ओ३म्

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ।

ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च। प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु ॥

यजुर्वेद 26:2

Edit with WPS Office

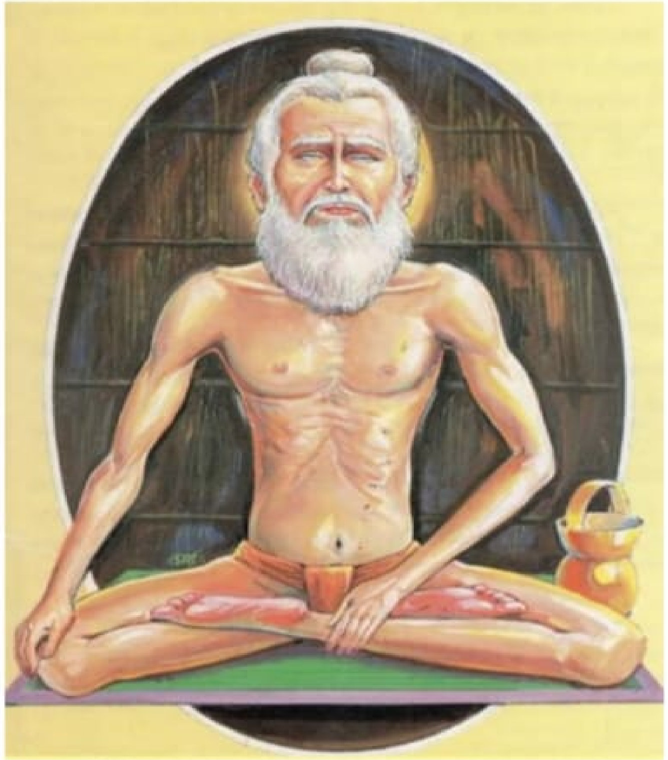

स्वामी विरजानन्द

स्वामी दयानंद सरस्वति

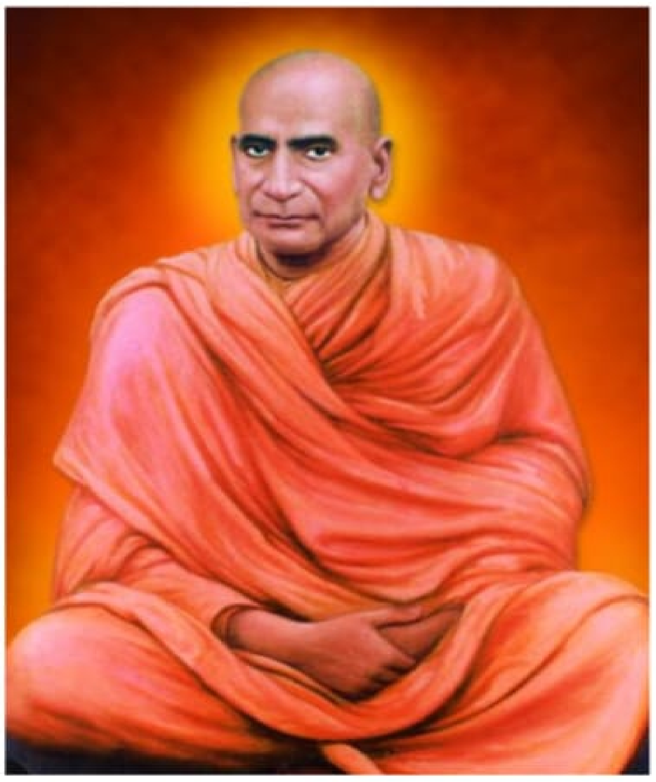

स्वामी श्रद्धानंद

पं॰ गुरुदत्त विद्यार्थी

Edit with WPS Office

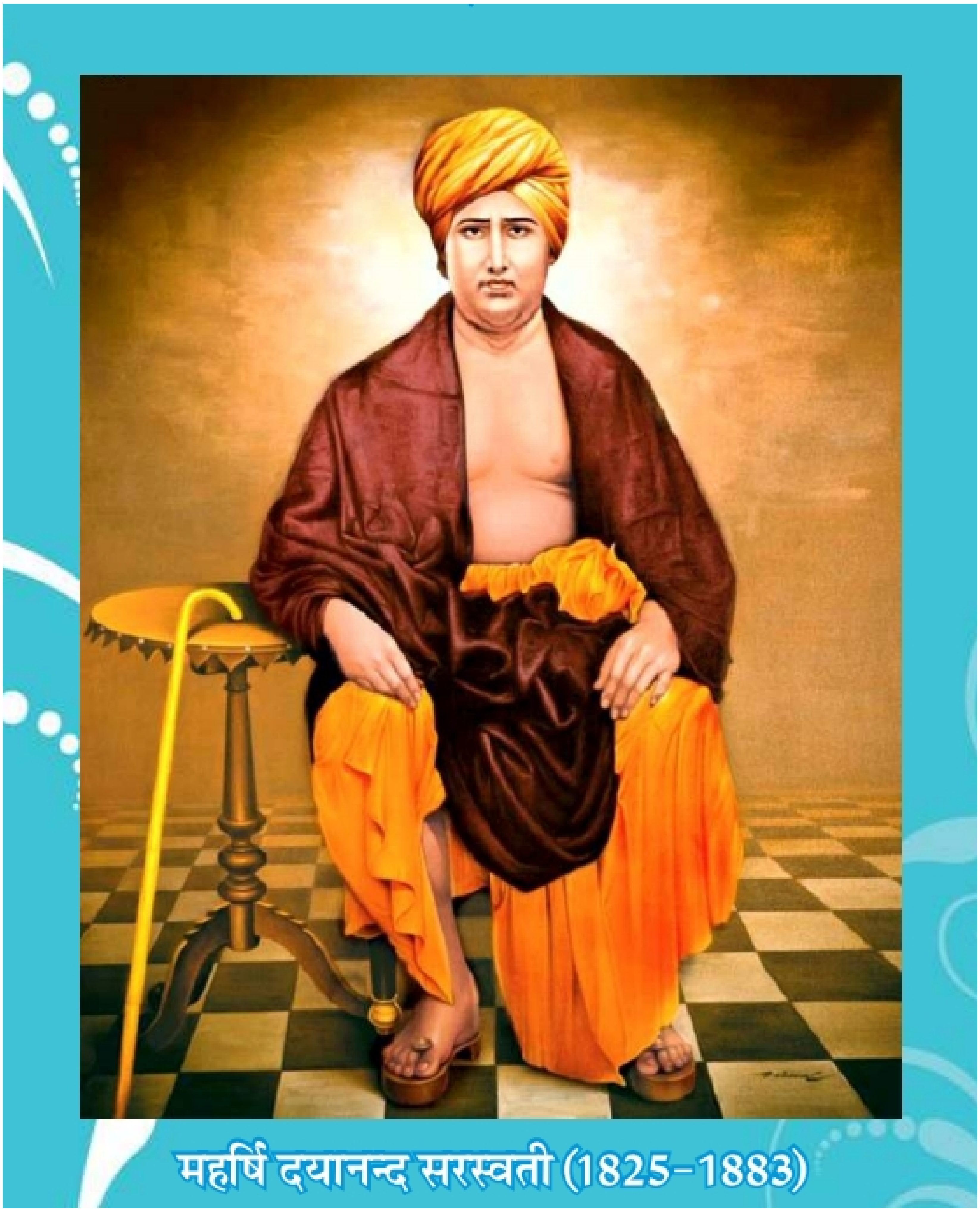

Edit with WPS Office

पुस्तक :

- **वैदिक सनातन धर्म भव-सागरतारिणी जिज्ञासा : ?**

(शंका समाधान)

सत्य को जानों ...?

➤ तर्क , बुद्धि , विज्ञान और शास्त्र प्रमाण के आधार पर सनातन धर्म को जानें ।

आज सनातन धर्म को लेकर कई प्रश्न उठ रहे हैं ? कुछ इसे केवल आस्था और मान्यताओं से जोड़ते हैं , तो कुछ परखरने का प्रयास करते हैं । यदि इनका तर्क पूर्ण उत्तर नहीं दिया गया ? तो भ्रांतियां बढ़ेगी ?
आज का युग अस्त्र - शस्त्र का नहीं , बल्कि विचार की लड़ाई है । यदि हम सनातन धर्म को केवल आस्था और परंपरा तक सीमित रखेंगे , तो इस वैचारिक संग्राम में विजय प्राप्त करना कठिन होगा ।
इसलिए , सनातन धर्म को केवल विश्वास और मान्यताओं तक सीमित रखने के बजाय हमें इसके गहरे वैज्ञानिक और दार्शनिक अर्थ को समझना होगा ।
यदि आप इसे तार्किक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जानना चाहते हैं , तो हमारी इस पुस्तक **" वैदिक सनातन धर्म भव-सागरतारिणी जिज्ञासा "** को पढ़ना होगा । इसमें तर्क , बुद्धि , विज्ञान और शास्त्र प्रमाण के आधार पर सनातन धर्म की गहरी व्याख्या की गई है ।
जिसमें न केवल आपके प्रश्नों का समाधान होगा , बल्कि आप दूसरों को भी सत्य का मार्ग दिखा सकेंगे ।

" ज्ञानी वह नहीं जो पुस्तकें रट ले ,
बल्कि वह है जो सत्य को तर्क और
अनुभव से जान सकें । "
क्योंकि
चाणक्य पहले ही कह गए , कि जिस मूर्ख में स्वयं की बुद्धि नहीं ? शास्त्र उसका क्या भला करेगा ।

Edit with WPS Office

अंधे को कांच क्या भला करेगा ।
उल्लू को दिन में नहीं दिखता ।
इसमें सूर्य का क्या दोष ?

______ सौरव कसाना आर्य

।। ओउम् नमस्ते: ।।

ऋग्वेद. 1/73/2... सत्य आत्मेंव शेव
भावार्थ... सत्य आत्मा की तरह सुख देने वाला होता है । इसलिए जीवन में सदैव सत्य का पालन करें । जो सत्य युक्त व्यवहार करता है , वह निर्भय , साहसी और उत्साही होता है । उसे परमात्मा का वरद हस्त प्राप्त होता है ।

सत्यमेव जयते नानृतं सत्येन पन्था विततो देवयान: ।
मुण्डक उपनिषद. 3.1.6
अर्थात : अर्थात सर्वदा सत्य की विजय और असत्य की पराजय और सत्य में ही विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है ।

नास्ति सत्यसमो धर्मो न सत्याद् विधते परम् ।
न हि तीव्रतंर किंचिदनृतादिह विधते ।।
महाभारत आदि पर्व. अध्याय 3 , श्लोक 100
भावार्थ : सत्य के समान कोई धर्म नहीं है , सत्य से बढ़कर कुछ भी नहीं है और असत्य से बढ़कर तीव्रतर पाप इस संसार में और कोई नहीं है ।

यजुर्वेद. 19.77 ______ हे मनुष्यों ! तुम सदा ही जो कुछ भी असत्य पाओ उस में श्रद्धा मत रखो और जो कुछ विश्लेषण , तर्क , तथ्य और प्रमाण

Edit with WPS Office

आदि से सत्य जानो , उसे श्रद्धा पूर्वक अपनाओं ।

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विधते ।

श्रीमद्भगवद्गीता. 4.38

भावार्थ : ज्ञान से बढ़कर इस संसार में कुछ भी पवित्र नहीं है ।

तमेव ऋषि तमु ब्रह्माणमाहुर्यज्ञन्य सामगा ।

ऋग्वेद. 10.117.6

अर्थात , वही ऋषि और ब्राह्मण है , जो अपने ज्ञान से दूसरों को सन्मार्ग पर लगाता है ।

सा विद्या या विमुक्ते ।। विष्णु पुराण. 1.19.41

अर्थात विधा वही है जो मुक्ति की तरफ ले जाए ।

मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयो । महाभारत

अर्थात मन ही मनुष्य के बंधन और मोक्ष का कारण है ।

वेदाहमेतं पुरुष महान्तमादित्यवर्णं तमस: परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।।

यजुर्वेद. 31.18

भावार्थ : मनुष्य इस लोक - परलोक के सुखों की इच्छा करें तो सबसे अति बड़े स्वयंप्रकाश और आनंद स्वरूप अज्ञान के लेश से पृथक वर्तमान परमात्मा को जान के ही मरणादि अथाह दु:खसागर से पृथक हो सकते हैं , यही सुखदायी मार्ग है , इससे भिन्न कोई भी मनुष्य की मुक्ति का मार्ग नहीं है ।

समाधान : इस मंत्र में परमात्मा ने स्पष्ट कह दिया है कि मुझे जाने बिना इस सृष्टि को जाने बिना मुक्ति नहीं हो सकती अर्थात मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता । ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग एक है अनेक नहीं ?

Edit with WPS Office

उधानं ते पुरुष नवयानं जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि ।।
अथर्ववेद. 8.1.6

अर्थात परमात्मा जीवात्मा से कहता है ; हे जीव ! सदा उन्नति कर , तेरा हमेशा उत्थान हो पतन नहीं ?

।। त्रैतवाद ।।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते ।
तयोरन्य: पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति ।।
ऋग्वेद. 1.164.20 , अथर्ववेद. 9.9.20

पदार्थ : सुंदर पंखों वाले दो पक्षी एक जीवात्मा , और दूसरा ब्रह्म परमात्मा दोनों मित्र और साथी हैं । अस्तित्व के एक ही पेड़ पर एक साथ घोंसला बनाते हैं । दोनों में से एक जीवात्मा ,फल को स्वाद से खाता है , और आनंद लेता है , और साथ ही परिणाम भी भुगतता है । दूसरा पक्षी (परमात्मा) बिना कुछ खाए , बस चारों ओर व्यापक रूप से देखता रहता है ।
भावार्थ : ______ इस मंत्र में रुपकालङ्कार है । जीव , परमात्मा और जगत का कारण ये तीन पदार्थ अनादि और नित्य हैं । जीव और ईश - परमात्मा यथाक्रम से अल्प अनन्त चेतन विज्ञानवान् सदा विलक्षण व्याप्यव्यापकभाव से संयुक्त और मित्र के समान वर्तमान है । वैसे ही जिस अव्यक्त परमाणुरुप कारण से कार्यरुप जगत होता है वह भी अनादि और नित्य हैं । समस्त जीव पाप पुण्यात्मक कार्यों को करके उनके फलों को भोगते हैं और ईश्वर एक सब ओर से व्याप्त होता हुआ न्याय से पाप - पुण्य के फल को देने से न्यायाधीश के समान देखता है ।

।। लेखक ।।

Edit with WPS Office

सौरव कसाना आर्य
स्थान : सिरोरा सलेमपुर जिला गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)
फोन नं : 9368093158

।। मार्गदर्शक : ।।

आचार्य अरविंद वैदिक

।। मेरे गुरु ।।

महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती जी ।

।। मेरे लिए प्रमाण पुस्तक ।।

ऋषियों के द्वारा लिखी गई पुस्तक , और वर्तमान में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा कृत आर्ष साहित्य ,स्वत: मेरे लिए परम प्रमाण है । ___ सौरव आर्य

वैदिक सत्यार्थ जिज्ञासा (सत्य को जानो) हमारी इस पुस्तक को पढ़ने से पहले महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा कृत सभी पुस्तक जरूर पढ़ लेवे खासकर सत्यार्थ प्रकाश , ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका...?

Edit with WPS Office

Edit with WPS Office

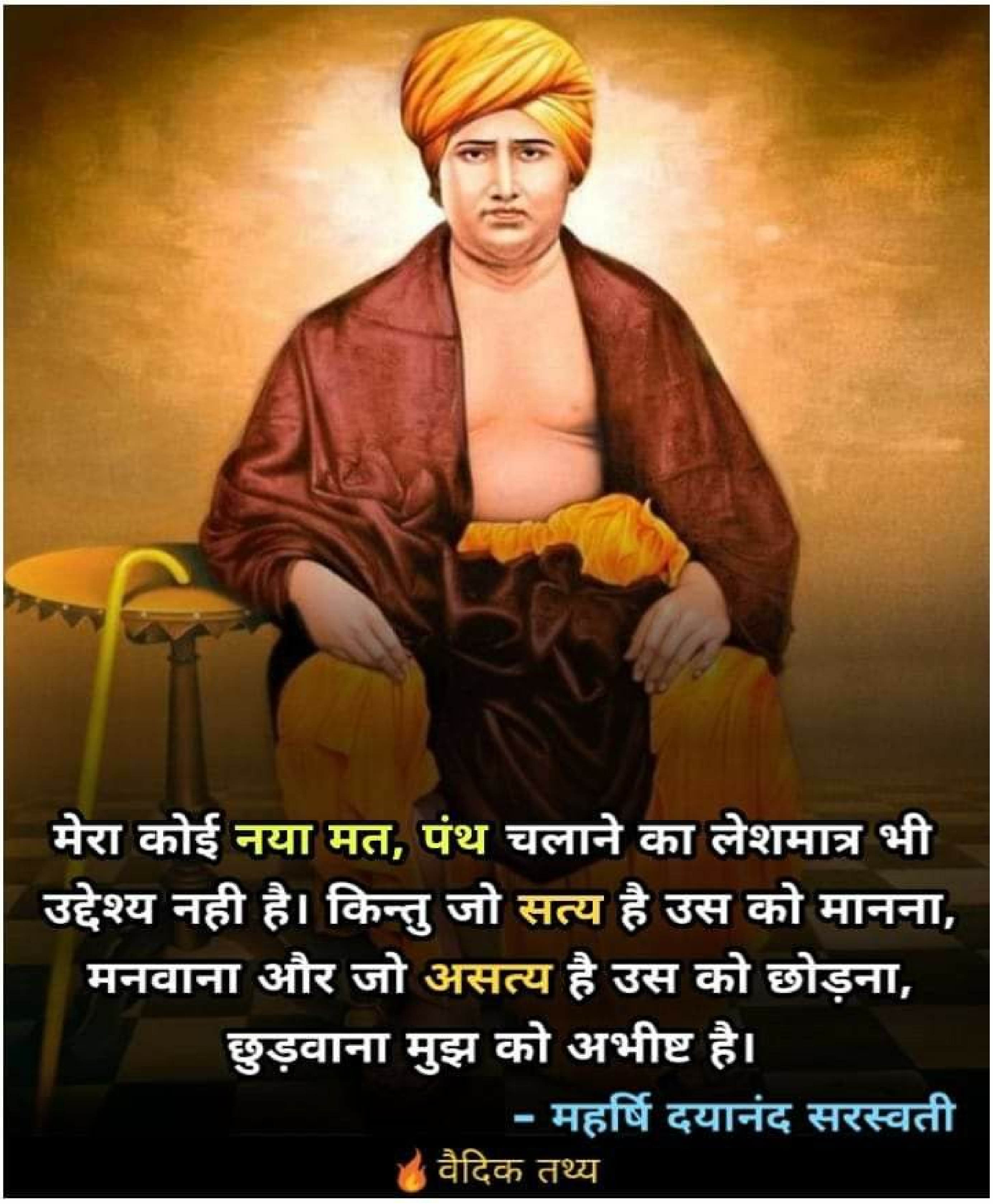

Edit with WPS Office

Edit with WPS Office

मेरी फोटो

- ✔ जीवन में हमें क्या करना है यह हमें रामायण सिखाती है ।
- ✔ जीवन में क्या नहीं करना यह हमें महाभारत सिखाती है ।
- ✔ और जीवन को हमें कैसे जीना है यह हमें श्रीमद्भगवत गीता सिखाती है ।

Edit with WPS Office

✓ हमें सृष्टिकर्ता परमात्मा के पांच कार्यों को कैसे जानना है ? **(पांच कार्यों के अंदर छिपे रहस्य)**जानने के लिए वेद हमें बतातें हैं ।

पुस्तक मूल्य : **प्रत्येक मनुष्य सत्य को ग्रहण करें सत्य को जाने यही इस पुस्तक का मूल्य है** ।
हमारे चैनल को जरूर ही सब्सक्राइब कीजिए । जल्द ही हम अपने चैनल पर कार्य करेंगे । हमारे चैनल का नाम : Souravkasana3774 हैं । जल्द ही हम अपने चैनल का नाम भी चेंज करेंगे । असत्य का खंडन और सत्य का मंडन करना इस चैनल का उद्देश्य होगा । चाहे राजनीति हो ,सामाजिक और सनातन संस्कृति के नाम पर झूठ में हो रहे ढोंग आडंबर पाखंड और देश की राजनीति सामाजिक आदि में गलत धारणाएं का खंडन और सनातन संस्कृति का वैदिक स्वरूप , राजनीतिक से संबंधित सत्य स्वरूप , देश के हित में सच्ची खबर दिखाना हमारा उद्देश्य होगा । सनातन की रक्षा करना मेरा उद्देश्य संकल्प है कर्तव्य है । इसलिए सभी हे प्रिय बंधुओं ! हमारे चैनल को सब्सक्राइब कीजिए । और ज्यादा से ज्यादा लोगों के पास शेयर कीजिए । यूट्यूब पर सर्च से ही लिंक आ जाएगा । जल्द ही हम इस चैनल पर कार्य करने वाले हैं ।

।। विषय- सूची ।।

क्र.स. **पृष्ठ संख्या**

. भूमिका
- 1.विधा और अविधा
- 2. पुरुषार्थ का महत्व एवं वेद में सफलता के सूत्र
- 3. सदाचार
- 4. वेदों में सृष्टि उत्पत्ति
- 5. मनुष्य उत्पत्ति
- 6. विश्व सभ्यताओं का जनक भारत एवं वैदिक सभ्यता
- 7. सत्य की राह

Edit with WPS Office

• 8. पुराण क्यों लिखें , किसने लिखे ? पुराणों के गप्पें

- कृष्ण के उज्ज्वल चरित्र पर पुराणों के गंदे आक्षेप
- भगवान श्री कृष्ण पर व्याभिचार का दोष
- विष्णु के निवास स्थान का पता
- सनातन धर्म का कूड़ेदान पुराणों में
- विचित्र मुखाधान
- पापमोचन का नुस्खा
- ब्रह्मा जी का गौं से मैथुन करना
- शिखंडी शिवाजी
- देवताओं को गर्भ रह गया
- कान में गर्भाशय
- ब्रह्मा की विचित्र उत्पत्ति
- सुंदर औलाद बनाने का विचित्र विधान
- सनातन धर्म का सुंदर भोजन
- विष्णु का व्याभिचार व अन्यों को प्रेरणा
- बालखिल्यों की उत्पत्ति
- शिवजी का पार्वती को विचित्र आदेश
- विलक्षण अतिथि सत्कार
- सुदर्शन ने अपनी पत्नी को व्याभिचारिणी बनाया
- विलक्षण लोक विज्ञान
- मत्स्य अवतार की लंबाई
- आम का पेड़
- आठ लाख मील ऊंचा पहाड़
- 800 मील ऊंचा किला
- ब्रह्मा जी की मुसीबतें
- मर्द के पेट से लड़का जन्मा
- एक नील सैनिकों का गप्पोड़ा
- इंद्र का सनातनी आचरण
- ब्रह्मा की नाक में से सूअर निकलना
- श्री कृष्ण की 30 करोड़ पत्नियां

Edit with WPS Office

- शिव जी के चार मुख
- विचित्र योग विज्ञान
- यज्ञ व विवाह में सूअर का दान दे
- सृष्टि की विचित्र उत्पत्ति
- सूअर को नमस्कार करो
- पौराणिक ऋषियों की मात्राएं
- हनुमान जी को 16 सुंदरी लड़कियों की भेंट
- देवताओं के चरित्र का भंडाफोड़
- परमात्मा साकार नहीं है
- कृष्ण को संभोग का पति बनाना
- पौराणिक मतानुसार सनातन धर्म के लक्षण
- पौराणिक मंत्र से शत्रु की सेना छूमंतर
- श्रीमद् भागवत महापुराण में गर्भवती हुई स्त्री से नियोग
- मत्स्य अवतार विष्णु ने नहीं , ब्रह्मा ने लिया ?
- शक्तिपीठों की कहानी : एक पौराणिक पोप लीला ?
- महाभारत के वेदव्यास vs पुराणों के वेदव्यास
- राधा तांत्रिक है , ऐतिहासिक नहीं
- गोरखनाथ की गोबर से उत्पत्ति
- गंगा नदी को भागीरथ लाया था क्या ?
- गौं मांस भक्षण के घोर पाप के समर्थक पुराण

- 9. पुराणों में अंग्रेजी एवं पुराण संज्ञा किसकी ?
- 10. विस्तृत जानकारी कृष्ण चरित्र (योगेश्वर श्री कृष्ण)
  - वेद और पुराण तुलनात्मक विश्लेषण :
- 11. भूल कहां हुई ? पाखंडवाद !
  - दूसरे चाणक्य हरित ऋषि और आचार्य मंगलदेव
  - राजा दाहिर और बप्पा रावल का इतिहास
- 12. क्या आर्य समाज मूर्ति पूजा विरोधी है ? और आर्य समाज और गुरुडम पन्थ के सिद्धांतों का तुलनात्मक वर्णन : एवं उपासना का अर्थ
- 13. वेद परिचय ..? वेदांग क्या है ..? एवं वैदिक साहित्य परिचय

Edit with WPS Office

- 14. महर्षि दयानंद सरस्वती को वेद भाष्य लिखने की आवश्यकता क्यों पड़ी ?
- 15. गौहत्या ,मांसाहार एवं विषयलम्पता पर आर्ष वैदिक विचार
- 16. वेद के वर्तमान युग के ऋषि , महर्षि दयानंद सरस्वती को महर्षि क्यों कहते हैं ?
- 17. आर्य समाज क्या मानता है
- 18. सनातन धर्म क्या है
- 19. धर्म क्या है ? स्वधर्म और आपद्धर्म विस्तृत व्याख्या
- 20. सत्यार्थ प्रकाश में ब्रह्मांड की रचना किस प्रकार हुई ? अष्टम समुल्लास
- 21. परमात्मा जीवात्मा प्रकृति
- 22. ब्रह्मांड को यज्ञ से कैसे समझे
- 23. देश की आजादी में आर्य समाज का क्या योगदान है ? और आर्य समाज का कार्य : रामधारी सिंह दिनकर और पतन का कारण :
- 24. महर्षि दयानंद सरस्वती ने इस समाज को क्या दिया ?
- 25. क्या महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों के प्रभाव में आकर के मूर्ति पूजा का विरोध करते थे ? जानिए सच्चाई ?
- 26. गार्गी और याज्ञवल्क्य का शास्त्रार्थ
- **27. कुछ कथावाचकों का अधूरा (मिथ्या) पाखंडी ज्ञान**

  कथावाचिका चित्रलेखा जी
  कथावाचक मोरारी बापू जी
  श्री चिन्मयानंद बापू जी
  आसाराम बापू जी
  धीरेंद्र कृष्ण शास्त्री (बागेश्वर धाम)
  प्रेमानंद जी महाराज
  अनिरुद्ध आचार्य महाराज
  राजेंद्र दास पांडे महाराज
  प्रदीप मिश्रा
  चमत्कारों के आगे विवश धर्म

Edit with WPS Office

पाखंडी नितिन लखेरा
कोरोना देवी
पाखंडी सूरजपाल जाटव/साकार हरि नारायण

- 28. रामपाल दास का भंडाफोड़
- 29. रामभद्राचार्य जी के झूठे आरोप
- 30. गप्पों पर लडें , दो गप्पी
- 31. इस्कॉन संस्था से ना जुड़े
- 32. 99% लोग नहीं जानते श्रीमद् भगवत गीता
- 33. मैं ब्रह्म हूं , सरल भाषा में समझे
- 34. वैदिक शिक्षा
- 35. उपनिषदों में आत्मा और परमात्मा संबंधी शिक्षा
- 36. ईश्वर स्तुति प्रार्थना एवं उपासना के मंत्र
- 37. कर्तव्य पालन , धर्म का अनुष्ठान करने , परोपकार आदि के संबंध में मंत्र
- 38. वेद के चुने हुए मंत्र ,वेद रत्न
- 39. चलते रहो चलते रहो , आगे बढ़ते रहो
- 40. 33 कोटि प्रकारों के देवताओं का वर्णन
- 41. स्वाध्याय
- 42. चारों वर्णों के कर्तव्य
- 43. मनुष्य के 6 दोष (अथर्ववेद मंत्र) जीवन की सीख
- 44. अहिंसा का वैदिक स्वरूप
- 45. वेद- परिचय 2
- 46. वेदों में प्रश्नोत्तर
- 47. पिण्ड और ब्रह्मांड
- 48. सृष्टि -भोक्ता जीवात्मा का परिचय
- 49.स्त्रष्टा का परिचय
- 50. हवन क्यों किया जाता है एवं हवन से निरोगता

Edit with WPS Office

- 51. यज्ञ की आत्मा ,प्राण और सार क्या है ?
- 52. पुराणों में गणेश की कहानी
- 53. गणपति का वेदों में स्वरूप
- 54. इंद्र कौन है ? देव - असुर संग्राम
- 55. यज्ञ/अग्निहोत्र का महत्व
- 56. पंच महायज्ञ
- 57. वेदों में विज्ञान
- 58. शिक्षाप्रद , प्रेरक प्रसंग
- 59. नमस्ते : एक आदर्श अभिवादन
- 60. ब्रह्म मुहूर्त , दिनचर्या एवं जीवन की सफलता
- 61. महत्वपूर्ण वैदिक मंत्र अर्थ सहित
- 62. त्रिगुणात्मक प्रकृति
- 63. स्वप्न अवस्था
- 64. रामायण की नैतिक शिक्षाएं एवं उनका व्यावहारिक अनुप्रयोग
- 65. महाभारत की नैतिक शिक्षाएं एवं उनका व्यावहारिक अनुप्रयोग
- 66. भगवत गीता की नैतिक शिक्षाएं एवं उनका व्यावहारिक अनुप्रयोग
- 67. उपवास का अर्थ
- 68. वैदिक ऋषि और उनके आविष्कार
- 69. आयुर्वेद
- 70. शरीर और आत्मा की विभिन्न अवस्थाएं
- 71. आत्मा का स्वरूप
- 72. वेदों में परमात्मा का स्वरूप
- 73. साम, दाम, दंड, भेद चार प्रकार के बल
- 74. भारत में गुरुकुल परंपरा होते हुए गुलामी कैसे संभव हुई ?
- 75. भारत विश्व गुरु
- 76. भारत का उन्नत ज्ञान - विज्ञान अन्य देशों तक कैसे फैला ?
- 77. वैदिक सनातन धर्म के मूल सिद्धांत
- 78. मनुष्य जन्म का उद्देश्य : वेदों के अनुसार

Edit with WPS Office

- 79. अष्ट चक्र
- 80. अष्ट सिद्धियां
- 81. मांसाहार : एक वैदिक दृष्टिकोण
- 82. दान का वास्तविक अर्थ
- 83. वेदों में जादू - टोने की भ्रांति
- 84. वेदों में नारी का महत्व
- 85. वैदिक धन उपार्जन सिद्धांत
- 86. काल और समय
- 87. वैदिक पर्व
- 88. वैदिक विज्ञान Vs आधुनिक विज्ञान
- 89. भारतीय दर्शन
- 90. अद्वैतवाद , विशिष्टाद्वैतवाद , द्वैतवाद , और शुद्धाद्वैतवाद
- 91. ईश्वरीय ग्रंथ की पहचान
- 92. शास्त्रों में हुए मिलावट को कैसे पहचानें
- 93. अष्ट प्रमाण
- 94. अध्यात्म क्या है
- 95. ज्ञान कर्म एवं उपासना योग
- 96. फलित ज्योतिष और वेदांग ज्योतिष : तुलनात्मक अध्ययन
- 97. छः प्रकार की वास्तविक संपत्ति
- 98. मनुष्य जन्म की सफलता का मापदंड
- 99. कर्म एवं कर्म फल सिद्धांत
- 100. कर्म के अनुसार पुनर्जन्म
- 101. हरिण के बच्चे में आसक्ति के कारण राजा भरत का हरिण योनि में जन्म ___ भागवत पुराण ।
- 102. मृत्यु किसकी आत्मा वा शरीर की ?
- 103. मृत्यु कभी पीछा नहीं छोड़ता
- 104. ब्रह्म ज्ञान से मृत्यु को जीतना संभव
- 105. मृत्यु सर्वत्र विद्यमान है

Edit with WPS Office

- 106. ओउम् से परम गति की प्राप्ति
- 107. पितृ -- श्राद्ध -- वर्णन
- 108. उपनिषदों का अमर संदेश
- 109. शंकराचार्य - भाष्य की कतिपय अवैदिक मान्यताएं
- 110. अद्वैतमतखण्डन
- 111. अद्वैतवाद - वेदांत दर्शन के भी विरुद्ध है
- 112. नवीन वेदान्तियों का मायावाद
- 113. उपनिषदों में त्रैतवाद एवं शास्त्रों में त्रैतवाद का समर्थन
- 114. आदि शंकराचार्य : वैदिक धर्म की पुनः स्थापना
- 115. महत्वपूर्ण श्लोकों की व्याख्या
- 116. वाल्मीकि रामायण से महत्वपूर्ण श्लोक
- 117. वेदों में महत्वपूर्ण उपदेश
- 118. उपनिषदों के कुछ महत्वपूर्ण उपदेश
- 119. दर्शनशास्त्र ज्ञान
- 120. मनुस्मृति के महत्वपूर्ण उपदेश
- 121. वेदों में नदियों का प्रतीकात्मक अर्थ : गंगा , यमुना और सरस्वती का यौगिक रहस्य
- 122. ब्रह्मा - सरस्वती के विवाद का खंडन
- 123. वेदों में किसी का इतिहास नहीं..? पुराणों में जिन राजाओं ऋषियों के नाम है वेद से ही नाम लिए गए ..? वेद में उनका कोई इतिहास नहीं .? देखिए
- 124. इतिहास , पशु हिंसा , और अश्लीलता
- 125. मनुष्य की इच्छाएं
- 126. गृहस्थाश्रम
- 127. समाज और साम्राज्य की रक्षा
- 128 वैदिक उपनिषद , परलोक विषय
- 129. यज्ञों के तीन संसार और तीन प्रकार
- 130. यज्ञों में आयुर्वेद

Edit with WPS Office

- 131. यज्ञों में ज्योतिष
- 132 यज्ञों से ऋण - मुक्ति
- 133. ज्ञानयज्ञ
- 134. उपासनायज्ञ
- 135. उत्तरायण क्या है ? अर्थात उत्तरायण किसको कहते हैं ..?
- 136. दक्षिणायन क्या है ? अर्थात दक्षिणायन किसको कहते हैं ..?
- 137. मनुष्य की परिभाषा एवं मनुष्य का उद्देश्य एवं प्रायश्चित शुद्धि
- 138. रामायण की उभरती शंकाएं , गरजते उत्तर ..?
- 139. अर्जुन और सुभद्रा के विवाह पर उठी शंकाओं का तर्कसंगत समाधान और क्या अश्वत्थामा आज भी जीवित है ? क्या द्रोपती के पांच पति थे ? क्या पितामह भीष्म जो गंगा नदी आज बह रही है इसी के पुत्र थे ? शंका समाधान
- 140. गुरु कौन है और किसे गुरु बनाना चाहिए ?
- 141. दुख क्या है यह कितने प्रकार के होते हैं ?
- 142. भगवान शिव कौन थे ..?
- 143. धर्मिष्ठ श्री राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना या कल्याणकारी शिव की उपासना ? आखिर क्या है सत्य ..? देखिए
- 144. क्या हनुमान जी बंदर थे ..?
- 145. मूर्ति पूजा एवं अवतारवाद और अवतारवाद पर महत्वपूर्ण शास्त्रार्थ
- 146. मोक्ष
- 147. मोक्ष प्राप्ति के साधन : अष्टांग योग
- 148. ईश्वर कहां रहता है ? कैसा दिखता है , उसको विद्वान लोग कैसे जानते हैं ? एवं प्राप्त करते हैं
- 149. इंद्रियां , मन , और अंत:करण
- 150. वर्ण व्यवस्था
- 151. जाति और जातिवाद
- 152 मनुस्मृति एवं उसका वैश्विक प्रभाव
- 153. ब्रह्मचर्य

Edit with WPS Office

- 154. आर्य कौन है ?
- 155. विवाह : उचित या अनुचित
- 156. वैदिक 16 संस्कार
- **157. शंका समाधान प्रश्नोत्तरी**

1. **क्या ईश्वर है ? तो दिखाई क्यों नहीं देता ?**
2. **क्या ईश्वर अवतार लेते हैं ?**
3. **यदि ईश्वर अवतार नहीं लेते हैं , तो श्री राम , श्री कृष्ण कौन है ?**
4. **ब्रह्मा , विष्णु और महेश (शिव) कौन है ?**
5. **मंदिर शब्द का अर्थ , मंदिर जाना उचित या अनुचित है ?**
6. **क्या रामायण और महाभारत काल्पनिक है ?**
7. **क्या भूत प्रेत होते हैं ?**
8. **क्या मूर्ति में परमात्मा है ?**
9. **क्या 84 लाख योनियां होती है ?**
10. **स्वर्ग और नरक क्या है ?**
11. **भाग्य बड़ा है या कर्म ?**
12. **धर्म बड़ा है या कर्म ?**
13. **परमात्मा के मुख्य कार्य कौन-कौन से हैं ?**
14. **क्या हम परमात्मा को पूर्ण रूप से जान सकते हैं ?**
15. **परमात्मा की उपासना के क्या लाभ है ?**
16. **परमात्मा की उपासना कैसे की जाती है ?**
17. **क्या गंगा में डुबकी लगाने , पूजा ,पाठ , कथा , यज्ञ , हवन , अथवा प्रायश्चित करने से पाप धुल जाते हैं ?**
18. **क्या गाय हमारी माता है ?**
19. **सप्त ऋषि कौन है ?**
20. **क्या नाम जप , पूजा , पाठ से ईश्वर की प्राप्ति संभव है ?**
21. **क्या वेदों में मिलावट संभव है ?**
22. **क्या तीर्थ यात्रा से पाप धुलते हैं ?**
23. **क्या गंगा नदी को राजा भगीरथ स्वर्ग से लाएं थें ?**

- 158. संस्कृत भाषा
- 159. पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , आकाश पंचतत्वों के गुण :

Edit with WPS Office

- 160. प्रार्थना

।। ओउम् ।।

प्रस्तावना

मानव योनि **सर्वश्रेष्ठ योनि** है । केवल इस योनि में ही परमात्मा का साक्षात्कार करके जन्म - मरण के चक्र से छुटकारा प्राप्त किया जा सकता है । प्रत्येक व्यक्ति का अपने प्रति क्या कर्तव्य है , परिवार ,समाज , राष्ट्र और विश्व के प्रति क्या कर्तव्य है और परमपिता परमात्मा के प्रति क्या कर्तव्य है -- इन सब का ज्ञान हमें वेदों से प्राप्त होता है एवं उस पर आचरण करने से मानव का जीवन नियमित , संयमित और संतुलित बन जाता है । अत: वेदों का अध्ययन करके , उनसे प्राप्त ज्ञान को आचरण में लाकर ही मानव कर्म से भवसागर को तैर कर ज्ञान से मोक्ष प्राप्त कर सकता है । इसके अतिरिक्त मूर्ति पूजा अथवा अन्य गुरुडम पंथों के द्वारा बतलाए जाने वाले मार्ग से कदापि सम्भव नहीं है । इस पुस्तक में चारों वेदों , उपनिषदों , योगदर्शन , गीता आदि धार्मिक ग्रंथों में दी गई शिक्षानुसार मानव जीवन को सफल बनाने की विधि का वर्णन किया गया है । इस पुस्तक (सत्यार्थ जिज्ञासा , सत्य को जानो) में दिए गए वेद मंत्रों के भाष्यकार इस प्रकार है ---

- ऋग्वेद के एक से छ: मंडल और समस्त यजुर्वेद का स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ।
- ऋग्वेद के सातवें से दशवें मंडल तक का और समस्त अथर्ववेद का श्रीपाद दामोदर सातवलेकर
- सामवेद का स्वामी ब्रह्म मुनि परिव्राजक ' विधामार्तण्ड

वेद मंत्रों के अतिरिक्त सम्बंधित विषय को स्पष्ट करने अथवा नवीन जानकारी देते हेतु-- रामायण , महाभारत , पुराण , ब्राह्मण ग्रन्थ ,आराण्यक , स्मृति , और गीता , अनेक विद्वानों एवं महापुरुषों आदि के कथनों को उद्घृत किया गया है । इन सब के लिए लेखक आभार प्रकट

Edit with WPS Office

करता है ।

आजकल लोग स्वार्थ सिद्धि के लिए पूजा पाठ तो बहुत करते हैं किंतु पुरुषार्थ , और श्रेष्ठाचरण करने पर ध्यान न देकर अनैतिक और अमर्यादित कार्यों के बल पर शीघ्रातिशीघ्र अपना मनोरथ सिद्ध करना चाहते हैं जिससे समाज में अव्यवस्था और अशान्ति फैल रही है । इस के अतिरिक्त परिश्रम और सदाचार के बिना उपासना में भी सफलता प्राप्त नहीं होती । स्तुति , प्रार्थना और उपासना में सफलता प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ , सदाचार , और सत्य को जानने के बाद प्राप्त ज्ञान के अनुसार आचरण करना अनिवार्य है ।

अतः इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए इस पुस्तक में पुरुषार्थ , श्रेष्ठाचार के महत्व का वर्णन करते हुए सत्य भाव से उपासना करने पर बल दिया गया है और साथ साथ और अनेक विषयों पर प्रकाश डाला गया है । अतः जिसको पढ़कर पाठकगण , को इस पुस्तक से लाभ प्राप्त होगा । **सा विधा या विमुक्तये** (विष्णु पुराण. 1.19.41) अर्थात विधा वही है , जो हमें मुक्ति की ओर ले जाऐ । वास्तव में आपको इस **(भव- सागरतारिणी अर्थात वैदिक सत्यार्थ सनातन धर्म जिज्ञासा)** पुस्तक को पढ़कर पता चलेगा कि वेदादि सत्य शास्त्रों का निचोड़ किसे कहते हैं ।

आशा है कि पाठकगण ! इस पुस्तक (सत्यार्थ जिज्ञासा) से लाभान्वित होकर अपने जीवन को सफल बनायेंगे । धन्यवाद

_____ लेखक : सौरव कसाना गुर्जर (आर्य)

•।। उद्देशिका ।।

इस पुस्तक का उद्देश्य मानव समाज को सनातन धर्म और उसके मूल सिद्धांतों से परिचित कराना है , जो वेद , उपनिषद और षडदर्शन पर आधारित है । आधुनिकता के युग में हम अपनी प्राचीन संस्कृति को भूल

Edit with WPS Office

चुके हैं , और यह पुस्तक उन विस्मृत शिक्षाओं को पुनर्जीवित करने का प्रयास है । वैदिक और नैतिक शिक्षा के माध्यम से ही समाज का वास्तविक उत्थान संभव है ।

इस पुस्तक में सार क्या-क्या है..? देखिए

- प्राचीन ज्ञान का आधुनिक दृष्टिकोण
- तर्क और बुद्धि के आधार पर शंका समाधान
- वेदों और शास्त्रों का प्रमाण
- धर्म और विज्ञान का समन्वय
- आध्यात्मिक और नैतिक विकास
- सनातन धर्म का वैज्ञानिक पक्ष
- धर्म के व्यावहारिक पक्ष
- संवाद शैली में लेखन

प्राचीन भारत , जिसे कभी ' विश्व गुरु ' कहां जाता था , की शक्ति का मूल कारण वेदों का अध्ययन और नैतिक शिक्षा थी । उसी महान परंपरा की पुनर्स्थापना हमारा नैतिक कर्तव्य है इस पुस्तक का उद्देश्य भी गुरुकुल परंपरा को पुनः स्थापित करना और समाज में फैली कुरीतियों , भ्रांतियों को दूर करना है । जब तक हम इन अवरोधों को नहीं हटाएंगे , तब तक विश्व का कल्याण असंभव है ।

मेरा उद्देश्य :

- वैदिक ज्ञान को सरल भाषा में जनसाधारण तक पहुंचाना ।
- यज्ञ और हवन की महत्ता को पुनर्स्थापित करना ।
- शुद्ध वैदिक कृषि और पर्यावरण की सुरक्षा को प्रोत्साहित करना ।

Edit with WPS Office

- आयुर्वेदिक जीवनशैली और शुद्ध शाकाहारी आहार को बढ़ावा देना ।
- वैदिक सनातन धर्म और संस्कृति की रक्षा और प्रचार करना ।
- समाज में व्याप्त कुरीतियों , जातिवाद और भेदभाव को समाप्त करना ।
- गुरुकुल प्रणाली की पुनर्स्थापना और नैतिक शिक्षा का प्रसार करना ।
- वेदों और शास्त्रों के अध्ययन और स्वाध्याय के प्रति प्रेरित करना ।

इस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए आपका सहयोग और समर्थन अत्यंत आवश्यक है । आप सभी से अनुरोध है कि इस अभियान में हमारे साथ जुड़े और सनातन धर्म की गौरवशाली धरोहर को पुनः जागृत करने में अपना योगदान अवश्य दें ।

• मेरे द्वारा लिखित एक कविता : भारत की आवाज

मेरा भारत सोने की चिड़िया था , देश गुसाई का
महाराणा के भालें का , मरदानी लक्ष्मी बाई का
लहूं को पीकर खिलें फूल यहां कुर्बानी का रंग लिए
यहां भगत सिंह पैदा होते हैं , सीने में कोई जंग लिए
यहां कोयल की वाणी से भी , बारूद की खुशबू आती है
कुरुक्षेत्र की लाल भूमि भी क्षत्रियों के गीत सुनाती है
ऐसी पावन धरती पर , क्यों धर्म मर्यादा भूल गया
पाखंडों का हुआ नित्य सत्य , फांसी पर झूल गया
अरे राम कृष्ण बदनाम हो गए भक्ति के प्रपंचों पर
देवी नग्न नाच रही है रामलीला के मंचों पर
मैं ऐसे मंचों से पर्दा हटवाने निकला हूं
अपने महापुरुषों के तुमको गीत सुनाने निकला हूं
ऋषिवर देव दयानंद कि तुम्हें याद दिलाने निकला हूं ।

अरे निराकार भगवान को भी साकार बनाया पंडों ने

Edit with WPS Office

जिसको चाहा जब चाहा अवतार बनाया पंडों ने
खुद को केवल वेद ज्ञान का हकदार बनाया पंडों ने
पत्थर को ही पूजा का आधार बनाया पंडों ने
भोले के सन्यासी बनकर मांस मदिरा खाते हैं
काली मां का देकर नारा बोतल भी चढ़वाते हैं
अरे बलिवैश्वदेव यज्ञ करने वाले बच्चों को खा जाते हैं
पर आज धर्म के मंचों पर वे साधु पूजें जाते हैं
जो साधु धर्म बैंच रहे हैं , मजहब की दीवारों में
वो लाश चुराते फिरते हैं रात को शमशानों में
मैं उनके पाखंडों को श्मशान बनाने निकला हूं
मैं तुमको अपने महापुरुषों के गीत सुनाने निकला हूं
ऋषिवर देव दयानंद की तुम्हें याद दिलाने निकला हूं ।

अरे जो कृष्ण योग विद्या का पारंगत माना जाता था
भारत के जनमानस में भगवान सा पूजा जाता था
जिसकी गीता गूंज रही है आज धर्म के नारों में
वो कृष्ण चूड़ी बेच रहा है भक्तों के बाजारों में
अरे गोपियों के संग श्री कृष्ण का तुमने नाच नचाया है
अपने आदर्श महापुरुषों पर यह ओछा दाग लगाया है
जो कावड़ लेने जाता है , शिव भक्तों का टोला
उनके धंधे देख रहा है त्रिनेत्रधारी भोला
भांग का पीकर प्याला जो सड़कों पर नाच नचाते हैं
इसी वर्ष हजारों बच्चे सड़कों पे मारे जाते हैं ।
मैं सीने में दर्द तुम्हारे लेकर गाता हूं
ऋषिवर देव दयानंद के टूटे-फूटे सपने लेकर गाता हूं
मैं रोता हूं राम कृष्ण के बेटों की करतूतों पर
दशरथ जी वन काट रहा है , जिनके एडी जूते पर
जो मां को गाली देकर के गुरु का ध्यान लगाने बैठे हैं
पुण्य के सहाय में अंधे पाप कमाने बैठे हैं
अपने घर से ऊंचा कोई पुण्य धाम नहीं हो सकता जी

Edit with WPS Office

ओउम् नाम से ऊंचा कोई नाम दान नहीं हो सकता जी
अपने घर को स्वर्ग बनाओ , डेरो में क्या रखा है
अपने घर की गऊं पूज लो , पत्थर के शेरों में क्या रखा है
अरे सब पाखंड को पहचाने सब की बात नहीं
सब वेदों के विद्वान बने , अब तो ऐसे हालात नहीं
इसलिए मैं , सबको सत्यार्थ प्रकाश पढ़ानें निकला हूं
अपने महापुरुषों के तुमको गीत सुनाने निकला हूं
ऋषिवर देव दयानंद की तुम्हें याद दिलाने निकला हूं

____ लेखक : सौंरव कसाना आर्य

● ।। भूमिका ।।

जीवों में दो तरह का ज्ञान होता है । पहला है **स्वाभाविक ज्ञान** । यह पशु– पक्षियों में अधिक होता है । उनको इसी ज्ञान से पूरा जीवन बिताना होता है । इस ज्ञान से पशु- पक्षी, खाना- पीना , सोना- जागना , उठना- बैठना, तथा बच्चे पैदा करना (नित्य कर्म) ही कर सकते हैं । इसका जीव को कोई फल नहीं मिलता है ।

दूसरा है **नैमित्तिक ज्ञान** । यह सीखने से सीखा जाता है यह ज्ञान पशु-

Edit with WPS Office

पक्षियों में बहुत कम और मनुष्य में बुद्धि से सम्बन्ध रखता है । **उदाहरण___** मनुष्य का बच्चा पैदा होते ही पानी में नहीं तैर सकता । यदि उसे पानी में छोड़ेंगे तो तुरंत डूब जाएगा । जब तक उसे तैरना नहीं सिखाया जाएगा । तब तक वह पानी में नहीं तैर सकेगा– कारण– यह मनुष्य के लिए नैमित्तिक ज्ञान है । मनुष्य का स्वाभाविक ज्ञान खाने-पीने सोने जागने उठने बैठने तक ही सीमित है बाकी सभी कार्य वह केवल सीखने से ही सीख सकता है । स्वाभाविक ज्ञान द्वारा किए गए कामों का मनुष्य को भी फल नहीं मिलता । नैमित्तिक ज्ञान से किए गए अच्छे या बुरे कार्यों का फल सुख के रूप में और बुरे कार्यों का फल दुख के रूप में मिलता है । इसलिए ईश्वर ने मनुष्य को अपने तथा दूसरे के जीवन को सुखी व उन्नत बनाने के लिए वेद ज्ञान सृष्टि के प्रारंभ में ही दिया गया ।

भारतीय सभ्यता और संस्कृति की जड़े अत्यंत प्राचीन और समृद्ध है , जिनकी नींव सनातन वैदिक धर्म पर आधारित है । यह धर्म केवल पूजा - अर्चना का मार्ग नहीं है , बल्कि जीवन जीने की कला , आध्यात्मिक प्रगति और मानवता के कल्याण की दिशा में मार्गदर्शन देने वाला एक व्यापक जीवन दर्शन है । युगों - युगों से , इस धर्म ने वैदिक दृष्टिकोण , तार्किकता , और वैदिक ज्ञान के माध्यम से मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को सार्थक और संतुलित बनाने का प्रयास किया है ।

हालांकि , आधुनिक युग में तकनीकी उन्नति और वैज्ञानिक विकास ने कई लोगों के मन में शास्त्रों , धार्मिक , सिद्धांतों और वैदिक ज्ञान के प्रति संदेह उत्पन्न किए हैं । वे यह प्रश्न उठाते हैं कि क्या सनातन धर्म का ज्ञान आज के युग में भी प्रासंगिक हैं ? क्या वैदिक ऋचाएं और उपनिषदों में दी गई शिक्षाएं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सत्यापित की जा सकती है ? ऐसे ही प्रत्येक प्रश्नों और शंकाओं का समाधान प्रस्तुत पुस्तक के माध्यम से दिया गया है ।

इस पुस्तक का उद्देश्य है कि वह पाठकों को तर्क , बुद्धि , शास्त्र प्रमाण और विज्ञान के आधार पर सनातन वैदिक धर्म की गहनता को समझने में सहायता प्रदान करें । इसमें उन सभी शंकाओं का उत्तर देने का प्रयास

Edit with WPS Office

किया गया है जो सनातन धर्म और आधुनिक विज्ञान के माध्यम विरोधाभास उत्पन्न करती है । इस प्रयास में हमने वेद , उपनिषद , ब्राह्मण ग्रंथ , षडदर्शन , गीता , तथा अन्य वैदिक ग्रंथों के साथ-साथ आधुनिक विज्ञान के सिद्धांतों का तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया है । परंतु हमें यहां भी ज्ञात होना चाहिए कि जिस प्रकार किसी भी विवाद के समाधान के लिए सुप्रीम कोर्ट का निर्णय अंतिम और सर्वमान्य होता है , उसी प्रकार धर्म से जुड़ी जिज्ञासाओं और विवादों के समाधान के लिए वेदों का निर्णय सर्वोपरि और अंतिम प्रमाण माना जाता है । जब भी किसी विषय पर वेद और किसी अन्य ग्रंथ के मध्य विरोधाभास या मतभेद उत्पन्न होता है , तो वेद ही सर्वमान्य होते हैं और उनका निर्णय ही अंतिम प्रमाण के रूप में स्वीकार किया जाता है ।

वैदिक शास्त्रों और वेद मंत्रों का गलत भाष्य (व्याख्या) और समय-समय पर उनमें हुई मिलावट (प्रक्षिप्तीकरण) ने सनातन धर्म की मौलिकता और सत्यता पर कई प्रश्न खड़े कर दिए हैं । इसके पीछे मुख्य कारण यह है कि वेदों का सही अर्थ समझने के लिए केवल संस्कृत भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं है , बल्कि उस विषय का भी गहन ज्ञान होना आवश्यक है , जिसमें वेद के मंत्रों का उपयोग किया गया है । यहां भाषा और विषय ज्ञान के महत्व को स्पष्ट करना जरूरी है । यदि किसी व्यक्ति को संस्कृत भाषा का अच्छा ज्ञान है , परंतु उसे जिस विषय पर वेद मंत्र आधारित है , उसकी सही समझ नहीं है (जैसे की भौतिकी , चिकित्सा , ज्योतिष आदि) तो वह वेदों के मंत्रों का सही अर्थ करने में विफल हो सकता है । यही समस्या समय-समय पर हमारे शास्त्रों के साथ हुई । कई विद्वानों ने संस्कृत भाषा में निपुणता प्राप्त तो कर ली , परंतु वेदों के उन विषयों को गहराई से नहीं समझ पाएं , जिनसे वे मंत्र जुड़े थे । इसके कारण कई स्थानों पर वेदों का गलत अर्थ और व्याख्या की गई , जिससे सनातन धर्म की शिक्षाओं को ठीक से समझने में बाधा उत्पन्न हुई ।

वेदों को समझने के लिए सिर्फ भाषा का ज्ञान पर्याप्त नहीं है । वेदों का अध्ययन करते समय वेदांग (शिक्षा , कल्प , व्याकरण , निरुक्त , छंद और

Edit with WPS Office

ज्योतिष) को जानना आवश्यक है । यदि कोई व्यक्ति बिना वेदांगो का अध्ययन किए वेदों का भाष्य करता है , तो वह मंत्रों का गलत अर्थ निकाल सकता है । वेदांग वेदों की गहरी समझ प्रदान करते हैं और उनके सही अर्थ तक पहुंचने के लिए मार्गदर्शन करते हैं । जो लोग सिर्फ भाषा की दृष्टि से वेदों को समझने का प्रयास करते हैं , वे अक्सर मंत्रों का अर्थ बदल देते हैं , जिससे उनका वास्तविक उद्देश्य और ज्ञान अनर्थ में बदल जाता है ।

यह पुस्तक उन सभी शंकाओं और प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करती है , जो सनातन वैदिक धर्म के सिद्धांतों , परंपराओं और विश्वासों के संदर्भ में उठती हैं । इस पुस्तक का उद्देश्य न केवल शास्त्रों के प्रमाण के आधार पर धार्मिक मान्यताओं का उत्तर देना , बल्कि तर्क और विज्ञान के दृष्टिकोण से भी सनातन धर्म की प्रासंगिकता और गहनता को समझाना है । सनातन धर्म की विशेषता यह है कि यह हमें एक खुला और विचारशील दृष्टिकोण प्रदान करता है , जहां तर्क और आस्था का समन्वय संभव है । यह धर्म सदा से मानव मस्तिष्क को प्रोत्साहित करता आया है कि वह केवल आंखें मूंदकर विश्वास न करें , बल्कि हर विषय को तर्क और बुद्धि से समझने का भी प्रयास करें । इसी दृष्टिकोण के आधार पर , यह पुस्तक सनातन धर्म के विभिन्न सिद्धांतों का विश्लेषण करती है और उन पर उठने वाले शंकाओं का समाधान प्रस्तुत करती है ।

पुस्तक में वेद , ब्राह्मण ग्रंथ , उपनिषद , गीता , और षडदर्शनों जैसे शास्त्रों से प्रमाण देकर धर्म के गूढ़ सिद्धांतों को स्पष्ट किया गया है । साथ ही , आधुनिक विज्ञान के साथ तुलनात्मक दृष्टिकोण रखते हुए , यहां सिद्ध किया गया है कि सनातन धर्म के सिद्धांत आज भी वैज्ञानिक दृष्टि से मान्य है और मानव जीवन के हर क्षेत्र में समावेशित हो सकते हैं ।

यह पुस्तक उन सभी पाठकों के लिए है जो सनातन धर्म के सिद्धांतों को तर्क और बुद्धि के आधार पर समझना चाहते हैं , जो अपने धार्मिक विश्वासों को आधुनिक संदर्भ में परखना चाहते हैं । इसके माध्यम से हम सभी एक नई दृष्टि प्राप्त करेंगे , जहां धर्म , विज्ञान और तर्क के समन्वय से जीवन के

Edit with WPS Office

महान प्रश्नों का उत्तर मिल सके । शंका समाधान की यह यात्रा आपको न केवल धर्म की गहराइयों में ले जाएगी , बल्कि आपको यह भी सिखाएगी कि तर्क , बुद्धि और शास्त्र कैसे एक साथ आकर मानव जीवन के रहस्यों को सुलझाने में सहायक हो सकते हैं ।

पाठकों से विनम्र अनुरोध है कि वे इस पुस्तक को खुले मन और तर्कशील दृष्टिकोण से पढ़े और उन शंकाओं को शांत करने का प्रयास करें जो उनके मन में वैदिक धर्म और आधुनिक विज्ञान के बीच सामंजस्य को लेकर उत्पन्न होती है । हमारा प्रयास यही है कि हम सभी वैदिक सनातन धर्म की महानता और वैज्ञानिकता को पुनः स्थापित कर सके और भविष्य की पीढ़ियों को इसका लाभ दे सकें ।

मुझे आशा है कि इस पुस्तक (ग्रंथों के निचोड़ द्वारा लिखी गई पीडीएफ) के माध्यम से आपको न केवल अपने शंकाओं का समाधान मिलेगा , बल्कि सनातन वैदिक धर्म की गहराई और वैज्ञानिकता का भी एक नया दृष्टिकोण प्राप्त होगा ।

______ सौरव कसाना आर्य (वैदिक विद्वान)

---

1. पहला पृष्ठ

[विधा और अविधा]

मानव योनि संसार की समस्त योनियों में सर्वश्रेष्ठ हैं। मानव जीवन में ही

Edit with WPS Office

परमात्मा का साक्षात्कार किया जा सकता है, अन्य किसी योनि में नहीं । मानव योनि के अलावा अन्य सभी योनियां केवल भोग योनियां है। केवल मनुष्य ही कर्म करके आध्यात्मिक उन्नति प्राप्त कर सकता है। इस संसार सागर को पार करने के लिए पाप कर्मों का क्षय होना और ज्ञान द्वारा पुण्य कर्म अर्जित करना आवश्यक है। जीवन में विद्या और अविद्या दोनों का महत्वपूर्ण स्थान है । परमात्मा की प्राप्ति का प्रयास विद्या है, जबकि जीवन के लिए भौतिक सुख सुविधाओं को प्राप्त करने का मार्ग अविधा है। इनमें से किसी एक की अपेक्षा दुख का कारण हो सकती है । भौतिकवाद और आध्यात्मिवाद दोनों को साथ लेकर चले और दोनों में आगे बढ़े । दोनों में से किसी एक को लेकर चलोगे तो निश्चित रूप से दुख प्राप्त होगा ।

भौतिक उन्नति पक्षी के एक पंख के समान है । पक्षी एक पंख से नहीं उड़ सकता । दूसरा पंख है आध्यात्मिक । जैसे पक्षी को उड़ाने के लिए दोनों पंखों की आवश्यकता है । वैसे ही **भौतिक** और **आध्यात्मिक** उन्नति से मानव सांसारिक सुख प्राप्त करता हुआ **भवसागर** से पार हो जाता है । अथर्ववेद में इस संसार की तुलना भारी पत्थरों वाली नदी से करते हुए कहा है______

अश्मन्वती रीयते रभध्यं वीरयध्वं प्र तरतर सखाय : ।
अंत्राजहीत ये असन्दुरेवा अनमीवानुतरेमामि वाजान् ।।
उतिष्ठता प्र तरता सखायोश्मुन्वती नदी स्यन्दत इयम् ।
अत्राजहीत ये असन्तशिवा : शिवान्त्योनानुत्मिमि वाजान् ।। (अथर्ववेद. 12/2/26 - 27)

भावार्थ______

यह संसार एक बड़ी पत्थरों वाली नदी है अर्थात यह काम क्रोध मोह और लोभ आदि नुकीले पत्थरों से भरी हुई नदी के समान है। इस नदी का वेग बड़ा भारी है। इसलिए इस नदी को पार करने के लिए सावधानी से वीरता युक्त संगठन करना चाहिए । इस तरह मिलाकर चलोगे तो पार हो सकोगे । आपस में फुट बढ़ाओगे तो इस नदी में बह जाओगे । जो चीज आपके पास अनावश्यक है अर्थात वासना रूपी भार को यही फेंक दो जब आप तैर कर पार हो जाओगे, तब वही उत्तम उत्तम चीजों को प्राप्त कर सकोगे । परंतु यदि अनावश्यक चीजों का भार अर्थात वासना रूपी भार अपने ऊपर

Edit with WPS Office

रखोगे तो उस भर के कारण ही डूब जाओगे । जीवन को सात्विक और पवित्र बनाकर आगे बढ़े तभी जीवन मुक्त होकर ईश्वर की शरण में जा सकोगे ।
ऋग्वेद में संसार सागर से पार होने के लिए मानव शरीर को नौका बताते हुए कहा है______

आ यद्रुहाव वरुणश्च नाव प्र यत्समुद्रमीयाव मध्यम् ।
अधि यदपां सुमिश्चाव प्र प्रेड्खईड्खयाव है शुभे कम् ।।

भावार्थ_______ (ऋग्वेद 7/88/3)
जब जीव इस शरीर रूपी नौका में आता है, उसी नौका में परमेश्वर भी चलाने वाला बैठता है । यह नौका संसार रूपी सागर में चलाई जाती है । आने वाले सुख-दुख रूपी तरंगों के कारण यह शरीर रूपी नौका भी उन्नत और अवनत होती रहती है, पर यह अवस्था मनुष्य को कल्याण और आनंद प्रदान करने वाली होती है।

वसिष्ठ ह वरुणो नाव्याधादृषि चकार स्वपा महोभि :।
स्तोतार विप्र सुदिनत्वे अहां यात्रु धावस्ततनन्यादुषास :।।

भावार्थ_______। (ऋग्वेद..7/88/4)
यह शरीर रूपी नौका ईश्वर ने बनाई, उस पर साधक को बैठाया और उसे ज्ञानी तथा कर्म का कर्ता बनाया । साथ ही काल का निर्माण करके शुभ दिनों का सृजन किया ताकि इन शुभ दिनों में उत्तम कार्य करके यह जीव उत्तम स्थान पर पहुंचे ।
वेद के इन मंत्रों से स्पष्ट हो रहा है कि जिस परमात्मा ने हमारा शरीर बनाया है, वह जिसने इस संसार को, ब्रह्मांड को और इस अनंन्त विश्व को उत्पन्न किया है, वह हमारे अंदर बैठा हुआ है । किंतु हम उसे नहीं जानते । कमाल है यह, घर का स्वामी घर में बैठा है और उसे हम देख नहीं पाते । वह परमात्मा निराकार है । उसका कोई रूप आकार नहीं है । वह आंखों से दिखाई नहीं देता है, कानों से सुनाई नहीं देता, हाथों से छुआ नहीं जा सकता, नाक से सूंघा नहीं जा सकता, । परंतु वह इस संसार के कण-कण में व्याप्त है । जिस प्रकार लोहे के एक गोले को अग्नि में तपाकर लाल कर देने पर उस गोले के प्रत्येक स्थान मैं अग्नि व्याप्त है क्योंकि गोले के किसी भी

Edit with WPS Office

स्थान पर हाथ लगाने से हाथ जल जाएगा । उसे अग्नि का गोला भी कह सकते हैं और लोहे का भी । इसी प्रकार संसार के प्रत्येक कण-कण में ईश्वर को सर्वव्यापक मानने से मानव में दो बातें आ जाती है____

- 1. [निष्पाप होना]

मनुष्य पाप आचरण के लिए सदैव एकांत की खोज किया करता है । चोर इसलिए रात्रि को सफलता का साधन समझता है, क्योंकि उसमें एक प्रकार के एकांत की अधिक संभावना होती है, जो ऐसे दुष्ट कर्मों के लिए आवश्यक है । परंतु ईश्वर को सर्वव्यापक मानने से पापाचरण के लिए एकांत स्थान नहीं मिल सकता । इस संबंध में कवि ने कहा है_____
एक बार एक अध्यापक ने अपने शिष्यों की परीक्षा लेने के उद्देश्य से अपने सभी शिष्यों से कहा कि धनाभाव के कारण मुझे बहुत परेशानी हो रही है। अतः आप सभी अपने-अपने घरों से कुछ ना कुछ वस्तु लाकर मुझे दे, किंतु वस्तु के लाने में एक शर्त होगी कि उस वस्तु को लेते समय कोई देखे नहीं । अगले दिन सभी शिष्य कोई न कोई वस्तु लेकर आए । किंतु एक छात्र ऐसा था जो कुछ भी नहीं लाया । अध्यापक ने उससे पूछा की क्या तुम्हारे घर में कोई भी वस्तु नहीं थी ? उस शिष्य ने उत्तर देते हुए कहा कि हमारे घर में तो बहुत सारी वस्तुएं हैं किंतु जब भी मैं किसी वस्तु को उठाने की कोशिश करता तो और कोई नहीं पर ईश्वर उसे देख रहा था । इसलिए है गुरु जी ! आपकी शर्त के अनुसार में किसी वस्तु को लाने में असमर्थ रहा । गुरुजी ने उस छात्र को धन्यवाद देते हुए कहा कि इस छात्र ने मेरे द्वारा पढ़ाए गए पाठ पर अमल किया है ।
आजकल हम समाज में देखते हैं कि ईश्वर को सर्वव्यापक तो अधिकतर लोग मानते हैं, परंतु उस पर दृढ़ता के साथ पालन नहीं करते । अतः इस बात की आवश्यकता है कि ईश्वर की सर्वव्यापकता को मानकर उस पर दृढ़ता से पालन करके पापाचरण से निवृत होकर अपना सुधार करें ।

- 2. [प्राणी मात्र से प्रेम की भावना उत्पन्न होना]

मानव ईश्वर को सर्वव्यापक मान्य तो वह प्रत्येक प्राणी में ईश्वर की सत्ता

Edit with WPS Office

और उसके व्यापकत्व गुण को स्वीकार करेगा । जब इस प्रकार प्रत्येक प्राणी में चाहे वह अछूत हो या कोई अन्य हो ईश्वर का होना मानेगा । तब उससे घृणा किस प्रकार कर सकता है । घृणा का अभाव ही प्रेम का द्वार है । एक कवि ने कहा है____

फिर महान बन मनुष्य, फिर महान बन ।
मन मिला अपार प्रेम से भरा तुझे,
इसलिए की प्यास जीव मात्र की बुझे ।
विश्व है तृषित, तू न कृपण बन,
फिर महान बन मनुष्य, फिर महान बन ।।

जब अबोध शिशु रो-रोकर मां की रट लगाता है, तब मां सभी कामों को छोड़कर दौड़ी चली आती है और बालक को गोद में उठा लेती है । वह यह नहीं देखती की बालक गंदा तो नहीं है । भगवान तो माताओं की भी माता है । यदि सच्चे हृदय से प्रार्थना करें, तो वे दौड़े चले आते हैं । शर्त यही है कि शुद्ध हृदय से प्रार्थना करनी चाहिए । प्राणी मात्र के प्रति प्रेम पनपने लगे, तो समझो की भक्ति पथ पर बढ़ने लगे हो । जिसने अपने दुर्गुणों को त्याग कर खुद को भगवान के सामने अर्पित कर दिया, वह भगवान के समान पवित्र बन जाता है। किसी ने कहा है___

प्रेम परमात्मा की ओर ले जाता है और स्वार्थ संसार के बंधन में फंसाता है । प्रेम प्रत्येक वस्तु को यथार्थ रूप में दिखाता है और स्वार्थ में मनुष्य अंधा हो जाता है । प्रेम दूसरे के सुख-दुख का सहचारी है और स्वार्थ की दृष्टि में यह बेकारी है । प्रेम प्रभु की भक्ति का पुजारी है स्वार्थ के विचार में यह एक बीमारी है।

एक बार सत्संग के समय एक संन्त से किसी गृहस्थी ने प्रश्न किया, 'महाराज, गृहस्थी में लगे रहने के कारण भक्ति और भजन में मन नहीं रम पाता । गृहस्थी के प्रपंच में रहकर भी ईश्वर की कृपा प्राप्ति का सरल साधन बताने की कृपया करें ।

संन्त ने कहा, बहुत सरल साधन है । हृदय से राग द्वेष घृणा और मेरे तेरे की भावना निकालकर सभी के प्रति प्रेम के भाव मन में पैदा करने का अभ्यास करो । जो सबसे प्रेम करने लगता है उसके घर में स्वत: ईश्वर का वास हो जाता है । असंयमित भोग से इंद्रियों दूषित हो जाती है, उनका क्षय होता है

Edit with WPS Office

। जो इंद्रियों का सत्कर्मों की ओर उन्मुख करके भक्ति करता है, उसके तमाम विकार नष्ट हो जाते हैं। जिसका हृदय किसी दुखी व्यक्ति के दुख में पिघलता है, उसके हृदय में प्रभु प्रकट होते हैं। जिसके मन में प्रेम और करुणा है, वहां भगवान का वास होता है।

- **[संसार सागर को पार करने का पुल]**

छान्दोग्य उपनिषद् में ब्रह्म को संसार- सागर से पार करने के लिए पुल कहा गया है। वह (ईश्वर) इन लोकों के अविनाश अर्थात रक्षा के लिए पुल होकर उन्हें धारण करता है। इस ईश्वर रूपी पुल को दिन- रात नहीं लांघने और न बुढ़ापा, न मौत , न शोक, न अच्छे और न बुरे कर्म लांघ सकते हैं।
इस ब्रह्म लोक प्राप्त जीव से समस्त पाप निवृत हो जाते हैं, क्योंकि यह ब्रह्म लोक पाप से रहित है। इस सेतु को पार कर अंधा समाखा हो जाता है, घायल घाव रहित हो जाता है, रोगी हुआ तो निरोग हो जाता है। इसलिए इस सेतु को पार कर रात भी दिन हो जाती है, क्योंकि यह ब्रह्म लोक सदैव प्रकाशित ही है, इसलिए जो मुमुक्षु इस ब्रह्मलोक को प्राप्त करते हैं, वे समस्त दुखों से छूट जाते हैं और उनका समस्त लोक लोकान्तरों में स्वेच्छाचार होता है।
यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने और निष्काम कर्म करने से ही मनुष्य ब्रह्म लोक को प्राप्त किया करता है। उत्कृष्ट कर्म और ज्ञान से मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है और मोक्ष में ब्रह्म की प्राप्ति से आनंद, अमर जीवन और प्रकाशमय स्थान की प्राप्ति होती है।

- **[प्राणी का संसार जाल में बद्ध होना उससे निकलने के उपाय]**

श्वेताश्वतरोपनिषद मैं इस संसार को परमात्मा का फैलाया हुआ जाल बताया है। जैसे जाल में फेसी हुई मछलियां निकलना चाहते हुए भी नहीं निकल सकती, फड़फड़ाकर उसी में मर जाती है। वैसे ही संसार के अनेक दुखों में फंसे हुए प्राणी संसार जाल से निकल नहीं पाते। जैसे मछली पकड़ने वाले मछेरे आदि जाल वाले स्वयं जाल में नहीं बंधते किंतु उस जाल से मछलियों

Edit with WPS Office

को ही पकड़ते हैं । वैसे ही ईश्वर भी संसार रूपी जाल में स्वयं बद्ध नहीं होता और जो कोई इस जाल के स्वामी से मित्रता और मेल विलाप करता है, उसको वह जाल में नहीं बांधता किंतु स्वय बंधे हुए को भी अपनी कृपा दृष्टि से अवश्य निकाल लेता है । ऐसा मानकर दुखों से छूटने की इच्छा रखने वाले मनुष्य को उचित है कि संसार रूपी जाल के स्वामी परमपिता परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए विशेष प्रयत्न करें ।

- अब प्रश्न उठता है कि परमात्मा की कृपा प्राप्त करने का उपाय क्या है ? इस प्रश्न का समाधान ऋग्वेद का यह मंत्र करता है । _____ (ऋग्वेद. 1/4/7)

एमाशुमाशवेभर यज्ञश्रियं नृमादनम ।
पतयन्मन्दयत् सखम् ।

भावार्थ______ ईश्वर पुरुषार्थी मनुष्य पर कृपा करता है , आलस्य करने वाले पर नहीं , क्योंकि जब तक मनुष्य ठीक-ठीक पुरुषार्थ नहीं करता तब तक ईश्वर की कृपा और अपने किए हुए कर्मों से प्राप्त हुए पदार्थों की रक्षा करने में समर्थ कभी नहीं हो सकता । इसलिए मनुष्य को पुरुषार्थी होकर ईश्वर की कृपा का भागी होना चाहिए ।

ईश्वर पुरुषार्थी मनुष्य पर ही कृपा करता है । इस पर कुछ लोगों को संदेह हो जाता है की चोर डकैत आदि भी पुरुषार्थ करते हैं, तो क्या ईश्वर इन पर भी कृपया करता है ? इसका उत्तर यह है कि नहीं, ईश्वर ऐसे मनुष्यों पर कृपा नहीं करता । इस संबंध में यजुर्वेद का निम्न मंत्र स्थिति का पूर्ण रूप स्पष्टीकरण कर रहा है_______

स्वाड़कृतोसि विश्वेंभ्यइन्द्रिभ्यो दिव्येभ्य : पार्थिवेभ्यो
मनस्त्वाष्टु स्वाहा त्वां सुभव सूर्योय देवेभ्यस्त्वा
मरीचिपेभ्यउदानायत्वा ।। (यजुर्वेद. 7/6)

भावार्थ_____ मनुष्य जब तक श्रेष्ठाचार वाला नहीं होता, तब तक ईश्वर भी उसको स्वीकार नहीं करता । जब तक जिसको ईश्वर स्वीकार नहीं करता, तब तक उसका पूरा-पूरा आत्मबल नहीं हो सकता और जब तक आत्मबल नहीं बढ़ता, तब तक उसको अत्यंत सुख भी नहीं होता।

इडाऽएहादिऽएहि काम्याऽएत ।

Edit with WPS Office

मयि वः कामधरणं भूयात् ।। (यजुर्वेद. 3/27)
भावार्थ______ मनुष्यों को उत्तम उत्तम पदार्थों की कामना निरन्तर करनी तथा उनकी प्रति के लिए परमेश्वर की प्रार्थना और सदा पुरुषार्थ करना चाहिए । कोई भी मनुष्य अच्छी या बुरी कामना के बिना क्षणभर में स्थित होने को समर्थ नहीं हो सकता । इससे सब मनुष्य को अधर्मयुक्त व्यवहारों की कामना को छोड़कर धर्म युक्त व्यवहारों की जितनी इच्छा बढ़ सके, उतनी बढ़ानी चाहिए ।

- **[पदोन्नति का आधार स्तंभ]**

किसी ने सच कहा है कि वर्ष भर सफलता, आपके प्रति मास की सफलता पर निर्भर करती है । प्रतिमास की सफलता आपके प्रतिदिन की सफलता पर निर्भर करती है । आपके प्रतिदिन की सफलता आपके प्रति घंटे की सफलता पर निर्भर करती है और आपका हर सफल घंटा आपका परिश्रम एवं सदाचारी की आदत पर निर्भर करता है । आपकी यह सफल आदत आपकी उन्नति या पदोन्नति का आधार स्तंभ है । ईसा मसीह अपने उपदेश में कहते हैं–आलसी मनुष्य अपने लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंच पाता, किंतु कठोर परिश्रम करने वाला, अपने प्रत्येक क्षण का सार्थक उपयोग करने वाला कभी अभावग्रस्त नहीं रहता ।

- **[ईश्वर की कृपा प्राप्ति के लिए पात्र होना]**

एक बार संत ज्ञानेश्वर जी धार्मिक प्रवचन करते समय कह रहे थे कि ईश्वर की कृपा प्राप्ति के लिए पात्र होना जरूरी है । सभा में उपस्थित एक महिला खड़ी होकर कहने लगी कि ईश्वर की कृपा प्राप्त करने के लिए पात्रता की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए क्योंकि ईश्वर तो सबको समान दृष्टि से देखता है । इस पर संत जी ने कहा कि आप अब बैठ जाइए । आपकी शंका का समाधान कर दिया जाएगा । सभा के समाप्त होने के बाद संत जी ने एक साधारण आदमी को उस महिला के पास यह कह कर भेजा कि तुम उस महिला के घर जाकर उससे यह कहना कि मुझे कुछ रूपयों की

Edit with WPS Office

आवश्यकता है । अतः यदि आप अपना कोई जेवर मुझे दे दो तो मैं उसे गिरवी रखकर अपना कार्य पूरा कर लूंगा और एक मास के बाद आपका जेवर आपको वापिस कर दूंगा । वह व्यक्ति उस महिला के घर गया और संत जी के निर्देशानुसार उससे कहा, इस पर महिला क्रोधित हो गई और उसे धमका कर घर से बाहर निकाल दिया । उस व्यक्ति ने वापिस आकर संत जी को पूरा विवरण कह सुनाया । अगले दिन संत जी उस महिला के घर गए और कहने लगे कि मुझे कुछ रूपयों की अति आवश्यकता है । अतः यदि आप अपने जेवर मुझे दे दो तो मैं एक मास के बाद आपको वापिस कर दूंगा । उस महिला ने तुरंत अपने जेवर लाकर संत जी को दे दिए और जलपान आदि द्वारा संत जी का यथोचित स्वागत भी किया । जेवर लेने के बाद संत जी ने ने कहा कि आपके कल के प्रश्न का उत्तर मिल गया । महिला ने कहा , मैं समझी नहीं । इस पर संत जी ने समझाते हुए कहा कि जब एक सांसारिक व्यक्ति भी किसी वस्तु को दूसरों को देते समय पात्रता देखता है तो ईश्वर को भी अपनी कृपा के लिए पात्रता अवश्य देखनी चाहिए और यह कहकर संत जी ने उस महिला के जेवर वापिस कर दिए ।

- **[मानव शरीर की रथ से तुलना]**

कठोपनिषद में शरीर को एक रथ, आत्मा को संवार, बुद्धि को सारथी, मन को लगाम , इंद्रियों को घोड़े और उन इंद्रियों के शब्द, स्पर्श आदि को मार्ग कहा है । कोई रथ जिसमें घोड़े जुते हो, किस प्रकार अच्छा काम दे सकता है ? जब सवार की आज्ञा मानने वाला रथवान हो और रथवान के कब्जे लगाम और घोड़े लगाम के इशारे पर चलने वाले हो और घोड़े जिस सड़क पर चलते हैं। वह अच्छी और निर्दिष्ट स्थान को ले जाने वाली हो ।

ठीक ऐसा ही एक रथ मनुष्य का शरीर भी है । इस रथ को भी ऐसा ही होना चाहिए की आत्मा (सवार) के अधीन बुद्धि (रथवान), बुद्धि के अधीन मन (लगाम) और मन के अधिकार में इंद्रियां (घोड़े) हो । तभी यह रथ धर्म के मार्ग पर चलकर सवार को निर्दिष्ट स्थान पर पहुंचा देने का कारण बन सकता है । यह शरीर रूपी रथ उपयुक्त भांति काम दे सके, इसके लिए आवश्यक है की आत्मा रूपी सवार (मानव) सावधान हो । यदि वह ज्ञानी है

Edit with WPS Office

तो स्वयं न तो मां के पीछे चलेगा और नहीं इंद्रियों को दुष्ट घोड़ो की तरह बेकाबू होने देगा।

- शरीर को रथ कहने का अलंकार अथर्ववेद में भी आया है । वहां कहां गया है____
- '**आरोह इमम अमृत रथम ।**

इस शरीर रूपी रथ पर जो अमृत और सुख है, चढ़ो । शरीर (मनुष्य) योनि प्रवाह से नित्य हैं, इसलिए उसे अमृत कहना ठीक है । दूसरे विशेषता जो सुख है, बड़े महत्व का है । सुख शब्द के अर्थ– सु=अच्छी +खम्=इंद्रियां अर्थात शरीर रूपी रथ कैसा होना चाहिए । इस को वेद ने कह दिया कि अच्छी इंद्रियों वाला, तभी उससे मुमुक्षु **अमरता=मोक्ष** और सुख (आनंद) प्राप्त कर सकता है ।

वेद और उपनिषदों में इस संसार को सागर, नदी आदि की उपमा देकर इसको पार करने पर ही मानव जीवन की सफलता बतलाई गई है ।

श्री राम ने राज्याभिषेक के बाद एक बार अपने गुरुदेव ऋषि वशिष्ठ के सानिध्य में अयोध्या वासियों की एक गोष्ठी आयोजित की । उसमें उन्होंने मानव जन्म को सफल बनाने पर बल देते हुए सभी को धर्म युक्त पुरुषार्थ और सदाचार का पालन करने की प्रेरणा दी । श्री राम ने कहा कि धर्म शास्त्रों में कहा गया है की जो व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षण को सत्कर्मों में नहीं लगाता, वह अन्त में घोर दुख पता है ।

यजुर्वेद में कहा गया है कि जो मनुष्य पुरुषार्थी, सदाचारी ईश्वर का उपासक है, वह ही श्रेष्ठ ज्ञान उत्तम धन और सत्यकामनाओं को प्राप्त होता है और नहीं । यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि वेद में पहले पुरुषार्थ उसके बाद सदाचार और अंत में उपासना की बात कही गई है । इससे प्रकट हो रहा है कि पुरुषार्थ और सदाचार के बिना उपासना सफल नहीं हो सकती । इस संबंध में **महर्षि याज्ञवल्क्य** ने कहा है_____

"केवल पुस्तकीय ज्ञान से सच्चा विवेक जागृत नहीं किया जा सकता । धर्म ग्रंथो के अध्ययन के साथ-साथ उसमें बतलाई गई बातों को जीवन में उतरने से ही उनसे लाभान्वित हुआ जा सकता है । जिस प्रकार अपनी आंखें और दीपक के प्रकाश से ही घोर अंधकार का रास्ता पार किया जा सकता है , इस प्रकार धर्म ग्रंथो की बातों को मन, कर्म और वचन से पालन

Edit with WPS Office

करने वाला ही है अविवेक रुपी संसार सागर को पार कर लक्ष्य तक पहुंच सकता है ।

अत: अपने लक्ष्य पर पहुंचकर जीवन को सफल बनाने के लिए क्रमश: पुरुषार्थ, सदाचार और उपासना का वर्णन आगे किया जाता है । (दूसरे पृष्ठ में)

• 2. दुसरा पृष्ठ

• ____ पुरुषार्थ ____

• पुरुषार्थ का महत्व_____

पुरुषार्थ का शाब्दिक अर्थ है परिश्रम व मेहनत । मानव को न केवल अपना जीवन सफल करने के लिए अपितु साधारण रूप से जीवन जीने के लिए भी पुरुषार्थ करना अति आवश्यक है । सामने रखे हुए स्वादिष्ट भोजन का एक ग्रास भी बिना परिश्रम किए अपने मुख में नहीं ले सकते । इस संबंध में मुझे एक राजा की कहानी याद आती है ।

एक राजा ने अपने धर्माचार्यों और विद्वानों को बुलाकर कहा कि आप लोग ऐसी बातें लिखकर लाओ जो भविष्य में आने वाली पीढ़ियों

Edit with WPS Office

को भी शिक्षा देती रहे । मैं उन्हें अपने महल में सुरक्षित रखवा दूंगा । राजा की आज्ञा पाकर सभी विद्वान एक-एक ग्रंथ लिखकर ले आए । राजा ने ग्रंथों को देखकर कहा कि यह तो बहुत बड़े हैं । इतना समय लोगों के पास नहीं होगा । अतः इन्हें और छोटा करके लाओ । इस पर सभी ने मिलकर एक ग्रंथ की रचना की । राजा ने फिर यही कहा कि इसे और छोटा करके लाओ । फिर सभी ने मिलकर एक पृष्ठ पर लिखा और राजा के पास गए । राजा ने फिर वही कहा कि इसे और छोटा करो । जब तक वे सब एक वाक्य बनाकर नहीं लाए तब तक राजा यही कहता रहा कि इसे और छोटा करो । वह एक वाक्य है__

दुनिया में परिश्रम के बिना मुफ्त में कुछ नहीं मिलता । वेदों एवं अन्य धर्म ग्रंथो में पुरुषार्थ को बहुत महत्व दिया गया है । पुरुषार्थ के संबंध में वेदों के कुछ प्रमुख मंत्र इस प्रकार हैं____

- **[पुरुषार्थ के संबंध में वेदों का कथन]**

- **______ऋग्वेद______**

1 मंत्र.... (ऋग्वेद . 1/9/7)

भावार्थ______ केवल ईश्वर की प्रार्थना से ही सुख नहीं मिल सकता, किंतु उसकी प्राप्ति के लिए पूर्ण पुरुषार्थ करना आवश्यक है ।

2 मंत्र.... (ऋग्वेद . 1/1/5)

भावार्थ________ जो जो पदार्थ हम ईश्वर से प्रार्थना के साथ चाहते हैं, सो सो हमारे अत्यंत पुरुषार्थ के द्वारा ही प्राप्त होने योग्य है, केवल प्रार्थना मंत्र से नहीं ।

3 मंत्र.... (ऋग्वेद . 1/9/15)

भावार्थ________ प्रतिदिन निरंतर पुरुषार्थ के बिना मनुष्य को ऐश्वर्या की प्राप्ति नहीं होती । इससे उनको चाहिए कि ऐसा पुरुषार्थ नित्य करें जिससे ऐश्वर्या बड़े ।

Edit with WPS Office

4 मंत्र.... (ऋग्वेद. 1/110/4)

भावार्थ________ जो मनुष्य प्रत्येक क्षण अच्छे-अच्छे पुरुषार्थ करते हैं, वे संसार से लेकर मोक्ष पर्यन्त पदार्थों को प्राप्त होकर सुखी होते हैं । किंतु आलसी मनुष्य कभी सुखों को नहीं प्राप्त हो सकते ।

5 मंत्र.... (ऋग्वेद. 5/34/5)

भावार्थ________ जो आलसी युक्त जनपुरुषार्थ को नहीं करते, वे अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त नहीं होते ।

6 मंत्र.... (ऋग्वेद. 5/41/14)

भावार्थ_________ हे मनुष्यों ! आप लोग धर्म युक्त कर्मों और श्रेष्ठ गुणों को ग्रहण कर के अपनी कामनाओं और वाणी को सुशोभित करो । जैसे जल से नदियां और समुद्र बढ़ाते हैं, वैसे ही धर्म युक्त पुरुषार्थ से मनुष्य बढ़ते हैं ।

7 मंत्र.... (ऋग्वेद. 6/11/6)

भावार्थ________ हे मनुष्यों ! जैसे अग्नि ईंधन से बढ़ता है, वैसे आप लोग पुरुषार्थ से बढ़िये और जैसे मनुष्य शत्रु का शीघ्र त्याग करते हैं, वैसे अन्याय आचरण रूप पाप का शीघ्र त्याग करो ।

- **____________यजुर्वेद____________**

8 मंत्र.... (यजुर्वेद. 10/13)

भावार्थ________ जो पुरुष आलस्य को छोड़कर सब समय में पुरुषार्थ का अनुष्ठान करते हैं, वे अच्छे फलों को भोंगते हैं ।

9 मंत्र.... (यजुर्वेद. 12/44)

भावार्थ________ जो मनुष्य प्रयत्न के साथ सब विधाओं को पढ़

Edit with WPS Office

और पढ़ाकर बारंबार सत्संग करते हैं। कुपथ्य और विषय के त्याग से शरीर तथा आत्मा के रोग को हटा के नित्य पुरुषार्थ का अनुष्ठान करते हैं, उन्हीं के संकल्प सिद्ध होते हैं, दूसरों के नहीं ।

10 मंत्र.... (यजुर्वेद. 15/21)

भावार्थ________ जैसे विद्या और युक्ति से सेवन किया अग्नि बहुत अन्न धन प्राप्त कराता है, वैसे ही सेवन किया पुरुषार्थ मनुष्यों को ऐश्वर्यावान कर देता है ।

11 मंत्र.... (यजुर्वेद. 21/25)

भावार्थ________ जो मनुष्य लोग विद्वानों के संग से काल की स्थूल, सूक्ष्म गति को जानकर एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गंवाते, वे नानाविध ऐश्वर्या को प्राप्त होते हैं ।

- ____________**अथर्ववेद**____________

12 मंत्र.... (अथर्ववेद. 7/50/8)

भावार्थ________ पुरुषार्थ मेरे दाएं हाथ मैं है, और मेरे बाएं हाथ में विजय है ।

13 मंत्र.... (अथर्ववेद. 13/2/11)

भावार्थ_______ संसार रूपी घर के छोटे बड़े (चंद्र और सूर्य) बालक अपनी शक्ति से खेलते हुए समुद्र तक पुरुषार्थ करते हुए जाते हैं । उनमें से एक जगत को प्रकाशित करता है और दूसरा ऋतुओं को बनाता है । इसी तरह सब गृहस्तियों के पुत्र अपने पुरुषार्थ से जगत को प्रकाशित करें ।

- **[पुरुषार्थ के संबंध में गीता का कथन]**

Edit with WPS Office

गीता.... तीसरा अध्याय पांचवा श्लोक

भावार्थ_____ कोई भी मनुष्य क्षण भर भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता ।प्रकृति के गुण सभी मनुष्यों को विवश कर उनसे कोई न कोई कार्य कराते रहते हैं ।

गीता हमें याद दिलाती है कि मनुष्य कर्म करने के क्षेत्र से भगाना चाहे तो भी नहीं भाग सकता । प्रकृति के गुण अन्य सभी प्राणियों और पदार्थों की तरह मनुष्य भी सत्व रज और तम इन तीनों गुणों से बना है । और यह तीनों गुण मनुष्य को प्रतिक्षण कुछ ना कुछ कर्म कराते ही रहते हैं ।

गीता.... तीसरा अध्याय आठवां श्लोक

भावार्थ______ श्री कृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं– हे अर्जुन ! तू अपने लिए नियत कर्म को अवश्य कर, क्योंकि कर्म न करने से कर्म करना श्रेष्ठ है । फिर कर्म न करने से तेरे शरीर की यात्रा भी तो सिद्ध नहीं हो सकती ।

गीता का स्पष्ट संदेश है कि यदि कर्म करने और कर्म न करने के बीच चुनाव करना है तो हर दशा में कर्म करना श्रेष्ठ है । मनुष्य को अपना शरीर बनाए रखने के लिए कुछ न कुछ कर्म करना ही पड़ेगा । प्रत्येक मनुष्य के अपने परिवार और समाज के प्रति और स्वयं के प्रति कुछ कर्म निश्चित है । उन नियत कर्मों को करते हुए ही मनुष्य अपने जीवन के लक्ष्य की प्रगति कर सकता है ।

गीता.... दूसरा अध्याय 49 वा श्लोक

भावार्थ_____ तेरा अधिकार केवल कर्म में है, उसके फल में नहीं । इसलिए फल की इच्छा रखकर कर्म मत कर, किंतु तू कर्म करना भी मत छोड़ ।

कर्म करना तो हमारे हाथ में है, परंतु कर्मों का फल उन शक्तियों पर निर्भर है जिन पर हमारा कोई बस नहीं चल सकता । अपनी ओर से पूरी निष्ठा कुशलता और परिश्रम के साथ कर्म करने के बाद यदि हमें अपनी इच्छा अनुसार फल नहीं मिलता तो हमें कर्म करना छोड़ नहीं देना चाहिए अपितु परिवर्तित स्थिति के अनुसार तुरंत नया कार्य परिश्रम पूर्वक आरंभ

Edit with WPS Office

कर देना चाहिए ।

• [पुरुषार्थ के संबंध में महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में कहा है]

मंत्र____ सोत्साहस्य हि लोकेषु न किंचदपि दुर्लभम् ।
भावार्थ_____ दुनिया उत्साह संपन्न पुरुष के लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है । उत्साह पूर्वक जो मनुष्य परिश्रम करता है, सफलता उसके चरण चूमती है । वह हर क्षेत्र में आगे बढ़ता हुआ जीवन को सफल बनाता है । उत्साह के संबंध में ऋग्वेद में कहा गया है___

मंत्र_______ ऋग्वेद . 10/83/1
भावार्थ______ जिसके पास उत्साह होता है , उसको सब प्रकार का बल और शास्त्रास्त्रो का सामर्थ्य प्राप्त होता है और हर एक प्रकार के शत्रु को वश में कर सकता है ।

मंत्र______ ऋग्वेद . 10/83/5
भावार्थ______ जिसके पास उत्साह नहीं होता वह कर्म शक्ति से हीन हो जाता है । इसलिए हर एक मनुष्य को उचित है कि वह अपने मन में उत्साह धारण करें और बलवान बने ।

• [उत्साह के संबंध में अथर्ववेद के मंत्र]

मंत्र______ अथर्ववेद . 4/31/4
भावार्थ______ स्वभावत : उत्साही पुरुष बहुतों में एकाध होता है और इसलिए सब उसका सत्कार करते हैं । शिक्षा द्वारा ऐसा प्रबंध करना चाहिए कि राष्ट्र का हर एक प्राणी उत्साही हो जाए और जीवन- युद्ध में अपना कार्य करने में समर्थ हो जाए । उत्साह से प्रकाश बढ़ता है और विजय की घोषणा करने का सामर्थ्य प्राप्त होता है ।

मंत्र_______ अथर्ववेद . 4/31/5

Edit with WPS Office

भावार्थ______ उत्साह ही इंद्र के समान विजय करने वाला है । उत्साह कभी निराशा के शब्द नहीं बुलवाता । इसलिए हमारे अंत:करण में उत्साह का स्वामित्व स्थिर होवे । हम उन महापुरुषों का नाम लेते हैं जिनके अंन्त : कारण हमें उत्साह का स्रोत बहता रहता है ।

- **कौन मूर्ख व कौन प्रशंसा का पात्र..?**

यश्च दिष्टपरो लोके यश्चापि हठवादिक ।
उभावपि शठावेतौ कर्मबुद्धि प्रशस्यते ।।
(महाभारत वनपर्व. 32/13)

संसार में जो केवल भाग्य के भरोसे रहकर कर्म नहीं करता अर्थात जो ऐसा मानता है कि पहले जो कर्म कियें हैं उनके अनुसार फल अपने- आप ही प्राप्त होगा , तथा जो हठवादी है - बिना किसी युक्ति के हठपूर्वक यह मानता है कि कर्म करना अनावश्यक है , जो कुछ मिलना होगा अपने- आप मिल जायेगा , -- वे दोनों ही मूर्ख है । जिसकी बुद्धि कर्म **(पुरुषार्थ)** में रुचि रखती है वहीं प्रशंसा का पात्र है ।

- **[पुरुषार्थ के संबंध में विद्वानों और महापुरुषों के विचार]**

सच्ची लगन, कठोर परिश्रम और अनुशासन के साथ कुशलता हो, तो कोई काम असंभव नहीं है ।____**महात्मा गांधी**
जिसके पास धैर्य है और परिश्रम से नहीं घबराता सफलता उसकी दासी है ।____ **महर्षि दयानंद सरस्वती**
ईमानदारी के साथ कठोर परिश्रम का कोई विकल्प नहीं है ।_____ **डॉक्टर अब्दुल कलाम (पूर्व राष्ट्रपति भारत)**
पुरुषार्थी मनुष्य के पास दरिद्रता नहीं आती ।_____ **आचार्य चाणक्य**
कुछ करने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति के लिए इस दुनिया में कुछ भी असंभव नहीं है ।_____ **अब्राहम लिंकन (पूर्व राष्ट्रपति अमेरिका)**
बाधाओं से रुके नहीं, प्रलोभनों से झुके नहीं, निन्दाओं से विचलित न

Edit with WPS Office

होकर, तब तक आगे बढ़ते रहना है, जब तक ध्येय न मिल जाए ।_____ **स्वामी रामदेव**

मनुष्य का मन जिस चीज के बारे में कल्पना कर सकता है उसे परिश्रम करके प्राप्त भी किया जा सकता है । _____ **नेपोलियन हिल**

जितना ज्यादा मेहनत करोगे उतना ही किस्मत साथ देगी । _____ **हेनरी फोर्ड**

कोई भी संचित कर्म फल प्रद नहीं होता, जब तक वर्तमान का कर्म उसमें सहायक ना हो, यथा दीपशलाका में रसायन विधि से अग्नि तो विद्यमान है, केवल रगड़ वर्तमान पुरुषार्थ है, जिससे वह दीप्त हो जाती है । _____ **स्वामी सर्वदानन्द**

वह कायर है जो कहता है, यह किस्मत है' । वह मजबूत है जो खड़ा है और कहता है, मैं परिश्रम से अपना भाग्य खुद बनाऊंगा । _____ **स्वामी विवेकानन्द**

धन्य है वह पुरुष जो काम करने से कभी पीछे नहीं हटते । भाग्यलक्ष्मी उनके घर की राह पूछता हुई आती है।____ **सन्त तिरुवल्लुवर**

समर्थ गुरु रामदास लिखते हैं, " प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह कर्म निष्ट करें और हताशा, निराशा व आलस्य को पास न फटकने दे । जो आलसी और निद्रालु , वह अभागा है । नित्य मेहनत पूर्वक सत्कर्म करते रहना, सेवा परोपकार में रत रहना ही किसी भी मानव का सच्चा धर्म है । वह अपने गृहस्थ शिष्यों को उपदेश दिया करते थे, न्याय पूर्वक परिश्रम से धनार्जन करो, जो अभावग्रस्त है , उनकी मदद करो ।

• कर्मों का फल भोगना पड़ेगा : _____

एक बार एक जिज्ञासु ने आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी से पूछा , क्या ईश्वर अपने भक्तों के पूर्व मे किए हुए पापों को क्षमा कर देते हैं ?

स्वामी जी ने उत्तर दिया , कदापि नहीं ! ईश्वर न्यायकारी है । यदि वह पाप क्षमा करेंगे , तो न्यायकारी कैसे रह जायेंगे ? यदि इस धारणा को

Edit with WPS Office

स्वीकार कर लिया जाए कि ईश्वर भक्ति से प्रसन्न होकर अपने भक्तों के पाप कर्मों को क्षमा कर देंगे, तो मानव स्वच्छन्द पाप कर्मों में लगा रहेगा । जैसे राजा अगर अपराधियों के अपराध क्षमा करने लगे, तो अपराधी स्वच्छन्द होकर अपराधों को अन्जाम देने लगेगा । इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता है ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं , जीव अपने कर्मों के करने में स्वतंत्र है , ईश्वर की व्यवस्था में परतंत्र है , वह आगे लिखते हैं- यह भ्रान्त धारणा है कि ईश्वर ही मनुष्य से तमाम कार्य करवाता है । मनुष्य अपनी अपनी प्रवृत्ति के अनुसार पाप वा पुण्य करता है । अपने सामर्थ्यअनुकूल कार्य करने में मनुष्य स्वतंत्र है । लेकिन जब वह अज्ञान ,दुरबुद्धि , कुसंग आदि विभिन्न कारणों से पाप करता है, तो ईश्वर व्यवस्था में पराधीन होकर उस के फल भोगने पड़ते हैं ।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी लिखते है, परमेश्वर पवित्र व न्यायकारी है । यदि परमेश्वर ही मनुष्यों से कार्य कराता तो उससे पाप कर्म कैसे होता ? परमेश्वर भला, पाप की प्रेरणा कैसे दे सकते हैं ? मनुष्य स्वतंत्र होने के कारण स्वयं पाप करता है । परमात्मा तो उसके कर्मअनुसार फल देता है ।

• आलस्य का त्याग करो : ______

सभी धर्मग्रन्थों व महापुरुषों ने मानव को आलस्य त्याग कर सदैव कर्म करते रहने की प्रेरणा दी है । ईसा मसीह अपने उपदेश में कहते हैं, आलसी मनुष्य अपने लक्ष्य तक कभी नहीं पहुंच पाता, किन्तु कठोर परिश्रम करने वाला, अपने प्रत्येक पल का सार्थक उपयोग करने वाला, कभी भी अभाव-ग्रस्त नहीं रहता । परिश्रमी व कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति सेवा करके पुण्य व व्यापार करके अक्षय धन सम्पत्ति अर्जित कर लेता है । वे कहते हैं, ओ आलसी, तू कब तक पड़ा रहेगा ? तू अपनी नींद से कब जागेगा ? यदि तू सोया ही रहेगा, तो लुटेरे की तरह गरीबी तुझे घेर लेगी । अभाव तुझ पर झपट्टा मार कर तेरे जीवन को नरक बना देगा ।

Edit with WPS Office

उपनिषद् का एक मंत्र है - **चरैवेति चरैवेति,** अर्थात निरन्तर क्रियाशील रहो । महात्मा बुद्ध कहते हैं, आलस्य का मार्ग मृत्यु की ओर ले जाता है । जो आलस्य में फंसते हैं, वे मानो मर चुके हैं । **संत तिरुवल्लुवर** भी कहते है कि आलस्य दरिद्रता का दूसरा नाम है ।

• पुरुषार्थ एवं दृढ़ इच्छाशक्ति द्वारा विधा की रेखा बनाना : ______

बौद्धिक जाने माने ऋषि थे । उनके आश्रम में कई छात्र शिक्षा ग्रहण करते थे । एक दिन ऋषि वृक्ष के नीचे बैठकर संस्कृति के रूप पढ़ा रहे थे । अध्ययन समाप्त होने के बाद उन्होंने एक निर्धन छात्र को संस्कृत के रूप सुनाने को कहा, पर वह बालक उन रुपों को सुनाने में असमर्थ रहा । इससे ऋषि ने डंडा मारने के लिए छात्र का हाथ आगे करने के लिए कहा । छात्र ने डरते- डरते हाथ आगे कर दिए । उस छात्र के हाथ को देखकर ऋषि बोले, वत्स तुम्हें मारना व्यर्थ है, क्योंकि तुम्हारे हाथ में विधा की रेखा ही नहीं है। तुम्हारा शिक्षा गृहण करना निरर्थक है । फिर उन्होंने उसके हाथ की ओर संकेत करते हुए कहा, देखो, विधा की रेखा यहां होती हैं । छात्र दुखी मन से उठा और आश्रम से बाहर चला गया । थोड़ी देर बाद जब वह वापिस आया तो उसकी हथेली से खून निकल रहा था ।

ऋषि ने पूछा, तुम्हारे हाथ में क्या हुआ ? यह घाव कैसे हो गया ? छात्र ने अत्यन्त सहजभाव से कहा, ऋषिवर, यह घाव नहीं है , बल्कि विधा की रेखा है जिसे मैंने स्वयं अपनी हथेली पर बना लिया । ऋषि ने तुरंत छात्र का उपचार किया । वह उसकी इच्छा शक्ति और साहस से बहुत प्रभावित हुए । उन्होंने उस दिन से उस पर अधिक ध्यान देना शुरू कर दिया । छात्र ने भी अपने गुरु का आपने प्रति प्रेम देखकर परिश्रम करना आरम्भ कर दिया ।

वह प्रतिदिन उन्नति करने लगा । उसकी दृढ़ इच्छाशक्ति , परिश्रम , लगन और ऋषि के अधिक लगाव ने उसे संस्कृति का विद्वान बना दिया । इस बालक ने आगे चलकर संस्कृत का पहला व्याकरण ग्रन्थ लिखा जो संसार में बेहद प्रसिद्ध हुआ । **वह ज्ञानी बालक आगे चलकर व्याकरणाचार्यों**

Edit with WPS Office

पाणिनि के नाम से विख्यात हुआ ।

जिस तरह से अग्नि राख से ढकी होने पर नहीं जलाती हैं और तेज हवा के कारण राख के उड़ जाने पर वही अग्नि चेतन होकर जला देती है । ठीक उसी प्रकार परिश्रम की आंधी चलने पर मनुष्य का मस्तिष्क तेज होकर बड़े से बड़ा कार्य करने में समर्थ हो जाता है ।

- **एक कवि ने कहा है ___**

लहरों से डरने वालों की नोका पार नहीं होती ,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती ।
नन्ही सी चींटी जब दाना लेकर चलती है, बढ़ती है ,
दीवारों पर सौ सौ बार फिसलती है ।
मन का विश्वास रगों में साहस भर कर ,
चढ़ना, गिर- गिर कर फिर चढ़ना ।
आखिर उसकी मेहनत बेकार नहीं होती ,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती ।
असफलता एक चुनौती है, स्वीकार करो ,
क्या कमी रह गई देखो और सुधार करो ।
जब तक सफलता न मिले , नींद चैन का त्याग करो ,
बिना कुछ किए जय- जयकार नहीं होती ,
कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती ।

यजुर्वेद के एक मंत्र में कहा गया है - ओ युवक ! बोल तू क्या चाहता है ? जो कुछ तू चाहता है , तुझे सब कुछ मिलेगा , परंतु इसके लिए एक शर्त है कि इसके लिए प्रयत्न तुझे स्वयं करना पड़ेगा । स्वयं ही यज्ञ रचना होगा । अपने आप को उस यज्ञ में आहुति बनाकर डाल देना होगा । तब जो कुछ भी तू चाहेगा , वह होगा अवश्य और यदि तू यह समझता है की कोई दूसरा तुझे बड़ा बना देगा तो याद रख , ऐसा कभी नहीं होगा ।

इंतजार करने वालों को चीजें मिलती तो है ,लेकिन सिर्फ वही मिलती है ,जो संघर्ष करने वाले छोड़ देते हैं । ___ **अब्राहम लिंकन** ।

Edit with WPS Office

• महाभारत में पुरुषार्थ को खेत बताना : ______

महाभारत में पुरुषार्थ को खेत प्रारब्ध को बीज बताया गया है । कहां गया है –

यथा बीज बिना क्षेत्रमप्तं भवति निष्फलम् ।
तथा पुरुषकारेण बिना दैव न सिद्धयति ।।

जैसे बीज खेत में बोये बिना सिद्ध नहीं होता , उसी प्रकार प्रारब्ध भी पुरुषार्थ के बिना सिद्ध नहीं होता । जो निराश होकर कहते हैं कि भाग्य में जो है , वहीं होकर रहेगा । उन लोगो को चुनौती देते हुए कहा है कि ईश्वर पुरुषार्थ में निरन्तर रत लोगों को कभी निराश नहीं करते ।

कई बार किसान परिश्रम करके खेत की गुड़ाई करता है , भीषण गर्मी में हल चलाता है , उसमें बीज बोता है , उसकी सिंचाई करता है , किन्तु कभी-कभी अधिक वर्षा या बाढ़ के प्रकोप से फसल से भरपूर खेत की सारी फ़सल नष्ट हो जाती है, बाढ के पानी में बह जाती है । किसान फिर भी निराशा को पास नहीं फटकने देता और दोबारा कठिन परिश्रम कर खेत तैयार करता है । इसी पुरुषार्थ के कारण वह फिर अनाज प्राप्त कर लेता है । इसी प्रकार यदि किसी संकट के कारण हमारा परिश्रम निष्फल हो जाय तो पुनः साहस कठोर के साथ उस कार्य को करने के लिए उन्मुख होना चाहिए । इससे हमारी आन्तरिक शक्तियां विकसित होती है और सफलता हमारे कदम चूमती है । इसीलिए तो कहा गया है –

परिश्रम सफलता की कुंजी है ।

ऋग्वेद में कहा गया है – मनुष्य अपने ध्येय को श्रम , पुरुषार्थ और संकल्प से प्राप्त कर सकता है । जो श्रम नहीं करता, उसके साथ देवता मित्रता नहीं करते । कर्मठ और संकल्पशील व्यक्ति के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है । इसलिए कितनी भी बाधाएं उपस्थित हो ,कर्मठ रहना चाहिए । लगातार कोशिश करने और हिम्मत न हारने की शक्ति हम में होनी चाहिए । सफलता , असफलता में ही छिपी होती है ।

Edit with WPS Office

• पुरुषार्थ के सम्बन्ध में सामवेद में कहा गया है –

1.___ **(सामवेद. 435)**

मंत्र___ **आ वाजं वाजिनो अग्मन् ।**

भावार्थ___ पुरुषार्थी लोग ही ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं ।

2.___ **(सामवेद. 441)**

मंत्र___ **न काममव्रतो हिनोति न स्पृशद्रियम् ।।**

भावार्थ___ पुरुषार्थहीन न प्रयत्न करता है और न धन पाता है ।

भाग्य के भरोसे बैठे रहना या दूसरों की सहायता के बल पर मंजिल तक पहुंचाने के सपने देखने से कुछ नहीं होता । शेर तो जंगल का राजा होता है ,, फिर भी उसे अपने आहार की तलाश के लिए मेहनत करनी पड़ती है । सोए हुए शेर के मुख में मृग स्वयं प्रवेश नहीं करते । ऐसे ही आप चाहे जिस भी क्षेत्र से जुड़े हो , आपका चाहे जो भी लक्ष्य हो , उसको पाने के लिए परिश्रम करना ही पड़ेगा । सफलता उसे ही मिलती है , जो परिश्रम करता है ।

यदि आप महान लोगों की जीवनी पढेंगे , तो स्वत: ही समझ जाएंगे की इतनी ऊंचाई तक पहुंचाने के लिए वे कितनी बार गिरे और कितनी बार उठें । अनेक बाधाएं उनके सामने आई , फिर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी और परिश्रम करते हुए आगे बढ़ते गए । उन लोगों की तरह यदि आप भी सोच समझकर दृढ़ता के साथ परिश्रम करते हुए आगे कदम बढ़ाएंगे , तो अवश्य सफल होंगे और मनचाही मंजिल तक पहुंचेंगे ।

परिश्रम के साथ-साथ सफलता के लिए धैर्य भी आवश्यक है । कुछ लोग लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं , काम भी शुरू कर देते हैं , पर जल्द ही थोड़ी सी कठिनाई आने पर अथवा अन्य किसी कारण से उनका उत्साह ठंडा पड़ जाता है । अत: आप अपने काम से ऊबे नहीं अन्यथा काम में मन नहीं लगेगा और आप अपने रास्ते से भटक जाएंगे । अत: दृढ़ निश्चय के साथ परिश्रम करते हुए उत्साह पूर्वक अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सफलता प्राप्त करें ।

Edit with WPS Office

• दृढ़ संकल्प करना : ______

जीवन में सफलता पाने के लिए परिश्रम के साथ-साथ दृढ़ संकल्पों वाला बनना चाहिए । इस सम्बन्ध में **छान्दोग्य उपनिषद्** के ऋषि ने **महिदास ऐतरेय** की कथा लिखी है ।

महिदास ऐतरेय एक यज्ञ कर रहा था जो 116 वर्ष में पूरा होता था । उसका स्वास्थ्य अच्छा न था । वैधों ने उससे कहा , महिदास जी आप इतने दिनों तक जीवित नहीं रह सकते । जो रोग आपको लग गया है उससे आप बचोगे नहीं । अतः इस यज्ञ का विचार त्याग दो । महिदास आत्मज्ञानी था । वह जानता था कि मनुष्य अपने संकल्पों का बना हुआ है । अतः दृढ़ संकल्प के साथ बोला , ऐ मेरे रोग ! मेरे शत्रु , क्यों मुझे तंग करता है ? तेरे किसी आक्रमण से मेरी मृत्यु होने वाली नहीं है । छान्दोग्योपनिषद् का ऋषि कहता है कि वह दृढ़ संकल्पी महिदास ऐतरेय पूरे 116 वर्ष तक जीवित रहा और यज्ञ पूरा किया ।

यह है दृढ़ संकल्प का फल । दृढ़ संकल्प से मनुष्य को हर क्षेत्र में सफलता मिलती है । प्रत्येक क्षेत्र में जहां मनुष्य दृढ़ संकल्प करके आगे बढ़ता है , वहां उसे सफलता अवश्य मिलती है । इस संसार में अनेक प्रकार की परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है । परंतु जो व्यक्ति दृढ़ संकल्प के साथ अपने मार्ग पर बिना डगमगाए निरंतर परिश्रम करता हुआ आगे बढ़ता है उसे अन्त में अवश्य ही सफलता मिलती है ।

दृढ़ संकल्प वाले लोग किस प्रकार कार्य करते हैं यह स्वामी दयानंद सरस्वती के जीवन में देखिए ।

घर में किसी वस्तु की कमी न थी , परंतु मूलशंकर (स्वामी जी का बचपन का नाम) ने दृढ़ संकल्प कर लिया कि सच्चे शिव का दर्शन पाऊंगा । घर वालों ने देखा कि युवक बाल वैरागी हुआ जा रहा है । घरवालों ने सोचा कि इसका विवाह कर दे । विवाह एक ऐसी जंजीर है जिसमें बंध जाने के बाद मनुष्य सांसारिक बंधनों में जकड़ जाता है । विवाह का शाब्दिक अर्थ है – बोझा ढोना बोझ ढोते रहो । इस बोझे का अन्त नहीं । इससे मुक्ति मृत्योपरान्त ही संभव है ।

मूल शंकर भी इसी जंजीर में बंधा जा रहा था । विवाह की पूरी तैयारी हो

Edit with WPS Office

चुकी थी । मूल शंकर ने मन में कहा , अब फस गए तो मुक्ति नहीं मिलेगी । उठ , तोड़ दे इस जंजीर को । मूल शंकर माता पिता के प्यार को , घर की संपत्ति को , सुख को , सबको त्याग कर घर से निकल पड़े । परंतु उनके पिता तो उन्हें बांधना चाहते थे । वे भी स्थान स्थान पर उन्हें तलाशने लगे । अन्त में सिद्धपुर के मेले में उन्हें पकड़ लिया । उन्हें फुसलाया , डराया धमकाया और जब देखा की मूलशंकर नहीं मानते तो कितने ही व्यक्तियों के पहरे में उन्हें कैद कर दिया गया । चौकीदारों से कहा गया कि देखो , वह भाग न जाए । वे पहरा देने लगे । लगातार जागते हुए तीसरी रात आ गई । पहरेदारों ने सोचा यह कहीं नहीं जाता , जाने का प्रयत्न भी नहीं करता । यह जाएगा नहीं । थके हुए थे ,वे ऊंघने लगे । मूल शंकर ने देखा और मन ही मन में कहा , मूल शंकर भाग सके तो भाग , नहीं तो फिर शायद अवसर न मिलेगा । यह सोचकर चुपके से भाग निकले । यह है दृढ़ संकल्प की बात । यदि मूल शंकर का दृढ़ संकल्प नहीं होता , तो वे देव दयानन्द नहीं कहलाए जाते । इस दृढ़ संकल्प के कारण ही उनके अन्दर कपिल , कणाद और गौतम जैसा पांडित्य , हनुमान भीष्म पितामह जैसा चमकता हुआ ब्रह्मचर्य , भीम जैसा अपार बल , महात्मा गौतम बुद्ध जैसा त्याग और वैराग्य , मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जैसी मर्यादा , योगीराज श्री कृष्ण जैसी नीतिमत्ता , महर्षि पतंजलि और व्यास जैसी आध्यात्मिकता आदि सभी गुण उनमें विद्यमान थे ।

आत्म विश्वास : ______

दृढ़ संकल्प से परिश्रम करना तभी सफल होता है , जब उसके साथ अपने आप पर भरोसा हो । इसे आत्म विश्वास कहते हैं । आप जो कुछ बनना चाहते हैं , उसके लिए अपनी संकल्प शक्ति से अपना आत्म विश्वास विकसित करें । दूसरे शब्दों में , आप अपने मस्तिष्क की शक्ति से अपना भविष्य बना सकते हैं । अगर आप स्वयं को दूसरों से कमजोर मानते हो , अगर आपकी सोच नकारात्मक है और आप स्वयं को एक आम आदमी मानते हो , तो आप वही हो जाएंगे । लेकिन अगर आप अपने को दूसरों से

Edit with WPS Office

अच्छा मानते हैं और आत्म विश्वास के साथ रहते हैं तो आप वही बन जाएंगे । जिस आदमी के पास कुछ भी न हो , उस समय भी यदि किसी में दृढ़ आत्मविश्वास है तो इस एकमात्र सहारे से बड़ा हो जाएगा और इससे ज्यादा प्रभावी सहारा कोई और नहीं हो सकता । आत्मविश्वासी लोग आज भी विश्व इतिहास को दिशा दे रहे हैं ।

आत्मविश्वास के सम्बन्ध में कहा गया है –

महान पुरुषों की क्रिया सिद्धि आत्मबल के कारण होती है , उपकरणों के कारण नहीं ।

आत्मविश्वासी वीर जन देव के सहारे नहीं रहते । **(वाल्मीकि रामायण)**

जिसके पास आत्मविश्वास रूपी कोष हैं , उसके लिए सारी पृथ्वी ही धन देने वाली है । **(महाभारत उद्योगपर्व)**

नकारात्मक दृष्टिकोण , थोड़ी दूर तक सोचने वाले और जल्दी हार मान जाने वाले लोग कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते । जीवन में सारे दरवाजे उनके लिए बंद है । आप चाहे जो करें , अपने ऊपर विश्वास रखें । आप क्या करना चाहते हैं , इसे पहले सोचें । अगर आप किसी भी काम में आत्मविश्वास के साथ दिमाग लगाकर परिश्रम करेंगे तो उसे अवश्य कर सकते हैं और सफल अवश्य होंगे ।

अतः हमें मानव जीवन को सफल बनाने के लिए तीव्र इच्छाशक्ति , दृढ़ संकल्प , आत्म विश्वास और कठोर परिश्रम आदि गुणों को धारण करना चाहिए । इनसे न केवल सांसारिक कार्यों में सफलता मिलेगी अपितु आध्यात्मिकता के क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त कर मानव जीवन के वास्तविक उद्देश्य तक पहुंचा जा सकता है ।

- **सनातन धर्म ग्रंथो में चार पुरुषार्थ बतलाए गए हैं ______**

चार पुरुषार्थ___ धर्म , अर्थ , काम ,मोक्ष

पुरुषार्थ का क्या उद्देश्य है ?

मनुष्य के **भौतिक** तथा **आध्यात्मिक** सुखों के बीच सामंजस्य स्थापित करना ।

Edit with WPS Office

अर्थ तथा काम ___ वे पुरुषार्थ मनुष्य के भौतिक सुखों के प्रतिनिधि है ।
धर्म तथा मोक्ष___ वे पुरुषार्थ मनुष्य के आध्यात्मिक सुखों के प्रतिनिधि है ।

•वेदों में सफलता के सूत्र :

ऋग्वेद. 1/18/4 _____जो मनुष्य वायु , विधुत , सुर्य और सोम आदि औषधियों के गुणों को ग्रहण करके अपने कार्यों को सिद्ध करते हैं , वे कभी दुखी नहीं होते ।

विस्तृत व्याख्या ______ जैसे , इस वेद मंत्र का भाव यह है कि इस संसार के अंदर जो भी व्यक्ति चाहे वह विद्यार्थी हो , चाहे वह युवा हो , चाहे वह व्यापारी हो , चाहे वह गृहस्थी हो , चाहे वह सन्यासी हो , चाहे वह राजनीतिक क्षेत्र में हो । कोई किसी भी क्षेत्र का हो । यदि वह अपने जीवन में सफलता को प्राप्त करना चाहता है , तो उसे जो है तीन देवताओं की उपासना करनी चाहिए ।
तीन देवताओं की शरण में जाना चाहिए । आज भी हम देखते हैं , कि लोग कुंभ में स्नान करने के लिये देखते हैं , आज हम देखते हैं कि लोग तीर्थ यात्रा पर जाते हैं , आज हम देखते हैं कोई हज करने जा रहा है । तो उन सब का उद्देश्य यह होता है कि हमारे जीवन में सुख हो , शान्ति हो , और हमें सफलता की प्राप्ति हो , लेकिन हम देखते हैं कि इतने पुरुषार्थ के बाद भी , इतने परिश्रम के बाद भी , इतनी श्रद्धा और मान्यताओं के पश्चात भी जीवन में कभी भी सफलता प्राप्त नहीं हो पाती । सुख प्राप्त नहीं हो पाता । शान्ति प्राप्त नहीं हो पाती । इसका कारण यह है कि कहीं ना कहीं हमारी मान्यताओं में या हमारे ज्ञान में कहीं त्रुटि है । तो यह वेद का मंत्र कहता है कि हम किन देवताओं की उपासना करें ?
पहला देवता कहां ______इंद्र देवता , दूसरा देवता ब्रह्मस्पति , तीसरा देवता सोम देवता । अब लोगों की कल्पना यह है कि इंद्र एक ऐसा देवता है जो स्वर्ग में रहता है , अप्सराओं से घिरा रहता है , और बादलों का स्वामी है ,

Edit with WPS Office

ऐरावत नाम का हाथी है , तो ऐसा कोई देवता है उसकी कल्पना की । लेकिन जो वेद है वेद का मंत्र कहता है कि इंद्र जो है , वह पुरुषार्थ का देवत्क है । जो व्यक्ति पुरुषार्थी है , वह व्यक्ति इंद्र देवता की उपासना कर रहा है , जो व्यक्ति अपने जीवन में पुरुषार्थ को परिश्रम को उद्द्धोशिल होता हो , उन्हें अपनाता है वह जीवन में कभी असफल नहीं होता । बिना पुरुषार्थ के , बिना परिश्रम के , जीवन में व्यक्ति को सफलता की प्राप्ति नहीं हो सकती ।

दूसरी बात ___ लेकिन केवल पुरुषार्थ मेहनत परिश्रम करना ही पर्याप्त नहीं है , उसके लिए उसे ज्ञानवान होना बहुत आवश्यक है । इसलिए ज्ञानी होने के लिए वह क्या करें ? वह दूसरे देवता ब्रह्मस्पति या ब्रह्म - पति अर्थात ब्रह्म और पति ये दो शब्द ___ ब्रह्म नाम वेद का है , ब्रह्म नाम ज्ञान का है , कि जो वेद का पति है , वेद का स्वामी है , वेद को जानने वाला है , वह विद्वान है , और जो वेदों का स्वामी परमपिता परमेश्वर है , जो विद्वानों की शरणागत होता है , और जब परमात्मा की शरणागत होता है , तो ऐसे व्यक्ति को जीवन में कभी भी असफलता की प्राप्ति नहीं हो सकती । हमारे पास में पुरुषार्थ भी हो गया , हमारे पास ज्ञान भी उपलब्ध हो गया , हम शिक्षित हो गये , विद्या भी आ गई , लेकिन उसके पश्चात भी हमारे जीवन में अभिमान आ गया , अहंकार आ गया , तो विनम्रता नष्ट हो गई , तो वह व्यक्ति भी अपने जीवन में अधूरा रहता है , तो **तीसरा देवता है ___** सोम देवता । सोम देवता का तात्पर्य यह है कि हम अपने जीवन में विनम्रता का पालन करें । हमारे जीवन में विनम्रता होनी चाहिए । तो जब यह तीन चीजें जिस व्यक्ति में होती हैं , ___एक पुरुषार्थ , एक विद्या , और एक परमात्मा की भक्ति , और चौथी विनम्रता । तो वेद का मंत्र कहता है " **सधा वीरों रिष्यति** " निश्चित रूप से उस व्यक्ति के जीवन में कभी पराजय नहीं होती । " **सोमों हिनोति मतर्यम्** " तो ऐसे व्यक्ति को वह परमपिता परमात्मा बहुत आगे ले जाता है । उसे बहुत आगे बढाता है ।

विनम्रता के ऊपर एक बात कहना चाहता हूं हमारे पास धन आ गया , एक दो प्लॉट खरीद लिए, बड़ी डिग्री हासिल कर ली , एक दो राजनीतिक पद मिल गए , तो हम जो हैं बहुत अभिमान में चुर हो जाते हैं । लेकिन

Edit with WPS Office

वास्तविकता यह है कि हम जब दुनिया का इतिहास पढ़ते हैं , चिंतन करते हैं , मनन करते हैं , और परमात्मा की इस विशाल सृष्टि को देखते हैं , तो हमारा अभिमान जो है , वह एक क्षण में दूर हो जाता है ।

- मैं अयोध्यासिहं उपाध्याय की पंक्तियों द्वारा इस वाक्य को पूरा करता हूं ।
  उन्होंने लिखा है ____

पंक्ति : एक तिनका

मैं घमण्डों में भरा ऐंठा हुआ
एक दिन जब था मुण्डेरें पर खड़ा
आ अचानक दूर से उड़ता हुआ
एक तिनका आंख में मेरी पड़ा
मैं झिझक उठा , हुआ बेचैन - सा
लाल होकर आंख भी दुखने लगी
मूंठ देने लोग कपड़े की लगें
ऐंठ बेचारी दबे पांवों भगी
जब किसी ढब से निकल तिनका गया
ऐंठता तू किसलिए इतना रहा
एक तिनका है बहुत तेरे लिए

______ अयोध्या सिंह उपाध्याय " हरिऔध "

कविता___ पंक्ति : एक तिनका ।
लेखक : अयोध्या सिंह उपाध्याय " हरिऔध " ।

मूल्य :
अहंकार का त्याग , विनम्रता की प्रेरणा , आत्मालोचन ।

Edit with WPS Office

तो इसलिए हमें अपने जीवन में पुरुषार्थ के साथ-साथ , शिक्षा के साथ-साथ यदि हमारे जीवन में विनम्रता होगी तो हमें अपने परिवार में , मित्र गणों में , अपने समाज में , समस्त जगह हमारा सम्मान होगा । और हम जीवन के हर क्षेत्र में सफलता प्राप्त करेंगे ।

मेरे द्वारा कहीं बात को अपने जीवन में जो व्यक्ति अपनाएगा , चाहे वह विद्यार्थी हो , चाहे अध्यापक हो , चाहे कोई भी किसी भी क्षेत्र में हो , तो निश्चित रूप से उन्हें जीवन में सफलता की प्राप्ति होगी ।

•हस्तरेखा विज्ञान ______

एक बार एक युवक महर्षि दयानंद सरस्वती जी महाराज के पास गया और हाथ आगे बढ़ाकर कहने लगा... स्वामी जी महाराज ! मेरा हाथ देखिए , हाथ में क्या-क्या है ? स्वामी जी महाराज ने उसका हाथ देखते हुए कहां कि , " इसमें खून है , मांस हैं , चर्बी है , चाम है और अस्थियां है और क्या है ? " हमारे हाथ में क्या है ? इस विषय पर वेदों में स्पष्ट लिखा है ।
वेद कहता है कि ....

कृतं में दक्षिणे हस्ते जयो में सभ्य आहित: ।
गोजिद् भूयासमश्वजिद् धनठ्जयो हिरण्यजित् ।।

।। अथर्ववेद. 7.50.8 ।।

भावार्थ : मेरे दाएं हाथ में कर्म है और बायें हाथ में विजय है । मैं अपने कर्मों के द्वारा गौं , भूमि , अश्व , धन , और स्वर्ण का विजेता बनूं ।।

यदि आप रेखाओं के भरोसे ही बैठे रहे तो कुछ नहीं होगा । कर्म के द्वारा और प्रबल पुरुषार्थ के द्वारा आप समस्त भूमण्डल पर शासन भी कर सकते हैं । अत: कर्म करो । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता और विधाता स्वयं ही हैं । ज्योतिष के द्वारा आपके भाग्य का निर्माण नहीं हो सकता ।

➤ **आर्य समाज से जुड़ने एवं महर्षि दयानंद का अनुयायी बनने**

Edit with WPS Office

का लाभ :

- भूत , प्रेत , जिन्न , पिशाच , चुड़ैल का डर समाप्त ।
- **चमत्कारी , बंगाली बाबाओं की जरूरत नहीं पड़ती ।**
- टोने-टोटके का डर नहीं रहता ।
- **कोई पाखंडी हमारे परिवार को शिकार नहीं बना सकता ।**
- मुहूर्त , दिशा - शूल , शुभ - अशुभ से छुटकारा ।
- **नवग्रहों को मनाने का झंझट समाप्त ।**
- तान्त्रिक दूर भागने लगते हैं , शनि देव का भय समाप्त ।
- **तंत्र - मंत्र , झाड़ - फूंक , श्री यंत्र , धन - लक्ष्मी यंत्र , गंडे - ताबीज की जरूरत समाप्त ।**
- पीर , मजारों , साई , दरगाहों से मन्नत मांगने की जरूरत नहीं पड़ती ।
- **विवाह सम्बन्ध में मांगलिक दोष आड़े नहीं आता ।**
- कोई देवी , माता , बाबा सिर नहीं चढ़ते ।
- **ईश्वर का आशीर्वाद हमेशा बना रहता है ।**
- कर्म फल की ईश्वरीय व्यवस्था की जानकारी होने से अब कोई धोखा नहीं दे सकता ? इसलिए सत्य हो जानने के लिए **... महर्षि दयानंद सरस्वती** द्वारा लिखित पुस्तक **___ सत्यार्थ प्रकाश पढ़े ।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

3. तीसरा पृष्ठ

- ## [सदाचार]

सदाचार का महत्व :______

सदाचार एक ऐसी सुगन्ध है जिससे मानव का पूरा जीवन महक उठता है। अच्छे आचरण को ही सदाचार कहते हैं। वह आचरण जो हमारे व्यवहारिक जीवन में लाभप्रद है। मनुस्मृति में कहा गया है कि जिस व्यक्ति में धैर्य , क्षमा ,मन-वाणी पर नियंत्रण , बुद्धि-विवेक , सत्य और अक्रोध जैसे गुण होंगे , वहीं सच्चे अर्थों में सदाचारी है। अर्थात वहीं सच्चरित्र और सज्जन कहलायेगा। सदाचारिता ही किसी व्यक्ति को आदर और यश प्रदान करती हैं। सदाचार के अभाव के कारण मानव मन और तन से अस्वस्थ होता जा रहा है।

रांची विश्वविद्यालय की दर्शनशास्त्र विभाग की अध्यक्ष डॉ मीरा वर्मा के अनुसार सभी धर्म सदाचार का सन्देश देते है। वे कहती हैं, वेदों में सदाचार को मानव का सर्वश्रेष्ठ गुण कहा गया है ,जिसकी सहायता से व्यक्ति सांसारिक और आध्यात्मिक ऊंचाई को प्राप्त करता है। डॉ मीरा वर्मा के अनुसार सदाचार व्यक्ति को श्रेष्ठ मार्ग पर चलना सिखाता है। हम दैनिक जीवन में भी महसूस कर सकते हैं कि यदि हम अच्छा आचरण नहीं करते तो कितनी कठिनाइयां आती है। लोग भले ही कहे कि जमाना ईमानदार और सदाचारियों का नहीं है , लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि ऐसा कहने वाले भी अच्छे आचरण को ही पसन्द करते हैं।

सदाचार के सम्बन्ध में वेद मंत्र :____

वेदों के सदाचार पर बहुत अधिक बल दिया गया है जिसके सम्बन्ध में अनेक मंत्र है। उनमें से कुछ मंत्र दिए जा रहे हैं____

Edit with WPS Office

1.___ ऋग्वेद. 1/5/1

भावार्थ___ जब तक मनुष्य हठ ,छल कपट और अभिमान को छोड़कर सत्य प्रीति के साथ परस्पर मित्रता करके परोपकार करने के लिए तन , मन , धन से यत्न नहीं करते ,तब तक उनके सुखों और विधा उत्तम गुणों की उन्नति कभी नहीं हो सकती ।

2.___ ऋग्वेद. 2/28/11

भावार्थ___ मनुष्य को चाहिए कि अन्याय से बिना आज्ञा पर पदार्थ के ग्रहण की इच्छा कभी न करें , किन्तु धर्मयुक्त व्यवहार से यथा शक्ति धन संचय करें ।

3.___ ऋग्वेद. 3/21/4

भावार्थ___ जैसे जल से सींचकर वृक्षों को बढ़ाने पर फल प्राप्त होते हैं , वैसे ही सत्संग से सत्पुरुषों का सेवन करके विज्ञान आदि फलों को प्राप्त करें ।

4.___ ऋग्वेद. 5/1/2

भावार्थ___ जो मनुष्य उत्तम आचरण से अग्नि के सदृश ऊपर को जाने वाले होते हैं , वे अविधा से निवृत्त होकर यशस्वी होते हैं ।

5.___ ऋग्वेद. 7/18/3

भावार्थ___ यदि मनुष्य अपनी वाणी को दिव्य बनाना चाहें तो वह अपनी वाणी को प्रभु की स्तुति करने में लगाए । प्रभु के शुभ गुणों का गान करके उन गुणों को अपने अंदर धारण कर के मनुष्य भी देव बन सकता है । जो इस प्रभु के दिव्य गुणों का आश्रय लेता है , वह सदा सुखी होता है ।

6.___ यजुर्वेद. 5/40

भावार्थ___ जब तक मनुष्य सुख-दुख ,हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपनी आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते । इससे मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें ।

Edit with WPS Office

7.___ **यजुर्वेद. 6/12**

भावार्थ___ किसी भी मनुष्य को कुटिल गामी सर्प आदि दुष्ट जीवों के समान धर्ममार्ग में कुटिल न होना चाहिए , किन्तु सर्वदा सरल भाव से रहना चाहिए ।

8.___ **यजुर्वेद. 6/17**

भावार्थ___ जैसे जल सांसारिक पदार्थों की शुद्धि का निदान है , वैसे विद्वान लोग सुधार का निदान है । इससे वे अच्छे कर्मों को करें । मनुष्यों को चाहिए कि ईश्वर की उपासना और विद्वानों के संग से दुष्टाचरणों को छोड़ सदा धर्म में प्रवृत्त रहें ।

9.___ **यजुर्वेद. 7/6**

भावार्थ___ मनुष्य जब तक श्रेष्ठाचार वाला नहीं होता ,तब तक ईश्वर भी उसको स्वीकार नहीं करता । जब तक जिसको ईश्वर स्वीकार नहीं करता ,तब तक उसका पूरा पूरा आत्मबल नहीं हो सकता और जब तक आत्मबल नहीं बढ़ता ,तब तक उसको अत्यंत सुख भी नहीं होता ।

10.___ **यजुर्वेद. 21/25**

भावार्थ___ जो मनुष्य लोग विद्वान के संग काल की स्थूल , सूक्ष्म गति को जानकर एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गंवाते हैं , वे नानाविध ऐश्वर्या को प्राप्त होते है ।

11.___ **सामवेद. 24**

भावार्थ___ परमात्मादेव ! तू अन्दर बैठे पीड़ा देने वाले काम क्रोध आदि पाप को अपने सन्तापक बलों से भस्म करके हमारी रक्षा करता है । परमात्मने ! तू अजर है , जरा से रहित है , संसार में हमारी रक्षा करने वाले तो जरा धर्मी है , कोई जरा को प्राप्त हो गए , कोई प्राप्त होने वाले हैं , किन्तु तेरा रक्षण सदा रहने वाला है , अतः हम तेरे आश्रित हैं , तू ही हमारी रक्षा कर ।

Edit with WPS Office

12.___ **सामवेद. 405**

भावार्थ___ हे अनन्त कर्म शक्ति वाले सर्वज्ञ सर्वान्तर्यामी परमात्मन ! तू हमारे अन्दर आत्मिक बल और संयम सदाचार का यश भरपूर कर दे तथा विरोधी बाधक वृतियों को सहन करने वाले प्राण को भी भरपूर कर दे , मैं उपासना द्वारा तेरी शरण में आया हूं ।

13.___ **सामवेद. 776**

भावार्थ___ हे सर्वदृष्टा ! अन्तर्यामि शान्त परमात्मन ! तू अग्रणायक होकर हमारे मन की वर्तमान कामनाओं को अपनी स्तुतियो की ओर प्रेरित करने हेतु पवित्र करा ! हमारी कामनाये संसार की ओर न जावें । ससार में न फँसावें अपितु तेरी स्तुतियों में लगे।

14.___ **सामवेद. 1867**

भावार्थ___ हे पापनाशक परमात्मन् ! तू जिससे अपनी रक्षा करना चाहिए ,उस काम आदि को विशेषरुप से नष्ट कर , दूसरे के प्रति होने वाले हमारे अन्दर हिंसा भावों को नष्ट कर । पाप के हनन साधनों लोभ और मोह विनष्ट कर , हमें अभिक्षीण करते हुए शत्रु रूप द्वेष को विनष्ट कर ।

15.___ **अथर्ववेद. 1/20/1**

भावार्थ___ हे ईश्वर आपस की फूट बढ़ाने वाला कोई कार्य हम से न हो । इस सत्कर्म से हमें सुख प्राप्त हो । पराजय अपकीर्ति अपयश देष और कुटिलता हमारे पास न आवे ।

16.___ **अथर्ववेद. 1/34/2**

भावार्थ___ मेरी जिह्वा के अग्रभाग में मधुरता रहे । जिहा के मूल में और मध्य में मधुरता रहे , मेरे कर्म में मधुरता रहे और मेरा चित् भी मधुर विचारों का मनन करें ।

- **गीता का सदाचार : _____**

Edit with WPS Office

1.___ **गीता. 16/21**

भावार्थ___ काम, क्रोध और लोभ , ये तीनों नरक के द्वार है जिनसे अपना नाश होता है । इसलिए मनुष्य को इन तीनों से बचना चाहिए ।

नरक और स्वर्ग और कहीं नहीं है , हमारे इसी जीवन में और इसी पृथ्वी पर है । कुछ मनुष्य अपने कर्मों के कारण ही अपने जीवन को नरक बना लेते हैं । इसके तीन मुख्य कारण है ___

(क)___बहुत अधिक इच्छाएं पालना ।

(ख)___ बहुत अधिक लोभ करना ।

(ग)___ अपनी इच्छाएं पूरी न होने पर क्रोध करना ।

मनुष्य को अपनी इच्छाओं को ऐसे शान्त भाव से पूरा करना चाहिए जैसे समुद्र बिना किसी आवेश के नदियों को अपने अंदर मिलने देता है । अपनी इच्छाओं को बिना लोभ और बिना आवेश के पूरा करने की योग्यता हमें अपने में उत्पन्न करनी चाहिए ।

2.___ **गीता. 6/40**

भावार्थ___ श्री कृष्ण आत्मोद्धार के लिए अर्जुन को समझाते हुए कह रहे हैं कि , हे अर्जुन ! भगवत्प्राप्ति के लिए कर्म करने वाला अर्थात शुभ कर्म करने वाला कोई भी मनुष्य दुर्गति को प्राप्त नहीं होता ।

3.___ **गीता. 6/32**

भावार्थ___ जो व्यक्ति समान दृष्टि रखकर सभी के सुख दुख को अपने सुख-दुख की तरह देखता है , वह परम योगी है ।

श्री कृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि हे अर्जुन ! आम आदमी अपने और अपने निकटतम लोगों के सुख-दुख की चिंता करता है । बहुत बार तो वह अपने शत्रुओं को दुख देने में भी प्रसन्नता का अनुभव करता है । जब मनुष्य संसार के हर प्राणी के दुख को अपना दुख तथा हर प्राणी के सुख को अपना सुख मानने लगेगा , तब यह समझना चाहिए कि वह परमयोगी हो गया है ।

Edit with WPS Office

• रामायण और सदाचार : ______

रामचरितमानस (रामायण) —तुलसीदास:___

1.___ **रामचरितमानस के सुंदरकांड के अंतर्गत विभीषण रावण को समझाते हुए कहते हैं -** हे भाई ! श्री राम तो सेवकों को आनंद देने वाले , दुष्टों के समूह का नाश करने वाले , वेद और धर्म की रक्षा करने वाले हैं । विभीषण की इस बात का माल्यावान नामक बुद्धिमान मंत्री ने भी समर्थन किया । इस पर रावण क्रोधित होकर बोला– यह दोनों मूर्ख शत्रु की महिमा का वर्णन कर रहे हैं । यहां से इनको दूर करो । इस पर माल्यावान तो अपने घर चला गया किंतु विभीषण ने पुनः हाथ जोड़कर कहा–

हे नाथ ! जहां सुबुद्धि है , वहां नाना प्रकार की सम्पदाएं रहती है । अर्थात हर प्रकार का सुख रहता है और जहां कुबुद्धि है , वहां अनेक प्रकार के दुख रहते हैं । सुबुद्धि वाला व्यक्ति ही सदाचारी होता है ।

2.___ **रामचरितमानस के उत्तरखंड में श्री भरत श्री राम से हाथ जोड़कर कहते हैं–** हे शरणागत का पालन करने वाले । मुझको संत और असन्त के भेद अलग-अलग करके समझाओ । श्री राम कहते हैं –

संत का मतलब है सदाचारी , सज्जन मनुष्य और असन्त का अर्थ है– दुष्ट आचरण करने वाला अर्थात दुर्जन । सन्त और असन्त की करनी ऐसी है जैसे– कुल्हाड़ी और चंदन का आचरण होता है । हे भाई ! सुनो कुल्हाड़ी चंदन को काटती है (क्योंकि उसका स्वभाव या काम ही वृक्षों को काटना है) किंतु चंदन अपने स्वभाव वंश अपने गुण देकर उसे (कुल्हाड़ी) सुगन्ध से सुबासित कर देता है । इसी गुण के कारण चन्दन देवताओं के सिर पर चढ़ता है और कुल्हाड़ी के मुख को आग में जलकर फिर घन से पीटते हैं ।

3.___ **वनवास के समय श्री राम अपने छोटे भाई लक्ष्मण और सीता को समझाते हुए कहते हैं –** मानव जीवन अमूल्य है , परंतु क्षण भंगुर है । इसलिए इसका एक एक क्षण का सत्कर्मों में सदुपयोग करके जीवन को सफल बनाना चाहिए ।

Edit with WPS Office

• महाभारत और सदाचार :_____

वेद , महाभारत और रामायण में अनेक स्थानों पर सदाचार के सम्बन्ध में कहा गया है । यहां पर पाठकों की जानकारी के लिए कुछ उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत किए जा रहे हैं ।

1.___ महाभारत में धर्मराज युधिष्ठिर कहते हैं कि मानव को हर क्षण सत्कर्म करते रहना चाहिए । ऐसा करने से ही संतोष की प्राप्ति होती है । जिस समय सत्कर्म का विचार आए , उसे तुरंत पूरा करना चाहिए । उसे कल के लिए छोड़ना ठीक नहीं है ।

2.___ महाभारत में एक अन्य स्थान पर कहा गया है – जीवन का सबसे महत्वपूर्ण गुण सदाचार है । धन ही हानि सहज है , पर चरित्र की हानि जीवन का विनाश । अतः अपने शील और सदाचार की रक्षा के लिए सदैव दृढ़ रहना चाहिए । कंचन कामिनी का आकर्षण , भौतिक सुख सुविधाओं के भोग की लालसा अच्छे-अच्छे धार्मिक जनों को अपने गिरफ्त में ले लेती है और जो इन लालसाओं में पड़कर सदाचार का त्याग कर देता है , उसके पतन का ठिकाना नहीं रहता ।

3.___ महाभारत में कहा गया है कि मन वाणी और क्रिया द्वारा किसी भी प्राणी से द्रोह न करना , सब पर दया करना और दान देना यह शील कहलाता है । जो भी पुरुषार्थ और कर्म दूसरों के लिए हितकर न हो , उस कार्य को नहीं करना चाहिए । वह कार्य करें जिसकी सब लोग प्रशंसा करें ।

गरुड़ पुराण : _____

गरुड़ पुराण में कहा गया है– विधा और धन से विभूषित होने पर दुर्जन का त्याग कर देना चाहिए क्योंकि मणि से अलंकृत सर्प भयंकर और घातक होता है ।

Edit with WPS Office

नीति शतक : ______

नीति शतक में कहा गया है– गुणी व्यक्तियों की संगत से बढ़कर कोई लाभ नहीं और दुव्यसनियों वा मूर्खों के संसर्ग से बड़ा कोई दुख नहीं ।

तैत्तिरीय उपनिषद् : ______

श्रेष्ठ कर्मों और अच्छे आचरण के माध्यम से लोक और परलोक का कल्याण हो जाता है । जैसे फूलों की सुगंध हवा के झोंके मात्र से दूर-दूर तक पहुंच जाती है ,वैसे ही सत्कर्मों की सुगंध दूर-दूर तक पहुंचकर सत्कर्म करने वाले की ख्याति में वृद्धि करती है ।

• [सदाचार के सम्बन्ध में विद्वानों और महापुरुषों के विचार]

गृहस्थ और परिवार में रहते हुए जो शील और सदाचार का , शास्त्र की मर्यादाओं का दृढ़ता के साथ पालन करता है , जिसका मन भौतिक प्रपंचों के प्रति आसक्त नहीं होता , जो राष्ट्र , समाज और परिवार के प्रति अपने कर्तव्यों का दृढ़ता से पालन करता है , वह किसी गेरुए वस्त्रधारी सन्त से कम नहीं है । ___ **महर्षि रमण ।**

धर्मानुसार सत्कर्म ही लोक- परलोक के लिए कल्याणकारी होते हैं । जो मनुष्य मन , वाणी , नेत्र और क्रिया द्वारा सत्कर्म करते हैं , शास्त्र विरुद्ध मनमाने , मर्यादाहीन आचरण से बचते हैं , उन्हें इस लोक और परलोक में भी शान्ति मिलती है । ___ **मुनि पाराशर**

आचरणहीनता और मर्यादाहीनता सब गुणों को नष्ट कर देती है । आचरणहीन कि तमाम कीर्ति व पुण्य नष्ट हो जाते हैं । अपयश मनुष्य के लिए मृत्यु के समान है । ___ **आचार्य चाणक्य ।**

वही असल सत्कर्म है जिससे किसी का हित हो । दुष्कर्म करने वाले की आत्मा धिक्कारने लगती है ,जबकि सत्कर्म करने वाले को अनूठी शान्ति मिलती है ।___ **महात्मा बुद्ध ।**

अपने बच्चों को कितनी संपत्ति दी है , यह महत्वपूर्ण नहीं, अपितु संस्कारों

Edit with WPS Office

की कितनी विरासत दी है , यह महत्वपूर्ण है । क्योंकि संस्कारों की नींव पर ही जीवन की इमारत खड़ी होती है ।___ **बाबा रामदेव ।**

जहां स्वार्थ समाप्त होता है वहीं से मानवता शुरू होती है ।___ **हजारी प्रसाद द्विवेदी ।**

अच्छा स्वास्थ्य और अच्छी समझ जीवन के दो सर्वोत्तम वरदान है । ___ **साइरस ।**

सच्ची जिंदगी वही है ,जिसमें हम केवल अपने लिए नहीं, सबके लिए जीते हैं । ___ **प्रेमचन्द ।**

जगत मैं सब कुछ क्षणभंगुर है , बचा रहता है तो बस आदर्श । हमारा आदर्श ही हमारी आशा है ।___ **नेताजी सुभाष चंद्र बोस ।**

कोई सदाचारी विद्वान न हो , तो कोई बात नहीं , किंतु धर्म ग्रंथो का ज्ञाता यदि सदाचारी नहीं तो कोरा ज्ञान उसका कल्याण नहीं कर सकता ।___ **सन्त देवराहा बाबा ।**

जीवनरूपी वाटिका में सत्संग के सिंचन से सद्गुण रूपी पुष्प विकसित होते हैं जिससे जीवन रूपी वाटिका महक उठती है ।

जब अपवित्र विचारों से एक व्यक्ति के भीतर घृणा व नफरत के बीज बोयें जा सकते हैं , तो पवित्र विचारों से एक व्यक्ति के जीवन में प्रेम करुणा और वात्सल्य क्यों नहीं खिलायें जा सकते ?___**बाबा रामदेव ।**

सदाचार ही श्रेष्ठ गुण है । चीन के दार्शनिक कन्फ्यूशियस अपने उपदेश में प्रायः कहा करते थे की सदाचार ही व्यक्ति का श्रेष्ठ गुण है । सदाचार सरलता और प्रेम ये धर्म के प्रमुख अंग है । जो सदाचारी नहीं , कामी क्रोधी लोभी और ईशालु है , उसे प्रभु की कृपा कभी नहीं मिल सकती । जो व्यक्ति सरल जीवन जीता है , उसकी यह तपस्या ही सच्ची तपस्या है । वे कहते थे की अधार्मिक वह है , जिसका हृदय दूसरे के दुख को देखकर दुखी नहीं होता । श्रेष्ठ कोटि का धार्मिक वह है , जो पर स्त्री को देखकर अपनी मां ,बहन या बेटी की तरह प्यार सम्मान देता है । सच्चा दानी वही है , जो दान देकर अहंकार या प्रदर्शन नहीं करता ।___ **दार्शनिक कन्फ्यूशियस ।**

Edit with WPS Office

• धर्म का सार- सदाचार :___

कश्मीर के राजा गोपादित्य धर्म परायण शासक थे । एक बार उन्होंने वैष्णव, शैव, शाक्त, जैन बौद्ध आदि विभिन्न सम्प्रदायों के शास्त्र मर्मज्ञ का सम्मेलन आयोजित किया । उन्होंने स्वयं सभी विद्वानों का सत्कार करके विनम्रता के साथ कहा , हमारे विभिन्न संप्रदाय अलग-अलग धर्म ग्रंथो में विश्वास रखते हैं और सभी अपने-अपने धर्म ग्रंथो के अनुसार चलने में कल्याण बताते हैं । मैं यदि कई जन्म लूं तब भी समस्त धर्म ग्रंथो का पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता । अतः सभी एक साथ बैठकर विचार विमर्श करें तथा समस्त धर्मों का सार चन्द शब्दों में लिखने की कृपया करें ।

सभी विद्वानों ने सलाह की । अगले सभी ने सर्वसम्मत्ति से एक कागज पर लिखा , दूसरों के दुख से दुखी होना , दूसरों का उपकार करना , श्रेष्ठ आचार ही धर्म है । किसी को दुख पहुंचाना , किसी का शोषण व उत्पीड़न करना अधर्म है, पाप है , दुष्टाचार है । राजा गोपादित्य ने सभी विद्वानों को स्वर्ण मुद्राएं देकर सम्मानित किया ।

• जीवन की सार्थकता : ______

राजा विक्रमादित्य अत्यंत पराक्रमी न्यायप्रिय ईमानदार और दयालु शासक थे । एक बार वह अपने गुरु के दर्शन करने उनके आश्रम पर गए । वहां जाकर उन्होंने अपने गुरु जी से अपनी कई जिज्ञासाओं का समाधान किया । जब वह वहां से चलने को तैयार हुए तो उन्होंने गुरुजी से कहा ,-गुरु जी, मुझे कोई ऐसा प्रेरक वाक्य बताइए जो महामंत्र बनाकर न केवल मेरे बल्कि मेरे उत्तराधिकारियों का भी मार्गदर्शन करता रहे । गुरु जी ने उन्हें एक श्लोक लिखकर दिया जिसका आशय यह था कि मनुष्य को दिन व्यतीत हो जाने के बाद कुछ समय निकालकर यह चिंतन अवश्य करना चाहिए कि आज का व्यतीत होने वाला दिन पशुवत गुजरा या सत्कर्मों में बीता क्योंकि बिना सत्कर्म, समाज सेवा, परोपकार आदि के तो पशु भी अपना गुजारा प्रतिदिन करते हैं, जबकि मनुष्य का कर्तव्य तो अपने

Edit with WPS Office

सत्कर्मों द्वारा जीवन को सार्थक करना है । इस श्लोक का राजा विक्रमादित्य पर इतना असर पड़ा कि उन्होंने इसे सिंहासन पर अंकित करवा दिया और इसका पालन भी किया ।

अतः प्रत्येक मानव को प्रतिदिन कम से कम एक सत्कर्म करके जीवन को सार्थक बनाना चाहिए ।

- **16.___ सत्कर्म और परिश्रम के सम्बन्ध में एक कवि ने कहा है:_____**

जिसको मेहनत से बहाना पसीना आता है ।
फटा आंचल दुखी दुर्बल का सीना आता है ।
चाहता है और के जीने में जो अपना जीना ।
सच तो यह, दुनिया में उसको ही जीना आता है ।

17.___ महाकवि तुलसीदास ने कहा :_____

तुलसी संत सुअंव तरु फूलहि पर हेत ।
इतते वे पाहन हनै उतते वे 'फल देता, ।

तुलसीदास जी कहते हैं कि सज्जन व्यक्ति और आम का पेड़ दूसरों के लिए ही फलते फूलते हैं । यदि कोई आम के पेड़ पर पत्थर फेंक मारता तो उसके बदले उसे आम का फल देते हैं । इसी प्रकार सज्जन व्यक्ति भी अपना अहित करने वालों का भला ही करते हैं ।

एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि मानव सत्कर्म करने वाला कैसे बनें, उसके हृदय को शुद्ध और पवित्र कैसे बनाया जाए ताकि उसमें उत्तम विचार उत्पन्न होने लगें । इस का एक साधन है– सत्संगति मुख्य रूप से दो प्रकार की है । एक अच्छी- अच्छी पुस्तको को अध्ययन करना व मनन करना और उसके अनुसार आचरण करना । वेद, सत्यार्थ प्रकाश, गीता ,व रामायण महाभारत आदि श्रेष्ठ पुस्तकों के पढ़ने से न जाने कितने मनुष्य भव सागर से पार हो गए हैं । दूसरे किसी श्रेष्ठ व्यक्ति के पास बार-बार जाना उसके विचारों से, उसके क्रियात्मक जीवन से प्रभावित होकर उन्हें अपने जीवन में धारण

Edit with WPS Office

करना ।

• वेद मंत्र और सत्संगति :_____

सत्संगति के सम्बन्ध में ऋग्वेद में कहा है___

1.___ **पुनर्ददताघ्नता जानता से गमेहि ।** (ऋग्वेद. 5/51/15)

हम दानी , अहिंसक और विद्वानों की संगति करें ।

2.___ **पवित्रवन्त: पीरवाचमासते ।** (ऋग्वेद. 9/73/3)

पवित्रता के इच्छुक वेद ज्ञान का सहारा ले ।

3.___यजुर्वेद. 9/19

भावार्थ___ जो मनुष्य विद्वान के साथ विधा और उत्तम शिक्षा को प्राप्त हो के धर्म का आचरण करते हैं । उनको इस लोक और परलोक में परमैश्वर्य का साधक राज्य , विद्वान माता- पिता निरोगता प्राप्त होती है । जो पुरुष विद्वानों की संगति करते हैं ,वे शरीर और आत्मा की शुद्धि को प्राप्त हुए सब सुखों को भोगते है । इससे विरुद्ध चलने हारे नहीं ।

4.___ अथर्ववेद. 18/4/14

मंत्र___ **स्वर्गपन्था : सुकृते देवयान: ।**

भावार्थ___ पुण्यात्माओं के लिए विद्वानों का अनुकरण स्वर्ग का रास्ता है ।

• आचार्य चाणक्य ने सत्संग के विषय में कहा ,---

जैसे मछली दर्शन से , कछवी ध्यान से और पक्षिणी स्पर्श से अपने बच्चों का सदा पालन पोषण करती है , ऐसे ही श्रेष्ठ पुरुषों की संगति मनुष्यों का पालन पोषण करती हैं । और कुमार्ग पर चलने वालों के लिए कहा है –

अपन्थांन तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुंचति ।

जो कुमार्ग पर चलता है , उसे अपना सहोदर भाई भी छोड़ देता है ।

• भतृहरि ने कहा है –

Edit with WPS Office

सत्संगति कथय किं न करोति पुंसाम्

सज्जनों की संगति मनुष्यों का क्या- क्या हित नहीं करती है ? अर्थात सब प्रकार की भलाई करती हैं ।

- **कालिदास ने कहा –**

विद्वानों की संगति से मुर्ख व्यक्ति भी विद्वान बन जाता है ।

नीति शतक में कहा गया है कि –

गुणी व्यक्तियों की संगत से बढ़कर कोई लाभ नहीं और दुव्यसनियों , मूर्खों के संसर्ग से बड़ा कोई दुख नहीं ।

- **रहीम कवि कहते हैं –**

रहीमन नीचन संग बसि लगत न कलंक काहि ।
दूध कलारिन हाथ लखि मद समओ सब ताहि ।।

रहीम कवि कहते हैं कि नीचों के साथ रहने से किसको कलंक नहीं लगता अर्थात सब कलंकित हो जाते हैं । जैसे मदिरा बेचने वाली औरत के हाथों में दूध को भी मदिरा ही समझेंगे ।

सत्संग एक मात्र ऐसा सरल साधन है, जो अज्ञान और कल्पित भ्रामक धारणाओं से मुक्ति दिलाकर मानव जीवन के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त करने की क्षमता रखता है । इसके विपरीत यदि कोई कुसंग में फंस जाए तो वह उसे राक्षस बना देती है । बड़े बड़े परिवारों के बच्चे कुसंग में फंस जाने से बिगड़ जाते है । पूज्य महात्मा गांधी जी के पुत्र हीरालाल गांधी यदि बिगड़े तो इसलिए कि उन्होंने अपने पिता की बजाय दूसरों की बुरी संगत में फंस गए । यह है संगत का प्रभाव । यदि मानव को अच्छी संगत मिल जाती है तो उस का कल्याण हो जाता है । दुर्गुण और दुव्यसनों में फंसे हुए अमीचन्द को स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने कहा – अमीचन्द ! हो तो हीरा, मगर कीचड़ में पड़ गए हो ? स्वामी जी के इस वचन ने अमीचंद के जीवन का रंग- रुप बदल दिया । मृत्यु के अन्तिम दृश्य ने नास्तिक गुरुदत्त को आस्तिक बना दिया । उसने अपना सारा जीवन ऋषि मिशन को समर्पित कर दिया ।

कदली सीप भुजंग मुख , स्वाति एक गुण तीन ।

Edit with WPS Office

जैसी संगत कीजिए , तैसा ही फल दीन ।।

स्वाति नक्षत्र से वर्षा होती है, बूंदें नीचे गिरती है । एक बूंद केले के पत्ते में जा गिरती है और वह कपूर बन जाती है दूसरी बूंदें सीप के मुख में जा गिरती है और मोती बन जाती है । तीसरी बूंदें सर्प के मुख में जा गिरती है और वह विष बन जाती है । एक ही वर्षा का एक सा पानी भिन्न भिन्न प्रकार की संगति के कारण तीन भिन्न भिन्न प्रकार के रूप धारण कर लेता है । कपूर सुगन्ध देता है । सैकड़ो रोगों में काम आता है , यज्ञ और पूजा के पवित्र स्थान पर पहुंचता है । मोती अमीरों के माथे का श्रृंगार, गले का हार बनता है , औषध बन जाए तो रोगी के लिए अमृत बन जाता है । विष तो विष ही है , मृत्यु लाता है । पानी एक ही जैसा है , एक ही आकाश से एक ही समय गिरा , संगति के कारण एक स्थान पर अमृत हो गया तो दूसरे स्थान पर विष ।

इसलिए सत्संग करो । सौ काम छोड़कर भी सत्संग में जाओ । पता नही कौन सी बात आपके जीवन को बदल दे ।

• रामायण और सत्संगति : ______

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड में सत्संगति के सम्बन्ध में कहते हैं –

एक बार भाइयों सहित श्री रामचंद्र जी परम प्रिय हनुमान जी को साथ लेकर सुंदर उपवन देखने गए । वहां पर सनकादि मुनि भी आ गए । तब श्री राम ने हर्षित होकर दंडवत की और प्रसन्न होकर कहा –

बड़े भाग पाइब सतसंगा । बिनहिं प्रयास हो हिं भव भंगा ।।

बड़े भाग्य से सत्संगति प्राप्त होती है । जिससे बिना ही परिश्रम जन्म मृत्यु का चक्र नष्ट हो जाता है । संत का संग मोक्ष का और कामी का संग जन्म-मृत्यु के बंधन में पड़ने का मार्ग है ।

सुंदरकांड में जिस समय हनुमान जी लंका में प्रवेश करने के लिए चले तो वहां लंकिनी नाम की राक्षसी ने उनको रोक कर कहा कि मेरी बिना आज्ञा के कैसे जा रहा है ? इस पर हनुमान जी ने उसे एक घूंसा मारा । जिससे वह

Edit with WPS Office

पृथ्वी पर लुढ़क गई । पुनः संभल कर उठी और बोली कि रावण को जब ब्रह्मा जी ने वर दिया था ,तब चलते समय मुझे उन्होंने राक्षसों के विनाश की पहचान बता दी थी कि जब तू बंदर के मारने से व्याकुल हो जाए तब तू राक्षसों का संहार हुआ जान लेना । हे तात ! मेरे बड़े भाग्य हैं कि जो मैंने आपको अपने नेत्रों से देखा और यह कहां –

हे तात ! स्वर्ग और मोक्ष के सब सुखों को तराजू के एक पलडें में रखा जाए ,तो भी वे सब मिलकर दूसरे पलड़े में रखें हुए उस सुख के बराबर नहीं हो सकतें , जो क्षणमात्र के सत्संग से प्राप्त होता है ।

और फिर हनुमान जी की भेट विभीषण से हुई तो विभीषण ने अपनी दुर्दशा का वर्णन करते हुए बुरी संगत से मिलने वाले दुखों के सम्बन्ध में कहा –

सुनहु पवन सुत रहनि हमारी । जिमि दसनन्हि महुं जीभ बिचारी ।।

विभीषण ने कहा, हे पवनसुत ! मेरी कहानी सुनो । मैं यहां वैसे ही रहता हूं जैसे दांतों के बीच में बेचारी जीभ रहती है ।

एक बार गुरु वशिष्ट जी श्री राम जी से अपने उपदेश में कह रहे थे – जब सत्पुरुषों के सानिध्य से मन वैराग्य में रमने लगता है , तब ऐसा विवेक उत्पन्न होता है कि भोगों की तृष्णा स्वयंमेंव नष्ट हो जाती है और सांसारिक विषय नीरस लगने लगते हैं । अज्ञान के नष्ट हो जाने पर विवेकी पुरुष भोग , वैभव ,धन संपत्ति आदि को झूठी पत्तल की तरह तुच्छ समझकर उनकी ओर देखता नहीं ।

वशिष्ठ जी ने आगे बताते हुए कहा की विवेक वैराग्य सत्पुरुषों के सत्संग से ही मनुष्य का सभी प्रकार का अज्ञान दूर होता है । ऐसे सत्पुरुषों के माध्यम से ही राष्ट्र और समाज का कल्याण संभव है । जिस प्रकार दीपक अंधकार का नाश करता है उसी तरह से विवेक और ज्ञान संपन्न महापुरुष सभी तरह के अज्ञान रूपी अंधकार का नाश करने में समर्थ होते हैं । ऐसे लोगों के सत्संग से प्राप्त विवेक ही तमाम तरह के अंधकार रूपी बंधनों से मुक्ति दिलाकर वासना युक्त अज्ञानी जीव का संसार- सागर से उद्धार कर देता है ।

Edit with WPS Office

• सदाचार की सीढ़ी : ______

एक दिन चैन मुनि सुदर्शन जी के पास एक श्रद्धालु पहुंचा । उसने कहा, मुनि श्री, मैं अनेक वर्षों से धर्म ग्रंथो का अध्ययन कर यथासंभव ज्यादा से ज्यादा ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करता हूं , पर सच्ची सुख शान्ति की अनुभूति नहीं हो पा रही है । यह किन साधनों से प्राप्त हो सकती है ? मुनि सुदर्शन जी ने उसे कहानी सुनाई –

एक व्यक्ति हाथों में दो डंडे लेकर महल के पास पहुंचा । किसी ने हाथों में डंडे देखें तो पूछा, ' ये डंडे क्यों ले रहे हो ? उसने बताया, ' महल की ऊपरी मंजिल तक पहुंचने के लिए, । यह सुनकर उस व्यक्ति ने कहा, अरे भैया, केवल इन दो डंडों के सहारे ऊपर तक नहीं पहुंच पाओगे । इन डंडों के बीच आड़ी सीढियां बनाकर ही ऊपर तक पहुंचा जा सकता है । विवेक से काम लो , तभी ऊपर तक पहुंच पाओगे । इतना कह वह व्यक्ति चला गया ।

इतना कहने के बाद मुनि श्री ने कहा, शास्त्रों का कितना भी अध्ययन कर लो , पर साधना में सफलता तभी मिलेगी, जब ज्ञान- विवेक, तपस्य रुपी डंडों के बीच सदाचार रुपी सम्यक चरित्र की आड़ी पट्टियां फिट करोगे । सम्यक चरित्र से ही एक ऐसी नसैनी तैयार हो सकती है, जिस पर एक एक कदम रखकर आदमी अपने लक्ष्य तक पहुंच सकता है । मुनि श्री के इस कथन से श्रद्धालु की जिज्ञासा शान्त हो गई ।

स्वाध्याय में चित्त लगाने से सन्मार्ग पर चलने की रुचि उत्पन्न होती है । व्यक्ति चाहे किसी शस्त्र को थोड़ा पढ़ता हो, पर उसका चिन्तन करता रहें । शास्त्र के अर्थ पर , आदेश पर, मर्म पर, और महत्व पर गम्भीरता से मनन करें । मनन करने के पश्चात् जो सार निकले, उसको कार्य रूप में परिणत करने पर ही स्वाध्याय का वास्तविक लाभ प्राप्त होगा ।

स्वाध्याय से ज्ञान प्राप्त होता है और उस ज्ञान का यदि हम अपने व्यवहारिक जीवन में पालन नहीं करते तो वह उसी प्रकार निरर्थक है जैसे किसी अच्छे सुयोग्य डॉक्टर से रोग की दवाई लेकर उसका सेवन नहीं करें । रोग तो तभी दूर होगा जब हम उस दवाई का सेवन करेंगे । इस सम्बन्ध में महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा है –

Edit with WPS Office

केवल पुस्तकीय ज्ञान से सच्चा विवेक जागृत नहीं किया जा सकता । धर्म ग्रंथो के अध्ययन के साथ-साथ उनमें बताई गई बातों को अपने जीवन में उतरने से ही उनसे लाभान्वित हुआ जा सकता है । जिस प्रकार अपनी आंखों और दीपक के प्रकाश से ही घोर अंधकार में रास्ता पार किया जा सकता है , ठीक उसी प्रकार धर्म ग्रंथो की बातों का मन, कर्म और वचन से पालन करने वाला ही अविवेक रुपी संसार- सागर को पार कर लक्ष्य तक पहुंच सकता है ।

• आचरण के बिना सब व्यर्थ : ______

हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन कहां करते थे , वहीं शिक्षा सार्थक कहीं जाएगी, जो सदाचारी व संस्कारी बनने की प्रेरणा देती है । संस्कारहीन शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को यह विवेक नहीं रहता कि क्या करने में कल्याण है । इसलिए शिक्षा के साथ साथ आचरण की सुचिता पर अवश्य ध्यान देना चाहिए ।

रावण ने सोने की लंका बनाई । उसने विशाल भवन में अनेक शालाओं का निर्माण कराया । एक दिन उसकी इच्छा हुई कि कोई मुनि लंका अवलोकन कर उसकी उपलब्धियों का बखान करे । रावण ने कुकुत मुनि को सादर आमंत्रित करते हुए कहा, आपके चरण मेरे महल में पड़ने चाहिए । उसकी दिव्यता और उपलब्धियों को देखकर आप स्वत: मुझे आशीर्वाद देने को तैयार होंगे । मुनि ने आमंत्रण स्वीकार कर लिया । जब वह लंका पहुंचे तो रावण ने उन्हें निरीक्षण कराते हुए कहा, यह अस्त्रशाला है , इसमें तरह- तरह के आधुनिक शस्त्रास्त्र है । यह चिकित्सालय है, यहां रोगों के निवारण के लिए तरह-तरह की औषधियां हैं । इस जगह मेरे इष्ट देव भगवान शंकर जी की स्तुति में हर समय गायन- वादन चलता रहता है । मुनि का ध्यान बरबस मदिरालय की ओर गया । वह समझ गए कि रावण की असुरता का प्रतीक है । मुनि श्री ने कहा, रावण , तुम्हारे महल में भव्य शस्त्रशाला है, किन्तु इन शस्त्रों का उपयोग किसके विरुद्ध किया जाना चाहिए , क्या इसका विवेक देने वाली आचरणशाला है । मुनि ने उसे चेताते

Edit with WPS Office

हुए आगे कहा, आचरणहीनता ही तुम्हारी लंका और तुम्हारे वंश के समूल नाश का कारण बनेगी । कालान्तर में मुनि की बात सच साबित हुई ।

• धर्मग्रन्थों की शिक्षा पर अमल करना : ______

मानव जब वेदों अथवा अन्य धर्मग्रन्थों की शिक्षा पर अमल करता है तो इस लोक में अन्नपान की बहुतायत से अभ्युदय होता ही है । इसके सिवा यश, तेज आदि उत्कृष्ट फलों की प्राप्ति से वह सूर्य द्वारा देवयान के पथिक की स्थिति में , अमृतत्व प्राप्त करने के लिए ब्रह्मलोक में भी पहुंच जाता है । ___ **छान्दोग्य उपनिषद् ।**

मनु महाराज जी कहते हैं कि जो व्यक्ति संतों, विद्वानों, सदाचारियों का निरादर और दुराचारियों व मूर्खों का आदर करता है , वह अक्षम्य पापों का भागी बनता है । अतः हमेशा सत्पुरुषों का सत्संग करके, उनको आदर देकर पापों से बचना चाहिए । शरीर से ही नहीं , मन से भी किसी का अहित नहीं सोचना चाहिए ।

सामाजिक प्राणी होने के नाते हमें किसी ना किसी का साथ तो करना ही पड़ेगा । लेकिन यदि हम सावधानी पूर्वक सदाचारियों या विवेकी पुरुषों की संगत करेंगे, तो स्वयं भी अच्छे गुणों को ग्रहण कर अपना जीवन सार्थक बनाएंगे । इसके विपरीत यदि हम दुर्व्यसनों से भरे लोगों की संगत करेंगे, तो स्वयं भी दुर्गुणों से युक्त होकर अपना जीवन दुखमय बना लेंगे । **सन्त कबीर दास** जी कहते हैं कि –

जानि बूझि सांचहि तजै, करै झूठ सो ने हूं ।
ताकि संगत राम जी, सपनेहु ना देहू ।।

• आचार्य चाणक्य का कथन –

संसार रुपी कड़वे वृक्ष के दो ही फल मीठे होते हैं – मधुर वाणी और सज्जनों की संगति ।

Edit with WPS Office

• [सदाचार- प्रशंसा]

{ वशिष्ठ स्मृति. 6/3 , देवी भागवत. 11/2/1 }
शिक्षा कल्प निरुक्त छन्द व्याकरण और ज्योतिष इन छः अंगोंसहित अध्ययन किये हुए वेद भी आचारहीन मनुष्य को पवित्र नहीं करते । मृत्युकाल में आचारहीन मनुष्य को वेद वैसे ही छोड़ देते हैं , जैसे पंख उगने पर पक्षी अपने घोंसले को ।

{ मनुस्मृति. 4/156 }
मनुष्य आचार से आयु को प्राप्त करता है , आचार से अभिलषित संतान को प्राप्त करता है , आचार से अक्षय धन को प्राप्त करता है और आचार से अनिष्ट लक्षण को नष्ट कर देता है ।

{ मनुस्मृति. 4/157 , वशिष्ठस्मृति. 6/6 }
दुराचारी पुरुष संसार में निन्दित , सर्वदा दुखभागी रोगी और अल्पायु होता है ।

{ महाभारत उद्योगपर्व 113/15 }
आचार ही धर्म को सफल बनाता है , आचार ही धनरुपी फल देता है , आचार से मनुष्य को सम्पत्ति प्राप्त होती है और आचार ही अशुभ लक्षणों का नाश कर देता है ।

{ महाभारत उद्योगपर्व. 36/28-29 }
गौओं , मनुष्यों और धन से सम्पन्न होकर भी जो कुल सदाचार से हीन है , वे अच्छे कुलों की गणना में नहीं आ सकते । परन्तु थोड़े धन वाले कुल भी यदि सदाचार से सम्पन्न हैं तो वें अच्छे कुलों की गणना में आ जाते हैं और महान यश प्राप्त करते हैं ।

{ महाभारत उद्योगपर्व. 36/30 }
सदाचार की रक्षा यतपूर्वक करनी चाहिए । धन तो आता और जाता रहता

Edit with WPS Office

है । धन क्षीण हो जाने पर भी सदाचारी मनुष्य क्षीण नहीं माना जाता है ; किन्तु जो सदाचार से भ्रष्ट हो गया , उसे तो नष्ट ही समझना चाहिए ।

{ महाभारत उद्योगपर्व. 34/41 }

मेरा ऐसा विचार है कि सदाचार से हीन मनुष्य का केवल ऊंचा कुल मान्य नहीं हो सकता ; क्योंकि नीच कुल में उत्पन्न मनुष्यों का भी सदाचार श्रेष्ठ माना जाता है ।

{ नारद पुराण, पूर्व० 4/22 }

आचार से धर्म प्रकट होता है और धर्म के स्वामी भगवान विष्णु हैं । अतः जो अपने आश्रम के आचार में संलग्न है , उसके द्वारा भगवान श्री हरि सर्वदा पूजित होते हैं ।

{ विष्णु पुराण. 3/11/2-3 }

सदाचारी मनुष्य इहलोक और परलोक दोनों को ही जीत लेता है । सत् शब्द का अर्थ साधु है और साधु वहीं है जो दोषरहित हो । उस साधु पुरुष का जो आचरण होता है ,उसी को सदाचार कहते हैं ।

{ शिवपुराण वा० उ० 14/56 }

आचारहीन मनुष्य संसार में निन्दित होता है और परलोक में भी सुख नहीं पाता । इसलिए सबको आचारवान् होना चाहिए ।

{ महाभारत अनुशासन पर्व. 143/51 }

लोक में यह सारा ब्राह्मण- समुदाय सदाचार से ही अपने पद पर बना हुआ है । सदाचार में स्थित रहने वाला शूद्र भी (इस जन्म में ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है ।

{ देवी भागवत पुराण. 11/1/10-11 }

आचार से ही आयु , संतान तथा प्रचुर अन्न की उपलब्धि होती है । आचार सम्पूर्ण पातकोंको दूर कर देता है । मनुष्यों के लिये आचार को

Edit with WPS Office

कल्याणकारक परमधर्म माना गया है । आचारवान् मनुष्य इस लोक में सुख भोगकर परलोक में भी सुखी होता है ।

{ देवी भागवत पुराण. 11/24/98 }
भगवान नारायण बोलें ! नारद ! आचारवान् मनुष्य सदा पवित्र , सदा सुखी और सदा ही धन्य हैं – यह सत्य है , सत्य है ।

- ## { वेद के सदाचार विषय पर महत्वपूर्ण मंत्र }

ऋग्वेद. 10.5.6 ______
भावार्थ : अर्थात हिंसा , चोरी , व्याभिचार , मधपान , जुआ , असत्य भाषण और इन पापों के करनेवालों दुष्टों का सहयोग करने का नाम सप्त मर्यादा है । इनमें से जो एक भी मर्यादा का उल्लंघन करता है , अर्थात एक भी पाप करता है , वह पापी होता है और जो धैर्य से इन हिंसादि पापों को छोड़ देता है वह निस्संदेह जीवन का स्तम्भ (आदर्श) होता है और मोक्षभागी होता है ।

ऋग्वेद. 7.104.22 ______
भावार्थ : अर्थात गरुड़ के समान (घमंड) , गीध के समान लोभ , कोक (चिड़ा) के समान काम , कुत्ते के समान मत्सर , उलूक के समान मोह (मूर्खता) और भेड़िया के समान क्रोध को मार भगाइए , अर्थात काम , लोभ , मोह , मद , मत्सर आदि छह विकारों को अपने अन्त: करण से हटा दीजिए ।
इन हिंसा आदि बाहरी और कामादि अन्तर्दुर्वासनाओं के त्याग से ही मनुष्य उत्तम सामाजिक हो सकता है । इन सबमें सत्य की महिमा महान है । वेद उपदेश करते हैं ___

ऋग्वेद. 10.71.2 , यजुर्वेद. 1.5 , 19.77 , अथर्ववेद. 10.5.22 , ऋग्वेद. 7.104.12

Edit with WPS Office

इन सभी मंत्रों में सदाचार का उपदेश है ______

भावार्थ : अर्थात जिस प्रकार छाननी से सत्तू छाने जाते हैं उसी प्रकार जहां विद्वान लोग अपनी वाणी को मन से शुद्ध करके बोलते हैं , वहीं पर लक्ष्मी और मित्रता ठहरती है । हे परमेश्वर ! मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि अपनी जीवनभर सत्य का पालन करूंगा , अतः हम असत्य से निकलकर सत्य में आता हूं । प्रजापति ने सत्य और असत्य को समझ - बूझकर अलग किया है और असत्य में अश्रद्धा तथा सत्य में श्रद्धा उत्पन्न की है । तीन वर्षों के इस पार जो हम झूठ बोले हो तो हे परमात्मन् ! उन सब दुष्फल पापों से हमारी रक्षा कीजिए । मनुष्य की सुविधा के लिए सत्य और असत्य के विज्ञान को एक दूसरे के विरुद्ध कहा गया है । इन दोनों में जो सत्य है वह सरल और सीधे स्वभाव से कहा जाता है तथा उससे कोमलता आती है , परंतु जो असत्य है वह तो हर प्रकार से सत्यानाश ही कर देता है ।

इन सत्य के प्रतिपादन करनेवाले मन्त्रों ने सत्यभाषण की समस्त विशेषताओं का सुन्दर वर्णन कर दिया है । अब आगे मधुर भाषण की विशेषताओं का वर्णन करते हैं ।

अथर्ववेद. 1.34. 1 -- 2 ______

भावार्थ : अर्थात मेरी जिह्वा के अग्रभाग में मधुरता हो और जिह्वा के मूल में मधुरता हो । हे मधुरता ! मेरे कर्म में तेरा वास हो और मेरे मन के अंदर भी तू पहुंच जा । मेरा आना - जाना मधुर हो , मैं जो भाषा बोलूं वह मधुर हो और मैं स्वयं मधुर -- मूर्ति बन जाऊं ।

यहां तक सत्य और मधुर वाणी बोलने की शिक्षा देकर अब वेद उपदेश करते हैं कि आ

अपनी किसी भी इंद्रियं से अभद्र , असत्य और अमंगल व्यवहार न होने दो , किंतु तब व्यवहार भद्र - ही - भद्र हो । यजुर्वेद उपदेश करता है ___

यजुर्वेद. 25.21 ______

भावार्थ : अर्थात हे यज्ञ करने वाले परमेश्वर के भक्त विद्वानों ! हम सदैव कल्याणकारी शब्द ही कानों से सुने , कल्याणकारी दृश्य ही आंखों से देखें और अपने दृढ़ अंगों के द्वारा शरीर से यावजीवन वही कर्म करें , जिससे

Edit with WPS Office

विद्वानों का हित हो ।
इसके आगे मनसा , वाचा , कर्मणा , बुराई से बचने का उपदेश किया गया है । अथर्ववेद में लिखा है ___

अथर्ववेद. 19.9.4 , 3 , 5 ______
भावार्थ : अर्थात यह जो ज्ञान से तीक्ष्ण बना हुआ मन है और जिससे भयंकर प्रसंग उत्पन्न हो जाते हैं , वह हमें शांति दे । यह जो ब्राह्मण के द्वारा संस्कृत हुई पर्मिष्ठिनी वाणी है और जिससे भयंकर प्रसंग उत्पन्न हो जाते हैं वह हमें शांति दे । ये जो पांचों ज्ञान अथवा कर्मेंद्रियां है और जिनसे प्रसंग छठे मन के साथ भयंकर पाप को पडते हैं , वे हमें शांति दे ।
इस प्रकार इन मंत्रों में मनसा , वाचा और कर्मणा पापों से बचने और शांति से रहने का उत्तम उपदेश दिया गया है । इन सब मन , वाणी और कर्मों में मन ही प्रधान है । उसी प्रकार से सब पापों की उत्पत्ति होती है , इसलिए मन को निष्पाप करने का उपदेश इस प्रकार दिया गया है ___
अथर्ववेद. 6.45.1 ______
भावार्थ : अर्थात हे मेरे मन के पापों ! तुम मुझसे दूर हो जाओ । मुझसे बुरी बातें क्यों करते हो ? मैं तुमको नहीं चाहता , इसलिए मेरे पास से दूर हो जाओ और जहां वन - वृक्ष है वहां चले जाओ , क्योंकि मैं अपने शरीर , इंद्रियं और मन में चित्त लगा रहा हूं ।
इसी प्रकार मन से सम्बन्ध रखने वाले ईर्ष्या - द्वेष से बचने का भी उपदेश किया गया है । अथर्ववेद में कहां है ___
अथर्ववेद. 6.18.2 ______
भावार्थ : अर्थात जैसे पृथिवी मुर्दे से भी अधिक मननशक्तिशून्य है और जैसे मरे हुए का मन भी शून्य हो जाता हैं उसी प्रकार ईर्ष्या करने वाले का मन भी मुर्दा हो जाता है ।
इस उपदेश का यही तात्पर्य है कि ईर्ष्या द्वेष करने से मन की विशालता नष्ट हो जाती है । वह अत्यंत संकुचित हो जाता है , मर जाता है और निंदा भी होती है । निंदा से बचने के लिए वेद उपदेश करते हैं कि ___
अथर्ववेद. 19.51.1 ______
भावार्थ : अर्थात मैं अनिन्दित होऊं , मेरा आत्मा अनिन्दित होवे और मेरे

Edit with WPS Office

चक्षु , श्रोत्र , प्राण , अपान तथा व्यान अनिन्दित होवे ।
इसके आगे वेद मंत्रों में व्याभिचार आदि दुष्ट कर्मों का त्याग करने की शिक्षा इस प्रकार दी गई है ___

ऋग्वेद. 1.125.7 ______

भावार्थ : अर्थात दुष्ट कर्म मत करो और न प्रतिष्ठित तथा धर्मात्माओं में व्याभिचार ही करो , क्योंकि व्यभिचार करने वालों के लिए दूसरा ही कानून है , जिससे वे शोक को प्राप्त होते हैं ।
इसके आगे हिंसा का निषेध इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 10.1.29 , 12.2.51 ______

भावार्थ : अर्थात हे हिंसे ! निर्दोषों की हत्या निश्चय ही महाभयानक है , अतः तू हमारी गौ , घोड़े और पुरुषों को मत मार । जहां-जहां तू गुप्तरुप से छिपी है वहां-वहां से हम तुझे निकालते हैं , अतः तू पत्ते से भी अधिक हल्की हो जा । अश्रद्धावाले जो धन की कामना से मांस खाने वालों का साथ करते हैं , वे सदैव दूसरों की ही हांडी का खाते हैं ।
इन मंत्रों में पशुवध और मांसभक्षण का निषेध किया गया है । इसके आगे मध का निषेध इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 8.2.12 ______

भावार्थ : अर्थात दिल खोलकर शराब पीनेवाले दुष्ट लोग आपस में लड़ते हैं और नंगे होकर व्यर्थ बड़बड़ाते है , इसलिए शराब का पीना बुरा है । जिस प्रकार शराब पीना बुरा है । वेद उपदेश करते हैं ___

ऋग्वेद. 10.34.10 ______

भावार्थ : अर्थात जुआरी की स्त्री कष्टमय अवस्था के कारण दुःखी रहती है , गली- गली मारे - मारे फिरनेवाले जुआरी की माता रोती रहती है , कर्जे से लदा हुआ जुआरी स्वयं सदा डरता रहता है और धन की इच्छा से वह रात के समय दूसरों के घरों में चोरी करने के लिए पहुंचता है , इसलिए जुआ खेलना अत्यंत बुरा है ।
इसी प्रकार चोरी को भी बुरा बतलाया गया है । अथर्ववेद में कहां है कि ___

अथर्ववेद. 1.16.1 ______

भावार्थ : अर्थात जो मुफ्तखोरे , भूखें और भटकनेवाले अंधेरी रात में बस्ती के भीतर चोरी करने और डाका डालने के लिए आते हैं , उनसे बचने के

Edit with WPS Office

लिए राजपुरुष सबको सचेत करता है और उन्हें पकड़कर मार डालता है , इसलिए कभी किसी की चोरी नहीं करना चाहिए ।

यहां तक स्थूल सदाचार का वर्णन करके अब सभ्यता - संबंधी सदाचार का वर्णन करते हैं । सभ्यता में सबसे पहली बात स्वच्छता और पवित्रता की है , इसलिए वेद उपदेश करते हैं ___

यजुर्वेद. 20.20 , यजुर्वेद. 19.39 ______

भावार्थ : अर्थात जैसे वृक्ष से सूखें पत्ते गिर जाते हैं , जैसे पसीना निकला हुआ आदमी स्नान से मल को धो डालता है और जैसे घी से पवित्रता होती है , उसी प्रकार हे जल ! मेरे शरीर , वस्त्र और घर के मलों को शुद्ध कर दे । मुझे विद्वान पवित्र करें । मेरा मन और बुद्धि पवित्र करें । संसार के समस्त प्राणी मुझे पवित्र करें और यह अग्नि मुझे पवित्र करें ।

इस स्वच्छता और पवित्रता के उपदेश के आगे सदाचार से संबंध रखने वाली दिनचर्या का उपदेश इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 10.151.5 , 1.125.2 , 1.125.1 ______

भावार्थ : अर्थात मैं प्रातः काल श्रद्धा की पूजा करता हूं , मैं मध्यदिन में श्रद्धा की पूजा करता हूं और मैं सूर्य छिप जाने पर श्रद्धा की पूजा करता हूं , इसलिए हे श्रद्धे ! तू श्रद्धा के लिए आ । जो प्रातः काल उठता है उसे सुंदर गौएं , सोना , घोड़े और लंबी आयु प्राप्त होती है और उसे जो सूर्यदेवता वसु के द्वारा इस प्रकार बांध देता है जैसे कोई रस्सी से बंधा हो , अर्थात प्रातः काल उठने का अभ्यास करने से सूर्य आप - ही - आप उठा देता है । प्रातः काल उठनेवालों को अनेक प्रकार के रत्नों की प्राप्ति होती है , इसलिए बुद्धिमान मनुष्य उस समय को पकड़कर रखते हैं , क्योंकि प्रातः काल के जागरण से प्रजा , धन , पुष्टि बढ़ती है और वीरता आती है ।

इस प्रकार दिनचर्या का वर्णन करके अब सदाचार से घनिष्ठ संबंध रखनेवाली उदारता , अर्थात दान का वर्णन करते हैं ___

ऋग्वेद. 5.42.8 , अथर्ववेद. 9.5.29 ______

भावार्थ : अर्थात हे बृहस्पते ! जो आपकी रक्षा से संबंध रखनेवाले हैं , वे दुखी से रहित , धनवान् और पुत्र - पौत्रवाले होते हैं और जो गायों , घोड़ों और वस्त्रों का दान करनेवाले होते हैं वे सौभाग्यवाले होते हैं और उनके घरों में अनेक प्रकार के धन सदा प्रस्तुत रहते हैं । जो जानने वाली गौ , बोझा

Edit with WPS Office

ढोनेवाले बैल , शिर के नीचे रखनेवाला तकिया , वस्त्र और सुवर्ण का दान करते हैं वे उत्तम गति को प्राप्त होते हैं ।
इस उदारता और दानसंबंधी उपदेश के आगे अब सदाचार के मूल सत्संग का वर्णन करते हैं । ऋग्वेद में आया है कि ___
ऋग्वेद. 1.125.5 ______
भावार्थ : अर्थात जो सदा विद्वानों के साथ रहता है वह सुखकारी स्वर्ग में निवास करता है , जहां अपतत्व (ईश्वर) स्थान देता है और सूर्यकिरणें दक्षिणा देती है ।
इस मंत्र में विद्वानों के सत्संग का फल बतलाया गया है । इसके आगे विद्वानों को दक्षिणा देकर उनकी सेवा करने का फल भी बतलाते हैं । ऋग्वेद में कहां है ___
ऋग्वेद. 1.125.6 , 10.107.5 , 10.107.7 ______
भावार्थ : अर्थात दक्षिणावान् पुरुषों को नाना प्रकार के सुख , सूर्य के समान ऐश्वर्य और अमृत के समान फल तथा दीर्घायु प्राप्त होती है । जो सबसे प्रथम श्रेणी का दक्षिणावान् होता है वह सबसे पहले बुलाया जाता है , वही ग्राम का मुखिया होता है , और वही राजा के यहां सम्मान पाता है । जो विद्वान को दक्षिणा में अश्व , गौ , सोना , चांदी और अन्न देता है उसके लिए यह दक्षिणा कवच का काम कर देती है ___ उसकी रक्षा करती है ।
यह सदाचारसंबंधी समस्त व्यवहार तभी संपन्न हो सकता है जब मनुष्य व्रतवाला हो , जिसका संकल्प दृढ़ हो और जो सदैव अपने सिद्धांत पर स्थिर रहे । इस व्रत का माहात्म्य बतलाते हुए वेद उपदेश करते हैं कि ___
यजुर्वेद. 19.30 ______
भावार्थ : अर्थात मनुष्य व्रत से दीक्षावान् होता है , दीक्षा से दीक्षावान् होता है , दक्षिणा से श्रद्धावान् होता है और श्रद्धा से सत्य को , अर्थात मोक्ष को प्राप्त होता है ।
इस प्रकार से यह व्रत ही सदाचार का मूल है । जो व्रतधारी है -- दृढ़ प्रतिज्ञावाले हैं -- वही सदाचार में सफलता प्राप्त करते हैं , परंतु स्मरण रखना चाहिए कि यह दृढ़ता और इस प्रकार का व्रत बिना अभ्यास के नहीं हो सकता और अभ्यास संस्कारों के बिना नहीं हो सकता ? इसलिए संस्कारवान् होना मनुष्य को जरूरी है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 4. चौथा पृष्ठ

- # { वेदों में सृष्टि उत्पत्ति }

- ### { प्रकृति और सृष्टि में क्या अंतर है }

प्रकृति और सृष्टि का साधारणत्य लोग इसे एक ही समझते हैं । परंतु ऐसा नहीं है ? सृष्टि, प्रकृति से बनी है । प्रलय के बाद सृष्टि अपने आप को प्रकृति में विलीन कर देती है । तो सृष्टि रचना के पूर्व की स्थिति होती है। प्रकृति अनादि है । ईश्वर अपनी इच्छा मात्र से उसमें हलचल पैदा कर सृष्टि का निर्माण करता है ।सत्व, रज, तम इन तीनों गुणों की समान अवस्था अर्थात साम्य अवस्था को प्रकृति कहते हैं । प्रकृति कोई अलग तत्व नहीं है । साम्य अवस्था वह है जब सत्व, रज, तम कार्य रूप में परिवर्तित नहीं होते । बल्कि अपने मूल कारण में स्थित रहते हैं । प्रकृति क्योंकि यह जड़ है, अतः स्वयं कुछ नहीं कर सकती । उन तत्वों में ईश्वर की प्रेरणा से उथल-पुथल होती है

Edit with WPS Office

। अर्थात सत्व, रज ,तम की साम्य अवस्था भग होती है । और उसमें विषमता आने लगती है, यहीं से प्रकृति से सृष्टि रचना का प्रारंभ होता है । सबसे पहला कार्य रूप **महत्व** तत्व होता है, इसे **बुद्धि** कहते हैं । फिर महत्व तत्व से **अहंकार** से पंच तन्मात्राएं और 10 इंद्रियों का निर्माण होता है । 11वीं इंद्रिय, मन ,है । तन्मात्राओं में पंचमहाभूतों की उत्पत्ति होती है । मूल प्रकृति तथा उससे बने 23 विकार होते हैं । 23 विकारों को ही सृष्टि कहते हैं । मूल प्रकृति से बने सभी संभव दृष्टि तथा दृश्य और अदृश्य पदार्थ सृष्टि के अंतर्गत आते हैं । जैसे– महत्व तत्व ,अहंकार ,पांच तन्मात्राएं, 11 इंद्रियां और पंचमहाभूत प्रकृति के कार्य को ही सृष्टि कहते हैं । ईश्वर के संविधान से ही मूल प्रकृति कार्य रूप होकर सृष्टि में परिवर्तित होती है । और सृष्टि में परिवर्तन सदा होता रहता है । सृष्टि के पश्चात प्रलय होती है । इस प्रकार ईश्वर सृष्टि रचना और प्रलय करता रहता है, और यह अनादि चक्र चलता रहता है । ऋग्वेद का मंत्र है___ यथा पूर्व कल्पयत = जैसे पूर्व काल में सृष्टि बनी ऐसे ही सृष्टि चक्र बनता रहता है । यह चक्र कभी रुकता नहीं है । अर्थात जो जन्म रहित सत्व्, रज्, तमों गुणों की जो प्रकृति है । स्वरूपाकार से बहुत ऊर्जावान हो जाती है । अर्थात प्रकृति के परिणामी होने से अवस्थांन्तर प्राप्त होता है ।कुटस सदा निर्विकार रहता है । प्रकृति सृष्टि में अविकार और प्रलय में निर्विकार रहती है । प्रकृति कारण है और उसके कार्य को ही सृष्टि कहते हैं । प्रकृति से बने सभी संभव दृश्य और अदृश्य पदार्थ सृष्टि के अंतर्गत आते हैं । जैसे___ पृथ्वी, जल ,अग्नि, वायु , आकाश अवकाश, और सूर्य, चंद्रमा, ग्रह- उपग्रह, तारे, नक्षत्र आदि । प्रकृति गतिहीन तथा शांत होती है और उसके मूल तत्व सत्व, रज, तम अपरिवर्तनशील होते हैं । सृष्टि ईश्वर के सामर्थ्य से गति करती है । और उसमें हर पल, हर क्षण परिवर्तन होता रहता है । परिवर्तन ही सृष्टि का नियम है । वैदिक सिद्धांतों के अनुसार ईश्वर जीव और प्रकृति तीनों अनादि है । इसी को त्रैतवाद कहते हैं । त्रैतवाद के बारे में हम आगे लिखेंगे__?

- **________ सृष्टि उत्पत्ति__________**

Edit with WPS Office

सृष्टि के अंतर्गत अनंत ब्रह्मांड , ग्रह ,नक्षत्र , तारे , गैलेक्सी , सौरमंडल आदि आते हैं । परमात्मा प्रकृति के तत्वों से सृष्टि की रचना करते हैं । सृष्टि रचना के पीछे दो प्रमुख कारण है -- **पहला** -- **परमात्मा को सृष्टि रचना करना आता है । दूसरा -- जीवात्मा को उसके शुभ अशुभ कर्मों का फल देने के लिए परमात्मा सृष्टि की रचना करते हैं । सृष्टि की चार अवस्थाएं होती हैं जो इस प्रकार से है ____**

1. उत्पत्ति ____ सृष्टि की उत्पन्न होने का समय अर्थात प्रारंभिक स्थिति ।
2. स्थिति ____ सृष्टि की प्रकट अवस्था स्थिति कहलाती है अर्थात वर्तमान समय ।
3. प्रलय ____ सृष्टि की अंतिम प्रलय अवस्था (विनाश का प्रारंभ) ।
4. सुषुप्त ____ यह सृष्टि की सबसे सूक्ष्मतम अवस्था होता है यह कुछ भी जानने योग्य नहीं होता है चारों तरफ अवकाश ही अवकाश होता है ।

- **परमात्मा सृष्टि की उत्पत्ति कैसे करते हैं : ____**

ऋग्वेद. 10/129/3
भावार्थ ___ प्रलयकाल में यह पूरा जगत मूल प्रकृति के रूप में था । यह अंधकार में विलीन था , और कुछ भी जानने योग्य नहीं था । सब कुछ अज्ञान और शून्यता में विलीन था , जिसमें कोई भेद या अलग-अलग वस्तुएं नहीं थी । वह एक सरल , अस्पष्ट और अव्यक्त रूप में उपस्थित था ।

तब जो सूक्ष्मतम अचेतन शक्ति का रूप है (परमात्मा) --- उससे यह पूरा व्याप्त था । उस समय परमात्मा अपनी साक्षात शक्ति द्वारा इस स्थिति से कार्यशील रूप में आए और सृष्टि का आरंभ किया ।
यह मंत्र सृष्टि की आरंभ अवस्था को दर्शाता है । जब सब कुछ अंधकार और अज्ञान में लिपटा हुआ था । कोई रूप , आकार , या भेद नहीं था , सिर्फ एक अपरिभाषित , अव्यक्त स्थिति थी । तब परमात्मा की अदृश्य शक्ति द्वारा इस असत् अवस्था (अव्यक्त स्थिति) से सृष्टि का प्रारंभ हुआ । यह प्रक्रिया अदृश्य से दृश्य की ओर जाने वाली है , जहां सूक्ष्मतम शक्ति ने कार्यशील रूप में प्रकट होकर सृष्टि की रचना की ।

Edit with WPS Office

जब सृष्टि निर्माण का समय आता है परमात्मा अपनी ओउम् नाम की ध्वनि से प्रकृति के मूल तत्व सत्व रज तम की साम्यावस्था को भंग करते हैं और उसी के पश्चात क्रमपूर्वक सृष्टि का निर्माण प्रारंभ होता है ।

सृष्टि की सारी आयु जो बीत चुकी है, तथा जो बाकी है चार अरब बत्तीस करोड़ है। इतना ही समय प्रलय का होगा। जैसे कि दिन के बाद रात आती हैं, फिर दिन आता है फिर रात आती है। इसी प्रकार सृष्टि में होता है। सृष्टि के प्रश्चात प्रलय,,प्रलय के पश्चात सृष्टि,,दिन रात के समान क्रम चलता आ रहा है। तथा चलता रहेगा। इसका कोई आरंभ या अन्त नही है। प्रलय के समय प्रकृति परम सुक्ष्म परमाणुओ के रुप में होती हैं। सृष्टि रचना के समय उनको बुधीपूर्वक मिलता है। सृष्टि की रचना करना, सृष्टि को धारण करना, तथा फिर समय आने पर प्रल्य करना। यह सर्व सर्वशक्तिमान परमेश्वर का ही काम है। परमेश्वर अपने कार्य को सार्थक करने के लिए तथा जीवों को उनके कर्मों अनुसार यथायोग्य फल देने के लिए ही सृष्टि की रचना करता है। जगत के बनने में तीन कारण है,,

- **(1).. एक निर्मित कारण ___** जिसके बनाने से कुछ बने ,, न बनाने से ना बने, और आप स्वयं बने नहीं, दूसरे को बना देवे।
  निर्मित कारण दो प्रकार के हैं__(क) सब सृष्टि को बनाने वाला, धारणकर सब की व्यवस्था करने वाला तथा प्रलय करने वाला परमात्मा,, **(ख)** दूसरा की परमेश्वर की बनाई हुई सृष्टि में से पदार्थो को लेकर कार्य करने वाला **जीवात्मा,,**।
- **(2).. दूसरा उपादान कारण____** जिसके बिना कुछ न बने, वही रूप बदले बने और बिगड़े भी,,। यह प्रकृति ही सब संसार को बनाने की सामग्री ह। यह प्रकृति जड़ होने से अपने आप न बन, और न बिगड़ती है। किंतु दूसरे के बनाने से बनती हैं, और बिगाड़ने से बिगड़ती है। कही कही जड़ के निर्मित से जड़ भी बन और बिगड़ जाता है। जैसे _परमेश्वर के बनाए बीज पृथ्वी में गिरने और जल पड़ने से वृक्ष बन जाते है। और अग्नि आदि के संयोग से बिगड़ जाते है। परन्तु इनका नियमपूर्वक बनना और बिगड़ना परमेश्वर और जीव के आधीन है।

Edit with WPS Office

- **(3).. तीसरा साधारण कारण____** जो बनाने में साधन हो, ज्ञान,, प्रकाश ,, समय आदि।

- **सृष्टि रचना का क्रम____** सर्वत्र फेले हुए परमाणुओ को इकट्ठा करके जो खाली स्थान बना वह आकाश है। आकाश की उत्पत्ति नही होती है। क्योंकि बिना आकाश के प्रकृति ओर परमाणु कहा ठहर सके। फिर वायु अग्नि जल पृथ्वी औषधिया ,अन्न तथा वीर्य शरीर क्रमश: बनते हैं। पशु पक्षी आदि सब कुछ बन जाने के परश्चात मनुष्य की उत्पत्ति होती है। वेद और मनुष्य की उत्पत्ति को एक १ अरब ६६ करोड़ ८लाख ५३ हजार १०५ वर्ष हो चुके हैं। मनुष्य की प्रथम उत्त्पति के दिन का नाम चैत्र मास का शुक्ल पक्ष १ प्रतिपदा रखा गया है।

- **अत सृष्टि संवत तथा विक्रमी संवत् एक ही दिन आरंभ होते हैं।**
- **मूल प्रकृति से स्थूलभूतो तक की निर्माण प्रक्रिया___**
- **इस जगत के निर्माण में मूलत:कोन से तत्व कारण है।____**
- **इस जगत का निर्माण किन अविभाज्य सुक्ष्मतम घटकों से हुआ।? इस पहेली को आधुनिक वैज्ञानिक विज्ञान अभी तक सुलझा नहीं सका है।**
- **किन्तु वैदिक ऋषियों ने वेदों के प्रमाण द्वारा बहुत पहले ही इस विषय का ज्ञान था।, कि इस जगत के निर्माण में मूलत: कितने तत्व कारण है____**

सांख्य दर्शन. 1/26/61______

भावार्थ___ **सत्व रजस और तमस ---** इन तीनों गुणों की साम्यावस्था को प्रकृति कहा जाता है । प्रकृति से महत्व (बुद्धि) उत्पन्न होती है , महत्व से अहंकार उत्पन्न होता है । अहंकार से पांचतन्मात्राएं (सूक्ष्म तत्व) उत्पन्न होती है , इन तन्मात्राओं से पंच भूत (स्थूल तत्व) और इंद्रियां उत्पन्न होती है । इन सब का योग मिलाकर कुल 24 तत्व होते हैं । चौबीस तत्व पुरुष है , जो जीव और परमेश्वर का प्रतीक है ।

प्रकृति अविकारी और महत्व , अहंकार तथा पांच सूक्ष्म भूत -- ये सब

Edit with WPS Office

प्रकृति का कार्य है , जबकि पुरुष(आत्मा) न तो प्रकृति का कार्य है और न ही इसका कोई रुप या कार्य है ।

यह श्लोक सांख्य दर्शन के सिद्धांत को समझाता है जो सृष्टि के तत्वों और उनके विकास की प्रक्रिया का वर्णन करता है । **यहां बताया गया है की प्रकृति तीन गुणों -- सत्व (शुद्धता) , रजस (क्रियाशीलता) , तमस (अज्ञान) की साम्यावस्था है । जब ये गन असंतुलित होते हैं , तब सृष्टि की प्रक्रिया प्रारंभ होती है ।**

इस जगत के निर्माण में मूलत: तीन तत्व कारण है, सत्व,, रज,, तम,,____, (ये अविभाज्य जिनके और टुकड़े न हो सकतें हैं,) सुक्ष्म घटक है।
सत्व,रज ,तम,__ इन तीनों का समलित नाम प्रकृति है। ये तीनों "तत्व" जड़ हे। अर्थात ये ज्ञानवान नही है। ये तीनों नित्य भी है, अर्थात न कभी उत्पन्न होते हैं , न ही कभी नष्ट होगे।

➤ तो आइए हम जानने का प्रयास करते हैं, कि ईश्वर विभिन्न अनुपात में किए। सयोगो द्वारा इन तीनों कणो से ही पांच स्थूलभुतो तक कि सृष्टि का निर्माण कैसे करता है।

- ईश्वर सर्वप्रथम मूल प्रकृति के सुक्ष्मतम तत्वों सत्व, रज, तम। को एकत्रित करता है।
- **सत्व,रज,तम__** इसे जो वस्तु कारण से जो (कार्य वस्तु) बनती है। उसका नाम __,,महतत्व ,,है **(बुद्धि तत्व है)**
- सत्व,रज,तम को मिलाने पर पहले ,, बुद्धि,, बनी।
- **बुद्धि तत्व** के साथ कुछ और मूल तत्व सत्व, रज,तम को भिन्न भिन्न अनुपात में मिलाने पर__ **,,अहंकार,,** वस्तु बनती है। यह वह साधन है। यह बुद्धि तत्व की अपेक्षा कुछ स्थूल होती है।
- **{सत्व, रज, तम} + बुद्धि__** अब इनके मिलाने पर **अहंकार** वस्तु बनती है______
- **अहंकार** के साथ कुछ और मूल प्रकृति (सत्व, रज, तम) कुछ और कणो को भिन्न भिन्न अनुपात में मिलाने से **सोलह (16) प्रकार की वस्तुएं** ईश्वर बनाता है______

Edit with WPS Office

- **पांच ज्ञानेन्द्रिया_____** चक्षु,,श्रोत्र,,घाण रसना, त्वचा
- **पांच कर्मेन्द्रिया_____** हाथ,पैर, वाणी,पायु ,उपस्थ
- **एक _____** मन
- **पांच तन्मात्राए _____** शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध
- **इनमे जो पहली ग्यारह (११) वस्तुएं हैं__** पांच ज्ञान,, पांच कर्म,, और एक मन । **इनसे कोई भी वस्तु का निर्माण नहीं होता है।** मे फिर दोहरा रहा हूं। इन वस्तुएं से ईश्वर कोई निर्माण नहीं करता है। ना ही इन से निर्माण संभव है।_____
- **जबकी शेष बची पांच वस्तुएं। (शब्द ,स्पर्श, रुप ,रस ,,गंध)**
- **शब्द___** अनेक शब्द तन्मात्रा से आकाश का एक परमाणु___
- **स्पर्श___** अनेक स्पर्श तन्मात्रा से वायु का एक परमाणु____
- **रुप___** अनेक रूप तन्मात्रा से अग्नि का एक परमाणु____
- **रस___** अनेक रस तन्मात्रा से जल का एक परमाणु____
- **गंध___** अनेक गन्ध तन्मात्रा से पृथ्वी का एक परमाणु___

___ विशेष ___

तन्मात्राऐ = सुक्ष्मभुत
परमाणु = तन्मात्रा तथा सुक्ष्मभुत के कण की बीच की अवस्था का नाम_
एक अणु से साठ (६०) परमाणु
स्थूलपंचमहाभूतों के कणों की निर्माण प्रक्रिया__

- **{आकाश के कणों का निर्माण}**

हम पहले आपको एक बात याद करा दे आकाश का निर्माण नहीं होता है। हम पहले बता चुके हैं। आकाश सर्वव्यापक है । जो आकाश दिख रहा है इसका निर्माण होता है , एक शून्य आकाश होता है जिसको अवकाश आकाश कहते हैं । वह अनादि ।

Edit with WPS Office

वेदों में निराकार परमेश्वर की तुलना आकाश से की गईं हैं। **(यजु०४०/१ __ॐ खं ब्रह्म)** परमात्मा आकाश के समान सर्वव्यापक है ।
बल्कि आकाश की तरंगे से ही कण निकलते हैं। जिन्हें अणु बोलते हैं।
आकाश के ६० परमाणु के योग से स्थूल आकाश का एक कण बनता हैं।
(आकाश का कण आखों से दिखाई नहीं देता है)

- **{वायु के कणों का निर्माण}**

वायु के दो अणुओ के योग से स्थूल वायु का एक कण बनता हैं। वायु के एक कण में **120 परमाणु** होते हैं।
(वायु का कण आखों से दिखाई नहीं देता है)

- **{अग्नि के कणों का निर्माण}**

दो अग्नि, दो वायु, तीन दवयणुक के योग से अग्नि का एक कण बनता हैं। अग्नि के एक कण में **360 परमाणु** होते हैं।

- **{पृथ्वी के कणों का निर्माण}**

- दो पृथ्वी, दो वायु, दो अग्नि,दो जल पांच दवयणुक मिलकर स्थूल पृथ्वी का एक कण में 600 परमाणु होते हैं। दूसरे शब्दों में 10 अणु की पृथ्वी होती हैं।

इन पांच भूतो के संयोग से पृथ्वी, चन्द्र, सूर्योदि, विशाल ग्रह,-उपगृह, नक्षत्रों,की रचना की जो हम जीवों के आधार है। आरंभ में ईश्वर ने अनेक पुरुष स्त्रियां के शरीर बनाकर उनमें जीव डालकर अमैंथुनी सृष्टि की रचना की। ये सभी युवावस्था में उत्पन्न हुए। फिर मैथुनी सृष्टि चल पढ़ी। मनुष्य की आदि सृष्टि जिसे तिब्बत कहते है। वहा हुई और कही नही। उस समय के कुछ वर्षो बाद। **चार ऋषियों मुनियों को ज्ञान दिया। जिनके नाम हैं। अग्नि, वायु,आदित्य, आगिरा।** उस समय दो प्रकार के मनुष्य थे। एक आर्य श्रेष्ठ विद्वान और दूसरे दस्यु अनार्य या अनाड़ी। मतलब दिखावे के लिए आर्य थे।

Edit with WPS Office

अंदर से आचरण का पालन नहीं करने के कारण अनार्य थे। मनुष्य का पहला जन्म तिब्बत में हुआ था तिब्बत में आर्य लोगों की जनसंख्या अधिक बढ़ने के कारण यहां आकर बसे थे इसलिए इस देश का नाम आर्यावर्त देश पड़ा आर्यावर्त से पहले इस देश का कोई नाम नहीं था ना ही यहां कोई जाति रहती थी।

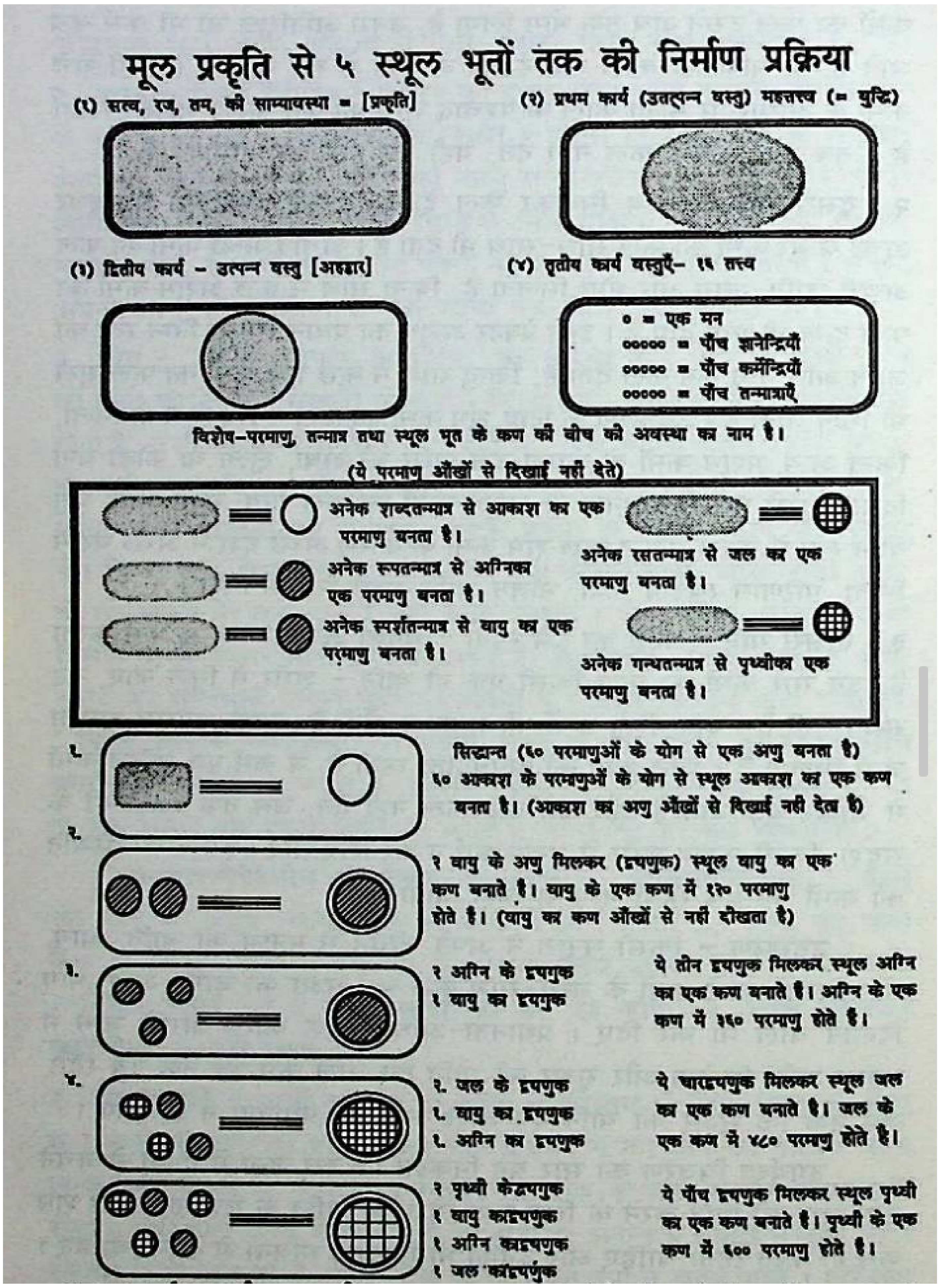

Edit with WPS Office

{ सृष्टि पूर्ण है }

उपनिषद वचन—

- स्त्रष्टा पूर्ण है , सृष्टि , जगत पूर्ण है , पूर्ण से पूर्ण पैदा होता है , पूर्ण से पूर्ण निकल जाने पर शेष पूर्ण ही रहता है । यह नियम सार्वभौम है , सृष्टि की प्रत्येक वस्तु छोटी बड़ी पूर्ण है , चाहे जड़ सृष्टि हो , चाहे चेतन सृष्टि हो , सर्वत्र पूर्णता से परिपूर्ण है , मनुष्य शरीर पूर्ण है पूर्ण शरीर से गर्भाधान के समय वीर्य कण पूर्ण स्त्री में चला जाता है । फिर भी मनुष्य पिता पूर्ण शेष रहता है , पूर्ण स्त्री , पूर्ण गर्भस्थ शिशु को प्रसव करने पर भी शेष पूर्ण ही रहती है , शिशु भी पूर्ण है , वही सिद्धांत सर्वत्र चेतन जगत में व्याप्त है , **इसी प्रकार हिरण्यगर्भ स्त्रष्टा परिपूर्ण है , पूर्ण से पूर्ण सृष्टि उत्पन्न होने के पश्चात शेष स्त्रष्टा पूर्ण ही रहता है , पूर्ण धावा, पृथ्वी , से पूर्ण चेतन सृष्टि उत्पन्न होने पर भी धावा पृथ्वी भी पूर्ण रहते हैं , यह पूर्णता क्रमशः से परंपरा से सदैव बनी रहती है ।**

{ सृष्टि महायज्ञ है }

ऋग्वेद. 10/130/1___

यह सृष्टि यज्ञमय है । इस सृष्टि यज्ञ में पंचभूत रुपी वस्त्रों को बुना जाता है । यह चिरकाल तक रहने वाली सृष्टि देवों के दिव्य कर्मों से स्थिर रहती है । इस सृष्टि यज्ञ में पितृगण कपड़े को बुनते हुए , अनेक प्रकार के उत्कृष्ट और निकृष्ट वस्त्रों या पदार्थों की रचना करते हैं ।

यजुर्वेद. 31/16___

विश्वे देवा: यज्ञ के द्वारा यज्ञों का निर्माण करते हैं । एक यज्ञ दूसरे यज्ञ का

Edit with WPS Office

परस्पर सहायक ,सावनरुप यज्ञ है ।

महर्षि यास्काचार्य ने भी कहा है___
(निरुक्त. 12/41)
अर्थात___ अग्नि के द्वारा अर्थात ज्ञानरुप अग्नि के द्वारा , जीव के अन्त: करण में परमेश्वर ज्ञान का प्रेरक है ।
सृष्टि महायज्ञ है ; जो अनादिकाल से निरंतर हो रहा है । यज्ञ में यजमान पति -पत्नी होते हैं ,यज्ञ के साधन यज्ञकुण्ड , अग्नि , समिधा ,धृत आदि आवश्यक होते हैं । सृष्टि महायज्ञ का महाऋतु , यजमान विष्णु है और यजमान पत्नी अदिति , स्वधा प्रकृति है । **अदित्यै विष्णु- पत्न्ये** (यजुर्वेद. 26/60) अर्थात विष्णु की पत्नी अदिति है । अदिति प्रकृति को कहते हैं । यह तात्विक सूक्ष्मता , सुंदरता जोड़ा है , जो प्रवाह रूप से अनादि नित्य है ।

सृष्टि महायज्ञ का यजमान सर्वदा युवा , जनिता , उत्पादक , जनक ,विधाता है ।
स नो ' बन्धुर्जनिता स विधाता . (यजु. 32/10)
यजमान पत्नी अदिति=प्रकृति भी नित्य सदा सुहागिन सुभागिन सृष्टि की जननी है ।

इस महायज्ञ में एक चेतनत्तम , महाशक्तिशाली , सर्वव्यापक तत्व है , यह एक ही तत्व कभी पुरुष स्त्री पिता , स्त्री रूपी माता , तात्विक रूप में नपुन्सक है , वेदों में तीनों लिंगों में उसका वर्णन है —-
सा विश्वायु सा विश्वकर्मा ,सा विश्वाधाया । (यजु.1.4) दूसरा पत्नीरूपी तत्व प्रकृति , स्वधा अदिति केवल जड़ है , यह जड़ चेतन का नित्य , अनादि जोड़ा है ।

सृष्टि महायज्ञ का यजमान अपने ही हिरण्यगर्भ में अन्तस्ताप अग्नि-कुण्ड में शक्तिरुपी घृत की आहुति देता है । इसलिए महाऋतु , महाकवि , महायज्ञ नाम पड़ा है । विष्णु सहस्त्रनाम में इसकी विस्तृत व्याख्या पढ़ने और विचारने योग्य है । इस महायज्ञ से अनेक प्रकार के तत्वों का निर्माण होता है ।

Edit with WPS Office

24 तत्वों का भी वर्णन महर्षि दयानंद ने विसप्ता मंत्र की व्याख्या में किया है और महर्षि कपिल ने अपने सांख्य दर्शन में 24 तत्वों का और पुरुष को मिलाकर 24 तत्वों का वर्णन किया है ।

इन अनेक तत्वों के निर्माण से अनेक प्रकार के जड़ रूपी ब्रह्मांडों का निर्माण होता है ।

ब्रह्मांड में धुलोक और पृथ्वी परस्पर पति-पत्नी रूप का मिथुन= जोड़ा है ।

दिवा पृथिवीयां मिथुना सबन्धु : (ऋग्वेद. 10/10/6)

सूर्य और पृथ्वी का यह भौतिक बृहतम विशालतम जड़रूपी जोड़ा है ।

विष्णु व्यापक होकर जड़ धावापृथ्वी में गति क्रिया चेष्टा करवाता है । इस धावापृथ्वी के महायज्ञ से असंख्य योनियों के नर- नारी पिंड उत्पन्न करवाता है । धावा पृथ्वी के यज्ञ से चेतन पिण्डों का निर्माण होता है । जो एक दूसरे यज्ञ का सहायक है ।

- सृष्टि में विविध प्रकार के कार्य परस्पर या यज्ञरूप है ।
- यज्ञ का अर्थ है **देवपूजा , संगतिकरण और दान । जड़- चेतन सृष्टि में परस्पर प्राकृतिक रूप से देना- लेना संगतिकरण के माध्यम से हो रहा है ।**
- सूर्य गर्मी , ऊर्जा , सोम और प्रकाश निरंतर दे रहा है । पृथ्वी सूर्य- रश्मियों के माध्यम से ले रही है । परिणामत: यज्ञ फल रूप विविध प्रकार की चेतन सृष्टि की उत्पत्ति होकर अन्य युज्ञों में सहायक हो रही है ।
- वृक्ष आदि परस्पर यज्ञ कर रहे हैं । दूषित वायु को ग्रहण कर प्राण- वायु को दे रहे हैं । विविध प्रकार के फूलों से फलों से लोकोपकार कर रहे हैं ।
- कृमि जलचर , पक्षी , पशु , मानव , विविध प्रकार के कर्मों से विविध

Edit with WPS Office

प्रकार के यज्ञ कर रहे हैं ।

- सृष्टि यज्ञ में कृमि केंचुआ , भूमि को उर्वरा बना रहे हैं , रेशम के कीड़े रेशम बना रहे हैं , जलचर पानी को शुद्ध कर रहे हैं , पक्षी जल के प्राणी को खाकर भूमि जल शुद्ध कर रहे हैं , और वृक्षों के पराग से एक दूसरे का संसर्ग कराकर पुष्प- फूलों में वृद्धि कर रहे हैं , मधुमक्खी फूलों से रस लेकर मधुर मधु बनती है । बिच्छू, सर्प ,छिपकली ,विषवाले कृमि मच्छर खाकर वातावरण को शुद्ध करते हैं । वे विष अपने शरीर में जमा कर लेते हैं । इसलिए इनको विषधर कहते हैं ।

- पशु = भेड़- बकरी बालों का दान करती हैं ,गायादि प्राणी दुग्ध देते हैं और अश्व , हाथी , भार ले जाने में कार्य करते हैं ।

- सभी प्राणी स्वाभाविक रूप से यज्ञ में सहायक है । मानव भी यज्ञ कर्म में श्रद्धा से लगा हुआ है , जो यज्ञ नहीं करते उनकी हानि होती है तथा उनका विकास नहीं होता है ।

सृष्टि में सबसे पहले क्या उत्पन्न होता है ..?

- सृष्टि का नियम है कि भोक्ता भोज्य पर निर्भर रहता है । इसलिए सबसे पहले भोज्य उत्पन्न होते हैं फिर भोक्ता इसी क्रम में सबसे पहले पृथ्वी पर पेड़ पौधे वनस्पतियां उत्पन्न होती है । क्योंकि जीव जंतु और मनुष्य , पेड़ पौधे और वनस्पतियां पर भोजन के लिए निर्भर होते हैं इसलिए सबसे पहले इनकी उत्पत्ति होती है । उसके पश्चात जीव -जंतु , पक्षी आदि उत्पन्न होते हैं उसके पश्चात सबसे अंतिम में मनुष्य उत्पन्न होते हैं और प्रलय काल में यह क्रम उल्टा चलता है सबसे पहले मनुष्य नष्ट होते हैं । उसके पश्चात जीव जंतु पशु पक्षी और इसके पश्चात पेड़ पौधे वनस्पति आदि नष्ट होते है ।

जीवो की उत्पत्ति ______

परमात्मा द्वारा जीवो को शरीर उनके कर्मों के आधार पर 4 प्रकार से प्राप्त कराया जाता है या फिर ऐसा कह सकते हैं कि इस

Edit with WPS Office

संसार में केवल चार प्रकार के ही जीव है ।

1.___ जरायुज (गर्भ से जन्म)

जरायुज जीव वह होते हैं जो माता के गर्भ में विकसित होते हैं और वहीं से जन्म लेते हैं । इससे मनुष्य और अन्य स्तनधारी पशु जैसे --गाय , बकरी आदि शामिल होते हैं । यह प्रकृति में सबसे सामान्य रूप से देखा जाने वाला जन्म का प्रकार है ।

2. ___ अंण्डज (अण्डो से जन्म)

अण्डज जीव अंण्डों से उत्पन्न होते हैं । इस श्रेणी में पक्षी , सरीसृप , और मछलियां आती हैं , जो अंण्डे देकर अपनी संतानों को जन्म देती है ।

3. ___ स्वेदज (स्वेद या केमिकल रिएक्शंस से जन्म)

स्वेदज जीव वह होते हैं जो मल मूत्र , पसीना , केमिकल रिएक्शन , आदि से उत्पन्न होते हैं । ये सूक्ष्म जीव जैसे -- **मच्छर , फफूंद , कीड़े , बैक्टीरिया** , और अन्य छोटे जंतु होते हैं , जो अनुकूल परिस्थितियों में विकसित होते हैं ।

4. ___ उद्भिज्ज (पृथ्वी से जन्मे)

उद्भिज्ज जीव पृथ्वी से उत्पन्न होते हैं । इसमें पौधों से लेकर अन्य वनस्पतियां तक की उत्पत्ति शामिल होती है । इनका जीवन बीजों के अंकुरण और भूमि के गर्भ से विकास पर आधारित है ।

इन चारों प्रकारों में जीवो की उत्पत्ति सृष्टि के अद्भुत चक्र और प्राकृतिक विविधता को दर्शाती है ।

- **सृष्टि का रहस्य और अधिक जानने के लिए वेद दर्शनों को अवश्य पढ़े :**

Edit with WPS Office

- वेद- दर्शनों में सृष्टि रचना के विविध प्रकार के कारणों का निर्देश है । विशेष कर पुरुषसूक्त , अदितिसूक्त ,भाववृतसूक्त , कालसुक्त और प्राचीन ऋषि मुनियों ने भी स्वरचित दर्शनों ग्रंथों में विविध कारणों पर प्रकाश डाला है ।
- **सृष्टिकर्ता का परिचय___ वेदान्तदर्शन**
- **तत्वों का समिक्षण ,अनुपात___ सांख्यदर्शन**
- **बुद्धि , ज्ञान- विज्ञान- पूर्वक रचना___ योगदर्शन**
- **साधनों का परिचय ,जीव___ न्यायदर्शन**
- **कर्म का महत्व और कर्म की विवेचना___ मीमांसादर्शन**
- **समय और काल की व्याख्या___ वैशेषिकदर्शन**

[प्रश्नोत्तरी प्रकृति और सृष्टि]

- ## प्रकृति

प्रश्न. 1 प्रकृति किसे कहते हैं ?
उत्तर. सत्व गुण , रजो गुण , तमो गुण इन तीन तत्वों के सामूहिक नाम को प्रकृति कहते हैं ।

प्रश्न. 2 प्रकृति की क्यों आवश्यकता है ?
उत्तर. जगत की रचना करने के लिए कारण के रूप में इसकी आवश्यकता होती है । जैसे घड़ा बनाने के लिए मिट्टी की आवश्यकता होती है ।

प्रश्न. 3 क्या प्रकृति की उत्पत्ति और विनाश कभी होता है ?
उत्तर. कभी नहीं ।

प्रश्न. 4 सत्व गुण रजो गुण तमो गुण के स्वरूप को बतलाए ?
उत्तर. सत्व गुण आकर्षण तथा प्रकाश , रजोगुण चंचलता तथा दुःख को

Edit with WPS Office

उत्पन्न करता है। तथा तमोगुण मूढ़ता (मोह) तथा स्थिरता को उत्पन्न करता है।

प्रश्न. 5 क्या प्रकृति में जीवात्माओं को उत्पन्न करने का सामर्थ्य है ?
उत्तर. नहीं

प्रश्न. 6 क्या प्रकृति से जीवों के समस्त दुख दूर हो सकते हैं ?
उत्तर. प्रकृति से जीवों के समस्त दुख दूर नहीं हो सकतें।

प्रश्न. 7 संसार में दुख कितने प्रकार का है ?
उत्तर. संसार में दुख तीन प्रकार का है ।
1. आध्यात्मिक 2. आधिभौतिक 3. आधिदैविक

प्रश्न. 8 आध्यात्मिक दुख किसे कहते हैं ?
उत्तर. स्वयं की त्रुटि (मूर्खता) से प्राप्त होने वाले दुख को आध्यात्मिक दुख कहते हैं।

प्रश्न. 9 आधिदैविक दुख किसे कहते हैं ?
उत्तर. बाढ भूकंप अकाल आदि प्राकृतिक विपदाओं से प्राप्त होने वाले दुख को आधिदैविक दुख कहते हैं।

प्रश्न.10 आधिभौतिक दुख किसे कहते हैं ?
उत्तर. अन्य पशु- पक्षी मनुष्य आदि जीवों से प्राप्त होने वाले दुख को आधिभौतिक दुख कहते हैं।

प्रश्न.11 क्या प्रकृति से अपने आप संसार बन सकता है ?
उत्तर. नहीं , ईश्वर की शक्ति व सहायता बिना प्रकृति से अपने आप संसार नहीं बन सकता ।

प्रश्न.12 क्या प्रकृति कभी चेतन हो सकती है ?

Edit with WPS Office

उत्तर. नहीं ।

प्रश्न.13 क्या प्रकृति की ब्रह्म से स्वतंत्र सत्ता है या ब्रह्म ही जगत रुप में परिवर्तित हो जाता है ?

उत्तर. प्रकृति की सत्ता ब्रह्म से पृथक और स्वतंत्र है । ब्रह्म जगत रुप में कभी परिवर्तित नहीं होता है ।

प्रश्न.14 सत्व रज तम वास्तव में ये गुण है या द्रव्य है ?

उत्तर. सत्व रज तम वास्तव मे द्रव्य है , किन्तु सत्वगुण रजोगुण तमोगुण नाम से जाने जाते हैं ।

प्रश्न.15 क्या प्रकृति के समस्त परमाणु एक ही स्वरुप वाले हैं ?

उत्तर. नहीं , प्रकृति के परमाणु अलग अलग स्वरूप =अलग गुण कर्म स्वभाव रंग रूप आकार भार वाले हैं ।

प्रश्न.16 क्या ईश्वर की सहायता के बिना पांच महाभूतो से रज वीर्य मिलने से स्वत : शरीर का निर्माण हो सकता है ?

उत्तर. नहीं , बिना ईश्वर की सहायता से पांच महाभूतो से रज- वीर्य के मिलने से स्वत: शरीर का निर्माण नहीं हो सकता है ।

प्रश्न.17 प्रकृति सर्वत्र व्यापक है या नहीं ?

उत्तर. प्रकृति सर्वत्र व्यापक नहीं है बल्कि एकदेशी है अर्थात एक निश्चित सीमा में फैली हुई है किन्तु ईश्वर उसके बाहर भी विद्यमान है ।

प्रश्न.18 प्रलय अवस्था कैसी होती है ?

उत्तर. प्रलय अवस्था में घोर अन्धकार होता है । इस काल में न सुर्य होता है न चांद ,न पृथ्वी न कोई शरीरधारी होता है । अपितु सर्वथा सुनसान , प्रकाश रहित अन्धकार जैसी अवस्था होती है ।

प्रश्न.19 प्रलय काल कितना होता है ?

Edit with WPS Office

उत्तर. प्रलय काल 4 अरब 32 करोड़ का होता है ।

प्रश्न.20 प्रलय काल की गणना कौन करता है ?
उत्तर प्रलय काल की गणना ईश्वर करता है ।

प्रश्न.21 प्रकृति के साथ जीव क्यों जुड़ता है और कब जुड़ता है ?
उत्तर प्रकृति के साथ जीव अपनी अविधा के साथ जुड़ता है तथा सृष्टि के आरंभ में जुड़ता है और मुक्ति से लौटने वाला जीव सृष्टि के मध्य में भी प्रकृति से जुड़ता है ।

प्रश्न.22 जीवात्मा प्रकृति के बंधन से कब छूटता है ?
उत्तर. जब प्रकृति और प्राकृतिक पदार्थों के प्रति आसक्ति को समाप्त कर पूर्ण वैराग्य को प्राप्त कर लेता है अर्थात राग- दूष आदि समस्त क्लेशों को समाधि लगाकर नष्ट कर देता है तब प्रकृति के बंधन से छूट जाता है ।

प्रश्न.23 मानव जीवन को सफल करने हेतु चार पुरुषार्थ कौन कौन से हैं ?
उत्तर. 1. धर्म   2.अर्थ   3.काम   4.मोक्ष इन चार पुरुषार्थों को सिद्ध कर लेना मानव जीवन को सफल करने का उपाय है ।

प्रश्न.24 जैसे सुख गुण प्रकृति का है वैसे ही क्या ज्ञान गुण भी प्रकृति का है ?
उत्तर. नहीं , ज्ञान गुण प्रकृति का नहीं अपितु चेतन है ।

प्रश्न.25 क्या मन रबड़ की तरह फैलता सिकुड़ता है ?
उत्तर. नहीं

प्रश्न.26 क्या सत्व रज तम तीनों के बिना केवल दो गुणों से कोई पदार्थ बन सकता है ? सभी पदार्थों में तीन गुण होते ही है चाहे वे न्यून , अधिक क्यों न हो ?
उत्तर. नहीं ,मात्र दो गुणों से कोई पदार्थ नहीं बन सकता ।

Edit with WPS Office

प्रश्न.27 अन्न (भोजन) कितने प्रकार का होता है ?
उत्तर. अन्न तीन प्रकार का होता है , **सात्विक ,राजसिक , तामसिक ।**

प्रश्न. 28 क्या अन्न का प्रभाव मन पर पड़ता है ?
उत्तर. हां , सात्विक अन्न भोजन करने से मन शुद्ध होता है ,राजसिक अन्न से मन में चंचलता आती है । और तामसिक अन्न मोह , आलस्य आदि उत्पन्न करता है ।

प्रश्न.29 मानव जीवन को स्वस्थ रखने के मूल आधार स्तम्भ कौन से है ?
उत्तर. मानव जीवन को स्वस्थ रखने हेतु मूल आधार , आहार , निंद्रा , और ब्रह्मचर्य का उत्तम प्रकार से सेवन करना ।

- ## संसार (सृष्टि)

प्रश्न.1 एक सृष्टि संसार की आयु कितनी होती है ?
उत्तर चार अरब 32 करोड़ होती है ।

प्रश्न.2 सृष्टि की आयु किससे नापी जाती है व उनकी आयु कितनी होती है ?
उत्तर सृष्टि की आयु सतयुग त्रेतायुग द्वापरयुग कलयुग से मापी जाती हैं ।

युग	वर्ष
सतयुग	17,28000
त्रेतायुग	12,96000
द्वापरयुग	8 ,64000
कलयुग	4 ,32000

एक चतर्युगी 43 ,20,000। तिरालीसं लाख बीस हजार ।

प्रश्न 3 एक सृष्टि में कुल कितनी चतुर्युगी होती है ?
उत्तर. 1000

Edit with WPS Office

प्रश्न.4 एक सृष्टि में कितने मन्वन्तर होते हैं ?
उत्तर. 14

प्रश्न 5 वर्तमान में कौन सा मन्वन्तर चल रहा है और इसका नाम क्या है ?
उत्तर. सातवां मन्वंतर चल रहा है और इसका नाम वैवस्वत मन्वंतर है ।

प्रश्न 6 एक मन्वंतर में कितनी चतुर्युगी होती है व वर्तमान में कौन सी चतर्युगी चल रही है ?
उत्तर. एक मन्वंतर में 71 चतर्युगी होती है तथा वर्तमान में 28 वी चतर्युगी चल रही है ।

प्रश्न 7 वर्तमान कलयुग के कितने वर्ष बीत चुके हैं ?
उत्तर विक्रम संवत से 5125 वर्ष कलयुग के बीत चुके हैं ।

प्रश्न 8 आगामी सतयुग का आरंभ कितने वर्षों के बाद होगा ?
उत्तर. कलयुग का समय समाप्त होने के बाद फिर से सतयुग प्रारम्भ होगा ।

प्रश्न 9 वर्तमान सृष्टि की आयु कितनी हो चुकी है ?
उत्तर. वर्तमान सृष्टि की आयु एक अरब ,96 करोड़ ,8 लाख 53 हजार ,125 वर्ष ।

प्रश्न 10 क्या काल के कारण धर्म और अधर्म होते हैं जैसे कि सुनने में आता है कलयुग में पाप कर्म बढ जाते हैं ?
उत्तर. नहीं ,काल के कारण धर्म और अधर्म नहीं होते हैं । प्रत्येक काल में धर्म और अधर्म दोनों की प्रवृत्तियां चलती है ।

प्रश्न 11 सृष्टि के प्रारंभ में मनुष्यों को किसने उत्पन्न किया और कैसे उत्पन्न किया ?
उत्तर सृष्टि के आरंभ में ईश्वर ने पृथ्वी के कणों से रज- वीर्य आदि धातु

Edit with WPS Office

बनाई उसे मिलाकर पच्चभौतिक अर्थात पृथ्वी जल अग्नि वायु और आकाश इन द्रव्यों से शरीर बनाकर धरती के अन्दर गर्भ पिण्ड बनाकर हजारों की संख्या में नवयुवक और नवयुवतियां को एक साथ उत्पन्न किया , जो शरीर से तो बलिष्ठ थे । किन्तु उनको कम ही ज्ञान था ।

प्रश्न 12 फिर उन मनुष्यों को ज्ञान कैसे हुआ ?

उत्तर ईश्वर ने जो हजारों की संख्या में मनुष्य उत्पन्न किए थे । उनमें से सर्वाधिक पवित्रात्माएं जो जो थी ,उनको चुना और उनसे समाधि लगवा करके ईश्वर ने उनको ज्ञान दिया । वही से गुरु परम्परा चली और सब मनुष्यों को ज्ञान हुआ ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 5. पांचवा पृष्ठ

• { मनुष्य उत्पत्ति }

सृष्टि में मनुष्य की उत्पत्ति : ______

सृष्टि के प्रारंभ में मनुष्य की उत्पत्ति एक गूढ़ और रहस्यमयी प्रक्रिया रही है जिसे वैदिक और शास्त्रीय ग्रंथो में विस्तार से समझाया गया है यह प्रक्रिया पंचमहाभूतों (पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , आकाश) से प्रारंभ होती है ।

Edit with WPS Office

परंतु आदि सृष्टि में यह क्रम साधारण मानव सृष्टि की तरह नहीं होता। आइए इसे गहराई से समझते हैं ____

1.___ पंचमहाभूतों से प्रारंभिक संरचना

प्रकृति के पांच मूल- तत्व -- पृथ्वी जल अग्नि वायु और आकाश -- से संपूर्ण सृष्टि की रचना होती है। इन पंचमहाभूतों से पृथ्वी का निर्माण होता है, और पृथ्वी से विविध प्रकार की औषधियां उत्पन्न होती है। औषधियों से अन्न की उत्पत्ति होती है, और अन्न से वीर्य की संरचना होती है। वीर्य से शरीर का निर्माण होता है, जो वर्तमान समय में जीवो की सृष्टि का सामान्य क्रम है।

2. ___ आदि सृष्टि : मैथुनी सृष्टि का अभाव

आदि सृष्टि में, यह सामान्य क्रम लागू नहीं होता, क्योंकि उस समय मैथुनी नहीं होती। वीर्य उत्पन्न होने के लिए शरीर की आवश्यकता होती है। और शरीर उत्पन्न करने के लिए स्त्री और पुरुष का होना अनिवार्य है। परंतु सृष्टि के आरंभिक समय में, स्त्री और पुरुष के शरीर का कोई अस्तित्व नहीं था। ऐसे समय में, परमात्मा स्वयं जीवात्मा के कर्मों के आधार पर स्त्री और पुरुष के शरीर की रचना करते हैं और उनमें आत्मा का संयोग करते हैं। जीवात्मा के कर्म भी स्वरूप से अनादि है। आदि सृष्टि में सभी जीवो का जन्म स्वेदज प्रकार से होता है। आदि सृष्टि के समय जब कोई यौन प्रक्रिया नहीं थी, परमात्मा ने बिना मैथुनी प्रक्रिया के अनेक पुरुष और स्त्रियों की रचना की। इन सृजित मानवों के माध्यम से आगे की यौन सृष्टि प्रारंभ होती है। इस समय मनुष्य सीधे युवावस्था में भूमि के गर्भ से जन्म लेता है इस समय भूमि माता के गर्भ की तरह सभी जीवो का लालन-पालन तथा पोषण करती है। इसलिए भूमि को हम आज भी माता कहते हैं क्योंकि हमारे पूर्वज यह जानते थे कि मनुष्य की पहली पीढ़ी का जन्म भूमि से ही हुआ है। शास्त्रों में इसका विस्तार से उल्लेख है कि आरंभ में सैकड़ो और सहस्त्रों मनुष्यों की उत्पत्ति सीधे परमात्मा के द्वारा की गई।

वेदों में सृष्टि के प्रारंभिक समय में मनुष्यों की अमैथुनी (यौन प्रक्रिया से रहित) सृष्टि का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद के इस मंत्र के अनुसार सृष्टि के

Edit with WPS Office

प्रारंभ में उत्पन्न होने वाले मनुष्य वनस्पतियों की तरह विकसित हुए , जहां उनकी अवस्था ,आकार या जन्मकर्म मैं कोई भिन्नता नहीं था ।

ते अज्येष्ठा अकनिष्ठास उद्भिदोऽ मध्यमासों महसा वि वादृध ।
सृजातातासो जनुषा पृश्निमासरों दिवो मयो आ नो अच्छा जिगातन ।।

ऋग्वेद. 5/59/6

भावार्थ_____ सृष्टि के आरंभ में उत्पन्न होने वाले मनुष्य में उम्र या जन्मक्रम की कोई मित्रता नहीं थी । न कोई बड़ा है , न छोटा , न ही कोई मंझला । ये मनुष्य वनस्पतियों की तरह स्वत : उत्पन्न हुए और समान अवस्था में थे । उनकी बुद्धि अत्यंत तीव्र और शक्तिशाली थी । ये दिव्यजन्मा व्यक्ति प्रकृति माता की संताने थे और परमात्मा के प्रकाशमय पुत्र माने जाते थे । उनका जन्म उच्च कोटि का था , और वे समस्त मनुष्यों में सबसे उत्कृष्ट और सम्माननीय थे ।

वेद और शास्त्रों में अनेक प्रमाण मिलते हैं कि आदि सृष्टि में मानव की उत्पत्ति प्राकृतिक प्रक्रियाओं से नहीं बल्कि दैवीय हस्तक्षेप से हुई थी । ये प्रमाण यह इंगित करते हैं कि सृष्टि के प्रारंभ में परमात्मा ने सीधे-सीधे मनुष्यों की रचना की , ताकि आगे की पीढ़ियां का जन्म मैथुनी सृष्टि के माध्यम से हो सकें ।

चित्र इछछोषस्तरुणस्य वक्षथें न यो मातरं दूति धातवे ।
अनूढा चन्द्रजी जनधधा चिद ववक्षथा सधो महि दूत्याय चरणु ।।

(सामवेद पूर्वार्ध प्र 1 अर्ध 2 द. 2 म. 2) क्रमिक मंत्र. 64

भावार्थ_____ सृष्टि के आरंभ में उत्पन्न होने वाले मनुष्यों की अवस्था युवावस्था की होती थी । वे अपनी आयु से परे होते हुए भी अपनी देखभाल स्वयं कर लेते थे । उन्हें दूध पिलाने के लिए माता का सहारा लेने की आवश्यकता नहीं होती थी । क्योंकि वे इतने सक्षम होते थे कि बिना दूध के ही पलते थे । विशेष बात यह थी कि वे तुरंत बड़े दूतों की तरह कठिन कार्यों का भार उठाने मैं सक्षम होते थे ।

Edit with WPS Office

- इस प्रकार सृष्टि की आदि प्रक्रिया एक दिव्य और आध्यात्मिक क्रिया थी , जिसके माध्यम से मनुष्य का प्रादुर्भाव हुआ ।

➤ इस पृथ्वी पर पहली बार मनुष्य की उत्पत्ति किस प्रकार हुई हम बताने की कृपा करेंगे___

विधाता ने सभी वस्तुएं पशु, पक्षी, देवता उत्पन्न करने के बाद मनुष्य की उत्पत्ति हुई और देवता सूक्ष्म इंद्रियां सहित अपने अलग-अलग कार्य में मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर गए । देवता का वर्णन हम इस पीडीएफ में नहीं करेंगे। उसके लिए ऐतरेय उपनिषद है। एक बात अवश्य याद रखो ध्यान से सुनो । मुझे बार-बार बताने पड़ रही है। कभी आप उल्टा समझ बैठो। ऐतरेय उपनिषद में उत्पन्न का वर्णन है। सृष्टि रचना का। उसमें मटेरियल सामग्री जिस चीज से बनी उसका वर्णन नहीं है, उत्पन्न का वर्णन है। ऐतरेय उपनिषद में। उत्पन्न हुई। विधाता ने किस सामग्री से उत्पन्न की सृष्टि उसका वर्णन नहीं है। सृष्टि उत्पत्ति का वर्णन वेद, उपनिषद, दर्शनशास्त्र , में है। खासकर सांख्य दर्शन।____

अब हम आपको बताते हैं पहली-बार मनुष्य धरती पर कैसे उत्पन्न हुआ___

लोग ,, मनु,, और,, शतरूपा ,,से मनुष्य की उत्पत्ति होना बताते हैं। जो की 101 %परसेंट गलत है। लोग सही अर्थ ना समझने के कारण ऐसी भूल करते हैं। मनुस्मृति में ऐसा कहीं नहीं लिखा । कि हम मनु और शतरूपा की संताने हैं। ऐसी बातें झूठ है। भगवान मनु पहले ही पीढ़ी के थे। लेकिन वह अकेले नहीं थे बहुत से अन्य लोग भी थे जैसे वेदों का ज्ञान प्राप्त करने वाले ऋषि अग्नि वायु आदित्य अंगार ऋषि ब्रह्मा आदि। पहले व्यक्ति नहीं थे पृथ्वी के पहले शासक थे राजऋषि मनु महाराज उनके समय के मनुष्यों का जन्म पृथ्वी से हुआ था। जैसे_ पौधे निकलते हैं ऐसे जन्म को अमैथुनी (मैथुन के बिना) सृष्टि में हुआ कहते हैं बाद में ब्रह्मा जी और मनु महाराज जी से मनुष्य की मैथुनी सृष्टि का आरंभ हुआ । उस समय अनेक लोगों का जन्म हुआ था मनु के राज्य में हुआ क्योंकि वह पहले राज ऋषि शासक थे।

Edit with WPS Office

इसलिए उन्हीं के नाम पर जीवो को जिनको मानव कहते हैं। उन्हीं के नाम पर मनुष्य नाम पड़ा। जैसे__ इस देश का नाम राजा भरत के नाम पर पड़ा। अब हम आपको धरती से कैसे गर्भ में मनुष्य का निर्माण कैसे और उत्पन्न हुआ इसके बारे में बताएंगे_____

यहां वैदिक मत यह है कि जिस जीव के भरण पोषण हेतु जितने कम पदार्थ की आवश्यकता होती है। वह जीव उतना पहले ही उत्पन्न होता है, सभी प्राणियों से पूर्व वनस्पतियों की उत्पत्ति होती है।और मांसाहारी प्राणियों से पूर्व शाकाहारी प्राणियों की। तथा शाकाहारियों में मनुष्य केवल ऐसा प्राणी है। जिसे सबसे विकसित तथा उन्नत माना जाता है। वह विभिन्न प्राणियों तथा वनस्पतियों पर निर्भर रहता है। इसी कारण उसकी उत्पत्ति सबसे बाद में होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि भ्रुणो का विकास बिना मादा के कैसे होता है?

शुक्राणु व् अण्डानु तो मान ले रासायनिक क्रिया के फलस्वरुप भूमि व जल में उत्पन्न हो गया। परंतु शुक्राणु व अण्डानु का निषेचन वह भ्रूण विकास कहां और कैसे हुआ?

इस विषय में मनुष्य उत्पत्ति पर चर्चा करते हुए। महर्षि दयानंद सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रंथ में युवावस्था में भूमि से उत्पत्ति बताई है। उन्होंने तर्क दिया है, कि यदि शिशु अवस्था में उत्पत्ति होती, तो उनकी रक्षा व पालन कौन करता तथा यदि वृद्ध उत्पन्न होते, तो वंश परंपरा आगे कैसे चलती ? इसी कारण मनुष्य की युवावस्था में ही भूमि से उत्पत्ति होती हैं।

यदिपि उन्होंने इस विषय पर कोई प्रमाण नहीं दिया। परंतु उन्हें ऋग्वेद के उन्हें प्रमाण मिले भूमि से सृष्टि उत्पत्ति के जहां लिखा है___

उप सर्प मातरं भूमिंमेतामुरुव्यचस पृथिवी सुशेवाम
ऊणमृदा युवातिदृक्षिणावत ऐषा त्वा पातु निर्ऋतेरुपस्थात।। **ऋग्वेद__ १०/१८/१०**

हे जीव उत्तम सुख देने में सर्वश्रेष्ठ इस माता के समान प्रारंभ में जिसके गर्भ में सभी प्राणी उत्पन्न होते हैं । जिस पर सभी प्राणी निवास करते हैं, वह पृथ्वी अति विस्तार वाली होकर सभी भ्रूणों को निकटता से प्राप्त होती है।

Edit with WPS Office

इसके साथ ही उस गर्भ का आंतरिक आवरण निरंतर हल्का स्पदन करता रहता है। वह भूमि उन भ्रूणों को ऐसा आच्छादन प्रदान करती है। जो ऊन के सामान कोमल चिकना व आरामदायक हो। वह उस दिव्य भ्रूण को सब और से गर्भ के समान जन्म को अमैथुनी [मैथुन के बिना] सृष्टि में हुआ कहते हैं। ब्रह्मा जी और मनु महाराज जी से मनुष्य की मैथुनी सृष्टि का आरंभ हुआ था। उस समय अनेक लोगों का जन्म हुआ था। मनु के राज्य में हुआ था ,क्योंकि वह पहले राजऋषि शासक थे? इसीलिए उन्ही के नाम पर जीवों को जिनको मानव कहते हैं, उन्हीं के नाम पर मनुष्य नाम पड़ा? जैसे–सृष्टि के बहुत समय बाद इस देश का नाम राजा भरत के नाम पर पड़ा। अब हम आपको धरती के गर्भ से मानव उत्पन्न हुआ इसके बारे में बताएंगे—----?

यहां वैदिक मत यह है कि जिस जीव के भरण पोषण हेतु जितने कम पदार्थ की आवश्यकता होती है। वह जीव उतना पहले ही उत्पन्न होता है, सभी प्राणियों से पूर्व वनस्पतियों की उत्पत्ति होती है। और मांसाहारी प्राणियों से पूर्व शाकाहारी प्राणियों की? तथा शाकाहारी में मनुष्य केवल ऐसा प्राणी है जिसे सबसे विकसित तथा उन्नत माना जाता है। वह विभिन्न प्राणियों तथा वनस्पतियों पर निर्भर रहता है, इसी कारण उसकी उत्पत्ति सबसे बाद में होती है।

अब प्रश्न यह उठता है कि भ्रूणों का विकास बिना मादां के कैसे होता है? शुक्राणु व अंण्डानु तो मान ले रासायनिक क्रिया के फलस्वरुप भूमि व जल में उत्पन्न हो गया। परंतु शुक्राणु व अंडाणु का निषेचन वह भ्रूण विकास कहां और कैसे हुआ?

सुखद स्पर्शयुक्त घर प्रदान करती है। उस गर्भ रूप पृथ्वी में नाना जीवनीय रसों के मिश्रण –अमिश्रण की क्रियाएं निरंतर चलती रहती है वह पृथ्वी उन भ्रूणों को तब तक पोषण प्रदान करती है जब तक वह अपना पालन में रक्षण करने में पूर्ण न हो जाए यह भूमि तुम जीव को पूर्ण रूप से निरंतर सानंद स्मरण करती है ऐसे सुरक्षित वह उत्तम स्थान में उन भ्रूणों या जीवन का पालन करती है इसके साथ ही जहां क्लेश पहुंच सकता है ऐसे असुरक्षित स्थान से उसभूमि के गर्भ रूप आवरण उसे जीव या भ्रूण की रक्षा करते हैं। सुखद स्पर्श युक्त घर प्रदान करती है। उस गर्भ रूपी पृथ्वी में

Edit with WPS Office

नाना जीवनीय रसों के मिश्रण- अमिश्रण की क्रियाएं निरंतर चलती रहती है। वह पृथ्वी उन भ्रूणों को तब तक पोषण प्रदान करती है। जब तक वह अपना पालन व रक्षण करने में पूर्ण न हो जाए। यह भूमि तुम जीव को पूर्ण रूप से निरंतर सान्नंद रमण करती हैं। ऐसे सुरक्षित वह उत्तम स्थानों में उन भ्रूणो या जीवों का पालन करती है। इसके साथ ही जहां क्लेश पहुंच सकता है । ऐसे असुरक्षित स्थानों से उस भूमि के गर्भरूप आवरण उस जीव या भ्रूण की रक्षा करते हैं।

उच्छ्वठचस्व पृथ्वी मां नि बाधथा: सूपायनास्मै भव
सूपवठचना , माता पुत्र यथा सिचाम्येन भूम ऊर्णुहिर ।। ऋग्वेद.____ 10/18/11

भावार्थ_____

वह गर्भ रूप पूर्वोक्ता पृथ्वी उत्कृष्टरूपेण उध्वृ दिशा में स्पंन्दित होती हुई, किवां उफनती हुई होती है। उस भूमि का आवरण ऐसा होता है। जो उसके अंदर पल रहे भ्रूण वा जीव को प्राप्त हो रहे , जीवनीय रसों को नहीं रोकता है। अर्थात वे रस रिस रिस कर उस जीव को प्राप्त होते रहते हैं । वह इस जीवन के लिए वह भूमि उसे पोषक व संवर्धक जीवनीय तत्वों का उपहार भेंट करती है । वह भूमि आवरण उन भ्रूणों वा जीवों को अच्छी प्रकार छिपाकर आश्रय प्रदान करता है।जिस प्रकार माता अपनी संतान को गोद वा गर्भ में ढककर सुरक्षा प्रदान करती है। उसी प्रकार भूमि के वे भाग उन जीवों को अपने गर्भ में लेकर उनके ऊपर नानाआवरणों के द्वारा उन जीवों को सब और से आच्छादित कर लेते हैं।

उच्घवठचमाना पृथ्वी सु तिष्ठुत सहस्त्र मित उप हि
श्रयन्ताम। ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहस्मै शरणां : सन्तवत्र।।
ऋग्वेद. 10/18/12

पूर्वोवक्त उफनी एवं स्पंन्दन करती हुई सी कोमल भूमि उन भ्रूणों वा जीवों की आच्छान्दिका होकर सुदृढ़ता से सुरक्षा पूर्वक स्थित होकर उन जीवों को भी स्थेरय प्रदान करती है। उस भूमि के पृथक पृथक स्थानों में अनेक संख्या में जीव निकटता से आश्रय पाते हैं । **किवां** उन गर्भ रूप स्थानों में बड़ी संख्या में विभिन्न सूक्ष्म अणुओं का प्रवाह बना रहता है। भूमि के वे स्थान उन जीवों के लिए घर के समान होते हैं। और घर के समान वह भुकोष्ठ उन

Edit with WPS Office

जीवों को ऐसे ही पकड़े वा धारण करे रहते हैं, जैसे– माता अपनी संतान को गर्भ में धारण किए रहती है । वे भुकोष्ठ ऐसे होते हैं कि उनमें घी के समान चिकनी रस सदैव रिसते रहते हैं, वे उन जीवों के लिए सर्वदा यथार्थ पूर्ण व्यवस्था तक इस अवस्था में वे जीव उन कोष्ठों में आश्रम पाते हैं ?!

इन तीन मंत्रो में भूमि के अंदर युवावस्था तक कैसे मनुष्य सहित सभी जरायुज प्राणी विकसित होते हैं , इसका सुंदर चित्रण किया गया है ।

जिस प्रकार अमीबा आदि एक कोशीय प्राणी कोशिका का निर्माण रासायनिक व जैविक क्रियाओ से होता है, इस प्रकार बहुकोशीय जरायुजों तथा अंण्डजो के भी शुक्र तथा रज का निर्माण इस उफनी हुई कोमल तथा सभी आवश्यक पदार्थ, जो भी माता के गर्भ में होते हैं, से परिपूर्ण पृथ्वी के धरातल की परतों में हो जाता है।

अब हम विचारे भ्रूण में माता के गर्भ की आवश्यकता क्यों होती है ? इस कारण ताकि भ्रूण को आवश्यकता वृद्धि हेतु पोषक पदार्थ प्राप्त हो सके, भ्रूण को सुरक्षित कोमल चिकना आवरण तथा आवश्यक ताप मिल सके । यदि इन परिस्थितियों को माता के गर्भ से अन्यत्र कहीं उत्पन्न कर दिया जाए, तो भ्रूण का विकास वही हो जाएगा, जिस प्रकार आज परखनली से बच्चे पैदा किए गए हैं।

हां, एक बात महत्व की है कि उस समय मनुष्य वा कोई भी जरायुज व्यवस्था में भूमि से उदभिजो कि भांति उत्पन्न होता है। महर्षि दयानंद सरस्वती जी का यह विचार अर्थात सर्वथा उचित है कि यदि शिशु उत्पन्न हो, तो पालन कौन करें? यदि वृद्ध पैदा होते तो वंश कैसे चलता ? **[देखें सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समल्लास]** , उपनिषदकार ऋषि इसे और विस्तार देता है। मुंडक उपनिषद कहता है______

तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूता; साध्या मनुष्या ; मुंडक उपनिषद_____2/1/7

अर्थात उस परमात्मा से अनेक विद्वान सिद्धि प्राप्त जन तथा साधारण विद्वान अनेक जन पैदा हुए।

अर्थात मनुष्य आदिकाल में सोचने चलने तथा स्वयं की रक्षा करने में समर्थ होता है।

यहां कोई यह प्रश्न करें कि पृथ्वी रूपी गर्भ में 25 वर्ष तक युवा कैसे पलता

Edit with WPS Office

और बढ़ता है ? तो इस पर गंभीरता से विचारे, तो कोई आपत्ति प्रतीत नहीं होती ? क्योंकि जिस प्रकार आज भी एक बालक जो लगभग 9 मास (महीने) तक माता के गर्भ में रहता है। प्रसव के पूर्व श्वास लेता है, न हाथ पैर फेंकता है, न खाता पीता है, न मल- मूत्रादि विसर्जित करता है , उसमें प्रसव के तुरंत बाद सभी क्रियाएं तुरंत प्रारंभ हो जाती है। तब यह क्या अद्भुत बात नहीं है? आश्चर्यजनक नहीं है? यदि किसी व्यक्ति को इस सबसे दूर रखा जाए और इस प्रसव प्रक्रिया से नितांन्त अनभिज्ञ होवे, तब वह इस प्रसव प्रक्रिया को संभव नहीं मानेगा। यदि उसने अंण्डजो की ही उत्पत्ति देखी हो, तो वह जरायुजो जो कि प्रसव प्रक्रिया को अण्डजो से भिन्न मानने को तैयार नहीं होगा। इसलिए युवावस्था में प्राणियों की उत्पत्ति असंभव नहीं है?? हां ,अद्भुत अवश्य है ? फिर इतनी सृष्टि प्रक्रिया की जटिलता क्रमबद्धता , वैज्ञानिकता क्या अद्भुत नहीं है ? तथा युवावस्था में प्राणी की उत्पत्ति कहां विचित्र रह जाती है? यह भी जानना आवश्यक है कि जिस प्रकार रासायनिक अभिक्रियाओं से भूमि रूपी माता के अंदर प्राणियों की उत्पत्ति होकर सभी जरायुज, अंण्डज स्वेदज एक ही प्रकार से भूमि की परतों में उदभिजो कि भांति युवावस्था में पैदा हुए। अंत में भारत ही नहीं अपितु विश्व भर के प्रबुद्ध मानवों व वैज्ञानिकों से निवेदन करना चाहता हूं कि वे अपने इतिहास पर गर्व करना सीखें। आप सभी यह मानते हैं, वह जानते ही कि वेद संसार में सबसे प्राचीन ग्रंथ हैं? हम यह भी सिद्ध करने की क्षमता रखते हैं की वेद ईश्वर का ज्ञान है। तथा वेद मंत्र रूपी तरंगों से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। अर्थात जैन ध्वनियों तरंगों से ब्रह्मांड की उत्पत्ति हुई है। वे ध्वनियां वेद मंत्र ही थे? एवं वर्तमान में ही तरंगे सर्वत्र विद्यमान है। मैंने ऋग्वेद के मंत्रो द्वारा भी मनुष्य की उत्पत्ति की चर्चा इस लेख में की है। वेद तथा ऋषियों के मतं में मनुष्य की प्रथम पीढ़ी सर्वाधिक , बुद्धिमती शारीरिक व मानसिक बल तथा सत्वगुण संम्पन्न थी। उसके बाद उनमें न्यूनता ही आई। न की विकास हुआ। हम संसार भर के सभी मानव उन्ही महान पूर्वजों के वंशज हैं। वेद हम सब का है। ऋषि हम सबके पूर्वज हैं। वेद व ऋषियों के ग्रंथों पर मानव मात्र ही नहीं, अपितु मानव ब्रह्मांड के सभी बुद्धिमान प्राणियों का साझा अधिकार है। आए हम सभी इस साझी विरासत को अपनाएं। अध्ययन व अनुसंधान करें। और गर्व से स्वयं को

Edit with WPS Office

पृथ्वी के सबसे बुद्धिमान मनुष्यों का वंशज कहे।।

- **मनुष्य की प्रारंभिक पीढ़ी कहां उत्पन्न हुई थी ..? इसके बारे में हम पहले लिख आए हैं सृष्टि उत्पत्ति में फिर भी जहां आवश्यकता है हमको लिखना पड़ता है ।**

मनुष्य की प्रारंभिक पीढ़ी के उत्पत्ति स्थल के संबंध में अनेक सिद्धांत है , परंतु प्राचीन भारतीय परंपराओं और वैदिक साहित्य के अनुसार , मानवता की उत्पत्ति का आधार पृथ्वी पर तिब्बत एवं हिमालय के क्षेत्र को महत्वपूर्ण माना गया है । प्रारंभिक मानव सभ्यता का संबंध उन पवित्र स्थलों से था जो प्राकृतिक संपदाओं से संपन्न थे , जैसे -- पर्वत और नदियों का संगम । जीवन की उत्पत्ति उन स्थानों के निकट हुई थी , जहां पर्वत और नदियां मिलती है , जो जीवन के स्रोत के प्रतीक माने जाते हैं ।

अथर्ववेद का यह मंत्र यह कहता है कि --- **अथर्ववेद. 11/1/7**

सकं सजाते : पयसा संधेयुदेवां महते वीर्याय ।
उधवो नाकास्यादि रोह विष्टप स्वर्ग लोक इति यम वदंति ।।
भावार्थ ______ हे मनुष्य ! जिसको विष्टप और स्वर्ग लोक भी कहते हैं उसे पर तू चढ जा । वह सब पृथ्वी से ऊंचा सुख देने वाला स्थान है वह पृथ्वी पानी से सबसे पहले आई और जिसमें एक साथ सभी उत्पन्न हुए समान मनुष्य प्रकट हुए महान वीर्य प्राप्ति के लिए उसको तू प्राप्त कर ।

इस मंत्र में विष्टप शब्द का उपयोग तिब्बत एवं हिमालय क्षेत्र के लिए ही हुआ है क्योंकि यहां संपूर्ण पृथ्वी में सबसे ऊंचा स्थान है । इसका मूल अर्थ यह है कि मनुष्य को स्वर्ग लोक या विष्टप (जो सर्वोच्च और सुखद स्थानों के प्रतीक है) की और बढ़ने की प्रेरणा दी जा रही है । यह स्थान धरती के सभी सुखों से परे और उच्चतम अनुभव प्रदान करने वाला है ।

पृथ्वी सबसे पहले जल से उत्पन्न हुई थी , जो वैदिक और भारतीय

Edit with WPS Office

सास्कृतिक साहित्य में सृष्टि के प्रारंभ की व्याख्या करता है । यह दर्शाता है कि सभी जीव एक साथ हुए , जिसमें मनुष्य भी शामिल है , और उन्हें महान कार्यों और वीर्य (शक्ति और सामर्थ्य) की प्राप्ति के लिए प्रेरित किया गया है ।

इमानि त्रिवेणी विष्टपा तानीन्द्रेऽव रोहय ।
शिरस्ततस्योवरामदीदम मउपरोदे ।।

ऋग्वेद. 8/91/5

भावार्थ ______ हे राजन तू उस त्रिविष्टप को प्राप्त कर जो सारी पृथ्वी में ऊंचा है और मनुष्य के लिए सुखकारी है तथा माता के उदर के समान मनुष्य को उत्पन्न करने का स्थान है ।

ऋग्वेद के इस मंत्र में राजा को प्रेरित किया जा रहा है कि वह उस त्रिविष्टप (स्वर्ग लोक) को प्राप्त करें , जो सर्वोच्च है और जहां अद्वितीय सुख और शांत की प्राप्ति होती है । इसके साथ ही , इस स्थान को माता के उदर के समान बताया है , जो जीवन देने और मानवता को जन्म देने का स्थान है । यह इस बात की और संकेत करता है कि **त्रिविष्टप** केवल आध्यात्मिक ऊंचाई का प्रतीक नहीं , बल्कि यह जीवन और सृजन का स्रोत भी है ।

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत । दिवं च पृथिवी चान्तरिक्ष स्व : ।।

ऋग्वेद. 10/190/3

भावार्थ ______ संपूर्ण सृष्टि को धारण करने वाला परमात्मा ने सूर्य चंद्र आकाश पृथ्वी तारों तथा सुखदायक स्थान अर्थात (त्रिविष्टप) को उत्पन्न किया जैसे पूर्व कल्प में उत्पन्न किया था ।

ऋग्वेद के इस मंत्र में त्रिविष्टप को स्वर्ग लोक कहा गया है इसलिए हमारे ऋषि मुनि एवं महापुरुष जीवन के अंतिम क्षणों में इसी तिब्बत एवं हिमालय में जाकर के तप आदि साधना क्या करते थे । इसकी पुष्टि महाभारत से भी होती है ।

Edit with WPS Office

वाकाक्ष कर्मश्रुत च यचं श्रोत्र जलाशयम् । निष्प शोषयेतें य: स स्वर्ग नाथ संशयत ।। **महाभारत वन पर्व , अध्याय 199 , श्लोक 82**

अर्थ ______ वाणी की शुद्धता कर्मों की शुद्धता और जल में शुद्धता यह तीनों प्रकार की शुद्धता जिस देश में है उसी का नाम स्वर्ग है । अत: स्वर्ग पृथ्वी लोक पर तिब्बत और हिमालय क्षेत्र को ही कहा जाता है ।

तत्रिस्त्रविष्टम गच्छत्वनु लोकेषु विश्रुतम ।
तत्र वैतरणी पुण्या नदी पापप्रणाशिनी ।

महाभारत वन पर्व , अध्याय 83 , श्लोक 83

अर्थ ______ मनुष्य को चाहिए कि वह तीनों लोकों में श्रेष्ठ त्रिविष्टप देश में जाए जहां पापों का नाश करने वाली पुण्या नदी वैतरणी बहती है ।

महाभारत को , मनुष्य अपने जीवन में उच्चतम आध्यात्मिक मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है । इसमें कहा गया है कि मनुष्य को तीनों लोकों में सर्वोच्च माने जाने वाले **त्रिविष्टप (स्वर्ग लोक)** की ओर बढ़ना चाहिए । यह वह स्थान है , जहां आत्मा को शांति और मोक्ष की प्राप्ति होती है , और जहां कोई भी सांसारिक पाप नहीं टिक सकते । इस वर्णन में **वैतरणी नदी** का उल्लेख किया गया है , जिसे पापों का नाश करने वाली **पुण्या नदी** कहां गया है । इसलिए पांडव भी अपने जीवन के अंतिम क्षणों में अपने शरीर का त्याग करने के लिए उत्तर की दिशा में अर्थात हिमालय पर स्वर्ग लोक में चले गए थे ।

वैदिक शास्त्रों के अनेकों प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि मनुष्य की प्रारंभिक पीढ़ी तिब्बत एवं हिमालय क्षेत्र पर पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न हुआ है । और अन्य प्रमाण हम -- अगले पृष्ठ (विश्व सभ्यताओं का जनक भारत) इसमें लिखेंगे ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

6. छठा पृष्ठ

{ विश्व सभ्यताओं का जन्क: भारत }

- **प्रथम मनुष्य उत्पत्ति स्थान वेद ज्ञान का प्रकाश मनुष्य सृष्टि का आरंभ____?**

- ____मनुष्य उत्पत्ति के बारे में हम ऊपर लिख आए हैं? थोड़ा सा इस अध्याय में लिखना आवश्यक समझा?
- ___पृथ्वी पर प्रथम मनुष्य उत्पत्ति स्थान____

- प्रथम ब्रह्मांड का विकास हुआ, जब पृथ्वी की रचना पूर्ण हुई, तो सर्वप्रथम हिमालय जो कि विश्व में सबसे ऊंचा है, धीरे-धीरे पानी से ऊपर आया।
- ईश्वर की व्यवस्था अनुसार सभी वनस्पति जीव जंतुओं का जन्म हुआ।
- तिब्बत के पठार पर जो स्थान जल से प्रथम बाहर आ गया था वहां ईश्वर की व्यवस्था से बहुत से मनुष्य की (नर नारी)की उत्पत्ति हुई।
- **तेन देवाऽअयन्त साध्याऽऋषयश्च ये,** (यजु 31/9)
- अर्थात देव ऋषि आदि कोटि के बहुत सारे मनुष्य जो सृष्टि उत्पादक ईश्वर की स्तुति करते हैं।
- **तस्माच्च देवा बहुधा संप्रसूता : साध्या मनुष्या: पशवो वया सि।** (मुण्डकोपनिषद 2/1/7)

Edit with WPS Office

- **अर्थात**____ईश्वर ने बहुत से देव, ज्ञानी, साध्य, मनुष्य तथा पशु पक्षी उत्पन्न किए।
- महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम समुल्लास में बताया है कि मनुष्य की उत्पत्ति **त्रिविष्टम** जिसको तिब्बत कहते हैं? वहां हुई हुई।
- उन्होंने यह भी बताया है कि आर्य लोग कुछ काल के पश्चात तिब्बत से सीधे आर्यावर्त के मैदानी क्षेत्रों में आकर बस गए।
- चरक संहिता का निम्न प्रमाण उल्लेखनीय है?
- **चरक संहिता चिकित्सास्थान रसायनध्याये चतुर्थ पाद __3**
- आशाय यह है कि बहुत दिन तक आर्य लोग हिमालय पर रहे, फिर उन्होंने हिमालय से उतरकर भूमि की खोज की। जिस रास्ते से वे आए उसका नाम हरद्वार रखा।
- यहां आकर वे कुछ दिन तो रहे पर जलवायु खान-पान के दोष से बीमार होकर फिर अपने मूल स्थान हिमालय की ओर लौट गये, परंतु कुछ काल बाद वे फिर वहां आये।
- अबकी बार उन्होंने यहां के जंगलों को काट काट कर देश को बसाने योग्य बनाया और हरद्वार ,कुरुक्षेत्र और सरस्वती नदी से लेकर सदानीरा तक जंगलों को जलाकर वहां बस गए और इस क्षेत्र का नाम रखा आर्यावर्त।
- पृथ्वी जब सात द्वीपों में विभाजित थी तो एक द्वीप को जम्बूद्वीप कहा गया, जिसमें पूरा एशिया का भाग आता है।
- उसने हिम– प्रदेश को ऋषभदेव के पुत्र भरत के नाम पर भरतखंड या भारतवर्ष कहा गया।
- भारतखंड में वर्तमान के ईरान से लेकर वियतनाम पर्यन्त समस्त पूर्वी द्वीप व श्रीलंका से लेकर कश्मीर के ऊपर कजाकिस्तान तक का क्षेत्र आता है।
- इसी लिए आज भी जब आर्यों/ हिंदुओं में कोई संस्कार होता है तो संकल्प में बोलते हैं कि__
- **वैवस्वत मन्वंतरे अष्टाविरशतितमें युगे कलि–युगे कलि प्रथम चरणें**

Edit with WPS Office

भूलोकें जम्बूद्वीपे भारत वर्ष भरतखडें आर्यावर्तान्तिर्गतैकदैकदैशे__नगरे देशातंर्गतें___अमुक______

- आर्य मनुष्य के गुण कर्म को शास्त्रों में निम्न अनुसार परिभाषित करते हुए कहा गया है कि..
- **आर्यावर्त विसृजन्तों अधि क्षमि** (ऋग्वेद 10/65/11)
- अर्थात __आर्य शब्द का अर्थ होता है वह व्यक्ति जो सत्य अहिंसा पवित्रता परोपकार पुरुषार्थ आदि आर्यावर्तों को विशेष रूप से धारण करते हैं तथा जो श्रेष्ठ गुण कर्म स्वभाव वाले होते हैं।
- **आर्य ईश्वर पुत्र;।** निरुक्त 6/26
- अर्थात आर्य ईश्वर पुत्र है ईश्वर पुत्र से अभिप्राय श्रेष्ठ गुण संपन्न व्यक्ति से है । अतः आर्य शब्द को सार्थक करने हेतु व्यक्ति में श्रेष्ठ गुणों से युक्त होना अनिवार्य है।
- **अहं भूमि मददामायृया** (ऋग्वेद 4/26/2)
- अर्थात ईश्वर निर्देश देता है कि मैंने यह भूमिआर्यों के लिए दी है । इससे यह प्रतीत होता है कि ईश्वर ने सर्वप्रथम आर्यों को उत्पन्न किया। तथा यह भूमि प्रदान की।
- इसलिए ईश्वर विश्व के लोगों को आर्य बने रहने हेतु निर्देश भी देता है।
- सृष्टि के प्रथम से यानी वेदों से लेकर रामायण ,महाभारत, चाणक्य, बोध, जैन , ग्रंथ में भी भारत में रहने वाले श्रेष्ठ व्यक्तियों को आर्य शब्द से ही संबोधित किया गया है।
- आर्य किसी जाति स्थान विशेष पर रहने वाले समूह आदि का नाम नहीं है आर्य शब्द विशेषण है।
- सृष्टि के प्रथम में उत्पन्न इन्हीं आर्य लोगों की विश्व में जितने भी मनुष्य हैं संतान हैं ।
- उल्लेखनीय है कि विश्व में हिमालय प्रसिद्ध विभिन्न प्राचीन मान्यताओं में जैसे पारसी में मौरु,युनान वाले मेरोस , दक्षिण तुर्किस्तान वाले मेरूव मिश्र वाले मेरई और असीरीया वाले गोरूख कहते हैं।
- **दक्षिणेन पुनर्मैरोमनिसस्यैव मूरधनि।**
- **वैवस्वतोनिवसति यम; सयमने पुरे।** (वायु पुराण 50/88)

Edit with WPS Office

- अर्थात मेरू के दक्षिण और मानस के ऊपर यह वैवस्वत मनु अपने यमपुर मैं बसते हैं।
- यह वही वैवस्वत मनु है, जिनको मनुह नूह ,मेनेस आदि नाम से विभिन्न प्राचीन सभ्यताओं में बतलाया जाता रहा है और अपना आदि पुरुष माना जाता रहा है।
- **तदप्येतदुतरस्य गिरे मनोरवसर्पणम । (शतपथ ब्राह्मण.. 1/8/1/6)**
- अर्थात____हिमालय पर ही मनु का अवस–र्पण अर्थात जल प्लावन हुआ।
- **अस्मिन हिमवत : क्षृड़े नाव व्यतीत मां चिरम्– महाभारत वनर्पव 187/49**
- अर्थात___ मनु ने इस हिमालय के छरंग में शीघ्रता से जल प्लावन की नाव को बांधा।
- यह सभी जानते हैं की ऐतिहासिक देवता इंद्र शिव आदि का स्थान भी हिमालय ही था।

➤ { वेद ज्ञान का प्रकाश }

- वह सवविदित है कि विश्व में ज्ञान का प्राचीनतम स्त्रोत भारत के चार वेद ही है।
- सृष्टि के प्रथम में जब मनुष्य उत्पन्न हो गए तो उन्हें समस्त ज्ञान देने के लिए सभी मनुष्यों में जो हर प्रकार से उत्तम मनुष्य थे ,उनके हृदय में ईश्वर ने चारों वेदों का ज्ञान का प्रकाश किया।
- उनके नाम है अग्नि, वायु ,आदित्य और अंगिरा ये चार ऋषि कहलाए।
- **तस्माद यज्ञात सवृहुत ऋण: सामानि जन्निरे। धन्दारसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत।।** **(यजुर्वेद 31/7)**
- अर्थात____ उस सच्चिदानंद, सब स्थानों में परिपूर्ण जो सब मनुष्यों

Edit with WPS Office

द्वारा उपास्य और सब सामर्थ्य से युक्त है। उस परब्रह्म से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और छान्दासि _अथर्ववेद ये चार वेद उत्पन्न हुए।

- इसी प्रकार **शतपथ ब्राह्मण 14.5.4.10** के वचन के माध्यम से बताया गया है कि ऋग्वेद आदि चारों वेद परमात्मा ने इस प्रकार अनायास उत्पन्न कर दिए जिस प्रकार की स्वास- प्रवास की क्रिया अनायास होती रहती है।
- **अग्नेवृ ऋग्वेदों वायोर्यजुवेदद्र ; सूर्यात् सामवेदः । (शतपथ ब्राह्मण.11/5/8/3)**
- अर्थात___ प्रथम सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु आदित्य और अंगिरा इन ऋषियों के हृदय में एक-एक वेद का प्रकाश किया।
- **अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम । दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यज : सामलक्षणम।। (मनुस्मृति.1/23)**
- अर्थात उस परमात्मा ने जगत में समस्त धर्म अर्थ काम मोक्ष आदि व्यवहारों की सिद्धि के लिए जगत के समस्त रूपों का ज्ञान देने के लिए।:
- अग्नि वायु आदित्य अंगिरा ऋषियों के माध्यम से त्रिविद्ध ज्ञान वाले नित्य वेदों को दुहकर प्रकट किया।
- **अथर्ववेद मंत्र संख्या..10/4/20** के द्वारा भी उक्तानुसार ही प्रमाण दिया गया है।
- अर्थात_____ जो सर्व शक्तिशाली परमेश्वर है उसी से (ऋच;) ऋग्वेद। (यजु;) यजुर्वेद। (सामनि) सामवेद। (अंगिरस) अथर्ववेद ये चारों उत्पन्न हुए थे।

- **वृहस्पते प्रथम वांचो अग्रं यत प्रैरत नामधैय दधाना।**
- **यदेषां क्षेष्ठ यदरिप्रमासीत प्रेणा तदेषा निहिंत गुहावि ।। (ऋग्वेद 10/71/1)**
- अर्थात_____हे ज्ञान के स्वामी परमात्मा सबसे पहले वेदवाणी के श्रेष्ठ पद समूह को प्राप्त कर उसका ऋषि प्रचार करते हैं। जो उनमें श्रेष्ठ होते हैं उनके गुहां स्थान में इस ज्ञान का आविर्भाव होता है।

Edit with WPS Office

- **देवस्य पश्व काव्य न ममार न जीर्यति।** (अथर्ववेद. 10/8/32)
- अर्थात् परमात्मा की कला को उसके काव्य को देखो, जो कभी न मरता है और न कभी पुराना होता है , अर्थात वेद ज्ञान नित्य है।

- **यथापूर्वम कल्पयत ।** (ऋग्वेद. 10/190/3)
- अर्थात ईश्वर नित्य है तो वह सब पूर्व कल्पों के अनुसार ही ब्रह्मांड को बनता है।
- मनुष्य के ज्ञान की प्राप्ति किसी निमित्त से होती है , इसलिए सृष्टि के प्रथम में चार उत्तम ऋषियों के हृदय में ईश्वर ने ज्ञान का प्रकाश किया । उन ऋषियों ने सब मनुष्यों को ज्ञान दिया तथा इसी क्रम में ज्ञान का प्रभाव होता रहा।

- उपरोक्तनुसार सभी वैदिक शास्त्रों में वेद ज्ञान को ईश्वर की वाणी ही कहा गया है।
- वेद ज्ञान ईश्वरीय ज्ञान है, इसकी साक्षी में स्वयं वेद के मंत्र प्रमाण है।
- वेद ज्ञान का पूर्ण प्रकाश के प्रथम में ही हुआ इसलिए वेद ईश्वर की वाणी है।
- वेद ज्ञान ऐसी भाषा में है जो सब भाषाओं की मूल है अर्थात सभी भाषाओं का विकास वेद की भाषा मूल संस्कृति से हुआ है।
- वेद ज्ञान में संसार को रचनें वह संचालन का सत्य, व्यवस्थित तर्कसंमत विधान है।
- परमात्मा के ज्ञान अर्थात वेद ज्ञान में सभी सत्य विद्याओं के मूल सिद्धांत है। अर्थात ब्रह्मांड प्रयन्त तक का समस्त ज्ञान निहित है।
- वेद ज्ञान को सभी परवर्ती आर्ष साहित्य ग्रंथ मान्य करते हैं। तथा स्तुति करते हैं।
- वेद ज्ञान मानव मात्रं के लिए तथा पूर्णतया भेदभाव रहित है , अर्थात जैसे सूर्य चांद व समस्त सृष्टि समस्त मानवों के लिए समान रूप से है। इसी प्रकार वेद ज्ञान सभी मानव मांत्र ।

Edit with WPS Office

- वेद ज्ञान प्रकृति नियमों के अनुरूप पूर्ण तर्कपूर्ण तथा तथाकथित चमत्कारों से रहित, वेदों में मात्र ज्ञान है, मनुष्यों का इतिहास नहीं।।

➤ मनुष्य सृष्टि का आरंभ

- मनुष्य की सृष्टि भारत के भाग **तिब्बत** में हुई। वहीं से उतरकर आर्य लोग सर्वप्रथम भारत के मैदान में बसे।
- समस्त विश्व के स्थान पर धीरे-धीरे आर्य लोग अपनी बस्तियां बसातें चले गए।
- वैवस्वत मन्वंतर में अन्य ऋषियों के साथ मरीचि भी उत्पन्न हुए , मरीचि के पुत्र कश्यप से दक्ष की पुत्री अदिति दिति व दनु आदि 13 कन्याओं का विवाह हुआ।
- अदिति के पुत्र आदित्य या दैव, दिति व दनु के पुत्र दैत्य दानव कहलाए।
- विशेषकर दैत्य वह दानवों द्वारा मध्य एशिया व यूरोप आदि में मानव बस्तियां स्थापित की गई।
- अपने पितृ पुरुष कश्यप के नाम पर ही सागर का नाम कश्यप सागर रखा।
- बाइबल में भी उल्लेख आया है कि असुरों का शासन भारत सम्राट होते हुए इथोपिया तक के उनके साम्राज्य में 127 प्रान्त थे।

- वैवस्वत मन्वंतर के प्रथम में जो मनुष्य उत्पन्न हुए या जो उनकी संतति हुई वह अति बुद्धिमान व विशिष्ठ प्रतिभाशा ली रहे थे।
- उनकी स्मरण शक्ति इतनी तीव्र थी, कि जो बातें जिसने जिस प्रकार कहीं उसको वर्षों बाद भी उसी प्रकार बता देते थे। की की आवश्यकता ही नहीं थी।
- संस्कृत जैसी सुवोत्कुष्ट भाषा का उपयोग करते थे।

Edit with WPS Office

- शारीरिक रूप से पूर्ण पृष्ठ व 10 से 15 फीट ऊंचाई के होते थे।
- त्रेता व बाद के युगों में ह्रास को प्राप्त होते हुए, (चरक संहिता विमानस्थान)
- सामान्य आयु 300 से 400 वर्ष होती थी (मनुस्मृति 1/81)
- रामकालीन भारद्वाज ऋषि 300 वर्ष से अधिक जियें थे।
- महाभारत कालीन व्यास ऋषि 300 वर्ष तक, शांतनु के भाई-बाहिलक 180 वर्ष। (महाभारत द्रोण पर्व 157/15) तथा भीष्म 160 वर्ष तक पूर्ण युवा शक्ति के साथ जियें थे।
- बर्फीली रूपकुंड झील में 8 से 10 फीट लंबे कंकाल पाए गए हैं।
- सतयुग में सब लोग वेद ज्ञान प्राप्त कर सब एक दूसरे से धर्म अनुसार ही व्यवहार करते थे।
- **नैव राज्य न राजासिन्न दण्डों न च दाण्डिक।**
- **धर्मैणैव प्रजा; सृवा रक्षन्ति च परस्परमा ।** **महाभारत शांति पर्व..59/14**
- अर्थात सतयुग के प्रथम में ना कोई राज्य या राजा था तथा दंण्ड और दण्डकर्ता कुछ भी नहीं था । प्रजा ही धर्म की अनुगामिनी होकर आपस में एक दूसरे की रक्षा करती थी।
- उचित व्यवस्था हेतु कश्यप अदिति के पुत्र विवस्वान व विवस्वान के वंशपुत्र मनु पृथ्वी के प्रथम राजा बने।
- मनु के पुत्र इश्वाकु ने अपने पितामह के नाम पर अपना वंश का नाम सूर्यवंश रखा।
- मनु की पुत्री इला जिसका विवाह चंद्र के पुत्र बुद्ध से हुआ जिससे चंद्रवंश चला।
- इस प्रकार कश्यप वंश परंपरा में मनुष्य की वृद्धि हो पाई।
- मनु के समय में ही विश्वव्यापि जलप्लावन (बाढ़) की घटना घटी।
- इसी जलप्लावन की घटना का समस्त प्राचीन सभ्यताओं मिश्र, यहूदी, बाइबल, बावे, सुमेर, असीरियन व दक्षिण अमेरिका के पुराने ग्रंथों में उल्लेख है।
- विश्व की प्राचीन सभ्यताओं में पाए जाने वाली विभिन्न जातियां पहले

Edit with WPS Office

भारतीय क्षत्रिय ही थी।

- **पौण्ड्काश्चौड्द्रविडा: काम्बोजा यवना : शंका।**
- **पारदा: पल्हवांश्चीना : किराता दरदा : खशा।।** (मनुस्मृति. 10/43)
- अर्थात____क्षत्रिय जातियां धार्मिक क्रियाओं के त्याग करने से और ब्राह्मणों के उपदेशों को न मानने के कारण कालान्तर में धीरे-धीरे पतित हो गई।
- उपरोक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि विभिन्न नाम से पाए जाने वाले विश्व भर के प्राचीन समूह चाहे उक्त वर्णित हो या अन्य नाम से हो सब भारतीय आर्यों के ही वंशज थे, तथा भारत से ही गए थे।
- भारतीय काल गणना के अनुसार प्रलय काल तक का समय 14 मन्वंतर में बटा है। प्रत्येक मन्वंतर में 71 चतुर्युगी होते हैं । तथा प्रत्येक चतुर्युगी में सतयुग , त्रेता ,द्वापर व कलियुग होता है।
- वर्तमान में सातवां मन्वंतर वैवस्वत चल रहा है , जिसकी 28वीं चतुर्युगी चल रही है , जिसका वर्तमान में कलयुग चल रहा है।
- फ्रेंच ज्योतिष आचार्य विद्वान जिन सेल्वन बैली (1736−1793) ने गणना कर यह बताया कि कलयुग का प्रारंभ ईसा पर्व 3102 वर्ष पूर्व 20 फरवरी को 2:27 30 दो बजकर 27 मिनट,सेकंड पर हुआ।
- इस प्रकार से महाभारत युद्ध अब से (2025) से लगभग 51163 वर्ष पूर्व हुआ। राम का काल लगभग 9 लाख वर्ष से अधिक पूर्व तथा इस चतुर्युगी को आरंभ हुए, लगभग 38 लाख वर्ष हो चुके हैं।

• ___वैदिक सभ्यता___

वैदिक सभ्यता , विश्व की सभी सभ्यताओं में सबसे प्राचीन है , जिसका आरंभ सृष्टि उत्पत्ति से प्रारंभ होता है सृष्टि में मनुष्य की उत्पत्ति तिब्बत और हिमालय क्षेत्र पर हुई थी । वेदों की उत्पत्ति के पश्चात वैदिक काल में आर्य लोग भारत के उत्तर - पश्चिम क्षेत्रों में निवास करते थे और धीरे-धीरे उन्होंने पूरे उत्तर भारत में अपने पैर पसारे । वैदिक सभ्यता भारतीय संस्कृति और

Edit with WPS Office

धर्म की नींव रखी है , यह सभ्यता मुख्य रूप से ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , और अथर्ववेद जैसे चार प्रमुख वेदों पर आधारित थी , जो धार्मिक और सामाजिक जीवन का आधार थे । वैदिक आर्यों की सभ्यता में सामाजिक , धार्मिक , राजनीतिक , और आर्थिक जीवन का अद्वितीय संतुलन था , आधुनिक संदर्भ में वैदिक सभ्यता का महत्व इसलिए बढ़ जाता है क्योंकि इसकी नींव पर भारतीय समाज , संस्कृति और धर्म का निर्माण हुआ है ।

1. धार्मिक आस्थाएं और अनुष्ठान :

वैदिक आर्यों का संपूर्ण जीवन धर्म , अर्थ , काम , और मोक्ष पर आधारित था , आत्मा , परमात्मा की खोज , सृष्टि के नियम और परम सत्य को जानने की अभिलाषा तथा प्रकृति और उसके विभिन्न तत्वों की सत्कार/पूजा उनके धार्मिक कृतियों के केंद्र पर थे । वे अग्नि , सूर्य , वायु , इंद्र , वरुण , पृथ्वी और आकाश जैसे प्राकृतिक शक्तियों को देवता मानते थे । इन देवताओं को प्रसन्न/बलवान करने के लिए यज्ञों का आयोजन किया जाता था , जिसमें अग्नि देवता के माध्यम से आहुति दी जाती थी । ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद , इन चारों वेदों में इन यज्ञों और धार्मिक अनुष्ठानों का वर्णन मिलता है ।

- **यज्ञ :** वैदिक काल में यज्ञ अत्यधिक महत्वपूर्ण थे । यज्ञों का उद्देश्य देवताओं को प्रसन्न करना , प्रकृति , वृष्टि जल अथवा वातावरण की शुद्धि के साथ-साथ शारीरिक एवं आत्मिक उन्नति प्राप्त करना था ।

- **ऋचाएं और मंत्र :** वैदिक सभ्यता में मंत्रों और ऋचाओं का बहुत महत्व था । वेदों में संकलित ये ऋचाएं देवताओं की स्तुति और उनकी कृपा प्राप्त करने के लिए गाई जाती थी । सामवेद विशेष रूप से संगीतमय स्तुतियों से संबंधित है । वैदिक ऋचाएं सृष्टि के नियमों को समझने एवं ज्ञान विज्ञान के गूढ़ रहस्यों के उद्घाटन करने में ऋषियों की सहायता करते थे ।
- **प्राकृतिक देवताओं की पूजा :** वैदिक आर्य एक निराकार परमात्मा

Edit with WPS Office

की उपासना करते थे एवं प्रकृति के विभिन्न तत्वों जैसे सूर्य , वायु ,जल , और अग्नि की पूजा करते थे , जो उनके जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण थे ।

2. सामाजिक संरचना :

- वैदिक समाज में एक स्पष्ट सामाजिक संरचना थी , जिसे मुख्यतः चार वर्णों में विभाजित किया गया था ___ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र । यह विभाजन कर्म और योग्यता के आधार पर था , और इसके अनुसार हर व्यक्ति का समाज में एक विशिष्ट स्थान था ।
- **ब्राह्मण :** ये समाज के कर्म एवं गुणों से उच्चतम वर्ग के लोग थे धार्मिक अनुष्ठानों का संचालन करते थे । उन्हें ज्ञान और शिक्षा का संरक्षक माना जाता था ।
- **क्षत्रिय :** ये योद्धा वर्ग के लोग थे और समाज की सुरक्षा का दायित्व इन्हीं पर था । राजा और सैनिक इस वर्ण से आते थे ।
- **वैश्य :** व्यापक और कृषि का कार्य वैश्य वर्ग के अंतर्गत आता था । ये समाज की आर्थिक धारा को नियंत्रित करते थे ।
- **शूद्र :** ये समाज के सेवा एवं सहायक वर्ग के लोग थे और उन्हें अन्य तीन वर्णों की सेवा करने के लिए रखा गया था ।

3. आर्थिक जीवन :

वैदिक आर्यों की आर्थिक व्यवस्था कृषि , पशुपालन , व्यापार और वाणिज्य पर आधारित थी । वैदिक सभ्यता में कृषि को मुख्य आजीविका का साधन माना जाता था और गोपालन (गाय पालन) का भी अत्यधिक महत्व था । गाय को धन और समृद्धि का प्रतीक माना जाता था , और इसका धार्मिक एवं आर्थिक महत्व दोनों थे ।

- **कृषि :** वैदिक काल में कृषि का प्रमुख महत्व था । लोग

Edit with WPS Office

अनाज , जौं , गेहूं और अन्य फसलों की खेती करते थे । वर्षा के पानी पर निर्भरता थी और ऋतुओं के अनुसार खेती की जाती थी ।

- **पशुपालन** : वैदिक सभ्यता में गाय को विशेष स्थान प्राप्त था । इसे धन का प्रतीक माना जाता था , और " गायों की वृद्धि " को समृद्धि का चिन्ह माना जाता था । घोड़े और बैल भी महत्वपूर्ण थे , जिनका उपयोग कृषि और परिवहन में होता था ।
- **व्यापार और वाणिज्य** : वैदिक काल में व्यापार का प्रारंभिक रूपरेखा कहां जाता है । वस्तु - विनिमय प्रणाली प्रमुख थी , और वस्त्र , अनाज , धातु , और पशु उत्पादों का लेन-देन होता था ।

4. राजनीतिक और प्रशासनिक व्यवस्था :

वैदिक काल की राजनीतिक व्यवस्था अपेक्षाकृत सरल थी , परंतु समय के साथ जटिलता बढ़ी । प्रारंभिक वैदिक काल में समाज जनों और कुलों में बंटा हुआ था , जो एक राजा या कुलपति के अधीन होते थे । राजा को समाज के सुरक्षा और न्याय का पालन करने वाला माना जाता था , परंतु उसकी शक्ति सीमित थी और उसे एक धर्म के अनुयायी के रूप में कार्य करना पड़ता था ।

- **राजा** : वैदिक काल में राजा का चुनाव सामूहिक रूप से किया जाता था । राजा का मुख्य कर्तव्य समाज की रक्षा करना और न्याय की स्थापना करना था । विश्व के प्रथम राजा स्वयंभू मनु थे । इस समय राजा से अधिक महत्व दंड विधान का हुआ करता था क्योंकि कठोर दंड विधान ही वास्तविक शासक होता था समाज पूर्ण रूप से व्यवस्थित एवं सुसंस्कृत हुआ करती थी ।
- **सभा और समिति** : वैदिक समाज में सभा और समिति जैसी संस्थाएं थी , जो राजा को सलाह देने और महत्वपूर्ण निर्णय लेने के लिए स्थापित की गई थी । सभा वरिष्ठ नागरिकों की थी , जबकि समिति में युवा और अनुभवी व्यक्ति सम्मिलित होते थे ।
- **राज्य का स्वरूप** : राज्य छोटे-छोटे जनों या कुलों में बंटे होते थे ।

Edit with WPS Office

इन जनों के मुखिया राजा या कुलपति होते थे , जो जनों की रक्षा और नेतृत्व करते थे ।

5. शिक्षा और ज्ञान :

वैदिक सभ्यता में शिक्षा और ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान था । शिक्षा गुरुकुलों में दी जाती थी , जहां ब्राह्मण गुरु अपने शिष्यों को वेदों का ज्ञान , दर्शनशास्त्र , विज्ञान , गणित , और नैतिक शिक्षा प्रदान करते थे । शिक्षा का उद्देश्य जीवन के विभिन्न पक्षों को समझना और एक अच्छे नागरिक के रूप में समाज में योगदान करना था ।

- **गुरुकुल प्रणाली :** वैदिक काल में गुरुकुल शिक्षा का केंद्र बिंदु होता था , जहां छात्र ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों और अन्य विषयों का अध्ययन करते थे । विद्यार्थी गुरु के आश्रम में रहकर अस्त्र - शस्त्र की शिक्षा भी प्राप्त करते थे ।
- **शास्त्रों का अध्ययन :** वेद , उपनिषद , और अन्य वैदिक ग्रंथों का अध्ययन वैदिक शिक्षा का प्रमुख हिस्सा था । यह शिक्षा मौखिक परंपरा के माध्यम से दी जाती थी और स्मरण शक्ति पर आधारित थी ।

6. वैदिक जीवनशैली और नैतिकता :

वैदिक काल में लोगों की जीवन शैली सरल और प्राकृतिक थी । वे प्रकृति के साथ सामंजस्य में रहते थे और इसका सम्मान करते थे । नैतिकता और धर्म का पालन प्रत्येक व्यक्ति का प्रमुख कर्तव्य था । वैदिक आर्य सत्य , धर्म , अहिंसा , और ईमानदारी जैसे गुणों को अत्यधिक महत्व देते थे । समाज में संयम और अनुशासन की भावना विद्यमान थी ।

- **परिवार :** वैदिक समाज में संयुक्त परिवार प्रणाली थी , जहां पिता को परिवार का मुखिया माना जाता था । माता-पिता का आदर

Edit with WPS Office

करना , बच्चों का पालन - पोषण और परिवार के अन्य सदस्यों की देखभाल करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य था ।

- **संयमित जीवन :** वैदिक जीवन में संयमित और धार्मिक जीवन शैली को महत्व दिया जाता था । लोगों को भौतिक सुख - सुविधाओं से दूर रहकर आत्म - संयम मैं रहने का प्रयास करना होता था ।

वैदिक आर्यों की सभ्यता एक प्राचीन और समृद्ध संस्कृति का उदाहरण है , जो धार्मिक आस्थाओं , सामाजिक संरचना , अर्थव्यवस्था , और ज्ञान - विज्ञान में अत्यधिक उन्नत थी । वैदिक आर्य अपने जीवन के हर क्षेत्र में धर्म और नैतिकता का पालन करते थे और उनके सामाजिक और धार्मिक सिद्धांतों का प्रभाव आज भी भारतीय समाज पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है । इस सभ्यता की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह एक संतुलित जीवन जीने की प्रेरणा देती थी , जिसमें व्यक्ति समाज , परिवार , और प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर चलता था ।

पृष्ठ समाप्त्

➤ [Theory of evolution का सच ?]

Charles Darwin ___ कि यह थ्योरी यह बताती है कि मनुष्य के पूर्वज बंदर थे और एक कर्मिक विकास से ही पृथ्वी पर जीव उत्पन्न हुए हैं यह

Edit with WPS Office

थ्योरी इस विचार पर आधारित है कि जीव वातावरण और परिस्थितियों के अनुसार धीरे-धीरे बदलाव और अनुकूल करते हैं । इस धरती पर सबसे पहले एक कोशिका unicellular organisms (अमीबा) वाले जीव बने । ये जीव पानी में रहते थे । समय और परिस्थितियों के अनुसार इन्होंने स्वयं को ढाल लिया । एक कोशिकीय जीव के बाद बहुकोशिकीय जीव (पशु ,पक्षी) बनें । इस तरह जीव विकास की यह यात्रा करोड़ों वर्षों तक चली , जिसके परिणाम स्वरूप बंदर से मनुष्य बना । जो की पूर्ण रूप से मिथ्या परिकल्पना है । अगर ऐसा है तो बंदर आज भी बंदर ही जन्म लेते और मृत्यु पर्यंत तक बंदर ही रहते हैं उनमें क्रमिक विकास क्यों नहीं होता ? उन बंदरों की उन्नति आज क्यों नहीं होती ? अगर बंदर से मनुष्य बना , तो मनुष्य से आगे और कुछ क्यों नहीं बना ? ऐसे अनेक प्रश्नों के उत्तर यह थ्योरी नहीं दे पाती । वास्तव में यह संसार अपने आप बन गया ऐसा कहना तर्क , बुद्धि , और सृष्टि नियमों के विरुद्ध है । जिस कारण से यह एक कल्पना मात्र है । यदि संसार इसी तरह बना तो आज टायर से अपने आप गाड़ियां क्यों नहीं बनती ? जबकि टायर तो हजारों वर्ष पूर्व बन चुका था । इंजन से अपने आप हवाई जहाज क्यों नहीं बनता ? यह सृष्टि अपने आप नहीं बन सकती । यह अत्यंत तर्क बुद्धि पूर्वक बनाई गई है जिसने भी बनाया है वह परम बुद्धि को धारण करता है । इसलिए हम साधारण बुद्धि से उस परम बुद्धि को ठीक ठीक नहीं जान सकते । अतः यह थ्योरी पूर्ण रूप से मिथ्या एवं कालापानिक है । चार्ल्स डार्विन कि इस थ्योरी को विश्व के सभी देशों ने अपनी पुस्तकों से हटा दिया है ।

- **[Big Bang theory बिग बैंग थ्योरी का सच]**

बिग बैंग के सिद्धांत के अनुसार लगभग 13.8 अरब वर्ष पहले ब्रह्मांड एक अति- सघन अवस्था में था । इस अवस्था में अचानक हुए एक महा विस्फोटक के परिणाम स्वरूप यह सृष्टि उत्पन्न हुई । इस विस्फोट के कारण सभी कण अपनी अपनी कक्षा में फैलने लगे , जिसके परिणाम स्वरूप ब्रह्मांड का विस्तार हुआ और यह प्रक्रिया आज भी जारी है । उस महा

Edit with WPS Office

विस्फोट में अपार ऊर्जा का उत्सर्जन हुआ , जो ब्रह्मांड की संरचना का आधार बना । अब कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं__ जब बिग बैंग से सृष्टि का निर्माण हुआ , तब ऊर्जा किस स्वरूप में विद्यमान थी ? आखिर बिग बैंग क्यों हुआ ? शून्य से सृष्टि का प्रारंभ कैसे संभव हुआ ? बिग बैंग किससे हुआ ? और बिना किसी निर्माता के सृष्टि अपने आप कैसे बन गई ? इन प्रश्नों का उत्तर बिग बैंग सिद्धांत नहीं दे पाता ।

वर्तमान में अनेक कल्पनात्मक सिद्धांत जैसे __ **steady state theory , bubble universe theory , और mirror University theory** प्रचलित है । परंतु इनमें से कोई भी यह स्पष्ट नहीं कर पाता कि ब्रह्मांड की प्रारंभिक अवस्था क्या थी ? यहां तक की आज के वैज्ञानिक भी यह स्वीकार करते हैं की बिग बैंग से पहले क्या था ? -- यह कोई नहीं जानता । यही कारण है की बिग बैंग सिद्धांत सृष्टि की प्रारंभिक स्थिति की व्याख्या करने में असमर्थ है ।

आधुनिक भौतिकी का कोई भी सिद्धांत सृष्टि की उत्पत्ति के उस मूल रहस्य को उजागर नहीं कर पाया है क्योंकि उनकी खोज केवल भौतिक जगत तक सीमित रहती है । परमात्मा और जीवात्मा , जो कि सृष्टि के मुख्य तत्व हैं , उसे जानने का प्रयास आज का कोई भी वैज्ञानिक नहीं करता । सृष्टि के वास्तविक रहस्य को समझने के लिए हमें तीन मूलभूत प्रश्नों का उत्तर ढूंढना होगा -- कौन , क्यों , और कैसे ? सृष्टि का निर्माण कौन करता है ? इसका निर्माण क्यों किया जाता है ? और यह प्रक्रिया कैसी होती है ?
सांख्य दर्शन अनुसार___
नवस्तुनो वस्तुसिद्धि ____ संख्यादर्शन. 1.78
अर्थात अभाव से भाव की उत्पत्ति नहीं हो सकती । इसका अर्थ यह है की कुछ भी अस्तित्व मैं तभी आता है जब पहले से कुछ विद्यमान हो ।
इस सिद्धांत को गीता में भगवान श्री कृष्ण ने भी कहा है ____
नास्तों विद्यतें भावो नाभावो विधते सत् । गीता. 2.16
भावार्थ यह है कि असत् की कभी कोई सत्ता नहीं होती और सत् का कभी

Edit with WPS Office

विनाश नहीं होता ।इसका सार यह है कि शून्य (nothing) से किसी भी वस्तु की उत्पत्ति नहीं हो सकती , और जो वस्तु विद्यमान है , उसका कभी भी पूर्ण विनाश नहीं हो सकता ।

असत् अर्थात जो वस्तु विद्यमान नहीं है , उसकी कभी भी कोई सत्ता नहीं होती , और जो वस्तु सत् है , वह कभी भी नष्ट नहीं होती । यह सिद्धांत यह बताता है कि कुछ भी शून्य से उत्पन्न नहीं हो सकता , और किसी वस्तु का पूर्ण विनाश नहीं हो सकता , वह केवल एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित हो सकता है ।

- **नाश का सिद्धांत : कारण में लय**

नाश : कारणलय ______सांख्य दर्शन. 1.121
इस सिद्धांत का तात्पर्य यह है कि किसी भी वस्तु का विनाश केवल उसका अपने सूक्षमतम कारणों में लय हो जाना है । इसका अर्थ यह है कि जब कोई वस्तु नष्ट होती हुई दिखती है , तो वह वास्तव में समाप्त नहीं होती , बल्कि अपने मूल कारण रूप मैं समाहित हो जाती है । यह विचार आधुनिक विज्ञान और वैदिक दर्शन दोनों में निहित है । कि पदार्थ कभी भी पूर्णत : नष्ट नहीं होता , बल्कि सिर्फ रूप बदलता है ।

- **वैज्ञानिक दृष्टिकोण से नाश का विश्लेषण _______**

यदि हम इसे आधुनिक विज्ञान के संदर्भ में देखें , तो हर वस्तु अणुओं से बनी होती है । अणु परमाणुओं से मिलकर बने होते हैं , और परमाणु इलेक्ट्रॉन , प्रोटॉन , और न्यूट्रॉन का निर्माण और भी सूक्ष्म कणों , जिन्हें कार्क कहा जाता है , से होता है । विज्ञान इस बिंदु पर तो पहुंच चुका है , लेकिन सवाल उठता है -- कार्क किससे बने होते हैं ?

वैदिक दृष्टिकोण : सूक्ष्म से सूक्ष्मतर का रहस्य

Edit with WPS Office

यहां वैदिक विज्ञान एक गहरा रहस्य उजागर करता है वैदिक सिद्धांत के अनुसार कार्क से भी सूक्ष्म तत्व होते हैं ।

1. ___ **कार्क का निर्माण मनस् तत्व से** ______वैदिक सिद्धांत कहता है कि कार्क मनस् (मन) तत्व से बने होते हैं , जो विचार और मानसिक शक्ति का आधार है ।

2. ___ **मनस् तत्व का निर्माण अहम् तत्व से** ______ मनस् तत्व का निर्माण (अहम्) अर्थात अहंकार तत्व से हुआ है , जो किसी भी वस्तु की स्व: अनुभूति और पहचान का मूल है ।

3.___ **अहम् तत्व का निर्माण महत्व तत्व से** ______ अहम् तत्व का निर्माण महत्व तत्व से होता है , जिसे सृष्टि की बुद्धिमत्ता और चेतना का स्त्रोत माना जाता है ।

4. ___ **महत्व तत्व का निर्माण प्रकृति के मूल कणों से** ______ महत्व तत्व प्रकृति के तीन गुणों -- सत (सत्तोगुण) , रज (रजोगुण) , तम (तमोगुण) से बना होता है । यह प्रकृति के सबसे मूल और सूक्ष्मतम कण मानें जाते हैं ।

- **नाश : केवल रुपान्तरण _____**

इस सिद्धांत के अनुसार , जब कोई वस्तु नष्ट होती है , तो वह वास्तव में नष्ट नहीं होती , बल्कि अपने मूल स्वरूप में लौट जाती हैं । यह केवल हमारी इंद्रियों की सीमा है जो इसे नाश के रूप में देखती है , जबकि वस्तु केवल एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तित होती है ।

उदाहरण के तौर पर , जब कोई वस्तु जलती है , तो उसकी भौतिक अवस्था बदलती है -- वह भस्म बन जाती है या धुएं में परिवर्तित हो जाती है । परंतु उस वस्तु के कण , अपने सूक्ष्मतम रूप में , अभी भी विद्यमान रहते हैं । हमारी इंद्रियां उस सूक्ष्मतम रुप को नहीं देख पाती , इसलिए हमें यह नष्ट हो जाना प्रतीत होता है ।

Edit with WPS Office

नाश का वास्तविक अर्थ ______

इसप्रकार , नाश का वास्तविक अर्थ पूर्ण समाप्ति नहीं है , बल्कि वस्तु का अपने कारणों में लय हो जाना है । यह सिद्धांत हमें यह सिखाता है कि ब्रह्मांड में कोई भी वस्तु कभी भी पूर्णतः नष्ट नहीं होती , बल्कि उसका अस्तित्व किसी और रूप में बना रहता है ।
इसलिए सृष्टि की उत्पत्ति , स्थिति , और प्रलय के गहन प्रश्नों के उत्तर केवल वैदिक ज्ञान मैं ही निहित है । वैदिक दृष्टिकोण के अनुसार , सृष्टि का निर्माण एक दिव्य योजना के फल स्वरुप होता है , जो वैज्ञानिकों के अध्ययन के परे है । इसलिए यह कहना उचित होगा कि Big Bang theory मात्र एक माननीय कल्पना है , जो सृष्टि उत्पत्ति की वास्तविक प्रक्रिया को समझाने में असमर्थ है ।

सृष्टि की आयु : वैदिक गणना के अनुसार _____

वैदिक परंपरा में सृष्टि की आयु और उसकी गणना एक अत्यंत विस्तृत और गहन प्रक्रिया मानी गई है । यह गणना अनादि काल से चली आ रही है और इसमें युगो , मन्वंतर , कल्पों का उल्लेख मिलता है । सृष्टि की आयु समझने के लिए समय को चार प्रमुख युगों में विभाजित किया गया है । आइए इसे समझने की कोशिश करते हैं :

चतुर्युग : सृष्टि के चक्र की इकाई ______

सृष्टि की आयु को जानने के लिए सबसे पहले चार युगों को समझना बहुत ही आवश्यक है ।

- **सतयुग** ___ 17,28000 वर्ष
- **त्रेता युग** ___ 12 ,96000 वर्ष
- **द्वापर युग** ___ 8 ,64000 वर्ष
- **कलयुग** ___ 4 ,32000 वर्ष

Edit with WPS Office

इन चारों युगों का एक पूरा चक्र चतुर्युग कहलाता है । चतुर्युग की कुल अवधि 43 लाख 20 हजार वर्ष मानी गई है , जो प्रत्येक युग के समय के हिसाब से अलग-अलग बंटा होता है यह चतुर्युग प्रकृति और जीवन की उन्नति और पतन के चक्र को दर्शाता है , जो सृष्टि के अस्तित्व का महत्वपूर्ण अंग है ।

- **मन्वंतर : 71 महायुग का संयोजन ______**

अब 71 चतर्युग मिलकर एक मन्वंतर बनाते हैं । यह मन्वंतर एक विशिष्ट अवधि होती है , जो सृष्टि और प्रलय के बीच के समय को दर्शाती है । प्रत्येक मन्वंतर की अवधि 30 करोड़ 67 लाख 20 हजार वर्ष होती है । इस अवधि में सृष्टि का एक मनु होता है , जो उस समय के मानवता और अन्य जीवों का संरक्षक माना जाता है ।

कल्प : सृष्टि का एक पूर्ण चक्र ______

14 मन्वंतर मिलकर एक कल्प का निर्माण करते हैं । इसे ब्रह्मा का एक दिन और एक रात भी कहा जाता है । एक कल्प सृष्टि का संपूर्ण चक्र होता है , जिसमें सृष्टि उत्पत्ति , पालन और प्रलय की ओर बढ़ती है । प्रत्येक कल्प में 14 मनु होते हैं , और इन मनुओं के नाम पर ही उस मन्वंतर का नाम रखा जाता है । वर्तमान में वैवस्वत मनु मन्वंतर चल रहा है ।

प्रत्येक मन्वंतर में सृष्टि का एक नया चरण शुरू होता है और एक नए मनु द्वारा इसका पालन पोषण होता है । इन 14 मनुओं के नाम इस प्रकार हैं ______

1. ___ **स्वायम्भुव मनु**
2. ___ **स्वारोचिष मनु**
3. ___ **औतमी मनु**
4. ___ **तामस मनु**

Edit with WPS Office

5. ___ रैवत मनु
6. ___ चाक्षुष मनु
7. ___ वैवस्वत मनु
8. ___ सावर्णि मनु
9. ___ दक्षसवर्णि मनु
10. ___ ब्रह्मसावर्णि मनु
11. ___ धर्मसावर्णी मनु
12. ___ रुद्रसावर्णी मनु
13. ___ देवसावर्णी मनु
14. ___ इंद्रसावर्णी मनु

सृष्टि की प्रकट अवस्था = 4 ,32,00,00,000 वर्ष **(ब्रह्म का एक दिन)**
सृष्टि की सुषुप्त अवस्था = 4 ,32,00,00,000 वर्ष **(ब्रह्म का एक रात)**
एक सृष्टि की पूर्ण आयु = 8 ,64,00,00,000 वर्ष

सृष्टि उत्पन्न हुए अब तक कितने वर्ष हो गए ..?

वैदिक परंपराओं और ज्योतिषियों शास्त्रों के अनुसार , सृष्टि की उत्पत्ति को अब तक 1 ,96,08,53,125 वर्ष बीत चुके हैं । वर्तमान में हम सृष्टि के 125वे वर्ष में चल रहे हैं । इस सृष्टि की आयु का उल्लेख विशेष रूप से यज्ञो के दौरान होने वाले संकल्प पाठ में मिलता है , जहां ब्रह्मा के एक दिन से लेकर मन्वंतर ,युग ,अयन , ऋतु , मास ,पक्ष , तिथि , काल और स्थान तक की सटीक गणना सुरक्षित रखी जाती है । यह गणना हमें बताती है कि सृष्टि का कालचक्र कितना विस्तृत और अद्भुत है ।

- **संकल्प पाठ में समय और स्थान की माप ______**

सृष्टि के आरंभ से यज्ञों में संकल्प पाठ एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया रही है । इसके माध्यम से हर पीढ़ी के ऋषि मुनियों ने काल गणना और समय की गहराइयों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित किया है

Edit with WPS Office

। यह संकल्प पाठ इस तरह से किया जाता है ______

"ओउम् तत्सत ब्राह्मणोंदिवसे द्वितीयप्रहराधै वैवस्वतन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणो , एकोवृंद: षण्णवति:कोटयों अष्टौलक्षाणि त्रिपठ्चासत्सहस्त्राणि चतुर्थविंशत्यधिकशत (1,96,08,53,125) सृष्टिविक्रमसंवत्सरे .... अयने , ... ऋतौ , ... मासे , ... पक्षे , ... वासरे , ... तिथौ , ... काले जम्बूद्वीपे , भरतखण्डे , आर्यावर्तान्तर्गते , मध्यखण्डछत्तीसगढ़प्रदेशे , रायपुरप्रान्ते , टैगोरनगरे स्थितप्रज्ञपरिसरसयभवने , यज्ञशालयम अस्माभि: दैनिक अग्रिहोत्र कर्मक्रियते ।। "

काल गणना की पवित्रता ______

यह संकल्प पाठ हमें केवल समय की गणना ही नहीं सिखाता , बल्कि ब्रह्मांडीय समय की विशालता को भी हमारे सामने प्रकट करता है । यह पाठ एक विशेष संरचना के माध्यम से हमें बताता है कि ब्रह्मा का एक दिन , मन्वंतर ,युग, मांस और तिथि कैसे क्रमबद्ध होते हैं । इसके साथ ही इसमें स्थान का भी विस्तृत विवरण दिया जाता है , जैसे जम्बूद्वीप , भारतखंड , आर्यावर्त , और यहां तक की स्थानीय स्तर पर राज्य और नगर तक की भी गणना होती है ।

सृष्टि संवत् : वैदिक ज्योतिष की अद्वितीयता ______

वैदिक ज्योतिष और शास्त्रों द्वारा प्रदान की गई यह गणना यह दर्शाती है कि सृष्टि का समय - चक्र कितना विशाल और अनंत है । यह हमें याद दिलाता है कि हम एक ऐसी परंपरा का हिस्सा है , जो ब्रह्मांड के अनंत चक्रों को समझने का प्रयास करती है । इस प्रकार की सटीक और जटिल गणना केवल वैदिक ज्ञान और शास्त्रों में ही मिलती है । जो सृष्टि के आरंभ से अब तक की यात्रा को सूक्ष्मता से मापती है । इस प्रकार संकल्प पाठ के माध्यम से सृष्टि की काल गणना को संरक्षित कर यज्ञ के दौरान ब्रह्मांडीय समय की पुनः स्थापना की जाती है ।

Edit with WPS Office

सृष्टि का चक्रीय स्वरूप ______

सृष्टि की प्रक्रिया चक्रीय होती है , जैसे दिन और रात का निरंतर आवागमन होता रहता है । जिस प्रकार दिन के बाद रात आती है और रात के बाद फिर दिन , वैसे ही सृष्टि के निर्माण के बाद प्रलय और प्रलय के बाद पुनः सृष्टि का निर्माण होता है । यह प्रक्रिया अनादि काल से चली आ रही है , और इसका कोई स्थायी आरंभ या अंत नहीं है । लेकिन हर सृष्टि और प्रलय का एक निश्चित समय होता है , जिसे कालचक्र कहा जाता है ।

वर्तमान सृष्टि का शेष समय ______

वेदों में वर्णित कालचक्र के अनुसार , इस सृष्टि के 2,35,91,46,876 वर्ष अभी शेष है । यह संकेत करता है कि इस सृष्टि का अभी भी बहुत समय भोगना शेष है , जिसके पश्चात प्रलय का आगमन होगा और उसके बाद एक नई सृष्टि का जन्म होगा । यह शाश्वत चक्र अनवरत चलता रहता है और इसका अंत केवल एक नए प्रारंभ का प्रतीक होगा ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

---

7. सातवां पृष्ठ

Edit with WPS Office

• { सत्य की राह् }

इसको हम दो श्रेणी में रखेंगे, पहली श्रेणी और दूसरी श्रेणी ।
लगभग दो अरब वर्ष पूर्व परमात्मा ने सृष्टि के आरंभ में मनुष्यों योगियों की सभी साधन करने के बाद मनुष्य की रचना की, और उसके कल्याण हेतु अग्नि वायु आदित्य अंगिरा नामक चार ऋषियों के हृदय में वेद वेद का ज्ञान प्रकाशित किया । ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद का प्रकाश किया । बाद में यही ज्ञान प्रसारित हुआ, वेदों के इसी ज्ञान विज्ञान उपदेश को वैदिक धर्म कहा जाता है । (आप लोगों ने पढ़ा होगा कि इस भारतवर्ष का पहला नाम आर्यावर्त था) आर्यावर्त अर्थात श्रेष्ठों का स्थान । महाभारत काल तक आर्यावर्त में वैदिक सनातन के अतिरिक्त और कोई दूसरा मत नहीं था ? वैदिक अवस्था में वर्णों का आधार जन्म नहीं बल्कि कर्म होता था । गुरुकुल में आचार्य बालक की बुद्धि, शरीर और व्यवहार की कुशल परीक्षा करके दीक्षा के समय उसे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का वर्ण प्रदान करते थे । 16 संस्कारों के माध्यम से बालक का जीवन परिष्कृत किया जाता था । जीवन में चार आश्रम थे । ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और सन्यास आश्रम । उस समय समाज में सुख शांति और समृद्धि थी । राजा और प्रजा सभी वेदों में वर्णित आचार संहिता का पालन करते थे । लेकिन समय के साथ-साथ वर्ण और आश्रम व्यवस्था विकृत होती चली गई । ब्राह्मण का पुत्र बिना वेद पढ़े भी ब्राह्मण कहलाने लगा । और शूद्र का पुत्र शिक्षित होने के बाद भी शूद्र कहलाने लगा । वर्णों का स्थान संकीर्ण जातियों ने ले लिया । राजा की हर गलत बात ब्राह्मण वेद सत्य सिद्ध करते , और बदले में मोटा-मोटा धन ले जाते । इस प्रकार सभी वर्ण अपने-अपने धर्म से पथित हो गए ।
एक कहानी से समझते हैं____
ब्राह्मण ने राजा से कहा, महाराज आपने जो गोमेध व अश्वमेध यज्ञ के विषय में पूछा हे ? ब्राह्मण कहता है, महाराज शास्त्रों में इसकी व्यवस्था है की जो राजा जितनी अधिक गाएं और अश्वो की अधिक बलि देगा उतनी ही उसके राज्य की सुख समृद्धि बढ़ेगी । और राजा मोक्ष को प्राप्त होगा । (यह सब

Edit with WPS Office

झूठी झूठी बातें तो बता दी ब्राह्मणों ने लोभ लालच के कारण)
एक राजा ने मदिरा पान करने के विषय में पूछा ? उसके राजगुरु ने किया उत्तर दिया_? उसके राजगुरु ने कहा महाराज जब देवताओं को सोम रस पीने का स्पष्ट वर्णन शास्त्रों में है । तो इस प्रकार आपत्ति राजा के मदिरापान करने में क्या आपत्ति हो सकती है ? राजगुरु ने कहा सोमरस मदिरा ही तो है महाराज ! जब देवता लोग मदीरा पीते थे तो आप क्यों नहीं ? राजा ने कहां धन्यवाद राजगुरु आज आपने हमारी बड़ी चिंता दूर कर दी । फिर एक सहस्त्र मुद्राओं से राजगुरु को भेंट किया गया । (लोभ लालच के कारण यह सब झूठी झूठी बातें बोली गई, ऐसी ऐसी बातों से आगे चलकर देश की कितनी बड़ी हानि हुई कोई अंदाजा भी नहीं लगा सकता) ।
स्वयं वेदों से विमुख होने के कारण और दूसरे पढ़कर कहीं विद्वान न बन जाए तो इस डर से अन्य वर्णों पर वेदों पर प्रतिबंध लगा दिए गए । स्त्रियों और शूद्रों से शिक्षा का अधिकार ही छीन लिया गया । महाभारत काल तक वैदिक संस्कृति बहुत ही क्षीण हो गई थी । वैदिक मूल्यों से विमुख होने के कारण ही महाभारत हुआ । जिसमें आर्यावर्त का समस्त ज्ञान, विज्ञान, ऋषि मुनियों और वैदिक विद्वान समाप्त होते चले गए । नए-नए अवैदिक मत शुरू हो गए । वैदिक मत क्षीण होने पर वाममार्गी मत आया । जिसने तंत्र तांत्रिक जैसी अवैदिक विधाओं द्वारा मोक्ष प्राप्ति का विचित्र रास्ता अपनाया । इन्होंने अपने ग्रंथों का नाम शिव और पार्वती ऐसे ऐसे देवी देवताओं के नाम लिखें । और उन ग्रंथों को वैदिक ग्रंथ कहकर प्रचारित किया । मंद , मास,, मीद , मुद्रा, मैथुन इन पांच मकारों को मुक्ति का साधन बताया । इन्होंने ही पशु बलि जैसी बातें अपने ग्रंथों में स्थापित की । और उन्हें वेदों की बातें कहकर प्रचारित किया । वाममार्गियों के अनाचार से अलग होकर कुछ ज्ञानियों ने जैन , बौद्ध मतों की नींव रखी । और वाममार्गियों द्वारा वेदों के विकृत रूप को ही वेद मानकर वेदों का तिरस्कार किया, बहिष्कार किया । क्योंकि जब उनके सामने लोग कहते थे राजा को गाय और अश्वों की बलि यज्ञ में अश्व की बलि देने से मोक्ष प्राप्त होता है । और यज्ञ में गाय की बलि देने से यजमान को मोक्ष प्राप्त होता है । और राजा को यज्ञ में अश्व की बलि देने से मोक्ष प्राप्त होता है । जब ऐसी बातें महात्मा गौतम बुद्ध के कानों में पड़ती थी । जब बुद्ध इनका विरोध करते तो

Edit with WPS Office

कहते थे ऐसा वेदों में लिखा है । महात्मा गौतम बुद्ध ने विश्वास किया और कहा अगर ऐसी बातें वेदों में लिखी है तो वेद निषेध के योग्य है । जैन मत के प्रवक्ता ने भी वाममार्गियों द्वारा रचे गए ग्रंथों को वेद मानकर उनका खंडन किया और अपने तीर्थंकरों की बड़ी-बड़ी मूर्तियां बनाकर उन्हें पूजना शुरू किया । इसलिए परमेश्वर का मानना कम होता गया । और जड़ वस्तुओं तथा व्यक्तियों की पूजा बढ़ती गई । लगभग 300 वर्षों तक जैन मत के प्रभाव से आर्यावर्त में वेदों का पठन-पाठन कम होता चला गया । लेकिन वेदों के नाम पर जनता को भ्रमित करना जारी रहा । **इसी समय श्री आदि शंकराचार्य जी हुए और उन्होंने एक बार फिर वैदिक मत की स्थापना की । आदि शंकराचार्य जी ने जैन मत के विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ करके उन्हें वैदिक मत की ओर लौटने के लिए विवश किया । वेदों की बूझती ज्योति फिर एक बार सजी । दुर्भाग्य वस शंकराचार्य जी एक षड्यंत्र का शिकार हुए । उन्हें विश देकर उनकी हत्या कर दी गई । और वेदों का उगता सूरज फिर एक बार तेजहीन होने लगा । शंकराचार्य स्वयं जड़ पूजा वस्तुओं के विरोधी थे ।** मगर आगे चलकर उनके शिष्यों ने वाममार्गियों के प्रभाव में आकर शिव पार्वती की प्रतिमाओं की पूजा शुरू कर दी गई । शिवपूजक जैन मंदिरों में की जाती थी । इसे रोकने के लिए पौराणिकों ने जैनियों के 24 तीर्थंकरों को अपने 24 अवतार घोषित कर दिए गए । और जैनियों के पुराणों की तरह अपने यहां भी पुराण रचे । फिर मंदिर बने और फिर उनमें मूर्तियां रखकर उनकी पूजा शुरु कर दी । फिर शैव और वैष्णव आदियो ने अपने-अपने पुराणों की रचना की । अपने-अपने ईष्ट देवों को महान बताया । यह पुराण इन मतों के अनुयायियों ने लिखे हैं । मगर उन्हें व्यास ऋषि रचित कहकर प्रचारित किया गया । इनमें से कई पुराण कहानियों से भरे पड़े हैं । जिनमें राम और कृष्ण जैसे महापुरुषों का चरित्र हनन किया गया है । सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह था कि यह सब अपने मत को वैदिक मत ही बताते थे । वैष्णवों ने जैसे विष्णु के कमल शंख चक्र गदा आदि को आग में तपाकर शरीर दागने को मुक्ति का मार्ग बताया । आर्यावर्त के मनुष्य ने परमात्मा के विष्णु और रुद्र आदि गौण आदि वाचक नामों को भूलाकर व्यक्तिवाचक बना दिया । और हर एक नाम की अलग एक आकृति कर दी । एक और वैदिक धर्म में ये विकृतियों पनप रही थी , और दूसरी और

Edit with WPS Office

विदेशी मत भारत की संस्कृति और यहां के लोगों पर तेजी से प्रहार कर रहे थे । तेजी के साथ धर्म परिवर्तन हो रहे थे । और इन सब पर ध्यान न देकर हिंदू धर्म गुरु मोक्ष के सरल साधन उपलब्ध करा रहे थे । और जनता को भ्रम जाल में फंसा रहे थे । नए-नए व्यक्तियों ने अपने नाम पर मतों की स्थापना होती गई । और यह देश कुरीतियों जातियों और भाषाओं में बटता चला गया । पहले इस्लाम फिर ईशाईयो उन्हें यहां कब्जा करना शुरू किया । विदेशी आक्रांताओं ने खजाना लूटां, बल्कि यहां की संस्कृति को भी नष्ट कर दिया । भारत ने एक राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान खो दी । और हमारा भारत आर्यवर्त पराधीन हो गया । इसी समय अनेक सामाजिक कुरीतियों ने भी जन्म लिया । जिसके कारण यह देश अंग्रेजों का गुलाम बनकर रह गया । हमारी बिखरी हुई संस्कृति को और जातियों को एक सूत्र में फिरहोने वाला कोई नहीं था ? कोई भी आदर्श हमारे सामने नहीं था । उस समय अनेक संस्थाएं समाज सुधार का कार्य कर रही थी । राजा राममोहन राय जैसे कई महापुरुषों ने समाज सुधार का काम किया । 19वीं शताब्दी में कई महापुरुषों ने कुरीतियों और समाज में फैल रही बुराइयों को दूर किया । और अनेक संस्थाओं का गठन भी किया । जैसे ब्रह्म समाज , प्रार्थना समाज और इन संस्थाओं ने बुराईयों को मिटाने का सार्थक काम नहीं किया ? तभी भारत की धरती पर एक महापुरुष स्वामी दयानंद सरस्वती का उदय हुआ , और उनकी सुक्ष्म बुद्धि से भारत की जनमानस में एक नई आशा क्रांति सी जाग गई । स्वामी दयानंद सरस्वती ने इन सभी संस्थाओं को एक मंच पर लाने की कोशिश की और जल्द ही उन्होंने अनुभव किया की अंग्रेजी हुकूमत के आगे अपने झुकाव के कारण जो संस्थाएं भारत की सच्ची प्रतिनिधि नहीं है । यह संस्थाएं वेदों का ज्ञान का मूल स्रोत भी नहीं मानती थी । इसलिए स्वामी दयानंद सरस्वती का इन संस्थाओं से मोंह भंग हो गया । योग प्रवर्तक स्वामी दयानंद सरस्वती का जन्म 1824 ई में गुजरात के टंकारा गांव में हुआ था । और इन्होंने आर्य समाज की स्थापना की । इन्होंने आगे अनेकों बड़े-बड़े कार्य किये । समाज सुधार में ये सबसे आगे रहे । इस समाज के लिए इन्होंने बहुत कुछ किया । इन्हीं के कारण देश आजाद हुआ क्योंकि इन्होंने बड़े-बड़े क्रांतिकारी दिए और इस देश को आजाद कराने में शहीद हुए जो महर्षि दयानंद सरस्वती की प्रेरणा से ही उनके हृदय में

Edit with WPS Office

चिंगारी आई । और अपने दुश्मनों से पीछे नहीं हटे और अपना बलिदान हंसते-हंसते इस भारत भूमि के लिए समर्पित कर दिया । महर्षि ने धार्मिक कार्यों में भी बहुत सहयोग किया । वेदों का पुन: प्रकाश किया । इस वैदिक सनातन धर्म को वेदों के सही भाष्य प्रदान किये ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

जो जो बाते वेदों के विरूद्ध ह वे मान्य नहीं होती। ये ऋषि मुनियों ने कहा है ___ वेद के मान्य ग्रंथ जिनमे वेदों की बाते हैं। वे आर्ष ग्रंथ नाम से जानते हैं। जिनमे वेद विरुद्ध कुछ भी नहीं है। जो ग्रंथ वेद विरुद्ध है वे मान्य नहीं है । खासकर पुराण जिनमे हमारे भगवान पर गंदे आरोप है। ऋषि मुनियों पर गंदे आरोप है। ऐसा नहीं है की उनमें सारी बातें गलत है नही, जो गलत बाते हैं उनका विरोध करना चाहिए। अनेक बाते अच्छी भी है। लेकिन जो बाते अच्छी हे। उनका समर्थन सभी को करना चाहिए। जो बाते गलत है उनका त्याग करना चाहिए। लेकिन लोग समझने को तैयार नहीं होते हैं। जो लोग शास्त्र पढ़ते हैं वो बिल्कुल भी इन ग्रंथो का समर्थन नहीं करते ।लेकिन लोगो को ना समझने के कारण कुछ कथावाचक अपनी दुकान चलाने के लिए भोले भोले_ हिंदू को ठग ने का काम करते हैं। जिसके कारण समाज की बहुत हानि हुई हैं । इस पाखंडवाद के कारण देश 1200 वर्ष तक गुलाम रहा है।जो लोग शास्त्र पढ़ते हैं वे अच्छी तरह जानते हैं कि ये सब गलत है । फिर भी लोगो के पास बुद्धि सिथिल होने के कारण समझने की कोशिश नही करते हैं। में पहले आपको बताना चाहता हूं।की इस पाखंड वाद के कारण इस भारत देश की क्या दुर्दशा हुई हैं। जब जब वेद पढ़ाए जाते थे। तब कोई पाखंडवाद नही था। और भारत सोने की चिड़िया कहलाता था। लेकिन वेद पढ़ने के कारण सभी सुखी रहते थे। **में आपको बता दूं। वेद आखिर लोगो ने पढ़ना क्यू छोड़ दिया था।** यह बात उस समय की है जब महाभात का युद्ध समाप्त हो गया था। युधिस्तर के राजा बनने के 35 वर्ष बाद उस समय कलयुग का आरंभ हो चुका था। उस समय कलयुग राजा

Edit with WPS Office

युधिस्तर के कारण पृथ्वी पर उतर नही पा रहा था । फिर कुछ समय बाद गांधारी के श्राप के कारण द्वारिका में यादव वंश समाप्त हो रहा था। उस समय कृष्ण भगवान नही थे। वन में तपस्या कर रहे थे। तभी नारद वहा आए और प्रभु को बताया भगवन द्वारिका में श्राप के कारण लोग आपस मैं मर रहे है। लड़ झगड़ कर एक दूसरे की आत्म हत्या जैसा पाप कर रहे हैं।इस कारण परभु कोई नहीं बचेगा। कुछ करे।नही तो अनर्थ हो जायगा।तभी कृष्ण ने नारद से कहा,, की तुम अर्जुन को सूचना दो ।और उन्हें बताओ। मेरी नगरी में लोग मर रहे हैं। अर्जुन से कहो ऋषिवर। तभी नारद ने सारी बातें अर्जुन को बताई। लेट सूचना मिलने के कारण कोई नहीं बचा। सिर्फ कुछ लोग ही शेष बचे । जो कृष्ण के परिवार वाले थे। अर्जुन उन सभी को लेकर जिनमे कृष्ण की पत्नी भी थी। लेकिन रास्ते में चलते चलते उन्हें कुछ डाकू मिले। जिनकी संख्या लगभग छ सात के करीब थी। तभी अर्जुन का रथ उन डाकुओं से घिर गया। जो अर्जुन सहस्त्रों अस्वोनी सेना के लिए इकला ही भारी था। वो अर्जुन इतना सिथिल हो गया था। की उन पर अपना धनुष भी नहीं उठा सका था। किस कारण कलयुग के आगमन के कारण। उस समय इतना विनाश हुआ था कि कल्पना भी नहीं की जा सकती है। उन डाकुओं ने कृष्ण की पत्नी ओर उनके पुत्रो की पत्नियों को भी वे डाकू ले गए ।और अर्जुन कुछ नहीं कर पाया। और मन में सोचने लगा कि मेरे बाहुबल को आज क्या हो गया मेरे धनुष को क्या हो गया आज समझ नहीं आ रहा में कृष्ण को क्या जवाब दुगा और अपने भ्राता युधिस्तर से क्या बोलूगा । श्री कृष्ण की मृत्यु हो चुकी थी। और अर्जुन कृष्ण को भी नही बचा पाए थे।और खाली हाथ दुखद समाचार मन में ले । हस्तिनापुर लौट आए। तभी युधिस्तर को सारी बाते सुनाई। फिर कुछ समय बाद पाण्डव अभिमन्यु के पुत्र को राज्य सोप कर। स्वर्ग को प्रस्थान किया। फिर कुछ वर्षो बाद प्रीक्षित को राज्य करते 60 वर्ष हो चुके थे।और कलयुग पूर्ण रूप से धरती पर उतर चला था। फिर राजा परीक्षित की मृत्यु के पश्चात उनके पुत्र राजा जनमेजय ने घोषणा की जिस ने मेरे पिता को मृत्यु दी है ।उसके प्राण लूंगा उसे छोड़ूंगा नहीं। दरअसल यह बात तब की ह। मे आपको बात बता दूं। जिसने राजा परीक्षित के प्राण लिए वह तक्षक नाग नही था। बल्कि एक नाग सम्प्रदाय का मुख्य था। उस मुख्या का नाम था।

Edit with WPS Office

तक्षक। जिसने राजा परीक्षित की हत्या करी। हत्या क्यू की इसके पीछे एक कहानी ह। एक कारण है। मे आपको बताऊं। जब एक दिन एक गुरु का शिष्य अपनी शिक्षा पूरी कर जब उसकी दक्षिणा देने की बारी आई तो उसके पास दक्षिणा में देने के लिए कुछ नहीं था। तो गुरु ने उसकी दक्षिणा कुछ कम करी और उस गुरु ने अपनी पत्नी जो उस विद्यार्थी की गुरू मां भी लगती थीं। तो उस गुरु पत्नी ने कहा,, मुझे दक्षिणा में परीक्षित की पत्नी के कुंडल चाहती हूं।क्या तुम लाकर दोगे । उस विद्यार्थी ने कहा,,जरूर गुरु मां । फिर वह विद्यार्थी राजा परीक्षित के दरबार में आया। और अपनी सारी बाते राजा को सुनाई। राजा ने भी स्वीकार कर लिया ठीक है हम अपनी महारानी से कहेगै। राजा परीक्षित ने अपनी पत्नी को सारी बाते सुनाई। तभी मुख्यमंत्री बना युयुत्सु जो कोरवो का सोतला भाई था। कहा महाराज आप उस विद्यार्थी को सोने के कुंडल मत दो क्योंकि इसका परिणाम बुरा होगा।क्योंकि आप कलयुग को स्वर्ण मै रहने का वचन दे चुके हैं। इसलिए आप स्वर्ण कुंडल ना दे। लेकिन मंत्री की राजा परीक्षित ने एक नही सुनी।और कहा में वचन दे चुका हूं। फिर मंत्री ने कहा आप एक काम करे अपनी दादी मां कुंती के कुंडल दे दो। राजा ने ऐसा ही किया। फिर जब वह विद्यार्थी कुंडलो को लेकर जा रहा था। तभी किसी नदी में पानी पीने चल दिया और स्नान के लिए कपड़ा भी उतार स्नान के लिए चल दिया। फिर क्या हुआ वहा से तक्षक नाग संप्रदाय का व्यक्ति गुजर रहा था। उसने देखा ये रोशनी कहा से आ रही है। तभी उसने देखा ये तो कुंडल ह तभी उसके मन में लालच आ गया। और उसने कुंडल चुरा लिए। क्योंकि ऐसी चोरी उस समय पहली बार हुई। उस विद्यार्थी ने उसे देख लिया उसने बहुत कोसिस की कुंडल छुड़ाने की लेकिन वह विद्यार्थी इतना बलवान नही था।जो कुंडल वापस ले सके। उसने लज्जा के मारे ना ही अपने घर पहुंचा। ना ही राजा के पास ।ना ही गुरू के पास फिर एक दिन क्या हुआ तक्षक कुंडल बेचने सुनार के पास गया । सुनार ने पुछा तुम ये कुंडल क्यू बैच रहे हो?? सुनार को सक हुआ। उसने किसी दूसरे के द्वारा ये बात राजा परीक्षित को बताई। तब राजा के सैनिक तक्षक को पकड़ कर राज दरबार में पहुंचे। राजा ने पुछा तक्षक क्या तुमने चोरी की ह। उसने झूठ बोला मैने चोरी नही की। तभी मजबूर होकर वही वह विद्यार्थी आ गया। उसने कहा महाराज आपके दिय हुए

Edit with WPS Office

कुंडल किसी ने चुरा लिए मेरे साथ न्याय करे। क्या? तभी राजा ने कहा,, ये तो नही तक्षक तभी उसने देखा विद्यार्थी ने कहा,, महाराज यही है मेरा चोर। मेरे साथ न्याय करो। तभी राजा ने तक्षक को मृत्यु का आदेश दिया। तभी वाह उसकी बहन के पति आ गए ।जो एक ऋषि थे। उन्होने परीक्षित के लिए क्षमा की प्रार्थना की महाराज इसको माफ कर दो राजा ने उसकी बात मान ली। और तक्षक घर आ गया। तभी सभी नाग सम्प्रदाय के लोगो ने उसे मुख्या के पद से नीचे उतार दिया। इसी बात के लिए ईर्ष्या उस के मन में बैठ गई। उसने राजा से बदला लेने के लिए कसम खा ली। ये सब घटना घट रही थी। कलयुग के कारण। ये कहानी थी परीक्षित की मौत की। इसी कारण जनमेजय ने प्राण लें लिया। की में नाग वंश को सधा के लिए समाप्त कर दुगा। उसने जनमेजय ने ऐसा ही किया। उसने जहा भी नाग सम्प्रदाय जाति रहती थी। सब को मौत के राह सुलाया। इसका बहुत बुरा परिणाम हुआ। क्योंकि ऋषि लोग नाग सम्प्रदाय को बचाने के लिए शस्त्र उठा लिए। जिसके कारण इतनी हानि हुई। ऋषियों की मौत होती रही और वेद विद्या पढ़ाने वाले लुप्त होते रहे। इसी कारण कुछ ऋषियों ने जो अधिक कम मात्रा में बचे हुए थे। वेदों को श्रुति (सुनने, सुनाना) के अनुसार पढ़ना आरम्भ किया। जिसे लिखित वेदों के भाष्य नही बन पाए। कुछ ऋषियों ने वेदों को सुरक्षित रखने के लिए उनका भाष्य लिखना प्रारम्भ कर दिया । अनेक शताब्दी बाद कम ऋषि होने के कारण फिर कुछ वर्षो बाद आचार्य सायन हुए। आचार्य अरविंद हुए जिससे इन लोगो ने भाष्य किया। ये ब्राह्मण थे। उस समय इन आचार्य सायन का भाष्य पढ़ाया जाने लगा। इनका भाष्य आज भी कही कही पढ़ाया जाता हैं। इन्होने कुछ मंत्रो का भाष्य गलत किया । कुछ मंत्रो के भाष्य मे जहा जो शब्द बनना चाहें,जो शब्द बनने की जरूरत है वहा उसके विपरीत गलत अर्थ किया। जिसके कारण लोगो का विश्वास उठ गया।और वेदों को ना समझने के कारण। यज्ञों में पशुवध होने लगें , कुछ लोगो ने अपने अपने संप्रदाय चला लिए। अपने ही नाम से अपना अलग धर्म बना लिया। पहले पारसी धर्म संप्रदाय चला डाला। फिर अपनी दुकान चलाने के लिए अपने अपने धर्म मे जोड़ने लगे। लोभ देकर, अपने धर्म के नियम बता कर। अपने अपने धर्म की पुस्तक भी बना डाली । अनगिनत वैदिक आर्य लोग पारसी मे जा मिले। पारसी को ही अपना धर्म

Edit with WPS Office

समझने लगे । फिर कई वर्षो बाद कुछ लोगो ने जैन धर्म बना डाला। जैन धर्म के संस्थापक महावीर स्वामी ने अपना मत बना डाला । जैन धर्म के लोगो ने सोचा । वैदिक आर्यों को अपने धर्म मे कैसे जोड़े। तो उन्होने अपने धर्म को बढ़ाने के लिए अनेक मूर्ति बनानी आरंभ कर दी। अच्छी अच्छी मूर्तियां उत्पन्न करी अच्छी सामग्री मिट्टी से बना डाली । जिससे लोगो का मूर्ति के प्रति अपना सनातन धर्म को छोड़ जैन धर्म को अपनाने लगे। जैन धर्म तेजी से बढ़ चला। जिसे सनातन वैदिक ब्राह्मणों को चिंता होने लगी। अगर ऐसा ही चलता रहा तो एक दिन हमारी दक्षिणा भी बन्द हो जाएगी। सनातन धर्म को लोग मानना छोड़ देंगे। इसलिए ब्राह्मणों ने वैदिक धर्म बचाने के लिए अपने देवी देवताओं की मूर्ति बनानी शुरू कर दी गई। जिसका परिणाम यह हुआ जो लोग अपने धर्म को छोड़ जैन धर्म में जा मिले थे। वे वापस आने लगे। अपने देवी देवताओ की और सुन्दर सुन्दर आकृति की मूर्ति बनानी शुरू कर दी गई। जिससे सनातन धर्म के लोगो ने अपना धर्म बदलना छोड़ दिया। और कुछ लोग वापस अपने धर्म मे आ गए। इसी समय पुराणों की भी रचना शुरू कर दी। ब्राह्मणों ने। पुराण के बारे में अगले भाग में बताएंगे। पुराणों पर एक कहावत ठीक बैठती हैं। हर चीज़ का दो जोड़ा होता है जैसे ___ रात _और _दिन का जोड़ा,, सुख _और _दुख का जोड़ा। ऐसे ही हानि __और__ लाभ ,, का जोड़ा। पुराणों के साथ भी ऐसा ही हुआ है। पुराणों के बारे में अगले भाग में बताएंगे। ___ जैन धर्म के बाद बुद्ध धर्म,, बुद्ध धर्म का भी जैन धर्म के जैसा ही तेजी से प्रचार हुआ,, फिर यवन,, फिर ईसाई,, फिर यहूदी और फिर मुस्लिम फिर सिख अनेक धर्म बन गए। इनकी चर्चा हम नही करेगे। पीडीएफ ज्यादा लम्बी हो जाएगी। अगर इन सभी धर्मो के बारे में विस्तृत जानना ह तो आपको सत्यार्थ प्रकाश के 11 वे समुलाश से 14 तक सभी संप्रदाय का विस्तृत वर्णन है। कृपया सत्यार्थ प्रकाश पढ़े।

कुछ लोग सोच रहे होगे कि इन्होने आर्य समाज सम्प्रदाय के बारे में नही बताया। आपको समझाने के लिए हम बता दे।___ आर्य समाज कोई सम्प्रदाय नही है । बल्कि जो जिसमे श्रेष्ठ गुण हो, श्रेष्ठ कर्म हो। जो यम_ नियम का पालन करता है। उसे आर्य कहते हैं। आर्य समाज लोगो को

Edit with WPS Office

अलग अलग जातियों में नही बाटता है। बल्कि सभी जातियों धर्म को एक एकता के सूत्र में बंधे रखता है। जिस प्रकार माला के अनेक बीजों के एक कड़ी से दूसरी कड़ी जुड़ी रहती है। प्रत्येक बीज के मिलने से एक माला बन जाती हैं। उसी प्रकार आर्य समाज आर्य लोग सभी को एक माला की तरह एकता में बांधे रखतें हैं।
अब आप सोच रहे होंगे कि आर्य समाज की स्थापना तो 1875 में हुई थीं।?? स्वामी दयानंद सरस्वती ऋषि द्वारा?? तो आप कैसे कह रहे हो आर्य बनो।?? आपको बता दूं वेदों के पढ़ाने बंध होने के साथ साथ आर्य लोगो के साथ भी ऐसा ही हुआ। लोगो ने आर्य कहलाना छोड़ दिया था । तभी ईश्वर की कृपया हुई और एक ऋषि दयानंद सरस्वती का जन्म हुआ। तब दोबारा से आर्य समाज की स्थापना हुई।

- **कोन कहता है की आर्य बाहर से आए?**

जो लोग ऐसा बोलते है। कि आर्य तो बाहर से आए हैं वो लोग सबसे बड़े अज्ञानी बुद्धिहीन प्राणी है। वेदों में 37 बार आर्य नाम आया । इतनी बार रामायण में भी,, महाभरत में तो गिनती ही नहीं कर सकते इतनी बार नाम आया। हम लोग पुराणों को धर्म ग्रंथ नहीं मानते । पुराणों की अच्छी बातों को मानते है। गलत बात का समर्थन नहीं करते। फिर भी हम आपको एक एक प्रमाण दिखाना चाहते हैं। की आर्य नाम आदि सृष्टि से हैं। इसका नाम सभी आर्ष ग्रंथओ में है। प्राचीन समय में राजाओं की रानियां अपने स्वामी को आर्य कहकर पुकारती थी ।
वाल्मीकि रामायण. ___
कैकेयी के वरदान मांगने पर दशरथ कैकेयी से कहते हैं -- **हन्त अनाये** । यहां कैकेयी को अनार्य कहकर धिक्कारा है । अब आप तो कहेंगे कि महिलाएं तो सभी अनार्य है परंतु आगे सुनो , महाराज दशरथ कहते हैं यदि मैं राम को वन भेज दूं ।
अनार्य इति माम्..... ,, अर्थात लोग मुझे अनार्य कहेंगे । जब कैकेयी चित्रकूट में पहुंची , तो श्री राम उन्हें आर्या कहते हैं , अब बताइये दशरथ ,कैकेयी आर्य थे या अनार्य ? हम आपको धन्यवाद देते हैं कि आप

Edit with WPS Office

गृध , वानर , असुर राक्षस , नाग , गंधर्व , आदि को मनुष्य मानते हैं और वास्तव में यह सत्य भी है । परंतु दुर्भाग्य से आप इन्हें अनार्य जाति का स्वीकार करते हैं । संभवतया आप महर्षि वाल्मीकि को भी अनार्य मानते होंगे परंतु वे महर्षि , सीता जी के मुख से जटायु को आर्य कहलवाते हैं और जटायु स्वयं को सनातन धर्म में स्थित क्षत्रिय स्वीकार करते हैं ।

बालि की मृत्यु पर तारा बालि को , आर्य पुत्र व आर्य कहकर संबोधित करती है परंतु आपकी बुद्धि ने बाली को अनार्य कहती है ।

सीता जी का अपहरण करके ले जाते समय राक्षस राज रावण श्री राम को आर्य जाति का नहीं बल्कि मनुष्य जाति का कहता है । (क्योंकि आर्य और अनार्य नाम की कोई जाती थी ही नहीं) आप वेदों को आर्यों का धर्म ग्रंथ मानते हैं । अनार्या का नहीं ? परंतु आपके द्वारा कथित अनार्य राजा सुग्रीव का राज्याभिषेक वैदिक मंत्रों के साथ यज्ञ के द्वारा संपन्न होता है ।

महाभारत में भी जगह-जगह आर्य शब्द आया है , भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में अर्जुन से कहा तुम मैं यह अनार्य जैसा भाव कैसे आया ? पार्थ ! तुम आर्य हो । महाभारत से निकली विदुर नीति में भी आर्य शब्द है । अन्य सभी ग्रंथो में आर्य शब्द है ।

आर्य कोई जाति नहीं आर्य श्रेष्ठ को कहते हैं विद्वानों को कहते हैं धर्म के पालन करने वाले को आर्य कहते हैं । जो इन सब गुणों के विपरीत है अर्थात जिनमें यह सब गुण नहीं है उसे अनार्य कहते हैं । जो चोर डाकु लूटेरे आदि को दस्यु कहा गया है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 8. आठवा पृष्ठ

Edit with WPS Office

{ पुराण क्यों लिखे, किसने लिखे , पुराणों में गप्पोडें }

इस पृष्ठ में हम पुराणों का वर्णन करेंगे ? और बताएंगे कि पुराण है क्या? पुराण लिखने की आवश्यकता ब्राह्मणों को क्यों पड़ी? ऋषि वेदव्यास के नाम से पुराण क्यों लिखे? क्योंकि कोई भी विद्वान जो सत्यनिर्णय की दृष्टिकोण के साथ इन पुराणों को अस्वीकार करते हैं। क्योंकि पुराणों में मिथ्या बातें इतनी है वेद विरूद्ध बातें हैं। अगर किसी ने योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण को कलंकित किया है? तो वह पुराणों ने किया है? आर्ष ग्रंथ विरुद्ध बातें हैं पुराणों में (वेद, ब्राह्मण ग्रंथ, अन्य ऋषि ग्रंथ,उपनिषद, दर्शन ,स्मृति , गीता, नीति,रामायण महाभारत आदि अन्य ग्रंथ के विरुद्ध बातें हैं पुराणों में) इन्हीं ग्रंथों को आर्ष ग्रंथ कहते है, इन्ही ग्रंथो में कोई बात वेद विरुद्ध है वह मान्य नहीं है) ऐसे आर्ष ग्रंथ ही पढ़ने लायक है ,पुराण आदि नहीं? ऋषि वेदव्यास की लिखी हुई वेदांत दर्शन, महाभारत ,हरिवंश पुराण में कहीं भी पुराण का वर्णन नहीं है? अतः भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में कहीं भी पुराण का नाम नहीं लिया ? वेदों का ही नाम लिया।

महाभारत के बाद कुछ पौराणिक ब्राह्मणों ने समय-समय पर आवश्यकता अनुसार समाज अनुसार पुराण रचे।

आइए समझने का प्रयास करते हैं? और प्रमाण सहित बताएंगे।

संसार में ऐसा कौन सा मनुष्य होगा जो अपने माता-पिता गुरु, आचार्य , पितामह तथा ऋषि महर्षियों पर दोषरोपण करने को अच्छा माने?? भले ही किसी के पूर्वज कितने ही बुरे क्यों ना हो? तथापि उनके प्रति कोई भी मनुष्य निंन्दा या सुनना कोई भी पसंद नहीं करेगा? सुपुत्र की तो बात ही क्या, कुपुत्र से कुपुत्र तथा निर्लज मनुष्य भी यह सब सहन नहीं करता। कि उसके सामने उसके पूर्वजों पर यह दोष लगाए । वह समय और था, जब पुराण रचे गए? तब स्थिति ही ऐसी थी ? क्योंकि जैन धर्म का प्रचार तेजी से हो रहा था। हिंदू धर्म के अनगिनत लोग जैनियों की बनाई हुई मूर्तियों को देखकर आकर्षित होकर अपने धर्म को छोड़ जैन धर्म में जा मिल रहे थे। इसी कारण से चिंतित होकर ब्राह्मणों ने अन्य ग्रंथ बना डालें। ब्राह्मणों को

Edit with WPS Office

चिंता हुई, अगर ऐसा ही चलता रहा तो एक दिन हमारी दक्षिणा भी बंद हो जाएगी। तब ब्राह्मणों ने अलग-अलग मूर्तियां अपने देवी देवताओं की बना डाली। जैनियों के 24 तीर्थंकर अपने भगवानों के 24 अवतार घोषित कर दिए। और अनेक मूर्तियां जैसे –श्री राम ,कृष्ण ,शिव, विष्णु ,गणेश, देवी दुर्गा आदि मूर्तियां बनाकर उनमें रंग रूप भर के सुंदर-सुंदर मूर्ति बना ली। इतना कार्य करने के बाद फिर पुराणों की रचना की। जो जो यह मानता है कि पुराण व्यास जी ने लिखे? अगर व्यास जी ने लिखे होते तो सभी पुराणों की एक बात होती , सृष्टि उत्पत्ति के बारे में और काफी अनेक बातें हैं ? पुराणों की ही आपस में एक दूसरे के विरुद्ध बातें हैं। अगर पुराण व्यास जी ने लिखे होते तो सभी पुराणों की एक बात होती ,जैसे –सृष्टि उत्पत्ति अन्य कहानी एक दूसरे के विरुद्ध नहीं होती, पुराणों में एक दूसरे के विरुद्ध कहानी है? फिर अलग-अलग पुराणों में एक देवता की निन्दा दूसरे को उस देवता को नीचा दिखाना। एक को परब्रह्म दूसरे को नीचा। जैसे शिव पुराण में शिव को सबसे ऊंचा स्थान। विष्णु पुराण में विष्णु का सबसे ऊंचा स्थान। जिस जिसकी जिस ईश्वर में आस्था थी भक्ति थी। उसी को श्रेष्ठ दूसरे को नीचा दिखाया गया। जैसे शिव पुराण में शिव को निराकार ब्रह्म और विष्णु को नीचा दिखाया गया। इसी प्रकार विष्णु पुराण में विष्णु को श्रेष्ठ और शिव को नीचा दिखाया गया। इसी प्रकार देवी भागवत में माता को शक्ति नाम से और तीनों देवों की माता के नाम से ब्रह्मा विष्णु महेश देवी की अपने हाथों की हथेली मसलने से उत्पन्न होने का वर्णन दर्शाया है। की ब्रह्मा विष्णु महेश देवी के हाथों को मसलने से उत्पन्न हुए। अब इन बातों से आप अंदाजा लगा सकते हो। जरा सोच विचारों क्या व्यास जी ऐसी बातें लिख सकते थे? इन बातों से आप विचार नहीं लगा सकते? कृपया कर देवता है कौन इस सृष्टि भूमंडल का संचालन कौन कर रहा है?

इन सब सबूतों, शब्दों से पता चलता है कि पुराण व्यास के बने हुए नहीं है। अब हम आपको बताएंगे कुछ उदाहरण श्लोक देकर प्रमाण के साथ और उसका निर्णय आप लोगों पर छोड़ता हूं। लोगों की दूसरी बुरी बात है की जो जो गलत बातें पुराणों में है उनका विरोध नहीं करते?? ना ही उन्हें ग्रंथों से हटाने का प्रयास करते जिन कहानियों में गलत बातें हैं। अगर हम मान भी ले की पुराण व्यास के लिखे हुए हैं तो इसी बात पर मुझे एक बात बताएं

Edit with WPS Office

इस देश पर इस देश के मंदिरों पर हिंदू लोगों पर अनेक संप्रदायों पर आक्रमण हुए अत्याचार हुए। हिंदू सनातन लोगों के मंदिर तोड़े। मंदिरों की जगह मस्जिद बनाई। क्या इन सब बातों से आपको नहीं लगता क्या हमारे ग्रंथों पर भी मिलावट नहीं हुई होगी?? उनको जलाया गया नहीं होगा? इन सभी ग्रंथों को जलाने का प्रमाण नालंदा विश्वविद्यालय है , कि नालंदा विश्वविद्यालय पर कैसे-कैसे अत्याचार हुए ? हमारे अन्य धार्मिक ग्रंथो को जलाया गया? उन में बड़े पैमाने पर मिलावट की हुई होगी?? अब आगे आप बोलो कि फिर तो वेद में भी मिलावट हुई होगी? फिर तो उपनिषद में भी मिलावट हुई होगी? इसके लिए मैं आपको बता दूं वेद में मिलावट हो ही नहीं सकती? पहली बात तो यह की वेद की भाषा किसी के समझ में आ ही नहीं सकती ? खासकर अलग-अलग संप्रदाय में, क्योंकि वेद वैदिक संस्कृति में लिखे हुए हैं। इसलिए वेदों का अर्थ ना समझने के कारण इनमें मिलावट होना संभव नहीं?

समाधान____जैसे____ संस्कृत साहित्य दो प्रकार की है ।

- पहली वैदिक साहित्य___**ऋग्वेद ,यजुर्वेद ,सामवेद ,अथर्ववेद, ब्राह्मण ,आरण्यक ,उपनिषद्।**
- **दूसरी लौकिक साहित्य____** रामायण [आदि काव्य] महाभारत, इतिहास, श्रीमद् गीता, पुराण साहित्य आदि। इसलिए वैदिक साहित्य में मिलावट हो ही नहीं सकती? लौकिक साहित्य में मिलावट हो सकती है? क्योंकि दोनों संस्कृत में अंतर है।

वेदों में मिलावट हो ही नहीं सकती? वेद ईश्वर का संविधान है। हमारे सभी ग्रंथों में मिलावट हो सकती है? लेकिन वेदों में मिलावट संभव नहीं, ना ही कोई कर सकता? अब हम आपको आगे बताएंगे पुराण की सच्चाई दिखाएंगे। अब मैं आपको अनेक प्रमाण के साथ श्लोक दिखाने का प्रयास करता हूं। ओ निर्णय आप लोगों पर छोड़ता हूं। कि ऐसे पेजों को हटाना चाहिए या नहीं? या चुपचाप मुंह लटका कर अपने ग्रंथों का अपमान देखोगे? पहले हम चर्चा करेंगे पुराण किसने बनाए ? हमारे भोले भाले हिंदू समझ बैठे हैं कि 18 पुराण वेदव्यास के बने हुए हैं। जो की पराशर ऋषि के पुत्र थे। महर्षि वेदव्यास महाभारत के समय के सबसे बड़े विद्वान ऋषि थे। जिस

Edit with WPS Office

समय से वर्तमान काल के कलयुग का प्रारंभ होता है । जिसको आज तक 5125 साल बीते हो गए। पुराणों के अध्ययन से प्रकट होता है कि उनका यह विचार उपयुक्त नहीं है। यह बात निम्नलिखित प्रमाणों से प्रमाणित हो जाएगी।

- **मुझे आशा है कि धर्म के जिज्ञासु पक्षपात रहित होकर इसे पढ़ेंगे। सत्य और असत्य का स्वयंम निर्णय लेंगे ..?**

प्रथम प्रमाण______ 18 पुराणों में बुद्ध को अवतार सिद्ध किया गया और जिस लेख में वर्णन है उनमें से उनका अतितकाल प्रतीत होता है, भविष्य का नहीं। जो उनकी रहन-सहन की पद्धति वर्णित है। वह आजकल के जैनियो के [पूज्य] गुरुओं से ठीक मिलती है। उससे स्पष्ट प्रकट है कि जिस समय 18 पुराण बनाए गए। उससे पूर्व बुद्ध का अवतार हो चुका था। देखो **शिव पुराण पूर्वार्ध___खंड.1, अध्याय 5/3/6**

किंतु इतिहास के विशेषज्ञों ने चिन्ह, स्मृति, स्तंभ और बौद्ध मंदिरों तथा आर्यावर्त ,ब्रह्म ,चीन ,तिब्बत की पुस्तकों और अजएब घरों की मूर्तियों से खोज की है कि बुद्ध विक्रम संवत से 614 वर्ष पूर्व हुए थे। और 80 वर्ष जीवित रहकर निर्धन को प्राप्त हुए। जिसे आज तक दो सहस्त्र ,पांच शत बासठ वर्ष होते हैं। और व्यास जी को चार सहस्त्र, 991 वर्ष हुए हैं ? अतः अर्थात बुद्ध दो सहस्त्र 419 वर्ष, और व्यास जी पीछे हुए? इससे सिद्ध हुआ कि व्यास जी पुराणों के रचयिता नहीं है।

दूसरा प्रमाण_____ समस्त इतिहासज्ञ इस बात को सिद्ध करते हैं कि रामानुज विक्रमादित्य की द्वादशी शताब्दी में हुए। किंतु वैष्णव मत का खंडन लिंग पुराण में भी विद्यमान है। जिसके शरीर पर तपाकर शंख चक्र के चिन्ह लगाए हुए हैं। वह जीता हुआ भी मृतवत है और सर्वधर्म कार्य से बहिष्कृत कर देने योग्य है। इससे प्रकट होता है कि रामानुज मत के पश्चात लिंग पुराण में उसका खण्डन हुआ है। क्योंकि यह सर्वसम्मत है की जो बात न हो चुकी हो, इसका खंडन नहीं हो सकता। और लिंग पुराण 18 पुराणों में संख्यात है। अच्छा है , रामानुज विक्रमादित्य की 12वीं शताब्दी में हुए। अर्थात आज तक उनको हुए 752 वर्ष हुए हैं। जैसा कि ऊपर लिखा जा

Edit with WPS Office

चुका है कि व्यास जी को चार सहस्त्र 991 वर्ष हो चुके हैं। यह भी व्यास ग्रंथ नहीं हो सकता ?

तृतीय प्रमाण______ तौज के जहांगीर नायक पुस्तक में जहांगीर बादशाह लिखता है कि मेरे पिता के राज्य काल में अमेरिका से एक पादरी आलू, तंबाकू, गोभी, यह तीन वस्तुएं भारत लाया था। इस बात पर समस्त ऐतिहासिक एकमत है। किंतु **ब्रह्मांड पुराण** में लिखा है कि इस घोर कलयुग में जो तंबाकू का सेवन करता है वह नरक को जाता है।

पद्म पुराण में लिखा है कि जो मनुष्य तंबाकू पीने वाले को दान देते हैं वह नरक गामी होते हैं। और वह तंबाकू सेवी ब्राह्मण ग्रामों में सुकर का जन्म लेता है।

विचार करो हिंदुओं की सभी धर्म ग्रंथ पुस्तकों में तंबाकू का निषेध नहीं है।(जब तंबाकू की विधि ही नहीं तो निषेध ही, कैसे?) पुराणों को छोड़कर । और तंबाकू अमेरिका भाषा का शब्द है, और बाबा नानक जी से लेकर उनकी सातवीं बादशाही तक किसी ने भी तंबाकू पीने का खंडन नहीं किया। (गुरु नानक देव ने अनेकों नशीले पदार्थ का खंडन किया है, तंबाकू का नाम भी नहीं?) क्योंकि वह उस काल में विद्यमान नहीं था, जब जहांगीर बादशाह के राज्य काल में उसकी प्रथा चली थी। तो औरंगजेब के राज्य काल में दसवीं बादशाही के समय उसका निषेध किया गया। इससे प्रकट होता है कि ब्रह्मांड और पद्म पुराण दोनों जहांगीर के पिता अकबर के राज्य काल से पीछे बनाए गए। और सम्राट अकबर का राज्य काल विक्रम संवत से 1613 से 1662 तक हुआ।

इससे सिद्ध होता है कि ब्रह्मांड पुराण और पद्म पुराण भी व्यास के लिखित नहीं है?

चतुर्थ प्रमाण_______ स्वामी शंकराचार्य रामानुज से पूर्व हो चुके थे, क्योंकि रामानुज ने शंकराचार्य का निषेध किया है। सभी में यह बात प्रकट है कि सर्व संसार की माया और स्वयं को बड़ा मानते थे। और सभी हिंदू शंकराचार्य को महादेव का अवतार मानते थे। और उनका बुद्ध के पूर्व होना संभव नहीं, क्योंकि उन्होंने बौद्धों का खंडन किया है। पद्म पुराण में पार्वती जी के उत्तर में महादेव कहते हैं_____ हे देवी कलयुग जी मैं ब्राह्मण का रूप धारण करके असत् शास्त्र प्रच्छत्र बौद्ध मायावाद का कथन

Edit with WPS Office

किया है।
अतः स्पष्ट सिद्ध होता है कि पद्म पुराण बुद्ध, शंकर, रामानुज, के पश्चात बना। यह भी व्यास लिखित ग्रंथ नहीं है।
पांचवा प्रमाण______ जगन्नाथ का मंदिर संवत 1231 विक्रमी में उड़ीसा राजा आनंग भीमदेव के द्वारा बनवाया गया। इससे पूर्वी यह मंदिर नहीं था। इससे सभी ऐतिहासिक एकमत है और मंदिर में भी संवत लिखा हुआ है। किंतु मंदिर का महात्मय स्कंद पुराण में लिखा हुआ है। तो इससे यह सिद्ध होता है कि स्कंद पुराण वर्ष 1231 विक्रमी के पीछे बना और व्यास का बनाया हुआ कभी नहीं हो सकता।
षष्ठ प्रमाण______ समस्त विद्वानों की इस विषय में सहमति है। कि 18 पुराण महाभारत के पीछे बनाए गए । परंतु पुराणों में महाभारत का वर्णन है लेकिन महाभारत में पुराण का वर्णन नहीं है। कहीं उल्लेख नहीं है और सभी जानते हैं कि सुकदेव जी ने राजा परीक्षित को भागवत सुनाया। [जो व्यास के पुत्र थे सुकदेव] इतिहास देखने से पता चलता है, ग्रंथ को पढ़ने से पता चलता है। कि जब कौरव- पांडव के युद्ध के पश्चात जब महाराज युधिष्ठिर सिंहासनरूढ हुए थे। [उन्होंने 26 वर्ष 8 मास 26 दिन तक राज्य किया।]
भागवत पुराण में लिखा है कि राजा परीक्षित के राज्य समाप्ति काल अर्थात महाभारत के 86 वर्ष पश्चात सुकदेव जी ने उनको भागवत सुनाया। [अब यहां ध्यान से देखो प्रमाण दे रहा हूं महाभारत से] **महाभारत शांति पर्व के अध्याय 332 333** से स्पष्ट सिद्ध होता है। कि जब युद्ध समाप्त हुआ पितामह भीष्म अपने अंत समय पर युधिष्ठिर को उपदेश दे रहे थे। तो उन्होंने एक उपदेश पर सुकदेव जी का वर्णन किया? तब उन्होंने सुकदेव जी का वर्णन करते हुए कहा कि बहुत समय हुआ कि जब उनकी मृत्यु हो गई। और [व्यास जी का शौक व्यास जी का पुत्र वियोग में रोना] करना लिखा है, युधिष्ठिर जी इस प्रकार पूछते हैं जिस प्रकार उन्होंने कभी देखा ही ना हो। और उस समय राजा परीक्षित उत्तरा के गर्भ में थे। जबकि परीक्षित के जन्म के पूर्व ही सुकदेव जी मर गए थे ? तो उनको 66 वर्ष पश्चात भागवत सुनना असंभव है। और सत्य तो यह है जैसा की देवी भागवत के अनुवादक ने लिखा है कि वास्तव में भागवत बोंप देव ने रचा है। [बोंप देव एक ब्राह्मण

Edit with WPS Office

का नाम है जिसने जिसने भागवत पुराण रचे] और जब भागवत सुकदेव जी ने नहीं सुनाया? परीक्षित ने नहीं सुना? [जिससे ऋषि व्यास देव का बहुत पहले जन्म हो चुका था, राजा शांतनु के समय] इससे आप अंदाजा लगा सकते हो इतने वर्षों तक श्रेष्ठ योगी ही जीवित रहता है। जबकि महाभारत में प्रमाण है कि सुकदेव जी मर गए बहुत पहले राजा पांडु के समय ।

तो इस सब प्रमाण से यह सिद्ध हुआ की भागवत पुराण के रचयिता व्यास जी नहीं है, ब्राह्मण बोंप देव हैं।

सप्तम प्रमाण_____ पद्म पुराण के उत्तरखंड के भागवत महात्मय के प्रथम अध्याय श्लोक नंबर 28 से 32 में लिखा है की नारद जी व्याकुल अवस्था में सनकादि को मिले , और कहां की काशी सोमनाथ रामेश्वरम आदि स्थानों पर यवनों ने मंदिरों को गिरा दिया। और उन पर अधिकार कर लिया। अर्थात मस्जिद बना ली। और यही अवस्था आश्रमों की हुई। किंतु स्पष्ट है कि यह अवस्था मोहम्मद के समय औरंगजेब के समय तक होती रही। अतः इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि पद्म पुराण को बने हुए 1034 से 1326 का समय हुआ था। आप लोग प्रमाणों को देखकर सही विचार लगाएं।

अष्टम प्रमाण_____ 18 पुराणों में ऋषि मुनियों और देवताओं की निंदा लिखी है और इन उन पर मिथ्या कलंक लगाए हैं जैसे ____

- ब्रह्मा जी पर पुत्री समागम का कलंक
- कुब्जा और राधा की कृष्ण के साथ संबंध
- महादेव को ऋषियों की पत्नियों के साथ
- विष्णु पर जालंधर की पत्नी वृद्धधा से
- इंद्र पर गौतम की पत्नी अहिल्या से
- चंद्रमा को अपने गुरु की पत्नी तारा से
- वरुण देवता को अगस्त्य देवता की माता उर्वशी से
- बृहस्पति को अपने भाई की पत्नी ममता से
- विश्वामित्र पर उर्वशी से
- पराशर पर मत्स्ययोरी

Edit with WPS Office

- द्रोपती का पांच पतियों के साथ
- देव को दासी से
- देवियों को मांसभक्षण से
- वामन को छल से
- बलदेव जिसको बलराम कहते हैं कृष्ण का बड़ा भाई पर मंदिरा का आरोप।
- सब ऋषि मुनियों देवताओं पर कलंक लगाएं।
- और नास्तिक मत को कई स्थान पर प्रकट किया।

इससे सिद्ध होता है की पुराणों के रचयिता बौद्ध थे । व्यास जी नहीं।

नवम प्रमाण______ ऋषि व्यास कृत वेदांत सूत्रों और योग भाष्य से संसार में स्पष्ट रूप से उनका धर्म समस्त विद्वानों पर प्रकट है। किंतु यह 18 पुराण वेदव्यास के लिखित नहीं, वेदांत दर्शन से बिल्कुल अलग है कुछ भी वस्तु के अर्थ मैल नहीं खाते। 18 पुराण उनके विरुद्ध हैं । उनका अभिप्राय उनके लिखे हुए शास्त्रों से नहीं मिलता इससे अच्छी प्रकार विदित होता है कि यह पुराण उनके द्वारा लिखित नहीं है।

दशम प्रमाण______ देवी भागवत में लिखा है कि एक राजा का लड़का किसी एक मल्लेच वेश्या लड़की पर आसक्त होकर पतित हो गया।।

जरा विचार करो भोले भाले लोगों ! इन सभी बातों को कौन सच मान सकता है? कौन ऐसी गंदी-गंदी बातों का समर्थन करने को तैयार है? इन पुराणों ने हमारे देवी देवता ऋषि में महाऋषियों व राजा महाराजाओं को कलंकित किया है। अगर किसी का भी जीवन चरित्रहीन रहा भी हो तो कौन इतना निर्गुंडी बुद्धिहीन व्यक्ति है, जो उनको कलंकित करेगा ?? क्या ऐसे पुराण सम्मान के योग्य हैं। हालांकि इन पुराणों में बहुत विज्ञान भी है। जानने योग्य बातें भी हैं, ज्ञानवर्धक बातें भी हैं, लेकिन हम लोगों को गलत का समर्थन नहीं करना चाहिए। ऐसा कौन व्यक्ति है, जो इन कलंकित बातों का समर्थन करेगा ? कोई भी नहीं। इसलिए हे प्रिय बंधुओ ! पुराणों में चाहे कहानी सच हो या असत्य अगर उस कहानी से समाज में शिक्षा मिल रही है, समाज का सुधार हो रहा है तो इसमें कोई दोष नहीं? अगर गलत बातों को

Edit with WPS Office

भी सच मानोगे इसमें दोष है।।

भागवत पुराण : ______ भागवत पुराण बोपदेव ने बनाया था । ऐसा उसने अपने बनाए **' हिमाद्रि '** नामक ग्रंथ में लिखा है । बोपदेव का भाई जयदेव बंगाल के राजा , जो 1170 में गद्दी पर बैठा था , का राजकवि तथा मित्र था । उसने **' गीतगोविंद '** और ' राधा विनोद ' नाम की दो पुस्तकें संस्कृत में रची थी । भागवत पुराण में राधा नाम का कहीं कोई उल्लेख नहीं है ।

➤ [कृष्ण के उज्ज्वल चरित्र पर पुराणों के गंदे आक्षेप]

प्रातः कुछ साल हुए हमने देखा वर्तमान कीर्तन प्रणाली दूषित है, तथा महान आत्मा श्री कृष्ण जी के नाम के साथ राधा का नाम जोड़ना गलत है। हम आर्य समाजी श्री कृष्ण को महान विद्वान ,सदाचारी, कुशल योद्धा राजनीतिज्ञ में निपुण और महान चरित्रवान तथा निष्कलंक मानते हैं। जिनको श्रीमद् भागवत गीता में योगीराज कहा गया? ऐसे महान पुरुष तेजस्वी कभी भी व्याभिचारी परस्त्रीगामी तथा कुकर्मी नहीं हो सकता? जो गंदा कार्य में नहीं कर सकता? मेरा भगवान कभी भी नहीं कर सकता?? पर सनातन धर्म के पुराणों में श्री कृष्ण जी महाराज जो गंगा के समान पवित्रपावन जीवन पर, असंख्य गंदे व मिथ्या लाक्षन लगाएं गए हैं । भागवत ब्रह्मवैवर्त पुराण में श्रीकृष्ण जी के बारे में ऐसी-ऐसी गंदी कहानी जुड़ी हुई है। लिखी हुई है। जिनका वर्णन हमें बहुत लज्जा से करना पड़ रहा है। लेकिन लोगों को विश्वास दिलाने के लिए, लोगों को सच्चाई दिखाने के लिए, हमें यह सब लिखना पड़ रहा है? कि लोग पुराणों की सच्चाई को जान सके। कि मिथ्या और कलंक लगी हुई बातों को जान सके। ऐसे गंदे पुराण वेदव्यास के नहीं हो सकते? महाभारत में ,योग दर्शन में, श्रीमद्

Edit with WPS Office

गीता में ,हरिवंश पुराण में, विष्णु पुराण में , कहीं भी श्री कृष्ण भगवान को व्यभिचारी नहीं बताया। और भागवत पुराण में भी गोपियों का वर्णन तो बताया है, लेकिन उसमें राधा का नाम कहीं भी नहीं।। और आजकल के पाखंडी लोग राधा को भगवान श्री कृष्ण के साथ जोड़ते हैं। विचार करो अगर कोई किसी की अपनी पत्नी के स्थान पर उसकी गर्लफ्रेंड को महत्व दें तो कैसा लगेगा ? (उसकी पत्नी के सामने, उसके माता-पिता के सामने, अपने माता-पिता के सामने ,कोई दूसरे लोग उनकी पत्नी को छोड़ गर्लफ्रेंड को महत्व दे तो कैसा लगेगा?) (इसी प्रकार आजकल के कथा वाचक पाखंडी लोग भगवान श्री कृष्ण की पत्नी को छोड़ और राधा को उनके साथ जोड़ते हैं? जबकि राधा का कोई संबंध भगवान श्री कृष्ण से नहीं था, उस समय सिर्फ एक ही राधेय नाम की औरत थी, वह जिन्होंने कर्ण का पालन पोषण किया था ! उसका नाम भी राधा नहीं राधेय था । इसलिए कर्ण को राधेय भी कहते हैं??) भारत का सबसे बड़ा ग्रंथ महाभारत में कहीं भी राधा का नाम नहीं?? कहीं भी भगवान श्री कृष्ण को व्याभिचारी परस्त्रीगामी नहीं बताया ? महाभारत, श्रीमद् गीता, हरिवंश पुराण जिसमें भगवान श्री कृष्ण के जीवन का संपूर्ण इतिहास है उसमें भी कहीं भी भगवान श्री कृष्ण पर दोष नहीं लगे? योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण नाम से संबोधित किया।।
इन पुराणों ने भगवान श्री कृष्ण पर लोगों ने कैसे-कैसे दोष लगाएं? इस पर हम विस्तृत जानकारी लिखेंगे।।

➤ [भगवान श्री कृष्ण पर व्याभिचारी का दोष]

पुराणों में गोपियों से श्री कृष्ण का रमण____
विष्णु पुराण पांचवा अध्याय, 13 श्लोक में लिखा है। वे गोपिया अपने पिता, पति, भाइयों के रोकने पर भी नहीं रुकती? और रोज रात को वह गोपिया विषय भोग की इच्छा रखने वाली, रात को कृष्ण के साथ रमण भोग किया करती थी। [59]। कृष्ण भी अपनी किशोरावस्था का मान करते हुए, रात्रि के समय उनके साथ रमण भोग क्या करते थे? [60] कृष्ण गोपियों के साथ किस प्रकार रमण किया करते थे, इसके लिए स्पष्ट प्रमाण देखिए__ जो

Edit with WPS Office

पुराण रचने वाले दुष्ट नीच ने कृष्ण को कलंकित करने के लिए लिखे हैं? कृष्ण कभी उनका शरीर अपने हाथों से स्पर्श करते हैं कभी प्रेम भरी तिरछी चितवन आंखों से उनकी ओर देखते हैं। कभी मस्त हो उनसे खुलकर हास विलास मजाक करते थे। जिस प्रकार बालक तनमय में होकर अपनी परछाई से खेलता है। वैसे ही मस्त होकर कृष्ण ने उन ब्रज सुंदर गोपियों स्त्रियों के साथ काम क्रीड़ा विषय भोग किया है।

आगे देखिए_____ भागवत स्कंद ,दसवां अध्याय 33 श्लोक 14।।

कृष्ण ने जमुना के कपूर के समान चमकीले बालू के तट पर गोपियों के साथ प्रवेश किया। वह स्थान जल तरंगों में शीतल, व कुमुदिनी की सौगंध से सुशोभित स्थान था। वहां कृष्ण ने गोपियों (ग्वालिनी) के साथ रमण भोग किया। बाहे फैलाना, आलिंगन करना , गोपियों के हाथ दबाना, उनकी चोटी पकड़ना, जांघों पर हाथ फैरना, लहंगे का नाड़ा खींचना, स्तन पकड़ना, मजाक करना, नाखूनों से उनके अंगों को नोच नोच के जख्मी करना, विनोद पूर्ण चितवन से देखना, और मुस्कुराना, और इन क्रियाएं द्वारा नवयोजना गोपियों में गोपियों के अंदर से कामदेव को जगाना, कामदेव को जागृत करके कृष्ण ने उनके साथ भोग किया। जब कृष्ण को दिन में वह भोग करने के बाद तृप्ति नहीं हुई, तो उन्होंने आधी रात को भोग किया। योनि में लिंग डालकर भोंग किया। योनि को जीभ से जख्मी किया।

[भागवत स्कंद दसवां, अध्याय 33, श्लोक 14]

कोई गोपी अपने नूपुर और करधनी के घुंघरूओं को अनकारती हुई नाच रही थी ? बहुत थक गई। तब उसने अपने बगल में खड़े श्याम सुंदर कृष्ण को देखकर कृष्ण की सुंदर कोमल हाथों को देखकर उसने कृष्ण के हाथों को उठाकर अपने स्तनों पर लगा लिया। अर्थात छाती दबवाकर अपनी वासना शांत करें।

यह सब क्यों होता था? इसलिए भागवत ___स्कंध दसवां , अध्याय 29, श्लोक 11

यह बात नहीं की रति युद्ध विषारद कृष्ण को ही गोपियों में ऐसा भाव रहता हो, वरन् गोपियों का भी कृष्ण मे व्याभिचार का भाव रहता था। उसके लिए जरा स्पष्ट प्रमाण **देखिए_______** वर्तमान पौराणिक सनातन धर्म में राम और कृष्ण विष्णु के अवतार माने गए हैं। विष्णु का अवतार इस पृथ्वी लोक

Edit with WPS Office

में व्यभिचार करने के लिए होता है क्या ?? कृष्ण के रूप में विष्णु केवल अपनी व्यभिचार भावना को पूरा करने के लिए आया था क्या ?? यह बात निम्न प्रमाण से स्पष्ट है। देखिए

विष्णु के अवतारों का रहस्य

शिव पुराण धर्म संहिता अध्याय दसवां ।

भगवान विष्णु असुर राक्षसों दैत्यों को मारकर उनकी स्त्रियों को पाताल में ले गया। तथा उनके साथ क्रीडा भोग विलास करता और मजे मारता रहा। त्रेता युग में राम ने जन्म लेकर जानकी सीता से विवाह किया। किंतु स्त्रियों के विलास से तृप्त नहीं हुआ, और वन में जाने के कारण गर्भाधान यथेष्ठ नहीं कर सका। इसलिए कलयुग के आरंभ में कृष्ण अवतार धारण किया। और बालकपन से गोपियों से क्रीडा भोग करके 10 लाख बच्चे पैदा कर डाले। तब भी स्त्री भोगों से कृष्ण की तृप्ति नहीं हुई, तो युवावस्था में रुक्मणी से शादी करके प्रदुमन पुत्र प्राप्त किया। तब भी तृप्ति नहीं हुई तो प्राग्ज्योतिष के राजा नरक को मारकर 16 000 औरत लाए। तथा कृष्ण ने उनसे शादी की। तो उनसे भोग करके 10000 बच्चे पैदा किया। फिर भी तृप्ति नहीं हुई? तो राधा नाम की औरत को पकड़ लाएं। इतना स्त्री भोगों को भोगने पर भी भगवान नित्य ही नारियों के लंपट है।

इस प्रमाण से स्पष्ट है कि पुराणों के अनुसार विष्णु के अवतार कृष्ण केवल बहुत औरतों से गया व्याभिचार करने के लिए ही हुआ ? गोपियों से रातों में क्रीड़ा करना, उनकी छाती में मरोड़ना, उनके लहंगे के नाडे खोलना, उनमें कामदेव को जागृत करके उनके साथ भोग करना, और 10 लाख लड़के उन गोपियों से पैदा करना? फिर 16000 औरतों को लाकर उनके साथ भोग करना और फिर 10000 बच्चे पैदा करना ?

क्या यही काम था भगवानों का इसीलिए अवतार होता है?? भगवान विष्णु का भोग करने के लिए या धर्म स्थापना करने के लिए पौराणिक फंडों?? ऐसी-ऐसी गंदी गंदी बातें अगर ईश्वर ही करेंगे , जो गंदा काम हम लोग नहीं कर सकते ?तो हमारे भगवान कैसे कर सकते हैं ??इसलिए भगवान का चरित्र उत्तम है, लेकिन पुराणों में इतना गंदा चरित्रहीन बता दिया भगवानों को ऐसे पुराणों को नहीं मानना चाहिए??

- **भगवत गीता अध्याय 18**______इस अध्याय में श्री कृष्ण को योगी का

Edit with WPS Office

योगी अर्थात योगेश्वर बताते हैं। और पुराणों में भोगेश्वर। धिक्कार है पुराणों को मानने वाले सनातनियों को छीं छीं इतनी निंदा हमारे भगवान श्री कृष्ण की?।

➤ [विष्णु के निवास स्थान का पता]

इस पृथ्वी के 16 करोड़ योजन ऊपर आकाश में विष्णु लोक है जिसमें विष्णु और उसकी पत्नी लक्ष्मी निवास करते हैं।

[संक्षिप्त स्कंद पुराण पृष्ठ 571 गीता प्रेस गोरखपुर]

इससे पता चला है कि यह देवता हमारे लिए विदेशी है। जो यहां से 16 करोड़ योजन अर्थात यहां से 64 करोड़ कोंस यानी प्राय एक अरब 28 करोड़ मील ऊपर कहीं आकाश में स्थित है। खेद है कि भारत के हिंदुओं का दिमाग भी विदेशी गुलामी में से है। इन्हें सर्वव्यापक निराकार परमात्मा पर कहीं विश्वास नहीं रहा। हमारा देश तो विदेशी गुलामी से आजाद तो हो गया। लेकिन यहां के लोगों के दिमाग भी परदेसी देवताओं की गुलामी से मुक्त हो जाए। तथा विष्णु व शिव मंदिर जो विदेशी गुलामी की बौद्धिक गुलामी के देश में अपमानजनक चिन्ह मिट जाए। तो देश वास्तव में स्वतंत्र हो जाए।

श्री कृष्ण जी के बारे में गोलोक की एक घटना लिखी है और बताया है कि उनका अवतार लेने का कारण भी लोक कल्याण नहीं था? एक दिन गोलोक में राधिका जी ने उन्हें किसी औरत से कुकर्म करते हुए पकड़ लिया। तो उन्होंने श्राप दे डाला और कहा___?

[ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खंड अध्याय __3]

अर्थात____ हे कृष्णा ब्रज के प्यारे, तू मेरे सामने से चला जा, तू मुझे क्यों दुख देता है? है चंचल, है अतिलंपट, कामचोर मैंने तुझे जान लिया है ,तू मेरे घर से चला जा। तू मनुष्य की भांति मैथुन करने में लंपट है? तुझे मनुष्य की योनि मिले, तू गोलोक से भारत चला जा ? हे सुशीली, हे शशिकले, हे पद्मावती, हे माधवो, तुम चारों इस कृष्ण को बाहर निकालो यह कृष्ण धूर्त है। इसे गोलोक से बाहर निकालो। इसका यहां कोई काम नहीं। इस प्रकार कृष्ण की गोलोक वाली पत्नी राधा ने कृष्ण को व्याभिचार में पकडकर श्राप

Edit with WPS Office

देकर औरतों से धक्के लगवा कर गोलोक से बाहर किया। और व्यभिचार कामना पूरी करने का श्राप देकर भारत में जन्म दिलाया। यहां आकर भी पौराणिक हजरत ने वही कुकर्म किया।
हे सनातनियों ! देखो अपने भगवान का चरित्र पुराणों में??
क्या अब भी राधा राधा रटनें से आपकी मुक्ति होगी ?
अकल से सोचो ईश्वर ने आपको बुद्धि दी है जरा बुद्धि से तो सोचो ! राधे राधे कहने वाले सनातनियों ! ऐसा चरित्रहीन व्यक्ति जिस भक्त के घर जाएगा, वहां पहले व्याभिचार का ही समान ढूंढेगा। ??

[ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खंड 72]

अब कुब्जा सो गई और निंद्रा के स्वामी कृष्ण भी यहां आनंद से सो गए। श्री कृष्ण ने कुब्जा को जगा लिया , सोई हुई दासींयों को नहीं जगाया? कृष्ण बोले, हे महाभाग्यशाली अपने श्रृंगार को दान कर, यह कहते हुए कृष्ण ने उसे अपनी गोद में उठा लिया। गोद में लेकर के कृष्ण ने उसके मुंह पर चुंबन किया। और उस कामुकीं को नंगा करके भोग करना आरंभ कर दिया। वह समागम से लज्जित हुई। मुस्कुरा कर कृष्ण को नंगा करके कृष्ण के होठों और गुप्तांगों पर चुंबन करने लगी। तब कृष्ण ने उसके कपोल चुंमकर लक्ष्मी की भाति गोद में ले लिया। क्योंकि दोनों का जोड़ा काम भोग में चतुर था। इसलिए काम भोग का अंत न आता। हे नारद वहां नाना प्रकार से काम भोग किया गया। भगवान श्री कृष्ण ने उसके स्तनों को मुंह में लिया और पिया। इसके बाद नाखूनों से प्रेम से जख्मी कर दिया और दांतों से उसके होठों का कलर का रस पी लिया। जब इतने से तृप्ति ना हुई तो उसके होंठ ही खा गए। उस रात कृष्ण ने आखिर सुक्राधान कर दिया। सुख संभोग से वह सुंदरी कुब्जा बाहों से लिपटकर सोई हुई, मूर्छित हो गई। भगवान श्री कृष्ण जी थोड़ी देर वहां ठहरकर अपने घर चले गए। जहां नंन्द सानंद ठहरे हुए थे।
प्रिय सनातनी बंधुओ ! कृष्ण अवतार का चरित्र पुराणों के कृष्ण के व्याभिचार शिरोमणि होने में अब भी क्या कोई संदेह है ?? पाखंड शिरोमणि गाली गलौज शास्त्री माधवाचार्य।। कृष्ण के बारे में ऐसा कहते हैं।
अब बताओ की कुब्जा की ठोड़ी पकड़ कर उसका कुबडापन मिटाया जा रहा है । यह स्तन दाब दाब कर व उसे नंगा किया जा रहा है। अरे निर्लज्ज

Edit with WPS Office

पोपों ! जरा भी शर्म बाकी हो तो डूब मरो चुल्लू भर पानी में तुम लोगों ने महात्मा कृष्ण को बड़ा कलंकित किया है।

कुब्जा के 30 करोड़ स्त्रियां थी या 63 करोड़ गोपियां थी ?

ब्रह्मवैवर्त पुराण उत्तरार्ध अध्याय 115, श्लोक.87 में साफ लिखा है, यदि उल्लू को दिन में भी ना दिखे, तो इससे सूर्य का क्या दोष। मालूम होता है हजरत माधवाचार्य ब्रह्मवैवर्त पुराण की शक्ल भी ना देखी है यदि पढ़ा होता तो यह प्रमाण उसे प्रमाण रूप में मिल जाता। बेचारा वैसे ही 111 नंबर का तिलक लगाकर ढोंग बनाकर पाखंडाचार्य बन बैठा। कुब्जा की कथा को देखकर हमने माधवाचार्य के उस झूठ का पर्दाफाश किया है। जो उसने देखा था कृष्ण के साथ दुराचार का कोई संबंध नहीं है। कृष्ण ने डॉक्टरी करके ठोड़ी पकड़कर झटका मार कर कुब्जा का कूड़ापन दूर किया। अब राधा कौन थी?? इसके प्रश्न पर हम उसके पाखंड का निराकरण करेंगे हमने विज्ञापन में ब्रह्मवैवर्त पुराण से यह सिद्ध किया था कि राधा कृष्ण के बामांग से पैदा होने से कृष्ण की पुत्री थी, रायणं से विवाह होने से वह कृष्ण की पुत्रवधू थी। क्योंकि रायणं गोलोक में कृष्ण के अंग से पैदा होने से उनका उस रिश्ते में पुत्र था। रायणं कृष्ण की माता यशोदा का भाई था। और कृष्ण का मामा लगता था। अतः इस रिश्ते से राधा कृष्ण की मामी हुई। इस हमारे लेख पर माधवाचार्य का दिमाग चक्कर खाने लगा। **[यह मैं नहीं कह रहा हूं लेखक श्री राम आर्य कह रहे हैं]** उन्हीं का लेख हमने यहां लिखा है।। उनम्मत की तरह आप प्रलाप करते हुए सफाई देने बैठे और अपनी पुस्तक में पृष्ठ 19, पर हमारे प्रमाणों को स्वीकार करते हुए आपने लिखा की असली राधा गायब हो गई। और छाया रूप राधा को छोड़ गई। उसकी रायण से शादी हुई। इस पागलपन की बात को कोई उस जैसा बुद्धिहीन अंधभक्त ही मान सकता है। जो राधा गायब हो गई क्या उसकी और छाया रुपी राधा की आत्मा एक थी ? या अलग-अलग? और यदि कहो कि एक थी, तो आत्मा के दो टुकड़े होना गीता या कोई भी शास्त्र नहीं मानता। यदि पृथक पृथक थी तो यह कहना बड़ी मूर्खता की बात है कि नई राधा पुरानी राधा की छाया थी। पता नहीं सनातनी पंडितों ने अपनी अकल कहां बेच दी, बुद्धि से कार्य नहीं लेते। उनकी सोचने समझने की शक्ति नहीं रही। जो ऐसी चंन्दुखानों बेतुकी असंभव बातों पर विश्वास करते हैं। की कलावती के

Edit with WPS Office

गर्भाशय में से हवा निकल पड़ी। और बजाए पांच तत्वों केवल वायु से राधा नाम की औरत बन गई ? इसलिए हम कहते हैं पुराण बनाने वाले व इन पर ईमान लाने वाले दोनों ही अज्ञानी है। और भांग के नशे में रहते हुए पुराण बनाए हैं। जो पुराण बनाते समय बुद्धि से कार्य नहीं लिया? माधवाचार्य पृष्ठ 18 पर लिखता है कृष्ण का राधा से विवाह हुआ। और पृष्ठ 22 पर लिखता है कि कृष्ण का राधा के साथ ना ही विवाह हुआ, ना ही गोना हुआ था। वह आजन्म ब्रह्मचारिणी रही। अब दोनों में कौन सी बात ठीक है यह तो वही जाने। और आगे लिखता है राधा प्रकृति को कहते हैं।

- हे प्रिय बंधुओ ! पाठकों, राधा श्री कृष्ण व्यभिचार की कथा नीचे पढ़े और देखें कि राधा प्रकृति है या एक व्यभिचारिणी औरत है।????

[ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खंड अध्याय 15]

एक दिन कृष्ण नंद के साथ वृंदावन गए, इतने में राधा जी कृष्ण के पास आ गई। उस कमल मुख वाली से कृष्ण जी कहने लगे, है प्यारी पलंग पर आजा मुझे बगल में ले ले। वह बोली मैं बैठी हूं, आप लेटे हैं। इस प्रकार व्यर्थ समय जा रहा है। मेरे बगल और सिर में चरण अर्पण करो। राधा कृष्ण को प्रणाम करके कृष्ण के पलंग पर गिरकर कृष्ण ने अपना चबाया हुआ पानं राधा को दिया और राधा का चबाया हुआ पानं कृष्ण ने मांगा। कृष्ण ने हाथ पकड़कर राधा को अपनी बगल में ले लिया। उसके कपड़े ढीले कर दिए, और चार प्रकार से चुंम्बन किया ? और उसे नग्न करके ऊपर से नीचे तक किशं किया। और 1 घंटे तक भोग किया। चुंबन से राधा के होठों का रंग हट गया। और कृष्ण ने और कलर लगाने के लिए कहा होठों पर, हे प्रिय ! इन होठों पर और कलर लगाओ? होठों का रंग और लिपटने से करधनी नष्ट हो गई। नव समागम से राधा रोमांचिक हो उठी। भोग करते-करते राधा मूर्छित हो गई और दिन रात होश में ना आई। [24 घंटे तक] दोनों के अंग से अंग प्रत्यंग से प्रत्यंग लिपट गए। कामशास्त्र के जाने वाले विशेषज्ञ श्री कृष्ण ने आठ प्रकार से भोग किया। फिर राधा से लिपटकर उस टेढ़ी नजर वाली मुस्कुराती हुई को नाखूनों और दातों से जख्मी कर दिया। काम भोग युद्ध से बड़ा शब्द हुआ।

काम युद्ध की समाप्ति पर वह राधा मुस्कुराने लगी वह राधा रात को हमेशा

Edit with WPS Office

कृष्ण के साथ भोग किया करती थी।

यह पुराणों ने कैसा गंदा कलंक लगाया हमारे भगवान कृष्ण पर। राधा कृष्ण के बाय अंग से उत्पन्न हुई थी ? या राधा के साथ कृष्ण कन्हैया का नया व्यभिचार का संबंध था ?? यह बात ब्रह्मवैवर्त पुराण मानने वालों को बराबर मानी पड़ेगी। राधा एक औरत थी, कृष्ण उसे व्यभिचार के लिए पकड़ कर लाए थे ? यह बात शिव पुराण में दिए गए पीछे से प्रमाणों से सिद्ध होती है ? कृष्ण का गोपियों से व्यभिचार का संबंध था। यह बात विष्णु पुराण ,शिव पुराण, भागवत पुराण, में सिद्ध हो चुकी है। पौराणिक पंथी पंडित भूमंडल भर में एक भी ऐसा नहीं है, जो ऊपर के प्रमाणों का खंडन कर सके ? जो इन पुराणों का विरोध कर सके। जो लांछन लगे हैं, उनका विरोध कर सके कोई भी नहीं, आर्य समाज को छोड़कर,? हम एक प्रमाण और दिखाते हैं____जिससे बिल्कुल सिद्ध हो जाएगा , राधा का कृष्ण के साथ व्यभिचार का संबंध था। ? पौराणिक पंडित अपनी पुराणों की गंदे बातों के नमूने देखें और लचित हो !

[पद्म पुराण उत्तरखंड, अध्याय 245]

रामचंद्र जी दंडकारणीय वन में जब पहुंचे तो उनके सुंदर स्वरूप को देखकर वहां के निवासी सारे ऋषि मुनियों ने भोग करने की इच्छा की। उन सारे ऋषियों ने द्वापर में गोपियों के रूप में जन्म लिया। और रामचंद्र जी कृष्ण बने, तब उन गोपियों के साथ कृष्ण ने भोग किया। इससे उन गोपियों को मोक्ष हो गया। वरना अन्य प्रकार से उनकी संसार रूपी भवसागर से मुक्ति भी न होती। सनातनी लोग इसलिए कृष्ण को गोपीवल्लभ भी कहते हैं। कि उन्होंने विषय भोग करके गोपियों को इस भवसागर से पार कर दिया। गोपीवल्लभ राधेश्याम नाम से कीर्तन करने का रहस्य। यदि आजकल यह कहीं पौराणिक कृष्ण आ जावे, तो विचारे इन कीर्तन करने वालों का इसी प्रकार उद्धार हो जाए ? बस दिन रात यही विचारे राधे कृष्ण राधे कृष्ण, अब तो इन पौराणिक पंडितों ने कृष्ण भी अलग कर दिए। बस राधे राधे बोलो उद्धार हो जाएगा ? मुक्ति के नुस्खे पुराणों के बड़े गजब के नुस्खे हैं। और यह सब अवतार का ही काम होता है। कि उन नुस्खें का प्रयोग करके अपने भक्तों का कल्याण करें।

Edit with WPS Office

[ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खंड उत्तरार्ध अध्याय,115]

कृष्ण गोपियों का जार (व्याभिचार) दुष्ट बड़ा लंपट था। मथुरा में आकर उसने मैथुन करके कुब्जा को मार डाला ? क्रीडा रति लंपट व्याभिचार शिरोमणि, चाहे सुकर अवतार के चेले यह सनातनी पंडित कितना ही जोर क्यों ना लगावे, पर इस सत्य को काट नहीं सकते? पुराणों ने कृष्ण महाराज को धूर्त में व्याभिचार शिरोमणि माना है। जबकि गीता के श्री कृष्ण महाराज महान आत्मा महान चरित्रवान कुशल योद्धा तथा राजनीतिक थे। पुराणों की राधा कृष्ण के गंदे अर्थों में प्रेमिका थी। जरा अपने ऊपर सोच कर देखो किसी के बाप, दादा का दुष्ट चरित्र भी हो, तो भी उनकी औलाद इस रहस्य को समाज में बताने से छुपाती है। पर पौराणिक सनातन धर्म में निष्कलंक श्री कृष्ण महाराज के साथ कलंकित राधा का नाम जोड़कर यह संकीर्तन कुपती औलाद ढोल मजारे पीट पीट कर चिल्लाती है। कि हमारे अवतार दुराचारी थे ? उनकी एक रखेल राधा थी, वे गोपिया (पशु चराने वाली) से व्यभिचार क्या करते थे।

जब इस प्रकार यह घर वाले ही अपने पूर्वजों को बदनाम करते हैं। तो विधर्मी लोग ईसाई मुस्लिम क्यों नहीं? इसका विरोध करेंगे बल्कि हमारा मजाक बनाएंगे ? और मजाक बनाया जा रहा है, क्यों? क्योंकि हम लोगों ने अपने ही महापुरुषों को बदनाम किया है? और ऐसा हुआ भी और हो रहा है ? पुराणों में सारे की सारी बातें बेहूदी मिथ्या भरी हुई है। राधा कृष्ण की बेटी, पुत्रवधू है और मामी है, और उसी राधा से कृष्ण का व्याभिचार चलता है। भगवान राम से ऋषि लोग भोग करने की इच्छा करते हैं। गोकुल में ऋषि लोग गोपियां बनती है। रामचंद्र जी कृष्ण बनकर उनके साथ भोग करते हैं। भोग करने से वह गोपिया मुक्त हो जाती है। इसलिए कृष्ण को गोपीवल्लभ कहां गया ? कैसी धूर्तता की बातें बदमाशों ने गड़गड़ कर लिखी है। जिन्हें पढ़ कर भी शर्म आती है। पौराणिक पंडित मंडल तथा उनका गुरु पाखंडी शिरोमणि माधवाचार्य इन बातों को सही मानता है। यह पुराण प्रायः दो हजार वर्ष पूर्व बने। ऐसे पुराणों में वर्णित इतिहास एवम् उनकी भाषा शैली से स्पष्ट है इनमें भारी मिलावटें की गई।

[भागवत महात्म प्रकरण मैं अध्याय 1, श्लोक 36]

Edit with WPS Office

अर्थात नारद जी कहते हैं कि कलयुग में यवनों ने भारत की नदियों तीर्थ आश्रमों पर कब्जा कर लिया। व देव मंदिरों को नष्ट कर डाला। विश्व श्लोक में आया यवन जो निश्चय पूर्वक मुसलमानी राज्य काल का घोतक है। क्योंकि महाभारत के बाद ऐसी कोई यवन जाति मुसलमान के अलावा नहीं हुई। जिसने समस्त भारत के मंदिरों तीर्थ और आश्रमों पर अधिकार करके उन्हें नष्ट भ्रष्ट किया। यह केवल मुसलमान ने किया था। अतः इस श्लोक से स्पष्ट है कि यह पुराण भारत में मुसलमान राज्य कायम होने पर बने। इसी प्रकार पुराणों में तंबाकू पीने का निषेध है। जिसकी विधि है, उसी का निषेध होना चाहिए। तो इसलिए पुराणों में तंबाकू का निषेध है , तंबाकू का जिक्र आया है। अर्थात तंबाकू पीने वाले ब्राह्मण को दान देने वाला व्यक्ति नरक में जाता है। और वह ब्राह्मण मरकर गांव का सूअर बनता है। जहांगीर बादशाह ने अपनी तजोर, ग्रंथ में लिखा है, कि भारत में तंबाकू आलू अमेरिकन्स पादरी अकबर के राज्यकाल के समय भारत लाया था। तभी से इसका प्रचार व पैदावार प्रारंभ हुई। इससे पहले ये चीजें भारत में नहीं होती थी ? अतः तम्बाकू का निषेध होने से स्पष्ट है कि यह पुराण अकबर के बाद बना। यह इतिहास के तथ्य हैं, अतः कोई भी इन्हें काट नहीं सकता। बकवास भले ही करता रह।।

[वेदों में राधा कृष्ण का विपक्षी प्रमाण]

इन्द्र वयुमनिराधं हवामहे...। अथर्ववेद. 11/15/2

इसमें इस पाखंडी माधवाचार्य को इस मंत्र में अंधे को राधा दिख पड़ी है। सत्य अर्थ यह है देखिए___ **(वयम)** हम लोग **(आराधंम्)** आराधना करने योग्य या सिद्ध करने हारे **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यशाली परमेश्वर की **(हवामहे)** स्तुति करते हैं। वेद मंत्रों में राधा व कृष्ण की गंध भी नहीं पर फिर इन सनातनी पाखंडी पंडितों को वेद में राधा कृष्ण नजर आ रहे हैं।

इस प्रकार हमने दिखाया कि श्री कृष्ण जी महाराज को पुराणों ने कल्पित कथाओं द्वारा हर प्रकार से बदनाम करने का प्रयास किया है। राधा से नाजायज संबंध कुब्जा से व्याभिचार गोपियों से विषय भोग एवं काम क्रीड़ा करना आदि झूठी बातें हैं। कीर्तन प्रणाली जिसका की सनातनियों में काफी प्रचार हो रहा है। महान कृष्ण को बदनाम करने की दृष्टि से अत्यधिक

Edit with WPS Office

मूर्खतापूर्ण चीज है।
हमारे पिछले लेख से स्पष्ट हो चुका है कि राधा रमण श्री गोविंद जै जै का अर्थ राधा से व्यभिचार करने वाले कृष्ण की जै होगा। राधे कृष्ण का अर्थ होगा राधा कृष्ण के नाजायज ताल्लुक का ढोल पीटना। माधवाचार्य ने राम का अर्थ विषयानन्दी किया है। तो हरे राम हरे कृष्णा का अर्थ होगा हे विषयानन्दी कृष्ण। गोपी वल्लम राधे श्याम का अर्थ होगा है गोपियों (ग्वालिनों) से विषय भोग व्याभिचार करने वाले व राधा के नाजायज प्रेमी कृष्ण । इस प्रकार वर्तमान संपूर्ण कीर्तन का अर्थ होगा गोपियों से व राधा से वे व्याभिचार करने वाले वेश्यानन्द विषयानन्दी कृष्ण की जय हो । यह कीर्तन हुआ, या अपने पुरखा श्री कृष्ण जी को पानी पी पीकर ढोल मजीरे बजाकर मजमा लगाकर गालियां देना हुआ है ? इन सनातनियों की कैसी अकाल मारी गई है कि वह पुराणों की शराब के नशे में निष्कलंक पवित्र आत्मा कृष्ण को दिन-रात चीख चीखकर गालियां दिया करते हैं । व्याभिचार को ये अज्ञानी ब्रह्मचर्य मानते हैं । पुराणों की व्यभिचारिणी राधा को यह आजन्म ब्रह्मचारी बनाते हैं । कृष्ण को ये आजन्म ब्रह्मचारी बताते हैं, कृष्ण के कुब्जा से खुले व्याभिचार को यह उसकी डॉक्टरी करके कमर सीधी करने का इलाज मानते हैं, गोपियों से हरामखोरी विषयभोग करने को पवित्र प्रेम का प्रतीक मानते हैं । जमुना में स्नान करती हुई गोपियों के वस्त्र चुराने व उनके गुप्तांगों के नग्न दर्शन करने, उनसे छल व मजाक करने को यह उनका पवित्र उपदेश देना बताते हैं । संसार के सारे दुराचारों की जड़, इस सनातन धर्म में मिट्टी का तेल डालकर आग लगा देनी चाहिए ।घासलेटी पुराणों को किसी नदी या पोखर में जल प्रवाह कर देना चाहिए । राम कृष्ण जैसे आर्य जाति के हमारे महापुरुषों को कलंकित करने वाले, उनको गालियां देने वाले इन कीर्तन पंथियों को तर्कशास्त्र का संबल लेकर ठीक करना चाहिए और जोर देकर उनको मजबूर करना चाहिए की कृष्ण को बदनाम करने से बाज आयें । उनकी इन हरकतों से हिंदू जाति का घोर अपमान हुआ है । ऐसे पाखंडी सनातनी पोप पंडितों की शक्ल देखना भी पाप समझना चाहिए । जो पुराणों का व कीर्तन का प्रचार करके भोली भाली हिंदू जाति में अधर्म का प्रचार करते हैं । यह हमारा सभी समझदार पाठकों से निवेदन है, क्योंकि जब तक इन धर्म के ठेकेदार, उपदेशकों की

Edit with WPS Office

अकाल दुरुस्त नहीं की जावेगी यह जनता को गलत मार्ग पर डालने से बाज नहीं आवेगे । इसलिए आर्य समाजियों वह प्रत्येक समझदार पौराणिक बंधुओ को जनता में से इन धार्मिक दोषों के निवारण का प्रयत्न करते रहना चाहिए ।।

➤ [सनातन धर्म का कूड़ेदान पुराणों में]

मां ,बहिन , भाई ,व बेटी से विवाह की आज्ञा।

[भविष्य पुराण (मुंबई छापा) प्रतिसर्ग खंड 4 , अध्याय 18 , 26, 27, 28 श्लोक]

अर्थ___ जो ज्ञान वाली (पढ़ी-लिखी पौराणिक) स्त्री हो वह चाहे किसी भी शुभ पुरुष को वर ले । वह चाहे उसका पुत्र, पिता व भाई कोई क्यों न लगता हो, वही उसका पति बन जाता है । ब्रह्मा जी ने अपनी पुत्री को, विष्णु जी ने अपनी मां को, तथा महादेव जी ने अपनी बहन को पत्नी ग्रहण करके श्रेष्ठा प्राप्त की और इस ज्ञान की बात को सुनकर सूर्य भगवान ने अपनी भतीजी से विवाह करके श्रेष्ठता को प्राप्त किया ।

समीक्षा___ सनातन धर्म की उपरोक्त प्रथा चाहे आजकल के आर्यसमाज विरोधी पौराणिक पंडितों एवं उनके भक्तों में भले ही आदर्श रूप में चालू हो और चाहे वह इसके अनुसार अपने परिवार में मां, बहन, बेटी आदि से विवाह करके अपने को परम श्रेष्ठ समझते हो, पर दुनिया तो इस गंदी प्रथा के मानने वालों पर सौ सौ बार थूकेंगी । ऐसी गंदी प्रथा तो जंगली लोगों में भी नहीं है । यदि यही सनातन धर्म है, तो फिर नीच व पिशाचों का धर्म कौन सा होगा ? क्या सनातनी देवता इतने पतित थे ? कि उन्होंने अपनी बेटी, बहन, मां व भतीजी को भी नहीं छोड़ा ? यदि ऐसे कुकर्मी भी देवता माने जा सकते हैं तो फिर उनमें और राक्षसों में भेद क्या होगा ?

हमारी दृष्टि में तो यह पौराणिक गप्पाष्टक है । और यदि सनातनी विद्वान इसे सही मानते हैं, तो स्पष्ट रूप से यह पौराणिक कूड़ेदान की एक भयंकर गंदगी है, जिसकी दुर्गन्ध ढाक के कारण सनातन धर्म से

Edit with WPS Office

लोग घृणा करते हैं । यदि पौराणिक जनता अब भी अपने यहां इस चालू गंदगी प्रथा को बंद कर देवे तो उत्तम होगा । नहीं तो आने वाले समय पर सनातन खतरे में है ।

➤ [विचित्र मुखाधान]

भविष्य पुराण प्रतिसर्ग खंड 4, अध्याय 18, श्लोक 37
दूसरा मंत्र भविष्य पुराण__ब्रहम् पूर्व अध्याय 79 , श्लोक 44, 46
नोट____यही कथा शिव पुराण उमा संहिता अध्याय 35, और मत्स्य पुराण अध्याय 11 , मैं विस्तृत से दी गई है ।

अर्थ___ वहां प्रिया संध्या घोड़ी रूप धारण किए खड़ी है । सूर्य भगवान भी घोड़े का रूप धारण करके मुख में मैथुन को प्रवृत्त हुए, उस संध्या ने सूर्य के वीर्य को नाक में होकर ग्रहण किया । उससे वैधो में श्रेष्ठ अश्वनीकुमार के दो देवता पैदा हुए, जिनके नाम नासत्य और दस्त्र थे ।
समीक्षा___ सनातनी लोग जिस सूर्य भगवान को नित्य जल चढ़ाते हैं वे उपासना करते हैं । यह उनके चरित्र का नमूना है हम नहीं कह सकते कि हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वान अपने देवता के इस पवित्र कर्म का अपनी गृहस्थी में कहां तक अनुकरण करते हैं। यदि वे करते तो हमारी प्रार्थना है कि वे इस पापकर्म को त्याग देवे अन्यथा यह गंदी प्रथा भी कहीं सनातन धर्म में सर्वत्र चालू न हो जावे, इसकी कोई गारंटी नहीं होगी । सुना है कि दिल्ली के माधवाचार्यजी व गाजियाबाद के खौमचाफरोश कोई यक्ताजी इस स्वानुभूत प्रथा के परम भक्त व प्रचारक थे । वे अपने देवता के इस कर्म को अपने सहधर्मियों के लिए अनुकरणीय एवं पवित्र कर्म तथा साक्षात सनातन धर्म मानते थे अब वे भी इससे घृणा करने लगे हैं । सुबह का भूला शाम को घर आ जावे तो भूला नहीं कहलावे । अत: हम उन्हें बधाई देते हैं यदि वे अपने पूज्य गुरुदेव दीनानाथ जी शास्त्री सारस्वत नृत्य, वादनाचार्य को भी इस पौराणिक कर्म से विरत कर सके तो और भी उत्तम होगा । आशा है यकता जी कोशिश करने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ेंगे ।

Edit with WPS Office

हमारी दृष्टि में तो यह पौराणिक गप्प है । न सूर्य ने ऐसा कोई पापकर्म किया होगा और न यह संभव भी है की मुंह में विषयभोग करके नाक में वीर्यधान किया जावे और फिर इस विलक्षण पौराणिक गर्भाधान से दो देवता अश्विनीकुमार पैदा हो जावे ? क्या देवताओं की पैदाइश का यही बेहूदा सनातनी तरीका रह गया है । क्या जो ऐसे बेतुके तरीके से पैदा हो पड़े, वह देवता भी बन जाता है । हम तो इस गप्पोडे को भी पौराणिक कूड़ेदान की भयंकर एक गंदगी ही हैं । चाहे हमारे विपक्षी सनातनी विद्वान इसे कितना भी उत्तम व अपने लिए अनुकरणीय मानते हो । ये गंदी बातें सनातन धर्म पर कलंक है ।

➤ [पापमोचन का नुस्खा]

[भागवत स्कंद 6 , अध्याय 2, श्लोक 9 व 10 तक]

अर्थ___ चोर, डाकू , शराबी लोग, मित्रों के साथ घात करने वाले (पौराणिक) ब्राह्मणों का कत्ल करने वाले (ब्रह्महत्यारे) गुरुपत्नीगामी, राजा और गौओं को मारने वाले तथा अन्य सभी प्रकार के पाप करने वालों के पापों का विनाश विष्णु के नाम उच्चारण मात्र से हो जाता है ।

समीक्षा___ पापों से मुक्त होने का यह नुस्खा भागवतकार ने इसलिए बताया था कि सारे ही दुष्ट, धूर्त एवं महापापी लोग वैष्णव संप्रदाय में शामिल हो जावे । और इस नुस्खे के प्रचार का प्रभाव भी यही हुआ कि सारे चोर ठग,लबार व नम्बरी बदमाश लोग भी धर्म के नाम पर सनातन धर्म में घुसे हुए आज पक्के वैष्णव बने ऊध्र्व-पुण्डर (तिलक) लगाए जनता को लूटते खाते फिरते हैं और सनातन धर्म की शोभा बढ़ा रहे हैं । यदि किसी को हमारी बात पर विश्वास ना हो तो अधिकांश 111 नंबर का तिलक लगाने वालों के व्यक्तिगत जीवन की खोज करके कोई भी देख ले ।

➤ [ब्रह्मा जी का गौं से मैथुन करना]

Edit with WPS Office

[मत्स्य पुराण , अध्याय 179 , श्लोक 34, 35, 36]
अर्थ___ रूपवती नाम की जो ब्रह्मा जी की पत्नी है वह सुरभि गौ का रूप धारण करके ब्रह्मा के समीप में खड़ी हो गई । तब लोकों में पूजित हुए ब्रह्मा जी संसार के निर्मित गौओं के उपकारार्थ उस गए से मैथुन करते भये । फिर उसे गए से धूम्र वर्ण वाले बहुत से पुत्र उत्पन्न हुए ।
समीक्षा___ पशु मैथुन की कथा फर्जी पौराणिक देवताओं की विशेषता रही है । सूर्य का घोड़ी से मुख मैथुन एवं ब्रह्मा जी का गौ से मैथुन करना इस प्रथा के ज्वलन्त उदाहरण हैं । हम निश्चय पूर्वक नहीं कह सकते कि हमें कोसने वाले हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वानों में अब भी यह प्रथा जारी है या नहीं । कभी-कभी पशुओं के मनुष्यों की आकृति के बच्चे पैदा हो जाते हैं इससे अनुमान होता है कि सनातनी विद्वानों में इस प्रथा का भी पूर्णतया अभाव नहीं हुआ है और ऐसे पशु बच्चे भी कदाचित उन्हीं की कृपा का प्रसाद होते हैं ।

हमारे विचार से यह बेहूदी प्रथा सनातनी कूड़ेदान की गंदगी का ही एक हिस्सा है आशा है हमारे विपक्षी विद्वान इस पशु मैथुन की सनातनी प्रथा के औचित्य पर अवश्य प्रकाश डालने की कृपया करेंगे ताकि उनके इस विषय में भिन्न-भिन्न पशुओं पर स्वानुभूत प्रयोग के गुण दोष पर संसार के कामशास्त्र लोग विचार कर सके ।

➤ [शिखण्डी शिवाजी]

[महाभारत___ सौप्तिक पर्व, अध्याय 37 , श्लोक 10 से 24 तक ।]
अर्थ___ प्रभावशाली ब्रह्मा ने प्राणियों की सृष्टि करने की इच्छा से सब से पहले महादेव जी को दिखा । तब ब्रह्मा ने उनसे कहा, प्रभों ! अब अविलम्ब संपूर्ण भूतों की सृष्टि कीजिए । यह सुनकर महादेव जी तथास्तु कहकर बहुत भूतगणों के दोष देखकर जल में मगन हो गए , और महान ताप का आश्रय लेकर दीर्घकाल तक तपस्या करते रहे ।

Edit with WPS Office

उधर पितामह ब्रह्मा ने सुदीघृ काल तक उनकी प्रतिक्षा करके अपने मानसिक संकल्प से दूसरे सर्वभूत स्त्रष्टा को उत्पन्न किया । उस स्त्रष्टा ने महादेव को जल में सोया देख अपने पिता ब्रह्मा जी से कहा, यदि दूसरा कोई मुझसे ज्येष्ठ न हो तो मैं प्रजा की सृष्टि करूंगा । यह सुनकर ब्रह्मा जी ने कहा, तुम्हारे सिवाय कोई दूसरा अग्रज नहीं है । ये शिव है भी तो पानी में डूबे हुए । अतः तुम निश्चिन्त होकर सृष्टि का कार्य आरंभ करो ।(तब स्त्रष्टा ने प्रजा की सृष्टि की)

जब प्राणी समुदाय की भली प्रकार वृद्धि हो गई और लोक गुरु ब्रह्मा जी भी संतुष्ट हो गए तब वे ज्येष्ठ पुरुष शिवजी जल से बाहर निकले । निकलने पर उन्होंने इन समस्त प्रजाओं को देखा, अनेक रूप वाली प्रजा की सृष्टि हो गई और वह अपने ही तेज से भली भांति बढ़ भी गई । यह देखकर शिवजी कुपित हो उठे और उन्होंने अपना लिंग काटकर फेंक दिया । इस प्रकार भूमि पर डाला गया। लिंग उसी रूप में प्रतिष्ठ हो गया । तब अविनाशी ब्रह्मा ने अपने वचनों द्वारा उन्हें शांत करते हुए कहा ! रुद्रदेव आपने दीर्घकाल तक जल में रहकर कौन सा कार्य किया है और इस लिंग को उत्पन्न करके किस लिए पृथ्वी पर डाल दिया है ।

यह सुनकर कुपित हुए जगतगुरु शिव जी ने ब्रह्मा जी से कहा प्रजा की सृष्टि तो दूसरे ने कर डाली फिर इस लिंग को रखकर में क्या करूंगा ?

समीक्षा____ शिवजी ने अपनी उपस्थेन्द्रिय को काट कर फेंक दिया, यह ठीक ही किया । आखिर वे उसको रखकर करते भी क्या ? उस अंग का मुख्य कार्य संतान पैदा करना ही होता है । जब संतान दूसरे व्यक्ति ने पैदा कर दी तो फिर शिवजी उसे निरर्थक रूप से धारण करके क्या करते ? उन्होंने क्रोध प्रकट करने का उपाय भी विलक्षण ही सोचा था । कटा हुआ वह लिंग पृथ्वी पर स्थापित हो । सनातनी जिस लिंग की पूजा करते हैं शिवजी का कटा हुआ यह वही उपस्थेन्द्रिय हैं । जो संतान पैदा करने के काम आता है ।

लिंगहीन हो जाने से ही पुराणों में शिव जी को शिखंडी लिखा गया है । जो ठीक ही है शिखंडी की उपासना करने से भक्तों मैं शिखंडीपन आना ही चाहिए । हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वानों में इसलिए यह गुण विशेष रूप से

Edit with WPS Office

दिखाई देता है । हमारा परामर्श है कि वे यदि शिखंडी की भक्त छोड़कर अपना इलाज दिल्ली की माधवाचार्य , प्रेमाचार्य ,वीराचार्य एण्ड कंपनी में करा लेंवे तो उत्तम होगा ।
शिवजी की उपस्थेन्द्रिया पर आफते आती रही है । एक बार तो ऊपर की कथा में उसे शिवजी ने गुस्से में आकर काट कर फेंक दिया था । शिवजी ने बमुश्किल छिपकली की पूंछ की तरह फिर उसे बड़ा पाया होगा तो दारू वन में भृगु ऋषि ने श्राप देकर उसे काट डाला (शिवजी के सामने हमेशा यही परेशानी रही कि उन्हें सदैव बिना उसके शिखंडी ही रहना पड़ा । और भक्तों को उसकी पृथक कटे हुए रूप में ही सदैव पूजा करनी पड़ी । वरना कितना उत्तम होता कि कोई पौराणिक सर्जन उसे शिवजी के शरीर में जोड़ देता तो भक्त लोग उसकी व शिवजी की (दोनों की) एक साथ पूजा कर लिया करते ।
कुछ भी हो हमारे विचार से यह भी पौराणिक गपोड़ा ही है, न तो सृष्टि की रचना इस प्रकार से हुई थी न शिवजी ने अपना वह अंग काटा होगा । गप्पी सूत लोगों ने यह झूठी कथा गढकर महाभारत में घुसेड दी है । इससे शिवजी के चरित्र पर एक कलंक लगता है । यदि इस गप्पाष्टक को सत्य माना जावेगा तो देश में सनातनी कूड़ेदान की एक गंदगी के रूप में यह कथा भी दुर्गन्ध फैलाती रहेगी ।

➤ [देवताओं को गर्भ रह गया]

प्रमाण___
सौर पुराण__अध्याय 53 , श्लोक 37...
शिव पुराण__ वायु स. , अध्याय 30 , श्लोक 9
अर्थ___ मारुत पत्रों से शिखंडी (हिजड़ो के सरदार) शिवजी की पूजा करें । लोक भाषा में शिखंडी का अर्थ हिजड़ा होता है ।

अर्थ___ देवों के देव महादेव जी के वीर्य को पीने से विष्णु के साथ अन्य देवताओं को गर्भ रह गया ।
समीक्षा___ हम तो सुना करते थे कि देवियों के ही गर्भधान हुआ करता है,

Edit with WPS Office

पर आज पता चला है कि शिवजी ने विष्णु आदि देवताओं के शरीर में मुखमार्ग से गर्भाधान कर दिया। उसका तरीका भी विलक्षण रहा। शिवजी का शुक्रपात हुआ और देवता लोग जिनमें विष्णु भी सम्मिलित थे। उसे जायके से पी ग्रे और उसी से उनके गर्भ रह गए। मुंह द्वारा गर्भधान हो सकता है इस पर पौराणिक वैज्ञानिको को परीक्षण करना चाहिए। हमारे विचार से यह भी पौराणिक गपोड़ा है। शिव जी के गर्भाधान करने व देवताओं के वीर्य पीने की वाममार्गीय प्रथा सनातनी कूड़ेदान का विशेष अंग है। ऐसी बेहूदी बातों से इस पौराणिक धर्म की संसार में बदनामी होती है। इन बातों पर सनातनी विद्वान ही विश्वास कर सकते हैं।

➤ [कान में गर्भाशय]

प्रमाण___

[महाभारत शान्तिपर्व, अध्याय 348 , श्लोक 27]

अर्थ___ चिन्तन करते समय नारायण के कानों में से एक पुरुष पैदा हुआ। वहीं प्रजा की सृष्टि करने वाला ब्रह्मा हुआ।

[महाभारत भीष्म पर्व, अध्याय 67, श्लोक 14]

अर्थ___ नारायण के कान में से मधु नाम का महान् राक्षस पैदा हुआ।

समीक्षा___ नारायण के कान में क्या कोई गर्भाशय की फैक्ट्री चालू थी ? जो उसमें से चार मुंह वाले ब्रह्मा जी, व मधु नाम के राक्षस पैदा हो गए थे ? क्या उस समय देवियों का अभाव हो गया था ? जो मर्दों के शरीर में से संताने पैदा होती थी ? यह भी एक विलक्षण गप्प है कि कान से बच्चे पैदा होते थे।

➤ [ब्रह्मा की विचित्र उत्पत्ति]

[भविष्य पुराण___ प्रतिसर्ग संख्या 41 , अध्याय 25 , श्लोक 108]

अर्थ___ सृष्टि बनने वाले (पौराणिक चतुर्मुखी) ब्रह्मा जी लिंड्गेन्द्रिय में से

Edit with WPS Office

पैदा हुए थे ।
समीक्षा___ महाभारत में लिखा है कि ब्रह्मा जी नारायण के कान में से पैदा हुए थे और भविष्य पुराण लिखता है कि वे लिंङ्गेन्द्रिय में से निकले थे ? दोनों में से कौन सी गप्प को ठीक माना जावे ? यह पौराणिक विद्वान कृपया स्पष्ट कर देवे । हमारी दृष्टि में तो सनातन धर्म के ग्रन्थ ऐसी ही गप्पो का भंडार है जिनका न सर है ना पैर ।

➤ [सुंदर औलाद बनाने का विचित्र विधान]

[मत्स्य पुराण___ अध्याय 48 , श्लोक 68 से 76 तक]
अर्थ___ राजा बलि ने अपनी रानी सुदेष्णा को दीर्घतमा से औलाद पैदा करने को भेजा । वह श्रृंगार करके ऋषि के पास गई दीर्घतमा ने कहा कि मेरे सारे शरीर पर दही, नमक तथा शहद लगाकर लज्जा को त्याग कर पैरों से लेकर मस्तक तक जीभ से चाट । हे देवी ! इश्क करने से तू वांच्छित पुत्रों को पावेगी ।
रानी ने वैसा ही किया परंतु जब सब अंग चाटती हुई गुदां के पास आई तब गुदा को छोड़ दिया । ऋषि ने कहा है हे शुभे ! जो तूने गुदा को त्याग दिया है इसलिए तेरा बड़ा पुत्र गुदा से रहित होगा । यह सुनकर रानी ने कहा कि है महाभाग ! ऐसा पुत्र आप देने योग्य नहीं हो । हे प्रभों ! आप मेरे प्रसन्न करने से मेरे पर कृपया कीजिए । दीर्घतमा बोला देवी ! तेरे अपराध से तो ऐसा ही प्रतीत होता, पुत्र तुझे कुछ फल नहीं देगा । पोता देगा । और उसके बिना गुदा के ही योग्य भाव हो जाएगा । फिर उस ऋषि ने रानी के अंगों में से कुक्षी को स्पर्श करके यह है वचन बोला । हे सुंदर हास्य वाली ! तूने मेरी उपस्थेन्द्रिय को खूब चाटा है , इसलिए तेरा ऐसा गर्भ होगा जैसा पूर्णमासी का चंद्रमा होता है ।
समीक्षा___ हमारे विपक्षी कट्टर पौराणिक विद्वानों के परिवारों मैं कदाचित आजकल भी यह संतान उत्पत्ति की विलक्षण विधि चालू होवे तो किसी आर्य समाजी को आश्चर्य नहीं करना चाहिए । सनातनी नुस्खे भी गर्भाधान के विलक्षण होते हैं पूर्णिमा के चंद्रमा के समान सुंदर बालक को जन्म देने

Edit with WPS Office

के लिए सनातन धर्म में उपस्थेन्द्रिय को चाटने का उपरोक्त विधान कितना घृणास्पद है । यह देखकर प्रत्येक को दुख होगा । वास्तव में यह कथा भी सनातनी कूड़ेदान की गंदगी का एक नमूना है जो पौराणिक गन्दी परंपरा को प्रकट करती है ।

➤ [सनातन धर्म का सुंदर भोजन]

[पदम पुराण___सृष्टि खंड, अध्याय 31, श्लोक 121 से 132 , कलकत्ता]
भावार्थ___शिवदूती ने शिवजी से कहा कि आप मुझे ऐसा भोजन देवें जो रसयुक्त , मीठा, दिल को ताकत देने वाला व अच्छे प्रकार का पका हुआ हो और तिब्बत पर भी दुर्लभ न होवे । साथ ही जिसको कभी मुझसे पहले किसी ने ना खाया हो । तो शिवजी ने कहा कि मैंने बहुत प्रकार की भोजन सामग्री तैयार कराई थी, वह तो समाप्त हो चुकी है, उसमें से जरा सी भी शेष नहीं बची है । तुम अब (देर करके) आई हो बताओ मैं अब तुमको क्या दूं जिससे तुम्हारी तृप्ति हो सके ? लो मैं तुमको खाने की ऐसी चीज देता हूं जिसका इससे पूर्व किसी ने स्वाद नहीं लिया है । मेरे अधोभाग में नाभि के नीचे दो गोल फल हैं, तुम मेरे लम्बे के सहित दोनों वृषण (अंडकोषों) को खा लो । इनका भोजन कर लेने से तुम्हारी पूर्ण तृप्ति हो जावेगी । पुलस्त्य जी ने कहा शिवदूती ने शिवजी के इस महाप्रसाद को पा लिया । शिवजी ने कहा कि जो (पौराणिक) लोग बिना हास्य (मजाक) किये इसका शुभ आचरण करेंगे उनको धन , पुत्र, स्त्री, मकानादि सम्पत्ति मैं ये सब कुछ प्राप्त हुआ करेगा । और जो लोग इस (पवित्र) भोजन का मजाक उड़ावेंगे, उनके दांत लम्बे-लम्बे हो जावेगे, वे दरिद्री हो जाएंगे । इसलिए इस शुभ कर्म की मजाक नहीं उड़ानी चाहिए ।अण्डकोषों को चनों के साथ भरकर पुए बनाकर खाने वालों के भाई बन्धु और स्वजनों का वंश नाश नहीं होता । इसे बिना पुत्र वालों को पुत्र मिलते हैं, गरीबों को धन मिलता है, वह सुंदर, रूपवान् एवं उत्तम भोगों को भोगने वाला और सब शास्त्रों का जानने वाला पारंगत विद्वान बन जाता है ।

समीक्षा___ शिवजी की सूझ बड़ी विलक्षण थी । उन्होंने एक स्त्री को जो

Edit with WPS Office

वाममार्गीय खुराक खिलाई यह सनातन धर्म पर कलंक है । किसी स्त्री के भोजन मांगने पर उसे ऐसी बात कहना पौराणिक सभ्यता को प्रकट करता है । शिवजी को यह भय भी था कि कहीं लोग उनकी इस बात की मजाक न उड़ावे इसलिए उन्होंने हास्य करने वालों को भय दिखाने को श्राप भी दे दिया । पुरुषों के अंडकोषों को खाने से लाभ व सेवन की विधि भी बता दी है कि उनको भूनकर चनों के साथ पुए बनाकर खाने से कितने लाभ होते हैं ? हमारे जिन विपक्षी पौराणिक विद्वानों ने इस भोजन को खाकर स्वयं परीक्षाएं की हो वे अपने सही अनुभव कृपया प्रकाशित कर देवे । यह हमारा उनसे निवेदन है । ताकि लोग यह देख सके कि उनको कि उनका जो पुत्र धन व खूबसूरती मिली है । क्या वह इसी भोजन की प्रताप से मिली है ? अथवा यह नुस्खा पुराणकार ने झूठा लिखकर पौराणिक जनता को बेवकूफ बनाया है ।

हमारी दृष्टि में तो किसी वाममार्गी या मुसलमान मतावलंबी ने यह कथा गढ़ कर पुराण में घुसेडकर शिवजी को कलंकित किया है । और यदि पौराणिक विद्वान इस कथा को सत्य मानते हैं । तो सचमुच यह सनातनी कूड़ेदान की भयंकर गंदगी है, जिसकी दुर्गन्ध से पुराण को देखने वाले अन्य लोग भी परेशान है ।

➤ [विष्णु का व्यभिचार व अन्यों को प्रेरणा]

[शिव पुराण___ श० रु० सं० अ० 22, श्लोक 45,46 ,47]

अर्थ___ उसी अवसर में विष्णु ने अमृत से उत्पन्न हुई पूर्ण चंद्रमा के समान मुख वाली दिव्य सौंदर्य से गवृत स्त्रियों को देखा । 45

काम के बाणों से मोहित (घायल) हुए विष्णु ने उन स्त्रियों के साथ क्रीडा विहार कर निवृत्ति प्राप्त की ।46

उन स्त्रियों से विष्णु ने बड़े पराक्रमी पुत्रों को उत्पन्न किया ।47

[शिव पुराण___श० रु० सं० , अध्याय 23, श्लोक 29, 30]

Edit with WPS Office

विष्णु बोल___ देवताओं ! आदर से मेरी बात को सुनो व उसी प्रकार शीघ्रता से करो तो तुम्हारा कल्याण होगा ।29।। पाताल लोक में यौवन से उन्मत दिव्य स्त्रियां हैं उनके साथ जिसको इच्छा हो वह महाक्रीडा करें ।30।।

समीक्षा___ विष्णु जी ने परस्त्रीगमन किया हो या नहीं वह दूसरी बात है । पर पुराणकार ने तो उनको महाव्यभिचार लिख ही दिया । यदि उपरोक्त बाद पुराण की सत्य है तो विष्णु के दुशचरित्र ,परस्त्रीगामी होने की बात स्पष्ट है । उन्होंने पहले तो स्वयं पाताल में जाकर वहां की औरतों को भोग डाला और बहुत से बच्चे पैदा कर दिए । जब अपना मन संतुष्ट हो गया तो अपने साथी देवताओं को प्रेरित किया कि अब तुम भी जाकर डुबकी लगा लो । ऐसे परस्त्रीगामी देवताओं की भक्ति से भक्तों में भी वही गुण नहीं आवेगें जो देवताओं में होते हैं , इसमें क्या गारंटी है ? जैसे उपास्य होंगे वैसे ही उपासक बनेंगे, जैसे गुरु होंगे वैसे चेला बनेंगे । इसलिए देवताओं के उपासक अधिकांश में व्यभिचार प्रिय देखे जाते हैं ।

हमारी दृष्टि में तो यह है पुराण की गन्दी बात सनातनी कुड़ेदान का अभिन्न भाग है जिसको देखकर विद्वान इस सनातन धर्म से घृणा करते हैं ।

➤ [बालखिल्यों की उत्पत्ति]

[शिव पुराण___ पार्वती खंड , अध्याय 49 , श्लोक 4 से 35 तक]

अर्थ___ पार्वती के विवाह में ब्रह्मा जी पुरोहित थे वे कहते हैं– हे तात ! तब लोकाचार का विधान करके शिव व पार्वती ने विधिपूर्वक अग्नि की परिक्रमा की ।।3।। हे मुने ! उसी समय शिव माया से विमोहित होकर मैंने देवी (पार्वती) के मनोहर नखचंद्र (पैर के नाखून) का दर्शन किया ।।5।। हे मुने ! दर्शनमात्र से ही मैं क्षुभित हो गया और काम से मेरा मन क्षोभ को प्राप्त हो गया (मैं कामातुर हो गया) ।।6.।। और बारंबार मोहित होकर मैं देवी के नखचंद्र को देखने लगा, और उसी के दर्शन से पृथ्वी पर मेरा वीर्यपात हो गया ।।7।। वीर्यपात होने से मैं बड़ा लज्जित हुआ और चरणों से उसे छुपाते हुए गुप्तांग को (मैंने) मर्दन किया ।।8।। मेरे उस वीर्य के बार-बार मर्दन होने

Edit with WPS Office

से बहुत से उज्जवल कण हो गये जिनसे सहस्त्रों बालखिल्यों ऋषि प्रकट हुए ।। 34-35 ।।

समीक्षा ___ ब्रह्मा जी का एक स्त्री के पैर के नाखून को विवाह के अवसर पर देखने मात्र से शुक्रपात हो जाना, उनकी चरित्रहीनता का ज्वलन्त उदाहरण है । पाठकों ने ऐसे प्रमेह के रोगी बहुत कम देखे होंगे जैसे पुराणोंक्त ब्रह्माजी थे । फिर उस पतित शुक्र को पैरों से मर्दन करने से 80 हजार बालखिल्य ऋषि भी वही पैदा हो गये । यह मनोरंजक गपोड़ा है सनातन धर्म के शास्त्रों में ऋषि मुनियों को कलंकित करने वाले, देवताओं को चरित्रहीन बताने वाले गपोडों की भरमार है । हम तो इस ऊंट पटांग घटना को गपोड़ा ही मानते हैं । पौराणिक विद्वान इसे सत्य मानते हैं तो यह भी सनातनी कूड़ेदान की एक कलंककारिणी गन्दगी है, यह मानना पड़ेगा । ऐसे दुर्बल चरित्र को ईश्वर या पूजनीय कैसे माना जा सकता है ।

➤ [शिवजी का पार्वती को विचित्र आदेश]

[ब्रह्मवैवर्त पुराण___ कृष्ण जन्म खंड , अध्याय 6 , श्लोक 146 से 161 तक, कलकता]

पूर्वकाल में विष्णु जी सब देवताओं के साथ गणेश जी को देखने के लिए श्वेत द्वीप में शंकर जी के मकान पर गये । वहां पार्वती प्रसन्न वदन होकर विष्णु को देखने लगी और अपने मुंह को ढक दिया । विष्णु के अति सुंदर स्वरूप को अपने मुंह को आच्छादित करके पार्वती बारंबार बिना पलक मारे नेत्रों से देखने लगी । पार्वती तिरछी निगाह से विष्णु के परम अद्भुत स्वरूप को देखकर शरीर से पुलकायमान होकर सुख सागर में मगन हो गई । पार्वती की उस भक्ति एवं शरीर से पुलकायमान होने की दशा को देखकर विष्णु ने अपने मन में पूजा की । पार्वती के मन की बात को जगतपति, सर्वान्तरयामी, सब की आत्मा शिव जी ने जान लिया उन्होंने स्वयं पार्वती को एकांत में बुलाकर अनेक प्रकार के हितकारी वाक्यों से समझाते हुए उससे कहा । हे पार्वती तू मेरे इस निवेदन को सुन और (मेरे कहने से) विष्णु को अपना श्रृंगार दान कर दे । (कुकर्म कर लो) ।

Edit with WPS Office

समीक्षा___ विष्णु जी केवल गणेश जी को देखने के लिए शिव जी के घर गए थे पार्वती की इच्छा करके नहीं गये थे । पुराणकार लिखता है की पार्वती उन पर मुग्ध हो गई । जब शिवजी ने यह दृश्य देखा तो दोनों का मन रह जावे एवं विष्णु का भी आदर सत्कार पूरी तरह से हो जावे, इस विचार से उन्होंने पार्वती को श्रृंगार दान करने के लिए बड़ी नम्रता के साथ एवं तर्कपूर्ण भाषा में आग्रह किया । हमारे विपक्षी सनातनी विद्वानों में आतिथ्य सत्कार की यह पवित्र प्रथा अब भी जारी है या नहीं, यह तो हमें ठीक ज्ञात नहीं है, पर हमारा विचार है कि ऐसी प्रथाओं के जारी हो जाने से हमारे पौराणिक विद्वानों के घरों पर अतिथियों के रोजाना आने-जाने का ताता लगा रहेगा और इस महंगाई के युग में वे आर्थिक संकट में पड़ जावेंगें । अच्छा हो कि शिव पार्वती व विष्णु के चरित्र की इस घटना का उनके अंधभक्त लोग अनुकरण न करें । हमारी दृष्टि में आदर सत्कार का यह प्रकार बुद्धिमान् लोगों की निगाह में एक गन्दी प्रथा है, जो की पौराणिक कूड़ेदान की शोभा बढ़ाती है ।

➤ [विलक्षण अतिथि सत्कार]

महाभारत अनुशासन पर्व, दानपर्व अध्याय 2 , श्लोक संख्या. 42 से 80 तक ।

यहां पर क्या लिखा है देखें ___

युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा कि गृहस्थ मनुष्य मृत्यु से कैसे तर सकते हैं ? भीष्म ने उत्तर में एक कथा सुनाई की सुदर्शन नाम का एक ब्राह्मण था । उसकी स्त्री का नाम ओध्धवती था । उसने अपनी पत्नी से कहा —-

42 43 श्लोक में

अर्थ___ तुझे अतिथि के प्रतिकूल कभी भी कोई कामना नहीं करनी चाहिए ।42।

जिस जिस उपाय से नित्य नित्य अतिथि संतुष्ट रहे । चाहे अपना शरीर ही क्यों न दान करना पड़े, तुझे इसमें विचार नहीं करना चाहिए ।43।

Edit with WPS Office

एक दिन सुदर्शन जंगल में लकडियां लेने गया था । पीछे से एक पौराणिक ब्राह्मण अतिथि बनकर उसके घर में आया और औध्धवती से बोला –

अर्थ___ यदि तुझे गृहस्थ धर्म प्रमाण है तो अपना शरीर प्रदान करके मुझे प्रसन्न कर सकती है । यह सुनकर औध्धवती ने और पदार्थों से उसे प्रसन्न करना चाहा, किंतु उसने शरीर प्रदान के बिना अन्य वस्तु स्वीकार नहीं की ।54। तब–

वह राजा की पुत्री सुदर्शन की पत्नी प्रथम दिवस के पति के वचन को याद करके लज्जित हुई उस ब्राह्मण से कहने लगी बहुत अच्छा ।56।

तब प्रसन्न होकर वह पौराणिक ब्राह्मण और औध्धवती एकान्त स्थान में प्रविष्ट हो गए ।57।

थोड़ी देर में सुदर्शन लकड़ियां लेकर आया और उसने पत्नी को आवाज दी कि तू कहां है । किंतु–

उसने पति की बात का उत्तर नहीं दिया क्योंकि ब्राह्मण ने उसे हाथों से स्पर्श (पकड़) रखा था ।60।

मैं उच्छिष्ट हूं । यह समझकर लज्जित हुई पति के सामने चुप साध गई । और कुछ न बोली ।61।

तब अन्दर कुटी में से ब्राह्मण (पौराणिक पंडित) बोला, वह तो मेरे पास है । यह सुनकर सुदर्शन बोला कि –

हे ब्राह्मण । तेरा विषयभोग सफल हो । मैं बहुत प्रसन्न हूं । अतिथि की पूजा गृहस्थ का मुख्य धर्म है ।69।

मैंने यह स्पष्ट शब्द इस समय कहे हैं । हे प्रिय ! इसमें संदेह नहीं है । इस सत्य को सिद्ध करने के लिए मैं स्वयं अपने शरीर को छूकर शपथ खाता हूं ।72। इस पर आकाशवाणी हुई –

हे सुदर्शन ! तूने उस मौत को जीत लिया जो तेरे पीछे-पीछे फिरती थी । भीष्म बोले– अत: हे युधिष्ठिर ! प्रत्येक प्रकार से अतिथि कि पूजा करने से गृहस्थी मृत्यु को जीत लेता है ।

➤ [सुदर्शन ने अपनी पत्नी को व्याभिचारिणी

Edit with WPS Office

बनाया]

(शिव पुराण. कोटिरुद्रसं अध्याय 13 , श्लोक संख्या 35)

अर्थ___ उस दुराचारी पुत्र ने अपनी स्त्री को भी शीघ्र ही व्याभिचारिणी कर दिया । तब उसके पिता ने पश्चाताप करके उसे धिक्कारा ।

समीक्षा___ महाभारत तथा शिव पुराण से सुदर्शन की पत्नी के व्यभिचारणी होने की बात स्पष्ट कर महाभारत कार ने इस अतिथि सत्काररूपी पौराणिक व्याभिचार को धर्म माना है । जबकि शिव पुराण ने उसे पाप माना है । यह मतभेद दोनों में क्यों है ? इसे सनातनी विद्वान स्पष्ट करें । अतिथि सत्कार की यह परिपाटी शायद हमारे विपक्षी सनातनी कट्टर विद्वानों के परिवारों में अब भी चालू रहेगी । क्योंकि यह उनका शास्त्रीय विधान है पर वास्तविक बात तो यह है कि व्याभिचार को प्रोत्साहन देने के लिए पौराणिक पंडितों ने इस कथा को गढ़कर महाभारत में घुसेड दिया है । ताकि भोली एवंम धर्म में अन्धश्रद्धा रखने वाली उनकी अन्ध भक्त सनातनी विचार की जनता को अतिथि सत्कार के नाम पर व्याभिचार के लिए तैयार किया जा सके । हम तो इसे ऐसा ही समझते हैं । पर यदि हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वान इसे सत्य मानते हैं तो स्पष्ट है कि यह कथा उनके पौराणिक कूड़ेदान की व्याभिचार को प्रोत्साहन देने वाली भयंकर गंदगी है । हमारा धर्म इसी प्रकार की बातों से विश्व में कलंकित होता है । अपनी स्त्रियों को व्याभिचार के लिए ऐसे अतिथिरुपी गुण्डों को पेश करना कितनी नीचता की बात है । खेद है कि ऐसी बातों को करने व उन पर अमल करने वाले हमारे विपक्षी विद्वान भी अपने को सनातनधर्मी कहने में लज्जा अनुभव नहीं करते ।

➤ [विलक्षण लोकविज्ञान]

(विष्णु पुराण अंश 2, अध्याय 77 , श्लोक संख्या 5 से 10 तक । गीता प्रेस गोरखपुर)।

Edit with WPS Office

यहां पर लिखा है—-
अर्थ___ हे मैत्रेय ! पृथ्वी से एक लाख योजन दूर सूर्यमंडल है और सूर्य मंडल से भी एक लाख योजन के अंतर पर चन्द्रमण्डल है ।5।
चंद्रमा से एक लाख योजन ऊपर संपूर्ण नक्षत्र मण्डल प्रकाशित हो रहा है ।6।
हे ब्रहम्न ! नक्षत्र मंडल से दो लाख योजन ऊपर बुध और बुद्ध से भी दो लाख योजन ऊपर शुक्र स्थित है ।7।
शुक्र से इतनी ही दूरी पर मंगल है और मंगल से भी दो लाख योजन बृहस्पति है ।8। हे द्विजोतम ! बृहस्पति से 2 लाख योजन ऊपर शनि है , और शनि से एक लाख योजन के अंतर पर सप्तऋषि मण्डल है ।9।
सप्तर्षियों से भी सौ हजार योजन ऊपर समस्त ज्योतिश्चक्र का नाभिरूप ध्रुव मण्डल स्थित है ।10।
समीक्षा___ पुराण बनाने वालों का नक्षत्रविज्ञान भी मनोरंजक वस्तु है । उनके हिसाब से पृथ्वी से सूर्य केवल एक लाख योजन (4 लाख कोस अथवा 8 मील) दूर है । सूर्य से भी एक लाख योजन आगे चंद्रमा है । अर्थात हमारी पृथ्वी से चंद्रमा दूर है और सूर्य पास है । इस प्रकार भारतीय ज्योतिष विज्ञान की संसार में हंसी इन पुराणकारों ने कराई है । इनको जब किसी बात का ठीक-ठाक पता नहीं था तो फिर इस विषय पर मौन ही रहना ठीक था । वर्तमान युग में जो आकाश मंडल में उपरोक्त ग्रहों की खोजबीन की गई है उसके अनुसार सूर्य से ग्रहों की दूरी निम्न प्रकार है —-
सूर्य से पृथ्वी ... 9,30,00,000 मील दूर है व व्यास 8000 मील है ।
बुध________ 3,60,00,000___3000
शुक्र________ 6,70,00,000___8000
मंगल_______ 14,10,00,000___4260
बृहस्पति______48,30,00,000___71000
शनि_______ 86,10,00,000___71000
अरुण_______ 1,78,20,00,000___33250
वरुण_______ 2,79,10,00,000___37250
यम_______ 3,70,00,00,000___3650

सूर्य हमारी पृथ्वी से 13 लाख गुना बड़ा है व 9 करोड़ ,30 लाख

Edit with WPS Office

मील दूर है यदि पुराण के अनुसार यह पृथ्वी से एक लाख योजन ही दूर होता तो पृथ्वी को उसने राख का ढेर बना दिया होता । चंद्रमा हमारी पृथ्वी से लगभग 238000 मील दूर है यह जब भी पृथ्वी और सूर्य के बीच में आ जाता है तभी सूर्य ग्रहण पड़ जाता है तथा सूर्य व चंद्रमा के बीच में परिभ्रमण में पृथ्वी आ जाती है तो चंद्रमा पर सूर्य प्रकाश की रूकावट होने से एवं पृथ्वी की छाया पड़ने से चंद्र ग्रहण बन जाता है यदि पुराण की गल्प सत्य होती तो कभी सूर्य ग्रहण पड़ते नहीं ।

हमारे दृष्टिकोण से भारतीय खगोल विज्ञान को कलंकित करने वाली यह भी पुराणोक्त सनातनी कूड़ेदान की शोभा बढ़ाने वाली कोरी गप्प ही है ।

➤ [मत्स्यावतार की लंबाई]

[भागवत पुराण स्कंद 8 , अध्याय 24 , श्लोक 44]

यहां पर लिखा है –

अर्थ___ एक सींग वाले मत्स्य अवतार का शरीर एक लाख योजन (4 लाख कोस अर्थात 8 लाख मील का था ।)

समीक्षा___ हमारी पृथ्वी की परिधि केवल 24000 मील की है । उसमें 8 लाख मील लंबी मछली (सनातनियों का कल्पित अवतार) कहां ठहरा होगा ? यह समस्या पौराणिक विद्वानों को विचारणीय है । शायद पुराण बनाने वाले की खोपड़ी पर वह सवार रहता होगा । पुराणों की गप्पें भी नमूने की होती है ।

➤ [आम का पेड़]

[भागवत पुराण स्कंद 5 , अध्याय 16 , श्लोक 16]

अर्थ___ मन्दराचल के मध्य में ग्यारह हजार योजन (88000 मील) ऊंचा देवताओं का एक आम का वृक्ष है । उस पर से पर्वत के शिखर के समान

Edit with WPS Office

मोटे फल अमृत समान मीठें गिरते हैं ।

समीक्षा___ हिमालय पर्वत की सबसे ऊंची चोटी केवल 5.5 मील ऊंची है । और उसी हिमालय पर 80000 मील ऊंचा आम का पेड़ लिख मारना शेखचिल्ली के गप्पोडे नहीं तो और क्या है ? यह गप्पोडे भी किसी ऐसे वैसे का किसी उपन्यास में लिखा नहीं है, वरन् सनातन धर्म के खास, शास्त्र पूज्य भागवत पुराण में उनके विश्वास के अनुसार साक्षात भगवान विष्णु के परम अवतार वेदव्यास जी ने गढकर लिखा है, ऐसी गप्पाष्ठको से युक्त होने से पुराणों का गप्पोडा साहित्य कहना उचित ही है ।

➤ [आठ लाख मील ऊंचा पहाड़]

(भागवत पुराण स्कंद 5 , अध्याय 16 , श्लोक. 7)

यहां लिखा है—

अर्थ___ (जम्बूद्वीप के) मध्य में इलावृत नाम का एक खंड है जो इसके मध्य में स्थित है । और स्वर्ण का मेरु पर्वत एक लाख योजन (800000) मील ऊंचा है । जो पर्वतों का राजा है । यह पर्वत पृथ्वी पर 32000 मील तक फैला है । मूल मैं 16 हजार योजन विस्तृत है । उतना ही भूमि में प्रविष्ट है ।

समीक्षा ___ हिमालय पर्वत को ही मेरु पर्वत कहते हैं । उसका उपरोक्त विवरण किसी शेखचिल्ली के गप्पोडे को मात देने में क्या कम है ? भूगोल एवं खगोल विज्ञान की उपरोक्त गप्पाष्टक सनातनी कूड़ेदान का अंग मानी जा सकती है । जमीन से चंद्रमा 238000 मील केवल ऊंचा है । और हिमालय 8 लाख मील ऊंचा यहां बता दिया । क्या सुंदर गप्प है ।

➤ [800 मील ऊंचा किला]

[विष्णु पुराण अंश 1 , श्लोक. 11 गीता प्रेस गोरखपुर]

अर्थ___ हिरण्यकश्यपु बोला , यह (प्रहलाद) बड़ा दुरात्मा है , इसे इस सौ

Edit with WPS Office

योजन ऊंचे महल से गिरा दो जिससे यह इस पर्वत के ऊपर गिरे और शिलाओं से इसके अंग छीन भिन्न हो जाए ।

समीक्षा___ आठ सौ मील ऊंचा महल बनाने को नसैनी कहां से आई होगी और उस पर चढ़ा कैसे जाता होगा ? इतना ऊंचा महल बना देना पुराण बनाने वाले को शेखचिल्ली बुद्धि वाला सिद्ध करता है । पुराणों में गप्पें भी चुन चुनकर लिखी है ।

➤ [ब्रह्मा जी की मुसीबतें]

[भागवत पुराण स्कंध 3 , अध्याय 20 , श्लोक. 23 से 28 तक]

अर्थ___ ब्रह्मा जी ने अपनी जांघ से कामासक्त असुरों को उत्पन्न किया । वे अत्यंत कामलोलुप होने के कारण पैदा होते ही मैथुन के देव ब्रह्मा जी की ओर बढ़ चले ।23।

यह देखकर पहले तो वे हंसे, किंतु फिर उन निर्लज असुरों को अपने पीछे लगा देखकर भयभीत और क्रोधित होकर बड़े जोर से भागे ।24।

तब उन्होंने भक्तों पर कृपया करके उनकी भावना के अनुसार दर्शन देने वाले विष्णु के पास जाकर कहा। 25।

परमात्मन् मेरी रक्षा कीजिए मैंने तो आपकी आज्ञा से प्रजा की उत्पत्ति की थी, किंतु यह तो पाप में प्रवृत्त होकर मुझे ही तंग करने चली है ।26।

नाथ ! एकमात्र आप ही दुखी जीवों के दुख दूर करने वाले हैं और जो आपकी चरण शरण में नहीं आते उन्हें दुख देने वाले भी एकमात्र आप ही हैं ।27।

प्रभु तो सबके हृदय की जानने वाले हैं, उन्होंने ब्रह्मा की आतुरता को देखकर कहा, तुम अपने इस कामकलुसित शरीर को छोड़ दो ।28।

समीक्षा___ ब्रह्मा जी ने असुर पैदा किए, वह ब्रह्मा जी का सौंदर्य देखकर उनसे ही मैथुन करने को भिड़ गए ।ब्रह्मा जी भाग पड़े विष्णु के परामर्श पर उन्होंने आत्महत्या कर डाली । यह सब पौराणिक ईश्वर ब्रह्मा जी की असलियत खोलने के लिए यथेष्ट है । अपने ही पूज्य देवताओं की मजाक

Edit with WPS Office

उड़ाने वाली इन भ्रष्ट कथाओं को पुराणों में घुसेड़े रखना, मूर्खता की पराकाष्ठा है । हमारी दृष्टि में तो यह है चण्डू खाने की गप्पे हैं पर पौराणिक विपक्षी विद्वान इनको भी सत्य मानते हैं । यह उनकी बुद्धि की बलिहारी है हमारे विचार से तो यह कथा भी पौराणिक कूड़ेदान की गंदगी का एक भाग है जो पुराणों में घुसी हुई बदबू फैला रही है ।

➤ [मर्द के पेट से लड़का जन्मा]

(विष्णु पुराण अंश 4 , अध्याय 2 , श्लोक 48 से 61 तक) ।
(महाभारत वन पर्व अध्याय 126 , श्लोक 27)

दोनों प्रमाणों में यह कथा आती है और लिखा है–

अर्थ___ प्रसेनजित् से युवनाश्व पैदा हुआ ।48।

युवनाश्वनि–सनातन होने के कारण खिन्न– चित्त से मुनीश्वरों के आश्रमों में रहा करता था । उसके दुख से द्रवीभूत होकर दयालु मुनिजनों ने उसके पुत्र उत्पन्न करने के लिए यज्ञ अनुष्ठान किया ।49।

आधी रात के समय उस यज्ञ के समाप्त होने पर मुनिजन मन्त्रपूत जल का कलश वेदी में रखकर सो गए ।50।

उनके सो जाने पर प्यास से अत्यंत व्याकुल होकर राजा ने उस स्थान में प्रवेश किया और सोते होने के कारण मुनियों को उन्होंने नहीं जगाया। 51।

और उस अपरिमित माहात्म्यशाली कलश के जल को उन्होंने पी लिया ।53।

जागनें पर ऋषियों ने पूछा इस मन्त्रित जल को किसने पिया है ? ।54।

इसका पान करने पर युवनाश्व की पत्नी महा विक्रमशील पुत्र को उत्पन्न करेगी । यह सुनकर राजा ने कहा मैंने ही बिना जाने इस जल को पी लिया है ।55।

राजा युवनाश्व के उदर में गर्भ स्थित हो गया और क्रमशः बढ़ने लगा ।56।

यथा समय बालक राजा की दायी कोख फाड़कर निकल आया ।57।

किंतु इससे राजा की मृत्यु नहीं हुई ।58। उस बालक का नाम मान्धाता हुआ

Edit with WPS Office

।61।
सौ वर्ष तक युवनाश्व ने वह गर्भधारण किया तब युवनाश्व की बाई कोख फाड़कर सूर्य के समान तेजस्वी बालक मान्धाता बाहर निकला ।
समीक्षा___ इस विचित्र कथा के बारे में हम दो बात नहीं समझ सके । पानी पीने से राजा का गर्भाधान कैसे हो गया ? जबकि गर्भाशय उसके शरीर में नहीं था । दूसरे यह भी मान लिया जाए की दैवगति से गर्भ रह गया । तो प्रश्न यह है कि यदि पानी ने गर्भाधान कारक औषधि का कार्य किया तो गर्भाधान राजा युवानाश्व के शरीर में किसने व किस मार्ग से किया जिससे गर्भ स्थापित हो सका । क्योंकि गर्भधारण करने वाले के शरीर में गर्भाशय व उस तक वीर्यधान करने का मार्ग होना आवश्यक है । और फिर वह गर्भ 100 साल तक राजा के पेट में कैसे फंसा रहा ? जब प्रसव का समय आया तो मुनियों ने राजा के शरीर में नीचे से ऑपरेशन करके एक प्रसव द्वार क्यों नहीं बना दिया । जिससे प्रसव में आसानी हो जाती । एक बात और समझ नहीं आई की पानी पीने पर पेट का आहार नली में घूमता हुआ बड़ी आंत मैं पहुंचा होगा । कुछ मूत्र में निकल गया होगा । न तो गर्भ मूत्राशय में रहता और न पखाने के भंडार बड़ी आंत में रह सकता । उसमें तो सूत जैसे या लंबे कीड़े ही रह सकते हैं । जो पाखाने में पैदा होते हैं उस पाखाने के गोदाम बड़ी आंत में मानव गर्भ तो रह ही नहीं सकता । यदि बनेगा तो सड़ जावेगा उसमें गर्भ को भोजन पहुंचाने एवं जीवित रखने वाली नाल कहां से आवेगी । और फिर गर्भ कोख फाड़कर ही क्यों निकला । वह सीधा मुंह या गुदा के रास्ते से क्यों नहीं निकल आया । जैसे सनातनी सिद्धांतानुसार ब्रह्मा जी के मुख में से ब्राह्मण निकले थे या मूत्रेन्द्रिय के मार्ग में से क्यों नहीं निकल आया जैसे शुक्राचार्य शिव जी के मूत्र मार्ग में से निकल पड़े । पुराण में लिखा है कि गर्भ युवनाश्व की दाई कोख फाड़कर बाहर निकाला और महाभारतकार लिखना है बाई कोख में से निकला । इन दोनों में इतना मतभेद क्यों है ? यदि घटना सत्य थी तो वर्णन एक ही प्रकार से होना चाहिए था ।
हमारे विचार से तो यह भी पौराणिक गपोड़ा है । और सनातनी कूड़ेदान की शोभा बढ़ाने वाला है । ऐसे ही गपोडों से वर्तमान फर्जी सनातन धर्म शोभा पाता है ।

Edit with WPS Office

➤ [एक नील सेनिकों का गप्पोडा]

(भागवत पुराण स्कंद 10 , अध्याय 90 , श्लोक संख्या 41,42)

अर्थ___ मैंने सुना है कि यदुवंश के बालकों की शिक्षा देने के लिए 388.00.000 अध्यापक (आचार्य) थे ।41।

ऐसी स्थिति में महात्मा यदुवंशियों की संख्या तो बताई ही कैसे जा सकती है ? स्वयं महाराज अग्रसेन के साथ नील (1,00,00,00,00,00,000) इतनी संख्या के सैनिक रहते थे ।42।

समीक्षा___ 3 करोड़ 88 लाख मास्टर और एक नील सैनिक यदि जमीन पर लेटने को खाटें बिछाते होंगे ? तो जमीन समुद्र व पहाड़ सभी का क्षेत्रफल मिलकर सारी पृथ्वी पर भी नहीं समा सकेंगे ? कोई भी हिसाब लगा कर देख लेवे यदि पेशाब करते होंगे तो जमीन पर समुद्र बन जाते होंगे । पीने के लिए कुएं नदी तालाब समुद्र सूख जाते होंगे । भोजन तो वह पुराण बनाने वाले के घर में करते होंगे । और उसकी बीवी खाना बनाती होगी । उनको खाना परोसिने को भी अरबों खरबों नौकर रहते होंगे । जब ये सैनिक नील सैनिक थे ?तो उनके मां-बाप भाई बहन रिश्तेदार जाति बिरादरी बीवी बच्चे भी होंगे और सब मिलकर 50 नील की संख्या से क्या कम होंगे ? विचार करो । उनके लिए मकान आदि सब सनातन धर्म सभाओं के दफ्तरों में बनाए जाते होंगे या वे सब मिलकर भागवत पुराण के बनाने वालों की गंजी खोपड़ी के ऊपर निवास करते होंगे ? ऐसी चण्डूखाने की गप्पाष्टक के इस भागवत पुराण में भरी है जिन्हें देखकर हंसी आती है । इसलिए एक पुराणकार ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि___

शुक्रप्रोक्त भागवत । श्लोक संख्या 11

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व खंड 31 , अध्याय 28 , श्लोक संख्या 11)

अर्थात___ भागवत पुराण दैत्यों के गुरु कानें शुक्राचार्य ने बनाया था । दैत्य गुरु की बातें दैत्यों जैसी होनी चाहिए । भागवत पुराण की उपरोक्त गप्प उसके बनाने वाले दैत्यराज के ही गुणों के अनुरूप है, सनातनी कूड़ेदान में ऐसी ही बे सिर- पैर गप्पों भरी पड़ी है ।

Edit with WPS Office

➤ [इंद्र का सनातनी आचरण]

(ब्रह्मवैवर्त पुराण खण्ड 4, अध्याय 14, श्लोक संख्या 44 से 51 तक, कलकत्ता)

अर्थ___ राजा चन्द्र के घर में भारतवर्ष में रम्भा ने जन्म लिया ।44।
राजा ने नाना प्रकार की सजधज के साथ अपनी उस पुत्री को राजा जनमेजय के साथ ब्याह दिया ।46।
एक बार राजा ने अश्वमेध यज्ञ किया ।47।
इंद्र उसके मकान में छिपकर घोड़े के पीछे बैठ गया । यज्ञीय अश्व के सौंदर्य को देखने को वह कन्या सानंद वहां गई ।48।
वह वहां अकेली ही गई, इंद्र ने घोड़े के समीप जाकर उस सती को पकड़ कर अपने वश में कर लिया ।49।
उस देवी के मना करने पर भी सनातनी देवराज इंद्र ने उसके साथ भोग कर लिया । तब इंद्र मूर्छित को प्राप्त हो गया और दिन व रात तक नहीं जागा ।50।
उस स्त्री ने संभोग हो जाने से योग द्वारा अपना शरीर त्याग दिया तथा इंद्र भी राजा के भय पर लज्जा से स्वर्ग को चला गया ।51।

समीक्षा___ पौराणिक देवता गण अपने कुकर्म के लिए विख्यात है । इंद्र भगवान ने भी जो आचरण किया, वह भी पौराणिक शास्त्रों की दृष्टि में साक्षात सनातन धर्म के अनुकूल पौराणिक विद्वान मानते हैं । इस प्रकार के व्यभिचार की कथाओं को पुराणों में पढ़कर पौराणिक भोली जनता व्यभिचार को भी धर्म मानने लगी है । स्पष्ट है कि पुराणों ने देश में व्याभिचार के प्रसार में योग दिया है । हमारी दृष्टि में तो यह सारी कथा ही गप्पाष्टक है । यह मूर्खों की रचना है । जो पुराणों में घुसेड़ी गई है और यदि इस कथा को सत्य माना जाएगा तो यह भी पौराणिक कूड़ेदान की एक गंदगी सिद्ध होगी ।

Edit with WPS Office

➤ [ब्रह्मा की नाक में से सूअर निकलना]

(भागवत पुराण स्कंद 3 , अध्याय 13 , श्लोक 18)

अर्थ___ ब्रह्मा जी विचार कर रहे थे कि उनकी नाक में से अंगूठे के आकार का एक सूअर (का बच्चा) निकल पड़ा ।

समीक्षा___ यही सूअर का बच्चा सनातन धर्म में वराह अवतार कहा जाता है । जिसने पानी में डूबी पृथ्वी का उद्धार किया था । ब्रह्मा जी का शरीर कथा था ? भिन्न-भिन्न प्रकार के जीव जंतुओं को पैदा करने की फैक्ट्री थी? जांघ मैं से असुर पैदा किए, भृकुटी से महादेव पैदा हो पड़े तो नाक में से सूअर पैदा हो गया यदि ऐसा ही कोई जादूगर या बाजीगर आज के युग में आ जावे तो सनातनी ग्रंथकारों के इन चमत्कारों की पुष्टि हो जावे । वरना आज का मानव तो इन बातों को शेखचिल्ली की गप्प ही मानेगा ।

➤ [श्री कृष्ण की 30 करोड़ पत्नियां]

(ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण जन्म खंड उत्तरार्ध अध्याय 115, श्लोक संख्या 67,68)

अर्थ___ श्री कृष्ण की आज्ञा से 30 करोड़ गोपियों ने गोलोक से भारतवर्ष आकर जन्म लिया और यहां कृष्ण जी ने अपनी पत्नी के रूप में आनंदपूर्वक उनके साथ रमण किया ।

समीक्षा___ बहुधा कृष्ण जी की 16108 पत्नियां ही प्रसिद्ध थी पर इस पुराणकार ने तो गजब ढाह दिया है । एकदम पत्नियों की संख्या 30 करोड़ तक पहुंचा दी है । समझ में नहीं आता है कि श्री कृष्ण जी भोगेश्वर थे या योगेश्वर थे ? स्त्री भोगों का योग से सनातन धर्म में क्या संबंध है । इसे पौराणिक विद्वान कृपया स्पष्ट कर दे । 30 करोड़ (औरतें मथुरा वृंदावन या द्वारिका में) रहती व सोती बैठती कहां थी ? उस समय तो देश की जनसंख्या भी इतनी नहीं थी ? शायद पुराण बनाने वाले गप्पाष्टक की खोपड़ी में ही उनका निवास रहता होगा ?

Edit with WPS Office

इन पुराण बनाने वालों ने हमारे धर्म को इसी प्रकार की गप्पें लिख लिखकर संसार में बदनाम किया हुआ है ।

➤ [शिवजी के चार मुखं]

(महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय 141, श्लोक संख्या. 1,2,3)
अर्थ ___ शिवजी ने कहा, पूर्णकाल में ब्रह्मा ने एक सर्वोत्तम नारी की सृष्टि की थी । उन्होंने संपूर्ण रत्नों का तिल तिल भर सार उद्धत करके उस शुभ लक्षणा सुंदरी के अंगों का निर्माण किया था, इसलिए वह तिलोत्तमा नाम से प्रसिद्ध हुई ।1।
बस सुंदर दांतों वाली सुंदरी निकट से मेरी परिक्रमा करती हुई जिस दिशा की ओर गई उस उस दिशा की ओर मनोरम मुख प्रकट होता गया ।2।
तिलोत्तमा के रूप को देखने की इच्छा से योगबल से में चतुर्मुख हो गया इस प्रकार मैंने लोगों को उतमोतम योग शक्ति का दर्शन कराया ।3।
समीक्षा___ तिलोत्तमा नाम की सुंदरी स्त्री के रूप पर शिवजी इस कदर मोहित हो गए कि उनकी आंखें उस पर चिपक कर रह गई , वह उनके चारों ओर जब घूमने लगी तो अन्य देवता लोग उनकी मजाक न बनायें इसलिए उन्होंने सर घूमाकर उसे देखते रहने की बजाय अपने तीन तरफ तीन मुख और बना लिये । वह उसके सौंदर्य को तबियत भर के देखते रहे । शिवजी की उसी कामातुर अवस्था में प्रकट हुए । चार मुख की नकल बनाकर चतुर्मुखी शिवजी की मंदिरों में आज भी पूजा होती है । यह शिवजी का रहस्य जब पाठकों पर प्रकट होगा तो वे इस पर हंसे बिना न रहेंगे, अपने ही पूज्य देवताओं की मजाक उड़ाने में पौराणिक विद्वानों ने कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी है ।

➤ [विचित्र योग विज्ञान]

Edit with WPS Office

[देवी भागवत स्कंद 7, अध्याय 35]

अर्थ___ अंगूठा, घुटना , जांघ, गुदा ,लिंग, नाभि, हृदय, ग्रीवा, कंठ नाक का अग्र, भाग, भृकुटी का मध्य भाग और मुधा यह 12 स्थान शरीर में है । प्राण वायु को रोककर इन स्थानों में ध्यान करना चाहिए ।

समीक्षा___ पौराणिकों का योग भी विलक्षण प्रकार का होता है । गुदा व लिंग इंद्रियों में मन को केंद्रित करके ध्यान करने से सनातनी विद्वानों को कौन सी सिद्धि प्राप्त होगी । यह हम नहीं समझ सके हैं, साधारणतया यह तो समझा जा सकता है कि मन: शक्ति को शरीर के जिस भाग में केंद्रित किया जाएगा उस स्थान की शक्ति विकसित होगी । उस स्थान की मांसपेशियों में बल आएगा । कुछ विशेष स्थानों का विशेष प्रभाव भी होता है । जैसे___ कण्ठकूप में ध्यान करने से भुख- प्यास की निवृत्ति होती है । नाभि चक्र में ध्यान करने से अपने शरीर विज्ञान का ज्ञान होता है । कान में ध्यान करने से आकाश में व्याप्त सूक्ष्म शब्दों को ग्रहण करने की सामर्थ्य पैदा होती है, भृकुटी के मध्य में ध्यान करने से लघु मस्तिष्क में संग्रहित जन्म- जन्मान्तरों के संस्कारों का एवं भूत वर्तमान व भविष्य की बातों का प्रत्यक्ष होता है, इत्यादि । किंतु लिंग (उपस्थेंन्द्रिय) में ध्यान करने से तथा वह मन: शक्ति के केंद्रित होने से सिवाय इसके लिए विषय भोगों की प्रवृत्ति अत्यधिक हो जाए अथवा स्तंभन शक्ति बढ़ जाए । और क्या लाभ होगा ? गुदेन्द्रिय में मन को केंद्रित करने से सनातनी विद्वानों को टट्टी की दुर्गंध सुंघने में आनंद आएगा । अथवा अन्य लाभ होंगे । उन्हें वे ही जा सकेंगे, यदि कहीं इन दोनों अंगों में रक्ताभिसरण क्रिया के बढ़ जाने से अर्श के मस्सै पैदा हो गये । तो पौराणिक योगियों का जीवन ही सफल हो जावेगा । आखिर सनातनी पुराणकारों को मल व मूत्रेन्द्रित मैं ध्यान करने का स्थान लिखने की आवश्यकता ही क्यों ? अनुभव हुई । सनातनी कूड़ेदान में हर प्रकार की गंदगी के नमूने मौजूद है ।

➤ [यज्ञ व विवाह में सूअर का दान दे]

(भविष्य पुराण उत्तरार्ध पर्व अध्याय 194 , श्लोक संख्या 1 से 5 तक ।)

Edit with WPS Office

अर्थ___ हे युधिष्ठिर ! मैं वराह के दान का महात्मय बताता हूं । यह पवित्र पुण्यदायक एवं दानों से श्रेष्ठ दान है । सूअर के दान करने से महान पापों के दोष नष्ट हो जाते हैं । ऐसा सब धर्मज्ञ लोग बताते हैं । सूर्य ग्रहण पर द्वादशी के दिन , यज्ञ उत्सवों में विवाह के अवसर पर अथवा खराब स्वप्न दुखने पर सूअर का दान देना चाहिए । कुरुक्षेत्र आदि तीर्थ में गंगा आदि नदियों पर, नगरों में पवित्र आरण्य में , वनों में गोष्ठो में , देवताओं में , रथों में अथवा अपने मकानों पर पुराण की विधि से सुअर का दान पौराणिक पंडित जी को दिया करो तो उपरोक्त फल प्राप्त होंगे ।

समीक्षा___ यदि यह प्रथा चालू हो जावे और सनातनी लोग हमारे विरोधी पौराणिक विद्वानों को हर शुभ अवसर पर दान में देने लगे तो यह इन लोगों का एक सुंदर धंधा बन जाएगा । रोजाना सवेरे शाम उनको चराने के लिए डण्डा हाथ में लेकर बम्पुलिस (पब्लिक शौचालयों) पर ले जाया करेंगे वे शाम को उनका दूध पिया करेंगे । उनको महतरो की शादियों के अवसरों पर ऊंचे दामों में बेचकर यह लोग मालामाल भी बन सकेंगे । इनका भी संकट दूर हो जाएगा । उधर सूअर दान व शुकरपालक विद्वानों की दुआएं, मिलने से पौराणिक दाताओं का भी कल्याण हो जाएगा । हमारी शुभकामना है कि सनातनी बन्धु पुराणोक्त इस अवस्था पर से शीघ्र आचरण प्रारंभ करने की शक्ति पशु– नाथ शिवजी से प्राप्त करें ।

➤ [सृष्टि की विचित्र उत्पत्ति]

(महाभारत शांतिपर्व अध्याय 166 , श्लोक संख्या 17 से 20 तक)

अर्थ___ प्रचेताओं के पुत्र दक्ष ने 60 कन्याओं को जन्म दिया। उन सबको प्रजाओं की उत्पत्ति के लिए ब्रह्म ऋषियों ने पत्नी रूप में प्राप्त किया ।17। इनकी कन्याओं से समस्त प्राणी, देवता, गंधर्व, अप्सरा, नाना प्रकार के राक्षस ,पशु, पक्षी ,मत्स्य, वानर, बड़े-बड़े नाग ,जल ,स्थल में विचारने वाले सब प्रकार के पक्षिगण उद्भिज,स्वदेज,अण्डज, और जरायुज प्राणी उत्पन्न हुए । तात, इस प्रकार संपूर्ण स्थावर और जंगम उत्पन्न हुआ ।

नोट ___ इसी प्रकार का विवरण भागवत पुराण स्कंद 6 , अध्याय 6 , में

Edit with WPS Office

श्लोक संख्या 21 से 35 तक मैं दिया गया है ।

समीक्षा___ दक्ष की बेटियों के गर्भ से मनुष्य, पशु, पक्षी, जलचर ,जीव, जंतु, सांप ,बिच्छू, घास- फूस, वृक्ष, वनस्पति सभी पैदा हो गए । इससे बढ़कर बेतुकी गप्प और क्या होगी ? सांप व बिच्छू ने किसी भी औरत को गर्भ में काटा तक नहीं ? बबूल, बेरिया, सेहुण के कांटे तक गर्भाशय में नहीं छिदें । ऊंट, हाथी, घोड़े, गाय, भैंस ,कुत्ता, बिल्ली, चूहे , घघूंदर, कबूतर, तीतर, बाज आदि । सभी औरतों के गर्भाशय में से निकल पड़े । इससे बढ़िया शेखचिल्ली की गप्प क्या होगी ? पुराणकार व महाभारत में गप्पाष्टक घुसेड़ने वाला भूल गया, वरना मुसलमानों के खुदा की तरह किसी देवता से कहलवा देता कि होजा और सभी कुछ एकदम हो जाता । इसके अतिरिक्त हम गप्प न 4 व 5 मैं दिखा चुके हैं कि सृष्टि उत्पत्ति का भिन्न प्रकार । (गाय से ब्रहमा ने संभोग करके तथा स्त्रष्टा के द्वारा प्राणी अप्राणी जगत की रचना का विधान) पुराण व महाभारत में दिया है तो यह कथा उसमें विपरीत होने से स्वयं खंडित हो जाती है, हमारे विचार से तो यह सब पौराणिक कूड़ेदान की शोभा बढ़ाने वाली एवं पौराणिक धर्म को कलंकित करने वाली गंदी कहानियां मात्र है ।

➤ [सूअर को नमस्कार करो]

(महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय 126 , श्लोक संख्या 4)

अर्थ ___ जो मनुष्य बौने ब्राह्मण और पानी से निकले सूअर को नमस्कार करता है और उसकी उठाई मिट्टी कौ मस्तक पर लगाता है ऐसे लोगों का कोई अशुभ नहीं होता है ?

समीक्षा___ महाभारत में यह व्यवस्था भी उत्तम दी गई है, बौना पौराणिक पंडित और सूअर दोनों एक ही कोटि मैं रख दिए गए हैं । गाली गलौज शास्त्री सनातनी पंडित माधवाचार्य जी भी ठिगने कद के हैं, यह इनका सौभाग्य है इनके जैसे ही कद किसी पंडित ने यह श्लोक महाभारत में घुसेड दिया, प्रतीत होता है । कुछ भी हो सूअर अक्सर कीचड़ में लोटा करता है,

Edit with WPS Office

उसे देखकर पौराणिक को उसको ठीक उसी प्रकार सलाम करना चाहिए। (अथवा दंडवत प्रणाम करें) जैसे कि किसी बौने पंडित को करते हैं। सूअर के चरणों की रज को सर पर लगावे सूअर को यज्ञ व विवाह में हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वानों को प्रेम के साथ दान देवे तो दान दाता का परम कल्याण होता है। उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। इसके लिए पौराणिको को गौशाला के समान सूअरशालाएं खोलनी चाहिए, वहां पर उनके लिए कीचड़ वाले तालाब बनवाने चाहिए तथा उनके भोजन के लिए वहीं पर बम्बपुलिस (पब्लिक शौचालय) बनवाने चाहिए। उनमें विष्ठा भोजन करने के बाद दोपहर को गर्मी में तालाबों में विश्राम करके जब शाम को सूअर उनमें से बाहर निकला करें तो आरती कराकर उनको दंडवत प्रणाम भक्त लोग किया करें। तो उनकी पूजा व सेवा के लिए हमारे विपक्षी पौराणिक पंडित व पुजारी नियत होने चाहिए। यह सब इसलिए भी करना चाहिए ताकि यज्ञ–विवाह व मरने पर दान करने के लिए सूअरशालाओं से सूअर सस्ते में समय पर मिल जाया करें। आशा है देश की सनातनधर्म– सभाएं अब यह व्यवस्था अपने हाथों में ले लेगी, व हमारे विपक्षी को उनका प्रबन्ध इंस्पेक्टर बना देगी, सूकर अवतार के वंशज सूअरों से पौराणिक भक्तों व पंडितों का खूब कल्याण हो। हमारा हार्दिक आशीर्वाद है।

➤ [पौराणिक ऋषियों की मात्राएं]

(भविष्य पुराण ब्रह्मपर्व अध्याय 42 , श्लोक संख्या 22 23 24)

अर्थ___ केवट की लड़की कहारी से व्यास जी ,कपाली से पाराशर ऋषि जी, शुकी(तोती) से सुकदेव जी, उल्लू से कणाद जी, श्रंगी ऋषि की हिरणी से, वशिष्ठ मुनि रण्डी से, नाव चलाने वाली से मन्दपाल जी तथा मेंढकी से मांडव्य मुनि पैदा हुए थे।

समीक्षा___ पौराणिक ऋषि मुनियों के जन्म में रण्डी, मेंढकी, तोती, उल्लू, व हिरनी से हुए थे। यह बात विश्वास योग्य तो नहीं प्रतीत होती है। हमारे विपक्षी पौराणिक विद्वानों को चाहिए की इन उत्पतियों को परीक्षण द्वारा

Edit with WPS Office

सिद्ध करने की चेष्टा करें । वरना लोग यह समझाने पर विवश होंगे कि आजकल कोई भी पौराणिक अमोघ वीर्य नहीं है । सब ऐसे वैसे ही हैं या हीनवीर्य अथवा जनखे है, क्योंकि पुराण आदि में जो इनकी उत्पत्ति की विधियां दी है वे सुगम है । उनके अनुसार पौराणिक विद्वान सरलता से अमल करके दिखा सकते हैं ।

➤ [हनुमान जी को 16 सुंदरी लड़कियों की भेंट]

(अध्यात्मरामायण युद्धकाण्ड सर्ग 14 , श्लोक संख्या 60,61)
अर्थ ___ (राम जब 14 साल बाद वन से लौटे तो हनुमान जी को अपने आगमन की सूचना भरत को देने पहले भेजा । यह शुभ संवाद सुनकर भरत ने हनुमान जी से कहा) हे सौम्य ! इस प्रिय समाचार को सुनाने के बदले मैं तुम्हें एक लाख गौ अच्छे-अच्छे सौ गांव और समस्त आभूषणों से युक्त परम सुंदरी 16 कन्याएं देता हूं ।
समीक्षा___ तुलसीदास जी व सनातन धर्म के अनुसार यदि हनुमान जी बंदर थे तो भरत जी ने उन्हें एक लाख गाएं क्यों दी ? बंदर गायों का क्या करता । यदि दूध पीता होगा तो थन चबा जाता होगा । फिर सौ गांव भी दिए गए । क्या बंदर कोई जमीदारी करने गया था । बंदर तो सारे गांव को उजाड़ डालने वाला भयंकर जानवर होता है शहरों में सभी उससे परेशान रहते हैं इससे भी ज्यादा मजेदार बात यह है कि भरत जी ने सोलह बड़ी खूबसूरत लड़कियां जेवर पहनना कर उसे भेंट कर दी । पता नहीं बंदर ने उन लड़कियों का क्या किया होगा । किसी का दुपट्टा खींचकर फाड़ा होगा, तो किसी का रेशमी ब्लाउज व लहंगा व पेटिकोट उतार कर ले भागा होगा । बंदर को तो 2 हज़ार बंदरिया यदि भेंट दी गई होती तो वह भी खुश रहता और बंदरों का वंश भी बढ़ता । पता नहीं भरत जी की अकल कहां खो गई थी । और यदि हनुमान को बंदर न मानकर आदमी माना जावे, तो सुंदर-सुंदर 16 लड़कियां भेट में देकर भरत जी ने उसे व्यभिचार क्यों बनाया ?

Edit with WPS Office

इस विचित्र पहेली का विपक्षी पौराणिक विद्वानों को उचित समाधान पेश करना चाहिए ।

➤ [देवताओं के चरित्र का भंडाफोड़]

(देवी भागवत पुराण स्कंद 4 , अध्याय 13)
अर्थ ___ जब देवताओं के गुरु ही झूठ बोलने वाले हैं , तो राजस, तामस गुणों से युक्त मनुष्य सत्यवादी कैसे हो सकता है ? विष्णु ब्रह्मा इंद्र तथा दूसरे देवता लोग सभी काम क्रोध लोभ आदि से अभिभूत है । सारे देवता गण तथा तपोधन मुनि लोग छल करने में दक्ष है । इंद्र अग्नि चंद्रमा ब्रह्मा यह सभी पर नारियों के लंपट हैं आर्यत्व संसार में कहां है ? हे मुनि ! यह बताओ—-

उत्तर___चाहे विष्णु हो ,चाहे ब्रह्मा, इंद्र या बृहस्पति ही क्यों न हो, शरीरधारी होने से सभी विकारों से युक्त होते हैं । विष्णु भी रागी है, शिवजी भी रागी है, तथा ब्रह्मा भी रागी है, । राजन् ! रागी व्यक्ति कौन सा पाप नहीं करता है । उन सभी का देह 25 तत्वों का बना हुआ है और समय आने पर वे सभी मरते हैं ।

समीक्षा___ जब ब्रह्मा विष्णु शिव आदि सारे ही देवता छली- कपटी, रागी-मोही तथा परनारियों के लम्पट है तो फिर उनमें और राक्षसों में भिन्नता क्या रही ? साथ ही फिर यह देवता कैसे बने रहे ? इन्फो राक्षस शिरोमणि क्यों नहीं माना गया है, क्योंकि दुर्गुणों में तो ये लोग राक्षसों से भी बाज़ी मार ले गए हैं ? जब विष्णु व शिव जी इन दुर्गुणों के भण्डार हैं तो अवतार लेकर भी वे महादुराचारी क्यों नहीं रहे होंगे ? शरीरधारी होने से जब प्रत्येक मनुष्य या देवता दुर्गुणों से अभिभूत होता है तो पौराणिक परमात्मा भी शरीरधारी (साकार) होने से दुर्गुणों व दुराचारी नहीं होगा इसमें क्या प्रमाण है ? देवी भागवत की दलील यदि सत्य है तो पौराणिक देवता व शरीरधारी इनका साकार परमात्मा साक्षात् दुर्गुणों का भंडार सिद्ध है , इसे कोई काट नहीं सकता है । शरीरवान होने से पौराणिक परमात्मा व उनके विष्णु शिव आदि

Edit with WPS Office

सभी मौत का समय आने पर मरते हैं । पुराणों के अनुसार जीने मरने वाला होने से पौराणिको का कोई अनादि परमेश्वर भी नहीं रह जाता है ।

➤ [परमात्मा साकार नहीं है]

(देवी भागवत स्कंद 3 , अध्याय 6 श्लोक. 69,70)
अर्थ___ संसार में जितनी भी चीजें आंख से दिखाई देती है वे सब त्रिगुणात्मक है । तीनों गुण प्रकृति के हैं परमात्मा के नहीं । वह तो निर्गुण है वह कभी भी आंख से दिखाई नहीं दे सकता है ।
समीक्षा___ इस प्रमाण ने परमात्मा को साकार मानने वालों को झूठा सिद्ध कर दिया है । साकार न होने से परमात्मा इंद्रियों का विषय नहीं हो सकता है क्योंकि साकार वास्तु त्रिगुणात्मक होने से इंद्रियगोचर हो सकती है । साथ ही त्रिगुणात्मक प्रत्येक वस्तु नाशवान् होती है । परमात्मा त्रिगुणात्मक प्रकृति का कार्य नहीं है । अतः जो पुराण व उनके मारने वाले ईश्वर को साकार शरीर धारी एक स्थान पर रहने वाला भक्तों को दर्शन देने वाला–त्रिशूलधारी या शंख, चक्र, गदा, पघधारी बताते हैं वे सभी झूठे हैं । यह पुराण की घोषणा है इस प्रमाण से निराकारवादियों की साकारवादियों पर डिग्री हो जाती है ।

➤ [कृष्ण को संभोग का पति बनाना]

(मुंबई का छापा सटीक भागवत स्कंद 10, अध्याय 31 श्लोक संख्या 2)
अर्थ ___ गोपियों ने कहा –हे संभोग के पति कृष्ण ! तुम्हारे बिना मोल की हम दासियों को अपने नेत्रों के कटाक्ष से घायल करना क्या हमारा वध करना (कत्ल करना) नहीं है जो तुमने हमारा कर डाला है ।
समीक्षा___ श्री कृष्ण जी को गीता तो योगेश्वर बताती है और भागवत पुराण उनको संभोग का पति लिखता है । योगेश्वर भी सनातन धर्म में क्या

Edit with WPS Office

परनारी भोगेश्वर बन सकता है ? हमारी दृष्टि में तो महात्मा कृष्ण को संभोग का पति बताने वाला भागवत पुराण सनातनी कूड़ेदान में पड़ा हुआ गंदगी फैला रहा है । इस गंदे कूड़ेदान की सफाई शीघ्र होनी चाहिए । वरना हमारा धर्म इसकी गंदगी से सदैव संसार में बदनाम होता रहेगा । इस कूड़ेदान के ठेकेदार हमारे विपक्षी विद्वानों को अब अपनी इस सम्पत्ति की या तो सफाई कर डालनी चाहिए या उसमें आग लगाकर उसे नष्ट कर देना चाहिए ।।

(अग्निपुराण 236 पेज पर 110 वां अध्याय । श्लोक संख्या 3)

अर्थ ___

गंगा देवी सब पापों को दूर करने वाली तथा स्वर्ग लोक देने वाली है । गंगा के जल में जब तक हड्डी पड़ी रहती है । तब तक वह जीव स्वर्ग लोक में निवास करता है ।

(महाभारत वनपर्व अनुसार मत्स्य अवतार ब्रह्मा ने लिया था । देखो___ 53 वा श्लोक)

अर्थ___ मैं प्रजापति ब्रह्मा हूं । मुझसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु नहीं उपलब्ध होती । मैंने ही मत्स्य रूप धारण करके इस महान भय से तुम लोगों की रक्षा की है । अब मनु को चाहिए कि ये देवता, असुर और मनुष्य आदि समस्त प्रजा की, सब लोकों की ओर संपूर्ण चराचर की सृष्टि करें ।

- **पौराणिकों ने कैसे कर्म फल व्यवस्था का परिहास उड़ाते हुए मोक्ष की रेवड़ी बाटी है उसका एक उदाहरण देखिए___**

गर्ग संहिता द्वारिका खंड अध्याय 42 में सिंधु देश के शासक दीर्घबाहु की कथा आती है । दीर्घबाहु बहुत ही इधम शासक था । वह सदा वेश्यागमन करता , सहस्त्रो ब्राह्मणों की हत्या करी , दस गर्भवती स्त्रियों को मार दिया । वह कपिला गौ की भी हत्या करता था । उसको मरने के बाद नरक भेजा गया और कढ़ाई में तलने के लिए डाला गया । लेकिन कढ़ाई तुरंत शीतल

Edit with WPS Office

हो गई । क्यों ? आपको पता है ? देखो ___
वह जहां मरा था उस भूमि पर किसी से अनजाने में द्वारिका नगरी की मिट्टी गिरी हुई थी । बस उसके कारण दीर्घबाहु के सारे पाप धुल गए और सद्गति हुई ।
बताओ ! गर्भहत्या, स्त्रीहत्या , ब्रह्महत्या और गौ हत्या करने के बाद भी व्यक्ति को उसका दंड नहीं मिलता ।
इन पाखंडियों ने कर्म फल व्यवस्था का परिहास कर रखा है पंडो ने ।
इसलिए कहते हैं सत्यार्थ प्रकाश पढ़ो और पाखंड से बचों ।

(वायु पुराण अध्याय 99 , श्लोक संख्या 75 से 80 तक)
(यहां बच्चा पैदा करने का अनोखा तरीका) देखें
अर्थ___ तब बलि ने ऋषि से अनुनय विनय करके उनको प्रसन्न किया तथा रानी सुदेशना की भर्त्सना करके उसे पुनः अलंकृत करके ऋषि से प्रदान किया । तब दीर्घतमा ने सुदेशना से कहा– हे शुभे ! तुम यदि नमक मिली दधि मेरे समस्त नग्न अंग पर पैरों से लेकर मस्तक तक लगाओ तथा बिना घृणा किये अपनी जिह्वा से चाटो तब तुम्हें इच्छानुरुप पुत्र प्राप्त होगा । तब सुदेशना ने मुनि के वचन का ठीक से पालन किया तथापि उसे मुनि का मलमार्ग चाटने से घृणा हो गई तथा उसे नहीं चाटा । तब मुनि ने सुदेशना से कहा– हे शुभे ! तुम्हारा ज्येष्ठ पुत्र मलमार्गरहित उत्पन्न होगा । तब रानी ने प्रार्थना की हे महाभाग ऐसा पुत्र मत दीजिए ।

{ विष्णु पुराण. 2/6/21 , ब्रह्मपुराण. 22/20 }
बिल्ली , कुत्ता , मुर्गा , बकरा , सूअर तथा पक्षियों को पालने वाला मनुष्य नरक में गिरता है ।
समीक्षा ___ वेद के दो मंत्र हम दिखाते हैं ___ **(यजुर्वेद. 16/27)**
कुत्ते को अच्छी शिक्षा देके उपयोग में लावें , उनको सुख प्राप्त करावे ।

यजुर्वेद. 13/50___ हे राजन् जिन भेड़ आदि के रोम और त्वचा मनुष्य के

Edit with WPS Office

सुख के लिए होती है और जो ऊंट भार उठाते हुए मनुष्य को सुख देते हैं , उनको जो कोई दुष्टजन मारे , उनको संसार के दुखदायी समझों और उनको अच्छे प्रकार दण्ड दो ।

➤ [पौराणिक मतानुसार सनातन धर्म के लक्षण]

{ महाभारत आदि पर्व. 122/12-14 }
हमारे मत में धूर्तों द्वारा प्रक्षिप्त महाभारत में , इसलिए हम महाभारत का प्रमाण दिखा रहे हैं कि कैसे हमारे धर्म ग्रंथो में मिलावट हुई है । धूर्तों ने हमारे काव्यशास्त्र (धर्मशास्त्र) रामायण महाभारत को भी नहीं छोड़ा ?
महाभारत में इस प्रमाण में लिखा है ___ अर्थ ___ एक समय श्वेत केतु बैठा था । उसने देखा कि उसके पिता के सामने ही किसी ब्राह्मण ने उसकी माता का हाथ पकड़ कर अपने साथ चलने को कहा , ब्राह्मण के द्वारा माता को इस प्रकार बलपूर्वक ले जाते हुए देखकर ऋषि पुत्र श्वेत केतु अमर्ष में भरकर अत्यंत क्रोध हुआ । तब अपने पुत्र को कुपित देखकर उसका पिता उद्धालक उससे बोला -- हे पुत्र ! क्रोध मत कर , यह तो सनातन धर्म है ।

{ भविष्य प्रतिसर्गपर्व खंड 4 , अध्याय 17 , श्लोक 70-71 }
उस अत्रि मुनि ने भाव को देख कर सनातन धर्म के तीनों देवता उनकी स्त्री अनूसया के पास आकर कहने लगे , लिंग को हाथ में लेकर महादेवी , उसके रस को बढ़ाते हुए विष्णु और कामवश होकर वेद का लोप किये हुए ब्रह्मा जी -- तीनों उसके वश में होकर बैठे और बोले -- हे काम से मस्त आंखों वाली , यौवन का दान दे , नहीं तो हम तीनों यही प्राण त्याग देंगे ।

अग्नि पुराण. अध्याय ,133 , श्लोक 16 - 18
श्मशान के कोयले को कौआ या उल्लू की विष्ठा में मिक्स करें । फिर उससे कपड़े पर शत्रु का चित्र बनाओ । मंत्र मारो । यह कपड़ा युद्ध के समय जेंब में रखो । शत्रु समाप्त ।।

Edit with WPS Office

समीक्षा ___ वाह ! पुराणों के क्या गजब के नुस्खे हैं , भारत सरकार को इस मंत्र की सूचना कौन सा पंडा देगा ?

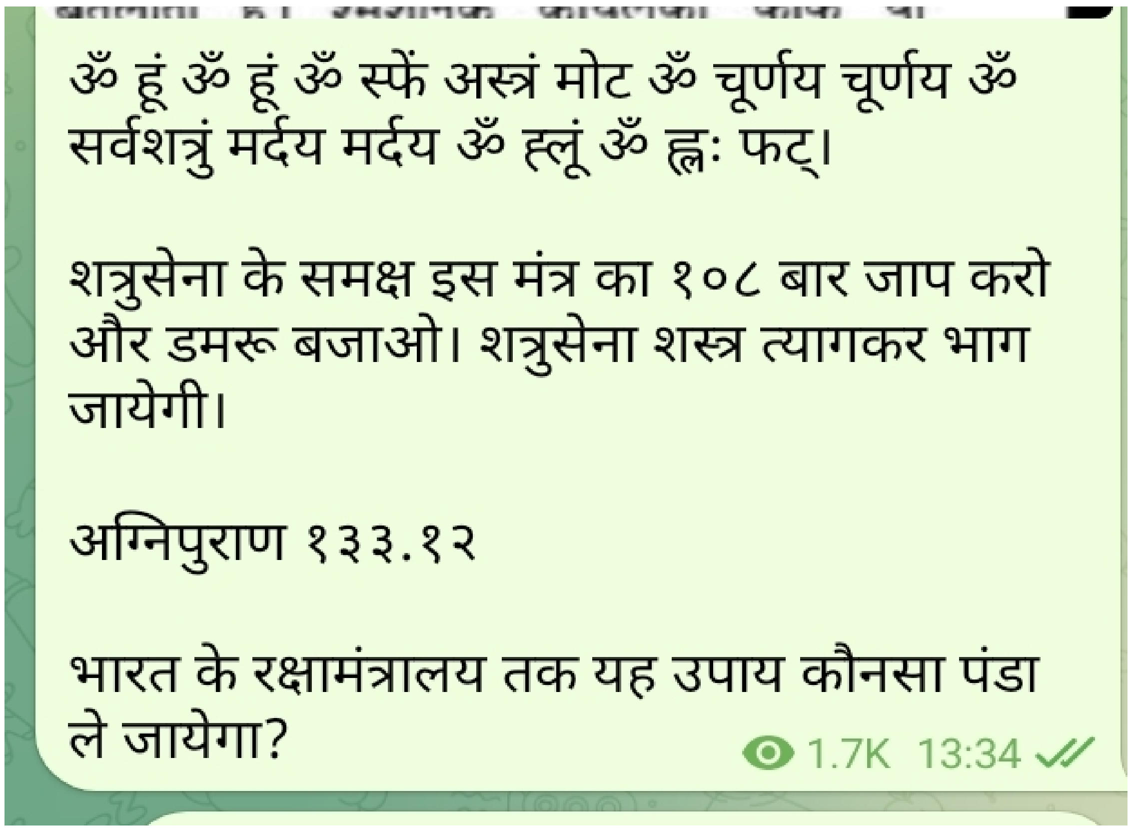

महाभारत वन पर्व के अनुसार मत्स्य अवतार विष्णु ने नहीं ? ब्रह्मा ने

Edit with WPS Office

लिया था ..?

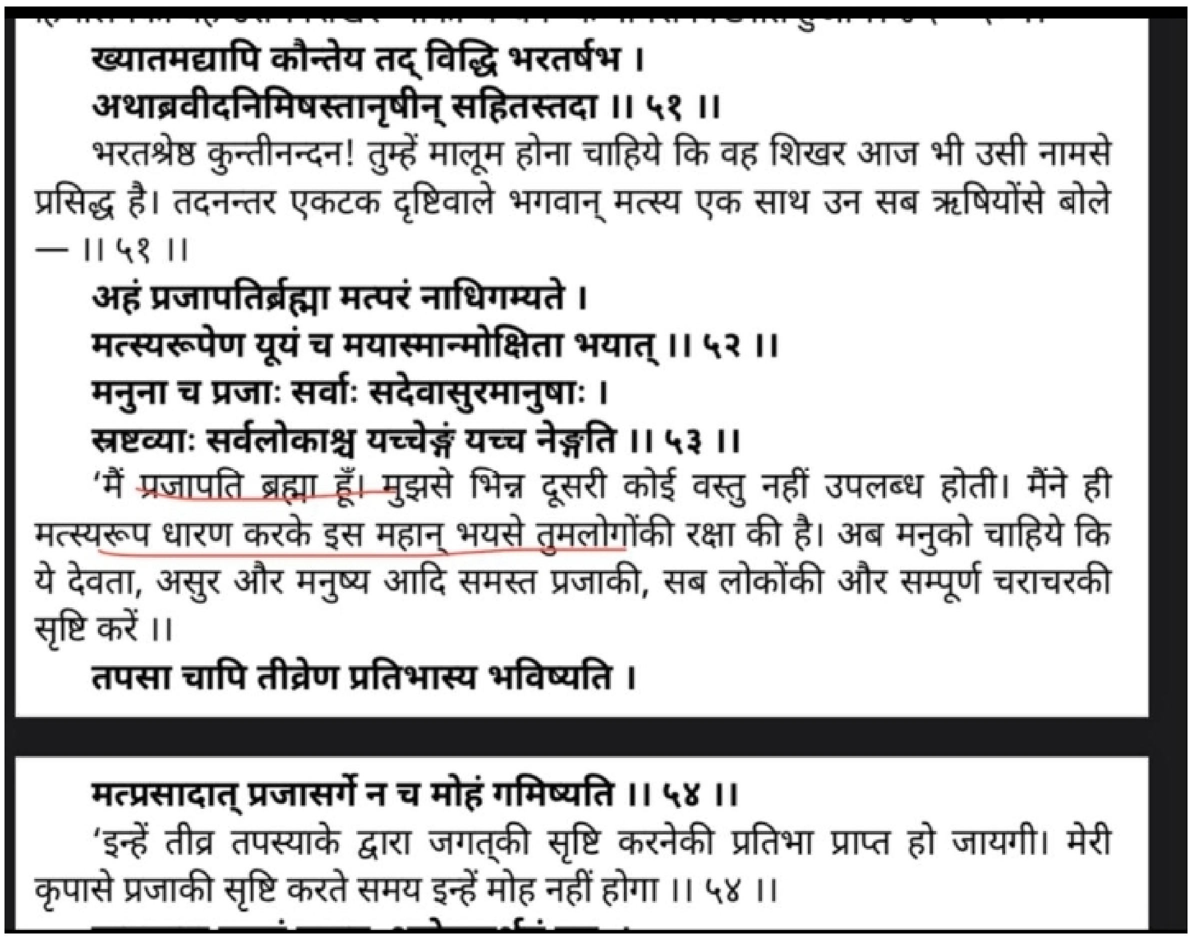

ख्यातमद्यापि कौन्तेय तद् विद्धि भरतर्षभ ।
अथाब्रवीदनिमिषस्तानृषीन् सहितस्तदा ।। ५१ ।।

भरतश्रेष्ठ कुन्तीनन्दन! तुम्हें मालूम होना चाहिये कि वह शिखर आज भी उसी नामसे प्रसिद्ध है। तदनन्तर एकटक दृष्टिवाले भगवान् मत्स्य एक साथ उन सब ऋषियोंसे बोले — ।। ५१ ।।

अहं प्रजापतिर्ब्रह्मा मत्परं नाधिगम्यते ।
मत्स्यरूपेण यूयं च मयास्मान्मोक्षिता भयात् ।। ५२ ।।
मनुना च प्रजाः सर्वाः सदेवासुरमानुषाः ।
स्रष्टव्याः सर्वलोकाश्च यच्चेङ्गं यच्च नेङ्गति ।। ५३ ।।

'मैं प्रजापति ब्रह्मा हूँ। मुझसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु नहीं उपलब्ध होती। मैंने ही मत्स्यरूप धारण करके इस महान् भयसे तुमलोगोंकी रक्षा की है। अब मनुको चाहिये कि ये देवता, असुर और मनुष्य आदि समस्त प्रजाकी, सब लोकोंकी और सम्पूर्ण चराचरकी सृष्टि करें ।।

तपसा चापि तीव्रेण प्रतिभास्य भविष्यति ।
मत्प्रसादात् प्रजासर्गे न च मोहं गमिष्यति ।। ५४ ।।

'इन्हें तीव्र तपस्याके द्वारा जगत्की सृष्टि करनेकी प्रतिभा प्राप्त हो जायगी। मेरी कृपासे प्रजाकी सृष्टि करते समय इन्हें मोह नहीं होगा ।। ५४ ।।

51 शक्तिपीठों की कहानी ___ एक पोप लीला ?

क्या भगवान शिव का विवाह सच में माता सती के साथ हुआ था ? क्या माता सती ने सच में दक्षयज्ञ में कूद कर जान दी थी ? क्या विष्णु जी ने सच में माता सती के मृत देह के 51 टुकड़े करे थे ? आखिर सच्चाई क्या है ? देखिए ___

वास्तव में यह पौराणिक पोप लीला है । इतिहास में कभी शिवजी का विवाह माता सती के साथ नहीं हुआ था । माता पार्वती जी का ही दूसरा नाम माता सती था , जिनके कहने पर भगवान शिव ने दक्ष यज्ञ नष्ट किया था ।

महाभारत के शांति पर्व अध्याय 284 , के अनुसार माता पार्वती जी इस बात से दुखी थी कि दक्ष द्वारा उनके पति भगवान शिव को आमंत्रण नहीं दिया गया था । भगवान शिव ने माता पार्वती का दुख दूर करने के लिए

Edit with WPS Office

दक्षयज्ञ को नष्ट कर दिया । उसके बाद प्रजापति दक्ष ने भगवान शिव से क्षमा मांगी और भगवान शिव ने उनका यज्ञ संपूर्ण होने दिया ।

चतुरशीत्यधिकद्विशततमोऽध्यायः

पार्वतीके रोष एवं खेदका निवारण करनेके लिये भगवान् शिवके द्वारा दक्षयज्ञका विध्वंस, दक्षद्वारा किये हुए शिवसहस्रनामस्तोत्रसे संतुष्ट होकर महादेवजीका उन्हें वरदान देना तथा इस स्तोत्रकी महिमा

भीष्म उवाच

एवमुक्त्वा तु सा देवी तदा पशुपतिं पतिम् ।
तूष्णींभूताभवद् राजन् दह्यमानेन चेतसा ।। ३० ।।

भीष्मजी कहते हैं—राजन्! अपने पति भगवान् पशुपतिसे ऐसा कहकर पार्वतीदेवी चुप हो गयीं, परंतु उनका हृदय शोकसे दग्ध हो रहा था ।। ३० ।।

अथ देव्या मतं ज्ञात्वा हृद्गतं यच्चिकीर्षितम् ।
स समाज्ञापयामास तिष्ठ त्वमिति नन्दिनम् ।। ३१ ।।

पार्वतीदेवीके मनमें क्या है और वे क्या करना चाहती हैं, इस बातको जानकर महादेवजीने नन्दीको आज्ञा दी कि तुम यहीं खड़े रहो ।। ३१ ।।

ततो योगबलं कृत्वा सर्वयोगेश्वरेश्वरः ।
तं यज्ञं स महातेजा भीमैरनुचरैस्तदा ।। ३२ ।।
सहसा घातयामास देवदेवः पिनाकधृक् ।

तदनन्तर सम्पूर्ण योगेश्वरोंके भी ईश्वर महातेजस्वी देवाधिदेव पिनाकधारी शिवने योगबलका आश्रय ले अपने भयानक सेवकोंद्वारा उस यज्ञको सहसा नष्ट करा दिया ।। ३२½ ।।

केचिन्नादानमुञ्चन्त केचिद्धासांश्च चक्रिरे ।। ३३ ।।
रुधिरेणापरे राजंस्तत्राग्निं समवाकिरन् ।

राजन्! भगवान् शिवके अनुचरोंमेंसे कोई तो जोर-जोरसे सिंहनाद करने लगे, किन्हींने अट्टहास करना आरम्भ कर दिया तथा दूसरे यज्ञाग्निको बुझानेके लिये उसपर रक्तकी वर्षा करने लगे ।। ३३½ ।।

- महाभारत की यह इस कथा से यह स्पष्ट है कि दक्ष यज्ञ में माता सती यज्ञकुंड में नहीं कूदी थी और ना उनके शरीर के 51 टुकड़े किये गये थे । यह 51 शक्तिपीठों की कथा भी गप्प है । शाक्तमत के उद्भव के बाद यह कथाएं बनाई गयी ।

महाभारत के वेदव्यास vs पुराणों के वेदव्यास

महाभारत. 13.45.23 ______ में महर्षि वेदव्यास ने स्पष्ट लिखा है कि किसी भी मनुष्य को बेचना नहीं चाहिए ? क्योंकि यह अधर्म है । देखिए

Edit with WPS Office

प्रमाण ___

यद्यप्याचरितः कैश्चिन्नैष धर्मः सनातनः ।
अन्येषामपि दृश्यन्ते लोकतः सम्प्रवृत्तयः ।। २१ ।।

यद्यपि कुछ पुरुषोंने ऐसा आचरण किया है; परंतु यह सनातन धर्म नहीं है। दूसरे लोगोंमें भी लोकाचारवश बहुत-सी प्रवृत्तियाँ देखी जाती हैं ।। २१ ।।

वश्यां कुमारीं बलतो ये तां समुपभुञ्जते ।
एते पापस्य कर्तारस्तमस्यन्धे च शेरते ।। २२ ।।

जो किसी कुमारी कन्याको बलपूर्वक अपने वशमें करके उसका उपभोग करते हैं, वे पापाचारी मनुष्य अन्धकारपूर्ण नरकमें गिरते हैं ।। २२ ।।

अन्योऽप्यथ न विक्रेयो मनुष्यः किं पुनः प्रजाः ।
अधर्ममूलैर्हि धनैस्तैर्न धर्मोऽथ कश्चन ।। २३ ।।

किसी दूसरे मनुष्यको भी नहीं बेचना चाहिये; फिर अपनी संतानको बेचनेकी तो बात ही क्या? अधर्ममूलक धनसे किया हुआ कोई भी धर्म सफल नहीं होता ।। २३ ।।

इति श्रीमहाभारते अनुशासनपर्वणि दानधर्मपर्वणि विवाहधर्मे यमगाथा नाम पञ्चचत्वारिंशोऽध्यायः ।। ४५ ।।

इस प्रकार श्रीमहाभारत अनुशासनपर्वके अन्तर्गत दानधर्मपर्वमें विवाहधर्मसम्बन्धी यमगाथानामक पैंतालीसवाँ अध्याय पूरा हुआ ।। ४५ ।।

लेकिन ब्रह्मवैवर्तपुराण (प्रकृति खण्ड/अध्याय 64/ श्लोक.92 - 95) में स्पष्ट लिखा है कि देवी दुर्गा के लिए किसी मनुष्य को खरीद के उसका बलि चढ़ाना चाहिए । अर्थात पुराण मनुष्यों के खरीद और बिक्री को बढ़ावा देता है जैसे ___ मोहम्मद साहब के इस्लाम में होता था ।

- **अब निर्णय आप ही करें कौन सा ग्रंथ ऋषि का है और कौन सा धूर्त पाखंडियों का ..?**

श्रीमद्भागवत , ब्रह्मवैवर्तपुराण आदि में श्रीकृष्ण के साथ गोपि - रति विहार का समूचा पेटर्न तांत्रिक है ।

Edit with WPS Office

(४२)

वाममार्गी साधनाएँ भ्रष्ट दिखायी पड़ती हैं किन्तु उनका आग्रह जातिवाद के विरोध पर रहा है, यह तथ्य सम्मुख आते ही हम उनका सामाजिक योगदान समझ सकते हैं।

इसके सिवाय तांत्रिकधाराओं की वाममार्गी साधना विभिन्न रूपों में दक्षिणपंथी ब्राह्मणवादी सम्प्रदायों को भी प्रभावित करती है। तांत्रिकों में वैष्णव तांत्रिक ब्राह्मण-परंपरा के अधिक निकट प्रतीत होते हैं। वैष्णवागमों में केवल ब्राह्मणों को ही दीक्षा देने का विधान है किन्तु 'भक्ति' का अधिकार जातियों को दिया गया है। यही कारण है कि यामुनाचार्य ने पांचरात्र आगमों को स्वीकार किया था। शैव और शाक्त तंत्रों में दक्षिणपंथ और वामपंथ दो मार्ग हैं। दक्षिणपंथी ब्राह्मणवाद के निकट हैं किन्तु वाममार्गी घोर क्रान्तिकारी हैं। वाममार्ग के बढ़ते हुए प्रभाव को परवर्ती पुराणों में प्रकारान्तर से स्वीकार कर लिया गया है। विशेष रूप से श्रीमद्भागवत, ब्रह्मवैवर्तपुराण आदि में 'कृष्ण' के साथ 'गोपी—रति-विहार' का समूचा 'पैटर्न' तांत्रिक है। वाममार्ग का मर्म 'रागसाधना' है, अर्थात् राग के माध्यम से परमतत्व की प्राप्ति होना चाहिए जब कि षड्दर्शनों में सर्वत्र 'रागदमन' का उपदेश दिया गया है। वाममार्गीयोग पतंजलि के योग-शास्त्र से भिन्न है, क्योंकि तांत्रिक योग 'नाड़ी योग' अथवा 'चक्र-योग' है जब कि 'योगशास्त्र' में 'चक्रसाधना' का कहीं उल्लेख नहीं मिलता अतः छठी शताब्दी के बाद 'चक्रसाधना', 'रागसाधना', मंत्रसाधना आदि का विकास ब्राह्मणवादी सम्प्रदायों के समानान्तर होता है।

इनमें तांत्रिकयोग अर्थात् चक्रसाधना तांत्रिक बौद्धों में 'यथावत्' स्वीकृत हुई है। देवताओं की मूर्ति, कवच, वस्त्र, वाहन, अस्त्र-शस्त्र आदि का ध्यान और 'युगनद्ध' शक्ति-शक्तिमान् की आराधना सभी तांत्रिक सम्प्रदायों में समान है। शक्ति-शक्तिमान् की एकता, उनके रमण-विलास, आदि का ध्यान वैष्णव परंपराओं में, प्रकारान्तर से स्वीकृत हुआ और 'राधा' की कल्पना करके, साधकों ने 'राधा-कृष्ण' के विलास का ध्यान प्रारम्भ किया फलतः सम्पूर्ण कृष्ण सम्प्रदाय का साहित्य तांत्रिक शक्ति-शक्तिमान् सिद्धान्त का ही विशिष्ट विकसित रूप है। मध्यकालीन वैष्णवों द्वारा उक्त तांत्रिक सिद्धान्त की स्वीकृति में बाधा इसलिए नहीं पड़ी कि स्वयं पांचरात्रआगमों में शक्ति-शक्तिमान् का सिद्धान्त स्वीकृत था। केवल आवश्यक 'मधुरता' का वहाँ अभाव था, उसे वाममार्गी शाक्त-शैव मतों से ग्रहण कर लिया गया है।

शक्ति शक्तिमान की एकता , उनके रमणविलास आदि का ध्यान प्रकरणान्तर से वैदिक परंपराओं में स्वीकृत हुआ और " राधा " की कल्पना करके साधकों ने राधा कृष्ण के विलास का ध्यान प्रारंभ किया ।

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य की तांत्रिक पृष्ठभूमि __ डॉ विश्वंभरनाथ उपाध्याय ।

रासलीला और राधा ___ तंत्रमार्ग से आयी है __ ना वैदिक है ना ऐतिहासिक

Edit with WPS Office

।

गोरखनाथ की गोबर से उत्पत्ति : ______

पुराणों में बहुत बातें कपोल-कल्पित और मिथ्या शास्त्रों के विरुद्ध गप्पोडें है ___ पुराण में ही लिखा है कि गोरखनाथ की उत्पत्ति गोबर से हुई है ? और हनुमान को भी नहीं छोड़ा और हनुमान पर दोष लगाया है कि हनुमान के पुत्र मकरध्वज मछली के पेट से हुआ । ऐसी मिथ्या बातें पुराणों में भर - भर कर लिखी हुई है __ तर्क और बुद्धि विज्ञान के आधार पर ये बातें खरी नहीं उतरती क्योंकि अगर मछली पानी में रहे तो बच्चा मर जाएं और मछली बाहर निकले तो मछली मर जाए । ऐसी मिथ्या बातें सृष्टि विज्ञान के विरुद्ध है ।

क्या गंगा नदी को राजा भगीरथ लाया था ? ______

गंगा नदी आदि सृष्टि से बहती आ रही है । गंगा नदी प्रकृति की देन है । जैसे पुराणों में कहा गया कि गंगा नदी को राजा भागीरथ लायें , जबकि उन्हीं पुराणों में हरिवंश पुराण मार्कंडेय पुराण भागवत पुराण आदि पुराणों में राजा भगीरथ की वंशावली दी गई है । जिसमें राजा भागीरथ राजा हरिश्चंद्र से 14 पीढ़ी बाद हुएं और राजा हरिश्चंद्र भागीरथ से 14 पीढ़ी पहले अयोध्या के राजा थे । तो राजा हरिश्चंद्र के समय जब विश्वामित्र ने राजा हरिश्चंद्र से दान में राज - पाट सब कुछ दान में ले लिया और राजा हरिश्चंद्र और उनकी पत्नी और राजा हरिश्चंद्र का पुत्र तीनों महल छोड़कर निकल पढ़े । परिस्थिति ऐसी आई कि राजा ने पत्नी और पुत्र को बेचां और फिर स्वयं को बेचा , राजा की पत्नी और पुत्र को किसी ब्राह्मण ने खरीद लिया और राजा को किसी भंगी ने खरीद लिया । भंगी ने राजा हरिश्चंद्र को शमशान घाट का कार्य दिया जिसमें मर्दों की बची हुई हड्डियों को अलग करके मिट्टी को शुद्ध बनाना होता था । तो इस समय राजा हरिश्चंद्र काशी गंगा के तट पर पहरा दे रहे हैं और गंगा नदी के पास जब राजा की पत्नी जब अपने पुत्र रोहतास को सांप डस लेता है तब राजा की पत्नी तारा कैसे

Edit with WPS Office

तैसे लाश को काशीगंगा नदी के तट पर जलाने के लिए लाई , ऐसा उन्हीं पुराणों में वर्णन हैं । और दूसरी तरफ राजा हरिश्चंद्र गंगा नदी में से एक मटका जल भर रहे थे , राजा ने पत्नी को देखा और कहा मुझे यह मटका उठवा दो । तब यहां गंगा नदी का वर्णन है ।
मैं पूछना चाहता हूं कि यह कौन सी गंगा थी । जिसका वर्णन भागीरथ की 14 पीढ़ी पहले राजा हरिश्चंद्र के समय गंगा का वर्णन है । अतः सत्य तो यही है की गंगा नदी को राजा हरिश्चंद्र ने अपने राज्य की तरफ रास्ता बनवाया होगा । जिससे गंगा की दिशा अपने राज्य की तरफ की यही सत्य है और जो ऐसा लिखा है कि राजा भगीरथ गंगा नदी को लायें थे । यह बात बिल्कुल शास्त्रों और सृष्टि के विरुद्ध है । बाद में गंगा की महिमा के लिए ऐसी कथा गढ़ी है कि भगीरथ गंगा को लाया था जो बिल्कुल मिथ्या कथा है । क्योंकि सत्य बात दो नहीं हो सकती । इन्हीं पुराणों में गंगा को भगीरथ के द्वारा लाया मानते हैं और दूसरी तरफ कुछ और है । इसलिए गंगा नदी आदि सृष्टि से अपनी जलधारा में बहती आ रही है । नदियों को कोई नहीं लाता है । नहर और रास्ते बनाए जा सकते हैं लेकिन नदियां का निर्माण और उनको लाना मनुष्य नहीं कर सकता है । यही सत्य है । वेद जो अपौरुषेय है उनमें कोई ऐसा वर्णन नहीं है कि गंगा को भगीरथ लायें थे । वेदों में आदि सृष्टि से गंगा बहती आ रही है ।

Edit with WPS Office

(८) गो मांस भक्षण के घोर पाप के समर्थक पुराण–

गोवध– ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृतिखण्ड अध्याय ५४ महाराजा स्वायम्भुव की प्रशंसा में लिखा है कि–

ब्राह्मणानां त्रिकोटिश्च भोजयामास नित्यशः।।४६।।
पञ्चलक्षगवां मांसैः सुपक्वैघृतसंस्कृतैः।।५०।।

महाराजा स्वायम्भूव पांच लाख गौओं के घृतादि द्वारा अच्छे प्रकार पकाये हुए मांस से नित्य तीन करोड़ ब्राह्मणों को भोजन कराते थे। पाठक देखें पुराणों की यह पापलीला इतना तो औरंगजेब आदि कोई भी क्रूर विधर्मी राजा भी नहीं करता था।

ब्रह्मवैवर्त पुराण प्रकृतिखण्ड अ. ६१ श्लोक ६५ से ६६ तक मण्डलेश्वर महाराजा चैत्र की प्रशंसा में लिखा है कि–

पञ्चकोटिगवां मांसं सापूपं स्वन्नमेव च।।६८।।
एतेषां च नदीराशीर्भुञ्जते ब्राह्मणा मुने।।६६।।

उनके यहाँ पांच करोड़ गौओं का मांस ब्राह्मण लोग उसके यहां खाते थे। यह बड़े शोक की बात है कि **भारतीय शास्त्रों में ऐसी बातें पढ़कर ही विदेशी अथवा देशी विद्वान् ऋषि–मुनियों के विरोधी व राष्ट्रद्रोही बनकर हमारे वैदिक ब्राह्मणों को बदनाम कर रहे हैं और उन्हें नास्तिक, धर्मद्रोही व राष्ट्र विरोधी कहकर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। अहो! मेरे अभागे भारत! तूने जहाँ विश्व को महान् ज्ञान–विज्ञान व चरित्र की शिक्षा दी, वहीं ऐसे गोहत्यादि पापों को भी विश्व में प्रचारित किया है।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

- # 9. ।। नौवा पृष्ठ ।।

महर्षि दयानंद सरस्वती जी कहते हैं पुराण बनाने वाले तू गर्भ में ही मर गया होता, तो अच्छा होता ? और आज भगवान श्री कृष्ण पर कलंक नहीं लगता। हमारे देवी देवताओं पर कलक नहीं लगता । सनातन पर संदेह नहीं लगता, धर्म नहीं बटतें। और आज सब की विचारधारा एक होती। इन्हीं पुराणों के कारण अलग-अलग संप्रदाय हो गए। पता नहीं पुराणों को छापने वाली संस्था को क्यों शर्म नहीं आती?? क्यों ऐसे गंदे पुराणों को छापती है? ना ही गंदे लेख को हटाने का प्रयास करती हैं ? हम तो इन पुराणों के ऊपर इतना ही कहना चाहते हैं।

- हे ईश्वर पुराणों को पढ़ने वाले को बुद्धि दो, उसे समझने की शक्ति दो , सत्य असत्य के निर्णय लेने की शक्ति दो।

- # [पुराणों में अंग्रेजी]

[भविष्य पुराण प्रति सर्ग खंड 1. , अध्याय 5 , श्लोक 37]
रविवार को संडे, फाल्गुन को फरवरी, तथा षष्ठ को सिक्सटी, अंग्रेजी में कहते हैं। अब बताओ मुझे जो यह कहते हैं, कि वेदव्यास के लिखे हुए पुराण है ?? क्या महाभारत के समय इंग्लिश (अंग्रेजी) थी ??

[भागवत स्कंद 12, अध्याय 33 , श्लोक 91]
अर्थात भागवत में कुल 18000 श्लोक हैं। पर गिनने पर 14180 श्लोक मिलते हैं। स्पष्ट है की भागवत में से प्राय 4000 श्लोक निकाल डाले गए। अतः वर्तमान भागवत कटा छटा होने से अधूरा ग्रंथ है। पुराणों के बारे में यह कहना कि व्यास ऋषि ने पुराणों को बनाया था। यह एक पागलपन की बात

Edit with WPS Office

है। क्योंकि स्वयं पुराण में लिखा है पुराणों को धूर्त नीच लोगों ने बनाया है। देखिए प्रमाण_____ **[देवी भागवत स्कंद पांचवा, अध्याय 11, श्लोक 12.]** अर्थात पुराण बनाने वाले अनेक चतुर् लोगों ने शिव और विष्णु की पूजा की श्रेष्ठता, अपने पेट भरने के लिए लिख मारी। इससे सिद्ध है कि पुराण बनाने वाले अनेक धूर्त लोग हैं। किसी भी एक व्यक्ति ने पुराण नहीं बनाएं।

[पुराणों की गपों में.. महाभारत के बाद भगवान रामचंद्र जी हुए]____देखिए?

भागवत पुराण में अवतारों की दो सूची लिस्ट दी है।
जिसमें यह बताया है कि कौन-कौन अवतार किस-किस क्रम में हुए हैं। दोनों की सूची एक दूसरे के सर्वथा विरुद्ध है।
पहली सूची ___[भागवत स्कंद 1 , अध्याय तीसरा, श्लोक 6 से 25 तक।] जिसमें एक कल्कि अवतार सहित कुल 22 अवतार होना माना है। इसमें एक विशेष बात यह है कि **रामचंद्र को 18वां** अवतार माना गया है और **व्यास जी को 17** वे नंबर पर माना गया। अर्थात यहां मतलब है रामचंद्र जी महाभारत के ऋषि व्यास जी के बाद में हुए। यह है भागवत पुराण की बनाने वालों की गप्पू जैसी बातें हैं। सनातनियों के कल्पित 24 अवतार भागवत नहीं मानता।
अब दूसरी सूची देखो______ भागवत स्कंध 2 , अध्याय 7, इसमें अवतार कुल 21 माने हैं। इसमें नया पशु अवतार है। हयग्रीव अवतार घुसेड़ दिया। और नाराज व मोहिनी नाम के पहली फहरिस्त के दो अवतार के नाम ना काबिल गलत मानकर निकाल दिए। इससे सिद्ध होता है की अफीम और दारू पीकर भागवतकार पुस्तक बनाने बैठा ?😂😅 उस अज्ञानी व्यक्ति को यह भी नहीं, यह भी पता नहीं रहा कि पीछे क्या लिख मारा। 😂😅 और आगे क्या लिखना है ? सारे पुराण एक दूसरे के विरोधी और गलत है। वास्तव में पुराण अति भ्रष्ट ग्रंथ है। इन वेद विरुद्ध ग्रंथों को मानने के कारण हिंदू जाति का बड़ा पतन हुआ। औरों की बात भी छोड़ दी जावे, कलयुग के पंडितों को साक्षात राक्षसों का अवतार बताया है। [ब्राह्मणों को राक्षस में नहीं कह रहा हूं , प्रमाण कह रहा है । देखिए____

Edit with WPS Office

देवी भागवत स्कंद 6 , मैं लोगों को मिलेगा ।।

पुराणों में इतनी गंदी मिथ्या बातें भरी हुई है। कि ईश्वर देवता ऋषि मुनियों किसी को नहीं छोड़ा। इन गप्पू लोगों ने, हर किसी पर दोष लगाएं। कोई नहीं बचा गप्पू पुराण बनाने वालों ने गजानन भगवान गणेश को भी नहीं छोड़ा। गणेश भी नहीं बचे, इन पौराणिक पोपो से । जिस प्रकार हमने कृष्ण के उदाहरण दिए हैं । इस प्रकार ऋषि मुनियों भगवान शिव विष्णु गणेश आदि सभी देवी देवता पर कलंक लगे हैं। इन सब का वर्णन हम आगे करेंगे ? इसलिए हम यहीं विराम देते हैं और आपकी आत्म शक्ति को जगाते हैं। की सच्चाई को जानो , हमें पुराणों का विरोध करना है गलत बातों का विरोध करना चाहिए। अनेक बातें अच्छी भी है। पर लेकिन जो बातें अच्छी नहीं है उन्हें हटाना चाहिए। और इनको बिल्कुल भी धर्म ग्रंथ नहीं मानना चाहिए ? क्योंकि इन पुराणों में एक दूसरे देवी देवताओं के विरुद्ध बातें हैं। कोई नहीं समझ पाएगा कि आखिर सच्चाई क्या है ? क्योंकि पुराण एक दूसरे के विरुद्ध पुराणों में एकता का सिद्धांत नहीं है। एक पुराण दूसरे पुराण का खंडन कर रहा है। जिन पौराणिकों ने इन पुराणों को अपना धर्म ग्रंथ माना है। जब जब इस देश की हानि हुई है। इन पुराणों के कारण क्या हानि हुई ,अगले भाग में बताएंगे।

जिस प्रकार हांण्डी में पके हुए चावलों में से एक चावल को जांच ने पर पता चलता है? की बाकी चावल पक्के हैं या नहीं?!
इसी प्रकार पुराणों के कुछ प्रमाणों से पता चल जाता है, कि यह पुराण धर्म ग्रंथ नहीं है।
इतने प्रमाण देने के बाद भी जिसकी बुद्धि के तार नहीं हिलते उसमें हमारा क्या दोष !

क्योंकि

चाणक्य पहले ही कह गए हैं, कि जिस मूर्ख में स्वयं की बुद्धि नहीं ? शास्त्र उसका क्या कर लेंगे !
अंधे को कांच क्या भला करेगा ।
उल्लू को दिन में नहीं दिखता ।

Edit with WPS Office

इसमें सूर्य का क्या दोष।______🙏🙏

{ पुराण संज्ञा किसकी ..? }

" **पुराण** " शब्द से आवाल वृद्ध सभी परिचित हैं और वह पुराण शब्द अष्टादश पुराणों एवं उप-पुराणों इन विशिष्ट ग्रंथों का ही वाचक है इस विचारधारा से भी सभी अवगत है । पर वैदिक वाड़मय के अनुसंधान से ज्ञात होता है कि पुराण शब्द किसी ग्रंथ विशेष का वाचक नहीं , अपितु " विशेषणरुप " अर्थ का कथन करने वाला है ।

वेदों में आया " पुराण " शब्द मुख्यतः सत्य सनातन परमात्मा का वाचक है " पुरा **नवं भवतीति पुराणम्** „ । **निरुक्त. 3/4/19**

अर्थात जो प्रथमत: नया हो वह पुराण । सो परमात्मा प्रत्येक सृष्टि में एक जैसा रहता है अतः उसकी पुराण संज्ञा होगी ही ।

और इसी प्रकार महाभाष्य में , **तादथर्यात् ताच्छब्धं भवति** "

महाभाष्य. 1/1/49

इस महाभाष्य के वचनानुसार उस परमात्मा की सत्ता , सामर्थ्य सृष्टि रचना आदि के बोधक ब्राह्मण ग्रंथ भी पुराण कहलायें । ये ब्रह्मादि के बनाये ऐतरेयादि ब्राह्मण ग्रंथ ही पुराण है , भागवत पुराण आदि नहीं ? इसकी पुष्टि महर्षि दयानंद ने सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास एवं एकादश समुल्लास मैं ___

ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान् गाथा नाराशंसीरिति ।।

तु० आश्व ० गृ० सू० . 3/3/1

तै० आ० . 2/9

सत्यार्थ प्रकाश तृतीय. 66

एका० . 312

इन आश्वलायन गृह सूत्र आदि के वचन से की है । महर्षि ने इस वचन का अर्थ इस प्रकार किया है ____

ऐतरेय , शतपथ , साम और गोपथ ब्राह्मण ग्रंथों के ही इतिहास , पुराण ,

Edit with WPS Office

कल्प , गाथा और नाराशंसीय ये पांच नाम है ।

- **इतिहास ____** जैसे जनक और याज्ञवल्क्य का संवाद ।
- **पुराण ____** जगत उत्पत्ति आदि का वर्णन ।
- **कल्प ____** वेद शब्दों के सामर्थ्य का वर्णन , अर्थ निरूपण करना ।
- **गाथा ____** किसी का दृष्टांत दृष्टांन्तरुप गाथा प्रसंग कहना ।
- **नाराशंसीय ____** मनुष्यों के प्रशंसनीय वा अप्रशंसनीय कर्मों का कथन करना ।

इस प्रकार परमात्मा और उसके ज्ञान आदि कर्मों का व्याख्यान करने वाले ऐतरेय आदि ब्राह्मण ग्रंथों की संज्ञा पुराण हुई । महर्षि ने स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश , आर्योंधश्यरत्नमाला , एवं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के ' वेद संज्ञा विचार ' प्रकरण में भी पुराण , कल्प , इतिहास , गाथा एवं नाराशंसी अभिधान ब्राह्मण ग्रंथों के ही बताये है । महर्षि ने ब्राह्मण ग्रंथों की पुराण संज्ञा वैदिक वाङ्मय के आधार पर ही बतलाई है , जो उपर्युक्त विवेचन से सुस्पष्ट है ।

बड़ा खेद है कि महाभारत काल के पश्चात जब मेरे देश का पतन हो गया एवं वेद - वेदागों का अध्ययन - अध्यापन प्रायः लुप्त हो गया , उस समय कुछ छली - कपटी लोगों ने 18 पुराणों एवं उपपुराणों की रचना कर डाली , जिन्हें हम वस्तुतः पुराण मान बैठे । धर्म के नाम पर उन्हें ही वांचने लगें , जिनमें भगवानों की मारपीट , अश्लीलता का कीचड़ , व्रत नियमादि का भय , अंधविश्वासों की आंधी तथा हिरण्याक्ष द्वारा पृथ्वी को चटाई के समान लपेटकर सिरहाने रख सो जाना , खंभे से नृसिंह का उत्पन्न होना इत्यादि सृष्टि विरुद्ध असंभव कपोलकल्पित गप्पें भरी पड़ी है ।

•सायणाचार्य ने भी ब्राह्मण ग्रंथों को पुराण माना है ____

इदं वा अग्रे नैव किठ्चनासीत्रधौरासीत् इत्यादिकं जगतः प्रागव _ स्थानमुपक्रम्य सर्गप्रतिपादिकं वाक्यजातं पुराणम् ।।

Edit with WPS Office

ऐतरेय ब्राह्मण सायणभूमिका पृष्ठ 4 ______

अर्थात पहले कुछ न था , धौ भी न था , इत्यादि जगत की पहले सत्ता बतलाकर तत: सृष्टि का प्रतिपादन करने वाले वाक्य ही पुराण कहाते है ।

सायणाचार्य की इन पंक्तियों से इतना तो सुस्पष्ट हो गया कि ब्राह्मण ग्रंथों के उन वाक्य समूहों की पुराण संज्ञा हैं , जिनमें सृष्टि रचना का प्रतिपादन है । पर यहां यह शंका रहती है यदि पुराणवाक्य ब्राह्मण शब्द से गृहीत हो गये , पुनः उनकी पुराण संज्ञा क्यों है ? इसका उत्तर भी सायणाचार्य देते हुए लिखते हैं ___

ऐतरेय ब्राह्मण सायणभूमिका पृष्ठ 4 , आ० 2/6

अर्थात ब्रह्मयज्ञ प्रकरण में मंत्र तथा ब्राह्मण से अतिरिक्त इतिहासादि भाग आम्नात है , जो ब्राह्मण , इतिहास , पुराण , कल्प , गाथा एवं नाराशंसी है । ऐसा मत विचारों । विप्रपरिव्राजक न्याय से ब्राह्मणादि के अवान्तर भेदो के ही इतिहास , पुराण आदि पृथक रूप से अभिधान है ।

इस प्रकार ज्ञात हो गया कि ' **पुराण** ' शब्द परमात्मा का वाचक है तथा उसके रूप को , कार्यों को बखान करने वाले ब्राह्मण ग्रंथों का ही नाम पुराण है , भागवतादि का नहीं ।

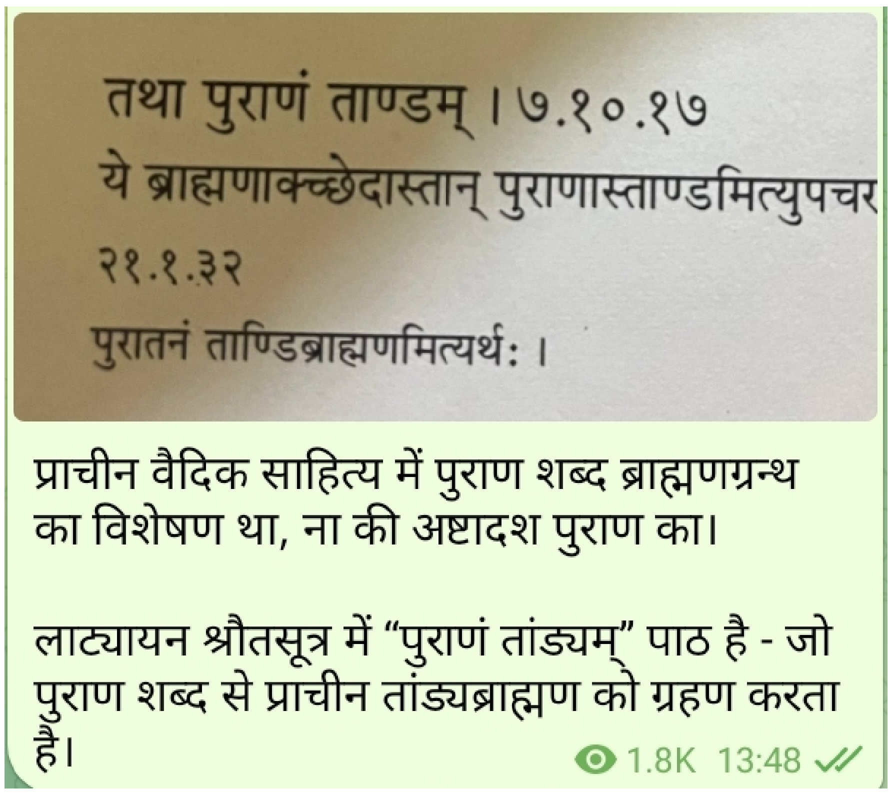
तथा पुराणं ताण्डम् । ७.१०.१७
ये ब्राह्मणाक्च्छेदास्तान् पुराणास्ताण्डमित्युपचर
२१.१.३२
पुरातनं ताण्डिब्राह्मणमित्यर्थः ।

प्राचीन वैदिक साहित्य में पुराण शब्द ब्राह्मणग्रन्थ का विशेषण था, ना की अष्टादश पुराण का।

लाट्यायन श्रौतसूत्र में "पुराणं तांड्यम्" पाठ है - जो पुराण शब्द से प्राचीन तांड्यब्राह्मण को ग्रहण करता है।

1.8K 13:48

हमारा बड़ा सौभाग्य है कि महर्षि ने भ्रमजाल फैलाने वाले पुराणों से मुक्ति दिलाकर तथा वेद विख्यात ब्राह्मण ग्रंथ ही पुराण है यह बताकर पुनः हमें वेदों से जोड़ा है । यदि उन पुराणों की मनगढ़ंत गप्पों का बखान किया जाए

Edit with WPS Office

तो संभव है पुस्तकों के देर लग जायें ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 10. ।। दसवां पृष्ठ ।।

वेद और पुराण : तुलनात्मक विश्लेषण____

भारतीय जनमानस में वेद और पुराण को हमेशा से ही एक समझा जाता है , परंतु इन दोनों के बीच कई मौलिक अंतर है । वेदों को ईश्वर का शाश्वत ज्ञान माना जाता है जबकि पुराण को मानव रचना माना जाता है , इन दोनों के बीच परमात्मा का स्वरूप , कर्मफल सिद्धांत , स्वर्ग नरक की अवधारणा , मूर्ति पूजा , और अन्य विषयों पर स्पष्ट भिन्नताएं पाई जाती है । आइए , इन प्रमुख बिंदुओं पर वेद और पुराणों के मध्य अंतर समझते हैं _____

1.___वेद ईश्वर का शाश्वत ज्ञान और पुराण : मानव निर्मित कथा

वेद _____ वेदों को ईश्वर द्वारा सृष्टि के आरंभ में मनुष्यों के कल्याण के लिए प्रदान किया हुआ ज्ञान माना जाता है । यह ज्ञान शाश्वत और सृष्टि के नियमों के अनुरूप है । वेद न केवल आध्यात्मिकज्ञान प्रदान करते हैं , बल्कि यह सृष्टि नियम , विज्ञान व तर्क पर आधारित है । वेदों की उत्पत्ति हुए अब तक 1.96,08,53,126 वर्ष हो गए हैं ।

पुराण _____ पुराण दूसरी और मानव निर्मित ग्रंथ है , जो लगभग 2500 - 3000 वर्ष पूर्व लिखे गए हैं । पुराण में कई कहानियां और किंवदंतियां है

Edit with WPS Office

जो वेदों के विपरीत , तर्क और सृष्टि के नियमों के अनुरूप नहीं है । इनमें धार्मिक और सांस्कृतिक कहानियों का विस्तार होता है , जिनका उद्देश्य भक्ति और उपदेश पर आधारित होता है , लेकिन ये वैज्ञानिक या तार्किक दृष्टिकोण से संपूर्ण नहीं माने जाते ।

2. ___ परमात्मा का स्वरूप : वेदों में निराकार , पुराणों में साकार अवतार

वेद _____ वेदों में परमात्मा को अजन्मा , सर्वव्यापक , निराकार , और अव्यक्त रूप में वर्णित किया गया है । ईश्वर का कोई रूप आकर नहीं है , वह निरंतर और सर्वत्र विद्यमान है । वेदों के अनुसार परमात्मा का मूर्त रूप में प्रतिनिधित्व संभव नहीं है । वेदों में अवतारवाद का खंडन है । वेदों के अनुसार ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

पुराण _____ पुराणों में परमात्मा को विभिन्न रूपों और अवतारों में प्रस्तुत किया गया है , जो शरीर धारण करते हैं और अधर्म का नाश करते हैं । विष्णु शिव और देवी के विभिन्न अवतारों का वर्णन पुराणों में मिलता है , जिनमें भगवान राम और कृष्ण के अवतार विशेष रूप से प्रमुख है । यह दृष्टिकोण वेदों में निरूपित निराकार परमात्मा की अवधारणा के विरुद्ध है ।

3.___ मूर्ति पूजा : वेदों में निषेध , पुराणों में अनिवार्यता

वेद _____ वेद स्पष्ट रूप से मूर्ति पूजा का निषेध करते हैं वेदों के अनुसार परमात्मा निराकार है और उसकी मूर्ति या प्रतिमा नहीं बनाई जा सकती । ईश्वर की आराधना आंतरिक साधना ,योग , प्राणायाम , और यज्ञों के माध्यम से की जाती है ।

पुराण _____ पुराण मूर्ति पूजा का समर्थन करते हैं । यहां परमात्मा के विभिन्न मूर्तियां और मंदिरों में उनकी पूजा का विधान किया गया है । पुराणों में मूर्तियों की स्थापना और पूजा को एक महत्वपूर्ण धार्मिक अनुष्ठान माना गया है । जो कि वेदों की मान्यता और सिद्धांत के विरुद्ध है ।

Edit with WPS Office

4. ___ स्वर्ग और नरक : वेदों में मानसिक अवस्थाएं , पुराणों में वास्तविक स्थान

वेद ______ वेदों के अनुसार स्वर्ग और नरक किसी विशेष स्थान का नाम नहीं है , बल्कि ये मानसिक अवस्थाएं हैं । जब व्यक्ति सुखी और संतुष्ट होता है , तो वह स्वर्ग का अनुभव करता है । और जब वह दुख और पीड़ा में होता है , तो वह नरक का अनुभव करता है । वेदों के अनुसार यह पूरी तरह से मानसिक अनुभव है , जो वर्तमान जीवन में ही होता है ।

पुराण ______ पुराणों में स्वर्ग और नरक को वास्तविक स्थान माना गया है , जहां मृत्यु के पश्चात आत्माएं अपने कर्मों के अनुसार जाती है । यहां पुष्पत्मा स्वर्ग स्थान में जाकर सुख का अनुभव करती है और पापी आत्मा नरक में दंड का भोग करती है । यह अवधारणा वेदों की मान्यता के विरुद्ध है ।

5. ___ कर्मफल सिद्धांत : वेदों में अपरिहार्य , पुराणों में प्रायश्चित से मुक्ति

वेद ______ वेदों के अनुसार , जो कर्म किया जाता है , उसका फल अवश्य मिलता है । व्यक्ति को अपने कर्मों का सुख या दु:ख स्वरूप फल भोगना ही पड़ता है , और इसे किसी भी प्रायश्चित से मिटाया नहीं जा सकता । कर्म का सिद्धांत अपरिवर्तनीय एवं शाश्वत है ।

पुराण ______ पुराणों में प्रायश्चित , हवन , कथा , पूजा पाठ , और गंगा स्नान के माध्यम से पापों से मुक्ति की बात कही गई है । पुराणों में यह मान्यता है कि धार्मिक अनुष्ठान करने से व्यक्ति अपने पापों से छुटकारा पा सकता है , और अपने बुरे कर्मों के परिणाम से बच सकता है ।

6 ___ समाज में प्रभाव : वेद और पुराण के सामाजिक परिणाम

Edit with WPS Office

वेद ______ वेदों का उद्देश्य सृष्टि के अनुरूप ज्ञान प्रदान करना और व्यक्ति को धर्म , अर्थ , काम, मोक्ष के मार्ग पर ले जाना है । वेदों के अनुसार , धर्म के आधार पर समाज में नैतिकता और अनुशासन का पालन करना आवश्यक है ।

पुराण ______ पुराणों में धर्म को अधिक लोकप्रिय और जनसाधारण के लिए सुलभ बनाने के प्रयास में कई ऐसी मान्यताएं प्रस्तुत की गई है , जो समय के साथ समाज में धार्मिक , सामाजिक , और नैतिक समस्याओं का कारण बनी । पुराणों के कारण धार्मिक , कर्मकांड , मूर्तिपूजा , अंधविश्वास , जातिवाद , भेदभाव और रुढियों का उदय हुआ , जो भारतीय समाज में कई इस समस्या का कारण बना ।

निष्कर्ष ______ वेद और पुराण स्पष्ट रूप से एक दूसरे से भिन्न है । जहां वेद ईश्वर का शाश्वत और तर्कपूर्ण ज्ञान प्रदान करते हैं वही पुराण मानव निर्मित कहानियों और अवतारों पर आधारित है । वेद निराकार और अजन्मा ईश्वर की बात करते हैं , जबकि पुराणों में ईश्वर के साकार रूपों और अवतारों पर बल दिया गया है । मूर्तिपूजा , स्वर्ग नरक की अवधारणा , और प्रायश्चित के सिद्धांत में भी दोनों ग्रंथों में स्पष्ट अंतर देखा जा सकता है । इसलिए वेद और पुराण को एक जैसा मानना उचित नहीं ..? क्योंकि दोनों की शिक्षाएं और दृष्टिकोण एक दूसरे के विपरीत है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 10. ।। दसवां पृष्ठ ।।

Edit with WPS Office

• [विस्तृत जानकारी कृष्ण चरित्र]

➤ { पुराणों के श्री कृष्ण, और महाभारत के श्री कृष्ण में अंतर }

•_____पुराणों के श्री कृष्ण_____

हाथ में मुरली लिए रहते हैं, गोपियों के साथ नाचते रहते हैं ,बहुत सारी लीलाएं करते हैं। बताने लायक नहीं है । जगह-जगह मंदिरों में आयोजन हो रहे हैं, देश में भी विदेश में भी एक बालक पीले कपड़े पहनकर के और नीचे धोती पहनकर के सिर पर मोर का पंख लगा करके मुकुट लगाकर के कोई भी कृष्ण बन जाता है। और कुछ बालक बालिका लड़कियां वो राधा वह बहुत सारी गोपिया हो जाती है। इसके विषय में बहुत सारे लोग कहते हैं कि श्री कृष्ण उस समय बालक थे। इसलिए उन्होंने लीलाएं की, कृष्ण भगवान ने गीता में कहा है,, और इसका उदाहरण भी देते हैं, अवतार के विषय में

यदा यदा धर्मस्य___इसमें कहते हैं कि भगवान कब अवतार लेता है, जब धरती पर अधर्म बढ़ जाता है। साधु की रक्षा के लिए , दुष्टो के विनाश के लिए, ऐसा तो श्री कृष्ण जी ने गीता में तो नहीं कहा? कि मैं रासलीला रचाने के लिए अवतार लेता हूं। राधा के साथ नाचनें मस्ती करने के लिए अवतार लेता हूं। ऐसा तो कुछ नहीं कहा,, अच्छा ईश्वर अवतार नहीं लेता, लेकिन जो मानते हैं, उनका लेता है। धर्म की रक्षा के लिए अधर्म के विनाश के लिए, और इन अश्लील कथाओं के विषय में मुझे याद है की श्रीमद्भागवत में एक प्रसंग आया है, राजा परीक्षित ने पूछा है, सुकदेव जी से कि भगवान श्री कृष्ण ईश्वर का अवतार थे, महापुरुष थे, तो फिर ऐसी लीलाएं क्यों कि ये पाप उन्होंने क्यों किए ? तो सुकदेव जी क्या कहते हैं , कि समर्थ को दोष नहीं होता, तुलसीदास ने भी यही लिखा, समर्थ को न दोष गोसाई, या तो

Edit with WPS Office

भागवत झूठा हो जाएगा। या फिर गीता झूठी हो जाएगी। गीता में श्री कृष्ण भगवान स्वयंम कह रहे हैं अपने मुख से क्या कहते हैं, **यदा यदा धर्मस्य__**इसका सही अर्थ, जैसे-जैसे श्रेष्ठ पुरुष आचरण करते हैं, वैसे-वैसे लोकं उनका अनुकरण करता है। और गीता में यह भी कहते हैं कि मेरे लिए तीनों लोकों में करने के लिए कोई कर्म शेष नहीं रहा है ? अर्थात में जीवन मुक्त हूं। श्री कृष्ण भगवान का स्वरुप वह था जो मोक्ष में होता है। वे शरीरधारी अवश्य है। लेकिन शरीर धारी होते हुए भी शरीर से रहित थे। जीवनमुक्त अवस्था को प्राप्त हो चुके थे। इसलिए वह कहते हैं मेरे लिए तीनों लोकों में कोई कर्म नहीं रहा करने के लिए ? मैं इसलिए कर्म करता हूं, ताकि लोग भी उसका अनुकरण करके कर्मों में रिक्त रहे।

अब कृष्ण भगवान तो कहते हैं कि मैं इसलिए कर्म करता हूं , ताकि लोग मेरा अनुकरण करें और वो सुकदेव जी बता रहे हैं, समर्थ को दोष नहीं है, हमको नहीं करना चाहिए। और कृष्ण भगवान कह रहे हैं , जैसा मैं कर रहा हूं, वैसा ही तुम करो। अर्जुन जी को क्या कहते हैं, **सर्वधर्म सर्वप्रत्यय** इसका अर्थ गीता का कोई भी अर्थ नहीं जानता, शायद कोई कोई ही जानता होगा। सब टीकाकारों ने क्या लिख रखा है? कि सब धर्मों को छोड़कर के मेरी शरण में आजा , यह गलत है ? कौन-कौन से धर्म छोड़ दे ? भगवान श्री कृष्ण तो क्षत्रिय धर्म को याद दिला रहे हैं। क्षत्रिय धर्म भी छोड़ दे इसका मतलब तो क्षत्रिय धर्म छोड़ दे, अहिंसा भी छोड़ दे, सब त्याग बलिदान भी छोड़ दे, पवित्रता भी छोड़ दे , किस-किस धर्म को छोड़ने की बात कर रहे हैं ? या मानवता छोड़ दे, वैदिक धर्म छोड़ दे ?

क्या ये धर्म नहीं है? उनके अध्ययन से पता लगता है **अधर्मामान असत** और व्याकरण से अधर्म का लोप हो गया है। तो धर्म बच गया। जितने भी टिकाकार है वह सब भ्रांति में है। भ्रांति वाले हैं, वो धर्मान शब्द से धर्म ही समझ रहे हैं। वास्तव में धर्मान शब्द से वहां अधर्मान शब्द है, अर्थात सब धर्मों को छोड़ दे और मेरी शरण में आजा, और मैं जैसा कहूं , वैसा कर, कृष्ण भगवान गीता में कह रहे हैं कि मैं जो कहूं, वैसा कर मैं जैसा कहूं वैसा कर, और भागवत के सुकदेव जी कह रहे हैं ,ना नहीं , कृष्ण भगवान वो कर सकते हैं , हम नहीं कर सकते। दोनों में विरुद्ध बातें दोनों में लीलाएं अलग अब बताएं की भागवत सही है या गीता सही है??

Edit with WPS Office

बड़ा आदमी यह कहे कि मैं तो चोरी करूं और बाप कहें मैं तो चोरी करूं तू मत करना। मैं तो दारु पियु , तू मत पीना। आप अच्छा है ,कि बुरा?
अब हम पहले भागवत की परीक्षा करते हैं, की भागवत क्या है? श्रीमद् भागवत में भले ही उसमें गलत बातें हैं लेकिन बहुत अच्छा ग्रंथ भी है। भागवत पुराण किसने लिखा? क्या प्रमाण है! लोग क्या मानते हैं, कि भागवत पुराण महर्षि वेदव्यास ने लिखा? **लेकिन ब्रह्म पुराण में यह लिखा है कि सभी पुराण वेदों से पहले ब्रह्मा जी ने लिखे?** अब कौन सी बात को मानोगे पौराणिक लोगों, जो पुराणों को व्यास के लिखे हुए मानता है। अब तो यहां दो बात हो गई। एक तरफ तो कह रहे हैं 18पुराण सत्यवदी के पुत्र वेदव्यास ने लिखे। और एक पुराण कह रहा है 18 पुराण वेदों से भी पहले ब्रह्मा जी ने लिखे।? अब कौन सी बात को सही मानोगे पुराणों को मानने वालों? **और भविष्य पुराण में एक-एक पुराण का एक-एक ऋषि बताया।** इसने यह पुराण रचा इसने यह रचा। अब देख लो इन पुराणों की एकमत एकता ही नहीं है। कोई पुराण क्या कह रहा है कोई क्या ? इसका मतलब यह हुआ कोई पता नहीं , इन पुराणों को किसने बनाया ? भागवत के बारे में क्या लिखते हैं कि सुकदेव ने राजा परीक्षित को कथा सुनाई, **अब महाभारत के शांति पर्व में मोक्ष पर्व है और उसमें 333 वा अध्याय है** उसमें लिखा है कि जब भीष्म पितामह बाणों की सैईया पर लेते हुए थे, तो सुकदेव जी की कहानी सुना रहे हैं पांडवों को युधिष्ठिर को, जब पितामह भीष्म को 52 दिन हो गए थे सैया पर पड़े हुए को तब अंतिम समय पर सुन रहे हैं। पितामह भीष्म जी ने कहा है,, सुकदेव जी अपनी इच्छा से मृत्यु को प्राप्त हुए। और योग्स्त होकर के पूर्ण गमन करके पूर्ण लोको को चले गए। और फिर कभी न लौटे, इसका अर्थ यह हुआ कि जब यह कहानी सुनाई जा रही है , उस समय सुकदेव इस धरती पर नहीं थे, पहले ही चले गए। मोक्ष को चले गए ,महर्षि सुकदेव जी साधारण व्यक्ति नहीं थे? जन्म से ही विद्वान ऋषि जैसे पैदा हुए। महाभारत में दो ही व्यक्ति ऐसे थे , जो विद्वान ही पैदा हुए, ऐसे आर्य समाज के विद्वान पंडित भगवत जी का कहना है __ वह कौन कौन है ? एक भगवान श्री कृष्ण और दूसरे सुकदेव जी भगवान। **भगवान श्री कृष्ण 64 दिन पढ़े महर्षि सांदीपनि के आश्रम में**। इसका मतलब यह हुआ भगवान श्री कृष्ण जी विद्वान पैदा हुए , वेद वेदांग उपनिषद दर्शन

Edit with WPS Office

राजनीतिक अर्थशास्त्र सभी। अब परीक्षित कब हुए ? परीक्षित का जन्म कब हुआ? महाभारत के युद्ध के अंतिम दिन, तब परीक्षित बड़े हुए उत्तरा के गर्भ से परीक्षित पैदा हुए, जो अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु का पुत्र था। तो जब बड़े हुए, तो जो सुकदेव महाभारत से पहले ही मोक्ष को चले गए, उनकी मृत्यु हो गई थी। तो उन्होंने परीक्षित को कथा कहां से सुना दी ? कि महाभारत में तो महर्षि व्यास कह रहे हैं क्योंकि महाभारत तो वेदव्यास जी ने लिखा तो वह बता रहे हैं भीष्म जी ने ऐसा कहा,, तो इससे पता चलता है परीक्षित को किसी सुकदेव ने कथा नहीं सुनाई? जब सुकदेव की मृत्यु हो गई परीक्षित के जन्म से पहले बहुत पहले तो सुकदेव जी ने कथा कहां से सुना दी ? ??????

अब और देखो किस-किस ने भागवत कथा सुनाई और देखो स्वयंम भागवत क्या कहता है, क्या कहती है भागवत में सनक जी का सुत जी से संवाद हुआ और यह लिखा है कि परीक्षित के भागवत सुनकर के मुक्ति हो गई यह लिखा है भागवत में भागवत सुनकर मोक्ष हुआ। तो वह कौन सी भागवत थी इसका मतलब दो भागवत है,

अब आगे देखो देव ऋषि नारद जी ने भागवत में लिखा है ब्रह्मा जी ने नारद को भागवत की कथा सुनाई । यह भागवत में लिखा है । सप्ता श्रवण की विधि उन्हें सनकादि ने बताई ? यहां सुकदेव जी का नाम नहीं है । पहले की बात है और देखिए सुकदेव जी ने सूत जी को नारद की घटना बताई इसका मतलब नारद जी पहले हुए? तो सुकदेव जी ने कथा कहां से सुनाई , ब्रह्मा जी ने नारद को पहले ही सुना दी थी?

प्रथम अध्याय के 18 वे श्लोक में भागवत में लिखा है की परीक्षित की मृत्यु हो गई भागवत सुनके। यह बात ब्रह्मा जी को बाद में मालूम पड़ी।

अब देखो कहीं है इन बातों का तालमेल पौराणिक लोगों भागवत की कथा का गान करने वालों, सच क्या है बताओ तो सही किसकी बात सही माने किसकी सही ना माने??

पहले तो सुकदेव जी सुना रहे हैं , ब्रह्मा जी ने नारद को कथा सुनाई। और यहां लिखा है 18वें श्लोक में परीक्षित की मृत्यु हो गई यह बात ब्रह्मा जी को बाद में मालूम पड़ी। तब उन्हें भागवत का महत्व पता चला। अब यहां ब्रह्मा जी राजा परीक्षित के बाद में पैदा हो गए? और सूत जी ने सनक जी से कहा

Edit with WPS Office

ब्रह्मा जी ने कहा नारद को अंतर बोधं कितना है? देखो ! इसका मतलब यह हुआ भागवत लिखने वालों को ही पता नहीं है कि यह ग्रंथ लिखा किसने है? 😂😂

हमारा मत यह है, इस विषय में सारे में की भागवत किसी एक आदमी ने नहीं लिखी ना 18 पुराण किसी एक आदमी ने लिखे जिसने भी लिखा वह विद्वान व्यक्ति था। संस्कृत का पंडित था। लेकिन वेदों का पूर्ण पंडित नहीं था। एक ने कुछ और लिख रखा है, दूसरे ने कुछ और लिख रखा है। और फिर लिखने वाले ने इनको ऐसे ही जोड़ दिया, जोड़ां और जोड़कर ग्रंथ बना दिए। यह कार्य चलता रहा वहां उस समय के लिए एक कहावत याद है अंधेल नगरी घर का बंद राजा था। जिसने ऐसे गप्पोडे लिखें। क्योंकि महाभारत के बाद सारी व्यवस्था छिन्न भिन्न थी। अब बताओ ऐसे ग्रंथ का क्या प्रमाण। और एक सुनो जब सनकादि ने नारद को भागवत की कथा सुनाई, तो वहां श्रोता (सुनने वाले) कौन-कौन थे। महर्षि भृगु, गुरु वशिष्ठ , गुरु परशुराम , जी थे। और सुनो और चारों वेद भी रूप धरके आ गए। भागवत सुनने। बताओ जी वेद भी भागवत सुनने आ गए? जो सभी पुस्तकों का सर्वश्रेष्ठ ज्ञान है। उनका अपमान उन वेदों का अपमान भागवत पुराण में है। क्या किसी को विश्वास आ रहा है, कि ऐसा ग्रंथ वेदव्यास का कैसे हो सकता है? इस भागवत पुराण में और आगे कहा,, 6 दर्शन भी रूप धरके आ गए। और धरती पर जितने भी तालाब हैं वह भी भागवत सुनने आ गए। और धरती पर जितने भी पहाड़ है वह भी भागवत सुनने आ गए। यह सब बातें इस प्रकार की बातें भागवत पुराण में लिखी है। ये सभी भागवत सुनने आ गए। और सारी दिशाएं दसों दिशाएं भी रूप धरके भागवत सुनने आ गई। सारी पृथ्वी के जितने भी नदियां हैं गंगा, जमुना ,सरस्वती सभी नदियां भागवत सुनने आ गई। यह है भागवत की सच्चाई। और इसी भागवत को सारा हिंदू समाज अंधा होकर के मान रहा है और इसमें कृष्ण भगवान को बदनाम करने के अलावा कुछ भी नहीं, कृष्ण भगवान का सही स्वरूप अगर जानना है तो महाभारत में पढ़िए और ब्रह्मवैवर्त पुराण में राधा का नाम है। भागवत में राधा का नाम नहीं है गोपियों का तो है खूब लीलाएं की लेकिन राधा का नाम नहीं है भागवत पुराण में।

Edit with WPS Office

- राधे कृष्ण पर कोर्ट ने एक बयान दिया था, रिलेशन पर कोर्ट ने कहा,, जब हमारे भगवान प्यार कर सकते हैं, तो इन युवाओं को सजा क्यों? कोर्ट के इस बयान पर कोई भी धर्माचार्य बोल न सका। क्योंकि इन लोगों इन पाखंडियों को तो राधे राधे करना है। वृंदावन में श्री कृष्ण जी का नाम किसी भी दीवार में नहीं मिलेगा, और राधे का नाम मिलेगा सब जगह-जगह राधे राधे और इस राधा के कारण लाइव रिलेशन जैसा कानून बनाया गया।

ये पाखंडी कथावाचक राधे-राधे करने वाले जो राधे-राधे करते हैं, ये कथावाचक अपनी बहन बेटियों को राधे नहीं बनाएंगे, लेकिन राधे-राधे करना है।

और इस भारत देश के जज भी तो ऐसे हैं, इन दंत कथाओं के आधार पर फैसला देने लगे कानून बनाने लगे तो क्या-क्या फैसला देने पड़ेंगे कोई जज फैसला देगा, चोरी करना अपराध नहीं है क्योंकि कृष्ण भगवान भी माखन चुराते थे। परनारी के साथ रहना भी पाप नहीं है? चोरी करना भी पाप नहीं है। फिर कोई जज यह कहेगा कि पहले पशुओं की बलि भी चढ़ाते थे इसलिए यह भी पाप नहीं है । और जुआ खेलने भी पाप नहीं है राजा नल और धर्मराज युधिष्ठिर भी जुआ खेले थे । जो इतने महान राजा थे ? यह भी पाप नहीं है अब कौन सा पाप बचेगा ? बताइए ! कोई भी हिंदू धर्म आचार्य टीवी सोशल मीडिया जितने भी महामंडलेश्वर शंकराचार्य और आरएसएस के लोग एक भी नहीं बोलते जब इस अश्लील कानून को लाया गया?? इस मुद्दे पर कोई भी मुंह खोलने के लिए तैयार नहीं है, कि हम राधा कृष्ण के संबंध प्रसंग को गलत मानते हैं । हिम्मत किसी की नहीं है, इस कानून को हटाने की रद्द करने की।

{ ब्रह्मवैवर्त पुराण, ब्रह्मखंड अध्याय 5 , श्लोक 25 –26 }

। इसका प्रमाण हम ऊपर लिख चुके हैं । ऊपर देख लेना।

अब आगे चलते हैं, अब आगे ब्रह्मवैवर्त पुराण में लिखा है श्री कृष्ण जी किसके अवतार थे , विष्णु जी के सब लोग यही जानते हैं। अवतार के बारे में इस पुराण में क्या लिखा है देखो__

ब्रह्मवैवर्त पुराण ब्रह्मखंड अध्याय 3, पृष्ठ तीन में लिखा है।

विष्णु जी की उत्पत्ति श्री कृष्ण जी से हुई। अब देख लो अब और आगे

Edit with WPS Office

देखो__ इसी पुराण में ब्रह्मवैवर्त पुराण के **ब्रह्मखंड, अध्याय 3, के 18** वे श्लोक में लिखा है। की कृष्ण की बाई बगल से शिवजी पैदा हुए। शिवजी भी कृष्ण से पैदा हो गए।

कोई नहीं सोचता इन मिथ्या बातों को किस प्रकार की बातें इन पुराणों में लिखी हुई है, कोई तर्क नहीं करना कोई ग्रंथ अपने आप नहीं पढना जैसा किसी ने बता दिया मान लिया । आंखों पर पट्टी बांध लेना और जैसे बता दिया वैसे मान लेते हैं।

यहां तो विष्णु और शिव जी की उत्पत्ति कृष्ण से हुई।

और भविष्य पुराण क्या कहता है इसको भी देखते हैं। यहां लिखा है ब्रह्मा जी से सब देवों की उत्पत्ति हुई।

अब बताओ किसको सही मानोगे यह सही है ,या वह सही है।

और **देवी भागवत** क्या कहती है इसको भी देखो__

{पृष्ठ 19 अध्याय 41}

यहां देवी पार्वती जी भगवान शिव से कह रही है, कि मैं तो अगले जन्म में कृष्ण बनूंगी और तुम राधा बन जाना और वैसे बने पार्वती जी कृष्ण का रूप बनकर आ गई और राधा शिव जी का रूप बनकर आ गए। तो यहां कृष्ण जी किसके अवतार हुए? विष्णु जी के या पार्वती के ? पार्वती जी के और सुनो अवतार क्यों लेता है अधर्म के विनाश के लिए धर्म की स्थापना के लिए। दुष्टों के विनाश के लिए और सज्जनों की रक्षा के लिए। मोहिनी का अवतार किसकी रक्षा के लिए लिया? भगवान शिव को भ्रष्ट करने के लिए लिया था क्या?? क्या रासलीला रचने के लिए लिया था किया? अब और इसमें शिव पुराण में क्या लिखा है, । और देवी भागवत में भृगु के श्राप के कारण से अवतार लिया था? और लिखा है कृष्ण जी का अवतार भृगु के श्राप के कारण हुआ था। ना कि अधर्म को मिटाने के लिए हुआ। भृगु ऋषि ने श्राप दिया था, विष्णु जी को अब तो अवतार लेना पड़ेगा। विष्णु को कृष्ण के रूप में?? अब बताओ कौन से पुराण की बात सही है??

- महर्षि दयानंद सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं की महाभारत में श्री कृष्ण का जीवन चरित्र अति उत्तम था। अगर यह पुराण नहीं रचे होते , तो आज कृष्ण पर जो झूठे कलंक लगे हुए हैं यह नहीं लगते। महर्षि दयानंद सरस्वती कहते हैं जन्म से लेकर मृत्यु तक श्री कृष्ण का

Edit with WPS Office

चरित्र अति उत्तम था । उन्होंने जीवन में कभी बुरा किया हो ऐसा कहीं लिखा नहीं मिलता है। अब बताओ महर्षि दयानंद सरस्वती ज्यादा भक्त थे श्री कृष्ण के जो कृष्ण का चरित्र अति उत्तम बता रहे हैं। या दूसरे पौराणिक लोग जो कृष्ण पर दोष कलंक लगते हैं। अब बताओ यह ज्यादा भक्त है कृष्ण के या महर्षि दयानंद सरस्वती?

भागवत में लिखा है भागवत कथा करने वाला कथावाचक कैसा होना चाहिए?? यहां इस बात का मतलब यह हुआ की भागवत लिखने वाला व्यक्ति तो धर्मात्मा व्यक्ति था। और लेकिन बाद में अधर्मियों ने बहुत सारी कथा जोड़ दी। भागवत लिखने वाला लिखता है। भागवत के क्या-क्या शर्त होनी चाहिए?

कथावाचक की योग्यता भागवत पुराण में।

1___कथावाचक वैराग्य होना चाहिए।

2___कथावाचक वेदों का विद्वान होना चाहिए।

3___कथावाचक धर्म कार्य करने में कुशल होना चाहिए।

4___कथावाचक धैर्यवान होना चाहिए।

5___कथावाचक निष्क्रिय होना चाहिए।

6___उसे किसी भी वस्तु की आशक्ति नहीं होनी चाहिए।

7___कथावाचक को सही उपदेश देना चाहिए मनुष्य हित की बात करनी चाहिए।

8___कथावाचक को सदा सत्य बोलना चाहिए।

9___कथावाचक को किसी भी समय किसी भी स्थिति में क्रोधित नहीं होना चाहिए।

10___कथावाचक को सदा राष्ट्रहित की बात करनी चाहिए।

- क्या ऐसा कोई कथा वाचक है?? आज के समय में लाखों रुपए की दक्षिण लेंगे। और कथा सुनाएंगे लेकिन भागवत पुराण के नियमों का पालन नहीं करेंगे खुद भागवत पुराण में यह नियम है। भागवत के कथा वाचक भागवतकार के इस नियम का पालन नहीं करता ।

Edit with WPS Office

- **अब कथा सुनने वाले की भी योग्यता लिखी है भागवत में कैसा होना चाहिए??**

1___जो भागवत की कथा सुनने वाला हो वह ब्रह्मचारी का पालन करने वाला होना चाहिए।
2___भूमि पर सोने वाला होना चाहिए। (इस समय कौन भूमि पर सो रहा है)?
3___ पत्तों पर भोजन करने वाला होना चाहिए।
4___ सुनने वाले को सत्य धारण करना चाहिए। कभी झूठ ना बोलने का संकल्प लेना चाहिए।

इन सभी बातों से लगता है भागवत लिखने वाला आदमी तो अच्छा था। लेकिन बाद में खिचड़ी बनी। खिचड़ी कैसे ? जो आया दाल चावल डालता गया अब इसमें आधी कच्ची आधी पक्की , किसी ने दाल चावल की जगह कंकड़ पत्थर भी डाल दिए। किसी ने विष भी डाल दिया। ऐसी स्थिति है भागवत पुराण की।

- **{ महाभारत के श्री कृष्ण का चरित्र } (योगेश्वर श्रीकृष्ण)**

अब कृष्ण भगवान का चरित्र महाभारत में देखो? उनका चरित्र कैसा था महाभारत में।
राजसूय यज्ञ हुआ, निश्चित ही जो व्यक्ति पैदा होता है, उस समय के रहने वाले लोग अधिक जानते हैं और उस स्थर के लोग अधिक जानते हैं जो उसके स्तर के हो। राजसूय यज्ञ में जब उनका सम्मान हुआ, कृष्ण भगवान का, तो शिशुपाल को बहुत बुरा लगा। और कहते हैं शिशुपाल ने भगवान श्री कृष्ण को सौ गालियां दी थी। अर्थात उनकी निन्दा की थी। लेकिन उस निंदा भरे शब्दों में कहीं भी उनको चोर नहीं बताया। कहीं भी गोपियों के साथ रास रचाने वाला नहीं बताया। कहीं भी राधा के साथ कुछ गलत करने वाला

Edit with WPS Office

नहीं बताया। झूठ बोलने वाला नहीं बताया ?
और फिर बाद में भागवत वाले पुराण वाले ब्रह्मवैवर्त पुराण वालों को कैसे पता लगा कि श्री कृष्ण जी कामी थे ? इसने मामा को मार दिया , इसने पुतना को मार दिया, यह कौन सा बलवान है। यह तो गवाला है। कोई अपशब्द नहीं कहे आरोप नहीं लगाए ?
भरी सभा में जिसका अपमान करना हो , अगर कृष्ण भगवान में इनमें से एक भी आरोप होता तो शिशुपाल नहीं कहता क्या ? भीष्म पितामह ने क्या उत्तर दिया। यही कहा था , शिशुपाल ने , यह कहीं का राजा नहीं आयु में भी बड़ा नहीं , आयु में बड़े तो इससे भी बहुत बड़े हैं। तो ऐसे ऐसे शिशुपाल ने बोला लेकिन भीष्म पितामह ने जो उनके गुण बताएं उस सभा वो कहते हैं, वेद - वेदांग विज्ञान के ज्ञाता ऐसा इस धरती पर कोई दूसरा नहीं है ! इस सभा में भूमंडल के सभी राजाओं के आगे कृष्ण को ही चुना। और सभा में जो सभी भूगोल के राजा है इस सभा में हे। यहां मुझे कोई भी ऐसा दिखाई नहीं देता जो कभी ना कभी कहीं ना कहीं इनसे पराजित न हुआ हो। इससे क्या सिद्ध हुआ , श्री कृष्ण जी विश्व के सबसे बड़े योद्धा थे। अगर भीष्म पितामह जैसा योद्धा यह कह रहा है , ऐसा इस धरती पर कोई भी राजा नहीं कभी ना कभी कहीं ना कहीं इनसे पराजित पराभूत न हुआ हो। और वेद वेदांग राजनीति में इनसे बड़ा कोई भी भूमंडल पर नहीं है। अर्थात श्री कृष्ण जी ऋषि विद्वान ब्राह्मण से भी ज्ञान में सबसे बड़े ब्राह्मण है। श्री कृष्ण जी सभी क्षत्रियों में सबसे बड़े क्षत्रिय हैं। और आगे पितामह भीष्म कहते हैं, मैंने अपने इस जीवन में बहुत लोगों की संगति की है भीष्म पितामह कह रहे हैं, मैं सबका इन सभी का पूर्ण चरित्र जानता हूं ,जितने भी सभा में बैठे हुए हैं, क्योंकि मेरी आयु सबसे अधिक है ऐसा भीष्म कह रहे हैं , मैंने इन्हीं को ऐसा सुना है जिन्होंने कभी भी अधर्म नहीं किया। महाभारत में ही कहा गया है ___

यत: सत्यं यतो धर्मो यतो ह्रीरार्जवं यत: ।
ततो भवति गोविन्दो यत: कृष्णस्ततो जय: ।।

उद्योग पर्व. 68/9

अर्थात जहां सत्य है , जहां धर्म है , जहां लज्जा है , जहां ऋजुता है वही गोविंद होता है । जहां कृष्ण है वहां जय होती है । इस प्रकार श्री कृष्ण

Edit with WPS Office

धर्म के ही प्रतिपादक थे , यह सुस्पष्ट है ।
अब देखो ऐसे महान व्यक्ति को हम ऐसे गंदे दोष लगाएं राधा के साथ यह किया यह किया? ऐसे दोष लगाने पर क्या हमें पाप नहीं लगेगा??
शिशुपाल ने दोष लगाए नहीं थे, उन्होंने निंदा की थी उसका परिणाम क्या हुआ था सुदर्शन चक्र चला दिया। आज कृष्ण भगवान आ जाए तो सबसे पहले सुदर्शन चक्र मंदिरों पर घूमेगा। मेरी ये लीलाएं हो रही है। मेरी यह दुर्दशा दुर्गति हो रही है, मंदिरों में? मेरी पत्नी रुक्मणी की जगह किसी काल्पनिक राधा का चित्र?
अगर किसी के माता-पिता को ऐसे नचाएं ,ऐसे रूप में दिखाएं, तो किसी भी सभ्य व्यक्ति का खून खौल उठेगा। कहेगा मेरे माता-पिता का ऐसा अपमान। और लेकिन कृष्ण भगवान का अपमान करने में कोई लज्जा नहीं आती, हम समझाएं तो कहते हैं यह तो हमारा खंडन कर रहे हैं। क्या हिंदू जाति ऐसे बचेगी अपने महापुरुषों का अपमान करके।
अगर अपने घर में ताले नहीं लगेंगे तो चोर चोरी करेगा। अपने घर में ताले लगाओ अर्थात यह सब निकालो गंदगी को पुराणों की गंदगी को, अपने घर का कचरा साफ करो नहीं तो दूसरे कीचड़ उछालेंगे?? कीचड़ उछालने पर दंगे करने के लिए तो तैयार हैं, कीचड़ दूर करने के लिए तैयार नहीं। कौन दूर करेगा इन पुराणों की गंदगी को?
अब कृष्ण भगवान स्वयंम क्या कहते हैं, महाभारत में एक घटना आती है की अश्वत्थामा अपने पिता के पास पढ़ते हैं। द्रोणाचार्य जी के पास। द्रोणाचार्य ने एक अस्त्र ब्रह्मशीर अस्त्र अर्जुन को दिया। अब बेटे ने भी कहा मुझे भी दो। द्रोणाचार्य ने कहा तू इसके योग्य नहीं है। (जबकि अश्वत्थामा बहुत बड़ा योद्धा था)। तू अस्त्र को छोड़ने के बाद वापस नहीं ले पाएगा? इसका कारण यह है इस अस्त्र को वहीं वापस ले सकता है, जो पूर्ण जितेंद्रिय हो। पूर्ण योगी हो। अब इसका अर्थ यह हुआ आचार्य द्रोण भी अर्जुन को महान योगी जितेंद्रिय मानते थे , उतना अपने बेटे पर विश्वास नहीं था। बेटा हट करने लगा, (एक पुत्र हट भी तो होती है,) द्रोणाचार्य ने अस्त्र दे दिया । अश्वत्थामा ने सोचा जब इसकी मुझे आवश्यकता हुई तब क्या करूंगा?? तो उसने सोचा कोई ऐसा योद्धा खोज लूं जिसके पास ऐसा प्रसिद्ध हथियार हो जो इसका बदला कर ले। तो उसे याद आया कृष्ण जी

Edit with WPS Office

का सुदर्शन अस्त्र सुविख्यात है। मैं द्वारिका चलता हूं। अश्वत्थामा जाते हैं और कृष्ण तो जानते थे अश्वत्थामा को । तो उन्होंने पहले अश्वत्थामा का स्वागत किया। और कहा गुरु पुत्र आइए। अश्वत्थामा बहुत दिनों तक रहे। एक दिन समुद्र किनारे पर दोनों घूम रहे थे तभी अश्वत्थामा बोले,? हे केशव ! आप अपना सुदर्शन चक्र मुझे दे दे। और मैं अपना ब्रह्मशिर अस्त्र आपको देता हूं। क्योंकि आप इस अस्त्र को वापस ले सकते हैं। इसका अर्थ क्या हुआ? कृष्ण भगवान जैसा योगी और जितेंद्रिय ब्रह्मचारी और कोई दूसरा नहीं था। अश्वत्थामा भी श्री कृष्ण जी को ऐसा मानते थे। महर्षि वेदव्यास जी भी ऐसा मानते थे। जिनके समय पर भगवान श्री कृष्ण पैदा हुए थे। वह सभी योद्धा ऋषि कलंकित नहीं कर रहे भगवान श्री कृष्ण को? तो भागवतकार ब्रह्मवैवर्त पुराण वाले दोषी कलंकित क्यों मानते हैं। ??
भगवान श्री कृष्ण ने कहां,, अश्वत्थामा से कि हे ब्राह्मण मेरे इस अस्त्र को मेरे प्राण प्रिय भाई बलराम जी ने भी नहीं मांगा। ये सुदर्शन चक्र मेरे पास ही रहता है। और मैं ही इसे चला सकता हूं। और मेरा पुत्र प्रद्युम्न है जो बाल रूप तेज प्राक्रम में मेरे समान है। और जिसको पैदा करने से पहले ,मैं और देवी रुक्मणी ने 12 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन किया हिमालया की चोटी पर ईश्वर की साधना की थी। उसके बाद यह पुत्र उत्पन्न हुआ है उस पुत्र ने भी इसको नहीं मांगा। ? और तुम मांग रहे हो।
अब देखो जो कृष्ण 12 साल तक समाधि लगा रहे हैं जिसने योग पद प्राप्त किया। जो इसी कारण योगी कहलाए। वो कृष्ण कैसे गोपियों के साथ रास रचाएंगे क्या ?? या राधा के साथ झूमेंगे। (कृष्ण और राधा को नचाते नचाते नचनियों का देश बन गया भारत। ऐसी बात तो पौराणिक लोगों को अच्छी लगती है, जो कालंपनिक और झूठी है, वीरों का देश नहीं रहा वीरों का देश बनेगा महाभारत के नायक श्री कृष्ण जी की पूजा करके ना कि पुराणों के कृष्ण की पूजा करके।) पर यह जो चरित्रवान जैसी बातें हैं यह किसी को अच्छी नहीं लगती। ? महाराणा प्रताप, शिवाजी, पृथ्वीराज चौहान आदि कृष्ण की पूजा करके पुराणों के कृष्ण की पूजा करके वीर नहीं बने थे। पुराणों की कहानी सुनकर नहीं बने थे। रामायण महाभारत उपनिषद दर्शन की कहानी सुनकर वीर बने थे। जीजाबाई भागवत की कथा नहीं सुनती थी? रामायण महाभारत की कथा कहानी सुनाती थी। लेकिन इन कथाओं को

Edit with WPS Office

लोग भूल गए इन वीरों की प्रेरणा को भूल गए। ?
जो कृष्ण स्वयं को शुद्ध पवित्र सत्यवादी मानते हैं उसके साथ ऐसा क्यों?
अब आगे देखो
जब राजा परीक्षित का जन्म हुआ, मरे समान पैदा हुए थे । क्योंकि अश्वत्थामा ने अस्त्र छोड़ दिया था। तो यह देखकर सब रोने लगे। तो कृष्ण भगवान ने कहा अगर मैं अर्जुन से निष्पक्ष निष्काम प्रीति की है और मैने अगर जीवन में सत्य का पालन किया है, सुबह शाम संध्या की है। तो यह पुत्र जीवित हो। और जीवित हुआ।
कृष्ण भगवान स्वयंम क्या कह रहे हैं कि मैंने कभी भी जीवन में मिथ्या भाषण नहीं किया और श्री कृष्ण के भक्त सूरदास जी के पद गाया करते हैं। मैया मोरी मैंने माखन खाया। किसने झूठा बनाया कृष्ण भगवान को झूठा पौराणिक लोगों ने बनाया हमने बनाया। कृष्ण भगवान को चोर हमने बनाया। कृष्ण भगवान को कामी हमने बनाया। और एक नाम भी रख दिया रण छोड़ मथुरा छोड़कर भाग गया। रणछोड़ का अर्थ होता है कायर। वो मैदान छोड़कर नहीं आए थे, 16 बार हराया था उन्होंने जरासंध को तो प्रजा की भलाई के लिए कितना युद्ध करेंगे। कितनी अर्थव्यवस्था का नुकसान करेंगे। इसलिए यह सोचकर दूसरे राजधानी बनाना उचित समझा। भगवान श्री कृष्ण हार कर नहीं आए थे , अगर हार कर आते तो रण छोड़ होते? लेकिन जगन्नाथ यात्रा निकलती हैं तो क्या नारे लगाते हैं, रणछोड़, माखन चोर। यह नारे लगाते हैं।
गोपाल सहस्त्रनाम के कहते हैं कृष्ण जी को चोर जार शिखा मणि। इसका मतलब क्या हुआ चोरों दुराचारियों का जार शिखा मणि , कितनी बढ़िया भक्ति कर रहे हैं ये अज्ञानी पाखंडी लोग। अपने महापुरुष को बदनाम कर रहे हैं। और आगे कह रहे हैं मटकी फोड़ रहे हैं, दही फैला रहे हैं। मक्खन फैला रहे हैं। अगर इस पर कोई विद्वान कह दे ऐसा मत करो। हमारी आस्था पर ठेस पहुंच जाती है।
ऐसा हमारा धर्म कुछ कह दे आस्था पर ठेस पहुंच रही है और धर्म हमारा पिघंल गया। ऐसा धर्म किस काम का जिस धर्म में सत्य नहीं है, अहिंसा नहीं है, कृष्ण भगवान को ही देख लो उन्होंने क्या कहा धर्म के क्या लक्षण बताएं कृष्ण भगवान ने महाभारत में धर्म के सात लक्षण बताएं।

Edit with WPS Office

महाभारत में कृष्ण जी युधिष्ठिर से कहते हैं।

आसमेधिक पर्व वैष्णव पर्व धर्म अध्याय 92 , गीता प्रेस गोरखपुर

इस अध्याय में भगवान श्री कृष्ण ने धर्म के सात लक्षण बताए हैं। सात लक्षण कौन-कौन से हैं । देखें

धर्म ही पिता है, धर्म ही माता है, धर्म ही स्वामी है, धर्म ही मित्र है, धर्म ही भाई है ,धर्म ही शखा है।

1____किसी से वेर ना करना , सबसे प्रेम करना।

2____भीतर बाहर की पवित्रता

3____क्रोध न करना

4____दयालु होना

5____इंद्रियों पर विजय प्राप्त करना

6____मन को जितना

7____सरलता होना जैसा भीतर वैसा बाहर पूर्णतया शक्ति का पालन करना।

- आज जो धर्म हो रहा है, आज का धर्म कृष्ण के धर्म से मैल नहीं खाता। आज धर्म क्या हो गया? देखो

1____मंदिर में जाना

2____अभिषेक करना

3____अगरबत्ती जलाना

4____लड्डू का भोग लगाना

5____रास रचाना

6____लीलाएं रचाना

7____लाल पीले चेहरे करना

8____नाचना गाना, मटकी फोड़ना

आप बताओ प्रिय बंधुओ क्या भगवान श्री कृष्ण ने ऐसा कोई लक्षण बताए क्या ? ऐसा धर्म बताया जैसे इस धर्म की विशेषता आज हो गई। तुम कहां ले जा रहे हो कृष्ण को? कृष्ण भगवान का तो वह स्वरूप है जो कभी जीवन में निराश नहीं हुआ। ऐसा महापुरुष जो कभी जीवन में कभी रोया नहीं। ऐसा महापुरुष जो जीवन में कभी सुख से खुशी से झूमा नहीं अर्थात

Edit with WPS Office

जो सुख में और दुख में समान रहा। ऐसा महापुरुष जिसने कभी किसी दुष्ट दुराचारी विधर्मी के आगे सर झुकाया नहीं। ऐसा महापुरुष जो किसी भी दुष्ट को कभी छोड़ा नहीं उसके घर में जाकर मारा। जरासंध को मरवाया। कंस को मारा, ऐसा महापुरुष जिसका अपना पराया कोई नहीं, ऐसी बातें यह सभी बातें महाभारत के लेखक वेदव्यास जी कहते हैं। जब आमने-सामने सेनाएं खड़ी है। तो धर्म राज युधिष्ठिर आशीर्वाद लेने के लिए जाते है। द्रोणाचार्य से कृपाचार्य से पितामह भीष्म से और मामा शल्य से। तो सभी ने एक ही बात कही।

जहां धर्म है वहां कृष्ण है, जहां कृष्ण है वहां विजय है माता कुंती से कृष्ण जी ने कहा था , जब शांति दूत बनकर गए। कुंती ने कहा तुम यहां क्यों आए हो?

तब कृष्ण ने कहा,, देखा बुआ मैं पांडवों का पक्ष इसलिए ले रहा हूं कि वह आपके पुत्र हैं, में इसलिए ले रहा हूं उनके साथ धर्म है। जहां धर्म है, वहां मैं हूं। और जहां अधर्म है, वहां मैं उसका विरोधी हूं।

जब दुर्योधन ने उनको भोजन के लिए कहा था, तो तब बहुत बड़ी निर्भरता से (मुंह पर कुछ कहते हैं, पीछे कुछ और कहते हैं।) और कृष्ण भगवान ऐसे नहीं थे उन्होंने कहा,, दुर्योधन मैं तेरा भोजन ग्रहण नहीं करूंगा दुर्योधन बोला क्यों? क्योंकि हम अन्न दो स्थितियों में ग्रहण कर सकते हैं। या तो मित्रता हो और या आपत्ति में हो। दुर्योधन तुम मेरे मित्र हो नहीं और मैं किसी आपत्ति में हूं नहीं। फिर दुर्योधन ने कहा,, मैं तो आपका शत्रु कभी नहीं रहा, तो श्री कृष्ण भगवान क्या कहते हैं,, जो पांडवों का शत्रु है वो मेरा भी शत्रु है।(तो कृष्ण भगवान कोई चापलूसी नहीं करते थे घुमा फिरा कर बात नहीं करते थे मुंह पर किसी को अच्छी लगे या बुरी मुंह पर बात करते थे उसके मुंह पर कहते थे।) तो एक ऐसा महापुरुष जो स्पष्ट कहता है, ऐसा महापुरुष जो बड़े-बड़े राजाओं को डांटता है, फटकारता है। ऐसा महापुरुष जो गृहस्थ रहकर के भी ब्रह्मचारी रहता है। ऐसा महापुरुष जो सारे भूत भविष्य को जानता है । तभी तो गीता में श्री कृष्ण भगवान ने कहा था, हे अर्जुन तेरे भी बहुत सारे जन्म हो गए हैं, मेरे भी हो गए । अब तो कृष्ण का अवतार बता रहे थे, अब कृष्ण भगवान स्वयंम कह रहे हैं मैंरे भी बहुत सारे जन्म हो चुके हैं। **(श्रीमद् गीता 2.12,,4.5।)**

Edit with WPS Office

कृष्ण भगवान कह रहे हैं, मेरे भी बहुत जन्म हो गए तेरे भी बहुत सारे जन्म हो गए अब इस बात से तो भगवान मनुष्य थे ? मनुष्य हुए । वह महापुरुष पूर्व जन्म को भी जानता है , कौन किस जन्म में क्या-क्या रहा, ऐसा सिद्ध योगी महापुरुष वह महापुरुष जो गरीब सुदामा के स्वागत के लिए दौड़ पड़ता है। जो आंसुओं से पैर धोता है। उस इतने पवित्र महापुरुष पर ऐसे लांचझर लगाओगे?? (कि वह तो राधा के साथ मस्ती करता था) कलंक लगाने से पहले उसका चरित्र तो पढ़ो उस महापुरुष योगेश्वर का चरित्र तो पढ़ो।??

राजसूय यज्ञ में भी काम क्या लिया था विद्वानों के पैर धोने का ऐसा आदर्श, ऐसा आज्ञाकारी, ऐसा नम्र, सबसे बड़ा व्यक्ति बन रहा है किसी सभा का वो ही सबके पैर धोए , ऐसा कहीं देखा है।? कोई झूठी पतले उठावें ऐसा कहीं देखा है? ऐसे महापुरुष की दुर्गति बहुत बड़ा पाप है और उसी पाप का फल है। भारत पराधीन हुआ। यही पाप चलता रहा तो भारत फिर से पराधीन होगा? **तुम जिस महापुरुष भगवान की पूजा करते हो वही गुण हमारे अंदर आ जाए जब आर्यकृष्ण जी की पूजा करके तो आर्य एकता के भाव आएंगे। जो नाचने वाले कृष्ण की पूजा करेंगे तो नाचने वाले भाव आएंगे। जो सब नाच रहे हैं, फिल्म वाले भी नाच रहे हैं ,और यह धर्म गुरु भी नचा रहे हैं। ऐसे को आध्यात्मिक कौन कहेगा ??**

तो इस पर विचार करें और इन विचारों को फैलावें कृष्ण भगवान सारे ब्रह्मांड को जानने वाले थे। अगर भीष्म पितामह जैसा महाज्ञानी यह कहता है, इनसे ज्यादा वेद वेदांग राजनीतिक में कोई दूसरा नहीं है। तो समझ लो आज का साइंस कृष्ण भगवान के सामने कुछ भी नहीं है। और उनकी हम ऐसी दुर्गति कर रहे हैं ? इसलिएअपराध से बचों दूसरों को भी बचाओ। दूसरे धर्म के लोग फिर हमारे शास्त्रों की बुराई निकाल करके हिंदू लोगों को भ्रमित करते हैं। फिर यह कथा वाचक लोग चुप्पी बना लेते हैं, मौन हो जाते हैं। फिर इन लोगों पर उत्तर नहीं बनता। ऐसी स्थिति मे आर्य समाज आगे आता है। इसलिए यह कार्य हम एक का नहीं है यह सभी हिंदू जाति का है, हम सब एकता में रहे। **अगर आप कृष्ण भगवान की पूजा करना चाहते हो। तो गीता के गायक महाभारत के नायक कृष्ण की पूजा करो। भागवत के कृष्ण की नहीं?? इन ग्रंथो का बहिष्कार होना चाहिए?** अगर सभी विद्वान

Edit with WPS Office

इनकी सभी बुराइयों को निकाल दे इन ग्रंथो की तो हम ऐसे शास्त्रों से बहुत कुछ सीख सकते हैं। लेकिन ऐसी गंदगी को निकालने का काम ये कथावाचक पाखंडी लोग नहीं करते हैं। जो गुरु बनता है वह कृष्ण जी का अवतार बन जाता है ऐसी स्थिति बना रखी है पाखंडियों ने। कोई भी इनको कथावाचकों को अवतार घोषित कर देता है। तो ऐसी सच्चाई को जानो प्रिय बंधुओ।

अगर ऐसे शास्त्रों की सफाई नहीं की गई तो फिर सेंट छिड़कने से कुछ नहीं होगा।

कोई भी कथावाचक पाखंडी श्री राम का अवतार घोषित नहीं करता अपने आप को। कृष्ण का अवतार घोषित कर लेते हैं। राम का अवतार इसलिए घोषित नहीं करता क्योंकि यहां मर्यादा में रहना पड़ेगा। इसलिए कृष्ण को कलंकित किया हुआ है। पुराण वालों ने कृष्ण जी को मर्यादाहीन बना दिया। पुराण वालों ने श्री राम पर कृपया कर दी कि उनको मर्यादाहीन किसी ने नहीं बनाया। फिर भी दो आरोप राम पर लगा ही दिए। संबुक वध , सीता वनवास।

सूर्यपाठी निराला एक कवि ने लिखा है।

महर्षि दयानंद सरस्वती को श्रद्धांजलि देते हुए।

- कवि लिखते हैं स्वामी दयानंद से बढ़कर भी कोई मनुष्य हो सकता है इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।
- **और मैं उनसे आगे कहता हूं,** कि कृष्ण भगवान से बढ़कर आत्मा में गुणों का विकास हो सकता है इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। परमात्मा के बाद जीवात्मा ही होता है। जीवात्मा अलग-अलग गुणों से युक्त होते हैं, सबसे ज्यादा गुणवान कोई जीवात्मा होगा उनका एक रूप कृष्ण भगवान ही होंगे।

ईश्वर तो नहीं पर ईश्वर का सबसे बड़ा प्रिय भक्त होगा।

- **क्या आप लोग जानते हैं महर्षि व्यास जी ने विश्व विजय किसको कहा है ??**

महर्षि व्यास जी ने कृष्ण को किस नाम की **उपाधि** से पुकारा।

- 1. एक नाम दिया था **योगेश्वर।**

Edit with WPS Office

- 2. दूसरा नाम दिया था **विश्वविजयी।**
- 3. तीसरा नाम दिया था **अच्युत।**

ये तीन विशेषण नाम दिए थे **महर्षि व्यास** जी ने भगवान श्री कृष्ण को। योगेश्वर उनका नाम योगेश्वर इसलिए पड़ा उनके जैसा योगी नहीं कोई भी।

विश्व विजय इसलिए नाम पड़ा उन्होंने कभी पराजित का मुख नहीं देखा कभी किसी से हारे नहीं सदा विजयी रहे।

अच्युत नाम इसलिए पड़ा इसका अर्थ होता है जो मर्यादा से कभी डिगने वाला ना हो।

- आज लोग झूठ की नीति को कृष्ण नीति कहते हैं एक पुस्तक भी लिखदी क्रिश्चियनिटी कृष्ण नीति।

कुछ अज्ञानी लोगों ने यह सोच लिया छलवल करना कृष्ण नीति है। जिस व्यक्ति ने कोई अधर्म नहीं किया, कभी भी अपने जीवन में अधर्म नहीं किया। उसके नाम पर ऐसी नीति। यही तो दुर्भाग्य है इस देश का अपने महापुरुषों की नीतियों में मिलावट करके उनको बदनाम करते हैं। **जो भी भगवान श्री कृष्ण ने किया वास्तव में योग दर्शन के अनुसार धर्म ही था। पूर्ण रूप से महाभारत में धर्म को दो ही व्यक्ति समझे थे। कृष्ण और विदुर।**

- **पितामह भीष्म** और **युधिष्ठिर** जैसे धर्म के प्रतीककों से धर्म का पालन करने वालों से भी भूल हुई है।

धर्म संशोधक धर्मस्थापक श्री कृष्ण की जय

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 11. ।। ग्यारहवां पृष्ठ ।।

• भूल कहा हुई..? पाखंडवाद ! दूसरे चाणक्य हरित ऋषि और आचार्य मंगलदेव । राजा दाहिर और बप्पा रावल का इतिहास ।

➤ [भूल कहां हुई ? पाखंडवाद का प्रभाव ? राजा दाहिर

• [राजा दाहिर की कथा]

भूल कहां हुई___? पाठकों हमें यह विचार करना है कि हमारे पौराणिक विद्वानों ने पुराणों को वेदों का सार बतलाया। वेदानुकूल आदेश भी दिए, सन्मार्ग की शिक्षा भी दी। जलादि तीर्थ पाषाण आदि मूर्ति पूजा का खंडन तथा पुराणों की परस्पर विशेषताएं विस्तार से मनुष्य को समझाई, फिर भूल कहां हुई? यह बहुत बड़ा प्रश्न है। इसका उल्लेख हम करेंगे____

• [भूल का कारण सस्ता सौदा]

हमारे विद्वानों के वेदानुकूल सुझाव देने के बाद भी, यंत्र तंत्र की सस्ते सामान की दुकान खोल ली, भोली भाली जनता को उधर मोड़ दिया गया। जैसे-उन पाखंडी यंत्र तंत्र के दुकानदारों ने कहा,, कि कलयुग में कीर्तन मोक्ष प्राप्ति का साधन है। अर्थात ताली बजाओ, ईश्वर को रिझाओ, ईश्वर को खिलाओ, मुक्त हो जाओ। और दूसरी बात तो देखो कि इन पुराणों में मूर्ति

Edit with WPS Office

पूजा का खंडन है। और वही उसका मंडन भी विस्तार से कर दिया। और नाना प्रकार की पूजा पद्धति का प्रावधान भी कर दिया। जहां पुराणों में देवालयादि का खंडन है, और वहीं दूसरी जगह भव्य विशाल मंदिर का निर्माण भी विदित कर दिया। ऐसा क्यों ? इसलिए कि यह जीविकोपार्जन का सरल और सस्ता माध्यम है। ये लोग परजीवी न रहकर स्वयंजीवी हो गए। इन्होंने इसके दुष्ट परिणाम का विचार नहीं किया। अंधे खटीक की भांति पूजा में लगे रहे ? धन संग्रह करते रहे और पृथ्वी में छुपाते रहे, न खाया और न खाने दिया। अंधविश्वास के ग्रर्त में ऐसे गिरे की सर्वस्व खो दिया। बस यहां भूल हुई है ?

- # [भूल का परिणाम क्या हुआ]

इस सस्ते सौदे का परिणाम यह हुआ कि हम पराधीन हो गए। हमारा विवेक समाप्त हो गया, वीरों का शौर्य चला गया। वीरप्रसूता वीरागणाओं के जौहर की धध्कती हुई ज्वाला बुझ गई। और स्वर्ग समान भव्य भारत पराधीन हो गया। **[किस कारण पराधीन हुआ पाखंडवाद अंधविश्वास के कारण।]**

- ## [अंधविश्वास]

सिन्धप्रदेश का राजा दाहिर महा शक्तिशाली, बलशाली वीरभट्ट ,शौर्यकुंज एवं प्रतापी राजा था। जिसकी वीरता से सभी भयभीत रहते थे। लेकिन अंधविश्वासी था। मूर्ख बन गया? देवल राजधानी थी। वह राजा देवी दुर्गा का बहुत बड़ा भक्त था। उसके राज्य में देवी का बहुत बड़ा विशाल मंदिर था। उसके विशाल गुंम्बद पर लहराती हुई पताका दाहिर के वीरत्व का संदेश दे रही थी। तथा फड़फड़ाती हुई पत्ताका सैनिकों में शौर्यत्व का संचार कर रहे थी। जहां यह सब कुछ हो रहा था। वह एक यह है अंधविश्वास भी साथ-साथ चल रहा था कि जिस दिन मंदिर की पताका (ध्वजा) झुक जाएंगी। उसी दिन अस्त्र-शस्त्र हत्यार डाल देंगे। युद्ध नहीं करेंगे। और मन में यह मान लेंगे ,कि हमारी देवी माता हमसे रुष्ट हो गई। (इस प्रकार राजा दाहिर ने

Edit with WPS Office

प्रतिज्ञा कर रखी थी) देवल का सौंदर्य विश्व विख्यात था। धन ऐश्वर्य की कोई कमी नहीं थी। राज्य में सभी सुखी थे। इसी कारण मोहम्मद बिन कासिम के मन में लालच आ गया। और सिंन्ध पर धावा बोल दिया। यह लुटेरा मोहम्मद बिन कासिम **712 ईस्वी** में आया था। यह लुटेरा अपने साथ **6000 लड़ाकू** डाकू लेकर आया था। अरब से भारत में चोरी, लूटपाट करने के लिए आया था। इस देश में प्रारंभ में 6000 ही मुसलमान आए थे। [और आज के समय इनकी संख्या करोड़ों में है] इस देश का पतन कैसे हुआ ? इसी पर हम चर्चा करेंगे ! कहां भूल हुई ? ज्यादा भूल तो हमारे ही देश के राजाओं से हुई। राजा दाहिर बड़े पराक्रमी राजा थे। राजा दाहिर के राज्य के अंदर दो अल्लाहफि नाम के मुसलमान शरणार्थी बनकर आए। उन दो मुसलमान के भारत आने के पीछे एक कारण था। उन्होंने जो अरब का खलीफा था, उन्होंने उसकी बात नहीं मानी? इसी कारण अरब का व खलीफा उन दोनों से नाराज हो गया। नाराज इतना हो गया कि उनको अपने देश से ही निकाल दिया। अब हमको देश से बाहर निकाल दिया? अब हम जाएं कहां ? इस प्रकार वे सोचने लगे। बहुत देर सोचने के बाद उन्होंने भारत देश में आने का निर्णय लिया। भारत जो हमेशा से शरणार्थियों की रक्षा करता आया है। और सब की धर्मशाला रहा है। दुनिया में किसी को कहीं जगह ना मिले, तो वह यही भारत में आकर मरता है। और वह दोनों शरणार्थी बनकर भारत में आए। और उन्होंने राजा दाहिर के राज्य में रहने का निश्चय लिया। और राजा दाहिर ने उन्हें शरण दे दी। न केवल शरण दी बल्कि राजा दाहिर ने उन्हें सेवा में नियुक्त भी किया। उनको नौकरी दी, उनको सम्मानित जीवन दिया। और बाद में अपना अंगरक्षक भी बना लिया। और जब यह सूचना अरब के खलीफा के पास पहुंची ? तो अरब के खलीफा ने राजा दाहिर से कहा,,? अपना (दूत राजा दाहिर के पास भेजा) मेरे देश के जो दो युवक आपके पास शरण लेकर रहते हैं। उनको वापस मुझे दे दीजिए। यह सुनकर राजा दाहिर ने उन दो युवकों को बुलाकर उनसे कहा,? तुम्हारा खलीफा तुम्हें वापस अपने देश बुलाना चाहता है। इतना सुनने के बाद उन दोनों ने राजा दाहिर के चरण पकड़ लिए। और कहां महाराज ? हमको आप पर विश्वास है, उस खलीफा पर नहीं है? हमारे वहां जाते ही हमारा कत्लेआम हो जाएगा? हमको मार दिया जाएगा। इसलिए आप ही हमको अपनी शरण

Edit with WPS Office

में रखो। आखिर राजा दाहिर बड़े उदार वाले थे। उनकी बातों की चाल को नहीं समझ पाए? और राजा दाहिर ने उनको पुत्रव्रत रखा। और जब अरब का लुटेरा मोहम्मद बिन कासिम 712 ई मैं पूरी कड़ी सुरक्षा के साथ अरब का वह लुटेरा अपनी 6000 लड़ाकू फौज के साथ इस देश को लूटने के लिए आगे बढ़ रहा था। मोहम्मद बिन कासिम की खबर सुनकर राजा दाहिर ने अपनी सेना की टुकड़ी तैयार की ? और वही पहुंच गया। जहां मोहम्मद बिन कासिम अपनी विजय पताका का उद्घोष करता आ रहा था। जब दोनों तरफ की सेना युद्ध में आमने-सामने आ गई तब यह सब देखकर राजा दाहिर ने कहा , उन दो मुसलमानों से कहा जो शरणार्थी बनकर रह रहे थे। जिनको बड़े-बड़े पद राजा दाहिर ने दिए? राजा दाहिर ने उनसे कहा, जाओ इस मोहम्मद बिन कासिम को रोको, और उनसे युद्ध करो। उन दो शरणार्थियों ने कहा, महाराज ! चिंतित होने की आवश्यकता नहीं है ? दुश्मन को देश की सीमा तक आने दो। हम उसको गाजर मूली की तरह चीर काट देंगे। आप चिंतित ना रहे? आने दो उनको। आखिर राजा दाहिर उनके विश्वास पर आ गया। और जैसे ही मोहम्मद बिन कासिम अरब सीमा से सिंध में प्रवेश करता है। जब बिल्कुल राज्य की सीमा के करीब आ जाता है। तो राजा दाहिर ने उनसे कहा? जल्दी जाओ ! रोको उसे, यह दुश्मन हमारे देश के अंदर घुसने वाला है। तो उस समय इन सारे के सारे मुसलमान लोगों ने जो कुछ मुसलमान भारत के थे, जो सिंध की सेना में कम संख्या में थे, और दो वे शरणार्थी बनकर रह रहे थे। एक बात उन्होंने राजा दाहिर से कहीं महाराज, ठीक है आपका दुश्मन है ,अरब से आ रहा है, लेकिन हम उसके सामने लड़ नहीं सकते ? राजा दाहिर बोले और उनसे पूछा क्यों ? क्या बात है? वे कहते हैं कि महाराज सामने वाला मुसलमान है, और हम भी मुसलमान हैं। एक मुसलमान दूसरे मुसलमान पर हथियार नहीं चला सकता। जब इन दुष्टों ने ऐसा कहा, राजा दाहिर के पैर तले से जमीन खिसक गई। इन दुष्ट नीच लोगों ने राजा दाहिर को धोखा दिया। और इन्होंने राजा दाहिर को साफ मना कर दिया। कि हम मोहम्मद बिन कासिम से युद्ध नहीं लड़ेंगे ? यह सब सुनकर राजा दाहिर बड़े चिंतित हुए। बड़े ही विचलित हुए। राजा दाहिर ने उनसे कहा, मैंने तो आप लोगों पर इतना विश्वास किया ? और तुम मेरे उस विश्वास के बदले विश्वासघात कर रहे हो? मैंने तुम्हें शरण

Edit with WPS Office

दी, तुम्हें धन दौलत दिया। धन दौलत के साथ-साथ बड़े-बड़े पद दिए। और तुम मेरे साथ इतना बड़ा विश्वासघात कर रहे हो ? वे कहते हैं महाराज आपकी सारी बातें सही है। लेकिन हम मुसलमान हैं और एक मुसलमान दूसरे मुसलमान पर हथियार नहीं चला सकता। और हम आपका साथ छोड़ते हैं। 19 लोगों ने उस समय राजा दाहिर का साथ छोड़कर, दूसरी सेना के पक्ष में गए। जो मोहम्मद बिन कासिम की सेना थी। हथियार सारे राजा दाहिर के थे , उनके पास सब कुछ राजा दाहिर का था और राजा के खिलाफ हो गए और मोहम्मद बिन कासिम से जाकर मिल गए । इनके मिलने पर ₹6000 पहले थे और कुछ यह गद्दार लोग अब इनकी संख्या काफी अधिक हो गई उस समय और गद्दार भी थे मोहम्मद बिन कासिम ने उन्हें लोभ लालच का हवाला देकर अपने पक्ष में ले लिया ओरिजिन लोगों का राजा दाहिर ने शरणार्थी बनाकर उन गद्दार लोगों को शरण दी थी। मोहम्मद बिन कासिमने उन्हें अपना सेनापति पद और धन दौलत का लालच दिया। मोहम्मद बिन कासिम के ऐसा कहने पर वे बहुत खुश हुए। और उनके शरीर में शत्रु के प्रति लड़ने की जान सी आ गई। मोहम्मद बिन कासिम ने अपने मन में सोचा, अब राजा दाहिर की हार निश्चित है
निश्चय ही जीत हमारी होगी। आखिर वह गद्दार भी गद्दारी कर गया। कुछ गद्दारों का साथ रहा और कुछ राजा दाहिर की मूर्खता रही। और कुछ राजा दाहिर की भूल रही यह देश गुलाम हुआ आखिर फिर भी उन लोगों ने राजा दाहिर का साथ ना दिया। और लेकिन फिर भी राजा दाहिर अपनी सेना के साथ बड़े पराक्रम से युद्ध लड़ रहे हैं। आखिर फिर भी उन लोगों ने राजा दाहिर का साथ ना दिया ,राजा दाहिर के साथ गद्दारी की। लेकिन फिर भी राजा दाहिर अपनी सेना के साथ बड़े पराक्रम से युद्ध लड़ रहे हैं। 14 दिनों तक युद्ध चलता रहा। युद्ध दिन में होता है, सूर्यास्त के बाद बंद हो जाता था। 14 दिनों तक राजा दाहिर युद्ध भूमि में बड़े ही पराक्रम से युद्ध में डटे रहे। [और आसपास के राजा अपने ही देश के कोई भी पड़ोसी राजा दाहिर की मदद करने के लिए नहीं आया ? गुलाम होने का यही सबसे बड़ा कारण है। दूसरे राजा यही सोचते है कि यह युद्ध मेरे देश की सीमा पर नहीं हो रहा, बल्कि शत्रु की सीमा पर हो रहा है। यही सबसे बड़ा पतन का कारण हुआ। इन विधर्मियों के दांत खट्टे कर दिए राजा दाहिर ने? अपने सैनिकों के साथ

Edit with WPS Office

बड़े ही पराक्रम से युद्ध लड़ रहे थे। मोहम्मद बिन कासिम भागने ही वाला था। उसके पास और कोई चारा नहीं था, उसने सोचा यहां तो जान बचाना भी मुश्किल हो रहा है। राजा दाहिर के पराक्रम को देख मोहम्मद बिन कासिम की सेना में खलबली मच गई। मोहम्मद बिन कासिम ने सोचा अगर इसी प्रकार युद्ध चला रहा , तो हमारी पराजय निश्चित है। गाजर मूली की तरह वह विदेशी सेना काटी जा रही थी। राजा दाहिर बहुत ही बड़े पराक्रमी योद्धा थे। लेकिन काफी दिनों तक युद्ध चला रहा मोहम्मद बिन कासिम को चिंता हुई कि इस प्रकार तो हमारी सारी सेना मारी जाएगी? रात का समय हुआ मोहम्मद बिन कासिम के पड़ाव के पास से उसी देवी के मंदिर का पुजारी गुजर रहा था। मोहम्मद बिन कासिम ने उसको रोका, और उसे कहां, ब्राह्मण पुजारी कृपया हम यह जानना चाहते हैं कि महाराज दाहिर प्रास्त कैसे होंगे ? कासिम ने उसे अत्यधिक मात्रा में धन देने का वचन दिया। और वह पुजारी उस लालच में आ गया। वह पुजारी भी देशद्रोही था, जो अपने महाराज के साथ विश्वासघात कर रहा था ? और महाराज का सारा भेद बता रहा था। उस पुजारी ने मैं उसको पुजारी तो नहीं कहूंगा। क्योंकि [जो ब्राह्मण के नाम पर गद्दार है] लेकिन उस धुर्त दुष्ट नीच देशद्रोही पाखंडी उस गद्दार ने मोहम्मद बिन कासिम से कहा , महाराज अगर आप चाह रहे हैं आपकी विजय हो , मैं आपकी हार को विजय में बदल दूंगा। **[देख लो देशद्रोही को जो अपने राजा का भेद बता रहा है, ऐसे देशद्रोहियों के कारण ही देश गुलाम हुआ]** मोहम्मद बिन कासिम बुरी तरह घबराया हुआ है ? उसे लगता है मेरी मौत सामने खड़ी है, उसने कहा , कैसे विजय दिलाओगे? वह देशद्रोही पुजारी कहता है, यह काम मेरा है तुम केवल युद्ध करो। उस पुजारी ने कहा ,मेरे इस कार्य में तुम मेरी रक्षा कैसे कर पाओगे? मोहम्मद बिन कासिम ने कहा, चिंता ना करें, अपनी जान देकर भी तुम्हारी रक्षा करूंगा। और अगर तुम इस कार्य में सफल हो गए, तो मैं तुम्हें अत्यधिक मात्रा में धन दौलत का खजाना दूंगा। आखिर वह गद्दार मंदिर का पुजारी एक देवल नगर का बहुत बड़ा संत था, और उस देवी के मंदिर में ध्वजा लगी हुई थी? और राजा दाहिर की देवी के प्रति बहुत बड़ी आस्था थी। वे जब युद्ध करने के लिए जाते थे। तो सबसे पहले देवी की पूजा मंदिर में आकर के ध्वज फहराकर के फिर दुश्मन के साथ युद्ध भूमि में युद्ध के लिए जाते थे। उस

Edit with WPS Office

धूर्त दुष्ट, ब्राह्मण तो उसको नहीं कहूंगा। लेकिन उस नीच ने उस गद्दार पाखंडी ने रात के अंधेरे में मंदिर का ध्वजा को झुका दिया। जब राजा सुबह होते ही युद्ध के लिए जा रहे थे और सबसे पहले देवी के मंदिर में आए। तो राजा ने दूर से देखा आज मंदिर का ध्वज कैसे झुक रहा है ? आज क्या बात हो गई? क्या देवी रूष्ट हो गई? [इस प्रकार के विचार राजा के मन में चल रहे थे] राजा के मन में आशंका पैदा हुई और राजा जैसे मंदिर में प्रवेश करता है। पुजारी का चेहरा उतरा हुआ था। नाटक कर रहा था बदमाश पाखंडी। महाराज दाहिर ने उसे कहा, पंडित जी आज मंदिर का ध्वजा कैसे झुका हुआ है ? और बोला यह तो मैंने भी देखा है। पुजारी बोला महाराज, आप अभी भी नहीं समझ पा रहे हैं? राजा दाहिर कहते हैं, मेरी समझ में नहीं आई, पुजारी कहता है महाराज देवी माता आपसे रुष्ट हो गई ? भयंकर नाराज हो चुकी है, इसलिए मंदिर का झंडा झुक गया है। अब शत्रु से जीतना संभव नहीं है? अब हार का सामना करना ही पड़ेगा। राजा दाहिर बहादुर तो था, लेकिन पाखंडी भी था। वैदिक विचारधारा से प्रभावित नहीं हुआ। वैदिक विचारधारा से प्रभावित हुआ होता, बंधा होता, तो आज ऐसा नहीं होता ?

और उस पाखंडी की चाल में आ गया राजा दाहिर। और कहते हैं, एक कहावत है_____ [मन के हारे हार है, मन के जीते जीत] जब राजा दाहिर ने जो अपने दुश्मनों के 14 दिनों तक युद्ध भूमि में उनके दांत खट्टे कर दिए। आखिर आज जब उसने ध्वज को झुकता देखा और जब पुजारी ने कह दिया तो फिर उसने राजा दाहिर ने मन में हार मान ली। [राजा दाहिर पाखंडी पुजारी के जाल में फंसे हुए थे, वेद से जुड़े हुए नहीं थे?] युद्ध भूमि में जो पराक्रम दिखाया। आखिर एक दिन में युद्ध का पासा पलट गया? राजा दाहिर को प्रास्त किया गया। और जब वह आक्रमणकारी नगर में प्रवेश कर गया। तो सबसे पहले उस मंदिर पर आक्रमण करता है। और तहसील कर देता है। राजा दाहिर बंदी बना लिए गए, उस देवी की मूर्ति को चकनाचूर कर दिया गया। देवल नगर का मंदिर मिट्टी में मिला दिया गया। और न जाने कितने मंदिर तोड़े गए। कितनी मां बेटियों के साथ बलात्कार किया गया। उनकी इज्जत के साथ खिलवाड़ किया गया। और देश के खजाने को लूटा गया। कितना अत्याचार हुआ किसके कारण इस

Edit with WPS Office

पाखंडवाद के कारण। दूसरे मोर्चे पर राजा दाहिर के पुत्र जयसिंह के नेतृत्व में दाहिर की सेना बड़े साहस और पराक्रम से युद्ध कर रही थी।

• [राजा दाहिर की विस्तृत जानकारी]

इस कहानी की शुरुआत तब होती है, जब आज के पाकिस्तान के आठवीं शताब्दी के सिंधु देश पर राजपूत के वंश के राजा राय साहसी का राज्य था। राय साहसी के कोई संतान नहीं थी। उन्होंने अपने प्रधानमंत्री कश्मीरी जज को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया। राय साहसी के देहांत के बाद जज ने राज्य गद्दी संभाली। राजा दाहिर जज के ही पुत्र थे। राजा जज ने ऊंचे पदों से स्थानीय जातियों के लोगों को हटाना शुरू कर दिया। जिससे स्थानीय जाति के लोग उनसे नाराज हो गए। राजा जच के देहांत के बाद उनके भाई चंद्रसेन ने राज्य का कारभार संभाला। परंतु चंद्र सेन ने बौद्ध धर्म अपना लिया। और बौद्ध धर्म को ही राष्ट्रीय धर्म घोषित कर दिया। जिससे ब्राह्मण नाराज हो गए। बाद में चंद्रसेन की मृत्यु के बाद इन सभी गलतियों का सुधार किया राजा दाहिर ने, चंद्रसेन की मृत्यु होते ही राजा दाहिर जो उस समय 18 वर्ष की उम्र में राजगद्दी पर बैठे थे । राजा दाहिर का बड़ा भाई भी था , जिसका नाम दाहिरसेन था। जो ब्राह्मणवाद का सूबेदार था। उनके समय ब्राह्मणवाद का सबसे ऊंचा पद समझा जाता था। इसलिए बड़े भाई राज सिंहासन की गद्दी पर नहीं बैठे? कुछ वर्षों बाद दाहिर की अपनी बहन से शादी करने के के कारण वह इस दुख को सह न सके? और मृत्यु को प्राप्त हुए। जिसका वर्णन हम आगे करेंगे।

•[पौराणिक पाखंडी ब्राह्मणों की भविष्यवाणी ज्योतिषी कुंडली के नाम पर गप्प]

जज के दो पुत्र हुए, दाहिरसेन और दाहिर, इसी अवसर पर ब्राह्मणों ने भविष्यवाणी की ओर कहां, दोनों पुत्र सिधं के राजा बनेंगे। इन दोनों पुत्रों

Edit with WPS Office

की ख्याति चारों ओर होगी, दूर-दूर तक के राजा महाराजा इन पुत्रों के आगे घुटने टेक देंगे। कुछ समय पश्चात रानी के एक पुत्री हुई। जिसका नाम बाई रखा गया। पुत्री के होने के पश्चात ब्राह्मणों को उसकी कुंडली दिखाई गई। ब्राह्मणों ने भविष्यवाणी की इस कन्या का विवाह जिससे होगा वह सिधं का राजा होगा? ब्राह्मणों की इस भविष्यवाणी को सुनकर राजा रानी दुखी हो गए। उसी समय जज ने अपने राज्य की सीमाओं को मजबूत करना शुरू कर दिया।

[सोचने वाली बात,, एक तरफ तो ब्राह्मणों ने कह दिया दोनों राजा सिंध के राजा बनेंगे? दूसरी तरफ कह दिया कि जो इस लड़की का पति होगा वो भी सिंध का राजा बनेगा। राजा रानी को लगा अगर युद्ध हुआ तो मेरे दोनों पुत्र मारे जाएंगे। राज सिंहासन छिन जाएगा। और सिंध का राजा मेरी पुत्री का पति बनेगा। इस प्रकार राजा रानी सोचने लगे, ।

•[क्या गप्पोडे भरी बातें हैं पौराणिक ब्राह्मणों की]

कुछ समय बाद राजा दाहिर ने अपना प्रधानमंत्री बुद्धिमान नाम के एक व्यक्ति को बनाया। जो बहुत ही तर्कसील व्यक्ति था। फिर कुछ वर्षों बाद दाहिर की बहन बाई विवाह योग्य हुई ? ब्राह्मणों की भविष्यवाणी भी एक मुसीबत बन गई थी। राजा ने अपने मंत्री वजीर की सलाह मांगी, वजीर ने कहां ,किसी अन्य व्यक्तियों के हाथों में राज सिंहासन जाने से अच्छा है आप स्वयं बाई से विवाह कर लीजिए। इससे आपका राज सिंहासन भी सुरक्षित रहेगा। और राज सिंहासन की बागडोर भी आपके हाथों में रहेगी। राजा दाहिर ने अपने सभी कर्मचारी राज परिवार के सदस्यों के सामने इस समस्या का हल निकालने की बात कही।

कोई भी व्यक्ति इस बात पर फैसला नहीं कर पाया? और अंत में वजीर की सलाह को स्वीकार किया गया। फिर ब्राह्मणों ने विवाह की सभी तैयारियां की विवाह के पश्चात दोनों को राज सिंहासन पर बिठाकर ब्राह्मणों के द्वारा मंत्रो का उच्चारण किया गया ? विवाह संबंधित घटना की जानकारी दाहिर के बड़े भाई दाहिर सेन जो ब्राह्मणवाद के सूबेदार थे उनको हुई। उन्होंने इस घटना को सुनकर राजधानी अलोर की और प्रस्थान किया। [अलोर सिंध

Edit with WPS Office

की राजधानी थी] अलोर पहुंचने पर उनके लिए महल का द्वार नहीं खोला गया ? दाहिरसेन विवश होकर ब्राह्मणवाद लौट आया। कुछ दिनों के उपरांत राजा दाहिर ने अपने दूत के द्वारा ब्राह्मणवाद भिजवाया। उस पत्र में क्षमा याचना की बात कही गई, दाहिर सेन ने पत्र पढ़ने के बाद राजा दाहिर को लिखकर कहां, ब्राह्मण वंश पर इतना बड़ा कलंक लग गया मैं सोच सोच कर पागल सा हो रहा हूं। मृत्यु के उपरांत भी मेरा उद्धार नहीं हो पाएगा? इसी खबर को सुनकर दाहिर सेन का स्वास्थ्य प्रतिदिन खराब होने लगा, और उसकी मृत्यु हो गई। क्योंकि दाहिर सेन इस दुख को सह न सके।
अपने बड़े भाई की मृत्यु के बाद दाहिर ने ब्राह्मणवाद को अपने कब्जे में ले लिया। और दाहिरसेन की विधवा पत्नी को भी अपना लिया। उससे शादी की राजा दाहिर का पूरे सिंध पर एकछत्र राज्य स्थापित हो गया। उसे रोकने वाला पूरे सिंध में कोई नहीं था?

- **[देखो पुराणों के पौराणिक ब्राह्मणों की गप्पू भरी भविष्यवाणी ,जिसके कारण एक भाई की जान चली गई। फिर कुछ समय बाद अरबों के आक्रमण होने लगे।]**

राजा दाहिर का शासन धार्मिक सुसंपन्न था। उदार विचारों वाला था, जिसके कारण विभिन्न धर्म के लोग शांतिपूर्वक रहते थे। जहां हिंदुओं के मंदिर , पारसीयों के अग्नि मंदिर, आदि अनेक धर्म के मंदिर, जिसके राज्य में जो अरब से आकर बसे मुसलमानों को रहने की अनुमति दी गई। जहां से अरबों का व्यापार चलता था और अरब के अनेक मुस्लिम लोगों ने राजा दाहिर के साथ धोखा किया। एक समय की बात है एक बार एक बार एक अरबी जहाज सिंधु नदी के तट पर खड़ा था। जहाज में सवार अरब व्यापारियों के सुरक्षाकर्मी ने देवल के शहर पर बिना कारण ही हमला कर दिया। वहां की महिलाओं को कैद कर लिया गया। इसका समाचार जब सूबेदार को मिला, उसने अपने अंगरक्षकों सहित जहाज पर आक्रमण कर औरतों को मुक्त कराया। अरबी जहाज में लोग अपनी जान बचाकर भाग गए। ईरान में धर्मगुरु खलीफा का शासन था हजाज उनका मंत्री था। उस खलीफा के पूर्वजों ने सिंध पर फंतह करने की अनेक तरीके अपनाए थे। लेकिन अब तक इन्हे कोई सफलता नहीं मिली थी। अरब के व्यापारियों ने खलीफा के सामने उपस्थित होकर सिंध पर हुई घटना को लूटपाट घटना बोलकर

Edit with WPS Office

शांतिपूर्वक इस बात को खत्म कर दिया गया। इसी कारण खलीफा ने सिंध पर आक्रमण करने का तरीका निकाल लिया ? उसे यही अवसर की तलाश थी। उसने अब्दुल्ला नामक व्यक्ति के नेतृत्व में अरबी सैनिकों का दल सिंध विजय करने के लिए रवाना किया। परंतु इन सैनिकों का डटकर सामना सिंध के सैनिकों ने किया? और उनके सेनापति अब्दुल्ला को भी जान से हाथ धोना पड़ा। खलीफा अपनी इस हार से तिलमिला उठा। इसके बाद 10000 सैनिकों का एक दल सिंध पर आक्रमण करने के लिए भेजा गया। सिंध पर 638 ई से 711 ई तक 74 वर्षों के काल में 9 खलीफाओं ने 15 बार आक्रमण किया। नो वे खलीफा का नेतृत्व मोहम्मद बिन कासिम ने किया। परंतु मोहम्मद बिन कासिम का भी मुकाबला राजा दाहिर की सेनाओं ने डटकर सामना किया। और कासिम को सोचने पर मजबूर कर दिया। सूर्यास्त तक अरबी सेना हार के कंगार पर खड़ी थी। परंतु उनके ज्ञानबुद्ध और मौझवाद नाम के मंत्री अरबों से जा मिले। अगले दिन फिर भयंकर युद्ध हुआ। सिंध सैनिकों में फूट होने की वजह से सेना हार के कंगार पर जाने लगी। तभी राजा के सलाहकार ने उन्हें सलाह दी, हे राजन आप अपने पड़ोसी राज्य में चले जाएं [राजा दाहिर को कहा] राजा दाहिर ने युद्ध में जाने से पहले एक बात कही थी। **राजा दाहिर ने सलाहकार से कहा, राजा दाहिर ने कहा मैं कुलीन लड़ाई में अरबों से लड़ने जा रहा हूं, अपने पूरे सामर्थ्य के साथ लडूंगा, अगर मैं उन्हें कुचल देता हूं तो मेरे साम्राज्य की नीव और मजबूत हो जाएगी ? लेकिन अगर मुझे सम्मान पूर्वक वीरगति प्राप्त हुई, तो यह युद्ध भारत और अरब की किताबों में स्वर्ण अक्षरों से लिखा जाएगा।** इसके बारे में महान से महान लोग बात करेंगे। दुनिया के अन्य राजा इसके बारे में बात करेंगे और कहां जाएगा कि सिंध के राजा दाहिर ने अपने देश के लिए दुश्मनों से लड़ते हुए अपनी अनमोल जिंदगी का बलिदान दे दिया।

ज्ञानबोध और मौझझवाद इन दोनों का मोहम्मद बिन कासिम की सेना में मिलने का कारण यह है कि उनके चाचा चंद्रसेन [दाहिर के चाचा] बौद्ध धर्म को ऊंचाई का स्थान दिया था। क्योंकि उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया था। और उनकी मृत्यु के बाद राजा दाहिर ने सब धर्मों को समान अधिकार दिया। जिसका दुख यह दोनों सह ना सके। और देशद्रोही के नाम से

Edit with WPS Office

मोहम्मद बिन कासिम से जा मिले। कई दिनों तक युद्ध चला रहा, युद्ध का कोई परिणाम नहीं निकल रहा, दोनों तरफ से पलड़ा भारी था। [एक दिन मंदिर का पुजारी भी देशद्रोही के नाम से कासिम से जा मिला और उस पाखंडी ने राजा की हार कैसे होगी? सब बताया। जिसका वर्णन हम पीछे कर चुके हैं] उस पाखंडी ब्राह्मण ने राजा का इस राज् को खोलने के कारण, मोहम्मद बिन कासिम ने सोचा क्या पता यह है हमसे झूठ बोल रहा हूं ? इस प्रकार मन में सोचा, तो उसने साथ के साथ दूसरा सुझाव भी सोचा, और उसने उसी रात अपने कुछ सैनिकों को स्त्रियों के वस्त्र पहनकर सिंध राज्य की सीमा के अंदर जाने का इस प्रकार षड्यंत्र किया। कुछ सैनिक हथियार सहित स्त्रियों के वस्त्र पहनकर राज्य में घुस गए। अगले दिन युद्ध शुरू हुआ राजा दाहिर और उनके पुत्र जयसिंह अलग-अलग मोर्चे पर युद्ध कर रहे थे। राजा दाहिर धव्ज झुकाने की खबर को सुन चुके थे। फिर भी उन्होंने अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए शस्त्र उठाने चाहिए तभी मोहम्मद बिन कासिम के सैनिकों ने पीछे से जिन्होंने स्त्रियों के वस्त्र पहन रखे थे, युद्ध में पीछे से कूद पड़े और राजा दाहिर पर तीरों की बौछार कर दी ? जिससे राजा दाहिर युद्ध में बहुत बुरी तरह घायल हुए। उनको घायल होते हुए राजा दाहिर के कुछ सैनिकों ने देख लिया। और उनको उठाकर सुरक्षित स्थान पर ले गए। खाड़ी के कीचड़ में छुपा दिया, तभी मोहम्मद बिन कासिम ने अपने कमांडो को आदेश दिया कि दाहिर दिखाई नहीं दे रहा , उसे ढूंढो, लगता है वह बड़ा हमला करने की तैयारी में है। तभी उस पाखंडी ब्राह्मण ने देशद्रोही ने आकर कासिम से कहा, मैं आपको वह जगह दिखा सकता हूं , जहां दाहिर को छुपाया गया है। कासिम ने उस ब्राह्मण की बात पर विश्वास किया और अपने कुछ सैनिक उसके साथ भेजें। उन सैनिकों ने राजा दाहिर को ढूंढ निकाला। और उसका सर काट कर भांले पर लटका कर कासिम के पास ले आया। कासिम ने राजा दाहिर की पहचान के लिए उस ब्राह्मण को बुलाया, राजा दाहिर की हत्या **[20 जून 712 ईस्वी में की गई थी]**

सिंध विजय के बाद मोहम्मद बिन कासिम ने हजाजबिन यूसुफ को पत्र लिखकर खुशी जाहिर की और शरम बिन हमदानी को राजा दाहिर का सर इराक ले जाने का आदेश दिया। इसके बाद मोहम्मद बिन कासिम ने राज परिवार के सभी सदस्यों को बंदी बनाया। परंतु जयसिंह का कोई अता- पता

Edit with WPS Office

नहीं था। इतिहासकार बताते हैं की जयसिंह युद्ध के मैदान से ही सिंध छोड़कर भाग गया था। दूसरी तरफ आलोर में राजा की मृत्यु की खबर सुनकर रानी सचेत हो गई। और जिन जिन विरागनाओं ने रानी सुहान्दी के साथ अरबी सेनाओं के तीरों का सामना, अपने शौर्य और पराक्रम से अस्त्र-शस्त्र सहित डटकर सामना किया। वे क्षत्राणियां वीरांगनाओं अधिक समय तक अरबों के सामने टिक न सकी। तो उन्होंने अपनी अस्तित्व की रक्षा के लिए उन रानी महिलाओं महारानियों ने जौहर कर लिया। अग्नि में जलकर अपना बलिदान इस भारत भूमि के लिए कर दिया। धन्य है, यह भारत भूमि जिस देश में ऐसी ऐसी विरागनाओं ने जन्म लिया।

इतना सब कुछ होने के पश्चात, अरबों ने पूर्ण रूप से सिंध को जीत लिया। और अपना राज्य स्थापित कर दिया। अनेक हजारों लोगों लाखों लोगों का बलिदान हुआ। लोगों के घर बेघर हो गए। और अनेक लोग डर कर मुस्लिम बन गए। अनेक स्त्रियों के साथ बलात्कार हुआ। अनेक सिंध की स्त्रियों को ले जाकर अरबों में बेचा गया , उनकी बोली लगाई गई। [अपने देश के राजाओं की आपस में फूट होने के कारण किसी पड़ोसी राजा ने भी मदद नहीं कि यह सोचने लगे कि यह जो हमला हो रहा है ,यह हम पर नहीं ?हमारे शत्रु पर हो रहा है । यही सबसे बड़ा गुलामी का कारण है। इसी का फायदा विदेशी आक्रमणकार्यो ने उठाया। मोहम्मद बिन कासिम की सिंध विजय के बाद मोहम्मद बिन कासिम ने राज परिवार के सभी सदस्यों को बंदी बना लिया। और राजा दाहिर की दो पुत्रियां, सिंध की राजकुमारी थी। जिनका नाम राजकुमारी सूर्य कुमारी, दूसरे का नाम परमाली था। राजा दाहिर की दोनों पुत्रियों को खलीफा के पास उपहार भेंट में भेज दिया गया। तो खलीफा ने उन दोनों लड़कियों के साथ संबंध बनाने की कोशिश की। राजा दाहिर की लड़कियां चतुर थी, उन दोनों लड़कियों ने खलीफा से कहा, हमारे साथ तो पहले से ही मोहम्मद बिन कासिम संबंध बना चुका है। अब आप जैसा शरीफ इंसान को मेरे साथ संबंध बनाने से क्या लाभ ? जिसके साथ पहले से संबंध बन गए हो, उसके साथ आप संबंध बनाओगे तो अच्छा नहीं लगेगा। इस बात को सुनकर खलीफा तिलमिला उठा। और खलीफा ने मोहम्मद बिन कासिम के लिए एक पत्र लिखा, अपने किसी दूत के द्वारा भिजवाया? उस पत्र में लिखा था मोहम्मद बिन कासिम जिस हालत में तू,

Edit with WPS Office

जहां भी है? उसी समय अपने को गधे की खाल में स्वयं को बंद करके मेरे पास आओ। मोहम्मद बिन कासिम ने ठीक वैसा ही किया। पर रास्ते में ही उसकी मृत्यु हो गई। ऐसा कहा जाता है कि इसके बाद खलीफा ने उन लड़कियों को बुलाया, लड़कियों ने सच्चाई बता दी, लड़कियों ने कहा, हम अपने पिता का बदला लेना चाहते थे। इसलिए हमने ऐसा झूठ बोला, यह सब सुनकर खलीफा का गुस्सा सातवें आसमान पर चढ़ गया। क्योंकि उसने अपना पराक्रमी बलशाली मोहम्मद बिन कासिम जैसा पराक्रमी सेनापति खो दिया।

अब यहां से अलग कहानी शुरू होती है, कुछ इतिहासकार कहते हैं खलीफा ने दोनों लड़कियों के साथ संबंध बनाकर खलीफा ने उन्हें घोड़े के पीछे बांधकर और अरब के शहर में दौड़ा-दौड़ा कर घुमाया गया। और कुछ इतिहासकार कहते हैं उन दोनों लड़कियों को हाथी से कुचलवा दिया था। खैर उनके साथ कुछ भी हुआ हो। लेकिन अरबों का उस समय सिंध पर और अन्य छोटे-छोटे भारत के राज्यों पर शासन हो चुका था। लेकिन जब यह सब कुछ घट रहा था ? तब भारत भूमि पर एक शेर बप्पा रावल अपने बचपन की यादों से खेल रहा था। उस समय बप्पा रावण की उम्र 3 वर्ष की थी। अब हम अगले भाग में बताएंगे बप्पा रावल कौन था ? और उसने अरब के आक्रमण कार्यों को कैसे धूल चटाई ? उस वीर योद्धा की कथा हम अगले पृष्ठ में करेंगे। और बताएंगे उस वीर बहादुर साहसी योद्धा ने कैसे विदेशों तक भगवा ध्वज फहराया। राजा दाहिर की कथा को हम यहीं विराम देते हैं। हमने सरल भाषा में समझाने की कोशिश की, मुझे विश्वास है लोगों की समझ में आ गया होगा? की अपनी भारत भूमि में कैसे-कैसे वीर योद्धाओं ने जन्म लिया। लेकिन आपस की फुट के कारण और पाखंडता के कारण एक दूसरे के खून के प्यासे हो गए और लड़ते-लड़ते अपना बलिदान कर गए। कोटि-कोटि धन्यवाद कोटि-कोटि नमन ऐसे वीर योद्धाओं को🙏🙏———……

•[दूसरे चाणक्य हरित ऋषि और आचार्य मंगल देव]

Edit with WPS Office

यह बात तब की है जब इस आर्यावर्त देश में अरबों के आक्रमण हो रहे थे । तो उस स्थिति में हरित ऋषि और आचार्य मंगल देव का नाम सबसे उंचे स्वर्णअक्षरों में लिखा जाता है। परंतु मुझे दुख इस बात का है कि ऐसे ऋषि महर्षि राजा महाराजाओं का इतिहास हमको नहीं पढ़ाया जाता। जो स्थान इनको देना चाहिए था वह स्थान मुगलों को दे दिया गया। लोग मुगलों को यह समझ बैठे की यही सबसे बड़े महान। लोग ताजमहल आगरा को देखकर यही अनुमान लगाते हैं। की मुगलों ने हमारे लिए बहुत कुछ किया, बल्कि ऐसा कुछ नहीं, मुगल योद्धाओं से भी बड़े-बड़े इस भारत भूमि में जिनके कार्य मुगल हजार जन्मों में भी नहीं कर सकते। जिनकी कला टेक्निकल आज हमको उन राजाओं द्वारा बनाए हुए मंदिर से मिलती है। जो आज से 1100 1200 साल पहले थे। बल्कि ऐसे बड़े-बड़े महान योद्धा थे, जो कार्य हमारे बड़े-बड़े महाराज राजाओं ने किया ऋषियों ने किया वह कार्य मुगल शासक कभी नहीं कर सके। आज मैं उन दो ऋषियों की बात करूंगा? जिन्होंने इस देश को गुलाम होने के बाद अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए, अपने देश की जनता को जगाया, उनके अंदर देशभक्ति की भावना पैदा करी। उनको अंदर तक जगाने का कार्य किया। ऐसे महान व्यक्तियों को मेरा कोटि-कोटि प्रणाम..__________🙏🙏

एक बात आपको बता दूं कि जिस प्रकार आजकल लोग जातियों से आपस में लड़ रहे हैं, उस समय ऐसा नहीं था, सभी जातियों ने मिलकर अरब आक्रमणकारियों को भगाया था। उस समय मनुष्य भेदभाव नहीं करता था। सभी लोग एकजुट रहते थे। उस समय इस्लाम की नई नई स्थापना हुई थी। क्योंकि उस समय एक लुटेरा मोहम्मद बिन कासिम उसकी नजर सदैव भारत के सिंध पर रहती थी। क्योंकि उस समय इस भारतवर्ष को सोने की चिड़िया कहा जाता था। भारत में चारों ओर खुशियली धन ऐश्वर्य को देखकर मुगल लोग चैन से नहीं बैठते थे। और भारत को लूटने की योजना बनाते रहते थे। कि भारत को कैसे लूटा जाए, इस देश पर कब्जा कैसे करें , यही विचार चलते रहते थे। दूसरी बात यह है कि उनका अल्लाह इसी की हुकूमत देता था। उनका एक ऐसा ईश्वर था, जो उनसे कहता था कि तुम

Edit with WPS Office

इस्लाम के झंडे के नीचे सभी को ले आओ और सभी को तुम्हें मारने का हक है, यदि वह मुसलमान बनता है तो छोड़ दो, अगर नहीं बनता हमारा धर्म नहीं अपनाता तो उसको मार दो, चाहे स्त्री हो या पुरुष हो, बुजुर्ग हो किसी को मत छोड़ो। क्योंकि उनके अल्लाह ने कुरान में ऐसा ही लिखा है। वे लोग इस आधार पर यह सब करते हैं। उन्होंने पहले किस देश पर आक्रमण किया। क्योंकि यह देश नजदीक था। यहां इस देश में धन दौलत की कमी नहीं थी। इस देश में सबसे पहले आक्रमण कब हुआ ? हम ऊपर लिख आए हैं, राजा दाहिर के समय अरबों का पहला आक्रमण राजा दाहिर के शासनकाल में हुआ। राजा दाहिर के जीवन चरित्र के बारे में हमने सरल भाषा में ऊपर लिख दिया है। मोहम्मद बिन कासिम पहले तीन युद्ध हार चुके थे । लेकिन बाद में मोहम्मद बिन कासिम ने राजा दाहिर का सेनापति बुद्धिमान बौद्ध धर्म था। इसलिए उसके साथ 19 लोग मोहम्मद बिन कासिम के साथ मिल गए। जिससे राजा दाहिर की हार हुई। राजा की सेना में जो बौद्धसैनिक थे। सेनापति के कहने से उन्होंने हथियार गैर दिए। किसी भी राजा ने राजा दाहिर का साथ नहीं दिया। बाकी जो हिंदू सैनिक थे उनके साथ मिलकर राजा दाहिर ने मोहम्मद बिन कासिम का सामना किया। और राजा दाहिर वीरगति को प्राप्त हुए। अरब सेना की विजय के बाद मुस्लिमों को जो कुछ मिला धन दौलत स्त्री सभी को लूटते पीटते मारते बलात्कार करते गए। महिलाओं को उठाकर ले गए उनके साथ बलात्कार किया। उनके पत्तियों को मारा, बच्चों को मारा, लगभग जो देखा उसी को मारते गए।

इतना बड़ा अत्याचार हुआ किस कारण हुआ कुछ अपने ही गद्दारों के कारण, दुसरा पाखंडवाद के कारण।

जिन्होंने राजा दाहिर के साथ गद्दारी की सभी युद्ध में मारे गए। अनेक लोगों ने धर्म परिवर्तन किया, उनको मुस्लमान बनाया गया। युवा गुलाम बना दिए गए। देखिए कितना बड़ा नरसंहार हुआ। किस कारण अपनी मूर्खता के कारण ,पाखंडवाद के कारण, देशद्रोह के कारण। देश गुलाम होने के यह सबसे बड़े तीन कारण है आपस की फुट के कारण, वेदों के उल्लंघन के कारण। यह भी सबसे बड़े कारण है। तो राजा दाहिर की छोटी रानी वह जीवित बच गई ? वह गुप्त मार्ग से निकल गई। उस रानी की हालत इतनी

Edit with WPS Office

खराब हो गई , उसी के सामने अपने परिवार भाई, पुत्र, बेटे ,पति सबको मारते देखा। इसी कारण उसको सदमा हो गया। तो वह रानी हरित ऋषि नाम के एक साधु से मिलती है। वह रानी हरित ऋषि को सारी घटना सुनाती है , और अपना दुख प्रकट करती है। हरित ऋषि यह सब सुनकर क्रोधित हो जाते हैं। और वह रानी को संभालते हैं, उसे समझाते हैं। और कहते हैं यह हार आपकी नहीं, इस आर्यावर्त भारतवर्ष भूमि के सभी राजाओं की है। इसलिए हम सबको एक होकर इन अरबों से लड़ना चाहिए? यह सब देखकर हरित ऋषि का क्रोध दिन प्रतिदिन बढ़ता जाता। हरित ऋषि ने कसम खा ली कि मैं इन अरबी लुटेरों को यहां से खदेड़ कर ही मानूंगा। हरित ऋषि ने कहा, हमें विदेशी शासक बिल्कुल स्वीकार नहीं ? चाहे कितना बड़ा ज्ञानी, शक्तिशाली, बलशाली हो, हमें स्वीकार नहीं? स्वदेशी शासक कितना ही अच्छा बुरा हो शक्तिशाली पराक्रमी ज्ञानी अत्याचारी हो ,फिर भी हमें वह स्वीकार है। क्योंकि वह स्वदेशी अपना होता है। तो इस प्रकार हरित ऋषि गांव-गांव शहर शहर नगर नगर जाकर लोगों को जगाते हैं। युवाओं के पास जाते हैं, खेतों में काम करने वाले किसानों को जगाते हैं। उन सभी के अंदर देशभक्ति की भावना का बीज बोते हैं। और हर जातियों के व्यक्तियों के पास जाते हैं। जैसे___ आजकल जातियां एक दूसरे को समझती नहीं है, उस समय सभी जातियां एक दूसरे से मिलकर प्रेमपूर्वक रहते थे। उस समय हरित ऋषि ने सभी जातियों के लोगों को जगाकर तभी किसानों के लोगों ने अपने युवाओं बच्चों को हरित ऋषि के हवाले सौंप देते हैं। हरित ऋषि प्रत्येक गांव में एक ही बात कहते हैं कि तुम सभी लोग दूध घी खाओ, पहलवानी करो। अस्त्र-शस्त्र चलाना सीखो। जब मुझे आपकी जरूरत पड़ेगी तब मैं अपना संदेश भिजवा दूंगा। तुम सभी लोग एकजुट रहना, हरित ऋषि ने ज्यादातर किसानों के बच्चों को ही जगाया। क्योंकि किसानों के बच्चों में देशभक्ति की भावना अत्यधिक होती है, अपने देश से प्रेम होता है। तो इस प्रकार हरित ऋषि जगह-जगह घूमते घूमते जब अत्यधिक अधिक संख्या में लोग एकजुट होकर जुड़ जाते हैं। तब उन्हें आवश्यकता पड़ती है एक सेनापति की। जो इस सेना के भार को संभाल सके ? जो वीर भी हो ,साहसी भी हो , जिसके अंदर क्षत्रिय भाव कूट-कूट कर भरा हो। तो हरित ऋषि मन ही मन ईश्वर से प्रार्थना करते हैं,

Edit with WPS Office

तो निकल पड़ते हैं एक सेनापति की खोज में हरित ऋषि रेगिस्तान की ओर चलते हैं। रेगिस्तान में काफी दूर तक चलने के बाद पहाड़ी किनारो पर उनको कुछ भील समुदाय के लोग दिखाई पड़ते हैं ? हरित ऋषि को देखकर भील लोग आपस में चर्चा करते हैं, और देखते हैं एक ऋषि हमारी तरफ आ रहा है। तब हरित ऋषि वहां पहुंचते हैं भीलों के पास हरित ऋषि ने राजाओं की सहायता क्यों नहीं ली ? इसका एक कारण है क्योंकि उस समय के राजपूत क्षत्रिय राजा विलासिता के घोर अंधकार में डूबे हुए थे, दारू मदिरापान करना मौज उड़ाना, वेश्याओं के साथ रहना मौज मारना आदि। क्योंकि उन्हें किसी भी प्रकार की कोई चिंता नहीं रहती थी? इन लोगों की आंखें तब भी नहीं खुली थी, जब राजा दाहिर पर इतना बड़ा आक्रमण हुआ ? यदि इन लोगों से कोई विद्वान पूछता कि तुम लोगों ने दाहिर की मदद क्यों नहीं की तो वे लोग कहते हैं, दूसरे के कार्य में अपना हाथ क्यों बढ़ाएं? हम अपनी मौत को क्यों बुलाए। क्योंकि वह लोग सोचते थे , कि जो रेगिस्तान का इलाका है सिंध की राजधानी के बीच का अरब इसको कभी पार नहीं कर पाएंगे। वह यह चीज भूल गए थे, की बौद्ध अभी भी उन अरबों के साथ है। उनके पास पूरा नक्शा है कि किस प्रकार वो राजस्थान में आएंगे ? क्योंकि अनेक बौद्ध गद्दार लोग उनके साथ थे। उस समय इतने बड़े हालात पैदा हो गए थे। तो हरित ऋषि जब उन भीलों के पास पहुंचते हैं, तब हरित ऋषि की नजर एक व्यक्ति पर पड़ती है। जिसका नाम था बप्पा रावल इसके माता-पिता के बारे में किसी को पता नहीं था। भीलों को वह जंगल में ही मिला था। उसका पालन पोषण भीलों द्वारा ही किया गया। लेकिन बप्पा रावल सभी भीलों में सबसे लंबा तगड़ा बलिष्ठ काफी मजबूत व्यक्ति था। जिसका तेज हरित ऋषि ने दूर से ही जान लिया। बप्पा रावल को भीलों ने सरदार घोषित कर रखा था। बप्पा रावल को देखकर हरित ऋषि मन में सोचते हैं, यही वह युवा है जो मेरे द्वारा युवा लोग संगठित एकजुट किए गए हैं , उनका सेनापति बनने लायक है। हरित ऋषि भीलों के पास जाकर कहते हैं, कि मुझे तुम्हारा यह युवा व्यक्ति चाहिए ? जो इस देश की इज्जत बचा सके, लूटने और बर्बाद होने से बचा सके। मैं इस व्यक्ति को राजा बनाऊंगा। क्योंकि उस समय साधु संतों का ऋषियों का सम्मान किया जाता था। जैसे आजकल लोग अपनी दुकान चलाने के लिए पाखंडी बाबा

Edit with WPS Office

राधे राधे गाते रहते हैं उस समय ऐसा नहीं था।
भील समुदाय के लोग हरित ऋषि की बातों को बड़ी गंभीरता से लेते हैं और सुनते हैं उस समय हरित ऋषि का ज्ञान का प्रभाव चारों ओर था। फिर वह लोग राजी हो जाते हैं। और बप्पा रावल को उनके साथ भेज देते हैं। तब वह वापस चलते हैं रास्ते में चलते-चलते उनको मेवाड़ के राजा मान मिलते हैं। राजा मान काफी चिंतित थे। क्योंकि सिर्फ वही एक व्यक्ति थे, जिसके अंदर देशभक्ति की भावना बची हुई थी। वह दुखी इस बात पर थे। उन्हें अपने राज्य की चिंता थी। क्योंकि उनको पता था कि किस प्रकार सिंध को लूटा गया ? वहां कैसे मुस्लिम शासन स्थापित हुआ? तो इस प्रकार रास्ते में दोनों की मुलाकात होती है। हरित ऋषि पूछते हैं ! हे राजन आप इतने चिंतित क्यों हो ? और आप कौन हो? तो वह राजा बोलता है, कि मैं मेवाड़ का राजा मान हूं। फिर हरित ऋषि बोलते हैं और पूछते हैं आप राजा हो और आप इतने चिंतित और गंभीर क्यों हो? तो राजा मान कहते है कि अब हमारी बर्बादी का समय आ गया है । क्योंकि मैंने बहुत से राजाओं को समझाने की बहुत कोशिश की लेकिन वह सभी अपनी विलासिता से बाहर नहीं निकलते, तो मैं क्या करूं ,इस वजह से मैं चिंतित हूं। क्योंकि अरब के आक्रमण हो रहे हैं ,मैं अपनी थोड़ी सी सेना लेकर उन अरबों का मुकाबला भी नहीं कर सकता। राजा मान को पता चलता है कि अरब का सेनापति सलीम हमारी तरफ आ रहा है। लाखों की सेना लेकर भारत पर आक्रमण करने के लिए, उन्होंने सिंध का इलाका जीत लिया था। वह चाहते थे कि हम किसी भी प्रकार से राजस्थान को जीतकर पूरे भारत में राज करें चारों ओर फैल जाए । इन सब का पता चल जाता है राजा मान को अपने गुप्तचर के द्वारा, लेकिन राजा मान सोचते हैं कि मैं क्या करूं मैं पीछे भी तो हट नहीं सकता। यह सब सुनकर हरित ऋषि कहते हैं, तुम इस बात की चिंता मत करो, क्योंकि मैंने गांव-गांव जाकर इतने युवा इक्कट्ठे कर लिए हैं , लाखों की संख्या में कि वे युवा अपने देश के लिए मर मिटने के लिए तैयार है। बस उन्हें मेरे एक आदेश की जरूरत है। हरित ऋषि कहते हैं राजा मान से,कि भीलों के भी 10000 से अधिक लोग हमारे साथ जुड़ चुके हैं। फिर हरित ऋषि कहते हैं राजा मान से, क्या आपके नगर मे आपका कोई विश्वास पात्र नही है ? जिस पर आप पुरा विश्वास कर सको! फिर राजा मान कहते है कि

Edit with WPS Office

मेरे दो सेनापति हे जिन पर हमे पूरा विश्वास है भरोसा है और देश धर्म के लिए मर मिटने को तैयार रहते ह ।तो फिर हरित ऋषि कहते हैं की जाओ और उनके साथ में विचार विमर्श करो और सभी सैनिकों के लिए युवाओं के लिए हथियारों का प्रबंध करो। फिर कुछ दिनों बाद हरित ऋषि अपना संदेश भिजवा देते हैं और सभी लोग मेवाड़ और चित्तौड़ में युवाओं की फौज जमा हो जाती है। जब सभी लोग लाखों की संख्या में हो जाते हैं तो उन सबको हथियारों का प्रबंध राजा मान करवाते हैं। और सेनापति बप्पा रावल को बनाया जाता है।
अब यहां तक तो आपने एक किस्सा जान लिया, अब आपको दूसरा किस्सा मंगल देव का बताता हूं ?

- ## 2. [आचार्य मंगल देव]

जब सिंध पर आक्रमण हुआ था, उस समय उसी राज्य में कुछ योद्धा थे जो बच गए थे । उनमें से एक योद्धा का नाम था मंगलदेव, जो कि उनके साथ शिष्य भी रहा करते थे । वो बहुत बड़े योद्धा भी थे, और आचार्य भी थे । और हरित ऋषि के जैसा ही कार्य कर रहे थे । घर- घर जाना, गांव- गांव जाना , नगर नगर जाना, किसानों को जगाना, उनके साथ में जो काफी सारे बौद्ध थे । उनको भी उन्होंने जगाने का प्रयास किया । और काफी सारे बौद्ध युवाओं को उन्होंने जगाया, उनमें देशभक्ति की भावना का बीज उत्पन्न कर दिया । और उन्होंने 10000 के लगभग लोगों को जोड़ा, और अपनी एक विशाल सेना बना दी थी । और जब अरब से सलीम अरबी सेना के साथ आता है, तो अपने साथ अपनी बेटी मीहा को भी लेकर आता है ।
जिस प्रकार सिकंदर का एक सेनापति उसका नाम था सेल्यूकस वह भी अपनी बेटी हेलना को भी लेकर आया था । इसी प्रकार सलीम भी अपनी बेटी को लेकर आता है और जब लाखों की सेना लेकर, जब सलीम अपनी सेना के साथ आ रहा था, आचार्य मंगलदेव को सलीम की खबर लग जाती है की अरबी सेना हम लोगों पर हमला करने के लिए आगे बढ़ रही है । तो

Edit with WPS Office

आचार्य मंगल देव अपने गुप्तचरों जो उन्होंने युवा जगाए थे, जिनके अंदर देशभक्ति की भावना बैठाई थी । और उन्हीं के साथ अपनी एक सेना बना ली थी, उन्हीं की सहायता से जो रात के समय छापे मार युद्ध होता है, उस तरीके से अरबी सेना पर आक्रमण करते हैं । वहां जितने भी पानी के स्रोत थे , कुएं थे, झरने थे, उन सभी में विष मिला दिया जाता है । जब अरब की सेना उस पानी को पीती थी, तो अरबी सेना की मृत्यु हो जाती थी । इस प्रकार लगभग 10000 के करीब अरबी सैनिक मारे जाते हैं, फिर कुछ समय बाद प्रातः काल का समय होता है, आचार्य मंगल देव की सेना अपने राष्ट्र ध्वज ले हाथों में हथियार लेकर अरबों का मुकाबला करने के लिए निकल पड़ती है । दूसरी तरफ ऋषि हरित के नेतृत्व में अत्यधिक विशाल सेना भी अरबों का मुकाबला करने के लिए निकल पड़ती है । वहीं पर हरित ऋषि और आचार्य मंगलदेव दोनों का मिलन होता है । और एक विशाल अश्वनी सेना बन जाती है । राजस्थान और सिंध के बीच का जो पहाड़ी इलाका था, वहां पर अरबी सेना और अपनी सेना की भिड़ंत होती है । अरब के भी 10000 से अधिक सैनिक पीछे की तरफ छुप जाते हैं, और प्रतीक्षा करते हैं और आपस में एक दूसरे से कहते हैं, की देखते हैं क्या होता है ? दूसरी तरफ सलीम ने अपने दो तीन हजार गुप्तचर राजस्थान की तरफ भेजे हुए थे, सलीम ने गुप्तचरों को भेजने से पहले कहा था, कि आप लोग हमको बताना कि वहां युद्ध की तैयारी कैसी है ? तो जो मंगल देव आचार्य थे, अरबों के जो गुप्तचर थे, उनको कैद कर लिया गया । क्योंकि आचार्य मंगल देव ने भी अपने गुप्तचर जगह-जगह बिठा रखे थे । चारों दिशाओं में भेज रखे थे । अरब के गुप्तचरों की गिरफ्तारी होने के बाद सलीम तक कोई खबर नहीं पहुंच पाई । कि भारत में भी एक लाख युवाओं की फौज एक साधु के नेतृत्व में चली आ रही थी । युद्ध के समय जब दोनों सेनाएं आमने-सामने होती हैं ? तब सलीम को पता चलता है कि यह तो कोई नई सेना आई है । हमसे युद्ध लड़ने के लिए, तब भी वह इतना घमंडी था, सोचता है कि यह तो काफिरों की सेना है, भला ! यह है हमारा क्या बिगाड़ पाएगी ? आज तक हम हिंदुओं को गाजर मूली की तरह काटते आए हैं और काटते रहेंगे । इनको तो हमारे मुट्ठी भर सैनिक ही इन काफिरों को मौत के मुंह सुलाएगें । सलीम की सेना में भी एक लाख से भी अधिक सैनिक थे ।

Edit with WPS Office

10000 अरबी सैनिकों को तो अकेले आचार्य मंगल देव और उनके सैनिकों ने मृत्यु के मुंह सुला दिए थे । लगभग 90 हजार के आसपास सलीम की सेना में सैनिक बचे थे ।

और हमारी सेना में हरित ऋषि और आचार्य मंगल देव के नेतृत्व में जो सेना आ रही थी । उस सेना में भी एक लाख से अधिक सैनिक थे । लेकिन सारे के सारे परशिक्षित सैनिक नहीं थे, उनको एक-दो दिन की ट्रेनिंग दी गई थी । लेकिन सभी में देश के लिए मर मिटने की भावना थी । जिसके कारण उनका साहस और लड़ने की शक्ति बढ़ जाती थी । उनके अंदर सबसे बड़ी आग यह थी, कि हमें अपने देश की रक्षा करनी है, इस देश को गुलाम होने से बचाना है । अगर हमने लापरवाही की तो हमारे गांव के गांव राज्य के राज्य लगभग सभी राज्य गुलाम बना लिए जाएंगे । (इन युवाओं के आगे देश की रक्षा का संबंध था) ।

अब सलीम की सेना का मकसद था, कि हमें इस देश को लूटना है, पीटना है ,काटना- मारना । स्त्रियों के साथ बलात्कार करना आदि है । यह सब करना इनकी सोच थी । धन दौलत आदि सब कुछ लेकर जाना है ।

अब दोनों सेनाओं की तरफ से शंखनाद होता है, दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध होता है । बप्पा रावल ने अपने 25000 सैनिक पीछे की तरफ रखे हुए थे । ताकि जब हमारे सैनिक को सांस फूलने लगे तो अचानक से 25000 सैनिक आकर उनकी सहायता करें। (इस प्रकार सोचकर 25000 सैनिक बप्पा रावल ने पीछे की तरफ खड़े किए ताकि जरूरत पड़ने पर मदद करें)

अरब के योद्धा भी काफी मजबूत थे । लडाकू थे, प्रशिक्षित थे, ट्रेनिंग से निपुण थे । अब दोनों तरफ के सैनिक युद्ध लड़ते लड़ते हमारे देश के जो युवा थे जो सैनिक थे अरब के सैनिकों पर भारी पड़ जाते हैं । क्योंकि उनके अंदर देश की रक्षा की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी । लड़ने का जोश और जज्बा था । और अरब के सैनिकों को गाजर मूली की तरह काटते जा रहे थे । जब अरबों के सैनिकों की संख्या कम होती गई । सलीम ने भी अपने पीछे की तरफ जो 20000 के लगभग सैनिक रखे हुए थे, ताकि जब सेना हारने लगे तो अचानक से हमला करके हमारी रक्षा करें । जब सलीम ने अपने 20000 सैनिक आगे की तरफ भेजें, अपने सैनिकों की सहायता के लिए । तो दूसरी तरफ यह दृश्य देखकर हमारी सेना में हड़कंप मच गया

Edit with WPS Office

। तभी बप्पा रावल ने अपने पीछे की तरफ जो 25000 सैनिक थे, आगे की तरफ भेजें । तब यह सब देखकर सलीम तिलमिला उठता है । सोचने के लिए मजबूर हो जाता है । और घबरा जाता है कि यह सब क्या हो रहा है ? क्या हम काफिरों के हाथों मारे जाएंगे ? हमारी सेना में सैनिकों की संख्या घटती जा रही है ?क्या करें ! आज तक हम इन काफिरों को काटते पीटते आए हैं , धराशाई करते आए हैं । लेकिन आज यह क्या हुआ । अब सलीम के पास 25 से 30000 सेना बची थी । अरबों के सैनिक अत्यधिक मात्रा में मारे गए थे । जबकि प्रशिक्षित सैनिक थे अरबों के क्योंकि वह सब पाप असत्य की तरफ थे । और हमारे सैनिक सत्य की तरफ थे । तो इस प्रकार सलीम संधि करने के लिए मजबूर हो जाता है । और वह अपने एक दूत को भेजता है । अपने दूत से कहता है कि तुम सफेद ध्वजा लेकर बप्पा रावल के पास जाओ । उससे कहो कि हम संधि करना चाहते हैं । बप्पा रावल के पास जब वह दूत जाता है, बप्पा रावल उसकी बातों को सुनते हैं । और कहते हैं ठीक है अगर संधि करनी है तो अपने सेनापति को यहां भेजो । फिर सलीम आता है संधि करने के लिए, तो अब बप्पा रावल संधि का विषय हरित ऋषि अपने गुरु पर छोड़ते हैं । हरित ऋषि कहते हैं सलीम से अब हम संधि नहीं करेंगे । आप देख रहे हैं युद्ध का परिणाम हमने युद्ध होने से पहले ही कहा था,? क्यों इन लाखों युवाओं की मौत का अपने सर पर पाप भोग रहे हो । हमने आपको पहले ही समझाया था । इतने सैनिक मरेंगे उनके माता-पिता रोएंगे । इतना सब कुछ होगा क्यों इतनी हत्याओं का जिम्मेदार बना रहे हो अपने को , हमारी तुम्हारे साथ कोई दुश्मनी नहीं थी, लेकिन तुम नहीं माने और युद्ध हो कर रहा । तुम लोगों ने सोचा और कहा कि हम तो इन काफिरों को मुस्लिम बना कर ही रहेंगे । लेकिन तुम लोग भूल गए और तुमने हमारी बात नहीं मानी ।

अब इसके बाद हरित ऋषि कहते हैं सलीम से कि तुमने सिकंदर का इतिहास पढ़ा है । सलीम बोलता है , हां , ऋषिवर मैंने पढ़ा है, हरित ऋषि कहते हैं सिकंदर का एक सैनिक था जो सिकंदर का सेनापति था । जिसका नाम सेल्यूकस था । वह जब आक्रमण करने के लिए आता है । तो अपने साथ अपनी बेटी हेलेना को साथ लेकर आता है । और चंद्रगुप्त मौर्य ने सेल्यूकस को हराया था, तो उसने भी संधि का प्रस्ताव रखा था । और

Edit with WPS Office

आचार्य चाणक्य ने उसकी संधि का विषय हेलेना की शादी चंद्रगुप्त से हो जाए । यह शर्त रखी थी । तभी संधि हो पाई थी । तभी मित्रता बन पाई थी ।

इसी प्रकार तुम अपनी बेटी को लेकर आए हो । इसका विवाह बप्पा रावल के साथ करवाना होगा । तभी संधि होगी । यह सब सुनकर सलीम के मन की मन में रह जाती है । सलीम सोचता है अगर युद्ध का क्षेत्र नहीं होता तो मैं कुछ करता भी और सोचता है यह जो मेरे बचे हुए 30000 सैनिक हैं यह सब मारे जाएंगे । यदि संधि करने के बाद बच गए, तो मैं किसी और देश पर हमला कर दूंगा । इस प्रकार सलीम के मन में चल रहा था और आखिर में उसे राजी होना पड़ता है । अपनी बेटी का विवाह बप्पा रावल से करवाते हैं । और मित्रता बन जाती है । बप्पा रावल फिर एक चक्रवर्ती सम्राट बन जाता है । **इस युद्ध के बाद आने वाले चार शताब्दी तक लगभग 400 वर्षों तक भारत पर किसी अरबी का आक्रमण नहीं हुआ ।**

- कोटि-कोटि धन्यवाद ऐसे ऋषि और आचार्य को जिनके कारण भारतवर्ष 400 वर्षों तक भारत पर किसी अरबी का आक्रमण नहीं हुआ । इन दोनों महापुरुषों हरित ऋषि और आचार्य मंगल देव के पास अपनी कोई सेना नहीं थी । लेकिन घर-घर जाकर लोगों को जगाया, उन्होंने देशभक्ति की भावना दी, उपदेश दिए , उनके सभी के मन में एक चिंगारी की क्रांति सी ला दी। और अपने देश को गुलाम होने से बचाया ।।

➤ अब हम इस भाग को यहीं विराम देते हैं और बप्पा रावत के जीवन चरित्र के बारे में बताते हैं ।

• { बप्पा रावल का जीवन चरित्र }

कुछ इतिहासकार मानते हैं दाहिर के समय बप्पा रावल 10 वर्ष के थे और कुछ 3 वर्ष का मानते हैं । देखा जाए तो 10 वर्ष से ही उचित लगता है एवं

Edit with WPS Office

सही लगता है । क्योंकि दाहिर की पराजय और उसकी मृत्यु के बाद आने वाले 5 वर्षों तक मुसलमानों विदेशियों का शासन रहा । इस समय की अवधि पर ऋषि हरित और आचार्य मंगलदेव लोगों को समझाते हुए कि अपने देश को कैसे आजाद कराना इस पर कार्य कर रहे थे ।

इस हिंदवी शेर का रक्त से नहाया हुआ कलेजा, जब अरब की धरती पर जाके , तब आने वाले 400 सालों तक किसी भी विदेशी ने भारत की तरफ आंख उठाने की हिम्मत तक नहीं हुई । आखिर कौन है वह योद्धा आए जानते हैं । उस बब्बर शेर का नाम है बप्पा रावल, जिसके नाम से दुश्मनों के छक्के छूट जाते हैं । आखिर वह देखने में कैसा लगता होगा ? जो देवी के सामने अपनी तलवार से एक ही बार में दो भैंसों की बली देता । 35 हाथ की धोती पहनता और 16 हाथ का दुपट्टा पहनता , जिसकी हाइट 9 फीट थी , और 32 मण की खड़क से युद्ध लड़ता , जिसकी सेना में 12 लाख 72 हजार सैनिक थे । हम बात कर रहे हैं मेवाड़ के (कालभोज) बप्पा रावल की वैसे तो गुहिलादित्य गुहिल राजपूत की स्थापना 566 ईस्वी में गुहिलादित्य ने की थी ।

परंतु बप्पा रावल ने इस वंश को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया । इसी कारण इन्हें गुहिल वंश का वास्तविक संस्थापक भी कहा जाता है । **इसी वंश में आगे चलकर राणा कुंभा, राणा सांगा, और महाराणा प्रताप जैसे महान वीर योद्धा हुए ।** बप्पा रावल के नाम पर ही पाकिस्तान के शहर **रावलपिंडी** का नाम पड़ा । आज भी बप्पा रावल के नाम पर इस शहर का नाम है ।

- आइए जानते हैं इस वीर योद्धा के इतिहास को जो हमारे स्कूलों की किताबों में नहीं पढ़ाया जाता ।

बप्पा रावल का जन्म 713 ईस्वी में हुआ था । इनके पिता का नाम महेंद्र द्वितीय था । जो राजस्थान के ईडर के शासक थे । जब बप्पा रावल 3 वर्ष के थे, तब इनके पिताजी की हत्या कर दी गई थी । इसी वजह से इनकी माता ने इन्हें कुशलता पूर्वक पुरोहितों के पास भिजवा दिया था । बप्पा रावल का लालन पालन भील समुदाय के बीच हुआ । इनकी माता इनके पिता के दुखों को सह न सकी । और सती हो गई । अतः इनको अपने दोनों माता-पिता का प्यार नहीं मिला था । बप्पा रावल की शिक्षा हरित ऋषि के देखरेख में हुई थी । बप्पा रावल हरित ऋषि से बहुत प्रभावित थे । अपने

Edit with WPS Office

गुरु के भक्त भी थे । बप्पा रावल की इस भक्ति को देखकर हरित ऋषि उनसे बहुत प्रभावित हुए। बप्पा रावल का वास्तविक नाम **कालभोज** था । इन्हें **बप्पा** की उपाधि हरित ऋषि ने ही दी थी । और **रावल** की उपाधि भील समुदाय के लोगों ने दी थी । इसीलिए इनका नाम बप्पा रावण पड़ा । जब बप्पा रावल की शिक्षा पूर्ण हुई । तब भारत पर अरबों के आक्रमण हो रहे थे । हरित ऋषि ने बप्पा रावल में वह प्रतिभा देखी, जो सनातन धर्म की रक्षा कर सके । इन आक्रमणकार्यों को विफल कर सके । हरित ऋषि ने बप्पा रावल को एक ऐसे स्थान के बारे में बताया जो धन ऐश्वर्य और राजा बन के शासन करे । इसी चाहत को पाने के लिए अपनी विशाल सेना को संगठित किया । हरित ऋषि ने बप्पा रावल को आशीर्वाद दिया । की मेवाड़ में सदैव उनके वंशजों का ही अधिकार रहेगा । और हरित ऋषि का यह वरदान आखिर सच साबित हुआ । **(1947 ई तक मेवाड़ पर सिसोदिया राजपूत वंश का शासन था ।** जो इसी वंश की अगली पीढ़ी थी) बप्पा रावल 723 ईस्वी में गद्दी पर बैठे । इस समय चित्तौड़ पर मानमारी का अधिकार राज्य था । बप्पा रावण ने हरित ऋषि के आशीर्वाद से 734 ईस्वी में चित्तौड़ के राजा मानमोरी को हराकर चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया । इससे पहले दोनों राजा अरबों के लुटेरो से एक साथ लड़े थे । क्योंकि राजा मान बप्पा रावल के मामा भी थे । इसलिए बिना युद्ध लड़ाई के अपना राज्य अपने भांजे बप्पा रावल को दे दिया । अरबों का 712 ईस्वी में सिंध जीतने के बाद सिंध पर राज्य स्थापित हो गया था । तथा अरबी आक्रमणकार्यों का डर दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा था । अरबी आक्रमणकार्यो ने छोटे-छोटे राज्यों को युद्ध में परास्त किया । और उन पर अधिकार करते चले गए । और उस समय उनकी सेना आज के गुजरात, राजस्थान के कई हिस्सों में फैल गई थी । इन आक्रमणकार्यों का डटकर सामना भारत के कुछ अन्य महान राजाओं और योद्धाओं ने किया । **जिनमें गुर्जर प्रतिहार नरेश ' प्रथम, ने, और नागभट्ट राजपूत के अन्य योद्धाओं, दक्षिण के चंद्रदाय, और मेवाड़ के बप्पा रावल भी प्रमुख थे ।** बप्पा रावल ने अरबों से हारे हुए राजाओं को कई छोटे -छोटे रियासतों को संगठित किया । और प्रतिहार नरेश प्रथम, और दूसरे प्रतिहार नरेश नागभट्ट, जैसे प्रतापी राजाओं को साथ लेकर एकजुट होकर एक विशाल हिंद सेना का गठन किया । और यह विशाल हिंदवी सेना

Edit with WPS Office

निकल गई अरबों को युद्ध में प्रास्त करने के लिए, और इस सेना का नेतृत्व कर रहे थे बप्पा रावल । इस हिंदवी सेना ने ना केवल अरबों को रोका, अपितु इन्हें युद्ध में हराकर ईरान और खुरासान बलूचिस्तान तक पीछे धकेल दिया । बप्पा रावल की सेना ने अरबी आक्रमणकार्यों जुनैत को 725 ईस्वी में युद्ध में हराया था । और ईरान के हजाज द्वारा भेजी गई सेना को बुरी तरह पराजित किया । बप्पा रावल ने सिंध पर हमला किया और उस पर कब्जा करके मुस्लिम शासक का खात्मा किया । और बप्पा रावल इतने पर नहीं रुके । गजनी के शासक सलीम को हराकर गजनी पर भी अधिकार कर लिया । बप्पा रावल ने अरबी लुटेरों की निगरानी करने के लिए जगह-जगह सैनिय चौकी बनवाई । माना जाता है कि बप्पा रावल का इतना बड़ा खौफ था । बप्पा रावल के प्रकोप से बचने के लिए कई मुस्लिम शासको ने अपनी लड़कियों पुत्री का विवाह बप्पा रावल के साथ किया । सलीम ने भी अपनी बेटी का विवाह बप्पा रावल के साथ किया । विवाह होने के पश्चात ही संधि हो पाई थी । और इसी संधि के कारण आने वाले 400 वर्षों तक अरबों के किसी भी लुटेरों ने भारत की तरफ आंख उठाकर देखने का साहस भी नहीं किया । बप्पा रावल की 100 पत्नियां थी । जिनमें से 35 मुस्लिम शासको की पुत्रियां थी । बप्पा रावल का शासन 723 ई से 753 इसी तक लगभग 30 वर्षों का था । राज्य त्याग के पश्चात बप्पा रावल ने सनातन धर्म के अनुसार सन्यास ग्रहण कर लिया । और भगवान शिव की भक्ति में लीन हो गए । यह शिव जी के बहुत बड़े भक्त थे । और इन्होंने ही शिव के एकलिंग मंदिर की स्थापना की थी ।।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- ## 12. ।। बारहवां पृष्ठ ।।

- **{ क्या आर्य समाज मूर्ति पूजा विरोधी है ?**

Edit with WPS Office

और आर्य समाज गुरुडम पन्थ के सिद्धांतों का तुलनात्मक वर्णन : उपासना का अर्थ }

संसार मैं दो प्रकार की मूर्ति होती है, विषय यह है ज्यादातर लोग यह नहीं जानते कि आर्य समाज है क्या, बस हम लोग इतना ही जानते हैं, आर्य समाज एक ऐसे लोगों का संगठन है, जो मूर्ति पूजा को नहीं मानते, मूर्ति पूजा नहीं करते , मूर्ति पूजा का विरोध करते हैं, आर्य समाज तो मूर्ति पूजा का खंडन करते हैं, इसके अलावा आर्य समाज के बारे में आम जनता कुछ नहीं जानती।

आर्य समाज के बारे में बहुत गलत विचार आज समाज के प्रति कुछ लोगों ने फैला दिया है। और आज ज्यादातर लोग यही मानते हैं की आर्य समाज तो मूर्ति पूजा का विरोधी है विरोध करता है। मूर्ति पूजा नहीं मानता ऐसे बहुत लोग सोचते हैं। आज मैं इस समस्या का समाधान करता हूं।

दुनिया में अगर सबसे बड़ा मूर्ति पूजक है तो वह आर्य समाज है, आप कहोगे कैसे सुनो आर्य समाज से बड़ा कोई मूर्ति पूजक नहीं है। आप कहोगे कैसे? **हमने तो यही सुना है आर्य समाज मूर्ति पूजा का खंडन करता है मूर्ति पूजा नहीं करता।**

देखो दुनिया में दो प्रकार की मूर्ति है, एक मूर्ति भगवान के द्वारा बनाई हुई। और दूसरी मूर्ति इंसान द्वारा बनाई गई मूर्ति है। मैं आपसे पूछना चाहता हूं, आप मुझे बताएं। भगवान की बनाई हुई मूर्ति अच्छी है, या इंसान की बनाई हुई मूर्ति अच्छी है?

और देखो सबसे बड़ी बात भगवान की बनाई हुई मूर्ति ना केवल अच्छी होगी, बल्कि भगवान की बनाई मूर्ति सच्ची भी होगी। और इंसान की बनाई हुई मूर्ति नकली होती है और भगवान की बनाई मूर्ति असली होती है।

भगवान की बनाई हुई मूर्तियों को अगर आप उसको खिलाओगे तो वह भोग खाएंगी, उससे बोलोगे बोलेगी, और इंसान की बनाई गई मूर्ति मंदिरों के अंदर रखी है, आप लोग वहां पूजा के लिए जाते हो भोग लेकर जाते हो। दूध चढ़ाते हो, इतना सब कुछ करते हो। क्या आज तक उस मूर्ति ने भोग को खाया है, आपके द्वारा चढ़ाया गया दूध पिया है? क्या आज तक किसी

Edit with WPS Office

मूर्ति ने आप लोगों को आशीर्वाद दिया है? क्योंकि यह इंसान की बनाई हुई मूर्ति है, यह नकली मूर्ति है। असली मूर्ति नहीं है, क्या आप लोग जानते हो भगवान की बनाई मूर्ति कैसी है आइए हम बताते हैं, आप हम सभी लोग भगवान की बनाई हुई मूर्ति है, अगर भगवान की बनाई हुई मूर्ति को खिलाओगे तो यह खाती भी है, कपड़े पहनाओगे कपड़े भी पहनेगी, और आपको आशीर्वाद भी देगी, यह है असली मूर्ति आर्य समाज की, आर्य समाज नकली पूजा नहीं करता, उसकी पूजा करता है,

ऋषि लोग कहते हैं मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, माता-पिता देवो भव, अतिथि देवो भव, आचार्य गुरु देवो भव, और पति-पत्नी ये सभी देवता हैं। इनकी पूजा करनी चाहिए, पूजा का मतलब यह नहीं होता की आरती उतारो उसका मंत्र जाप करो। उसका व्रत रखो।

पूजा का मतलब होता है, अपने बुजुर्ग माता-पिता की सेवा करो उनके लिए अच्छे वस्त्र उनका कहना मानो उनके सभी कार्य पूर्ण करो, पत्नी से प्रेम से बोलो यही सबसे अच्छी पूजा है। इसी को पूजा कहते हैं आर्य समाज इसी काम को भलीभाति करता है।आर्य समाज के जितने भी गुरुकुल हैं, इन्हीं गुरुकुलों में बच्चों को शुद्ध ज्ञान होता है, अपने धर्म के बारे में जानकारी होती है, गुरुकुलों में रहकर बच्चों का निर्माण होता है, हजारों की संख्या में अनगिनत विद्यार्थी गुरुकुल में पढ़ते हैं, यह भी सबसे अच्छी पूजा है, जिसके कारण लोगों को पता लगता है कि मैं कौन हूं। और मुझे क्या करना है, सही क्या है, गलत क्या है। कितने सारे वृद्ध आश्रम आर्य समाजियों के चलते हैं,पहला वृद्ध आश्रम आर्य समाज के द्वारा खोला गया। जहां पर जाकर के लोगों को आश्रय दिया जाता है।जिनका इस दुनिया में कोई नहीं है, उन लोगों को। यह सच्ची मूर्ति पूजा है,।

दूसरी बात यह है हम पर यह आरोप लगाया जाता है आर्य समाजियों पर यह जो पत्थर बड़ी मूर्तियां हैं इनका हम खंडन करते हैं इसकी पूजा नहीं करते यह बात सच है। लेकिन इसमें कोई संदेह भी नहीं इंसान की बनाई हुई मूर्तियों की हम पूजा नहीं करते लेकिन कभी भी इनका हम निराधार भी नहीं करते, आज तक हमारे इतिहास में जब-जब इन पत्थर की बनी मूर्तियों पर भी संकट आया है, विदेशी विधर्मियों ने जब इन मूर्तियों को अपमानित करना चाहा। तब तब मूर्तियों के सम्मान के लिए जो कोई खड़ा हुआ है तो

Edit with WPS Office

उस संगठन का नाम है आर्य समाज।
हम भले ही मूर्ति पूजा नहीं करते लेकिन अपने महापुरुषों की मूर्तियों के सम्मान में सबसे आगे रहते हैं, और आपको एक बात और बता दूं, आज तक उन मूर्तियों में भगवान समझा हुआ है अन्य लोगों ने , पत्थर की मूर्ति को भगवान माना हुआ है। लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूं, यह जो मूर्ति पूजा हमारे समाज में चली हुई है, ज्यादा प्राचीन नहीं है। इस पृथ्वी पर आज तक ऐसा कोई महापुरुष नहीं आया, जिसने मूर्ति पूजा का विधान किया हो , या स्वीकार किया हो। बल्कि जितने भी समाज सुधारक है महापुरुष है सब ने मूर्तियों का खंडन किया है। विरोध किया है। यह विरोध केवल महर्षि दयानंद ने ही नहीं किया, विरोध केवल आर्य समाज ही नहीं करता जड़ पूजा का बल्कि जितने भी विद्वान है, समाज सुधारक है, सब ने विरोध किया है,
आप लोगों ने गुरु नानक देव जी का नाम तो सुना होगा, गुरु नानक देव कहते हैं,

___ जो पत्थर को मानते देव
वाकि व्यर्थ गई सभी सेवा

जो पत्थर को देवता मानकर पूजता है, गुरु नानक कहते हैं उसकी सारी पूजा बेकार है गई। कोई फायदा नहीं क्योंकि उन्होंने पत्थर को भगवान मान लिया। भगवान पत्थर का नहीं होता है, भगवान तो चेतन है।

__कबीर दास क्या कहते हैं सुने__

पत्थर पूजे तो हरि मिले, मैं पूजू पहाड़।

कबीर दास कहते हैं अगर तुम लोगों को पत्थर पूजने से भगवान मिल जाए, तो मैं बहुत बड़ा पत्थर पूजने के लिए तैयार हूं।
दादू महाराज ने मूर्ति पूजा का विरोध किया, कबीर दास ने भी मूर्ति पूजा का खंडन किया, आदि गुरु शंकराचार्य ने भी मूर्ति पूजा का खंडन किया। आर्ष सन्यासी परंपरा के स्वामी विवेकानंद ने भी मूर्ति पूजा का विरोध किया।
अपने ग्रंथो मे मूर्ति पूजा का खंडन किया। सभी महापुरुष लोगों ने मूर्ति का विरोध किया। लेकिन लोग मूर्ति के खण्डन का आरोप महर्षि दयानंद पर लगाते हैं।

Edit with WPS Office

मूर्ति पूजा जैनियों से चली, जैनियो से पहले मूर्ति पूजा का कहीं विधान नहीं था। इन्होंने अपने 24 तीर्थंकर घोषित किए। परमात्मा निराकार है परमात्मा निराकार है। उसकी कोई मूर्ति नहीं हो सकती, परमात्मा कण-कण में व्याप्त है, कण-कणमें होने से वह सर्वव्यापक है। जिस परमात्मा की कोई आकृति नहीं भला उसकी मूर्ति कैसे बन सकती है। परमात्मा का कोई रूप नहीं है उसकी मूर्ति नहीं बन सकती।

आप सभी लोग समझने का प्रयास करो, जब परमात्मा की कोई मूर्ति ही नहीं, । जैनियो ने इसलिए मूर्ति पूजा चलाई उस समय लोग निराकार परमेश्वर का ध्यान करते थे। इन लोगों ने सोचा और ऐसा फार्मूला निकाला, व्यक्ति ध्यान में बैठता है, पर उसका मन तो लगता नहीं इस प्रकार इन लोगों ने कहा, इस प्रकार लोगों को बहकाया, और लोगों से कहा हमने भगवान की मूर्ति बना दी, आओ और सुबह शाम इस मूर्ति की पूजा करो। आपका कल्याण होगा। जैनियों के ऐसा करने पर ब्राह्मणों को चिंता हुई। क्योंकि लोग मूर्तियों की और आकर्षित हो रहे थे। लोग सनातन धर्म छोड़ जैनियों का धर्म अपना रहे थे। इसलिए ब्राह्मणों ने भी अपने धर्म को बचाने के लिए अपने महापुरुषों की मूर्तियां बनाई। जैनियों ने अपने 24 तीर्थंकर जो बनाए थे, ब्राह्मणों ने इनको 24 अवतार घोषित कर दिए। और भगवान के 24 अवतार बताएं।

आर्य समाज कोई मत नहीं है, किसी का संप्रदाय नहीं है। आर्य समाज एक आंदोलन का है,। आर्य समाज एक क्रांतिकारी विचारधारा का नाम है। दुनिया में जितने भी धर्म है सनातन धर्म को छोड़कर अन्य सभी किसी विशेष व्यक्ति द्वारा बनाए गए हैं। इनका प्रवक्ता इनका अपना गुरु होता है। 1000 साल पहले इस धरती पर कोई भी मुस्लिम धर्म नहीं था। आज से 2000 साल पहले ईसाई धर्म नहीं था। जैन मत महावीर स्वामी जी ने चलाया। बौद्ध धर्म महात्मा गौतम बुद्ध के द्वारा चलाया गया। अब आप पूछोगे सनातन धर्म किसने चलाया? हम आपको बताते हैं। सनातन धर्म परमात्मा द्वारा प्रकट होता है। जिसका न आदि है और न अंत है। भगवान राम से पहले भी सनातन धर्म था भगवान श्री कृष्ण के समय भी सनातन धर्म था। गौतम ऋषि वेदव्यास, जैमिनी, कणाद कपिल मुनि ऋषि दयानंद यह सभी महापुरुष सनातन धर्म के संस्थापक नहीं है। यह सभी महापुरुष

Edit with WPS Office

सनातन धर्म के प्रचारक हैं। हमारा धर्म ग्रंथ वेद है। गीता ,रामायण ,महाभारत, यह हमारे धार्मिक ग्रंथ है। वेदों को पढ़ना पढ़ना सुनाना आर्यों का परम धर्म है। हम सभी सनातनियों का परम धर्म है। राम कृष्ण ऋषि लोग आदि महापुरुष भगवान वेदों को ही पढ़कर विद्वान हुए थे। एक दिन ऋषि दयानंद से उनके किसी अनुयाई ने पूछा ऋषिवर कि आप न्यूतन को मानते हैं या पुरातन को ऋषि दयानंद कहते हैं, मैं ना न्यूतन को मानता हूं , न पुरातन को,लोगों ने पूछा ऋषिवर ये आप क्या कह रहे हो। महर्षि दयानंद ने कहा, पुरातन को इसलिए नहीं मानता एक दिन न्यूतन था, न्यूतन को इसलिए नहीं मानता कालांतर में पुरातन होगा। ऋषि ने कहा मैं सनातन धर्म को मानता हूं।

- आइए हम कुछ परमाण से मूर्ति पूजा को जानने का प्रयास करते हैं , कि हमारे शास्त्रों में मूर्ति पूजा है या नहीं।_______

___यजुर्वेद ३२/३____

उस परमात्मा की कोई मूर्ति आकृति नहीं है, उसे तोला या नापा नहीं जा सकता, हमें उस परमात्मा का नाम स्मरण अर्थार्त उसकी आज्ञा का पालन करना चाहिए, धर्म युक्त कामों को करना बहुत कीर्तन देने वाला है

___यजुर्वेद 40/1___

इस जड़ चेतन जगत में जो कुछ भी है वह ईश्वर की कृपया से है ईश्वर का सभी वस्तुओं में वास है, ईश्वर के द्वारा त्यागे गए का भोग कीजिए, अधिक लालच मत करो, यह धन आदि सब किसका है? अर्थात ईश्वर के अलावा किसी का नहीं।

____ यजुर्वेद 40/8____

वह परमपिता परमात्मा सर्वव्यापक ,काया रहित, नाडियो से रहित, वह घावों से रहित, पवित्र ,पाप रहित, विद्वान, मननशील, सर्वव्यापक ,स्वयंभू,(स्वयं उत्पन्न होने वाला) उस ने सृष्टि के आरंभ से ही सब के लिए यथायोग्य के साधन सुविधाओं की व्यवस्था की है।

Edit with WPS Office

___यजुर्वेद 40/15___

यह शरीर वायु अमृत आदि से बना हुआ है। शरीर नाशवान है। इसलिए है यजमान तुम ईश्वर के ओम का जाप करो, जो परमपिता परमेश्वर का नाम है वह परमात्मा ओम है।

____ अथर्ववेद 20/81/1___

हे इंद्रदेव! सैकड़ो देवलोक ,सैकड़ो भूमिया ,तथा हजारों सूर्य भी उत्पन्न हो जाए, तो भी उस परमात्मा की कोई बराबरी नहीं कर सकता, वह ईश्वर कण -कण में व्याप्त है। वह परमात्मा एक है।

__ गीता अध्याय आठवां श्लोक 13 मंत्र__

जो पुरुष ओम ॐ एक अक्षर रूप ब्रह्म का उच्चारण करता है, और उसके अर्थ स्वरूप मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिंतन करता हुआ, शरीर को त्याग कर जाता है, वह पुरुष परम गति को प्राप्त होता है।

__ भागवत पुराण स्कंद 3, मंत्र 21,22,__

मैं सब प्राणियों में जीवात्मा रूप में व्याप्त हूं। जो मेरा अपमान करके मूर्ति पूजा करते हैं, वह पाखंडी है पाखंड करते हैं। मैं मूर्तियों में नहीं सबके अंदर रहने वाला हूं। जो मनुष्य मुझे छोड़कर मूर्तियों की पूजा करते हैं। वह अपने अज्ञानता से सुखी राख मैं ही हवन करते हैं। जिसका कोई लाभ नहीं ।

___ श्वेता उपनिषद___

परमात्मा का कोई रूप नहीं जिसे आंख से देखा ना जा सके। उसे कोई भी आंख से नहीं देख सकता। वह हृदय में स्थित है, वह ओम् नाम लेने से प्रसन्न होता है। जो उसे हृदय और मन से जान लेता है, वह आनंद को प्राप्त होता है।

___यजुर्वेद 40/17___

ऊं खं ब्रह्म

Edit with WPS Office

उस परमात्मा का ओम नाम आकाश के समान व्यापक है।

आदि शंकराचार्य अपनी पुस्तक परा पूजा में लिखते हैं _______

तीर्थो में, पशु की बलि देने वाले यज्ञों में तथा लकड़ी पत्थर और मिट्टी से बनी मूर्तियां मैं जिसका मन लगा है, वे मनुष्य मूढ मति है।

___२_____

अपने घर में रखी खीर को छोड़कर मूर्ख भीख की इच्छा करता है। पत्थर मिट्टी लड़कियों को देवता मानता है।

___३___

पत्थरों से बने भवन में बंधा बैठा वह देवता पत्थर ही है।
अरे पंडित यह तो बता कि वह देवता रहता कहां है ?

___४___

मूर्तियों की पूजा नीच कर्म है,... वेद के अनुसार परमात्मा की उपासना ही उत्तम है।

_____कठोपनिषद______

वह परमात्मा प्राणियों और अप्राणियों में छुपा हुआ है। वह सामने नहीं है, सूक्ष्म दृष्टि वाले लोग, अपनी तीवृ सूक्ष्म बुद्धि द्वारा जान लेते हैं।

_____ मुण्डक उपनिषद_____१/२/२

वह ब्रह्म निश्चय ही प्रकाशमान है, मूर्तिरहित, सर्वव्यापक बाहर, और भीतर सर्वत्र वर्तमान, जन्मरहित, मन से शून्य, पवित्र, सूक्ष्म ,अविनाशी, प्रकृति और जीव से सूक्ष्म है।

______श्वेता उपनिषद______१/१५

जैसे तिलों में तेल, दही में मक्खन, स्त्रोतों में जल,अरणियो मैं अग्नि ,पेरने बिलोन, खोदने और रगड़ने से प्राप्त होती है। इसी प्रकार परमात्मा आत्मा में ग्रहण किया जाता है। वह सत्य और तप से तथा ज्ञानदृष्टि से देखा जाता है।

______ श्वेता उपनिषद______ १/१६

Edit with WPS Office

वह सर्वव्यापक दूध में मक्खन की भांति सब में समाया हुआ है। आत्मविद्या और तप उसकी प्राप्ति का मूल् है। वह ब्रह्म उपनिषद का परम रहस्य है।

___ देवी भागवत महापुराण__१/७____

पानी के तीर्थ नहीं होते, मिट्टी और पत्थरों के देवता नहीं होते, वे किसी भी काल में पवित्र नहीं करते, प्रभु भक्त तो इस संसार में क्षण भर में पवित्र कर देते हैं।

___ देवी भागवत पुराण_३/७/९____

ब्रह्मा बोले! हे मुने! निर्गुण का रूप दृष्टिगोचर नहीं होता, कारण यह है की दृश्य तो नश्वर है,अरूप का दर्शन कैसे हो सकता है।

___विष्णु पुराण__ २/१४_२९,३०____

जन्म से रहित आत्मा एक, व्यापक सम शुद्ध निर्गुण और प्रकृति से परे है। जन्म वृद्धि आदि से रहित सर्वव्यापी अवयव है।__ **मंत्र २९__** में

हे राजन! वह परम ज्ञानमय है असत नाम और जाति आदि से उस सर्वव्यापक का योग न कभी हुआ है, और न होगा।__**[३०]**
नोट__ विष्णु पुराण में विष्णु शब्द की व्याख्या सर्व व्यापक अर्थ में की गई है।

___विष्णु पुराण__अंश_ ३/१/४५____

यह संपूर्ण विश्व परमात्मा की ही शक्ति में व्याप्त है, अत इसीलिए वह विष्णु कहलाता है। क्योंकि विश धातु का अर्थ प्रवेश करना है।

___विष्णु पुराण__४/१__ मंत्र_८३,८४____

अर्थात जिस अजन्मा, सृवमय विधाता परमेश्वर का आदि मध्य अनंत स्वरूप स्वभाव और सार हम नहीं पाते।८३।
कला मुहूर्त आदिमय काल भी जिसकी विभूति के परिणाम का कारण भी नहीं हो सकता। जिसका जन्म मरण नहीं होता, जो सनातन सर्वदा एक रूप

Edit with WPS Office

है तथा जो नाम रूप से रहित है।८४।

___श्रीमद्भागवत __१/२/५____

ज्योति स्वरूप परमात्मा व्यक्ता व्यक्त पदार्थों से भी सूक्ष्म है। वह आकाश की भाति सर्वधार ,निर्विकार , अंतहीन और उपमारहित है।

_____कूर्म पुराण___ अध्याय १/ पृष्ठ ४___

मैं हृदय में स्थित रहने वाला, बिना पैरों के चलने वाला, बिना हाथों ग्रहण करने का कार्य करता हूं। बिना आंखों के देखता, और बिना कान के सुनता हूं।

___लिङ्ग पुराण___अध्याय 2____ श्लोक 20

परमात्मा प्रकृति और जीव से परे तथा उत्पत्ति और विनाश से रहित है।

_____ ब्रह्मवैवर्त पुराण___अध्याय 2____

परमेश्वर दुख, रोग ,बुढ़ापा, मृत्यु, शोक और भय से सर्वथा रहित है।

______वायु पुराण___अध्याय 4____

गंध वर्ण,रस, स्पर्श रूप, आदि विषयो से रहित, अजन्मा, नित्य, अविनाशी, परमात्मा अपनी ही आत्मा में स्थित है।

_____शिवपुराण वासुसहिता अध्याय 4, मंत्र 1,2__

बिना आंखों के भी वह देखता है, बिना कानों के भी सुनता है, वह सब को जानता है। उसको पूर्ण रूप से जानने वाला कोई नहीं है। उसको परम पुरुष कहा जाता है।

_____भागवत पुराण___५/११____

जिस प्रकार वायु संपूर्ण स्थावर जड़ प्राणियों में प्रविष्ट होकर उन्हें प्रेरित करती है। उसी प्रकार परमेश्वर सर्व साक्षी आत्मरूप से इस संपूर्ण प्रपंच में ओत-प्रोत है।

Edit with WPS Office

___भागवत पुराण__७ स्कंद, ९ अध्याय, ६मंत्र___

जैसे व्यापक अग्नि प्रत्येक पदार्थ में व्यापक होते हुए भी पृथक जान पड़ती है। किंतु मंथन करने पर प्रकट हो जाती है। वैसे ही परमात्मा सभी शरीरों में व्याप्त रहते हुए भी नहीं जान पढ़ते। किंतु धीर पुरुष हृदय मंथन द्वारा सर्वांतर्यामीरूप से उसका अनुभव कर लेते हैं।

___श्रीमद् गीता___अध्याय ८___९ मंत्र___

सर्वज्ञ अनादि सब पर शासन करने वाला, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, सबका धारणकर्त्ता, अचेतन्यरूप, होते हुए भी ज्ञान द्वारा सूर्य की तरह प्रकाशित और प्रकाशस्वरूप अविधा अंन्धकार से अति परे उस परमेश्वर का स्मरण करो।

- ## ____समीक्षा समाधान विचार____

____

प्रियबंधुओ! हमने अनेकों प्रमाण द्वारा आप लोगों को समझाने की कोशिश की है, और अधिक प्रमाण देने के लिए हजारों प्रमाण है। हमारे किसी भी ग्रंथ शास्त्र में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है, ना ही अनेको ईश्वर का विधान है। इस सृष्टि को चलाने वाला ब्रह्मांड को चलाने वाला ईश्वर एक है। उसकी कोई मूर्ति नहीं है, वह आकार रहित है, वह परमेश्वर वायु की तरह व्याप्त है। उस परमेश्वर को कोई नहीं जान सकता , वही जान सकता है जिसने उसका मंथन किया साधारण मनुष्य प्रभु की शक्ति को ना जानते हुए पशु के समान है । वह सब के हृदय में निवास करता है। जो उसे हृदय में जान जाता है उसके स्वरूप को पहचान जाता है वह कैसा है कैसे दिखता है वहीं परमात्मा का जानने वाला है वह प्रत्येक वस्तु में कणकण में व्याप्त है।_____

पतन का कारण : ______ जगन्नाथ पुरी मंदिर में 7000 श्रद्धालुओं के लिए₹300000 की लागत से भोजन बनाया गया । फिर उसे फेंक दिया

Edit with WPS Office

गया क्योंकि वहां के पंडितों ने 18 घंटे की बहस के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि ' भोग ' एक अमेरिका वासी के , जो कि हिंदू नहीं था , किसी पंडित की कृपा से अंदर आने के कारण भ्रष्ट हो गया ।

थाईलैंड की राजकुमारी सिरींधोरन को इसलिए मंदिर के अंदर नहीं आने दिया गया था क्योंकि वह बौद्ध तो थी , पर भारत में जन्मी बौद्ध न थी । 1972 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को इसलिए मंदिर में नहीं जाने दिया गया था क्योंकि वह बेशक हिंदू थी पर उसके पति पारसी थे ।

समीक्षा : ______ हे पौराणिक मंदिर के पुजारी ब्राह्मणों ? क्या आपकी दृष्टि में कोई मनुष्य नहीं है ? सब अछूत है क्या ? क्या आपका कोई पुनर्जन्म नहीं हुआ ? क्या आपको अपने सभी जन्म याद है ? क्या आपके सभी जन्म ब्राह्मण कुल में ही हुए ? अगर यह सब संभव नहीं तो अछूत छुआछूत कैसा ? क्या तुम्हारा ईश्वर शक्तिहीन है ? तुम लोगों के कारण इस देश का पतन हुआ ? जन्म से जाति मानने वाले अनेक ब्राह्मण आज भी छुआछूत अछूत मान रहे हैं और इसी राह पर चल रहे हैं । जो बिल्कुल वेदों के विरुद्ध बात है ।

•___पौराणिक लोगों का विद्वानों से प्रश्न____

प्रश्न_...अगर आप कहते हो। ईश्वर कण-कण में व्याप्त है, तो वह मूर्ति में भी होगा। फिर मूर्ति का विरोध क्यों? कृपया इसका समाधान कीजिए!
उत्तर......आपके प्रश्न का उत्तर आपके प्रश्न में ही है, आपने जानने का प्रयास ही नहीं किया। चलो कोई बात नहीं हम आपको बताते हैं।
आपने मान लिया परमात्मा कण-कण में व्याप्त है, यह आपकी बात सही है वह मूर्ति में भी है पत्थर में भी है मिट्टी में भी है,। क्योंकि आपने उस परमेश्वर की मूर्ति में भगवान की प्रतिमा देख ली । जबकि वह कण-कण में होते हुए भी सर्वव्यापक है। आपने पत्थर की मूर्ति को भगवान बनाकर पूजा। जो बिल्कुल गलत है। ईश्वर कण-कण में व्याप्त है लेकिन आप लोग जड़ को

Edit with WPS Office

पूज रहे हो। मैं पौराणिक लोगों से पूछता हूं पत्थर में ही ऐसी क्या विशेषता है जो उसको पूजते हो ? जिसमें कोई जीव नहीं। जो आपसे बात नहीं करती आशीर्वाद नहीं देती। पूजा करो चेतन की करो । जो बोलती है ,खाती है ,पीती है, आशीर्वाद देती है, उस मूर्ति की पूजा करो। ईश्वर की बनाई मूर्ति को पूजो वेद शास्त्रों में शरीर को ब्रह्म कहा है। जो ब्रह्म को खिलाता है सेवा करता है। अपने माता-पिता दादा दादी सब की सेवा करता है उनकी आज्ञा का पालन करता है उनके द्वारा दिया हुआ ज्ञान को धारण करता है। उसका कल्याण होता है यही पूजा है। मैं आपसे प्रश्न पूछता हूं आप भी मानते हो ईश्वर कण-कण में है तो आप मूर्ति में क्यों पूजते हो ?? मूर्ति को क्यों दूध चढ़ाते हो !क्यों खिलाते हो !क्यों ?
श्रीमद् गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं। जो अपने बड़ों की सेवा करता है उनकी आज्ञा का पालन करता है उनको पूजता है। जो सच्चे मन से मेरा ध्यान करता है वह वास्तव में मेरा ही स्मरण करता है। यहां भगवान श्री कृष्ण निराकार ब्रह्म की बात बता रहे हैं।

•____समीक्षा____२______

प्रिय बंधुओं ! इस अध्याय में पुराणों के माध्यम से परमात्मा का स्वरूप दर्शाया गया है। पुराणों मै परमात्मा का जो स्वरूप परिलक्षित है। वही वेद आदि शास्त्रों में वर्णित है। जिसे आर्य समाज मानता है। फिर पौराणिक लोग यह क्यों कहते हैं की आर्य समाज ईश्वर को नहीं मानता। वास्तविकता यह है कि आर्य समाज जितना परमात्मा को मानता है उतना पौराणिक लोग नहीं मानते। पौराणिक मानवमात्र को पुराणों के माध्यम से ईश्वर से दूर कर रहे हैं। और ऐसे गंभीर गृत में धकेल रहे हैं। जहां से कल्पों तक नहीं निकल सकते। पाठक बन्धुओं यदि पौराणिक हो तो भूल तो हो गई। अब भी संभालने का अवसर है, वेदों की ओर लौटो और जीवन को सफल बनाओ। वेदों का आदेश सर्वभौतिक और फल दायक है। पौराणिको मैं यदि थोड़ा सा भी ओज और पानी है, तो प्रस्तुत अध्याय में पौराणिक मनीषियों को भी वेदानुकूल ईश्वर मान्यताएं हैं। उन्हें मानिए

Edit with WPS Office

इसलिए मानिए कि वे विद्वान हमारे बाप दादा है। हम उन्हें माने तुम भी मानो, सच पूछो तो हम (आर्य) पौराणिक विद्वानों मनीषियो की वेदानुसार बातें जो प्रस्तुत अध्याय में लिखी हैं। उन्हें हदय से मानते हैं। किंतु पौराणिक नहीं मानते, यदि वे मानते होते तो परमात्मा को साकार और जन्म लेने वाला न मानते, वर्तमान परिस्थिति में सिद्ध होता है, की पौराणिक भाई अपने विद्वानों की बात की अवहेलना कर उनका अनादर कर रहे हैं।

भागवत का प्रचलन अधिक है, इसी भागवत के स्कंध 10, अध्याय 84, श्लोक 11, 12 ,13, आंखें खोल कर पढ़ लो। समझकर मिथ्याडम्बर त्याग दो। दु:खद बात यह है पौराणिक भाई जो वैष्णव है। उन्हें रामचरितमानस माननीय है। जिसका अखंड पाठ करके न सोएंगे, और न सोने देंगे। किंतु रामचरितमानस की शिक्षापृद बातें नहीं मानेंगे।

श्री रामचरितमानस में ईश्वर का स्वरूप कहां है क्या बताया है देखिए

बिनु पग चलि

दूसरे रूप में कहा है___

चौदह भुवन एक पति होई,भूत द्रोह तिष्ठही नहि कोई।।

अस प्रभु छाडि भजहि जो आना। ते नर पशु बिनु पूंछ विसाना।।

अर्थात संपूर्ण ब्रह्मांड का एक ही स्वामी है, अतः भूतादि द्रोह ठहर नहीं सकता। ऐसा प्रभू जो सर्वांतरयामी है,

उसे छोड़कर अन्यत्र देवी देवताओं, पाषाण मूर्तियों को भजते पूजते हैं। वे मनुष्य बिना पूछ और बिना सिंग का पशु है।

आगे गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं_____

चलहि कुपथ वेदमग छोडे, कपट कलेवर कलि-मल भाड़े।

अर्थात जो लोग वेद पद को त्याग कर चलते हैं, वह कुमार्ग पर चल रहे हैं,। उनका शरीर कपटी है, और पाप एवं विष्ठा के पात्र हैं।

Edit with WPS Office

•आर्य समाज मूर्ति पूजा का विरोधी है , मूर्तियों का नहीं !

आर्यों के घरों में भी महापुरुषों की मूर्तियां होती हैं। पर वो उन्हें जबरदस्ती भोग नहीं खिलाते, झूला नहीं झूलाते। जन्मदिन नहीं बनाते।
मूर्तियां न सुनती है ,ना खाती है ,न हीं पीती है, ना बोलती है ,ना आशीर्वाद देती है। नहीं हमें आशीर्वाद देती है।
सोमनाथ जैसे हजारों मंदिर तोड़ दिए गए, जब कहां चली गई मूर्तियों की ताकत ना तो वह बोली, ना अपनी रक्षा की ,ना अपने भक्तों की रक्षा की?
आज भी मूर्ख लोग मूर्तियों को जगाते हैं।
लोग कहते हैं ईश्वर कण-कण में है मूर्तियों में भी होगा सब जानते हैं ईश्वर कण-कण में है सर्वव्यापी है सर्व व्यापक है। आर्य समाज मूर्तिपूजा का विरोध इसलिए करता है। यह बात ठीक है ईश्वर कण-कण में है मूर्ति में भी है , पर लेकिन मूर्तियों के पुजारीयो ने मूर्तियों को ही ईश्वर मान लिया ,जो की मूर्ति जड़ है। चेतन नहीं। इसलिए चेतन मूर्तियों को पूजो। आपसे बात भी करेगी बोलेगी भी, भोग खिलाओगे खाएंगी भी, आशीर्वाद भी देगी , यही सबसे अच्छी मूर्ति है।
मूर्तियां सिर्फ इतिहास जानने व चरित्र से शिक्षा लेने के लिए होती है। अपने महापुरुषों के गुण कर्मों के, हम उनके गुणों को अपने जीवन में धारण कर सके। कुछ सीखें उनके आचरणों से शिक्षा ले सके। इसलिए मूर्ति होती है___ जैसे___
देवी देवता, महापुरुष राम, कृष्ण, महर्षि दयानंद सरस्वती।
आदि महापुरुषों के गुणों को जीवन में धारण करो।

•______दूसरा उदाहरण ______

Edit with WPS Office

शिवलिंग पूजको का सर्वोत्तम लिंड्ग और स्थान सोमनाथ है। वहां के विशाल मंदिर में शिवलिंग मध्य में लटका हुआ था। वह मंदिर असंख्य संपत्ति से परिपूर्ण था। सागर के तट पर बना, यह मंदिर भारत की गौरव गरिमा का प्रतीक था। आक्रामक मोहम्मद गजनवी ने इसकी ख्याति सुनकर आक्रमण कर दिया। भारतीय वीर नरेशो ने सामना करने की तैयारी की। किंतु अंधविश्वासी पुजारी ने उन्हें युद्ध करने से रोक दिया। उनसे यह है कह दिया गया कि हमारे महादेव हमारी रक्षा क्या इस ब्रह्मांड की रक्षा करने के लिए अकेले ही सक्षम है। वह अपने गणों के माध्यम से इन मल्लेचछो को यहां से मार मार कर भगा देंगे। आप लोग शांत रहिए। फिर क्या हुआ हमारे क्षत्रिय राजा इन पुजारीयो के चक्कर में आ गए। सभी राजा चुप्पी साध कर बैठ गए। मोहम्मद गजनवी ने पुजारीयो को पीट पीट कर सारा भेद जान लिया। पुजारीयो से उस शिवलिंग का जो अधर में लटका हुआ था, मार मारकर सारा भेद जान लिया। फिर क्या हुआ? गजनवी ने अपने हाथों मैं गदा पकड़कर गंदा से उस शिवलिंग पर प्रहार किया। चुंबक टूटा ,और शिवलिंग धरती पर आ गिरा।और सोमनाथ मंदिर में अरबो की संपत्ति लूटकर बैलगाड़ियों में भरकर गजनी ले गया। और पुजारीयो को भी ले जाकर गजनी बेच दिया। शिवलिंग को चीरकर दो टुकड़े किए, एक टुकड़ा मस्जिद की सीढ़िया में, और दूसरा टुकड़ा शौचालय में लगा दिया। जिस पर हजारों जूते और हजारों मन विष्ठा(टट्टी)पड़ती है। जब यह सब हो रहा था। तब शिवलिंग तश से मस नहीं हुई, ना तो वह बोली ना ही अपनी रक्षा की, इस लिग ने आज तक किसी म्लेच्छ की उंगली नहीं तोड़ी। अरे हिंदुओं, अगर तुम्हारे हृदय में थोड़ी सी भी पीड़ा है। अपने भगवान हमारे आराध्य भगवान शिव से लगन प्रेम है, तो सोमनाथ जाकर अपने सोमनाथ मंदिर की अपने पूज्य देवों की दुर्दशा देखो, वहां विशाल भवन बना हुआ है। जिसमें सभी देवताओं की मूर्तियां रखी हुई है। उन पर संन (वर्ष)भी पड़ा है। हाल यह है कि कोई मूर्ति ऐसी नहीं है जो विकलांग न हो, यहां तक शिव की जंघा कटी हुई है। पार्वती के स्तन कटे हैं, गणेश की सूंड कटी है, यह सब क्यों हुआ? **उत्तर ____मूर्ति पूजा और अंधविश्वास के कारण।**

यह भारत वीरों की भूमि है, वीरप्रसूता माताओ की जननी है। वीरागनाओं की जोहर स्थली है। इतना सब कुछ होने पर भी अज्ञान है, अंधविश्वास एवं

Edit with WPS Office

मूर्ति पूजा ने इस आर्य जाति को ऐसा झकछोरा की बहुत भूतप्राय हो गई। इस दुर्बलता का लाभ तैमूर ने उठाया, उसने 1338 ई में भटनेर पर आक्रमण कर दिया। 10000 हिंदुओं को मारकर तलवार की प्यास बुझाई। मारकाट करता हुआ वह दिल्ली पहुंचा। दिल्ली पहुंच कर तैमूर की फौज ने एक लाख हिन्दुओं के सिर काटे, फिर फिरोजशाह की मस्जिद में ईद मनाई, सोमनाथ को लूटने के बाद महमूद गजनवी ने नगरकोट के मंदिर का विध्वंस करके, इसमें से 700मण सोने चांदी के बर्तन,740मण सोना, 2000 मण चांदी, और 20 मण हीरे मोती ज्वाहरात लूटे, थानेश्वर के आक्रमण में दो लाख हिंदुओं को बन्दी बनाकर गजनी ले गया। वहां हिंदू को ढाई ढाई रुपए में बेच दिया। ऐसे अनेक प्रमाण है, अधिक प्रमाण नहीं दे सकता, क्योंकि इसका वर्णन में इस पीडीएफ मैं विस्तार से नहीं करना चाहता। इसके लिए हम अलग पीडीएफ बनाएंगे। इन उदाहरणों के माध्यम से आप लोगों को समझाना चाहता हूं। देख लो मूर्तिपूजा के मानने के लाभ? ना ही मूर्तियां की रक्षा कर पाए , ना ही अपनी रक्षा कर पाए। विचार करो और सोचों, इन गलतियों से सीखो और आगे बढ़ो।

भागवत वाले भागवत को वेदों का सार बतलाते हैं, आप उसका खंडन करते हैं,(सुमेधानंद)___

उत्तर____हम आर्यसमाजी हैं, हम किसी का खंडन नहीं करते, हम लोग तो सत्य के आधार पर मंडन करने वाले हैं, सार का खंडन तो भागवत वाले ही कर रहे हैं।

देखो___

(भागवत माहात्मय__अध्याय१, श्लोक 71)

अर्थात ब्राह्मण केवल अन्न धनादि के लोभवंश घर घर एव जन जन को भागवत की कथा सुनाने लगे हैं, इसलिए कथा का सार चला गया ।७१।

- ## (पंडितों की दशा)

(भागवत माहात्मय__अध्याय १, श्लोक 75,)

अर्थात पंडितों की यह दशा है, कि वे अपनी स्त्रियों के साथ भैंसों की तरह

Edit with WPS Office

रमण करते हैं। उनमें संतान पैदा करने की कुशलता पाई जाती है। मुक्ति_ साधन में सर्वथा अकुशल है।

- अधिक सत्य को जानने के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें। जो महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा लिखा गया।__

अगर सभी को सत्य के मार्ग पर चलना है तो पहले हमें छोटे-छोटे साहित्य पढ़ने चाहिए। छोटे-छोटे ग्रंथ पढ़ने के बाद बड़े ग्रंथ पढ़ने चाहिए। जिससे हम उन सभी ग्रंथों में सत्य असत्य का निर्णय ले सके। आर्ष साहित्य पढ़ने चाहिए।
जैसे__ वेद, उपनिषद, दर्शनशास्त्र, नीति शास्त्र धर्म राजनीतिक शास्त्र, संहिता ,स्मृति, रामायण महाभारत, सत्यार्थ प्रकाश।
यह सभी ग्रंथ पढ़ने चाहिए आर्ष ग्रन्थों को पढ़ने से ही लोक तथा परलोक की यात्रा संभव हो सकेगी ।

•मूर्तिपूजा से 16 हानियां

- ➤ हम अपना लेख लिखने से पहले आपको बता दूं आर्य समाज मूर्ति का विरोधी नहीं है?? मूर्तिपूजा में जो हो रहा है पाखंड उसका विरोधी है?? मैं किसी का भी पक्षधर नहीं हूं मैं सिर्फ सच्चाइयां सच्चाई दिखाना चाहता हूं आपको सत्य दिखाना ही मेरा कर्तव्य है मुझे अपना कर्तव्य पूरा करने दीजिए आप लोग मेरे विचार के पक्षधर भी नहीं है? तो बुराई भी मत कीजिए। ?
- हमें मूर्तियों से बिल्कुल भी ईर्ष्या नहीं प्राचीन काल में इन मूर्तियों से कितना नुकसान हुआ था कितना नहीं इस पर हम नहीं लिखेंगे? **हम तो बल्कि मूर्तियां में हो रहा पाखंड का नुकसान या हानियां समझो इस पर लिखेंगे। हमें मूर्तियों से बिल्कुल भी जलन नहीं है मूर्तियां बनाओं अच्छी -अच्छी आकृति की बनाओ ज्योतिष को समझने वाली हमारे ग्रंथो को**

Edit with WPS Office

समझाने वाली मूर्तियां बनाओ। अच्छी कलाकारी से बनवाओ लेकिन हम मूर्ति पूजा के विरोधी हैं। और इस मूर्ति पूजा की हम 16 हानियां बताते हैं देखें.?____

- # सत्यार्थ प्रकाश 11वां समुल्लास

ऋषि दयानंद सरस्वती जी मूर्ति पूजा के विरोधी हैं? ये पूरी दुनिया जानती है। लेकिन दुनिया यह नहीं जानती की ऋषि दयानंद मूर्ति पूजा को भगवान मानने की पूजा के विरोधी हैं?? मूर्ति को केवल एक मूर्ति मानिए। उस मूर्ति का ख्याल रखिए? उसकी साफ सफाई रखिए ? उस मूर्ति की कितनी सुंदर कलाकारी है ,दुनिया को यह दिखलाइए । ऋषि दयानंद को कोई आपत्ति नहीं आपत्ति तो तब होती है जब हम भगवान मान करके उसके साथ भगवान जैसा व्यवहार करते हैं? बस यही से सबको आपत्ति शुरू हो जाती है। तो इसी आपत्तियों को ऋषि दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश में 15 हानिया बताई है। उन्ही हानियों को हम नीचे लिखेंगे। और आज के समय में कितना पाखंड है इसको देखते हुए उसमें थोड़ा बदलाव करेंगे।
क्योंकि लोग यही कहते हैं पौराणिक लोग आर्य समाज के विद्वानों से की मूर्ति पूजा ठीक है, हम करते हैं आपका क्या जाता है? हमारी मर्जी हम करें कर रहे हैं? अगर हमारे जीवन में मूर्तियों से कुछ आ भी नहीं रहा? तो कुछ जा भी नहीं रहा? हमको करने दीजिए यह सवाल पौराणिक लोगों का रहता है?
तो इस प्रश्न पर ऋषि दयानंद जी क्या कहते हैं, नहीं आपका नुकसान तो व्यक्तिगत है ही । समाज का भी नुकसान है, समाज की भी हानि है इसलिए समाज की और व्यक्तिगत हानि देखते हुए मूर्ति पूजा छोड़नी बहुत आवश्यक है।? और सच्चे ईश्वर की उपासना बहुत आवश्यक है , आइए मूर्ति पूजा से होने वाली सबसे पहली हानि। देखो _____

- 1...______ साकार मूर्ति में मन स्थिर नहीं हो पाता है। मूर्ति पूजा से मन कभी भी ईश्वर में नहीं लग सकता यह व्यक्तिगत हानि है, लोग जा रहे हैं समय को व्यर्थ कर रहे हैं। लोग घर से सोच कर जाते हैं कि

Edit with WPS Office

भगवान में मन लगाएंगे? और मन तो किसी एक प्राकृतिक जगह पर लगा हुआ है? वह प्राकृतिक वस्तु है जड़ मूर्ति।? ईश्वर अनंत है ईश्वर सर्वव्यापक है। अगर ईश्वर में मन लगाना है तो इन मूर्तियों से पीछा छुड़ा करके अनन्त ईश्वर में मनन को लगाना पड़ेगा? आपने एक मूर्ति को देख लिया? फिर दूसरी मूर्ति को देखने की इच्छा होगी? फिर तीसरी मूर्ति को देखने की इच्छा होगी? तो इस प्रकार मन कैसे लग सकता है? फिर मंदिर में कोई पुरुष या स्त्री या कोई लड़की आ जाए उसे देखने की इच्छा होगी? फिर तो ध्यान लड़की की ही तरफ जाएगा? तो इसलिए हम निराकार ईश्वर से दूर हो गए।

➤ 2...________ मंदिरों में करोड़ों रुपए व्यय होते हैं? करोड़ों रुपए महर्षि दयानंद सरस्वती आज से ढेडं सो साल पहले की बात बता रहे हैं। और अगर मैं आज के समय की बात करूं तो आज की अर्थव्यवस्था की बात कहूं तो अरबों खरबों रुपया मंदिरों पर खर्च होता है? और जो देने वाले लोग होते हैं वो दरिद्र हो जाते हैं। जो हमारी मेहनत की कमाई होती है वो व्यर्थ जाती है। क्यों व्यर्थ जाती हैं क्योंकि जिस मंदिर को हम बना रहे हैं मतलब दक्षिण में कुछ मंदिर बने हुए हैं। क्योंकि वो मंदिर ईश्वर की सृष्टि को समझाते हैं। उन मंदिरों में एक मंदिर कोणार्क का मंदिर है? कोणार्क का मंदिर दरअसल हमारी ज्योतिषी को समझाते हैं? हमारे भूगोल विज्ञान को समझाते हैं? ऐसे मंदिर सही होते हैं? ऐसे मंदिर बनने चाहिए? इस तरह की वेधशालाएं बननी चाहिए ऐसे मंदिरों का विरोध नहीं है? लेकिन यह जो नई नवेले मंदिर बनते जा रहे हैं आजकल। तो ऐसे मंदिर हमारी शास्त्रों को नहीं दर्शाते , । और आज के समय में भी पहले के अनेकों मंदिर हैं जो हमारे इतिहास को दर्शाते हैं वेद शालाओं को दर्शाते हैं, ज्योतिष को दर्शाते हैं। और दूसरी तरफ ऐसे मंदिर जो हमारे इतिहास ज्योतिष को नहीं दर्शाते? जिसमें इस्कॉन के यहां के गुरु हैं उनका भाषण आता है की द्वारिका में मंदिर बना दिया है। उसमें इतने पैसे खर्च हो गए इतने और दे दो। लोगों से इस प्रकार पैसे मांगते हैं दक्षिणा के रूप में बहुत ज्यादा चंदा इकट्ठा भी होता है। और सोचिए खरबों रुपए लगने के बावजूद भी एक व्यक्ति गूगल पर इस्कॉन

Edit with WPS Office

की तरफ से विज्ञापन दे रहा है पैसे दो और जमा करो। यह मंदिर में जो लगाया गया पैसा यह जनता की जेब से है। और ऐसी जगह पैसा जा रहा है हमारी जेब से जिसका कोई परिणाम नहीं निकलने वाला। हमारा कुछ पैसा सरकार की जेब में भी जाता है। जिसके कारण सही सड़के बनती है? नए चिकित्सा खुलते हैं? हॉस्पिटल बनते हैं ?और हमारा पैसा सेना के लिए भी जाता है? जिसके कारण हम सुरक्षित रहते हैं। और हमें लाभ ही होता है। अगर हम यही पैसा किसी धार्मिक संस्था को दान देते हैं (जो हम मंदिर में पैसा दे रहे हैं) या कोई समाज की सेवा करने वाली संस्था को पैसा देते हैं। तो इस सब पैसे का हमें लाभ होता है। उसका भी एक परिणाम निकल कर आता है? बच्चे पढ़ रहे हैं ,नागरिक शिक्षित हो रहे हैं ,लेकिन जो अरबों खरबों रुपया सीमेंट में खर्च कर दिया मंदिरों में जहां कोई नहीं बैठता कोई ध्यान नहीं कर सकता क्योंकि उसका ध्यान मूर्ति पर रहता है जिन मूर्तियों पर अरबों खरबों रुपया खर्च होता है, उनका शून्य परिणाम निकलता है? यह दूसरी सबसे बड़ी हानि थी यह व्यक्तिगत हानि नहीं थी यह पूरे समाज की हानि है? क्योंकि एक परंपरा बन जाती है। फिर लोगों को देना ही पड़ता है। आम जनता दरिद्र हो जाती है। (अगर सभी मंदिरों में दान करने लगे तो) और मंदिर बहुत विशाल बन जाता है। और जो मंदिर के पुजारी हैं वह हो जाते हैं पराधीन आलसी उनको बैठे-बैठे मिल जाता है जिसे बैठे-बैठे मिल रहा है वह काम क्या करें क्यों करें ?? ना तो यह किसी को पढ़ाते ना सीखाते ना उपदेश देते।

- 3...________ स्त्री पुरुषों का मंदिरों में मेला होने से व्यभिचार लड़ाई बखेड़ा और रोग आदि उत्पन्न होते हैं। आप लोगों ने देखा होगा रोग तो होते ही होते हैं। क्योंकि मंदिरों में आने वाले सभी व्यक्ति स्वस्थ नहीं होते हैं? आज के समय में स्पर्श करने या अंदर गंदगी श्वास जाने से भी बीमारी हो जाती है? अत्यधिक भीड़ होने से भी रोग उत्पन्न होते हैं। और दूसरी तरफ व्यभिचार बहुत होता है? मंदिर के मेलों में लड़कियां आती हैं जिससे मन में लड़कों के या किसी पुरुष के मन में गंदे विचार दोड़ने लगते हैं। जिससे मूर्तियों में लगा थोड़ा सा भी ध्यान हट जाता है। पहली बात तो मूर्ति में ध्यान ही नहीं आता? सच्चे मन से ध्यान लाने की

Edit with WPS Office

कोशिश भी करें तो वह विचार बखेड़ा लड़ाई झगड़ा से होने वाली हानि नहीं लाने देते, मन में लड़कियों को देखकर चल रहे गंदे विचार नहीं लाने देते , मनं एकाग्र नहीं हो पाता?

- 4...________ उसी को धर्म अर्थ काम और मुक्ति का साधन मानकर पुरुषार्थ रहित होकर मनुष्य जन्म व्यर्थ गवाता है! क्योंकि साकार जड़ मूर्ति को पूजने वाला व्यक्ति मनुष्य इन चारों पुरुषार्थ से अलग रह जाता है और उसे फिर कुछ प्राप्त नहीं होता ?
- 5...________ नाना प्रकार के विरुद्ध स्वरूप नाम चरित्र युक्त मूर्तियों के पुजारियों का ऐक्यमत नष्ट होके विरुद्ध मत में चलकर आपस में फूट बढ़ा के देश का नाश करते हैं।
- 6...__________ उसी के भरोसे में शत्रु का पराजय और अपना विजयमान बैठे रहते हैं? उन का पराजय होकर राज्य स्वतंत्र और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भठियारे के टट्टू और कुम्हार के गदहे के समान शत्रुओं के वश में होकर अनेकविधि दुख पाते हैं।
- 7....__________ जब कोई किसी को कहे कि हम तेरे बैठने के आसान वा नाम पर पत्थर धरे तो जैसे वह उसे पर क्रोधित होकर मारता हुआ गाली प्रदान देता है । वैसे ही जो परमेश्वर की उपासना के स्थान हृदय और नाम पर पाषाण आदि मूर्तियां धरते हैं उन दुष्ट बुद्धि वालों का सत्यानाश परमेश्वर क्यों न करें?
- 8....___________ आंख के अंधे होकर परिवार के सभी लोग किसी पाखंडी के कहने से मंदिरों पर जाते हैं और कुछ लोग अपनी मर्जी से भी जाते हैं। अपनी इच्छा लेकर जाते हैं कहीं-कहीं आपने सुना भी होगा ऐसी घटना होती रहती है, अनेकों घटना हुई है जो परिवार के सभी सदस्य घूमने के लिए जाते हैं मंदिरों में जाते हैं और उनके साथ दुर्घटना हो जाती है? सभी इच्छाएं रह जाती है। धर्म, संसार और परमार्थ का काम नष्ट करते हैं। और ऐसा भी देखा गया है चोर मंदिरों को जाते हैं उस समय चोरी हो जाती है, हमारे विमान भी छीन जाते हैं, ऐसा भी देखा गया है होता भी है लोग मंदिर में प्रवेश करने से पहले अपने जूते चप्पल बाहर छोड़ते हैं। और तब हम पूजा करके वापस आते हैं तो

Edit with WPS Office

हमारे जूते चप्पल चोरी हो जाते हैं। अनेक लोग तो किसी दुकान पर रखने के लिए देते हैं? क्यों देते हैं वे लोग रखने के लिए? क्योंकि उनको पता है कुछ भी हो सकता है। और अनेक मंदिरों में शत्रुओं ने बंम भी गेरे है। अनेक पुजारीयों कि भगवान की आरती उतारते समय मौत भी हुई है? होली दिवाली पर भी अनेकों घटनाएं होती हैं। त्योहार पर ऐसी घटनाएं हमारी गलतियों के कारण होती है। यह सबसे बड़ी हानि है ऐसी घटनाओं पर किसी के साथ भी बुरा हो सकता है??

- 9....________ दुष्ट पुजारियों को धन देते हैं, (जो अपने धर्म अपने कर्म अपने कर्तव्य से भटक गए हैं) जिन्होंने वेदों को पढ़ना छोड़ दिया निराकार ईश्वर की उपासना करनी छोड़ दी? वह उस धन को वेश्या परस्त्री गमन मधं मांसाहार लड़ाई बखेड़ा में व्यय करते हैं ? जिससे दाता का सुख का मूल नष्ट होकर दुख होता है।
- 10....________ माता-पिता आदि माननीयों का अपमान कर पाषाण आदि मूर्तियां का मान करके कृत धन हो जाते हैं?
- 11....__________ उन मूर्तियों को कोई तोड़ डालता है , या चोर ले जाता है, तब हा– हा करते रोते रहते हैं। या कोई मूर्ति फट या टूट जाती है तब भी हा–हा करते रोते रहते हैं।
- 12....__________ पूजारी परस्त्रियों के संग और पूजारिन परपुरुषों के संग से प्रायः दूषित होकर स्त्री पुरुष के प्रेम के आनन्द को हाथ से खो बैठते हैं।
- 13....________ स्वामी सेवक की आज्ञा का पालन यथावत् न होने से परस्पर विरुद्धभाव होकर नष्ट भ्रष्ट हो जाते है।
- 14....________ जड़ का ध्यान करने वाले का आत्मा भी जड़ बुद्धि हो जाता है? जड़ का ध्यान करने से चेतन का ध्यान कभी नहीं हो सकता?
- 15....________ परमेश्वर ने सुगन्धियुक्त पुष्पादि पदार्थ वायु जल के दुर्गंध निवारण दूर करने के लिए बनाए हैं। और आरोग्यता के लिए बनाए हैं? उन को फूलों को पुजारी जी तोड़ताड कर न जाने उन उन पुष्पों की कितने दिन तक सुगंधियां आकाश में चढ़कर वायु जल की शुद्धि करता और पूर्ण सुगंन्धि के समय तक उस का सुगंन्ध होता है?

Edit with WPS Office

और उस फुल का नाश पंडित लोग मध्य में ही कर देते हैं। पुष्पादि कीच के साथ मिल सड़ के उल्टा दुर्गंध उत्पन्न करते हैं। क्या परमात्मा ने पत्थर पर चढ़ाने के लिए पुष्पादि सुगन्धियुक्त पदार्थ रचे हैं।??

- पत्थर पर चढ़े हुए पुष्प, चन्दन और अक्षत आदि सब का जल और मृतिका का संयोग होने से मोरी वा कुण्ड में आकर सड़ के इतना उस से दुर्गंध आकाश में चढ़ता है कि जितना मनुष्य के मल का। और सहस्त्रों जीव उस में पड़ते हैं, उसी में मरते हैं, और सड़ते हैं। ऐसे ऐसे अनेक मूर्तिपूजा के करने में दोष आते हैं। इसलिए सर्वथा पाषाण आदि मूर्ति पूजा सज्जन लोगों को त्यक्तव्य हैं । और जिन्होंने पाषाणमय मूर्ति की पूजा की है , करते हैं और करेंगे । वह पूर्वोक्त दोषों से न बचे ; न बचते हैं और न बचेंगे।
- 16....________ जड़ मूर्ति में कभी भी ध्यान नहीं लग सकता क्योंकि लोग मंदिर में ईश्वर की भक्ति के लिए नहीं बल्कि अपनी इच्छा लेकर जाते हैं। क्योंकि आज इस संसार में लोग दुखी हैं तब से दुखी हैं जब से निराकार पर ब्रह्म का ध्यान छोड़ा है , और जड़ मूर्ति पकड़ ली है। इसलिए लोग अपने दुख के निवारण के लिए अपनी इच्छा के लिए अपने कामना मन में रखकर मंदिर जाते हैं ना की भक्ति करते हैं, ईश्वर का ध्यान करते हैं, ना ही ईश्वर का धन्यवाद देते हैं उसके उपकार के लिए उन्होंने हमें इतना अनमोल जीवन दिया। ईश्वर को धन्यवाद सिर्फ ध्यान समाधि लगाकर योग अवस्था में ही दे सकते हैं। ना की जड़ मूर्ति के रूप रंग को देखकर??

हमने मूर्ति पूजा से होने वाली 16 हानियां बताई? अब मेरा ,जड़ मूर्ति में भगवान ईश्वर की प्रतिमा देखने वालों से एक सवाल है अब हमें इस मूर्ति का लाभ बताएं??

आप हमें 16 तो नहीं दो लाभ बता दीजिए मूर्ति पूजा के इससे क्या लाभ है ??किसका लाभ हुआ है????

- **साकार भक्ति और निराकार भक्ति का लाभ एक उदाहरण से समझे ??**

एक पिता के दो पुत्र साकार और निराकार??

Edit with WPS Office

एक पिता के दो पुत्र थे उसके दोनों अपने ही पुत्र थे। दोनों पुत्र साकार और निराकार संस्कारी बालक थे। दोनों पुत्र जानते थे हमारे पिता एक है, दोनों साथ-साथ पढ़ते थे , साथ-साथ खेलते थे।

दोनों पुत्र सुबह शाम प्रतिदिन अपने माता-पिता बड़े बुजुर्ग लोगों के अपने गुरु आचार्य के पैर छूते थे चरण स्पर्श करते थे। दोनों में एक ही अंतर था। **साकार पुत्र** आज्ञा का पालन नहीं करता था, उनकी सेवा नहीं करता था। अपने से बड़ों का ख्याल नहीं रखता था बुजुर्ग लोगों की सेवा नहीं करता था। इसलिए सेवा से होने वाले लाभ पुण्य से साकार पुत्र वंचित रह गया। ? ज्ञान के प्रकाश से वंचित रह गया? बड़े बुजुर्गों की सेवा से मिलने वाला आशीर्वाद से वंचित रह गया?? साकार को दुख और हानि दोनों मिली।

निराकार पुत्र___ प्रतिदिन अपने माता-पिता की सेवा करता था बड़े बुजुर्ग लोगों की आज्ञा का पालन करता था उनका ख्याल रखता था। अपने कर्तव्य का पूरा पालन करता था। अपने माता-पिता की हर समस्या का समाधान करता था। उनकी सभी इच्छाएं पूरी करता था। इसलिए निराकार की उस सेवा से होने वाला पुण्य उसे मिलता था। इस सेवा से उसे ज्ञान का प्रकाश सत्य और असत्य का निर्णय करने की क्षमता। इन सब के साथ-साथ उसे आशीर्वाद भी मिलता था। और उसे सुख शांति मिलती थी। वह किसी के जाल में नहीं फसता था ??

इसलिए हे पौराणिक लोगों साकार जड़ मूर्ति को मानने वाले लोगों और जो निराकार को मानने वाले लोग हैं इन दोनों में अंतर देखो किस का क्या लाभ है??? सोचो और विचार करो!

साकार जड़ मूर्ति पूजा से कोई लाभ नहीं?? जड़ मूर्ति के कारण लोगों ने स्वाध्याय करना छोड़ दिया ? वेदों को पढ़ाना छोड़ दिया। अपने शास्त्रों को पढ़ाना छोड़ दिया , यह सबसे बड़ी हानि है। परब्रह्म ईश्वर का ध्यान लगाना छोड़ दिया। कोई कोई पौराणिक पढ़ता भी है तो कुछ नहीं सीख पाता। कोई कोई वेदों को पढ़ता भी है कोई सीख नहीं ले पाता।

निराकार वाले लोग स्वाध्याय करते हैं वेदों को पढ़ते हैं अपने शास्त्रों को पढ़ते हैं रामायण महाभारत पढ़ते हैं। राम कृष्ण अपने महापुरुषों से सीख लेते हैं ,उनके ज्ञान का प्रचार करते हैं । परब्रह्म ओम ईश्वर का ध्यान करते हैं यह सबसे बड़ा लाभ है।

Edit with WPS Office

हम एक प्रमाण और दिखाते हैं??

मैत्रेय उपनिषद,, दूसरा अध्याय ,, 26 वा श्लोक

प्रस्तर खंण्ड ,स्वर्ण अथवा मिट्टी पत्थर द्वारा निर्मित मूर्तियों की पूजा , मोक्ष की इच्छा वाले को त्याग देनी चाहिए ? पुनः ये जड़ मूर्ति जन्म एवं भोग प्राप्त कराने वाली होती हैं। इस कारण पुनः जन्म न ग्रहण करना पड़े इस उद्देश्य से सन्यासी विद्वान और बुध्दिमानियों को इस प्रकार की बाहरी जगत की पूजा का परित्याग करके हृदय में ही आत्मा की पूजा करनी चाहिए।।

अब आप लोग समझ गए होंगे जड़ मूर्ति पूजा जो करता है उसका इससे कोई लाभ नहीं उसको इस पूजा से जन्म ही भोग ही मिलते हैं इस संसार में आने के लिए जन्म ही लेना पड़ता है जो जड़ मूर्तियों की पूजा करता है ?? इसलिए जो इस संसार से छूटना चाहता है उसको जड़ मूर्तियों का परित्याग करके अपनी आत्मा के अंदर के भाव को जगाना चाहिए। हृदय में ही आत्मा की पूजा करनी चाहिए ??

हम एक और प्रमाण के दिखाते हैं।

बृहदारण्यक उपनिषद् में लिखा है ईश्वर का निराकार रूप ही उपासना करने योग्य है अतः उस परमेश्वर परब्रह्म निराकार रूप की ही उपासना करने से ही प्राप्त होता है , ईश्वर का निराकार रूप ही सर्वोत्तम है। उस परमेश्वर का कोई आकार नहीं है।

- # { मूर्ति पूजा का खंडन: }

सनातन धर्मी परमात्मा की मूर्ति के रूप में पूजा और भक्ति करते हैं। पूजा शब्द **पूज** धातु से बना है और **पूज्** का अर्थ **सेवा** है। भक्ति शब्द में **भज** धातु है, **भज् सेवायां, भज्** का अर्थ भी सेवा है। दोनों शब्दों के अर्थ सेवा के हैं। प्रकृति को किसी वस्तु का ज्ञान नहीं है। उसे न अपना ज्ञान है और न किसी का। वह ज्ञान शून्य है। परमात्मा अपने आप को भी जानता है और अपने से अन्य सभी वस्तुओं को जानता है । इस तरह से जानने में ईश्वर सब से पूरा और न जानने में प्रकृति सब से पूरी है। इन दोनों को किसी अन्य की आवश्यकता नहीं है । ईश्वर और प्रकृति दोनों आवश्यकता से शून्य है।

Edit with WPS Office

जीवात्मा को आवश्यकता है।
मूर्ति बनाकर पूजा करने वाले सनातन धर्मी कहते हैं कि हम भगवान की पूजा करते हैं ,सेवा करते हैं। भगवान की सेवा करने के लिए क्या चाहिए, ?यह विचारने की बात है। भगवान के लिए हम कौन सी ऐसी वस्तु लायें जिसकी उसे आवश्यकता है? जब उसकी आवश्यकता का ज्ञान हमें हो जाएगा ,तब ही हम उसकी सेवा कर सकेंगे । आज तक कोई आदमी यह पता नहीं लगा सका कि भगवान को अमुक वस्तु की आवश्यकता है। भगवान हमें सब कुछ देता है, जीवन को बनाए रखने की सारी सामग्री हमें वह देता है। जिसका भंडार अपूर्व है, वह हम से क्या चाहेगा ? **एक अंग्रेजी भाषा के लेखक टामस पेन ने लिखा है ,** जिस प्रकार हमारी सेवा होती है , इसी तरह भगवान की सेवा नहीं की जा सकती क्योंकि उसको किसी की आवश्यकता नहीं है ।
सामवेद में कहां है कि—--
मंत्र : _____ यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम। मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्वग्रये।। (सामवेद 44)
भावार्थ____ परमात्मा हर्षपिता दाता है, उसके दिन सब प्रकार के पदार्थ हैं। उदरपुर्ती के लिए अन्न और स्वास्थ्य के लिए फल और औषधि सुख लाभ के लिए कपास काष्ठ, लोह ,भूषार्थ स्वर्ण आदि रत्न, पीने, नहाने ,धोने को जल, तप प्रकाशार्थ अग्नि , श्वास लेने को वायु आदि दिए हैं। इनके प्रतिकार में हम केवल हावभाव भरे स्तुति वचन मधुर रस भरे पात्रों के समान उस के लिए दे सकते हैं।
महर्षि स्वामी दयानंद जी ने इस बात को समझा कि भारत की गुलामी की जड़ में मूर्ति पूजा का यही पाखंड और अंधविश्वास है, जो इसकी कमजोरी और आत्म विश्वास रहित बनता है। उन्होंने मूर्ति पूजा के भयानक नतीजे को देखते हुए घोर विपत्तियां सह कर इसका विरोध किया और मूर्ति पूजा का खंडन भी किया है । आर्यसमाज की स्थापना इसी उद्देश्य से की गई थी । **इस सम्बंन्ध में स्वामी जी का कहना है—**
मैंनै आर्य समाज का उद्यान लगाया है । इससे मेरी अवस्था एक माली की सी है। पौधों में खाद डालते समय राख और मिट्टी माली के सिर पर पड़ ही जाया करती है। मुझ पर राख और धूल चाहे कितनी पड़े, मुझे इसका कुछ

भी परहेज नहीं , परंतु वाटिका हरी भरी रहे और निर्विघ्न फूले फले । —
महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती।

आर्य समाज में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फेंकने की प्रचंड अग्नि विद्यमान है। — डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन (पूर्व राष्ट्रपति)
आर्य समाज ने ही हिंदू संस्कृति की रक्षा की है। —-मोरार जी देसाई (पूर्व प्रधानमंत्री, भारत सरकार)

•आर्य समाज और गुरुडम पन्थ के सिद्धांतों का तुलनात्मक वर्णन :

कुछ व्यक्ति यह प्रश्न करते हैं कि आर्य समाज के सिद्धांतों को ही श्रेष्ठ क्यों माना जाए **जबकि राधा स्वामी , संत आसाराम बापू , ब्रह्मकुमारी** आदि द्वारा बतलाए गए रास्ते पर चलकर आसानी से परमात्मा का साक्षात्कार किया जा सकता है । इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने अथवा शंकाओं का समाधान करने के लिए राधा स्वामी आदि गुरु पंन्थो एवं आर्य समाज के सिद्धांतों को तुलनात्मक रूप में जानना आवश्यक है ।
राधा स्वामी जी की एक पुस्तक , **भक्तिसार** , जिसमें उन्होंने लिखा है– **हुक्मी लिख – सुख पाइयें** , अर्थात मलिक हुकुम के अनुसार संसार में किसी जीव को सुख या दुख मिलता है । फिर आगे लिखते हैं इनका हुक्मी , , ब्खशीश , अर्थात यहां दया और ब्खशीश का भी रास्ता है। मालिक कुल ने जहां संसार के जीवों को उनके कर्मों के अनुसार सुख-दुख रूपी फल देने का प्रबंध प्रकृति में कर रखा है , वहां संत महापुरुषों अथवा गुरुओं को खास शक्ति और अधिकार दे रखे हैं। जन्मान्तरों का पापी जीव भी यदि गुरु की शरण में आ जाता है या संत के द्वार पर आ गिरता है , तो वे उन्हें बख्श देते हैं, उनके पाप समाप्त कर देते हैं । उन्हें पवित्र बनाकर मलिक के चरणों में ले जाते हैं।
इससे यह बात साफ प्रकट होती है कि चाहे कितना भी बड़ा पापी क्यों ना हो , वह यदि गुरु की शरण में आ गया तो गुरु उसके समस्त पापों को

Edit with WPS Office

समाप्त कर देता है । यदि हम ऐसा मान ले तो प्रथम तो मानव को इससे पाप कर्म करने की प्रेरणा मिलती है । पहले पाप करो और फिर गुरु की शरण में जाकर बख्शीश करा लो । दंड तो मिलेगा ही नहीं। दूसरे परमात्मा के न्यायकारी होने पर प्रश्न चिन्ह लग जाता है क्योंकि किसी एक को माफ कर दिया जाए और दूसरों को जो गुरु की शरण में नहीं गया , उसे सजा दी जाए। यह न्याय नहीं कहा जा सकता । यह तो अन्याय है, भेदभावपूर्ण व्यवहार है।

दूसरी तरफ जब हम इस संबंध में आर्य समाज के सिद्धांतों पर दृष्टि डालते हैं तो उसमें साफ शब्दों में कहा गया है कि परमात्मा न्यायकारी है। प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्मों का फल अवश्य भोगना पड़ता है। जिसने जैसा कर्म किया उसको कर्मानुसार फल दिया जाए, यही न्याय है। इस संबंध में ऋग्वेद में कहा गया है–

मंत्र– **इदमाप: प्रवहत यत्किं च दुरित मयि। यदाहममिदुद्रोह यद्क शेप उतानृतम ।।** **(ऋग्वेद. 1/23/22)**

भावार्थ– मनुष्य जैसा कुछ पाप वा पुण्य करते हैं , सो ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था से उनको प्राप्त कराता ही है।

परमेश्वर तो निश्चय के साथ यथायोग्य जीवों के पाप वा पुण्य को जानकर , उनके कर्म अनुसार शरीर देकर सुख-दुख का भोग कराता ही है।

श्री कृष्ण ने गीता में यही कहा है कि कर्मों का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है ? । **एक कवि ने कहा है–** दिन रात न्याय में फर्क पड़े न इस तेरी लगी कचहरी कहीं नहीं।

यथायोग्य बर्ताव करें, मिले रु और रियासत कहीं नहीं।।

समस्त गुरुडम पन्थ ईश्वर के साक्षात्कार का बड़ा आसान रास्ता बतलाते हैं। राधा स्वामी कहते हैं कि यदि तुझे मालिक के पवित्र दर्शन की इच्छा है तो गुरु के रूप का ध्यान करो । जब तू गुरु के रूप में लीन हो जाएगा तो फिर अंदर से तुझे मालिक के स्वरूप का साक्षात्कार स्वयं हो जाएगा।

इस संबंध में संत आसाराम बापू ने और भी आगे बढ़कर अपने गुरु भक्ति योग पुस्तक में कहा है कि गुरु इस पृथ्वी पर साक्षात ईश्वर है। गुरु और ईश्वर सचमुच एक रूप है । शिष्य को चाहिए कि वह गुरु को साक्षात ईश्वर के रूप में माने , मनुष्य के रूप में कदापि नहीं ।

Edit with WPS Office

ब्रह्माकुमारी मानती है कि ईश्वर निराकार है सर्वव्यापक नहीं किंतु परमात्मा साधारण मनुष्य के शरीर में अवतरित होकर लोगों को अपनी पहचान देता है। ईश्वर को सर्वव्यापक न मानने वाली ब्रह्मकुमारिया भी अपने को आस्तिक कहने का दुस्साहस करती हैं , यह कितनी बड़ी विडंबना है। किसी शरीरधारी, एक देशी, जीवात्मा को ईश्वर मानना जनता को धोखा देना है।

हम धर्म के नाम पर सब कुछ देखते हुए भी अंधे और सब कुछ सुनते हुए भी बहरे बने रहते हैं। हमारी पर्दा नसीन बहुत सी बहू- बेटियां जो घर से बाहर निकलने में तो लाज से गढ़ जाती है। किंतु धर्म के नाम पर भेड़ की तरह अंधे कुएं में जा गिरती है ।

आर्य समाज परमात्मा के साक्षात्कार के लिए योग के आठ अंगों पर चलने के लिए कहता है । योग के आठ अंग हैं - यम, नियम ,आसन ,प्राणायाम ,प्रत्याहार ,धारणा, ध्यान और समाधि। इनमें समाधि आठवां व अन्तिम अंग हैं । कोई व्यक्ति एक से लेकर सातवीं सीढ़ी पर चढ़े बिना आठवीं सीढ़ी पर कैसे चढ़ सकता है?? बिना समाधि के ईश्वर का साक्षात्कार नहीं हो सकता?? इन गुरुडम पंथों ने तो परमात्मा को प्राप्त करने के लिए लिफ्ट सिस्टम बना दिया ।😂😂 । गुरु के नाम रूपी बिजली की लिफ्ट पर सवार होकर गुरु मंत्र रूपी बटन को दबाओं तो तुरंत ऊपर पहुंचकर परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं।

यह सब धर्म के नाम पर धोखा है , छल कपट है । इस प्रकार आसान रास्ता बतलाकर भोली जनता को गुमराह किया जा रहा है। वास्तव में योग के आठ अंगों पर चले बिना उस परम शक्ति का साक्षात्कार नहीं हो सकता । आर्य समाज इसी तथ्य को स्वीकार करता है।

मानव मन के संस्कारों की मैल धोने का उपाय बतलाते हुए गुरुड़म पंथ के **संन्त कृपाल सिंह** ने अपनी पुस्तक **रूहानी रसायन** में लिखा है कि जब हमारा मन पापों की मैल से भर जाए तो इसको सिर्फ नाम से जुड़कर साफ किया जा सकता है। कितनी आश्चर्यजनक बात है कि चाहे किसी को बुखार हो या नजला अथवा पेचिश लग रही हो , सब रोगों की एक ही दवा है वह है नाम अथवा गुरु मंत्र। उन्होंने न तो यह बताना आवश्यक समझा कि मनं के विकार कितने प्रकार के होते हैं? और उनको किस प्रकार दूर किया जा

Edit with WPS Office

सकता है। जिसको गुरु मंत्र को ये सब रोगों की दवा बताते हैं, उस पर ही विचार कीजिए तो पता चलेगा कि वह एक ऐसा गुरु मंत्र होता है, जिसको किसी दूसरे व्यक्ति को नहीं बताया जाता। यदि कोई उसे दूसरे को बता देगा तो उसकी न जाने कितनी बड़ी हानि हो जाएगी। अतः कोई भी अपने गुरु मंत्र को दूसरे को नहीं बतलाता है । यदि कोई भी अच्छी वस्तु ,मंत्र ,है अथवा कोई नियम है तो उसे दूसरों को बतलाने में कोई हानि नहीं होती अपितु परोपकार होता है, लाभ मिलता है । **आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद जी ने तो यहां तक कहा है कि जो व्यक्ति गायत्री मंत्र को कम से कम 10 व्यक्तियों को नहीं सिखाएगा तो वह पाप का भागी होगा ।** इससे स्पष्ट है कि यह गुरुडम पंथ स्वार्थी धोखेबाज और छल कपट करने वाले हैं । **जब कि आर्य समाज परोपकारी , परमार्थी एवं ठीक मार्ग बतलाने वाला है।**
आर्य समाज मनं के मैल के विकारों के संबंध में बताता है की मनं के अंदर तीन प्रकार के विकार होते हैं,। **मल , विक्षेप और आवरण** । उनके उपाय भी अलग-अलग हैं जिनका वर्णन इस पुस्तक में आगे किया जाएगा ।
सनातन धर्म को मानने वाले ईश्वर को साकार मानकर भगवान की राम , कृष्ण , हनुमान , शिव शेरावाली माता आदि मूर्ति बनाकर पूजा करते हैं। ये कहते हैं कि भगवान को साकार मानने में कोई दोष नहीं है। आर्य समाज ईश्वर को निराकार मानता है और कहता है कि भगवान को साकार मानने में एक नहीं अनेक दोष हैं जो निम्न प्रकार है।—--

- **{ भगवान को साकार मानने में होने वाले दोष : }**

1...______ ईश्वर को साकार मानने से पहले दोष तो यह है कि वह सच्चिदानन्द और निर्विकार नहीं रहता , जबकि ईश्वर सच्चिदानंद और निर्विकार है सच्चिदानंद में तीन पद हैं, –सत् , चित्ज्ञ , आनन्द । सत् का अर्थ है भूत ,भविष्य ,वर्तमान तीनों कालों में एक रस रहने वाला। दूसरे शब्दों में जिसमें किसी प्रकार का परिवर्तन न हो सके। वह सत् है। सदैव ज्ञान वाले को चित् कहते हैं। और तीनों कालों में नितांन्त दुख के अभाव का नाम आनन्द है। ईश्वर सच्चिदानंद है इसलिए कि उसमें परिवर्तन कभी नहीं होता। इसका ज्ञान भी कभी नष्ट नहीं होता और न हीं कभी उसमें दुख

Edit with WPS Office

व्याप्त होता है। संसार के जितने भी साकार पदार्थ है, उन सब में परिवर्तन होता है। इसलिए वे सत् नहीं। चित्त केवल आत्मा या परमात्मा ही है। जो निराकार है। कोई साकार या शरीरधारी दुख से नहीं बच सकता। तीनों कालों में इनमें आनन्द नहीं रहता। सर्दी -गर्मी भूख - प्यास भय, शोक, रोग ,बुढ़ापा, मृत्यु , आदि साकार शरीरधारी को सताते हैं। अतः साकार मानने पर ईश्वर सच्चिदानंन्द और निर्विकार न रहने का दोष आ जाता है।

2...________ प्रत्येक साकार पदार्थ एक देसी अर्थात् एक ही जगह रहने वाला होता है । अतः ईश्वर को यदि साकार माना जाए तो उसमें सर्वव्यापक न रहने का दोष आ जाता है जबकि ईश्वर सर्वव्यापक है।

3...________ तीसरा दोष यह है आ जाता है कि ईश्वर अनादि और अनंन्त नहीं रहता क्योंकि प्रत्येक साकार पदार्थ उत्पन्न होता है , इसलिए उसका आदि होता है और जिसका आदि है उसका अंन्त भी अवश्य होगा । जो उत्पन्न होगा , वह नष्ट अवश्य होगा । जिसका एक किनारा है, उसका दूसरा किनारा भी अवश्य होगा। अतः वह अनादि नहीं होता और न अनन्त होता जबकि ईश्वर अनादि और अनंन्त है।

4...________ ईश्वर को साकार मानने से यह दोष आ जाता है कि वह सर्वज्ञ नहीं रहता। क्योंकि जब साकार होगा तो वह एक ही जगह पर होगा, सब जगह नहीं । जब सब जगह नहीं होगा तो सब जगह का ज्ञान भी नहीं होगा । एक ही जगह का ज्ञान होगा अतः ईश्वर अंतर्यामी भी नहीं रहेगा क्योंकि वह प्रत्येक मनं की बात नहीं जान सकेगा।

5...________ पांचवा दोष यह आ जाता है कि ईश्वर नित्य नहीं रहेगा। नित्य उसको कहते हैं कि पदार्थ हो किंतु उसका कोई कारण न हो । वह किसी के मेल से बना हुआ न हो। साकार पदार्थ तत्वों के मेल से बना हुआ होता है।

6...________ छटा दोष यह है आ जाता है कि परमात्मा सर्वाधार नहीं रहता। वह पराधार हो जाता है। परमात्मा सर्वाधार इसलिए है कि सारा संसार उसी के सहारे चल रहा है। सारे ब्रह्मांड को उसी ने धारण किया हुआ है । यदि परमात्मा को साकार माना जाए तो वह किसी न किसी के सहारे रहेगा और पराधार हो जाएगा। यही कारण है कि मतवादियों ने ईश्वर को साकार मानकर उसके स्थान निश्चित किए हैं । किसी ने सातवां आसमान , तो किसी ने चौथा आसमान , किसी ने क्षीरसागर, तो किसी ने बैकुंठ लोक

Edit with WPS Office

आदि स्थान उसके रहने के बताएं है। जिस परमात्मा के आधार पर सारा जगत है, लोगों ने उसे साकार मानकर जगत को उसका आधार बना दिया। जब परमात्मा ही जगत के सहारे हो गया तो फिर जगत किसके सहारे रहेगा ?

कबीर दास जी ने साकार रूप का खंडन करते हुए कहा है–--

पाहन पूजे हरि मिले , तो मैं पूजूं पहार।
या ते तो चक्की भली ,पीस खाये संसार ।।

भगवान को साकार मानकर मूर्ति की पूजा करने वाले सनातन धर्मी , गुरु को भगवान मानकर गुरु अथवा गुरु मंत्र के द्वारा भगवान का साक्षात्कार करने वाले गुरुडम पंथ आदि के गुण–दोषों का वर्णन करने के उपरान्त यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो गया है। कि भगवान के संबंध में आर्य समाज का सिद्धांत ही पूर्णरूपेण ठीक है । जिसके अनुसार भगवान सच्चिदानन्द स्वरूप , निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा , अनन्त, निर्विकार, अनादि, सर्वाधार, सर्वेश्वर , सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, नित्य, पवित्र , सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी चाहिए।

• { उपासना का अर्थ }

उप अर्थात **निकट** , **आसन** अर्थात **बैठना** , हम परमात्मा के पास बैठते हैं। शब्दों के अर्थ की दृष्टि से उपासना का अर्थ यह हुआ कि हम परमात्मा की आज्ञा का पालन करते हैं , हम ईश्वर में विश्वास करते हैं और हम ईश्वर के गुणों को धारण करते हैं और इस प्रकार उसके निकट हो जाते हैं । परमात्मा के गुणों को जिसने अधिक से अधिक ले लिया वह ईश्वर के अधिक पास है।

उपासना के संम्बन्ध में वेद मंत्र :---------

मंत्र– (ऋग्वेद. 2/23/4)

जो मनुष्य सत्यभाव से जगदीश्वर की उपासना करते हैं , उनको जगदीश्वर पापाचरण निवृत्त कर शुभ गुण कर्म स्वभाव से युक्त कर पवित्र करता है और जो वेद वा ईश्वर के विरोधी हैं , उनका अधोगति को पहुंचाता है यही उपासना का लाभ होता है।

Edit with WPS Office

मंत्र–   (ऋग्वेद. 6/3/4)

जैसे उत्तम प्रकार से शिक्षित घोड़ा मनुष्य को मार्ग में पहुंचाता है , वैसे ही धर्म मार्ग को हम लोगों को पहुंचाइये और जैसे बड़ई परशु से काष्ठ को काटता है वैसे हम लोगों के दोषों को काटिए और जैसे तालू से उत्पन्न आद्र्रस जिह्वा को प्राप्त होता है। वैसे ही विद्या के रस को प्राप्त कराईये । तथा जैसे अग्नि काष्ठों को जलाता है, वैसे ही हमारे दुर्व्यसनो को जलाइये ।

मंत्र–   (ऋग्वेद. 7/60/11)

उत्तम कर्म करते समय जो भगवान की स्तुति में अपने मन को लगाता है , उसकी स्तुति सब देवगण सुनते हैं । जो लोग प्रभु की उपासना करते हैं , उनकी बुद्धि शुभ कर्म में प्रेरित होती है । और उससे उनका निवास सुखमय होता है।

- **{ यजुर्वेद }**

मंत्र :।   (यजुर्वेद . 3/52)

मनुष्यों को सब जगत के हित करने वाले जगदीश्वर की ही स्तुति करनी और किसी की न करनी चाहिए , क्योंकि जैसे सूर्य लोक सब मूर्तिमान द्रव्यों का प्रकाश करता है वैसे उपासना किया हुआ ईश्वर भी भक्तजनों के आत्माओं में विज्ञान को उत्पन्न करने से सब सत्य व्यवहारों को प्रकाशित करता है। इससे ईश्वर को छोड़कर और किसी की उपासना कभी न करनी चाहिए।

मंत्र :   (यजुर्वेद. 5/18)

सब मनुष्यों को जिस परमेश्वर ने पृथ्वी सूर्य और त्रिसरेण आदि भेद से तीन प्रकार के जगत को रचकर धारण किया है, उसी की उपासना करनी चाहिए।

मंत्र :   (यजुर्वेद. 17/29)

मनुष्यों को चाहिए की जो सबसे सूक्ष्म, बड़ा अति- श्रेष्ठ सब का धारणकर्त्ता, विद्वानों का विषय अर्थात समस्त विधाओं का समाधानरूप अनादि और चेतनमात्र है , वही ब्रह्म उपासना करने के योग्य है , अन्य नहीं।

- **{ सामवेद }**

Edit with WPS Office

मंत्र :।   (सामवेद.4)

मानव जब परमात्मदेव की विशेष स्तुति ध्यानोपासना करता है तो मानव के अंदर परमात्मा प्रकाशित होकर अज्ञान आदि बन्धकों को भलीभांति विनिष्ट करके उपासक के ज्ञानसुखैश्वर्य को पूरा करता है अपितु बिना मांगे ही सब कामनाएं पूरी हो जाया करती है। सचमुच मनुष्य व्यर्थ चाहना को बढा-बढा कर अपने को अशांन्त कर बैठता है। यदि एक परमात्मा की ही चाहा रखें तो अन्य चाह के उठने का प्रसंग ही न रहे। चाहना के स्वामी को पा लेने से संपत्तिमान को अपनाने का लाभ संपत्तिभागी बनना ही है ।

मंत्र :   (सामवेद.285)

हे उपासक जनों ! उपासना रस पान करने वाले ओजस्वी परमात्मा के लिए उपासना रस को निष्पत्र करो । इस कारण निरूद्ध करने योग्य चित्रवृत्तियों को अभ्यास , वैराग्य के द्वारा निरुद्ध करो , पुनः आत्मसमर्पण करो । इस प्रकार उपासना रस देने वाले उपासक के लिए परमात्मा सुख का दान देता रहता है।

मंत्र :।   (सामवेद. 653)

उपासक द्वारा परमात्मा की आराधना करने पर उसके ज्ञानेंद्रियों में शांति - असंयमरहितता जननेन्द्रिय में शांति-व्यभिचार की अप्रवृत्ति, मन में शान्ति और रस रक्त प्राणों में शान्ति हो जाती है।

परमात्मा की उपासना के संबंध में चारों वेदों में अनेक मंत्र आए हैं। यहां पर कुछ मंत्र उदाहरणार्थ दिए गए हैं जिससे यह स्पष्ट हो रहा है कि परमात्मा की ठीक ढंग से उपासना करने पर मानव पापाचरण से निवृत होकर धर्माचरण में प्रवृत्त होकर अमृत धाम को प्राप्त कर सकता है अर्थात मानव जीवन के अंतिम उद्देश्य मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। संसार में प्रत्येक कार्य को प्रारंभ करने से पहले उस कार्य के करने की विधि एवं अन्य आवश्यक जानकारी प्राप्त करके ही कार्य किया जाता है । तभी सफलता मिलती है अन्यथा व्यक्ति उसमें असफल हो जाता है। इसी प्रकार उपासना को सफल बनाने के लिए उपासक को पहले अपने आप को तैयार करना होगा।

- ## { अथर्ववेद }

Edit with WPS Office

मंत्र :। (अथर्ववेद. 2/1/4)
धुलोक और पृथ्वीलोक के अंदर जो अनंन्त पदार्थ हैं, उन सब का निरीक्षण करने के बाद पता लगता है कि अटल सत्य नियमों का पहला प्रवर्तक एक ही परमात्मा है। इसलिए मैं उसी की उपासना करता हूं। जिस प्रकार वक्ता में वाणी रहती है , उसी प्रकार जगत के सब पदार्थों में अथवा सब प्राणियों में वह सब का धारण पोषणकर्ता एक आत्मा रहता है । उसको अग्नि भी कह सकते हैं अर्थात जैसे अग्नि लकड़ी में गुप्त रहती है, उसी प्रकार वह परमात्मा सब पदार्थों में गुप्त रहता है।
मंत्र :। (अथर्ववेद. 6/1/1)
हे योगमार्ग में प्रवृत्त मनुष्य! तू सर्वप्रेरक एक ईश्वर की उपासना कर, रात्रि के समय उसका गुणगान कर , उसका बहुत भजन कर और उसके तेज को मन में धारण कर।
मंत्र :। (अथर्ववेद. 6/1/2)
वहीं एक ईश्वर इस भाव समुद्र के बीच में सत्य की प्रेरणा करने वाला है, वह न बाल होता है और न वृद्ध होता है । अपितु सदा तरुण रहता है । वही सब सुखों को देने वाला है और हिंसा रहित वाणी का प्रवर्तक है, उसी का गुण गान कर, उपासना कर।

•उपासना को सफल बनाने के लिए आवश्यक कार्य :

1. ___ **मन के विकारों को दूर करना :-**

मन के अंदर तीन प्रकार के विकार होते हैं :

- क. ___ मल
- ख. ___ विक्षेप
- ग. ___ आवरण

इन विकारों को निम्न प्रकार से दूर किया जा सकता है ।
क. मल : ______ मन में दूसरों को हानि पहुंचाने का विचार तथा पापों के जो संस्कार आत्मा पर है , उनका नाम मल है । मल ज्ञान से दूर होता है ।

Edit with WPS Office

जो पदार्थ जैसा है , उसको वैसा समझना ज्ञान है । जड़ को जड़ , चेतन को चेतन , नित्य को नित्य और अनित्य को अनित्य मानना ज्ञान है । ज्ञान के द्वारा यह समझ लेना की संसार के सब प्राणी और सब पदार्थ नाशवान है , इसलिए दूसरे के अधिकारों को छीनने , हानि न पहुचाने का भाव न रखना ही मल दोष दूर होना है ।

ख. विक्षेप : ______ लगातार विषयों का चिंतन करने अथवा मन के स्थिर न रहने का नाम विक्षेप है । जब मानव संसार के पदार्थों को जीवन का उद्देश्य मानकर उनका प्रयोग करता है । वह सांसारिक वस्तुओं में लिप्त हो जाता है , उनमें डूब जाता है , तब मन में विक्षेप दोष उत्पन्न हो जाता है । संसार के पदार्थ वास्तव में साधन तो है परंतु साध्य नहीं अर्थात जीवन का उद्देश्य नहीं है । यह सिद्धांत समझकर जो कार्य किया जाता है , वह मानव को जल में कमल की भांति संसार की ममता में लिप्त नही होने देता । निष्काम कर्म से विक्षेप दूर होता है । शरीर ,समाज और आत्मा की उन्नति के लिए प्रयत्न करना कर्म है । परंतु उसके फल को परमात्मा की इच्छा पर छोड़ देना चाहिए ।

ग. आवरण : ______ संसार के नाशवान पदार्थों के अभिमान का मन पर परदा पड़े रहने का नाम आवरण है । मन का यह दोष उपासना से दूर होता है । पदार्थो के पास जाकर उन के गुणों से अपने दोषों को सुधारने का नाम उपासना है ।

मानव के मन पर जब अहंकार या अभिमान का पर्दा होता है , तो परमात्मा प्रदत वस्तुओं को अपनी समझने लगता है । मेरा धन , मेरी स्त्री , मेरा बल , मेरा राज्य , मेरी आज्ञा , आदि आदि । वह समझता है कि मुझसे बड़ा कोई नहीं । परंतु जब वह ज्ञानपूर्वक कर्म करता है , मन और इंद्रियों को बाहर के विषयों से हटाकर शक्तियों को हृदय में एकाग्र करता है और समझता है कि मेरे निकट परमात्मा है और मैं परमात्मा के निकट हूं । बस इसी उपासना से अहंकार अर्थात आवरण दोष दूर हो जाता है । जैसे कल्पना करो , एक मनुष्य शीत का सताया हुआ है । अगर वह शीत दूर करने के लिए जल के समीप जाता है तो यह उसका अज्ञान है , ज्ञान नहीं । शीत तो तभी दूर हो सकता है , जब प्रथम उसे अग्नि का ज्ञान हो , फिर शीत शांत करने के लिए अग्नि प्राप्ति के लिए कर्म करें और अग्नि के पास जाकर शीत रूपी दोष को

Edit with WPS Office

अग्नि के गुण गर्मी से दूर करें । **तात्पर्य यह है कि ज्ञान से मल ,कर्म से विक्षेप और उपासना से आवरण दोष दूर होता है ।**

मन को एकाग्र करने के उपाय : ______

मन के दोषों को दूर करने के साथ-साथ मन को एकाग्र करने पर ही उपासना में सफलता मिलती है । मन बड़ा चंचल स्वभाव वाला है । इस शब्द में गीता में कहा है ______

अर्जुन उवॉच ______ गीता. 6.34

भावार्थ ______ हे श्री कृष्ण ! यह मन बड़ा चंचल ,प्रमथन स्वभाव वाला , बड़ा दृढ़ और बलवान है । इसलिए उसका वश में करना में (अर्जुन) वायु को रोकने की भांति अत्यंत दुष्कर मानता हूं ।

श्री कृष्ण ______ गीता. 6.35

भावार्थ______ श्री कृष्ण बोले -- हे महाबाहों ! नि: सन्देह मन चंचल और कठिनाई से वश में आने वाला है , परंतु हे कुंती पुत्र अर्जुन ! यह अभ्यास और वैराग्य से वश में होता है ।

- **1.______ योग दर्शन और गीता के अनुसार मन को एकाग्र करने के उपाय :**

सूत्र : **अभ्यास वैराग्याभ्यां तन्निरोध : ।**

अभ्यास और वैराग्य के द्वारा वृत्तियां का निरोध किया जा सकता है । क्योंकि वृत्तियां संसार के आवागमन चक्र की प्रेरक होती है और शुभ विवेक की ओर अग्रसर करती है ।

१. अभ्यास : ----

सूत्र : (योग दर्शन) **-- तत्र स्थितौयत्नोऽभ्यास : ।**

अभ्यास वह है जो चित्त की स्थिरता के लिए निरंतर यत्न किया जाए , क्योंकि रजोगुण और तमोगुण की वासनाएं एक , दो या चार दिन में और उपदेश श्रवण मात्र से ही निरुद्ध नहीं होती । इनके लिए यम- नियम आदियों का पालन करते हुए तप करना पड़ता है , तब अवश्य वंश मैं हो सकती है ।

भगवान के नाम और गुणों का श्रवण , कीर्तन , मननं तथा श्वास

Edit with WPS Office

द्वारा जप और भगवत प्राप्ति विषय शास्त्रों का पठन-पाठन इत्यादि चेष्टाएं भगवत प्राप्ति के लिए बारंबार करने का नाम ' **अभ्यास** , है । जैसा कि कहा गया है -- **चरैवेति- चरैवेति** -- बार-बार प्रयत्न करो ।

उधमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथै : ।

परिश्रम- अभ्यास करने से ही कठिन से कठिन कार्यों को मानव सिद्ध कर लेता है , मनोकामना से नहीं ।

दीर्घकाल तक , निरंतरता पूर्वक और ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ अति श्रद्धा के साथ अनुष्ठान करने पर दृढ़ संस्कार वाला हो जाता है । फिर उसके मन में चंचलता , अस्थिरता नहीं रहती । सतों गुण प्रदान हो जाता है । इस संबंध में योग दर्शन का सूत्र है -----

सं तु दीर्घकाल नैरन्तर्य सत्कारा सेवितो दृढ़ भूमि : ।

अर्थात ___ योगी का इस सूत्र के अनुसार आचार्य ने तीन रहस्यों की ओर आकृष्ट किया है ---

१._____ भोजन : --- भोजन सात्विक , गोघृत - दूध से युक्त हो । विशेषकर दलिया या खिचड़ी हो और जितना स्वास्थ्य के अनुसार उचित हो , नित्य प्रति उपलब्ध हो सके , उतना ही करें । कम और अधिक करने से और परिवर्तन करते रहने से वृत्तियां बन न सकेगी । क्योंकि प्रत्येक पदार्थ के गुण भिन्न भिन्न होते हैं , जो मानसिक अवस्था में परिवर्तन करते रहेंगे , कहां भी है -- जैसा खावे अन्न , वैसा होवे मन । जैसा पीवे पानी , वैसी होवे वाणी ।

२.______ स्थान : --- ऋतु आदि को ध्यान में रखते हुए जिस स्थान को साधना के लिए निश्चय कर लेवे , फिर नित्य प्रति उसी स्थान पर बैठे । भिन्न भिन्न स्थानों पर बैठतें रहने से परमाणु सतोगुण के नहीं बन पायेंगे । इसलिए साधना का स्थान भी एक ही होना चाहिए । उस कमरे में घृत ज्योति और सुगन्धि भी नित्य साधना से पूर्व करें ।

३. ______ समय : --- साधना का समय भी निश्चय कर उसका ही पालन करें । निश्चय समय के परिवर्तन से वृत्तियां साधनमयी बन न पायेंगी । बीच में अंतराल न आने देवें । इस अंतराल का फल मन पर कुवासनाओं का प्रभाव हो सकता है । इसलिए भोजन , समय और स्थान के नित्य पालन रूप से दीर्घकाल के श्रद्धा पूर्वक अभ्यास से वृत्तियां के निरोध में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त होगी । साधना शौच आदि से निवृत होकर ही करनी

Edit with WPS Office

लाभकारी है । अन्यथा पेट में गैस होगी , कब्ज और भारीपन के कारण साधना में आलस्य भी आएगा ।

2. ______ वैराग्य : ----

वैराग्य दो प्रकार का होता है ।

१.____ अपर वैराग्य : -- सूत्र (योग दर्शन)

दृष्टानुश्रविक विषय वितृष्णस्य वशीकार संज्ञा वैराग्यम् ।

लौकिक पुत्र - पौत्र , धनैश्वर्य आदि विषय को ' दृष्ट विषय , कहते हैं एवं ' आनुश्रविक , प्रकृति से लेकर परलोक पर्यंत के विषयों को वेद विहित विषय कहते हैं । इन दोनों प्रकार के विषय से तृष्णा रहित मानव के चित्त की अवस्था को वशीकार नामक अपर वैराग्य कहते हैं । अर्थात इसी वशीकार वैराग्य द्वारा मन में राग , द्वेष , पुत्र ,कलत्र और धन आदि के प्रतिममत्व को वश में करने का यत्न करें । जो मन व चित् के दोष निवृत्त हो गए हैं , उन्हें दृढ़ करें और जो निवृत्त नहीं हुए , उन की निवृत्ति के लिए यत्न करते रहे । जब बाहरी विषयों से मन आदि इंद्रियां निवृत्त हो जाए , तब आभ्यंतर उनके बीज रूप में बनें हुए सूक्ष्म संस्कारों को भी समाप्त करें । अपर वैराग्य द्वारा चित्त की सभी राजस् तामस् वृतियों का निरोध किया जाता है । इससे ही सम्प्रज्ञात - धारणा और ध्यान की अवस्था प्राप्त होती है । जो असम्प्रज्ञात योग = समाधि की अति सहयोगी है ।

२.____ पर वैराग्य : --- सूत्र (योग दर्शन)

तत्परं पुरुषख्यातेर्गुण वैतृष्ण्य ।

(पुरुषख्याते :) प्रकृति और पुरुष के विवेक ज्ञान से (गुणवैतृष्ण्यम्) सतोगुणमयीवृति भी समाप्त हो जाती है , उसे पर वैराग्य कहते हैं । वशीकार वैराग्य में जहां रजोगुण , तमोगुण की वृत्तियां नष्ट हो जाती है , वहां सत्तोगुण की वृत्तियां रहती है , पर वैराग्य में सत्तोगुण रुप में वृत्तियां भी नष्ट हो जाती है । क्योंकि सतोगुण वृत्तियां भी प्रकृति के गुणों से युक्त होती हैं । इसलिए तीनों प्रकार की वृत्तियां जब निरुद्ध हो जाती है , तभी आत्मसाक्षात्कार प्राप्त होता है । जो मोक्ष प्राप्त होने की अवस्था कही जाती है । यही धर्म मेघ समाधि = निबीज समाधि= असम्प्रज्ञान समाधि की अवस्था होने से सर्वोत्कृष्ट है ।

Edit with WPS Office

- 2. ______ **केन उपनिषद के अनुसार मन को एकाग्र करने के उपाय** :

यदि कोई व्यक्ति नियम से सात या आठ घंटे ' **तज्जपस्तर्थभावनम्** , की मर्यादा से प्रणव **(ओउम्)** का जाप करें तो निश्चय ही उसका मन लग जाता है और उसकी हालत जागृत अवस्था में वही हो जाती है , जो सुषुप्ति में हुआ करती है । इसी प्राप्त अवस्था को मन का निर्विषय होना कहा जाता है । मन निर्विषय होकर असाक्षात रीति से आत्मा की अंतर्मुखी के जागृत कर देने का कारण बन जाता है । परंतु साक्षात कारण नहीं बन सकता । इसलिए उपनिषद में मन को ब्रह्म की ओर चलता हुआ सा कहा गया है । यदि कोई उपासक चाहता है की आत्मा की अंतर्मुखी वृत्ति को जागृत करके प्रयागत्मदर्शी बने तो उसका उपयुक्त भांति ' ओउम् , का जाप करना चाहिए ।

- 3. ______ **मुण्डकोपनिषद के अनुसार मन को एकाग्र करने के उपाय :**

(क) ___ प्राणायाम करना : प्राणायाम के अभ्यास से आत्म साक्षात्कार में बाधक मल , विक्षेप , आवरण , अविधा आदि पंच कलेशों का विध्वंस हो जाता है । मनु महाराज ने कहा है कि जिस प्रकार अग्नि लोहें आदि धातुओं के मल को नष्ट कर देती है , इसी प्रकार प्राणायाम से इंद्रियों के दोष क्षीण हो जाते हैं , अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है जिससे समाधि शीघ्र लग जाती है ।

(ख) ___ योगी जनों के आदर्शों का आचरण करना : यम - नियमों का पालन करने से जिसका चित्त राग द्वेष रहित हो गया है , ऐसे योगी जनों के आदर्शों का आचरण करने से भी चित्त की शान्ति और एकाग्रता होती है , क्योंकि वैसा ही बनने का भाव मन में पैदा होता है ।

(ग) ___ प्रसन्न रहना : कभी किसी से मन में ग्लानि न करें । हर समय हंसमुख होकर सबसे बोले । प्रसन्न - चित्त से भी चित्त की एकाग्रता

Edit with WPS Office

और शांति की अवस्था प्राप्त होती है । वेदों में , गीता में , उपनिषदों में और योग दर्शन में मन को वश में करने की इस बहुत सरल विधि बताई गई है कि मनुष्य प्रत्येक समय प्रसन्न रहने की अपनी प्रकृति बना लें । मन यदि प्रसन्न रहें तो सरलता से टिकता है । फिर बहुत प्रयत्न नहीं करना पड़ता । परंतु इस सीधी सी सरलता सी बात को हम प्रायः नहीं करते । ईश्वर को हम कहते हैं -- सत्त चित्त आनंद - आनंद स्वरूप , आनंद का भण्डार । उससे मिलता है तो हमें भी अपने अंदर आनंद पैदा करना होगा । सर्वदा प्रसन्न रहने का स्वभाव बनाना होगा ।

मन प्रसन्न रहे तो शरीर भी स्वस्थ रहता है । प्रत्येक समय शिकायत करते रहने , प्रत्येक के दोष निकालने का स्वभाव अच्छा नहीं है । वह मनुष्य के शरीर को अस्वस्थ बना देता है । जिसके विषय में कोई शिकायत हो , उसकी बुराई को भूलकर किसी विशेषता को याद करो । उसमें यदि सारे ही दोष है , तो अन्त में कोई न कोई गुण भी तो होगा । इस पर विचार करते हुए तुम प्रसन्न रहो ।

(घ) ___ श्रद्धा से ध्यान करना : --- उपरोक्त मन की एकाग्रता के उपायों में से सब को अथवा जो आपको रुचिकर हो , उनको अपना कर श्रद्धा से ध्यान करें तो अवश्य ही मन की एकाग्रता प्राप्त होगी ।

- **4. ______ छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार मन को एकाग्र करने के उपाय : ---**

(क) ___ जब मनुष्य पूर्ण श्रद्धा रखते हुए 15 दिन तक यज्ञ और ईश्वर का हार्दिक चिंतन करता रहे तो इससे मन एकाग्र होकर उसकी वृत्ति शुद्ध हो जाती है ।

(ख) ___ लोभ और तृष्णा की नदी में बहने वाला व्यक्ति कभी भी शान्त और स्थिर चित्त वाला नहीं हो सकता । अर्थात लोभ और तृष्ण्ओं का त्याग करने पर ही व्यक्ति शांत और स्थिर चित्त हो सकेगा ।

5. ______ स्वाध्याय करने से मन का एकाग्र होना : ---

Edit with WPS Office

वेद एवं अन्य धार्मिक ग्रंथों को पढ़ने का व्यसन किसी की जानकारी तो बढ़ा सकता है , पर उससे कोई अत्मिक लाभ तभी होगा जब व्यक्ति भले ही शास्त्र को थोड़ा पढ़े पर उसका चिंतन करता रहे । शास्त्र के अर्थ पर , आदेश पर , मर्म पर और महत्व पर गंभीरता से मनन करना , अपनी आत्मा का अध्ययन करना , आत्ममंथन से जो नवजीत निकला हो उसे बचाकर आत्मसात् कर लेना ही स्वाध्याय का तथ्य है । इस प्रकार स्वाध्याय में मन लगाने से मन एकाग्र होने लगता है और सन्मार्ग की ओर रुचि जागृत हो जाती है ।

- **6. ______ पाराशर मुनि के अनुसार मन को एकाग्र करना : ---**

पाराशर मुनि के अनुसार इंद्रिय संयम , क्षमा , धैर्य , सन्तोष , सत्य भाषण , अहिंसा आदि गुण सुख देने वाले हैं । दुर्व्यसनों को त्याग कर इन गुणों को निर्वहन करने वाले मनुष्य का मन स्वत : ही एकाग्र होकर परमात्मा के ध्यान में लगने लगता है ।

- **7. ______ दंतिया (कौशल नरेश के राजपुरोहित की पुत्री) के अनुसार मन एकाग्र करना : ---**

दंतिया कहती है कि मानव ध्यान के माध्यम से अपने मन को एकाग्र कर सकता है । उसने उदाहरण देकर बताया कि जब एक अंकुशधारी महावत शक्तिशाली और विशालकाय हाथी को वश में कर सकता है तो वह भी ध्यान के माध्यम से अपने मन को वश में क्यों नहीं कर सकती ? अर्थात ध्यान के माध्यम से मन वश में हो सकता है ।

- **8. ______ सत्पुरुषों का सत्संग करने से मन का एकाग्र होना : ---**

सत्पुरुषों एवं विद्वानों का बारम्बार सत्संग करने से मन एकाग्र होने लगता है । सज्जन पुरुषों एवं विद्वानों की संगति से मानव का मन

Edit with WPS Office

पापाचरण से निवृत होकर धर्माचरण में लग जाने से मन में पवित्रता और स्थिरता आने लगती है। _____ इस संबंध में आचार्य चाणक्य ने कहा है ---- जैसे मछली दर्शन से , कछवी ध्यान से , और पक्षिणी स्पर्श से अपने बच्चों का सदा पालन पोषण करती है , ऐसे ही श्रेष्ठ पुरुषों की संगति मनुष्यों का पालन पोषण करती है।

- **9. ______ सांसारिक सुखों के पीछे छिपे हुए दुखों का ज्ञान व वैराग्य होने से मन का एकाग्र होना : ---**

मानव जब तक सांसारिक सुखों के पीछे छिपे हुए दुखों को नहीं जान लेता ,तब तक वैराग्य नहीं होता। वैराग्य के उत्पन्न हुए बिना चंचल मन एकाग्र नहीं होता। मन के एकाग्र हुए बिना समाधि नहीं लगती। समाधि के लगे बिना ईश्वर का साक्षात्कार नहीं होता। ईश्वर के साक्षात्कार के बिना अज्ञान व दुखों का नाश नहीं होता अर्थात मोक्ष नहीं मिलता।

- **10. ______गायत्री मंत्र का जाप करना : ---**

साधक के द्वारा 1 दिन में 25000 गायत्री मंत्र का जाप करने के पश्चात मन स्वयं ही खड़ा हो जाता है , वश में हो जाता है।

- **11. ______ आसन द्वारा मन को एकाग्र करना : ---**

आसन के द्वारा भी मन वश में किया जा सकता है। यदि मनुष्य 3 घंटे और 36 मिनट तक एक ही आसान से हिले बिना , कष्ट बिना , आंखें झपके बिना , बैठ सके तो उसका मन वश में हो जाता है।

- **12. ______ बुद्धि के द्वारा मन को वश में करना : ---**

जब बुद्धि के साथ मन को वश में करोगे , तो यह वहां पहुंचेगा जहां

Edit with WPS Office

आप को जाना है ।

• मन का वश में होने के लक्षण : ---

मन का वश में होने का अर्थ है , उसका बुद्धि के , विवेक के नियंत्रण में होना । बुद्धि जिस बात में औचित्य अनुभव करें , कल्याण देखें , आत्मा का हित , लाभ स्वार्थ समझे उसके अनुसार कल्पना करने , योजना बनाने , प्रेरणा देने का काम करने को मन तैयार हो जाए तो समझना चाहिए की मन वश में हो गया है । जब मन वश में हो जाता तो जिस काम पर लगा दिया जाए , उसमें लग जाता है । मन की एकाग्रता और तन्मयता में इतनी प्रचंड शक्ति है कि उसकी शक्ति की तुलना संसार की ओर किसी शक्ति से नहीं की जा सकती ।

असंस्कृत , छुदृल मन प्रायः इंद्रिय भोग , अहंकार की तृप्ति और धन संचय के तीनों क्षेत्रों में ही सुख ढूंढ़ पाता है । उसके ऊपर कोई अंकुश न होने से वह उचित -अनुचित का विचार नहीं करता और ' जैसा बन वैसा करने , की नीति अपनाकर जीवन की गतिविधि को कुमार्गगामी बना देता है ।

फल स्वरुप एक योजना छोड़ने , दूसरी अपनाने में गुण- दोष ढूंढने की बाधा नहीं रहती । इसलिए वश में किया हुआ मन अमृत के समान और अनियंत्रित मन हलाहल विष जैसा बताया गया है ।

•समाधि में बाधक पंच कलेशों का वर्णन : ---

- अविधा , अस्मिता ,राग , द्वेष और अभिनिवेश ये पांच क्लेश कहलाते हैं -- ये ही जन्म - मरण के कारण है और ये समाधि में बाधक है ।
- **1._____ अहिंसा :** जिस से पदार्थों के स्वरूप का यथावत बोध हो , वह विधा कहाती है और भ्रमवश पदार्थ के स्वरूप का बोध हो , वह अविधा

Edit with WPS Office

कहलाती हैं ।अविधा चार प्रकार की है ---

- **(क)___ अनित्य** : जो पदार्थ नित्य नहीं , उसे नित्य मानना । जैसे --- मांस , रक्त , हड्डी , आदि से बने शरीर को नित्य मानना और जन्म मरण को भी नित्य - पवित्र कहना अविधा कहलाती हैं ।
- **(ख)___ अशुचि** : अपवित्र सांसारिक विषय भोगों को पवित्र मानना ।
- **(ग)___ दुख** : क्षणिक सुख के पश्चात मन को सन्तप्त करने वाले विषयों को नित्य और सुख कारक मानना ।
- **(घ)___ अनात्मसु** : जिन पदार्थों में आत्मा नहीं , उनमें आत्मा- बुद्धि करना । जैसे जड़ पंचभूतों को और जड मूर्ति में आत्मबुद्धि करना अविधा कहलाती हैं । अविधा के और भी अनेक उदाहरण हैं । जैसे -- रज्जु में सांप , सीप में चांदी का बोध होना अविधा हैं ।
- **2.____ अस्मिता** : द्रष्टा और देखने का साधन बुद्धि इन दोनों चेतन और जड़ तत्वों में एक रुपता समझना ही अस्मिता है । वैसे ही भोक्ता और भोग को एक मानना आदि अनेक उदाहरण हैं । जैसे -- सुख और दुख मन का धर्म है , पर में दुखी हूं , पर मैं सुखी हूं , इस प्रकार कहते रहना ।
- **3.____ राग** : सूत्र -- **सुखानुशयी राग :** ।
- जिन पदार्थों के उपभोग से सुख होता है , उन्हें बार-बार प्राप्त करने की जो इच्छा जाग्रत होती हैं । वह राग कहलाता है ।

- **4. ______ द्वेष** : सूत्र - **दुखानुशयी द्वेष :** ।
- राग के विपरीत द्वेष कहाता है अर्थात जिनसे हमें दुख मिलता है , उनसे सर्वथा दूर रहना या उनको नष्ट कर देना अथवा करवा देना , ऐसा प्रतिशोध का भाव ही द्वेष कहलाता है ।

- **5. ______ अभिनिवेश** : सूत्र - **स्वरसवाही विदुषोऽपि तथा रुढोऽभिनिवेश :** ।
- जिस प्रकार मूर्ख को मृत्यु का भय सताता है , विद्वान को भी वैसा ही

Edit with WPS Office

लगा रहता है क्योंकि वह अनादि काल से अनुभव गम्य है । इस कारण प्रत्येक व्यक्ति यह सोचता है कि मैं कभी न मृत्यु को प्राप्त होऊं , सदैव बना रहा हूं । इस भाव को ' अभिनिवेश , दुख कहते हैं । इस प्रकार अविधा आदि पंच कलेश अति महत्व रखते हैं । इनका एकमात्र निवृत्त का उपाय विवेक है ।

- **क्लेशों की निवृत्ति का उपाय : ______**

ये अविधा आदि पंच क्लेश से ,यम - नियम और क्रिया योग अनुष्ठान से क्षीण हो जाते हैं । जैसे अग्नि से लोहादि का जंग नष्ट हो जाता है । अर्थात कुवासनाओं का जो आधारभूत चित्त है , वही शुद्ध हो जाता है , तब उनके टिकाव का अवसर ही प्राप्त नहीं रहता । इसलिए उनको क्षीण - निर्बल होना कहा है ।

- **बीज रूप में विद्यमान कलेशों के क्षय का उपाय : ______**

जो बीज रूप में चित्त मैं सूक्ष्म वृत्तियां है ,वे भी ध्यान - सम्प्रज्ञात - समाधि से नष्ट हो जाती है । फिर वे जन्म -मरण रूप दुख का कारण नहीं रहती ।

शीघ्र समाधि लाभ के लिए और एक महत्वशाली उपाय :

अपने आप को ईश्वर को समर्पण कर देने से भी समाधि शीघ्र प्राप्त हो जाती है , क्योंकि इस उपाय से ' अहं ,भाव समाप्त हो जाता है , जो समाधि में बाधक है । इसलिए उपासक जब अपने सब कुछ को ईश्वर के अर्पण कर देता है तब उसमें कलुषित भाव पैदा नहीं होते और ईश्वर भी उस भक्त की शुभकामना को शीघ्र ही सिद्ध कराता है । ऋग्वेद में कहा गया है ____
ऋग्वेद. 1/1/6 ____ में न्याय , दया , कल्याण और सबका मित्र भाव रखने वाला परमेश्वर है , उसी की उपासना करके जीव इस लोक और मोक्ष के सुख को प्राप्त होता है । क्योंकि इस प्रकार सुख देने का स्वभाव और

Edit with WPS Office

सामर्थ्य केवल परमेश्वर का है , दूसरे का नहीं । जैसे शरीर धारी अपने शरीर को धारण करता है , वैसे ही परमेश्वर सारे संसार को धारण करता है और इसी से संसार की यथावत रक्षा और स्थिति होती है ।

जो उस सच्चे माता-पिता , गुरु रूप प्रभु को आत्मा से सर्वस्व अर्पण कर देता है । फिर वह प्यारा प्रभु भी उसका शीघ्र भला करता है । यह उसका सत्य कथन है । परंतु यह समर्पण भाव कहना जितना सरल प्रतीत होता है , उतना आचरण में आना साधारण काम नहीं , नहीं तो कभी कब का दुनिया का भला हो जाता । इसलिए सच्चे हृदय से आत्म समर्पण करो , केवल वाणी मात्र से नहीं ।

•योग अंगों का वर्णन : ______

योग के आठ अंग है ।

1. ___ यम : यह के पांच भेद है ।

(क) अहिंसा : _____ मन वचन और शरीर से किसी भी निरपराधी को कष्ट न देना अहिंसा कहाती है । इसलिए अनिष्ट चिंतन , कठोर और कुभाषण आदि करना हिंसा में आ जाता है ।

अहिंसा पालन के लाभ : ______ पूर्ण रूप से अहिंसक प्राणी के पास जो हिंसक आता है , तो वह भी अहिंसक बन जाता है । सर्प , शेर आदि हिंसक प्राणी भी उसकी हानि नहीं पहुंचाते ।

कुछ लोग इसके विपरीत कहते हैं कि हिंसक प्राणी तो हिंसक ही रहता है । ऐसे लोग तर्क देते हैं कि व्याकरण शास्त्र के निर्माता पाणिनी को सिंह ने मारा , मीमांसा शास्त्र के रचने वाले आचार्य जैमिनी को हाथी ने मारा , छन्द शास्त्र के रचयिता पिंगलाचार्य को मगरमच्छ ने मारा , क्या ये अहिंसा के पुजारी न थे ? इसलिए हिंसक प्राणियों का क्या विश्वास हो सकता है । परंतु योगी और विद्वान में अंतर होता है । योगी ही पूर्ण रूप से अहिंसा को धारण कर सकता है , दूसरा नहीं । इस कारण आचार्य पतंजलि का कथन सत्य है ।

(ख) सत्य : ______ मन वचन और कर्म में सत्य मानना , बोलना और

Edit with WPS Office

वैसा ही आचरण करना सत्य कहाता है । मनवाणी और कर्म में एकरूपता का होना ही सत्य है , अन्यथा असत्य समझना चाहिए ।

सत्य सिद्धि का फल : ______ जो योगी पूर्णरूपेण सत्यवादी , सत्यमानी , सत्यकारी हो जाता है , तब उसकी वाणी अमोघ हो जाती है । वह जो भी उचित शब्द उच्चारण करता है , वह सार्थक हो जाता है । वह भ्रष्ट व्यक्ति को भी ' आज से तू यह कार्य छोड़ दे , ऐसा कह देता है तो उसके कथन और आशीर्वाद से वह उस पाप से बचकर शुभाचरण वाला हो जाता है । जैसे महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अमी चंद को कहां कि ' अरे ! अमीचन्द है तू हीरा पर कीचड़ में फंसा हुआ है । वास्तव में इस वचन ने उसे हीरा ही बना दिया ।

(ग) अस्तेय : ______ छल कपट आदि से और स्वामी की बिना आज्ञा से अनाधिकार पूर्वक वस्तु का ग्रहण करना अस्तेय =चोरी कहाता है । उसका पूर्ण रूप से परित्याग करने को अस्तेय =चोरी न करना कहते हैं ।

अस्तेय सिद्धि का फल : ______ जब योगी पूर्ण रूप से अस्तेय और अनाधिकार के भाव को प्राप्त हो जाता हैं , तब उसके पास प्रचुर मात्र में जीवनोपयोगी उत्तम पदार्थों की प्राप्ति थोड़े ही पुरुषार्थ से हो जाती है । सांसारिक लोग ही उसका अपने आप सहयोग करने लग जाते हैं । उसके पास किसी चीज का अभाव नहीं होने देते ।

(घ) ब्रह्मचर्य : ______ ईश्वर की उपासना , वेद का अध्ययन , प्रचार - प्रसार और वीर्य की रक्षा करना । ब्रह्मचर्य में हानिकारक निम्न आठ तत्वों को माना जाता है ।

1. प्रातः 4:00 न उठना ।
2. सूर्यास्त , सूर्योदय तक सोना ।
3. रजोगुणी , तमोगुणी भोजन करना ।
4. स्त्रियों का चिंतन करना ।
5. स्त्रियों के साथ क्रीडा करना और एकांत में वार्तालाप अधिक देर तक करना ।
6. गन्दी पुस्तक पढ़ना ।
7. गंदे चित्र देखना ।
8. अश्लील बातें करना आदि ।

Edit with WPS Office

ब्रह्मचर्य की सिद्धि का फल : ______ जब योगी ब्रह्मचर्य को पूर्ण रूप से अपने शरीर में धारण कर लेता है , तब उसके शरीर में अपारशक्ति का संचार होने लगता है । उसकी शारीरिक आत्मिक और बौद्धिक शक्ति अक्षुण्ण हो जाती है । उसको दूसरे कामी जन पराजित नहीं कर सकते । ब्रह्मचर्य और तप के बल से योगी और पूर्ण ब्रह्मचारी मृत्यु पर भी विजय पा लेता है । इंद्रिय निग्रह को सबसे बड़ा तप कहा है । **भर्तृहरि महाराज कहते हैं ___ कामदेव को वश में करने वाले वीर ही होते हैं ।**

(ङ) अपरिग्रह : ______ चाहे सन्यासी हो या गृहस्थी उसको अनावश्यक और आवश्यक वस्तुओं का भी अधिक संग्रह नहीं करना चाहिए । क्योंकि परिग्रह से साधना में बांधा आती है और समाज में अव्यवस्था फैलती है । किसी के पास अनाज और वस्तुओं का अंबार लगा होता है तो दूसरे के पास खाने और पहनने का भी अभाव हो जाता है । इसलिए अपरिग्रह होना प्रत्येक प्राणी के लिए सुखदायक है ।

अपरिग्रह धारण करने का फल : ______ जब योगी अपरिग्रह को प्राप्त हो जाता है अर्थात अनावश्यक और आवश्यक वस्तुओं का भी अपने आप अधिक संग्रह नहीं करता , तब उसका मानव जीवन सफल किस रूप में हो सकता है इसके लिए किस प्रकार योग और क्षेम की आवश्यकता होती है और पूर्व जन्म में मैं किन योनियों में था और आगे किस में जा सकता हूं और क्यों जा सकता हूं , इन सब बातों का उसे बोध हो जाता है ।

नोट : प्राप्ति का नाम योग और रक्षा को क्षेम कहते हैं ।

2.______ नियम : ______ शौच , संतोष ,तप , स्वाध्याय , और ईश्वर प्रणिधान ये पांच नियम है । इनका भी अनुष्ठान यमों के साथ-साथ अनिवार्य रूप से होना चाहिए , क्योंकि इनसे साधक को साधना में सफलता मिलती है और साधारण का भी जीवन पवित्र और उन्नत होता है ।

(क) ___ शौच : ______ शौच दो प्रकार का कहाता है ।

(१) बाहरी शुद्धि : बाहरी शुद्धि जल आदि से होती है । वस्त्र , पात्र , स्थान , खानपान , आदि को पवित्र रखना और शरीर को बाहर से पवित्र साफ रखना बाहरी शुद्धि है । अपने को शुद्ध पवित्र और साफ रखने से शरीर के अंगों की रक्षा होती है ।

Edit with WPS Office

(२) ___ आभ्यंतर शुद्धि : विधा , ज्ञान , सत्संग , संयम , स्वाध्याय , सत्य और धर्म से मन व बुद्धि को पवित्ररखना । सत्य बोलने से मन पवित्र , वेद आदि सत्य शास्त्रों के ज्ञान से बुद्धि , साधना , तप से आत्मा पवित्र और हित ,मित , ऋत से वृत्तियां सुंदर होती है । शरीर हृष्ट-पुष्ट और निरोग होता है ।

शौच पालन के लाभ : ______

१. बाहरी शुद्धि के लाभ :

(क) ___ जल आदि से स्नान , शुद्ध वस्त्र करके शुद्ध पवित्र साफ सुथरा रहने से अपने शरीर के अंगों की रक्षा हो जाती है ।

(ख) ___ शरीर हृष्ट-पुष्ट और निरोग रहता है ।

आभ्यंतर शुद्धि के लाभ : जब योगी आभ्यंतर शुद्धि को प्राप्त हो जाता है , तब अन्त :करण की शुद्धि , मन में उत्साह , प्रसन्नता , सुविचार और एकाग्रता होती हुई इंद्रियों पर विजय कर लेता है और उसकी इंद्रियां स्वेच्छा अनुसार बाहरी विषयों की ओर आकृष्ट न होती हुई अंतर्मुखी ,आत्मानुकूल विषयों को ग्रहण करने वाली हो जाती है । जब यह अवस्था प्राप्त हो जाती है , तब आत्म दर्शन की योग्यता प्राप्त होती है । यह आभ्यान्तर शुद्धि का फल है ।

(2) सन्तोष : ______ अपने पूरे पुरुषार्थ के पश्चात ईश्वरीय व्यवस्था से जो , जितना और जैसा पदार्थ प्राप्त हो , उसी में संतुष्ट रहने को 'संतोष , कहते हैं ।

अपनी योग्यता व अधिकार के अनुरूप अपनी शक्ति , सामर्थ्य , ज्ञान विज्ञान तथा उपलब्ध साधनों से पूर्ण पुरुषार्थ करने से प्राप्त फल में प्रसन्न रहने को संतोष कहते हैं ।

संतोष प्राप्त के लाभ : ______

अत्यंत सुख की प्राप्ति होती है ।

मन शांत प्रसन्न और एकाग्र रहता है ।

अधिक पुरुषार्थ करने की प्रेरणा मिलती है ।

संतोष के पालन से आत्मविश्वास बढ़ता है ।

मन के विचार पवित्र रहते हैं ।

Edit with WPS Office

(3) तप : ______ जीवन के लक्ष्य को पूरा करने की साधना में हानि लाभ , सुख-दुख , भूख प्यास , सर्दी गर्मी , मान अपमान आदि । द्वन्द्वों को शान्ति और धैर्य से सहन करने को तप कहते हैं ।
महर्षि वेदव्यास जी लिखते हैं -- बिना तप के प्रभु के दर्शन नहीं होते । योग्यता और अधिकार के अनुरूप साधनों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए , परंतु आवश्यक पड़ने पर अभाव में भी प्रसन्नता रसके , ऐसा पूरा अभ्यास करना चाहिए ।
' ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका , में महर्षि दयानंद सरस्वती जी कहते हैं -- जिस प्रकार सोने को अग्नि में डालकर इसका मल दूर किया जाता है , इसी प्रकार सद्गुणों से और उत्तम आचरणों से अपने हृदय ,मन और आत्मा को निर्मल करना ही तप है । यह है तप का वास्तविक स्वरूप ।

महात्मा गौतम बुद्ध कहते हैं -- जिसने अपनी इच्छाओं पर पूर्ण नियंत्रण कर लिया है , जो हर स्थिति में संतुष्ट रहता है , जो दुख में दुख और सुख में सुख की अनुभूति नहीं करता , वही सच्चा तपस्वी है ।
महर्षि रमण कहते हैं -- जिसे अहित करने वाले , निन्दा करने वाले पर भी क्रोध नहीं आता , जिसने क्रोध पर पूर्ण नियंत्रण कर लिया है , वह उच्च कोटि का तपस्वी है ।
वराह पुराण में कहां है --" तपस्या शरीर और मन को परिष्कार करने वाली एक प्रक्रिया है । केवल तप द्वारा ही हम अपनी बुद्धि , भावनाओं , आसुरी प्रवृत्तियां आदि को संयमित कर सकते हैं ।

तप के भेद : ______

भगवान श्री कृष्ण ने गीता में तीन प्रकार के तप का वर्णन किया गया है ।

1. शारीरिक तप : ______ गीता. 17/14

देवता , विद्वान , ब्राह्मण , गुरु और वृद्धों की सेवा करना और उनकी आज्ञा मानने में जो शारीरिक कष्ट होता है , उसे प्रसन्नता पूर्वक सहन करना , अपने आप को भीतर और बाहर से निर्मल रखना , धोखा ,छल , कपट नहीं अपितु सरलता का जीवन बीताना , ब्रह्मचर्य का पालन करना और बिना कारण किसी कष्ट नहीं देना और यह सब करते हुए भी नम्रता से रहना ,

Edit with WPS Office

अकड़ना नहीं , अभिमान में नहीं आता , दूसरों को अपने से नीचा नहीं समझना , यह है शारीरिक तप ।

2. वाणी का तप : ______ गीता. 17/15

वाणी के तप के संबंध में गीता में कहा गया है कि सत्य बोल परंतु मीठा बोल , दूसरे का हित करने वाला बोल , ऐसा न कर की तू बोलें और दूसरों के हृदय में अग्नि की ज्वालाएं धधक उठें । ऐसा न कर कि तेरी वाणी से तूफान उठें , घृणा के बादल गरज उठे ।

3. मन का तप : ______ गीता. 17/16

श्री कृष्ण ने मन के तप के सम्बन्ध में कहा है कि -- मन प्रसन्न हो ,शान्त और गम्भीर । इन्द्रियां वश में हो , मनुष्य बातुनी न हो ,हर समय गप न हांकता हो । भावनाओं में पवित्रता हो ,-- इन सब बातों का नाम मन का तप है । मन का तप यह है कि इसे खोटें विचारों का , गन्दे विचारों का , बुरे विचारों का अड्डा न बनने दो । ईर्ष्या द्वेष जलन और घृणा का अड्डा ना बनने दो । इसे काम क्रोध लोभ मोह और अहंकार की चिंगारियों से बचाओं , और कैसे बचाओं ? श्री कृष्ण ने कहा है -- मन प्रसाद : ,मन को प्रसन्न रख , इसमें आनंद जमा कर । हर समय चिन्ताओं में डूबे मत रहो , हर समय शोक सागर में डूबे मत रहो ,चिन्ताओं के तूफान उठें , या शोक सागर के बादल छा जाए या दुखों के बादल गरज उठे ,हर समय हर हाल में इस विश्वास के साथ प्रसन्न रहो की प्रभु की इस माया में कल्याण ही होगा ।

•शारीरिक , वाणी , मानसिक तपों के उपभेद : _______

1.___ सात्विक तप : फल को न चाहने वाला योगी पुरुषों द्वारा परम श्रद्धा से किए हुए उपरोक्त तीनों प्रकार के तपों को सात्विक तप कहते हैं ।

2. ___ राजस् तप : जो तप सत्कार ,मान , पूजा के लिए और किसी अन्य स्वार्थ के लिए स्वभाव से या पाखंड से किया जाता है , वह अनिश्चित एवं क्षणिक फल वाला राजस् कहा गया है ।

3. ___ तामस तप : जो तप मूढ़ता हठ से मन , वाणी और शरीर की पीड़ा

Edit with WPS Office

के सहित अथवा दूसरों का अनिष्ट करने के लिए किया जाता है । वह तामस तप कहा गया है ।

• तप का फल : ______

द्वन्द्वों के सहने रुप तप से योगी के मल , आवरण और विक्षेप नष्ट होते हुए शरीर पूर्ण स्वस्थ , निरोग और फौलादी कठोरवत हो जाता है । मन आदि इंद्रियों पर विजय प्राप्त हो जाती है । जैसे कि मुण्डकोपनिषद में कहां गया है ___

' नायमत्मा बलहीनेन लभ्य : ,

• 4. स्वाध्याय : ______

समस्त दुखों से छुड़ाने वाले शास्त्रों का अध्ययन करना , ओउम् आदि पवित्र शब्द मंत्रों का जाप करना , स्व , अपना आत्म निरीक्षण करना स्वाध्याय कहलाता है । स्वाध्याय के तीन रूप है ____

1. _____ वेद , उपनिषद और दूसरे अच्छे ग्रंथो का नित्य पाठ करना स्वाध्याय कहलाता है । थोड़ा पढ़ा जाए या अधिक , परंतु प्रतिदिन अवश्य पढ़ाना चाहिए । पढ़ना और पढ़े हुए पर विचार करना यह स्वाध्याय है । शतपथ ब्राह्मण का विश्वास है कि जो व्यक्ति प्रतिदिन स्वाध्याय करता है , वह अपना वैध आप बन जाता है , अपना नेता आप हो जाता है । अपनी उलझनों को आप सुलझा लेता है ।

2. _____ स्वाध्याय का अर्थ केवल वेद पढ़ना ही नहीं है । इसका एक और रूप भी है । योग दर्शन का भाष्य करते हुए व्यास मुनि ने कहा है कि प्रभु का नाम स्मरण करना भी स्वाध्याय है । उठते , बैठते , चलते फिरते हर समय उस प्रभु को याद रखना , उसके ओउम् नाम का मन ही मन में उच्चारण करते रहना यह भी स्वाध्याय है ।

3. ______ स्वाध्याय का तीसरा रूप है आत्म निरीक्षण , अपने को देखना , अपने आप को पढ़ना । प्रतिदिन प्रात: और सायं काल एकांत में बैठकर आत्म निरीक्षण करो कि आज क्या मैंने कोई अच्छा कार्य किया है ?

Edit with WPS Office

यदि कोई अच्छा कार्य हुआ है , तो भगवान का धन्यवाद करो और प्रार्थना करो कि ऐसा अच्छा कर्म करने की शक्ति वह आपको और भी दे । यदि कोई बुरा काम हुआ है तो पश्चाताप करो , प्रार्थना करो और निर्णय करो कि ऐसी बात फिर न होने पाएं ।

- **स्वाध्याय के लाभ : ______**

- स्वाध्याय करने से जीवन में काम आने वाले पदार्थों का शुद्ध ज्ञान हो जाता है ।
- हानिकारक वस्तुओं से मिलने वाले दुखों से बचते हैं ।
- जीवन में शान्त , प्रसन्न , तृप्त और सुखी रहकर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होंगे ।
- आत्मा और परमात्मा के दर्शन के अधिकारी बनते हैं ।
- एकाग्रता बढ़ती है । ईश्वर के प्रति , श्रद्धा और रुचि बढ़ती है ।

- **स्वाध्याय का फल : ______**

- गूढ़ रहस्यों का भान हो जाना ।
- सिद्ध पुरूषों से संयोग होना ।
- ईश्वर का साक्षात्कार करने में मन लगना ।

- **(5) ईश्वर प्रणिधान : ______**

जब अपने पूरे पुरुषार्थ से शुभ कर्मों को करके ईश्वर -अर्पण कर देना = स्वेच्छानुसार कर्म फलों का परित्याग कर देने को ईश्वर प्रणिधान कहते हैं । इस भावना से ईश्वर में श्रद्धा , अभिमान का त्याग और जीवन शांति युक्त रहता है । जब साधक अपने को और अपने द्वारा होने वाले श्रेष्ठ कर्मों को ईश्वर के अर्पण कर देता है अर्थात सर्वात्मना ईश्वर को समर्पित हो जाता है , तब समाधि की सिद्धि उसको शीघ्र प्राप्त हो जाती है ।

Edit with WPS Office

ईश्वर प्रणिधान के लाभ : ______

- ममत्व (मैं और मेरा) की भावना समाप्त हो जाती है ।
- किसी भी प्रकार का अनुचित कार्य नहीं करता ।
- समाधि की सिद्धि शीघ्र प्राप्त हो जाती है क्योंकि ईश्वर प्रणिधान से साधक के मन में अति शांति हो जाती है । वह नि:शंक और विघ्न बाधाओं से सुरक्षित अनुभव करता हुआ ईश्वर में समाहित हो जाता है ।

योग का तीसरा अंग - आसन : ______

महर्षि पतंजलि ने आसन की परिभाषा को छोटे से सूत्र में अभिव्यक्त किया है । -- स्थिरसुखमासनम् । अर्थात स्थिरता पूर्वक (प्रतिभा की भांति) सुखपूर्वक प्रसन्न मुद्रा में बैठकर जिसमें ध्यान किया जाता है , उसे आसन कहते हैं ।

मन को ईश्वर में लगाना तभी संभव हो सकता है जब हम अपने शरीर को स्थिर करें , अचल करें । यदि हम शरीर में गति करते रहे तो मन में भी गति होगी एवं इससे मन में वृत्तियां रहेगी । साधक को जो आसान अनुकूल पड़े उसी एक का अभ्यास करें । पद्मासन , सिद्धासन , स्वस्तिकासन , (साधारण अवस्था में बैठना) आदि में से साधक को किसी एक आसन का अभ्यास करना चाहिए ।

- **आसन सिद्धि के लाभ : ______**

आसन सिद्धि से शरीर पर नियंत्रिण होता है ।
मन एकाग्र होता है ।

- **आसन सिद्धि के उपाय : ______**
- आसन सिद्धि के लिए अधिक जोर न देवें । क्योंकि इससे हानि हो सकती है । इसलिए धीरे-धीरे आसन के अभ्यास को बढ़ाया जाए ।
- मन को आसन की ओर से हटाकर ईश्वर के ध्यान में संलग्न रखें , क्योंकि मन का आसन में ध्यान रहने से आसन शीघ्र परिवर्तन करने का ध्यान आ सकता हैं । इसलिए मन को आसन की ओर से हटाकर ईश्वर में संलग्न करने का ध्यान रखें ।

Edit with WPS Office

- आसन न अधिक नीचा हो ,न अधिक ऊंचा हो और न अधिक गुदगुदा हो ।
- गीता में लिखा है कि साधक को युक्त आहार - विहार का ध्यान अवश्य रखना चाहिए , क्योंकि इस पर ध्यान न रखने से आलस्य , प्रमाद का प्रभाव हो जाएगा , जो आसन की स्थिरता में और साधना में बाधक होगा ।

(4) योग का चतुर्थ अंग- प्राणायाम : ______

प्राण का अर्थ वायु और आयाम का अर्थ रोकना । अर्थात वायु को रोकने का नाम प्राणायाम है । वायु को चार प्रकार से रोका जाता है ---

१. ___ **बाहरी प्राणायाम :** फेफड़ों में स्थित प्राण को बाहर निकाल कर बाहर ही रोकना । इसको रेचक भी कहते हैं ।

२. ___ **आभ्यंतर प्राणायाम :** बाहर के प्राण को अंदर (फेफड़ों में) लेकर अंदर ही रोकना । इसको पूरक भी कहते हैं ।

३. ___ **स्तम्भवृत्ति प्राणायाम :** प्राण का जहां का तहां (अंदर का अंदर और बाहर का बाहर) रोक देना ।

४. ___ **बाहरी व आभ्यंतर विषयाक्षेपी प्राणायाम :** बाहरी व आभ्यान्तर प्राणायामों को जोड़कर करना । वह है कुंभक । स्तम्भवृत्ति और कुम्भक में यही भेद है कि स्तंभ में जहां प्राण है , वही का वही रोक देना है , परंतु कुम्भक में रेचक और पूरक प्राणायाम करते हुए अंदर बाहर रोकना होता है ।

कुम्भक दो प्रकार का होता है ---

1.___ **बाह्य कुम्भक :** अपान वायु को निकालकर कुछ काल बाहर ही रोके रखना ।

2.___ **आभ्यंतर कुम्भक :** प्राण वायु को अंदर लेकर फिर कुछ काल अंदर ही रोके रखना ।

Edit with WPS Office

•प्राणायाम करने के लिए आवश्यक निर्देश :

1. प्राणायाम पेट एवं बड़ी आंतें खाली (भोजन व मल न) होने पर ही करना चाहिए ।
2. भोजन के न पचने ,मल (शौच) त्याग न होने पर प्राणायाम न करें ।
3. प्राणायाम करने का उपयुक्त समय प्रातः काल है ।
4. यदि आहार पच गया हो व मल शुद्धि हो गई हो तो सायं काल भी कर सकते हैं ।
5. भोजन करने के कम से कम चार - पांच घंटों के उपरान्त ही प्राणायाम करना चाहिए ।
6. स्नान करने के बाद प्राणायाम करना अधिक उपयुक्त है ।
7. वस्त्र ऋतु के अनुरूप एवं ढीलें होने चाहिए ।
8. प्राणायाम का स्थान शुद्ध , एकान्त , वायु के आवागमन वाला हो , वहां जिधर से वायु आवागमन हो रहा हो , उधर मुख करना चाहिए ।
9. अपनी अवस्था (बालक , किशोर , युवा , प्रौढ़ ,व वृद्धावस्था) को देखकर प्राणायाम करें ।
10. बालक किशोर एवं वृद्ध समान अर्थात अल्प से मध्यम मात्रा में तीन से दस प्राणायाम कर सकते हैं ।
11. युवा व प्रौढ एक समान अर्थात मध्यम से पूर्ण मात्रा में 11 से 21 प्राणायाम कर सकते हैं ।
12. शरीर के सामर्थ्य (स्त्री , पुरुष के सामर्थ्य) को देखकर प्राणायाम करें ।
13. कम से कम तीन प्राणायाम हर अवस्था वाले एवं स्त्री - पुरुष सब कर सकते हैं ।
14. इक्कीस प्राणायाम से अधिक न करें ।
15. प्राणायाम करते समय शरीर भारी बने , सिर भारी बने या सिर दर्द होने लगें , चक्कर आने लगे , तो प्राणायाम न करें ।
16. प्राणायाम करने वाले को भोजन में सभी तत्व (विटामिन , खनिज ,

Edit with WPS Office

लवण , प्रोटीन , चिकनाई आदि) होने चाहिए ।

17. शीत ऋतु में अधिक मात्रा में , ग्रीष्म ऋतु में कम मात्रा में एवं वर्षा ऋतु में बीच की मात्राओं में प्राणायाम करना चाहिए ।
18. बुद्धिनाशक , मदकारी व तामसिक पदार्थों का (शराब , अफीम , ब्राउन सुगर , ड्रग्स , पेप्सी आदि) सेवन न करें ।
19. नयें व्यक्ति को प्रारंभ में प्रथम प्रकार का प्राणायाम (बाहरी प्राणायाम) ही करना चाहिए । अभ्यास करते हुए बाद में दूसरे तीसरे प्रकार के प्राणायाम (आभ्यंतर व स्तम्भवृत्ति) कर सकते हैं ।
20. प्राणायाम नथूनों के माध्यम से करें । मुख से न करें ।
21. एक बार प्राणायाम करके तत्काल दूसरी व तीसरी बार करना नयें व्यक्ति के लिए कठिन होता है । अतः एक बार करके 3-4 सामान्य श्वास - प्रवास ले लेवें । पुनः अगला प्राणायाम करें ।
22. अच्छे प्रशिक्षक से सीखकर ही प्राणायाम करें ।
23. प्राणायाम करते समय मन को खाली न रखें । मन को प्राण के साथ जोड़कर , प्राणों को अपने अधिकार में करने हेतु प्रभु से प्रार्थना करें कि हे प्राण दाता ! मेरे प्राण मेरे अधिकार में हों । प्राण के साथ रहने वाला मेरा मन मेरे अधिकार में हों ।
24. प्राणायाम का मुख्य उद्देश्य मन को रोक कर आत्मा व परमात्मा में लगाना एवं उनका साक्षात्कार करना है , ऐसा मन में रख कर प्राणायाम करें ।
25. प्राणायाम के समय में परमेश्वर का ध्यान सतत करते रहें ।

प्राणायाम करने की विधि : ______

1. बाह्य प्राणायाम : ______ किसी एक आसन (सिंहासन , पद्मासन , स्वस्तिकासन या सामान्य पालथी) में बैठ जायें ,कमर ,छाती , गर्दन ,व सिर को सीधी रेखा में रखें । दोनों हाथों को एक मुद्रा (ज्ञान मुद्रा या द्रोण मुद्रा) बनाकर घुटनों के ऊपर रखें । शरीर को अच्छी प्रकार स्थिर व एकाग्र करें । धैर्य व उत्साह से श्वसनतंत्र के नियम के अनुसार अंदर के प्राण को धीरे-धीरे

Edit with WPS Office

बाहर निकालें । पूरा प्राण बाहर निकाल कर , प्राण को बाहर ही रोके रखें । जालंधर बंध (ठोड़ी को छाती के साथ) और उड्डीयानबंध (पेट को अंदर ले जाना) तथा मूलबंध (गुदा इंद्रिय को ऊपर खींच कर रखना) लगावें । यथा सामर्थ्य प्राण को बाहर ही रोके रखें । सामर्थ्य पूरा हो(थोड़ी सी घबराहट बैचेनी होने तक) जाए तो तीनों बन्धों को (पहले मूलबंध को , फिर उड्डीयानबंध को , और फिर जालन्धर बन्ध को) छोड़े । धीरे-धीरे बाहर के प्राण को श्वसनतंत्र के नियम के अनुसार ही अंदर ले जायें । सामान्य स्थिति में आ जायें । 3 4 बार श्वास - प्रवास लेकर पुनः ऐसा ही करें । इस प्रकार कम से कम तीन बार अवश्य करें । लंबे अभ्यास के द्वारा संख्या बढ़ा सकते हैं ।

सावधानियां : ___

1. त्रिबन्ध लगाने के प्रयास में प्राणायाम विधि का त्याग न करें ।
2. प्राण को अंदर लेते समय सभी को धीरे-धीरे ही लेना चाहिए ।
3. अंदर लेते समय प्राय: धैर्य छूट जाता है । तेजी के साथ प्राण को अंदर खींचते हैं । ऐसा बिल्कुल न करें ।
4. जबरदस्ती न करें । अधिक देर तक रोकने में शक्ति न लगातार विधि में शक्ति लगावे , कुशलता के प्रति ध्यान देवे ।
5. मन को पूर्ण नियंत्रण में रखने का सतत प्रयास करें ।
6. मन को आत्मा व परमात्मा में लगावें ।

2. आभ्यंतर प्राणायाम : ______

बाह्य प्राणायाम के समान आसन की स्थिति बना लेवे । बाहर के प्राण को धीरे-धीरे लयबद्ध क्रम से अंदर ले जावे । जितना भर सकते हैं , उतना पूरा भर के अंदर ही रोके रखें । सामर्थ्य पूरा हो (थोड़ी सी घबराहट-बेचैनी होने तक) जाए , तो धीरे-धीरे लयबद्ध क्रम से प्राण को बाहर निकालें । तीन - चार बार सामान्य श्वास -प्रश्वास लेवे । पुनः ऐसा ही कम से कम तीन बार प्राणायाम करें ।

सावधानियां : ___

Edit with WPS Office

1. बाह्य प्राणायाम की सावधानियां आभ्यंतर प्राणायाम मैं भी समझ लेवे ।
2. इसमें प्राण को लेते समय व निकालते समय धीरे-धीरे ही लेना व निकालना है ।
3. इस प्राणायाम में एक बन्ध जालन्धर लगा सकते हैं ।
4. ग्रीष्म ऋतु में अधिक न करें ।
5. बाह्य प्राणायाम की अपेक्षा इस प्राणायाम में प्राण के अधिक समय तक अंदर रोक सकते हैं ।

3. स्तम्भवृत्ति प्राणायाम : ______

बाह्य प्राणायाम के समान आसन की स्थिति बना लेवे । मन को दोनों नथुनों के मध्य में लगावें । निरंतर चलने वाले श्वास -प्रश्वास की अनुभूति करें । अनुभूति होगी कि श्वास के द्वारा प्राण अंदर जा रहा है और प्रश्वास के माध्यम से बाहर निकल रहा है । श्वास - प्रश्वास की गति का अनुभव अच्छी तरह हो जावे , तो अंदर का अंदर और बाहर का बाहर ही रोके रखें । अंदर से बाहर निकलने वाले प्राण को बाहर न निकलने देवें । बाहर से अंदर आने वाले प्राण को अंदर न आने देवें । यथार्थ सामर्थ्य से रोककर छोड़ देवें । कुछ समय तक सामान्य श्वासन करते रहे । पुनः दूसरी बार इसी प्राणायाम को करें । इस प्रकार कम से कम तीन प्राणायाम करें ।

सावधानियां : ___

1. बाह्य प्राणायाम की भांति जप आदि मन मैं चलता रहता है ।
2. जबरदस्ती न करें ।
3. किसी भी ऋतु में कर सकते हैं ।
4. मार्ग में आते जाते हुए दुर्गंध आदि की स्थिति में इस प्राणायाम को करके अशुद्ध वायु से बचा जा सकता है ।

4. बाह्यभ्यन्तर विषयाक्षेपी प्राणायाम : ______

बाह्य प्राणायाम की भांति आसन की स्थिति बना लेवे । बाह्य प्राणायाम की विधि के अनुसार प्राण को बाहर निकाल कर बाहर ही रोके रखें । त्रिविध

Edit with WPS Office

बन्ध ना लगावे । सामर्थ्य पूरा हो जावें तो बाहर के प्राण को अंदर न लेवे , बल्कि धक्का देकर अंदर बचे हुए प्राण को बाहर निकाल कर बाहर ही रोके रखें । कुछ देर बाद पुनः अंदर लेने की इच्छा होवे तो अंदर न लेकर पुनः बाहर धक्का देकर बाहर ही रोकें रखें । इस प्रकार एक , दो , तीन बार करने के उपरांत प्राण को धीरे-धीरे लयबद्ध क्रम से (आभ्यंतर प्राणायाम की विधि) अंदर लेवे । पूरा भरकर फिर अंदर ही रोके रखें । सामर्थ्य के अनुसार रोक कर बाहर निकालने की इच्छा हो , तो बाहर ना निकाले , बल्कि बाहर के प्राण को और अंदर भरकर अंदर ही रोके रखें । कुछ देर बाद पुनः बाहर निकालने की इच्छा हो जावे तो बाहर के प्राण को और अंदर भर लेवे , इस प्रकार एक , दो , तीन बार करके धीरे-धीरे प्राण को बाहर निकाले । सामान्य स्थिति में आ जावे । अपने सामर्थ्य के अनुसार एक बार , दो बार , तीन बार तक करें ।

सावधानियां : ___

1. यह प्राणायाम अत्यंत कठिन व परिश्रम साध्य है ।
2. वर्षों के अभ्यास से ही संभव है ।
3. पहले क्रम से प्रथम तीन प्राणायामों (बाहर , आभ्यंतर , स्तम्भवृत्ति) का अभ्यास वर्षों तक कर कुशलता प्राप्त हो जाने पर चौथा प्राणायाम करना चाहिए ।

चारों प्राणायाम के लाभ : ______

1. प्राणायामों का मुख्य लाभ मन की पूर्ण एकाग्रता है , मनों नियंत्रण है ।
2. एकाग्र हुए मन को आत्मा व परमात्मा मैं लगाकर आत्म दर्शन एवं प्रभु दर्शन कर पाना है ।
3. श्वासन तंत्र (रेस्पिरेटरीसिस्टम) सुव्यवस्थित होता है ।
4. बुद्धि , स्मृति , बल , पराक्रम ,ओज , आत्मा , विश्वास , उत्साह बढ़ते हैं ।
5. इंद्रियों का संयम होता है ।
6. ज्ञान का विकास होता है ।

Edit with WPS Office

7. सूक्ष्म तत्वों को समझने का सामर्थ्य बढ़ता है ।
8. ब्रह्मचर्य का पालन होता है ।
9. शारीरिक कार्य क्षमता बढ़ती है ।
10. शरीर में स्फूर्ति रहती है ।
11. आलस्य प्रमाद दूर होता है ।

योग का पांचवा अंग प्रत्यहार : ______

नेत्र , श्रोत् , घृणा , आदि इंद्रियों को संसार के विषयों से हटाकर मन के साथ-साथ रोक (बांध) देने को प्रत्याहार कहते हैं । जिस प्रकार रानी मक्खी के उड़ जाने से अन्य सभी मक्खिया उड़ जाती है रानी मक्खी के बैठने पर अन्य मक्खियों भी उसी के आसपास बैठ जाती है । ठीक उसी प्रकार मन को एकाग्र करने से इंद्रियां मन के साथ एकाग्र हो जाती है , रुक जाती है ।

जब बहुर्मुखी इंद्रियां बाह्य विषयों से हटकर चित्त के अनुसार विषयों को ग्रहण करने वाली हो जाती है , उस अवस्था को प्रत्याहार कहते हैं । यह इंद्रियों पर विजय प्राप्त करने का परम साधन है । ध्यान से पूर्व संकल्प द्वारा मन के साथ-साथ इंद्रियों को रोकने का अभ्यास करना चाहिए ।

प्रत्याहार के लाभ : ___

1. इंद्रियों को जीतने वाला बन जाता है ।
2. विषय भोगों में नहीं फंसते ।
3. अपनी इच्छा से इंद्रियों को जहां लगाना चाहे , लगा सकते हैं ।
4. पूर्ण एकाग्रता से ध्यान कर सकते हैं ।
5. आत्म दर्शन के अधिकारी बन जाते हैं ।

योग का छठा अंग - धारणा : ______

Edit with WPS Office

अपने मन को अपनी इच्छा से अपने ही शरीर के अंदर किसी एक स्थान में बांधने , रोकने , या टिका देने को धारणा कहते हैं । चित्त का ब्रह्म रन्ध्र , आज्ञा चक्र , नाभि चक्र , अथवा हृदय चक्र आदि में स्थिर करना 'धारणा ,कहाती है । योग दर्शन के अनुसार इनमें सबसे श्रेष्ठ ब्रह्मरन्ध्र और आज्ञा चक्र है । कुछ ऐसा भी कथन करते हैं कि मन को कही भी टिकाओं , वही धारणा है । परंतु आंखें बंद करके ही ' त्राटक , करना महत्व शाली होता है । आंखों से देखते रहने से नेत्र ज्योति पर गलत प्रभाव पड़ता है । इसलिए आंखें बंद करके ही धारणा का अभ्यास करना चाहिए ।

मुण्डक उपनिषद् के अनुसार ब्रह्म यद्यपि अपने विभुत्व गुण से सभी स्थानों पर मौजूद है परंतु उसे प्राप्त करने वाला आत्मा वही प्राप्त कर सकता है , जहां वह भी मौजूद हो । शरीर के अंदर हृदय वह स्थान है , जहां जीव निवास करता है और ब्रह्म भी अपने व्यापकत्व से यहां मौजूद होता है । इसलिए हृदय ही वह स्थान है , जहां आत्मा परमात्मा का साक्षात्कार कर सकते हैं । इसलिए मुंण्डकउपनिषद में यह शिक्षा दी गई है कि हृदय में ही मन को टिका कर धारणा का अभ्यास करना चाहिए ।

बहुत से साधक धारणा का अभ्यास लंबे समय तक करते हुए धारणा को ही ध्यान मान लेते हैं , ऐसा ना करें । क्योंकि धारणा बनाकर आगे अगले अंग में ध्यान का विधान किया गया है । अतः धारणा का अर्थ केवल मन को टिकाए रहना ही है । धारणा से मन को टिकाकर अलग प्रक्रिया में ध्यान आरंभ किया जाता है ।

धारणा के लाभ : ______

1. मन एकाग्र होता है ।
2. मन प्रसन्न ,शान्त और तृप्त रहता है ।
3. मन के विकारों को दूर करने में सफलता मिलती है ।
4. ध्यान की पूर्व तैयारी होती है जिससे ध्यान अच्छा लगता है ।

योग का सातवां अंग - ध्यान : ______

Edit with WPS Office

शरीर के अंदर मन को जिस एक स्थान पर एकाग्र करने का निश्चय ' **धारणा** , में कर लिया है , फिर उसी स्थान में चित्तवृत्ति को दीर्घकाल तक टिकायें रहना , इधर-उधर जब भी जायें , फिर वहां से रोककर पुनः उसी स्थान पर एकाग्र करने को ध्यान कहते हैं ।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि चित्तवृत्ति स्थान का बार बार परिवर्तन करने से बहुत काल तक भी मन को स्थिरता प्राप्त न हो सकेगी ।

ध्यान का अर्थ कुछ न विचारना , विचार शून्य हो जाना नहीं है । जिस प्रकार पीपे (टीन) में तेल आदि तरल पदार्थ एक धारा में निकलता है , उसी प्रभु के एक गुण (आनन्द ज्ञान आदि) को लेकर सतत चिन्तन करते रहना चाहिए । जैसे सावधानी हटने से तेल आदि की धारा टूटती है , वैसे ही किसी एक आनन्द आदि गुण के चिन्तन के बीच अन्य कुछ चिन्तन आने पर ध्यान - चिंतन की धारा टूट जाती है ।

ध्यान में केवल एक ही विषय रहता है । उसी का निरन्तर चिन्तन करना चाहिए । ध्यान में निर्विषय का होने का अभिप्राय यह है कि जिसका ध्यान करते हैं , उससे भिन्न कोई विषय ना हो , इतना ही निर्विषय शब्द का अर्थ लेना चाहिए । अन्यथा लेने पर वह ध्यान न होकर बेहोश (मूर्छित) अवस्था मानी जाएगी । ऐसी अवस्था कोई भी प्राप्त करना नहीं चाहता ।

ध्यान काल में वैज्ञानिक के समान सूक्ष्म बुद्धि होकर परोक्ष वस्तु को प्रत्यक्ष करने की सुव्यवस्थित ज्ञान रूपी धारा निरन्तर चलती है । तब सर्वाधिक सचेत - सावधान रहते हुए अधिकाधिक ज्ञान को सूक्ष्मता से प्राप्त किया जाता है ।

• ध्यान करने के लिए कुछ आवश्यक निर्देश : ______

1. ध्यान करते समय ध्यान को ही सर्वोपरि महत्व दें । ध्यान के समय किसी भी अन्य विचार को , चाहे वह कितना भी शुभ क्यों न हो , महत्व न दे ।
2. ध्यान के समय मन व इन्द्रियां को अन्तमुखी बनाए तथा ध्यान से पहले प्रतिदिन मन में यह चिन्तन भी अवश्य करें कि मैं प्रकृति , धन , ऐश्वर्य , भूमि , भवन ,पुत्र ,पौत्र , पत्नी आदि रुप नहीं हूं । मैं समस्त जड़

Edit with WPS Office

चेतन बाह्य पदार्थों के बन्धन से परे हु । यह शरीर भी मेरा स्वरुप नहीं है । मैं शरीर इंन्द्रियों तथा इन्द्रियों के विषय - शब्द , स्पर्श , रूप , रस , गंध आदि से रहित हूं । मै मन के विषय - काम , क्रोध ,लोभ व अहंकार आदि वासना रुप तथा मन नहीं हूं । मैं अविधा , अस्मिता , राग , द्वेष व अभिनिवेश रुप पंच कलेशों से रहित हूं । मैं अमृत पुत्र हूं । मैं आनन्दमय , ज्योतिर्मय , शुद्ध , सत्व हूं । मैं उसी ब्रह्म का अंश हूं । जैसे बूंद समुद्र से आकाश को उड़ती है , फिर भूमि पर गिरकर नदियों के प्रवाह से होकर पुनः सागर में ही समाहित हो जाती है । सागर को छोड़कर बूंद रह नहीं सकती , मैं भी उसी आनन्द के सिन्धु परमेश्वर में बूंद से सागर रुप होना चाहता हूं । वहीं विधाता हमें जीवन, प्राण , शक्ति , गति , ओज , शान्ति , सुख ,व समस्त भौतिक ऐश्वर्य प्रदान करता है । मैं सदा प्रभु में हूं और प्रभु सदा मुझ में है । वहीं प्रभु मुझे सतत आनन्द दे रहा है । भगवान अपने आनन्द की अजस्त्र वृष्टि सदा कर रहे हैं ।

3. साधक को सदा विवेक वैराग्य भाव से रहना चाहिए । स्वयं को द्रष्टा साक्षी के रूप में अवस्थित रख कर अनासक्त भाव से समस्त शुभ कर्मों को भगवान की सेवा मानकर करना चाहिए । कर्तव्य का अहंकार व फल की अपेक्षा रहित कर्म भगवान का क्रियात्मक ध्यान है ।
4. बाह्य सुख प्राप्त का विचार व सुख के समस्त साधन सब दुख रुप है । संसार में जब तक सुख वृद्धि बनी रहेगी , तब तक भगवान को समर्पण , ईश्वर प्रणिधान नहीं हो सकेगा तथा ईश्वर प्रणिधान के बिना ध्यान व समाधि तक पहुंचना असम्भव है ।
5. इस प्रकार प्रत्येक साधक को प्रतिदिन कम से कम एक घंटा जप , ध्यान व उपासना करनी चाहिए । ऐसा करने पर इसी जन्म में सम्पूर्ण दुखों की समाप्ति और परमपिता परमेश्वर की अनुभूति हो सकती है । यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि जीवन का मुख्य लक्ष्य आत्म साक्षात्कार व प्रभु प्राप्ति हैं । शेष सब कार्य व लक्ष्य गौण हैं ।

ध्यान के लाभ : ___

1. ध्यान से उच्च एकाग्रता प्राप्त होती हैं ।

Edit with WPS Office

2. सर्वाधिक ज्ञान प्राप्त होता हैं अर्थात पूर्ण विवेक होता है ।
3. सूक्ष्मता से ज्ञान का बोध होता है ।
4. ध्यान वैज्ञानिक बनने का सर्वोत्तम उपाय है ।
5. प्रभु दर्शन का मार्ग प्रशस्त होता है ।
6. काम , क्रोध , लोभ और मोह आदि से रहित हो जाते हैं ।
7. मन प्रसन्न , शान्त और तृप्त रहता है ।
8. रक्तचाप (बी. पी.) हृदय रोग आदि नहीं होते ।
9. जीवन में तनाव (टेंशन) अवसाद (डिप्रेशन) आदि भयानक रोग नहीं होते ।

योग का आठवां अंग - समाधि :

जिस अवस्था में योगी ध्याता को अपने स्वरूप= शरीर का भी बोध न रहे , केवल मात्र ध्येय का ही ध्यान रहे , वह समाधि कहलाती है ।

वस्तु के जैसे गुण , कर्म , स्वभाव है , साधक समाधि में वैसा ही साक्षात्कार करता है । प्रभु के जिस गुण का ध्यान करते हैं , समाधि में उसी गुण का दर्शन होता है ,सब का नहीं । ध्यान में शरीर का ज्ञान रहता है कि मैं कहां , कैसे बैठा हूं , परन्तु समाधि में शरीर का बोध नहीं रहता । यही इन दोनो में अंतर है । इसलिए इसको ' असम्प्रज्ञात , समाधि कहते हैं और ध्यान को सम्प्रज्ञात कहा है ।

उस समाधि की उदात्त अवस्था को भर्तृहरि महाराज ने निम्न शब्दों में प्रकट किया है --

हे प्रभो ! मैं वे दिन देखना चाहता हूं , जब गंगा के तट पर बर्फ की शिला पर पद्मासन लगाकर आप के ध्यान (समाधि) में इतना तल्लीन हो जाऊं कि मेरे शरीर को हिरण दीवार समझकर अपनी खाज को दूर करें , फिर भी मेरा ध्यान न टूटें । अर्थात मुझे कुछ भी पता न चले । यह है समाधि की अवस्था जिसके लिए ' स्वरुप - शून्य , प्रयोग किया गया है ।

समाधि के लाभ :

1. प्रभु के दर्शन से सुख , शान्ति , तृप्ति , निर्भयता , स्वतंत्रता की प्राप्ति होती हैं ।

Edit with WPS Office

2. ईश्वर का आनन्द मिलता है जिससे मुक्ति जैसा अनुभव करते हैं ।
3. मन के समस्त विकार दूर होते हैं ।
4. मूर्खता रुपी अविधा (अज्ञान , सर्वथा) नष्ट होती हैं ।
5. पाप कर्म सर्वथा नहीं होते क्योंकि पाप कर्म में प्रवृत्त करने वाले कुसंस्कार समाधि से नष्ट होते हैं ।
6. समाधि से भव सागर रुपी संसार- चक्र (जन्म - मरण रूपी चक्र) से सर्वथा छूटकर मृत्युंजय बन जाते हैं । शरीर में न रहने पर (मृत्यु होने पर) मुक्ति मैं जातें हैं अर्थात जीवन के प्रयोजन को पूर्ण करते हैं ।

- **योगांगो के अनुष्ठान में पालन करने वाली सम्पत्ति :** ______

मुमुक्षु को जीवन में योग के अंगों के अनुष्ठान पालन करने वाली निम्न छः प्रकार की सम्पत्ति कहाती है ---

1. **शम** : ______ अपने आत्मा और अन्त: करण को अधर्माचरण से हटाकर धर्माचरण में सदैव प्रवृत्त रहना ।
2. **दम** : ______ श्रोत्र आदि इन्द्रियों को कुविषयों से हटाकर ब्रह्मचारी और जितेंद्रिय बनना ।
3. **उपरति** : ______ दुष्ट कर्म करने वाले से सदा दूर रहना ।
4. **तितिक्षा** : ______ निन्दा , स्तुति , हानि - लाभ आदि में हर्ष - शोक आदि को छोड़कर मुक्ति के साधनों में प्रवृत्त रहना ।
5. **श्रद्धा** : ______ वेद- शास्त्र , महापुरुषों और योग में अति विश्वास रखना ।
6. **चित्त की एकाग्रता के लिए जैसे क्षुधा** - तृषातुर को अन्न , जल से अन्य कुछ भी अच्छा नहीं लगता , वैसे ही मुमुक्षाथी को मुक्ति के साधनों से भिन्न में प्रीति न रखना ।

Edit with WPS Office

•उपासना को सफल बनाने के उपाय : ______

मन के विकारों को दूर कर मन को एकाग्र करना , चित्त वृत्तियां का निरोध करना एवं योग के अंगों का पालन करने आदि साधनों के अतिरिक्त उपासक को निम्नलिखित बातों का पालन करने पर उसकी उपासना शीघ्र सफलता प्राप्त कर लेगी ।

•परमात्मा की स्तुति , उपासना सत्य भाव से करना : ______

परमात्मा की जैसी स्तुतियां उपासना के समय करें , वैसी ही सत्य भाव से व्यवहार काल में भी चरितार्थ करें । ऐसा नहीं कि उपासना के समय अन्य स्तुति करना और व्यवहार काल में उसके विपरीत करना और मानना । जैसे ' भू , कह कर हम यदि परमात्मा की स्तुति करते हैं । ' भू , का अभिप्राय प्राणों का देने वाला , प्राणाधार है । यह शब्द भगवान की प्रशंसा का सूचक है । अतः इस शब्द में जो गुण वर्णन किये गए हैं , उनका कुछ भाग अपने अंदर भी धारण करने का प्रयत्न करें । हम परमात्मा को कहते हैं --- प्राणाधार , प्राणों को देने वाला । इससे लाभ तभी होगा , जब हम किसी को प्राण दे नहीं सकते , तो उसके प्राण लेने का भी हमें कोई अधिकार नहीं है । हम जो ईश्वर को प्राणाधार कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं , तब हम स्वयं प्राणियों के प्राण लेते फिरें तो इस प्रशंसा का क्या लाभ ? इससे तभी लाभ होगा जब हम स्वयं भी किसी के प्राण न हरे । यथा संभव किसी के प्राणों की रक्षा करने का प्रयास करें । उपासक को आध्यात्मिक और सांसारिक एक ही सत्य पर निर्भर रहना चाहिए । वह प्रवचन में नहीं आता । सत्य स्तुति तो बाहर - भीतर जीवन में समान घटनें वाली होती है । परमात्मा स्वयं सत्य स्वरूप है । ऋग्वेद में कहा है ---

ऋग्वेद. 6/15/11 ______

भावार्थ : जो सत्य भाव से जगदीश्वर की उपासना करते हैं । उनकी ईश्वर

Edit with WPS Office

सब प्रकार से रक्षा कर धर्मयुक्त गुण , कर्म और स्वभावों में प्रेरणा कर तथा शरीर ओर आत्मा का बल अच्छे प्रकार देकर मोक्ष को प्राप्त कराता है । यजुर्वेद में कहा है कि. **यजुर्वेद. 4/28 ______**

भावार्थ : मनुष्यों को योग्य है कि अधर्म को छोड़ने और धर्म को ग्रहण करने के लिए सत्य प्रेम से कामना करें , क्योंकि सत्य भाव से प्रार्थना किया हुआ परमात्मा शीघ्र ही अधर्मों को छुड़ा कर धर्म में ही प्रवृत्त कर देता है ।

यजुर्वेद. 40/16 ______

जो सत्य भाव से परमेश्वर की उपासना करते हैं , यथाशक्ति उसकी आज्ञा का पालन करते और सर्वोपरि सत्कार के योग्य परमात्मा को मानते हैं , उनको दयालु ईश्वर पापाचरण मार्ग से पृथक कर धर्मयुक्त मार्ग में चला के विज्ञान देकर धर्म ,अर्थ , काम और मोक्ष को सिद्ध करने के लिए समर्थ करता है । इसलिए एक अदूतीय ईश्वर को छोड़ किसी की उपासना कदापि न करें ।

•परमात्मा के प्रति हमारी स्तुतियां श्रद्धा से पूर्ण हाव भाव युक्त होना : ______

परमात्मा के प्रति हमारी हाव भाव भरी स्तुतियां ऐसी हो जैसे दूध भरी गाय स्नेह पूर्वक बछड़े की ओर आकर्षित हो जाती हैं । इस सम्बन्ध में सामवेद में कहा है ---

सामवेद. 349 ______

भावार्थ : हमारी स्तुतियां परमात्मा के प्रति ऐसी होनी चाहिए जैसे यात्री अपने गन्तव्य स्थान पर जाकर ही विश्राम पाता है , ऐसे परमात्मा में विश्राम पायें , मध्य में विश्राम न करें तथा परमात्मा के प्रति ऐसी भाव भरी हुई स्तुतियां हो जैसे दूध भरी गौएं स्नेह में भरकर बछड़े की ओर झुकी जाया करती है , उस की ओर आकर्षित हो जाती हैं ।

सामवेद. 736 ______

भावार्थ : जैसे मनुष्य अपने लिए अन्न भोजन को दुग्ध , घृत आदि मिश्रित कर स्वाद वाला बनाते हैं । ऐसे ही उपासना रस को श्रद्धा भरे वचनों से

Edit with WPS Office

मीठा बनाकर हृदय स्थान में परमात्मा को आमंत्रित करें ।

•परमात्मा द्वारा उपासना में सफलता प्रदान करना :

जो उपासक श्रद्धा , सत्यभाव , प्रेम , पूर्वक परमात्मा की उपासना करता है । उसको वह दयालु परमात्मा उपासना के ठीक मार्ग पर चलाकर सफलता प्रदान कराता है । इस सम्बन्ध में सामवेद में कहा है ---

सामवेद. 481

भावार्थ : चेताने वाला , स्नेही , मेधावी उपासकों का स्तुति योग्य परमात्मा उपासक को जैसे रथ स्वामी घोड़े को साधता है , चलाता है , ऐसे साधता - सिद्ध बनाता , उपासना मार्ग पर चलाता है ।

सामवेद. 478

भावार्थ : सर्वज्ञ परमात्मा उपासकों को अपने अमृतधाम की ओर ले जाता है । जैसे जल नदियों की तरंगें वस्तुओं को तट की ओर पहुंचाती है या जैसे अग्नि पिण्ड सूर्य जलों को सूक्ष्म कर उन्नत करता है । ऐसी ही परमात्मा उपासक को अमृत बना उन्नत करता है ।

•मानव जीवन को सफल बनाना :

मानव जीवन ईश्वर प्राप्ति के लिए मिला है । इस मुख्य उद्देश्य को छोड़कर अन्य किसी भी कार्य को प्राथमिकता नहीं देनी चाहिए , यदि ऐसा नहीं किया तो तुम्हारा जीवन चन्दन वन को कोयला बनाकर नष्ट करने के समान ही है । यदि कोई मनुष्य यह समझें कि विषयों को भोगकर इन्द्रियों की तृष्णा समाप्त हो जाएगी तो यह विचार ऐसा ही है जैसे अग्नि को बुझाने के लिए उसमें घी डाल़ना । मानव जीवन की सफलता तो काम , क्रोध , लोभ , मोह और अहंकार आदि कुसंस्कारो को नष्ट करने में ही है । जैसा कि हम देखते हैं --- ' भवन्ति नम्रास्तरव : फलोद गमै , फल व पत्तों से

Edit with WPS Office

रहित वृक्ष ठूंठ की भांति सीधा खड़ा रहता है , परन्तु पत्ते , फूल और फल आने पर वे झुक जातें हैं । इसी प्रकार मानव जब गुणग्राही ,नम्र , सदाचारी , संयमी , धैर्यवान आदि गुणों को धारण कर लेता है और परिश्रम बनकर उपासना करता हुआ परमपिता परमात्मा की शरण में जाकर जीवन को सफल बना लेता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 13. ।। तेरहवां पृष्ठ ।।

- ## { ।। वेद परिचय ।। }

{ वेद क्या है ? }

वेद शब्द, विद , धातु से बना है । जिसका अर्थ है– ज्ञान प्राप्त करना । **(विद् ज्ञाने – धातुपाठ 2 /57) ।** परमात्मा ने आदि सृष्टि में चार ऋषियों के हृदय में जिस विद्या का प्रकाश किया और वही विधा प्राचीन ,मध्यकालीन और वर्तमान के वैदिक विद्वानों के पुरुषार्थ से सुरक्षित और संरक्षित है , ऐसी विधा ऐसे अनंत ज्ञान के भंडार को ही वेद कहते हैं ।

- ### { परमात्मा ने वेद ज्ञान क्यों दिया }

परमात्मा ने मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए वेदों का ज्ञान प्रदान किया । वेद

Edit with WPS Office

विधा को समझकर मनुष्य तिनके से पृथ्वी पर्यंत सभी भौतिक पदार्थों का यथार्थ ज्ञान, पश्चात आत्मा और परमात्मा विषयक आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करके लौकिक सुख तथा मोक्ष सुख प्राप्त कर सके।
—इस उद्देश्य से वेद का ज्ञान दिया गया।

- **{ परमात्मा ने वेद ज्ञान कब दिया }**

सृष्टि के प्रारंभ में मनुष्य उत्पत्ति के समय परमात्मा ने वेदों का ज्ञान दिया। वर्तमान सृष्टि को आरंभ हुए 1,96,08,53,126 वर्ष हो चुके हैं।
यह काल गणना यज्ञ से पूर्व उच्चारित किये जाने वाले संकल्प पाठ की प्राचीन परंपरा की देन है।

- **{ वेद कितने हैं }**

वेद चार हैं। **ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद।**
प्रमाण :-----

एतस्य वा महतो भूतस्य नि : श्वसितमेतद।
यदृवेदो यजुर्वेद : सामवेदोऽथर्ववेद ।।
बृहदारण्यक उपनिषद्. (4/5/11)

अर्थात___ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद परमात्मा के श्वास रूप है।

ऐसे ही वैदिक शास्त्रों में अनेक प्रमाण है जिससे सिद्ध होता है कि वेद चार ही हैं।
क्रमशः—-

1. **ऋग्वेद**___ अग्नि ऋषि
2. **यजुर्वेद** ___वायु ऋषि
3. **सामवेद** ___आदित्य ऋषि
4. **अथर्ववेद** ___अंगिरा ऋषि

प्रमाण :----

मनुस्मृति. 1 /23

Edit with WPS Office

शतपथ ब्राह्मण. 11/5/2/3
शतपथ ब्राह्मण. 14 /5 आदि ।

➤ वेदों ने अरबों पहले ही मानव मात्र को यह संदेश दिया था कि भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान का समन्वय ही सृष्टि का कल्याण कर सकता है । उसी के परिणाम स्वरूप हमें वेदों में मुख्यत: दो प्रकार की विधाओं का उल्लेख मिलता है जो निम्नलिखित है ______

1. अपरा विधा (भौतिक ज्ञान)

यह विद्या भौतिक जगत , सृष्टि और पदार्थों के गुण , कर्म , और स्वभाव से संबंधित है । इसमें प्रकृति और उसके विभिन्न तत्वों का विश्लेषण और उनके सही प्रयोग का ज्ञान दिया गया है । अपरा विधा के अंतर्गत निम्नलिखित विषय आते हैं :

- **सृष्टि उत्पत्ति** : सृष्टि के निर्माण और उसके कारणों का वर्णन
- **पदार्थ विज्ञान** : पदार्थों के गुण और स्वभाव का अध्ययन । भौतिक ज्ञान , रसायन विज्ञान , कृषि विज्ञान , जंतु विज्ञान , जीव विज्ञान आदि ।
- **वास्तु शास्त्र** : भवन निर्माण और वास्तु विज्ञान ।
- **ज्योति शास्त्र** : ग्रहों और नक्षत्रों का अध्ययन और उनके प्रभाव ।
- **चिकित्सा** : रोगों की चिकित्सा और स्वस्थ जीवन के लिए उपाय ।
- **तार विद्या** : (टेलीग्राफ) : संचार के साधनों का ज्ञान ।
- **विमान विद्या** : उद्यान से संबंधित विज्ञान ।
- **गणित** : गणितीय सूत्रों और उनके अनुप्रयोग ।
- **खगोल विज्ञान** : तारों , ग्रहों और ब्रह्मांड का अध्ययन ।

2. परा विद्या (आध्यात्मिक ज्ञान)

परा विद्या मनुष्य के जीवन का वास्तविक उद्देश्य समझाने वाली विद्या है ।

Edit with WPS Office

यह नित्य और अनित्य , सत्य और असत्य के भेद को जानने और मानव जीवन को सफल बनाने की दिशा में मार्गदर्शन करती है । परा विद्या के अंतर्गत उन विषयों का ज्ञान आता है जो मनुष्य को परम सिद्धि यानी मोक्ष प्राप्त करने की दिशा में प्रेरित करते हैं । इसमें अर्थ , धर्म , काम , और मोक्ष के संतुलन पर विशेष बल दिया गया है । इसके अंतर्गत आने वाले प्रमुख विषय हैं :

- **ब्रह्म विद्या** : परमात्मा और ब्रह्म के संबंध में ज्ञान ।
- **मुक्ति** : जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति का मार्ग ।
- **धर्म** : धार्मिक और नैतिक मूल्यों का पालन ।
- **योग** : आत्मा और परमात्मा के मिलन का विज्ञान ।
- **पुनर्जन्म** : जन्म - मृत्यु के चक्र और कर्म के सिद्धांत का अध्ययन ।

जिस प्रकार गणित के एक सूत्र को समझ लेने पर उससे संबंधित सभी प्रश्नों का समाधान किया जा सकता है , उसी प्रकार वेदों के मंत्र सूत्र रूप में ज्ञान देते हैं । उनके सही अर्थ को जान लेने पर मनुष्य अपने जीवन के हर पहलू को समझ और सुलझा सकता है । इसी कारण प्राचीन ऋषि मुनियों ने अपना जीवन वेद मत्रों के गहन अध्ययन और उनके अर्थ को जानने में समर्पित कर दिया ।

वेदों की इस व्यापक व्याख्या के परिणाम स्वरूप हमारे पास आज **छह दर्शन , स्मृतियां , उपवेद , ब्राह्मण शास्त्र , उपनिषद , और श्रीमद्भगवद्गीता** जैसे अमूल्य ग्रंथ है । जो सनातन धर्म के आधार स्तंभ माने जाते हैं । इन ग्रंथों के माध्यम से वेदों के गूढ़ ज्ञान को समझने और आत्मसात करने का मार्ग प्रस्तुत किया गया है ।

• वेद का ज्ञान चार ऋषियों को ही क्यों मिला ?

प्रथम समाधान___ ऐसी शंकाओं का समाधान अशोक वनिका न्याय से

Edit with WPS Office

होता है । अशोक वनिका न्याय ऐसा है कि रावण ने माता सीता को अशोक वाटिका में ही क्यों रखा ? अन्यत्र क्यों नहीं ? अगर माता सीता को अन्यत्र भी कहीं रखते तो यही प्रश्न पुनः आ जाता । ऐसे ही वेद का ज्ञान चार ऋषियों को मिला । 5,6,3 को क्यों नहीं मिला समझना चाहिए ?

प्रमाण— उपदेश मंजरी, पंचम उपदेश ।

दूसरा समाधान___ परमात्मा न्यायकारी है इसलिए पात्रता, योग्यता और क्षमता आदि को देखकर ही मनुष्य को उतना देता है जितना वह उसका अधिकारी हो, सृष्टि के आदि में यही चार ऋषि सबसे योग्य, सक्षम और कुशल पात्र थे । इसलिए परमात्मा ने इन चार ऋषियों को क्रमशः —वेदों का इन ऋषियों के हृदय में वेदों का ज्ञान (प्रकाशित) किया ।

चार ऋषियों ने आगे वेदों का ज्ञान किसे दिया ?

ऋषि ब्रह्मा ने चारों ऋषियों से चारों वेदों का ज्ञान प्राप्त किया । ऋषि ब्रह्मा के बाद विराट ,वशिष्ठ, नारद, दक्ष, प्रजापति, स्वयंभू मनु आदि ने गुरु शिष्य परंपरा से वेदों का ज्ञान प्राप्त किया और दुनिया भर में प्रचार किया । गुरु से श्रवण कर आगे सुनाने के कारण वेदों का **श्रुति** नाम भी पड़ा ।

प्रमाण— उपदेश मंजरी, पंचम उपदेश ।

- ## { वेद का ज्ञान किस भाषा में है }

पहले तो यह समझ लेना चाहिए कि वेद का ज्ञान बिना भाषा के नहीं दिया जा सकता । क्योंकि बिना भाषा के कोई भी बात समझी नहीं जा सकती । ऋग्वेद. (10/71/3) के अनुसार **यज्ञेन वाच : पदवीयमायन्तामन्व विन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम...** ऋषि भाषा के साथ ईश्वर से वेद ज्ञान को प्राप्त करते हैं । वेद वैदिक संस्कृत भाषा में है ।

प्रमाण— उपदेश मंजरी, पंचम उपदेश ।

इसका प्रमाण यह है कि वैदिक संस्कृत भाषा प्राचीनतम भाषा है । अंग्रेजी, लैटिन, फ्रेंच आदि अनेक भाषाओं के अनेक शब्द संस्कृत भाषा के ही अपभ्रंश विकृत स्वरूप हैं ।

- ## { वेद ही ईश्वरीय ज्ञान क्यों है }

Edit with WPS Office

वेद के संदर्भ में यह प्रश्न अक्सर उठता है कि वेद ही ईश्वरीय ज्ञान क्यों माने ? बाइबल, कुरान आदि को क्यों नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर है वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है क्योंकि वेद इन कसौटियों पर खरा उतरता है :

वेद सृष्टि के आरंभ में दिया गया है :--- जैसे– **मोबाइल खरीदने के साथ ही उसके परिचालन की विधि मिलती है । ऐसे ही सृष्टि उत्पत्ति के साथ ही उसका संविधान देना अनिवार्य है ।** संविधान दिए बिना आज्ञा, निषेध आदि । के अभाव में अच्छे कर्म नहीं किया जा सकते । सृष्टि के पदार्थों के ज्ञान के अभाव में उनमें यथा योग्य लाभ नहीं ले पाएंगे । इसलिए ईश्वर मनुष्य उत्पत्ति के साथ ही वेद का ज्ञान प्रदान करता है । कुरान आज से मात्र 1400 वर्ष और बाइबल कुछ 2000 वर्ष पहले रची गई है । इसलिए सृष्टि के बीच में मिलने से यह वेद ज्ञान नहीं ? यदि परमात्मा अपना ज्ञान सृष्टि के मध्य में देता है तो आदि सृष्टि के मनुष्यों के साथ अन्याय सिद्ध होता है ? परंतु परमात्मा न्यायकारी है इसलिए यह बात अप्रामाणिक और अतार्किक है ।

वेद में ईश्वर का यथार्थ स्वरूप :

ईश्वरीय ज्ञान वही होगा जिसमें ईश्वर ने अपने स्वरूप का यथार्थ वर्णन किया हो । ईश्वर एक, अजन्मा, निराकार , सर्वव्यापक ,सर्वज्ञ ,सर्वाधार, न्यायकारी आदि है । ऐसे ईश्वर के यथार्थ स्वरूप का वर्णन वेदों में वर्णित है । कुरान का अल्लाह सातवें आसमान पर स्थित होने से साकार और एकदेशी है —इसलिए न तो अल्लाह ईश्वर है , और न ही कुरान ईश्वर ज्ञान । बाइबल का यहोवा और कुरान का अल्लाह अपनी स्तुति करने वाले के बड़े-बड़े से बड़े पाप को क्षमा कर देता है । इसलिए अन्यायकारी होने से ईश्वर नहीं और न ही कुरान बाइबल ईश्वरीय ज्ञान ।

वेद में विज्ञान : ज्ञान वही हो सकता है जिसमें सभी बातें वैज्ञानिक प्रमाणों द्वारा सिद्ध, तार्किक और सृष्टि नियम के अनुकूल हो । वेद में संसार के समस्त पदार्थों का विज्ञान है । तार विधा, विमान विधा, गणित विधा, भुगोल विधा, रासायनिक विधा आदि समस्त वैज्ञानिक विधाएं हैं । इसलिए वेद ईश्वरीय ज्ञान है । कुरान, बाइबल आदि में धरती को चपटी कहा है । धरती को स्थिर कहा है । धरती को खम्बों के आधार स्थित बताया है । ऐसी पृथ्वी

Edit with WPS Office

आदि लोक विषयक ज्ञान अशुद्ध है । कुरान में गंधी के रॉकेट से भी तीव्र गति में आकाश गमन का वर्णन , तारों को शैतान का शस्त्र बताना । चंद्र को तारों से दूर बीच ब्रह्मांड में बताना आदि अनेक अवैज्ञानिक अतर्किक और सृष्टि नियम के विपरीत बातें होने से कुरान ईश्वरीय ज्ञान नहीं है ।

वेदों में इतिहास नहीं : ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के आदि में प्राप्त होता है । इसलिए उसमें किसी भी प्रकार का इतिहास होना संभव नहीं क्योंकि इतिहास समय के बीतने पर वर्षों बाद बनता है, उत्पत्ति के साथ ही ! वेद में किसी भी प्रकार का कोई इतिहास उपलब्ध नहीं है । वेद में जो विश्वकर्मा, कृष्ण, यम, इंद्र आदि नाम आए हैं । उनके प्रसंगानुसार भिन्न-भिन्न अर्थ है, कुछ शब्द ईश्वर वाचक है, और कुछ लौकिक पदार्थों के नाम है । इतिहास का इससे कोई संबंध नहीं । कुरान में पैगंबर मोहम्मद का नाम है । और बाइबिल में यीशु मसीह आदि पात्रों का इतिहास वर्णित है । इसलिए वे ईश्वरीय ज्ञान नहीं है ।

वेद मानव मात्र के लिए कल्याणकारी :--- ईश्वर सर्व कल्याणकारी है इसलिए उसका ज्ञान भी वही होगा जो सबके लिए समान हो और मानव मात्र के कल्याण हेतु जिसमें प्रेम पूर्वक रहने का संदेश हो । वेद का प्रत्येक मंत्र समता और संगठन का प्रतिपादक है । किसी भी वर्ग विशेष के लिए द्वेष वैर और संकीर्णता आदि वेद में वर्णित नहीं है । इसलिए वेद ईश्वरीय ज्ञान है । कुरान की प्रत्येक आयत काफिरों (गैर मुसलमानों) को मारने काटने का आदेश देती है । बाइबल में यीशु मसीह स्वयं कहता है कि वह इस धरती पर पिता से बेटे को मा को बेटो को, पति से पत्नी को लड़वाने झगड़वाने के लिए अवतरित हुआ है । इसलिए कुरान और बाइबल ईश्वरीय ज्ञान नहीं है ।

- **{ ।। वेद नित्य है या अनित्य ।। }**

तस्मै नूनमभिधवे वाचा विरुप नित्यया । **(ऋग्वेद. 8/75/6)** इस मंत्र में वेद को नित्य कहां है । **ऐसे ही** **वेदांत दर्शन. 1/3/29** में भी ऐसा ही कहा है–

अतएव च नित्यत्वम् । महाभारत. 12/23/24 मैं कहां है–

Edit with WPS Office

अनादिनिधना नित्या वागुत्सृष्टा स्वयम्भुव ।
आदौ वेदमती दिव्या यत: सर्व: प्रवृत्तय: ।।
अर्थात___ सृष्टि के आदि में स्वयम्भू परमात्मा से ऐसी वाणी वेद निकले जिनका न आदि है, न अन्त, जो नित्य नाश रहित और दिव्य है । वेद विधा जो ईश्वर ने चार ऋषियों के हृदय में प्रकाशित की और गुरु- शिष्य परंपरा से जो संसार में फैली वह नित्य है, पुस्तक रूप वेद नहीं, वेद की पुस्तकें अनित्य है, उसमे वर्णित मंत्र (ज्ञान) नित्य है ।

- ## { ।। क्या वेद ऋषियों की रचना है ।। }

बहुत से लोग वेद को ऋषियों की रचना मानते हैं । उनके अनुसार ऋषि विश्वामित्र गायत्री मंत्र के रचयिता है, ऐसे ही सभी मंत्रों की रचना अलग- अलग ऋषियों ने की है– यह अर्वाचीन मत ठीक नहीं क्योंकि :
सत्यार्थ प्रकाश के सातवें समुल्लास में महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने बताया है कि ऋषि लोग मंत्र कर्ता नहीं थे , बल्कि मंत्र दृष्टा थे । फिर ऋषि कौन है ?
ऋषय : मन्त्रदृष्टार : (निरुक्त)
अर्थ___ समाधि में बैठकर ईश्वर से वेद मंत्रों को पढ़ने वाला व्यक्ति ऋषि कहलाता है । ऋषि विश्वामित्र गायत्री मंत्र के रचयिता नहीं थे अपितु उन्होंने मंत्र का साक्षात करके उनका उपदेश और प्रचार किया है, ऐसे ही अन्य मंत्रों ऋषियों के संबंध को समझना चाहिए ।

{ ।। वेद तीन है ।। }

कई बार ऐसी शंका उपस्थित होती है कि यदि वेद चार हैं वेद को वेद को वेदत्रयी क्यों कहते हैं । इसका उत्तर यह है कि वेद में ज्ञान कर्म और उपासना यह तीन विषय हैं । इसलिए शतपथ ब्राह्मण में वेद को त्रयीविधा कहां गया है ।
वेदत्रयी में चार वेदों का ही समावेश है ।
—- विनियोक्तव्यरुपश्च त्रिविध : सम्प्रदश्यृतें ।
ऋग्यजु : सामरुपेण मन्त्रों वेदचतुष्टये ।।

Edit with WPS Office

{ सर्वानुक्रमणी वृत्ति : भूमिका }

वेद चार ही हैं, वैदिक शास्त्रों में इसकी सिद्धि के लिए अनेक प्रमाण है । जैसे – ऋग्वेद. 10/90/9, बृहदारण्यक उपनिषद. 4/5/11, यजुर्वेद. 31 /7, अथर्ववेद. 19/6/13, अथर्ववेद. 10/7/20, वाल्मीकि रामायण. 4/3/29 आदि ।

• ज्ञान , कर्म, उपासना का वास्तविक स्वरूप :

ज्ञान___ जिस ईश्वर से लेकर पृथ्वी पर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर फिर उनसे यथायोग्य उपकार लिया जा सके, इसका नाम ज्ञान है । शुद्ध ज्ञान के बिना शुद्ध कर्म नहीं और शुद्ध कर्म के बिना शुद्ध उपासना नहीं हो सकती । यह तत्व ज्ञान ऋग् कहलाता है और यह ऋग्वेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है ।

कर्म___ सुख की प्राप्ति और दुख से छूटने के लिए जीवात्मा मन, इंद्रिय शरीर में जो चेष्टा करता है, कर्म कहलाता है । वेद में निष्काम कर्म करने की प्रेरणा दी गई है । कर्म का एक अर्थ है पदार्थों का ज्ञान लेने के बाद उस पदार्थ का उपयोग करना । ऋग्वेद में जहां मुख्यतः उन पदार्थों से उपयोग लेने की विधि प्रतिपादित है ।

उपासना___ ईश्वर का ज्ञान की दृष्टि से सामीप्य प्राप्त करना उपासना है । ऋग्वेद से पदार्थों का ज्ञान लेकर, यजुर्वेद से उपयोग की विधि सीखकर, सामवेद से उपासना प्रकरण को ग्रहण करना चाहिए । जिससे कि हम संसार के बंधन में न फंसकर सत्याचरण और सच्ची ईश्वर भक्ति से उसे प्राप्त कर सके । उपासना को साम नाम से जाना जाता है जो की सामवेद का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है ।

{ ।। वेद का प्रयोजन ।। }

सुख प्राप्ति___ वेद का अर्थ है ज्ञान, ज्ञान सुख का कारण है । ज्ञान के बिना सुखकारक पदार्थ भी दुखद कारक होता है । क्योंकि ज्ञान के बिना

Edit with WPS Office

पदार्थ की योग्य योजना करते नहीं बनती ।

उध्वृगति___ अनन्त ज्ञान–संपन्न परमेश्वर मनुष्य की योग्यता बढ़ाने के लिए और उसे ऊंचे दरजे को पहुंचने के लिए सहज सदा प्रवृत्त है और इसी हेतु को सफल करने के लिए विधा का प्रकाश करता है ।

सत्य असत्य का निर्णय करने के लिए भी वेद ही अपौरुषेय होने से परम प्रमाण और स्वत : प्रमाण है ।

- **{ चारों वेदों में कुल मंत्रों की संख्या }**

ऋग्वेद___ 10 मण्डल ,___85 अनुवादक,___ 1028 सूक्त,___10589 मंत्रों की संख्या ।

यजुर्वेद___40 अध्याय,___1975 मंत्र ।

सामवेद___2 आर्चिक,___27 अध्याय,___18 काण्ड 730 सूक्त,___ 1875 मंत्र ।

अथर्ववेद___ 10 मण्डल,___ 20 काण्ड,___730 सूक्त,___ 5977 मंत्र ।

= [20416 कुल मंत्र]

कुल मंत्र : बीस हजार चार सौ सोलह मंत्र ।

- **{ ।। विभिन्न शास्त्रों में वेद विषयक विचार ।। }**

मनुस्मृति मै___ **वेदोऽखिलोधर्ममूलम „** **(मनु 2 /6)** अर्थात वेद ही संपूर्ण सनातन वैदिक धर्म का मूल और आधार है ।

पितृदेवमनुष्याणां देवश्चक्ष : सनातनम ,अशक्यम चाप्रेमय च वैदशास्त्रमिति स्थिती। **(मनु. 12 /97)** अर्थात पितृ = रक्षकों विद्वानों और साधारण मनुष्यों के लिए वेद सनातन नेत्र हैं पथप्रदर्शक है, अपौरुषेय और सत्यज्ञान युक्त है ।

बिभुर्ति सवृभूतानि वेदशास्त्र सनातनम ।
तस्मादेतत्परं मन्यें यज्जन्तोरस्य साधनम् ।।

(मनुस्मृति. 12 /99)

Edit with WPS Office

अर्थात नित्य वेद शास्त्र सब प्राणियों का ज्ञान, विधा दान द्वारा धारण–पोषण करता है । और यह मनुष्य मात्र के लिए सुख, उन्नति, पुरुषार्थ प्राप्ति आदि का साधन है । इसलिए मैं वेद शास्त्र को सर्वोत्तम मानता हूं ।

दहति वेदज्ञ: कर्मज दोषमात्मन,, (मनुस्मृति. 12 /101)

अर्थात विद्वान वेदज्ञान रूपी अग्नि से कुसंस्कारों को मिटाकर आत्मा को पवित्र रखता है ।

धर्म जिज्ञासमानाना प्रमाण परमं श्रुति "। (मनुस्मृति. 2 /13) अर्थात धर्म को जानने की इच्छा करने वालों के लिए वेद परम प्रमाण है ।

- **{ ।। दर्शनशास्त्रों में ।। }**

मन्त्रायुर्वेदप्रमाण्यवच्च तत्प्रामाण्यमाप्तप्रामाण्यात " (न्याय दर्शन. 2/1/68) अर्थात वेद वाणी आप्तों के भी आप्त परमेश्वर की वाणी होने के कारण परम प्रमाण है ।

(वैशेषिक दर्शन. 1/1/3)___ अर्थात परमात्मा का वचन होने के कारण आम्ना – वेद प्रमाण है ।

(सांख्य दर्शन. 5/51) ___अर्थात वेदों के मनुष्य कृत न होने और ईश्वर कृत होने से वेद स्वत : प्रमाण है ।

(मीमांसा दर्शन. 1/1/2)___ अर्थात वेद आज्ञा का पालन करना (वेद में आदिष्ट कार्यों को करना और निषिद्ध कार्यों को न करना) धर्म है ।

- **{ ।। उपनिषदों में ।। }**

(बृहदारण्यकोपनिषद. 4/5/11)___ अर्थात ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद उस महान परमेश्वर के मानों श्वास से निकले हैं ।

(मुण्डकोपनिषद. 2/1/4)___ अर्थात उस ईश्वर का मस्तक मानों अग्नि है, सूर्य और चंद्र उसके नेत्रों के समान है । दिशाएं उसके कानों के तुल्य है । वेद मानों उसकी वाणी से निकले अर्थात ईश्वरीय ज्ञान है ।

(छान्दोग्योपनिषद्. 1/4/2)___ अर्थात देवों ने मृत्यु से भयभीत होकर त्रयी

Edit with WPS Office

विधा का आक्षय लिया । उन्होंने अपने को वेद मंत्रों से आच्छादित कर लिया क्योंकि इन वेद मंत्रों से उन्होंने अपने को आच्छादित कर लिया इसलिए इन्हें छन्द के नाम से कहा जाता है ।

- **{ ।। क्या ब्राह्मण ग्रन्थ सभी वेद हैं ।। }**

मध्यकालीन आचार्यों ने वेद की संहिताओं के साथ-साथ ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद आदि को भी वेद मानना आरंभ कर दिया । यह मध्यकालीन आचार्यों की बहुत बड़ी भूल थी । ऋषियों का मत इससे भिन्न है ।

[महाभाष्य. 5/1/1]

अर्थात___ चारों वेदों के वेत्ता और ईश्वर भक्त ब्राह्मणों तथा महर्षियों ने जो वेदों के व्याख्यान किए हैं वे ब्राह्मण ग्रंथ कहे जाते हैं । स्पष्ट है कि ब्राह्मण वेद नहीं अपितु उनके व्याख्यान है ।

(तैत्तिरीय आरण्यक. 2 /9) ___ अर्थात ब्राह्मण ग्रंथ के– इतिहास पुराण, कल्प गाथा और नाराशंसी पांच नाम है । वेद में किसी भी प्रकार का इतिहास नहीं और जिस ग्रंथ में इतिहास हो वह ईश्वरीय ग्रंथ नहीं हो सकता । यह पूर्व लिखा है अतः ब्राह्मण ग्रंथ वेद से भिन्न है । और अपौरुषेय, ईश्वरकृत नहीं है ।

- **{ ।। क्या शूद्र भी वेदाध्ययन कर सकता है ।। }**

मध्यकालीन आचार्यों ने एक और बड़ी भूल यह कर दी कि शूद्र और स्त्रियों को वेदाध्ययन में अनधिकृत बता दिया । जबकि वेद में ईश्वर ने स्वयं कहा है कि :

यथेमां वाच कल्याणीमांवदानि जनेभ्य : ।
ब्रहमराजन्याभ्यां शूद्रायचाययि च स्वाय चारणाय ।।

(यजुर्वेद. 23 /2)

अर्थात___ ईश्वर ने ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और अपनी पत्नी (स्त्री) और तो और अतिशूद्रों के लिए भी वेद का प्रकाश किया गया । अर्थात सब मनुष्य

Edit with WPS Office

वेदों को पढ़-पढा और सुन सुनाकर विज्ञान को बढ़ाके, अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों को त्यागकर दुखों से छूटकर आनंद को प्राप्त हो । इस मंत्र में शूद्र और स्त्री दोनों ही को वेद पढ़ने का अधिकार स्वयं परमात्मा ने दिया है ।

- ## { ।। वेदों की शाखाएं ।। }

शाखा का अर्थ , व्याख्यान । ऋषि मुनियों ने वेदों के मंत्रों की व्याख्या हेतु वेद की शाखोंओं का निर्माण किया । शाखा और संहिता दोनों में भेद है । संहिता ईश्वरकृत है, जबकि शाखाएं ऋषीकृत है । संहिताओं में मूल मंत्र है जबकि शाखाओं में मंत्रों का व्याख्यान (प्रतीक धरकर) महाभाष्य मैं वेदों की 1127 शाखाएं हैं ।

वेद	शाखाएं
ऋग्वेद	20
यजुर्वेद	100
सामवेद	999
अथर्ववेद	08
कुल शाखाएं =	1127

इन 1127 शाखाओं में से आज इस समय केवल 7-8 शाखाएं मिलती हैं । अन्य नष्ट भ्रष्ट हो गई । कई लोग आक्षेप करते हैं कि यदि वेद नष्ट हो सकता है तो वह नित्य कैसे ? और यदि नित्य नहीं तो ईश्वर प्रोक्त कैसे ? बात को ध्यानपूर्वक समझिए । नष्ट भ्रष्ट होने वाले वेद नहीं बल्कि ऋषीकृत शाखाएं हैं । मूल संहिताएं आज भी अपरिवर्तित रूप से हम तक सुरक्षित पहुंची है । ऋग्वेद की प्रामाणिक शाखा है —-- शाकल शाखा । यजुर्वेद की माध्यन्दिनीय शाखा प्रमाणिक है । सामवेद की कौथुमी और अथर्ववेद की शौनक शाखा प्रमाणित और मौलिक है । सामवेद की 999 शाखाएं होने का रहस्य यह है कि 999 सामवेद गान के भेद में शाखाएं हो गई ।

- ## { ।। वेद की रक्षा कैसे हुई ।। }

Edit with WPS Office

मन में प्रश्न उठता है कि लगभग दो अरब वर्षों के बाद भी वेद न तो लुप्त हुए, न उनमें मिलावट हुई। वेद की ऐसी रक्षा का कौन सा प्रबंध किया गया। यह जानने का प्रयास करते हैं।

अष्टो विकृतय : प्रोक्ता क्रमपूर्वा मनीषिभि।
जटा माला शिखा लेखा ध्वजों दण्डों रथों धन : ।।

(वेद रहस्य, पृष्ठ 54, से साभार उद्धृत)

आठ प्रकार के क्रमपाठ – जटा , माला, शिखा, लेखा, ध्वज , दंण्ड, रथ, और धन पाठ, इनमें वेद की रक्षा संभव हो पाई। क्रमपाठों में कुछ और भेद करके, प्रत्येक मंत्र के 11 प्रकार से पाठ करने का विधान किया गया है। ये पाठ काशी, मिथिला, नदियां और बम्बई तथा मद्रास आदि में आज भी होते हैं। वेद के एक-एक शब्दों को जब 11 11 बार पढ़ा जाता था तो किस प्रकार संभव हो सकता था। कि उनमें किसी प्रकार की मिलावट हो सके।
वेद की रक्षा के लिए चारों वेदों के अनुक्रमणी ग्रंथ तैयार किए गए जो आज भी उपलब्ध है इनमें चारों वेदों की छन्द संख्या, पद संख्या, मंत्र संख्या, छन्द, ऋषि देवता आदि वर्णित किए गए हैं।
वेदों का भाष्य रचकर वेदों की रक्षा की व्यवस्था की गई जिनमें वेदों का सर्वश्रेष्ठ भाष्य महर्षि दयानंद सरस्वती जी द्वारा रचित है।

- **{ ।। उपवेद ।। }**

वेद____________________ उपवेद
ऋग्वेद—------------------------------ आयुर्वेद
यजुर्वेद—------------------------------ धनुर्वेद
सामवेद—------------------------------ गान्धर्ववेद

आयुर्वेद___ अर्थात वैधकशास्त्र सुश्रुत संहिता, धनवन्तरि, कृत निघण्टु तथा चरक संहिता आदि सब मिलकर आयुर्वेद कहा जाता है। ये ऋग्वेद के उपवेद हैं। यहां यह बात याद रखनी चाहिए कि अथर्ववेद में भी वैधक अधिक विवरण के साथ वर्णित है।
धनुर्वेद___ जिसमें शस्त्रास्त्र विधा के निर्माण और प्रयोग का विधान है।

Edit with WPS Office

अंगिरा, भारद्वाज आदि कृत संहिताएं इस विद्या के प्राचीन ग्रंथ है ।
गाधर्ववेद___ नारद संहिता आदि इस से संबंधित ग्रंथ है । इस उपवेद का अधिकतर सम्बन्ध साम गाना आदि से है ।

4.अथर्ववेद___ शिल्पशास्त्र से संबंधित विश्वकर्मा , त्वष्टा, देवज्ञ और मयकृत संहिता इस उपवेद के प्राचीन ग्रंथ है । कौटिल्य अर्थशास्त्र भी इस विषय का अपूर्व ग्रंथ है ।

- **{ ।। वेद के 6 अंग (वेदांत) है ।। }**

शिक्षा___ अक्षरों के उच्चारण को वर्ण ,स्वर, मात्रा, बल, साम, सन्तान के भेद से पूर्ण उन्नत किए जाने की विधि बतलाने वाले शास्त्र को शिक्षा कहते हैं । प्राचीन ग्रंथो के बिना, ऋषि दयानंद कृत वर्णोच्चारण शिक्षा, इस विषय का उपयोगी ग्रंथ है ।
कल्प___ वेद मंत्रों को, याज्ञिक कर्मकांड में विनियुक्त करना तथा विनियुक्त करने की विधि बतलाना इस शास्त्र का काम है । आश्वलायन आदि कल्पसूत्र, प्रत्येक वेद के पृथक पृथक है ।
व्याकरण___ जिससे भाषा संस्कारित की जाए, उसे व्याकरण कहते हैं । शाकटायन का शब्दानुशासन, पाणिनी की अष्टाध्यायी और पतंजलि का महाभाष्य प्रमुख ग्रंथ है । व्याकरण शास्त्रों के कारण ही संस्कृत संसार की आय समस्त भाषाओं के मुकुटमणि के रूप में विराजमान है ।

निरुक्त___ इस समय केवल यास्काचार्य का निरुक्त मिलता है । तथा निघण्टु भी इस निरुक्त के तीन भाग हैं,

1. **नैघण्टुक भाग** : इसमें वैदिक शब्दों के पर्याय दिए गए हैं ।
2. **नैगम व्याख्यान** : वेद मंत्रों तथा शब्दों का व्याख्यान इस भाग में है ।
3. **दैवत व्याख्यान** : अग्नि वायु सूर्य आदि देवताओं की व्याख्या इस भाग में है ।

Edit with WPS Office

छन्द ___ : इस शास्त्र में वैदिक छन्दो का वर्णन है । गायत्री , उष्णिक, अनुष्टुप, बृहती, पंक्ति, त्रिष्टुप,जगती, विराट अति जगती, शक्करी, अति शक्वरी, अष्टि, अत्यष्टि, धृति, अतिधृति, एकपदा, द्विपदा, प्रगाथ,बृहती, प्रगाथककुभु तथा महाबृहति ये 20 प्रसिद्ध छन्द है ।

ज्योतिष___ सूर्य, चन्द्र आदि नक्षत्रों की गतिविधि आदि बतलाने वाले ग्रंथों में ज्योतिषशास्त्र कहते हैं । सूर्य सिद्धांत आदि इस विषय के उपयोगी ग्रंथ है ।

वैदिक संहिताओं , ब्राह्मण , आरण्यक , और उपनिषद के वेद संबंधी जिस साहित्य का विकास हुआ उसे क्या कहते हैं -- **वेदांग**

वैदिक साहित्य का विभाजन जिन 6 अंगों में किया गया उसे क्या कहते हैं -- वेदांग

______ वेदांग______

1. **छन्द ___** वेद के पैर
2. **कल्प ___** वेद के हाथ
3. **ज्योतिष ___** वेद की आंख
4. **निरुक्त ___** वेद के कान
5. **शिक्षा ___** वेद की नासिका
6. **व्याकरण ___** वेद के मुख

निरुक्त की रचना ___ महर्षि यास्क ने की थी ।

- **{ ।। वेद को माता क्यों कहते हैं ।। }**

स्तुता मया वरदा वेद माता प्रचोदयान्ता पाव–मानी द्विजानाम ।
आयु : प्राण प्रजा पशु कीर्ति ब्रह्ममवर्चसम् , महा दत्वा व्रजत ब्रह्मलोक ।।
(अथर्ववेद. 19/71/1)

Edit with WPS Office

वेद माता कैसी है, वेद को माता क्यों कहते हैं ? इस विषय में मंत्र कहता है—

प्रचोदयन्ता___ वेद वाणी मन को उत्साह से प्रेरणा करने वाली है ।

द्विजानां पावमानी___ द्विजो (वेदाध्ययन करने वाले को पवित्र करती है) ।

वरदा वेदमाता___ श्रेष्ठ ज्ञान और निम्न वरों को देने वाली माता :--
आयु, प्राण, पशु , कीर्ति, ज्ञान, तेज
वैदिक मान्यता के अनुसार जो भी हमारा निर्माण करें, वह हमारी माता कहलाती है। जननी, ईश्वर , भूमि को आदि अनेक माताएं मिलकर मनुष्य के आत्मिक और शारीरिक विकास में सहायक होती है । उसी प्रकार श्रेष्ठ ज्ञान देकर आयु की वृद्धि, प्राणों की रक्षा, प्रजा का पालन, पशुपालन ,कीर्ति फैलाकर, ज्ञान बढ़ाकर, तेजयुक्त बनाकर वेद माता अपना दायित्व पूर्ण करती है ।

- **{ ।। वेद भाष्य की आवश्यकता क्या है ।। }**

(महाभारत शातिपर्व मोक्षपर्व अध्याय 305, श्लोक. 13-14)
अर्थात___ जो वेद- शास्त्रों को केवल पढ़ लेता है किंतु उनके अर्थ और तत्व को नहीं जानता उसका इस प्रकार केवल पढ़ लेना केवल भार ढोने और निष्फल सा हो जाता है । अत: वेदादि शास्त्रों का अर्थ और तत्व सहित समझने का ही सबको प्रयत्न करना चाहिए ।

(निरुक्त नैगम काण्ड. 1/18)
अर्थात___ जो वेद को पढ़कर उसके अर्थ को नहीं समझता वह भारवाही पशु के समान है, किंतु जो वेदों के अर्थ को समझने वाला है । वही समस्त सुख और कल्याण को प्राप्त करता है । वह उस पवित्र ज्ञान के द्वारा पाप को नष्ट कर परमानंद रूप मोक्ष को प्राप्त कर लेता है ।

Edit with WPS Office

- **{ वेदार्थ शैली : सायण और पाश्चात्य भाष्यकार }**

- सायण का भाष्य यज्ञपरक भाष्य है सायण, उव्वट, तथा महीधर वेदों को अपौरुषेय मानते रहे, परंतु उन्होंने इस तरफ ध्यान नहीं दिया कि इन अपौरुषेय ग्रंथों में इतिहास तथा पशु हिंसा आदि स्वीकार करने पर उनकी अपौरुषेयता बनी रह सकती है या नहीं । यज्ञ से स्वर्ग (सुख) प्रति तो हो सकती पर यज्ञ की नांव भव सागर पार कराने मैं समर्थ नहीं, इसलिए योग और अध्यात्म का फल यज्ञ से ऊंचा बताया गया है, परंतु सायण आदि भाष्यकारों के समय यज्ञ का ही बोलबाला था । इसलिए सायन ने यज्ञपरक रूढि अर्थ किए ।
- मैक्समूलर ने सायण के ही यज्ञपरक रूढि भाष्य का अनुवाद किया । इसलिए यज्ञपरक व्याख्या के साथ तो बंधा ही बंधा परंतु विकासवाद के मिथ्या सिद्धांत को भी वेदों से जोड़ दिया । इन सब भाष्यो में वैदिक मान्यता के विरुद्ध– एकेश्वरवाद के स्थान पर बहुत्ववाद, अवतारवाद, साकारवाद आदि अवैदिक मान्यताओं का समावेश किया गया ।

- **{ महर्षि दयानंद सरस्वती जी की वेदार्थ शैली }**

महर्षि दयानंद सरस्वती जी के वेद भाष्य की अनेक विशेषताएं हैं, सबसे पहली विशेषता तो यह है उन्होंने अपने भाष्य में संस्कृत के साथ-साथ हिंदी में भी अर्थ दिया है । अभी तक भारतीय विद्वानों द्वारा जो भाष्य हुए थे , वे केवल संस्कृत में थे । इसलिए सर्वसाधारण इस बात से अनभिज्ञ थे कि वेदो में क्या कहा गया है ।

सायण से भिन्न भाष्य ___ उलट, सायण, ने जो वेद भाष्य किए हैं, अथवा उनका अनुकरण करते हुए इंग्लैंड तथा जर्मनी आदि यूरोप के निवासियों ने अपनी अपनी भाषा में जो भाष्य किए हैं, एवम् भारतीय विद्वानों ने जो भाष्य किये हैं या वे क्रूर रहे हैं, वे सब अनर्थ उत्पन्न करने वाले हैं । **उदाहरणार्थ___** सारण ने सब वेदों का जो यज्ञपरक अर्थ किया है, यह बात गलत है । वेदों में परमार्थ का–आत्मा - परमात्मा का वर्णन है । परंतु सायण

Edit with WPS Office

का कहना तो इतना ही है, —- सर्वे वेदा क्रिया काण्डपरा : सन्ति । सब वेद कर्मकाण्ड का ही वर्णन करते हैं । जहां सायण ने अपने भाष्य में अनेक देवताओं को उपास्य बताया, वहां ऋषि दयानंद जी वेद की मान्यता, एक सदं, विप्रा बहुधा वदन्ति, पर अडिग रहते हुए एकेश्वरवाद के पक्ष में अडिग खड़े रहे ।

महीधर ने यजुर्वेद अध्याय 23 में मंत्रों का इतना अश्लील भाष्य किया (कि उसके बारे में हम आगे लिखेंगे) खैर ऋषि दयानंद सरस्वती जी ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रंथ में महीधर कि इस पोप लीला का जमकर प्रमाण सहित खंडन किया और मंत्रों के सही अर्थ को भी प्रदर्शित किया ।
ऋषि दयानंद जी का वेद भाष्य निरुक्त पर आक्षित है । ऋषि दयानंद के वेद भाष्य निरुक्तपरक है, रुढ़िवादी को छोड़कर चलते हैं क्योंकि ऋषि दयानंद ने वेद भाष्य में रुढ़िवाद का सहारा नहीं लिया , इसलिए उस भाष्य में लचक है, अर्थ में स्वतंत्रता है, अनेकार्थ है, ऋषि दयानंद जी का भाष्य वेदों के अर्थो को रुढि न मानकर यौगिक मानता है । जो इस भाष्य की असाधारण विशेषता यह है कि उसमें शब्दों का रुढ अर्थ न करके यौगिक अर्थ किया गया है । इंद्र का अर्थ करते हुए पुराण-प्रसिद्ध अर्थ नहीं किया गया, उसकी नियुक्ति की गई है– इति परमैक्षृये – जिसमें ऐश्वर्या हो, वह इंद्र है, ऐश्वर्या के कारण इंद्र का अर्थ परमात्मा भी हो सकता है , सूर्य भी हो सकता है, राजा भी हो सकता है । यह दिशा महर्षि यास्क जी के निरुक्त ने दी है । निरुक्त के चतुर्थ अध्याय में लिखा है—-
एकार्थमनेक शब्द इत्येतदुक्तम अथ यानि अनेकार्थानि एकशब्दानि तानि अतः अनुक्रमिष्याम अनेक शब्दों का एक अर्थ होता है । और एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं । इसका अर्थ यह है कि इंद्र, मित्र ,वरुण– ये अनेक शब्द है । परंतु इनका अर्थ ऐश्वर्यावान आदि होने के कारण परमात्मा , सूर्य, राजा यह सब हो सकते हैं । इसी प्रकार गौ, यह एक शब्द है, परंतु इसका अर्थ गमनशील होने के कारण पृथ्वी ,गाय इत्यादि यह सब हो सकते हैं । वेदों में शब्दों का अर्थ रुढ अर्थ नहीं है, यौगिक अर्थ है, उनकी व्युत्पत्ति करने से, उनकी धातु को जानने से जो अर्थ बनता है यह अर्थ है । उदाहरण___ देवता का क्या अर्थ है ? रुढ अर्थ किया जाय तो जगत में जो प्रसिद्ध देवता है, वे

Edit with WPS Office

इस शब्द से लिए जाएंगे, परंतु निरुक्तकार (अध्याय 7, खंड 15) ने देवता का अर्थ___ देवो दानात वा दोपनात् या धोतनात वा, धुन स्थानो भवेतीति वा इस प्रकार किया गया है । ऋषि दयानंद सरस्वती की वेदांर्थ शैली का यही गुरु है । इसी को आधार बनाकर ऋषि दयानंद जी ने सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समूहलाश में ईश्वर के 100 नाम नई व्युत्पत्तिपूर्वक लिखे हैं । ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने वेद मंत्रों को तीन प्रकार के अर्थ कहने वाला बताया है, परोक्ष((अदृश्य) प्रत्यक्ष (दृश्य) तथा अध्यात्म (ज्ञानागोचर) (आत्मा और परमात्मा) यही व्यवस्था निरुक्त 7/1/2 में उपलब्ध है । विस्तार से नियम सहित समझने के लिए ऋग्वेदादिभाषभूमिका मैं वैदिक प्रयोग नियम विषय पर पढ़ें । अतः महर्षि दयानंद सरस्वती जी की वेदांर्थशैली और उनके वेद भाष्य पूर्णतः : महर्षि यास्क जी आदि प्राचीन ऋषियों की शैली के अनुकूल है, वर्तमान में यही भाष्य सबसे प्रामाणिक और सिद्धांत अनुकूल है । श्रद्धा पूर्वक महर्षि दयानंद सरस्वती जी के वेद भाष्यो का स्वाध्याय करना सब आर्यों का परम धर्म है ।

➤ ____वेदांग क्या है ? ____

वेदांग शब्द का अर्थ है " **वेदों के अंग** " । यह वैदिक साहित्य के अध्ययन और उसकी समझ के लिए आवश्यक छह अनुशासन है । वेदांग का मुख्य उद्देश्य वेदों के सही पाठ , अर्थ , और समझ को सुचारू रूप से प्रस्तुत करना है । वेद को समझने के लिए इन छः अंगों का ज्ञान आवश्यक माना जाता है । वेदांग को वेदों का सहायक ज्ञान कहां जा सकता है , जो वेदों के अध्ययन में सहायता करता है ।

वेदांगों की संख्या छह है , और वे इस प्रकार हैं :

1. शिक्षा

Edit with WPS Office

2. कल्प
3. व्याकरण
4. निरुक्त
5. छन्द
6. ज्योतिष

आइए अब प्रत्येक वेदांग का विस्तार से वर्णन करते हैं :

1. शिक्षा (phonetics and pronunciation) :

शिक्षा वेदों के उच्चारण और ध्वनियों के अध्ययन से संबंधित है । इसका उद्देश्य वेदों के मत्रों का सही उच्चारण और स्वरों की शुद्धता सुनिश्चित करना है । वेदों के पाठ में स्वर , मात्रा , और उच्चारण की गलतियां अर्थ को बदल सकती है , इसलिए शिक्षा की महत्ता बहुत अधिक है ।
उदाहरण :
वेद के मंत्रों में स्वर और उच्चारण की महत्ता है । जैसे :

- ओउम् का उच्चारण यदि सही नहीं किया जाए , तो उसके प्रभाव में कमी हो सकती है ।
- ऋग्वेद के मंत्रों में " उ " स्वर का उच्चारण अगर गलत किया जाए , तो उसका अर्थ बदल सकता है ।

प्राचीन काल में वैदिक मंत्रों के सही उच्चारण की महत्ता को देखते हुए कई ऋषियों और विद्वानों ने शिक्षा पर विभिन्न ग्रंथ लिखे । यहां कुछ प्रमुख शिक्षा ग्रंथों का उल्लेख किया गया है :

1. पाणिनीय शिक्षा :

- यह शिक्षा पर आधारित सबसे प्रसिद्ध ग्रंथों में से एक है , जिसे महर्षि पाणिनि ने लिखा । पाणिनि , जो संस्कृत व्याकरण के महान आचार्य माने जाते हैं , ने इसमें स्वरों , ध्वनियों और अक्षरों के शुद्ध उच्चारण

Edit with WPS Office

की विस्तृत जानकारी दी है ।

- इसमें विशेष रूप से वर्णों की ध्वनियों और उनके उच्चारण की विधियों का वर्णन है ।

2. याज्ञवल्क्य शिक्षा :

- यह ग्रंथ ऋषि याज्ञवल्क्य द्वारा रचित है , जो वैदिक शिक्षा का एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है । इसमें स्वर , व्यंजन , उनकी शुद्धता , और उनके सही उच्चारण के नियमों का वर्णन किया गया है ।
- इसमें विशेष रूप से वैदिक मंत्रों के शुद्ध उच्चारण की महत्ता पर जोर दिया गया है ।

3. कात्यायन शिक्षा :

- यह ग्रंथ महर्षि कात्यायन द्वारा रचित है , और इसमें वैदिक मंत्रों के उच्चारण के नियमों का विस्तृत वर्णन किया गया है ।
- इस ग्रंथ में ध्वनि विज्ञान पर अधिक जोर दिया गया है , और इसमें उच्चारण की शुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए विस्तार पूर्वक नियम दिए गए हैं ।

4. नारद शिक्षा :

- नारद शिक्षा , नारद मुनि द्वारा रचित ग्रंथ है , जिसमें स्वरों और मंत्रों के उच्चारण के नियम दिए गए हैं । इसमें उच्चारण की शुद्धता के साथ साथ स्वरों और ध्वनि की शुद्धता का भी विवरण मिलता है ।

5. महर्षि बृहस्पति की शिक्षा :

- यह ग्रंथ महर्षि बृहस्पति द्वारा रचित है , जो वैदिक उच्चारण और स्वर

Edit with WPS Office

शुद्धता पर केंद्रित है । इसमें स्वर और व्यंजन की शुद्धता और उनके सही उच्चारण के विभिन्न अंगों का वर्णन किया गया है ।

6. व्यास शिक्षा :

- यह ग्रंथ महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित है , जिसमें वैदिक मंत्रों के शुद्ध उच्चारण और स्वर की शुद्धता का वर्णन मिलता है । इसे शिक्षा साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है ।

7. लौगाक्षि शिक्षा

- यह ग्रंथ महर्षि लौगाक्षि द्वारा रचित है और इसमें वैदिक मंत्रों के सही उच्चारण की तकनीकों पर विस्तृत विवरण दिया गया है ।

शिक्षा ग्रंथों का महत्व : इन सभी ग्रंथों का मुख्य उद्देश्य यह है कि वैदिक मंत्रों का उच्चारण ठीक उसी प्रकार से किया जाए जैसे कि वैदिक काल में किया जाता था । इन ग्रंथों में वर्णित उच्चारण की विधियां और नियम यह सुनिश्चित करते हैं कि वैदिक पाठ और अनुष्ठान अपने शुद्धतम रूप में संपन्न हो ।

2. कल्प (Rituals and ceremonies)

कल्प धार्मिक अनुष्ठानों , विधियों और संस्कारों का ज्ञान है । यह बताता है कि वैदिक यज्ञ और अन्य धार्मिक क्रियाएं कैसे की जाती है । इसके अंतर्गत विभिन्न यज्ञ , होम , व्रत , और अन्य धार्मिक विधियों की जानकारी दी जाती है ।

कल्पसूत्र , चार मुख्य भागों में विभाजित होते हैं :

- श्रौतसूत्र (वैदिक यज्ञ)
- गृहासूत्र (गृहस्थ जीवन के संस्कार)

Edit with WPS Office

- धर्म सूत्र (धार्मिक कर्तव्य)
- शुल्बसूत्र (यज्ञ की ज्यामिति)

उदाहरण :

- अग्निहोत्र यज्ञ का अनुष्ठान कैसे करना है , इसके लिए कल्प सूत्रों में स्पष्ट विवरण दिया गया है ।
- विवाह संस्कार की विधियां गृहासूत्रों में वर्णित है ।

कल्प के अंतर्गत कई ग्रंथ लिखे गए हैं , जो वैदिक अनुष्ठानों के शास्त्रों का विवरण देते हैं । कल्प ग्रंथों का अध्ययन वैदिक यज्ञों और संस्कारों के उचित अनुष्ठान के लिए अत्यंत आवश्यक है ।

यहां कुछ प्रमुख कल्प ग्रंथों का उल्लेख किया गया है :

1. आश्वलायन गृहसूत्र

- यह गृहसूत्र यज्ञों और अनुष्ठानों की विधियों का वर्णन करता है जो घरेलू जीवन से जुड़े होते हैं , जैसे विवाह , उपनयन (यज्ञोपवीत संस्कार) , श्राद्ध कर्म आदि ।
- गृहसूत्रों का मुख्य उद्देश्य यह बताना है कि कैसे वैदिक संस्कार गृहस्थ जीवन में संपन्न किए जाए ।

2. कात्यायन श्रौतसूत्र :

- यह श्रौतसूत्र यज्ञों की प्रक्रियाओं , विशेषकर वेदों के निर्देशानुसार किए जाने वाले बड़े यज्ञों (जैसे __ अग्निहोत्र , सोमयज्ञ , अश्वमेध यज्ञ) की विधियों को बताता है ।
- इसमें यज्ञों के लिए आवश्यक सामग्री , मंत्र , और अनुशासन का विस्तृत विवरण मिलता है ।

Edit with WPS Office

3. आपस्तम्ब गृहासूत्र :

- आपस्तम्ब गृहासूत्र में गृहस्थ जीवन के संस्कारों और अनुष्ठानों का विस्तार से वर्णन किया गया है । इसमें विवाह , गर्भाधान , नामकरण , अन्नप्राशन , और अंत्येष्टि संस्कार आदि का वर्णन किया गया है ।
- यह गृहस्थ जीवन के लिए धार्मिक कर्मकांडों को विस्तार से समझाता है और यह दक्षिण भारत में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है ।

4. बौधायन धर्मसूत्र :

- बौधायन धर्मसूत्र मुख्य रूप से व्यक्ति के धार्मिक और सामाजिक कर्तव्यों का विवरण करता है । इसमें नियमों और विधियों का उल्लेख है कि कैसे एक व्यक्ति को धर्म के अनुसार अपने जीवन का संचालन करना चाहिए ।
- इसमें सामाजिक और नैतिक व्यवहार , जातियों के कर्तव्य , जीवन में विभिन्न आश्रमों का पालन , और अन्य नैतिक नियमों का वर्णन है ।

5. हिरण्यकेशी श्रौतसूत्र :

- यह श्रौतसूत्र वैदिक यज्ञों और अनुष्ठानों की विधियों को विस्तृत वर्णन करता है । इसमें विशेष रूप से सामवेद के यज्ञों की विधियों पर ध्यान दिया गया है ।
- इसमें विभिन्न यज्ञों की प्रक्रिया , यज्ञ में उपयोग किए जाने वाले मंत्रों और अन्य आवश्यक विधानों का उल्लेख है ।

6. पारस्कर गृहासूत्र :

यह गृहासूत्र यज्ञों और संस्कारों की विधियों पर केंद्रित है । इसमें घर परिवार से जुड़े वैदिक कर्मकांड जैसे की विवाह , उपनयन , श्राद्ध कर्म आदि आदि

Edit with WPS Office

का उल्लेख है । पारस्कर गृहासूत्र यजुर्वेद की शाखाओं में महत्वपूर्ण माना जाता है ।

7. शुल्बसूत्र :

शुल्बसूत्र एक विशेष प्रकार का कल्प सूत्र है जो यज्ञ वेदियों के निर्माण और उनकी ज्यामिति से संबंधित है । इसमें बताया गया है कि यज्ञ की वेदी का आकार , लंबाई , चौड़ाई , और ऊंचाई कैसे होनी चाहिए । शुल्बसूत्र में यज्ञ वेदी के निर्माण के गणितीय और ज्यामितीय सिद्धांतों का विस्तृत वर्णन है ।

कल्प ग्रंथ वेदों के अनुष्ठानिक और धार्मिक विधानों का विस्तार से वर्णन करते हैं । इनमें से प्रत्येक ग्रंथ का अपना एक विशेष महत्व है , क्योंकि ये विभिन्न प्रकार के यज्ञ , संस्कार , और सामाजिक नियमों का पालन करने के तरीके को बताते हैं । वेदांगो के अंतर्गत कल्प ग्रंथों का अध्ययन वैदिक संस्कृति और धर्म को सही ढंग से समझने और उसे पालन करने में अत्यंत सहायक होता है ।

3. व्याकरण (grammar) :

व्याकरण वेदों के भाषाईं संरचना और शब्दों के सही रूपों को समझाने का विज्ञान है । व्याकरण वेदों की भाषा के नियमों और संरचनाओं को व्यक्तिगत करता है । पाणिनी का अष्टाध्यायी सबसे प्रसिद्ध वैदिक व्याकरण ग्रंथ है ।

उदाहरण :

- शब्दों के सही रूप का ज्ञान : जैसे " गायत्री " का सही व्याकरणिक रूप क्या है । पाणिनि के अष्टाध्यायी मैं विभिन्न प्रत्ययों और धातुओं का विस्तृत वर्णन मिलता है , जो वैदिक पाठ को समझने में सहायक है ।

संस्कृत व्याकरण पर आधारित कई महत्वपूर्ण ग्रंथ है , जिनमें से कुछ

Edit with WPS Office

अत्यंत प्रसिद्ध और विद्वानों द्वारा व्यापक रूप से अध्ययन किए जाते हैं। ये ग्रंथ न केवल वेदों के अध्ययन में सहायक होते हैं, बल्कि संस्कृत भाषा की संरचना और शुद्धता को बनाए रखने के लिए भी आवश्यक होते हैं।

यहां कुछ प्रमुख संस्कृत व्याकरण ग्रंथों के उदाहरण दिए जा रहे हैं :

1. पाणिनि का अष्टाध्यायी :

- अष्टाध्यायी संस्कृत व्याकरण का सबसे महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध ग्रंथ है, जिसे महर्षि पाणिनि ने लिखा है। यह ग्रंथ लगभग 4000 सूत्रों में विभाजित है और इसमें संस्कृत भाषा के समस्त व्याकरणिक नियमों का विस्तृत वर्णन मिलता है।
- यह ग्रंथ आठ अध्यायों में विभाजित है, और प्रत्येक अध्याय में संस्कृत भाषा की धातुओं (werbs), प्रत्ययों (suffixes), और विभक्तियों (cases) के नियम दिए गए हैं। इसे संस्कृत का मूल व्याकरण माना जाता है।

विशेषता :

- सिद्धांत कौमुदी : पाणिनी के अष्टाध्यायी पर भट्टोजि दीक्षित द्वारा लिखा गया यह व्याख्या - ग्रंथ पाणिनि के सूत्रों की गहराई से व्याख्या करता है।

2. कात्यायन का वार्तिक :

- कात्यायन ने पाणिनि के अष्टाध्यायी पर वार्तिक लिखें, जिसमें उन्होंने पाणिनि के सूत्रों पर स्पष्टीकरण और उनके कुछ स्थानों पर संशोधन प्रस्तुत किया।
- कात्यायन का यह कार्य पाणिनीय व्याकरण को और अधिक व्यक्तिगत और सटीक बनाने में सहायक सिद्ध हुआ। वार्तिक मुख्य रूप से उन स्थानों पर ध्यान देता है जहां पाणिनि के नियम स्पष्ट नहीं

Edit with WPS Office

थे ।

3. पतंजलि का महाभाष्य :

- महाभाष्य महर्षि पतंजलि द्वारा रचित ग्रंथ है , जो पाणिनि के अष्टाध्यायी और कात्यायन के वार्तिक पर एक विशाल और व्यापक टिप्पणी है । यह ग्रंथ संस्कृत व्याकरण पर सबसे विस्तृत और गहन व्याख्या मानी जाती है ।
- पतंजलि ने इसमें पाणिनि के सूत्रों की विस्तार से व्याख्या की और कात्यायन के वार्तिक पर अपनी समीक्षा प्रस्तुत की । यह संस्कृत व्याकरण के अध्ययन में एक अनिवार्य ग्रंथ है ।

4. काशिका वृत्ति :

- काशिका वृत्ति वामन और जयादित्य द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण व्याकरणिक ग्रंथ है , जिसमें पाणिनि के अष्टाध्यायी पर विस्तृत व्याख्या दी गई है ।
- इस ग्रंथ में पाणिनि के प्रत्येक सूत्र की सरल और विस्तृत व्याख्या है , जो छात्रों और विद्वानों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती है । काशिका वृत्ति पाणिनीय व्याकरण की समझ की और गहरा बनाती है ।

5. लघुसिद्धांतकौमुदी :

- यह ग्रंथ भट्टोजि दीक्षित द्वारा रचित है , जो पाणिनि के अष्टाध्यायी की व्याख्या को सरल और संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करता है ।
- लघु सिद्धांतकौमुदी छात्रों के लिए एक आसान और सुबोध ग्रंथ है , जिसमें पाणिनि के सूत्रों की सरल भाषा में व्याख्या की गई है , जिससे छात्रा पाणिनीय व्याकरण के कठिन सिद्धांतों को आसानी से समझ सके ।

Edit with WPS Office

6. परिभाषेन्दुशेखर :

- नागेश भट्ट द्वारा रचित यह ग्रंथ संस्कृत व्याकरण के परिभाषाओं (definitions) और नियमों का विस्तृत विवेचन करता है ।
- इसमें संस्कृत के कठिन व्याकरणिक नियमों को सरल रूप में समझाया गया है । इस ग्रंथ का मुख्य उद्देश्य व्याकरणिक नियमों को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करना है ।

7. प्रत्ययमज्जरी :

- प्रत्ययमज्जरी एक विशिष्ट ग्रंथ है , जिसमें संस्कृत धातु (verbs) के प्रत्ययों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । यह धातुओं और प्रत्ययों के संयोजन से बने शब्दों की व्याकरणिक प्रक्रिया को समझने में सहायक होता है ।
- यह ग्रंथ विशेष रूप से पाणिनि के प्रत्यय नियमों की व्याख्या करता है और उनके सही प्रयोग का निर्देश देता है ।

8. धातुपाठ :

- धातुपाठ पाणिनि द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है , जिसमें संस्कृत की सभी धातुएं (verbs) सूचीबद्ध हैं । यह ग्रंथ धातुओं के सही रूप , उनके संयोजन और उनका सही प्रयोग सिखाता है ।
- यह ग्रंथ संस्कृत भाषा के व्याकरणिक ढांचे को समझने के लिए अत्यंत उपयोगी है , क्योंकि यह धातु के विभिन्न रूपों और उनके अर्थो की विस्तृत जानकारी देता है ।

व्याकरण वेदांग का अध्ययन वैदिक मंत्रों और संस्कृत साहित्य के शुद्ध और सही उच्चारण एवं अर्थ को समझने के लिए आवश्यक है । उपर्युक्त व्याकरण ग्रंथों ने संस्कृत भाषा के अध्ययन को सरल और सुसंगठित किया

Edit with WPS Office

है । इनमें से प्रत्येक ग्रंथ का अपना विशेष महत्व है , और सुसंगठित किया है । इनमें से प्रत्येक ग्रंथ का अपना विशेष महत्व है , और ये सभी मिलकर संस्कृत व्याकरण की एक विस्तृत और गहरी समझ प्रदान करते हैं ।

4. निरुक्त (Etymology and interpretation) :

निरुक्त वेदों के कठिन और दुर्बोध शब्दों का अर्थ बताने का विज्ञान है । यह शब्दों की उत्पत्ति , उनके मूल अर्थ और उनका वैदिक संदर्भ में क्या महत्व है , यह बताता है । यास्क का निरुक्त इस विषय का प्रमुख ग्रंथ है ।
उदाहरण :

- जैसे वेदों में " अग्नि " शब्द का क्या अर्थ है , उसे निरुक्त के द्वारा समझाया गया है । अग्नि का अर्थ केवल आग नहीं है , बल्कि यह ब्रह्मांड की शक्ति और प्रकाश का प्रतीक है ।

निरुक्त पर कुछ प्रमुख ग्रंथ और उनके उदाहरण इस प्रकार हैं :

1. यास्क का निरुक्त

- यास्क द्वारा रचित निरुक्त सबसे महत्वपूर्ण और प्राचीन निरुक्त ग्रंथ है । यह निरुक्त साहित्य का मुख्य और प्रथम ग्रंथ माना जाता है । यास्क ने इस ग्रंथ में वेदों के दुर्बोध शब्दों का व्याख्यान और उनकी व्युत्पत्ति प्रस्तुत की है
- यास्क का निरुक्त मुख्य रूप से ऋग्वेद के कठिन शब्दों का व्याख्यान करता है और इन शब्दों की उत्पत्ति के साथ-साथ उनका वैदिक संदर्भ में अर्थ बताता है ।

विशेषता :

- यास्क ने अपने ग्रंथ में शब्दों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया है : नित्य (शाश्वत) , नैमित्तिक (कालगत) , और काव्य (रचना संबंधी) । यह श्रेणीकरण वेदों के शब्दों को समझने में अत्यंत सहायक सिद्ध

Edit with WPS Office

होता है ।

2. निघंटु :

- निघंटु निरुक्त साहित्य का सबसे प्राचीन ग्रंथ है , जिसे यास्क के निरुक्त का आधार माना जाता है । निघंटु एक प्रकार का वैदिक शब्दकोश है , जिसमें वैदिक शब्दों की सूची और उनके अर्थ दिए गए हैं ।
- निघंटु में वैदिक शब्दों को विभिन्न विषयों के आधार पर वर्गीकृत किया गया है , जैसे कि देवताओं , प्रकृति और अन्य विषयों से संबंधित शब्द । इसके तीन भाग हैं : नैमित्तक निघंटु , दैविक निघंटु , और औपदेशिक निघंटु ।

विशेषता :
निघंटु मुख्य रूप से उन शब्दों का संग्रह है , जिनका अर्थ सरल नहीं है और जिनकी व्याख्या आवश्यक है । यास्क के निरुक्त में इन शब्दों की व्याख्या निघंटु के आधार पर की गई है ।

3. शाकल्य निरुक्त :

- शाकल्य निरुक्त एक अन्य महत्वपूर्ण निरुक्त ग्रंथ है , जिसमें वैदिक शब्दों का विश्लेषण और उनकी व्युत्पत्ति का वर्णन किया गया है । यह ग्रंथ वैदिक शब्दों के भिन्न-भिन्न अर्थ और उनके संदर्भों को स्पष्ट करता है , जिससे वेदों के अध्ययन में सहायता मिलती है ।

4. दुर्गाचार्य का निरुक्त टीका :

- दुर्गाचार्य ने यास्क के निरुक्त पर एक विस्तृत टीका लिखी है , जिसे दुर्ग टीका कहा जाता है । इस टीका में उन्होंने यास्क के निरुक्त की गहन व्याख्या की है और वैदिक शब्दों के गूढ़ अर्थों को और भी स्पष्ट

Edit with WPS Office

किया है ।

- यह टीका वैदिक अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है , क्योंकि इसमें यास्क के निरुक्त की कठिन व्याख्याओं को सरल बनाया गया है ।

5. स्कंद स्वामी की निरुक्त टीका :

- स्कंद स्वामी ने यास्क के निरुक्त पर एक और महत्वपूर्ण टीका लिखी , जिसमें उन्होंने वैदिक शब्दों के व्युत्पत्तिगत और भाषाशास्त्रीय दृष्टिकोण से विश्लेषण किया है । यह टीका वैदिक व्याकरण और निरुक्त के अध्ययन के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है , क्योंकि इसमें वैदिक शब्दों की गहन व्याख्या की गई है ।

6. माध्वाचार्य का निरुक्त टीका :

- माधवाचार्य , जो वेदांत दर्शन के प्रवर्तक माने जाते हैं , ने भी यास्क के निरुक्त पर एक महत्वपूर्ण टीका लिखी है । इसमें उन्होंने वैदिक शब्दों और उनके गूढ़ अर्थो को अपने दार्शनिक दृष्टिकोण से व्याख्यायित किया है ।
- माधवाचार्य की टीका वैदिक शब्दों की धार्मिक और दार्शनिक व्याख्या में सहायक सिद्ध होती है ।

निरुक्त की विशेषता और महत्व :

निरुक्त का मुख्य उद्देश्य वेदों के उन शब्दों को स्पष्ट करना है जो सामान्य व्याकरण और शब्दकोश से समझना कठिन होते हैं । निरुक्त के माध्यम से वेदों के कठिन शब्दों और उनके विशेष संदर्भों को सही ढंग से समझा जा सकता है । यह वेदों की व्याख्या और अनुष्ठानों को सही ढंग से करने में सहायक है । यास्क का निरुक्त इस संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है , क्योंकि यह वेदों के कठिन शब्दों की व्याख्या का प्राचीनतम और सबसे व्यापक स्रोत है ।

Edit with WPS Office

निरुक्त ग्रंथों का अध्ययन वेदों के शुद्ध ज्ञान और उनके सही अर्थ को समझने के लिए अनिवार्य माना जाता है ।

6. छन्द :

छन्द वैदिक मंत्रों की छंद - व्यवस्था और उनके लयबद्ध पाठ का ज्ञान है । वेदों के मंत्र विशेष प्रकार के छंदों में होते हैं , जिनमें लय , मात्रा और गति का ध्यान रखा जाता है । छंदों के ज्ञान के बिना वेदों का सही पाठ असंभव है ।

संस्कृत साहित्य में अनेक प्रकार के छंद पाए जाते हैं , जिनमें से कुछ मुख्य प्रकार इस प्रकार है :

1. गायत्री छंद :

- गायत्री सबसे प्रसिद्ध वैदिक छंद है , जिसमें तीन पंक्तियां (त्रिपदा) होती है , और प्रत्येक पंक्ति में 8 -8 अक्षर होते हैं , कुल 24 अक्षर होते हैं । इस छंद का उपयोग वैदिक साहित्य में प्रमुख मंत्रों में किया जाता है , जैसे गायत्री मंत्र ।

उदाहरण :
गायत्री मंत्र: ऊं भूर्भुव स्व , तत्सवितुर्वरण्यम् । भर्गो देवस्य धीमहि , धियो यो न प्रचोदयात् ।।

2. अनुष्टुप छंद :

- यह छंद संस्कृत काव्य का सबसे सामान्य छंद है , जिसमें 4 पंक्तियां होती है और प्रत्येक पंक्ति में 8 अक्षर होते हैं । यह छंद महाभारत , रामायण , और गीता जैसे महाकाव्यों में व्यापक रूप से प्रयुक्त होता है । उदाहरण :

Edit with WPS Office

o भगवत गीता के श्लोक अनुष्टुप छंद में होते हैं , जैसे " धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः । मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत सञ्जय ।।

3. त्रिष्टुप छंद :

- इस छंद में प्रत्येक पंक्ति में 11 अक्षर होते हैं , और यह चार पंक्तियों वाला छंद होता है । त्रिष्टुप छंद का प्रयोग भी वैदिक मंत्रों और श्लोकों में व्यापक रूप से होता है । उदाहरण :

  o ऋग्वेद के कई मंत्र त्रिष्टुप छंद में है: " इन्द्रं वृत्राणि हन्तारं , वृत्रघ सातवाहनम् । "

4. जगती छंद :

- इस छंद में प्रत्येक पंक्ति में 12 अक्षर होते हैं , और चार पंक्तियों वाली संरचना होती है । जगती छंद अपेक्षाकृत लंबा होता है और इसका उपयोग विशेष प्रकार की वैदिक स्तुतियों में होता है । उदाहरण :

  o " जगतीमधि विष्णुस्तिष्ठ , विष्णोः पादं पिपर्ति जगतीमधि । "

5. पंक्ति छंद :

- इसमें प्रत्येक पंक्ति में 10 अक्षर होते हैं और पांच पंक्तियां होती हैं । यह छंद सामवेद में विशेष रूप से प्रयुक्त होता है । उदाहरण :

  o सामवेद के कई मंत्र पंक्ति छंद में होते हैं ।

6. उष्णिक छंद :

Edit with WPS Office

- इस में प्रत्येक पंक्ति में 7 - 8 अक्षर होते हैं और इसका उपयोग छोटे मंत्रों या स्तुतियों में किया जाता है ।

7. शक्करी छंद :

- यह एक विशेष प्रकार का वैदिक छंद है , जिसमें असमान लंबाई की पंक्तियां होती हैं , और इसका प्रयोग ऋग्वेद के कुछ विशिष्ट मंत्रों में होता है ।

कुछ महत्वपूर्ण छंद ग्रंथों के उदाहरण :

छंदशास्त्र संस्कृत साहित्य के लिए छंदों के नियम और प्रकारों का वर्णन करते हैं । यहां कुछ प्रमुख छंदशास्त्र ग्रंथ दिए गए हैं :

1. छन्दः सूत्र (पिंगल)

- पिंगल मुनि द्वारा रचित यह ग्रंथ छंद शास्त्र का सबसे प्राचीन और प्रसिद्ध ग्रंथ है । यह छंद शास्त्र का आधारभूत ग्रंथ माना जाता है , जिसमें विभिन्न छंदों के प्रकार , उनके नियम , और लय की संरचना का वर्णन किया गया है ।
- इस ग्रंथ में 8 अध्याय है , जिनमें वैदिक और लौकिक छंदों के नियमों का विस्तृत वर्णन मिलता है । पिंगल का छंद : सूत्र विभिन्न छंदों की लय , मात्रा , और गति के विश्लेषण का महान स्रोत है ।

विशेषता :

- इसमें विशेष रूप से वैदिक और संस्कृत साहित्य में उपयोग होने वाले छंदों के प्रकारों की व्याख्या है , जैसे गायत्री , अनुष्टुप , त्रिष्टुप , जगती , आदि ।

2. छंदोमंजरी (गणपति)

Edit with WPS Office

- यह ग्रंथ गणपति द्वारा रचित है और इसमें संस्कृत साहित्य के विभिन्न छंदों का सरल और स्पष्ट वर्णन मिलता है । यह ग्रंथ विशेष रूप से छात्र और विद्वानों के लिए उपयुक्त है , जो छंदों के नियमों को आसानी से समझना चाहते हैं ।
- छंदोमंजरी में छंदों के निर्माण के नियम , उनकी विशेषताएं और उनका उपयोग विस्तार से बताया गया है ।

3. वृत्तरत्नाकर (केदार भट्ट)

- केदार भट्ट द्वारा रचित यह ग्रंथ संस्कृत छंद शास्त्र का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है । इसमें छंदों के विविध रूपों और प्रकारों का विवेचन किया गया है । इस ग्रंथ में लगभग सभी प्रमुख छंदों का विस्तार से वर्णन किया गया है ।
- यह ग्रंथ संस्कृत कविता और छंदों के विभिन्न प्रकारों को समझने के लिए उपयोगी है , विशेष रूप से जब कोई व्यक्ति संस्कृत काव्यशास्त्र का अध्ययन कर रहा हो ।

4. सिद्धांत कौमुदी (भट्टोजि दीक्षित)

- सिद्धांत कौमुदी भट्टोजि दीक्षित द्वारा लिखा गया एक महत्वपूर्ण व्याकरणिक ग्रंथ है , लेकिन इसमें छंद शास्त्र के नियमों और उनके महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है । इसमें छंदों के शास्त्रीय नियमों का वर्णन व्याकरण के संदर्भ में किया गया है , जिससे छंद और भाषा का घनिष्ठ संबंध समझा जा सके ।

5. सरस्वतीकंठाभरण (राजानक रत्नाकर)

- यह ग्रंथ छंद शास्त्र का एक और महत्वपूर्ण स्रोत है , जो विभिन्न छंदों और उनके संरचना के नियमों का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है ।

Edit with WPS Office

इसमें विशेष रूप से काव्य और नाटक में छंदों के उपयोग को समझाया गया है ।

6. छंदोनुसासन (हेमचन्द्राचार्य)

हेमचन्दाचार्य द्वारा रचित यह ग्रंथ छंद शास्त्र का एक महान कार्य है । इसमें विभिन्न छंदों का विवेचन किया गया है , साथ ही उनके नियमों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया गया है । हेमचंद्र का यह कार्य विशेष रूप से जैन साहित्य में प्रचलित छंदों के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है ।

6. ज्योतिष (Astronomy and Astrology)

ज्योतिष वेदांग का वह भाग है जो खगोलीय घटनाओं और उनके प्रभावों का अध्ययन करता है । वैदिक अनुष्ठानों और यज्ञों के लिए शुभ समय का निर्धारण ज्योतिष के आधार पर किया जाता है । यह न केवल ग्रहों और नक्षत्रों की स्थिति का अध्ययन करता है , बल्कि समय की गणना और पंचांग का निर्माण भी करता है :

वर्तमान में ज्योतिष दो प्रमुख अंगों में विभाजित किया जाता है :

- **गणित ज्योतिष :** इसमें ग्रहों की गति , समय की गणना और पंचांग का निर्माण किया जाता है । इसे खगोल विज्ञान (Astronomy) भी कहते हैं । यही मूल वेदांग ज्योतिष है ।
- **फलित ज्योतिष :** इसमें ग्रहों और नक्षत्रों के मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है । यहां मूल वेदांग ज्योतिष का हिस्सा नहीं है यह कालांतर में निर्माण किया गया है । इसे ही एस्ट्रोलॉजी कहां जाता है ।

वेदांग ज्योतिष दो प्रमुख ग्रंथों में विभाजित है :

Edit with WPS Office

1. **ऋग्वेद ज्योतिष** : यह 36 श्लोकों का एक ग्रंथ है , जो ऋग्वेद संहिता से संबंधित है और इसमें प्रमुख रूप से समय की गणना और ग्रहों की गति का वर्णन है ।
2. **यजुर्वेद ज्योतिष** : यह 43 श्लोकों का ग्रंथ है जो यजुर्वेद से संबंधित है और इसमें ज्योतिषीय गणना , नक्षत्रों और ग्रहों की स्थिति के बारे में जानकारी दी गई है

वेदांग ज्योतिष के प्रमुख तत्व :

1. **कालगणना (समय की गणना)** : वेदांग ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य समय की गणना करना है । इसमें दिन , ऋतु , अयन , और वर्ष की गणना का वर्णन है । यह गणना सूर्य और चंद्रमा की गति पर आधारित होती है ।
2. **नक्षत्र विज्ञान** : वेदांग ज्योतिष में नक्षत्रों की विशेष महत्ता हैं । 27 नक्षत्रों के आधार पर समय और शुभ - अशुभ मुहूर्त का निर्धारण किया जाता है । हर नक्षत्र का अपना विशेष महत्व और प्रभाव होता है , जिसका ध्यान वैदिक अनुष्ठानों में रखा जाता है ।
3. **ग्रह और उनका प्रभाव** : वेदांग ज्योतिष में नवग्रहों (सूर्य , चंद्र , मंगल , बुध , बृहस्पति ,शुक्र , शनि , राहु , केतु) का वर्णन किया गया है । इन ग्रहों की स्थिति और उनकी गति से जीवन के विभिन्न पहलुओं पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है ।
4. **मुहूर्त निर्धारण** : वैदिक अनुष्ठानों , यज्ञों और धार्मिक कर्मकांडों के लिए शुभ मुहूर्त का निर्धारण वेदांग ज्योतिष के माध्यम से किया जाता है । इसमें समय की सही गणना और ग्रहों की अनुकूल इस स्थिति का विशेष ध्यान रखा जाता है ।
5. **पंचांग का महत्व** : वेदांग ज्योतिष के आधार पर पंचांग की रचना की जाती है , जो सनातन धर्म में दैनिक जीवन और धार्मिक अनुष्ठानों के लिए मार्गदर्शन करता है । पंचांग में तिथि , वार , नक्षत्र , योग , और ग्रहण का वर्णन होता है , जो वैदिक ज्योतिष के विभिन्न तत्वों पर आधारित होता है ।

Edit with WPS Office

प्रमाण और वेदों का आधार :

वेदांग ज्योतिष का आधार चार वेदों में ___ ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद और अथर्ववेद । यद्यपि ज्योतिष संबंधी विवरण इन वेदों में बिखरे हुए रूप में है , परंतु वेदांग ज्योतिष के ग्रंथों ने इन्हीं विवरणों को एकत्र कर व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया है ।

- ऋग्वेद में सूर्य और चंद्रमा की गति का वर्णन मिलता है , जो समय की गणना के लिए आधारभूत है ।
- यजुर्वेद में अनुष्ठानों के लिए शुभ समय के निर्धारण की चर्चा की गई है ।
- सामवेद और अथर्ववेद में नक्षत्रों और ग्रहों के अध्ययन का उल्लेख है , जो वेदांग ज्योतिष के लिए महत्वपूर्ण है ।

वेदांग ज्योतिष के प्रमुख विद्वानों ने ज्योतिष शास्त्र के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । उनके द्वारा रचित ग्रंथों ने न केवल प्राचीन काल में बल्कि आज भी ज्योतिष शास्त्र के अध्ययन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । यहां कुछ प्रमुख वेदांग ज्योतिष आचार्य के नाम , उनके ग्रंथ और योगदान दिए गए हैं :

1. लगधाचार्य

- **ग्रंथ :** लगध ज्योतिष (वैदिक ज्योतिष)
- **योगदान :** लगधाचार्य को वैदिक ज्योतिष का प्रथम ज्ञात आचार्य माना जाता है । उन्होंने सबसे प्राचीन ज्योतिषीय ग्रंथ "वेदांग ज्योतिष " की रचना की , जो सूर्य और चंद्रमा के आधार पर वर्ष की गणना करता है । यह ग्रंथ कालगणना , ग्रहों के संचरण और नक्षत्रों पर आधारित है , जिसमें यज्ञ -संबंधित समय की जानकारी दी गई है ।

Edit with WPS Office

2. आर्यभट्ट

- **ग्रंथ :** आर्यभटीय
- **योगदान :** आर्यभट्ट भारत के महान गणितज्ञ और ज्योतिष आचार्य थे । उन्होंने ग्रहों की गति और उनके स्थान का सटीक विश्लेषण दिया । उनका मुख्य योगदान खगोल विज्ञान और गणित के क्षेत्र में रहा , जहां उन्होंने पाई (π) का मान और त्रिकोणमिति के सिद्धांतों को परिभाषित किया । आर्यभट्ट में उन्होंने ग्रहण की अवधारणा , ग्रहों की स्थिति और सूर्य तथा चंद्रमा के आकार की गणना के सिद्धांत दिए ।

3. वराह मिहिर

- **ग्रंथ :** बृहत्संहिता , पंचसिद्धांतिका
- **योगदान :** वराह मिहिर का योगदान ज्योतिष और खगोल विज्ञान दोनों में रहा । उनकी बृहत्संहिता एक प्रमुख ग्रंथ है , जिसमें खगोल शास्त्र , मौसम विज्ञान , वास्तु शास्त्र , और ज्योतिष के विविध पहलुओं पर विस्तृत जानकारी दी गई है । पंचसिद्धांतिका में उन्होंने पांच प्रमुख ज्योतिष सिद्धांतों (सूर्य सिद्धांत , रोमकसिद्धांत , पौलिसिद्धांत , वशिष्ठसिद्धांत , पितामहसिद्धांत का वर्णन किया है ।

4. भास्कराचार्य (भास्कर)

- **ग्रंथ :** सिद्धांत शिरोमणि , लीलावती
- **योगदान :** भास्कराचार्य का ज्योतिष और गणित दोनों में गहरा योगदान रहा । सिद्धांत शिरोमणि में उन्होंने खगोल शास्त्र और गणित के महत्वपूर्ण सिद्धांतों का उल्लेख किया । लीलावती में गणितीय सिद्धांतों के साथ-साथ ज्योतिषीय गणनाओं का भी वर्णन किया गया है । उन्होंने सूर्य , चन्द्र और ग्रहों की गति के सटीक नियमों को बताया , जिससे ग्रहण और ग्रहों की स्थिति का पूर्वानुमान लगाया जा

Edit with WPS Office

सकता है ।

5. ब्रह्मगुप्त :

- **ग्रंथ** : ब्रह्मस्फुटसिद्धातं
- **योगदान** : ब्रह्मगुप्त ने खगोल शास्त्र और गणित में महत्वपूर्ण योगदान दिया । ब्रह्मस्फुटसिद्धातं मैं उन्होंने ग्रहों की गति और समय के गणना के सिद्धांतों को प्रस्तुत किया । इसके अलावा , उन्होंने शून्य (0) की अवधारणा और इसके उपयोग को परिभाषित किया , जो बाद में गणित और ज्योतिष दोनों में क्रांतिकारी रचना सिद्ध हुआ ।

6. गर्गाचार्य :

- **ग्रंथ** : गर्ग संहिता
- **योगदान** : गर्ग मुनि ने ज्योतिषशास्त्र के आधारभूत सिद्धांतों का उल्लेख किया है । उनका ग्रंथ गर्ग संहिता वैदिक ज्योतिष के साथ-साथ जन्म कुंडली और ग्रहों के प्रभाव पर आधारित है । उन्होंने ग्रहों और नक्षत्रों के आधार पर भविष्यवाणी करने की विधियों को विकसित किया , जो फलित ज्योतिष के लिए महत्वपूर्ण है ।

7. महर्षि पाराशर :

- **प्रमुख ग्रंथ** : पाराशर होरा शास्त्र
- **योगदान** : महर्षि पाराशर को भारतीय फलित ज्योतिष के संस्थापक के रूप में जाना जाता है । उनके द्वारा रचित पाराशर होरा शास्त्र ज्योतिष का एक मुख्य ग्रंथ है , जिसमें ग्रहों , राशियों , नक्षत्रों , और कुंडली के आधार पर भविष्यवाणी के नियम बताए गए हैं । पाराशर ने ज्योतिषीय गणनाओं में भाव (ग्रहों) , ग्रहों के बल , दशा प्रणाली , और महादशा प्रणाली का महत्व स्पष्ट किया । यह ग्रंथ ज्योतिषियों के

Edit with WPS Office

लिए कुंडली निर्माण और भविष्यवाणी के लिए आज भी एक महत्वपूर्ण स्रोत है ।

उन्होंने 12 राशियों , नौ ग्रह और 27 नक्षत्रों का विस्तृत विवरण दिया , जो आधुनिक ज्योतिषीय गणनाओं के आधारभूत सिद्धांत है ।

निष्कर्ष : ये सभी अचार्य ज्योतिष शास्त्र के आधार स्तंभ माने जाते हैं , जिन्होंने अपने ज्ञान और ग्रंथों के माध्यम से इस विज्ञान को समृद्ध किया । उनकी रचनाएं आज भी ज्योतिषीय अध्ययन और अनुसंधान में महत्वपूर्ण मानी जाती है ।

• वैदिक साहित्य परिचय

धर्म व्यक्तिगत विषय नहीं है धर्म को जानने के लिए हम शास्त्रों के अधीन है । जो शास्त्र धर्म - अधर्म , सत्य और असत्य का ठीक-ठीक आचरण मनुष्य मात्र को बतलाता है । केवल वही सनातन धर्म के मूल वैदिक शास्त्र हो सकते हैं । प्रत्येक भारतीयों को केवल उन्हीं शास्त्रों का ही अध्ययन एवं पठन-पाठन अपने घरों में करना उचित है । सनातन धर्म का मूल वैदिक साहित्य अत्यंत विस्तृत और प्राचीन है । यह साहित्य चार मुख्य भागों में विभाजित किया गया है : संहिताएं , ब्राह्मण , आरण्यक , और उपनिषद । ये सभी भाग वैदिक ज्ञान के आधारस्तंभ माने जाते हैं । इनका उद्देश्य मनुष्य को धर्म , कर्म , और मोक्ष का ज्ञान प्रदान करना है । यहां इनका विस्तार से वर्णन किया गया है :

1. **वेद (संहिताएं)** ___ सनातन धर्म का मूल धर्म ग्रंथ वेद है । संहिताएं वेदों का सबसे प्रारंभिक और मुख्य भाग है , जिनमें मंत्रों और स्तुतियों का संग्रह है । जितने भी धर्म ग्रंथ है उनकी उत्पत्ति वेदों से ही हुई है । अतः वेद ही सर्वोच्च है एवं सर्वमान्य है । वेद ईश्वर द्वारा ऋषियों को सुनाए गए ज्ञान

Edit with WPS Office

पर आधारित है । इसलिए इसे श्रुति कहां गया है । सामान्य भाषा में वेद का अर्थ होता है ज्ञान । वेद पुरातन ज्ञान विज्ञान का अथाह भंडार है । इसमें मानव जीवन की हर समस्या का समाधान है । वेदों में ब्रह्म (ईश्वर) , ब्रह्मांड , ज्योतिष , गणित , रसायन , औषधि , प्रकृति , खगोल , भूगोल , धार्मिक नियम , आचार विचार आदि सभी विषयों से संबंधित ज्ञान भरा पड़ा है । वेदों की संख्या चार है ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , और अथर्ववेद ।

2. ब्राह्मण ग्रंथ ___ : ब्राह्मण ग्रंथ वेदों के व्याख्यान ग्रंथ है । प्रत्येक वेद के साथ एक या अधिक ब्राह्मण ग्रंथ जुड़े हुए हैं ।

- ऋग्वेद के ब्राह्मण : ऐतरेय ब्राह्मण , कौषीतकि ब्राह्मण
- यजुर्वेद के ब्राह्मण : तैत्तिरीय ब्राह्मण (कृष्ण यजुर्वेद) , शतपथ ब्राह्मण (शुक्ल यजुर्वेद)
- सामवेद के ब्राह्मण : ताण्डय ब्राह्मण , जैमिनीय ब्राह्मण
- अथर्ववेद के ब्राह्मण : गोपथ ब्राह्मण

3. आरण्यक ___ : आरण्यक वे ग्रंथ है जो वानप्रस्थ ऋषियों और साधकों के लिए थे । इनका अध्ययन घर - गृहस्थी छोड़कर वन में किया जाता था । आरण्यक ग्रंथ मुख्य रूप से यज्ञों और कर्मकांडों के गूढ़ तत्वों को समझाते हैं , जो की साधारण व्यक्ति की अपेक्षा ध्यान - साधना करने वाले साधकों के लिए होते थे ।

प्रमुख आरण्यक :

- ऐतरेय आरण्यक (ऋग्वेद से संबंधित)
- तैत्तिरीय आरण्यक (यजुर्वेद से संबंधित)
- बृहदारण्यक (शुक्ल यजुर्वेद से संबंधित)

3. उपनिषद ___ : उपनिषद वेदों का दार्शनिक और आध्यात्मिक भाग है । इन्हें वेदांत भी कहा जाता है , क्योंकि ये वेदों के अंतिम भाग है और

Edit with WPS Office

ज्ञान , आत्मा , ब्रह्म , और मोक्ष जैसे विषयों पर ध्यान केंद्रित करते हैं । उपनिषदों में कर्मकांडों की अपेक्षा ज्ञान और ध्यान को महत्व दिया गया है । इन्हें वेदों का सार कहां जाता है और ये सनातन धर्म के दार्शनिक विचारों की नींव रखते हैं । उपनिषदों की संख्या वैसे तो 108 है परंतु 11 उपनिषद ही बहुत अधिक महत्वपूर्ण है ।

प्रमुख उपनिषद : ईशावास्योपनिषद् , केनोपनिषद , कठोपनिषद , प्रश्नोपनिषद , मुण्डकोपनिषद , माण्डूक्योपनिषद् , तैत्तरीयोपनिषद , ऐतरेयोपनिषद् , छान्दोग्य उपनिषद् , बृहदारण्यक उपनिषद् , श्वेताश्वतरोपनिषद ।

4. षडदर्शन शास्त्र ___ : दर्शनशास्त्र गहन चिंतन द्वारा परम सत्य की खोज पर आधारित है । यह वेदों की ही सूक्ष्म ज्ञान को सरल शब्दों में व्याख्या करता है । इनकी संख्या 6 हैं । सांख्य दर्शन __ ऋषि कपिल , योग दर्शन __ ऋषि पतंजलि , न्याय दर्शन __ ऋषि गौतम , वैशेषिक दर्शन __ ऋषि कणाद , मीमांसा दर्शन __ जैमिनी , वेदांत दर्शन (ब्रह्म सूत्र) __ व्यास (बादरायण) ।

5. वेदांग ___ : वेदों के अध्ययन और उनके अर्थ को समझने के लिए कुछ अन्य ग्रंथ भी लिखे गए हैं जिन्हें वेदांग कहा जाता है । ये वेदों के सहायक अंग माने जाते हैं :

1. शिक्षा (उच्चारण विज्ञान)
2. कल्प (यज्ञ विधियां)
3. व्याकरण (संस्कृत व्याकरण)
4. निर्वचन (शब्दार्थ और व्याख्या)
5. छंद (काव्यशास्त्र)
6. ज्योतिष (खगोल और ज्योतिष विज्ञान)

6. विशुद्ध मनुस्मृति ___ : महर्षि मनु द्वारा रचित सृष्टि का प्रथम संविधान एवं मानव धर्मशास्त्र ।

Edit with WPS Office

7. **श्रीमद् भगवत गीता ___** : योगेश्वर श्री कृष्ण द्वारा महाभारत युद्ध में अर्जुन को सुनाया गया संपूर्ण उपनिषदों का सार है । इसे गीतोपनिषद भी कहा जाता है ।

8. **इतिहास ग्रंथ ___** : वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत ।

9. **उपवेद ___** : वेदों के अनुपूरक शास्त्र

उपवेद शब्द का शाब्दिक अर्थ है " सहायक वेद " । उपवेद वेदों के अनुपूरक शास्त्र है , जो जीवन के विभिन्न व्यावहारिक और वैज्ञानिक पक्षों पर प्रकाश डालते हैं । वेदों में जहां आध्यात्मिक , धार्मिक , और दार्शनिक ज्ञान का संग्रह है , वही उपवेद जीवन के अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे की चिकित्सा , संगीत , वास्तु कला और युद्ध कला से संबंधित ज्ञान प्रदान करते हैं । चार प्रमुख उपवेद हैं , जो चार मुख्य वेदों से जुड़े हुए हैं । प्रत्येक उपवेद एक विशिष्ट क्षेत्र पर केंद्रित है और व्यावहारिक जीवन के लिए आवश्यक ज्ञान प्रदान करता है ।

ऋग्वेद का उपवेद : स्थापत्यवेद या शिल्प वेद

स्थापत्यवेद को शिल्प वेद भी कहा जाता है और इसका संबंध निर्माण और वास्तुकला से है । यह उपवेद भवनों , नगरों , यंत्रों और रहने योग्य स्थान के डिजाइन , योजना और निर्माण के बारे में जानकारी प्रदान करता है । प्राचीन भारतीय सभ्यता में वास्तु शास्त्र और शिल्प विद्या का विशेष महत्व था , जिससे भवन , घर और नगर नियोजन जैसी विधियों का विस्तार से वर्णन है ।

शिल्पवेद के प्रमुख बिंदु :

- भवनों और नगरों का निर्माण

Edit with WPS Office

- यंत्रों और अस्त्र शस्त्रों का निर्माण
- वास्तु कला के सिद्धांत और नियम
- घर , भवन और किलों की संरचना

यह उपवेद जीवन की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए एक व्यवस्थित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है और समाज को स्थायित्व और समृद्धि प्रदान करता है ।

यजुर्वेद का उपवेद : धनुर्वेद

धनुर्वेद युद्ध कला और सैन्य विज्ञान का प्राचीन शास्त्र है । इसका संबंध यजुर्वेद से है और यह शस्त्र विद्या , युद्ध नीति और सैन्य संगठन पर केंद्रित है । धनुर्वेद में शस्त्रों के प्रकार , उनके उपयोग , युद्ध की रणनीतियां और योद्धा के गुणों का वर्णन किया गया है । प्राचीन भारत में धनुर्विद्या की प्रमुखता थी और इसे न केवल शारीरिक कौशल , बल्कि मानसिक संतुलन और अनुशासन का शास्त्र भी माना जाता था ।

धनुर्वेद के प्रमुख बिंदु :

- शस्त्रों का वर्गीकरण और उपयोग
- युद्ध नीति और रणनीति
- योद्धा के गुण और आचरण
- शत्रुओं से रक्षा और आक्रमण के उपाय

धनुर्वेद यह सिखाता है कि कैसे युद्ध कला को नैतिकता और अनुशासन के साथ संतुलित रखा जाए , जिससे न केवल व्यक्तिगत सुरक्षा बल्कि राष्ट्र की रक्षा भी सुनिश्चित हो । धनुर्वेद आज उपलब्ध नहीं होता है ।

सामवेद का उपवेद : गंधर्ववेद

Edit with WPS Office

गंधर्ववेद संगीत शास्त्र और नाट्यकला का शास्त्र है । यह उपवेद सामवेद से जुड़ा हुआ है , जो स्वयं भी संगीत और छंदों पर आधारित है । गंधर्ववेद में संगीत के स्वर ,ताल , राग रागिनी और नृत्य कला का वर्णन मिलता है । भरतमुनि का प्रसिद्ध नाट्य शास्त्र भी इसी का अंग है । गंधर्ववेद के अनुसार , संगीत और नृत्य न केवल मनोरंजन का साधन है , बल्कि आध्यात्मिक साधना और मानसिक शांति का माध्यम भी है ।

गंधर्ववेद के प्रमुख बिंदु :

- संगीत के सप्त स्वर
- राग और रागिनी का महत्व
- नृत्य और नाट्यकला के सिद्धांत
- संगीत का मानसिक और आध्यात्मिक प्रभाव

गंधर्ववेद यह सिखाता है कि संगीत और कला जीवन को संपूर्ण और संतुलित बनाते हैं । यह उपवेद कलात्मक और सांस्कृतिक विकास का माध्यम है , जो समाज में सौंदर्य और सद्भाव का संचार करता है ।

अथर्ववेद का उपवेद : आयुर्वेद

आयुर्वेद संसार की सबसे पुरानी और व्यापक चिकित्सा प्रणाली है । यह उपवेद शरीर , मन और आत्मा के बीच सामंजस्य स्थापित करने का शास्त्र है और इसका संबंध अथर्ववेद से है । आयुर्वेद में रोगों के उपचार के साथ-साथ स्वस्थ और संतुलित जीवन जीने के नियमों का विस्तृत वर्णन है । यह चिकित्सा प्रणाली प्राकृतिक तत्वों जैसे पृथ्वी , जल , वायु , अग्नि और आकाश पर आधारित है । आयुर्वेद का मुख्य उद्देश्य केवल रोगों का उपचार नहीं , बल्कि एक स्वस्थ और दीर्घायु जीवन को बनाए रखना है ।

आयुर्वेद के प्रमुख बिंदु :

Edit with WPS Office

- त्रिदोष सिद्धांत : वात , पित्त , कफ
- जड़ी बूटियों और औषधियों का उपयोग
- शरीर , मन और आत्मा का संतुलन
- स्वास्थ्य के लिए दिनचर्या और आहार संबंधी नियम

आयुर्वेद यह सिखाता है कि जीवन का उद्देश्य केवल शारीरिक स्वास्थ्य ही नहीं , बल्कि मानसिक और आत्मिक शांति भी है । यह शास्त्र जीवन के हर पहलू में स्वस्थ्य और संतुलन की खोज पर आधारित है । यह संपूर्ण वैदिक साहित्य केवल धार्मिक कर्तव्यों का मार्गदर्शन ही नहीं करते हैं , बल्कि मानव जीवन के सामाजिक , आध्यात्मिक और दार्शनिक उत्थान में भी अद्वितीय योगदान देता है । प्रत्येक सनातनी के लिए इन शास्त्रों का अध्ययन और इनसे प्रेरित ग्रंथों का पठन-पाठन अनिवार्य है , तभी हम धर्म और अधर्म के वास्तविक अंतर को समझ सकेंगे । ऋषि वाल्मीकि के द्वारा रचित रामायण और ऋषि व्यास द्वारा रचित महाभारत हमारे गौरवशाली इतिहास के अद्भुत ग्रंथ है , जिन्हें हर सनातनी को जीवन में कम से कम एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए । जब तक हम अपने अतीत को नहीं समझते ___ हम कौन थे और क्या बने ___ तब तक भविष्य को दिशा देने की रहा नहीं सुनिश्चित नहीं हो सकती । इसलिए , इन शास्त्रों के अध्ययन को प्राथमिकता दें और भारत को फिर से "विश्व गुरु " बनाने के इस महायज्ञ में अपनी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करें ।

18 पुराण :

ब्रह्म पुराण , पद्म पुराण , विष्णु पुराण , वायु पुराण , भागवत पुराण , नारद पुराण , मार्कंडेय पुराण , अग्नि पुराण , भविष्य पुराण , ब्रह्मवैवर्तपुराण , लिंग पुराण , वराह पुराण , स्कंद पुराण , वामन पुराण , कूर्म पुराण , मत्स्य पुराण , गरुड़ पुराण , ब्रह्मांड पुराण ।

18 पुराण वैदिक साहित्य के अंतर्गत नहीं आते । उनकी रचना महाभारत

Edit with WPS Office

युद्ध के पश्चात जब इस भूमि से वेदों का ज्ञान विलुप्त होने लगा इसी कालखंड में समय-समय पर की गई है । पुराणों में वेद विरुद्ध , बुद्धि , तर्क एवं सृष्टि क्रम के विरुद्ध बहुत सी बातें कहीं गई है इस कारण से उनकी प्रमाणिकता भी सिद्ध नहीं होती । पुराणों में कुछ इतिहास अवश्य है परंतु उनमें भी सटीकता का अभाव है । पुराणों की रचना महर्षि व्यास का नाम लेकर की गई । परंतु यह उनकी रचना नहीं है इसलिए पुराणों की प्रमाणिकता ना होने के कारण वैदिक साहित्य में इनका कोई भी स्थान नहीं है । अतः हमें केवल वैदिक साहित्यों का ही अध्ययन करना उचित है पुराणों का नहीं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

---

14. ।। चौंदहवा पृष्ठ ।।

- **{ महर्षि दयानंद सरस्वती को वेद भाष्य लिखने की आवश्यकता क्यों पड़ी ? } देखो**

हम आपको एक सच्चाई अवश्य बताना चाहते हैं आर्यावर्त देश में एक सबसे बड़ी हानि यह थी कुछ आचार्यों ने वेदों के गलत अर्थ करके भाष्य गलत लिख कर के जो अर्थ लेना चाहिए था वह ना लेकर अन्य का अर्थ ले लिया । **वेदों का भाष्य करने के लिए, शिक्षा कल्प, व्याकरण निरुक्त, नैघण्तुक , छन्द, ज्योतिष ।** इनका ज्ञान आवश्यक है । तभी हम वेद भाष्य कर सकते हैं । ज्योतिष की अधिक आवश्यकता नहीं होती लेकिन व्याकरण अति आवश्यक है । जो इन सभी विधाओं को जानता है । वही

Edit with WPS Office

वेद भाष्य कर सकता है । जो इन विधाओं को न पढ़कर वेदभाष्य करता है, वेद भाष्य गलत होने के कारण अर्थ के अनर्थ हो जाते हैं । ऋषि दयानंद से पहले अनेक अनेक आचार्यों ने वेद भाष्य लिखें, उन सभी ने कहीं-कहीं सैकड़ो की संख्या में अर्थ के अनर्थ किए हैं । हम कुछ मंत्र दिखाते हैं उन सभी आचार्यों ने जिन्होंने वेदभाष्य करते समय अर्थ के अनर्थ किए हैं । बिना व्याकरण छंद समझे कोई भी वेद भाष्य नहीं कर सकता । इन गलत वेद भाष्य के कारण देश हजारों वर्षों तक गुलामी में फंसा रहा । गुलामी कैसी बलि प्रथा । व्यभिचार, यज्ञों में गौ मांस , देश पराधीन, आदि । आइए हम आपको दिखाते हैं, महीधर , और आचार्य सायण का भाष्य ।

आचार्य महीधर भाष्य___

गर्भवती गौ को मारकर होमं करना :

1.___ (यजुर्वेद . 8 /30 ... महीधर भाष्य)

अर्थात___ चर्बी से एक पदी, चर्बी और अंगों से द्विपदी, होम से त्रिपदी, पत्नी सयाज से चतुश्पदी अपने पैर तथा गर्भ के पैर मिलाकर अष्टपदी गौ होम करना चाहिए ।

2.___ (यजुर्वेद . 35 /20 पर महीधर भाष्य)

अर्थात___ हे जात वेद तू पितरों के लिए गाय की चर्बी प्राप्त कर ।

3.___ (यजुर्वेद .23 /16 पर महीधर भाष्य)

अर्थात___ रानी का घोड़े के साथ सोना___

मंत्र___ 23 /16

__ महिषी अश्व समीषे शेते हे अश्वगभ्रध गर्भधारकरेत : ।
अहं आकृष्य क्षिपामी त चरेत आकृष्य ।।

अर्थात___ यजमान की स्त्री घोड़े के पास सोती है, और कहती है कि हे घोड़े में तेरा गर्भ धारण कराने वाला वीर्य खींचकर अपने में डालती हूं । और तू भी उस वीर्य को खींचकर मेरे में डाल ।

Edit with WPS Office

4.___ (यजुर्वेद. 23 /20 पर महीधर भाष्य)

{ घोड़े के लिंग को योनि में डालना }

मंत्र___ 23 /20

महिषी स्वयमेवाश्वाश्न माकृष्य स्वायोनौ स्थापयति ।
वाजी अश्वो रेतोदधातु मयि वीर्य स्थापयतु ।।

अर्थात___ यजमान की स्त्री घोड़े के लिंग को स्वयं खींच कर अपनी योनि में स्थापित करती है और कहती है कि यह घोड़ा मेरे शरीर में वीर्य स्थापना करें ।

5.___ (यजुर्वेद. 23 /29 पर महीधर भाष्य)

{ लिंग का योनि में प्रवेश करना }

हे अश्व, महिष्या गुदोपरि वीर्य धारयं लिंगयोनौ प्रयेशय ।।

अर्थात___ हे घोड़े ! तू यजमान की स्त्री की गुदा से ऊपर वीर्य डाल अर्थात लिंग को योनि में प्रवेश कर ।

6.___ (यजुर्वेद. 23 /22 पर महीधर भाष्य)

{ कुमारी से मखौल }

अध्वर्युदय : कुमारी पत्निभि : सहसो पहासं यदन्ते अंदुल्या योनिप्रदेशयन्नाह हले- हले इति शब्दयन्ती ।।

अर्थात___ अध्वर्य आदि कुमारी तथा पत्नियों से मखौल करते हैं, उंगलियों से योनि की शक्ल बनाकर इशारा कर– करके कि स्त्रियों के शीघ्र चलने में योनि के अंदर हलचल शब्द होता है । जब योनि में लिंग प्रवेश करता है, तो योनि निरंतर वीर्य (रज) झरने लगती है ।

7.___ (यजुर्वेद. 23 /28 पर महीधर भाष्य)

होता परिवृक्तामाह यदा अस्या : परिवृक्तया हरवं स्थूल च शिश्न योनि प्रतिगच्छेत् ।

तदा वृषणों अस्या : योनिरुपरिकम्पेते यथा उदक पृण गो शफे पदे मत्स्यौ कम्पेते ।3।

अर्थात___ होता परिवृक्ता रानी को कहता है कि जब तेरी योनि में छोटा

Edit with WPS Office

और मोटा लिंग घुसता है तो दोनों अंडकोष उसकी योनि पर कांपते हैं। जैसे पानी से भरे हुए गौ खुर में दो छोटी मछलियां तड़पती हैं।
(यकोसकौ) कुमारी अध्वर्यु का उपवास करती है। की जो यह छिद्र सहित तेरे लिंग का अग्रभाग है, सो तेरे मुख के समान दिख पड़ता है।4।

8.___ (यजुर्वेद. 23 /22.23 पर महीधर भाष्य)

मंत्र___ यकासकौ शकुन्तिकाहलगिति वच्चति।
आहन्ति गभे पसो निगलगलीति धारका।।

अर्थात___ यज्ञशाला में अध्वर्यु आदि ऋत्विक लोग कुमारी और स्त्रियों के साथ उपवास पूर्वक संवाद करते हैं। इस प्रकार से की अडगुली से योनि दिखला के हंसते हैं। (आहलगिति) जब स्त्री लोग जल्दी-जल्दी चलती हैं तब उनकी योनि में हल- हल्ला शब्द, और योनि और लिंग से वीर्य झरता है।

- **{ अब महर्षि दयानंद का अर्थ देखिए इसी मंत्र का }**

(यकौसको) प्रजा का नाम शुकनितका है कि जैसे– बाज़ के सामने छोटी-छोटी चिड़ियाओ की दुर्दशा होती है, वैसे ही राजा के सामने प्रजा की **(आहलगिति)** जहां एक मनुष्य राजा होता है, वहां प्रजा ठगी जाती है।
(अन्तिम गभे पसों) तथा प्रजा का नाम गभ और राज्य का नाम पस है। जहां एक मनुष्य राजा होता है वहां वह अपने लोभ के पदार्थों की हानि ही करता चला जाता है। इसलिए राजा को प्रजा का घातुक अर्थात हनन करने वाला भी कहते हैं। इस कारण से एक को राजा कभी नहीं मानना चाहिए, किंतु धार्मिक विद्वानों की सभा के आधीन ही राज्य प्रबंध होना चाहिए।3।
(यकौसको) इत्यादि मंत्रों के शतपथ- प्रतिपादित अर्थ से महीधर आदि अल्पज्ञ लोगों के बनाए हुए अर्थ का अत्यंत विरोध है।4।

महर्षि दयानंद जी महाराज तथा आर्य समाज को धर्म विरोधी व नास्तिक कहकर गालि प्रदान करने वाले अयि कथित सनातनी भाइयों अथवा अपने को वेदज्ञ मानने वालों, कहो ! अपने हृदय पर हाथ रखकर अपनी माता-

Edit with WPS Office

पिता बहन वा पुत्री से पूछकर कहो ! **वेद का विरोधी महीधर है या दयानंद ।**
कुछ तो लाज करो ! कहीं सिर छुपाने का स्थान भी बचा है क्या ?

- **{ आचार्य सायण भाष्य }**

(ऋग्वेद. 6 मण्डल, 17वा सुक्त, 11 वा मंत्र)

आचार्य सायण ने इस मंत्र के भाष्य में लिखा है___

हे इंद्र परस्पर समान प्रीति वाले मारुदगण तुम्हें स्त्रोत द्वारा बढ़ाते हैं । तुम्हारे लिए पूसा और विष्णु ने 100 (सो) भैंसें (कटड़ा, पशु) पकाएं । इंद्र ने कटड़ा का मांस खाकर और अलग दूसरे पात्र में सोम तथा नशीले पदार्थों को भरा है ।

{ अब महर्षि दयानंद सरस्वती का अर्थ देखिए इसी मंत्र का }

वधृन्य विश्वे मरुत: सजोषा : पंचच्छत महिषां इंद्र ।
तुभ्यम पूसा विष्णुस्त्रीणि सरांसि धावन्वृत्रहणं मदिरमंशुमशुमस्मै ।।
(ऋग्वेद. 6/17/11)

पदार्थ___ हे सूर्य के समान वर्तमान राजन, तुल्य प्रीति के सेवन वाले संपूर्ण मनुष्य जिन आपकी वृद्धि करें और जो पुष्टि करने वाला दौड़ता हुआ व्यापक बिजली रूप तीन चलते हैं जिनमें उन अंतरिक्ष आदि को व्याप्त होता है, वैसे दौड़ते हुए इसके लिए आनंद करने वाले विभक्त मेघ को जैसे सूर्य, वैसे शत्रुओं का मारता है और जो आपके लिए 100 बड़े पदार्थों को देता है और जो परोपकार के लिए पाक करें, उसको आप लोग जानिए ।

भावार्थ___ जैसे प्रजाजन राजा और राज्य को बढ़ावे वैसे राजा इनकी निरंतर वृद्धि करें ।।

2. मंत्र देखिए ___

- **{ आचार्य सायण भाष्य }**

{ पांचवा मण्डल ,29 सुक्त , सातवा और आठवां मंत्र }

मंत्र___ 7

सखा सख्ये अपचतूयमग्निरस्य क्रत्वा महिषा त्री शतानि ।

Edit with WPS Office

त्री साकमिन्द्रो मनुष: सरांसि सुतं पिब्दवृत्रहत्याय सोम ।।

भावार्थ___
अग्नि ने अपने मित्र इंद्र के लिए शीघ्र ही सौ भैंसों को पकाया था , इंद्र ने वृत्र को मारने के लिए मनु के तीन पात्रों में भरे हुए सोम को एक साथ पी लिया था ।

मंत्र___ 8
त्री यच्घता महिषाणामघो मास्त्री सरांसि मघवा सोम्यापा ।
कारं न विश्वे अहन्त देवा भरमिन्द्राय यदहि जघान: ।।

भावार्थ___
हे धन स्वामी इंद्र ! जब तुमने 300 भैंसों का मांस खाया , सोमरस से भरे तीन पात्रों को पिया एवं वृत्र को मारा तब सब देवों ने सोमरस से पूर्ण तृप्त इंद्र को उसी प्रकार बुलाया ।

- **अब इन्ही मंत्रों का स्वामी दयानंद सरस्वती का भाष्य देखो—**

{ महर्षि दयानंद सरस्वती }
मंत्र___ 7
भावार्थ___ इस मंत्र में वाचकलुप्तोपमालडकार है , जैसे सूर्य ऊपर नीचे और मध्यभाग में वर्तमान स्थूल पदार्थों का प्रकाश करता है , वैसे उत्तम मध्यम और अधम व्यवहारों को राजा प्रकट करें और सबके साथ मित्र के सदृश वार्ताव करें ।
मंत्र___ 8
भावार्थ___ इस मंत्र में उपमाअलंकार है , जैसे पुरुषार्थी जन को सब स्वीकार करते हैं , वैसे ही सूर्य ईश्वरीय नियमों से नियत जलरस का ग्रहण करता है , जैसे जन बड़े पदार्थों की उत्तेजना से सैकड़ो काम सिद्ध करते हैं , वैसे ही राजा प्रजाजनो से बड़े राजकार्य को सिद्ध करें ।

- **{ आचार्य सायण भाष्य }**

Edit with WPS Office

(ऐतरेय ब्राह्मण. 2/8/1 में सायण का भाष्य)

प्राचीन काल में देवों ने अपने यज्ञ में मनुष्य को पशु बनाकर आलंबन किया । किंतु इस आलम्भित (मनुष्य पशु) से मेध अर्थात यज्ञ के योग्य हवि : भाग निकल गया और वह अश्व में प्रविष्ट हो गया । इसलिए अश्व यज्ञ के योग्य हुआ । तब निकले हुए हवि : भाग वाले इस मनुष्य को देवों ने (यज्ञ पशु बनाने के लिए) अत्यंत तिरस्कृत कर दिया । वह देवों के द्वारा स्वीकृत किंतु परित्यक्त मनुष्य ही किंपुरुष अर्थात किन्नर हो गए ।

उन्होंने अश्व को आलम्भन किया । किंतु उस आलम्भित अश्व से यज्ञ योग्य हवि: भाग निकल गया और वह गाय में प्रविष्ट हो गया । इसलिए गाय यज्ञ योग्य हुई । कब निकले हुए हवि भाग वाले इस (अश्व) को देवों ने अयोग्य जानकर उसे भी तिरस्कृत कर दिया । वह (देवों से पहले स्वीकृत किंतु बाद में परित्यक्त) नीलगाय हो गई ।

{ ऐतरेय ब्राह्मण . 27/1/1 सायण भाष्य }

सोम राजा गंधर्व के पास थे । देवताओं और ऋषियों ने विचार किया कि यह सोम राजा हम तक कैसे आवे । (क्योंकि धुलोक में सोमरक्षक गंधर्वों के पास रहते हैं उनका स्वभाव जानने वाली) वाणी ने कहा कि गंधर्व स्त्रियों को चाहते हैं । मैं स्त्री बन जाऊंगी । तब तुम (सोम के बदले) मुझे बेच देना । देवताओं ने कहा, –नहीं हम तुम्हारे बिना अर्थात मंत्र रूप वाणी के बिना कैसे रहेंगे ? उसने पुनः कहा (संदेह मत करो और मुझे उनके हाथ बेच दो । यदि तुम चाहोगे तो मैं तुम्हारे पास पुनः लौट आऊंगी उन्होंने ऐसा ही किया और एक बहुत नग्न स्त्री अर्थात कुम्हारी के रूप में उसे बेचकर सोमरस ले लिया गया ।।

मेरे सायण भक्त अपने को सनातनी कहाने वाले पौराणिक भाइयों , देखा , आपने आचार्य की मानसिकता और पाण्डित्या गंधर्व जाति जो पूज्य मानी जाती है, उसे कामी बता दिया । इसी प्रकार देव भी अप्सराओं के साथ रस रंग में मस्त रहते हैं । वेदवाणी को स्त्री बना दिया और कन्या को बेचने का अपराध भी कर दिया । साथ में वेद वाणी को विश्वसधातिनी सिद्ध किया । जरा बताओ, हे कोई ऐसी बात जिससे आप किसी सच्चरित्र व्यक्ति को मुख दिखला सकते हो ?

Edit with WPS Office

{ ऐतरेय ब्राह्मण. अध्याय 10, खंड 3 }

उत्तरार्ध के दो पदों को मिलाकर पढ़ना चाहिए । इसलिए (लोक में भी) पुरुष भोग के समय अपनी जांघो को मिलता है । यह मिथुन है । इसलिए इस प्रकार आज्यशस्त्र के प्रारंभ में मिथुन ही करता है जो यजमान के प्रजनन के लिए होता है ।

मेरे भाइयों ! इन्हें मांस हिंसा मैथुन व चमत्कार ये ही सर्वत्र दिखाई देते हैं । जहां सीधा-सीधा अर्थ ऐसा दिखाई दे रहा हो, वहां उन्हें यही दिखाई देते हैं । उनमें योगिकार्य करने की न इच्छा है और न योग्यता ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 15. ।। पंद्रहवां पृष्ठ ।।

- ## { गौहत्या, मांसाहार एवं विषयलम्पता पर आर्ष वैदिक विचार }

वैदिक उपासना पद्धति, जो महर्षि पतंजलि के योग के नाम से विश्व विख्यात है । उसमें ईश्वर उपासना के अष्ट सोपान बताए हैं । जिनमें प्रथम सोपान यम है । महर्षि पतंजलि यज्ञ के पांच भाग करते हैं ।

1. **अहिंसा**
2. **सत्य**
3. **अस्तेय**
4. **ब्रह्मचर्य**
5. **अपरिग्रह**

Edit with WPS Office

अहिंसा को शेष चार यमों का मूल कहां है । इसका अर्थ है प्राणी मात्र के प्रति **निवैरता** अर्थात सबसे प्रीति करना । केवल न्याय हेतु राजा दोषी को दंड दे सकता है । अथवा आत्मरक्षार्थ किसी दुष्ट पर चोट करना हिंसा की कोटि में नहीं माना जा सकता । जब वेद कहता है –

मित्रस्या चक्षुषा सर्वांणि भूतानि समीक्षे । (यजुर्वेद 36 /18)
मां हि सी स्तन्वा प्रजा । (यजुर्वेद. 12 /32)

अर्थात___ मैं सब प्राणियों को मित्र की भांति देखता हूं , इस शरीर से प्राणियों को मत मार **(यजुर्वेद. (1/1)** में कहां है– गाय को सर्वथा अवध्या कहां है तथा इन मंत्रों में सभी प्राणियों की हिंसा का निषेध है । जिस मनुस्मृति में मांसाहारादि 200 का प्रक्षेप किया है, वस्तुत : वे धूर्तो की देन है । भगवान मनु तो मांसाहार में आठ पापी मानते हैं ।

अनुमन्ता विरासिता निहन्ता क्रयविक्रयी ।
संस्कती चोपहता च खादकश्चेति धातका : ।।

अर्थात___ मांसाहार की अनुमति देने वाला, मांस काटने वाला, पशु मारने वाला, खरीदने व बेचने वाला, पकाने, परोसने व खाने वाला ये आठ घोर पापी है ।इतना ही नहीं **इसी अध्याय के श्लोक 123** . मैं रक्त से अपवित्र पात्र को किसी भी प्रकार शुद्ध न किया जा सकने योग्य लिखा है, तब ऐसे भगवान मनु एवं उनके अनुसार वेदानुमोदित विधानों के संरक्षक क्षत्रिय लोग भला कैसे मांसाहार कर सकते थे ? वस्तुत : आर्य वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के वे ही पात्र होते थे । जो मांसाहार मदिरापान, दुराचारादि दोषों से दूर रहते थे । जो इन दोषों में लिप्त रहते थे, उन्हें अनार्य व दस्यु की श्रेणी में रखा जाता था । ब्रह्मचर्य पालन भी आर्य मानवो का एक महाव्रत होता था । राजकुमार श्री लक्ष्मण जी अपने बड़े भाई भगवान श्री राम की पत्नी भगवती सीता की माता के समान सेवा की, परंतु उनका चेहरा भी भली प्रकार नहीं देखा । वानर क्षेष्ठ श्री सुग्रीव के द्वारा सीता जी के आकाश मार्ग से आभूषण देखकर श्री लक्ष्मण जी ने श्री राम जी से कहा था ।

Edit with WPS Office

नाऽहं जानामि नाऽहं जानामि कुण्डले ।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्य पादाभिवन्दनात ।।
(वाल्मीकि रामायण किष्किंधा कांड सर्ग 6/22/23)

अर्थात___ हे भ्राता ! मैं माता सीता के बाजूबन्द तथा कुंडलों को पहचान नहीं सकता, क्योंकि मैंने उनका मुख ध्यान से कभी देखा ही नहीं ? मैं तो केवल उनके पैरों के नूपुरों को जानता हूं क्योंकि प्रतिदिन मैं उनके चरणों की वंदना करता था ।

द्वापर काल में पांडव श्री अर्जुन जब इंद्रलोक में जाते हैं, तो अप्सरा उर्वशी उनकी परीक्षा लेने हेतु उनसे विवाह का प्रस्ताव रखती है, तो श्री अर्जुन उत्तर देते हैं ।

यथा कुन्ती च माद्री च शची चैद ममानधे तथा च
वंशजननी त्वं हि मेडष्य गरीयसी ।।
(महाभारत वनपर्व इंद्रलोकाभिगमनपर्व, अध्याय 46, श्लोक 46)
अर्थात___ हे देवी ! आप मेरे लिए माता कुंती माता , माद्री , एवं मातृतुल्या शचि के समान पूज्य है । अर्थात आप मेरे लिए माता समान है ।

- **{ क्या वेदों में मांस भक्षण का विधान है ?? अश्वमेध, नरमेध, गोमेध का क्या अर्थ है—- }**

जैसे कि हम पहले बता चुके हैं अनेक प्रमाण दिखा चुके हैं की मध्यकाल के पौराणिक आचार्य ने वेदों में पशु बलि, आदि जो अनेकों भ्रांतियां वेदों के गलत अर्थ के कारण यज्ञों में पशु बलि दी जाती थी । क्या यह बलि वेदों के अनुकूल है ? या निषेध है । इसी पर चर्चा करेंगे और दिखाएंगे आपको प्रमाण के साथ की आखिर सच क्या है ? —---
वेदों के विषय में सबसे अधिक प्रज्वलित भ्रम यह है कि वेदों में पशु बलि मांसाहार आदि का विधान है । इस भ्रांति के मुख्य कारण है , **जैसे मैक्सगूलर, ग्रीफी और मध्यकाल के आचार्य सायण, महीधर आदि** । इन आचार्य के द्वारा वेदों के गलत अर्थ करना और विधर्मीयो तथा साम्यवादी

Edit with WPS Office

अथवा नास्तिक विचारधारा के समर्थकों द्वारा सुनी सुनाई बातों को बिना जांचे बार-बार रटना । किसी भी सिद्धांत अथवा किसी भी तथ्य को आंख बंद करके मान लेना बुद्धिमान लोगों का लक्षण नहीं है । हम वेदों के सिद्धांत की परीक्षा वेदों की साक्षी द्वारा करेंगे । जिससे हमारी भ्रांति का निवारण हो सके । तो अब प्रश्न यह उठता है कि क्या वेदों में मांस भक्षण का विधान है ? आइए इस प्रश्न के समाधान पक्ष की ओर चलते हैं, वेदों में मांस भक्षण का स्पष्ट निषेध किया गया है । अनेक वेद मंत्रों में स्पष्ट रूप से किसी भी प्राणी को मारकर खाने का निषेध किया गया है । जैसे– वेद का मनुष्य को आदेश है कि **यजुर्वेद. __ (1.1)** इस मंत्र में कहां गया है, हे मनुष्यों ! जो गऊ आदि पशु हैं, वे कभी भी हिंसा करने योग्य नहीं है । एक और मंत्र में कहा गया है कि **यजुर्वेद के (40.7)** इस मंत्र में कहा गया है जो लोग प्राणी मात्र को अपनी आत्मा के तुल्य जानते हैं , अथवा जैसे अपना हित चाहते हैं वैसे ही अन्य में भी वर्तते है उनको शोक आदि प्राप्त नहीं होते । अथर्ववेद में भी इस विषय में स्पष्ट कहा गया है कि **अथर्ववेद. (6.140.2)** इस विषय में स्पष्ट है कि हे मनुष्यों ! चावल खाओ , जौ खाओ, उड़द खाओ, और तिल खाओ । तुम्हारे लिए यही रमणीय भोजन पदार्थों का भाग है । तुम किसी भी नर और मादा की कभी भी हिंसा मत करो ।

एक और मंत्र में कहा गया है कि **अथर्ववेद. (8.6.23)** जो नर और मादा भ्रूण और अंण्डों के नाश से उपलब्ध हुए मांस को कच्चा या पका कर खाते हैं, हमें उनका विरोध करना चाहिए ।

एक और मंत्र में कहा गया है कि **अथर्ववेद. (10.1.29)** निर्दोषों को मारना निश्चित ही महा पाप है हमारे गाय घोड़े और पुरुषों को मत मारो ।

- इन मंत्रों से स्पष्ट है कि वेदों के अनुसार मांस भक्षण निषेध है । जो अब प्रश्न यह है उठता है कि क्या वेदों में वर्णित अश्वमेध, नरमेध, गोमेध मैं घोड़ा, मनुष्य और गाय कि यज्ञों में बलि देने का विधान है ?

आइएं इस प्रश्न के समाधान पक्ष की ओर चलते हैं । मेध शब्द के तीन अर्थ हैं–

1. **पहला मेध** अथवा शुद्ध बुद्धि को बढ़ाना ।
2. **दूसरा मेंध** अर्थ लोगों में एकता अथवा प्रेम को बढ़ाना ।
3. **तीसरा मेंध** अर्थ -हिंसा ।

Edit with WPS Office

इसलिए मेंध से केवल हिंसा शब्द का अर्थ ग्रहण करना उचित नहीं है ? जब यज्ञ को हिंसा रहित कहा गया है तो उसके संदर्भ में मेध का अर्थ हिंसा क्यों लिया जाए ?? बुद्धिमान व्यक्ति मेंधा कहे जाते हैं । इसी तरह लड़कियों का नाम मेधा सुमेधा इत्यादि रखा जाता है । तो क्या यह नाम उनके हिंसक होने के कारण रखे जाते हैं ?? या बुद्धिमान होने के कारण ?

- **अश्वमेध शब्द का अर्थ–** यज्ञों में बलि देना नहीं है? अपितु शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है की राष्ट्र के गौरव, कल्याण और विकास के लिए किए जाने वाले सभी कार्य अश्वमेध हैं ।
- **गोमेध का अर्थ–** यज्ञों में गाय की बलि देना नहीं है ? अपितु अन्न को दूषित होने से बचाना है , अपनी इंद्रियों को वश में रखना, सूर्य की किरणों से उचित उपयोग लेना , धरती को पवित्र या साफ रखना गोमेध यज्ञ है । क्योंकि गौ के अर्थ– अन्न ,इंद्रियां , सूर्य की किरण, पृथ्वी आदि ।
- **नरमेध का अर्थ** मनुष्य की बलि देना नहीं है ? अपितु मनन मनुष्य की मृत्यु के बाद उसके शरीर का वैदिक रीति से दहा- संस्कार करना नरमेध यज्ञ है । मनुष्यों को उत्तम कार्यों के लिए प्रशिक्षित व संगठित करना, नरमेध या पुरुषमेध कहलाता है ।
- **अजमेर का अर्थ–** बकरी आदि की बलि देना नहीं है ? अपितु अज कहते हैं । बीज अनाज या धान आदि को इस प्रकार कृषि की पैदावार बढ़ाना अजमेध है । इसका सीमित अर्थ अग्निहोत्र में धान आदि की आहुति भी देना है ।

- **{ वेदों में गाय का महत्व ?? गौ हत्यारों के लिए वेद में दंड ? }**

यजुर्वेद में गाय को स्तुति की पात्र होने से **इड़ा**, इसके दूध के घी की आहुति दी जाने से **हवियां** , चाहने योग्य होने से **कामया** , हृदय को प्रसन्न करने से **चन्द्रा** , अखण्डनय होने से **अदिति** , न मारी जाने योग्य से **अघन्य** कहां गया है । अघन्य शब्द से गाय का अघन्य करने का संदेश स्पष्ट है कि विदेशी लेखक भी उसे भली प्रकार से स्वीकार करते हैं । गाय की रक्षा हेतु वेदों में अनेकों मंत्र हैं । जैसे– **यजुर्वेद. (3 /20)** इस मंत्र में कहा गया है कि हे

Edit with WPS Office

गौओं तुम पूज्य हो, तुम्हारी पूजता में भी प्राप्त करूं ।
ऋग्वेद. 8/101/15 इस मंत्र में कहा गया है कि मैं समझदार मनुष्यों को कह देता हूं, तू बेचारी बेकसुर की हत्या मत कर । वह अदिति है वह काटने चीरने योग्य नहीं है ।
ऋग्वेद. (8/101/16) यहां पर इस मंत्र में कहा गया है कि उस देवी गाय को मनुष्य अल्प बुद्धि होकर मारे कांटे नहीं ।
अथर्ववेद. (10/1/29) यहां पर इस मंत्र में कहां गया है की निरापराध की हत्या बड़ी भयंकर होती है। अतः तू हमारे गाय ,पुरुष को और घोड़े को मत मार ।
ऋग्वेद. (6/28/4) गायं वधशाला में न जाए, गाय का वध मत कर ।
अथर्ववेद. (7/5/5) वे लोग मूर्ख हैं जो गाय से और कुत्ते के अंग से यज्ञ करते हैं ।
इसके अतिरिक्त भी वेदों में अनेक मंत्र गौ रक्षा के लिए दिए गए हैं । हमने कुछ ही गिने-चुने मंत्र दिखाएं हैं । हमें पुनः विचार करना चाहिए कि जब वेदों में गौ रक्षा की स्पष्ट साक्षी है । तब उन्ही वेदों में यज्ञ में पशु बलि और पशु हिंसा का संदेश कैसे हो सकता है ?? अब प्रश्न यह उठता है कि वेदों में गो हत्या करने वाले के लिए क्या विधान है – आइए इस प्रश्न के समाधान पक्ष की ओर चलते हैं । वेदों में गाय के हत्यारे के लिए कठोर से कठोर दंड का विधान है । जैसे– यजुर्वेद. (30 /18) मैं इस मंत्र में कहां गया है जो गों हत्या करने वाला हो उसे मृत्युदंड दिया जाए ।
अथर्ववेद. (4/21/7) यहां पर इस मंत्र में कहा गया है कि हे गौ तुम प्रजाओं से संपन्न होकर उत्तम घास वाली चरागाह भूमि में चरों सुखपूर्वक जिनसे जल पिया जा सके , ऐसे जलाशयों में शुद्ध जल को पियो । चोर व घातक तुम्हारा स्वामी न बने । क्रूर का शस्त्र भी तुम्हारे ऊपर न गिरे ।
वेदों में गाय हत्या पर दंड का विधान होने के बाद भी मध्यकाल में यज्ञों में पशु बलि प्रज्ज्वलित होने का कारण राजाओं द्वारा संस्कृत एवं वेद ज्ञान से अनभिज्ञ होना था । दंड देने का कर्तव्य राजाओं का है । जब राजाओं को ही नहीं बताया गया, सिखलाया गया । कि गौ हत्यारे को क्या दंड दें ? तो वह कैसे दंड देते ? इसके विपरीत यह बताया गया कि होंम में बलि दिया गया पशु यजमान स्वर्ग को जाता है । सत्य यही है की यज्ञ में किसी भी पशुओं

Edit with WPS Office

की बलि का कोई भी विधान वेदों में नहीं है ? वेदों के सत्य उपदेश अनुकूल नहीं है, एवं जो कुछ भी मध्यकाल में प्रज्वलित हुआ । वह वेदों के मनमाने अर्थ करने से हुआ है । जोकि त्यागने योग्य है । एक और भारतीय आचार्य व वाममार्गियों के प्रभाव में आकर वेदों को मांस भक्षण सार्थक घोषित करने को उतारू थे । दूसरी और विदेशी चिंता अपनी मतान्नदा के जोश में वेदों के स्वार्थ पूर्ति के लिए निंदक अर्थ निकाल रहे थे । जिससे कि वेदों के प्रति भारतीय जनमानस में श्रद्धा समाप्त हो जाए । और उनका मार्ग प्रशस्त हो सके ।

- **धन्य है ! स्वामी दयानंद सरस्वती जिन्होंने अपनी दूर दृष्टि से इस षड्यंत्र को न केवल समझा, अपितु निराकरण के लिए वेदों का उचित भाष्य भी किया । हम सभी को स्वामी जी के इस उपकार का आभारी होना चाहिए ।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 16.।। सोलहवां पृष्ठ ।।

- ## [वेद के वर्तमान युग के ऋषि , महर्षि दयानंद सरस्वती को, ऋषि क्यों कहते हैं..?]

महर्षि को ऋषि क्यों कहते हैं..? पौराणिको द्वारा यह आपत्ति उठाई जाती है कि महर्षि दयानंद सरस्वती को आप लोग ऋषि क्यों कहते हैं ।
ऋषि तो मंत्र के द्रष्टा को कहते हैं ,
महर्षि दयानंद ने तो मंत्रों के दर्शन नहीं किए थे , मंत्र तो उनके पहले से ही विधमान थे ।

Edit with WPS Office

मंत्र नित्य होते हैं , उनका समय-समय पर विविध ऋषि दर्शन करते रहते हैं । एक ऋषि ने किसी मंत्र का दर्शन कर लिया हो , इसका अर्थ यह नहीं की अन्य ऋषि उस मंत्र का दर्शन नहीं कर सकते ।
विविध ऋषियों ने एक ही मंत्र के दर्शन किए हैं , अलग-अलग समय पर किये हैं , और इसीलिए वेद में अनेक ऐसे मंत्र हैं , जिसके एक से ज्यादा ऋषि हैं ।
जैसे– ऋग्वेद. 4/19 की सम्पात ऋचाओं का दर्शन ऋषि विश्वामित्र ने किया था , लेकिन उसका प्रचार वामदेव ने किया , इस लिए आज भी यह ऋचाओं का ऋषि वामदेव को ही माना जाता है ।
इस प्रकार महर्षि दयानंद के समय तक प्राचीन मंत्र दृष्टा ऋषियों द्वारा किये हुए अर्थ नष्ट हो गए थे , इसलिए महर्षि ने फिर से उनका अर्थदर्शन किया , इस प्रकार वह मंत्रदृष्टा हुए और ऋषि पद के अधिकारी हुए । जिन-जिन मंत्र पर महर्षि दयानंद का अर्थ है , वह सारे मंत्र प्राचीन ऋषियों के साथ महर्षि दयानंददृष्ट भी मानने ही चाहिए ? यही वैदिक व्यवस्था थी !
मंत्रदृष्टा के अलावा मन्त्रार्थ करने वाले के लिए भी ऋषि शब्द का व्यवहार होता है ।
निरुक्त. 10/10___ के अनुसार ‘ **ऋषिदृष्टार्थस्य** , अर्थात ऋषि अर्थ का दर्शन करते हैं , यहां अर्थ शब्द से तात्पर्य मंत्र का अर्थ करना है , **इसी पाठ को वैंकट ने अपने ऋग्वेद के अष्टम अष्टक के सातवें अध्याय की अनुक्रमणी में उद्बोधित करते हुए इसे किसी प्राचीन ब्राह्मण का वचन मानते हैं** । इससे पता लगता है कि ब्राह्मणग्रंथों में भी ऋषियों को मन्त्रार्थदृष्टा माने गये हैं , यह प्रमाण से भी महर्षि दयानन्द के लिए ऋषि शब्द का व्यवहार सिद्ध होता है ।
यजुर्वेद . 7/46 ___ के मंत्र के भाष्य में आचार्य उबट लिखता है कि– **ऋषिर्मन्त्रांणां व्याख्याता** , अर्थात ऋषि लोग मन्त्र की व्याख्या करते हैं , अब महर्षि दयानंद के लिए यह लक्षण तो सर्वथा लागू होते हैं । फिर उन्हें ऋषि कहने में किसी को आपत्ति कैसी..?
बौधायन धर्मसूत्र. 2/6/36 की व्याख्या करते हुए **गोविन्दस्वामी लिखते हैं** कि – **ऋषिर्मन्त्रांर्थज्ञ:** अर्थात ऋषि मंत्रों के अर्थ जानने वाले होते हैं । और महर्षि दयानंद के मन्त्रार्थज्ञ होने में किसी को शंका कैसे हो सकती है ..?

Edit with WPS Office

यजुर्वेद. 3/6___ पृथ्वी को सूर्य के आसपास घूमाने वाले मन्त्रार्थ महर्षि ने ही किया था , स्वामी करपात्री जैसे पौराणिक तो 20 वी सदी के अन्त तक को , पृथ्वी को अचला मानते थे ।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया । (ऋग्वेद. 1/164/20)

यथेमा वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य । (यजुर्वेद. 26/2)

ब्राहम्णोंडस्य मुखमासीद बाहू राजन्य: (कृत: यजुर्वेद. 31/11)

इत्यादि मंत्रों का साक्षात्कार किया है , अतः इन मंत्रों पर ऋषि दयानंद का नाम उल्लेख होना चाहिए । जहां यह उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाशन होगा , वहां यह इतिहास भी सुरक्षित रहेगा कि " **द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया,,** (ऋग्वेद. 1/164/20) मंत्र ने त्रैतवाद के प्रतिपादन में कितना योगदान दिया ।

यथैमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्य: (यजुर्वेद. 26/2)मंत्र ने उन सभी प्रतिबन्धों को तोड़ने में महर्षि दयानंद को योगदान दिया , जो धर्म के ठेकेदारों ने स्त्री शूद्रों नाधीयाताम आदि को आधार बनाकर लगा रखे थे ।

ब्राहमणोंडस्य मुखमासीद,(यजुर्वेद. 31/11) के मंत्र ने तो अमोघास्त्र का काम किया , जिससे जन्मगत जात -पात पर आधारित समाज दुर्ग पर प्रहार किया गया , मुक्ति से पुनरागमन के प्रत्यक्ष दर्शन को वेद-मूलक प्रतिपादित किया है ।

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
को नो महा अदितये पुनदात पितंर च दृशेय मातरठ्च ।।

(ऋग्वेद. 1/24/1)

अग्नेवृयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
स नो महा अदितये पुनदरत् पितरठ्च दृशेयं मातरच्च ।।

(ऋग्वेद. 1/24/2)

इस प्रकार स्वाध्यायशील व्यक्ति यदि **यथेमा वाचं कल्याणीमावदानि** (यजुर्वेद. 26/2) पर दयानंद का नामोल्लोख पाएगा , तो सर्वप्रथम अपने को दया और आनंद से युक्त करेगा और देखेगा कि वह भी शास्त्रार्थ- समर में उस मोर्चे का एक सैनिक है , जो वेदों पर एकाधिकार के विरुद्ध लड़ा जा रहा है , वह भी मनुष्य मात्र के लिए वेद का द्वार खोलेगा , वह सच्चा दृष्टा

Edit with WPS Office

बन जायेगा । भाव यह है की मंत्र का अध्ययन करते हुए मंत्र लिखित ऋषि के समान अपनी मनोभूमिका बनानी चाहिए , तत्पश्चात उस मंत्र को पढ़ें , देखें , की मंत्र अपना रहस्य स्वयं कैसे खोलता है ।

इस प्रकार निरुक्त ,वैकटभाष्य , उबटभाष्य , बौधायन धर्मसूत्र का भाष्य इत्यादि प्रमाणों से महर्षि दयानन्द के लिए ऋषि शब्द का व्यवहार सिद्ध होता है , पौराणिको द्वारा इस पर जो आपत्ति उठाई जाती है , वह शास्त्र परम्परा के विरुद्ध होने से अमान्य है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 17.।। सत्तरहवा पृष्ठ ।।

•__आर्य समाज क्या मानता है...?__

इस पाठ में पाठको के समक्ष आर्य समाज के मान्यताएं दिखलाई जाएगी। ताकि पोगापंथथ्यों के मन का मैल दूर हो जाए। और वे सत्यपथ के पथिक बन जाए। तथा यह समझ ले की आर्य समाज की मान्यताएं सार्वभौमिक एवं वेदानुकूल है। उन्हें मानना सभी मानवों का धर्म है। आर्य समाज एवं संसार के सभी मतावलंबियों का मानना है कि और सभी मुकाकण्ठ से स्वीकार करते हैं। की वेद ही ईश्वरीय वाणी है। सावृभौतिक सर्वमान्य ग्रंथ है। इनका पठन-पाठन मानवमात्र का परम कर्तव्य है।

Edit with WPS Office

•_____आर्य समाज की मान्यताएं_____

१. ईश्वर____ जिसके ब्रह्म परमात्मा आदि नाम है। जो सच्चिदानंद आदि, लक्षण युक्त है, जिसके गुण क्रम स्वभाव पवित्र है, जो सर्वज्ञ निराकार ,सर्वव्यापक, अजन्मा अनन्त सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का सृष्टिकर्ता व धर्ता हैं, सब जीवों के कर्म अनुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि से लक्षणयुक्त है उसी को परमेश्वर मानता हूं___ **महर्षि दयानंद सरस्वती**

२. चारों वेद____(विद्याधर्मयुक्त ईश्वर प्रणीत संहिता मंत्र भाग) को निभ्रान्त स्वत प्रमाण मानता हूं। यह पुस्तक स्वयं प्रमाण युक्त है, जिसके प्रमाण होने में किसी अन्य ग्रंथ की अपेक्षा नहीं है। जैसे__सूर्य व प्रदीप अपने स्वरूप के स्वत प्रकाशक और पृथ्वी आदि के प्रकाशक होते हैं_वैसे ही चारों वेद और चारों वेदों के छः छन्द,छह उपांग, चार उपवेद और 1127 वेदों की शाखाएं जो कि वेदों की व्याख्यान रूप है। ब्रह्मादि महा ऋषियों के बनाए हुए ग्रंथ हैं, उनको वेद अनुकूल होने से प्रमाण मानता हूं।

३.जीव_____जो इच्छा द्वेष सुख-दुख और ज्ञान आदि गुण युक्त अल्पज्ञ नित्य है , उसी को जीव मानता हूं।

४. अनादि पदार्थ_____तीन पदार्थ है,एक ईश्वर दूसरा जीव ,तीसरा प्रकृति, अर्थात जगत का कारण, इन्हीं को नित्य कहते हैं, जो नित्य पदार्थ हैं उनके गुण कर्म स्वभाव भी नित्य है।

५. मुक्ति_____सब दुखों से छूटकर ,बंधनरहित, सर्वव्यापक, ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना,नियत समयपर्यंन्त मुक्ति के आनंद को भोगने के पश्चात पुनः संसार में आना।

६. मुक्ति के साधन_____ईश्वरोपासना, योगाभ्यास धर्म अनुष्ठान व ब्रह्मचर्य से विद्या प्राप्ति, विद्वानों का संग, सत्यविद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि।

Edit with WPS Office

७.देव______विद्वानों को देव, अविद्वानों को असुर, पापियों को राक्षस, अनाचारियों को पिशाच मानता हूं। _____**महर्षि दयानंद सरस्वती...।**

८. देवपूजा______उन्हीं विद्वानों माता-पिता, आचार्य, अतिथि, न्यायकारी राजा और धर्मात्माजन, पतिव्रता स्त्री,और स्त्रीव्रतपति का सत्कार करना, देव पूजा कहाती है, इसके विपरीत अदेवपूजा है। चेतन मूर्तियों को पूज्य, पाषाणादि जड़ मूर्तियों को है अपूज्य मानता हूं। ____**महर्षि दयानंद सरस्वती।**

९. पुराण_____जो ब्रह्मादि के बनाए हुए ऐतरेय वह बृहदारण्यक आदि उपनिषद है, उन्हीं को पुराण इतिहास कल्प गाथा नाराशंसी नाम से जानता हूं। अन्य मनुष्यों के द्वारा बनाए हुए पुराण भागवत आदि को नहीं।

१०. तीर्थ______जिससे दुख सागर से पार उतरे की जो सत्यभाषण, विद्या, सत्संग,यमादि योगाभ्यास, पुरुषार्थ विद्यादानादि शुभ कर्म, उन्हीं को तीर्थ मानता हूं समझता हूं। इतर जल स्थलादि को नहीं।

११. स्वर्ग______स्वर्गनाम सुखविशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है।

१२. नरक______दुखविशेष भोग उसकी सामग्री को प्राप्त होना ही नरक है।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

- # { सनातन धर्म पर मेरी शायरी }

है तुझ में वो हिम्मत? मैं मूर्ति की पूजा करता हूं, इसलिए तुमने मूर्तियां तोड़ी____
मैं मंदिर की पूजा करता हूं , इसलिए तुमने मंदिर तोड़े
लेकिन तुम लोग भूल गए
मैं सूर्य की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो बुझा दे
मैं चंद्रमा की पूजा करता हूं,हिम्मत है तो चंद्रमा का प्रकाश हटा दे___?
मैं जल की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो सुखा दे।
मैं वृक्षों की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो मिटा दे।
मैं पर्वतों की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो हिला दे।
मैं मिट्टी की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो अपने कब्र से हटा दे।
मैं इस अग्नि की पूजा करता हूं, हिम्मत है तो अपने घर का चूल्हा अपने हाथों से बुझा दे।
सनातन का मतलब भी समझते हो??
जो आदि और अनंत है,जो पुरातन है, वर्तमान और भविष्य है, जो सबका जन्मदाता है, इसलिए वह सब का पिता है। हिम्मत है तो अपने नाम से अपने बाप का नाम हटा दे।____?

- ## 18. अठारहवां पृष्ठ

- ## [सनातन धर्म क्या है]

Edit with WPS Office

जो सदा से था , सदा से है , और सदा ही रहेगा उसी को ही सनातन धर्म कहते हैं ।

1. परमात्मा 2. जीवात्मा 3. प्रकृति

यह तीनों अनादि तत्व है , इन तत्वों का कभी विनाश नहीं होता । सदा रहते हैं , ये तीनों तत्व अनादि हैं अतः इनको सनातन कहा गया है ।

- **धर्म शब्द का अर्थ ______**
- **धारयति इति धर्म :** का अर्थ है -- जो धारण किया जाता है , वही धर्म है । धर्म शब्द संस्कृत भाषा के धृ धातु से बना है , जिसका अर्थ है धारण करना ।
- ________ श्रेष्ठ गुणों , श्रेष्ठ नियमों , श्रेष्ठ कर्तव्य , व्यवहारों सिद्धांतों विधानों को धारण करना ही मनुष्य का एकमात्रधर्म है ।
- . ईश्वर के बनाए हुए जिन नियमों , कर्तव्यों एवं सिद्धांतों के द्वारा आत्मोन्नति एवं उत्तम सांसारिक सुख को प्राप्त किया जाये ।
- . जिसके द्वारा समाज , समाज एवं राष्ट्र को व्यवस्थित एवं मर्यादा में रखा जाए उसे ही सनातन धर्म कहते हैं ।
- ___ सृष्टि को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए ईश्वर के बनाए हुए नियम विधान एवं कर्तव्य एवं सनातन धर्म है ।

अथर्ववेद.____ 10/8/23...

अर्थ___ सनातन उसको कहते हैं जो कभी पुराना न हो, सदा नया रहे, जैसे दिन रात का चक्र सदा नया रहता है । ऐसे ही सनातन धर्म है जिसका आदि है ना अंत ।

(वाल्मीकि रामायण. अयोध्या कांड सर्ग 21 , श्लोक. 10)

यहां पर लिखा है___ भगवान श्री राम कह रहे हैं अपनी माता कौशल्या से जब तक मेरे पिता महाराज ! दशरथ जीवित है । तब तक आप उनकी सेवा करें । यही परंपरागत सनातन धर्म है ।

(श्रीमद् गीता. अध्याय पहला (1). श्लोक संख्या. 40)

Edit with WPS Office

यहां पर अर्जुन जी कह रहे हैं श्री कृष्ण से कहते हैं– कुल के क्षय हो जाने पर हमारे कुल का जो सनातन धर्म है । कुल की शोभा जो सनातन धर्म की पुरानी परंपराएं हैं, सदियों का अनुभव के आधार पर कुल की जो मर्यादाएं बन चुकी है वे नष्ट हो जाती है जब कुल की परंपराएं मर्यादाएं नष्ट हो गई । तब इन परंपराओं के नष्ट हो जाने पर, संपूर्ण कुटुंब में संपूर्ण समाज में अधर्म का बोलबाला हो जाता है ।

वेद___ सृष्टि के आरंभ में ईश्वर द्वारा दिया वो ज्ञान है जिसकी मनुष्य को संसार में रहते हुए आवश्यकता है और जिसको जान करके मनुष्य सुख पूर्वक रह सकता है । वेद शब्द का अर्थ ही 'ज्ञान, है । वेद ज्ञान दो अरब वर्ष पहले जितना सत्य और व्यावहारिक था आज भी उतना ही सत्य और व्यावहारिक है । अतः वेद सनातन है और वेद का ज्ञान भी सनातन है ।

सनातन धर्म वेद को धर्म का आधार मानता है । और आर्य समाज भी वेद को धर्म का आधार मानता है । वेदों के अतिरिक्त दूसरे ग्रंथों जो जो बातें वेद अनुकूल है, आर्य समाज उन्हें स्वीकार करता है । सनातन धर्म ने बहुत सी बातें वेद विरुद्ध भी स्वीकार कर ली है । यही अंतर है सनातन धर्म और आर्य समाज में (आर्य समाज ही सनातन धर्म है, लेकिन कुछ अज्ञानी गुलामी के प्रभाव में आके आर्य लोगों को बाहर से आया हुआ बताते हैं) वेद विरुद्ध बातों को स्वीकार करना और उन्हें व्यवहार में अपनाना ही आर्य (हिंदू) जाति के पतन का कारण है ।

वेदों में आत्मा को भी सनातन कहा गया है ।
सामवेद. 54 , सामवेद. 531

- **_____सत्य सनातन वैदिक धर्म क्या है, और इसकी पहचान क्या है ?**

भारत में रहने वाले अनेक लोगों को अपने धर्म के बारे में नहीं पता? आर्य

Edit with WPS Office

समाज के अलावा कोई भी आपको अपने धर्म के बारे में विस्तृत जानकारी नहीं दे सकता। आइए जानने का प्रयास करते हैं__की हमारा धर्म क्या है। कुछ लोग बोलते हैं हमारे धर्म का नाम हिंदू है, और कुछ लोग बोलते हैं, हमारे धर्म का नाम सनातन धर्म है।

हिंदू का मतलब क्या होता है हिंदू नाम हमको मुसलमानो ने हमें दिया था। गुलामी के समय हमको हिंदू नाम से पुकारते थे। जो कि हमारे धर्म का नाम नहीं है हिंदू, किसी व्यक्ति द्वारा दिया गया है।

हिंदू का अर्थ __ अरबी, फारसी, उर्दू, में__चोर लुच्चा लफंगा शराबी कव्वाली दंगाबाज काफिर आदि नाम है इसलिए अपना नाम हिंदू न बताएं.. आज दुनिया भर में हिंदू नाम से हमें लोग जानते हैं।

सनातन की पहचान__सनातन धर्म का अर्थ होता है पुराना, जिसका ना कोई अंत है, ना कोई आरंभ है, जो एक रस रूप है, जो हमेशा से है उसको सनातन कहते हैं।

जो पुराना है जो धारण करने योग्य है जिसको हम धारण कर रहे हैं, ऐसी क्या चीज है जिसको हम धारण कर रहे हैं ? आइए बताते हैं। जो पुराना है क्या पुराना है सत्य सनातन वैदिक धर्म यह हमारा धर्म है। जो सदा सत्य रहता है सनातन जो हमेशा है वह हमेशा क्या है ? जिसको हम धारण कर रहे हैं वेद , क्योंकि वेद ही ईश्वरीय वाणी है। वेद ही हमको धर्म के बारे में सीखाता है ऐसा कर वैसा कर सत्य बोल धैर्य से काम कर, अपने बड़ों की सेवा कर अपने कर्तव्य का पालन कर यह सब कौन सिखाता है वेद। इसलिए वेद मूल ग्रंथ है। इसलिए आर्य समाज वेदों को मानते हैं, जो पुराणों को मानते हैं वह कभी भी वेदों का नाम नहीं लेते, अगर वेदों का नाम लेंगे तो उनकी दुकान बंद हो जाएगी इसलिए वह बोलते हैं सनातन धर्म विस्तृत जानकारी नहीं देते कथावाचक करने वाले बाबा।

अगर कोई इन बाबाओ से पूछे आपने तो बता दिया हां सनातन धर्म है, कि सनातन धर्म पुराना है जिसका कोई अंत नहीं लेकिन वह पुरानी क्या चीज है इसके बारे में नहीं बताते। अगर सच बताएंगे जो उनके पुराणो के सहारे जो दुकान चलती है वह बंद हो जाएगी।

सनातन की परिभाषा :

Edit with WPS Office

______ यह तैत्तिरीयोपनिषद् . 1.11 का वचन है ।

आचार्य अन्तेवासी , अर्थात अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करें कि तू सदा सत्य बोल , धर्माचार कर , प्रमादरहित होके पढ - पढ़ा , पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विधाओं के ग्रहण और आचार्य के लिए प्रिय धन देकर , विवाह करके सन्तानोत्पत्ति कर । प्रमाद से सत्य को कभी मत छोड़ , प्रमाद से धर्म का त्याग मत कर , प्रमाद से आरोग्य और चतुराई को मत छोड़ , (प्रमाद से उत्तम ऐश्वर्य की वृद्धि को मत छोड़) , प्रमाद से पढ़ने और पढ़ाने को कभी मत छोड़ । देव , विद्वान और माता-पितादि की सेवा में प्रमाद मत कर । जैसे विद्वान का सत्कार करें , उसी प्रकार माता , पिता , आचार्य और अतिथि की सेवा सदा किया कर । जो अनिन्दित धर्म युक्त कर्म है , उन सत्यभाषणादि को किया कर , उनसे भिन्न मिथ्याभाषणादि कभी मत कर । जो हमारे सुचरित्र अर्थात धर्म युक्त कर्म हो , उनका ग्रहण कर और जो हमारे पापाचरण , उनको कभी मत कर । जो कोई हमारे मध्य में उत्तम विद्वान धर्मात्मा ब्राह्मण है , उन्हीं के समीप बैठ और उन्ही का विश्वास किया कर । श्रद्धा से देना , अश्रद्धा से देना , शोभा से देना , लज्जा से देना , भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिए । जब कभी तुझको कर्म वा शील तथा उपासना ज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो ; तो जो वे समदर्शी पक्षपात रहित , योगी , अयोगी , आद्रर्चित , धर्म की कामना करने वाले धर्मात्मा जन हो । जैसे वे धर्म मार्ग में वर्ते , वैसे तू उसम वार्ता कर
यही आदेश आज्ञा , यही उपदेश , यही वेद की उपनिषद और यही शिक्षा है । इसी प्रकार वर्तना और चाल - चलन सुधारना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 19. ।। उन्नीसवां पृष्ठ ।।

Edit with WPS Office

- # [धर्म क्या है ? स्वधर्म और आपद्धर्म]

आजकल संप्रदायों और विभिन्न मतमतांतरों ने **धर्म** शब्द का व्यापक रूप से दुरुपयोग किया है , जिसके परिणामस्वरूप धर्म के नाम पर अनेक झगड़े हो रहे हैं । यह प्रश्न उठता है कि **धर्म** वास्तव में है क्या ? कई लोग धर्म को ' रिलिजन ' या 'मजहब ' के रूप में देखते हैं , लेकिन यह शब्द धर्म के वास्तविक अर्थ से बिल्कुल भिन्न है ।

रिलिजन या **मजहब** किसी विशेष मत , पंथ या संप्रदाय के अनुयायियों के लिए बनाए गए नियमों का समूह है । यह एक विचारधारा है , जो केवल उस विशेष पंथ /संप्रदाय के अनुयायियों के कल्याण की बात करती है । इसके विपरीत , धर्म का अर्थ संप्रदाय या रिलिजन से नहीं है संपूर्ण सृष्टि से है । **वैदिक सनातन धर्म** संपूर्ण ब्रह्मांड के लिए निर्धारित सर्वोत्तम नियमों का नाम है , जो ईश्वर द्वारा प्रदत्त होता है और किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करता ।

धर्म का शाब्दिक अर्थ ..?

धर्म शब्द संस्कृत भाषा के **धृ** धातु से बना है जिसका अर्थ है **- धारण करना**
धारयति इति धर्म " जो धारण किया जाता है वही धर्म है ।
सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को ईश्वर ने जिस उद्देश्य से , जिन कार्यों के निर्वहन के लिए बनाया है वहीं उसका धर्म है । अब यह विचार करना चाहिए कि धारण करने योग्य क्या है ___ श्रेष्ठ या तुच्छ ? निश्चित रूप से श्रेष्ठ ही धारण करने योग्य है । इसलिए , श्रेष्ठ आचार - विचार , श्रेष्ठ कर्तव्य और कर्म ही मनुष्य के लिए धारण करने योग्य होते हैं ।

जिस आचरण से मनुष्य को आत्मिक , मानसिक और शारीरिक उन्नति प्राप्त होती है , और जिन गुणों को धारण करने से व्यवहारिक सुख एवं मोक्ष की सिद्धि होती है , वही आचरण या कर्तव्य **धर्म** कहलाता है । वेदों में मनुष्य के

Edit with WPS Office

लिए जो कर्तव्यों का विधान किया गया है , वही सच्चा धर्म है और उसके विपरीत अधर्म है ।

धर्म का व्यापक स्वरूप ...?

धर्म केवल मनुष्य का नहीं , बल्कि समस्त सृष्टि के कण कण का है । सृष्टि के प्रत्येक वस्तु का अपना एक धर्म होता है , ईश्वर ने सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ को जिस जिस उद्देश्य से बनाया गया अगर वहां उन गुणों को धारण करता है वही उसका धर्म बन जाता है जो ईश्वर द्वारा उसे प्रदान किया गया है । उदाहरण के लिए :

- **अग्नि** का धर्म उसकी उष्णता है ।
- **जल** का धर्म उसकी शीतलता है ।
- **सूर्य** का धर्म है प्रकाश देना ।
- **वायु** का धर्म उसकी चंचलता , शुष्कता है ।

अब सूर्य ने प्रकाश को धारण किया है । तो **सूर्य** का धर्म प्रकाश देना है , अब अगर वह प्रकाश देना बंद कर दे , तो वह अधर्मी कहलाएगा । उसी प्रकार , मनुष्य को **सदाचार , सत्य भाषण , परोपकार , अहिंसा** आदि गुणों को धारण करता है , तो वह अधर्मी माना जाएगा । अतः श्रेष्ठ गुणों को धारण करना ही मनुष्य मात्र का एकमात्र धर्म है । जिसे मानव धर्म कहा जाता है ।

इस प्रकार , ईश्वर ने सृष्टि के प्रत्येक जीव के लिए एक विशिष्ट कर्म निर्धारित किया है । जब कोई जीव अपने निर्धारित कर्म का पालन करता है , तो वह धर्माचरण कहलाता है , और अगर वह इसके विपरीत करता है , तो उसे अधर्माचरण कहा जाता है । इसी के अनुसार जीवों को उनके कर्मों का फल भी मिलता है । **" धर्मो रक्षति रक्षित : "** अर्थात , धर्म की रक्षा करो , तो वह तुम्हारी रक्षा करेगा । धर्म ही इस चराचर जगत और सभी जीवो के जीवन का मूल है । धर्म के बिना इस सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती । इसलिए , धर्मानुसार आचरण करें , सत्य का ग्रहण करें , और असत्य का

Edit with WPS Office

त्याग करें ।

धर्म सनातन है , समय के साथ इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता । इसे ना ही उत्पन्न किया जा सकता है ना ही नष्ट किया जा सकता है यह तो ईश्वर प्रदत्त होता है । जो सृष्टि के कल्याण के लिए ईश्वर के उपदेशात्मक रूप में वेदों के माध्यम से उत्पन्न होता है इसलिए इसे **वैदिक सनातन धर्म** कहा जाता है , जो सृष्टि के आरंभ से ही अस्तित्व में है और सदा ही रहेगा ।

धर्म का उद्देश्य..?
धर्म का उद्देश्य न केवल व्यक्तिगत , बल्कि सामाजिक और वैश्विक कल्याण है । वेदों में यह स्पष्ट किया गया है कि धर्म केवल किसी एक जाति , संप्रदाय या देश के लिए नहीं है , बल्कि यह संपूर्ण सृष्टि और समस्त मानवता के लिए समान रूप से उपयोगी है । वेदों में निहित शिक्षाएं सर्वोत्तम और धारण करने योग्य है , जो व्यक्ति , परिवार , समाज और राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर ले जाती है । महर्षि मनु कहते हैं कि **" वेदों अखिलो धर्ममूलम "** (2.6) अर्थात , वेद ही इस सृष्टि में धर्म का मूल आधार है । **अतः जो वेद विरुद्ध है , वह अधर्म है ।**

मानव धर्म क्या है..?
श्रेष्ठ गुणों , श्रेष्ठ नियमों , श्रेष्ठ कर्तव्य व्यवहारों सिद्धांतों को धारण करना ही मनुष्य का एकमात्रधर्म है ।
वेदोऽखिलो धर्ममूलम्_____ मनुस्मृति. 2/6
अर्थात वेद ही धर्म के मूलाधार है ।

धर्मजिज्ञासानानां प्रमाण परम श्रुतिः _____ मनुस्मृति. 2/13
अर्थात धर्म की जिज्ञासा रखने वालो के लिए वेद ही परम प्रमाण है । उसी से धर्म अधर्म का पता करें ।

यतोऽभ्युदयनि : श्रेयससिद्धि : स धर्म : _____ वैशेषिक दर्शन. 1/1/2
अर्थात जिसके आचरण से मनुष्य की त्रिविध - आत्मिक , मानसिक व

Edit with WPS Office

शारीरिक उन्नति और व्यावहारिक उत्तम सुख की प्राप्ति एवं वृद्धि हो तथा मोक्ष सुख की सिद्धि हो वह आचरण या कर्तव्य धर्म है ।

चोदनालक्षणो धर्म : " ____ पूर्व मीमांसा दर्शन. 1/1/2
अर्थात वेदों में मनुष्य को करने के लिए जो कर्तव्य विहित किये है , वह धर्म है ।

- **महाभारत में भीष्म पितामह के मत में धर्म की परिभाषा :**

य: स्यात्प्रभवसंयुक्त: स धर्म इति निश्चय: ।
य: स्याद्धारणंसंयुक्त: स धर्म इति निश्चय: ।
य: स्यादहिंसासम्पृक्त: स धर्म इति निश्चय: ।
महाभारत शांति पर्व/राजधर्मानुशासनपर्व , अध्याय 109. श्लोक.10 - 12

अर्थात जिससे सबकी उन्नति , पालन - पोषण हो तथा जो अहिंसा अर्थात पूर्ण निवैरता , सबसे प्रीति परंतु न्यायानुसार दण्ड होवे , निश्चित ही , वही धर्म है ।

धारणाद् धर्ममित्याहुधर्मेण विधृता: प्रजा: ।
य: स्याद् धारणंसंयुक्त: स धर्म इति निश्चय: ।।
महाभारत शांति पर्व /राजधर्मानुशासनपर्व. अध्याय 109/श्लोक 11

अर्थात जिससे सभी प्राणियों का धारण व पोषण होता है , वही धर्म कहलाता है । " पंचतंत्र में सभ्य समाज की व्यवस्था में लिखा है ___

" मामृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु य: पश्यति स: पश्यति ।। "

अर्थात जो परायी स्त्री को माता के समान और पराये धन को मिट्टी के ढेले

Edit with WPS Office

के समान समझता है , सब प्राणियों को अपने आत्मा के समान समझता है , वही वास्तव में देखता है ।

सत्यार्जवे धर्ममाहु: परं धर्मविदो जना: ।। 40 ।।
दुर्ज्ञेय: शाश्वतो धर्म: स च सत्ये प्रतिष्ठित: ।
श्रुतिप्रमाणों धर्म: स्यादिति वृद्धानुशासनम् ।। 41 ।।

महाभारत (व्याध गीता)

भावार्थ : धर्मज्ञ पुरुष सत्य और सरलता को सर्वोत्तम धर्म बताते हैं । सनातन धर्म के स्वरूप को जानना तो अत्यंत कठिन है , परंतु वह सत्य में प्रतिष्ठित है । जो वेदों के द्वारा प्रमाणित हो , वही धर्म है __ यह वृद्ध पुरुषों का उपदेश है ।।

त्यज दुर्जनसंसर्ग भज साधुसमागमम् ।
कुरु पुण्यमहोरात्रं स्मर विष्णुं सनातनम् ।।

नारद पुराण. 1.16.17

भावार्थ : दुष्टों के संग को त्यागों । सज्जनों के संग को अपनाओं । दिन - रात पुण्य करो । सनातन भगवान विष्णु का स्मरण करों ।

धर्म का ज्ञान तीन प्रकार से होता है..?

- आत्मा की शुद्धि तथा सत्य को जानने की इच्छा से ।
- धर्मात्मा विद्वानों की शिक्षा एवं संगति से ।
- परमेश्वर की वेद विद्या को जानने से ही मनुष्य को सत्य असत्य का यथावत ज्ञान होता है , अन्यथा नहीं ।

धर्म की रक्षा कैसे संभव है.. ?

- वेदों में बताए गए विहित कर्म को करने से ।
- सत्य के ग्रहण और असत्य का त्याग करने से ।
- बुद्धि तर्क और विज्ञान का सदुपयोग करने से ।

Edit with WPS Office

अधर्म क्या है .. ?

- वेदों में जिन कर्मों का निषेध है , वही अधर्म है ।
- जिन कर्मों को करने पर मनुष्य के मन में भय , शंका , अशांति एवं ग्लानि उत्पन्न होती है , वहां सब अधर्म के कर्म है ।

मनुष्य की स्वतंत्रता और कर्म का फल :
मनुष्य को अच्छा या बुरा कर्म करने की पूरी स्वतंत्रता प्राप्त है , लेकिन उसके कर्मों के परिणामों को भोगने में वह परतंत्र है । ईश्वर ने मनुष्य को बुद्धि दी है ताकि वह हर कर्म को सोच - समझकर , हानि - लाभ का विचार कर , उचित ढंग से करें । हर कर्म का फल निश्चित रूप से प्राप्त होता है , चाहे वह इस जन्म में हो या अगले जन्म में , कर्म का फल भोगे बिना नहीं कटते हैं ।

अधर्म के परिणाम :

कर्म कभी निष्फल नहीं होते । जो कर्म अधर्म के अनुसार किए जाते हैं , उनके परिणाम स्वरुप व्यक्ति को दुख , अशांति और पाप स्वरूप फल भोगना पड़ते हैं ।
अधर्म के कृत्य वे है जो मनुष्य के मन , समाज और संपूर्ण सृष्टि को नुकसान पहुंचाते हैं । इन्हें करने से व्यक्ति न केवल अपने जीवन में कष्ट पाता है , बल्कि भविष्य में भी उसके कर्मों के परिणाम स्वरूप दुख प्राप्त होता है । इसलिए , वेदों में कहा गया है **" मनुर्भव "** अर्थात , मनुष्य बने और धर्म के अनुसार कर्म करें । धर्म के मार्ग पर चलकर मनुष्य अपने कर्मों से मुक्ति और मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है । अगर कोई व्यक्ति धर्म का पालन करते हुए भी मृत्यु को प्राप्त होता है , तो उसकी आत्मा को परम गति प्राप्त होती है । अतः मनुष्य को धर्म के मार्ग पर चलकर सही कर्म करने चाहिए , ताकि उसे आत्मिक और मानसिक शांति के साथ-साथ मोक्ष की प्राप्ति हो सके ।

धर्म की रक्षा कैसे संभव है ..?

धर्म की रक्षा करने से पहले , सबसे महत्वपूर्ण है कि हम धर्म को सही ढंग से

Edit with WPS Office

समझे । धर्म क्या है और इसका वास्तविक स्वरूप क्या है ? इसे समझने के लिए हमें **वैदिक सनातन धर्म के मूल धर्म ग्रंथों का अध्ययन करना होगा ।** आज के समय में , हम भौतिक उन्नति , भोग - विलास , मोबाइल , टीवी , इंटरनेट में इतने व्यस्त हो चुके हैं कि शास्त्रों **(वेद , उपनिषद , रामायण , महाभारत , भगवत गीता)** को पढ़ने का समय ही नहीं निकाल पाते । इस वजह से हम अपनी मूल संस्कृति और धर्म से दूर होते जा रहे हैं । आज की शिक्षा प्रणाली भी पूर्ण रूप से पश्चिमीकरण और अंग्रेजीकरण की ओर बढ़ चुकी है , जिसके कारण हम अपनी संस्कृति की जड़ों से कटते जा रहे हैं । अगर यही चलता रहा , तो आने वाली पीढ़ियां अपनी वैदिक सनातन संस्कृति से पूरी तरह से दूर हो जाएगी और शायद क्रिश्चियन या अन्य पश्चिमी संस्कृतियों का पालन करने लगेगी । यह गंभीर स्थिति होगी , और इसका उत्तरदायी केवल हम ही होंगे , क्योंकि हमने अपनी भविष्य की पीढ़ियों को सनातन धर्म और संस्कृति के बारे में अवगत नहीं करवाया । धर्म और संस्कृति की रक्षा का बीज घर से ही बोया जा सकता है , और इसमें माता-पिता की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है । हमें अपनी आने वाली पीढ़ियों को यह बताना होगा कि उनकी संस्कृति और धर्म कितना महान है । यदि हम स्वयं धर्म और संस्कृतियों का अध्ययन नहीं करेंगे , तो अपने बच्चों को क्या सिखाएंगे ? और यदि वे अपने बच्चों को यह नहीं सिखाएंगे , तो पूरी संस्कृति भ्रष्ट हो जाएगी और समाज में केवल भौतिकवादी दृष्टिकोण ही रह जाएगा ।

इसलिए , यह आवश्यक है कि हम आज ही से अपने घरों में **वैदिक शास्त्रों की शिक्षा दीक्षा** को बढ़ावा दे । हमें अपनी संस्कृति और धर्म के महान मूल्यों को समझना और आत्मसात करना होगा । वैदिक शास्त्रों के अध्ययन और पालन के माध्यम से हम धर्म की सच्ची रक्षा कर सकते हैं । यह कार्य केवल हमारे व्यक्तिगत प्रयासों से नहीं होगा , बल्कि इसके लिए हमें समाज में सामूहिक रूप से जागरूकता फैलानी होगी । इस महान कार्य में प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी आवश्यक है । माता-पिता , शिक्षक , विद्वान और समाज के हर व्यक्ति को इस दिशा में योगदान देना होगा । अपनी संस्कृति की रक्षा और उसे जीवित रखने के लिए हमें अपने बच्चों को वैदिक शास्त्रों

Edit with WPS Office

का महत्व समझाना होगा और उन्हें धर्म के मूल सिद्धांतों से अवगत कराना होगा ।

हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि सत्य ही धर्म का आधार है । जिस प्रकार मनुष्य धार्मिकता में प्रगति करता है , वह उतना ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी अपनाने लगता है , क्योंकि धर्म का गहरा संबंध विज्ञान से है । अतः धर्म की सच्ची रक्षा तभी हो सकती है जब हम इसे सही ढंग से समझे , उसका पालन करें , और आने वाली पीढियों को इसके महत्व से परिचित कराएं । धर्म की शिक्षा के बिना समाज अपनी दिशा खो देता है , इसलिए हमें आज ही से इस दिशा में ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है ।

स्वधर्म व शुद्ध धर्म क्या है ..?

ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , और संन्यास ।

आपधर्म क्या है ..? (परिस्थितियों के बदलने पर बदलता है)

धर्म की रक्षा के लिए जब विपरीत परिस्थितियां आती हैं तब शस्त्र उठाना एवं विपत्तियों का नाश करना ही आपधर्म का मूल उद्देश्य है ।

- आत्मरक्षा
- स्त्री रक्षा
- राष्ट्र रक्षा
- गौ रक्षा
- धर्म की रक्षा

•धर्म vs मत , पंथ , संप्रदाय , मजहब , रिलिजन

✓ **धर्म ईश्वर कृत होता है ,** जबकि मत , पंथ संप्रदाय मजहब मनुष्य द्वारा बनाए जाते हैं ।

Edit with WPS Office

✓ मत पंथ संप्रदाय मजहब रिलिजन भेदभाव करते हैं , **जबकि धर्म सबके लिए एक होता है कभी भेदभाव नहीं करता क्योंकि ईश्वर का ज्ञान सबके लिए कल्याणकारी होता है और एक जैसा होता है ।**

✓ धर्म बुद्धि तर्क और विज्ञान पर आधारित है क्योंकि यहां ईश्वर का ज्ञान है , जबकि मत पंथ संप्रदाय मजहब विज्ञान का विरोधी है ।

✓ धर्म ईश्वर से मनुष्य का सीधा संबंध बताता है (अष्टांग योग) वह आत्मा और परमात्मा के मध्य में किसी पैगम्बर , गुरु , ऋषि मुनि , अवतार , आदि की आवश्यकता नहीं समझता , जबकि मजहब सम्प्रदाय मत पंथ मनुष्य के बीच में अपने-अपने एजेंटों को लाकर खड़ा करता है ।

✓ धर्म प्राणी मात्र के सुख के लिए है , और मत-मतांतर या संप्रदाय केवल अपने अनुयाइयों के सुख की गारंटी लेता है ।

✓ धर्म अनादि है नित्य है इसलिए उसका नाश कभी नहीं होता , जबकि मत मतांतर बनाए नवीन हैं इसलिए यह नष्ट भी हो जाता है ।

✓ सनातन धर्म के पूज्य ईश्वर है व्यक्ति विशेष नहीं , अन्य पंथों के पूज्य ईश्वर नहीं व्यक्ति विशेष है जो ईश्वर के पुत्र या दूत हैं ।

महाभारत में विदुर नीति के अंतर्गत श्लोक है___

नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति ।
न तत् सत्यं यत छलेनाभ्युपेतम ।।
(विदुर नीति. 3 – 58)

अर्थ___ वह धर्म नहीं है जहां सत्य नहीं है । वह सत्य नहीं है जिसमें छल है ।।

इस प्रकार___

सत्य___ यह धर्म है , असत्य___ यह अधर्म है ।
न्याय___ यह धर्म है , अन्याय___ यह अधर्म है ।
निष्पक्ष___ यह धर्म है , पक्षपात___ यह अधर्म है ।

Edit with WPS Office

• ______धर्म किसे कहते हैं______

धर्म जीवन के अंदर ऐसा विषय है जो हमें मनुष्य बनाता है, अगर हमारे जीवन में धर्म ना हो तो हम मनुष्य नहीं, जितने भी हमारे महापुरुष ऋषि महर्षि हुए हैं, उन्होंने हमें जीवन जीने की वह राह दिखाई। जो आगे जाकर एक सनातन धर्म बना।

सनातन शब्द का अर्थ जो हमेशा से चला आ रहा है , उसको सनातन कहते हैं। और धर्म उसको कहता हूं जिसका कोई विरोध ना कर सके। जैसे__धैर्य सत्य बोलना, ब्रह्मचारी का पालन करना, चोरी ना करना ,स्वस्थ रहना, क्रोध न करना। इन नियमों के पालन को कौन व्यक्ति कह सकता है ,कि यह अधर्म है ?? **धर्म के 10 लक्षण नियम____**

- जिसका कोई विरोध ना कर सके ,जो धारण करने योग्य हो। उसे धर्म कहते हैं। जैसे सत्य बोलना ब्रह्मचारी का पालन करना चोरी ना करना आदि।____महर्षि दयानंद सरस्वती।
- महर्षि दयानंद सरस्वती कहते हैं कि जो पक्षपात रहित न्याययचरण सत्य भाषण आदि युक्त ईश्वर आज्ञा वेदों से अविरुद्ध हो वह धर्म कहलाता है। जो इसके विरुद्ध हो वह अधर्म कहलाता है।

धृति:क्षमा दमोऽस्तेय शौचमिन्द्रियनिग्रह:।
धीविधा सत्यमक्रोधो दशक
धर्मलक्षणम____मनुस्मृति ६/१२

- **१.धृति____**सुख-दुख हानि लाभ मान अपमान में धैर्य रखना।
- **२. क्षमा____**निर्बलों पर दया रखना ,वह सामर्थ्य होने पर भी दोषी द्वारा पक्षपात रहित करने पर दण्ड न देना।
- **३.दम____**मन में अच्छी बातों का चिंतन करना मन को वश में रखना।
- **४.अस्तेय____**बिना आज्ञा किसी दूसरे की वस्तु का प्रयोग न करना। चोरी ना करना।
- **५.शौच____**मन वाणी शरीर व वातावरण को शुद्ध रखना।
- **६. इन्द्रियनिग्रह_____**हाथ पांव आंख मुख नाक आदि इंद्रियों को अच्छे कार्य में लगाना।

Edit with WPS Office

- **७.धी;** हर काम बुद्धि पूर्वक करना वह बुद्धि वर्धन हेतु प्राणायाम सात्विक भोजन प्रार्थना आदि करना।
- **८.विधा**_____ईश्वर द्वारा बनाए गए प्रत्येक पदार्थ का ज्ञान प्राप्त करना, तथा उनसे उपयोग लेना शुद्ध ज्ञान, शुद्ध कर्म व शुद्ध उपासना को जानना।
- **९. सत्य**_____सदैव सत्य व प्रिय बोलना जो हम जानते हैं।
- **१०. अक्रोध**_____इच्छा विधान से उत्पन्न क्रोध का त्याग करना।

आचार परमो धर्म_____(मनुस्मृति. 1.108)
शुभ गुणों के आचरण का नाम ही धर्म है।

मनुस्मृति.___ 8–17
भावार्थ___ धर्म ही एक ऐसा मित्र है, जो मृत्यु के पश्चात भी जीवात्मा के साथ जाता है । शरीर के नष्ट होते ही सब कुछ नष्ट हो जाता है ।

(वाल्मीकि रामायण. अयोध्या काण्ड. सर्ग.48 श्लोक संख्या 3)
हे कल्याणी ! मनुष्य अच्छा या बुरा जैसा भी कर्म करता है । उस भले या बुरे कर्म का फल कर्ता को अवश्य मिलता है ।

महाभारत आदिपर्व 3 –100
यहां पर लिखा है सत्य के समान कोई धर्म नहीं है , सत्य से बढ़कर कुछ भी नहीं है और असत्य से बढ़कर तीव्रता पाप इस संसार में और कोई नहीं है ।

(मनुस्मृति. 5.3)___
अर्थ___ जल से शरीर शुद्ध होता है, मन सत्य के आचरण से शुद्ध होता है । विधा से और तप से (सब प्रकार के कष्ट उठाकर भी धर्म का आचरण करने से) जीवात्मा पवित्र होता है और बुद्धि ज्ञान से पवित्र होती है ।
आर्य समाज की यही मान्यता है ।

यजुर्वेद.___ 1– 5.

Edit with WPS Office

अर्थ___ हे सत्य धर्म के उपदेश, व्रतों के पालन प्रभु ! मैं असत्य को छोड़कर सत्य को ग्रहण करने का व्रत लेता हूं । आप मुझे ऐसा सामर्थ्य दो कि मेरा यह व्रत सिद्ध हो अर्थात मैं अपने व्रत पर पूरा उत्तंरु ।

मनुस्मृति. 4– 233.
अर्थ___ संसार में जितने दान है, अर्थात जल, अन्न, गौ, भूमि, वस्त्र, तिल, सुवर्ण, घी, आदि इन सब दान से वेद विधा का दान अतिश्रेष्ठ है ।

ऋग्वेद. 5/60/5..___
अर्थ___ हम में कोई छोटा या बड़ा नहीं है हम सब आपस में भाई-भाई हैं । हम सबको मिलकर के समृद्धि के लिए काम करना चाहिए ।

धर्मकारणम______मनुस्मृति
बाहरी चिन्ह,,किसी को धर्मात्मा नहीं बनाते, कपड़े कैसे पहने हैं? या बाल कैसे रखें? आदि बातें देश ,काल ,ऋतु ,और रुचि पर आधारित है। काला, पीला चोला पहनना, कंठी माला धारण करना, तिलक लगाना ,जटा बढ़ाना, आदि बातों का धर्म से कोई संबंध नहीं विशेष संबंध नहीं है।
ऋषि पतंजलि के यम नियमों में भी यही बातें बोलते हैं।
तिलक लगाना माला धारण करना चंदन का लेप लगाना यह शरीर की सुंदरता के लिए होता है। लोग सुंदरता दिखाने के लिए लगा सकते हैं, लेकिन इसका धर्म से कोई लेना-देना नहीं।
धर्म का मूल ग्रंथ वेद है। इसलिए वैदिक धर्म भी कहा जाता है मनु द्वारा जो बताए गए धर्म के लक्षण वही धर्म है। मनु द्वारा जो बताए गए 10 धर्म के लक्षण वेद अनुकूल है।
बाहरी चिन्ह मनुष्य को धार्मिक नहीं बनाते ,अपितु उक्त गुण ही मनुष्य को धार्मिक बनाते हैं। मनुष्य को चाहिए कि धर्म और धर्म के गुणों को समझें। धर्म के नियमों को समझें और उनका पालन करे।
सनातन___एक न्यूतन होता है, एक पुरातन होता है, एक सनातन होता है। जो नया है उसे न्यूतन कहते हैं, जो पुराना है उसे पुरातन, और जो हमेशा से है वह सनातन कहेंगे। सनातन में तीन चीज हमेशा रहती है। पहला ईश्वर,

Edit with WPS Office

दूसरा जीव, तीसरा प्रकृति। धर्म परमात्मा का दिया हुआ ज्ञान है। सनातन इसलिए है परमात्मा स्वयं सनातन है। इसलिए ज्ञान भी हमेशा था, हमेशा है ,हमेशा रहेगा।

अगर धर्म का विश्लेषण यदि हम करें, धर्म में आठ चीजें होनी चाहिए।

- १. समानता का भाव
- २. वशुदैव कुटुंब (पूरे विश्व को अपना परिवार समझे)
- ३. सभी लोगों के विकास की बात
- ४. धर्म का आधार विज्ञान सम्मत होना चाहिए।
- ५. शारीरिक आत्मिक उन्नति करना।
- ६. पारिवारिक धर्म (अपने परिवार के प्रति अपने कर्तव्य का पालन करना।
- ७. सामाजिक धर्म (समाज के प्रति जो आपका कर्तव्य है उसका पालन करना। इस समाज ने हमको बहुत कुछ दिया है।
- ८. राष्ट्र धर्म (वेद कहता है माता-पिता आचार्य गुरु भूमि हमारी माता है, अपने राष्ट्र के प्रति जो हमारा कर्तव्य है उसको पूरा करना आवश्यकता पड़ने पर इस भूमि के लिए अपना बलिदान करना हमारा धर्म है।
- अगर कोई व्यक्ति मंदिर नहीं जाता हो, कोई भी पुस्तक नहीं पड़ता हो, अगर उसके जीवन में ईमानदारी है, तो वह अपने धर्म का पालन कर रहा है। तो उससे अच्छा कोई धर्मात्मा नहीं है। धर्म किसी जाति स्थान देश से बंधा नहीं है, धर्म तो अपने कर्मों में झलकता है।

•धर्म पर मेरे विचार ______

धर्म का अर्थ है कर्तव्य, एक व्यक्ति का सबसे पहले अपने प्रति जो कर्तव्य है, फिर अपने परिवार के प्रति, परिवार के बाद अपने समाज के प्रति, समाज के बाद अपने राष्ट्र की प्रति, प्रकृति के प्रति, पर्यावरण के प्रति, संपूर्ण जीव जगत के प्रति जो कर्तव्य है कार्य करने के कर्मय कार्य है, उसी को धर्म कहता हूं। जो परमात्मा और आत्मा का संबंध है, इसे धर्म नहीं कहते? इसे

Edit with WPS Office

आध्यात्मिक कहते हैं? हमारे हिंदू धर्म में यह बहुत बड़ा कंफ्यूज है लोग आध्यात्मिक के नाम पर तो कुछ करते नहीं है? आध्यात्मिक की परिभाषा अज्ञानी हिंदू पुरुष नहीं जानता? वो इस धर्म की परिभाषा को समझा नहीं? और आजकल के कथा वाचक अपने आप को आध्यात्मिक गुरु बताते हैं, तो वे एक मूलभूत परिभाषा नहीं जानते? कि जो व्यक्ति जब तक अपने धर्म के कर्तव्य का पालन नहीं करता, जब तक वह आध्यात्मिक हो ही नहीं सकता?

समीक्षा जैसे______मेरे पिताजी घर में बीमार पड़े हैं? और मैं उनकी सेवा करने की बजाय मंदिरों में चला जाता हूं ? तो ये धर्म नहीं हो सकता? आध्यात्मिक नहीं हो सकता? भगवान इस अपराध के लिए मुझे क्षमा नहीं कर सकते? पहले अपने सारे करण्य कर्तव्य को पूरा करने के बाद, जब मैं परमात्मा की खोज में निकलता हूं। (इसका अर्थ है धर्म के कर्तव्यों को पूरा करने के बाद) सबसे पहले अपने शरीर का पालन पोषण संरक्षण, क्योंकि मेरा शरीर ही माध्यम है? धर्म के सारे कार्य को पूरा करने का। इसके बाद अपने परिवार का पालन पोषण व संरक्षण, अगर असुरक्षित मेरा परिवार या मैं हूं तो मुझे कोई पूजा करने का अधिकार नहीं है, कहीं बाहर मंदिर जाने का अधिकार नहीं है,? उसके बाद अपने समाज का समाज के बाद अपने राष्ट्र का राष्ट्र के बाद संपूर्ण मानवता का संपूर्ण मानवता, संपूर्ण जीव जगत का इनके सबके पालन पोषण कर्तव्य संरक्षण को पूरा करने के बाद फिर मेरी एक जिम्मेदारी बनती है। यानी मैं ही सबका जिम्मेदार हूं। हम सब की मिलकर व्यवस्था धर्म व्यवस्था मैं होता है, धर्म हमारे कर्तव्य होते हैं? कर्तव्य व्यवस्था के साथ चलते हैं। अगर व्यवस्था कहीं गलत हो रही है तो उसका प्रतिपादक कौन करेगा? प्रतिकार हमें ही करना है इसी का नाम धर्म है।

धर्म की व्यवस्थाओं से हमें पता चलता है, की राष्ट्र की परिभाषा क्या है? धर्म की व्यवस्थाओं से पता चलता है कि परिवार की परिभाषा क्या है? धर्म की व्यवस्थाओं से पता चलता है कि हमारे समाज क्या है? धर्म की व्यवस्था से पता चलता है कि हमारे लिए क्या कार्य व अकार्य हैं? धर्म की व्यवस्था से हमें भगवान का पता चलता है । तो धर्म को छोड़कर भगवान को याद करने की शिक्षा आजकल कथावाचक जो देते हैं? ये ही हिंदुओं को विनाश की तरफ ले जा रहे है? पहले धर्म के कर्तव्य को पूरा करिए। धर्म के कर्तव्यों

Edit with WPS Office

को पूरा करने के बाद, जो समय बचता है उसे ईश्वर चिंतन में लगाइए? एक तरफ आपकी पत्नी आपके बच्चे भूखे मर रहे हैं? और आप माला लेकर मंदिर में भगत जी बने बैठे हैं। यह धर्म नहीं है, ये अधर्म की परिकाष्ठा है। एक तरफ हमारा राष्ट्र असुरक्षित है? लोग हमारे धर्म पर आक्रमण कर रहे हैं, लोग हमारे धर्म भाइयों को मार रहे हैं। ऐसे में अगर मैं माला लेकर बैठ जाऊं? और मैं समझु कि भगवान मुझे मोक्ष देंगे। तो मैं यह बताना चाहता हूं, भगवान मुझे मोक्ष नहीं देंगे ,मैं हमेशा के लिए अपने कर्तव्य का पालन न करने के कारण हमेशा के लिए अधर्म के रास्ते पर चलते हुए हमेशा के लिए नरर्क के अंधेरों में पडने वाला हूं। बल्कि कई बार तो यह होता है कि लोगों को नरर्क भी नसीब नहीं होता? जो लोग धर्म के नाम पर अधर्म करते हैं? जो लोग धर्म से विश्वास घात करते हैं, जो लोग दूसरों को उनके करण्य कर्तव्य से हटकर अकरण्य की ओर ले जाते हैं? उन लोगों को नरर्क भी नसीब नहीं होता?।

जो सत्य व अपने धर्म कर्तव्य का जो पालन करते हुए ईश्वर के भजन में डूबा रहता है, उसे ही मोक्ष का द्वार प्राप्त होता है।

मैं गीता से आपको समझता हूं___देखिए

भगवान श्री कृष्ण ने पूरी ताकत लगाई की महाभारत का युद्ध ना हो। तो उन्होंने कौरवों से यह कहा, अगर तुम पांच गांव भी दे दोगे तो यह युद्ध टल जाएगा? कौरवों ने पांच गांव देने से मना कर दिया? उसके बाद भगवान श्री कृष्ण ने करण से कहा, करण यदि तुम कौरवों का साथ छोड़कर पांडवों के साथ आ जाओ ?वह तुम्हारे भाई हैं, जब तुम पांडवों के साथ आ जाओगे तो पांडव अपना सारा राज्य तुम्हें दे देंगे। और तुम राजा बनोगे। करण अपने कर्तव्य से बंधा हुआ था। उसने मना कर दिया।

एक बार श्री कृष्ण से द्रोपती ने कहा, हे केशव ,यदि आप इस युद्ध को टाल दोगे? तो मेरे अपमान का क्या होगा? भगवान श्री कृष्ण ने कहा,, द्रोपती यह करोड़ों लोगों के जीवन का प्रश्न है, इस समय मैं तुमसे यह नहीं कह सकता तुम सही हो क्योंकि तुम्हारा मान सम्मान करोड़ों लोगों के जीवन के बराबर नहीं हो सकता? करोड़ औरतें विधवा हो जाएगी ,करोड़ों बच्चे अनाथ हो जाएंगे ,केवल किसलिए तुम्हारे मान सम्मान के कारण इसलिए द्रोपती युद्ध चाहने वाली हट मत करो, इसलिए मुझे शांति का प्रयास करने दो। लेकिन

Edit with WPS Office

जब उनके शांति के सारे प्रयास असफल हो गए और और कौरवों पांडवों की सेना जब आमने-सामने खड़ी थी? और अर्जुन ने यह कह दिया, महाराज में युद्ध नहीं करूंगा। देखिए सोचिए कितना बड़ा स्वर्णिम अवसर हुआ होगा? (जब अर्जुन ने मना कर दिया युद्ध करने से और भगवान श्री कृष्णा कैसे उपदेश देते हैं कैसे समझाते हैं अर्जुन को)
अगर भगवान श्री कृष्ण के स्थान पर आज के समय जो हमारे कथावाचक धर्म गुरु होता तो वो क्या कहता? वो कहता, अरे अर्जुन कितनी अच्छी बात है देख तेरे परिवार वाले भी उधर हैं और मेरे तेरे परिवार वाले भी उधर हैं एक काम करते हैं यहां से चलते हैं दोनों कहीं जंगल में बैठेंगे अपना आश्रम बनाएंगे। भगवान का नाम लेंगे थोड़े दिनों में अपना मंठ स्थापित कर देंगे? बना देंगे। कुछ दिनों में महंत बन जाएंगे और फिर अपना धंधा अच्छा चलेगा क्यों इस युद्ध के चक्कर में फंसे रह? अहिंसा परमो धर्म का नारा देते हुए घोषित करते हुए यहां से निकल पड़ते हैं 😂😂।।
अब हम भगवान श्री कृष्ण का उपदेश बताते हैं कैसे अर्जुन को दिया,? अर्जुन जो पूरी पांडव सेना की रीड है। वह युद्ध करने से मना कर रहा है लेकिन उस समय जब भगवान श्री कृष्ण की गीता वाणी शुरू होती है ? भगवान हंसने लगते हैं ,क्यों ?क्योंकि वह जानते हैं दुनिया का सबसे बड़ा महारथी युद्ध करने से मना कर रहा है । उन्होंने अर्जुन को युद्ध के लिए तैयार किया और अर्जुन से कहते हैं, अरे अर्जुन ऐसे कठिन समय में तेरे अंदर यह दुर्गुण भाव कैसे आया यह हम आर्यों के आचरण के विरुद्ध है ,यह हम आर्यों के धर्म के विरुद्ध है, अगर आज तु युद्ध को छोड़कर चला गया, तो समझ लो ना ही तुम्हें सम्मान मिलेगा, ना ही तुम्हें अधिकार मिलेगा, तुम घर से बेघर हो जाओगे, भीख भी नहीं मांग पाओगे, भीख के लिए भी तड़पा देगा दुष्ट दुर्योधन? इसलिए ह कोन्ते ! अपने समान के लिए ,अपने अधिकार के लिए और अपने परिवार के लिए युद्ध कर अपने धर्म के लिए युद्ध कर धर्म स्थापना के लिए युद्ध कर, उठ खड़ा हो । जब धर्म ने युद्ध मांगा, तब तु युद्ध को छोड़कर जा रहा है? जब धर्म पर अधर्म हावि होने लगा तुमने कायरता दिखा दी।? जब अधर्मियों की फौज अत्याचार करने के लिए खड़ी हो गई? और तुम्हारे पास धर्म होते हुए भी कायरता जैसी बातें कर रहे हो, जो भूमंडल का सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर है। और तू धर्म को छोड़कर चला गया तो

Edit with WPS Office

ऐसे में धर्म तुझे कभी क्षमा नहीं करेगा? अगर धर्म तुझे क्षमा नहीं करेगा ना तो तुझे कभी स्वर्ग (सुख) मिल पाएगा? ना ही तुझे कभी कीर्ति मिलेगी? ना ही तुझे समाज में इज्जत मिलेगी? जो ऐसे कठिन समय में धर्म पर संकट के समय धर्म छोड़कर चले जाते हैं तो वो समय चाहे कितना अच्छा लगे, (शत्रुओं को भाई-भाई समझकर) जो कोई अपने शत्रु को भाई समझे जो उस पर अन्याय कर रहा है तो यह सबसे बड़ी कायरता है । ऐसी सोच रखने कायरों का काम है। और उनकी संपत्ति बच जाती है लेकिन इतिहास उन्हें कभी क्षमा नहीं कर सकता। ऐसे कायरों कि जान तो बच जाती है। ऐसे व्यक्तियों को ना ही धर्म का पता ,ना ही सत्य का पता होता है, ऐसा व्यक्ति बुद्धिहीन अज्ञानी होते हैं। इसलिए हे अर्जुन ! तुम ना ही अज्ञानी हो ?ना ही बुद्धिहीन हो, तुम हर गुण में सर्वश्रेष्ठ हो।

मेरा अपना उदाहरण

इतिहास ऐसे व्यक्तियों को याद करता है इतिहास याद करता है वीर शिवाजी को, इतिहास याद करता है महाराणा प्रताप को। इतिहास याद करता है गुरु तेग बहादुर को गुरु गोविंद को जिन्होंने धर्म के खातिर अपना बलिदान कर दिया। इतिहास याद करेगा बंदा बैरागी को। इतिहास याद करेगा चंद्रशेखर को। इतिहास याद करेगा सुभाष चंद्र बोस को।

और इस देश में एक बहुत गंदी लहर चली है गांधी जैसे लोग भी महान बताने लगे। इतिहास जब सही आकलन करेगा तो इतिहास सम्मान करेगा नाथूराम गोडसे का? इतिहास याद करेगा कमलेश तिवारी को। इतिहास योद्धाओं का सम्मान करता है। अगर अर्जुन ने उस दिन युद्ध छोड़ दिया होता तो इतिहास में न कभी अर्जुन अमर हुआ होता ,ना ही भगवान श्री कृष्ण को उनका उचित स्थान मिला होता । तो फिर कोई भी उन्हें भगवान नहीं मानता । धर्म पुकारता है धर्म के लिए लड़ने वालों को ही कल का अवतार बताया जाता है? क्योंकि उनमें ही दैवीय अंश है। (यहां हमने अवतार की बात नहीं की अवतार उसको कहते हैं जो गुणों से श्रेष्ठ हो इसको ईश्वर का इस अवतार नहीं कहते? बल्कि दैवीय अंश कहते हैं । और यह दैवीय अंश अर्जुन और कृष्ण में था। मैं इतना जरूर मानता हूं, भगवान परमात्मा जिन लोगों को अपने कार्य के लिए नियुक्त करते हैं उनमें कुछ ना कुछ दैवीय अंश एक मुझ साधारण व्यक्ति से ज्यादा होता है। चाणक्य जी

Edit with WPS Office

अपनी नीति में कहते हैं, जो महापुरुष धर्म युद्ध की तरफ चले वह युद्ध को ही धर्म कहते हैं। तो यह सारी अवधारणाएं हम लोगों को समझनी पड़ेगी। आजकल के जो कथा वाचक है वाचिका है, उनको धर्म से कोई लेना-देना नहीं है? हमारे सनातन धर्म में पुरुषों का श्रृंगार करना वर्जित है। तो आप लोगों ने देखा होगा आजकल के कथावाचक श्रृंगार में रहते हैं। जो व्यक्ति सनातन का धर्म प्रचारक है उसका श्रृंगार करना वर्जित है, सबसे पहले जो सन्यासी होता है उसको शीशा देखना, बालों में तेल लगाना ,खुशबू के तेल लगाना वर्जित है। जो लोग श्रृंगार करके व्यास पीठ पर बैठते हैं । जो लोग ब्यूटी पार्लर में जाकर व्यास पीठ पर आकर बैठते हैं ,जिन लोगों के कपड़े संतों के कपड़े नहीं बाजीगरी के जैसे कपड़े होते हैं। हालांकि वह कपड़े बड़े महंगे होते हैं, तो ऐसे लोगों को धर्म प्रचारक मानेंगे तो इसमें आपकी ही मूर्खता होगी? ऐसे लोग जो श्रृंगार करके कथा करते हैं वह धर्म प्रचारक नहीं है । वास्तव में वह आपका मनोरंजन करते हैं वह ऐसी बातें करते हैं जिससे आप खुश हो, तो ऐसे ढोंगी बाबाओ से सावधान रहो। क्योंकि धर्म खुशी में नहीं होता, । धर्म सत्य में है ,कड़वी बातों में भी धर्म होता है। धर्म में तो सही गलत बताया जाता है । सही क्या है?गलत क्या है? क्या करना चाहिए? क्या नहीं करना चाहिए? धर्म की जगह लोगों को गीत संगीत सुना देना? यह अधर्म की परिकाष्ठा है। ये लोग ऐसे कठिन समय में जब सनातन इतने बड़े संकट में है, लोगों को जो सीखा है रहे हैं, यह वास्तव में अधर्म की परिकाष्ठा है। जब हिंदुओं को उनका शौर्य उनका पुरुषार्थ उनका पराक्रम को जगाने की जरूरत थी? तब आपने आप को धर्माचार्य कहने वाले ये जोकर ये कथावाचकों की मंडली, ये हिंदुओं को सुलाने पर लगे हुए थे । ये हिंदुओं को यह बताने में लगे हुए थे, कि परमात्मा का स्मरण करो गुरु की शरण में आकर परमात्मा की कृपा हो जाती है । इन लोगों को तो पता ही नहीं परमात्मा कौन है ??!परमात्मा तो उस बहते हुए खून में है, जो खून अपने देश अपने धर्म की रक्षा के लिए बहा दिया जाता है? अगर युद्ध इतना जरूरी नहीं होता, तो भगवान राम मेरी माता सीता के लिए युद्ध लड़ने लंका नहीं जाते। धर्म के सम्मान के लिए जब भी हमें युद्ध से बचाना चाहा है तो विधर्मियों ने हमारी बहन बेटियों के साथ बलात्कार जननय अपराध किए हैं, दुर्गति करी है। इसलिए जो धर्म की सही जानकारी नहीं बताते हैं ऐसे

Edit with WPS Office

कथावाचकों से बचना चाहिए ।

जिसका स्वरूप ईश्वर की आज्ञा का यथावत पालन और पक्षपात रहित न्याय सर्वहित करना है । जोकि प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सुपरीक्षित और वेदोक्त होने से सब मनुष्यों के लिए यही एक धर्म मानने योग्य है , उसको धर्म कहते हैं **____ आर्यदेश्यरत्नमाला ______ महर्षि दयानंद सरस्वती ।**
वैशेषिक दर्शन. 1/1
अर्थात जिससे लोक व परलोक दोनों की उन्नतियों की सिद्धि हो , वह धर्म है ।

महाभारत में भीष्म पितामह की दृष्टि में धर्म______
महाभारत शांति पर्व , राजधर्मानुशासन पर्व , अध्याय 109 , श्लोक 10-12
अर्थात जिससे सबकी उन्नति , पालन पोषण हो , तथा जो अहिंसा अर्थात पूर्ण निवेरता , सबसे प्रीति परंतु न्याय अनुसार दंड होवे , निश्चित ही , वह धर्म है ।

भगवान शिव की दृष्टि में धर्म के लक्षण ______
महाभारत अनुशासन पर्व. अध्याय 142 , श्लोक 30 (दाक्षिणात्य पाठ)
श्री महेश्वर ने कहा , देवी उमा से किसी भी जीव की हिंसा न करना , सत्य बोलना , सब प्राणियों पर दया करना , मन और इंद्रियों पर नियंत्रण रखना तथा अपनी शक्ति के अनुसार दान देना गृहस्थ आश्रम का उत्तम धर्म है । अर्थात सरलता ही धर्म है और कुटिलता ही अधर्म है ।

- __________ यहां अहिंसा को पहला धर्म बताया है और अगर पतंजलि योग दर्शन को देखें तो अष्टांग योग में पहला यम है अहिंसा , भगवान पतंजलि ने यह भी लिखा की अहिंसा मूल है , अहिंसा महाव्रत है । अहिंसा से बड़ा कोई व्रत नहीं ।

- **अब अहिंसा क्या है ? इस पर विचार करते हैं______**

प्रायः लोग यह समझते हैं कि अहिंसा का अर्थ है कि किसी से वैर न करना , हमने गांधी के तीन बंदर सुने हैं ___ किसी की बुराई मत देखो ,

Edit with WPS Office

किसी की बुराई मत सुनो और किसी को बुरा मत बोलो । बुरा क्या है , यह भी तो पता होना चाहिए ? अगर राजा किसी की बुराई नहीं सुनेगा ,तो अपराधी को दंड कैसे देगा ? कोई व्यक्ति याचक बनकर न्याय की याचना करने आता है , तो वहां राजा आंख मुंह और कान बंद करके बैठ जाए , तो क्या होगा ? अर्थात अहिंसा का अर्थ समझा ही नहीं गया , अहिंसा का अर्थ प्राचीन ऋषियों के काल के बाद सबसे ज्यादा किसी ने समझा तो ऋषि दयानंद ने समझा , ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश में अहिंसा का अर्थ करते हुए लिखा है ___

प्राणी मात्र के प्रति वैर-त्याग अर्थात सबसे प्रीति करना ।

यहां अर्थात सबसे प्रीति करना नहीं लिखते , तो अहिंसा समझ में ही नहीं आती । परमाणु बम किसी की हिंसा नहीं करता , कोई उसे चलाएगा तब वह हिंसा करेगा । बंदूक की गोली भी स्वयं किसी की हिंसा नहीं करती , परंतु क्या वह अहिंसा हो गई ? कबूतर किसी की हिंसा नहीं करता , कोई मारने आए तो आंख बंद कर लेता है , क्या यह अहिंसा हो गई ? पत्थर भी हिंसा नहीं करता , यदि कोई उसे सिर में मार दे , तो वह मारने वाले की हिंसा हुई , क्या इससे पत्थर अहिंसक हो गया ? इसलिए ऋषि ने जोड़ा ___ सबसे प्रीति करना , उधर महर्षि व्यास ने योग दर्शन के भाष्य में अहिंसा की परिभाषा करते हुए लिखा है ___

सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानाम अनभिद्रोह सा अहिंसा , योग दर्शन ।

अर्थात सब प्रकार से सभी कालों में सभी जीवो के प्रति द्रोह नहीं होना चाहिए , वह अहिंसा है ।

मीमसा दर्शन. 1/1/3_____

जिसके लिए वेद की आज्ञा हो , वह धर्म और जो वेद विरुध हो वह अधर्म है ।

भागवत पुराण. 6/1/40_____

जो वेद में कहा है वही धर्म है और जो वेद के विरुद्ध है वही अधर्म है । वेद साक्षात् नारायण स्वरूप है , क्योंकि वे (भगवान के श्वास मात्र) से स्वयं प्रकट हुए हैं , ऐसा हमने सुना है ।

Edit with WPS Office

कूर्म पुराण. 46/129______

एक और इतिहास सहित संपूर्ण पुराण और एक और परम वेद इनमें वेद ही परम है , महान है , श्रेष्ठ है ।

देवी भागवत पुराण. 11/1/26-27______

धर्म के विषय में वेद ही प्रमाण है , जो कुछ वेद अविरुद्ध एवं वेदानुकूल है वही प्रमाणिक है । अन्य नहीं । जो वेद को छोड़कर दूसरे ग्रन्थों को प्रमाणिक मानता है , उसके लिए यमलोक में कुण्ड तैयार है , अर्थात वह यमलोक में जलकुण्डों में गिरता है ।

वेद की महिमा महान है । मानव बुद्धि और उसका सीमित ज्ञान वेद की महिमा का बखान करने में असमर्थ है , अतः मैं गरुड़ पुराण की सम्पत्ति देकर हम इस प्रसंग को समाप्त करना चाहते हैं ।

गरुड़ पुराण. ब्र० का० 102/44______

मैं दुहाई देकर भुजा उठाकर सत्य सत्य कहता हूं कि वेद से बढ़कर कोई शास्त्र नहीं है ? और केशव (नारायण) परमात्मा से बढ़कर कोई देव नहीं है ।

• स्वधर्म और आपद्धर्म

स्वधर्म और **आपद्धर्म** सनातन धर्म की महत्वपूर्ण अवधारणाएं हैं , जो धर्म के विभिन्न पक्षों को समझने में सहायता करती है । दोनों ही शब्द धर्म के पालन से जुड़े हैं , किंतु इनके अर्थ और उपयोग की परिस्थितियां भिन्न-भिन्न होती है । आइए इन दोनों को विस्तार से समझते हैं :

1. स्वधर्म :

स्वधर्म का शाब्दिक अर्थ है " स्वयं का धर्म " या " अपना धर्म " । यह उस

Edit with WPS Office

व्यक्ति के लिए निर्धारित कर्तव्यों , आचरणों , और नैतिक नियमों को दर्शाता है , जो उसकी सामाजिक , पारिवारिक , और व्यक्तिगत स्थिति के अनुरूप होते हैं ।

स्वधर्म व्यक्ति के स्वाभाविक गुणों , समाज में उसकी भूमिका , और जीवन की परिस्थितियों के अनुसार निर्धारित होता है । इसके अंतर्गत व्यक्ति को अपनी सामाजिक स्थिति (वर्ण और आश्रम) के अनुसार धर्म का पालन करना होता है ।

स्वधर्म के प्रमुख पक्ष :

➤ **वर्णधर्म :** व्यक्ति के कर्मों और गुणों के आधार पर वर्ण तय होते हैं ___ ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , और शूद्र । प्रत्येक वर्ण के अपने विशिष्ट कर्तव्य होते हैं । उदाहरण के लिए :

- **ब्राह्मण** का धर्म है वेदों का अध्ययन करना , ज्ञान का प्रचार - प्रसार करना , और धार्मिक अनुष्ठान करना ।
- **क्षत्रिय** का धर्म है समाज की रक्षा करना , शूरवीरता दिखाना , और न्याय की स्थापना करना ।
- **वैश्य** का धर्म है व्यापार , कृषि और समाज के आर्थिक हितों का ध्यान रखना ।
- **शूद्र** का धर्म है सेवा करना और समाज में अन्य वर्णों के कार्यों में सहयोग देना ।

➤ **आश्रम धर्म :** यह जीवन के चार आश्रमों **(ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , सन्यास)** के अनुसार होता है , जो व्यक्ति की जीवन यात्रा के विभिन्न चरणों का प्रतिनिधित्व करते हैं । हर आश्रम के अपने विशेष कर्तव्य और दायित्व होते हैं ।

- **ब्रह्मचर्य** का धर्म है अध्ययन और गुरु सेवा ।
- **गृहस्थ** का धर्म है परिवार का पालन पोषण , समाज सेवा , समाज सेवा , और बढ़ना ।

Edit with WPS Office

- **वानप्रस्थ** का धर्म है सांसारिक जीवन से धीरे-धीरे संन्यास की ओर बढ़ना ।
- **सन्यास** का धर्म है संपूर्ण रूप से ईश्वर के प्रति समर्पित जीवन जीना और संसार से विरक्ति ।

मनुष्य जब परिस्थिति एवं अवस्था में होता है वही उसका स्वधर्म होता है स्वधर्म का पालन करने से व्यक्ति अपने कर्मों के अनुसार जीवन में शांति , संतुलन और मोक्ष की ओर अग्रसर होता है । **भगवत गीता. 3.35** में भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा है " स्वधर्मे निधनं श्रेय " **परधर्मो भयावह " (अपने स्वधर्म का पालन करते हुए मृत्यु को प्राप्त होना भी श्रेयस्कर है , दूसरों का धर्म पालन करना भयावह है)** इसका तात्पर्य यह है कि हर व्यक्ति को अपने स्वधर्म के अनुसार ही आचरण करना चाहिए ।

2. आपधर्म :

आपद्धर्म एक महत्वपूर्ण अवधारणा है , जिसका उल्लेख वैदिक साहित्य में किया गया है और जिसका पालन समाज को आपातकाल या संकट के समय करना होता है । जिस तरह से सृष्टि में **सुकाल** (अनुकूल समय) और **आपातकाल** (संकट का समय) आते जाते रहते हैं , उसी तरह धर्म भी इन परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है । शुद्ध धर्म का पालन तब तक होता है जब तक सब कुछ सामान्य और व्यवस्थित होता है , परंतु जब कोई संकट या आपत्ति आती है , तब आपद्धर्म का पालन आवश्यक हो जाता है ।

आपद्धर्म और वर्ण व्यवस्था का संबंध :

वर्ण व्यवस्था , समाज की कार्य प्रणाली को संतुलित और संगठित रखने के लिए बनाई गई थी । वैदिक सभ्यता में यह व्यवस्था शांति और उन्नति के समय **शुद्धधर्म** का पालन करती है , लेकिन संकट के समय **आपद्धर्म** के सिद्धांत पर आधारित होती है । जब समाज में आश्रम व्यवस्था स्थिर होती है और सब कुछ सामान्य रूप से चल रहा होता है , तब शुद्ध धर्म का पालन

Edit with WPS Office

होता है । उस समय सभी वर्णों के लोग अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं :

- **ब्राह्मण शिक्षा** , वेद अध्ययन , और ज्ञान के प्रसार में लगे रहते हैं ।
- **क्षत्रिय शासन** , रक्षा और न्याय का कार्य करते हैं ।
- **वैश्य व्यापार** और कृषि में संलग्न होते हैं ।
- **शूद्र समाज** की सेवा और विभिन्न कार्यों में सहायता करते हैं ।

परंतु जब कोई आपत्ति या संकट आता है , जैसे कि युद्ध , प्राकृतिक आपदा , या सामाजिक उथल-पुथल , तो आश्रम व्यवस्था अस्थिर हो जाती है , और समाज की रक्षा के लिए वर्ण व्यवस्था को नए स्वरूप से कार्य करना पड़ता है । इस स्थिति में , समाज की रक्षा के लिए **क्षत्रिय वर्ण** की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाती है ।

आपद्धर्म का पालन :

➤ आपद्धर्म का पालन तब किया जाता है जब समाज पर संकट आ जाता है और धर्म की रक्षा के लिए असामान्य कदम उठाने पड़ते हैं । इसका मुख्य सिद्धांत यह है कि संकट के समय व्यक्ति अपने सामान्य कर्तव्यों से हटकर , आवश्यकतानुसार किसी भी कार्य में संलग्न हो सकता है । उदाहरण के लिए :

- जब आपातकालीन स्थिति होती है , तो समाज के सभी लोग , चाहे वे ब्राह्मण हो या अन्य वर्ण के , अपनी अपनी योग्यताओं के अनुसार काम में लग जाते हैं ।
- सामान्य परिस्थिति में सभी ब्राह्मण होते हैं , अर्थात शिक्षा और ज्ञान का प्रसार करते हैं , परंतु जब संकट आता है , तो क्षत्रिय वर्ण का प्रादुर्भाव होता है ।

धर्म की रक्षा : के लिए विपरीत परिस्थिति में शस्त्र उठाना , युद्ध करना ,

Edit with WPS Office

और आवश्यकता पड़ने पर हिंसा का सहारा लेना आपद्धर्म का हिस्सा है । इसे शास्त्रों में उचित माना गया है , क्योंकि धर्म की रक्षा के लिए कभी-कभी साधारण धर्म से हटकर काम करना पड़ता

ऐतिहासिक उदाहरण :

➤ भारतवर्ष के इतिहास में कई बार ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हुई , जब **ब्राह्मणों** ने भी शस्त्र उठाकर धर्म की रक्षा की । कुछ प्रमुख उदाहरण इस प्रकार है :

- **गुरु द्रोणाचार्य** ने , जो एक ब्राह्मण और शिक्षक थे , धर्म की रक्षा के लिए युद्ध में भाग लिया ।
- **भगवान परशुराम** , एक ब्राह्मण पुत्र होते हुए भी , धर्म की रक्षा के लिए शस्त्र उठाएं और क्षत्रियों का विनाश किया ।
- **महाभारत और रामायण** के युद्ध में धर्म की रक्षा के लिए लड़े गए थे ।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि जब धर्म पर संकट आता है , तब वर्ण व्यवस्था का पुनर्निर्माण होता है और सभी लोग अपने सामान्य कर्तव्यों से हटकर धर्म की रक्षा के लिए संगठित होते हैं ।

वर्ण व्यवस्था और आपद्धर्म :

वास्तव में , वर्ण व्यवस्था का समाज को संकट से रक्षा करना और आपत्ति का समाधान करना है । जब संकट आता है , तब हर व्यक्ति , अपनी क्षमता और योग्यता के अनुसार , समाज की रक्षा के लिए अपना योगदान देता है । इस समय सब कुछ राजा के नेतृत्व में संचालित होता है , और सभी एक मत होकर संकट का सामना करते हैं ।

वास्तविक वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य ही सृष्टि को आपत्ति , संकट , मृत्यु और दुख से बचाना है । इसलिए , आपद्धर्म एक अस्थायी धर्म है , जो संकट के समय समाज की सुरक्षा और धर्म की रक्षा के लिए आवश्यक होता है ।

Edit with WPS Office

जैसे ही शंकट समाप्त हो जाता है , वर्ण व्यवस्था अपने सामान्य रूप में लौट आई है और शुद्ध धर्म का पालन फिर से प्रारंभ हो जाता है ।

आपद्धर्म का मुख्य उद्देश्य धर्म और समाज की रक्षा करना है , जब समाज पर कोई आपत्ति या संकट आता है । यह वर्ण व्यवस्था के माध्यम से संचालित होता है , जहां सामान्य परिस्थितियों में सभी अपने-अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं , लेकिन संकट के समय क्षत्रिय वर्ण की भूमिका प्रमुख हो जाती है । इस स्थिति में , समाज के सभी लोग अपने योग्यताओं के अनुसार संकट का सामना करने में जुट जाते हैं । आपद्धर्म यह दर्शाता है कि धर्म को बचाने के लिए कभी-कभी साधारण नियमों से हटकर कार्य करना भी धर्म का ही हिस्सा है ।

निष्कर्ष :

स्वधर्म व्यक्ति का व्यक्तिगत और सामाजिक कर्तव्य है , जो उसकी स्थिति , योग्यता और जीवन के चरणों के अनुसार निर्धारित होता है । यह धर्म सामान्य जीवन में पालन किया जाता है और इसका उद्देश्य व्यक्ति और समाज की उन्नति और संतुलन बनाए रखना है ।

आपद्धर्म , इसके विपरीत , संकट या आपातकाल की परिस्थितियों में लागू होता है , जब सामान्य नियमों का पालन कठिन या असंभव हो जाता है । यह धर्म अस्थायी होता है और परिस्थिति समाप्त होने पर व्यक्ति को पुनः अपने स्वधर्म का पालन करना चाहिए ।

दोनों ही धर्म जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्य को सही आचरण का मार्ग दिखाते हैं , जिससे वह धर्म , सत्य और न्याय के मार्ग पर चलते हुए अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर सके ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 20. ।। बीसवां पृष्ठ ।।

- **सत्यार्थ प्रकाश में ब्रह्मांड की रचना किस प्रकार हुई अष्टम समुल्लास________**
- **पहले एक उदाहरण से हम आपको समझाते हैं,___**

आप एक बिल्डिंग के सामने खड़े हैं, और आपके सामने एक बिल्डिंग बन रही है। आपसे किसी ने पूछा कि इस बिल्डिंग के निर्माण के लिए क्या क्या चाहिए? फिर आपका जवाब होगा कि ,**रॉ मैटेरियल,** और **लेबर !** दूसरे शब्दों में **उपादान कारण मटेरियल सामग्री जैसे,__सीमेंट, सरिया!** निर्मित कारण जिसकी इच्छा शक्ति से वह मटेरियल किसी वस्तु का आकार लेगा यानी की लेबर ! किसी वस्तु के पीछे दो कारण होते हैं **निर्मित कारण, उपादान कारण,!** जिनको प्राचीन सभी दर्शनों ने माना है , और पाया है कि ब्रह्म और जीव,।

जैसे___जगत का निर्माण होता है,! लेकिन महर्षि दयानंद सरस्वती जी का मत कुछ और था, उनके अनुसार जगत के निर्माण में ब्रह्म और जीव के अलावा तीसरे कारण की भी आवश्यकता होती है, वह है **साधारण कारण।** अब यह साधारण कारण क्या है ? अब यह जो बिल्डिंग बन रही थी ,जिसका उदाहरण हमने पहले दिया, आपको समझाने के लिए। उस बिल्डिंग में लेबर के अलावा,तीसरी चीज की भी आवश्यकता होती है। तीसरी चीज है जो बिल्डिंग के निर्माण में सहायक है वह है मशीनरी।

Edit with WPS Office

मशीनरी भले ही मजदूर ने बनाई हो वह मशीनरी बिल्डिंग नहीं है। वह मशीनरी बिल्डिंग के निर्माण के लिए **इंपॉर्टेंट कारण** है। महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने जो तीसरा तत्व बताया, साधारण कारण आज तक किसी ने भी, किसी भी ग्रंथ में इस प्रकार की बात नहीं हुई। इस पृष्ठ में हम महर्षि दयानंद सरस्वती के त्रैतवाद को गहराई से समझने का प्रयास करते हैं। और जानेंगे वह कौन से वैदिक मंत्र है जिसमें त्रैतवाद के संकेत मिलते हैं। और साथ में जानेंगे की त्रैतवाद अन्य दर्शनों में द्वैत ,अद्वैत विशिष्ट अद्वैत हो गया। इनसे कैसे अलग है, **महर्षि दयानंद सरस्वती जी का त्रैतवाद भी वैदिक दर्शनों पर आधारित है।** अब आपको कैसे पता चलेगा की कोई दर्शन वेदांत दर्शन है। उसको जानने के लिए सबसे पहले दर्शनों को उपनिषदों पर आधारित होना चाहिए। और उस उपनिषद में ब्रह्म ,जीव, जगत इन तीन तत्वों की बातें होनी चाहिए। तभी वह वेदांत दर्शन कहलाएगा। उपनिषदों को भी वेदांत दर्शन कहा जाता है । हर दर्शन में मूल तीन तत्व होते हैं, ब्रह्म ,जीव, जगत, इन तीनों में संबंध कैसा है? इन दर्शनों की व्याख्या करने पर पता चलता है। कि यह दर्शन एक तत्व की बात कर रहे हैं, या त्रैतवाद की ! इसी पर महर्षि दयानंद सरस्वती के त्रैतवाद को सम्मिलित किया गया है। सबसे पहले एकतत्ववाद और त्रैतवाद को समझ लेते हैं। एकतत्व में वेदांत दर्शन के जो तीन मूल तत्व हैं, ब्रह्म ,जीव, जगत, इन तीनों को एक ही तत्व माना जाता है। इन तीनों को एक दूसरे से अलग नहीं माना जाता।
जैसे कि आदि शंकराचार्य के अद्वैतवाद दर्शन को देखेंगे तो वहां भी ऐसा ही बताया गया है। **दूसरा है**___द्वैतवाद में क्या होता है कि जो तीन मूल तत्व है ब्रह्म, जीव ,जगत, इनमें से दो ब्रह्म और जीव एक हो जाएंगे। और फिर परिणाम में दो ही मूल तत्व बचते हैं। **अगर हम माधवाचार्य के द्वैतवाद** को देखें माधवाचार्य जी ने यह बोला कि जो जीव और जगत है यह एक है। एक ही तत्व है दोनों को मिलाकर एक तत्व कर दिया और फिर परिणाम में एक तत्व और बचा ब्रह्म वहां पर दो ही तत्व बचते हैं। इसलिए इसको भी द्वैतवाद कहते हैं। वहां पर उन्होंने बोला जो जीव और जगत है यह एक ही तत्व है परतंत्र है। और ब्रह्म को स्वतंत्र तत्व बोला और फिर विष्णु जी का रूप माना। और अगर हम सांख्य दर्शन को देखें तो उसमें द्वैतवाद दर्शन है। सांख्य दर्शन के अनुसार ब्रह्म की सत्ता नहीं होती। वहां पर ब्रह्म को नहीं

Edit with WPS Office

माना जाता है। वहां पर केवल जीव और जगत होता हैं। जीव (पुरुष) जगत (प्रकृति) कहते हैं। वहां पर भी दो ही तत्व है सांख्य दर्शन में इसलिए संख्या दर्शन में भी द्वैतवाद है। तीसरा है त्रैतवाद___

त्रैतवाद_____त्रैतवाद, जिसको आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने किया था। वेदांत दर्शन में ब्रह्म निर्मित कारण बोला गया। ब्रह्म ही सब कुछ करता है, और उसके बाद वेदांत दर्शन में जीव को उपादान कारण बोला गया क्योंकि जीव के आगमन से ही चीजें बनी है। अंतिम जो है वह है प्रकृति यह प्रकृति रचना है। यह तीन चीज थी वेदांत दर्शन में **निर्मित कारण, उपादान कारण ,और रचना।**

लेकिन महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपने त्रैतवाद में बताया, की ब्रह्म निमित्त कारण है। और ब्रह्म के साथ-साथ जीव भी निमित्त कारण है। जीव उपादान कारण नहीं है। क्योंकि जीव भी स्वतंत्र इच्छा रखता है रचना करने की मतलब मनुष्य कुछ ना कुछ बनाता रहता है , आविष्कार करता रहता है, तो महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने ब्रह्म और जीव को एक साथ रखा। और निमित्त कारण बोला, बस थोड़ा सा अंतर किया, कि जो ब्रह्म है वह मुख्य निमित्त कारण है, और जो जीव है वह साधारण निमित्त कारण है। इसलिए ब्रह्म और जीव दोनों को निमित्त कारण रखा। इसके बाद उपादान कारण उन्होंने बोला, यानी जो मटेरियल पदार्थ है, या सामग्री वह प्रकृति है। प्रकृति का ही उपयोग करके ब्रह्म और जीव कुछ बनाते हैं। **उपादान कारण प्रकृति हो गया।** और निमित्त कारण ब्रह्म और जीव हो गया। इसके बाद उन्होंने जो तीसरा तत्व बताया, जिसका अभी तक किसी भी दर्शन में किसी भी ग्रंथ में यह बात नहीं रखी थी। वह है साधारण कारण ।, साधारण कारण क्या करता है, वह निमित कारण की सहायता करता है, उपादान (प्रकृति) के माध्यम से रचना को बनाने का। जैसे___बिल्डिंग का हमने उदाहरण दिया था , वहां लेबर की सहायता कर रही थी मशीन , बिल्डिंग्स को बनाने में, तो वहां पर जो मशीनरी थी, वह साधारण कारण है। दूसरे उदाहरण से समझाते हैं,

- **संसार को बनाने में तीन कारण होते हैं निमित्त कारण, उपादान कारण, साधारण कारण,**

1. **निमित्त कारण __यानी बनाने वाला उदाहरण __ हलवाई।**

Edit with WPS Office

2. **उपादान कारण __यानी बनाने की सामग्री उदाहरण __सूजी, घी।**
3. **साधारण कारण__यानी अन्य सहयोगी कारण उदाहरण__ कड़ाई, चूल्हा।**

ऐसे ही, इसी प्रकार ब्रह्मांड के उदाहरण में जब ब्रह्मांड की रचना होती है। तो निमित्त कारण ब्रह्म और जीव है। उनकी सहायता कौन कर रहा है, उपादान कारण (प्रकृति)। जिससे यह ब्रह्मांड बनने वाला है, बनाने वाले ब्रह्म और जीव को माना गया। ब्रह्म को मुख्य माना गया

। ब्रह्म के बनाए हुए संसार में जीव भी कुछ ना कुछ बनाता रहता है। ब्रह्म के संसार बनाने के बाद जीव भी रचना करता रहता है। जैसे_ विमान, मशीन आदि।

इसमें जो सहायता करने वाला तत्व है, वह है ज्ञान, प्रयोग ,टाइम, यह सब जो तत्व है, ये सम्मिलित रूप से साधारण कारण है। कारण के बिना कार्य संभव नहीं होता है। इसलिए ब्रह्म और जीव साधारण कारण की सहायता से रचना करता रहता है।

- अब हम देखेंगे की जो महर्षि दयानंद सरस्वती ने यह त्रैतवाद रखा है, किस आधार पर प्रस्तुत किया है। यह किन ग्रंथों और शास्त्रों पुस्तकों से आधारित है। और जब उनसे लोगों ने शास्त्रार्थ किया गया। तो उन्होंने किस तरह से उत्तर दिए, और त्रैतवाद में क्या प्रमाण दिए।

_______त्रैतवाद के वैदिक प्रमाण_________

- महर्षि दयानंद की पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश है। उसमें उन्होंने आठवे समुल्लास में अपने त्रैतवाद के विषय पर विस्तृत चर्चा की है______

उन्होंने आठवे समुल्लास के प्रारंभ में ही मंत्रो के प्रमाण दिए।उन्होंने बताया सृष्टि का निर्माता ब्रह्म ही है, जो अपने सामर्थ्य से इस जगत को बनाता है। यहां पर उन्होंने प्रथम मंत्र में ही परमात्मा के लक्षण बताए हैं,

(ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त १२९, मंत्र ७)

हे मनुष्य! जिससे यह विविध सृष्टि प्रकाशित हुई है जो धारण और प्रलयकर्ता है ,जो इस जगत का स्वामी है, जिस व्यापक में यह सब जगत, उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय को प्राप्त होता है। सो परमात्मा है ! उसको तू जान और दूसरे को सृष्टि करता मत मान।

Edit with WPS Office

(ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त १२९ , मंत्र ३)

यह सब जगत सृष्टि से पहले अंधकार से आवृत्त, रात्रिरूप में जानने के अयोग्य, आकाशरूप सब जगत तथा तुच्छ अर्थात अनन्त परमेश्वर के सम्मुख एकदेशी आच्छादित था। पश्चात परमेश्वर ने अपने सामर्थ्य से कारण रूप से कार्य रूप कर दिया।

(ऋग्वेद मंडल १०, सूक्त १२१, मंत्र १)

हे मनुष्यों! जो सब सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार और जो यह जगत हुआ है और होगा उस का एक अद्वितीय पति परमात्मा इस जगत की उत्पत्ति के पूर्व विधमान था। और जिसने पृथ्वी से लेके सूर्या पृयन्त जगत को उत्पन्न किया है उस परमात्मा देव की प्रेम से भक्ति किया करें।

(यजुर्वेद अध्याय ३१, मंत्र २)

हे मनुष्यों! जो सब में पूर्ण पुरुष और जो नाश रहित कारण और जीव का स्वामी जो पृथ्वी आदि जड़ और जीव से अतिरिक्त है वहीं पुरुष इस सब भूत भविष्यत और वर्तमानस्थ जगत का बनाने वाला है।

(तैत्तिरीय उपनिषद भृगुवल्ली, अनु १)

जिस परमात्मा की रचना से यह सब पृथ्वी आदि भूत उत्पन्न होते हैं जिस से जीते और जिस मे प्रलय का प्राप्त होते हैं, वह ब्रह्म है। उस के जानने की इच्छा करो।

यह मंत्र सिद्ध करते हैं ब्रह्म ही सृष्टि का निर्माता है। आगे महर्षि दयानंद सरस्वती कहते हैं। इन मंत्रों के माध्यम से ही ब्रह्म को ही निमित्त कारण माना है।

इन मंत्रो के अलावा और दो मंत्र दिखाते हैं, वेदांत दर्शन के ब्रह्म सूत्र के प्रथम अध्याय के प्रथम पाद के प्रथम दो मंत्र हैं।____**(१)अथातो ब्रहमजिज्ञासा,,**____

ब्रह्म को लेकर हमारी जो जिज्ञासा है, उसे शांत करना प्रारंभ है।

(२)

जन्माधस्य मत:____**शारीरक सू०, अध्याय १, सूत्र २**

Edit with WPS Office

जिस से इस जगत का जन्म, स्थिति और प्रलय होता है ; वही ब्रह्म जानने योग्य है।
अनेकों प्रमाण महर्षि दयानंद सरस्वती ने दिए हैं, और प्रमाण हम नहीं दिखा सकते पीडीएफ अधिक बड़ी हो जाएगी। विस्तृत प्रमाण जाने के लिए सत्यार्थ प्रकाश का आठवां समुल्लास पढ़ें।____
ब्रह्म को सृष्टि का निर्माता कारण माना है, हमारे ग्रंथों ने भी ब्रह्म को निमित्त कारण माना है। महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने इसी विचारधारा को आगे बढ़ाया। और ब्रह्म को निर्मित कारण माना।
लेकिन जब उनसे किसी ने प्रश्न किया, क्या जो अद्वैत वेदांत की धारणा है, ब्रह्म का मिथक रूप जगत है क्या यह सही है ? ब्रह्म से ही सृष्टि का जन्म होता है क्या ! ब्रह्म ही अपना स्वरूप बदलकर जगत रूप धारण करता है क्या ?? इस पर महर्षि दयानंद उत्तर देते हैं! महर्षि कहते हैं, मैं इस अद्वैत की इस विचारधारा को नहीं मानता। कि ब्रह्म ही अपने स्वरूप को जगत में प्रणित करता है। अर्थात ब्रह्म जगत है। इसलिए ब्रह्म जगत हो जाएगा ,क्योंकि इस अवधारणा से ब्रह्म उपादान कारण बन जाएगा जगत का क्योंकि ब्रह्म अपने आप का प्रयोग कर रहा है ,जगत को बनाने में इसलिए ब्रह्म उपादान कारण बन जाएगा। और फिर ब्रह्म के साथ क्या होगा कि कालांतर में ब्रह्म विकारी हो जाएगा। मतलब दूसरे शब्दों में अगर आप देखो जगत में जो भी वस्तु चीज हैं, कालांतर में जाकर उसमें विकार उत्पन्न हो जाता है या उसकी मृत्यु हो जाएगी या नष्ट होने लगेगा। इस प्रकार से ब्रह्म भी विकारी हो जाएगा।
दूसरा बड़ा जो कारण महर्षि ने बताया कि ब्रह्म उपादान कारण नहीं हो सकता जगत (प्रकृति) का ! उन्होंने सांख्य दर्शन और वैशिषक दर्शन को सिद्धांत से समझाया। उन्होंने बताया की जो कारण के गुण और स्वभाव होते हैं, वो कार्य में भी जाते हैं, अगर ब्रह्म जगत का उपादान कारण हो गया तो इसका मतलब यह हो गया कि ब्रह्म के भी गुण भी दिखना चाहिए। ऐसा नहीं है। क्योंकि कहीं ना कहीं हम देखें ब्रह्म को सच्चिदानंद कहा गया है। **सत् चित् आनंद!** इसका मतलब जो सत है, जिसका चित् आनंद स्वरूप है। और दूसरी तरफ हम देखें जगत में जितने भी प्राणी वस्तु चीजें हैं, सभी दुखी हैं ! तो इस प्रकार से कह सकते हैं, की ब्रह्म जो है वह जगत का

Edit with WPS Office

उपादान कारण नहीं हो सकता। क्योंकि ब्रह्म के भी गुण जगत में हमें नहीं दिखते हैं। इसलिए जगत का जो कारण होगा उपादान कारण वह कुछ और होना चाहिए। इसलिए महर्षि ने कहा,, वह उपादान कारण प्रकृति है। इसका मतलब यह हुआ की ब्रह्म आपको (खुद को अपने आप को) जगत में सम्मिलित नहीं करता। बल्कि ब्रह्म प्रकृति को जगत में पृणित करता है। प्रकृति ही वह पदार्थ है, जिससे जगत और ब्रह्मांड बनता है। **यहां पर प्रश्न करने वाले ने पूछा?** महर्षि से पूछा,, कि इसका मतलब तो यह हुआ ब्रह्म प्रकृति के माध्यम से जगत बनाता है। ?? यहां पर महर्षि जी उत्तर देते हैं ! की प्रकृति भी ब्रह्म जैसी ही है। जैसे ब्रह्म न किसी से जन्म लेता है, और न मरता है। वैसे ही प्रकृति ना किसी से जन्म लेती है न मरती है। प्रकृति भी ब्रह्म और जीव की तरह है। प्रकृति भी अनादि है। यहां पर उन्होंने एक बात और बोली जो जीव है। वह भी स्वतंत्र तत्व है। वह भी ना किसी से जन्म लेता है ना मरता है। जीव भी अनादि है। बस अंतर यह है कि जीव भी निमित्त कारण है। जब ब्रह्म प्रकृति का उपयोग करके जगत को बनाता है। जगत के जो पदार्थ होते हैं, उनका उपयोग करके जीव भी कुछ ना कुछ बनाता रहता है। रचना करता रहता है। ब्रह्म जैसे मुख्य निमित्त कारण है। वैसे ही जीव जो है साधारण कारण हो गया है। जीव भी अनादि है, जीव भी जन्म नहीं लेता। न मरता है। अब जो तीन तत्व हैं, ब्रह्म ,जीव ,जगत यह तीनों तत्व अनादि है। स्वतंत्र है। इसमें से ब्रह्म और जीव निमित्त कारण है। और प्रकृति उपादान कारण। इन तीनों के अस्तित्व को अच्छे से समझने के लिए ______

(ऋग्वेद प्रथम मंडल, सूक्त १६४ , मंत्र २०)

सुंदर पंखों वाले दो पक्षी एक जीवात्मा, और दूसरा ब्रह्म परमात्मा दोनों मित्र और साथी हैं। अस्तित्व के एक ही पेड़ पर एक साथ घोंसला बनाते हैं। दोनों में से एक जीव आत्मा , फल को स्वाद से खाता है, और आनंद लेता है, और साथ ही परिणाम भी भुगतता है। दूसरा पक्षी (परमात्मा) बिना कुछ खाए , बस चारों ओर व्यापक रूप से देखता रहता है।

- यहां पर जो पहली चिड़िया है, जो फलों का भोग कर रही है। अर्थात अपने कर्मों को भोगने वाली है, वह जीव है। दूसरी तरफ जो चिड़िया है

Edit with WPS Office

वो वृक्ष पर बैठी है। और आनंद भाव से सब को देख रही है। और अपने आनंद भाव में स्थित है। वह परमात्मा है। और यह जो पेड़ है यह जगत (प्रकृति) है।

इस प्रकार हमने आपको उदाहरण देकर समझाया है। यह पेड़ जगत को दिखा रहा है। इस पेड़ ने जन्म कैसे लिया है ? एक बीज से उसी बीज को यहां पर दयानंद सरस्वती जी ने प्रकृति बोलते है। परमात्मा, आत्मा ,प्रकृति इन तीनों के कारण ही वृक्ष का जो जगत है , यह संभव हो पाता है। इसलिए परमात्मा आत्मा प्रकृति को अनादि माना गया है । जो एक दूसरे से स्वतंत्र हैं। जिसमें परमात्मा और आत्मा निमित्त कारण में रखे गए हैं। और जो प्रकृति है वो उपादान कारण रखी गई है। इनके संयोग से वृक्ष रुपी जगत जन्म लेता है।

अब इन दोनों कारणों से निर्मित कारण ,उपादान कारण के अलावा महर्षि दयानंद सरस्वती ने एक साधारण कारण भी प्रस्तुत किया। और उन्होंने बताया कि साधारण कारण से ही बीज जो है, वृक्ष रूप में पृणित होता है।

निमित्त कारण__ वह है जिसके बनाने से कुछ बने, ना बनाने से ना बने। जैसे__ हमारे ब्रह्म और जीव!

उपादान कारण__ वह है, जिसके बिना कुछ ना बने, जैसे__ प्रकृति,,या संसार को बनाने वाली सामग्री।

और इसी में महर्षि दयानंद सरस्वती ने महर्षि कणाद की ही तरह है परमाणु को भी प्रकृति माना है। जगत नहीं माना है। क्योंकि जगत को बनाने की एक सामग्री है, इसलिए परमाणु को भी प्रकृति माना है। और इसके बाद अंतिम कारण माना है रचना का।

साधारण कारण__जो सहायता करता है जो एक साधन होता है ! जैसे__ कुम्हार घड़ा बनाता हैं, जो उसकी चाल है वहां पर, वह साधारण कारण है !

दोस्तों जब महर्षि जी ने अपने त्रैतवाद के विचार को सबके सामने प्रस्तुत किया। तब कुछ प्रश्नकर्ताओ ने पूछा,,? कि अगर ईश्वर को जगत बनाने के लिए प्रकृति की आवश्यकता है ! तो फिर ईश्वर सर्वशक्तिशाली नहीं रहेगा ! जो सर्वशक्तिशाली नहीं है, तो ईश्वर कैसा ?? तो यहां पर महर्षि जी उत्तर देते हैं,, की सर्व शक्तिशाली वह नहीं होता, जो असंभव कार्य को कर दे। अगर ऐसा होता तो ब्रह्म दूसरे एक नए ब्रह्म को जन्म दे देता ! या फिर अपने आप

Edit with WPS Office

का विनाश कर लेता । लेकिन ऐसा नहीं होता। इसलिए सर्व शक्तिशाली का मतलब यह नहीं है कि वह असंभव कार्य कर दे। सर्व शक्तिशाली का मतलब यह है, कि ईश्वर में इतनी शक्ति, इतना सामर्थ्य है कि वो साधारण कारण, और उपादान कारण का उपयोग करते हुए, जगत को बना सकता है, धारण कर सकता है, तथा और उसका प्रलय कर सकता है। इसलिए वह सर्वशक्तिशाली है। उसके बनाए हुए जगत में उससे ज्यादा कोई शक्तिशाली नहीं होता है। इसलिए ईश्वर सर्व शक्तिशाली है, सामर्थ्यवान है। ना कि इसलिए कि वह असंभव कार्य करें।

अब यहां पर प्रश्नकर्ता प्रश्न पूछते हैं !? कि ईश्वर जगत को बनाता ही क्यों है ?? इसके पीछे का प्रयोजन क्या है??

तो यहां पर महर्षि जी उत्तर देते हैं,, यहां पर महर्षि जी उत्तर में प्रश्नकर्ता से ही पूछते हैं,? कि **आपकी आंखों का क्या प्रयोजन है** ! देखना ही तो है। इसी प्रकार से जिस ब्रह्म में ज्ञान है ,शक्ति है , बल सामर्थ्य है जगत को बनाने का। उसका क्या प्रयोजन रह जाएगा। अगर ब्रह्म सृष्टि रचना नहीं करें। जगत की उत्पत्ति ना हो। जिस प्रकार से नेत्र का देखना स्वभाव है। उसी प्रकार से ब्रह्म का स्वभाव है, जगत को उत्पन्न करना ।____!!

- **महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश के आठवें समुल्लास में मंत्रों और शास्त्रों के प्रमाण सहित माध्यम से अपने त्रैतवाद को सृष्टि निर्माण के त्रैतवाद को प्रस्तुत किया है,।**

मुझे आशा है, कि लोगों की समझ में आ गया होगा मैंने बड़ी ही मेहनत से सरल भाषा में आपको समझाने का प्रयास किया है, धन्यवाद।।

•त्रैतवाद को एक सरल भाषा में समझे

त्रैंतवाद के प्रमाण हम ऊपर लिख आए हैं

एक ऋषि सन्यासी ऐसा है इस हिंदुस्तान में जिसका कोई आश्रम नहीं है सच्चा त्यागी सच्चा सन्यासी जो आदमी सन्यासी है उसे धन संग्रह का क्या मतलब इसलिए लोग महर्षि दयानंद सरस्वती को समाज सुधारक मानते हैं! क्योंकि उन्होंने कहा और देखा कि इस समाज में अधिक अंधविश्वास

Edit with WPS Office

पाखंड कुरीतिया फैली हुई है, तो उन्होंने सोते हुए समाज को जगाया ? इस समाज को जगाओ जब यह समाज जागेगा ही नहीं तो ये क्या ब्रह्म को समझेंगे ??(क्योंकि महर्षि दयानंद सरस्वती के समय पाखंडवाद चरम सीमा पर था।) दयानंद को लोग समाज सुधारक समाज का उदहारक पाखंड खंडनी समाज को निर्मल रूप बनाना और समाज के मल को त्याग देना उसके बाद ब्रह्म का ज्ञान देना इस समाज को, क्योंकि ब्रह्म का ज्ञान होना आवश्यक है? इसलिए हम आपको एक घटना बताते हैं? जब बुद्ध के पास सवाल लेकर आए लोग क्योंकि उस समय उनके ज्ञान की चर्चा दूर-दूर तक थी। जब ब्राह्मण लोग बुद्ध के पास गए सृष्टि प्रकृति से रिलेटेड प्रश्न पूछते थे? तो भगवान बुद्ध एक ही बात कहते थे यह प्रश्न हम सभी को जानने के लिए नहीं है। ऐसे प्रश्नों को हम जान नहीं सकते? जब ब्राह्मण ने अपने इस प्रकार के प्रश्न रखें तो बुद्ध ने कहा आपके प्रश्नों का उत्तर आज से पहले ना मिला था , ना मिलेगा, ना आगे मिलने की उम्मीद है।? और बुद्ध ने उन ब्राह्मणों से यह भी कहा इन ऐसे प्रश्नों से लोगों को फंसा दो, तुम्हें पैसे चढ़ाते रहेंगे क्योंकि ब्राह्मण यही प्रश्न करते थे कि यह संसार किसने बनाया और कब बना? ब्राह्मण लोग बुद्ध से शास्त्रार्थ करने की कोशिश करते थे लेकिन बुद्ध सृष्टि से रिलेटेड जगत से रिलेटेड जो प्रश्न रहते थे उनको ठुकरा देते थे कि यह प्रश्न हमारे सभी को जानने के योग्य नहीं है? बुद्ध कहते थे यह सब मैटाफिजिक्स का जंगल है इन ऐसे प्रश्नों को त्यागों। और यहां से शुरू करो सर्वादुखम इसका मतलब है हर आदमी को कोई ना कोई दुख है उसके जानने की कोशिश करो और दुख दूर करो इस प्रकार बुद्ध ने कहा,,? जब बुद्ध इस तरह कहते थे तो लोग लोगों ने कहा इनको बुद्धि प्राप्त हो गई। फिर ब्राह्मणों ने कहा बुद्धि प्राप्त नहीं हुई बल्कि बुद्धू है यह बुद्धू का शब्द वहीं से निकला है। जो मैटाफिजिक्स (तत्व विज्ञान सृष्टि विज्ञान) के बारे में नहीं जानता वह बुद्धू होगा।

तो इसी प्रकार यहां भी लोगों ने कहा दयानंद समाज का सुधार करेगा लेकिन मैटेफिजिक्स के बारे में नहीं जानेगा? ऋषि दयानंद ने सोचा , तो कभी बुद्ध की तरह बुद्धू कहना शुरू कर देंगे तो दयानंद सरस्वती को लगा कि अगर भारत के अंदर सुधार करना है ज्ञान फैलाना है तो पहले मैटाफिजिक्स लानी पड़ेगी बिना मैटाफिजिक्स के लोग ज्ञानी नहीं समझेंगे

Edit with WPS Office

तो मैटाफिजिक्स किसको कहा? ऋषि दयानंद सरस्वती ने उन्होंने कहा, मेटा फिजिक्स का एक ही सोर्स है सब जितने हैं पाखंड कुरीतियों के सोर्स हैं इन सभी को छोड़ एक ही सोर्स पकड़ा ऋषि दयानंद ने वह है वेद, और अन्य जो ग्रंथ है वेद से प्रमाणित है तो वह मान्य ग्रंथ है। अगर किसी ग्रंथ में वेद विरुद्ध बातें हैं तो उसको मान्य नहीं कहेंगे इस प्रकार ऋषि दयानंद सरस्वती ने कहा,,? तो महर्षि दयानंद सरस्वती ने वेदसिद्धांत से हमको बताया? कि ईश्वर एक है ईश्वर ही इस जगत का सृष्टि करता है। उसी ने इस जगत को बनाया है ,उन्होंने ऋषि ने वेद में से कहा,, इस जगत का सृष्टि करता एक ही है दयानंद ने कहा एक ही ईश्वर को मानो वही ईश्वर कल्याण करने से शिव, पालन करने से विष्णु ,उत्पत्ति करने से ब्रह्मा कहलाता है? ये ब्रह्म के गौण नाम है। उसी परब्रह्म का निज नाम ओम है। वह ईश्वर निराकार है, वह ईश्वर किसी नियम के नीचे नहीं है, उस परमेश्वर पर कोई नियम लागू नहीं होता क्योंकि वह परमेश्वर परब्रह्म ओम है। जो इस जगत का सृष्टा भी है और नियंता भी है। सनातन के सभी विद्वानों ने ब्रह्म को एक माना है शंकराचार्य ने भी ब्रह्म को एक माना है। वह निर्गुण भी है, निराकार भी है। लेकिन शंकराचार्य ने ब्रह्म के दो टुकड़े कर दिए ?? शंकराचार्य के इस सिद्धांत को महर्षि दयानंद सरस्वती ने ठुकरा दिया। अस्वीकार किया। और कहां,, शंकराचार्य ने ब्रह्म को एक तो माना है लेकिन दो टुकड़े करें हैं, एक अपार ब्रह्म दूसरा पार ब्रह्म। ब्रह्म के एक हिस्से (रूप) को निराकार बता दिया दूसरे हिस्से को सगुण बता दिया? सगुण ब्रह्म किसको कहा शंकराचार्य ने शंकराचार्य ने कहा कि ब्रह्म को जो निराकार है निर्गुण है असीम है जिसको हम देख नहीं सकते अनिवरचीय है, उसको कोई शब्द में उसका वर्णन नहीं कर सकते। उसको जब माया के परदे से देखेंगे देखते हैं तो माया के जो तीन गुण हैं तीन गुण होते हैं माया में सतोगुण रजोगुण तमोगुण जो रजोगुण गुणों के द्वारा से देखते उनको तीन रूप में ही ईश्वर दिखाई दे जाता है। जो सतोंगुण के द्वारा स्थल के द्वारा से देखेंगे उन्हें ईश्वर ब्रह्म नजर आएगा? और जो रजोगुण के हिसाब से देखेंगे तो वह इस जगत को चलाने वाला नियंत्रण करने वाला विष्णु और जो तमोगुण से देखेंगे तो जो इस जगत को अंधकार से मिटाने वाला नष्ट करने वाला उस शिव को। और शंकराचार्य ने यह सगुण का कॉन्सेप्ट बना दिया। और दयानंद सरस्वती

Edit with WPS Office

ने शंकराचार्य के सिद्धांत को अस्वीकार किया। उन्होंने कहा शंकराचार्य माया को मानते थे , मैं माया को नहीं मानता हूं? उन्होंने कहा माया कैसे ब्रह्म को ढंक सकती है? एक उदाहरण से समझो कहीं दुनिया में ऐसा हो सकता है कि अंधेरे ने प्रकाश को ढक लिया? तो मैं शंकर की इस माया की थ्योरी को मानता नहीं हूं। तो जो यह तीन सगुण ब्रह्म बनाए इनको भी नहीं मानता। ?

महर्षि दयानंद सरस्वती ने कहा मैं एक ही ब्रह्म को मानता हूं? जिसके इशारे पर निर्गुण भी है, निराकार भी है , असीम भी है। उस ब्रह्म का कुछ पता नहीं है कहां-कहां से कहां शुरू हुआ कहां खत्म होगा वह अजन्मा भी है ,वह किसी योनि में नहीं आता संसार के अंदर ही रहता है , संसार का नियंता भी है संसार में निर्णय करने वाला भी है। और बड़ा दयालु भी है। दयानंद ने कहा चलो ये ब्रह्म के गुण शंकराचार्य ने सभी मांन लिए हैं? मैंने भी वेदांत से मांन लिए। ? लेकिन शंकर ने जो यह दो ब्रह्म रूप कर दिए है सगुण ब्रह्म और निर्गुण ब्रह्म। मैं इस सिद्धांत को ऐसे अस्वीकार करता हूं। ऋषि दयानंद ने कहा ब्रह्म सगुण हो ही नहीं सकता? ये गुण कहां से आते हैं फिर यही इन गुणों का आधार बनाया, जो सांख्य दर्शन ने बनाया सांख्य दर्शन ने कहा, गुण तो सारे प्रकृति में है। प्रकृति त्रिगुणात्मक है। यह प्रकृति अपूर्व है? पहले से मौजूद है। जब यह प्रकृति पहले से मौजूद थी, तो भगवान क्या करते हैं इस प्रकृति से सृष्टि उत्पन्न करते हैं सारे गुण जो संसार में आते हैं वो प्रकृति के गुणों से आते हैं? प्रकृति को उपादान कारण माना जाता है जगत का। ईश्वर नथिंग में से समथिंग पैदा नहीं कर सकता? ये इस प्रकार विज्ञान वाले भी मानते हैं? की नथिंग में से नथिंग ही निकल सकता है? नथिंग मै से समथिंग नहीं निकल सकता? ईसाई मुसलमान भी मानते हैं कि अल्लाह ने नथिंग में से दुनिया पैदा कर दी?

प्रकृति को उपादान कारण मान करके ईश्वर निर्मित कारण है प्रकृति का। ब्रह्म सत्य है, जगत को मिथ्या नहीं माना है । जब ईश्वर को सृष्टि कर्ता मानते हैं और कर्ता मानते हैं, तो ईश्वर को भोक्ता भी मानना चाहिए ? जो आदमी गलत काम करेगा तो दंड भी उसी को मिलेगा। अगर हम ईश्वर को भोक्ता मान ले तो ईश्वर भी दंड भोक्ता होगा ?

इस पर ऋषि दयानंद ने कहा ईश्वर भोक्ता नहीं है? वो किसी भी नियम से

Edit with WPS Office

बाधित नहीं है? इस प्रकृति को भोगने वाला जो है वही कर्म को भोगने वाला वह जीव है। जीव के अंदर और ईश्वर के अंदर शंकराचार्य ने एक भेद रखा? कि जीव ही ब्रह्म है? जब जीव इस बात का पता लगा लेता है कि मैं ही ब्रह्म हूं? तब वो ब्रह्ममय हो जाता है। ब्रह्म में लीन हो जाता है?

महर्षि दयानंद शंकराचार्य की इस बात को भी नहीं मानते ? जीव और ब्रह्म एक नहीं हो सकते? जीव भोक्ता है और भगवान कैसे भोक्ता हो सकता है ? क्या भगवान को भी कर्मों का दंड मिलेगा ? भगवान का ज्ञान तो सारे संसार का अनंन्त ज्ञान है? सर्वज्ञ है, भगवान सब जगह जानता है ? किस जगह क्या हो रहा है ? और जीव अल्पज्ञ है ? जीव भी तो थोड़ा सा ज्ञान होता है। जो अल्पज्ञ है, भोक्ता है, वह सर्वज्ञ कैसे हो सकता है?? तो इसलिए दयानंद जी ने तीन चीजें अनादि मानी है? इसलिए दयानंद की थ्योरी को त्रैतवाद कहते हैं ? तीन सत्य है। ईश्वर, जीव, प्रकृति। ईश्वर अपनी जगह है, जीव अपनी जगह है, प्रकृति अपनी जगह है, तीनों एक दूसरे से अलग है।

ब्रह्म________ जिसके ईश्वर परमेश्वर परमात्मा आदि अनेक नाम है, यह एक विभु या सर्वदेशी ज्ञान–वती तथा शक्तिमती सत्ता है। जो एक है। अखंड और एक रस है। इसमें किसी भी काल या किसी भी अवस्था मैं भी किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। जीव परिक्षित्र अर्थात एक देशी चेतन सत्ता है। इसको कृतत्व भोक्तृत्व, ज्ञातृत्व वानाणु कह सकते हैं।

जीवात्मा_________ जीवात्मा अनेक अर्थात संख्या की अपेक्षा अनंन्त है । इनमें भिन्न-भिन्न कालों में परिस्थिति के अनुसार ज्ञान की अपेक्षा से परिवर्तन होता रहता है। अर्थात जीव का ज्ञान घटता बढ़ता रहता है। किस जन्म में कितना ज्ञान होता है इसका कोई पता नहीं रहता। और उसी के अनुसार उसकी भोक्तृत्व और कर्तृत्व शक्ति भी प्रभावित होती रहती है।

प्रकृति___________ प्रकृति परमाणुओं देश काल आदि की मौलिक अवस्था का नाम है। इन्हीं के संयोग– वियोग आदि द्वारा सृष्टि बनती बिगड़ती रहती है। प्रकृति जड़ है, उसमें न कर्तृत्व है, न भोकृत्व है, और न ज्ञातृत्व है। यह स्वयं न कुछ कर सकती है, और न सुख दुख का अनुभव करती है। और न इसमें ज्ञान है।

यह हुआ वैदिक त्रैतवाद का विवरण।।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 21. ।। इक्कीसवां पृष्ठ ।।

- ## ।। { परमात्मा } ।।

> ### { ईश्वर की विशेषता/ गुण:--------}

- ईश्वर एक है, अनेक नहीं।
- ईश्वर वास्तव में सत्तात्मक पदार्थ है, कोई कल्पना नहीं।
- ईश्वर निराकार चेतन पदार्थ है।
- ईश्वर आनंद से परिपूर्ण है, अत्यंत सुखकारी है।
- ईश्वर अनादि है, नित्य है अर्थात ईश्वर की उत्पत्ति कभी नहीं हुई, सदा से है,सदा रहेगी।
- ईश्वर सर्वव्यापक सर्वत्र है चारों ओर अनंत तक ऐसा कोई भी स्थान नहीं जहां ईश्वर नहीं?
- ईश्वर सर्वज्ञ हैं अर्थात सभी विधांये जानता है। ईश्वर में अनंत ज्ञान व अनंत बल है।
- ईश्वर न्यायकारी दयालु है, अपने सारे कार्य नियमपूर्वक, न्यायपूर्वक करता है।
- ईश्वर क्षमा नहीं करता क्योंकि जो पूर्णता न्यायकारी होता है, वह क्षमा नहीं करता इसलिए ईश्वर न्यायकारी है।
- ईश्वर पूर्णतया निर्भीक है, तथा अत्यंत पवित्र व शुद्धस्वरूप उसमें किसी भी प्रकार का कोई राग ,द्वेष, ईर्ष्या अपवित्रता नहीं है? ईश्वर कोई है

Edit with WPS Office

अधर्म नहीं करता, पाप नहीं करता।

- ईश्वर सर्वशक्तिमान है इसका गलत अर्थ नहीं करना चाहिए? कि ईश्वर सब कुछ कर सकता है? इसका सही अर्थ है कि ईश्वर अपने नियम पूर्वक कार्यों। जैसे–सृष्टि रचना , कर्म फल देना , समय पूर्वक प्रलय करना, आदि में किसी की मदद नहीं लेते? सर्वशक्तिमान का अर्थ यहां पूर्ण समर्थ होने से है, न की नियम विरुद्ध कुछ भी कर लेने से,?
- ईश्वर अवतार नहीं लेता क्योंकि वह हमेशा सर्वत्र है हर दिशा में हर जगह है। फिर अवतार कहां लेगे ?? ईश्वर प्रकृति से (शरीर आदि से) नहीं बंधता है।
- ईश्वर साकार नहीं हो सकता ? क्योंकि साकार होने से एक निश्चित स्थान में एक निश्चित लंबाई चौड़ाई में आ जाएगा ? जिस ईश्वर में सर्वव्यापकता सर्वज्ञता आदि गुण नहीं रहेंगे? तथा साकार और निराकार दोनों एक साथ नहीं हो सकते? (क्योंकि ईश्वर सच्चिदानंद स्वरुप है जो सदा आनंदमय है) क्योंकि दो विरोधी गुण एक पदार्थ में नहीं आ सकते?
- ईश्वर का मुख्य निज् नाम ओम् है। ईश्वर के विभिन्न कर्म गुण स्वभाव के कारण अन्य गौणं नाम भी है। जैसे कल्याण करने से शिव , व्यापक होने से विष्णु , रचना करने से ब्रह्मा। इंद्र , प्रजापति, सरस्वती, रुद्र, अग्नि, सूर्य ,आदि। ये सभी एक ईश्वर के कर्म अनुसार अलग-अलग नाम।
- ईश्वर का मुख्य कार्य कर्म निम्न है–ईश्वर जीवों के कल्याण के लिए जगत की रचना करता है, जगत का पालन पोषण करता है , और जगत का समय आने पर प्रलय भी करता है , जीवात्माओं को उनके कर्मों का फल देना , और आदि सृष्टि में वेदों का ज्ञान देता है। परमात्मा परमेश्वर के ये पांच मुख्य कार्य होते हैं।।

- ## ।।{ जीवात्मा }।।

- ## { जीवात्मा की विशेषता/गुण–---- }

Edit with WPS Office

- जीवात्मा अनेक बहु संख्यक है , किंतु सीमित है। ईश्वर जीव आत्माओं की संख्या जानते हैं। और जीवात्मा नहीं जान सकती?
- जीवात्मा एक सत्तात्मक पदार्थ वस्तु है , इच्छा पर्यत्न ज्ञान आदि आत्मा के गुण हैं।
- जीवात्मा एकदेशी , निराकार चेतन पदार्थ है।
- जीवात्मा अनादि है, नित्य है, अर्थात जीवात्मा न कभी उत्पन्न हुआ है, और न कभी नष्ट होगा।
- जीवात्मा अल्पज्ञ है, व अल्पशक्तिमान होता
- जीवात्मा का कोई लिंग आकार रंग रूप नहीं होता ? स्त्री पुरुष या नपुंसक लिंग ये सभी शरीर के अंग होते हैं।
- जीवात्मा में स्वभाव से सुख का अभाव है तथा हमेशा उसे सुख की इच्छा रहती है, इसलिए वह प्रकृति या ईश्वर का सुख पाना चाहता है। किंतु प्रकृति का सुख उसे पूर्ण तृप्ति नहीं कर सकता? प्रकृति के रजोगुण वह तमोगुण के कारण उसे सुख की अपेक्षा कई गुणा दुख मिलता है। इसलिए उसे पूर्ण व तृप्त सुख पाने के लिए प्रकृति के बंधनों से छूटने के लिए ईश्वर को (मुक्ति को) पाना होगा।
- जीवात्मा के कण-कण में अर्थात अंदर बाहर सभी और व्यापक है। किंतु जीवात्मा ईश्वर से पृथक (अलग) पदार्थ (वस्तु) है।
- ईश्वर जीवात्माओं को उनके कर्म अनुसार अलग-अलग शरीर योनि में भेजता है। जैसे – कीटंपतंग पशु पक्षी मनुष्य आदि।
- जीवात्मा किसी भी प्रकार की इच्छा करने, प्रयत्न करने अर्थात किसी भी प्रकार का कर्म करने में स्वतंत्र होता है। किंतु कर्म का फल भोगने के लिए ईश्वर के आधीन होता है।
- जीवात्मा का अपने स्वयं का स्वाभाविक ज्ञान, बल सामर्थ्य, अत्यंत कम है। वह ईश्वर की मदद/कृपा से ही देखने सुनने बोलने आदि में समर्थ हो जाता है।
- जीवात्मा को मन बुद्धि इंद्रियां आदि शारीरिक साधन ईश्वर प्रकृति से ही बना कर देता है।
- जीवात्मा का शरीर से संबंध होना, जन्म व शरीर छोड़ना मृत्यु कहलाता

Edit with WPS Office

है।

- सभी जीवात्माएं स्वरूप व स्वभाव से एक जैसी होती हैं ? कोई अंतर नहीं है। किंतु ज्ञान– विज्ञान, संस्कार व कर्म के कारण उनमें अंतर होता है।
- मुक्ति प्राप्त के लिए प्रयास का अवसर जीवात्मा को मनुष्य शरीर में ही होता है, अच्छा (अर्थात मनुष्य शरीर में ही जीवात्मा की मुक्ति होती है)
- मुक्ति मिलने पर जीवात्मा 33 नील 10 खरब 40 अरब में ईश्वर के आनंद को उपभोक्ता है। तथा देखने सुनने आने जाने आदि की विभिन्न शक्तियों ईश्वर से प्राप्त करता है। मुक्ति के बाद शेष बचे हुए कर्म फल के कारण जीवात्मा को पुनः दोबारा से मनुष्य योनि प्राप्त होती है।
- जीवात्मा को कोई भी नष्ट नहीं कर सकता, न ईश्वर, न शस्त्र, न अग्नि न जल आदि के द्वारा आत्मा को नहीं मारा जा सकता। आत्मा अजर अमर अविनाशी है।।

- ## { प्रकृति }

- ## { प्रकृति की विशेषता /गुण }

- ईश्वर वह जीवात्माओं को छोड़कर जो भी दृश्य , अदृश्य पदार्थ (वस्तु) है। वे सभी प्रकृति से बने हैं। अर्थात सूर्य ,चंद्र , तारे , मांस ,खून, हड्डी, मन, बुद्धि,अग्नि, वायु ,जल, पत्थर, मिट्टी, सोना, चांदी, आदि धातुएं कपड़ा , कागज, वृक्ष , फल ,फूल ,अनाज, हाइड्रोजन ,ऑक्सीजन, नाइट्रोजन , इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन, एक्स-रे किरणें, आदि प्रकृति से बने हैं।
- सत्, रज्, तम् नामक मूल परमाणुओं के समुदाय को प्रकृति कहते हैं।
- प्रकृति के परमाणु अर्थात सत्व रज तम आदि नित्य हैं, अर्थात न कभी उत्पन्न हुए, न कभी नष्ट होंगे। प्रकृति की मात्रा सीमित है। परंतु इसे ईश्वर ही जानता है।
- प्रकृति से बने पदार्थ अनित्य होते हैं, अर्थात नष्ट होकर टूट फूट कर मूल

Edit with WPS Office

परमाणुओं में आ जाते हैं। प्रकृति जड़ है इसलिए इससे बने पदार्थ भी जड़ ही रहते हैं ?।

- प्रकृति के परमाणु साकार है, इसलिए इसमें बने पदार्थ भी साकार होते हैं, व स्थान घेरतें हैं।
- ईश्वर प्रकृति के अनेक सूक्ष्म परमाणुओं को लेकर नियमानुसार अपनी अनंत शक्ति और ज्ञान से इस दृश्यमान सृष्टि को बनाते हैं। प्रकृति से बनी इस सृष्टि की उत्पत्ति व प्रलय ईश्वर ही समय आने पर करते हैं?।
- प्रकृति से बने प्रत्येक पदार्थ को मनुष्य एक सीमा तक ही तोड़ सकता है, उसके आगे प्रलय के समय ईश्वर ही तोड़ता है । तोड़ते तोड़ते वह पदार्थ सत्व रज तम नामक परमाणु तक पहुंच जाता है। फिर उसे आगे नहीं तोड़ सकते ? क्योंकि सत्व रज तम नामक परमाणु अविभाज्य अविनाशी है।
- प्रकृति से बने पदार्थ जड़ होने के कारण स्वयं गति नहीं कर सकते ? स्वयं व्यवस्थित नहीं हो सकते ? वे गति तभी ही कर सकते हैं, जब कोई चेतनाओं गति दे बाध्य बल लगाकर वही आधुनिक वैज्ञानिक न्यूटन का नियम है।
- प्रकृति से बने पदार्थ में रूप रस गंध स्पर्श भार आदि गुण होते हैं।
- प्रकृति से बने पदार्थ में सत्व नामक परमाणु के कारण कुछ सुख होता है। अलृप्तिदायक क्षणीक (अस्थाई) व दुख मिश्रित होता है। जैसे रसगुल्ला हमें तृप्ति नहीं कर सकता ? जब तक खाएंगे तब तक ही सुख मिलेगा। ज्यादा खा लिया तो रोग का दुख व कभी खाने की इच्छा होने पर न मिलने वाला दुख , उसे बनाने में कई घंटे लगाना और सुख 2 मिनट का मिलना ? और आदि दुख। अर्थात प्रकृति पदार्थों में थोडे सुख के साथ साथ बहुत सा दुख भी है। केवल ईश्वर में ही बिना दुख के पूर्ण तृप्तिदायक सुख है। अतः प्रकृति से बने पदार्थ का केवल शरीर को स्वस्थ रखने के लिए करना चाहिए ? तथा सुख ईश्वर से प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए ?
- मन ,बुद्धि ,इंद्रियां प्रकृति से बने होने के कारण जड़ है। आत्मा इनसे कार्य करती है। जैसे ‘कैसेट, जड़ है? उसके रोल में गाने कोड़ के रूप में अंकित रहते हैं। जिसे टेप (करैट) द्वारा सुना जाता है । ऐसे ही मन में

Edit with WPS Office

विचारों को कोड रूप में जीवात्मा अपनी इच्छा व प्रयत्न से डालता है ,व पढ़ता है। इसलिए अच्छे या बुरे विचार मन में स्वयं नहीं आ जाते। हम जीवात्मा में अपनी इच्छा से मन में उलटे विचार उठाकर अशांत हो जाते हैं। मन तो जड़ है वह शांत स्थिर है। इच्छाओं पर नियंत्रण व मन पर नियंत्रण कि कल योगाभ्यास द्वारा सीखा जा सकता है ?

- ।। ओउम् ।।

अब प्रश्न यह है कि ईश्वर, जीवात्मा ,प्रकृति है। इस पर विश्वास अनुभव कैसे हो ? यदि हम थोड़ा सत्य जानने की इच्छा करें? रुचि करें, बुद्धिपूर्वक विचारे और स्वयं से प्रश्न पूछे?? तो यह आसानी से समझा जा सकता है। यह सिद्धांत याद रखना होगा। कि किसी भी पदार्थ का अनुभव/पहचान उनके गुण कर्म स्वभाव से होती है । जैसे – अग्नि का अनुभव उसके गुण- ताप के माध्यम से अंधा दृष्टिहीन व्यक्ति भी कर लेता है। पानी का अनुभव उसके गुण तरलता शीतलता में कर सकते हैं। पानी व अग्नि दोनों में रूप गुण होने से उन्हें देखकर भी पहचान सकते हैं। जिस पदार्थ में यह गुण नहीं है और उसी गुण से हम उस पदार्थ को पहचाना चाहेंगे? तो यह कदापि संभव नहीं? जैसे– ईश्वर में रूप (आकृति रंग आदि) गुण नहीं है, और हम सोचे कि हमें रूप गुण से ही ईश्वर दिखे तो यह कदापि संभव नहीं?? ईश्वर व जीवात्मा दोनों के अपने अलग-अलग विशिष्ट गुण कर्म स्वभाव है। माध्यम से हम उन्हें पहचान सकते हैं। अनुभव कर सकते हैं।।

➤ { ईश्वर पर विश्वास /ईश्वर का अनुभव }

- प्रकृति से बने पदार्थ जड़ हैं, वे स्वयं न तो व्यवस्थित रह सकते हैं? न नियम से और न ही स्वयं गति कर सकते हैं। जबकि ब्रह्मांड में सूर्य चंद्र पृथ्वी आदि बड़े-बड़े जड़ पिंड व्यवस्थित नियमपूर्वक गति कर रहे हैं ?

Edit with WPS Office

तो इन्हें कौन बनाता है? इनमें गति कौन देता है ?बड़ी-बड़ी आकाशगंगाओं को किसने धारण किया है? यह कार्य जीवात्मा अल्पज्ञ वह अल्प सामर्थ्य वाला होने से तो कदापि नहीं कर सकता ? अतः यह सभी कार्य ईश्वर नामक चेतन शक्ति ही करती है?!

- मां के पेट में बच्चे का शरीर कौन बनाता है? उसमें आत्मा कौन डालता है? सनी हुई मिट्टी अपने आप घड़ा नहीं बन जाती? ऐसे ही गर्भ में शरीर बनाने वाले पदार्थ होने पर भी अपने आप कान, आंख, हाथ, पैर, नहीं बनते? वैज्ञानिक जिन्हें जीन्स कहते हैं? उन जीन्सों को भी पहले किसने बनाया? काली मिट्टी पानी में एक बीज से कई मीठे मीठे रंग-बिरंगे फल फुल कौन बनाता है? निश्चित रूप से इन कार्यों को करने वाला चेतन ईश्वर ही है।।
- सबसे पहले मनुष्य, पशु ,पक्षी , बीज किसने बनाया? कोई काला, कोई गोरा ,कोई धनवान के घर, कोई निर्धन के घर जन्म लेता है। कोई पुरुष तो कोई स्त्री शरीर में आदि । यह कर्म फल कौन दे रहा है? कोई सूअर कोई गधा तो कोई कुत्ता आदमी बनता है यह कैसे कौन कर रहा है, यह सभी कार्य ईश्वर कर रहा है।
- एक छोटा सा जीव आत्मा हाथी के शरीर में उसे किस प्रकार चलना हिलता है किस प्रकार अल्प शक्ति हो निराकार जीवात्मा एक साकार शरीर के अंदर रहती है। वह किस प्रकार उस शरीर को हिलाते चलाती हैं ? निश्चित रूप से जीवात्मा यह कार्य उनसे
- योगाभ्यास के द्वारा योगी को ईश्वर के गुणों आनंद ज्ञान बल आदि का अनुभव होता है, जिससे वह अत्यंत तृप्ति/ निर्भरता/आनन्द है । यही ईश्वर का साक्षात्कार या प्रत्यक्ष कहलाता है।

➤ {जीवात्मा पर विश्वास जीवात्मा का अनुभव }

- एक मृत शरीर में पहले क्या था, जो उसे हिला डूलाए से चल रहा था और अब नहीं है। निश्चित रूप से वह एक चेतन शक्ति थी, जिसे हम जीवात्मा कहते हैं? एक नन्ही सी चींटी इधर से उधर कैसे चली जाती है ?

Edit with WPS Office

क्या खाना है ?कहां जाना है? उसे कैसे पता चल रहा है । यह सब ज्ञान गुण धारण करने वाले चेतन जीवात्मा के कारण ही हो रहा है।

- ठंडा-गरम ,कड़वा -मीठा ,सौगंध-दुर्गंध आदि यह सब अनुभव करने वाला जीवात्मा ही है। मृत शरीर में जीवात्मा के न होने से वह शरीर कुछ अनुभव नहीं करता है ?
- हमारे शरीर में ऐसा क्या है? जिससे हम इच्छाएं करते हैं। प्रयत्न करते हैं, उत्सुकता, जिज्ञासा करते हैं। नई-नई बातें सीखते हैं, ज्ञान धारण करते हैं, इन सब का उदाहरण है, जीवात्मा।।
- हम स्वयं अनुभव करते हैं, कि मैं एक वास्तविक सत्तात्मक वस्तु /चीज हूं। जो सुख चाहता है ,और दुखों से छूटना चाहता है।
- जीवात्मा अल्पज्ञ व अल्पशक्तिमान है, हम स्वयं भी जीवात्मा है ,इसलिए इस गुण को हम स्वयं अनुभव कर सकते हैं। कि हम सभी विद्याएं नहीं जान सकते ? व बिना साधनों के बड़े-बड़े कार्य नहीं कर सकते ? तथा जन्म से बिना किसी के सिखाए/ देखे, हम कुछ नहीं सीख पाते हैं ?

➤ { प्रकृति का अनुभव /प्रकृति पर विश्वास }

- जिस प्रकार रोटी को देखकर आटा के होने पर अस्तित्व पर विश्वास कर सकते हैं, उसी प्रकार प्रकृति पदार्थ ईट ,पत्थर ,सूर्य, चांद ,पृथ्वी ,शरीर, लकड़ी, सोना ,लोहा, जल,वायु आदि को देखकर प्रकृति अर्थात अति सूक्ष्म मूल परमाणुओं पर विश्वास कर सकते हैं। ईट ,पत्थर ,सूर्य आदि सभी हमें दिखतें हैं अर्थात साकार हैं, इनमें रूप, गुण है , इसलिए ये सभी पदार्थ जिन मूल परमाणुओं से बने हैं अर्थात प्रकृति से वह भी साकार है, रूप गुण से युक्त है। एक पत्थर के सामने हम कितना ही रोएं या हंसे या उसे लकड़ी से कितना ही पीटे वह कोई प्रतिक्रिया नहीं करता ।क्योंकि उसमें ज्ञान नामक गुण नहीं है, वह जड़ है। इसलिए पत्थर जिन परमाणुओं से बना अर्थात प्रकृति से वह भी जड़ है । प्रकृति में रूप ,रस ,गंध, स्पर्श ,रंग,भार आदि गुण है इसलिए प्रकृति से बने

Edit with WPS Office

पदार्थ भी ये सब गुण हैं। जो हम अनुभव करते ही हैं। जैसे– फूल में सुगंध, रुई में कोमलता ,पत्थर में कठोरता, गन्नें में मिठास, लाल, पीला, नीला रंग आदि रूप गुण के कारण ही हम पदार्थों को देख पाते हैं। यह शरीर भी प्रकृति से बना है जब जीवात्मा इसमें से निकल जाता है, तो शरीर जला दिया जाता है या गाड़ दिया जाता है। जिससे शरीर के पदार्थ अन्य सूक्ष्म परमाणुओं में परिवर्तित हो जाते हैं।

कुछ मत पंथ वाले बिना प्रमाण के अज्ञानता से हट से दुराग्रह से,अपने प्रयोजन की सिद्धि करने के लिए वेद, दर्शन, उपनिषद् आदि के विरुद्ध त्रैतवाद के विपरीत अद्वैतवाद या द्वैतवाद को मानते हैं ? अद्वैतवाद का अर्थ है केवल एक पदार्थ ईश्वर की सत्ता मानना? सब कुछ ईश्वर से ही बना है अर्थात केवल ईश्वर को अनादि मानना। द्वैतवाद का अर्थ है केवल दो पदार्थों को अनादि मानना। अर्थात ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति इन तीनों में से केवल दो को मानना ?
इन मतों को गलत सिद्ध करने के लिए इनके सिद्धांत में मात्र एक या दो दोष /त्रुटि दिखा देना पर्याप्त है, क्योंकि जिस सिद्धांत में मात्र एक दोष भी है तो वह सत्य सिद्धांत नहीं कहलाएगा ? वैदिक त्रैतवाद का सिद्धांत अकाट्य है, उसमें न कोई दोष है, न कोई निकाल पाएगा ? अब आगे हम द्वैतवाद व अद्वैतवाद मानने के दोष लिखेंगे।।

➤ { केवल ईश्वर ही मानने पर दोष अद्वैतवाद }

पूरी सृष्टि में सब कुछ ईश्वर ही है अर्थात सब कुछ ईश्वर का अंश है ऐसा मानने पर हम और आप सभी तथा पत्थर, लोहा आदि सभी ईश्वर के अंश कहलाएंगे ? जैसे – मिठाई के अंश में मिठाई का गुण मीठापन रहता ही है। या सोने का अंश सोना ही रहता है । तो हम यदि ईश्वर के अंश हैं तो हममें ईश्वर के गुण, पूर्ण आनंद, पूर्ण ज्ञान, पूर्ण निर्भरता आदि क्यों नहीं है ?? लोहा, पत्थर ,आदि भी ईश्वर हैं तो यह चेतन क्यों नहीं है ? यह हमारी बातें सुनते जानते क्यों नहीं है ? इस प्रकार यह सिद्धांत गलत सिद्ध होता है।।
अद्वैतवाद में एक ही तत्व को माना गया है ? एक ही ब्रह्म है, वो ही इस

Edit with WPS Office

संसार में आता है। उसी ने इस संसार में रूप धारण कर रखा है । इसको लेकर कुछ प्रश्न उठते हैं, दूसरे पक्ष वाले की आप कहते हो? एक ही तत्व है, उसी से यह संसार बन गया। उसी से जीव बन गया , उसी से प्रकृति बन गई।

शास्त्रों का नियम है, जो पदार्थ जैसा है, उसका वही अंतिम स्वरूप रहता है , जो कारण होता है वो कार्य में भी आता है। अब जैसे– ईश्वर चेतन है? तो उससे बना हुआ जगत भी चेतन होना चाहिए ?? (अद्वैतवाद के अनुसार) जबकि यह संसार जड़ है । चेतन से आत्मा को तो मान ले, की ब्रह्म चेतन है उससे होने वाला जीवात्मा भी चेतन है, यह बात तो सभी स्वीकार करते हैं ? जबकि यह संसार तो जड़ हो रहा है ? तो इस रूप में तो आपकी बात खंडित हो रही है ? क्योंकि जैसे - आप बता रहे हो (कि ब्रह्म का दूसरा रूप है) तो फिर यह संसार भी चेतन होना चाहिए ? बहुत विद्वान मानते भी हैं , यह संसार चेतन ही है। लेकिन आपको जड़ दिखाई दे रहा है। जब यह बात ज्यादा पूछी जाती है तो अद्वैतवादी कहते हैं, देखो सच तो यह है ना तो यह संसार है, ना जीव है, ना प्रकृति,जो कुछ भी नहीं बस एक ब्रह्म ही सत्य है, बाकी सब मिथ्या है? जो दिखाई दे रहा है यह सब स्वप्न के समान है। अब आप लोग विचार करिए ? जो यह बात कह रहे थे, कि ब्रह्म से ही सारा संसार बना है, वही थोड़ी देर बाद कहने लगे , ये संसार ही मिथ्या है।

इस बात के ऊपर हम आदि शंकराचार्य की एक कहानी सुनाते हैं? कि एक बार आदि शंकराचार्य जी कहीं जा रहे थे, और उनके साथ उनके शिष्य भी थे। (उनकी शिक्षा थी कि ब्रह्म सत्य बाकी सब मिथ्या यही उपदेश लोगों से कहते जा रहे थे, सुनते जा रहे थे?) जैसे आदि शंकराचार्य जी जा रहे थे, तो उनके सामने एक खूनी बैंल दौड़ता आ रहा था। उनके साथ जो शिष्य थे वह तो यही सोच रहे थे, यह जो बैल है जो हमारी तरफ आ रहा है यह मिथ्या है , वास्तव में नहीं है? तो इससे क्या डरना? इस प्रकार सोच रहा था कि यह जो बैंल आ रहा है , यह भ्रम है , वास्तविकता नहीं है, सत्य नहीं है। तो इस प्रकार आगे आगे शंकराचार्य जी चल रहे थे ? पीछे-पीछे उनके शिष्य चल रहे थे ? जैसे बेंल पास में आया, आदि शंकराचार्य उस जगह से उठकर एक साइड को हो गए । (बैल को रास्ता दे दिया) तो उनके शिष्य भी एक तरफ को हो गए। फिर बाद में रास्ते में उनके शिष्यों ने पूछा? गुरुजी आपने तो

Edit with WPS Office

कहा था, कि संसार तो मिथ्या है ? जो कुछ है वास्तविक नहीं है, तो जब वह बैल हमारी तरफ दौड़ कर आया तो आप उससे अलग क्यों हो गए? आदि शंकराचार्य जी ने कहा, आपने उसको देखा ! आदि शंकराचार्य कहते हैं ये भी तो मिथ्या ही है।

तो यह हमने आपको समझाने के लिए काल्पनिक कहानी सुनाई, यह कहानी सच नहीं है? आपको अद्वैतवाद समझाने के लिए हमने बताई? यह मनोरंजन की कहानी है !

अब हम आपको बताते हैं वास्तविकता क्या है? वास्तविकता यह है अगर संसार मिथ्या है। जो सत् शाश्वत ईश्वर है, उसे मिथ्या नहीं बता सकते ? (अद्वैतवाद के अनुसार) और जो मूल सिद्धांत जो है वेद के वह यह है कि ईश्वर संसार का निमित्त कारण है। उपादान कारण नहीं ? ईश्वर जो है वह अभिन्न निर्मित उपादान कारण है। यानी उसी से यह संसार बना है ? उसी ने इस संसार को बनाया है ? उसी से बना है और यह बात भी कहते हैं कि यह संसार मिथ्या है। (अद्वैतवादी लोग कहते हैं) दो तरीके की बातें करते हैं, दो तरीके की बातें हो गई? पहले कह रहे हैं अभिन्न उपादान कारण है, ।

उत्पादन कारण यह होता है जैसे मिट्टी से घड़ा बनता है? यह उपादान कारण है और जो कुमार है वह निमित्त कारण है। अद्वैतवादी विद्वानों का कहना है कि यह जो संसार बना है , ईश्वर से बना है, ईश्वर ने ही बनाया है? मतलब कुम्हार भी वही है? मिट्टी भी वही है ?संसार जो दिखाई दे रहा है ये मटका है।

दूसरी बात कहते हैं यह संसार है ही नहीं मिथ्या है? दो तरीके की बातें करते हैं।

ये जो संसार ईश्वर ने बनाया अपने से बनाया है, इसका वह उदाहरण देते हुए तर्क देते हुए कहते हैं, जैसे–मकड़ी अपने अंदर से जाला निकालती है? ऐसे ही ईश्वर ने अपने भीतर से इस संसार की रचना कर दी ? अब इस पर विचार करो ! मकड़ी जो है वास्तव में मकड़ी कौन है ? वह जड़ शरीर या उसके अंदर रहने वाली आत्मा? यह जो उदाहरण देते हैं ? अद्वैतवादी लोग ! यह उदाहरण उनके पक्ष में नहीं, बल्कि उनका खंडन करता है? मकड़ी अपने अंदर से जाला बना रही है ? यह बात हम सबको दिखाई दे रही है ,पर वह मकड़ी चेतन है या जड़ है ? मकड़ी चेतन नहीं है, मकड़ी की

Edit with WPS Office

जो आत्मा है वह चेतन है। मकड़ी का शरीर जड़ है, अब यह बताइए मकड़ी का जाला किसमें से निकल रहा है ? आत्मा में से निकल रहा है या जड़ शरीर में से ? आपका जवाब होगा जड़ शरीर में से। इसलिए यह बात अपने पक्ष की ही साबित होती है, और अद्वैत का खंडन करती है। प्रकृति जड़ है। उसी से संसार बन रहा है जैसे आत्मा मकड़ी के अंदर से जाला बना रही है ? ऐसे ही ईश्वर संसार को बना रहा है ? दोनों चीज अलग-अलग हो गई ना ? इसलिए यह जो उदाहरण दिया जाता है कि मकड़ी अपने अंदर से जाला बनाती है इस प्रकार ईश्वर सृष्टि की रचना करता है, यह बात गलत है। यह सिद्धांत अद्वैतवाद पक्ष में नहीं , बल्कि उनके सिद्धांत का खंडन ही करता है ? जब उनसे कोई पूछता है उनसे कहते है कि आप अद्वैतवाद की बात करते हैं ? हम भी इसको मानते हैं! पर यह ऊपरी ऊपरी स्तर है जब गहराई में जाते हैं तो यह अद्वैत ही रहता है ? क्योंकि उपनिषद में ऐसे बहुत सारे वाक्य प्रतीत होते हैं। कि जब आत्मा संसार में है तब तो त्रैतवाद होता है। और जैसे वह आत्मा अंदर-अंदर ब्रह्मलीन होने के कारण ब्रह्ममय हो जाता है, मतलब ध्यान व्यवस्था समाधि में चला जाता है। तो इस संसार से छूटता चला जाता है। तो वह अद्वैत हो गया।

अह ब्रह्मासमि —-इसका उत्तर देते हुए स्वामी दयानंद लिखते हैं, जैसे– मंच के ऊपर विद्वान बोलते हैं लोग कहते हैं देखो मंच से कितनी अच्छी आवाज आ रही है? पर मंच नहीं बोल रहा मंच पर बैठा - खड़ा हुआ व्यक्ति बोल रहा है?

ऐसे ही ब्रह्म में रहने के कारण उसे ब्रह्म कह दिया गया है कि मैं ब्रह्म के समान हूं। ब्रह्म जिस प्रकार आनंद लेता हुआ जीवात्मा भी उसी प्रकार आनंदित रहती है। इस उपनिषद में जगह-जगह है यह भी मिलता है कि उस ब्रह्म को प्राप्त करके ही यह जीव आनंदित हो जाता है। तो कहते हैं वास्तव में आखिरी में जाकर अद्वैतवाद हो जाता है? यह बात झूठ है आखिरी में जाकर अद्वैतवाद नहीं होता , परमात्मा में रहकर के आत्मा का अस्तित्व बना रहता है।

जो यह मानते हैं कि परमात्मा में विलीन हो जाना यह तो एक प्रकार से डूब मरना है ? क्योंकि उसने अपने जीवन में पुरुषार्थ किया स्वाध्याय किया मुक्ति पाने के लिए और अंत में क्या हुआ डूब गया खत्म हो गया। ऐसे कुछ

Edit with WPS Office

विद्वान मानते हैं, यह गलत है क्योंकि जीव परमात्मा में रहकर के आनंद का उपभोग करना यह मुक्ति है। तो वहां भी अद्वैतवाद बात नहीं हो जाता ? हां लेकिन ईश्वर के लिए अद्वैतवाद शब्द आया है कि ईश्वर अद्वैत है। इसके जैसा कोई दूसरा ईश्वर नहीं है ? यह मतलब होता है अद्वैत का? ब्रह्म अद्वैतीय है। लेकिन परमात्मा, जीवात्मा ,प्रकृति इन उस रूप में ब्रह्म अद्वैतीय है ? तीन पदार्थों के बने रहने के कारण संसार कभी भी अद्वैतवादी नहीं हो सकता ? इस संसार इस जगत में जब प्रलय होता है तब भी प्रकृति बची रहती है इसलिए तीन पदार्थ ही सत्य है। **यही वैदिक सिद्धांत है परमात्मा,जीवात्मा ,प्रकृति -- (सत्,रज् तम्) तीनों अनादि तत्व हैं।।**

➤ 2. । (द्वैतवाद) ।

•2..{ केवल ईश्वर व प्रकृति मानने पर दोष (द्वैतवाद) }

जीवात्मा का अलग अस्तित्व न मानते हुए केवल ईश्वर व प्रकृति नामक दो पदार्थ ही माने तो हममें जो चेतनता है ,वह ईश्वर की माननी पड़ेगी ? यदि हमें ईश्वर की चेतनता है ,तो ईश्वर के अन्य गुण जैसे– पूर्ण ज्ञान ,पूर्ण आनंद आदि क्यों नहीं ? अतः यह सिद्धांत अमान्य सिद्ध होता है ।

➤ 3..{ केवल जीवात्माएं व प्रकृति मानने पर दोष (द्वैतवाद) }

सृष्टि में ईश्वर को नहीं मानते हुए केवल जीवात्माओं व प्रकृति का अस्तित्व माने तो यह सृष्टि कौन बनाता है ? वेदों का ज्ञान कौन देता है? कर्म फल कौन देता है ? निश्चित रूप से इन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकेंगे ? क्योंकि आत्मा अल्पज्ञ व अल्पशक्तिमान होने से तथा प्रकृति जड़ होने से इन कार्यों को नहीं कर सकेगा । अतः ईश्वर नामक चेतन सर्वज्ञ शक्ति मानना ही होगा ?

Edit with WPS Office

- 4.. केवल जीवात्माएं व ईश्वर मानने पर दोष (द्वैतवाद) केवल जीवात्माएं व ईश्वर का ही अस्तित्व मानने पर प्रश्न उठेगा ? कि यह दृश्य साकार जगत कैसे किससे बना?? जीवात्मा व ईश्वर तो निराकार है, उनसे साकार वस्तु बन नहीं सकती ? तथा ईश्वर को साकार व निराकार दोनों भी नहीं माना जा सकता ? (इसका कारण पूर्व में पृष्ठ 2 में ईश्वर की विशेषताएं गुण नामक पृष्ठ पर लिख आए हैं) ।
- इस प्रकार ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति तीनों का अस्तित्व (सत्ता) है । इन तीनों से ही सृष्टि का चक्र चलता है लगभग 5000 वर्ष (महाभारत युद्ध के पूर्व) पूर्व सभी वैदिक धर्म मानते थे ? वैदिक त्रैतवाद को मानते थे । किंतु महाभारत युद्ध के बाद सारी व्यवस्थाएं छिन्न भिन्न हो गई। वेदों का पठन– पाठन अत्यंत कम हो जाने से वह अन्य सिद्धांत जैसे– अद्वैतवाद , द्वैतवाद का प्रचार हो जाने से, अलग-अलग पंथ संप्रदाय बन जाने से त्रैतवाद को मानने वाले अत्यंत कम हो गए? त्रैतवाद कौन है करने के कारण ही विभिन्न पाखंड ,अंधविश्वास, कुरीतियों, समाज में फैल गई? अतः वैदिक त्रैतवाद को अच्छी तरह समझकर अन्य में भी इसका प्रचार कर उनकी अज्ञानता हटाना चाहिए? व उन्हें पाखंडों अंधविश्वासों से बचाना चाहिए तथा ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जानकर सही विधि से उसकी पूजा उपासना करनी चाहिए? ।

प्रश्न..._____ ईश्वर पूजा का क्या अर्थ है ?

उत्तर...पूजा का अर्थ है यथायोग्य सत्कार करना अर्थात जो वस्तु कर्म, गुण, स्वभाव से जैसी है ? उसे वैसा ही जानकार मानकर उसके साथ उचित व्यवहार करना। ईश्वर की पूजा का अर्थ है , ईश्वर जैसा है, उसे वैसा ही जानकार मानकर अर्थात ईश्वर में कौन से गुण हैं , ईश्वर क्या-क्या कार्य करता है आदि जानकर कहीं एकांत स्थान में बैठकर आंखें बंद कर मन में एकाग्रभाव ईश्वर के गुणों का चिंतन करना । ईश्वर के कार्यों का चिंतन करना । ईश्वर के हम पर किए जा रहे उपकारों ,दया, कृपा को याद करना , व

Edit with WPS Office

जीवन में सुख शांति संतोष प्रसन्नता, ज्ञान, बल , उत्साह, निर्भरता, विचारों की पवित्रता आदि गुणों की प्राप्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करना तथा ईश्वर हमारा मित्र है , पिता है, माता है , ऐसी भावना करके जो जो समस्याएं हैं , उन्हें ईश्वर को बताना ईश्वर से समाधान मांगना आदि तथा व्यवहार में उसकी आज्ञाओं आदेशों का पालन करना सत्याचरण करना, अहिंसा का पालन करना, सेवा , परोपकार के कार्य करना आदि ईश्वर की पूजा है । जो ईश्वर के स्वरूप को उल्टा जान मानकर जैसे- साकार मानकर या अवतार लेने वाला मानकर ईश्वर की पूजा के नाम पर किसी भी प्रकार के उल्टे सीधे कर्मकांड करते हैं बुद्धिपूर्वक कार्य नहीं करते हैं ? दोष युक्त तरीके को अपनाते हैं ,तो वह अवश्य पाप के भागी बनते हैं। ईश्वर न्यायकारी होने के कारण इसका दंड भी अवश्य देता है। ईश्वर ने हमारे शरीर में बुद्धि नामक पदार्थ इसलिए दिया है , कि हम सोच विचार कर पता कर जानकर समझकर उचित कार्य करें ? यदि ऐसा नहीं करते हैं तो ईश्वर हमें बुद्धि का सही प्रयोग न करने के कारण दंड देता है ,हो सकता है अगले जन्म में बुद्धि कम कर दे और गधे ,घोड़े ,कुत्ते की योनियों में भेज दे आदि।।

प्रश्न..._____ देव पूजा का अर्थ क्या है ?

उत्तर... विद्वानों का यथायोग्य सत्कार करना गृहस्थियों को वैदिक विद्वानों को घर में बुलाना चाहिए , उन्हें भोजन आदि खिलाना चाहिए? दान आदि देना चाहिए। उनसे आध्यात्मिक प्रवचन सुनना चाहिए ? ज्ञान विज्ञान प्राप्त करना चाहिए? यह देव पूजा है।।

प्रश्न...______ पितृ (पित्तर)पूजा का अर्थ ?

उत्तर... जीवित माता-पिता गुरुजनों आदि की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उन्हें प्रसन्न रखना आदि उनकी सेवा करना आदि यह मुख्य गृहस्थियों का धर्म है।

पीपल तुलसी आदि की पूजा जो पदार्थ जड़ है , उनकी पूजा से अर्थ है ,कि

Edit with WPS Office

उनकी देखभाल कर उनका सदुपयोग करना। जैसे– पीपल ,तुलसी आदि की औषधियां के रूप में प्रयोग करना उनकी सुरक्षा करना इनका ध्यान रखना, समय पर पानी देना आदि इनकी पूजा है ? आजकल जो पेड़ों में कुमकुम चढ़ाना, धागे, कपड़े बांधना ,अनाज चढ़ाना , परिक्रमा लगना आदि यह घोरपाखंड, अंधविश्वास है। इन कार्यों को करने से ईश्वर अवश्य दंड देता है ? क्योंकि यह बिना विचारे ही मूर्खता के कार्य है।।

प्रश्न...______ ईश्वर सर्वव्यापक होने से पत्थर में भी व्यापक है तो क्या पत्थर में ईश्वर की भावना करके खीर पुरी का भोग लगा सकते हैं ?

उत्तर... नहीं ! क्योंकि पत्थर जड़ पदार्थ है। जड़ को खीर खिलाने से क्या लाभ ? चेतन को छोड़ जड़ को खिला रहे हो तो यह महापाप है ?? ईश्वर इस कार्य के लिए कभी भी क्षमा नहीं करता ?? पत्थर में ईश्वर को मान उसके सामने खीर रखने पर क्या होगा ? पत्थर जड़ है, वह खीर को न देख सकेगा और न अनुभव कर सकेगा और ईश्वर स्वयं अनंत आनंद स्वरूप है ?सच्चिदानंद है ? और ईश्वर निर्विकार है तथा प्रकृति से नहीं बंधता है ? ईश्वर को खीर की कोई आवश्यकता नहीं है ? वैसे भी ईश्वर सर्वव्यापक होने से खीर के कण-कण में पहले से ही ईश्वर समाया हुआ है । इस प्रकार खीर रखने पर न पत्थर खाएगा ? न हीं ईश्वर ? अंत: उसे मनुष्य ही चेतन प्राणी ही खाता है । पत्थर व ईश्वर अलग-अलग वस्तु हैं। इसलिए पत्थर में ईश्वर की भावना करना मूर्खता है । जैसे –कि पत्थर में मिठाई की भावना करके नहीं खा सकते या आगं में पानी की भावना करके उसमें नहीं नहा सकते ? इसलिए इस प्रकार की भावना करना बुद्धियुक्त नहीं है ? अत: जो चीज जैसी है उसे वैसा ही जानना मानना चाहिए?।।

प्रश्न..._____ ईश्वर ,जीवात्मा व प्रकृति तीनों एक साथ

Edit with WPS Office

एक ही स्थान पर कैसे रह जाते हैं ?

उत्तर... इसे समझने के लिए हम शरीर का उदाहरण ले सकते हैं शरीर (प्रकृति) में जीवात्मा व ईश्वर दोनों रहते हैं। ईश्वर व जीवात्मा दोनों निराकार है? व प्रकृति अर्थात शरीर साकार है । ईश्वर व जीवात्मा शरीर (प्रकृति) के समान स्थान नहीं घेंरती है ? स्थान केवल प्रकृति घेरती है इसलिए तीनों एक साथ एक स्थान में रह सकते हैं।
जैसे—--करंट लोहे से भी अति सूक्ष्म होने के कारण लोहे के कण-कण में चला जाता है ? ऐसे ही ईश्वर अत्यंत सूक्ष्म है ,वह जीवात्मा व प्रकृति में व्यापक रहता है। जीवात्मा भी अत्यंत सूक्ष्म व निराकार है ? इसलिए वह भी प्रकृति के साथ एक ही स्थान पर रह सकता है? याद रखना चाहिए कि हमारे शरीर में ईश्वर सदा व्यापक रहता है। किंतु हमारा शरीर ईश्वर से एक अलग पदार्थ है शरीर प्रकृति से बना है, इसी प्रकार हम जीवात्माओं में भी ईश्वर सदा व्यापक रहता है । किंतु हम जीवात्माएं ईश्वर से पृथक एक अलग चेतन पदार्थ है। इस प्रकार ईश्वर जीवात्मा व शरीर (प्रकृति) तीनों अलग अलग पदार्थ हैं ।।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 22. ।। बाईसवां पृष्ठ ।।

- ## (ब्रह्मांड को यज्ञ से कैसे समझे)

Edit with WPS Office

- **{ यज्ञो के तीन संसार और तीन प्रकार }**

वेदों में तीन संसारो का वर्णन है, एक आकाशीय है। जिसमें सूर्य ,चंद्र ,तारां,वायु, जल और विद्युत आदि है। इस आकाशीय संसार में राजा पुरोहित सेना, नगर ,ब्राह्मण ,क्षत्रिय ,वैश्य ,शूद्र ,नदी, समुद्र ,जंगल ,पशु, पक्षी आदि सब कुछ है। और जो कुछ इस संसार में दिखाई पड़ता है। वह सब आकाशीय संसार में मौजूद है। जिस प्रकार यह आकाशीय संसार है इसी प्रकार **दूसरा संसार मनुष्य का शरीर है**। जिसमें नगर द्वार राजा ऋषि, शत्रु ,ब्राह्मण, युद्ध और उसी प्रकार के समस्त पदार्थ हैं। जिस प्रकार आकाशीय संसार में है। **तीसरा यह पृथ्वी संसार है** जिसमें सभी पदार्थ मौजूद है। **वेदों के यह तीनों संसार, आधिदैविक, अध्यात्मिक, आधिभौतिक कहलाते हैं।**

इनमें से आकाशीय संसार और मनुष्यशरीरस्त संसार दोनों परस्पर संबंध रखते हैं। आकाशीय संसार का एक पदार्थ शारीरिक संसार का आधार है। आकाशीय संसार में जिस प्रकार सभी पदार्थ मौजूद हैं। उसी तरह वहां यज्ञ भी हुआ करता है। और जिस प्रकार आकाश में यज्ञ हुआ करता है। उसी तरह शरीर में भी यज्ञ हुआ करता है। ये पिंण्ड और ब्रह्मांड के यज्ञ निरंतर जारी रहते हैं। किंतु परिवर्तनों के कारण कभी-कभी दोनों में वैषम्य में उत्पन्न हो जाता है। इसलिए भौतिक यज्ञो से दोनों का सामाज्सय करना ही वैदिक यज्ञों का मुख्य उद्देश्य है। हम चाहते हैं कि यहां थोड़ा सा पिंड ब्रह्मांड के यज्ञ और उनका परस्पर संबंध वर्णन कर दू। जिससे विषय स्पष्ट हो जायं और ज्ञात हो जायं की किस प्रकार यज्ञ वैज्ञानिक नीव पर स्थित है , और पिंड ब्रह्मांड से संबंध रखते हैं।

- **{ पिंण्ड व ब्रह्मांड का संबंध }**

पिंड और ब्रह्मांड का परस्पर संबंध बताते हुए अथर्ववेद का मंत्र कहता है—- **(अथर्ववेद.5/8/7)**

Edit with WPS Office

सूर्य मेरा नेत्र है, वायु मेरा प्राण है, अंतरिक्ष मेरी आत्मा (हदय) है, और पृथ्वी मेरा शरीर, मैं अपने आप को अपराजित समझकर,धावा और पृथ्वी के बीच में सुरक्षित रहता हूं। यह मंत्र पिंड और ब्रह्मांड का संबंध बताता है। यजुर्वेद के दूसरे स्थानों में है , अर्थात धौ शिर , वायु प्राण, अंतरिक्ष नाभि, दिशा कान, और भूमि पैर है। यहां भी वही संबंध वर्णित है। वेदों में इस प्रकार के बहुत वर्णन है। इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है, कि पिंण्ड के साथ ब्रह्मांड का घनिष्ठ संबंध है। **यह बात प्रत्यक्ष भी है, कि बिना सूर्य के हम देख नहीं सकते? बिना वायु के श्वास नहीं ले सकते? और बिना पृथ्वी के खड़े नहीं हो सकते?** कहने का मतलब यह है कि पिंड ब्रह्मांड के साथ नत्थी है। जैसे यह दोनों का आधार आघेय वर्णित है। वैसे ही वेदों में दोनों जगह के यज्ञों का वर्णन है। ब्रह्मांड यज्ञ के विषय में लिखा है कि—- **(यजुर्वेद 31/15)** इस मंत्र में लिखा है, कि अर्थात यज्ञवेदी की सात परिधियां है। उसमें 21 समिधा है। ऐसे यज्ञ को देवताओं ने फैला रखा है। जिसमें पुरुष पशु बंधा हुआ है। पुरुष के द्वारा हवि से देवता जिस यज्ञ को फैलाते हैं ? उस यज्ञ में वसंतऋतु भी है। ग्रीष्मऋतु धन है। और शरद ऋतु हवि है।

गोपथ ब्राह्मण में लिखा है कि—-----

(गोपथ ब्राह्मण.1/13)

- अर्थात अग्नि होता है, वायु अध्वर्यु है, सूर्य उदगाता है। चंद्रमा ब्रह्मा, और वर्षा सदस्य है। यह ब्रह्मांड यज्ञ है

और पिंण्ड यज्ञ के लिए वेद में लिखा है—---

(अथर्ववेद. 11/8/29)

अर्थात हड्डियों की समिधां बनाकर , रेत का घी करके , और आठ प्रकार के रसों को लेकर सब देवताओं ने पुरुष में प्रवेश किया।

शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि अर्थात पुरुष ही यज्ञ है। क्योंकि यह यज्ञ को करता है। यह उतना ही सत्कर्म करता है, जितना वह स्वयं होता है। इसलिए पुरुष ही यज्ञ है। इसी तरह **छान्दोग्य उपनिषद्** में भी पुरुष को यज्ञ कहा है,?----यहां लिखा है कि—--

(छान्दोग्य उपनिषद्. 3/12)

- अर्थात पुरुष ही यज्ञ है। इसके जो 24 वर्ष है, वह प्रातः सवन है। जो 44 वर्ष है वह माध्यन्दिन सवन है। और जो 48 वर्ष है वह तृतीय सवन

Edit with WPS Office

है।

इन प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि ऊपर जिस सूर्य आदि देवताओं का ब्रह्मांड यज्ञ के नाम से वर्णन हुआ है। वही देवता मनुष्य शरीर मैं प्रवेश कर गये। और मनुष्य शरीर के पदार्थ को यज्ञ की सामग्री बनाकर वहां भी यज्ञ करने लगे। गोया पिंण्डब्रह्मांड के यज्ञ और उन दोनों का संबंध दृढ़ हो गया और इस प्रकार से यह नित्य संबंध स्थापित हो गया। इसी संबंध के अनुसार पिंड और ब्रह्मांड के दोनों यज्ञ ,यज्ञ के तीनों धर्म–देवपूजा , संगति, दान निरंतर कर रहे हैं। गर्मी- सर्दी जल, हवा, प्रकाश और अंधकार से ब्रह्मांड सदैव हमारी सब की पूजा, संगति और दान किया करता है। मनुष्य शरीर भी सर्दी - गर्मी प्रकाश आदि से संगति करता है। इंद्रियां परस्पर पूजा करती है, और दान देती है। इसी तरह मनुष्य शरीर भी अन्य प्राणियों के साथ पूजा , संगति और दान का व्यवहार करता है। इस तरह पिंड और ब्रह्मांड दोनों , यज्ञ का कार्य सम्पादन करते हैं। हम कह आए हैं कि ब्रह्मांड पिंड का आधार है। शरीर बिल्कुल ही ब्रह्मांड के आधीन है। आंख सूर्य की , श्वास वायु का , और पैर पृथ्वी के मोहताज है। पर जब सूर्य चला जाता है, वायु का चलना बंद हो जाता है और पृथ्वी ठंडी या गर्म हो जाती है। अर्थात जब दोनों संसारों में विषमता उत्पन्न हो जाती है, तब हम तीसरी भौतिक यज्ञ से दोनों में सामंजस्य उत्पन्न करते हैं। हम चिराग जलाकर सूर्य का काम लेते हैं। पंखा चला कर वायु का काम लेते हैं। और जूता चप्पल पहनकर या ऊंचे मंच पर खड़े होकर पृथ्वी की सर्दी गर्मी को अनुकूल कर लेते हैं।

यह अनुकूल ही यज्ञ का संगतिकरण है । पूजा और दान है। अर्थात विषमता उत्पन्न होने पर पृथ्वीस्त पदार्थों को लेकर वैज्ञानिक सिद्धांत से पिंड ब्रह्मांड में समंजस्य उत्पन्न कर देना ही यज्ञ का प्रधान कार्य है। इसलिए वेद में कहा गया है कि—-

यज्ञों यज्ञेन कल्पताम् यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा

अर्थात यज्ञ से यज्ञ कल्पित हुए हैं। देवता भी यज्ञ से यज्ञ कर रहे हैं। **शतपथ ब्राह्मण में लिखा है यज्ञाधज्ञ निमिमा इति।** अर्थात में यज्ञ से यज्ञ का निर्माण करता हूं। इस सब वर्णन का यही मतलब है, कि पिंड ब्रह्मांड के यज्ञों की विषमता का भौतिक यज्ञो से सामंजस्य करते रहना चाहिए ?

यद्यपि सत्कर्म मात्र यज्ञ के नाम से कहां गया है ,भैष्जय यज्ञ , पुत्रेष्टि यज्ञ ,

Edit with WPS Office

अश्वमेध यज्ञ ,अवर्पण यज्ञ ,गोमेध यज्ञ , और पंचमहायज्ञ आदि स्थूल और व्यवहारिक यज्ञ प्रधान है। ये सभी यज्ञ अपने-अपने ढंग से निराले हैं। अतंएव इन सब के साधन भी निराले हैं।
यज्ञकर्ता यज्ञ मंडप आदि एक समान होते हैं। परंतु कुंण्डों की बनावट पात्र , हवीनय पदार्थ, और अन्य विधियां अलग-अलग होती है।।
अगर आप ब्रह्मांड को समझना चाहते हैं? तो यज्ञ , ब्राह्मड को समझने का सर्वश्रेष्ठ तरीका है ? समझने का प्रयास करें यदि किसी बालक को बताना हो कि पृथ्वी का आकार कैसा है ? पृथ्वी में पानी की मात्रा कितनी है ? यह बताने के लिए उसे पृथ्वी पर तो लेकर नहीं जाएंगे ? तो आज के समय में उस बच्चे को पृथ्वी का रहस्य समझाने के लिए ग्लोब दिखाते हैं। ग्लोब क्या है ? ग्लोब पृथ्वी की आकृति है। पृथ्वी की अनुकृति है। ब्रह्मांड की नकल है। पृथ्वी की नकल है। यदि किसी बालक को नदी दिखानी है और आसपास नदी नहीं है। तो एक माता ने बच्चे को समझाने के लिए विवश होकर के कहा, कि जो घर के सामने नाली है, इसको देख रहे हो यह नाली जो दिख रही है इसके जैसी ही नदी है नदी थोड़ी आकार में बड़ी होती है। जैसे इसमें पानी बह रहा है ,उसी प्रकार नदी में भी पानी बहता है? ईश्वर की सर्वव्यापकता सिद्ध करने के लिए क्या उदाहरण दिया जाता है? **ऊं खं ब्रह्म** यानी ईश्वर आकाश के समान सर्वव्यापक है? अर्थात ईश्वर को समझने के लिए आकाश की उपमा दी जा रही है ? उसी प्रकार परमात्मा सर्वव्यापक है , क्योंकि परमात्मा को आंखों से नहीं देखा जा सकता ? तो उसे समझने के लिए आकाश की व्यापकता का उदाहरण देना पड़ रहा है ? यहां बैठे हुए हम समुच्चय पृथ्वी को नहीं देख सकते। इसलिए बालक को ग्लोब दिखाया जा रहा है। ग्लोब देखो ऐसी होती है पृथ्वी। उसी प्रकार शास्त्रों ने कहा यज्ञ जो है ब्राह्मड की अनुकृति है ? आपने एक वचन अवश्य सुना होगा **यथा पिंडे ब्राह्मडे** इसका मतलब है जैसा हमारा शरीर है वैसा हमारा ब्रह्मांड है। आपने कभी विचार किया ?आचमन करते हैं तो तीन बार आचमन करते हैं।
ओउम् अदितेऽनुमन्यस्व
ओउम् अनुमतेऽनुमन्यस्व
ओउम् सरस्वत्यनुमन्यस्व ।

Edit with WPS Office

इसके बाद जब अग्नि प्रज्वलित करते हैं , दीपक जलाते हैं। **ऊं भूर्भुव स्व** इसमें तीन शब्द आए हैं उसके बाद **जल प्रसेचन** करते हैं। यज्ञ में एक विधि होती है जल प्रसेचन। **पंच घृत आहुति** के पश्चात जल प्रसेचन किया जाता है। तो जल प्रसेचन करते समय तीन बार जल का प्रसेचन किया। तीन बार आंचमन किया है?

ओम अमृतोपस्तरणमसि स्वाह ।

ओम अमृतापिधानमसि ।

ओं सत्यं यश: श्रीर्मयि श्री: श्रयतां स्वाहं।

तीन शब्दों से दीपक को प्रज्वलित किया गया। इसके बाद जब प्रातः सायं काल की आहुतियां प्रदान करते हैं, जैसे___

- फिर **ऊं भूर्भुव स्व** तीन आहुति, इसके बाद **प्राण अपान व्यान** । यज्ञ में तीन का बहुत बड़ा महत्व है। जब पूर्ण आहुति करते हैं तीन बार पूर्ण आहुति की जाती है। **जैसे___** ओउम् सर्व वै पूर्ण स्वाहा। तीन बार।

आचमन भी तीन बार किया जा रहा है ? जल प्रसेचन भी तीन दिशाओं में किया जा रहा है? और आहुतियां भी तीन बार प्राण अपान व्यान यह तीन प्रकार की वायु है। यह भी हमें सुनने को मिल रहा है। यज्ञ में पूर्णाहुति भी तीन बार की जा रही है ? इनका विशेष महत्व है। आप देखेंगे जो यज्ञ कुंड है ,उसमें भी तीर मेघालाएं होती हैं। आपने बड़े-बड़े यज्ञ के कुंड में देखा होगा , यज्ञ के कुंड में जो तीन सीडियां की तरह होती है ? उनको मेघलाएं कहते हैं। तो यज्ञ कुंड की भी तीन मेघलाएं होती है। तीन का विशेष महत्व क्यों है?? कभी आपने विचार किया ? शास्त्रों ने कहा **ओम् भूर्भुव स्व:** क्योंकि तीन प्रकार के लोकं हैं। **पहले पृथ्वी लोक। जिसको भु कहा गया ? इसके बाद भुव यानी अंतरिक्ष लोक। इसके बाद स्व: यानी धुलोक।** पृथ्वी लोक यानी जिस पर हम निवास कर रहे हैं। जो आकाश का मार्ग है उसको अंतरिक्ष लोक कहा गया है। और जो सूर्य है सूर्य के आसपास का स्थान है उसे द्युलोक कहा गया है। तो यह तीन प्रकार के लोक हैं ,इसी को समझाने के लिए और यज्ञ के प्रयोजन को बताने के लिए कि आप जो यज्ञ करेंगे इससे इन तीनों लोकों की शुद्धि होगी। इन तीनों लोकों में सुगंधित फैलेगी और वातावरण शुद्ध होगा। तो इसके लिए तीन का विशेष महत्व बताया है, तीन प्रकार की मेघलाएं बनाई जाती है? अगर आप किसी विद्वान से पूछोगे

Edit with WPS Office

की तीन मेघलाएं किसका प्रतिबिंब है। तो वह कहेंगे कि यह तीन मेघलाएं तीन प्रकार के लोकों का प्रतिबिंब है। तीनों लोकों को शुद्ध करना यज्ञ का प्रयोजन है। **महर्षि मनु कहते** हैं, जो यज्ञ की हावि है, यज्ञ में जो सामग्री डाली जाती है? वह पृथ्वी आकाश धुलोक यानी आदित्यों तक प्राप्त होती है? वहां के वातावरण को शुद्ध करती है। लोको की शुद्धि को ध्यान में रखकर यज्ञ किया जाता है। मेघलाएं की जो चौड़ाई है पांच अंगुल की रहती है,? ऐसा शास्त्रों में मापं दिया गया है। गृह सूत्रों में भी कहा है कि किस प्रकार यज्ञ का निर्माण करना चाहिए ? तो कहां गया है पांच पांच अंगुल की उसकी चौड़ाई होनी चाहिए ? तो इसका क्या अर्थ है, किस बात को संकेत करती है, पंचमहाभूतों के नाम तो सुने होंगे? आकाश पृथ्वी जल अग्नि वायु ! तो संस्कार में पंच महाभूत होते हैं इसलिए पांच पांच अंगुल की मेघलाएं होती है। इसके बाद समिधा ध्यान प्रकरण में देखेंगे तो महर्षि दयानंद सरस्वती ने संस्कार विधि में लिखा है की आठ आठ अंगुल की समिधाओं का आधान करना चाहिए? दोस्तों इसके पीछे क्या रहस्य है देखो, इस ब्रह्मांड में इस सृष्टि में आठ प्रकार के वसु हैं और आठ प्रकार के वसुओं के कारण आठ प्रकार अंगुल की समिधा आधान की जाती है। इसलिए यज्ञ बहुत रहस्यमय क्रिया है। ब्रह्मांड से मिली हुई क्रिया और आप देखेंगे कि ब्रह्मांड के कण-कण में यज्ञ हो रहा है। आप कहोगे कैसे? देखो आप सूर्य का उदाहरण लेंगे? सूर्य आपको प्रकाश कैसे प्रदान कर रहा है। सूर्य आपको एनर्जी कैसे प्रदान कर रहा है उसके पीछे आधुनिक विज्ञान यह कहता है कि सूर्य के अंदर न्यूक्लियर चेंज रिएक्शन हो रहे हैं ? अर्थात हाइड्रोजन अपने आप को समर्पित कर रहा है। जिसके कारण हाइड्रोजन जो है हीलियम में कन्वर्ट हो रही है। जिसके कारण सूर्य हमें प्रकाश प्रदान कर रहा है। सूर्य हमें ऊर्जा दे रहा है, इसका क्या कारण है कि हाइड्रोजन ने अपने आप को आहुत किया, क्या बनाने के लिए हीलियम बनाने के लिए तो यह सब क्या है समर्पित कर देना, यह मेरा नहीं है मैं इसे अन्य को समर्पित कर रहा हूं? इसी प्रकार यज्ञ की भावना है? मैं जो सामग्री यज्ञ में डाल रहा हूं ,यह मेरी नहीं है? इसलिए अग्नि को समर्पित कर रहा हूं। अच्छी तरह समझने के लिए दूसरा उदाहरण देता हूं

आपको अपने शरीर का दूसरा उदाहरण देता हूं। ___ जैसे _____

Edit with WPS Office

- मैंने आपको कहा यज्ञ ब्रह्मांड की अनुकृति है। वैसे ही यदि ब्रह्मांड को समझना हो, तो शरीर को समझना पड़ता है। अपने शरीर को समझ करके आप ब्रह्मांड को समझ सकते हैं। और ब्रह्मांड को समझ करके आप यज्ञ को समझ सकते हैं। यज्ञ के माध्यम से आप ब्रह्मांड को समझ सकते हैं।

अगर मैंने अपने हाथ में खाना रखा है, और हाथ कहे नहीं में इसे मुखं को नहीं पकड़ाऊंगा ?? तो क्या हमारा विकास हो पाएगा ? खाना हाथ में ही रह जाएगा और थोड़े ही दिनों में मृत्यु हो जाएंगी ? तो इसलिए हाथ कहता है कि यह भोजन मेरा नहीं है ? जो मेरे हाथ में भोजन रखा है यह मेरा नहीं है ? मैं इस भोजन को मुख को समर्पित करता हूं ! भोजन मुख में आने के बाद मुख क्या कहता है ? यदि मैं इस भोजन को मुख में ही रखूगा तो यह बासी होकर, मेरी मृत्यु हो जाएगी। इसलिए मैं इस खाने को उदर (पेट) में भेज देता हूं ! वहां उस भोजन की पाचन क्रिया के पश्चात अन्य शरीर में पोषण के रूप में भेजा जाता है। उदर भी कहता है, यह भोजन मेरा नहीं है इसलिए मैं इसे पूरे शरीर में भेजता हूं? ताकि शरीर में ऊर्जा आ सके, तो यह सब क्या हो रहा है?यह सब यज्ञ हो रहा है।

इसी प्रकार जब यज्ञ में अग्नि प्रज्वलित होने पर जब उसमें सामग्री आहुति डालते हैं, तो यह कह कर डालते हैं, में इस अग्नि को आहुति समर्पित कर रहा हूं ? फिर वो अग्नि यही कहती है, जो सामग्री मुझ में आई है वह मेरी नहीं है ? जो सामग्री यज्ञ में जाती है उससे शुद्ध वर्षा होती है , यज्ञ से शुद्ध वातावरण होता है, शुद्ध वायु के कारण अच्छे बादल बनते हैं ,अच्छे वर्षा होती है और अच्छी वर्षा के कारण ,अच्छी फसल उत्पन्न होती है। जब अच्छी फसल उत्पन्न होती है, तो अच्छा भोजन आता है और पौष्टिक आहार करके ही हमारे जीवन में नियंता खुशहाली आती है। तभी हम अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं। **कब??** जब भोजन पौष्टिक होता है, भोजन अच्छा होगा, भोजन कब अच्छा होगा? जब वर्षा अच्छी होगी ! वर्षा कब अच्छी होगी, जब बादल अच्छे होंगे ,बादल कब अच्छे होंगे ,जब वायु अच्छी होगी और वायु कब अच्छी होगी वायु तब अच्छी होगी जब हम यज्ञ में औषधीय डालेंगे। घृत सामग्री डालेंगे। इसका मतलब क्या हुआ जो यज्ञ में जो आहुतियां डाली गई है वह घूम फिर करके हमारे पास ही आ रही है।

Edit with WPS Office

लोग कहते हैं तुम यज्ञ में इस प्रकार से आहुति डाल करके तुम व्यर्थ कर रहे हो ? ऐसे कुछ मुर्ख लोग कहते हैं ! ऐसे लोगों को साइंस का सिद्धांत ही नहीं पता ?? अर्थात कोई भी पदार्थ उत्पन्न होता है ,नष्ट होता है यह नहीं है बल्कि एक रूप से अन्य रूप में उपांतरित होता है। इसी प्रकार है वह औषधीय युक्त सामग्री घूम कर हमारा ही कल्याण कर रही है? भोजन के रूप में पुनः हमें ही प्राप्त हो रही है। **इसी रहस्य को बताते हुए भगवान श्री कृष्ण ने तृतीय अध्याय में कहा है, जो व्यक्ति यज्ञ नहीं करता? भोजन खाता है ! वास्तव में वह पाप का सेवन कर रहा है । इसलिए हम श्री कृष्ण और श्री राम के अनुयायी हैं। हम श्री कृष्ण और श्री राम के वंशज हैं , तो हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम प्रतिदिन यज्ञ करें।**

तो **ऊं भूर्भुव स्व** इन मंत्रो से दीप प्रज्ज्वलित किया जाता है।

ब्रह्मांड की क्रिया को समझने का संकल्प लिया जाता है। उसके बाद दीपक को जला लिया, **महर्षि दयानंद सरस्वती अपनी संस्कार विधि नामक पुस्तक में लिखते हैं** कि **ऊं भूर्भुव स्व** इस मंत्र का उच्चारण करके ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य के घर से अग्नि ला अथवा घृत का दीपक जला उसे कपूर में लगा किसी एक पात्र में धर उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगा के यजमान व पुरोहित उसे दोनों हाथों से उठा करके यदि गर्म हो चिमटे से पकड़कर के अगले मत्रों से उसका आधान करें।

प्रारंभ में उन्होंने एक बात कही, महर्षि दयानंद सरस्वती ने की आप अग्नि को कहां से लेकर आए? ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य, के घर से अग्नि ला। तो यह बात समझ में नहीं आई कि महर्षि ने ऐसे क्यों कहा? तो इसको समझाते हुए अन्य आर्य विद्वानों ने कहा, की प्राचीन काल में एक परंपरा हुआ करती थी कि जो यज्ञवैदी है ,उसमें कभी भी अग्नि का लोभ नहीं हुआ करता था। प्राचीन काल में विवाहित जो जोड़ा होता है दंपत्ति या तो ब्राह्मण है तो ब्राह्मण के घर से। अगर क्षत्रिय है तो क्षत्रिय के घर से। वेश्य है तो वेश्य के घर से। अग्नि लेकर के आता था। वह अग्नि जो कभी भी शांत नहीं होती , जो कभी भी क्षीण नहीं होती? निरंतर जलती रहती है। ऐसी अग्नि को लेकर के अग्निकुंण्ड में आवाहन करता था। परंतु आज यह परंपरा लुप्त हो चुकी है। महाभारत युद्ध के पश्चात बहुत सी परंपराएं सनातन परंपरा लुप्त हो गई, इसलिए महर्षि दयानंद ने विकल्प रूप में कहा, अथवा

Edit with WPS Office

घृत का दीपक जला ले । क्योंकि उनको पता है कि यह परंपरा लुप्त हो चुकी है उन्होंने कहा अगर आपसे यह नहीं होता तो घृत घी का दीपक जला ले। अगर पहली परंपरा को ही मान ले तो फिर यज्ञ होगा ही नहीं? परंपरा भले ही लुप्त हो गई हो। परंतु नवीन परंपरा जैसे महर्षि दयानंद ने विकल्प रूप में रखी है, कि घृत का दीपक जलाए । अब **ऊं भूर्भुव स्व:** इस मंत्र से दीपक जला ले। और एक शुभ (चम्मच) होता है ,जिससे घी की आहुति डालते हैं। **शुभ** का क्या करना है कहां,, उस शुभ में कपूर रख देना है और उस कपूर को जिस दीपक को आपने जलाया है ,कपूर को उसके साथ रख देना है । जिससे कि कपूर भी जल जाए और उसका फिर यज्ञ कुंड में आधान कर देना है। परंतु प्राचीन परंपरा क्या थी, प्राचीन परंपरा ऐसी नहीं थी प्राचीन परंपरा यह हुआ करती थी जैसे कि महर्षि दयानंद ने लिखा कपूर लगा किसी एक पात्र में धर उसमें छोटी-छोटी लकड़ी लगा करके यजमान व पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथों से उठा ले यदि गर्म हो चिमटे से पकड़कर अगले मत्रों से उसका अग्नि आधान करें। ऐसी व्यवस्था तब थी जब बड़े-बड़े यज्ञ कुंड हुआ करते थे ? परंतु आज आप देखेंगे यज्ञ कुंड का साइज बहुत छोटा हो गया है और इसलिए इतने बड़े-बड़े कुंड घर आ भी नहीं सकते इसलिए छोटे कुंडों में करने में भी कोई आपत्ति भी नहीं है। कम से कम हम यज्ञ तो कर रहे हैं ? जिनको यज्ञ करना है छोटे कुंडों से करने में भी कोई आपत्ति नहीं है? परंतु उसमें आधान करने की एक नई परंपरा प्रारंभ करनी पड़ी एक कपूर को शुभ के ऊपर रखकर के यज्ञ कुंड में उसको स्थापित करते हैं और उसका मंत्र क्या है देखो

ऊं भूर्भुव स्व: स्वधृरिवयूम्न पृथिवीय वरिम्णा पृथिवि देवयजृन पृष्ठेप्रिमत्रादमत्राधादये।।

- इस मंत्र का अर्थ बहुत सुंदर है ब्रह्मांड को समझने के लिए यह मंत्र अत्यंत महत्वपूर्ण है पहले क्या कहा गया? ऊं भूर्भुव स्व यदि हम इसका आध्यात्मिक अर्थ देखें? ऊं भूर्भुव स्व इससे हम यह समझ सकते हैं कि परमात्मा प्राणाधार है। दुख विनाशक है। सुखदायक है।
- दूसरा आध्यात्मिक अर्थ क्या निकल कर आता है? देखें__परमात्मा सत चित आनंद यानी सच्चिदानंद है।

और जो हमने वैज्ञानिक अर्थ देखा वह हमने ब्रह्मांड से संबंधित अर्थ देखा

Edit with WPS Office

वह क्या है? पृथ्वी लोक अंतरिक्ष लोक द्युलोक ऊं भूर्भुव स्व से यह तात्पर्य लेना चाहिए? आगे मंत्र का मुख्य भाग क्या कहता है? धुलोक का क्या अर्थ है? सूर्य के पास का जो स्थान है। धु किसको कहते हैं? सूर्य को कहते हैं। मतलब सूर्य के समान सूर्य की तरह तो क्या कहा गया? जो यजमान यज्ञ कर रहा है, वह यजमान किस प्रकार हो? तो कहा है वह सूर्य के समान हो। इसकी व्याख्या करते हुए महर्षि दयानंद सरस्वती लिखते हैं, सूर्य बहुत ही महिमा वाला है। ऐश्वर्यावन है। और याज्ञवल्क्य भी इसी प्रकार अर्थ करते हैं? की सूर्य के साथ अनेकानेक जो नक्षत्र हैं वह शोभायमान रहते हैं। आप देखेंगे सूर्य कभी भी सौरमंडल में अकेला नहीं रहता? अनेक लोकान्तर अनेक नक्षत्र उसके साथ टिके रहते हैं। मतलब सूर्य अनेक नक्षत्र के साथ शोभायमान रहता है। तो इससे मनुष्य को प्रेरणा दी गई है। जैसे सूर्य जो है अनेक नक्षत्र के साथ शोभायमान है। उसी प्रकार मनुष्य आप में बहुत से गुण हो। जैसे सूर्य के साथ अनेक नक्षत्र होते हैं और उनके साथ शोभायमान है। वैसे मनुष्य भी अनेक गुणों अनेक ऐश्वर्या के साथ अनेक गुणों के साथ मनुष्य शोभायमान है।

इस मंत्र में कहा गया और प्रार्थना की गई । हे प्रभु ! मुझे सूर्य की तरह बना दो ऐश्वर्याशाली बना दो और आगे क्या कहा गया? **पृथ्वीदेवयनि** जैसे पृथ्वी है पृथ्वी सबको आश्रय प्रदान करती है , इसी प्रकार यजमान को बनना चाहिए। क्या बनना चाहिए? तो कहा, अन्य को आश्रय देने वाला। यदि हम यज्ञ करते हैं किसी को संयोग नहीं दे सकते? किसी के साथ संयोग की भावना नहीं रख सकते? तो हम को मनुष्य होना धिक्कार है। हमारे द्वारा यज्ञ करने का कोई लाभ नहीं है ? यदि हम पृथ्वी की तरह किसी को आश्रय न दे सके?

इस मंत्र से यह भी स्पष्ट हो जाता है हालांकि इसमें प्रार्थना की गई है। हे प्रभु ! मुझे सूर्य के समान ऐश्वर्या शाली बना दो। पृथ्वी के समान आश्रय प्रदान करने वाला बना दो।

वास्तव में यज्ञ वही है, जिसमें अनेक आध्यात्मिक गुण जो यज्ञ को रच सके। और अगला मंत्र जो है वह है कि कौन सी भूमि में यज्ञ किया हुआ सफल होता है ? तो कहां गया **ऊं भूर्भुव स्व तस्यास्थे पृथ्वी तमन्ना।**

इस मंत्र में बताया गया किस भूमि पर यज्ञ किया हुआ सफल होता है , तो

Edit with WPS Office

कहा गया? **देवयजनी** अथवा जहां विद्वान यज्ञ करते हैं जहां देव और विद्वान का सत्कार होता है। उस पृथ्वी **तस्यथेविषठे** यह कहां गया। भूमि की पीठ पर जिस अग्नि का आधान करते हैं? वह भूमि कौन सी होनी चाहिए? तो कहां जिसमें विद्वानों का सत्कार हो जिसमें नियमित स्वाध्याय हो।

जिसमें वैदिक विद्वानों का या वेद का तिरस्कार होता है नियमित यज्ञ नहीं होता जड़ चेतन देवताओं की पूजा यानी समान नहीं होता। ऐसी भूमि पर यज्ञ नहीं होना चाहिए अर्थात् किसी मांसाहारी के घर में यज्ञ नहीं होना चाहिए ? किसी कुकर्मी के घर में यज्ञ नहीं होना चाहिए? क्यों? क्योंकि वहां पर विद्वानों का तिरस्कार होता है ,वहां पर वेद का उल्लंघन हुआ है ,वहां पर वेद का स्वाध्याय नहीं होता।

यज्ञ तो उसी भूमि पर होना चाहिए ? जिसमें निरंतर वेदों का स्वाध्याय हो विद्वानों का सम्मान हो।

अगला मंत्र क्या बताया? ओम उद बुध्यस्वाप्रे प्रतिजागृहित्मिष्टापूते सं सूजेधामय च अस्मिन्तसधस्ते अध्युतरृस्मन देवा यजमानक्ष।

ऐसे कह कर के दीपक से कपूर को लगाना है।

यज्ञकुंण्ड में रख देना है। उसके बाद अग्नि प्रदीप्त हो। ऐसी प्रार्थना करते हुए।

विक्षे देवा यजमानक्ष इसमें क्या कहा गया है , हे अग्नि उदभुद हो। ऊपर उठ प्रकट हो यानी जिसमें हम यज्ञ कर सके ऐसी प्रचंड अग्नि होनी चाहिए?

कुछ लोग ऐसे होते हैं अग्नि प्रज्वलित नहीं हुई और उसमें सामग्री डालें जा रहे हैं ? तो इसका कोई लाभ नहीं।

अग्नि और यजमान मिलकर के यज्ञ को इष्ट करें। आपने सुना होगा श्री राम का जन्म पुत्रेष्टि यज्ञ से हुआ था। पूर्णिमा व अमावस्या किया जाता है दशेष्टि यज्ञ।

संसार में हम परोपकार की भावना से जो कर्म करते हैं आपने यह सुना होगा नर सेवा ही नारायण सेवा है।

विशेषण_संध्या मत करो, ध्यान मत करो, उपासना मत करो, यज्ञ मत करो, केवल किसी का उपकार करो। कई लोग ऐसे कहते हैं। ऐसे लोग बुद्धिहीन होते हैं, अज्ञानी होते हैं। ऐसे लोग कहते हैं यज्ञ में घी ही मत डालो किसी गरीब को खिला दो ।

Edit with WPS Office

सत्य क्या है हम बताते हैं। दोनों ही आवश्यक है यज्ञ भी और परोपकार भी। और यह कह देना मैं परोपकार का कार्य करूंगा इसी में मेरा इष्ट भी हो जाएगा और भक्ति परोपकार सेवा भी हो जावेगी? तो यह संभव नहीं? क्योंकि यह सब आपका नित्य कर्म है। सब कर्मों का अपना-अपना एक प्रयोजन है। संध्या का भी प्रयोजन है ,यज्ञ का भी प्रयोजन है, परोपकार का भी प्रयोजन है । हालांकि निष्कर्म भावना से कर्म करता हुआ, एक ही प्रयोजन को ध्यान में रखता है कि मैं ईश्वर की प्रति करना चाहता हूं? इस भावना को मन में रखते हुए व्यक्ति कर्म करता है, परंतु एक प्रयोजन भी रहता है सब कर्मों के पीछे जैसे__ यज्ञ का मुख्य प्रयोजन वातावरण की शुद्ध करना! तो दोनों प्रकार के कर्म करने चाहिए ? **इष्ट और अपुर्त।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 23.।। तेइसवां पृष्ठ ।।

•(देश की आजादी में आर्य समाज का क्या योगदान है)

आज का हमारा विषय है देश की आजादी में आर्य समाज और महर्षि दयानंद का क्या योगदान है।

माना जाता है कि देश 15 अगस्त 1947 ई को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त हुआ। **लेकिन सृष्टि के आरम्भ से पूरे विश्व पर आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा।** आर्य व उनके पूर्वजों ने ही विश्व को बसाया, सभी देशों के आदि पूर्वज आर्यावर्ती आर्यों की संताने वह वंशज थे। **सृष्टि का आरंभ अमैथुनी सृष्टि से हुआ। ईश्वर ने अमैथुनी सृष्टि से उत्पन्न, चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु,**

Edit with WPS Office

आदित्य, अंगिरा , चारों को वेदों का ज्ञान दिया। अमैथुनी सृष्टि में जो स्त्री पुरुष उत्पन्न हुए, वह सभी ईश्वर के पुत्र वह सभी एक ही वर्ण जाति के होने तथा किसी का भी गोत्र आदि न होने से वेदों के अनुसार गुण कर्म और स्वभाव के आधार पर आर्य कहलाए। इतिहास की लंबी यात्रा में अनेकों उत्थान और पतन हुए, **सामाजिक ढांचा मुख्ता 5000 वर्षों** में काफी तेजी से विकृत हुआ। आज संसार में जितने भी 200 से अधिक देश है उनका इतिहास महाभारत के बाद से ही सीमित है। इस अवधि में अविधा के कारण देश देशांतर में वेदोंतर का दुर्व्यवहार होता रहा, ऋषि दयानंद ने वेद वेदांत वेदान्तरो की समीक्षा की, तो पाया मत मत मतान्तरो में पहुंची हुई सत् मान्यताएं हैं ,और कुछ मान्यताएं उन मतों के अग्रभाव के काल में समाज में प्रचलित अविद्या के आधार पर आधारित उनके आचार्यों के विचार है। सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक अरब लाखों वर्षों तक भारत के कभी गुलाम व दास बनने के संकेत रामायण महाभारत आदि किसी भी ग्रंथो में नहीं मिलते। महाभारत काल तक वेद अनुयायी आर्यों का ही पूरे विश्व में सार्वभौमिक चक्रवर्ती राज्य था। इस विषय पर महर्षि दयानंद ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश के 11 वे समुल्लास में लिखा है, सृष्टि से लेकर 5000 वर्षों के पूर्व तक आर्यों का सार्वभौमिक चक्रवर्ती राज्य रहा। अर्थात भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र चक्रवर्ती आर्यावर्त राज्य था। अन्य देशों के मांडलिक अर्थात छोटे-छोटे राजा राज्य करते थे। कौरव पांडव यहां के पर्यान्त यहां के राज्य में सब भूगोल के राजा और प्रजा चलते थे। क्योंकि यहां मनुस्मृति सृष्टि के आदि में उत्पन्न हुई थी। महर्षि मनु द्वारा लिखी गई। उसमें प्रमाण मिला है, उसमें कहा गया है, की आर्यावर्त में उत्पन्न हुए ब्राह्मण, क्षत्रिय ,वैश्य, शूद्र अर्थात विद्वानों से भूगोल के मनुष्य ब्राह्मण, क्षत्रिय,दस्यु म्लेच्छ आदि सब अपने अपने योग्य की विद्या, चरित्र शास्त्रों, और शस्त्र अस्त्र की शिक्षा ले और विद्या अभ्यास करें। महाराजा युधिष्ठिर जी के राजसूय यज्ञ के समय महाभारत के अंदर प्रयन्त यहां के राज्य, के आधीन सब राज्य थे। **देश का पतन महाभारत युद्ध के बाद वेदाध्यन के शिथिल के कारण हुआ।** वेद और ऋषियों के ग्रन्थों का अध्ययन न करने के कारण ही देश की परंपरा बंद हो गई। सर्वत्र विद्या अविद्या के कारण मत संप्रदाय का प्रारंभ हो गया। वैदिक मान्यताओं के विरुद्ध एक वाममार्ग पथ भी स्थापित

Edit with WPS Office

हो गया। जिसका इसके मिलते-जुलते सभी अविधाओं का वर्णन महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश में दिया। देश छोटे-छोटे राज्यों और रियासतों में बटता गया। सबसे पहले इस देश में मुसलमान आए,जिन्होंने देश में प्रचलित अंधविश्वास , मूर्तिपूजा, फलित ज्योतिषी ,जातिवाद, छुआछूत , भेदभाव आदि का सहारा लिया। और देश को लूटा। यह प्रवृत्ति जारी रही ,बाद में विदेशी मुसलमान शासको ने देश के अन्य भागों के राज्यो को पराधीन किया। देश में जगन्य अपराध व अन्याय तथा अत्याचार किए। छलबल से आर्य हिंदुओं का धर्मान्तरण किया। आर्य हिंदू संगठन जातियां छिनभिन्न हो गई। देश के अन्य भागों में आर्य हिंदू राजा शक्तिशाली जो थे, महाराष्ट्र ,राजस्थान ,दक्षिण भारत के अनेक राजा शक्तिशाली व पराक्रमी रहे। जिन पर वे विधर्मी विदेशी लुटेरे विजय प्राप्त न कर सके। अपितु उनकी जो भी कोशिशें होती थी, वह विफल हो जाती थी। वीर शिवाजी महाराणा प्रताप वीर वीर गोविंद जी की आदि देश के रक्षक महापुरुषों का इतिहास सभी लोगों को पढ़ना चाहिए। इससे उन्हें अपने पूर्वजों के गौरव गाथा शौर्य पराक्रम जानने का अवसर मिलेगा। उन्हें जो दूसरा इतिहास पढ़ाया गया, उसके प्रभाव से बच सकेंगे। भारत पर आठवीं शताब्दी में मुगलों के आक्रमण आरंभ हुए। हमारे राजा जो हिंदू राजा थे धर्म परायण थे। धर्म के अनुसार व्यवहार करते थे। जबकि विधर्मी किसी आक्रमणकारी किसी भी नीति और नियम धर्म को नहीं मानते थे। अन्याय ,अत्याचार हिंसा लूटपाट बलात्कार आदि करना उनका स्वभाव था। हमारी आपस की फूट और एकता व्यवहार की नीति न होने के कारण हमारे कुछ राजाओं को पराधीनता का परिणाम झेलना पड़ा। कालांतर में यही प्रक्रिया जारी रही। अनेक छोटे-छोटे राज्यों पर विदेशी लुटेरे आक्रांताओं आक्रमणकार्यों का कब्जा हो गया। **मुसलमानों के बाद ईस्ट इंडिया कंपनी ने भारत में व्यापार आरंभ किया, उन्होंने देश की कमजोरी का अध्ययन किया, अपने राजनीतिक शक्ति के प्रचार व विस्तार की योजना को बीच के रूप में लेकर के काम करने लगे।** उसका विस्तार अंग्रेजी राज्य के रूप में सामने आया। शन्ने शन्ने अधिकांश भागों में अंग्रेजी राज्य स्थापित हो गया। इसके काल में भी इसाई मत का प्रचार आरंभ हुआ। छलवल का सहारा लेकर लोगों को इसाई मत में सम्मिलित किया जाने लगा। देश की जनता पर

Edit with WPS Office

अंग्रेजों ने अत्याचार बढ़ा दिए, खूब अत्याचार किया ,देश के संसाधनों का शोषण किया जा रहा था। हमारी संस्कृत वैदिक परंपरा को जड़ से समाप्त किया गया । और गुरुकुलों में आने वाली आर्थिक मदद रोक दी गई। लोगों को स्थाई रूप से गुलाम बनाने उनसे प्रशासनिक कार्य करने में अंग्रेजों ने अंग्रेजी का प्रचलन किया। अंग्रेजी पढ़कर नौकरी तो हासिल होती थी , माता-पिता अपनी संतान को इसलिए अंग्रेजी की शिक्षा दिलवाने लगे यह शिक्षा हमारे देश के लोगों का अपने प्राचीन धर्म व संस्कृति के प्रति जो लगाव था। लगाव हटकर के हिंसा का भाव लोगों के मन में उत्पन्न करने लगी विदेशी इसाई परंपरा को अच्छा मानने लगे, जिससे सनातन वैदिक धर्म का प्रभाव कम होता गया ,आर्य हिंदुओं की संख्या निरंतर घटती रही ऐसे समय में देश के विद्वान सामाजिक लोग इसका विरोध करते, और उन की बातों को दबा दिया जाता। **इस अन्याय और अत्याचार का परिणाम था 1857 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ।**जो इन्हीं कारणों से असफल भी हो गया। इस आजादी की लड़ाई में हमें महारानी लक्ष्मी अन्य देशभक्त और आर्य हिंदू योद्धाओं का पराक्रम व शौर्य देखने को मिला। अंग्रेजों की शक्ति अधिक थी। उनकी सेना में भारतीय लोग भी थे, जो अपने ही देशवासियों पर अत्याचार करते थे। यह एक ऐसा समय था जब अंग्रेजों ने पुलिस व सेना द्वारा अपने भारतीयों से भारतीयों पर खूब अत्याचार करवाया। इन अंग्रेजों ने हिंदू मुस्लिम को आपस में लड़ाया। हजारों की संख्या में आपस में लोगों को मार डाला गया। अमृतसर जलियांवाला बाग मैं हुई घटना जैसा एक उदाहरण है। जो भारतीय आंदोलन कार्यों पर गोलियां चलवा दी गई। समाज में भय और आतंक का वातावरण उत्पन्न हुआ। सन 1857 ईस्वी में ऋषि दयानंद 32 वर्ष के युवक थे। वो इस अवधि तक देश के अनेक भागों व नगरों में भ्रमण कर चुके थे। देशवासियों के बेहाल जीवन और अंग्रेजों के अत्याचार से सुप्रचित थे। देश की दुर्दशा के कारण का महर्षि बहुत चिंतन करते थे। जड़ मूर्ति पूजा के विरोधी तो वे बचपन से ही थे इसलिए वह तर्क युक्ति ज्ञान के अनुरूप मान्यताओं के सिद्धांत को मानते थे। इस कारण उन्होंने देश के उद्धार कैसे हो सकता है ?इस पर उन्होंने तत्कालीन विद्वानों और देशवासियों के साथ विचार किया होगा! उनके इन भाव विचारों को देखकर सन 1857 ई में क्रांतिकारी विचारों के युवक के दृष्टिकोण होते

Edit with WPS Office

हैं।सन 1857 ईस्वी में स्वतंत्रता संग्राम में वास्तविक भूमिका क्या रही होगी ?क्या थी ?इसके परमाण उपलब्ध नहीं है। अनुमान से ही कहा जा सकता है, कि इस आजादी की लड़ाई में भी उनकी सक्रिय भूमिका हो सकती है। ना कि ऋषि दयानंद अपितु अनेक क्रांतिकारी जिन्होंने आजादी की लड़ाई में अपना योगदान दिया! इतिहास के पन्नों पर नहीं आ सके। महर्षि दयानंद सरस्वती ने प्रथम स्वतंत्रता आंदोलन के बाद 1860 से 1863 के मध्य लगभग 3 वर्षों तक मथुरा दंडी स्वामी विरजानंद गुरु विरजानंद सरस्वती से वेद वेदांत के अंतर्गत शिक्षा अष्टाध्याई वेदभाष्यदि ग्रंथो का अध्ययन किया। विद्या पूरी होने पर उन्होंने वेद मंत्रों के भाष्य के साथ-साथ सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रंथ लिखा। उस ग्रंथ को जानने तथा उसको जन-जन तक प्रचार करने की योग्यता प्राप्त कर ली। विद्या पूरी होने पर गुरुवीरजानंद ने देश की परतंत्रता अंधविश्वास आदि समस्याओं का कारण अविधा का प्रचलन ज्ञात करवाया।गुरु विरजानंद ने स्वामी दयानंद सरस्वती को देश से अविधा दूर करने की प्रेरणा दी, इसी कार्य को उन्होंने अपने जीवन में किया। और देश देशांतर घूमकर सब जगह ज्ञान और अज्ञान से लोगों को परिचित कराया। उन्होंने वेद के आधार पर जन सामान्य में ईश्वर, आत्मा, प्रकृति का सत्य रूप में प्रचारित किया। उन्होंने फलित गलत ज्योतिषी मूर्ति पूजा सभी गलत मान्यताओं को आर्य जाति के पतन का मुख्य कारण बताया। उन्होंने मूर्ति पूजा सहित अनेक विषयों पर सनातनी हिंदू सहित, अनेक विधर्मी ईसाई ,मुसलमान ,सहित सभी से शास्त्रार्थ की चर्चाएं की। सभी विद्वान उनकी विद्या और ज्ञान का लोहा मानते थे। वैदिक धर्म की सत्य सर्व ज्ञान मान्यताओं के लिए **10 अप्रैल 1875 ईस्वी में मुंबई में आर्य समाज की स्थापना की। वैदिक मान्यताओं से लोगों को परिचित कराने के लिए उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश नामक ग्रंथ लिखा उसमें सभी आर्ष ग्रंथ की वैदिक मान्यताओं को विस्तृत से सम्मिलित किया गया।** सत्यार्थ प्रकाश में वेदों सहित विद्या और मत मतान्तरो संप्रदायों का स्वरूप जानने को मिलता है। ऋषि दयानंद ने इस ग्रंथ को लोगों के लिए हिंदी में लिखा है। जैसी विशेषता सत्यार्थ प्रकाश में है ऐसी किसी भी मत मत्तांतरों के ग्रन्थों में नहीं है । वेदाध्ययन करने वाला कोई भी व्यक्ति गुलामी और दास्ता को पसंद नहीं करता ,अपितु उससे मुक्त होने के लिए निरंतर

Edit with WPS Office

प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से प्रयत्नशील रहता है। सत्यार्थ प्रकाश से हम ऋषि दयानंद के स्वदेशी राज्य को सर्वोत्तम और विदेशी राज्य किसी भी स्थिति में सुखदायक नहीं होता। **सत्यार्थ प्रकाश के आठवें समुल्लास में ऋषि दयानंद लिखते हैं, कोई कितना भी कहे ,परंतु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि होता है।** मत मतान्तरो के आग्रह रहित अपने और पराए पक्षपात सुनने माता और पिता के समान कृपा करने वाला न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य पूर्णता सुखदायक नहीं होता। इन पंक्तियों में देश को अंग्रेजी राज्य से मुक्त कराने के लिए प्रेरणा और घोषणा दृष्टिगोचर होती है। सत्यार्थ प्रकाश के 11वें समुल्लास में स्वामी जी ने कहा,, संवत 1914 सन 1857 में तोपों से गिराए गए मंदिर और मूर्तियां तोड़ी गई अंग्रेजों ने उन्हें नष्ट किया। तब मूर्तियों की शक्ति कहां गई थी इसके उत्तर में द्वारिका के लोगों ने बड़ी वीरता दिखाई अंग्रेजों से लड़े शत्रु को मारा। परंतु मूर्ति एक मक्खी की टांग भी न तोड़ सकी। जब श्री कृष्ण के सदशष कोई वीर देशभक्त और वैदिक प्रेमी होता, तो इन अंग्रेजों के छक्के छुड़ा देता। और ये अंग्रेज भागते फिरते और देश छोड़कर चले जाते। उसका यहां भला यो कहो ,जिस रक्षक मूर्ति जिसकी रक्षक मूर्ति मार खाए उसके शरणार्थी उसके भक्त क्यों ना पिटे। इन पंक्तियों में भी प्रथम आजादी की लड़ाई में भी अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े द्वारिका के लोगों की वीरता की प्रशंसा देश को आजाद कराने की प्रेरणा, संकेत रूप में विद्यमान है। इसके अनेक वचन ऋषि दयानंद के ग्रंथ और वेद भाष्य में मिलते हैं। उनकी महर्षि की प्रेरणा से ही सभी ऋषि भक्त व आर्य समाज के अनुयाईयो ने देश रूपी धर्म धारण करके देश की आजादी में योगदान दिया था। स्वामी श्रद्धानंद ,पंडित श्याम जी, कृष्ण वर्मा, लाला लाजपत राय, भाई परमानंद, पंडित राम प्रसाद बिस्मिल, शहीद भगत सिंह, राजगुरुसुखदेव,उधम सिंह, चंद्रशेखर आजाद, वीर सावरकर, लोकमान्य तिलक, पंडित लेखराम, गुरुदत्त विद्यार्थी आदि अनेक हजारों लाखों महापुरुषो ने देश की आजादी की प्रेरणा ऋषि दयानंद के ग्रंथों से ही ली। इन सभी स्वतंत्र देश के बलिदान सेनानियों के भीतर राष्ट्र प्रेम की लो जलाई। जिसकी प्रीति देश में स्वतंत्रता के रूप में हुई। हमारी अपनी आंतरिक कमजोरी के कारण हम वैदिक धर्म और संस्कृति को भली प्रकार से प्रचारित प्रसारित नहीं कर पाए। जिसके कारण देश का विभाजन हुआ।

Edit with WPS Office

हमारे लाखों भाइयों का अपना जीवन आजादी के बाद भी बलिदान करना पड़ा। वर्तमान में देश की आजादी की रक्षा के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़कर इससे प्रेरणा लेकर धर्म रक्षा के कार्यों को करने की महत् आवश्यकता है। यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो इतिहास सनातन वैदिक आर्यों धर्मियों को कभी क्षमा नहीं करेगा।______!!

- **आर्य समाज का कार्य : रामधारी सिंह दिनकर**

आर्य समाज के जन्म के समय हिंदू कोरा फुसफुसिया जीव था । उसके मेरुदंड की हड्डी थी ही नहीं । चाहे कोई उसे गाली दे या उसकी हंसी उड़ाएं , उसके देवताओं की भर्त्सना करे या उसके धर्म पर कीचड़ उछाले , जिसे वह सदियों से मानता आ रहा है , फिर भी इन सारे अपमानों के सामने दांत निपोर कर रह जाता था । लोगों को यह उचित शंका हो सकती थी कि यह आदमी भी है या नहीं , अथवा वह प्रतिपक्षी की ओर घूर सकता है या नहीं । किंतु आर्य समाज के उदय के बाद , अविचल उदासीनता कि यह मनोवृति विदा हो गई । हिंदुओं का धर्म एक बार फिर जगमगा उठा है । आज का हिंदू अपने धर्म की निंदा सुनकर चुप नहीं रह सकता । जरूर हुई तो धर्म रक्षार्थ वह अपने प्राण भी दे सकता है । **(राष्ट्रकवि रामधारी सिंह दिनकर : संस्कृति के चार अध्याय पृष्ठ संख्या. 567) ।**

पतन का कारण ______ जगन्नाथ पुरी मंदिर में 7000 श्रद्धालुओं के लिए ₹300000 की लागत से भोजन बनाया गया । फिर उसे फेंक दिया गया क्योंकि वहां के पंडितों ने 18 घंटे की बहस के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि ' भोग ' एक अमेरिका वासी के , जो कि हिंदू नहीं था , किसी पंडित की कृपा से अंदर आने के कारण भ्रष्ट हो गया ।

थाईलैंड की राजकुमारी सिरींधोरन को इसलिए मंदिर के अंदर नहीं आने दिया गया था क्योंकि वह बौद्ध तो थी , पर भारत में जन्मी बौद्ध न थी । 1972 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को इसलिए मंदिर में नहीं जाने दिया गया था क्योंकि वह बेशक हिंदू थी पर उसके पति पारसी थे ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 24. ।। चौबीसवां पृष्ठ ।।

•(महर्षि दयानंद सरस्वती ने इस समाज को क्या दिया)

सृष्टि का आरंभ लगभग दो अरब वर्षों पूर्व हुआ। उस समय एक ही ईश्वर, एक ही वेद का ज्ञान, के द्वारा चलते थे। सभी सुखमय खुशहाली जीवन जीते थे। ना किसी से भेदभाव, ना किसी से ऊचनीच, और वैभवशाली था आर्यावर्त भूगोल। परंतु दुर्भाग्य से महाभारत काल के आते आते वेद ज्ञान की अनदेखी गलत अर्थों के कारण राज सत्ताओ की एकता व्यवहार कार्य सिमिट्टता चला गया।
महर्षि दयानंद सरस्वती कहते हैं, जब आपस में भाई-भाई लड़ते हैं तो तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है। यही हुआ भी दुनिया का विश्व गुरु रहा भारत आर्यावर्त यह भी पहचानने में सक्षम न रहा कि हम पर कोई शासन कर रहा है। विशाल धन दौलत वैभव का यह देश विदेशी आक्रांताओं ,अंग्रेजी सत्ता, और कुरीतियो अंधविश्वास पाखंड के फौज तलें अंधेरेकाल में 12 फरवरी 1824 ई० को मूल नक्षत्र में मूल सत्य की स्थापना के लिए हजारों रश्मियां की चका और ध्वनिया के कड़कड़हाट के साथ गुजरात के टंकारा में मूलशंकर ने जन्म लिया। शिवरात्रि पर बौध होने

Edit with WPS Office

पर उन्होंने19 वर्ष की आयु में गृह त्याग कर सच्चे शिव की खोज में निकला। और दयानंद सरस्वती नाम से प्रसिद्ध हुए। गुरु विरजानंद से शिक्षा प्राप्त कर, वे सारे देश में घूमे। देश धर्म संस्कृति सभ्यता इतिहास और भूगोल को गहराई से जाना, और सब समस्याओं के मूल को समझा, और परिवर्तन के मैदान में अकेले कूद पड़े। इस आदित्य ब्रह्मचारी की गर्जना में सदियों से सोए भारत को जगाया ।

जोर कर खड़ा कर दिया। सन 1857 ई के संग्राम में दो ही रास्ते थे, परंतु दयानंद की इस हुंकार ने देश की चिंतन धारा ही बदल दी, **कोई कितना ही करे जो स्वदेशी राज्य होता है वह ही सर्वोपरि और उत्तम होता है** । इतिहास के हस्ताक्षर है कि इस युग में **स्वदेशी** और **स्वराज** शब्द का जन्म इसी वाक्य से हुआ। विराट भारत की कल्पना व दयानंद ने ही दी। वेद में गलत अर्थों को मिलाकर प्रचारित करके अपने ग्रंथों को महानतम बता करके मूल संस्कृति की समाप्ति का षड्यंत्र था । तब दयानंद की सिंह गर्जना थी, कि वेद ही ईश्वरय ज्ञान है । वेदों की ओर लौटो, और वेद के सही अर्थ भी लौटे, और पिछड़े लोग भी, इस युग में आपकी क्रांतिकारी सोच ने ही तो आत्मनिर्भर भारत के लिए________

- **पहली गौशाला रिवाड़ी में खुलवाई**
- **पहला अनाथालय फिरोजपुर**
- **पहला महिला कन्या गुरुकुल देहरादून**
- **और महिला छात्रावास दिया।**
- **पहला स्वदेशी पंजाब नेशनल बैंक दिया।**
- **पहले आर्य नगर नाम की कॉलोनी दी।**
- **पहली आयुर्वैदिक फार्मेसी दी।**
- **डी ए वी कॉलेज लाहौर दिया।**
- **गुरुकुल शिक्षा प्रणाली दिया।**
- **नमस्ते शब्द से पहचान दी।**
- **हिंदी का उपहार ग्रंथ दिया।**
- **तुम्हारी सोच नहीं तो डोला पालकी जैसी सैकड़ो प्रथाएं तोड़ी।**
- **तुमने ही विधवाओं को सम्मान दिलवाया।**

Edit with WPS Office

- **महिलाओं को कोर्ट का अधिकार दिलवाया।**
- **पहली महिला विमान सरला ठकराल पायलट दी।**
- **भगत सिंह, बिस्मिल, लाला लाजपत राय जैसे बलिदान होने वाले सेनानी दिए।**
- **स्वामी श्रद्धानंद, श्याम जी कृष्ण वर्मा, हजारों क्रांतिकारी दिए।**
- **मुंशी प्रेमचंद,जयशंकर प्रसाद, गुरुदत्त विद्यार्थी, पंडित लेखराम आर्य जैसे क्रांतिकारी लेखक दिए।**
- **सेमल स्टॉक्स जैसे अंग्रेज को सत्यानंद स्टोक्स बनाया।**
- **शिवकर बापूजी तलपडे जैसे सोच के वैज्ञानिक दिए।**
- **जातिवाद तोड़कर आर्य नाम दिया।**
- **नया चिंतन, नई सोच दी।**
- **अनेक सत्यार्थ प्रकाश जैसे ग्रंथ दिए।**
- **और अमूल्य उपहार आर्य समाज दिया।**

➤ ऋषि दयानंद हम तेरे आगे नतमस्तक हैं । पर हमारी जिम्मेदारी समाप्त नहीं हुई, रोती बिलखती भारत छोड़कर जाने वाली शक्ति अब भी छुपे रास्तों से प्रहार के रास्ते खोल रही है ।

प्रहार को हमें पहचाना होगा दयानंद ने हमें अंधकार से निकालकर हमारा आज दिया है ,अगली पीढ़ी को हमें बेहतर कल देना है। और और बड़ों से हमें समझना भी है, और संभलना भी है ,मजबूत परिवार, मजबूत भारत ,रिश्ते बचाइए, उच्च नीच को मिटाकर गले लगाइए। प्रकृति कृषि से बंधेगे राजाओं के राजा किसान और नशा मुक्ति युवा है भारत का भविष्य ,नशा भगाए ,यौवन बचाए और दयानंद के चिंतन दर्शन चुनौतियों का सामना करने का संकल्प को दोहराएं । घर खेत प्रकृति को देखें ये सब राष्ट्र विश्व को रहा दिखाए ।और आज यही संकल्प लेते हैं ।

- **महर्षि दयानंद सरस्वती ने मनुष्य के कल्याण के लिए विश्व को एक सूत्र में बांधने के लिए 10 नियम बताइए। कोई किसी भी धर्म संप्रदाय से हो सबके लिए यह नियम। 10 नियम कौन-कौन से हैं ? आइए बताते हैं?**

Edit with WPS Office

- 1..______सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं ,उन सब का आदिमूल परमेश्वर है।
- 2..______ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु ,अजन्मा , अनन्त , निर्विकार, अनादि ,अनुपम, सर्वाधार ,सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वअंतर्यामी ,अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है।
- 3..______वेद सब सत्यविधाओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना –पढ़ाना और सुनना– सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है।
- 4..______ सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उधत रहना चाहिए।
- 5..______सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
- 6..______संसार का उपकार करना, इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
- 7..______ सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।
- 8..______अविधा का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
- 9..______प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किंतु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
- 10.._____ सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतंत्र रहना चाहिए? और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतंन्त्र रहे।

।। पृष्ठ समाप्त्।।

- ## 25. ।। पच्चीसवां पृष्ठ ।।

Edit with WPS Office

➤ {क्या महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों के प्रभाव में आकर के मूर्ति पूजा का विरोध करते थे ?? जानिए सच्चाई? }

____ **स्वामी निश्चलानंद सरस्वती ये कहते हैं?** महर्षि दयानंद सरस्वती जो खंडन करते थे मूर्ति पूजा का, अवतारवाद का, वो तो अंग्रेजो से प्रभावित होकर के क्या करते थे क्या यह सच है ? उन्होंने इस बात का कोई प्रमाण नहीं दिया?

- क्या महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों के प्रभाव में आकर के बोलते थे देखो सत्यार्थ प्रकाश से समझे?

इस विषय के लिए इतिहास पर दृष्टि डालते हैं। जब महर्षि दयानंद सरस्वती बंगाल जाते हैं कलकाता में जो ब्रह्म समाज के प्रमुख नेता थे उनसे मिलते हैं उन प्रमुख नेताओं में से एक थे **केशवचंद्रसेन** और ब्रह्म समाज अंग्रेजों की सभ्यता से बहुत प्रभावित थे। केशव चंद्र सेन इसी मान्यता के व्यक्ति थे। की जो अंग्रेज लोग हैं अंग्रेजों के जो तरीके हैं बहुत अच्छे हैं हम लोगों पर भी अंग्रेजी आनी चाहिए ? ऋषि दयानंद सरस्वती और केशव चंद्र सेन के बीच में चर्चा होती है। और चर्चा हो रही थी, केशव चंद्र सेन जो थे उन्होंने ब्रह्म समाज की स्थापना नहीं की थी? लेकिन 1856 में केशव चंद्र सेन ब्रह्म समाज से जुड़े थे। तो ब्रह्म समाज से जुड़कर उनकी भी अवधारणा बन गई थी, कि जो भारतीय सनातनियों की मान्यताएं हैं वह अच्छी नहीं है ? इसलिए हमें उन्नति करनी है, आगे बढ़ना है, विकसित होना है, तो हमें अंग्रेजों के नियमों पर चलना पड़ेगा ? जैसे अंग्रेज कर रहे हैं हमें वह करना पड़ेगा। हमें भी उन्हीं की तरह कपड़े पहनने पड़ेंगे। उन्हीं की तरह बोलना पड़ेगा। तो इसलिए वह अंग्रेजों के पक्षधर थे। केशव चंद्र सेन और ऋषि दयानंद के बीच चर्चा होती है, तो केशव चंद्र सेन ऋषि दयानंद से कहते हैं ? कि वैसे तो आप बहुत विद्वान हैं। बहुत अच्छा कार्य कर रहे हैं। लेकिन मुझे बड़ी निराशा हुई जानकर कि आप अंग्रेजी नहीं जानते? अगर आप अंग्रेजी जानते होते तो मैं आपको विदेश ले जा रहा होता ? यानी केशव चंद्र सेन कह रहे हैं अगर महर्षि आप पर अंग्रेजी आती तो मैं आपको विदेश ले

Edit with WPS Office

जाकर के आपका व्याख्यान करवाता वहां के लोग बड़े प्रभावित होते आपसे। उन्होंने फिर ये भी कहा,, केशव चंद्र सैन ने आप कैसे विद्वान हो जो आप पर अंग्रेजी नहीं आती? इस पर ऋषि ने उत्तर दिया मैं अंग्रेजी नहीं जानता यह बात बिल्कुल सही है, मुझसे भी दुख की बात यह है कि जो व्यक्ति आपके सामने बैठेगा। जो आप समाज सुधार की बात करोगे। अपने शास्त्रों की बात करोगे। तो आप उसे किस प्रकार समझाओगे जब आप पर संस्कृति ही नहीं आती ? यह बहुत दुख की बात है। और जिस पर संस्कृति नहीं आती वह क्या समाज सुधार करेगा ? ऋषि दयानंद की ये बातें सुनकर केशवचंद्रसेन मौन हो गए ? वह कैसे बता पाएगा आप कैसे बता पाओगे भारत की प्राचीन संस्कृति प्राचीन सभ्यता क्या थी ? **इसलिए अगर समाज सुधार करना है तो संस्कृत सीखनी पड़ेगी?**

अगर ऋषि जी अंग्रेजों से प्रभावित होते तो उनके सामने एक व्यक्ति बैठा है , जो अंग्रेजों से प्रभावित है केशव चंद्रसेन । तो महर्षि दयानंद सरस्वती उसको ऐसे फटकार लगाते? महर्षि दयानंद सरस्वती की जीवनी लिखने वाले सभी लेखकों ने लिखी है और वहां स्पष्ट उल्लेख है कि यदि ऋषि अंग्रेजों से जरा भी प्रभावित होते तो उस समय जो केशव चंद्र सेन ने कहा ऋषि से तुमको अंग्रेजी नहीं आती? यह आपका सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। अंग्रेजी पढ़ करके अपना सुधार कर ले बिना संस्कृति के आपको संस्कृति पढ़नी पड़ेगी ??

एक और आपको उदाहरण देता हूं ?? जो निश्चलानंद सरस्वती शंकराचार्य मठ के स्वामी हैं उन्होंने जोर-जोर से यह कहा,, दयानंद जी मूर्ति पूजा का खंडन करते थे ??

हम बताते हैं महर्षि दयानंद सरस्वती के क्या विचार थे मूर्ति पूजा पर तब उन्होंने यह अनुभव किया कि सामान्य लोगों को ये बात बताता रहूंगा? काशी जा करके महर्षि दयानंद सरस्वती ने पंडितों को ललकारा और कहां की तुम मूर्ति पूजा को सिद्ध करो?? वेद में कहां है मूर्ति पूजा? एक बार तो आपको आश्चर्य होगा? आश्चर्य लगेगा? की निश्चलानंद जो शंकराचार्य मठ के स्वामी है, उनके तर्क कितने खोखले हैं? उनकी यह बात कितनी झूठी है कि वह अंग्रेजों के प्रभाव में आकर के मूर्ति पूजा का खंडन किया करते थे महर्षि दयानंद सरस्वती।

Edit with WPS Office

जब महर्षि दयानंद सरस्वती काशी में जाकर के पंडितों को ललकारते हैं और कहते हैं वेदों में सिद्ध करो मूर्ति पूजा? **विचार करो**___? अगर महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों की प्रभाव में आकर की मूर्ति पूजा का खंडन करते तो वह काशी में जाकर यह ललकारेंगे कि तुम वेदों में से मूर्ति पूजा दिखलाओ ??? अगर अंग्रेजों के प्रभाव में होते तो वह तो यह कहेंगे की मूर्ति पूजा तो अनुचित है, ? और जब काशी का शास्त्रार्थ प्रारंभ होता है। क्योंकि ऋषि दयानंद सरस्वती जी ने वहां पर विज्ञापन छपवा दिए थे , पहले और बांट दिए थे? उस विज्ञापन में लिखा हुआ था कि मैं महर्षि दयानंद सरस्वती यहां पर आए हुए काशी में काशी के पंडितों सिद्ध करो मूर्ति पूजा कहां है ?? इस प्रकार का विज्ञापन छपवा दिया था ? और उस पत्र में विज्ञापन में आगे लिखा हुआ था, और यदि वह सिद्ध नहीं कर पाए तो जनता को गलत धारणा गलत विचार देना बंद कर दीजिए ? लोगों को गलत रास्ते पर चलाना छोड़ दीजिए ? इस प्रकार के विज्ञापन वहां के पंडितों और राजा के हाथ लगे। वहां के राजा ने देखा एक ऐसा साधु ललकारता है कि दिखाओगे वेदों मैं मूर्ति पूजा कहां है ? राजा के सम्मान की बात थी क्योंकि राजा भी स्वयंम अंधपरंपराओ पर चले हुए थे पंडितों की बातों पर विश्वास करते थे। राजा ने पंडितों को बुलाया राजा ने उन पंडितों के साथ विचार विमर्श किया राजा ने उन पंडितों से कहा या तो इस प्रश्न का उत्तर दो नहीं तो और कोई समाधान सोचो यह तो सीधे कह रहा है? सीधे चुनौती देता है? इसी उद्देश्य से पंडितों की सभा बुलाई गई पंडित लोग तैयार हुए और कहां हम बहस शास्त्रार्थ करेंगे दयानंद से। दिनांक निश्चित की गई पंडित लोग आए और बैठे। और राजा स्वयंम आए। 30 पंडित सामने बैठे हैं, और दूसरी तरफ अकेले महर्षि दयानंद सरस्वती जी हैं? पंडित विशवान्द, पंडित बाल शास्त्री जैसे वेद शास्त्रों के पंडित बने हुए थे अपने आप को दिग्गज विद्वान मानते थे। अपने आप को वेदों के पंडित कहते थे। लेकिन सभी पौराणिक पंडित हारे। कोई भी सिद्ध नहीं कर पाया कि वेद में यहां मूर्ति है। नहीं सिद्ध कर पाए? जब भारतीय संस्कृत का मूल ग्रंथ वेद में मूर्ति पूजा का वर्णन नहीं है? तो फिर यह कहना कि दयानंद मूर्ति पूजा का खंडन अंग्रेजों के प्रभाव में आकर के करते थे यह बात बहुत खोखली है इसलिए ऋषि का जीवन यदि मूर्ति पूजा में लगा तो वह खण्डन में लगा। उसका एक ही उद्देश्य था मूर्ति

Edit with WPS Office

पूजा से होने वाली हानियां मूर्ति पूजा से होने वाला राष्ट्र का नुकसान देश का नुकसान हुआ है।
मैं तुम्हें एक कहानी सुनाता हूं जब ऋषि दयानंद सरस्वती जी यह सोचते हैं कि दुनिया सुखी होनी चाहिए तो यह सबसे बड़ा दुख मूर्ति पूजा से हुआ है। तो इस दुख को झेलने वाले अंदाज को कैसे नजरअंदाज कर सकते हैं स्वामी जी?? और उन्होंने किया भी नहीं? और उनको लालच भी दिया गया ऋषि दयानंद को। ऋषि दयानंद को लालच इसलिए दिया गया उनसे कहा गया कि यह मंदिर है, इस मंदिर की रियासत चलती है ,जो भी धन आता है। वह उसका मालिक हो जाता है। जो इस मंदिर का महंत पुजारी बोल दे। तो उसकी बात को पूरा शासन और जनता को माननी पड़ेगी? इस गद्दी पर हम तुम्हें बैठाते हैं? लेकिन शर्त एक है तुम मूर्ति पूजा को खंडन नहीं करोगे? मूर्ति पूजा है अवतारवाद है जो भी अंधविश्वास परंपरा है वह सभी माननी पड़ेगी? और तुम्हारा आदेश इस पूरे राज्य पर चलेगा। इस प्रकार का लालच दिया गया ऋषि दयानंद को।
ऋषि दयानंद सरस्वती उसे ठुकरा देते हैं। अगर ऋषि दयानंद सरस्वती को कोई लालच होता? अगर वो किसी लालच में यह कार्य कर रहे होते? क्या वह उस समय मूर्ति पूजा का खंडन छोड़ नहीं देते जब इस प्रकार का लालच दिया गया?? विचार करो। अगर बात किसी लालच की होती? अगर बात किसी डर की होती? एक राजा कह रहा है कि आप यह छोड़ दीजिए आपको आपके लिए यह जो शासन जो मंदिर से चलता है वह आपको सौंप देंगे। लेकिन इतना लालच देने के बावजूद भी ऋषि दयानंद सत्य पर डटे रहे मूर्ति पूजा का खंडन करते रहे। ऋषि दयानंद सरस्वती ने कहा जितनी आपके पास संपत्ति है इतनी तो मेरे पिता पर थी । अपने पिता की इतनी बड़ी संपत्ति को छोड़कर मैंने सन्यासी ग्रहण किया किस लिए इस अंधविश्वास इस पाखंडवाद को मिटाने के लिए, देश को आजाद करने के लिए, छुआछूत भगाने के लिए, स्त्रियों को उनका हक दिलाने के लिए, सन्यास ग्रहण करने के बाद भी मैं समाज सुधार करता रहूंगा? तो इससे विचार लगाना चाहिए प्रिय बंधुओ !! जो लोग यह कहते हैं महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों के प्रभाव में आकर की मूर्ति पूजा का खंडन करते थे उनके मुंह पर तमाचा है?? अगर महर्षि दयानंद सरस्वती अंग्रेजों के प्रभाव में आ

Edit with WPS Office

गए होते या उनके प्रभाव में आकर के खण्डन कर रहे हैं तो सत्यार्थ प्रकाश का 13वा समुल्लास ना होता जिसमें ईसाइयों का खंडन है। ? और उसमें विस्तृत वर्णन किया है सत्यार्थ प्रकाश में कि ईसाइयों में किस प्रकार अंधविश्वास परंपरा नाटक बाजी जादूगर भरा पड़ा है। उसमें ऋषि दयानंद ने सत्यार्थ प्रकाश में इतना बड़ा खंडन किया ? ईसाइयों की जो सामान्य बात है व्यक्ति को भी स्वीकार्य नहीं होगी। महर्षि दयानंद का जब व्याख्यान चल रहा था? उस समय जो स्वामी श्रद्धानंद थे ? ऋषि दयानंद सरस्वती से प्रभावित थे। और उनके शिष्य थे उन्होंने अपने ग्रंथ में लिखी ये सभी बातें कि जब महर्षि का व्याख्यान चल रहा था, सामने अंग्रेज अधिकारी बैठे हुए थे? उनको अच्छा लगता था वो कहते थे देखो महर्षि अपने पुराणों का कैसे विरोध करते हैं। अंग्रेज अधिकारी महर्षि का रोज प्रवचन सुनने के लिए आते थे? एक दिन ऋषि दयानंद जी ने बाइबिल को आड़े हाथों लिया? और उस प्रवचन अंग्रेजों की सभा में कहा,? की देखो बाइबल में लिखा है यीशु मसीह की उत्पत्ति कुंवारी कन्या से हुई है? देखो कितना विज्ञान के विरुद्ध तथ्य लिखा है? यह सुनकर अंग्रेज अधिकारी तिलमिला गए, बहुत क्रोधित हुए क्रोधित होने के बाद उनके जो कोतवाल थे महर्षि दयानंद के। उससे कहा तुम्हारे जो सन्यासी साधू है ना इनसे कह दो कि हम तो ईसाई लोग हैं अंग्रेज लोग हैं सभ्य लोग हैं कुछ नहीं कह रहे। अगर यहां मुसलमान बैठा होता ऋषि कुरान का विरोध कर रहे होते तो स्वामी जी के प्राण भी संकट में आ जाते? तो बात सीधी सीधी है अंग्रेजों की धमकी दी गई कि ऐसा नहीं है हम लोगों को बुरा नहीं लगा हमें भी बुरा लगता है। यह सब कहने की कोतवाल की हिम्मत नहीं हुई महर्षि दयानंद से कौन कहे किसी की भी हिम्मत नहीं हुई कहने की कि अंग्रेज लोग नाराज हैं? कि इस तरह खण्डन मत किया करो बाइबल का। लेकिन कौन बताएं उन्हें किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी यह सब कहने की? स्वामी श्रद्धानंद ने बड़े ही विस्तार से इस घटना को लिखा है अपने ग्रंथ कल्याण मार्ग पथिक में लिखा है। स्वामी दयानंद ने देखा सब लोग मेरे पास खड़े हैं कोई कुछ बोल नहीं रहे? कुछ कहने का साहस नहीं कर रहे? तो स्वामी दयानंद ने खुद ही कहा, अंग्रेज लोग नाराज हो जाएंगे? अंग्रेज लोगों की नाराजगी से नहीं डरता मैं। जाकर कह दो उनसे। मुझे सत्य अधिक प्रिय है, अगर कोई चाहे मेरी उंगलियों की

Edit with WPS Office

बत्ती बनाकर के भी जला क्यों ना दे फिर भी मैं सच्च ही कहूंगा? अपने उस अंग्रेज अधिकारी से बोल दो, कि ऋषि दयानंद डरने वाले नहीं है।
अब जरा विचार करो शंकराचार्य के शिष्य लोगों स्वामी निश्चलयानंद जी जैसे आप कह रहे हो?अगर महर्षि अंग्रेजों के प्रभाव में आते और और उनके प्रभाव में आकर मूर्ति पूजा का खंडन कर रहे हैं तो फिर वह इस प्रकार ऐसे ना कहते।
एकदम निराधार झूठा तथ्य है स्वामी निश्चयानंद का। महर्षि दयानंद को झूठा साबित कर रहे हैं।
मैं आपको बता दूं मूर्ति पूजा के पीछे ऋषि दयानंद का कोई मकसद नहीं था। ना ही किसी के हृदय को ठेस पहुंचाना था। महर्षि दयानंद सरस्वती ने अपनी सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखते हैं कि मेरा उद्देश्य किसी के हृदय को ठेस पहुंचाना नहीं है मेरा तो उद्देश्य इतना है कि जो बातें सही है, वो लोगों को पता होनी चाहिए?
मैं आपको बता दूं ऐसी भी बहुत सारी बातें होती हैं जिनको हम मानते रहते हैं, एक साल से जीवन जीते रहते हैं उस आधार पर फिर हमें बाद में पता चलता है अरे यह काम तो हमने गलत कर लिया? कितना अच्छा होता है जो समय रहते हमें जगाने वाला मिल जाए, सत्य के दर्शन करवाए वही चेताने वाले, सत्य का ज्ञान देने वाले महर्षि दयानंद सरस्वती है।
उन्होंने लोगों को समझाया लोगों को अंधविश्वास और पाखंड कुरीतियों से बाहर निकलवाया। और लोगों को बताया जो आप कर रहे हो यह गलत है।? इससे तुम्हारा कोई भला होने वाला नहीं है? क्योंकि हमने ऐसे अनेक कष्ट भुगते हैं। सोमनाथ मंदिर की कितनी बार चर्चा की जाए ? जब सारी हमारी सेना राजा खड़े हैं और शत्रु के पक्ष में भी खड़े हैं, वह जो पुजारी है कहता है नहीं यह अभी शुभ मुहूर्त नहीं हे युद्ध लड़ने का युद्ध लड़ने का जब शुभ मुहूर्त आएगा तब लड़ेंगे। और ब्राह्मणों ने कहा, युद्ध लड़ने की जरूरत नहीं है ,क्या आप लोग नहीं जानते? यह जो सामने मूर्ति रखी है यह ईश्वर का साक्षात रूप है। यह अपनी सुरक्षा स्वयं कर लेगी बस शुभ मुहूर्त की प्रतीक्षा कीजिए। सामने जो मुगल सेना खड़ी है , उसने तो मूर्ति की प्रतीक्षा नहीं की?? वह तो आया और एक झटके में मंदिर को तहस-नहस कर दिया? और इतिहासकार कहते हैं उन मूर्तियों के छोटे-छोटे पत्थर थे , उनको

Edit with WPS Office

सीडीओ पर लगवाया गया? तब कहां थे मूर्ति पूजा को मानने वाले लोग?? हमें यह बात आज तक समझ में नहीं आई की मूर्ति नहीं रक्षा कर सकती? लेकिन महर्षि दयानंद सरस्वती को समझ में आ गई थी, ऋषि दयानंद को बचपन में ही समझ में आ गया, ऐसा नहीं है कि ऋषि नास्तिक हैं वो तो कट्टर आस्तिक हैं? भगवान के बिना तो उनका कदम तक भी नहीं बढ़ता? सत्यार्थ प्रकाश में भी पहले समुल्लास में भगवान के लिए ही लिखा। वो कहते हैं, भगवान है एक है सब जगह है। लोगों में यह बात भी बहुत झूठ फैल रही है, ऋषि दयानंद कहते हैं मूर्ति में भगवान नहीं है। जो ऐसे आरोप लगाता है जरा विचार तो करो जरा बताओ तो सही ऋषि ने कहां पर लिखा है कि मैं मूर्ति में भगवान नहीं है?? वो तो मानते हैं मूर्ति में भगवान है। लेकिन भगवान तो मेरे अंदर भी है? मेरे एक-एक बाल में भी भगवान है। छोटे से छोटे कणों में भी भगवान है।

हम लोग भगवान से अपेक्षा क्या करते हैं, कि वह भगवान आए ,हमारे सारे काम कर जाए, क्या भगवान इसलिए कण -कण में बसा हुआ है? जो हमारे छोटे-छोटे काम करें?

जरा विचार करो अगर मेरी सुरक्षा भगवान को स्वयं करनी होती? तो मुझे दोनों हाथ देने की जरूरत नहीं थी? मुझे दो पैर देने की जरूरत नहीं थी? मुझे इतना अच्छा शरीर दिया? क्यों दिया? भगवान ने इसलिए दिया ताकि मैं अपनी रक्षा के साथ-साथ दूसरों की भी रक्षा कर सकूं अपने समाज की रक्षा कर सकूं। क्योंकि यह कार्य मुझे स्वयंम करने है? ईश्वर इसके लिए नहीं है, कि ईश्वर आकर मेरे सारे कार्य करें? ईश्वर व्यापक है सब जगह है ,पर इसका मतलब यह बिल्कुल भी नहीं जिस रूप मूर्ति में हम ईश्वर मानते हैं? महर्षि दयानंद सरस्वती कट्टर आस्तिक थे। महर्षि का कोई भी कार्य ईश्वर के बिना नहीं चलता। महर्षि द्वारा लिखित सत्यार्थ प्रकाश हमारे ग्रंथो के सभी सिद्धांतों का निचोड़ है।? उन सभी में ईश्वर का महत्व बताया वह तो कहते हैं, जो व्यक्ति मोक्ष सुख चाहता है वह न्यूनतम एक घंटा प्रातः काल एक घंटा सायं काल कम से कम 2 घंटे उस भगवान का ध्यान करना चाहिए?

सोचिए ये महर्षि दयानंद का कहना है अब देखो ऋषि कितने कटरा आस्तिक है।

एक वो लोग हैं जो किसी कैलेंडर पर दीपक आरती उतार कर और यह

Edit with WPS Office

सोचते हैं हमने भगवान की पूजा कर ली यह कौन से आस्तिक हैं? आस्तिक तो महर्षि दयानंद है। महर्षि दयानंद 5 मिनट के लिए नहीं बोलते जैसे पुजारी लोग 5 मिनट के लिए मंदिरों में थाली घूमाते हैं?? महर्षि दयानंद तो कहते हैं दो घंटे कम से कम 2 घंटे ईश्वर का ध्यान प्रतिदिन करना चाहिए? अब देखो जरा सोचो कौन सबसे बड़ा भक्त है ईश्वर का महर्षि दयानंद सरस्वती या पौराणिक लोग जो जड़ पूजा करने वाले पाखंडी है।? अब आगे और सोचिए

आंखें खोल करके , यह सच्ची भक्ति है?? या आंखें बंद करके ध्यान अवस्था में उपासना करने की सच्ची भक्ति है?? महर्षि ने वेदों का संकलन किया? और संकलन में जब उन्होंने मंत्र लिखें। तो पहले शुरू के मंत्रों में ईश्वर के नाम की ईश्वर से प्रार्थना करने की ईश्वर की उपासना करने की बाढ़ लगा देते हैं?? **ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप निराकार सर्व शक्तिमान न्यायकारी जगदीश्वर दयालु अजन्मा अनंत निर्विकार अनादि अनुपम सर्वाधार सर्वेश्वर सर्वव्यापक सर्वअंतर्यामी अजर अमर अभय नित्य पवित्र और सृष्टि करता है उसी की उपासना करनी योग्य है।**

इन नामों को जानने के बाद ऐसा लगता है कि ऋषि सच्चे ईश्वर भक्त थे? वो विरोध ईश्वर का नहीं करते वह विरोध इसलिए करते हैं कि आप लोग ईश्वर को गलत तरीके से पूजं रहे हो?? यह ठीक वैसे ही है जैसे मैं अपने माता-पिता से कहूं मैं तो माता-पिता का भक्त हूं ?आपका भक्त हूं? अपने माता-पिता की सेवा करता हूं । लेकिन मैंने ना उनके कपड़े की व्यवस्था की ?ना उनके खाने की? पीने की व्यवस्था की? बस उनके सामने एक थाली रखी दीपक जलाया सुबह शाम घुमाया और उनकी आरती उतारी फिर अलग बैठ गया ?बस ऋषि दयानंद जी इसी तरीकों को मना करते हैं। कि यह अपने माता-पिता की पूजा करने का सही तरीका नहीं है?

पूजा करने का सही तरीका यह है कि उनको क्या चाहिए? उन्हें किस बात से प्रसन्नता होती है? उनके हाल-चाल पूछिए। उनकी प्रसन्नता का कारण पूछिए तो फिर आपकी पूजा हो जाएगी?

इसी प्रकार की बात ईश्वर पर लागू होती है। हम जो मान करते हैं ? ईश्वर को उसकी कोई जरूरत नहीं। ईश्वर को क्या चाहिए? जब ईश्वर के कान नहीं है, आंखें नहीं है, ईश्वर का शरीर ही नहीं है ,उन्हें किसी वस्तु से असर ही नहीं

Edit with WPS Office

पडंने वाला है।

लोग अपनी संतुष्टि के लिए तो मंदिर जा सकते हैं मंदिर की बनावट देखने के लिए जा सकते हैं मंदिर में शांति होती है, बाहरी शोर से मुक्त होकर के मंदिर की जो भावनाएं तरंगे होती हैं, वहां जाकर शांति मिलती है घंटी की जो ध्वनि होती है? वह हमें सुख पहुंचती है? इन सभी सुख शांति के लिए तो मंदिर जा सकते हैं जाना भी चाहिए यही विचार लेकर जाना चाहिए।

- अब जो लोग यह सोचते हैं कि मंदिर जाकर मेरे पाप नष्ट हो जाएंगे, मुझे मोक्ष मिल जाएगा? मैं अपराध करूं तो ईश्वर मुझे ईश्वर क्षमा कर देंगे ? मैं ईश्वर के दर्शन करके आया हूं । तो यह सब कहना है उसका अज्ञान के कारण है?
- मैं मंदिर का विरोध नहीं कर रहा हूं मैं तो मंदिर से होने वाली हानियां दोष बताएं है?
- मैं तो कहता हूं आप लोग मंदिर जाओ । पर मंदिर जाने के साथ-साथ शास्त्रों का अध्ययन करो ,स्वाध्याय करो, जैसे आप लोग स्वाध्याय करोगे? आपको सच्चा ज्ञान होगा । आपको सत्य और असत्य में फर्क दिखेगा और मूर्ति पूजा जो आप कर रहे थे? वह धीरे-धीरे छूट जाएगी और निराकार परमेश्वर जिसका कोई आकार नहीं उस पर ध्यान लग जाएगा।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 26. ।। पृष्ठ छब्बीसवां ।।

•गार्गी और याज्ञवल्लय का शास्त्रार्थ

Edit with WPS Office

• बृहदारण्यक उपनिषद् तीसरा अध्याय

➤ **साथियों हमें किसने बनाया है। जिसने भी बनाया है, उसको किसने बनाया है? हमको बनाने वाला इस ब्रह्मांड में रहता है? या ब्रह्मांड के बाहर रहता है? ब्रह्मांड के बाहर ब्रह्मांड के अंदर क्या है? ब्रह्म कहां है? ऐसे सवाल हमारे मन में उठते रहते हैं ! आज इन सब का उत्तर गार्गी और याज्ञवल्क्य के शास्त्रार्थ से जानेंगे__**

एक समय की बात है एक दिन राजा जनक ने बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया। इस यज्ञ में देश-विदेश के ब्राह्मण ऋषि लोग आए हुए थे। कुरू और पांचाल से भी अनेक ब्राह्मण आए। जब अधिक ब्राह्मण आ गए। तो राजा जनक को इस बात की इच्छा हुई। उनके अंदर जिज्ञासा हुई जानने की कि इनमें से सबसे बड़ा विद्वान ज्ञानी ब्राह्मण कौन है? तो इसका पता लगाने के लिए उन्होंने एक युक्ति निकाली, उन्होंने 1000 गायों को और उनके सींगो पर में 10-10 स्वर्ण मुद्राओं को बांधा और यह भी घोषणा की जो भी ब्राह्मण सबसे ज्यादा विद्वान ज्ञानी होगा, उसको ही 1000 गांय और इतने सोंने की मुद्राएं दे दी जाएगी। अब सभा में बहुत बड़े-बड़े ब्राह्मण आए हुए थे। सब एक से बढ़कर एक ज्ञानी थे, लेकिन किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी, कि अपने आप को बोल सके। और इतनी गायों और स्वर्ण मुद्राओं को ले जा सके। जब थोड़ा सा समय बिता तब **याज्ञवल्क्य जी सामने आए और उन्होंने अपने शिष्य से बोला इन सभी गायों को अपने आश्रम ले चलो।** और वहां पर बैठे सभी ब्राह्मण याज्ञवल्क्य से नाराज हो गए, और ब्राह्मण लोग क्रोधित हो जाते हैं। क्योंकि उनको लगता है कि याज्ञवल्क्य जी तो अहंकारी है। और अपने आप को सबसे ज्यादा विद्वान ज्ञानी ब्राह्मण समझते है। और यहीं से प्रारंभ होता है शास्त्रार्थ की श्रृंखला का आरंभ, एक से बढ़कर एक विद्वानों ने याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ किया। उन सभी की चर्चाएं यहां नहीं करेंगे। अनेक ब्राह्मण से जो शास्त्रार्थ किया था उसमें याज्ञवल्क्य जी विजय हुए थे। अगर इन सभी का शास्त्रार्थ जानना है। बृहदारण्यक उपनिषद् में देखने को मिलेगा। **अब शास्त्रार्थ की बारी आती है गार्गी की, जो एक विदुषी गार्गी महिला है, गर्ग गोत्र में जन्म लेने के कारण गार्गी नाम पड़ा।** जो महर्षि

Edit with WPS Office

वचक्नु की पुत्री थी। जब जनक जी के दरबार में अस्वल,आर्तभाग,भृज्यु,उषस्त कहोल सभी ब्राह्मण ऋषि से हार गए थे।

- **याज्ञवल्क्य जी का गार्गी से शास्त्रार्थ प्रारंभ।**

गार्गी जी का पहला प्रश्न था, जैसे____

- **पहला प्रश्न__**पृथ्वी जल से ओतप्रोत है, वैसे जल किससे ओतप्रोत है?! दूसरे उदाहरण में यहां गार्गी जी का प्रश्न है, पृथ्वी में जो सभी पदार्थ हमको दिखाई दे रहे हैं स्थूल रूप में वे सभी जल से ओतप्रोत है? वैसे जल किससे ओतप्रोत है?क्योंकि जल जीवन है ,जल ना हो तो जीवन नहीं तो जल कहां से आया? यही पहला प्रश्न है?
- **उत्तर____**याज्ञवल्क्य जी यहां पर बताते हैं कि जैसे पृथ्वी जल ओतप्रोत है, यानी पृथ्वी जल तत्व से आई है! ये जल तत्व वायु से ओतप्रोत है!
- **विशेष उदाहरण__**वायु ही जल को गर्म होल्ड करती है। यही वायु जब धीरे-धीरे जल से बढ़ती जाती है। वाष्प बढ़ता है। बादल का रूप लेती है। और जब धीरे-धीरे ठंडा होता है वही जो बादल है ठंडा होकर पानी में बदल जाते हैं। तो एक तरह से यह देखा जाता है, की जो जल तत्व है वह वायु तत्व से ओतप्रोत है। तो यहां पर याज्ञवल्क्य जी यही उत्तर देते हैं। अब यहां पर गार्गी जी नहीं रुकती ,इस प्रश्न को और बढ़ाती है। और कहती है।____
- **दूसरा प्रश्न____**जल वायु से ओतप्रोत है , तो वायु किससे ओतप्रोत है? वायु किस तत्व से आया है जो वायु हमें महसूस होती है वह किस सूक्ष्म तत्व से आई है?
- **उत्तर____**यहां पर याज्ञवल्क्य जी कहते हैं, वायु अंतरिक्ष से आई है, वायु का जो सूक्ष्म तत्व है वह अंतरिक्ष है। वायु अंतरिक्ष से ओतप्रोत है।
- **तीसरा प्रश्न____**अगर वायु अंतरिक्ष से ओतप्रोत है तो अंतरिक्ष किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर_____**यहां पर याज्ञवल्क्य जी कहते हैं अंतरिक्ष गंधर्व लोक से

Edit with WPS Office

ओतप्रोत है।

- **चौथा प्रश्न____**गंधर्व लोग किस से ओतप्रोत है?
- **उत्तर______**याज्ञवल्क्य जी कहते हैं गंधर्व लोक आदित्य लोक से ओतप्रोत है।
- **पांचवा प्रश्न____**गार्गी जी कहती हैं, फिर आदित्य लोक किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर______**याज्ञवल्क्य जी कहते हैं, आदित्य लोक चंद्रलोक से ओतप्रोत है।
- **षष्ठ प्रश्न____**फिर चंद्र लोक किससे से ओतप्रोत है?
- **उत्तर______**याज्ञवल्क्य जी कहते हैं चंद्रलोक नक्षत्र लोक से ओतप्रोत है।
- **सातवां प्रश्न___**गार्गी जी पूछती हैं नक्षत्र लोक किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर_____**याज्ञवल्क्य जी कहते हैं, नक्षत्र लोक देवलोक से ओतप्रोत है।
- **आठवां प्रश्न______**फिर देव लोक किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर______** याज्ञवल्क्य जी कहते हैं देवलोक इंद्रलोक से ओतप्रोत है।
- **नौवां प्रश्न____**फिर इंद्रलोक किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर______** याज्ञवल्क्य जी कहते हैं इंद्रलोक प्रजापति से ओतप्रोत है।
- **दसवा प्रश्न______**फिर प्रजापति किससे ओतप्रोत है?
- **उत्तर_____**याज्ञवल्क्य जी कहते हैं प्रजापति ब्रह्म से ओतप्रोत है। यहां पर याज्ञवल्क्य जी शास्त्रार्थ समाप्त करते हैं ।____

- जो शास्त्रार्थ चल रहा था गार्गी जी कुछ ना कर रही थी। बस जो उत्तर मिल रहा था उसी उत्तर का नया प्रश्न बना रही थी। ऐसे करते-करते जब ब्रह्म लोक तक बात पहुंची। तो गार्गी जी ने पूछा,______

ब्रह्मलोक किससे ओतप्रोत है?

Edit with WPS Office

- **याज्ञवल्क्य जी यहां पर क्रोधित हो जाते हैं, और गार्गी से यह कहते हैं, की हे गार्गी ! तू अपने प्रश्न को अतिप्रश्न न कर, ऐसा करने से कहीं तेरा मस्तक न फट जाए।**
- **ऐसा सुनने पर गार्गी जो बड़ी दार्शनिक थी, अपने प्रश्नो से सबको मंत्र मुक्त कर देती थी। उसको भी यह समझ में आ जाता है । कि मैं ज्यादा अतिप्रश्न कर गई हूं। तो उसे अपनी भूल का अनुभव हुआ और उसने वहीं पर अपने प्रथम संवाद को समाप्त किया।**
- अब यहां पर याज्ञवल्क्य जी से और भी लोगों ने शास्त्रार्थ किया। लेकिन गार्गी जी यहां पर शांत नहीं होने वाली थी इस संवाद के समाप्त होने पर गार्गी दूसरे संवाद की तैयारी करने लगी। क्योंकि वह अभी तक हारी नहीं थी। अब जब उससे दूसरी बार शास्त्रार्थ होता है, तो यहां पर वह दो ही प्रश्न पूछती है। (इन प्रश्नों से हमको परब्रह्म में आ जाएगा) **गार्गी प्रश्न पूछने से पहले घोषणा करती है अगर याज्ञवल्क्य जी ने मेरे इन दो प्रश्नों के उत्तर दें दिए तो इनको कोई नहीं हरा पाएगा। यह सबसे बड़े विद्वान साबित हो जाएंगे।___**

पहला प्रश्न____याज्ञवल्क्य जी इस पृथ्वी से लेकर उस ब्रह्मलोक जहां तक बात हुई थी पहले शास्त्रार्थ में जो कुछ भी दिख रहा है भुत भविष्य वर्तमान काल समय किसमे ओतप्रोत है?

- ➤ गार्गी जी का प्रश्न यह है, स्वर्ग लोक से ऊपर जो कुछ भी है, और पृथ्वी से नीचे जो कुछ भी है, और इन दोनों के मध्य जो कुछ भी है, और जो हो चुका है, और जो अभी होना है, भूत वर्तमान भविष्य समय स्पेस किसमे ओतप्रोत है?
- ➤ स्पेस और टाइम के बारे में प्रश्न किया है ,स्पेस टाइम से बाहर भी कुछ है या नहीं ?
- ➤ दूसरे शब्दों में उसका प्रश्न यह था सारा ब्रह्मांड किसके अधीन है, अर्थात किसके शासन अनुशासन और प्रशासन में सारा ब्रह्मांड कार्य कर रहा है?!

उत्तर____हे गार्गी ! अक्षर तत्व के आधीन ये सारा ब्रह्मांड कार्य कर रहा है।

Edit with WPS Office

दूसरा उदाहरण__याज्ञवल्क्य जी उत्तर देते हैं कि इस पृथ्वी से लेकर के ब्रह्म लोक मृत्यु लोक अगर उसके परे हम जाएंगे ,तब वहां पर जो स्थिति है उसको हम सूत्र कहते हैं। अब आप पूछोगी यह सूत्र किस में ओतप्रोत है ? **यह सूत्र आकाश तत्व में ओतप्रोत है। यानी जो सूक्ष्म से सूक्ष्म कारण तत्व है, यह सब कुछ कार्य हुआ है वो यहां पर आकाश तत्व कहा गया है**

विशेष उदाहरण___साथियों जब हम आकाश तत्व की बात करते हैं तो सूक्ष्म तत्व और आकाश तत्व की हमे पता पता है कि जो आकाश तत्व है वह स्थूल रूप में अविनाशी है। उसका विनाश नहीं हो सकता।

अविभाज्य नहीं कर सकते। इसको तोड़ नहीं सकते । यह अनंत है, जैसे_ हम पांच तत्वों की बात करते हैं चाहे जल अग्नि वायु आकाश पृथ्वी तो इसमें जल अग्नि वायु पृथ्वी यह जो चार हैं, यह एक दूसरे का स्वरूप बदल सकते हैं ,एक दूसरे को प्रभावित करते हैं जैसे वायु वह अग्नि को बुझा सकती है अग्नि लगा सकती है अग्नि को जल बुझा सकता है। जल वायु में घूल सकती है। कहने का मतलब यह है, यह चारों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। **लेकिन आकाश एक ऐसा तत्व है जो की बैकग्राउंड में है, वह प्रभावित नहीं होता ।** इसलिए आकाश तत्व को सबसे ज्यादा सूक्ष्म तत्व माना गया है। और अंतिम ऐसा तत्व है जो सब में ओतप्रोत है। यानी इससे सभी जन्म लेते हैं, और यह आकाश तत्व है यह इंद्रियों से भी परे हैं। इसलिए वेदों और उपनिषदों में भी आकाश अनन्त है। **यह निष्क्रिय है, यह किसी भी क्रिया में भाग नहीं लेता। आकाश तत्व ब्रह्म परमेश्वर की ही तरह निराकार है।**

जब गार्गी को यह उत्तर मिल जाता है ! अब वही प्रश्न को दोबारा से कुछ शब्द बदलकर पूछा?!

दूसरा प्रश्न_____ जो आकाश तत्व है यह किस में ओतप्रोत है? गार्गी का प्रश्न है कि आकाश का कारण क्या होगा?!

उत्तर______ यहां पर याज्ञवल्क्य जी गार्गी जी को बताते हैं कि यह जो आकाश तत्व है, यह ओतप्रोत है ब्रह्म अक्षर पर।

ब्रह्म अक्षर क्या होता है इसको जान लेते हैं।

जब याज्ञवल्क्य जी ने ब्रह्म अक्षर की बात की तो उसे समझाना प्रारंभ किया । समझते हुए सबसे पहले उन्होंने बताया कि यह जो अक्षर है, ना तो मोटा

Edit with WPS Office

है, ना पतला है, ना छोटा है, ना बड़ा है, ना ही द्रव्य है, ना ही लिक्विड है, ना ही वायु है, ना ही आकाश है, यह आकाश तत्व से अलग है। आगे समझते हुए बताते हैं ना तो वह कुछ खाता है, ना ही उसे कोई खाता है, इसका मतलब यह हुआ वह ऊर्जा के लिए ना तो किसी पर आधारित है। ना ही और ऊर्जा के लिए उस पर कोई आक्षित है, वो कहते हैं,__

एतस्य वा अक्षस्य प्रशासने गार्गी !

यह जो ब्रह्म अक्षर है यही हमारे ब्रह्मांड को संचालन करता है। जो हमने आकाश तत्व की बात करी है वह आकाश इसी अक्षर के ओतप्रोत है। इस अक्षर को अच्छी तरह से समझने के लिए याज्ञवल्क्य जी कहते है जो भी ब्रह्म अक्षर तत्व के बिना जाने यज्ञ हवन करता है। सालों साल तपस्या करता है ,उसको कुछ भी लाभ नहीं होता अगर इस अक्षर को नहीं जाना। **जो इस अक्षर तत्व के जाने बिना मर जाता है वह दरिद्र होता है।** और कोई भी ब्राह्मण तब तक ब्राह्मण नहीं बन सकता जब तक इस अक्षर तत्व को समझ ना ले। और इस अक्षर को और अधिक गहराई से समझाते हुए कहते हैं यह जो अक्षर तत्व है, यह दृष्टि का विषय नहीं है । यह दृष्टा है। यह देखने वाला है। अगर आप आंखों से देखते हैं, हमारी आंखें इस अक्षर तत्व से देखती हैं । अगर आप कान से सुनते हैं, तो आपका कान इस अक्षर तत्व से सुनता है। यह जो अक्सर तत्व है यह सुनाई देने वाली चीज नहीं है, ये श्रोता है! यानी यह किसी का कार्य नहीं है, ये सिर्फ कारण है। इसलिए आकाश तत्व जो है, वो इस अक्षर में ओतप्रोत है। यही जो ब्रह्म रूपी अक्षर तत्व है, यही **ओम् ओउम है**। इसलिए कहा जाता है कि____

ओमित्येदक्षरभिद अक्षरम__ओउम ही सब कुछ है।

- **और आगे कहते हैं, त्रिकाल में त्रिकालाती में यानी भूत भविष्य वर्तमान और इन तीनों कालों के परे, जो भी जानने योग्य है, वह ब्रह्म रूपी अक्षर तत्व ओउम है।**
- **इसी को परब्रह्म ॐकार कहते हैं।**

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 27. ।। सत्ताईसवां पृष्ठ ।।

•कथावाचकों का पाखंडी ज्ञान देखो :

कथावाचक विद्वान नहीं होते बल्कि अपनी कहानियों किस्से और इतिहास से लोगों को सुनाते हैं, मनोरंजन करते हैं। अतः मानव इतना निर्मल हो गया, कि अपने शास्त्रों का खुद अध्ययन करने का सामर्थ नहीं रहा। लोग अपने ग्रंथों को नहीं पढ़ते।जिससे यह कथावाचक पाखंडी लोग लोगों को कहानियां सुनाने के लिए या कथा करने के लिए ये कथा वाचक लोगों से लाखों लाखों रुपए ले जाते हैं। लोगों को ठगते हैं। भोली भाली जनता इनके जाल में आ फसती हैं। कथा के नाम पर लोगों से जितना लूटा जाए लूटते हैं। कथावाचक धर्म के नाम पर मौज मारते हैं। अपने प्रवचनों द्वारा यह लोग पाखंडी लोग लोगों को भ्रमित करते हैं। सबसे बड़ी बात यह है जितने भी कथावाचक हैं सब की विचारधारा सबके प्रवचन सबका धर्म ज्ञान अलग-अलग होता हैं। अपने को ज्ञानी दूसरे को अज्ञानी समझते है। ये कथावाचक लोग। हम एक-एक करके सभी का भंडाफोड़ करेंगे। और इनकी बातों को दर्शाएंगे। की किस प्रकार यह लोगों का उल्लू बनाते हैं, धर्म के नाम पर। हम आपको इनकी मिथ्या बातें दिखाते हैं। ये लोग कितना अच्छा कर रहे हैं,या कितना ग़लत कर रहे हैं, इसका निर्णय हम आप पर छोड़ते हैं। हमें तो सिर्फ सत्य जानना है सत्य दिखाना है।_____!

इन्होंने बेडागरक करके रख दिया पूरे भारत का इन्हीं लोगों की हरकतों से महर्षि दयानंद सरस्वती को लिखना पड़ा, कि पत्थर की पूजा करने वाले की

Edit with WPS Office

बुद्धि भी पत्थर जैसी हो जाती है। इनको पत्थर और भगवान में वेद और कुरान में संध्या और नमाज में अंतर पता नहीं चला। एक धर्म प्रचारक स्त्री को सर पर चुन्नी डाल के मंच पर डांस करते हुए देखेंगे, औरों को भी नचायेंगे तो दयानंद सरस्वती यही तो कहेंगे ना , ये भागवत बनाने वाला गर्भ में ही क्यों ना मर गया, गर्भ में मर गया होता तो अच्छा होता, भारत को 1000 साल तक गुलाम ना होना पड़ता।

इस दुनिया में यूरिया बेचना अपराध नहीं है लेकिन दूध के नाम पर यूरिया बेचना अपराध है। कंकड़ पत्थर बेचना अपराध नहीं है, लेकिन अनाज के नाम पर कंकड़ पत्थर बेचना अपराध है। ठीक इसी प्रकार से व्यापार करना भी कोई अपराध नहीं है लेकिन धर्म के नाम पर धर्म प्रचार के नाम पर व्यापार करना अपराध है अपराध है गलत है। और इस अपराध को आजकल के हमारे कथावाचक, भागवत गाने वाले धड़ल्ले से कर रहे हैं। और जिस धड़ल्ले से यह व्यापार का काम चल रहा है, आने वाले दिनों में दुनिया में आदमियों की संख्या कम, धर्मों की संख्या ज्यादा हो जाएगी। आज जितने धर्म गुरु उतने ज्यादा धर्म, जिसने देखा अपना एक नया धर्म शुरू कर दिया। शुरुआत हिंदू धर्म से हुई भागवत के कथावाचक जानते हैं कि हिंदू नाम भारत के किसी भी प्राचीन ग्रंथ में नहीं है, लेकिन अपनी रोजी-रोटी के लिए व्यापार चलाने के लिए उन्होंने हिंदू को एक प्रोडक्ट बनाकर के बेच रहे हैं, भारत के जितने भी प्राचीन शास्त्र हैं, मनुस्मृति, दर्शन, सब के सब, जब भी धर्म की परिभाषा करते हैं, या जानते हैं तो इनमें हिंदू कहीं पर भी शब्द नहीं होता, लेकिन सब कुछ जानते हुए यह लोग हिंदू को एक प्रोडक्ट के नाम पर बेचेगे। हालत किसी तरह से यहां तक सहन हो रहे हैं। लेकिन अब बात और ज्यादा बढ़ गई है।

देखो कैसे______

- **_____कथावाचिका चित्रलेखा______**

1.. जिस समय नमाज पढ़ी जाए, तो हम भी प्रयास करेंगे की भागवत बंद करके 5 मिनट के लिए उनके अल्लाह को प्रणाम करके, उनके लिए हम अल्लाह को प्रणाम करके उनकी नमाज पढ़ेंगे। और उनका बर्थ भी रख लेंगे।______!

Edit with WPS Office

समीक्षा :
चित्रलेखा देवी जी आपके इस बयान के क ारण हिंदू जाति के साधु संत नाराज हुए, तब आपने इस बयान से बचने के लिए वीडियो बनाकर आपने कहा कि मैं एक जगह कथा कर रही थी पास में मस्जिद थी पास में ही मेरी कथा चल रही थी, तो मुस्लिम लोग नमाज पढ़ रहे थे तो उनका मेरे पास फोन आया। की अपनी कथा बंद कर दीजिए हमें परेशानी हो रही है। तब आपने यह बयान दिया जो हम ऊपर लिख आए हैं।

सच्चाई हम बताते हैं_____ आप झूठ बोल रही हो देवी जी । आपने मस्जिद का नाम नहीं बताया उस गांव का नाम नहीं बताया जहां कथा हो रही थी ? इसलिए आप झूठ बोल रही हो। चलो सच मान भी ले तब भी आपने उनका कहना माना उनके लिए भागवत बंद करी। **तो देवी चित्रलेखा जी यहां हमारा प्रश्न उठता** है जैसे __ आपने उनकी बात मानी क्या वे तुम्हारी बात मान सकते थे ? तुम्हारी बात क्यों नहीं मानी उन्होंने क्यों नहीं कहा कि भाई आज रहने दो नमाज आज हमारी कथा चल रही है, तुमने नहीं कहा क्योंकि तुमको पता था कि यह लोग नहीं मानेंगे फिर भी तुम अपना आपा खोती रही। और आपने यहां तक कह दिया कि हम आपकी नमाज पढ़ लेंगे तो क्या जाता है।
2.. आपने एक कविता गाई__ मंदिर में दाना चुग कर चिड़िया मस्जिद में पानी पीती है। एक पक्षी भेद नहीं रखता एक पशु भेद नहीं रखता है। मैंने सुना है राधा की चुनरी सलमा बेगम सिटी है।
कभी कन्हैया कन्हैया गाता रसखान सुनाई देता औरों को दिखते होंगे , हिंदू मुसलमान पर मुझे हर शख्स में इंसान दिखाई देता है।
सम ीक्षा _____देवी कह रही है राधा की चुनरी सलमा बेगम सिती है।
अरे हम तो पूर्ण बहिष्कार की बात कर रहे हैं । झारखंड में हमारे भाइयों कि हिंदू भाइयों की हत्या कर दी गई बिना बात के, सिर्फ इतना लिखने पर "हिंदू फल की दुकान " उनका अधिकार छीन लिया उनको मार दिया गया। बिना दुश्मनी के, क्या आपको ऐसे लोग भी इंसान दिखते हैं ?? और आपने उस घटना पर एक सवाल नहीं बोला, क्यों ? क्योंकि तुमहे तो राधा की चुनरी शिवानी थी ना बेगम से ..?

Edit with WPS Office

हम तो इस पर एक ही टिप्पणी दे सकते हैं, हिंदुओं **स्वावलंबी बनो**। ऐसे पाखंडी कथावाचको / कथावाचिका से बचो। ऐसे लोगों का तो बहिष्कार होना चाहिए।

इन लोगों को इस देवी को कन्हैया कन्हैया गाता रसखान दिखाई देता है। केवल इतना ही क्यों है देवी जी हमें तो कन्हैया की जन्म भूमि के ऊपर मस्जिद खड़ी कर दी, मथुरा में वह मस्जिद का ढांचा खड़ा हुआ दिखाई देता है, उसके पीछे भी कोई रसखान ही खड़ा था। जिसने हमारे भगवान श्री कृष्ण कन्हैया का मंदिर तोड़कर मस्जिद खड़ी कर दी। क्या आपको जिन्होंने मस्जिद खड़ी करी वे भी इंसान दिखाई देते हैं कृपया इसका उत्तर दे दीजिए देवी जी! ???

- हमें तो यह पता है इंसान की पहचान उसकी शक्ल से नहीं उसके ज्ञान व्यवहार कर्मों से होती है। उसी से ही पहचाना जाता है।
- लेकिन हिंदुओं सनातनियों को यह समझना जरूरी है हर कोई इंसान नहीं होता है की देखने से इंसान लगता हो। उसकी बातों से पता चलता है कि वह इंसान है या नहीं।

3.. नफरतों का असर देखो जानवरों का बंटवारा हो गया। गाय हिंदू हो गई, बकरा मुसलमान हो गया।

पर्दाफाश____देवी जी चित्रलेखा जी ! आप यह भी तो बता दीजिए कि यह बटवारा किया किसने कब किया .. ?

जिस बंटवारे की बात कर रही हो देवी जी उस हिंदू की गाय को इन मुसलमान ने बीच सड़कों से काटा है, हमारी गौ माता की हत्या की है। और मैं आपको बता दूं गौ हिंदुओं की माता है, आपने भी गौ माता की हॉस्पिटल संस्था खोली हुई है। आप तो इंसान देखती हो क्या आपने पूछने की कोशिश की कि हमारी गऊ पर इतने अत्याचार हुए, क्या आपने उस बारे में बताया। क्या आपने पूछा। आप पूछोगे भी नहीं।?

जो सनातनी हिन्दू लोग गाय को रोटी खिलाते हैं? वही आप जिसको इंसान कह रही हो रोटी के साथ गौमास खाते थे, तब तो आपने इस पर टिप्पणी नहीं दी। ??

4.. आपका अगला बयान आपने कहा वह समय दूर नहीं जब हरा मुसलमानों का, लाल हिंदुओं का होकर रह जाएगा।

Edit with WPS Office

आपको तो देवी जी कुछ नहीं पता थोड़ा बाहर - भीतर भी निकल लिया करो । विदेशो की भी जानकारी ले लिया करो। आपको बता दूं देवी जी, क्योंकि आपको तो पता ही नहीं है , जो मन में आया कह दिया, तुर्की का झंडा लाल है वह एक इस्लामी राष्ट्र है। थोड़ी जानकारी भी रख लिया करो। ? आपको तो यह भी नहीं पता बांग्लादेश और पश्चिम बंगाल की स्थिति आज के समय कैसी हो रही है। पश्चिम बंगाल में कोई भी हिंदू अपने आप को हिंदू नहीं कह सकता। यहां कैसे काम नहीं आ रही तुम्हारी इंसानियत?? कर लो अपनी कथा वहां आप तो भाई कह रही हो मुसलमानों को उनकी नमाज पढ़ने के लिए कह रही हो तो जाओ पढ़ो वहां! ???
आपको यह भी नहीं पता हिंदुओं का कलर कौन सा है। मैं आपको बता दूं हिंदुओं का कलर लाल नहीं भगवा है केसरिया कलर है।
5.. आपका अगला बयान आपने कहा वह दिन भी दूर नहीं जब सारी हरी सब्जी मुसलमानों की हो जाएगी । और हिंदुओं के हिस्से में सिर्फ टमाटर और गाजर ही आएंगी। और आपने आगे कहा,, अगर परिंदे भी हिंदू और मुसलमान हो जाए तो सुखे मेवे भी यह देखकर हैरान हो गए न जाने कब से नारियल हिंदुओं के और खजूर मुसलमानों के हो गए। और आपने कहा आगे गीता और कुरान आपस में कभी नहीं लड़ते हैं , जो इनके लिए लड़ते हैं वह कभी नहीं पढ़ते हैं।
पर्दाफाश______ हरी सब्जियां टमाटर गाजर पर जवाब ही क्या दे इन गप्पू जैसी बातों पर।
देवी जी ! आप नारियल और खजूर का उदाहरण दे रही हो। हिंदू इन दोनों को ग्रहण करता है। खजूर मुसलमान भी खाता है। उन्हें अपने भाइयों को मुसलमान को नारियल दो अगर ग्रहण भी कर ले तो, कहो उनसे इसको पूजो । आप इंसानियत देख रही हो ना देखो इंसानियत आपको सब पता है कि ये बुरे लोग हैं फिर भी आप को इन लोगों कि संगति करनी है और हिंदुओं को खतरे में गिराना आपका कार्य सा बन गया है।
आपने आगे कहा मैंने कुरान की कुछ लाइन पड़ी है आपने यह नहीं बताया आपने क्या पढ़ा है?? एक दो आयत हमको भी बता दो इन मुसलमान के आगे बता दिया होता तो देखते भी। आपने एक भी आयात नहीं पढी आपने कुरान नहीं पढा अगर पढ़ा होता तो आप इनको इंसान नहीं कहती।

Edit with WPS Office

6.. आपने आगे बयान दिया की सभी धर्मो एक जैसे हैं तो नमाज पढ़ने में क्या जाता है ? सभी धर्म में इंसानियत है। आपके इस बयान से तो साबित हो गया आपने कुरान की शक्ल भी नहीं देखी ..? **देवी कथावाचिका जी !**

पर्दाफाश समाधान___ जब भगवान श्री राम को गुरु विश्वामित्र यज्ञ के सफल होने के लिए राम लक्ष्मण को ले जा रहे थे। तो दुष्ट प्रवृत्ति के लोग राक्षस यज्ञशाला मे विधन डाल रहे थे , समस्या खड़ी कर रहे थे तब भगवान श्री राम ने प्रतिज्ञा की थी गुरु को वचन दिया था कि मैं इस पृथ्वी को राक्षस जाति से विहीन कर दूंगा अर्थात इनका सर्वनाश कर दूंगा।

एक मंत्र में श्री राम कहते हैं मैं अपने भाई को त्याग सकता हूं, अपनी पत्नी को त्याग सकता हूं । लेकिन अपने वचन से नहीं डिग सकता। अपना वचन नहीं त्याग सकता।

अब देखो प्रिय बंधुओ ! क्या कुरान ऐसी ही कहती है ? कुरान कहती है जो काफिर तुम्हारी बात नहीं माने उनके साथ जबरदस्ती करो उनको मुसलमान बनाओ और मार डालो। काफिरों को मारना ही पुण्य है आपको मन्नत मिलेगी। मारना ही पुण्य। आप स्त्रियों के साथ जो चाहो वो करो। **देवी चित्रलेखा जी अब करो तुलना ?** आप क्यों कुरान और हिंदुओं के शास्त्रों की तुलना करती हो ?? अगर आपको मुसलमान धर्म इतना ही प्यारा है तो मुस्लिम क्यों नहीं बन जाती ? ऐसे कथावाचिका जो अधूरी बातें करती हैं उनकी कोई जरूरत नहीं इस सनातन धर्म को, जो सनातन धर्म को तोड़ने का कार्य करती हो। **गलत कथा वाचको का बहिष्कार करना ही चाहिए?**

महाभारत से मैं आपको बता दूं, जब भगवान श्री कृष्ण शांति दूत बनकर गए थे , तो दुर्योधन ने उनका भोजन के लिए कहा तो भगवान श्री कृष्ण ने कहा दुर्योधन तुम मेरे मित्र हो नहीं। प्रीति मुझे तुमसे है नहीं। इसलिए मैं तुम्हारा भोजन नहीं कर सकता जो राजा अन्याय करता हो अत्याचारी हो उसका मैं विरोधी हूं।

देखो भगवान श्री कृष्ण तो नहीं कह रहे की दुर्योधन हम तो भाई-भाई हैं हम सब तो एक हैं क्या जा रहा है 5 मिनट के लिए भोजन ही सही तुम्हारा। इसलिए चित्रलेखा जी स्वाध्याय करो, अपने शास्त्रों को पढ़ो समझो आपने तो भागवत पुराण भी सही से नहीं पढ़ा। पढ़ा होता तो ऐसी बातें नहीं करती । औरों की तो बात ही छोड़ो इसलिए समझो इसी में भलाई है। अगर ऐसे

Edit with WPS Office

कथावाचकों का बहिष्कार नहीं किया गया तो जिस दिन हिंदू जाति अल्पसंख्यक में हो जाएगी तो उस दिन क्या होगा।

इसलिए हे हिंदुओं ! जीवित रहते हुए जाग जाओ, सत्य को जानो, सत्य को ग्रहण करो। खुद स्वाध्याय करो, पढ़ो समझो सच्चाई को जानो किसी के बहकावे में मत आओ।

●______कथावाचक मोरारी बाबूजी

अगर इस्लाम को पूरी दुनिया स्वीकार कर ले जिसमें कोई बुराई नहीं। हम भी उसी धर्म को स्वीकार कर लेंगे।

(२)___अल्लाह हू अल्लाह अल्लाह अल्लाह हू अल्लाह के गीत गाओ हलू हल्ला!

●_________श्री चिन्मयानंद बापू जी

हमारा अल्लाह मिल गया मिल गया ,हमारा अल्लाह मिल गया अल्लाह की भक्ति करो अल्लाह मिलेगा।

●_________आसाराम बापू जी

अली जितने तुम्हारे हैं ,अल्ली उतने हमारे है।

क्या ये इस प्रकार कथावाचक के लक्षण होते हैं जो अब इनके लिए सभी धर्म एक समान हो गए? मुझे समझ में नहीं आता इन ढोंगी पाखंडीयो को क्या चाहिए ? क्या ये पूरी दुनिया पर एकछत्र राज करना चाहते हैं ? क्या ये विश्व गुरु बनना चाहते हैं ? क्या इनको ग्लोबल शांति पुरस्कार चाहिए ? अब ये सब धर्मों के सम्मान की बात करने लगे। अब इनके लिए जगत में सभी

Edit with WPS Office

अच्छे हैं। इनकी नजर में औरंगजेब भी अच्छा है, इनकी नजरों में वीर शिवाजी भी अच्छे हैं। इनकी नजरों में मारने वाला भी अच्छा है, बचाने वाला भी अच्छा है। सही भी सही है, गलत भी सही है, उचित भी सही है , अनुचित भी सही है। धर्म भी ठीक है, अधर्म भी ठीक है। इनके लिए तो सभी एक जैसे हैं। जब सभी एक जैसे हैं, तो आप क्यों मंच पर बैठे हो ? फिर आप किस बात का उपदेश कर रहे हो ? क्या यह सनातन धर्म का उपदेश है अल्लाह हू अल्लाह अल्लाह अल्लाह हू अल्लाह ? आपको क्या जरूरत पड़ी मंच पर बैठने की, शिवाय इसके की आपको अपना व्यापार चलाना है! आपको अपनी एस और आराम की जिंदगी ठाठबाट से चाहिए। **लेकिन कोई आपसे पूछे या ना पूछे, आर्य समाज तो आपसे सवाल पूछेगा ! अभी दुनिया में आर्य समाज की संस्था मरी नहीं है, जब तक दुनिया में आर्य समाज है वह सवाल पूछता रहेगा!** मेरा आर्य समाज्यों से निवेदन है कि आपने सवाल पूछे आपको संतोषजनक उत्तर नहीं मिले, लेकिन बाबूजी ने स्वीकार तो कर लिया, कि मेरे अंदर से अल्लाह बोलता है। क्या बाबूजी के अंदर मोहम्मद बैठा है ? क्या उनके अंदर से मोहम्मद कि आयतें उतर रही है ? क्या अंदर मुस्लिम सिंगर बैठा है, जो कह रहा है मौलाना अली मौलाना अल्लाह रे अल्लाह।

इसी प्रकार जो देवी कथा वाचक स्त्रियां हैं वह भी इसी प्रकार करती है। सर पर चुन्नी रखकर मंच पर डांस करती है और लोगों को भी नचाती है। आप लोगों को सब पता है सही क्या है गलत क्या है। फिर भी अपनी दुकानदारी व्यापार चलाने के लिए लोगों से छुपाते हैं। लेकिन आप लोगों को सच तो बोलना ही पड़ेगा। आप लोगों ने कृष्ण को प्रोजेक्ट बनाया हुआ है। जो कृष्ण महाभारत में वेदव्यास जी से भी बड़े स्थान पर थे। जो पूरी तरह से सदाचारी विद्वान थे। उन योगेश्वर भगवान श्री कृष्ण का अपमान करते हो। उसको आप लोगो ने चोर बनाया। उसको जार बनाया नचाया आपने उसको गोपियों के साथ रासलीला करने वाला बतलाया। इतना बड़ा अपमान किया है तुम लोगों ने भगवान श्री कृष्ण का, भगवान श्री कृष्ण तुम लोगों को कभी क्षमा नहीं करेगा। तुम लोग नरक में गिरोगे नरक में।______!

•______धीरेंद्र कृष्ण शास्त्री बागेश्वर धाम

Edit with WPS Office

यह बाबा अपने आप को हनुमान जी का बहुत बड़ा भक्त बताता है, और कहता है हनुमान ने मुझे अनेक सिद्धिया दी है। और यह बाबा दूसरों के मन की बात भी जान लेता है, अब देखते हैं कि यह बाबा सच में ही हनुमान का भक्त है, या हनुमान के नाम पर पाखंड करता है।_____!

1.. यह बाबा कहता है यज्ञ,हवन के समय या मंत्रों के समय जब कपड़ा नीचे लगाकर के चरणामृत लिया जाता है। एक भी बूंद हाथ से अगर भूमि पर गिर जाती है। उस बूंद के जल को श्री हनुमान जी महाराज अपनी जीभा से चाटते हैं।____

देखो इस पाखंडी बाबा का ज्ञान इससे कोई पूछे जब हनुमान जी नहीं थे तब कौन चाटता था। मैं चरणामृत लेता हूं, और कुछ बूंदें जमीन पर छोड़ता हूं, ऐसा प्रयास मैंने किया कुछ नहीं हुआ नहीं हनुमान आए नहीं मुझको दिखे।।

2.. एक दिन राम जी बोले मंथरा आपकी जय हो, राम जी ने बोला जय हो हनुमान जी मंथरा तुमसे शादी करना चाहती है, इसलिए शादी की शुभकामनाएं हनुमान जी, यह सब सुनकर हनुमान जी को गुस्सा आ गया, और वे मंथरा के कमरे में जाकर मंथरा की पिटाई की, पूछं और मुक्का मार मार कर मंथरा का मुंह लाल कर दिया हनुमान जी ने।

देखो इस पाखंडी को यह भी नहीं पता कि मंथरा कोन थी। मंत्थरा कैकेयी की दासी थी, कैकयी की सेवा करने के लिए शादी के समय उसी के साथ आई थी। जो एक बूढ़ी महिला थी लाठी पकड़ कर चलती थी। और यह पाखंडी, हनुमान की तुलना मंथरा से कर रहा है। जो एक साधारण दासी थी और हनुमान जी चारों वेदों के विद्वान थे। वेदों के पंडित बलवानों के भी बलवान थे जो सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करते थे उसकी यह दशा कर दी इस पाखंडी बाबा ने।

3..प्याज लहसुन इसलिए नहीं खाते क्योंकि प्याज लहसुन का जन्म गंदगी राक्षस के मुंह से हुआ इसलिए वह राक्षस के मल से पैदा हुए है।

अब मैं आपको बताता हूं सही क्या है,, यह दोनों प्याज और लहसुन औषधि है, जिनकी उत्पत्ति ऐसे ही हुई जैसे और वनस्पति औषधियो की हुई है। इसकी तहसील गर्म होती है, यह तमोगुणी है इसलिए साधक लोग और

Edit with WPS Office

ब्रह्मचारी लोग इसका सेवन इसलिए नहीं करते क्योंकि यह शरीर में कामुकता को बढ़ाती है, और शरीर में आलस्य लाती है। इसलिए लोग इनका सेवन कम करते हैं, भगवान श्री कृष्ण ने भी गीता में कहां है, हमको तमोगुणी औषधीय का सेवन नहीं करना चाहिए। जैसे अत्यधिक मात्रा में गर्म मिर्च, खट्टा पदार्थ, मदिरा इनको खाने से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसलिए इन औषधियों का निषेध है। इसलिए भगवान श्री कृष्ण कहते हैं हमको शात्विक भोजन करना चाहिए। तमोगुणी पदार्थ का सेवन नहीं करना चाहिए।

इस बाबा के पास जितने भी लोग आते हैं, उनके मन की बात बताने के बाद उनसे कहता है, यहां अब दोबारा लौट कर मत आना देखना भी मत।
किसी किसी लोगों से कभी-कभी कहता है की सबको बागेश्वर धाम में आना चाहिए बागेश्वर धाम में बुलाओ जो जो परेशान है। इस बात से आप समझ सकते हो कि यह बाबा कैसा है ?!

___रामायण किष्किंधा कांड सर्ग अध्याय 3 , श्लोक 28 ,29,32 ..___

यहां पर भगवान श्री राम हनुमान के विषय में कहते हैं, कि हनुमान चारों वेदों का विद्वान मनुष्य में श्रेष्ठ मातृ पितृ आज्ञाकारी, मनुष्यों में सुंदर देखने वाले व्यक्ति, मित्रता निभाने वाले शास्त्रों के बहुत बड़े पंडित है।
और यह बाबा हनुमान को बन्दर समझता है, हमने एक श्लोक का अर्थ दिखाकर आपको बताया है कि हनुमान मनुष्य थे ना कि पशु और ये बागेश्वर धाम बाबा उनको बंदर बताता है।
4.. बागेश्वर धाम धीरेंद्र शास्त्री सीता को रावण की पुत्री बताता है। क्या सही में पुत्री थी ,नीचे देखो हम समझाते हैं क्या थी ? यह पाखंडी बाबा, रावण को अच्छा व्यक्ति बताता है ? दुष्ट दुराचारी को। कहता है रावण इसलिए चुरा कर लाया था सीता को उस पर अपनी बेटी का दु:ख सहा नहीं गया ।

______रामायण अरण्य कांड सर्ग 47, श्लोक 26,34..।______

रावण सीता से कहता है कि मैं तेरे जैसी अनेको स्त्रियों का तुझसे पहले भी हरण करके लाया था। उनमें से आप मेरी पटरानी बनो, मुझ से विवाह करके जीवन में सुखी रहोगी।

Edit with WPS Office

दोस्तों विचार करो अगर रावण की माता सीता बेटी होती, तो वह इस प्रकार कह सकता है क्या? बिल्कुल भी नहीं, तो इस प्रकार पता चलता है, कि सीता रावण की बेटी नहीं थी अगर बेटी होती तो वह इस प्रकार नहीं कहता। अगर रावण की बेटी होती सीता तो सीता विवाह में नहीं जाता। जबकि रावण गया था।

5.. ये बाबा कहता है हमारे 33 करोड़ देवी देवता है। आप अपने देवताओं को पूजो आप अपने देवताओं को छोड़कर,पीर मजार पर चादर डालकर माथा टेकना बंद करो।

ये बात तो बाबा ने सही बताकर के गलत भी बता दी। क्योंकि बाबा ने हिंदूओ के 33 करोड़ देवी देवता बता दिए। लोग यहां भ्रम में पड़ गए, अब जो उन लोगों के मन में सवाल उठ रहे हैं । उनका उत्तर कोन दे ? ये बाबा तो नहीं दे सकता। अब उनका उतर तो आर्य समाज के विद्वान ही दे सकते है।

6..इन पाखंडीयो के चक्कर में मत फंसो,ये बाबा कहता है कि ब्रहमा के दो पुत्र वह पुत्रियां थी। मनु और शतरूपा इनसे ही हम सब की उत्पत्ति हुई। इसलिए हम सब को मानव कहते हैं। मनु महाराज की पांच संताने हुई। तीन पुत्रियां दो पुत्र इनसे ही सृष्टि शुरू हुई।

इस बाबा को कुछ नहीं पता अगर पता होता तो ऐसी अतपटि जैसी बात नहीं करता।!

मनु से पहले ही मनुष्य की उत्पत्ति हो चुकी थी। अधिक संख्या में ऋषि व मनुष्य लोग भूमि के गर्भ से जन्म ले चुके थे। उन सब के बीच मनु को इसलिए भेजा वहां जाकर राजा की तरह राज व्यवस्था व संविधान बनाए। इसलिए वे पहले राजा कहलाए, राजऋषि कहलाते है। उस समय किसी का कोई नाम नहीं था। जिससे वे मनु कहलाए। बाद में फिर मनुष्य कहलाए। फिर और बाद में ऋषियों ने उनके नाम रखे।

•__________प्रेमानंद जी महाराज

Edit with WPS Office

इनकी दोनों किडनी खराब है, इन्होंने अपनी एक किडनी का नाम राधा, दूसरे किडनी का नाम कृष्ण रखा। ज्यादातर लोग उनसे इसलिए प्रभावित हुए हैं दोनों किडनी खराब होने के बावजूद भी उनका स्वास्थ्य शरीर ठीक है। वे लोगों को प्रवचन देते हैं, हंसते हैं और हंसाते हैं। वो धार्मिक ज्ञान भी देते हैं, लोगों को ब्रह्मचारी का महत्व बताते हैं।

हालांकि सच्चाई यह है ना तो राधा उनकी किडनी को चला रही है। ना कृष्ण उनकी किडनी को चला रहा है। उनकी किडनी और उनका स्वास्थ्य बना हुआ है डिजनेस की वजह से बना हुआ है उनका जो खून है वह बदला जाता है। अगर उनका खून न बदला जाए, या उनका अस्पताल का उपचार न किया जाए। तो वह ज्यादा समय तक जीवित नहीं रहेंगे। कुछ अंधभक्त लोग उनको कृष्ण का अवतार बताते हैं, वे कोई कृष्ण का अवतार नहीं है। जो बताता है वह कोटि-कोटि महा मूर्ख है। किसी को भी अवतार बता देना,भगवान मान लेना ईश्वर का अपमान है। सच्चाई यह है वे डॉक्टर के पास जाते हैं और अपना इलाज करा रहे हैं। डॉक्टर की सलाह से दवाई खाते हैं इसलिए उनकी किडनी जीवित है। इन दवाइयां की वजह से ही चल पा रहे हैं, बोल पा रहे हैं। ना कि राधा कृष्ण उनकी किडनी में है।

लोग एक दूसरे की देखा देखी ज्यादा करते हैं। ये लोग भी जा रहे हैं तो हम भी चले ऐसा लोग करते हैं इसने स्टेटस पर फोटो लगाया मैं भी लगाता हूं। इसलिए इनके पास भक्तों की जनसंख्या बढ़ रही है फॉलोअर बढ़ रहे हैं। इनके पास एक्टर आ रहे हैं ,सिंगर आ रहे हैं राजनीतिक नेता आ रहे हैं।

जैसे नीम करोली बाबा के बारे में कोई नहीं जानता था लेकिन फेसबुक पर छा जाने के कारण उनको लोग जानने लगे। ठीक इसी प्रकार प्रेमानंद महाराज भी हैं।

एक कारण यह है लोगों को पता नहीं है शास्त्रों को पढ़ा नहीं है इसलिए प्रेमानंद ने ना ही वेद पढ़े हैं, ना ही उपनिषद ना ही रामायण ,महाभारत गीता, सभी पुराण नहीं पढे। अगर पुराण पढ़े होते तो राधा राधा नहीं करते। लेकिन वे विद्वान जरूर है, उनमें बोलने का कॉन्फिडेंस अच्छा है, ब्रह्मचारी स्वास्थ्य के बारे में बोलते रहते हैं। उनकी गलत बात यह है कि वह राधे-राधे करते रहते हैं।

इनसे किसी ने सवाल पूछा, की महाराज कुछ लोग निराकार की पूजा करते

Edit with WPS Office

हैं ईश्वर को निराकार मानते हैं इस पर आप क्या कहोगे ??
यह महाराज उत्तर देते हैं और साकार कि मूर्ति पूजा के लिए बोलते हैं। यह कहते हैं जब साकार ने शब्द दिए तो साकार की पूजा क्यों नहीं। हम लोग प्रणाम किसको करते हैं साकार को देखकर ही तो करते हैं। इस प्रकार इस महराज का कहना है। यह बिल्कुल गलत है। इनको यह नहीं पता शब्द कहां से आए हैं।
में बताता हु शब्द कहां से आए हैं। सृष्टि के आरंभ में चार ऋषि उत्पन्न हुए ईश्वर ने उन ऋषियों को वेद का ज्ञान दिया। ईश्वर ने वेदों को उनके हृदय में उत्पन्न किया। ऋषियों ने ही शब्दों की रचना कि। ना की साकार जड़ मूर्ति को देखकर जैसे ये महाराज बता रहे हैं। प्रणाम तो हम माता पिता को भी करते हैं, ईश्वर की स्तुति, उपासना, गुरु को भी प्रणाम करते हैं। इनका नाम क्यों नहीं लिया आपने ? साकार तो ये भी है लेकिन ये सभी चेतन है। और मूर्तियां जड़ है। और आप लोगो को मूर्तियों ने किया दिया ? जो आप इस प्रकार पोप लीला कर रहे हो।
दूसरी बात इनकी यह बाबा पाखंडवाद अंधविश्वास पर घोर आपत्ति उठाता है , इनका यह समाज के प्रति बहुत अच्छा कार्य है । इनकी इस बात का हम इनका समर्थन करते हैं । गंडा ताबीज अंधविश्वास पर बहुत ज्यादा जोर देते हैं जो की बहुत अच्छा कार्य ।
प्रेमानंद महाराज नरक जाने की तैयारी कर रहे हैं । प्रेमानंद महाराज को नरक जाने से बचा लो बहुत बड़ी गलती कर रहे हैं : देखिए ___
प्रेमानंद संत नियमों का पालन नहीं करते इनका नरक भोगना पक्का है ?
प्रेमानंद कहते हैं कि ___ ध्यान रखना चमड़े की बेल्ट पहनने वाला और चमड़े के जूता पहनने वाले को गौ हत्या का पाप लगता है । अगर वो इन पशुओं से जो चमड़ा निकाल कर निर्माण किया जाता है । जूता बेल्ट आदि । ये जो गृहस्थी आदि इनका प्रयोग करते हैं , तो उसे गौ हत्या का दंड मिलता है । और आगे बाबा कहता है क्योंकि आप पहनते हैं , उसमें आप सहयोगी हुए । आप उसका प्रोत्साहन बढ़ा रहे हैं गौ हत्याका । ऐसा यह बाबा कहता है ?
आप लोगों ने देखा किस प्रकार प्रेमानंद महाराज अच्छी बातें बोली की लेदर का जो भी इस्तेमाल करेगा , गाय भैंस आदि से बनती है इसलिए नरक का

Edit with WPS Office

द्वार जाना पड़ेगा ।
लेकिन मॉडल टेक्नोलॉजी के अभाव में हो सकता है शायद प्रेमानंद महाराज को यह बात ना पता हो कि ओड़ी लग्जरी जैसी गाड़ियों को प्रेमानंद जी महाराज इस्तेमाल कर रहे हैं ? इन गाड़ियों की जो सीट होती है वो लेदर की होती है । मैंने बहुत ज्यादा रिसर्च की मैं आपको बताऊं ।
जिस गाड़ियों में प्रेमानंद जी महाराज घूमते हैं इनकी कीमत 3 करोड़ से भी ऊपर है तो इन गाड़ियों की सीट मैं लेदर का इस्तेमाल होता है । जो की गाय भैंस की चर्बी से बनती है । क्या बाबा इस गाड़ी को छोड़ेंगे ? क्या जूता पहनना छोड़ेंगे ? अगर यह सब नहीं छोड़ेंगे सीट पर बैठना नहीं छोड़ेंगे तो फिर तो **बाबा को भी नरक जाना पड़ेगा ?** जो कोई इनका भक्त है इस बाबा को बताओ । नरक जाने से इस बाबा को बचाओं ।

•__________अनिरुद्राचार्य महाराज

- 1.. इस बाबा से किसी ने सवाल पुछा कि मोक्ष किसका होता है? अब देखते हैं ये बाबा किया जवाब देता है।

उत्तर___ ये महाराज कहते है मोक्ष मन का होता है।
जो बिलकुल गलत है, हम बताते हैं किसका होता है मोक्ष ?
मोक्ष मन का नही होता,मोक्ष तो आत्मा का होता है। क्योंकि मन सुक्ष्म तत्व है सभी इन्द्रियां आत्मा के पीछे है। मोक्ष में मनुष्य ना ही स्थूल शरीर में रहता ह। ना ही सुक्ष्म अवश्था में, मोक्ष में आत्मा ईश्वर के आनंद भाव में रहती है। मोक्ष में आत्मा को प्रत्येक वस्तु समझने का सामर्थ्य आ जाता है। मोक्ष एक जन्म में नहीं मिलता अनेक जन्म लेने पड़ते हैं।अब आप सोच रहे होंगे कि हमने इस जन्म में अच्छा किया है। अगले जन्म का किया पता अच्छा किया या बुरा ऐसा नहीं होता है अगर हम इस जन्म में अच्छा करेंगे तो हमको अगला जन्म अच्छा मिलेगा। इस प्रकार जब हमारे सात जन्म अच्छे प्रकार के हो जाएंगे। तब हमें मोक्ष प्राप्ति होगी।

Edit with WPS Office

2.. ब्रहमा जी के दाय हाथ से मनु, और बाय हाथ से सतरुपा उत्पन्न हुए। देखो इनके ज्ञान की बातें कैसे पागल बनाते हैं लोगों को मूर्ख बना रहे हैं। सब कथावाचकको की अलग अलग बाते हैं। अब कोन सी बात सत्य मानोगे ।? भोले भाले लोगो? किस कथावचक का विश्वास करोगे? दूसरी बात जानने योग्य ये है कि दोनो कथावाचक हिंदू सनातनी है, और दोनो की विचार धारा एक दुसरे के सामने गलत हे। सिर्फ़

आर्य समाज के ही विद्वान ऐसे मिलेंगे जिनकी विचारधारा एक ह। और एक दूसरे से मिलती है।

3.. इनसे किसी ने पुछा महाराज जब मनुष्य मरने के बाद दूसरी योनि में चला जाता तो वे हमारे पितृ कैसे हुए और दूसरी तरफ भगवान श्री कृष्ण भी गीता में कहते है ये आत्मा एक शरीर छोड़ दुसरे शरीर में प्रवेश करती है। जिसने मरने के बाद अगला जन्म ले लिया। हमारे पितृ कैसे हुए? अब देखते हैं ये महाराज क्या उत्तर देते हैं?

ये बाबा कहता है जो हमारे पूर्वज मरे हैं, उनको भोग लगाया जाता हैं। ताकि जब उन पर भूख मरी का संकट आए। तो उनका पेट भर जाए। इस प्रकार इस महाराज का कहना है। अब हम इसका उत्तर देते है______

देखिए दो शब्द होते हैं

1.. पितृ

2.. श्राद्ध

पितृ का अर्थ होता है ___ , रक्षा करने वाला, पालन करने वाला, हमारा पालन कोन करता है ? जीवित पिता ही तो करता है।

श्राद्ध से जो कुछ किया जाए उसे श्राद्ध बोलते हैं

अब देखिए शास्त्र इस विषय पर किया कहते हैं।

यजुर्वेद अध्याय 3, मन्त्र 55... पितृ के लिए___

अपनी संतान को आत्मा और शरीर से जो बलवान बनाए , उनकी शिक्षा का ध्यान करने वाला ,उनका पालन पोषण करने वाला, जो पितृ है, हे मनुष्यों उस अपने पितृ की पूजा करो।

इस मंत्र से समझ सकते हो कि पितृ जीवित पिता के लिए कहा गया है। वेदों में इस प्रकार के अनेक मंत्र हैं,

Edit with WPS Office

जो हमारे माता, पिता, गुरु,आचार्य है। ये ही इसका अर्थ होता है। पितृ का दूसरा अर्थ निमार्ण करना भी होता है, हमारा निमार्ण कोन करता है जीवित माता,पिता, गुरु आचार्य ही तो हमारा सभी प्रकार से निमार्ण करते हैं। इसलिए ये पितृ होते हैं। दूसरा प्रमाण देखो___

_____गीता 2 अध्याय, 22श्लोक_____

भगवान श्री कृष्ण जी कहते हैं, जैसे मनुष्य पुराने वस्त्र को त्याग कर दूसरे वस्त्र धारण करता है। उसी प्रकार जीवात्मा एक देह को त्याग कर दूसरी देह (शरीर) को धारण करती है।

तो यहां पर श्री कृष्ण जी बिलकुल भी नहीं कहते कि जिसका विवाह नहीं होगा, जो बिना शादी के मरेगा उसके देवता धरना। उसके तीन ईंटों के देवता रखना। या उसकी आत्मा भटकटी रहेगी।

दूसरा प्रमाण___ चाणक्य नीति___अध्याय 11, श्लोक 11____

जो प्रतिदिन अपने पितृरो को श्राद्ध करता है, ऐसा ब्राह्मण कहलाता है। अपने पितरों को श्राद्ध द्वारा तृप्त करो।

चाणक्य नीति__अध्याय 42, श्लोक 19,

जन्म देने वाला, यज्ञोपवीत कराने वाला, गुरु विधा दान देने वाला, अध्यापक अन्न देने वाला, और भय से मुक्त रखने वाला, यह पांच व्यक्ति पितर कहलाते हैं।

4.. इनका कहना है जब समुद्र मंथन हुआ तब राहु नाम के राक्षस ने छल से अमृत पी लिया तभी विष्णु ने उसका सर काट दिया। सर काटने से अमृत की दो बूंदें जमीन पर गिरी एक बूंद लहसुन बन गई, दूसरी बूंद प्याज बन गई।

अब आप लोग कोन से कथावाचक का विश्वास करोगे अंधभक्तों 😂?

5.. इस इस बाबा से किसी लड़की ने पूछा? कि जब 84 लाख प्रकार की योनियों होती है? तो उनमें से चार लाख योनियों मानव की होती है, तो मानव को चार लाख योनियों मिली कैसे ?

इस पर इस बाबा का जवाब___? देखो?

चार लाख प्रकार के मनुष्य होते हैं, हर प्रकार के मनुष्य कोई छोटा है कोई

Edit with WPS Office

बड़ा है कोई गुगां बहरां । इस प्रकार बाबा का जवाब है। 😂😅😀😃😄😁

इस बाबा ने तो बात योनियों की हो रही थी,? और इस बाबा ने तो दोष ही की गिना दिए? 😁😄😃इसलिए यह सही उत्तर नहीं है ! बाबा को तो क्वेश्चन ही समझ में नहीं आया , तो उत्तर सही कैसे हो सकता है??😂🤣

सही उत्तर हम देते हैं___

मनुष्य एक प्रकार की जाति होती है, जैसे मनुष्य जाति में पुरुष स्त्री आ जाते है, और ट्रांसजेंडर । तीन ही प्रकार के मनुष्य होते हैं। दूसरी जाति होती है पशु योनि । ऐसे ही पक्षियों की योनिजाति होती है।

और बाबा ने तो मनुष्य के दोष को भी जाति और योनि बता दिया ? जैसे __ छोटा ,बड़ा, रोग,कलर इनको भी बाबा ने योनियों और जातियों में गिन दिया।😂😂 ।

6.. यहां बाबा बताता है जो लड़की अपने स्तनों को भूमि पर लगाकर के सोती है तो उसके प्रभाव से उसके स्तनों के प्रभाव से पृथ्वी डगमगाने लगती है, ऐसा इस बाबा का कहना है 😅😂🤣?

जरा इस पर विचार करो अगर ऐसे होता ऐसे तो होना छोड़ो, ऐसी बातें जो कहता है वह अज्ञानी मूर्ख धूर्त व्यक्ति होता है। भला उसकी ऐसी गप्पू जैसी बातों पर कौन विश्वास करें? जिस व्यक्ति में स्वयं की बुद्धि नहीं बुद्धि होकर भी सही मार्ग नहीं दिखाता तो उस की बुराई करने में क्या लाभ ?

अब हम आपको बताएंगे कि बाबा की बातों में कितनी सच्चाई है या कितना झूठ है ?

इस बाबा से कोई पूछे की जो लड़की कुश्ती लड़ती है, जब दो लड़कियां आपस में लड़ती है, कुश्ती के समय दाव भी लगते हैं ऊपर नीचे भी होती हैं कुश्ती के समय। स्तन धरती से भी लगते हैं, क्या ऐसी परिस्थिति में पृथ्वी डगमगाती है ?

जो लड़कियां योंगा करती है, नदी में तैरती है, चलते चलते रास्ते में गिर भी जाती है, अनेकों उदाहरण है। क्या उनके स्तन धरती से लगने से भूमि डगमगा जाती है ?

आप बाबा लड़कियों का इतना अपमान क्यों करते हो ? कभी तो उनको

Edit with WPS Office

लड़कियों को गायत्री मंत्र का जाप करने के लिए मना करते हो। कभी कुछ बताते हो। आपकी बातें मिथ्या है, गलत है, आपकी ऐसी गप्पू जैसी बातों से तो लगता है आपने कुछ नहीं पढ़ा। कुछ नहीं जाना कुछ नहीं समझा, वेदों की तो बात छोड़ो, आपने तो पुराणों को भी सही से नहीं पढ़ा ।

ऐसे पाखंडी कथा वाचकों के अनेकों उदाहरण है, अनेकों बातें हैं इनकी गप्पोडे जैसी बातों का हमको प्रचार नहीं करना, बल्कि सच्चाई दिखाना है। कि उनकी बातों में कितनी सच्चाई है कैसे यह लोगों को धर्म के नाम पर लोगों को पागल बनाते हैं, भ्रम में डालते हैं,।
जितने भी भागवत के कथावाचक हैं? इन लोगों ने तो भागवत भी सही से न पड़ी? अगर भागवत भी सही से पढ़ी होती ? तो यह ऐसी बातें नहीं करते ? यह बाबा अगर इस बाबा से कोई ऐसा सवाल पूछ ले? जिसका उत्तर इस बाबा के पास है, तो यह बाबा गुस्सा दिखाने लगता है, कोई इस बाबा का इंटरव्यू ले ले तब गुस्सा दिखाने लगता है? क्या यह भागवत कथा की मर्यादा है ? **जबकि भागवत पुराण में लिखा है?**
श्रीमद् भागवत महापुराण दूसरा अध्याय 56 श्लोक।
यहां लिखा है जो व्यक्ति सुख और दुख में समान परिस्थितियों में रहता है ,ऐसा भाव रहता है, जो व्यक्ति ना ही किसी की निंदा करता है, और ना किसी की प्रशंसा करता है, ना क्रोध करता है, ना प्रसन्न होता है। ऐसा समभावी व्यक्ति ऐसा इंद्रजीत व्यक्ति ही आचार्य, साधु, योगी कहलाने योग्य है।।
ऐसे कथावाचकों में एक भी लक्षण ऐसा नहीं जिसमें यह सभी गुण हो, इसलिए ऐसे लोगों को ना ही साधु कह सकते ? ना ही आचार्य ? ना ही गुरु !

•___राजेंद्रदास पांडे महाराज कथावाचक

इस पाखंडी बाबा का कहना है, प्याज की उत्पत्ति कुत्ते के अंडकोष से है, और लहसुन की उत्पत्ति कुत्ते के नखं से हैं।
देखो देखो इन पाखंडियों का ज्ञान, यह पाखंडी तो अलग ही तरीके से बता रहा है। ऐसी बातों को करने वाला विद्वान नहीं हो सकता, योगी नहीं हो

Edit with WPS Office

सकता , सन्यासी नहीं हो सकता।
इन सभी लोगों की जो दुकान चल रही है, हम लोगों को शास्त्रों का अध्ययन न करने के कारण चल रही है। हमारी शास्त्रों के प्रति जो रुचि थी, वह समाप्त हो गई। और हम इतने आलसी हो गए, कि अपने शास्त्रों को भी नहीं पढ़ते और ऐसे बाबाओं को अपना गुरु मान लिया। इन बाबाओ को गुरु पौराणिक लोग मानते हैं, आज के वह लोग जो अज्ञानी है, जो अपने धर्म ग्रंथ के बारे में भी नहीं जानते, ऐसे लोगों को यह पागल बनाते हैं अपनी जाल में फंसाते हैं।
इसलिए हे मनुष्य लोगों सच्चाई को जानो अपने शास्त्रों को पढ़ो , खुद अध्ययन करो दूसरों को कराओ। क्या आप इतने निर्मल हो, कि अपने शास्त्रों को भी नहीं पढ़ सकते। आप लोग अपने धर्म ग्रंथो को अपने आप नहीं पढ़ोगे, तब तक ऐसे पाखंडी लोग आपको भ्रम में डालते रहेंगे, आपका पागल बनाते रहेंगे।
महर्षि दयानंद सरस्वती ने ऐसे पाखंडियों का सत्यार्थ प्रकाश के 11वें समूह में खंडन किया है, और पौराणिक पंडितों का विस्तृत वर्णन किया है, और इन लोगों के काले करतूत दिखाएं है, ऐसे पौराणिक पंडित ब्राह्मण नहीं हो सकते , ऐसे कथावाचक शुद्ध ब्राह्मण नहीं हो सकते ब्राह्मण के नाम पर राक्षस है।
जो लोगों को ज्ञान से वंचित करते हैं, ठगी जैसा काम करते हैं।

- **सच्चा ब्राह्मण तो वह है जो अपने ज्ञान के प्रकाश से लोगों को समाज को एक नई रहा दिखाएं, जैसे __ महर्षि दयानंद सरस्वती।**

जब मुसलमानो ने कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी। इस नाम का एक ग्रंथ लिखा और उस ग्रंथ को हर घर घर में बतवाया मदरसे में बाटा हर स्थान पर उस पुस्तक को बांटा। तब उस समय के एक भी कथावाचक, एक भी हिन्दू ने जाकर उन मुसलमानों से जाकर नहीं बोला कि तुम्हारी हिम्मत कैसे हुई, कि कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी, मतलब हिंदूओं के आराध्य देव भगवान श्री कृष्ण पर इस नामक एक ग्रंथ लिखा। उसमें क्या लिखा **कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी**। एक भी कृष्ण के उपासक ने , कृष्ण की पूजा करने वाले ने, उस पुस्तक का जवाब नहीं दिया। एक व्यक्ति खड़े हुए जिनका नाम था

Edit with WPS Office

पंडित चंपुपति एमे उन्होंने कहा,, कि मुसलमानों ने इतनी गलत दुष्टता की हे। हमारे भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण को गालियां दी है। उन पर लाछर लगाएं है। इन मुसलमानों का प्रतिकार होना चाहिए इनको जवाब देना चाहिए। फिर उस पंडित चंपुपति एमे ने भगवान श्री कृष्ण का असली चरित्र लिखा। जिस पुस्तक का नाम था। योगेश्वर श्रीकृष्ण इसको बांटा गया, फिर चंपुपति एमे ने कहा, तुमने जो हमारे श्री कृष्ण पर गलत लाछर लगाया। हमारे श्री कृष्ण के बारे में झूठ बोलकर पुस्तक लिखी। अब मैं तुम्हारे मोहम्मद साहब का सच बोलकर के एक पुस्तक लिखुगा। तुम्हारे हदीश और तुम्हारे कुरान और तुम्हारे प्रमाण के आधार पर लिखुगा। उस पंडित चंपुपति एमे ने एक पुस्तक लिखी। जिसका नाम था **रंगीला रसूल**। ये पुस्तक लिखी । अब इस पुस्तक को छापें कोन ? एक भी पब्लिकेशन हाउस सनातन धर्म पर चलने वाले , धार्मिक पुस्तकों को छापने वाला , प्रकाशन उस रंगीला रसूल पुस्तक को छापने के लिए तैयार नहीं हुआ। तब लाहोर में एक प्रकाशन चलता था एक पब्लिकेशन हाउस चलता था। जिसका नाम था राजपाल एण्ड संस्था, महाश्य राजपाल उस प्रकाशन को चलाते थे। महाश्य राजपाल ने कहा, पंडित चंपुपति एमे जी में आपकी पुस्तक रंगीला रसूल को छापुगा । तो पंडित चंपुपति एमे ने उनसे बोला कि पुस्तक तो छाप दो लेखक का नाम नहीं देना। क्योंकि लेखक का नाम दोगे तो, सजा ए मौत, अब आप लोग सोच रहे होंगे कि जब पंडित चंपुपति एमे ने हदीश और कुरानो के आधार पर लिखा तो काहे का डर? नपुर शर्मा ने भी तो यही कहा था, वही तो बात बोली जो जाकिर नाईक बोलता है। क्योंकि वे ही वहीं जाकिर नाईक की बात नपुर शर्मा ने बोली तो अपराधी हो गई। अगर जो जाकिर नाईक बोलता है, इस्लामी गुरु बोलते थे। वो सही था। जब पंडित चंपुपति एमे ने कहा, और महाशय राजपाल ने कहा कि आप चिंता मत करो! मैं आपका नाम नहीं लूंगा। और मैं वचन देता हूं, मरते दम तक मर जाऊंगा , आखरी सांस तक मैं आपका नाम नहीं लिखूंगा। तो वह पुस्तक छांपी और महाशय राजपाल ने अपने प्रकासन से और लेखक की जगह लिख दिया दूध का दूध पानी का पानी, जैसी करनी वैसी भरनी। और वह पुस्तक बड़ी संख्या में लोगों के घर में बांटी गई। जब विस्तृत संख्या में बाट दी गई । तो पूरे इस्लामी में हड़कंप मच गया। कि यह क्या हो गया। मुसलमानों को को तो

Edit with WPS Office

यह लग रहा था की सनातनी तो हमारे द्वारा लिखी गई पुस्तक कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी । इस पर चुप बैठ जाएंगे। अब क्या करें । तो महात्मा गांधी ने मुसलमानो से बोला तुम्हें इन हिंदुओं को जवाब देना चाहिए। यंग इंडिया नाम का उस समय समाचार अखबार छपता था। उसमें लेख लिख रहा है। महात्मा गांधी का बयान लिखा हुआ है। कि मुसलमानो को हिंदुओं से लड़ना चाहिए। और मुसलमान लड़े और हमले किए गए। कई बार महाशय राजपाल पकड़े गए। मुसलमानों के अनेक बार पूछने पर भी महाशय राजपाल ने लेखक का नाम नहीं बताया। अतः फिर यह कैश लाहौर के हाई कोर्ट मैं पहुंचा। हाई कोर्ट में 3 साल तक यह कैश चला। जज साहब ने पांच मौलवियों की एक समिति बनाई। और उनसे बोला कि यह देखो यह रंगीला रसूल की पुस्तक है। यह हिंदुओं ने लिखी है। इस पर मुसलमानों ने कैश कर दिया है। तुम लोग इस पुस्तक को ले जाओ ,और ले जाकर देखो इस पुस्तक में कौन सी बात झूठ है ? कोई ऐसी बात है इसमें जो अप्रमाणिक है। जिसका कोई प्रमाण न मिलता हो। तुम्हारी हदीश और कुरान से तो सारे मौलवियों ने इस पुस्तक को देखा और शौध किया गया। और बोलें इस पुस्तक में तो कोई भी बात ऐसी नहीं है जो झूठ हो। मौलवियों ने खुद स्वीकार किया और कहा ,ये पुस्तक सही है। तो महाशय राजपाल को रिहा कर दिया गया। जेल से छोड़ दिया गया। तो फिर महात्मा गांधी ने यंग इंडिया में लिखा कि यदि तुम्हें देश की न्याय व्यवस्था न्याय नहीं दे सकती तो तुम लोगों को न्याय कानून को अपने हाथ में लेना चाहिए। उसके बाद महाशय राजपाल कि लाहौर में चाकुओं से हत्या कर डाली। कहने का तात्पर्य यही है, कि सनातनियों के कृष्ण को यह लांछन लगाते रहे, और सनातनी चुप पड़े रहे, यदि उनकी ही बात को किसी ने सच उजागर कर दिया तो उन सब के पेट में दर्द हो जाता है । फिर सनातनी लोग आर्य समाज को गाली देते हैं। की आर्य समाज तो मूर्तियों का खंडन करता है। आर्य समाज तो कृष्ण को नहीं मानता। आर्य समाज तो हनुमान को नहीं मानता, आर्य समाज तो मंदिरों का विरोधी है। अगर आर्य समाज ऐसा होता तो कभी भी योगेश्वर श्री कृष्ण का सच्चा चरित्र न लिखता। महाशय राजपाल एक आर्य समाज थे। आर्य समाज ने ही योगेश्वर कृष्ण का सच्चा चरित्र लिखा। और मुसलमान को करारा जवाब दिया रंगीला रसूल नामक

Edit with WPS Office

पुस्तक लिखकर मोहम्मद के ऊपर दूध का दूध पानी का पानी किया। तब कोई भी हिंदू कथा वाचक कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी इस पुस्तक का विरोध नहीं किया ना ही इस पर किसी ने जवाब दिया आर्य समाज के अलावा। तब कहां चला गया था इनका चमत्कार? इनकी भक्ति इनके कृष्ण का अपमान हो रहा था। आर्य समाज किसी का विरोधी नहीं है! लेकिन मुझे दुख इस बात का है कि लोग कहते हैं कि आर्य समाज तो सनातन धर्मियों का शत्रु है!

दूसरे उदाहरण से और समझो आर्य समाज क्या है। जब हैदराबाद के निजाम ने हैदराबाद में मंदिरों में ताले लगवा दिए। तो उस समय भी एक भी मंदिर का व्यक्ति एक भी पुजारी एक भी कथावाचक एकत्रित होकर नहीं गया ना ही इसका विरोध किया, कि हमारे मंदिरों में ताले क्यों लगवाएं। तब वहां आर्य समाज के विद्वानों के लोग गए। आर्य समाजी स्वामी महात्मा नारायण वहां गए। और हैदराबाद के निजाम को घुटने में टेका। इस आंदोलन में आर्य समाज के अधिक जनसंख्या में लोग शहीद हुए। कुछ लोग हिंदू भी थे। लेकिन अधिक संख्या में नहीं अधिक संख्या में आर्य समाज के लोग थे। जब हैदराबाद के निजाम को घुटने पर ला दिया आर्य समाज के विद्वानों ने तब निजाब ने कहा कि मैं तो आप लोगों का ही समर्थन कर रहा हूं आप लोग मूर्ति पूजा नहीं करते, यह तो मैं आपका काम आसान बना रहा हूं। यह सुनकर आर्य समाज के विद्वान तिलमिला उठे और कहां है हैदराबाद के निजाम यह ठीक है आर्य समाज मूर्तियों की पूजा नहीं करता। मूर्तियों को नहीं मानता। लेकिन हमने कोई मूर्ति नहीं तोड़ी। लेकिन जो पूज रहे हैं। मूर्तियों को मान रहे हैं । वे हमारे भाई हैं ! अगर उन पर आंच आई तो हम आर्य समाजी लोग आपको छोड़ेंगे नहीं। अधिक संख्या में अब आंदोलन करेगे। यह सब सुनकर हैदराबाद का निजाम डर गया और उसने क्षमा मांगी और मंदिरों के ताले खुले।

•____________प्रदीप मिश्रा

• इस पाखंडी बाबा का ज्ञान तो देखो, पाखंडी कोई गाली नहीं होती?

Edit with WPS Office

पाखंडी अज्ञानी को कहा जाता है।

यह बाबा कहता है__________

जब आपका बच्चा एग्जाम देने जा रहा है? हाई स्कूल के उसको लग रहा है, मैंने पढ़ाई नहीं करी पूरी साल उसे डर है मैं फेल ना हो जाऊं? तो उसके लिए उपाय हैं

शहदं लेकर के और बेलपत्र की बीच वाली पत्ती पर शहद लगाकर के और शंकर भगवान की शिवलिंग पर जाकर के बच्चे के हाथ से चिपक्वा दीजिए। चाहे बच्चे ने पढ़ाई ना कि हो पूरी साल, तो वह बच्चा पास हो जाएगा ? जिस दिन यह काम करेगा यह उपाय करेगा। वह बच्चा सफल होगा !

कोई इस बाबा से पूछे___?

क्या तुम इस प्रकार उपाय बता करके उन बच्चों के साथ अन्याय करना चाहते हो? कोई इस बाबा से पूछे तो सही ?

क्या तुम भारत देश भारत के युवाओं को इस प्रकार का उपाय बता करके उन्हें उनकी शिक्षा से दूर रखना चाहते हो ? उन्हें अशिक्षित बनाना चाहते हो? क्या इस देश को अनपढ़ गवार देश बनाना चाहते हो ? जिस भूमि पर बड़े-बड़े ऋषि महर्षि बड़े-बड़े विद्वान महापुरुषों की भूमि रही उस भूमि के साथ उसभूमि पर पैदा होने वाले युवाओं के साथ इस प्रकार का ऐसा अन्याय उन्हें उनकी शिक्षा से दूर रखने का उपाय बता रहे हो! यह कैसा उपाय है गप्पू पोपों जैसा?

इस प्रकार का उपाय बता करके तुम भगवान श्री कृष्ण का भी अपमान कर रहे हो? ऋषियों का अपमान कर रहे हो ? भगवान राम का अपमान कर रहे हो ?

श्रीमद् गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं हे अर्जुन पुरुषार्थ कर, अपने कर्तव्य का पालन कर, उठो हे आर्य ? हे वीर मानवता की रक्षा के लिए और धर्म राजनीति समाज की रक्षा के लिए शस्त्र उठाओ, अपने उस शत्रु का विनाश करो जो तुझे तुम्हारे अधिकार से वंचित कर रहा है, पुरुषार्थ करने से रोक रहा है ? तुझे अपने कार्य करने से रोक रहा है। तुझ से तेरा अधिकार छीन रहा है तेरे साथ अन्याय कर रहा है ,उसके साथ युद्ध कर और अपना अधिकार पा तब अर्जुन ने धर्म की रक्षा के लिए और समाज की रक्षा के लिए शस्त्र उठाएं। तब तो भगवान श्री कृष्ण ने अर्जुन से तो नहीं कहा कि

Edit with WPS Office

शिवलिंग पर जाकर की, हे अर्जुन तुम ऐसा करो यह उपाय करो तुम क्षत्रिय कर्तव्य और धर्म का पालन मत करो । यह तंत्र-मंत्र उपाय करो । शिवलिंग पर जाओ बेलपत्र लो उस पर शहद लगाओ और चिपका दो तुम्हारी विजय हो जाएगी। ऐसा तो भगवान श्री कृष्ण ने नहीं कहा? आप भगवान श्री कृष्ण का भी अपमान करते हो प्रदीप मिश्रा जी।

दूसरी बात___आप लोगों से उनका अधिकार छीन रहे हो ऋषियों के बने हुए ग्रंथ ना पढ़ने के लिए मना कर रहे हो , उनके बनाए हुए सिद्धांत नियम का अपमान कर रहे हो ? गुरु शिष्य की परंपरा जो होती है उसको खत्म कर रहे हो? कभी सोचा भी नहीं था आप लोग इतने नीचे भी गिर जाओगे? आप कथा करते हो शिव कथा करते हो ठीक है अच्छी बात है करो? लेकिन जो आप कथा में मदारी का खेल कर रहे हो यह गलत है ? **कहने का मतलब यह है__**आप लोगों से एक कथा कराने के लिए लाखों लाखों रुपए ले जाते हो ऐसा क्या है उस कथा में , कथा के समय आपने तो कभी नहीं कहा कि जिस प्रकार मैं शास्त्रों को पढ़कर कथा सुना रहा हूं, इस प्रकार तुम भी ज्ञानी बनो जिस प्रकार मैं विद्वान हू तुम भी विद्वान बनो। पर यह सब तो नहीं कहना आप लोगों को ? अगर यह सब रहस्य बताओगे तो आपकी दुकान बंद हो जाएगी। आप लोग जनता को भ्रम में डालते हो कथा के नाम पर लाखों लाखों रुपए ले जाते हो और जनता भोली भाली हिंदू जनता को भ्रम में डालते हो। श्रृंगार करने से कोई गुरु नहीं होता , गुरु होता है ज्ञान देने से उपदेश करने से गुरु होता है। आप लोगों को ऐसा क्यों नहीं बोलते ? कि आप लोग भी शिव पुराण पढ़ो। कहने की बात यह है आप लोगों को ऐसा कहना ही नहीं है ?अगर ऐसा कहोगे तो आपकी पोल खुलेगी झूठ पकड़ा जाएगा लोगों का विश्वास उठेगा हमारी दुकान बंद हो जाएगी ?

आप भगवान श्री राम का भी अपमान करते हो भगवान श्री राम ने कितने कठिन परिश्रम पुरुषार्थ से सेतु का निर्माण किया था , भगवान श्री राम ने सदा मर्यादा का पालन किया था। आप लोगों को हमारे किसी भी महापुरुष भगवान या ऋषि की उनके जीवन की घटनाओं की सीख नहीं देते कि हमको उनके जैसा व्यवहार करना चाहिए। उनके जैसे गुणों को धारण करना चाहिए ,भगवान राम ने तो नहीं कहा की शिवलिंग लो बेलपत्र लाओ उस पर शहद लगाओ और चिपका दो और हमारी विजय हो जाएगी ।

Edit with WPS Office

लेकिन यह सब आपकी समझ में कहां से आएगी आप तो अपनी ही संस्कृति को नष्ट करने में तुले हुए हो ?

तीसरी बात____जिस समय सोमनाथ मंदिर लूटा गया, उस समय हमारे क्षत्रिय राजाओं ने शत्रु से लड़ने के लिए शस्त्र उठा लिए थे उठाएं ? तब भी आप लोगों ने इसी प्रकार का मंत्र बताया, आप लोगों ने आपके पौराणिक ब्राह्मणों ने आपके पूर्वजों ने उनको शस्त्र उठाने से रोका और कहा कि हमारे भगवान शिव इतने सक्षम इतने शक्तिशाली है की वह हमारी भी रक्षा करेंगे ,अपनी भी रक्षा करेंगे, और इन दुष्टों को दण्ड भी देंगे, बल्कि ऐसा कुछ नहीं हुआ इसके विपरीत हुआ ! और हम गुलाम हो गए, इज्जत लूटी गई, स्त्रियों का अपहरण किया कर लिया गया, तब भी तो आपका यही मंत्र था। इसलिए जनता को गुमराह करना छोड़ दो भ्रम में डालना छोड़ दो, सही मार्ग पर आओ सत्य को जानो।

आपने प्रदीप मिश्रा जी यह उपाय उस समय पर बताया यह उपाय उस समय पर बताया जब बच्चे हाई स्कूल इंटरमीडिएट में फैल होने की वजह से आत्महत्या कर रहे थे। तभी सरकार ने यह निर्णय लिया। अगर कोई भी बच्चा एग्जाम में कुछ भी लिखेगा वह पास होगा खासकर 10वीं 12वीं के लिए कहा था। और आपका उपाय भी उसी समय का है।

सोचने समझने वाली बात जरा बुद्धि से सोचो भोली भाली जनताओ इस बाबा ने दसवीं के लिए ही यह उपाय क्यों बताया ? चलो यह मान भी ले एग्जाम के लिए बोला हाई स्कूल का नाम नहीं लिया। तब भी यह बात सिद्ध नहीं होती गपोडो की बातें हैं।

जरा सोचो कोई व्यक्ति ग्रेजुएशन आईएएस आईपीएस बड़ी पोस्ट डिग्री के एग्जाम दे रहा हो और अगर उसने कहीं भी कोचिंग नहीं ली कहीं भी पुरुषार्थ नहीं किया पढ़ाई नहीं की क्या वह पास होगा क्या उसकी पोस्ट लगेगी ?

एक कवि ने लिखा है____की बाबा भक्तों के पैसे से मर्सिडीज़ जैसी गाड़ी खरीद लेता है, मौज मारता है, और भक्त बाबा के आशीर्वाद से एक साइकिल भी नहीं खरीद पाए। 😂😂😂😂😄😄

Edit with WPS Office

•चमत्कारों के आगे विवश धर्म__ धीरेंद्र शास्त्री__ का चमत्कार, दिव्य शक्ति या पाखंड।

- **(इस चमत्कार को हम दो श्रेणी में रखते हैं)**

पहली श्रेणी______

आजकल एक धीरेंद्र शास्त्री नाम का युवक बागेश्वर धाम है। मुझे बड़ा आश्चर्य है , कि ये कौन सा विषय है, जिस पर हम लिखे सारा समाज खड़ा हो गया। स्वामी रामदेव भी आ गए बीच में, क्योंकि स्वामी रामदेव आर्य समाजी होकर उनकी भावना विचलित हो उठी और वह इस चमत्कार पर विश्वास भी करने लगे। स्वामी रामदेव जी धीरेंद्र शास्त्री का समर्थन लेने से अनेकों आर्य समाजी विद्वान विचलित से हो गए।

ऐसा लगता है कि इन कथा वाचकों के पास ना तो कोई काम है, देश में क्या अच्छा हो रहा है, विदेश की मीडिया साइंस की खोजों को बहुत महत्व देता है, विदेश का व्यक्ति वैज्ञानिक प्रत्येक लोग साइंस को ही महत्व देता है। खोजो मैं रुचि रखता है। ब्रह्मांड के बारे में सृष्टि के बारे में कैसे बना ? लोकान्तर के बारे में , सूक्ष्म पदार्थों के बारे में विदेश के लोगों की जानने की जिज्ञासा रहती है, खोज करते रहते हैं, पाखंड जैसी चीज वहां कुछ नहीं, अंतरिक्ष पदार्थ की खोज करते रहते हैं। कि यह भूमि कैसे बनी, ऋषियों जैसी उनके अंदर क्षमता रहती है, खोंज में जानने में जिज्ञासा में व्यस्त रहते हैं ।

और यहां भारत के लोगों में चमत्कारों से दूसरा काम ही नहीं, चमत्कारों में सबसे ज्यादा हिंदू समाज पागल हो रहा है। तो इससे कुछ लोग अंधविश्वास निवारण के नाम पर एक अभियान चलाते हुए हिंदू , उनका अभियान हिंदुओं तक सीमित रहता है । श्याम मानव की उस समय कोई चर्चा कर रहा था, नागपुर में चैलेंज किया था धीरेंद्र कृष्ण शास्त्री को। पहले हम बताते हैं आपको श्याम मानव कौन है? **श्याम मानव महाराष्ट्र में andhashraddha nirmoolan समिति के मुखिया हैं। जिसको 1980 में नरेंद्र दामोदर द्वारा संस्थापक किया गया था ।** जैसे कि आप नाम से

Edit with WPS Office

समझ सकते हो इस संस्था का कार्य पाखंडवाद अंधविश्वास को खत्म करना है। लेकिन 28 अगस्त 2013 नरेंद्र की गोली मारकर हत्या कर दी जाती है। लेकिन इसके बाद 28 दिसंबर 2013 में इस काम को आगे ले जा रहे हैं श्याम मानव। और ये अपने आप को कट्टर सनातनी हिंदू कहते हैं ? यह बताते हैं हम अंधविश्वास पाखंड के खिलाफ हैं। दैनिक भास्कर रिपोर्ट बताती है कि श्याम मानव ने 200 से ज्यादा पाखंडी फर्जी बाबाओ को जेल में डाल चुके हैं । इनका सबसे पहला केस था शकुंतला देवी को लेकर, वह पाखंड फैलाती थी। उनका भंडाफोड़ किया। शकुंतला की भविष्यवाणी और चमत्कार सब बंद हुए। ? इसके बाद फौरन मिशनरी को लेकर इनका कैश था। यह बताते हैं की पांच मिशनरी नागपुर आए हुए थे। एक ऐसी सभा करते थे, जहां पर अंधे को दिखने लगता है, बहरे को सुनने लगता है। ऐसे चमत्कारों का दावा करते थे । ऐसे लोगों को श्याम मानव ने 1986 में जेल में डलवाया। श्याम मानव धीरेंद्र शास्त्री को चैलेंज करते हैं। **पहले चैलेंज होता है कि कमरे में 10 लोग हैं, उनका नाम, उनके पिता का नाम, उनकी उम्र, और उनका फोन नंबर बताओ। दूसरा चैलेंज रखा की एक बगल के कमरे में रखी 10 चीज के बारे में बताया जाए? श्याम मानव कहते हैं कि अगर धीरेंद्र शास्त्री बाबा ने सही 90% बताया तो मैं 30 लाख रुपए का इनाम दूंगा?** अगर बाबा यह चैलेंज जीत गया तो मैं अपनी संस्था छोड़ बाबा की शरण में आ जाऊंगा? यह चैलेंज जब बागेश्वर धाम धीरेंद्र शास्त्री के पास पहुंचा तो उन्होंने इस चैलेंज को स्वीकार नहीं किया और कहा कि हम अपनी कथा कर रहे हैं। चैलेंज स्वीकार नहीं किया? लेकिन बाबा के भक्ति कुछ हिंदुओं को इस चैलेंज से तकलीफ हो गई । और श्याम मानव का पुतला जलाकर शो निकाला गया? और श्याम मानव को मारने की धमकी दे दी गई कि जिस प्रकार नरेंद्र का हाल किया था, उसी प्रकार तुम्हारा हाल करेंगे। तो इसलिए श्याम मानव को सिक्योरिटी दे दी गई। फिर श्याम मानव की तरफ से धीरेंद्र शास्त्री को धमकी दी गई। धीरेंद्र शास्त्री के भाई के फोन पर कहा, तेरहवीं की तैयारी कर लो। श्याम मानव की तरफ से भी धमकी मिलने के बाद फिर भी धीरेंद्र शास्त्री ने चैलेंज स्वीकार नहीं किया। चैलेंज स्वीकार न करने के कारण अनेक लोगों का विश्वास हट गया । मुझे समझ नहीं आता सरकार इन बाबाओ पर एक्शन क्यों नहीं लेती?

Edit with WPS Office

अगर यह बाबा चमत्कारिक है, तो जो लोग बीमारी से गुजर रहे हैं तो इन बाबाओ के पास आना चाहिए उनको ! क्यों सरकार अस्पताल में पैसे खर्च कर रही है ?लेकिन ये सब होगा ही नहीं?? **जेम्स रेन्डी दुनिया का नंबर वन चमत्कारिक जादूगर था। धीरेंद्र शास्त्री की छोटी-मोटी ट्रिक कुछ भी नहीं है जेम्स रेन्डी के सामने।** बस फर्क इतना है जेम्स रेन्डी अपनी ट्रिक का इस्तेमाल करते थे लोगों को दिखाने के लिए। और धीरेंद्र शास्त्री अपनी ट्रिक का इस्तेमाल करते हैं लोगों का बेवकूफ बनाने के लिए। जेम्स रेन्डी ने एजुकेशन फाउंडेशन की स्थापना करी। लेकिन इन्होंने एक चैलेंज भी निकाला ? चैलेंज क्या था सिंपल सा चैलेंज था? दुनिया में कोई भी इंसान जेम्स रंडी को सबूत प्रूफ दिखा दे नेचुरल चीजों का मतलब भूतों का की भूत प्रेत जैसी कोई चीज है या नहीं ? **अगर जो इंसान भूत प्रेत दिखा देगा उसे एक करोड़ का इनाम मिल जाएगा, यह चैलेंज रखा जेम्स रेन्डी ने ,** लेकिन आज तक इस चैलेंज को कोई भी नहीं जीत पाया। कोई भी नहीं कर पाया?? हैरानी की बात यह है इसके बावजूद भी दुनिया भर में जेम्स रेन्डी से बहुत प्रभावित थे लोग ! और हमारे भारत में एक ऐसा बाबा भी देखने को मिलता है सोने की चैन निकाल देता है 😂😂?? कोई बाबा पानी का पेट्रोल बना देता है? और जब उस पेट्रोल को डालते हैं, तो पानी बन जाता है । तो इसका क्या फायदा हुआ ??😂😂। और बहुत से बाबाओं को क्राइम करते भी पाया गया ? । 2017 में हिंदू साधुओं की टॉप्स बॉडी है, अखिल भारतीय अखाड़ा परिषद उन्होंने 14 फेक बाबाओ की लिस्ट भी जारी कर दी है। इस परिषद के राष्ट्रपति ने यह भी कहा,,? कि लोग ऐसे पाखंडियों से चौकस रहे ? ऐसे पाखंडी लोग सच्चे साधुओं का नाम भी बदनाम करते हैं। इसमें कई बड़े नाम है , **आसाराम ,राधे मां ,निरमलं बाबा, राम रहीम गुरमीत सिंह, नारायण साईं, इसमें और बड़े नाम वाले बाबा हैं? जो क्राइम करते ही पकड़े गए। जलेबी बाबा, नित्यानंद, प्रेमानंद, चंद्र स्वामी, अमित चैतन्य, मिर्ची बाबा, ऐसे ऐसे पाखंडी बलात्कारी बाबा अनेक धर्मों में मिलेंगे ?? मुस्लिम फैंक फ्रॉड बाबाओ के भी नाम बताते हैं । शेख अब्दुल रहीम, अकमल राझा, हकीम बाबा, अकलम बाबा, इस बाबा ने तो एक औरत से कहा ,यदि आप अपने पति की बीमारी को ठीक करवाना चाहती है? तो अपनी बेटी को लाकर के मुझे सौंप दीजिए?** 😂 । ऐसे ऐसे पाखंडी

Edit with WPS Office

बाबाओं पर तो हंसी आती है?! 😂😂। ऐसा ही पाखंड ईसाइयों में है? ईसाइयों में एक बिजेंद्र सिंह है। जिसके 20 लाख से अधिक फॉलोअर हैं। बागेश्वर बाबा की तरह यह भी चमत्कारिक बाबा है। इन फर्जी ईसाइयों बाबाओ पर एक फिल्म भी बनाई गई है? Drance ! यह फिल्म का नाम है ? अब आते हैं बागेश्वर धाम की बात पर कि बात तो ठीक है चैलेंज होना चाहिए। श्याम मानव ने चैलेंज किया और बाबा उसको पूरा नहीं कर पाया। अंधविश्वास का खंडन करना चाहिए। मैं भी इस अंधविश्वास पाखंड का विरोधी हूं। लेकिन मैं इतना अवश्य कहना चाहता हूं, ऐसे लोग जो अंधविश्वास निवारण के लिए सक्रिय होते हैं, जैसे_ श्याममानव आदि जैसे लोग। लोग यह भूल जाते हैं कि चमत्कार तो सब जगह है, चमत्कार दिखा करके भी संत की उपाधि से भी घोषित किया जाता है।

दूसरी तरफ वहां देखो ईसाइयों में क्या-क्या नाटक होते हैं, जब तक चमत्कार नहीं दिखाएगा ? तब तक संत ही नहीं बनेगा। चमत्कार जरूरी है, बाइबल में चमत्कार भरा हुआ है, वहां लिखा है, ईशा ने एक मछली से कई लोगों ने भोजन कर लिया फिर भी रोटी बच गई, और ईशा ने पत्थर में बड़ा डंडा मारा पानी का झरना बह उठा। पानी का स्त्रोत चल पड़ा। यह भी तो चमत्कार ही है। इसलिए दूसरे धर्म में भी लोगों को भ्रम में डालने के चमत्कार है।

हिंदुओं में भी चमत्कार की बहुत लंबी कहानी है, हम लोग चमत्कारों पर विश्वास करते रहे, और विधर्मी लोग विदेशी आक्रांता लुटेरे हमारे मंदिरों को तोड़ते गए, तब कोई चमत्कार काम नहीं आया। धीरेंद्र कृष्ण शास्त्री जो हनुमान जी से शक्ति प्राप्त कर रहे हैं, उन हनुमान जी ने अयोध्या का मंदिर जब औरंगजेब ने तोड़ा और बाबर ने तोड़ा तो हनुमान जी नहीं आए। और कृष्ण भगवान का मंदिर मथुरा में तोड़ा तब भी कोई नहीं आया। काशी में विश्वनाथ मंदिर पर मस्जिद खड़ी कर दी। तब भी कोई चमत्कार नहीं आया। अब चमत्कारी बाबा इकट्ठे हो रहे हैं, सुनते हैं कि हमारे 3200 मंदिर तोड़े पता नहीं कितने होंगे, हमारे देश को लूट ले गए, तैमूर आया, औरंगजेब आया, बाबर आया, उनके सामने कोई नहीं आया गंदा लेकर हनुमान जी नहीं आए, कोई चमत्कार नहीं हुआ। अंग्रेजों आये , अंग्रेजों ने हमें मार कांटा , गोलियों से भूना और यातनाएं दी और लूट ले गए। हमारे देश के

Edit with WPS Office

लोगों को बंधक बना लिया। जब भी कोई चमत्कार दिखाने नहीं आया??। उस समय ऐसे चमत्कारी बाबा लोग कहां गए ? कहां लुप्त हो गए थे ?। किसी भी बाबा के पास हनुमान जी की शक्ति नहीं आई।? किसी के भी पास कोई देवी देवता नहीं आ रहे थे ?। जब सोमनाथ का मंदिर तोड़ा तो वहां के पुजारी युद्ध के लिए मना करते हैं। कि अभी शुभ मुहूर्त नहीं है। हमारे सोमनाथ जी अभी थोड़ी देर में वीरभद्र को भेजेंगे। इन सब का नाश कर देंगे। कोई वीरभद्र नहीं आया ?। कोई देवता नहीं आया। और सोमनाथ मंदिर तोड़ा और धन लेंगे। पुजारी को भी लेंगे, लेकिन इतना सब कुछ होने के बाद भी हिंदू जाति में चेतना नहीं आई,? फिर वही हो रहा है आज। जो वेद से प्यार नहीं करते, इस मूल ग्रंथ को मिटाना चाहते हैं, सनातन धर्म को मिटाना चाहते हैं। आज का हिंदू समाज जो कभी आर्य कहलाता था। आज का सनातन धर्मी चमत्कारों से ऊपर उठे ही नहीं, ऊपर उठ करके अगर ये विद्वान हो गए, सत्य असत्य का ज्ञान हो गया। तो इन्हें शत्रु मित्र का ठीक-ठाक मालूम हो गया तो तब यह हमारे षड्यंत्र को सफल नहीं होने देंगे। आज का मीडिया भी ऐसे ही लोगों को उठाता है चमत्कारों को नाटकबाजों को जादूगरों को। किसी ने सवाल किया था, शंकराचार्य अविमुक्तेश्वरान्द ने चैलेंज किया था, धीरेंद्र शास्त्री को? कि हमारी ज्योतिष मठ की जमीन नीचे धंस रही है। तो कहते हैं कि अगर यह चमत्कार है कोई सिधि है तो वहां की उस जमीन को ऊपर कर दे।

यह सब चमत्कार होता कैसे हैं यह सब मानसिक क्रिया होती है। और भी ऐसे बहुत सारे जादूगर है, जो ऐसा काम करते हैं आपने टीवी चैनलों पर भी देखा होगा एक लड़की थी कहती है मैं भी ऐसे कर सकती हूं ऐसे किसी भी व्यक्ति की बातों को जान सकती हूं उस लड़की का नाम है **सुहानी शाह**। वह भी धीरेंद्र शास्त्री की तरह ही करती है, कोई व्यक्ति दूसरे के विचारों को प्रभावित कर सकता है। दूसरे के मनं के विचारों को जान सकता है। यह मनोविज्ञान होता है। जो इसमें अभ्यास करेगा, और फिर कहते हैं, हनुमान जी ने ऐसे कर दिया हम पर शक्ति आ रही है ऐसे धीरेंद्र शास्त्री कहते हैं जबकि यह एक कला है सीखने की जादूगर दूसरों की बातों को जानने की। लेकिन धीरेंद्र शास्त्री को चमत्कार दिखाने के लिए हनुमान जी प्रकट हो रहे हैं। कितने आश्चर्य की बात है??। हनुमान जी पर यही काम था क्या ??

Edit with WPS Office

धीरेंद्र कृष्ण नाम का शास्त्री इस युवक को यह भी नहीं पता होगा हनुमान जी कौन थे ? हनुमान जी बहुत बड़े वैज्ञानिक थे, सूर्य तक की यात्रा करते थे, सूर्य की परिक्रमा करते थे, केवल लंका ही नहीं गए, **वाल्मीकि रामायण में लिखा** है हनुमान जी चारों वेदों के विद्वान थे, व्याकरण आदि शास्त्रों के विद्वान थे , तो हनुमान जी की प्रेरणा धीरेंद्र कृष्ण शास्त्री को हो रही है, तब तो वेदों को भी जानते होंगे। मैं एक वेद मंत्र देता हूं , इसका अर्थ करके समझा दे ? बताएं इस मंत्र में किसकी व्याख्या की गई है ?। क्या व्याख्या है मंत्र की ? अगर इसमें ये ज्ञान है धीरेंद्र शास्त्री में, हनुमान जी उन पर प्रकट होते हैं,? अगर हनुमान जी का आशीर्वाद उनके साथ है, तो फिर सारी सृष्टि को जानते होंगे? क्योंकि हनुमान जी से कोई भी विद्या छुपी नहीं थी ? हनुमान जी आकाश में जाते थे, सूर्य लोक पर चले जाते थे, सूर्य की चारों ओर परिक्रमा करते थे। तो हनुमान जी महान वैज्ञानिक थे, महान योगी थे, और महान बलवान थे।
अगर धीरेंद्र शास्त्री भी ऐसा है तो धीरेंद्र शास्त्री को पाकिस्तान बॉर्डर चीन बॉर्डर पर भेज देना चाहिए। क्योंकि जब धीरेंद्र शास्त्री पर हनुमान जी का आशीर्वाद है उनकी शक्ति है। तो ऐसी शक्ति का सामना तो ना तो चीन की सेना कर पाएगी? ना पाकिस्तान की सेना कर पाएगी? हमारे भारत के सैनिकों को बॉर्डर पर बेडिगेट और तारों से लहस देश की रक्षा करनी पड़ रही है। तो बॉर्डर पर हनुमान जी का भक्त धीरेंद्र शास्त्री आए, जहां बॉर्डर पर लड़ाई होती है, धीरेंद्र शास्त्री को भेज दे तो यह बाबा अपने आप संभाल लेगा। आपस में देश लड़ते हैं इन सब के बीच शांति लादें। लेकिन इन पाखंडियों को यह काम नहीं करना है। बस सामान्य पब्लिक को चमत्कार दिखाएंगे ? मेरे मन की बात बता दी इससे किसका भला हो गया ?? और किसका भला हुआ है ??। जो आज बड़े-बड़े बूचड़खाने चल रहे हैं। हत्याएं हो रही है, गायं कट रही है ,इन पर हनुमान जी को दया नहीं आती क्या ?? अगर हनुमान जी आज इस दुनिया में होते तो आज मेरा यह भारत इस प्रकार से नष्ट नहीं हो रहा होता ?? इस भारत में भ्रूण हत्याएं इस भारत में सारे पाप हो रहे हैं। इस भारत में गों मांस बेंचा जा रहा है ?। हनुमान जी के देश में ऐसे हो सकता है? अगर हनुमान की शक्ति आ रही है तो ? काश आज हनुमान जी होते तो उनकी गदां का सामना कोई अस्त्र नहीं कर पाता।

Edit with WPS Office

उनकी गदां ऐसी नहीं थी, कि सर फोड़ दिया। आज हनुमान जी का चित्र लगाकर के दुराचारी दिखाने वाली फिल्में देखी जा रही है। और कहते हैं हनुमान जी की पूजा हो रही है ? यह काम तो योगी ही कर सकता है धीरेंद्र शास्त्री का तो चेहरा देखकर लगता नहीं कि योगी है ?। धीरेंद्र शास्त्री बाबा का चमत्कार दरबार में ही चलता है ,अगर कहीं दूसरी जगह बाबा को बैठा दे वहां बाबा का चमत्कार नहीं चलता ?? इसलिए लोगों सच्चाई को जानो सच्चाई को पहचानो। आप किसी की भी बात मान लो पर लेकिन जो सच्चाई है उसको मानो ऐसा असत्य का समर्थन मत करो। सत्य की राह पर चलो। चमत्कारों की राह पर मत चलो, चमत्कारों की राह पर चलोगे तो यह देश यह समाज यह परिवार सब बिखर जाएगा। इस देश में बड़े-बड़े महापुरुष हुए बड़े-बड़े महाराज राजा हुए किसी ने भी अपने ग्रंथ में चमत्कार नाम की कोई बात नहीं कहीं ? किसी भी विद्वान ने या किसी भी महापुरुष ने चमत्कारों पर विश्वास नहीं किया। महाराणा प्रताप पृथ्वीराज चौहान वीर शिवाजी इन्होंने चमत्कारों से युद्ध कौशल नहीं सीखा इन्होंने रामायण महाभारत से प्रेरणा ली उनकी सीखा ? इन्होंने महापुरुषों के जीवन को,अपने जीवन चरित्र पर उतारा उनके गुणों को धारण करके उनके जैसा व्यवहार किया, ना कि चमत्कारों के राह पर चलकर। इनकी माताएं इनको रामायण महाभारत की कहानियां सुनाती थी, ना कि चमत्कारों के गुड्डू गुड़ियों की जैसी गप्पू कहानी , ये वीर रामायण महाभारत की आदि कथाओं को सुनकर बने, ना कि चमत्कारों को देखकर। इसलिए ,हे बंधुओ ! इस राष्ट्र को अपने परिवार को अपने जीवन को सफल बनाना है तो पुरुषार्थ करो पुरुषार्थ , चमत्कारों के पीछे मत भागो। जो जैसा व्यवहार करता है, वैसा ही बनता है। इसलिए अच्छा व्यवहार करो? अच्छी शिक्षा लो ! अच्छा ज्ञान दो और सत्य को जानो यही धर्म है।

दूसरी श्रेणी ______

इस श्रेणी में हम बताएंगे की बागेश्वर धाम के चमत्कार चाहे वह काल्पनिक हो, साइंस प्रैक्टिकल है, और इसके सिवा कुछ भी नहीं। ऐसा चमत्कार दिखाने से इस हिंदू समाज का क्या लाभ हुआ है? क्या लाभ है। बागेश्वर धाम धीरेंद्र शास्त्री जी ने चमत्कार क्या दिखाया सभी धर्म के धर्माचार्य

Edit with WPS Office

विद्वानों के पेट में मिर्ची सी लग गई। बागेश्वर धाम का तो एक छोटा सा ही चमत्कार है। तथा अन्य धर्म में देखें तो चमत्कार ही चमत्कार भरे पड़े हैं पाखंड भरा पड़ा है। धीरेंद्र शास्त्री से पहले भी चमत्कार अन्य धर्म में होते थे होते हैं और होते रहेंगे। लेकिन भारत की मीडिया ने कभी भी उन चमत्कारों उन पाखंडों को नहीं दिखाया? यह तो इन मीडिया वालों से ही पूछे इन्होंने अन्य धर्मो में जो हो रहा पाखंड उसको क्यों नहीं दिखाते । ? लेकिन एक चमत्कार धीरेंद्र शास्त्री जी ने दिखा दिया तो सबके मिर्ची सी ही लग गई। मीडिया का यह कारण तो हम नहीं बताएंगे कि उन्होंने धीरेंद्र शास्त्री का चमत्कार ही क्यों दिखाया ? क्यों इस बाबा की परीक्षा ली इस चमत्कार पर एक्सपीरियंस क्यों ?इस पर शोध क्यों ? जबकि अन्य धर्म में अधिक पाखंड हो रहा है, उन पर क्यों नहीं ? इस पर हम अपने विचार रखते हैं, इसका एक कारण यह है क्योंकि सनातनियों की विचारधारा अलग हो सकती है, हम आपस में एक दूसरे से सवाल उठा सकते हैं शोध कर सकते हैं, समझा सकते हैं? लेकिन अन्य पंथ्यों अन्य संप्रदायों में इस प्रकार की दया भावना एकता संभव नहीं है।
चमत्कार के माध्यम से धीरेंद्र शास्त्री के फॉलोअर अधिक है, हिंदू समाज तो उनके साथ है, लेकिन अन्य धर्म के लोग भी धीरेंद्र शास्त्री से प्रभावित होकर हिंदू धर्म में आ रहे हैं घर वापसी कर रहे हैं। अनेकों हजारों की संख्या में घर वापसी करवा चुके हैं धीरेंद्र शास्त्री, जिनका कोई नहीं है ऐसे अनाथ लड़कियों की शादी भी करवा चुके हैं। बड़े-बड़े काम धीरेंद्र शास्त्री कर रहे हैं। ऐसे कार्य कर रहे हैं जो इस हिंदूसमाज अनेक ऐसी लड़कियों जिनका इस दुनिया में कोई नहीं और विधवा लड़कियों औरत जिनको समाज अछूत मानता है ऐसे लोगों को एक सूत्र में बांधने का कार्य कर रहे हैं। लोगों को अपने सनातन समाज से जोड़ रहे। मुझे इनके ऐसे कार्य बहुत अच्छे लगते हैं। ऐसे ही कार्य करने चाहिए प्रयास करना चाहिए। इस सनातन समाज में हो रही सभी बुराइयां को जड़ से खत्म करना चाहिए। इस समाज में कुछ ऐसे पिछड़े लोग रहते हैं , ऐसे लोग हैं जिनको अपने महापुरुषों भगवान के चरित्र के बारे में कोई नहीं बताता, अपने धर्म के बारे में कोई नहीं बताता, कोई जानकारी नहीं होती। तो इस संकट को दूर करने के लिए धीरेंद्र शास्त्री ने एक पुस्तक भी रची जिसका नाम **सनातन धर्म क्या है।** इस पुस्तक का

Edit with WPS Office

नाम है। इस पुस्तक में इन्होंने विस्तृत जानकारी दी है अन्य संप्रदायों और सनातन की तुलना करके, अपने सनातन धर्म की पहचान की है, और सनातन धर्म को श्रेष्ठ बताया है।

लेकिन जहां इन्होंने इतने अच्छे कार्य इस समाज के लिए किए, वही एक दिन इनके दरबार में एक व्यक्ति आया जिसका नाम अली था। वह व्यक्ति बाबा से बोला मेरा नाम अली है, फिर बागेश्वर धाम ने इसके उत्तर में कह दिया हमारे पास बजरंगबली है। बस जैसे ही यह खबर बड़ी तेजी से फैली मुसलमानों के पास भी फैली, और सभी मुसलमान इकट्ठा होकर के सभी मौलवी एक हो गए, सभी मौलवी रिपोर्ट लिखवाने थाने पहुंचे। और बागेश्वर धाम के ऊपर केस दर्ज करवाया।

- हमारे बजरंगबली हनुमान वह महापुरुष भगवान है, जो सभी धर्मो संप्रदायों के भी महापुरुष है हनुमान जी अति पराक्रम , वेदों के विद्वान अधिक बुद्धिमान वाले थे।

अब मुसलमान अली को भी इसी प्रकार समझते थे, मुसलमान लोगों ने तो अली को अल्लाह की भी उपाधि दे दी। मौलवी लोग अली को हनुमान से ऊपर समझते हैं । मौलवियों का कहना है, बागेश्वर ने हमारे अली की हनुमान से तुलना क्यों करी, क्योंकि हमारे अली तो सर्वश्रेष्ठ है आपके हनुमान से भी ऊपर है। ऐसा मुसलमान मौलवी का कहना है। अब यहां से बात बिगड़ गई। मुसलमान ने हुंकार भी भर दी (सर जनं से जुदा)।
लेकिन जब ऐसे बोला , तो किसी भी सनातन धर्म आचार्यों की इसका उत्तर देने की हिम्मत नहीं हुई । किसी भी बागेश्वर धाम के भक्त की हिम्मत नहीं हुई कि उन्होंने हमारे बाबा के लिए ऐसे क्यों बोला। यह बात खबर बागेश्वर धाम पहुंची धीरेंद्र शास्त्री के पास तो मीडिया ने उनसे लाइव होकर पूछा, क्या आपने ऐसा ही बोला था मीडिया वालों ने पूछा। बागेश्वर धाम बोलते हैं मैंने ऐसा ही बोला लेकिन उस व्यक्ति का नाम अली था लेकिन इनके अल्लाह को नहीं कहा था। इतनी बात कह कर के धीरेंद्र शास्त्री कहते हैं अगर किसी को यह सुनकर दुख पहुंचा हो, तो मैं मुसलमानों से माफी मांगता हूं। और कहने का भाव यह है इस प्रकार बागेश्वर धाम ने माफी मांगी। बागेश्वर धाम का इस प्रकार माफी मांगना, सनातन के अनेक

Edit with WPS Office

आचार्यो को बुरा लगा, और हमको भी बुरा लगा। क्योंकि हमारे शास्त्रों में जो नीति थी उसका उल्लंघन हुआ। जब बागेश्वर धाम ने कह दिया कि उस व्यक्ति का नाम अली था, सच कहने के बाद भी बागेश्वर धाम ने माफी किस लिए मांगी क्यों मांगी ? अपने धर्म के लिए तो सर भी कट जाए तब भी हमको पीछे नहीं हटना चाहिए। अपने सत्य वचन के लिए तो बागेश्वर धाम को अन्य लोगों को जो सनातन धर्मी है सर कटा देना चाहिए। यही हमारे शास्त्रों की परंपरा है। और आपने शास्त्रों की परंपरा का बागेश्वर धाम ने उल्लंघन किया , जिसको दुनिया हनुमान का भक्त बताती है, वही ऐसे करें , माफी मांगे तो इस समाज का क्या होगा। अब इन सब बातों से यह पता चलता है बागेश्वर धाम को अभी अपने शास्त्रों का इतना ज्ञान नहीं है, अगर ज्ञान होता तो अपनी बातों से नहीं फिरते। अपनी बातों से डंटे रहते। अपनी बातों को वापस किस लिए ले लिया? क्या अपनी जान अपने धर्म अपनी संस्कृति से भी अधिक प्यारी है , अरे अपनी संस्कृति और अपने धर्म के लिए तो अपना बलिदान दे देना चाहिए। अगर किसी के पास भी इस प्रकार की समस्या ऐसा संकट आए तो अपने धर्म के खातिर शरीर का बलिदान भी दे देना चाहिए, बलिदान ऐसे नहीं की सर झुकाकर लो काट लो सिर ,ऐसे नहीं शास्त्र कहता है कि संकट के समय हमें ऐसे समय पर हमें अहंकार में होना चाहिए, अहंकार में बोलना चाहिए लड़ते हुए अपने धर्म की रक्षा करनी चाहिए, जिससे शत्रु के मन में भी भय डर बैठ जाए । जो अपने धर्म के खातिर और अपने राष्ट्र के खातिर दूसरे की जान बचाने के खातिर दूसरे को बचाने के लिए जो अपनी जान दे दे , समझ लो उसे मोक्ष हो गया, ऐसे समय पर धर्म के खातिर जान देने के समय पर यह समझो उसे अनेक जन्म नहीं लेने पड़े, इसी जन्म में मोक्ष हो गया और हो जाता है।

- अगर किसी के साथ अत्याचार हो रहा हो (हमारी आंखों के सामने किसी को मारा जा रहा हो) और हम खड़े देख रहे हो , हम उसे बचा नहीं रहे तो वह चाहे उसने पाप नहीं किए हो,, तब उस व्यक्ति को पाप लगता है, जिसके सामने हत्याएं हो रही है खड़ा देखता है । चाहे हम निर्मल हो या बलशाली हो हमें ऐसी स्थिति में दूसरे की मदद करनी चाहिए। सबसे बड़ा पुण्य होता है यह। रामायण में भी जटायु ने माता सीता को बचाने बचाते बचाते अपने प्राण न्योछावर भी कर दिए।

Edit with WPS Office

इसका हिसाब देना पड़ता है, जो व्यक्ति खड़े-खड़े देखता हो और शत्रु को रोकना नहीं। ऐसी अनेक घटनाएं है और एक घटना हम भी बताते हैं आपको याद दिलाने के लिए दिल्ली में 1 वर्ष पहले साक्षी नाम की लड़की की हत्या हुई और साहिल नाम के व्यक्ति ने की। सबकी आंखों के सामने वह घटना हुई लोग तमाशा देखते हुए उस लड़की को देखते हुए गुजर रहे थे, किसी की भी हिम्मत नहीं हुई कि उस दुष्ट नीच पापी अत्याचारी साहिल को रोक सके। जबकि गुजरने वालों की संख्या 50_ 60 से भी अधिक थी। वह लड़की को पिटता रहा पत्थर मारता रहा। लेकिन किसी ने भी उस लड़की को नहीं बचाया। (और सभी गुजरने वाले हिंदू ही थे) क्या यही परंपरा थी हमारे आचार्य की ऋषियों की भगवानों की, कि किसी के सामने हत्या हो रही हो और वह खड़ा देखता रहे। याद रखो हमेशा किसी के सामने हत्या करने वाला हत्या करने वाले से अधिक अपराधी है और इन सभी 50-60 लोगों को दंड मिलेगा। मुझे दुख है बहुत बड़ा दुख है सरकार ने भी अभी तक उस लड़की के साथ न्याय नहीं किया, उस साहिल उसके शरीर के 100 100 टुकड़े नहीं किए, ऐसे पापी के तो टुकड़े-टुकड़े होने चाहिए। (अगर उस समय साक्षी की जान बचाने में कोई व्यक्ति अपना बलिदान भी दे देता तो समझो जो हजारो जन्म में पुण्य करने के बाद भी मोक्ष नहीं मिलता तो समझो उसे उस समय मोक्ष मिल गया यह है अपना बलिदान करने का समर्पण।)

कुछ अन्य लोग यह आरोप लगाते हैं बागेश्वर धाम पर कि इन्होंने अपनी दुकान चलाने के लिए हिंदू राष्ट्र का नारा दिया जिससे लोग इनसे जुड़े रहे ।
हमारे विचार में यह भी कारण हो सकता है। आप पूछेंगे क्यों ? बताता हूं बागेश्वर धाम सरकार कहते हैं इस देश को हिंदू राष्ट्र बनाना है। लेकिन हमारे विचार में यह संभव नहीं क्यों संभव नहीं ?

किसी के कहने से हिंदू राष्ट्र नहीं हो सकता? हिंदू राष्ट्र तब तक नहीं हो सकता जब तक सभी हिंदुओं की विचारधारा एक ना हो जाए? मुस्लिम लोग तो इस राष्ट्र को मुस्लिम राष्ट्र तो बना सकते हैं ? लेकिन सनातनी लोग नहीं ? सनातन लोग क्यों नहीं ? सनातन लोग इसलिए नहीं आजादी के समय हिंदू अधिक संख्या में था बटवारा होने के पश्चात भी हिंदू राष्ट्र घोषित

Edit with WPS Office

नहीं हुआ ! क्यों? यह देश हिंदू राष्ट्र तब होगा जब हमारी सभी सनातनियों की विचारधारा एक होगी। देश को हिंदू राष्ट्र बनाना सबसे बड़ा ब्रह्मास्त्र है गुरुकुल शिक्षा प्रणाली। गुरुकुलो में विज्ञान के साथ आध्यात्मिक विज्ञान की भी शिक्षा मिलती है लोगों को अपने धर्म के बारे में जानकारी होती है धर्म परिवर्तन होने से रुकता है और सभी एकता के सूत्र में बंधे रहते हैं। इतने यह देशहिंदू राष्ट्र नहीं हो सकता जब तक रामपाल जैसे पाखंडी कबीरपंथी अपने आप को भगवान घोषित न करें। ये नीच तो अपने आप को भगवान बताता है। ऐसे लोगों ने अपने सनातन के धर्म ग्रंथ ही बदल दिए। लोगों के विचार ही बदलते जा रहे हैं। कबीरपंथी के लोग कभी भी राम का नाम नहीं ले सकते। ना ही कृष्ण का नाम ,ना ही हनुमान का ,ना ही शिव जी का बस कबीर कबीर रामपाल रामपाल कहते रहते हैं रामपाल दास के चेले। बताओ जब ऐसी विचारधारा रहेगी तो यह देश कैसे हिंदू राष्ट्र हो सकता है। अगर नाम बोलने से हिंदू राष्ट्र हो भी गया तो क्या लाभ होगा ? मुझे यह तो बताओ ?जब तक विचारधारा एक ही नहीं होगी तो एक हिंदू राष्ट्र कैसे घोषित हो सकता है ? अगर इस प्रकार से हिंदू राष्ट्र हो भी गया? तो क्या ऐसे लोग ऐसे पाखंडी लोग जो अपने आप को भगवान कहते हैं ईश्वर का अपमान करते हैं तो क्या यह सब छोड़ देंगे? लोगों के विचारधारा छूट जाएगी क्या? लोग एक सूत्र में आ जाएंगे ? नहीं ना बिल्कुल नहीं इसलिए पहले विचारधारा एक हो धर्म ग्रंथ एक हो कुछ लोगों को तो अपना धर्म ग्रंथ ही नहीं पता। **हमारा धर्म मूलग्रंथ है वेद । रामायण, महाभारत तो धार्मिक ग्रंथ है।**

ऊपर हम जिन बाबाओं का वर्णन कर आए हैं और जो बाबा रह गए हैं हम उनका और वर्णन नहीं कर सकते। हम इनका ज्ञान अपनी इस पीडीएफ में और नहीं लिख सकते। ज्ञानी पुरुष एक उदाहरण से ही समझ जाता है और हमने तो अनेकों उदाहरण दिए हैं। ? कि सत्य ज्ञान और असत्य अज्ञान मैं क्या अंतर है। हम इन बाबाओ का एक और उदाहरण देकर इनका खंडन करेंगे और अपना मंडन लिखेंगे।

- **पौराणिक सभी कथावाचक और कथावाचिका लोग कहते हैं, कि लड़कियों को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है? और गायत्री मंत्र का जाप**

Edit with WPS Office

करने का भी अधिकार नहीं है। ??

- **शास्त्र इस पर क्या कहते हैं देखो। ??**

समीक्षा______कहते हैं ये कथावाचक ! स्त्री का कभी भी यज्ञोपवीत संस्कार नहीं होता है। प्रिय बंधुओं ! कोई इन गुरु घंटालों से यह पूछे स्त्रियों को वेदों को पढ़ने का अधिकार क्यों नहीं है ?? और इनसे पूछे आप तो मूर्तियों को मानते हैं उनकी पूजा करते हैं , उन पत्थरों की मूर्तियों में भगवान को देखते हैं। तो फिर हमको यह बताओ जो बदायूं में मूर्तियां हैं ? उन मूर्तियों में स्त्रियों की मूर्तियों में जनेऊ कैसे हैं ? वे जनेऊ भी साधारण जनेऊ नहीं थे। आज की तरह। उन मूर्तियों में स्त्रियों ने नीचे तक जनेऊ धारण कर रखा है ? अगर इन बाबाओ से कोई यह प्रश्न पूछे ये कौन सी स्त्रियां (महिलाएं)थी ? जो जनेऊ धारण कर रही हैं ? ये वह लोग हैं जो कहते थे शूद्रों को भी वेद यज्ञोपवीत का अधिकार नहीं है? और आज स्त्रियों के लिए बोल रहे हैं ?? लेकिन आज हम आपको बताएंगे कि यह सारे दावे झूठे हैं ? ये बातें कुछ पाखंडियों के द्वारा ऐसी भ्रांति फैलाई गई है कि स्त्रियों को अधिकार ही नहीं है ? यह बातें हमारे शास्त्रों के विरुद्ध है ये पौराणिक बाबा पुराणों को मानते हैं? अतः हम इनके पुराणों से ही प्रमाण देंगे।

प्राचीन काल में पुरुष और स्त्रियां नृत्य प्रतिदिन गायत्री की उपासना किया करती थी? आज के समय यह सब नहीं होता आज के पौराणिक और जो बेरी गुरु हैं अपने धर्म के यह अपने चेले चेलियों को नए-नए मंत्र देते हैं। अपने ही बनाए हुए मंत्र को जपवांते हैं। **जैसे____** रामु रामाय नमः । अनेक बाबा इस मंत्र को जपवांते है ।? और स्त्रियों को इसी प्रकार के मंत्र देते हैं। कोई नमो नारायण कहता है। और कोई गुरु मे अपना ही नाम जोड़ देता है। ऐसे मंत्रों में एक मंत्र बहुत प्रसिद्ध है। वह मंत्र है **ओम नमो भगवते वासुदेवाय नमः।** इस मंत्र के संबंध में पहली बात तो यह , ये कोई मंत्र नहीं है ? कोई भी व्यक्ति इस मंत्र को किसी भी वेद में नहीं दिखा सकता मंत्र केवल वेद में है? और दर्शनों में सूत्र हैं। उपनिषदों में वचन है। और अन्यों में श्लोक है। भगवत गीता में भी भगवान श्री कृष्ण ने ऐसे मंत्रों का कहीं वर्णन नहीं किया ? **सिर्फ ओम जपने के लिए कहा,,?**

पुराणों में__ विष्णधर्मों ,प्रथम खंड 155/28 अर्थात द्वान्द द्वादश अक्षर का मंत्र भी स्त्री और शूद्रो के लिए है।

Edit with WPS Office

द्वादश अक्षर मतलब 12 अक्षर का ओम नमो भगवते भी 12 अक्षर का ही है। जब स्त्रियों को अधिकार नहीं दिया गया गायत्री का जाप करने का ? तो इस प्रकार का मंत्र बना दिया गया ओम नमो भगवते वासुदेवाय नमः। कोई भी पौराणिक अपने शिष्यों को गायत्री मंत्र जपने को नहीं बताता है।

गायत्री मंत्र जपने का आर्ष ग्रंथ अधिकार देते हैं। गायत्री जप का।

महाभारत में शल्य पर्व में एक वर्णन आता है एक तपस्विनी का इतिहास आया जो वेदों की पूर्ण पंडित थी। जो भारद्वाज की पुत्री सिधा थी। जो वेदों की पूर्ण पंडित थी ? इसका वर्णन आता है अनेको स्त्रियों का महाभारत में वर्णन है जो वेदों की पूर्ण पंडित थी। शिवा नाम की ब्राह्मणी वेदों में पारंगत थी। इसी प्रकार से गार्गी मैत्री सुलभा द्रोपती वयुना धरनी वेदवती आदि कितनी अनगिनत महिलाओं का इतिहास मिलता है। ऐसी देवियों को ब्रह्मा की उपाधि भी मिलती थी। जब चारों वेदों को पढ़ने का अधिकार स्त्रियों को पहले से ही है? तो केवल गायत्री मंत्र जो कि वेदों में से ही है और मां सरस्वती का किसी भी फोटो को दे देख लो चारों वेदों को हाथ में ले रखा है। ? और ये पंडडे पुजारी मना करते हैं ? ये लोग लड़कियों को उनके अधिकार से वंचित करते हैं।

जिन पुराणों की ये कथा करते हैं, उन पुराणों ने भी स्त्रियों को अधिकार दिया है ? इन पाखंडी लोगों ने पुराण भी ढंग से नहीं पढ़े। पढ़े होते तो ऐसी बातें नहीं करते। देखें____

भविष्य पुराण उत्तर पर्व अध्याय 4 , श्लोक 13

उत्तम आचरण वाली विधवा स्त्री वेद मंत्रों को ग्रहण करें और सधवा (जिसका पति जीवित है)स्त्री अपने पति की अनुमति से मंत्रों को ग्रहण करें।

वशिष्ठ स्मृति श्लोक संख्या 21.7 में लिखा है।

यदि स्त्री के मन में पति के प्रति दुर्भाव आए तो उसे पाप का पश्चाताप करने के लिए 108 बार गायत्री मंत्र का जाप करना चाहिए और मन से उसका पश्चाताप भी करना चाहिए?

भविष्य पुराण उत्तर पर्व 122/9 मैं

Edit with WPS Office

अर्थात अर्वेदिक मंत्रों का जाप करना निरंथक है। अर्थात जिनको आप मंत्र बताते हैं? वह मंत्र नहीं है पुराण भी वेदों के मंत्रों को जपने के लिए कह रहे हैं।

जैसे ___ आप लोगों ने मंत्र बना रखे हैं। जैसे__ओम रामानुजाचार्य। इस प्रकार के मंत्र गलत हैं।

•__________पाखंडी नितिन लखेरा

एक नितिन लखेरा नाम का व्यक्ति है युवा है। यह युवा अधिक मात्रा में पाखंड फैला रहा है ,अंधविश्वास फैला रहा है । सोशल मीडिया यूट्यूब चैनल एक ऐसे बेरोजगारों का रोजगार बन गया , जो स्त्रियों के वस्त्र पहनकर के देवी मां का वितरण रूप धारण करके लोगों को फसाता है, इस 23 साल के युवा ने लोगों को ऐसे भ्रम में डाला है जैसे__ छोटे बच्चों को चुप शांत करने के लिए हाउ हाउ कहकर डराया जाता है। इसी प्रकार यह बाबा आजकल ऐसे ही कर रहा है। जो लोग इसके पास आ रहे हैं वह भी एक अज्ञानी और मुर्ख है। इस नितिन नाम के युवा के ऊपर देवी मां प्रकट होती है, और हाथ में तलवार लेकर के डांस करती है। इस युवा ने पैसे कमाने का अच्छा नाटक किया है। हजारों पैसे के रूप में इसके पास दक्षिणा भी आती है। इस पाखंडी का विकराल रूप देखने के लिए। अधिक मात्रा में भीड़ जमा होती है। यह युवा डेली डांस करता है, डेली इस पर देवी प्रकट होती हैं। इस 23 साल के युवा के आगे 80 90 साल के बुजुर्ग भी चरण छूते हैं। यह है लोगों का उल्टा ज्ञान बड़े बुजुर्ग अपने से छोटे के पैर छू रहे हैं।

हे मेरे बंधुओ ! अल्प ज्ञान वाले हिंदुओं जरा बुद्धि से तो सोचो आपकी बुद्धि कभी ऋषियों का जैसा ज्ञान रखती थी और आज स्थिति ऐसी हो गई बच्चों जैसी। है बड़े बुजुर्ग लोगों दोष हमसे छोटे लोगों का नहीं। बल्कि आप लोगों का है, अगर आज आपके पास बुद्धि होती तो ऐसे अपने से छोटे लोगों का पैर कभी नहीं छूते।

दूसरी बात यह है अगर उस बालक के ऊपर देवी प्रकट हो रही है, तो

Edit with WPS Office

पाकिस्तान और चीन ने हमारी जमीन कब्जा रखी है , उसको क्यों नहीं छूड़ाती वापस क्यों नहीं करती यह शक्ति हमारी जमीन को हमारे राष्ट्र की जमीन को।? चलो यह कार्य भी छोड़ो देश के अंदर ही इतने अत्याचार हत्याएं भ्रूण हत्याएं आदि इतने महापाप हो रहे हैं दुर्घटनाएं हो रही है भूकंप आ रहे हैं तो यह दिव्य शक्ति अगर प्रकट हो रही है, तो ऐसे कार्यों को क्यों नहीं कर रही , क्यों नहीं रोक रही? क्यों हमारी रक्षा नहीं कर रही? इतनी दंगे होते हैं, क्यों नहीं रोकती। यह नितिन नाम का व्यक्ति अपनी दुकान चलाने के लिए पाखंड फैलाने के लिए लोगों को भ्रम में डालने के लिए लोगों का बहुत भूत भगाने के लिए तो काम आ रहा है, और दूसरी तरफ वह कार्य जिससे इस मानव का नहीं, इस राष्ट्र का नहीं, पूरे विश्व का कल्याण होगा उसकार्य को करती क्यों नहीं यह दिव्य शक्ति। लोगों को 5 मिनट डांस दिखा करके हाथों को पटक कर पैरों को पटक कर कहते हैं शक्ति आ रही है, यह कैसी शक्ति है इससे किसका भला हुआ? किसका भला होगा ? क्या हमारे ऋषि महर्षि ऐसे ही करते थे? हमारे भगवान श्री कृष्ण इतने विद्वान इतने योगीराज योगेश्वर थे, उनके जैसा ज्ञानी विद्वान कोई नहीं था, उससमय पर। लेकिन उन्होंने तो कभी अपने से बड़ों से अपने पैर नहीं छूने दिए। लोगों को अपने जाल में फंसने का यह सबसे बड़ा साधन है, 5 मिनट के लिए डासं करो, नाटक करो और लोगों का पागल बनाओ।
मेरी समझ में एक बात नहीं आती जरा सोचो अगर दिव्य शक्ति प्रकट होती , इस प्रकार तो आज इतने अस्पताल हॉस्पिटल बन रहे हैं। लोग बीमार हो रहे हैं इनको ठीक क्यों नहीं करती। यह तो मैं एक उदाहरण दिया है इस प्रकार कि अगर मान लो देवी प्रकट होती है। तो लोगों के दुखों को क्यों नहीं हरती। लेकिन ऐसी कोई देवी प्रकट नहीं होती यह सिर्फ नाटक है, नाटक है, । यह लड़का अपने कर्तव्य को छोड़ स्त्रियों के कपड़े पहनकर नचनिया बन गया। ब्राह्मणों ने अपना कार्य छोड़ दिया तब ही इस देश का पतन हुआ। लोगों को पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना छोड़ दिया। वेद का ज्ञान देना छोड़ दिया, उपदेश देना छोड़ दिया, तभी यह देश गुलाम हुआ। यह राष्ट्र ब्राह्मणों का अपना कर्तव्य भूल जाने के कारण गुलाम हुआ। क्षत्रियों ने अपना कार्य नहीं छोड़ा। वेश्याओं ने अपना कार्य नहीं छोड़ा। शूद्रो ने अपना कार्य नहीं छोड़ा। किसी ने अपना कार्य कर्तव्य छोड़ा है , तो वह ब्राह्मण है। और आज

Edit with WPS Office

के समय में भी ब्राह्मण ही पाखंड फैला रहा है। इसलिए पुराणों में भी कलयुग के ब्राह्मणों को सतयुग के राक्षस बताया है।
अधिक संख्या में ब्राह्मण ऐसे हैं, जो वेद विद्या अपना कार्य नहीं छोड़ रहे, कुछ ही ऐसे लोग हैं जो पाखंड फैला रहे हैं जैसे हम लिख आए हैं पहले।

•__________कोरोना देवी

जब कोरोना का कहर चारों ओर फैल रहा था, लोग अपने घर से बाहर नहीं निकल रहे थे, खाने पीने की सामग्री भी कम पड़ती जा रही थी। लॉकडाउन जैसे हालात हो गए थे और लॉकडाउन लगा भी। क्योंकि ये एक ऐसी बीमारी थी, जो लोगों के छूने बोलने आपस में बात करने से लगती थी। लेकिन आज इस बीमारी से राहत मिल रही है, यह बीमारी आज दूर होती जा रही है। हम बात उस समय की करेंगे, जिस समय इसका कहर जारी था, लोगों को अपने चपेट में ले रही थी। पूरे विश्व में फैल गई थी। लाखों करोड़ों की संख्या में लोगों की जाने गई थी। अब हम पूरे विश्व की बात न करके अपने देश की बात करेंगे, उस समय की बात करेंगे, जब भारत देश में अपने देश में इस बीमारी से लड़ने के लिए अलग-अलग शोध द्वारा मेडिकल दवाइयां बनाई जा रही थी अंग्रेजी दवाई आयुर्वेदिक दवाई बनाई जा रही थी शोध किया जा रहा था बीमारी की जड़ के लिए कौन सी दवा उचित रहेगी इस पर प्रतिदिन शोध किया जाता था। इसी समय पर दूसरी तरफ लोक अंधविश्वास को बढ़ावा दे रहे थे। अंधविश्वास की अनेक खबरें आई। फोन में से एक खबर उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ की है वहां पौराणिक पंडित लोगों ने ब्राह्मणों ने कोरोना से बचने के लिए अपने गांव को इस बीमारी से बचाने के लिए अंधविश्वास का सहारा ले रहे थे, उन्होंने एक ऐसी जड़ मूर्ति की प्रतिमा तैयार कर दी, उस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठा कर, उसको एक देवी का नाम दे दिया जिसका नाम कोरोना देवी रखा। दूर-दूर के लोग इस कोरोना देवी के दर्शन करने के लिए आते थे। प्रतिदिन तीनों समय इस देवी की आरती पूजा की जाती थी। जब इस देवी के बारे में प्रशासन को पता चली, की प्रतापगढ़ के कुछ अन्य लोग अंधविश्वास को बढ़ावा दे रहे हैं। तो प्रशासन ने उस पर

Edit with WPS Office

बुलडोजर चला दिया। और वह कोरोना के देवी नष्ट भ्रष्ट हो गई।
देखो भाइयों देखो कैसा पाखंड फैल रहा है, यह बस क्या ही कहे कितना लिखें हम। इस पर इस पाखंड को कितना लिखें हम।
लोगों की बुद्धियों ने सोचना छोड़ दिया, ईश्वर की उपासना की जगह हवन, यज्ञ की जगह जड़ जैसी मूर्तियों को खड़ा करके उस की पूजा तो कर रहे हैं। सच्चे ईश्वर अपने महापुरुष भगवान को बोलते जा रहे हैं।
किसी ने सही कहा था__ जिसकी जैसी बुद्धि, उसका वैसा ही व्यवहार। जिसका जैसा व्यवहार ,उसकु बुद्धि भी वैसी।
एक जगह तो कुत्तिया का भी मंदिर है। यह कुत्तिया शहीद हो गई थी। किसी युद्ध में। और लोगों के पाखंडवाद ने इनको भी देवी का नाम दे दिया, माता कुटिया देवी। 😂
एक तरफ महाभारत का सुघंनी जिसकी वजह से इतना बड़ा विशाल युद्ध हुआ लाखों लोग मरे हजारों स्त्रियां सती हुई, विधवा हुई। जिसकी वजह से इतना बड़ा महाभारत युद्ध हुआ कौरव पांडव आपस में लड़े। उनकी आपस में दुश्मनी कराई। और उस पापी पाखंडी दुष्ट नीच बलात्कारी क्या ही कहू । उसका भी मंदिर बना दिया इस पाखंडी समाज ने। इस सुंघनी मंदिर के पुजारी लोग कहते हैं, महाभारत के बाद महाभारत के युद्ध के बाद मामा सुहानी को पश्चाताप हुआ और वह यहां आकर तप करने लगे। अपने तप से शिवजी को प्रसन्न किया। और उसे वरदान भी दिया। तब से यहां मंदिर बना हुआ है, और यह पौराणिक लोग मंदिर का पुजारी कहते हैं यहां इच्छा पूरी भी होती है।

• { पाखंडी सूरजपाल जाटव /साकार हरि नारायण }

यह पाखंडी सूरजपाल जाटव बहुत बड़ा अज्ञानी पाखंडी है । अपने नाम के आगे साकार हरि नारायण जोड़ता है जो कि सरासर अपने आप को ईश्वर मानता है । ईश्वर का नाम रखकर अपनी दुकान चलाने वाला यह दुष्ट पहले यह युपी पुलिस में सिपाही की नौकरी करता था । एक दिन इसने एक महिला के साथ बलात्कार किया । जिससे इसकी नौकरी छूट गई । लेकिन

Edit with WPS Office

आगे इसने बाबा बनने का सोचा । लेकिन इसे लगा मुझे बड़ा रोजगार करना है, तो इस बाबा ने सोचा क्यों न मैं बाबा बन जाऊं । क्यों न मैं अपने आप को ईश्वर का अवतार बता दू । फिर मुझसे लोग जुड़ेंगे । क्योंकि इसे ऐसा इसलिए लगा इसने सोचा क्यों ना मैं भोले भाली जनता को अपने पास बुलाऊ । और अपने आप को ईश्वर का अवतार बता दू ? जैसा इसने सोचा ऐसा ही हुआ । यह सब ख्याल इसको 20 साल पहले आया था । जब यह सरकारी सिपाही की नौकरी करता था । (ऐसे ऐसे पाखंडी अपनी दुकान इसलिए चला रहे हैं लोग अपने शास्त्रों का अध्ययन नही करते) यह बाबा बड़ा ही पैसे वाला बन जाता है बड़ा ही चमत्कारिक बाबा बन जाता है । और जगह-जगह देश परदेश में अपने सत्संग करता है । इस बाबा ने सत्संग के द्वारा ही भक्तों की दक्षिणा के द्वारा ही अपनी बड़ी इमारत खड़ी की ,हालांकि यह बाबा सोशल मीडिया से दूर रहता था । ताकि किसी को इसका राज पता ना चले । जब इस बाबा की चारों ओर कीर्ति होने लगी । लोग इस बाबा के चमत्कारिक कार्यों पर विश्वास करने लगे । तो एक समय ऐसा आया जब यह बाबा 2 जुलाई को 2024 , यूपी के हाथरस में एक सत्संग रैली प्रवचन के दौरान दो लाख भक्तों की भीड़ जमा हुई । जब इस बाबा का प्रवचन समाप्त हुआ तब इस पाखंडी ने कहा कोई भी चरणों की धूल के बिना नहीं जाएगा । इसने कहा बाबा के चरण की रज लेकर जरूर जाए । जब मेरा सत्संग समाप्त हो जब मैं यहां से चला जाऊं तब , इसी पाखंडी की इसी गलती के कारण इसके चले जाने पर जो दो लाख की संख्या में भीड़ थी उसमें बुजुर्ग महिलाएं छोटे-छोटे बच्चे अपनी माता के साथ छोटे-छोटे बच्चे किसी का भाई किसी की बहन आदि सभी आए हुए थे । जो बाबा ने कहा था सभी मेरे पैरों की रज लेकर जरूर जाएं, अपने माथे से लगाए आपके सभी कष्ट दूर होंगे । भक्त लोग है ही पागल आंख के अंधे गांठ के पूरे बाबा के चरण लेने के लिए 2 लाख की भीड़ उमड़ पड़ी । दूसरी तरफ बाबा सत्संग से बाहर निकल रहे थे बाबा के सिपाही अपने बाबा को इस भीड़ से निकाल रहे थे । लेकिन जब बाबा के सिपाहीयों को लगा कि इस प्रकार तो हमारे बाबा को खतरा है, तो बाबा के सेवादारों ने सिपाहियों ने समरसेबल का फवारा बनाकर बाबा के भक्तों पर छिड़का ताकि यह पीछे हट जाए और बाबा को रास्ता दे दे । जो 2 लाख की भीड़ जमा थी बाबा ने

Edit with WPS Office

इस भीड़ की सुरक्षा के लिए अपनी सुरक्षा के लिए कोई भी प्रशासन से मदद नहीं मांगी । बाबा ने यह कहकर टाल दिया कि हमारे सेवादार ही काफी है । जिसका परिणाम यह हुआ भीड़ को काबू कंट्रोल करना भारी हो गया । क्योंकि बाबा पहले ही कह चुका था कि जब भी यहां से जाओं मेरे गुजरने के बाद मेरे चरणों की धूल जरूर लेकर जाना जरूर लगाना इसी की वजह से अफरा तफरी मची । बाबा के निकलने के बाद जब उसके भक्त चरण की रज लेने के लिए आगे बड़े और उधर से पानी डाला बाबा के सेवादारों ने लाठी चार्ज भी किया । चिकनी जमीन होने के कारण उस पर पानी पड़ने से लोग रिपटकर गिरने लगे महिलाएं बच्चे बुजुर्ग किसी की बहन किसी का भाई छोटे-छोटे बच्चे आदि । जिसका परिणाम यह हुआ 135 लोगों की मौत हो गई । किसी का भाई चला गया किसी की बहन चली गई किसी की मां चली गई किसी का पिता चला गया । किस कारण इस पाखंड वाद के कारण लोगों के अज्ञान के कारण अगर इन लोगों ने इन जनता वासियों ने अपने शास्त्र पढ़ें होते अच्छा ज्ञान लिया होता तो आज यह समय ना आया होता । हाथरस में इतना बड़ा हादसा न हुआ होता । सैकड़ो की संख्या में घायल भी हुए लोग । अनेक बाबा के सिपाही भी मरे । हमने सोशल मीडिया के माध्यम से न्यूज़ खबर के माध्यम से यह देखा बाबा ने अपनी छवि दूर-दूर तक फैलाई हुई थी । बाबा ने अपने मंत्र अपना श्लोक अपनी आरती सब लिखकर अपनी तस्वीर आदि सभी भक्तों में बताकर भक्त लोग न्यूज़ खबर के अनुसार लोग पूजा करते दिखे इस पाखंडी बाबा की । इसको ही ब्रह्मांड का स्वामी बताने लगे । 😅😂😅😃 बाबा के पास लाल हरे चश्मे भी है ,जिनसे बाबा बड़ी-बड़ी बीमारियां ठीक करता है । बाबा ऐसे करतूतो के लिए क्या ही बोले क्या ही करें । इसके भक्तगण भी उतने ही पागल उतने ही पाखंडी है जो यह ना जान सके कि जिसके पास हम जा रहे हैं वह सच्चा संत है या पाखंडी???????😂😅😃😂😄 ।
आप लोगों को पाखंडवाद से सचेत करना मेरा धर्म है और मैं अपने धर्म का पालन कर रहा हूं । सच्चाई को बताना सच्चाई से आप लोगों का मार्गदर्शन कराना मेरा कर्तव्य है और मैं अपने कर्तव्य का धर्म का पालन कर रहा हूं ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 28. ।। अट्ठाईसवां पृष्ठ ।।

• { रामपाल नहीं हरामपाल पाखंडी बोलों }

{ रामपाल का भंडाफोड़ }

आज हम ऐसे व्यक्ति के बारे में लिख रहे हैं जिसके अनुयायी उसको संत कहकर पुकारते हैं । लेकिन जब हम इस व्यक्ति के जीवन को देखते हैं, तो हमें इस व्यक्ति में कोई भी गुण कर्म स्वभाव और संतों जैसे गुण कर्म दिखाई नहीं देते । किस आधार पर हम इस रामपाल नहीं हरामपाल पाखंडी को संत कह सकते हैं ? जो व्यक्ति अपने नाम पर दास शब्द लगाता है । अपने सभी अनुयायियों को दास बनाकर के रखता है । हम बात कर रहे हैं इस पाखंडे रामपाल की , यह दिन प्रतिदिन ऋषि दयानंद और आर्य समाज पर झूठे आरोप लगाता रहता है । यह व्यक्ति वेदों के गलत अर्थ करके जनता के सामने प्रस्तुत करता है और जनता को भ्रमित करने का पुरा प्रयास करता है । आर्य समाज और दयानंद पर इस व्यक्ति ने अनेकों झूठे आरोप लगाए

Edit with WPS Office

नियोग अवस्था को लेकर के अक्षर ये ऋषि दयानंद के ऊपर यह भी और इसके अनुयायी भी आरोप लगाते रहते हैं और गंदी गंदी भाषा में सोशल मीडिया कमेंट्स में वो लोग कहते हैं । यह व्यक्ति ऋषि दयानंद पर यह भी आरोप लगाता है, की ऋषि दयानंद तो भांग पी करके वेदों के गलत अर्थ किया करते थे इसलिए उनके वेद का अर्थ सही नहीं है यह व्यक्ति ऋषि के जीवन में हुई घटनाओं के ऊपर ऋषि पर आरोप लगाया करता रहता है । आइए मैं इस व्यक्ति के जीवन की एक घटना जो की बिल्कुल झूठी घटना इस व्यक्ति ने एक पुस्तक में लिखी है इस पुस्तक के ऊपर थोड़ा सा प्रकाश डालते हैं । यह पाखंडी व्यक्ति अपने आप को संत बताने के लिए किस तरह गिर सकता है आईए जानते हैं एक उदाहरण से । **इसके द्वारा लिखी हुई एक पुस्तक में ज्ञान गंगा ।____ उदाहरण ____ ज्ञान गंगा पुस्तक इसके पृष्ठ 286, पेज नंबर 256 । यहां इसने लिखा है ___**

7 सितंबर 2011 को मेरा लड़का मोहित 12 साल का जो कि मेरे कहने पर मिस्त्री को बुलाने के लिए गया था मेरा लड़का ।

अब कोई इनके चेलों से पूछे 11000 वोल्ट से उस मोहित को तो बचा लिया। उस व्यक्ति को उड़कर के बचा लिया । किंतु अपने ही आश्रम में 220 वोल्ट से अपने चेले को रामपाल दास क्यों नहीं बचा पाए ? यह पूछने वाला कोई इनसे है ??

उदाहरण___ जिस प्रकार हाण्डी में पके हुए चावलों में से एक चावल को जांचने पर पता चलता है कि बाकी चावल पके है या कच्चे है ।

इसी प्रकार इस पुस्तक के एक उदाहरण को प्रस्तुत करने से आप सभी को यह समझ आ गया होगा कि इस ज्ञान गंगा नाम की पुस्तक में रामपाल दास ने कौन सा अज्ञान भरा हुआ है जिस अज्ञान के बल पर वह संपूर्ण समाज में धर्म और अध्यात्म को दूषित करते हुए जनता को भ्रमित करने का उत्सुक प्रयास कर रहा है । स्वामी दयानंद सरस्वती जैसे महापुरुष पर कीचड़ उछालने वाले मिथ्या आरोप लगाने वाले रामपाल दास के अनुयायी ऐसा समझते हैं, रामपाल दास का जीवन बड़ा उच्च कोटि का बड़ा पुण्यात्मक जीवन रहा है ऐसा नहीं है (जैसे उसके भक्त सोचते हैं) हमने जब इसके बारे में जानकारी प्राप्त की तो हमें रामपाल दास के बारे में कुछ इस प्रकार की चीज पता चली जिन चीजों को जानने के बाद कोई भी व्यक्ति इसे संत

Edit with WPS Office

महापुरुष तो क्या? इसे साधारण मनुष्य भी स्वीकार नहीं करेगा ? इस पर जब देशद्रोही हत्या के आरोप लगे थे तब इसने अपने ही देश के प्रशासन से सामना किया और लोगों पर गोलियां चलाई । जिसके कारण इसकी उम्र कैद हुई और जेल में सदा के लिए बंद है ।

रामपाल पाखंडी नियोग पर आरोप लगाता है । सबसे बड़ी शंका उनके हृदय में यह है **सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास** में लिखे स्वामी द्वारा नियोग व्यवस्था के बारे में है ।

मैं आपको बताना चाहता हूं स्वामी दयानंद सरस्वती ने न नियोग की व्यवस्था बनाई है और न सबके लिए नियोग की व्यवस्था की है ? स्वामी जी ने नियोग की व्यवस्था उन लोगों के लिए लिखी है? जिनका जीवन साथी मर गया है या छोड़ कर चला गया है और कोई अपने वंश को आगे बढ़ना चाहते हैं ? तो ऋषि ने वहां पर स्पष्ट लिखा है **जो द्विज है द्विजों में पुनर्विवाह नहीं होता।** ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य यह द्विज है कहलाते हैं । द्विजों में पुनर्विवाह निषेध है। पुनर्विवाह नहीं करेगा तो अपने वंश को आगे कैसे बढ़ाएगा ? तो उस आपातकाल की स्थिति में नियोग व्यवस्था दयानंद ने अपनी तरफ से नहीं कही ? उन्होंने तो केवल बताया है ! यदि आपके जीवन में इस प्रकार का आपातकाल समस्या हो आप इस व्यवस्था के द्वारा संतान की उत्पत्ति कर सकते हैं । तो ऋषि पर मिथ्या आरोप लगाने वाले आप जरा महाभारत को पढ़िए । आपको पता चलेगा धृतराष्ट्र पांडव विधुर यह नियोग से उत्पन्न हुए थे । पांचो पांडव नियोग से उत्पन्न हुए थे । **(आपातकालीन स्थिति के कारण)**

हरामपाल पाखंडी आप महाभारत की नियोग व्यवस्था के बारे में तो नहीं बोले ? ऋषि व्यास पर तो आपने झूठे आरोप नहीं लगाए? कि उन्होंने ऐसी बातें क्यों लिखी ? आपको ऋषि दयानंद से ही कैसे आपत्ति हैं ??

आज बहुत शहरों में ऐसे धंधा चलाने वाले नियोग की व्यवस्था है ? आज जगह जगह नियोग संस्था खुली हुई । इन पर तो आपने कभी नहीं कहा ? क्या समाज और कानून उन्हें स्वीकार नहीं करता कोई किसी का बच्चा गोद लेता है क्या वह उसे फेंक देता है । उसे स्वीकार नहीं करता समाज ?

आपने सबसे बड़ा पाप पाखंडी रामपाल आपने जो ऋषि दयानंद पर मिथ्या आरोप लगाए हैं यह सबसे बड़ा पाप है । इससे भी बड़ा पाप आपने यह

Edit with WPS Office

किया आपने जो वेदों की अर्थ के अनर्थ किये ? अपने मनमाने तरीके से किए। यह सबसे बड़ा महापाप है ?
आप क्या जानो ऋषि दयानंद के बारे में ऋषि ने तो वह कर दिखाया आप 1000 जन्म लेकर भी नहीं कर सकते ? और **ऋषि दयानंद ने अपनी 59 साल में बहुत बड़ा कार्य किया है। 19 साल की अवस्था में वो घर से निकले थे। और 31 साल की अवस्था में स्वामी विरजानंद मिले। और इसके बाद जो समय मिला 31 से 59 तक केवल 28 साल में कुरितियां को दूर किया। देश को आजाद किया। महिलाओं को पढ़ने का अधिकार दिया। महिलाओं और पुरुषों को वेद का ज्ञान दिया। सत्यार्थ प्रकाश जैसा ग्रंथ दिया। और सबसे बड़ा शोधं यह दिया ऋषि जी ने कहा सूर्य आदि लोकों में भी जीवन है। यहां भी जीव रहते हैं। और नासा के वैज्ञानिक विश्व के वैज्ञानिक आज तक स्वामी के इस वाक्य पर आज तक शोध कर रहे हैं।** अलग-अलग सैटेलाइट भेज रहे हैं अलग-अलग ग्रहों में इतना बड़ा शोधं ऋषि जी ने दिया।
क्या पाखंडी रामपाल आप विश्व को शोधं दे सकते हो ? आप शोध कहां से दे दोगे? शोध तो वही व्यक्ति दे सकता है वही संत दे सकता है जिसके पास बुद्धि हो आपके पास में तो न बुद्धि है और न ज्ञान है? आप एक नंबर के पाखंडी हो , अज्ञानी हो । आप तो यह शोध दे सकते हो कि मैं 11000 वोल्ट से मोहित को छुड़ाने आ गया और ढाई सौ वोल्ट वाली महिला को बचाने नहीं आया । मैं चमत्कारिक हूं यह शोध दे सकते हो आप पाखंडी रामपाल और लोग लोगों का उल्लू बनाता हूं भला इस पर वैज्ञानिक क्या शोध करेंगे ? ?😄😂😃😅😃😂😂 विचार करो सत्य को जानने प्रिय बंधुओ ! बचों इस नीच व्यक्ति से । अपनी जेब में प्रेग्नेंट किट रखने वाला पाखंडी भला क्या शोध देगा ????😂😂😅 । रामपाल पाखंडी एक नंबर का बलात्कारी देशद्रोही अज्ञानी ढोंगी महिलाबाज ।

- **रामपाल दूसरा आरोप यह लगाता है कि दयानंद भाग का नशा करते थे ? और भांग के नशे में उन्होंने वेदों के अर्थ किए ? आइए सच्चाई बताते हैं ।**

स्वामी दयानंद सरस्वती ने भांग पी स्वामी स्वयं इसको स्वीकार करते हैं ।

Edit with WPS Office

लेकिन कब भी यह भी तो जानों आइए बताते हैं ___
जब धूर्त व्यभिचारी लम्पट पाखंडी लोग लाल कपड़े पहनकर के घूम रहे थे । आपके जैसे लोग जो धर्म के नाम पर जनता को भ्रमित करते हैं अधर्म परोस रहे थे ? आध्यात्मिक के नाम पर अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए पब्लिक को अपना दास गुलाम करके रखे हुए थे । ऐसे लोगों के चंगुल में जब स्वामी दयानंद फंसे हुए थे जैसा उन्होंने बताया ऐसा करने से भगवान मिलेगा ऐसा ऐसा स्वामी ने किया **(स्वामी दयानंद उस समय सत्य की खोज के लिए निकले हुए थे, सच्चे शिव को जानने की मन में इच्छा थी, उस समय स्वामी ने वेद नहीं पढें थे , बिना समझे पढ़ें थे ?)** तो इस स्थिति में उन पाखंडियों ने जैसा बताया वैसा किया स्वामी ने । क्योंकि स्वामी दयानंद के मन में जिज्ञासा थी सच्चे शिव को जानने की ? क्योंकि परमात्मा को जानना चाहते थे, पाना चाहते थे । **(उस काल में भी जैसे रामपाल पाखंडी तू बना बैठा है उस समय भी लोग धर्म के ठेकेदार बने बैठे थे)** उन्होंने दयानंद सरस्वती को बताया । जैसे हम भांग पीते हैं , वैसे ही परमात्मा के दर्शन हो जाते हैं । सो तुम ऐसा करो । दयानंद सरस्वती अपने ग्रंथ में स्वयं इस बात को स्वीकार करते हैं और खुद इस बात को लिखते हैं । स्वामी जी लिखते हैं, हां ,मेरे अंदर यह दुर्गुण था लेकिन जब मैं सच्चे गुरु और सच्चे शिव की खोज की और सफल हुआ तब मैंने यह दुर्गुण निकाल के फेंका और सत्य को जानना चाहा । सत्य को जानने के बाद सच्चे गुरु गिरजानंद के मिलने के बाद यह दुर्गुण मैंने निकाल फेंका । **जैसे___ दूध में गिरी मक्खी को निकाल फेंकते हैं ?**
इस पृथ्वी पर ऐसा कौन सा व्यक्ति है जिसके जीवन में कोई दुर्गुण नहीं आता ??? अरे हरामपाल पाखंडी आपको पता भी है ? यह जो हमारा शरीर है यह प्रकृति से बना है । और प्रकृति तो तमोगुणी भी होती है । तो मैं आपको बताऊं तमोगुणी गुण के प्रभाव से जीवन में दुर्गुण आ जाते हैं । लेकिन मनुष्य उसको कहते हैं जो अपने दुर्गुणों को निकाल करके बाहर फेंकता है । और सतगुण धारण करता है । रामपाल दास जी स्वामी दयानंद सरस्वती ने स्वयंम स्वीकार किया । हां ! मेरे अंदर दुर्गुण आ गया था उस समय की स्थिति के कारण ।
पाखंडी रामपाल हमको यह बताओ । क्या आपके जीवन में कभी दुर्गुण

Edit with WPS Office

नहीं आए ? आपके जीवन में भी दुर्गुण आए आपने अपने शिष्यों के सामने कभी यह बात क्यों नहीं की हरामपाल पाखंडी ? आपने कभी नहीं कहा , कि मेरे जीवन में भी इस प्रकार के दुर्गुण आ रहे थे , मैंने उनको निकाल कर फेंक अपने जीवन को उन्नत बनाया **,महानता का लक्षण दयानंद जैसे लोगों में दिखाई देता है** आप जैसे पाखंडी लोगों में नहीं ? आपने शिव को भी भांगड़ बना दिया ? भांग पीने वाला बना दिया ? जिस शिव ने पिनाक, पाशुअस्त्र बनाया निर्माण किया । उस अग्नेद विधा के विद्वान योगीराज शिव को आप जैसे लोगों ने आरोप लगाकर भांग पीने वाला बताया है ।

- **आइए इस हरामपाल के करतूत दिखाते हैं कि किस प्रकार दारू के चसके लेता था ।___** 🤩🤣😂😁😄😃😀😅😂।।

बाबा रामपाल एक नंबर का पाखंडी धूर्त व्यक्ति है । इसके चेलें दिन रात कहते हैं संत साहिब ही पूर्ण परमात्मा है ।

आपको ऐसा प्रमाण दूंगा रामपाल और रामपाल का भाई महेंद्र दारू के चटकारे लेते थे । एक नंबर का नशेड़ी नशाबाज पाखंडी धूर्त व्यक्ति है । जो बाहर से अपने आप को हंस की तरह दिखाता है । जो अंदर से काला कौवा है😂😅 । आपको प्रमाण दिखाता हूं ?___

{ शैतान बण्या भगवान } ये पुस्तक है । लेखक संत कृष्ण दास जी महाराज गरीबदास डेरा संत साहिब सत्संग भवन ठाकुरपुरा धाम (कलाल्टी) जिला अम्बाला पिन कोड : 133203 (हरियाणा) [दूरभाष 01731– 289648 , मोबाइल. 94161883314]

यह पुस्तक कबीर पंथी द्वारा लिखी हुई है । अब आपके सामने बताते हैं वो इसी का चेला था, जो रामपाल की सेवा करता था , रामपाल के साथ रहता था । लगभग 5 साल तक रामपाल के साथ रहने वाले व्यक्ति संतकृष्णदास जी महाराज ने यह पुस्तक लिखी है । इसके पेज नंबर 4 पर लिखा है___

कि परंतु इस पुस्तक का निकालना (भक्ति और भगवान) रामपालकी इस पुस्तक का आपने एक कहावत सुनी होगी , मुंह मियां मिठु वाली कहावत है । रामपाल का जीवन चरित्र जो इस पुस्तक के भूमिका वाले पृष्ठ पर दिया है , सफेद झूठ लिखने वाला कोई दूसरा नहीं उसका अपना छोटा सगा भाई भक्त महेंद्र दास (धनाना) ही है । अपने पुत्र आप ही बांध रहे हैं, सत्संगी भक्तजन और उनके साथ रहने वाले साथी रिश्तेदार अभी जिंदा है ।

Edit with WPS Office

जो यह जानते हैं कि स्वयं महेंद्र और रामपाल दोनों इकट्ठे बैठकर शराब पीते थे । स्वयं मेरे सामने भी महेंद्र ने शब्द उच्चारण किया कि हमें तो ज्ञान नहीं था , पहले अज्ञानी में समय बर्बाद कर दिया । हम दोनों भाई इकट्ठे बैठकर दारू पीते थे । एक भक्त ने बताया कि जब मैं रामपाल को संत रामस्वरूप विवेकानंद जी के पास लेकर गया तो उस समय शराब पी रखी थी ।

दोस्तों इस उदाहरण से समझ सकते हो रामपाल और उसका भाई महेंद्र कितने दारु बाज थे ।

सोशल मीडिया पर अनेक फोटो है जिसमें रामपाल हनुमान जी की आरती उतारता दिख पड़ता है । लोग कहते हैं रामपाल पहले हनुमान जी का भक्त था । लेकिन इसने अपना बिजनेस चलाने के लिए हनुमान को भुला दिया भक्ति को भुला दिया । अपने भक्तों के सामने अपना कोई दोष नहीं बताया । दारु पीने का दोष । और पाखंडी कहता है कि मैंने लोगों की दारू छुड़ा दी ।

इसके लिए मैं आपको समझाऊं महात्मा गांधी को तो सभी जानते हैं हमारे देश के राष्ट्रपिता है । जो स्वयं अहिंसा की मूर्ति है लेकिन अहिंसा होने के बावजूद महात्मा गांधी के कारण इतनी मार कांटे हुई । लाखों लोग बलिदान हुए । तो फिर काहे का अहिंसा का पुजारी महात्मा गांधी ? इसी प्रकार यह हरामपाल पाखंडी है ।

अब मैं आपको बताता हूं नियोग के कुछ प्रमाण दिखाता हूं । जिसके अनुसार महर्षि ने सत्यार्थ प्रकाश में नियोग के विषय में कहा आपातकालीन स्थिति के लिए कहा गया ___

ऋग्वेद. 10/85/45

ऋग्वेद. 10/40/2

मनुस्मृति___ से प्रमाण____

मनुस्मृति . 9/60 ,9/61 ,9/62 , 9/63 , 9/69 ,9/176 ,9/76 , 9/81 , 9/103 , 9/56 , इन सभी के नौवें अध्याय और श्लोक संख्या इतने में , नियोग की व्यवस्था है आपातकालीन स्थिति के अनुसार ।।

महाभारत____ से प्रमाण ____

आदिपर्व अध्याय __ 119 , श्लोक संख्या. 36,37

Edit with WPS Office

आदिपर्व अध्याय__ 104 , श्लोक संख्या. 2
आदिपर्व अध्याय__ 113 , श्लोक संख्या. 16
आदिपर्व अध्याय__ 105 , श्लोक संख्या. 5 ,6
नारद स्मृति__ अध्याय 12 , श्लोक संख्या. 101
नारद स्मृति__ अध्याय 12 , श्लोक संख्या. 87,97
वशिष्ठ स्मृति__ अध्याय 17 , श्लोक संख्या 5
भागवत पुराण__ 9 वा स्कंद ,6 अध्याय , श्लोक .2
गरुड़ पुराण__ आचारकाडं के अध्याय 72 में ।

हे प्रिय बंधुओ ! अब आप देख सकते हो कि नियोग के बारे में महर्षि दयानंद ने शास्त्रों के अनुसार सत्यार्थ प्रकाश में लिखा था ना कि अपने पास से । नियोग की व्यवस्था सबके लिए नहीं है आपातकालीन स्थिति के अनुसार है। जब पुरुष और स्त्री (पति पत्नी , शारीरिक कमजोरी कमी के अनुसार संतान उत्पत्ति में असफल रहना) जब दोनों की इच्छा हो , तब ही नियोग हो सकता है । अथवा नहीं ? किसी से जबरदस्ती नहीं यह शास्त्रों के विरुद्ध है ग्रंथों में कहा गया है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 29. ।। उन्नतीसवां पृष्ठ ।।

• { रामभद्राचार्य जी के झूठे आरोप }

मैं रामभद्राचार्य जी से यह निवेदन करता हूं । जैसे आपने वीडियो के माध्यम से ऋषि दयानंद पर झूठे आरोप लगाए थे ? सत्यार्थ प्रकाश को लेकर के सामान्य जनमानस में जो आपने भ्रांति उत्पन्न की है वह अति निंदनीय है ।

Edit with WPS Office

जिस वीडियो में आपने ऋषि पर झूठे आरोप लगाए थे । इस प्रकार अगली वीडियो में इस वीडियो की बातों पर गलती मान कर चैनल पर डालकर अपने चैनल पर उसमें यह स्वीकार करें आपने जो बोला है वह मिथ्या भाषण था और ऐसा करने से आपकी छवि धूमिल नहीं होगी ? अपितु आपको जो जगतगुरु की उपाधि प्राप्त है । उसमें दृढ़ता आएगी, क्योंकि जिस ऋषि पर आपने दोषरोपण लगाया है । यदि आपने उनके जीवन को पढ़ा होता उनके चरित्र को पढ़ा होता तो आपको पता चलता कि ऋषि कितने सरल व्यक्ति थे । आपने एक वाक्य तो जरुर सुना होगा — **विधा ददाति विनयम,** । महाभारत के पश्चात इस पंक्ति को यदि किसी ने चरितार्थ किया है ,तो वह थे ऋषि दयानंद सरस्वती और शायद आप नहीं जानते कि ऋषि दयानंद जी अपने पूर्व कालीन ऋषियों का महर्षियों का कितना सम्मान किया करते थे । ऋषि ने कहा, कि ब्रह्मा से लेकर के जैमिनी पर्यंत जितने भी ऋषियों की श्रृंखला रही है यदि उसकाल में ऋषि दयानंद का जन्म होता तो ऋषि दयानंद उनके चरणों में बैठने का अधिकारी भी नहीं होते । पूर्व के ऋषियों का सम्मान ऋषि दयानंद करते थे । और एक तरफ आप है रामभद्राचार्य जी ? जो ऋषि दयानंद का अपमान सार्वजनिक रूप से कर रहे हैं । जबकि आप जानते हैं कि ऋषि दयानंद कितने बड़े विद्वान थे , कितने बड़े दार्शनिक थे, कितने बड़े समाज सुधारक थे, इन सभी बातों को जानते हुए भी आपने अपमान तो किया ? परंतु अपनी भूल को स्वीकार भी नहीं किया ? और यदि आप ऋषि दयानंद की विद्वत्ता को देखना चाहते हैं ? और विद्वत्ता के साथ उनकी सरलता को देखना चाहते हो ? तो कहते हैं – एक बार कुछ विरोधी ऋषि के पास शास्त्रार्थ करने के लिए आए उन्होंने ऋषि से प्रश्न पूछा ? कि ऋषि दयानंद आप विद्वान है या अविद्वान है ? (ये भी एक षड्यंत्र था) वह सोच रहे थे कि यदि दयानंद ने कहा (अपने आप को) कि मैं विद्वान हूं तो वो कहेंगे (प्रश्न करने वाले) तुम तो अहंकारी हो ? अहंकारियों से हम क्या ही शास्त्रार्थ करें ? और यदि ऋषि दयानंद कहेंगे कि मैं अविद्वान हूं, ? तो वह कहेंगे? जब तुम कुछ जानते ही नहीं हो तो हम तुमसे शास्त्रार्थ कैसे करें ? (स्वामी जी उनकी चाल को समझ चुके थे) लेकिन ऋषि दयानंद ने उत्तर दिया ? कि जिन विषयों को मैं जानता हूं उनमें मैं विद्वान हूं , और जिन विषयों की मुझे

Edit with WPS Office

जानकारी नहीं है उनमें मैं अविद्वान हूं । ऋषि का उत्तर सुनकर के विरोधी चुपचाप खड़े के खड़े रह गए ।
लेकिन आपको तो लगता है रामभद्राचार्य जी कि आप सब कुछ जानते हैं इसलिए आपका तेजपन दिखाई दे रहा है ? और आप तो श्री राम कथा कर रहे हैं । क्या आपने श्री राम कथा में रामायण में यह प्रसंग नहीं पढ़ा कि महाराज दशरथ जब ऋषि वशिष्ठ के पास जाकर के बोलते हैं । हे महर्षि तीन विवाह करने के पश्चात भी संतान की प्राप्ति नहीं हुई तो मुझे क्या करना चाहिए ? महर्षि वशिष्ठ कहते हैं , महाराज आपको पुत्रेष्टि यज्ञ करवाना चाहिए । तो महाराज दशरथ कहते हैं तो हे ऋषिवर ! कर दीजिए पुत्रेष्टि यज्ञ तो इस पर महर्षि वशिष्ठ बड़ी शालीनता के साथ कहते हैं कि महाराज दशरथ मैं इस विषय का विद्वान नहीं हूं । अगर आपको पुत्रेष्टि यज्ञ करवाना है तो श्रृंगी ऋषि को बुलवाना पड़ेगा । तो इस बात से हमें पता चलता है कि हमारे ऋषियों में कितनी सरलता थी । जिस विषय को वो नहीं जानते थे उसे सहजता से स्वीकार कर लेते थे ।
और एक आप है रामभद्राचार्य जी ! आप तो सन्यासी हैं तो फिर आप यह क्यों नहीं मान लेते कि आप सत्यार्थ प्रकाश में ऋषि दयानंद को नहीं जानते थे । क्यों नहीं स्वीकार करते कि आपने सत्यार्थ प्रकाश को और सभी ग्रंथों को सही से नहीं पढ़ा ? या अच्छे से नहीं सुना ? याद रखना सत्यार्थ प्रकाश को पढ़ना और समझना साधारण बुद्धि वालों के बस की बात नहीं है । यह भी हो सकता है जिस व्यक्ति ने आपको सत्यार्थ प्रकाश सुनाया हो वह इतना ही समझ पाया हो ? परंतु आप तो विद्वान है आपको तो कोशिश करनी चाहिए थी जानने की ? क्या महर्षि स्वामी दयानंद जैसे विद्वान जो ऋषि की उपाधि को प्राप्त किए हुए हैं वह इन आर्ष ग्रन्थों का खंडन कर सकता है ? (यह सोचना चाहिए था आपको) आपने गुरुदत्त विद्यार्थी का नाम तो सुना होगा जो की वैज्ञानिक बुद्धि का व्यक्ति था । विद्वानों के मताअनुसार पढ़ने और सुनने को मिलता कि पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी जैसा व्यक्ति कहता है मैंने सत्यार्थ प्रकाश को अनेकों बार पढ़ा है । और जितनी बार भी मैंने इस ग्रंथ को पढ़ा उतनी ही बार मुझे इसमे नयापन दिखाई दिया है । तो फिर आप अपनी गलती स्वीकार क्यों नहीं कर पा रहे हो ? आपको ऐसा क्यों लगता है कि आप गलत नहीं हो सकते ? अगर आपको लगता है

Edit with WPS Office

कि आप सही हैं तो आप अपना पक्ष रखें ? आप शास्त्रार्थ की चुनौती स्वीकार क्यों नहीं करते हो ? जो की आर्यविद्वानों के माध्यम से दी गई है । उसको स्वीकार कीजिए । यह सिद्ध कीजिए कि यहां पर ऋषि दयानंद ने रामायण महाभारत को कल्पित कहा पर कहा ? हम ऋषि दयानंद के ग्रंथों से प्रमाण दिखाते हैं । हम प्रमाण आगे दिखाएंगे ।

मैं आपको बता दूं रामभद्राचार्य एक प्रसिद्ध कथा वाचक है । उनके शिष्य उनको जगतगुरु के नाम से संबोधित करते हैं । हम तो उनको जगतगुरु नहीं समझते क्योंकि उनके बयानों के अनुसार । संन्यासी होने के बावजूद भी झूठ बोला । महर्षि दयानंद सरस्वती पर एक निर्दनीय टिप्पणी की गई । उन्होंने अपनी व्यासपीठ से बोला कि स्वामी दयानंद सरस्वती से बड़ी भूल हुई और स्वामी दयानंद ने रामायण महाभारत को कल्पित कहा और स्वामी दयानंद ने कहा वेदों में रामायण महाभारत का उल्लेख प्राप्त नहीं है (ऐसा रामभद्राचार्य ने आरोप लगाया) चलिए देखते हैं यह बात कहां तक सही है कहां तक झूठ है । हे महानुभाव रामभद्राचार्य जी मैं आपसे पूछना चाहता हूं ? कि वेद प्राचीन है या रामायण महाभारत ? रामायण काल तो लाखों वर्ष का है । लेकिन वेद तो अपौरुषेय है । वेद का ज्ञान तो जब परमपिता परमात्मा ने सृष्टि का सृजन किया उस समय वेद का ज्ञान दिया । तो भगवान राम की चर्चा वेद में कैसे हो सकती है ? और आप केवल राम शब्द को देखकर के वेद में इतिहास ढूंढने का प्रयास करेंगे तो तब तो बहुत सारे शब्द वेद में ऐसे आ गए जो अलग-अलग परंपराओं को मानने वाले लोग भी अपने-अपने महापुरुषों के बारे में धारणाएं रखकर के प्राप्त कर सकते हैं । मैं आपको एक उदाहरण देता हूं यजुर्वेद के 40 वे अध्याय का मंत्र है यहां पर लिखा है ईशा वास्य ____ इस मंत्र को लेकर के ईसा मसीह को मानने वाले लोग भी कहते हैं वेद में ईसा मसीह का वर्णन है । मुस्लिम लोग भी मदीना शब्द को कहते हैं वेद में मदीना का वर्णन है । ऐसे ही कबीर को मानने वाले लोग भी कहते हैं वेद के कवि नाम को कि कबीर परमात्मा का नाम है । रामभद्राचार्य जी आप भी ऐसा ही कर रहे हो वेदों के साथ खींचातानी ना करे इस खींचातानी की वजह से इस भूमंडल का बड़ा ही पतन हुआ है । वेदों की गलत अर्थों के कारण ही अनेक धर्म मजहब संप्रदाय बने । आप जैसे लोगों के कपोल कल्पित अर्थो से ही तो वेद की

Edit with WPS Office

निंदा समाज में हुई है । विदेशी लोग तो वेदों को गडरियो की पुस्तक कहा करते थे । तब आप लोग कहां सोए हुए थे ? महर्षि दयानंद सरस्वती ने आकर के वेदों का सही अर्थ समाज में प्रस्तुत किया । और उत्तम भाष्य करके बता दिया कि वेदों का किस प्रकार भाष्य किया जाता है । दुनिया में वैज्ञानिक लोग ऋषि दयानंद का वेद भाष्य सर्वोत्तम बताते हैं । मैं तो यह कहना चाहता हूं आपने जो मिथ्या आरोप महर्षि दयानंद पर लगाया है । यदि ऋषि की रामायण महाभारत को कल्पित मानते हैं । यह ऐसे झूठे शब्द आपने कहां से पढ़ें ?? आपको चैलेंज देना चाहता हूं ,आप सिद्ध करें । आप अपने को धर्मगुरु मानते हैं । आजआपके करोड़ों फॉलोअर हैं यदि आप समाज को गलत मैसेज देंगे तो समाज में कितना बुरा प्रभाव पड़ेगा आप तो आर्य समय से लोगों को काटने का काम कर रहे हो ? बल्कि आपको इस समय यह समझना चाहिए था कि आज के इस समय की स्थिति को देखकर अगर समाज की रक्षा कर सकते हैं तो हम सब की विचारधारा दृढ होनी चाहिए ।

आर्य समाज के लोगों ने तो इतना ही करा है हमारे सभी ग्रंथों में जो मिलावट हुई है जो गलत बातें डाली है उन्ही का आर्य समाज ने खंडन किया है।

महर्षि दयानंद सरस्वती जी सनातनर्वेदिक धर्म के ग्रंथों का खंडन नहीं किया उनका सही मंडन किया है ।

रामभद्राचार्य जी जानबूझकर के आर्य समाज को हिंदू समाज से अलग करना चाहते हो आप ??

विदेशी मुसलमान और भारत के मुसलमान भी इस बात को अच्छी तरीके से जानते हैं । कि अगर हिंदू समाज आर्य समाज के संपर्क में रहेगा तो हम हिंदुओं का बाल बांका नहीं कर पाएंगे । फिर देश में गजवा हिंद नहीं हो सकता । इस देश में ईसाइयों का प्रचार नहीं हो सकता । स्वामी दयानंद सरस्वती के तर्कों का जवाब उनके पास में नहीं है । आजकल के म***** मौलवी पादरी में सभी में भगदडबची हुई है । ऋषि दयानंद के तर्को के सामने सभी धराशायी हो जाते हैं । स्वामी दयानंद सरस्वती एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं कुरान बाइबल की पोल खोली है । इनके विद्वानों से शास्त्रार्थ किए हैं । इन अधर्मियों का यह प्लान रहता है कि आर्य समाज को हिंदू समाज से

Edit with WPS Office

अलग किया जाए । हिंदू समाज से आर्य समाज तब ही अलग हो सकता है जब कोई झूठे आरोप लगाए झूठा प्रचार करें । रामभद्राचार्य जी क्या आपने पंडित मदन मोहन मालवीय को नहीं पढ़ा ? **उन्होंने क्या बोला वो कहते हैं___ आर्य समाज दौड़ता है तो हिंदू समाज चलता है । आर्य समाज चलता है तो हिंदू बैठ जाता है । आर्य समाज बैठ जाएगा तो हिंदू समाज सो जाएगा । और जिस दिन आर्य समाज सो गया उस दिन हिंदू समाप्त हो जाएगा । आर्य तो हिंदू समाज की छावनी है । राम और कृष्ण हमारी दो आंखें हैं । अगर हम राम और कृष्ण को नहीं मानेंगे तो क्या मोहम्मद और ईसा मसीह को मानेंगे ?**

यह जो ऋषि पर आपने झूठा बयान दिया है इसकी मैं घोर निंदा करता हूं । आपके इस प्रकार कहने के पीछे के षड्यंत्र को नहीं समझ पा रहा हूं । कि आप एक संन्यासी होकर झूठ कैसे बोल गए ? मैं आपको बताना चाहता हूं । जब जब भी विधर्मी लोगों ने राम और कृष्ण पर गंदे गंदे आरोप लगाए तब -तब आर्य समाज मैदान में आया है । विधर्मी लोगों ने 1920 ईस्वी में एक पुस्तक लिखी थी जिसका नाम था कृष्ण तेरी गीत जलानी पड़ेगी । उस समय इस पुस्तक का उत्तर देने की आप जैसे कथावाचकों की हिम्मत नहीं पड़ी ? तब आर्य समाज के विद्वान पंडित चंपू पति एम ऐ योगेश्वर कृष्ण पुस्तक लिखकर ईट का जवाब पत्थर से दिया । और मुसलमानो के मोहम्मद पर भी एक पुस्तक लिखी रंगीला रसूल इस पुस्तक से भी विधर्मियों में हड़कंपमच गया । और **रामपाल आर्यं को इसपुस्तक को छापने के कारण अपना बलिदान देना** पड़ा ।

आर्य समाज तो वह संगठन है जिसने अपना बलिदान देखकर के अपने महापुरुषों का सम्मान किया ।

निजाम हैदराबाद ने जब मंदिरों पर ताले लगवा दिए थे हिंदू समाज को तब वहां सताया जा रहा था । उससमय आर्य समाज खड़ा हुआ था । निजाम को आर्यविद्वानों के आगे नाकं रगड़नी पड़ी और मंदिरों में ताले खुले अनेक आर्य लोग बलिदान हुए । अनेक सनातनी लोग भी बलिदान हुए थे । जब मां भगवती सीता पर जब गंदी पुस्तक लिखी गई **सीता का छलेला** उस पुस्तक का उत्तर भी आर्य समाज के लोगों ने दिया । और एक आप आर्य समाज को हिंदू से अलग करना चाहते हैं ? समाज में गलत मैसेज देना चाहते हैं ।

Edit with WPS Office

आप महा पाप कर रहे हैं । क्या धर्म गुरुओं का यह कर्तव्य नहीं है कि समाज को सही रहा दिखाएं ? आप लोगों को भ्रमित कर करने के अलावा और कुछ नहीं करते ? जो महर्षि दयानंद करके गए हैं लोगों को अपने धर्म से जोड़िए । आप महर्षि के इस कार्य को क्यों नहीं करते लोगों को अपने धर्म में जोड़ो यह कार्य करो बस एक दूसरेपर झूठ बोलना है यही आपको करना है । जो सर्वनाश का कारण बनेगा ।

- **आइए हम महर्षि दयानंद के ग्रंथों से प्रमाण दिखाते हैं कि वो रामायण और महाभारत को कितना मानते थे ___**

[**सत्यार्थ प्रकाश के तीसरा समुल्लास, पेज नंबर. 63**]

यहां पर महर्षि ने लिखा है___ तत्पश्चात मनुस्मृति वाल्मीकि **रामायण** और **महाभारत** विदुर नीति आदि अच्छे-अच्छे प्रकरण जिम से दुष्ट व्यसन दूर हो और उत्तमता सभ्यता प्राप्त हो वैसे को काव्यरीति से अर्थात पद्च्छेद, पदार्थोक्ति , अन्वय, विशेष्य विशेषण और भावार्थ को अध्यापक लोग जनावें और विद्यार्थी लोग जानते जायें। इनको एक वर्ष के भीतर पढ़ लें ।

- ➤ **[रामभद्राचार्य जी जरा हमको बताओ की रामायण महाभारत महर्षि ने कहां पर काल्पनिक कह दिया ? वो तो खुद रामायण महाभारत विदुर नीति पढ़ने की बात कह रहे हैं ?]**

और आगे देखो ___ 11 वा समुल्लास , उत्तरार्ध पृष्ठ पर यहां पर महर्षि ने लिखा है ___

सृष्टि से लेकर पांच सहस्त्र वर्षों से पूर्व समय पर्यंत आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात भूगोल में सर्वोपरि एकमात्र राज्य था । अन्य देशों में मांडलिक अर्थात छोटे-छोटे राजा रहते थे क्योंकि कौरव पांडव पर्यंत यहां के राज्य और राज शासन में सब भूगोल के सब राजा और प्रजा चले थे ।क्योंकि यह **मनुस्मृति** जो सृष्टि की आदि में हुई है उसका प्रमाण है इसी आर्यावर्त देश में उत्पन्न हुए ब्राह्मण अर्थात विद्वानों से भूगोल के मनुष्य ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र दस्यु , म्लेच्छ आदि सब अपने-अपने योग्य विद्या चरित्रों की शिक्षा और विद्या अभ्यास करें और **महाराज युधिष्ठिर** जी के राजसूय यज्ञ और **महाभारत** युद्ध पर्यंत यहां के राज्याधीन सब राज्य थे ।

Edit with WPS Office

[देखो रामभद्राचार्य जी अगर महर्षि महाभारत को काल्पनिक बताते तो वह उदाहरण क्यों देते ? इसलिए झूठे आरोपों को वापस लो]

- **एक और उदाहरण दिखाते हैं___**

[महर्षि दयानंद द्वारा रचित उपदेश मंजरी , प्रथम उपदेश]

श्री कृष्ण जी एक भद्र पुरुष थे , उनका महाभारत में उत्तम वर्णन हुआ है ।

- और महर्षि दयानंद सरस्वती ने 11वे समुल्लास में महाभारत से लेकर के अपने समय तक आर्यों की वंशावली दी है ।

[उपदेश मंजरी , अष्टम उपदेश]

इसके अनंतर भरत- कुल में अनेक राजा होते रहे । इसी कारण उस आर्यावर्त का नाम भारतवर्ष हो गया । तदांतर राम राजा से रघु राजा बड़े थे । रघु पीछे राजा राम हुए इनका रावण से युद्ध हुआ । इनका इतिहास रामायण में वर्णन किया गया है । ऐसे वीर पराक्रमी बुद्धिमान विद्वान वैध और न्यायकारी राजा लोग आर्यावर्त में हुए । उस समय आर्यावर्त में प्रत्येक स्थान पर बड़ी भारी उन्नति हुई ।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के 11वें समुल्लास में वह लिखते हैं____देखो श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अति उत्तम है, उनके गुण कर्म स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश हैं । जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यंत बुरा काम कुछ भी किया हो ? ऐसा नहीं लिखा । महर्षि दयानंद सरस्वती भगवान श्री कृष्ण को आप्त पुरुष मानते हैं ।
आप्त पुरुष उसे कहते हैं जो अपने कर्तव्य मर्यादा से कभी डीगा ना हो ।

मान्यवर ! आप व्याकरणवेत्ता है , रामचरितमानस की चौपाइयों को अच्छा गाते हैं , स्मृति के धनी है । परंतु आपको वेद की वर्णमाला का भी ज्ञान नहीं है , यह आपके वीडियो से स्पष्ट हो जाता है । महर्षि वाल्मीकि ने भगवान श्री राम को वेद वेदांग तत्वज्ञ कहां है और आप वेद में उन्ही श्री राम का

Edit with WPS Office

इतिहास ढूंढते हैं । महर्षि वाल्मीकि ने जो कहा है वह महान वैज्ञानिक देव ऋषि नारद के अनुसार कहा है , यह भी वाल्मीकि रामायण से स्पष्ट हो जाता है , इस भूमंडल के प्रथम राजा महाप्राज्ञ भगवान मनु महाराज से लेकर महर्षि वेदव्यास पर्यंत सभी ऋषि वेद को अपौरुषेय व सर्व विज्ञानमय मानते हैं , परंतु आपको इन दिव्य पुरुषों में से कोई भी स्वीकार्य नहीं , भगवान ब्रह्मा, भगवान शिव, भगवान राम ,भगवान कृष्ण , एवं किसी भी ऋषि-मुनि , यहां तक की आधी शंकराचार्य ने भी वेद में मानवीय इतिहास की बात नहीं कही , परंतु आप इन सबको मूर्ख समझकर अपनी मिथ्या धारणा का प्रचार कर रहे हैं । भला अपौरुषेय ग्रंथ में कोई मानवीय इतिहास कैसे हो सकता है ? क्या श्री राम के विषय में आपको महर्षि नारद एवं महर्षि वाल्मीकि के प्रमाण स्वीकार्य नहीं ? क्या इसे ही सनातन धर्म कहेंगे ? आप वेद की ऋचाओं के रुढ अर्थ कर रहे हैं । रामम् , पद देखते ही आपको मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम का इतिहास दिखाई दे गया ? आप जिस मंत्र से श्री राम का इतिहास निकाल रहे हैं उससे आपके शिष्य राम एवं भद्र दोनों पदों को दिखाकर आपका इतिहास दिखाएंगे । ऐसे वेदज्ञों से तो वेद भी भयभीत हो उठेगा , यदि ऐसे रुढ अर्थ करने लगे तो एक मंत्र देता हूं __इसका क्या अर्थ करोगे आप ?

इन्द्र: सीतां निगृहातु तां पूषाभिरक्षतु ,। अथर्ववेद. 3/17/4

इस मंत्र का आप क्या यह अर्थ करोगे ___

इंद्र सीता का अपहरण करें और पूषा उसकी रक्षा करें , यह आपका कैसा ऐतिहासिक अर्थ होगा ?

दूसरा मंत्र : **ऋग्वेद. 4/58/3**

यहां कहां गया है__ का भी रुढ अर्थ करके __ चार सींग , तीन पैर, दो सिर ,सात हाथ , वाले बैल को तीन प्रकार से बेधा हुआ मान लीजिए ।

आप तो वैयाकरण है , तब तो इस बात को भी जानते होंगे की व्याकरण वेद व लोक का अनुगमन करता है ,न कि वेद वा लोक व्याकरण के अधीन होते हैं । पाणिनी अष्टाध्यायी का अशिष्य प्रकरण एवं , छन्दसि बहुलम , व्यत्ययो बहुलम , आदि सूत्र महर्षि पाणिनि ने व्यर्थ नहीं लिखे हैं ? आपको प्रत्याहार

Edit with WPS Office

सूत्रों में राम कथा दिखाई देती है ? यह बात मुनि कात्यायन एवं महाभाष्यकार पतंजलि को नहीं सूझी और आपको सूझी, लगता है कि आपको किसी भी ऋषि मुनि पर किंचित भी विश्वास नहीं है , स्वयं को ही स्वयंभू ब्रह्मा मानते हैं रामभद्राचार्य जी ? स्वामी जी महाराज ! श्री राम कथा वा भागवत कथा करना अलग बात हैं । परंतु वेदांर्थ जानना सर्वथा पृथक व किलष्टतम कार्य है । वेद परमपिता का ब्रहमाण्डीय ग्रंथ है ।
आप देखते हैं जिस मंत्र में आपको राम कथा दिखाई दे रही है ? या जिस मंत्र में आप राम कथा बता रहे हो? वह मंत्र इस प्रकार है____

भद्रं भद्रोंया सचमान आगात्स्वसारं जारों अभ्येति पश्चात ।
सुप्रकेतेधुभिरग्निवितीष्ठन्नुदभवृणैरभि रामस्थात् ।।

ऋग्वेद. 10/3/3

इस मंत्र में रामभद्राचार्य जी भद्र का अर्थ राम कर रहे हैं ।
और भद्रया का अर्थ सीता कर रहे हैं ।
जो बिल्कुल अर्थ के अर्थ गलत है ।
आइए इन्हीं के पौराणिक आचार्य सायण का भाष्य दिखाते हैं इसका अर्थ क्या किया है उन्होंने ?
आचार्य सायण ने भद्रं का अर्थ ___ भजनीय , कल्याण ।
भद्रया का अर्थ ___ उषाकाल, प्रकाश , अग्नि
रामम् का अर्थ आचार्य सायण ने किया है ___ काला , कृष्ण , अंधकार ।

और रामभद्राचार्य को राम कथा दिखाई दे रही है इस मंत्र में ___ राम कथा का तो एक बीज भी नहीं मिला इस मंत्र में ? इसलिए इन सभी प्रमाणों से रामभद्राचार्य झूठे साबित होते हैं । और अपनी गलतियों के लिए क्षमा मांगे ।। सत्य बोलने का साहस करें क्योंकि आप एक संन्यासी है एक संन्यासी को सत्य असत्य का ज्ञान रहता है । फिर भी आपने ऋषि दयानंद पर झूठे आरोप वेदों के गलत अर्थ , इसलिए सत्य को जानो पढ़ो , और सत्य की विचारधारा को अपनाओ ! तभी इस राष्ट्र का कल्याण हो सकता है ।।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 30. ।। तीसवां पृष्ठ ।।

{ गप्पों पर लड़े, दो गप्पी }

।। प्रदीप मिश्रा और प्रेमानंद महाराज ।।

पिछले दिनों वृंदावन के संत श्री प्रेमानंद जी महाराज और भागवत शिव पुराण के कथाकार पंडित प्रदीप मिश्रा राधा के अस्तित्व और चरित्र पर आपस में उलझ गए प्रदीप मिश्रा का पुराणों के आधार पर ही यह कहना था कि श्री कृष्ण की 16000 रानियां में से राधा का नाम नहीं है, राधा के पति का नाम भी अन्यघोष था। उन्होंने बताया और कहा, कि राधा बरसाने गांव की नहीं थी इस वक्त वह प्रेमानंद जी महाराज आपे से बाहर हो गए? मथुरा और वृंदावन के इलाकों में राधा को कृष्ण की प्रेमिका के रूप में दिखाया जाता है। यहां पर राधा को नारायण का ही रूप दिखाया जाता है। यहां पर राधा को लाडली पता नहीं किन-किन नाम से पुकारा जाता है यहां पर राधा की भक्ति ईश्वर की भक्ति समझी जाती है और वृंदावन के इलाकों में अनेक पुरुष भी स्त्री रूप धारण करते हैं और राधा रानी घूमते फिरते हैं। आइए इन बातों पर सत्य का प्रकाश डालते हैं राधा का उल्लेख निम्न चार पुराणों में मिलता है वराह पुराण, पद्म पुराण, नारायण पुराण, शिव पुराण, राधा का सबसे पहला चरित्र चित्रण कवि जयदेव ने 11वीं शताब्दी में रचित __ गीत गोविंद में किया था और यह सभी पुराण राजा भोज के शासनकाल अर्थात 1010 से1055 ई के अंतर्गत लिखें गए शिव पुराण के कई श्लोक 14 वी शताब्दी में लिखे गए थे और इन पुराणों में ही राधा को गीत गोविंद के चलते लोकप्रियता से पुराणों में शामिल किया गया। संपूर्ण महाभारत में राधा का जिक्र तक नहीं आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती

Edit with WPS Office

ने सत्यार्थ प्रकाश के 11वें समुल्लास में लिखते हैं राजा भोज के राज्य में व्यास जी के नाम से मार्कंडेय और शिव पुराण बनाकर किसी ने खड़ा किया था । जब इसका समाचार राजा भोज को हुआ तो राजा ने उन पंडितों को बहुत दर्दनाकं दंड दिया । उनके हाथ कटवा दिए और अन्य पंडितों से कहा जो कोई काव्य आदि ग्रंथ बनाए तो अपने नाम से बनाए । ऋषि मुनियों के नाम से नहीं ? यह बात प्रमाणिक है और राजा भोज के बने हुए ग्रंथ संजीवनी नामक इतिहास में इन सब बातों का जिक्र होता है । जो अभी भी भीड़ नामक नगर में उपलब्ध है । आगे महर्षि जी आगे लिखते हैं कि राजा भोज के डेढ़ सौ वर्ष पश्चात वैष्णवी मत का प्रारंभ हुआ एक सतर्क नामक व्यक्ति उत्पन्न हुआ था । उससे थोड़ा सा चला उसके पश्चात मुनिवाहन और तीसरा यावनाचार्य हुआ । तत्पश्चात ब्राह्मण रामानुज हुआ उसने अपना मत फैलाया शैवों ने शिव पुराण आदि शाक्तों ने भगवती आदि । भागवत ने कृष्ण आदि वैष्णवन ने वैष्णव आदि अपना मत चलाया । उनमें अपना नाम इसलिए नहीं रखा अपने नाम से बनेंगे तो लोग प्रमाण और प्रश्न पूछेंगे ! इसलिए उन्होंने ऋषि मुनियों के नाम से ही पुराणों की रचना की इसलिए इन लोगों के आपस में झगड़ा हैं । वैसे ही पुराणों में भी लिखे हैं वैसे ही भागवत में ही विष्णु की नाभि से कमल से ब्रह्मा और ब्रह्मा के अंगूठे से अन्य देव अप्सराय उत्पन्न हुई ।।

- ## 31. इक्कतीसवां पृष्ठ

Edit with WPS Office

- **[इस्कॉन (iskon) संस्था से ना जुड़े]**

प्रभुपाद ने इस्कॉन की स्थापना की इन्होंने अपने समय में सनातन का डंका बजाया विदेश में लोगों को अपनी संस्कृति से जोड़ा । लेकिन जहां अच्छे कार्य होने के बावजूद भी , अनेक कार्य शास्त्रों के विरुद्ध और इनके बाद इनके शिष्य के द्वारा ईसाई और सनातन को एक समझा गया । जोकि शास्त्रों और सनातन के विरुद्ध है । प्रभु पाद ने विदेश में और अपनी पुस्तक में भगवान श्री कृष्ण की घोर निंदा की है । उनको चोर और व्याभिचार आदि नाम से पुकारा । इनके द्वारा लिखी गई गीता में ब्रह्मा विष्णु महेश की बुराइयां है । उनको नीचा दिखाया गया और सर्वोच्च भक्ति श्री कृष्ण की दिखाई । और दूसरी तरफ भगवान श्री कृष्ण को भी नहीं छोड़ा इन्होंने यह अपनी पुस्तक में ऐसे लिखते हैं । देखिए ___

Prabhupada morning walk california Berkeley 8 October 1972. ; उनसे कोई पूछता है इस पुस्तक में कोई पूछता है हिटलर कैसा आदमी था ।

उत्तर ___ साकारी अच्छा आदमी था इसलिए उन्होंने परमाणु बम नहीं गिराया ऐसा प्रभुपाद जी कहते हैं ।

आइए , प्रभुपाद भगवान श्री कृष्ण के बारे में क्या कहते हैं उनकी एक पुस्तक है जिसका नाम है ; perfect question perfect answer , इसके **पृष्ठ संख्या** 22 पर आप देखेंगे तो इसमें एक व्यक्ति पूछता है उसका नाम है बोब (bob) ।

Edit with WPS Office

BOB: Is Kṛṣṇa attractive to rascals?

ŚRĪLA PRABHUPĀDA: Oh, yes! He was the greatest rascal also.

BOB: How is that?

ŚRĪLA PRABHUPĀDA: [*laughing*] Because He was always teasing the *gopīs*.

ŚYĀMASUNDARA: Teasing?

ŚRĪLA PRABHUPĀDA: Yes. Sometimes when Rādhārāṇī would go out, Kṛṣṇa would attack Her, and when She would fall down—"Kṛṣṇa, don't torture Me in that way"—They would fall down, and Kṛṣṇa would take the opportunity and kiss Her. [*He laughs.*] So, Rādhārāṇī was very pleased, but superficially Kṛṣṇa was the greatest rascal. So unless rascaldom is in Kṛṣṇa, how could rascaldom be existent in the world? Our formula of God is that He is the source of everything. Unless rascaldom is in Kṛṣṇa, how can it be manifest . . . because He is the source of every-

भावार्थ हिंदी :

Bob (बोब) __वह पूछता है क्या श्री कृष्ण दुष्टों के लिए आकर्षक है ?
Prabhupad (प्रभुपाद) __ प्रभुपाद जी वह सबसे बड़ा दुष्ट भी था ।
Bob (बोब __ वह कैसे ?
Prabhupada (प्रभुपाद) __ कि श्री कृष्ण दुष्ट है और हंसते हुए कहते हैं कि क्योंकि वह हमेशा गोपियों को चिढ़ाते रहते हैं । जब श्री राधा रानी बाहर जाती थी , तो श्री कृष्ण जी उस पर हमला करते थे और वह गिर जाती थी वह कहती थी तो श्री कृष्ण मुझे इस तरह यातना मत दो इतने कहाँ पर ही श्री कृष्ण राधा रानी के ऊपर गिर जाते थे । और श्री कृष्ण अवसर पाकर उन्हें चूमते थे । तो राधा रानी बहुत प्रसन्न तो श्री कृष्ण जी सबसे बड़े दुष्ट थे ।
जब तक धूर्तता श्री कृष्ण में नहीं है तब तक दुनिया में कैसे अस्तित्व में रह सकते हैं ।

Edit with WPS Office

सनातन धर्मियों को ईसाई बनाने की बहुत बड़ी साजिश है। आज से 400 वर्ष पूर्व भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी आई थी। जो भारत में आई थी मसाले सब्जी का व्यापार करने लेकिन अपने पैर जमाने के बाद भारत को 200 वर्ष तक गुलामी भोगनी पड़ी और उस कंपनी ने अपना प्रचार इतना बढ़ाया कि देश पर 200 साल तक राज किया। उसी राज परंपरा को फिर से स्थापित करने के लिए पूर्व एक संस्था खड़ी कर दी गई है। जिस संस्था कंपनी का नाम है **दा इंटरनेशनल सोसाइटी फोर कृष्ण कॉन्शांइन्स इस्कॉन।** जिसे इस्कॉन बोलते हैं। अब कुछ लोग बोलेंगे कि इस्कॉन तो सनातन धर्म संस्कृति का प्रचार कर रही है। कुछ लोग यह भी बोलेंगे कि सनातन संस्कृति को जीवित रख रही है इस्कॉन संस्था। अगर आप लोग ऐसा सोचते हैं ,तो आप बहुत बड़े अंधकार में हैं। क्योंकि जो आपको दिखाया जा रहा है। वह सिक्के का एक पहलू है। दूसरा पहलू नहीं दिखाया जाता। जैसे किसी पक्षी को फसाने के लिए चेहरे का उपयोग करते हैं । ऐसे ही आपको सनातन संस्कृति में थोड़ा सा प्रचार करके आपको फसाया जा रहा है। अगर कोई सनातनी होगा तो वह अपने महापुरुषों की वैदिक निंदा नहीं सुन सकेगा। कोई भी अपने महापुरुषों की निंदा नहीं कर सकता। लेकिन इस्कॉन एक परसेंट भी इस बात पर विचार नहीं करता। अपने महापुरुषों की पूर्व निंदा करता है। आप कहोगे वो कैसे देखो____

अमोघ लीला________यह बाबा कहता है एक दिन भगवान श्री कृष्ण की बगल में रुक्मणी जी बैठी हुई थी। जैसे जिस प्रकार राम हमेशा सीता को अपनी बगल के पास बैठाते थे। सीता माता इतनी सुंदर है। सीता माता तो सुंदर थी। और एक कृष्ण के पास बावली सी रुक्मणी बैठी है, उठा इसे यहां से। इस प्रकार अमोघ लीला एक कथा के दौरान कह रहे थे। जिन श्री कृष्ण के नाम पर यह लोग इतना कमा खा रहे हैं। उनकी पत्नी का इस प्रकार अपमान। अमोघ लीला यह धूर्त व्यक्ति पाखंडी श्री कृष्ण की जो पत्नी जिसके साथ भगवान श्री कृष्ण ने हिमालय पर्वत पर जाकर 12 साल तक ब्रह्मचारी का पालन किया। तब प्रधुमन जैसा पुत्र पाया और उस कृष्ण की पत्नी के साथ इस प्रकार अपमान किया गया। ये कहकर कृष्ण इसको अपनी बगल के पास से अलग हटा। जिसने प्रदुमन जैसा पुत्र दिया। पराक्रमी बलशाली जब कृष्ण और प्रदुमन दोनों साथ चलते थे तो कोई

Edit with WPS Office

उनको पहचान नहीं पाता था। कौन प्रदुमन है ,कौन कृष्ण है। तभी माता रुक्मणी ने कृष्ण के मुकुट पर मोर के पंख लगाए। ताकि मैं इनको पहचान सकूं।

2.. **दूसरी बात** चैतन्य महाप्रभु जिन्हें श्री कृष्ण का अवतार मानते हैं, कुछ अज्ञानी इस्कॉन वाले लोग और कृष्ण के सिद्धांतों पर चलते हुए देख सकते हैं। देखिए चैतन्य महाप्रभु का इस फोटो को जिसमें चैतन्य महाप्रभु भगवान शिव और माता पार्वती को आशीर्वाद देते दिखाया गया है।

Edit with WPS Office

जिनका जन्म 300 400 वर्ष पूर्व हुआ था। और दूसरा फोटो भी देखिए किस प्रकार भगवान शिव और माता पार्वती सृष्टि के आदि से हैं लेकिन भगवान शिव और पार्वती का इस प्रकार अपमान किया गया। ये इस्कॉन वाले सदा ब्रह्मा और शिव की निंदा करते रहते हैं। योगेश्वर शिव को नशेड़ी बताते हैं ये पाखंडी लोग। ये सब निंदा इन लोगों ने अपनी श्रीमद्

भगवतगीता में ही अध्याय 2 श्लोक नंबर 62।

Edit with WPS Office

तात्पर्य: जो मनुष्य कृष्णभावनाभावित नहीं है उसमें इन्द्रियविषयों के चिन्तन से भौतिक इच्छाएँ उत्पन्न होती है | इन्द्रियों को किसी कार्य में लगे रहना चाहिए और यदि वे भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति में नहीं लगी रहेंगी तो वे निश्चय ही भौतिकतावाद में लगना चाहेंगी | इस भौतिक जगत् में हर एक प्राणी इन्द्रियाविषयों के अधीन है, यहाँ तक कि ब्रह्मा तथा शिवजी भी | तो स्वर्ग के अन्य देवताओं के विषय में क्या कहा जा सकता है? इस संसार के जंजाल से निकलने का एकमात्र उपाय है-कृष्णभावनाभावित होना | शिव ध्यानमग्न थे, किन्तु जब पार्वती ने विषयभोग के लिए उन्हें उत्तेजित किया, तो वे सहमत हो गये जिसके फलस्वरूप कार्तिकेय का जन्म हुआ | इसी प्रकार तरुण भगवद्भक्त हरिदास ठाकुर को माया देवी के अवतार ने मोहित करने का प्रयास किया, किन्तु विशुद्ध कृष्ण भक्ति के कारण वे इस कसौटी में खरे उतरे | जैसा कि यामुनाचार्य के उपर्युक्त श्लोक में बताया जा चूका है, भगवान् का एकनिष्ठ भक्त भगवान् की संगति के अध्यात्मिक सुख का आस्वादन करने के कारण समस्त भौतिक इन्द्रियसुख को त्याग देता है | अतः जो कृष्णभावनाभावित नहीं है वह कृत्रिम दमन के द्वारा अपनी इन्द्रियों को वश में करने में कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो, अन्त में अवश्य असफल होगा, क्योंकि विषय सुख का रंचमात्र विचार भी उसे इन्द्रियतृप्ति के लिए उत्तेजित कर देगा |

भगवत गीता अध्याय 2 श्लोक 62

इन सब परमाणो से पता चलता है कि यह सनातन नहीं है। अब आगे श्री कृष्ण का अपमान किया गया। यह लोगों को कैसे इसाई बनना चाहते हैं सनातन धर्म को इस एक वीडियो में ये अमोघ लीला बोलते हैं। कहता है भगवत गीता और बाइबल के संदेश में कोई अंतर नहीं है, जहां बाइबल चलती है ,उसी रास्ते से गीता चलती है । जहां बाइबल खत्म होती है, वहां से गीता शुरू होती है

इस बाबा का कहना यह है **यीशु मसीह** और **श्री कृष्ण** भगवान एक ही सिद्धांत पर चलते थे एक ही रास्ते पर चलते थे। फर्क इतना है जो हमारे ईसा मसीह पहले हो गए पहले बाइबल का ज्ञान दे दिया उसके बाद जहां से बाइबल खत्म होती है भगवत गीता शुरू होती है। क्योंकि श्री कृष्ण बाद में पैदा हुए। यह लोगों को आश्वासन दिला रहे हैं की बाइबल और सनातन धर्म एक ही है।

3.. छत्तीसगढ़ में एक ही परिवार के सभी सदस्य ईसाई बन गए। तब वहां पर आर्य समाज का एक विद्वान गया उन लोगों से पूछा आप लोग ईसाई क्यों बन गए ? क्या आपको अपने सनातन संस्कृति से प्यार नहीं है ? अपने

Edit with WPS Office

महापुरुषों जिनका चरित्र इतना महान है। आपको क्या कमी दिख रही थी , हमारे सनातन संस्कृति में।? फिर उन लोगों ने उत्तर दिया! महाशय जी आप जो कह रहे हो उचित कह रहे हो ठीक कह रहे हो। उन्होंने बोला हमारे इस फादर का जवाब दे दीजिए। फादर को बुलाया गया और फादर ने कहा, देखिए एक तरफ तो हमारे ईसा मसीह है। और दूसरी तरफ तुम्हारे श्री कृष्ण है। अब मैं इन दोनों का चरित्र बताता हूं। हमारे ईसा मसीह सभी लोगों के पापों की गठडीं बांधकर सूल्ली पर चढ़ गए। और आपके श्री कृष्ण जी यमुना नदी में नहाती हुई नंगी गोपियों के कपड़े चुराकर के कदम के पेड़ पर चढ़ गए। अब बताओ किसका जीवन चरित्र अच्छा है।
तो इस प्रकार के ईसाई लोग तर्क देने लगे तो कोई भी व्यक्ति सनातन धर्म को स्वीकार नहीं करेगा। इन इस्कॉन वालों का सिद्धांत क्या की पुराणों से श्री कृष्ण को बदनाम करिए। लुच्चा व्यभिचारी बदमाश चोर बताइए।
और ईसा मसीह की महान आत्मा का वर्णन करते हैं। ईसा मसीह को शुद्ध पवित्र बताते हैं। ये इस्कॉन वाले लोग।
और दिल्ली में जो इस्कॉन मंदिर है वहां के जो वर्तमान के गुरु हैं गोपाल कृष्ण गोस्वामी उनके विषय में एक बात सुनने को मिली। उनकी पत्नी ने कहा कि उन्होंने मुझे और मेरे बच्चे को मारने की कोशिश की। इन्होंने अनेक लड़कियों के साथ सेक्स संबंध बनाएं। जिसकी सच्चाई मुझे पता चली और मुझे मेरे बच्चे को मारने की कोशिश की गई। किस प्रकार हम लोग इससे इस घटना से बचे। और वह हत्यारा गोपाल कृष्ण गोस्वामी इस्कॉन का वर्तमान गुरु है।

- **4.. देखिए इस्कॉन वाले अपना मंत्र बताते हैं।**

हरे कृष्ण हरे कृष्ण
कृष्ण कृष्ण हरे हरे
हरे राम हरे राम
राम राम हरे हरे

इनका जो यह मंत्र है यह बताते हैं इसे बोलिए और आपको मोक्ष प्राप्त होगा।
अब देखिए इस मंत्र का मतलब क्या है हम बताते हैं। ये पाखंडी लोग तो नहीं बताएंगे।

Edit with WPS Office

इस मंत्र में राम जी का अपमान किया गया।
इन लोगों ने जो हरे का अर्थ लिया हुआ है वह लिया है राधा।
हरे का मतलब होता है हरि । और इन पाखंडियों ने हरे का मतलब राधा कर रखा है।
अब जो यह, हरे कृष्ण, बोलते हैं इसका मतलब यह हुआ राधा कृष्ण।
अब यहां पर राधा को राम के साथ भी जोड़ दिया। और कृष्ण के साथ भी जोड़ दिया।
अब इन धूर्त पाखंडी लोगों को मेरी चुनौती है, कहीं भी हरे नाम से राधा का वर्णन दिखा दे।
हरे का अर्थ में आपको बताऊं, हरे का मतलब होता है

ऋग्वेद__9/66/25
परमपिता परमात्मा का नाम हरे है, इसलिए उसे हरि कहते हैं। उसका नाम हरि है।
अनेक जगह हरे नाम परमात्मा का आया है। और ये पाखंडी लोग राधा को हरे कहते हैं।
सामवेद 474, सामवेद 842 । इन दो मंत्रों में भी हरे नाम परमात्मा का आया है।
हरि उसे बोला जाता है जो दुखों को हरने वाला है।
मेरे कहने का मतलब यह है ये पाखंडी लोग हरे का अर्थ राधा ले रहे हैं। और फिर राधा को राम के साथ भी जोड़ रहे हैं। जिस राधा का कहीं वर्णन नहीं। कहीं प्रमाण नहीं।
इस्कॉन वालो ने खुद यह मंत्र बनाया है। इनको मैं बता दूं मंत्रों को ईश्वर ही बना सकते हैं। मनुष्य सिर्फ श्लोक बना सकता है। अगर इंसान मंत्र बनाने लगे तो यह बहुत बड़ा अपमान है ईश्वर का। इस प्रकार का कहीं भी हमारे शास्त्रों में मंत्र नहीं।
इन धूर्त पाखंडीयो का कहना यह है की ना तो ईश्वर की परमपिता परमात्मा की उपासना प्रार्थना स्तुति मत करो सिर्फ राधे-राधे गाओ। हरे कृष्ण हरे कृष्ण बोलो मोक्ष प्राप्त हो जाएगा। अगर हरे कृष्ण से मोक्ष प्राप्त होता तो महर्षि वेदव्यास को क्यों जरूरत पड़ी वेदांत दर्शन लिखने की। इन

Edit with WPS Office

पाखंडियों से कोई पूछने वाला भी तो हो? बस भोले भाले हिंदू अज्ञान की वजह से इनके चपेट में आ जाते हैं। महर्षि कपिल को क्यों जरूरत पड़ी सांख्य दर्शन लिखने की। ऋषि महाऋषियों को क्यों जरूरत पड़ी उपनिषदों और दर्शनों को लिखने की। अगर राधे-राधे गाने से कृष्ण कृष्ण गाने से मोक्ष प्राप्त हो गया होता । तो ऋषि लोग क्यों लिखते शास्त्रों को। ये मूर्ख लोग ऋषियों का भी अपमान करते हैं।

__________पाखंडी अमोघ लीला__________

4.. इसका कहना है कि जब राहु का गला काटा उस गले को काटने से जहां हड्डी गिरी वहां उगा लहसुन,, और जहां मांसपेशियां गिरी वहां उगी प्याज। दूसरी बात में कहता है जहां शैतान ने पहला कदम रखा वहां प्याज उगा। जहां दूसरा पैर रखा लहसुन की उत्पत्ति हुई। इस पाखंडी की बातों से तो यह पता चलता है। ये बाबा अंदर से ईसाई और बाहर से हिंदू बनता है।

और दूसरी बात________

हरे का अर्थ परमात्मा होता है, और ये हरे का अर्थ राधा ले रहे है, जो कि गलत है।

इसलिए कहने का मतलब यह है कि हरे का अर्थ राधा नहीं है, परमेश्वर परमात्मा है। ये लोग राधा बताते हैं। हमारा मतलब सत्य को जानना है। लोगों को सत्य दिखाना है। और हमने दिखा दिया। मंत्रों को तो ईश्वर ही बना सकते हैं, हम लोग श्लोक ही बना सकते हैं। जबकि इन्होंने मंत्र बना दिया। इस प्रकार का मंत्र हमारे किसी भी शास्त्र में नहीं।

हम एक और प्रमाण दिखाते हैं, ये लोग कहते हैं, **हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे , हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे,** इस प्रकार का इन्होंने यह मंत्र बनाया। यह लोग कहते हैं इस मंत्र का जाप करने से मोक्ष हो जाएगा।
__ यह गलत है, ऐसा नहीं होता। अगर ऐसा होता तो हमारे ऋषि मुनियों को क्यों आवश्यकता पड़ी इतने मोटे ग्रंथ लिखने की??

सृष्टि को जाने बिना ब्रह्म को जाने बिना मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता ? मोक्ष प्राप्ति के लिए आध्यात्मिक व भौतिक ज्ञान आवश्यक है। हम प्रमाण दिखाते हैं____

Edit with WPS Office

1.. ______ईशोपनिषद______११ वा मंत्र_____

जो आध्यात्मिक विद्या (ज्ञान) और भौतिक (कर्म)को ही एक साथ जानता है वह विद्या से मृत्यु पार करके विद्या ज्ञान से अमृतत्व को प्राप्त करता है ,अर्थात मोक्ष प्राप्त करता है।

2.._______वेदांत दर्शन______१,१______

शब्दब्रह्म में जो निष्णात अर्थात वेदादि सत्यशास्त्रों के मर्म को जानता है। वही विज्ञानसाधक योगी परब्रह्म को जानता है, परब्रह्म अनन्त है। शब्दब्रह्म के बिना हम परब्रह्म को नहीं जान सकते।

3.._______यजुर्वेद_____३१,१७_________

ओमकार ही सर्वव्यापक परब्रह्म है

4..__चतुर्थ अध्याय,___३६,३७,३८,३९ श्लोक__

- ३६____यदि तू अन्य सब पापियों से भी अधिक पाप करने वाला है, तो भी तू ज्ञान रूप नौका द्वारा हनी नि: संदेश सम्पूर्ण पाप–समुद्र से भलीभांति तर जाएगा।

- ३७_____क्योंकि हे अर्जुन! जैसे प्रज्वलित अग्नि ईंधनों को भस्ममय कर देता है। वैसे ही ज्ञान रूपअग्नि संम्पूर्ण कर्मों को भस्ममय कर देता है।

- ३८_____इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला नि: संदेश कुछ भी नहीं है, उस ज्ञान को कितने ही काल से कर्मयोग द्वारा शुद्धान्त:करण हुआ मनुष्य अपने आप ही आत्मा में पा लेता है।

Edit with WPS Office

- ३९_____जितेंन्द्रिय साधनपरायण और श्रद्धावान मनुष्य ज्ञान को प्राप्त होता है, तथा ज्ञान को प्राप्त होकर वह बिना विलम्ब के–तत्काल ही भगवत्प्राप्तिरूप परम शांति को प्राप्त होता है।

_______२ अध्याय_______१२ श्लोक________

न तो ऐसा ही है कि मैं किसी काल में नहीं था ,तू नहीं था अथवा ये राजा लोग नहीं थे और न ऐसा ही है कि इससे आगे हम सब नहीं रहेंगे।
यहां मनुष्य जिस प्रकार कर्म बंधन में रहता है , ठीक इसी प्रकार श्री कृष्ण का भाव है कि
इन सभी मंत्रों से यह सिद्ध होता है कि भगवान श्री कृष्ण निराकार परमेश्वर ब्रह्म का वर्णन कर रहे हैं ना कि अपने मनुष्य रूप का। क्योंकि उस समय योग अवस्था में थे। जो पूर्ण योगी होता है उसको मैं ब्रह्म हूं का बोध होता है।

- ➤ देखो भाइयों देखो इतने प्रमाण देने के बाद भी जिनकी आंखें नहीं खुली इसमें हमारा क्या दोष।
- ➤ भगवान कृष्ण ने भी मोक्ष प्राप्ति का साधन आध्यात्मिक ज्ञान और भौतिक ज्ञान ही बताया है।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 32. बत्तीसवां पृष्ठ

- **99% पर्सेंट लोग नहीं जानते श्रीमद् भगवतगीता के बारे में**

Edit with WPS Office

खासकर इस्कॉन वाले____

आज के समय जिस विषय पर ज्यादा उपवाद है, वह है श्री कृष्ण। आज मैं आपको वह जानकारी देने की कोशिश करूंगा। जो आप लोगों ने ध्यान से नहीं समझे नहीं पढी।_____

आज हम बात करते हैं गीता की, सारे प्रमाण इस्कॉन की गीता से ही दूंगा जो प्रभुपाद द्वारा लिखित है। क्योंकि लोग अधिक इसी संस्था से ही जुड़े होते हैं।

गीता महाभारत का ही अंश है। यह जो महाभारत वेदव्यास जी ने लिखी थी, **महाभारत ग्रंथ में गीता के श्लोकों की संख्या 745 है। और इस्कॉन की गीता में 700 श्लोक है। 45 श्लोक कहां गए?**

आपको महाभारत में गीता के श्लोक देखने को मिलेंगे।

- **महाभारत भीष्म पर्व अध्याय 43, श्लोक संख्या 4 (गीता प्रेस गोरखपुर) ।**
- धृतराष्ट्र ने 1 श्लोक कहां
- भगवान श्री कृष्ण ने 620 श्लोक कहां
- और 57 श्लोक अर्जुन द्वारा
- संजय ने 67 श्लोक बोले। कुल श्लोक संख्या 745 है।

अब 45 श्लोक इस्कॉन वालों ने अपनी पुस्तक में क्यों ना लिखें??

अब बात करते हैं श्री कृष्ण ने ईश्वर का कैसा स्वरूप बताया है।

अध्याय 13 , श्लोक 16, में कहां है।

परम सत्य जड़ तथा जगम समस्त जीवों के बाहर तथा भीतर स्थित है। सूक्ष्म होने के कारण वे भौतिक इंद्रियों के द्वारा जानने या देखने से परे हैं, यधपि वे अत्यंत दूर रहते हैं। किंतु हम सब जीवों के निकट भी है।

समाधान____इस श्लोक में श्री कृष्ण जी स्पष्ट कहते हैं कि वह ब्रह्म अति सूक्ष्म है भौतिक इंद्रियों द्वारा देखा नहीं जा सकता ! भौतिक इंद्रियों जैसे आंख नाक कान आदि। द्वारा उस ब्रह्म को नहीं देखा जा सकता।

_______13 अध्याय, के 25 वे श्लोक_______

Edit with WPS Office

कुछ लोग परमात्मा को ध्यान के द्वारा अपने भीतर देखते हैं, तो दूसरे लोग ज्ञान के अनुशीलन द्वारा और कुछ ऐसे हैं जो निष्काम कर्मयोग द्वारा देखते हैं।

___फिर 13वें अध्याय के 13 श्लोक में कहां है___

जो जानने योग्य है, तथा जिसको जानकार मनुष्य परमानन्द को प्राप्त होता है, उसको भली भांति कहूंगा वह अनादि वाला परमब्रह्म न सत् ही कहा है, न असत् ही।

समाधान____यहां श्री कृष्ण कह रहे हैं उस ब्रह्म को जानकर ही मोक्ष को प्राप्त होते हैं, ना की साकार मूर्ति देखकर यहां स्पष्ट कह रहे हैं , निराकार की श्री कृष्ण बात कर रहे हैं।

______13 अध्याय , 14, 15 श्लोक मैं ______

14.. उसके हाथ पांव कान आंखें सिर तथा मुंह सर्वत्र है। अर्थात सब जगह हैं, इस प्रकार परमात्मा सभी वस्तुओं में व्याप्त होकर अवस्थित है।

15.. परमात्मा समस्त इंद्रियों के मूल स्त्रोत हैं। फिर भी वे इंद्रियों से रहित है वे समस्त जीवों के पालनकर्ता होकर भी अनासक्त है। वह प्रकृति के गुणों के परे हैं , फिर भी वह भौतिक प्रकृति के समस्त है, इससे ईश्वर निराकार्ि सिद्ध होता है।

अवतार के विषय में श्री कृष्ण जी क्या कहते हैं देखिए

_______अध्याय 5, श्लोक 14_________

शरीर रूपी नगर का स्वामी देहधारी जीवात्मा न तो कर्म का सृजन करता है, न लोगों को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है । न ही कर्मफल की रचना करता है। यह सब तो प्रकृति के गुणों द्वारा ही किया जाता है।

यहां सभी के लिए कह रहे हैं जो जो जीवात्मा इस प्रकृति लोक में है वह किसी भी प्रकार की रचना प्रलय न कर सकते , यह सब निराकार ब्रह्म का कार्य है।

Edit with WPS Office

________अध्याय 5, श्लोक 15 में________

कहते हैं परमेश्वर न तो किसी के पापों को ग्रहण करता है । न पुण्य को किंतु सारे देहधारी जीव उस अज्ञान के कारण मोहग्रस्त रहते हैं। जो उनके वास्तविक ज्ञान को आच्छंदित किये रहता है।

________अध्याय 7, श्लोक 24_________

मैं इस श्लोक में कहते हैं श्री कृष्ण जी जो बुद्धिहीन पुरुष मेरे अनुतम अविनाशी परम भाव को न जानते हुए मन इंद्रियों से परे मुझ सच्चिदानन्द परमात्मा को मनुष्य की भांति जन्मकर व्यक्ति भाव को प्राप्त हुआ मानते हैं।

________अध्याय 7 , श्लोक 25_________

मैं अपनी योग माया से छिपा हुआ मैं सबके प्रत्यक्ष नहीं होता, इसलिए यह अज्ञानी जनसमुदाय मुझ जन्मरहित अविनाशी परमेश्वर को नहीं जानता, अर्थात मुझको जन्मने मरने करने वाला समझता है।
यहां श्री कृष्ण जी स्पष्ट कहते हैं कि ब्रह्म ईश्वर ऐसा नहीं है , जैसे– लोग उसे शरीरधारी मानते हैं, भगवान कह रहे हैं ईश्वर ऐसा नहीं है ? श्री कृष्ण कह रहे हैं कि मैं ब्रह्म नहीं हूं, मैं योगमाया से ब्रह्म का वर्णन बता रहा हूं । क्योंकि ईश्वर तो सच्चिदानन्द स्वरुप है। ईश्वर आनंदमय है, दुखों से रहित है।
अब लोगों के मन में सवाल आ रहा होगा कि भगवान श्री कृष्ण ऐसा क्यों कहा हैं कि मेरी शरण में आओ ? पार्थ ! मैं पापों से मुक्त कर दूंगा, यह सबसे बड़ा सवाल है। आइए इसके बारे में बताते हैं।______यह कौन सा मंत्र है और ऐसा क्यों कहा,,

गीता अध्याय 18, श्लोक 66 में कहा है,

संपूर्ण धर्मो को अर्थात संपूर्ण कर्तव्य कर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ शक्तिशाली सर्वाधार परमेश्वर के ही शरण में आ जा, तुझे संपूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा, तू शोक मत कर डर मत।
समाधान______इसी 18 वे अध्याय के 62 वे श्लोक में क्या बोलते हैं, देखो।
अपनी संपूर्ण भक्ति भावना एकाग्र करके जिस प्रकार में उसकी शरण में

Edit with WPS Office

गया हूं। तो तु उसकी शरण में जा उस प्रभु के प्रसाद से इन आपतात्तियों को मारने से तुझे अशान्ति नहीं होगी, उल्टा प्रमुख कार्य का निमित बना दूं। यह जानकर तुझे परम शांति प्राप्त होगी और कभी न नष्ट होने वाला प्रभु- भक्त प्राप्त होगा ! **– स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती भाष्य।**

इसी18 वे अध्याय के 62वां श्लोक स्वामी प्रभुपाद का भाष्य और देखो।

हे भारत ! तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की शरण में जा उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परमधाम को प्राप्त होगा।

इन दो श्लोकों से ही देख सकते हो भगवान श्री कृष्ण निराकार ब्रह्म की बात कर रहे हैं,

कुछ प्रमाण और दिखाते हैं।______

महाभारत में अश्रमेधिक पर्व अध्याय 16, श्लोक 6–13

अर्जुन कहते हैं भगवान श्री कृष्ण से जो आपने सौहार्दवश पहले मुझे जो ज्ञान का उपदेश दिया है, मेरा वह सब ज्ञान इस समय विचलित चित हो जाने के कारण नष्ट हो गया है भूल गया हूं।

महाभारत. 11 श्लोक में कहते हैं श्री कृष्ण जी।

है पांण्डुनन्दन ! निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन हो, तुम्हारी बुद्धि बहुत मंद जान पड़ती है। हे पार्थ, अब मैं उस उपदेश को ज्यों त्यों नहीं कह सकता। क्योंकि वह धर्म ज्ञान ब्रह्मपद की प्राप्ति करने के लिए पर्याप्त था। वह सारा का सारा धर्म उसी रूप में फिर से दोहराना दुहरा देना, अब मेरे वंशकी बात भी नहीं है।

इसी के 13 वे श्लोक में फिर कहते हैं,______

उस समय मैंने परमात्मतत्व का वर्णन किया था। अब उस विषय का ज्ञान कराने के लिए मैं एक प्राचीन इतिहास का वर्णन करता हूं।

वेदांत दर्शन ,प्रथम अध्याय, प्रथम पाद , 30 सूत्र

यहां वेदव्यास जी कहते हैं जो मनुष्य योगी अवस्था में होता है , उसे ब्रह्म का बोध हो जाता है । और वह अपने आप को ब्रह्म कहकर ब्रह्म का वर्णन करता है कि मैं ब्रहम हूं।

Edit with WPS Office

मुझ से अभिप्राय ब्रह्म परमात्मा से है, श्री कृष्ण जी ने परमात्मा के स्थान में अपने को क्यों कर कहा ? इसका उत्तर यह है कि श्री कृष्ण जी परम योगी थे ! इस कारण वे परब्रह्म परमात्मा में इतने लवलीन थे, कि अपने को उससे भिन्न नहीं देखते थे ? जो योगी होता है उसे इसी प्रकार, **मैं ही ब्रह्म हूं।** इस प्रकार बोध होता है।

ऐसे पूर्ण योगी महात्मागण इसी प्रकार दीक्षा करते हैं, इसका प्राचीन प्रमाण भी और दिखाते हैं हम , देखो एक और प्रमाण_____

बृहदारण्यक उपनिषद् (१__४__१०)

अर्थात एक दिन उपदेश के समय वामदेव ऋषि ने कहा,? कि सूर्य में जो पुरुष प्रकाश दे रहा है ? वह मैं ही हूं।

_____यजुर्वेद 31 /17______

ओंकार ही सर्वव्यापक परब्रहम है

________ईश्वर कैसा है________

किसका ध्यान करें ? गीता क्या कहती है भगवान श्री कृष्ण क्या कहते हैं ?

गीता अध्याय 8, श्लोक 11

जो वेदों के ज्ञाता हैं जो ओंकार का उच्चारण करते हैं और संन्यास आश्रम के बड़े बड़े मुनि है, वे ब्रह्म में प्रवेश करते हैं। ऐसे सिद्धी की इच्छा करने वाले ब्रह्मचर्यव्रत का अभ्यास करते हैं। अब मैं तुम्हें वो विधि बताऊंगा जिससे कोई भी व्यक्ति मुक्ति लाभ कर सकता है।

गीता अध्याय 8, श्लोक 12,13

जो समस्त ऐन्द्रियो से विरक्ति को योग की स्थिति (योगधारणा) कहा जाता है। इन्द्रियों के समस्त द्वारों को बन्द करके तथा मन को हदय में और प्राण वायु को सर पर केंद्रित करके मनुष्य अपने को योग में स्थापित करता है। १२।

इस योग अभ्यास में स्थित होकर तथा अक्षरों पर संयोग यानी ओंकार का उच्चारण करते हुए यदि कोई भगवान का चिंतन करता है। तो वह निश्चित रूप से आध्यात्मिक लोकों को को जाता है।

Edit with WPS Office

18 अध्याय के श्लोक 63

मैंने जो तुम्हें ज्ञान बतलाया है, उस पर पूरी तरह से स्मरण करो ! जो चाहो सो करो।

यहां श्री कृष्ण जी कहते हैं जो मैंने ज्ञान दिया है इसका स्मरण करो और आगे आपकी इच्छा है जो करो सो करो।

- **_____क्या गीता में भगवान श्री कृष्ण अपनी पूजा के लिए बोल रहे हैं ।______!?**
- **आइए हम बताते हैं____**

साथियों श्रीमद् भगवतगीता के **18 अध्याय के 66**वें श्लोक को पढ़कर यही कहते हैं **खासकर इस्कॉन** वाले की श्री कृष्ण की भक्ति परब्रह्म से श्रेष्ठ है ? अर्थात समस्त प्रकार के धर्मों का परित्याग करो और मेरी शरण में आओ मैं समस्त पापों से तुम्हारा उद्धार कर दूंगा डरो मत।

अब दोस्तों यह जो श्लोक है यह गीता के अंतिम श्लोक का एक अंतिम श्लोक है इसलिए इसे भगवत गीता का सार भी कहा जाता है।

इस श्लोक को पढ़कर कई प्रकार की प्रक्रिया आती है कुछ लोग बोलते हैं श्री कृष्ण जी यहां पर अहंकारी है और घमंडी हो गए हैं ? कुछ लोग यहां पर बोलते हैं श्री कृष्ण जी ने सभी देवी देवताओं की पूजा को निषेध बताया है।

आखिर सच क्या है बताते हैं ? !

कुरुक्षेत्र की भूमि है दो सेनाओं के बीच में श्री कृष्ण जी अर्जुन को ज्ञान दे रहे हैं।

कि तुम इन सबको भूल जाओ और अपने धर्म का क्या फल होने वाला है? तुम्हारे कर्तव्य का क्या परिणाम होगा? उन सभी को भूलकर मेरे शरण में आ जाओ!

- **क्या यहां पर श्री कृष्ण जी अहंकारी है ??**

Edit with WPS Office

जैसे____कोई बच्चा अंधेरे में है अगर वह रो रहा है तो उसकी माता बोलती है, बेटा डरो मत ! मैं तुम्हारे साथ हूं अगर इस बच्चे को उसकी मां ले ले ।और फिर उसकी गोद में से कोई अनजान व्यक्ति ले ले। और उस मां से बोले इस बच्चे को मुझे दो। मैं इसकी हत्या करूंगा। तो इस संकट की घड़ी में मां अपने प्राण देने को न्योछावर रहती है। और अपने बच्चों को कुछ नहीं होने देती।

इसी प्रकार श्री कृष्ण जी अर्जुन से कह रहे हैं तो यहां इस श्लोक में श्री **कृष्ण जी को अहंकारी घमंडी कहने का कोई प्रश्न नहीं उठता है।** एक मां की तरह ही श्री कृष्ण अर्जुन को समझा रहे हैं। इसलिए अहंकार का कोई सवाल ही नहीं उठता।

दूसरी बात भगवान श्री कृष्ण अपनी योगमाया से उस परब्रह्म ईश्वर का ज्ञान दे रहे हैं।

यह मतलब है इस श्लोक का।

और कुछ अज्ञानी लोग इस श्लोक का मतलब दूसरे धर्म संप्रदाय से लेते हैं। दूसरे देवी देवताओं की उपासना से लेते हैं। लेकिन धर्म का जो यहां पर अर्थ है, वो नैतिक कर्तव्य है, यहां पर अर्जुन क्षत्रिय है तो उसके लिए युद्ध लड़ना उसका धर्म है। **दूसरा उदाहरण,** जैसे__ युद्ध भूमि में गुरु द्रोणाचार्य का धर्म है ज्ञान देना लेकिन युद्ध भूमि में उसका दूसरा धर्म है यहां पर गुरु द्रोणाचार्य पहला धर्म छोड़ , दूसरे धर्म कर्तव्य का पालन कर रहे हैं? इसी प्रकार भगवान श्री कृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं उसको समझा रहे हैं ? की युद्ध भूमि में तुम्हारा धर्म है युद्ध लड़ना ?! युद्ध भूमि से पहले अपने सभी धर्मो को भूल जाओ , अपने क्षत्रिय कर्तव्य को याद कर , युद्ध लड़ा ?!

कुछ लोगों को इस श्लोक में अहंकार इसलिए दिख रहा है ? वो इस श्लोक को भौतिक दृष्टि से देख रहे हैं ? **(धर्म भौतिक विषय ह ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक विषय है)** अगर हम आध्यात्मिक अर्थ देखेंगे तो जिस प्रकार हमने मां और बच्चे का उदाहरण दिया इसी प्रकार जैसे मां अपने बच्चे के डर का निवारण करती है , उसी प्रकार श्री कृष्ण जी अर्जुन के डर का निवारण कर रहे हैं?

Edit with WPS Office

• ______क्या श्री कृष्ण की भक्ति सर्वोच्च है_______

क्या श्री कृष्ण की ही सर्वोच्च भक्ति है ? क्या हमें दूसरे देवी देवताओं को छोड़कर सिर्फ और सिर्फ श्री कृष्ण जी की ही पूजा करनी चाहिए ? यह बात इसलिए फैली है जो कृष्ण भक्त हैं **ज्यादातर इस्कॉन** वाले तो उन्होंने **18 अध्याय 66** श्लोक का यही अर्थ निकाला है कि श्री कृष्ण की ही भक्ति सर्वोच्च है।

अगर हम स्वामी भक्ति वेदांत प्रभु पाद का व्याख्यान देखें___तो उन्होंने लिखा है आध्यात्मिकवादी कई प्रकार के होते हैं कुछ निर्गुण की प्रति आकृष्ट होते हैं। तो कुछ परमात्मा के प्रति। लेकिन जो भगवान के साकार के प्रति आकृष्ट होता है तो इससे भी बढ़कर जो साक्षात भगवान श्री कृष्ण के प्रति आकृष्ट होता है ? तो वह सर्वोच्च योगी है।

अब इसी कारण से अनेक कृष्ण भक्त मिल जाएंगे जो आपसे बोलेंगे कि अन्य देवी देवताओं की पूजा ना करो क्योंकि श्री कृष्ण की ही भक्ति सर्वोच्च है।

लेकिन ऐसा नहीं है अगर हम इस श्लोक को अच्छी प्रकार से समझे समझने का प्रयास करें कि यहां पर श्री कृष्ण जी क्या कह रहे हैं ?

स्वामी प्रभुपाद ने भगवान के साकार रूप पर ज्यादा जोर दिया है ? जबकि भगवान श्री कृष्ण खुद कह रहे हैं कि **निराकार की भक्ति करो** जो मुझे साकार रूप में देखता है वह व्यक्ति बुद्धिहीन है। देखो प्रमाण दिखाता हूं।

______अध्याय 7, श्लोक 24 ______

बुद्धिहीन पुरुष मेरे अनुत्तम अविनाशी परम भाव को नहीं जानते हुए मन इंद्रियों से परे मुझ सच्चिदानन्द परमात्मा को मनुष्य की भांति जन्म कर व्यक्ति भाव को प्राप्त हुआ मानते हैं।

_______अध्याय 7 , श्लोक 25_________

यहां पर कहते हैं, अपनी योगमाया से छिपा हुआ में सबके प्रत्यक्ष नहीं होता? इसलिए यह अज्ञानी जनसमुदाय मुझे जन्म रहित अविनाशी परमेश्वर को नहीं जानता अर्थात मुझको जन्मने – मरने वाला समझता है।

Edit with WPS Office

- **अब यहां पर देख सकते हो स्वामी प्रभुपाद ने भक्ति पर ज्यादा जोर दिया है।** भगवान **श्री कृष्ण के विरुद्ध बात कही है।**

- **इस श्लोक को अच्छी तरह से समझने के लिए अनेक विद्वानों का भाष्य पढ़ेंगे? और लिखेंगे?!**

इसलिए हम इनके श्लोक के भाष्य को प्रमाण नहीं मान सकते ? अब हम और अनेक लेखक विद्वानों के भाष्य से तुलना करेंगे इस श्लोक की। देखो___?

- **पहले आदि शंकराचार्य का भाष्य देखो____**

___18 अध्याय , श्लोक 66___

सब धर्मों को छोड़कर सब धर्मों का संन्यास करके मुझ एककीशरण में आ, फिर आगे जाकर आदि शंकराचार्य जी ने इस श्लोक को परिभाषित किया और कहा,?

वह जो सबकी आत्मा संमभाव से सर्वभूतों में स्थित ईश्वर अच्युत तथा कर्म जन्म जरा और मरण से रहित है। आदि शंकराचार्य ने श्री कृष्ण को यहां भगवत गीता के आधार पर ही परिभाषित किया है।

अगर और हम गहराई से देखें भगवान श्री कृष्ण ने संमभाव से सर्वभूतों में स्थित कई बार बोला है ?

श्री कृष्ण जी ने अध्याय 2 के 48 के श्लोक में कहा?

है धनंजय ! अर्जुन तू आसक्तिको त्यागकर तथा सिधि और असिधि में समान बुद्धिवाला होकर योग में स्थित हुआ कर्तव्य कर्मों को कर, समत्व ही योग है !

और आदि के दो श्लोक में भी उनमें भी समत्व का प्रयोग आया है ? कह रहे हैं अर्जुन तू बुद्धि वाला हो ! किसी भी कर्म बंधन में मत फंस।

जैसे___ श्री कृष्ण जी संमभाव से सभी में स्थित है। ये लक्षण किसी मानव के नहीं हो सकते? ये लक्षण ब्रह्म के हैं। जब कृष्ण सभी में स्थित है, सभी

Edit with WPS Office

कृष्ण में स्थित है तो श्री कृष्ण कैसे ? ईर्ष्या पूर्वक अन्य देवी देवताओं की पूजा के लिए मना कर सकते हैं ?
और इसको अच्छी तरह से समझाने के लिए उन्होंने

___अध्याय 9 , श्लोक 23 , में बोला है___

जो भक्त अन्य देवी देवताओं की पूजा करते हैं वह मुझे ही पूजते हैं ?! यहां सोचने वाली बात है,
तो वे अंतिम अध्याय में जाकर कैसे दूसरे देवी देवताओं की पूजा को क्यों मना करेंगे??

इससे हम समझ सकते हैं की **भगवत गीता के 18 अध्याय के 66 श्लोक में।**
श्री कृष्ण जी ने ब्रह्मरूप की चर्चा हुई है ? ना कि मानव रूप की ? और ऐसा ही आदि शंकराचार्य जी ने भी भाष्य किया है ? कि जब आप उन्हें मानव रूप में देखने लगेंगे तो आपको उनके अंदर अहंकारी गुण भी दिखने लगेगा ?
बहुत से श्री कृष्ण भक्त उनके साकार रूप मनुष्य रूप के आगे नहीं बढ़ पाते हैं।

जबकि श्री कृष्ण स्वयंम कह रहे हैं ? जो मनुष्य मुझे साकार रूप में देखता है और मनुष्य रूप में देखता है वह अज्ञानी है।

अब आप यहां स्पष्ट देख सकते हो भगवान श्री कृष्ण अपने आप को सगुण रूप वाला नहीं बता रहे ?
अपने आप को निर्गुण निराकार परब्रह्म स्वरूप ही बता रहे हैं !
जो हमारे इंद्रियों से परे और अविनाशी है । और यहीं पर श्री कृष्ण भक्त धोखा खा जाते हैं? और उन्हें मनुष्य रूप में व साकार रूप में भजते रहते हैं ।
जबकि असली कृष्ण तत्व उनका निर्गुण निराकार सच्चिदानन्द स्वरूप ही है।

Edit with WPS Office

तो उनकी सगुण भक्ति सर्वश्रेष्ठ कैसे हो गई ?
इसलिए आदि शंकराचार्य जी ने 18 अध्याय के श्लोक नंबर 66 में श्री कृष्ण के सगुण रूप की बात ना करके उनके निर्गुण रूप की बात की है। आदि शंकराचार्य जी को भगवत गीता की गहरी समझ थी जब की श्री कृष्ण स्वयंम कह रहे हैं, कि वह जन्म मरण इंद्रियों से परे हैं। उनके सगुण स्वरूप की भक्ति करने का कोई लाभ नहीं है ? और निर्गुण भक्ति से मुझे प्राप्त करोगे !

- **अब हम इसी अध्याय18, के 66 श्लोक को दिखाएंगे की और अनेक विद्वानों का इस श्लोक का भाष्य किस प्रकार है?!**

रचयिता स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती का भाष्य

हे अर्जुन ! तुझे यह संदेह कैसे हो गया ? कि मैं तुझे पाप करने की सलाह भी दे सकता हूं ? पाप करने की सलाह देने के बाद तो दुर रही , तू निश्चय रख की तेरे हृदय में कोई पाप वासना उठती होगी तो उसे भी मैं उभरने नहीं दूंगा। इसलिए तेरी तो मैं भक्त और सखा होने के कारण व्यक्तिगत रूप में जिम्मेदारी लेता हूं , तू और सब धर्म छोड़कर एक ही धर्म पकड़ ले की मेरी शरण में आ जा , मैं तुझे सब प्रकार के पाप भाव **(जिन्हें करने से तुझे पाप लगेगा)** (**पाप फलों से नहीं**) से छुड़ा दूंगा, तू दुख मत मान, !

इसी 18 अध्याय के श्लोक नंबर 66 का इस प्रकार स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती का भाष्य इसी प्रकार लिखा और आदि शंकराचार्य की तरह ही गीता की गहरी व्याख्या की है ।

अब हम दूसरे विद्वान का भाष्य भी देखेंगे

____स्वामी श्री पंडित आर्यमुनि जी का भाष्य____

जो महर्षि दयानंद सरस्वती के समय के विद्वान थे!
हे अर्जुन ! वेदविरोधी सब धर्मों को छोड़कर मेरी एक वैदिकधर्म रूपी शरण को प्राप्त हो ! ऐसा करने पर मैं तुम को सब (जो लगने योग्य) पापों से छुड़ा

Edit with WPS Office

दूंगा शौक मत कर !

- **हमने आदि शंकराचार्य का भाष्य दिखाया**
- **स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती का भाष्य**
- **स्वामी श्री पंडित आर्य मुनि जी का भाष्य भी दिखाया है।**

ये तीनों विद्वान बहुत बड़े विद्वान है। जिनकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। इन तीनों का मत श्रीमद् गीता के **अध्याय 18, श्लोक 64** में एक ही विचार मिलता है। इसलिए हम इन सभी का भाष्य सही मानेंगे। इनका भाष्य सही और गीता के अनुसार है ।

गीता प्रबोधिनी____स्वामी रामसुखदास द्वारा लिखी हुई गीता।

गीता ज्ञानेश्वरी महाराज द्वारा लिखी हुई।

गीता रामानुजाचार्य द्वारा लिखी हुई।

गीता स्वामी अड़गड़ानंद जी द्वारा लिखी हुई ।

- **इन सभी लेखकों विद्वानों ने सर्वाधान का अर्थ अधर्म ही लिया है। अतः इसलिए इन सभी का भाष्य सही और ये सभी गीता प्रमाणिक है।**

स्वामी प्रभुपाद का भाष्य हम प्रामाणिक नहीं मानेंगे, क्योंकि उन्होंने अर्थ सही किया है लेकिन भाष्य में भगवान श्री कृष्ण को परब्रह्म से भी ऊपर बता दिया ? और कहते हैं भगवान श्री कृष्ण की साकार भक्ति ही सर्वोच्च परब्रह्म से भी ऊपर है।
इस प्रकार का भाष्य करने से स्वामी प्रभुपाद ने भगवान श्री कृष्ण का भी अपमान किया ? उनके उपदेश का भी अपमान किया ? और परब्रह्म परमेश्वर का भी अपमान किया ? भगवान श्री कृष्ण को परब्रह्म से ऊपर बताकर ?! श्री कृष्ण को भगवान शिव जी से भी बड़ा मान लिया स्वामी

Edit with WPS Office

प्रभुपाद ने। **इनके भाष्य में भगवान शिव और विष्णु की भरमार बुराई है। मेरा एक सवाल इस्कॉन वालों से जब श्री कृष्ण का जन्म नहीं हुआ था तब कौन ब्रह्म थे ?**

क्या दो परब्रह्म है? हमने उदाहरण देकर समझाया है ऊपर कि परब्रह्म शरीर से रहित है! खुद स्वयंम भगवान श्री कृष्ण ऐसा कह रहे हैं ? कहने का तात्पर्य यह है इस्कॉन वालों ने गीता को समझा ही नहीं ? इसलिए अपनी गीता में अर्थ के अनर्थ किया !

हम परब्रह्म का एक और उदाहरण देते हैं, कि परब्रह्म क्या है ?!

___ बृहदारण्यक उपनिषद्____ 3/8/11____

अक्षराधिकरण में यह है निरूपण किया है की जो इस अक्षर ब्रह्म परमात्मा को जानकर इस लोक से प्रायण करता है, वह ब्राह्मण है। इत्यादि वाक्य में एकमात्र परमात्मा की भक्ति कथन की गई है।

इस अनन्यभक्ति को दृढ़ करने के लिए कृष्ण जी ने सब धर्मों का त्याग कथन करके एकमात्र वैदिक धर्म की शरण कथन की है। इस श्लोक में धर्म शब्द के अर्थ धर्माभास के हैं। अर्थात जो सध्दर्मो के समान प्रतीत होते हैं, और वास्तव में मिथ्या है। उनको छोड़कर तू एकमात्र वैदिक धर्म की शरण ले।

इसी 18 अध्याय, के श्लोक 46 में

कृष्ण जी यहां यह कथन कर आए हैं कि चारों वर्ण अपने-अपने कर्मों से परमात्मा का पूजन करके सिद्धि को प्राप्त होते हैं ? जब श्लोक में वर्णों को धर्म परमात्मा की पूजा का हेतु कथन किए गए हैं , तो यहां आकर उनके त्याग के कथन से क्या तात्पर्य है ?? सब धर्मों को छोड़ने की बात कैसे कह सकते हैं ? इसलिए वहां अधर्मा होना चाहिए ?

हमने स्वामी शंकराचार्य का भाष्य दिखाया है। वो लिखते हैं, वो यह अर्थ करते हैं कि सर्वधर्मों को त्याग कर इस श्लोक में संन्यास का विधान किया गया है। इनका यह कथन इसलिए संगत नहीं कि इनके मत में संन्यास का अधिकार केवल ब्राह्मण ही को है। फिर कृष्ण जी ने अर्जुन को ऐसे संन्यास का उपदेश क्यों किया ? जिसका उसे अधिकार ही न था, यदि यह कहा

Edit with WPS Office

जाए कि अर्जुन को लक्ष्य रखकर ब्राह्मणों के लिए यह उपदेश दिया गया है ? तब भी ठीक नहीं । क्योंकि सर्वधर्मो के त्याग का इसी **अध्याय के 11**वें श्लोक में खंडन किया गया है।

इसलिए वेद विरुद्ध धर्म के त्याग में ही यहां कृष्ण जी का तात्पर्य है।

- **भगवान श्री कृष्ण ने योग अवस्था में परब्रह्म का वर्णन किया था। क्योंकि वे योगेश्वर थे। वे योगी थे जिनके प्रमाण हम लिख आए हैं।**
- **जो भगवान श्री कृष्ण को परब्रह्म बोलता है ? श्री कृष्ण को परब्रहम से भी ऊपर बताता है ? उसके लिए हम प्रमाण दिखाते हैं। यह प्रमाण देखने के बाद उसको सत्य जान पड़ेगा। कि आखिर सत्य क्या है ? देखो___**

____महाभारत, शांतिपर्व, 530 पृष्ठ_____

अर्थात यहां लिखा है, श्री कृष्ण ने ब्रह्ममुहूर्त में परब्रह्म ईश्वर का ध्यान किया। तत्पश्चात शौचादि दैनिक हवन संध्या उपासना के कार्यों से निवृत होकर गायत्री मंत्र का जाप और अग्निहोत्र किया।

_____महाभारत उद्योग पर्व___85/21______

अर्थात; श्री कृष्ण जी जिस समय वृकस्थल पर पहुंचे, तब सूर्यास्त होने वाला था, उस समय श्री कृष्ण ने रथ से उतरकर स्नान आदि करके ईश्वर का ध्यान करने के लिए बैठ गए।

_____महाभारत सभापर्व _____38/18______!

श्री कृष्ण वेद वेदांग विज्ञानवेता और बल में तथा शास्त्रारथ विद्या में इतने निपुण है, कि उनसे अधिक इस समय संपूर्ण पृथ्वी पर दूसरा कोई मनुष्य नहीं है।

समाधान____इस श्लोक में भगवान श्री कृष्ण को मनुष्य ही बताया है। मनुष्य से तुलना की है, जो लोग यह बोलते हैं भगवान श्री कृष्ण परमेश्वर थे, वे अज्ञानी है। लोग श्री कृष्ण को विष्णु जी का अवतार बताते हैं, अवतार का अर्थ गुण है, जो गुणों में श्रेष्ठ है उसको अवतार कहते हैं। जिसमें 10

Edit with WPS Office

गुण होते हैं उसको अवतार कहते हैं लोग मान लेते हैं। क्योंकि लोग अवतार का अर्थ प्रकट होने से ले लेते हैं। जबकि अवतार के विपरीत है अवतार का अर्थ गुणों से श्रेष्ठ जिसमें सभी गुण विद्वान हैं, वह भगवान है।

भागवत पुराण स्कंद 10 , अध्याय 45, श्लोक 34
यहां लिखा है श्री कृष्ण और बलराम ने यदुकुल के पुरोहित गर्गरवाच से जनेऊ धारण कराकर दिउजत्व प्राप्त किया। और गायत्री मंत्र की दीक्षा ली। तत्पश्चात गुरुकुल में जाकर 6 अंगों सहित चारों वेद उपनिषद धनुर्वेद चारों उपवेद धर्मशास्त्र ,न्यायशास्त्र, मीमांसा सहित राजनीतिशास्त्र का विधिवत अध्ययन किया।
समाधान____अगर भगवान श्री कृष्ण परब्रह्म होते तो इन जनेऊ के तीन ऋणों में क्यों बंधते?

- **महाभारत में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि ____**

अहं हि तत् करिष्यसि परमपुरूषकारत: ।
दैवं तु न मया शक्यं कर्म कर्तु कथठ्चन ।।
अर्थ ____ मैं एक श्रेष्ठ पुरुष की भान्ति अपने पुरुषार्थ से तो कुछ कर सकता हूं , किन्तु दैवी (ईश्वरीय) विधान में हस्तक्षेप करना मेरे सामर्थ्य से बाहर है ।

इसलिए आगे भगवान श्री कृष्ण ने कहा था गीता में मेरे लिए इस जीवन में कोई कर्म शेष नहीं है। मैं जन्म मृत्यु से मुक्त हूं। फिर भी मैं कर्म करता हूं। ताकि लोग मेरे जैसे मनुष्य रूप का आचरण कर सके। **गीता __३/२२ ।**
तो आप लोग समझ सकते हो सत्य को जान सकते हो की गीता में भगवान श्री कृष्ण परब्रह्म का वर्णन किया था , वे मनुष्य थे, गुणों से महापुरुष थे। भगवान थे । परमात्मा नहीं। परमात्मा तो परब्रह्म परमेश्वर निराकार ओम है। जिसका जप करने के लिए स्वयंम भगवान श्री कृष्ण ने कहा ब्रह्म रूप में उसका व्याख्यान किया ।

एक श्लोक राम के विषय में भी लिखते हैं, मैं साधारण मनुष्य की तरह

Edit with WPS Office

उनका जन्म हुआ, सभी मनुष्य में गुणों में श्रेष्ठ थे। इस भूमंडल पर तीनों लोकों में उनकी बराबरी करने वाला कोई नहीं था। उन्होंने सदा मर्यादा का पालन किया। इसलिए वो मर्यादापुरुषोत्तम कहलाए।

आज लोग कहते हैं की राम के जैसा इस भूमंडल पर कोई नहीं, भरत के जैसा भाई नहीं। तो इस प्रकार किससे तुलना की जा रही है **मनुष्य से या ईश्वर से** ? जरा विचार किया आप लोगों ने ? यह तुलना साधारण मनुष्य से की जा रही है। कि ये महापुरुष सभी मनुष्यों में श्रेष्ठ हैं। इसीलिए मनुष्य से उपाधि दी गई है।

रावण ने जब ब्रह्मा से वरदान मांगा था, तो उन्होंने वरदान में मांगा था कि उन्हें कोई भी पराजित न कर सके , देवता, गंधर्व, यक्ष ,राक्षस, असुर ! लेकिन मनुष्य को छोड़ दिया, रावण मनुष्य को सभी जातियों में निर्बल समझता था। जिसको रावण ने निर्मल समझा था कमजोर समझा था मनुष्य जाति को, वही मनुष्यों में राम जैसे पुरुष ने जन्म लिया। रावण शक्तिशाली होने के बाद भी उस पर साधारण मनुष्य भारी पड़ गया।

इसलिए कहने का तात्पर्य यह है राम ने भी साधारण मनुष्य की तरह जन्म लिया। मनुष्य के रूप में जन्म लेने के बाद ईश्वर की उपासना, पूजा ,हवन यज्ञ को नहीं छोड़ा, प्रतिदिन करते थे। एक प्रमाण दिखाते हैं।

वाल्मीकि रामायण__(अयोध्याकाण्ड सर्ग 87, श्लोक 11, गीता प्रेस गोरखपुर! ___

तीनों ! भगवान श्री राम, श्री लक्ष्मण व माता सीता ने मौन धारण कर एकाग्रचित होकर संध्या उपासना किया ईश्वर का ध्यान किया।

विशेष____देखो ! श्री रामचंद्र जी भगवती सीता और लक्ष्मण की प्रातः सायं। प्रार्थना, संध्या उपासना किया करते थे।

अब तो विश्वास हो गया होगा जो भगवान श्री कृष्ण को ही परब्रह्म बोलते हैं, अगर भगवान श्री कृष्ण परब्रह्म परमेश्वर ईश्वर होते तो वह ध्यान क्यों करते ? 12 साल तक हिमालय पर्वत पर जाकर **(दोनों पति-पत्नियों ने स्वयं भगवान श्री कृष्ण और उनकी पत्नी माता रूकमणि) ब्रह्मचारी का पालन किया था।** तब प्रदुमन जैसा पुत्र हुआ।

Edit with WPS Office

जो परब्रहम ईश्वर का ध्यान करता है , वह ईश्वर का सच्चा भक्त योगी हो जाता है।
अगर अब भी किसी के मन में शंका उठ रही है तो हम दूसरा उदाहरण भी देते हैं। क्योंकि आपके मन में सवाल उठ रहा होगा जब अर्जुन ने श्री कृष्ण से दोबारा गीता का ज्ञान पूछा तो उन्होंने मना क्यों किया? जिसका उत्तर हम लिख आए हैं ऊपर ! **महाभारत अश्वमेधिक पर्व , अध्याय 16, श्लोक 6_13** में कहा है, हमने प्रमाण लिखा हुआ है ऊपर देख लेना।

- **अब हम दूसरा उदाहरण और दिखाते हैं। महाभारत से ही____!**

जैसे_____माता गांधारी ने अपने तप भक्ति सामर्थ्य से सिद्धि पा ली थी । तो उन्होंने अपनी अंतरात्मा दृष्टि से दुर्योधन के शरीर को वज्र की भर्ती कठोर बना दिया था । हालांकि जहां दुर्योधन ने गुप्तांगों के पास केले के पत्ते लपेट रखे थे ,वहां से वह भाग कच्चा रह गया? जब इस बात का गांधारी को बोध हुआ , तो वे चिंतित हो गई। दुर्योधन ने कहा माता आप दोबारा से आंखों की पट्टी बांध दोबारा शरीर देखिए मैं केले के पत्ते हटा दूंगा? दुर्योधन के इस प्रकार कहने पर गांधारी ने कहां? अब मुझ मैं वह सामर्थ्य तप नहीं है, जो अब तुझे दोबारा वज्र का बना दू। मेरी वर्षों की तपस्या का फल था जो मैंने तुझे आशीर्वाद के रूप में दे दिया।
इसी प्रकार श्री कृष्ण जी ने अर्जुन से कहा था ? जब मैं योग अवस्था में था। अब मैं योग अवस्था में नहीं हूं। अब मैं तुझको वह ज्ञान दोबारा से नहीं दे सकता।
यहां इसका मतलब यह नहीं समझना की श्री कृष्ण में योग शक्ति नहीं रही ? योग शक्ति तो पूर्ण है। लेकिन जैसे__ एक बार ज्ञान प्रदान कर दिया गया ? उसे दोबारा उस व्यक्ति को ज्ञान नहीं दिया जा सकता। अगर अर्जुन की जगह कोई और उनसे ज्ञान देने के लिए बोलता ? जो गीता में अर्जुन को दिया था, तो योग माया से उसको भी वही ज्ञान प्रदान करते। परंतु इस प्रकार किसी ने नहीं पूछा ? ना ही इस प्रकार का वहां कोई वर्णन है। सिर्फ अर्जुन के अलावा उद्धव को ज्ञान दिया गया । इनको अलग प्रकार का ज्ञान दिया गया था।

Edit with WPS Office

हमने इस 18.66श्लोक का अर्थ अलग-अलग विद्वानों के भाष्यों से भी मिलाया है और दिखाया भी है । अतः आपको दिखाया अब आप लोग समझ गए होंगे कि इस्कॉन वालों ने अर्थ के अनर्थ किए हैं। 18.66 इस अध्याय के श्लोक में ये लोग मानते हैं? कि सभी धर्मो का त्याग कर दो और सभी शास्त्र युक्त कर्मों विधि विधान का त्याग कर दो मेरी शरण में आ जाओ।

भगवान की भक्ति के नाम पर आपको किसी भी मर्यादा का आलंबन लेने की जरूरत नहीं है? किसी भी तरह का ज्ञान प्राप्त करने की जरूरत नहीं है? आप भक्ति में आ जाओ? आप भक्ति करने लगो भगवान की और इन सभी चीजों को उतार के रख दो जितनी भी शास्त्र युक्त मर्यादा है ? तो इस तरह का दुष्ट प्रचार किया जाता है इस्कॉन की तरफ से।??

- **अब हम आपको बताएंगे भगवान कृष्ण का भाव क्या था। आखिर किस चीज के त्याग के लिए वो बोल रहे थे?? देखो प्रमाण गीता से____**

श्रीमद् गीता पहला अध्याय 1.33,,1.9 और
अध्याय 9. श्लोक 22 में कहा है

पहला अध्याय 33 वे श्लोक में कहा है

हमें जिनके के लिए राज्य , भोग और सुखादि अभीष्ट हैं, वे ही ये सब धन और जीवन की आशा को त्याग कर युद्ध में खड़े हैं।

पहला अध्याय श्लोक 9 में कहा है

और भी मेरे लिए जीवन की आशा त्याग देने वाले बहुत से शूरवीर अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित और सब के सब युद्ध में चतुर है।

यहां पर इन श्लोक में भगवान श्री कृष्ण जी अर्जुन को समझा रहे हैं और कह रहे हैं जैसे आपके शत्रु दल के सभी योद्धा राज्य के सभी सुख चैन को छोड़कर अथवा अपने परिवार को भूलकर और अपने प्राणों की परवाह किए बिना यहां युद्ध भूमि में खड़े हैं

इसी प्रकार, है अर्जुन! तुम भी अपने सभी ऐश्वर्या सुखचैन त्याग कर समर्पण भाव से राज्य भोग सुख आदि सभी के प्रेम भाव को छोड़कर मेरी शरण में

Edit with WPS Office

आ।
तो यहां इस श्लोक में भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को धर्म परिवार का त्याग के लिए नहीं कह रहे बल्कि कर्तव्य की ओर दिशा कर रहे हैं कि यहां है अर्जुन तुम्हारा यह कर्तव्य है युद्ध करने का उन सभी को भूल जा और अपनी एक दृष्टि एक लक्ष्य रख। तो यहां यह मतलब होगा इस श्लोक का।?
भगवान श्री कृष्ण जी कर्तव्य धर्म मर्यादा का त्याग के लिए नहीं कह रहे बल्कि उसे उसके कर्तव्य का बोध करा रहे हैं ? उसका एक दृष्टि एक लक्ष्य का बोध करा रहे हैं । अगर भगवान श्री कृष्ण सभी धर्मो को त्यागने की बात कहते तो सभी धर्मो में बहुत से धर्म आते हैं जिनका त्याग कर देने पर व्यक्ति पशु हो जाए ??

मेरा आप सभी सनातनियों से निवेदन है इस इस्कॉन की गीता को ना पड़े । जो इस ग्रंथ का प्रचार करते हैं कि इस तरीके की मिथ्या को बढ़ावा ना दे ??

है सनातनियों है बंधुओ आप जरा विचार तो करो जब भगवान श्री कृष्ण ने शुरू में गीता में कहा है कि जब-जब धर्म की हानि होती है तब तब में आता हूं धर्म की रक्षा के लिए ? ऋषि मुनियों की रक्षा के लिए ? समाज की रक्षा के लिए । धर्म स्थापना के लिए मैं आता हूं। तो यहां समझने वाली बात यह है कि भगवान श्री कृष्ण बाद में क्यों मना कर सकते हैं ? सभी धर्मो के त्याग के लिए ?? तो इस प्रकार वहां सर्वाधार का मतलब अधर्म ही होगा ?! तो इस प्रकार से बाद में अर्जुन भगवान श्री कृष्ण से कहते हैं ?
18 वा अध्याय,,73 श्लोक। मैं कहां है?
अर्जुन बोले,, है अच्युत ! आपकी कृपा से मेरा मोहं नष्ट हो गया ? और मैंने स्मृति प्राप्त कर ली है, अब मैं संशयरहित स्थिर हूं अत: आपकी आज्ञा का पालन करूंगा।?
अर्जुन यहां साफ-साफ कह रहे हैं की, हे केशव ! जैसे मेरे शत्रु बिना किसी की परवाह किए बिना राज्य परिवार का रणभूमि में किसी की परवाह नहीं है चाहे प्राण जाए या ना जाए । विजय हो या ना हो। तो इसी प्रकार उसी प्रकार मैं भी रणभूमि में खड़ा रहूंगा और जैसा आप कहोगे जैसा आपने कहा इस आज्ञा का पालन करूंगा।

Edit with WPS Office

तो इन सभी श्लोक का मतलब इसी प्रकार है जैसे हमने सभी विद्वानों के प्रमाण सहित दिखाएं हैं और इस्कॉन की गीता प्रामाणिक नहीं है बढ़ा चढ़ा कर भक्ति पर जोर दिया गया है। हम आपको कुछ प्रमाण दिखाते हैं।

श्रीमद् भागवत महापुराण____6.1.40

श्री विष्णुधर्मपुराण बैखानसगृहासूत्र

श्रुति स्मृति शास्त्रों में बताए गए विधि विधान भगवान की ही आज्ञा है, जो वेद शास्त्रों और स्मृति की, इनकी अवहेलना करने वाला मेरा प्रिय कभी नहीं हो सकता।

नारद महापुराण पूर्वार्ध 15.52 में लिखा है कि जो स्वधर्म का परित्याग कर भक्ति मात्र से जीवन धारण करते हैं, उस पर भगवान विष्णु कभी संतुष्ट नहीं होते वह तो धर्माचार्य से ही संतुष्ट होते हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 33. पृष्ठ तैंतीसवां

• [मैं ब्रह्म हूं , सरल भाषा में समझे]

हम ब्रह्म सूत्र की चर्चा करते हैं___

ब्रह्म सूत्र के आधार पर संसार भर में अद्वैतवाद का प्रचलन हुआ है। अद्वैतवाद क्या है? जैसे माना जाता है ईश्वर के अतिरिक्त अन्य किसी पदार्थ की कोई सत्ता नहीं होती? ये ब्रह्म सूत्र से कैसे लिया ? किसने लिया ? यह बात अलग है, लेकिन हम एक बात कहना चाहते हैं ? कि यह ब्रह्म सूत्र है ही नहीं? कि ईश्वर की अतिरिक्त कोई सत्ता नहीं है। **आदि शंकराचार्य जी**

Edit with WPS Office

महाराज ने यह स्वीकार किया, ईश्वर और जीव दोनों अलग है। और प्रकृति भी अलग है।

इसलिए ब्रह्म सूत्र के चार सूत्रों पर थोड़ा लिखने का प्रयास करते हैं।

पहला सूत्र कहां से प्रारंभ होता है, अर्थात ब्रह्म जिज्ञासा__हम ब्रह्म को जानने की इच्छा करते हैं?

भगवान व्यास जी महाराज ब्रह्म के विषय का प्रतिपादन प्रारंभ कर रहे। और कह रहे हैं कि अब हम ब्रह्म को जानने की इच्छा करते हैं।

दूसरे सूत्र में जगत आ गया ?

जिसको लोग कहते हैं मिथ्या है? लेकिन भगवान व्यास ब्रह्म के बाद जगत को जोड़ देते हैं। ब्रह्म के बाद जगत को कैसे जोड़ते हैं जिससे जन्म आदि होता है, किसका जगत? स्वयंम शंकराचार्य जी ने इसका यही अर्थ किया कि जगत की स्थिति, प्रलय और जन्म जिससे होता है उस ब्रह्म को जानने की इच्छा करते हैं। जिससे जन्म आदि होता है किसका जन्म अगर ईश्वर की अतिरिक्त कोई वस्तु नहीं है, तो जन्म किसका ? ईश्वर के अतिरिक्त सब कुछ मिथ्या है। तो हम आपको एक बात बता दे मिथ्या कि जन्म होता नहीं। इसलिए जगत एक वास्तविक सत्ता है। वास्तविक सत्ता और सतस्वरूप सवरो में अंतर है। वास्तविक सता यह है कि जैसे___ हम यज्ञशाला में बैठे हैं, लेकिन हमारा यह नित्य अस्तित्व नहीं है, क्योंकि हम यहां सदा नहीं बैठे रहेंगे ? आत्मा आवश्यक है लेकिन आत्मा पता नहीं कहां कहां जाकर आया लेकिन पूर्ण वर्तमान का सत्य यह है कि हम यज्ञशाला में उपस्थित हैं , वैसे ही जगत सत्य है ,वास्तविक है ,सत्यस्वरूप नहीं बल्कि वास्तविक है सत्यस्वरूप कहते हैं , जिसकी सत्ता सदैव बनी रहे? तो जगत की सदैव तो नहीं रहती, लेकिन जब तक रहती है ,जगत वास्तविक है ,काल्पनिक नहीं है ? मिथ्या नहीं है ? तो फिर क्या है ? जिसकी ऐसी सत्ता जिसकी सदैव रहती हो , उससे जगत का जन्म होता है। ईश्वर से नहीं ? ईश्वर चेतन है ,लेकिन जगत जड़ है। इसलिए ईश्वर से जगत का जन्म हो ही नहीं सकता। तो और ऐसी कोई सत्ता होनी चाहिए । जो जड़ हो वह सत्ता का नाम है प्रकृति । उस सत्ता के अनेक नाम है महाभारत में ब्रह्मा विष्णु महेश 30 नाम के गिनाएं हैं।   जिसमें एक नाम प्रकृति है, स्वाभाविक अवस्था स्वाभाविक अवस्था कैसी है ईश्वर के अतिरिक्त। जैसे____एक व्यक्ति काम कर रहा है, काम कर

Edit with WPS Office

रहा है तो वह उसके ऊपर बल लग रहा है, बल लग रहा है, तो इच्छा कर रहा है, किसी से प्रेरित हो रहा है! कोई कह रहा है खेती का काम करो। और उसका परिवार कह रहा है पैसे लाओ पैसे चाहिए ? कोई नहीं कह रहा है तो खुद अपने मन से कह रहा है मुझे पैसे चाहिए ? भोजन चाहिए ? यह स्वाभाविक अवस्था नहीं है ! और प्राकृतिक अवस्था भी नहीं है, प्राकृतिक अवस्था आराम से शिथिल शांत किसी की बिना प्रेरणा के रही है ? जो रह सकती है वह सदैव रह सकती है वह स्वाभाविक अवस्था। महाप्रलय की पदार्थ की ऐसी अवस्था है जो सदा रहती है, कोई छेड़छाड़ न करें तो सोए रहती है । लेकिन यह जो जगत की अवस्था यह सदा नहीं रहती । तो जो सदा रह सकती है, उस अवस्था को जिससे जगत का जन्म होता है, जगत शब्द का अर्थ है सदैव चलता रहता है। प्रत्यनशील रहता है। इस सृष्टि में कोई भी पदार्थ ऐसा नहीं जो चलता नहीं । जो चलता नहीं वह पदार्थ नित्य है , वो पदार्थ अविनाशी है। अजन्मा है ,लेकिन जो चलता है, वह ना तो अजन्मा है, ना ही अविनाशी है, तो जगत का जिससे जन्म होता है। किससे ब्रह्म से ? उपादान कारण नहीं है जगत का, ब्रह्म निमित्त कारण है। फिर जगत की बात क्यों कर रहे हैं, महर्षि व्यास महर्षि जगत की बात इसलिए कर रहे हैं कि जगत को जाने बिना ब्रह्म को नहीं जाना जा सकता ? जब ब्रह्म के जानने की बात कर चुके तो जगत को बीच में ले आए भगवान व्यास ,क्यों लाए ? क्या जरूरत थी ? हम बात कर रहे थे ब्रह्म को जानने की और जगत उसमें किस लिए आया ,उसमें जगत इसलिए आया ब्रह्म को जानने का सबसे बड़ा साधन है, तो वह जगत है। ब्रह्म को जानने की इच्छा के लिए जगत का जन्म, स्थिति , प्रलय ,को जानना अनिवार्य है, **क्यों अनिवार्य है** ? मान लीजिए ! जैसे___तुम्हें इच्छा हो रही है कि यह आदमी मरा है कि जीवित है ,देखो की दूर सोया हुआ है। तो क्या देखोगे ? जीवात्मा आता जाता थोड़ी नहीं है अगर उसकी सब प्रकार से क्रिया करके भी, जीवात्मा तो मिलेगा नहीं, तो किस चीज से पहचान करोगे ? क्योंकि हम शरीर से पहचान करेंगे ? शरीर से श्वास ले रहा है कि नहीं ? हाथ पैर हिल रहे हैं कि नहीं ? हृदय धड़क रहा है कि नहीं ? अगर यह सब है तो अर्थात इसमें जीवात्मा है ! तो जीवात्मा को जानने के लिए किसको जाना शरीर को। शरीर को जानने का शरीर को जानने से जीवात्मा का अस्तित्व

Edit with WPS Office

का बोध हुआ। तो इसी प्रकार पहले ब्रह्म को जाने की वह है कि नहीं, यह जानने के लिए जगत को देखें, जगत में प्रत्येक पदार्थ का कैसे जन्म हुआ है ? कैसे उसकी स्थिति है, और कैसे उसकी मृत्यु हो रही है ,हर क्षण तीनों चीज हो रही है ! हमने शरीर के मुंह से रोटी खाई, अब रोटी की स्थिति यह है लार क्रर्मिक्स होकर के स्टाक की लार से क्रिया होगी। फिर आमाशय में जाएगा तो फिर वो रोटी नहीं रहेगी। यहां पर भोजन कुछ और हो जाएगा। ग्रहणी में जाकर कुछ और हो जाएगा। बड़ी आंत में जाकर कुछ और हो जाएगा। तो यह इस प्रकार गति चल रही है। परिवर्तन हो रहा है। इसी प्रकार परिवर्तन का नाम जगत है, सृष्टि में हो रहे विभिन्न परिवर्तनों को देखो। सृष्टि में हो रहे जन्म स्थिति प्रलय मृत्यु की क्रियाओं को देखो। परमाणु अणु बड़े-बड़े लोक लोकातंर मिलकर बना रहे हैं, टूट रहे हैं , बन रहे हैं, टूट रहे हैं , ये सब गति कर रहे हैं। ये सब जगह हो रहा है इसका नाम है जगत। **जो ब्रह्म को जानने की इच्छा करते हैं , जानने के लिए पहला साधन बताया जगत ।** तो कुछ लोग क्या सोचते हैं कि जगत मिथ्या है, इसलिए जगत से दूर हो जाओ दूर हो जाने से ब्रह्म प्राप्त हो जाएगा।

अगर जगत से दूर हो जाने से ब्रह्म प्राप्त हो जाता ? मोक्ष हो जाता ? तो परमात्मा जगत की रचना ही नहीं करता ? जीवात्मा को शरीर देता ही नहीं ? वह तो मोक्ष में ही था, पर वह मोक्ष में ही था पर वह ऐसी अवस्था में था, जैसे पागल को पागल की नजर में पूरी दुनिया है ही नहीं। वो दुनिया से हटा हुआ रहता है। अपने में मस्त रहता है। वैसे ही मोक्ष वाला भी रहता है, योगी भी रहता है। लेकिन दोनों में अंतर है योगी और मोक्ष वाला ज्ञान कि अवस्था में रहता है। लेकिन पागल अज्ञान की अवस्था में रहता है। दुनिया से अलग-अलग हो जाने का नाम मोक्ष नहीं है। **दुनिया से अलग होकर के ब्रह्म को नहीं प्राप्त किया जा सकता। दुनिया में रहते हुए , दुनिया में ना रहो ऐसे ब्रह्म प्राप्त किया जा सकता है। अनासक्ति योग निष्काम योग कैसा निष्काम योग ?** सब कुछ ईश्वर का है उसका उपभोग करें प्रत्यपूर्वक उसका ही माने, उसकी ही जाने और उसका जैसा व्यवहार करें, इसलिए जगत है चलायमान है।

देश जीव की दृष्टि से नहीं चलता , काल की दृष्टि से चलता है । देश की दृष्टि क्या है ?अभी हम सोच रहे हैं हम बैठे हैं लेकिन हमारे साथ कितनी गतियां

Edit with WPS Office

जुड़ी हुई है मालूम है किसी को चलो हम बताते हैं! 1600 किलोमीटर प्रति घंटे की गति से अपनी अक्ष पर तो 1600 किलोमीटर प्रति घंटा हम गेंद की तरह घूम रहे हैं ? इसी प्रकार पृथ्वी घूमती है सूर्य के चारों ओर 1 लाख किलोमीटर प्रति घंटा घूम रही है ! अब सूर्य भी किलोमीटर घूम रहा है, 7 लाख प्रति किलोमीटर घंटे से घूम रहा है। यह तीन गति तो हम जानते हैं। 1600 किलोमीटर प्रति घंटा ,एक लाख किलोमीटर प्रति घंटा, 7 लाख किलोमीटर प्रति घंटा और आकाशगंगा भी किसी के चारों ओर घूम रही है वह गति और तेज हो गई यह तो हुई देश की दृष्टि से दूरी,
अब काल की दृष्टि से दूरी, शिशु जन्म लेता है, बालक होता है , युवा होता है, जवान होता है, फिर बूढ़ा होता है, मर जाता है, यह काल की दृष्टि से होता है। तो दोनों की दृष्टि से जो गति होती है ,जिसमें गति होती है ,उसका नाम है जगत । और दोनों की गति ईश्वर और प्रकृति दोनों की जरूरी है, जीवात्मा भी होती है। काल की दृष्टि से नहीं, देश की दृष्टि से होती रहती, वह एकदेशी होती है। **तो जो लोग यह सोचते हैं कि ब्रह्म से अलग हटकर के घर बार छोड़कर के सब कुछ छोड़कर के ब्रह्म हमको ले जाएगा। अगर ऐसा होता तो भगवान श्री कृष्ण को घर बसाने की क्या जरूरत रहती ? ना युद्ध लड़ने की जरूरत रहती ? ना महाभारत युद्ध का नेतृत्व करने की जरूरत रहती ? और ना भगवान राम को होती क्यों पहुंचे रावण से लड़ने को वे भी कह देते कि हैं राम रावण क्या है ? ये सब ब्रह्म ही तो है !** ऋषि दयानंद से ये ही तो कहा है ?क्या समाज सुधार की बातें करते हो ? क्या लोभ उपकार की बातें करते हो ?आप,हम, सब कुछ ब्रह्म है ,बस ब्रह्म में रम जाओ ? जगत को छोड़ो ऐसे बहुत साधुओं ने कहा ,ऋषि दयानंद ने क्या कहा कि ब्रह्म कहां रहता है ? कि सबके हृदय में रहता है विराजमान है, सबके हृदय में विराजमान है तो सबके हृदय में जाकर देखा कि सब लोग कितने पीड़ित है ? कोई भूख से पंडित है कोई रोग से पंडित है देश पराधीन ,कोई रोग से पीड़ित है ! देश में प्रतिदिन लोग दुखी हैं, कितनो पर अत्याचार हो रहा है । तब आपका ब्रह्म नहीं कहता कि उनकी कुछ सेवा की जाए कुछ परोपकार किया जावे ? इनका परोपकार करते-करते मुझे को तो मोक्ष हो जाएगा मैं तो परोपकार करूंगा जब ईश्वर ने जगत बनाया है, और हम ईश्वर को जगत समझेंगे ? तो हमारी जगत में रहने की शैली बदल जाएगी ? अगर यह सोच

ले। कि ईश्वर कुछ नहीं है। हम ही जगत के मालिक हैं। जैसे__ **आज संसार सोच रहा है ऐसे करके क्या सोचता है, लूट सके तो लूट जितना लूट सको लूटो! कौन कहेगा ऐसा ऐसी बात कौन कहेगा?** जो यह सोचेगा, कि इस जगत का स्वामी कोई नहीं है। हम जीव स्वतंत्र हैं? इसका स्वामी कोई नहीं ,और जो यह सोचेगा, हम जीव भी नहीं है? हम मशीन जड़ हैं। अगर सब कुछ जीव मान ले। तब व्यवहार कुछ बदले, तो जो यह सोचेगा कि जैसे मैं जीव हूं ऐसे ये भी जीव है, वैसे और भी जीव हैं। सबको दुख और सुख दोनों को अनुभव होता है। इसलिए अपना व्यवहार बदलेगा। जीव की सत्ता मानने से ये व्यवहार बदलेगा। लेकिन ब्रह्म की सत्ता मानने से बिल्कुल बदल जाएगा ? **हम सब जीव हैं। लेकिन हम सब किसी की देन है , कर्म में स्वतंत्र अवश्य हैं, फल में पराधीन है, इसलिए वह सही जीवन जिएगा, जो ब्रह्म को जानने की जिज्ञासा हुई करते हैं, उनको पहले सृष्टि को जानना अनिवार्य है ?** आज संसार में बहुत सारे लोग कहते हैं, की में ब्रह्म में स्थित हूं, ये पहले की शैली है।

अगर लोहा आग में गर्म हो जाए, आंग हो जाए वह लोहा यह कहने लगे कि मैं अग्नि हूं ? तो गलत तो नहीं है क्योंकि वह गर्म लाल लोहा कहीं लग गया, तो आग लगा देगा। लेकिन वह कहेगा मैं अग्नि हूं तो यह गलत भी नहीं है गलत भी है। वास्तविकता क्या है? मैं अग्निमय हूं। लेकिन योगी भी यह कहता है कह सकता है कि मैं ब्रह्म में स्थित हूं? जिसने ब्रह्म का साक्षात्कार किया हो वह कह सकता है। **लेकिन हमने क्या समझ लिया, मैं भी ब्रह्म, वह भी ब्रह्म, और सब ब्रह्म, अगर सब ब्रह्म होते तो परिश्रम, उपासना, भक्ति, करने की जरूरत क्या?** अगर हम सब ब्रह्म है तो? किसी का परोपकार करने की आवश्यकता क्या? पढ़ लिखने एवं विद्वान बनने की आवश्यकता क्यों? हम तो सब ब्रह्म हैं। तो फिर क्या कहते हैं। ये ब्रह्म है जो अविधा ग्रस्त हो जाता है। तो अपने को ब्रह्म वश जीव समझ लेता है, ऐसा कहते हैं तो ब्रह्म किसका हो गया? अविधा किस पर हावि हो गई? ब्रह्म पर! जब ही तो जीव समझ ले अपने को अविद्या इतनी बलवान है, ब्रह्म पर भी हावि होकर के उसे भी कह देती है। जीव मान ले अपने को अविद्या बड़ी हुई या ब्रह्म अविधा की पूजा करें उससे बड़ा कोई नहीं वह तो ब्रह्म को भी वश में कर लेती है। परंतु ऐसा नहीं होता ब्रह्मा कभी जीव नहीं होता। दोनों अलग-

Edit with WPS Office

अलग सत्ताएं है । अगर सब कुछ ब्रह्म होता तो सृष्टि बनाता ही नहीं परमात्मा। परमात्मा कोई बालक थोड़ी नहीं है , जो रेतं में बैठा और कभी घर बना दिए जैसे ___छोटे बच्चे बनाते हैं, परमात्मा बालक नहीं है। जो छोटे बच्चों की तरह खिलौने बनाए ? बच्चे खेल क्यों करते हैं, बच्चे खेल इसलिए खेलता है क्योंकि उसे सुख खुशी मिलती है। वो मनोरंजन के लिए खेल करता है। तो परमात्मा ने जगत उसने मनोरंजन के लिए नहीं बनाया। लीला के लिए नहीं बनाया। लीला उसको कहते हैं, जो सरलता से बना दिया। यह खेल नहीं है खेल खेल में बनाया। वह खेल खेल का क्या अर्थ? कोई कार्य हो कहे कि यह तो मेरे बाएं हाथ का खेल है। आराम से कर लेता, ऐसे बनाया ईश्वर ने किसी और के लिए बनाया। अपने लिए नहीं ? कौन है वह जिसके लिए बनाया? सूर्य किसके लिए बनाया, परमात्मा के तो आंखें नहीं उसको तो जरूरत नहीं कुछ देखने की जिसको देखता है, उसमें वह बैठा हुआ है। किसके लिए बनाया सूर्य किसी और के लिए बनाया है? कौन है , जो चेतन होगा। जड़ के लिए तो बनाएगा ही नहीं। सूर्य पृथ्वी के लिए नहीं बनाया, पृथ्वी सूर्य के लिए नहीं बनाई? नीम पीपल के लिए नहीं बनाया, पीपल नीम के लिए नहीं बनाया? नदी समुद्र के लिए नहीं बनाई बादल नदियों के लिए नहीं बनाए? किसी और के लिए बनाएं? जिसके लिए बनाए वह भी चेतन है। ईश्वर की तरह ताकि उसका उपयोग कर सके, सुखी रह सके। जो चेतन होगा? वो चेतन भी ऐसा होगा, वह चेतन ऐसा होगा कि, ह तो चेतन, लेकिन पूर्ण नहीं होगा। पूर्ण हुआ तो उसको जरूरत नहीं बनाने की पूर्ण तो केवल ईश्वर है। इसलिए ऐसा चेतन और है जो पूर्ण भी नहीं है,सर्वव्यापक भी नहीं है, सर्व शक्तिमान भी नहीं है, सर्वज्ञ भी नहीं है, क्योंकि चेतन है ज्ञान वाला है। एक देश में रहने वाला है, अल्प शक्ति वाला है, चेतन में शक्ति होती है, जड़ में कोई शक्ति नहीं होती? जड़ में शक्ति है लेकिन वह सारी शक्ति परमात्मा की है। उस सत्ता का नाम है जीव जो चेतन ज्ञान वाला है एकदेशी है और अल्प शक्ति वाला है, पर उसके पास शक्ति है, अगर शक्ति ना हो, ज्ञान भी ना हो, चेतन ना हो , तो वह उपयोग ही कैसे हो करेगा? तो फिर ईश्वर की बनाई हुई सृष्टि बेकार हो जाएगी। तो सत्ता कितनी हुई तीन।

ईश्वर_ बनाने वाला सबका अध्यक्ष

Edit with WPS Office

जीव _सब का उपभोग करने वाला और जिससे बनाया जो पदार्थ है उसका नाम **,प्रकृति,** तीनों अनादि है। ईश्वर अलग है , परब्रह्म अलग है, यह सब कलांपनिक की बातें हैं।

अब अगला सूत्र____अगला सूत्र क्या दिया है एक तो जगत को देखकर के ईश्वर का अनुमान करो? यह जगत है तो इसको बनाने वाला भी है। शास्त्र वेद हैं तो उसका कारण है, ज्ञान का भी कारण होगा। ज्ञान अपने आप पैदा नहीं होता शास्त्र का कारण है। ब्रह्म जो शास्त्र को देखने पर भी ईश्वर का बोध होता है।

अगला सूत्र____अब शास्त्र से कैसे मालूम पड़ेगा? जगत से तो मालूम पड़ेगा हो गया, जगत को बनाते हुए किसी ने देखा नहीं है? ईश्वर ही बनाता है। लेकिन शास्त्र तो कोई भी लिख देता है। जैसे__लोग कहते हैं शास्त्र वेद ऋषियों ने लिखे बहुत सारे लोग यही कहते हैं? सिर्फ आर्य समाज जी को छोड़कर। वो कहते हैं वेद ईश्वर की वाणी, बाकी सब ऋषियों की वाणी है। तो इसके लिए सूत्र दिया है ,जैसा शास्त्र में है वैसे वेद में है। वैसा जगत में है ,इसलिए ऐसा लगता है कि दोनों को बनाने वाला एक है। जो प्रयोग में है, जो सिद्धांत में हैं, इसका अर्थ प्रयोग करने वाला सिद्धांत बनाने वाला दोनों एक ही हैं। यह तर्क दिया है। महर्षि व्यास जी ने इसका अर्थ क्या हुआ महर्षि व्यास जी संपूर्ण वेद के ज्ञाता थे, संपूर्ण वेद को समझते थे, और संपूर्ण सृष्टि के ज्ञाता थे दोनों में तुलना कर लो कोई कहे गाय और भैंस एक जैसी है, कौन रहेगा? जिसे दोनों देखी हो। दोनों दूध देती हो, दोनों के चार टांगे होती हो , बस कुछ उत्तर बता देगा भैंस काली रहती है और गांय सभी रंग की होती है। यह बात बताएगा तो कौन बताएगा यह बात? जिसने दोनों को अलग-अलग देखा हो। तो जिसने सृष्टि को पूरी तरह से नहीं जाना और वेद को पूरी तरह से नहीं जाना तो वह कहीं न सकता कि दोनों का समन्वय है। तो महर्षि व्यास कितने बड़े विद्वान थे, भू-तल के सबसे बड़े ऋषि माने जाते थे अपने समय के।

तो चार सूत्रों से क्या समझे? ब्रह्म को जानने के लिए प्राप्त करना अलग बात है।तो पहले जानने के लिए साक्षात्कार करके साक्षात्कार से ही जाना जाएगा। फिर प्रत्यक्ष जाना जाएगा। जगत का ज्ञान आवश्यक है, वेद का ज्ञान आवश्यक है ,लेकिन आज दुनिया में ऐसे भी योगी हो गए, जो वेद का

Edit with WPS Office

ज्ञान आवश्यक न आवश्यक समझते, ना जगत का ज्ञान आवश्यक समझते, फिर भी लोग आंखें बंद करके कह देते हैं योगी। सर पर बाल रखने से समाधि, पीट पर हाथ रखने से समाधि, नाम जपने से समाधि, वो ऋषियों को बिल्कुल नहीं समझते थे।
हम लोग क्या सोचते हैं, वेद में तो साहित्य, कहानी , इतिहास ,अलंकार , साहित्य विषय नहीं होता? साहित्य साधन होता है गंध पध के द्वारा समझाया जाता है। चाहे वह आध्यात्मिक की बात हो, चाहे विज्ञान की बात हो। अब कोई कहेगा इसके अलावा भी बहुत विषय होते हैं। इतिहास, भूगोल, राजनीतिक शास्त्र,समाजशास्त्र है, लेकिन होते हैं ,इन सभी विषयों को तभी जाना जा सकता है, जब आध्यात्मिक और पदार्थ विज्ञान जो दोनों को समझता है। वही अच्छी राजनीतिक कर सकता है। वही अच्छा समाजशास्त्री हो सकता है। वही अच्छा अर्थशास्त्री हो सकता है। वही संसार में जीने का सही रास्ता बता सकता है, **कौन ?** जो दोनों विज्ञान में पारंगत हो तो संपूर्ण विज्ञान से भरा हुआ है। जो यह कहते हैं सृष्टि को जानने की कोई आवश्यकता नहीं है। ईश्वर का ध्यान करने से वैसे ही समाधि लग जाएगी। स्वयंम भी मूर्ख है ,दूसरों को भी मूर्खता में ले जा रहा है। जो यह कहते हैं वेद के बिना ही ईश्वर प्राप्त हो जाएगा? कोई आवश्यकता नहीं ज्ञान की, वे भी स्वयंम मूर्ख है, दूसरों को भी मूर्खता में ले जा रहे हैं।
योग दर्शन सांख्य दर्शन दोनों को पढ़ो, इन्हीं के अनुसार यह सब बातें हैं, दोनों में ही प्रमाण है। सभी आर्ष ग्रंथ वेद पर ही आश्रित है। वेद धर्म ग्रंथ है। सभी ऋषियों के बने हुए ग्रंथ हैं। अगर धागे से मोती निकल जाएगे, बिखर जाएंगे, माला टूट जाएगी, इसलिए धागे से मोती निकालने का प्रयास नहीं करना चाहिए यह प्रयास करना अपराध है , जानबूझकर किया गया अपराध है अनजाने में किया गया तो अपराध नहीं है उसके लिए पश्चाताप है, पश्चाताप का विधान किया है भगवान शिव ने। **ये ब्रह्म की प्राप्ति घर पर रहकर भी हो सकती है। कहीं और जगह जो तुमने सुना, गुरु बिना कोई नहीं होता, पर ऐसा कोई गुरु नहीं होता जो कान में मंत्र पढ़ने से कोई गुरु नहीं हो सकता गुरु वह है जो शिक्षा देता है अगर अपने आप पढ़ सकते हो तो पुस्तक ही गुरु है।**

Edit with WPS Office

ये समझ लो तीनों सत्ताएं अलग-अलग होती है ,तीनों को पृथक पृथक समझना चाहिए। इनको समझाने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान, व पदार्थ विज्ञानज्ञान आवश्यक है।

ऐसा नहीं है, इनको नहीं जानोगे तो हम,जी, नहीं पाएंगे। बल्कि बड़ी सिंधियो को भी प्राप्त कर लेंगे। राक्षस बाणासुर के पास भी बहुत सिद्धियां थी। लेकिन सिधिंओ को प्राप्त करने से तात्पर्य यह नहीं होता कि हमने ईश्वर प्राप्त कर लिया, मोक्ष को चले गए हमने ईश्वर प्राप्त कर लिया मोक्ष को चले गए। हमारे मत में सिधियों को प्राप्त करना प्राण विद्या का फल है।

इस प्राण पर विजय पाने से क्या सिद्धि मिलेगी? ईश्वर प्राप्ति इसका परिणाम की तो आगे की बात है। जो गए असुर हो जाएंगे, अपनी प्रसिद्धि के लिए करते रहे ,इसके लिए पुरुषार्थ करना होगा।

ब्रह्म को जानो , ब्रह्म को जानने के लिए जगत को जानो। परोपकार करो। यह शरीर परोपकार है। जैसे __ जब ईश्वर परोपकार के लिए सृष्टि रचता है, हमसे भी यह अपेक्षा करता है हमसे यह इच्छा रखता है, कि हम उसके बनाए हुए शरीर से हम भी दूसरों का उपकार करें।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 34. पृष्ठ चौंतीसवां

- ## ______वैदिक शिक्षा______

Edit with WPS Office

➤ (गायत्री महामंत्र से प्रार्थना व कर्तव्य)

ओम भूर्भुव स्व तत्सवितुर् वंरेण्यंम भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न प्रचोदयात्। **(ऋ. ३/६२/१० , यजु. ३६.३ ,साम.६/३/१०)___!**

ओम भूर्भुव स्व:_हे ईश्वर ! आप सर्वरक्षक ,प्राणदायक दुखनाशक और सुखदायक है।

तत् सवितुर वरेण्यम्__आप समस्त जगत के उत्पादक और वरण करने योग्य हो।

भर्गो देवस्य धीमहि__आप शुद्ध स्वरूप परमात्मा का हम ध्यान करते हैं।

धियो यो न: प्रचोदयात्__आप हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें!

ओम असतो मां सदगमय__ (शतपथ ब्राह्मण)
हे ईश्वर ! मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलिए।

ओम तमसो मा ज्योतिर्गमय__ (शतपथ ब्राह्मण)
हे ईश्वर ! मुझे अविद्या से विद्या की ओर ले चलिए

ओम मृत्योर्मा अमृतं गमय__ (शतपथ ब्राह्मण)
हे ईश्वर ! मुझे मृत्यु से अमृत की ओर ले चलिए।

Edit with WPS Office

ओउम् आनंन्द__हे ईश्वर आप आनंद स्वरूप हैं, मुझे भी आनंद दीजिए।

सत्यं वद__तैतिरीय उपनिषद (शिक्षा वल्ली)__सत्य बोलो !

धर्म चर__तैतिरीय उपनिषद (शिक्षा वल्ली)__धर्म का आचरण करो।

वेद पठ__वेद पढ़ो।

यजस्व वीर __ **(ऋ. २/२६/२)** हे वीर! यज्ञ करो।

निष्कर्ष :_____ऊपर दिए गए मंत्र व उनके मंत्र को स्मरण प्रतिदिन प्रातः है, सायं गायत्री आदि मत्रों का जाप करो वैदिक धार्मिक याज्ञिक बनो।

➤ भाग; २. (दुर्गुणों से ग्रस्त न हो)

मा निन्दत। ___ (ऋ. ४/५/२)
निंन्दा मत करो ।

मा ऋध___ (अथर्ववेद ११/२/२०)
क्रोध मत करो

मा गृध:___। (यजुर्वेद ४०/१)
लोभ मत करो

मा उत जल्पी। (ऋग्वेद ८/४८/१४)
बकवास मत करो।

मा पृदाकु: । (यजुर्वेद ६/१२)
भेड़िए समान व्यवहार मत करो।

Edit with WPS Office

मा अहिभर: (यजुर्वेद ६/१२)
सांप समान व्यवहार मत करो।

मा पणिभुर (ऋग्वेद १/३३/३)
कंजूस मत बनो।

मा भेम (ऋग्वेद १/११/२)
भयभीत मत होवे।

मा श्रविष्म (सामवेद उ् १६०५)
हम खेद को प्राप्त न हो अर्थात कभी खिन्न न हो।

मा नो निद्रा (ऋग्वेद ८/४८/१४)
मुझे आलस्य न सताए ।

मा संवित्तथा (यजुर्वेद ६/३५)
कभी चंचल ने हो, कभी घबराओ नहीं।

निष्कर्ष____दुर्गुण हमेशा दुख देते हैं, और सद्गुण हमेशा सुख देते हैं। इसलिए दुर्गुणों का त्याग करो और सद्गुणों को धारण करो। जैसे_ ऋग्वेद में कहां है अक्षैर्मा दीव्य; (१०/३५/१३) अर्थात जुआ मत खेलो । यजुर्वेद में कहां है (५/५) अर्थात उच्च बनो , श्रेष्ठ बनो।

- # भाग: ३ ____मातृ ,पितृ भक्ति, गुरुभक्ति ,देशभक्ति, ईश्वर भक्ति की अनिवार्यता।

Edit with WPS Office

मातृदेवो भव। **(तैत्तिरीय उपनिषद शिक्षा वल्ली)**
माता को देवता मानने वाले बनो।

पितृदेवो भव। **(तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा वल्ली)**
पिता को देवता मानने वाले बनो।

आचार्यदेवो भव। **(तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा वल्ली)**
आचार्य को देवता मानने वाले बनो।

अतिथिदेवो भव। **(तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा वल्ली)**
अतिथि को देवता मानने वाले बनो।

मातृमान ,पितृमान, आचार्यवान पुरुषों वेद। **(शतपथ ब्राह्मण)**
श्रेष्ठ माता-पिता और आचार्य से श्रेष्ठ ज्ञानवान मनुष्य का निर्माण होता है।

माता भूमि; **(अथर्ववेद १३/१/२)**
भूमि अर्थात धरती मेरी मां है।

पुत्रों अहं पृथ्विया। **(अथर्ववेद १३/१/२)**
मैं धरती मां का पुत्र हूं।

त्वं हि न: पिता **(सामवेद ४/२/१३/३)**
हे परमात्मा ! आप हमारे पिता है।

त्वं माता **(सामवेद ४/२/१३/२)**
हे ईश्वर ! आप हमारी माता है

अदिति माता **(ऋग्वेद १/६/१६.१०)**
अदिति परमात्मा माता है।

Edit with WPS Office

स पिता स पुत्र (ऋग्वेद १/६/१६/१०)
ईश्वर हमारा पिता भी है, पुत्र भी है।

स न पितेव। (ऋग्वेद १/१/९)
ईश्वर पिता के समान पालक है

निष्कर्ष___मातृभक्त, पितृभक्त, गुरुभक्त ,देशभक्ति, और ईश्वर भक्त बनो। तथा सदैव इनका सम्मान करो। इससे जीवन सफल और श्रेष्ठ बनेगा।

➤ (भाग ४ __ ओम परमात्मा का स्वरूप व महत्व)

ओम ऋतो स्मर (यजुर्वेद ४०/१५)
हे जीव! तु ओम् का स्मरण कर।

ओम ख ब्रह्म (यजुर्वेद ४०/१७)
ईश्वर आकाश के समान व्यापक है

ओमिति ब्रह्म (तैत्तिरीय उपनिषद् १/८/१)
ओम ही ब्रह्म है।

उदगीथ्मुपासीत (छान्दोग्योपनिषद् १/१/९)
उच्च स्वर से गान करने योग्य ओम परमात्मा की उपासना करो।

तस्य वाचक :प्रणव; (योगदर्शन १/२६)
परमात्मा का निज नाम ओम है।

Edit with WPS Office

न तस्य परमात्मा अस्ति। **(यजुर्वेद ३२/३)**
परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं होती।

स पर्यगात् **(यजुर्वेद ४०/८)**
ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है।

स एष एक। **(अथर्ववेद १३/४/१२)**
ईश्वर एक ही है।

एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति **(ऋग्वेद १/१६/४/४६)**
एक ईश्वर को विद्वान लोग अनेक नाम से पुकारते हैं।

ओम इति एतद् अक्षरम्। **(मांण्डूक्य उपनिषद _१)**
ओम परमात्मा अविनाशी है।

विभू प्रभुरिति त्वां उपास्मेह। **(अथर्ववेद १४/४/४६)**
हे ईश्वर ! विभु प्रभु नाम से आपकी उपासना करते हैं।

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति **(यजुर्वेद ३१/१८)**
परमात्मा को जानकार ही मृत्यु आदि सभी दुखों से छूट सकते हैं।

निष्कर्ष__ईश्वर के अनेक नाम है परंतु उसका मुख्य नाम ओम है। उसका ध्यान करना संसार का सर्वश्रेष्ठ कार्य है।

➤ भाग ५ ___(सुदृढ़ स्वास्थ्य श्रेष्ठ तेजस्वी बने)

Edit with WPS Office

अश्मा भवतु नस्तनू **(यजुर्वेद २९/४९)**
हमारे शरीर पत्थर समान दृढ़ कठोर हो।

मा पुरा जरसो मृथा : अथर्ववेद ५/३०/१५
बुढ़ापे से पूर्व न मरे।

स्वे क्षेत्रे अनमीवा विराज **(अथर्ववेद ११/१/२२)**
अपने शरीर में निरोग होकर रहो।

कालों अश्वों वहति। **(अथर्ववेद ११/५३/१)**
समय रूपी घोड़ा दौड़ रहा है।

नेत्वा जहानि **(अथर्ववेद१३/१/१२)**
हे प्रभु ! मैं तुझे कभी न छोडूं।

न स्तेयम् अहि। **(अथर्ववेद १४/१/५७)**
मैं चोरी करके न खाऊं।

नो अभयं कुरु **(यजुर्वेद ३६/२२)**
हे प्रभु ! हमें अभय कीजिए।

अहमनृतात् सत्यमुपैमि **(यजुर्वेद १/५)**
मैं असत्य को छोड़कर सत्य को धारण करूंगा।

अहं सूर्यइवाजनि **(सामवेद १५२)**
मैं सूर्य के समान तेजस्वी हो जाऊं।

असन्तापं में हृदयम्। **(अथर्ववेद १६/३/६)**
मेरा हृदय संन्ताप से रहित हो।

Edit with WPS Office

प्रियं मां कृणु देवेषु (अथर्ववेद १९/६२/१)
हे प्रभु! मुझे देवों का प्रिय बना दो।

अग्ने वेचरस्विन कृणु । (अथर्ववेद ३/२२/३)
है प्रकाश स्वरूप प्रभु ! मुझे तेजस्वी बना दो।

निष्कर्ष_____ शरीर को स्वस्थ, सुदृढ़ , निरोग, तेजस्वी और दीर्घायु बनाने के लिए प्रतिदिन व्यायाम , प्राणायाम करो तथा चरित्रवान बनो।

➤ भाग ६_ (दीर्घायु हेतु प्रार्थना)

अणृना: स्याम। (यजुर्वेद ६/११७/३)
हम किसी के ऋणी न हो।

विश्वदानी सुमनस: स्याम (ऋग्वेद ६/५२/५)
हम सदा पुष्प के समान बने।

वयं भगवन्त: स्याम। (अथर्ववेद १/१०/२०)
हम ऐश्वर्यावान बने।

अदीना; स्याम। (यजुर्वेद ३६/२४)
दीनता रहित होकर जीवें।

पश्येम शरद: शतम् (यजुर्वेद ३६/२४)
सौ वर्ष तक देखते रहे।

जीवेम शरद् : शतम्। (यजुर्वेद ३६/२४)

Edit with WPS Office

सौ वर्ष तक जीवित रहे।

शृणुयाम शरद् शतम्। (यजुर्वेद ३६/२४)
सौ वर्ष तक सुनते रहे।

प्रब्रवाम शरद: शतम् (यजुर्वेद ३६/२४)
सौ वर्ष तक बोलते रहे।

भूयश्च शरद् शतात्। (यजुर्वेद ३६/२४)
सौ वर्ष से अधिक जीवित रहे।

परं मृत्यु अनुपरेहि (यजुर्वेद ३५/७)
मृत्यु को परे धकेल दे।

पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम (ऋग्वेद ६/५२/५)
हम उगते हुए सूर्य को देखें।

ऋतस्य पथा प्रेत (यजुर्वेद ७/४५)
सत्य के पथ पर चले।

निष्कर्ष_____ **दीर्घायु की प्राप्ति हेतु रात्रि में जल्दी सोओ , सुबह जल्दी उठो, सदाचारी बनो, ब्रह्मचर्य का पालन करो।**

➤ (भाग७ सुखमय जीवन के उपाय)

वाचं वदतु शान्तिवाम (अथर्ववेद ३/३०/२)
शांतिदायक वाणी बोलो

वाचं वदत भद्रया (अथर्ववेद ३/३०/३)

Edit with WPS Office

कल्याणकारी वाणी बोलो।

वाचा वदामि मधुमत्। **(अथर्ववेद १/३४/३)**
मैं मधुर वाणी बोलूं।

स्वेन ऋतुना संवदेत। **(ऋग्वेद १०/३१/२)**
अपने कर्म से बोलो।

अकर्मा दस्यु: **(ऋग्वेद १०/२२/८)**
कर्महीन आलसी व्यक्ति दस्यु समान है।

इच्छन्ति देवा: सुन्वन्तम्। **(ऋग्वेद ८/२/१८)**
पुरुषार्थ व्यक्ति को विद्वान गण चाहते हैं।

जानता संगमेमहि। **(ऋग्वेद ५/५१/१६)**
विद्वान का संग करें।

स्वस्ति पन्थामनुचरेम **(ऋग्वेद ५/५१/१६)**
कल्याणकारी पथ पर चले।

सं गच्घध्वम सं वदध्वम **(ऋग्वेद १०/१११/२)**
मिलकर चले मिलकर बोले।

अहमनृतात् सत्यमुपैमि। **(यजुर्वेद १/५)**
मैं असत्य को छोड़कर सत्य बोलूं।

मा मा प्राप्ति पाप्मा। **(अथर्ववेद १७/१/२९)**
मुझमें पाप कर्म न चिपके अर्थात में पाप कर्म न करु।

तन्मे मन: शिवसंकल्पमस्तु। **(यजुर्वेद ३४/४)**

Edit with WPS Office

मेरा मन कल्याणकारी विचार वाला हो।

निष्कर्ष_____ पुरुषार्थ बनो_आलसी नहीं, मधुर बोलो_कठोर नहीं, सत्संग करो_ कुसंग नहीं, श्रेष्ठ बनो _ निष्कृष्ट नहीं, और सदा प्रसन्न रहो, कभी दुखी नहीं।

➤ भाग ८______ (ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना)

दुरितानि परासुव **(यजुर्वेद ३०/३)**
दुर्गुणों को दूर करो।

यद् भद्र तन्न आसुव **(यजुर्वेद ३०/३)**
कल्याणकारी गुणों को धारण करो।

स दाधार पृथ्वीम्। **(यजुर्वेद १३/४)**
ईश्वर पृथ्वी को धारण किया हुआ है।

य आत्मदा बलदा **(यजुर्वेद २४/३)**
ईश्वर आत्मज्ञान और सब प्रकार के बल को देने वाले हैं।

कस्मै देवाय हविषा विधेम्। **(यजुर्वेद २४/३)**
सुखस्वरूप ईश्वर की विशेष भक्ति करें।

येन ईशे अस्य द्विपदरचतुष्पद **(यजुर्वेद २३/३)**
ईश्वर मनुष्य और गाय और आदि प्राणियों के शरीर को बनाता है।

Edit with WPS Office

येन धौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा। (यजुर्वेद ३२/६)
ईश्वर ने सूर्य आदि लोक व भूमि को धारण किया है।

येन नाकः । (यजुर्वेद ३२/६)
ईश्वर ने दुखरहित मोक्ष को धारण किया है।

वयं स्याम पत्यो रयिणाम (ऋग्वेद १०/१२१/१०)
हम धन ऐश्वर्य के स्वामी बने।

स नो बन्धुजरनिता (यजुर्वेद ३२/१०)
ईश्वर हमारा बंन्धु और सकल जगत का उत्पादक है।

अग्ने नय सपुथा (यजुर्वेद ४०/१६)
हे ईश्वर ! हमें सुपथ में ले चलिए।

निष्कर्ष_____ ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करने से ईश्वर से बल, विधा, बुद्धि, सहनशीलता, निर्भयता, विनम्रता, प्रसन्नता, सफलता, आदि की प्राप्ति हो।

➤ भाग ९_____ (ईश्वर का वैदिक स्वरूप व प्रार्थना)

तेजोंऽसि तेजो मयि धेहि । (यजुर्वेद १९/९)
हे ईश्वर ! आप तेज स्वरूप है मुझमें भी तेज धारण कराइए।

वीर्यमसि वीर्य मयि धेहि। (यजुर्वेद १९/९)
हे ईश्वर ! आप वीर्यवान है मुझमें भी वीर्य धारण कराइए।

Edit with WPS Office

बलमसि बलं मयि धेहि। **(यजुर्वेद १९/९)**
हे ईश्वर ! आप बलशाली है मुझे भी बलशाली बनाइए।

ओजो ऽ स्योजों मयि धेहि (ओजो असि ओजो मयि धेहि)। **(यजुर्वेद १९/९)**
हे ईश्वर ! आप ओज स्वरूप है मुझमें ओज धारण कराइए।

मन्युरसि मन्यु मयि धेहि। **(यजुर्वेद १९/९)**
हे ईश्वर ! आप मन्युस्वरुप है मुझमें मन्यु धारण कराइए।

सहोऽसि सहो मयि धेहि। **(यजुर्वेद १९/९)**
हे ईश्वर ! आप सहनशील हैं मुझमें सहनशील धारण कराइए।

बलदा असि। **(ऋग्वेद ३/५३/१८)**
हे ईश्वर ! आप समस्त बलों के दाता है।

धनदा असि **(ऋग्वेद ७/३३/१७)**
हे ईश्वर ! आप समस्त धनों के दाता है।

त्वं सोमासि। **(ऋग्वेद १/९/४)**
हे ईश्वर ! आप सुखस्वरूप व सुखप्रदाता है।

त्वं भद्रों असि। **(ऋग्वेद १/४/९)**
हे ईश्वर ! आप कल्याणस्वरूप व कल्याणकर्ता है।

विभूरसि। **(यजुर्वेद ५/३१)**
हे ईश्वर ! आप सर्वत्र व्याप्त हो।

वहिरसि। **(यजुर्वेद ५/३१)**

Edit with WPS Office

हे ईश्वर ! आप ज्ञान स्वरूप हो।

निष्कर्ष_____ ईश्वर का वैदिक स्वरूप जानों उसके गुणों को धारण करो और पाखंड अंधविश्वास से बचकर आनन्दमय जीवन जीयों।

➤ भाग १०___ ईश्वर का वैदिक स्वरूप______

उशिगसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप कमनीय हो।

अंघारिरसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप पाप नाशक हो।

शुन्ध्युरसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर! आप शुद्ध स्वरूप हो।

सम्राडसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप सभी राजाओं के महाराज हो।

परिषदयोसि। यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप सभापति सभाप्रिय सभारक्षक हो।

नभोंऽसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप आकाश के समान सुक्ष्म हो।

मृष्टोऽसि। (यजुर्वेद ५/३२)
हे ईश्वर ! आप शुद्ध स्वरूप सब पापों के मार्जक हो।

Edit with WPS Office

ऋतधामासि। **(यजुर्वेद ५/३२)**
हे ईश्वर ! आपका धाम सर्वत्र व सत्य है अतः आप सर्वव्यापक स्वरूप हो।

समुद्रोऽसि। **(यजुर्वेद ५/३३)**
हे ईश्वर ! आप द्रवणीय स्वरूप हो, अर्थात सब जीवों के गमनागमन कराने वाले हो।

अजोऽसि। **(यजुर्वेद ५/३३)**
हे ईश्वर ! आप अजन्मा हो।

अहिरसि। **(यजुर्वेद ५/३३)**
हे ईश्वर ! आप हीनता से रहित हो।

सदोऽसि। **(यजुर्वेद ५/३३)**
हे ईश्वर ! आप सतावान या सबके ठहरने के स्थान हो।

निष्कर्ष______ ईश्वर का वैदिक स्वरूप जाने बिना उसकी सच्ची भक्ति नहीं हो सकती? अतः स्वाध्याय सत्संग से ईश्वर के वैदिक स्वरूप को जानो मानो और महान बनो।

➤ भाग ११शारीरिक रक्षा हेतु प्रार्थना

आयुर्मे पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरी आयु की रक्षा कर।

प्राण में पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**

Edit with WPS Office

हे ईश्वर ! मेरे प्राण की रक्षा कर।

अपानं में पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरे अपान वायु की रक्षा कर।

व्यान में पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरे व्यान वायु की रक्षा कर।

चक्षुर्मे पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरे नेत्रों की रक्षा कर।

श्रोत्र में पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरे कानों की रक्षा कर।

आत्ममान में पाहि। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मुझ जीव आत्मा की रक्षा कर।

वाचं में पिन्व। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मेरी वाणी को पुष्ट कर।

मनो में जिन्व। **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर! मेरे मन को तृप्त कर।

ज्योतिर्ययच्छ **(यजुर्वेद २४/१७)**
हे ईश्वर ! मुझे ज्ञान प्रदान कर।

पाहि रीषत। **(ऋग्वेद १/३/१०_१५)**
हिंसक व्यक्ति से हमारी रक्षा कर।

पाहि धूर्तरराव्ण। **(ऋग्वेद १/३/१०_१५)**

Edit with WPS Office

कंजूस धूर्त व्यक्ति से हमारी रक्षा कर।

निष्कर्ष______ अपने शरीर, परिवार, समाज और राष्ट्र की सुरक्षा हेतु शस्त्र व शास्त्र दोनों का ज्ञान प्राप्त कर, व्यवहार में उचित प्रयोग कर, सुखी , सुरक्षित आनंदित रहो।

➤ भाग १२______ श्रेष्ठ राष्ट्र हेतु प्रार्थना

यतेमहि स्वराज्ये। **(ऋग्वेद ५/६६/६)**
हम स्वराज्य __वैदिक राज्य के लिए प्रयत्न करें।

वयं तुभ्यं बलिहतश्स्याम **(अथर्ववेद १३/१/६२)**
हम मातृभूमि की रक्षा हेतु समर्पित हो।

अर्चन्ननु स्वराज्यम्। **(ऋग्वेद १/८/९)**
स्वराज्य की अर्चना करो।

वयं राष्ट्रे जार्गयाम पुरोहिता **(यजुर्वेद ९/२३)**
हम राष्ट्र में जागरूक पुरोहित बने।

अस्माक वीरा उतरे भवन्तु **(ऋग्वेद १०/१०३/११)**
हमारे राष्ट्र में वीर आगे रहे

ब्रह्मवर्चसी जायत आ राष्टे। **(यजुर्वेद २२/२२)**

Edit with WPS Office

हमारे राष्ट्र में वेद के विद्वान उत्पन्न हो।

वीरों जायताम्। (यजुर्वेद २२/२२)
हमारे राष्ट्र में शत्रु नाशक वीर उत्पन्न हो।

फलवत्यो न ओषधय: (यजुर्वेद २२/२२)
हमारे राष्ट्र में औषधीया फल से युक्त हो।

दोग्ध्री धेनुं: (यजुर्वेद २२/२२)
हमारे राष्ट्र की गौ माता भरपूर दूध देने वाली हो।

राष्ट्रेण वधृताम (अथर्ववेद ६/७८/२)
श्रेष्ठ राष्ट्र के साथ आगे बढ़े।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्र विरक्षति। (अथर्ववेद ११/५/११७)
ब्रह्मचर्य रूपी तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है।

त्वं राष्ट्राणि रक्षसि। (अथर्ववेद ११/३०/३)
तू राष्ट्र की रक्षा कर।

निष्कर्ष______ राष्ट्र सुरक्षित रहेगा तो हम सुरक्षित रहेंगे , इसके लिए राष्ट्रीय एकता हेतु प्रयास करो। संगठन में रहो, परस्पर प्रेम से मिलकर रहो।

➤ भाग १३______ ईश्वर की महिमा व प्रार्थना

Edit with WPS Office

तनूपा अग्ने असि । (यजुर्वेद. 3 /17)
हे ईश्वर ! आप सबके शरीरों के रक्षक हैं ।

आयुदा अग्ने असि । (यजुर्वेद. 3 /17)
हे ईश्वर ! आप सबको आयु देने वाले हैं ।

वाचारदा अग्ने असि । (यजुर्वेद. 3 /17)
हे ईश्वर ! आप विज्ञान देने वाले हैं ।

परिभूरसि । (ऋग्वेद. 1/1/176)
हे ईश्वर ! आप सर्वत्र व्याप्त है ।

विश्वदेवो महां असि । सामवेद उत्तरार्ध. (2/2/22/2)
हे विश्वदेव ! आप सबसे महान हैं ।

स्तोतार : ते इहं स्मसि । (यजुर्वेद. 34/41)
हे ईश्वर ! आपकी स्तुति करने वाले सुखी होते हैं ।

अग्ने भद्र । करिष्यसि । (ऋग्वेद.1/1/2-1)
हे ईश्वर ! आप कल्याण करने वाले हैं ।

इन्द्र मृऽयासि न: । (सामवेद. 2/2/6-9)
हे इंद्र परमेश्वर ! आप हमें सुखी करने वाले हैं ।

आयुरस्यायुमे दा :। (अथर्ववेद. 2/17/4)
हे ईश्वर ! आप जीवनशक्ति है हमें जीवनशक्ति दीजिए ।

क्षोत्रमसि क्षोंत्र में दा : (अथर्ववेद. 2/17/5)
हे ईश्वर ! आप श्रवणशक्ति स्वरुप है अर्थात आप में
श्रवण शक्ति है । मुझे श्रवण शक्ति दीजिए ।

Edit with WPS Office

चक्षुरमि चक्षुमे दाः । (अथर्ववेद. 2/17/7)
हे ईश्वर ! आप में दर्शन शक्ति है मुझे दर्शन शक्ति दीजिए ।

परिपाणमसि परिपांण में दाः। (अथर्ववेद. 2/17/7)
हे ईश्वर आप रक्षण शक्ति स्वरूप है अर्थात आप में रक्षण शक्ति है मुझे भी रक्षण शक्ति दीजिए ।

निष्कर्ष______ सच्चे ईश्वर की सच्ची भक्ति से जीवन सफल सार्थक महान बनता है । ईश्वर भक्त बिना अन्त में बहुत पछताना पड़ता है । अतः उसकी भक्ति करें और शक्ति पायें ।

➤ भाग १४______ यज्ञानुष्ठान कर समर्थ बने

आयुर्यज्ञेन कल्पताम्। (यजुर्वेद. 18 /29)
हमारी आयु यज्ञ से समर्थ हो__पुष्ट हो ।

प्राणों यज्ञेश ।
हमारे प्राण यज्ञ से समर्थ हो ।

चक्षुर्यज्ञेन ।
हमारे नेत्र यज्ञ से समर्थ हो ।

श्रोत्र यज्ञेन ।

Edit with WPS Office

हमारे कान यज्ञ से समर्थ हो ।

वाक् यज्ञेन कल्पताम् ।
हमारी वाणी यज्ञ से समर्थ हो ।

मनो यज्ञेन कल्पताम् ।
हमारा मन यज्ञ से समर्थ हो ।

आत्मा यज्ञेन कल्पताम् ।
आत्मा यज्ञ से समर्थ हो ।

ब्रह्मा यज्ञेन कल्पताम् ।
चारों वेदों का ज्ञाता यज्ञ से समर्थ हो ।

ज्योतिर्यज्ञेन कल्पताम् ।
सूर्य ज्योति यज्ञ से समर्थ हो ।

स्वर्यज्ञेन कल्पताम् ।
सुख यज्ञ से समर्थ हो ।

पृष्ठं यज्ञेन कल्पताम् ।
पृथ्वी आदि लोकों का आधार यज्ञ से समर्थ हो ।

यज्ञों यज्ञेन कल्पताम् ।
सारे अच्छे कार्य यज्ञ से समर्थ हो ।

निष्कर्ष_______ यज्ञ के माध्यम से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, बौद्धिक,आत्मिक उन्नति होती है और समाज में सुख, शांति की वृद्धि होती है । अतः दैनिक यज्ञ को जीवन का अंग बनाये ।

Edit with WPS Office

➤ भाग १५______ यज्ञ का महत्व

यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म । (शतपथ ब्राह्मण. (1/71/5)
यज्ञ सर्वश्रेष्ठ कर्म है ।

स्वर्ग कामों यजेत। (ताण्डय ब्राह्मण. 16/15/5)
सुख विशेष चाहने वाले यज्ञ करें ।

ईजाना: स्वर्ग यन्ति लोकम् । (अथर्ववेद. 10/4/2)
यज्ञ करने वाले स्वर्ग को प्राप्त होते हैं ।

अरं कृण्वन्तु वेदिम । (ऋग्वेद. 1/170/4)
यज्ञ वेदी को रोली आदि से सजाओ ।

यजध्व हविषा तना गिरा । (ऋग्वेद. 2/2/1)
हे मनुष्यों ! तन धन और वाणी से यज्ञ करो ।

प्रांचं यज्ञं प्रणंयतां सखाय :। (ऋग्वेद. 10/101/2)
हे मित्रों ! प्रत्येक कार्य के आरंभ में यज्ञ करो ।

सम्यंचों अंग्नि सपर्यत । (अथर्ववेद. 3/30/6)
तुम सब मिलकर यज्ञ करो ।

ऊधर्व कृण्वन्तु अध्वरस्य केतुम् । (ऋग्वेद.3/8/8)
यज्ञ का ध्वज ऊंचा रखों ।

Edit with WPS Office

जुहोत प्र च तिष्ठत । (ऋग्वेद. 1/15/9)
यज्ञ करो और यश पाओं ।

अयं यज्ञों भुवनस्य नाभि । (यजुर्वेद. 23 /62)
यज्ञ संसार का केंद्र बिंदु है ।

यज्ञो विश्वस्य भुवनश्य नाभि । (अथर्ववेद. 9/10/14)

यज्ञ विश्व ब्रह्मांड का केंद्र है ।

इमं यज्ञं विततं विश्वकर्मणा । (अथर्ववेद. 2/35/5)
यज्ञ का विस्तार ईश्वर ने किया है ।

निष्कर्ष______ यज्ञकर्ता के परिवार मैं निरंतर सुख शान्ति समृद्धि बनी रहती है । दुख कष्ट रोग विध्न बांधाओ का निवारण होता है । इसलिए श्रद्धापूर्वक नियमित यज्ञ करो ।

➤ भाग १६______ यज्ञ की महिमा

मा यज्ञादिन्द्र सोमिन : । (ऋग्वेद. 10/57/1)
हे परमेश्वर ! हम यज्ञ को छोड़कर न चले ।

यज्ञस्य प्रविता भव । (ऋग्वेद. 3/21/3)
यज्ञ के रक्षक बनो ।

यज्ञो हित इन्द्र वधृनों भूत । (ऋग्वेद. 3/32/12)
हे जीव ! यज्ञ ही तुझे बढ़ाने वाला है ।

Edit with WPS Office

यज्ञस्ते वज्रमहिहत्य आवत् । **(ऋग्वेद. 3/32/12)**
यज्ञ रुपी वज्र पाप नाश में सफलता दिलाता है ।

इच्छन्ति देवा : सुन्वन्तम् । **(ऋग्वेद. 8/2/18)**
यज्ञकर्ता को देवगण भी चाहते हैं ।

पाहि मां यज्ञन्मयम । **(यजुर्वेद. 2/6)**
हे ईश्वर ! मुझ यज्ञ कर्ता की रक्षा करो ।

शर्म भक्षीय दैव्यम् । **(सामवेद)**
यज्ञकर्ता को दिव्य सुख मिलता है ।

सुन्वानम् उत सिषासित सहस्त्रा । **(अथर्ववेद)**
यज्ञकर्ता को सहस्त्रों प्रकार का ऐश्वर्या मिलता है ।

देवान् यज्ञेन बोधय । **(अथर्ववेद. 29/63/1)**
देवों को यज्ञ से जागरूक बनाओ ।

विश्वायुधेहि यजथाय देव । **(ऋग्वेद. 10/7/3)**
हे देव ! हमें संपूर्ण आयु यज्ञ के लिए दो ।

यजध्वं हविषा तना गिरा । **(ऋग्वेद. 2/2/1)**
तन धन वचन से यज्ञ करो ।

स यज्ञेन वनवद् देव मतारन् । **(ऋग्वेद. 5/3/5)**
प्रभु यज्ञकर्ता को दिव्य और शक्ति युक्त कर देता है ।

निष्कर्ष______ यज्ञ की महिमा को जानकर प्रतिदिन यज्ञ करो ।

Edit with WPS Office

➤ भाग १७______ सुरक्षित राष्ट्र हेतु प्रार्थना

बहु बाहवोर्बलम् (अथर्ववेद. 19/60/1)
हे प्रभु ! मेरी दोनों भुजाएं बहुत बलशाली हो ।

वर्च आ देहि में तन्वं (अथर्ववेद. 19/37/2)
हे ईश्वर ! मेरे शरीर में तेज हो ।

श्रेष्ठता भूयास्म (अथर्ववेद.18/4/87)
हे ईश्वर ! हम श्रेष्ठ बने ।

नो वेद आ भर। (अथर्ववेद. 20/56/6)
हे ईश्वर ! हमें वेद ज्ञान प्रदान कर ।

ब्रह्म वर्म ममान्तरम्। (अथर्ववेद. 1/19/4)
वेद ज्ञान मेरा रक्षक है ।

तिस्त्रो देवी न: शर्म यच्छत । (अथर्ववेद. 5/3/6)
मातृभूमि, मातृभाषा, मातृ संस्कृति-सभ्यता हमें सुख देती है ।

महारथो जायताम् (यजुर्वेद. 22/22)
हमारे राष्ट्र में महारथी उत्पन्न हो ।

दस्यूनव धूनुष्व। (अथर्ववेद. 19/46/2)
हिंसक– दस्यु– डाकुओं को धुन डालो ।

Edit with WPS Office

मा न: स्तेन ईशत । (यजुर्वेद. 1.1)
भ्रष्ट व चोर लोग हम पर शासन न करें ।

सासहाम पृतन्यत । (ऋग्वेद. 1/8/4)
हमला करने वाले शत्रु को हम पीछे हटा दे ।

उपं सर्प मातरं भूमिमेताम् । (ऋग्वेद. 10/18/10)
हे मनुष्य ! तु इस मातृभूमि की सेवा कर ।

नमो मात्रे पृथिव्यै नमो मात्रे पृथिव्यै । (यजुर्वेद. 9/22)
मातृभूमि को हमारा नमस्कार हो, हमारा बार-बार नमस्कार हो ।

निष्कर्ष______ राष्ट्र को सुरक्षित रखने हेतु ईश्वर से प्रार्थना भी करें और तदनरूप पुरुषार्थ भी करें । परस्पर लड़ाई झगड़े को दूर कर सब मिलकर राष्ट्रीय उन्नति हेतु प्रयत्नशील होवे ।

➤ भाग १८______ महामृत्युंजय मंत्र से प्रार्थना

त्र्यंम्बक यजामहे। (यजुर्वेद. 3/6)
हे तीनों कालों के ज्ञाता परमेश्वर! हम आपकी स्तुति करते हैं ।

सुगन्धित पुष्टिवर्धनम आप सुगंधित और पुष्टि को बढ़ाने वाले हैं ।
उर्वारुकमिव बंन्धनान । जैसे खरबूजा पक जाने पर मीठा होकर अपने डंठल से **आसानी से अलग हो जाता है** । वैसे–

Edit with WPS Office

मृत्युयोमुक्षीय मा अमृतात । हम भी मृत्यु के बंधन से आसानी से छूट जावे किंतु **आपके अमृत आनंद से दूर ना रहे ।**

त्र्यंम्बक यजामहे। हे रुद्र स्वरूप तीनों कालों के ज्ञाता परमेश्वर ! हम आपकी **उपासना करते हैं ।**

सुगन्धि पति वेदनम् । आप यश कीर्ति रक्षण शक्ति को देने वाले हैं ।

उर्वारुकमिव बंधनान् । जैसे खरबूजा पक जाने पर अपने लता से छूटकर अमृत **के समान मीठा हो जाता है ।** वैसे

इतोमुक्षीय मामुत। हम भी इस शरीर से छूट जाये और आपके मोक्ष आनंद को **पृथक होवे ।**

या मेधा देवगणा । (यजुर्वेद. 32/4)
जिस मेधा बुद्धि की विद्वान गण याचना करते हैं ।

पितरोश्चोपासते ।
महात्मा जन जिसकी कामना करते हैं ।

तयामामदय मेधया उसी मेधा बुद्धि से

अग्ने मेधाविनं कुरु । हे अग्नि परमात्मा मुझे मेधावी बनाईये ।

निष्कर्ष______ प्रतिदिन महामृत्युंजय मंत्र का जाप करें और पाप अधर्म को छोड़कर दान पुण्य परोपकार को बढ़ाकर यश कीर्तिमान बने ।

Edit with WPS Office

➤ भाग १९______ चरक संहिता के अनुसार भोजन

उष्णमश्नीयात ।
गरम गरम भोजन करना चाहिए ।

स्निग्धमश्नीयात् ।
गौ घृत दूध स्निग्ध भोजन करना चाहिए ।

मात्रावदश्नीयात ।
मात्रा पूर्वक भोजन करना चाहिए ।

जीणेअश्नीयात ।
पहला भोजन पच जाने पर दोबारा भोजन करना चाहिए ।

वीर्यविरुधमश्नीयात ।
बल वीर्य के प्रतिकूल पदार्थ नहीं खाना चाहिए ।

इष्ट देशे अश्नीयात् ।
आनंदित करने वाले स्वच्छ स्थान पर भोजन करना चाहिए ।

नातिद्रुतमश्नीयात् ।
बहुत जल्दी-जल्दी भोजन नहीं करना चाहिए ।

नातविलिम्बितमश्नीयात् ।
बहुत धीरे-धीरे भोजन नहीं करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

अजल्पन्नहसन् तन्मना भुंजीत ।
मौन होकर प्रसन्नता पूर्वक भोजन करना चाहिए ।

आत्मानभिसमीक्ष्य भुंजीत ।
अपनी प्रकृति और शक्ति को समझकर भोजन करना चाहिए ।

नोच्छिष्ट कस्यचिद् ददयात ।
झुठा भोजन किसी को नहीं देना चाहिए ।

न नोच्छिष्ट: कच्चिद व्रजेत ।
झूठे मुंह इधर-उधर नहीं जाना चाहिए ।

निष्कर्ष___ भोजन संबंधी उपरोक्त नियमों का पालन करो ।

➤ भाग २०______ सुख शान्ति हेतु प्रार्थना

कृधि मा देववन्तम । (ऋग्वेद. 6/47/10)
हे ईश्वर ! मुझे आस्तिक बना दो ।

जातवेद: पुनिही मां (यजुर्वेद.19/39)
हे सर्वज्ञ प्रभु ! मुझे पवित्र कर दो ।

धृतं में चक्षुरमृतं म आसन । (सामवेद. 613)
हे ईश्वर! मेरी आंखों में स्नेह व वाणी में मिठास हो ।

Edit with WPS Office

रमन्तां पुण्या लक्ष्मी: । **(अथर्ववेद. 7/115/5)**
हे ईश्वर ! मेरे घर में पवित्र कमाई हो ।

मा श्रुतेन वि राधिसी । **(अथर्ववेद.1/1/4)**
हे ईश्वर ! हम वेदों के विपरीत न चले ।

पितेव न: श्रुणुहि। **(ऋग्वेद. 1/104/9)**
हे ईश्वर ! पिता के भातिं हमारी पुकार को सुनो ।

मेधां धाता ददातु में । **(यजुर्वेद. 32/15)**
हे ईश्वर ! मुझे मेधां बुद्धि दो ।

मे वरुण श्रुधि हवम् । **(यजुर्वेद. 21/1)**
हे वरुणदेव ! मेरी प्रार्थना को सुनो ।

सूर्यस्यावृतमन्वावते । **(यजुर्वेद. 2/26)**
हे ईश्वर ! में सूर्य के समान व्रती बनु ।

अग्ने अनृणो भवामि । **(यजुर्वेद. 19/11)**
हे ईश्वर! मैं सदा ऋण से मुक्त रहूं ।

कृधि नो यशसो। **(सामवेद. 479)**
हे ईश्वर ! हमें यशस्वी बनाओ ।

भद्रं श्लोकं श्रुयासम । **(अथर्ववेद. 16/24)**
हे ईश्वर मैं मंत्र श्लोक आदि कल्याणकारी मंत्र सुनूं ।

निष्कर्ष______ प्रतिदिन प्रात: सायं ईश्वर से बल विद्या, बुद्धि की प्राप्ति

Edit with WPS Office

हेतु प्रार्थना करो ।

➤ भाग २१______ गौ माता का महत्व

गावो विश्वस्य मातरं ।
गाय विश्व की सबकी माता है ।

गोस्तु मात्रा न विधते । (यजुर्वेद. 23/48)
गौ माता का मूल्य नहीं है । ये बहुमूल्य है ।

वज्र कृणुध्वम । (अथर्ववेद.19/48/4)
गौशाला बनाओ ।

माधवी गावो भवन्तु न । (यजुर्वेद. 23/29)
हमारी गोवै मधुर दूध देने वाली हो ।

पुष्टैय गौपालम । (यजुर्वेद. 30/11)
पुष्टि के लिए गौपालक रखो ।

नमो वज्रयाय च । (यजुर्वेद. 13/44)
गो-चरण में कुशल व्यक्ति के लिए नमस्कार हो ।

गोष्ठायय च । (यजुर्वेद. 13/44)
कुशल गौशाला संचालक के लिए नमस्कार हो ।

Edit with WPS Office

घृतेंन त्वं तन्वं ववधृयस्व । (यजुर्वेद.12/44)
गो धृत से शरीर को पुष्ट करो ।

गावो भगो गाव इन्द्रो । (अथर्ववेद. 4/22/5)
गौ माता मनुष्य की संपत्ति और ऐश्वर्य है ।

पयसा शुक्रममृत जनित्रम । (यजुर्वेद. 19/84)
गौ दूध से आयु व वीर्य बढ़ता है ।

शिवो वो गोष्ठो । (अथर्ववेद. 3/14/5)
तुम्हारी गौशाला कल्याणकारी हो ।

अनागोहत्या वै भीमा । (अथर्ववेद.10/1/29)
निरपराध गोवंश की हत्या भयंकर दुखदायी है ।

निष्कर्ष______ गौ माता के महत्व को जानकर उसकी सेवा करो ।

➤ भाग २२______ वेदों में नमस्ते का विधान

नमस्ते हरसे शोचिसे । (यजुर्वेद. 36/20)
हे पाप हरने वाले सबके प्रकाशक परमेश्वर ! आपके लिए नमस्कार ।

नमस्ते अस्तु अचिषे । (यजुर्वेद. 36/20)
हे स्तुति के योग्य परमात्मा ! आपके लिए नमस्कार ।

Edit with WPS Office

नमस्ते अस्तु विधुते । **(यजुर्वेद. 36/21)**
हे विद्युत स्वरूप परमात्मा ! आपके लिए नमस्कार ।

नमस्ते स्तनयित्नवे । **(यजुर्वेद. 36/21)**
विद्युत के तुल्य दुष्टों को भय देने वाले परमेश्वर आपके लिए नमस्कार हो ।

नमस्ते भगवन्नस्तु । **(यजुर्वेद. 36/21)**
हे अनन्त ऐश्वर्यावान प्रभु ! आपके लिए नमस्कार हो ।

नमस्ते प्राणं ऋन्दाय । **(अथर्ववेद. 11/4/2)**
दुष्टों को रुलाने वाले हे प्राण स्वरूप परमात्मा ! आपको नमस्कार ।

नमस्ते प्राण विधुतें । **(अथर्ववेद. 11/4/2)**
विद्युत स्वरूप परमात्मा आपके लिए नमस्कार है ।

नमस्ते प्राण वर्षते । **(अथर्ववेद. 11/4/2)**
वृष्टि करने वाले हे प्राण स्वरूप परमात्मा ! आपको नमस्कार ।

नमस्ते अस्तवायते । **(अथर्ववेद. 11/4/7)**
आगमन करने वाले के लिए नमस्कार ।

नमो अस्तु परायते । **(अथर्ववेद. 11/4/7)**
गमन करने वाले के लिए नमस्कार ।

नमस्ते प्राण तिष्ठत । **(अथर्ववेद. 11/4/7)**
हे प्राण स्वरूप परमात्मा । सर्वत्र स्थित रहने वाले तेरे लिए नमस्कार ।

नमस्ते प्राण प्राणते । **(अथर्ववेद. 11/4/8)**
हे प्राण स्वरूप परमात्मा ! जीवन चलाने वाले तुझे नमस्कार ।

Edit with WPS Office

निष्कर्ष_____ **सभी बच्चों को चाहिए कि वे अपने माता-पिता आदि बड़ों को प्रतिदिन नमस्ते करें । उनकी आज्ञा का पालन करें । इससे आयु विद्या यश और बल की वृद्धि होती है ।**

➤ भाग २३______ सच्चे ईश्वर को जाने और माने

प्राणाय नमो यस्य सर्वमिद वशे । (अथर्ववेद. 11/4/1)
प्राण स्वरूप परमात्मा के लिए नमस्कार है जिसके वश में यह सारा संसार है ।

यो भूत: सर्वस्य ईश्वर: । (अथर्ववेद. 11/4/1)
जो सबका ईश्वर है, स्वामी है ।

यस्मिन् सर्व प्रतिष्ठितम् । (अथर्ववेद. 11/4/1)
जिस ईश्वर में यह संपूर्ण जगत प्रतिष्ठित है ।

तदेजति । (यजुर्वेद. 40/5)
ईश्वर मूर्खों की दृष्टि में चलता है ।

तत् न एजति । (यजुर्वेद. 40/5)
ईश्वर वास्तव में चलायमान नहीं होता ।

तदन्तरस्य सर्वस्य । (यजुर्वेद. 40/5)

Edit with WPS Office

ईश्वर सबके अंदर है ।

तदु सर्वस्य बाह्यत । (यजुर्वेद. 40/5)
ईश्वर सबके बाहर भी है ।

भूरिदा हि असि । (ऋग्वेद. 4/32/21)
ईश्वर बहुत देने वाला है ।

इन्द्राय पवते मदं । (ऋग्वेद. 9/62/14)
ईश्वर मनुष्य के लिए आनंद बरसाता है ।

राजा उत वृत्रहा । (ऋग्वेद. 1/19/14)
ईश्वर सबका राजा और विघ्नहर्ता है ।

विश्वतक्षच्क्षु । (यजुर्वेद. 17/19)
ईश्वर सबका दृष्टा है ।

इन्द्रस्य युज्य: सखा । (ऋग्वेद. 1/22/19)
ईश्वर जीव आत्मा का सर्वोत्तम मित्र है ।

निष्कर्ष______ ऐसी ईश्वर को जानकर प्रतिदिन उसकी उपासना करो और उससे लाभ प्राप्त करो ।

➤ भाग २४______ अन्न की महिमा व नियम

Edit with WPS Office

अन्न न निन्दयात् । (तैत्तिरीय उपनिषद् भृगु वल्ली-7)
अन्न की निन्दा न करें ।

अन्न न परिचक्षीत् । (तैत्तिरीय उपनिषद् भृगु वल्ली-8)
अन्न का अनादर न करें ।

अन्न बहु कुवीत । (तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली-9)
अन्न खूब उत्पन्न करें ।

अन्नाद वै प्रजा: प्रजायन्तें । (तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली-9)
अन्न से ही प्रजा की उत्पत्ति होती है ।

अन्नेन एवं जीवन्ति । (तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली-9)
अन्न से ही सब जीवित रहते हैं ।

अन्नपते अन्नस्य नो देहि । (वेद)
हे अन्प्रदाता प्रभों ! हमें अन्न दीजिए ।

केवलाघो भवति केवलादी । (वेद)
अकेला खाने वाला पाप खाता है ।

ऋतभुक् हितभुक् मितभुक् (चरक संहिता)
सात्विक अन्न खाओ । हितकारी अन्न खाओ ।माप तौल कर खाओ अर्थात मात्रा पूर्वक खाओ, अधिक भोजन दुखदायी है ।

वर्जयेन्मधुमांसम् । (मनुस्मृति. 11/93)
मास मदिरा का सेवन त्याग दो ।

सुखं मेषाय मेष्यै । (यजुर्वेद. 3/59)

Edit with WPS Office

भेड़ बकरियों को सुखी करो ।

पशून पाहि । (यजुर्वेद. 1.1)

आण्डा मा । (ऋग्वेद. 1/7/19/8)
अण्डों (गर्भ) को नष्ट मत करो ।

निष्कर्ष______ यजुर्वेद में मा हिंसी कहकर हिंसा करने के लिए मना किया है । हिंसा से प्राप्त भोजन अति दुखदायी होता है । अतः सुखदाई सुखदायी सात्त्विक पौष्टिक अन्न खाओ । कभी भी मांस मछली अंडा शराब बीड़ी सिगरेट आदि अभक्ष्य पदार्थ का सेवन मत करो ।

➤ भाग २५______दान की महिमा व नियम

उतो रयि:प्रणतो नोप दस्यति । (ऋग्वेद. 10/117/1)
दानी का धन घटता नहीं है ।

पृणन्नापरिपृणन्तमभि । (ऋग्वेद. 10/117/7)
कंजूस पीछे रह जाते हैं दानी आगे बढ़ जाता है ।

शतहस्त समाहार सहस्त्रहस्त संकिर । (अथर्ववेद. 3/24/5)
सैकड़ो हाथों से कमाओ और हजार हाथों से दान करों ।

दक्षिणावन्तो अमृत भजन्ते । (ऋग्वेद. 1/125/6)

Edit with WPS Office

दानी व्यक्ति अमर पद को प्राप्त करते हैं ।

इंय ते यज्ञिया तनूं: । (यजुर्वेद. 4/13)
यह शरीर परोपकार के लिए है ।

करो यत्र वरिवो बाधिताय: । (ऋग्वेद. 6/18/4)
पीड़ित जनों की सहायता के लिए तत्पर हाथ श्रेष्ठ हैं ।

श्रद्धया देयम् ,अश्रद्धया देयम् । (तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा 11/3)
श्रद्धापूर्वक दान करना चाहिए ,श्रद्धा न हो तो भी दान करना चाहिए ।

श्रिया देयम्, हिया देयम् । (तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा 11/3)
शोभा पूर्वक दान करना चाहिए ,लोक लाज के कारण भी दान करना चाहिए ।

भिया देयम्। संविदा देयम् । (तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा 11/3)
भय से देना चाहिए ,प्रेम से भी देना चाहिए ।

सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदान विशिष्यते ।
सभी दानों में ब्रह्मदान सर्वश्रेष्ठ है अर्थात वेद ज्ञान का दान या वेद विद्या के प्रचार प्रसार हेतु दान सर्वश्रेष्ठ है ।

संकिर सत्रा वाजम् । (अथर्ववेद. 20/98/2)
सत्य के प्रसार हेतु दान करें ।

य: पृणाति स ह देवेषु गच्छति । (ऋग्वेद. 1/125/5)
जो दान सेवा आदि से प्राणियों को तृप्त करता है वह देवलोक को जाता है ।

निष्कर्ष______ सूर्य चंद्र वृक्ष वनस्पति सभी दान कर रहे हैं, हमें भी दान

Edit with WPS Office

की प्रवृत्ति धारण करनी चाहिए, जिसके पास जो कुछ भी है उसका सत्पात्रों में अवश्य दान करना चाहिए ।

➤ भाग २६______ ईश्वर, माता- पिता विद्वान और वेदादि शास्त्रों पर श्रद्धा रखने का माहात्म्य

श्रद्धया विन्दते वसु । (ऋग्वेद. 10/151/4)
माता-पिता गुरु, विद्वान, ईश्वर और वेदादि शास्त्रों पर श्रद्धा रखने से भौतिक धन व आध्यात्मिक धन मिलता है ।

श्रद्धावान लभते ज्ञानम् । (गीता)
श्रद्धावान ज्ञान प्राप्त करता है ।

अश्रद्धा परमं पापम् । (महाभारत शांति पर्व)
श्रद्धा न रखना परम पाप है ।

श्रद्धा पापमोचनी । (महाभारत शांति पर्व)
श्रद्धा पाप से छुड़ाने वाली है ।

श्रद्धाया सत्यसमाप्यते । (यजुर्वेद. 19/30)
श्रद्धा से सत्य स्वरूप ईश्वर मिलता है ।

विधयामृतश्नुते । (यजुर्वेद. 40/14)
विधा से अमृत मिलता है ।

Edit with WPS Office

अघमस्त्वघकृते । (अथर्ववेद. 10/1/5)
पाप कर्म से दुख ही मिलता है ।

दूर ऊनेन हीयते । (अथर्ववेद. 10/18/85)
कुसंगति से पतन होता है ।

अयज्ञियो हतवचा भवति । (अथर्ववेद. 12/2/37)
ईश्वर उपासना ,माता-पिता गुरु का सत्कार संगतिकरण सत्संग व दान न करने वाला भाग्यहीन होता है ।

उच्च तिष्ठत महते सौभगाय । (यजुर्वेद. 27/2)
सौभाग्य की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ करना चाहिए ।

उधानं ते पुरुष नावयानं । (अथर्ववेद. 8/1/6)
हे मनुष्य ! तेरी उन्नति हो अवनति नहीं ।

मात्र तिष्ठ: पराडंमना । (अथर्ववेद. 8/1/9)
संसार में उदास होकर मत रहो ।

निष्कर्ष_______ विधा, बुद्धि, ज्ञान प्राप्त कर सत्कर्म करते हुए, उन्नति करते हुए श्रद्धा सहित ईश्वर की उपासना करते हुए समस्त दुखों से छूटने के लिए व परम सुख ईश्वरीय सुख को प्राप्त करने के लिए यह जीवन मिला है । अतः इसके लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए ।

➤ भाग २७_______ मनुस्मृति,

Edit with WPS Office

महाभारत, नीति श्लोक, आदि में धर्म का स्वरूप व महत्व

वेदों अखिलो धर्ममूलम् । **(मनुस्मृति)**
संपूर्ण वेद धर्म का मूल है ।

अहिंसा परमो धर्म । **(महाभारत)**
अहिंसा परम धर्म है ।

धर्म जिज्ञासमानानां परमं प्रमाणं श्रुति । **(मनुस्मृति)**
धर्म को जानने के इच्छुक के लिए वेद परम प्रमाण है ।

आचार: परमो धर्म: । **(मनुस्मृति)**
वेद स्मृति में प्रतिपादित सदाचार परम धर्म है ।

धर्म स्वर्ग स्य सोपानम् ।
धर्म स्वर्ग की सीढ़ी है ।

यतो अभ्युदय निश्रेयस सिद्धि:स । **(वैशेषिक दर्शन)**
जिसे करने से सांसारिक सुख और मोक्ष सुख मिले वह धर्म है ।

कर्तव्यो धर्म संग्रह । **(श्लोक संग्रह)।** **धर्म का संग्रह करना चाहिए ।**

धर्मण हीना पशुभि समाना । **(भतृहरि नीति शतक)**
धर्म से रहित व्यक्ति पशु समान है ।

न लोभात् धर्म त्यजेत । **(महाभारत. 11/12)**
लोभ के कारण कभी धर्म का त्याग न करें । एक धर्म ही सदा साथ रहने

Edit with WPS Office

वाला निश्चल है ।

धर्मो नित्य सुख दुखें तु अनित्ये । (महाभारत)
धर्म नित्य है सुख दुख अनित्य है ।

एक एवं सुहदध्मो निधनेअपि अनुयाति य: । (मनुस्मृति)
धर्म ही सच्चा मित्र है जो मृत्यु के साथ जाने वाला है ।

न लिङ्गम् धर्म कारणम् । (मनुस्मृति)
बाहरी चिन्ह धर्म का कारण नहीं है ।

निष्कर्ष______ सुखस्य मूल धर्म– अर्थात सुख का मूल धर्म है ।
धर्म के 10 लक्षण : धैर्य रखना, मन को अधर्म से रोकना, चोरी न करना, इंद्रियों पर संयम रखना, विधा और बुद्धि बढ़ाना, सत्य बोलना, क्रोध न करना, ।
धर्म के आठ मार्ग__ हवन ,स्वाध्याय ,तप ,सत्य, क्षमा, दया और अलोभ ।
जो व्यक्ति उपरोक्त धर्म को धारण नहीं करता है व अन्त में घोर पश्चाताप करता हुआ शोक की अग्नि में जलता है ।

➤ भाग २८______ चारों वेदों में हमारे कर्तव्य कर्म

मित्रस्य यायां पथा । (ऋग्वेद. 5/64/4)
मित्रता के मार्ग पर चले ।

Edit with WPS Office

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे। (यजुर्वेद. 36/18)
परस्पर एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें।

अंग्नि द्वंत वृणीमहे। (सामवेद. 1/1/1/3)
ज्ञान, बल, सुख, शान्ति ,पहुंचने वाले ईश्वर का वरण ध्यान करें।

जुषेधां यज्ञं। (अथर्ववेद. 5/6/8)
यज्ञ, दान परोपकार आदि कर्मों का सेवन करें।

अनु सं रथध्वम्। (ऋग्वेद. 10/103/6,, सामवेद. 1854)
मिलकर कार्य करो।

वावृधु सौभगाय। (ऋग्वेद . 5/60/5)
ऐश्वर्या के लिए पुरुषार्थ करें।

स्वं महिमानमायजताम । (यजुर्वेद. 22/47)
अपनी महिमा को बढ़ायें। अर्थात यश कीर्ति फैलायें।

यशो गृहीत्वा पृथिवीमनु सं चरेम। (अथर्ववेद. 19/58/3)
यशस्वी होकर पृथ्वी पर विचरण करें।

त्वमगदश्चर। (अथर्ववेद. 4/17/8)
निरोग होकर विचरण करें।

कृणवन्तों विश्वमार्यम। (ऋग्वेद . 9/63/5)
सारे संसार को आर्य अर्थात श्रेष्ठ बनाओ।

खुदत वाजसातये। (अथर्ववेद. 20/137/2)
बल प्राप्ति के लिए व्यायाम करें या ऐसे खेले।

Edit with WPS Office

व्रत कृणुत । (यजुर्वेद. 4/11)
व्रत धारण करें ।

निष्कर्ष______ चारों वेदों का यह सार रूप में संदेश है कि मनुष्य को ईश्वर की उपासना, आसान ,व्यायाम ,हवन, दान, परोपकार ,स्वस्थ निरोग यशस्वी दीर्घायु होकर अपने जीवन को सुखी श्रेष्ठ बनाना चाहिए एवं औरों के जीवन को भी सुखी श्रेष्ठ बनाने हेतु प्रयत्नशील होना चाहिए ।

➤ भाग २९______ महर्षि दयानंद सरस्वती के अनुसार ईश्वर का वैदिक स्वरूप स्तुति सहित

ओम् सच्चिदानन्द: ।
हे ईश्वर! आप सत् चित् आनन्द स्वरूप है

ओम् निराकार: ।
हे ईश्वर ! आप निराकार हैं ।

ओम् सर्वशक्तिमान् ।
हे ईश्वर! आप सर्वशक्तिमान है ।

ओम् न्यायकारी ।
हे ईश्वर ! आप न्यायकारी है ।

Edit with WPS Office

ओम् दयालु ।
हे ईश्वर ! आप दयालु है ।

ओम् अजन्मा ।
हे ईश्वर ! आप अजन्मा है ।

ओम् अनन्त।
हे ईश्वर ! आप अनन्त है ।

ओम् निर्विकार ।
हे ईश्वर ! आप निर्विकार है ।

ओम् अनादि ।
हे ईश्वर ! आप अनादि है ।

ओम् अनुपम ।
हे ईश्वर ! आप अनुपम है ।

ओम् सर्वाधार ।
हे ईश्वर! आप आधार है ।

ओम सर्वेश्वर ।
हे ईश्वर ! आप सबके स्वामी है ।

निष्कर्ष______ ईश्वर के सच्चे वैदिक स्वरूप को जानकर उसकी स्तुति प्रार्थना उपासना करने से ईश्वर से विशेष ज्ञान बल आनंद और दयालुता महानता प्रसन्नता निर्भयता निष्कामता निराभिमानता आदि ईश्वरीय गुणों की प्राप्ति होती है ।

Edit with WPS Office

➤ भाग ३०______ महर्षि दयानंद सरस्वती के अनुसार ईश्वर का वैदिक स्वरूप

ओम् सर्वव्यापक ।
हे ईश्वर ! आप सर्वव्यापक है ।

ओम सर्वअंतर्यामी ।
हे ईश्वर ! आप सर्वन्तयामी है ।

ओम् अजर ।
हे ईश्वर! आप अजर है ।

ओम् अमर ।
हे ईश्वर ! आप अमर है ।

ओम् अभय् ।
हे ईश्वर! आप अभय है

ओम् नित्य ।
हे ईश्वर ! आप नित्य हैं ।

ओम् पवित्र ।
हे ईश्वर ! आप पवित्र हैं ।

Edit with WPS Office

ओम् सृष्टिकर्ता ।
हे ईश्वर ! आप सृष्टिकर्ता है ।

ओम् पालनकर्ता ।
हे ईश्वर ! आप समस्त सृष्टि के पालनकर्ता है ।

ओम् संहारकर्ता ।
हे ईश्वर ! आप संहारकर्ता है ।

ओम् सत्यं ज्ञान अनन्त ब्रह्म । (तैत्तिरीय उपनिषद् ब्रह्मानन्द वल्ली)
हे ईश्वर ! आप सत्यस्वरूप ज्ञानस्वरूप अनन्तस्वरूप सबसे महान है ।

ओम् शान्ति: शान्ति: शान्ति: ।
हे ईश्वर ! हमें आध्यात्मिक आधिदैविक अधिभौतिक दुखों से छुटकारा दिलाए तथा सब प्रकार से शान्ति दो ।

निष्कर्ष______ ईश्वर के सच्चे वैदिक स्वरूप को जानकर उसकी उपासना करके ही जन्म मरण आदि संसार के समस्त रोगों , दुखों, कष्टों , विघ्नों, बाधाओं से छूट सकते हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 35. पृष्ठ पैंतीसवां

• [उपनिषदों में आत्मा और परमात्मा संबंधी शिक्षा]

•1. ।। ईशोपनिषद् :।।

त्याग के साथ भोग करना :

ईशोपनिषद कहता है कि यह सब जो कुछ पृथ्वी पर जगत में चराचर वस्तु है, वे सब ईश्वर से आच्छादित है । उसी ईश्वर के दिए हुए पदार्थों का त्याग के साथ भोग कर । किसी के भी धन का लालच मत कर । उपनिषद ने प्रत्येक प्रकार के भोग की आज्ञा दी है परंतु इन सब भोगों के साथ एक शर्त लगा दी कि मनुष्य इन भोग पदार्थों को ईश्वर का समझ कर भोग करें । उनमें ममत्व न जोड़े । संसार के समस्त दुखों का मूल कारण ममता है । दुख प्राय : किसी वस्तु के पृथक होने से हुआ करता है, परंतु जब इन सब वस्तुओं को स्वयं छोड़ देता है, तब दुख नहीं, अपितु सुख हुआ करता है ।

अत: जब तक मनुष्य में ममता का प्राबल्य रहता है, तब तक वह किसी वस्तु को छोड़ना नहीं चाहता । परंतु जब उन वस्तुओं में वह अपना केवल प्रयोग अधिकार समझता है, तब प्रयोग का समय समाप्त होने पर स्वयं उन्हें छोड़ देता है । जेल के अंदर कैदी कारागार के कपड़े और बर्तनों का प्रयोग करता है । तब तक उन्हें स्वच्छ रखना है, संभाल कर रखता है, की कोई चुरा कर न ले जाए । किंतु जब वह कारागार से मुक्त होता है, तब क्या अपने कंबल से बर्तनों से लिपट कर रोता है ? नहीं रोता ! क्योंकि वह उन्हें अपना नहीं समझता । इनसे उसकी ममता जुड़ी हुई नहीं है ।

यह जो कुछ भी संसार में, तेरे लिए बनाया है, इनका प्रयोग, धन संचयकर, मकान बना, व्यापार कर, शक्ति बढ़ा, किंतु त्याग की भावना से ।

Edit with WPS Office

जब दुखी जन चिल्ला उठे, जब अनाथों का सहायता की आवश्यकता हो, जब देश पर , धर्म जाति पर आपत्ति आ जाए, तब इन वस्तुओं को तुच्छ समझकर त्याग दो । यह है त्याग से भोग करने का अभिप्राय ।।

निष्काम भाव से कर्म करना :

निष्काम कर्म फल की इच्छा त्याग कर कर्म कर्तव्य समझ कर कर्म करने को कहते हैं । मनुष्य का ध्यान प्रायः कर्म करने की और कम, उसका फल पाने की ओर अधिक रहता है, पर कर्म करना जहां हमारे हाथ में है और हमारे कर्मों का फल उस शक्ति पर निर्भर है जिस पर हमारा कोई बस नहीं है । अपनी ओर से पूरी निष्ठा, कुशलता और परिश्रम के साथ कर्म करने के बाद यदि हमें वांछित फल नहीं मिलता तो हमें कर्म करना नहीं छोड़ देना चाहिए । हम पाएंगे कि कर्म करने का अपना एक आनंद है जो इस बात पर निर्भर नहीं रहता कि हमारे कर्म का फल क्या मिलेगा । हमेशा कर्म के फल को लेकर परेशान रहने वाला व्यक्ति कर्म करने के इस आनंद से वंचित रहता है । सकाम कर्म करने वाला व्यक्ति संसार चक्र में फंस जाता है किंतु निष्काम भाव से कर्म करने वाला व्यक्ति की वासनाओं का नाश हो जाता है । वासनाओं के न रहने पर सब सुख दुख भी पृथक हो जाते हैं और सुख दुख के न रहने पर उनकी वासनाएं भी नहीं बन सकती । इस प्रकार मनुष्य संसार चक्र से निकल जाता है ।।

आत्मा के अनुकूल मन ,वाणी और शरीर से आचरण करना :

जो व्यक्ति आत्मा में और, जो वाणी से और बोलते हैं, और करते कुछ और ही है, वे कभी अविधा रूप दुख सागर से पार हो आनंद को प्राप्त नहीं हो सकते और ऐसे व्यक्ति आत्मा के विपरीत (आत्म हनन) काम करने वाले मरकर प्रकाश रहित और तम से अच्छंदित योनियों को प्राप्त होते है ।
जो आत्मा, मन ,वाणी और कर्म से निष्कपट एक सा आचरण करते हैं, वे ही देव आर्य सौभाग्यवान सब जगत को पवित्र करते हुए इस लोक और

Edit with WPS Office

परलोक में अतुल सुख भोंगते हैं ।

आत्म हनन अर्थात आत्मा के प्रतिकूल कार्य नहीं करना चाहिए । आत्म स्वरूप से शुद्ध और पवित्र है, किसी प्रकार के ईर्ष्या द्वेष आदि दोषों से लिप्त नहीं है । इसलिए आत्म प्रेरणा भी, जिसको अंत:करण के अनुकूल कार्य करना कहते हैं, इन दोषों से मुक्त होती है । इसलिए मनु ने इसी आत्म प्रेरणा को स्वस्थ च प्रियमात्मन : कहकर धर्म का अंतिम साधन बतलाया है । चरित्र निर्माण करने का मुख्य साधन भी यही आत्म प्रेरणा है । चरित्रवान हुए बिना मनुष्य अध्यात्म जगत में प्रवेश नहीं कर सकता इस संबंध में कठोपनिषद में कहा है–

दुश्चरित्रता , मन की चंचलता , संशय, अशांति तथा तृष्णा में फसावट, ये सब या इनमें से कोई भी जिस व्यक्ति में होती है, स्पष्ट है कि उसका मन मालिन होता है । मन की मालिनता मनुष्य के भीतर सात्विक भावों की जागृति नहीं होने देती, वह सदैव तमोगुण के अंधकार और रजोगुण के दलदल में फंसा रहता है । यह अवस्था ब्रह्म के समीप होने की नहीं है, अपितु ब्रह्म से दूर होने का कारण है । इन विध्न बाधाओ को दूर करने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य की बुद्धि, प्राय प्रेरिता बुद्धि (प्रज्ञा) बने, जो विध्नों से दूर रहा करती है । जब उसकी बुद्धि सुधरने लगती है तो वह क्रमशः उस अवस्था को भी प्राप्त कर लेता है जिसमें उसका मन और बुद्धि सभी स्थिर हो जाती है । यही ईश्वर प्राप्ति के मार्ग की ओर मुंह फिर जाना कहा जाता है ।

आत्म- प्रेरणा से किस प्रकार चरित्र निर्मित होता है, इसके लिए किसी विशेष व्याख्या की जरूरत नहीं है । चरित्र को ही सदभ्यास कहते हैं । अभ्यास एक ही कर्तव्य को अनेक बार कार्य परिणत करने से बना करता है । मनुष्य जब कोई अच्छा या बुरा काम करना चाहता है, तो अच्छा काम करने में आत्म प्रेरणा से उसको उत्साह और प्रसन्नता उत्पन्न होती है, परंतु जब बुरा काम करने का विचार करता है तो उसके सम्मुख भीतर से भय , लज्जा और शंका के रूप में अनुत्साह अप्रसन्नता पैदा होती है । पहली सूरत में किसी अच्छे काम को अनेक बार करके प्राणी उसको करने का अभ्यास (आदत) बना लेता है और फिर उस काम को वह इच्छा से नहीं किंतु अभ्यास वश किया करता है । इसी का नाम सदभ्यास या चरित्र है । इसी प्रकार जब कुसंगति में पड़कर कुसंग दोष से आत्म प्रेरणा के विरुद्ध मनुष्य

Edit with WPS Office

कोई बुरा काम अनेक बार कर लेता है तो उसके करने का सदभ्यास बन जाता है और वह इस बुराई को भी बिना इच्छा के किन्ही सूरतों में इच्छा के विरुद्ध भी अभ्यासवश करने लगता है । कल्पना करो की एक मनुष्य को मदिरा पीने का बुरा अभ्यास बन गया है । अब जब उससे दूसरे मनुष्य उसको इस बुराई की दुष्कर्मता बतलाते हैं तो वह उन्हें स्वीकार तो कर लेता है । परन्तु जब वे कहते हैं की फिर उसे छोड़ क्यों नहीं देते, तब वह अपनी विवशता प्रकट करते हुए कह देता है की क्या करूं ? आदत से लाचार हूं ।

इस प्रकार विचार करने से स्पष्ट हो जाता है कि आत्म प्रेरणा से सदभ्यास या चरित्र बना करता है और उसके विपरीत आचरण करने से असदभ्यास या दुश्चरित्र । अतः हमें आत्मा के अनुकूल मन वाणी और शरीर से आचरण करना चाहिए ।

जैसे-जैसे मनुष्य सुकर्मों की चेष्टा करते हैं, वैसे-वैसे ही पाप कर्म से बुद्धि की निवृत्ति होती है और विधा, अवस्था और सुशीलता बढ़ती है ।।

ज्ञान और कर्म के द्वारा मानव के कर्तव्य का विधान :

1___जो कर्म को ज्ञान की उपेक्षा कर के सेवन करते हैं, वे गहरे अंधकार में प्रवेश करते हैं अर्थात दुख पाते हैं और जो कर्म की उपेक्षा करके केवल ज्ञान में ही रमते हैं, वे उससे भी अधिक अंधकार को प्राप्त होते हैं अर्थात उससे भी अधिक देख पाते हैं । **(ईशोपनिषद- 12)**

2___ जो ज्ञान और कर्म इन दोनों को साथ-साथ लेकर जानता है । वह कर्म से मृत्यु को तैर कर ज्ञान से अमरता को प्राप्त होता है । **(ईशोपनिषद- 14)**

इन दोनों मंत्रों से स्पष्ट हो गया है कि केवल ज्ञान का या केवल कर्म का सेवन करना अंधकार में पड़ना है । सिद्धांत यह है कि ज्ञान और कर्म दोनों का प्रयोग साथ-साथ करना चाहिए । वेदों का शाश्वत सिद्धांत है, ज्ञ जो तीनों कालों में एक जैसी उपयोगिता रखता है । ज्ञान उपलब्ध करके उसको कार्य में परिणत करना मानव जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य है और ऐसा करने पर

Edit with WPS Office

ही जीवन में सफलता प्राप्त होगी। मान लीजिए एक व्यक्ति कहता है कि मुझे गाजियाबाद के रास्ते का पूर्ण ज्ञान है कहां-कहां से किस प्रकार गाजियाबाद पहुंचा जाएगा। इसका मुझे अच्छी प्रकार ज्ञान है परंतु वह गाजियाबाद जाने का कर्म नहीं करता, घर पर बैठे-बैठे अपने ज्ञान का ढिंढोरा पीट रहा है। भगवान यदि उसकी आयु एक हजार वर्ष भी कर दे तो भी वह कर्म किए बिना गाजियाबाद नहीं पहुंच सकता। दूसरे व्यक्ति को गाजियाबाद जाने के मार्ग का ज्ञान नहीं है और वह गाजियाबाद से विपरीत दिशा में कर्म करता है, दौड़ लगाता है परंतु वह भी गाजियाबाद नहीं पहुंच सकता। इसके लिए यह आवश्यक है कि रास्ते का ज्ञान भी हो और उसी के अनुसार कर्म भी करें।

दूसरा उदाहरण लीजिए मान लीजिए की एक व्यक्ति कहता है कि मैंने सत्यार्थ प्रकाश को कई बार पढ़कर उसके अंदर बतलाई गई सभी बातों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर लिया है। आप जहां से चाहे प्रश्न पूछ लीजिए और कभी-कभी तो वह सत्संग में जाकर दूसरे लोगों से प्रश्न पूछता है। अपने को सभा में ज्ञानी सिद्ध करने का पूर्ण प्रयास करता है किंतु उस प्राप्त ज्ञान के अनुसार कर्म करने में शून्य ही नहीं अपितु आचरण में ऋणात्मक भी है। दूसरा व्यक्ति कहता है कि मुझे तो केवल सत्यार्थ प्रकाश की एक ही बात का ज्ञान है कि ईश्वर सर्वव्यापी है और ईश्वर को सर्वव्यापी मानकर कार्य करता है। इससे मेरी आत्मा निष्पाप हो गई है क्योंकि जब भी मेरे मन में कोई अशुद्धि विचार आता है तो मुझे हर वस्तु, हर प्राणी में भगवान के दर्शन होते हैं और मैं इससे पाप करने से बच जाता हूं। दूसरे हर प्राणी में चाहे वह ऊंची जाति का, नीची जाति का है, उन सबमें मुझे भगवान के दर्शन होने के कारण में सभी से प्रेम करता हूं। इससे सिद्ध हो रहा है कि चाहे ज्ञान थोड़ा प्राप्त किया जाए, पर उसके अनुसार कर्म करने वाले को सफलता मिलती है। वही श्रेष्ठ है। दूसरे लोग ज्ञान बहुत अधिक प्राप्त करके उसके अनुसार कर्म न करने से कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा, बल्कि यदि ज्ञान का अहंकार हो गया, जैसा कि अधिकतर हो जाता है तो वह ज्ञान हानिकारक भी हो सकता है, क्योंकि अहंकार पतंन का कारण है। ज्ञान मात्र का कोई फल नहीं मिलता, परंतु कर्म जितना भी करोगे, चाहे वह कितना भी उल्टा सीधा क्यों ना हो, उसका कुछ ना कुछ फल अवश्य

Edit with WPS Office

मिलता है । इसलिए उपनिषद की शिक्षा में कर्म का बहुत ऊंचा स्थान है । यहीं से गीताकर ने कर्मयोग की शिक्षा ली है–-

कोई भी मनुष्य क्षण भर बिना कर्म किए नहीं रह सकता ।

प्रकृति के गुण सभी मनुष्यों को विवश कर उनसे कोई न कोई कर्म कराते रहते हैं । (गीता___3/5)

अतः उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो गया है कि मानव को अपना जीवन सफल बनाने के लिए ज्ञान और कर्म को साथ-साथ लेकर चलना चाहिए। हम जितना भी ज्ञान प्राप्त करें उसके अनुसार कर्म अवश्य करें ।।

• 2. ।। केन उपनिषद् ।।

मन, प्राण, और चक्षु श्रोतादि इंद्रियां किसकी सहायता से कार्य करती हैं :

एक जिज्ञासु के शांत हृदय में प्रश्न उठता है की मन किस प्रकार संकल्प विकल्प करता है । कहां से उसमें इतना वेग आ जाता है कि जिससे वह कल्पनातीत काल में असंख्य मील दूर पहुंच जाया करता है ? किस प्रकार प्राण अपना विलक्षण कार्य करके प्राणियों के जीवन का आधार बना हुआ है ? चक्षु , श्रोतादि इंद्रियों में जड़ प्रकृति का कार्य होते हुए भी किस प्रकार देखने सुनने आदि की विभिन्न क्रियाएं हुआ करती है ।

उपनिषद् के ऋषि का उत्तर :---

उपनिषद के ऋषि ने उत्तर दिया है कि एक शक्ति और वह एक विलक्षण शक्ति है, जो मन, चक्षु, श्रोतादि इंद्रियों मैं अपना अपना व्यापार करने की योग्यता प्रदान करती है और उसी की प्रधान की हुई योग्यता से मन आदि मिट्टी के ढेले के सदृश होते हुए भी विलक्षण कार्य करते हैं की जिनकी कार्य प्रणाली को समझने में विज्ञान के टिमटिमाते हुए दीपक धुंधले पड़ रहे हैं और तर्क के तीव्र आलोचक शास्त्र भी कुंठित हो रहे । न वहां आंख पहुंचती

Edit with WPS Office

है, न वाणी पहुंच सकती है, और न मन । उस विलक्षण शक्ति तक इंद्रियों और मन की पहुंच नहीं है । इसलिए इनके माध्यम से कोई भी उस शक्ति तक नहीं पहुंच सकता । ईश्वर तक इंद्रियों की पहुंच नहीं है, इसलिए इंद्रियों के द्वारा न तो उसको जानते और न जान सकते है ।

प्रश्न : ब्रह्म क्या है ?

उत्तर :

जो वाणी द्वारा प्रकाशित नहीं होता, जिससे वाणी का प्रकाश होता है । जिसका मन से मनन नहीं किया जाता, जिससे मन मनन करता है, जो आंख से नहीं देखा जाता , जिससे आंख देखती है । जो कान से नहीं सुना जाता, जिससे कान सुनता है । जो प्राण से प्राण के व्यापार में नहीं आता , जिससे प्राण अपना व्यापार करता है । उसको ही तू ब्रह्म जान ।

वह विलक्षण शक्ति (ब्रह्म)इंद्रियों की पहुंच से परे है । न केवल यह की इंद्रियां वहां नहीं पहुंच सकती बल्कि यह भी की इंद्रियों द्वारा उसके स्वरूप का प्रकाश भी नहीं हो सकता । उस शक्ति (ब्रह्म) तक इंद्रियों की पहुंच न होने का मतलब यह है कि उसकी प्राप्ति का साधन इंद्रियां नहीं है । उसके स्वरूप का प्रकाश न कर सकने का तात्पर्य यह है कि उसके स्वरूप उसके गुण कर्म का ठीक-ठीक प्रकटीकरण इंद्रियों द्वारा नहीं हो सकता ।

यदि तुम उस विलक्षण शक्ति का सामीप्य प्राप्त कर अमृता जीवन प्राप्त करना चाहते हो, तो तुम्हें इंद्रियों के कार्यों (विषयों) में लिप्त नहीं होना चाहिए । उनसे काम लो, उनको अपना अपना व्यापार करने की स्वतंत्रता दो, परंतु तुम उनके कार्यों से निरपेक्ष रहो, उनमें फसों नहीं, उन पर अधिकार रखो ।

ब्रह्म को जानने के सम्बन्ध में उपनिषद का मत :

उपनिषद के शब्दों में ब्रह्म को जानने के संबंध में यह मत है कि– न वेदेति वेद च , अर्थात उसे नहीं भी जानते और जानते भी हैं । इसका भाव यह है कि ब्रह्म को जितना भी जानते हैं, उससे मनुष्य को आस्तिक (ईश्वर

Edit with WPS Office

विश्वासी) बना रहना चाहिए और जो कुछ नहीं जानते, उसके जानने के लिए उस (ब्रह्म) का जिज्ञासु रहना चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा देकर ऋषियों ने जन समाज को नास्तिकता या अज्ञेयवाद के गड्ढे में गिरने से बचा लिया है। मनुष्य यदि ईश्वर के संबंध में यह विचार रखें कि उसे अच्छी तरह जानता है तो इसका फल यह है कि उसमें ईश्वर के लिए उपेक्षा बुद्धि पैदा होगी। कारण स्पष्ट है और वह यह है कि जिस चीज को आदमी अच्छी तरह से जान लिया करता है फिर उसकी और ध्यान नहीं दिया करता। एक विद्यार्थी जिसने एम ए या आचार्य की परीक्षा में उत्तीर्णता प्राप्त कर ली, वह अंग्रेजी या संस्कृत की प्रारंभिक पुस्तकों की ओर ध्यान भी नहीं देता, क्योंकि उनके लिए उसका विश्वास है कि वे भली भांति जानी हुई पुस्तकें हैं। यदि इसी प्रकार मनुष्यों में ब्रह्म के लिए उपेक्षा बुद्धि पैदा हो जावे तो फल यह होगा कि वे (मनुष्यों) न ब्रह्म की ओर ध्यान देंगे, न उसके गुणों का जाप करेंगे और ऐसा करने से ईश्वरोपासना से जो मनुष्य का गुण वृद्धि द्वारा कल्याण हुआ करता है, उससे वंचित रहेंगे।

अब मन्तव्य के दूसरे पहलू पर विचार कीजिए। यदि मनुष्य अज्ञेयवादियों के सदृश यह समझने और मानने वालों की ब्रह्म को जान ही नहीं सकते तो फिर उसमें निराशा के भाव पैदा होंगे और वह समझने लगेगा की जिस वस्तु को हम प्राप्त नहीं कर सकते अथवा जिस वस्तु का प्राप्त होना संभव ही नहीं, उसके लिए प्रयत्न करना निरर्थक और समय को व्यर्थ नष्ट करना है। इसका भी फल वही होगा कि मनुष्य निराशा से न ईश्वर का स्मरण करेंगे और न उसकी उपासना। इस प्रकार उसके फल स्वरुप गुणोत्कर्ष से वंछित रहेंगे और अपने ही हाथों अपना भविष्य बिगाड़ेंगे।

अतः देख लिया कि उपनिषद ने ब्रह्म ज्ञान के संबंध में इस मन्तव्य की शिक्षा देकर कि उसमें कुछ जानते हैं और कुछ नहीं जानते। जो जानते हैं, वे आस्तिक बने रहेंगे और जो नहीं जानते वे उसकी खोज करें। मनुष्य जाति का बड़ा उपकार किया है। और उसे दोनों और के गड्ढों में गिरने से बचा लिया है।

जिन खोजा तिन पहिया कहावत के अनुसार ईश्वर की खोज करने वाले उस(ब्रह्म)का कुछ ना कुछ अधिक ज्ञान प्राप्त करते ही रहते हैं और यही ज्ञान वृद्धि अन्त में उनके कल्याण का कारण हुआ करती है।

Edit with WPS Office

आत्मा की दो वृत्तियां :

आत्मा जब बाहरी जगत में काम करना चाहता है, तब उसकी बाहरी मुखी वृत्ति काम करती है । बाहरी मुखी वृत्ति का काम बुद्धि ,मन और इंद्रियों के माध्यम से पूरा हुआ करता है । जब आत्मा अपने भीतर ही काम करता है, तब वह अपनी अन्तर्मुखी वृत्ति से काम लेता है ।

मेरा धन, मेरी संपत्ति, मेरा पुत्र, मेरी पुत्री, मेरा शरीर आदि भावनाओं का प्रादुर्भाव अहंकार की सत्ता से हुआ करता है । व्यक्तितत्व अहंकार के बिना नहीं बन सकती और व्यक्तितत्व के निर्माण के बिना जगत नहीं बन सकता । परंतु अंतर्मुखी वृत्ति के लिए किसी माध्यम की जरूरत नहीं है । बहिर्मुखी वृत्ति के द्वारा उपलब्ध ज्ञान का नाम बोध है । परंतु जो ज्ञान अन्तर्मुखी के द्वारा प्राप्त हुआ करता है, उसका नाम प्रतिबोध है । उसको प्रतिबोध कहे जाने का कारण यह है कि वह बहिर्मुखी व्यक्ति द्वारा प्राप्त ज्ञान के प्रकार की दृष्टि से विभिनता रखता है । आत्मा का स्वाभाविक गुण ज्ञान के अतिरिक्त प्रयत्न भी है । इसलिए आत्मा सतत प्रयत्नशील रहता है । सतत प्रयत्नशील रहने का मतलब यह है की आत्मा की वृत्तियां में से एक वृत्ति सदैव काम करती रहती है । जब एक वृत्ति रुकती या रोकी जाती है तो उसका फल यह होता है की दूसरी वृत्ति बिना किसी प्रयत्न के स्वमेव यांत्रिक रूप से काम करने लगती है । जब व्यक्ति प्रयत्नशील होकर ध्यान (योग का सातवां अंग) के अभ्यासों द्वारा मन निर्विषय कर दिया जाता है । तब बहिर्मुखी वृत्ति बंद होकर अन्तर्मुखी वृत्ति स्वमेव जारी हो जाया करती है । इस अन्तर्मुखी वृत्ति का कार्य आत्मा और परमात्मा होते हैं । इसलिए आत्मा को अपना और ईश्वर का ज्ञान प्राप्त हुआ करता है । उसका नाम प्रतिबोध हुआ करता है ।

उपनिषद की शिक्षा :

Edit with WPS Office

उपनिषद ने शिक्षा दी है कि इस प्रतिबोध प्राप्त विज्ञान से मनुष्य अमृता (मोक्ष)प्राप्त करता है । उसे अपने उत्कर्ष से शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तीनों प्रकार का बल प्राप्त करना चाहिए और उपलब्ध विज्ञान से अमृत प्राप्त करनी चाहिए । परंतु इस प्रतिबोध की प्राप्ति अहंकार के नाश होने से ही प्राप्त होती है । अहंकार के नाश से ममता का नाश होता है और ममता के नाश होने से मनुष्य (आत्मा) और परमात्मा के बीच का पर्दा उठ जाता है । यही मनुष्य का अंतिम ध्येय है ।

ब्रह्म को इसी जीवन में जानने का यत्न करना चाहिए अन्यथा ऐसा न करने पर बहुत बड़ी हानि होगी । जगत के एक-एक पदार्थ में ब्रह्म आकाशवत् ओत प्रोत है । इसलिए इसकी खोज तत्व ज्ञान प्राप्त करते हुए करनी चाहिए । इस प्रकार उसकी खोज करते हुए धीर पुरुष अमरत्व प्राप्त किया करते हैं ।

ईश्वर प्राप्ति का मार्ग :

इंद्रियों की पहुंच ईश्वर तक नहीं है । इसलिए इंद्रियों के द्वारा कोई भी ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते । **कठोपनिषद में कहा गया है– तस्मात् पराङ् पश्यति नान्तरत्मत् (कठोपनिषद .4/21) ।** इंद्रियों का स्वभाव ही बाहर की ओर चलने का है । फिर इनके पीछे चलकर स्पष्ट है कि कभी आत्मद्रष्टा नहीं बन सकता । आत्म दर्शन भीतर घुसे बिना नहीं प्राप्त हो सकता । जैसे कि कहां गया है– **वेनस्तत्पश्यन निहितं गुहासत् – (यजुर्वेद 32/8)।** योगी ईश्वर का हृदयाकाश में साक्षात्कार करता है । **आत्मनात्मानभि स विवेश । – (यजुर्वेद. 32/11)** जीवात्मा द्वारा परमात्मा को प्राप्त करो । जो धीर पुरुष आत्मा में प्रवेश कर ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं , उन्हीं को चिरस्थायी सुख प्राप्त होता है, अन्यों को नहीं । इसलिए स्पष्ट है कि इंद्रियों से कोई ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकता ।

असम्प्रज्ञात अवस्था को प्राप्त करने के उपाय :

Edit with WPS Office

सूत्र : भव प्रत्ययो विदेह प्रकृतिलयानाम् ।(योगदर्शन . 1/19)
भवप्रत्यय : विदेह और प्रकृतिलय पुरुष का भेद यह है कि विदेह लोग उपाय प्रत्ययो का आश्रय लेते हैं परंतु प्रकृति लय वाले योगी (भव प्रत्यय :) जो भव संसार चक्र में ही फंसाने वाले हैं, उनको ही सम्मुख रखकर उपासना करते हैं । जैसे परमात्मा के यथार्थ स्वरूप को न जानकार किसी की मूर्ति को ही ब्रह्म मानकर उसकी उपासना करते हैं । वे शरीर त्यागने के पश्चात इन्हीं प्रकृति आदि में लय होते रहते हैं अर्थात आवागमन चक्र में ही घूमते रहते हैं ।' भव' अज्ञान को कहते हैं जड़ पदार्थों में ईश बुद्धि करके योगाभ्यास करने से वास्तविक असम्प्रज्ञान समाधि की अवस्था प्राप्त नहीं हो सकती । इसलिए इसको भवप्रत्यय कहां है क्योंकि यह संसार चक्र का कारण है ।

उपाय प्रत्यय :

सूत्र - श्रध्दावीर्यस्मृतिसमाधि प्रज्ञापूर्वक इतरेषाम् । (योगदर्शन . 1/20)
श्रद्धा, वीर्य, स्मृति, समाधि और प्रज्ञा युक्त हुए विदेह अवस्था को जिन्होने प्राप्त कर लिया, वे ही लोग असम्प्रज्ञात समाधि को प्राप्त करते हैं, प्रकृतिलय वाले नहीं । अथवा मोक्ष के प्रबल जिज्ञासु जनों को उपरोक्त उपायों को धारण करना ही ' उपाय प्रत्यय ,कहलाता है ।
1. **श्रद्धा___** मोक्ष के अभिलाषी में यम-नियमों आदि के पालन के साथ-साथ ईश्वर के सच्चे स्वरूप का बोध होना और उनके उपाय का अति श्राद्ध भक्ति से अनुष्ठान करना, मन में दीर्घकालता के कारण उपेक्षा का भाव न आने देना ही श्राद्ध है । यह श्रद्धा माता के समान योगी की रक्षा करती है ।
2. **वीर्य___** ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए संयम और तप का जीवन बनाकर, अत्युसाह पूर्वक योग सम्पादन में लगे रहना, आलस्य और प्रमाद न करते रहना । ऐसा करने से योग को सिद्ध करने बल (योग वीर्य) सम्पन्न होता है ।
3. **स्मृति___** अपनी पूर्व अवस्था को और कालान्तर योग की अवस्था को

Edit with WPS Office

स्मरण रखते हुए आगे बढ़ने का उत्साह करते रहना । इससे चित्त का स्मृति भंडार खुल जाता है और चित् के इस प्रकार खुल जाने से योगी व्याकुलता रहित हो जाता है । यह चित् की समाधि है ।

4. समाधि___ योग अभ्यास से सम्प्रज्ञात समाधि की अवस्था को प्राप्त होने पर ही, जब तक असम्प्रज्ञात अवस्था प्राप्त न हो जाए, तब तक योगाभ्यास करते रहना अर्थात विदेह अवस्था से ही संतुष्ट न हों जाना ।

5. प्रज्ञा___ इन उपरोक्त उपायों के अनुष्ठान से अंतिम असम्प्रज्ञात अवस्था को प्राप्त हो जाता है । जिसको ऋतम्भरा प्रज्ञा नाम से पुकारते हैं । इस अवस्था में सभी कर्म वासनाओं का और अविधा आदि कालेश्वर का सर्वथा क्षय हो जाता है । आत्म साथ-साक्षात्कार प्राप्त होकर संसार के बंधनों से इस प्रकार छूट जाता है जैसे– सर्प स्वयं समय आने पर अपनी केंचुली को छोड़ देता है ।

अन्धतम प्रविशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते ।

जो प्रकृति की उपासना करते हैं प्रकृति से उत्पन्न हुए इस संसार के विषय भोगादि और शरीर के सौंदर्य में ही लिप्त रहते हैं । वे संसार चक्र में ही पड़े रहते हैं और जो प्रकृति के पदार्थ को और शरीर को साधन रूप में समझकर श्रद्धा वीर्य आदि शास्त्रोक्त उपायों के अनुष्ठान में रत रहते हैं , वे ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं ।

ब्रह्म विद्या प्राप्ति के साधन :

ब्रह्म विद्या प्राप्ति के लिए तप , इंद्रियनिग्रह और निष्काम कर्म ये तीन साधन है । जो वेद और उनके सम्पूर्ण अंगों में प्रतिष्ठित है और जिनका आधार सत्य है ।

तप : ____ तप कठोरताओं को सहने, अशुद्धियों को दूर करके शरीर और इंद्रियों पर अधिकार रखने तथा कठिन समय पर जनता की सेवा करने का नाम है ।

दम : ____ इंद्रियों के निग्रह को दम कहते हैं । इंद्रियों को ऐसा बनाना दम है, जिससे वे कोई अनुचित काम न कर सके ।

Edit with WPS Office

कर्म : _____ ब्रह्म विद्या का साधक कर्म निष्काम कर्म है । जिसको गीता में कर्मयोग कहा है । सकाम कर्म से वासना की उत्पत्ति होती है, जिसको उपनिषदों में हृदयग्रन्थि कहां है । इस वासना के चित्त में बने रहने से मनुष्य आवागमन के चक्र से नहीं छूट सकता । परंतु निष्काम कर्म से बंधन में लाने वाली यह वासना पैदा नहीं होती । यही निष्काम कर्म की विशेषता है ।

।। तप , दम , और कर्म का सत्य पर निर्भर होना :।।

वेद और वेदांग चाहते हैं कि उनमें वर्णित तप दम और कर्म सत्य पर निर्भर हो । यदि इन साधनों में सच्चाई न हो तो फिर ये साधन केवल दिखावट की बात रह जाते है । नीति में एक स्थान पर कहां है- यज्ञ, अध्ययन, दान, तप, सत्य, क्षमा, धृति और अलोभ, यह आठ प्रकार का धर्म का मार्ग है । इनमें से प्रारंभ के चार, यज्ञ अध्ययन दान और तपदम्भ के लिए भी प्रयुक्त होते हैं । परंतु अंत के चार सत्य, क्षमा, धृति, और अलोभ दिखावट से शून्य होते हैं । ये महात्माओं में ही होते हैं । स्पष्ट है कि सदाचार दम्भ से शून्य हुआ करता है । इसलिए यदि ब्रह्म विद्या के साधन तप, दम, कर्म, सत्य पर निर्भर हो तो फिर उनमें दम्भ और दिखावट नहीं हो सकती । उनमें वास्तविकता होगी । इस प्रकार वे विद्या और ब्रह्म की प्राप्ति के असन्दिग्ध साधन होंगे ।

जो जिज्ञासु उपयुक्त भांति ब्रह्म विद्या को जानकर उसकी प्राप्ति के साधनों को काम में लाते हैं, वे निष्पाप होकर चिरकाल तक प्राप्त रहने वाले ब्रह्मलोक को प्राप्त कर लेते हैं ।

• 3. ।। कठोपनिषद ।।

आत्मा और ईश्वर के संबंध में कठोपनिषद के विचार :

Edit with WPS Office

यह उपनिषद एक आख्यापिका के रूप में– वाजश्रवा का पुत्र नचिकेता था । उसने यम नामक एक विद्वान व्यक्ति से शिक्षा प्राप्त की, जिस शिक्षा का नाम कठोपनिषद है । यहां पर केवल आत्मा और परमात्मा के संबंध में दी गई शिक्षा का वर्णन किया जाएगा, पूरे कठोपनिषद का नहीं ?।।

सकाम कर्म यज्ञादि से प्राप्त होने वाला स्वर्ग :

वह स्वर्ग जो सकाम कर्म यज्ञादि से प्राप्त हुआ करता है, वह मनुष्यों में सर्वश्रेष्ठ (देव यानि) में पैदा होने से बढ़कर और कुछ नहीं है । अवश्य वह देव योनि दुखों से रहित और उत्कृष्ट तम सांसारिक सुखों से परिपूर्ण होता है । इसलिए शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि सकाम जन्य स्वर्ग,, में मनुष्य स्थूल शरीर के साथ उत्पन्न हुआ करता है । स्थूल शरीर के साथ उत्पन्न होकर जरा, मृत्यु भूख प्यास आदि से छुटकारा लेना संभव नहीं ।

जब यज्ञ फल विशेष की कामना से किया जाता है, तब वह उसी अनित्य फल का अनित्य साधन हुआ करता है । परंतु जब वही यज्ञ निष्कामता के साथ फल को ईश्वर के अर्पण करके किया जाता है, तब वह अनित्य होते हुए नित्य ईश्वर की प्राप्ति के साधनों में से एक हो जाता है । यम आचार्य ने इसी दूसरे प्रकार के यज्ञ द्वारा ईश्वर प्राप्ति का संकेत किया है ।

श्रेय और प्रेय मार्ग :

यम नचिकेता को समझाते हुए कहता है की धीर पुरुष श्रेय (निवृत्ति) को और मन्द अज्ञानी पुरुष सांसारिक की दृष्टि से केवल प्रेय (प्रवृत्ति) को अपना ध्येय बनाते हैं, परंतु तूने विषय भोग निस्सारता पर विचार करके छोड़ दिया जिसमें बहुत से लोग फंस जाया करते हैं ।

श्रेय और प्रेय निवृत्ति मार्ग ही को विधा और अविधा भी कहते हैं । जो

Edit with WPS Office

लोग नचिकेता की तरह सांसारिक सुख में लिप्त नहीं होते, वे ही श्रेय (विधा) पथगामी होते हैं, परंतु प्रेय (अविधा) ही को जिन लोगों ने अपना ध्येय बना रखा है और जो खुले तौर पर परलोक (श्रेय) पथ की सत्ता नहीं मानते, उन्हें बार-बार मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है । वे संसार में भी सफल मनोरथ नहीं होते ।

परलोक पथ प्रदर्शक कोई-कोई अर्थात बहुत थोड़े ही है । यह मार्ग बहुत कठिन है । इसलिए बहुत से इसे जानना ही नहीं चाहते और जो जानना भी चाहते हैं, उनमें से बहुत के यह समझ में ही नहीं आता । जो लोग स्वयं श्रेयपथगामी नहीं है, वे यह मार्ग किसी को नहीं दिखा सकते, परंतु जो इस पंथ के पथिक ईश्वर के अनन्य भक्त हैं, उनके बतला देने पर किसी को भी सन्देह नहीं रहता । वह परमात्मा जो इस मार्ग (श्रेय) का लक्ष्य है, वह सूक्ष्म से भी सूक्ष्म और निदिध्यासन (आत्मा के ग्रहण करने योग्य) का विषय होने से तर्क का विषय नहीं है । इसलिए इस विषय में तर्क काम नहीं दे सकता, किन्तु कुतर्क होने से बुद्धि का बिगाड़ने वाला होता है ।

परमात्मा प्राप्ति का साधन :

परमाणु जो सूक्ष्म से सूक्ष्म समझा जाता है, ईश्वर उनसे भी सूक्ष्म है और ब्रह्मांड जो असीम और अपार माना जाता है, ईश्वर उससे भी महान है । उसकी प्राप्ति के तीन साधन है—--
निष्कामता
शोक रहित होना
बुद्धि की निर्मलता।

परमेश्वर प्रवचन, मेघा या बहुश्रुत होने से प्राप्त नहीं होता अर्थात उसका प्राप्त होना, प्राप्त करने वालों की इच्छा के अधिकार में नहीं है, किंतु स्वयं उस (ईश्वर) ही के अधिकार में है कि वह किसको प्राप्त हो जाए । उपनिषद की इस विलक्षण शिक्षा पर एक शंका का उत्पन्न होती है । वह यह है कि ईश्वर क्या अंन्धाधुन्ध किसी को प्राप्त हो जाता है अथवा प्राप्त होने की कोई

Edit with WPS Office

मर्यादा का नियम है । इस संबंध में ऋग्वेद में एक जगह कहा है—
नऋते श्रान्तस्य सख्याय । (ऋग्वेद . 4/33/11)
यत्न करके थके बिना कोई ईश्वर की मित्रता प्राप्ति के लिए समर्थ नहीं होता । इस शिक्षा का भाव यह है कि ईश्वर के निर्वाचन में आने का अधिकार बनने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य जितना अधिक से अधिक यतन स्वयं कर सकता है, करके, तब ईश्वर की दया की इच्छा रखें । एक आख्यायिका वेदांत के ग्रंथों में आई है जिसमें कहा गया है की एक खड़ी हुई माता का छोटा पुत्र अपने पांव से खड़ा होकर न चल सकने वाला, बालक उससे दूर खेल रहा था । बालक को भूख लगी, तब वह माता की और घुटनों के बल चला और माता के चरणों तक पहुंच गया । माता खड़ी हुई थी इसलिए उस छोटे बालक की शक्ति से बाहर था कि वह अपना मुंह माता के स्तनों तक पहुंच कर दूध पीकर अपनी भूख शांत करें । अब वह सहायता के लिए आशा भरी दृष्टि से माता की ओर देखा है । माता के हृदय में दया के भाव जागृत होते हैं और वह अपने बच्चों को गोद में उठाकर दूध पिलाकर उसकी भूख शांत कर देती है । इसी प्रकार जब मोमुक्षु समस्त योग साधनों की पूर्ति करके हृदय ग्रंथि को काट देता है, तब वह ईश्वर की दया का पात्र बनकर उसके प्राप्त होने का सौभाग्य प्राप्त कर लिया करता है ।

आत्मा की अन्तर्मुखीवृत्ति को जागृत करके आत्मसाक्षात करना :

ब्रह्म को कोई भी व्यक्ति जगत के स्थूल पदार्थों में इंद्रियों द्वारा नहीं देख सकता । इसको कोई सूक्ष्मदर्शी जिज्ञासु अपनी बुद्धि को अत्यंत सूक्ष्म निर्मल बनाकर आत्मा की अन्तर्मुखी वृत्ति की जागृति द्वारा ही साक्षात कर सकता है । उसकी ओर चलना अर्थात अन्तर्मुखी वृत्ति के जागृत करने का मार्ग बाहर से भीतर की ओर चलना है जिसका क्रम यह है की वाणी आदि समस्त इंद्रियों को जिज्ञासु मन में लगा देवे जिससे इस प्रकार भीतर चलने से वे बाहर अपने विषयों की ओर न जा सके । मन को अपने सूक्ष्म बुद्धि में लगावे और बुद्धि को अपने कारण महतत्व में लगा देवे । इस बुद्धि के कारण महतत्व को आत्मा में आत्मा में लगा देवे । आत्मा में उसके लगाने

Edit with WPS Office

का अभिप्राय यह है कि अब अन्तर्मुखी वृत्ति जागृत हुई और आत्मा बाहर का काम बन्द करके आत्म साक्षात्कार में लग गया ।

यह आत्म साक्षात्कार का मार्ग अत्यंत कठिन है । इसलिए आत्मदर्शी लोग इस मार्ग को तलवार की धार पर चलने के सदृश बतलाते हैं । इसी उद्देश्य से उपनिषद में जिज्ञासु को सावधान होकर कार्य करने की चेतावनी की गई है ।

जब पांचों ज्ञानेंद्रियां मन के साथ अपना अपना कार्य छोड़कर ठहर जाती हैं और बुद्धि भी चेष्टा नहीं करती तब बहिर्मुखी वृत्ति का बन्द हो जाना और अंतर्मुखी वृत्ति का जागृत हो जाना । इसी अवस्था का नाम उपनिषद के शब्दों में परम गति (जीवात्मामुक्तअवस्था) है । परंतु जब वह बहिर्मुखी वृत्ति बंद नहीं होती, जिज्ञासु अंतर्मुखी नहीं हो सकता । कबीरदास जी ने इसी उच्च भाव को अपने मोटे शब्दों में इस प्रकार प्रकट किया है–

भीतर के पट जब खुले बाहर के हो बन्द ।

जीवात्मा और परमात्मा :

जीवात्मा और परमात्मा दोनों स्वतंत्र सत्ता रखने वाले और पृथक हैं । उनका हदयावकाश में प्रकाश और छाया की तरह स्थित बतलाते हुए दोनों का सम्बन्ध कर्म से जोड़ा गया है । अर्थात एक जीव कर्म करके फल का भूगतने वाला तथा दूसरा जीव ईश्वर साक्षी रहकर फल का देने वाला है । जैसा कि अथर्ववेद में कहा गया है–

द्वा सुपर्णा संयुजा सखाया सामान वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोस्या : पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्न्योऽभिचाकशीति ।।

(अथर्ववेद . 9/9/20)

नित्य प्रकृति रूप वृक्ष पर स्थित दो पक्षी रूप (जीव और ईश्वर) है । जिनमें एक जीव वृक्ष के स्वादिष्ट फलों को चखता है । और दूसरा ईश्वर भोग न करता हुआ साक्षी मात्र है ।

Edit with WPS Office

ब्रह्म का व्यापकत्व होना :

उपनिषद में ब्रह्म व्यापकत्व का बड़ा सुंदर वर्णन है । अग्नि और वायु जगत में परिपूर्ण है । ये जिस वस्तु के भीतर होते हैं उसी के आकार में दिखाई देते हैं । जैसे – प्रकाश या वायु एक घर में है, तो उस घर के आकारवत् ही दिखाई देते हैं । यदि किसी पात्र, घड़े आदि में है तो उसी की तरह नजर आने लगते हैं । इसी तरह से ब्रह्म जगत में अपने व्यापकत्व से जिस वस्तु में रहता है, उस उस वस्तु के तुल्य रूप वाला होता है । परंतु उस वस्तु से सदैव पृथक रहता है । न ब्रह्म उसमें लिप्त होता और न वह वस्तु ब्रह्म में लिप्त हो सकती है । इसी लिप्त न होने की बात को स्पष्ट करने के लिए एक और उपमा दी गई है की आंखों से देखने की योग्यता सूर्य से आती है । इसलिए कहा गया है कि समस्त लोक का चक्षु होते हुए भी जिस प्रकार सूर्य आंखों के बाहरी विकारों से पृथक रहता है, उसी प्रकार जगत पिता संसार की निकृष्ट से निकृष्ट वस्तु में व्याप्त होते हुए भी उसके समस्त विकारों से पृथक रहता है ।

ईश्वर एक है, सबको वश में रखने वाला, सबका अंतर्यामी और एक रूप वाली प्रकृति से जगत की असंख्य रचनाएं करता है । जो धीर पुरुष उस जीवात्मा में स्थित परमात्मा को देखते हैं, उनको चिरकाल तक रहने वाला सुख और शांति प्राप्त होती है, अन्यों को नहीं ।।

- # ।। मुण्डकोपनिषद ।।

शौनक का अंगिरा ऋषि से प्रश्न पूछना :

अंगिरा ऋषि की सेवा में मर्यादानुसार उपस्थित होकर श्रेष्ठ और सम्पन्न

Edit with WPS Office

गृहस्थ शौनक ने पूछा कि वह क्या वस्तु है जिसके जान लेने से सब कुछ जाना हुआ हो जाता है ?

अंगिरा ऋषि के द्वारा शौनक के प्रश्न का उत्तर देना :

अंगिरा ऋषि ने शौनक के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रकट किया कि परा और अपरा दो विद्यायें जानने योग्य है । जिससे ब्रह्म को जान लिया जाता है, उसे परा विद्या कहते हैं । ऋग्वेद आदि परा विद्याएं हैं । वेद केवल परा विद्या के ग्रंथ नहीं अपितु अपरा विद्या के भी हैं । वेद में जहां ब्रह्म विद्या की मूल शिक्षा दी गई है, वहां अन्य स्थलों पर गृहस्थ धर्म का भी वर्णन है, युद्ध करने का भी विधान किया गया है, चक्रवर्ती राज्य रखने का उल्लेख है, धन पैदा करने की भी आज्ञा दी गई है इत्यादि । अपरा का अर्थ भी यही है की जो केवल परा न हो अर्थात परा और अपरा दोनों का मिश्रण हो ।

परा विधा के द्वारा ब्रह्म की प्राप्ति होती है । ब्रह्म का कुछ ज्ञान शिष्य को हो जाए, इसलिए आचार्यों ने ब्रह्म के कुछ गुणों का यहां वर्णन किया है—-

वह इंद्रियों से प्राप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि इंद्रियों का विषय नहीं है ।
उसे अपना काम चलाने के लिए इंद्रियों की आवश्यकता नहीं है ।
वह सूक्ष्म सर्वव्यापक और एक रस है ।
वह जगत का निमित्त कारण है ।

ऐसे ब्रह्म के लिए अंगिरा ऋषि कहते हैं कि उसे केवल धीर पुरुष प्राप्त कर सकते हैं ।धीर पुरुष उन विद्वानों को कहते हैं जिनके मन, वाणी और आचरण में समता होती है ।

कार्य करने का विधान :

वेदों में जिन कर्मों के करने का विधान है और जिन्हें सुक्ष्मदर्शी विद्वानों ने उन (वेदों) का ज्ञान प्राप्त करके प्रकट किया है, उन्हें सत्यता के साथ सदैव करना चाहिए । क्योंकि जगत में मनुष्य का मार्ग अपने किए हुए कर्मों से ही बना करता है ।

Edit with WPS Office

यज्ञ :

कर्मों मैं मुख्य यज्ञ है, इसलिए पहले उसी के करने की शिक्षा दी गई है । यज्ञ दो प्रकार से किए जाते हैं– एक फल की इच्छा से , दूसरे कर्तव्य पालन करने के लिए केवल धर्म समझकर फल की इच्छा छोड़कर करना । इनमें पहला मनुष्य को आवागमन के चक्र में रखता है । और दूसरा मोक्ष के कारणों से एक कारण बना सकता है ।

प्रत्येक गृहस्थ का धर्म है की नैतिक यज्ञ के सिवाय निम्न नैमितिक यज्ञों को यथा संभव किया करें—-

दर्श____ अमावस्या को जो यज्ञ किया जाता है उसका नाम दर्श है ।

पौर्णमास्यम____ प्रत्येक मास की पूर्णिमा को करना चाहिए ।

चातुमार्शयम____ वर्षा ऋतु में किए जाने वाले यज्ञ का नाम चातुमार्शयम है ।

आग्रयण____ वह यज्ञ है जो शीत ऋतु में किया जाता है ।

अतिथियज्ञम्____ यह भी नैत्यिक यज्ञों में से एक है और प्रतिदिन किया जाना चाहिए ।

वैश्व देवम्____ यह भी नैत्यिक यज्ञों में से एक है और प्रतिदिन होना चाहिए ।

उपनिषद मैं चेतावनी दी गई है कि जो इन विविध यज्ञों को नहीं करते अथवा जो करते हैं परंतु विधि और श्रद्धापूर्वक नहीं करते वे अपने समस्त लोकों को खराब करते हैं ।

सात लोक जिनमें से किसी न किसी लोक में प्राणी रहता है :

पृथ्वी
वायु
अंतरिक्ष
आदित्य
चंद्रमा

Edit with WPS Office

नक्षत्र
ब्रह्मलोक
ये ही सात लोक हैं जिनमें से किसी न किसी लोक में प्राणी रहा करता है । यज्ञ न करने वाले अथवा देव ऋण से उऋण न होने वाले जिस लोक में भी जाएंगे, वह उनके लिए शांति का स्थान न होगा । सातवें ब्रह्म लोक में तो अशुभ कुर्मी जा ही नहीं सकते ।

निष्काम यज्ञ :

जो विद्वान प्रज्वलित अग्नि यों मैं यथा काल और यथाविधि हवन करता है और उसके बदले में इच्छा कुछ नहीं करता तो इस निष्काम यज्ञ के बदले में उसे अद्वितीय ब्रह्म की प्राप्ति होती है । वे निष्काम यज्ञ की आहुतियां मानों यज्ञमान को बुलाकर अपने साथ ले जाकर उसे सूर्य की किरणों द्वारा ब्रह्म लोक को पहुंचा देती है ।

सकाम यज्ञ :

सकाम कर्म अच्छा कर्म है, परंतु अच्छा होने पर भी अपनी सीमा रखता है । वह सीमा पुत्र प्राप्ति आदि लोकोत्रति तक सीमित है । इससे ईश्वर अथवा मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती । इसलिए जो लोग सकाम यज्ञों को ही सब कुछ मानते हैं, उन्हीं को मोक्ष प्राप्ति का साधन मानते हैं, वे वास्तव में अज्ञानी है और निन्दा के पात्र हैं ।

सांसारिक फल की इच्छा न रखना :

जो संसार में किसी सांसारिक फल की इच्छा नहीं रखते और अपना उद्देश्य केवल ब्रह्म को प्राप्त करना रखते हैं । ऐसे पुरुष शांति के वातावरण में जब एकांतवास करते हुए श्राद्ध के साथ तप का जीवन व्यतीत करते हैं , अल्पाहारी हो जाते हैं, तब उनकी आत्मा शुद्ध हो जाती है और विधिपूर्वक परमात्मा का साक्षात्कार किया करते हैं ।

Edit with WPS Office

ब्रह्म ज्ञान प्राप्ति के वातावरण को बनाने के साधन :

ईश्वर को प्राप्त होने के लिए जिस प्रकार के वातावरण की जरूरत है, उसको बनाने के साधन निम्नलिखित है—-
वह ब्रह्म विद्या में श्रद्धा रखता हो ।
सकाम कर्म से प्राप्त होने वाले फलों की जांच करके उनकी अस्थिरता को जान लेवे ।
वैराग्य वाला होता हुआ भली भांति समझ ले कि ईश्वर प्राप्ति का साधन सकाम कर्म नहीं है ।
वेदज्ञ और ब्रह्मानिष्ठ गुरु की सेवा में आदर पूर्वक ब्रह्म विद्या की प्राप्ति के लिए उपस्थित होवे ।
इन साधनों से संपन्न होकर ही कोई ब्रह्म ज्ञान प्राप्ति की इच्छा कर सकता है ।

ब्रह्म रूपी लक्ष्य को बींधने के उपाय :

ईश्वर को प्राप्त होने के लिए जिस प्रकार के वातावरण की जरूरत है, उसको बनाने के साधन निम्नलिखित है—-
ब्रह्म विधा तो उस लक्ष्य को बीधनें के लिए धनुष है ।
उपासना अर्थात ब्रह्म विद्या उपनिषद में बतलाएं हुए ब्रह्म प्राप्ति के विधानों को काम में लाने रूप बाण को उस धनुष में लगाना ।
ब्रह्मा को चित्त में लीन करना मानो उस बाण का खींचना है ।
बाण को चलाना मानों ब्रह्म रूपी लक्ष्य को बींध लेना है ।
इस अलंकार का भाव यह है कि ब्रह्म प्राप्ति के लिए जिज्ञासु को उपनिषदों के अध्ययन द्वारा ब्रह्म प्राप्ति के साधनों का ज्ञान प्राप्त करके उसे कार्य मैं परिणत करना चाहिए । इसी क्रिया को उपासना कहते हैं । उपासना करते हुए जिज्ञासु को अपने चित्त ब्रह्म में लीन कर देना चाहिए । चित्त को ब्रह्म में लीन कर देने का भाव यह है कि उसकी बाहर जाने वाली वृत्तियां निरुद्ध हो गई और आत्मा की अन्तर्मुखी वृत्ति जागृत होकर अपना काम करने लगी ।

Edit with WPS Office

इसी से परमात्मा का साक्षात्कार हुआ करता है ।

दूसरे अलंकार द्वारा ब्रह्म प्राप्ति की शिक्षा :

प्रणव अर्थात ओंकार धनुष है ।
जीवात्मा बाण है ।
लक्ष्य जहां निशाना लगाना, वह ब्रह्म है ।
उपयुक्त धनुष द्वारा लक्ष्य को बींधने के लिए दो बातों की जरूरत है—--
(अ) जिज्ञासु आलस्य रहित हो ।
(ख) चित् को एकाग्र किए बिना कोई साधारण से साधारण निशान भी नहीं लगा सकता । इसलिए अभूतपूर्व लक्ष्य बींधने के लिए तो लक्ष्य में चित्त का तन्मय (एकाग्र) होना अनिवार्य है ।
जब जिज्ञासु इन दो बातों को काम में लाकर अपनी आत्मा को ओंकार के जप आदि विधानों में लगाता है , तभी वह इस योग्य होता है कि ब्रह्म को प्राप्त कर सके ।
महान परब्रह्म परमेश्वर अद्वितीय होते हुए अमरता का पुल भी है । अमर जीवन प्राप्त करने के लिए इसी पुल से गुजरना होगा । अतः आवश्यक है कि मनुष्य उस और चले । इसलिए उसे लक्ष्य बनाने और लक्ष्य बनाकर उसके बींधने का विधान उपनिषद में किया गया है ।

ईश्वर प्राप्ति के साधन :

ईश्वर को प्राप्त करने अथवा उसकी समीपता उपलब्ध करने के लिए मनुष्य के अंदर सत्य, तप ,सम्यक , ज्ञान और ब्रह्मचर्य की आवश्यकता होती है । इनके द्वारा वे दोस्त क्षीण होते हैं और तभी इस योग्य भी होते हैं की शरीर में व्याप्त ज्योतिर्मय और पवित्र ईश्वर के दर्शन कर सके ।
सत्य___ सत्य से मनुष्य का मन क्षीण दोष होकर शुद्ध होता है । सत्य ही की विजय होती है, झूठ से मनुष्य कभी फल फूल नहीं सकता । देवयान (ईश्वर) की ओर चलने का मार्ग भी सत्य से ही प्राप्त हुआ करता है । जिस पर चलकर मनुष्य सत्य के परमकोष ईश्वर तक पहुंचता है । परंतु पहुंचते वे

Edit with WPS Office

ही से जो साधन संपन्न होकर कामना रहित हो चुके हैं ।
तप___ तब से द्वंन्द रहित होकर बलवान आत्मा वाला बनता है ।
सम्यक ज्ञान___ सम्यक ज्ञान से बुद्धि शुद्ध होती है । जो उसे ब्रह्म प्राप्त करना चाहते हैं, वे पहले अपने को इस योग्य बनाते हैं की आत्मा द्वारा उसका ज्ञान प्राप्त करें । इसी ज्ञान प्राप्त करने की विधि को प्रतिरोध या निदिध्यासन कहते हैं । इसी प्राप्त ज्ञान की महिमा से वे विशुद्ध अन्त:करण वाले होते हैं । और ब्रह्म को प्राप्त किया करते हैं ।
ब्रह्मचर्य___ ब्रह्मचर्य से जीवन संयमित होता है ।
ये चारों गुण न केवल ईश्वर प्राप्ति में सफलता के कारण होते हैं, किन्तु लोकोत्रति के लिए भी उनकी वैसी ही आवश्यकता होती है ।

निर्मल अन्त:करण वाला पुरुष :

उपनिषद के ऋषि कहते हैं की निर्मल अन्तःकरण वाला पुरुष अपने शुद्ध अन्तःकरण के प्रभाव से अन्त समय अथवा किसी समय में भी जिस जिस लोक या भोग का मन द्वारा संकल्प करता है, वह उस लोक या भोग को प्राप्त किया करता है । निर्मल अन्तःकरण वाला पुरुष अमोघ संकल्प हो जाया करता है । वह जो भी संकल्प करता है, वह पूरा हो जाया करता है । उसका कोई भी संकल्प व्यर्थ नहीं जाया करता ।

अतः इस प्रकार का समार्थ्य है या सिद्धि चाहने वाले को चाहिए की आत्मवेत्ता गुरु को प्राप्त हो और उसका सत्कार करें, तब उसकी शिक्षानुकूल आचरण करने से अपने को सिद्धि प्राप्त शिष्य बना सकता है ।

- # ।। तैत्तिरीयोपनिषद् ।।

शिक्षाध्याय :

Edit with WPS Office

मित्र :न:शम् = मित्र हमारे लिए कल्याणकारी हो ।
वरुण: शम् = श्रेष्ठ ईश्वर सुखदायी हो ।
अर्यमा न: शम् भवतु= न्यायकारी ईश्वर हमारे लिए सुखकारक हो ।
इन्द्र: वृहस्पति न: शम् = ऐश्वर्यावान वेद वाणी का अधिपति ईश्वर हमारे लिए सुखकारक हो ।
उरुक्रम : विष्णु न: शम् = महापराक्रमी सर्वव्यापक ईश्वर हमारे लिए सुखदायक हो ।
नमो ब्रह्मणे = ब्रह्म को नमस्कार हो ।
नमस्ते वायो = हे सर्वाधार ईश्वर आपको नमस्कार हो ।
त्वम् एव प्रत्यक्षं ब्रह्म असि = आप ही प्रत्यक्ष ब्रह्म है ।
ऋंत वदिष्यामि = दिव्य सत्य कहूंगा ।
सत्यं वदिष्यामि = सत्य कहूंगा ।
अवतु माम् = मेरी रक्षा करें ।
ओउम् शान्ति: शान्ति: शान्ति: ।
तीन प्रकार के आध्यात्मिक, आधिदैविक, आधिभौतिक दुख है जिससे मनुष्य के हृदय में समता और सुख न रहकर उनकी जगह विषमता और दुख आ जाया करता है । इसलिए शान्ति का तीन बार पाठ यहां किया गया है तथा अन्य स्थानों पर भी किया जाता है । शान्ति के अर्थ हैं भीतर समता और सुख का होना ।

ईश्वर के प्रेम को हृदय में भरपूर रखने के उपाय :

ईश्वर के प्रेम को हृदय में भरपूर रखने के लिए स्वाध्याय और प्रवचन की आवश्यकता है ।
स्वाध्याय ___ स्वाध्याय दो प्रकार का हुआ करता है–
(अ) शास्त्रों का नियम पूर्वक अध्ययन और मनन करना ।
(ब) आत्माध्ययन–आत्मनिरीक्षण यथार्थ अपने कृतियों पर दृष्टि रखते हुए जो बुरे हो, उन्हें छोड़ने और जो भले हो, उन्हें पुनः करने की दृढ़ इच्छा

Edit with WPS Office

शक्ति अपने भीतर उत्पन्न करते रहना ।
प्रवचन ___ अध्यापन आदि द्वारा वेद प्रचार को प्रवचन कहते हैं । स्वाध्याय और प्रवचन अर्थात वेद विचार और प्रचार को सदैव अपना लक्ष्य बनाए रखना चाहिए । कुछ अन्य कार्यों का विवरण निम्नलिखित है–

ऋतम्___ तीनों काल में एक जैसी रहने वाली वेदाज्ञा पर चलना ।
सत्यम___ मन, वाणी और कर्म में समता का होना ।
तप___ द्वन्द्वो को सहना और नियमित जीवन बनाना ।
दम___ इंद्रियों पर अपना अधिकार रखना ।
शम___ अन्त: करणों का शान्त रखना ।
अग्नय___ ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ संबंधित तीनों प्रकार की अग्नियों को स्थापित करना ।
अग्निहोत्रम्___ प्रतिदिन हवन करना ।
अतिथय___ अतिथियों की सेवा करना ।
प्रजा___ संतान का पालन पोषण करना ।

शिक्षा समाप्त होने पर आचार्य द्वारा ब्रह्मचारी शिष्य को दी जाने वाली शिक्षा :

शिक्षा समाप्त होने पर आचार्य ने ब्रह्मचारी शिष्य को अंतिम और कुछ एक क्रियात्मक बातों की शिक्षा दी जो निम्न प्रकार है । इस पर आज भी प्रत्येक छात्र को ध्यान देना चाहिए ।
सत्य बोलो धर्म का आचरण करो स्वाध्याय करने में कभी प्रमाद न करो ।
शिक्षा समाप्त होने पर आचार्य को उचित दक्षिणा देनी चाहिए ।
ब्रह्मचर्य आश्रम समाप्त करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करके संतान पैदा करने चाहिए ।
सत्याचरण धरमपूर्वक व्यवहार करने, जो कुछ उपयोगी और कल्याणप्रद है, उसके प्राप्त करने, ऐश्वर्या के बढ़ाने, पढ़ने पढ़ाने, और पितरों से संबंधित कार्य करने में कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए ।
माता-पिता आचार्य और अतिथि को सदैव देवों की कोटि का मानते रहना

Edit with WPS Office

चाहिए ।
जो अनिदित अच्छे कर्म है, उन्हीं को करना चाहिए । अन्य बुरे कर्मों को कभी ना करना चाहिए ।
गुरु के भी अच्छे आचरणों का अनुकरण करना चाहिए, अन्यों का नहीं ।
जो कोई भी विद्वान घर पर आए तो उसका सदैव सत्कार करना चाहिए ।
श्रद्धा से, अश्रद्धा से, प्रसन्नता से, अन्यों की लज्जा से, भय से, प्रेम भाव से, जैसी भी सूरत हो प्रत्येक अवस्था में दान करना चाहिए ।
कैसा कर्म करना चाहिए, किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए ?

ब्रह्म प्राप्ति के सम्बध में पच कोशो पर विचार :

कोशो का क्रम बाहर से भीतर चलने की ओर है । इनमें से प्रथम तीन–अन्नमय, प्राणमय और मनोमय कोश वे है जिनका बाहरी और भीतरी इंद्रियों से संबंध है । इसलिए इनके सम्बन्ध में उपनिषत्कार ने स्पष्ट रीति से लिख दिया है कि इनके द्वारा ब्रह्म प्राप्त होने के योग्य नहीं है । किन्तु उन्होंने कहां है कि जब ये समस्त इंद्रियां मन के साथ ब्रह्म को प्राप्त न करके स्थान विशेष से लौट आती है, तब विज्ञानमय कोश के द्वारा उपासक ब्रह्म की ओर चला करता है । वह स्थान विशेष जहां तक इंद्रियों की पहुंच है, वह है जहां मनोमय कोश की सीमा समाप्त होती है । उससे आगे मन और इंद्रियों की पहुंच नहीं है ।

यहां एक बात याद रखने योग्य है कि यद्यपि उपर्युक्त तीनों कोश ब्रह्म प्राप्ति के साक्षात कारण नहीं है, परन्तु असाक्षात कारण अवश्य है क्योंकि इनके बाहर से भीतर की ओर चलने की प्रवृत्ति हीं के कारण उपासक की पहुंच विज्ञानमय कोश से आगे बढ़ती है ।

विज्ञानमय कोश, अन्त:करणों की बाहरी और भीतरी वृत्तियों का संधि स्थान है । उस (विज्ञानमय कोश) के बाहर की ओर होने से आत्मा का मन और इंद्रियों के साम्राज्य में प्रवेश होता है और उसके भीतर की ओर चलने से उसे आत्म जगत का प्रकाश दृष्टिगोचर होने लगता है ।

Edit with WPS Office

उपासक का कोशों की दुनिया में प्रवेश होकर बराबर आगे बढ़ने के साधन :

पहली योग्यता___ अन्तमय कोश के अंतर्गत मनुष्य को ‘अत्ररसमय, बताया है । इसका तात्पर्य यह है कि अत्रमय होकर उसे पुष्ट और निरोगी शरीर वाला होना चाहिए और रसमय होकर वीर्यवान और ओजस्वी होना चाहिए । इन दोनों गुणों के एकत्र हो जाने से मनुष्य , मनुष्य कहे जाने के योग्य हुआ करता है ।

दूसरी योग्यता___ उसे प्राणमय होना चाहिए । इस प्राणमय होने का अर्थ यह है कि प्राणायाम आदि के द्वारा उसके प्राण पुष्ट और ऐसे होने चाहिए कि प्रत्येक प्राण अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में रहते हुए अपने-अपने कार्यों को उत्तम रीति से करें । प्राणों के पुष्ट और प्रभावशाली होने से मनुष्य के भीतर निष्काम होकर कर्म करने की योग्यता आ जाती है ।

तीसरी योग्यता___ उपयुक्त दोनों योग्यताओं के प्राप्त करने के बाद अब मनुष्य को ज्ञानोपार्जन करना चाहिए । इसलिए मनोमय कोश के अंग चारों वेद कह गए हैं । चारों वेदों के साथ आदेश को इस मनोमय का धड़ बतलाया गया है । आदेश आज्ञा, उपदेश, शिक्षा, शासन और नियम को कहते हैं । यहां अंत के दो अर्थों का लेना ही श्रेयस्कर प्रतीत होता है । अर्थात ज्ञानोपलब्धि के साथ ही उपासक को आत्म शासक नियम और मर्यादा के भीतर रहने वाला होना चाहिए ।

चौथी योग्यता___ अब उपासक को बाहरी जगत से अपना संबंध कम करके भीतर की (आत्मा) दुनिया में चलना है । इस लिए अब उसी के अनुरूप उसे बनना चाहिए । आत्म जगत के अनुरूप बनने के लिए पांच बातों की आवश्यकता है और यही पांच बातें विज्ञानमय कोश के अंगोंपागं है ।

श्रद्धा___ जब उपासक ईश्वर के इस असीम जगत और उसकी अभूतपूर्व रचना को देखता है, और उस पर विचार करता है तब उसका हृदय उस महान प्रभु के प्रति प्रेम और श्रद्धा से भरपूर हो उठता है ।

Edit with WPS Office

ऋत् ___ वेदों में वर्णित ईश्वर प्राप्ति के नियमों की जानकारी और उनके अनुकूल आचरण करना ऋत् का अभिप्राय है ।

सत्य___ मन, वाणी और आचरण में समता का भाव सदैव बनाए रखना सत्य का आचार सदाचार है ।

योग___ चित्त कि बाहर जाने वाली वृत्तियां का निरोध योग है, जिससे आत्मा अंतर्मुखी होकर आत्म चिंतन और परमात्मा चिंतन में लीन हो ।

महतत्व___ समष्टि बुद्धि तत्व उस उपासक का आश्रय स्थान होना चाहिए । इसका अभिप्राय यह है कि उसे निरहंकार होकर अहंकार (ममता) की दुनिया से ऊपर हो जाना चाहिए ।

इन योग्यताओं को प्राप्त कर लेने पर उपासक अन्तिम आनंदमय कोश में प्रवेश करने का अधिकारी बना करता है ।

5. पांचवी योग्यता___ विज्ञानमय संबंधी योग्यताओं को प्राप्त कर लेने पर उपासक प्रेम के मंदिर का पुजारी बन जाता है । अतः वह प्रेममय और प्रेम की मूर्ति बन चुका है । इधर-उधर कहीं कोई भी नहीं जो उसका प्रेमोपद्वार न प्राप्त कर चुका हो । इस प्रकार प्रेम के मंदिर में प्रविष्ट होकर मोद, प्रमोद और अन्त में आत्मा के आनंद में उपासक मग्न हो जाता है । अब उसका प्रियतम ही उसका आश्रय स्थान है और उसी के प्रेम भक्ति में लवलीन हो रहा है ।

यही मनुष्य जीवन का चरमोद्देश्य और यही आत्मा की अंतिम गाति है । यहां पहुंचकर उपासक व्यास के शब्दों में कह उठता है- प्राप्तं प्राप्तव्यम्' अर्थात जो प्राप्त होने योग्य था । वह प्राप्त हो गया ।

•।। छान्दोग्योपनिषद् ।।

धर्म के स्कन्ध (भाग) :

Edit with WPS Office

धर्म के तीन स्कन्ध (भाग) है ।

पहला स्कन्ध___ यज्ञ स्वाध्याय और दान यह मिलकर धर्म का पहला स्कन्ध है ।

दूसरा स्कन्ध___ तप ही दूसरा स्कन्ध है ।

तीसरा स्कन्ध___ ब्रह्मचारी आचार्य कुल वासी अर्थात् कुल में रहता हुआ अपने को जो तपस्वी बनाता है, वह तीसरा स्कन्ध है ।

धर्म के इन तीनों अंगों को जानने और उनके अनुसार आचरण करने वाला पुण्य लोक प्राप्त करता है अर्थात श्रेष्ठ गति को प्राप्त होते हैं । परंतु इनमें से जो ब्रह्मनिष्ठ हो जाता है, मुक्ति केवल वही प्राप्त करता है ।

जिस ब्रह्म में लवलीन होने से मुक्ति पाना है, उसे जानना चाहिए । तीनों लोक अर्थात समस्त जगत के प्रादुभुरत और प्रकाशित होने पर त्रयी विधा-वेद प्रकट हुए इन तीनों विधाओं को तपाने अर्थात उनका सार निकालने में भूर्भुव : स्व: प्रकट हुए और इनके प्रकाशित होने पर इनसे ओंकार प्रकाशित हुआ ।

भूर्भुव स्व को दूसरे शब्दों में (सत् चित्+आनन्द) सच्चिदानन्द कहते हैं । ईश्वर का स्वरूप यही सच्चिदानन्द है अर्थात सच्चिदानन्द स्वरूप जीव सच्चित् स्वरूप और प्रकृति केवल सत्स्वरूपा है । ईश्वर के स्वरूप से प्रकट हो जाने पर फिर यह समझ लेने में कुछ भी कठिनाई बाकी नहीं रह जाती कि वह सच्चिदानन्द स्वरूप वाला ईश्वर ओंकार है ।

मनुष्य, ईश्वर के स्वरूप और उसके निज नाम को जान लेने के बाद समझ लेता है कि वह सर्वव्यापक आदि अनेक गुणों से भूषित है । उसके व्यापकत्व को जगत में समझ लेने के लिए एक उदाहरण दिया जाता है– एक लोहे के गोले को इतना गरम करो कि वह लाल होकर दहकने लगे । अब उस गरम लोहे के गोले पर एक निगाह ढालो तो प्रकट हो जाएगा की लोहे के एक-एक कण में अग्नि ओत प्रोत है । इस गोले को लोहे का गोला कहने के सिवाय अग्नि का गोला भी कह सकते हैं । क्योंकि जहां भी उस पर हाथ रखे , हाथ जलने लगता है । ईश्वर जगत रूपी गोले में अग्निवत् व्याप्त है अर्थात जगत का कोई भी भाग ऐसा नहीं है जहां ओंमाग्नि परिपूर्ण

Edit with WPS Office

न हो । इसलिए समस्त ब्रह्मांड को ओम् कहा गया है । और वह समस्त वेदवाणी में व्याप्त है ।

वेदों की शिक्षा पर अमल करने का लाभ :

मनुष्य जब मनुष्य वेदों की शिक्षा पर अमल करता है तो इस लोक में तो अन्नपान की बहुतायत से उसका अभ्युदय होता है । इसके अतिरिक्त यश, तेज आदि उत्कृष्ट फलों की प्राप्ति से वह सूर्य द्वारा देवयान के पथिक की स्थिति में अमृतत्व प्राप्त करने के लिए ब्रह्म लोक में भी पहुंच जाता है ।

सवनत्रय– यज्ञमय जीवन :

सवन यज्ञ को कहते हैं । पुरुष ही यज्ञ है । उसकी आयु के प्रथम 24 वर्ष हैं, वह प्रातः सवन है । प्रातः सवन में गायत्री छन्द प्रयुक्त होता है । गायत्री 24 अक्षरों की होती है । इस पुरुष यज्ञ के उस प्रातः सवन से वसु संबंधित है । प्राण ही वसु है क्योंकि ये ही इस सब (प्राणी समूह) को बसातें हैं ।
इन 24 वर्षों की आयु में उस ब्रह्मचारी को यदि कोई भी दुख दे अर्थात ब्रह्मचारी में बाधा डालें तो वह दृढ़ संकल्प के साथ उनसे कहे की हे प्राण प्रिय बंधुओ ! यह मेरा ब्रह्मचर्य रूपी प्रातः सावन है । आप लोग मेरे लिए माध्यन्दिन सवन को (अर्थात 44 वर्ष के ब्रह्मचर्य) विस्तृत करें । आप प्राण प्रिय बंधुओ के मध्य में, मैं जो यज्ञ हूं, लुप्त न हो जाऊं । इस प्रकार के विनय से वह ब्रह्मचारी उदित होता है और रोग चिंता से रहित होता है ।
इसके बाद जो 44 वर्ष द्वितीय ब्रह्मचर्य के हैं, वह माध्यन्दिन सवन है । माध्यन्दिन सवन का त्रिष्टुप छन्द है जिसमें 44 अक्षर होते हैं । इस पुरुष यज्ञ के उस माध्यन्दिन सवन से रुद्र संबंधित है । प्राण ही रूद्र है क्योंकि ये ही इस सब प्राणी समूह को रुलाते हैं ।
इस 44 वर्ष वाले ब्रह्मचर्य की आयु में उस ब्रह्मचारी को यदि कोई सतावे अर्थात ब्रह्मचर्य में बाधा डालें तो वह उनसे कहे की है प्राण प्रिय बंधुओ और

Edit with WPS Office

रुद्रो ! यह मेरा माध्यन्दिन सवन है । आप लोग मेरे लिए तृतीय सवन (अर्थात 48 वर्ष के ब्रह्मचर्य) को विस्तृत करें । ऐसा यन्त करें कि आप प्राण प्रिय बंधुओ और रुद्रो के मध्य में, मैं जो यज्ञ हूं, लुप्त न हो जाऊं । इस विनय से वह ब्रह्मचारी उदित होता है और रोग चिंता रहित होता है ।
इसके बाद जो 48 वर्ष तृतीय ब्रह्मचर्य के हैं, वह तृतीय सवन है । इस तृतीय सवन से आदित्य संबंधित है । प्राण ही आदित्य है क्योंकि ये प्राण ही इस सब को ग्रहण करते हैं ।
इस 48 वर्ष वाले ब्रह्मचर्य की आयु में ब्रह्मचारी को यदि कोई सतावे अर्थात ब्रह्मचर्य में बाधा डालें तो वह उनसे कहे कि हे प्राणों ! आदित्यों ! यह मेरा तृतीय सवन है । आप लोग यतन करें कि मेरी आयु की वृद्धि हो जिससे आप लोग प्राण और आदित्यों के मध्य में, मैं जो यज्ञ हूं , विलुप्त न हो जाऊं । इस विनय से ब्रह्मचारी उदित होता है और निश्चय ही निरोग होता है ।
यह प्रसिद्ध है कि महीदास ऐतरेय (इतरा के पुत्र) इस विज्ञान को जानते हुए कहा करते थे कि वह ब्रह्मचर्य में बाधक बन क्यों मुझे इस प्रकार दुख देता है । जो मैं इस तेरे उपताप (दुख) से नहीं मरूंगा । प्रसिद्ध है कि वे 116 वर्ष (24+44+48) जिये । जो कोई इस विज्ञान को इस प्रकार जानता है, वह निश्चय ही 116 वर्ष तक जीवित रहता है ।

इसका उद्देश्य यह है कि मनुष्य अपने जीवन को यज्ञमय बनाकर अपनी आयु में वृद्धि करें । इस उद्देश्य की पूर्ति के सम्बन्ध में निम्नलिखित शिक्षाएं दी गई है ।—---

आत्मा से ही आत्मा का उद्धार करना :

जीवात्मा को पुरुष कहते हैं । इस जीव का उद्धार अपने ही करने से हुआ करता है । एक जगह कहां गया है की आत्मा ही से आत्मा का उद्धार करना चाहिए । क्योंकि आत्मा ही आत्मा का बन्धु और आत्मा ही आत्मा का शत्रु है । इस संबंध में गीता में कहा गया है—--

Edit with WPS Office

उद्धरेदात्मनात्मान नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन ।। (गीता . 6/5)

अपने द्वारा अपना संसार सागर से उद्धार करें और अपने को अधोगति में ना डालें क्योंकि यह मनुष्य स्वयं अपना बंधु है और स्वयं ही अपना शत्रु है ।

गीता का स्पष्ट संदेश है कि मनुष्य का उद्धार करने वाला और कोई नहीं, मनुष्य स्वयं ही है । भगवान की कृपा भी उन्हीं पर होती है जो सच्ची भावना से अपने आप को ऊपर उठाने का प्रयास करते हैं । अपने मन में निर्मलता और निराशा के विचारों को स्थान देकर हम स्वयं अपने शत्रु बन जाते हैं । दूसरी और अपने आप को आशा, उत्साह और विश्वास से भरकर हम स्वयं अपने सबसे बड़े मित्र बन जाते हैं ।

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना: जित: ।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वतेरतात्मैव शत्रुवत् ।।
(गीता. (6/6)

जिस जीव आत्मा द्वारा मन और इंद्रियों सहित शरीर जीता हुआ है, उस जीव आत्मा का तो वह आप ही मित्र है और जिसके द्वारा मन और इंद्रियों सहित शरीर नहीं जीता गया है, उसके लिए वह आप ही शत्रु के सदृश शत्रुता में वर्तता है ।

यज्ञ में ब्रह्मा और ऋत्विज का कार्य :

यज्ञ के विस्तार के दो मार्ग हैं मन और वाणी । यज्ञ में ऋत्विज मंत्रों का उच्चारण करते हैं, परंतु ब्रह्मा चुपचाप रहकर मन में यज्ञ की प्रत्येक विधि का विचार करता है कि वह ठीक तरीके से हो रही है या नहीं और त्रुटि होने पर उसको दूर कराता रहता है ।
ब्रह्मा का काम मानसिक होने से उसे मन का और अन्य ऋत्विजों का काम वाणी से संबंधित होने से उन्हीं वाणी का संशोधक कहा गया है ।

Edit with WPS Office

प्रातरनुवाक ,उन पठनीय के मंत्रों को कहां गया है जो गाये नहीं जाते और जो प्रातः काल के यज्ञ में पढ़ें जाते हैं । जैसे– स्वस्तिवाचन और शान्तिकरण ।
परिधानिया – जिन ऋचाओं मंत्रों को पढ़कर हवन कुण्ड में समिधा डालते हैं, उन्हें परिधानिया कहते हैं ।
ब्रह्म का नाम उपयुक्त दोनों प्रकार के मंत्रों के मध्य में चुप रहने और मानसिक विचारने का है । परंतु जब ब्रह्म भूल करके प्रातरनुवाक के बाद और परिधानियां से अपना मौन भगं कर डालता हैं तो एक ही वाणी रूप मार्ग को शुद्ध और दूसरे मन रुप तो मार्ग को नष्ट कर डालता है। उससे यज्ञ भी दूषित होता है । और यजमान भी पापी बनता है । उससे यज्ञ भी दूषित होता है । इसलिए ब्रह्म को अपने कर्तव्य का उचित रीति से पालन करना चाहिए अन्यथा वह यज्ञ को नष्ट करने का कारण बनेगा ।

यज्ञ में पांचों प्राणों के नाम से आहुति दे देना :

छान्दोग्य उपनिषद् में अश्वपति द्वारा विद्वानों को शिक्षा देते समय कहा गया है कि यज्ञ में पांचो प्राणों के नाम से आहुति देनी चाहिए । जिसका विवरण निम्नलिखित है–----
पहली आहुति___ प्रणाय स्वाहा, ऐसा कहकर होमें । प्राण इस आहुति से तृप्त होता है । प्राण के तृप्त होने पर आंखें तृप्त होती है, आंखों के तृप्त होने पर आदित्य तृप्त होता है । आदित्य के तृप्त होने पर द्युलोक तृप्त होता है । धुलोक के तृप्त होने पर जो कुछ द्युलोक और आदित्य के अधिकार में होता है वह सब तृप्त होता है । इन सब तृप्ति के पीछे उपासक संतान से, पशु से, अन्न आदि से, तेज से ब्रह्मवर्चस से तृप्त होता है ।
इसके बाद दूसरी आहुति को 'व्यानाय स्वाहा, कह कर होमें । उससे व्यान तृप्त होता है ।व्यान के तृप्त होने पर कान तृप्त होते हैं । कानों के तृप्त होने पर चंद्रमा तृप्त होता है , चंद्रमा के तृप्त होने पर दिशाएं तृप्त होती है, दिशाओं के तृप्त होने पर जो कुछ भी दिशाओं और चंद्रमा के अणिकार में

Edit with WPS Office

होते हैं, वे सब तृप्त होते हैं । उनके तृप्त होने पर उपासक संतान , पशु , अन्नादि, तेज और ब्रह्मवर्चस से तृप्त होता है ।
इसके बाद तीसरी आहुति को ' अपानाय स्वाहा , कहकर होमें । इससे अपान तृप्त होता है । अपान के तृप्त होने से वाणी तृप्त होती है । वाणी के तृप्त होने पर अग्नि तृप्त होती है । अग्नि के तृप्त होने पर पृथ्वी तृप्त होती है । पृथ्वी के तृप्त होने पर जो कुछ भी पृथ्वी और अग्नि के अधिकार में होता है वह सब तृप्त होता है । उन सब के तृप्त होने के बाद उपासक संतान, अन्नादि, तेज और ब्रह्मवर्चस से तृप्त होता है ।
इसके बाद चौथी आहुति को ' समानाय स्वाहा , ऐसा कहकर होमें । इससे समान तृप्त होता है । समान के तृप्त होने पर मन तृप्त होता है । मन के तृप्त होने पर मेघ तृप्त होता है । मेघ के तृप्त होने पर विद्युत तृप्त होती है । विद्युत के तृप्त होने पर जो कुछ भी विद्युत और मेघ के अधिकार में होता है वह सब तृप्त होता है । इन सब के तृप्त होने के बाद उपासक (यजमान) सम्मान, पशु , अन्नादि, तेज और ब्रह्मवर्चस से तृप्त होता है ।
इसके बाद पांचवी आहुति ' उदानाय स्वाहा ,कह कर होमें । इससे उदान तृप्त होता है । उदान के तृप्त होने पर वायु तृप्त होती है । वायु के तृप्त होने पर आकाश तृप्त होता है । आकाश के तृप्त होने पर जो कुछ भी वायु और आकाश के अधिकार में होता है वह सब तृप्त होता है । इस सब के तृप्त होने के बाद यजमान संतान, पशु, अन्नादि, तेज और ब्रह्मवर्चस से तृप्त होता है ।
जो इस विज्ञान को न जानता हुआ हवन करता है, वह जैसे अंगारों को हटाकर राख में होम में सदृश होता है ।

जो इस विज्ञान को ऐसा जानता हुआ हवन करता है उसका समस्त लोकों, संपूर्ण प्राणियों, और सब आत्माओं में हवन किया हुआ होता है । जो इस पद्धति के अनुसार हवन करता है, उस यजमान के समस्त पाप ऐसे नष्ट हो जाते हैं जैसे मुंज की रुई अग्नि में डालने से जल जाती है ।

ईश्वर प्राप्ति के साधनों का विवरण :

सनत्कुमार में नारद से कहा कि–'सत्येन पन्था विततो देवयान , अर्थात

Edit with WPS Office

सत्य के ग्रहण कर लेने से मनुष्य के लिए देवयान (ईश्वर प्राप्ति) का मार्ग खुल जाता है । परंतु इस मार्ग पर चलने के लिए साधन सम्पन्नता आवश्यक है । उन साधनों का विवरण निम्नलिखित प्रकार से हैं—---

विज्ञान : (विशेष ज्ञान) , (प्रतिबोध) जो आत्मा द्वारा प्राप्त किया जाता है ।
मनन विशेष ज्ञान प्राप्ति के बाद उसका मनन करना चाहिए । मनन के बिना विज्ञान की उपयोगिता काफी नहीं रहती ।

श्रद्धा : मनन के बाद सत्य को केवल जानकर नहीं अपितु धारण करके श्रद्धवान् चाहिए ।

निष्ठा : श्रद्धा के लिए निष्ठा आवश्यक । ब्रह्म की प्राप्ति के साधन का नाम निष्ठा है । गुरु सेवा आदि को भी निष्ठा कहते हैं । यह निष्ठा श्रद्धा का साधन है ।

कृति : कम से निष्ठा प्राप्त होती है । अकर्मण्य निष्ठावान नहीं हो सकता । निष्ठा कर्म की एक उच्च अवस्था है । इसलिए आवश्यक है कि कर्म करके वह अवस्था लाई जावे ।

सुख : कर्म के लिए सुख होना अनिवार्य है । अशांन्त और दुखी मनुष्य अच्छे कर्म करने वाले नहीं होते हैं ।

सत्य : ये छः साधनों के द्वारा ही सत्य का पालन किया जा सकता है । तब जिज्ञासु सत्य के मार्ग पर चलकर ईश्वर को प्राप्त कर लेता है ।

अन्तिम उद्देश्य भूमा :

सुख ईश्वर से प्राप्त हुआ करता है । इसलिए भूमा (ईश्वर) को सुख कहां गया है । क्योंकि वही सुख स्वरूप है ।
ईश्वर प्राप्ति के साधन दो भागों में विभक्त है—-

प्रारम्भिक साधन____ :

प्रारम्भिक साधनों की पूर्ति आत्मा बाहरी जगत से किया करता है । इसलिए ये साधन आत्मा के बहिर्मुखी साधन कहे जाते हैं । इन साधनों की सम्पत्रता

Edit with WPS Office

जप आदि के द्वारा मुमुक्षु सुख और शांति प्राप्त किया करता है । ईश्वरोपासना के प्रारंभिक साधनों को काम में लाते हुए जिज्ञासु इस योग्य हो जाता है कि सुखपूर्वक अपेक्षित कर्म कर सके । इस कृति से वह निष्ठावान होता है । निष्ठा से उसमें श्रद्धा के भाव जागृत हो उठते हैं । श्रद्धा से वह मनन करता हुआ विज्ञान (विशेष ज्ञान) प्राप्त करता है । एवं विशेष ज्ञान की प्राप्ति से सत्यमानी, सत्यवादी, और सत्यकारी बनकर ईश्वर प्राप्ति के अंतिम साधनों की ओर चल पड़ता है । अस्तु उपासना की अंतिम अवस्था सनत्कुमार ने नारद को इस प्रकार बतलाई—-

उपासना की अंतिम अवस्था :

जब मनुष्य ईश्वर की भक्ति में लीन होकर न अन्य को देखता, न अन्य को सुनता और न अन्य को जानता, तभी वह उपासक एकत्वदर्शी बना करता है । इस प्रकार एकत्वदर्शी होकर जिज्ञासु अपनी महिमा (ब्रह्मांड और ब्रह्मांडेतर) में प्रतिष्ठित व्यापक ईश्वर को नीचे, ऊपर, पूरब, पच्छिम, दक्षिण, उत्तर सभी जगह देखने लगता है । उसके सिवा उसे (जिज्ञासु, प्रेमी को) और कुछ दिखाई नहीं देता ।

अहंकार आदेश :

इसके बाद उपासक अपने में भी उसी को देखकर भक्ति के आवेश में और प्रेम की सर्वोच्च अवस्था में पहुंचकर, प्रियतम का जगत स्वयं अपने को समझ अपने ही नीचे, ऊपर, पूरब, पच्छिम आदि समस्त दिशाओं में देखने लगता है । इसी का नाम अहंकार आदेश है । यह अहंकार निर्दोष और उपासना में बाधा न डालने वाली अवस्था है । असल में अहंकार नष्ट नहीं होता । उच्च अवस्था में ही सही, किंतु बाकी रहा करता है ।

जब यह है अहंकार भी तिरोहित होकर में और तू के भाव बाकी नहीं रहता तब फिर सर्वव्यापक आत्मा ही को जो मैं और तू भावों (अहंकार) में

Edit with WPS Office

सर्वथा पृथक हैं प्रत्येक जगह देखने लगता है । यही अवस्था ईश्वरोपासना की सर्वोच्च अवस्था है ।

ऋग्वेद में कहां है —हे प्रकाश प्रभु ! यदि मैं तू हो जाऊं और तू मैं हो जाऊं तो तेरा आशीर्वाद संसार में सत्य हो जायें । (ऋग्वेद . 8/44/23)

मंत्र_____ **यदग्रे स्यामहं त्वं घा स्या अहम् ।**
स्युष्टे सत्या इहाशिष : ।।

भावार्थ_____ प्रभु का मनुष्यों के लिए आशीर्वाद– श्रृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा :
अर्थात सुनो ऐ अमृत पुत्रों ! इस वाक्य में है, जिसमें उन्हें अमर होने का आशीर्वाद दिया है । जब मनुष्य के भीतर इतनी उत्कृष्ट भक्ति, इतना उत्कृष्ट प्रेम आ जाता है कि उसके भीतर का भेद ज्ञान तिरोहित हो जाता है । तब अहंकार के बाकी न रहने से जब वह अपनी सुध-बुध भूलकर प्रियतम ही को सब कुछ जिसमें वह स्वयं भी शामिल होता है, समझने लगता है और उस पर अब वह कहावत चरितार्थ होने लगती है– ' जिधर देखता हूं उधर तू ही तू है ।

• 7. ।। बृहदारण्यक उपनिषद् ।।

यज्ञ के सम्बन्ध में अशवल और याज्ञवल्क्य के प्रश्नोत्तर :

अशवल ने कहा – हे याज्ञवल्क्य ! आज यह होता यज्ञ में कितनी ऋचाओं से होता का काम करेगा । ?
याज्ञवल्क्य : तीन ऋचाओं से
अशवल : वे तीन कौन सी है ?
याज्ञवल्क्य : पहली पुरोनुवाक्या, दूसरी यात्रा, तीसरी शस्या ,।

Edit with WPS Office

अशवल : इस ऋचाओं से वह यजमान क्या जीत लेता है ?
याज्ञवल्क्य : जितने प्राणी है, उन सब पर विजयी होता है । प्राणियों पर विजय प्राप्त करने का भाव यह है कि यज्ञ द्वारा किए गए उपकारों से यजमान प्राणियों के हृदय में अपने लिए स्थान बना लेता है ।

विशेष :

पुरोनुवाक्या :___ उन ऋचाओं को कहते हैं जो यज्ञ प्रारंभ करने से पहले पढ़ी जाया करती है । पुर : + अनुवाक्या =प्रथम +अनुवचन जैसे– ईश्वर प्रार्थना, स्वस्तिवाचन और शान्ति करण के मंत्र ।
याज्या :___ जो यज्ञ में प्रत्येक विधि के साथ पढ़ी जाती है, उन्हें याज्या कहते हैं ।
शस्या :___ प्रशंसार्थ पढ़ी गई ऋचाएं ' शस्या कहीं जाती है ।

अशवल : हे याज्ञवल्क्य ! आज यह अध्वर्यु इस यज्ञ में कितनी आहूति देगा ?
याज्ञवल्क्य : तीन आहुतियां ।
अशवल : वे तीन आहुतियां कौन है ?
याज्ञवल्क्य : एक जो आहुतियां प्रज्ज्वलित हो उठती है, दूसरी वे जो नाद करती है, और तीसरी वे जो आहुतियां नीचे को बैठ जाती है।
अशवल : इनमें यजमान क्या जीत प्राप्त कर लेता है ?
याज्ञवल्क्य : जो आहुतियां प्रज्ज्वलित हो उठती है, उनसे देवलोक जीत लेता है क्योंकि देवलोक चमकीला है । जो आहुतियां अति नाद करती हैं, उनसे पितृ लोक जयी होता है । क्योंकि पितृ लोक अति नादी है । जो आहुतियां नीचे बैठ जाती है उनसे मनुष्य लोक विंचित होता है । क्योंकि मनुष्य लोक नीचे होने के समान है ।

स्पष्टीकरण :

देव ,पितर और मनुष्य तीन भागों में मनुष्य समाज विभक्त है । निष्काम करने वाले देव । वे देवलोक को प्राप्त किया करते हैं । देवलोक ब्रह्मलोक मुक्ति पर्यायवाचक है । भाव यह है कि निष्कामता से मुक्ति प्राप्त हुआ करती है और ऐसे कर्म करने वालों के सिर सदैव ऊंचे रहा करते हैं ।

Edit with WPS Office

अच्छे कर्म, सकामता के साथ, जो फल की इच्छा रखते हुए किए जाते हैं । इनके करने वाले पितृलोक प्राप्त करते हैं । पितृलोक स्वर्गलोक और ऐसी मनुष्य योनि जिनमे सुख ही सुख प्राप्त हुआ करता है । पर्यायवाचक है । स्वार्थ रुपी नाद से युक्ति यह श्रेणी हुआ करती है ।
इन दोनों से नीचे , अच्छे- बुरे निदित कर्म करने वाले मनुष्य कहे जाया करते हैं । याज्ञवल्क्य के उत्तर का निष्कर्ष यही है कि जो आहुतियां प्रज्ज्वलित होकर ऊपर उठने वाली है, वे निष्कामता की धोतक है । जो मध्य में नाद युक्त होकर रहती हैं, वे सकामता का भाव प्रकट करती हैं । जो नीचे जाती है, वे अच्छे बुरे मिश्रित कर्मों को प्रकट करती है ।

अशवल : हे याज्ञवल्क्य ! आज यह ब्रह्म कितने देवताओं की सहायता से यज्ञ की रक्षा करेगा ?

याज्ञवल्क्य : एक से ।

अशवल : वह कौन है ?

याज्ञवल्क्य : मन ही वह देवता है ।

अशवल : देवता अनन्त है फिर अकेला मन किस प्रकार से उनसे यज्ञ की रक्षा कर सकता है ?

याज्ञवल्क्य : समाधान यह है कि मन अपनी वृत्तियां और अपने संकल्पों से असंख्य है और विश्वेदेव भी असंख्य है । इसलिए असंख्य मन असंख्य देवों से यज्ञ की रक्षा कर सकता है । अध्यात्म यज्ञ में विध्नकारक इंद्रिय रूप देवता हुआ करते हैं । यह देव अपनी असंख्य वृत्तियों से असंख्य होते हैं । इनसे मन अपनी असीम सामर्थ्य के द्वारा उस यज्ञ की रक्षा किया करता है ।

प्रजापति द्वारा ' द , का उपदेश देना :

देव , मनुष्य और असुर तीनों प्रकार के मनुष्य प्रजापति की संतान थे । श्रेष्ठ मनुष्य देव, मध्यम श्रेणी के मनुष्य और निकृष्ट श्रेणी के मनुष्य असुर कहे जाते थे । तीनों प्रकार के मनुष्य प्रजापति के पास शिक्षा लेने गए । देवगण बोले ! – हे प्रजापति ! हमें उपदेश दे । तब प्रजापति ने उन्हें द अक्षर का उपदेश दिया । उपदेश देकर प्रजापति ने पूछा समझ गए । देवगण

Edit with WPS Office

बोले–समझ लिया , इंद्रियों का दमन करने (उन्हें वश में रखने) को आपने कहा है । प्रजापति ने कहा, हां, तुमने समझ लिया है ।

इसके बाद मनुष्यों ने कहा–हमें भी आप उपदेश देवें । इन्हें भी उसी द अक्षर का उपदेश प्रजापति ने दिया । प्रजापति ने उपदेश देकर पूछा–तुमने समझ लिया ? मनुष्यों ने उत्तर दिया, हां, समझ लिया है । दान करो, ऐसा आपने कहा है । प्रजापति ने कहा, हां, तुमने समझ लिया है । इसके बाद असुरों ने प्रजापति से कहा, हमको भी आप उपदेश देवें । प्रजापति ने उनको भी द अक्षर का उपदेश दिया । प्रजापति ने उपदेश देकर उनसे पूछा कि तुमने समझ लिया ? असुरों ने कहा , हां , समझ लिया, दया करो यह आपने कहा है । प्रजापति ने कहा, हां, तुमने समझ लिया है ।

व्याख्या :

तीनों श्रेणी के मनुष्यों को तीन प्रकार की शिक्षा देने का तात्पर्य यह है कि प्रत्येक श्रेणी के व्यक्ति जिस उपदेश पर आचरण कर सके, उनके लिए उसी की उपयोगिता हो सकती है । शिक्षा जो प्रत्येक श्रेणी को दी गई है, वह असल में उसी श्रेणी के व्यक्तियों की अपने लिए छांटी हुई है । इंद्रियों पर अधिकार रखना सर्वोच्च कार्य है । देवों अर्थात प्रथम श्रेणी के मनुष्यों ने इसलिए उसे अपने लिए पसंद किया । दान दूसरी श्रेणी का कार्य है, इसलिए उसे मनुष्यों ने अपने लिए छांट लिया । दया, जिसमें न समय की जरूरत थी, न अपने पास से कुछ देने की किंतु दूसरों को कष्ट न देकर उन पर कृपा रखना ही इष्ट था, उसे असुरों ने अपने लिए उपयोगी समझा ।

प्रजापति ने इन तीनों को अपनी शिक्षा का पात्र इसलिए ठहराया कि उन्होंने देखा कि जो जो कुछ कर सकता था, उसने वह अपने-अपने लिए छांट लिया । इसलिए उन्होंने समझा कि उन्हें इसी पर अमल करने दो । यदि वे इतना भी कर लेंगे तो भी उनका कुछ सुधार ही होगा ।

रोग के दुख को प्रसन्नता के साथ सहन करना :

उपनिषदों में शिक्षा दी गई है कि कोई व्यक्ति जब रोगी हो जाए, तो उसे रोग के दुख को प्रसन्नता के साथ, उसके सहन करने को तप समझकर सहन करें

Edit with WPS Office

। असल में मनुष्य का रोगी होना ईश्वर की दया का परिणाम है, जब स्वास्थ्य रक्षा के नियमों को तोड़कर रोगी अपने भीतर रोग के अंणुओं को बहु मात्रा में एकत्र कर लेता है और उनसे उसे हानि होने की संभावना बढ़ जाने लगती है । तब उन रोगाणुओं को शरीर से निकालकर बाहर कर देने के लिए वह रोगी हुआ करता है । तात्पर्य उसका यह है कि रोगी होना मनुष्य के निरोग बनने की एक कार्य प्रणाली है और इसी कार्य प्रणाली का नाम रोग है । इसलिए रोग को बुरा न समझकर, किंतु यह समझते हुए कि यह सब स्वास्थ्य बनाने का साधन है, उसे प्रसन्नता से सहन करना चाहिए ।

गायत्री मंत्र के समस्त पदों का विस्तृत विवरण : (गायत्री उपाख्यान)

तत् + सवितु : + वरेण्यम् = तत्सवितुर्वरेण्यंम् , यह गायत्री मंत्र का पहला पद है । भूमि, अंतरिक्ष और धौ में आठ अक्षर हैं और गायत्री मंत्र के पहले पद में भी आठ अक्षर हैं । उसके इस पद को जो इस प्रकार जानता है, वह इन तीनों लोकों में जितना है उतने को जीत लेता है ।

व्याख्या ____

इस पहले पद का अर्थ यह है कि ईश्वर जो जगत का रचयिता है, वही उपासना के लिए ग्रहण करने योग्य है । उपासक जब इसको जान लेता है और इसके अनुसार आचरण करने लगता है, तब वह ऐसा हो जाता है मानो इन तीनों लोकों में जो कुछ भी है, वह सब उसने प्राप्त कर लिया है क्योंकि सबसे अधिक मूल्यवान वस्तु इन तीनों लोकों की वही है, जिसने इन्हें बनाया है । उसे पाकर तुम्हें फिर और कुछ पाना शेष नहीं रह जाता ।
गायत्री मंत्र के इस पद और तीनों लोकों **(भूमि, अंतरिक्ष, धौ)** के शब्दों के आठ आठ अक्षरों की तुलना केवल इसलिए यहां की गई है जिससे दोनों की बाहरी समता भी प्रकट हो जावे ।

गायत्री मंत्र का दूसरा पद :

Edit with WPS Office

ऋग् ,यजु , और साम तीनों में आठ अक्षर हैं और गायत्री मंत्र के दूसरे पद भी (भर्गो देवस्य धीमहि आठ अक्षरों वाला है) गायत्री का यह पद इन तीनों वेदों के बराबर है । जितनी इन तीनों वेदों में विद्याएं हैं, वह उतना प्राप्त कर लेता है जो इस गायत्री के पद इस पद इस प्रकार जानता है ।

व्याख्या ____

गायत्री के इस पद का भाव यह है कि ईश्वर पवित्र और प्रकाशयुक्त है , उसे हम अपने हृदय में धारण करें । जिस समय उपासक इसको जानकर सचमुच अपने हृदय में धारण कर लेता है, तब वह मानो इतना ही ज्ञानी है जितना इन तीनों वेदों को पढ़कर कोई ज्ञानी हुआ करता है । क्योंकि इन तीनों वेदों के ज्ञान की चरम सीमा तो इतनी ही है कि मनुष्य ईश्वर को जानकर उसे प्राप्त कर लेंवे ।

दोनों वाक्यों में आठ आठ अक्षरों का होना केवल बाहरी समता दिखलाने के लिए प्रकट किया गया है ।

गायत्री मंत्र का तीसरा पद ;

गायत्री के तीसरे पद धियो यो न: प्रचोदयात् , में भी आठ अक्षर हैं और प्राण , अपान और व्यान में भी 8 अक्षर है । अतः अक्षरों की दृष्टि से इन दोनों में समता है । गायत्री के इस तीसरे चरण में ईश्वर से प्रार्थना की गई है कि वह हमारी बुद्धियों को प्रेरित बुद्धि बना देवे अर्थात बुद्धियों को ऐसी प्रेरणा मिल जावे जिससे वह बुराई और अधर्म की ओर न जाकर भलाई और धर्म की ओर जाया करें । जब मनुष्य इस चरण की उपयोगिता को समझकर उस पर आचरण करके अपने को मेधावी = सुधरी हुई बुद्धि वाला बना लिया करता है तो उसका प्राणी संसार पर अधिकार हो जाया करता है । पतंजलि, व्यास, बुद्ध , शंकर और दयानंद इसके उदाहरण है ।

चौथा चरण (तुरीय अवस्था)

गायत्री का पहला पद जगत की रचना से संबंधित होने से पहली अवस्था जागृत है । ईश्वर को हृदय में धारण करने का यत्न दूसरी स्वप्नावस्था है और

Edit with WPS Office

धारण कर लेने से बुद्धियों को सुधार होते-होते ऋतम्भरा तक पहुंच जाना सुषुप्तावस्था है। इन तीनों अवस्थाओं में प्रकाशित ईश्वर जिस उपनिषद की कंडिका में परोरजा अर्थात रजस – प्रकाशित लोकों से परे, कहा गया है, उस समय प्राप्त हुआ करता है, जब इन तीनों अवस्थाओं के अभाव हो जाने से वह चौथी अवस्था जिसे तुरीय कहा जाता है, स्वयंमेव प्राप्त हो जाया करती है। पहली तीन अवस्थाएं आत्मा के बहिर्मुखी चौथी तुरीय अवस्था आत्मा के अन्तर्मुख होने से संबंधित है। जिस प्रकार वस्तु का अभाव वस्तु के न रहने से स्वयंमेव लक्षित होने लगता है, इसी प्रकार इन अवस्थाओं के अभाव से तुरीयावस्था इन्हीं के भीतर से निकल आया करती है।

जैसे– ओंकार मैं अकार, उकार, मकार से संबंधित तीन अवस्थाएं इन तीन मात्राओं का स्वरूप है और चौथी अमात्रा (मकार का हल होना) इसी ओंकार के साथ हुआ करती है। इसी प्रकार गायत्री के तीन चरण तीन अवस्थाएं और उनका अभाव तुरीय अवस्था हुआ करती है। इसलिए यहां उसे चौथी अवस्था कहा गया है। चौथी अवस्था इसलिए भी उसे कहा जाता है कि यह एक नियम है की वाचक के साथ वाच्य निहित रहा करता है। गायत्री के पहले तीन चरण वाचक की कोटि में है और इसलिए वाच्य भी उनके साथ होना चाहिए और उसी वाच्य को देखने की अवस्था ही तुरीय कहीं जाती है।

गायत्री मंत्र तुरीय अवस्था में प्रतिष्ठित है। इसका अभिप्राय यह है कि यदि उपासक गायत्री मंत्र में वर्णित शिक्षानुसार ईश्वर को हृदय में धारण करके उसका साक्षात्कार करना चाहता है तो उसे इसी तुरीय अवस्था का आश्रय लेना पड़ेगा।

गायत्री मंत्र का महत्व :

उपनिषद में गायत्री मंत्र के महत्व का वर्णन करते हुए कहा है कि समस्त लोक, समस्त विधा, समस्त प्राणी जितने हैं, उतना दान लेने से गायत्री के तीन पदों के ही बराबर होते हैं। उसका चौथा तुरीय पद तो किसी भी दान

Edit with WPS Office

के बदले प्राप्त नहीं हो सकता ।
जनक ने गायत्री का मुख अग्नि बतलाते हुए बुडिल को यह शिक्षा दी कि जिस प्रकार अग्नि कोई वस्तु जो उसमें डाली जावे, भस्म कर देता है । इसी प्रकार गायत्री का जानने वाला समस्त पाप उत्पन्न करने वाली वासनाओं को नष्ट करके और कृत पापों को प्रसन्नता से भोगकर शुद्ध, पवित्र और मुक्त हो जाता है ।

•8. ।। कृष्णयजुर्वेदीय श्वेताश्वतरोपनिषद् ।।

ओउम् की निरन्तर उपासना से परमेश्वर का साक्षात होना :

जैसे बासं अरणि और दियासलाई आदि अपने कारण में रहते हुए अग्नि का साक्षात स्वरूप नहीं दीख पड़ता और न उन बासं आदि में कारण रूप अग्नि के चिन्ह का अभाव होता है । यदि अभाव हो तो उत्पन्न ही कहां से वा कैसे हो ? वह अग्नि फिर फिर बार-बार ईंधन के संयोग से घिसने मथने आदि द्वारा साक्षात निकलता प्रकट होता है, जल उठता है । इसके समान ही ओउम् की उपासना द्वारा परमेश्वर साक्षात ज्ञात होता है और ठीक प्रकार से उपासना हुए बिना शरीर में अप्रकट रहता है । अर्थात इसी शरीर में प्रकटता और अप्रकाशित दोनों होती है ।अन्त: करण की वृत्तियां को ऊपर की अरणि और ओंकार को द्वितीय अरणि कर अर्थात ओंकार के साथ ही अपनी बुद्धि , इन्द्रिय, और शरीर को जोड़कर ध्यान योग के साथ मथने के अध्यास से बासं आदि में गुप्त अग्नि के समान प्रकट हुई ज्योति: स्वरूप अपने हृदय में सब और से प्रकाशमान परमेश्वर को साक्षात देख सकता है । जैसे तिलों में व्याप्त अदृष्ट तेल कोल्हू में डालकर पेरने से निकलता है । जैसे प्रत्यक्ष न दीखता हुआ दही में व्याप्त घी मन्थन करने से साक्षात दीखने

Edit with WPS Office

लगता है, जैसे नदी के समीप स्त्रोता मैं पहले से अदृष्ट जल खोदने से चू आता है, जैसे अरणि नमक लकड़ी में व्याप्त अदृष्ट अग्नि मथने या घिसने से प्रकट हो जाता है, इसी प्रकार उस परोक्ष स्वरूप सर्वत्र व्याप्त ईश्वर को भी अपने हृदय में साक्षात करता है । जो बहाना मात्र छोड़कर सच्चे मन से तथा चित्त की एकाग्रता के साथ तप के अनुष्ठान से सर्वदृष्टा इस परमात्मा को अनुकूलता के साथ ज्ञान दृष्टि से देखता है । दूध में जैसे घी व्याप्त होता है, वैसे ही सब जड़ चेतन पदार्थों में ईश्वर व्याप्त है ।

जो जिज्ञासु दीर्घकाल पर्यन्त, एकाग्रचित से मन वाणी और शरीर को वशीभूत करके वाचक ओउम् पद से वाच्य ईश्वर की निरन्तर ध्यान उपासना करता, उसी में निष्ठा रखता, उसी में तत्पर रहता, उसी में श्रद्धा पूर्वक बुद्धि को लगाता है, वह समय पाकर अपनी आत्मा में ही ज्ञान चक्षु से ईश्वर को अवश्य ही देखता है । इसमें किसी को कोई सन्देह नहीं होना चाहिए ।

मन की वृत्तियों का निरोध करने के लिए परमात्मा के शरणागत होना :

मन और बुद्धि की सावधानता, स्थिरता और विषय वासना की निवृत्ति चाहने वाले मनुष्यों को उचित है कि वे अनन्त, सर्वज्ञ, सर्वप्रेरक, अंतर्यामी एक परमेश्वर की ही बहुत काल तक निरन्तर एकाग्रचित से विशेषकर स्तुति, प्रार्थना करें । विषय वासना से ठीक निवृत्ति होने का अन्य साधन नहीं है । जैसे कि जल से मिटने वाली प्यास अन्य किसी वस्तु से निवृत करने की इच्छा वाले को फल प्राप्त होना कम सम्भव है । वैसे ही यहां अभ्यास, वैराग्यादि साधनों के द्वारा मन की वृत्तियों का निरोध करने के समय परमात्मा की शरणागत हुए बिना उससे अधिक वा उसके तुल्य अन्य कोई गति नहीं है । क्योंकि परमात्मा सर्वोपरि सांसारिक भोगों की फंसावट से अलग है, विषय वासना का लेश मात्र भी उससे सम्बन्ध नहीं तथा उसकी शरण में पहुंचते मनुष्य को ऐसा अद्भुत आनंद मिलता है जिसके सामने संसार के सब विषयों के भोग अत्यन्त फीके पड़ जाते हैं ।

Edit with WPS Office

योगी पुरुषों की संगति करना

जैसे मन के निरोध से इंद्रियां स्वयंमेव वशीभूत हो जाती है तथा बुद्धि के सावधान, निश्चल होने पर मन भी एकाग्र शांत हो जाता है । इसी प्रकार जीवात्मा जब परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना, और उपासना में लग जाता है तब बुद्धि आदि सब शांत होकर ठहर जाते हैं । इसीलिए योगी को प्रार्थना करनी चाहिए कि सिद्ध, जीवनमुक्त और ज्ञान की सीमा को प्राप्त हुए योगी से मेरा संग हो । वे लोग डूबते हुए मुझको निकालें । मेरी प्रार्थना वाणी को सुने । उस पुरुष को अपनी कीर्ति वा प्रतिष्ठा की इच्छा नहीं करनी चाहिए ।

प्राणायाम के अभ्यास से मन पर नियंत्रण करना :

प्राणायाम का अभ्यास करने वाला योगी पुरुष शरीर की चेष्टा को शांत कर प्राण के गमन आगमन को शांत प्रवाह से चलने वाला करके तब मुख को बंद करके केवल नासिका के द्वारा सांस लेता जावे । सात द्वारों में मुख सबसे बड़ा द्वारा है । इसी कारण इसमें वाणी और रसना दोनों इंद्रियां रहती हैं । इसके बाद रहने से दो इंद्रियों को जीत सकता है । दुष्ट घोड़े जिसमें जुड़े हो , ऐसे रथ के तुल्य दुष्ट इंद्रियां रुपी घोड़ों से युक्त शरीर रथ को जानता हुआ, प्रमाद वा भूल न करके लगाम की रस्सी रूप मन को दृढ़ता पकड़े रहे । जिस गाड़ी में दुष्ट घोड़े जुड़े हुए होते हैं, उसके हांकने वाला यदि क्षण भर भी उनकी ओर से ध्यान हटा लेवे, तो वे दुष्ट घोड़े रथ के स्वामी, सारथी और रथ तीनों को कहीं गड्ढे आदि में ले जाकर गिराते या वृक्ष आदि से टकरा देते हैं । वैसे ही कोई योगी वा ज्ञानी इन दुष्ट इंद्रियों की स्वाभाविक दुष्टता को क्षण भर भी भूल जावे तो ये शीघ्र ही शरीर रूप रथ को विषयरुप गड्ढों में ले जाते हैं । ऐसा जानते हुए योगी को चाहिए कि वह प्राणायाम आदि साधनों से मन को नियंत्रण में रखने का प्रयत्न करें ।

योगाभ्यास से शरीर , इन्द्रिय और अन्तःकरण की मलीनता दूर करना :

Edit with WPS Office

जैसे स्वर्णादि धातुओं को सोधने का जैसा-जैसा उपाय किया जाता है, वैसे वैसे मलीन असार अंश उन स्वर्णादि से निकलते जाते हैं और शुद्ध सारांश निर्मलता को प्राप्त हुए, अंश प्रदीप्त होते हैं और सार ही सर्वत्र शुद्धांश कहाता है । और सार ही स्थायी होता है वा जो शुद्ध चिरस्थायी अंश है, वही सार कहाता है । असार अपने स्वभाव से ही नष्ट हो जाता है या जो शीघ्र नष्ट होने वाला है वही असार कहाता है । वैसे ही योग के तप आदि अंगों के अनुष्ठान की प्रबलता है अर्थात बहुत काल तक दृढ़ता और और निरन्तर श्रद्धा के साथ सांगोपांग योगाभ्यास करने से शरीर, इंद्रियां और अंतःकरण की मलीनता शनै शनै दूर हो जाती है, तथा शुद्ध सारभूत अंश रह जाते हैं । असार मालिन वस्तु पर ही रोग और निर्मलता रुप जरावस्था अपना प्रभाव जमाते हैं । इसी से योगी के शरीर को रोगादि आदि नहीं दबा पाते । जो दर्पण जैसा सार रूप वा जैसा मलिनता रहित होता है, उसमें वैसा ही शुद्ध रूप दीखना संभव है । इसी प्रकार शुद्ध सारांश रूप निर्मल इंद्रियों से अत्यन्त दूरस्थ, सूक्ष्म , छिपे हुए छिपे हुए गन्धादि विषयों का ग्रहण वा बोध योगी को हो सकता है ।

ब्रह्म ज्ञान होने से कुवासना रुपी गांठों का समाप्त होना :

जीव के अन्त: कारण मैं अनादि काल से संचित दुख और बन्धन का कारण कुवासना रूप अनेक गांठें विद्यमान है । वे ही फांसे रस्सी के तुल्य बांधने वाली तथा वे ही सब दुखों के मूल, चिन्ता, शोकादि को उत्पन्न करने वाली है । ब्रह्म ज्ञान होने से उनकी निवृत्ति होने पर शोकादि भी छूट जाते हैं ।

परमात्मा को भक्ति के साथ बार-बार नमस्कार करना :

जो पुरुष सर्व व्याप्त ईश्वर को भक्ति के साथ बार-बार नमस्कार करता है और अपने इष्ट की सिद्धि उस से मांगता है और उसी की स्तुति करता है । स्वभाव से भक्तों का उद्धार करने वाला ईश्वर ईश्वर उसका कल्याण अवश्य करता है । इसलिए भक्ति के साथ-साथ नमस्कारादि से इसको प्रसन्न करने

Edit with WPS Office

का उद्योग अवश्य करना चाहिए ।

दैनिक स्तुति, प्रार्थनोपासना एवं मनन करने योग्य वेदों के कुछ प्रमुख मंत्र :

प्रत्येक व्यक्ति का यह परम कर्तव्य है कि वह अपने जीवन को सफल बनाने के लिए श्रद्धा से, आदर से और पवित्र भावना से लगन और परिश्रामपूर्वक वेदों का अध्ययन करें एवं प्रतिदिन परमेश्वर का ध्यान करें तथा उनमें दी गई शिक्षा को अपने जीवन में अपनाएं । ऐसा करने से आपका जीवन मंगलमय हो जाएगा । शान्ति आपके घर आंगन में ज्योति सुधा रसधार बरसाएगी ।

वेदों के शाश्वत ज्ञान की ज्योति से मन का, मस्तिष्क का अंधकार मिटा कर हम वह लक्ष्य पा लें जिसे पाने के लिए यह मानव शरीर मिला है ।

इस उद्देश्य की सफलता प्राप्ति के लिए यहां वेदों के कुछ प्रमुख मंत्रों को भावार्थ सहित दिया जा रहा है । आशा है कि पाठकगण सत्य भाव से स्तुति, प्रार्थनोपासना, स्वाध्याय मनन एवं उनके अनुसार मन, वाणी और आचरण में समानता करके मानव जीवन के वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होंगे ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 36. पृष्ठ छत्तीसवां

• ईश्वर स्तुति प्रार्थना एवं उपासना के मंत्र :

1. मंत्र :

Edit with WPS Office

ओम भूर्भुव स्व : तत्सवितुर्वरेण्यंम्, भर्गो
देवस्य धीमहि धियो यो न प्रचोदयात् ।।
(यजुर्वेद 36/3)

भावार्थ___ हे सर्वरक्षक, प्राणों के प्राण, दुख विनाशक, सुख स्वरूप, संसार के उत्पादक व सर्वप्रेरक, प्रकाशस्वरूप उस वर्णन करने योग्य, सर्वश्रेष्ठ, पाप नाशक तेज का हम ध्यान करें जो हमारी बुद्धियों को शुभ कार्यों में प्रेरित करें ।

2. मंत्र :

ओम् विश्वानि देव सवितदुरितानि परासुव ।
यद् भद्र, तंत्र आसुव
(यजुर्वेद 30/3)

भावार्थ___ हे सकल जगत के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्यायुक्त, शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर ! आप कृपया करके, हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुखों को दूर कीजिए, जो कल्याणकारक गुण, कर्म स्वभाव और पदार्थ है, वे सब हमको प्राप्त कीजिए ।

3. मंत्र :

ओम् हिरण्यगर्भ समवर्तताग्रे भूतस्य: पतिरेक आसीत ।
स दाधार पृथिवीं धामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।
यजुर्वेद (23/1 व 25/10)। (यजुर्वेद 13/4)

भावार्थ___ जो स्वप्रकाश स्वरूप और जिसने प्रकाश हारे सूर्य चंद्रमा आदि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं , जो उत्पन्न हुए संपूर्ण जगत का एक ही चेतन स्वरूप था, जो सब जगत के उत्पन्न होने से पूर्व वर्तमान था, वह इस भूमि और सूर्यादि को धारण कर रहा है, हम लोग उस सुख स्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से विशेष भक्ति किया करें ।

Edit with WPS Office

4 मंत्र

ओम् य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवा : ।
यस्यच्छायाऽमृंत यस्य मृत्यु: कस्मै देवाय हविषा विधेम ।। यजुर्वेद. (25/13)

भावार्थ___ जो आत्मा ज्ञान का दाता, शरीर आत्मा और समाज के बल का देने हारा, जिसकी सभी विद्वान लोग उपासना करते हैं और जिसका प्रत्यक्ष, सत्य , स्वरूप, शासन, न्याय अर्थात शिक्षा को मानते हैं, जिसका आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है और जिसको न मानना अर्थात भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दु:ख का हेतु है, हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्त: करण से भक्ति अर्थात उसकी आज्ञा पालन करने में तत्पर रहे ।

5. मंत्र

ओम् य: प्राणोंतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पद : कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।
(यजुर्वेद 24/11)

भावार्थ___ जो प्राण वाले और अप्राणिरूप, जगत का अपनी अनन्त महिमा से एक ही विराजमान राजा है, जो इस मनुष्य आदि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है । हम लोग उस सुखस्वरूप , सकल ऐश्वर्या को देने हारे परमात्मा के लिए अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके विशेष भक्ति करें ।

6. मंत्र

ओम् येन धौरुग्रा च दृढा येन स्व: स्वभितं येन नाकं ।
योऽअन्तरिक्षे रजसो विमान: कस्मै देवाय हविषा विधेम ।। यजुर्वेद. (32/6)

Edit with WPS Office

भावार्थ___ जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया और जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण किया और जिस ईश्वर ने दुख रहित मोक्ष को धारण किया, और जो आकाश में सब लोग लोक लोकान्तरों को, विशेष मान युक्त अर्थात जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता है, हम लोग उस सुखदायक, कामना करने के योग्य पर ब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें ।

7. मंत्र

ओम् प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।।

(ऋग्वेद 10/121/10)

भावार्थ___ हे प्रजापते ! सब प्रजा के स्वामी परमात्मा, आपसे भिन्न दूसरा कोई, इन, सब उत्पन्न हुए जड़ चेतन आदि को नहीं तिरस्कार करता है, अर्थात आप सर्वोपरि हैं । जिस जिस पदार्थ की कामना वाले हो के हम लोग भक्ति करें, आपका आश्रय लेंवें और वांच्छा करें, उस उसकी कामना हमारी सिद्ध होवे, जिससे हम लोग धन ऐश्वर्यो के स्वामी होवे ।

8. मंत्र

ओम् स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यत्र देवाऽअमृतमानशानास्तृतीयेधामन्नध्यैरयन्त ।।

(यजुर्वेद. 32/10)

भावार्थ___ हे मनुष्यों ! वह परमात्मा, अपने लोगों का भाई के समान सुखदायक, सकल जगत का उत्पादक, वह सब कामों को पूर्ण करने हारा, संपूर्ण लोकमात्र और नाम स्थान, जन्मों को जानता है और जिस सांसारिक सुख-दुख से रहित, नित्यानंद युक्त, मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होके विद्वान लोग स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायाधीश है । अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें ।

Edit with WPS Office

9. मंत्र___

ओम् अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान ।

युयोध्यस्भज्जुहुराणमेनो भूमिष्ठान्ते नम उक्त विधेम ।। (यजुर्वेद. 40 /13)

भावार्थ___ से स्वयं प्रकाश स्वरूप, सब जगत के प्रकाश करने हारे, सकल सुखदाता परमेश्वर ! आप जिसे संपूर्ण विधायुक्त हैं, कृपया करके हम लोगों को विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्या की प्राप्ति के लिए अच्छे धर्म युक्त आप्त लोगों के मार्ग से संपूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराईए और हमसे कुटिलतायुक्त पाप रुप कर्म को दूर कर दीजिए । इस प्रकार हम लोग आपकी बहुत प्रकार की स्तुतिरूप, नम्रता पूर्वक प्रशंसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहे ।

10 मंत्र___

नमस्ते अग्र ओज से गृणन्ति देव कृष्टय: ।
अमैर मित्रमर्दय ।। (सामवेद. 11)

भावार्थ___ से प्रिय परमात्मन् ! आत्मबल, ज्ञानबल , प्राप्त करने हेतु में तेरी और आने के लिए तेरी नम्र और मीठी स्तुतियां करता हूं । तेरी ओर आने में काम- क्रोध आदि शत्रु बाधक है । इन्हें तू अपने बल से नष्ट कर । जब मैं तेरी ओर आना चाहता हूं, तो ये बाधक बनकर आगे खड़े हो जाते हैं । तू ओज स्वरूप है, मुझे ओज दे ।

11. मंत्र___

अग्ने रक्षाणों अंहस: प्रति स्मदेव रीषत: ।
तपिष्टैरजसोदह ।। (सामवेद. 24)

भावार्थ___ हे परमात्म देव ! तू हमारे अंदर बैठे, पीड़ा देने वाले काम क्रोध

Edit with WPS Office

आदि पापों को अपने सन्तापक बलों से भस्म करके हमारी रक्षा करता है। परमात्मन्! तू अजर है, जरा से रहित है। संसार में हमारी रक्षा करने वाले तो जरा धर्मी है, कुछ जरा को प्राप्त हो गए, कुछ प्राप्त होने वाले हैं, किंतु तेरा रक्षण सदा रहने वाला है। अतः हम तेरे आश्रित हैं, तू ही हमारी रक्षा कर।

12. मंत्र___

ऊर्ध्व ऊषुण ऊतये तिष्ठा देवों न सविता।
ऊर्ध्वी वाजस्य सनिता यदजिंभिवधद्भि विह्यामहे।। (सामवेद. 57)

भावार्थ___ हे परमात्मन्! सूर्य जैसे अंधकार से बचाने के लिए प्रकाश देता हुआ ऊपर स्थित है। ऐसे तू भी अज्ञान से रक्षा के लिए ज्ञान प्रकाश देता हुआ हमारे ऊपर विराजमान रह, यह एक प्रार्थना है। दूसरी प्रार्थना है कि तू मोक्षानन्द अमृत भोग का देने वाला है, तुझे मंत्र स्निग्ध स्तुतियों से अपने हृदय में आमंत्रित करते हैं, सो दोनों को तू स्वीकार कर।

13. मंत्र___

भिन्धि विश्वा अपद्विष: परिबाधों जही मृध:
वसु स्पहं तदा भर। (सामवेद. 134)

भावार्थ___ हे परमात्मन्! मेरे अंदर दूसरों के प्रति होने वाली तथा मेरे प्रति दूसरों की भी सब द्वेष प्रवृत्तियों को छिनभिन्न कर दे। मेरे अंदर दूसरों के प्रति होने वाली बाधा प्रवृत्तियां और पाप वृत्तियों को एवं मेरे प्रति दूसरों की बांधा भावनाओं, पाप वृत्तियों को मिटा दे, पुनः वांछनीय वननीय गुण धन को मेरे अंदर धारण करा दे जिससे मैं दूसरों का अहित चिंतन न करूं और न मेरे प्रति कोई अहित चिंतन कर सके।

14. मंत्र___

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम्।

Edit with WPS Office

अग्ने रथं न वेधम् ।। (सामवेद. 5)

भावार्थ___ से परमात्मन् ! तू मेरा प्रियतम अतिथि है । तू मेरे हृदय गृह में या अंन्त:करण सदन में आता है । परमात्मन् ! तुझे रथ प्रिय है और मुझे उससे भी अधिक प्रिय है । वह तो प्रियतर है, मेरा रथ है मेरा शरीर है, मेरा मित्र है मेरा प्राण । परंतु परमात्मन् ! तू मेरे शरीर और प्राण से भी अत्यंत प्रिय है । मैं तेरी स्नेहपूर्ण स्तुति करता हूं । लौकिक रथ है प्यारा, देह का सहारा , लौकिक मित्र प्यारा है, मन का सहारा है । परमात्मन् ! तू अत्यंत प्यारा है, आत्मा का सहारा है । अतः मेरा अतिथि बन जा, मेरे शरीर में नस-नस में बस जा, मेरे प्राण में रम जा, आत्मा में समा जा । तू लेने वाला अतिथि नहीं, तू तो लाने वाला अतिथि है । अतः तू अत्यंत प्यारा है, स्तुति ले जा, शांति प्रसाद दे जा ।

15. मंत्र___

आ याहायमिन्दवेऽश्वयते गोपत उवरापते ।
सोम सोमपते पिब ।। (सामवेद. 402)

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! तू मेरे मन का रक्षक है, उसे स्थिर और पवित्र कर, तू मेरी इंद्रियों का रक्षक है, इन्हें संयम में रख । तू बहुत गति वाली देह रुपी गाड़ी का रक्षक है, इसे श्रेष्ठ मार्ग में चला । तू सोम्य भावों के उपासना रसों का रक्षक है, उन्हें निरन्तर बनाए रख । तू आद्र में स्नेह भरे उपासना रसों को स्वीकार कर, यह समर्पित है ।

16. मंत्र___

इन्द्रक्रतुंन आभर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षाणो अस्मिन्पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ।।
(सामवेद. 259)

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! तू हमारा पिता है, हम तेरे पुत्र हैं । पुत्रों के अंदर जैसे पिता अपने प्रज्ञान को भरता है और सर्वस्व का प्रदान करता है । तू भी

Edit with WPS Office

हमारे अंदर प्रज्ञान भर दे तथा गुण सम्पत्ति का भी प्रदान कर दे । अतः इस संसार यात्रा में मार्ग निर्देश कर कि हम कैसे भिन्न-भिन्न मार्ग में चले, ताकि यहां जीवन की सफलता प्राप्त करें, पुनः जीते हुए तेरी अनुपम ज्योति को पा सके ।

17. मंत्र___

त्वं न इन्द्रा भर ओ जो नृम्णं शतक्रम विचर्षणे ।
आ वीरं पृतनासहम् ।। (सामवेद. 405)

भावार्थ___ हे अनन्त कर्म शक्ति वाले सर्वज्ञ, सर्वांतर यामी परमात्मन् ! तू हमारे अंदर आत्मिक बल और संयम, सदाचार का यश भरपूर कर दे तथा विरोधी बाधक प्रवृतियों को सहन करने वाले प्राण को भी भरपूर कर दे । मैं उपासना द्वारा तेरी शरण में आया हूं ।

18. मंत्र___

अग्नि तं मन्यो यो वसुरस्तं यं यन्ति धनेशः ।
अस्तमवरन्त आशवोऽस्तं नित्यासो वाजिन इषं स्तोतृभ्य आभर ।। (सामवेद. 425)

भावार्थ___ मैं अपने अन्दर बसने वाले उस अग्रणायक परमात्मा की अर्चना करता हूं जिसे मेरी वाणियां स्तुति द्वारा अपना आश्रय बनाती है । जिसे मेरे चलते हुए प्राण प्राणायाम द्वारा अपना आश्रय बनाते हैं । जिसे मेरे निरन्तर वेगवान मन आदि मनन चिंतन द्वारा अपना आश्रय बनाते हैं । इन तीनों साधनों द्वारा स्तुति करने वाले हम उपासकों के लिए परमात्मा अपना शान्त सुख आभरित करता है ।

19. मंत्र___

बसन्त इन्नु गीष्म इन्नु रुन्तयः ।
वर्षाण्यनु शरदों हेमन्तः शिशिरः इन्नु रुन्तय ।। सामवेद. (616)

Edit with WPS Office

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! मेरे प्राण प्राणायाम द्वारा, मेरा मन मनन द्वारा, मेरे कान तेरे श्रवण द्वारा, मेरी आंखें तेरे दर्शन एवं वस्तु वस्तु में तेरी छवि देखें। तेरा पाठ पढ़ मेरी वाणी तेरी स्तुति गान करें। मेरी नाभि का अधोभाग आसन और सदाचरण द्वारा तेरे में सदा बार-बार समर्पण करने योग्य रहे।

20. मंत्र___ **(सामवेद. 624)**

भावार्थ___ हे महान ऐश्वर्यावन परमात्मन् ! तू हमें बाहरी बाल और आत्म बल दे जिसके द्वारा तू संसार पर शासन करता है। हम संसार पर नहीं अपने शरीर और मन पर शासन कर सके तथा प्रज्ञा भी दे। प्रज्ञा के समान स्थिर धन–मोक्षैश्वर्य और ब्रह्मानन्द भी दे। काम क्रोध आदि पापों भावों के निर्मित हमें सहन करने वाले संयमी और समन करने वाले बना दे।

21. मंत्र___ **(सामवेद. 776)**

भावार्थ___ हे सर्वदृष्टा अन्तर्यामी शान्त परमात्मा ! तू अग्रणायक हो हमारे मन में वर्तमान कामनाओं को अपनी स्तुति की ओर प्रेरित करने हेतु पवित्र कर। हमारी कामनाएं संसार की ओर न जावें। संसार में न फंसाए, अपितु तेरी स्तुति में लगी रहे।

22. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 3 /24 एवं ऋग्वेद. 1/1/9)**

भावार्थ___ हे भगवान ! जैसे पिता अपने पुत्रों को अच्छी प्रकार पालन करके और उत्तम उत्तम शिक्षा देकर उनको शुभ गुण और श्रेष्ठ कर्म करने के योग्य बना देता है। वैसे ही आप हम लोगों को शुभ गुण और शुभ कर्मों से युक्त सदैव कीजिए।

23. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 1/29/7)**

Edit with WPS Office

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! आप हम लोगों में जो दुष्ट व्यवहार , अर्थात खोटे चलन तथा जो हमारे शत्रु हैं, उनको दूर कर हम लोगों के लिए सकल ऐश्वर्या दीजिए ।

24. मंत्र___ (ऋग्वेद. 3/56/6)

भावार्थ___ हे जगदीश्वर ! आप कृपया करके हम लोगों को धर्म से पुरुषार्थ युक्त करके प्रतिदिन ऐश्वर्य प्राप्त कराओ और निरंतर रक्षा करके सब सुखों के लिए शुभ कार्य कराओ ।

25. मंत्र___ (ऋग्वेद. 6/3/4)

भावार्थ___ हे भगवान ! जैसे उत्तम प्रकार से शिक्षित घोड़ा मनुष्य को ठीक मार्ग में पहुंचाता है, वैसे धर्म मार्ग को हम लोगों को पहुंचाइये और जैसे बढ़ई परशु से काष्ठ को काटता है वैसे हम लोगों के दोषों को काटिए और जैसे तालू से उत्पन्न आद्र्रस जिह्वा को प्राप्त होता है वैसे विधा के रस को प्राप्त कराइये तथा जैसे अग्नि काष्ठों को जलाता है, वैसे ही हमारे दुर्व्यसनो को जलाइये ।

26. मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/76/9)

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! आप कृपया करके हमारी शुद्धि के लिए श्रेष्ठ बुद्धि व श्रेष्ठ बल को दीजिए जिससे हम लोग आपको जान और प्राप्त होकर सुखी हो ।

27. मंत्र___ (यजुर्वेद. 32 /14)

भावार्थ___ हे अग्निदेव ! जिस मेधा बुद्धि का विद्वान जन आश्रय लेते हैं, जो बुद्धि आपने मेरे पूर्वजों को दी थी, हे ज्ञानस्वरूप ज्योतिर्मय भगवान । मुझे भी वह मेधा बुद्धि प्रदान कीजिए ।

Edit with WPS Office

28. मंत्र___ (सामवेद. 1132)

भावार्थ___ हे परमात्मन् स्वरूप ज्योति ! तू अब इस जीवन ज्ञान देने के लिए, मनन शक्ति देने के लिए, विशिष्ट बुद्धि देने के लिए, उत्तम वाणी वाली सुशंयत सत्य वाणी देने के लिए हमारे लिए साक्षात् हो ।

29. मंत्र___ (अथर्ववेद. 4/23/2)

भावार्थ___ जिस प्रकार हवन किये हुए हवन द्रव्यों को अग्नि सब देवों के पास पहुंचाता है, इस प्रकार यह है महान देव सब दिव्य भाव वालों के पास रहने वाली सुमति को हमारे अन्त: करण में स्थिर करें और हमें पाप से बचावे ।

30. मंत्र___ (अथर्ववेद. 4/23/5)

भावार्थ___ ऋषि लोग जिसकी सहायता से बल प्राप्त करते हैं, जिसकी सहायता से देव असुरों का पराभव करते हैं तथा जिसके आधार से कुटिल व्यवहार करने वालों को पराजित किया जाता है, वह ईश्वर हमें पाप से बचावे ।

31. मंत्र___ (अथर्ववेद. 4/23/6)

भावार्थ___ जिसकी सहायता से देवता लोग अमरत्व प्राप्त करते हैं, जिसने औषधियां मधुर रस वाली बनाई है, जिसने देवता लोगों में आत्मिक बल भर दिया है, वह देव हमें पाप से बचावे ।

32. मंत्र___ (अथर्ववेद. 4/23/7)

भावार्थ___ भूत, भविष्य और वर्तमान में प्रकाशित होने वाला, यह संपूर्ण

Edit with WPS Office

विश्व जिसके शासन में रहता है, उसकी मैं स्तुति, प्रार्थना और उपासना करने की याचना करता हूं । कि वह परमेश्वर हमें पाप से बचावे ।

33. मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/24/2)

भावार्थ___ जो बलवान प्रभु वीरों को भी वीर्य देने वाला, दुष्टों के बल का जो नाश करता है, जिसका अमृत रस धारण करती हुई नदियां और गौवे इस पृथ्वी पर विचारती हैं, वह प्रभु हमें पाप से बचावे ।

34. मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/3/4)

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! मेरी सब कामनाएं पूर्ण तथा सिद्ध हो । मेरे मन के संकल्प सत्य हो । मुझसे कोई पाप कर्म न हो और मेरी रक्षा सब देव करें ।

35. मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/10/8)

भावार्थ___ हे परमात्मन् ! मुझे ज्ञान युक्त, वायु से प्राण, सूर्य से चक्षु, अंतरिक्ष से श्रोत, पृथ्वी से स्थूल शरीर और मनन शक्ति से संयुक्त विधा के साथ उत्तम वाणी को चाहता हूं, इन सब कि मुझे प्रति होवे ।

36. मंत्र___ (सामवेद. 1170)

भावार्थ___ हे बसाने वाले परमात्मन् ! तू ही हमारा पिता है । अपने आश्रय में अपने बसाने वाला होने से, हे बहुत प्रकार से हदय में मन को प्रेरित करने वाले परमात्मन् ! तू माता है । संकल्पों को प्रेरित करने वाला जीवन निर्माता है । अतः अधिकार के साथ तुझ से प्राप्त होने वाले साधुभाव एवं सुख को हम चाहते हैं ।

37. मंत्र___ (सामवेद. 1505)

Edit with WPS Office

भावार्थ___ हे ज्ञान प्रकाश स्वरूप परमात्मन्! तू अन्य तपस्वी उपासकों के समान हमारे ज्ञान, वैराग्य और श्रेष्ठतम कर्म योगाभ्यास को बढ़ा। तू हमें देव भाव होने के लिए जीवन मुक्त सम्बन्धी ऐश्वर्य देने के लिए अपनी और प्रेरित कर।

38. मंत्र___ (सामवेद. 1866)

भावार्थ___ जिस अवसर पर काम आदि दोषों के तीक्ष्ण वाण, कुत्सित मार करने वाले धूम रहित ज्वालाओं के समान प्रहार कर रहे हो, उस अवसर ब्रह्मांड का स्वामी अविनाशी समस्त देवों की माता निर्माता परमात्मा हमारे लिए शुभ शरण दे।

39. मंत्र___ (सामवेद. 1867)

भावार्थ___ हे पापनाशक परमात्मन्! तू जिससे अपनी रक्षा करनी चाहिए उस काम आदि को विशेषरूप से नष्ट कर, दूसरों के प्रति होने वाले हमारे अंदर संग्राम भावों, हिंसा भावों को नष्ट कर, पाप के हनन साधनों लोभ और मोह को विनष्ट कर, हमें अभिक्षीण करते हुए शत्रु रुप द्वेष को विनष्ट कर।

40. मंत्र___ (सामवेद. 1874)

भावार्थ___ हे संगमनीय सर्वदेव धर्म वाले परमात्मा देव! हम कानों से शुभ श्रवण करें, आंखों से शुभ दर्शन करें। दृढ़ शक्त मन, वाणी आदि साधनों से तेरी स्तुति करते हुए देव द्वारा निर्दिष्ट जो आयु सौ वर्ष या उससे अधिक से अधिक है उसे शरीर अंगों से विशेष सेवन करें।

41. मंत्र___ (सामवेद. 1875)

भावार्थ___ महान यश है जिसका ऐसा परमात्मा हमारे लिए कल्याण रुप हो,

Edit with WPS Office

सबको जानने वाला सर्वज्ञ पोषण कर्ता प्रजा स्वामी हमारे लिए कल्याण रुप हो, दुष्ट प्रवृत्तियां को तोड़ने में अहिंसित- अकुंठित वज्र दंड रूप शक्ति जिसकी है, ऐसा तुरंत कल्याण कार्य संपादक व्यापनशील परमात्मा हमारे लिए कल्याण रूप हो । महान ब्रह्मांड का स्वामी परमात्मा हमारे लिए कल्याण प्रदान करें ।

42. मंत्र___ (ऋग्वेद. 7/54/12) महामृत्युंजय मंत्र , (यजुर्वेद. 3 /60)

भावार्थ___ हे प्रभो ! हम शुद्ध गन्ध वाले, शरीर, आत्मा और सामाजिक बल को बढ़ाने वाले रुद्र रूप जगदीश्वर की निरन्तर स्तुति करें । आपकी कृपा से लता से बन्धन छूटकर अमृत तुल्य पके खरबूजे के तुल्य शरीर के बन्धन से छूटें, परंतु मोक्ष रूप सुख से कभी न छूटें ।
हे प्रभो ! उत्तम गन्धयुक्त रक्षक स्वामी सबके अध्यक्ष हम आपका निरंतर ध्यान करें । लता के बंधन से छूटें पके अमृत रूप खरबूजे के तुल्य इस शरीर से छूट जाएं परंतु मोक्ष और जन्म के सुख और सत्य धर्म के फल से कभी न छूटें ।

43. मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/60/1-2)

भावार्थ___ में आसन वाक् = मेरे मुख में उत्तम वाक् शक्ति रहे । नसों: प्राण: = मेरी नाक में प्राण रहें । अक्ष्णों : चक्षु: = मेरी आंखों में उत्तम दृष्टि रहे, । कृणयों : श्रोतम् = मेरे कानों में उत्तम श्रवण शक्ति रहे । वाह्हो बहुबलम् = मेरे भुजाओं में बड़ा बल रहे । ऊवो: ओज: = मेरी जांघों में सामर्थ्य रहे । मैं सर्वा अरिष्टानि = मेरे सब अवयव निरोग रहे । आत्मा अनिभृष्ट: =मेरी आत्मा उत्साह युक्त, न गिरा हुआ हो ।

44. मंत्र___ अथर्ववेद. 19/67/1 से 8 तक ।

भावार्थ___ (1)पश्येम शरद: शतम् = हम 100 वर्ष देखें । (2) जीवेम शरद:

Edit with WPS Office

शतम् = हम 100 वर्ष जीवे । (3) बुध्येम शरदः शतम् : = हम 100 वर्ष ज्ञान लेते रहे । (4) रोहेम शरदः शतम् = हम 100 वर्ष तक बढ़ते रहें । (5) पूषेम शरदः शतम् = हम 100 वर्ष तक पुष्ट होते रहे । (6) भवेम शरदः शतम् = हम 100 वर्ष तक अच्छी तरह रहे । (7) भूयेम शरदः शतात् = हम 100 वर्ष तक सजते रहें । (8) भूयसीः शरदः शतात् = हम 100 वर्षों से भी अधिक जीवें ।

45. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 10/8/1)**

भावार्थ___ जो भूतकाल, भविष्य काल और वर्तमान काल के सभी पर अधिष्ठाता होकर रहता है, जिसका केवल प्रकाशमय स्वरूप है, उस श्रेष्ठ ब्रह्म के लिए नमस्कार है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 37. पृष्ठ सैंतीसवां

कर्तव्य पालन , धर्म का अनुष्ठान करने, परोपकार आदि के सम्बध में मंत्र ___

1. मंत्र___

आ त्वेता निं षीदतेन्द्रमभि प्र गायत ।
सखायः स्तोमवाहसः ।। **(ऋग्वेद 1/5/1)**

भावार्थ___ जब तक मनुष्य हट,छल और अभिमान को छोड़कर सत्य प्रीति के साथ परस्पर मित्रता कर परोपकार करने के लिए तन, मन औ । धन से यतन नहीं करते, तब तक उनके सुखों और विद्या आदि उत्तम गुणों की

Edit with WPS Office

उन्नति कभी नहीं हो सकती ।

2. मंत्र___

युवाकु हि शचीनां युवाकु सुमतीनाम् ।
भूयाय वाजदात्नाम ।। (ऋग्वेद 1/17/4)

भावार्थ___ मनुष्य को सदा आलस्य छोड़कर अच्छे कामों का सेवन तथा विद्वानों का समागम नित्य करना चाहिए, जिससे अविधा और दरिद्रता जड़ मूल से नष्ट हो ।

3. मंत्र___

मां न: शंसो अररुषो धूर्ति: प्रणं मत्यस्य ।
रक्षाणो ब्रह्मणस्पते ।। (ऋग्वेद 1/18/3)

भावार्थ___ किसी मनुष्य को धूर्त अर्थात छल कपट करने वाले मनुष्य का सेंग न करना और अन्याय से किसी की हिंसा न करना चाहिए । किंतु सब की न्याय से ही रक्षा करनी चाहिए ।

4. मंत्र___

अथा न उभयेषाममृत मत्यीनाम् ।
मिथ: सन्तु प्रशस्तय:।।

भावार्थ___ जब तक मनुष्य राग द्वेष को छोड़कर परस्पर उपकार के लिए विद्या, शिक्षा और पुरुषार्थ से उत्तम उत्तम कर्म नहीं करते, तब तक वे सुखों के सम्पादन करने में समर्थ नहीं हो सकते । इसलिए सबको योग्य है कि परमेश्वर की आज्ञा में वर्तमान होकर सबका कल्याण करें ।

Edit with WPS Office

5. मंत्र___

मां ते राधांसि मां त ऊतयो वसोऽस्मान्कदा चना दभन् ।
विश्वा च न उपमिमीहि मानुष वसूनि चषणिभा आ ।। **(ऋग्वेद. 1/84/20)**

भावार्थ___ वे ही धार्मिक मनुष्य है जिनके शरीर, मन और धन सबको सुखी करें, वे ही प्रशंसा के योग्य है जो जगत के लिए प्रयत्न करते हैं ।

6. मंत्र___ **(ऋग्वेद 1/137/1)**

भावार्थ___ जो शुभ, अच्छे कर्मों का आचरण करते हैं, वे अत्यंत प्रशंसित होते हैं । जो सुशीलता और नम्रता से सबके चित् को धर्मयुक्त व्यवहारों में बांधते हैं, वे ही सबको सत्कार करने योग्य हैं ।

7. मंत्र___ **(ऋग्वेद 1/181/7)**

भावार्थ___ जो श्रेष्ठ धर्मात्मा विद्वानों की वाणी को सुनते हैं, वे कुमार्ग को छोड़कर सुमार्ग को प्राप्त होते हैं । जो मन और कर्म से झूठ बोलने को नहीं चाहते, वे माननीय होते हैं ।

8. मंत्र___ **(ऋग्वेद 2/1/5)**

भावार्थ___ उसी कुल के धन का नाश नहीं होता जो दूसरे सुपात्रों के लिए संसार का उपकार करने को देता है ।

9. मंत्र___ **(ऋग्वेद 2/14/12)**

Edit with WPS Office

भावार्थ___ सज्जनों का धन औरों के सुख के लिए और दुष्टों का धन औरों के दुख के लिए होता है । जो धन और ऐश्वर्या की उन्नति के लिए सर्वदा प्रयत्न करते हैं । वे पुष्कल वैभव पाते हैं ।

10. मंत्र___ **(ऋग्वेद 2/17/4)**

भावार्थ___ जिस जगदीश्वर ने प्रकाश के लिए सूर्य , भोजन के लिए औषधि, पीने के लिए जल रसों को, निवास के लिए भूमि और कर्म करने के लिए शरीर आदि बनाए हैं, वह पिता के तुल्य सबको सत्कार करने योग्य है ।

11. मंत्र___ **(ऋग्वेद 2/28/11)**

भावार्थ___ मनुष्य को चाहिए कि अन्याय से बिना आज्ञा परपदार्थ के ग्रहण की इच्छा कभी ना करें, किंतु धर्म युक्त व्यवहार से यथाशक्ति धन संचयन करें ।

12. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/12/3)**

भावार्थ___मनुष्यों को चाहिए कि मूर्ख लोगों का संग त्याग के और विद्वानों का संग करके उत्तम आचरण करने से इस संसार में ऐश्वर्या का संग्रह करके सदा ही आनंदयुक्त रहे ।

13. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/18/3)**

भावार्थ___ जैसे ईंधन और घृत से अग्नि बढ़ती है वैसे ही ब्रह्मचर्य तथा वेद

Edit with WPS Office

के अभ्यास से बल और विधा बढ़ती है । जितना वेद से ब्रह्मचर्य रखने योग्य है, उतना अभ्यास करना चाहिए ।

14. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/18/4)**

भावार्थ___ पुरुषों ! आप लोगों को चाहिए कि ब्रह्मचर्य द्वारा विद्या और अवस्था बढा सब लोगों के साथ मित्रता करके सकल जनों को अधिक अवस्थायुक्त तथा विद्यमान करो ।

15. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/21/4)**

भावार्थ___ जैसे जल से सींचकर वृक्षों को बढ़ाने पर फल प्राप्त होते हैं, वैसे ही सत्संग से पुरुषों का सेवन कर के विज्ञान आदि फलों को प्राप्त करें ।

16. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/3/10)**

भावार्थ___ मनुष्य को चाहिए की सदा ही अधर्म के आचरण से डर के धर्म में प्रवृत्त हों और बुरे व्यसनों को त्यागकर धर्मयुक्त मार्ग से चले ।

17. मंत्र___ **(ऋग्वेद 3/45/3)**

भावार्थ___ जिन लोगों की समुद्र के सदृश अचल गंभीर बुद्धि, पृथ्वी के सदृश क्षमा और पालने का सामर्थ्य, गौ के सदृश दान और नदी के सदृश वृद्धि है, वे ही संपूर्ण सुखों से युक्त होते हैं ।

Edit with WPS Office

18. मंत्र___ **(ऋग्वेद 4/3/7)**

भावार्थ___ हे मनुष्यों ! जिस पुत्र के विधमान रहने पर माता और पिता को दुख होता है और सत्कार नहीं होता, वह भाग्यहीन निरंतर पीड़ित होता है और जिस पुत्र की उत्तम सेवा से माता-पिता प्रसन्न होते हैं, उसकी प्रजाओं में प्रशंसा और उसको सुख होता है ।

19. मंत्र___ **(ऋग्वेद 4/14/4)**

भावार्थ___ है स्त्री पुरुषों ! आप लोग यदि रात्रि के चौथे पहर में उठ और आवश्यक कृत्य करके वाहन वा पैरों से सूर्योदय से पहले शुद्ध वायु देश में भ्रमण करें तो आप लोगों को रोग कभी प्राप्त न होवे जिससे कि बलिष्ठ और अधिक अवस्था वाले हुए गृहाश्रम में बड़े आनंद को भोगो ।

20. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 5/14/6)**

भावार्थ___ जैसे ईंधन आदि से अग्नि बढ़ता है, वैसे ही सत्संग से विज्ञान बढ़ता है ।

21. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 5/20/1)**

भावार्थ___ यही धर्म युक्त व्यवहार है कि जैसी इच्छा अपने लिए होती है, वैसी ही दूसरों के लिए करें और जैसे प्राणी अपने लिए दुख की इच्छा नहीं करते हैं, वैसे ही अन्य के लिए भी उनको वर्ताव करना चाहिए ।

22. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 5/29/3)**

Edit with WPS Office

भावार्थ___ जो मनुष्य सब वेदों को पढ़कर नहीं खाने और नहीं पीने योग्य वस्तु का वर्ज्जन करके न्यायाधीश के सदृश न्याय और सूर्य के सदृश सत्य और असत्य का प्रकाश करते हैं, वे महाशय होते हैं ।

23. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 5/42/5)**

भावार्थ___ जो मनुष्य अपने सदृश अन्यों को भी सुख-दुख हानि लाभ प्रतिष्ठा और अप्रतिष्ठा को मानते हैं, वे ही प्रशंसा के योग्य होते हैं ।

24. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 6/14/1)**

भावार्थ___ जो मनुष्य आलस्य आदि दोषों का त्याग कर धर्म से पुरुषार्थ करते हैं, वे संपूर्ण इष्ट सुखों को प्राप्त होते हैं ।

25. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 6/28/4)**

भावार्थ___ हे मनुष्यों ! जो अशुद्ध आहार और विहार करने वाले हैं, लंपट चुगल और कसंगी हैं, उनको विधा कभी प्राप्त नहीं होती है । और जो पवित्र आहार और विहार करने वाले हैं, जितेंन्द्रिय, यथार्थवक्ता, सत्संगी , पुरुषार्थी हैं । उनको विधा प्राप्त होती है, ऐसा जानिए ।

26. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 6/47/11)**

भावार्थ___ हे मनुष्यों ! सदा ही मूर्खों का पक्ष त्याग के विद्वानों के पक्ष में समर्थन करिए और जैसे अच्छा सारथी घोड़ों को अच्छे प्रकार जोड़कर रथ

Edit with WPS Office

में, सुख से गमन आदि कार्यों को सिद्ध करता है, वैसे जितेंद्रिय जीव अपने संपूर्ण प्रयोजनों को सिद्ध कर सकता है, और जैसे कोई दुष्ट सारथी घोड़ों से युक्त रथ में स्थित होकर जीव दुखी होता है, वैसे ही अजित इंद्रियां जिसमें ऐसे शरीर में स्थित होकर जीव दुखी होता है ।

27. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 6/51/5)**

भावार्थ___ जिनका सूर्य के समान सुंदर शिक्षा से पालने वाला पिता, पृथ्वी के समान सहनशीलता आदि गुण और विधायुक्त माता, अग्नि के समान प्रकाशमान भ्राता वर्तमान है, वही सुख होता है तथा जैसे पूर्ण विद्यमान जन सन्मार्ग को पूछते हैं, वैसे ही विधा पढ़ने वाले पढ़ाने वालों का निरन्तर सत्कार करते हैं ।

28. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 7/6/4)**

भावार्थ___ उत्तम नेता का यह कर्तव्य है कि वह गाढ़ अंधकार में पड़ी और वही आनन्द मानने वाली प्रजा को उनकी प्रज्ञा जागृत करके सीधे उन्नति के मार्ग पर चलावे । ऐसे धन के स्वामी, आत्म सम्मान रखने वाले तथा शत्रु का दमन करने वाले, अग्नि के समान तेजस्वी वीर के गीत गाए जाएं ।

29. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 7/23/2)**

भावार्थ___ शोक या दुख को दूर करने के उपाय करने चाहिए । ईश्वर की स्तुति शोक को दूर कर सकती है, इसीलिए ईश्वर की स्तुति करनी चाहिए । यह शोक को दूर करने का उपाय हैं । अपनी आयु कितनी है, यह कोई नहीं जानता, पर वह यह अवश्य जान सकता है कि आयु क्षीण होती है । इसलिए मनुष्य स्वयं को पाप से बचावे ।

Edit with WPS Office

30. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 7/36/1)**

भावार्थ___ सत्य के केंद्र से सत्य ज्ञान फैलता है। यज्ञ स्थान से ज्ञान के सूक्त प्रसृत हुए हैं । यज्ञ से ज्ञान के सूक्त किस तरह प्रसृत हुए हैं । ? इस विषय में मंत्र स्पष्ट करता है– सूर्य अपनी किरणों से वृष्टि की उत्पत्ति करता है । पर्वत के शिखरों से युक्त यह पृथ्वी वृष्टि जल को ग्रहण करती है । और धान्य को उत्पन्न करती है । अग्नि वेदी में प्रदीप्त होता है , उसमें उस धान्य का हवन किया जाता है । और उस समय ज्ञान सूक्त गाये जाते हैं । इस प्रकार यज्ञ स्थान में ज्ञान के सूक्तों की उत्पत्ति होती है ।

31. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 7/104/3)**

भावार्थ___ दुष्ट कर्म करने वाले मनुष्य अगाध अन्धकार में ही सदा रहते हैं । उस अन्धकार से वह कभी बाहर नहीं निकाल सकते ।

32. मंत्र___

भावार्थ___ कुछ लोग ऐसे नास्तिक होते हैं कि जो प्रभु की स्तुति ही नहीं करते तो कुछ लोग आस्तिक तो होते हैं और वे प्रभु की स्तुति भी करते हैं, पर उनकी स्तुति प्रेम भरी और हृदय से नहीं होती । तीसरी लोग वे होते हैं की जो प्रभु की स्तुति बड़े प्रेम से और हृदय से करते हैं । प्रभु ऐसे तीसरे वर्ग के लोगों की स्तुति ही सुनता है ।

33. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 8/18/17)**

Edit with WPS Office

भावार्थ___ है सबको वास कराने वाले देवों ! संपूर्ण दुष्ट कर्म रूपी सागर से पार जाने के लिए सुकर्म रूपी नाव ही है । उत्तम कर्म करने वाला मनुष्य ऐसे सागर को पार कर सकता है ।

34. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 8/27/22)**

भावार्थ___ धन वही उत्तम है की जो अनेकों का पालन करता है, जो परोपकार के लिए खर्च होता है । जो स्वार्थ के लिए खर्च किया जाता है, वह धन तो पापमय होता है । ऐसे पापमय धन से सुख प्राप्ति की आशा नहीं की जा सकती है । सच्चा सुख तो उत्तम धन से ही मिलता है ।

35. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 8/33/11)**

भावार्थ___ स्त्री सदा विनम्रता से व्यवहार करें, वह कभी उद्धत न हो, साथ ही लज्जा का भाव लेकर वह चले, निर्लज्ज ने हो । वह चलते समय पैर फैलाकर या लंबे-लंबे डग भरकर न चले, अपितु पैर सटाकर तथा छोटे-छोटे डग भर कर चले । उसके शरीर के सभी अवयव अच्छी तरह ढके रहे । स्त्री का यदि कोई भाग खुला रहेगा तो उसे देखकर पुरुषों के मन में को कुभाव जागेगे और कामवासना पैदा होगी । अतः स्त्री के सभी अंग अवयव ढके रहे । इस मंत्र में स्त्रियों के लिए उत्तम उपदेश है ।

36. मंत्र___ **(ऋग्वेद. 10/83/5)**

भावार्थ___ जिसके पास उत्साह नहीं होता, वह कर्म की शक्ति से हीन हो जाता है । इसलिए हर एक मनुष्य को उचित है कि वह अपने मन में उत्साह धारण करें और बलवान बने ।

Edit with WPS Office

37. मंत्र___   **(यजुर्वेद.1 /5)**

भावार्थ___ मनुष्य का आचरण दो प्रकार का होता है एक सत्य और दूसरा झूठ का, अर्थात जो पुरुष वाणी, मन और शरीर से सत्य का आचरण करते हैं, वे देव कहाते है और जो झूठ का आचरण करने वाले हैं, वे असुर राक्षस आदि नामों के अधिकारी होते हैं। (शतपथ ब्राह्मण)

38. मंत्र___   **(यजुर्वेद. 1 /23)**

भावार्थ___ ईश्वर सब मनुष्यों को आज्ञा और आशीर्वाद देता है कि किसी को भी यज्ञ, सत्याचार और विधा के ग्रहण से चलायमान कभी न होना चाहिए। क्योंकि मनुष्यों को उक्त यज्ञ आदि अच्छे-अच्छे कार्यों से ही उत्तम उत्तम संतान, शारीरिक, वाचिक और मानस विविध प्रकार के निश्चल सुख प्राप्त हो सकते हैं।

39. मंत्र___   **(यजुर्वेद. 2 /28)**

भावार्थ___ मनुष्य को यह निश्चय करना चाहिए कि मैं अब जैसा कर्म करता हूं वैसा ही परमेश्वर की व्यवस्था से फल भोगता हूं और भोगूंगा। सब प्राणी अपने कर्म से विरुद्ध फल को कभी नहीं प्राप्त होते। इससे सुख भोगने के लिए धर्मयुक्त कर्म ही करना चाहिए कि जिससे कभी दुख नहीं हो।

40. मंत्र___   **(यजुर्वेद. 2 /30)**

भावार्थ___ जो दुष्ट मनुष्य अपने मन, वचन और शरीर से झूठे आचरण करते हुए अन्याय से अन्य प्राणियों को पीड़ा देखा अपने सुख के लिए औरों

Edit with WPS Office

के पदार्थों को ग्रहण कर लेते हैं, ईश्वर उनको दुख युक्त करता है और नीच योनियों में जन्म देता है कि वे अपने पापों के फलों को भोग के फिर भी मनुष्य देह के योग्य होते हैं । इससे सब मनुष्यों को योग्य है कि ऐसे दुष्ट मनुष्य व पापों से बचकर सदैव धर्म का ही सेवन किया करें ।

41. मंत्र___ (यजुर्वेद. 3 /30)

भावार्थ___ मनुष्यों को सदा उत्तम उत्तम काम करना और बुरे बुरे काम छोड़ना तथा किसी के साथ द्रोह व दुष्टो का संग भी न करना और धर्म की रक्षा वा परमेश्वर की उपासना, स्तुति और प्रार्थना निरन्तर करनी चाहिए ।

42. मंत्र___ (यजुर्वेद. 3 /48)

भावार्थ___ मनुष्य को उचित है कि पाप की निवृत्ति, धर्म की वृद्धि के लिए परमेश्वर की प्रार्थना निरन्तर करके जो मन, वाणी व शरीर से पाप होते हैं, उनसे दूर रहकर जो कुछ अज्ञान से पाप हुआ हो उसके दुख रूप फल को जानकर फिर दूसरी बार उसको कभी न करें, किंतु सब काल में शुद्ध काल के अनुष्ठान ही की वृद्धि करें ।

43. मंत्र___ (यजुर्वेद. 3 /49)

भावार्थ___ जब मनुष्य लोग सुगन्ध्यादि पदार्थ अग्नि में हवन करते हैं, तब वे ऊपर जाकर वायुवृष्टि जल को शुद्ध करते हुए पृथ्वी को आते हैं, जिससे यव आदि औषधि शुद्ध होकर सुख और पराक्रम के देने वाली होती है । जैसे कोई वैश्य लोग रुपया आदि को दे लेकर अनेक प्रकार के अन्नादि पदार्थों को खरीदते व बेचते हैं, वैसे हम सब लोग भी अग्नि में शुद्ध द्रव्यों को छोड़कर वर्षा वा अनेक सुखों को खरीदते हैं, खरीदकर फिर वृष्टि और सुखों

Edit with WPS Office

के लिए अग्नि में हवन करते हैं ।

44. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 4 /20)**

भावार्थ___ प्रश्न मनुष्य को परस्पर किस प्रकार वर्तना चाहिए ? उत्तर- जैसे धर्मात्मा विद्वान, माता-पिता भाई मित्र आदि सत्य व्यवहार में प्रवृत्त हो, वैसे पुत्रादि और जैसे विद्वान धार्मिक पुत्रादि धर्मयुक्त व्यवहार में वर्तें, वैसे माता-पिता आदि को भी वर्तना चाहिए ।

45. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 4 /21)**

भावार्थ___ मनुष्यों को उचित है कि द्वेषादि त्याग, विधा धन की प्राप्ति और धर्म मार्ग के प्रकाश के लिए ईश्वर की प्रार्थना, धर्म और धार्मिक विद्वानों की सेवा निरन्तर करें ।

46. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 5 /10)**

भावार्थ___ मनुष्यों को उचित है कि जो इस संसार में तीन प्रकार की वाणी होती है, अर्थात एक शिक्षा विधा से संस्कार हुई, दूसरी सत्यभाषण युक्त और तीसरी मधुर गुण सहित उनको स्वीकार करें ।

47. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 5 /40)**

भावार्थ___ जब तक मनुष्य सुख दुख हानि और लाभ की व्यवस्था में परस्पर अपने आत्मा के तुल्य दूसरे को न जानते, तब तक पूर्ण सुख को प्राप्त नहीं होते । इससे मनुष्य लोग श्रेष्ठ व्यवहार ही किया करें ।

Edit with WPS Office

48. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 6 /12)**

भावार्थ___ किसी भी मनुष्य को कुटिलरगामी सर्प आदि दुष्ट जीवों के समान धर्म मार्ग में कुटिल न होना चाहिए । किन्तु सर्वदा सरल भाव से ही रहना चाहिए ।

49. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 6 /36)**

भावार्थ___ माता-पिता को योग्य की अपनी संतानों को विवादित अच्छे-अच्छे गुणों में प्रवृत्त कराकर अच्छे प्रकार उनके शरीर की रक्षा करें, अर्थात जिससे वे निरोग शरीर और उत्साह के साथ गुण सीखें और उन पुत्रों को योग्य है की माता-पिता की सब प्रकार से सेवा करें ।

50. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 7 /48)**

भावार्थ___ इस संसार में कर्म करने वाला जीव और फल देने वाला ईश्वर है । यहां यह जानना चाहिए की कामना के बिना कोई आंख की पलक कभी नहीं हिला सकता । इस कारण जीव कामना करें, परंतु धर्म संबंधी कामना करे, अधर्म की नहीं । यह निश्चय कर जानना चाहिए कि जो इस विषय में मनु जी ने कहा है, वह वेद अनुकूल है । जैसे इस संसार में अति कामना प्रशंसनीय नहीं और कामना के बिना कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता, इसलिए धर्म की कामना करनी, अधर्म की नहीं, क्योंकि वेदों का पढ़ना, पढ़ाना और वेदोक्त धर्म का आचरण करना आदि कामना इच्छा के बिना सिद्ध नहीं हो सकती ।

Edit with WPS Office

51. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 8 /48)**

भावार्थ___ जैसे सूर्य की किरणों को प्राप्त होकर संसार के पदार्थ शुद्ध होते हैं, वैसे ही दुराचारी पुरुष अच्छी शिक्षा और स्त्रियों के सत्य उपदेश से दंड को पाकर पवित्र होते हैं । गृहस्थों को चाहिए की अत्यंत दुख देने और कुल को भ्रष्ट करने वाले वह व्याभिचार कर्म से सदा दूर रहे , क्योंकि इससे शरीर और आत्मा के बल का नाश होने से धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष की सिद्धि नहीं होती ।

52. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 11 /5)**

भावार्थ___ योगाभ्यास के ज्ञान को चाहने वाले मनुष्य को चाहिए कि योग में कुशल विद्वानों का संघ करें । उनके संग से योग की विधि को जानकर ब्रह्म ज्ञान का अभ्यास करें । जैसे विद्वानों का प्रकाशित किया हुआ मार्ग सबको सुख से प्राप्त होता है, वैसे ही योगाभ्यासियों के संग से योग विधि सहज में प्राप्त होती है । कोई भी जीव आत्मा इस संग और ब्रह्म ज्ञान के बिना पवित्र होकर सब सुखों को प्राप्त नहीं हो सकता, इसलिए उस योग विधि के साथ ही सब मनुष्य पर ब्रह्म की उपासना करें ।

53. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 11 /8)**

भावार्थ___ जो मनुष्य ईर्ष्या- द्वेष आदि को छोड़ ईश्वर के समान सब जीवों के साथ मित्रभाव रखते हैं, वे सम्पत को प्राप्त होते हैं ।

54. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 12 /79)**

भावार्थ___ मनुष्य को ऐसा विचारना चाहिए कि हमारे शरीर अनित्य और

Edit with WPS Office

स्थिति चलायमान है । इससे शरीर को रोगों से बचाकर धर्म अर्थ काम और मोक्ष का अनुष्ठान शीघ्र करके अनित्य साधनों से नित्य मोक्ष के सुख को प्राप्त होवे । जैसे औषधि तृण आदि फल, फूल पत्ते, स्कंध और शाखा आदि से शोभित होते हैं , वैसे ही रोग रहित शरीरों से शोभामन हो ।

55. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 17 /31)**

भावार्थ___ जो पुरुष ब्रह्मचर्य आदि व्रत, आचार, विधा, योगाभ्यास , धर्म के अनुष्ठान, सत्संग और पुरुषार्थ से रहित है, वे अज्ञान रूप अंधकार में दबे हुए ब्रह्म को नहीं जान सकते । जो ब्रह्म जीवन से पृथक अंतर्यामी सबका नियन्ता और सर्वत्र व्याप्त है, उसके जानने को जिसकी आत्मा पवित्र है, वे ही योग्य होते हैं, अन्य नहीं ।

56. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 20 /44)**

भावार्थ___ जब तक मनुष्य शुद्धान्त:करण नहीं होवे, तब तक विद्वानों का संग, सत्य शास्त्र और प्राणायाम का अभ्यास किया करें । जिससे शुद्धान्त:करणवान हो ।

57. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 21 /49)**

भावार्थ___ जैसे सूर्य और चंद्रमा का प्रकाश द्वारों से घर को पैठ घर के भीतर प्रकाश करता है, वैसे विद्वानों का उपदेश कानों में प्रविष्ट होकर भीतर मन में प्रकाश करता है । ऐसे जो विधा के साथ अच्छा यत्न करते हैं , वे धनवान होते हैं ।

Edit with WPS Office

58. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 33 /35)**

भावार्थ___ जो पुरुष सूर्य के तुल्य अविधा रूप अंधकार और दुष्टा को निवृत्ति कर सबको वशीभूत करते हैं, वे अभ्युदय को प्राप्त होते हैं ।

59. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 35 /12)**

भावार्थ___ जो राग- द्वेष आदि दोषों को छोड़कर सब मैं अपने आत्मा के तुल्य बर्ताव करते हैं, उन धर्म आत्माओं के लिए सब जल औषधि आदि पदार्थ सूखकारी होते हैं और जो स्वार्थ में प्रति तथा दूसरों ईर्ष्या द्वेष करने वाले, उन अधर्मियों के लिए यह सब युक्त पदार्थ दुखदायी होते हैं । मनुष्यों को चाहिए की धर्मात्माओं के साथ प्रीति और दुष्टो के साथ निरंतर अप्रीति करें । परंतु उन दुष्टों का भी चित् से सदा कल्याण ही चाहे ।

60. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 37 /11)**

भावार्थ___ जो मनुष्य सत्य भाव से आत्मा और अन्त: करण की शुद्धि के लिए और सृष्टि विधा के अर्थ ईश्वर की उपासना करते हैं, उनका वह कृपालु ईश्वर विधा और धर्म के दान से सब दुखों से उद्धार करता है ।

61. मंत्र___ **(यजुर्वेद. 40 /3)**

भावार्थ___ वे हीं मनुष्य असुर, दैत्य, राक्षस तथा पिशाच आदि है, जो आत्मा में और वाणी से बोलते कुछ और है तथा करते कुछ और ही हैं । वह कभी अविधा रूप दुख सागर से पर हो आनंद को नहीं प्राप्त हो सकते और जो आत्मा मन वाणी और कर्म से निष्कपट एक सा आचरण करते हैं, वे ही देव, आर्य, सौभाग्यवान सब जगत को पवित्र करते हुए इस लोक और

Edit with WPS Office

परलोक में अतुल भोगते हैं ।

62. मंत्र___ **(सामवेद. 285)**

भावार्थ___ हे उपासक जनों ! उपासना रसपान करने वाले ओजस्वी परमात्मा के लिए उपासना रस को निष्पन्न करो । इस कारण निरुद्ध करने योग्य चित्रवृत्तियों को अभ्यास वैराग्य के द्वारा निरुद्ध करो । पुनः आत्मसमर्पण करो । इस प्रकार उपासना रस देने वाले उपासक के लिए परमात्मा सुख का वरदान देता रहता है ।

63. मंत्र___ **(सामवेद. 745)**

भावार्थ___ उपासक नम्र स्तुतिवचन या आमंत्रण परमात्मा के प्रति करें तो परमात्मा उसे अवश्य स्वीकार कर दीर्घ जीवन देने वाली रक्षा विधियों के साथ उसके हृदय में प्राप्त होता है । साक्षात होता है तथा उपासक को अमृत भोगों से भी अपकृत् कर देता है ।

64. मंत्र___ **(सामवेद. 812)**

भावार्थ___ आत्म समर्पण कर्ता उपासक के पापों का नाश परमात्मा ऐसे कर देता है, जैसे सेनानायक शत्रु सैनिक बलों को जीत नष्ट कर देता है । पुनः बहुत पालनकर्ता विविध सुखदान उपासक को ऐसे तृप्त करते है, जैसे पर्वत के नदी सोते भूमि को सींचते हुए तृप्त करते हैं ।

65. मंत्र___ **(सामवेद. 855)**

Edit with WPS Office

भावार्थ___ उपासक का रक्षक परमात्मा उपासक के प्रति शत्रु की हिंसावृत्ति, कर्म विनाशक प्रवृत्ति और द्वेषी की द्वेष भावनाओं को दूर कर देता है तथा उपासक के अंदर से किसी के भी प्रति शत्रु जैसी वृत्ति, वैरवृत्ति दास जैसी हानि करने वाली प्रवृति और द्वेष भावनाओं को उठने नहीं देता है ।

66. मंत्र___ **(सामवेद. 1125)**

भावार्थ___ साथ पत्नियों की भांति रक्षणीय तथा हित साधने वाली मन, बुद्धि, चित्त, अंहकार श्रोत, नेत्र और वाणी । परमात्मा का मन से मनन, बुद्धि से विवेचन, चित् से स्मरण, अहंकार से अपनाना, श्रोत से श्रवण, नेत्र से विभूति दर्शन, वाणी से स्तवन हितकर होता है । ऐसे परमात्मा को सम्यक प्राप्त करने वाले या योग युक्त परमात्मा को आमंत्रित करने वाले मुमुक्षु उपासकजन विश्व को पूर्ण करने वाले महान व्यापक अकेले शांत स्वरूप परमात्मा के स्वरूप या प्रापणीय मोक्ष को प्राप्त होते हैं ।

67. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 1/20/1)**

भावार्थ___ हे ईश्वर ! आपस में फुट डालने वाला कोई कार्य हमसे न हो । इस सत्कर्म से हमें सुख प्राप्त हो । पराराज, आपकीर्ति, अपयश, द्वेष और कुटिलता हमारे पास न आवे ।

68. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 1/34/2)**

भावार्थ___ मेरी जिह्वा के अग्र भाग में मधुरता रहे, जिह्वा के मूल में और मध्य में मधुरता रहे । मेरे कर्म में मधुरता रहे और मेरा चित् भी मधुर विचारों का मनन करें ।

Edit with WPS Office

69. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 2/10/1)**

भावार्थ___ आनुवांशिक रोग, आपत्ति, कष्ट, फैलने वाले रोग, द्रोह से होने वाले कष्ट, ईश्वरीय नियम तोड़ने से होने वाले बन्धन आदि सब दुर्गतियों से निर्दोष होकर पवित्र बनने का एकमात्र उपाय ज्ञान ही है, दूसरा उपाय नहीं है।

70. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 2/10/8)**

भावार्थ___ जिससे सूर्य अंधकार को हटाकर स्वयं अपना उदय करता है, इसी रीति से चंद्र आदि अन्य देव भी घने अंधकार की पकड़ को दूर करते हुए स्वयं अपने उदय से प्रकाशित होते हैं। इसी तरह से स्वयं अपने पुरुषार्थ से अपने पास दूर करके ज्ञान की सहायता से अपना उद्धार करें, क्योंकि यही एक उन्नति का सबसे मुख्य साधन है।

71. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 3/24/5)**

भावार्थ___ हे मनुष्य ! तू सो हाथों वाला होकर धन प्राप्त कर और हजारों हाथों वाला बनकर उसका दान कर। इस प्रकार अपने कर्तव्य कर्म की उन्नति कर।

72. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 3/30/5)**

भावार्थ___ वृद्धो का सम्मान करो, चित् में शुभ संकल्प धारण करो, उत्तम सिद्धि तक प्रयत्न करो, आगे बढ़कर अपने सिर पर कार्य का भार लो और

Edit with WPS Office

आपस में विद्वेष न बढ़ाओ । परस्पर प्रेमपूर्वक भाषण करो, मिल जुलकर पुरुषार्थ करने वाले बनो । इसलिए तुम्हें उत्तम मन से मुक्त बनाया है ।

73. मंत्र___ (अथर्ववेद. 4/31/7)

भावार्थ___ उत्साह और वरिष्ठता ये दो गुण साथ-साथ रहते हैं और ये सब धन प्राप्त कराते हैं । स्वयं उत्पन्न किया हुआ और स्वयं संग्रह किया हुआ धन इनसे प्राप्त होता है । उत्साही पुरुष के शत्रु मन में डरते हुए परास्त होकर भाग जाते हैं ।

74. मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/7/8)

भावार्थ___ कंजूसी मनुष्य को नंगा बनाती है और आलसी बनाती है । मनुष्य के चित् और संकल्प को मलीन करती है ।

75. मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/31/11)

भावार्थ___ जो दूसरों की हिंसा करने का यत्न करता है, वह दूसरे की हिंसा करने से पूर्व अपनी ही हिंसा करता है । जो दूसरे की हिंसा करना चाहता है वह अभागी है , उससे ईश्वर भक्त होने से जो भाग्यवान होते हैं, उनका कल्याण ही होता है ।

76. मंत्र___ (अथर्ववेद. 6/64/3)

भावार्थ___ तुम सब का संकल्प एक जैसा हो, तुम्हारे ह्रदय समान हो, तुम्हारा मान समान हो, जिससे तुम सब मिल- जुलकर उत्तम रीति से रहोगे ।

Edit with WPS Office

77. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 7/95/1)**

भावार्थ___ काम और क्रोध दो गीधं के समान दो भाव मनुष्य में रहते हैं । ये पीड़ा बढ़ाने वाले हैं । यह दोनों शोक बढ़ाने वाले और सुखाने वाले हैं । ये हृदय को भी सुखाते हैं ।

78. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 8/1/4)**

भावार्थ___ हे मनुष्य ! तू ऊपर चढ़, नीचे मत गिर । मृत्यु के पाशों से अपने आप को छुड़ा । दीर्घायु प्राप्त कर और इस मनुष्य लोक से तथा सूर्य के प्रकाश से अपने आप को दूर न कर ।

79. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 14/2//74)**

भावार्थ___ जैसे डोरी में अनेक धागे मिलकर रहते हैं, वैसे ही गृहस्थाश्रम मिलकर रहने का आश्रम है । गृहस्थाश्रम में इकट्ठे हुए सब लोग स्त्री को धन और सुसन्तान प्राप्त होने का शुभ आशीर्वाद देकर उसको शुभ मार्ग से चलावें । इस तरह यह स्त्री तेजस्विनी, यज्ञस्विनी, तथा सुसन्तानयुक्त होकर विजयी होवे ।

80. मंत्र___ **(अथर्ववेद. 18/4/10)**

भावार्थ___ यज्ञकर्ता को अग्नियां घोड़ो की तरह अपनी पीठ पर बैठकर स्वर्ग में ले जाती है जहां की स्वर्ग में वे देवों के साथ मिलकर आनंद भोगते हैं । अतः स्वर्ग प्राप्ति के लिए यज्ञ करना परमावश्यक है ।

Edit with WPS Office

81. मंत्र___ (अथर्ववेद. 18/4/12)

भावार्थ___ यज्ञादि कार्यों में प्रज्ज्वलित अग्नियां यजमान को उत्साहित करके पूर्ण मनोरथ वाला बनाती हैं । वह अपने कार्य में सफल बनता है , क्योंकि अग्नियां उसे कर्तव्य पथ से गिरने से बचा लेती है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 38. पृष्ठ अड़तीसवां

- **[वेद के चुने हुए मंत्र, वेद रत्न]**

- **।। ईश्वर ।।**

स एष एक एकवृदेक एवं । (अथर्ववेद. 13/4/20)
वह एक ही है अद्वितीय अकेला विधमान है ।

- **।। ईश्वर एक नाम अनेक ।।**

एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति । (ऋग्वेद. 1/164/46)
एक ही है सत्यस्वरूप परमात्मा जिसको विद्वान अनेक नामों से पुकारते हैं ।

Edit with WPS Office

- ।। निराकार ईश्वर ।।

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति । (यजुर्वेद. 32/3)
उसकी (परमात्मा की) कोई प्रतिमा नहीं है । वह निराकार है ।

- 4. ।। निराकार परमात्मा ।।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायम । (यजुर्वेद 40/8)
वह है सर्वव्यापक, तेजस्वी प्रकाशमान शरीर रहित निराकार भगवान।

- 5. ।। सर्वव्यापक ओउम् ।।

ओउम् खं ब्रहम। (यजुर्वेद. 40/17)
ओम निराकार आकाश के समान संपूर्ण ब्रह्मांड में व्याप्त हो रहा है ।

- 6. ।। अजन्मा ।।

अजऽएकपात् । (यजुर्वेद. 34/53)
वह अजन्मा, अविनाशी अविभाज्य है ।

- 7. ।। सर्वव्यापक परमेश्वर ।।

ईशा वास्यमिद सर्व । (यजुर्वेद. 40/1)
ईश्वर समस्त प्राणियों में व्याप्त हो रहा है ।

Edit with WPS Office

• 8. ।। ईश्वर सब में व्याप्त है ।।

सऽओत: प्रोतश्च विभु : प्रजासु । (यजुर्वेद. 32/8)
ईश्वर सब प्रजाओ में ओतप्रोत विधमान है ।

• 9. ।। गर्भस्त जीवात्मा ।।

प्रजापतिश्चरति गर्भऽअन्त : (यजुर्वेद. 31/19)
सर्वरक्षक सर्वेश्वर गर्भस्त जीवात्मा के भीतर और सब प्राणियों के हृदय में विचर रहा है ।

• 10. ।। एक ईश्वर की उपासना ।।

मा चिदन्यदि शंसत सखाय : (ऋग्वेद. 8/1/1 , सामवेद. 1360)
हे मित्रों ! एक ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य की उपासना नहीं करो ।

• 11. ।। एक परमेश्वर की उपासना ।।

एक एवं नमस्यों विक्ष्वीडय । (अथर्ववेद. 2/2/1)
ब्रह्मांड को नमस्कार योग्य स्वामी एक ही है, उसकी ही स्तुति प्रार्थना करनी चाहिए ।

• 12. ।। अद्वितीय सम्राट ।।

Edit with WPS Office

एको विश्वस्य भुवनश्य राजा । (ऋग्वेद. 6/36/4)
वह संपूर्ण ब्रह्मांड का अकेला ही सम्राट है ।

- **13. ।। परमात्मा मित्र है ।।**

स न इन्द्र शिव सखा । (ऋग्वेद. 8/93/3)
परमात्मा हमारा कल्याणकारी मित्र है ।

- **14. ।। ईश्वर का भक्ति अजेय रहता है ।।**

न यस्य हन्यते सखा न जीयते कदा चन् । (ऋग्वेद. 10/152/1)
ईश्वर का भक्त कदाचित नहीं मारा जाता और ना ही पराजित होता ।

- **15. ।। ईश्वर हमारा पिता है ।।**

तवं हि न: पिता वसो । (ऋग्वेद. 8/98/11 , सामवेद. 1170 , अथर्ववेद. 20/108/2)
हे सर्वव्यापक ईश्वर तू ही हमारा पिता है ।

- **16. ।। ईश्वर हमारी माता है ।।**

त्वं माता शतक्रतो बभूविथ । (प्रमाण 15 वे मंत्र में)
हे अनन्त कर्म करने वाले ईश्वर ! तू ही हमारा दिव्य माता है ।

Edit with WPS Office

- 17. ।। ईश्वर हमारे समीप ही है ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 10/8/32)
ईश्वर हमारे इतने समीप है कि वह पृथक नहीं हो सकता और न हीं वह दिख सकता ।

- 18. ।। ईश्वर तुम्हारे हृदय में है ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/82/7)
ईश्वर तुम्हारे हृदय में विद्यमान है ।

- 19. ।। परमात्मा पूर्ण है ।।

मंत्र ___ (अथर्ववेद. 10/8/29)
पूर्ण परमात्मा की पूर्ण शक्ति से उत्पन्न हुआ है पूर्ण ब्रह्मांड ।

20. ।। ईश्वर सबका शरणस्थान है ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 32/8)
ईश्वर सम्पूर्ण विश्व का है शरणस्थान , जैसे घोसले में करते हैं पक्षी विश्राम । इस प्रकार पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ब्रह्मांड घोसला है, जिसमें हमको ईश्वर शरण स्थान दे रहे हैं ।

- 21. ।। ईश्वर सबको देख रहा है ।।

Edit with WPS Office

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/50/6)
हे सर्वश्रेष्ठ एवं वरणीय परमेश्वर! तू सबको देख रहा है ।

- **22. ।। सब का उद्गम एक ।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 2/23/6)
हे ईश्वर ! तू समस्त लोकों , ऐश्वर्या तथा ज्ञानों का उद्गम है ।

- **23. ।। मृत्यु पर विजय कैसे ? ।।**

मंत्र___ (यजुर्वेद. 31/18)
जो परमेश्वर के अस्तित्व का प्रत्यक्ष अनुभव करता है वह ही मृत्यु पर विजय प्राप्त करता है ।

- **24. ।। अमर आत्मा ।।**

मंत्र___ (यजुर्वेद 40/ 15)
आत्मा अमर है परंतु शरीर तो अन्त में भस्म हो जाता है ।

- **25. ।। ओम का स्मरण ।।**

मंत्र___ (यजुर्वेद. 40/15)
ओउम् का स्मरण और ध्यान कर ।

Edit with WPS Office

• 26. ।। ईश्वर का ध्यान ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 40/15)

हे जीव ! (मृत्यु समय) ईश्वर का कर ध्यान अपनी त्रुटियां एवं किए हुए कर्मों का स्मरण कर , कर्मवान !

• 27. ।। वेदों का स्वाध्याय ।।

मंत्र___ (सामवेद. 325)

परमात्मा के वेद रूपी काव्य को देखो अर्थात वेद का स्वाध्याय करो ।

• 28. ।। वेदों के अनुसार आचरण ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/134/7)

हम वेद मंत्रों के अनुसार आचरण करें ।

• 29. ।। श्रेष्ठ बनाओ ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/63/5)

सम्पूर्ण संसार को आर्य (श्रेष्ठ) बनाओ ।

• 30. ।। धर्म ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 12/1/17)

Edit with WPS Office

पृथ्वी धर्म के सहारे टिकी है ।

- **31.** **।। सत्य ।।**

मंत्र___ (अथर्ववेद. 14/1/1)
भूमि सत्य से थमी हुई है ।

- **32.** **।। सत्य का मार्ग ।।**

मंत्र___ (यजुर्वेद. 7/45)
सत्य के मार्ग पर चलो ।

- **33.** **।। सत्य का मार्ग ।।**

मंत्र___ (अथर्ववेद. 18/4/3)
सत्य का मार्ग अपनालो, जिस मार्ग से सदाचारी विद्वान लोग चलते हैं ।

- **34.** **।। सत्यवादी की विजय ।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/73/8)
सत्य का संरक्षक कर्मयोगी किसी से दबाया नहीं जा सकता ।

- **35.** **।। अच्छा सुनो ।।**

Edit with WPS Office

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/89/8)
हे विद्वानों! हम कानों से अच्छे वचन सुनें कल्याणकारी ।

• 36. ।। अच्छा देखो ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/89/8)
हे विद्वानों! हम आंखों से अच्छा दृश्य देखे मंगलकारी ।

• 37. ।। श्रेष्ठ विचार ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/89/9)
हमें सब और से श्रेष्ठ शुभ विचार प्राप्त हो ।

• 38. ।। कुकर्म ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 10/1/5)
बुरां करने वाले का हमेशा बुरा होता है ।

• 39. ।। कर्म का फल ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 12/3/48)
मनुष्य वही खाता है जो वह पकाता है अर्थात वह अपने किए का फल भोगता है ।

Edit with WPS Office

• 40. || निन्दा ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 5/2/6)
निन्दक स्वयं निंदनीय हो जाते हैं ।

• 41. || दुष्कर्मी ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 7/104/7)
दुष्कर्मी को सुख नहीं मिलता ।

• 42. || शुभ संकल्प ||

मंत्र___ (यजुर्वेद. 34/1)
मेरा मन शुभ संकल्पों वाला हो ।

• 43. || श्रेष्ठ विचार ||

मंत्र___ (यजुर्वेद. 30/3)
है परमात्मा ! हमें श्रेष्ठ विचार प्रदान कीजिए ।

• 44. || श्रेष्ठ कर्म ||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 6/23/3)
सर्व उत्पादक परमेश्वर के शासन में सब मनुष्य श्रेष्ठ कर्म करते रहे ।

Edit with WPS Office

• 45. || प्रार्थना ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 5/82/5 , यजुर्वेद. 30/3)
हे ईश्वर हमारी समस्त निकृष्ट प्रवृत्तियां को दूर कीजिए ।

• 46. || उत्तम मार्ग ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/20/1)
हे स्वप्रकाशस्वरूप परमेश्वर ! हमारे मन को उत्तम मार्ग पर ले चलिए ।

• 47. || श्रेष्ठ जीवन ||

मंत्र___ (सामवेद. 1047)
हे परमात्मा हमें श्रेष्ठ जीवन वाला बनाएं ।

• 48. || वैदिक मार्ग ||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 13/1/59)
वैदिक मार्ग से हम कभी विचलित न हो ।

• 49. || प्रेम||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/30/9)
एक दूसरे से ऐसा प्रेम करो जैसे गौ अपने नवजात बछड़े को प्यार करती है

Edit with WPS Office

।

- **50.** **।। द्वेष।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 6/10/7)
द्वेष को त्याग कर ।

- **51.** **।। जियो, जीने दो ।।**

मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/69/1)
तुम भी जियो, मुझे भी जीने दो , हम पूर्ण आयु (सौ वर्ष) तक जीवित रहे ।

52. **।। अहिंसा ।।**

मंत्र ___ (अथर्ववेद. 10/1/29)
निर्दोष की हत्या करना पाप है ।

- **53.** **।। मित्र की दृष्टि ।।**

मंत्र___ (यजुर्वेद. 36/18)
हम सब एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें ।

Edit with WPS Office

• 54. || मित्रता ||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/15/6)
सब दिशाओं के लोग मेरे मित्र बने रहे ।

• 55. || मधुर वाणी ||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 1/34/2)
मेरी जिह्वा के अग्रभाग तथा मूल में मधुरता हो ।

• 56. || राष्ट्र ||

मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/30/3)
हे मनुष्य तू राष्ट्रों का रक्षक है ।

• 57. || राष्ट्र ||

मंत्र___ (यजुर्वेद. 12/11 , ऋग्वेद. 10/173/1 , अथर्ववेद. 6/87/1)
सावधान ! तेरा राष्ट्र कभी अवनत न हो ।

Edit with WPS Office

• 58. **|| मातृभूमि ||**

मंत्र___ (अथर्ववेद. 12/1/12)

भूमि मेरी माता है, मैं भूमि का पुत्र हूं ।

• 59. **|| मातृभूमि ||**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/18/10)

तू मातृभूमि की सेवा कर ।

• 60. **|| मातृभूमि के लिए बलिदान ||**

मंत्र___ (अथर्ववेद. 12/1/62)

हे मातृभूमि ! हम तेरे लिए अपना जीवन करे बलिदान ।

• 61. **|| समान उद्देश्य ||**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/191/2)

हे मनुष्यों ! तुम संयुक्त होकर पग बढ़ाते चलो तुम परस्पर मिलकर संवाद करते रहो ।

Edit with WPS Office

- **62. ।। मनो की एकता ।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/191/2)

हे मनुष्यों ! तुम्हारे मन एक समान होकर ज्ञान प्राप्त करें ।

- **63. ।। हृदयो की एकता ।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/191/4)

हे मनुष्यों ! तुम सबके हृदय एक समान हो ।

- **64. 65 ।। हृदयों की एकता ।।**

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/191/4)

हे मनुष्यों ! तुम सबके संकल्प एक समान हो । तुम्हारा मन एक समान हो ।

66. ।। समान भ्रातृत्व ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/30/6)

तुम्हारी बलशाला हो सामान तुम्हारे अन्न का भाग हो एक समान ।

Edit with WPS Office

67. ॥ समान चिन्तन ॥

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/191/3)
तुम सब का चिन्तन मनन हो एक समान, तुम्हारी समिति और सभा हो एक समान ।

68. ॥ विचार और व्यवहार में समानता ॥

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/8/5)
तुम्हारे मन कर्म संकल्प हो एक समान ।

70. ॥ प्रकाश ॥

मंत्र___ (अथर्ववेद. 8/1/8)
अंधकार से निकल कर प्रकाश में आओ ।

71. ॥ ऊंचा उठो ॥

मंत्र___ (अथर्ववेद. 8/1/6)
हे मनुष्य ! तू ऊंचा होने की चेष्टा कर, ऊंचा उठ ।

72. ॥ उन्नति ॥

Edit with WPS Office

मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/67/4)
100 वर्षों तक हम श्रेष्ठता की ओर उत्थान करते रहे ।

73. ।। धन और ऐश्वर्या ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/121/10)
हे ईश्वर ! हम धन और ऐश्वर्या के स्वामी हो ।

74. ।। ऊपर उठो ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/30/7)
ऊपर उठना और आगे बढ़ना प्रत्येक जीवित मनुष्य का कर्तव्य लक्ष्य है ।

75. ।। ऊंचा ध्वज ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 3/8/8)
राष्ट्रीय यज्ञ के ध्वज को ऊंचा रखो ।

76. ।। उन्नति करो ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 8/1/4)

Edit with WPS Office

हे मनुष्य उन्नति करता जा अवनत न हो ।

77. ।। मुर्दा दिल नहीं ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 8/1/9)
हे पुरुष ! इस संसार में मुर्दा दिल होकर मत रह ।

78. ।। अज्ञान अंधकार ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/86/10)
बुद्धि में स्थित अज्ञान अंधकार को नष्ट करो ।

79. ।। अजेय ।।

मंत्र___ (क
मैं शक्तिमान अजेय हूं किसी से पराजित नहीं हो सकता ।

80. ।। निडरता ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 19/15/6)
हम मित्र चाहे शत्रु से निडर और निर्भीक रहे ।

Edit with WPS Office

81. || वीरता ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/27/1)
मैं सत्य के विरोधी और कुटिलगामी को मारने वाला हूं ।

82. || दृढ़ संकल्प ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/27/5)
जब मैं दृढसंकल्प कर लेता हूं, तब पर्वत भी मुझे नहीं रोक सकते ।

83. 84 || शत्रुहन्ता ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/166/2)
मैं शत्रुओं का नाश करने वाला होऊं । शत्रु मेरे पैरों के नीचे हैं ।

85. || वीर पुरुष ||

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/18/4)
वीर पुरुष कभी हिसितं नहीं होता है ।

Edit with WPS Office

86, 87. ।। आर्य माता घोषणा करती है ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/159/3)

मेरे पुत्र हैं शूरवीर, शत्रुओं का नाश करने वाले , मैं हूं सम्यक विजेत्री, विजयशालिनी ।

88. ।। आर्य विरागना कहती है ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/159/2)

मैं गृहस्थ में शिरोमणि विदुषी हूं , मैं समाज की ध्वजा मस्तिष्क हूं ।

89. ।। जागो और उठो ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 30/17)

जगन जीवन है, सोनां मृत्यु है ।

90. ।। परिश्रम ।।

मंत्र___

कर्म है मेरे दाहिने हाथ में , विजय है मेरे बायें हाथ में ।

91. ।। रचनात्मक कार्य कर ।।

Edit with WPS Office

मंत्र___ (अथर्ववेद. 5/16/1)
यदि ईश्वर के ज्ञान द्वारा तू बना है सामर्थ्यवान , तो कुछ रचनात्मक कार्य कर , अन्यथा तू है निकृष्ट इंसान ।

92. ।। परिश्रम और सत्य ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद.12/5/1)
यह सृष्टि परिश्रम और तपस्या से उत्पन्न की गई , ज्ञान से युक्त , सत्य के आधार पर ठहरी हुई है ।

93. ।। परिश्रम ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 8/2/18 , अथर्ववेद. 20/18/3)
देवता सुकर्मशील परिश्रमी व्यक्ति को चाहते हैं , आलसी सोए पड़े को नहीं ।

94. ।। पुरुषार्थहीन मनुष्य ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/22/8)
कर्म न करने वाला पुरुषार्थहीन मनुष्य ही दस्यु (असभ्य ,चोर ,डाकू ,लुटेरा) होता है ।

Edit with WPS Office

95. ।। हलवाहों को नमस्कार ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 2/8/4)

हम खेत जोतने वाले हलवाहों (किसान)को नमस्कार करते हैं और उनके हल और जुए की उपयोगिता की प्रशंसा करते हैं ।

96. ।। स्वराज्य ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 5/66/6)

हम स्वराज्य के लिए प्रयत्न करें ।

97. ।। स्वाधीनता ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 36/24)

हम किसी के अधीन न होते हुए 100 वर्ष तक जीवित रहे ।

98. ।। विद्वान नेता ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 9/87/3)

मेधावी विद्वान पुरुष ही जनता का नेता हो ।

99. ।। गिरे हुए को उठाओ ।।

Edit with WPS Office

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/137/1)
हे विद्वानों ! गिरे हुए को पुनः ऊपर उठाओ ।

100. ।। उत्तम हाथ ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 6/18/14)
हाथ वही उत्तम है जो दुःखी और पीड़ितों की सहायता करें ।

101. ।। धन का वितरण ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/24/5)
सौ हाथों से धन को इकट्ठा कर और हजारों हाथों से उसको बांट दें ।

102. ।। सच्चा मित्र ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/117/4)
जो दरिद्र मित्र की सहायता नहीं करता, वह मित्र नहीं ।

103. ।। निर्मल मित्रता ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 6/48/18)

Edit with WPS Office

हे मनुष्य ! तेरी मित्रता छल कपट रहित हो ।

104. ।। अपसंचयन पाप है ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 10/117/6)
अकेला खाने वाला अत्यंत पापी होता है ।

105. ।। लोभ ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 40/1)
अन्य किसी के धन की लालसा नहीं करनी चाहिए ।

106. ।। ज्ञान ।।

मंत्र___ (ऋग्वेद. 1/3/10)
विधा, ज्ञान हमें पवित्र करती है ।

107. ।। विधा द्वारा मोक्ष ।।

मंत्र___ (यजुर्वेद. 40/14)
विधा से मोक्ष प्राप्त होता है ।

Edit with WPS Office

108. ॥ यज्ञ ॥

मंत्र___ (यजुर्वेद. 18/29)
अपने जीवन को यज्ञ द्वारा सफल बनाओ ।

109. ॥ यज्ञ ॥

मंत्र___ (यजुर्वेद. 4/13)
तुम्हें यह शरीर यज्ञ के लिए मिला है ।

110. ॥ यज्ञ ॥

मंत्र___ (अथर्ववेद. 18/4/2)
यज्ञ करने वाले उत्तम गति (मोक्ष) को प्राप्त होते हैं ।

111. ॥ ब्रह्मचर्य ॥

मंत्र___ (अथर्ववेद. 11/5/19)
ज्ञानी ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य और तपस्या द्वारा मृत्यु पर विजय प्राप्त करते हैं ।

Edit with WPS Office

112. ।। आज्ञाकारी पुत्र ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/30/2)

पुत्र पिता के आदर्शों के अनुकूल चले ।

113. ।। मधुर पत्नी ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/30/2)

पत्नी पति से मधुर वाणी बोले ।

114. ।। भ्रातृ एकता ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 3/30/2)

भ्राता भ्राता से द्वेष न करें ।

115. ।। माता-पिता का कल्याण ।।

मंत्र___ (अथर्ववेद. 1/31/4)

हमारी माता, हमारा पिता, सदा सुखी हो ,भगवान ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

* # 39. पृष्ठ उन्नतालीसवां

* **{ चलते रहो चलते रहो , आगे बढ़ते रहो }**

1.
[प्रमाण___ ऐतरेय ब्राह्मण ___ 7/15/1]

इंद्र अपने पुत्र रोहित से कहते हैं–
हम सुनते आ रहे हैं की जो परिश्रम करके थक कर चूर नहीं हो जाता , तब तक व्यक्ति को कभी धन और यश प्राप्त नहीं होता , परमादी व्यक्ति को पाप मार डालता है , इंद्र उसी के सहायक होते हैं जो जीवन में कर्म करता है , इसलिए तुम चलते रहो चलते रहो ।

2.
[प्रमाण___ ऐतरेय ब्राह्मण ___ 7/15/2]

पुरुषार्थ करने वाले की जंघाएं पुष्ट होती है । उसका आत्मा सामर्थ्ययुक्त फल पाने वाला होता है । हरीश परिश्रम करने वालों की मार्ग की सभी बाधाएं दूर हो जाती है , इसलिए परिश्रम करो परिश्रम करो ।

3.
[प्रमाण___ ऐतरेय ब्राह्मण ___ 7/15/3]

भाग्य क्या है ? जो बैठा रहता है , उसका भाग्य भी बैठ जाता है , जो उठकर

Edit with WPS Office

खड़ा होता है , उसका भाग्य भी उठ खड़ा होता है । जो सोया रहता है उसका भाग्य भी सो जाता है , जो चलता रहता है , उसका भाग्य भी आगे बढ़ जाता है । इसलिए चलते रहो चलते रहो ।

4.
[प्रमाण___ ऐतरेय ब्राह्मण ___ 7/15/4]

जो व्यक्ति सोया रहता है उसका नाम कलयुग है , जो निंद्रा को छोड़कर जग जाता है उसको द्वापर कहते हैं , जो उठ खड़ा होना ही त्रेता है , और कर्म करना ही आगे बढ़ना सतयुग है । इसलिए आगे बढ़ते रहो बढ़ते रहो ।

5.
[प्रमाण___ ऐतरेय ब्राह्मण ___ 7/15/5]

चलने वाला ही मधु पाता है , चलने वाला ही मीठा गूलर का फल चखता है । सूर्य को देखो , कभी रुकता नहीं है , इसलिए चलते रहो - चलते रहो ।

6.
[प्रमाण___ शतपथ ब्राह्मण___ 2/1/3/9]

कल करूंगा कल करूंगा जरूर कसम से कल करूंगा, ऐसी बात नहीं सोचनी चाहिए ? मनुष्य के कल को कौन जानता है , निठल्ले आलसी बैठे मनुष्य का भाग्य भी बैठा रहता है , खड़े मनुष्य का भाग्य भी खड़ा हो जाता है । सोने वाले का भाग्य भी सोता है और चलने वाले का भाग्य भी चल पड़ता है । इसलिए परिश्रम करते हुए चलते रहो चलते रहो । आगे बढ़ो आर्य (श्रेष्ठ विद्वान) बनो । गुण कर्म स्वभाव से श्रेष्ठ बनो । सदा सत्य का पालन करो , झूठ मत बोलो !

Edit with WPS Office

7.
[प्रमाण___ विदुर नीति, दूसरा अध्याय___श्लोक 66]

भावार्थ___ हे राजन् ! जैसे सूक्ष्म छेद वाले जाल में फंसी हुई दो बड़ी बड़ी मछलियां मिलकर उस जाल को काट डालती हैं , वैसे ही काम और क्रोध– ये दोनों मिलकर बुद्धि- विवेक को लुप्त कर देते हैं ।

8.
[प्रमाण___विदुर नीति , दूसरा अध्याय___ श्लोक 67]

भावार्थ___जो मनुष्य इस संसार में धर्म और अर्थ का भलीभांति विचार करके विजय -साधनों का संग्रह करता है , वह साधन संपन्न व्यक्ति सदा सुख प्राप्त करता है ।

9.
[प्रमाण___ विदुर नीति , दूसरा अध्याय___ श्लोक 70]

भावार्थ___ पापाचारी दुष्टों का त्याग न करके उनके साथ मेल- जोल रखने से निष्पाप धर्मात्माओं को भी उन पापियों के समान दण्ड प्राप्त होता है , जैसे सुखी लकड़ियों में मिल जाने से गीली लकड़ी भी जल जाती है । अतः दुष्टों के साथ कभी भी मेल- मिलाप नहीं करना चाहिए ।

10.
[प्रमाण___ विदुर नीति , दूसरा अध्याय___ श्लोक 79]

Edit with WPS Office

भावार्थ___ कर्णी ,नालीक ,नाराज नामक बाणों को शरीर से निकाला जा सकता है , परंतु कटु-वाणीरूपी कांटा नहीं निकाला जा सकता , क्योंकि वह हृदय के भीतर धंस जाता है ।

11.
[प्रमाण___ विदुर नीति , दूसरा अध्याय___ श्लोक 80]

भावार्थ___ कटु वचनरूपी बाण मुख से निकलकर दूसरों के मर्मस्थानों को छेंद डालते हैं , जिनसे घायल हुआ मनुष्य रात- दिन दुखी रहता है , अतः विद्वान दूसरों पर उन कटु वाग्बाणों को न छोड़े ।

विशेष___ यहां विदूर यह संकेत कर रहे हैं कि तुम्हारे पुत्रों ने सभा में द्रोपती को जो दुर्वाचन कहे थे , वे द्रोपती और पांडवों के हृदय में बैठ गए हैं । अतः जिसका परिणाम अब बुरा होगा ।

12.
[प्रमाण___ विदुर नीति, तीसरा अध्याय___ श्लोक 48]

भावार्थ___ छेदने और तपाने से सुवर्ण की पहचान होती है , सदाचार से भले मनुष्य की , बर्ताव से साधु सज्जन की , भय से शूरवीर की , अर्थ-संकट में धीर की तथा आपत्ति में मित्र और शत्रु की पहचान होती है ।

13.
[प्रमाण___ विदुर नीति, तीसरा अध्याय___ श्लोक 49]

भावार्थ___ बुढ़ापा– रूप सौंदर्य को नष्ट कर देता है । आशा– धैर्य को समाप्त कर देती है । मृत्यु– प्राणों को हर लेती है । असूया-डाह– निंदा

Edit with WPS Office

धर्माचरण पर पानी फेर देती है । क्रोध– शोभा को नष्ट कर देता है । दुष्टों की संगति उत्तम स्वभाव को नष्ट कर देती है । विषय- वासना की आंधी, लज्जा के दीपक को बुझा देती है और अभिमान सारे गुणों पर चौका लगा देता है ।

14.
[प्रमाण___ विदुर नीति ,चतुर्थ अध्याय___ श्लोक 38]

भावार्थ___ जो व्यक्ति किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखता हुआ भी मित्र भाव से व्यवहार करता है, वही वास्तव में बन्धु होता है, वही मित्र होता है, वही आश्रय और वही सहारा होता है ।

15.
[प्रमाण___ विदुर नीति, सप्तम अध्याय___ श्लोक 65]

भावार्थ___ जो मनुष्य अधर्म से कमायें हुए धन से यज्ञ , दान आदि कर्मों को करता है , (कि वो सोचता है) इनसे परलोक में सुख मिलेगा , वह मरने के पश्चात उस यज्ञ ,दान , आदि के शुभ फल को प्राप्त नहीं करता , क्योंकि वह धन अनुचित उपायों से कमाया गया था । अतः उसको इसका कोई फल नहीं मिलेगा !

16.
[प्रमाण___विदुर नीति , सप्तम अध्याय ___ श्लोक 38]

शास्त्रों का अध्ययन और वृद्धो की सेवा किए बिना बृहस्पति के समान विद्वानों को भी धर्म और अर्थ के विषय में ज्ञान नहीं हो सकता !

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 40. पृष्ठ चालीसवां

- ## { तैंतीस कोटि (प्रकार) के देवता का वर्णन }

हमारे धर्म ग्रंथो में 33 प्रकार के देवता बताए हैं । कौन-कौन से देवता का क्या-क्या कार्य है ? आदि हम सब लिखेंगे __ इन्हीं देवताओं के कारण हमारा शरीर संचालित होता है, हमारा शरीर ही नहीं अपितु ब्रह्मांड में प्रत्येक जीव इन्हीं 33 प्रकार के देवताओं के कारण संचालित है । शरीर में प्रत्येक देवता का अलग-अलग कार्य है , सभी देवता अपने अपने कार्य को संचालित करते हैं । आइए हम तैंतीस प्रकार के देवताओं का वर्णन करते हैं___

- ➤ और इन 33 प्रकार के देवताओं का संचालन परब्रह्म (परमात्मा) जिसका नाम ओउम् है, उसके द्वारा संचालित है ।

[ईश्वर एक है]

ऋग्वेद.
10/81/3।
10/164/46
6/34/4

यजुर्वेद.
13/4
17/19
40/4

Edit with WPS Office

23/1
23/63
16/41
5/21
13/46
40/1
36/3
30/2
25/10

सामवेद.
389
1710

अथर्ववेद.
13/4/20
2/2/1
9/10/28
13/4/16-18

इन सभी प्रमाणों में सभी ब्रह्मांडों अनेको पृथ्वी आदि लोकों ग्रह नक्षत्र का मालिक ईश्वर एक है । उस परमेश्वर परमात्मा का ना आदि है ना अंत है, वह अजन्मा है, सर्वव्यापक है, आकाश के समान निराकार , नस नाड़ियों से रहित , जिसे आंखों से देखा नहीं जा सकता (परमात्मा आंखों का विषय नहीं है , इंद्रियों का विषय नहीं है) परमात्मा सूक्ष्म से भी अतिसूक्ष्म है , कानों से सुना नहीं जा सकता, वह ईश्वर अदृश्य है , जो कण-कण में व्याप्त है , जो सबके हृदय में विराजमान है , उसकी कोई मूर्ति नहीं है , वह ईश्वर दूसरा, तीसरा ,चौथा, पांचवा ,छठा, सातवां, आठवां, नवा, दसवां, नहीं है वह एक है । वही परमेश्वर ॐ है । जिसका निज नाम ओउम् है । वही ईश्वर रचना करने से ब्रह्मा, पालन करने से विष्णु , संहार करने से शिव कहलाता है । उसी

Edit with WPS Office

ईश्वर की शक्ति से यह ब्रह्मांड थमा है । उसी निराकार की शक्ति से 33 देवताओं का संचालन होता है और 33 देवताओं की संचालन की शक्ति से हम मनुष्य के शरीर का संचालन होता है ।
33 प्रकार के देवताओं का प्रमाण___
ऋग्वेद. 10/55/3
भावार्थ___ परमात्मा ने अपने शरीर (तेज) से धुलोक भूलोक और अंतरिक्ष को पूर्ण किया । इंद्र समय-समय पर पांच जातियों (देव, मनुष्य, पितर, असुर, और राक्षस) और साथ तत्वों (सात मरुदगण सात सूर्य-किरण ,सात लोकं आदि) को अपने प्रदीप्त नानाविष कार्यों के द्वारा , धारण करते हो । वह सब कार्य एक ही भाव से चलते हैं । इस संबंध में मेरे 33 देवता ,(आठ वसु , 11 रुद्र , 12 आदित्य , प्रजापति ,वषट्कार और विराट) इंद्र की सहायता करते हैं ।

दूसरा प्रमाण यजुर्वेद से ___

यजुर्वेद. 20/11
भावार्थ___ जो पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ,सूर्य चंद्र ,नक्षत्र ये आठ और प्राण, अपान, व्यान ,उदान , समान ,नाग , कूर्म, कृकल , देवदत्त ,धनंजय तथा ग्यारहवां जीवात्मा , बारह महीने , बिजली और यज्ञ यह 33 देवता है ।

- नीचे दिए गए सभी प्रमाणों मैं तैंतीस प्रकार के देवताओं का वर्णन है __ तथा उन सबके कार्य बताए गए हैं । पीडीएफ ज्यादा बड़ी होने की वजह से हम उन सभी के भावार्थ नहीं लिख सकते ,प्रमाण दिखा सकते हैं ___

ऋग्वेद. 3/6/9 , 8/39/9 , 9/92/4 , 1/34/11 , 8/35/3 , 1/139/11 , 1/45/2 , 8/39/1 , 3/6/9 , 8/47/2 ।
यजुर्वेद. 20/36 , 20/11 , 34/47 , 7/19 ।
अथर्ववेद. 20/13/4 , 10/7/13 ,10/7/23 , 10/7/23 , 10/7/27 ।
इन सभी वेद के प्रमाण मंत्रों में तैंतीस प्रकार के देवताओं का वर्णन है !

Edit with WPS Office

- **{ 8 वसु ,11 रुद्र ,12 आदित्य , इंद्र (बिजली) , प्रजापति अर्थात यज्ञ }**

- **{ आठ वसु }**

1. पृथ्वी (भूमि)
2. जल (पानी)
3. वायु (अनिल)
4. अग्नि (अनल)
5. आकाश (प्रत्यूष)

- { नक्षत्र }

6.सूर्य (प्रभास)
7.चंद्रमा (सोम)
8.नक्षत्र (ध्रुव)

- **वेदों में वसु —-**

ऋग्वेद. 1/9/9 ,1/96/6 , 1/143/6 , 1/164/27 , 1/7/9 , 3/20/5 ..

एक उदाहरण दिखाते हैं—
(ऋग्वेद. 1/9/9)
वसोरिन्द्र वसुंपति गीर्भिगृणन्त ।
ऋग्मियम होम गन्तारमूतये ।।
पदार्थ___ वेदवाणी से स्तुति करते हुए हम लोग अग्नि ,पृथ्वी , वायु ,अंतरिक्ष, आदित्यलोक , धौ , अर्थात प्रकाशमान लोक , चंद्रलोक और नक्षत्र अर्थात जितने तारे दिखते हैं , इन सब का नाम वसु है , क्योंकि ये ही निवास के स्थान है , इनका पति स्वामी और रक्षक वेद मंत्रों के प्रकाश करनेहारे सबके अन्तर्यामी अर्थात अपनी व्याप्ति से सब जगह प्राप्त होने तथा सब के धारण करने वाले परमेश्वर को संसार से सुख के साथ वास कराने का हेतु जो विधा आदि धन है , उसकी प्राप्ति और रक्षा के लिए

Edit with WPS Office

प्रार्थना करते हैं ।
भावार्थ___ सब मनुष्यों को उचित है कि जो ईश्वरपन का निमित्त , संसार का स्वामी , सर्वत्र व्यापक इंद्र परमेश्वर है , उसकी प्रार्थना और ईश्वर के न्याय आदि गुणों की प्रशंसा पुरुषार्थ के साथ सब प्रकार से अतिश्रेष्ठ विद्या राज लक्ष्मी आदि पदार्थों को प्राप्त होकर उनकी उन्नति और रक्षा सदा करें ।

- **(निरुक्त अध्याय 7 , खंड 15)**

अर्थ___ देवों दानादवा, दीपनादवा धोतनादवा धुस्थानों भवतीति व ।

- देव का प्रमुख लक्षण है 'दान ' जिसका अर्थ है देना । जो व्यक्ति अपने सर्वश्रेष्ठ , प्रियतम वस्तु या यहां तक की अपने प्राण भी सबके कल्याण के लिए समर्पित कर देता है , उसे ' देव ' कहां जाता है ।

- देव का दूसरा गुण है ' दीपन ' अर्थात प्रकाश करना । सूर्य चंद्रमा और अग्नि अपने प्रकाश से जगत को आलोकित करते हैं , इसी कारण इन्हें ' देव ' की संज्ञा दी जाती है ।

- देव का कर्म है ' धोतन ' जिसका तात्पर्य है सत्य का प्रचार प्रसार करना । जो मनुष्य सत्य को पहचानता है , उसे मानता है , उसे बोलता है और उसे अपने कर्मों में उतारता है , वह भी देव कहलाता है ।

- देव की एक और विशेषता है ' दयुस्थान ' अर्थात उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित होना । ब्रह्मांड में सूर्य अपने उच्च स्थान के कारण ' देव ' है , समाज में विद्वान अपने ज्ञान के कारण और राष्ट्र में राजा अपनी प्रतिष्ठा के कारण ' देव ' कहलाते हैं ।

इस प्रकार , ' देव ' शब्द का उपयोग न केवल चेतन प्राणियों के लिए , बल्कि जड़ पदार्थों के लिए भी होता है , जो अपने गुण कर्म और स्थान के आधार पर देवत्व को धारण करते हैं ।

Edit with WPS Office

देवता का सार ' दान ' में निहित है । जो भी अपनी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार दान करता है , वह देवता की श्रेणी में आता है । जैसे सूर्य अपनी किरणों का और अग्नि अपनी ऊष्मा का दान करती है , वैसे ही जो भी प्राणी या तत्व अपने से कुछ प्रदान करता है , वह देवता कहलाता है । दान की यह क्षमता ही देवता की महत्ता और सार्थकता का प्रतीक है ।

भावार्थ___ दान देने से देव नाम पड़ता है । और दान कहते हैं– अपनी चीज दूसरे के अर्थ दे देना ।
___यही आठ वसु हमें बसाने में सहायक है, इनके बिना हम रह नहीं सकते ! देवता शब्द दिव् धातु से आया है । जिसका अर्थ होता है– जो प्रकाशित करता है , अगर हम निरुक्त में जाएंगे– (जिसका प्रमाण हमने ऊपर लिख दिया) यास्काचार्य जी की परिभाषा देखेंगे—- तो वहां पर ऋषि बताते हैं कि देवता वो होते हैं , जो जीवन को बनाए रखने के लिए दान करते हैं । जैसे___ सूर्य देवता है क्योंकि वो अपनी ऊर्जा से हमारा जीवन चलाते हैं । वायु एक देवता है , क्योंकि वह ऑक्सीजन देती है , वो हमारा जीवन चलाते हैं , अन्न देवता है हमारी भूख मिटाते हैं , जल देवता है क्योंकि हमारी प्यास मिटाते हैं , वैसे ही पृथ्वी भी देवता है क्योंकि उनका गुरुत्वाकर्षण हमारे शरीर को थामें रहता है , वो हर एक चीज जो हमारे जीवन को चलाती है , वह देवता है । देवता ईश्वर नहीं है ? ईश्वर द्वारा बनाए गए विषय हैं । अगर हम वेदों में जाएंगे तो वहां पर हर एक सूक्त से पहले देवता का नाम दिया जाता है ,वो बताता है कि इन मंत्रों में किस देवता के बारे में बताया गया है । किस विषय के बारे में बताया गया है ।

वेदों में तीन हजार तीन सौ तैंतीस 333 देवताओं का भी वर्णन है— लेकिन यह देवता 33 कोटि देवताओं से अलग है , इन देवताओं के बिना भी हम रह सकते हैं । 33 कोटि देवताओं से जो अलग देवता हैं , जो मनुष्य सत्य बोलता है उसको देवता कहा गया है 333 वही देवता है । देखो ___

- **शतपथ ब्राह्मण. 1/1/14**

सत्य बोलने वाले देवता और झूठ बोलने वाले मनुष्य होते हैं ।

शतपथ ब्राह्मण. 3/7/3/10

Edit with WPS Office

विद्वानों का नाम देवता है ।
महीधर भाष्य. यजुर्वेद. 31/6
इस तरह प्रकाशमान होने से योगियों का नाम देवता भी है ।

33 कोटि देवताओं की श्रेणियां :

यस्य त्रयस्त्रिंशद् देवा अगे: गात्रा विभेजिरे ।
तान् वै त्रयास्त्रिंशद् देवानेके ब्रह्मविदो विदु: ।। अथर्ववेद. 10/7/27

जिसके शरीर में 33 देवता अंग - प्रत्यंग के रूप में विभाजित हुए हैं , उसे ब्रह्म के ज्ञाता (ब्रह्मविद) 33 देवताओं के रूप में जानते हैं ।

इसका तात्पर्य यह है कि एक मनुष्य के शरीर में 33 प्रकार के देवता विभिन्न अंगों के रूप में उपस्थित होते हैं । इन देवताओं को वे ब्रह्म ज्ञानी (ब्रह्म का वास्तविक ज्ञान रखने वाले) समझते और मानते हैं ।
इस मंत्र से यह स्पष्ट होता है कि वेदों में 33 देवता किसी बाहरी मूर्ति पूजा के रूप में नहीं , बल्कि प्रकृति और शरीर के बाहरी एवं भीतरी शक्तियों और तत्वों के रूप में समझे जाते हैं ।

33 कोटि देवताओं की श्रेणियां को चार प्रमुख भागों में बांटा गया है ;

आठ (8) वसु:

वसु वे देवता है जो पृथ्वी और सृष्टि के विभिन्न तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं । ये हैं ___ अग्नि , पृथ्वी , वायु , अंतरिक्ष , चंद्रमा , नक्षत्र , धौ
सृष्टि के सभी प्राणी जिनमें बसते हैं , उन्हें वसु कहां जाता है । ' वसु ' का अर्थ है वह जो स्थिरता और सुरक्षा प्रदान करें ।
वसुंधरा (पृथ्वी) स्थिरता का प्रतीक है , यह हमें आधार और पोषण देती है इसलिए इसे वसु कहां जाता है ।
वायु चंचलता और जीवन दायिनी प्राण वायु का दान करती है , जिससे वह

Edit with WPS Office

भी वसु कहलाती है ।
अंतरिक्ष : स्थान प्रदान करता है और इसलिए इसे वासु के रूप में जाना जाता है ।
अग्नि : ऊष्मा और ऊर्जा का दान करती है , जिससे जीवन चलता है , इसलिए इसे भी वसु माना जाता है ।
आदित्य : सूर्य प्रकाश का स्रोत है जो सृष्टि को जीवंत करता है ।
चंद्रमा : अपनी सौम्यता और शीतलता से शांति और संतुलन का दान करता है ।
नक्षत्र : (तारें) सुरक्षा और मार्गदर्शन का प्रतीक होते हैं , जिससे वे भी वसु कहे जाते हैं ।
धौ : (आकाश या परलोक) हमें परलोक का सुख और आध्यात्मिक मार्ग का बोध कराता है ।

इन सभी तत्वों द्वारा दिए गए दान और योगदान के कारण , इन्हें देवता कहा जाता है । वे अपनी अपनी भूमिकाओं के माध्यम से इस संसार को संतुलित , सुरक्षित और जीवंत बनाए रखते हैं , और इसी कारण से ये सभी वसुदेवता कहलाते हैं ।

- **।। वेदों में 8 वसु ।।**

ऋग्वेद. 1/9/9
ऋग्वेद. 1/96/6
ऋग्वेद. 1/143/6
ऋग्वेद. 1/164/27
ऋग्वेद. 1/7/9
ऋग्वेद. 3/20/5

Edit with WPS Office

- **{ ग्यारह रुद्र }**

जीवात्मा , पांच प्राण और पांच उप प्राण , ये ग्यारह जब शरीर को छोड़ते हैं तो लोग रो पड़ते हैं इस कारण ये रुद्र कहलाते हैं ये ग्यारह शरीर का आधार होने से देव है ।

1. पांच प्राण : ____ प्राण , अपान , व्यान , समान , उदान
2. पांच उप प्राण : ____ नागकर्म , कृकल , देवदत्त , धनंजय , कूर्म
3. जीवात्मा

रुद्र शरीर के भीतर स्थित विभिन्न प्राण (जीवन शक्ति) और क्रियाओं के प्रतीक माने जाते हैं । रुद्रों का मुख्य कार्य शरीर और प्राणों के संतुलन को बनाए रखना है । जब ये रुद्र शरीर से बाहर निकलते हैं , तो शरीर मृत हो जाता है और शोक का कारण बनता है , इसलिए इन्हें " रुद्र " कहा जाता है , क्योंकि रुद्र का अर्थ है " रोने वाला " या रुलाने वाला " । आइए अब 11 रुद्रों कार्य और महत्व को विस्तार से समझते हैं ।

Edit with WPS Office

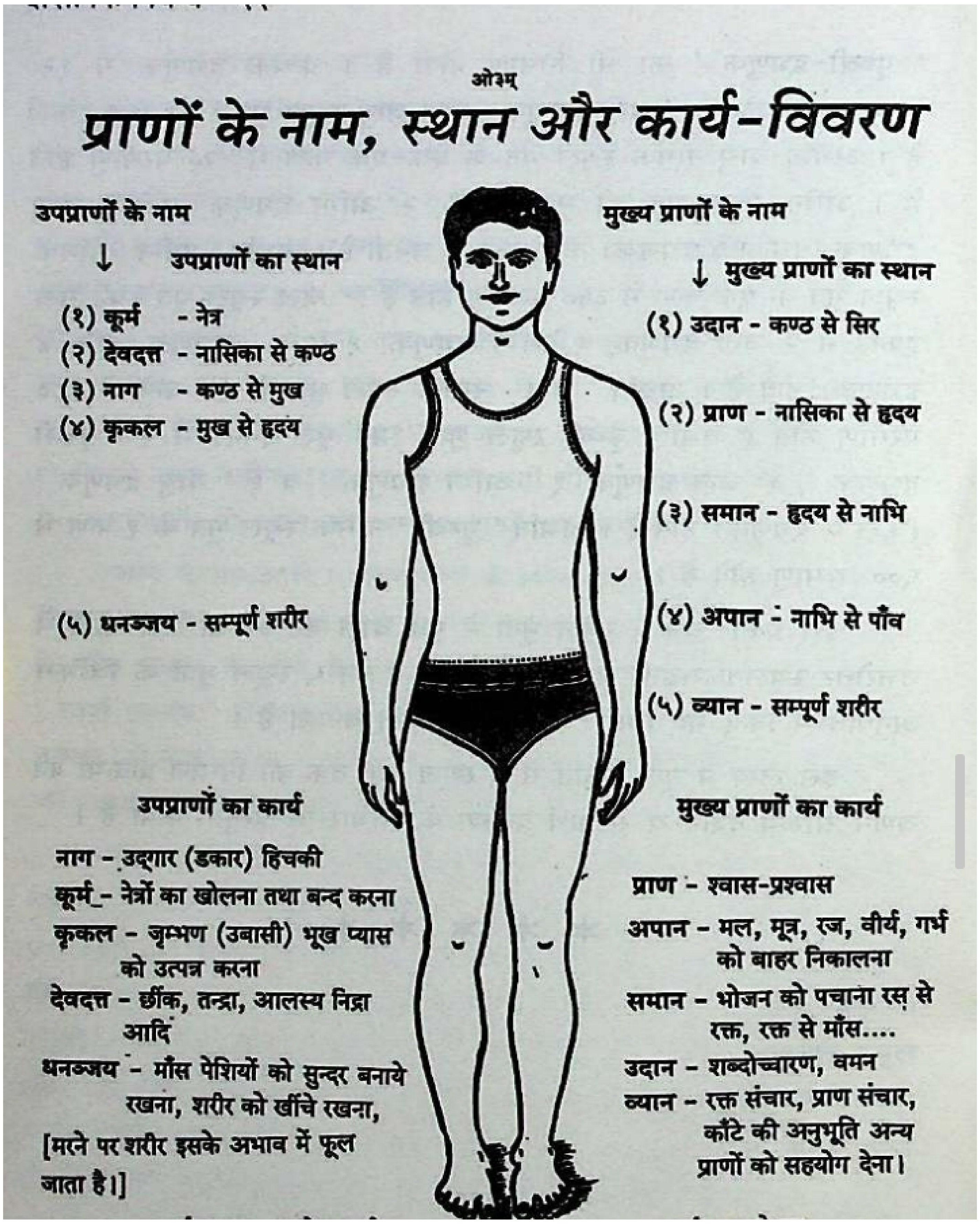

1. **प्राण**___ का मुख्य स्थान काम नासिका (नाकं) से हृदय तक । प्राण शरीर की मुख्य जीवन शक्ति है , जो श्वास - प्रश्वास को नियंत्रित करती है । यह शरीर में ऊर्जावान प्रवाह को बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण है । प्राण के बिना जीवन असंभव है । यह रुद्र सांस लेने और छोड़ने के कार्य का प्रबंधन करता है और जीवन की ऊर्जा का प्राथमिक स्रोत है ।

Edit with WPS Office

2. **अपान___** का मुख्य स्थान (कार्य) गुदा उपस्थेन्द्रिय के कचरे को बाहर निकालना । अपान प्राण का वह रूप है जो शरीर से नीचे की ओर संचारित होता है । यह मल और मूत्र के निष्कासन के लिए उत्तरदायी होता है । अपान रुद्र शरीर की शुद्धिकरण प्रक्रियाओं को नियंत्रित करता है और विषाक्त पदार्थों को बाहर निकालता है ।

3. **समान ___** का मुख्य कार्य हृदय से नाभि तक पाचन क्रिया में भोजन को पचाने में सहायक । समान रुद्र भोजन के पाचन और पोषण तत्वों के अवशोषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । यह आहार को ऊर्जा में बदलने और शरीर के विभिन्न हिस्सों में पोषण को वितरित करने का कार्य करता है । समान शरीर की पाचन क्रिया को संतुलित रखता है ।

4. **उदान ___** उदान का मुख्य कार्य कंठ से लेकर ऊपर तक (कहते हैं जिसने उदान पर विजय पा ली , वह कभी भी पानी में नहीं डूब सकता) हमारे बोलने में जो प्रेशर लगता है वह उदान प्राण के कारण लगता है । जैसे– उल्टी में प्रेशर लगता है दबाव बनता है, यह सब उदान प्राण के कारण होता है । उदान प्राण शरीर के ऊर्ध्व (ऊपर की ओर) प्रवाह को नियंत्रित करता है । यह आत्मा के शरीर से बाहर निकलने के समय भी महत्वपूर्ण होता है , विशेषकर मृत्यु के समय । उदान रुद्र का कार्य शरीर की ऊर्जावान गतिविधियों को नियंत्रित करना और मृत्यु के समय आत्मा के ऊपर उठने की प्रक्रिया में सहायता करना है ।

5. **व्यान ___** का मुख्यकार्य जितने भी हृदय से नाड़ियां हमारे शरीर में जारी हैं, उन सब में ऊर्जा का भेजने का कार्य व्यान प्राण का है । जो पूरे शरीर में व्यापक है दौड़ रहा है । उसे व्यान प्राण कहते हैं । जैसे– कहीं चोट लगने पर मस्तिष्क में जो सूचना भेजता है या जो हमें पता चलती है चोट लगने की ,व्यान प्राण के कारण । हृदय से 101 नाड़ियां निकलती हैं , फिर वह नाड़ियां सो सो शाखाएं बन जाती हैं । फिर उपशाखाएं की 72000 उपशाखाएं बन जाती हैं । इन नाड़ियों में जो

Edit with WPS Office

भी गति हो रही है । वे सब व्यान प्राण के कारण हो रही है । व्यान प्राण पूरे शरीर में प्रवाहित होने वाली ऊर्जा का प्रतिनिधित्व करता है । यह रक्त परिसंचरण और संचार प्रणाली से जुड़ा हुआ है , जिससे शरीर के सभी अंगों तक ऊर्जा पहुंचती है । व्यान रुद्र का कार्य शरीर के सभी हिस्सों में ऊर्जा को संतुलित रूप से वितरित करना है ।

6. **नाग**___ का मुख्य स्थान (कार्य) कंठ से मुख तक... जैसे- डकारें आना , हिचकियां आना , खांसी आना , छींक आना , यह सब नाग प्राण के कारण होता है । नाग कर्म रुद्र शरीर में छींकने और हिचकी जैसी गतिविधियों को नियंत्रित करता है । यह छोटे लेकिन महत्वपूर्ण शारीरिक क्रियाओं का प्रबंधन करता है , जो शरीर की सहज प्रतिक्रियाओं से संबंधित होते हैं ।

7. **कूर्म**___ इसका मुख्य कार्य आंख से देखना और आंखों की पुतली को दाएं बाएं घूमाना , पलक झपकना , आदि आंखों का सभी कार्य कूर्म प्राण का होता है ।

8. **देवदत्त**___ निन्दा के साथ छींक आलस्य अंगड़ाई , आदि इसका काम भी नासिका से कंठ तक रहता है । लेकिन इसको नाग प्राण का सहयोगी समझा जाता है । देवदत्त रुद्र जंभाई (yawning) के लिए उत्तरदायी है । यह शरीर में अधिक ऑक्सीजन प्राप्त करने की एक सहज क्रिया है , जब शरीर को थकावट अनुभव होती है या उसे अतिरिक्त श्वास की आवश्यकता होती है । जंभाई शरीर के शारीरिक ऊर्जा स्तर को बनाएं रखने में सहायक होती हैं ।

9. **क्रकल**___ इसका कार्य मुख से हृदय तक रहता है । भूख लगना ,प्यास लगना ,जंगाई आना । कृकल: रुद्र शरीर में खांसी और आवाज के संचालन से संबंधित है । जब शरीर को श्वसन प्रणाली में कुछ अवरोध अनुभव होता है , तब कृकल रुद्र खांसी के माध्यम से उसे बाहर निकालता है और गले को साफ रखता है ।

Edit with WPS Office

10. **धनंजय** ___ यह प्राण व्यान का सहयोगी प्राण है । पूरे शरीर में मांसपेशियों को सुंदर बनाना , हमारी हड्डियों को खींचे रहना । जैसे– कभी-कभी हम अकड़ के खड़े होते हैं, अकड़ के चलते हैं , हाथ पैर में जोर लगाने पर जो कड़ापन आता है , प्रेशर बनाते हैं , वह धनंजय प्राण के कारण होता है । इसलिए जब किसी की मृत्यु होती है, तो सबसे पहले धनंजय प्राण निकलता है । धनंजय रुद्र शरीर की विभिन्न ध्वनियों और ध्वनिमूलक गतिविधियों को नियंत्रित करता है । यह मृत्यु के बाद भी शरीर में बना रहता है (अकड़पन) और शरीर के नष्ट होने तक काम करता रहता है । यह शरीर के अंगों और तंत्रों को जुड़े रहने में सहायता करता है और जीवन के अंतिम क्षणों तक शरीर के भीतर सक्रिय रहता है । और सबसे पहले निकलता भी यही धनंजय प्राण है ।

11. **जीवात्मा ,** जीवात्मा के बिना जीवन नहीं, यह हमारी आत्मा है , सभी प्राण जीवात्मा से ही ऊर्जा लेते हैं । सभी प्राणों के निकलने के बाद अत: में जीवात्मा निकलती है । जीवात्मा रूद्र आत्मा का प्रतीक है , जो शरीर का वास्तविक संचालक है । यह शरीर में प्राणों को नियंत्रित करता है और जीवन के संपूर्ण अस्तित्व के लिए उत्तरदायी होता है । जब जीवात्मा शरीर छोड़ता है , तो व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है , और जीवन चक्र का अंत होता है ।

शरीर में इन 11 रुद्रों का महत्वपूर्ण योगदान है , जो शरीर की हर छोटी बड़ी क्रिया को नियंत्रित करते हैं । जब ये रूद्र शरीर से बाहर निकलते हैं , तो शरीर की जीवन शक्ति समाप्त हो जाती है , जिससे मृत्यु होती है । इसलिए इन रूद्रों को " रुद्र " कहां गया है , क्योंकि इनके निकलने पर शोक और विलाप होता है ।

1. **इंद्र (बिजली)** ___ इंद्रदेव का मतलब बिजली है । जिसके द्वारा ऐश्वर्या और विधा की प्राप्ति होती है ।

Edit with WPS Office

• इंद्र (विद्युत) :
इंद्र ऐश्वर्य और ऊर्जा के देवता है , जो इस सृष्टि को समृद्धि प्रदान करते हैं । विद्युत को " देव " मानने का आधार उसके द्वारा प्रदान किए जाने वाले ऐश्वर्य , शक्ति और समृद्धि में निहित है । **बृहदारण्यक उपनिषद्** **(3/1/6)** के अनुसार , इंद्रदेव , जो ऐश्वर्य और शक्ति का प्रतीक है , को विद्युत के रूप में परिभाषित किया गया है । इस वचन में प्रश्न किया जाता है " **कतम इंद्र : ?** " अर्थात इन्द्र (ऐश्वर्य का स्रोत) कौन है ? इसका उत्तर दिया जाता है: " अशनिरिति " यानी विद्युत ही इंद्रदेव है ।

विद्युत के माध्यम से हमें कई महत्वपूर्ण साधन प्राप्त होते हैं :

1. **गति** : विद्युत का उपयोग मशीनों , वाहनों , और अन्य उपकरणों को चलाने के लिए होता है , जिससे गति प्राप्त होती है ।
2. **शक्ति** : विद्युत ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है , जो आधुनिक जीवन के लिए आवश्यक है ।
3. **प्रकाश** : विद्युत से हमें कृत्रिम प्रकाश मिलता है , जिससे रात के समय भी कार्य करना संभव हो पाता है ।
4. **समृद्धि** : विद्युत के बिना उद्योग , तकनीकी विकास और अर्थव्यवस्था का सुचारू रूप से संचालन संभव नहीं होता । विद्युत समाज की समृद्धि का एक महत्वपूर्ण आधार है ।
5. **सुख** : आधुनिक युग में विद्युत के बिना जीवन की कल्पना करना मुश्किल है । यह हमारे दैनिक जीवन में सुविधा और आराम का स्रोत है , जैसे कि घरों में बिजली , गर्मी , और शीतलता का प्रबंधन ।

इस प्रकार , विद्युत को इंद्र के रूप में देखा जाता है , क्योंकि यह ऐश्वर्य , शक्ति , और समृद्धि का साधन है ।

2. **प्रजापति (यज्ञ)**___ प्रजापति का मतलब है प्रजापति के क्षेत्र में यज्ञ और पशु आते हैं । जिनके द्वारा वायुवृष्टि जल की शुद्धि और प्रजा

Edit with WPS Office

का पालन होता है ।

• प्रजापति/यज्ञ :

प्रजापति/यज्ञ और हवन के माध्यम से संपूर्ण सृष्टि का कल्याण करने वाले देवता हैं ।यज्ञ को देवता के रूप में मान्यता दी जाती है क्योंकि यज्ञ से सृष्टि का संतुलन बना रहता है और प्राणियों को सुख और समृद्धि प्राप्त होती है । **भगवत गीता.** **(3/14)** में इस संबंध में स्पष्ट उल्लेख किया गया है :

" अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भव: ।
यज्ञाद भवति पर्जन्यो यज्ञ: कर्म समुद्र भव : ।। "

भावार्थ : ______

- सभी प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं और उनके जीवन का आधार अन्न है ।
- अन्न की उत्पत्ति पर्जन्य (वर्षा) से होती है ।
- वर्षा की उत्पत्ति यज्ञ से होती है ।
- और यज्ञ कर्म (कर्तव्यों और गतिविधियों) से उत्पन्न होता है ।

• यज्ञ का महत्व :

1. **वर्षा का स्रोत :** गीता के अनुसार , यज्ञ के माध्यम से पर्जन्य (वर्षा) की प्राप्ति होती है । वर्षा धरती पर अन्न उत्पन्न करने के लिए आवश्यक होती है । इस प्रकार , यज्ञ प्राणियों के जीवन और पोषण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है । यज्ञ का तात्पर्य केवल अग्नि में आहुतियां देना नहीं है , बल्कि इसका व्यापक अर्थ वह कर्म और कर्तव्य है जो सृष्टि के संतुलन को बनाए रखते हैं ।
2. **सृष्टि का संतुलन :** यज्ञ सृष्टि के संतुलन को बनाए रखने के लिए किया जाने वाला कर्म है । जब मनुष्य अपने कर्तव्यों का पालन करते हैं और समाज में सामंजस्य स्थापित रखते हैं , तब यज्ञ की भावना से सृष्टि को भी लाभ मिलता है । इस संतुलन से न

Edit with WPS Office

केवल भौतिक समृद्धि , बल्कि आध्यात्मिक समृद्धि भी प्राप्त होती है ।

3. **समाज और प्रकृति का परस्पर संबंध :** यह समाज और प्रकृति के बीच का परस्पर संबंध दर्शाता है । यज्ञ के माध्यम से मनुष्य प्रकृति से जो कुछ प्राप्त करता है , उसे पुनः प्रकृति को लौटाता है , जिससे एक निरंतर चक्र चलता रहता है । यह चक्र वर्षा , अन्न , जीवन को संचालित करता है ।

यज्ञ न केवल धार्मिक अनुष्ठान है , बल्कि यह प्राणियों के जीवन और सुख का आधार है । यज्ञ के द्वारा वर्षा होती है , जिससे अन्न का उत्पादन होता है , और यह अन्न सभी जीवो के जीवन को पोषित करता है । इस प्रकार , यज्ञ को देवता कहा गया है , क्योंकि यह प्राणी मात्र के जीवन और समृद्धि का कारण है ।

निष्कर्ष : यह 33 कोटि देवता केवल सनातन संस्कृति के नहीं है , बल्कि ये संपूर्ण सृष्टि के देवता हैं । यह संसार इन्हीं तत्वों और शक्तियों पर आधारित है । इस प्रकार , सनातन धर्म और वैदिक संस्कृति का यह महत्वपूर्ण सिद्धांत न केवल धार्मिक , बल्कि वैज्ञानिक और दार्शनिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है । इसे समझने के बाद हम अपनी संस्कृति के प्रति अधिक जागरूक हो सकते हैं और इसे दूसरों के सामने भी सही तरीके से प्रस्तुत कर सकते हैं ।

- ## { बारह आदित्य }

12 आदित्य सृष्टि के 12 महीनों का प्रतिनिधित्व करते हैं , जिनके नाम इस प्रकार हैं : **चैत्र , वैशाख , ज्येष्ठ , आषाढ़ , श्रावण , भाद्रपद , आश्विन , कार्तिक , मार्गशीर्ष , पौष , माघ तथा फाल्गुन** ।

Edit with WPS Office

इनका संबंध समय और सृष्टि की आयु से है , क्योंकि यह पूरे वर्ष भर के चक्र को धारण करते हैं । ' आदित्य ' शब्द ' आयु ' से उत्पन्न हुआ है , जो जीवन काल या समय की धारण करने वाली शक्ति को दर्शाता है । आदित्य मुख्य रूप से सूर्य देव के विभिन्न रूपों का प्रतिनिधित्व करते हैं , और इनका संबंध प्राकृतिक और मौसमीय चक्रों से भी है ।

बारह आदित्ययों के नाम निम्नलिखित है , जो सनातन धर्म के पंचांग के 12 महीनों से संबंधित है:

1. **चैत्र** : यह वर्ष का पहला महीना होता है और इसे वर्ष के आरंभ का प्रतीक माना जाता है ।
2. **वैशाख** : यह महीना कृषि और उपज की दृष्टि से महत्वपूर्ण है , और इसे समृद्धि का प्रतीक माना जाता है ।
3. **ज्येष्ठ** : इस महीने को सबसे लंबा महीना माना जाता है , क्योंकि इसमें सूर्य अपनी प्रखरता में होता है ।
4. **आषाढ़** : इस महीने में वर्षा ऋतु का प्रारंभ होता है , जो पृथ्वी को जीवनदायिनी जल से सिंचित करती है ।
5. **श्रावण** : यह महीना वर्षा ऋतु का प्रमुख महीना होता है , जिसमें प्रकृति अपनी संपूर्णता में खिलती है ।
6. **भाद्रपद** : इस महीने में वर्षा ऋतु का अंत होता है , और यह मौसम परिवर्तन का महीना माना जाता है ।
7. **आश्विन** : इस महीने को शरद ऋतु के आरंभ के रूप में जाना जाता है , जिसमें मौसम साफ और सुखद हो जाता है ।
8. **कार्तिक** : कार्तिक महीने को विशेष रूप से धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है । इसे पवित्रता और प्रकाश का प्रतीक माना जाता है ।
9. **मार्गशीर्ष** : यह महीना ठंड का आरंभिक महीना होता है , जिसमें शीत ऋतु अपने चरम पर होती है ।
10. **पौष** : यह सबसे ठंडा महीना होता है और इसे ठंडी हवाओं और शांतिपूर्ण वातावरण का प्रतीक माना जाता है ।

Edit with WPS Office

11. **माघ** : यह ठंड का अंतिम महीना होता है , और इसके बाद बसंत ऋतु की प्रारंभ होती है ।

12. **फाल्गुन** : यह महीना वसंत ऋतु का आगमन का प्रतीक होता है और यह आनंद और उत्सव का महीना माना जाता है ।

इन बारह आदित्यों का संबंध सृष्टि के समय चक्र और ऋतु परिवर्तन से होता है । हर आदित्य का वर्ष के अलग-अलग महीने में अलग-अलग रूप में प्रभाव होता है , जो सृष्टि के जीवन चक्र को संतुलित करता है । ये 12 आदित्य सृष्टि की आयु को धारण करते हैं ।

12 आदित्यों के प्रमाण___

ऋग्वेद. 10/55/3 , 10/72/8 , 9/114/3

अथर्ववेद. 8/9/21 ,

आदित्या : = अदिते : ?

सूर्य सुखप्रद होता है । (आरम्भ सृष्टि में वर्तमान अखंड अग्नि के)

ऋग्वेद. 9/114/3 **ऋग्वेद. 10/72/8**

सूर्य आत्मा जगतस्तथुषश्च , ऋग्वेद. 1/115/1

सब स्थावर और जंगम जगत की आत्मा सूर्य है । यह है इस सूर्य देवता का मंन्त्र का आधिदैविक अर्थ है ।

प्राण: प्रजानामुदयत्येष सूर्य : । प्रश्नोपनिषद.1/8

सब प्राणियों का सब उत्पन्न वस्तुओं का प्राण होकर सूर्य उदय होता है । प्रश्नोपनिषद में यह मन्त्र ऋग्वेद का वचन कहकर उपदेश किया गया है । वास्तव में इस संसार के सब प्रकार के जीवन का सब प्रकार की चेष्टा गति व क्रिया का तथा सब प्रकार की शक्ति का केंद्र सूर्य ही है । भौतिक विद्या के ज्ञाता भी प्रकाश, ताप ,विद्युत चुंबक आदि से बलों का तथा वनस्पति,

Edit with WPS Office

पशु ,मनुष्य में रूपांतरित सब बलों का भी आधार आदित्य को ही मानते हैं , पर आदित्य का यह प्राण ही हमें देश ,काल ,अवस्था आदि नाना भेद से भिन्न-भिन्न प्रकार का मिलता है और यही प्राण के प्रकार का भेद है जिसके कारण धुस्थानीय देवता भिन्न-भिन्न बहुत से हुए हैं । तथा एक आदित्य की जगह नाना आदित्य बने हैं । इन प्रसिद्ध 12 आदित्ययों के अतिरिक्त सात आदित्य का वर्णन निम्न वेद मंत्रो में देखने को मिलता है–

ऋग्वेद. 1/114/3 ___ इस मंत्र में नाना सूर्यावाली भिन्न-भिन्न प्रकारों का प्राण देने के कारण भिन्न भिन्न प्रकार के सूर्य वाली सात दिशाओं का वर्णन है और इसी के अनुसार सात आदित्यों का वर्णन है । एक ही आदित्य भिन्न-भिन्न सात दिशाओं में भिन्न-भिन्न प्रकार का प्राण देने के कारण सात आदित्य हो गया है ।

कतमे आदित्या इति ? द्वादश वै मासा: संवत्सरस्य एते आदित्या ।
बृहदारण्यक उपनिषद्. 3/9/5

भावार्थ___ आदित्य कौन से हैं ? संवत्सर के बारह महीने ही 12 आदित्य है ।

तात्पर्य यह है कि प्रत्येक महीने में सूर्य भिन्न-भिन्न प्रकार का प्राण देता हुआ भिन्न-भिन्न आदित्य कहलाता है । प्रत्येक महीने में आदित्य की किरणें हम पर अपना जरा जरा भिन्न-भिन्न प्रकार का प्रभाव डालती हुई पड़ रही है ।

- **[12 आदित्य कौन-कौन से]**

- चैत्र ___ पर्जन्य ____बादल में निवास
- वैशाख ___ त्वष्टा ___ तेज से प्रकृति
- ज्येष्ठ ___ पूषा ____ अन्न पौष्टिक ऊर्जा
- आषाढ़ ___ अर्यमन ____प्राण शक्ति का संचार
- श्रावण ___ भग____ देह में चेतना ऊर्जा
- भाद्रपद ___ विवास्वान____ पवन अग्नि
- अश्विन___ विष्णु____ विश्व का अनुव्यापक

Edit with WPS Office

- कार्तिक___ अंशुमन ____ वायु रूप में प्राण
- मार्गशीर्ष ___ वरुण____ जल तत्व
- पौष___ मित्र____ मित्रता
- माघ ___ इंद्र ____ इंद्रियों पर नियंत्रण
- फाल्गुन ___ धाता ____ सृष्टि कर्ता

ये 12 आदित्य , 12 महीने हैं ये आदित्य दिन प्रतिदिन हमारी उमर को ले जाते हैं । इसलिए इनको आदित्य कहते हैं ।

- वेदों में उपनिषदों में एक मंत्र है प्रमाण हम पीछे लिख आए हैं– की जैसा हमारा शरीर ऐसा ही ब्रह्मांड जो हमारे पिंड में है, वही ब्रह्मांड की अनुकृति है ।
- इसी प्रकार जो हमारे अंदर तीन गुण विद्यमान रहते हैं सत् रज् तम , बाहर इन्हीं तीन गुणों से सारी सृष्टि का निर्माण होता है, सूर्य, चंद्र ,नक्षत्र आदि । सत्व् रज् तमों यह प्रकृति के तीन गुण है, जो अनादि है । जिन गुणों की सहायता से ईश्वर सृष्टि का निर्माण करता है ।

रजोगुण,__ सतोगुण,__ तमोगुण__

ब्रह्मा	विष्णु	महेश
रचना	पालन	विनाश
गतिशील	प्रकाशसील	स्थितिसील

सतो, रजो, तमों
इन तीन गुणों से सृष्टि चलती है ।
इन तीन गुणों को मिलने पर यानी की तीनों गुण निराकार परमेश्वर अणु के रूप में (अपने कार्य के लिए उपयोग में लेता हैं , अर्थात सृष्टि का पहले की तरह सृष्टि निर्माण करता है) । सत रज तम , प्रकृति के गुण हैं , जिनकी अलग सत्ता है , ईश्वर की अलग सत्ता है जिसका सर्वोत्तम नाम ओउम् है । जो देवों के देव जिसका गौण नाम महादेव हैं ,वही ब्रह्मांड का परमेश्वर है ।

Edit with WPS Office

• इस ओम में क्या-क्या समाया हुआ है , इस पर चर्चा करेंगे___

ओउम् तीन अक्षरों का मुख्य नाम है ।

ओ उ म

ओ__ विराट , अग्नि , विश्व
उ__ हिरण्यगर्भ , वायु , तेजस
म__ ईश्वर , आदित्य , प्रज्ञा

विराट __ जो बहुत प्रकार के जगत को प्रकाशित करें ।
अग्नि __ ज्ञानस्वरूप सर्वज्ञ
विश्व__ जो अग्नि वायु आकाश जल पृथ्वी में प्रविष्ट हुआ है ।

हिरण्यगर्भ __जो सूर्य आदि तेज वाले पदार्थ का उत्पत्ति तथा निवास स्थान है ।
वायु __ जो सब चराचर जगत को धारण जीवन और प्रलय करता है ।

ईश्वर__समर्थ्यवान है जो
आदित्य__ जिसका विनाश कभी ना हो
प्रज्ञा __ जो सब चराचर जगत के व्यवहार को जानता है , ईश्वर के नामों में ओउम् सर्वोत्तम निज नाम है ,
क्योंकि इसमें उसके सभी गुण प्रकट होते हैं । वही ईश्वर का प्रदान व निज नाम है ।

• ।। ओउम् की उत्पत्ति ।।

ऐतरेय ब्राह्मण. 5/32

वेदों को तपाया उन तपाएं हुओं से तीन शुक्र उत्पन्न हुए– ऋग्वेद से भू: , यजुर्वेद से भुव: , सामवेद से स्व: , फिर उन तीनों सुक्रो को तपाया गया, उन तपाएं हुओं से तीन वर्ण उत्पन्न हुए__ अकार: , उकार: , मकार: इन तीनों कोई इकट्ठा किया गया , तब ओउम् यह शब्द बना । तात्पर्य यह है कि

Edit with WPS Office

ओउम् शब्द ही वेदों का सार एवं आधार है । ओम् शब्द ही वेदों का परम और मुख्य विषय है । ॐ ।

- **{ वेदों में वसु , रुद्र , आदित्य से एक साथ प्रार्थना के मंत्र }**

ऋग्वेद. 3/20/5 , 6/62/8 , 10/48/11 , 10/66/3 , 10/150/1.. ।
यजुर्वेद. 2/16
अथर्ववेद. 19/9/11.....

- **{ भगवान और ईश्वर में अंतर }**

ईश्वर__ ईश्वर एक है , जो संसार का राजा है मालिक है । संसार का रचयिता, पालनकर्ता, और समय आने पर प्रलयकर्ता है , यही ईश्वर परमात्मा रचना करने से ब्रह्मा , पालन करने से और कण-कण में व्याप्त होने से विष्णु , कल्याण करने से और समय आने पर संहार करने से महेश कहलाता हैं । वही ईश्वर कर्मों का फल देता है , जन्म देता है , वही ईश्वर है । ईश्वर का दूसरा नाम भगवान भी है । भगवान शब्द ईश्वर के लिए तो प्रयोग होता ही है , मनुष्यों के लिए भी भगवान शब्द प्रयोग होता है । मनुष्यों में जो महापुरुष होते हैं, श्रेष्ठ योग्यता वाले लोगों को भी भगवान कहा जाता है । उनको भगवान क्यों कहते हैं..? उनको भगवान इसलिए कहते हैं इसको समझने के लिए एक उदाहरण देता हूं । धनवान शब्द का अर्थ क्या है..? जिसके पास धन हो वही धनवान है । बलवान का अर्थ क्या है..? जिसके पास सामर्थ्य बल हो , वह बलवान है । इसी प्रकार संस्कृत शब्दकोश में भगवान शब्द के 6 अर्थ बताए हैं । जैसे___
ऐश्वर्या __ वैभव , धन , संपत्ति
धर्म ,तेज __ अच्छे कर्म
यश__ ख्याति, प्रसिद्ध
श्री अर्थात शोभा__ धन, योग्य, लक्ष्मी

Edit with WPS Office

ज्ञान __ बोध
वैराग्य __ मोह त्याग

जिसमें यह 6 चीज (गुण) हो वो भगवान, ये 6 गुण श्री रामचंद्र जी के पास थे , कृष्ण जी के पास थे । यही गुण आदिशंकराचार्य के पास भी थे ,यही गुण महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती जी के पास भी थे । इसलिए इनको भी भगवान कहते हैं । भगवान श्री राम भगवान श्री कृष्ण को भी भगवान कहते हैं । भगवान राम भगवान श्री कृष्ण को सृष्टि कर्ता नहीं कह सकते..? क्योंकि ये महापुरुष है, ईश्वर नहीं । (कुछ लोग अज्ञान में महापुरुषों को भगवान श्री राम भगवान श्री कृष्ण को सृष्टि कर्ता कहते हैं , उनके कहने करने से कुछ नहीं , उनके मानने या ना मानने में उनका ही दोष) (इस अज्ञान के कारण रामपाल दास ईश्वर बना बैठा है , उनके पास स्वयं की बुद्धि नहीं जो अज्ञानी (रामपाल दास) को ईश्वर कहते हैं) इसीलिए कहने का मतलब यह है कोई कुछ भी माने लेकिन सच वही जो शास्त्रों में है । शास्त्रों के अनुसार मनुष्य भगवान बन सकता है , आप कहोगे कैसे..? वेद में लिखा है हम भी भगवान बन सकते हैं , (सृष्टिकर्ता नहीं , गुणों से) जिस व्यक्ति में जो यह छह गुण हो , वही भगवान कहलाने योग्य है । जो गुण हम ऊपर लिखा आए हैं । भगवान इंद्र का नाम अर्जुन था लेकिन अच्छे कर्म होने के कारण ऐश्वर्यावान होने के कारण इंद्र नाम से संबोधित हुए ।

विष्णु पुराण में भी लिखा है___

समग्रस्य धर्मस्य यशस: श्रिय: ।
योश्रैव षण्णां भग इतीरंणां ।। विष्णु पुराण. 6/5/74

अर्थात___ ऐश्वर्या , धर्म , यश ,श्री , ज्ञान , वैराग्य इन छह का नाम भग: है । इन 6 गुणों से युक्त व्यक्ति को भगवान कहा जाता है ।
ईश्वर में तो यह गुण होते ही है , भगवान शब्द में ईश्वर के नाम में पांच तत्व भी होते हैं । विशेषण के लिए ईश्वर के लिए दोनों है ।
ईश्वर : ______ ईश्वर शब्द में चार अक्षर होते हैं **--- ई + श् + व + र** , इन चार अक्षरों का क्रमशः अर्थ इस प्रकार है **--- ई , से इन्द्रिय** + **श् से शंशय**

Edit with WPS Office

(संशय) , + व **से विकार** + र **से रहित** अर्थात जो इंद्रियों (**पांच ज्ञानेंद्रियों + पांच कर्मोंन्द्रिया**) तथा सब संशयों इत्यादि विकारों से रहित उसे ईश्वर कहते हैं । दूसरे शब्दों में स्पष्ट है कि ईश्वर निराकार एवं विकारों से रहित होता है ।

भगवान : ______ भगवान में पांच अक्षर होते हैं : **भ + ग + व + अ + न** , तथा उसका अर्थ है ______

भ___से___भूमि

ग___से___आकाश

व___से___वायु

अ___से___अग्नि

न___से___समुद्र, जल

अर्थात जो पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , आकाश , इन पच्चमहाभूतों को धारण करता है , वह भगवान कहाता है ।

निराकार ईश्वर मूल प्रकृति से समस्त सृष्टि को रचकर धारण करता है । मनुष्य का शरीर पंचमहाभूतों (**पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , आकाश**) से बना है । अर्थात आत्मा पच्चमहाभूतों से बने शरीर को धारण करता है । और जो मनुष्य संसार में आकर श्रेष्ठ कर्म करता है , वह भगवान बन सकता है । स्मरण रहे -- ईश्वर और भगवान में अंतर है । ईश्वर कभी भी जन्म नहीं लेता क्योंकि वह सब विकारों से रहित है । और भगवान कभी ईश्वर नहीं बन सकता । और अब देखते हैं कि ईश्वर किसे कहते हैं _____

ईशावास्यमिद् सर्वम् । **(यजुर्वेद. 40/1)**

अर्थात ईश्वर इस ब्रह्मांड की प्रत्येक वस्तु के कण - कण में विद्यमान है , वह सब वस्तुओं के बाहर- भीतर ओत - प्रोत है ।

जन्माधस्य यत् । **(वैशेषिक दर्शन . 1/1/2)** इस सूत्र का सारांश है -- जिससे इस संसार की उत्पत्ति , स्थिति , और प्रलय होती है , उस चेतन का नाम ईश्वर है ।

कलेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्ट पुरुषविशेष ईश्वर : **(योग दर्शन . 1/24)**

अर्थात जो अविधा , क्लेश , कुशल - अकुशल , इष्ट - अनिष्ट और मिश्र

Edit with WPS Office

फलदायक कर्मों की वासना से रहित है , वह सब जीवों से विशेष ईश्वर कहाता है ।
अतः ईश्वर सच्चिदानन्द निराकार सर्वशक्तिमान , न्यायकारी , दयालु , अजन्मा , अनन्त , निर्विकार , अनादि , अनुपम , सर्वाधार , सर्वेश्वर , सर्वव्यापक , सर्वांतर्यामी , अजर , अमर , अभय , नित्य , पवित्र , और सृष्टिकर्ता है , उसी की उपासना करनी योग्य है , परमात्मा वेद ज्ञान प्रदाता , सब जीवों के कर्मो का निर्णायक एवं फलदाता है । ईश्वर के बारे में जितना अधिक जानने का प्रयास करेंगे उस के प्रति उतना ही प्रेम श्रद्धा , आस्था बढ़ती है ।

भगवान शब्द का दूसरा अर्थ क्या है..? देखिए
भज सेवायाम धातु से **भग** शब्द बनता है ।
भज्यते सेव्यते भोगार्थिभिरथि भग:
सेवनीय होने के कारण भग कहलाता है ।

इसी कारण महर्षि यास्क ने निघण्टु. 1.7 में भंग: को धन का पर्यायवाची नाम बताया है ।
इसी आचार पर आचार्य सायण ने अपने **ऋग्वेदभाष्य. 7/41/5** मैं भगवान शब्द का अर्थ धनवान किया ।

दुर्गाचार्य ने भी अपनी **निरुक्तभाष्य 11.44** में भगवन्तं शब्द का अर्थ धनवन्त: किया है ।
आचार्य वैकट ने भगवान शब्द का अर्थ **भाग्ययुक्त किया ।**
महर्षि दयानंद ने धन को ऐश्वर्या का पर्याय मानते हुए भगवान शब्द का अर्थ **ऐश्वर्यावान** भी किया ।

स्त्री की योनि को भी भग कहते हैं क्योंकि वह कामीपुरुष द्वारा सेवनीय होती है , भग से युक्त होने के कारण स्त्री को भगवती कहा जाता है । भग को अगर धन का पर्यायवाची नाम मानो तो भगवती शब्द का अर्थ धनवती भी होगा । यह अर्थ आचार्य सायण भाष्य , दुर्ग, स्कंदस्वामी आदि ने किया

Edit with WPS Office

है । महर्षि दयानंद ने ज्ञान को धन मानते हुए भगवती शब्द का अर्थ धन किया ।
भग का अर्थ अगर भजनीय: करते हो, भगवान शब्द का अर्थ है , जिसका भजन किया जाये । इस अर्थ में यह परमात्मा का नाम होगा ।

भगवान शब्द का अर्थ आचार्य वैकट ने , देव अथवा भगवान किया है – इस अर्थ में वह राजा, ऋषि, गुरु पिता आदि के लिए प्रयोग होगा ।

हमारे शास्त्र में ऋषि मुनि के लिए भगवान शब्द का प्रयोग स्वाभाविक है , **मुनि पतंजलि ने अपने महाभाष्य में अपने पूर्वाचार्यों को भगवान नाम से संबोधित किया है । अपने भाष्य 1.3.1 में वह भगवान वाष्र्ययणि का स्मरण करते हैं ।** वाष्र्ययणि एक निरुक्त आचार्य थे । यह इस प्रमाण से सिद्ध होता है कि ईश्वर के अलावा मनुष्य के लिए भी संस्कृत साहित्य में भगवान शब्द का व्यवहार होता है । **इसी अर्थ में श्री राम, श्री कृष्ण आदि को भगवान कहे जाने में दोष नहीं है ।।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 41. इक्कतालीसवां

- # { ।। स्वाध्याय ।। }

स्वाध्याय वेद का होता है , क्योंकि वेद में ही अध्याय है । वेद का अर्थ ज्ञान होता है , इसलिए महर्षि मनु ने कहा– **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्–** मनु. 2/6

Edit with WPS Office

संपूर्ण वेद धर्म का आधार है । अतः महर्षि दयानंद सरस्वती ने जोर देकर कहा– वेदों की ओर लौटो , अर्थात वेद का पढ़ना पढ़ाना सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है । यह कहकर आर्य समाज और गुरुकुलो के द्वारा नित्य प्रतिदिन वेदों का अध्ययन कराकर चरितार्थ कर दिया है ।
इस विषय में पुनः मनु ने कहा–
वेद के पठन- पाठन नित्य के स्वाध्याय करने में और नित्य के यज्ञ करने में कभी अनध्याय नहीं करना चाहिए । यह काम नित्य प्रति करने आवश्यक है , छोड़ने नहीं चाहिए ? वेद में भी कहां है—
ऋग्वेद. 1/38/14 ___
भावार्थ___ हे विद्वान तू वेदवाणी को मुख में धारण कर और उस वेदवाणी को मेघ की भांति गर्जन करते हुए दूर-दूर तक फैला । उसका उपदेश कर और गायत्री मंत्र में कहे हुए वेद के वचनों का स्वयं गान कर और दूसरों को भी पढ़ा ।

- **[स्वाध्याय का अर्थ]**

स या स्व उपपद मैं होनेपर आडं अधिपूर्वक अध्ययनार्थक इड, धातु से इडेश्च (3/3/21) इस पाणिनीय सूत्र से घठ प्रत्यय करने पर स्वाध्याय शब्द सिद्ध होता है ।सुष्ठु आवृत्य अध्ययन स्वाध्याय: स्वमध्ययन स्वाध्याय: । भली= भांति आवृतिपूर्वक अध्ययन करना या अपने लिए अथवा स्वयं अध्ययन करना ।
स्व शब्द के आत्मा , आत्मीय आदि अनेक अर्थ होने के कारण स्वाध्याय शब्द के भी विविध अर्थ हो जाते हैं ।
योग दर्शन के व्यास भाष्य में स्वाध्याय शब्द का अर्थ महर्षि व्यास ने इस प्रकार किया है ।
स्वाध्याय: प्रणवादिपवित्राणां जप: मोक्ष शास्त्राध्ययन वां । (2/1 तथा 2/32 सूत्र भाष्य) प्रणव= ओम् गायत्रयादि का जप करना या मोक्ष शास्त्र आध्यात्मिक– ग्रंथ वेद दर्शन उपनिषद् आदि का पढ़ना स्वाध्याय कहलाता है ।

Edit with WPS Office

[महाभारत. 1/40/10]
यहां स्वाध्याय के लिए कहा गया है– स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य पालन आदि तप में लगा हुआ, भय, शोकादि से रहित ,उध्वृऐता , और जितेंद्रिय होकर महात्मा जरत्कारु संपूर्ण भूमंडल पर भ्रमण करने लगा , उसने कभी मन से भी स्त्री आदि की इच्छा नहीं की ।

- **[चारों वर्ण आश्रमों में वेदों का स्वाध्याय करना अनिवार्य है]**

- **[ब्रह्मचर्य आश्रम]**

(मनुस्मृति. 3/2 और3/4)
तुम ब्रह्मचर्य से गृहस्थ आश्रम में जाना चाहते हो ,जाओ ! मैं तुमको मना नहीं करता । ठहरों ! मेरी एक बात मान लो । आजकल के सड़क छाप बनजारे की तरह मत जाओ , दरिद्र नारायण बनकर मत जाओ , तुम्हें कुछ बनने के लिए सिंहावलोकन करना होगा । सबसे पहले गुरु, आचार्य की आज्ञा आवश्यक है , तुम्हें स्नान करना होगा , एक दो लौटा जल से काम नहीं चलेगा , भरपूर डुबकी लगानी होगी , वह भी नदी तालाब से कार्य नहीं चलेगा । गुरुकुल में गुरु के द्वारा स्नान करना होगा , चारों वेदों को या दो वेद अन्यथा न्यून से न्यून एक वेद को पढ़कर स्नातक बन जाओ । वह भी वेद विधिवृत स्नातक बनकर जिसका ब्रह्मचर्य खंडित न हुआ हो, वह पुरुष व स्त्री गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करें । अर्थात अनुक्रमकपूर्वक आकर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य अपने वर्णअनुकूल सुंदर लक्षण युक्त कन्या से विवाह करें । अर्थात ब्रह्मचर्य आश्रम में वेदों का स्वाध्याय करके ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर सकता है ।

- **[गृहस्थाश्रम]**

गृहस्थाश्रम में पंचमहायज्ञ और स्वाध्याययज्ञ नित्य प्रति करना आवश्यक है ।

Edit with WPS Office

महर्षि मनु ने कहा है कि–
[मनुस्मृति. 4/2]
ऋषियज्ञ , देवयज्ञ ,भूतयज्ञ , नृयज्ञ , पितृयज्ञ इन पांचों यज्ञों को यथाशक्ति करते ही रहना चाहिए । इनको छोड़ना नहीं चाहिए ।
विधा पढ़ना ब्रह्मयज्ञ कहलाता है , तर्पण करना पितृयज्ञ (माता-पिता की सेवा) कहलाता है , होंम करना देवयज्ञ कहलाता है , पशु पक्षियों की सेवा करना भूतयज्ञ कहलाता है , और अतिथियों की सेवा करना नृयज्ञ कहलाता है ।
पंच महायज्ञ में स्वाध्याय को शतपथ ब्राह्मण ने ब्रह्मयज्ञ कहां है । समावर्तन के समय आचार्य अन्तेवासी अर्थात नव स्नातक को उपदेश देकर दीक्षा देता है ।

- **[आचार्य का नवस्नातक को उपदेश]**

(तैत्तिरीय शिक्षा 1/1)

आचार्य अन्तेवासी अर्थात अपने शिष्य और शिष्याओ को इस प्रकार उपदेश करें कि तू सदा सत्य बोल । धर्माचार कर , प्रमादरहित होके पढ़ पढ़ा । पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विधाओं को ग्रहण कर और आचार्य के लिए प्रिय धन देकर विवाह करके संतानोत्पत्ति कर । प्रमाद से सत्य को कभी मत छोड़ । प्रमाद से धर्म का त्याग मत कर । प्रमाद से आरोग्य को मत छोड़ । प्रमाद से उत्तम ऐश्वर्या की वृद्धि को मत छोड़ । प्रमाद से पढ़ने और पढ़ाने को कभी मत छोड़ ।१।
देव (विद्वान) और माता-पितादि की सेवा में प्रमाद मत कर । जैसे विद्वान का सत्कार करें, उसी प्रकार माता-पिता , आचार्य और अतिथि की सेवा सदा किया कर । जो अनिनिन्दत धर्म युक्त धर्म है , उन सत्या भाषणादि को किया कर , उनसे भिन्न मिथ्याभाषणादि कभी मत किया कर , जो हमारे सुचरित्र अर्थात धर्म युक्त कर्म हो , उनका ग्रहण कर और जो हमारे पापाचरण हो उनको कभी ग्रहण मत कर ।
जो कोई हमारे मध्य में उत्तम विद्वान , धर्मात्मा ब्राह्मण है उन्हीं के समीप बैठ

Edit with WPS Office

और उन्ही का विश्वास किया कर , श्रद्धा से देना , अश्रद्धा से देना, शोभा से देना , लज्जा से देना , भय से देना , और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिए , जब कभी तुझको कर्म वा शील तथा उपासना वा विज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो ।२,३।

तो जो विचारशील , पक्षपातरहित , योगी अथवा तपस्वी , आद्रचित , धर्म की कामना करने वाले धर्मात्माजन हो । जैसे वे धर्ममार्ग मैं वृते वैसे तू भी उसमें वृताकर । यही आदेश आज्ञा , यही उपदेश, यही वेद की और यही उपनिषद की शिक्षा है । इसी प्रकार वर्तना और अपना चाल- चलन सुधारना चाहिए । प्राचीन गुरुकुलों , विद्यालयों , आधुनिक विश्वविद्यालयों या विधापीठ आदि में समावर्तन के अवसर पर जो उपदेश दीक्षा के समय स्नातक को दिया जाता है । वह प्राय: सर्वत्र तैतरियों उपनिषद के आधार पर ही दिया जाता है । अर्थात वेद वा विधा – समाप्ति में आचार्य अन्तेवासी अपने शिष्य को उपदेश देते हैं –

सत्य का व्यवहार करना , धर्म का आचरण करना ।

यदि तुम्हें अपने जीवन में संशय उत्पन्न होने लगें कि मुझे अमुक कार्य करना चाहिए या नहीं वा अमुक व्यवहार मेरे लिए कर्तव्य है या अकर्तव्य , यह संशय उत्पन्न हो जाएं , तब तुम ऐसा करना कि उस विषय में जो ब्रहमवित (वेद के ज्ञाता, ज्ञानी) विचारवान योगी- तपस्वी निस्वार्थी धर्मपरायण हो , उक्त विषय में जैसे वे आचरण करें , तुम्हें भी उस विषय में ऐसा ही आचरण करना है । यही आदेश है, यही उपदेश है । यही वेद शास्त्र की आज्ञा है , यही अनुशासन है । यही करने योग्य है , इसका ही तुम्हें पालन करना है ।

आजकल शिक्षा समाप्त कर दीक्षान्त भाषण देने की परिपाटी है , जिसमें कुछ सालों से कुछ विश्वविद्यालय में गुरुकुलों में तैत्तिरीय उपनिषद् के इस उपदेश को दीक्षान्त भाषण का अंग बना लिया है ।

गुरुकुलो में यह प्रथा तो उपनिषद काल के समय से आदिकाल से चली आ रही है और जो गुरुकुल भारत में चल रहे हैं उनमें दीक्षान्त के समय आचार्य लोग यही भाषण देते हैं । इस भाषण में शिक्षा का ही नहीं , अपितु अपने भावी जीवन में किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए उसका भी सार आ जाता है । अगर वेद आरंभ संस्कार के समय बालक को पिता द्वारा दिए गए उपदेश को शिक्षा समाप्त कर पर आचार्य द्वारा स्नातक को दिए गए भाषण

Edit with WPS Office

के साथ मिलकर पढ़ा जाए , तो वैदिक संस्कृति के शिक्षा के सिद्धांत एकदम उभर आते हैं जो शिक्षा के वर्तमान सिद्धांतों या वर्तमान परिपाटी से कहीं ऊंचे हैं ।

[मनुस्मृति. 10/65]

यहां लिखा है– जन्म से कोई ब्राह्मण नहीं होता , किन्तु सब अपने गुण-कर्मानुसार होते हैं , शुद्रकुल में उत्पन्न व्यक्ति ब्राह्मण बन जाता है , और ब्राह्मण कुल में उत्पन्न व्यक्ति शुद्र बन जाता है , ।

मनु महाराज लिखते हैं – **मनुस्मृति. 2/28**

इस प्रकार का श्लोक का अर्थ महर्षि दयानंद सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश में इस प्रकार लिखा है–

(स्वाध्याय) सकल विधा पढ़ने पढ़ानें, ब्रह्मचर्य सत्यभाषणादि नियम पालने अग्निहोत्र आदि होम, सत्य का ग्रहण , असत्य का त्याग और सत्य विधाओं का दान देवे वेदस्थ कर्मोपासनाज्ञान विधा के ग्रहण पक्षेष्टादि करने संतानोत्पत्ति ब्रह्म , देव , पितृ , बलिवैश्वदेव और अतिथियों के सेवनरूप पच्चमहायज्ञों और अग्रिष्टोमादि तथा शिल्पविधा विज्ञानादियज्ञो के सेवन से इस शरीर को ब्राही अर्थात वेद और परमेश्वर की भक्ति का आधार रूप ब्राह्मण का शरीर किया जाता है । इतने साधनों के बिना ब्राह्मण शरीर नहीं बन सकता । ब्राह्मण अर्थात सर्वोत्तम पुरुष बनने के लिए भी सर्वप्रथम स्वाध्याय की ही आवश्यकता है । छान्दोग्य उपनिषद में स्वाध्याय से मोक्ष मिलता है ऐसा लिखा है ।—---

[छान्दोग्य उपनिषद. 8/15/1]

अर्थात आचार्य कुल से वेदों को पढ़कर , गुरु की दक्षिणा को देकर समावर्तन द्वारा लौटकर , कुटुम्ब में स्वाध्याय मे रत , रहकर और धार्मिक विद्वानों के सत्संग में सब इंद्रियों को वश में करके , अहिंसा– बुद्धि से सब प्राणियों को देखा हुआ आयुपर्यन्त इस प्रकार का व्यवहार करता हुआ, विद्वान ही ब्रह्म लोक (मोक्ष) को प्राप्त होता है ।

Edit with WPS Office

।। वानप्रस्थाश्रम ।।

प्रमाण___ [शतपथ ब्राह्मण, काण्ड 14]

मनुष्यों को उचित है कि ब्रह्मचर्य आश्रम को समाप्त करके गृहस्थ होकर वानप्रस्थ और वानप्रस्थ होके सन्यासी होवे , अर्थात यह अनुक्रम से आश्रम का विधान है । इस प्रकार वानप्रस्थाश्रम भी तप और स्वाध्याय आदि के लिए है , महर्षि मनु ने भी कहा है–

[मनुस्मृति. 6/7]

वानप्रस्थी को चाहिए कि वह जितेंद्रिय होकर सर्वदा स्वाध्याय करने में रत रहे , सांसारिक विषयों से इंद्रियों का दमन करें , सब पर कृपया दृष्टि रखता हुआ विधादि का दान करता रहे , किंतु प्रत्युपकार में किसी से कुछ न ले , इस प्रकार व्यवहार करें ।

योगदर्शन के 1/28 व्यासभाष्य में स्वाध्याय के विषय में कहा है–

स्वाध्याय से मनुष्य योग को साधे , योग से स्वाध्याय का मनन करें , स्वाध्याय और योग की सम्पति से परमात्मा का साक्षात्कार होता है ।
इस प्रकार से मुनि लोग स्वाध्याय है को अपने जीवन में चरितार्थ करें ।

।। संन्यासाश्रम ।।

चौथे आश्रम सन्यास में सभी सांसारिक साधनों का त्याग करते हुए स्वाध्याय की आवश्यकता बतलाई है ।

[मनुस्मृति. 6/15]

सन्यासी सब सांसारिक कार्यों से विरत हो जायें , किंतु वेद के स्वाध्याय को न छोड़े , वह सन्यासी के लिए भी अनिवार्य है । इस प्रकार ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , और संन्यास सभी आश्रमों में स्वाध्याय यज्ञ की शास्त्रकारों ने अत्यन्त आवश्यकता बतलाई है ।

Edit with WPS Office

[मनुस्मृति. 6/18]
ब्राह्मणादि चारों वर्ण , ब्रह्मचर्य आदि चारो आश्रम अर्थात सम्पूर्ण वर्णाश्रम धर्म ,भूत वर्तमान और भविष्यत इन सबका ज्ञान वेद के अध्ययन से होगा ।

- { ।। स्वाध्याय की महिमा ।। }

हमारे शास्त्रों में स्वाध्याय की महिमा बहुत बतलाई गई है । वेद स्मृति उपनिषद दर्शन और ब्राह्मणग्रन्थों में स्वाध्याय के महत्व पर प्रभुत प्रकाश डाला गया है । स्वाध्याय के महत्व को दृष्टि में रखते हुए ही हमारे पूर्वज ऋषि– महर्षियों ने हमारी जीवनचर्या में स्वाध्याय को सबसे अधिक महत्व दिया है ।
जैसा– कि महर्षि मनु ने कहा है –
[मनुस्मृति. 4/147]
ब्राह्मण का कर्तव्य है कि वह यथा अवसर आलस्यरहित होकर वेद का ही अभ्यास करें , क्योंकि यही ब्राह्मण का मुख्य और परम धर्म है । अन्य सब कर्तव्य इसके उपधर्म कहलाते हैं ।

[मनुस्मृति. 2/166]
तपस्या में लगा हुआ ब्राह्मण नित्य प्रति वेदों का अध्ययन करें , उनका अभ्यास कदापि न छोड़े , क्योंकि वेद का पढ़ना ही ब्राह्मणों का परम ताप कहलाता है ।

[गीता अध्याय. 17/15]
किसी को दुख न देनेवाला वाक्य बोलना , सत्य बोलना , प्रिय और हितकारी वाक्य बोलना और स्वाध्याय का नित्य अभ्यास करना यह सब वाणी का तप कहलाता है । वाणी से इन कर्मों के करने को वाङ्मय तप कहते हैं ।

[मनुस्मृति. 11/245]

Edit with WPS Office

शक्ति के अनुसार वेदाभ्यास करना , महायज्ञ करना तथा क्षमा करना , यह तीनों कर्म महापातक रूपी कर्म से उत्पन्न हुए बड़े-बड़े पापों को भी शीघ्र ही नष्ट कर देते हैं ।

जो धर्म का अनुष्ठान जानने वाला तथा धर्माचरण करने वाला ब्राह्मण है । वह यदि थोड़ा अध्ययन करके भी वेदों का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है । उनमें यत्न करता है वह स्वर्गलोक को जाता है ।

[छान्दोग्य उपनिषद् 2/23/1]
मनुष्य के लिए धर्म के तीन स्कंध है । —--
यज्ञ , स्वाध्याय , दान ।
इनमें स्वाध्याय सर्वश्रेष्ठ है , क्योंकि इसी से हम वस्तुतः मनुष्य कहलाने के अधिकारी बनते हैं ।

शतपथ में लिखा है— ब्राह्मण जिस दिन स्वाध्याय नहीं करता , उसी दिन वह ब्राह्मण से अब्राह्मण हो जाता है । अर्थात ब्राह्मण की पवित्रता इसी में है कि वह सदा सर्वदा दिन प्रतिदिन नया ज्ञान , उपयोगी ज्ञान , ब्रह्मज्ञान अर्जित करता चले । अपने ज्ञान रूपी कोष को उत्तरोत्तर बढ़ता चलें ।
ज्ञान का मार्ग किसी की बपौती नहीं है ? वरन गरीब , अमीर , नीच- ऊंच , नारी , पुरुष , बालक , जवान और वृद्ध सबके लिए समान रूप से खुला हुआ है ।

स्वाध्याय की महिमा के विषय में महाभारत में बहुत कुछ कहा गया है —
[महाभारत. अध्याय 8 , श्लोक 3]
भीष्म जी ने कहा– युधिष्ठिर ! जिनका ब्रह्म (ईश्वर तथा वेद) ही परम धन है , आत्मज्ञान हीं दिव्य गति है तथा वेदों का स्वाध्याय ही श्रेष्ठ तप है , उन ब्राह्मणों को मैं चाहता हूं ।

Edit with WPS Office

[महाभारत. अध्याय 11 , श्लोक. 18]
लक्ष्मी कहती है– मैं सदा वेदों के स्वाध्याय में तत्पर रहने वाले ब्राह्मणों , स्वधर्मपरायण क्षत्रियों , कृषि धर्म में लगे वैश्यों तथा नित्य सेवापरायण शूद्रों के यहां निवास करती हूं ।

[महाभारत. अध्याय 31 , श्लोक 14]
नारद ने श्री कृष्ण जी से कहा– जो नित्य निरंतर समस्त प्राणियों पर प्रसन्नचित्त रहते हैं और सवेरे से दोपहर तक वेदों के स्वाध्याय में संलग्र रहते हैं , उनका मै पूजन करता हूं ।

- { स्वाध्याय की प्रशंसा }

शतपथ ब्राह्मण के एक ब्राह्मण में संपूर्ण स्वाध्याय की प्रशंसा का उल्लेख है ।
[शतपथ ब्राह्मण. 11/5/7/1]
यहां लिखा है– अब स्वाध्याय की प्रशंसा करता हूं । स्वाध्याय और प्रवचन दो प्रिय कर्म है । जो इनको करता है , वह एकाग्र मन वाला हो जाता है । वह कभी पराधीन नहीं होता । उसके कार्य दिनों दिन सिद्ध होते जाते हैं , वह सदा सुख की नींद सोता है । उससे बढ़कर अपने रोगों का चिकित्सक कोई नहीं होता । इंद्रिय- संयम आत्माभिमुखता , बुद्धि का विकास और कीर्ति के कारण लोक- व्यवहार में निर्विघृता ये वैशिष्टय उसको प्राप्त हो जाते हैं । उसकी बुद्धि विकसित होकर अध्ययन अध्यापन, यजन- याजन आदि चारों कर्मों से उसे युक्त कर देती है । स्वाध्यायसील के व्यवहार से आकृष्ट हुए लोग उसका सत्कार और दान के द्वारा तथा उसे सब प्रकार के कष्टों से बचाकर और उसके प्राणों की रक्षा करके उसका पालन करते हैं ।

[शतपथ ब्राह्मण. 15/5/8/10]
अर्थ___ जलाशय नित्य बहते हैं , सूर्य नित्य चलता है ,चंद्रमा नित्य यात्रा करता है , नक्षत्र सदा अपनी परिक्रमाओं में घूम रहे हैं । सो जिस दिन कोई

Edit with WPS Office

ब्राह्मण स्वाध्याय नहीं करता उस दिन वह ऐसा ही काम करता है , जैसे जल सूर्य चंद्र नक्षत्र यह सब देव अपना कार्य करना छोड़ दे । इसलिए स्वाध्याय नित्य करना चाहिए । कुछ नहीं तो एक ऋचा, एक यजुर्वेद वाक्य , एक साम वचन , एक गाथा या एक लोकोक्ति का ही उच्चारण कर ले जिससे की स्वाध्याय का व्रत टूटने न पावें ।

[मनुस्मृति. 2/167]

अर्थ___ निश्चय ही वह ब्राह्मण पग के नख से लेकर शिखा तक परम तप तपता है जो की सामर्थ्यनुसार प्रतिदिन नियम से स्वाध्याय करता है । भले ही वह द्विज पुष्पमाला आदि से अलंकृत होकर ही ऐसा करता हो ।

[शतपथ ब्राह्मण. काण्ड 11 , अध्याय. 5 , ब्रा 6 क 2]

संसार में जितने भी कार्य हैं स्वाध्याय उन सबसे श्रेष्ठ है , कठिन कार्य है , ऐसा जानकर जो स्वाध्याय करता है वह तत्वों को जान लेता है । इसलिए स्वाध्याय करना चाहिए ।

[शतपथ ब्राह्मण. काण्ड 11 , अध्याय 5 , ब्रा 7 , क 1]
स्वाध्यायशील मनुष्य जिस जिस वेद का स्वाध्याय करता है । उसको उस उस वेद का वही फल मिलता है । जो उस वेद से यज्ञ करने पर होता है । स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए ।

- **{ ।। स्वाध्याय का फल ।। }**

स्वाध्याय में भी एक आत्मिक सुख है । ज्यो- ज्यो हम ज्ञान प्राप्त करते हैं , अन्दर से एक प्रकार के विवेक युक्त ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करते हैं । गुप्त

Edit with WPS Office

सुख का अनुभव करते हैं ।
मनु महाराज ने लिखा है—--

[मनुस्मृति. 4/20]

मनुष्य ज्यों- ज्यों शास्त्रों का परिशीलन करता जाता है , त्यों- त्यों उत्तरोत्तर ज्ञान की वृद्धि होती जाती है और उसकी रुचि भी शास्त्रों के प्रति बढ़ती जाती है ।

[मनुस्मृति. 2/107]
स्वाध्याय करने का इतना फल है कि जो द्विज नित्य प्रति विधि- पूर्वक पवित्र होकर एक वर्ष तक स्वाध्याय करता है , तो ये समझों उसे नित्य प्रति दूध दही घी शहद मिलता है । उसको इनका अभाव नहीं होता ।

स्वाध्याययादिष्ट देवतासम्प्रयोग: । योगदर्शन. 2/44
स्वाध्याय से इष्ट देवता का साक्षात होता है ।

[योगदर्शन के 1/28 व्यासभाष्य में]
समन्वय करते हुए स्वाध्याय के विषय में कहा है ।
अर्थ___ स्वाध्याय से योग को प्राप्त करें और योग से स्वाध्याय का अभ्यास करें । इस प्रकार स्वाध्याय और योगरूपी सम्पति से परमात्मा का साक्षात होता है ।

ऋग्वेद और सामवेद में स्वाध्याय के फल का वर्णन करने वाले 6 मंत्र हैं । जिनमें स्वाध्याय के नाना लाभों का विस्तृत वर्णन किया है । उनमें से केवल तीन मंत्र यहां उद्धृत किए जाते हैं । —-

[ऋग्वेद. 8/67/31 , सामवेद. उत्तरार्ध अ० 10 खंड
ा० 6]

Edit with WPS Office

पावमनी अर्थात् सबको पवित्र करने वाली ईश्वर प्रदत एवं ऋषियों द्वारा सठिच्चत ऋचाओं का जो अध्ययन करता है । वह पवित्र आनंद रस का आस्वादन करता है ।

[सामवेद. प्रमाण ऊपर लिख आए हैं]

पावमानी ऋचाएं इस लोक और परलोक दोनों को धारण करने में हमारे सहायक हो , देव- उत्तम विद्वान या श्रेष्ठ इंद्रियों द्वारा प्राप्त करवाई हुई ये ऋचाएं हमारी शुभकामनाओं को पूर्ण करें ।

[सामवेद. उत्तरार्ध अ० 10 , खंड 6]

ये पावमानी ऋचाएं कल्याणकारिणी है , इनके द्वारा मनुष्य आनन्द को प्राप्त होते हैं । इन ऋचाओं का अर्थात वेद का स्वाध्याय करने वाले इस लोक में उत्तम भोग का उप- भोग करता हुआ मोक्ष का अधिकारी बन जाता है । अतएव स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए ।

स्वाध्याय का उपसंहार करते हुए पाठको को बताना चाहता हूं कि महाभाष्यकार पतंजलि ने वेद- वेदांग का स्वाध्याय निष्कारण - स्वार्थ आदि से रहित धर्म है , पुनः वे लिखते हैं –

[महाभारत अ० 1/1/1 आ० 1]

विधा चार प्रकार से आती है–
आगम , स्वाध्याय , प्रवचन और व्यवहारकाल से , आगमकाल उसे कहते हैं कि जिसमें मनुष्य सावधान होकर , ध्यान देके पढ़ाने वाले से विधादि पदार्थ ग्रहण कर सके । स्वाध्यायकाल उसे कहते हैं कि पठन समय में आचार्य के मुख से जो शब्द अर्थ और सम्बंधों की बातें प्रकाशित हो । उन्हें एकान्त में स्वस्थचित होकर पूर्वापर विचार के हृदय में ठीक-ठीक दृढ कर सके ।

Edit with WPS Office

प्रवचनकाल , उसे कहते हैं जिसमें दूसरे को प्रीति से विधाओं को पढ़ा सकना , व्यवहारकाल उसे कहते हैं , कि जब अपनी आत्मा में सत्यविधा होती है । तब यह करना , यह न करना , वही ठीक- ठीक सिद्ध होके वैसा ही आचरण करना हो सके ।

स्वाध्याय करके मनुष्य अपने जीवन को व्यवहारिक बनाएं , अर्थात चरितार्थ करें ।

- **{ ।। स्वाध्यायशील श्रीराम ।। }**

प्राचीन काल के महापुरुष ऋषि लोग वेदों के ज्ञाता थे । उदाहरणार्थ —-

- वाल्मीकि रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचंद्र वेद- वेदांग के ज्ञाता धनुर्वेद में निष्णात और गुरुकुल के स्नातक थे ।

तप और स्वाध्याय में रत , वक्ताओं में निपुण और मुनियों में श्रेष्ठ नारद जी से तपस्वी वाल्मीकि मुनि ने पूछा—
भगवन ! इस समय इस संसार में गुणवान; शूरवीर धर्मज्ञ , कृतज्ञ , सत्यवादी और दृढ़- प्रतिज्ञ कौन है ?
श्री राम के बहुत से गुणों का वर्णन किया वहां वैदिक विद्वान वेद- वेदांग के जाननेवाला भी बताया गया है ।

रक्षिता स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च ।
रक्षिता वेदवेदागतत्वज्ञों धनुर्वेद च निष्ठित; ।।

(वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड प्रथम सर्ग , श्लोक 14)

भावार्थ : ______

- श्रीराम प्रजा के पालक धर्म के रक्षक हैं , स्वजनों के पालक हैं , वेद और वेदागों के ज्ञाता तथा धनुर्वेद में निष्णात है ।

[श्लोक. 15]

Edit with WPS Office

भगवान श्री राम सब शास्त्रों के तत्वों को अच्छी तरह से जानने वाले हैं , स्मृतिशाली और प्रतिभाशाली हैं , सर्वप्रिय , सज्जन , अपनी आत्मा में कभी दीनता नहीं होने देते और कार्य कुशल हैं । वाल्मीकि रामायण सुंदरकाण्ड में वेदों का अध्ययन किया लिखा है—

[वाल्मीकि रामायण. सुंदरकाण्ड सर्ग 34]
श्री राम यजुर्वेद के ज्ञाता , वैदिक विद्वानों से सम्मानित , धनुर्वेद तथा वेद-वेदांग में पारंगत है ।

[अयोध्या काण्ड. 1/20]
गुरुकुल में पढ़कर श्री राम सर्वविधाव्रत स्नातक है । तथा छहों अंगोंसहित सम्पूर्ण वेदों के ज्ञाता थे । श्री राम के विषय में युद्ध कांड में लिखा है—-

[युद्धकाण्ड. 28/19]
अर्थ___ श्री राम से धर्म पृथक नहीं है श्री राम धर्म का कभी उल्लंघन नहीं करते , वे ब्रह्मास्त्र और वेद दोनों के ज्ञाता हैं तथा वेदवेंताओं में श्रेष्ठ हैं ।
—--- इस प्रकार से मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम सहित चारों भाई गुरुकुल के स्नातक और वेदों के ज्ञाता थे ।

- **{ ।। वीर हनुमान व्याकरण के महाज्ञाता थे ।। }**

[किष्किंधा सर्ग. 3 में]
श्री राम वीर हनुमान के विषय में लक्ष्मण से कहते हैं—
जिसे ऋग्वेद की शिक्षा नहीं मिली , जिसने यजुर्वेद का धारण नहीं किया तथा जो सामवेद का विद्वान नहीं है वह ऐसी सुंदर शैली में किसी से वार्तालाप नहीं कर सकता ? निश्चित ही इन्होंने संपूर्ण व्याकरण का बहुत बार अध्ययन किया है । क्योंकि वीर हनुमान के कई बार बोलने पर भी उनके मुंह से अशुद्धि नहीं दिखाई दी । इसलिए वीर हनुमान वेद सहित व्याकरण के भी ज्ञाता थे ।

Edit with WPS Office

[रावण गुरुकुल का स्नातक था , युद्धकाण्ड 92/64]

रावण गुरुकुल में गुरु द्वारा वेद- विधाव्रत स्नातक उपाधि से अलंकारकृत था । सुपाश्व नामक बुद्धिमान रावण के मंत्री ने रावण से कहा—-
हे रावण ! तू वेद विधाव्रत स्नातक तथा स्वधर्मपरायण होकर स्त्रीवध (सीता का वध) क्यों करना चाहता है ?
रावण वेद का ज्ञाता होने पर भी उसका आचरण ठीक नहीं था । इसलिए तो कहा है कि– आचारहीन न पुननित वेदा: „ अर्थात , आचारहीन को वेद भी पवित्र नहीं करते ।

- **{ ।। वेदों का ज्ञाता आचार्य द्रोण ।। }**

आचार्य द्रोण कहते हैं कि – मेरे आगे चारों वेद हैं पीछे धनुष और बाण है । आगे ब्रह्मशीर शक्ति है और पीछे क्षात्रशक्ति में श्राप और शर दोनों से शत्रुओं का मान मर्दन कर सकता हूं ।

[महाभारत. सभापर्व 38/19–20]

भीष्म शिशुपाल को उत्तर देते हुए कहते हैं—
श्री कृष्ण में वेद- वेदांग विज्ञान और बल आदि सभी गुण मौजूद है । अर्थात इस समय मनुष्यों लोक में , श्री कृष्ण से बढ़कर कौन है , दान दया बुद्धि वेदादि शास्त्रों का श्रवण ,शूरता , बुरे कार्यों में लज्जा , कीर्ति , उत्तम बुद्धि , नम्रता , तेजस्विता , धैर्य , संतोष , सभी गुणों में इन्होंने अनुपम ख्याति प्राप्त की है । ये गुरुकुलों के चरणों में पढ़कर गुरुकुल से स्नातक हुए ।

Edit with WPS Office

- **[महर्षि भारद्वाज वेदों के ज्ञाता थे]**

(तैत्तिरीय ब्राह्मण. 3/10/11/3)
अर्थात भारद्वाज ने 300 वर्ष पर्यन्त (मनुष्य की 3 आयु शतायुवे पुरुष: के अनुसार 100×3 =300 ब्रह्मचर्य अर्थात वेदों का अध्ययन किया । इस प्रकार अध्ययन करते-करते वह जब अत्यंत वृद्धावस्था को प्राप्त हो गया तो इंद्र ने उसके समीप आकर कहां यदि तुझे और भी आयु मिले तो तू उससे क्या करेगा ? भरद्वाज ने उत्तर दिया कि उससे भी मैं वेदों का अध्ययन आदि रूप ब्रह्मचर्य ही करूंगा । इंद्र ने पर्वत के समान तीन ज्ञान राशि रूप वेदों को दिखाया और उनमें से प्रत्येक राशि से मुट्ठी सी भरली और भारद्वाज को कहा कि ये वेद इस प्रकार ज्ञान की राशि या पर्वत के समान है जिनके ज्ञान का कहीं अन्त नहीं । यद्यपि तूने तीन आयु पर्यंत (300 वर्ष तक) वेदों का अध्ययन किया है तथापि तुझे उनके संपूर्ण ज्ञान का अन्त नहीं प्राप्त हुआ ।

- **[स्वाध्याय रत नारद और सनत्कुमार का प्रश्नोत्तर]**

कहते हैं कि एक बार सनत्कुमार अर्थात सदा कुमार रहने वाले ऋषि के पास नारद मुनि पहुंचे और उनसे कहा , भगवन ! मुझे ज्ञान दीजिए । ऋषि ने कहा, जो कुछ तुम पहले जानते हो वह बतलाओ , तब मैं उससे आगे तुम्हें शिक्षा दूंगा । नारद ने भगवन ! मैंने ऋग्वेद पढ़ा है , यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद , पांचवा इतिहास- पुराण वेदों के वेद (अर्थात जिससे वेदों स्पष्ट हो जाते हैं) पित्र्य राशि दैवविधा , वाको वाक्य या एकायन , ब्रह्म विद्या सर्प विद्या ,भूत – विधा क्षत्र= विधा , नक्षत्र विद्या , सर्प विद्या देवजन विद्या (ललित काला) इन्हें भी पढा है ।

भगवन ! यह सब कुछ पढ़ कर में मन्त्रवित् हुआ है , आत्मवित् नहीं

Edit with WPS Office

हुआ – मुझे शब्द ज्ञान तो हो गया है आत्मज्ञान नहीं हुआ है ।

(तैत्तिरीय आरण्यक. 2/12)
का कहना है कि यदि व्यक्ति बाहर न जा सके , तो वह गांव में ही स्वाध्याय कर ले , यदि दिन में स्वाध्याय न हो सके तो रात्रि में स्वाध्याय कर ले , यदि बैठकर न कर सके तो खड़ा रहकर या लेटकर स्वाध्याय कर ले ।

(शतपथ ब्राह्मण. 11/3/7/4.याज्ञवल्क्य ऋषि)
शतपथकार लिखते हैं"-- यदि कोई व्यक्ति सुगंधित तेल लगाकर श्रृंगार किये हुए यथेष्ट भोजन करके तृप्त हुआ , बिछोने (बेड तकत ,खाट) पर लेटा हुआ भी स्वाध्याय कर रहा है तो जानो वह चोटी से लेकर नाखून के अग्रभाग तक तप कर रहा है ।

स्वाध्याय संयमाभ्यां दृश्यते पुरुषोत्तम: (भवसंतरणोपनिषद् . 3/6)
अर्थात__ उपनिषद की इस उक्ति के अनुसार स्वाध्याय और संयम ऐसे तत्व हैं, जिनसे व्यक्ति पुरुष से पुरुषोत्तम बनता है ।

स्वाध्याये नास्त्यनध्यायो ब्रहमसंत्र हि तत् स्मृतम , (मनुस्मृति. 2/106)
स्वाध्याय में छूट नहीं , क्योंकि इसे ब्रह्मसंत्र अपि वा ब्रहमयज्ञ कहां गया है । सन्यासी सभी काम्य कर्मों का न्यास (त्याग) कर सकता है , परन्तु स्वाध्याय का त्याग नहीं कर सकता ।

मनुस्मृति. 6/94
अर्थात__ सभी काम्य कर्मों को त्याग दे , परन्तु वेद को , वेद के स्वाध्याय को न त्यागे ।
स्वाध्याय ही ऐसा श्रम है , जो चारों आश्रमियो के लिए तुल्य एवं आवश्यक है , स्वाध्याय श्रम से ही आश्रम शब्द की सार्थकता है ।

- **{ स्वाध्याय परम श्रम है }**

Edit with WPS Office

स्वाध्याय मात्र श्रम नहीं , परमश्रम है , धावापृथ्वी में जितने भी श्रम गिनाये जा सकते हैं , उनमें स्वाध्याय सभी की पराकाष्ठा है –चरम सीमा है , परला सिरा है , भगवान **याज्ञवल्क्य कहते हैं–**

शतपथ ब्राह्मण. 11/5/7/2

इस द्युलोक और पृथ्वीलोक के मध्य जो कोई भी श्रम है , स्वाध्याय उन सब की पराकाष्ठा है ।

(मनुस्मृति. 2/168)

अर्थात__ जो द्विज (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य) स्वाध्याय श्रम न करके अन्यत्र श्रम मै जा लगता है , वह बहुत शीघ्र ही शूद्रत्व को प्राप्त हो जाता है । इस प्रकार आपने देखा कि जहां ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , और संन्यास – आश्रमी के लिए स्वाध्याय – श्रम विहित है , वहां द्विजमात्र के लिए भी स्वाध्याय श्रम करना आवश्यक है । श्रम और श्रम में भी स्वाध्याय – श्रम , वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था की नींव है ।

यदि कोई व्यक्ति ब्राह्मणत्व प्राप्त करना चाहे , तो उसके लिए विहित अनेक साधनों में प्राथमिकता स्वाध्याय को ही दी जाती है ।

मनुस्मृति. 2/28

अर्थात__स्वाध्याय से विचार करने कराने से होंम के अनुष्ठान से , शब्द- अर्थ सम्बन्धसहित वेद को पढ़ने से , पौणृमासी आदि इष्टि के करने से , पुत्रोंत्पादनादि से , तथा पचमहायज्ञो के और अन्य विशिष्ट यज्ञो के अनुष्ठान से इस शरीर में ब्राह्मण भाव लाया जा सकता है ।

- **{ स्वाध्याय परमतप है }**

(शतपथ ब्राह्मण. 11/3/7/4)

अर्थात__ यधपि कोई व्यक्ति सुगंधित तेल लगाकर और श्रृंगार किये हुए अच्छी प्रकार से सुखदायक बिघौने पर लेटा हुआ भी स्वाध्याय करता है , तो

Edit with WPS Office

समझना चाहिए कि वह चोटी से लेकर नाखून के अग्रभाग तक तप कर रहा है ।

यही बात मनु ने भी कही है–

(मनुस्मृति.2/167)

अर्थात__ जो द्विज सुगंधित माला धारण किए हुए भी यथासामर्थ्य प्रतिदिन स्वाध्याय करता है , निश्चय जानो वह नखाग्र– पर्यन्त परमतप कर रहा है ।

(मनुस्मृति. 2/166)

अर्थात__ ब्राह्मण तप करते हुए सदा वेदाभ्यास करें । वेदाभ्यास ही ब्राह्मण का परम तप है ।

- **{ स्वाध्याय परम धर्म है }**

पठचधा वेदाभ्यास –

वेदस्वीकरणं पूर्व , विचारोऽभ्यासंन जप: ।
प्रदानंचैव शिष्येभ्यो वेदाभ्यासों हि पठचधा ।।

(दक्षस्मृति. 2/31)

भावार्थ ___ वेदों को स्वीकार करने से पूर्व वेदों का अध्ययन व आचरण करना , विचार करना , अभ्यास व जप करना । शिष्यों को वेदों का अभ्यास भी कराया जाता है ।

श्रत्यभ्यास: पठश्चापि स्यात् स्वीकारोऽर्थविचारणमां ।
अभ्यासश्च तपश्चापि शिष्येभ्य प्रतिपादनम् ।।

(स्कन्द पुराण. 3/ (2)5/14)

भावार्थ ___ आस्था का अभ्यास , पढ़ना ,स्वीकार करना और अर्थ पर विचार करना है । शिष्यों को अभ्यास एवं तप का उपदेश ।

Edit with WPS Office

- { स्वाध्याय परम यज्ञ है }

आपस्तम्ब - सूत्रकार , शतपथकार और भगवान मनु स्वाध्याय को ब्रहमयज्ञ कहते हैं —

ब्रहमयज्ञों ह वा एष यत् स्वाध्याय । (आप० घ० सू० . 1/4/3)

अर्थात__ भगवान याज्ञवल्क्य ने तो न केवल स्वाध्याय को ब्रह्मयज्ञ कहा है , अपितु उन्होंने स्वाध्याय यज्ञ के भिन्न-भिन्न पात्रों का वर्णन भी किया है । जिस प्रकार अग्निहोत्र में जुहू , चमस , स्त्रुवा , अवभृत आदि पात्र होते हैं , तद्वत स्वाध्याय- यज्ञ के वाणी , मन , आंख आदि आवश्यक अंग भी अग्निहोत्र के पात्रों की भांति पात्र हैं । उन्होंने लिखा है—

(शतपथ ब्राह्मण. 11/5/6/3)

निश्चय ही स्वाध्याय ब्रह्म यज्ञ है , वाणी इस ब्रह्मयज्ञ की जुहू है , मन उपभृत है , चक्षु ध्रुवा है , मेधा स्त्रुव है , और सत्य अवभृत है , अर्थात जिस प्रकार अग्निहोत्र आदि द्रव्ययज्ञों में जूहू , उपभृत आदि पात्रों की आवश्यकता होती है , उसी प्रकार स्वाध्यायरूपी यज्ञ में जुहू आदि की आवश्यकता है ।

वेदाभ्यासों हि विप्राणां परमं तप उच्चतें ।
ब्रह्मयज्ञ स विज्ञेय: षडडगसहितस्तु य: ।।

(दक्षस्मृति. 2/30)

- { स्वाध्याय परम रस है }

तैत्तिरीय उपनिषद्. 2/7
अथर्ववेद. 10/8/44

पावमानीयो अध्येत्यषिभि: संभूतं रस ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीर सपिधूदकम् ।।

(ऋग्वेद. 9/67/32)

Edit with WPS Office

अर्थात__ जो व्यक्ति अग्नि- वायु आदि ऋषियों द्वारा एकात्मना धारित वेद को अधिकृत रूप से ग्रहण करता है , अध्ययन करता है , उसे अनेकों लौकिक रस प्राप्त होते हैं ।

भिन्न-भिन्न कक्षाओं के रस भी भिन्न-भिन्न है । पाठशास्त्र में मधुर , अम्ल , लवणादि षडस है , तो साहित्य में श्रंगार आदि (वात्सल्य को मिलाकर दस रस हैं , जिन्हें साहित्यिक लोग ब्रह्मानंद का सहोदर मानते हैं । साहित्य के क्षेत्र में श्रंगार आदि रस है , परन्तु वे भी ऐसे रस हैं , जिनसे व्यक्ति की पूर्ण तृप्ति नहीं होती , वह अतृप्त ही रहता है । कोई ऐसा रस होना चाहिए जिसे पीकर पूर्णतृप्त हुआ जा सके । जिसमें नहाकर निष्णात हो जाए । वही एक रस वेद है , अध्ययन , स्वाध्याय है । स्वाध्याय- रस का पान करने वाले जानते हैं कि यज्ञ- वाणी का विषय नहीं , अनुभव का विषय है – स्वयं तदन्त: करणेन - गृहाते ।

एषा भूतानां पृथिवी रस: पृथिव्या आपो रस: ।
अपाम् ओषधयो रस: । ओषधीनां पुरुषों रस: ।
पुरुषस्य वाग् रस: । वाच: ऋग्रस , ऋच: साम रस: ।
साम्न उद्गीथो रस । –----

अर्थात__ उपनिषद के इस वाक्य में उद्गगीथ को अंतिम रस कहां है । उद्गगीथ जिसका रस है वे ऋग्वेदादि ग्रन्थों के स्वाध्याय- रस का पान करके ही व्यक्ति आनंदी होता है । यही वह रस है जिसे पाकर व्यक्ति जागतिक रसों से हट सकता है । अन्यथा जागतिक रस व्यक्ति को व्यथित करते हैं ।

गीता. 2/57 – में श्री कृष्ण कहते हैं–

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिन: ।
रसवर्ज रसोप्यस्य परं दृष्टावा निवर्तते ।।

अर्थात__ निराहार देही के विषय तो निवृत्त हो जाते हैं , परन्तु उनके प्रति लगाव , उनकी चाह , उनका रस बना रहता है । उसकी निवृत्ति परम रस का पान करके ही होती है । यही गीताकार को परम से परमात्मा ही अभीष्ट है । परन्तु यदि परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान को परम मान लिया जाए , तो कोई हानि नहीं , बस , अधीती उस रस का तैराक हो जाता है । उसमें अबाध गति पा लेता है । अध्येति का यही भाव है , इस स्वाध्याय - इस के कारण ही

Edit with WPS Office

वाणी सरस्वती कहलाती है । इस तरह स्वाध्याय परम- श्रम है , परम तप है , परम धर्म है , परम स्कन्ध है , परम योग है , परम यज्ञ है , और परम रस भी , इसलिए स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए ।

मैत्रा० उपनिषद. 6/34

छान्दोग्य उपनिषद्. 1/1/1

(शतपथ ब्राह्मण. 11/5/7/1)

देखो , ये नदियां निरन्तर बहती है , रुकती नहीं, सूर्य समय पर उदय होता है । चंद्रमा नियमित गति से चलता है । समस्त नक्षत्र- मण्डल नियमित चल रहा है । एकनिष्ठ अपने व्रत पर आरूढ़ है । जैसे– ये सभी देव यदि कभी रुक जाए , नियम भंग कर दे , वैसे ही ब्राह्मण का वह दिन होगा जिस दिन वह स्वाध्याय- नियम का भंग कर देगा ।

शतपथकार तथा याज्ञवल्क्य तो स्वाध्याय ना करने से उतनी ही बड़ी हानि मानते हैं जितनी की नदियों के रुकने से हानि होने की संभावना होती है , जितनी कि सूर्य के अनुदित होने से हानि होने की संभावना होती है , जितनी की चंद्रमा और नक्षत्र- मंडल के अपनी चाल छोड़ देने से हानि होने की संभावना होती है । जिस दिन ये देवगण अपना व्रत भंग कर ठहर जाएंगे , उस दिन प्रलय हो जाएगी । इसी प्रकार व्यक्ति के स्वाध्याय व्रत को भंग करने का दुष्परिणाम होगा कि परिवार समाज और राष्ट्र के शील ,व्रत , चरित्र का प्रलय हो जाएगा । यह अक्षम्य अपराध है , व्रत को अक्षुण्ण रखने के लिए चाहे एक वाक्य मात्र क्यों न हो , उसे ही दोहरा ली , नागा न करें ।

शतपथ ब्राह्मणकार लिखते हैं –

(शतपथ ब्राह्मण. 11/5/6/9)

ऋचा ही सही एक यजुर्मन्त्र ही सही , एक साममन्त्र ही सही , एक गाथा ही सही , व्रत की अखंडता के लिए कोई एक श्लोक ही दोहरा ले , परन्तु स्वाध्याय में नागा न आने दे , स्वाध्याय- सत्र की अखंडता बनी रहनी चाहिए ।

(आश्वलायन - गृहासूत्र. 3/3/1)

Edit with WPS Office

इसमें स्वाध्याय के लिए निम्न ग्रंथों के नाम लिखे हैं । ऋग्वेद, यजुर्वेद , सामवेद , अथर्ववेद , ब्राह्मण , कल्प , गाथा , नाराशंसी , इतिहास एवं पुराण ।
किन्तु मनोयोगपूर्वक जितना स्वाध्याय किया जा सके उतना ही करें । बस , स्वाध्याय- सत्र को अटूट रखें , उसमें व्यवधान न आने पाये ।

(शांखायन - गृहासूत्र.1.4)
यहां पर ब्रह्मयज्ञ के लिए ऋग्वेद के बहुत से सूक्तो एवं मंत्रों के पाठ की बात कही है । अन्य गृहासूत्रों ने भी शाखा- भेद के अनुसार ब्रह्मयज्ञ के लिए विभिन्न मंत्रों के पाठ व स्वाध्याय की बात कही है ।

(याज्ञवल्क्यस्मृति. 1/10/1)
मैं यहां लिखा है कि समय एवं योग्यता के अनुसार ब्रह्मयज्ञ में वेदों के साथ इतिहास एवं दर्शनग्रंथ भी पढ़े जा सकते हैं ।

उपर्युक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि वेद के अध्ययन के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों का अध्ययन भी स्वाध्याय है । समय के अनुसार स्वाध्याय के नियमों में शिथिलता लायी गयी और एकमात्र वेद अध्ययन को ही स्वाध्याय न कहकर अन्य ग्रंथों को भी समाविष्ट कर लिया गया । यहां तक की उसमें 6 वेदांगो , आश्वलायनादि - श्रोत्तसूत्रों , निरुक्त , छन्द , निघण्टु , ज्योतिष , शिक्षा , पाणिनि - व्याकरण के प्रथम सूत्र , याज्ञ - वल्किस्मृति. (1.1) के प्रथमश्लोकार्ध , महाभारत. (1/1/1) के प्रथम श्लोकार्ध , न्याय , पूर्वमीमांसा , उत्तरमीमांसा के प्रथम सूत्र आदि को भी समाविष्ट कर लिया गया । इस ढील देने का यही प्रयोजन दीखता है कि किसी भी अवस्था में स्वाध्याय- सत्र की अखंडता में अंतर न आने पाये , इसमें व्यवधान न हो ।
शतपथकार ने यही बात , स्वाध्याय- यज्ञ को देवयज्ञ का रूप देकर समझाई है , यहां उसके वाणी , मन , चक्षु , हृदयादि अंगों को जूहू , उपभृत , ध्रुवा , स्त्रुव आदि पात्रों की संज्ञाए दी है , वहां उसने ऋग , यजु , साम , अथर्ववेद , ग्रंथों को दूध ,घृत , सोम , स्नेह , मधु की आहुतियां स्वीकार किया है । जिस प्रकार देवयज्ञ मैं देवों को तृप्त करने के लिए दूध ,घृत , सोमादि पदार्थों की

Edit with WPS Office

आहुतियां देना आवश्यक है , उस प्रकार स्वाध्याय- यज्ञ में दूध , घृत , सोमादि की आहुतियां देना अनिवार्य है , वे दूध आदि पदार्थ यहां क्या है ..? जिनकी आहुतियां देने से देव तृप्त हो सकते हैं ।

(शतपथ ब्राह्मण. 11/5/6/4-9)

उपर्युक्त प्रमाण से यह सिद्ध हुआ कि जिस प्रकार द्रव्य यज्ञ में ,पय , आज्य , सोम , मेद (स्नेह) और मधु की आहुतियां देव तर्पणार्थ दी जाती है , उसी प्रकार स्वाध्याय यज्ञ में ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , अथर्ववेद , अनुशासन , विधा ,वाकोवाक्य इतिहास , पुराण , गाथा , नाराशंसी की आहुतियां दी जाती है । जिनके देने से देव तृप्त होते हैं , इससे जहां यह पता चला कि देवयज्ञ की भांति स्वाध्याय भी यज्ञ है । वहां यह ज्ञात हो गया कि किन-किन ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिए ।

ऋगादि चारों वेदों का और अनुशासन (वेदांग) विधा (सर्पविद्या एवं वाद - विवाद) , इतिहास , पुराण , गाथाएं , नाराशंसी तथा जीवन चरित र जिसमें नरों का शंसन हो प्रशंसा हो । **(छान्दोग्य उपनिषद. 7/1/1)**

उपर्युक्त प्रसंग का भी यही आशय है कि जिस प्रकार अग्निहोत्र नैत्यक कर्तव्य है , तद्वत स्वाध्याय- यज्ञ भी नैत्यक कर्तव्य है , जिस प्रकार देवयज्ञ मैं प्रतिदिन आहुति -दान आवश्यक है , स्वाध्याय यज्ञ में ऋगादि का अध्ययनरूप पय - आज्यादि आहुति – दान आवश्यक है । इसमें नागा न होना चाहिए ।

सर्पविद्या एवं देवविधा –छान्दोग्यपनिषद . 7/1/7

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 42. पृष्ठ बयालीसवां

• { ।। चारों वर्णों के कर्तव्य ।। }

।। कर्म गुण ।।

अथ ब्राह्मणस्वरुपलक्षणम्

[मनुस्मृति. 1/88]

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा ।
दान प्रतिग्रहचैव ब्राहमणानामकल्पयत् ।।

[श्रीमद्भगवत गीता. 18/42]

नमो दमस्तप: शौच क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञान विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ।।

अर्थ___ निष्कपट होके प्रीति से पुरुष- पुरुषों को स्त्री स्त्रियों को पढावे ।
पूर्ण विधा पढ़ें ।
अग्निहोत्रादि यज्ञ करें ।
यज्ञ करावे
विधा अथवा सुवर्ण आदि का सुपात्रों को दान देवे ।
न्याय से धनोपाजर्न करने वाले गृहस्थ से दान लेवे । इनमें से तीन कर्म पढाना , यज्ञ कराना ,दान लेना जीविका है । परन्तु —

[प्रतिग्रह प्रत्यवर]   11 मनु ०

जो दान लेना है , वह नीचे कर्म है , किन्तु पढ़ा के और यज्ञ करके जीविका करनी उत्तम है ।
मन को अधर्म में न जाने दे , किंतु अधर्म करने की इच्छा भी न उठने देवे ,

Edit with WPS Office

क्षोत्रादि इंद्रियों को अधर्माचरण से सदा दूर रखें दूर रखके धर्म ही के बीच में प्रवृत्त रखें । ब्रह्मचर्य , विधा , योगाभ्यास की सिद्धि के लिए शीत, उष्ण , निन्दा , स्तुति , क्षुधा , तृषा , मानापमान आदि द्वन्दू का सहना राग -द्वेष मोहादि से मन और आत्मा को तथा जलादि से शरीर को सदा पवित्र रखना । क्षमा अर्थात कोई निंदा स्तुति आदि से सतावे तो भी उन पर कृपालु रहकर क्रोधादि का न करना । निरभिमान रहना , दम्भ ,स्वात्मा - श्लाथा अर्थात अपने मुख से अपनी प्रशंसा न करके नम्र सरल शुद्ध पवित्र भाव रखना सब शास्त्रों को पढ़कर विचार कर उनके शब्दार्थ संबंधों को यथावत जानकर पढ़ाने का पूर्ण समर्थ्य करना । पृथ्वी से लेकर परमेश्वर पर्यन्त पदार्थों को ज्ञान और क्रिया- कुशलता तथा योगाभ्यास से साक्षात करके यथावत उपकार ग्रहण करना कराना , परमेश्वर , वेद , धर्म परलोक, परजन्म पूर्वजन्म कर्मफल और मुक्ति से विमुख कभी न होना ।
ये नव कर्म जिस और गुण धर्म में समझना , सबसे उत्तम गुण , कर्म , स्वभाव को धारण करना । ये गुण कर्म जिस व्यक्ति में हो वे ब्राह्मण और ब्राह्मणी होवे । विवाह भी इन्हीं वर्ण के गुण कर्म स्वभावो को मिला के ही करें । मनुष्यमात्र में से इन्हीं को ब्राह्मणवर्ण का आधिकार होवे ।2।

- **।। अथ क्षत्रियस्वरुपलक्षणम् ।।**

प्रजानां रक्षण दानमिज्याध्ययनमेव च ।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासत ।।
1. [मनुस्मृति. 1/89]

शौर्य तेजो धृतिदांक्ष्यं युध्दे चाष्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रकर्म स्वभावजमे ।।
2. गीता. 18/43

अर्थ___ 1. दीर्घ ब्रह्मचर्य से (अध्ययनम) सांगोपांग वेदादि शास्त्रों को यथावत पढ़ना , अग्निहोत्रादि यज्ञों का करना , सुपात्रों को विधा सुवर्ण आदि

Edit with WPS Office

और प्रजा को अभयदान देना , प्रजाओ का सब उपकार से सर्वदा यथावत पालन करना , यह धर्म क्षत्रियों के धर्म के लक्षणों में और शस्त्रविधा का पढ़ना और न्यायघर और सेना में जीविका करना क्षत्रियों की जीविका है । विषयों में अनासक्त हो के सदा जितेंद्रिय रहना , लोभ व्याभिचार , मधपानादि , नशा आदि दुर्व्यसनों से पृथक रहकर विनय सुशीलता आदि शुभ कर्मों में सदा प्रवृत्त रहना ।1।

2. शस्त्र संग्राम , मृत्यु और शस्त्रप्रहार आदि से न डरना , प्रगल्भता , उत्तम प्रतापी होकर किसी के सामने दीन वा भीरू न होना , चाहे कितनी ही आपात विपत क्लेश दुख प्राप्त हो तथापि धैर्य रखके कभी न घबराना , संग्राम , वाग्युद्ध , दूतत्व , न्याय विचार आदि सब में अति चतुर , बुद्धिमान होना , युद्ध में सदा उद्धत रहना , युद्ध से घबराकर शत्रु के वश में कभी ना होना , इसका अर्थ प्रथम श्लोक में आ गया , जैसे– परमेश्वर सब के ऊपर दया करके पितृव्रत वर्तमान , पक्षपात छोड़कर धर्माऽधर्म करने वालों को यथायोग्य सुख- दुख रूप फल देता और अपने सर्वज्ञता आदि साधनों से सबका अंतर्यामी होकर सबके अच्छे बुरे कर्मों को यथावत देखता है , वैसे – प्रजा के साथ वर्तकर गुप्त दूत आदि से अपने को सब सब प्रजा वा राजपुरुषों के अच्छे- बुरे कर्मों से सदा ज्ञात रखना , रात- दिन न्याय करने और प्रजा को यथावत सुख देने , श्रेष्ठों का मान और दुष्टों को दंड करने में सदा प्रवृत रहना , सब प्रकार से अपने शरीर को रोगरहित , बलिष्ठ, दृढ़ ,तेजस्वी , दीर्घायु रखके आत्मा को न्याय धर्म में चलकर कृतकृत्य करना आदि गुण कर्मों का योग जिस व्यक्ति में हो वह क्षत्रिय और क्षत्रिया होवे । इनका भी इन्हीं गुण कर्मों के मेल से विवाह करना और जैसे– ब्राह्मण पुरुषों और ब्राह्मणी स्त्रियों को पढ़ावें , वैसे– ही राजा-पुरुष , और रानी स्त्रियों का न्याय तथा उन्नत सदा किया करें । जो क्षत्रिय राजा न हो वे भी राज्य में ही यथाधिकार से नौकरी किया करें ।2।

- **।। अथ वैश्यस्वरुपलक्षणम् ।।**

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।

Edit with WPS Office

वणिक्पथं कुसीद च वैश्वस्य कृषिमेव च ।।
[मनुस्मृति. 1/90]

कृषि गौरक्ष्यं वाणिज्य वैश्य कर्म ।
स्वभावजम् ।।
[गीता. 18/44]

अर्थ___ 1. वेदादि शास्त्रों का पढ़ना , अग्रिहोत्रादि यज्ञों का करना , अनादि का दान देना ये तीन धर्म के लक्षण और गाय आदि पशुओं का पालन करना , उनसे दुग्धादि का बेचना नाना देशों की भाषा , हिसाब , भूगभविधा भूमि बीज आदि के गुण जानना , और सब पदार्थों के भावाभाव समझना , ब्याज का लेना खेती की विधा का जानना , अन्न आदि की रक्षा , खाद और भूमि की परीक्षा , जोतना बोना आदि व्यवहार जानना , ये चार कर्म वैश्य की जीविका है । ये गुण कर्म जिस व्यक्ति में हो वह वैश्य- वैश्या और इन्ही की परंपरा परीक्षा और योग से विवाह होना चाहिए ।1।
2.___ गौ इत्यादि पशुओं का पालन और वर्धन करना , विधा और धर्म की वृद्धि करने कराने के लिए धनादि का व्यय करना । यज्ञ करना वेदादि शास्त्रों का पढ़ना , सब प्रकार का व्यापार करना , उचित ब्याज लेना , खेती करना वैश्य में ये गुण स्वभाव रूप हो जाने चाहिए ।2।

- **।। अथ शूद्रस्वरुपलक्षणम् ।।**

एकमेव हि शूद्रस्य प्रभु: कर्म समादिशत् ।
एतेषामेव वर्णाना शुश्रूषामनसूयया ।।
[मनुस्मृति]

परिचयात्मक कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ।।
[गीता. 18/44]

Edit with WPS Office

अर्थ___ परमेश्वर ने (शूद्रस्य) जो विधाहीन जिसको पढ़ने से भी विधा न आ सके , शरीर से पुष्ट , सेवा में कुशल हो , उस शूद्र के लिए इन ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तीनों वर्णों की (अनसूयया) निन्दा से रहित प्रीति से सेवा करना , (एकमेव कर्म) यही एक कर्म करने की आज्ञा दी है । ये मुर्खत्वादि गुण और सेवा आदि कर्म जिस व्यक्ति में हो वह शूद्र और शूद्रा है । इन्हीं की परीक्षा से इनका विवाह और इनको अधिकार भी ऐसा ही होना चाहिए । इन गुण कर्मों के योग ही से चारों वर्ण होवे तो उस कुल , देश और मनुष्य समुदाय की बड़ी उन्नति होवे , और जिनका जन्म जिस वर्ण में हो उसी के सदृश गुण कर्म स्वभाव हो तो बात विशेष है ।1।

2.___ परमेश्वर ने जो विधाहीन , जिसको पढ़ने से भी विधा न आ सके , शरीर से पुष्ट , सेवा में कुशल हो उस शूद्र के लिए इन ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य तीनों वर्णों की निन्दा रहित प्रीति से सेवा करना यही एक कर्म करने की आज्ञा है ।2।

- **।। वर्ण परिवर्तन ।।**

शूद्रों ब्राहमणतामोति ब्राहमणश्चैतिशूद्रताम ।
क्षत्रियज्जातमेवं तु विधाद्वैश्यातथैव च ।।
[मनुस्मृति. 1/65]

अर्थ___ ब्राह्मण शूद्रता को प्राप्त हो जाता है और शूद्र ब्राह्मणता को प्राप्त हो जाता है । क्षत्रिय से उत्पन्न हुआ भी इसी प्रकार और वैसे ही वैश्य से हुआ पुरुष भी अन्य वर्णों को प्राप्त होता जानना चाहिए ।

- **[जन्म से सब शूद्र]**

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्चते ।

Edit with WPS Office

वेदाभ्यासाद् भवेद् विप्रो ब्रहम जानाति ब्राह्मण ।।
—-- [वज्रसूचि उपनिषद. श्लोक. 2]

अर्थ___ मनुष्यमात्र जन्म से शूद्र है । वह संस्कार द्वारा द्विज कहा जाता है । वेद ज्ञान से विप्र और ब्रह्मज्ञान से ब्राह्मण बनता है ।

- **{ ।। गोत्र क्या वस्तु है ।। }**

गोत्र: भूरक्षका : गोरक्षकाश्च ।

गोत्र शब्द दो संस्कृत शब्दों – **गो+त्र** से बना है । **गो के दो अर्थ है– गाय और पृथ्वी । त्र – का अर्थ है ,त्राण या रक्षा करना , इसलिए गोत्र का शाब्दिक अर्थ हुआ– गाय और पृथ्वी की रक्षा करने वाला दल ।**
मौलिक और प्राचीनतम आर्य गोत्र ये है—--
आरम्भ में सात ऋषियों ने आर्य दलो (गोत्रों) का संगठन और संचालन किया । उन सात ऋषियों के नाम ये है —-
1.विश्वामित्र , 2. जमदग्नि , 3. भरद्वाज , 4. गौतम , 5. अत्रि , 6. वशिष्ठ , 7. कश्यप ।
कई विद्वान आठवां अगस्तय भी बताते हैं ।
समयांतर में ये सात या आठ गोत्र (आर्यदल) बढ़कर 24 हो गए , फिर 49 और फिर सैकड़ो - सहस्त्रों

चतुविशति गोत्राणि । ऊन पच्चाशत गोत्र भेदा : ।
गोत्राणि तु शतानि , अनन्तानि ।।
एक दल वाले आपस में विवाह न करें ।

वेदों में वर्ण व्यवस्था किस प्रकार है आइए जानते हैं ?

Edit with WPS Office

- ## [।। चार वर्ण ।।]

यजुर्वेद. ___ 31/11 , ऋग्वेद. 10/90/12 , अथर्ववेद. 19/6/6

अर्थ___ इस समाज का मुख (ब्राह्मण+आसीत) ब्राह्मण होता है । और भुजाएं क्षत्रिय बनाई जाती है , इस समाज का जो मध्यस्थान है वह वैश्य है , पैरों के लिए शूद्र होता है ।

इस मंत्र में अलंकारिक रीति से चारों वर्णों का संकेत है ।

सिर की भांति विचार प्रधान मनुष्य ब्राह्मण पद का अधिकारी है , भुजां की भांति रक्षा तथा प्रहार में तत्पर का नाम क्षत्रिय है , मध्यभाग= पेट आदि की भांति जो समस्त समाज के ऐश्वर्या का केंद्र हो उसे वैश्य कहते हैं , जिस प्रकार पैर सारे शरीर का भार उठाते हैं , उसी प्रकार जो समस्त समाज की सेवा करें , उसे शूद्र कहते हैं ।

- वेदों में समाज के चारों वर्णों को ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को शरीर की कार्य दृष्टि से समझाया गया है ।।

- महाभारत में महाराज युधिष्ठिर इंद्रप्रस्थ का सम्राट बनते ही उनके पास चारों वर्णों के व्यक्ति आये ? अपने महाराज से न्याय मांगने , महाराज युधिष्ठिर ने उनको कर्मों के आधार पर ही दंड दिया, उनसे उनका वर्ण पूछा ! तब वर्ण अनुसार उनको दंड दिया ।
- तो इससे सिद्ध होता है कि वर्ण कर्मों के आधार पर होते हैं , लेकिन उनके कर्म को उनके कुल से जोड़ा जाता है । जैसे– विदुर कर्मों के आधार पर ब्राह्मण थे , लेकिन कुल के आधार पर उनकी माता दासी थी शूद्र थी ।

➤ किसी किसी व्यक्ति में चारों वर्ण भी होते हैं । और अलग-अलग चारों वर्णों को शिक्षा प्राप्त करने का समान अधिकार । देखें प्रमाण______

महाभारत शान्तिपर्व. अध्याय ,327 , श्लोक 46 ,47 ,48 ,49

Edit with WPS Office

जैसे आग में तपानें , काटने और कसौटी पर कसने से शुद्ध सोनें की परख की जाती है ,उसी प्रकार कर्म और गुण आदि के द्वारा शिष्यों की परीक्षा करनी चाहिए ।46।
तुम लोग अपने शिष्यों को किसी अनुचित या महान् भयदायक कार्य में न लगाना । तुम्हारे पढ़ाने पर भी जिसकी जैसी बुद्धि होगी और जो पढ़ने में जैसा परिश्रम करेगा ,उसी के अनुसार उसकी विधा सफल होगी । सब लोग दुर्गम संकट पार हो और सभी अपना कल्याण देखें ।47।48।

[महाभारत. 12/327/49]
ब्राह्मण को आगे रखकर चारों वर्णों को उपदेश देना चाहिए । यह वेद अध्ययन महान कार्य माना गया है , इसे अवश्य करना चाहिए ।49।

[तैत्तिरीय उपनिषद्. 2/3/10/1]
तस्मै ह जीनू वेदान् ।
उस (सीता) के लिए सोम ने तीनों वेदों को प्रदान किया ।

[महाभारत अश्वमेधिकपर्व. अध्याय 91 , श्लोक 37]
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र सभी को तप करने का अधिकार है ।

- **[ब्राह्मणों के गुण कर्म धर्म]**

ऋग्वेद. ___
5/29/3 , 5/31/4 , 7/13/3 , 7/29/2 , 7/42/1 , 7/93/6 ,
यजुर्वेद.___
31/10-11
सामवेद. 406 , 847-849 , 1466 , 1467

Edit with WPS Office

- [क्षत्रियों के गुण कर्म धर्म]

ऋग्वेद. ___
4/12/3 , 4/42/1 , 5/69/1 , 6/75/1-8 , 7/38/8 , 7/46/1 , 7/56/13 , 7/56/22 , 7/69/4 , 7/82/3 , 7/82/5-6 , 8/5/7 ,।
यजुर्वेद. ___
6/18/-19 , 11/34 , 13/13 , 16/13 , 16/48 ,17/65 , 29/22 , 30/10-11
सामवेद___
397 , 401 , 404 , 428 ।
अथर्ववेद___
1/29/5 , 3/2/6 , 11/1/2 , 3/19/1-8 , 5/14/9 , 20/87/4 , 20/89/9 , 20/97/2 ।

➤ अनेकों प्रमाण और हैं , लेकिन हमने कुछ ही प्रमाण प्रस्तुत किये । इन सभी प्रमाणों में क्षत्रियों के गुण कर्म धर्म है ।

- [वैश्यों के गुण कर्म धर्म]

ऋग्वेद.___
4/48/1 , 5/45/6 , 8/67/2 , 10/90/11-12
यजुर्वेद.___
3/49 , 3/28 , 15/30 , 31/10-11
अथर्ववेद___
3/15/1-2 , 3/15/4-8

- [शूद्रों के गुण कर्म धर्म]

ऋग्वेद.___

Edit with WPS Office

10/90/11-12
यजुर्वेद.___
31/1-11
अथर्ववेद___
19/6/5-6

- [चारों वर्णों का विभाग]

ऋग्वेद___
1/8/6 , 1/33/3 , 1/38/13 , 1/122/15 , 10/90/11-12

- [औरत का वर्ण धारण]

ऋग्वेद___
1/71/3 , 5/30/9 , 1/82/5 , 1/123/5 , 6/64/3 , 6/75/13 , 6/75/15 , 8/33/19

- [वर्ण व्यवस्था गुण कर्म प्रधान होती है]

ऋग्वेद.___
4/44/6 , 6/22/10 , 8/2/18 , 9/112/1 , 9/112/3 , 10/86/19 , 10/125/5
अथर्ववेद.___ 20/128/6-7

- **हम अन्य प्रमाण दिखाते हैं , इसी वर्ण व्यवस्था गुण कर्म प्रधान के ।**

प्रमाण___ ऋग्वेद. 9/112/1
अर्थ___ जिस प्रकार शिल्पी लकड़ी के काम की इच्छा करता है , जिस प्रकार वैध रोगी की कामना करता है , जिस प्रकार ज्ञानवान याज्ञिक

Edit with WPS Office

यजमान की कामना करता है , इसी प्रकार हमारी बुध्दियां नाना प्रकार की कामना वाली है , मनुष्य के कर्म भी विविध प्रकार के हैं । हे तेजस्वी सोमदेव ! आप इंद्रदेव के निमित्त प्रभावित हो ।

[इसी मंडल सूक्त का तीसरा मंत्र]

3.___

हम उत्तम शिल्पो का सम्पादान करने वाले हैं , हमारे पिता तथा पुत्र चिकित्सक हैं , माता तथा कन्या जौ पीसने का कार्य करती है , हम सभी भिन्न-भिन्न कार्य करने वाले हैं , फिर भी गौओं कि जिस तरह गोपालक सेवा करते हैं , उसी प्रकार हे सोमदेव ! हम आपकी सेवा करते हैं । आप इंद्रदेव के निमित्त प्रभावित हो ।

[वज्रसूचि उपनिषद श्लोक 5]

अलग-अलग नीच जातियों में जन्म लेकर ऋषियों ने उत्तम वर्ण को प्राप्त किया । जैसे ___ मृगी से ऋष्यक्षृंक , कुश से कौशिक , जम्बूक से जाम्बूक , वल्मीक से वाल्मीकि , धीवरकन्या सत्यवती से व्यास , शशक के पृष्ठभाग से गौतम , उर्वशी अप्सरा से वशिष्ठ , कुम्भ से अगस्त्य उत्पन्न हुए थे । इन सभी की ब्राह्मण जाति न होने के कारण पर भी प्राचीन काल में वे ज्ञान को प्रतिपादित करने वाले बड़े ही विद्वान ब्राह्मण हुए थे । इसलिए जाति भी ब्राह्मण नहीं कर्म से ब्राह्मण बन सकते हैं ।

[महाभारत अनुशासन पर्व. अध्याय 31 , श्लोक 19]

चण्डाल योनि में उत्पन्न मत्तंग तप से ब्राह्मण बन गए । पैजवन शूद्र से ऋषि बन गए ।

[महाभारत शान्तिपर्व. राजधर्म , अध्याय 60 , श्लोक 39]

पैजवन शूद्र ने सौ सहस्त्र गौए दान दी । इन्द्ररानी देवता वाले सुक्त से वह उन ऋग्वेद के सुक्तो का ऋषि हो गया । शुनक का पुत्र वीतहव्य क्षत्रिय वंशज सौनक ऋषि ब्राह्मण बन गया ।

[महाभारत अनुशासन पर्व. अध्याय 143 , श्लोक 46]

Edit with WPS Office

धर्मात्मा क्षत्रिय भी कर्म से ब्राह्मण हो जाता है । शूद्र भी वेद पढ़ा हुआ और वेंदिक कर्मों से युक्त हुआ ब्राह्मण बन जाता है । ब्राह्मण भी दुष्कर्मों से सर्वभक्षी होने से ब्राह्मणत्व को छोड़कर शूद्र हो जाता है ।

शूद्र सेवकों का भरण -पोषण करना द्विज का कर्तव्य है । **(महाभारत शांति पर्व)**

शास्त्रों अनुसार भगवान वाल्मीकि को शूद्र मानते हैं , लेकिन अपनी साधना और तप ज्ञान से कर्मानुसार महर्षि वाल्मीकि बने ।

रावण महर्षि विश्रवा का पुत्र है रावण ब्राह्मण होकर अपने कर्मों से राक्षस बन गया । जबकि रावण के अपने पुत्र अक्षय कुमार , मेघनाद आदि क्षत्रिय वर्ण के रहें ।

वर्ण परिवर्तन का ऐतिहासिक प्रमाण :

महाभारत अनुशासन पर्व , अध्याय 30 , श्लोक 2 , 3 , 4

विश्वामित्रेण च पुरा ब्राह्मण्यं प्राप्तमित्युत ।
श्रूयते वदसे तच्च दुष्प्रापमिति सत्तम ॥ २ ॥

सत्पुरुषोंमें श्रेष्ठ पितामह! परंतु सुना जाता है कि पूर्वकालमें विश्वामित्रजीने इसी शरीरसे ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लिया था और आप जो उसे सर्वथा दुर्लभ बता रहे हैं (ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध-सी जान पड़ती हैं) ॥

वीतहव्यश्च नृपतिः श्रुतो मे विप्रतां गतः ।
तदेव तावद् गाङ्गेय श्रोतुमिच्छाम्यहं विभो ॥ ३ ॥

मेरे सुननेमें यह भी आया है कि राजा वीतहव्य क्षत्रियसे ब्राह्मण हो गये थे। गङ्गानन्दन प्रभो! अब मैं पहले उसी प्रसङ्गको सुनना चाहता हूँ ॥ ३ ॥

स केन कर्मणा प्राप्तो ब्राह्मण्यं राजसत्तमः ।
वरेण तपसा वापि तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ ४ ॥

वे नृपशिरोमणि वीतहव्य किस कर्मसे, किस वर अथवा तपस्यासे ब्राह्मणत्वको प्राप्त हुए? यह मुझे विस्तारपूर्वक बतानेकी कृपा करें ॥ ४ ॥

- राजा वीतहव्य ने भी विश्वामित्र जी के समान उसी शरीर में कर्म और तपस्या आदि द्वारा क्षत्रिय से ब्राह्मण बन गए थे ।

महाभारत. 12.23.11 ______

Edit with WPS Office

' देखिए ! इन्द्रं ब्राह्मण के पुत्र हैं , किंतु कर्म से क्षत्रिय हो गये हैं । उन्होंने पाप में प्रवृत्त हुए अपने ही भाई - बन्धुओं (दैत्यों) ___ में से आठ सौ दस व्यक्तियों को मार डाला ।

महाभारत शांति पर्व अध्याय 327 , श्लोक.44 से 49 में महर्षि वेदव्यास जी ने अपने शिष्यों को किस प्रकार वेद अध्ययन करना और किसको कराना चाहिए ? उसके उपदेश में बता रहे हैं कि चारों वर्णों को वेदों का अध्ययन करना चाहिए ।

भवन्तो बहुलाः सन्तु वेदो विस्तार्यतामयम् ।। ४४ ।।
नाशिष्ये सम्प्रदातव्यो नाव्रते नाकृतात्मनि ।

'तुमलोग बहुसंख्यक हो जाओ और इस वेदका विस्तार करो। जिसका मन वशमें न हो, जो ब्रह्मचर्य-व्रतका पालन न करता हो तथा जो शिष्यभावसे पढ़ने न आया हो, उसे वेदाध्ययन नहीं कराना चाहये ।। ४४ ।।

एते शिष्यगुणाः सर्वे विज्ञातव्या यथार्थतः ।। ४५ ।।
नापरीक्षितचारित्रे विद्या देया कथंचन ।

'ये सभी शिष्यके गुण हैं। किसीको शिष्य बनानेसे पहले उसके इन गुणोंको यथार्थरूपसे परख लेना चाहिये। जिसके सदाचारकी परीक्षा न ली गयी हो, उसे किसी प्रकार विद्यादान नहीं देना चाहिये ।। ४५ ।।

यथा हि कनकं शुद्धं तापच्छेदनिकर्षणैः ।। ४६ ।।
परीक्षेत तथा शिष्यानीक्षेत् कुलगुणादिभिः ।

'जैसे आगमें तपाने, काटने और कसौटीपर कसनेसे शुद्ध सोनेकी परख की जाती है, उसी प्रकार कुल और गुण आदिके द्वारा शिष्योंकी परीक्षा करनी चाहिये ।।

न नियोज्याश्च वः शिष्या अनियोगे महाभये ।। ४७ ।।
यथामति यथापाठं तथा विद्या फलिष्यति ।
सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वो भद्राणि पश्यतु ।। ४८ ।।

'तुमलोग अपने शिष्योंको किसी अनुचित या महान् भयदायक कार्यमें न लगाना। तुम्हारे पढ़ानेपर भी जिसकी जैसी बुद्धि होगी और जो पढ़नेमें जैसा परिश्रम करेगा, उसीके अनुसार उसकी विद्या सफल होगी। सब लोग दुर्गम संकटसे पार हों और सभी अपना कल्याण देखें ।। ४७-४८ ।।

श्रावयेच्चतुरो वर्णान् कृत्वा ब्राह्मणमग्रतः ।
वेदस्याध्ययनं होदं तच्च कार्यं महत् स्मृतम् ।। ४९ ।।

'ब्राह्मणको आगे रखकर चारों वर्णोंको उपदेश देना चाहिये। यह वेदाध्ययन महान् कार्य माना गया है। इसे अवश्य करना चाहिये ।। ४९ ।।

स्तुत्यर्थमिह देवानां वेदाः सृष्टाः स्वयम्भुवा ।
यो निर्वदेत सम्मोहाद् ब्राह्मणं वेदपारगम् ।। ५० ।।
सोऽभिध्यानाद् ब्राह्मणस्य पराभूयादसंशयम् ।

महाभारत में द्रोपती को पंडिता कहकर बुलाया गया है ।

श्री राम के राज्य तिलक के समय सभी वर्णों को सादर आमंत्रित किया गया था और सभी ससम्मान राजसभा में उपस्थित थे । धर्मराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय पतन होने पर भी शूद्र वर्ण में जन्मा परंतु महान धनुर्धर एकलव्य राजाओं की पंक्ति में विराजमान था । जब राजसूय यज्ञ में भगवान श्री कृष्ण की अग्र पूजा की घोषणा हुई , तब शिशुपाल ने उस यज्ञ

Edit with WPS Office

में उपस्थित अनेक विशिष्ट पुरुषों के रहते श्री कृष्ण की पूजा का विरोध किया था । उन विशिष्ट पुरुषों में एकलव्य की भी गणना करते हुए कहा था ।

महाभारत , सभा पर्व अघभिहरण पर्व , अध्याय 37 , श्लोक 14
कोई बताएं कि यहां एक क्षत्रिय नरेश क्यों एकलव्य को विशिष्ट पुरुषों के रूप में सार्वजनिक रूप में गणना कर रहा था ?? यदि उस काल में शूद्र को हेय माना जाता तो ऐसा कैसे संभव था ? परंतु पापी लोगों की कुटिलता व धूर्तता ने श्री राम जैसे सर्वहितैषी के हाथों शूद्र शम्बूक की हत्या तथा गुरुवर द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य का अंगूठा दक्षिणा में मांगने के काल्पनिक प्रक्षेप (मिलावट) से जहां हमारे महापुरुषों को बदनाम किया , वहीं सामाजिक वर्ण व्यवस्था को कर्मणा से जन्मना बनाकर सर्वप्रिय शूद्र वर्ण पर अत्याचारों के कल्पित प्रसंग के चलते सामाजिक विघटन की नींव भी रख दी । विश्व पुरुष भगवान मनु की मनुस्मृति में मनमाने प्रक्षेप करके इस मानव जाति को खंड-खंड करने का कुटिल प्रयास किया । जिसका वर्णन हम यथा स्थान करेंगे । जरा विचारे की वैदिक मनु प्रोक्त वर्ण व्यवस्था के कुछ क्षीण होने तथा जन्मना - जाति व्यवस्था के विष का कुछ कुछ अंकुरण होने के महाभारत काल में शूद्र को राजा के मंत्री बनने का अधिकार था । **महाभारत शांति पर्व में मैं राजधर्मानुशासन पर्व के अध्याय 85 वे के श्लोक 7-11** में पितामह भीष्म ने धर्मराज युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए कहां मंत्रिमंडल के आकार के विषय में कहा - राजा के मंत्रिमंडल में 4 ब्राह्मण ,18 क्षत्रिय ,21 वैश्य , तीन शूद्र , एक सूत को सम्मिलित करें । ये वर्ण कर्मानुसार ही कहें है , न कि जन्मना जाति के आधार पर , तब कौन मूर्ख होगा , जो शूद्र (श्रमिक) के शोषण की कल्पना करेगा ।

हां , धर्म - अधर्म , सत्यासत्य का संघर्ष सदैव होता रहा और होना भी चाहिए । विश्वभर के किसी भी देश का संविधान इस संघर्ष को अवैध वा अनावश्यक नहीं कह सकता और न कोई भी सभ्य समाज ही ऐसा कहेगा ,अपना देश , साथ ही अन्य देश भी सुखी , समृद्ध , सशक्त व ज्ञान - विज्ञान से संपन्न थे । मनुष्य समाज के ही अंग दानव , असुर ,राक्षसादि वर्गों

Edit with WPS Office

में मांसाहार , मदिरा पान व हिंसा आदि भयंकर दोष अवश्य थे । इस कारण देव व मनुष्य वर्गों का इन वर्गों से संघर्षण बना ही रहता था । पुनरुपि उस समय के राक्षसादि वर्ग भी वर्तमान के जनसाधारण वा कुलीन व विकसित माने जाने वाले कथित धार्मिकों से सदाचारादि दृष्टि से श्रेष्ठ थे । राक्षस राज रावण , जिसके पुतले का दहन करके यह अभागी आर्य (हिंदू) जाति अपने को धर्मात्मा मानने का ढोंग करती है , और जो पुरुषोत्तम श्री राम की तुलना में अति निकृष्ट व्यक्ति था । आज के कथित धर्माचार्य , राजनेताओं व सामाजिक धुरन्धरो से भी श्रेष्ठ था ।उस महाबली रावण ने विश्व सुंदरी भगवती सीता माता जी का अपहरण करके भी उससे कभी कोई कुचेष्टा करने का प्रयास तक नहीं किया । वाल्मीकि रामायण के कुछ अध्येता इसे नलकूबर के शाप के भय का परिणाम कहेंगे ।

वस्तुत : यह महर्षि वाल्मीकि की रामायण में कुछ लोगों की प्रक्षिप्त कल्पना है , ऐसे लोग रावण में किसी भी अच्छाई का होना स्वीकार करने को अघत नहीं है । वरदान व शापों की एक घड़ी विचित्र कल्पना अतिरंजीत रूप में हमारे इतिहास को विकृत करने में एक बहुत बड़ा कारण रही है ।

शुक्र नीति. प्रथमअध्याय , श्लोक -- 38 ,39 ,40 ,41 ,42, 43____

इस जगत मैं जन्म से ___ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र -मल्लेच्छ नहीं होते हैं , किंतु गुण और कर्म के भेद से होते हैं ।38।

संपूर्ण जीव ब्रह्म से उत्पन्न होने से क्या ब्राह्मण हो सकते हैं ? अर्थात नहीं ! वर्ण से और पिता से ब्रह्म तेज की प्राप्ति नहीं हो सकती ।39।

ज्ञान- कर्म -देवता - आदि की उपासना देवता के आराधना में तो तत्पर - और - शांत - दांत - और - दयालु ऐसा जो मनुष्य- वही गुणों से ब्राह्मण होता है ।40।

लोक की रक्षा करने में चतुर शूरवीर दांत और पराक्रमी दुष्टों को दंड का दाता ऐसा जो मनुष्य उसे क्षत्रिय कहते हैं ।41।

लेन-देन में चतुर उपवहार है जीवन जिनका और पशुओं की रक्षा और खेती के करने हारे जीव वे पृथ्वी में वैश्य कहाते हैं ।42।

ब्राह्मण की सेवा और पूजन में तत्पर शूरवीर शांत और जितेंद्रिय हलकाष्ठ और तृण - इनको ले जाने हारे जो नीच जीव वे शूद्र कहातें है ।43।

Edit with WPS Office

त्याग दिया है अपने धर्म के आचरण जिन्होंने , ऐसे निर्दयी पर को पीड़ा देने हारे नित्य हिंसक जो अविवेकी मनुष्य , वे म्लेच्छ है ।

महाभारत. 12/318/89- 90 _____

महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं --- ब्रह्म से उत्पन्न होने के कारण सभी वर्ण ब्राह्मण है ।
इसीलिए तो महाभाष्य में लिखा है कि तप : श्रुताभ्यां यो हीनों जाति ब्राह्मण एवं स : अर्थात तप और श्रुति से हीन होने पर भी जाति से ब्राह्मण होते हैं ।

न्याय दर्शन. 2/2/68 ___

समानप्रसवात्मिका जाति : ।।

अर्थात जिनका सामान प्रसव , आयु और भोग हो वह सब एकजातिय जीव हैं ।
अतः वैदिक शास्त्रों के अनुसार पृथ्वी का प्रत्येक मनुष्य एकजातीय है । मूर्खता और अज्ञानता के कारण हमने महान वर्ण व्यवस्था को जाति व्यवस्था में परिवर्तित कर दिया ।

- **वर्ण का निर्धारण जन्म या कर्म पुरातात्विक प्रमाण से समझे______**

शास्त्रों में इस विषय को लेकर के बहुत सारे विरोधाभास है । देखिए अगर इस बात को पुरातात्विक रूप से जांचना हो तो ये बड़ा सरल विषय है की प्राचीन भारत में वर्ण व्यवस्था जन्म से थी या कर्म से ?
यहां हम आपको पुरातात्विक दृष्टि से वर्णन व्यवस्था कर्मानुसार होने का एक प्रमाण दिखाते हैं । **छठी शताब्दी के पल्लव वंश उर्वरअरि तांब्बर लेख में लिखा है की राजा विरुकुज जो ब्राह्मण बन गए थे । उन्होंने अपने बल**

Edit with WPS Office

और पराक्रम से क्षत्रिय वर्ण धारण किया । अर्थात वो ब्राह्मण से क्षत्रिय हो गए थे । यह एकमात्र ऐसा प्रमाण है जो वर्णन परिवर्तन का पुरातात्विक प्रमाण है ।

हमारे सभी शास्त्रों ने कहा है जो वेदों को पढ़ता है ,उनका स्वाध्याय करता है । जो धर्म अनुसार कार्य करता है , जो प्रतिदिन यज्ञ हवन शुभ कार्य करता है वो ब्राह्मण है । वर्ण व्यवस्था कर्म अनुसार थी शास्त्रों से ही सिद्ध होती है । अगर वर्ण व्यवस्था जन्म से होती तो शास्त्रों ने इस प्रकार कहा होता कि ब्राह्मण ही वेदों को पढ सकता है , वही उनका स्वाध्याय कर सकता है । लेकिन शास्त्रों ने ऐसे नहीं कहा ? शास्त्रों ने कहा जो वेदों को पढ़ता है वो ब्राह्मण है । इससे सिद्ध होती है कि वर्ण व्यवस्था कर्म अुनसार थी ।

किसका क्या वर्ण होगा ? ये प्राचीन गुरुकुलों में आचार्य ही सिद्ध करते थे कि विधार्थी में क्या क्या गुण है ,उस विधार्थी के गुण कर्म अनुसार उसकी शिक्षा के अनुसार आचार्य उसी तरह का उसका वर्ण चयन करते थे। ।
जब बालक शिक्षा के लिए गुरुकुल में जाता है तब अपने पिता के वर्ण से ही शिक्षा प्राप्त करता है ।जिस वर्ण के उसके पिता थे , वही वर्ण से उसका संस्कार होता है । जब शिक्षा प्राप्त कर लेता है तब आचार्य ही उसका वर्ण घोषित करते हैं ।

- जब चारों वर्णों में इतना प्रेम व सहकार का भाव था , तब क्या उनमें परस्पर वैवाहिक सम्बंध भी हुआ करते थे ?

उत्तर ____

वाल्मीकि रामायण. अयोध्या काण्ड. सर्ग 63/51 सर्ग 64/55 , गीता प्रेस ।

1.___ श्रवणकुमार ब्राह्मण थे , जबकि उनके पिता वैश्य तथा माता शूद्रा थी ।

अर्थात श्रवण ने राजा दशरथ से कहा-- हे राजन् में वैश्य से शूद्रा में पैदा हुआ हूं ।

श्रवण कुमार के पिता ने कहा-- हे राजन् ! चूंकि तुझ क्षत्रिय ने अज्ञान से

Edit with WPS Office

श्रवण मुनि को मार दिया । इसलिए तुझे ब्रह्म हत्या नहीं लगी ।
2.___ महात्मा विदुर की पत्नी के पिता ब्राह्मण तथा माता शूद्रा थी । **महाभारत आदि पर्व के सम्भवपर्व. अध्याय 113 , श्लोक 12**
3.___ राजा धृतराष्ट्र की एक पत्नी वैश्य वर्ण की थी । **(अध्याय 114 में)**
4.___ कर्ण का विवाह वैश्य कन्या पद्मावती से हुआ ।

• श्रीमद् गीता में वर्ण व्यवस्था______

गीता. 4/13___ **चातुर्वर्ण्य मया सृष्टं गुणकर्मविभागश: ।**
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम् ।।

भावार्थ ___ हे अर्जुन ! चार वर्णों की रचना मैंने की । तो क्या मनुष्यों को चार भागों में बांट दिया ? श्री कृष्ण कहते हैं -- नहीं , गुणकर्म विभागश: -- गुणों के माध्यम से कर्म को चार भागों में बांटा है । ' **भगवान श्री कृष्ण आगे कहते हैं--** (18/43) में अर्थात उपर्युक्त लक्षण स्वभावस्थ है , आदत का अंग बन चुके हैं । इसलिए क्षत्रिय के कर्म को भी स्वभाव ने जन्म दिया ।
कोई कहता है -- स्वें स्वें कर्मण्यभिरत (18/45) अपनी अपनी ड्यूटी (कर्म) करो । गीता के अध्याय 3/8 में कहते हैं -- ' नियतं कुरु कर्म त्वं -- अर्जुन ! तू निर्धारित किए हुए कर्म को कर । अब वह निर्धारित कर्म है क्या..? इस पर योगेश्वर श्री कृष्ण गीता के अध्याय 3/9 में कहते हैं ,यज्ञापति कर्मणो -- अर्जुन ! यज्ञ की प्रक्रिया ही कर्म है । वह हरकत कर्म है जिससे यज्ञ पूर्ण होता है । इस यज्ञ के अतिरिक्त संसार में जो कुछ भी किया जाता है , दिन रात जिससे लोग व्यस्त रहते हैं , क्या वह कर्म नहीं है ? श्री कृष्ण कहते हैं -- नहीं , अन्यत्र लोकोडयं कर्मबन्धन । यज्ञ की प्रक्रिया के अतिरिक्त जो कुछ भी किया जाता है , वह इसी लोक का एक बंधन है , इसी लोक में बांधकर रखने का उपाय है । तदर्थ कर्म कौन्तेय मुक्तसंग समाचरं । इसलिए अर्जुन ! उस यज्ञ की पूर्ति के लिए तू संग दोष से रहित होकर भली प्रकार कर्म का आचरण कर । अत: कर्म ऐसी विधा है जिसका आचरण संग दोष के रहते नहीं किया जा सकता ।
परिचयात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् , । (18/44) जो महापुरुष अव्यक्त की स्थिति वाले हैं , अविनाशी तत्व में स्थित है उनकी तथा इस पथ

Edit with WPS Office

पर अग्रसर अपने से उन्नत लोगों की सेवा में लग जाओं । इससे दूषित संस्कार शमन होते जायेंगे , साधना में प्रवेश दिलाने वाले संस्कार सबल होते जायेंगे । **कृषिगौरक्षयवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् । --(गीता. 18/44)** स्वभाव कहते हैं -- आदत को । तब आपके अंतराल में तामसिक गुणों का दमन हो गया , **इंद शरीर कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते (13/1)** अर्जुन ! यह शरीर ही क्षेत्र है , जिसमें भला अथवा बुरा बोया हुआ बीज संस्कारों के रूप में जमता है , इसलिए इस क्षेत्र की निराई करें । इसके अंदर से विकारों को निकालकर फेंक दें और सही रखें यह वैश्य श्रेणी का कर्म है । **वैश्यकर्म स्वभावजम् , (गीता. 18/44)** आपके स्वभाव ने इसको जन्म दिया , स्वभाव परिवर्तनशील है । आज जो स्वभाव है , कल वह नहीं रहेगा । ' **वाल्मीकि भये ब्रहम समाना , -- (श्री रामचरितमानस. 2/193/8)** --क्या बदला था वाल्मीकि जी का उनका ? शरीर वही था , हाथ पांव वही थे , केवल गुण बदला तो स्वभाव बदल गया , गुण परिवर्तित हो गया ।

योगेश्वर श्रीकृष्ण स्पष्ट कहते हैं-- हे अर्जुन ! मैंने मनुष्य को नहीं बांटा , फिर बांटा किसे..? **कर्माणि प्रविभक्तानि --** कर्म को बांटा गया है । कैसे बांटा ? ' **स्वभावप्रभवैगुणै** , -- **(18/44)** वे कर्म स्वभाव में पाए जाने वाले गुणों के आधार पर बनते हैं , उन गुणों के आधार पर कर्म को बाटा है , जन्म के समय सभी मनुष्य हैं , जन्म से न कोई क्षत्रिय है , न वैश्य ,न ब्राह्मण ,न शूद्र ही है , जो मेडिकल में बैठा ही नहीं वह किस बात का डॉक्टर । जब भर्ती ही नहीं हुई , तो श्रेणी कैसी ..? जब अपनी योग्यता कर्म अनुसार होती है तब गुण कर्म स्वभाव से बांटे जाते हैं ।

अपि चेत् सुदुराचारो (9/30) -- अर्थात अत्यंत दुराचारी भी इस कर्म का सच्चा अधिकारी है । अस्तु , यदि छुआछूत उच्च नीच जाति और संप्रदाय है तो वह धर्म नहीं और इनको मानने वाला भी धर्मी नहीं है । परमात्मा एक है और उसकी एक जैसी अनुभूति सबके लिए है । उसकी अनुभूति पा लेने वाला महात्मा समाज में कभी दरार नहीं डाल सकता ..? केवल अधूरी जानकारी और ना समझी के कारण लोग ऐसा समझते और करते हैं ।

- **मेरे अपने विचार _____(शंका समाधान , प्रश्नोत्तरी)**

Edit with WPS Office

{ जाति और वर्ण में क्या फर्क है }

______ ब्राह्मण का बेटा बिना पढ़े लिखे भी ब्राह्मण कहलाता है । और शूद्र का बेटा पढ़ लिख कर भी शूद्र रहता है ? यह जाति क्यों नहीं जाती । क्या जाति जन्म से या कर्म से ? मेरे विचार में जाति जन्म से कर्म से नहीं ? ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र गुण कर्म से होते हैं । परंतु जाति जन्म से होती है । जाति तो जन्म से मृत्यु पर्यंत रहती है । जिसमें परिवर्तन नहीं होता , जैसे -- मनुष्य जाति , पशु जाति , पक्षी जाति, पशु जाति = इस जाति में मनुष्य पशु नहीं बन सकता ? और पशु मनुष्य नहीं बन सकता । जो जिसकी जाति है , वही रहेगी । तो फिर क्या वर्ण बदला जाता है ____ वर्ण बदला जाता है , जब वर्ण गुण - कर्म से किया गया है , जैसे गुण कर्म होंगे , वैसा ही वर्ण हो जाएगा ।

क्या ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र क्या ईश्वर ने नहीं बनाए हैं ?

ईश्वर ने जातियां बनाई है । मनुष्य समाज को गुण कर्म अनुसार मनुष्य बनाने का उपदेश -- वेद द्वारा भगवान ने अवश्य दिया है ।

o कौन से गुण देखकर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र बनते हैं ?

वेद में भगवान ने मंत्र में उपदेश देकर समझाया , समाज रूपी शरीर का ब्राह्मण मुख है , क्षत्रिय बाहु है , पेट वैश्य है , और पैर शूद्र है । यह इस दृष्टांत से यह बात निकलती है , शरीर के अंग में मुख ज्ञान प्रदान क्षेत्र है , क्योंकि मुख में कान नाक आंख जीभ आदि जानेन्द्रिय है । और दूसरा काम सर्दी वर्षा ऋतुओं में सारा शरीर वस्त्रों से ढक लिया जाता है । परंतु मुख सदैव खुला रहता है , वह सर्दी गर्मी आदि ऋतुओं के कष्ट को सहन करता है । और तीसरा काम जो भी ग्रहण करता है , अपने पास नहीं रखता , दूसरों को दे देता है , इससे सिद्ध होता है कि जिस व्यक्ति में ज्ञान तप और त्याग है , वह ब्राह्मण है ।

बाहुओं को क्षत्रिय बताने का मतलब यह है कि बाहु अर्थात हाथ , बल प्रदान होते हैं , जब कोई शरीर पर आक्रमण करता है , तो भुजाएं हाथ सबसे पहले शरीर की रक्षा करते हैं । अतः जो न्याय पूर्वक अपने बल से व प्रजा की रक्षा करें , वह क्षत्रिय है । पेट को वैश्य कहने का मतलब यह है कि पेट सारा भोजन अपने अंदर एकत्रित करता है और फिर उसका ठीक-ठाक पाचन

Edit with WPS Office

करके प्रत्येक शरीर अंग को यथा भोग्य हिस्सा दे देता है । अतः जो धन को एकत्रित करके मनुष्य समाज को यथोचित नियम अनुसार वितरण करता है , वह वैश्य है । और पैरों को शूद्र इसलिए कहा गया है कि पैर प्रथम तो सारे शरीर का बोझ उठाते , दूसरे परिश्रम करके सिर , पेट हाथ आदि अंगों को वही स्थान पर पहुंचा देते हैं । जहां जाना है उनके पास , ज्ञान बल और धन तो नहीं जो उनसे कार्य कर सके , उनके पास परिश्रम करने की शक्ति है , इसलिए वे समाज रूपी शरीर की सेवा करते हैं । **इससे निष्कर्ष यह निकलता है जो सेवा प्रदान है , वह शूद्र है । ब्राह्मण ज्ञान से , क्षत्रिय बल से , वैश्य धन से , और शूद्र सेवा से मनुष्य समाज की सेवा करें । यही वर्णों का वर्णीत्व है ।**

- **ज्ञान बल धन परिश्रम तो प्रत्येक मनुष्य में पाया जाता है ? फिर तो मनुष्य चारों वर्णों वाला है ? फिर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य आदि की व्यवस्था बन कैसे सकती है ?**

यह ठीक है , प्रत्येक मनुष्य में चारों वर्णों की योग्यता तो है , परंतु जिस मनुष्य में जो चीज मुख्य है , उसके आधार पर वर्ण माना जाता है । प्रत्येक मनुष्य में कोई ना कोई एक मुख्य बात अवश्य है , यह ठीक है प्रत्येक मनुष्य में चारों वर्णों की योग्यता है , परंतु जिस मनुष्य में जो चीज मुख्य है उसके आधार पर ही वर्ण माना जाता है । हर मनुष्य में कोई ना कोई मुख्य बात अवश्य है , कोई धनवान है , कोई बलवान है , कोई विद्वान है , कोई सेवक है , उसी के आधार पर उसका वर्ण है , वेद ने तो बीज रूप से अलंकारिक वर्णन कर दिया है बुद्धिमानों ने उस अलंकारों का रहस्य निकाला है ।

- **जरा स्पष्ट रूप से समझाओ , कौन-कौन से काम करने वाला कौन-कौन से वर्ण में आता है ?**

जिसमें सम , तप ,दम ,पवित्रता , शक्ति , कोमल , ज्ञान -विज्ञान , और जिसमें आस्तिकता है , वह व्यक्ति ब्राह्मण है । जिसमें वीरता , तेज , पराक्रम , धैर्य , क्षमता , युद्ध से न भागने का स्वभाव , दानशीलता , धैर्यशीलता , और न्यायकारी ईश्वर की तरह न्याय करने का भाव है , वह क्षत्रिय है , जो कृषि , गोरक्षा , दान और वर्णीज्य व्यवसाय में निपुण है , वह वैश्य है । और जो केवल अपने शरीर से सेवा करने में निपुण है , वह शूद्र है ।

Edit with WPS Office

o यदि वर्णों को जन्म से माने तो क्या आपत्ति है ? करोड़ों लोग वर्ण जन्म से मानते हैं ?

जो लोग जन्म से वर्ण मानते हैं , उनके अनुसार भी वर्ण कर्म से ही सिद्ध होता है । क्योंकि उनके मत में भी ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन तीनों वर्णों को द्विज माना जाता है । और शूद्रों को एकज माना जाता है । द्विज का अर्थ है , जिसके दो जन्म हो , संसार में जिनके भी दो जन्म होते हैं , वे द्विज कहलाते हैं । जैसे ___ दांत या पक्षी ।

दांत द्विज क्यों कहलाते हैं ? इसलिए कि इसके दो जन्म होते हैं । बच्चों के दूध के दांत टूट जाते हैं , और दोबारा से उनका जन्म हो जाता है । पक्षी द्विज इसलिए कहलाते हैं , कि उनके भी दो जन्म होते हैं , पहले तो अंडे का जन्म होता है , फिर अण्डे से पक्षी का जन्म होता है । अब सोचना यह है कि यदि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य द्विज हैं , तो दूसरा जन्म इनका कौन सा है ? माता-पिता के यहां जन्म से तो सभी एकज अर्थात एक जन्म वाले फिर द्विज अर्थात दो जन्म वाले कहां से बने ..? इसका उत्तर है-- माता-पिता के बाद आचार्य द्वारा जो जन्म मिलता है , उससे द्विज होता है । अर्थात आचार्य ने योग्यता अनुसार उनको वर्ण प्रदान किया । वास्तव में प्राचीन काल में वर्ण के बनाने की यही व्यवस्था थी । सभी अपने पुत्रों को गुरुकुलों में भेजते थे , बाद में पढ़ लिख कर जैसी उनकी योग्यता होती थी , उसी के अनुसार आचार्य उन्हें वर्ण की उपाधि देते थे ।

o क्या ब्राह्मण का लड़का ब्राह्मण , और शूद्र का लड़का शूद्र नहीं होता..?

यह कोई विशेष आवश्यक नहीं , किंतु ब्राह्मण का लड़का ब्राह्मण और शूद्र का लड़का शूद्र ही हो , जैसे की यह आवश्यक नहीं की डॉक्टर का लड़का डॉक्टर या मास्टर का लड़का मास्टर या वकील का लड़का वकील हो , क्योंकि जब पिता जैसी लड़के में योग्यता नहीं होती तो वह अपने पिता के पद तक कैसे पहुंच सकेगा ?

o मैं समझता हूं जैसे-- गधे से गधा , और घोड़े से घोड़ा , आम से आम , और सेब से सेब उत्पन्न होता है ? वैसे ही ब्राह्मण से ब्राह्मण , शूद्र से शूद्र उत्पन्न होता है ..?

मैं पहले ही बता चुका हूं कि गधा घोड़ा आदि जातिया जन्म से उत्पन्न होती है ? परंतु ब्राह्मण क्षत्रिय आदि जो वर्ण है , वह तो कर्म अनुसार बदलते ही

Edit with WPS Office

रहते हैं । जातियां कभी नहीं बदलती , गधे घोड़े कभी नहीं बदलते , जो है वही रहेंगे ।

- **मेरे विचार में तो वर्ण भी नहीं बदलते .? भगवान ने जो जिसका वर्ण बना दिया है , वही रहता है ..?**

अच्छा , यह तो बताओ कि कोई वर्ण नहीं बदलता तो ब्राह्मण क्षत्रिय मुसलमान या इसाई कैसे बन जाता है ? इस भारत में 1947 से पहले 8 करोड़ मुसलमान थे , और इनमें 60 फ़ीसदी ऐसे हैं जो हिंदुओं से मुसलमान बने । और इनमें सनातन धर्म के चारों वर्णों के व्यक्ति मौजूद है , ये कैसे बदल गए ? यदि वर्ण भगवान के बनाये होते , तो ये लोग कभी बदल सकते थे ? कदापि नहीं ! जो चीज भगवान की बनाई हुई होती है , उसमें परिवर्तन होता ही नहीं , भगवान का बनाया हुआ आम कभी सेब नहीं बन सकता । भगवान का बनाया हुआ शेर कभी हाथी नहीं बन सकता । दुनिया की किसी चीज को ले लो भगवान की बनाई हुई अपरिवर्तनशील है , ईश्वर द्वारा बनाई हुई में कभी भी परिवर्तन नहीं हो सकता । मनुष्य जाति कभी भी पशु जाति नहीं बन सकती । यदि भगवान का बनाया हुआ वर्ण होता तो ब्राह्मण ब्राह्मण ही रहता , और मुसलमान मुसलमान ही रहता , परंतु ऐसा नहीं होता ? गुण कर्म के बदल जाने से न तो ब्राह्मण , ब्राह्मण रहता । और न मुसलमान , मुसलमान रहता है ।

- **मित्र ब्राह्मण तो ब्राह्मण ही रहता है ? चाहे भले ही वह मुसलमान व ईसाई हो जाए ? हां इतना कहा जा सकता है वह मुसलमान व ईसाई होने पर व उस काम का नहीं रहता , जिस काम का रहना चाहिए ? जैसे लड्डू के नाले में गिर जाने पर लड्डू रहता है , पर वह खाने का काम का नहीं रहता ..?**

तुमने मित्र क्या अच्छी तर्क दी है , मुसलमान और ईसाई होने पर भी ब्राह्मण ही रहते हैं । लड्डू की भी खूब मिसाल दी यह तो बताओ नाली में गिर जाने पर लड्डू तो काम का नहीं रहता ? किसी की गायं या भैंस नाली में गिर पड़े तो वह भी काम की नहीं रहती क्या ? जिसकी जैसी शक्ल है वह तो ऐसी रहेगी , परंतु यह आवश्यक नहीं की नाली में गिर जाने पर काम की नहीं रहती ? लड्डू खाने के काम का नहीं रहता परंतु रुपया गिर जाने पर जरूर काम का रहता है । इसलिए लड्डू का उदाहरण वर्णों पर नहीं घटता ।

Edit with WPS Office

जातियों पर नहीं घटता । जैसे नाली में गिर जाने पर लड्डू लड्डू ही रहेगा , जलेबी नहीं बन सकता । वैसे ही नाली में गिर जाने पर मनुष्य मनुष्य ही रहेगा , गधा घोड़ा आदि नहीं बन सकता ? जो जिसकी आकृति बनी हुई है वह कैसे बदल सकती है ? जाति आकृति से जानी जाती है और वर्ण गुण कर्मों से जाने जाते हैं ।

o__ तो क्या वर्ण सकल से नहीं जाने जाते ..?

कभी नहीं , वर्ण तो गुण कर्मों से जाने जाते हैं , यदि शक्ल से जाने जाते ? तो फिर किसी से पूछने की क्या जरूरत थी , कि तुम्हारा वर्ण क्या है ? तुम ब्राह्मण हो या क्षत्रिय ? यही तो एक बात है जो प्रमाणित करती है कि वर्ण जन्म से नहीं होते कर्म से है । यदि ईश्वर ने जन्म से वर्ण बनाए होते तो उसकी पहचान के लिए उसमें कुछ ना कुछ भेद अवश्य रखते । चारों वर्णों के 2000 मनुष्यों को एक लाइन में खड़ा कर दो । अपरिचित मनुष्य उनमें से कभी न बता सकेगा कि यह कौन-कौन से वर्ण के आदमी है ?

o__ क्या ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य रंग रूप से बिल्कुल नहीं पहचाने जाते ?

वर्ण रंग रूप से नहीं होते अगर रंग रूप से होते तो ब्राह्मण सफेद रंग का , क्षत्रिय लाल रंग का , वैश्य काला , परंतु ऐसा नहीं है । कश्मीर में भंगी और मद्रास के ब्राह्मण का मुकाबला करके देख लो भंगी गोरा और खूबसूरत मिलेगा , और मद्रास के ब्राह्मण तवे से भी ज्यादा काला मिलेगा । कुवैत और बिहार के भूकंप में छोटे-छोटे बच्चे मलबे के नीचे दबें हुए निकले , उन बच्चों में सभी वर्ण के बच्चे थे , उनके मां-बाप सगे संबंधियों का कुछ पता नहीं चला , अब बताओ वह बच्चे किस वर्ण के माने जाएंगे ? यदि रंग रूप के आधार पर वर्ण होता गाय भैंस के बच्चे की तरह पहचान लिए जाते । इसलिए वर्ण व्यवस्था पशुओं पर नहीं घटता..? वर्ण व्यवस्था कर्मों के अनुसार ही उचित है और कर्मों के अनुसार ही होती है । यही वेद आदि सभी शास्त्रों का कहना है । इसलिए वर्ण व्यवस्था जन्म से नहीं कर्म से होती है ।

➤ हे प्रिय बंधुओ पाठकों की समझ में आ गया होगा सभी शास्त्र तर्क प्रमाण के साथ मैंने आपको दिखाया समझाया । अतः सत्य को ग्रहण करें ।

• द्विज किसे कहते हैं ..?____

Edit with WPS Office

व्यक्ति जन्म से शूद्र (अशुद्ध/छोटा) होता है , यदि वह संस्कारित हो जाये तो संस्कार से द्विज कहलाता है । विद्या प्राप्त कर लेने से अर्थात विद्या युक्त होने से विप्र कहलाता है , और जो व्यक्ति जन्म के बाद संस्कार युक्त होकर विद्या प्राप्त कर लेता है अर्थात जन्म प्राप्त कर , संस्कारवान होकर विद्या प्राप्त कर लेने वाला मनुष्य श्रोत्रिय कहलाता है ।
जिसके दो बार जन्म हो उसे द्विज कहते हैं । अब आप कहोगे दो बार जन्म कैसे आइए जानते हैं __ जैसे चिड़िया पहले अंडा देती है , फिर उस अंण्डे से बच्चा निकलता है , इसी प्रकार मनुष्य के भी दो जन्म है , एक माता के गर्भ से , और दूसरा जन्म आचार्य से जो उसे अपने गर्भ में धारण करके उसे शिक्षा बल पराक्रम सभी से उत्तम विद्वान बनाता है इसीलिए आचार्य द्वारा जब उसकी शिक्षा समाप्त हो जाती है , आचार्य उसकी तर्क बुद्धि और पराक्रम बल से अनुमान लगाकर अतः जिसमें उसकी निष्ठा है ,उसे कौन सा वर्ण देना है , उसकी निष्ठा सामर्थ्य के अनुसार वह वर्ण देकर फिर वह द्विज कहलाकर अतः ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र , गुण कर्म अनुसार उसी वर्ण में उसका चयन करता है ।
सामवेद. 706___ जिन भी विधाओं में शिष्यों की रुचि तथा ग्रहण शक्ति हो , उन विधाओं में गुरुजन उन्हें निष्णातं करें ।

सामवेद. 938___ माता-पिता से एक जन्म मिलता है , दूसरा जन्म आचार्य से प्राप्त होता है । जब शिष्य विद्याव्रतस्नातक होते हैं उस समय आचार्य गुण कर्मानुसार यह ब्राह्मण है , यह क्षत्रिय है , यह वैश्य है इस प्रकार स्नातकों को वर्ण देते हैं । उस काल में प्रथम जन्म का कोई ब्राह्मण भी गुण कर्म की कसौटी से क्षत्रिय या वैश्य बन सकता है , क्षत्रिय भी ब्राह्मण या वैश्य बन सकता है और वैश्य या शूद्र भी ब्राह्मण या क्षत्रिय बन सकता है ।

ऋग्वेद. 6/22/10____ हे राजन् ! आप सत्य विद्या के दान और उपदेश से शूद्र के कुल में उत्पन्न हुओं को भी द्विज करिये और सब प्रकार से ऐश्वर्य को प्राप्त कराय तथा शत्रुओं का निवारण करके सुख की वृद्धि कीजिए ।

अथर्ववेद. 19/71/1____ इस मंत्र में सारे सुखों की प्राप्ति का उपदेश है ।

Edit with WPS Office

वेद माता जो ज्ञान के देने वाली परमात्मा की पवित्र वाणी वेदवाणी सारे इष्ट फलों के देने वाली है -- इसकी जितनी प्रशंसा की जाए थोड़ी है , सब विद्वानों को योग्य है कि इस ईश्वरीय पवित्र वेदवाणी को ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्यादि मनुष्य मात्र में प्रचार करते हुए सारे संसार में फैला देवें । उस वाणी की कृपा से पुरुष को दीर्घ जीवन , आत्मबल ,पुत्रादि सन्तान ,गौ , घोड़े , आदि पशु यश और धन प्राप्त होते हैं , यही वेद वाणी पुरुष को ब्रह्मवर्चस दे कर वेद ज्ञानियों के मध्य में सत्कार और प्रतिष्ठा प्राप्त कराती हुई ब्रह्मलोक को अर्थात सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान जो परमात्मा उसका ज्ञान देकर मोक्षधाम को प्राप्त कराती है ।

तैत्तिरीय उपनिषद् . शिक्षावल्ली. 1/11____

Edit with WPS Office

—यह तैत्तिरीयोपनिषद् [१।११] का वचन है।

आचार्य्य अन्तेवासी, अर्थात् अपने शिष्य और शिष्याओं को इस प्रकार उपदेश करे कि तू सदा सत्य बोल, धर्माचार कर, प्रमादरहित होके पढ़-पढ़ा, पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विद्याओं के ग्रहण और आचार्य्य के लिए प्रिय धन देकर, विवाह करके सन्तानोत्पत्ति कर। प्रमाद से सत्य को कभी मत छोड़, प्रमाद से धर्म का त्याग मत कर, प्रमाद से आरोग्य और चतुराई को मत छोड़, [प्रमाद से उत्तम ऐश्वर्य की वृद्धि को मत छोड़], प्रमाद से पढ़ने और पढ़ाने को कभी मत छोड़। देव, विद्वान् और माता-पितादि की सेवा में प्रमाद मत कर। जैसे विद्वान् का सत्कार करे, उसी प्रकार माता, पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा सदा किया कर। जो अनिन्दित धर्मयुक्त कर्म हैं, उन सत्यभाषणादि को किया कर, उनसे भिन्न मिथ्याभाषणादि कभी मत कर। जो हमारे सुचरित्र अर्थात् धर्मयुक्त कर्म हो , उनका ग्रहण कर और जो हमारे पापाचरण, उनको कभी मत कर। जो कोई हमारे मध्य में उत्तम विद्वान् धर्मात्मा ब्राह्मण हैं, उन्हीं के समीप बैठ और उन्हीं का विश्वास किया कर। श्रद्धा से देना, अश्रद्धा से देना, शोभा से देना, लज्जा से देना, भय से देना और प्रतिज्ञा से भी देना चाहिए। जब कभी तुझको कर्म वा शील तथा उपासना ज्ञान में किसी प्रकार का संशय उत्पन्न हो; तो जो वे समदर्शी पक्षपातरहित, योगी, अयोगी, आर्द्रचित्त, धर्म की कामना करनेवाले धर्मात्मा जन हों, जैसे वे धर्ममार्ग में वर्त्तें, वैसे तू उसमें वर्त्ता कर। यही आदेश आज्ञा, यही उपदेश, यही वेद की उपनिषत् और यही शिक्षा है। इसी प्रकार वर्त्तना और अपनी चाल-चलन सुधारना चाहिए।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 43.पृष्ठ तैंतालीसवां

• [मनुष्य के 6 दोष , (अथर्ववेद मंत्र) जीवन की सीख]

अर्थ___ उल्लू ,भेड़िया ,कुत्ता, चिड़िया, गरुड़ और गिद्ध के समान आचरण न बनाओं उनका अनुकरण करना छोड़ दो ।
व्याख्या___ इस मंत्र में छः जानवरों के आचरण के अनुकूल का निषेध किया गया है, मनुष्य को चाहिए कि उन 6 बुराइयों को सर्वदा छोड़ दे ।
उल्लू को अंधेरा प्यारा होता है उसको प्रकाश से डर लगता है , हमें ऐसा नहीं बनना है ? हमें ज्ञान के प्रकाश से डरना नहीं चाहिए ! किंतु स्वयं उसको ग्रहण कर सर्वत्र फैलाना चाहिए । सर्वदा विधा की बुद्धि और अविधा का नाश करना चाहिए ।
भेड़िया क्रूर और निर्दय होता है , अपने शिकार को नोच- नोच कर उसके अंग- भंग करता है । हमें अपने जीवन में क्रूर और निर्दय नहीं बनना है , दयालु और उदार बनना चाहिए । अहिंसा का भाव हृदय में रखना चाहिए ।
कुत्ता जाति द्रोह का प्रतिनिधि है , अपनी जाति के साथ वह सर्वदा द्वेष करता है और लड़ता है और मनुष्य के आगे पुंछ हिलाता है , और पैर चूमता है ।
इससे हमें शिक्षा मिलती है कि जो जाति द्रोही होती है , उन्हें दूसरे का गुलाम बनना अवश्य पड़ता है ।
इसलिए कभी भी अपने देश और जाति के साथ जयचंद के समान द्रोह और विश्वासघात नहीं करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

कोक पक्षी (चिड़िया) चंचल चित् वृत्ति बहुत होती है , और कामुकता अधिक पाई जाती है , हमें उसका अनुसरण नहीं करना चाहिए ? जिस जाति के स्त्री पुरुष में संयम के बजाय चंचलता और कामुकता अधिक बढ़ जाती है , वह जाति नष्ट हो जाती है ।
गरुड़ अभियान का प्रतिनिधि है , वह अपने रंगों पर मस्त हो जाता है , इसी प्रकार जो मनुष्य अपनी सजावट और फैशन में लगे रहते हैं , अपनी सुंदरता पर अभिमान करते हैं , वह गरुड़ के दोष का अनुकरण करते हैं और अतः मैं पतन की ओर जाते हैं ।
गिद्ध लालच का प्रतिनिधि है , वह दूसरों के मांस पर पलता है , इसी प्रकार कई लोग दीन दुखियों पर दया ने करके उनका माल हजम करते हैं , और अपना पेट बढ़ाते हैं । हमें इस प्रवृत्ति को सर्वदा छोड़ देना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 44. पृष्ठ चव्वालीसवां

- **[अहिंसा का वैदिक स्वरूप]**

{ वेद की अहिंसा }

वेद की अहिंसा छली- कपटी धोखेबाज और पापी को सब प्रकार से दबाकर रखने अथवा नष्ट कर देने का आदेश देती है ।

ऋग्वेद. 1/42/4___

Edit with WPS Office

अर्थात___ उस पापी धोखेबाज के क्रोध पर अपना पांव रखो । ऐसे दुष्टों को कुचल डालो ।

अथर्ववेद. 1/16/3___

अर्थात___ हमारा अपना तथा दूसरा जो कोई भी शत्रु हमको दास बनाना चाहता है , हमारा नाश कर रहा है , हे वीर नायक ! तू उसे बाणों से भी बींध डाल ।

अथर्ववेद. 1/16/4___

अर्थात___ इस मंत्र से स्पष्ट है कि वीर लोग प्रत्यक्ष शत्रु अथवा मित्र बनकर घात करने वाले शत्रु का अपने ज्ञान तथा बल से पूर्णतया नाश कर डाले , जिससे कि वह कभी भी सिर न उठा सके , चीन ने मित्र बनकर हमारे साथ धोखा किया है । अतः ऐसे धोखेबाज शत्रु के बल को समूल नष्ट कर देना चाहिए ।

मनुस्मृति अहिंसा, मनु. 8___

दुष्ट-पुरुष को मारने में कोई पाप नहीं होता , क्रोधी को क्रोध से मारना जानों , क्रोध से क्रोध की लड़ाई है ।

- **रामायण की अहिंसा ___**

किष्किंधा काण्ड. 2/32

कपट पूर्ण व्यवहार रखने वाले शत्रुओं को पहचान लेना चाहिए , छल- कपट एक प्रकार का पाप है और पापी को दंड देना ही धर्म है ।
राम का जीवन दुष्टों को दंड देने में व्यतीत हुआ है ।

Edit with WPS Office

• महाभारत की अहिंसा___

शांतिपर्व__

जो जैसा व्यवहार करें उसके साथ वैसा ही व्यवहार करना धर्म है , कपटी और छली के साथ कपट छल से और सज्जनों के साथ सज्जनता से व्यवहार करना उचित है ।

• गीता की अहिंसा___

भगवान श्री कृष्ण ने जब देखा कि अर्जुन यह मतसमझा हुआ है कि युद्ध स्थल में सामने आचार्य मामा चाचा भाई आदि खड़े हैं , उन्हें मारना पाप है , पीछे हट रहा है,, उस समय भगवान श्री कृष्ण कहते? अर्जुन से..! हे अर्जुन ! तुम्हारा पीछे हटना तो पाप कर्म है , यह तो अनार्यों का काम है , उठो ! युद्ध करो और इन पापियों का वध करो । जो कोई धर्म का शत्रु है वह मेरा शत्रु है , तुम्हारा शत्रु है मानव समाज का शत्रु है , ऐसे अधर्मियों का जीने का कोई अधिकार नहीं , इसलिए हे अर्जुन मत छोड़ो दुष्टों को, दंड दो , अगर तुम इनको दंड नहीं दोगे तो समाज का पाप तुम पर लगेगा , धर्म का पाप तुम पर लगेगा अर्जुन अपने शत्रुओं को देखो ऐसी दया शत्रु के मन में नहीं, तो तुम्हारे मन में कैसे यह दया का भाव आया ? उठो इन सब का वध करो ।

चाणक्य नीति___

हिंसक के साथ हिंसा का , दुष्ट के साथ दुष्टता का , व्यवहार करो ! इसमें कोई दोष नहीं ।

Edit with WPS Office

महर्षि दयानन्द सरस्वती की अहिंसा___

ऋषि सत्यार्थप्रकाश के 10 वे समुल्लास में प्रश्नोत्तर के रूप में लिखते हैं–
प्रश्न ___ जो सभी अहिंसक हो जावे तो व्याघ्रादि पशु इतने बढ़ जावे कि सब गाय आदि पशुओं को मार खावे और तुम्हारा पुरुषार्थ ही व्यर्थ हो जावे ।
उत्तर___ यह राजपुरूषों का कार्य है कि जो हानिकारक पशु व मनुष्य हैं उनको दण्ड देवे और प्राण से भी वियुक्त कर देवें ।
महर्षि 6 वे समुल्लास में लिखते हैं कि ___
राज्य के अधिकारी , धर्म और ऐश्वर्या की इच्छा करने वाला राजा , बलात्कार काम करने वाले डाकुओं को दंड देने में एक क्षण भी देर न करें । जो दुष्ट वचन बोलने , चोरी करने , बिना अपराध से दंड देने वाले से भी बलात्कार काम करने वाला है वह अतीव पापी दुष्ट है , जो राजा बलात्कारी पुरुष को दण्ड नहीं देता है , वह शीघ्र ही नाश को प्राप्त हो जाता है और राज्य में द्वेष उठता है ।

यजुर्वेद. 20/25___
जहां ज्ञानी और शूरवीर संगठित होकर साथ-साथ बढ़ते हैं ,उसी राष्ट्र की उन्नति होती है , वही देश पुण्य देश है , उसे कोई भी परास्त नहीं कर सकता ।

प्रश्न. आधुनिक युग में कौन जीवित रह सकता है ...?

उत्तर... वही मनुष्य वा राष्ट्र जीवित रह सकता है जो हिंसा अहिंसा की वास्तविकता को समझ कर सब प्रकार की शक्ति का पूर्णतया संचय रखेगा और अवसर आने पर अपनी पूरी शक्ति से शत्रु दल का मान मर्दन कर सकेगा । जिसका जीवन तप ,त्याग और सदाचार का जीवन होगा नि:

Edit with WPS Office

सन्देह वह संघर्ष जगत में अग्रणी होगा , विजेता होगा और बड़े स्वाभिमान के साथ जीवन व्यतीत कर सकेगा । यह एक विशुद्ध वैदिक विचारधारा है जो हमारे शास्त्रों तथा पूर्वजों ने हमें दी है । इसे सदा स्मरण रखिए तथा इसके अनुसार स्वयं तथा राष्ट्र को शक्तिशाली बनाइये ।।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 45. पृष्ठ पैंतालीसवां

- ## [वेद- परिचय]

{ स्त्रष्टा का धन्यवाद }

1..

अथर्ववेद. (9/10/2)

अर्थ___ जिस जगदीश्वर ने वेदस्थ अक्षर ,पद , वाक्य , छन्द , अध्याय आदि बनाये है , उसको सब मनुष्य धन्यवाद देवे ।

____ महर्षि पतंजलि भगवान ने वर्ण या अक्षरों से प्रतिमण्डित आकाश चन्द्र तारों के समान सुशोभित ब्रहमराशि वेदों को कहा है , जिसके पढ़ने-पढ़ाने से सब यथार्थ विद्याओ का लाभ होता है ।

वेद को परम अक्षर , परब्रह्म , परमपवित्र कहां है , उसी का अंग वर्णमाला , वेदांग शिक्षा है ।

2..

अथर्ववेद. (10/8/26)

Edit with WPS Office

अर्थ___ पूर्ण पुरुष से पूर्ण जगत उत्पन्न होता है , पूर्ण परमेश्वर से पूर्ण (समस्त) जगत पालित होता है । उसपूर्ण को इस वर्तमान इसी जीवन में जाने , जिससे यह जगत पालित होता है ।

3..

अथर्ववेद. (10/8/32)

अर्थ___ जो फैले हुए (सूत्र) सबको लपेटने वाला सूत्र प्रकृति को जानता है , जिसमें लोक- लोकान्तर रूपी प्रजा पिरोई हुई है , उस सूत्र के भी सूत्र को जो जानता है , वह महत् ब्रह्म को जानता है ।

4..

अथर्ववेद. (10/8/38)

अर्थ ___ में उस फैले हुए प्रकृति रूपी सूत्र को जानता हूं , जिसमें लोक- लोकान्तर सभी प्रजा ओतप्रोत है । मैं उस सूत्र के भी सूत्र अन्त: वर्तमान तत्व को जानता हूं वह तत्व परब्रह्म है ।

5..

अथर्ववेद. (10/8/43)

अर्थ___ नौ द्वारोवाले कमल के समान शोभायमान तीन गुणों से आवृत्त जो शरीर है , उसमें जो यक्षात्मा तत्व है , उसे ब्रह्म को जानने वाले ही जानते हैं ।

6..

अथर्ववेद. (10/2/31)

अर्थ___ आठ चक्रवाली , नो द्वारोंवाली देवताओं की ये अयोध्या पुरी (नगरी) शरीर है । उसनगरी में हिरण्यकोश जो स्वर्गरूप ज्योति : से आवृत्त है , अर्थात अनेक वलों से युक्त जीवात्मा (स्वर्ग) सुखस्वरूप परमात्मा की ओर चलने वाला ज्योति : से आवृत्त है ।

7..

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. (10/2/32)
अर्थ___ उस तिकोने (तीन और से) ठहरे हुए हिरण्यमय कोश में जो शरीरधारी यक्ष जीवात्मा है , उसको ब्रह्म के जानने वाले जानते हैं ।

8..
यजुर्वेद. (7/5)
अर्थ___ परमात्मा कहता है – हे जीव ! तेरे शरीर के अन्दर धुलोक , पृथ्वीलोक , अंतरिक्षलोक को रखता हूं । पर और अवर देवों के साथ अर्थात ज्ञानेंद्रियों , कर्मेन्द्रियो के साथ विराजमान होकर आनंदित हो ।

9..
यजुर्वेद. (36/3)
अर्थ___ प्राणाधार सुख स्वरूप , दुख नाशक जगद त्पादक , शुद्धस्वरूप देव का जो वरणीय है , उसका ध्यान करें । वह हमारी बुद्धियों को शुद्ध मार्ग में प्रेरित करें ।

10..
अथर्ववेद. (16/71/1)
अर्थ___ मैंने वेद माता गायत्री की स्तुति की है , जो द्विजों को पवित्र करने वाली है । वह मुझे , आयु , प्राण ,प्रजा , पशु ,कीर्ति , धन , संपत्ति देकर ब्रह्मलोक (मोक्ष) को प्राप्त कराये ।

- **{ वेदों के अध्ययन से लाभ }**

1..
ऋग्वेद. (1/164/36)
अर्थ___ जिस व्यापक अविनाशी परमेश्वर में सब विद्वानों और पृथ्वी सूर्य आदि सब लोक स्थित हैं , जिस में सब वेदों का मुख्य तात्पर्य है , उस ब्रह्म को नहीं जानता , वह वेदों से सुख को प्राप्त नहीं हो सकता । जो वेदों को

Edit with WPS Office

पढ़ के धर्मात्मा योगी होकर ब्रह्म को जानता है , वह जीवन में सब सुखों का आनन्द और जीवनमुक्त होकर परमात्मा को प्राप्त होता है ।

2..

ऋग्वेद. (6/67/31-32)

अर्थ___ जो मनुष्य प्रभु की कल्याणी वाणी का अध्ययन और मनन करता है , वह ऋषियों के प्राप्त किए मधुररस , ज्ञानरस , मुक्तिरस को तथा संसार सुख की साधन सामग्री- दूध , घृत , जल , प्रभूति को प्राप्त कराता है ।

3..

ऋग्वेद. (5/82/5)

अर्थ___ हे सकल जगत के उत्पन्न करने वाले ईश्वर ! सब पाप हम सब से दूर करो , और संसार में जो कुछ भी कल्याणमय है , वह हमें पाप छुपा करके दो ।

- **{ चारों वेदों का रचियता स्त्रष्टा }**

1..

शतपथ ब्राह्मण. (14/4/10/3)

अर्थ___ याज्ञवल्क्य महाविद्वान जो महर्षि हुए हैं , वह अपनी पंडित मैत्रेयी स्त्री को उपदेश करते हैं कि हे मैत्रेयी ! जो आकाशादि से भी बड़ा सर्वव्यापक परमेश्वर है , उससे ही ऋक , यजु , साम , अथर्ववेद – यह चारों वेद उत्पन्न हुए हैं । जैसे– मनुष्य के शरीर से श्वास बाहर को आके फिर भीतर को जाता है , इसी प्रकार सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदों को उत्पन्न करके संसार में प्रकाशित करता है , और प्रलय में संसार में वेद नहीं रहते , परंतु उसके ज्ञान के भीतर वे सदा बने रहते हैं । जैसे– बीज में अंकुर प्रथम ही रहता है , वही वृक्ष- रूप होके फिर भी बीज के भीतर रहता है , इसी प्रकार वेद भी ईश्वर के ज्ञान में सब दिन बने रहते हैं , उनका नाश कभी नहीं होता , क्योंकि वह ईश्वर की विद्या है , इससे इनको नित्य ही जानना ।

Edit with WPS Office

2..

यजुर्वेद. (31/7)

अर्थ___ उस ईश्वर से ही ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , तथा छन्दांसि इस शब्द से अथर्ववेद उत्पन्न हुए हैं ।

3..

अथर्ववेद. (10/7/20)

अर्थ___ उस सर्वशक्तिमान ईश्वर से ही ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद यह चारों वेद उत्पन्न हुए हैं ।

- **ऋग्वेद.** = जिससें पदार्थों के गुण कर्म स्वभाव को जाना जाय , वह ऋग्वेद है । ऋग्वेद में ज्ञान विषय प्रमुख होने से इसे ज्ञानकाण्ड भी कहा जाता है ।

- **यजुर्वेद.** = जिससे मनुष्य ईश्वर से लेकर पृथ्वी पर्यंन्त पदार्थों के ज्ञान से धार्मिक विद्वानों का संग शिल्प क्रिया सहित विधाओं की सिद्ध करता है , वह यजुर्वेद है । क्रियाकाण्ड प्रधान होने से यजुर्वेद को क्रियाकाण्ड विषय भी माना है ।

- **सामवेद.** = जिससे कर्मों की समाप्ति द्वारा कर्मबंधन छूटें , वह सामवेद है । कर्मों का बंधन मुक्त जीव का ही छूट सकता है अतः सामवेद को उपासनाकाण्ड नामक शब्द से जाना जाता है ।

- **अथर्ववेद.** = निरुक्त . 11/18
- **अर्थ___** जिससे जिसके द्वारा संशय हटते ही विषय का समग्रतापूर्वक ज्ञान होता है , वह अथर्ववेद है इसे विज्ञानकाण्ड नाम से भी जाना जाता है ।

Edit with WPS Office

- **{ वेद- प्रदाता ईश्वर }**

1..
ऋग्वेद. (8/68/1)
अर्थ___ मेधावी महान् विद्वानों के लिए परमात्मा वेद देता है और वह उससे स्तुति गाते हैं ।

2..
ऋग्वेद. (10/54/6)
भावार्थ___ जीव- ज्योति है , प्रकाशवान है , स्त्रष्टा सर्गारम्भ में उसमें वेदज्ञान ज्योति डालता है ; प्रकाशित करता है ।

3..
ऋग्वेद. (3/26/6)
अर्थात वह ईश्वर महाज्ञानी वक्ताओं का पिता गुरु है ।

4..
योगदर्शन. (1/26)
अर्थात वह सब गुरुओं का भी गुरु महागुरु ईश्वर है , जो काल की सीमा में नहीं आता है ।

- **{ वेद मानवमात्र के लिए }**

1..
यजुर्वेद. (26/2)
भावार्थ___यह कल्याणमयी वेद वाक् (जनेम्य :) मानवमात्र अर्थात ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र आदि सभी के लिए है ।

2..

Edit with WPS Office

सामवेद. (643)
अर्थात वेद ज्ञान का (जनिता) उत्पन्न करने वाला पावन परमात्मा है ।

- { वेद पढ़ने से लाभ }

1..
ऋग्वेद. (6/67/32)
भावार्थ___ जो जन परमेश्वर की पावमानी ऋचाओं को पढ़ता है , वह सरस्वती वेदवाणी से दूध ,घी ,मधु आदि सभी पदार्थों को प्राप्त होता है ।

{ सृष्टिकर्ता स्त्रष्टा }

1..
यजुर्वेद. (26/6)
भावार्थ___ विधा विज्ञान का प्रकाशक ईश्वर विद्वान वीर श्रेष्ठ पुरुषों को उत्पन्न करता है , वही घोड़े आदि शीघ्रगामी पशुओं का उत्पादक है ; वही सम्पूर्ण भुवनों लोकों को बनाता है । वही अनन्त कोटि ब्रह्मांड का कर्ता है । अतः इस जगत में सर्वोत्पादक ईश्वर की उपासना कीजिए ।

2..
यजुर्वेद. (31/16)
भावार्थ___ अर्थात संपूर्ण लोगों का स्त्रष्टा ईश्वर न उत्पन्न होनेवाला अजन्मा है , तथा जड़- चेतन सबके भीतर रहता है , एवं बहुत प्रकार के लोक-लोकान्तर उसी के सामर्थ्य से उत्पन्न होते हैं ।

3..
सामवेद. 643
पदार्थ___ वेद ज्ञान का उत्पन्न करने वाला धुलोक को पैदा करने वाला पृथ्वी

Edit with WPS Office

का सृजन करने वाला अग्नि का उत्पादक , सूर्य को उत्पन्न करने वाला विद्युत का स्त्रष्टा और यज्ञ ,जल , का स्त्रष्टा सारे संसार का उत्पादक ईश्वर सबको पवित्र करता है ।

- **{ वेद में त्रैतवाद }**

1..

ऋग्वेद. (1/164/20) , अथर्ववेद. (9/9/20)

पदार्थ___ हे मनुष्यों ! सुंदर पंखों वाले समान सम्बन्ध रखने वाले मित्रों के समान वर्तमान में दो पखेरु (पक्षी) एक जो काटा जाता उस वृक्ष का आश्रय करते हैं । उनमें से एक उस वृक्ष के पके हुए फल को स्वादुपन से खाता है और दूसरा न खाता हुआ सब और से देखता है अर्थात सुंदर चलने- फिरने वाला क्रियाजन्य काम को जाननेवाले व्याप्यव्यापकभाव से साथ ही सम्बन्ध रखते हुए मित्रों के समान वर्तमान जीव और ईश- परमात्मा समान कार्यकारणरूप ब्रह्मांड देह का आश्रय करते हैं । उन दोनों अनादि जीव ब्रह्म में जो जीव है वह पाप- पुण्य से उत्पन्न सुख दुखात्मक भोग को स्वादुपन से भोगता है और न भोगता हुआ उस भोगते हुए जीव को सब और से देखता अर्थात साक्षी है यह तुम जानो ।

भावार्थ___ इस मंत्र में रूपकालंऽकार है ।

जीव , परमात्मा और जगत का कारण ये तीन पदार्थ अनादि और नित्य हैं । जीव और ईश- परमात्मा यथाक्रम से अल्प अनन्त चेतन विज्ञानवान सदा विलक्षण व्याप्यव्यापकभाव से संयुक्त और मित्र के समान वर्तमान है । वैसे ही जिस अव्यक्त परमाणुरूप कारण से कार्यरूप जगत होता है वह भी अनादि और नित्य है । समस्त जीव पाप- पुण्यात्मक कार्यों को करके उनके फलों को भोगते हैं और ईश्वर एक सब और से व्याप्त होता हुआ न्याय से पाप-पुण्य के फल को देने से न्यायधीश के समान देखता है ।

Edit with WPS Office

- **{ जीव ब्रह्म का भेद }**

1..
ऋग्वेद. (10/82/3)
भावार्थ___ वह हमारा पिता है , उत्पादक ईश्वर संपूर्ण नामस्थान जानता है , वही भूतों (अग्नि जलादि) का नाम रखने वाला है ।
[इस मंत्र में यहां पिता- पुत्र का संबंध दर्शाया है]

2..
ऋग्वेद. (10/121/2)
भावार्थ___ जो आत्मादि ज्ञान का देने वाला ईश्वर है , उसकी उपासना संपूर्ण देवगण करते हैं , अतः उसी ईश्वर की उपासना करते हुए अमृत्व को प्राप्त करें ।

[यहां उपास्य - उपासक का निर्देश है]

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 46.पृष्ठ छियालीसवां

[वेदों में प्रश्नोत्तर]

1..
यजुर्वेद. 23/47

Edit with WPS Office

प्रश्न ___ आदित्य के तुल्य तेजस्वी , समुद्र के समान जलाधार और भूमि से बड़ा कौन है ? और किस का परिणाम नहीं है ? इन चार प्रश्नों का उत्तर अगले मंत्र में जानना चाहिए ?

यजुर्वेद. 23/48

उत्तर___ कोई भी आप प्रकाशमान जो ब्रह्म है उसके समान ज्योति विद्यमान नहीं वा सूर्य के प्रकाश से युक्त मेघ के समान जल के ठहरने का स्थान वा सूर्यमंडल के तुल्य लोकेश वा वाणी के तुल्य व्यवहार का सिद्ध करने हारा कोई भी पदार्थ नहीं होता – इसका निश्चय सब करें ।

2..

यजुर्वेद. 23/59

प्रश्न ___ इस जगत के धारणकर्ता बन्धन भूमि , सूर्य , अंतरिक्षों महान- सूर्य के कारण और चंद्रमा जिससे उत्पन्न हुआ है , उसको कौन जानता है ?

यजुर्वेद. 23/60

उत्तर___ विद्वान , उत्तर देवे कि हे जिज्ञासु पुरुष ! इस जगत के बन्धन अर्थात स्थिति के कारण प्रकाशित अप्रकाशित मध्यस्थ आकाश इन तीनों लोक के कारण और सूर्य चंद्रमा के उपादान और निमित्त कारण इस सब को मैं जानता हूं । ब्रह्म ही इस सब का निमित्त कारण और प्रकृति उपादानकारण है ।

3..

यजुर्वेद. 23/46

प्रश्न___ बिना सहाय के कौन भ्रमता , कौन फिर फिर उत्पन्न होता ।शीत की निवृत्ति कर्ता कौन और बड़ा उत्पत्ति का स्थान क्या है ? इन सब प्रश्नों के समाधान अगले मंत्र से जानने चाहिए ।

Edit with WPS Office

यजुर्वेद. 23/46

उत्तर___ हे विद्वानों ! सूर्य अपनी ही परिधि में घूमता है , किसी लोकान्तर के चारों ओर नहीं घूमता है ,चन्द्रादि लोक उसी सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं । अग्नि ही शीत का नाशक और सब बीजों के बोने को बड़ा क्षेत्र भूमि ही है – ऐसा तुम लोग जानो ।

4..

अथर्ववेद. 10/2/24

प्रश्न___ यह भूमि किसने विशेष रूप से स्थिर की है , धारण की है या बनाई है ?

किसने ऊपर का यह आकाश धारण किया ,थामा या बनाया ? और किसने यह ऊपर का और तिरछा व्यापक अंतरिक्ष वातावरण धारण किया , थामा या बनाया ?

अथर्ववेद. 10/2/25

उत्तर___ उस महान ब्रह्मशक्ति ने यह भूमि या देह बनाई और विशेष रूप से धारण और स्थिर की , उस महान शक्ति ब्रह्म ने ऊपर का आकाश वा सिर भी बनाया और स्थिर किया , यह ऊपर का और तिरछा , फैला हुआ अंतरिक्ष , वातावरण ,देह का मध्य भाग भी उसी महाशक्ति ब्रह्म ने धारण किया , बनाया और स्थिर किया ।

वेदों में अनेकों मंत्र प्रश्नोत्तर के माध्यम से समझाएं गए हैं एवं हमने यहां नमूने मंत्र ही लिखें है , पुस्तक ज्यादा बड़ी होने की आसंका है , इसलिए हमने कुछ ही मंत्र प्रश्नोत्तरी के लिखे हैं , । अधिक मंत्र जिनको प्रश्नोत्तर के माध्यम से प्रभु (परमपिता परमेश्वर) ने समझाया हैं । **आप telegram channel वैदिक पुस्तकालय** को ज्वाइन करके वहां सर्च बार में क्लिक करके पुस्तक __ **वैदिक प्रश्नोत्तरी** को डाउनलोड करके उसको पढ़ना । जिनके लेखक __ **जगदीश्वरान्द सरस्वती ।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 47.पृष्ठ सेतालीसवां

[पिण्ड और ब्रह्मांड]

प्राचीन ऋषि मुनियों ने वेदाध्ययन और मंत्रों के साक्षात्कार से समाधिस्थ होकर वेद के ज्ञान और ब्रह्मांड के विस्तृत ज्ञान को समझा । मंत्रों के गंभीर भाव को अपने लघुसूत्र में दर्शाया है– " **यद ब्रहमाण्डे तत् पिण्डे „** अर्थात जो ब्रह्मांड में है वही पिंड में है , पिण्ड (शरीर) और ब्रह्मांड में साम्य है , कही - कही वैषम्य भी है । ब्रह्मांड अनन्त प्रकार के हैं , पिण्ड भी अनेक असंख्य प्रकार के हैं ।

अल्पज्ञ जीव के लिए अनन्त कोटि ब्रह्मांड का अपनी अल्प बुद्धि से समझना ऐसा ही दु: साहस है , जैसा वर्षा की बूंदों को पकड़कर आकाश में चढ़ने की कल्पना करना । अतः योगियों ने एक सूत्र बनाया , जो ऊपर लिखा है । पिण्ड को समझा जा सकता है । जहां जैसी सुविधा हो । समझने में यदि असुविधा हो तो सृष्टिकर्ता का वेद , जो सृष्टि का निर्देशक काव्य है , उसको देखा जा सकता है ।

यजुर्वेद. अध्याय 7 , मंत्र 5 मैं निर्देश है–

भावार्थ___ हे जीव ! तेरे अंदर धावा , पृथ्वी और अंतरिक्ष को रखता हूं । ज्ञानेन्द्रियां ऊपर है , कर्मेन्द्रियां नीचे हैं । ज्ञानपूर्वक कर्म करके आनंद में रहो ।

इसी भाव की आचार्य महर्षि पतंजलि ने चरक संहिता में मूल रूप से व्याख्या की है–

पुरुषलोक (जगत) के तुल्य है । यह भगवान पुनर्वसु आत्रेय ने कहा , अर्थात

Edit with WPS Office

पुरुष इन महान लोकों का एक छोटा प्रतिरूप है , जितने भी इस लोक में मूर्तिमान भाव है , उतने ही पुरुष में है और जितने पुरुष में है , उतने ही इस लोक में है ।

अथर्ववेद. काण्ड दसवां , सुक्त 8 , मंत्र 33 में

भावार्थ___ जो सृष्टि के अनादि कारण जीव , ब्रह्म , प्रकृति आदि की प्रजा सृष्टि में ओतप्रोत है , इस सूत्र के रहस्य को जो जानता है , वह बहुत बड़े ज्ञान विज्ञान को सरलता से प्राप्त कर लेता है । जैसे विशाल भूमि का ज्ञान छात्रों को सुबोध कराने के लिए पूर्व आचार्य ने ग्लोब , भूमि का मानचित्र (नक्शा) भूगोल पुस्तक की रचना की है , जिससे छात्र सरलता से विशाल भूमि का ज्ञान प्राप्त करते हैं ।

इस प्रकार ऋषियों ने पिण्ड का ज्ञान करा कर ब्रह्मांड का ज्ञान कराया है ।

वेद स्त्रष्टा परमेश्वर को विविध नामों से पुकारता है । हिरण्यगर्भ ,भी वेद द्वारा प्रदत्त सृष्टि का प्यारा नाम है । यह स्त्रष्टा ऐश्वर्यायुक्त है , वैभवयुक्त है । ब्रह्मांड का निर्माण भी हिरण्यगर्भ में होता है । ' सुनहरे चमकीले गर्भ में इस पृथ्वी पर मनुष्यसृष्टि है , अतः पृथ्वी मनुष्य का आधार है । मनुष्य ही नहीं , प्रत्युत प्राणीमात्र का आधार है । पृथ्वी का आधार सूर्य , सूर्य का आधार ब्रह्मांड है , ब्रह्मांड का आधार सृष्टि का स्त्रष्टा ब्रह्म है । इस प्रकार ब्रह्म सर्वाधार (सब का आधार) है । जिस प्रकार पुष्पमाला के समस्त पुष्प धागे के आधार पर टिके होते हैं , उसी प्रकार असंख्य ब्रह्मांड परमेश्वर के आधार पर टिके हैं । यह महा चैतन्य शक्ति ही तो इन असंख्य ब्रह्मांडों को चक्राकार गति में घूमा रही है ।

जिस प्रकार शरीर के अंग उपांग (अवयव) स्नायुमंण्डल से बंधे हुए हैं , उसी प्रकार यह पिण्ड (शरीर) अर्थात व्यक्ति भी समाज अर्थात सामाजिक नियमों में बंधा हुआ है । समाज राष्ट्रीय नियमों पर आश्रित है और राष्ट्र सार्वभौम नियमों में नियंत्रित है । तात्पर्य यह है कि सर्वत्र एक सम्बन्धसूत्र है , यह सृष्टि का वैचित्रय है ।

जिस प्रकार प्राणियों में नर- नारी का जोड़ा होता है , उसी प्रकार ब्रह्मांड में धावा -पृथ्वी का जोड़ा होता है– धुलोक और पृथ्वी लोक । धुलोक ' नर , है तो पृथ्वी लोक नारी है । धुलोक जब ऊपर से रश्मियों के माध्यम से

Edit with WPS Office

सोम - रस (वीर्य) का विसर्जन करता है , तो पृथ्वी उसे अपने गर्भ में धारण कर गर्भवती होती है । प्रसव - काल आने पर क्रमश : उद्भिज्ज , अण्डज और जरायुज सृष्टि करती है । ठीक वैसे ही जैसे विभिन्न प्राणियों के नर-नारी जोड़े इस वसुधा पर जीव सृष्टि करते हैं । यह एक अद्भुत साम्य है ।

____ पिण्ड (शरीर) में भी धुलोक है । यह शरीर का सिर है । वृक्ष- स्थल अंतरिक्षलोक और नाभिप्रदेश: शरीर का पृथ्वीलोक है । जिस प्रकार नेत्रों में ज्योति है , उसी प्रकार सूर्य भी ज्योति: स्वरूप होकर चमक रहा है । ऐसे ही अंतरिक्ष में चल रहा है । जिस प्रकार पृथ्वी पर नदियों में जल का प्रवाह होता है , उसी प्रकार शरीर के नाभिप्रदेश में मूत्रादि का प्रवाह होता है । इस प्रकार हम देखते हैं की संपूर्ण ब्रह्मांड एक लघु पिण्ड (शरीर) मैं प्रतिबिम्बित होता रहता है ।

ब्रह्मांड____________पिंड

(धुलोक) (शिरोभाग सिर)
(अंतरिक्ष लोक) (वक्ष- स्थल)
(पृथ्वी लोक) (नाभि प्रदेश)

स्त्रष्टा ने हमारे शरीर में जिस प्रकार के अंग बनाए हैं , इस प्रकार के अनुरूप जगत में औषधि , वनस्पति ,कन्द मूल आदि बनाए हैं । हमारे गोल सिर के ऊपर बाल हैं ,तो गोल नारियल के ऊपर जटाओं के रूप में बाल है , सिर में स्थित मस्तिष्क की रचना तो बिल्कुल अखरोट के आकार अंग के समान है । साम्यता का निष्कर्ष देखिए — अखरोट की गिरी मस्तिष्क को बल देती है , अखरोट के मध्य में एक गुहा है , ब्रहम- रन्ध्र में ब्रहम गुहा है । मगज रूप रंग वाला भी होता है । नारियल का काम सिर को ठंडा रखना होता है , उसी से खोपड़े (सिर) में खोपड़ी (नारियल) का तेल लगाते हैं , सिर की खोपड़ी और नारियल में इतनी साम्यता थी कि हम नारियल को व्यवहार में खोपड़ा ही कहने लगे ।

नारियल के ऊध्व भाग में तीन छिद्र है , ये उसके तीन नेत्र है । दो नेत्रों वाला प्राणी नारियल का सेवन करें तो उसका तीसरा नेत्र (बुद्धि) भी

Edit with WPS Office

खुलजाता है । यह नारियल अखरोट का उपयोग मस्तिष्क को शक्ति देता है , बुद्धि को विकसित करता है , नेत्र के अनुरूप बादाम लीची है । बादाम के सेवन से नेत्र की ज्योति और बल मिलता है । नेत्र और सूर्य का तो सीधा सम्बन्ध है । प्रातः काल सूर्योदय के समय नेत्रों को थोड़ी देर के लिए सूर्य की ओर करने से नेत्र ज्योति बढ़ती है । हमारी नासिका तो बिल्कुल काजू के अनुरूप है । दांतों को देखने से ऐसा लगता है , मानो किसी ने अनार के दाने निकालकर हमारे मुंह में लगा दिए हो , काशीफल या पेठा , पपीता तो मानो पेट की नकल कर रहा हो , पेठा पेट की शक्ति को बढ़ाता है । क्या विचित्रता है । पेठा ने पेट को अपना आकर तो दिया ही , साथ में शक्ति भी।

नारियों के विविध प्रकार के स्तन , तदनुसार विविध प्रकार के आम है । नारी के स्तन तो पके आम की तरह है , जिसको चुसकर शिशु अपना पेट भरता है । आम चूसना बिल्कुल वैसा ही है , जैसा शिशु का मा का स्तन चूसना , केला तो साक्षात नर लिंग की भांति ऊपर से कठोर और भीतर से कोमल है । स्मरण रहे की केला वीर्यवर्धक है और चिलगोजा भी वीर्यकण के आकृति वाला है और पौरुषशक्ति का वर्धक होता है ।—-
—---

जिस प्रकार हमारे शरीर में भोजन का अंतिम अंश वीर्य है , उसी प्रकार गाय- भैंस के दूध का अंतिम-अंश घृत है । घृत पौष्टिक है । वीर्य भी पुष्ट संतान को जन्म देता है । धृत वीर्यवर्धक भी है ।

शरीर के अस्थिपंजर को देखने से ऐसा लगता है कि गन्ने के टुकड़ों को एक के ऊपर एक रखकर ही उसे खड़ा किया गया हो । न केवल हड्डियां गन्ने की तरह है ,प्रत्युत उसकी गांठे बिल्कुल हमारी हड्डियों के जोड़ों से समानता रखती हैं ।गन्ने का रस और उससे बने पदार्थ गुड़ शक्कर आदि हड्डियों को मजबूत करते हैं । अस्थिपंजर और गले में यह अद्भुत साम्यता है ही , स्त्रष्टा ने हमें एक संदेश भी दिया है , मनुष्य को अपना स्वभाव भी गन्ने के समान मधुर बनाना चाहिए । ऊपर से कठोरता और दृढ़ता भी हो , परंतु हृदय कोमल और मधुर हो , यह है सृष्टिविद्या को समझने का महत्व और आनन्द ।

Edit with WPS Office

जैसे आम और पत्रस मैं रेशों का जाल फैला हुआ है , वैसे ही हमारे शरीर में स्नायुओ का जाल है । फलों के रेशे , वृक्ष से रस लेकर उसे पूरे फल में जिस प्रकार पहुंचा देते हैं , उसी प्रकार हमारे शरीर की नस- नाडियां रक्त को शरीर में सर्वत्र पहुंचाती है । आम और पत्रस एकत्वर्ध्दक भी है ।

_____ हमारे शरीर में मांस बिल्कुल वैसे ही है जैसे चुकन्दर, आलू ,कला , सरकंदी , कद्दू और चीकू का गूदा । जिस प्रकार त्वचा हमारे शरीर की रक्षा करती है , उसी प्रकार वृक्षों की छाल तथा फलों का छिलका उनकी रक्षा करता है । पत्ते वाली सब्जियां बिल्कुल चमड़े के समान है , ये चर्म- रोगों के निवारण में सहायक सिद्ध होती है , हाथ , पैरों की उंगलियां तो बस मूंगफली की तरह है , भिंडी तो इतनी कोमल और आकर्षक है की अंग्रेजी में इसे लेडीज फिंगर ही नाम दे दिया गया है ।

कान तो परमात्मा की अद्भुत सृष्टि है सूचीवेधशास्त्रियो (एक्यू- पंचर चिकित्सक) ने अपना संपूर्ण शास्त्र ही कान पर खड़ा किया है । केवल कणेन्द्रिय के नाड़ीसंस्थान का अध्ययन कर वे सम्पूर्ण शरीर के रोगों का निदान करते हैं । उनके अनुसार कान में पूरा शरीर ही छिपा हुआ है । शरीर के प्रत्येक भाग का स्नायु बिंदु को सुई से चुभोकर शरीर के किसी भी रोग का उपचार किया जा सकता है , ऐसा सूचीवेधशास्त्रियों का सिद्धांत है ।

कान को ध्यान से देखे तो लगता है कि यह गर्भस्थ शिशु का हीं रूप है । सिर के नीचे और पैर के ऊपर नीचे गोल और मुलायम भाग तो लटक रहा है , वह मस्तिष्क ही तो है । इसमें मस्तिष्क के समस्त स्नायु बिंदु विद्यमान है । कान के मध्य भाग में पेंट के बिंदु और ऊपरी भाग है । ये कोई मनगढ़ंत कल्पना नहीं , चिकित्साशास्त्र के विशेषज्ञों का ठोस निष्कर्ष है , कानों को छेद कर कुंडल पहनने की बहुत प्राचीन परंपरा है । हमारे यहां तो कणवेध वैदिक संस्कार ही होता है । कणछेदन अनेक रोगों की संभावनाओं को नष्ट करता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सृष्टिकर्ता (ब्रह्मा) ने ब्रह्मांड की रचना की , उसके अंतर्गत सौरमंडल की रचना की सौरमंडल का ही एक अंश पृथ्वी है । पृथ्वी पर चेतन सृष्टि की , मनुष्य शरीर के अनुरूप ही कन्दन्मूल- फल- वनस्पति आदि पदार्थ सृष्टि पर उत्पन्न किए , यह अद्भुत साम्य संक्षेप में निम्न चित्रन्तालिका से स्पष्ट है _____________

Edit with WPS Office

ब्रह्मांड	पिण्ड	कन्द-मूल-फल
धुलोक	सिर	नारियल
सूर्य	मस्तिष्क	अखरोट

- **[पिण्ड और ब्रह्मांड]**

पिण्ड	कन्द-मूल-फल
नेत्र	बादाम- लीची
मुख	अनार- सीताफल
दांत	अनार के दाने मोती
कण्ठ	करेला

अन्तरिक्ष- लोक	हृदय	सेब- समुद्री पदार्थ (मोती)
(वायु)	स्तन	आम- मौसमी
	यकृत	मूली- गाजर
	फेफड़े	तरबूज- अंगूर
	फुफ्फुंस	तरबूज- अंगूर

नोट : ब्रह्मांड की अनुकृति पिंड में और पिंड की अनुकृति वीर्यकण में है । प्रत्येक बड़ी वस्तु की सूक्ष्म आकृति सर्वत्र उपलब्ध रहती है ।

पृथ्वीलोक	पेट	पेठा- पपीता
	आंत	करेला- चिचेण्डा
	लिंग	केला
	वीर्यकण	चिलगोजा- दूध-घृत- मक्खन चावल
	योनि	गेहूं- जौ- मक्का
	रज	मूंग- मसूर- उड़द
	अंडकोष	अंजीर- बैंगन- टमाटर- खजूर
	मांस	गूदा वाले पदार्थ आलू- कन्द- चकुंदर- शकरकंदी

Edit with WPS Office

रक्त	रस वाले पदार्थ (नींबू- संतरा- अंगूर
अस्थि	गन्ना- गन्ने का रस- गुड- शक्कर
त्वचा	पत्ते वाली सब्जी- वनस्पति-केसर
अंगूलिया	मूंगफली- सुहाजना फली

उपर्युक्त पदार्थ अंग विशेष को लाभ देने के साथ-साथ संपूर्ण शरीर को बल प्रदान करते हैं । आयुर्वेद के ग्रन्थों - चरक- सुश्रुत आदि से विशेष ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं ।

_______ वेद में अलंकाररूप से ब्रह्मांड की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है । स्त्रष्टा की अनेक प्रकार की शक्तियों से ब्रह्मांड में क्या-क्या पदार्थ बनते हैं , उनका वर्णन **यजुर्वेद के पुरुषसूक्त (अध्याय 31)** में मिलता है ।

अर्थात स्त्रष्टा की मानस शक्ति से ब्रह्मांड में चन्द्र , चक्षु से सूर्य , श्रोत्र से वायु-प्राण ,मुख से अग्नि , नाभि से अंतरिक्ष , शीर्ष से धौ ,पाद से भूमि ,श्रोत्र से दिशाएं उत्पन्न हुई ।

स्त्रष्टा की शक्ति	**ब्रह्मांड में निर्मित वस्तु**
मनस्	चंद्रमा
चक्षु	सूर्य
श्रोत्र	वायु-प्राण मुख अग्नि
नाभि	अन्तरिक्ष
शीर्ष;	धौ
पाद	भूमि
श्रोत्र	दिशा

पिण्ड (शरीर) में ब्रह्मांड की लघुरुप आकृति है । इसका वर्णन यजुर्वेद में किया गया है ।

अब तक हमने सृष्टि में विद्यमान सामंजस्य को देखा । भोक्ता , भोग्य तथा भोजयिता मैं एक अद्भुत तारतम्य का दर्शन किया । अब हम संक्षेप में पिंड

Edit with WPS Office

और ब्रह्मांड की साम्यता का अध्ययन करेंगे ।

{ पिण्ड } { ब्रह्मांड }

- 1. जन्म , जीवन व मृत्यु है । 1. उत्पत्ति स्थिति व प्रलय है ।
- 2. पिंड का जन्म सोद्देश्य है । 2. ब्रह्मांड की सृष्टि सोद्देश्य है ,सकारण है , यज्ञरूप है ।
- 3. पिंड में नर नारी का जोड़ा है, संतान उत्पत्ति है । 3. ब्रह्मांड में प्रकृति में वह पुरुष का जोड़ा है । धावा पृथ्वी का जोड़ा मिथुन है , प्रजनन की प्रक्रिया चालू है ।
- 4. पिंड देश काल में है । 4. ब्रह्मांड देश काल की सीमा में है ।
- 5. पिंड में शरीर और आत्मा है , पिण्ड में जीव का आवा गमन होता है । 5. ब्रह्मांड में प्रकृति और परम पुरुष परमात्मा है । ब्रह्मांड में अनन्त जीवों का आवागमन होता है ।
- 6. नर नारी दो शरीर में दो जीवन का सन्निधान है । 6. ब्रह्मांड में धावा तथा पृथ्वी के निकट परम पुरुष का सन्निधान है ।
- 7. पुरुष में नारी के सामीष्य से काम की उत्पत्ति होती है । संतान की उत्पत्ति करना पुरुष का स्वभाव है । 7. परम पुरुष में प्रकृति के सान्निध्य से ईक्षण की उत्पत्ति होती है , और ईक्षण से ही जड़ प्रकृति में गति प्रगति होती है ।
- 8.कामेच्धा से पिण्ड मैं क्षोभ उत्पन्न होता है । 8. परम पुरुष के ईक्षण से प्रकृति में क्षोभ उत्पन्न होता है ।

Edit with WPS Office

- 9. रात्रि के अंधकार में काम से क्षोभ उत्पन्न होता है ।   9. ब्रह्मांड में भी ब्रह्म रात्रि के गूढ़तम अंधकार में स्त्रष्टा के ईक्षण से प्रकृति में क्षोभ उत्पन्न होता है ।

- 10. सृष्टि रचना को समझने वाले पति-पत्नी अर्धरात्रि में ही(मैथुन) गर्भाधान करते हैं ।   10. हिरण्यगर्भ में मध्यरात्रि में ही गूढ़तम अंधकार में सृष्टिकर्ता के सन्निधान से प्रकृति में क्षोभ उत्पन्न होता है ।

- 11. नारी के गर्भाशय तथा योनि में अंधकार होता है ।   11. प्रकृति के गुणों (सत्व , रज , तम) की साम्यवस्था में भी अंधकार होता है । हिरण्य- गर्भ में भी जहां सृष्टि की उत्पत्ति होती है , वहां तम रहता है ।

- 12. शरीर में काम के वशीभूत नसों में रक्त का क्रमशः तीव्र प्रवाह, क्षोभ , उत्तेजना ,हर्ष , मैथुन , वीर्य विसर्जन ,रज- वीर्य मिलन , गर्भाधान गर्भाशय , तत्पश्चात गर्भवती मैं अन्तस्ताप तथा जीव के सन्निधान से आहार आदि के कारण रस-रक्त- मांस-मज्जा-अस्थि-रज वीर्य का निर्माण होता है । पिंड का निर्माण होता है , गर्भ में सलिल रूप आप रूप वीर्य से पिण्ड बनता है ।   12. हिरण्यगर्भ में भी जहां-जहां साम्यावस्था होती है , वहां-वहां ईश्वर के सन्निध्य से मूल प्रकृति में क्षोभ उत्पन्न होता है । इस क्षोभ के कारण प्रकृति में विकृति आकर उससे ब्रह्मांड की संपूर्ण सामग्री का निर्माण होता है । अग्नि रूप स्त्रष्टा के अन्तस्ताप से हिरण्यगर्भ में महदण्ड बनता है । महान अण्ड-कार में सूर्य आदि ग्रह- उपग्रह बनते हैं । हिरण्यगर्भ में प्रकृति विकृति आप रूप सलिल रूप 24 प्रकार के तत्वों से आकृतिवान ब्रह्मांड बनता है ।

- 13. प्रकृति का सिद्धांत है कि कोई भी रचना अन्धरूप में होती है और प्रकाश में उसकी वृद्धि होती है ।   13. सारी सृष्टि भी ब्रह्म रात्रि के अन्धरूप में होती है । उसके पश्चात प्रकाश में वृद्धि को प्राप्त होती है ।

Edit with WPS Office

- 14. जीव- पिण्ड सृष्टि का निमित्त कारण है । 14. ब्रह्म सृष्टि का निमित्त कारण है ।

- 15. नारी- गर्भ में रज तथा वीर्य का विशेष समय में संयोग होने पर ही तत्वों में बुदबुद बनते हैं । तत्पश्चात पिण्ड बनता बढ़ता जाता है । उसके बाद ही शिशु का भ्रूण आदि क्रियाएं चलती है । 15.स्त्रष्टा के हिरण्यगर्भ मैं स्थित प्रकृति में जब विषमावस्था अर्थात विकृति आ जाती है , तभी महदण्ड में बीजारोपण होता है । उसके पश्चात ही भ्रमण किया आदि प्रारंभ हो जाती है ।

- 16.जीव और जठराग्नि के संयोग से आहार आदि के द्वारा धातुओं की रचना तथा उनकी पुष्टि में लगभग 24 वर्ष लग जाते हैं । 16. उपर्युक्त प्रक्रिया पूर्ण होकर 24 तत्वों के निर्माण में लगभग एक अरब 42 करोड़ वर्ष लग जाते हैं । यह अनुमानित कल्पना है ।

- 17. गर्भ में शिशु के समस्त अंग उपांग समकाल में बनते हैं । 17. हिरण्यगर्भ में प्रकृति में विक्षोभ के पश्चात जो महदण्ड उत्पन्न होता है , उसी में सौरमंडल अपने समस्त ग्रहों- उपग्रहों के साथ सम काल में बनता है ।

- 18.पिण्ड के परिपक्व तथा परिपूर्ण पुष्ट होने पर नवे मास में शिशु का जन्म होता है । 18.महदण्ड की परिपक्वता हो जाने पर हिरण्यगर्भ में विस्फोट हो जाता है , और सौरमंडल की उत्पत्ति होती है , क्योंकि हिरण्य गर्भ असीम है ।

- 19.पिण्ड की उत्पत्ति हमेशा सिर से प्रारंभ होती है । 19. सौरमंडल जब भी मह-दण्ड से उत्पन्न होता है , तो सर्वप्रथम सूर्य ही पैदा होता है ।

Edit with WPS Office

- 20. शिशु के उत्पन्न होने के बाद वह मातृ-दुग्ध , आहार वायु तथा प्रकाश में शनै: शनै: विकास को प्राप्त करता है । 20. महदण्ड के विस्फोट से सौरमंडल शिक्या कृति में घूमता हुआ प्रकट होता है और प्रति मन्वंतर लगभग एक करोड़ मील के घेराव में फैलता है ।

- 21. जन्म के समय शिशु गीला , कोमल तथा असमर्थ होता है । 21. विस्फोट के बाद सौरमंडल के ग्रह- उपग्रह भी आद्रपिलपिले तथा अस्थिर होते हैं ।

- 22. विकसित होते हुए पिण्ड के अंग उपांग दृढ़ व पुष्ट होते हैं । 22. सौरमंडल के ग्रह- उपग्रह भी विकसित होते हुए ठोस, दृढ़ ,स्थिर व नियमित गति के होते हैं ।

- 23. बाल , किशोर वो युवावस्था की पूर्णता को प्राप्त होने पर्यन्त पिण्ड का विकास होता है । 23. सौरमंडल भी ब्रह्म दिवस के सात मन्वंतर पूर्ण होने पर आठवें संधिकाल के मध्य-भाग तक विकसित होता है ।

- 24. पूर्ण विकास प्रौढ़ावस्था हो जाने पर पिंड का क्रमशः संकुचन होता है । 24. आठवें संधिकाल के उत्तरार्ध मैं मन्वंतर से 14वें मन्वंतर पर्यंन्त ब्रह्मांड का संकुचन होता है ।

- 25. शैशव अवस्था में शिशु के अंग उपांगो को पुष्ट हो कर पूर्ण विकसित हो पूर्णता को प्राप्त होने में लगभग पच्चीस वर्ष लग जाते हैं । 25. सौरमंडल में ग्रहों उपग्रहों को पूर्ण विकसित होकर समर्थ होने तक लगभग 67 करोड़ , 12 लाख वर्ष लग जाते हैं ।

- 26. पिण्ड का विनाश व अन्त्येष्टि होती है । 26. ब्रह्मांड का प्रलय और कार्य का कारण में क्रमशः लय होता है ।

Edit with WPS Office

- 27. नारी ऋतुकाल आने पर जीवन में अनेक बार ऋतुमती होती है और ऋतुस्नाता होती है तथा जीवन में वह लगभग 10- 12 बार प्रसूता है । 27. सन्धिकाल आने पर पृथ्वी का जलप्लावन के बाद पुनः भूमि पुष्ट 14 बार संपूर्ण प्रजा और उत्पन्न करती है ।

- 28.पिण्ड का विकास जीवन के पूर्वार्ध में तथा ह्रास जीवन के उत्तरार्ध में होता है । 28. ब्रह्मांड की परिधि का विस्तार भी ब्रह्म दिवस के पूर्वार्ध में तथा संकुचन ब्रह्म दिवस के उत्तरार्ध में होता है ।

- 29. मृत्यु के पश्चात पुनर्जन्म होता है । 29. प्रलय के पश्चात पुनः सृष्टि होती है ।

- यहां पिंड और ब्रह्मांड में साम्यता का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किया है । आशा है पाठकों को लाभ होगा ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 48.पृष्ठ अड़तालीसवां

[सृष्टि- भोक्ता जीवात्मा का परिचय]

जीव___ प्राणियों का वह चेतन तत्व , जिससे वह जीवित रहते हैं ।

Edit with WPS Office

आत्मा___ निरंतर क्रियाशील होने से जीव का नाम आत्मा भी है ।
प्राणी___ जीव प्राण को धारण करने से इसका नाम प्राणी है ।
सृष्टि को भोगने से जीव को भोक्ता भी कहते हैं ।
जीव का स्वरूप___ जीव एक सूक्ष्मतर चेतन तत्व है । वह अजन्मा, अमर ,अजर ,नित्य है ।
जीव के गुण___ इच्छा, द्वेष ,प्रयत्न ,सुख , दुख , ज्ञान यह जीव के छह गुण है । **(वैशेषिक दर्शन)**
यह गुण प्राणी भाव में प्रत्यक्ष देखे जाते हैं ,

जीव के तीन शरीर होते हैं_____
एक स्वाभाविक जो जीव के स्वाभाविक गुणरूप है । चेतन तत्व रूप जो अगोचर होता है ।
सूक्ष्म शरीर___ पच्च प्राण , पच्च ज्ञानेंद्रिय पच्चसूक्ष्मभूत (पच्च तन्मात्रा) और मन तथा बुद्धि ,सवह तत्वों का समुदाय सूक्ष्म शरीर कहाता है , यह सूक्ष्म कि जीव की ,मुक्ति नहीं होती ,वहसूक्ष्म शरीरसे संयुक्त रहता है , यह सूक्ष्म शरीर सूक्ष्मभूतों के अंशो से बना है । ___ (सत्यार्थ प्रकाश का छठा समुल्लास)
स्थूल शरीर___ जो दृष्टिगोचर होता है । स्थूल शरीर पच्च महाभूतों से बना है । यह मानव का स्थूल शरीर ग्यारह इंद्रियां पंचकोषों से तथा अंग उपांग से सुशोभित है , सुंदर है ।
इन्हीं इंद्रियों के कारण मनुष्य कर्म- भोग योनि वाला कहाता है । जीव के कर्म अनुसार स्थूल शरीरों में भी इंद्रिया कम ज्यादा होती है । एकेन्द्रिय प्राणी 2 , इंद्रिय प्राणी ,5 इंद्रिय प्राणी 11 इंद्रियां प्राणी , केवल मानव शरीर को ही प्राप्त है ।

यह इंद्रियं जीव के बन्धु, मित्र हैं , जीव के सहायक हैं , सूक्ष्म तत्व रूप इंद्रिय स्थूल शरीर के स्थूल इंद्रियों के कर्म कार्य में सहायक है ।
स्थूल शरीर के बिना जीवन का कोई भी कार्य संपादन नहीं होता ।

स्थूल शरीर के अंग जिसके विकलांग है ,या इंद्रियों का अभाव है , जैसे

Edit with WPS Office

लंगड़े अंधे गूंगे बहरे वह बड़े असमर्थ हो जाते हैं , यह स्थूल शरीर वेदों में देवपुरी कहा गया है , यह स्त्रष्टा का बना हुआ आत्मा का श्रेष्ठ मंदिर है । **(अथर्ववेद) ।**

_____ जीवात्मा का स्वरूप जीव सूक्ष्म तत्व है , वह लिंग रहित है , असंख्य है , अल्प सामर्थ्यवाला क्रियाशील है ,अल्पज्ञ है , कर्म करने में स्वतंत्र है , फल भोगने में ईश्वराधीन है ।

जीव का सामर्थ्य _____ जीव का सामर्थ्य 24 प्रकार का होता है , बल पराक्रम आकर्षण प्रेरणा गति भीषण विवेचन किया उत्साह स्मरण निश्चय इच्छा प्रेम द्वेष संयोग विभाग संयोजक विभाजक श्रवण स्पर्शन दर्शन स्वादन और गन्ध ग्रहण तथा ज्ञान इन 24 प्रकार के सामर्थ्य युक्त जीव है , **(सत्यार्थ प्रकाश छठा समुल्लास)**

जीव कभी पुरुष शरीर , कभी स्त्री शरीर कभी नपुंसक शरीर धारण करके विविध नाटक धारण करता है । विविध लिंग वाले शरीरों में रहकर भी कभी शिशु कुमार कुमारी युवक युवती वृद्ध- वृद्धा अनेक अवस्थाओं में जीवन में नाटक खेलता है । जैसे एक ही व्यक्ति नटशाला में विविध रूपों को धारण कर नाटक खेलता है , ऐसे ही जीव जन्म जीवन मृत्यु पुनर्जन्म में कर्म भोग चक्कर का नाटक खेलता है , सृष्टि रूपी नटशाला में स्त्रष्टारुप अध्यक्ष नटराज की व्यवस्था में जीवों का नाटक होता है ।

जीव की गति_____ सृष्टि की उत्पत्ति के समय अन्य ब्रह्मांडो से जीवों का सामूहिक आगमन होता है । सृष्टि की स्थिति के समय , जन्म , जीवन , मृत्यु के समय स्व- स्व कर्म अनुसार अकेला ही आता- जाता है । जब-जब धरती पर भूकंप या पूर्ण प्लावन होता है ,तब तब सामूहिक रूप से जीव अन्य लोक में चले जाते हैं ।

जब जलप्लावन की अवधि समाप्त होती है , पुनः चेतन सृष्टि के आरंभ के समय सामूहिक रूप से जीव - पुनः पृथ्वी पर आ जाते हैं ।

जब सृष्टि का प्रलय होता है , तब भी जीव सामूहिक रूप से दूसरे ब्रह्मांड में चले जाते हैं । जैसे विविध प्रकार के पक्षी ऋतुओं के कारण देश देशांतर से आते और जाते हैं , यह प्रत्यक्ष है । जीव के परोक्ष आवागमन का उपरोक्त

Edit with WPS Office

उदाहरण प्रत्यक्ष है , जैसे बाढ़ और अकाल के कारण भी मनुष्य आदि प्राणी स्थान परिवर्तन कर देते हैं ।

जीव का भ्रमण_____ जीव का गमन तथा आगमन ईश्वर के व्यवस्था अनुसार होता है । जब-जब जीव का आवागमन या गमन होता है , तब जीव सूक्ष्म शरीर के सहारे सूर्य रश्मि और वायु के माध्यम से आता है ।

मृत्यु के उपरांत जीव शरीर को छोड़कर प्रथम दिन सूर्य में , दूसरे दिन अग्नि में , तीसरे दिन वायु में , चौथे दिन आदित्य में , पांचवें दिन चंद्रमा में , छठे दिन ऋतु में , सातवें दिन मरुत में , आठवें दिन बृहस्पति में , नोवे दिन मित्र प्राण में , दसवें दिन वरुण में , ग्यारहवें दिन इंद्र में , बारहवें दिन विश्वेदेवा ,(खाध पदार्थों) मैं भ्रमण करते हुए अपने कर्मों के अनुकूल गर्भाशय को प्राप्त हो शरीर धारण कर उत्पन्न होता है ।

{ यजुर्वेद. 36/6 }_____ विविध योनि में जाने से पूर्व जीव वायु के साथ रहता है । जल औषधि का प्राण आदि में प्रवेश करके वीर्य में प्रवेश करता है । अर्थात जिस योनि में जाना होता है , उस योनि के नर शरीर में प्रथम प्रवेश करता है । पुनः गर्भाधान द्वारा स्त्री गर्भाशय में स्थित होकर पुनः जन्म लेता है । ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के पुनर्जन्म का विषय यह अति गूढतम रहस्य स्त्राष्टा और वेदज्ञ मुनि योगी जानते हैं ।

जीव के कर्मफल_____ जो जीव मनुष्य शरीर में सात्विक होता है , वे देव अर्थात विद्वान , जो रजोगुणी होते हैं , वे मध्यम मनुष्य और जो तमो गुणयुक्त होते हैं , वे नीचे गति को प्राप्त होते हैं ।

- जो अत्यंत तमोगुणी है वे स्थावर वृक्ष आदि कृमि- कीट मत्स्य , सर्प ,कच्छप पशु और मृग (हिरण) के जन्म को प्राप्त होते हैं ।
- जो मध्यम तमोगुणी है , वे हाथी , घोड़ा , शूद्र , म्लेच्छ , निंदित कर्म करनेहारे सिंह , व्याघ्र , वराह अर्थात शूकर के जन्म को प्राप्त होते हैं ।
- जो उत्तम तमोगुणी है , वे चारण (जो की कविता दोहा आदि बनाकर मनुष्यों की प्रशंसा करते हैं) सुंदर पक्षी दाभिक पुरुष अर्थात अपने सुख के लिए अपनी प्रशंसा करनेहारे राक्षस जो हिंसक पिशाच अनाचारी अर्थात - मधादि के आहारकर्ता और मलिन रहते हैं , वह उत्तम तमोगुण के कर्म का फल है ।

Edit with WPS Office

- जो अत्यंत रजोगुणी है , वे लोहार , मल्लाह नट नाटक करनेवाले सेवक होते हैं ।
- जो मध्यम रजोगुणी है , वे राजा , राजमंत्री ,राजपुरोहित राजदूत ,वकील , सेनापति का जन्म पाते हैं ।
- जो उत्तम रजोगुणी होते हैं , वे ज्ञान , विद्या , विशेषज्ञ , बाजा बजाने वाले , यक्ष अप्सरा विद्वानों के सेवक होते हैं ।

- जो उत्तम सतोगुणी होते हैं , वे तपस्वी सन्यासी वेद-पाठी , विमान चलाने वाले , ज्योतिषी और देह को स्वस्थ और पुष्ट रखने वाले होते हैं ।
- जो मध्यम सतोगुणी होते हैं , वे जीव यज्ञकर्ता वेदार्थवित् विद्वान ,विशेषज्ञ और अध्यापक होते हैं ।
- स्त्रष्टा की अति गुप्त व्यवस्था रहती है , सामान्य जन कर्म ही करते हैं । कर्मफल प्रदाता ही सब जानता है । लोक में प्रत्यक्ष है कि अच्छे कर्म का फल परिणाम अच्छा होता है , बुरे कर्म का बुरा फल होता है । कभी -कभी कर्मफल में देर होती है । क्रमशः फल मिलने में देर हो सकती है । कुछ कर्म फल वर्तमान जीवन में , कुछ कर्म फल अगले जीवन में मिलते हैं ।

जीव का जन्म पुनर्जन्म_____ जन्म का अर्थ प्रकट होना , जीव शरीर को धारण करके उत्पन्न होने का नाम जन्म है । जीवन- मृत्यु के पश्चात पुनः जन्म का नाम पुनर्जन्म है ।

वेद आदि शास्त्रों में जन्म- पुनर्जन्म में उत्तम इंद्रिये , उत्तम शरीर , उत्तम योनि प्राप्ति के लिए अनेक प्रार्थना__ मंत्र है । योगी , विद्वान , मुनि , जो पवित्रता में सिद्धि प्राप्त कर लेता है , उसको पुनर्जन्म का ज्ञान होता है । **(योग दर्शन)** ।

लोक में अनेक बालक बालिकाएं विभिन्न प्रदेशों में विदेशों में समय-समय पर पूर्वजन्म की घटनाएं प्रायः सुनते सुनातेरहते हैं और युवाअवस्था आने पर भूल जाते हैं । लेखक को एक बालक की पूर्व जन्म की सत्य घटना का ज्ञान है ।

Edit with WPS Office

पूर्वजन्म की स्मृति स्वल्पकाल ही रहती है , पूर्व जन्म को भूल जाना दैवी व्यवस्था है । नहीं तो लोक में पूर्व जन्म के बन्धु- वान्धव , पति-पत्नी का सम्बंध , धन संपत्ति , जमीन जायदाद के विविध प्रकार के झगड़े होने से मानव जीवन दुखी होता है । वर्तमान जीवन में भी लोगों में मोह अज्ञानवंश अनेक झगड़े होते हैं । यदि पूर्व जन्म की स्मृति हो तो और जीव अधिक दुखी परेशान है । जीव की पुनर्जन्म की स्मृति रहती है , किंतु वह नवजात शिशु को दुग्ध पीने का संस्कार रहता है , हंसता है , रोता है , वाणी इतनी असमर्थ होती है कि वह बोल नहीं पाता , जब बोलने का सामर्थ्य होता है , तब तक वह तीन चार वर्ष मैं पूर्व स्मृतियां भूल जाता हैं ।

लाखों- करोड़ों में एक दो जीव ही है , जो मानव शरीर में पुनः पुनः आते हैं । वे पूर्वजन्म की घटनाएं बता सकते हैं ।

पुनर्जन्म______ **वैदिक धर्म पुनर्जन्म को मानता है । ऋग्वेद. 6/47/18 , अथर्ववेद. 10/8/27 , 10/8/28 , 11/4/6 , यजुर्वेद. 4/15 अर्थात मृत्यु के पश्चात पुन : जन्म होता है ।** यदि पुनर्जन्म न मानेंगे तो सृष्टि रचना का क्या उपयोग ? सृष्टि को कौन भोंगेगा ? मात्र एक जीवन में सब कर्मो के फल भोगे नहीं जा सकते । जन्म जन्मांतरों के संचित कर्मों तथा वर्तमान जन्म के फलों को भोगने के लिए जन्म लेना ही पड़ता है मृत्यु अर्थात पच्चमहाभूतों से बने शरीर की होती है । तथा आत्मा चेतन तत्व होने से नित्य , अजर , अमर है और किये शुभाशुभ कर्मों के आधार पर ईश्वरीय कर्मफल जाति आयु भोग की न्यायव्यवस्थानुसार पुनः शरीर को प्राप्त होता है । पुनर्जन्म कब , कहा कैसे होगा -- यह परमात्मा के अतिरिक्त कोई नहीं जानता । ईश्वरकी न्याय व्यवस्था अनुसार जब जीवात्मा शरीर धारण करता है तो उसे जन्म तथा जब वह उस शरीर को छोड़ता है तो उसे मृत्यु और जन्म - मृत्यु के मध्य काल को ' जीवन , कहते हैं ।

चमत्कार एवं अन्धविश्वास ______ चमत्कार नहीं होते और न हीं हो सकते हैं यह सृष्टि ईश्वर के बनाए नियमानुसार ही चलती है । प्राकृतिक नियमों के विरुद्ध कोई घटना घट नहीं सकती । होनी (प्रकृति नियम अनुसार जो होना है) कभी अनहोनी नहीं होती और अनहोनी (प्रकृति नियम के विरुद्ध) भी कभी होनी नहीं हो सकती । प्रकृति नियमानुसार

Edit with WPS Office

रात्रि के बाद दिन और दिन के बाद रात्रि होती है , इस कोई टाल नहीं सकता । मृत्यु होने पर फिर वह मृत शरीर जीवित नहीं हो सकता , क्योंकि यह प्रकृति नियम के विरुद्ध है । मनुष्य स्वभाव से अल्पज्ञ है अतः सृष्टि में किसी नई घटना को देखकर वह उसे चमत्कार समझने की भूल करता है । वास्तव में अपने आप कुछ नहीं हो सकता । प्रत्येक घटना के पीछे कोई ना कोई कारण होता है । कारणभावत्कार्यभाव **(वैशेषिक दर्शन. 4/1/3)** ______ अर्थात कारण होने पर ही कार्य संभव होता है क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता । वैज्ञानिक लोग प्रकृति के नियमों को समझने के पश्चात उसे विज्ञान के रूप में स्वीकार करते हैं । कभी किसी की कही सुनी बातों पर बिना परीक्षण के विश्वास नहीं करना चाहिए । प्रकृति नियम के विरुद्ध किसी भी बात पर विश्वास करने को अंधविश्वास एवं अन्धश्रद्धा कहते हैं । मूर्ति पूजा छुआछूत जाति पाति जादू टोना डोरा धागा कंण्ठी ताबीज शकुन अपशकुन जन्मपत्री , फलित ज्योतिष , हस्तरेखा , नवग्रहपूजा , बलि प्रथा , सती प्रथा , मांसाहार , मधपान , मृतक श्राद्ध , इत्यादि अवैदिक और अवैज्ञानिक बातों को मानने का वैदिक धर्म में निषेध है । अज्ञानता के कारण ही अन्धविश्वास फैलता है ।

प्राकृतिक अटल नियम : ______

1.___ ईश्वर के बनाए प्रकृति के नियम अटल , अपरिवर्तनशील होतें है । कोई भी संत , फकीर , महात्मा , गुरु , पीर , पैगम्बर , भगवान इत्यादि । उनका उल्लंघन नहीं कर सकता ।
2.___ जो वस्तु बनती है , उसका विनाश भी होता है ।
3.___ जिसकी आदि है उसका अन्त निश्चित है । जिसका जन्म होता है उसकी मृत्यु भी निश्चित है । ऋग्वेद. 1/41/1 , जन्म और मृत्यु का अट्टू संबंध है । जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु होती है तथा जिसकी मृत्यु हुई है उसका जन्म भी होता है ।
4.___ जिसका आरंभ होता है उसका अनंत अनिवार्य है अतः मोक्ष काल सदा के लिए नहीं होता , उसका भी अन्त होता है ।
5.___ आत्मा अनादि , अमर और नित्य है । मृत्यु शरीर की होती हैं जो

Edit with WPS Office

अन्त्येष्टि संस्कार के दौरान अग्नि के द्वारा अपने कारण पच्चमहाभूतों में रुपान्तरित हो जाता है ।

6.___ जब तक आत्मा शरीर में रहता है तब तक उसमें कार्य करने की क्षमता रहती है और जैसे ही वह शरीर को त्यागता है उस शरीर की मृत्यु होती है , अर्थात उस मृत शरीर में कार्य करने की क्षमता समाप्त हो जाती है । किया हुआ कोई भी कर्म बेकार नहीं जाता उसका फल अवश्यमेव प्राप्त होता है । कब , कहा , और कैसे -- मात्र सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान परमात्मा ही जानता है । कर्म फल के सभी रहस्यों को समझना अल्पज्ञ मनुष्य की समझ से बाहर है ।

7.___ सामान्य तौर पर , शुभ तथा अशुभ कर्मों के फल स्वरुप मनुष्य को सुख और दुख प्राप्त होते हैं । अर्थात शुभ कर्मों का फल सुख , और अशुभ कर्मों का दण्ड अशुभ होता है ।

8.___ यह प्राकृतिक नियम और वैज्ञानिक तथ्य है कि चेतन तत्व से जड़ वस्तु की उत्पत्ति अथवा जड़ से चेतन पदार्थ की उत्पत्ति नहीं हो सकती । यह असंभव है ।

9.___ स्त्री पुरुष के मिलन बिना संतान उत्पत्ति नहीं हो सकती । संतान उत्पत्ति के लिए पुरुष का वीर्य और स्त्री के रज का संयोग परमावश्यक है ।

10.___ **कारणभावत्कार्यभाव** **वैशेषिक दर्शन. 4/1/3** अर्थात कारण होने पर ही कार्य संभव होता है क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य नहीं होता है ।

11.___ **न तु कार्याभावात्कारणाभाव** : **वेदांत दर्शन. 1/2/1** अर्थात् कार्य के अभाव से कारण का अभाव होता है ।

12.___ **कारणाऽभावात्कार्याऽभाव** **वेदांत दर्शन. 1/2/1** अर्थात् कारण न होने से कार्य कभी नहीं होता है ।

- **[क्या ईश्वर पापों को क्षमा करता है..?]**

वाल्मीकि रामायण. अयोध्या कांड , सर्ग 63 , श्लोक 6____

कल्याणी ! मनुष्य शुभ या अशुभ जो भी कर्म करता है ,भद्रें अपने उसी कर्म के फलस्वरूप सुख या दु:ख कर्ता को प्राप्त होते हैं ।

Edit with WPS Office

वाल्मीकि रामायण. आरण्यक कांड , सर्ग 29 , श्लोक 8____
जैसे समय आने पर वृक्ष में ऋतु के अनुसार फूल लगते ही है , उसी प्रकार पापकर्म करने वाले पुरुष को समयानुसार अपने उस पापकर्म का भयंकर फल अवश्य ही प्राप्त होता है ।

महाभारत शांति पर्व. अध्याय 290 , श्लोक . 16-17___
मनुष्य नेत्र मन वाणी और क्रिया के द्वारा चार प्रकार के कर्म करता है और जैसा कर्म करता है वैसा ही फल मिलता है ।16।
राजन् ! मनुष्य कर्म के फलरुप से कभी केवल सुख , कभी सुख दुख दोनों को एक साथ प्राप्त करता है । पुण्य या पाप कोई भी कर्म क्यों ना हो , फल भोगे बिना उसका नाश नहीं होता ।

महाभारत शांति पर्व. अध्याय 181 , श्लोक 8 ,9____
जिस-जिस मनुष्य ने जैसा कर्म किया है , वह उसके पीछे लगा रहता है । यदि कर्ता पुरुष शीघ्रता पूर्वक दौड़ता है तो वह भी उतनी ही तेजी के साथ उसके पीछे जाता है । जब वह सोता है तो उसका कर्मफल भी उसके साथ ही सो जाता हैं । जब वह खड़ा होता है तो वह भी पास ही खड़ा रहता है और जब मनुष्य चलता है तो उसके पीछे-पीछे वह भी चलने लगता है । इतना ही नहीं , कोई कार्य करते समय भी कर्म संस्कार उसका साथ नहीं छोड़ता । सदा छाया के समान पीछे लगा रहता है ।

महाभारत शांति पर्व. अध्याय 181 , श्लोक 12____
जैसे फूल और फल किसी की प्रेरणा के बिना ही अपने समय पर वृक्षों में लग जाते हैं , उसी प्रकार पहले के किये हुए कर्म भी अपने फल भोग के समय का उल्लंघन नहीं करते ।

महाभारत शांति पर्व. अध्याय 181 , श्लोक 15 ,16____
कोई बालक हो , तरुण हो या बूढ़ा हो , वह जो भी शुभाशुभ कर्म करता है , दूसरे जन्म में उसी उसी अवस्था में उस उस कर्म का फल उसे प्राप्त होता है ।15।

Edit with WPS Office

जैसे बछड़ा हजारों गौओं में से अपनी मां को पहचानकर उसे पा लेता है , वैसे ही पहले का किया हुआ कर्म भी अपने कर्ता के पास पहुंच जाता है ।

- **{ मुक्ति के साधन }**

ईश्वर की स्तुति प्रार्थना और उपासना का करना , धर्म का आचरण और पुण्य का करना , सत्संग , विश्वास , तीर्थसेवन , सत्पुरुषों का संग और परोपकार आदि सब अच्छे कर्मों का करना तथा सबदुष्ट कर्मों से अलग रहना___यह सब मुक्ति के साधन कहलाते हैं ।___ **आर्यदेश्यरत्नमाला ।**

मुक्ति का अधिकारी______

- वेद के सिद्धांतों को यथार्थ जानता हो ।
- निश्चयपूर्वक यथार्थ दृढ़ विश्वास ईश्वर और वेद में रखता हो ।
- सभी प्रकार की भौतिक वासनाओं से रहित होना ।
- योगानुष्ठान से चित्त् आत्मा को निर्मल बनाना ।
- शुद्ध अन्त: करण वाले सन्यासी स्थितिप्रज्ञ योगी शुद्धात्मा मुक्ति को प्राप्त होकर आवागमन से छूट जाते हैं ।

मुण्डकोपनिषद. 3/6___

मुक्ति मैं जीव का अस्तित्व बना रहता है और संकल्पमात्र शरीर से इच्छा अनुसार उत्तम सुख ब्रह्मानंद को प्राप्त कराता है । परान्त काल के बाद मुक्ति जीव- लोक- उपकार के लिए पवित्र मानव देह धारण करते हैं । ईश्वर के अनुग्रह से यह मानव देह मिलता है ।

अथर्ववेद. 11/4/20___

अर्थात जीव गर्भपिण्ड में गतिमान होते हुए पुनः-पुनः उत्पन्न होता है ।

Edit with WPS Office

यजुर्वेद. 4/15___
जीव पुनः पुनः मन इंद्रिय प्राण आयु प्राप्ति की इच्छा करता है ।

अथर्ववेद. 11/4/14___
अर्थात गर्भ के अंदर ही यह जीव प्राण लेता है । अप्राण दूर करता है , पुनः पुनः जन्म लेता है ।

यजुर्वेद. 35/2___
अर्थात जीव शरीर को छोड़कर वायु सूर्य रश्मि के माध्यम से लोक-लोकान्तर में जाता है , पुनः आता है ।

यजुर्वेद. 8/28___
अर्थात जीव जरायु के साथ गर्भ से दश मास में उत्पन्न होता है । यहां चाद्र मास के दश मास है । स्त्री के ऋतु धर्म चक्र से गणना करना चाहिए ।

यजुर्वेद. 12/37___
अर्थात जीव विविध प्रकार के औषधि वनस्पति जलचर आदि योनियों के गर्भ में रहता है , पुनः पुनः गर्भ से उत्पन्न होकर भी जीव अजन्मा है । जीव शरीर धारण करता है , जीव का जन्म मरण नहीं होता । वेद शास्त्र उपनिषद गीता ऋषि मुनि इसी सिद्धांत को मानते हैं ।

यजुर्वेद. 40/5___
अर्थात हे जीव ! 100 वर्षों तक कर्म करते हुए जीने की इच्छा कर । कर्तव्य बुद्धि से कर्म करने पर कर्म बंधन नहीं होता ।

अथर्ववेद. 10/2/31___
अर्थात आठ चक्र नव द्वारवाली पुरी में जीव रहता है । अतः जीव का पुरुष नाम है ।

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 10/2/26___
अर्थात मस्तिष्क के हृदय में जीव सुरक्षित रहता है , चेतन शरीरों में सर्वत्र योनियों में यही व्यवस्था स्त्रष्टा की है ।

अथर्ववेद. 10/8/43___
अर्थात आत्मा- पक्ष ,नव द्वारवाला कमल के समान सुंदर शरीर में रहता है । जो सत्व , रज ,तम तीन गुणों से घिरा है , बना है । विद्वान ब्रह्म ज्ञानी जानते हैं ।

यजुर्वेद. 35/3___
अर्थात जीव को गर्भ में प्रवेश समय किरणें छोड़ देती है ।

- ## [जीव का आवागमन]

नाडीतत्वदर्शनम्र से साभार_____
___ अत्यंत सूक्ष्म चारों भूतो (रूप ,रस-गन्ध स्पर्श-तन्मात्राओं) के साथ मन की क्रिया से क्रियावान आत्मा कर्मवंश एक शरीर से दूसरे शरीर में संक्रमण करता है । सूक्ष्म भूतों के साथ रहने का तात्पर्य लिंगशरीर या कारण शरीर से है ।___ **(चरक शारीर०अ०2-3)**

जो कर्मज (आत्मकर्मज , पूर्वजन्मकृत ,शुभासुभकर्मज) चार भूत है ,वे आत्मा से युक्त रहकर ही गर्भ में प्रवेश करते हैं । वे बीजधर्मा लिंगशरीर , आत्मा के दूसरे देह मै प्रवेश करने पर उसके साथ ही देहान्तरो में प्रवेश करते है । **(चरक शारीर ० अ० 2-34)**

जिस पर सूक्ष्म बीज स्थूल वृक्ष को उत्पन्न करता है उसी प्रकार सूक्ष्म-भूतात्मा स्थूल शरीर को उत्पन्न करता है ।

जिस कर्म के कारण जीव पुनर्जन्म में प्रेरित होता है ,उसी के अनुसार उस जन्म में सब कुछ प्राप्त करता है और पुनर्जन्म में अभ्यस्त सभी गुण उस

Edit with WPS Office

जन्म में भी प्राप्त होते हैं । _____ **(सुश्रुत संहिता. 2/60)**

जन्म जन्मान्तरों में जो दान ,तप या अध्ययन किया गया है , अत्यंत अभ्यास के कारण जीव , दूसरे जन्म में भी उन्हीं के अनुरुप वृतियों को प्राप्त होता है ।

यज्ञ करने वाला पुरुष , जिस प्रकार इस लोक में यज्ञ करता है , उसी प्रकार इस लोक से चलें जाने पर भी यज्ञ करने वाला होता है ।_____ **(छान्दोग्य उपनिषद्. 3/14)**

मनुष्य जिस जिस भाव को स्मरण करता हुआ अन्त में शरीर का त्याग करता है , हे अर्जुन ! दूसरे जन्मों में भी उसी भावना से भावित होने के कारण उस उस भाव को प्राप्त करता है । _____ **(गीता. 6/44 तथा 8/6)**

जीव मरण के समय जिस भावना से बद्ध रहता है , जन्मान्तरों में भी उसी को प्राप्त करता है ,शुभ और अशुभ की प्रेरणा और मन की गति से शाश्वत और अव्यव जीव कृमि की भांति एक देंह से दूसरे देह में जाता है ।_____ **(योग वशिष्ठ. 4/17/26)**

प्राणियों में जो बुद्धि और आकृति का भेद दीखता है , इसमें सत्व रज और तम- इन तीन गुणों से विशिष्ट कर्म ही कारण है ।_____ **(चरक शारीर०अ०21)**

पुरुष एक चौड़े खम्भें (युप) के समान है । युप चतुष्कोण होता है । स्त्री- पुरुष के अपने भाग का आधा है । इसलिए जब तक पुरुष स्त्री को प्राप्त नहीं करता तब तक अपने रुप (संतान) को उत्पन्न करने में समर्थ नहीं होता । स्त्री के बिना पुरुष आधा है । जब स्त्री को प्राप्त करता है और उसमें उत्पन्न होता है तब पूर्ण होता है ।_____ **(शतपथ ब्राह्मण. 5/2/1/10)**

_____ सारांश यह है कि पुरुष कि पूर्णता स्त्री पुरुष के सम्मुख मिलने से ही

Edit with WPS Office

होती है ।

गीता. 13/1______

हे अर्जुन यह शरीर क्षेत्र है , ऐसा कहा जाता है और जो इसको जानता है वह तत्वेता ज्ञानी लोग उसे क्षेत्रज्ञ कहते हैं ।

वेद कहता है यह भूमि यह मानव देह आत्मा का बीज बोने और उसका फल काटने का , कर्म करने और भोगने का स्थान है । यह शरीर कर्मक्षेत्र है । मनुष्य जैसा कर्म करता है वही उसे प्राप्त होता है । वेद कहता है ___

अथर्ववेद. 12/3/48___ पकाने वाले के पास पकाया हुआ पदार्थ आ जाता है । जो हांडी में डाला है वही तो खाने को मिलेगा अर्थात जो कर्म किए हुए हैं उनका फल तो भोगना ही पड़ेगा । कर्म फल से मनुष्य बच नहीं सकता । उत्तम कर्म करने से उच्च योनि प्राप्त होती है और बुरे कर्म करने से नीच योनि मिलती है । जैसा कोई कर्म करता है ,उसे वैसा ही फल भोगना पड़ता है ।

केनोपनिषद. 1/5______

यहां इसी जन्म में यदि ईश्वर को जान लिया , उसका साक्षात्कार कर लिया , तो ठीक है , परंतु यदि इसी जन्म में उसे प्राप्त न किया तो महान हानि है ,जन्म निष्फल है ।

इसी जन्म में उसे जानने का प्रयत्न करो । तैयार हो जाओ आगे बढ़ो ।

कठोपनिषद. 3/14_______

उस परमात्मा को पाने के लिए , उठो , जागो और श्रेष्ठ जनों के पास पहुंचकर उनसे परमात्मा के रहस्य को जानों । जैसे उस्तरे की धार लांघने में कठिन और तीखी होती है । वैसे ही यह मार्ग कठिन है , ऐसा ज्ञानी लोग कहते हैं , शुभ कर्म और पुरुषार्थ से सफलता मिलेगी , अवश्य मिलेगी ।

भूत - प्रेत ______ राक्षस जिन्न भूत प्रेत डायन डाकिनीं , चुड़ैल ,परी इत्यादि वास्तव में कुछ भी नहीं होते । ये सब मनुष्य के मस्तिष्क के विकार हैं जो ऐसी कल्पना करते हैं । जादू वादू टोना टोटका इत्यादि भी नहीं होते । बिना शरीर के आत्मा कुछ भी नहीं कर सकता । एक समय में आत्मा एक ही

Edit with WPS Office

शरीर में निवास करती है , अनेक स्थानों में नहीं ? मृत्यु के पश्चात दिवगतात्मा भटकती नहीं है , अपितु वह अपने किये हुए शुभाशुभ कर्मानुसार परमात्मा की न्याय व्यवस्था में एक नया शरीर धारण करती है । (ईश्वर की कृपा से मात्र गर्भावस्था में माता के गर्भ में एक या उससे भी अधिक शरीरों का निर्माण होता है और उन शरीरों में आत्मा वसती है ______ अथर्ववेद. 10/8/28 , ऋग्वेद. 6/47/18) जो ईश्वर में विश्वास नहीं करता उसकी सोच नकारात्मक हो जाती है जिसके परिणाम स्वरुप ऐसी बेतुकी बातों पर विश्वास करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 49. पृष्ठ उन्चासवां

- # [स्त्रष्टा का परिचय]

सृष्टि बनी हुई वस्तु है , यह स्पष्ट दिखाई दे रही है , बनीं हुईं अर्थात यह कार्य है । प्रत्येक कार्य का कारण होता है , यह अटल सिद्धांत है , कार्य यह स्पष्ट निर्देश करता है कि उसका कोई कारण है , जब तक मनुष्य के सिर में मस्तिष्क है , मस्तिष्क में विचार करने की शक्ति है ,तब तक यह मानना पड़ेगा कि कार्य है तो उसका कारण अनिवार्य है और वह कारण ही स्त्रष्टा परमात्मा है ।

Edit with WPS Office

नास्तिको का मन्तव्य कि सृष्टि बिना कारण के उत्पन्न हुई ओर इस सृष्टि के लिए स्त्रष्टा की कोई आवश्यकता नहीं , यह बात अस्वीकार्य है । यह बात मनुष्य के लिए तभी मान्य हो जब उसके सिर में से मस्तिष्क निकल जाय और विचारशक्ति समाप्त हो जाय । लेकिन जब तक विचार शक्ति है , तब तक कार्य कारण के अटल सिद्धांत को मानना पड़ेगा । जब सृष्टि है तो स्त्रष्टा का होना अनिवार्य है ।

स्त्रष्टा के अस्तित्व में निम्न प्रमाण है____

लोक में प्रत्यक्ष है कि स्त्रष्टा को विभिन्न विचारशील विद्वान विविध प्रकार के नामों से स्मरण करते हैं ।

स्त्रष्टा के अस्तित्वमात्र से सकल ब्रह्मांड में नियमित गति प्रगति विकास हास उत्पत्ति और प्रलय हो रहा है जैसे कि आत्मा के अस्तित्व से शरीर में गति , चेष्टा ,कर्म होते हैं । आत्मा के अभाव में शरीर शव मात्र रह जाता है ।

मनुष्य शुभ कर्म करता है उसको परमेश्वर की ओर से उत्साह प्रेरणा और प्रसन्नता प्राप्त होती है और अशुभ काम करने से लज्जा भय तथा शंका होती है । स्त्रष्टा के सर्वव्यापक होने से ही प्रेरणादि होती है ।

स्त्रष्टा प्राणीमात्र के गर्भ में विविध प्रकार के रूप रंग आकृति वाले शरीरों की रचना करता है । ___ **(अथर्ववेद. 4/16/2)**

परमेश्वर की विधिपूर्वक उपासना करने से ब्रह्मानंद की प्राप्ति होती है अतः सृष्टि में सर्वत्र स्त्रष्टा विद्यमान है । उपासक किसी भी स्थान पर उपासना करके यह अनुभव कर सकता है ।

अनादिकाल से ऋषि ,महर्षि , मुनि, सन्त , विद्वान और योगियों ने स्त्रष्टा का अस्तित्व और सर्वव्यापक माना है ।

स्वयं स्त्रष्टा ने सृष्टि के संविधान वेद में अपने अस्तित्व का और सर्वव्यापकत्व का प्रतिपादन किया है । ऋषि मुनियों के प्रणीत ग्रंथ उपनिषद उपवेद वेदांग - दर्शनों में भी उपरोक्त स्त्रष्टा के विविध नाम , गुण कर्म स्वभाव का विस्तृत वर्णन है ।

- **[16 कलाओं तथा 3 ज्योतियों का कलाकार]**

यजुर्वेद. 8/36 , 32/5

Edit with WPS Office

इस पर ब्रह्म के सिवाय दूसरा कोई उत्तम पदार्थ नहीं जो सब विश्व अर्थात सब जगह में व्याप्त हो रहा है। वही सब जगत का पालनकर्ता और अध्यक्ष हैं। तथा सब प्राणियों को सुख देता है।

तीन ज्योति अग्नि, सुर्य, विधुत = बिजली के सर्वजगत के प्रकाश होने के लिए रच के संयुक्त किया गया है।

स्त्रष्टा का नाम षोडशी है, क्योंकि उसने 16 कलाओं को बनाया है। सोलह कलाएं निम्न प्रकार की है –

1. **ईक्षण** __ यथार्थ विचार और कर्म करने की इच्छा।
2. **प्राण**__ सब विश्व को धारण करना जैसे जीव प्राण शरीर को धारण करता है।
3. **श्रद्धा** __ सत्य में विश्वास।
4. **आकाश** __ पच्चमहाभूतों का प्रथम तत्व, जहां सुर्य की रश्मि प्रकाशित होती है।
5. **वायु** __ प्राणी मात्र का जीवनाधार।
6. **अग्नि** __ शक्तिरूप होकर जड़ और चेतन को गति देता है विविध शक्तिरुपों में जीवनोपयोगी।
7. **जल** __ जन्म से लेकर मरण= प्रलय पर्यन्त उपयोगी तरल पदार्थ है। जो शान्तिदायक है।
8. **पृथ्वी** __ जड़ चेतन को उत्पन्न करने वाली भूमि माता रासायनिक पदार्थ, अन्न, औषधि, वनस्पति,मानवादि को उत्पन्न करने वाली है।
9. **इन्द्रिय** __ पच्च ज्ञानेंद्रियों पच्च कमेन्द्रियों द्वारा जीव सुख पाता है।
10. **मन** __ उमय इन्द्रियों का सहायक।
11. **अन्न** __ खाद्य पदार्थों का नाम अन्न है।
12. **वीर्य** __ बल और पराक्रम, वीर्य वह अद्भुत पदार्थ है, जो संतति की उत्पत्ति करनेवाला है।
13. **तप** __ धर्मानुष्ठान,सत्याचरण में पुरुषार्थ।
14. **मन्त्र**__ वेद मंत्र, ज्ञान - विज्ञान का सूक्ष्म रूप से वर्णन करना।
15. **कर्म**__ विविध प्रकार की चेष्टा,कर्म करने का सामर्थ्य।
16. **नाम** __ दृश्य और अदृश्य पदार्थों की संज्ञा करना।

Edit with WPS Office

उपर्युक्त तीनों ज्योतियों तथा सोलह कलाओं को संसार के विचित्र कलाकार ने अद्भुत पद्धति से बनाया है ।

सभी योनियों के जीवनधारी उपयुक्त कला और ज्योति के माध्यम से ही संसार में विविध प्रकार के कर्म करते हैं और कर्म भोग को प्राप्त होते हैं तथा जीवन को सफल करते हैं । यदि उपयुक्त ये कलाएं और ज्योति न होती तो जीवों के लिए कर्म-क्षेत्र ही नहीं होता । अतः अद्भुत सृष्टि रचना कलाकार के लिए शतश: धन्यवाद ।

- **[स्त्रष्टा का स्वरूप]**

(यजुर्वेद. 40/8)

वह परमात्मा सब ओर से व्याप्त है । शीघ्रकारी सर्वशक्तिमान स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर से रहित छिद्र रहित और नहीं छेद करने योग्य नाड़ी आदि के साथ सम्बन्धरुप बन्धन से रहित अविधा आदि दोषों से रहित होने से सदा पवित्र जो पापयुक्त पापकारी और पाप में प्रीति करनेवाला कभी नहीं होता सर्वत्र सब जीवों के मनों की वृत्तियों को जाननेवाला दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला अनादि स्वरूप यथार्थ भाव से वेद द्वारा सब पदार्थों को विशेषरूप से बनाता है । अपने स्वरूप से उत्पत्ति और विनाश रहित प्रजाओ के लिए बनाता है ।

हे मनुष्यों ! जो अनन्त शक्तियुक्त अजन्मा निरन्तर सदा मुक्त न्यायकारी निर्मल सर्वत्र सब का साक्षी नियन्ता अनादिस्वरुप ब्रह्म कल्प के आरंभ में जीवों के अपने कहे वेदों से शब्द अर्थ और उनके सम्बन्ध को जनानेवाली विधा का उपदेश न करें तो कोई विद्वान न होवे । और न धर्म काम और मोक्ष के फलों के भोगने को समर्थ हो । इसलिए इसी ब्रह्म की सर्वत्र उपासना करो ।

- **[स्त्रष्टा के नाम]**

सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने अपनी पुस्तक में ईश्वर के

Edit with WPS Office

सो से अधिक नामों की व्याख्या की है वहां आप ईश्वर के नाम देख सकते है ।
विष्णु सहस्रनाम पुस्तक में ईश्वर के एक हजार नामों की व्याख्या दी हुई है ।
प्रिय पाठकों ! विष्णु सहस्रनाम पुस्तक में ईश्वर के नामों की व्याख्या देख सकते हो ।

सब जगत का पालनकर्ता और रक्षा करने से उस का नाम पिता है । सब जगत का उत्पादक होने से सविता है ।
जो अनन्त ब्रह्मांडों का स्वामी होने और बड़ा होने से उसका नाम बृहस्पति है ।
जो जगत का व्यवस्थापक द्रष्टा और स्वामी होने से उसका नाम अध्यक्ष हैं ।
जिससे अनन्त प्रकार के ब्रह्मांडो का उत्पत्ति स्थिति तथा प्रलय होता है इसलिए उस स्त्रष्टा का नाम हिरण्यगर्भ है ।
जो सब जगत के भीतर बाहर और मध्य में व्याप्त है । सर्वनियता है अतः इसलिए उसका नाम सर्वांतर्यामी है ।
सृष्टि बनाने से सृष्टिकर्ता । ईश्वर का भाव होने से संत , चेतनता होने से चित् तथा आनदमय होने से उस ईश्वर का नाम सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्मा है ।
सुखदायक वस्तुओं का निर्माता होने से और स्वयं सुखी होने से सुखस्वरुप है ।
अनन्त ब्रह्माण्ड को धारण कर रहा है तथा सबका आधार होने से सर्वाधार है ।

• [ईश्वर का गुण कर्म स्वभाव]

गुण __ ईश्वर एक अद्वितीय सर्वशक्तिमान निराकार सर्वव्यापक अनादि और अनन्त आदि सर्वाधार नित्य सत्य सर्वव्यापक सुखस्वरूप निर्विकार स्वयंभू सच्चिदानंद स्वरुप है ।
कर्म__ ईश्वर जगत की उत्पत्ति पालन और विनाश करता है । तथा सब जीवों के पाप- पुण्य का कर्म अनुसार फल देता है । जीवो के कर्म अनुसार

Edit with WPS Office

उनको विभिन्न प्रकार की योनियों में भेजता है । और सृष्टि के आदि में वेद का ज्ञान देता है ।
स्वभाव __ ईश्वर अविनाशी ज्ञानी अनादि न्यायकारी दयालु शुद्ध पवित्र और अजन्मा आदि है , अनुपम अजर अमर अभय नित्य पवित्र है ।

- [स्त्रष्टा की उपासनाएं]

सृष्टिकर्ता के नाम गुण कर्म स्वभाव तथा कर्म और कला का परिचय लिख चुका हूं । ऐसे महान स्त्रष्टा की स्तुति प्रार्थना उपासना करना मनुष्य का परम कर्तव्य है । अतः वेदोक्त विधि के अनुसार उपासना करना श्रेष्ठ कर्म है । उपासना दो प्रकार की होती है ।
निर्गुणोपासना ___ शब्द स्पर्श रस रूप गन्ध संयोग वियोग हल्का भारी अविधा जन्म मरण और दु:ख आदि गुणों से रहित परमात्मा को जानकर जो उसकी उपासना करनी है ,उसको निर्गुणोपासना कहते हैं । **आयोदेश्यरत्नमाला ।**
सगुणोपासना___ जिसको सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान शुद्ध नित्य आनंद सर्वव्यापक एक सनातन निराकार अनादि न्यायकारी दयालु आदि सत्य गुणों से युक्त जान करके जो ईश्वर की उपासना करता है उसे सगुणोपासना कहते हैं ।
ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना पच्च महायज्ञों के अनुष्ठान से ओंकार और गायत्री आदि संध्योपासना आदि करने से उपासक भक्त को निम्न लाभ होता है ।
उपासना का फल___ परमेश्वर के गुण धर्म स्वभाव के सदृश गुण कर्म स्वभाव जीवात्मा के पवित्र हो जाते हैं । और परमेश्वर का ब्रह्मानंद भी प्राप्त होता है ।
जैसे शीत से आतुर पुरुष अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता हैं । वैसे परमेश्वर के समीप प्राप्त होने से सब दोष दुख छूटकर ब्रह्मानन्द प्राप्त होता है । और आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुख प्राप्त होने पर भी न घबरावेगा । ___ सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समुल्लास ।
यह सिद्ध योगी की अनुभूति है । मुझे इसी ब्रह्मानन्द के रास्ते पर चलना है ।

Edit with WPS Office

ऋग्वेद. 3/26/2 ___

दो समिधाओं के अन्दर जैसे अग्नि छुपी हुई सुरक्षित रहती है , परस्पर घर्षण से अग्नि प्रज्वलित होती है वैसे गर्भावस्था में आरंभिक मास दो मास के प्रतीति नहीं होती और गर्भवती गर्भ को सावधानी से पालित पोषित करके यथासमय नवें मास में संतान उत्पन्न करती हैं । वैसे ही ठीक इसी प्रकार उपासक भक्त सावधानी से नित्य नित्य की उपासना यज्ञादि कर्म कर के अपने अंदर की आध्यात्मिक अग्नि को विकसित करता है ।

आध्यात्मिक अग्नि निरन्तर विकसित होते होते इतनी बढ जाती है कि अंदर की अग्नि बाहर फूट पड़ती है । जिससे भक्त के कपड़े लाल , अग्निरूप हो जाते हैं । (भक्त लोकोपकार की भावना से पारिवारिक सम्बंधों को त्याग कर के विश्व-कल्याण की भावना से संन्यास की दीक्षा लेकर के लोगों में आध्यात्मिक अग्नि जगाता है) जैसे __ आदि शंकराचार्य , स्वामी दयानन्द सरस्वती ,महात्मा नारायण स्वामी , स्वामी श्रद्धानंद , तपोमूर्ति स्वामी ब्रह्मानंद दण्डी , स्वामी स्वतंत्रानंद सरस्वती , स्वामी सर्वदानन्द वितराग , महानुभावों ने देश में खूब आध्यात्मिक अग्नि से सामाजिक क्रांति लाकर समाज की उन्नति की , जिससे राष्ट्र स्वतंत्र हुआ । विश्व में उन्नत विचारों की क्रांति हुई ।

यजुर्वेद. 36/3___

प्राणाधार दुखनाशक सुख स्वरूप जगत उत्पादक का ही हम वरण करें , शुद्ध स्वरूप देव का ही हम ध्यान करें । यह देव हमारी बुद्धि को उत्तम कार्यों में प्रेरणा करें ।

अथर्ववेद. 19/71/1___

जब उपासक को आयु प्राण प्रजा कीर्ति पशु धन ब्रह्म विद्या इत्यादि का सुख इस लोक में प्राप्त होता है । और लोकोपकार का कार्यों में समर्पण करके मोक्ष को प्राप्त करता है ।

उपासक जप उपासना कर्म करते हुए धर्म अर्थ काम और मोक्ष को प्राप्त करता है ।

Edit with WPS Office

ईश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना कर्म विधि- विधान निषेध आदेश परम आध्यात्मिक आदिदैविक आदिभौतिक सहस्त्रों मंत्र वेदों में है ।

- **[स्त्रष्टा जिन पदार्थों को उत्पन्न करता है , उन्हीं पदार्थों से वह प्रसिद्ध होता है]**

अथर्ववेद सुक्त 13 के सातवें काण्ड के निम्न मन्त्र द्रष्टव्य है 26 वे मंत्र
वह सविता प्रेरक परमेश्वर दिन से पैदा हुआ अर्थात प्रकट हुआ , क्योंकि उससे दिन पैदा हुआ है ।26।

वह निश्चय से रात्रि से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से रात्रि पैदा हुई है ।30।

वह निश्चय से अन्तरिक्ष से प्रकट हुआ है क्योंकि उससे अन्तरिक्ष पैदा हुआ ।31।

वह निश्चय से वायु से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से वायु पैदा हुई है ।32।

वह निश्चय से धुलोक से प्रकट हुआ क्योंकि उस से धुलोक पैदा हुआ ।33।

वह निश्चय से दिशाओं से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से दिशाएं पैदा हुई है ।34।

वह निश्चय से भूमि से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से भूमि पैदा हुई है ।35।

वह निश्चय से अग्नि से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से अग्नि पैदा हुई है ।36।

वह निश्चय से जलों से प्रकट हुआ है क्योंकि जल उससे पैदा हुआ है ।37।

Edit with WPS Office

वह निश्चिय से ऋचाओं से प्रकट हुआ है क्योंकि उस से ऋचाएं पैदा या प्रकट हुई है ।38।

वह निश्चय से यज्ञ से प्रकट हुआ है क्योंकि उससे यज्ञ पैदा हुआ है ।39।

वह सविता यज्ञ है , उस सविता का यज्ञ है , वह सविता यज्ञ के सिर रुप में कल्पित किया गया है ।40।

अथर्ववेद. 17/1/19___

जिसकी सत्ता अनुभव में नहीं आ रही । उस अव्याकृत प्रकृति में विद्यमान जगत स्थित है और सत् जगत में पूर्व कालीन प्रकृति स्थित है । भूतकालीन प्रकृति निश्चय से भविष्यत्काल में होने वाले जगत में रखी हुई है । और होने वाला जगत परमेश्वर के सामर्थ्य में हमारी पालना कर विश्व को निरूपित करने वाला हमारी आध्यात्मिक भौतिक उन्नति करें ।
गर्भाशय में गर्भ का अभाव रहता है , गर्भ में वीर्य प्रवेश होते ही रज में प्रतिष्ठित होता है । गर्भवती स्त्री प्रसिद्ध पूर्ण हो जाती है और वीर्यदाता पुरुष पिता बनकर पूर्ण और प्रसिद्ध हो जाता है । पुत्र में पिता प्रतिष्ठित है , भविष्य में पुत्र पिता बन जाता है । पिता पुत्र का चक्र अनादिकाल से सर्वदा बना रहता है यह सार्वभौम नियम है ।

अथर्ववेद. 10/8/28___

एक ही जीव कभी पिता कभी पुत्र बनता है । वही जीव ज्येष्ठ भ्राता और छोटा भाई बनता है । एक ही जीव मन में प्रविष्ट हुआ पहले पैदा होता है , वही शरीर त्याग कर फिर से गर्भ में आता है । इसी क्रम से बार-बार नाना रूपों में जन्म लेता है ।
हमारे ब्रह्मांड में , पिण्ड में , गणित विद्या में , प्राकृतिक नियम व पदार्थों में सिद्ध कर दिया और वेद के अनेक मंत्रों के प्रमाण देकर यह दर्शा दिया कि ईश्वर जीव व प्रकृति का अनादिकालीन सृष्टिचक्र है ।
इससे यह लाभ हुआ कि स्त्रष्टा की सिद्धि हो गई । स्त्रष्टा में श्रद्धा होने से योगाभ्यास द्वारा ब्रह्मानन्द का नित्य नित्य आनन्द भोगता है ।

Edit with WPS Office

जैसे गृहस्थ में गर्भाधान के समय क्षणिक चरमानन्द प्राप्त होता है। मुक्ति मैं ब्रह्मानन्द को परान्तकाल तक जीव प्राप्त करता है।
मैंने सृष्टि विधा में सतश: प्रमाणों से वैदिक सिद्धांतों पर प्रकाश डाला है। ऋषियों के आप्त प्रमाणों के साथ साथ भी प्रकाश डाला है। वेद से भिन्न कोई पुस्तक संसार में नहीं है, जो सत्यविधाओं का प्रकाश देवें।
यदि भौतिक विज्ञानों के पास कुछ पदार्थ विधायें हैं तो वो वेदों से ही ली गई है। जिन भौतिक तत्वदर्शायों ने मनोयोग से पुरुषार्थ कर के विधा व सिद्धांत प्राप्त किया है। वे वैज्ञानिक धन्यवाद के पात्र हैं। संसार उनका कृतज्ञ हैं। मिथ्या विकासवादी ईसाई मतावलंबी वा इलाहामी लोगों की मनुष्यकृत पुस्तकों में विज्ञान का किंचित मात्र भी प्रकाश नहीं है। उनकी इलाहमी पुस्तकों में अविधा व मिथ्यावचन व संसार के प्राणीमात्र के लिए बहुत सी हानिकारक बातें लिखी हैं। वे ईश्वरकृत नहीं हो सकती। नाना मतावलंबियों के कारण संसार में दंगे झगड़े होकर अशांति और दुःख है, यह प्रत्यक्ष है। अतः वैदिक व्यवस्था से सुख शान्ति हो सकती है।

- **[पुरुष सुक्त में स्त्रष्टा की महिमा]**

यजुर्वेद. 31/3___
यह दृश्य अदृश्य ब्रह्मांड परमपुरुष स्त्रष्टा की महिमा का सूचक है। अनन्त ब्रह्माण्ड से परमपुरुष अति प्रशंसित और बड़ा है। पृथिव्यादि चराचर जगत एक पाद अर्थात चौथाई अंश मात्र है। अनन्त ब्रह्माण्ड से तीन -चौथाई महापुरुष नाश रहित अमृतरुप बड़ा है।

यजुर्वेद. 31/5___
महापुरुष स्त्रष्टा से प्रकाशमान ब्रह्मांड उत्पन्न हुआ है। वह अधिष्ठाता परिपूर्ण और प्रसिद्ध है, सूर्य भूमि आदि क्रमशः उत्पन्न हुए हैं।

गीता ___
एक विराट् ब्रह्मांड पुरुषाकार दूसरा निराकार परमपुरुष है। क्षर ब्रह्मांड

Edit with WPS Office

पुरुषाकार जो है , वह नष्ट होता है , परिवर्तित होता है और अक्षर निराकार परमपुरुष कूटस्थ सर्वत्र निश्चल नष्ट अपरिवर्तित सर्वदा रहता है । जैसे पिण्ड पुरुषाकार नष्ट होता रहता है । और निराकारात्मा पुरुष नष्ट नहीं होता , अजर अमर नित्य रहता है ।

• [महान विराट पुरुषोत्तम का आलंकारिक स्वरूप वर्णन]

अथर्ववेद. 9/7/1 ,9/7/2 , 9/7/4 , 9/7/5

अथर्ववेद. 9/7/5___

विराट् प्रजापति निराकार परमपुरुष का वेद में आलंकारिक वर्णन लघु पिण्ड शरीर के अंगों उपांग की उपमा देकर अरबों योजनों में विस्तृत ब्रह्मांड के ग्रह- ग्रहपति तीनों लोकों में फैले हुए आकार का वर्णन किया है । क्या मानव की मेधा में शक्ति है , जो विराट ब्रह्मांड की कल्पना करके परमपुरुष के आकार को समझ सकेगा ? कदापि नहीं ! कल्पना के लिए महान मेधा बुद्धि बढ़ानी चाहिए ।

अथर्ववेद. 9/10/24___

अर्थात विभिन्न जगत का राजा वाक् प्रवक्ता है । विशाल पृथिवी असीम अन्तरिक्ष और विराट= बृहत सूर्यरुप है । महाकाल मृत्युरुप होकर विराट ब्रह्मांड को नष्ट करता है । वह साधनाशील का अधि राजा है । भूत और भविष्य उसके अंश में है ।

भूत और भविष्य को मेरे वंश में करें अर्थात साधनाशील महापुरुष वर्तमान का सदुपयोग करके भूत और भविष्य की अपने वश में रखते हैं । वर्तमान ही भूत हो जाता है । आने वाला भविष्य वर्तमान बन जाता है । वर्तमान भूतकाल में समा जाता है ।

अथर्ववेद. 10/7/32___

भूत भविष्यत वर्तमान का स्वामी जो ।
विश्व अधिष्ठाता है अन्तर्यामी जो ।
केवल परमानन्द रुप है नामी जो ।

Edit with WPS Office

नमस्कार उस ब्रह्म ज्येष्ठ परमेश्वर को ।
नमस्कार उस सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को ।

ध्वनि अन्तरिक्ष दिव्य लोक रचनाएं हैं ।
चरण उदर मूंधा समान प्रकटायें है ।
जिसने अपने ज्ञापक लोक रचायें है ।
नमस्कार उस ब्रह्म ज्येष्ठ परमेश्वर को ।
नमस्कार उस सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को

अथर्ववेद. 10/7/33___
जिसके दो अंग सूर्य पुनर्नव चन्द्र बने ।
कल्प कल्प में नूतन रुप धरे अपने ।
एव अग्नि बनाई मुख अपनी जिसने ।
नमस्कार उस ब्रह्म ज्येष्ठ परमेश्वर को ।
नमस्कार उस सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को ।

अथर्ववेद. 10/7/34___
जिसकी प्राण अपान सारी हवा बनी ।
आंखें जिसकी ज्योतिर्मय रश्मियां बनी ।
जिसकी विजयपताकायें सब दिशा बनी ।
नमस्कार उस ब्रह्म ज्येष्ठ परमेश्वर को ।
नमस्कार उस सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को ।

अथर्ववेद. 10/7/36___
सर्वश्रेष्ठ - मानस में तप से प्रकट हुआ ।
सोम किया केवल जो श्रम से प्रकट हुआ ।
जो केवल सुख - सार घट -घट प्रकट हुआ ।
नमस्कार उस ब्रह्म ज्येष्ठ परमेश्वर को ।
नमस्कार उस सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर को ।

Edit with WPS Office

- **[वेद में स्त्रष्टा स्वयं अपना परिचय दे रहा है]**

यजुर्वेद. 23/50___
सब जीवों के प्रति ईश्वर उपदेश करता है कि मैं कार्य कारणात्मक , जगत में व्याप्त हूं । मेरे बिना एक परमाणु भी अव्याप्त नहीं है । जहां जगत नहीं है , वहां भी अनंत स्वरूप से परिपूर्ण हैं । जो इस अति विस्तार युक्त जगत को आप लोग देखते हैं , यह मेरे आगे अणु मात्र भी नहीं है । इस बात को वैसे ही विद्वान सब को जनावें ।

ऋग्वेद. 10/129/7___
हे मानव! जिससे यह अनंत सृष्टि बनी और प्रकाशित है और सुदीर्घ काल पर्यन्त यह स्थित बनी रहेगी , पश्चात प्रलय के द्वारा नष्ट हो जायेगी । जो इसका स्वामी अध्यक्ष परिपूर्ण स्त्रष्टा द्रष्टा है ,उस सर्वाधार महापुरुष को ज्ञान- विज्ञान से समझों ।
सृष्टि का अध्यक्ष स्त्रष्टा अणु परमाणु और अनन्त ब्रह्माण्डों को सर्वतोरुप से पूर्णतया देखता है और मालिक है , वही अध्यक्ष हो सकता है ।
जीव कोई भी वस्तु को जो छोटी हो या बड़ी ,उस के एक भाग को ही देख सकता है और लघु अंश मात्र का ही मालिक होता है । वह भी किंचित जीवन पर्यन्त उसमें भी बंटवारा झंगडा विवाद से दुखी होता है । तब भी अहंकार से अपने को मालिक हिस्सेदार समझता है । परमपुरुष ही सभी का अध्यक्ष हैं , निराकार होने से सर्वत्र व्यापक है । उसके सामने अर्थात तुलना में वह महान है और अनन्त ब्रह्माण्ड अणुमात्र है । जैसे विशाल समुद्र के आगे जल बिन्दु मात्र है ।

- **[ब्रह्माण्ड परमेश्वर के अधीन है]**

अथर्ववेद. 4/2/4___

Edit with WPS Office

जिसके वश में बड़े बड़े धुलोक है , जिससे यह विस्तृत अन्तरिक्ष हुआ है , जो सूर्यादि लोकों को रचकर बड़ी महिमा के साथ चमकाता है , उस आनन्दस्वरूप देव की स्तुति प्रार्थना उपासना करना चाहिए ।

ऋग्वेद. 9/66/5___

संसार के स्त्रष्टा पवित्रकर्ता विज्ञानदाता वेदों को उत्पन्न करने वाला धुलोक को पैदा करने वाला पृथ्वीलोक का निर्माता अग्नि का उत्पादक सूर्य का उत्पादयिता इन्द्र= विधुत वायु ऐश्वर्य का स्त्रष्टा और जल को उत्पन्न करने वाला सब को गति देता है और पवित्र करता है ।

जड़ चेतन सृष्टि का कर्ता ___

ऋग्वेद. 10/121/3___

जिसने जड़ चेतन सृष्टि को उत्पन्न करके धारण कर रहा है , एक ही राजा धारण करता है , इस जगत में दो पैर वाले और चार पैर वाले प्राणियों पर जो अकेला राज्य करता है , उसकी उपासना श्रद्धा से करना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 50.पृष्ठ पचासवां

{ हवन क्यों किया जाता है..? }

दो मित्रों की बातें..? प्रश्नोत्तरी !

Edit with WPS Office

यज्ञ करने से अनेक लाभ है , घी सामग्री का व्यर्थ में फेंकना नहीं है ? यज्ञ में घृत और सामग्री जो जलाई जाती है , वह वायुमंडल को शुद्ध बना देती है । वायु के शुद्ध होने से रोगों की संभावना नहीं रहती ।

यज्ञ से वायु कैसे शुद्ध हो सकती है ..?

यज्ञ की सामग्री मैं चार प्रकार के पदार्थों का समावेश होता है । रोगनाशक सुगंधित मीठे और पुष्टिकारक । इन पदार्थ से जब यज्ञ किया जाता है तो वायुमंडल में स्वास्थ्य को हानि पहुंचने वाले जो कीटाणु होते हैं ,वह मर जाते हैं । इसी का नाम वायु शुद्ध होना होता है । इसी यज्ञ के द्वारा वर्षा शुद्ध होने की संभावना रहती है । जिससे अन्न और औषधीय गुणकारक होती है । फलत: समस्त प्राणियों का कल्याण होता है ।

मेरे विचार में तो रोग नाशक और पुष्टि कारक पदार्थों यदि खाए तो अधिक लाभ होगा ? जलाकर पदार्थों को क्यों नष्ट करें ? और भला यज्ञ द्वारा वर्षा होने की संभावना कैसे हो सकती है ?

मेरा मतलब यह नहीं है कि पौष्टिक कारक और रोग नाशक पदार्थ खाए ना जाए ? उन्हें यथोचित खाना भी चाहिए । और उनसे यथाशक्ति यज्ञ करना चाहिए । जहां पदार्थों द्वारा शरीर को पुष्ट करना आवश्यक है , वहां पदार्थों द्वारा वायु को शुद्ध करना और भी आवश्यक है । यदि कोई मनुष्य वायु को शुद्ध नहीं करता तो वह पापी है ? क्योंकि जब वह वायु को गंदा करता है , तो वायु को शुद्ध करना भी धर्म है । देखो , **शरीर से जो कुछ निकलता है गंदा ही तो होता है ?** आंख से गंदगी निकलती है वह गंदी , कान से मेल निकलता है वह गंदा , मुंह और नाक से जो मैल निकलता है वह गंदा , पसीना निकलता है वह गंदा , मल मूत्र निकलता है वह गंदा , इसी प्रकार से जो वायु निकलती है वह भी गंदी होती है । मनुष्य बाहर से अन्न जल वायु फल आदि पदार्थ जो लेता है वे सभी पवित्र पदार्थ है , वे पदार्थ शरीर के भीतर जाने पर गंदे होकर निकलते हैं और बाहर की वायु को गंदा करते हैं । यह मानी हुई बात है । वायु ही प्राणियों का जीवन है । भोजन और जल के बिना दो-चार दिन और अधिक समय तक जिंदा रह सकते हैं । लेकिन वायु के बिना एक घंटा भी जीवित नहीं रह सकते । जब वायु प्राणियों की जिंदगी का आधार है ,तो उसको शुद्ध करना कितना आवश्यक होगा ? जब वायु

Edit with WPS Office

अशुद्ध हो जाती है, तब कितनी बीमारियां फैलती है । प्लैग हैजा आदि रोगों के फैलने का कारण गंदगी (गंदी) वायु ही तो है । मरीज के शरीरों के कीटाणु और चूहों के पेट के कीटाणु भी तो वायु में मिल जाते हैं और भयंकर बीमारियों को जन्म देते हैं । इसलिए वायु को शुद्ध बनाने के लिए यज्ञ हवन से बढ़कर दूसरा उपाय नहीं हो सकता ।

तुम्हारा यही कहना है की अग्नि में जलकर पदार्थों को नष्ट क्यों किया जाता है ?

वास्तव में यह ना समझी बात है । संसार में किसी चीज का नाश नहीं होता केवल रूप बदल जाता है । देखो , गरम पानी जल जाने पर मूर्ख मनुष्य तो समझता है कि यह नष्ट हो गया , परंतु बुद्धिमान जानता है कि यह भाप बनकर वायु में मिल गया नष्ट नहीं हुआ । इसी प्रकार यज्ञ की सामग्रियों को जलाकर नष्ट नहीं होती वह सूक्ष्म होकर वायु का संशोधन करने तथा वायु में मिली हुई भाप को शुद्ध बादल के रूप में जमाने का काम करती है , भाप को जमाने के लिए घी तो जामन का काम करता है । जैसे सैकड़ो मण दूध को जरा सी दही जमा देती है । ऐसे ही घृत जिसे सूर्य की तीक्ष्ण से तीक्ष्ण किरणें भी नहीं सुखां सकती ? उसको जमाकर वर्षा का कारण बनता है । यदि लोग विधि पूर्वक हवन करें तो निश्चय पूर्वक ठीक समय पर वर्षा होगी । प्राचीन समय में अत्यंत विधि पूर्वक यज्ञ होते थे , इसलिए खूब वर्षा होती थी । फलत: अकाल नहीं पड़ा करते थे और न आजकल जैसे रोग फैलतें थे ।

क्या घर में सुगंधित रोग नाशक पदार्थ रखने नहीं चाहिए ? क्या उनसे वायु शुद्ध नहीं हो सकती ?जलाने से ही शुद्ध होती है जलाने में क्या विशेषता है ?

घर में सुगंधित और रोग नाशक पदार्थ अवश्य रखनें चाहिए । परंतु उनसे यज्ञ भी करना चाहिए । यज्ञ करने से पदार्थों की शक्ति करोडो गुना बढ़ जाती है । इसका प्रमाण यह है जैसे कि एक मनुष्य चार मिर्च खा जाता है । उसकी तेजी और कड़वाहट को आसानी से सहन कर लेता है । परंतु यदि वह मनुष्य जरा सा टुकड़ा मिर्च का अग्नि में डाल दे तो उसकी तेजी को वह सहन नहीं कर सकता ? खासते-खासते परेशान हो जाता है । बल्कि गली मोहल्ले वालों की भी नाक में दम आ जाता है । वे कहने लगते हैं कि न जाने आज किस कमबख्त ने मिर्च जलाई है ? परंतु यदि मनुष्य घृत और उत्तम सामग्रियों से हवन करता है तो लोग कहते हैं कि किसी भाई के यहां

Edit with WPS Office

हवन हो रहा है । जिसकी सुगंधि आ रही है । अब तुम समझ गए होंगे , कि जिस वस्तु को अग्नि जलाते है उसकी शक्ति कितने गुना बढ़ जाती है । यज्ञ से बढ़कर उपकार का दूसरा कोई कर्म नहीं हो सकता ? यज्ञ गुप्त दान है । यज्ञ से जहां अपने घरों की वायु शुद्ध होती है । वहां दूसरे के घरों की वायु भी शुद्ध होती है । जैसे ___ चाहे कोई किसी का दान न लेवे परंतु यज्ञ द्वारा एक दूसरे का दान ग्रहण कर लेते हैं । जो कि यज्ञ द्वारा सामग्री सूक्ष्म रूप में वायु द्वारा सबके घरों में पहुंच जाती है और रोगाणुओं को नष्ट करती है ।

संसार की दुग्ध और रोग के कीटाणुओं को तो सूर्य की रश्मिया ही नष्ट कर देती है तो फिर यज्ञ करने की क्या आवश्यक है ? जो काम मनुष्य के किए बिना हो रहा है उसमें व्यर्थ की चर्चा क्यों की जाए ?

जब सूर्य चंद्र मनुष्य के बिना निकाले ही निकल रहे हैं तो मनुष्य फिर प्रकाश के लिए बिजली , गैस ,लालटेन और दीपक क्यों काम में ले रहे हैं ? सृष्टि में फल वनस्पति आदि लगातार उत्पन्न हो रहे हैं ? तो फिर मनुष्य खेती करके अनाज क्यों उत्पन्न कर रहा है ? शरीर में स्वयं रोगों के दूर होने का भगवान ने प्रबंध कर रखा है । हृदय बराबर रक्त शुद्ध कर रहा है । पेट की आइडिया बराबर भोजन और जल का विभाजन कर रही है ? तथा कर्म अनुसार प्रत्येक इंद्रिय को उत्तम हिसा देकर गंदा हिस्सा बराबर शरीर को देकर गंदा हिस्सा निकाल रही है । रोगों के दूर होने का समुचित प्रबंध है , तो फिर क्यों मनुष्य औषधीयों का प्रयोग कर रहा है ? और फिर परहेज से रहने का यत्न कर रहा है ? वास्तव में सृष्टि की यह नियम ही तो मनुष्य अपनी अनुकूल चलने की प्रेरणा करते हैं । ताकि मनुष्यो का कल्याण हो ।

सृष्टि नियम यह बतलते हैं कि जैसे___ सूर्य अपनी रश्मियों से गंदगी को दूर करता है ,वैसे ही गंदगी को तुम दूर करो । जैसे सूर्य संसार की वायु को शुद्ध करता है , वैसे ही वायु को शुद्ध तुम भी करो । यह यज्ञ आदि परोपकार के काम करने में सृष्टि नियम प्रबल प्रमाण का प्रत्यक्ष परिचय दे रही है ।

अच्छा जी !

मेरा अगला प्रश्न __ **यज्ञ करते हुए मंत्र क्यों पढ़ते हैं ?**

मंत्रों में यज्ञों का नाम वर्णित किया है । उन्हें श्रोता गणों को सुनाया जाता है । दूसरी बात मंत्र कंठस्थ रहते हैं । फलत: वेद की रक्षा होती है । तीसरी बात यह है जिस चीज को बार-बार पढ़ा जाता है, उसमें श्रद्धा भी हो जाती है ।

Edit with WPS Office

श्रद्धा हो जाने पर काव्य में प्रवृत्ति बनी रहती है । प्रवृत्ति बनी रहने से आत्मा पर कर्मकांड के उत्तम संस्कार पड़े रहने के कारण मनुष्य अपने जीवन के उद्देश्य तक पहुंच जाता है । धर्म को समझता है , और धर्म अनुसार चलता है ।।

हवन से नीरोगता

अ. ३।११।

मुंचामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत
राजयक्ष्मात्। ग्राहिर्जग्राह यद्येतदेनं तस्या इंद्राग्नी
प्र मुमुक्तमेनम् ॥१॥

हे मनुष्य ! (त्वा)तुझे (अज्ञात-यक्ष्मात्) अज्ञात रोगसे और (राज-यक्ष्मात्) क्षय रोगसे निवृत्त करके (कं जीवनाय) सुखमय जीवनके लिए (हविषा) हवनके द्वारा (मुंचामि) छुड़ाता हूं। (एनं)इस रोगीको (ग्राहिः जग्राह)न छोड़नेवाले रोगने (जग्राह) पकड़ रखा है। (तस्या) उस पीड़ासे इसको, (इंद्राग्नी) विद्युत् और अग्नि अथवा वायु और सूर्य (प्रमुमुक्तं) छुड़ा सकते हैं।

क्षयरोग तथा कई दूसरे रोग हवनसे दूर होते हैं। शीघ्र न छोड़नेवाले रोगभी विद्युत् प्रयोग तथा अग्नि प्रयोगसे दूर होजाते हैं।

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव ।
तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्शमेनं शतशारदाय ॥२॥

यदि (क्षितायुः) आयु समाप्त हो चुकी है, यदि (परेतः) प्रायः मर चुका

है, अथवा यदि मृत्युके (अंतिकं नीत) पास जा चुका है, तथापि (तं) उसको (निर्ऋते उपस्थात्)बीमारीके पाससे(आहरामि) मैं लौटा लाता हूं और (शत शारदाय) सौ वर्षके जीवनके लिये (अस्पार्श) बल देता हूं।

रोगी बिलकुल आसन्नमरण भी हो, तथापि योग्य उपायोंके प्रयोगसे वह पुन दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है।

इस मंत्रमें 'नि ऋति" शब्द बीमारी, महामारी आदिका वाचक है। "ऋत"=नियम अर्थात् ठीक, योग्य, पथ्य आचार व्यवहार। इसका आचरण न करनेका नाम "निर्ऋति" है। यही सब बीमारीयोंका मूल कारण है। इस लिये हरएकको उचित है, कि वह सुनियमोंका पालन करे और आरोग्यपूर्ण दीर्घ जीवन प्राप्त करे।

Edit with WPS Office

सहस्राक्षेण शतवीर्येण शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ।
इंद्रो यथैनं शरदो नयात्यति विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥ ३ ॥

(सहस्राक्षेण) सहस्र औषध पदार्थोंसे युक्त (शतवीर्येण) सैंकडों प्रकारके गुण करनेवाले, (शतायुषा) सौ वर्षकी आयु बढानेवाले (हविषा) हवनके द्वारा (एनं आहार्ष) इसको मैं लाया हूं। (इन्द्र.) आत्मा इसको (यथा) जिस प्रकार (शरद नयति) सौ वर्षकी आयुतक ले जायगा और (विश्वस्य दुरितस्य पारं) संपूर्ण दोषोंके परे पहुंचायेगा, वैसा मैं करता हूं।

उत्तम हविर्द्रव्यमें सहस्रों पदार्थ होते हैं, जिससे सैंकडों लाभ प्राप्त होते हैं, और सौ वर्षकी आयुभी प्राप्त होती है। शरीरके सब दोष दूर होते हैं और पूर्ण आयु मिलती है, हवनसे इतने लाभ होते हैं।

शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु
वसन्तान् । शतं त इन्द्रो अग्निः सविता बृहस्पतिः
शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ॥४॥

(वर्धमान) बढता हुआ तू (शरद॰ शतं) सौ शरदऋतुतक, (शतं हेमन्तान्) सौ हेमन्त ऋतुतक और सौ वसंत ऋतुतक (जीव) जीता रह। इन्द्र, अग्नि, सविता और बृहस्पति ये (ते) तेरे लिये (शतं) सौ वर्षका आयुष्य देवें। (शतायुषा हविषा) सौ वर्षकी आयु करनेवाले हविसे अर्थात् हवनसे (एनं आहार्ष) इसको मैं लाया हूं अर्थात् पूर्णायुके लिये जीवित किया है।

सौ वर्षकी पूर्ण आयु प्राप्त करनेका यत्न करना चाहिये। इंद्रादि शब्द विशेष चिकित्साओंके वाचक हैं, (१) इंद्र-विद्युत् चिकित्सा, (२) अग्नि चिकित्सा, (३) सविता-सूर्य किरण चिकित्सा, (४) बृहस्पति-मानस चिकित्सा। साथ साथ (५) हवि-हवन चिकित्सा। इन सब चिकित्साओंके योग्य रीतिसे करनेपर अवश्य दीर्घ आयु प्राप्त हो सकती है।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 51.पृष्ठ इक्यानवां

यज्ञ की आत्मा प्राण और सार क्या है..?

।। राजा जनक और ऋषि अष्टावक्र का संवाद ।।

एक बार राजा जनक ने बहुत बड़ा विशाल यज्ञ रचाया । धीरे-धीरे समय बीतता गया यज्ञ में भाग लेने के लिए राजा जनक ने सभी राजाओं ऋषियों महाऋषियों विद्वानों विद्यार्थियों सभी के पास निमंत्रण पत्र भेजे । वह समय भी आ गया जिस दिन यज्ञ होना था । बड़े-बड़े धार्मिक विद्वान लोग ऋषि महाराजाओं से लेकर के विद्यार्थी तक सभी आने लगे । अनेक महात्मा सन्यासियों इस धार्मिक विशाल यज्ञ को देखने के लिए चल दिए । कुछ सन्यासियों की भीड़ ऋषि अष्टावक्र के सामने से जा रही थी । पास में खड़े ऋषि अष्टावक्र ने उन संन्यासियों को रोकते हुए पूछा आप लोग कहां जा रहे हो..? उन सन्यासियों विद्वानों ऋषियों ने उत्तर दिया महाराज अष्टावक्र राजा जनक ने बहुत बड़े यज्ञ का आयोजन किया है । उस यज्ञ में भाग लेने के लिए हम सबको आमंत्रित किया है , तभी उन विद्वानों ने ऋषि अष्टावक्र से पूछा महाराज आप नहीं चल रहे क्या.? मुनि अष्टावक्र ने कहा नहीं हम पर निमंत्रण नहीं आया । तभी उन विद्वानों ने कहा महाराज आपको कैसे राजा जनक ने निमंत्रण देने से छोड दिया आप तो बहुत बड़े विद्वान ज्ञानी है चारों और आपके ज्ञान का प्रकाश है । तभी अष्टावक्र मुनि ने कहा हो सकता है अनजाने में भूल से हमें निमंत्रण ना दिया हो । तभी मुनि अष्टावक्र ने मन ही मन सोचा वेदों में लिखा है जहां धार्मिक कार्य हो रहा हो शुभ कार्य हो रहा हो वहां अगर कोई निमंत्रण भी ना दे फिर भी जाने का कोई अपराध नहीं । कोई बुराई नहीं । (क्योंकि पांच यज्ञों में एक यज्ञ अतिथि यज्ञ है) इस प्रकार यज्ञ के समय कुछ विद्वानों के साथ महाराज अष्टावक्र पहुंचे । सभा

Edit with WPS Office

में जब महाराज अष्टावक्र पहुंचे तो उन्हें देखकर विद्यार्थी लोग हंस रहे थे । इसलिए हंस रहे थे क्योंकि ऋषि अष्टावक्र आठ जगहों से टेढ़े-मेढ़े थे , इसलिए उनके शरीर को देखकर विद्यार्थी अपना आपा खो बैठे) यह सब देखकर महाराज अष्टावक्र आग- बबूला हो गए और क्रोध में आकर राजा जनक को रोकते हुए कहा -- महाराज यह विद्वानों की सभा नहीं है ? यह तो चमारों की सभा है , राजा जनक बोलें वो कैसे महाराज ? अष्टावक्र ने कहा जो शरीर की बहार की चमड़ी को देखकर हंस रहे हैं ? तभी राजा ने कहा ऋषिवर ,गुरुकुल के विद्यार्थी हैं बच्चे हैं इनको इतना ज्ञान नहीं इन्हें माफ कर दो । अष्टावक्र महाराज कहते हैं ये सभा विद्वानों की नहीं चमारों की सभा है ऐसा कहते हुए थोडे शान्त हुए और कहा राजा जनक से , इस यज्ञ का ब्रह्म कौन है ? तब राजा जनक ने कहा ऋषि याज्ञवल्क्य ,। चलो याज्ञवल्क्य से तो हम बाद में बात करेंगे । अगर ये यज्ञ विद्वानों का है तो मेरे तीन प्रश्नों के उत्तर दे । **राजा जनक ने कहा तीन प्रश्न कौन से हैं ? तब अष्टावक्र ने कहा - मेरा पहला प्रश्न यज्ञ की आत्मा क्या है ? मेरा दूसरा प्रश्न यज्ञ के प्राण क्या है ? मेरा तीसरा प्रश्न यज्ञ का सार क्या है ?** इतना सुनते ही राजा जनक ने विनती की , प्रार्थना की , पैरों को हाथ लगाया और कहा ऋषिवर, आपके प्रश्नों के उत्तर देने का सामर्थ्य मुझ में नहीं , हमारी इतनी योग्यता नहीं है , आप तपस्वी हो योगी हैं , ऋषि परंपरा को सुशोभित कर रहे हैं । कृपया आप ही इन प्रश्नों का उत्तर दीजिए । तब अष्टावक्र महाराज कहते हैं, हे सुनों राजन् ! यज्ञ की की जो आत्मा है वह स्वाहा है , जनक बोले महाराज स्वाहा के कैसे हैं ? बोले जैसे यह शरीर चलता फिरता है बिना आत्मा के इस शरीर की सामर्थ्यता नहीं है ? बिना आत्मा के आंख कान कुछ काम नहीं करता लेकिन इन सभी को चलाने वाला जैसे आत्मा है ,तो यह शरीर है और चलता है ऐसे ही यज्ञ की जो आत्मा है वह स्वाहा है (अच्छा कहा , अच्छा कहे , अच्छा सुने) यदि यज्ञ के मंत्रों में स्वाहा ना बोले ? तो यज्ञ आगे गति नहीं करेगा ? हम मंत्र पाठ करते हैं और बोलते हैं मंत्र बोलने के बाद मैं बोलते हैं , स्वाहा ! जब स्वाहा बोलते हैं तभी अगला मंत्र खुलता है । यदि स्वाहा ना बोला जाए आहुति ना दी जावे । स्वाहा ना कहा जाए अगला मंत्र बोलने का रास्ता नहीं मिलेगा । यज्ञ आगे उन्नति की ओर नहीं बढ़ेगा । इस यज्ञ की आत्मा **स्वाहा** है ।

Edit with WPS Office

दूसरा प्रश्न का उत्तर ___ अष्टावक्र मुनि कहते हैं , हे राजन् इस यज्ञ के प्राण इदमनम : है । राजा जनक बोलते हैं ये क्या है ? कहते हैं यज्ञ करने वाला व्यक्ति जब यज्ञ में आहुति देवे और मन में इदमनम: का भाव लाए उसके हृदय आत्मा में आचरण का शुद्ध व्यवहार होवे की जो सब कुछ आहुति मैं दे रहा हूं , यह सब मेरा नहीं है । अर्थात् अपने मन में यह भावना रखें की जो कुछ भी में आहुति दे रहा हूं इस संसार रूप में , मेरा कुछ भी नहीं सब कुछ परमात्मा का है , एक तरह से परमात्मा का धन्यवाद उसका उपकार करना चाहिए । (जैसे यज्ञ में जो सामग्रियां डाली जाती है तो सामग्रियां से यह भावना मत ले या यज्ञ की लकडियां कि मैं इनको दुकान पर से बहुत महंगी लाया हूं तब मैंने यह (यज्ञ ,हवन) किया । ऐसा भाव प्रकट न करें बल्कि यह कहे की मेरा कुछ नहीं जो कुछ कर रहा है परमात्मा कर रहा है परमात्मा ही देने वाला है । मेरा इस संसार में कुछ नहीं यह सामग्री मैं नहीं लाया हूं , बल्कि परमात्मा दिला रहा है परमात्मा मुझ पर करवा रहा है यह भाव ही **प्राण** है यज्ञ के प्राण है) जब हर बात को व्यक्ति परमात्मा को जोड़े , मन में परमात्मा को लेकर के सामने आए । आप कहोगे कैसे ? जहां करने वाले ने यह जोड़ा कि प्रभु तेरी कृपा से कर लेते हैं , तू करता है तो कर लेते हैं ,परमात्मा के आधीन प्राण है , इससे यज्ञ जीवित रहता है ।
यज्ञ का सार क्या है ? जैसे यज्ञ के अंदर आहुति देने के बाद जो उसमें से सुगंध निकलती है यह ही इस यज्ञ का सार है । राजा जनक बोलें यह सुगंध यह सार क्या है ? तो बोलें यह सुगंध देवताओं का भोजन हैं । सूर्य चंद्रमा पृथ्वी अग्नि वायु ये सभी रोटी नहीं खाते हैं ? इनका भोजन जो यज्ञ से निकली सुगंधि का धुआं , यही देवताओं का भोजन है । यही इन देवताओं की पूजा है । इसलिए यह सुगंध ही इस यज्ञ का **सार** है ।

व्यक्तियों के जीवन में भी सुगंध और दुर्गंध है , अच्छा कर्म अच्छा पुरुषार्थ सेवा परोपकार सामर्थ्य अनुसार दान अच्छा सदाचारी अच्छा धार्मिक ये ही व्यक्ति के जीवन में सुगंधि हैं , अच्छे कर्म से ही हमारा भाग्य लिखा जाता है ।
दुर्गंध , दुर्गंध वह है जो इन सब कार्यों के विपरीत है । बुरा कर्म , आलसी , कोई परोपकार सेवा का कार्य नहीं , अधर्मी , कोई दान नहीं किया , मदिरा

Edit with WPS Office

का सेवन करने वाला ये सभी व्यक्ति के जीवन में दुर्गंध है । इन्हीं से हमारा अगला जन्म मिलता है , ऐसी कर्म से हमारा भाग्य ही नरक बनता है । सुख-दुख नरक स्वर्ग व्यक्ति के जीवन में ही है । व्यक्ति का अच्छा कर्म ही स्वर्ग है बुरा कर्म ही नरक है ।

निर्णय आपको लेना है कि आपका यह जीवन नर्क है या स्वर्ग है ?? जैसे - एक व्यक्ति बहुत स्वस्थ है कोई कमी नहीं , दूसरों को लग रहा है कि वह सुख में है । लेकिन अंदर से नरक है , आप कहोगे वह कैसे ? देखो , उसके शरीर में चर्बी इतनी जम गई कि उससे अपने शरीर का वजन भी नहीं उठा पाता , (ईश्वर ने उस नर्क से बचने के लिए उसे पुरुषार्थ दिया है , लेकिन आलसी मनुष्य पुरुषार्थ नहीं करता) कोई कोई ज्यादा मोटे की वजह से चल नहीं पाते ,किसी किसी के घुटने खराब हो जाते हैं । किसी किसी के बीमारियां हो जाती है , अच्छा स्वस्थ शरीर होने के बाद भी दुख रहता है , दुख होता है यही तो नरक है । नरक का खंडन हमारे सभी शास्त्र करते हैं स्वयं स्वर्ग- नरक का खंडन गीता करती है । जैसे बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि तू नरक में जाएगा , तू स्वर्ग में जाएगा ,बल्कि स्वर्ग नरक कोई स्थान नहीं है इस शरीर में ही है । जो ऐसे स्थान सोचते हैं कि स्वर्ग और नरक स्थान है ,आकाश में वो अज्ञानी पुरुष है)। इसका खंडन स्वयं भगवान श्री कृष्ण ने कर दिया । मरने के बाद जीवात्मा दूसरा शरीर धारण कर लेती है , और आगे भगवान श्री कृष्ण कहते हैं-- इस आत्मा को ना तो अग्नि जला सकती है ? ना ही इस जीवात्मा को तेल में उबाल सकते हैं ? ना ही इसको किसी अस्त्र-शास्त्र द्वारा काटा जा सकता है । **इस आत्मा का परमात्मा भी विनाश नहीं कर सकता । यह आत्मा अजर है , अमर है , नित्य है , पवित्र है ।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 52.पुराणों में गणेश की कहानी

शिव पुराण के अनुसार गणेश की कथा ___

यह शिव पुराण की प्रसिद्ध कथा है , इस कहानी में कितना सत्य है अथवा कितना असत्य ? विद्वान लोग पढ़ने के बाद स्वयं निर्णय ले ?कि ऐसी कहानियों को सच मानोगे या कलांपनिक कहानी ? इसका विचार पढ़ने के बाद पाठक विद्वान स्वयं कर सकते हैं ? जैसा कि सभी जानते ही हैं कि शिव और पार्वती जी का निवास स्थान कैलाश पर्वत पर हुआ करता था इसलिए शिवजी को कैलाश वासी और कैलाश पति भी कहते हैं । लोगों का ऐसा मानना है कि शंकर भगवान तीनों लोकों अर्थात पृथ्वी लोक अंतरिक्ष लोक और द्युलोक के स्वामी है इसलिए उनको त्रिलोकी नाथ भी कहते हैं ।
1 दिन की बात है कि प्रातः काल की बेला में योगीराज शिवाजी महाराज हमेशा की तरह साधना के लिए , एकांत में , अपने घर से कहीं दूर , कैलाश पर समाधि लगाने चले गए । शक्ति की देवी माता पार्वती जी घर में अकेली थी । उनको अपनी सहेलियों संग नहाने की सूझी ।
माताजी ने अपनी कुछ सहेलियों को संदेश भेज कर नहाने का निमंत्रण दिया और अपने घर बुला लिया । कुछ ही समय में सभी सहेलियां माता पार्वती जी के यहां , घर के भीतर ही बहते हुए झरने में नहाने में व्यस्त हो गई । नहाने से पूर्व , घर के अंदर कोई बिना बताएं न आ जाए , इसको ध्यान में रखकर तथा घर की देखभाल और अपनी सुरक्षा के लिए उन्होंने एक विचित्र बात सोची । उन्होंने , अपने शरीर पर लगे उबटन (मैल) से एक सुडौल हष्ट-पुष्ट छोटी आयु के बालक का पुतला बनाया । उसके पश्चात पार्वती जी ने अपनी दैवी शक्ति से उस पुतले में प्राण प्रतिष्ठा कर दी , प्राण डालते ही वह बालक मनुष्य जैसा हो गया , और माता जी को प्रणाम किया , और कहां माताजी आज्ञा दीजिए , मुझे किस लिए उत्पन्न किया ? मैं कौन हूं ? माता पार्वती ने कहा तुम मेरे पुत्र हो , तुम्हारा नाम गणेश है । तुमको मैंने अपनी सुरक्षा के लिए उत्पन्न किया है , और माता पार्वती ने

Edit with WPS Office

पहरेदारी के लिए बाहर दरवाजे पर उसको नियुक्त किया और उसे कहा , हे पुत्र ! जब तक मैं और मेरी सहेलियां घर के अंदर नहा नहीं लेते ? इतने तुम यही खड़े रहना पहरेदारी देते रहना । गणेश माता जी आज्ञा पाकर बाहर दरवाजे पर पहरेदारी देने लगा , और वहां घर के अंदर उसकी माताजी नहाने में अपनी सहेलियों के साथ व्यस्त हो गई ।

समय बीतता गया , और शिव शंकर महाराज जी के घर आने का भी समय हो गया , जब वे घर पर लौटे तो किसी बालक को दरवाजे पर खड़े देखा और उसे कहा , हे पुत्र ! तुम कौन हो और यहां पहरेदारी क्यों दे रहे हो ? इस पर वह बालक शांत रहा । और शिवजी बिना बताए जैसे ही घर में प्रवेश करने लगे , तो उस बालक ने विनम्रता से रोका , और कहा , मैं पार्वती पुत्र गणेश हूं और माताजी भीतर नहा रही है और उनकी आज्ञा अनुसार जब तक वे नहा नहीं लेती ?तब तक कोई अंदर नहीं जाएगा । अतः मैं किसी को भी भीतर नहीं जाने दूंगा । आप कुछ देर के लिए यही प्रतीक्षा करें । शंकर जी ने कहा , मैं इस घर का मालिक हूं और पार्वती मेरी पत्नी है अतः तुम मेरे भी पुत्र हुए और मैं तुमको आज्ञा देता हूं कि मेरे मार्ग से हट जाओ और मुझे भीतर जाने दो । बाल गणेश ने पिताश्री को प्रणाम किया और कहा , पिताश्री मैं अपनी माता की आज्ञा का पालन कर रहा हूं । मैं माता जी की आज्ञावश विवश हूं , आप कुछ देर के लिए प्रतीक्षा करें । यह सुनकर शंकर जी के अहंकार को ठेस पहुंची तथा आपस में वाद विवाद बढ़ता चला गया और यहां तक की भोले शंकर से रहा भी नहीं गया उनको क्रोध आने लगा । परंतु बालक टस से मस नहीं हुआ और अपने पिता भोलेनाथ को बार-बार रोकता रहा । शंकर जी तिलमिला उठे और अपने आपे से बाहर हो गए , उन्होंने अपना धैर्य खो दिया और बाल गणेश से झगड़ा मोल लिया जो एक घमासान युद्ध के रूप में परिवर्तित हो गया ।

शंकर भगवान जो सारी सृष्टि को एक ही झटके में हिला देते हैं आज स्वयं हिलते नजर आने लगे । वे जिस बालक गणेश से लड़ रहे थे -- वह कोई ऐसा वैसा नहीं था , आखिर वह भी पार्वती पुत्र गणेश था । खूब डटकर मुकाबला करता रहा । भगवान शिव शंकर जी अचम्बें में पड़ गए की इतना शक्तिशाली बालक मुझ से भी नहीं डरता । भोलेनाथ ने अपनी सेना को बुला लिया । अब तो घमासान युद्ध प्रारंभ हो गया । शिव पुराण में लिखा है

Edit with WPS Office

कि उस बालक की लड़ाई शिवजी के साथ ब्रह्म सहस्त्र वर्षों तक चलती रही और अंत में शिवजी की सेना परास्त हो गई । शंकर जी अचंभे में पड़ गए और सोचने लगे --- क्या करें ..? शिवजी ने विष्णु एवं उनकी समस्त सेना को भी बुला लिया परंतु वे सब मिलकर भी एक साथ होकर भी उस बालक को हरा नहीं पाए और हार गए । अन्त में विष्णु और शिवाजी ब्रह्मा जी के पास उनकी सहायता मांगने के लिए गए । ब्रह्मा जी ने भी साथ दिया । अब तो ब्रह्मा विष्णु महेश और तीनों की सेना और दूसरी और एक छोटा सा बालक गणेश । भयंकर युद्ध हुआ परंतु हारना तो इन तीनों की सेना को ही था क्योंकि वह बालक पार्वती जी की शक्ति का प्रतीक है । लाखों करोड़ों की संख्या में सेना हताहत हुई परंतु बालक द्वार पर ही टिका रहा । इस युद्ध को चलते हुए ब्रह्म सहस्त्र वर्ष बीत गए । युद्ध के दौरान बालक को विष्णु ने देखा की बालक का मुख दूसरी ओर है । अतः उन्होंने शिवजी को , उस अवसर पर गणेश को पीछे से धोखे से मारने की योजना बताई और बालक पर प्रहार करने की सलाह दी । शिव शंकर ने भी मौका हाथ से नहीं जाने दिया । अपने त्रिशूल से , छल कपट से तथा धोखे से उस बालक की गर्दन त्रिशूल से काट गिरा दी । बाल गणेश वही देर हो गया और उसका सिर धड़ से अलग होकर कहीं दूर जा गिरा । पूरा वातावरण शांत हो गया । सब ने चैन की सांस ली । इसी के साथ माताजी का स्नान भी समाप्त हुआ । जब बाहर आई तो ब्रह्मा विष्णु महेश जी तथा इतनी बड़ी संख्या में सेना को घर के बाहर देखकर परेशान हो गई और अपने बालक पुत्र के बारे में पूछने लगी । शिवजी ने पूरी घटना सुनाई और कहा कि उस बालक को मैंने समाप्त कर दिया ।

गणपति की असली कहानी तो अब आरंभ होती है । पार्वती ने जब अपने पुत्र को मरा हुआ देखा तो वे फूट-फूट कर रोने बिलखने लगी और पार्वती ने शिवजी से आग्रह किया कि मेरे बच्चे को कैसे भी जीवित कर दो । आप कुछ भी करो , मुझे मेरा बेटा वापस चाहिए , नहीं तो मैं भी अपने प्राण त्याग दूंगी । शिवजी पार्वती को समझाने में असफल रहे । सब जानते हैं कि स्त्री हठ के सामने भला किसी की चली है जो शिवजी की चलती ? विवश होकर शिवजी ने अपनी सेना को बालक के कटे सिर को ढूंढने के लिये कहा । काफी देर तक गुजरने पर भी कटा हुआ सर नहीं मिला । शिवजी ने फिर

Edit with WPS Office

अपनी सेना को चारों दिशाओं ही नहीं अपितु तीनों लोकों में दोबारा भेजा और कहां की बिना ढूंढे वापस नहीं लौटना। तब भी वही उत्तर मिला सिर कहीं नहीं मिल रहा है। पार्वती का रोना धोना जारी था। रात्रि हो चुकी थी। विवश होकर शिवजी ने सेना को आदेश दिया , कल सवेरे होने से पूर्व मुझे कटा हुआ सर चाहिए। यदि कहीं सर ना मिले , तो सूर्य निकलने से पूर्व जो सबसे पहले नवजात शिशु दिखें , उसका सिर काट कर मेरे पास लाना , खाली हाथ नहीं आना। और यही हुआ भी , प्रातः काल की अमृतवेला में एक हथिनी ने बच्चे को जन्म दिया और सेना के कुछ सिपाहियों ने यह देख लिया हाथी के नवजात शिशु को उसी क्षण मार दिया गया और उसका सर अलग करके शिव जी के समक्ष लाया गया। पार्वती को यह सब अच्छा नहीं लगा। उन्होंने कहा मुझे वही बच्चा चाहिए। जिसको मैंने बनाया। हाथी के सिर वाला और मनुष्य धड़ वाला बालक नहीं। ऐसे बच्चों का तो सभी देवी देवता मजाक उड़ाएंगे। बहुत समझाने के बाद पश्चात यही निर्णय हुआ कि ऐसा नहीं होगा। शिव जी ने उस हाथी के बच्चे के सर को गणेश के धड़ से जोड़ दिया। और उसमें प्राण प्रतिष्ठा किये और बालक जीवित हो गया। पार्वती और उपस्थित सभी देवी देवताओं ने यह विचित्र रूप वाला बालक देखा तो किसी को भी नहीं भाया। भला ऐसा है पार्वती पुत्र ! इस पर शिव जी महाराज ने समझाते हुए घोषणा की कि हमारा यह बेटा गणपति के नाम से प्रसिद्ध होगा और अभी से सभी देवी देवताओं की पूजा से पहले हमारे पुत्र श्री गणेश की पूजा होगी। इस आश्वासन के बाद पार्वती जी भी संतुष्ट और शांत हो गई।

तब से आज तक यह मान्यता रही है कि प्रत्येक कार्य प्रारंभ करने से पहले गणपति की ही पूजा की जाती है। यही कहानी है श्री गणेश की । क्या आप जानते हैं कि हमारे गणनायक , अष्टविनायक लंबोदर सूंड वाले गणपति महाराज की सवारी किस पर बैठकर करते हैं ..? जी हां , उनकी सवारी मूषक है । जिसकी विस्तृत चर्चा आगे करेंगे।

ब्रह्मवैवर्त पुराण के गणपति की अलग कहानी ______ ब्रह्मवैवर्त पुराण में गणपति की कहानी और उत्पत्ति अलग ढंग से वर्णित है। कहानी इस प्रकार है ; शिवाजी महाराज ने पुत्र प्राप्ति हेतु माता पार्वती को एक वर्ष के

Edit with WPS Office

लिए पूर्णायक व्रत रखने का आग्रह किया जिससे भगवान विष्णु प्रसन्न होते हैं और उनके आशीर्वाद से पुत्र प्राप्ति संभव हो सकेगी। पार्वती ने आज्ञा का पालन किया और एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उस खुशी के अवसर पर सभी देवी देवताओं को निमंत्रण भेजा गया। सभी देवी देवता एकत्रित हुए। वहां सूर्यपुत्र भगवान शनि भी उपस्थित थे परंतु उन्होंने उस नवजात शिशु को देखने से इनकार कर दिया। पार्वती को बहुत बुरा लगा और कारण पूछने पर शनि ने उत्तर दिया मेरी दृष्टि पड़ने से बच्चे को हानि पहुंच सकती है। पार्वती ने नहीं माना और आग्रह पर जब शनि की दृष्टि बच्चे पर पड़ी तो उस बच्चे का सिर धड़ से कट कर भूमि पर गिर गया। यह दृश्य देखकर सभी देवी देवता आश्चर्यचकित हो गए। भगवान विष्णु ने सतर्कता बरती और शीघ्रता से पुष्प भद्रा नदी के तट की ओर प्रस्थान किया, जहां से वे एक नवजात हाथी के बच्चे का सिर काटकर शिव जी के घर ले आए। उन्होंने पार्वती के पुत्र गणपति के सिर के स्थान पर वह हाथी का सर जोड़ दिया। इस प्रकार प्रचलित हाथी सर वाले गणपति की उत्पत्ति हुई।

मत्स्य पुराण______ इस पुराण के अनुसार पार्वती ने अपने शरीर के मेल से एक मूर्ति बनाई और उस मूर्ति में प्राण भरकर उसे जीवित कर दिया। वह जीवित पुत्र बड़े पेट वाला और हाथी के सिर का था।

वराह पुराण ______ वराह पुराण के अनुसार शिव जी के मुख के तेज से गणेश पैदा हुआ। वह बालक बड़ा ही सुंदर और तेजस्वी था। पार्वती ने गणेश को श्राप देकर बदसूरत वाला बना दिया।

गणेश पुराण______ गणेश पुराण के अनुसार तो कथा ही भिन्न है। इस पुराण के अनुसार गणपति अदिथि के पुत्र थे। अदिथि की प्रार्थना सुनकर स्वयं महा गणपति ने उनके गर्भ से जन्म लिया।

स्कंद पुराण______ स्कंद पुराण की कथा बिल्कुल भिन्न है। इसके अनुसार वरेणीय नामक एक राजा व उसकी रानी को विघ्नेश्वर नामक एक पुत्र हुआ। उसके चार भुजाएं और हाथों में आयुध थे। राजा ने सेवको से

Edit with WPS Office

उस बच्चे को दूर किसी सरोवर में फेंक देने के लिए कहा , वहां से पाश्रव मुनि ने उस बच्चे को देखा और अपने आश्रम में ले आए और उसका पालन पोषण किया ।

तो शिव ,पार्वती तथा उनके पुत्र गणपति की ऐसी कहानी हमारे पुराणों में मौजूद या लिखित है । लेकिन सत्य तो केवल एक होता है ,अनेक नहीं..? आज विज्ञान के युग में कुछ वर्ष पहले लिखें पुराणों की कौन सी कथा माननी है वा कौन सी नहीं इसका निर्णय तर्क-अनुसंधान आदि के द्वारा विवेक पूर्ण विचार कर ही किया जा सकता है । इस पर भी चिंतन करने की आवश्यकता है कि ये उपरोक्त कथाएं कहा तक सत्य है । कितना ईश्वर व सृष्टि नियमों का भलीभांति पालन करती हैं ।

पुराणों में ही इतना मतभेद हैं तो यह प्रश्न स्वाभाविक भी है । की किस पुराण की कथा को सही माना जाए और किस पुराण की कथा को गलत और यदि किसी को सही मान भी लिया जाए तो इससे शेष पुराण झूठे सिद्ध होंगे ? किसी की कथा को सही माना भी जायें तो उसके पीछे क्या कारण माना जाए क्योंकि सभी पुराणों की कथाएं ईश्वर और प्रकृति के नियम के अनुरूप नहीं लगती , तर्क से भी उचित नहीं लगती ,, साथ ही इनमें स्वाभाविक रूप से प्रश्न भी उठाते हैं । अत: इन कथाओं को शत प्रतिशत सही भी तो नहीं कहा जा सकता ? फिर भी हम उठ रही शंकाओं का प्रश्न यहां लिखते हैं .. ? जो सभी के मन में उठ रहे होंगे इन कथाओं को सुनने से ।

इन कथाओं से मन में उठने वाले प्रश्न ______

प्रश्न...1______ क्या माता पार्वती जी प्रतिदिन नहाती थी या कभी कभी ? यदि प्रतिदिन नहाती थी तो घर की रखवाली कौन करता था ? और यदि कभी-कभी नहाती थी तो वह भगवान शिव की पत्नी कैसे हो सकती थी क्योंकि भगवान की पत्नी होकर कभी-कभी नहाना उचित नहीं लगता..?

प्रश्न...2______ क्या माताश्री प्रतिदिन भगवान शिव के बाहर जाने के बाद ही नहाती थी ? यदि हां , तो शिवजी कहां जाते थे ? यदि कहो कि वो ध्यान करने कहीं दूसरे स्थान पर जाते थे तो क्या उनका ध्यान घर पर नहीं लगता था ? वे किसका ध्यान करते थे ? हिंदू भाई शिव शंकर को ही सदाशिव अर्थात ईश्वर मानते हैं क्या ईश्वर दूसरे ईश्वर का ध्यान कर सकता है ? क्या

Edit with WPS Office

दो ईश्वर है ?? ईश्वर एक है या अनेक ??

प्रश्न...3______ माता पार्वती इससे पहले भी नहायी होगी तो उन्होंने इसी प्रकार से अपने कानं की मेल से बच्चों को उत्पन्न किया था ? यदि हां , तो उनके नाम कौन से हैं ? और उनका वर्णन किस पुराण में है ? इसी से प्रमाणित होता है कि शिव पुराण की यह कथा दन्तकथा है , जिसका कोई आधार या प्रमाण नहीं होता ?

प्रश्न...4______ क्या माता जी के शरीर पर इतना उबटन लगा हुआ था कि एक बच्चे का पिण्ड बन सकता था ? यह भी कल्पित हैं । मनुष्य का कान इतना छोटा और उसमें इतनी अधिक मैल होना -- यह बात मेल नहीं खाती या खरी नहीं उतर रही ?

प्रश्न...5______ क्या कैलाश पर्वत में अनेक लोगों का आना जाना था कि घर की देखभाल के लिए एक पहेरेदार की आवश्यकता पड़ती थी ? पहरेदार की आवश्यकता तभी पड़ती है जब कोई बिना पूछे घर में घुस आता है या फिर घर के द्वार पर ताला होता । भगवान शिव के घर पहरेदार की आवश्यकता क्योंकर पड़ी ? वैसे भी भगवान कहाने वाले मनुष्य ही होते हैं , ईश्वर नहीं । और भगवान शिव शंकर ने अपने गण सेनापति कहां पर नियुक्त कर रखे थे ?

प्रश्न...6______ क्या माताजी अपनी सहेलियों के साथ करोड़ों वर्षों तक नहाती रही ? और किसी को भी ठंड नहीं लगी ? कैलाश पर्वत सदा बर्फ से ढका रहता है और वहां लंबे काल तक नहाया नहीं जा सकता । ऐसा प्रतीत होता है कि जिस व्यक्ति ने शिव पुराण लिखा होगा वह अवश्य ही किसी रेगिस्तान का निवासी रहा होगा ? क्योंकि न तो उसे कैलाश पर्वत के बारे में कोई ज्ञान रहा होगा , न ही वह बर्फीले स्थान के बारे में जानता होगा । नहीं तो वह इस प्रकार का वर्णन नहीं करता , जैसा मैदानी इलाकों का होता है । लगता है शिव पुराण की कहानी काल्पनिक है , या जिसने भी लिखी है , हमारी सनातन संस्कृति का मजाक उड़ाने के लिए ही लिखी है , वरना शिव पुराण में इतने सारे गप्पोडें नहीं होते ?

प्रश्न...7_______ घर के बाहर अनेकों वर्षों तक घमासान युद्ध चला रहा और उसकी आवाज माता जी को सुनाई नहीं दी ? सेना घोड़े हथियारों की आवाज़ सुनाई नहीं दी? क्या सभी बहरें थे ? या उनके कानों में इतनी मैल

Edit with WPS Office

जम जाती थी कि उनको अस्त्र-शस्त्रों की टकराने की आवाज सुनाई नहीं पड़ती थी ? लगता है माताजी ने पूरा जीवन नहाने में ही बिताया होगा , सहस्त्र वर्षों तक नहाती ही रही होगी ? जब सहस्त्र वर्षों तक युद्ध चला रहा है ?तो माता पार्वती भी तो सहस्त्र वर्षों तक नहाती रही होगी ?

प्रश्न...8______ क्या गणेश जी बिना खाए पिए इतने वर्षों तक लड़ते रहे ? क्या बालक के बालक ही रहे या बालक से युवावस्था में नहीं आए ? बालक गणेश इतने वर्षों तक लड़ता रहा और उसकी आयु भी नहीं बढ़ी , उतनी ही रही ? कैसे संभव है ..?

प्रश्न...9______ क्या त्रिलोकी नाथ भगवान शंकर को मालूम नहीं पड़ा की गणेश मेरा और पार्वती का पुत्र है ? यदि मालूम नहीं पड़ा तो वे कैसे त्रिलोकी नाथ ? कैसे योगीराज ? और कैसे तीनों लोकों के स्वामी कहाते हैं..?

प्रश्न...10______ समस्त संसार का संहार करने वाला भगवान शिव शंकर एक नन्हे बालक से कैसे युद्ध में पराजित हो गए ? और अपनी जान बचाने के लिये उसे ब्रह्म और विष्णु तथा उनकी सेना की सहायता मागनी पड़ी ? कैसे (सबका संहार करने वाला शिव , जिसका दूसरा नाम महेश है , वह एक बालक से लड़ नहीं पाया ? कैसी अनहोनी बात है ..?

प्रश्न...11______ क्या गणेश इतना शक्तिशाली था कि उसके समक्ष ब्रह्मा विष्णु महेश तीनों तथा समस्त सेना भी मुकाबला नहीं कर पाई ? यह त्रिदेवों के लिए अपमानजनक बात लगती है ?? ऐसी असंभव कहानीयों की बातों पर विश्वास करना असंभव है ।

प्रश्न...12______ जिस शंकर भगवान के क्रोधित होने पर पूरा ब्रह्मांड थरथर कापता है , वह ब्रह्म और विष्णु के कहने पर छल कपट से गणेश को मृत्यु के घाट उतारता है , ऐसा अनुचित कर्म एक योगी के लिए कहां तक उचित है ? क्या भगवान भी किसी बेकसूर प्राणी की धोखे से हत्या करता है ? यदि हत्या करता है तो वो भगवान कहाने योग्य ही नहीं ?

प्रश्न...13______ पार्वती की मांग पर शिव जी ने अपनी सेनाओं को गणेश जी के कटे सिर को ढूंढने का आदेश दिया परंतु कटा सर नहीं मिला । (क्या तीनों लोकों के नाथ , त्रिलोकीनाथ को भी मालूम नहीं पड़ा कि सिर कट कर कहां जाकर गिरा ?

प्रश्न...14______ माता पार्वती की जिद पर शिवजी ने गणेश जी को फिर

Edit with WPS Office

से जीवित किया और चूंकि बालक गणेश का कटा हुआ सिर ढूंढने से भी नहीं मिला ? और उसके स्थान पर एक हथिनी के बच्चे का सर लगाया गया और वह बालक गणपति नाम से प्रसिद्ध हुआ । यहां अनेक शंकाएं उत्पन्न होती है । 1. एक बालक के कटे धड़ पर हथिनी के नवजात शिशु का सिर किसने लगाया अर्थात वह शल्यक्रिया किस वैध या डॉक्टर ने की थी ? 2. हे प्रिय पाठको ! आप ही विचार करो क्या किसी हाथी का सिर एक मनुष्य के बच्चे की गर्दन पर लगाया जा सकता है अथवा नहीं ? मान लो वह संभव हो भी गया तो हाथी के सूंड वाले सिर का मुंह ऊपर आकाश की ओर होना चाहिए , परंतु जब हम लोक में गणपति जी की तस्वीर को देखते हैं तो उसमें वह सामने की ओर है जो एक हास्यास्पद अनहोनी शेखचिल्ली की सी घटना प्रतीत होती है ।

प्रश्न...15______ मनुष्य की ज्ञानेंद्रिय का केंद्र मस्तिष्क होता है । हाथी के मस्तिष्क में पशुओं जैसी ज्ञान इंद्रियां होगी तो गणपति का स्वभाव कैसा होना चाहिए ? सिर पशु का और धड़ मनुष्य का हो , ऐसा प्राणी न कभी हुआ है , और न ही कभी हो सकता है ? प्रकृति नियम के विरुद्ध होने से गणपति की प्रतिमा मात्र काल्पनिक है जिससे अनेक बातें सीखी जा सकती है । इससे यही प्रमाणित होता है कि पुराणों में अनेक घटनाएं मिश्रित है ।

प्रश्न...16______ शाकाहारी पशु मात्र घास , हरी सब्जियां अथवा फल फूल ही खाता है । परंतु हमारे गणपति महाराज मात्र लड्डू मोदक खाना ही पसंद क्यों करते हैं ? इसका सरल समाधान यह है कि जो मिष्ठान पंडित को प्रिय लगता है , गणपति को भी उसी का भोग करने कराने का ढोंग करते ? इसी भोग के बहाने पंडितों का पेट भरता है । क्यों न हो , पाषाण (मिट्टी की) होने के कारण , प्रतिमा किसी भी पदार्थ का भोग नहीं लगा सकते हैं । खाना पीना जीवितों के लिए संभव है , जड़ मूर्तियों के लिए नहीं ..?

प्रश्न...17______ कोई भी बुद्धिजीवी मनुष्य रोजमर्रा की सवारी के लिए तेज रफ्तार वाला वहान रखना चाहता है परंतु श्री गणेश जी ने अपना वाहन एक मूषक (चूहे)को चुना । भला एक छोटा सा प्राणी --इतनी भारी काया वाले श्री गणेश जी को कैसे उठाकर भाग सकता है ? वास्तव में मूसक किसी भी सवारी के काम नहीं आता ।

Edit with WPS Office

प्रश्न...18______ थोड़ा सा विचारे की क्या बैल (शिवजी की सवारी) (शेर)माता पार्वती की सवारी और चूहा गणेश जी की सवारी तीनों एक ही घर में एक साथ रह सकते हैं ? क्या हमारे पूजनीय देवी देवताओं को और कोई सवारी नहीं मिली क्या ?

प्रश्न...19______ कैलाश पर्वत पर इतनी कड़ाके की सर्दी में क्या ऐसी तीनों सांवरिया रह सकती है ? उसकी खुराक क्या होगी , तथा कहा से आती होगी ?

प्रश्न...20______ पहरेदार के लिए गणेश को उत्पन्न करने की क्या आवश्यकता थी , जब पहले से नंन्दी बैल और शेर मौजूद थे ?

प्रश्न...21______ हाथी का शरीर सूंड काला होता है , परंतु गणपति का मुंह और शरीर गोरे रंग के हैं ? भला यह कैसे संभव है ?

प्रश्न...22______ अलग-अलग पुराणों में अलग-अलग प्रकार की कहानी है ? क्या कोई पाठक बंधु निर्णय ले सकता है स्वयं से की कौन सी कथा सही है ? किस कथा पर विश्वास करें ? किसी पुराण में गर्भ से उत्पन्न हुआ बताया है , किसी में तपस्या के द्वारा , किसी में भगवान शिव के मुख , तो किसी में मेंल द्वारा उत्पन्न हुआ बताया है , और किसी में किसी राजा के यहां जन्म हुआ है । आप बताओ प्रिय बंधुओ कि कथा कौन सी कथा सही है कौन सी गलत स्वयं निर्णय ले हमको तो यह कालापानिक कथाएं लगती है ?

परमपिता परमात्मा को गणपति भी कहा गया है वेदों में , लेकिन वेदों के गणपति पुराणों के गणपति से मेल नहीं खाते ? पुराणों के गणपति की मूर्तियों से कुछ सीख सकते हैं , जो उससे सीख आ रही है निराकार एवं ईश्वर की ही आ रही है ।

ऐसे अनेक प्रश्न हो सकते हैं , जिनका उत्तर सभी जाना चाहेंगे । संक्षेप में गणपति जी की काल्पनिक प्रतिमा से संबंधित महत्वपूर्ण रहस्यों की जानकारी प्रस्तुत करते हैं ।

- ## [गणपति प्रतिमा का रहस्य]

Edit with WPS Office

वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक स्वरूप

गणपति की उपासना के लिए जिस प्रसिद्ध श्लोक का उच्चारण किया जाता है , वह गणपति के बारे में न होकर निराकार परमात्मा का ही वर्णन करता है । यहां उसी श्लोक की वैदिक व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है ।

वक्रतुण्ड : ______ (टेढ़े मेढ़े मुंह वाला) अग्नि की लपटे एक प्रकार की नहीं , अपितु टेढ़ी-मेढ़ी ही होती है अर्थात ईश्वर सर्व व्यापक होने से सब दिशाओं में विद्यमान है । ईश्वर निराकार है । यहां भौतिक अग्नि प्रतीक मात्र है जिसकी लपटे सदा ऊपर की ओर उठती हैं जो हमें प्रगति के मार्ग पर ऊपर उन्नति की और बढ़ाने की प्रेरणा प्रदान करती है । ईश्वर सदैव सब जीवों का कल्याण चाहता है इसलिए सबको उन्नति करने की प्रेरणा प्रदान करता रहता है ।

महाकाय : ______ महान काया वाला भारी भरकम शरीर वाला विशालता एवं प्रभावशाली होने का प्रतीक है । प्रत्युत इतना महान है कि हम उसकी कल्पना नहीं कर सकते ।

सूर्यकोटि समप्रभ : ______ करोड़ सूर्यो की रोशनी के समान : जो परमेश्वर सूर्य जैसे अनगिनत सूर्यो को रचकर धारण किये हुए हैं वह परमात्मा कितना प्रभावशाली होगा __ उसकी कल्पना करना हमारी कल्पना से बाहर है अर्थात वह सर्वोपरि है ।

निर्विघ्नम् : ______ जो महानुभाव ईश्वर की सच्ची पूजा आज्ञा का पालन करता है परमात्मा उसके समस्त दुख विध्न दूर करते हैं इसलिए गणपति परमेश्वर को विध्नहर्ता कहते हैं ।

वरदा : ______ वर देने वाला अर्थात भक्तों की मुरादों को पूर्ण करने वाला वह और कोई नहीं , गणपति भगवान है ।

सुरप्रिय : ______ सुर का अर्थ होता है देवता अर्थात श्रेष्ठजन , जो मनुष्यों में उत्तम होते हैं । ऐसे श्रेष्ठजन ही परमात्मा की सच्ची भक्ति करते हैं । सुर का दूसरा अर्थ स्वर अर्थात संगीत भी लगाया जा सकता है । संगीत परमात्मा के निकट पहुंचता है इसलिए भजनों के माध्यम से लोग परमात्मा तक पहुंचाने का प्रयास करते हैं । इसलिए ईश्वर को सुर प्रिय कहा गया है । संगीत का अर्थ होता है संगति कराने वाला अर्थात जिसके माध्यम से हम

Edit with WPS Office

ईश्वर से जुड़ते हैं । भक्तजन संगीत के माध्यम से परमात्मा की स्तुति प्रार्थना उपासना करते हैं । संगीत द्वारा परमात्मा में मन शीघ्र लगता है । इसलिए गणपति प्रतिमा में गणपति के एक हाथ में शंख संगीत का प्रतीक दर्शाया जाता है ।

लंबोदर : ______ईश्वर के भंडार भरपूर होते हैं , कभी खाली नहीं होते , यह प्रकृति ही उसका पेट है । प्रकृति में कभी वस्तुओं का अभाव नहीं होता , इसी को दर्शाने के लिए मूर्तिकार ने गणपति जी के उदर को लंबा दिखाया है । सुख समृद्धि तथा विशालता का प्रतीक ।

बड़े-बड़े कान : ______ दूर एवं नजदीकी बातों को सुनने की क्षमता का प्रतीक ।

छोटी-छोटी आंखें :______ ईश्वर की आंखों से कोई बच नहीं सकता ?दूरदर्शिता का प्रतीक । कैमरे की आंख छोटी होती है , पर इससे छोटी आंख द्वारा दूर तथा पास के चित्र खींचे जाते हैं ।

लंबी सूंड : ______ (नाक) हाथी ही एकमात्र ऐसा प्राणी है जिसकी सूडं सबसे लंबी होती है । यह स्वाभिमान तथा आन मान शान की पहचान मानी जाती है । राजा के सर्वहितकारी कार्यों से ही राष्ट्र का स्वाभिमान एवं सम्मान बढ़ता है ।

बाएं गाल पर काला तिल :______ सौंदर्य का प्रतीक । तिल चेहरे के सौंदर्य पर चार चांद लगा देता है ।

एक टूटा दांत______ पराक्रम तथा देशद्रोहियों का दमन करना तथा निडरता का प्रतीक । यह प्रेरणादायक प्रतीक है की शत्रु कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो , लड़ाई के मैदान से योद्धा को कभी भागना नहीं चाहिए , चाहे युद्ध में शरीर का कोई भी अंग क्यों न खोना पड़े ।

चार हाथ :______ चारों दिशाओं में राज्य का फैलाव तथा शक्ति का प्रतीक । परमात्मा सब दिशाओं में विद्यमान है अर्थात वह सर्वव्यापक है ।

एक हाथ में मोदक : ______ लड्डू मिठाई खुशहाली का प्रतीक है । अर्थात राष्ट्रपति को चाहिए कि वह अपनी जनता को भरपेट रोटी , कपड़ा और मकान मोहेया कराता रहे । जनता को भी योग्य है , वह भी राष्ट्र के नियमों का पालन करें ।

दूसरे हाथ में रस्सी : ______ राष्ट्र के न्याय व्यवस्था में किसी भी प्रकार की

Edit with WPS Office

ढील नहीं होनी चाहिए । देशद्रोहियों तथा अपराधियों को कड़ी सजा होनी चाहिए । रस्सी इसी का प्रतीक है की गद्दारों को सजा देनी चाहिए उन्हें बांधकर जेल में डालना चाहिए ।

तीसरे हाथ में ओउम् ध्वज : ______ कहते हैं जैसा राजा वैसी प्रजा अर्थात यदि राजा धर्म निष्ठावान होगा , तो उसकी प्रजा भी धर्मात्मा होगी । ईश्वर का निज नाम ओउम् है , ओउम् ही गणपति है ।

चौथे हाथ में शंख : ______ ईश्वर अनन्त सूरों वाला है , सुरों का स्वामी है । ईश्वर की भक्ति तथा (आज्ञा- पालन) करना ही ईश्वर भक्ति है । यह भजन और संगीत का प्रतीक है । भजन और संगीत द्वारा भी ईश्वर प्राप्त किया जा सकता है । आपस में भाईचारा तथा प्राणी मात्र के प्रति प्रेम । गणपति की प्रतिमा के चारों हाथों में अलग-अलग वस्तुएं दिखाई देती है । जैसे ओउम् ,त्रिशूल , कटारी तथा शंख ।

मूषक वाहन : ______ मूषक खोजने के यंत्र का प्रतीक है । कंप्यूटर में इसे माउस के नाम से जाना जाता है । चूहा भूमि खोदकर अंदर घुसकर तथा बिल बनाकर रहता है । भूमि खोद कर ही इमारत की नींव डाली जाती है । यहां तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति के गुप्तचर देश सीमा की खबर राष्ट्रपति राजा को देते रहे । ताकि राष्ट्र सुरक्षित रहे ।

मूषक के कण : ______ हमने कहीं सुना है की मूषक के कान में कहने से सभी मनोकामनाएं पूर्ण होती है । इस संदर्भ में आप स्वयं समझ सकते हैं कि आप गणपति में आस्था या विश्वास नहीं रखते ? यदि करते होते तो उसके पैरों के तले बैठने वाले मूषक से कहीं बातों का क्या लाभ ? स्वयं गणपति परमपिता परमात्मा आपका हृदय में विराजमान है । और आप उस परमेश्वर को छोड़कर एक तुच्छ प्राणी के कान में बातें कह रहे हो । क्या इससे मलिक प्रसन्न होगा ? आपकी मनोकामनाएं पूर्ण होती है आपके विवेकपूर्ण परिश्रम से , जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं परमात्मा उनको अपने लक्ष्य तक पहुंचने की प्रेरणा अवश्य प्रदान करता है ।

गणपति मूर्ति का रंग चमकदार केसरी क्यों ? गणपति परमात्मा के अनेक गौणिक नामों में एक नाम अग्नि भी है , भौतिक अग्नि का रंग चमकीला केसरी होता है इसलिए मंदिरों में गणपति की काल्पनिक मूर्तियों का रंग चमकीला केसरी होता है । ईश्वर चेतन तत्व है , आकार रहित है , निराकार

Edit with WPS Office

है । अतः उसके रंग रूप का प्रश्न ही नहीं खड़ा होता ? गणपति = प्रतिमा मूर्तिकार की कल्पना है जो ईश्वर के अनेक गुण कर्म स्वभावों को दर्शाती है । उपयुक्त चिह्न मात्र समझाने हेतु है । इनका वास्तविकता से कोई संबंध नहीं है ।

[अग्नि के सात गुण कर्म स्वभाव]

1. ऊर्ध्व गमन...______ ऊपर की ओर उठना (मनुष्य को सदा उन्नति करते रहना चाहिए)
2. प्रकाश...______ रोशनी प्रदान करना (हमें अपने गुण कर्म स्वभाव से दूसरों को भी लाभ पहुंचाना चाहिए ।
3. तेज...______ संपर्क में आने वाली वस्तुओं को अपनी तपिश से भस्म करना तथा अपने भर्ग से अवगुणों को समाप्त कर पवित्र करना (मनुष्य को योग्य है कि वह दूसरों के अवगुणों को समाप्त करने का प्रयास करें तथा विकार रहित बनाएं ।
4. आत्मसार...______ अपने जैसा अग्निमय बना देना (अपने संपर्क में आने वाले लोगों को अपने जैसा बना देना)
5. विस्तार...______ अग्नि आगे की ओर गति करती है इसलिए उसका प्रकाश दूर-दूर तक जाता है । मनुष्य को भी सदा आगे की और बढ़ना चाहिए , विस्तार करना चाहिए तथा अपने सद्कर्मों से यश एवं ख्याति बढ़ाता रहे ।
6. संघर्ष...______ उन्नति के लिए संघर्ष अर्थात परिश्रम करना जरूरी है । (अग्नि परिश्रम करने की प्रेरणा देती है)
7. परोपकार...______ अग्नि परोपकार के लिए ही जलती है , यह जीवन भी अग्नि के कारण ही संभव है । (अपने लिए तो सभी जीते हैं , मनुष्य वही कहलाने योग्य है , जो दूसरे के परोपकार के लिए जीता है । पाठकवृद्ध प्रज्वलित अग्नि को देखें और गणपति की प्रतिमा को देखें दोनों में कोई भेद नहीं दिखाई देगा क्योंकि परमात्मा का एक नाम अग्नि अर्थात गणपति है । इसलिए लोग अपने घरों में जोत जलाते हैं ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 53. गणपति का वेदों में स्वरुप

• [गणपति की वेदों में महिमा]

{ मंगलमूर्ति गणपति }

यजुर्वेद. 23/19______

ओउम् गंणाना त्वां गणपति हवामहें । प्रियवाणां त्वां प्रियपति हवामहें । निधिनां त्वां निधिपति हवामहें वसो मम आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ।।

अर्थ ___

हे गणों के स्वामी गणपति । हम आपका आहान् करते हैं । हे प्रियों के प्रियपति हम आपका स्वागत करते हैं । हे निधियों के निधिपति हम आपका स्तवन करते हैं , आप हमारे शरणदाता है । सारे संसार को धारण करने वाले आप अजन्मा है । मैं आपको भलीभांति जान सकू इसलिए मैं आपका आहान् करता हूं ।

वेदों में गणपति शब्द अनेकों बार आया है जिसका अर्थ है गणों का स्वामी , अर्थात इस ब्रह्मांड में जितनी भी वस्तुएं विद्यमान है , जिनकी गणना हो सकती है , उन सब के स्वामी को ' गणपति , (सब गणों का पति) अर्थात

Edit with WPS Office

परम पति परमात्मा कहते हैं । सब मनुष्यों को गणपति की पूजा करनी चाहिए । मनुष्य मात्र का यह कर्तव्य ही नहीं , धर्म भी है कि वह गणपति अर्थात गणों के स्वामी परमेश्वर की पूजा अर्थात उसकी आज्ञा का पालन करना चाहिए । परमात्मा की वाणी ही उसकी आज्ञा है । जो जो बातें वेदों में कही गई है , उन उन बातों का स्वाध्याय मनुष्य मात्र को करना चाहिए । तथा उनको अपने जीवन में धारण करना चाहिए अर्थात उनको व्यवहार में लाना चाहिए यही ईश्वर की सच्ची पूजा कहाती है । सरल भाषा में धर्म का पालन करना ही गणपति ईश्वर की पूजा है । धर्म का आचरण सबके लिए समान होता है और उसका पैमाना परमात्मा के गुणों को धारण करने से होता है ।

अध्यात्म का अर्थ परमात्मा को जानना फिर परमात्मा के गुणों को धारण करके उसी में रमे रहना है --- इसमें प्रदर्शन नहीं होता । हिंदू समाज में लोगों की प्राय: ऐसी मान्यता है की कोई भी शुभ कार्य करने से पूर्व हमने गणपति (प्रचलित हाथी मस्तिष्क वाले गणपति) की पूजा नहीं की तो वह कार्य सफल नहीं होगा या हम उस कार्य के करने में असफल होंगे । उनकी यह धारणा गलत नहीं है ? और न ही कोई अंधविश्वास है । वास्तव में उनकी यह आस्था सत प्रतिशत सत्य पर आधारित है क्योंकि प्रत्येक कार्य के प्रारंभ करने से पहले समझदार व्यक्ति को गणपति अर्थात परमपिता परमात्मा की पूजा अवश्य करनी चाहिए क्योंकि कोई भी कार्य उस ईश्वर की कृपा के बिना सिद्ध नहीं होता । यहां हमें एक बात का ध्यान रखना चाहिए कि परमात्मा की पूजा अर्थात मात्र परमात्मा की ही पूजा होनी चाहिए । ईश्वर के स्थान पर किसी अन्य की पूजा उपासना करना या किसी काल्पनिक पाषाण आदि मूर्तियों को तस्वीरों के रूप में सामने रखकर उसकी पूजा करना उपासना करना , ईश्वर की पूजा नहीं अपितु उस परमपिता परमात्मा का घोर अपमान करना है । मूर्ति पूजा करने से हम परमात्मा की पूजा करने से वंचित रहते हैं । मूर्ति पूजा करने से अनेक अंधविश्वास उत्पन्न होने लगते हैं । जिसका कोई लाभ नहीं होता और लोग सच्चे परमात्मा को भूल जाते हैं । तथा नास्तिकता की ओर अग्रसर होते हैं । यह सत्य सनातन वैदिक पूजा पद्धति के बिल्कुल विरुद्ध है ।

Edit with WPS Office

गणपति के तीन अर्थ______

गणपति शब्द तीन अर्थों में प्रचलित है ।

1.__गणपति अर्थात गणों का स्वामी -परमपिता परमात्मा

2.__ गणपति का दूसरा अर्थ है , प्रजा का पालन करने वाला --प्रजापति और क्योंकि यज्ञ के द्वारा समस्त प्रजा का उपकार होता है इसलिए यज्ञाग्नि को भी गणपति कहते हैं ।

3.__ गणपति का तीसरा अर्थ होता है , समूह या प्रजा का स्वामी अर्थात राष्ट्रपति । देश के राष्ट्रपति को भी गणपति कहते हैं ।

सार्वजनिक गणपति की व्याख्या :---

1.___ गणपति___ गण + पति =गणपति अर्थात गणों का स्वामी ।

प्रियपाठकवृद्ध ! परमात्मा शब्द का अद्वितीय चेतन सर्वोत्तम वस्तु का बोध कराता है । वह परमेश्वर मनुष्य मात्र का है , किसी राष्ट्र या जाति विशेष का नहीं ? अपितु सारे विश्व का स्वामी है । वह अनादि काल से सृष्टि की रचना करता है , उसको व्यवस्था में रखता है और समय आने पर उसका अंत करता है ।

वेद में निम्नलिखित मंत्रों में स्पष्ट रूप से गणपति की महिमा का वर्णन है :

______

ऋग्वेद. 2/23/1______

उपर्युक्त मंत्र का स्वामी (विषय) ब्राह्मणस्पति है अर्थात जो समस्त ब्रह्मांड का स्वामी परमात्मा है । ब्रह्म शब्द के अनेक अर्थ होते हैं , जैसे परमात्मा , वेद ,यज्ञ , ब्रह्मांड , अन्न , धन ,मन , प्राण , वाक् , ब्राह्मण , सबसे बड़ा इत्यादि । यज्ञ के चार पुरोहितों में से मुख्य पुरोहित को ब्रह्म कहते हैं । पति का अर्थ है रक्षक , पालक और स्वामी । उपर्युक्त मंत्र में परमात्मा के कुछ गौणिक और आलंकारिक नामों जैसे ब्राह्मणस्पति , कवि ,ज्येष्ठराज , का वर्णन है । अतः यह आध्यात्मिक मंत्र है जिसका अर्थ है -- हे गणों ! (गणनीय वस्तुओं को गण कहते हैं) के स्वामी __ गणपति__ परमपिता परमात्मा । आप कवियों के कवि हैं , उपम है । श्रवणस्तम (श्रवण करने योग्य) है , ज्येष्ठराज (परमात्मा सर्वव्यापक होने से सूर्य , चंद्रमा , नक्षत्रादि श्रेष्ठ पदार्थों में विद्यमान है तथा उसी से प्रकाश प्राप्त कर रहे ये सब

Edit with WPS Office

प्रकाशित होते हैं । इसलिए ईश्वर को ज्येष्ठराज भी कहां जाता है) है। हे ईश्वर ! हम आपसे विनम्र प्रार्थना करते हैं कि आप हमारे हृदय में आकर विराजो और हमारी रक्षा करो ।

वैदिक गणपति की पूजा : ______

वेद के अनेक मंत्रों में गणपति शब्द आया है , जिसका सरल और सीधा अर्थ होता है -- गणों का स्वामी अर्थात परमपिता परमात्मा । ब्रह्मांड में जितनी भी सूक्ष्म और स्थूल वस्तुएं हैं जिनकी गणना की जा सकती है उनको गण कहते हैं और उनके स्वामी , रक्षक , पालक , मालिक को ' पति , कहते हैं । अतः जो गणों का स्वामी है उसे गणपति कहते हैं । ऐसा और कोई नहीं , स्वयं परमात्मा है ।

यजुर्वेद. 23/16______

ईश्वर के अनेक गौणिक , कार्मिक , स्वाभाविक , और आलंकारिक नाम होते हैं , उनमें से एक नाम गणपति है । यजुर्वेद के उपर्युक्त मंत्र में ईश्वर को अनेक नामों से संबोधित किया गया है । जैसे __ गणपति , प्रियपति , तथा निधिपति । यहां ईश्वर को प्रियपति अर्थात वह प्रेम का स्वामी है -- सब को प्रेम करता है और सब का प्रिय है । यदि हम मन , वचन और कर्म से अहिंसा का पालन करते हैं अर्थात सबसे प्रेम करते हैं तो समझों हम गणपति की सच्ची पूजा करते हैं और इसी प्रकार परमात्मा ' निधिपति है , अर्थात वह धन ऐश्वर्य का स्वामी है । और धन ऐश्वर्यो का स्वामी वही हो सकता है जो धन का सही सही सदुपयोग करता है जो सुपात्रों को , उनकी आवश्यकतानुसार आर्थिक सहायता करता है । वेद कहता है कि आप खूब कमाएं और खूब धन ऐश्वर्य के स्वामी बनें । जिनके पास धन का अभाव है , जो निर्धन है , असहाय है उनकी सहायता कर धन का सदुपयोग करें । यदि हम उपयुक्त मन्त्र में वर्णित गणपति परमात्मा के गुण कर्म स्वभाव को अपने जीवन में आचरण में लाते हैं तो समझों हम गणपति की सही पूजा करते हैं । --- यही गणपति पूजा की वैदिक पद्धति है ।

2.__गणपति अर्थात यज्ञ या यज्ञाग्नि : ___

Edit with WPS Office

वैदिक साहित्य में गणपति का दूसरा अर्थ होता है -- यज्ञ या यज्ञाग्नि । यज्ञ का दूसरा नाम गणपति अर्थात प्रजापति है । क्योंकि यज्ञ से समस्त प्रजाओं का पालन होता है , उपकार होता है अतः यज्ञ को प्रजापति भी कहते हैं । विज्ञान भी इस बात की पुष्टि करता है कि यज्ञ करने से घी और सामग्री इत्यादि अग्नि के द्वारा सूक्ष्म होकर वातावरण को शुद्ध करते हैं जिससे सब जीवों का परोपकार होता है । घी तथा अनेक रोग नाशक जड़ी बूटियों और पौष्टिक पदार्थों से बनी सामग्री अग्नि के संयोग से सूक्ष्म होकर वायु को शुद्ध और पवित्र बनाते हैं , जिसके कारण मनुष्य ही नहीं , अपितु सब प्राणी शुद्ध वायु का सेवन कर स्वस्थ रहते हैं । इसके अतिरिक्त वायु सूक्ष्म होने के कारण ऊपर अंतरिक्ष में बादलों को वर्षा करने में सहायता करता है । वर्षा का पानी दूर-दूर तक खेत खलिहानों में पौष्टिक और अधिक मात्रा में फसल उत्पन्न करता है । इस गुण की वजह से यज्ञ को प्रजापति कहते हैं । क्योंकि यज्ञ प्रजा का पालक होने से प्रजापति कहाता है । यज्ञ गणपति/ प्रजापति का साक्षात भौतिक स्वरूप है ।
यदि आपने यज्ञ की प्रज्वलित अग्नि की लपटों को गौर से देखा होगा तो वह आधुनिक प्रचलित गणेशोत्सव में पूजे जाने वाले हाथी के मुख वाले ' गणपति , की प्रतिमा के समान दिखती है । यज्ञाग्नि यज्ञकुण्ड में फैली हुई और ऊपर की लपटे टेढ़ी-मेढ़ी होती है । इसी दृश्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि वास्तव में एक विद्वान कलाकार ने गणपति की मूर्ति में सर्वव्यापक परमात्मा तथा देश का राष्ट्रपति के गुण कर्म स्वभाव और प्रजापति अर्थात यज्ञाग्नि को दर्शाने का प्रयास किया गया है । गणपति के चारों हाथ चारों दिशाओं के प्रतीक है । (हवन कुंड चौकौर होता है , उसके चार कोने होते हैं) भव्य विशाल काया सर्वव्यापकता का प्रतीक है क्योंकि यज्ञाग्नि में भेंट की गई आहुतियां सारे विश्व को प्राप्त होती हैं ।

3.___ गणपति अर्थात राष्ट्रपति : ___ गणपति का तीसरा अर्थ है --देश का राजा या राष्ट्रपति । जैसे एक देश का राष्ट्रपति अपनी प्रजा के रहने खाने और सुरक्षा का ध्यान रखता है , इसी प्रकार परमपिता परमेश्वर गणपति जिनको राष्ट्रपति भी कहते हैं -- वह भी सृष्टि का पालन पोषण , सुरक्षा , मनुष्यों का स्वामी बनकर ज्ञान देता है । उसी परमात्मा को गणपति या

Edit with WPS Office

राष्ट्रपति कहा गया ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 54.इंद्र कौन हैं ..? देव -- असुर संग्राम

इंद्र कौन है ..?
इंद्र शब्द की उत्पत्ति वेदों से हुई है ।
संस्कृत में एक शब्दों के अनेकों अर्थ होते हैं और प्रसंग ,विषय के अनुसार उसके अर्थ बदलते रहते हैं ।

- **कनक __** धतूरा , सोंना , गेहूं
- **सैधव __** नमक , घोड़ा
- **यज्ञ __** देव पूजा , दान , संगतिकरण , त्याग
- **बलि __** अंश ,भाग , बलिदान ,वध
- **गौ __** पृथ्वी ,गौ
- **इंद्र __** ईश्वर , विधुत , सूर्य , आत्मा , विद्वान , ऐश्वर्या

वेदों में इंद्र शब्द का प्रयोग परमात्मा के इंद्रिय शक्ति के लिए भी हुआ है ।

देवराज इंद्र कौन है ?

Edit with WPS Office

देवराज इंद्र एक ऐतिहासिक पुरुष थे ।
ऋषि कश्यप और अदिति के 12 पुत्र थे । धाता , अर्यमा , मित्र , वरुण , अंश , भाग , विवस्थान , पूषा , पर्जन्य , त्वष्टा , विष्णु , इंद्र ।
यही 12 आदित्य देंव कहलाएं । इनके नाम वेद मंत्रों से लेकर रखे गए हैं ।
देव और असुर दोनों ही प्रजापति कश्यप के पुत्र थे । देवों की उत्पत्ति अदिति से और असुरों की उत्पत्ति दिति से हुआ था । असुर ज्येष्ठ , और देव कनिष्ठ थे । -- **(ताण्डय ब्राह्मण . 18/1/2) और शतपथ ब्राह्मण. 14/4/1/1**
जब देव बड़े हुए तो उन्होंने असुरों और दानवों से कुछ भूमि मांगा परंतु दैत्यों और असुरों ने वह बात स्वीकार नहीं की , दोनों में घोर युद्ध प्रारंभ हुआ यही ऐतिहासिक देवासुरसंग्राम नाम से प्रसिद्ध हुआ । **(काठक संहिता. 31/8)**
इन पर इन्ही दिनों ग्रंथ रचे गए उन्हीं ग्रंथो के आधार पर रामायण और महाभारत में राम रावण युद्ध और महाभारत के युद्ध के वर्णनों में देव असुर संग्राम की उपमाएं पदे पदे दी जाने लगी ।
अमृत मंथन __ अमृत मंथन का कोई भी ऐतिहासिक उल्लेख किसी भी वैदिक साहित्य ग्रंथो में नहीं मिलता । लेकिन सृष्टि के आरंभ में अमृत मंथन अंतरिक्ष में ईश्वर द्वारा किया गया सत् रज तम प्रकृति के तीन गुणों से अंतरिक्ष में मंथन हुआ । तब यह सृष्टि बनी ।
इसका उल्लेख हमें कुछ पुराणों में ही प्राप्त होता है । उसमें भी किसी अमृत नाम के स्थान पर अमृत मंथन का वर्णन है । **(हरिवंश पुराण. 67/6)**
समुद्र मंथन में निकले कुछ रत्नों के नाम जैसे -- कामधेनु गाय , कौस्तुभ , मणि , लक्ष्मी , रंभा , पांचजन्य , शंख , पारिजात , पुष्प , धनवंतरी , हलाहल विष , अमृत ।
समुद्र मंथन की बात भी बाद में जोड़ी गई है , यह कहानी सच्ची नहीं है । किसी भी वैदिक शास्त्र में इस मंथन का कोई उल्लेख नहीं ? ना ही वेदों में , ना ही ब्राह्मण ग्रन्थों में , ना रामायण महाभारत में , पुराणों में इसका उल्लेख आता है । वह भी किसी स्थान का नाम आता है हरिवंश पुराण में । अगर इस कहानी को सच्ची मान भी लें तो इसे मानने से बहुत ज्यादा विरोधाभास

Edit with WPS Office

है व दोष आएगा क्योंकि अवतारवाद मानना पड़ेगा , जैसे कि समुद्र मंथन के समय कछुआ का अवतार विष्णु जी ने लिया ऐसी ऐसी जो कहानी है इस कहानी को मानने से , वेद गलत साबित होंगे , अगर पुराणों में यह बात गलत है , तो वेद का सिद्धांत सही है । क्योंकि वेदों में कहीं भी अवतारवाद नहीं ? कहीं भी नरक लोक स्वर्ग लोक के स्थान की बात नहीं , वेदों में नरक लोक स्वर्ग लोक व्यक्ति के जीवन में है यह वेद का कहना है , जबकि पुराण स्वर्ग लोक नरक लोक का स्थान मानता है अंतरिक्ष में । दोनों में विरोधाभास हो जाएगा । इसलिए वेद ही परम प्रमाण है क्योंकि वेद अपौरुषेय हैं , वेद ईश्वर द्वारा इस सृष्टि का सिद्धांत संविधान है , वेदों में जो कहा गया है , वही सत्य है ।

इंद्र कौन था ! दुराचारी या धर्मात्मा ..?

1. पुराणों के इंद्र
2. वैदिक साहित्यों के इंद्र

- **_______इंद्र दुराचारी नहीं धर्मात्मा था । उपनिषदों में इंद्र को 100 वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने वाला बताया है ।**
- **अदिति और ऋषि कश्यप का पुत्र इंद्र वेद का बहुत बड़ा विद्वान था । उसने अपने पिता के पास 101 वर्ष ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए ब्रह्म विद्या सीखी थी। । बाद में इन्द्र कर्म से क्षत्रिय हो गया । अपने भाई असुरों के साथ देवासुर संग्राम में व्यस्त हो गया । सतत युद्ध करने के कारण इन्द्र वेद भूल गया । उसने ऋषि विश्वामित्र के पास से फिर से वेद ग्रहण किया । ऋषि विश्वामित्र ने पहले इंद्र से वेद सीखा था । बाद में उन्होंने अपने गुरु इंद्र को ही वेद पढ़ाया । इस लिए इन्द्रं कौशिक कहलाया । ______ यह गाथा जैमिनीय ब्राह्मण. 2.80 में मिलती हैं ।**

1. पुराणों के इंद्र ___

आप लोगों ने सीरियल में देखा होगा या पढ़ा होगा कि

Edit with WPS Office

इंद्र को किस प्रकार दिखाया गया है पुराणों में इंद्र को दुराचारी , लोभी , वैश्यगमन , काम भोगी , झूठा , छिपकर वार करने वाला , दारूबाज मदिरा का सेवन करने वाला , परस्त्री गामी आदि प्रकार के पुराणकार ने दोष (देवराज इंद्र पर) लगाए हैं । यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे -- पुराणों में भगवान श्री कृष्ण के चरित्र को गंदा किया है । पुराणों ने कृष्ण पर दोष लगाएं -- वेश्यागमन , लंपट , परस्त्रीकामी , चोर , अधर्मी , नहाती हुई लड़कियों के वस्त्रों को चुराता , राधा , कुबजा के साथ संभोग , आदि दोष भगवान श्री कृष्ण पर भी लगाएं हैं ।

2. वैदिक साहित्यों कें इंद्र ___

वैदिक साहित्य ग्रंथो में इंद्र का चरित्र जैसे -- वेद , रामायण , महाभारत , ब्राह्मण ग्रंथ , उपनिषद , स्मृति , आदि वैदिक ग्रंथों में इंद्र का चरित्र अति उत्तम है । वेद में इंद्र कोई अलग से देवता नहीं है , बल्कि निराकार पर ब्रह्म ईश्वर ऐश्वर्या सुखी समृद्धि होने से इंद्र है । वेद में जो इंद्र है वह परमात्मा का नाम है , और जो ऐतिहासिक इंद्र हैं पुराणों में उपनिषदों में रामायण में महाभारत में ,वो अलग है क्योंकि प्राचीन समय में इंद्र नाम के अनेक व्यक्ति हुए , (अनेकों महापुरुषों ऋषियों-मुनियों ने देवताओं ने वेदों में से नाम रखे हैं । **(मनुस्मृति. 12/97)** जिस इंद्र की बात पुराणों में हुई है , उसी इंद्र की बात रामायण महाभारत उपनिषदों में है और उपनिषदों में इंद्र को 100 साल तक ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला बताया है । और रामायण में तो श्री राम के चरित्र की तुलना इंद्र से की गई है । (अगर इंद्र दुराचारी होता तो श्री राम के चरित्र की उपमा वाल्मीकि इंद्र से क्यों देते ?) इससे यही साबित होता है , भगवान श्री कृष्ण के चरित्र की तरह इंद्र का चरित्र भी पुराणकारो ने अति भ्रष्ट , लिखा है । महाभारत में भगवान श्री कृष्ण का चरित्र अति उत्तम है । कहीं भी लेशमात्र भी दोष नहीं ? ऋषि वेदव्यास ने भगवान श्री कृष्ण का चरित्र अति उत्तम लिखा है महाभारत में और उनके लिए कहा है जो कभी मर्यादा से नहीं डिगा ,जिसने कभी अधर्म नहीं किया , जिसने कभी झूठ नहीं बोला , जो सबसे श्रेष्ठ व्यक्ति है , वह श्री कृष्ण है । और शिशुपाल ने भी भगवान श्री कृष्ण को सो गालियां दी लेकिन कहीं भी उन्होंने चोर , दुराचारी , वेश्यागमन आदि दोष नहीं लगाए और

Edit with WPS Office

राधा कुबजा का कोई नाम नहीं पूरी महाभारत में कोई भी लेशमात्र उल्लेख नहीं , भगवान श्री कृष्ण का कोई मतलब नहीं कोई नाम नहीं , कोई रिश्ता नहीं , भगवान श्री कृष्ण के चरित्र को गंदा करने के लिए पुराणों में ऐसी बातें घुसेड़ी है । और महाभारत में इंद्र का चरित्र भी अति उत्तम है , वीर योद्धाओं को इंद्र के समान उपमा दी गई है , और पांडव भी अंतिम समय में इंद्र की राजधानी जहां उनका शासन था हिमालय पर्वत , वही उस क्षेत्र को स्वर्ग कहा गया है । वहां जाकर पांडवों ने अपने प्राण त्यागें । हिमालय के आसपास का क्षेत्र ही स्वर्ग लोक कहा गया है ।

•क्या वेदों में इंद्र कोई पुरुष रूप धारी देवता थे ..?

षडविंश ब्राह्मण के अनुसार इंद्र को पर्जन्य , वृष्टि , विधुत , आदि नाम से जाना जाता है इसलिए इंद्र का कोई निर्दिष्ट लिंग नहीं है ।

यत्पर्जन्यः पुरोबलाको भूत्वाभिप्रैत्तेन पुमान्। यद् वृष्ट्या यदशन्या तेन स्त्री। यद्विद्युता तेन नपुंसकम्। तस्मात् सर्वमेवेति ब्रूयात् ॥ ६ ॥

यद् येनेन्द्रः पर्जन्यो वर्षोन्मुखो मेघः सन्पुरोगामी बलाको भूत्वा अभिप्रैत् देवान् तेन पुंरूप पर्जन्यात्मकत्वेन पुमान्। यत् येन वृष्ट्या यत् येन वाशन्या असुरानवधीत् तेन स्त्रीरूपवृष्ट्यशन्यात्मकत्वेन स्त्री भवति। यत् येन विद्युताहन्। विद्युच्छन्दो नपुंसकलिङ्गोऽप्यस्ति। औणादिकः क्विप् बहुलवचनान्नपुंसकलिङ्गेऽपि भवतीति। तेन नपुंसकविद्युदात्मकत्वेन नपुंसकम्। तस्मात् सुब्रह्मण्या सर्वमेव भवतीति ब्रूयादिति सूक्तमेव ॥ ६ ॥

जो यह इन्द्र पर्जन्य(वर्षा करने वाला मेघ) होकर सबसे आगे देवताओं के सामने आया, तो यह पर्जन्य के (पुल्लिंग) होने से पुरुष हुआ। जो इसने वृष्टि से या अशनि से (वज्रपात) से असुरों का वध किया, तो 'वृष्टि' शब्द के स्त्रीलिंग होने से यह स्त्री हुआ। जो यह विद्युत (बिजली) होकर (असुरों का संहार किया) तो 'विद्युत'शब्द के नपुंसकलिंग में भी होने से यह नपुंसक हुआ (औणादिकः क्विप् बहुलवचनान्नपुंसकलिङ्गेऽप्यस्ति)।

- इन्द्रं पर्जन्य नाम वाले होने से पुरुष , वृष्टि नाम वाले होने से स्त्री तथा विधुत नाम वाले होने से नपुंसक लिंग कहलाते ।

क्या सोम औषधि है या मदिरा ..?

Edit with WPS Office

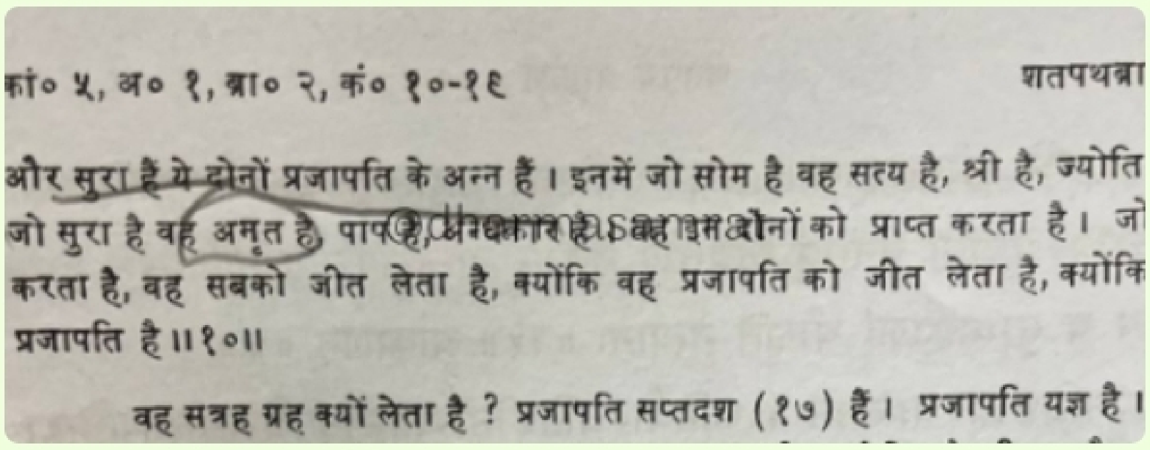

कां० ५, अ० १, ब्रा० २, कं० १०-१९ शतपथब्रा

और सुरा है ये दोनों प्रजापति के अन्न हैं। इनमें जो सोम है वह सत्य है, श्री है, ज्योति
जो सुरा है वह अमृत है, पाप है, अन्धकार है। वह इन दोनों को प्राप्त करता है। जो
करता है, वह सबको जीत लेता है, क्योंकि वह प्रजापति को जीत लेता है, क्योंकि
प्रजापति है ॥१०॥

वह सत्रह ग्रह क्यों लेता है ? प्रजापति सप्तदश (१७) हैं। प्रजापति यज्ञ है।

शतपथ ब्राह्मण 5.1.2.10

> **यत्सोमश्च सुरा च ततः सत्यं श्रीर्ज्योतिः**
> **सोमोऽनृतं पाप्मा तमः सुरैते एवैतदुभे**

शतपथ ब्राह्मण कहता है की सोम है वह श्री है, सत्य है और ज्योति है। तथा जो सुरा है वह अनृत(असत्य) है, पाप है, अन्धकार है।

जो लोग सोम और शराब को समान मानते है, उनकी मान्यता गलत है। सोम औषधि है और सूरा अर्थात शराब पाप है।

6.2K 11:10

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 55.यज्ञ / अग्निहोत्रं का महत्व

Edit with WPS Office

सनातन संस्कृति में प्रत्येक शुभ कार्य से पहले यज्ञ करने का विधान स्पष्ट रूप से बताया गया है । वैदिक ज्ञान और यज्ञ का संबंध अटूट है , क्योंकि वेदों में जो कुछ भी कहां गया है , वह यज्ञ के संदर्भ में ही है । यज्ञ शब्द " **यज** ,, धातु से बना है , जिसका अर्थ है **देवपूजा , संगति और दान ।** देवताओं की पूजा करना , समान जनों के साथ मित्रता करना , और छोटे जनों को दान देना , सभी यज्ञ का ही रूप है । यज्ञ का सबसे महत्वपूर्ण संदेश यह है कि संसार के सभी जड़ चेतन वस्तुएं , गुण या शक्तियां यज्ञ के पात्र हैं । तप रुपी कर्म को भी यज्ञ कहा गया है ।
वेदों में यज्ञ का स्थान सर्वोच्च है । ऋग्वेद में यज्ञ की महिमा अनेक स्थानों पर की गई है , विशेषकर - (ऋग्वेद. 10/90/16) में यज्ञ के महत्व को इस प्रकार बताया गया है ; " तस्माधज्ञात् सवहुत : ऋच : सामानि जज्ञिरे , अर्थात इस यज्ञ से ऋचाएं , और सामवेद के मंत्र उत्पन्न हुए । इस मंत्र से यह स्पष्ट होता है कि वेदों की ऋचाओं और मंत्रों का मूल यज्ञ ही है । यज्ञ के माध्यम से न केवल देवताओं की पूजा होती हैं बल्कि यह संसार की समस्त क्रियाओं का आधार बनता है ।

यज्ञ का व्यापक अर्थ : ______

यज्ञ सिर्फ अग्निहोत्र या हवन तक सीमित नहीं है । यह एक विस्तारित परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करता है , जिसमें संसार की समस्त जड़ चेतन वस्तुओं के बीच परस्पर लाभ पहुंचाने का सिद्धांत छिपा है । जो हमसे श्रेष्ठ है , वह पूजनीय है , जो हमारे बराबर है , वह मित्रता के योग्य है ; और जो हमसे छोटा है , वह दान और सहयोग के योग्य है । इसी प्रकार हम स्वयं भी दूसरों से पूजनीय , मित्रता और दान के योग्य है ।
सनातन धर्म में प्रत्येक संस्कार , धार्मिक कृत्य , और त्यौहार में यज्ञ की प्रधानता है । **(शतपथ ब्राह्मण . 1/1/1/1)** मैं कहां गया है " **यज्ञों वै श्रेष्ठतमं कर्म** , अर्थ -- यज्ञ सबसे श्रेष्ठ कर्म है । प्राचीनतम शास्त्रों से लेकर आज तक यज्ञ का प्रचलन निरंतर रहा है । ऋग्वेद -- इसका प्रथम मंत्र ही यज्ञ से संबंधित है , जो यह दर्शाता है कि यज्ञ उतने ही पुराने हैं जितना वेदों का काल ।

Edit with WPS Office

यज्ञ और आत्मा- परमात्मा का संबंध : ______

उपनिषदों में यज्ञ का उल्लेख आत्मा और परमात्मा के मिलन के संदर्भ में भी किया गया है । यज्ञ को आत्मिक शुद्धि और आध्यात्मिक प्रगति का साधन बताया गया है ।(**छान्दोग्य उपनिषद् 5/24/1**) में कहा गया है कि " अग्निहोत्र यथांदृश : ब्राह्मण : प्ररमेष्ठिन „ अर्थात अग्निहोत्र ब्रह्म का स्वरूप है ।

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि यज्ञ ब्रह्म का साक्षात स्वरूप है और इसके माध्यम से आत्मा और परमात्मा के बीच संबंध स्थापित होता है । यज्ञ के द्वारामनुष्य अपनी आत्मा को शुद्ध कर परमात्मा से मिलन की प्रक्रिया को सुगम बनाता है ।

यज्ञ और कर्मयोग : ______

यज्ञ केवल धार्मिक कर्म ही नहीं , बल्कि कर्म योग का एक अभिन्न हिस्सा है । **(भगवत गीता . 3.9)** श्री कृष्ण कहते हैं " **यज्ञाधात्कर्मणोंऽन्यत्र लोकोंऽयं कर्मबन्धन „ ।** अर्थात यज्ञ के लिए किए गए कर्म ही मुक्तिदायक होते हैं , अन्यथा सभी कर्म बंधन में डालने वाले होते हैं ।

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि यज्ञ के बिना किया गया कोई भी कर्म फलहीन है और सांसारिक बंधनों में जकड़ा रहता है । यज्ञ द्वारा किए गए कर्म से व्यक्ति मोक्ष की ओर अग्रसर होता है और जीवन में शांति और संतुलन प्राप्त करता है ।

यज्ञ और सार्वजनिक आरोग्यता : ______

यज्ञ का सबसे बड़ा लाभ सार्वजनिक आरोग्यता से जुड़ा है । जैसे सफाई , सड़क , अस्पताल और अन्य साधन जन- स्वास्थ्य के लिए आवश्यक

Edit with WPS Office

होते हैं , वैसे ही यज्ञ भी आरोग्यता का एक माध्यम है । यज्ञ द्वारा उत्पन्न धूम्र और भाप वातावरण को शुद्ध करता है और वायु तथा वृष्टि जल को शुद्ध करने में सहायक होता है । यही कारण है कि वैदिक यज्ञ का मुख्य उद्देश्य आधिभौतिक और आधिदैविक विषमताओं को समाप्त कर संतुलन स्थापित करना है ।

यज्ञ और सार्वजनिक स्वरुप : ______

यज्ञ केवल व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं किया जाता बल्कि इसका मुख्य उद्देश्य परोपकार है । जब यज्ञ किया जाता है , तो इसका प्रभाव न केवल यज्ञकर्ता पर बल्कि पूरे जगत पर पड़ता है । इससे पर्यावरण शुद्ध होता है , जिससे सभी जीवो को लाभ मिलता है । इसी कारण यज्ञ को प्रजापति भी कहां गया है , क्योंकि यह समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए होता है ।

(यजुर्वेद. 12/32) मैं कहां गया है कि" **यज्ञौ वै विशस्य भैषजम् ।** यज्ञ समस्त जगत के लिए औषधि है । यह श्लोक दर्शाता है कि यज्ञ के माध्यम से संसार की समस्त समस्याओं का समाधान संभव है । यज्ञ न केवल आध्यात्मिक बल्कि भौतिक और सामाजिक शांति और समृद्धि का भी माध्यम है । इसका उद्देश्य सार्वभौमिक कल्याण है ।
शतपथ ब्राह्मण . (1.7.2.1) मैं कहां गया है कि अयं यज्ञों लोकेषु श्रेष्ठ । अर्थात यज्ञ संसार में सबसे श्रेष्ठ कर्म है । इस श्लोक से स्पष्ट होता है कि यज्ञ केवल व्यक्तिगत नहीं , बल्कि सामाजिक और सार्वभौमिक कल्याण का साधन है । यज्ञ द्वारा मनुष्य न केवल अपने जीवन को शुद्ध करता है , बल्कि समाज और प्रकृति का भी कल्याण करता है ।

यज्ञ और पर्यावरण संरक्षण। : ______

आज के समय में , जब प्रदूषण और पर्यावरणीय संकट गहराता जा रहा है , यज्ञ का महत्व और भी बढ़ गया है । यज्ञ द्वारा उत्पन्न धूम्र और भाप , वायु

Edit with WPS Office

और जल को शुद्ध करने में सहायक होते हैं । जब यह धूम्र बादलों से मिलता है , तो वृष्टि के रूप में यह शुद्ध जल प्रदान करता है । जो औषधियों और अन्न के उपादान में सहायक होता है । इस प्रकार , यज्ञ पर्यावरण संरक्षण का एक महत्वपूर्ण माध्यम बनता है ।
(अथर्ववेद. 1.32.4) मैं कहां गया है " **यज्ञेन वृष्टि प्रपद्यंते** ।,, अर्थ __ यज्ञ से वर्षा होती है । यह श्लोक स्पष्ट करता है कि यज्ञ का पर्यावरणीय महत्व कितना व्यापक है । यज्ञ से उत्पन्न धुआं और भाप वायु और जल को शुद्ध करते हैं , जिससे वृष्टि होती हैं और पृथ्वी पर औषधि और अन्न की उत्पत्ति होती है । **(गीता. 3.14)** में कहां गया है कि " अन्नाद भवति भूतानि पर्जन्यादन्न सम्भव । यज्ञाद भवति पर्जन्यों यज्ञ : कर्मसमुभ्दव ।। इसका अर्थ है __ सभी प्राणी अन्न से जीवित रहते हैं ,अन्न वर्षा से उत्पन्न होता है , वर्षा यज्ञ से होती है , और यज्ञ कर्म से उत्पन्न होता है ।

- **यह श्लोक स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि यज्ञ और पर्यावरण का सीधा संबंध है । यज्ञ के माध्यम से जलवायु का संतुलन बना रहता है , जिससे पृथ्वी पर जीवन संभव है ।**

यज्ञ का आध्यात्मिक और भौतिक लाभ : ______

यज्ञ का आध्यात्मिक लाभ तो है ही , साथ ही इसका भौतिक लाभ भी स्पष्ट है । अगर हर घर में यज्ञ प्रारंभ हो जाए , तो परिवार में कलह , दुख राग द्वेष दरिद्रता और अशांति जैसी समस्याएं स्वत : समाप्त हो जाती है । इसके साथ ही , पर्यावरणीय समस्याएं जैसे प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन का भी समाधान हो सकता है । इसप्रकार ,यज्ञ न केवल आत्मिक शांति प्रदान करता है , बल्कि भौतिक जीवन की समस्याओं को भी दूर करता है ।

यज्ञ का वैज्ञानिक महत्व : शुद्धि और स्वास्थ्य का रक्षक ______

Edit with WPS Office

वैज्ञानिक दृष्टि से यज्ञ एक विशेष प्रकार की दहन प्रक्रिया है जिससे विभिन्न कार्बनिक पदार्थों को अग्नि को समर्पित किया जाता है । मुख्य सामग्री में लकड़ी , घी और हवन सामग्री शामिल होती है । जिनमें औषधीयं गुणों से युक्त , सुगंधित , और बलवर्धक तत्व मिलाए जाते हैं । यज्ञ के दौरान , यज्ञ वेदी में तापमान केंद्र से किनारो की ओर लगभग 600°c से 200°c तक होता है , जिससे कई पदार्थ जलकर गैसीय अवस्था में परिवर्तित हो जाते हैं । यज्ञ के समय दहन की प्रक्रिया से जो गैस उत्पन्न होती है , उनमें पाइनिन डाईपेटीन सिनीआंल युजेनॉल सेफ्रोल और टर्पिनआंल जैसे सुगंधित योगिक शामिल है । इसके साथ ही एल्डिहाइडस् कीटोन्स और अम्लीय पदार्थ बनते हैं , जो अपने रासायनिक गुणों के कारण अत्यंत सक्रिय होते हैं ।

फार्मल्डिहाइड़ : यज्ञ से उत्पन्न कीटाणुनाशक गैस : ______

यज्ञ के समय उत्पन्न होने वाले रासायनिक यौगिकों में फार्मल्डिहाइड़ सबसे महत्वपूर्ण है । यह एक अत्यंत क्रियाशील और प्रभावी कीटाणुनाशक है । फार्मल्डिहाइड़ पानी में घुलनशील होता है , और इसका 40 प्रतिशत जलीय घोल फार्मलिन कहलाता है । इसका उपयोग पौधों और जीवों के मृत शरीर को संरक्षित करने में किया जाता है , क्योंकि यह सड़न प्रक्रिया को रोकता है ।

यज्ञ वेदी से निकलने वाली फार्मल्डिहाइड़ गैस वातावरण में फैलाकर कीटाणुओं और विषाणुओं का नाश करती है , जिससे आसपास का वातावरण शुद्ध और रोगाणुरहित हो जाता हैं । यह गैस पानी में भी घुलकर उसमें उपस्थित रोगाणु का नाश करती है , और श्वास के माध्यम से शरीर में जाकर स्वास्थ्य सुधारने में सहायक होती है । फार्मल्डिहाइड़ अपने अत्यधिक क्रियाशील स्वभाव के कारण वातावरण मैं उपस्थित हानिकारक गैसों , जैसे सल्फर डाइऑक्साइड से भी क्रिया करती है और उन्हें समाप्त करती है । इस प्रकार यज्ञ के दौरान उत्पन्न होने वाली गैस न केवल वातावरण को शुद्ध करती है , बल्कि प्रदूषण के स्तर को भी नियंत्रित करने

Edit with WPS Office

में सहायक होती है ।

यज्ञ से स्वस्थ्य और वातावरण पर सकारात्मक प्रभाव : ______

यज्ञ से उत्पन्न होने वाली गैसों का प्रभाव केवल वातावरण को शुद्ध करने तक सीमित नहीं है , बल्कि यह मानव शरीर के रोगों को दूर करने और स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में भी सहायक होती है । यदि व्यक्ति के शरीर में कोई रोग हो , तो यज्ञ से उत्पन्न गैसे उसे ठीक करने में सहायता करती है । इस प्रकार यज्ञ के वैज्ञानिक महत्व को समझते हुए यह कहा जाता है कि यह न केवल धार्मिक अनुष्ठान है , बल्कि पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए भी अत्यधिक लाभकारी प्रक्रिया है ।

निष्कर्ष ______ श्री राम और श्री कृष्ण भी नित्य संध्या उपासना, अग्निहोत्र किया करते थे , इसलिए हमें भी उनका अनुसरण करते हुए नित्य प्रतिदिन अपने घर में संध्या , उपासना यज्ञ आदि करनी चाहिए । यज्ञ को धर्म का मूल कहा गया है । शास्त्रों के अनुसार , जिस घर में यज्ञ नहीं होता , वह शमशान के समान माना जाता है । इसलिए हर व्यक्ति को यज्ञ का अनुष्ठान करना चाहिए , क्योंकि यह धर्म का पालन है और अधर्म का त्याग है । यज्ञ करने से जीवन में समृद्धि , शांति , और संतुलन आता है । और इसके अभाव में दुख , कष्ट और पाप का भागी बनना पड़ता है । (गीता. 3.16) मैं श्री कृष्ण भगवान कहते हैं -- जो यज्ञ के इस चक्र को नहीं अपनाता , वह पाप में डूबता है और इंद्रियों में लिप्त होकर व्यर्थ जीवन जीता है ।

यह श्लोक यह बताता है कि यज्ञ न करने वाला व्यक्ति न केवल अधर्म का भागी बनता है , बल्कि उसका जीवन भी निष्फल हो जाता है । यज्ञ न केवल आत्मिक , बल्कि भौतिक और सामाजिक उन्नति का भी साधन है । यज्ञ द्वारा न केवल मनुष्य का व्यक्तिगत कल्याण होता है , बल्कि समाज प्रकृति और समस्त जीवों का भी कल्याण होता है । इसलिए यज्ञ का अनुष्ठान प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अभिन्न अंग होना चाहिए ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

---

56. पंच महायज्ञ

वैदिक परंपरा में पंच महायज्ञ का अत्यधिक महत्व है । यह पांच यज्ञ मानव जीवन को पूर्णता और संतुलन प्रदान करने के लिए प्रतिदिन किए जाने वाले अनुष्ठान है । वैदिक सनातन धर्म के अनुसार , मनुष्य को समाज , प्रकृति , पूर्वजों और सभी जीवो के प्रति कर्तव्यों का पालन करना चाहिए । ये यज्ञ इस संतुलन को बनाए रखने का माध्यम है । और इनका उद्देश्य व्यक्तिगत और सामाजिक कल्याण है ।

पंच महायज्ञ निम्नलिखित है ______

1. **ब्रह्म यज्ञ** : ______ (वेदाध्ययन और ज्ञान का आदान-प्रदान ।)

2. **देव यज्ञ** : ______ (हवन , अग्निहोत्र)

3. **पितृ यज्ञ** : ______ (जीवित माता -पिता , एवं गुरु की सेवा)

4. **बलिवैश्वदेव यज्ञ** : ______ (सभी पशु- पक्षी आदि जीवों की सेवा)

5. **अतिथि यज्ञ** : ______ (साधु , सन्यासी , ब्रह्मचारी , विद्वानों एवं ऋषियों का सत्कार)

Edit with WPS Office

1. ब्रह्म यज्ञ : ______ का तात्पर्य है वेदों का अध्ययन और ज्ञान आदान प्रदान करना । यह यज्ञ सभी शास्त्रों के प्रति श्रद्धा , अध्ययन और स्वाध्याय के माध्यम से ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का साधन है । ब्रह्म यज्ञ से व्यक्ति अपनी आत्मा की शुद्धि करता है और वेदों के माध्यम से समाज में ज्ञान का प्रसार करता है ।

श्लोक : ___

स्वाध्यायोऽध्येतव्यों ब्रह्मयज्ञस्तु तु कर्मीणि । (तैत्तिरीय उपनिषद् 1.9.1)

अर्थ ___ स्वाध्याय और वेदाध्ययन ब्रह्म यज्ञ का महत्वपूर्ण कर्तव्य है ।

यह यज्ञ यह सिखाता है कि ज्ञान का प्रचार और स्वाध्याय एक मनुष्य के लिए सवौच्च धर्म है । हमें नित्य प्रतिदिन वैदिक शास्त्रों का अध्ययन एवं स्वाध्याय करना चाहिए । एवं उसका प्रचार प्रसार समाज के मध्य में करना ही ब्रह्म यज्ञ का उद्देश्य है ।

2. देव यज्ञ : देवताओं की पूजा ______ देव यज्ञ का तात्पर्य है 33 कोटि देवताओं की पूजा और उन्हें प्रसन्न करना । यह यज्ञ अग्निहोत्र और हवन के माध्यम से देवताओं को आहुति अर्पित करने के लिए किया जाता है । देव यज्ञ का का उद्देश्य प्राकृतिक शक्तियों और देवताओं का आशीर्वाद प्राप्त करना है , जिससे समाज और संसार में संतुलन बना रहे । अग्निहोत्र इस यज्ञ का प्रमुख अंग है ।

श्लोक : ___ (श्रौतसूत्र)

" अग्निहोत्र जुहुयादादित्यमुपतिष्ठेत ।।

अर्थ ___ अग्निहोत्र में आहुति देनी चाहिए और सूर्य देव की उपासना करनी चाहिए । देव यज्ञ से वायु , जल से अग्नि तत्व की शुद्धि होती है , जो पर्यावरण संतुलन में सहायक है । इसलिए प्रतिदिन संध्या वेला में हमें यज्ञ /अग्निहोत्र घर में करनी चाहिए ।

3. पितृ यज्ञ : (जीवित माता-पिता एवं गुरु की सेवा) ______

जीवित माता-पिता एवं गुरुजनों की श्रद्धापूर्वक सेवा करना , आदर सत्कार

Edit with WPS Office

करना श्राद्ध है । उन्हें अन्न , जल , भोजन एवं आज्ञा पालन से उन्हें तृप्त करना ही तर्पण है ।

श्लोक : ___ मनुस्मृति. 3.82

कुयाध्हरह : श्राद्धमनाहेनोदके वा ।
पयोमूलफलैवऽपि पितृभ्य : प्रीतिमावहन ।।

इस श्लोक में पितृ यज्ञ का विधान वर्णित है , जिससे पितरों को अन्न , जल ,दूध ,फल आदि भोज्य पदार्थों से श्रद्धा पूर्वक तर्पण करने का निर्देश दिया गया है । इसमें बताया गया है कि : --

गृहस्थ व्यक्ति को अपने माता-पिता , पितामह और पूर्वजों का अन्न , जल ,दूध और फल जैसे पदार्थों से तर्पण करना चाहिए ।
पितरों के प्रति प्रेम पूर्वक सेवा और आदर भाव रखना चाहिए ।
प्रतिदिन पितृ यज्ञ के रूप में श्रद्धा और प्रेम पूर्वक तर्पण , भोजन दान , और सेवा करनी चाहिए ।

यह श्लोक पितृ यज्ञ की सेवा को दर्शाता है , जिसमें जीवित पितरों का तर्पण और उनका सम्मान करना धर्म के मुख्य अंगो में से एक है । परंतु आजकल जो माता-पिता की मृत्यु के पश्चात उनका श्राद्ध तर्पण किया जाता है वह वैदिक परंपरा और संस्कृति के विरुद्ध है । केवल जीवित माता-पिता और गुरु जनों का श्राद्ध और तर्पण संभव है मृत का नहीं ।

4. बलिवैश्वदेवयज्ञ यज्ञ : (सभी जीवों की सेवा) ______

इसे भूत यज्ञ भी कहा जाता है , इसका तात्पर्य है सभी जीवों और प्रकृति की सेवा करना । इसमें पशु- पक्षियों , कीट- पतंगों और सभी प्राणियों के प्रति प्रेम और करुणा का भाव रखा जाता हैं । यह यज्ञ व्यक्ति को पृथ्वी पर रहने वाले हर प्राणी के प्रति दायित्व का बोध करवाता है ।

श्लोक : ___ मनुस्मृति. 3.84

वैश्वदेवस्य सिध्दस्य गृहोऽग्रो विधिपूर्वकम ।
आभ्यं : कुयाद्दितायक्ष ब्राह्मणों होमत्रवहम ।।

Edit with WPS Office

इस यज्ञ के माध्यम से प्रत्येक गृहस्थ को अपने द्वारा पकाए गए भोजन में से एक भाग पशु -पक्षियों के लिए निकालनी चाहिए । क्योंकि प्रत्येक जीव महत्वपूर्ण है इसलिए उनका भरण पोषण का दायित्व भी हमारे ऊपर है इसलिए सभी जीवित प्राणियों के प्रति करुणा और सम्मान का भाव रखना चाहिए । यह यज्ञ पर्यावरण संतुलन और प्राणियों के कल्याण के लिए आवश्यक है ।

5. अतिथि यज्ञ : (साधु , सन्यासी, ब्रह्मचारी , विद्वानों , ऋषियों का सत्कार) ____

अतिथि सत्कार और समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करना । वैदिक संस्कृति में अतिथि (साधु , सन्यासी , ब्रह्मचारी ,विद्वानों और ऋषियों का सत्कार) देवता के समान माना गया है । अतिथि का सम्मान और उसकी सेवा को महत्वपूर्ण कर्तव्य माना गया है । घर में आए हुए अतिथि से अपनी जिज्ञासा एवं समस्याओं का समाधान प्राप्त करना एवं आत्मोन्नति के लिए तत्पर रहना ही इस यज्ञ का महान उद्देश्य है । परंतु ध्यान रहे सगे संबंधी , मित्र , सखा आदि अतिथि नहीं है । जिसकी कोई तिथि निर्धारित ना हो उसे अतिथि कहा जाता है । इसलिए संत , महात्मा , ब्रह्मचारी , गुरु ही अतिथि कहलाने के योग्य है , अन्य नहीं ।

श्लोक : ___ तैत्तिरीय उपनिषद् 1.11.2

" अतिथिदेवो भव „।।

अर्थ ___ अतिथि को देवता के समान मानो ।

अतिथि यज्ञ में अतिथि का आदर , सत्कार और सेवा का महत्व बताया गया है । इससे समाज में सहयोग और सद्भाव का विकास होता है ।

निष्कर्ष _____ पंच महायज्ञ मनुष्य के पांच महत्वपूर्ण दैनिक कर्तव्य रूपी कर्म है , जिनके माध्यम से वह समाज , प्रकृति , देवता , पूर्वज और सभी जीवो के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करता है । यह यज्ञ व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ समाज और पर्यावरण की भी रक्षा करते हैं । इन पांच यज्ञों के पालन से व्यक्ति न केवल आत्मिक शांति प्राप्त करता

Edit with WPS Office

है , बल्कि समस्त जगत का भी कल्याण करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

---

57. वेदों में विज्ञान

वेदों में न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक ज्ञान समाहित है , बल्कि भौतिकी , रसायन शास्त्र , जीव विज्ञान , खगोल विज्ञान , चिकित्सा , गणित , कृषि , और दर्शनशास्त्र का ज्ञान भी मूल रूप से सूत्र रूप में परमात्मा द्वारा हमें प्रदान किया गया है । वेदों को समस्त प्रकार के ज्ञान , सत्य और सिद्धांतों का मूल स्रोत माना जाता है । वैदिक संस्कृति में वेदों को परम ज्ञान और सत्य का अंतिम स्रोत माना है ।

" सर्व वेदात प्रसिध्यति " अर्थात सभी ज्ञान वेदों से सिद्ध होते हैं । तथा सभी ज्ञान का स्त्रोत वेद है । वेदों में जो ज्ञान परमात्मा द्वारा दिया गया है वह अत्यंत सूक्ष्म और सूत्र रूप में है । इसका विस्तार इसलिए नहीं किया गया क्योंकि मनुष्य को ईश्वर ने बुद्धि दी है , और इस बुद्धि का उपयोग करते हुए वह इस सूक्ष्म ज्ञान का विस्तार कर सकता है , जिससे विज्ञान और अन्य क्षेत्रों में प्रगति की जा सके ।

तो चलिए इस खण्ड में वेदों में वर्णित विज्ञान और उसके विभिन्न आयामों को समझने का प्रयास करते हैं ।

1. ___ पृथ्वी के परिधि पर घूमने का वर्णन : _____

वेदों में पृथ्वी के घूमने का उल्लेख अत्यंत वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया गया है ।

Edit with WPS Office

आयं गौ: पृश्निरक्रमीदसदन् मातरं पुर: ।
पितरं च प्रयन्त्स्व: ।। (यजुर्वेद. 3/6)
इस मंत्र में पृथ्वी को ' गौ , अर्थात गाय के रूप में संबोधित किया गया है । गाय का प्रतीकात्मक अर्थ है जैसे गाय चारागाह मैं दूर-दूर तक जाती है । वैसे ही पृथ्वी सदा अपनी परिधि में घूमती रहती है । वेदों के अनुसार , पृथ्वी अंतरिक्ष के मध्य में निरंतर अपनी परिधि में घूमती रहती है ।
जल को पृथ्वी की माता के समान कहा गया है , क्योंकि पृथ्वी जल के परमाणुओं के सहयोग से उत्पन्न हुई है ।
सूर्य को पृथ्वी का पिता माना गया है , क्योंकि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है । सूर्य का पिता वायु है और आकाश माता है ।
इसी प्रकार चंद्रमा का पिता अग्नि है , और माता जल है । इनके आपसी आकर्षण से सभी ग्रह और उपग्रह अपनी अपनी कक्षाओं में घूमते रहते हैं ।

" गौरिति पृथिव्या नामधेयम् यद्दूरं गता भवति ।
यच्चास्या भूतानि गच्छन्ति गातेवोकारो नामकरण ।। (निरुक्त. 2/2/5)
अर्थात पृथ्वी को ' गौ , कहा जाता है क्योंकि यह दूर तक जाती है । और इस पर सभी जीव - जन्तु चलते हैं । इस प्रकार से वेदों में पृथ्वी के घूमने और इसकी कक्षाओं का उल्लेख वैज्ञानिक रूप में किया गया है ।

2. ___ खगोल विज्ञान का उल्लेख : ______

या गौवृतुनि पयोति निष्कृतं पयो दुहानां व्रतनीरंवारत ।
सा प्रंब्रुवाणा वरुणाय दाशुषे देवेभ्यों दाशद्धविषा विवस्वते।।(ऋग्वेद. 10/65/6)
भावार्थ : ___ इस ऋचा में वर्णन किया गया है कि सभी लोक (ग्रह , तारे , आदि) अपने-अपने निर्धारित मार्गो पर सदा नियम पूर्वक घूमते रहते हैं । विशेष रूप से पृथ्वी को अपनी कक्षा में सूर्य के चारों ओर घूमते हुए बताया गया है । इस घूमने की प्रक्रिया और सभी लोकों के नियमबद्ध मार्ग

Edit with WPS Office

में चलने के कारण सृष्टि में संतुलन बना रहता है । इसके परिणाम स्वरूप पृथ्वी पर अनेक प्रकार के प्राकृतिक तत्व जैसे कि रस , फूल , पेड़ पौधे , और अन्य पदार्थ उत्पन्न होते हैं , जो सभी प्राणियों के जीवन के लिए आवश्यक है ।
यह श्लोक यह है दर्शाता है कि ब्रह्मांड के इन नियमों के कारण ही जीवन का अस्तित्व संभव है । यदि लोक अपने निर्धारित मार्ग पर न चले , तो सृष्टि में असंतुलन उत्पन्न हो जाएगा और जीवन असंभव हो जाएगा ।
यह पृथ्वी गोल है , सूर्य तथा चंद्र की स्थिति , चंद्र का पृथ्वी के चारों ओर चक्कर लगाना , सूर्य का किसी और वस्तु का चक्कर लगाना तथा अपनी धूरी पर घूमना , पृथ्वी का सूर्य के चारों ओर घूमना , दिन और रात होने का वर्णन , अमावस्या पूर्णिमा से संबंधित विशेष ज्ञान आदि ग्रह- नक्षत्र की चाल का वर्णन विशेष रूप से प्रश्न उत्तरी माध्यम में किया गया है । (यजुर्वेद. 3/6 , 23/9 - 10)

3. ___ चन्द्रमा का पृथ्वी के चारों ओर परिभ्रमण : ______

त्वं सोमं पितृभि: संविदानोऽनु धावापृपृथिवी आतंतन्थ ।
तस्मै त हविषा विधेम वय स्याम पतयो रयीणाम ।। (ऋग्वेद. 10/65/6)

भावार्थ _____ इस श्लोक में यह बताया गया है कि चंन्द्रमा (सोम) पृथ्वी के चारों ओर परिक्रमा करता है । यह चन्द्रमा कभी कभी सूर्य और पृथ्वी के मध्य में आता है , जिसमें सूर्य और चंद्रमा के बीच विशेष खगोलीय घटनाएं होती है , जैसे ग्रहण । यह तत्थ खगोल विज्ञान के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है , क्योंकि यह वेदों में खगोलीय घटनाओं का स्पष्ट उल्लेख करता है ।

यदा सूर्यममु दिवि शुक्रं ज्योतिरधारय: ।
आदिते विश्वा भुवनानि येमिरे ।। (ऋग्वेद. 8/12/30)

भावार्थ _____ इस श्लोक में सूर्य को ' शुद्ध दिव्य प्रकाश , के रूप में वर्णित किया गया है । जब इस शुद्ध दिव्य प्रकाश , यानि सूर्य , को ब्रह्मांड में

Edit with WPS Office

स्थापित किया गया है , तब समस्त भुवन (ग्रह , तारे आदि) नियमबद्ध हो गए । इसका अर्थ यह है कि सूर्य के आकर्षण और गुरुत्वाकर्षण के कारण सभी ग्रह उसके चारों ओर नियमित रूप से घूमने लगे । यह ऋग्वेद का वर्णन अत्यंत वैज्ञानिक है , जिसमें सूर्य के गुरुत्व बल को ब्रह्मांडीय संतुलन और ग्रहों की गति का आधार बताया गया है ।

4. ___ यजुर्वेद में सूर्य और चंद्रमा के प्रकाश का वर्णन :

क: स्विदेकाकी चरंति कऽउंस्विज्जायते पुनः ।
किस्विद्धिमस्य भेषज किम्वावपन महत ।। (यजुर्वेद. 23/9)

भावार्थ ______ इस मंत्र में ईश्वर ने प्रश्न - उत्तर के माध्यम से मनुष्य को खगोलीय ज्ञान प्रदान किया है , प्रश्न है : कौन एकाकी विचरण करता है और अपने प्रकाश से प्रकाशित होता है ? और कौन दूसरे के प्रकाश से प्रकाशित होता है ?
उत्तर : अगले मंत्र में ______

सूर्यऽएकाकी चंरति चन्द्रमा जायते पुनः ।
अग्निर्हिमस्य भेषज भूमिरावपनं महत् ।। (यजुर्वेद. 23/10)

भावार्थ ______ उत्तर में यह स्पष्ट किया गया है कि सूर्य अकेला विचरता है , यानि सूर्य अपनी धूरी पर घूमता है और स्वयं अपने प्रकाश से प्रकाशित होता है । इसके विपरीत , चन्द्रमा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होता है । चन्द्रमा स्वयं प्रकाश का स्त्रोत नहीं है , बल्कि वह सूर्य के प्रकाश को परावर्तित करता है ।

ऐसा ही वाल्मीकि रामायण में भी कहा गया है कि चंद्रमा सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित है ___

विनष्टशीताम्बुतुषारपंकोमहाग्रहग्राहविनष्टपंक
प्रकाशलक्ष्म्याश्रयनिर्मलांको ।
रराज चन्द्रो भगवाठ्शशांक: ।।

Edit with WPS Office

वाल्मीकि रामायण सुंदरकांड. सर्ग.3 , श्लोक 6

भावार्थ ______ जिन्होंने अब शरद ऋतु में शीतलता को प्राप्त जल और ओस की बूंदों के कीचड़ को नष्ट कर दिया था । तथा सूर्य की किरणों को ग्रहण कर स्वयं अपने अंदर विद्यमान अंधकार रूपी कीचड़ को भी समाप्त कर लिया था , जो प्रकाश रूपी ऐश्वर्य को धारण कर निर्मल आकृति हो गयें थे , वे भगवान शश चिह्न से अंकित चंद्रमा तब आकाश में सुशोभित हो रहे थे ।

युदा सूर्यममु दिवि शुक्रं ज्योतिरधारय : ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ।। **(ऋग्वेद. 6/1/6/5)**
भावार्थ ______ सूर्य आदि लोकों के आकर्षण के साथ सब लोकों का आकर्षण हो रहा है और परमेश्वर से ही इन सब सूर्य आदि लोकों का आकर्षण हो रहा है ।

सत्येनोत्ताभिता भूमि: सूर्योणोतभिता धौ: ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमो अधि श्रित: ।। **(अथर्ववेद. 14/1/1)**
भावार्थ ______ लोक दो प्रकार के है -- एक प्रकाश करने वाले जैसे सूर्य आदि और दूसरे अप्रकाशमान जैसे पृथ्वी चन्द्र आदि परमेश्वर के नियम से प्रकाशक सूर्य आदि लोक प्रकाश्य पृथिवी चन्द्र आदि लोकों को अपने प्रकाश से प्रकाशित करते हैं ।

सत्येनोतभिता भूमि: सूर्योणोतभिता धौ: ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमों अधि श्रित: ।। **(अथर्ववेद. 14/1/2)**
भावार्थ ______ चन्द्रमा शीतलस्वभाव है , सूर्य की किरणें उसके ऊपर गिर कर शीतल हो जाती हैं , और जब वे चन्द्रमा से उलटकर वायु से मिलकर पृथिवी पर पड़ती है , तब शीतलता के कारण पृथिवी के अन्न आदि पदार्थों को पुष्ट करती है । इसी प्रकार सूर्य और चंद्रमा का प्रभाव नक्षत्रों पर होता है

Edit with WPS Office

|

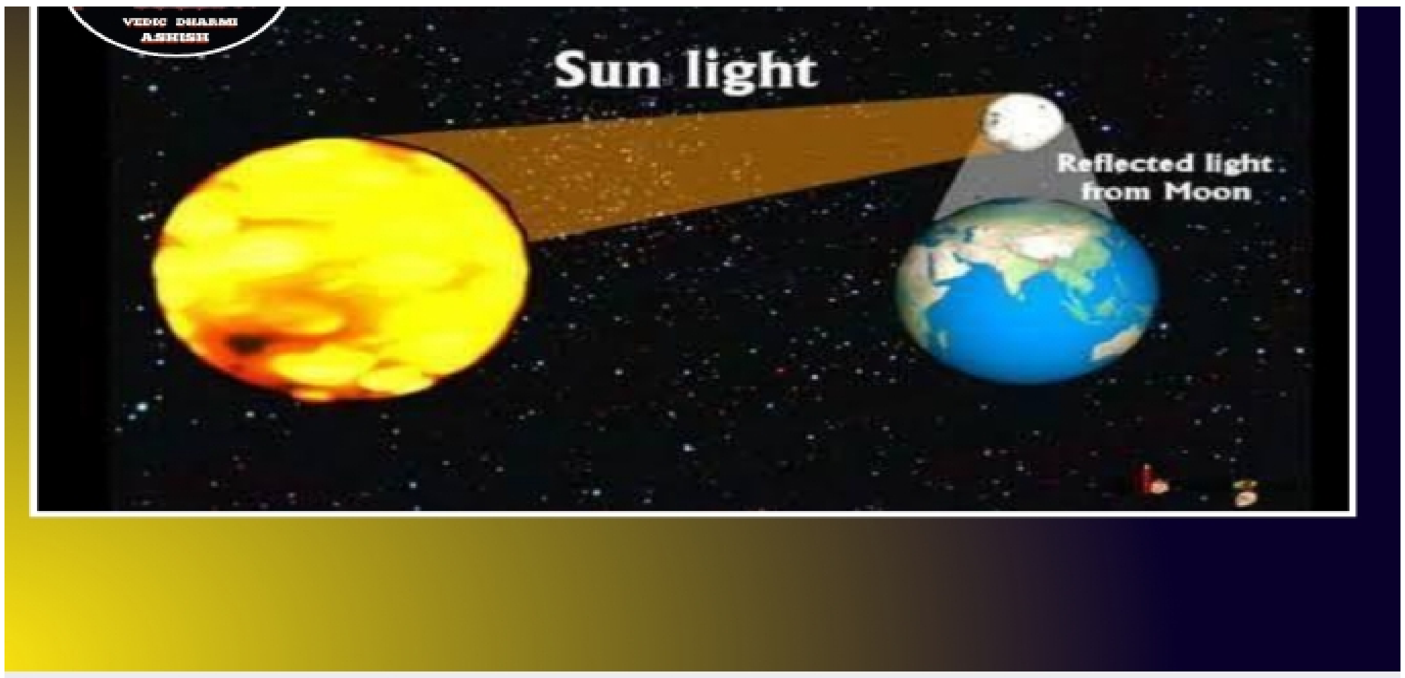

Yajurveda (18/40) Of Uvat & Mahidhar

चन्द्र लोक सूर्य के रश्मि से प्रकाशित होता है।

सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वस्तस्य नक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयो नाम.
स न ऽ इदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा.. (४०)

सूर्य सुषमा दायक हैं. चंद्र देव सूर्य की किरणों से प्रकाश पाते हैं. नक्षत्रों की रश्मियां गंधर्व अप्सराएं हैं. ये चमकीली हैं. ये ब्राह्मणों व क्षत्रियों की रक्षा करें. इन के लिए आहुति अर्पित है. इन के लिए स्नेहपूर्वक आहुति अर्पित है. इन के लिए स्वाहा. (४०)

परम आह्लादकारी एवं सूर्य की रश्मि के प्रकाशवाला चन्द्रमा ही गन्धर्व है। नक्षत्र ही उसकी अप्सराएं हैं। उनका नाम 'भेकुरी' (=भा=प्रभा करनेवाली) है। वह चन्द्रगन्धर्व हमारी इस ब्राह्मण जाति को एवं क्षत्रिय जाति को पाले। उसके लिए यह आहुति है। उन नक्षत्रों के लिए यह आहुति है ॥ ४० ॥

उ० सुषुम्णः सूर्यरश्मिः । यः सुषुम्णः सुयज्ञियः । सूर्यस्येव हि चन्द्रमसो रश्मयः । चन्द्रमा गन्धर्वः तस्य नक्षत्राणि अप्सरसः । भेकुरयो नाम भाः हि नक्षत्राणि

Edit with WPS Office

निरुक्त (२/६) : सूर्य रश्मि से चन्द्रमा प्रकाशित होता है।

अथाप्यस्यैको रश्मिश्चन्द्रमसं प्रति दीप्यते तदेतेनोपेक्षितव्यम् । आदित्यतोऽस्य दीप्तिर्भवतीति–'सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः' (शु० य० १८.४०) इत्यपि निगमो भवति ।

अथापि और भी अस्य इस (सूर्य) की एकः रश्मिः एक किरण चन्द्रमसं प्रति चन्द्रमा में जाकर दीप्यते प्रकाशित होती है तत् इसी कारण एतेन वेदार्थ करने वाले को उपेक्षितव्यम् जान लेना चाहिए। (क्योंकि) आदित्यतः आदित्य (सूर्य) से अस्य इस (चन्द्रमा) का दीप्तिर्भवति प्रकाश होता है । जैसे–'सुषुम्णः सुषुम्ना सूर्यरश्मिः सूर्य की किरण (–विशेष) है चन्द्रमा चन्द्रमा गन्धर्वः गन्धर्व (उस सुषुम्ना को धारण = ग्रहण करने वाला) है' ।

निरुक्त (४/२५): चंद्र में सूर्य के रश्मि जाति है।

अत्र ह गोः सममंसतादित्यरश्मयः स्वं नाम । अपीच्यमपचितम् । अपगतम् । अपिहितम् । अन्तर्हितं वा । अमुत्र चन्द्रमसो गृहे ।

गौः गो (शब्द) व्याख्यातम् (द्वितीय अध्याय के द्वितीय पाद में) व्याख्यायित कर दिया गया है ।

मन्त्रार्थ—अत्र चन्द्रमसः गृहे इस चन्द्रमा के घर (अर्थात् चन्द्रमण्डल) में ह निश्चित रूप से इत्था त्वष्टुः इस सूर्यमण्डल से अपीच्यम् निकल कर गये हुए अथवा पृथक् करके धारण किये हुए गौः (सुषुम्णा नामक) सूर्य किरण के नाम प्रह्लादित होने (के अवस्थान को अमन्वत (दूसरी रश्मियों ने) स्वीकार किया ।

सामवेद (147,915): चंद्र में सूर्य की प्रकाश है।

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्. इत्था चन्द्रमसो गृहे.. (३)

गतिमान चंद्र मंडल में सूर्य का दिव्य तेज है, ऐसा विद्वान् मानते हैं अर्थात् सूर्य के छिप जाने पर उन्हीं के प्रकाश से चंद्रमा प्रकाशित होता है. (३)

ऋग्वेद (1/84/15): चंद्र में सूर्य की प्रकाश है।

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्. इत्था चन्द्रमसो गृहे.. (१५)

इस गतिशील चंद्रमंडल में जो तेज छिपा है, वे सूर्य की किरणें हैं, ऐसा जानो. (१५)

अथर्ववेद(20/41/3): चंद्र में सूर्य की प्रकाश है।

अत्राह गोरमन्वत नाम त्वष्टुरपीच्यम्. इत्था चन्द्रमसो गृहे.. (३)

चंद्र मंडल एक ग्रह है. उस में सूर्य रूपी इंद्र ही अपनी एक किरण में विराजते हैं. (३)

Edit with WPS Office

आचार्य सायण ने अपने ऋग्वेद (१/५०/४) के भाष्य में स्पष्ट लिखते हैं की जिस प्रकार दर्पण पर सूर्य किरण प्रतिफलित होती है उसी प्रकार चंद्रमा में सूर्य किरण का प्रतिफलन द्वारा रात्रि अंधकार का निवारण होता है।

सारी वस्तु के प्रकाशक हो अथवा रात्रि में चन्द्रमा आदि के प्रकाशक हो क्योंकि रात्रि में जलीय चन्द्रमा आदि के बिम्बों में सूर्य की किरणें प्रतिबिम्बित होकर अन्धकार का निवारण उसी प्रकार करती हैं जिस प्रकार द्वार पर स्थित दर्पण के ऊपर गिरी हुई सूर्य की किरणे घर के अन्दर के अन्धकार को दूर कर देती हैं। क्योंकि ऐसा है, अतः तुम विस्तृत एवं सुन्दर अन्तरिक्ष को चारों ओर से प्रकाशित करते हो। अथवा हे सूर्य! अन्तर्यामी होने से सबके प्रेरक परमात्मा! तुम संसार सागर से पार करने वाले हो। अतः तुम सब मुमुक्षुओं द्वारा दृष्टव्य— साक्षात्कार

प्रकाशस्य कर्ता । सर्वस्य वस्तुनः प्रकाशयितेत्यर्थः । यद्वा । चन्द्रादीनां रात्रौ प्रकाशयिता । रात्रौ हि अम्मयेषु चन्द्रादिबिम्बेषु सूर्यकिरणाः प्रतिफलिताः सन्तोऽन्धकार निवारयन्ति यथा द्वारस्थदर्पणोपरि निपतिताः सूर्यरश्मयो गृहान्तर्गतं तमो निवारयन्ति तद्वदित्यर्थः । यस्मादेवं तस्मात् "विश्वं व्याप्तं "रोचनं

काण्व यजुर्वेद (25/67) : आचार्य सायण लिखते हैं की सूर्य जिस से चंद्रमा प्रकाश प्राप्त करता है।

इयँव्वेदिः परो अन्तः पृथिव्या अयँय्यज्ञो भुवनस्य नाभिः ।
अयꣳ सोमो वृष्णो अश्वस्य रेतो ब्रह्मायँव्वाचः परमँव्व्योम ॥ ६७ ॥

इयम् । वेदिः । परः । अन्तः । पृथिव्याः । अयम् । यज्ञः । भुवनस्य । नाभिः ॥
अयम् । सोमः । वृष्णः । अश्वस्य । रेतः । ब्रह्मा । अयम् । वाचः । परमम् । व्योम ॥ ६७ ॥

इयम् आश्वमेधिकी वेदिः, पृथिव्याः परोऽन्तः उत्कृष्टं स्थानम् । अयमेव अश्वमेधो यज्ञः, भुवनस्य भूतजातस्य नाभिः 'णह बन्धने', उत्पादकं कारणम् । अयं सोमः, वृष्णः सेचनसमर्थस्य अश्वस्य आदित्यात्मकस्य, रेतः वीर्यम्, यस्मात् सूर्यसकाशात् चन्द्रमसः तेजःप्राप्तिस्तत इत्यर्थः ।

१. तदित्यादिप्रत्नम् ।

ऋग्वेद (7/81/2) सायणभाष्य : सूर्य के प्रकाश से ही चंद्र जैसे अन्य नक्षत्र भी चमकते हैं।

"सूर्यः सर्वस्य प्रेरक आदित्यः "उस्रियाः रश्मीन् "सचा सह युगपदेव "उत् "सृजते उद्गमयति । तथा "उद्यत् उद्गच्छत् प्रादुर्भवत् "नक्षत्रं नभसि दृश्यमानं ग्रहनक्षत्रादिकम् अर्चिवत् दीप्तिमत् करोति । सौरेण तेजसा हि नक्तं चन्द्रप्रभृतीनि नक्षत्राणि भासन्ते।

Edit with WPS Office

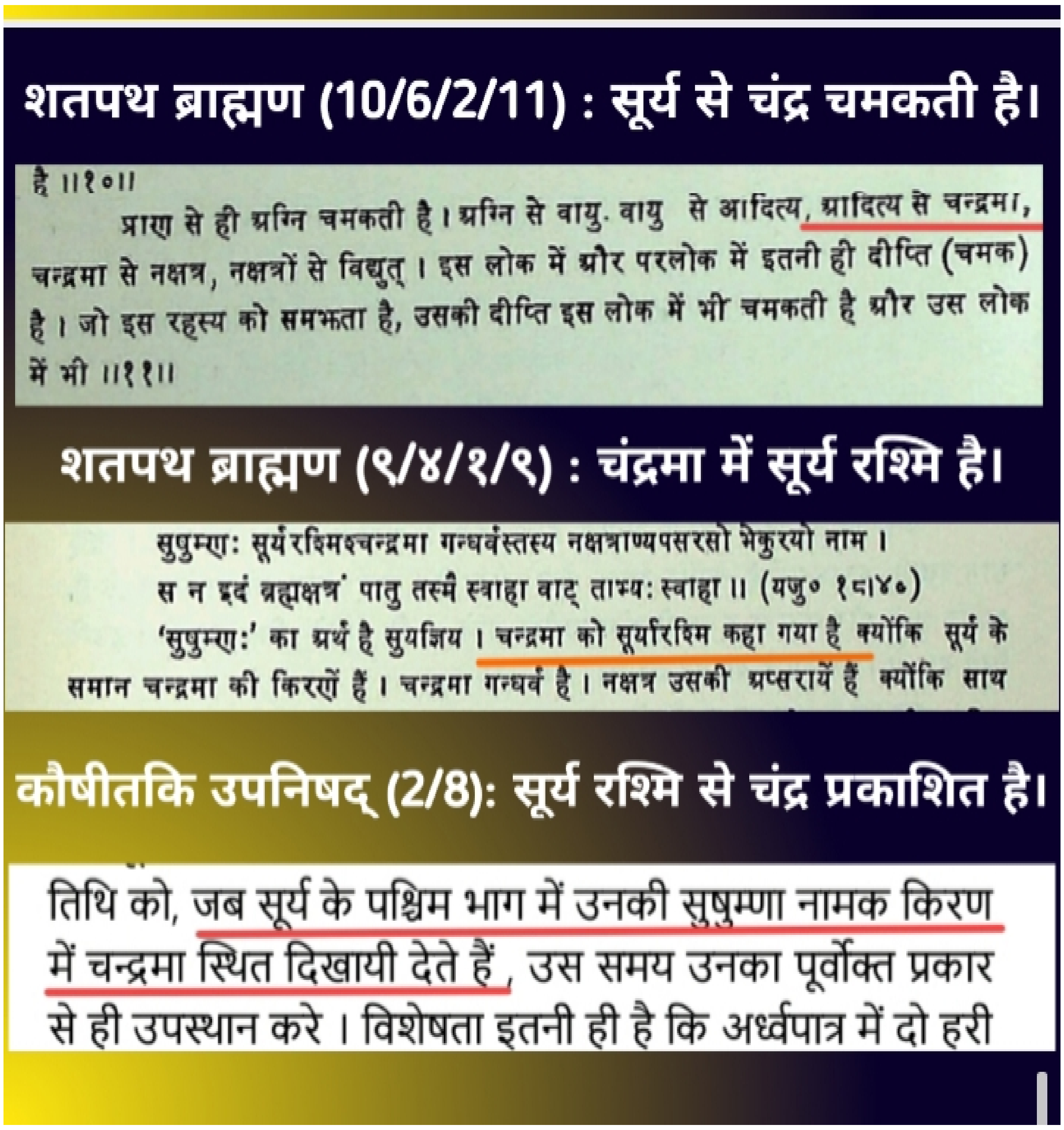

5.___ विद्युत बनाने की विधा ______

इममु त्यमथर्ववदग्नि मन्थन्ति वेधसं: ।
यमंड:कूयन्तमानयत्रमूर श्याव्याभ्य ।। (ऋग्वेद. 6/15/17)

भावार्थ ______ जो विद्वान लोग भूमि , अन्तरिक्ष , वायु , आकाश , तथा सूर्य आदि से मंथन करके विधुत को निकालते हैं , वह अनेक कार्य को सिद्ध करने में समर्थ होते हैं ।

6.___ यान/vehide बनाने की प्रेरणा ______

Edit with WPS Office

हरी नु क इन्द्रंस्य योजमायै सूक्तेन वचंसा नवेन ।
मो षु त्वामत्र बहवो हि विप्रा नि रींरमन्यजंमानासी अन्ये ।। (ऋग्वेद. 2/18/3)

भावार्थ ______ जो बिजली से रथ (यान) को नहीं सिद्ध करते हैं सर्वत्र ना रम (घूम) सकते हैं और ना दूसरों को (रमा) घुमा सकते हैं ।

तषु यदत्रा तृषुणा ववक्ष तृषु द्रत कृणुते यहो अग्नि: ।
वातस्यमेलिंगसचते निजूवत्राशु न वाजयते हिन्वे अर्वा ।। (ऋग्वेद. 4/7/11)

भावार्थ ______ जो मनुष्य बिजली और वायु आदि के योग की विधा को जाने तो वह दूत और घोड़े के सदृश दूर वाहन और समाचार को पहुंचा सकते हैं ।

अनु त्रिशोक: शातमव हाणिर्न कुटसेराथो यो असत ससवान ।। (यजुर्वेद. 9/8)

भावार्थ ______ तीन प्रकार के प्रकाश से प्रकाशित (विधुत , सूर्य , अग्नि) रथ होवे उनमें सौ श्रेष्ठ पुरुषों को लगें तथा ले जावे ।

त्रयं पवयो मधुवाहनें रथे सोमंस्य वेनामनु विश्व इद्रिंदु: ।
त्रय: स्कभितासं आरभे त्रिर्नक्त याथस्त्रिवीश्विना दिवां ।। (ऋग्वेद. 1/34/2)

भावार्थ ______ भूमि समुद्र और अन्तरिक्ष में जाने की इच्छा करने वाले मनुष्यों को योग्य है कि तीन तीन चक्र युक्त अग्नि के घर और स्तभंयुक्त यान को रचकर उसमें बैठ कर एक दिन - रात में भूगोल समुद्र अन्तरिक्ष मार्ग से तीन तीन बार जाने को समर्थ हो सकें उस यान में इस प्रकार के खंभ रचने चाहिए कि जिसमें कलावयव अर्थात काष्ठ लोष्ठ आदि खंभों के अवयव स्थित हो फिर वहां अग्नि , जल का संप्रयोग कर चलावे । क्योंकि इनके बिना कोई मनुष्य शीघ्र भूमि , समुद्र , अन्तरिक्ष में जाने आने को समर्थ नहीं हो सकता । इससे इनकी सिद्धि के लिये सब मनुष्यों को बड़े बड़े यत्र अवश्य

Edit with WPS Office

करनें चाहिए ।

आ नासत्या त्रिभिरेकाद्शैरिह् देवेभियात मधुपेयंमश्विना ।
प्रायुस्तारिष्ट नी रपासि मृक्षत् सेधंत भवंत सचाभुवां ।। (ऋग्वेद. 1/34/11)

भावार्थ ______ जब मनुष्य ऐसे यानों में बैठ और उनको चलाते हैं तब तीन दिन और तीन रात्रियों में सुख से समुद्र के पार तथा ग्यारह दिन और ग्यारह रात्रियों में ब्रह्मांड के चारों ओर जाने को समर्थ हो सकते हैं इसी प्रकार करते हुए विद्वान लोग सुख युक्त पूर्ण आयु को प्राप्त हो दुखों को दूर और शत्रुओं को जीतकर चक्रवर्ती राज्य भोगने वाले होते हैं ।

7. ___ विमान आदि बनाने की प्रेरणा ______

आ यस्मिन्हस्ते नर्ना मिमिक्षुर रथें हिरण्ययें रथेष्ठा: ।
आ रश्मयो गभस्तयो: स्थूरयोराध्वत्रश्वासो वृषणों युजाना: ।। (ऋग्वेद. 6/29/2)

भावार्थ ______ जो राजा शस्त्र और अस्त्र के जानने वाले , श्रेष्ठ धार्मिक , शूर तथा विमान आदि वाहनों के बनाने वाले शिल्पियों और बिजली आदि की विधा को जानने वाले विद्वानों का सत्कार करके रक्षा करता है , उसी के सूर्य के किरणों के समान यश बढ़ते हैं ।

ऋग्वेद. 1/164/48 , 1/34/2 , 1/34/9 **ऐसे अनेकों मंत्र में विमान विद्या का वर्णन हमें मिलता है ।**

द्वादशं प्रधयंश्वक्रमेक त्रीणि नभ्यांनि क उ तच्चिंकेत ।
तस्मिंन्त्साकंत्रिंशता न शङ्कवोऽपिता : षष्टिर्न चंलाचलासं । (ऋग्वेद.1/164/48)

भावार्थ ______ कोई विद्वान जैसे शरीर रचना को जानते हैं वैसे ही विमान आदि यानों को बनाना जानते हैं । जब जल ,स्थल और आकाश में शीघ्र जाने के लिए रथों को बनाने की इच्छा होती है , तब उनमें अनेक जल अग्नि के चक्कर , अनेक बंधन , अनेक धारण , और कीलें रचनी चाहिये , ऐसा

Edit with WPS Office

करने से चाही हुई सिद्धि होती हैं ।

ऋग्वेद. 1/34/2 , 1/34/9 , यजुर्वेद अध्याय 21 , मंत्र 6 ,4 ,34 ,33 ,73 ऐसे अनेकों मंत्र में विमान विद्या का वर्णन हमें मिलता है ।

8. ___ बिना ईंधन के विमान बनाने की प्रेरणा ______

अनेनो वों मरुतो यामो अस्वनश्र्वश्रिवमजत्यरंथी: ।
अनवसो अनभीशू रंजस्तूवि रोदंसी पथ्यां याति साधन् ।। (ऋग्वेद. 6/66/7)

भावार्थ ______ हे मरुतो ! वीर सैनिको ! तुम्हारा यान , जहाज निविघृ गतिकारी हो । तुम्हारा वह यान अणुशक्ति से चालित हो , जो बिना घोड़ा के ,जो बिना सारथी के , बिना अन्न के , बिना लकड़ी , कोयला , या पैट्रोल के , बिना रासो के , बिना लगाम के ही भूमि पर और आकाश में चल सकें , जा सकें , गतियों को साधता हुआ विशेष रुप से और विविध प्रकार से गति कर सकें ।

प्राचीन विमान विद्या का ऐतिहासिक प्रमाण :
प्राचीन भारतीय महाकाव्य , जैसे -- रामायण और महाभारत में , विमानों का उल्लेख मिलता है । विशेष रूप से रामायण में , पुष्पक विमान का वर्णन किया गया है , जिसका प्रयोग रावण द्वारा सीता का अपहरण करने के लिए और बाद में भगवान राम द्वारा अयोध्या लौटने के लिए किया गया है । महाभारत में भी दिव्य विमान " सौभ „ का उल्लेख आता है , जो माया द्वारा निर्मित था और जिसका उपयोग शाल्व ने किया था । यह विमान किसी आधुनिक यंत्र जैसा प्रतीत होता है , जो एक स्थान से दूसरे स्थान तक उड़ान भर सकता था ।

महर्षि भारद्वाज और बृहद विमान शास्त्र महर्षि भारद्वाज द्वारा रचित बृहद विमान शास्त्र में विमान निर्माण की प्रक्रिया को विस्तार से समझाया गया है

Edit with WPS Office

। यंत्र सर्वस्व नामक ग्रंथ में उन्होंने 500 से अधिक प्रकार के विमानों को बनाने की विधियों का वर्णन किया गया है । यह ग्रन्थ प्राचीन भारतीय विज्ञान की एक अद्भुत उपलब्धि है , जिसमें वायुयान निर्माण के विभिन्न चरणों , उनके यांत्रिक पहलुओं , और उनकी उड़ान तकनीकों पर चर्चा की गई है ।

गयाचिंतामणि और भोजप्रबंध विमान विद्या का उल्लेख अन्य प्राचीन ग्रंथों में भी मिलता है , जैसे गयाचितांमणि और भोजप्रबंध । इन ग्रंथों में राजा भोज के समय में विमानों के प्रयोगं और उनकी तकनीकी संरचनाओं का उल्लेख किया गया है । यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय विज्ञान में विमान विद्या का गहरा अध्ययन और अभ्यास था । समरांगणसूत्रधार , राजा भोज द्वारा रचित एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रंथ है , जिसमें विमान निर्माण की विधियों का उल्लेख है । इसमें विमान के संचालन , उसकी स्थिरता , और उसके निमार्ण में उपयोग होने वाली धातुओं और सामग्री का विस्तार से वर्णन किया गया है । यह ग्रन्थ विमान विद्या पर एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करता है और यह बताता है कि प्राचीन भारत में यांत्रिक विज्ञान का कितना विकास हुआ है ।

ऋग्वेद भाष्य भूमिका : ___ महर्षि दयानंद सरस्वती जी द्वारा रचित ऋग्वेद भाष्य भूमिका में भी विमान विद्या का उल्लेख मिलता है । उन्होंने वैदिक विज्ञान को पुनः जागृत करने का प्रयास किया और बताया कि ऋग्वेद में छिपे हुए ज्ञान में विमान विद्या का भी संदर्भ है । उनके अनुसार , वेदों में वर्णित यांत्रिक विज्ञान का सही तरीक़े से अध्ययन किया जाए तो विमान विद्या और अन्य प्राचीन तकनीकों को फिर से पुनर्जीवित किया जा सकता है ।
प्राचीन भारत साहित्य और ग्रंथो में विमान विद्या का उल्लेख दर्शाता है कि प्राचीन भारत में विज्ञान और तकनीकी विकास का एक उन्नत स्थर था । रामायण , महाभारत , बृहद विमान शास्त्र , समरांगणसूत्रधार , ऋग्वेद भाष्य भूमिका जैसे ग्रंथ इस बात के प्रमाण है कि भारतीय मुनियों ने विमान निर्माण की तकनीक पर गहराई से शोध किया था । इस ज्ञान का अध्ययन

Edit with WPS Office

और अनुसरण करके , आधुनिक विज्ञान के कई नए आयामों की खोज की जा सकती है ।

9.___ Telephone /सूचना बनाने का विज्ञान ______

प्रोथदक्लो न यवसेविष्यन्यदा मह: सिंबुरणोध्वेस्थात ।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध रस ते ब्रंजन कृष्णमस्ति ।।
(ऋग्वेद. 7/3/2)
भावार्थ ______ जब मनुष्य अग्रि यान से गमन और विधुत से सूचना को ग्रहण करें तब वह शीघ्र कार्य को सिद्ध कर सकते हैं ।

10. ___ अगस्त्य संहिता में इलेक्ट्रॉनिक सेल बनाने की विधि ______

अगस्त्य संहिता. 2/56 ______
भावार्थ ______ इसका तात्पर्य था , एक मिट्टी का पात्र लें , उसमें ताम्र पट्टिका डालें तथा शिखिग्रीवा डालें , फिर बीच में गीली काष्ठ पांसु लगायें , ऊपर पारा तथा दस्त लोष्ट डालें , फिर तारों को मिलाएंगे तो , उससे मित्रा-वरुण शक्ति का उदय होगा ।

11. ___ अगस्त्य संहिता में आक्सीजन और हाईड्रोजन बनाने की विधि ______

अगस्त्य संहिता. 3/23 ______
भावार्थ ______ महर्षि अगस्त्य कहते हैं सौ कुंभों की शक्ति का पानी पर प्रयोग करेंगे , तो पानी अपने रुप को बदल कर प्राण वायु तथा उदान वायु में परिवर्तित हो जाएगा । उदान वायु को वायु प्रतिबन्धक वस्त्र में रोका जाए तो यह विमान विद्या में काम आता है ।

Edit with WPS Office

12.___ भाप इंजन आदि बनाने की प्रेरणा ______

ऋग्वेद. 1/34/10 ______

जब यानों में जल और अग्नि को प्रदीप्त करके चलाते हैं तब ये यान और स्थानों को शीघ्र प्राप्त कराते हैं उनमें जल और वाष्प के निकलने का एक ऐसा स्थान रच लेवे कि जिसमें होकर वाष्प के निकलने से वेग की वृद्धि होवे । इस विधा का जानने वाला ही अच्छे प्रकार सुखों को प्राप्त होता है ।

13.___ वेदों में गणित विधा (19digit) तक जोड़ना , घटाना ,गुणा

यजुर्वेद. 18/24

भावार्थ ______ इस मंत्र में (यज्ञेन) इस पद से जोड़ना - घटाना लिये जाते हैं , क्योंकि जो यज धातु का सङ्गतिकरण अर्थ है , उससे सङ्ग कर देना अर्थात किसी संख्या को किसी संख्या से योग कर देना वा यज धातु का जो दान अर्थ है , उससे ऐसी सम्भावना करनी चाहिए किसी संख्या का दान अर्थात व्यय करना निकाल -डालना यही अन्तर है । इस प्रकार गुणन , भाग ,वर्ग , वर्गमूल ,घन , घनमूल , भागजाति ,प्रभागजाति आदि जो गणित के भेद है , वे योग और अन्तर से ही उत्पन्न होते हैं , क्योंकि किसी संख्या को किसी संख्या से एक बार मिला दें तो योग कहाता है । जैसे __ 2+4+=6 अर्थात 2 में 4 जोड़े तो 6 होते हैं । ऐसे यदि अनेक बार संख्या में संख्या जोड़े तो उसको गुणन कहते हैं । जैसे अर्थात 2×4=8 , 2 को 4 बार अलग अलग जोड़े वा 2 से 4 चार से गुणों तो 8 होते हैं । ऐसे ही चार को चार को चौगुना कर दिया तो 4 का वर्ग 16 हुए , ऐसे ही अन्तर से भाग वर्गमूल , घनमूल , आदि निष्पन्न होते हैं अर्थात किसी संख्या को जोड़ देवें । वा किसी प्रकारान्तर से घटा देवें । इसी योग वा वियोग से बुद्धिमानों की यथामति कल्पना से व्यक्त , अव्यक्त , अंकगणित और बीजगणित आदि

Edit with WPS Office

समस्त गणित क्रिया उत्पन्न होती है । इस कारण इस मन्त्र में दो के योग से उत्तरोत्तर संख्या वा दो के वियोग से पूर्व पूर्व संख्या अच्छे प्रकार दिखलाई है , वैसे गुणन का भी कुछ प्रकार दिखलाया है , यह जानना चाहिए ।

यजुर्वेद के मंत्रों में बड़ी बड़ी संख्या को जोड़ना, घटाना , गुणा करना , भाग , वर्गमूल , घनमूल आदि गणित के सभी अंगों का ज्ञान दिया गया है ।

यजुर्वेद. 18/25 ______

भावार्थ ______ पिछले मन्त्र में एक संख्या को लेकर दो के योग वियोग से विषम संख्या कहीं । इससे पूर्व मन्त्र में क्रम से आई हुई एक , दो , तीन संख्या को छोड़ इस मन्त्र में चारि के योग वा वियोग से चौथी संख्या को लेकर सम संख्या प्रतिपादन किया । इन दोनों मन्त्रों से विषम संख्या और सम संख्याओं का भेद जान के बुद्धि के अनुकूल कल्पना से सब गणित विधा जाननी चाहिए ।

14.___ तेल तथा प्राकृतिक गैस का वर्णन ______

पृथिव्या: सधस्थादग्नि पुरीष्यमाड्गिरस्वत् खंनामि ।। (यजुर्वेद. 11/28)

भावार्थ ______ यजुर्वेद में कहा गया है कि पुरीष्य अग्नि को पृथ्वी के भीतर से निकालता हूं तेल तथा प्राकृतिक गैस ही पुरीष्य अग्नि है ।

वेदों में ज्ञान और विज्ञान का अथाह भंडार सूत्रों और सूक्ष्म रूप में भरा हुआ है । ये प्राचीन ग्रंथ सिर्फ आध्यात्मिक नहीं , बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी अत्यधिक समृद्ध है । कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत किए गए हैं , जो इस गहरे ज्ञान की झलक दिखाते हैं । परंतु इनकी पूर्ण समझ और व्यापक दृष्टिकोण पानें के लिए पाठकों को वेदों का गंभीर अध्ययन करने की आवश्यकता है , जिससे वे इस अनमोल धरोहर का सच्चा लाभ उठा सकें ।

Edit with WPS Office

आक्षेप-१ : वेद में पृथ्वी को दृढ़ (अचल) बताया गया है?

Rigveda (2/12/2)

यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्रकुपितॉं अरम्णात्.
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात्स जनास इन्द्रः.. (२)

हे मनुष्यो! जिसने चंचल पृथ्वी को दृढ़ किया, क्रोधित पर्वतों को नियमित किया, विशाल अंतरिक्ष को बनाया एवं आकाश को स्थिर किया, वही इंद्र हैं. (२)

Yajurveda (32/6)

येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः.
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम.. (६)

यजुर्वेद - ३६५

उत्तरार्ध — बत्तीसवां अध्याय

उस परम पुरुष ने स्वर्ग को उग्र बनाया. उस ने पृथ्वी को दृढ़ बनाया. उस ने स्वर्ग को स्थिर बनाया. उस ने अंतरिक्ष में शोभा रची. हम (उन के अलावा) अब किस देव के लिए हवि का विधान करें ? (६)

उत्तर: दृढ़ शब्द का अर्थ ठोस होता है अचल नहीं।

Ashtadhyayi (7/2/20)

BK. VII. CH. II. §. 21] IRREGULAR PARTICIPLES. 1369

quotes Haradatta and Mâdhava, धृष forms participles in those senses, when option is allowed, as, धृष्टं or धर्षितं, प्रधृष्टः or प्रधर्षितः not meaning 'impudent'.

दृढः स्थूलबलयोः ॥ २० ॥ पदानि ॥ दृढः, स्थूल, बलयोः, ॥

वृत्तिः ॥ दृढ इति निपात्यते स्थूले बलवति चार्थे ॥

20. The irregularly formed Past Participle दृढ means 'stout' and 'strong'.

It is derived from दृह with क्त affix. In other senses, the forms are [illegible] ॥ There are two roots one दृह (I. 769) without nasal, and the

महर्षि पाणिनि के संस्कृत व्याकरण ग्रंथ अष्टाध्यायी (७/२/२०) में लिखा है "दृढः स्थूलबलयोः" अर्थात- दृढ़ का अर्थ ठोस और मजबूत होता है।

Edit with WPS Office

आचार्य सायण ने भी ऋग्वेद (2/12/2) में दृढ़ का अर्थ पाषाण आदि द्वारा चलती हुई पृथ्वी का ठोस बनना किया है।

हे जनाः य इंद्रो व्यथमानां चलंतीं पृथिवीमदृंहत । शर्करादिभिर्दृढामकरोत् ॥ दृह दृहि वृद्धौ ॥ यश्च प्रकुपितान् इतस्ततश्चलितान्पक्षयुक्तान्पर्वतानरम्णात्। नियमितवान्। स्वे स्वे

और विज्ञान के अनुसार पृथ्वी गति भी कर रही है साथ में ठोस भी है।

वाला होना) है । **ताम् दिशः अनु वातः समवहत** उस (भूमि) को (सुखाने के लिए) चारो दिशाओं से (प्रजापति के सङ्कल्प से) वायु बहने लगा । **तां शर्कराभिः अदृंहत्** उस (शुष्क हुई भूमि) को (प्रजापति ने) शर्करा (= पाषाण के छोटे-छोटे टुकड़ों) से दृढ़ बनाया । तत्पश्चात् प्रजापति ने **नः वै शं भूयात्** हम लोगों का कल्याण होवे–इस प्रकार

तैत्तिरीय ब्राह्मण (1/1/3/6-7) में भी लिखा है की प्रजापति ने पृथ्वी को पाषाण आदि द्वारा दृढ़ अर्थात ठोस बनाए। जैसा कि विज्ञान के अनुसार पृथ्वी में लावा ठंडा होने से पाषाण आदि का निर्माण होता है उसी से पृथ्वी ठोस बनती है।

आक्षेप-२ : वेद में पृथ्वी को निर्ऋति कहा गया है जिसका अर्थ गतिहीन होता है?

Rigveda (1/164/32)

अधिदैवत—**यः** जो (मेघ) **ईम्** जल को **चकार** बरसाता है **सः** वह (मेघ) **अस्य** इस (वृष्टितत्त्व) को **न वेद** नहीं जानता । **यः** जो इन्द्र **ईम्** जल को **ददर्श** देखता (जानता) है **तस्मात्** उससे **हिरुक्** छिपा हुआ होता है । **सः** वह (मेघ) **मातुः** माता (अन्तरिक्ष) के **योना अन्तः** स्थान-विशेष के भीतर **परिवीतः** वायु से परिवेष्टित हुआ **बहुप्रजाः** बहुत धाराओं को पैदा करने वाला **निर्ऋतिम्** पृथिवी में **आविवेश** प्रविष्ट हो जाता है ।

ऋषि यास्क के निघण्टु शब्दकोश (१/१) में पृथ्वी का २१ नाम दिया गया है जिसमें से एक नाम "निर्ऋति" भी है।

Nighantu (1/1)

गौः । ग्मा । ज्मा । क्ष्मा । क्षा । क्षमा (१) । क्षोणिः (२) । क्षितिः । अवनिः । उर्वी । पृथ्वी । मही । रिपः (३) । अदितिः । इळा । निर्ऋतिः । भूः । भूमिः । पूषा । गातुः । गोत्रा । इत्येकविंशतिः पृथिवीनामधेयानि ॥ १ ॥

Edit with WPS Office

उत्तर: "निर्ऋति" का अर्थ नियम में गति करना भी होता है।

Nirukta (2/7) By Acharya Skanda

तत्र तेषु पृथिवीनामसु निर्ऋतिः पठ्यते। सा च प्रलयाधिदेवता तुल्यश्रुतित्वात् पृथिव्या सन्दिह्यते। तयोः पृथिवीन्द्रियप्रलयदेवतयोर्यो विभागोऽर्थभेदाश्रयस्तं दर्शयति पृथिवी निर्ऋतिः, निरमणात् नियमेन रमणात्। निश्चलत्वेनावस्थानादित्यर्थः। रमन्ते वाऽस्यां भूतानीति। ऋच्छतेः कृच्छ्रं दुःखं तदापत्तिरितरा मृत्योरधिदेवता। अस्याः पृथिव्या वा एषा निर्वाचिका ऋक्।

आचार्य स्कन्द स्वामी ने अपने निरुक्त (२/७) के भाष्य में निर्ऋति का निर्वाचन "निरमणात्" का अर्थ करते हुए लिखते है "नियमेन रमणात्" अर्थात जो नियम में रहते हुए गति करें उसको निर्ऋति कहा जाता है।

रमण ^१ संज्ञा पुं० [सं०] आनंदोत्पादक क्रिया । विलास । क्रिड़ा । कोलि ।

२. मैथुन ।

३. गमन । घूमना । विचरण ।

४. पति

रमण का अर्थ गमन करना होता है।

आक्षेप-३: अथर्ववेद के मंत्रों में पृथ्वी को स्थिर बताया गया है?

Atharvaveda (6/44/1)

तिष्ठाद्रोगः अयं तव

अस्थाद् द्यौरस्थात्पृथिव्यस्थाद्विश्वमिदं जगत्।
अस्थुर्वृक्षा ऊर्ध्वस्वप्नास्तिष्ठाद्रोगो अयं तव॥ १ ॥

१. द्यौः अस्थात्-ग्रह-नक्षत्रमण्डलोपेत यह द्युलोक स्थित है, नीचे गिरता नहीं। पृथिवी अस्थात्-यह सर्वाधारभूत पृथिवी स्थित है। इदं विश्वं जगत् अस्थात्-यह परिदृश्यमान जङ्गम प्राणिसमूह स्थित है। २. ये ऊर्ध्वस्वप्नः-खड़े-खड़े ही सोते हुए वृक्षाः अस्थुः-वृक्ष भी स्थित हैं। अयं तव रोगः-यह तेरा रोग भी तिष्ठात्-निवृत्त गतिवाला होता जाए (ष्ठा गतिनिवृत्तौ) न बहे, न बढ़े अपितु निवृत्त हो जाए।

Atharvaveda (6/77/1)

[७७ - प्रतिष्ठापन सूक्त]

[ऋषि - कबन्ध । देवता - जातवेदा (अग्नि) । छन्द - अनुष्टुप् ।]

१५२६. अस्थाद् द्यौरस्थात् पृथिव्यस्थाद् विश्वमिदं जगत्।
आस्थाने पर्वता अस्थु स्थाम्न्यश्वाँ अतिष्ठिपम् ॥१ ॥

द्युलोक, भूलोक एवं दोनों के मध्य सम्पूर्ण जगत् अपने-अपने स्थान एवं मर्यादा में स्थिर हैं, पर्वत भी अपने-अपने स्थान में स्थिर हैं, वैसे ही हम स्थाम्नि(अपनी गमनशील शक्तियों को आत्मशक्ति) द्वारा मर्यादा में स्थिर करते हैं ॥१ ॥

१६

Edit with WPS Office

उत्तर: इन दिनों मंत्रों में पृथ्वी आदि लोकों का नियम में स्थित होने का वर्णन है अर्थात जैसे यह सारे प्राकृतिक वस्तुएं अपने अपने मर्यादा उलंघन नहीं करते तथा ईश्वर के नियंत्रण में स्थित है उसी प्रकार हमे अपने रोग को निवृत कर उनको नियंत्रित करना चाहिए और वैसे ही हम अपने अश्व रूपी इन्द्रियों को भी नियंत्रित रखना चाहिए।

Atharvaveda (6/88/1)

ध्रुव राजा

ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं जगत्।
ध्रुवासः पर्वता इमे ध्रुवो राजा विशामयम्॥ १॥

१. जैसे **द्यौः**-द्युलोक **ध्रुवा**-स्थिर है और **पृथिवी ध्रुवा**-पृथिवी स्थिर है। द्यावापृथिवी के अन्दर वर्तमान **इदम्**-यह **विश्वं जगत्**-सब संसार **ध्रुवम्**-स्थिर दीखता है और वहाँ के **इमे**-ये **पर्वताः ध्रुवासः**-पर्वत-जैसे ध्रुव हैं, उसी प्रकार **अयम्**-यह **विशाम्**-प्रजाओं का **राजा**-राजा भी **ध्रुवः**-स्थिर हो। राजा कभी भी सन्मार्ग से विचलित होनेवाला न हो।

भावार्थ—प्रजापालक राजा वही होता है जो कर्त्तव्य-मार्ग पर पर्वत के समान स्थिर होकर रहता है।

उदाहरण के लिए अथर्ववेद में एक और मंत्र में यह भी लिखा है की जैसे पृथ्वी आदि लोक स्थिर है वैसे ही राजा भी स्थिर रहें अब यहां स्थिर का अर्थ अगर गतिहीन से लेंगे तो क्या राजा हिलेगा नहीं?

इसीसे ही स्पष्ट पता चल जाता है की पृथ्वी आदि स्थिर का अर्थ यही होगा की वह सब अपने अपने मर्यादाओं में स्थित है वैसे ही राजा भी अपने मर्यादाओं में स्थिर रहें।

आक्षेप-४: वेदों में पृथ्वी को "ध्रुव" कहा गया जिसका अर्थ स्थिर होता है ?

Atharvaveda (12/1/17)

विश्वस्वं मातरमोषधीनां ध्रुवां भूमिं पृथिवीं धर्मणा धृताम्।
शिवां स्योनामनु चरेम विश्वहा॥ १७॥

१. **विश्वस्वम्**-(सुः) सम्पूर्ण धनों को उत्पन्न करनेवाली, **ओषधीनां मातरम्**-ओषधियों की मातृभूत **ध्रुवाम्**-मर्यादा में स्थित, **पृथिवीम्**-अतिशयेन विस्तारवाली **भूमिम्**-इस भूमि पर **विश्वहा**-सदा **अनुचरम्**-अनुकूलता से विचरण करें। यह पृथिवी इतनी विशाल है कि यहाँ परस्पर संघर्ष की आवश्यकता ही नहीं। २. इस पृथिवी पर हम विचरण करें जोकि **धर्मणा**

उत्तर: इस मंत्र-१७ के अगले ही मंत्र में पृथ्वी को तीव्र गतिवाली कहा गया है अर्थात मंत्र-१७ में ध्रुव शब्द अचल के लिए नहीं आया है वल्कि नियम में स्थिर रहकर अपने कक्ष में गति करने के अर्थ में आया है। अथर्ववेद (६/८८/१) में भी राजा को पृथ्वी जैसे ध्रुव अर्थात मर्यादा में कार्य करने को कहा गया है इससे यहां ध्रुव का अर्थ अचल सिद्ध नहीं होता।

Atharvaveda (12/1/18): पृथ्वी की गति तीव्र है।

५१२ १२.१.१९ अथर्ववेदभाष्यम्

बभूविथ-तू सचमुच विशाल है। **महान् ते वेगः**-तेरा वेग महान् है—तू तीव्र गतिवाली है। **एजथुः वेपथुः**-तेरा हिलना-डुलना भी महान् है—कम्प (भूकम्प) अति प्रबल है। **महान् इन्द्रः**-पूजनीय परमैश्वर्यशाली प्रभु **अप्रमादं त्वा रक्षति**-प्रमादरहित होकर तेरा रक्षण कर रहे हैं। २. हे भूमे! **सा**-वह तू **नः प्रोचयः**-हमें दीप्त जीवनवाला बना। **हिरण्यस्य इव**-स्वर्ण की तरह **संदृशि**-दिखनेवाली—चमकती हुई दीप्त भूमे! तू ऐसी कृपा कर कि **कश्चन**-कोई भी **नः**-हमसे **मा द्विक्षत**-द्वेष न करे।

Edit with WPS Office

छन्दोग्य ब्राह्मण (1/2/7) : कन्या पतिकुल में ध्रुव (स्थिर) रहें।

ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी
ध्रुवँ विश्वमिदं जगत् ।
ध्रुवासः पर्वता इमे
ध्रुवा स्त्री पतिकुले इयम् ७

छान्दोग्य ब्राह्मण में भी लिखा है की जैसे पृथ्वी आदि लोक ध्रुव अर्थात् स्थिर हैं वैसे ही स्त्री भी अपने पतिकुल में ध्रुव अर्थात् स्थिर रहें अब अगर यहां ध्रुव का अर्थ अचल (static) लेंगे तो क्या स्त्री अपने पतिकुल में रहकर हिलेगी डुलेगी नहीं? तो वह स्त्री घर का कार्य कैसे करेगी?

इसलिए ध्रुव का अर्थ अचल लेना मूर्खतापूर्ण होगा। इसलिए यहां ध्रुव का अर्थ होगा अपने अपने मर्यादाओं में स्तित रहकर कार्य करना जैसे पृथ्वी आदि लोक ईश्वर के नियम में स्थित रहकर अपने अपने कार्य कर रहें हैं।

इसी प्रकार ऋग्वेद (10/173/4) में राजा को भी पृथ्वी आदि के तरह अविचल होने को कहा है।

ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वता इमे.
ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम्.. (४)

जिस प्रकार द्युलोक, धरती, ये पर्वत एवं सारा विश्व ध्रुव है, उसी प्रकार प्रजाओं के बीच यह राजा भी अविचल रहे. (४)

Rigveda (3/30/4)

तव । द्यावापृथिवी इति । पर्वतासः । अनु । व्रताय । निमिताऽइव । तस्थुः ॥४

हे इन्द्र "त्वम् "एकः असहाय एव "अच्युतानि च्युतिरहितानि दृढमूलान्यपि तव प्रतिपक्षभूतानि रक्षांसि "च्यावयन् स्वस्वस्थानात् पातयन् तथा "वृत्रा वृत्राणि पापानि "जिघ्नमानः हिंसन् "चरसि "हि "स्म वर्तसे खलु। किंच एवंविधसामर्थ्योपेतस्य "तव "व्रताय कर्मणे आज्ञायै द्यावापृथिव्यौ "पर्वतासः पर्वताश्च "निमितेव निखाता निश्चला इव "अनु तस्थुः अनुकूलास्तिष्ठन्ति ।। स्म । चादित्वादनुदात्तः । च्यावयन् । 'च्युङ् गतौ ' इत्यस्य ण्यन्तस्य शतरि रूपम् । णिच्स्वरः । चरसि । चर गतिभक्षणयोः । हियोगादनिघातः । जिघ्नमानः । 'हन हिंसागत्योः' इत्यस्य 'घञर्थे कविधानम् ' इति कः । तस्य 'छन्दस्युभयथा' इति सार्वधातुकत्वाच्छप् । तस्य श्लुः । 'बहुलं छन्दसि' इत्यभ्यासस्येत्वम् । हन्तीति जिघ्नः । आचारार्थे क्विप् । अस्मात्ताच्छील्यार्थे चानश् । शप् । व्यत्ययेनाद्युदात्तत्वम् । द्यावापृथिवी । देवताद्वन्द्वे च ' इत्युभयपदप्रकृतिस्वरत्वम् ।। निमितेव । डुमिञ् प्रक्षेपणे' इत्यस्य कर्मणि निष्ठा । ' गतिरनन्तरः' इति गतेः प्रकृतिस्वरत्वम् । 'सुपां सुलुक्' इति सुपो डादेशः। 'इवेन

आचार्य सायण ने यहां पृथ्वी आदि लोकों को परमात्मा के आज्ञा के द्वारा अपने अपने कर्मों में स्थित है लिखा है। उन्होंने अपने भाष्य में पृथ्वी आदि लोकों को परमात्मा के आज्ञा से अपने कर्म करने के गति प्रकृति में स्थिर रहना अर्थ किया है।

Edit with WPS Office

विभक्त्यलोपः' इत्युक्तत्वात् पूर्वपदस्वरः । तस्थुः। 'ष्ठा गतिनिवृत्तौ' इत्यस्य लिटयुसि आतो लोपे कृते तस्य द्विर्वचनेऽचि' इति स्थानिवद्भावात् द्विर्वचनम् । निघातः ॥

आचार्य सायण के वेद भाष्य में पृथ्वी को गतिशील बताया गया है।

Rigveda (5/84/2) : पृथ्वी गतिशील है।

२११२ ऋग्वेदसंहिता म.५अ.६सू.८५

हे विचारिणि विविधं चरणशीले पृथिवि देवि त्वा त्वां स्तोमासः स्तोतारः अक्तुभिः गमनशीलैः स्तोत्रैः प्रति ष्टोभन्ति अभिष्टुवन्ति। किंच या त्वं हेषन्तं शब्दयन्तं वाजं न अश्वमिव उद्धतं पेरुं पूरकं मेघं प्र अस्यसि प्रक्षिपसि हे अर्जुनि शुभवर्णे गमनशीले वा।।

हे विविध प्रकार से गमनशील पृथिवी देवी! स्तोता गमनशील स्तोत्रों-द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे शुभ वर्ण वाली अथवा गमनशील! जो तुम शब्द करने वाले अश्व की भाँति उमड़े हुए जल से परिपूर्ण मेघ को प्रक्षिप्त करती हो, उन्हीं तुम्हारी स्तोता स्तुति करते हैं।

Rigveda (3/30/9) : पृथ्वी समान गति से चलती है।

हे "इन्द्र "महीं महतीमत एव "अपाराम् "इषिरां स्थानाभावेन चलन्तीम् एवंविधां "भूमिं "सामनां समानाम् । तथा च मन्त्रवर्णः--' गावौ ते सामनावितः ' (ऋ. सं. १०. ८५. ११) इति । यद्वा सम

आचार्य वेंकट और मुद्गलने भी पृथ्वी को भ्रमणशील माना है।

Rigveda (5/84/2) : पृथ्वी गतिशील है।

Edit with WPS Office

स्तोमासस्त्वा विचारिणि प्रति ष्टोभन्त्यक्तुभिः ।
प्र या वाजं न हेषन्तं पेरुमस्यस्यर्जुनि ॥ २ ॥

स्तोमासः । त्वा । विऽचारिणि । प्रति । स्तोभन्ति । अक्तुऽभिः ।
प्र । या । वाजम् । न । हेषन्तम् । पेरुम् । अस्यसि । अर्जुनि ॥ २ ॥

वेङ्कट० स्तोमासः त्वा विचरणस्वभावे! प्रति अर्चन्ति हविर्भिः सह । प्र क्षिपसि या अश्वमिव शब्दं कुर्वन्तं पूरकं मेघं शुक्लवर्णे! ॥ २ ॥

मुद्गल० हे विचारिणि! विविधं चरणशीले! पृथिवीदेवि! त्वा त्वाम् स्तोमासः स्तोतारः अक्तुभिः गमनशीलैः स्तोत्रैः प्रति स्तोभन्ति अभिष्टुवन्ति । किञ्च या त्वम् हेषन्तम् शब्दयन्तम् वाजम् न अश्वमिव पेरुम् पूरकं मेघम् प्र अस्यसि प्रक्षिपसि हे अर्जुनि! शुभ्रवर्णे! ॥ २ ॥

दृळ्हा चिद् या वनस्पतीन् क्ष्मया दर्धर्ष्योजसा ।
यत् ते अभ्रस्य विद्युतो दिवो वर्षन्ति वृष्टयः ॥ ३ ॥

दृळ्हा । चित् । या । वनस्पतीन् ...

Rigveda (10/89/4): पृथ्वी अपने अक्ष (axis) पर घूमती है।

इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा अपः प्रेरयं सगरस्य बुध्नात्.
यो अक्षेणेव चक्रिया शचीभिर्विष्वक्तस्तम्भ पृथिवीमुत द्याम्.. (४)

मैंने इंद्र के लिए सर्वोच्च स्तुतियां की हैं. इन स्तुतियों द्वारा मैंने अंतरिक्ष के जल को बरसने के लिए प्रेरित किया है. वे इंद्र अपने कर्मों द्वारा द्यावा और पृथ्वी को इस प्रकार धारण करते हैं, जिस प्रकार धुरा पहियों को धारण करता है. (४)

ऋग्वेद (१०/८९/४) में स्पष्ट लिखा है की जैसे एक रथ का पहिया उसके धूरा के द्वारा धारण होकर घूमती है उसी प्रकार पृथ्वी और सूर्य भी अपने अपने धूरा (axis) द्वारा धारण किए हुए हैं। अर्थात् जैसे रथ का पहिया अपने अक्ष पर घूमती है उसी प्रकार पृथ्वी भी अपने अक्ष पर घूम रही है।

उदकानि "प्रेरयं प्रेरयानि । "यः "इन्द्रः "शचीभिः कर्मभिः "पृथिवीम् "उत अपि च "द्यां दिवं "चक्रिया रथचक्राणि "अक्षेणेव यथा रथाक्षेण तद्वत् "विष्वक् सर्वतः "तस्तम्भ अस्तभ्नात् ॥

Edit with WPS Office

ऐतरेय ब्राह्मण (3/44): पृथ्वी अपने अक्ष पर घूमने से दिन और रात होता है।

The sun does never set nor rise. When people think the sun is setting (it is not so). For after having arrived at the end of the day it makes itself produce two opposite effects, making night to what is below and day to what is on the other side.

When they believe it rises in the morning (this supposed rising is thus to be accounted for). Having reached the end of the night, it makes itself produce two opposite effects, making day to what is below and night to what is on the other side.[24] In fact the sun never sets. Nor does it set for him who has such a knowledge. Such a one becomes united with the sun, assumes its form, and enters its place.

ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रंथ ऐतरेय ब्राह्मण (3/44) के अनुसार सूर्य न कभी अस्त होता है न कभी उदय होता है अर्थात सूर्य पृथ्वी के चारों ओर नहीं घूमता वल्कि पृथ्वी के अपने अक्ष पर घूमने के कारण उसके आधे हिस्सों में दिन और उसके विपरीत हिस्सों में रात होता है।

वेद में पृथ्वी को "गौ" कहा गया है जिसका अर्थ गमनशील होता है।

Unadi Sutra (2/68) By Panini

उदा०—(1) गौः (= गाय, किरण, पृथ्वी)—गच्छति यो यत्र यया वा सा। गम्लृ गतौ। गम् डो—अचोऽन्त्यादि टि, टिलोप—ग् ओ—सु, गोतो णित् से णिद्वद्भाव, अचो ञ्णिति से वृद्धि आदेश।

"गम्" धातू से "डो" प्रत्यय लग के "गौ" शब्द बनता है और जो गम् धातू है उसका अर्थ गमनशील ही होता है।

Nirukta (2/5) : पृथ्वी दूर तक गति करती है इसलिए गौ कहा जाता है।

गौरिति पृथिव्या नामधेयं,यद्दूरं गता भवति। यच्चास्यां भूतानि गच्छन्ति।गातेर्वौकारो नामकरणः। अथापि पशुनामेह भवत्येतस्मादेव। अथाप्यस्यां ता-द्धितेन कृत्स्नवन्निगमा भवन्ति । गोभिः श्रीणीत

Edit with WPS Office

आचार्य स्कन्दस्वामी ने पृथ्वी का गमनशील होना माना है।

Nirukta (2/5) By Skanda Swami

यद् दूरं गतो भवति । नैरन्तर्येणात्माकाशादिवैदूंदूरेऽप्युपलब्धेर्गमिक्रियाव्यवहारः । अन्यत्र चान्यत्र चोपलब्धेर्दूरापदेशः । प्रत्ययोपात्तैरूढ्यर्थसम्बन्धाच्च गमिरत्र नैरन्तर्योपलब्धिर्दूरविशिष्टं गमनमुपादत्ते, तक्षा परिव्राजक इति यथा । यद्यपि चायं गोशब्दः पैर्श्वादावनेकत्र रूढः, तथाप्यस्य तैत्रे तत्र मन्त्रवाक्यार्थसमवायसम्भवाद्भिधेयं निश्चित्य तदवयवभूतस्य गमेस्तद्विशेषविषयतैव व्यतिरेकव्यावृत्त्यर्थं पूर्ववत् प्रदर्शनीयेति । यच्चास्यां भुतानि प्राणिनो गच्छन्ति । चो वार्थे । कारकविकल्पश्चायम् । कर्तरि कारकेऽधिकरणे वेत्यर्थः । 'गौतेः' वा स्तुत्यर्थस्य, औकारप्रत्ययः । धातुविकल्पश्चायमे । गीयते स्तूयतेऽसाविति गौः, गायन्ति वाऽस्यां स्थिता इति गौः । इह च पूर्वत्र च निर्वचने क्रियैकत्वे कारकभेदः ।

आचार्य स्कन्दस्वामी ने अपने निरुक्त भाष्य में लिखा है की पृथ्वी निरन्तर आकाश में गति करती है उन्होंने यहां परिव्राजक का भी उदाहरण दिया है। जैसे एक परिव्राजक निरन्तर भ्रमण करता है वैसे ही पृथ्वी भी भ्रमण कर रही है।

Yajurveda (3/6): पृथ्वी गौ अर्थात् गमनशील है।

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसंदन् मातरं पुरः।
पितरं च प्रयन्त्स्वः ॥

– आयं (यह) गौः (गमनशील पृथ्वी) पृश्निः (नाना रंग तथा प्रकार के प्रजाओं को पोषित करने वाली) अक्रमीत् (गति करती हुई) असदत् मातरम् पुरः (माता रूपी अंतरिक्ष (मातान्तरिक्षम् – निरुक्त २/८) के पूर्व दिशा को प्राप्त करती है अर्थात पश्चिम से पूर्व की और अंतरिक्ष में घूमती है) पितरं च प्रयन्स्वः (पिता रूपी सूर्य के चारों ओर गति कर रही है)

जैमिनीय ब्राह्मण (3/304) में भी इस मंत्र के व्याख्या आया है जिसमे गौ और पृश्नि दोनो शब्दों को पृथ्वी के विशेषण के रूप में व्याख्या किया गया है।

अपश्यत् आयं गौः पृश्निर् अक्रमीद् इति। ततो वा इयं पृथिवी पृश्निं वर्णम् अपुष्यत्। पृश्निं ह वै वर्णं प्रजया पशुभिः पुष्यति य एवं वेद। तद् आहुर् ऊर्ध्वा वा एते स्वर्गलोकं रोहन्ति ये यजन्ते। त ईश्वराः पराञ्चो

Edit with WPS Office

वेद में पृथ्वी को "सर्प" कहा गया है जिसका अर्थ गतिशील होता है।

Atharveda (12/1/37)

३३३६. याप सर्पं विजमाना विमृग्वरी यस्यामासन्नग्नयो ये अप्स्व१न्तः । परा दस्यून् ददती देवपीयूनिन्द्रं वृणाना पृथिवी न वृत्रम् । शक्राय दध्रे वृषभाय वृष्णे ॥३७ ॥

हिलती हुई गतिशील जिस भूमि में अग्नि स्थित है, जो जल के अन्दर है। देववृत्तियों की अवरोधक, वृत्र जैसे शत्रुओं का संहार करने वाले, देवराज इन्द्र का वरण करने वाली पृथ्वी, शक्तिशाली, वीर्यवान् और सामर्थ्यशाली पुरुष के लिए धारण की गई है ॥३७ ॥

Nighantu (2/14) : गति के १२२ नामों में से एक नाम "सर्प" है

वर्तते । अयते । लोटते । लोठते । स्यन्दते (३) कसति । सर्पति । स्यमति । स्रवति (४) । स्रंसति । अवति । श्चोतति । ध्वंसति । वेनति । मार्ष्टि । भुरण्यति । शवति । काल्यति ।

शतपथ ब्राह्मण(7/4/1/25) : पृथ्वी आदि लोक सर्प है क्यूकी निरंतर गति करते हैं।

अब "सर्पनाम" ऋचा। (यजु० १३।६) के द्वारा उसकी पूजा करता है। ये लोक सर्प हैं। वे इसी सब के साथ जो कुछ कि यहाँ है चलते हैं। यह अग्नि जो है यह इन सब का देवता है। जब उन देवों ने अपने आत्मा को उसमें धारण कर लिया तो वे डरे कि कहीं उनकी आत्मा भी इन लोकों के साथ न चली जाय ।।२५।।

Edit with WPS Office

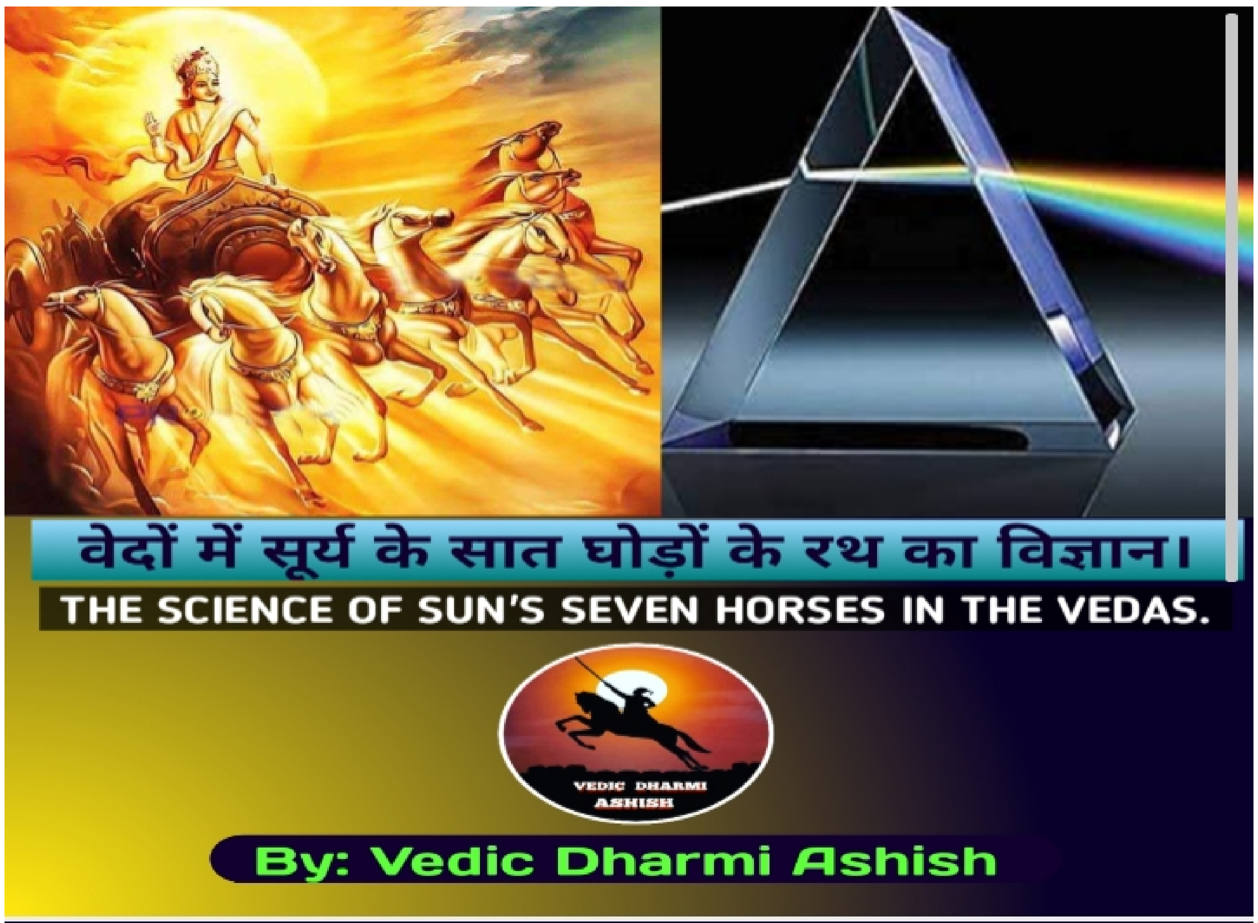

आक्षेप: वेदों में लिखा है की सूर्य को सात घोड़ों के रथ खींचता है।

ऋग्वेद (1/50/1)

उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः. दृशे विश्वाय सूर्यम्.. (१)

सूर्य के घोड़े सब प्राणियों को जानने वाले हैं, वे प्रकाशयुक्त सूर्य को इसलिए ऊपर ले जाते हैं कि सारा संसार उन्हें देख सके. (१)

ऋग्वेद(1/50/8)

सप्त त्वा हरितो रथे वहन्ति देव सूर्य. शोचिष्केशं विचक्षण.. (८)

हे सूर्य! तुम दीप्तिमान् एवं सर्वप्रकाशक हो. किरणें ही तुम्हारे केश हैं. हरित नाम के सात घोड़े तुम्हें रथ में बिठाकर ले चलते हैं. (८)

Edit with WPS Office

उत्तर: सूर्य के सात अश्वों का अर्थ आचार्य सायण ने सूर्य के सात किरणों से किया है।

ऋग्वेद (1/50/1) सायणभाष्य

"केतवः प्रज्ञापकाः सूर्याश्वाः यद्वा सूर्यरश्मयः "सूर्यं सर्वस्य प्रेरकमादित्यम् "उदु "वहन्ति ऊर्ध्वं वहन्ति । उ इति पादपूरणः । उक्तं च - ' मिताक्षरेष्वनर्थकाः कमीमिद्विति'

ऋग्वेद(1/50/8) सायणभाष्य

हे "सूर्य "देव द्योतमान "विचक्षण सर्वस्य प्रकाशयितः "सप्त सप्तसंख्याकाः "हरितः अश्वाः रसहरणशीला रश्मयो वा "त्वा त्वां "वहन्ति प्रापयन्ति। कीदृशम् । "रथे अवस्थितमिति

क्या अश्व शब्द का अर्थ केवल घोड़ा ही होता है?

उणादि सूत्र (1/151) के अनुसार अश्व शब्द "अशु व्याप्तौ" धातू से बनता है जिसका अर्थ होता है व्यापनशील।

स्वा०द०वृ०—अश्नुते व्याप्नोतीति **अश्वः**, तुरङ्गो वह्निर्वा; **अजाद्**िपाठात् (द्रष्टव्य—अ० 4.1.4) स्त्रियाम् **अश्वा** । यः पृष्णाति स्निह्यति सिञ्चति पूरयति वा स

निरुक्त (2/27) में भी अश्व का अर्थ व्यापनशील है।

कस्मात् किस कारण से **अश्वः** अश्व (कहा जाता है)? क्योंकि **अध्वानम्** (गन्तव्य) मार्ग को **अश्नुते** व्याप्त कर लेता है । **वा** अथवा **महाशनः** अधिक खाने वाला **भवति इति** होता है ।

आचार्य स्कंद स्वामी ने भी निरुक्त (4/27) में अश्व का अर्थ सूर्य के सात व्यापनशील रश्मि किया है।

नान्यानि ज्योतींषि तद्रश्मिभिराच्छादितत्वाददृश्यमानत्वात्। स च तैर्युक्त **एकोऽश्वोऽशनो व्यापी वहति** गच्छति **सप्तनामा** सप्त रश्मयो यस्मै रसानभिसंनामयन्ति। सप्तर्षयो वा यं प्रति स्तावकत्वेन नमन्ति स सप्तनामा। उत्तरोऽर्धर्चः संवत्सरस्तुतिः। **त्रिनाभि** नाभित्रयं ग्रीष्मो वर्षा हेमन्त इत्येते ऋतवो नाभिस्थानं यस्य तत् त्रिनाभि।

Edit with WPS Office

क्या अश्व शब्द का अर्थ केवल घोड़ा ही होता है?

ऋग्वेद(1/115/3) में आचार्य सायण ने अश्व का अर्थ व्यापनशील किया है।

"भद्राः कल्याणाः । अश्वाः एतग्वाः इत्येतदुभयम् अश्वनाम। तत्रैकं क्रियापरं योजनीयम् । "अश्वाः तुरगा व्यापनशीला वा "हरितः

ऋग्वेद(1/164/2) में सायण ने अश्व का अर्थ सूर्य के सात व्यापनशील किरणों से किया है

निर्वहन्तीत्यर्थः । स चैकः असहायः अश्वो व्यापनशीलः आदित्यः सप्तनामा सप्त रसानां संनमयितारो रश्मयो यस्य तादृशः

ऋग्वेद(1/164/3) में सायण ने अश्व का अर्थ सूर्य के सात व्यापनशील किरणों से किया है।

रश्मयः ते सप्त यस्य रथस्य तादृशमुभयविधं रथ पूर्वोक्ताः अधिष्ठिताः "अश्वाः व्यापनशीलाः "सप्त "वहन्ति निर्वहन्ति च ।

क्या हरितः का अर्थ घोड़ा होता है?

निरुक्त (4/11) के अनुसार सूर्य के व्यापनशील किरणों को हरितः बोला जाता है क्यू की सूर्य किरण रसों को सुखा देती है या हर लेती है।

माणानां विततं संह्रियते।यदासावयुङ्क्त हरणानादित्यरश्मीन्हरितोऽश्वानिति वा । अथ रात्री वासस्तनुते सिमस्मै,वेसरमहरवयुवती सर्वस्मात् । अपि वोपमार्थे

आचार्य सायण ने भी हरितः का अर्थ रसों को हरने वाले रश्मि से किया है।

हे सूर्य देव द्योतमान विचक्षण सर्वस्य प्रकाशयितः सप्त सप्तसंख्याकाः हरितः अश्वाः रसहरणशीला रश्मयो वा त्वा त्वां वहन्ति प्रापयन्ति। कीदृशम् । रथे अवस्थितमिति शेषः । तथा शोचिष्केशम् । शोचींषि तेजांस्येव यस्मिन् केशा इव दृश्यन्ते स तथोक्तः तम्। हरितः इति आदित्याश्वानां संज्ञा, 'हरित आदित्यस्य' (नि. १. १५. ३) इति निघण्टावुक्तत्वात् ॥ शोचिष्केशम् ।

Edit with WPS Office

सूर्य के रथ का अर्थ क्या है?

अथर्ववेद (8/8/23): रथ का अर्थ संवत्सर भी होता है जो निरंतर आगे बढ़ता रहता है।

२२२९. संवत्सरो रथः परिवत्सरो रथोपस्थो विराडीषाग्नी रथमुखम्।
इन्द्रः सव्यष्ठाश्चन्द्रमाः सारथिः ॥२३॥

'संवत्सर' ही रथरूप, 'परिवत्सर' रथ में बैठने का स्थल, 'विराट्' जोतने का दण्ड, 'अग्नि' इस रथ के मुख्य रूप, इन्द्रदेव बाई तरफ विराजने वाले और चन्द्रमा सारथि रूप हैं ॥२३॥

अथर्ववेद (19/53/1): सूर्य के सात रश्मियों वाला कालरूपी अश्व ही इस सूर्य के संवत्सर रूपी रथ को चला रहे हैं। अर्थ सूर्य के किरणों से दिन रात का विभाग होता रहता है इस से वर्ष आगे बढ़ता है।

[ऋषि- भृगु । देवता- काल । छन्द- त्रिष्टुप्, ५ निचृत् पुरस्ताद् बृहती, ६-१० अनुष्टुप् ।]

४९५२. कालो अश्वो वहति सप्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूरिरेताः।
तमा रोहन्ति कवयो विपश्चितस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वा ॥१॥

काल स्वरूप अश्व विश्वरूपी रथ का वाहक है। वह सात किरणों और सहस्र आँखों वाला है। वह जरारहित और प्रचुर पराक्रम सम्पन्न है, समस्त लोक उसके चक्र हैं। उस (अश्व या रथ) पर बुद्धिमान् ही आरोहण करते हैं ॥१

निरुक्त में सूर्य के रथ का व्याख्या

ऋग्वेद (1/164/2): सूर्य के रथ एक पहिए वाला है।

१७१७. सप्त युञ्जन्ति रथमेकचक्रमेको अश्वो वहति सप्तनामा।
त्रिनाभि चक्रमजरमनर्वं यत्रेमा विश्वा भुवनाधि तस्थुः ॥२॥

एक चक्र (सविता के पोषण चक्र) वाले रथ से ये सातों जुड़े हैं। सात नामों (रंगों) वाला एक (किरण रूपी) अश्व इस चक्र को चलाता है। तीन (द्युलोक, अन्तरिक्ष एवं पृथ्वी) नाभियों (केन्द्रक) अथवा धुरियों वाला यह कालचक्र सतत गतिशील अविनाशी, और शिथिलता रहित है। इसी चक्र के अन्दर समस्त लोक विद्यमान हैं ॥२॥

ऋग्वेद के इसी मंत्र पर निरुक्त (4/27) में आए व्याख्या के अनुसार सूर्य के रथ का पहिया में 12 अरे है जो की 12 महीनों का कहा जाता है तथा इसमें 360 कीलें है जो हर एक महीने के 30 दिन को मिला के साल के 360 दिन होता है। अर्थात सूर्य का रथ संवत्सर को कहा गया है।

(श्रा० आ०) से (=इधा लेते हैं—पांच को)। 'बारह अरों (महीनों) वाला वह (चक्र) पुराना होने के लिये नहीं होता है,' (१। १६४। ११) 'बारह दण्डे एक पहिया' (१।१६४।४८). यहां महीनों की (स्तुति) है। मापाः=मापने से (=बरस को मापते हैं) प्रधिः=अलग २ करके (पहिये की नेमि बनाने के लिये) रखा हुआ होता है। 'उन (पहिये) में सदा चलते रहने वाले तीन सौ साठ कीलसे जड़े होते हैं (१।१६४।४८) 'तीन सौ साठ बरस के दिन रात होते हैं,' इकट्ठे कहने में' यह ब्राह्मण है (ऐ० ब्रा० ४। २। ६) (आपत्रा अर्ध मिथ-

Edit with WPS Office

वेदों में सीधे सीधे सूर्य के सात किरणों के वर्णन।

ऋग्वेद (8/72/16) : सूर्यस्य सप्त रश्मिभि:

७२९७. अधुक्षत्पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः । सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः ॥१६ ॥
वायुदेव ने सूर्यदेव की सप्त रश्मियों से पुष्ट हुए अन्न एवं रस का दोहन (यज्ञीय प्रक्रिया के अन्तर्गत) सप्त पद वाली (वाणियों-मंत्रों) के संयोग से किया ॥१६ ॥

अथर्ववेद (7/112/1) : सप्त सूर्यस्य रश्मय:

२००३. अव दिवस्तारयन्ति सप्त सूर्यस्य रश्मयः ।
आपः समुद्रिया धारास्तास्ते शल्यमसिस्रसन् ॥१ ॥
सूर्यदेव अपनी सात-किरणों से समुद्र की जल-धाराओं को पहले द्युलोक तक ले जाते हैं, फिर वहाँ से वृष्टि करते हैं। हे व्याधिग्रस्त पुरुष ! वे तुम्हारे शल्य के समान पीड़ादायक "कास" आदि रोग को नष्ट करें ॥१ ॥

ऋग्वेद (1/105/9) : ये सप्त रश्मय:

११५५. अमी ये सप्त रश्मयस्तत्रा मे नाभिरातता ।
त्रितस्तद्वेदाप्त्यः स जामित्वाय रेभति वित्तं मे अस्य रोदसी ॥९ ॥
ये सात रंगो वाली सूर्य की किरणें जहाँ तक हैं, वहाँ तक हमारा नाभि क्षेत्र (पैतृक प्रभाव) फैला है। इसका ज्ञान जल के पुत्र 'त्रित' को है। अतएव प्रीतियुक्त मैत्री भाव हेतु हम प्रार्थना करते हैं। हे द्यावापृथिवि! आप हमारी इन प्रार्थनाओं के अभिप्राय को समझें ॥९ ॥

वेदों के ब्राह्मण ग्रंथों में सूर्य के सात किरणों के व्याख्या

ऋग्वेद (2/12/12) : सूर्य के सात किरण है लिखा।

यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्त सिन्धून् ।
यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं स जनास इन्द्रः ॥ १२

इस मंत्र के व्याख्यान में जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण (1/9/2/8) में भी लिखा है की सूर्य के सात किरणों है।

MAHARISHI UNIVERSITY OF MANAGEMENT VEDIC LITERATURE COLLECTION — जैमिनीयोपनिषद्ब्राह्मणम् — [Jaiminīya Upanishad]

५ स एष एतस्य रश्मिरन्नम्भूत्वा सर्वास्वासु प्रजासु प्रत्यवस्थितः स यः कश्चाश्नात्येतस्यैव रश्मिनाश्नाति ६ स एष सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान्तदेत-दृचाभ्यनूच्यते यस्सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्तवे सप्त सिन्धून्यो रौहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं स जनास इन्द्र इति ७ यस्सप्तरश्मिरिति सप्त ह्येत आदित्यस्य रश्मयः वृषभ इति एष ह्येवासाम्प्रजानामृषभः तुवि-ष्मानिति महीयैवास्यैषा ८ अवासृजत्सर्तवे सप्त सिन्धूनिति सप्त ह्येते सिन्धवः तैरिदं सर्वं सितं तद्यदेतैरिदं सर्वं सितं तस्मात्सिन्धवः ९ यो रौ-

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 58. शिक्षाप्रद , प्रेरक प्रसंग

1. कर्म में निहित है सफलता का स्वाद :

सत्यवादी हरिश्चंद्र के पुत्र रोहित पिता की तरह धर्म तथा सत्य पर हमेशा रहते थे । देवराज इन्द्र भी बालक के गुणों से प्रभावित हुए । देवराज ने रोहित को पांच वर्ष तक अपने उपदेशों में अनेक दृष्टांत देकर सदा कर्म करते रहने , आगे बढ़ने और धर्मानुसार आचरण करने की प्रेरणा दी ।

Edit with WPS Office

देवराज इन्द्र ने रोहित से कहा --- श्रम से जो नहीं थका , ऐसे पुरुष को लक्ष्मी मिलती है । निराश होकर आलसी बनकर बैठे व्यक्ति को पाप धर दबोचता है । जो चलता रहता है , उसके पाप थक कर सोएं रहते हैं । जो निरन्तर चलता रहता है , देवगण भी उसी पर कृपा करते हैं । इसलिए चलते रहो -- चलते रहो । इन्द्र आगे कहते हैं --- बैठे हुए निराश व्यक्ति का सौभाग्य बैठा रहता है । खड़े होकर साहस के साथ चलने वाले का सौभाग्य आगे - आगे चलने लगता है । इसलिए चलते रहो चलते रहो । चलता मनुष्य ही मधु पाता है । चलता हुआ ही स्वादिष्ट फल चखता है । इसलिए कहा है --- चरैवेति , चरैवेति अर्थात चलते रहो चलते रहो ।

उपनिषद् में प्रस्तुत देवराज इन्द्र द्वारा रोहित को दिए गए उपदेशों में पांच श्लोकों का अन्तिम शब्द ' चरैवेति , दिया गया है । उन उपदेशों का सार है कि निरन्तर कर्म में तत्पर रहकर आगे बढ़ने वाला व्यक्ति ही सफलता प्राप्त करता है ।

शिक्षा : निराश व्यक्ति का सौभाग्य बैठा रहता है , जबकि साहस के साथ चलने वाले का सौभाग्य आगे - आगे चलने लगता है ।

2. सत्य पर अटल रहना चाहिए :

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती वेदों के इस वाक्य को अपने उपदेशों में दोहराया करते थे कि सत्य पर अटल रहना चाहिए । प्राण भी चलें जाएं किन्तु सत्य का त्याग नहीं करना चाहिए । वह केवल वाणी से ही सत्य के महत्व को प्रस्तुत नहीं करते थे , बल्कि स्वयं जिस बात को वेदोक्त मानते थे , उसका सदैव दृढ़ता से पालन किया करते थे । स्वामी जी अपने प्रवचन में स्वदेश प्रेम , हिन्दी को अपनाने और स्वदेशी वस्तुओं का इस्तेमाल कर कुटीर उद्योगों को बढ़ाने देने की प्रेरणा दिया करते थे । एक बार स्वामी जी किसी सभा में प्रवचन देने वाले थे उनके एक भक्त ने कहा , वहां अंग्रेज गवर्नर और कलक्टर होंगे । ऐसी स्थिति में प्रवचन में कोई ऐसी बात नहीं कहिएगा , जिससे किसी को बुरा लगें । स्वामी जी समारोह में पहुंचे । प्रवचन शुरू करते ही वह बोलें , लोग कहते हैं कि सत्य को प्रकट

Edit with WPS Office

न करो , कलक्टर , कमिश्नर आदि को बुरा लगेगा , वे क्रोधित होंगे , पर चक्रवर्ती राजा भी क्यों न अप्रसन्न हो , हम तो सत्य ही कहेंगे । उन्होंने गीता का उदाहरण देते हुए कहा --- आत्मा को न तो कोई हथियार छेद सकता और न ही आग जला सकती है । क्या कोई यह दावा कर सकता है कि वह मेरी आत्मा का नाश कर देगा ? शरीर रक्षा के लोभ में , मैं सत्य को क्यों दबाऊं ? स्वामी जी की निर्भीक वाणी सुनकर सभी हतप्रभ रह गए ।

शिक्षा : **हमें सदैव सत्य पर अटल रहना चाहिए , चाहे प्राण भी चलें जाएं ।**

3. कल्याण का साधन है आत्मचिंतन :

सनक , सनंदन , सनातन और सनत्कुमार -- ये चारों मुनि सनकादि के नाम से विख्यात हुए । ये ब्रह्मा के मानस पुत्र थे । परम विख्यात होने के कारण देवता भी सनकादिक का बहुत आदर करते थे । अत्यंत ज्ञानी होने के बावजूद वे समय - समय पर ब्रह्मा जी आदि का सत्संग कर उनसे और अधिक ज्ञान प्राप्त करने को तत्पर रहा करते थे ।

एक दिन सनकादिक ने अपने पिता ब्रह्मा जी से प्रश्न किया , कि सांसारिक विषय विपत्तियों के घर है । सांसारिक ऐश्वर्य और भोग विलास मानव की अशान्ति और पतन के कारण है , यह जानते हुए भी मानव पशु के समान उनके भोग में क्यों लिप्त रहता है ? उसे सांसारिक लगाव से मुक्त करने का क्या उपाय हो सकता है ?

ब्रह्मा जी अचानक किए गए इस प्रश्न का उपयुक्त उत्तर नहीं दे पाए । उन्होंने भगवान विष्णु का स्मरण कर उनसे सनकादिक की जिज्ञासा का समाधान करने की प्रार्थना की । श्री विष्णु ने हंस के रूप में प्रकट होकर सनकादिक की जिज्ञासा का समाधान करने के लिए कई कथाएं सुनाई । उन्होंने बताया कि इन्द्रियों के विषय का चिंतन व विषयों में आसक्ति नहीं करनी चाहिए । शरीर क्षण भंगुर है , उसे महत्व न देकर आत्म चिंतन करने में ही कल्याण है । भगवान का चिंतन करते रहने से ही सांसारिक भोग - ममता से बचा जा सकता है ।

सनकादिक ने उनसे प्राप्त ज्ञान के माध्यम से असंख्य जीवों को

Edit with WPS Office

सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी ।

शिक्षा : इन्द्रियों के विषयों में आसक्ति नहीं करनी चाहिए । ईश्वर का चिंतन करते रहने से ही सांसारिक मोह ममता से बचा जा सकता है ।

4. बांटने से खजाना खाली नहीं होता :

महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने कहा है -- जो ईमानदारी से अर्जित धन को सत्कर्मों में खर्च करता है या उस धन को धर्म - कर्म व सेवा परोपकार में खर्च करता है , उसे असंख्य गुना धन प्रभु प्रदान करता है । जो भी सम्पत्ति है , वह मेरी नहीं भगवान की है , ऐसा मानता है । उसका उपयोग समाज के लिए , सत्कर्मों और सेवा -परोपकार के लिए है --- भारतीय संस्कृति का यह सूत्र आत्मा के अर्थशास्त्र का एक नमूना बतलाते हुए लेखक धमेंद्र देव लिखते हैं --- बांटने से अधिक भागीदार बनाओं , दुखी जनों को सुखी बनाओं , रोगियों को दवा - चिकित्सा उपलब्ध कराओ , इसे ही आत्मा का अर्थशास्त्र कहते हैं ।

शिक्षा : देने बांटने से खजाना कभी खाली नहीं होता ।

5. सुख और शान्ति प्राप्त करने के उपाय :

सन्त डोगरे जी महाराज कहा करते थे , प्रभु ने हमें जन्म इसलिए दिया है कि हम उनके बनाए गए संसार को सुखी बनाने में जीवन लगाएं , यदि तुम सुखी होना चाहते हो , तो सब में परमात्मा के दर्शन कर दूसरों को सुख और संतोष दो । दूसरों को सुख देना ही प्रभु की सच्ची पूजा है । एक बार उनसे किसी जिज्ञासु ने पूछा , अशान्ति क्यों बढ़ रही है ? डोगरे जी ने बताया -- धनार्जन की अंधी दौड़ ने अशान्ति बढ़ाई है । यही अशान्ति का मूल कारण है कितने ही लोगों को मूर्ति में ईश्वर दिखाई देता है , पर उन्हें मानव में ईश्वर दिखाई नहीं देते । यदि मानव एक - दूसरे में भगवान के दर्शन कर दूसरों को सुखी बनाने का प्रयत्न करें तो संसार की बहुत सी समस्याएं स्वत: हल हो जाएगी । सांसारिक भोगों के प्रति लालसा को छोड़कर

Edit with WPS Office

सन्तोषी और सात्विक जीवन जीने से शान्ति प्राप्त होती है ।

शिक्षा : सन्तोषी और सात्विक जीवन से शान्ति और सुख प्राप्त होता है ।

6. संयम के बल पर महान् बनना :

हमारे ऋषि मुनियों ने संकल्प को ऐसा अमोघ साधन बताया है , जिसके बल पर हर क्षेत्र में सफलता पायी जा सकती है । स्वामी विवेकानन्द ने कहा था , दृढ़ संकल्पशील व्यक्ति के शब्द कोष में असम्भव शब्द नहीं होता । लक्ष्य की प्राप्ति में साधना का महत्वपूर्ण योगदान होता है । संकल्प जितना दृढ़ होगा , साधना उतनी ही गहन होती जाएगी । शास्त्रों में कहा गया है कि ऐसा कोई अक्षर नहीं , जो मंत्र न हो । ऐसी कोई वनस्पति नहीं , जो औषधि न हो । ऐसा कोई पुरुष नहीं जो योग्य न हो । प्रत्येक शब्द में मंत्र विधमान है , उसे जागृत करने की योग्यता होनी चाहिए । प्रत्येक वनस्पति में अमृत तुल्य रसायन विधमान है , उसे पहचानने का विवेक चाहिए । प्रत्येक व्यक्ति में योग्यता स्वभावत: होती है , किन्तु उस योग्यता का सदुपयोग करने का विवेक होना चाहिए ।

साधना को लक्ष्य से जोड़कर मानव अपनी योग्यता का उपयुक्त लाभ उठा सकता है । दृढ़ संकल्प और साधना के बल पर मानव महान् बन सकता है । प्रमाद , अहंकार , असीमित आकांक्षाएं मानव को दानव बना देती हैं ।

शिक्षा : दृढ़ संकल्प और साधना के बल पर मानव महान् बन सकता है ।

7. अभिमान से पुण्य नष्ट होते हैं :

भगवान श्री राम वनवास काल के दौरान संकट में हनुमान जी द्वारा दी गई अंगूठी सहायता से अभिभूत थे । एक दिन उन्होंने कहा ,हे हनुमान , संकट के समय तुमने जो मेरी सहायता की , मैं उसे याद कर गदगद हो उठा

Edit with WPS Office

हूं । सीता जी का पता लगाने का दुष्कर कार्य तुम्हारे बिना असम्भव था । लंका जलाकर तुमने रावण का अंहकार चूर- चूर कर दिया । वह कार्य अनूठा था । घायल लक्ष्मण के प्राण बचाने के लिए यदि तुम संजीवनी बूटी न लाते , तो न जाने क्या होता ? इन तमाम बातों का वर्णन करके श्री राम जी ने कहा , तेरे समान उपकारी सुर , नर मुनि कोई भी शरीरधारी नहीं है । मैंने मन में खूब विचार कर देख लिया , मैं तुम से उऋण नहीं हो सकता ।

सीता जी ने कहा , तीनों लोकों में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है , जो हनुमान जी को उनके उपकारों के बदले में दी जा सके । श्री राम जी ने पुनः जैसे ही कहा , हनुमान , तुम स्वयं बताओं कि तुम्हारे अनन्त उपकारों के बदले में क्या दूं ? जिससे मैं उऋण हो जाऊं ।

श्री हनुमान जी ने हर्षित हो , प्रेम से व्याकुल होकर कहा , भगवन , मेरी रक्षा कीजिए , अभिमान रुपी शत्रु कहीं मेरे तमाम सत्कर्मों को नष्ट न कर डालें । प्रशंसा ऐसा दुर्गुण है , जो अभिमान पैदा कर संचित पुण्यों को नष्ट कर डालता है और यह कहते-कहते वह श्री राम के चरणों में लौट गए । हनुमान जी की विनयशीलता को देखकर सभी हतप्रभ हो उठें ।

शिक्षा : प्रशंसा ऐसा दुर्गुण है , जो अभिमान पैदा कर सभी संचित पुण्यों को नष्ट कर डालता है ।

8. ईश्वर से साक्षात्कार :

एक पत्रकार को साथ लेकर कुछ अंग्रेज पादरी महर्षि रमण के पास पहुंचे । उन्होंने महर्षि रमण से पूछा , कहा जाता है कि आप घंटों तक ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं । आज हम इस बात को स्वयं देखने आये है कि आप ईश्वर से कैसे मिलते हैं ? यदि यह बात निराधार साबित हुई , तो ये पत्रकार आपके चमत्कार का भंडाफोड़ करेंगे ।

महर्षि रमण मुस्कराएं और बोलें , आप सवेरे मेरे साथ चलकर स्वयं ईश्वर का साक्षात्कार कर सकते हैं । महर्षि के ये शब्द सुनते ही पादरी हक्के-बक्के रह गए । वे अपने स्थान को लौट गए । रात भर उन्हें नींद नहीं आई । सवेरा होते ही वे महर्षि रमण के आश्रम में पहुंच गए । महर्षि पूजा अर्चना के बाद पादरियों को साथ लेकर जंगल की ओर चल पड़े । जंगल में नदी के

Edit with WPS Office

किनारे स्थित झोंपड़ी में पहुंचे । वहां लेटें हुए कुष्ठ रोगी को प्रेम से उठाया । उसके शरीर पर औषधियुक्त तेल की मालिश की । मालिश के बाद नहलाया , उसके कपड़े बदले । चूल्हा जलाकर दलिया बनाया । बड़े प्रेम से अपने हाथों से उसे दलिया खिलाया । उन्होंने पास चटाई पर बैठे पादरियों से कहा , मैं इस तरह से प्रतिदिन ईश्वर की पूजा करता हूं । उससे बातें करता हूं । क्या आपको लगता है कि मैं कोई पाखंड करता हूं । पादरी तथा पत्रकार महर्षि रमण के सामने नतमस्तक हो गए । उन्ही में से एक पत्रकार ने इंग्लैंड से प्रकाशित समाचार पत्र में संस्मरण में लिखा , उस दिन हम सबको लगा कि ईसा मसीह के साक्षात दर्शन कर रहे हैं ।

9. सत्य - शील पर अटल रहे :

महर्षि वेदव्यास को पुराणों में 'जगत गुरु , कहा गया है , जिनके अनमोल उपदेशों से संसार भर के मानव ' भक्ति , ज्ञान , सदाचार तथा नीति की प्रेरणा प्राप्त करते रहे हैं । यद्यपि वेदव्यास ने वेद संहिता का विभाजन और महाभारत जैसे महान ग्रन्थ का सृजन करके धरती पर ज्ञान की भागीरथी प्रवाहित की ओर असंख्य व्यक्तियों को सदाचार का पालन करने की प्रेरणा दी ।

जगतगुरु व्यास ने अपने नीति वचनों में मानव कल्याण के दस साधन बताएं है ।

1. **सत्य**
2. **क्षमा**
3. **सरलता**
4. **परमेश्वर का ध्यान**
5. **करुणा**
6. **हिंसा से दूरी**
7. **मन और इन्द्रियों पर संयम**
8. **सदा प्रसन्न रहना**
9. **मधुर व्यवहार करना**

Edit with WPS Office

10. सबके प्रति कोमल भाव रखना

वह शिष्यों को प्रेरणा देते हुए कहते हैं , सत्य से पवित्र हुई वाणी बोलनी चाहिए तथा मन से जो पवित्र जान पड़े , उसी का आचरण करना चाहिए । असत्य भाषण परस्त्री संग , अभक्ष्य (मांस , मदिरा आदि) का सेवन तथा धर्म विरुद्ध आचरण करने से कुल का शीघ्र नाश हो जाता है ।
सद्‌गुरु व्यास जी के उपदेश में माता - पिता की सेवा , पति की सेवा , सबके प्रति सम्मान भाव , मित्रों से द्रोह न करना तथा भगवान के भजन को महायज्ञ कहा है । व्यास जी के मतानुसार जो लोग दान और सेवा के कार्यों में विध्न डालते हैं , दीन - दुखियों को और अनाथों को पीड़ा पहुंचाते हैं , वे मूलतः दुष्ट प्रवृत्ति के होते हैं और वे इस पृथ्वी पर भार के समान ही है ।

शिक्षा : माता - पिता की सेवा , सबके प्रति समान भाव , मित्रों से द्रोह न करना तथा भगवान के भजन को महायज्ञ कहा गया है ।

10. वाणी में संयम रखना अत्यावश्यक :

मनुस्मृति में कहा गया है कि कठोर वाणी बोलना , झूठ बोलना , पर निंदा करना और व्यर्थ बातें बनाना , ये वाणी के चार दोष है । इन दोषों से बचने वाला व्यक्ति हमेशा खुशी और सन्तुष्ट रहता है ।

संस्कृत के एक श्लोक में बताया गया है कि दूसरे व्यक्ति में दोष देखने वाला , दूसरों के अवगुणों का वर्णन करने वाला , किए गए उपकार को याद न रखने वाला और क्रोध को मन में रखने वाला व्यक्ति चांडाल की श्रेणी में आता है । महर्षि कहते हैं -- उद्वेग रहित वाणी का उच्चारण , सत्य , प्रिय और हितकर वचन बोलना , अनर्गल बातचीत में समय व्यर्थ न करके सत्साहित्य का अध्ययन करना एवं भगवान के नाम का कीर्तन करना वाणी का जाप कहलाता है । अतः वाणी से प्रत्येक शब्द सोच समझकर निकालने में ही लाभ है ।

11. शुद्ध अंतः करण ही असल तीर्थ है :

Edit with WPS Office

महामुनि अगस्त्य जी श्रीशैल पर्वत पर अपनी पत्नी लोपामुद्रा से धर्म चर्चा कर रहे थे । लोपामुद्रा परम विदुषी थीं । एक दिन उन्होंने महामुनि से पूछा कि धर्मशास्त्रों में पवित्र तीर्थो की महिमा भरी पड़ी है । तीर्थ यात्रा व तीर्थ निवास को अनेक पुण्यों का प्रदाता माना जाता है । जो साधनहीन व्यक्ति , वृद्ध और अपाहिज तीर्थ न कर पाएं , उन्हें इस कर्तव्य का पालन कैसे करना चाहिए ?

महर्षि अगस्त्य ने बताया , तीर्थ भ्रमण में मानसी तीर्थो की महिमा सर्वोपरि है । साधनहीन व्यक्ति घर बैठे ही सदाचार का पालन कर तीर्थ यात्रा का पुण्य प्राप्त कर सकता है । उन्होंने आगे कहा , सत्य और क्षमा तीर्थ है । इन्द्रियों पर संयम रखना भी तीर्थ का पुण्य देता है । जो व्यक्ति दयावान होता है और जिसका अन्त: करण शुद्ध सात्विक होता है , वह घर बैठे ही तीर्थ का पुण्य प्राप्त कर लेता है ।

महर्षि ने कहा , यदि मन का शुद्ध न हो , तो दान , यज्ञ , तप शास्त्रों का श्रवण , स्वाध्याय सभी व्यर्थ है । ज्ञान रूपी जल से स्नान करके पवित्र नदियों के स्नान का पुण्य प्राप्त होता है । ज्ञान रूपी जल राग , द्वेषमय मल को दूर करने की क्षमता रखता है । जिसका मन डांवाडोल रहता है , वह तीर्थ का फल नहीं प्राप्त कर सकता । असंयमी , अश्रद्धालु , व संशयात्मा कितने ही तीर्थो की खाक छान लें , उसे पुण्य नहीं मिलता ।

अपने पति के श्रीमुख से सच्चे तीर्थो की महिमा जानकर लोपामुद्रा भाव विभोर हो उठीं ।

12. गरीबों के लिए खर्च में धन की सार्थकता :

राजा भोज धर्म शास्त्रों के अनुसार ही जीवन बिताने का प्रयास करते थे । वह इतने बड़े दानी थे कि कोई भी उनके द्वार से कभी खाली हाथ नहीं लौटा । राज्य का दीवान राजा की इस प्रवृत्ति से चिन्ता में पड़ गया । उसे लगा कि यदि राजा इसी प्रकार दान देते रहे तो एक दिन राजकोष खाली हो जायेगा । दीवान ने एक दिन राजा भोज के भोजन कक्ष की दीवार पर एक सूक्ति - आपदार्थो धन रक्षेत , अर्थात आपतकाल के लिए धन सम्भाल कर रखना चाहिए , लिख दी । राजा ने देखा , तो उसके नीचे लिख दिया --- '

Edit with WPS Office

श्रींमतां कुत: आपदा , अर्थात सक्षम लोगों पर आपदा कहा आती है ।

अगले दिन दीवान ने राजा की लिखी सूक्ति पढ़ी , तो फिर उसने नीचे लिख दिया -- ' देवात् क्वचित समायति , अर्थात यदि देवयोग से विपत्ति आ जाएं तो...? राजा ने जब यह सूक्ति पढ़ी , तो उन्होंने उसके जवाब में लिख दिया -- ' संचितो अपि विनश्यति , अर्थात ऐसा भी समय आता है , जब संचित सम्पत्ति भी नष्ट हो जाती है । उसके बाद राजा ने दीवान से मिलने पर कहा , राज्य के हित में राज दीवान की चिन्ता उचित है , किन्तु धर्मशास्त्रों के अध्ययन से में इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि लक्ष्मी चंचला हैं । उस धन - सम्पत्ति की ही सार्थकता है जिसका उपयोग गरीबों असहायों की सेवा के लिए किया जाता है । इसलिए भविष्य की चिन्ता छोड़कर इसका निरन्तर सद्कर्मों में उपयोग करना चाहिए ।

13. सहनशक्ति का परिणाम :

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी फरुखाबाद में गंगा के तट पर ठहरें हुए थे । उनकी कुटिया से थोड़ी दूरी पर एक झोंपड़ी थी जिसमें एक साधु रहता था । पता नहीं क्यों , वह साधु स्वामी जी से बहुत क्रोधित था । हर रोज वह स्वामी जी की कुटिया के पास आकर गाली दिया करता था । जब वह गालियां देकर थक जाता , तो वापिस अपनी झोपड़ी में आ जाता । दयानंद जी उसकी गालियां सुनकर मुस्कुराते थे और जवाब नहीं देते थे ।

एक दिन किसी शिष्य ने स्वामी जी को फलों का टोकरा भेजा । उन्होंने टोकरे में से कुछ फल निकालें और उन्हें एक कपड़े में बांधां और बोले , यह फल ले जाकर उस साधु को दे दो । वह व्यक्ति फल लेकर साधु के पास पहुंचा और बोला , यह फल स्वामी जी ने आपके लिए भेजें हैं । साधु , दयानंद का नाम सुनते ही चिल्लाते हुए बोला , मैं तो रोज उसे गालियां देता हूं । यह फल उसने मेरे लिए नहीं , किसी और के लिए भेजें होंगे । यह सुनकर वह व्यक्ति वापिस चला गया । वहां जाकर स्वामी जी को पूरी बात बताई । स्वामी जी उस व्यक्ति से बोले , तुम वापिस उस साधु के पास जाओं और बोलों कि आप प्रतिदिन अमृत की वर्षा करते हो , उसमें निश्चित ही आपकी शक्ति लगती होगी । ये फल उस शक्ति को बनाये रखने

Edit with WPS Office

के लिए ही स्वामी जी ने भेजें हैं ताकि अमृत वर्षा में कमी न आ जाए । यह सुनकर साधु बहुत लज्जित हुआ । इसके बाद उसने स्वामी दयानन्द जी की कुटिया पर जाकर क्षमा याचना की ।

14. सुनो नहीं , अमल करो :

एक व्यक्ति महात्मा बुद्ध के पास सत्संग के लिए अक्सर आया करता था । बुद्ध उपदेश में प्रायः कहा करते थे , लोभ , द्वेष , और मोह पाप के मूल हैं । हिंसा करना और असत्य बोलना घोर अधर्म है । यदि सच्ची शान्ति चाहते हो , तो इन दुर्गुणों को त्याग दो । वह व्यक्ति भगवान बुद्ध के उपदेश तो सुनता , लेकिन दुर्गुणों को त्याग नहीं पा रहा था । हर क्षण उसका मन अशान्त रहता था । एक दिन बुद्ध के पास पहुंच कर उसने कहा , भगवन् में काफी दिनों से आपके उपदेश सुनता आ रहा हू , लेकिन उनका प्रभाव नहीं पड़ा । मन बहुत अशान्त रहता है । बुद्ध ने मुस्कराकर पूछा , तुम कहां के रहने वाले हों ? उस व्यक्ति ने कहा , श्रावस्ती का । बुद्ध ने अगला सवाल किया , श्रावस्ती यहां से कितनी दूर है ? जब व्यक्ति ने दूरी बता दी , तो बुद्ध ने उससे फिर पूछा , तुम वहां का रास्ता जानते हो ? उसने कहा , बहुत अच्छे तरीके से । तब बुद्ध ने फिर पूछा , रास्ता जानने के बाद उस पर चले बिना क्या तुम श्रावस्ती पहुंच सकते हो ? उसने उत्तर दिया , वहां पहुंचने के लिए तो चलना ही पड़ेगा । बुद्ध ने कहा , वत्स , सिर्फ प्रवचन सुनने या कल्याण का मार्ग जानने से कुछ नहीं होता , तुम्हें उस पर चलना पड़ेगा । उन्हें अपने आचरण में ढालो , फिर देखना कि किस प्रकार तुम्हारा मन शान्ति का अनुभव करता है । उस व्यक्ति ने ऐसा ही किया और उसे दुर्गुणों से छुटकारा मिल गया ।

15. दया धर्म का मूल :

महाराज युधिष्ठिर समय समय पर ऋषियों के आश्रम में पहुंचकर उनसे सत्संग किया करते थे । एक बार वह महर्षि मार्कण्डेय जी के दर्शन के

Edit with WPS Office

लिए पहुंचे । उन्होंने महर्षि जी से प्रश्न किया , सर्वोत्तम धर्म और सर्वोत्तम ज्ञान क्या है ? महर्षि ने बताया , क्रूरता का अभाव अर्थात दया सबसे महान धर्म है । क्षमा सबसे बड़ा बल है । सत्य सबसे उत्तम व्रत है और परमात्मा के तत्व का ज्ञान ही सर्वोत्तम ज्ञान है । जो व्यक्ति सांसारिक वस्तुओं में सुख न खोजकर परमात्मा को ही सुख का स्त्रोत मानकर सत्कर्मों व भक्ति में लगा रहता है , वह न कभी दुखी होता है और न निराश । अतः हृदय में दया और करुणा की भावना रखने वाला ही सबसे बड़ा धर्मात्मा और ज्ञानी है ।

महर्षि मार्कण्डेय युधिष्ठिर को उपदेश देते हुए कहते हैं , राजन् , तुम सभी प्राणियों को भगवान स्वरूप मानकर उन पर दया करो । मैं सबका स्वामी हूं -- ऐसा अंहकार कभी पास न आने देना । अपने को स्वामी नहीं , सेवक समझने से ही राजा का कल्याण होता है । जो व्यक्ति राग , द्वेष , से मुक्त होकर सबके कल्याण की कामना करता है , उसके कल्याण के लिए प्रभु भी तत्पर रहते हैं ।

16. आत्मनिर्भरता की प्रेरणा :

आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती जी मुंबई में आर्य समाज मंदिर में प्रवचन कर रहे थे । प्रवचन के बाद एक व्यवसायी ने स्वामी जी को प्रणाम किया तथा अपने दस वर्षीय पुत्र को आशीर्वाद देने की प्रार्थना की ।

स्वामी जी ने उससे पूछा , बेटा अपना काम स्वयं करते हो या नौकरों से करवाते हो ? उसने विनम्रतापूर्वक कहा , माता पिता मुझे कोई कार्य करने ही नहीं देते , नौकरों से करवाते हैं । स्वामी जी ने उसे समझाया , आज से अपना काम स्वयं करने का संकल्प लो । प्रातः सूर्योदय से पहले शैय्या त्यागकर हाथ - मुंह धोकर सबसे पहले माता पिता को प्रणाम किया करो । अपनी पुस्तकें आदि स्वयं उठाया करो । नौकरों पर निर्भर रहने से तुम आलसी बन जाओगे । जो काम खुद से न हो सकें , उसके लिए नौकरों या दूसरों की सहायता लिया करो ।

स्वामी जी ने उसके पिता की ओर देखकर कहा , तुम धनिक लोग अपने बच्चों को आलसी बनाने के अपराधी हो । बच्चों को अपना काम

Edit with WPS Office

स्वयं करने दो , तभी वे आत्मनिर्भर बन सकेंगे । स्वामी जी के प्रेरणादायक , कल्याणकारी उपदेश को सुनकर पिता - पुत्र उनके सामने नतमस्तक हो गये ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 59.नमस्ते : एक आदर्श अभिवादन

नमस्ते शब्द भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है और इसका मूल संस्कृत भाषा से है । यह दो शब्दों ' नमः , और ' ते , से मिलकर बना है , जिसका अर्थ होता है " मैं आपको सम्मान देता हूं " या आपका मान करता हूं । संस्कृत व्याकरण में " नम „ अव्यय होता है , जिसका मतलब है कि इसका रुप नहीं बदलता -- यह सदा एक जैसा रहता है , चाहे वह किसी भी लिंग या विभक्ति में हो ।

नमस्ते का सामान्य अर्थ : सत्कार और सम्मान होता है , और इसे अभिवादन के लिए आदर सूचक शब्दों में सबसे श्रेष्ठ माना जाता है ।

नमः के विविध अर्थ : ______

" नमः „ शब्द के अनेक शुभार्थ होते हैं जैसे ___

- दूसरे व्यक्ति या पदार्थ को अपने अनुकूल: बनाना ।
- पालन पोषण करना ।
- अन्न और जल देना ।
- वाणी से बोलना ।
- और कभी कभी दण्ड देना भी ।

Edit with WPS Office

वेदों और अन्य प्राचीन भारतीय ग्रंथों (जैसे -रामायण , महाभारत) में ' नमस्ते , शब्द का सर्वत्र प्रयोग मिलता है । वेदों को परम प्रमाण माना गया है इसलिए नमस्ते शब्द का महत्व वैदिक युग से ही स्थापित है ।

नमस्ते का वेदोक्त प्रयोग :

वेदों में नमस्ते का प्रयोग अलग अलग संदर्भों में किया गया है । कुछ प्रमुख वैदिक उद्धरण इस प्रकार है :

1. ___ परमेश्वर के लिए

- ***" दिव्य दैव नमस्ते अस्तु „*** (अथर्ववेद. 2/2/1) --- हे प्रकाशस्वरूप देव , आपको नमस्ते हो ।
- ***" विश्वकर्मन नमस्ते पाह्यस्मान „*** (अथर्ववेद. 2/35/4)
- ***" तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः „*** (अथर्ववेद. 10/7/32) सृष्टिपालक परमेश्वर के लिए हम नमन करते हैं ।
- ***" नमस्ते भगवन्नस्तु „*** (यजुर्वेद. 36/21) हे ऐश्वर्यासम्पन्न ईश्वर आपको नमस्ते ।

2. ___ बड़ों के लिए

- ***नमस्ते राजन्*** (अथर्ववेद. 1/10/2) हे राष्ट्रपति , आपको नमस्ते ।
- ***तस्मै यमाय नमो: अस्तु मृत्यवे*** (अथर्ववेद. 6/28/3) दण्डदाता यमराज को नमस्ते ।
- ***" नमस्ते अधिवाकाय „*** (अथर्ववेद. 6/13/2) उपदेशक और अध्यापक को नमस्ते ।

3. ___ सभी को (बड़े , छोटे , बराबर)

- ***" नमो महदभयो नमो अभ्रकेभयों नमो युवभ्य „*** (ऋग्वेद. 1/27/13) बड़ों , बच्चों , और जवानों को नमस्ते ।
- ***" नमो ह्रस्वाय नमो बृहते „*** (यजुर्वेद. 16/30) छोटे और बड़े सभी को नमस्ते ।
- ***" नमो ज्येष्ठाय व कनिष्ठाय च „*** (यजुर्वेद. 16/32) सबसे

Edit with WPS Office

बड़े और सबसे छोटे को नमस्ते ।

नमस्ते का वैज्ञानिक महत्व :

नमस्ते केवल एक सांस्कृतिक परंपरा नहीं है , बल्कि इसका वैज्ञानिक महत्व भी है । जब हम दोनों हाथों को जोड़ते हैं , तो हाथों के तालु में स्थित विशेष अंश मस्तिष्क और हृदय से जुड़े स्त्रायु माध्यमों को उत्तेजित करते हैं । इससे हमारे हृदय और मस्तिष्क को लाभ होता है , जिससे शरीर में ऊर्जा का प्रवाह सुचारू होता है ।

नमस्ते की चार प्रमुख क्रियाएं :

भारतीय ऋषियों के अनुसार , जब भी आप किसी का अभिवादन करें , तो चार प्रमुख क्रियाएं करनी चाहिए ।

सिर झुकाना ।

हाथ जोड़ना ।

नमस्ते जी , बोलना ।

बड़ों के पैर छूना (यदि सामने वाला व्यक्ति आपसे बड़ा हो)

यदि सामने वाला व्यक्ति आपसे बराबर या छोटा है , तो चौथी क्रिया (पैर छूने) को छोड़ सकते हैं , लेकिन बाकी तीन क्रियाएं करनी ही चाहिए ।

शुभ अभिवादन का संदेश :

अतः नमस्ते शब्द न केवल एक अभिवादन है , बल्कि यह भारतीय संस्कृति और मूल्यों का प्रतिबिम्ब है । इसलिए , " good morning „ good afternoon „ good evening „जैसी अंग्रेजी अभिव्यक्तियों के के स्थान पर " **नमस्ते , सुप्रभात „ और शुभ रात्रि** जैसे वैदिक अभिवादन का प्रयोग करें ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 60.ब्रह्म मुहूर्त एवं दिनचर्या

प्राचीन वैदिक साहित्य और जीवनशैली में दिनचर्या को संतुलित और प्राकृतिक आधार पर रखा गया है , जिससे शारीरिक , मानसिक , और आत्मिक लाभ प्राप्त हो सकें । इसका एक महत्वपूर्ण अंग है " ब्रह्म मुहूर्त „ में जागरण , जिसे हमारे ऋषियों ने अत्यंत सुख और अनुकूल समय माना है ।

ब्रह्म मुहूर्त क्या है ..?

रात्रि का अन्तिम प्रहर , यानी सूर्योदय से लगभग डेढ़ घंटे पूर्व लगभग (4 से 5.30 बजे का समय) , ब्रह्म मुहूर्त कहलाता है । संस्कृत में ब्रह्म का अर्थ है " परम तत्व या परमात्मा „ और मूहर्त का अर्थ है समय का वह विशेष हिस्सा , जो जीवन के अनुकूल होता है । इस मूहर्त में जागना शारीरिक और मानसिक लाभों के लिए अत्यंत लाभकारी है । इस समय जागने से मनुष्य को सौंदर्य , बल , बुद्धि और स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है ।

ब्रह्म मूहर्त का महत्व और प्रकृति से संबंध :

ब्रह्म मुहूर्त का प्रकृति से गहरा संबंध है । जैसे ही यह समय आता है , पुरी प्रकृति चैतन्य हो जाती है । पक्षी मधुर स्वर में चहचहाने लगते हैं , कमल के फूल खिल उठते हैं । यह प्राकृतिक जागरण हमें भी संकेत देता है कि हमें भी इस समय में उठना चाहिए । यह समय न केवल प्रकृति के साथ हमारा सामंजस्य बैठाता है , बल्कि हमारी आन्तरिक ऊर्जा को भी जाग्रत करता है ।

आयुर्वेद में भी इस समय को संजीवनी शक्ति से भरा माना गया है , ब्रह्म मुहूर्त में टहलने और योग करने से शारीरिक और मानसिक ऊर्जा का

Edit with WPS Office

संचार होता है । इस समय की आयु को " अमृत तुल्य कहा गया है क्योंकि यह शरीर को ताजगी और स्फूर्ति से भर देती है ।

अध्ययन और आध्यात्मिकता :

ब्रह्म मुहूर्त को अध्ययन के लिए भी सर्वोत्तम समय बताया गया है । रात भर के आराम के पश्चात , जब शरीर और मस्तिष्क ताजगी से भरे होते हैं , तब इस समय में अध्ययन करने से समझने और स्मरण रखने की क्षमता अधिक होती है । यह समय मानसिक स्पष्टता और ध्यान के लिए भी आदर्श है ।

वेदों में भी इस समय का महत्व बताया गया है ___ उदाहरण के लिए

ऋग्वेद. 1/125/1 ___ जो लोग सूर्योदय से पहले उठते हैं , वे स्वस्थ , बलवान , दीघार्यु होते हैं । उनका जीवन सुख और समृद्धि से भरा होता है । यह मंत्र बताता है कि जो व्यक्ति इस समय को व्यर्थ नहीं गंवाते , उन्हें दीघार्यु और सशक्त जीवन की प्राप्ति होती है ।

सामवेद. 35/4 ___ में कहा गया है कि सूर्योदय से पहले उठकर शौच और स्नान कर लेना चाहिए , फिर ईश्वर की उपासना करनी चाहिए । इससे न केवल शारीरिक शुद्धि होती है , बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक समृद्धि भी होती है ।

अथर्ववेद. 7/16/2 ___ में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि जो लोग सूर्योदय के पश्चात भी सोते रहते हैं , उनका तेज और शक्ति क्षीण हो जाता हैं । इसका संदेश यही है कि आलस्य को त्याग कर सुबह जल्दी उठना चाहिए ताकि ऊर्जा और तेज बना रहे ।

ब्रह्म मुहूर्त में जागना केवल एक प्राचीन परंपरा नहीं है , बल्कि यह प्रकृति और आत्मा के बीच गहरे संबंध को समझने का मार्ग है । यह समय स्वास्थ्य , ज्ञान और आत्मिक विकास का स्त्रोत है । आधुनिक जीवन में भी , यदि हम इस दिनचर्या को अपनाते हैं , तो आयु वृद्धि के साथ साथ हमें मानसिक शांति , शारीरिक शक्ति और आध्यात्मिक उच्चाइयों की प्राप्ति हो सकती है ।

Edit with WPS Office

- ## { दिनचर्या }

प्रातः समय की वेला सोते हुए हम लोगों की आयु को धीरे-धीरे अर्थात दिन - दिन काटती है , ऐसा जानकर और आलस्य छोड़कर हम लोगों को रात्रि के चौथे प्रहर में जाग के विद्या , धर्म और परोपकार आदि व्यवहार में नित्य उचित वर्ताव रखना चाहिए । ____ (ऋग्वेद. 1/92/10)
जो मनुष्य रात्रि के चौथे प्रहर में जागकर शयन पर्यन्त व्यर्थ समय को नहीं जाने देते वे सुखी होते हैं , अन्य नहीं । ____ (ऋग्वेद. 1/113/5)
जो मनुष्य उषा से पहले शयन से उठ आवश्यक कर्म करके परमेश्वर का ध्यान करते हैं , वे बुद्धिमान और धार्मिक होते हैं । ____ (ऋग्वेद. 1/113/11)
हे स्त्री - पुरुषों ! आप लोग रात्रि के चौथे प्रहर में उठ और आवश्यक कृत्य करके वाहन वा पैरों से सूर्योदय से पहले शुद्ध वायु देश में भ्रमण करें तो आप लोगों को रोग कभी न प्राप्त होवे । ____ (ऋग्वेद. 4/14/4)
दिन और रात्रि के सन्धि में अर्थात सूर्योदय और अस्त के समय में परमेश्वर का ध्यान और अग्निहोत्र अवश्य करना चाहिए । ____ **(सत्यार्थ प्रकाश. चतुर्थ समुल्लास)**

- ## { जीवन की सफलता } ____

हे मनुष्यों ! तुम लोगों को चाहिए कि इस जगत में मनुष्य का शरीर धारण कर विद्या , उत्तम शिक्षा , अच्छा स्वभाव , धर्म , योगाभ्यास और विज्ञान का सम्यक् ग्रहण करके मुक्ति - सुख के लिए प्रयत्न करो , यही मनुष्य जीवन की सफलता है ऐसा जानो । ____ (यजुर्वेद. 35/22) ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

•61. महत्वपूर्ण वैदिक मंत्र अर्थ सहित :

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्य: स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकं सद् विप्रा बहुधा वदंत्यग्नि यमं मातरिश्वामाहु: ।। (ऋग्वेद. 1/164/46)

भावार्थ _____ जिसे लोग इन्द्र, मित्र , वरुण आदि कहते हैं , वह सत्ता केवल एक ही परमात्मा की है ऋषि लोग उसे भिन्न भिन्न नामों से पुकारते हैं ।

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमा : ।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआप : स प्रजापति: ।। (यजुर्वेद. 32/1)

भावार्थ _____ वह अग्नि (तेज युक्त) है , वह आदित्य (नाश - रहित) है , वह वायु (अनन्त बल युक्त) है , वह चन्द्रमा (हर्ष का देने वाला) है , वह शुक्र (उत्पादक) है , वह ब्रह्म (निरंतर व्यापक) है , वह आप (सर्वव्यापक) है , वह प्रजापति (सब प्राणियों का स्वामी) है ।

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमस: प्रस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।। (यजुर्वेद. 31/18)

भावार्थ _____ यदि मनुष्य इस लोक और परलोक के सुखों की इच्छा करें तो सबसे अति बड़े स्वयप्रकाश और आनंदस्वरुप अज्ञान के लेश से पृथक , वर्तमान परमात्मा को जान के ही मरणादि अथाह दु:ख सागर से पृथक हो सकतें हैं , यही सुखदायी मार्ग हैं , इससे भिन्न कोई भी मनुष्यों की मुक्ति का

Edit with WPS Office

मार्ग नहीं है ।

हिरण्यगर्भ: समवर्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेकऽआसीत् ।
स दाधार पृथिवी धामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।।
(यजुर्वेद. 13/4)

भावार्थ ______ हे मनुष्यों तुमको योग्य है कि सृष्टि के रचने से प्रथम परमेश्वर ही विद्यमान था । जीव गाढ़ निद्रा सुषुप्ति में लीन और जगत का कारण अत्यन्त सूक्ष्मावस्था में आकाश के समान एक रस स्थिर था , जिसने सब जगत को रच के धारण किया और जो अनन्त समय में प्रलय करता है , उसी परमात्मा को उपासना के योग्य मानों ।

पृथिंवि देवयजन्योषंध्यास्ते मूलं मा हिंꣳसिषं व्रजं गंच्छ गोष्ठानं वर्षंतु ते द्यौर्बंधान देंव सवितः परमस्यां पृथिव्याशतेन पाशैर्योऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मस्तमतो मा मौंक् ॥ यजुर्वेद 1/25

भावार्थ ______ विद्वान मनुष्य को पृथ्वी का राज्य तथा उसी पृथ्वी में तीन प्रकार के यज्ञ और औषधियां इनका नाश कभी न करना चाहिए । जो यज्ञ अग्नि में हवन किये हुए पदार्थों का धूम मेघमण्डल को जाकर शुद्धि के द्वारा अत्यंत सुख उत्पन्न करने वाला होता है , इससे यह यज्ञ किसी पुरुष को कभी छोड़ने योग्य नहीं है तथा जो दुष्ट मनुष्य है , उनको इस पृथ्वी पर अनेक बन्धनों से बांधे और उनको कभी न छोड़ें , जिससे की वे दुष्ट कर्मों से निवृत्त हो और सब मनुष्यों को चाहिए कि परस्पर ईर्ष्या - द्वेष से अलग होकर एक दूसरे की सब प्रकार सुख की उन्नति के लिए सदा यत्न करें ।

त्र्यंम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुंष्टिवर्धनम्। उर्वारुकमिंव बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्। त्र्यंम्बकं यजामहे सुगन्धिं पंतिवेदंनम्। उर्वारुकमिंव बन्धंनादितो मुंक्षीय मामुतंः ॥ यजु० 3/60

ी

भावार्थ ______ हम लोग जो शुद्ध गन्ध युक्त शरीर , आत्मा और समाज के बल को बढ़ाने वाला , ज्ञान कर्म और उपासना रुपी परमेश्वर है , उसकी निरंतर स्तुति करे । इनकी कृपा से जैसे -- खरबुजा फल पककर लता के संबंध से छूट कर अमृत के तुल्य होता है , वैसे हम लोग भी प्राण वा शरीर के वियोग से छूट जावे और मोक्षरूप सुख से श्रद्धा रहित कभी न होवे ।

Edit with WPS Office

समानी प्रपा सह वोऽन्नभाग: समाने योक्ते सह वो युनज्मि ।
सम्यठ्चोऽग्निं संपर्यतारा नाभिमिवाभित: ।। (अथर्ववेद. 3/30/6)

भावार्थ _____ जैसे अरे एक नाभि में सटकर एक पहिये को रथ का बोझ सुगमता से ले चलने योग्य करते हैं , ऐसे ही मनुष्य एक वेदानुकूल धार्मिक रीति पर चलकर अपना खान पान मिलकर करें , और मिलकर ही अग्नि को पूजें अर्थात परमेश्वर की उपासना करें , शारीरिक अग्नि को , जो जीवन और वीरपन का चिन्ह है , स्थिर रखें , हवन करके जलवायु शुद्ध रखें और शिल्प व्यवहार में प्रयोग करके उपकार करे और सुख से रहें ।

" प्रियं मां कृणु देवेषु प्रिय राजसु मां कृणु ।
प्रिय सर्वस्य पश्यंत उतं शूद्र उताये „ ।। (अथर्ववेद. 19/62/1)

भावार्थ _____ में सभी का प्रिय बनूं चाहें वह शूद्र हो या आर्य मनुष्य एक दूसरे की रक्षा तथा सहायता करें । न केवल मानवमात्र बल्कि सम्पूर्ण प्राणी मात्र को भी मित्र दृष्टि से ही देखें ।

वैदिक संस्कृति कर्म एवं पुरुषार्थ की संस्कृति है कर्महीन व्यक्ति को वेदों में दस्यु कहकर पुकारा गया । (अकर्मा दस्यु) ऋग्वेद. 10/22/8 ___ इसलिए वेद आजीवन कर्म करने की प्रेरणा देता है । इसके साथ यह भी कहता है कि कर्म भी इस प्रकार किया जाए की उसके फल में कर्ता की आसक्ति ना होने पाए अर्थात निष्काम कर्म करने की प्रेरणा वेद हमें देता है ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत : समा: ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरें ।। (यजुर्वेद. 40/2)

भावार्थ _____ इस प्रकार पुरुषार्थ की प्रेरणा देते हुए वेद कहते हैं कि हे पुरुष ! तेरा लक्ष्य है ऊपर उठना या उठाना , पुरुषार्थ करना है नीचे गिरना अवनति करना नहीं ।

Edit with WPS Office

उधानं ते पुरुष: नावयानम् -- अथर्ववेद. 8/1/5

भावार्थ _____ जीवन को निष्पाप बनाने के लिए दुष्ट चरित्र का त्याग आवश्यक है इसलिए वेदों में दुर्गुणों का त्याग तथा भद्र प्राप्ति की बात कही गई है ।

भद्रं कणोभि: श्रृणुयाम देवा भद्रं पंश्येमाक्षभिंर्यजत्रा: । (यजुर्वेद. 25/21)

भावार्थ _____ हम कानों से भद्र (अच्छा) ही सुनें तथा आंखों से भद्र ही देखें ।

सत्यं बृहध्तमुग्रं दीक्षा तपों ब्रह्म यज्ञ: पृथिवी धारयन्ति । (अथर्ववेद. 12/1/1)

भावार्थ _____ सत्य विस्तृत अथवा विशाल ज्ञान , क्षात्र बल , ब्रह्मचर्य आदि व्रत , सुख दुख , सर्दी - गर्मी , मान - अपमान आदि द्वन्द्वों को सहन करना , धन और अन्न , स्वार्थ - त्याग , सेवा और परोपकार की भावना ये गुण है , जो पृथ्वी को धारण करने वाले हैं । इन सब भावनाओं को एक शब्द ' धर्म , के द्वारा धारित की जाती है ।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा
मा शान्तिरेधि। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥ (यजुर्वेद के 36/17)

भावार्थ _____ आकाश में शांति हो , अन्तरिक्ष में शांति हो , पृथ्वी पर शांति हो , जल में शांति हो , औषधियों में शांति हो , वनस्पतियों में शांति हो , समस्त देवताओं में शांति हो , और यह सम्पूर्ण पृथ्वी शांतिमय हो जाएं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 62. त्रिगुणात्मक प्रकृति

त्रिगुणात्मक प्रकृति , जिसे वेदांत और अन्य वैदिक शास्त्रों में प्रमुखता से समझाया गया है , सृष्टि के तीन मौलिक गुणों -- सत्व (शुद्धि और ज्ञान) रजस् (क्रिया और ऊर्जा) और तमस् (अज्ञान और जड़ता) --- का सिद्धांत है । ये तीन गुण प्रकृति की सभी वस्तुओं और प्राणियों और घटनाओं में विद्यमान रहते हैं और इनके बीच का संतुलन ही सृष्टि के संचालन का आधार है । आइए इन तीन गुणों को शास्त्रीय प्रमाण के साथ विस्तार से समझते हैं ।

1.___ सत्व गुण (सत्य और ज्ञान का गुण)

सत्व गुण शुद्धि , ज्ञान और संतुलन और शांति का प्रतीक है । यह गुण उन सभी में प्रमुख होता है जो ज्ञान , चेतना और विकास से संबंधित है । जब सत्व गुण बढ़ता है , तब व्यक्ति के भीतर ज्ञान , आत्मसंयम धर्म और शांति का विकास होता है । यह गुण आत्मज्ञान और आध्यात्मिक उन्नति की दिशा में प्रेरित करता है ।

शास्त्र प्रमाण :

भगवद गीता . 14.6 में भगवान श्री कृष्ण सत्व गुण के संबंध में कहते हैं ;

अर्थ ____ सत्व गुण निर्मल और प्रकाशक है , जिससे शुद्धता और ज्ञान उत्पन्न होता है । यह ज्ञान और सुख से बांधता है ।

2. ___ रजस् गुण (क्रिया और ऊर्जा का गुण)

रजस् गुण सक्रियता , क्रियाशीलता , इच्छा और भौतिक गतिविधियों का प्रतिनिधित्व करता है । यह गुण व्यक्ति को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है और भौतिक संसार की इच्छाओं और महत्वकांक्षाओं की ओर खींचता है । रजस् गुण से प्रेरित व्यक्ति हमेशा किसी न किसी गतिविधि में लगा रहता है और सफलता , समृद्धि और भौतिक सुखों की प्राप्ति के लिए प्रयासरत होता है ।

Edit with WPS Office

शास्त्र प्रमाण :

भगवद गीता. 14.7 में रजस् गुण को इस प्रकार समझाया गया है ।

अर्थ ____ हे कौन्तेय , रजस् गुण को कामनाओं और कर्मों का जन्म दाता जानो , जो कर्मों के साथ शरीरधारी जीव को बांधता है ।

3. ___ तमस् गुण (अज्ञान और जड़ता का गुण)

तमस् गुण , आलस्य , अज्ञान ,जड़ता , और मानसिक अंधकार का प्रतीक है । यह व्यक्ति को निष्क्रियता , भ्रम और अज्ञानता की ओर ले जाता है । जब तमस् गुण प्रमुख होता है , तो व्यक्ति के विचारों और कार्यों में अव्यवस्था , आलस्य , और असंवेदनशीलता देखने को मिलती है । यह गुण व्यक्ति को मोह ,भ्रम और नकारात्मक में बांधता है ।

शास्त्र प्रमाण :

भगवद गीता. 14.8 में कहा गया है कि

अर्थ ____ हे भारत ! तमस् अज्ञान से उत्पन्न होता है , तो सभी प्राणियों के लिए मोहकारक है । यह प्रमाद , आलस्य और निद्रा में बांधता है ।

त्रिगुणों की परस्पर क्रिया :

सृष्टि के हर जीव और वस्तु में ये तीन गुण विभिन्न अनुपात में पाएं जाते हैं । किसी व्यक्ति या वस्तु में कौन सा गुण प्रबल होगा , यह उसके कर्म , भावनाओं , और मानसिक स्थिति पर निर्भर करता है । त्रिगुणों के मिश्रण से ही जीवन में विविधता और परिवर्तन आते हैं । एक व्यक्ति सत्व गुण की प्रधानता से शांत , ज्ञानवान और धर्मपरायण होता है ; रजस् की प्रधानता से कर्मशील , महत्वाकांक्षी और भौतिक सुखों का इच्छुक होता है ; जबकि तमस् की प्रधानता से आलसी , जड़ और अज्ञानी बनता है ।

विवेकानुसार गुणों का विकास :

गीता में श्री कृष्ण यह भी बताते हैं कि व्यक्ति अपने विवेक और आत्मसंयम के माध्यम से सत्व गुण को विकसित कर सकता है । रजस् और तमस् से ऊपर उठकर सत्व के मार्ग पर चलने से आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है और मोक्ष का मार्ग खुलता है ।

Edit with WPS Office

भगवद गीता. 14.20 में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि ___

अर्थ ____ जब जीव इन तीन गुणों को पार कर लेता है , तो वह जन्म - मृत्यु , जरा (बुढ़ापा) और दु:ख से मुक्त हो जाता है और अमृत (मोक्ष) को प्राप्त करता है ।

निष्कर्ष : त्रिगुणात्मक प्रकृति सृष्टि और जीवन की जटिलता को समझने का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है । सत्व , रजस् और तमस् -- ये तीनों गुण हमारे जीवन के हर पहलू को प्रभावित करते हैं । जीवन में संतुलन और आध्यात्मिक उन्नति के लिए सत्व गुण की प्रधानता आवश्यक है , लेकिन रजस् और तमस् भी जीवन की गतिशीलता और चुनौतियों के लिए महत्वपूर्ण है । वेदों और भगवद गीता जैसे शास्त्रों में त्रिगुण सिद्धांत का गहन वर्णन मिलता है , जो हमें आत्मनिरीक्षण और आत्म - संयम के माध्यम से जीवन को श्रेष्ठ पूर्ण बनाने की प्रेरणा देता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 63. स्वप्न अवस्था

शास्त्रों के अनुसार , स्वप्नों की उत्पत्ति और उनके पीछे छिपे रहस्यों का संबंध जीवात्मा के पूर्व जन्मों के कर्मों और संस्कारों से है । विशेष रूप से ब्रह्म सूत्र , उपनिषद और वैदिक ग्रंथों में स्वप्नों की व्याख्या को ईश्वर की योगमाया और जीवात्मा के कर्मफल से जोड़ा गया है । आइए इसे नए दृष्टिकोण से समझते हैं ।

1. ____ स्वप्न: कर्म और संस्कारों का प्रतिबिम्बं :

Edit with WPS Office

ब्रह्म सूत्र (अध्याय 3 , पाद 2 , श्लोक. 1-6) के अनुसार , जीवात्मा ईश्वर का अंश है और उसमें ईश्वर के गुण छिपे रहते हैं । जन्म जन्मांतरों के कर्म और संस्कार जीवात्मा की चेतना पर गहरे प्रभाव डालते हैं , और इन्ही कर्म संस्कारों के आधार पर स्वप्नों का निर्माण होता है । ईश्वर अपनी योगमाया के माध्यम से जीवात्मा को उसके पूर्व जन्मों के कर्मों के अनुसार विभिन्न दृश्य दिखाते हैं ।

स्वप्न वास्तव में हमारे जीवन का प्रतिबिम्ब होते हैं , लेकिन ये दृश्य वास्तविकता नहीं होते । यह मात्र माया है , जिसमें जीवात्मा उन कर्मों और इच्छाओं का अनुभव करता है जो उसके अंतर्मन में छिपे होते हैं ।

2. ____ स्वप्न: माया की एक खेल :

शास्त्रों में स्वप्नों को माया का खेल कहा गया है । जागृत अवस्था की तरह यह सृष्टि वास्तविक नहीं होती । स्वप्न में हमें जो दृश्य दिखते हैं , वे हमारे पूर्व कर्मों के आधार पर निर्मित होते हैं , लेकिन इनमें कोई स्थायित्व नहीं होता । यही कारण है कि स्वप्न में किए गए कर्मो का वास्तविक जीवन में कोई फल प्राप्त नहीं होता है ।

बृहदारण्यक उपनिषद् (4.3.9.10) में स्वप्न की व्याख्या करते हुए कहा गया है ।

" स्वप्न की अवस्था में जीवात्मा इस लोक और परलोक दोनों का अनुभव करता है । वह सुख - दुख का भोग करता है , परन्तु यह अनुभव केवल उसकी वासनाओं और कल्पनाओं का परिणाम होता है । „

इसका अर्थ यह है कि स्वप्न की अवस्था में जीवात्मा मानसिक रूप से एक नई सृष्टि का निर्माण करता है , जिसमें वह अपने कर्मों और इच्छाओं के आधार पर विभिन्न अनुभवों से गुजरता है । यह अनुभव वास्तविक नहीं होते , लेकिन जीवात्मा की चेतना पर गहरा प्रभाव डालते हैं ।

3. ____ योगमाया और स्वप्न का संबंध :

ईश्वर ने स्वप्न को योगमाया के माध्यम से जीवात्मा के कर्मफल के

Edit with WPS Office

आभास के लिए उत्पन्न किया है । जागृत अवस्था में जो कर्म किए जाते हैं , उनका परिणाम निश्चित होता है , परन्तु स्वप्न में किया गया कोई भी कर्म वास्तविकता में फलित नहीं होता । यह ईश्वर की व्यवस्था का एक हिस्सा है , जहां स्वप्न के माध्यम से जीवात्मा को अपने कर्मों का बोध कराया जाता है , लेकिन उसका कोई स्थायी प्रभाव नहीं पड़ता ।

ब्रह्म सूत्रों में यह स्पष्ट किया गया है ।

" स्वप्न में जीवात्मा को उसके कर्मों के अनुसार दृश्य दिखाएं जातें हैं , जो ईश्वर की योगमाया से उत्पन्न होते हैं । यह दृश्य अस्थायी होते हैं और जागृत अवस्था की तरह सत्य नहीं होते । „

इससे स्पष्ट होता है कि स्वप्न के दृश्य केवल मानसिक प्रक्रियाओं और कर्मों का परिणाम होते हैं , जिनका भौतिक जगत में कोई वास्तविक अस्तित्व नहीं होता ।

4. ____ स्वप्न और जागृत अवस्था का भेद :

स्वप्न और जागृत अवस्था के बीच का मुख्य अंतर यह है कि जागृत अवस्था में किए गए कर्मो का फल अवश्य भोगना पड़ता है जबकि स्वप्न में यह नियम लागू नहीं होता । स्वप्न की सृष्टि माया पर आधारित होती है , जो जीवात्मा को अस्थायी रुप से अपने कर्मों के प्रभाव का अनुभव कराती है । जागृत अवस्था में , कर्मों का सीधा प्रभाव जीवन पर पड़ता , जबकि स्वप्न केवल मानसिक गतिविधियों का खेल होता है ।

सपना वास्तव में देखता कौन है ?

कठोपनिषद. (2.2.8) में उल्लेख किया गया है **" यं एष सुप्तेषु जागर्ति कामं कामं पुरुषों निमिमाण „** --- इसका अर्थ है कि जब शरीर सो जाता हैं , तब पुरुष रुपी जीवात्मा जागृत रहता है और नाना प्रकार के भोगों की रचना करता है । यानी शरीर के सो जाने पर भी जीवात्मा की चेतना सक्रिय रहती है , और यही चेतना स्वप्नों का सृजन करती है । अतः स्वप्न वास्तव में जीवात्मा द्वारा ही देखा जाता है ।

स्वप्न की सृष्टि के बारे में श्रुति स्पष्ट करती है कि स्वप्न में जो वस्तुएं देखी

Edit with WPS Office

जाती है , वे वास्तविक नहीं होती । स्वप्न की दुनिया अधूरी और अनियमित होती हैं । यह जीवात्मा की चेतना का खेल है , जहां जागृत अवस्था में देखी ,सुनी , या अनुभव की गई वस्तुएं अनोखे और विचित्र ढंग से प्रकट होती हैं । प्रश्नोपनिषद में भी यही बताया है कि जीवात्मा स्वप्न में जागृत अवस्था में सुनी और देखी गई वस्तुओं को पुनः अनुभव करता
है , किन्तु यह अनुभव अजीब और अप्रत्याशित होता है । वह देखी और अनदेखी , सुनी और अनसुनी वस्तुओं को भी स्वप्न में देख सकता है , और कभी कभी लोक और परलोक की वस्तुओं का भी दर्शन करता है ।

स्वप्न पूरी तरह से व्यर्थ नहीं होते । कुछ अवसरों पर वे भविष्य में होने वाली शुभ या अशुभ घटनाओं का संकेत भी देते हैं । इस प्रकार यह समझा जा सकता है कि स्वप्न केवल जीवात्मा की स्वतंत्र रचना नहीं है । वास्तव में , यह ईश्वर की योगमाया और उसकी शक्ति के माध्यम से घटित होता है । जीवात्मा इस प्रक्रिया में सिर्फ एक निमित्त है , जबकि वास्तविक नियंत्रण और संचालन परमेश्वर की शक्ति से होता है ।
इस प्रकार स्वप्नों का अनुभव जीवात्मा की चेतना और ईश्वर की माया के मिलन का परिणाम है । यह केवल मन का खेल नहीं , बल्कि एक दैवीय व्यवस्था का हिस्सा है , जहां स्वप्न जीवन के भूत , भविष्य , और कर्मों के बंधनों का सूचक बनते है ।

निष्कर्ष ___ शास्त्रों के अनुसार , स्वप्न जीवात्मा के लिए एक मानसिक और माया से निमित्त अवस्था है , जो उसके पूर्व जन्मों के कर्मों और संस्कारों से प्रेरित होती है । स्वप्न की सृष्टि वास्तविकता नहीं होती , बल्कि यह जीवात्मा की इच्छाओं और कर्मों का प्रतिबिम्ब होती है । यह ईश्वर की योगमाया के माध्यम से उत्पन्न होती है , जिससे जीवात्मा को कर्मफल का आभास होता है , लेकिन इसका कोई स्थायी प्रभाव नहीं होता । इस प्रकार , स्वप्न माया का एक खेल है , जो जीवात्मा को वास्तविक जीवन में इसका कोई प्रत्यक्ष परिणाम नहीं होता ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 64. रामायण की नैतिक शिक्षाएं एवं उनका व्यावहारिक अनुप्रयोग

रामायण न केवल एक धार्मिक ग्रंथ है , बल्कि नैतिकता और आदर्श जीवन का एक उत्कृष्ट उदाहरण भी है । इसके पात्रों और घटनाओं के माध्यम से हमें जीवन में नैतिकता कर्तव्य ,धर्म , और संयम के महत्व को समझने का अवसर प्राप्त होता है । रामायण की शिक्षाएं आज भी हमारे जीवन में उतनी ही प्रासंगिक है , जितनी प्राचीन काल में थी । आइए कुछ महत्वपूर्ण नैतिक शिक्षाओं और उनके व्यावहारिक प्रयोगों को समझते हैं ।

1. धर्म और कर्तव्य पालन (मर्यादा पुरुषोत्तम का आदर्श)

रामायण की सबसे प्रमुख नैतिक शिक्षा है धर्म का पालन और कर्तव्य के प्रति निष्ठा । भगवान श्री राम को " मर्यादा पुरुषोत्तम ,, कहा जाता है , जिसका अर्थ है कि उन्होंने हर परिस्थिति में धर्म और मर्यादा का पालन किया है । चाहे वह पिता के वचन का पालन हो , भाई के प्रति प्रेम हो , या राज्य और प्रजा के प्रति कर्तव्य हो , राम ने कभी धर्म का त्याग नहीं किया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- जीवन में चाहे कैसी भी कठिनाइयां आएं , हमें अपने जीवन कर्तव्यो और जिम्मेदारियों से विमुख नहीं होना चाहिए ।
- अपने परिवार , समाज , और राष्ट्र के प्रति ईमानदार और निष्ठावान रहना ।
- किसी भी स्थिति में सच्चाई और धर्म का साथ न छोड़ना ।

Edit with WPS Office

2. वचनबद्धता (प्रतिबद्धता)

रामायण में राजा दशरथ द्वारा कैकेयी को दिए गए वचन की रक्षा के लिए श्री राम का वनवास जाना किसी भी परिस्थिति में वचन पालन की उत्कृष्ट शिक्षा देता है । उन्होंने कैकेयी को दिए गए वचन का पालन किया , भले ही यह उनके लिए कितना भी कष्टदायक क्यों न हो , श्री राम ने भी अपने पिता के वचन का आदर करते हुए वनवास स्वीकार किया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- हमें अपने वचनों का पालन करना चाहिए , चाहे परिस्थिति कैसी भी हो ।
- समाज और व्यक्तिगत संबंधों में विश्वास और ईमानदारी को बनाए रखना ।
- जब हम कोई वचन देते हैं , तो उसे पूरा करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी है ।

3. समर्पण और त्याग (सीता का आदर्श)

माता सीता ने श्री राम के साथ वनवास का कठिन जीवन स्वीकार कर अपने पतिव्रता धर्म का पालन किया । यह शिक्षा देती है कि परिवार और प्रियजनों के प्रति त्याग और समर्पण कितना महत्वपूर्ण है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- पारिवारिक जीवन में त्याग , सहनशीलता और समर्पण के गुणों को अपनाना ।
- संकट के समय अपने परिवार के साथ खड़े रहना और एक दूसरे का सहारा बनना ।

4. भाईचारे का आदर्श (लक्ष्मण और भरत की निष्ठा)

लक्ष्मण का श्रीराम के प्रति अटूट प्रेम और सेवा भाव भाईचारे का महान उदाहरण हैं । उन्होंने अपने भाई के साथ हर परिस्थिति में कंधे से कंधा मिलाकर खड़े रहकर अपने कर्तव्य का निर्वाहन किया । भरत ने भी

Edit with WPS Office

राज्य का त्याग कर श्रीराम की चरण पादुका को सिंहासन पर रखा और पूरी निष्ठा से राज्य का संचालन किया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- परिवार में भाई - बहनों के बीच आपसी प्रेम और सम्मान को बनाए रखना ।
- दूसरों के प्रति निस्वार्थ सेवा भाव और समर्पण को जीवन में अपनाना ।
- सच्ची मित्रता और भाईचारे का आदर करना ।

5. विनम्रता और आदर्श नेतृत्व (राम का शासन)

श्री राम ने अपने जीवन और शासनकाल में विनम्रता , न्याय , और आदर्श नेतृत्व का उदाहरण प्रस्तुत किया । रामराज्य में सभी प्रजा का ख्याल रखा गया , और न्याय , शांति और समृद्धि का शासन स्थापित किया गया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

नेतृत्व में विनम्रता और न्याय को अपनाना , चाहे वह व्यक्तिगत जीवन हो या कार्यक्षेत्र ।

अपने अधीनस्थों के प्रति सम्मान और करुणा का भाव रखना ।

समाज और समुदाय के कल्याण के लिए कार्य करना ।

6. मैत्री और विश्वास (हनुमान और सुग्रीव का समर्पण)

हनुमान जी का श्रीराम के प्रति अद्वितीय समर्पण और सुग्रीव के साथ राम की मैत्री हमें निस्वार्थ सेवा और विश्वास का महत्व सिखाती हैं । हनुमान ने अपने कर्तव्यों को ईमानदारी और निष्ठा से निभाया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- मित्रता में निस्वार्थ भाव और विश्वास का पालन करना ।
- अपने कर्तव्यों को पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ निभाना ।
- दूसरों की सहायता और सेवा के लिए सदैव तत्पर रहना ।

Edit with WPS Office

7. क्षमा और सहनशीलता (विभीषण का उदाहरण)

विभीषण ने अपने भाई रावण के अन्यायपूर्ण कृत्यों के विरुद्ध खड़े होकर धर्म का साथ दिया । यह क्षमा और सहनशीलता की शिक्षा देता है । उन्होंने श्रीराम से जुड़कर धर्म की रक्षा की ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- अन्याय और अधर्म के विरुद्ध खड़ा होना , चाहे वह कितनी भी कठिन परिस्थिति क्यों न हो ।
- क्षमा के महत्व को समझना और जीवन में सहनशीलता को स्थान देना ।
- सत्य और धर्म के मार्ग पर अडिग रहना , भले ही इसका सामना करने के लिए हमें विरोध सहना पड़े ।

8. अहंकार का पतन (रावण का अंत)

रावण का चरित्र यह सिखाता है कि अहंकार और अन्याय का अंत निश्चित है । चाहे व्यक्ति कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो , जब वह अधर्म के मार्ग पर चलता है तो उसका विनाश अवश्य होता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- अहंकार से दूर रहकर विनम्रता को अपनाना ।
- शक्ति और संपत्ति का दुरुपयोग न करना ।
- न्याय और सत्य के मार्ग पर चलते हुए अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना ।

निष्कर्ष :

रामायण हमें जीवन जीने की कला सिखाती हैं । इसमें वर्णित नैतिक शिक्षा हमें यह बतातीं है कि कैसे हम अपने व्यक्तिगत , पारिवारिक और सामाजिक जीवन में सही आचरण , धर्म और मर्यादा का पालन कर सकते हैं । आज के समय में इन शिक्षाओं का व्यावहारिक रूप से पालन करके हम एक सफल , संतुलित और सशक्त जीवन जी सकते हैं ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 65. महाभारत की नैतिक शिक्षाएं एवं व्यावहारिक अनुप्रयोग

महाभारत एक विशाल महाकाव्य है , जिसमें नैतिकता , धर्म , कर्तव्य और जीवन की गहरी समझ से जुड़ी अनेक शिक्षाएं निहित है । यह न केवल एक महान युद्ध की कथा है, बल्कि इसमें जीवन के हर पक्ष को समझने वाले महत्वपूर्ण दर्शन और नैतिक सिद्धांत भी समाहित है । महाभारत की शिक्षाएं आज भी हमारे जीवन में अत्यधिक प्रासंगिक हैं और उनके व्यावहारिक प्रयोग से हम एक संतुलित और नैतिक जीवन जी सकते हैं । आइए कुछ प्रमुख नैतिक शिक्षाओं और उनके व्यावहारिक प्रयोग को समझते हैं ।

1. धर्म का पालन (धर्म और अधर्म के बीच चुनाव)

महाभारत का सबसे महत्वपूर्ण संदेश धर्म और अधर्म के मध्य चुनाव का है । अर्जुन और कौरवों के बीच युद्ध न केवल सत्ता का था , बल्कि धर्म और अधर्म के मध्य संघर्ष का प्रतीक था । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी , यह सिखातें हुए कि धर्म का पालन करना जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

जीवन में हमें हमेशा धर्म और नैतिकता के आधार पर निर्णय लेना चाहिए ।

चाहे परिस्थितियां कितनी भी कठिन हो , हमें सत्य और न्याय का

Edit with WPS Office

साथ देना चाहिए ।

कठिनाइयों के समय भी नैतिकता के प्रति समर्पित रहना आवश्यक है ।

2. कर्तव्य और निस्वार्थ कर्म (भगवद गीता का उपदेश)

भगवद गीता, जो महाभारत का एक भाग है , ज्ञान तथा कर्म योग का सिद्धांत प्रस्तुत करता है । श्रीकृष्ण ने अर्जुन को सिखाया कि उसे अपने कर्तव्यों का पालन बिना फल की चिंता किए करना चाहिए । कर्म का फल परमात्मा पर छोड़ देना चाहिए और अपने कर्तव्यों को निष्ठा से निभाना चाहिए ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- हमें अपने कर्तव्यों को पूरी निष्ठा और समर्पण के साथ निभाना चाहिए ।
- कर्म करते समय फल की अपेक्षा से मुक्त रहना चाहिए , इससे मन को शांति और स्थिरता प्राप्त होती हैं ।
- कार्यक्षेत्र या व्यक्तिगत जीवन में जब चुनौतियां आती हैं , तब भी हमें अपने कार्य को ईमानदारी से करते रहना चाहिए ।

3. शांति और सहनशीलता (भीष्म का त्याग और धृतराष्ट्र का दृष्टांत)

भीष्म पितामह का जीवन त्याग और सहनशीलता का प्रतीक है । उन्होंने अपने पिता की प्रसन्नता के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत लिया और हस्तिनापुर के प्रति अपना कर्तव्य निभाया । वहीं , धृतराष्ट्र का अंधा प्रेम अपने पुत्रों के प्रति उनकी सहनशीलता और कर्तव्यहीनता को दर्शाता है , जिसने पूरे राज्य को विनाश की ओर धकेल दिया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- कठिन परिस्थितियों में संयम और धैर्य बनाए रखना ।
- व्यक्तिगत स्वार्थ के ऊपर समाज और परिवार के हित को प्राथमिकता देना ।
- निर्णय लेते समय भावनाओं पर नियंत्रण रखते हुए विवेक से

Edit with WPS Office

काम लेना ।

4. अंहकार का अंत (दुर्योधन तथा कर्ण का पतन)

महाभारत में दुर्योधन का अंहकार और अधर्म ही उसके पतन का कारण बना । उसकी शक्ति और लालसा ने उसे अंधा कर दिया और अंत में उसने सब कुछ खो दिया । यह अंहकार के विनाशकारी परिणामों को दर्शाता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- हमें अंहकार से दूर रहकर विनम्रता और विनयशीलता का पालन करना चाहिए ।
- शक्ति और संपत्ति का दुरुपयोग करने से बचना चाहिए ।
- दूसरों के प्रति करुणा और सहानुभूति का भाव रखना चाहिए , और अपने कार्यों में संतुलन बनाए रखना चाहिए ।

5. मैत्री और विश्वास (कृष्ण और अर्जुन की मित्रता)

महाभारत में श्री कृष्ण और अर्जुन की मित्रता एक आदर्श उदाहरण है , श्रीकृष्ण ने अर्जुन को हर कठिनाई में मागदर्शन दिया और युद्ध में उसका सारथी बनकर निस्वार्थ भाव से उसकी सहायता की ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- सच्ची मित्रता में निस्वार्थता और विश्वास को स्थान देना चाहिए ।
- मित्रों की कठिनाइयों में उनका साथ देना और सही मार्गदर्शन प्रदान करना मित्रता का महत्वपूर्ण अंग है ।
- रिश्तों में ईमानदारी और विश्वास को बनाए रखना जरूरी है ।

6. स्त्री सम्मान (द्रोपती का अपमान और उसके परिणाम)

महाभारत का एक महत्वपूर्ण अध्याय द्रोपती का अपमान है , जिसने युद्ध की नींव रखी । द्रोपती के अपमान ने यह सिखाया कि किसी भी स्त्री का अपमान अधर्म है और इसका परिणाम विनाशकारी हो सकता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

Edit with WPS Office

- स्त्रियों का सम्मान करना समाज का नैतिक और सामाजिक दायित्व है ।
- हर व्यक्ति को समानता और सम्मान के साथ व्यवहार करना चाहिए , चाहे वह स्त्री हो या पुरुष ।
- हमें अपने समाज में स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा और उनके प्रति संवेदनशीलता दिखानी चाहिए ।

7. नैतिक नेतृत्व (श्री कृष्ण का नेतृत्व)

श्री कृष्ण ने महाभारत के युद्ध में नैतिक नेतृत्व का आदर्श प्रस्तुत किया । उन्होंने अर्जुन को न केवल युद्ध के दौरान मागदर्शन दिया , बल्कि जीवन के हर स्थिति में उसे नैतिकता का पाठ सिखाया । श्री कृष्ण ने बताया कि सही नेतृत्व वह हैं जो नैतिकता , धर्म और न्याय पर आधारित हो ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- नेतृत्व में नैतिकता और न्याय का पालन करना आवश्यक है ।
- चाहे व्यक्तिगत जीवन हो या कार्यक्षेत्र , हमें अपने निर्णय नैतिक आधार पर लेने चाहिए ।
- एक अच्छे नेता को दूसरों के कल्याण और समाज की भलाई के लिए कार्य करना चाहिए ।

8. क्षमा का महत्व (युधिष्ठिर का आदर्श)

युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के लिए और अपने राज्य के लिए कई बार क्षमा का उदाहरण प्रस्तुत किया । उन्होंने शांति और संवाद के माध्यम से समस्याओं के समाधान का प्रयास किया । यहां तक कि युद्ध के पश्चात भी , उन्होंने अपने शत्रुओं को क्षमा कर दिया ।

व्यावहारिक प्रयोग :

- क्षमा का महत्व समझना और इसे जीवन में अपनाना ।
- व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में किसी भी प्रकार के टकराव से बचने के लिए क्षमाशीलता को प्राथमिकता देना ।

Edit with WPS Office

- क्षमा करके हम न केवल दूसरों को बल्कि स्वयं को भी शांति और संतुलन में रख सकते हैं ।

निष्कर्ष :

महाभारत की नैतिक शिक्षाएं हमें जीवन के हर परिस्थिति में सही मार्गदर्शन प्रदान करती हैं । यह ग्रन्थ हमें सिखाता है कि नैतिकता , धर्म , सत्य और कर्तव्य का पालन कैसे किया जाए । इन शिक्षाओं का व्यावहारिक प्रयोग हमें व्यक्तिगत , पारिवारिक और सामाजिक जीवन में संतुलन , सफलता , और आत्म - संतोष की ओर ले जा सकता है । महाभारत का संदेश यही है कि जीवन में चुनौतियों और संघर्ष आएंगे , लेकिन हमें हमेशा धर्म , सत्य और कर्तव्य का मार्ग नहीं छोड़ना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 66.भगवत गीता की नैतिक शिक्षाएं एवं उनका व्यावाहरिक अनुप्रयोग

भगवत गीता केवल एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं है , बल्कि यह जीवन के विभिन्न परिस्थिति पर गहन नैतिक और व्यावाहरिक शिक्षा प्रदान करती है । इसमें दी गई शिक्षाएं न केवल आत्मिक उन्नति के लिए है , बल्कि जीवन की समस्याओं के समाधान के लिए भी अत्यंत प्रासंगिक हैं । यहां हम भगवत गीता से प्राप्त नैतिक शिक्षा और उसके व्यावहारिक प्रयोगों को विस्तार में देखेंगे ।

Edit with WPS Office

1. कर्तव्य पालन का महत्व (कर्मयोग)

नैतिक शिक्षा : भगवत गीता का मुख्य संदेश यह है कि व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन बिना किसी फल की अपेक्षा के करना चाहिए । यह कर्मयोग का सिद्धांत है , जिससे श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि कर्म करना मनुष्य का धर्म है , लेकिन कर्म का फल ईश्वर पर छोड़ देना चाहिए ।

प्रमुख श्लोक :

- ***कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।***
  मा कर्मफलहेतुभूमा ते सडग्ऽस्तकर्मणि ।। श्लोक .(2.47)

इस श्लोक में श्रीकृष्ण जी अर्जुन से कहते हैं कि कर्म करने का अधिकार मनुष्य का है , लेकिन फल की चिंता नहीं करनी चाहिए ।

व्यावहारिक प्रयोग :

आज के जीवन में , इस शिक्षा को अपनाने का अर्थ है कि हमें अपने कार्यों को पूरी निष्ठा और ईमानदारी से करना चाहिए , चाहे वह व्यक्तिगत हो या वेबसाइट जीवन । फल की अपेक्षा किए बिना कर्म करने से व्यक्ति मानसिक शांति और संतोष प्राप्त कर सकता है । उदाहरण के लिए , एक छात्र को अपनी परीक्षा की तैयारी पूरी निष्ठा से परिणाम की चिंता किए बिना करनी चाहिए । परिणाम पर ध्यान केन्द्रित होगा तो सुख और दुख उत्पन्न होते हैं । इसी तरह , एक व्यवसायिक व्यक्ति को अपने दायित्व का निर्वाहन पूर्ण सत्यनिष्ठा से करना चाहिए और परिणाम की चिंता किए बिना अपने प्रयासों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए । किसी से कोई भी अपेक्षा रखें बिना ही अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए ।

2. आत्मा की अमरता (ज्ञान योग)

भगवद्गीता में आत्मा को अविनाशी और अमर बताया गया है । शरीर नाशवान है , लेकिन आत्मा शाश्वत और अजर अमर है । श्री कृष्ण कहते हैं - मृत्यु तो केवल शरीर की होती हैं , आत्मा कभी नष्ट नहीं होता ।

प्रमुख श्लोक :

वासांसि जीणानि यथा विहाय
नवानि गृहाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा

Edit with WPS Office

अन्यानि संयाति नवानि देही ।। श्लोक . (2.22)
इस श्लोक में शरीर की तुलना वस्त्रों के साथ की गई है जिस प्रकार हम पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्र पहनते है उसी प्रकार जीवात्मा भी पुराने शरीर को त्याग कर नए नए शरीर को धारण करता रहता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

जीवन की अनिश्चितताओं और दुखों का सामना करने में यह शिक्षा अत्यंत सहायक है । जब व्यक्ति यह मान लेता है कि आत्मा अजर अमर है , तो वह मृत्यु का भय और जीवन की कठिनाइयों से मुक्त हो सकता है । यह शिक्षा जीवन के सभी प्रकार की समस्याओं में मानसिक शांति बनाए रखने में सहायता करती है । किसी भी विपरीत परिस्थिति में अथवा दुःख के समय , जैसे किसी प्रियजन की मृत्यु इस शिक्षा को आत्मसात करके व्यक्ति मानसिक संतुलन बनाए रख सकता है ।

3. संतुलित जीवन (स्थितप्रज्ञ)

श्रीकृष्ण गीता में बार बार समत्व (समानता) की बात करते हैं । वे कहते हैं कि सुख - दुख , हार - जीत , हानि - लाभ , में सम रहने वाला व्यक्ति ही सच्चा योगी हैं । स्थितप्रज्ञ अर्थात स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति अपने जीवन में हर प्रकार की समस्याओं का समाधान बहुत ही सरलता से कर सकता है । जीवन में समान दृष्टि रखने से व्यक्ति मानसिक संतुलन प्राप्त करता है और जीवन की उतार - चढ़ाव से प्रभावित नहीं होता ।

प्रमुख श्लोक :

सम दुख सुखं धीर सोऽमृतत्वाय कल्पते ।। (श्लोक. 2.15)
इस श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति सुख और दुख में समान रहता है , वह अमरता के योग्य होता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

आज के जीवन में , समत्व योग को अपनाने का अर्थ है कि हमें जीवन की अस्थायी घटनाओं , जैसे सफलता और असफलता , से प्रभावित नहीं होना चाहिए । हमें इन स्थितियों को समान दृष्टि से देखना चाहिए और संतुलित दृष्टिकोण बनाए रखना चाहिए । एक कर्मचारी को प्रमोशन न मिलने पर हतोत्साहित नहीं होना चाहिए , और एक व्यापारी को हानि होने

Edit with WPS Office

पर निराश नहीं होना चाहिए । इसी तरह सफलता मिलने पर अंहकार में न आकर विनम्र बने रहना भी समत्व योग का अभ्यास है ।

4. निस्वार्थ सेवा (निष्काम कर्म)

भगवद गीता नि: स्वार्थ सेवा का संदेश देती है । निष्काम कर्म का अर्थ है बिना किसी स्वार्थ के कर्म करना । इसका उद्देश्य केवल समाज और मानवता की भलाई होनी चाहिए , न कि स्वयं का लाभ ।

प्रमुख श्लोक :

योगस्थ: कुरु कर्माणि संग त्यक्तवा धनज्जय ।

सिद्धयसिद्धयों: समो भूत्वा समत्व योग उच्यते ।। श्लोक. (2.48)

इस श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि फल की आसक्ति को त्यागकर सम दृष्टि से निस्वार्थ भाव से कर्म करने को निष्काम कर्म योग कहा जाता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

इस शिक्षा को अपने जीवन में अपनानें का अर्थ है कि व्यक्ति अपने कर्तव्यों और कार्यों को बिना किसी स्वार्थ के करें । उदाहरण के लिए , समाज सेवा , जैसे गरीबों की सहायता करना , बिना किसी मान्यता या पुरुस्कार की अपेक्षा के निष्काम का एक उदाहरण हैं । कार्यालय में , बिना व्यक्तिगत लाभ की चिंता किए , टीम के लिए काम करना भी इसी सिद्धांत का पालन करना है ।

5. स्वधर्म का पालन (अपना धर्म निभाना)

भगवद्गीता में स्वधर्म का पालन करने पर विशेष जोर दिया गया है । इसका अर्थ है कि हर व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए , चाहे वे कितने भी कठिन क्यों न हो । अपने धर्म का पालन करना ही सच्ची सफलता है ।

प्रमुख श्लोक :

श्रेयान्स्वधर्मो विगुण: परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।

स्वधर्मो निधनं श्रेय: परधर्मो भयावह: ।। (श्लोक. 3.35)

इस श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं कि अपने स्वधर्म (स्वाभाविक कर्तव्य) का पालन करना दूसरे के स्वधर्म का पालन करने से श्रेष्ठ है , भले ही वह स्वधर्म

Edit with WPS Office

दोषयुक्त प्रतीत होता हो । परधर्म भय उत्पन्न करता है । अर्थात इस ब्रह्मांड में प्रत्येक प्राणी के कर्तव्य निर्धारित है । किसी प्राणी का अपना कर्तव्य , योग्यता से रहित होने पर भी किसी अन्य के कर्तव्य से श्रेष्ठ है , अतः मनुष्य को अपने स्वयं के कर्तव्यों के प्रति सत्यनिष्ठ होना चाहिए । किसी भी परिस्थिति में कर्तव्यों का त्याग नहीं करना चाहिए । इसे ही स्वधर्म कहा गया है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

जीवन में , हमें अपने और सामाजिक कर्तव्यों का पालन करना चाहिए , चाहे वे हमें कठिन लगें । एक छात्र का धर्म है कि वह पढ़ाई में मन लगाएं , एक माता पिता का धर्म है कि वे अपने बच्चों का पालन पोषण करें और एक कर्मचारी का धर्म है कि वह अपनी नौकरी को सत्य एवं निष्ठा से करें । स्वधर्म के पालन से व्यक्ति आत्मसंतुष्टि प्राप्त करता है और अपने जीवन में सच्ची शांति और स्थिरता पाता है ।

6. इन्द्रियों पर नियंत्रण (आत्म -संयम)

भगवद्गीता में आत्म - संयम और इन्द्रियों पर नियंत्रण को अत्यंत महत्वपूर्ण बताया गया है । श्री कृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति अपनी इंद्रियों को नियंत्रण कर लेता है , वही सच्चे अर्थों में आत्म - जागृत होता है । इन्द्रियां मनुष्य को भटकाती है और भौतिक सुखों की ओर आकर्षित करती है , जिससे व्यक्ति अपने वास्तविक उद्देश्य से दूर हो जाता हैं ।

प्रमुख श्लोक :

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशय ।। *श्लोक.* (8.7)

इस श्लोक में श्री कृष्ण कहते हैं कि हर समय मन को संयमित रखना और ईश्वर का स्मरण करते हुए अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए ।

व्यावहारिक प्रयोग :

आधुनिक जीवन में , आत्म - संयम का अर्थ है कि व्यक्ति को अपनी इच्छाओं और लालच पर नियंत्रण रखना चाहिए । आज की दौड़ भाग दुनिया में , जहां कई प्रकार के विकर्षण होते हैं , आत्म संयम अत्यधिक महत्वपूर्ण है । उदाहरण के लिए , एक विधार्थी को इंटरनेट और सोशल

Edit with WPS Office

मीडिया के विकर्षण से दूर रहकर पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए । इसी प्रकार , इन्द्रियों के माध्यम से भोग की इच्छा को नियंत्रित करना भी आत्म - संयम का पालन करना है ।

7. सभी जीवो के प्रति समान दृष्टि (समभाव)

भगवद्गीता सभी जीवों के प्रति समान दृष्टि रखने की शिक्षा देती हैं । श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो व्यक्ति सभी को समान दृष्टि से देखता है , वही सच्चे ज्ञान का अधिकारी है । लिंग , जाति , वर्ग आदि से परे उठकर सभी जीवो को समान समझना ही सत्य सनातन धर्म है ।

प्रमुख श्लोक :

विधाविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता: समदर्शिन: ।। ***श्लोक*** . (5.18)

इस श्लोक में श्री कृष्ण जी कहते हैं कि सच्चा ज्ञानी वहीं हैं जो विद्वान , पशु , और प्रत्येक जीव को समान दृष्टि से देखता है ।

व्यावहारिक प्रयोग :

समाज में भेदभाव , जाति , धर्म , लिंग आदि के आधार पर भेदभाव समाप्त करने के लिए इस शिक्षा का पालन अत्यंत आवश्यक है । हमें प्रत्येक जीव को समान दृष्टि से देखना चाहिए , चाहे वह किसी भी जाति या वर्ग का ही क्यों ना हो । यह समानता और भाईचारे का संदेश है , जिसे प्रत्येक व्यक्ति को आत्मसात करना चाहिए ।

भगवत गीता की शिक्षाएं जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अत्यंत महत्वपूर्ण है । इन नैतिक शिक्षाओं को अपने जीवन में अपनानें से व्यक्ति न केवल आत्मिक उन्नति प्राप्त करता है , बल्कि जीवन के सभी कर्तव्यों को उत्तम ढंग से निभा सकता है । चाहे वह कर्मयोग हो , आत्म - संयम , स्वधर्म , या समत्व योग , गीता की शिक्षाएं विश्व के प्रत्येक मनुष्य के लिए अत्यंत लाभकारी , प्रासंगिक और प्रेरणादायक है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 67. उपवास का अर्थ

सामान्यत: उपवास का अर्थ भूखे रहना या भोजन न करना माना जाता है । परन्तु क्या इसका वास्तव में यही अर्थ है ? वैदिक शास्त्रों में " उपवास „ शब्द का एक गहन और आध्यात्मिक अर्थ निहित है , जिसे सही संदर्भ में समझना आवश्यक है ।

शतपथ ब्राह्मण. (1/1/1/7) मैं " उपवास „ का अर्थ केवल भूखे रहना नहीं , बल्कि एक गहरी आध्यात्मिक प्रक्रिया को दर्शाता है । इसमें गृहस्थ के लिए " उपवास „ तब होता है जब यज्ञ या व्रत के विशेष अवसर पर विद्वान लोग गृहस्थ के घर आते हैं और उनके साथ समय व्यतीत करते हैं । **" उप „ का अर्थ है " समीप „ और " वास „ का अर्थ है " रुकना „ ।** इसका मूल अर्थ था विद्वानों का सान्निध्य प्राप्त करना , उनके साथ सत्संग करना और उनके ज्ञान से लाभान्वित होना । इसलिए " उपवास „ का वास्तविक उद्देश्य था विद्वानों की संगति से ज्ञान और उपदेश करना ।

निराहार का अर्थ और संदर्भ : ____

शतपथ ब्राह्मण.(1/1/1/8) के अनुसार " निराहार „ का तात्पर्य केवल भूखे रहने से नहीं था । इसका उद्देश्य यह था कि जब कोई विद्वान गृहस्थ के घर आए , तो गृहस्थ को तब तक भोजन नहीं करना चाहिए जब तक कि विद्वान भोजन ग्रहण न कर लेवें । इसके पीछे भावना यह थी की विद्वानों की सेवा और सत्संग को प्राथमिकता दी जाए । और उनके सान्निध्य

Edit with WPS Office

से जीवन में ज्ञान और संतुलन आए । निराहार रहना आत्म - अनुशासन और विद्वानों के प्रति आदर का प्रतीक था , न कि केवल शारीरिक भूख को सहना ।

समय के साथ उपवास का यह गूढ़ अर्थ खो गया और सत्संग , स्वाध्याय , और ज्ञान की खोज का स्थान केवल भूखे रहने ने ले लिया । आज , उपवास को मात्र भूखा रहना या विशेष आहार तक सीमित कर दिया गया , जबकि इसका मूल उद्देश्य था वैदिक विद्वानों का सत्संग करना , उनके उपदेशों को सुनना , और उनके ज्ञान से अपने जीवन को समृद्ध करना ।

सच्चे उपवास का उद्देश्य केवल शरीर को भूखे रखकर आत्मा को शुद्ध करना नहीं है , बल्कि ज्ञान का प्रकाश प्राप्त करना है । वैदिक विद्वानों के सान्निध्य में रहकर , उनके विचारों और उपदेशों को आत्मसात करना ही उपवास का वास्तविक स्वरूप है । सत्संग , स्वाध्याय , और विद्वानों की सेवा से ही आत्मिक और बौद्धिक विकास संभव है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 68.वैदिक ऋषि और उनके आविष्कार

वैदिक ऋषियों ने न केवल आध्यात्मिक और धार्मिक क्षेत्र में महान योगदान

Edit with WPS Office

दिया , बल्कि विज्ञान , गणित , चिकित्सा , खगोल विज्ञान , प्रोद्योगिकी और योग के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण अविष्कार किये हैं । यहां कुछ प्रमुख वैदिक ऋषियों और उनके आविष्कारों का उल्लेख किया गया है ।

1.___ महर्षि भारद्वाज , विमानों के वैज्ञानिक और आयुर्वेद के ज्ञाता :

महर्षि भारद्वाज केवल आयुर्वेद में पारंगत नहीं थे , बल्कि वे एक अद्वितीय विमान शास्त्री भी थे । वैदिक युग में विमान शास्त्र का उल्लेख कई हमारे शास्त्रों में कई जगह मिलता है , लेकिन महर्षि भारद्वाज ने इस विधा को उच्चतम स्तर तक पहुंचाया , जिसे आज का विज्ञान भी पूरी तरह से नहीं समझ पाया है । रामायण काल में भी विमानों का उल्लेख मिलता है , और यह माना जाता है कि उस समय भी विमान विज्ञान एक उन्नत शास्त्र था ।

महर्षि भारद्वाज ने " यंत्र सर्वस्व „ " आकाश शास्त्र „ " अंशुबोधनी „ और भारद्वाज शिल्प जैसे चार प्रमुख ग्रंथों की रचना की , जिनमें उन्होंने वैमानिकी के विभिन्न पहलुओं का विस्तृत वर्णन किया है । उनका ग्रंथ " यंत्र सर्वस्व „ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं , जिसमें विमानों के निमार्ण और संचालन के लिए वैदिक मंत्रों पर आधारित तकनीकों का वर्णन है ।

विमानों के प्रकार :

1. **शक्त्युद्रम :** बिजली से चलने वाला विमान ।
2. **भूतवाह :** अग्नि ,जल , वायु से संचालित होने वाला विमान ।
3. **धूमयान :** गैस से चलने वाला विमान ।
4. **शिखोद्रम :** तेल द्वारा संचालित विमान ।
5. **अंशुवाह :** सूर्य की किरणों से संचालित विमान ।
6. **तारामुख :** चुंबक द्वारा चलने वाला विमान ।
7. **मणिवाह :** चंद्रकांत और सूर्यकांत मणियों से संचालित विमान ।
8. **मरुत्सखा :** केवल वायु द्वारा संचालित विमान ।

वैदिक काल , रामायण , एवं महाभारत काल तक भारत में विमान का विस्तृत उल्लेख हमें शास्त्रों में मिलता है ।

Edit with WPS Office

आधुनिक युग में प्राचीन विज्ञान का पुनः आविष्कार : शिवकर बापूजी तलपड़े ।

आधुनिक इतिहास में विमानों के निर्माता के रूप में राइट ब्रदर्स को मान्यता दी जाती है , लेकिन इससे भी पहले शिवकर बापूजी तलपड़े ने 1895 में वैदिक ग्रंथों के आधार पर एक विमान का सफलता पूर्वक निर्माण किया था ।

मरुत्सखा विमान ,का यह मांडल उन्होंने प्राचीन शास्त्रों में वर्णित जानकारी के आधार पर बनाया था । यह चालक रहित विमान 1500 फिट की ऊंचाई तक उड़ा और फिर स्वचालित रूप से नीचे आ गया । मुंबई के चौपाटी पर इस विमान की उड़ान का प्रदर्शन बड़ोदा के महाराजा सयाजीराव गायकवाड और अन्य प्रतिष्ठित नागरिकों के समक्ष किया गया । यह विमान इतना उन्नत था कि इसमें एक ऐसा यंत्र लगा था , जो एक निश्चित ऊंचाई पर पहुंचने के बाद विमान को ऊपर उठने से रोक देता था ।

दुर्भाग्य की बात यह है कि अंग्रेजों ने छल पूर्वक तलपड़े जी का विमान मांडल प्राप्त किया और उसे ब्रिटिश फर्म रैली ब्रदर्स को बेच दिया । इसके बाद राइट ब्रदर्स को प्रथम विमान निर्माता के रूप में विश्व व्यापी ख्याति मिली , जबकि तलपड़े जी की इस अद्भुत उपलब्धि को उचित मान्यता नहीं मिल सकी । यह एक दुर्भाग्यपूर्ण सच्चाई है कि भारत के स्वाधीनता के पश्चात भी हमारे पाठ्यक्रमों में शिवकर बापूजी तलपड़े का उल्लेख नहीं किया गया है , जबकि वे आधुनिक युग के पहले विमान निर्माता थे ।

2. ___ ऋषि भास्कराचार्य :

पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण शक्ति के प्रथम खोजकर्ता , प्राचीन भारत के महान गणितज्ञ और खगोल शास्त्री भास्कराचार्य (जन्म. 1114) भारत के

Edit with WPS Office

महान गणितज्ञ और खगोल शास्त्रियों में से एक थे , जिनकी गणना आज भी विश्वभर में सम्मान के साथ जाती है । उनका कार्यकाल उज्जैन में स्थित एक प्रतिष्ठ वेधशाला के प्रमुख के रूप में था , जो प्राचीन भारत में गणित और खगोल शास्त्र का प्रमुख केंद्र माना जाता है । यह वेधशाला गणितीय अनुसंधान और खगोलीय अध्ययन के लिए विख्यात थी ।

सिद्धांत शिरोमणि : गणित और खगोल विज्ञान का अमूल्य ग्रंथ : भास्कराचार्य जी का सबसे प्रसिद्ध योगदान " सिद्धांत शिरोमणि ,, नामक ग्रंथ है , जिसे उन्होंने चार भागों में विभाजित किया है ।

लीलावती : गणित के सूत्रों का सरल और सुन्दर वर्णन ।
बीजगणित : उन्नत गणितीय समीकरणों और समस्याओं का संग्रह ।
गोलाध्याय : खगोल शास्त्र का विस्तृत वर्णन ।
ग्रह गणिताध्याय : ग्रहों की गति और उनके गणितीय गणना का वर्णन ।

लीलावती नामक पुस्तक विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि यह भास्कराचार्य की पुत्री लीलावती के नाम पर लिखी गई थी । इस पुस्तक में गणित और खगोल शास्त्र के सूत्रों को काव्यात्मक और संवाद आत्मक रूप में समझाया गया है , जो इसे न केवल एक शैक्षिक बल्कि साहित्यिक धरोहर भी बनाता है ।

गुरुत्वाकर्षण की की चर्चा करते हुए , भास्कराचार्य ने पृथ्वी की आकर्षण शक्ति का उल्लेख किया और बताया कि कैसे यह शक्ति भारी वस्तुओं को अपनी ओर खींचती है । उनके अनुसार , गुरुत्वाकर्षण के कारण ही वस्तुएं जमीन पर गिरती है । जबकि आकाश में ग्रह इस आकर्षण के बिना निरावलम्ब रहते हैं । उन्होंने यह भी कहा कि विविध ग्रहों की ग्रुरुत्वाकर्षण शक्तियां एक- दूसरे के साथ संतुलन बनाए रखती है , जिससे वे अपने-अपने कक्ष में बने रहते हैं ।

आज की विज्ञान जगत में न्यूटन को गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत का खोजकर्ता माना जाता है , परंतु भास्कराचार्य ने इस सिद्धांत की व्याख्या न्यूटन से लगभग 550 वर्ष पूर्व ही कर दी थी । उनका यह योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है , जो उन्हें विश्व इतिहास में एक अग्रणी वैज्ञानिक के रूप में स्थापित

Edit with WPS Office

करता है ।

3.___ आर्यभट :

आर्यभट का जन्म 476 ईस्वी में महाराष्ट्र में हुआ था और वे प्राचीन भारत के महान गणितज्ञ और खगोल वैज्ञानिक माने जाते हैं । उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति -- " आर्यभटीय है ,, जिसे ज्योतिष और खगोल विज्ञान पर आधारित भारत की सबसे वैज्ञानिक पुस्तक कहा जाता है । यह ग्रन्थ गणित और खगोल विज्ञान के सिद्धांतों का अनमोल संग्रह है , जिसमें आर्यभट ने अपनी गहन दृष्टि और वैज्ञानिक सौच का प्रमाण दिया है ।

आर्यभट का सबसे महत्वपूर्ण योगदान गणित के क्षेत्र में था , **जहां उन्होंने शून्य (0) की खोज की** । शून्य के बिना गणित की कल्पना अधूरी है , और आर्यभट की यह खोज आधुनिक गणित को आकार देने में अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है । उनके गणितीय कार्यों
ने न केवल भारत में बल्कि पूरी दुनिया में गणित की समझ को नया आयाम दिया ।

प्राचीन समय में यह धारणा थी कि पृथ्वी स्थिर और सपाट है , लेकिन आर्यभट ने इसके विपरीत सिद्ध किया । उन्होंने सबसे पहले बताया कि पृथ्वी गोलाकार है और यह अपनी धुरी पर घूमती है । यह उनकी दूरदर्शिता थी कि उन्होंने पृथ्वी के दैनंदिन घूर्णन का सिद्धांत प्रस्तुत किया , जिसे आज भी वैज्ञानिक सत्य माना जाता है ।

आर्यभट ने ग्रहणों के वास्तविक कारणों की भी स्पष्ट व्याख्या की है । उन्होंने कहा , " सूर्यग्रहण तब होता है जब चन्द्रमा सूर्य को ढक लेता है और उसकी छाया पृथ्वी पर पड़ती हैं । इसी प्रकार , चन्द्र ग्रहण तब होता है जब पृथ्वी की छाया चन्द्रमा को ढक लेती है ,, । यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण उस समय की पारंपरिक धारणाओं से बिल्कुल अलग और क्रांतिकारी था , जो खगोलीय घटनाओं को धार्मिक और अलौकिक मानते हैं ।

Edit with WPS Office

आर्यभट ने त्रिकोणमिति और बीजगणित के कई आधुनिक विधियों की खोज की , जो गणितीय गणनाओ के लिए आधारभूत सिद्धांत माने जाते हैं । उनकी गणनाओं ने गणित को एक नई दिशा दी और बाद में ब्रह्मगुप्त , श्रीधर , महावीर और भास्कराचार्य जैसे महान गणितज्ञों ने उनके सिद्धांतों से प्रेरणा लेकर गणित को और भी समृद्ध किया ।

आर्यभट के सम्मान में भारत ने अपने पहले कृत्रिम उपग्रह का नाम " आर्यभट „ रखा । यह उपग्रह 360 किलो वजनी था और इसे अप्रैल 1975 में प्रक्षेपित किया गया था । इस उपग्रह का नामकरण उस वैज्ञानिक के नाम पर किया गया , जिसने खगोल विज्ञान में भारत को वैश्विक स्तर पर प्रतिष्ठा दिलाई ।

4. ___ महर्षि कणाद : परमाणु संरचना के प्रथम वैज्ञानिक :

प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक परंपरा में महर्षि कणाद का नाम परमाणु विज्ञान के जन्मदाता के रूप में अंकित है । ईशा से लगभग 600 वर्ष पूर्व , जब दुनिया के अधिकांश हिस्से पदार्थ की संरचना के रहस्यों के अनभिज्ञ थे , महर्षि कणाद ने परमाणु सिद्धांत को प्रतिपादित किया । जिस सिद्धांत को आधुनिक विज्ञान में डाल्टन के नाम से जाना जाता है , उसकी नींव वास्तव में महर्षि कणाद ने रखी थी । उन्होंने यह सिद्ध किया कि हर पदार्थ की मूल इकाई परमाणु है , जिसे उन्होंने स्वयं परमाणु नाम दिया ।
महर्षि कणाद ने न केवल परमाणुओं को सबसे सूक्ष्म और अविभाज्य इकाई के रूप में प्रस्तुत किया , बल्कि उन्होंने यह भी बताया कि दो समान प्रकार के परमाणु मिलकर एक संयुक्त इकाई का निर्माण कर सकते हैं , जिसें उन्होंने " द्विणुक „ कहा । यह द्विणुक आधुनिक रसायन विज्ञान में बाइनरी मोलेक्यूल की अवधारणा से मेल खाता है । महर्षि कणाद का यह दृष्टिकोण परमाणु संरचना और अणु विज्ञान का पहला वैज्ञानिक विश्लेषण था , जिसे उन्होंने एक दर्शन के रूप में व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत किया ।

Edit with WPS Office

महर्षि कणाद ने अपने ग्रंथ वैशेषिक दर्शन में परमाणु विज्ञान के सिद्धांतों को विस्तार से प्रतिपादित किया । उनका यह दर्शन इस बात पर केंद्रित था कि ब्रह्मांड के प्रत्येक तत्व को परमाणुओं के रूप समझा जा सकता है । उन्होंने पदार्थ की संरचना , गति और परिवर्तन के नियमों का वर्णन किया , जो आधुनिक भौतिकी और रसायन विज्ञान के सिद्धांतों के समानांतर प्रतीत होते हैं । कणाद के अनुसार , परमाणु न केवल भौतिक संरचना के आधारभूत तत्व है , बल्कि उनकी गति और संयोजन से संसार की विविधता उत्पन्न होती हैं ।
महर्षि कणाद को न केवल परमाणु की संरचना को समझाया , बल्कि उन्होंने गति के नियमों को भी प्रतिपादित किया , जो उनके वैशेषिक दर्शन में विस्तार से वर्णित है । उनके अनुसार , प्रत्येक वस्तु का स्वभाव है गति में रहना , और यह गति बाहरी बलों या आतंरिक प्रवृतियों के कारण उत्पन्न होती हैं । इस सिद्धांत ने बाद में गति और बल के आधुनिक सिद्धांतों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

5. ___ महर्षि कपिल :

महर्षि कपिल भारतीय दर्शन के उन अग्रणी ऋषियों में से एक थे। , जिन्होंने सांख्य दर्शन का प्रतिपादन किया । सांख्य दर्शन तत्वों पर आधारित एक गहन ज्ञान प्रणाली है , जिसमें महर्षि कपिल ने सृष्टि की उत्पत्ति और उसके स्वरुप को समझने के लिए तत्वों के सूक्ष्मतम रुपों का वर्णन किया । उन्होंने यह स्वीकार किया कि सृष्टि जिन तत्वों से बनी है , उनका सटीक आकार बताना कठिन है , परंतु वे तत्व इतने सूक्ष्म है कि उनकी उपस्थिति का ज्ञान केवल उनके गुणों से ही किया जा सकता है ।

महर्षि कपिल का सबसे महत्वपूर्ण योगदान त्रिगुण सिद्धांत है , जिसके अनुसार **यह संसार तीन गुणों -- सत्तोगुण , रजोगुण , और तमोगुण -- पर आधारित है ।** ये तीनों गुण ही विश्व की संरचना , कार्यप्रणाली और

Edit with WPS Office

विकास को नियंत्रित करते हैं ।

सत्तोगुण : प्रकाश , शांति और संतुलन का प्रतीक ।
रजोगुण : क्रिया , ऊर्जा और उथल-पुथल का धोतक ।
तमोगुण : अज्ञानता , जड़ता , और स्थिरता का चिन्ह ।
कपिल ने यह माना कि ये तीन गुण मिलकर सृष्टि का समग्रता को परिभाषित करते हैं और इनके संतुलन से ही विश्व की सभी गतिविधियां संचालित होती हैं ।

महर्षि कपिल ने सबसे पहले सृष्टि उत्पत्ति का एक व्यवस्थित सिद्धांत प्रस्तुत किया , जिसमें उन्होंने संसार का एक क्रमबद्ध विकास प्रक्रिया के रूप में देखा । उनके अनुसार , सृष्टि की उत्पत्ति तीन अनादि तत्वों -- परमात्मा , जीवात्मा और , प्रकृति -- के समन्वय से होती है । महर्षि कपिल ने यह स्पष्ट किया कि इन तीन तत्वों के योग से ही इस जगत की रचना होती है , और ये तीनों तत्व सृष्टि को प्रभावित , नियंत्रित और संचालित करते हैं ।
" कपिलस्मृति „ महर्षि कपिल द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण धर्मशास्त्र हैं , जिसमें उन्होंने धार्मिक और आध्यात्मिक सिद्धांतों को विस्तार से प्रतिपादित किया । कपिल स्मृति में न केवल धर्म के नियम और मागदर्शन दिये है , बल्कि जीवन के गूढ़ रहस्यों को भी स्पष्ट किया गया है । यह शास्त्र प्राचीन भारत के धार्मिक और सामाजिक ढांचे को समझने के लिए एक अमूल्य स्त्रोत हैं ।
महर्षि कपिल की महानता का प्रमाण यह है कि उनका उल्लेख भगवद्गीता में भी किया गया है , गीता के अनुसार , महर्षि कपिल ने सृष्टि के निर्माण और जीवन के रहस्यों को सबसे पहले व्यवस्थित रूप में प्रतिपादित किया था । उन्होंने संसार की रचना को गहन दृष्टि से देखा और समझाया जिससे वे भारतीय दर्शन के इतिहास में एक अग्रणी स्थान प्राप्त करते हैं ।

6. ___ महर्षि बौधायन :

Edit with WPS Office

महर्षि बौधायन प्राचीन भारत के एक महान गणितज्ञ और शुल्व शास्त्र के रचयिता थे । शुल्व शास्त्र , जिसे उस समय रेखागणितीय या ज्यामिति कहा जाता था , मैं बौधायन का योगदान अद्वितीय है । बौधायन का कार्य भारतीय गणितीय परंपरा का प्रमुख स्तंभ माना जाता है , और उनके योगदान को विश्व भर में महत्वपूर्ण माना गया है ।

पाइथागोरस प्रमेय का मूल बौधायन : आज जिस प्रमेय को पाइथागोरस के नाम से जाना जाता है , उसका सबसे प्राचीन लिखित विवरण महर्षि बौधायन के शुल्बसूत्रों में पाया जाता है , बौधायन ने समकोण त्रिभुज से संबंधित यह प्रमेय प्रस्तुत किया , जो

कहता है कि समकोण त्रिभुज की विकर्ण पर बने वर्ग का क्षेत्रफल उसकी अन्य दो भुजाओं पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है ।

यह प्रमेय बौधायन ने निम्नलिखित सूत्र में प्रस्तुत किया : दीर्घचतुरश्रस्याक्ष्णया रज्जु: पार्श्वमानी तिर्यग् मानी च यत् पृथग् भूते कुरुतस्तदुभयं करोति ।।

इसका अर्थ यह है कि अगर समकोण त्रिभुज की विकर्ण पर कोई रस्सी तानी जाएं , तो उस पर बने वर्ग का क्षेत्रफल ऊर्ध्व और क्षैतिज भुजाओं पर बने वर्गों के योग के बराबर होता है । यह कथन " बौधायन प्रमेय „ के रूप में इतिहास में सबसे प्राचीन और सटीक ज्यामितीय सिद्धांतों में से एक हैं ।

बौधायन ने पाइथागोरस से सदियों पहले इस प्रमेय की खोज की थी । जबकि पाइथागोरस का जन्म ईसा के लगभग 8 वी शताब्दी पूर्व हुआ था । बौधायन का प्रमेय ईसा से 15 वी शताब्दी पहले से ही भारत में पढ़ाया जा रहा था । इस तथ्य को जानते हुए , यह स्पष्ट होता है कि पाइथागोरस का प्रमेय वास्तव में बौधायन की देन हैं , जो गणित और ज्यामितीय के क्षेत्र में भारत की अग्रणी स्थिति को दर्शाता है ।

बौधायन के शुल्बसूत्रों में केवल पाइथागोरस प्रमेय ही नहीं , वल्कि गणित और ज्यामिति से संबंधित कई अन्य महत्वपूर्ण सिद्धांत भी मिलते हैं । इनमें 2 के वर्गमूल का सन्निकट मान और प्रारंभिक गणितीय प्रमेय शामिल हैं । बौधायन के गणितीय सिद्धांत और प्रमेय आज भी गणित के अध्ययन के

Edit with WPS Office

लिए एक महत्वपूर्ण आधार मानें जाते हैं ।

7. ___ ऋषि नागार्जुन :

ऋषि नागार्जुन को प्राचीन भारत के महान रसायन शास्त्री और धातुविद के रूप में जाना जाता हैं । उन्होंने रसायन शास्त्र और धातु विज्ञान पर गहन शोध किया और अपने समय में इस क्षेत्र में अद्वितीय योगदान दिया । उनकी कई रचनाएं रसायन शास्त्र के अद्वितीय सिद्धांतों को समाहित करती हैं , जिनमें से " रस रत्नाकर „ और ' रसेन्द्र मंगल , विशेष रूप से प्रसिद्ध है । इन ग्रंथों ने रसायन शास्त्र के जटिल विषयों को सरलता से समझाया और उनके विज्ञान के प्रति दृष्टिकोण को उजागर किया ।

नागार्जुन की चिकित्सकीय क्षमता और सूझबूझ ने उन्हें असाध्य रोगों की औषधियां तैयार करने में विशेषज्ञता दी । उन्होंने औषधि निर्माण और चिकित्सा विज्ञान में भी अमूल्य योगदान दिया । उनकी कुछ प्रमुख चिकित्सा ग्रंथो में " कक्षपुटतंत्र ; आरोग्य मंजरी ; योग सार , और योगाष्टक शामिल हैं । इन ग्रंथों में उन्होंने न केवल विभिन्न रोगों
की चिकित्सा का वर्णन किया , बल्कि आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण की विधियों को भी विस्तार से समझाया ।
नागार्जुन ने विभिन्न धातुओं का शोधन और मिश्रण तैयार करने की तकनीकों को भी विकसित किया । उन्होंने पारा और अन्य धातुओं के शोधन की विधियों पर काम किया और महारसों के शोधन की प्रक्रियाओं का भी विस्तार से वर्णन किया ।
विशेष रूप से , नागार्जुन ने धातुओं को स्वर्ण (सोना) या रजत (चांदी) में परिवर्तित करने की तकनीकें विकसित की , जो आज भी प्राचीन विज्ञान का एक अद्भुत खोज मानी जाती हैं । उनके द्वारा विकसित पारे का शोधन न केवल धातु परिवर्तन के लिए बल्कि मानव शरीर को निरोगी और दीघार्यु बनाने के लिए भी प्रयोग किया जाता था ।

Edit with WPS Office

ऋषि नागार्जुन का योगदान केवल रसायन शास्त्र और धातु विज्ञान तक सीमित नहीं था। उनकी चिकित्सा पद्धतियां और औषधीय खोजें चिकित्सा विज्ञान को एक नई दिशा प्रदान करती हैं। उनके शोध और सिद्धांत आज भी हमें यह दिखाते हैं कि प्राचीन भारत का विज्ञान कितना उन्नत और गहन था। नागार्जुन ने विज्ञान को समर्पित जीवन दिया और उनके द्वारा किए गए शोध कार्यों ने रसायन शास्त्र और चिकित्सा विज्ञान को समृद्ध किया।

8. ऋषि सुश्रुत : शल्य चिकित्सा (सर्जरी) के जनक :

आचार्य सुश्रुत जिन्हें शल्य चिकित्सा (सर्जरी) का पितामह कहा जाता है , का जन्म छठी शताब्दी ईसा पूर्व में काशी (वर्तमान वाराणसी) में हुआ था। उन्होंने आयुर्वेद के महान ऋषि धनवंतरी से शिक्षा प्राप्त की ओर आयुर्वेद के शल्य चिकित्सा (सर्जरी) शाखा में अद्वितीय योगदान दिया। उनका प्रमुख ग्रंथ " सुश्रुत संहिता „ आज भी विश्व चिकित्सा पद्धति में अपना विशेष स्थान रखता है , जो शल्य चिकित्सा के विभिन्न आयामों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करता है।

' सुश्रुत संहिता , को चिकित्सा विज्ञान का एक महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है , जिसमें शल्य चिकित्सा के साथ साथ शरीर रचना , काय चिकित्सा , बाल रोग , स्त्री रोग , और मानसिक रोगों की जानकारी भी दी गई है। सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा की जटिलताओं को देखते हुए लगभग 125 प्रकार के शल्य उपकरणों का अविष्कार किया , जिनमें विशेष प्रकार के चाकु , सुइयां और चिमटियां शामिल हैं।

आचार्य सुश्रुत ने 300 प्रकार की आपरेशन प्रक्रियाओं का विकास किया। उनके द्वारा विकसित प्रक्रियाओं में न केवल साधारण शल्य चिकित्सा बल्कि जटिल आपरेशनों का भी उल्लेख है। सुश्रुत ने मोतियाबिंद की सर्जरी की विधि का विस्तृत विवरण दिया , इसके अलावा उन्हें सीजेरियन प्रसव कराने का भी गहन ज्ञान था , जो उस समय की चिकित्सा विज्ञान में एक क्रांतिकारी उपलब्धि थी।

Edit with WPS Office

सुश्रुत ने टूटी हुई हड्डियों की पहचान और उन्हें जोड़ने में विशेष विशेषज्ञता प्राप्त की । इसके साथ ही , उन्होंने शल्य चिकित्सा के दौरान होने वाली पीड़ा को कम करने के लिए संज्ञाहरण की विधि का विकास किया । वे शल्य क्रिया से पहले रोगों को विशेष औषधियां देते थे , जिससे संज्ञाहरण का काम होता था । इसलिए सुश्रुत को संज्ञाहरण के पितामह के रूप में भी जाना जाता है ।

आधुनिक प्लास्टिक सर्जरी ओर कास्मेटिक सर्जरी के मूल प्रवर्तक भी ऋषि सुश्रुत ही थे । उन्होंने शल्य चिकित्सा में अद्भुत कौशल अर्जित किया , जिसमें चेहरे और अन्य शारीरिक अंगों की मरम्मत और पुनर्निर्माण जैसी विधियां शामिल थी । यह विज्ञान उनके समय में अत्यंत विकसित और प्रभावी था , और सुश्रुत ने इसे व्यापक रूप से प्रसारित किया ।
आठवीं शताब्दी में , सुश्रुत संहिता का अरबी अनुवाद ' किताब - ए- सुश्रुत , के नाम से हुआ , जिससे यह ग्रंथ अरब और पश्चिमी चिकित्सा में भी प्रसिद्ध हो गया । सुश्रुत का ज्ञान सीमाओं को पार कर वैश्विक चिकित्सा समुदाय तक पहुंचा , जिससे उन्हें वैश्विक स्तर पर पहचान मिली ।

9. ऋषि चरक :

महर्षि चरक को आधुनिक आयुर्वेद चिकित्सा जगत का जनक माना जाता है । उनके जीवन और कार्यों से यह स्पष्ट होता है कि प्राचीन भारत की विज्ञान पद्धति और चिकित्सा विधियां अत्यंत आधुनिक और उन्नत थी । चरक कुषाण राज्य के राजवैद्य थे और उन्होंने चिकित्सा विज्ञान को एक नई दिशा दी । " चरक संहिता „ आज भी आयुर्वेद का अद्वितीय ग्रंथ माना जाता है , जिसमें उन्होंने रोगनाशक और रोगनिरोधक औषधियों का गहन विवरण दिया है । चरक संहिता विभिन्न ऋषियों द्वारा समय-समय पर संकलित आयुर्वेद का महान ग्रंथ है । जिसमें महर्षि चरक का भी विशेष योगदान था । ' चरक संहिता , न केवल एक चिकित्सा ग्रंथ है , बल्कि यह भारतीय दर्शन

Edit with WPS Office

और अर्थशास्त्र के विभिन्न सिद्धांतों पर भी प्रकाश डालता है । इस ग्रंथ में सोना , चांदी , लोहा , पारा और अन्य धातुओं के भस्म और उनके चिकित्सीय उपयोग का उल्लेख है । महर्षि चरक ने आचार्य अग्निवेश द्वारा रचित ' अग्निवेशतंत्र , में सुधार और विस्तार करके इसे नया रूप दिया , जिसे आज हम ' चरक- संहिता , के नाम से जानते है । इस ग्रंथ में शारीरिक और मानसिक व्याधियों के उपचार के साथ साथ स्वस्थ जीवन जीने के सिद्धांत भी बताएं गए हैं ।

ऋषि चरक का मानना था कि किसी भी चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि वह शरीर के सभी घटकों को समझें , जिसमें वातावरण का भी प्रमुख स्थान है । उनका कहना था कि रोग और योगी दोनों पर वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ता है । इसलिए चिकित्सा करने से पहले रोगी के प्रकृति को समझना आवश्यक है । उन्होंने इस सिद्धांत पर बल दिया कि रोग को रोकना उपचार से अधिक महत्वपूर्ण है ।

महर्षि चरक ने चिकित्सा विज्ञान में रोग निदान की एक अनूठी विधि विकसित की । उन्होंने कहा कि एक चिकित्सक को अपने ज्ञान के माध्यम से रोगी के शरीर में प्रवेश करना चाहिए , ताकि वह रोग का सही निदान कर सकें । जब तक शरीर की संपूर्ण जानकारी नहीं होती , तब तक रोग का सफल उपचार संभव नहीं है । यह विचार ' चरक- संहिता में विस्तार से वर्णित है , जहां उन्होंने चिकित्सा के इस गूढ़ सिद्धांत को समझाया ।

10. वाराहमिहिर :

वाराहमिहिर प्राचीन भारत के एक महान गणितज्ञ , खगोल शास्त्री और ज्योतिषाचार्य थे । वे सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्नों में से एक थे , जो उनकी असाधारण विद्वता और ज्योतिष शास्त्र में अद्वितीय ज्ञान का प्रतीक है । वाराह मिहिर की रचनाएं प्राचीन विज्ञान के साथ साथ ज्योतिष और खगोल शास्त्र का एक अद्भुत मिश्रण प्रस्तुत करती

Edit with WPS Office

हैं ।

वाराह मिहिर की भविष्यवाणी और उनका नाम

एक प्रसिद्ध कथा के अनुसार , जब चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के पुत्र का जन्म हुआ , तब मिहिर ने भविष्यवाणी की कि एक दिन सुअर (वाराह) उसके पुत्र की मृत्यु का कारण बनेगा । राजा ने कई प्रयास किए , लेकिन अतः मैं मिहिर की भविष्यवाणी सत्य साबित हुई । तभी से उन्हें वाराह मिहिर के नाम से जाना जाने लगा । यह भी माना जाता है कि उन्होंने सूर्य की उपासना के माध्यम से ज्योतिष का दिव्य ज्ञान प्राप्त किया ।

प्रमुख रचनाएं : वृहज्जातक , वृहत्संहिता और पंचसिद्धांतिका

वाराह मिहिर ने ज्योतिष और खगोल शास्त्र पर तीन प्रमुख ग्रंथों की रचना की :

1. **वृहज्जातक** : ज्योतिष विज्ञान का यह ग्रंथ यात्रा मुहूर्त , विवाह मुहूर्त और जन्मकुंडली के विषय में विस्तार से जानकारी प्रदान करता है । यह ज्योतिष के गूढ़ सिद्धांतों और जीवन के महत्वपूर्ण निर्णयों के लिए समय निर्धारण का शास्त्र है ।

2. **वृहत्संहिता** : इस ग्रंथ में मौसम , कृषि विज्ञान , पशु - पक्षियों के व्यवहार , भवन निर्माण कला , वास्तु विधा , और इस्पात निमार्ण की विधियों का गहन विवरण है । वाराह मिहिर ने पशु - पक्षियों के व्यवहार के आधार पर मौसम और प्राकृतिक आपदाओं की भविष्य वाणी की विधि बताई , जो आज के वैज्ञानिक सिद्धांतों से मेल खाती है । इसके साथ ही , उन्होंने भारतीय इस्पात निमार्ण की उच्च गुणवत्ता का भी उल्लेख किया , जिसका फारस और अन्य देशों तक निर्यात होता था ।

3. **पंचसिद्धांतिका** : यह ग्रंथ खगोल शास्त्र पर आधारित है और इसमें वाराह मिहिर के समय प्रचलित पांच प्रमुख खगोलीय सिद्धांतों का वर्णन है । इस ग्रंथ में ग्रंहो और नक्षत्रों की स्थिति और समय की सटीक गणनाओं का अध्ययन किया गया है । पंचसिद्धांतिका वाराहमिहिर के

Edit with WPS Office

खगोल शास्त्र में गहन अध्ययन और त्रिकोणमिति के ज्ञान का परिचायक हैं ।

वृहत्संहिता में वाराह मिहिर ने **कृषि विज्ञान** और **वास्तु विधा** पर भी विस्तृत प्रकाश डाला है । उन्होंने कृषि के लिए भूमि की तैयारी , वृक्षारोपण की विधि , सिंचाई के सही समय और बीमारियों से पेड़ों की रक्षा करने के उपायों का वर्णन किया है । इसके अलावा , भवन निर्माण की तकनीके , वास्तु के सिद्धांत और भवनों के निमार्ण में दिशा निर्देश भी इस ग्रंथ का हिस्सा है ।
वाराह मिहिर ने ग्रहणों के वास्तविक कारणों का वर्णन भी किया है , जो उनके वैज्ञानिक दृष्टिकोण को दर्शाता है । उन्होंने बताया कि चंद्रग्रहण तब होता है जब चन्द्रमा पृथ्वी की छाया में आ जाता हैं , और सूर्य ग्रहण तब होता है जब चन्द्रमा सूर्य और पृथ्वी के बीच आ जाता हैं । उनका यह दृष्टिकोण उस समय की परंम्परागत धारणाओं से अलग था और खगोलीय घटनाओं की वैज्ञानिक व्याख्या करता है ।

वाराहमिहिर ने ज्योतिष और खगोलशास्त्र के अध्ययन में त्रिकोणमिति के महत्वपूर्ण सूत्रों का प्रयोग किया , जिससे उनके त्रिकोणमिति ज्ञान का पता चलता है । उनके कार्यों ने गणित के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया और खगोलीय गणनाओं की सरल और सटीक बनाया ।

11. महर्षि अगस्त्य :

महर्षि अगस्त्य भारतीय ऋषि परंपरा के महान संत और विद्वान थे , जिन्होंने विज्ञान , आयुर्वेद , ज्योतिष और धार्मिक ग्रंथों में गहरा योगदान दिया । उन्होंने प्राचीन समय में विधुत तथा बैटरी के आविष्कार में महत्वपूर्ण योगदान दिया था । उनके द्वारा रचित वैदिक ग्रंथों में विधुत उत्पादन और इसके उपयोग के सिद्धांतों का वर्णन मिलता है , जो यह दर्शाता है कि प्राचीन भारतीय विज्ञान अत्यंत उन्नत और समृद्ध था ।

Edit with WPS Office

महर्षि अगस्त्य ने अपने ग्रंथों में विधुत और इसके संचयन की प्रक्रिया का वर्णन किया है , जो आज के समय में बैटरी की अवधारणा से मेल खाती है । उनके द्वारा रचित अगस्त्य संहिता में एक विशेष प्रकार की विधुत उत्पन्न करने की विधि का उल्लेख है । उन्होंने बताया कि यदि एक मिट्टी के बर्तन में पानी , तांबे की एक पट्टी और जस्ते की एक पट्टी रखी जाए , तो एक गैल्वेनिक सेल की भांति विधुत का निर्माण होता है ।

यह प्रक्रिया आज की बैटरी की संरचना के समान है , जिसमें कैथोड (तांबे की पट्टी) और ऐनोड (जस्ते की पट्टी) के बीच में एक इलेक्ट्रोलाइट (जल) होता है । इस प्रकार महर्षि अगस्त्य द्वारा वर्णित विधुत उत्पादन की विधि आधुनिक समय में बैटरी निर्माण की मूल अवधारणा को प्रमाणित करती हैं ।

महर्षि अगस्त्य ने न केवल विधुत के निमार्ण की विधि बताई , बल्कि इसका प्रयोग भी बताया । उन्होंने विधुत के प्रयोग से जल का विधुत अपघटन करने की विधि समझाई , जिसमें जल को विधुत धारा के माध्यम से से हाइड्रोजन और ऑक्सीजन गैसों में विभाजित किया जा सकता है । यह प्रक्रिया आज के विज्ञान में भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है , जो यह प्रमाणित करती हैं कि प्राचीन भारत के ऋषियों के पास अद्वितीय वैज्ञानिक दृष्टिकोण और तकनीकी ज्ञान था ।

अगस्त्य संहिता महर्षि अगस्त्य द्वारा रचित एक अद्वितीय ग्रंथ है , जिसमें उन्होंने न केवल विधुत उत्पादन और इसके उपयोग की विधियां बताई , बल्कि इसमें विज्ञान और तकनीकी ज्ञान का एक गहरा भंडार समाहित है । इस ग्रंथ में उल्लेखित विधुत उत्पादन की विधि आज की बैटरी टैक्नोलॉजी का प्रारंभिक रूप माना जाता है । उन्होंने यह भी बताया कि विधुत का प्रयोग युद्ध के दौरान शत्रुओं को रोकने के लिए किया जा सकता है , जो उस समय की सैन्य तकनीक में भी प्रगति को दर्शाता है ।

Edit with WPS Office

12. महर्षि पतंजलि :

महर्षि पतंजलि प्राचीन भारत के महान ऋषियों में से एक थे , जिन्हें योग और संस्कृत व्याकरण का जनक माना जाता है । उनकी विद्वता और गहन ज्ञान का प्रभाव आज भी भारत और विश्वभर में अनुभव किया जाता है । पतंजलि ने न केवल योग के माध्यम से आत्म - शुद्धि और मानसिक संतुलन की विधि प्रतिपादित की , बल्कि उन्होंने संस्कृत के महाभाष्य की भी रचना की , जो आज भी संस्कृत व्याकरण का प्रमुख आधार है ।

महर्षि पतंजलि की सबसे प्रसिद्ध रचना **योगसूत्र** है , जिसमें उन्होंने योग को आत्मा , मन और शरीर के संयोजन का शास्त्र बताया है । योगसूत्र चार अध्यायों में विभाजित है ;

1. **समाधि पाद** : इसमें समाधि की अवस्था और मानसिक शांति प्राप्त करने की विधियां दी गई है ।

2. **साधना पाद** : इसमें योग के आठ अंगों ___ अष्टांग योग ___ का विस्तृत विवरण है ; जो यम , नियम , आसन , प्राणायाम , प्रत्याहार , धारणा , ध्यान , और समाधि के रूप में जाने जाते हैं ।

3. **विभूति पाद** : इसमें योग साधना से प्राप्त होने वाली शक्तियों का वर्णन है ।

4. **कैवल्य पाद** : यह आत्मा की शुद्धता और परमात्मा से मिलन का अंतिम चरण है ।

पतंजलि ने योग को केवल शारीरिक व्यायाम नहीं , बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक शुद्धि का माध्यम बताया । उनके अनुसार , योग के अभ्यास से मनुष्य अपने भीतर की शक्ति और आंतरिक शांति का अनुभव कर सकता है , और उसे आत्मसाक्षात्कार की और ले जा सकता है ।

Edit with WPS Office

महर्षि पतंजलि ने संस्कृत के प्रसिद्ध वैयाकरण पाणिनी के अष्टाध्यायी पर एक विस्तृत भाष्य लिखा , जिसे महाभाष्य कहा जाता है । यह व्याकरण के नियमों की गहरी व्याख्या करता है और संस्कृत भाषा की संरचना को सरल और सुलभ बनाता है । महाभाष्य का अध्ययन आज भी संस्कृत व्याकरण के विद्यार्थियों और विद्वानों द्वारा किया जाता है , और यह संस्कृत भाषा के अध्ययन के लिए अमूल्य स्रोत है ।

महर्षि पतंजलि का योग और व्याकरण के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान में भी महत्वपूर्ण योगदान के लिए जाना जाता है । उन्होंने शरीर और मन के संतुलन को बनाए रखने के लिए योग को एक महत्वपूर्ण माध्यम माना , और उनकी शिक्षा आज की चिकित्सा पद्धतियों में भी उपयोगी साबित होती है । योग के माध्यम से न केवल मानसिक तनाव को दूर किया जा सकता है , बल्कि शरीर को निरोगी और दीर्घायु बनाए रखने की विधियां भी उन्होंने प्रस्तुत की ।

प्राचीन भारत के महान ऋषियों की अद्वितीय विरासत :

महर्षि सुश्रुत , महर्षि कणाद , महर्षि अगस्त्य , महर्षि बौधायन , और अन्य महान ऋषियों ने भारतीय सभ्यता और विज्ञान को अपने अमूल्य योगदान से समृद्ध किया ।

उनके कार्य केवल आध्यात्मिक और दार्शनिक नहीं थे , बल्कि उन्होंने विज्ञान , गणित , चिकित्सा , खगोल शास्त्र , योग , रसायन विज्ञान , और व्याकरण जैसे क्षेत्रों में भी अद्वितीय योगदान दिया ।

प्राचीन भारत के ये ऋषि न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक गुरुओं के रूप में प्रसिद्ध थे , बल्कि विज्ञान और तकनीकी ज्ञान के क्षेत्र में भी अग्रणी थे । महर्षि चरक और सुश्रुत ने चिकित्सा विज्ञान को समृद्ध किया , जबकि महर्षि पतंजलि ने योग के माध्यम से शरीर और आत्मा के संतुलन का मार्ग दिखाया । महर्षि कणाद और नागार्जुन ने रसायन विज्ञान और परमाणु सिद्धांत में गहन शोध किया , और महर्षि अगस्त्य ने विद्युत के सिद्धांतों को

Edit with WPS Office

प्रतिपादित किया । बौधायन , भास्कराचार्य और वाराह मिहिर ने गणित ज्योतिष और खगोल शास्त्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया , जो आज भी आधुनिक विज्ञान की नीव माने जाते हैं ।

इन ऋषियों के विद्वता और गहन दृष्टि ने यह प्रमाणित किया है कि प्राचीन भारत विज्ञान और ज्ञान के क्षेत्र में अत्यंत उन्नत था । उनके द्वारा रचित ग्रंथ और सिद्धांत आज भी विज्ञान , दर्शन और चिकित्सा के क्षेत्र में उपयोगी साबित हो रहे हैं । इन महान ऋषियों ने भारतीय संस्कृति को अद्वितीय बनाया , और उनकी शिक्षा से संपूर्ण विश्व को ज्ञान का प्रकाश प्राप्त हुआ ।

अतः यह कहना उचित है की प्राचीन भारत के ऋषि मुनि न केवल भारत के गौरव हैं , बल्कि वे समूची मानवता के लिए एक अनमोल धरोहर है । उनके सिद्धांत और शिक्षाएं आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी हजारों वर्ष पहले थी । उनके विचार और विज्ञान का योगदान सदियों तक मानवता को प्रेरित और मार्गदर्शित करता रहेगा ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 69. आयुर्वेद

आयुर्वेद भारतीय चिकित्सा की एक प्राचीन प्रणाली है , जिसका उद्देश्य शरीर , मन , आत्मा और पर्यावरण के संतुलन के माध्यम से संपूर्ण स्वास्थ्य को बनाए रखना है । यह एक समग्र प्रणाली है , जो केवल रोगों का उपचार

Edit with WPS Office

करने पर केंद्रित नहीं होती , बल्कि स्वस्थ जीवन जीने के तरीके , रोगों की रोकथाम , और शरीर के भीतर के संतुलन को बनाए रखने पर जोर देती हैं ।

आयुर्वेद का शाब्दिक अर्थ :

" आयुर्वेद दो संस्कृत शब्दों से मिलकर बना है ;
आयु __जिसका अर्थ है ; जीवन या आयु
वेद __ जिसका अर्थ है " ज्ञान या विज्ञान ,,

इस प्रकार आयुर्वेद का अर्थ है ; जीवन का विज्ञान या जीवन जीने की कला ,, यह जीवन के हर क्षेत्र को समाहित करता है , जिसमें शारीरिक , मानसिक और सामाजिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य शामिल है ।

आयुर्वेद के मुख्य उद्देश्य :

1. **स्वास्थ्य की रक्षा** : आयुर्वेद का प्राथमिक उद्देश्य स्वस्थ व्यक्तियों के स्वास्थ्य की रक्षा करना और उन्हें बीमारियों से दूर रखना है ।
2. **रोगों का उपचार** : यह बीमारियों का निदान और उपचार करने के लिए विभिन्न प्राकृतिक तरीकों और औषधियों का उपयोग करता है ।

आयुर्वेद के मूल सिद्धांत :

आयुर्वेद भारतीय चिकित्सा पद्धति है , जो अत्यधिक प्राचीन है । इसका उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं है , बल्कि शरीर , मन और आत्मा के संतुलन के माध्यम से स्वस्थ्य जीवन पर केंद्रित है । आयुर्वेद के मूल सिद्धांत निम्नलिखित हैं :

1.___ त्रिदोष सिद्धांत

यह आयुर्वेद का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है । शरीर में तीन दोष होते हैं :

- **वात** : यह तत्व गति , ऊर्जा और गतिविधि का प्रतिनिधित्व करता है । वात के असंतुलन से गैस , चिंता , सूखापन , अनिद्रा

Edit with WPS Office

जैसी समस्याएं हो सकती है ।

- **पित्त** : यह तत्व पाचन और चयापचय को नियंत्रित करता है । पित्त के असंतुलन से पेट की समस्याएं , जलन , चिड़चिड़ापन आदि हो सकतें हैं ।
- **कफ** : यह तत्व शरीर में ठहराव, स्त्रेहन , और संरचना को बनाए रखता है । कफ का असुंतलन अधिक वजन , सुस्ती , सर्दी जैसी समस्याओं का कारण बनता है ।

2.___ पंचमहाभूत सिद्धांत ;

इस सिद्धांत के अनुसार , सभी पदार्थ और शरीर पांच महान तत्वों से बने होते हैं :

आकाश , वायु , अग्नि जल पृथ्वी इन तत्वों का संतुलन स्वास्थ्य का प्रतीक है , और शुक्र सम्मिलित है ।

3.___ धातु ,माला , अग्नि सिद्धांत ;

- धातु : ये शरीर के मूल ऊतक है , जिनमे - रस , रक्त , मांस , मेद ,अस्थि , मज्जा , और शुक्र सम्मिलित है ।
- माला : ये शरीर से बाहर निकालने वाले उत्सर्जन पदार्थ हैं , जैसे - मल , मूत्र ,पसीना आदि ।
- अग्नि : यह पाचन और चयापचय की प्रक्रिया को नियंत्रित करता है । जब अग्नि का संतुलन बिगड़ता है , तो पाचन संबंधी समस्याएं उत्पन्न होती हैं ।

4.___ स्वास्थ्य का आयाम :

आयुर्वेद में स्वास्थ्य का अर्थ केवल शरीर के स्वस्थ होने से नहीं है , बल्कि मन , आत्मा और इंद्रियों के संतुलन से भी होता है । इसे कहते हैं ;

- समदोषा (संतुलित दोष)
- समधातु (संतुलित धातुएं)
- सममला (संतुलित मल)

Edit with WPS Office

- ➤ समअग्नि (संतुलित अग्नि)
- ➤ प्रसन्न आत्मा , मन , और इंद्रियां ।

आयुर्वेद में मुख्य ऋषियों का योगदान :

आयुर्वेद की नीव कई ऋषियों और चिकित्सको ने रखी । उनके योगदान से ही यह चिकित्सा पद्धति आज भी प्रचलित है ;

ऋषि चरक : चरक को आधुनिक आयुर्वेद का पिता माना जाता है । उनका प्रमुख ग्रंथ चरक संहिता है । जो चिकित्सा और पथ्य- पथ्यां (आहार- विहार) के सिद्धांतों पर आधारित है । चरक संहिता में शरीर के दोष , धातु और माला के संतुलन के महत्व को समझाया गया है । ऐसा ग्रंथ में द्रव्य गुण विज्ञान , चिकित्सा के सिद्धांत , निदान और औषधियों का विस्तृत वर्णन है ।

ऋषि सुश्रुत : सुश्रुत को शल्यचिकित्सा के पिता के रूप में जाना जाता है । उनका प्रमुख ग्रंथ " सुश्रुत संहिता „ है । जिसमें शल्यचिकित्सा और शरीर रचना विज्ञान पर गहन जानकारी दी गई है । उन्होंने शल्य चिकित्सा के कई महत्वपूर्ण सिद्धांतों को स्थापित किया , जैसे प्लास्टिक सर्जरी , मोतियाबिंद की सर्जरी, और कई शल्यचिकित्सा प्रक्रिया ।

ऋषि वाग्भट : वाग्भट के प्रमुख दो ग्रंथ है ; " अष्टांग हृदय „ और अष्टांग संग्रह „ । उन्होंने आयुर्वेद को अष्टांग (आठ अंगों) में विभाजित किया , जिसमें काय चिकित्सा , शल्य चिकित्सा , शालाक्य (नेत्र - कर्ण - नाक चिकित्सा) , भूत चिकित्सा , बाल चिकित्सा , औषध विज्ञान , गर्भ चिकित्सा और रसायन चिकित्सा सम्मिलित हैं । उनकी रचनाएं सरल और व्यवस्थित है , जो आम लोगों के लिए भी आसानी से समझने योग्य है ।

ऋषि आत्रेय : आत्रेय एक प्राचीन आयुर्वेदाचार्य थे , जिन्होंने आत्रेय संहिता की रचनाएं की थी । उनके शिष्य अग्निवेश ने इस ज्ञान को आगे बढ़ाया । आत्रेय ने रोगों के निदान और चिकित्सा के सिद्धांतों पर काम किया और उन्हें संहिताबद्ध किया ।

Edit with WPS Office

ऋषि कश्यप : कश्यप ने बाल रोग और स्त्री रोग पर व्यापक रूप से काम किया । उनका ग्रंथ " कश्यप संहिता „ बाल चिकित्सा और स्त्री चिकित्सा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण योगदान है ।

आयुर्वेदिक उपचार की विधियां :

- **औषधियों का प्रयोग :** जड़ी- बूटियों और खनिजों से निर्मित औषधियों का उपयोग किया जाता है ।

- **पंचकर्म :** शरीर को शुद्ध करने और दोषों को संतुलित करने के लिए पंचकर्म प्रक्रियाएं (वमन , विरेचन , बस्ती , नस्य , रक्तमोक्षण) की जाती है ।

- **आहार और जीवनशैली :** उचित आहार और जीवनशैली के माध्यम से शरीर के दोषों को संतुलित किया जाता है ।

- **योग और ध्यान :** मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य के लिए योग और ध्यान को आयुर्वेदिक का हिस्सा माना जाता है ।

आयुर्वेद के मूल सिद्धांत शरीर , मन और आत्मा के संतुलन पर आधारित है , जो स्वास्थ्य को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । कुछ प्रमुख ऋषियों जैसे चरक, सुश्रुत ,वाग्भट , आदि ने इस चिकित्सा पद्धति के सिद्धांतों को स्थापित और समृद्ध किया , जिससे यह प्रणाली आज भी जीवित और प्रभावशाली है ।

आयुर्वेद में शरीर के **मर्म स्थोनो** का विशेष महत्व है । मर्म स्थान वे महत्वपूर्ण बिंदु होते हैं जहां शरीर के तीनों दोष- वात , पित्त और कफ का सुंतलन नियंत्रित होता है । मर्म बिंदुओं पर चोट लगने से व्यक्ति को गंभीर चोट या यहां तक कि मृत्यु तक का सामना करना पड़ सकता है ।

Edit with WPS Office

आयुर्वेद में कुल **107 मर्म स्थानों** का उल्लेख है । आचार्य सुश्रुत के अनुसार , **मर्म वे बिंदु होते हैं जहां मांस (मांसपेशी) सिरा (नसें) स्त्रायु (तंतु) , अस्थि (हड्डी) और संधि (जोड़) का संगम होता है ।** यह संगम शरीर के विभिन्न कार्यों को नियंत्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । ये मर्म बिन्दु किसी प्रकार के आघात या चोट के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं ; और इन्हें गंभीरता से बचाने की आवश्यकता होती है । " **मारयन्तीति मर्माणि** „ जिसका अर्थ है कि **वह बिंदु जिन पर आघात होने से मृत्यु संभव है** । इन बिंदुओं पर चोट लगने से जीवन -प्रक्रिया गंभीर रूप से प्रभावित होती हैं , इस प्रकार ,मर्म बिन्दुओं का ध्यान रखना अति आवश्यक है , क्योंकि ये शरीर की
महत्वपूर्ण संरचना और ऊर्जा का केंद्र होते हैं । मर्म का ज्ञान शरीर को संपूर्ण रुप से समझने और उनके स्वास्थ्य को संरक्षित करने का माध्यम है । यह आयुर्वेद का एक अनमोल ज्ञान है , जो शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा और संतुलन में सहायक हैं , और जिसका सही उपयोग जीवन को दीघार्यु , स्वस्थ और संतुलित बनाता है ।

वेदों में स्वास्थ्य संबंधी निर्देश : प्राकृतिक जीवन और स्वास्थ्य का संतुलन :

वेदों में स्वस्थ जीवन जीने के लिए कई महत्वपूर्ण निर्देश दिए गए हैं , जो प्रकृति और शरीर के बीच सामंजस्य स्थापित करती हैं । ये निर्देश न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को श्रेष्ठतर बनाते हैं ; बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन की भी नींव रखतें हैं । आइए , इन निर्देशों को आधुनिक संदर्भ में समझते हैं :

1. ठंडे पानी से स्नान करें और गर्म जल ही पिएं :

वेदों में स्नान और पानी पीने के तरीकों का विशेष उल्लेख है । स्नान के लिए ठंडा पानी श्रेष्ठतर माना गया है , क्योंकि यह शरीर को शुद्ध

Edit with WPS Office

और ऊर्जा प्रदान करता है । वहीं पीने के लिए सूर्य या अग्नि से तप्त गर्म जल का सुझाव दिया गया है । यह पाचन में सहायता करता है और शरीर की शुद्धि प्रक्रिया को बेहतर बनाता है । ठंड से उत्पन्न बीमारियों की अवधि में गुनगुने पानी से स्नान का विकल्प दिया गया है , जो शरीर को आराम और सुरक्षा प्रदान करता है ।

2. पानी घूंट घूंट कर पिएं :

पानी पीने का ढंग भी महत्वपूर्ण होता है । घूंट घूंट कर धीरे- धीरे पानी पीने से यह शरीर में सही तरीके से अवशोषित होता है और पाचन तंत्र को बेहतर तरीके से काम करने में सहायता मिलती हैं ।

3. भोजन के तीन नियम : हितभुक , मितभुक , और ऋतभुक

- हितभुक : वह भोजन करें जो शरीर के लिए हितकारी हो , यानि स्वास्थ्यवर्धक और सुपाच्य हो ।
- मितभुक : कम भोजन करें , क्योंकि अधिक भोजन से पाचन संबंधी समस्याएं होती हैं ।
- ऋतभुक : मौसम के अनुसार भोजन का चयन करें । जैसे -- गर्मियों में ठंडी और हल्की चीजें खाएं और सर्दियों में गर्म और पोषक तत्वों से भरपूर आहार लें ।

4. भोजन जीवन के लिए हो ,न कि जीवन भोजन के लिए :

यह एक महत्वपूर्ण विचार है कि भोजन का उद्देश्य केवल जीवित रहना होना चाहिए , न की खानें के लिए जीना । संतुलित और संयमित भोजन से जीवन बेहतर बनता है , और भोजन को केवल आवश्यकता अनुसार ग्रहण करना चाहिए । जितनी भूख हो उससे कम भोजन ग्रहण करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

5. भोजन चबाकर खाएं :

अच्छे पाचन और स्वास्थ्य के लिए भोजन को चबा-चबा कर खाना चाहिए। इससे पाचन तंत्र पर कम दबाव पड़ता है और भोजन सही ढंग से पचता भी है। एक ग्रास भोजन को कम से कम 32 बार चबाना चाहिए।

6. उगते और ढलते सूर्य का संपर्क :

उगते और ढलते सूर्य की किरणें शरीर के लिए अत्यंत लाभकारी मानी गई है। इन किरणों में रोगाणुनाशक गुण होते हैं, जो शरीर को रोगमुक्त रखने में सहायता करते हैं।

7. सूर्याभिमुख होकर मल- मूत्र का त्याग न करें :

सूर्य हमारे जीवन का प्रमुख स्रोत है, वेदों में सूर्य देव को सम्मान करने का निर्देश दिया गया है, और सूर्य की दिशा में मुख करके मल मूत्र त्याग करने से शरीर की आंतरिक ऊर्जा नष्ट होती है। यह एक प्रतीकात्मक निर्देश है कि हमें प्राकृतिक शक्तियों के प्रति सम्मान एवं कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए।

8. वायु और प्रकाशयुक्त घर में रहें :

वेदों में ऐसे घरों में रहने का सुझाव दिया गया है जहां वायु और प्रकाश का समुचित प्रवेश हो। यह स्वस्थ और खुशहाल जीवन के लिए अति आवश्यक है, क्योंकि ताजी हवा और प्राकृतिक प्रकाश स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होते हैं।

9. प्रातः भ्रमण :

सुबह की शुद्ध हवा में घूमना स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी है। यह शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है, फेफड़ों को ताजगी देता है और मन को शांत रखता है।

10. नियमित आसन और प्राणायाम करें :

Edit with WPS Office

वेदों में योग और प्राणायाम को दैनिक जीवन का अंग बनाने की सलाह दी गई है । यह न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को सुधारता है , बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन भी प्रदान करता है ।

11. जौं और चावल का भोजन :

वेदों में जौं और चावल को प्रमुख आहार बताया गया है । जौं का गुण यह है कि उस पर आकाशीय बिजली नहीं गिरती , जो इसे सुरक्षित और पौष्टिक बनाती है । जहां जौं का प्रयोग संभव न हो , वहां चावल को विकल्प के रूप में बताया गया है । जौं के सतू में दही मिलाकर खाने से व्यक्ति विषम परिस्थितियों में मानसिक रूप से स्थिर रहता है । यह मिश्रण शरीर को ठंडक और ताजगी प्रदान करता है ।

12. श्रीखंड का महत्व :

वेदों में गर्म दूध को दही से फाड़कर बनाए गए छेने (जिसे आज के समय में श्रीखंड कहा गया) को अत्यंत गुणकारी बताया गया है । यह पोषक तत्वों से भरपूर होता है

13. ईर्ष्या और क्रोध से बचें :

वेदों में मानसिक शांति को विशेष महत्व दिया गया है । ईर्ष्या और क्रोध को शरीर के लिए धीमा जहर माना गया है , जो धीरे-धीरे शरीर और मन दोनों को नष्ट करता है ।

14. ब्रह्म मुहूर्त में जागरण और दिन में न सोना :

ब्रह्म मुहूर्त (सूर्योदय से पहले का समय) में जागने से आयु बढ़ती है और स्वास्थ्य में सुधार होता है । दिन में सोने से आयु घटती है , क्योंकि यह शरीर की प्राकृतिक लय को बाधित करता है । सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय खाना एवं सोना दोनों ही वर्जित कहा गया है । वैदो में दी गई ये निर्देश शारीरिक , मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन को बनाए रखने का अद्भुत तरीका है । ये सिद्धांत न केवल प्रकृति के साथ जुड़ने पर बल देते हैं , बल्कि शरीर और मन को स्वस्थ रखने के लिए व्यावहारिक सुझाव भी प्रदान करते

Edit with WPS Office

हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 70.शरीर और आत्मा की विभिन्न अवस्थाएं :

शरीर वह साधन या स्थान है जहां जीवात्मा भोगों का अनुभव करता है । भोग चाहे सुख के हो या दु:ख के , वे इसी शरीर के माध्यम से अनुभव किए जाते हैं । यह शारीरिक अस्तित्व हमें कर्मों का फल भोगने का अवसर प्रदान करता है , इसलिए यह **शरीर भोग का साधन है ।**
" **भोगायतंन शरीर „** मीमांसा दर्शन का एक महत्वपूर्ण सूत्र है । इसका संक्षेप में अर्थ है कि शरीर भोग का साधन है । जीवन में कर्तव्यों का पालन और कर्मों का निष्पादन ही शरीर धारण करने का मुख्य उद्देश्य है ।

इस सूत्र में दो मुख्य शब्द है -- **भोगायतन** और **शरीर ।**

- ★ **भोग ____** भोग का अर्थ है , किसी वस्तु , क्रिया , या अनुभूति का अनुभव करना । यह सुखद या दुखद , दोनों हों सकता है ।
- ★ **आयतन ____** आयतन का अर्थ होता है निवास स्थान या माध्यम , जहां कोई वस्तु रहतीं हैं ।
- ★ **शरीर ____** शरीर भौतिक रूप से हमारा स्थूल शरीर है ,

Edit with WPS Office

जिससे हम भोग का अनुभव करते हैं ।

शरीर केवल एक माध्यम है जो हमें कर्मों के परिणाम स्वरूप सुख - दुख का अनुभव कराता है । शरीर आत्मा का वास्तविक स्वरूप नहीं है , बल्कि आत्मा के कर्मों के फलों को भोगने का स्थान मात्र है । आत्मा अपने कर्मों का फल यथावत शरीर के माध्यम से ही प्राप्त करती हैं , इसलिए इस भौतिक शरीर का अत्यधिक महत्व दिया गया है । परंतु यह भी समझाया गया है कि शरीर नश्वर है , आत्मा अमर है ।

उपनिषदों में शरीर को तीन मुख्य प्रकारों में विभाजित किया गया है ; जो निम्नलिखित हैं ;

1. **स्थूल शरीर (स्थूलशरीर)**
2. **सूक्ष्म शरीर (सूक्ष्मशरीर)**
3. **कारण शरीर (कारणशरीर)**

इन तीनों प्रकार के शरीरों का विवरण विभिन्न उपनिषदों और वैदिक ग्रंथों में दिया गया है । आइए प्रत्येक शरीर का विस्तृत वर्णन श्लोकों के साथ देखेंगे ।

1. स्थूल शरीर (physical body)

स्थूल शरीर ; भौतिक शरीर है यह पंचमहाभूतों (पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , और आकाश) से बना है । स्थूल शरीर का संबंध हमारी जागृत अवस्था से है , जहां हम इंद्रियों के माध्यम से शरीर का अनुभव करते हैं । इसका जन्म कर्मों के फलस्वरूप होता है और मृत्यु के पश्चात इसका नाश हो जाता है । उपनिषदों में विशेष रूप से स्थूल शरीर का वर्णन इस प्रकार है ;

" **अन्नमय : कोश :** „ **(तैत्तिरीय उपनिषद् 2.2)**

इसका अर्थ है कि स्थूल शरीर " अन्नमय कोश „ है , यानि यह भोजन से निर्मित और पोषित होता है । यह सबसे बाहरी परत है और शरीर के

Edit with WPS Office

आंतरिक अंगों , मांस , हड्डियों और त्वचा से मिलकर बना है ।

2. सूक्ष्म शरीर (sukshma sharira)

सूक्ष्म शरीर ; वह अदृश्य शरीर है जो इंद्री , मन , बुद्धि , अहंकार , प्राण , और चित्त से मिलकर बना होता है । यह हमारे मानसिक और आध्यात्मिक अनुभवों का केंद्र है और स्वप्रावस्था से जुड़ा होता है । इसे स्थूल शरीर की तुलना में अधिक सूक्ष्म और अदृश्य माना जाता है । यह शरीर मृत्यु के पश्चात भी जीवात्मा के साथ रहता है और पुनर्जन्म के लिए कारण बनता है ।

श्लोक :

" प्राणमय कोश ; मनोमय: कोश: विज्ञानमय कोश: " (तैत्तिरीय उपनिषद्. 2.3)

इस श्लोक के अनुसार , सूक्ष्म शरीर तीन स्तरों में विभाजित है :

- प्राणमय कोष : यह जीवन शक्ति (प्राण) से संबंधित है और विभिन्न प्रकार के प्राण (वायु) के रूप में कार्य करता है ।
- मनोमय कोष : यह मन और भावनाओं से संबंधित है ।
- विज्ञानमय कोष : यह बुद्धि और निर्णय शक्ति से संबंधित है ।

3. कारण शरीर (karana sharira)

कारण शरीर ; वह सूक्ष्मतम और अचिंत्य स्थिति है , जो हमारे जीवन के मूल कारण के रूप में कार्य करता है । कारण शरीर की स्थिति में जीवात्मा सुषुप्ति अवस्था में होता है , जहां न कोई जागृति होती हैं और न कोई स्वप्न । यह शरीर जीवात्मा की सबसे गूढ़ और सूक्ष्म अवस्था है , जहां आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप में रहती हैं । यह कारण शरीर व्यक्ति की जन्म -जन्मातरं की वासनाओं और कर्मों का स्त्रोत होता है । कारण शरीर की स्थिति में आत्मा ब्रह्म के साथ अपने पूर्ण एकत्व का अनुभव करती हैं ।

श्लोक :

" आनन्दमय: कोश: „ (तैत्तिरीय उपनिषद्. 2.5)

इस श्लोक के अनुसार , कारण शरीर को " आनन्दमय कोष „ कहा

Edit with WPS Office

जाता है , जो परम आनंद की अवस्था का प्रतीक है । यह शरीर जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति के पश्चात की स्थिति अनुभव कराता है ।

सारांश :

- स्थूल शरीर : यह भौतिक शरीर है , जो पंचमहाभूतों से बना है और नाशवान है ।
- सूक्ष्म शरीर : इसमें मन , इंद्री , बुद्धि , अंहकार , चित्त और प्राण शामिल हैं ; और यह पुनर्जन्म का कारण है ।
- कारण शरीर : यह शरीर सूक्ष्म और स्थूल शरीरों का कारण है , जो जन्म और मृत्यु के चक्र का मूल स्रोत है और केवल मोक्ष के द्वारा समाप्त होता है ।

इन तीनों शरीरों का अध्ययन आत्मा के गहरे रहस्यों और संसार के चक्र को समझने में सहायक होता है ।

जीवात्मा की चार अवस्थां :

उपनिषदों में जीवात्मा की चार अवस्थाओं --- जाग्रत (जागृत) , स्वप्न , सुषुप्ति और तुरीय --- का गहन विवेचन किया गया है । यह अवधारणा मुख्य रूप से माण्डूक्य उपनिषद में वर्णित है ; जो आत्मा (आत्मन्) के चार स्तरों को परिभाषित करता है । इन अवस्थाओं के माध्यम से आत्मा जगत का अनुभव करती हैं और अंततः तुरीय (चतुर्थ) अवस्था में ब्रह्म से एकाकार होती हैं ।

1. जाग्रत अवस्था (जागृत)

माण्डूक्य उपनिषद , मन्त्र वचन. 3 : , प्रथम पाद : **" जाग्रत स्थानों बहिष्प्रज्ञः सप्ताङ्ग एकोनविंशतिमुखः स्थूलभुग्वैश्वानरः प्रथमः पादः ।**

➤ यह अवस्था वह है , जिसमें आत्मा बाहरी संसार के साथ अपने स्थूल शरीर के माध्यम से संपर्क करती है । इस अवस्था में आत्मा

Edit with WPS Office

बाह्य विषयों का अनुभव इंद्रियों के माध्यम से करती हैं ।

- वैश्वानर इस अवस्था का नाम है , जो स्थूल भोग से युक्त होता है । इस अवस्था में हम जागरूक होते हैं और पंचेद्रियों के माध्यम से भौतिक संसार के साथ जुड़ते हैं ।
- इस अवस्था में 19 मुख माने जाते हैं , जो पांच ज्ञानेंद्रियां , पांच कर्मेंद्रिया , पांच प्राण , मन , बुद्धि , चित्त और अहंकार है ।

2. स्वप्न अवस्था (स्वप्न)

माण्डूक्य उपनिषद , मन्त्र वचन. 4 , द्वितीय पाद : " स्वप्रस्थानोंऽन्तप्रज्ञ: सप्ताङ्ग् एकोनविंशतिमुख: प्रविविक्तभुक तैजस् : द्वितीय: पाद: । „

- स्वप्न अवस्था वह है , जिसमें आत्मा अपने सूक्ष्म शरीर के माध्यम से अपने आंतरिक संसार का अनुभव करती हैं । इसमें बाहरी वस्तुएं नहीं होती , बल्कि मन में बने मानसिक चित्रों का अनुभव होता है । स्वप्न अवस्था में व्यक्ति अपने ही मन के भीतर की कल्पनाओं और मानसिक छवियों का अनुभव करता है । यह जागृत अवस्था में संचित हुए विचारों और भावनाओं का सूक्ष्म रूप होता है ।
- इस अवस्था को तैजस कहा जाता है , क्योंकि इसमें अंत : प्रज्ञा होती हैं , यानी कि आत्मा स्वप्न के रूप में आंतरिक अनुभव करती हैं ।
- इस अवस्था में भी वही 19 मुख होते हैं , जो जागृत अवस्था में होते हैं , परन्तु अनुभव आंतरिक होते हैं और सूक्ष्म शरीर के स्तर पर होते हैं ।

3. सुषुप्ति अवस्था (सुषुप्त)

माण्डूक्य उपनिषद , मन्त्र 5 , तृतीय पाद : " यत्र सुप्तों न कठ्चन कामयते न कठ्चन स्वप्न पश्यति तत् सुषुप्तम् । सुषुप्तस्थानोऽप्रज्ञ एकीभूत:

Edit with WPS Office

प्रविविक्तभुक प्राज्ञ आनन्दमय: चतुर्थ: पाद: ।„

- **सुषुप्त** अवस्था में व्यक्ति किसी भी प्रकार की इन्द्रियं या मानसिक गतिविधि का अनुभव नहीं करता । यह गहरी नींद की अवस्था है , जहां न कोई स्वप्न होता है और न ही जागृति । व्यक्ति इस अवस्था में पूर्ण विश्राम और शांति का अनुभव करता है । इस अवस्था में आत्मा अपनी सूक्ष्म एवं स्थूल इन्द्रियों से मुक्त होकर केवल कारण शरीर में स्थित रहती हैं ।
- इस अवस्था को प्राज्ञ कहा जाता है , जहां मन और बुद्धि विलीन हो जातें हैं और केवल आनंद शेष रहता है । इस अवस्था में व्यक्ति पूर्ण विश्रांति का अनुभव करता है और कोई भी स्वप्न या जागृत अनुभव नहीं होता ।
- इसमें आत्मा को अद्वैत (अविभाजित) स्थिति का अनुभव होता है , परन्तु वह इस आनन्द को जागरूक रुप से अनुभव नहीं करता । यह गहरी नींद की अवस्था है ।

4. तुरीय अवस्था (तुरीय)

माण्डूक्य उपनिषद , मन्त्र वचन. 7 , चतुर्थ पाद : नान्त: प्रज्ञ: न बहिष्प्रज्ञ नोभयत: प्रज्ञ: न प्रज्ञानघनं न प्रज्ञं नाप्रज्ञम् । अध्ष्टम् अव्यवहार्यम् अग्राहाम अलक्षणम् अचिंत्यम् अव्यपदेश्यम् एकात्मप्रत्ययसारम् प्रपठ्पशमम् शान्तम् शिवम् अद्वेतम् चतुर्थम् मन्यन्ते स आत्मा स विज्ञेय: ।

- तुरीय अवस्था वह है , जो जाग्रत , स्वप्न और सुषुप्ति , तीनों से परे है । इसे " चतुर्थ „ अवस्था भी कहा जाता है । यह अवस्था शुद्ध चेतना की अवस्था है , जहां न तो बाहरी और न ही आंतरिक अनुभव होते हैं ।
- यह अवस्था न तो जाग्रत है , न स्वप्न , और न ही गहरी नींद की स्थिति । इसे अद्वैत कहा गया है , जहां आत्मा और ब्रह्म का पूर्ण एकत्व होता है । यह अनिर्वचनीय , अव्यक्त और अद्वितीय है ।
- इसमें आत्मा को शांति , परमानंद और पूर्णता का अनुभव होता

Edit with WPS Office

है । यह स्थिति ब्रह्मज्ञान की अंतिम अवस्था है , जिसमें आत्मा अपनी मूल प्रकृति में स्थित हो जाती हैं ।

माण्डूक्य उपनिषद में इन चार अवस्थाओं के वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि आत्मा अपनी भौतिकता , मानसिकता और आध्यात्मिकता के विभिन्न स्तरों को पार करती हुई अंततः तुरीय अवस्था में पूर्ण ब्रह्म से एकाकार हो जाती हैं । जहां वह अपनी आत्मा और ब्रह्म की एकता को अनुभव करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•71.आत्मा का स्वरूप

आत्मा/ जीवात्मा का स्वरूप अजन्मा , नित्य , शाश्वत और पुरातन है । इसका कभी नाश नहीं होता , चाहे शरीर नष्ट हो जाएं । जिस प्रकार एक व्यक्ति पुराने वस्त्रों को त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है , उसी प्रकार जीवात्मा एक शरीर को त्यागकर दूसरे शरीर में प्रवेश करता है । यह चक्र तब तक चलता है जब तक जीव मोक्ष/ मुक्ति को प्राप्त नहीं कर लेता । जीवात्मा अपने कर्मों के अनुसार विभिन्न योनियों में जन्म लेता है और उन कर्मों के फल भोगता है । मृत्यु केवल शरीर की होती हैं , आत्मा हमेशा अविनाशी रहतीं हैं ।

भगवत गीता में कहा गया है : ______

Edit with WPS Office

" नैन छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक: ।
न चैन क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत : ।। (श्लोक. 2.23)
अर्थात : आत्मा को शस्त्र काट नहीं सकते , अग्नि जला नहीं सकती , जल भिगो नहीं सकता और वायु इसे सुखा नहीं सकतीं । आत्मा स्थिर , अचल , अविनाशी , और सनातन है । यह अव्यक्त , अचिंत्य और विकार रहित है ।

आत्मा का स्वभाव :

आत्मा इंद्रियातीत है , अर्थात इसे रुप , गंध , शब्द और स्पर्श के माध्यम से अनुभव नहीं । यह इसलिए भी है क्योंकि आत्मा इंद्रियों के परे है , इसे न तो देखा जा सकता है और न ही सुना जा सकता है । आत्मा का अनुभव केवल ज्ञान की दृष्टि से ही किया जा सकता है । इसलिए आत्मा का स्वरूप अव्यक्त और अपरिभाष्य है , जो केवल आध्यात्मिक दृष्टि और साधना से ही समझा जा सकता है ।

आत्मा का निवास स्थान :

शास्त्रों के अनुसार , आत्मा का निवास हदय में होता है । परमात्मा स्वयंम पूर्ण ज्ञान स्वरूप और सर्वज्ञ हैं , जबकि आत्मा अल्पज्ञ है । जो थोड़ा सा ज्ञान जीवात्मा में होता है , वह भी परमात्मा से ही प्राप्त हुआ है , जैसे की छाया में थोड़ा प्रकाश होता है , वह सूर्य के प्रकाश का अंश होता है । इसी प्रकार , जीवात्मा परमात्मा के अंश रूप में शरीर के हृदय में वास करता है ।

जिस प्रकार चंदन की गंध हर जगह फैल जाती है , उसी प्रकार हृदय में स्थित जीवात्मा अपने विज्ञान रुप गुण से पूरे शरीर में व्याप्त हो जाता हैं । इस प्रकार , जीवात्मा पूरे शरीर में अनुभव कर सकता है कि कहा सुख है और कहा दुख । हालांकि वह हृदय में स्थित है , फिर भी उसकी उपस्थिति समस्त शरीर में अनुभव की जा सकती है ।

मृत्यु के पश्चात आत्मा की यात्रा :

जब शरीर की मृत्यु होती है , तो उदान वायु शरीर से निकल जाती हैं ,

Edit with WPS Office

जिससे शरीर ठंडा हो जाता हैं। इस समय जीवात्मा अपनी इंद्रियों और मन को साथ लेकर उदान वायु के साथ अगले लोक की यात्रा करता है। जीवात्मा की गति उसके अंतिम संकल्प और कर्मों पर निर्भर होती हैं। मृत्यु के समय उसका जो संकल्प होता है, उसी के आधार पर सूक्ष्म शरीर का निर्माण होता है। यह सूक्ष्म शरीर पहले सोम (चन्द्रमा के तत्व) में स्थित होता है, फिर मेघ (बादल) में, मेघ से वृष्टि (वर्षा) जल में, जल से अन्न में, और अंततः अन्न से वीर्य में स्थानांतरित होता है। इसके बाद वीर्य के माध्यम से जीवात्मा गर्भ में प्रवेश करता है।

इस प्रकार, परमात्मा जीवात्मा को संकल्प और कर्म के आधार पर विभिन्न योनियों में ले जाता है। जीवात्मा के साथ प्राण, मन, इंद्रियां और सूक्ष्म तत्व भी चलते हैं, और वह एक शरीर से दूसरे शरीर में प्रवेश करता है।

आत्मा के इस निरंतर यात्रा और शरीरों के परिवर्तन का उद्देश्य अंततः मोक्ष की प्राप्ति है, जहां आत्मा परमात्मा में विलीन होकर जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाती हैं।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 72.वेदों में परमात्मा का स्वरूप

Edit with WPS Office

वेदों में ईश्वर का स्वरूप बहुत गहनता से और स्पष्ट रूप से वर्णित किया गया है । वेदों के मंत्रों के माध्यम से हमें ईश्वर की महानता , सर्वव्यापकता और सर्वशक्तिमानता का ज्ञान मिलता है । यहां कुछ प्रमुख वेद मंत्र दिए गए हैं , जो ईश्वर के स्वरूप का वर्णन करते हैं ।

1. यजुर्वेद. 40/8

भावार्थ : वह परमात्मा शुद्ध , सर्वव्यापक , शरीर रहित , दोष रहित , नसों और मांसपेशियों से रहित , पापों से मुक्त , सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है । वह सृष्टि की उत्पत्ति करने वाला है और सब कुछ नियंत्रित करता है । वह सर्वज्ञ और स्वयम्भु (स्वयं से उत्पन्न) है और उसने अनादिकाल से संसार के नियमों का संचालन करता है ।

2. ऋग्वेद. 1/164/46

भावार्थ : सत्य (ईश्वर) एक है , विद्वान उसे विभिन्न नामों और रुपों में पुकारते हैं । यह मंत्र ईश्वर की एकता और सार्वभौमिकता को दर्शाता है , और यह बताता है कि भले ही हम उसे अलग- अलग रुपों और नामों से जाने , वह एक ही है ।

3. अथर्ववेद. 10/8/31

भावार्थ : जो परमात्मा अपनी महानता से सम्पूर्ण सृष्टि को देखता है , वह स्थिर और गतिमान दोनों का साक्षी है । यह मंत्र ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन करता है कि वह हर जगह है और सब कुछ देखता है ।

4. ऋग्वेद. 10/121/1

भावार्थ : प्रारंभ में हिरण्यगर्भ उत्पन्न हुआ , वही समस्त सृष्टि का स्वामी है । उसी ने आकाश और पृथ्वी को स्थिर किया । हम किस देवता की आराधना करें जो इन सबका कर्ता है । यहां परमात्मा को सबका उत्पादक कहा गया है ।

5. यजुर्वेद. 32/3

भावार्थ : ईश्वर का कोई रूप नहीं है ; उसे आंखों से कोई देख नहीं सकता

Edit with WPS Office

। यह मंत्र ईश्वर के निराकार स्वरूप का वर्णन करता है , जो मानव इंद्रियों से परे है ।

6. ऋग्वेद. 3/62/10 (गायत्री मंत्र)

भावार्थ : हम उस परमात्मा के दिव्य तेज का ध्यान करते हैं , जो हमारी बुद्धि को प्रेरित और मार्गदर्शित करें । यह मंत्र ईश्वर की प्रकाश स्वरूप और बुद्धि को प्रकाशित करने वाली शक्ति का वर्णन करता है ।

7. अथर्ववेद. 13/4/16

भावार्थ : वह अजन्मा और अद्वितीय है । यह मंत्र ईश्वर की शास्वत्ता और उसकी एकता को स्पष्ट करता है कि वह अजन्मा है और उससे परे कोई नहीं है ।

8. यजुर्वेद. 40/6

भावार्थ : जो लोग ईश्वर के स्थान पर अन्य वस्तुओं की स्तुति एवं उपासना करते हैं ; वे घोर अंधकार में प्रकाश करते हैं । यह मंत्र हमें शिक्षा देता है कि ईश्वर के भिन्न किसी अन्य की उपासना करना हमें अज्ञानता के अंधकार में ले जाता है ।

9. यजुर्वेद. 32/3

भावार्थ : उसका कोई प्रतिरूप/प्रतिमा एवं प्रतिमान नहीं है । यह मंत्र ईश्वर की निराकारता और उसकी तुलना किसी भौतिक वस्तु से न किए जाने का संदेश देता है । ईश्वर का न कोई रूप है और न ही कोई मूर्ति । वह किसी भी भौतिक या मानसिक स्वरूप से परे हैं ।

10. यजुर्वेद. 40/1

भावार्थ : संसार को बनाने वाला सर्वव्यापक है , वह सब के ऊपर नीचे , आगे- पीछे दाएं -बाएं , अंदर- बाहर , यानी सभी स्थानों पर उपस्थित है । अतः अन्याय पूर्वक किसी का भी कोई पदार्थ नहीं लेना चाहिए , क्योंकि ईश्वर सब कुछ देख रहा है । यहां कुछ भी स्थायी रूप से मेरा नहीं है , बल्कि

Edit with WPS Office

केवल कुछ समय के लिए मिला है । इस सत्य को समझते हुए हमें पवित्र जीवन जीना चाहिए । जो मनुष्य ईश्वर की सर्व दृष्टि का आदर करते हुए पाप कर्मों से बचते हैं , उन पर ईश्वर की विशेष कृपा होती है ।

इस मंत्र में ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन किया गया है परमात्मा कण-कण में उपस्थित है और हमारे प्रत्येक कर्म का वह स्वयं साक्षी है इसलिए बुरे कर्मों से हमेशा बचने का प्रयास करें ।

11. ऋग्वेद. 10/129/1-7 (नासदीय सुक्त) (ऐतरेय उपनिषद्)

भावार्थ : जब सृष्टि का आरंभ नहीं हुआ था , तब न तो अस्तित्व था , न ही अनस्तित्व । तब न आकाश था , न कोई अन्य तत्व । सिर्फ एक परम सत्य था , जो अनंत , अपरिवर्तनीय और अखंड था । उस समय केवल वह परम सत्ता ही विद्यमान थी ।

यह सुक्त सृष्टि की उत्पत्ति से पहले की स्थिति और ईश्वर की अनंतता का वर्णन करता है । यह दर्शाता है कि ईश्वर न केवल सृष्टि का कर्ता है बल्कि वह सृष्टि से परे भी है ।

12. यजुर्वेद. 23/19

भावार्थ : वह ईश्वर सर्वत्र दृष्टि रखने वाला है , उसका मुख और बाहु चारों दिशाओं में है । वह अपने पंखों से आकाश और पृथ्वी को धारण करता है । यह एक ही देवता है जो आकाश और पृथ्वी को उत्पन्न करता है ।

यह मंत्र ईश्वर की सर्वव्यापकता का वर्णन करता है कि वह हर दिशा में है और उसकी दृष्टि सर्वत्र है । वह इस सृष्टि को धारण करने वाली शक्ति है ।

13. अथर्ववेद. 4/16/8

भावार्थ : वह ईश्वर जो भूतकाल और भविष्य काल में सभी कुछ जानता

Edit with WPS Office

है , जो इस संसार में सब कोई स्थिर करता है , जो प्राणियों की सभी गतिविधियों को नियंत्रित करता है ।

यह मंत्र बताता है कि ईश्वर काल और स्थान की सीमाओं से परे है और संपूर्ण सृष्टि पर उसका नियंत्रण है । इन वेद मंत्रों से स्पष्ट होता है कि ईश्वर कोई भौतिक वस्तु नहीं है जिसे इंद्रियों के माध्यम से अनुभव किया जा सके । वह परलौकिक (आध्यात्मिक) है और उसकी उपस्थिति समस्त सृष्टि में है ।

वेदों के अनुसार ईश्वर निराकार , सर्वव्यापक , सर्वशक्तिमान , सर्वज्ञ , शाश्वत और सर्वत्र उपस्थित है । वह न केवल सृष्टि का कर्ता है , बल्कि उसका पालनहार और संहारक भी है । ईश्वर कोई भौतिक वस्तु नहीं है जिसे देखा जा सकें , बल्कि वह एक अद्बितीय चेतना है , जिसे केवल ज्ञान और ध्यान के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है ।

{ उपनिषदों में परमात्मा का स्वरूप }

उपनिषदों में परमात्मा का स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म , गूढ़ और गहन रूप में वर्णित है । उपनिषदों को वेदों का अंतिम भाग माना जाता है और उन्हें वेदांत भी कहा जाता है , जिससे परमात्मा की वास्तविकता और सृष्टि के परम सिद्धांत का विवरण मिलता है । उपनिषदों के अनुसार , परमात्मा निर्गुण , निराकार , अव्यक्त और सर्व व्यापक है । वह न केवल इस सृष्टि का स्त्राष्टा है , बल्कि वह समस्त वस्तुओं में व्याप्त है । आइए , कुछ प्रमुख श्लोक के माध्यम से परमात्मा के स्वरूप को विस्तार से समझते ;

1. निर्गुण और निराकार (ब्रह्म)

उपनिषदों में परमात्मा को ब्रह्म के रूप में चित्रित किया गया है , जो निर्गुण (गुणों से रहित) और निराकार (रूप- रहित) है । मुण्डक उपनिषद् में ब्रह्म का स्वरूप इस प्रकार वर्णित है ; " **सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ।** „

Edit with WPS Office

(मुण्डक उपनिषद. 2.2.10)

भावार्थ : ब्रह्म सत्य है , ज्ञान स्वरूप है , और अनंत है । यह श्लोक ब्रह्म के तीन मुख्य गुणों को प्रकट करता है ; सत्य (अस्तित्व) , ज्ञान (चेतना) और अनंत (सीमाहीनता) । ब्रह्म न तो किसी गुण से बंधा है और न ही उसे किसी विशेष रूप में बांधा जा सकता है ।

2. सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान

ब्रह्मांड के हर कण में परमात्मा का वास है । वह सर्वत्र है , जो सब कुछ संचालित करता है , और वही इस समस्त जगत का आधार है । ईशोपनिषद में यह स्पष्ट रूप से कहा है

" ईशावास्यमिदं सर्व पत्किठ्च जगत्यां जगत् „ ईशावास्यमिद्. 1.1

भावार्थ : इस संपूर्ण जगत में जो कुछ भी गतिशील या स्थिर है , वह सब परमात्मा द्वारा ही आवृत्त है । परमात्मा सर्वव्यापी है , अर्थात वह प्रत्येक वस्तु और प्राणी में विद्यमान है ।

3. अव्यक्त और अनिर्वचनीय (ब्रह्म का रहस्य)

कठोपनिषद में ब्रह्म का वर्णन अव्यक्त और अनिर्वचनीय रुप में किया गया है । यह मानव समझ से परे है और उसकी महिमा का अनुभव केवल ध्यान और आत्मज्ञान से किया जा सकता है ।

" न तत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मन : । " **(कठोपनिषद. 1.3.12)**

भावार्थ : वह (ब्रह्म) ऐसा है जिसे न आंखें देख सकती हैं , न वाणी उसे व्यक्त कर सकती हैं , और न ही मन उसे जान सकता है । इसका अर्थ यह है कि ब्रह्म इंद्रियों की सीमा से परे है और उसे केवल आत्मज्ञान से ही अनुभव किया जा सकता है ।

4. परमात्मा और आत्मा का एकत्व

उपनिषदों में ब्रह्म और आत्मा के बीच गहरा संबंध बताया गया है । यह बताया गया है कि आत्मा और ब्रह्म अनेक गुणों में एक जैसे हैं , दोनों में

Edit with WPS Office

कोई भेद नहीं है । यह अद्वैतवाद का सिद्धांत है , जो उपनिषदों का मूलभूत तत्व है ।

" अहं ब्रह्मास्मि । „ (बृहदारण्यक उपनिषद. 1.4.10)
भावार्थ : मैं ब्रह्म हूं । इस श्लोक में आत्मा और ब्रह्म के एकत्व का प्रतिपादन किया गया है । आत्मा (जीव) को यह बोध हो जाता हैं कि वह स्वयं ब्रह्म स्वरूप है , जो समस्त सृष्टि में व्याप्त है ।

5. ब्रह्म की शाश्वतता

ब्रह्म न तो जन्म लेता है और न ही मरता है । वह शाश्वत और अनंत है । यह गुण कठोपनिषद के इस श्लोक में स्पष्ट रूप से वर्णित है ;

" न जायते म्रियते वा विपश्चित । „ (कठोपनिषद. 1.2.18)
भावार्थ : ब्रह्म न जन्म लेता है , न मरता है । वह सदा से है और सदा रहेगा । वह ज्ञानस्वरूप , अविनाशी और अनंत है ।

6. परमात्मा सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है

छान्दोग्य उपनिषद में यह कहा गया है कि परमात्मा सर्वज्ञ (सब कुछ जानने वाला) और सर्वशक्तिमान (सब कुछ करने वाला) है । वह इस समस्त जगत का कर्ता है ।

" सर्व खल्विदं ब्रह्म । „ (छान्दोग्य उपनिषद. 3.14.1)
भावार्थ : यह समस्त सृष्टि वास्तव में ब्रह्म (परमात्मा) है । इस श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि परमात्मा समस्त जगत में व्याप्त है और वह ही सभी वस्तुओं का मूल है ।

7. परमात्मा अद्वितीय है (अद्वैत सिद्धांत)

माण्डूक्य उपनिषद में यह कहा गया है कि परमात्मा अद्वितीय है और वह सभी द्वैत (दोहरापन) से परे है । उसे किसी अन्य वस्तु से तुलना नहीं की जा सकती ।

Edit with WPS Office

" एकोदेव: सर्वभूतेषु गूढ़: सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा । „ **(श्वेताश्वर उपनिषद. 6.11)**
भावार्थ : एक ही परमात्मा है , जो समस्त जीवों में गुप्त रूप से उपस्थित है । वह सर्वव्यापी और प्रत्येक प्राणी की आंतरिक आत्मा है । यह श्लोक अद्वैतवाद की प्रमुखता को दर्शाता है , जो उपनिषदों का प्रमुख सिद्धांत है ।

8. अदृश्य और अव्यक्त परमात्मा

कठोपनिषद में परमात्मा के अदृश्य और अव्यक्त स्वरुप को प्रस्तुत किया गया है । यह स्पष्ट किया गया है कि उसे सामान्य इंद्रियों से जाना या देखा नहीं जा सकता ।

" अणोरणीयान महतो महीयान् आत्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम् । „ **(कठोपनिषद. 1.2.20)**
भावार्थ : परमात्मा सबसे छोटा (अणु से भी छोटा) और सबसे बड़ा (संपूर्ण जगत से भी विशाल) है । वह प्रत्येक प्राणी के हृदय में गुप्त रूप से स्थित है । यह श्लोक परमात्मा की सूक्ष्मता और उसकी व्यापकता दोनों को दर्शाता है ।

9. परमात्मा का रुप और गुण

श्वेताश्वर उपनिषद में परमात्मा के विभिन्न गुणों और स्वरुपों का विचरण दिया गया है । इसे समझना और अनुभव करना अत्यंत कठिन है , लेकिन यह समस्त ज्ञान और चेतना का स्त्रोत है ।

" अपाणिपादो जवनो ग्रहीता पश्यत्यचक्षु: स श्रणोत्यकर्ण : । **(श्वेताश्वर उपनिषद. 3.19)**
भावार्थ : परमात्मा के न हाथ है और न पांव , फिर भी वह सब कुछ पकड़ता है और शीघ्रता से गति करता है । उसकी आंखें नहीं है , फिर भी वह सब कुछ देखता है । उसके कान नहीं है , फिर भी वह सब कुछ सुनता है । यह श्लोक परमात्मा के अप्रत्यक्ष और अलौकिक स्वरुप को व्यक्त

Edit with WPS Office

करता है ।

10. ब्रह्माण्ड का कर्ता और आधार

बृहदारण्यक उपनिषद में यह कहा गया है कि परमात्मा इस ब्रह्मांड का कर्ता और आधार है । वह सब कुछ उत्पन्न करता है और सब कुछ उसी में विलीन हो जाता है ।

" यस्मिन्सवाणि भूतानि आत्मैवाभूद्विजानत : । (बृहदारण्यक उपनिषद. 2.4.6)
भावार्थ : जिसमें सभी प्राणियों का अस्तित्व विलीन हो जाता है , वही परमात्मा है । यह श्लोक ब्रह्म और आत्मा के एकत्व की अवधारणा को और अधिक स्पष्ट करता है जो उपनिषदों का केंद्रीय सिद्धांत है ।

11. ध्यान और ज्ञान के माध्यम से परमात्मा का अनुभव

मुण्डक उपनिषद में यह कहा गया है कि ध्यान और ज्ञान के माध्यम से ही परमात्मा का अनुभव किया जा सकता है ।

" नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुधा श्रुतेन । „ (मुण्डकोपनिषद. 3.2.3)
भावार्थ : यह आत्मा (परमात्मा) न तो प्रवचन से प्राप्त होता हैं , न ही बुद्धि से , और न ही बहुत सुनने से । यह श्लोक बताता है कि परमात्मा का अनुभव तर्क या वाणी से नहीं , बल्कि ध्यान और आत्मज्ञान से होता है ।

12. उपनिषदों में परमब्रह्म परमेश्वर की सर्वलोकमय विराट स्वरूप का वर्णन इस प्रकार किया गया है । (मुण्डकोपनिषद. 2.1.4)

" अग्निर्मुधा चक्षुषी चन्द्रसूर्यो दिशा: श्रोत्र वांग विवृताक्ष वेदा: ।
वायु: प्राणों हृदयं विश्वमस्य पभ्दयां पृथिवी होष सर्वभूतान्तरात्मा ।।
भावार्थ : अग्नि उस परमेश्वर का मस्तक है , चंद्रमा और सूर्य दोनों नेत्र हैं , सब दिशाएं दोनों कान है , और प्रकट हुए वेद उसकी वाणी है , वह समस्त

Edit with WPS Office

प्राणियों का अंतरात्मा हैं , इस प्रकार परमात्मा के विराट स्वरूप का उल्लेख करके उसे सबका अंतरात्मा बताया गया है ।

निष्कर्ष : परमात्मा इस सृष्टि में जितने भी अज्ञात तत्व है उससे भिन्न है और जो ज्ञात है उससे भी भिन्न है इसलिए उपनिषदों में परमात्मा का स्वरूप अत्यंत व्यापक और गहन है । वह न तो किसी विशेष रूप या गुण में बांधा जा सकता है और न ही उसे किसी एक नाम से पुकारा जा सकता है । परमात्मा या ब्रह्म समस्त सृष्टि का कारण है , और वही परमात्मा का मूल स्वरूप है । उपनिषदों का मूल संदेश यह है कि आत्मा और परमात्मा का एकत्व समझने के लिए आत्मा के वास्तविक स्वरूप को जानना आवश्यक है , जो केवल ज्ञान और ध्यान के माध्यम से संभव है ।

13. ईश्वर के स्वरूप की व्याख्या करते हुए श्री कृष्ण गीता में कहते हैं । भगवत गीता.(13.15)

बहि: अन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मात्वात्तदविज्ञेय दूरस्थं चान्तिके च तत् ।।

भावार्थ : संसार को रचने वाला अत्यंत सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है , इसलिए उसका ज्ञान इंद्रियों से नहीं , उसके गुणों और कार्य को जानने से ही हो सकता है ।

{ षडदर्शन (छह दर्शनों) में परमात्मा या ईश्वर का स्वरूप }

छः दर्शन में परमात्मा या ईश्वर का स्वरूप भिन्न भिन्न रुपों में व्याख्यायित किया गया है । इन दर्शनों के नाम है --- सांख्य दर्शन , न्याय दर्शन , वैशेषिक दर्शन , मीमांसा और वेदांत । प्रत्येक दर्शन के अनुसार परमात्मा के स्वरूप को सूत्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है ।

1. सांख्य दर्शन : (1/19)

Edit with WPS Office

सांख्य दर्शन में ईश्वर को पुरुष कहा गया है । इसमें प्रकृति और पुरुष (ईश्वर) को मूल तत्व माना गया है । पुरुष निर्गुण , निराकार और निष्क्रिय है , जो केवल साक्षी मात्र है ।

सूत्र : पुरुष: साक्षी दृश्यतेऽसाक्षिरुप :
(पुरुष केवल साक्षी है , वह कोई क्रिया नहीं करता)

2. योग दर्शन : (साधना पाद , अध्याय 2 , सूत्र 24)

योगदर्शन पतंजलि द्वारा प्रतिपादित है , जिसमें ईश्वर का उल्लेख किया गया है । यहां ईश्वर को विशेष पुरुष कहा गया है , जो कर्मों और विकारों से मुक्त है ।

सूत्र : क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट : पुरुषविशेष ईश्वर :
(जो क्लेश , कर्म , विपाक और आशयों से परे हो , वह विशेष पुरुष ईश्वर है)

3. न्याय दर्शन : (अध्याय 4 , पाद 1 , सूत्र 21)

न्याय दर्शन में ईश्वर को इस जगत के कारण और सृष्टि के रचयिता के रूप में स्वीकार किया गया है । ईश्वर ही इस संसार का कर्ता है ।

सूत्र : ईश्वर : सर्वज्ञ : सर्वशक्तिमान् कारणम् ।
(ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान है , और वही कारण है)

4. वैशेषिक दर्शन : (अध्याय 1 , पाद 2 , सूत्र 4)

वैशेषिक दर्शन में भी ईश्वर को जगत् का कर्ता और संचालक माना गया है । ईश्वर ही इस संसार को नियोजित और संचालित करता है ।

सूत्र : नियमात् ईश्वरस्य सत्ताप्रसिद्धि : ।
(नियमों के आधार पर ईश्वर का अस्तित्व स्थापित होता है)

Edit with WPS Office

5. पूर्व मीमांसा दर्शन :

पूर्व मीमांसा में कर्मकांड को प्राथमिकता दी जाती है और ईश्वर का स्पष्ट उल्लेख नहीं है । यहां मुख्य रुप से वेदों के यज्ञ और अनुष्ठान को महत्व दिया गया है ।

सूत्र : वेदा: प्रमाणम् यज्ञ: सर्वोत्तम : ।

(वेद प्रमाण है और यज्ञ सर्वोत्तम है)

6. वेदांत दर्शन :

वेदांत दर्शन , विशेषकर अद्वैत वेदांत में , परमात्मा को निर्गुण और निराकार ब्रह्म के रूप में प्रस्तुत किया गया है । यहां परमात्मा ही सबकुछ है , और जगत माया है ।

सूत्र : ब्रह्म सत्यं जगत्मिथ्या , जीवों ब्रह्मैव नापर :

(ब्रह्म सत्यं हैं जगत माया है , और जीव वास्तव में ब्रह्म के स्वरूप ही है)

इन सूत्रों के माध्यम से छः दर्शनों में ईश्वर या परमात्मा के स्वरूप को भिन्न भिन्न रूपों में समझाया गया है ।

ईश्वर के होने का प्रमाण ..?

संसार में ईश्वर के विषय में लोगों की अनेक प्रकार की मान्यताएं हैं । कुछ लोग ईश्वर को साकार मानते हैं , तो कुछ लोग उसे निराकार । कुछ लोग यह प्रश्न करते हैं कि यदि ईश्वर वास्तव में है , तो वह दिखाई क्यों नहीं देता ? कुछ लोग उसे भयंकर मानते हैं , जबकि कुछ लोग उसे शांत बताते हैं । वहीं , कुछ लोग यह भी दावा करते हैं कि ईश्वर का अस्तित्व ही नहीं है । इन सभी प्रश्नों का स्पष्ट और उत्तम उतर हमें वेदों में मिलता है ।

ऊपर दिए गए वेद मंत्रों से यह स्पष्ट होता है कि ईश्वर कोई भौतिक वस्तु नहीं है जिसे इंद्रियों के माध्यम से अनुभव किया जा सके । वह

Edit with WPS Office

परलौकिक (आध्यात्मिक) है और उसकी उपस्थिति समस्त सृष्टि में है।

भले ही हमने सृष्टि के रचयिता ईश्वर को प्रत्यक्ष रूप में नहीं देखा है , परंतु इस नियमबद्ध सृष्टि को देखकर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि यह संसार अपने आप नहीं बना है । जिस प्रकार एक छोटी सी सुई भी अपने आप नहीं बन सकती , उसे बनाने के लिए एक बुद्धिमान व्यक्ति की आवश्यकता होती हैं , उसी प्रकार इस विशाल संसार को बनाने के लिए भी एक सर्वोच्च चेतना का होना आवश्यक है ।

सृष्टि के जड़ पदार्थ अपने आप नहीं बन सकते । उन्हें आकार देने के लिए एक बुद्धिमान शक्ति की आवश्यकता होती है । तो फिर यह जटिल और व्यवस्थित संसार कैसे अपने आप बन सकता है ? यह स्पष्ट है कि मनुष्य के द्वारा भी इस संसार की रचना करना असंभव है । अतः उसी परम शक्ति का नाम ईश्वर है ।

अतः वेद आदि प्रमाण से यह सिद्ध होता है कि परमात्मा सर्वव्यापक सर्वज्ञ , निराकार , अकायम , अजन्मा , अविनाशी , अनादि एवं सनातन है परमात्मा हाथ पैर आदि समस्त इंद्रियों से रहित होकर भी सब कार्य करने में समर्थ हैं ।

श्रीमद्भगवद्गीता और मनुस्मृति आदि में सृष्टि की उत्पत्ति परमात्मा से ही बताई गई हैं । इसलिए वास्तव में श्रुतियो (वेदों) के साथ स्मृतियों का कोई विरोध नहीं है । यदि कहीं विरोध हो तो भी वह स्मृतियों को छोड़कर श्रुतियो के कथनों को ही मान्यता देनी चाहिए क्योंकि वेद और स्मृति के विरोध में वेद ही बलवान मानें गए हैं । इसलिए वेदानुकूल स्मृतियों को ही प्रमाण मानना उचित है ना कि वेदों के प्रतिकूल अपनी इच्छाओं के अनुसार बनाई हुई स्मृतियां या पुराणों को ।

परमात्मा सर्वव्यापक है या एकदेशीय.. ?

Edit with WPS Office

परमात्मा सर्वव्यापक है , न की किसी एक स्थान तक सीमित । जिसने इस अनंत संसार की रचना की है , वह हर जगह , हर क्षण और हर तत्व में समाहित है । कोई भी ऐसा जो किसी विशेष स्थान तक सीमित हो , वह समस्त ज्ञान का अधिकारी नहीं हो सकता । सृष्टि के विशाल और सूक्ष्मतम रहस्यों को वहीं समझ सकता है , जो प्रत्येक अणु - परमाणु में उपस्थित हो । ईश्वर सूक्ष्म से भी अधिक सूक्ष्म है , और सबसे विराट से भी अधिक विराट । वह जन्म- मृत्यु से परे , निराकार , शरीर - रहित , और अविनाशी है । वेदों और शास्त्रों में इस अद्वितीय सत्य की प्रमाणिक पुष्टि की गई है । इसलिए ईश्वर केवल एक स्थान पर सीमित नहीं , बल्कि सर्वव्यापक है ।

ईश्वर का नाम क्या है..?

जिस प्रकार मनुष्य , वस्तु , स्थान आदि का नाम होता है प्रश्न उठता है कि संसार के बनाने वाले का क्या नाम है ? नाम बहुत ही महत्वपूर्ण है , क्योंकि किसी भी कार्य को करने वाले की पहचान नाम से ही होती हैं । अतः उस परमपिता परमेश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम ओउम् है , क्योंकि इस एक नाम से संसार के रचयिता के सभी मुख्य गुण पता चलते हैं । इसमें ' उ , यह चिन्ह केवल उच्चारण को लंबा करने के लिए है अन्यथा यहां ओम् है । जो अ , उ , और म , से मिलकर बना है । संस्कृत भाषा के व्याकरण अनुसार अकार , उकार , मकार से विराट , सर्वव्यापक , सर्वशक्तिमान् , अजन्मा , सर्वज्ञ शब्द सिद्ध होता है , सृष्टि की उत्पत्ति , स्थिति और प्रलय रुपी तीनों गुण ओम् नाम के अर्थ से ही निकलते हैं ।

" ओम् खं ब्रह्म „ (यजुर्वेद. 40/17)

अर्थात ____ मै ब्रह्म ही संसार का रचयिता विराट और आकाश की भांति सर्वव्यापक हूं । ऐसा कोई स्थान नहीं जहां में उपस्थित नहीं हूं , इस आकाश को मैंने ही रचा है , तुम सब मनुष्य मुझे ओम के नाम से ही पुकारों । इस यजुर्वेद के श्लोक से सिद्ध होता है कि ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम ओउम् ही है ।

ब्रह्म को कैसे जाने..?

परमात्मा को ठीक -ठीक जानने के लिए युक्ति प्रमाण नहीं चल सकता

Edit with WPS Office

क्योंकि परमात्मा तर्क का विषय नहीं है । वह मन एवं इंद्रियों से अतीत (परे) है । उसकी सिद्धि कोई तर्क और युक्ति से नहीं हो सकती । परमात्मा का अंश रुपी जो जीव - आत्मा है , उसके द्वारा उस ब्रह्म को जाना जा सकता है । परंतु ब्रह्म को कोई पूर्ण नहीं जान सकता क्योंकि जीवात्मा अल्पज्ञ है और ब्रह्म सर्वज्ञ हैं ।

अतएव जो यह मानता है कि मैंने ब्रह्म को जान लिया है , मैं ज्ञानी हूं । वह वस्तुत: सर्वथा भ्रम में हैं , क्योंकि ब्रह्म इस प्रकार ज्ञान का विषय नहीं है । जितने भी ज्ञान के साधन है उनमें से एक भी ऐसा नहीं है जो ब्रह्म तक पहुंचा सकें । अतः इस प्रकार से जानने वाले के लिए परमात्मा सदा अज्ञात है । जब तक जानने का अभिमान रहता है तब तक परमेश्वर का साक्षात्कार नहीं हो सकता । परमेश्वर का साक्षात्कार उन्ही भाग्यवान महापुरुषों को होता है जिनमें जानने का अभिमान किंचित भी नहीं रह जाता । उसके लिए तो वेद ही सर्वोपरि प्रमाण है । वेदों ने उसका स्वरूप जैसा बताया वैसा ही मनाना तथा जानना चाहिए क्योंकि वेद ही ईश्वरीय वाणी है । अतः वेदों में बताए गए उपदेशों कर्मकांड उपासना योग के अनुष्ठान से ही ईश्वर को ठीक-ठाक और भाली भांति जाना जा सकता है , अन्यथा नहीं !

क्या ईश्वर , गॉड , और अल्लाह एक ही है ..?

आज विश्व के प्रमुख मजहबों में सबसे बड़ा क्रिश्चियनिटी (इसाईयत) है , इसके पश्चात इस्लाम का स्थान आता है । यदि हम भारत की बात करें , तो 11वीं शताब्दी में इस्लाम का भारत में प्रवेश हुआ । उनके आगमन का मुख्य उद्देश्य मारकाट , लूटपाट , मंदिरों को ध्वस्त करना , धन - संपत्ति लूटना , महिलाओं का शोषण और पुरुषों को गुलाम बनाकर तलवार के दम पर मत परिवर्तन कराना था । इस्लाम के अनुयायी जब भी आक्रमण करते थे ,वे लूट - मार करके चले जाते थे , परंतु कालांतर में अत्यधिक लालच के फल स्वरुप स्थायी रूप से भारत में रहकर इस कार्य को जारी रखने लगे । पूरे विश्व में इस्लाम के प्रसार के पीछे उनकी हिंसा और अत्याचार को मुख्य कारण माना जाता है । अब प्रश्न यह है उठना है कि उन्हें इस तरह क्रूर - कृत्यों के लिए प्रेरणा कहां से मिलती थी ? इसके पीछे कोई ना कोई शक्ति

Edit with WPS Office

अवश्य होगी जो उन्हें प्रेरित करती थी । इस्लाम के अनुयायी कुरान को अल्लाह की वाणी मानते हैं । लेकिन अगर अल्लाह वास्तव में ईश्वर है , तो कैसे कोई ईश्वर किसी को हिंसा , हत्या , लूट और अत्याचार का आदेश दे सकता है ?

इसी तरह , भारत में 16वीं शताब्दी में क्रिश्चियनिटी का आगमन हुआ । उनका मुख्य उद्देश्य भी धन कमाना , शासन करने के लिए विभाजन करना और लोगों की आस्थाओं का दमन करना था । जहां भी वे गए , सबसे पहले उन्होंने वहां की संस्कृति को नष्ट करने और क्रिश्चियनिटी का प्रचार -प्रसार करने का प्रयास किया । एक समय ऐसा था जब कहा जाता था कि अंग्रेज साम्राज्य में सूरज कभी अस्त नहीं होता । उन्होंने धन और सत्ता के लालच में दुनिया के अनेक देशों को गुलाम बना रखा था । तो प्रश्न उठता है कि इस तरह के निर्दय कृत्यों के लिए उन्हें प्रेरणा कहां से मिलती थी ? इसाई के अनुयायी बाइबलको गोड का ग्रंथ मानते हैं । अगर गाडं वास्तव में ईश्वर है , तो कैसे कोई ईश्वर हिंसा , विभाजन , अन्याय और अत्याचार का आदेश दे सकता है ?

भारत का इतिहास देखें तो किसी भी भारतीय राजा ने कभी किसी अन्य देश पर अकारण आक्रमण नहीं किया । उदाहरण के लिए , भगवान श्री राम ने श्रीलंका विजय के पश्चात भी विभीषण को उनका राज्य वापस सौंप दिया था । हिंसा , अत्याचार , और शोषण को सनातन धर्म में अधर्म माना गया है , और ऐसे कार्यों के लिए हमारे शास्त्रों में उचित दंड का प्रावधान भी है । सनातन धर्म का प्रमुख ग्रंथ वेद है , जिसे साक्षात ईश्वर की वाणी माना जाता है । वेदों में ईश्वर को समानता , करुणा और न्याय का प्रतीक बताया गया है , जो किसी के साथ भेदभाव नहीं करता ।

सनातन धर्म के सिद्धांतों में कर्म , पुनर्जन्म और दंड का विशेष महत्व है । भगवान कृष्ण ने भगवत गीता में यह शिक्षा दी है कि जब संसार में अन्याय और अधर्म फैलें , तब धर्म की स्थापना के लिए शस्त्र और शास्त्र का संतुलित उपयोग आवश्यक है । वहीं पश्चिमी और इस्लामी संस्कृतियों में

Edit with WPS Office

पुनर्जन्म और कर्म फल के सिद्धांत का अभाव है , जो उनके भटकने का एक प्रमुख कारण हो सकता है । अब यह है आपके ऊपर निर्भर करता है कि आप स्वयं यह तय करें कि ईश्वर का वास्तविक स्वरूप क्या है ? वह कैसा है ? और वास्तव में वह कौन है ? ईश्वर गॉड और अल्लाह एक है या अलग-अलग ..?

ईश्वर , परमात्मा एवं ब्रह्म का अर्थ :

ईश्वर : जो परम ऐश्वर्या को धारण करता है , संसार का स्वामी , नियंत्रक , कर्मों का फल दाता और सभी जीवो का पालक होने से वह ईश्वर कहलाता है ।

परमात्मा : परम चेतन तत्व एवं प्रेरणा कर्ता होने से वह परमात्मा कहलाता है ।

ब्रह्म : निरंतर सर्वत्र व्यापक होने से वह ब्रह्म कहलाता है ।

यह तीनों ही शब्द एक ही परम चेतन शक्ति (परमात्मा) के गुण एवं विशेषता बताने के लिए ही उपयोग होता है ।

ईश्वर और भगवान में अंतर :

ईश्वर एक ही है , भगवान अनेक हो सकते हैं । ईश्वर का मुख्य नाम ओउम् है । सैकड़ो गुणवाचक नाम और भी है जैसे - ब्रह्मा , विष्णु , गणेश , महेश , आदि ।

भगवान , भज - धातु से ' भग , शब्द बना है और इससे ही बना है 'भगवान , । जैसे धनवान का अर्थ धन वाला , उसी प्रकार भगवान का अर्थ है - भग वाला । भग मैं युक्त है -- श्री , ऐश्वर्य , अनाशक्ति , वीर्य व यश । जिनमें यह छह गुण पाए जाते हैं , वे भगवान है ।

अर्थात , जो भजने योग्य हो वही भगवान कहलाता है । भजन श्रेष्ठों का किया जाता है , दुष्टो का नहीं ! इसलिए गुण एवं कर्म से श्रेष्ठ मनुष्य भी भगवान कहलाने योग्य है । जैसे -- श्री राम , श्री कृष्ण , शिव , इंद्र आदि । भगवान शरीरधारी भी हो सकते हैं परंतु ईश्वर परमात्मा का कोई शरीर नहीं है वह सर्व व्यापक है भगवान अनेक हो सकते हैं परंतु ईश्वर एक ही है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 73. साम , दाम , दण्ड , भेद : चार प्रकार के बल

भारतीय राजनीति और कूटनीति में साम , दाम , दंड , भेद की नीति का उपयोग प्राचीन समय से चला आ रहा है । यह चार नीतियां किसी भी समस्या का समाधान निकालने के लिए विभिन्न परिस्थितियों में अपनाई जाती हैं । इनका उद्देश्य यह होता है कि विभिन्न प्रकार के उपायों के माध्यम से शांति स्थापित की जाए और लक्ष्य प्राप्त किया जा सके । साम दाम दंड भेद चार ऐसे नीति - तत्व है जो भारतीय राजनीति और कूटनीति में अत्यंत प्रभावी माने जाते हैं । इन नीतियों का सही समय और स्थान पर उपयोग करना राजनीति सफलता की कुंजी है ।

1. साम (सौम्यता और संवाद)

साम नीति का अर्थ है बातचीत और सामंजस्य के माध्यम से समस्या का समाधान करना । इस नीति के अंतर्गत शांति और मैत्रीपूर्ण ढंग से बातचीत करके अपने लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । इसमें मुख्य रूप से धैर्य , समझौता , और विश्वास को प्रमुखता दी जाती है । साम नीति निम्नलिखित तरीकों से कार्य करती है ;

- सौम्यता और शांति से समस्याओं का समाधान ।
- बिना संघर्ष या विवाद के मत भेदों को समाप्त करने का प्रयास ।
- वार्ता और संवाद के माध्यम से सहमति प्राप्त करने की प्रयास ।

Edit with WPS Office

उदाहरण स्वरूप , किसी विवादित विषय को शांति और संवाद से हल करना साम नीति का आदर्श उदाहरण है । यह नीति तब प्रभावी होती है जब दोनों पक्ष किसी विवाद या मुद्दे पर सहमति से समाधान खोजने के लिए तैयार होते हैं ।

2. दाम (प्रलोभन या लाभ)

दाम का अर्थ है धन या लाभ देकर अपनी बात मनवाना । यह नीति तब प्रयोग में लाई जाती है जब सामने वाले को किसी प्रकार का आर्थिक या अन्य लाभ देकर अपने पक्ष में किया जाता है । यह एक प्रकार का प्रलोभन होता है , जो किसी को अपनी और आकर्षित करने या अपनी योजना में सहयोग देने के लिए दिया जाता है । इसका उपयोग इस प्रकार होता है ;

- सामने वाले को धन , लाभ या किसी प्रकार का पुरस्कार देकर संतुष्ट करना ।
- आर्थिक या भौतिक लाभ देकर उसका समर्थन प्राप्त करना ।

राजनीति में अक्सर यह नीति देखी जाती है , जब किसी दल या समूह को अपने पक्ष में करने के लिए उसे पद या धन का प्रलोभन दिया जाता है । उदाहरण के रूप में , चुनाव के समय नेताओं द्वारा जनता को सुविधाओं और योजनाओं का वादा करना दाम नीति का एक रूप है ।

3. दंड (शक्ति का प्रयोग या सजा)

दंड का अर्थ है जबरदस्ती या सजा का प्रयोग करके अपने लक्ष्य को प्राप्त करना । जब सौम्यता या प्रलोभन काम नहीं आते , तब शक्ति का प्रयोग करके विरोधी को अनुशासित या नियंत्रित किया जाता है । यह नीति आमतौर पर तब उपयोग की जाती है जब कोई व्यक्ति या समूह विरोध या विद्रोह कर रहा हो और उसे नियंत्रित करने के लिए कठोर कदम उठाने की आवश्यकता हो । इसमें ;

- अनुशासन स्थापित करने के लिए कठोर सजा या दंड का प्रावधान ।

Edit with WPS Office

- शक्ति का प्रयोग कर सामने वाले को बाध्य करना ।

उदाहरण के लिए , कानून का उल्लंघन करने पर सजा देना या विद्रोहियों के विरुद्ध सैन्य कार्यवाही करना दंड नीति का हिस्सा है । यह तब लागू की जाती है जब अन्य साधन असफल हो जाते हैं और शक्ति का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है ।

4. भेद (विभाजन या फूट डालना)

भेद का अर्थ है किसी को विभाजित करके उसे कमजोर करना या उसकी शक्ति को कम करना । यह नीति उस समय अपनायी जाती है जब कोई विरोधी समूह या व्यक्ति अत्यधिक शक्तिशाली हो और उसे विभाजित करके कमजोर किया जा सके । इसके अंतर्गत ;

- विरोधी के बीच फूट डालकर उन्हें कमजोर करना ।
- मनोवैज्ञानिक तरीके से उन्हें विभाजित करके अपनी स्थिति मजबूत करना ।
- सामूहिक एकता को तोड़ना ।

उदाहरण के तौर पर , " फूट डालो और राज करो „ की नीति भेद नीति का एक सटीक उदाहरण है , जिसे अंग्रेजों ने भारत में उपयोग किया था । उन्होंने भारतीय शासकों और समुदायों के बीच फूट डालकर अपनी सत्ता को स्थिर बनाए रखा था ।

निष्कर्ष ______

साम दाम दंड भेद चार ऐसी नीतियां है जो समय अनुसार अलग-अलग परिस्थितियों में लागू की जाती है । इनका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति या समूह के विरोध को समाप्त करना और अपने उद्देश्य को प्राप्त करना है । साम नीति से सौम्यता के साथ समाधान निकाला जाता है , दाम नीति से प्रलोभन दिया जाता है , दंड नीति से शक्ति का प्रयोग कर अनुशासन लाया जाता है , और अंत में भेद नीति से विरोधियों के बीच फूट डालकर उन्हें

Edit with WPS Office

कमजोर किया जाता है । इन नीतियों का संतुलित और विवेकपूर्ण उपयोग एक सफल नेतृत्व और कूटनीति के लिए अत्यंत आवश्यक है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 74. भारत में गुरुकुल परंम्परा होते हुए गुलामी कैसे संभव हुई

वैदिक काल से लेकर महाभारत काल तक , भारत को विश्व गुरु के रूप में मान्यता प्राप्त थी । उस समय भारत ज्ञान - विज्ञान में न केवल प्रगतिशील था , बल्कि वैश्विक सभ्यता के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में स्थापित था । उस समय भारत न केवल आध्यात्मिक और धार्मिक ज्ञान का केंद्र था , बल्कि विज्ञान , गणित , चिकित्सा , और युद्ध कला में भी उन्नत था । लेकिन महाभारत युद्ध के पश्चात , वैदिक सनातन धर्म और उसके साथ जुड़े ज्ञान - विज्ञान में पतन का प्रारंभ हुआ । इस युद्ध में अत्यधिक शक्तिशाली दिव्य और परमाणु अस्त्रों का प्रयोग हुआ , जिसने विज्ञान और ज्ञान की धारा को बाधित किया । अनेक ऋषि -मुनि और विद्वानों की मृत्यु हो गई , जिनके पास वेदों और विज्ञान का गहन ज्ञान था । परिणामस्वरूप , गुरुकुलों में वेदों की शिक्षा धीरे धीरे समाप्त होने लगी , और एक अंधकार युग का आगमन हुआ ।

महाभारत युद्ध के बाद की स्थिति को आधुनिक परिप्रेक्ष्य से समझा जा

Edit with WPS Office

सकता है -- जैसे आज अगर परमाणु युद्ध हो जाएं , तो सबसे पहले ज्ञान - विज्ञान का नाश होगा , और जो कुछ लोग बचें रहेंगे , वे केवल अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करेंगे । ऐसी परिस्थिति में , कई पीढ़ियों तक ज्ञान का विकास रुक जाएगा और लोगों का ध्यान सिर्फ अपने मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने में लगा रहेगा । इसी प्रकार , महाभारत के बाद की पीढ़ियों को भी उस विनाश के परिणामों से उबरने में लंबा समय लगा । यह पतन और उत्थान सृष्टि के चक्र का हिस्सा है , जो निरन्तर चलता रहता है ।
महाभारत युद्ध के बाद समाज को दिशा देने वाले ज्ञानी , ऋषि - मुनि लगभग समाप्त हो चुकें थें । वेदों के गहरे और वास्तविक अर्थों को समझने वाले लोग बहुत कम बचें थे , जिसके कारण वेद मंत्रों के अर्थों का अनर्थ होने लगा । पहले जहां वेदों की शिक्षा गुरु - शिष्य परंपरा के माध्यम से श्रुतियों के रूप में दी जाती थी , वहां अब विभिन्न , मत , पंथ , और संप्रदाय उत्पन्न होने लगें । धीरे-धीरे ग्रंथों का निर्माण हुआ और जैन , बौद्ध और पौराणिक संप्रदायों का उदय हुआ ।

लगभग 300-400 वर्षों तक भारत में जैन और बौद्ध संप्रदाय का प्रभाव बना रहा । इसके पश्चात पौराणिक संप्रदायों ने उनका स्थान लिया । इन पौराणिक संप्रदायों में वैष्णव ,शैव , और शाक्त सम्प्रदाय प्रमुख थे । गुरुकुलों का पुनः निर्माण हुआ , परंतु अब उनमें पौराणिक मान्यताओं के आधार पर शिक्षा दी जाने लगी । परिणामस्वरूप , समाज में जातिवाद , उच्च - नीच भेदभाव , अवतारवाद , और मूर्ति पूजा जैसी कुरीतियों फैलने लगी । इन कुरीतियों ने समाज को मानसिक और आध्यात्मिक रूप से दुर्बल कर दिया और यह दुर्बल समाज अपनी रक्षा के लिए सक्षम नहीं रह गया ।

जब इस्लामिक आक्रमण भारत पर हुआ , उस समय गुरुकुल तो थे , पर उन में वेदों की वास्तविक शिक्षा का अभाव था । अगर वेदों की शिक्षा गुरुकुलों में दी जाती , तो महाभारत काल की तरह ज्ञान- विज्ञान में उन्नति कर सकते और आत्म सम्मान की रक्षा के लिए भी लड़े होते । हम श्री राम और श्री कृष्ण के आदर्शों का अनुसरण करते हुए दुष्टों का दामन करते और अपने

Edit with WPS Office

आदर्शों के लिए प्राण त्यागते , परंतु कभी गुलामी स्वीकार नहीं करते ।

इस्लामी आक्रमणकारियों निर्णय ने न केवल हमारे समाज पर आक्रमण किया , बल्कि हमारी संस्कृति धरोहर और शिक्षा संस्थानों को भी नष्ट कर दिया । नालंदा विश्वविद्यालय तक्षशिला और विक्रमशिला जैसे विश्व विद्यालयों , जो ज्ञान विज्ञान के केंद्र थे , जला दिए गए । इन पुस्तकालयों में लाखों ग्रंथ थे , जो ज्ञान का अनमोल भंडार थे । नालंदा विश्वविद्यालय का पुस्तकालय इतना विशाल था कि उसमें लगी आग 6 महीने तक जलती रही ।

महाभारत काल के गुरुकुल और पौराणिक काल के गुरुकुलों के बीच रात और दिन का अंतर था । महाभारत काल में वेदों की शिक्षा उन्नत ज्ञान और विज्ञान को बढ़ावा देती थी , जबकि पौराणिक काल के गुरुकुलों में पौराणिक मान्यताओं की शिक्षा तक सीमित हो गई थी । इसी कारण , हम न केवल गुलामी का शिकार हुए , बाल के ज्ञान और विज्ञान का भी पुनरुत्थान करने में असफल रहे ।

इसलिए जिस समय इस्लामी आक्रमण हुए , भारत में गुरुकुल तो थे परंतु उन में वेदों की शिक्षा का अभाव था , परिणाम स्वरुप समाज जात -पात भेदभाव तथा विभिन्न कुरीतियों एवं मान्यताओं के कारण संगठित नहीं हो पाया , यह समाज दुर्बल हो चुका था ज्ञान - विज्ञान का पुनरुत्थान संभव नहीं हो पाया , और भारत गुलामी के युग में प्रवेश कर गया ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

•75. भारत विश्व गुरु

भारत में गुरु का स्थान सदियों से सर्वोपरि रहा है । " गु „ शब्द का अर्थ होता है अंधकार और " र „ शब्द का अर्थ होता है अंधकार को दूर करने वाला , उसे हटाने वाला इसलिए गुरु शब्द का अर्थ होता है अज्ञानता से ज्ञान की ओर ले जाने वाला , असत्य से सत्य की ओर , अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला । " शिक्षा दान महादान „ यह केवल एक साधारण वाक्य नहीं , बल्कि हमारी समृद्ध शिक्षा और संस्कृति का प्रतिबिंब है । यह परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है , जिसने भारत को विश्व गुरु का गौरव दिलाया । हमारे देश ने सदियों से शिक्षा और शिक्षक को पवित्र माना , और इसका प्रचार प्रसार पूरे विश्व में किया । (प्राचीन आर्यवर्त) आज का भारत में वैदिक शास्त्रों के अध्ययन का दौर था । गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के तहत , गुरु - शिष्य परंपरा के माध्यम से वेदों की शिक्षा घर -घर तक पहुंचाई जाती थी । यह समय ऐसा था जब विश्व के अधिकांश भाग शिक्षा से अभिज्ञ थें , जबकि भारत ज्ञान के महासागर में गोते लगा रहा था । उस समय , शिक्षा केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं थी , बल्कि जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करती थी ।

प्राचीन विश्वविद्यालय का वैश्विक आकर्षण

तक्षशिला , नालंदा , विक्रमशिला जैसे प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयो में दुनियाभर से छात्र वेद , नीति शास्त्र , गणित , सैन्य विज्ञान , ज्योतिष , भूगोल और विज्ञान के अन्य विषयों को सीखने आते थे । ये विश्वविद्यालय ज्ञान का केंद्र थे , जहां से भारत ने पूरे विश्व में शिक्षा का प्रसार किया । इस दौरान , भारत की शिक्षा प्रणाली वैदिक काल से लेकर मौर्य काल तक बेहद उन्नत और संगठित थी । भारत को इस समय में केवल एक देश के रूप में नहीं , बल्कि संपूर्ण विश्व के शिक्षक के रूप में देखा जाता था । भारत ने न केवल भौतिक ज्ञान , बल्कि आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा का भी प्रसार किया । यह वही ज्ञान था , जिसने पूरे विश्व को आलोकित किया और भारत को विश्व गुरु के

Edit with WPS Office

रूप में प्रतिष्ठित किया ।

भारत पुनः विश्व गुरु कैसे बनेगा ?

भारत को एक बार फिर विश्व गुरु के रूप में स्थापित करने का प्रश्न विचारणीय है । इस उत्तर को समझने के लिए हमें यह जानना आवश्यक है कि हमारे प्राचीन ऋषि -मुनियों ने इतना विस्तृत और गहन ज्ञान कैसे अर्जित किया था । उनके ज्ञान का उद्देश्य मात्र भौतिक समृद्धि नहीं था , बल्कि इसके परे एक ऐसी समृद्धि थी जो मानव जीवन को पूर्ण बनाती हैं । यह वही समृद्धि है , जिसे हमारे पूर्वजों ने समझा और समस्त विश्व को इसका पाठ पढ़ाया । वेदों को ईश्वर की वाणी माना गया है , और इन्हीं वेदों के अध्ययन , चिंतन और पठन - पाठन से हमारे ऋषि - मुनियों ने यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया । वेदों में सृष्टि के कण-कण का ज्ञान समाहित है , जिसने भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान का एक सामंजस्य स्थापित किया । यह ज्ञान केवल भौतिक उन्नति तक सीमित नहीं था , बल्कि जीवन की सफलता और समृद्धि के लिए आध्यात्मिक मार्गदर्शन भी प्रदान करता था । ऋषियों ने भौतिक और आध्यात्मिक ज्ञान को समान महत्व दिया । वे जानते थे कि जीवन में केवल भोग और विलास पर्याप्त नहीं है । सच्ची समृद्धि और उन्नति के लिए आध्यात्मिक ज्ञान आवश्यक है । इस संतुलन को समझते हुए वे त्याग पूर्ण जीवन जीते थे , जहां भोग भी संयमित था और जीवन का उद्देश्य भी स्पष्ट था ।

कालांतर में जब मनुष्य सांसारिक सुखों और विलास में लिप्त होने लगा , तब वैदिक ज्ञान और गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का हास्य होने लगा । समाज में अज्ञानता और भेदभाव ने अपने पैर पसार लिए , जिसके परिणाम स्वरुप जातिवाद छुआछूत और हिंसा जैसी कुप्रथाएं फैल गई । इसके बाद मुगलों और अंग्रेजों के शासन ने भारत की प्राचीन शिक्षा व्यवस्था को और भी क्षीण कर दिया । भारत के विश्व गुरु बनने की राह तब तक कठिन है जब तक हम आपसी मतभेद, जातिवाद और छुआछूत जैसी बांधाओ को नहीं मिटाते । केवल औपचारिक शिक्षा से विद्वत्ता प्राप्त नहीं की जा सकती । विद्वान बनने के लिए यथार्थ ज्ञान की आवश्यकता है , जो केवल हमारे

Edit with WPS Office

वैदिक शास्त्रों से प्राप्त हो सकता है । भारत तभी पुनः विश्व गुरु बन सकता है जब हम अपने वैदिक ज्ञान की ओर लौटे और उसका पठन-पाठन गुरुकुल पद्धति के माध्यम से प्रत्येक घर में सुनिश्चित करें । यह ज्ञान हमें न केवल भौतिक सफलता की ओर ले जाता है , बल्कि आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग दिखाएगा । जब भारत अपनी प्राचीन शिक्षा प्रणाली और जीवन के संतुलित दृष्टिकोण को पूर्ण स्थापित करेगा , तभी वह एक बार फिर विश्व गुरु के रूप में उभर सकेगा ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 76. भारत का उन्नत ज्ञान - विज्ञान अन्य देशों तक कैसे फैला ..?

प्राचीन भारत में ज्ञान और विज्ञान के विकास में हमारे ऋषि मुनियों का विशेष योगदान रहा है । उन्होंने न केवल आध्यात्मिक उन्नति की , बल्कि भौतिक और तकनीकी विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । विशेष रूप से शिल्पकला और अभियांत्रिकी के क्षेत्र में महर्षि विश्वकर्मा का योगदान उल्लेखनीय है । उन्हें दिव्य वास्तुकला और इंजीनियरिंग के जनक के रूप में जाना जाता है । रामायण और महाभारत जैसे महाकाव्य में भी इस ज्ञान और विज्ञान की उन्नति का उल्लेख मिलता है , जिसमें उन्नत विमान और अस्त्र- शस्त्रों का वर्णन है ।
वेदों पर आधारित धनुर्वेद एक प्राचीन ग्रंथ था , जिसमें युद्ध के लिए दिव्य

Edit with WPS Office

यंत्रों और अस्त्र शस्त्रों का विज्ञान दिया गया था। इस ग्रंथ में उच्च विज्ञान के सिद्धांतों का समावेश था , जिनका उद्देश्य शत्रुओं को परास्त करना था। हालांकि आज यह ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं , लेकिन इसके सिद्धांत प्राचीन भारतीय सैन्य शक्ति के प्रतीक रहे हैं। श्री राम और लक्ष्मण द्वारा खर और दूषण की 10,000 सैनिकों वाली सेना को दिव्य अस्त्रों से पराजित करना इसका एक उदाहरण हैं।

प्राचीन भारत में राष्ट्र की शक्ति उसके पास उपलब्ध उन्नत अस्त्र - शस्त्रों पर निर्भर करती थी। ऐसे अनेक दिव्य अस्त्रो और शस्त्रों का निर्माण सत्य की विजय और दुष्टों के विनाश के लिए किया गया था। प्राचीन भारत की सभ्यता न केवल नैतिकता और धर्म के क्षेत्र में उन्नत थी , बल्कि उसकी सैन्य और तकनीकी क्षमता भी अत्यधिक प्रगति पर थी।

मध्यकाल में राजा भोज का शासन (900 - 1053 ई.) भी विज्ञान और तकनीकी विकास का एक महत्वपूर्ण काल था। राजा भोज को वास्तुकला और इंजीनियरिंग में विशेष रुचि थी। उनके शासनकाल में कई उल्लेखनीय निर्माण और तकनीकी उपलब्धियां का हमें वर्णन मिलता है। महाकवि कालिदास जैसे विद्वान भी उनके समय में हुए। प्राचीन ग्रंथ **भोजप्रबंध** और **समरांगणसूत्रधार** में विमानों का उल्लेख मिलता है , जो दर्शाता है कि उस समय भी विज्ञान और प्रौद्योगिकी का विकास उच्च स्तर पर था। अब यहां प्रश्न उठता है कि प्राचीन भारत में पहले से ही हर प्रकार का ज्ञान और विज्ञान उपलब्ध था , तो वह समाप्त कैसे हो गया , इसका उत्तर हमारे इतिहास के उत्थान और पतन के चक्र में निहित है। प्रत्येक सभ्यता , चाहे वह कितनी भी उन्नत हो , जब आलस्य प्रमाद और आंतरिक विभाजन की चपेट में आ जाती है , तो उसका पतन अवश्य भावी होता है। जैसे - महाभारत युद्ध के पश्चात यदुवंश वृष्णिवंश और अंधक वंशियों के आपसी झगड़ों से उनका पतन हुआ , वैसे ही समृद्धि और भौतिक उन्नति के समय , मनुष्य के भीतर आलस्य और प्रमाद उत्पन्न होते हैं। उन्नति के साथ-साथ जो अपार धन ,संपत्ति और मनोरंजन के साधन प्राप्त होते हैं , वे मनुष्य को संघर्ष और पुरुषार्थ से दूर कर देते हैं। यही सभ्यता के पतन का प्रमुख कारण बनता है।

Edit with WPS Office

प्राचीन विज्ञान के अवशेष क्यों नहीं मिलते ?

यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि यदि प्राचीन काल में विज्ञान इतना उन्नत था , तो उसके अवशेष आज हमें क्यों नहीं मिलते ? इसके कई कारण हो सकते हैं ;

1. **क्षरण और विनाश** : समय के साथ ,प्राचीन निर्माण और तकनीकी क्षय हो जाती हैं , उनका प्राकृतिक रूप से नाश हो जाता है ।
2. **प्राकृतिक आपदाएं और आक्रमण** : प्राकृतिक आपदाएं जैसे - भूकंप , बाढ़ और बाहरी आक्रमणों के कारण भी सभ्यताएं नष्ट हो जाती है । कई बार आक्रांताओं द्वारा जानबूझकर ज्ञान और विज्ञान का नाश किया गया ।
3. **ग्रंथों में मिलावट** : समय के साथ , स्वार्थी लोगों ने ग्रंथ और साहित्य में विभिन्न मिलावट की , जिससे उनकी ऐतिहासिकता और प्रमाणिकता समाप्त हो गई ।
4. **सभ्यताओं के अवशेषों का दुरुपयोग** : इतिहास पर शोध करने वाले कई लोग सभ्यताओं के अवशेष निकालकर उनका दुरुपयोग करते हैं , जिससे वे सही रूप में संरक्षित नहीं हो पाते । जैसे - हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त अवशेषों का उपयोग रेल की पटरियों एवं आसपास के लोगों द्वारा घर बनाने में उपयोग किया गया इस कारण भी प्राचीन सभ्यता के अवशेष समाप्त हो जातें हैं ।

वर्तमान विज्ञान का श्रेय : ______

जड़ चेतन का विशेष ज्ञान ही विज्ञान कहलाता है विज्ञान न तो किसी व्यक्ति विशेष का होता है और न हीं किसी राष्ट्र का । यह पूरी मानवता के कल्याण के लिए होता है । जिसने भी संसार के उत्थान और प्रगति के लिए पुरुषार्थ किया है , उसकी प्रशंसा होनी चाहिए । विज्ञान ने यहां तक पहुंचाने के लिए बहुत लंबी यात्रा तय की है । पिछले 100 वर्षों में विज्ञान ने चमत्कारिक प्रगति की है , और इन 100 वर्षों की एक झलक यह बताती है कि विज्ञान किस दिशा में आगे बढ़ा है । वर्तमान विज्ञान की अधिकांश खोजें 1600 से

Edit with WPS Office

1800 शताब्दी के बीच हुई थी ।

लेकिन यह भी सत्य है की अंग्रेजी शासन काल के दौरान भारत के अनेक ज्ञान- विज्ञान के ग्रंथ अंग्रेजों द्वारा चुराए गए और विदेशों में ले जाए गए ,आज भी हम यह देखते हैं कि कई प्राचीन भारतीय ग्रंथ और तकनीकी विदेशों में संरक्षित है । जिसकी पुष्टि स्वयं पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक: **द डिस्कवरी ऑफ इंडिया (The Discovery of india. 1954) में भी करते हैं ।**

भारत का प्राचीन विज्ञान विदेशों में कैसे पहुंचा , एक जटिल लेकिन महत्वपूर्ण विषय है । इस संदर्भ में एडाल्फ हिटलर और उसकी विचारधाराओं को समझना आवश्यक हो जाता है । हिटलर की पुस्तक : mein kampf (1925) में उनके विचारधारा और जर्मनी के लिए उनकी योजनाएं स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई है । इस पुस्तक में हिटलर ने आर्यों को मानव सभ्यता के प्रमुख संस्थापक के रूप में प्रस्तुत किया है । उन्होंने यह दावा किया कि दुनिया भर में जितने भी सांस्कृतिक , वैज्ञानिक और तकनीकी उन्नति हुई है , वह आर्यों की ही देन है ।

हिटलर की आत्मकथा : (mein kampf. 1925) ______

हिटलर के अनुसार , आर्यन मानवता का एक श्रेष्ठ वर्ग थे , और दुनिया की सभी वैज्ञानिक और सांस्कृतिक उपलब्धियां आर्यों के कारण संभव हुई । Mein kampf में हिटलर ने कहा , " **हर मानवीय संस्कृति की अभिव्यक्ति , कला , विज्ञान और तकनीकी कौशल का प्रत्येक उत्पाद आर्य जाति की सृजनात्मक शक्ति का परिणाम है । „** हिटलर ने यह भी दावा किया कि जापान की उन्नति आर्य प्रभाव का ही परिणाम है ।

" Every manifestation of human culture , every product of art , science and technical skill , which we see before our eyes two - day , is almost exclusively the product of

Edit with WPS Office

the Aryan creative power. Aryan alone who founded a superior type of humanity. If we divide mankind into three categories founders of culture , bearers of culture , and destroyers of culture the Aryan alone can be considered as representing the first category „ on the next page he said that " the present japanese development has been due to Aryan influence. (Mein kampf page no . 232) „

इसके साथ ही हिटलर ने यह भी माना की विश्व पर केवल आर्यों का प्रभुत्व होना चाहिए । इस विचारधारा के तहत उन्होंने नाजी दल के लिए स्वास्तिक और गरुड़ चिन्ह को ध्वज के रूप में अपनाया , जो प्राचीन भारतीय प्रतीकों से प्रेरित थे ।

हिटलर की इस विचारधारा का एक हिस्सा वेदों पर आधारित था । वेदों को हिटलर और उनके अनुयायियों ने विज्ञान कला और तकनीकी विकास की नींव माना । ऋग्वेद के एक मंत्र का उदाहरण देते हुए हिटलर ने कहा कि ईश्वर ने आर्यों को यह भूमि दी है ,और आर्य कभी भी डर कर छिपते नहीं है ।

अहम् भूमीमददम आर्याय ।।   ऋग्वेद. 4/26/2

हालांकि हिटलर ने आर्य सभ्यता और प्राचीन ज्ञान को बढ़ावा देने का प्रयास किया , लेकिन उसने आर्यत्व को गलत तरीके से परिभाषित किया । वह यह समझने में विफल रहा कि आर्यत्व केवल एक नस्ल या जन्म का प्रतीक नहीं है , आर्य कोई जन्म से नहीं कर्म से कहलाता है । वह अपने आप को जन्म से आर्य मानता था । हिटलर का अधूरा ज्ञान और उसकी चरमपंथी नीतियां अंततः घातक सिद्ध हुई ।

हिटलर की इस विचारधारा के आधार पर जर्मनी में संस्कृत और वेदों का अध्ययन जोर-शोर से किया जाने लगा । आज भी जर्मनी में संस्कृत का बहुत अधिक प्रभाव है और 14 विश्वविद्यालयों में संस्कृत का अध्ययन किया जाता है । वह लोग स्वयं को आर्यों की संतान मानते हैं और भारतीय

Edit with WPS Office

प्राचीन ज्ञान का अनुसरण करते हैं । यह स्पष्ट है कि जर्मनी ने भारत के प्राचीन ग्रंथो और वेदों से प्रेरणा ली , और विज्ञान , कला , और तकनीकी विकास में इसका उपयोग किया ।

द्वितीय विश्व युद्ध : ______

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जर्मनी में विज्ञान और तकनीक का उन्नयन अभूतपूर्व स्तर पर था , और इसका एक बड़ा उदाहरण था V-2 **रॉकेट** परियोजना । इस परियोजना का नेतृत्व **wernher von Braun** जैसे वैज्ञानिकों ने किया । हिटलर ने इस परियोजना में भारी निवेश किया क्योंकि वह इसे युद्ध में निर्णायक हथियार के रूप में देख रहा था ।

V - 2 रॉकेट परियोजना का आरंभ : ______

1936 से 1943 तक , जर्मनी के पेन मुंडे गांव को दुनिया की पहली लंबी दूरी की मिसाइल बनाने का केंद्र बनाया गया । यहां wernher von Braun के नेतृत्व में लगभग 12000 लोगों की टीम काम कर रही थी । इस दौरान ,V- 2 रॉकेट का निर्माण हुआ । जो जर्मनी के लिए अत्यधिक महत्व का अस्त्र बन गया । हिटलर को आशा थी कि इस रॉकेट के माध्यम से वह युद्ध का परिणाम अपने पक्ष में कर सकेगा । लेकिन जब ब्रिटिश खुफिया एजेंसी को इस परियोजना का पता लगा , तो उन्होंने ऑपरेशन हाइड्रा के तहत जर्मनी के पेनमुंडे कारखाने पर हमला कर दिया । परंतु उसके पश्चात भी जर्मनी का कारखाना बंद नहीं हुआ एड्रेस बदल लिया और शहर के बीचो-बीच लगा दिया । इसके पश्चात 1940 में मित्र देश (Alies country) द्वार जर्मनी के कोलोन शहर को बमबारी के द्वारा पूर्ण नष्ट कर दिया गया जिसमें 50000 से अधिक लोगों की मृत्यु हुई ।

जर्मनी ने जवाबी कार्यवाही में V - 2 राकेटों का प्रयोग ब्रिटेन पर किया , जिससे भारी तबाही हुई । लगभग 3000 लोग इन रॉकेट हमलों में मारे गए । इस तकनीकी को देखकर दुनिया के वैज्ञानिक और सैन्य विशेषज्ञ चौंक गए थे । मित्र देश ने मिलकर जर्मनी को चारों ओर से घेर लिया , और अंततः जर्मनी युद्ध हार गया । यदि जर्मनी को कुछ और समय मिल जाता , तो युद्ध

Edit with WPS Office

का परिणाम शायद अलग होता ।

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्त होने के बाद ,V -2 रॉकेट तकनीक को प्राप्त करने के लिए अमेरिका , सोवियत संघ , ब्रिटेन और फ्रांस जैसे विजेता देशों ने जर्मनी के वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की खोज प्रारंभ की । Wernher von Braun और उनके सहयोगियों ने जर्मनी और ऑस्ट्रेलिया की पहाड़ियों और गुफाओं में रॉकेट तकनीक और दस्तावेजों को छुपा दिया था , ताकि यह तकनीक सुरक्षित रहे । अब वह वैज्ञानिक तथा इंजीनियर थोड़े सुरक्षित थे क्योंकि जब तकनीक नहीं मिलेगी तब तक कोई भी देश ऐसे होनहार और गुणी व्यक्तियों को नहीं मरेगा । बाद में तकनीक के कुछ ब्लूप्रिंट ब्रिटेन व फ्रांस को मिले इसलिए यहां देश फाइटर जेट विमान एवं स्पेस एजेंसी के मामले में उन्नत है ।

अमेरिका ने सबसे बड़ा लाभ उठाया , क्योंकि उन्हें wernher von Braun और उनकी टीम के प्रमुख वैज्ञानिक हाथ लग गए । इन वैज्ञानिकों को अमेरिका लाया गया और उन्हें अमेरिकी नागरिकता दी गई । Wernher von Braun ने डेढ़ सौ से अधिक रॉकेट इंजीनियरों को अमेरिका में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । 1958 में नासा की स्थापना के बाद wernher von Braun ने नासा के अपोलो मिशन में भी काम किया । उनकी रॉकेट तकनीक पर आधारित इंटरकॉन्टिनेंटल मिसाइलें भी विकसित की गई । नासा की सफलता में जर्मन वैज्ञानिकों का महत्वपूर्ण योगदान था ।

जब सोवियत संघ को यह पता चला कि अमेरिका के पास जर्मनी के प्रमुख रॉकेट वैज्ञानिक हैं , तो उन्होंने भी दिन-रात रॉकेट तकनीक की खोज शुरू कर दी । सोवियत संघ के वैज्ञानिक पेनमुंडे गांव पहुंचे , जहां उन्हें सुपर सोनिक बंबर रॉकेट से संबंधित दस्तावेज मिले । इसके अलावा , जर्मन द्वारा पोलैंड में छोड़े गए V- 2 रॉकेट के अवशेष भी सोवियत संघ के हाथ लगे । यहीं से अमेरिका और सोवियत संघ के बीच अंतरिक्ष होड़ की शुरुआत हुई ।

Edit with WPS Office

V - 2 रॉकेट के साथ-साथ , परमाणु हथियारों की सोच भी हिटलर की ही थी । जर्मनी के साथ वैज्ञानिक इस दिशा में भी काम कर रहे थे । लेकिन 1944 में जर्मनी की हार के बाद , परमाणु तकनीक भी अमेरिका के हाथ लग गई , जिससे अमेरिका ने परमाणु हथियार विकसित किए ।

दूसरे विश्व युद्ध के दौरान हिटलर ने जिन यहूदियों को युद्ध बंदी बना रखा था , वे लोग ही कई वैज्ञानिक परियोजनाओं का हिस्सा थे । युद्ध के बाद , कई यहूदी वैज्ञानिकों ने अमेरिका और अन्य देशों में जाकर शरण ली और वहां की वैज्ञानिक उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया । इजराइल ने भी इस विद्या का लाभ उठाकर अपनी वैज्ञानिक उन्नति की ।

हिटलर का उदय : ______

हिटलर एक ऐसा नाम है जिसे इतिहास में अक्सर सबसे क्रूर और निर्दय तानाशाह के रूप में देखा जाता है , परंतु इसके पीछे की कहानी कही अधिक जटिल और गहरी है । हिटलर कौन था , और क्यों उसकी छवि इतनी विवादित है ? यह प्रश्न जर्मनी की तकनीकी और वैज्ञानिक शक्ति के परिप्रेक्ष्य में अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है । जिस हिटलर को आज दुनिया मित्र देशों (Alies country) के दुष्प्रचार के कारण सबसे क्रूर व्यक्ति मानती है , वही हिटलर और उसकी जर्मनी आज के वैज्ञानिक और तकनीकी चमत्कारों के पीछे की ताकत का एक बड़ा हिस्सा है । प्रश्न यह है उठता है कि अगर ब्रिटेन , जिसने आधी दुनिया को गुलाम बनाया और शोषण किया , " अच्छा हो सकता है , तो हिटलर क्यों " बुरा „ हम माना जाता है ? अगर जापान पर परमाणु बम गिराने वाला अमेरिका वैश्विक नायक हो सकता है , तो हिटलर कैसे सबसे बड़ा खलनायक बन गया ?

वर्साय की संधि जर्मनी की दुर्दशा : ______

प्रथम विश्व युद्ध के बाद , वर्साय की संधि (Treaty of Versailles) 1919 ने जर्मनी को एक गहरे आर्थिक संकट में धकेल दिया । इस संधि के तहत जर्मनी पर भारी कर्ज का बोझ डाल दिया गया था , जिसे चुकाने में उन्हें 92 साल लग गए । इस दौरान , जर्मनी की अर्थव्यवस्था चरमरा गई ,

Edit with WPS Office

और लोग भूखे मरने लगे । गृह युद्ध की स्थिति बन रही थी । जर्मनी के कई प्रमुख क्षेत्रों पर यहुदियों और कम्युनिस्टों का प्रभाव बढ़ रहा था , जिससे आम जनता में इनके प्रति गहरा आक्रोश उत्पन्न हुआ । यही स्थिति हिटलर के उदय का कारण बनी । हिटलर ने एक दुखी , टूटते हुए जर्मनी को नई दिशा दी । उसने न केवल अपने देश को पुनः संगठित किया , बल्कि उसे विश्व मंच पर एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में उभारा । वास्तविकता यह है कि जर्मनी ने द्वितीय विश्व युद्ध की शुरुआत नहीं की थी । इसके विपरीत , फ्रांस , ब्रिटेन , डच और पुर्तगाली जैसे देशों ने पहले से ही दुनिया के आधे हिस्से को गुलाम बना रखा था और उनका शोषण कर रहे थे । हिटलर ने केवल इन साम्राज्यवादी शक्तियों का विरोध किया , और उसकी इस प्रतिक्रिया ने उसे दुनिया का शत्रु बना दिया ।

भारतीय संदर्भ में , कई लोग हिटलर का विरोध करते हैं , परंतु उन्हें यह है जानना चाहिए कि हिटलर और जर्मनी ने नेताजी सुभाष चंद्र बोस का साथ दिया था ताकि वे भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़ सके । यह सहयोग इस बात को दिखाता है कि हिटलर की भूमिका केवल एक क्रूर तानाशाह की नहीं थी , बल्कि एक ऐसा नेता भी था जो औपनिवेशिक शक्तियों के विरुद्ध खड़ा था । हिटलर के कारण द्वितीय विश्व युद्ध के समय यूरोपीय साम्राज्यवादी ताकते इतनी कमजोर हो गई कि उन्हें अपने गुलाम देशों को स्वतंत्र करना पड़ा । भारतीय स्वतंत्रता संग्राम भी इस समय तेजी से आगे बढ़ा , और अंततः 1947 में भारत को स्वतंत्रता मिली ।

हिटलर के उदाहरण से स्पष्ट है कि भौतिक उन्नति और तकनीकी विकास के पश्चात भी , अगर आध्यात्मिक दृष्टिकोण नहीं हो , तो वह विनाश की ओर ही ले जाता है । विज्ञान और तकनीक का लाभ उन्ही को मिल सकता है , जिनके पास आध्यात्मिक ज्ञान है अन्यथा , यह प्रगति एक विनाशकारी युद्ध की ओर ले जाती है , जैसा कि हम द्वितीय विश्व युद्ध में देख चुके हैं ।

मनुष्य में गुण और दोष दोनों होते हैं । मैं यहां यह दावा नहीं कर रहा की हिटलर एक महान या श्रेष्ठ व्यक्ति था । उसके कई कार्य निस्संदेह भयानक

Edit with WPS Office

और निंदनीय थे , परंतु यह भी सत्य है कि जिन शक्तियों के विरुद्ध वह लड़ रहा था , वे भी संसार की सबसे क्रूर और अत्याचारी ताकतें थी । हिटलर के कई निर्णय प्रत्यक्ष रूप से गलत थे , लेकिन उन निर्णयों के पीछे जो परिस्थितियां थी , वे भी कम क्रूर नहीं थी । इतिहास हमें यह सिखाता है कि प्रत्येक क्रिया की एक विपरीत प्रतिक्रिया होती है , और यही हिटलर के संघर्ष में भी दिखता है । जब वह यूरोप की साम्राज्यवादी ताकतों से लड़ रहा था , तो उसे अपने देश के भीतर उठने वाली विरोधी आवाजों को भी दबाना पड़ा ।

अगर हम ब्रिटेन की बात करें , तो उसी ब्रिटेन ने वर्षों तक भारतीयों का अपमान किया और उनका शोषण किया । प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात जर्मनी के साथ जो व्यवहार किया गया , वह भी किसी अपमान से कम नहीं था । क्या हम यह कह सकते हैं कि जिस तरह 1857 की क्रांति में अंग्रेजों के प्रति भारतीयों का संघर्ष हुआ , उस संघर्ष में भारतीयों को दोषी माना जाए और अंग्रेजों को सज्जन ? बिल्कुल नहीं ! ठीक वैसे ही , हिटलर ने भले ही कई पाप किए , लेकिन द्वितीय विश्व में मारे गए लाखों लोगों की कुर्बानी व्यर्थ नहीं गई । युद्ध के परिणाम स्वरूप , यूरोप की साम्राज्यवादी शक्तियां इतनी कमजोर हो गई की उन्हें अपने उपनिवेशों को स्वतंत्रता देने पर मजबूर होना पड़ा । हिटलर का विरोध करते हुए हमें यह भी ध्यान रखना चाहिए कि उसकी नीतियों के कारण ही साम्राज्यवाद का अंत हुआ और विश्व के कई देशों को स्वतंत्रता प्राप्त हुई ।

विजेता ही इतिहास लिखते हैं : ______

वास्तव में , इतिहास का निर्माण हमेशा विजेताओं द्वारा किया जाता है । भारतीय इतिहास का भी एक बड़ा हिस्सा अंग्रेजों ने अपने दृष्टिकोण से लिखा , जिससे भारतीयों के मन में एक स्थायी गुलाम मानसिकता भर दी गई । जो तथा कथित इतिहास हमें पढ़ाया गया , उससे कई सच्चाइयों को दबाया गया और अंग्रेजों के दृष्टिकोण को प्राथमिकता दी गई । इसलिए , जब भी आप इतिहास के तथ्यों की खोज करेंगे , आपको हिटलर के विरुद्ध बहुत सारी जानकारी और साहित्य मिलेगा , जबकि स्टालिन और माओ

Edit with WPS Office

जैसे तानाशाहों , जिन्होंने करोड़ों लोगों की हत्याएं की , के बारे में केवल कुछ पृष्ठों में ही सिमटी जानकारियां मिलती हैं । हिटलर के विरुद्ध नकारात्मक साहित्य से विश्व के पुस्तकालय भरे पड़े है , जबकि अन्य शक्तियों के अत्याचार छिपाए गए हैं ।

युद्ध किसी के लिए भी लाभकारी नहीं होता , चाहे वह युद्ध कितने भी अच्छे उद्देश्य के लिए लड़ा गया हो । युद्ध के दौरान निर्दोष लोगों की हत्या , विनाश और अप्रिय घटनाओं को रोकना संभव नहीं होता । यह सही है कि हिटलर ने यहुदियों के खिलाफ कठोर नीतियां अपनाई और लाखों यहुदी मारे गए , लेकिन क्या कोई इस पर चर्चा करता है कि यहूदी समुदाय जर्मन की अर्थव्यवस्था पर सदियों से हावी में था ,और वे प्रत्यक्ष- अप्रत्यक्ष रूप से जर्मनी की आर्थिक स्थिति को प्रभावित कर रहे थे । फिर भी , पर्दे के पीछे छिपे इन लोगों को कभी मानवता के शत्रुओं के रूप में नहीं देखा गया । वास्तव में , जो संसार प्रत्यक्ष रूप से देखता है , उसी को सच मान लेता है ।

आज के समय में कुछ भी सुनकर या देखकर तुरंत सत्य या असत्य का निर्णय नहीं किया जा सकता । अगर ऐसा होता , तो भगत सिंह , चंद्रशेखर आजाद जैसे महान क्रांतिकारियों को भी इतिहास में " आतंकवादी ,, सिद्ध करने का भी प्रयास किया गया । बहुत से लोग नहीं जानते होंगे कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस को ब्रिटिश सरकार ने युद्ध बंदी घोषित कर रखा था , और यदि वह भारत लौटते , तो उन्हें ब्रिटेन को सौंप दिया जाता ।
इस पूरे इतिहास का सार यही है कि जिस विज्ञान और तकनीक के पीछे आज की दुनिया दौड़ रही है , उसका अंत विनाशकारी युद्ध से ही होता है । आज भी हम उसी दिशा में बढ़ रहे हैं , और इसका परिणाम एक और महा विनाशकारी युद्ध हो सकता है , जिसे टालना संभव नहीं होगा । वर्तमान विज्ञान और प्रौद्योगिकी का सही लाभ लाभ वही लोग उठा सकते हैं जिनके पास आध्यात्मिक ज्ञान है । संसार को बचाने का एकमात्र तरीका भौतिक तथा आध्यात्मिक का ज्ञान संतुलन है ।

अतः जर्मनी के माध्यम से और भारत से चुराए गए अनेक वैदिक शास्त्रों

Edit with WPS Office

और ग्रंथों के माध्यम से ज्ञान और विज्ञान अन्य देशों में पहुंचा । उन देशों ने इस ज्ञान का उपयोग कर अनेक भौतिक तथा वैज्ञानिक उन्नति की , जबकि भारत , जिसने इस ज्ञान को उत्पन्न किया , वहां पीछे रह गया । यह विडंबना है कि भारत की प्राचीन धरोहर दूसरे देशों में उन्नति का आधार बनी , परंतु भारत स्वयं इससे लाभ नहीं उठा सका ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 77. वैदिक सनातन धर्म के मूल सिद्धांत

वैदिक सनातन धर्म मानव जीवन के शाश्वत सिद्धांतों और आध्यात्मिक ज्ञान का स्रोत है । जिसे हम वैदिक धर्म के नाम से भी जानते हैं । इसका आधार वेदों में निहित ज्ञान है , जो मानव जीवन , प्रकृति और ब्रह्मांड के सत्य को समझने का मार्ग प्रदान करता है । " **सनातन „** का अर्थ है शाश्वत , अनादि या अनंत , जो यह दर्शाता है कि यह धर्म सृष्टि के आरंभ से ही अस्तित्व में है और इसके सिद्धांत सार्वभौमिक और शाश्वत हैं । यह धर्म सृष्टि के नियमों और ब्रह्मांड के सनातन सत्य पर आधारित है , इसलिए इसे वैदिक सनातन धर्म कहा जाता है । वैदिक सनातन धर्म न केवल धार्मिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है , बल्कि यह जीवन के मूलभूत सिद्धांतों , सामाजिक व्यवस्था , नैतिकता , और आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग को भी प्रस्तुत करता है ।

Edit with WPS Office

वैदिक सनातन धर्म के मूल सिद्धांत :

1. ऋत (ऋत) ___ प्राकृतिक और नैतिक आदेश

ऋत वह सिद्धांत है जो इस जगत की समस्त प्राकृतिक और नैतिक व्यवस्था को नियंत्रित करता है । यह धर्म के नियमों के पालन और प्राकृतिक नियमों के साथ सामंजस्य की बात करता है । वैदिक सनातन धर्म में ऋत का पालन बहुत महत्वपूर्ण है , क्योंकि यह जगत की संरचना और संतुलन का आधार है । सूर्य का उदय होना , ऋतुओं का आना , और प्राणी मात्र का जीवन __ सभी ऋत के भाव हैं ।

2. धर्म ___ कर्तव्य और नैतिकता

" धर्म „ का मूल अर्थ है ' धारण करना , या ' समाज , प्रकृति और जीवन को संतुलित और संरक्षित रखना । वैदिक सनातन धर्म में धर्म का व्यापक अर्थ होता है , जिसमें नैतिकता , सामाजिक कर्तव्य , और आध्यात्मिक उन्नति के सिद्धांत आते हैं । हर व्यक्ति का अपना स्वधर्म (अपना कर्तव्य) होता है , जो उनकी आयु , जाति , लिंग और परिस्थिति के अनुसार भिन्न होता है । धर्म का पालन करना जीवन का परम लक्ष्य है , क्योंकि इससे समाज और आत्मा दोनों का कल्याण होता है ।

3. सत्य ___ सत्य की खोज और पालन

वेदों में सत्य को सर्वोपरि माना गया है । **" सत्यमेव जयते „** (सत्य ही विजय पाता है) वैदिक सनातन धर्म का मूल मंत्र है । सत्य का पालन करना , सत्य को जानना और सत्य के मार्ग पर चलना एक आध्यात्मिक साधक का परम लक्ष्य है । यह केवल बाहरी सत्य नहीं है , बल्कि आत्मा का आंतरिक सत्य , जो आत्मानुभूति और ब्रह्म ज्ञान के रूप में प्रकट होता है ।

4. यज्ञ ___ कर्म और आत्मोसर्ग

यज्ञ वैदिक सनातन धर्म का एक केंद्रीय अनुष्ठानिक कृत्य है , जो कर्म , त्याग और आध्यात्मिक उन्नति का प्रतीक है । यज्ञ न केवल अग्नि में

Edit with WPS Office

आहुति डालने का कर्मकांड है , बल्कि यह अपने अहंकार , इच्छाओं और स्वार्थों का आत्मोत्सर्ग भी है । यज्ञ का गहरा आध्यात्मिक महत्व है , जो विश्व की स्थिरता और व्यक्तिगत आत्मोन्नति दोनों में योगदान देता है । यज्ञ से जगत का संतुलन बना रहता है , और यह समाज में सामूहिक कल्याण का भी प्रतीक है ।

5. कर्म और पुनर्जन्म ___ कर्म के सिद्धांत

वैदिक सनातन धर्म में कर्म का सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है । कर्म का अर्थ है- कर्म करना या क्रिया और यह सिद्धांत बताता है कि प्रत्येक जीव अपने कर्मों केअनुसार ही अपने जीवन का निर्माण करता है । अच्छे कर्म से व्यक्ति को उत्तम फल मिलता है , जबकि बुरे कर्मों से दुखों का सामना करना पड़ता है । पुनर्जन्म का सिद्धांत भी इसी कर्म पर आधारित है __ जन्म और मृत्यु का चक्र तब तक चलता है , जब तक आत्मा मोक्ष प्राप्त नहीं कर लेती ।

6. मोक्ष ___ आत्मा की मुक्ति

मोक्ष वैदिक सनातन धर्म का अंतिम लक्ष्य है । मोक्ष का अर्थ है आत्मा का जन्म - मृत्यु के चक्र से मुक्त हो जाना और परमात्मा के साथ एकत्व प्राप्त करना । यह आत्मा की परम शांति और आनंद की अवस्था है , जहां व्यक्ति संसार के बंधनों से मुक्त हो जाता है । मोक्ष प्राप्त करने का मार्ग ज्ञान , भक्ति (ईश्वर प्रेम) , और कर्म (निष्काम कर्म) के माध्यम से होता है ।

7. आत्मा और ब्रह्म ___ एक होते हुए भी भिन्न है

वैदिक सनातन धर्म के अनुसार , आत्मा (जीवात्मा) और ब्रह्म (परमात्मा) में अनेक समानताएं एवं भिन्नताएं भी हैं । ब्रह्म परंम चेतन तत्व है , जो अदृश्य , असीम और सर्वव्यापी है । आत्मा ब्रह्म का अंश है , और जब आत्मा इस सच्चाई का अनुभव करती है , तब मोक्ष की प्राप्ति होती है । उपनिषदों में इस ज्ञान को ब्रह्म विद्या कहा गया है , और यही वैदिक सनातन धर्म का परम सत्य है ।

Edit with WPS Office

8. वर्ण और आश्रम ___ सामाजिक व्यवस्था

वैदिक सनातन धर्म में समाज को चार आश्रमों में विभाजित किया गया है । चार वर्ण हैं ;

1. **ब्राह्मण ___** ज्ञान और धर्म के शिक्षक ।
2. **क्षत्रिय ___** शासन और रक्षा के अधिकारी ।
3. **वैश्य ___** व्यापार और कृषि के कर्ता ।
4. **शूद्र ___** सेवा और श्रम का कार्य करने वाले ।

- **{ चार आश्रम }**

1. **ब्रह्मचर्य ___** शिक्षा और संयम का जीवन ।
2. **गृहस्थ ___** परिवार और समाज का पालन ।
3. **वानप्रस्थ ___** सेवानिवृत्ति और आध्यात्मिक साधना ।
4. **सन्यास ___** संसार का त्याग और मोक्ष की प्राप्ति का प्रयास ।

यह व्यवस्था जीवन के हर चरण और समाज के हर वर्ग को अपने कर्तव्यों का पालन करने का मार्गदर्शन करती है , जिससे समाज में संतुलन और सामंजस्य बना रहता है । वैदिक सनातन धर्म एक ऐसा जीवन मार्ग है , जो शाश्वत सत्य ,कर्म ,धर्म और मोक्ष के सिद्धांतों पर आधारित है । यह धर्म केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं है , बल्कि जीवन के हर पहलू ___ चाहे वह व्यक्तिगत हो , सामाजिक हो या आध्यात्मिक ___ को संतुलित और समृद्ध बनाने की दिशा में काम करता है । यह मानव जीवन के शाश्वत मूल्यों और नैतिकता पर आधारित है , जो व्यक्ति को आत्मिक उन्नति और सामूहिक कल्याण की ओर प्रेरित करता है ।

वेदों का ज्ञान और उनका आचरण हमें यह सिखाता है कि हम अपनी आत्मा की वास्तविकता को पहचाने , अपने कर्मों का उचित रूप से पालन करें , और जीवन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति की ओर अग्रसर हो । वैदिक सनातन धर्म का उद्देश्य केवल आध्यात्मिक साधना ही नहीं है , बल्कि यह करुणा सह - अस्तित्व और सत्य के मार्ग पर चलते हुए जीवन की गहराइयों में आत्म - साक्षात्कार प्राप्त करने का मार्ग भी प्रस्तुत करता है

Edit with WPS Office

। इसका परम लक्ष्य व्यक्ति को आत्म - साक्षात्कार और मोक्ष की दिशा में ले जाना है , जो मानव जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 78. मनुष्य जन्म का उद्देश्य : वेदों के अनुसार

वेद सनातन धर्म का मूल धर्म ग्रंथ है । जिसके अनुसार मोक्ष ही मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य है उसे ही प्राप्त करने के लिए यहां मनुष्य शरीर ईश्वर ने हमें दिया है । वेदों में न केवल ईश्वर की आराधना और प्रकृति के नियमों की व्याख्या की गई है , बल्कि मनुष्य जीवन के उद्देश्य को भी स्पष्ट रूप से बताया गया है । वेदों के अनुसार , मनुष्य का जीवन एक अद्वितीय और दुर्लभ अवसर है , जिसे आत्म - साक्षात्कार , सत्य की खोज और मोक्ष प्राप्ति के लिए उपयोग किया जाना चाहिए । मनुष्य का जीवन भौतिक सुखों तक सीमित नहीं है , बल्कि इसका मुख्य उद्देश्य आत्मा की उन्नति और ब्रह्म से एकत्व प्राप्त करना है ।

मनुष्य शरीर की दुर्लभता :
वेदों में मनुष्य जन्म को अन्य सभी प्राणियों से श्रेष्ठ और दुर्लभ माना गया है । यह अवसर बार - बार नहीं मिलता , और इसलिए इसे प्राप्त करने के पश्चात इसे सर्वोच्च लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए समर्पित करना चाहिए । "

Edit with WPS Office

ऋग्वेद „ में मनुष्य जीवन को विशेष रूप से महत्वपूर्ण बताया गया है क्योंकि मनुष्य को विचार करने की क्षमता प्राप्त है । अन्य जीव - जन्तु अपनी प्राकृतिक प्रवृतियों पर आधारित होते हैं , जबकि मनुष्य सही और ग़लत का निर्णय कर सकता है और उच्चतर चेतना की ओर अग्रसर हो सकता है ।

धर्म ,अर्थ , काम , मोक्ष -- पुरुषार्थ चतुष्टय

______ वेदों में मनुष्य जीवन के चार प्रमुख उद्देश्यों का वर्णन किया गया है , जिन्हें पुरुषार्थ चतुष्टय कहा जाता है ;

- **धर्म** : धर्म का अर्थ है कर्तव्य , नैतिकता और धार्मिकता । यह वह मार्ग हैं जो जीवन में सही आचरण का निर्देश देता है । वेदों के अनुसार , धर्म के बिना जीवन अराजक और दिशाहीन हो जाता हैं । धर्म युक्त आचरण ही जीवन का मूल है ।
- **अर्थ** : जीवन निर्वाह के लिए आवश्यक धन और संसाधनों का अर्जन भी आवश्यक है , परंतु इसे धर्म के मार्ग पर चलते हुए प्राप्त करना चाहिए । अर्थ का उपयोग समाज और परिवार की भलाई के लिए किया जाना चाहिए ।
- **काम** : यह मानव की इच्छाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति से जुड़ा हुआ है , परंतु इसे संतुलित और नियंत्रित तरीके से ही प्राप्त करना चाहिए ताकि जीवन में असंतुलन न हो । मनुष्य की इच्छाएं अनंत होती हैं , और इन पर केवल धर्मयुक्त आचरण द्वारा ही अंकुश लगाया जा सकता है । धर्म के मार्ग पर चलते हुए हम अपनी इच्छाओं को संतुलित कर सकते हैं , जिससे जीवन में समरसता और स्थिरता बनी रहती है ।
- **मोक्ष** : मोक्ष जीवन का अंतिम और सर्वोच्च उद्देश्य है । यह जन्म मरण के चक्र से मुक्ति और आत्मा का परम सत्य से मिलन है । यह तब प्राप्त होता है जब व्यक्ति अपने सांसारिक बंधनों और मोह-माया से मुक्त हो जाता है । मोक्ष का अर्थ होता है मुक्ति अर्थात दुखों का अत्यंत निवृत्ति हो जाना ही मोक्ष है ।

Edit with WPS Office

इन चार पुरुषार्थों में मोक्ष को सर्वोपरि माना गया है , क्योंकि यह आत्मा की मुक्ति और ब्रह्म के साथ एकाकार होने का मार्ग है ।

वेदों में सत्य की खोज को सबसे महत्वपूर्ण कार्य बताया गया है । " **सत्यमेव जयते „** (सत्य की ही विजय होती है) का सिद्धांत वेदों में गहरे रूप से निहित है । सत्य का अर्थ केवल यथार्थ नहीं , बल्कि वह अंतिम वास्तविकता है जिसे जानना हर मनुष्य का परम कर्तव्य है । " ऋग्वेद के अनुसार , सत्य की प्राप्ति आत्मज्ञान और ध्यान के माध्यम से हो सकती है । यह सत्य ब्रह्म के स्वरूप का बोध कराता है और मोक्ष की दिशा में मार्ग प्रशस्त करता है ।

आत्मा का परम उद्देश्य ___ आत्मसाक्षात्कार :

वेदों में आत्मा को अजर - अमर और शाश्वत बताया गया है । आत्मा का परम उद्देश्य ब्रह्म (ईश्वर) का साक्षात्कार करना है । " उपनिषदों „ में आत्मा और ब्रह्म के एकत्व का सिद्धांत वर्णित है -- " अह ब्रह्मास्मि „ (में ब्रह्म हूं) मनुष्य जीवन का उद्देश्य इस एकत्व की अनुभूति करना है । आत्मसाक्षात्कार के बिना जीवन अधूरा है , और यही मोक्ष प्राप्ति की दिशा में पहला चरण है ।

वेदों में कर्म के सिद्धांत को बहुत महत्व दिया गया है । हर व्यक्ति को अपने कर्मों के आधार पर फलों की प्राप्ति होती है , और यही कर्म जन्म - मरण के चक्र को निर्धारित करते हैं । " यजुर्वेद „ के अनुसार , व्यक्ति को निस्वार्थ और धर्म अनुसार कर्म करना चाहिए , ताकि वह मोक्ष की और अग्रसर हो सके । पुनर्जन्म और कर्म का यह चक्र तब समाप्त होता है जब व्यक्ति सभी बंधनों से मुक्त हो जाता है और मुक्ति प्राप्त कर लेता है ।

अहिंसा , सत्य और करुणा -- नैतिक मूल्यों का पालन :

वेदों में नैतिक मूल्यों पर विशेष बल दिया गया है । " अहिंसा परमो धर्म „ (अहिंसा सबसे बड़ा धर्म है) का सिद्धांत वेदों और शास्त्रों का मूलभूत सिद्धांत है । अहिंसा के माध्यम से मनुष्य अपने भीतर करुणा , प्रेम , और शांति का विकास करता है । इसी प्रकार , सत्य और करुणा भी मोक्ष प्राप्ति

Edit with WPS Office

की दिशा में अत्यंत आवश्यक गुण माने गए हैं । सत्य का पालन , सेवा भाव और दूसरों के प्रति सहानुभूति व्यक्ति को आत्मिक शुद्धि की ओर ले जाती है ।

ज्ञान का महत्व :

वेदों में ज्ञान को मोक्ष प्राप्ति का सबसे महत्वपूर्ण साधन बताया गया है । ऋते ज्ञानात्र **मुक्ति** : उपनिषदों में ज्ञान के माध्यम से आत्मा के स्वरूप को जानने और ब्रह्म का साक्षात्कार करने का मार्ग बताया गया है । यह ज्ञान केवल बौद्धिक ज्ञान नहीं , बल्कि आत्मज्ञान है , जो ध्यान , तपस्या , और वेदों के अध्ययन से प्राप्त होता है । वेदों का अध्ययन और उनके ज्ञान को जीवन में उतारना ही व्यक्ति को मोक्ष की ओर ले जाता है ।

वेदों में भक्ति का स्थान :

हालांकि वेद मुख्यतः ज्ञान और कर्म के मार्ग पर केंद्रित है , भक्ति को भी वेदों में विशेष स्थान दिया गया है । " ऋग्वेद „ में ईश्वर के प्रति श्रद्धा और आस्था की महत्ता का वर्णन किया गया है । भक्ति के माध्यम से व्यक्ति अपने अहंकार को छोड़कर ईश्वर की शरण में आता है और अपने जीवन को ईश्वर की सेवा में समर्पित करता है । भक्ति से व्यक्ति का हृदय शुद्ध होता है और मोक्ष की प्राप्ति सुगम होती है ।

मोक्ष के साधन :

वेदों के अनुसार मोक्ष प्राप्ति के तीन प्रमुख साधन है ;

- ज्ञान योग :   आत्मा और ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप को जानने का मार्ग ।
- भक्ति योग : ईश्वर के प्रति प्रेम और समर्पण का मार्ग ।
- कर्म योग : निस्वार्थ और धर्म के अनुसार कर्म करने का मार्ग ।

इन तीनों मार्गों का संतुलन ही व्यक्ति को मोक्ष की दिशा में ले जाता है ।

वेदों के अनुसार मनुष्य जीवन का उद्देश्य आत्मा उन्नति और मोक्ष की प्राप्ति

Edit with WPS Office

है । यह जन्म एक दुर्लभ अवसर है , जिसे आत्मज्ञान , सत्य की खोज , और ईश्वर की उपासना द्वारा ही सार्थक किया जा सकता है । धर्म अर्थ काम और मोक्ष के बीच संतुलन स्थापित कर , और नैतिक मूल्यों का पालन करते हुए व्यक्ति इस जीवन के अंतिम लक्ष्य ___ मोक्ष ___ को प्राप्त कर सकता है । वेदों में दिए गए उपदेश और मार्गदर्शन आत्मा को सांसारिक बंधनों से मुक्त कर , उसे परम सत्य से एकाकार होने की ओर ले जाते हैं । यही मनुष्य जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 79. अष्ट चक्र

योग दर्शन में आठ चक्रों को शरीर की ऊर्जा का मूल स्रोत माना गया है । ये चक्र शारीरिक , मानसिक , और आध्यात्मिक ऊर्जा के प्रवाह को संतुलित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । प्रत्येक चक्र शरीर के एक विशेष भाग से जुड़ा होता है और मनुष्य के मानसिक , शारीरिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को नियंत्रित करता है । आइए इन चक्रों के बारे में विस्तार से समझे :

Edit with WPS Office

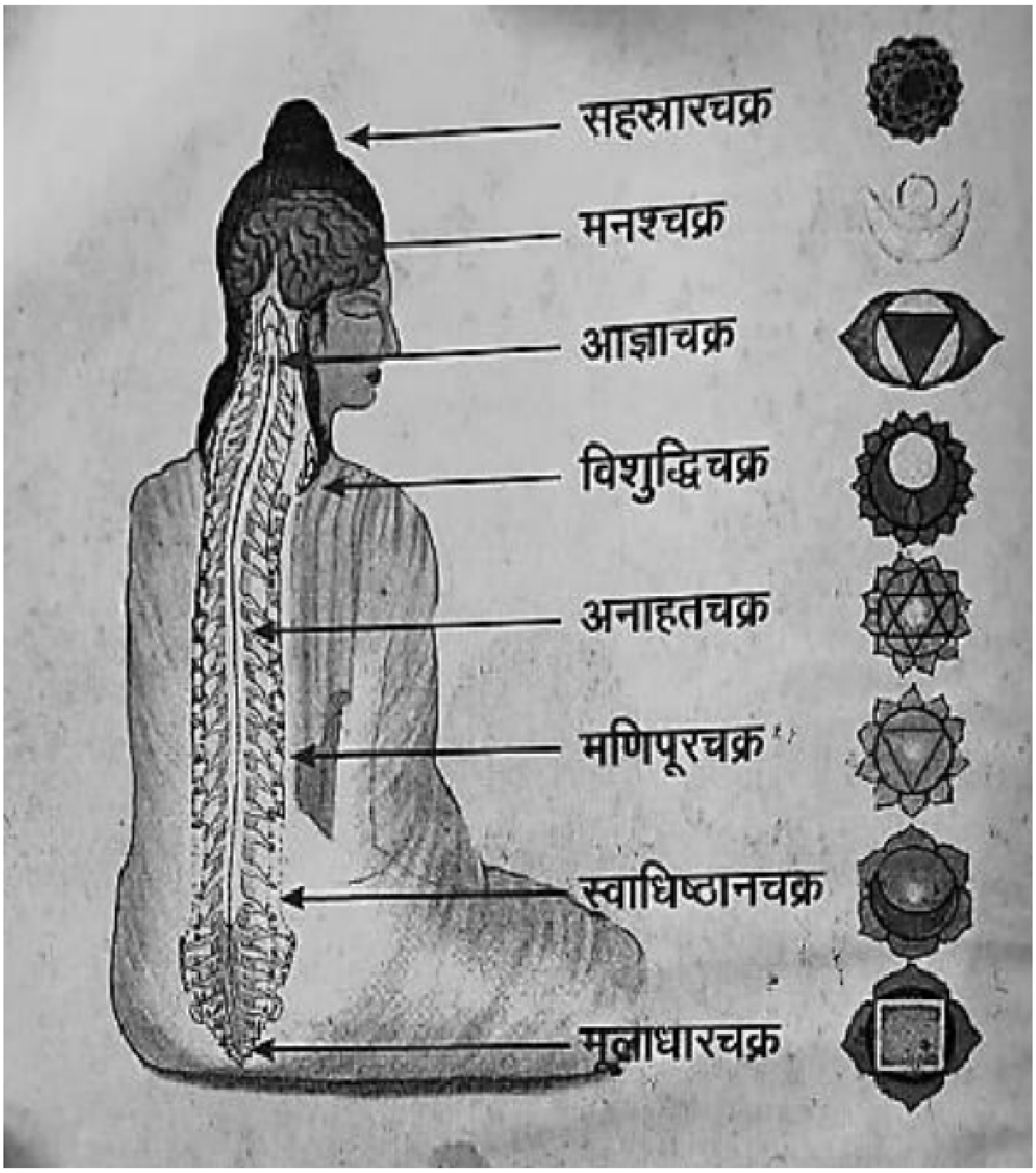

1. मूलाधार चक्र (root chakra)

स्थान : रीढ़ की हड्डी के आधार पर ,गुदा और जननांगों के बीच । मूलाधार चक्र जीवन की आधारभूत आवश्यकताओं से जुड़ा हुआ है , जैसे सुरक्षा , स्थिरता और भौतिक अस्तित्व । यह चक्र शरीर और पृथ्वी के बीच स्थिरता स्थापित करता है । इसका जागरण व्यक्ति में आत्मविश्वास और संतुलन लाता है । यदि यह चक्र संतुलित न हो , तो भय और असुरक्षा की भावना प्रबल हो जाती हैं ।

2. स्वाधिष्ठान चक्र (sacral chakra)

स्थान : रीढ़ में नाभि के ठीक नीचे , यौन अंगों के पास । यह चक्र रचनात्मकता , यौन ऊर्जा , और भावनात्मक संतुलन से जुड़ा हुआ है ।

Edit with WPS Office

इसका जागरण व्यक्ति में आनंद , सृजनशीलता , और प्रेम को प्रेरित करता है । अगर यह चक्र असंतुलित हो जाए , तो व्यक्ति में यौन ऊर्जा का दमन , भावनात्मक असंतुलन और आत्म- सम्मान की कमी अनुभव होती है ।

3. मणिपूर चक्र (Solar plexus chakra)

स्थान : नाभि के ठीक ऊपर , सौर जालक क्षेत्र में । मणिपुर चक्र शरीर की पाचन क्रिया और आंतरिक गतिविधियों का नियंत्रण करता है । यह शरीर की ऊर्जा और आत्म शक्ति का केंद्र है , जो इच्छा शक्ति , आत्म नियंत्रण और व्यक्तिगत शक्ति को बढ़ाता है । इसका जागरण आत्मविश्वास और संकल्प शक्ति को बढ़ाता है , जिससे व्यक्ति अपने जीवन में आत्म- नियंत्रण प्राप्त कर सकता है ।

4. अनाहत चक्र (heart chakra)

स्थान : हृदय के दाई ओर , छाती के बीच में , रीड की हड्डी के पीछे । अनाहत चक्र प्रेम , करुणा , और मानवता का केंद्र है । यह चक्र हमारे हृदय और फेफड़ों को नियंत्रित करता है और रक्त संचार और नर्वस सिस्टम का संतुलन बनाए रखता है । इसका जागरण व्यक्ति में प्रेम , दया , और शांति की भावना उत्पन्न करता है , और उसे सभी के प्रति करुणामय बनाता है ।

5. विशुद्धि चक्र (Throat chakra)

स्थान : कंठ के पास , गले के बीच में । विशुद्धि चक्र संचार और और आत्म -अभिव्यक्ति का केंद्र है । यह चक्र शारीरिक वृद्धि , भूख - प्यास और तापमान को नियंत्रित करता है , जिस व्यक्ति सटीक और प्रभावशाली तरीके से अपनी बात रख पाता है ।

6. आज्ञा चक्र (Third eye chakra)

स्थान : भौंहों के बीच , रीड की हड्डी के ऊपर पीनियल ग्रंथि के पास । आज्ञा चक्र मानसिक स्पष्टता , अंतर्ज्ञान और और आत्म - जागरूकता का केंद्र है । यह चक्र व्यक्ति की इच्छा शक्ति , प्रवृत्ति, और ज्ञान को नियंत्रित करता है । इसका जागरण व्यक्ति को उच्च अंतर्ज्ञान और मानसिक दृष्टि

Edit with WPS Office

प्रदान करता है , जिससे वह जीवन में गहन निर्णय लेने में सक्षम होता है ।

7. मनश्चक्र (Bindu या ललना चक्र)

स्थान : हाइपोथेलेमस में , मस्तिष्क के केंद्र में । यह चक्र मन और भावनाओं के अनुरूप कार्यकर्ता है और विचारों , संस्कारों और मस्तिष्कों के स्रोवो को नियंत्रित करता है । इस भावनाओं और मानसिक संतुलन का केंद्र माना जाता है । इसका जागरण मानसिक शांति और आंतरिक संतुलन प्रदान करता है , जिससे व्यक्ति अपने भावनात्मक जीवन में स्थिरता प्राप्त कर सकता है ।

8. सहस्त्रसार चक्र (Crown chakra)

स्थान : सिर के शीर्ष पर , पीयूष ग्रंथि (पिट्यूटरी ग्लैंड) के पास । सहस्त्रसार चक्र सभी आध्यात्मिक शक्तियों का केंद्र है । यह चक्र आत्म ज्ञान , ब्रहमांडीय चेतना , और आध्यात्मिक जागरूकता से संबंधित है । इसका जागरण व्यक्ति को आध्यात्मिक रूप से जागरूक बनाता है , और वह परमात्मा से एकीकृत हो जाता है । यह चक्र आत्मिक उन्नति की चरम अवस्था का प्रतीक है ।

इन 8 चक्रों में स्थित ऊर्जा ही हमारे शारीरिक , मानसिक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य को संचालित करती है । ये चक्र शरीर को ऊर्जान्वित , संतुलित और सक्रिय रखते हैं । अष्टांग योग और ध्यान , प्राणायाम के माध्यम से इन चक्रों का संतुलन बनाए रखना ही सच्चे आत्मिक विकास की कुंजी है । चक्रों का जागरण न केवल शारीरिक रोगों और मानसिक विकारों से मुक्ति दिलाता है , बल्कि आत्म - ज्ञान और आंतरिक चेतना को भी जागृत करता है ।

कुंडलिनी जागरण :

यह एक प्राचीन योगिक प्रक्रिया है जो मानव शरीर में स्थित आठ मुख्य चक्रों (उर्जात्मक केंद्रों) को जागृत करने के उद्देश्य से की जाती है । कुंडलिनी शक्ति को एक सुप्त ऊर्जा के रूप में माना जाता है , जो रीढ़ के निचले हिस्से (मूलाधार चक्र) में स्थित होती है । इस ऊर्जा को एक सोते

Edit with WPS Office

हुए सर्प के रूप में प्रतीकात्मक रूप में वर्णित किया गया है , जो जागरण की प्रक्रिया के दौरान ऊपर की ओर यात्रा करता है और प्रत्येक चक्र को जागृत करता है ।
कुंडलिनी जागरण के प्रमुख तत्वों में सम्मिलित है ;

1. **प्राणायाम** (सांस लेने की विधियां)
2. **ध्यान**
3. **मंत्रों का उच्चारण**
4. **योगासन**
5. **शुद्ध आहार और संयम**

कुंडलिनी जागरण को धीरे-धीरे और सावधानी पूर्वक साधना की आवश्यकता होती है , क्योंकि यह मानसिक , शारीरिक और आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ चुनौतियां भी ला सकता है । सही मार्गदर्शन के बिना यह प्रक्रिया असंहज अनुभव भी करा सकती हैं , इसलिए इसे गुरु या योग्य मार्गदर्शक की देखा देखरेख में ही अभ्यास करना चाहिए । इस जागरण के बाद व्यक्ति को अद्वितीय आध्यात्मिक अनुभव और चेतना की ऊंची अवस्थाओं का अनुभव होता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 80. अष्ट सिद्धियां

अष्ट सिद्धियां वे विशेष आध्यात्मिक शक्तियां हैं , जिन्हें योग और

Edit with WPS Office

तपस्या द्वारा प्राप्त किया जा सकता है । यह सिद्धियां किसी साधक को अलौकिक क्षमताओं से सो सुसज्जित करती हैं , जिससे वह भौतिक और आध्यात्मिक जगत की सीमाओं को पार कर सकता है । अष्ट सिद्धियां का वर्णन पतंजलि योग दर्शन में प्रमुखता से किया गया है , और इन्हें प्राप्त करने वाले साधक के पास एक विशेष आत्मिक और मानसिक शक्ति होती है ।

अणिमा महिमा चैव लघिमा गरिमा तथा ।
प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्ट सिद्धय : ।।

अर्थ : ___ अणिमा , महिमा , गरिमा , लघिमा , तथा प्राप्ति , प्राकाम्य , ईशित्व और वशित्व ये सिद्धियां " अष्टसिद्धि ,, कहलाती हैं ।

नीचे अष्ट सिद्धियों का विवरण दिया गया है ;

1. अणिमा (Anima) : यह शक्ति साधक को अपने शरीर को एक अणु के समान छोटा करने की क्षमता प्रदान करती है । साधक सूक्ष्मतम वस्तुओं एवं स्थानों पर प्रवेश कर सकता है । यह शक्ति उसे सूक्ष्मता की चरम सीमा तक पहुंचाने में सक्षम बनाती है । जिस प्रकार हम अपने नग्न आंखों से एक अणु को नहीं देख सकते , उसी तरह अणीमा सिद्धि प्राप्त करने के पश्चात दूसरा कोई व्यक्ति सिद्धि प्राप्त करने वाले को नहीं देख सकता है । साधक जब चाहे एक अणु के बराबर का सूक्ष्म देह धारण करने मैं सक्षम होता है ।

2. महिमा (Mahima) : साधक इस सिद्धि से अपने शरीर को अत्यंत विशाल रूप में परिवर्तित कर सकता है । हनुमान जी का अपने शरीर को विशालकाय रूप में धारण करना महिमा सिद्धि का उत्कृष्ट उदाहरण है ।

3. गरिमा (Garima) : यह शक्ति साधक को अपने शरीर को अत्यधिक भार बना लेने की क्षमता देती है । साधक अपने शरीर का भार

Edit with WPS Office

इतना बढ़ा सकता है कि कोई भी शक्ति उसे हिला नहीं सके ।

4. लघिमा (Laghima) : यह सिद्धि साधक को अपने शरीर को भार रहित (हल्का) बनाने की क्षमता प्रदान करती है । साधक पानी पर चल सकता है , हवा में उड़ सकता है , और किसी भी स्थान पर बहुत हल्के रूप में पहुंचना संभव हो सकता है । साधक का शरीर इतना हल्का हो सकता है कि वह पवन से भी तेज गति से उड़ सकता है । उसके शरीर का भार ना के बराबर हो जाता है ।

5. प्राप्ति (prapti) : इस शक्ति से साधक बिना किसी अवरोध के किसी भी स्थान पर जा सकता है और कहीं से भी किसी भी वस्तु को प्राप्त कर सकता है । साधक बिना भौतिक बाधाओं के किसी भी स्थान पर तुरंत पहुंच सकता है , चाहे वह कितनी भी दूरी पर क्यों न हो ।

6. प्राकाम्य (prakamya) : यह सिद्धि साधक को अपनी प्रत्येक इच्छा को पूरी करने की शक्ति देती है । साधक अपनी इच्छा अनुसार जल या अग्नि के गुण बदल सकता है , और किसी भी प्राकृतिक तत्व पर अपनी इच्छा लागू कर सकता है , साधक किसी के मन की बात को बहुत सरलता से समझ सकता है , फिर सामने वाला व्यक्ति अपने मन की बात की अभिव्यक्ति करें या नहीं ।

7. ईशित्व (isitva) : यह शक्ति साधक को संपूर्ण सृष्टि और सभी जीव जंतुओं पर नियंत्रण प्रदान करती है । साधक ब्रह्मांड की सभी शक्तियों और घटनाओं को अपनी इच्छा से नियंत्रित कर सकता है , जैसे वायु या जल का प्रभाव । यह भगवान की उपाधि है , यह सिद्धि प्राप्त करने से पश्चात साधक स्वयं दिव्य शक्तियों का स्वामी बन जाता है , वह प्रकृति पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकता है ।

8. वशित्व (Vasitva) : यह शक्ति साधक को सभी प्राणियों और तत्वों को वश में करने की क्षमता देती है । साधक किसी भी प्राणी जीव जंतु

Edit with WPS Office

या तत्वों को अपनी इच्छा के अनुसार नियंत्रित कर सकता है । वशित्व प्राप्त करने के पश्चात साधक किसी भी व्यक्ति को अपना दास बना कर रख सकता है । वह जिसे चाहे अपने वश में कर सकता है या किसी की भी पराजय का कारण बन सकता है ।

समग्र रूप में , अष्ट सिद्धियां साधक को भौतिक और आत्मिक रूपांतरण की अद्वितीय क्षमताएं प्रदान करती है । ये शक्तियां उसे किसी भी रूप में प्रकट होने , किसी भी आकर या स्थान पर वास करने और अपने चारों ओर के तत्वों और प्राणियों पर नियंत्रण प्राप्त करने में सक्षम बनाती है । अष्ट सिद्धियां इस बात का प्रतीक है कि मानव चेतना और ऊर्जा की शक्ति अनंत है हो सकती हैं , और योग के माध्यम से साधक इस परम स्थिति तक पहुंच सकता है । इन सिद्धियों के माध्यम से व्यक्ति सूक्ष्म से सूक्ष्मतर और विशाल से विशालतम बनाकर जीवन के उच्चतम लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकता है । यह सिद्धियां केवल भौतिक शक्तियां नहीं , बल्कि आत्मिक उन्नति का प्रतीक है , जो साधक को आत्मा के गहरे रहस्यों और ब्रह्मांड की अपार शक्तियों के साथ जोड़ती है ।

सामान्य दृष्टि और बुद्धि से अष्ट सिद्धियां असंभव प्रतीत हो सकती हैं , क्योंकि हमारी सामान्य बुद्धि और अनुभव भौतिक सीमाओं से बंधी होती है । परंतु इसका यह अर्थ नहीं है की जो हमारी समझ से परे है , वह असंभव है ।

मानव बुद्धि सीमित है और हम अक्सर उन्हीं चीजों को वास्तविक मानते हैं जिन्हें हम प्रत्यक्ष रूप से अनुभव कर सकते हैं । किंतु हमारे ज्ञान की सीमाएं हमें उस अनदेखे और अज्ञात को समझने से रुकती है ,जो ऋषियों ने साधना और तप के माध्यम से अनुभव किया था । ऋषि - मुनि प्रज्ञावान थे --- उनकी चेतना सामान्य मानव से कहीं अधिक गहन और सूक्ष्म थी । उन्होंने जिस ,तप ध्यान और समाधि के माध्यम से अष्ट सिद्धियों की प्राप्ति की बात कही है , वह सामान्य मानसिकता से परे है ।

Edit with WPS Office

वर्तमान आधुनिक विज्ञान भी कई ऐसी चीजों को पहले असंभव मानता था , जिन्हें बाद में प्रमाणित किया गया । ऋषियों की बातें और सिद्धियां उसी प्रकार की उच्चतर चेतना और अनुभव से जुड़ी है , जिन्हें हम सामान्य बुद्धि से नहीं समझ सकते । इसलिए यह आवश्यक है कि हम अपने सीमित ज्ञान को स्वीकार करें और उन बातों पर खुला दृष्टिकोण रखें , जिन्हें महान ऋषियों ने अपने अनुभव और साधना के आधार पर कहा है । जो बातें ऋषियों द्वारा कही गई है , वे सिर्फ कल्पना या मिथक नहीं है , बल्कि गहन विचार और साधना का परिणाम है । इसलिए उन्हें नकारनें से पहले यह समझना जरूरी है कि वे बातें एक उच्चतर चेतना और अनुभव से उत्पन्न हुई है । यदि कोई बात हमारी समझ के बराबर है , तो उसे तत्काल अस्वीकार करने की जगह उस पर गहन विचार करना चाहिए । प्राचीन ज्ञान को बिना विचार किए नकारना हमें उसकी गहराई और सत्यता से वंचित कर सकता है ।

ऋषियों का ज्ञान केवल भौतिकता पर आधारित नहीं था , बल्कि उन्होंने ब्रह्मांड और आत्मा की असीमित संभावनाओं का अनुभव किया था । उनका ज्ञान अकल्पनीय था , जिससे भौतिक , मानसिक और आध्यात्मिक सभी स्तरों को समाहित किया गया था । इसलिए , हमें यह स्वीकार करना चाहिए की जो बातें आज असंभव प्रतीत होती है , वे ऋषियों की प्रज्ञा और साधना से संभव थी और हो सकती है ।

इसलिए यह कहना उचित होगा कि अष्ट सिद्धियां जैसी शक्तियों को सिर्फ हमारे सीमित दृष्टिकोण से नकारा नहीं जा सकता । हमें अपनी अल्पज्ञता को स्वीकारते हुए प्राचीन ऋषियों की गहन साधना और उनके अनुभवों का सम्मान करना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 81.मांसाहार : एक वैदिक दृष्टिकोण

सनातन धर्म में आहार को केवल शरीर का पोषण देने वाले तत्व के रूप में नहीं , बल्कि इसे आध्यात्मिक और धार्मिक सिद्धांतों से भी जोड़ा था । उनके अनुसार , आहार से न केवल शरीर की ऊर्जा प्राप्त होती है , बल्कि इससे मन और आत्मा के शुद्धता भी प्रभावित होती है । यही कारण है की आहार को बहुत ही सोच - समझकर चुना जाना चाहिए , ताकि वह शारीरिक और मानसिक संतुलन बनाए रखें और व्यक्ति के मोक्ष प्राप्ति में सहायक हो सके ।

आहार के चार सिद्धांत :

- आहार से आयु , बल , रुप और बुद्धि की वृद्धि होनी चाहिए ।
- आहार प्राप्त करने में किसी अन्य प्राणी को कष्ट नहीं होना चाहिए ।
- आहार धर्मसम्मत और शुद्ध होना चाहिए ।
- आहार मोक्ष प्राप्ति में सहायक होना चाहिए ।

आहार की महत्ता :

सात्विक आहार वह होता है जो शरीर को ऊर्जा प्रदान करता है , रोगों से मुक्त रखता है , और मन को शांत रखता है । इसमें रस , पौष्टिकता , और रुचिकर्ता होती है । वेदों में घी दूध अन्न फल साग सब्जी और जल जैसे आहारों को सात्विक माना गया है , जो न केवल शरीर को स्वस्थ रखते हैं , बल्कि आध्यात्मिक साधना में भी सहायक होते हैं । ऐसे आहार से किसी जीव को कष्ट नहीं होता और यह आहार प्राकृतिक रूप से ही प्राप्त किया जा सकता है ।

भगवत गीता के अध्याय 17 , में भगवान श्री कृष्ण ने आहार के तीन प्रकारों

Edit with WPS Office

सात्विक राजसिक और तामसिक -- का विस्तार से वर्णन किया है । हर प्रकार का आहार न केवल शरीर पर , बल्कि मन और आत्मा पर भी प्रभाव डालता है । यहां इन तीनों प्रकारों के आहार का विस्तार से वर्णन किया गया है ;

1. सात्विक आहार (शुद्ध और उन्नत आहार)

(भगवत गीता. अध्याय 17 , श्लोक. 8)

अर्थ : जो आहार आयु , सत्व (शांति) , बल , स्वास्थ्य , सुख और प्रसन्नता को बढ़ाता है , जो रस युक्त , मधुर , स्थिर और हृदय को प्रिय होता है , वह सात्विक आहार है और सात्विक लोगों द्वारा पसंद किया जाता है ।

विशेषताएं :

- **सात्विक आहार शरीर और मन को शुद्ध और शांत रखता है ।**
- **यह आयु और बल को बढ़ाता है , रोगों से बचाव करता है ।**
- **इसमें फल , सब्जियां , दूध , दही , घी , अनाज , और जल जैसे प्राकृतिक पदार्थ सम्मिलित होते हैं ।**
- **यह आहार मानसिक शांति , आत्मिक शुद्धि और आध्यात्मिक साधना के लिए अत्यंत आवश्यक है ।**
- **इस प्रकार का भोजन पचाने में हल्का और शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है ।**

2. राजसिक आहार (उत्तेजना और तृष्णा बढ़ाने वाला आहार)

(भगवत गीता. अध्याय 17 , श्लोक. 9)

अर्थ : जो भोजन बहुत कड़वा , खट्टा , नमकीन , बहुत गर्म , तीखा , शुष्क , और जलन करने वाला हो , उसे राजसिक आहार कहा जाता है । यह आहार दुख चिंता और रोगों को उत्पन्न करने वाला होता है ।

विशेषताएं :

- **राजसिक आहार इच्छाओं और तृष्णा को बढ़ाता है ।**

Edit with WPS Office

- **यह भोजन मानसिक अशांति , क्रोध और अधीरता को जन्म देता है ।**
- **इसमें अत्यधिक मसालेदार , खट्टा , नमकीन , तले- भुने पदार्थ शामिल होते हैं , जो शरीर को उत्तेजित करते हैं ।**
- **यह आहार शारीरिक ऊर्जा तो देता है , लेकिन मानसिक संतुलन को भंग करता है और अंततः दुख शोक और रोगों का कारण बनता है ।**
- **इसे भोगवादी और तीव्र इच्छाओं वाले लोग पसंद करते हैं , क्योंकि यह तुरंत तृप्ति देता है , लेकिन लंबे समय में हानिकारक होता है ।**

3. तामसिक आहार (अवसाद और आलस्य को बढ़ाने वाला आहार)

(भगवत गीता. अध्याय 17 , श्लोक. 10)

अर्थ : बासी , गले- सड़े , दुर्गंधयुक्त , मांसाहार , और अशुद्ध भोजन , जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है , तामसिक लोगों को प्रिय होता है ।

विशेषताएं :

- **तामसिक आहार शरीर और मन दोनों को भारी और आलसी बना देता है ।**
- **इसमें बासी , गला - सड़ा , खराब , ज्यादा पकाया हुआ , मांसाहार और अशुद्ध भोजन शामिल है ।**
- **इस आहार से मन और शरीर में अवसाद , आलस्य , और अज्ञानता का जन्म होता है ।**
- **तामसिक आहार का सेवन आत्मिक विकास को अवरुद्ध करता है और मनुष्य को अधोगति की ओर ले जाता है ।**
- **ऐसे भोजन से व्यक्ति मानसिक रूप से थका हुआ , निराश और उत्तेजित हो जाता है ।**

भोजन केवल शरीर को ऊर्जा देने का साधन नहीं है , बल्कि यह मन और आत्मा पर भी गहरा प्रभाव डालता है । सात्विक आहार शरीर , मन और आत्मा को शुद्ध करता है और आध्यात्मिक प्रगति में सहायक होता है । राजसिक आहार तृष्णा और इच्छाओं को बढ़ाता है , जो अंततः अशांति

Edit with WPS Office

और दुख का कारण बनते हैं । वहीं , तामसिक आहार व्यक्ति को आलसी , अवसाद और अधर्म की ओर ले जाता है । इसलिए , हमें अपने आहार में सावधानी बरतनी चाहिए और सात्विक भोजन को प्राथमिकता देनी चाहिए , ताकि हम शारीरिक , मानसिक और आध्यात्मिक रूप से उन्नत हो सके ।

मांसाहार से होने वाले दुष्प्रभाव :

1. **हिंसा और पाप** : मांसाहार हिंसा पर आधारित होता है । इसमें एक जीव को उसकी जीवन शक्ति से वंचित करना पड़ता है , जिससे उस जीव को अपार पीड़ा होती है । जहां हिंसा होती है , वहां पाप उत्पन्न होता है और जहां पाप होता है , वहां दुख दरिद्रता और राग - द्वेष का वास होता है । किसी जीव को कष्ट देकर स्वयं शांति और सुख की कामना करना स्वार्थ और अज्ञानता का परिचायक है ।

2. **कर्म और पुनर्जन्म** : प्रत्येक जीव का पुनर्जन्म उसके कर्मों पर आधारित होता है । यदि हम किसी अन्य जीव को दुख और पीड़ा पहुंचते हैं , तो हमारे पुनर्जन्म का फल भी वैसा ही भयानक होगा । इसलिए , हमें ऐसे कर्मों से बचना चाहिए जो अन्य जीवों को कष्ट पहुंचाते हैं ।

वृक्ष और दूध : अहिंसक स्रोत :

कुछ लोग तर्क देते हैं की फल खाने और दूध पीने से भी हिंसा होती है । लेकिन वेदों के अनुसार , फल और दूध का सेवन अहिंसा का पालन करते हुए किया जा सकता है । पेड़ अपने फल स्वाभाविक रूप से गिराते हैं , जिन्हें बिना किसी क्षति के ग्रहण किया जा सकता है । इसी तरह , गाय की सेवा करके उसके अतिरिक्त दूध का उपयोग करना भी किसी प्रकार की हिंसा नहीं मानी जाती , क्योंकि इससे बछड़े की आवश्यकताओं में कोई कमी नहीं होती । गाय भैंस का दूध मनुष्य के लिए ही बना है । और मनुष्य द्वारा गाय के बछड़े को दूध पिलाना उस मनुष्य का कर्तव्य और उस पर निर्भर है अर्थात आवश्यकता अनुसार बछड़े को गाय का दूध पिलाते हैं ? अनेक लोग ऐसे हैं जो कहते हैं -- जो गाय का दूध होता है वह उसके बछड़े के लिए होता है ,? परंतु ऐसा नहीं है अगर बछड़े के लिए होता , तो बछड़ा

Edit with WPS Office

गाय के इतने दूध को पीकर अकेला दो-चार दिनों में मृत्यु को प्राप्त हो जाता । जो बिना विचारे और तर्क से नहीं सोचते वही ऐसी कपोल कल्पित बातें कहते हैं , जो सृष्टि नियमों और वेदों और शास्त्रों के विरुद्ध है , और साथ के साथ ईश्वर की रचना का भी अपमान है । इसलिए गाय का दूध मनुष्य के लिए ही होता है । मनुष्य पशु पक्षियों पर निर्भर है । ऐसा वेद कहता है ।

तामसिक और राक्षसी आहार :

मनुस्मृति में स्पष्ट किया गया है कि मांस और मध राक्षसी और पिशाच प्रवृत्ति के आहार हैं , जो वैदिक सभ्यता के अनुरूप नहीं है । मनुष्य का स्वाभाविक आहार फल , अन्न और शाकाहार है । वेदों ने मांसाहार को हानिकारक बताया है , क्योंकि यह शरीर को रोगों का घर बना देता है और मानसिक शांति भंग करता है ।

मनुष्य का स्वाभाविक आहार :

शारीरिक संरचना के आधार पर , मनुष्य का प्राकृतिक आहार फलाहार हैं । उसके दांत और आंते इस प्रकार की बनी है कि वे फल और शाकाहार को आसानी से पचा सकें । मांसाहारी जीवो की तुलना में मनुष्य के दांत और पाचन प्रणाली मांस खाने के लिए नहीं बनी है । यह दर्शाता है कि मनुष्य का मूल आहार फल और सब्जियां ही है , जिन्हें छोड़कर उसने अपने प्राकृतिक स्वभाव को बिगाड़ लिया है ।

प्राकृतिक आहार का महत्व :

पका हुआ , भुना हुआ और कृत्रिम भोजन मनुष्य के लिए स्वाभाविक नहीं है । हमारे शरीर के स्वस्थ विकास के लिए प्राकृतिक आहार की आवश्यकता होती है , जो फल और अनाजों में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । फलाहार न केवल शारीरिक स्वास्थ्य के लिए बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति के लिए भी महत्वपूर्ण है । यही कारण है कि सनातन धर्म में व्रत और धार्मिक अनुष्ठानों में फलाहार का विशेष महत्व है ।

कुछ लोग तर्क देते हैं कि चिकन , मटन , मछली , और अन्य मांसाहार का

Edit with WPS Office

उपयोग मनुष्य के भोजन के लिए ही है , और अगर हम इन्हें नहीं खाएंगे , तो इनकी संख्या बढ़ जाएगी । लेकिन इस प्रकार का तर्क बिल्कुल भी सही नहीं है । जब जन्म और मृत्यु मनुष्य के हाथ में ही नहीं है , तो इन जीवों को केवल आपके भोजन बनाने के लिए किसने उत्पन्न किया ? क्या ईश्वर ने ऐसा किया है ? अगर हम ऐसा मानें , तो ईश्वर को अधर्मी , स्वार्थी , पक्षपाती कहना पड़ेगा , जो की पूरी तरह से गलत है ।

ईश्वर तो दयाल , कल्याणकारी और प्रेममय है । वह सब के दुखों को हरने वाले हैं और उनका स्वभाव सच्चिदानंद है , जिसमें राग , द्वेष , हिंसा , और अधर्म का कोई स्थान नहीं है । तो यह सोचने की ईश्वर ने इन जीवों को केवल मनुष्य के खाने के लिए बनाया है , यह तर्क नहीं बिल्कुल कुतर्क है। ऐसे विचार केवल एक स्वार्थी , पक्षपाती और अधर्मी व्यक्ति से ही संभव है , जो अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए कुतर्क का सहारा लेते हैं ।

मनुष्य का स्वभाव और विचार उसके आचरण और संगति पर निर्भर करते हैं । जैसा वह दिन भर करता है , जैसे वातावरण में वह रहता है , वैसा ही उसका स्वभाव और सोच बन जाता है । यही कारण है कि कई बार व्यक्ति गलत चीजों को सही मानने लगता है ।

इसलिए , केवल संगति बदलने से ही मनुष्य का उद्धार संभव है । हमें अपने विचारों को शुद्ध करने के लिए , आज से ही वैदिक शास्त्रों की संगति अपनानी चाहिए और दूसरों को भी इसके लिए प्रेरित करना चाहिए । इसी से इस संसार का कल्याण संभव है , क्योंकि सही विचार और शुद्ध संगति ही मनुष्य को सच्चाई की ओर ले जाते हैं ।

निष्कर्ष : वैदिक शास्त्रों में सात्विक , आहार को सर्वोत्तम माना गया है । यह न केवल शरीर को स्वस्थ और मन को शांत रखता है , बल्कि आध्यात्मिक साधना और मोक्ष प्राप्ति में भी सहायक होता है । मांसाहार , जो हिंसा और पाप से भरा होता है , मनुष्य के स्वभाव और धर्म के विरुद्ध है । इसलिए , हमें अपने आहार में शुद्धता और अहिंसा को प्रमुखता देनी

Edit with WPS Office

चाहिए और अपने जीवन को सच्चे अर्थों में उन्नत बनाने के लिए सात्विक और फलाहारी जीवनशैली अपनानी चाहिए । इस प्रकार , केवल आहार ही नहीं , बल्कि हमारी पूरी जीवन शैली को वैदिक सिद्धांतों के अनुरूप बनाना ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•82.दान का वास्तविक अर्थ

दान का वास्तविक अर्थ समझने के लिए पहले हमें यह समझना होगा की दान क्या **नहीं** है । साधारणत : " दान „ का अर्थ लोग **Donation , gift** या **charity** के रूप में लेते हैं । लेकिन भारतीय दर्शन में " दान „ केवल किसी वस्तु को देने या दान करने तक सीमित नहीं है । वास्तव में , दान एक ऐसी अवधारणा है जिसे किसी अन्य भाषा में सीधे अनुवाद नहीं किया जा सकता , यानी यह **Non - translatable** है ।

दान का शास्त्रों में बहुत ही गहन और विस्तृत अर्थ दिया गया है ;
" स्वसत्व निवृत्ति पूर्वकम परसवातोत्पादनम दान „ इसका अर्थ है ; **" अपना अपनापन/लगाव/आत्मीयता छोड़ते हुए किसी दूसरे में अपनत्व उत्पन्न करना ही दान है । „**
ईश्वर शास्त्रीय परिभाषा का विश्लेषण करने पर हमें पता चलता है कि दान केवल वस्त्र , भोजन ,धन या संपत्ति को देने से कहीं अधिक है । इसमें **स्वामित्व , भावनात्मक जुड़ाव ,** और **अपनत्व** का त्याग सम्मिलित होता है । आप जो भी दे रहे हैं , उसे सिर्फ वस्तु के रूप में नहीं बल्कि उसमें निहित

Edit with WPS Office

अपनत्व को भी छोड़ते हुए देना होता है ।

दान के मर्म को समझने के लिए यह आवश्यक है कि जब हम किसी वस्तु , धन , या सेवा का दान करते हैं , तो हमें उससे जुड़े अपने भावात्मक संबंधों और स्वामित्व के विचारों को भी त्यागना पड़ता है । जैसे ___ " **इदम् इंदिराय इदम् मम , इदम् ब्रह्मणे इदम् मम „** का भाव यह है की यह वस्तु अब मेरी नहीं , इसका संबंध अब उस व्यक्ति या उद्देश्य से है , जिसे मैंने दिया है ।

धन और अन्य प्रकार के दान :

" धन„ शब्द का भी एक सीमित अर्थ होता है , जिसे हम अक्सर संपत्ति , दौलत , सोना , या रुपया समझते हैं । लेकिन हमारे शास्त्रों में **धन** केवल भौतिक वस्तुओं तक सीमित नहीं है । यह कई रूपों में हो सकता है ;

- **पुत्र धन** (संतान -पुत्र एवं पुत्री)
- **गौ धन** (पशुधन)
- **विधा धन** (ज्ञान का धन)
- **संतोष धन** (संतोष का होना) , इत्यादि ।

धन के इन रूपों को जब हम किसी के साथ साझा करते हैं या समर्पित करते हैं , तो उसमें भी अपने स्वामित्व और अपनत्व का त्याग करके दूसरे के जीवन में उसका महत्व बढ़ाने का भाव होना चाहिए ।

विविध प्रकार के दान :

हमारा समाज विविध प्रकार के दान की अवधारणाओं से समृद्ध है , जैसे ;

- **विद्या दान : ज्ञान का दान करना , जिससे व्यक्ति शिक्षित हो और समाज में अपना योगदान दे सके ।**
- **प्राण दान : किसी के प्राण बचाने के लिए जीवन का दान ।**
- **कन्यादान : विवाह में पुत्री का दान , जो समाज में एक नई इकाई की स्थापना का प्रतीक है ।**

Edit with WPS Office

- **रक्तदान : स्वास्थ्य और जीवन को बचाने के लिए रक्त का दान ।**
- **अभय : किसी को सुरक्षा और निडरता का अनुभव कराना ।**

इन सभी दानों में समान तत्व है -- अपनत्व का त्याग । जब आप कुछ देते हैं , तो उसे पूरी तरह से छोड़ देते हैं और दूसरे के जीवन में उसका मूल्य बढ़ाते हैं । दान केवल वस्त्र , धन , या संपत्ति देने तक सीमित नहीं है । इसका वास्तविक स्वरूप है कि उस वस्तु , भावना , या सेवा के प्रति अपनी स्वामित्व भावना और भावनात्मक और जुड़ाव को त्याग कर उसे दूसरों के साथ साझा करें । जब आप किसी को कुछ देते हैं , तो उस दान का उद्देश्य केवल भौतिक रूप में नहीं , बल्कि भावनात्मक और मानसिक रूप से भी दूसरे के जीवन की समृद्ध करना होना चाहिए । दान का वास्तविक अर्थ तभी सार्थक होता है जब आप अपने स्वार्थ और स्वामित्व की भावना को त्याग कर दूसरों के कल्याण के लिए समर्पित करते हैं । यही दान का सच्चा मर्म है ।

दान किसे करना चाहिए और किसे नहीं ?

दान दाता के अधीन होता है । वैदिक शास्त्रों के अनुसार दान केवल उपयुक्त और योग्य व्यक्ति को ही करना चाहिए , अयोग्य को नहीं । क्योंकि अयोग्य को दान करने पर उस दान का वहां दुरुपयोग ही करता है और उसका फल दाता को भी भोगना पड़ता है इसलिए दान हमेशा सोच विचार , जांच - परख , चिंतन - मनन करके ही करना चाहिए क्योंकि दान , दाता के अधीन होता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

•83.वेदों में जादू- टोने की भ्रांति

वेदों के संबंध में एक आम भ्रांति प्रचलित हो गई है कि इनमें जादू- टोना और अंधविश्वास का वर्णन है । यह भ्रांति मुख्य रूप से सायणाचार्य , महीधर जैसे विद्वानों द्वारा किए गए भाष्यों के कारण उत्पन्न हुई , जिन्होंने वेदों के कुछ प्रकरणों में जादू - टोने जैसी अवधारणाओं का उल्लेख किया । परंतु इस संदर्भ में गहन अध्ययन और सही समझ आवश्यक है ताकि वेदों के वास्तविक संदेश को समझा जा सके ।

जादू - टोना और वेदों का संबंध :

सबसे पहले यह समझना जरूरी है कि " जादू ,, शब्द स्वयं ही वेदों की भाषा का नहीं है । यह एक फारसी शब्द है , जिसका अर्थ बाजीगरी , करिश्मा , वशीकरण और हिंसा से जुड़ा होता है । इस फारसी शब्द को वेदों के " यातु ,, शब्द के अपभ्रंश के रूप में लिया गया है । जबकि " यातु ,, शब्द का अर्थ वेदों में अंधविश्वास या अवैज्ञानिक करिश्मा से नहीं है । निघण्टु (वेदों की शब्दावली के विश्लेषण के लिए लिखा गया प्राचीन ग्रंथ) के अनुसार , " यातु ,, का अर्थ " हिंसा ,, हैं ।

वेदों का वैज्ञानिक दृष्टिकोण :

वेदों में वर्णित प्रक्रियाएं और मंत्र वैज्ञानिक और तर्कसंगत है , और इनका उद्देश्य मानव जीवन को बेहतर बनाना है । उदाहरण के लिए , अथर्ववेद. 8/6/18 ___ में जादू या इंद्रजाल का उल्लेख शत्रु सेना को पराजित करने के संदर्भ में हुआ है । यह कोई काल्पनिक अंधविश्वासी प्रक्रिया नहीं है , बल्कि एक रणनीतिक और वैज्ञानिक दृष्टिकोण से शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने की तकनीक को दर्शाता है ।

वेदों के ये मंत्र और प्रक्रियाएं तब की सामाजिक और प्राकृतिक समस्याओं के समाधान के रूप में प्रस्तुत किए गए थे । ये मंत्र अंधविश्वास या कल्पनाओं पर आधारित नहीं थे , बल्कि उनके पीछे तात्विक और वैज्ञानिक

Edit with WPS Office

विचारधारा थी ।

रोगों का उपचार और मानसिक शांति :

अथर्ववेद के विभिन्न मंत्रों में शारीरिक और मानसिक रोगों के उपचार के लिए सुझाव दिए गए हैं । ये मंत्र न केवल शरीर के रोगों को दूर करने के उद्देश्य से हैं , बल्कि मानसिक शांति और संतुलन को प्राप्त करने का भी मार्गदर्शन देते हैं । इस प्रकार , वेदों में उल्लिखित प्रक्रियाएं स्वस्थ जीवन और नैतिकता को बढ़ावा देती है । इन मंत्रों का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के भीतर के देशों को हटाना और उसे मानसिक एवं शारीरिक रूप से स्वस्थ बनाना है ।

तांत्रिक ग्रन्थों की गलत व्याख्या :

यह भी ध्यान देने योग्य है की तांत्रिक ग्रंथों में अक्सर जादू - टोने और तंत्र-मंत्र के नाम पर कई अवैज्ञानिक और काल्पनिक प्रक्रियाओं का वर्णन मिलता है । लेकिन यह वेदों की परंपरा से अलग है । तंत्र और वेदों का आधार और दृष्टिकोण भिन्न है । तांत्रिक ग्रंथों में कल्पित और अवैज्ञानिक विवरण होते हैं , जबकि वेदों में प्रस्तुत ज्ञान का आधार पूरी तरह से सत्य और वैज्ञानिक होता है ।

वेदों में अंधविश्वास नहीं , वास्तविकता है .. ?

वेदों में वर्णित हर प्रक्रिया और मंत्र का आधार तात्विक और वैज्ञानिक है , न कि अंधविश्वास या जादू - टोना । समय के साथ , वेदों के मूल संदेश को सही ढंग से न समझ पाने के कारण यह भ्रांति उत्पन्न हुई कि वेदों में जादू - टोना का वर्णन है ।

वेदों में जादू- टोने या अंधविश्वास का कोई स्थान नहीं है । यह केवल एक भ्रांति है जो वेद मंत्रों के दूषित भाष्य के कारण फैली है । वेदों में जो कुछ भी वर्णित है , वह मानव जीवन को सुधारने , शत्रुओं से रक्षा करने , रोगों से मुक्ति पाने और मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य को बनाएं रखने के लिए वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर आधारित है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•84.वेदों में नारी का महत्व

वेदों में नारी को समाज और परिवार में अत्यंत उच्च स्थान प्रदान किया गया है । वैदिक संस्कृति में नारी केवल गृहिणी ही नहीं , बल्कि समाज की आधारशिला मानी गई है । वैदिक मंत्रों में नारी को सम्मान , स्वतंत्रता और अधिकार दिए गए हैं , जो यह दर्शाते हैं कि उस युग में नारी शक्ति को किस तरह देखा जाता था । नारी का स्थान एक मां , पत्नी , पुत्री के रूप में महत्वपूर्ण तो था ही , साथ ही वह शिक्षा , युद्ध , धर्म और समाज के अन्य क्षेत्रों में भी अपना योगदान देती थी ।

नववधू का स्थान : साम्राज्ञी

वेदों में नववधू को गृह की साम्राज्ञी कहा गया है , जिसका अर्थ है कि वह घर की रानी होती है । यह उसके अधिकार और सम्मान को दर्शाता है ।

(अथर्ववेद. 14/1/43) ______

भावार्थ : जिस प्रकार नदिया समुद्र में जाकर विलीन हो जाती है , उसी प्रकार नववधू को अपने पति के घर जाकर वहां की साम्राज्ञी बनना चाहिए । यह संकेत करता है कि नववधू अपने पति के घर में पूरी गरिमा और सम्मान के साथ प्रवेश करती है , और वहां एक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण करती है ।

Edit with WPS Office

युद्ध में नारी का स्थान :

वेदों में नारी को केवल घर तक सीमित नहीं रखा गया था । उसे समाज और राष्ट्र की रक्षा के लिए थी सक्षम माना गया है । नारी के भीतर वीरता और साहस को भी महत्व दिया गया है , जो उसे युद्ध क्षेत्र में भी सम्मानित स्थान देता है ।

(ऋग्वेद. 10/159/3) ______

भावार्थ : मेरे पुत्र और पुत्रियां दोनों ही बाहरी और भीतरी शत्रुओं का विनाश करने वाले हो , जैसे प्रकाश अज्ञान के अंधकार को दूर करता है । यह मंत्र नारी शक्तियों और समाज में उसकी भूमिका को दर्शाता है , जिसमें वह न केवल घर की रक्षक है , बल्कि समाज की शत्रुओं से रक्षा करने वाली भी है ।

ऋषिकाएं : ज्ञान और शक्ति की प्रतीक :

वेदों में नारी केवल गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं थी , बल्कि उसे आध्यात्मिक और बौद्धिक क्षेत्र में भी ऊंचा स्थान प्राप्त था । कई ऋषिकाओं ने मंत्रदृष्टा के रूप में वेदों में महत्वपूर्ण योगदान दिया है । **घोषा , अपाला , लोपामुद्रा , सावित्री , इन्द्राणी , दक्षिणा , श्रद्धा , और कामायनी** जैसी ऋषिकाओं के उल्लेख से यह स्पष्ट होता है कि वैदिक नारी ज्ञान और शक्ति की प्रतीक थी । इनकी कीर्ति का प्रभाव उनके पतियों पर भी पढ़ता था और वे समाज में प्रतिष्ठित होती थी ।

शिक्षा और ज्ञान का अधिकार :

- वेदों में नारी को शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार था । कई ऋषिकाएं (महिला ऋषि) , जैसे कि गार्गी , मैत्रेयी , अपाला वेदों और उपनिषदों की ज्ञाता थी और उन्होंने समाज में महत्वपूर्ण योगदान दिया ।
- इन महिला ऋषियों ने वेदों पर प्रश्न पूछे और दार्शनिक संवादों में हिस्सा लिया । गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों ने याज्ञवल्क्य जैसे महान ऋषियों के साथ संवाद किए और ब्रह्म ज्ञान पर चर्चा की ,

Edit with WPS Office

जिससे यह सिद्ध होता है कि नारी को शास्त्रार्थ और अध्ययन का पूर्ण अधिकार था ।

परिवार की आधारशिला :

ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में नारी को परिवार का आधार माना गया है । परिवार की स्थिरता और समृद्धि में नारी की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है ।

(ऋग्वेद. 3/53/4) ______

यह उदाहरण दर्शाता है की नारी केवल परिवार का अभिन्न हिस्सा नहीं है , बल्कि उसके बिना परिवार की कल्पना भी अधूरी है । वह समाज के उत्थान और स्थिरता की दूरी है । वेदों में नारी को अबला नहीं , बल्कि सबला के रूप में देखा गया है । उसे समाज , परिवार और धर्म में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । नारी का व्यक्तित्व उसके गुणों से प्रतिष्ठित होता है , जिससे वह समाज में एक आदर्श स्थापित करती है । वैदिक युग की नारी जीवन के हर क्षेत्र में अग्रणी थी , चाहे वह घर हो , युद्ध हो या फिर आध्यात्मिक क्षेत्र ।

वैदिक यज्ञ में नारी का स्थान :

वेदों में नारी को धार्मिक कृत्यों और यज्ञों में भाग लेने का अधिकार प्राप्त था । वे पति के साथ यज्ञ करती थी और कई बार स्वयं यज्ञ का संचालन भी करती थी । पति - पत्नी मिलकर यज्ञ और अन्य धार्मिक अनुष्ठान करते थे , और वे दोनों ही समान रूप से इन अनुष्ठानों के फल के अधिकारी माने जाते थे ।

स्वतंत्रता और स्वावलंबन :

वेदों के काल में नारी को शिक्षा , विवाह , और सामाजिक स्वतंत्रता का अधिकार प्राप्त था । उसे अपने जीवन साथी का चयन करने का अधिकार भी था , जो कि स्वयंवर जैसी प्रथाओं से प्रमाणित होता है । विवाह के बाद भी , नारी को स्वतंत्रता और सम्मान प्राप्त था , और उसका पति के कर्तव्यों और धर्म में समान भागीदार के रूप में स्थान था ।

Edit with WPS Office

निष्कर्ष : ______

वेदों में नारी का स्थान , धर्म और समाज और परिवार की धूरी के रूप में स्थापित किया गया है । उसे शिक्षा , स्वतंत्रता , और धार्मिक अनुष्ठानों का अधिकार देकर वेदों ने एक आदर्श समाज की रचना की है , जहां नारी और पुरुष समान रूप से एक दूसरे के पूरक हैं । नारी को देवी , विदुषी , सहधर्मिणी , और माता के रूप में उच्चतम सम्मान और आदर प्रदान किया गया है , जो यह दर्शाता है कि वेदों के युग में नारी का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और उच्च था ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 85.वैदिक धन उपार्जन सिद्धांत :

धन इस संसार में शरीर को चलाने के लिए आवश्यक है , परंतु जब यह आवश्यकता लालच में बदल जाती है , तो सर्वनाश की नींव रखी जाती है । आज का मनुष्य धर्म - अधर्म , उचित - अनुचित , सत्य - असत्य का भेद भूल चुका है । समाज में भ्रष्टाचार , अनैतिकता और अन्याय का बोलबाला है , और इसका मूल कारण धन और संपत्ति का असमान वितरण है । धन को ही शक्ति का मापदंड मान लिया गया है , जिसके कारण मानव समाज नैतिकता की सीमाएं पार कर चुका है ।

आर्य संस्कृति में धन को एक साधन के रूप में देखा गया , न कि जीवन का अंतिम उद्देश्य । वेदों और शास्त्रों के अनुसार , जीवन का उद्देश्य धर्म अर्थ

Edit with WPS Office

काम और मोक्ष की प्राप्ति है , जो मर्यादाओं के भीतर रहकर ही संभव है । परंतु आज का समाज केवल अर्थ की लालसा में सीमाओं को भूल गया है , और इसी लालसा के कारण समाज में अराजकता और विनाश की संभावना बढ़ रही है ।

धन अर्जन के पांच वैदिक नियम : ?

धन कैसे उत्पन्न किया जाए , इस पर शास्त्रों ने स्पष्ट मार्गदर्शन दिया है । इन नियमों का पालन करते हुए ही धन अर्जन करना उचित और लाभकारी माना गया है ;

1. **पहला नियम : धन अर्जन से दूसरों को कष्ट न हो**

जब हम धन अर्जित करें , तो इसका ध्यान रखें की हमारे कार्यों से किसी भी प्राणी को दुख या कष्ट न पहुंचे । दूसरों के हितों का सम्मान करना अनिवार्य है ।

2. **दूसरा नियम : अपने शरीर को कष्ट न हो**

धन अर्जन के लिए अपने स्वास्थ्य को अनदेखा न करें । स्वस्थ शरीर ही जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा कर सकता है । अतः संतुलन बनाए रखना आवश्यक है ताकि शरीर भी स्वस्थ रहे और धन भी अर्जित होता रहे ।

3. **तीसरा नियम : परिश्रम और पुरुषार्थ से अर्जित धन**

जो धन आप स्वयं के परिश्रम और पुरुषार्थ से कमाते हैं , वही सही मायनों में आपको संतुष्ट और समृद्धि प्रदान करेगा । दूसरों के धन की लालसा न करें और उसी में जीवन यापन करें , जो आप स्वाभाविक रूप से अर्जित कर सकते हैं । सत्य के पथ पर अर्जित किया गया धन ही में संतुष्ट रहे ।

Edit with WPS Office

4. चौथा नियम : अधर्म से धन अर्जित न करें

धन अर्जन के मार्ग धर्म संगत होना चाहिए । किसी भी प्रकार का अधर्म या अनैतिक कार्य से अर्जित किया गया धन लंबे समय तक टिकता नहीं , और अंत में वह व्यक्ति को विनाश की और ले जाता है असंतोष और दुख का कारण भी होता है । धर्म के मार्ग पर चलकर अर्जित धन ही स्थायी और समृद्धि कारक होता है ।

5. पांचवा नियम : धन अर्जन से स्वास्थ्य में बांधा न हो

धन अर्जन इतना महत्वपूर्ण न हो जाए कि आप स्वास्थ्य , सत्संग , और वेद शास्त्रों का अध्ययन भूल जाए । जीवन का संतुलन बनाए रखें , ताकि मानसिक और आध्यात्मिक विकास भी साथ-साथ हो सके ।

इन पांचों नियम का पालन करके अर्चित धन ही वास्तविक " अर्थ „ कहलाता है । जो धन इन नियमों के विरुद्ध अर्जित किया जाता है , वह अनर्थकारी होता है । अतः हमें गलत मार्गो से अर्जित धन का त्याग कर , सही मार्ग से ही धन अर्जन का प्रयास करना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•86. काल और समय

काल और **समय** को अक्सर एक ही मान लिया जाता है , परंतु दोनों की प्रकृति और अस्तित्व में गहरा अंतर है । काल को समझना सृष्टि और

Edit with WPS Office

अस्तित्व की अनंतता को समझना है , जबकि समय सृष्टि के भीतर के परिवर्तनों और घटनाओं को मापने का एक साधन है ।

काल और **अनादि** (जिसका कोई प्रारंभ नहीं) और **अनंत** (जिसका कोई अंत नहीं) है । यह वह तत्व है जो सृष्टि के हर चरण ___ उत्पत्ति , स्थिति , प्रलय और सुषुप्त अवस्था ___ में निरंतर बना रहता है । काल का अस्तित्व सृष्टि के अस्तित्व से पहले भी था और प्रलय के बाद भी रहेगा । इसे शाश्वत और अपरिवर्तनीय माना जाता है । चाहे सृष्टि का कोई भी चरण हो , काल का प्रवाह कभी रुकता नहीं । इसका कोई आरंभ नहीं है और न ही कोई अंत । काल स्वयं मैं शाश्वत **सत्य** है , जो न कभी उत्पन्न हुआ है और न ही नष्ट होगा । काल तत्व में **सत** और **रज** गुण की प्रधानता होती उसमें **तम** गुण का अभाव होता है । प्रकृति की साम्यावस्था भंग होने की पहली स्थिति ही काल कहलाती है । यह प्रकृति की अव्यक्त अवस्था होती है जो **ओम** रश्मियों द्वारा प्रेरित होती है ।

काल सृष्टि से परे है । यह न तो सृष्टि की उत्पत्ति से बंधा है , न उसकी समाप्ति से । चाहे सृष्टि हो या न हो ,काल अपनी शाश्वतता में स्थिर रहता है । काल को किसी भी मापदंड से नहीं बांधा जा सकता ।

समय का संबंध सृष्टि की उत्पत्ति से लेकर उसके प्रलय तक की अवधि से होता है । सृष्टि के आरंभ के साथ ही समय की गणना प्रारंभ होती है और सृष्टि के अंत के साथ ही वह समाप्त हो जाता है । समय सृष्टि के साथ-साथ चलता है और केवल उसकी सीमा तक ही अस्तित्व में रहता है । यह घटनाओं , कार्यों और परिवर्तनों को मापने का एक साधन है , जो सृष्टि के अस्तित्व से बंधा है । जब सृष्टि उत्पन्न होती है , तो समय की गिनती प्रारंभ होती है __ दिन , रात , वर्ष ,युग , आदि के रूप में । यह पूरी तरह से भौतिक संसार और घटनाओं पर आधारित है । जब सृष्टि का प्रलय होता है , तब समय का अंत हो जाता है । इसे हम भौतिक या लौकिक घटनाओं के अनुक्रम के रूप में जानते हैं ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•87. वैदिक पर्व

भारतीय संस्कृति में पर्वों का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। चाहे वह होली हो, दीपावली हो या विजयादशमी, ये सभी पर्व हमारे जीवन में उत्साह, उल्लास और आध्यात्मिकता का संचार करते हैं। ये पर्व न केवल सामूहिकता और सामाजिक एकता के प्रतीक है, बल्कि इनका संबंध सीधे प्रकृति से जुड़ा हुआ है। वैदिक काल से ही इन पर्वों का आरंभ हुआ और ये हमारे जीवन का अभिन्न अंग बने रहे। इनका उद्देश्य प्रकृति के प्रति कृतज्ञता अर्पित करना और हमारे पर्यावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करना है। वैदिक दृष्टिकोण में पर्व का संबंध किसी व्यक्ति विशेष, स्थान विशेष, या जन्म - मृत्यु की घटनाओं से नहीं है; यह तो शुद्ध रूप से प्रकृति और उसके चक्र का सम्मान है।

वैदिक पर्वों का मूल स्वरूप :

वैदिक परंपरा में पर्वों का आरंभ प्रकृति के चक्र और मौसम परिवर्तन के आधार पर हुआ था। ऋतुओं के परिवर्तन के समय जब प्रकृति अपने नए स्वरूप में आती है, तो वेदों में ऐसे समय को एक विशेष यज्ञ और उत्सव का अवसर माना गया है। जैसे की शरद ऋतु में फसल की कटाई के बाद दीपावली का पर्व मनाया जाता हैं, तो बसंत ऋतु के आगमन पर होली का उत्सव मनाया जाता है।

Edit with WPS Office

1. ।। दीपावली ।।

दीपावली , जिसे आज एक धार्मिक पर्व के रूप में मनाया जाता है , वास्तव में भारतीय संस्कृति का एक ऐसा त्यौहार है जिसका प्रारंभ किसी विशेष व्यक्ति या घटना से नहीं , बल्कि प्रकृति और फसल की उर्वरता से जुड़ा हुआ है । इस पर्व का वास्तविक उद्देश्य कृषक समाज के द्वारा नई फसल का स्वागत और उसे ईश्वर को समर्पित कर धन्यवाद अर्पित करना है ।

दीपावली के बारे में प्रचलित मान्यताएं :

आज हिंदू समाज में दीपावली को श्री रामचंद्र जी की लंका विजय और अयोध्या वापसी का प्रतीक माना जाता है , वही जैन इसे महावीर स्वामी के निवारण का दिन समझते हैं । सिख इसे गुरु हरगोविंद जी की रिहाई से जोड़ते हैं , और बौद्ध भी इसे अपने रीति रिवाजों के अनुसार मनाते हैं । परंतु इन सभी मान्यताओं के बावजूद यह पर्व वास्तव में किसी भी धर्म विशेष या घटना विशेष से जुड़ा हुआ नहीं है ।

दीपावली का ऐतिहासिक और सांस्कृतिक आधार :

दीपावली का उत्सव इस धरती पर मानव सभ्यता के आरंभ से ही चला आ रहा है । सृष्टि के आरंभ से लेकर आज तक (1,96,08,53,125 वर्षों से) जब भी नई फसल का आगमन होता है , किसान वर्ग ईश्वर का धन्यवाद करने के लिए विशेष यज्ञ और उत्सव का आयोजन करता रहा है । इस यज्ञ को " शारदीय नवसस्येष्टि „ के नाम से जाना जाता है , जिसमें " नवसस्येष्टि „ का अर्थ है " नवीन फसल (सस्य) का यज्ञ (दृष्टि) । शारदीय का तात्पर्य यह है कि यह यज्ञ शरद ऋतु में आयोजित किया जाता है ।

नवसस्येष्टि : कृषि और आध्यात्मिकता का संगम :

आर्य संस्कृति में यज्ञ को देवपूजा , संगतिकरण और दान का प्रतीक माना जाता है । यज्ञ का उद्देश्य न केवल ईश्वर की पूजा करना है , बल्कि समाज के सभी वर्गों को एकत्रित कर एक दूसरे के प्रति सहयोग और सामंजस्य

Edit with WPS Office

बढ़ाना भी है । दीपावली का यह यज्ञ उसी परंपरा का एक भाग है , जहां किसान अपने खेतों में उगाए गए नए अन्न को यज्ञ -- अग्नि में समर्पित कर उस परमात्मा का धन्यवाद करते हैं , जिसने वर्षा , धूप और मौसम के अनुकूलता के साथ फसल को उगाने और पोषित होने का अवसर दिया । इस यज्ञ में किसान मिलकर सामूहिकता का परिचय देते हैं , साथ ही समाज के गरीब और जरूरतमंद लोगों को अन्न का दान देकर इस पर्व की यज्ञीय परंपरा को सार्थक बनाते हैं ।

दीपावली का वास्तविक स्वरूप और प्राचीनता :

आज के समय में दीपावली को किसी विशेष घटना से जोड़कर मनाया जाता है , परंतु सत्य यह है कि यह पर्व प्रकृति के साथ मानव के संबंध का उत्सव है । वाल्मीकि रामायण के अनुसार श्री रामचंद्र जी का अयोध्या लौटना चैत्र माह (मार्च - अप्रैल) में हुआ था , जो दीपावली के समय से बिल्कुल अलग है । अतः दीपावली को श्री राम की वापसी से जोड़ना एक गलत धारणा है ।

दीपावली का वास्तविक महत्व प्रकृति और कृषि से जुड़ा हुआ है । यह एक ऐसा पर्व है जो न केवल हमारे पूर्वजों द्वारा मनाया जाता रहा है , बल्कि हमारी सभ्यता के साथ ही इसकी परंपरा भी चली आ रही है । यह पर्व किसानों का , फसल का , और प्रकृति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का है । हमें दीपावली को इसके वास्तविक स्वरूप में समझकर मनाना चाहिए और अपने अन्नदाता , प्रकृति , का धन्यवाद अर्पित करना चाहिए । दीपावली का वास्तविक महत्व समझना और उसे एक कृषि पर्व के रूप में मनाना , हमारी संस्कृति की गहराई और सनातन सभ्यता की जड़ों से जुड़ने का एक प्रयास है । यह पर्व किसी धर्म , व्यक्ति या घटना का नहीं , बल्कि प्रकृति के साथ हमारे संबंध और फसल की उपज का उत्सव है । हमें अपने सांस्कृतिक मूल्यों की ओर लौटते हुए दीपावली के इसमूल स्वरूप को अपनाना चाहिए और प्रकृति का आदर करते हुए सामूहिकता और दान का संदेश फैलाना चाहिए ।

Edit with WPS Office

2. ।। होली ।।

वसंत ऋतु के आगमन पर फाल्गुन मास की पूर्णिमा को मनाया जाने वाला होली का पर्व अपनी प्राचीनता और सांस्कृतिक गरिमा के कारण अत्यंत महत्वपूर्ण है । इसका वैदिक नाम " वासंती नवसस्येष्टि „ है , जिसका अर्थ है वसंत ऋतु के नए अन्न से किया गया यज्ञ । इस पर्व को अनाज की नई फसल के यज्ञ और समाज में भाईचारे की भावना को बढ़ावा देने के लिए मनाया जाता है । समय के साथ इस पर्व को कई तरह के मिथकों से जोड़ दिया गया है , जबकि इसका वास्तविक स्वरूप प्रकृति , यज्ञ , और सामाजिक समरसता में निहित है ।

वासंती नवसस्येष्टि : प्रकृति के सौंदर्य का प्रतीक :

वसंत ऋतु भारत की छह ऋतुओं में " ऋतुओं „ के राजा „ के रूप में प्रतिष्ठित हैं । इस समय मै शीत ऋतु का समापन हो जाता है , और चारों ओर हरियाली , खिलते फूल और सुगंध से भरा वातावरण होता है । ऐसा प्रतीत होता है कि यह ऋतु अपने आगमन पर प्रकृति का विशेष श्रृंगार है । फूलों से सजे वृक्ष जैसे यह संदेश देते हैं कि जीवन में नई ऊर्जा और उमंग लाएं । इस रंग-बिरंगे मौसम का संदेश है कि जीवन को भी प्रकृति की तरह विभिन्न सात्विक रंगों से संजोए , जिससे जीवन आकर्षक , आनंदमय और प्रेरणादायी बने । वैदिक परंपरा में होली के रंगों का उद्देश्य केवल रंग रंगीन होना नहीं था , बल्कि जीवन में विभिन्न रंगों की उपस्थिति का अभ्यास कराना था । रंग हमारे जीवन की विभिन्न अवस्थाओं का प्रतीक है , जैसे बचपन की निर्दोषता , युवावस्था की ऊर्जा , और वृद्धावस्था की शांति । समाज में सामूहिकता का उत्सव मनाने का यह पर्व हमें पुराने वैमनस्य को भुलाकर नए , सौहार्दपूर्ण संबंधों की शुरुआत करने का संदेश देता है । इसके पीछे यह विचार था कि मनुष्य को जीवन की सभी अवस्थाओं में धर्म , सत्य , और विवेक के मार्ग पर चलना चाहिए ।

नव वर्ष और नव संवत्सर का स्वागत :

होली का पर्व पुराने संवत्सर को विदाई और नए संवत्सर के स्वागत का

Edit with WPS Office

प्रतीक भी है । चैत्र मास की कृष्ण प्रतिपादन से नए वैदिक वर्ष का प्रारंभ होता है , और प्रकृति अपने रंग - बिरंगे पुष्पों से सजकर इसका स्वागत करती है । यह मान्यता है कि इस दिन वातावरण के साथ-साथ वायुमंडल भी खुशियों और सौहार्द की ऊर्जा से भर जाता है । प्रकृति के इस नैसर्गिक यज्ञ का प्रतीक वैदिक यज्ञों में भी देखा जा सकता है । इन यज्ञों से वातावरण शुद्ध और सुगंधित होता है , जो होली के पर्व में उल्लास , प्रसन्नता और आनंद का संचार करता है ।

होली का वास्तविक अर्थ और वैदिक संदर्भ :

होली के नाम की उत्पत्ति " **होलक** „ शब्द से हुई है , जिसका अर्थ है " **अधपका अनाज** „ वैदिक संदर्भों में यह पर्व न केवल नए अन्न का स्वागत करता है , बल्कि उस अनाज को सबसे पहले देवताओं को अर्पण कर आभार प्रकट करने की परंपरा है । वेदों में कहा गया है " **अग्निवै देवानाम मुखं** „ अर्थात अग्नि देवताओं और पितरों का मुख है । नई फसल के अन्न को अग्नि में समर्पित कर इसे देवताओं को अर्पण किया जाता है ताकि उसके प्रसाद के रूप में सबको समृद्धि और आनंद प्राप्त हो ।

होलिका दहन का वास्तविक प्रतीकात्मक अर्थ :

आज होलिका दहन को लेकर समाज में कई भ्रांतियां है । कुछ लोगों ने इसे पौराणिक कथाओं और मिथकों से जोड़ दिया गया है , जिसमें होलिका को जिंदा जलाने की कथा लोकप्रिय है । वैदिक दृष्टिकोण से होलिका दहन का वास्तविक अर्थ किसी व्यक्ति विशेष का दामन नहीं , बल्कि एक प्रकार का कृषि अनुष्ठान है । होलिका किसी स्त्री को जलाने का प्रतीक नहीं है , बल्कि अनाज के ऊपर की परत , यानी वह आवरण है जो नए अन्न को संरक्षित करता है । जब नए चने , मटर , जौं आदि को भूना जाता है तो उनकी ऊपरी परत , जिसे होलिका कहते हैं , जल जाती है और भीतर का अन्न बच जाता है । यह प्रक्रिया प्रकृति के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने का एक रूप है ।

होली का नाम और यज्ञ परंपरा :

यह पर्व का एक और नाम " होलिकोत्सव „ है और इस उत्सव का मुख्य

Edit with WPS Office

उद्देश्य नवान्न यज्ञ करना है । बसंत ऋतु में पकने वाली फसल को सबसे पहले अग्निदेव को अर्पित किया जाता है , जिसे नवसस्येष्टि कहा जाता है । होली का वैदिक स्वरुप इस बात का प्रतीक है कि नई फसल को पहले देवताओं को समर्पित करने की परंपरा से समाज में आस्था और सामूहिकता की भावना का संचार होता है । चारों वर्णों के लोग मिलकर इस यज्ञ को आयोजित करते हैं , और इसके माध्यम से सामूहिकता , सामाजिकता और वैदिक मर्यादाओं को बनाए रखने का प्रयास करते हैं ।

होली का वैज्ञानिक और सांस्कृतिक महत्व :

" ऋतु सन्धिषु रोगा जायन्ते „ अर्थात ऋतुओं के परिवर्तन के समय रोगों का आगमन होता है । ऐसे में ऋतु परिवर्तन के दौरान यज्ञ करने से वातावरण में शुद्धि होती है और रोग निवारण का अवसर मिलता है । होली का यह अनुष्ठान हेमंत और वसंत ऋतु के संधिकाल में आता है , जिससे रोग और नकरात्मक ऊर्जा दूर होती हैं । इस यज्ञ में तिल , मूंग , जड़ी - बूटियों आदि का उपयोग कर न केवल पर्यावरण शुद्ध किया जाता है बल्कि इसके धुएं में औषधीय गुण भी होते हैं , जो स्वास्थ्य के लिए लाभकारी है ।

पौराणिक और आधुनिक भ्रांतियां :

आज होली को लेकर कई पौराणिक कहानियां प्रचलित है , जिनमें प्रमुख है हिरण्यकश्यप की बहन होलिका और प्रहलाद की कहानी । इसमें कहां गया है कि होलिका को वरदान था कि वह अग्नि में नहीं जलेगी , लेकिन जब वह प्रहलाद के साथ अग्नि में बैठी तो होलिका जल गई और प्रहलाद बच गया । परंतु वैदिक परंपरा में इस कथा का कोई स्थान नहीं है । होली का पर्व वस्तुत: प्राकृतिक और वैदिक अनुष्ठान है , न कि किसी मिथक या पौराणिक कथा का उत्सव ।

हमें चाहिए कि होली का पर्व अपने वास्तविक स्वरूप में मनाए । होलिका दहन एक वैदिक यज्ञ के रूप में किया जाएं , जिसमें शुद्ध , सामग्री का प्रयोग हो । इस यज्ञ में तिल , मूंग , और औषधीय जड़ी - बूटियों का उपयोग कर प्राकृतिक तत्वों का सम्मान करें । होली केवल रंगों का पर्व नहीं , बल्कि

Edit with WPS Office

सामाजिक एकता , सामूहिकता और प्रकृति के प्रति आभार का पर्व है । इसे वैदिक विधियों से मनाने से हम अपनी संस्कृति और परंपराओं को पुनर्जीवित कर सकते हैं ।

3. ।। विजयदशमी ।।

वैदिक सभ्यता के प्रमुख पर्वों में से एक विजयदशमी है , जिसे आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि को मनाया जाता है । यह पर्व समाज की साहसिकता , तेज , शक्ति और क्षत्रिय धर्म का प्रतिनिधित्व करता है । अज्ञानवश इसे श्री राम द्वारा रावण पर विजय प्राप्त करने का प्रतीक माना जाता है , जबकि वास्तव में इस पर्व का श्री राम के लंका विजय से कोई संबंध नहीं है । यह पर्व श्री राम के जन्म से बहुत पहले से आर्य क्षात्रधर्म का प्रतीक रहा है , जो वेदों में स्थापित ब्रह्म और क्षत्र शक्ति के संतुलन और समन्वय को दर्शाता है ।

वैदिक दृष्टि में ब्रह्म और क्षत्र शक्ति का महत्व :

वैदिक साहित्य में ब्रह्म और क्षत्र शक्ति के संयोजन को अत्यधिक महत्व दिया गया है । यजुर्वेद में कहा गया है _____

" यत्र ब्रह्म च क्षत्र च सम्यञ्चौ चरत: सह: । „ यजुर्वेद. 20/25

अर्थात ______ जहां विद्या और पराक्रम का संतुलित सामंजस्य होता है , वहां पुण्य , प्रज्ञा और अग्नि तुल्य तेज और ओज रहता है । यह पर्व इसी समन्वित शक्ति का प्रतीक है , जो समाज को सुरक्षा , ज्ञान और विकास की ओर ले जाती है ।

विजयदशमी का ऐतिहासिक संदर्भ :

वाल्मीकि रामायण के अनुसार , श्री राम के लंका का विजय चैत्र मास में हुई थी , न कि आश्विन मास में । इसलिए विजयदशमी का श्री राम की लंका विजय से कोई संबंध नहीं है । प्राचीन काल में यह पर्व वर्षा ऋतु के अंत के साथ आता था । वर्षा के दौरान तीन से चार महीने तक सैन्य गतिविधियां बंद रहती थी , और रास्ते की कठिनाइयों के कारण सेनाओं का आना -

Edit with WPS Office

जाना भी रुका रहता था । वर्षा के समाप्त होने के साथ ही क्षत्रियों के लिए यह समय अपने शस्त्रों का पुनः निरीक्षण और सफाई करने का था ताकि वह फिर से अपनी युद्ध कौशल को जागृत कर सके ।

शस्त्र पूजन और सार्वजनिक प्रदर्शन :

विजयदशमी पर क्षत्रिय अपने शस्त्रों को साफ कर उन्हें फिर से उपयोग योग्य बनाते थे । इस दिन शस्त्रों का पूजन और प्रदर्शन आयोजित होता था , जिसमें वीर अपनी शस्त्र विधा का सार्वजनिक प्रदर्शन करते थे । राजा की आज्ञा से शस्त्रों की प्रदर्शनी लगाई जाती थी , जहां आम जनता इन वीर योद्धाओं के शौर्य और कौशल का अवलोकन करने के लिए एकत्रित होती थी । यह अवसर एक सामाजिक और सांस्कृतिक आयोजन के रूप में देखा जाता था , जिसमें शौर्य का उत्सव मनाया जाता था और आम जनता को अपनी सुरक्षा और रक्षा के प्रति जागरूक किया जाता था ।

महाभारत में विजयदशमी का उल्लेख :

महाभारत में भी विजयदशमी का आयोजन विस्तार से वर्णित है । औ इसमें उल्लेखित है कि पितामह भीष्म के आदेश पर आचार्य द्रोण ने अपने शिष्यों - कौरव और पांडव - को शस्त्रास्त्र कौशल का प्रदर्शन करने के लिए एकत्रित किया था । यह प्रदर्शन एक सार्वजनिक आयोजन था , जहां शस्त्र विद्या का खुलेआम प्रदर्शन किया गया , जिससे समाज में शौर्य , अनुशासन और कौशल का प्रचार होता था ।

विजयदशमी आर्य जाति के शौर्य , बल और क्षात्रधर्म का अद्वितीय प्रतीक पर्व है । यह ब्रह्म और क्षत्र के संतुलन का प्रतीक है , जो समाज के सुरक्षा और समृद्धि के लिए आवश्यक है । विजयदशमी केवल एक त्यौहार नहीं , बल्कि एक आदर्श है , जो हमें अपने कर्तव्यों की और सजग रहने , अपने कौशल को निखारने और समाज की रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहने का संदेश देता है ।

वैदिक पर्वों का वैज्ञानिक और आध्यात्मिक महत्व : ______

Edit with WPS Office

वैदिक पर्व न केवल धार्मिक भावना को प्रदर्शित करते हैं , बल्कि इनमें गहरी वैज्ञानिक और आध्यात्मिक सोच भी समाहित है । ऋतु परिवर्तन के समय हमारे शरीर और मन में भी परिवर्तन आते हैं , और वैदिक पर्वों के आयोजन का समय इसी अनुसार रखा गया है । यज्ञ और पूजा के माध्यम से पर्यावरण शुद्ध होता है और मन की शुद्धि का भी अवसर मिलता है । इस प्रकार वैदिक पर्व एक संपूर्ण शारीरिक , मानसिक और आध्यात्मिक संतुलन प्रदान करते हैं ।

1. **प्रकृति से सामंजस्य** : वैदिक पर्व प्रकृति के चक्र का सम्मान करते हैं । फसल की बुआई और कटाई के समय किए जाने वाले यज्ञ और उत्सव पर्यावरण के प्रति हमारे कर्तव्यों को याद दिलाते हैं ।
2. **सामाजिक एकता** : इन पर्वों में सामूहिकता का महत्व है । समाज के सभी वर्ग एक साथ मिलकर इन उत्सवों का आनंद लेते हैं , जिससे सामाजिक एकता और सहयोग की भावना बढ़ती है ।
3. **मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य** : ऋतु परिवर्तन के समय शरीर और मन में भी परिवर्तन आते हैं , और इन पर्वों के माध्यम से हमें संतुलन बनाए रखने का अवसर मिलता है । यज्ञों से वातावरण शुद्ध होता है और मानव स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है ।

वैदिक पर्व की प्रासंगिकता :

वैदिक त्यौहार किसी व्यक्ति विशेष के जन्म मृत्यु से संबंधित नहीं है यह प्रकृति से संबंधित है आज के युग में भले ही पर्व का स्वरूप बदल गया हो , लेकिन इनका मूल उद्देश्य अभी भी प्रासंगिक है । वैदिक पर्व हमें याद दिलाते हैं कि हमें प्रकृति का आदर करना चाहिए और उसके प्रति कृतज्ञ रहना चाहिए । वैदिक परंपराओं में निहित पर्यावरण के प्रति सम्मान , समाज में शांति , एकता , और परस्पर सहयोग का भाव आज के समय में भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना वैदिक काल में था । अतः हमें व्यर्थ के आडंबरों से ऊपर उठकर वैदिक त्यौहार को उनके वास्तविक स्वरूप में ही ग्रहण करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 88.वैदिक विज्ञान Vs आधुनिक विज्ञान

मानव सभ्यता के विकास में विज्ञान का योगदान अविस्मरणीय है । विज्ञान ने हमारे जीवन को अनेक रूपों में सरल , सुरक्षित और सुविधाजनक बनाया है । लेकिन , जब हम विज्ञान की बात करते हैं , तो हमारे सामने तो अलग-अलग दृष्टिकोण आते हैं __ एक है आधुनिक विज्ञान और दूसरा है वैदिक विज्ञान । आधुनिक विज्ञान ने केवल 400 - 500 वर्षों में अकल्पनीय प्रगति की है , जबकि वैदिक विज्ञान की जड़ें आदिकाल से जुड़ी है , जिसका ज्ञान अरबो वर्ष पुराना है । इस लेख में , हम इन दोनों विज्ञानों के मूलभूत अंतर और उनकी अनूठी विशेषताओं पर एक गहन दृष्टिकोण से विचार करेंगे । सबसे पहले , आइए " विज्ञान „ शब्द की विवेचना करते हैं और समझते हैं कि क्या विज्ञान और साइंस एक ही है ।

विज्ञान का अर्थ है -- " विशेष ज्ञान „ एक ऐसा ज्ञान जो परमात्मा से लेकर सबसे सूक्ष्म भौतिक तत्वों तक विस्तारित होता है । विज्ञान में केवल भौतिक वस्तुएं नहीं बल्कि चेतन और जड़ का संपूर्ण सृष्टि - विज्ञान समाहित है । इसका उद्देश्य जीवन के हर पहलू , आत्मा , और ब्रह्मांड के रहस्यों को जानना है ।

Edit with WPS Office

इसके विपरीत , **साइंस** केवल उन वस्तुओं का अध्ययन करता है जिन्हें हम अपनी इंद्रियों से अनुभव कर सकते हैं । यह भौतिक जगत की परिधि में सीमित रहता है और चेतना या आत्मा के अध्ययन को स्वीकार नहीं करता । साइंस वस्तुओं के परीक्षण और मापन पर आधारित है , लेकिन वह सृष्टि की सूक्ष्मता गहराइयों को नहीं छू सकता ।

इसलिए , विज्ञान और साइंस दोनों शब्द समान नहीं है । विज्ञान एक संपूर्ण दृष्टिकोण है जो चेतना और अस्तित्व के हर स्तर को समेटे हुए हैं , जबकि साइंस मात्र जड़ तत्वों तक सीमित है ।

वैदिक ऋषियों ने सृष्टि के रहस्यों का अन्वेषण समाधि की अवस्था में ध्यान मग्न होकर किया । उनके लिए किसी भी विशाल बजट , महंगे उपकरण या प्रयोगशालाओं की आवश्यकता नहीं थी । उनके लिए उनका शरीर ही सबसे बड़ी प्रयोगशाला थी , और आत्मा ही सबसे महत्वपूर्ण उपकरण । ध्यान और साधना के माध्यम से , उन्होंने सृष्टि के गूढ़ रहस्यों का अनुभव किया ।

इसके विपरीत , आधुनिक विज्ञान को खोज और शोध के लिए बड़े-बड़े बजट , उपकरण , और लैब की आवश्यकता होती है । इसमें आत्मा और परमात्मा का कोई स्थान नहीं होता । विज्ञान का यह रूप बाहरी यंत्रों पर निर्भर है , जबकि वैदिक विज्ञान में मनुष्य का शरीर ही सबसे बड़ी प्रयोगशाला है , जहां बिना किसी बाहरी संसाधन के सृष्टि के समस्त रहस्यों का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है ।

1. वैदिक विज्ञान और आधुनिक विज्ञान का प्रारंभिक समय

आधुनिक विज्ञान का प्रारंभ लगभग 400 से 500 साल पहले मानी जाती है । यह विज्ञान , परंपरागत रूप से पश्चिमी देशों में विकसित हुआ और विभिन्न वैज्ञानिक प्रयोगों अनुभवों और अवलोकन पर आधारित है परंतु इसकी जड़ें वैदिक शास्त्र ही है । इसकी विशेषता यह है कि यह निष्कर्ष तक

Edit with WPS Office

पहुंचने के लिए एक व्यवस्थित प्रक्रिया का पालन करता है । **उदाहरण** के लिए , न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण के सिद्धांत से लेकर आइंस्टाइन के सापेक्षता सिद्धांत तक , हर सिद्धांत को प्रमाणित करने के लिए प्रयोग और अनुसंधान किए गए ।

इसके विपरीत , वैदिक विज्ञान की उत्पत्ति सृष्टि के आरंभ से है । वैदिक ग्रंथों जैसे ___ वेद , ब्राह्मण ग्रंथ , उपनिषदों और दर्शनों में विज्ञान के विभिन्न सिद्धांतों का उल्लेख सूक्ष्म तथा सूत्र रूप में है । वैदिक विज्ञान को अनुमान , प्रयोग या परीक्षण की आवश्यकता नहीं है ; यह परम सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव है , जिसे ऋषियों ने ध्यान , साधना और आत्म साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त किया । वैसे तो ज्ञान और विज्ञान का मूल स्रोत परमात्मा है इसलिए संसार में जितने भी ज्ञान विज्ञान आज प्रचलित है वहां सब का मूल वेद ही है ।

2. ज्ञान की प्राप्ति का तरीका :

आधुनिक विज्ञान के अनुसार , ज्ञान प्राप्ति के लिए पहले अनुमान लगाया जाता है , फिर प्रयोग और अवलोकन किए जाते हैं ; और अंत में निष्कर्ष निकाला जाता है । **उदाहरण स्वरूप ,** किसी औषधि के प्रभाव को समझने के लिए वैज्ञानिक उसे विभिन्न स्तरों पर परखते हैं , फिर ही उसे मान्यता दी जाती है ।

वैदिक विज्ञान में ज्ञान प्राप्ति का तरीका भिन्न है । यहां अनुमान और परीक्षण के स्थान पर आत्म साक्षात्कार और अनुभव की प्रधानता है । वैदिक विज्ञान को प्राप्त करने के लिए शुद्ध मन , अनुशासन और साधना की आवश्यकता होती है । यह अनुभव आधारित ज्ञान है , जो ध्यान और योग की विधियों से प्राप्त किया जाता है ।

3. ज्ञान का विस्तार और सीमा :

Edit with WPS Office

आधुनिक विज्ञान अपने प्रयोगात्मक संसाधनों तक सीमित है । इसका दायरा सीमित है , क्योंकि इसे ज्ञात सीमाओं के बाहर जाकर प्रयोगों की आवश्यकता होती है । उदाहरण के लिए , वैज्ञानिक जितना शोध और अन्वेषण करेंगे , उनका ज्ञान उतना ही बढ़ेगा , परंतु यह सीमाओं में बंधा रहेगा ।

वैदिक विज्ञान का ज्ञान असीमित माना जाता है । इसमें सूक्ष्म से सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल पदार्थों की जानकारी उपलब्ध है । वैदिक ग्रंथों में आत्मा , परमात्मा , तत्व , और पंचमहाभूतों की विस्तृत जानकारी दी गई है , जो इस बात का प्रमाण है कि वैदिक विज्ञान अपने आप में संपूर्ण औरअसीमित है ।

4. तकनीकी और व्यवहारिक ज्ञान :

आधुनिक विज्ञान में पदार्थों की गहन जानकारी न होने के कारण कई बार तकनीकी खामियां उत्पन्न होती है । उदाहरण के लिए , आधुनिक तकनीकें हमें सुविधा तो देती है , परंतु उनके दुष्परिणाम भी होते हैं , जैसे कि प्रदूषण , स्वास्थ्य समस्याएं , आदि । कई आधुनिक यंत्रों में ऐसे तत्व होते हैं , जिनके बारे में विज्ञान पूर्ण ज्ञान नहीं रखता , जिसके कारण उन पर पूर्णतः विश्वास नहीं किया जा सकता ।

वैदिक विज्ञान में पदार्थों का गहन और संपूर्ण ज्ञान होता है । वैदिक विज्ञान के अनुसार , सभी पदार्थों का मूल स्वरूप और उनकी ऊर्जा के संबंध में जानने का प्रयास किया गया है । इसलिए वैदिक चिकित्सा और आयुर्वेद जैसे क्षेत्रों में बिना किसी दुष्प्रभाव के उपचार की क्षमता है । वैदिक विज्ञान में सभी प्रक्रियाओं का निर्माण प्रकृति के अनुरूप किया गया है , जिससे यह तकनीकी खामियों से बचा रहता है ।

5. भौतिक और चेतन पदार्थों का ज्ञान :

आधुनिक विज्ञान केवल जड़ पदार्थों तक सीमित है । इसका उद्देश्य मुख्यतः

Edit with WPS Office

भौतिक तत्वों का अध्ययन करना है। यह शरीर के अंगों और उनके कार्यों को समझने तक ही सीमित है , आत्मा , चेतना , और जीवन के गहरे रहस्यों पर इसका कोई ध्यान नहीं होता।
वैदिक विज्ञान में चेतन और जड़ , दोनों प्रकार के पदार्थों का अध्ययन किया जाता है। यह शरीर के साथ-साथ आत्मा ,मन , और चेतना के रहस्यों को भी उजागर करता है। यही कारण है की वैदिक विज्ञान में योग , ध्यान , और आध्यात्मिक साधना का विशेष महत्व है। यह विज्ञान मानव को संपूर्ण रूप से जानने की क्षमता प्रदान करता है , जो आधुनिक विज्ञान में संभव नहीं है।

6. स्वास्थ्य देखभाल और उपचार का दृष्टिकोण :

आधुनिक विज्ञान स्वास्थ्य रक्षा के लिए महंगे उपचारों , दवाइयों और तकनीकों का सहारा लेता है। इससे स्वास्थ्य सेवाएं आम लोगों के पहुंच से दूर हो जाती है। स्वास्थ्य सेवाओं में अत्यधिक खर्च होता है , जो गरीब और साधारण वर्ग के लिए एक बड़ी चुनौती है।

वैदिक विज्ञान के अनुसार स्वास्थ्य रक्षा में शुद्धता , पवित्रता , और प्राकृतिक तत्वों का उपयोग किया जाता है। आयुर्वेद जैसे चिकित्सा पद्धति में जड़ी - बूटियों और प्राकृतिक तत्वों का प्रयोग होता है , जो सस्ती और सुरक्षित होते हैं। यह विज्ञान न केवल शरीर बल्कि मन और आत्मा को भी स्वस्थ बनाने में सहायक है।

7. प्रश्नों का उत्तर देने की क्षमता :

आधुनिक विज्ञान " कैसे „ का उत्तर तो दे सकता है , लेकिन " क्यों „ " किसके लिए „ और " कौन „ जैसे प्रश्नों का उत्तर नहीं देता। उदाहरण के लिए , विज्ञान बता सकता है कि शरीर में विभिन्न प्रक्रियाएं कैसे काम करती हैं , परंतु क्यों और किस उद्देश्य से वे ऐसा करती हैं , इसका उत्तर नहीं दे सकता।

Edit with WPS Office

वैदिक विज्ञान में " कैसे „ के साथ-साथ " क्यों „ " किसके लिए „ और " कौन „ जैसे प्रश्नों का भी उत्तर मिलता है । वैदिक ग्रंथों में इन गूढ़ प्रश्नों के उत्तर आत्मा , परमात्मा , और जीवन के उद्देश्य में खोजे जाते हैं । वैदिक विज्ञान जीवन के उद्देश्य और सृष्टि के रहस्यों को समझने का माध्यम है ।

8. समाज और वैश्विक समस्याओं का समाधान :

आधुनिक विज्ञान व्यक्तिगत , सामाजिक , राष्ट्रीय और वैश्विक समस्याओं का समाधान करने में सक्षम नहीं है । विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ आज पर्यावरण , सामाजिक असमानता , और अन्य अनेक समस्याएं उत्पन्न हो रही है । इनका समाधान आधुनिक विज्ञान नहीं दे पा रहा है ।

वैदिक विज्ञान में इन सभी समस्याओं का समाधान निहित है । यह एक संपूर्ण जीवन शैली है , जो व्यक्ति को समाज और प्रकृति के साथ सामंजस्य मैं जीने की प्रेरणा देती है । वैदिक विज्ञान में पर्यावरण संतुलन , सामाजिक , समर सत्ता , और सहायक हो सकते हैं ।

9. विनाश की और बढ़ता संसार और वैदिक विज्ञान की भूमिका :

आज के युग में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अंधाधुंध प्रयोग के कारण संसार विनाश की ओर बढ़ रहा है । परमाणु बम , प्रदूषण , जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं इस बात का संकेत है की अगर यही गति बनी रही , तो धरती का भविष्य संकट में है ।

वैदिक विज्ञान का मानना है कि संसार को बचाया जा सकता है यदि हम प्राकृतिक संसाधनों का सम्मान करें और वैदिक जीवन शैली अपनाएं । वैदिक विज्ञान का उद्देश्य मानवता को विनाश से बचाना और उन्हें सृष्टि के साथ संतुलन में रखना है ।

Edit with WPS Office

निष्कर्ष : वैदिक विज्ञान और आधुनिक विज्ञान के मध्य मूलभूत अंतर यह है कि वैदिक विज्ञान में जड़ और चेतन दोनों का समन्वय है , जो संपूर्ण सृष्टि और प्रकृति के कल्याण को केंद्र में रखता है । महाभारत काल तक वैदिक विज्ञान अत्यधिक उन्नत था , जिसमें हर आविष्कार प्रकृति के संतुलन और सृष्टि के नियमों का पालन करते हुए किए जाते थे । आज की आवश्यकता है कि हम वैदिक विज्ञान की उन उन्नत तकनीकों को पुनः स्थापित करें और उस समग्र दृष्टिकोण को पुनः अपनाएं , जिससे न केवल भौतिक प्रगति हो , बल्कि सृष्टि का भी संरक्षण हो । इसके लिए सरकार और समाज दोनों को वैदिक विज्ञान के क्षेत्र में शोध और अनुसंधान को बढ़ावा देना होगा , जिससे भविष्य में एक संतुलित और कल्याणकारी विश्व की स्थापना हो सके ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 89. भारतीय दर्शन

" **दर्शन** „ शब्द का मूल अर्थ "**देखना** „ "**साक्षात्कार** „ या **अवलोकन करना** „ है । इसे " **दृश** „ धातु से व्युत्पन्न किया गया है । यह शब्द अनुभवजन्य और आंतरिक जागरूकता पर आधारित है । वैदिक परंपरा में , दर्शन का अर्थ केवल बौद्धिक ज्ञान नहीं है , बल्कि एक ऐसी प्रणाली है , जो आत्मा , **ब्रह्म ,** और परम सत्य के अनुभव और साक्षात्कार के माध्यम से जीवन के अंतिम सत्य को समझने का प्रयास करता है । दर्शन में ध्यान , योग , और साधना का महत्व है । इसका उद्देश्य न केवल सैद्धांतिक ज्ञान प्राप्त करना है , बल्कि आत्म साक्षात्कार , , और आत्मा की शुद्धि के लिए एक मार्गदर्शन प्रदान करना है । भारतीय दर्शन का मुख्य लक्ष्य जीवन के अंतिम सत्य की

Edit with WPS Office

अनुभूति और मुक्ति (मोक्ष) प्राप्त करना है । "**दृश्यतेहानेति दर्शनम् „** का अभिप्राय यह है कि जिसके माध्यम से सत् और असत् वस्तुओं का साक्षात्कार हो सके । यह वह साधन है जिसके द्वारा विभिन्न दृष्टिकोणों से किसी वस्तु का वास्तविक ज्ञान और यथार्थ बोध प्राप्त किया जाता है । दर्शन एक ऐसा माध्यम है जो सत्य और असत्य , दोनों के अंतर को स्पष्ट करता है और गहन चिंतन द्वारा वस्तुओं की सटीक और समग्र समझ प्रदान करता है ।

Philosophy „ शब्द ग्रीक शब्दों " phillo „ (प्रेम) और " Sophia „ (ज्ञान) से मिलकर बना है , जिसका शाब्दिक अर्थ है " ज्ञान का प्रेम „ या " बुद्धि का प्रेम „ । पश्चिमी परंपरा में , philosophy बौद्धिक और तर्क संगत विश्लेषण पर आधारित है । इसका उद्देश्य अस्तित्व , ज्ञान , नैतिकता , तर्क और मानव जीवन के उद्देश्य के बारे में गहन विचार करना है । Philosophy मुख्यतः तर्क , प्रश्न और विश्लेषण के माध्यम से सत्य की खोज करती है । यह एक सैद्धांतिक प्रणाली है जो विचारों के तार्किक विश्लेषण और आलोचना पर केंद्रित है ।

भारतीय और पाश्चात्य दर्शन के बीच के अंतर को समझने के लिए एक तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है , जो इस प्रकार है ;

1. सैद्धांतिक बनाम व्यावहारिक दृष्टिकोण :

- **पाश्चात्य दर्शन** : यह सैद्धांतिक दृष्टिकोण पर आधारित है । पश्चिमी दार्शनिकों का दर्शन आश्चर्य और जिज्ञासा से उत्पन्न हुआ है । वे विश्व , ईश्वर , और आत्मा के रहस्यों को समझने की जिज्ञासा के चलते चिंतन करते हैं । यहां दर्शन का उद्देश्य मात्र ज्ञान की प्राप्ति है ; यह एक अंत के रूप में देखा जाता है , न कि किसी अन्य उद्देश्य के साधन के रूप में ।

- **भारतीय दर्शन** : इसके विपरीत , भारतीय दर्शन व्यावहारिक है

Edit with WPS Office

और जीवन के दुखों से मुक्ति पाने के उपाय के रूप में विकसित हुआ है । भारतीय दार्शनिक जीवन में उपस्थित दुखों के समाधान के लिए दर्शन का आश्रय लेते हैं । प्रो. मैक्समूलर ने कहा है „ भारत में दर्शन का अध्ययन केवल ज्ञान के लिए नहीं , बल्कि जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए किया गया है । „ इस प्रकार , भारतीय दर्शन को एक साधन के रूप में देखा जाता है , जो मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रदान करता है ।

2. तार्किक बनाम धार्मिक दृष्टिकोण :

- **पाश्चात्य दर्शन** : इसे तार्किक दृष्टिकोण वाला कहा जा सकता है , क्योंकि यहां के दार्शनिकों ने तार्किक विधियों को अपनाया है । पाश्चात्य दर्शन में बुद्धि और तर्क का इतना प्रभाव है की दर्शन और धर्म को अलग-अलग या विरोधी के रूप में देखा गया है । पश्चिमी दर्शन ने धर्म के प्रभाव को नगण्य रखा है ।
- **भारतीय दर्शन** : भारतीय दर्शन पर धर्म की गहरी छाप है । यह धार्मिक दृष्टिकोण को अपनाता है , क्योंकि दर्शन और धर्म दोनों का उद्देश्य मोक्ष प्राप्त करना है । धर्म के साथ निकट संबंध होने के कारण भारतीय दर्शन में आत्म संयम , धर्म सम्मत आचरण और आध्यात्मिक अनुशासन पर विशेष बल दिया गया है ।

3. बौद्धिक बनाम आध्यात्मिक ज्ञान :

- **पाश्चात्य दर्शन** : पश्चिमी दर्शन मुख्यतः बौद्धिक हैं और तर्क पर आधारित है । पाश्चात्य दार्शनिकों का मानना है कि बुद्धि के माध्यम से सत्य का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है । यह ज्ञान विश्लेषण और बौद्धिक विवेचना के आधार पर होता है , जिसे परोक्ष ज्ञान कहा जाता है । प्लेटो , अरस्तु , डेमोक्रेट्स , डेकार्ट , और हीगल जैसे दार्शनिकों ने बुद्धि को ही सर्वोच्च माना है ।

Edit with WPS Office

- **भारतीय दर्शन** : इसके विपरीत , भारतीय दर्शन आध्यात्मिकता पर आधारित है । यहां आध्यात्मिक अनुभव और ज्ञान को प्राथमिकता दी गई है । भारतीय दर्शन सत्य के केवल सैद्धांतिक विवेचन से संतुष्ट नहीं होता , बल्कि वह सत्य की प्रत्यक्ष अनुभूति को सर्वोपरि मानता है । यह मानता है कि आध्यात्मिक ज्ञान तार्किक ज्ञान से उच्च हैं , क्योंकि यह ज्ञाता और ज्ञेय के द्वैत को समाप्त कर देता है ।

4. विश्लेषणात्मक बनाम संश्लेषणात्मक दृष्टिकोण :

- **पाश्चात्य दर्शन** : पश्चिमी दर्शन विश्लेषणात्मक है । वहां दर्शन की विभिन्न शाखाओं जैसे तत्वज्ञान (Metaphysics) , नीति विज्ञान (Ethics) , प्रमाण विज्ञान (Epistemology) , ईश्वर विज्ञान और सौंदर्य शास्त्र की व्याख्या अलग-अलग की जाती है । प्रत्येक क्षेत्र का अलग विश्लेषण किया जाता है ।

- **भारतीय दर्शन** : इसके विपरीत , भारतीय दर्शन में एक संश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है । यहां प्रत्येक दर्शन में प्रमाण विज्ञान , तर्क विज्ञान , नीति विज्ञान , और ईश्वर विज्ञान आदि पर एक समग्र दृष्टिकोण से विचार किया गया है । भारतीय दर्शन संश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पर आधारित है ।

5. इह - लोक बनाम परलोक दृष्टिकोण :

पाश्चात्य दर्शन : पश्चिमी दर्शन मुख्यतः इह - लोक (This- word) या भौतिक संसार की सत्ता को मानता है । यह इस लोक की सच्चाई और अनुभव को प्राथमिकता देता है और जीवन के यथार्थ पर केंद्रित रहता है ।

भारतीय दर्शन : इसके विपरीत , भारतीय दर्शन इह - लोक के साथ-साथ परलोक (Other - word) में भी विश्वास करता है । भारतीय दार्शनिकों के अनुसार , इस संसार के परे भी एक दिव्य और शाश्वत सत्य है ,

Edit with WPS Office

जिसे आत्मज्ञान और साधना द्वारा अनुभव किया जा सकता है ।

अतः **Philosophy** और दर्शन एक नहीं है उनमें सैद्धांतिक तथा व्यवहारिक मतभेद स्पष्ट रूप से देखे जा सकते हैं इन दोनों परंपराओं के अध्ययन से स्पष्ट है कि जहां पाश्चात्य दर्शन तर्क बुद्धि और विश्लेषण पर आधारित है , वहीं भारतीय दर्शन का आधार आध्यात्मिकता अनुभव और मोक्ष की प्राप्ति है । दोनों दृष्टिकोण सत्य की खोज में सहायक है , परंतु उनके मार्ग और उद्देश्य अलग-अलग है ।

भारतीय दर्शन मुख्यतः आत्मज्ञान और मोक्ष प्राप्ति के मार्ग की खोज के लिए विकसित हुआ है । इसे दो मुख्य श्रेणियां में विभाजित किया गया है ; **आस्तिक दर्शन (जो वेदों को मान्यता देते हैं)** और **नास्तिक दर्शन (जो वेदों को नहीं मान्यता देते)** इन दोनों में कुल मिलाकर अनेक दर्शनों की शाखाएं हैं , जो एक दूसरे से भिन्न होने के पश्चात भी , जीवन के विभिन्न पहलुओं पर गहन विचार प्रस्तुत करते हैं ।

___{ आस्तिक दर्शन (वेदों को मानने वाले दर्शन }___

इन दर्शनों को षड्दर्शन भी कहा जाता है , क्योंकि वेदों के आधार पर छह प्रमुख दर्शनों का विकास हुआ ;

1. सांख्य दर्शन

भारतीय दर्शनशास्त्र के प्राचीनतम और महत्वपूर्ण दर्शनों में से एक है । इसे महर्षि कपिल मुनि द्वारा स्थापित किया हुआ माना जाता है । सांख्य दर्शन में सृष्टि , प्रकृति , और आत्मा के तत्वों की व्याख्या द्वैत के सिद्धांत के आधार पर की गई है । " सांख्य „ शब्द का अर्थ है -- " संख्या „ या " गणना „ और

Edit with WPS Office

यह दर्शन सृष्टि के विभिन्न तत्वों को संख्यात्मक रूप से विश्लेषित करता है ।

सांख्य दर्शन की मुख्य विशेषताएं :

प्रकृति और पुरुष का द्वैत :

- ★ सांख्य दर्शन प्रकृति (प्रकृति) और पुरुष (आत्मा) के द्वैत (Dualism) को मानता है ।
- ★ प्रकृति जड़ है और उसमें चेतन नहीं है ; यह संसार के सभी भौतिक तत्वों की जननी है ।
- ★ पुरुष चेतन है और साक्षी रूप में है , जो प्रकृति से भिन्न और स्वतंत्र है । पुरुष स्वयं कोई क्रिया नहीं करता , वह मात्र अनुभव करता है ।
- ★ सृष्टि का निर्माण प्रकृति और पुरुष के संयोग से होता है । जब पुरुष प्रकृति से पृथक होता है , तब मुक्ति या मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

2. प्रकृति के तीन गुण :

- ★ सत्व : यह शुद्ध , हल्का और ज्ञानमय है ।
- ★ रजस् : यह गति और क्रियाशीलता का प्रतीक है ।
- ★ तमस् : यह जड़ता , अज्ञान , और स्थिरता का गुण है ।

- o इन तीन गुणों के संयोग और विक्षोभ से ही सृष्टि का विकास होता है । जब यह गुण संतुलित होते हैं , तब प्रकृति अप्रकट रहती है , और जब इनमें असंतुलन उत्पन्न होता है , तब सृष्टि का विस्तार होता है ।

3. तत्वों का विकास :

- o प्रकृति के 24 मूल तत्व है ये तत्व प्रकृति से विकसित होते हैं और इस क्रम में आते हैं । पुरुष 25 वा तत्व है ;

Edit with WPS Office

★ मूल प्रकृति : सत्व , रजस् और तमस् ।

★ महतत्व (बुद्धि) : प्रकृति से पहला तत्व बुद्धि या महतत्व उत्पन्न होता है ।

★ अहंकार : इसके बाद अहंकार , जो व्यक्तित्व और पहचान का स्रोत है ।

★ मन और इंद्रियों : अहंकार से मन , पांच ज्ञानेंद्रियां (श्रोत्र , त्वक , चक्षु , रसना , घाण) और पांच कर्मेंद्रियां (वाक् , पाणि , पाद ,पाय ,उपस्थ) उत्पन्न होती है ।

★ पंचमहाभूत : पृथ्वी , जल , अग्नि , वायु , और आकाश (पंचमहाभूत) का विकास भी अंहकार से होता है ।

★ पांचतन्मात्राएं : इन पंच महाभूतो के सूक्ष्म रूप पांचतन्मात्राएं होती हैं -- शब्द , स्पर्श , रूप , रस , और गन्ध ।

4. अविधा और मोक्ष :

o सांख्य दर्शन के अनुसार , संसार के दुखों का कारण अविद्या (अज्ञान) है , जो पुरुष और प्रकृति के बीच भेद को न पहचानने से उत्पन्न होती है ।

o जब पुरुष स्वयं को प्रकृति के प्रभाव से मुक्त कर लेता है और अपनी वास्तविकता का बोध कर लेता है , तब मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

o मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान और विवेक की आवश्यकता होती है , जो पुरुष और प्रकृति के भेद को समझने में सहायता करता है ।

5. साख्य में ईश्वर का अभाव :

o सांख्य दर्शन को लेकर समाज में एक भ्रांति यहां भी फैलाई गई है कि यहां नास्तिक दर्शन है क्योंकि इसमें ईश्वर का अस्तित्व नहीं है परंतु यह पूर्ण रूप से मिथ्या एवं भ्रामक है । सांख्य दर्शन में ईश्वर का विशेष स्थान है । सांख्य दर्शन में "पुरुष „ शब्द की भी गलत व्याख्या की गई है । इस शब्द के प्रयोग को लेकर भ्रम उत्पन्न हुआ है । परमात्मा को सर्वत्र पूर्ण होने के कारण "पुरुष „ कहां जाता है ,

Edit with WPS Office

जबकि जीवात्मा को भी , शरीर में स्थित होने के कारण , पुरुष कहा जाता है । (निरुक्त. 2.3) में "अंतर पुरुष शब्द का प्रयोग परमात्मा और जीवात्मा के भेद को स्पष्ट करने के लिए किया गया है , जबकि योग दर्शन में "पुरुष विशेष „ शब्द का प्रयोग इसी भिन्नता को दिखाने के लिए हुआ है । सांख्य दर्शन में "पुरुष „ शब्द से कहां परमेश्वर और कहां जीवात्मा का आशय है , इसका सही विवेचन विद्वान लोग ही कर सकते हैं । साख्य का मानना है की सृष्टि और मुक्ति के सिद्धांतों को समझने के लिए प्रकृति और पुरुष के सिद्धांत पर्याप्त है । अतः सांख्य दर्शन एक आस्तिक दर्शन है ।

सांख्य दर्शन भारतीय दर्शन की एक वैज्ञानिक और तार्किक प्रणाली है जो सृष्टि , आत्मा , और मोक्ष के संबंध में गहन दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है । इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति को यह समझाना है कि कैसे आत्मा पुरुष) स्वयं को प्रकृति के बंधनों से मुक्त कर सकती है और मोक्ष प्राप्त कर सकती है ।

2. योग दर्शन

योग दर्शन जिसे महर्षि पतंजलि ने रचा है , भारतीय दर्शन की एक महत्वपूर्ण शाखा है , जिसमें ईश्वर , जीवात्मा , और प्रकृति के स्वरूप को स्पष्ट रूप से समझाया गया है । यह दर्शन मुख्यतः मन , आत्मा , और मोक्ष की प्राप्ति के उपायों पर केंद्रित है । सांख्य दर्शन और योग दर्शन के सिद्धांतों में गहरी समानता पाई जाती है , लेकिन योग दर्शन में ईश्वर और मोक्ष के संबंध में ईश्वर और मोक्ष के संबंध में अधिक विस्तार से चर्चा की गई है । इसमें वैदिक उपासना पद्धति और योग साधना के विशिष्ट अंगों का वर्णन मिलता है । महर्षि पतंजलि ने योग के आठ अंगों को यम (संयम) , नियम (पालन) , आसन (मुद्रा) , प्राणायाम (श्वास) , प्रत्याहार (वापसी) , धारणा (एकाग्रता) , ध्यान (ध्यान) और समाधि (अवशोषण) के रूप में परिभाषित किया ।

योग दर्शन की मुख्य विशेषताएं :

Edit with WPS Office

- योग दर्शन में यह बताया गया है कि योग क्या है , जीवात्मा के बंधन के कारण क्या है , और मोक्ष की प्राप्ति के लिए कौन-कौन से उपाय किए जाने चाहिए । इसके अतिरिक्त , इसमें योग साधक की विभिन्न अवस्थाएं , शक्तियां (विभूतियां) , और मन की वृतियों के बारे में भी विस्तृत जानकारी दी गई है ।
- यह दर्शन मन और चित्तवृत्तियों के निरोध के उपायों का वर्णन करता है और बताता है कि किस प्रकार से मन का पुरुष (आत्मा) के साथ संबंध रहता है और उसे कैसे समाप्त किया जा सकता है ।

यथार्थ उपासना और योग :
वर्तमान समय में समाज में उपासना पद्धतियों के नाम पर कई पाखंड और परस्पर विरोधी परंपराएं प्रचलित है , जो योग दर्शन के सिद्धांतों के अनुरूप नहीं है । देवी - देवताओं की प्रतिमा की पूजा , देवी जागरण , कब्रों की पूजा , ईश्वर का ऊंची आवाज में आहान करना , और घंटा घड़ियाल बजाकर की जाने वाली उपासना आदि को योग दर्शन में अस्वीकार किया गया है ।

योग दर्शन का मानना है कि यह सभी प्रथाएं योग से भटक चुकी है और ईश्वर की सच्ची उपासना से दूर है । परमेश्वर के श्रेष्ठ एवं सत्य नाम " ओम् (प्रणव) का जाप न करके अन्य नामों से की जाने वाली स्तुति प्रार्थना और उपासना अपूर्ण मानी गई है ।

आंतरिक उपासना और ध्यान :
योग दर्शन के अनुसार , परमेश्वर का ध्यान बाहरी वस्तुओं पर नहीं , बल्कि आंतरिक रूप से होता है । जब तक इंद्रियां भारी वस्तुओं की ओर आकर्षित होती है , तब तक परमेश्वर का सच्चा ध्यान संभव नहीं है । इसलिए , ईश्वर की सच्ची भक्ति और उपासना के लिए योग दर्शन एक अनुपम और प्रामाणिक मार्गदर्शक है ।

योग दर्शन पर महर्षि व्यास का प्राचीन और प्रामाणिक भाष्य उपलब्ध है ,

Edit with WPS Office

जो योग के सिद्धांतों और उसके और गूढ़ तत्वों को समझने में सहायक है । यह भाष्य योग साधना की गहराई और उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत है । योग दर्शन एक ऐसा शास्त्र है , जो आंतरिक साधना और ईश्वर की सच्ची उपासना के मार्ग का सटीक और वैज्ञानिक ढंग से प्रतिपादन करता है , और जो व्यक्ति मोक्ष प्राप्ति की आकांक्षा रखते हैं उनके लिए यह एक उत्कृष्ट साधना पद्धति है ।

3. वैशेषिक दर्शन

वैशेषिक दर्शन , महर्षि कणाद द्वारा रचित , भारतीय दर्शन की एक प्राचीन और महत्वपूर्ण शाखा है , जिसमें धर्म के वास्तविक स्वरूप का वर्णन किया गया है । इस दर्शन में धर्म को सांसारिक उन्नति और परम श्रेयस (मोक्ष) की प्राप्ति का साधन माना गया है । इसलिए , मानव कल्याण और पुरुषार्थ चतुष्टय (धर्म अर्थ काम मोक्ष) की सिद्धि के लिए धर्म का पालन आवश्यक माना गया है ।

धर्म का वास्तविक स्वरूप :
इस दर्शन केअनुसार , धर्म का सही रूप समझने से ही संसार में फैलें बाहरी आडम्बरो और मतभेदों का समाधान हो सकता है । वैशेषिक दर्शन का मानना है कि धर्म के सत्य स्वरूप को समझे बिना जो लोग धर्म के नाम पर बाहरी दिखावे और पाखंड फैला रहे हैं , पारस्परिक विद्वेष और भ्रम का शिकार हैं । धर्म के वास्तविक रूप का अनुसरण करने से इन समस्याओं का समाधान संभव है ।

पदार्थ और मोक्ष प्राप्ति :
वैशेषिक दर्शन में द्रव्य , गुण ,कर्म , सामान्य , विशेष और समवाय ___ इन छह पदार्थों का विश्लेषण किया गया है । इनके साधर्म्य (समानता) और वैधर्म्य (असमानता) के ज्ञान द्वारा मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग बताया गया है । यह एक विशिष्ट ज्ञान प्रणाली है जो पदार्थों के गुणों और उनके संबंधों को स्पष्ट करती है । इस ज्ञान को न जानने से अनेक भ्रान्तियां उत्पन्न होती है

Edit with WPS Office

और वेदों एवं शास्त्रों को सही तरीके से समझना कठिन हो जाता है ।

साधम्र्य - वैधर्म्य की भूमिका :

इस दर्शन में साधम्र्य - वैधर्म्य की पद्धति महत्वपूर्ण है । यह पदार्थों के गुणों और भेदों के आधार पर उनके सही स्वरूप का विश्लेषण करती है । उदाहरण के लिए , यदि कोई नवीन वेदांती अद्वैतवाद सिद्ध करने के लिए कहें कि " जीव और ब्रहम एक ही है क्योंकि दोनों चेतन है , " तो इस तर्क का खंडन वैशेषिक दर्शन के साधम्र्य - वैधर्म्य है सिद्धांत से किया जा सकता है ।

यद्यपि जीव और ब्रह्म दोनों चेतन है , परंतु उनके विशेष धर्मों में अंतर है , जो उन्हें दिन भिन्न बनाता है । जैसे चार पैर होने से गाय और भैंस एक नहीं हो जाती , वैसे ही ब्रह्म और जीव के गुण भी उन्हें अलग-अलग परिभाषित करते हैं । ब्रह्म सर्वव्यापक , सर्वज्ञ , और सृष्टिकर्ता है , जबकि जीव , सीमित , अल्पज्ञ और भोक्ता हैं ।

प्रकृति और पंचमहाभूत :

वैशेषिक दर्शन में प्रकृति और पंच महाभूतो (पृथ्वी जल अग्नि वायु और आकाश) के भेद भी उनके विशेष गुणों के आधार पर समझाएं गए हैं । प्रत्येक तत्व का विशिष्ट धर्म उसे अन्य से भिन्न बनाता है । इस दृष्टिकोण को न समझने से वेदांत के विभिन्न सूत्रों की व्याख्या में अनेक भ्रम उत्पन्न हुए हैं ।

ब्रह्म और जगत का संबंध :

इस दर्शन में यह प्रश्न उठता है कि ब्रह्म जगत का उपादान कारण है या निमित्त कारण । वेशेषिक दर्शन का यह सिद्धांत ___ **कारणगुणपूर्वक : कार्य गुणों दृष्ट । „** ___ यह स्पष्ट करता है कि कारण है कि **कारण के गुण कार्य में पाए जाते हैं ।** इसे समझने से ब्रह्म और जगत के संबंध की भ्रांतियां का निवारण होता है । इस सिद्धांत की कसौटी पर अद्वैतवाद और अन्य मिथ्या मान्यताएं स्वत : खंडित हो जाती है ।

Edit with WPS Office

वेदों की प्रमाणिकता :
वेशेषिक दर्शन वेदोक्त धर्म की व्याख्या करता है और वेदों को ईश्वरकृत मानकर उन्हें परम प्रमाण मानता है । यह दर्शन स्पष्ट रूप से कहता है कि वेदों में निहित शिक्षाएं ही धर्म का सही मार्गदर्शन करती है ।

प्राचीन भाष्य :
वेशेषिक दर्शन पर **प्रशस्त पाद भाष्य** नामक प्राचीन और प्रमाणिक ग्रंथ उपलब्ध है , जो इस दर्शन के गूढ़ तत्वों और सिद्धांतों की विस्तृत व्याख्या करता है । यह भाष्य वेशेषिक दर्शन की मूल शिक्षा और उसकी गहराई को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण स्रोत है । वेशेषिक दर्शन एक गहन और तार्किक प्रणाली है , जो धर्म , पदार्थों के स्वरूप , वेदों की प्रमाणिकता , और उनके सिद्धांतों को आधार बनाकर , मानव जीवन को सच्चे कल्याण की दिशा में प्रेरित करता है ।

4. न्याय दर्शन

न्यायदर्शन , जिसे महर्षि गौतम ने रचा है , भारतीय दर्शन की महत्वपूर्ण शाखाओं में से एक है , जिसमें सोलह प्रमुख पदार्थों के तत्वज्ञान के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति का वर्णन किया गया है । यह दर्शन तर्क प्रमाण और विश्लेषण के आधार पर सत्य की खोज और जीवन के गूढ़ प्रश्नों का समाधान प्रस्तुत करता है ।

मोक्ष प्राप्ति की प्रक्रिया :
न्याय दर्शन में पदार्थों का क्रमिक रूप से वर्णन किया गया है , जिसमें पहले उनके नामों का उल्लेख , फिर उनके लक्षण , और अंत में उनकी विस्तृत परीक्षा की जाती है । वेद के इस मंत्र " विधयाऽमृतमश्रुते „ के अनुरूप , मोक्ष प्राप्ति की प्रक्रिया पदार्थों के तत्व ज्ञान से आरंभ होती है । इस ज्ञान से मिथ्या ज्ञान का नाश होता है , जिसके परिणाम स्वरूप राग , द्वैष ,लोभ , आदि दोषों का अंत होता है । जब अशुभ कर्मों में प्रवृत्ति समाप्त हो

Edit with WPS Office

जाती है , तो जन्म और मृत्यु के दुखों से मुक्ति मिलती है , और यहीं मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग है ।

न्याय की परिभाषा और तर्क की प्रक्रिया। :

" प्रमाणैर्थपरीक्षण न्याय : " ___ इस परिभाषा के अनुसार न्याय दर्शन में प्रमाणों के आधार पर सत्य का परीक्षण किया जाता है । इसमें तर्क और न्याय की पद्धति को विस्तार से समझाया गया है । वाद विवाद की प्रक्रिया में जय - पराजय के कारणों का विश्लेषण , निग्रहस्थान (जिन कारणों से वाद समाप्त होता है) का विस्तृत उल्लेख , और वाद के दोषों जैसे हेत्वाभास (त्रुटिपूर्ण तर्क) ,जल्प (झूठे तर्क) और वितण्डा (असंगत तर्क) का खंडन भी इस दर्शन का हिस्सा है ।

संशय और मिथ्या ज्ञान का निवारण :

न्याय दर्शन की शैली और मिथ्या ज्ञान के निवारण में अत्यंत सहायक है । संशयास्पद विषयों पर निर्णय लेने की प्रणाली , वाद - विवाद के विभिन्न प्रकार , और तर्कों के दोषों का निराकरण न्याय दर्शन की विशिष्टताएं है । जो लोग वेद और ईश्वर को नहीं मानते , उनके साथ वाद करने की विशेष पद्धति , जिसे " पठ्चावय " रूप में जाना जाता है , का भी विस्तृत वर्णन किया गया है । यह पद्धति प्ररार्थानुमान (दूसरों को तर्क से समझाने) का एक विशिष्ट तरीका है , जिसका प्रयोग कर विरोधी को पराजित किया जा सकता है । इस ज्ञान को " आन्वीक्षिकी विधा " भी कहां जाता है , जो तर्क की गहन विद्या है ।

त्रैतवाद और ईश्वर की भूमिका :

न्याय दर्शन में परमेश्वर को सृष्टिकर्ता , निराकार , सर्वव्यापक और जीवात्मा से भिन्न माना गया है । जीवात्मा को शरीर से अलग , सीमित , और परिच्छिन्न माना गया है , जबकि प्रकृति को अचेतन और सृष्टि का उपादान कारण स्वीकार किया गया है । इस प्रकार , न्याय दर्शन त्रैतवाद का स्पष्ट प्रतिपादन करता है , जिसमें ईश्वर , जीवात्मा , और प्रकृति तीनों की अलग-अलग भूमिकाएं निर्धारित है ।

Edit with WPS Office

प्राचीन भाष्य और व्याख्या :

इस दर्शन पर महर्षि वात्स्यायन का प्रामाणिक और प्राचीन भाष्य उपलब्ध है , जो न्याय दर्शन के गूढ़ सिद्धांतों को विस्तार से समझने के लिए महत्वपूर्ण स्रोत है । यह भाष्य न्याय दर्शन की बारीकियों और उसकी तर्कशक्ति को स्पष्ट रूप से व्याख्यायित करता है ।

न्याय दर्शन तर्क , प्रमाण , और सत्य की खोज पर आधारित एक गहन और तार्किक प्रणाली है , जो मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति और जीवन के अन्य जटिल प्रश्नों का समाधान प्रदान करती है । यह दर्शन वेदों के सिद्धांत का समर्थन करते हुए , सत्य और धर्म की खोज के लिए तर्क का अनुकरण करने का मार्ग प्रशस्त करता है ।

5. पूर्व मीमांसा दर्शन

महर्षि जैमिनी द्वारा रचित एक महत्वपूर्ण दर्शन है , जिसमें मुख्य रूप से धर्म और धर्मी के स्वरूप का विश्लेषण किया गया है । इस दर्शन का केंद्र बिंदु वैदिक यज्ञों के विधि विधानों , मंत्रों के प्रयोग , और यज्ञों की संपूर्ण प्रक्रियाओं का गहन विवेचन है । यदि योग दर्शन अत: करण की शुद्धि और अविधा के नाश के उपायों पर केंद्र है , तो मीमांसा दर्शन समाज और राष्ट्र के व्यापक हित में कर्म और कर्त्तव्य की दिशा दिखाता है । यह दर्शन पारिवारिक जीवन से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक कर्तव्यों का मार्गदर्शन करता है । जिससे समूचे राष्ट्र की समृद्धि और उन्नति संभव हो सके । अश्वमेधादि यज्ञों का विस्तार से वर्णन इसी उद्देश्य की पुष्टि करता है ।

वैशेषिक दर्शन के सूत्र " तदवचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम् " और प्रशस्तपाद भाष्य में " तच्चेश्वरनोयनाभिव्यक्ताद्धर्मादेव" में जो वेदों को ईश्वरकृत मानकर उनकी प्रमाणिकता को स्थापित किया गया है , उसी दृष्टिकोण की पुष्टि पूर्व मीमांसा में भी की गई है । जैमिनी ने अपने सूत्रों " अथातो धर्म जिज्ञासा " और " चोदनालक्षणो धर्म: के माध्यम से यह प्रतिपादित किया है

Edit with WPS Office

की वेदोक्त कर्म ही धर्म है । उनके अनुसार , यथार्थ में क्रियात्मक धर्म का सर्वोच्च रूप यज्ञ है , और इस दर्शन में यज्ञों की मीमांसा का विस्तृत वर्णन मिलता है ।

यज्ञ , वेद मंत्रों से अत्यधिक संबंधित है , और संपूर्ण कर्मकांड , मंत्रों के सही प्रयोग पर आधारित है । मीमांसा दर्शन में मंत्रों के विनियोग का विधान किया गया है , जो धर्म के पालन और उसके फल प्राप्ति के लिए अनिवार्य है । जैमिनी ने वेदों को धर्म के लिए परम प्रमाण माना है । जैसे "निरुक्त " में कौत्स के संदेह का समाधान युक्ति संगत उत्तरों द्वारा दिया गया है , वैसे ही में (मीमांसा दर्शन. 1.2.1) में वेद मंत्रों की सार्थकता और उनके सही प्रयोग का विस्तार से उत्तर दिया गया है ।

पूर्व मीमांसा में वैदिक यज्ञों का सांगोपांग विश्लेषण किया गया है । इसके तीन प्रमुख यज्ञ मानें गए हैं : **दर्श पूर्णमास , ज्योतिष्टोम (सोमयाग) ,** और **अश्वमेध** । ये तीन यज्ञ प्रधान माने गए हैं क्योंकि यह " प्रकृति यांग ,, के रूप में प्रतिष्ठित है । इनके अतिरिक्त , अन्य यज्ञ जैसे अग्निष्टोम आदि को " विकृत यांग " कहा गया है , जो प्रदान नहीं मानें गए हैं ।

मंत्रों के प्रयोग का आधार :
जैमिनी मुनि ने यज्ञों में मंत्रों के प्रयोग के लिए श्रुति , लिंग , वाक्य ,प्रकरण , स्थान , और समाख्या ___ ये छह मौलिक आधार मानें है । ये सभी सिद्धांत इस दर्शन में विस्तार से प्रस्तुत किए गए हैं , जो मंत्रों के प्रयोग और उनके महत्व को स्पष्ट करते हैं

अन्य महत्वपूर्ण विषय :

- मीमांसा दर्शन में केवल यज्ञों और मंत्रों पर ही नहीं , बल्कि और भी कई गहन विषयो पर विचार किया गया है ; जैसे ______
- ऋत्विजो के कर्मों का विश्लेषण
- संवत्सर यज्ञों का वैज्ञानिक आधार
- मंत्रों का लक्षण और वेद का स्वरूप

Edit with WPS Office

- वेद और ब्राह्मण ग्रंथों के बीच का अंतर ।
- वेदों की स्वत : प्रमाणिकता और मंत्रों के स्वर सहित उच्चारण का महत्व ।
- यज्ञ में एकश्रुति पाठ का विशिष्ट अध्ययन ।
- देवता , वर्ण , और स्त्रियों के यज्ञाधिकार पर विचार ।
- निषाद समुदाय को यज्ञ का अधिकार इत्यादि ।

मीमांसा दर्शन में इन सभी विषयों पर बहुत ही गूढ़ और स्पष्ट रूप से विवेचना की गई है , जो धर्म और कर्तव्य के प्रति एक विस्तृत दृष्टिकोण प्रस्तुत करतीं हैं ।

6. ब्रह्मसूत्र/वेदांत अथवा उत्तर मीमांसा दर्शन

ब्रह्मसूत्र या उत्तर मीमांसा दर्शन , महर्षि व्यास द्वारा प्रणीत दर्शन है , जिसे समान्यत: " वेदांत „ के नाम से जाना जाता है । शंकराचार्य , रामानुज , माध्वाचार्यादि विभिन्न आचार्यों ने अपने मत की मान्यता के अनुसार व्याख्याएं करके इस दर्शन के यथार्थ स्वरूप को ही छिपा दिया है । अधिकांशत: इन आचार्यों की व्याख्याओं को ही " वेदांत „ के रूप में मान्यता दी गई है , लेकिन वास्तव में मूल वेदांत दर्शन के सिद्धांतों से ये मान्यताएं मेल नहीं खाती है ।

यदि अद्वैतवाद , विशिष्टाद्वैतवाद , द्वैतवाद और शुद्धाद्वैतादि वाद वास्तव में वेदांत के मौलिक सिद्धांत होते , तो इनके प्रवर्तक व्यास मुनि ही होते , न की बाद के आचार्यों । परंतु ये वाद वेदांत के मूल सिद्धांत नहीं है , ये आचार्यों की अपनी कल्पनाएं हैं , और वे आपस में विरोधाभासी भी है ।

वेदांत का मूल अर्थ और उद्देश्य :

वेदांत का शाब्दिक अर्थ है " वेदों का अंतिम सार " । महर्षि व्यास के शिष्य जैमिनी ने पूर्व मीमांसा में जिन सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है , वे व्यास मुनि की मान्यताओं के अनुरूप है । जैमिनी ने " चोदना लक्षणों धर्म :

Edit with WPS Office

कहकर धर्म को वेदोक्त माना है , जिसका अंतिम उद्देश्य मोक्ष या ईश्वर की प्राप्ति है । वेदांत दर्शन उसी ईश्वर (ब्रह्म) का विस्तार से विश्लेषण करता है और धर्म तथा ब्रह्म की जिज्ञासा के बीच के गहरे संबंधों को प्रकट करता है ।

ब्रह्म का स्वरूप :
वेदांत के अनुसार , ब्रह्म जगत का कर्ता , धर्ता और संहर्ता है , इसलिए वह जगत का निमित्त कारण है , परंतु वह उपादान या अभिन्न निमित्तोंपादन कारण नहीं है । ब्रह्म सर्वज्ञ , सर्वशक्तिमान , आनन्दमय , नित्य , अनादि , और अनन्त गुणों से युक्त शाश्वत सत्ता है । वह निराकार और जन्म - मरण के बंधनों से मुक्त है । प्रकृति को कार्य रूप में परिवर्तित कर सृष्टि का निर्माण करता है , परंतु स्वयं अचल और निर्विकार बना रहता है ।

चारों वेदों का उपदेशक वही ब्रह्म है और सृष्टि के निर्माण और वेदों में कहीं भी कोई विरोध नहीं है , इसलिए यह सिद्ध होता है कि वेदज्ञान और जगत के कर्ता एक ही ब्रह्म है । यह ब्रह्म ही संपूर्ण जीवों के कर्म अनुसार उनके फलों की व्यवस्था करता है ।

जीव - ब्रह्म की भिन्नता :
जीव - ब्रह्म की एकता और जगत को मिथ्या मानने वाले सिद्धांत मूल वेदांत के विरुद्ध है । वेदांत दर्शन के प्रथम सूत्र " अथातो ब्रह्म जिज्ञासा „ से स्पष्ट है कि जिस ब्रह्म की जिज्ञासा की जा रही है , वह श्रेय (जानने योग्य) है , और जीवात्मा से भिन्न है । यदि ब्रहम और जीवात्मा एक ही होते , तो स्वयं को जानने की इच्छा कैसे संभव होती ? जीवात्मा सीमित , एकदेशीय और अल्प सामर्थ्य वाला है , जबकि ब्रह्म अनन्त और पूर्ण है ।

वेदांत में मोक्ष और कर्म का महत्व :
वेदांत में मोक्ष के बाद भी जीवात्मा कि पृथक सत्ता स्वीकार की गई है । इसके अतिरिक्त , जो वस्तु सत्य है , उसका अपने कारण में विलय संभव है , इसका अभाव नहीं । इस सिद्धांत के अनुसार , कार्य जगत को भी मिथ्या

Edit with WPS Office

नहीं कहा जा सकता ।

वेदांत में कर्मों का त्याग और केवल ज्ञान के उपदेश की मान्यता भी नवीन वेदंतियों का भ्रम है । मूल वेदांत में कर्म करने का स्पष्ट निर्देश है उदाहरण स्वरूप , वेदांत दर्शन (3.1.9 - 11) में सुकृत व और दुष्कृत कर्मों का वर्णन है , (3.3.3) में स्वाध्याय की महत्ता बताई गई है , (3.4.60 - 61) में काम्य कर्मों के पालन की बात की गई है , और (3.4.19) में अग्निहोत्र आदि यज्ञों के अनुष्ठान का उल्लेख है । इसके अतिरिक्त , ब्रह्म की उपासना के लिए यम - नियम और योगांगो के पालन का भी निर्देश दिया गया है ।

इस प्रकार , मूल वेदांत दर्शन का केंद्र बिंदु ईश्वर के सत्ता , कर्म का महत्व , और मोक्ष का साधन है । बाद के आचार्यों द्वारा प्रस्तुत की गई नई मान्यताएं मूल् वेदांत के सिद्धांतों के विपरीत है और इसलिए वे आपस में विरोधाभासी है । वेदांत , वास्तव में , वेदों के अंतिम और शाश्वत सत्य का उद्धघाटन करता है , जो मोक्ष कर्म और ब्रह्म के समन्वय पर आधारित है ।

___{ नास्तिक दर्शन }___

नास्तिक दर्शन भारतीय दर्शन शास्त्र में उन दर्शनों का समूह है , जो वेदों की प्रमाणिकता को स्वीकार नहीं करते और इसे अंतिम सत्य के रूप में नहीं मानते । भारतीय दर्शन को व्यापक रूप से दो भागों में विभाजित किया गया है : आस्तिक (जो वेदों को मानते हैं) और नास्तिक (जो वेदों को नहीं मानते) नास्तिक दर्शन मुख्यत: चार प्रमुख दर्शनों में विभाजित है ;

1. चार्वाक दर्शन

चार्वाक दर्शन भारतीय दर्शन की एक नास्तिक (वेद- निंदक) शाखा है , जो भौतिकवाद और प्रत्यक्ष वाद पर आधारित है । इसे "लोकायत " या " भौतिकवादी " दर्शन भी कहा जाता है । यह दर्शन इंद्रिय अनुभव और प्रत्यक्ष प्रमाण को ही सत्य मानता है और आत्मा पुनर्जन्म परलोक ईश्वर

Edit with WPS Office

और वेदों की प्रमाणिकता जैसी पारलौकिक और आज्यात्मिक अवधारणाओं का खंडन करता है ।

चार्वाक दर्शन के मुख्य सिद्धांत इस प्रकार है :

1. **प्रत्यक्ष प्रमाण ही सत्य है** : चार्वाक दर्शन केवल प्रत्यक्ष (जो इंद्रियों से प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सके) को ही ज्ञान का वास्तविक और प्रामाणिक स्रोत मानता है । इसके अनुसार , जो कुछ भी प्रत्यक्ष अनुभव में नहीं आता , वह अवास्तविक और असत्य है ।
2. **आत्मा और पुनर्जन्म की अवधारणा का खंडन करना** : चार्वाक दर्शन आत्मा, परलोक , और पुनर्जन्म जैसी अवधारणाओं को अस्वीकार करता है । इसके अनुसार , मृत्यु के पश्चात कुछ भी नहीं होता , और आत्मा शरीर के साथ ही समाप्त हो जाती है ।
3. **ईश्वर और वेदों की निंदा** : चार्वाक वेदों ,यज्ञ , और ईश्वर की अवधारणाओं को अस्वीकार करता है । यह दर्शन वेदों को मानव निर्मित मानता है और ईश्वर को एक मिथ्या धारणा के रूप में देखता है जो केवल लोगों को धोखा देने के लिए बनाई गई है ।
4. **सुखवाद (हेडोनिज्म)** : चार्वाक दर्शन का मुख्य सिद्धांत सुखवाद है । इसके अनुसार , जीवन का अंतिम उद्देश्य इंद्रिय सुख प्राप्त करना है । चार्वाक दर्शन का कहना है ।

o यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् , ऋण कृत्वा घृत पिबेत् । (जब तक जियो , सुख से जियो , ऋण लेकर भी घी पियो ।

5. यथार्थवादी और व्यावहारिक दृष्टिकोण : चार्वाक दर्शन जीवन को व्यावहारिक और यथार्थवादी दृष्टिकोण से देखता है । यह धर्म मोक्ष और तपस्या जैसी चीजों को व्यर्थ मानता है और कहता है कि इनसे व्यक्ति व्यक्ति के जीवन में कोई वास्तविक लाभ नहीं होता ।

• चार्वाक (नास्तिक) की राक्षसी विचारधारा :

जब तक जियो सुख से जियो , ऋण ले - लेकर घी का पान करो

Edit with WPS Office

क्योंकि मरने के पश्चात फिर जन्म नहीं होता । अतः खाओं , पियो , मौज उड़ाओ । खूब भोगों का भोग करो । यही लोक है , परलोक आदि कुछ नहीं है ।

राक्षसी मार्ग भी यही इसी चार्वाक जैसा है । देखिए रावण ने सीता जी से यही तो कहा था ___

भुड़क्ष्व भोगान यथाकामं पिब भीरु रमस्व च ।।

वाल्मीकि रामायण सुंदरकांड. 24.24

सीते ! इच्छानुसार भोगो को भोग । खा , पी और मौज कर ।
आज का पाश्चात्य जगत भी इसी राक्षसी मार्ग पर चल रहा है ।

2. बौद्ध दर्शन

बौद्ध दर्शन भारतीय दर्शन की एक शाखा है , जिसे गौतम बुद्ध (563 - 483 . ईसा पूर्व) ने प्रतिपादित किया था । यह दर्शन वेदों की प्रमाणिकता को नहीं मानता है और स्वतंत्र रूप से सत्य की खोज करता है । बौद्ध दर्शन में जीवन के दुख , उसके कारण , और दुख से मुक्ति के मार्ग पर ध्यान केंद्रित किया गया है ।

बौद्ध दर्शन के मुख्य सिद्धांत इस प्रकार है ;

1. चार आर्य सत्य (Four noble truths)

- बौद्ध दर्शन की नींव चार आर्य सत्यों पर आधारित है ;
- दुख (Dukkha) : जीवन में दुख और असंतोष सर्वव्यापी है । जन्म , बुढ़ापा , बीमारी, मृत्यु , वियोग , और अप्रिय स्थितियां दुख का कारण है ।
- दुख समुदाय (Samudaya) : दुख का कारण तृष्णा (इच्छा) और आसक्ति है । यह तृष्णा जीवन के विभिन्न रूपों (इंद्रिय सुख , भौतिक सुख , आदि) से जुड़ी होती है ।
- दुख निरोध (Nirodha) : दुख का अंत संभव है । तृष्णा और

Edit with WPS Office

आसक्ति का त्याग करके निवारण प्राप्त किया जा सकता है , जो दुख से मुक्ति की अवस्था है ।

- दुख निरोध गामिनी प्रतिपद (Magga) : यह दुख से मुक्ति का मार्ग है , जिसे " अष्टांगिक मार्ग ,, कहां जाता है ।

2. अष्टांगिक मार्ग : (The Eightfold path)

दु:ख से मुक्ति के लिए बुद्ध ने अष्टांगिक मार्ग बताया , जो आठ तत्वों का समूह है ;

- सम्यक दृष्टि (Right view) : चार आर्य सत्य को समझना ।
- सम्यक संकल्प (Right intention) : अहिंसा , करुणा , और त्याग का संकल्प ।
- सम्यक वाक् (Right speed) : सत्य बोलना , कटु शब्दों का त्याग करना ।
- सम्यक कर्म (Right Action) : अहिंसक और नैतिक आचरण ।
- सम्यक आजीविका (Right Livelihood) : ऐसा पेशा अपनाना जो किसी प्राणी को हानि न पहुंचाए ।
- सम्यक प्रयास (Right Effort) : बुरी प्रवृत्तियों को त्यागना और अच्छे गुणों का विकास करना ।
- सम्यक स्मृति (Right mindfulness) : अपने शरीर ,मन , और विचारों पर सचेतन ध्यान ।
- सम्यक समाधि (Right Concentration) : ध्यान द्वारा मन को एकाग्र करना ।

3. अनात्मवाद (No - Self or Anatman) :

बौद्ध दर्शन का एक प्रमुख सिद्धांत है " अनात्मवाद " जो कहता है की आत्मा जैसी कोई स्थायी , स्वतंत्र , और अपरिवर्तनीय ईकाई नहीं है । इसके अनुसार , मनुष्य पंच स्कंधों (रुप, वेदना , संज्ञा , संस्कार , विज्ञान) से बना है , जो क्षणिक और नश्वर है । आत्मा की अवधारणा को बौद्ध दर्शन

Edit with WPS Office

एक भ्रांति मानता है ।

4. क्षणिकवाद (Impermanence or Anicca) :

बौद्ध दर्शन के अनुसार , सभी संपूर्ण वस्तुएं क्षणभंगुर और अस्थायी है । संसार में कोई भी वस्तु या स्थिति स्थायी नहीं है , और सभी चीजें निरंतरपरिवर्तनशील है । इस सिद्धांत का पालन करते हुए बौद्ध दर्शन यह सिखाता है कि संसार के मोह और आसक्ति को छोड़कर ध्यान और साधना के माध्यम से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है ।

5. प्रतीत्य समुत्पाद (Dependent Origination) :

प्रतीत्य समुत्पाद का अर्थ है कि सभी घटनाएं और चीजें कारण और प्रभाव के संबंध में होती है । कोई भी वस्तु या स्थिति स्वतंत्र रूप से अस्तित्व में नहीं है ; सब कुछ एक - दूसरे पर निर्भर करता है । यह सिद्धांत यह समझाने का प्रयास करता है कि जीवन में दुख क्यों होता है और इसे कैसे समाप्त किया जा सकता है ।

6. निवारण (Nirvana) :

बौद्ध दर्शन में निवारण का अर्थ है दुख , तृष्णा , और मोह से पूरी तरह मुक्ति पाना । यह शांति , करुणा , और पूर्ण ज्ञान की अवस्था है , जहां व्यक्ति पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो जाता है । निवारण की प्राप्ति बौद्ध साधना का अंतिम लक्ष्य है ।

7. बौद्ध संप्रदाय के प्रमुख शाखा :

- **हीनयान (Theravada) :** यह बौद्ध संप्रदाय की सबसे पुरानी शाखा है और इसे प्राचीन " विद्यालय " या " थेरवाद „ कहा जाता है । यह आत्म - शुद्धि , ध्यान , और व्यक्तिगत मुक्ति पर जोर देता है ।
- **महायान :** यह बौद्ध संप्रदाय की एक बाद की शाखा है , जो करुणा (करुणा और परोपकार) और बोधिसत्व मार्ग पर जोर देती है । इसके अनुसार , मुक्ति पाने के बाद बोधिसत्व दूसरों की सहायता के लिए संसार में रहते हैं ।

Edit with WPS Office

- **वज्रयान** : यह बौद्ध संप्रदाय की एक तांत्रिक परंपरा है , जो तिब्बत , भूटान , और हिमालय क्षेत्रों में प्रचलित है । यह ध्यान , मंत्र , और तांत्रिक साधनाओं का प्रयोग कर मुक्ति पाने का मार्ग सुझाता है ।

3. जैन दर्शन

जैन दर्शन भारतीय दर्शन की एक प्रमुख नास्तिक (वेद - निंदक) शाखा है , जिसकी स्थापना भगवान ऋषभदेव ने की और जिसे भगवान महावीर (599 - 527. ईसा पूर्व) ने विस्तार दिया । जैन संप्रदाय का मुख्य उद्देश्य आत्मा की शुद्धि और मोक्ष (आत्मा की मुक्ति) प्राप्त करना है । यह दर्शन अहिंसा , अनेकांतवाद और अपरिग्रह पर आधारित है । जैन दर्शन वेदों की प्रमाणिकता को स्वीकार नहीं करता और कर्म , आत्मा , और पुनर्जन्म जैसी अवधारणाओं पर ध्यान केंद्रित करता है ।

जैन दर्शन के मुख्य सिद्धांत :

1. **अहिंसा** (Non - Violence) :
   - जैन दर्शन का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है अहिंसा , जिसका अर्थ है किसी भी जीव को मन , वचन , और कर्म से हानि न पहुंचाना ।
   - जैन संप्रदाय में अहिंसा केवल शारीरिक हानि से नहीं , बल्कि मानसिक और भावनात्मक हिंसा से भी बचने की शिक्षा दी जाती है । इसका पालन अत्यंत कठोरता से किया जाता है , विशेषकर मुनियों और आचार्यों द्वारा ।

2. **अनेकांतवाद** (theory of multiplicity of perspectives) :
   - जैन दर्शन के अनुसार , किसी भी वस्तु या घटना के कई

Edit with WPS Office

दृष्टिकोण हो सकते हैं । सत्य एक नहीं है ; वह अनेक रूपों में प्रकट हो सकता है ।

- o अनेकांतवाद यह सिखाता है की हर चीज को देखने और समझने के विभिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं और हमें किसी एक दृष्टिकोण पर अडिग नहीं होना चाहिए । यह सहिष्णुता और समावेशिता को बढ़ावा देता है ।

3. सयादवाद (Doctrine of Conditionality) :

- o यह सिद्धांत अनेकांतवाद का ही विस्तार है । इसके अनुसार , सत्य को समझने के लिए किसी एक निष्कर्ष पर पहुंचना कठिन है । प्रत्येक कथन और निष्कर्ष को संदर्भ और परिस्थितियों के अनुसार समझना आवश्यक है ।
- o सयादवाद का अर्थ है कि कोई भी कथन केवल एक दृष्टिकोण से सत्य हो सकता है , और इसे अन्य दृष्टिकोणों से भी देखा जा सकता है ।

4. कर्म सिद्धांत (theory of Karma)

- o जैन दर्शन में कम को आत्मा पर लगे पाप या पुण्य के बंधन के रूप में देखा जाता है । कर्म आत्मा के ऊपर धूल के कणों की तरह चिपकते हैं और उसे अशुद्ध करते हैं ।
- o आत्मा के शुद्धिकरण के लिए इन कर्मों को समाप्त करना आवश्यक है , जिसके लिए तप , साधना , और नैतिक आचरण का पालन करना पड़ता है । कर्म की यह प्रक्रिया जन्म और पुनर्जन्म के चक्र को संचालित करती है ।

5. मोक्ष (Liberation or Moksha)

- o जैन दर्शन का अंतिम लक्ष्य आत्मा की मुक्ति , या मोक्ष , है । यह तब होता है जब आत्मा समस्त कर्मों से मुक्त हो जाती है और शुद्ध , पूर्ण , और असीमित ज्ञान की अवस्था में पहुंच जाती है ।
- o मोक्ष प्राप्त आत्मा संसार के चक्र (जन्म और पुनर्जन्म) से मुक्त

Edit with WPS Office

हो जाती है और सिद्ध क्षेत्र (अनंत शांति और आनंद की अवस्था) में वास करती हैं ।

6. त्रिरत्न (three jewels) :

- मोक्ष की प्राप्ति के लिए जैन दर्शन त्रिरत्न पर आधारित है ।
    - सम्यक दर्शन (right faith) : सत्य के प्रति विश्वास और श्रद्धा ।
    - सम्यक ज्ञान (right knowledge) : सत्य का सही ज्ञान और समझ ।
    - सम्यक चरित्र (right conduct) : सत्य और ज्ञान के अनुसार आचरण ।

7. पांच महाव्रत (five Great Vows) :

- जैन मुनि और साधक पांच महाव्रतो का पालन करते हैं ;
    - अहिंसा : हर जीव के प्रति अहिंसा का पालन ।
    - सत्य : सदा सत्य बोलना ।
    - अस्तेय : चोरी न करना और किसी अन्य की वस्तुएं न लेना ।
    - ब्रह्मचर्य : ब्रह्मचर्य का पालन , जिसमें इच्छाओं का त्याग और संयम का जीवन ।
    - अपरिग्रह : भौतिक वस्तुओं और संपत्ति के प्रति आसक्ति का त्याग ।

8. जीव और अजीव (Living and Non - Living Entities) :

- जैन दर्शन में जीव (संजीव) और अजीव (निर्जीव) का स्पष्ट विभाजन है । जीव आत्मा है , जो अनंत ज्ञान , सुख और शक्ति का स्त्रोत है । अजीव में पदार्थ (पंच महाभूत) , समय , स्थान , और गति शामिल हैं ।
- जीव जब कर्मों में बंध जाता है , तब वह संसार में जन्म और

Edit with WPS Office

मृत्यु के चक्र में फंसा रहता है । जब यह कर्म बंधन समाप्त हो जाता है , तब आत्मा अपनी शुद्ध अवस्था में पहुंचती है और मोक्ष प्राप्त करती है ।

जैन संप्रदाय के दो मुख्य शाखा :

दिगंबर : दिगंबर संप्रदाय के मुनि निर्वस्त्र रहते हैं और संपूर्ण त्याग का पालन करते हैं । उनके अनुसार , मोक्ष प्राप्ति के लिए सभी प्रकार के भौतिक और मानसिक बंधनों से मुक्त होना आवश्यक है ।

श्वेतांम्बर : श्वेतांबर मुनि सफेद वस्त्र धारण करते हैं । उनके अनुसार , संयम और तपस्या का पालन करते हुए भी वस्त्र धारण करना मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में बांधा नहीं है ।

4. आजीवक दर्शन :

यह एक प्राचीन नास्तिक दर्शन है , जो भाग्यवाद (अर्थात , जीवन की घटनाएं पूर्व निर्धारित होती है) को मानता है । आजीवक दर्शन का मानना है कि कर्म और प्रयत्नों का जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । आजीवक दर्शन भारतीय दार्शनिक परंपरा में नियतिवाद और तपस्या पर जोर देने वाला संप्रदाय था । इसका मुख्य सिद्धांत यह था की जीवन में सब कुछ पूर्व निर्धारित है , और मनुष्य के प्रयास या कर्म से इसे बदला नहीं जा सकता । यद्यपि आजीविक संप्रदाय अब अस्तित्व में नहीं है , लेकिन इसका ऐतिहासिक और दार्शनिक योगदान महत्वपूर्ण है , क्योंकि इसने अपने समय में बौद्ध और जैन दर्शन के विकास को प्रभावित किया ।

तीन चार दर्शनों का प्रमुख उद्देश्य वेदों की प्रमाणिकता को चुनौती देना और अपने स्वतंत्रता दृष्टिकोण प्रस्तुत करना था । नास्तिक दर्शन भौतिक और आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों में चिंतन को स्वतंत्र रूप से विकसित करने का एक प्रयास था

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 90. अद्वैतवाद , विशिष्टाद्वैतवाद , द्वैतवाद , और शुद्धाद्वैतावाद

अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद , द्वैतवाद , और **शुद्धाद्वैत** भारतीय वेदांत दर्शन की प्रमुख धाराएं हैं , जिनमें ब्रह्म , जीव , और जगत के संबंध को भिन्न दृष्टिकोणों से समझाया गया है । ये सभी दर्शन वेदांत के सिद्धांतों पर आधारित है , लेकिन इनके बीच महत्वपूर्ण अंतर है । आइए , इन दर्शनों का परिचय और उनके मुख्य सिद्धांतों को संक्षेप में समझे ;

1. अद्वैतवाद (Advaita vedanta)

- **प्रवर्तक** : आदिशंकराचार्य जी
- **ब्रह्मसत्यंजगन्मिथ्या जीवोब्रह्मोवनापर** : इसका अर्थ है ; ब्रह्म सत्य है , जगत मिथ्या है , जीव ही ब्रह्म है , यह वेदांत का उद्घोष है ।
- **मुख्य सिद्धांत** : अद्वैत का अर्थ है " अद्वितीय „ या " एकमात्र सत्य " । इस सिद्धांत के अनुसार , ब्रह्म ही एकमात्र वास्तविकता है और जगत , माया के कारण , मिथ्या है । जीव , जगत , और ब्रह्म ___ तीनों की एकता को इस दर्शन में प्रतिपादित किया गया है ।
- अद्वैतवाद के के अनुसार जीवात्मा और परमात्मा (ब्रह्म) में कोई अंतर नहीं है । " **अहं ब्रह्मास्मि** " का अर्थ है - में ब्रह्म हूं । यह विचार दर्शाता है कि हर जीवात्मा (व्यक्ति) का वास्तविक स्वरूप ब्रह्म है , लेकिन अज्ञान (अविधा) के कारण जीवात्मा स्वयं को ब्रह्म से अलग मानता है ।

Edit with WPS Office

- **माया** अद्वैतवाद का महत्वपूर्ण सिद्धांत है , जो इस संसार को असत्य है और ब्रह्म को परम सत्य बताता है
- माया एक ऐसी शक्ति है जो ब्रह्म को आत्मा और जगत के रूप में विभाजित करती है । माया के कारण जीव को यह प्रतीत होता है कि वह संसार में एक स्वतंत्र अस्तित्व रखता है , जबकि वास्तव में वह ब्रह्म का ही अंग है ।
- माया दो प्रकार की होती है :___
    - **आवरणात्मक माया** : यह जीव की चेतना पर आवरण डालती हैं , जिससे वह अपनी वास्तविकता (ब्रह्म) को नहीं पहचान पाता ।
    - **विक्षेपात्मक माया** : यह माया जीव को संसार के वस्त्र में लिपटाए रखतीं हैं और उसे इस माया में उलझाए रखती हैं , जिससे वह जगत को ही सत्य मानता है ।
- **मुक्ति** : अद्वैत दर्शन के अनुसार , मोक्ष तभी संभव है जब जीव अपने वास्तविक स्वरूप (ब्रह्म) का ज्ञान प्राप्त कर लेता है और इस भौतिक जगत को माया का परिणाम मानता है ।

2. विशिष्टाद्वैतवाद (Vishishtadvaita) :

- **प्रवर्तक** : रामानुजाचार्य
- **मुख्य सिद्धांत** : विशिष्टद्वैत का अर्थ है -- "विशेष के साथ अद्वैत " । इस दर्शन में ब्रह्म को एक अद्वितीय , सर्वव्यापी सत्ता के रूप में स्वीकार किया गया है , लेकिन इसमें जीव और जगत को ब्रह्म के विशेष (विशिष्ट) के रूप में देखा गया है । जीव और प्रकृति ब्रह्म के शरीर के रूप में है , इसलिए वे ब्रह्म से अलग नहीं है , लेकिन स्वतंत्र भी नहीं है ।
- **मुक्ति** : विशिष्टद्वैत के अनुसार , मोक्ष जीव के ब्रह्म के साथ मिलन में है , जहां जीव ब्रह्म की सेवा करता है और उसे उसका सच्चा स्वरूप प्राप्त होता है । यह ब्रह्म के प्रति पूर्ण भक्ति (भक्ति योग) के माध्यम से संभव है ।

Edit with WPS Office

3. द्वैतवाद (Dvaita vedanta)

- **प्रवर्तक** : माधवाचार्य
- **मुख्य सिद्धांत** : द्वैत का अर्थ है -- "दो " । इस दर्शन के अनुसार , ब्रह्म (ईश्वर) और जीव एक दूसरे से भिन्न और स्वतंत्र हैं । जीवात्मा और परमात्मा का अलग-अलग अस्तित्व है और ये कभी एक नहीं हो सकते । ब्रह्म (विष्णु) ही सर्वोच्च और स्वतंत्र सत्ता है , जबकि जीव और जगत पराधीन है और ईश्वर पर निर्भर है ।
- **मुक्ति** : द्वैत दर्शन में मोक्ष का अर्थ है ईश्वर के सान्निध्य में पहुंचना और उसकी सेवा करना । जीव को ईश्वर की भक्ति और अनुग्रह के माध्यम से मोक्ष प्राप्त होता है , लेकिन जीव और ब्रह्म के बीच का भेद मोक्ष के बाद भी बना रहता है ।

4. शुद्धाद्वैत (Shuddhadvaita vedanta)

- **प्रवर्तक** : वल्लभाचार्य
- **मुख्य सिद्धांत** : शुद्धाद्वैत का अर्थ है -- "शुद्ध अद्वैत " । वल्लभाचार्य के अनुसार , ब्रह्म एकमात्र सत्य है और वह सृष्टि के रूप में प्रकट होता है । इसमें जीव और ब्रह्म के बीच भेद नहीं है ; जीव , ब्रह्म का ही अंश है , और जगत ब्रह्म की लीला है । शुद्धाद्वैत में , ब्रह्म को सर्वोच्च , निराकार , और सगुण दोनों ही रूपों में स्वीकार किया गया है ।
- **मुक्ति** : शुद्धाद्वैत के अनुसार , भक्ति और प्रेम के माध्यम से जीव ब्रह्म की साक्षात अनुभूति कर सकता है । जीव और ब्रह्म के बीच एकता है , और यह एकता भक्ति मार्ग से साकार होती है ।

निष्कर्ष : ___

वेदांत का मूल स्वरूप महर्षि व्यास द्वारा रचित ब्रह्म सूत्रों में प्रतिपादित है , जो ब्रह्म , जीव और जगत के संबंध को स्पष्ट करता है । शंकराचार्य , रामानुजाचार्य , माधवाचार्य आदि आचार्यों ने अपने-अपने

Edit with WPS Office

दृष्टिकोण के आधार पर वेदांत की अलग-अलग व्याख्याएं की , जिससे अद्वैत , विशिष्टद्वैत , द्वैत , और शुद्धाद्वैत जैसी विभिन्न दार्शनिक धाराएं उभर कर सामने आई ।

हालांकि , इन आचार्यों की व्याख्याओं को व्यापक रूप से वेदांत का रूप मान लिया गया है , परंतु ये व्याख्याएं मूल वेदांत दर्शन के सिद्धांतों से भिन्न और आपस में विरोधाभासी है । इन आचार्यों के विचार उनके व्यक्तिगत दृष्टिकोण और दार्शनिक कल्पनाओं पर आधारित है , जो वेदांत के मूलभूत सिद्धांतों का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व नहीं करते । इसलिए वेदांत का वास्तविक स्वरूप इन विभिन्न मतों से परे है और इसे समझने के लिए मूल ब्रह्म सूत्रों और उनके यथार्थ तात्पर्य का गहन अध्ययन आवश्यक है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•91.ईश्वरीय ग्रंथ की पहचान

किसी भी ग्रंथ को ईश्वरीय मानने से पहले हमें कुछ मापदंडों का उपयोग करके उसकी प्रामाणिकता की जांच करनी चाहिए । ये मापदंड न केवल तर्क संगत है , बल्कि यह सुनिश्चित करते हैं कि वह ग्रंथ सृष्टि के नियमों और सार्वभौमिक सच्चाइयों के अनुरूप हो । इन मापदंडो के आधार पर ही हम यह निर्धारित कर सकते हैं की कोई ग्रंथ वास्तव में ईश्वरीय है या नहीं ।

Edit with WPS Office

1. प्रथम मापदंड : सृष्टि के आदि में दिया गया ज्ञान :

ईश्वरीय ज्ञान सृष्टि के आरंभ में दिया गया होना चाहिए । इसका अर्थ है कि जब सृष्टि का निर्माण हुआ , तभी उसका ज्ञान मानव सभ्यता को प्राप्त हुआ हो । किसी भी ईश्वरीय ज्ञान का प्रारंभ सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही होना चाहिए । ताकि वह सृष्टि के मूल नियमों और सिद्धांतों को समझा सके ।

2. द्वितीय मापदंड : तर्क , विज्ञान और बुद्धि सम्मत होना :

यदि कोई ग्रंथ ईश्वरीय है , तो उसमें दी गई सभी बातें तर्कसंगत , वैज्ञानिक दृष्टिकोण से सही , और बुद्धि के अनुरूप होनी चाहिए । सृष्टि जैसी है , इसका ज्ञान भी उसी अनुरूप होना चाहिए । ईश्वरीय ग्रंथ में ऐसा कोई तत्व नहीं होना चाहिए जो विज्ञान , तर्क अथवा सृष्टि क्रम के विपरीत हो ।

3. तृतीय मापदंड : भेदभाव का पूर्ण अभाव :

ईश्वरीय ज्ञान कभी भी भेदभाव नहीं करता । उसमें जाति , धर्म , लिंग या किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए । ईश्वर का ज्ञान समस्त मानव जाति के लिए समान होता है । यदि किसी ग्रंथ में भेदभाव की बात की गई है , तो वह ईश्वर का ग्रंथ नहीं हो सकता ।

4. चतुर्थ मापदंड : ऐतिहासिक विवरणों का अभाव :

ईश्वरीय ग्रंथ में किसी विशेष स्थान , राजा , या मनुष्य के जीवन का इतिहास नहीं होना चाहिए । क्योंकि सृष्टि से पहले कोई इतिहास ही नहीं था और ईश्वर किसी राजा अथवा मनुष्य का गुणगान क्यों करेंगे ? ईश्वर का ज्ञान शाश्वत और सार्वभौमिक होता है , और वह किसी विशेष कालखंड , व्यक्ति , या स्थान तक सीमित नहीं हो सकता । इसलिए , ईश्वरीय ग्रंथ में कहानियां , ऐतिहासिक घटनाएं या किसी विशेष समुदाय का उल्लेख नहीं होना चाहिए ।

Edit with WPS Office

5. पंचम मापदंड : ऐतिहासिक ज्ञान का पूर्णता में होना :

ईश्वरीय ग्रंथ का ज्ञान पूर्ण और संपूर्ण होना चाहिए । ऐसा कोई भी महत्वपूर्ण विषय नहीं होना चाहिए जो उस ग्रंथ में अनछुआ रह जाए । ईश्वर के ज्ञान की विशेषता उसकी व्यापकता और पूर्णता में होती है ।

निष्कर्ष : ___

बौद्ध और जैन संप्रदाय के ग्रंथ लगभग 2800 वर्ष पुराने हैं , बाइबल की आयु 2024 वर्ष पुरानी है , कुरान शरीफ़ करीब 1600 वर्ष पुराना है , और गुरु ग्रंथ साहिब 310 वर्ष पूर्व रचित हुआ । परंतु अगर हम प्राचीनता और मौलिकता के पैमाने पर विचार करें , तो वेद सभी से पहले और सृष्टि के आरंभ से ही उपलब्ध है । विश्व की सबसे बड़ी यूनिवर्सिटी में जो सभी देशों के लगभग एक यूनिवर्सिटी है , वहां सबसे पहला ग्रंथ ऋग्वेद ही बताया , हमारे चारों वेद ही सबसे पहले प्राचीन ग्रंथ है ।

विभिन्न सांप्रदायिक ग्रंथों का आकलन करने पर यह स्पष्ट होता है कि केवल वेद ही ऐसे ग्रंथ है जो सभी मापदंडों पर खरे उतरते हैं । वेद न केवल सबसे प्राचीन है , बल्कि उनका ज्ञान निष्पक्ष , तर्कसंगत , विज्ञान आधारित और सभी प्रकार के भेदभाव से मुक्त है । वेदों में न तो कोई ऐतिहासिक कहानियां हैं , न ही किसी विशेष काल या समय की सीमाओं में बंधे हुए हैं । वे अपने आप में पूर्ण ज्ञान के प्रतीक है । यही कारण है कि वेद को एकमात्र शाश्वत और ईश्वरीय ग्रंथ माना जाता है , जो सृष्टि के आरंभ से ही मानव जाति के लिए उपलब्ध है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 92.शास्त्रों में हुए मिलावट को कैसे पहचाने

शास्त्रों की प्रमाणिकता को परखने के लिए कुछ विशेष मापदंड होते हैं , जो हमें यह समझने में सहायता करते हैं कि कौन सा शास्त्र असली है और कौन अप्रमाणिक , मिलावटी या नकली । जब हम किसी शास्त्र का अध्ययन करते हैं , तो हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि वह शास्त्र कुछ महत्वपूर्ण सिद्धांतों का पालन कर रहा है या नहीं । अगर इन सिद्धांतों का उल्लंघन हो रहा है , तो वह शास्त्र मिलावटी है और उसकी प्रामाणिकता संदिग्ध हो जाती है ।

1. परस्पर विरोधाभास नहीं होना चाहिए :

किसी भी प्रमाणिक शास्त्र में परस्पर विरोधी बातें नहीं होनी चाहिए । यदि एक शास्त्र में एक विचार प्रस्तुत किया गया है और बाद में उसी शास्त्र में उस विचार का खंडन किया गया है , तो यह उस शास्त्र के मिलावटी होने का संकेत है । उदाहरण के लिए , अगर शास्त्र के आरंभ मैं धर्म के नियमों का पालन करने की शिक्षा दी जा रही हो और अंत में उन नियमों को नकारा जा रहा हो , तो यह विरोधाभास दर्शाता है कि वह शास्त्र प्रामाणिक नहीं है । प्रमाणिक शास्त्रों में हर शिक्षा एक सुसंगत प्रवाह में होती है , जिसमें कोई विरोधाभास नहीं होता ।

अगर एक साधारण व्यक्ति द्वारा लिखे गए ग्रंथ में भी विरोधाभास नहीं होता है , तो ऋषि , जो तत्व ज्ञानी थे , कैसे एक ही शास्त्र में परस्पर विरोधी बातें लिख सकते हैं ? इसलिए , जब हम शास्त्रों का अध्ययन करें , तो हमें अपनी बुद्धि का उपयोग करके शास्त्र की सच्चाई और प्रमाणिकता की जांच करनी

Edit with WPS Office

चाहिए ।

2. प्रसंग विरोध नहीं होना चाहिए :

शास्त्र के किसी भी भाग में एक विषय को प्रारंभ करने के पश्चात उसे पूरी तरह से समझाएं बिना या समाप्त किए बिना , दूसरा विषय प्रारंभ हो जाता है , तो यह प्रसंग विरोध कहलाता है । यह स्पष्ट संकेत है कि उस शास्त्र के साथ छेड़छाड़ हुई है । उदाहरण के लिए , यदि कोई शस्त्र धर्म की एक विशेष विधि को समझाना प्रारंभ करता है , परंतु बीच में ही उसे छोड़कर किसी और विषय पर चर्चा प्रारंभ कर देता है , तो यह अस्वाभाविक और अप्रमाणिक माना जाएगा । प्रमाणिक शास्त्रों में प्रत्येक विषय का क्रमिक और संगठित विवरण होता है , जिसमें किसी विषय को बिना पूर्ण किए छोडा नहीं जाता ।

3. वेदों के विरुद्ध कुछ नहीं होना चाहिए :

वेद सनातन धर्म के मूल और शाश्वत ज्ञान का स्रोत है । किसी भी प्रमाणिक शास्त्र में वेदों के विपरीत कोई बात नहीं होनी चाहिए । यदि कोई शास्त्र वेदों में बताए गए सिद्धांतों के विरुद्ध जाता है , तो वह शास्त्र पूर्णतः अप्रामाणिक और अमान्य माना जाएगा । वेद परमात्मा का ज्ञान है , इसलिए जहां मनुष्यों से भूल हो सकती है , परमात्मा से नहीं । हम वेद मंत्रों के अर्थ का गलत भाष्य या व्याख्या कर सकते हैं , लेकिन वेद स्वयं में त्रुटिहीन है । इसलिए , जब भी वेदों और किसी अन्य ग्रंथ में किसी विषय को लेकर विवाद की स्थिति उत्पन्न होती है , तो वेदों को ही सर्वमान्य और अंतिम प्रमाण माना जाता है । मनुष्यों को अपनी बातों की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए वेदों के मंत्रों का संदर्भ देना पड़ता है , जिससे यह स्पष्ट होता है कि वेद ही सर्वोच्च है । वेदों को ही धर्म के प्रति जिज्ञासु व्यक्तियों के लिए एकमात्र प्रमाणिक शास्त्र माना जाता है । वेदों का सम्मान और उनके सिद्धांतों के अनुरूप जानकारी ही किसी भी शास्त्र की प्रमाणिकता का वास्तविक मापदंड हैं ।

Edit with WPS Office

कुछ वैदिक शास्त्र एवं उनके प्रमाणिक सोर्स :

सनातन धर्म के शास्त्रों में मिलावट एक गंभीर समस्या है , विशेष रूप से आधुनिक समय में , जब वेद , उपनिषद , भगवत गीता , और अन्य पवित्र ग्रंथों के नाम पर कई अप्रामाणिक पुस्तकें बाजार में उपलब्ध है । कई लोग इन ग्रंथो को पढ़कर यह मान लेते हैं कि वे प्रमाणिक शास्त्रों का अध्ययन कर रहे हैं , परंतु वास्तविकता यह है कि इनमें से कई ग्रंथों की प्रमाणिकता संदिग्ध होती है ।

यह आवश्यक है कि पाठक यह समझे कि सभी पुस्तकें जो वेद या उपनिषद के नाम पर बिक रही है ,वे सही और प्रमाणिक नहीं होती । इसलिए किसी भी शास्त्र को पढ़ने से पहले उसकी प्रामाणिकता की जांच करना बहुत आवश्यक है । प्रमाणिक शास्त्रों का अध्ययन ही सही ज्ञान और धर्म की सच्ची समझ प्रदान करता है । इसलिए कुछ प्रमाणिक ग्रंथों का वर्णन नीचे किया जा रहा है ।

1. संपूर्ण वेदभाष्य (हिंदी)

भाष्यकारों के नाम ___

- **ऋग्वेद ___** महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती , आर्य मुनि जी , स्वामी ब्रह्ममुनि जी परिव्राजक ।
- **यजुर्वेद ___** महर्षि दयानंद सरस्वती ।
- **सामवेद ___** पंडित रामनाथ वेदालङ्कार , पंडित हरिशरण सिद्धातांलंकार ।
- **अथर्ववेद ___** पंडित क्षेमकरणदास त्रिवेदी , पंडित हरिशरण सिद्धातांलंकार ।

2. **विशुद्ध मनुस्मृति ___**डॉ सुरेंद्र कुमार
3. **वाल्मीकि रामायण ___** स्वामी जगदीश्वरानंद सरस्वती
4. **महाभारत ___** स्वामी जगदीश्वरानंद सरस्वती
5. **षड्दर्शन ___** आचार्य उदयवीर शास्त्री

Edit with WPS Office

6. **संस्कार विधि** ___ महर्षि दयानंद सरस्वती
7. **एकादशोपनिषद्** ___ महात्मा नारायण स्वामी , सत्यव्रत सिद्धांतालंकार

आपसे अनुरोध है कि जब भी कोई शास्त्र या ग्रंथ खरीदे , केवल प्रामाणिक और विश्वसनीय स्रोत से ही खरीदे । आजकल सभी ग्रंथ ऑनलाइन उपलब्ध है , ऊपर दिए गए ग्रंथों के नाम के साथ भाष्यकार का नाम टाइप करके आसानी से प्रमाणिक ग्रंथ घर बैठे ही प्राप्त कर सकते हैं । यह सुनिश्चित करें कि आप किसी प्रमाणिक स्रोत से ही शास्त्रों का अध्ययन करें , ताकि आपको सही और प्रमाणिक जानकारी प्राप्त हो सके । धन्यवाद ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 93. अष्ट प्रमाण

प्राचीन सनातन वैदिक ग्रंथों में समय-समय पर मिलावट और प्रक्षेपण का प्रश्न उठता रहा है । यह समस्या मुख्यत: महाभारत , रामायण , मनुस्मृति और अन्य प्रमुख ग्रंथों में देखी जाती है , जहां मूल ग्रंथों में श्लोकों की संख्या समय के साथ बढ़ती चली गई । उदाहरण के तौर पर , महाभारत के बारे में माना जाता है कि मूल **"जय संहिता "** में केवल 8000 श्लोक थे , जो बाद में एक लाख 10000 श्लोक तक पहुंच गए । इस प्रकार की मिलावट या प्रक्षेपण की समस्या के चलते ग्रंथों के अध्ययन में भ्रम उत्पन्न हो सकता है । ऐसे में यह आवश्यक हो जाता है कि इन ग्रंथो में प्रक्षेप (मिलावटी) श्लोकों की पहचान की जाए । प्राचीन शास्त्रों में बताए गए , आठ प्रमुख प्रमाणों का

Edit with WPS Office

सही उपयोग करके हम इन प्रक्षिप्त श्लोकों की पहचान कर सकते हैं । इन प्रमाणों की सहायता से हम सत्य और असत्य , प्रमाणिक और अप्रामाणिक के बीच अंतर कर सकते हैं । न्याय दर्शन , जो प्राचीन भारतीय दर्शन शास्त्र की प्रमुख शाखाओं में से एक है , तर्क और प्रमाण के सिद्धांतों पर आधारित है । न्याय दर्शन के अनुसार , ज्ञान को प्राप्त करने के लिए प्रमाण (साक्ष्य) आवश्यक होते हैं । इस प्रणाली में आठ प्रमाणों का वर्णन किया गया है , जो सत्यं ज्ञान की प्राप्ति के साधन है । आइए इन आठ प्रमाणों के बारे में विस्तार से जानते हैं , साथ ही उनके सूत्र भी प्रस्तुत करते हैं ।

1. **प्रत्यक्ष प्रमाण :** यह प्रमाण इंद्रियों द्वारा प्राप्त जानकारी पर आधारित होता है । जब कोई वस्तु इंद्रियों (जैसे आंखों , कानों) द्वारा प्रत्यक्ष रूप से जानी जाती है , तो उसे प्रत्यक्ष प्रमाण कहते हैं , लेकिन पास जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वह मनुष्य ही है , यह प्रत्यक्ष प्रमाण है ।

सूत्र___ " इन्द्रियांर्थसन्निकर्षोत्पन्नं ज्ञानं प्रत्यक्षम् ।। " (न्याय सूत्र . 1.1.4) (इंद्रियों के द्वारा वस्तुओं का साक्षात संपर्क जब होता है , तो जो ज्ञान उत्पन्न होता है , उसे प्रत्यक्ष कहते हैं ।

2. **अनुमान प्रमाण :** अनुमान प्रमाण का अर्थ होता है किसी पदार्थ या घटना के चिन्हों से उसका ज्ञान प्राप्त करना । उदाहरण स्वरूप , यदि हम धुआं देखते हैं , तो यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कहीं आग लगी होगी । इसी प्रकार , इस सृष्टि को देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसे बनाने वाला कोई होना चाहिए ।

सूत्र___ " पूर्ववत्तदूत्तसम्प्रतिपति : अनुमानम् । " (न्यायसूत्र. 1.1.5) (पहले से ज्ञात लक्षणों के आधार पर उस वस्तु का ज्ञान , जो प्रत्यक्ष रूप से नहीं देखा गया हो , अनुमान कहलाता है ।)

Edit with WPS Office

3. उपमान प्रमाण : यह प्रमाण तुलनात्मक ज्ञान पर आधारित होता है । उदाहरण के लिए , यदि किसी व्यक्ति ने एक प्रकार का हाथी देखा है और फिर दूसरा हाथी दिखा , तो वह समानता के आधार पर दूसरे हाथी को पहचान सकता है ।

सूत्र___ " साध्श्यतदूत्त्वबोधकं ज्ञानं उपमानम् । " (न्यायसूत्र. 1.1.6)
(किसी अज्ञात वस्तु की जानकारी उस वस्तु के समानता के आधार पर प्राप्त ज्ञान उपमान कहलाता है)

4. शब्द प्रमाण : यह प्रमाण शास्त्रों और ऋषियों के द्वारा दिए गए ज्ञान पर आधारित होता है । जैसे , भेजो और उपनिषदों में बताए गए मोक्ष के ज्ञान को सत्य मानकर चलना शब्द प्रमाण कहलाता है ।

सूत्र___ आप्तोपदेश : शब्द : । (न्याय सूत्र . 1.1.7)
(विश्वसनीय व्यक्ति द्वारा कहे गए वाक्य जो ज्ञान प्रदान करते हैं , उन्हें शब्द प्रमाण कहते हैं)

5. एतिहा (इतिहास) प्रमाण : जो घटनाएं सत्यवादी और विद्वानों द्वारा बताई गई है , और जो असंभव या असत्य प्रतीत नहीं होती , वे इतिहास प्रमाण के अंतर्गत आती है । उदाहरण के लिए , वेद सम्मत ग्रंथों में लिखे गए इतिहास को इसी श्रेणी में रखा जाता है ।

सूत्र___ पूर्वोपदेशसिद्ध ज्ञानं ऐतिहाम् । (न्याय सूत्र. 3.1.13)
(जो ज्ञान पुरानी परंपराओं या वचनों के आधार पर आता है , उसे इतिहास प्रमाण कहा जाता है)

6. अर्थापत्ति प्रमाण : यह प्रमाण किसी बात के न कहें जाने पर भी उसे समझने की योग्यता पर आधारित होता है । जैसे , यदि कहा जाता है कि बादलों से बारिश होती है , तो यह समझा जा सकता है कि बिना बादल के बारिश नहीं होगी ।

Edit with WPS Office

***सूत्र*___ *अनुपलब्धिकरणम् अर्थापत्ति : ।*   (न्याय सूत्र . 2.1.10)
(जब प्रत्यक्ष या अनुमान से वस्तु का ज्ञान नहीं होता , तो जो ज्ञान प्राप्त होता है , उसे अर्थापत्ति कहते हैं ।)

7. संभव प्रमाण : यह प्रमाण उस घटना पर आधारित होता है , जो सृष्टि क्रम के विरुद्ध न हो । जैसे , संतान उत्पत्ति के लिए माता-पिता का होना संभव और आवश्यक है , इसलिए इस प्रकार की असंभव बातों को प्रमाण नहीं माना जा सकता ।

सूत्र*___ *" यत्सर्वत्र सम्भवति तत् सम्भव : । (न्याय सूत्र. 3.1.12)
(जिस वस्तु का कहीं भी संभव होना सत्य होता है , उसे सम्भव प्रमाण कहां जाता है ।)

8. अभाव प्रमाण : जब किसी वस्तु की अनुपस्थिति के आधार पर ज्ञान प्राप्त होता है , तो उसे अभाव प्रमाण कहते हैं । जैसे , यदि कहा जाए कि किसी स्थान पर जल है , परंतु वह जल नहीं मिला , तो इस अभाव से यह ज्ञान प्राप्त होता है कि वहां जल नहीं है ।

सूत्र*___ *अभावप्रमाणं अनुपलब्धि : । (न्यायसूत्र. 2.1.11)
(किसी वस्तु की अनुपस्थिति या अभाव का ज्ञान अनुपलब्धि प्रमाण कहलाता है ।)

न्याय दर्शन में प्रमाणों का यह वर्गीकरण सत्य ज्ञान प्राप्त करने के विभिन्न माध्यमों को स्पष्ट करता है । इनमें से प्रत्येक प्रमाण का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है और यह हमें तर्क और साक्ष्य आधारित दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करता है ।

इन आठ प्रमाणों का सही ढंग से उपयोग करने पर हम ग्रंथों में मिलावट या प्रक्षेपण की पहचान कर सकते हैं । प्राचीन काल में हस्तलिखित प्रतियों के

Edit with WPS Office

माध्यम से स्वार्थी व्यक्तियों द्वारा शास्त्रों में प्रक्षिप्त श्लोक जोड़े जाते थे , जिससे भ्रम उत्पन्न होता था । अब यह हमारा उत्तरदायित्व बनता है कि हम इन प्रमाणों का उपयोग कर शास्त्रों के सही अर्थ करें और आने वाली पीढ़ियों को सत्य ज्ञान से परिचित कराएं ।

यह प्रक्रिया केवल वैदिक शास्त्रों तक सीमित नहीं है , बल्कि यह एक व्यापक दृष्टिकोण है जो संपूर्ण भारतीय साहित्य पर लागू होता है । इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि हम सत्य और असत्य के बीच भेद करने की इस कला को समझें और अपने धर्म , संस्कृति और ज्ञान की सही पहचान करें ।

•शास्त्र प्रमाण क्या होते हैं और क्यों जरूरी है धर्म में ?

वर्तमान युग में जब धर्म पर तरह-तरह के प्रश्न उठते हैं , तो एक गंभीर और बुनियादी प्रश्न भी होता है ___" शास्त्र प्रमाण का क्या अर्थ है ? और क्यों धर्म में केवल तर्क या भावना नहीं , बल्कि शास्त्र प्रमाण आवश्यक है ? " सनातन धर्म केवल आस्था या परंपरा पर आधारित नहीं है , बल्कि यह शास्त्रों पर आधारित वैज्ञानिक और तर्कसंगत जीवन पद्धति है । इस लेख में हम समझेंगे कि शास्त्र प्रमाण किसे कहते हैं , कितने प्रकार के होते हैं और धर्म में इनकी भूमिका क्यों अपरिहार्य है ।

शास्त्र प्रमाण का अर्थ क्या है ?

संस्कृत में ' प्रमाण ' का अर्थ है ___ ज्ञान प्राप्त करने का प्रमाणिक साधन ।
________ ऐसे प्रमाण जिनसे धर्म , आत्मा , परमात्मा , मोक्ष आदि विषयों की सत्यता सिद्ध होती है और जिनका आधार शास्त्र होते हैं ।

" **शास्त्र प्रमाणम्** " का प्रयोग रामायण , महाभारत , भगवत गीता ,

Edit with WPS Office

उपनिषद , ऋषियों , आचार्यों की शिक्षाओं में प्रमुख रूप से मिलता है ।

गीता में शास्त्र प्रमाण का महत्व :

" तस्माच्छास्त्रं प्रमाण ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ । " (भगवत गीता. 16/24)
भावार्थ : तुझे क्या करना चाहिए और क्या नहीं , इसका निर्णय शास्त्र प्रमाण से ही करना चाहिए ।

" य: शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्त्तते कामकारत: । " (गीता. 16/23)
भावार्थ : जो शास्त्र को त्यागकर अपनी इच्छानुसार कार्य करता है , वह न सिद्धि पाता है , न सुख और न मोक्ष ।

यह स्पष्ट करता है कि धर्म का आधार केवल भावना , परंपरा , या समाज नहीं है ___ बल्कि शास्त्र है ।

प्रमाण के प्रकार __ दर्शनशास्त्र की दृष्टि से :
भारतीय दर्शन में छ: प्रमाण बताए गए हैं , लेकिन विभिन्न दर्शनों में भिन्न भिन्न माने गए हैं । आइए हम संक्षेप में उन्हें देखें:

प्रमाण का नाम	**अर्थ**	**उपयोग**
• प्रत्यक्ष	इंद्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान	जो प्रत्यक्ष दिखाई दे
• अनुमान	तर्क द्वारा निष्कर्ष	जैसे __ धुएं से आग का अनुमान
• उपमान	उपमा या तुलना से ज्ञान	जैसे __ घोड़े को गाय से तुलना करके जानन
• शब्द	विश्वसनीय स्रोत से सुना ज्ञान	शास्त्र

Edit with WPS Office

और गुरु की वाणी

- अधपत्ति अन्यथा न होने से निष्कर्ष जैसे __ व्रती दिल में नहीं खाता , तो रात में खाता होगा

- अनुपलब्धि अनुप्रस्थिति का ज्ञान जहां वस्तु नहीं है , वह जानना

सनातन धर्म में " शब्द प्रमाण " को सर्वोपरि माना गया है , क्योंकि आत्मा , परमात्मा , पुनर्जन्म , मोक्ष आदि को प्रत्यक्ष या अनुमान से नहीं जाना जा सकता ।

" शब्द प्रमाण " का सर्वोत्तम स्रोत है ___ वेद और शास्त्र ।

- वेद अपौरुषेय है ___ यानी मनुष्य निमित्त नहीं है ।
- वेदों से उत्पन्न हुए उपनिषद् , स्मृतियां , भगवद गीता , ब्राह्मण ग्रंथ , दर्शनशास्त्र , धर्मशास्त्र , आदि -सब " शास्त्र " है ।
- अतः जो विषय प्रत्यक्ष से परे हैं ___ आत्मा , धर्म , ईश्वर , मोक्ष ___ उनके लिए केवल शास्त्र प्रमाण ही अंतिम प्रमाण है ।

शास्त्र प्रमाण किन-किन ग्रंथों को माना गया है ?

सनातन धर्म में निम्न ग्रंथों को शास्त्र प्रमाण माना गया है :

1. **चार वेद** ___ ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , अथर्ववेद
2. **ग्यारह उपनिषद** ___ ब्रह्म विद्या और आत्मज्ञान का स्रोत
3. **भगवत गीता** ___ उपनिषदों का सार
4. **षडदर्शन** ___ 6 दर्शन ग्रंथ
5. **विशुद्ध मनुस्मृति** ___ धर्म और सामाजिक व्यवस्था के नियम
6. **धर्म सूत्र , श्रुति - स्मृति , आचारशास्त्र** ___ व्यवहारिक जीवन के नियम

Edit with WPS Office

7. **ऋषियों के भाष्य और टीकाएं ___** जैसे शंकराचार्य , रामानुजाचार्य , माधवाचार्य आदि के भाष्य
8. **महाकाव्य ___** रामायण , महाभारत

नोट :

18 पुराण ऋषियों के ग्रंथ नहीं है इसलिए इन्हें वैदिक साहित्य एवं शास्त्रों में नहीं रखा तथा गिना जाता है पुराणों की बातें वेद , तर्क , बुद्धि , प्रकृति के नियम तथा सृष्टि क्रम के ही विरुद्ध है जिनकी कोई प्रमाणिकता नहीं है । प्रत्येक पुराण एक दूसरे की विरोधी बातें करते हैं । यह बहुत ही नवीन ग्रंथ है बाद में लिखे गए हैं ।

" धार्मिक विषयों में यदि कहीं विरोधाभास उत्पन्न हो , तो उसका अंतिम और सर्वोच्च निर्णय केवल वेदों के आधार पर ही किया जाएगा । वेद ही धर्म के अंतिम निर्णायक प्रमाण है ___ उनके ऊपर किसी अन्य ग्रंथ का अधिकार नहीं है । "

शास्त्रीय प्रमाण (Scriptural Reference) :

मनुस्मृति. 2.6 ______
वेद: अखिलो धर्ममूलम ।
भावार्थ : वेद संपूर्ण धर्म का मूल है ।

मनुस्मृति. 2.8 ______
" श्रुतिस्तु वेदों विज्ञेय: धर्मशास्त्रं तु स्मृति: । "
भावार्थ : श्रुति अर्थात वेद ही ज्ञेय और स्मृति उनसे ही प्रेरित है ।

गौतम धर्म सूत्र. 1/1 -2 ______
" धर्मो वेद: प्रमाणम् । "
भावार्थ : धर्म का प्रमाण केवल वेद ही हैं ।

Edit with WPS Office

शंकराचार्य ___ ब्रह्म सूत्र भाष्य. 1/1/3
" श्रुत्युनुगृहीत: अर्थों धर्म: "
भावार्थ : जो अर्थ वेद श्रुति (श्रुति = वेद) द्वारा अनुमोदित हो वही धर्म है ।

न्याय दर्शन. 1/1/1 (गौतम ऋषि)
" आत्मज्ञानान्मोक्ष: । तत्र प्रमाणानि... श्रुति: प्रमुखम् । "
भावार्थ : आत्मा के ज्ञान से मोक्ष होता है , और इसका प्रमुख प्रमाण ' श्रुति ' (वेद) ही है ।

जब भी किसी शास्त्र , पुराण , स्मृति या अन्य ग्रंथ में मतभेद या विरोध हो , तो उस स्थिति में अंतिम निर्णय केवल वेद के अनुसार ही मान्य होगा । वेद अपौरुषेय , शाश्वत और सर्वोपरि प्रमाण है ___ शेष सभी ग्रंथ वेदों के अधीन ही माने जाते हैं ।

धर्म में शास्त्र प्रमाण क्यों आवश्यक है ?

1. अनंत विषयों का ज्ञान बिना शास्त्र असंभव है

आत्मा , ईश्वर , पुनर्जन्म , कर्मफल आदि ऐसे विषय है जिन्हें प्रत्यक्ष या वैज्ञानिक उपकरणों से नहीं जाना जा सकता ।

2. धर्म का मानक निर्धारण

सही क्या है और गलत क्या ___ इसका निर्णय समाज या किसी व्यक्ति की इच्छा से नहीं हो सकता । इसके लिए शास्त्र अंतिम प्रमाण है ।

3. संप्रदायों में मतभेद का समाधान

जब भिन्न विचारधाराए सामने आती है , तो उनका निर्णय शास्त्र के आधार पर होता है ___ न कि किसी व्यक्ति की राए पर ।

Edit with WPS Office

4. भ्रम और अंधविश्वास से बचाव

यदि शास्त्र प्रमाण न हो , तो लोग मनमाने कर्म , पूजा - पद्धतियां , या विश्वास बना सकते हैं । इससे अधर्म का जन्म होता है ।

5. धार्मिक शुद्धता और वैज्ञानिकता बनाए रखना

शास्त्रों में यज्ञ , कर्मकांड , जीवन शैली आदि का वैज्ञानिक आधार होता है । यह प्रमाणिकता देता है ।

शास्त्र प्रमाण का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

हालांकि शास्त्र प्रत्यक्ष प्रमाण जैसे नहीं होते , लेकिन उनका वैज्ञानिक विश्लेषण संभव है :

- **प्राणायाम , ध्यान , हवन ___** आधुनिक विज्ञान ने इनके लाभ प्रमाणित किए हैं ।
- **धर्म के नियम (ब्रह्मचर्य , शाकाहार, यज्ञ) ___** स्वास्थ्य और मानसिक संतुलन से जुड़े हैं ।
- **पुनर्जन्म पर शोध ___** डॉ इयान स्टीवेन्सन जैसे वैज्ञानिकों ने इसके प्रमाण प्रस्तुत किए हैं ।

क्या तर्क और भावना शास्त्र से ऊपर हो सकते हैं ?
नहीं ।

" तर्कोऽप्रतिष्ठानात् । " ___ ब्रह्म सूत्र. 2/1/11
भावार्थ : तर्क की कोई निश्चित स्थापना नहीं होती , वह बदलता रहता है ।

अतः केवल तर्क और भावना के आधार पर धर्म नहीं समझा जा सकता ।

Edit with WPS Office

शास्त्र ही एकमात्र स्थायी प्रमाण है ।

शास्त्र , तर्क और अनुभव ___ तीनों की भूमिका

सर्वोत्तम सिद्धांत है :
शास्त्र + तर्क + अनुभूति = सत्य ज्ञान

- **शास्त्र.** दिशा देते हैं ,
- **तर्क.** समझ को पुष्ट करता है ,
- **अनुभव.** उसे आत्मसात करता है ।

वर्तमान युग में शास्त्र प्रमाण का महत्व और आवश्यकता

- जब आज धर्म के नाम पर भ्रम पाखंड और विकृतियां फैल रही है , तब शास्त्र ही वह कसौटी है जो धर्म और अधर्म में अंतर करते हैं ।
- वामपंथी विचार , पश्चिमी प्रभाव , और धर्म विरोधी प्रचार से लड़ने के लिए हमें शास्त्रों का ज्ञान और उनकी प्रमाणिकता को पुनः स्थापित करना होगा ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•94. अध्यात्म क्या है

Edit with WPS Office

अध्यात्म शब्द का अर्थ है " आत्मा से संबंधित " या आत्मा का ज्ञान " यह एक गहन प्रक्रिया है , जो मनुष्य को उसके वास्तविक स्वरूप से परिचित कराती है और उसे भौतिक संसार से परे , आत्मा और परमात्मा के अस्तित्व की खोज की और प्रेरित करती है । अध्यात्म किसी विशेष धर्म या पंथ तक सीमित नहीं है , बल्कि यह जीवन की मूलभूत सच्चाइयों और अस्तित्व के रहस्यों को समझने का प्रयास है ।

अध्यात्म की परिभाषा :

अध्यात्म वह प्रक्रिया है , जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने आंतरिक सत्य , आत्मा और परमात्मा के साथ एकता का अनुभव करता है । यह मन , शरीर , और आत्मा को संतुलित करने की दिशा में काम करता है और जीवन के गहरे अर्थ और उद्देश्य की खोज कराता है ।

अध्यात्म के प्रमुख पक्ष :

1. **आत्म अनुभूति** : अध्यात्म का पहला चरण है आत्मज्ञान , यानी " मैं कौन हूं ? " का उत्तर ढूंढना । यह जीवन के बाहरी पक्षों को छोड़कर आंतरिक चेतना की और मुड़ने की प्रक्रिया है ।

2. **परमात्मा की खोज** : अध्यात्म का अंतिम उद्देश्य परमात्मा को समझना और उससे एकाकार होना है ।

3. **संसार से विरक्ति** : अध्यात्म व्यक्ति को यह बोध कराता है कि संसार के भौतिक सुख - दुख अस्थायी है , और स्थायी शांति और आनंद केवल आत्मा और परमात्मा के संबंध में है ।

4. **जीवन की उद्देश्यपूर्ण दिशा** : अध्यात्म जीवन के उद्देश्य की खोज है , जो मानव को उसकी सीमाओं और उसके अस्तित्व के गहरे

Edit with WPS Office

रहस्यों को समझने की प्रेरणा देता है ।

अध्यात्म का महत्व :

अध्यात्म मनुष्य को आंतरिक शांति , स्थिरता और संतुलन प्रदान करता है । यह जीवन की जटिलताओं और तनावों से निपटने में सहायता करता है , और जीवन को एक उद्देश्य पूर्ण और सार्थक दिशा में ले जाता है । मनुष्य स्वभाव से ही चैतन्य है । उसके मन में स्वत : ही उसके निर्माता को जानने की इच्छा होती रहती हैं । जब अविधा तथा अज्ञानता के कारण मनुष्य स्वयं को ब्रह्म से भिन्न मानकर , सांसारिक बंधन में पड़कर , जन्म - मरण में फंसा हुआ , अनंत दुखों को भोगता है तब उसे स्वत: ही जगत के मिथ्या स्वरूप का आभास होने लगता है । उसके मन में विभिन्न प्रश्न एवं जिज्ञासा उत्पन्न होने लगता है । उपनिषदों का स्पष्ट उपदेश है कि यदि जीव स्थाई सुख शांति की प्राप्ति करना चाहता है तो उसे आत्मा अनुभूति के लिए प्रयत्नशील होना पड़ेगा । अध्यात्म की और बड़े बिना स्थाई सुख शांति की प्राप्ति असंभव है । इसलिए सर्व कल्याणकारी वेद , जीवों को , कर्म , उपासना , और ज्ञान के उपदेश द्वारा अध्यात्म पथ पर आगे बढ़ाता है । जो जिस अवस्था में है उसे उसी अवस्था में अध्यात्म की ओर नियोजित करना ही वेद का एकमात्र लक्ष्य है । अतः जो जिस श्रेणी में , जिस अवस्था में और जहां है , वहीं अपना धर्म का पालन करता हुआ स्वाभाविक रूप से अध्यात्म की ओर बढ़ता जाए ।

मनुष्य का बच्चा बिना सिखाएं स्वयं से कुछ भी नहीं सीख सकता । यदि उसे कोई शिक्षा न दे , तो वह अपने आसपास की भौतिक वस्तुओं , पशु - पक्षियों को देखकर उन्हीं के जैसा व्यवहार करना सीख लेता है । बिना मार्गदर्शन के , मनुष्य अपनी बुद्धि का सही ढंग से उपयोग नहीं कर पाता । इसलिए , मनुष्य केवल स्वाभाविक ज्ञान ही अर्जित कर सकता है । परंतु यथार्थ और गहन ज्ञान प्राप्त करने के लिए उसे किसी न किसी गुरु का सानिध्य अवश्य चाहिए ।

Edit with WPS Office

जब मनुष्य को सृष्टि के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है , तभी वह सुख-दुख जीवन मरण के बंधनों से मुक्त होकर , परमानंद रूपी मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है । यही प्रत्येक मनुष्य के जीवन का मुख्य उद्देश्य होना चाहिए । क्योंकि वही विद्या वास्तविक है , जो मोक्ष प्राप्त करने में सहायक हो , और अध्यात्म उस यात्रा की पहली सीढ़ी है ।

ज्ञान को दो प्रमुख श्रेणियां में विभाजित किया जा सकता है ; **आध्यात्मिक ज्ञान** और **भौतिक ज्ञान ।**

1. **आध्यात्मिक ज्ञान :** इसमें आत्मा , परमात्मा , जन्म , मृत्यु और मोक्ष से संबंधित ज्ञान आता है । यह ज्ञान व्यक्ति को उसकी आंतरिक वास्तविकता से परिचित कराता है और जीवन के उच्चतम उद्देश्यों की ओर प्रेरित करता है ।
2. **भौतिक ज्ञान :** इसमें संसार के पदार्थों , विज्ञान , तकनीक , और भौतिक जीवन से संबंधित जानकारियां आती हैं । यह ज्ञान भौतिक संसाधनों का उपयोगकर जीवन को अधिक सुविधाजनक और उन्नत बनाने में सहायक होता है ।

समाज के समुचित विकास और शांति के लिए दोनों प्रकार के ज्ञान की आवश्यकता होती है । भौतिक ज्ञान को सही दिशा में संचालित करने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है , क्योंकि आध्यात्मिकता के अभाव में भौतिक उन्नति का दुरुपयोग हो सकता है , जो विनाश का कारण बनता है । वर्तमान समय में , हमने भौतिक क्षेत्रों में बहुत प्रगति कर ली है , परंतु आध्यात्मिक ज्ञान की कमी के कारण इसका दुरुपयोग हो रहा है , जिससे अनेक समस्या उत्पन्न हो रही है ।

आध्यात्मिक उन्नति समाज में मानवीय गुणों , जैसे प्रेम , करुणा , और सामंजस्य ,को बढ़ावा देती है । जब भौतिक और आध्यात्मिक उन्नति साथ-साथ होती है , तब उसका लाभ संपूर्ण प्राणी मात्र के लिए होता है । अध्यात्म मनुष्य को प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करना सिखाता है और जीवन में संतुलन लाता है ।

Edit with WPS Office

जहां भौतिक ज्ञान सीमित होता है , वहीं से आध्यात्मिक ज्ञान की यात्रा शुरू होती है । सृष्टि के भौतिक रूप को देखकर हम केवल भौतिक ज्ञान में उन्नति कर सकते हैं , लेकिन सृष्टि के पीछे छिपी वास्तविकता और गहरे अर्थ को समझने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता होती है । यही कारण है कि भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के ज्ञान का संतुलन मानव जीवन और समाज के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है ।

आध्यात्मिक ज्ञान की आवश्यकता :

मनुष्य की जिज्ञासा और ज्ञान की प्यास केवल आध्यात्मिक ज्ञान से ही तृप्त हो सकती है , क्योंकि यही ज्ञान उसे जीवन की पूर्णता की ओर ले जाता है । यदि सृष्टि के पदार्थों में इतनी सुंदरता और सुख है , तो उन पदार्थों को बनाने वाले परमपिता परमात्मा को प्राप्त करने में कितना असीम आनंद होगा , यह सोचने योग्य है । जो जीवात्मा इस मानव शरीर को पाकर विभिन्न आश्चर्यजनक वस्तुओं का सृजन कर सकती है , और उस जीवात्मा को जानना संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य है ।

आज विज्ञान की उन्नति से प्रभावित होकर लोग यह भूल जाते हैं की प्राचीन समय में मानव ने धर्म ग्रंथो , विशेष रूप से वेदों से ही ज्ञान प्राप्त किया था । हमारे ऋषि - मुनियों ने इन्हीं वेदों के माध्यम से सृष्टि का कल्याण किया । ठीक उसी प्रकार जैसे शरीर और प्राण दोनों जीवन के लिए आवश्यक है , वैसे ही **भौतिक और आध्यात्मिक** ज्ञान दोनों संसार के संतुलन और कल्याण के लिए अनिवार्य है ।
बिना आध्यात्मिक ज्ञान के , भौतिक ज्ञान विनाशकारी सिद्ध होता है और दीर्घकाल तक टिक नहीं सकता । आज के विश्व में हम इस असंतुलन का दुष्परिणाम देख रहे हैं । आध्यात्मिक ज्ञान की कमी के कारण भौतिक उन्नति ने कई समस्याएं उत्पन्न की है , जैसे पर्यावरणीय विनाश , सामाजिक असंतुलन और मानसिक अशांति ।

Edit with WPS Office

आध्यात्मिक ज्ञान का क्षेत्र अत्यंत व्यापक और गहरा है। जिस प्रकार समुद्र की गहराई को मापने के लिए उसमें उतरना आवश्यक है , उसी प्रकार वास्तविक सुखऔर शांति की अनुभूति के लिए मनुष्य को आध्यात्मिकता में डूबना पड़ता है । जिसने स्वयं को अपने मानसिक , शारीरिक और भावनात्मक बंधनों से मुक्त कर लिया , वही वास्तविक सुखी है । और यह आत्मा - विजय केवल **आध्यात्मिक ज्ञान** के माध्यम से ही संभव है । भौतिक साधनों से यह विजय प्राप्त नहीं की जा सकती ।

अतः जीवन में सच्चा और स्थायी सुख प्राप्त करने के लिए **आध्यात्मिक ज्ञान** अति आवश्यक है । यही वह मार्ग है जो मनुष्य को उसकी वास्तविकता और परमात्मा के सत्य स्वरूप से जोड़ता है , जिससे वह आत्म शांति और आनंद की प्राप्ति कर सकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•95.ज्ञान , कर्म एवं उपासना योग

1. ज्ञान योग :

ज्ञान योग को वेदों में आत्म - ज्ञान और परम सत्य की प्राप्ति के लिए एक प्रमुख मार्ग के रूप में मान्यता दी गई है । यह योग का वह पथ है , जिसमें व्यक्ति अपने भीतर सत्य की खोज करता है और ब्रह्म (सर्वोच्च सत्य) का बौध प्राप्त करने का प्रयास करता है । इसे वेदांत दर्शन के आधार पर सबसे उच्चतम और दार्शनिक मार्ग माना गया है । आइए वेदों के संदर्भ में ज्ञान

Edit with WPS Office

योग को विस्तार से समझते हैं ।

ज्ञान योग की परिभाषा :

वेदों में ज्ञान योग का अर्थ है " ज्ञान के माध्यम से मुक्ति की प्राप्ति " । इसका लक्ष्य अद्वैत वेदांत (अद्वैत - द्वैत रहित) के अनुसार आत्मा और परमात्मा के एकत्व का अनुभव करना है । इस योग का सबसे कठिन और बौद्धिक मार्ग माना जाता है , क्योंकि इसमें व्यक्ति को अपने अस्तित्व और जगत के बारे में गहन अध्ययन और ध्यान करना होता है । वेदों के अनुसार , संसार की सभी समस्याओं और दुखों का मूल कारण अज्ञानता (अविधा) है । ज्ञान योग इस अज्ञान को मिटाकर आत्मा और ब्रह्म की पहचान कराता है । उपनिषदों , जो कि वेदों का अंतिम भाग माने जाते हैं , में ज्ञान योग को विशेष रूप से समझाया गया है । उपनिषदों में आत्मा (जीव) और ब्रह्म (परमात्मा) के एकत्व पर जोर दिया गया है , और इसे जानने को ही मुक्ति का मार्ग बताया गया है ।

ज्ञान योग के चार स्तंभ (महावाक्य) :

वेदों और उपनिषदों में चार प्रमुख महावाक्यों का वर्णन किया गया है , जो ज्ञान योग के स्तंभ माने जाते हैं ;

1. **प्रज्ञानं ब्रह्म (ऋग्वेद)** ___ ज्ञान ही ब्रह्म है । " यह बताता है कि सवौच्च ज्ञान ही ईश्वर की वास्तविकता है ।
2. **अहं ब्रह्मास्मि (बृहदारण्यक उपनिषद)** ___ मैं ही ब्रह्म हूं । " व्यक्ति को अपने भीतर परम सत्य का बोध करना ।
3. **तत्त्वमसि (छान्दोग्य उपनिषद)** ___ तू वही है । " जीव और ब्रह्म के एकत्व को प्रकट करता है ।
4. **अयमात्मा ब्रह्म (माण्डूक्य उपनिषद)** ___ "यह आत्मा ही ब्रह्म है । " यह कहता है कि जो आत्मा हमारे भीतर है , वही ब्रह्म का स्वरूप है ।

Edit with WPS Office

ज्ञान योग के प्रमुख चरण :

ज्ञान योग के मार्ग को चार प्रमुख चरणों में विभाजित किया जा सकता है , जिन्हें वेदांत में भी स्पष्ट किया गया है ;

1. **श्रवण** : गुरु से वेदांत ग्रंथों और उपनिषदों के उपदेशों को सुनना और उन्हें समझने का प्रयास करना ।
2. **मनन** : सुनी हुई बातों पर चिंतन और मनन करना , ताकि किसी प्रकार के संदेह को दूर किया जा सके ।
3. **निदिध्यासन** : ध्यान और गहन साधना के माध्यम से सत्य का अनुभव करना । यह आत्मा और ब्रह्म के एकत्व का प्रत्यक्ष अनुभव कराने का प्रयास है ।
4. **साक्षात्कार** : आत्म - साक्षात्कार या ब्रह्म -साक्षात्कार की अवस्था , जिसमें व्यक्ति अपने वास्तविक स्वरूप का अनुभव करता है और मुक्ति (मोक्ष) प्राप्त करता है ।

ज्ञान योग व्यक्ति को आत्मज्ञान और परम सत्य की प्राप्ति का मार्ग दिखाता है । यह मार्ग कठिन अवश्य है , परंतु इसका परिणाम मोक्ष और शाश्वत शांति की प्राप्ति है । वेदांत के इस दर्शन को समझने के लिए निरंतर अध्ययन , ध्यान , और गुरु के मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है । ज्ञान योग न केवल बौद्धिक प्रक्रिया है , बल्कि यह एक आंतरिक आध्यात्मिक जागरूकता की यात्रा है , जो व्यक्ति को स्वयं के भीतर और ब्रह्म के साथ एकत्व का अनुभव कराती है ।

2. कर्म योग :

कर्म योग वेदों के विशेष रूप से भगवत गीता में वर्णित एक महत्वपूर्ण योग पथ है , जिसमें व्यक्ति अपने कर्तव्यों को निष्काम भाव (फल की इच्छा किए बिना) से करते हुए मुक्ति की ओर बढ़ता है । वेदों में , कर्म योग को जीवन के यथार्थ से जुड़े होने के साथ-साथ आंतरिक शुद्धि और आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग माना गया है । यह जीवन में हर प्रकार के कर्म

Edit with WPS Office

(कार्य) को ईश्वर के प्रति समर्पण की भावना से करने पर बल दिया गया है । कर्म योग का उद्देश्य न केवल मोक्ष प्राप्ति है , बल्कि यह मानव जीवन के उद्देश्य को समझने में भी सहायक होता है । आइए , वेदों के अनुसार कर्म योग को विस्तार से समझते हैं ।

कर्म योग का अर्थ है " कर्म द्वारा योग की प्राप्ति " । इसमें व्यक्ति अपने कर्तव्यों और दायित्वों का पालन इस प्रकार करता है कि वह निस्वार्थ होकर कार्य करता है और किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत लाभ या सख की अपेक्षा नहीं रखता । इसे " निष्काम कर्म " कहा जाता है ।

कर्म शब्द का अर्थ है " कार्य „ या " क्रिया „ और योग का अर्थ है " संयोजन या एकत्व । इस प्रकार , कर्म योग का तात्पर्य है उस पथ से है , जिसमें कर्म के माध्यम से आत्म - साक्षात्कार और मुक्ति प्राप्त की जा सकती है ।

वेदों में कम को जीवन का आधार माना गया है । वेद बताते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति का जीवन कर्म से बंधा हुआ है , और कर्म से भाग नहीं सकते ।

ऋग्वेद और यजुर्वेद में इस बात पर जोर दिया गया है कि व्यक्ति को अपने कर्मों को धार्मिक , सामाजिक और नैतिक दायित्वों के साथ निभाना चाहिए । कर्म का प्रभाव हमारे वर्तमान और भविष्य दोनों पैर पड़ता है , और इसलिए यह महत्वपूर्ण है कि कर्म को सही भावना के साथ किया जाए ।

गीता का उपदेश है कि ___ ***" कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन " । 2.47 ।।*** व्यक्ति का अधिकार केवल कर्म करने में है , न कि उसके फलों में । यह कर्म योग का मुख्य सिद्धांत है , जिसमें व्यक्ति को अपने कर्तव्यों का पालन बिना फल की इच्छा किए करना सिखाया गया है ।

कर्म योग और निष्काम कर्म :

कर्म योग का मूल सिद्धांत निष्काम कर्म हैं । इसका अर्थ है , फल की इच्छा

Edit with WPS Office

किए बिना कर्म करना । कर्म करने के बाद फल पर नियंत्रण नहीं होता , इसलिए व्यक्ति को केवल कर्म पर ध्यान देना चाहिए । यह भावनात्मक और मानसिक संतुलन बनाए रखने में सहायता करता है और व्यक्ति को स्वार्थ और अहंकार से मुक्त करता है । हम कर्मों को पूर्णता से करें , परंतु परिणामों के प्रति आसक्ति न रखें ।

कर्म योग और वेदों के चार पुरुषार्थ :

वेदों के अनुसार , मानव जीवन में चार पुरुषार्थ (जीवन के उद्देश्य) होते हैं :

1. **धर्म** : नैतिकता और कर्तव्य पालन ।
2. **अर्थ** : धन और संपत्ति का अर्जन ।
3. **काम** : इच्छाओं की पूर्ति ।
4. **मोक्ष** : मुक्ति या आत्म-साक्षात्कार ।

कर्म योग का अंतिम उद्देश्य व्यक्ति को कर्म के बंधनों से मुक्त करना और आत्मा की शुद्धि के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति करना है । जब व्यक्ति अपने जीवन के प्रत्येक कर्म को ईश्वर की सेवा मानकर करता है और उसमें किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं रखता , तो वह धीरे-धीरे अपनी आत्मा को पवित्र और निर्मल कर लेता है ।

वेदों में यह स्पष्ट किया गया है कि व्यक्ति को अपने कर्मों से भागने के स्थान पर , उन्हें सही भावना और निष्ठा के साथ करना चाहिए । कर्म योग न केवल व्यक्तिगत विकास का मार्ग है , बल्कि यह समाज और ब्रह्मांड के साथ संतुलन बनाए रखने का भी महत्वपूर्ण साधन है ।

3. उपासना योग :

उपासना योग वेदों और उपनिषदों में एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक मार्ग है , जिसका उद्देश्य भक्त को ईश्वर के निकट लाना है । " उपासना „ का अर्थ होता है " पास बैठना „ या " समीपता प्राप्त करना " और उपासना योग में

Edit with WPS Office

व्यक्ति अपने ध्यान , प्रार्थना और साधना के माध्यम से ईश्वर की निकटता प्राप्त करने का प्रयास करता है । यह योग साधक को ईश्वर से जोड़ने , मन की शुद्धि , और आत्मिक उन्नति की और प्रेरित करता है । उपासना योग का मुख्य उद्देश्य ध्यान और भक्ति के माध्यम से आत्मा को ब्रह्म से जोड़ना है ।

वेदों और उपनिषदों में उपासना योग का वर्णन गहन ध्यान , जप , और ईश्वर की आराधना के रूप में मिलता है । इसमें भक्ति और ध्यान का मिश्रण होता है , जिसमें साधक स्वयं को ईश्वर के प्रति समर्पित कर देता है । उपासना योग वह मार्ग हैं , जिसमें साधक नियमित रूप से ध्यान , मंत्रों का जाप , और पूजा - अर्चना करके अपने भीतर ईश्वर की उपस्थिति का अनुभव करता है । यह व्यक्ति के मन और आत्मा को पवित्र करने के लिए एक शक्तिशाली साधन माना गया है ।

" यस्य देवे परा भक्ति : यथा देवें तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता हार्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ।। " *(श्वेताश्वतर उपनिषद. 6.23)*

इस वचन में कहा गया है कि जिस व्यक्ति को ईश्वर और गुरु के प्रति परा भक्ति होती है , उसे आत्मज्ञान और उपासना योग के माध्यम से सत्य का अनुभव होता है ।

उपासना योग का महत्व :

वेदों में उपासना को प्रमुख स्थान दिया गया है । ऋग्वेद , सामवेद , और अथर्ववेद में कई स्थानों पर उपासना और ध्यान के महत्व का वर्णन है । वेद बताते हैं की उपासना के द्वारा साधक अपने मन को एकाग्र करता है और ईश्वर की आराधना करके उसके साथ एकाकार होने का प्रयास करता है । ऋग्वेद में यज्ञ और उपासना के माध्यम से ईश्वर की स्तुति और आराधना करने का निर्देश मिलता है । वेदों में उपासना को मन और आत्मा की शुद्धि का प्रमुख साधन माना गया है ।

Edit with WPS Office

*" ओम अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ।। "* *(ऋग्वेद. 1.1.1)*

इस मंत्र में अग्नि की उपासना की गई है , जो यज्ञ और उपासना के माध्यम से साधक को ईश्वर से जोड़ता है ।

उपनिषदों में उपासना योग :

उपनिषदों में उपासना योग को आत्मा और ब्रह्म के एकत्व की प्राप्ति का मार्ग बताया गया है । उपनिषदों में ईश्वर को ध्यान और भक्ति के माध्यम से समझने पर जोर दिया गया है । उपासना योग के द्वारा साधक अपनी चेतना को उच्चतम अवस्था में ले जाकर आत्मज्ञान प्राप्त करता है ।

कठोपनिषद , मुण्डकोपनिषद , और **तैत्तिरीय उपनिषद्** में उपासना योग का विशेष रूप से वर्णन किया गया है । उपनिषद बताते हैं कि उपासना के द्वारा साधक अपनी इंद्रियों को नियंत्रित करके मन को एकाग्र करता है और ध्यान के माध्यम से आत्म और ब्रह्म का अनुभव करता है ।

भगवत गीता में ईश्वर उपासना :

*" तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत ।
तत्प्रसादात् परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम् ।। "* *(भगवत गीता. 18.62)*

अर्थात , व्यक्ति को पूर्ण भक्ति और उपासना के साथ ईश्वर की शरण में जाना चाहिए । ऐसा करने से उसे परम शांति और मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

उपासना योग के प्रकार :

Edit with WPS Office

1. **सगुण उपासना** _____ सगुण का अर्थ होता है गुण सहित । अर्थात गुण वाला जिसमें वह गुण हैं अर्थात सगुण । जिसको सर्वज्ञ , सर्व शक्तिमान , आनंदमय , सर्वव्यापक , सर्वपिता , समस्त जगत को रचने वाला , न्यायकारी , दयालु , मंगलमय , अंतर्यामी आदि सत्य गुणों से युक्त जानकर जो ईश्वर की उपासना करते हैं वह सगुण उपासना कहलाती है । **उदाहरणार्थ :** सृष्टि की रचना , स्थिति और प्रलय करने में परमात्मा सगुण हैं । मानव मात्र के किए हुए कर्मों का फल देने में भी परमात्मा सगुण हैं ।

2. **निर्गुण उपासना** _____ निर्गुण का अर्थ होता है गुण रहित । अर्थात जिसमें गुण नहीं है, वह निर्गुण हैं । जिसको अजन्मा , निराकार , अकायम , शब्द , स्पर्श , रूप , रस , गंध , संयोग - वियोग , लंबा - चौड़ा , हल्का - भारी , अविधा , जन्म - मरण , दुख आदि गुणों से रहित जानकर परमात्मा की उपासना , निर्गुण उपासना कहलाती है । **उदाहरणार्थ :** मानव कृत कार्य करने में परमात्मा निर्गुण है । संतान उत्पत्ति करने में परमात्मा निर्गुण है ।

जो मनुष्य ईश्वर के देह धारण करने से सगुण और देह त्याग करने से निर्गुण उपासना कहते हैं वे सब वेद विरुद्ध होने से मानने योग्य नहीं हैं , कुछ लोग यह भी कहते हैं की मूर्ति पूजा ईश्वर की सगुण उपासना तथा निराकार रूप निर्गुण उपासना है यह भी पूर्ण सत्य नहीं है यह भ्रम केवल ईश्वर के गुणों को ना जानने तथा वेद विरुद्ध शास्त्रों के पठन-पाठन से ही उत्पन्न हुआ है । अतः सबको पूर्वोक्त विधि से उपासना करनी चाहिए ।

सारत : सगुण उपासना में ईश्वर के गुणों को समझकर उनकी उपासना की जाती है , जबकि निर्गुण उपासना में ईश्वर को गुण रहित और निराकार मानकर ध्यान किया जाता है । दोनों का सही अर्थ समझकर ही सच्ची उपासना संभव है ।

उपासना योग की विधि :

Edit with WPS Office

उपासना योग को प्राप्त करने के लिए कुछ मुख्य साधनाएं निम्नलिखित है ;

1. **ध्यान (meditation)** : नियमित ध्यान , योग और प्राणायाम साधना के द्वारा मन को एकाग्र किया जाता है । यह मन को शांति प्रदान करता है और साधक को ईश्वर के समीप लाता है ।
2. **जप (Chanting)** : मंत्रों (गायत्री आदि) एवं ओम नाम का नियमित जाप करने से साधक के मन में शांति और स्थिरता आती हैं । जप के माध्यम से साधक ईश्वर का स्मरण करता है और अपने अंदर उसकी उपस्थिति का अनुभव करता है ।
3. **संध्या एवं यज्ञ** : स्वाध्याय , यज्ञ एवं दैनिक अग्निहोत्र वेदों के महत्वपूर्ण अंग है । इनका उद्देश्य ईश्वर की कृपा प्राप्त करना और साधक को अपने कर्तव्य पथ की और अग्रसर करना है ।

" सर्वोन्द्रियाणां जर्जरी भूतकाले , न कार्यमाणा : स्मरितव्यमेव ।
उपासना योगरतोऽनुभूते , मन: समाधाय निजं विसृज्य ।। " ***(तैत्तिरीय उपनिषद्।)***

इस वचन में बताया गया है कि जब इंद्रियां जर्जर हो जाती है , तब भी उपासना के माध्यम से ध्यान और समाधि में लीन होकर आत्मज्ञान प्राप्त किया जा सकता है ।

उपासना योग का उद्देश्य :

उपासना योग का मुख्य उद्देश्य ईश्वर से संपर्क स्थापित करना , मन और आत्मा की शुद्धि है । यह योग , व्यक्ति को स्वार्थ , अहंकार , और माया से दूर रखता है और उसे आत्मा की उच्चतर अवस्था तक ले जाता है । उपासना योग के द्वारा साधक अपनी चेतना को ब्रह्म के साथ जोड़कर जीवन - मरण के चक्र से मुक्ति प्राप्त करता है । वेदों औरउपनिषदों के अनुसार , उपासना योग साधक को ईश्वर के समीप लाने का सशक्त मार्ग है । यह योग , ध्यान , जप , प्राणायाम तप , यज्ञ और साधना के माध्यम से आत्मा और ब्रह्म के एकत्व की प्राप्ति का मार्ग दिखाता है । उपासना योग न

Edit with WPS Office

केवल व्यक्ति को मोक्ष की और अग्रसर करता है , बल्कि उसे जीवन में शांति , समर्पण , और संतुलन का अनुभव भी कराता है ।

ज्ञान , कर्म और उपासना में श्रेष्ठ कौन ?

ज्ञान , कर्म और उपासना ___ इन तीनों में श्रेष्ठ कौन है ? यह प्रश्न जितना सरल लगता है , उतना ही गहरा है । यदि हम इनके महत्व को समझे , तो पाएंगे कि यह तीनों एक दूसरे के बिना अधूरे हैं । मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में इनका सामूहिक योगदान ही सफलता की कुंजी है । अकेले ज्ञान , कर्म या उपासना हमें मोक्ष तक नहीं पहुंचा सकते , क्योंकि ये तीनों मिलकर आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया को पूर्ण करते हैं ।

ज्ञान , मनुष्य को विवेक और वैराग्य का मार्ग दिखाता है । जब व्यक्ति सही ज्ञान प्राप्त करता है , तो उसे संसार की क्षणिकता और आत्मा की महत्ता का बोध होता है । यह ज्ञान व्यक्ति को सांसारिक मोह - माया से दूर कर , सत्य और अनित्य का भेद समझने में सहायता करता है । परंतु केवल ज्ञान ही पर्याप्त नहीं है , क्योंकि यह व्यक्ति को सत्य की राह दिखाता है , उस राह पर चलने के लिए कर्म की आवश्यकता होती है ।

कर्म वह माध्यम है जिसमें हम जीवन के कष्टों और बंधनों से मुक्त होते हैं । सत्कर्म करते हुए हम अपने शारीरिक और मानसिक कष्टों को कम करते हैं और जीवन को संतुलित ढंग से जीते हैं । ज्ञान हमें दिखता है कि क्या सही है , और कर्म उस ज्ञान को जीवन में लागू करने का साधन है । सत्कर्मों से मनुष्य का हृदय शुद्ध होता है और उसे आत्मिक शांति की ओर ले जाता है ।

जब ज्ञान से विवेक उत्पन्न हो जाए और कर्म से जीवन शुद्ध हो जाए , तब उपासना हमें परमात्मा के निकट पहुंचाती है । उपासना के माध्यम से व्यक्ति अपने भीतर परमात्मा को अनुभव करता है । जिस प्रकार आंखों में पड़ा तिनका दिखाई नहीं देता किंतु उसकी चुभन से हमें इसका आभास होता है , उसी प्रकार उपासना से हम उस परमात्मा का अनुभव कर पाते हैं जो पहले

Edit with WPS Office

से ही हमारे भीतर निहित है । उपासना से मन स्थिर होता है , और आत्मा में व्याप्त परमात्मा की अनुभूति होती है ।

ज्ञान, कर्म और उपासना ___ ये तीनों मिलकर मोक्ष के मार्ग को सुगम बनाते हैं । ज्ञान से विवेक उत्पन्न हो सकता है , परंतु बिना कर्म और उपासना के वह अधूरा रहता है । कर्म जीवन को संतुलित और शुद्ध बनाते हैं , परंतु बिना ज्ञान और उपासना के वह केवल सांसारिक कर्मकांड में सीमित हो जाता है । उपासना से व्यक्ति परमात्मा का साक्षात्कार करता है , परंतु यह अनुभव तभी संभव होता है जब मनुष्य ज्ञान से मार्गदर्शित और कर्म से शुद्ध हो ।

इसलिए , मोक्ष का मार्ग केवल एक विधि से संभव नहीं है । ज्ञान से विवेक , कर्म से शुद्धि और उपासना से आत्मसाक्षात्कार ___ इन तीनों का समन्वय ही मोक्ष की ओर ले जाने वाला सच्चा मार्ग है । यह तीनों एक - दूसरे के पूरक हैं , और इनके मिश्रण से ही परमात्मा का अनुभव प्राप्त होता है , जो मोक्ष का प्रमाण है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 96. फलित ज्योतिष और वेदांग ज्योतिष : तुलनात्मक अध्ययन

फलित ज्योतिष और वेदांग ज्योतिष , दोनों ही ज्योतिष के महत्वपूर्ण

Edit with WPS Office

अंग है , लेकिन इनके उद्देश्य , दृष्टिकोण और उपयोग में महत्वपूर्ण भिन्नताएं हैं । इन दोनों का आधार खगोलीय गणना और ग्रहों की स्थिति का अध्ययन है , फिर भी इनका प्रयोग और महत्व अलग-अलग क्षेत्रों में है । यहां इन दोनों की तुलनात्मक समीक्षा प्रस्तुत की गई है ;

1. परिभाषा और उद्देश्य :

- **वेदांग ज्योतिष :** यह ज्योतिष का एक प्राचीन अंग है , जो मुख्य रूप से वैदिक अनुष्ठानों और धार्मिक कर्मकांडों के लिए शुभ समय की गणना और निर्धारित करने पर केंद्रित है । इसका उद्देश्य वैदिक काल में धार्मिक अनुष्ठानों को सही समय पर संपन्न करना सुनिश्चित करना था । वेदांग ज्योतिष खगोलीय पिंडों की स्थिति और गति का अध्ययन करता है ताकि काल गणना (समय की गणना) की जा सके और पंचांग का निर्माण किया जा सके ।

- **फलित ज्योतिष :** इसे आधुनिक ज्योतिष के रूप में भी जाना जाता है , जिसका उद्देश्य व्यक्ति के जीवन में होने वाली घटनाओं की भविष्यवाणी करना है । यह ज्योतिषी व्यक्ति की जन्म कुंडली , ग्रहों की स्थिति , और राशि के आधार पर उसके जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे स्वास्थ्य , धन , शिक्षा , करियर , विवाह , और अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं की भविष्यवाणी करता है । फलित ज्योतिष का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के जीवन में मार्गदर्शन प्रदान करना और संभावित चुनौतियों के लिए समाधान प्रदान करना है ।

2. वैज्ञानिक दृष्टिकोण और पद्धति :

- **वेदांग ज्योतिष :** यह सूर्य और चंद्रमा की गति , नक्षत्रों की स्थिति , और ग्रहों के आधार पर समय की गणना करता है । इसमें गणितीय सटीकता का महत्व है और यह मुख्य रूप से काल गणना (समय की गणना) पर निर्भर है । वेदांग ज्योतिष में समय को दिन , मास , ऋतु ,

Edit with WPS Office

अयन , और वर्ष में विभाजित किया जाता है और विभिन्न वैदिक अनुष्ठानों के लिए शुभ मुहूर्त का निर्धारण किया जाता है ।

- **फलित ज्योतिष :** यह व्यक्ति की जन्म कुंडली के आधार पर भविष्यवाणियां करता है । जन्म के समय ग्रहों की स्थिति और उनके प्रभाव का अध्ययन किया जाता है । फलित ज्योतिष का आधार ग्रहों की चाल , गोचर (ग्रहों की वर्तमान स्थिति) , दशा (जीवन के विभिन्न कालखंड) , और कुंडली के विभिन्न भाव (हाउस) होते हैं । इसमें सांख्यिकी और अनुभव का भी मिश्रण होता है , लेकिन यह मुख्य रूप से व्यक्तिगत भविष्यवाणी पर केंद्रित है ।

3. उपयोग और महत्व :

- **वेदांग ज्योतिष :** इसका उपयोग धार्मिक और वैदिक अनुष्ठानों के लिए किया जाता है । इसका महत्व मुख्यतः धार्मिक और सांस्कृतिक संदर्भों में है , जहां अनुष्ठानों और यज्ञों के लिए शुभ समय की गणना की जाती है । वेदांग ज्योतिष का उद्देश्य धर्म और अनुष्ठानिक जीवन की शुद्धता बनाए रखना है ।

- **फलित ज्योतिष :** इसका उपयोग व्यक्ति के जीवन में मार्गदर्शन और भविष्यवाणी के लिए किया जाता है । यह ज्योतिष व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पहलुओं जैसे करियर , विवाह , स्वास्थ्य , शिक्षा , और वित्तीय स्थिति पर केंद्रित है । इसका महत्व मुख्यतः व्यक्तिगत और सामाजिक संदर्भों में है , जहां लोग अपने जीवन के बारे में भविष्यवाणियां जानना चाहते हैं ।

4. प्रमाण और स्त्रोत :

- **वेदांग ज्योतिष :** इसका आधार वेदों पर है , विशेषकर ऋग्वेद और यजुर्वेद , जहां समय की गणना , नक्षत्रों और ग्रहों की स्थिति का वर्णन

Edit with WPS Office

किया गया है । वेदांग ज्योतिष के दो प्रमुख ग्रंथ ऋग्वेद ज्योतिष और यजुर्वेद ज्योतिष है ।

- **फलित ज्योतिष :** यह मुख्यतः पौराणिक और शास्त्रीय ग्रंथो जैसे " बृहत्पाराशर होराशास्त्र , " बृहत्संहिता , " और फलदीपिका " पर आधारित है । ये ग्रंथ व्यक्तिगत भविष्यवाणी और जीवन की घटनाओं की गणना पर केंद्रित है ।

निष्कर्ष : वेदांग ज्योतिष और फलित ज्योतिष में बहुत अधिक अंतर है वेदांग ज्योतिष का संबंध खगोल विज्ञान (Astronomy) से है वही फलित ज्योतिष व्यक्ति के जीवन की भविष्यवाणी और मार्गदर्शन प्रदान करता है । **खगोल विज्ञान** एक प्रमाणिक विज्ञान है और इसके निष्कर्षों का समर्थन अनुभवजन्य डेटा और गणितीय मॉडल से होता है । खगोल विज्ञान के सिद्धांत और निष्कर्ष परीक्षण योग्य , दोहराए जाने योग्य , और वस्तुनिष्ठ होते हैं । उदाहरण के लिए , ग्रहों की गति , तारों की संरचना , और आकाशगंगाओं की दूरी के अध्ययन के लिए खगोल वैज्ञानिक सिद्धांतों का उपयोग किया जाता है , जो प्रयोगो और अवलोकनों द्वारा पुष्टि की जा सकती है । जबकि फलित ज्योतिष को विज्ञान के रूप में मान्यता नहीं मिली है क्योंकि इसके सिद्धांत और भविष्यवाणियां वैज्ञानिक पद्धति द्वारा सत्यापित नहीं की जा सकती । ज्योतिषीय भविष्यवाणियां व्यक्तिगत और सांस्कृतिक विश्वासो पर आधारित होती है , और इन्हें अनुभवजन्य साक्ष्य द्वारा समर्थन नहीं मिलता । यह अधिकतर सांस्कृतिक सामाजिक , और व्यक्तिगत विश्वासों पर निर्भर करता है । अतः फलित ज्योतिष और वेदांग ज्योतिष एक नहीं है दोनों भिन्न - भिन्न है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 97. छः प्रकार की वास्तविक संपत्ति

शास्त्रों में बताई गई असली संपत्ति वह है जिसे धारण करके मनुष्य का अंत:करण शुद्ध और निर्मल हो जाता है , और वह सांसारिक दुखों से मुक्त होकर मुक्ति की ओर अग्रसर होता है । इन संपत्तियों को धारण करने से व्यक्ति की आध्यात्मिक उन्नति होती है , और यह उसे आत्मज्ञान की ओर ले जाती है । शास्त्रों में बताई गई इन छः संपत्तियों को धारण करना मनुष्य जीवन का वास्तविक उद्देश्य बताया गया है । ये संपत्तियां निम्नलिखित है ;

1. **शम (आत्मसंयम) :** शम का तात्पर्य है अपने अंत : करण को धर्म के अनुसार चलाना , पापाचरण का त्याग करना , और मन , वचन , शरीर से किसी को कष्ट न देना । यह आंतरिक शांति और संयम को बनाए रखने की संपत्ति है ।

2. **दम (इंद्रियों का नियंत्रण) :** अपने इंद्रियों को अनुशासित करना और उन्हें बुरे कार्यों से हटाकर शुभ कर्मों में लगाना दम कहलाता है । यह हमें इंद्रिय सुख से ऊपर उठकर सही और धर्ममय मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है ।

3. **उपरति (सत्संगति) :** दुष्ट गलत कर्म करने वाले लोगों की संगति से दूर रहना उपरति कहलाती है । यह संपत्ति हमें सही मार्ग पर चलने और जीवन में नैतिकता और अच्छाई को धारण करने की प्रेरणा देती है ।

4. **तितिक्षा (सहनशीलता) :** सुख-दुख , लाभ - हानि , मान - अपमान , निंदा - स्तुति , जैसे द्वंद्वों से ऊपर उठना और उन्हें समान दृष्टि से देखना तितिक्षा कहलाती है । यह संपत्ति हमें धैर्य और संतुलन बनाए रखने की शिक्षा देती है ।

Edit with WPS Office

5. श्रद्धा (आस्था) : शास्त्रों , वेदों और महापुरुषों द्वारा दिए गए सत्य उपदेशों में अटूट विश्वास करना श्रद्धा कहलाती है । यह संपत्ति हमें ईश्वर और धर्म के प्रति गहन आस्था विकसित करने में सहायक होती है ।

6. समर्पण (चित्त की एकाग्रता) : अपने मन और चित्त को शांत और एकाग्र करना , अनावश्यक बातों और हंसी - मजाक से दूर रहना , और स्वयं को ईश्वर की सेवा में समर्पित करना ही समर्पण की संपत्ति है ।

इन संपत्तियों को धारण करने से व्यक्ति अध्यात्मिक धनी बन जाता है और मोक्ष की और अग्रसर होता है । इसलिए शास्त्रों के अनुसार , मनुष्य को इन्हीं संपत्तियों को प्राप्त करने की लालसा रखनी चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 98.मनुष्य जन्म की सफलता का मापदंड

शास्त्रों के अनुसार , मनुष्य जन्म की सफलता का मापदंड भौतिक संपत्ति , प्रतिष्ठा , या सांसारिक सुख नहीं है , बल्कि आत्मज्ञान और मोक्ष की प्राप्ति है । मनुष्य जीवन को सबसे दुर्लभ और महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि यह ईश्वर की प्राप्ति और आत्मिक उन्नति का साधन है । शास्त्रों में दिए गए मापदंड निम्नलिखित हैं ;

Edit with WPS Office

1. **धर्म का पालन :** मनुष्य जन्म की सफलता का पहला मापदंड हैं धर्म का पालन । धर्म का अर्थ केवल धार्मिक अनुष्ठान करना नहीं है , बल्कि जीवन में सत्य , अहिंसा , करुणा , और न्याय जैसे गुणों को अपनाना है । धर्म के अनुसार आचरण करते हुए व्यक्ति सही और गलत के बीच अंतर कर सकता है और पाप से दूर रह सकता है ।

2. **अध्यात्मिक उन्नति :** मनुष्य जीवन की सफलता का सबसे बड़ा मापदंड आत्मज्ञान प्राप्त करना है । शास्त्रों के अनुसार , आत्मा और परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करना और सांसारिक मोह - माया से ऊपर उठाना ही जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है ।

3. **ईश्वर की भक्ति :** शास्त्रों में कहा गया है कि मनुष्य जीवन का असली उद्देश्य ईश्वर की भक्ति करना और उनकी कृपा प्राप्त करना है । भक्ति के माध्यम से व्यक्ति ईश्वर के निकट पहुंचता है और मन को शांति और संतुष्टि मिलती है ।

4. **साधु संगति और सत्संग :** सत्संग और संतों की संगति को मनुष्य जीवन की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण माना गया है । सच्चे संतों की संगति से व्यक्ति सही मार्ग पर चलता है और उसे आत्मिक शांति प्राप्त होती हैं ।

5. **वैराग्य और त्याग :** सांसारिक सुख और भोग से परे , शास्त्रो में वैराग्य और त्याग की महिमा बताई गई है । अपने जीवन में अनावश्यक भौतिक इच्छाओं का त्याग और परम सत्य की और बढ़ना मनुष्य जीवन की सफलता का मापदंड हैं ।

6. **मोक्ष की प्राप्ति :** शास्त्रों के अनुसार , मनुष्य जन्म की अंतिम और सर्वोच्च सफलता मोक्ष की प्राप्ति है । मोक्ष का अर्थ है जन्म - मृत्यु

Edit with WPS Office

के चक्र से मुक्ति और आत्मा का परमात्मा में लीन हो जाना ।

इन सभी मापदंडों पर चलते हुए , मनुष्य अपने जीवन को सार्थक बना सकता है और शास्त्रों के अनुसार जीवन की सच्ची सफलता प्राप्त कर सकता है ।

श्रेय और प्रेय :

वेदों और उपनिषदों में " श्रेय " और " प्रेय " को जीवन के दो प्रमुख मार्गों के रूप में वर्णन किया गया है । ये दोनों मार्ग मनुष्य के जीवन की दिशा और उसके कर्मों का निर्धारण करते हैं । सही मार्ग का चुनाव ही मनुष्य जीवन की सफलता और असफलता को तय करता है । " कठोपनिषद " में विशेष रूप से इन दोनों मार्गों के बारे में वर्णित किया गया है ।

1. श्रेय (नित्य सुख का साधन) :

- श्रेय वह मार्ग है , जो मनुष्य को परमात्मा की प्राप्ति और मोक्ष की दिशा में ले जाता है । यह मार्ग स्थायी और नित्य सुख का साधन है । श्रेय का तात्पर्य है ऐसे कर्मों और साधनों का अनुष्ठान करना , जिनसे मनुष्य सभी प्रकार के दुखों से मुक्त हो सके और परम आनंद प्राप्त कर सके ।

- **कठोपनिषद.** 1.2.1 में कहां गया है ; " श्रेयो हि धीरा: श्रेयसो वृणीते , प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते । " अर्थात बुद्धिमान व्यक्ति श्रेय का चयन करते हैं , जो स्थायी सुख की ओर ले जाता है , जबकि सामान्य और अज्ञानी लोग प्रेय को चुनते हैं , जो उन्हें तात्कालिक सुख की ओर आकर्षित करता है ।

- श्रेय का मार्ग त्याग , वैराग्य , और धर्म के पालन पर आधारित है ।

Edit with WPS Office

इसके माध्यम से व्यक्ति सांसारिक इच्छाओं और मोह - माया से मुक्त होकर आत्मज्ञान की प्राप्ति करता है । यह मार्ग नित्य आनंद स्वरूप परमब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति का साधन है ।

- **कठोपनिषद.** 1.2.12 में भी इसे स्पष्ट किया गया है ; ***" न एवं तत्रसम श्रेय: न किठ्चन चात्परेण । "*** अर्थात श्रेय के समान कोई दूसरा श्रेष्ठ मार्ग नहीं है , जो जीवन के सभी कष्टों से मुक्ति प्रदान करता है ।

- आत्म - संयम , योग , ध्यान , तपस्या , और ईश्वर की भक्ति श्रेय मार्ग के अंग है । ये साधन व्यक्ति को सांसारिक बंधनों से मुक्त कर स्थायी शांति और मोक्ष की प्राप्ति कराते हैं ।

2. प्रेय (क्षणिक सुख का साधन) :

- प्रेय वह मार्ग है , जो तात्कालिक और भौतिक सुख की प्राप्ति के लिए प्रेरित करता है । इस मार्ग में भौतिक वस्त्र , धन , संपत्ति , प्रतिष्ठा , परिवार ,यश , और सांसारिक सुखों की प्राप्ति के साधनों को प्राथमिकता दी जाती है ।

- **कठोपनिषद.** 1.2.2 में कहां गया है ; ***" श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत: , तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीर: । "*** अर्थात श्रेय और प्रेय दोनों मनुष्य के समक्ष आते हैं , लेकिन विवेकवान व्यक्ति दोनों का विश्लेषण करता है और श्रेय का चुनाव करता है , जबकि अज्ञानी तात्कालिक सुखों (प्रेय) को चुनते हैं ।

- प्रेय के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति भले ही तात्कालिक सुख प्राप्त कर ले , लेकिन यह सुख अस्थायी होता है और अंतत: जीवन में दुख और असंतोष का कारण बनता है । यह मार्ग व्यक्ति को सांसारिक बंधनों में उलझाए रखता है और उसे मोक्ष की ओर नहीं ले जाता ।

Edit with WPS Office

- धन - संपत्ति , यश - प्रतिष्ठा , और अन्य भौतिक सुख-सुविधाओं का लालच प्रेय के अंतर्गत आता है । यह मनुष्य को तात्कालिक सुख प्रदान करता है , लेकिन इसका परिणाम अंततः दुख और असंतोष होता है ।

श्रेय और प्रेय के बीच चुनाव :

- मनुष्य जीवन में सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह है कि श्रेय का चुनाव करें या प्रेय का । " कठोपनिषद " के अनुसार , विवेकवान व्यक्ति श्रेय का चयन करते हैं , जो स्थायी और नित्य सुख की प्राप्ति का साधन है । इसके विपरीत , अज्ञानी लोग प्रेय का चयन करते हैं , तो तात्कालिक और अस्थायी सुखों में उलझे रहते हैं ।

- **कठोपनिषद. 1.2.3** में यह बताया गया है : ***" सत्यमेव श्रेय : , सत्यं च हित् प्रेयश्च अशास्त्र । "*** अर्थात सत्य ही श्रेय हैं , और वही हितकारी है : जबकि प्रेय असत्य और शास्त्रों के विरुद्ध है ।

- इसलिए , मनुष्य जन्म की सफलता मान - सम्मान , धन - संपत्ति , यश , और प्रसिद्धि से नहीं आंकी जा सकती । ये सब तो केवल मनुष्य समाज द्वारा अज्ञानता के कारण निर्मित अवधारणाएं हैं , जो पूर्णतः मिथ्या और अस्थायी है । वास्तविक सफलता तो सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग में निहित है ।

- " **मुण्डकोपनिषद. 3.2.6** में कहां गया है : ***" सत्यमेव जयते , नानृतम् । "*** अर्थात , केवल सत्य की ही जीत होती है , असत्य कभी विजयी नहीं होता । इस वचन से यह सिद्ध होता है की सत्य को ही जीवन में सर्वोच्च स्थान दिया जाना चाहिए ।

- इसलिए , मनुष्य को अपनी प्रसिद्धि और सफलता की आकांक्षा इस

Edit with WPS Office

मृत्यु लोक में नहीं बल्कि ब्रह्म लोक में करनी चाहिए । ब्रह्मलोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करने का अर्थ है अपने कर्मों से ईश्वर और सत्य के निकट जाना , आत्म ज्ञान प्राप्त करना , और मोक्ष की और अग्रसर होना । यही सच्ची और स्थायी सफलता है ।

- मृत्यु लोक की प्रसिद्धि और सम्मान अस्थायी है , जबकि ब्रह्म लोक में प्राप्त की गई प्रसिद्धि और मोक्ष अनन्त और शाश्वत है । जब आप अगर ब्रह्म लोक में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए कर्म करेंगे , तभी आप वास्तव में सफल कहलायेंगे ।

निष्कर्ष :

वेदों और उपनिषदों के अनुसार , मनुष्य जीवन केवल कर्मों का फल भोगने के लिए नहीं मिला है , बल्कि यह श्रेय और प्रेय में से सही मार्ग का चुनाव करके जीवन को सार्थक बनाने का अवसर है । श्रेय का मार्ग नित्य सुख और मोक्ष की प्राप्ति कराता है , जबकि प्रेय का मार्ग केवल क्षणिक और अस्थायी सुख प्रदान करता है । इसलिए शास्त्रों के अनुसार , श्रेय का मार्ग ही सच्चा और श्रेष्ठ मार्ग है , जिसे अपनाकर मनुष्य अपने जीवन को सफल बना सकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•99. कर्म एवं कर्म फल सिद्धांत

Edit with WPS Office

कर्म संस्कृत शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ है " क्रिया „ या "कार्य „ । भारतीय दर्शन और विशेषकर वेदों , उपनिषदों , और भगवत गीता में , 'कर्म , केवल एक सांसारिक क्रिया ही नहीं है , बल्कि वह संपूर्ण मानसिक , वाचिक (वाणी द्वारा) और शारीरिक गतिविधियों को समाहित करता है । कर्म का सिद्धांत इस पर आधारित है कि व्यक्ति के कर्म उसके वर्तमान और भविष्य को निर्धारित करते हैं । किसी भी व्यक्ति द्वारा किए गए कार्यों का प्रभाव उसके वर्तमान जीवन और पुनर्जन्म पर पड़ता है ।

मुख्य प्रकार के कर्म :

1. **संचित कर्म** : ये वे कर्म है जो पिछले जन्मों से एकत्रित होते आए हैं और जो वर्तमान जीवन में परिणाम के रूप में सामने आते हैं ।
2. **प्रारब्ध कर्म** : यह वह कर्म है जिसका परिणाम वर्तमान जीवन में ही भोगा जाता है । इसे हम अपने वर्तमान जीवन की नियमित या प्रारब्ध मान सकते हैं ।
3. **क्रियामाण कर्म (कृत कर्म)** : ये वे कर्म है जो हम वर्तमान जीवन में करते हैं और जो भविष्य में परिणाम देंगे । ये कर्म हमारे अगले जीवन या पुनर्जन्म में फलित होंगे ।

कर्म फल सिद्धांत :

कर्मफल सिद्धांत का मूल विचार यह है कि प्रत्येक क्रिया (कर्म) का परिणाम (फल) निश्चित रूप में मिलता है , चाहे वह अच्छा हो या बुरा । जैसे हर क्रिया की प्रतिक्रिया होती है , वैसे ही हर कर्म का फल भी होता है । व्यक्ति जो भी अच्छे या बुरे कर्म करता है , उसका फल उसे भोगना ही पड़ता है , भोगें बिना कर्म के फल से मुक्ति संभव नहीं है ।
" नियतं कुरु कर्म त्वं । "(गीता. 3.8) अर्थात , अपने नियत कर्मों को करो ।

इस सिद्धांत के अनुसार :

Edit with WPS Office

- **सकारात्मक कर्म (पुण्य कर्म)** : यदि कोई व्यक्ति अपने कर्मों से दूसरों को लाभ पहुंचाता है , सृष्टि के नियमों का पालन करता है , और धर्म का आचरण करता है , तो उसे अच्छे फल प्राप्त होते हैं ।
- **नकारात्मक कर्म (पाप कर्म)** : यदि कोई अपने कर्मों से दूसरों को कष्ट पहुंचाता है , नियमों का उल्लंघन करता है या गलत कार्य करता है , तो उसे बुरे परिणाम भोगने पड़ते हैं ।

कर्म और उसके फल का यह सिद्धांत जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है ___ वर्तमान जीवन से लेकर पुनर्जन्म तक ।

वेदों के अनुसार कर्म :

वेदों में कर्म का विशेष महत्व है । वेदों के अनुसार , हर व्यक्ति का धर्म उसके कर्म पर आधारित होता है । ऋग्वेद और यजुर्वेद में विभिन्न प्रकार के यज्ञों और कर्मकांडों का उल्लेख किया गया है , जिनके माध्यम से व्यक्ति देवताओं को प्रसन्न कर सकता है और सुखमय जीवन जी सकता है । वेदों में कर्म को तीन श्रेणियां में विभाजित किया गया है ;

1. **नित्य कर्म** : ये वे दैनिक कर्तव्य है जिन्हें करना आवश्यक है , जैसे प्रातःकाल स्नान , संध्या वंदन , हवन आदि ।
2. **नैमित्तिक कर्म** : ये वे कर्म है जो विशेष अवसरों पर किए जाते हैं , जैसे विवाह , श्राद्ध आदि ।
3. **काम्य कर्म** : ये वे कर्म है जो व्यक्ति अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए करता है , जैसे धन की प्राप्ति , संतान प्राप्ति आदि के लिए किए गए यज्ञ और हवन ।

ऋग्वेद कहता है :

Edit with WPS Office

" कृण्वन्तोविश्वमार्यम् "। (ऋग्वेद. 9/63/5)
अर्थात , कर्म करते हुए पूरे संसार को श्रेष्ठ (आर्य) बनाओ ।

यह मंत्र कर्म की शक्ति और उसकी सार्वभौमिकता को इंगित करता है। , जो समाज और संसार की उन्नति के लिए आवश्यक है ।
वेदों मैं यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जो व्यक्ति अपने कर्म को सही प्रकार से करता है , वह जीवन में सुख और समृद्धि प्राप्त करता है । परंतु इसके साथ ही यह भी कहा गया है कि कर्मों के परिणाम व्यक्ति के जीवन और पुनर्जन्म को भी निर्धारित करते हैं ।

ऋग्वेद में कर्म और धर्म :

" कर्मणैव हि संसिद्धिः । " (ऋग्वेद. 10/121/10)
अर्थात , कर्म से ही सिद्धि प्राप्त होती है ।

यजुर्वेद में कर्म का महत्व :

" कुर्वन्नेवेह कर्माणि । " (यजुर्वेद. 40/2)
अर्थात , कर्म करते रहो , क्योंकि कर्म ही जीवन है ।

उपनिषदों के अनुसार कर्म :

उपनिषदों में कर्म के सिद्धांत को और अधिक गहराई से समझाया गया है । उपनिषदों में कर्म को आध्यात्मिक दृष्टिकोण से देखा गया है । कर्म की प्रक्रिया को जीवन - मरण और पुनर्जन्म के चक्र से जोड़ा गया है । उपनिषदों के अनुसार , आत्मा जन्म और मृत्यु के चक्र में तब तक फंसी रहती है जब तक वह अपने कर्मों से मुक्त नहीं हो जाती । यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक की आत्मा मोक्ष प्राप्त नहीं कर लेती ।

उपनिषदों में कहा गया है कि कर्म , बंधन और मोक्ष दोनों का कारण बन

Edit with WPS Office

सकते हैं । जो व्यक्ति अज्ञानता के कारण कर्म करता है , वह इस संसार में बंध जाता है । जबकि जो व्यक्ति ज्ञान पूर्वक कर्म करता है , वह मोक्ष की ओर अग्रसर होता है । इसलिए , उपनिषदों में ज्ञान (ब्रह्म ज्ञान) और निष्काम कर्म (फल की इच्छा के बिना किया गया कर्म) को अत्यधिक महत्व दिया गया है ।

बृहदारण्यक उपनिषद में कहा गया है :

" ***स यथाकर्म यथाश्रुतं ततो भवति*** " (4.4.5)
अर्थात , व्यक्ति अपने कर्मों और ज्ञान के अनुसार ही अगले जन्म में वैसा ही होता है । " इस श्लोक में स्पष्ट रूप से कर्म के सिद्धांत को दर्शाया गया है , जो व्यक्ति के पुनर्जन्म को निर्धारित करता है ।

छान्दोग्य उपनिषद में भी कर्म फल का उल्लेख है :

" तं यथां यथां उपासते तद्एव भवति "। (3.14.1)
अर्थात , जैसा व्यक्ति कर्म करता है , वैसा ही वह बनता है । "

" उत्तिष्ठ जाग्रत । " (कठोपनिषद. 1.2.6)
अर्थात , उठो और कर्म के माध्यम से सत्य की खोज करो ।

कर्म की तीन प्रकृति :

1. **सात्विक कर्म** : जो कर्म बिना किसी स्वार्थ के , केवल कर्तव्य भाव से किए जाते हैं और जिनसे किसी को कष्ट नहीं होता ।
2. **राजसिक कर्म** : जो कर्म फल की इच्छा से किए जाते हैं और जिनमें स्वार्थी भावना निहित होती है ।
3. **तामसिक कर्म** : जो कर्म अज्ञानता और आलस्य के कारण किए जाते हैं और जिनसे दूसरों को कष्ट होता है ।

Edit with WPS Office

निष्काम कर्म :

भगवत गीता में निष्काम कर्म का सिद्धांत प्रमुख रूप से **अध्याय 2 , श्लोक 47** में वर्णित है । श्री कृष्ण अर्जुन को यह समझाते हैं कि

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सग्डोऽस्त्वकर्मणि ।।

अर्थ : तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है , उसके फलों में कभी नहीं । इसलिए कर्म फल की इच्छा से प्रेरित होकर कर्म मत करो , और न ही कर्म न करने में तुम्हारी आसक्ति होनी चाहिए ।

यह श्लोक निष्काम कर्मयोग का मूल सिद्धांत प्रस्तुत करता है । इसमें भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को यह समझाते हैं कि मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है , परंतु उसे उस कर्म के फल पर अधिकार नहीं है । इसका अर्थ यहां है कि जब भी कर्म करें पूर्ण निष्ठा एवं निस्वार्थ भाव के साथ करें , परंतु उसका परिणाम हमारे नियंत्रण में नहीं होते । इस श्लोक के तीन प्रमुख बिंदु निम्नलिखित हैं ;

1. **कर्म पर अधिकार** : मनुष्य का कर्म पर पूर्ण नियंत्रण होता है मनुष्य कर्म करने के लिए स्वतंत्र है इसलिए उसका चुनाव हमें सोच विचार , चिंतन मनन पूर्वक करनी चाहिए । कर्तव्य का पालन हमारा नैतिक और आध्यात्मिक उत्तरदायित्व भी है ।
2. **फल की चिंता मत करो** : कर्म करने के पश्चात उसके परिणाम पर हमारी कोई नियंत्रण नहीं । हम फल की अपेक्षा ना करें , क्योंकि फल कई बाहरी कारकों पर निर्भर करता है जो हमारे नियंत्रण से बाहर है । इस तरह हम तनाव , चिंता और मोह से बच सकते हैं ।
3. **अकर्मण्यता से बचो** : निष्काम कर्म का यह अर्थ नहीं है कि हमें निष्क्रिय हो जाना चाहिए । श्री कृष्ण कहते हैं कि कर्म न करने की भी प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए । हमें कर्म करते रहना चाहिए , लेकिन फल की चिंता किए बिना । कर्म न करना भी एक प्रकार की बुराई है , क्योंकि यह आलस्य और जीवन में नकारात्मकता को बढ़ावा देता है

Edit with WPS Office

।

निष्काम कर्म की व्यावहारिक समझ :

जब हम किसी कार्य में केवल परिणाम की लालसा रखते हैं , तो हम मानसिक तनाव , चिंता और मोह मैं फंस जाते हैं । इससे जीवन में दुख और असंतोष उत्पन्न होता है ।

जैसे अगर हम किसी की सहायता कर रहे हैं तो इसलिए ना करें की समय आने पर वह भी हमारी सहायता करेगा । हम इसलिए सहायता करें कि हम सहायता करने के योग्य हैं या कर सकते हैं , उससे कोई भी आशा न रखें । यदि हम निष्काम भाव से कर्म करते हैं , तो हमारे मन में शांति और संतुलन बना रहता है । कर्म करने की प्रक्रिया में आनंद लेना और उस कर्म को श्रेष्ठा से करना ही वास्तविक सफलता है । इसके साथ , हम अपने जीवन में सच्ची स्वतंत्रता का अनुभव कर सकते हैं ।

इसप्रकार , निष्काम कर्म का सिद्धांत व्यक्ति को न केवल कर्तव्यनिष्ठ बनाता है , बल्कि उसे जीवन में स्थिरता और आत्म - संतोष की ओर भी ले जाता है ।

भगवान श्री कृष्ण आगे कहते हैं ;

" यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धन : । " (भगवत गीता. 3.9)
अर्थात , यज्ञ के लिए किए गए कर्म व्यक्ति को बंधन से मुक्त करते हैं ।

" योग: कर्मसु कौशलम् " (भगवत गीता. 2.50)
अर्थात , कर्म में कुशलता ही योग है ।

इस श्लोक में कर्म को योग का मार्ग बताया गया है , जिसका पालन करना ही मोक्ष की ओर ले जाता है ।

Edit with WPS Office

भगवत गीता में कर्म का एक और महत्वपूर्ण सिद्धांत है :

" तस्मात् सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च " (भगवत गीता. 8.7)
अर्थात , सभी परिस्थितियों में परमात्मा का स्मरण करो और अपने कर्म (युद्ध) का पालन करो ।

यह श्लोक यह बताता है कि मनुष्य को हर स्थिति में अपने धर्म और कर्म का पालन करना चाहिए , चाहे स्थिति कैसी भी हो । कर्म का पालन करना ही धर्म है । उसे अपने कर्तव्यों से पीछे नहीं हटना चाहिए । साथ ही , किसी भी कम को धर्म के अनुरूप और समाज के कल्याण के लिए किया जाना चाहिए ।

निष्कर्ष : कर्म और कर्म फल सिद्धांत वेदों , उपनिषदों और भगवत गीता के आधार पर यह स्पष्ट है कि कर्म ही जीवन का आधार है । कम से न केवल व्यक्ति का वर्तमान जीवन प्रभावित होता है , बल्कि उसका भविष्य और पुनर्जन्म भी निर्धारित होता है । अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य अपने कर्मों को सही दिशा में ले जाए , ताकि वह जीवन - मरण के चक्र से मुक्त होकर मोक्ष की प्राप्ति कर सके । निष्काम कर्म , धर्म और ज्ञान का पालन ही मोक्ष का मार्ग है , जैसा कि वेदों , उपनिषदों और श्रीमद् भगवत गीता में बताया गया है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

100.कर्म के अनुसार पुनर्जन्म

सज्जनों ! पुनर्जन्म होता है अथवा नहीं ? के संबंध में विभिन्न मत - मजहब पन्थो में बंटी हुई मानव जाति अपना अपना तर्क देकर पुनर्जन्म नहीं होता यह सिद्ध करते हैं । नास्तिक भोगवादी लोगों के विचारों को महर्षि दयानंद ने इस प्रकार उद्धृत किया ___

सत्यार्थ प्रकाश द्वादश समुल्लास : ______ मृत्यु के पश्चात शरीर भस्म हो जाता है , इसलिए जब तक जीवें सुखपूर्वक जीवें । मरने के बाद शरीर पुनः लौटकर नहीं आता है । स्वर्ग -अस्वर्ग कुछ नहीं है , केवल कहने मात्र के लिए है । परंतु वेद शास्त्रों ने पुनर्जन्म को स्वीकार किया है , सर्वप्रथम वेदों के इन मंत्रों पर नजर डालते हैं ___

" ओउम् पुनर्मत्विन्द्रियं पुनरात्मा द्रविण ब्राह्मणं च ।
पुनरग्नयो धिष्णया यथास्याम कल्पन्तामिहैव ।। (अथर्ववेद. 6/53/2)
भावार्थ : हे जगदीश्वर आपकी कृपा से पुनर्जन्म में मन आदि ग्यारह इंद्रियों प्राप्त हो अर्थात सर्वदा मनुष्य देह ही प्राप्त होता रहे । जिससे दूसरे जन्म में भी हम लोग 100 वर्ष से अधिक जीवें । सत्यविधा आदि श्रेष्ठ धन भी पुनर्जन्म में प्राप्त होते रहे । आप ही में हमारी निष्ठा बनी रहें । जगत के कल्याण के लिए अग्निहोत्रादि यज्ञ करते रहे । हम लोग जैसे पूर्वजन्मों में शुभ गुण धारण करनेवाली वृद्धि से उत्तम शरीर और इन्द्रियसहित थे , वैसे ही पूर्व जन्म में भी वृद्धि के साथ मनुष्य देह के कृत्य करने में समर्थ हो । ये सब शुद्ध वृद्धि के साथ मुझको यथावत प्राप्त हो ।

ऋग्वेद. 10/59/6 ______
भावार्थ : हे सुखदायक परमेश्वर ! आप कृपा करके पुनर्जन्म में हमारे बीच

Edit with WPS Office

में उत्तम नेत्र , कर्णादि सब इंद्रियां स्थापन कीजिए । प्राण अर्थात् मन , बुद्धि , चित्त , अहंकार , बल , पराक्रम आदि युक्त शरीर पुनर्जन्म में कीजिए । हे ईश्वर ! इस जन्म और प्रजन्म में हम लोग उत्तम - उत्तम भोगों को प्राप्त हो । सबको मान देनेहारे । सब जन्मों में हम लोगों को सुखी रखिए , जिससे हम लोगों का कल्याण हो ।

यजुर्वेद. 4/15 ______

भावार्थ : हे सर्वज्ञ ईश्वर ! जब - जब हम जन्म लेंवे तब - तब हमको शुद्ध मन , पूर्ण आयु , आरोग्यता ,प्राण , कुशलता युक्त जीवात्मा , उत्तम चक्षु और श्रोत्र प्राप्त हो । वह सब जन्मों में हमारे शरीरों का पालन करें । सब पापों का नाश करने वाले आप हमको बुरे कामों और सब दु:खों से पुनर्जन्म में अलग रखें ।

अथर्ववेद. 5/1/2 ______

भावार्थ : जो मनुष्य पूर्व जन्म में धर्माचरण करता है , उस धर्माचरण के फल से अनेक उत्तम शरीरों को धारण करता है और अधर्मात्मा मनुष्य नीच शरीर (योनि) को प्राप्त होता है । जो पूर्वजन्म में किए हुए पाप - पुण्य के फलों को भोग करके स्वभावयुक्त जीवात्मा हैं , वह पूर्व शरीर को छोड के वायु के साथ रहता है , पुनः जल औषधि वा प्राण आदि में प्रवेश करके वीर्य में प्रवेश करता है । तदनन्तर योनि (गर्भाशय) में स्थिर होके पुनः जन्म लेता है । जो जीव जैसी ईश्वर ने वेदों में सत्य भाषण करने की आज्ञा दी है वैसा ही यथावत जान के बोलता है और धर्म ही में यथावत स्थित रहता है , वह मनुष्य योनि में उत्तम शरीर धारण करके अनेक सुखों को भोगता है और जो अधर्माचरण करता है वह अनेक नीच शरीर अर्थात कीट पतंग पशु आदि के शरीर को धारण करके अनेक दुखों को भोगता है ।

यजुर्वेद. 19/47 ______

भावार्थ : इस संसार में हम दो प्रकार के जन्मों को सुनते हैं । एक , मनुष्य शरीर का धारण करना और दूसरा नीच गति से पशु - पक्षी , कीट , पतंग , वृक्ष आदि का होना । इनमें मनुष्य शरीर के तीन भेद हैं ___ प्रथम पितृ

Edit with WPS Office

अर्थात ज्ञानी होना , दूसरा देव अर्थात सब विधाओं को पढ़के विद्वान होना , तीसरा मत्रर्य अर्थात साधारण मनुष्य शरीर का धारण करना । इनमें प्रथम मनुष्य शरीर पुण्यात्माओं और पुण्य पाप तुल्य वालों का होता है , दूसरा जो अधिक पाप करते हैं उनके लिए है । इन्हीं भेदों से सब जगत के जीव अपने-अपने पुण्य और पापों के फल भोग रहे हैं । जीवों को माता और पिता के शरीर में प्रवेश करके जन्म धारण करना , पुनः शरीर को छोड़ना , फिर जन्म को प्राप्त होना , बारंबार यह जन्म और मृत्यु की प्रक्रिया चलती रहती है । ग्रंथ विस्तार के भय से यहां केवल प्रमाण हेतु पांच मंत्रों को ही स्थापित किया है । चारों वेदों में पुनर्जन्म संबंधित अनेकों मंत्र देखे जाते हैं । पुनर्जन्म को पुष्टि करते हुए निरुक्तकार कहते हैं ___

निरुक्त अध्याय. 13 , खंड 19 ______

भावार्थ : यहां यहां लिखा है ऋषि कहते हैं कि मैंने जन्म-मरण को प्राप्त होकर नाना प्रकार के हजार गर्भाशयों का सेवन किया । अनेक प्रकार के भोजन किये , अनेक माताओं के स्तनों का दूध पिया , अनेक माता-पिता और बंधु - बंधुओं को देखा । मैंने गर्भ में नीचे मुख ऊपर पग इत्यादि नाना प्रकार की पीड़ाओं से युक्त होके जन्म धारण किये । न्याय दर्शन के सूत्रकार इस प्रकार कहते हैं ___

पुनरुत्पत्ति : प्रेत्यभाव : ।। **(न्याय दर्शन आ . 1 , सूत्र. 19)**

भावार्थ : जो उत्पन्न अर्थात किसी शरीर को धारण करता है , वह अवश्य ही मरण अर्थात शरीर छोड़ के पुनरुत्पन्न दूसरे को अवश्य प्राप्त होता है । इस प्रकार मरके पुनर्जन्म लेने को " प्रेत्यभाव " कहते हैं । इसी पुनर्जन्म संदर्भ में महर्षि पतंजलि भी सूत्र के माध्यम से कहते हैं ___

स्वरसवाही विदुषोऽपि तथाऽभि रुढोऽभिनिवेश : **(योग दर्शन. 2 , सूत्र. 9)**

भावार्थ : हर एक प्राणियों की यह इच्छा नित्य देखने में आती है कि मैं सदैव सुखी बना रहा हूं । मरु नहीं । यह इच्छा कोई भी नहीं करता कि मै न होऊं । ऐसी इच्छा पूर्व जन्म के अभाव से कभी नहीं हो सकती । यह अभिनिवेश क्लेश कहलाता है , जो कि कृमि आदि पशु पर्यन्त को भी मरण का भय बराबर होता है । यह व्यवहार पूर्व जन्म की सिद्धि को जनाता है ।

Edit with WPS Office

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं ____

गीता. अध्याय 4 , श्लोक. 5 ______
भावार्थ : योगीराज श्री कृष्ण अर्जुन को कहते हैं कि हे अर्जुन ! मेरे और तुम्हारे बहुत जन्म बीत चुके हैं । उन सबको मैं जानता हूं ।

गीता. अध्याय 2 , श्लोक. 22 ______
भावार्थ : जिस प्रकार मनुष्य फटे पुराने वस्त्र उतार कर दूसरे नये ग्रहण करता है इसी प्रकार यह देही (आत्मा) पुराने शरीर छोड़कर नये दूसरे शरीर धारण करती है ।

गीता. अध्याय 2 , श्लोक. 27 ______
भावार्थ : जो पैदा हुआ है उसकी मौत निश्चित है और जो मरा है उसका जन्म भी निश्चित है ।

उपनिषदों में भी पुनर्जन्म होने का इस प्रकार उल्लेख मिलता है ______

निष्काम अर्थात फल की कामना रहित होकर समाज कल्याण में समर्पित दिव्य मानव मरणोपरांत उत्तरायण " देवयान " के मार्ग से ब्रह्मलोक को प्राप्त होते हैं और पुण्य क्षीण होने के बाद **क्षीणे पुण्ये मतर्य लोकं विशन्ति** इस गीता के श्लोक के अनुसार इसी धरती में महामानव के रूप में जन्म लेकर महान कार्य करते हैं । दूसरे जो सकाम अर्थात हर
फल की इच्छा रखकर मनुष्य कार्य करते हैं वे इन मंत्रों के अनुसार जन्म पाते हैं ___

छान्दोग्य उपनिषद. 5/10/6 - 7 ______
भावार्थ : मरणोपरांत दक्षिणायन " पितृयान " के मार्ग से आकाश को लौटते हैं । आकाशीय दशा से वायवीय दशा को प्राप्त होते हुए पुनः वायु से

Edit with WPS Office

धूम और धूम से अभसदृश मेघ बनकर इसी धरती में बरस पढ़ते हैं और बरसकर धान , गेहूं , तिल , माप औषधि वनस्पति आदि में जा पैदा होते हैं । जो - जो भी इन औषधि वनस्पति को खाता है उसके वीर्य से उस जैसी ही संतान उत्पन्न होती है । पशु खाए तो पशु उत्पन्न होए मनुष्य खाए तो मनुष्य उत्पन्न होता है । अर्थात पूर्व जन्म में सकाम कर्म करते समय जिनका आचरण मानवीय अच्छा रहा है वे तो मनुष्य योनि पाकर ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य कुल में जन्म पाते हैं , परंतु जिनका आचरण पूर्व जन्म में अच्छा नहीं था अत्यंत बुरा रहा था वे कर्मों के आधार पर कुत्ता , गधा , सूअर तथा कीट आदि योनि में जन्म पाता है ।6।

7. अथवा चांडाल (निकृष्ट) योनि में जन्म लेता है । कहने का तात्पर्य पूर्ववर्ती जन्म में मनुष्य जैसा शुभ अशुभ कर्म करता है पूर्व जन्म में उसी के अनुसार शरीर प्राप्त करके सुख - दुख भोग करता है । अतः पूर्व जन्म के बाद पूर्व जन्म होना यह शाश्वत नियम है । भागवत पुराण के पंचम स्कंध में राजा भारत को मोह वश पुनर्जन्म में हरिण का शरीर प्राप्त होना लिखा है ___

भागवत पुराण. स्कंद. 5 , अध्याय 8 , श्लोक. 27 ______

राजा भरत को वन में तपस्या करते समय संयोगवश हरिणशावक से प्रेम हुआ । कुछ समय व्यतीत होने पर एक दिन हरिणशावक भरत के पास बैठा पुत्र के समान शोकातुर हो रहा था , भरत उसे इस स्थिति में देख रहे थे उनका चित्त उसी हिरण शावक में लगा रहा था । इसी आसक्ति में ही मृगशावक को देखते-देखते तपस्वी भरत का शरीर शांत हो गया । तदांतर उन्हें अंत काल की भावना अनुसार पुनर्जन्म में हरिण का ही शरीर (देह) प्राप्त हुआ । वर्तमान में भी इस प्रकार की घटनाएं पत्र - पत्रिकाओं में पढ़ने को सुनने को मिलती रहती है । इससे यह प्रमाणित होता है कि जीवात्मा अपना कर्म फल भोगने के लिए इस धरा पर अवश्य जन्म लेता ही रहता है । इसी को पुनर्जन्म कहा जाता है ।

पुनर्जन्म का सिद्धांत भारतीय दर्शन और वेद , उपनिषदों , गीता एवं अन्य

Edit with WPS Office

शास्त्रों में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है । यह आत्मा अमर है और शरीर केवल एक माध्यम है जिसके द्वारा आत्मा अपने कर्मों का फल भोगती है । जब शरीर नष्ट होता है , आत्मा नए शरीर में प्रवेश करती है और यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक आत्मा अपने सभी कर्मों के फल भोगकर मोक्ष प्राप्त नहीं कर लेती । पुनर्जन्म कर्म के आधार पर होता है , और यह प्रक्रिया कर्मों के फल स्वरुप चलती रहती है ।

वेदों में पुनर्जन्म और कर्म :

वेद , पुनर्जन्म के बारे में सीधे तौर पर कहता है ,लेकिन इसके कर्मकांड और यज्ञों के विवरण पुनर्जन्म के सिद्धांत को संकेत करते हैं । यज्ञ और धार्मिक कर्म वेदों के अनुसार मनुष्य के लिए आवश्यक माने गए हैं ताकि वह अपने भविष्य के जीवन को उत्कृष्ट बना सके ।

पुनर्जन्म का शाब्दिक अर्थ है " पुनः जन्म लेना " । इसका अर्थ यह है कि मृत्यु के पश्चात आत्मा नष्ट नहीं होती , बल्कि वह नए शरीर को धारण करती है । यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक आत्मा अपने कर्मों का फल भोगकर मोक्ष नहीं प्राप्त कर लेती । शास्त्रों के अनुसार , यह आत्मा अनादि काल से कर्मों का भोग करती आ रही है और तब तक यह चक्र चलता रहेगा जब तक आत्मा पूरी तरह से कर्म बंधन से मुक्त नहीं हो जाती ।
यजुर्वेद में पुनर्जन्म की प्रक्रिया को यज्ञों और कर्मकांडों से जोड़ा गया है । यह कहा गया है कि जो व्यक्ति धर्म अनुसार कर्म करता है , उसे अगले जन्म में अच्छे फल प्राप्त होते हैं ।

" अग्निर्दैवो देवयानम्_ यत्र कामा: प्रवर्तन्ते " **(यजुर्वेद. 40/6)**
अर्थात , " अग्नि के माध्यम से धर्म के मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति वहां जाता है , जहां उसकी सभी इच्छाएं पूर्ण होती है । "
वेद के इस मंत्र में पुनर्जन्म के संबंध में संकेत मिलता है , जहां व्यक्ति अपने पुण्य कर्मों के फल स्वरुप उच्चतर लोकों या पुनर्जन्म में सुखद स्थिति को प्राप्त करता है ।

Edit with WPS Office

उपनिषदों में पुनर्जन्म और कर्म फल सिद्धांत का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है । इन ग्रंथो में पुनर्जन्म को आत्मा के मोक्ष प्राप्त करने से पहले की प्रक्रिया के रूप में देखा गया है । आत्मा अपने कर्मों के आधार पर पुनर्जन्म लेती है और जब तक कर्मों के बंधन से मुक्त नहीं हो जाती , तब तक वह जन्म मरण के चक्र में बंधी रहती है ।

बृहदारण्यक उपनिषद में पुनर्जन्म और कर्म के सिद्धांत को स्पष्ट किया गया है ;

" स यथाकर्म यथाश्रुतं ततो भवति " (4.4.5)
अर्थात , व्यक्ति जैसा कर्म करता है और जैसा ज्ञान प्राप्त करता है , उसके अनुसार ही वह अगला जन्म धारण करता है ।

यहां श्लोक इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि मनुष्य अपने कर्मों के आधार पर ही अगला जन्म धारण करता है । पुण्य कर्म करने वाला व्यक्ति उच्च योनियों में जन्म लेता है , जबकि पाप करने वाला व्यक्ति निम्न योनियों में जन्म लेने के लिए बाध्य होता है ।

छान्दोग्य उपनिषद में भी कर्म और पुनर्जन्म के सिद्धांत को विस्तृत रूप से समझाया गया है । यह कहा गया है कि व्यक्ति अपने कर्मों के आधार पर विभिन्न योनियों में जन्म लेता है ।

" तं यथां यथां उपासते तद्एव भवति " (3.14.1)
अर्थात , " जिस प्रकार व्यक्ति अपने कर्म और उपासना करता है , वैसा ही वह अगले जन्म में उत्पन्न होता है । "
यहां पुनर्जन्म की प्रक्रिया कर्म और व्यक्ति की उपासना पद्धति पर निर्भर मानी गई है । इस श्लोक में यह स्पष्ट किया गया है कि व्यक्ति अपने कर्मों के आधार पर अच्छे या बुरे जन्मों को प्राप्त करता है ।

Edit with WPS Office

भगवत गीता में भगवान श्री कृष्ण ने पुनर्जन्म और कर्म का गहन विश्लेषण किया है । गीता में आत्मा की अमरता और कर्मों के अनुसार पुनर्जन्म के संबंध में विस्तार से समझाया गया है ।

श्री कृष्ण अर्जुन को बताते हैं कि आत्मा अमर है और यह शरीर केवल नश्वर है । आत्मा शरीर बदलती है , जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर नए वस्त्र धारण करता है ।

" वासांसि जीणानि यथा विहाय , नवानि गृहाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा , अन्यानि संयाति नवानि देही ।। (गीता. 2.22)

अर्थात , " मनुष्य जैसे पुराने वस्त्र त्याग कर नए वस्त्र धारण करता है , वैसे ही आत्मा पुराने शरीर को त्याग कर नए शरीर को धारण करती है । "

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि आत्मा अमर है और वह कर्मों के आधार पर नए शरीर में पुनर्जन्म लेती है । भगवत गीता में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि व्यक्ति अपने कर्मों के आधार पर अगला जन्म प्राप्त करता है ।

" उध्व गच्छन्ति सत्वस्था , मध्ये तिष्ठन्ति राजसा: ।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसा: ।। (श्रीमद्भगवद्गीता. 14.18)

अर्थात , " सात्विक गुणों वाले लोग उच्च लोकों को प्राप्त होते हैं , राजसिक गुण वाले बीच में रहते हैं , और तामसिक गुण वाले निम्न लोगों को प्राप्त होते हैं । "

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि कर्म और गुणों के आधार पर व्यक्ति को विभिन्न लोकों या योनियों में पुनर्जन्म मिलता है । अच्छे कर्म और सात्विक गुण व्यक्ति को उच्च योनियों में ले जाते हैं , जबकि बुरे कर्म और तामसिक गुण उसे निम्नतर योनियों में धकेलते है ।

Edit with WPS Office

कर्म के अनुसार मोक्ष या पुनर्जन्म :

भगवान श्री कृष्ण गीता में यह भी कहते हैं कि जो व्यक्ति अपने कर्मों को फल की इच्छा से मुक्त होकर करता है , वह जन्म मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है और मोक्ष प्राप्त करता है ।

" यस्य नाहंकृतो भावों बुद्धिर्यस्य न लिप्यते ।
हत्वाऽपि स इमांल्लोकात्र हन्ति न निबध्यते ।। (भगवत गीता. 18.17)
अर्थात , " जिस व्यक्ति का अहंकार नहीं है और बुद्धि शुद्ध है , वह कर्म करने के पश्चात कर्म के बंधनों में नहीं फंसता । "

यह श्लोक के माध्यम से भगवान श्री कृष्ण बताते हैं कि निष्काम कर्म योग(फलों की इच्छा के बिना) के माध्यम से व्यक्ति पुनर्जन्म के चक्र से मुक्त हो सकता है और मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है ।

श्रेष्ठ शरीर की प्राप्ति कर्मों से :

मनुष्य को अपने जीवन में ऐसे कम करने चाहिए जो केवल स्वयं के लिए नहीं , बल्कि सभी प्राणियों के हित में हो । जब भी हम अज्ञान और अहंकार से प्रेरित होकर कर्म करते हैं , तो प्रायः उसका परिणाम दूसरों के लिए दुखदायी ही होता है । यह संसार का अपरिवर्तनीय नियम है । यदि हम किसी को पीड़ा देंगे , तो वह पीड़ा किसी न किसी रूप में हमें वापस मिलेगी । इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम किसी भी जीव , चाहे वह मनुष्य हो , पशु पक्षी , कीट पतंग या पेड़ पौधे हो , किसी को भी कष्ट न पहुंचाए । सभी प्राणी अपने-अपने कर्मों का फल भोगने के लिए विभिन्न योनियों में जन्म लेते हैं , और उनकी उस यात्रा में हस्तक्षेप करना सृष्टि के नियमों का उल्लंघन है । मनुष्य के लिए सबसे महत्वपूर्ण यह है कि वह ऐसे कर्मों से बचे जो उसे पशु पक्षी या वृक्ष जैसी योनियों में जन्म लेने के लिए बाध्य करें । वास्तव में , मनुष्य शरीर भी दुख , रोग , भय , चिंता और मृत्यु जैसे कष्टों से भरा हुआ है । इस जीवन में भी हमें पूर्ण स्वतंत्रता नहीं मिलती , बल्कि

Edit with WPS Office

कई तरह की परतंत्रताएं झेलनी पड़ती है । इसलिए , मनुष्य को चाहिए कि वह इन शरीरों के जन्म मरण के चक्र से निकलने का प्रयास करें और ऐसे कर्मों का चयन करें जो न केवल उसे मोक्ष के मार्ग पर ले जाए , बल्कि अन्य प्राणियों के जीवन को भी बिना किसी कष्ट के संपन्न करें ।

सृष्टि के नियमों के अनुसार , प्रत्येक प्राणी की जाति , आयु और कर्म फल निश्चित है । हमें उनका सम्मान करते हुए , उनकी आयु और कर्मों का भोग करने में सहायता करनी चाहिए । किसी भी प्राणी की अकाल मृत्यु का कारण ना बने और उनकी भलाई के लिए हर संभव प्रयास करें । यही सच्ची मानवता है और यही मनुष्य जीवन की सार्थकता है ।

पुनर्जन्म की आवश्यकता क्यों होती है :

सृष्टि उत्पत्ति का प्रधान कारण जीवों के कर्म और परमेश्वर का न्याय ही है । जीव अनादि काल से कर्म करते हुए चले आ रहे हैं और परमात्मा भी अनादि काल से उनको कर्म फल देता हुआ चला आ रहा है । इसलिए प्रत्येक प्रलय के बाद नवीन सृष्टि होती है । और जीवों के शेष कर्मों के अनुसार उनको नाना प्रकार की योनियों में उत्पन्न करता है ।

जीवात्मा जब शरीर को धारण करती है , तब वह एक देशीय होने के कारण अपने-अपने से भिन्न अन्य पदार्थ की प्राप्ति की इच्छा से सदैव कुछ ना कुछ प्रयत्न किया करती है । इस प्रयत्न से संघर्ष उत्पन्न होता है , और उस संघर्ष से बहुत से महान कष्ट होने लगते हैं । कभी-कभी तो इनमें अत्यंत अत्याचारी जीव उत्पन्न हो जाते हैं कि उनकी सम्मिलित क्रियाओं से सृष्टि में उथल-पुथल होने लगती है , तथा श्रेष्ठ प्राणियों को घोर यातनाएं भोगनी पड़ती है । ऐसी दशा में अपनी उच्च सभ्यता , न्याय और दया से प्रेरित होकर परमात्मा सृष्टि नियमों की रक्षा करने के लिए और दुष्टों से श्रेष्ठों की रक्षा व क्षतिपूर्ति दिलाने के लिए विवश होता है । दया , धर्म और न्याय स्वरूप परमात्मा दुष्ट अत्याचारी जीवों को दंड देकर व अत्याचार सहने वाले श्रेष्ठों को प्रतिफल दिला कर सृष्टि नियमों की रक्षा करता है । यह न्याय वह

Edit with WPS Office

नाना प्रकार की योनियों को बनाकर करता है । और एक योनि से दूसरी योनि को लाभ पहुंचाता है , अर्थात पूर्व जन्म का प्रतिफल दिलाता है क्योंकि जीव कर्म करने के लिए स्वतंत्र है फल भोगने के लिए परतंत्र । यही परमात्मा के सृष्टि के नियमन का कारण है ।

सृष्टि में पहले भोग्य उत्पन्न होता है या भोक्ता : ?

संसार का यह नियम है कि जो ज्ञान और कर्म में पूर्ण होता है , वह ज्ञानहीन का उपभोक्ता बनता है । अर्थात , पहले भोग्य के पदार्थ उत्पन्न होते हैं , और उनके पश्चात उन्हें भोगने वाले उत्पन्न होते हैं । इस सिद्धांत के अनुसार , जब पशुओं के लिए आवश्यक वृक्ष , पेड़ - पौधे आदि उत्पन्न हो जाते हैं , तब पशु उत्पन्न होते हैं । इसी प्रकार , जब मनुष्य के भोग्य पदार्थ , जैसे वृक्ष , अन्न , आदि, उत्पन्न हो जाते हैं , तब उन्हें भोगने के लिए मनुष्य का जन्म होता है ।

इस नियम के अनुसार , इस चेतना से युक्त सृष्टि में सबसे पहले वृक्षों का निर्माण हुआ । वृक्षों के बाद पशु उत्पन्न हुए , और पशुओं के बाद मनुष्य का जन्म हुआ । वेदों में चेतन सृष्टि की उत्पत्ति का यही क्रम बताया गया है । **यजुर्वेद के मंत्र इस बात की पुष्टि करते हैं ;**

" सम्भूत पृषदाज्यम् । पशून्तांश्चके वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ।। "
(यजुर्वेद. 31/16)
इस मंत्र का अर्थ है की सबसे पहले पृषद् नामक वनस्पतियां उत्पन्न हुई , फिर उड़ने वाले , फिर अरण्यों में विचरण करने वाला और ग्रामों में रहने वाले पशु उत्पन हुए । इनके बाद मनुष्य समाज प्रकट हुए ।

इस प्रकार से समस्त चेतन सृष्टि की उत्पत्ति का क्रम वनस्पतियों से प्रारंभ होकर पशुओं और फिर मनुष्यों तक पहुंचता है , जो सृष्टि के विकास की एक अद्भुत प्रक्रिया को दर्शाता है ।

Edit with WPS Office

कर्मानुसार पुनर्जन्म का सिद्धांत :

मनुष्य को सृष्टि का सबसे बुद्धिमान प्राणी माना जाता है , परंतु जब वह इस बुद्धि का दुरुपयोग करता है और भ्रष्टाचार , अनाचार , कामुकता , धन की असीम लालसा , मांसाहार और युद्ध के माध्यम से प्राणियों का संहार करता है , तो वह सृष्टि के प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ देता है । जंगलों की अंधाधुंध कटाई , पहाड़ों का दोहन , समुद्र और भूगर्भिक असंतुलन से प्राकृतिक संपदा का नाश कर देता है । इस विनाशकारी गतिविधियों के परिणाम स्वरूप सृष्टि के स्वाभाविक नियम गड़बड़ा जाते हैं , और परिणामस्वरूप प्राणी विविध प्रकार के कष्टों का सामना करने को विवश हो जाते हैं ।

सृष्टि के इन नियमों की रक्षा और पुनर्स्थापना के लिए , नियामक शक्ति (ईश्वर) अत्याचारी और भ्रष्ट प्राणियों को उनके कर्मों के अनुसार पशु या वृक्ष की योनियों में भेजता है । वहां वे अपने दुष्कर्मों का फल भोगते हैं और जिनके प्रति उन्होंने अन्याय किया था , उनकी सेवा के माध्यम से अपने ऋण को चुकाते हैं । जैसे पशु पक्षी , मनुष्य की सेवा करते हैं ___ उनके लिए भोजन , दूध और अन्य आवश्यकताएं प्रदान करते हैं ___ वैसे ही वृक्ष भी फल , फूल , अन्न , औषधि , और वर्षा जैसे अनमोल साधनों के माध्यम से न केवल मनुष्य की , बल्कि पशु पक्षियों की भी सेवा करते हैं । यह चक्र इस सिद्धांत पर आधारित है की निम्न योनियों के प्राणी उच्च योनियों की सेवा करके अपने कर्मों का प्रायश्चित करते हैं और ऋण से मुक्त होते हैं ।

जो मनुष्य अपनी बुद्धि का सदुपयोग करने में असफल रहे , जो केवल भोग और विलास में लिप्त रहे , उनकी बुद्धि का प्राकृतिक स्थान (सिर आकाश की ओर) से हटा दिया गया और उनका सिर धरती की ओर झुका दिया गया , प्रतीकात्मक रूप से दर्शाते हुए कि उनकी ज्ञानेंद्रियां छीन ली गई है । यद्यपि उन्हें बुद्धि और ज्ञान मिला था , उन्होंने इसका दुरुपयोग किया , और परिणाम स्वरूप उन्हें पशु बना दिया गया । पशुओं की बुद्धि सीमित होती है , इसलिए उनका सिर क्षितिज की और आडा कर दिया गया ,

Edit with WPS Office

जबकि मनुष्य का सिर आकाश की ओर इसलिए रहता है क्योंकि उसका संबंध ज्ञान और बुद्धि से होता है । और जिन मनुष्यों ने अहंकार और प्रमाद के साथ जानबूझकर दुष्कर्म किए , उनकी न केवल ज्ञानेंद्रियां बल्कि कर्मींद्रियां भी छीन ली गई । ऐसे प्राणी वृक्ष बन जाते हैं ___ अचल , स्थिर , और ज्ञानहीन । वृक्ष अपने स्थान से हिल नहीं सकते , न ही उन्हें किसी तरह का बोध होता है । यह स्थिति उन लोगों की होती हैं , जिन्होंने अपने मनुष्य जन्म का अत्यधिक दुरुपयोग किया । इस प्रकार , जो सतोगुणी कर्म करते हैं , वे ऊपर की ओर बढ़ते हैं ___ मोक्ष प्राप्त करते हैं या उच्चतर मानव योनियों में जन्म लेते हैं । रजोगुणी कर्म करने वाले मध्य की ओर जाते हैं , जबकि तमोगुणी कर्म करने वाले नीचे की ओर गिरते हैं और वृक्ष या अन्य निम्न योनियों में जन्म लेते हैं । यह कर्मों के आधार पर जन्म - मरण का अनवरत चक्र है , जिसमें प्राणी विभिन्न योनियों में आते - जाते रहते हैं ।

ईश्वर ने विभिन्न योनियों की रचना क्यों की ..?

प्रकृति ने प्राणी वर्ग को चार प्रकारों में विभाजित किया है ___ **जरायुज** (माता के गर्भ से उत्पन्न) , **उद्भिज्ज** (अंकुरित होकर पैदा हुए) , **अंडज** (अंडे से उत्पन्न) और **स्वेदज** (पसीने अथवा केमिकल रिएक्शन से उत्पन्न) इन जीवों के शरीरों का निर्माण उनके कर्मों के आधार पर होता है ।

जीवों की योनियों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है : **भोग योनि और कर्म योनि** । मनुष्य की योनि को कर्म योनि कहा जाता है , जबकि पशु पक्षी कीट और पेड़ पौधों की योनि भोग योनि कहलाती है । मनुष्य शरीर में , व्यक्ति न केवल अपने पूर्व जन्म के कर्मों का फल भोगता है , बल्कि वह नए कर्म भी कर सकता है । इसके विपरीत , भोग योनि में केवल पूर्व जन्म के कर्मों का फल ही भोगा जाता है , वहां नए कर्म का संचय करने की क्षमता नहीं होती , क्योंकि बुद्धि का अभाव होता है ।

मनुष्य के पास विवेक तथा बुद्धि होती है , जिससे वह अच्छे या बुरे कर्म कर सकता है । परंतु पशु , पक्षी , पेड़ - पौधों में यह क्षमता नहीं होती , इसलिए

Edit with WPS Office

वे केवल अपने पूर्व कर्मों का फल भोंगते हैं । यदि मनुष्य अधर्म के कर्म करता है , तो उसे भविष्य में भोग योनि में जाकर उन कर्मों का फल भोगना पड़ता है ।

- **ज्ञान के साथ किए हुए कर्म** से उत्तम गति प्राप्त होती है ।

- **अज्ञानता के साथ किए हुए कर्म** मध्यम गति की ओर ले जाते हैं ।

- **जानबूझकर अधर्म का कर्म करने से** अधम गति प्राप्त होती है ।

आत्मा की योनियों का निर्धारण उसके कर्मों के आधार पर होता है :

- **जब पाप कम और पुण्य अधिक** होते हैं , तो व्यक्ति को उत्तम मनुष्य शरीर प्राप्त होता है ।

- **पाप और पुण्य के बराबर** होने पर अधम मनुष्य शरीर मिलता है ।

- **यदि पाप पुण्य से अधिक** होते हैं , तो पशु -पक्षी का शरीर मिलता है ।

- **जब पाप बहुत अधिक** होते हैं , तो आत्मा पेड़ - पौधों का शरीर धारण करती है ।

मनुष्य कर्म करने के लिए स्वतंत्र होता है , लेकिन उसे अपने कर्मों का फल भोगने के लिए परतंत्र रहना पड़ता है ।

मृत्यु के बाद आत्मा की यात्रा : नए शरीर में प्रवेश :

जब शरीर की मृत्यु होती है , तो उदान वायु शरीर से निकलती है , और शरीर ठंडा हो जाता है । उस समय , जीवात्मा इंद्रियों के सूक्ष्म तत्वों को

Edit with WPS Office

साथ लेकर उदान वायु के साथ दूसरे लोक में चला जाता है । आत्मा की गति उसके अंतिम संकल्प (कर्म) के आधार पर होती है । मृत्यु के समय आत्मा जिस संकल्प को धारण करती है , उसी के अनुसार वह आगे का जीवन पाती है ।

- आत्मा पहले **सोम** (चंद्रमा) मैं स्थित होती है ।
- वहां से **मेघ** (बादल) में प्रवेश करती है ।
- मेघ से **वृष्टि जल** (वर्षा) में , और वर्षा से अन्न (फसल) में प्रवेश करती है ।
- अंततः , **अन्न से रज** , वीर्य (शुक्र) के माध्यम से गर्भ में प्रवेश करती है ।

इस पूरी प्रक्रिया में परमात्मा जीवात्मा को उसकी संकल्पों के अनुसार भिन्न भिन्न योनियों में ले जाता है । इस प्रकार जीवात्मा प्राण ,मन , इंद्रियों और अन्य सूक्ष्म तत्वों सहित एक शरीर से दूसरे शरीर में स्थानांतरित होता रहता है ।

निष्कर्ष : वेद , उपनिषद और भगवत गीता सभी इस पर बात पर सहमति जताते हैं की कर्म ही पुनर्जन्म का मुख्य कारण है । व्यक्ति जो भी कर्म करता है , उसका प्रतिफल उसे अवश्य भोगना पड़ता है , और उसके कर्म ही यह निर्धारित करते हैं कि उसका अगला जन्म कैसा होगा । पुण्य कर्म उसे उच्चतर योनियों और लोको में जन्म दिलाते हैं , जबकि पाप कर्म उसे निम्नतर योनियों में धकेलते हैं । शास्त्रों के अनुसार , जन्म - मरण के इस चक्र से मुक्ति पाने का एकमात्र तरीका मोक्ष है , जिसे निष्काम कर्म और योग के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 101. हरिण के बच्चे में आसक्ति के कारण राजा भरत का हरिण योनि में जन्म ___ भागवत पुराण !

भागवत पुराण पंचम स्कंद में एक कथा आती है । महाराज भरत बड़े ही भगवद भक्त थे । ऋषभदेव ने संकल्प मंत्र से पृथ्वी की रक्षा हेतु नियुक्त कर दिया । उन्होंने पिता की आज्ञा में स्थित रहकर विश्व रूप कन्या पच्चनी से विवाह किया । पच्चनी से पांच पुत्र हुए । जो सर्वथा उन्हीं के समान थे । राजा भरत समय-समय पर छोटे बड़े यज्ञों का आयोजन करके भगवान का यजन किया करते थे ।

इस प्रकार सहस्त्रों वर्ष निकल जाने पर भोगी हुई वंश परंपरागत संपत्ति को पुत्रों में बांट दिया । फिर राज महल से निकलकर वे पुलहाश्रम (हरिहर क्षेत्र) में चले गये । वही पुलहाश्रम के उपवन में एकांत रहकर कन्द मूलादि खाकर आराधना करने लग गए । एक बार भरत गण्डकी नदी में स्नान करके प्रणव का जप करते हुए तीन मुहूर्त तक नदी की धारा के पास बैठे रहे । इसी समय एक गर्भवती हिरणी प्यास से व्याकुल होकर जल पीने के लिए अकेले नदी के तीर पर आई । जल पी रही थी कि अचानक सिंह की दहाड़ सुनाई पड़ी । डर के मारे उसने भयवश नदी पार करने के लिए छलांग मारी ।

भागवत पुराण. 5/8/5 ______

उसके पेट में गर्भ था , उछलते समय उसका घर अपने स्थान से हटकर योनि द्वार से निकलकर नदी के प्रवाह में बहने लगा । राजा भरत ने देखा कि

Edit with WPS Office

बेचारा हिरनी का बच्चा नदी के प्रवाह में बह रहा है । उस पर भरत को दया आई वे उस मातृहीन हिरण के बच्चे को अपने आश्रम ले आए । लंबी छलांग तथा सिंह के दहाड़ से डरी हुई हिरणी बहुत पीडित हो गई थी और अपने झुंड से भी विधोह हो गया था , इसलिए किसी गुफा में जाकर वही मर गई । उस मृग छीने के प्रति राजा भरत की ममता उत्तरोत्तर बढ़ती गई । धीरे-धीरे यम - नियम और भगवद पूजा से वे दूर हो गए । उस हिरणी के बच्चे में आसक्ति बढ़ गई । कभी दिखाई नहीं दिया तो व्याकुल हो जाते । इस प्रकार राजर्षि भरत विध्नों के वशीभूत होकर योग - साधना से भ्रष्ट हो गए और मृग छीने के पालन पोषण में अपना आत्म स्वरूप भूल गए । एक दिन हरिण शावक उनके सामने पुत्रवत् बैठा था वे उसे इस स्थिति में देख रहे थे और उनका चित्त उसी में लगा रहा था । इस प्रकार हरिण शावक की आसक्ति में राजा भरत का शरीर छूट गया ।

भागवत पुराण. 5/8/27 ______
अन्त काल की भावना के अनुसार उनको मृग शरीर ही मिला । पूर्व जन्म की भगवद आराधना के प्रभाव से अपने मृगरुप होने का कारण जानकर वे पश्चाताप करते हुए कहने लगे मुझ अज्ञानी का वही मन अकस्मात् एक नन्हे से हरिण -शावक के पीछे अपने लक्ष्य से च्युत हो गया ।

भागवत पुराण. 5/8/30 ______
इस प्रकार मृग बने हुए राजर्षि भरत के हृदय में वैराग्य जागृत हुआ । अपनी जन्म भूमि कालठ्जर पर्वत से वे उसी शालग्राम तीर्थ में पुलस्त्य और पुलह ऋषि के आश्रम में चले आये । वहां रहकर वे काल की प्रतीक्षा करने लगे ।

भागवत पुराण. 5/8/31 ______
अन्त में उन्होंने अपने शरीर का आधा भाग गण्डकी के जल में डुबायें रखकर उस मृग शरीर को त्याग दिया ।

कहने का तात्पर्य ______ किसी भी परिस्थिति में तन मन विवेक और बुद्धि में आसक्तपन नहीं लाना चाहिए आसक्ति ही बंधन का कारण है ।

Edit with WPS Office

अगर हरिनी के शावक में भरत आसक्त न होते तो मरणोपरांत उनको हरिण की योनि नहीं मिलती । इसलिए अन्त्य सुधारने के लिए सर्वथा सजग रहना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•102. मृत्यु किसकी आत्मा वा शरीर की ..?

उपस्थित सज्जनों एवं वहनों ! आज के इस शोकावस्था में आप सब के सामने एक नये विषय पर लेखनी लिखता हूं , वह विषय है मृत्यु किसकी ? दुनिया की विधि व्यवस्थानुसार कोई आ - रहा है और कोई जा - रहा है । जो कल था आज वह नहीं है और जो आज है कल नहीं भी रह सकता है । यह दुनिया आनी - जानी है । इस धर्मशाला रुपी संसार में कितने मुसाफिर विश्राम करने आए , कितने अभी भी विश्राम कर रहे हैं और कितने विश्राम करने आएंगे । इस दुनिया में किसी प्राणी को अमरता नहीं मिली है । किसको मृत्यु कहे ? जो जा - कर वापस नहीं लौटा उस को मृत्यु नहीं कह सकते । हम भी घर से बाहर व्यापार - वाणिज्य के लिए , तीर्थ करने के लिए , भ्रमण करने के लिए निकलते हैं वापस लौटने की कोई निश्चित समय सीमा नहीं होती है । आज भी आ सकते हैं अथवा महीनों , वर्षों भी लग सकता है अथवा नहीं भी आ - सकते हैं उसको तो मृत्यु नहीं कह सकते । तो फिर मृत्यु किसकी ? **आचार्य चाणक्य कहते हैं** ___ धर्मात्मा , सदाचारी

Edit with WPS Office

की मृत्यु रक्षा करती है ।

योग वशिष्ठ में उल्लेख है ___ 3/2/10

इस स्मृति में कहा गया है -- हे मृत्यु ! तू अपने बल से किसी को नहीं मार सकती और यह भी नहीं कह सकती कि मैंने ही उसको मारा है । क्योंकि व्यक्ति वह अपने ही कर्मों से मारा जाता है , किसी दूसरे कारण से नहीं । उपरोक्त प्रमाण से सिद्ध होता है मृत्यु किसी को नहीं मारती । अपितु साधु - सन्त , महात्मा , तपस्वी , योगी - मुनि विद्वान ऋषि , वृद्धजनों और ज्ञानी जनो की हमेशा रक्षा करती है । देवताओं , ऋषि मुनियों से लेकर महात्मा बुद्ध , भगवान महावीर , स्वामी विवेकानंद , आदि शंकराचार्य , महर्षि दयानंद सरस्वती तक किसी ने भी मृत्यु को दोष नहीं दिया । स्वामी दयानंद को 17 बार जहर दिया गया मृत्यु ने दयानंद की रक्षा की । क्योंकि महर्षि दयानंद को लोक - उद्धार के लिए बहुत काम करने थे । अन्त में 18वीं बार पुनः उनके ही पाचक ने एक वेश्या से मिलकर जहर दिया तब भी मृत्यु ने रक्षा करने की भरपूर कोशिश की । स्वामी दयानंद मेरे प्रभों तेरी इच्छा पूर्ण हो , कहते कहते विश्वघात्री परम पावनी मां (प्रभु) की गोद में स्वयं जा बैठे । भीष्म पितामह को शय्या पर उतरायण आने तक मृत्यु ने ही मां बनकर रक्षा किया । हमारे वीर बलिदानियों ने कभी मृत्यु को शत्रु नहीं माना । मृत्यु तो सांसारिक भोगों के प्रति परम् वैराग्य की भावना उत्पन्न कर इसे भक्ति के आनंदप्रद मार्ग पर स्वाभाविक रूप से प्रेरित करने वाली दिव्या मां है । अविज्ञ लोग ईश्वर से शिकायत करते है ___

अपने दोषों को कोई नहीं देखता परन्तु शिकायत कर बैठते हैं । शास्त्रकारों ने जीवन और मृत्यु के सन्दर्भ में बहुत कुछ लिखा है । वास्तविकता यह है जीवन प्रकाश दिन की भांति है और मरण अंधकार रात्रि की भांति । हम सभी जानते हैं कि दिन काम करने के लिए और रात्रि विश्राम करने के लिए है । मनुष्य अथवा अन्य कोई भी प्राणी जब दिन में काम करते-करते अत्यधिक थक जाता है तो उसके अन्त: करण (मन , बुद्धि आदि) तथा बाहरीकरण (हाथ ,पैर , आंख ,कान आदि) सभी काम के अयोग्य होकर विश्राम की आवश्यकता का अनुभव करने लगते हैं । रात्रि विश्राम की अवस्था है । मनुष्य गाढ निंद्रा में शयन करता है , उस समय संपूर्ण अंग -

Edit with WPS Office

प्रत्यंग क्रियाशून्य हो जातें हैं ।

प्रातः काल तक उसके सभी अंग - प्रत्यंग पुनः शक्ति के भंडार बनकर काम करने योग्य हो जाते हैं । इसी प्रकार ही जीवन दिन की भांति काम करने और मृत्यु रात्रि की तरह विश्राम देकर पुनः कार्य करने योग्य बना देने का नाम है । पुनः प्रश्न उपस्थित होता है , मृत्यु किसकी ? अब दूसरी और नजर डालते हैं तो कहा जाता है शरीर से आत्मा का संयोग होना जनम है और संसार के भोगों को भोग कर शरीर से आत्मा का निकल जाना मरण (मृत्यु) है । यह कैसे ? गीता में इस प्रकार का वर्णन आता है ___

गीता. 2/22 ______

समझने की बात है जिस प्रकार पुराने वस्त्रों को त्याग कर नये वस्त्रों को बदलते हैं , उसी प्रकार जीवात्मा भी पुराने शरीर रूपी वस्त्र को त्यागकर नया शरीर (वस्त्र) धारण करता है यह निश्चित नहीं है कि नया वस्त्र (नया कपड़ा) एक साल वा दो साल चलें , ज्यादा भी चल सकता है और डेट निकल कर अथवा उलझ कर फट भी जाता है । कोई गारंटी वारंटी थोड़ी न है । हम प्रयास कर सकते हैं कि अधिक दिन तक चले । ठीक इसी तरह यह शरीर पांच भौतिक तत्वों के संयोग से बना है ।

क्षिति , जल , पावक , गगन , समीरा ।
पंच तत्व रचित अति उच्च शरीरा ।।

पृथ्वी , जल , अग्नि , आकाश और वायु इन पांच के संयोग से यह शरीर तैयार हुआ है । ये पांच तत्व कभी नाश नहीं होते जिनको हम प्रकृति भी कहते हैं । पृथ्वी का गुण _ गन्ध है । जल का गुण _ रस । अग्नि का गुण _ रुप । आकाश का गुण है _ शब्द और वायु का गुण _ स्पर्श है । हम नाकं से गन्ध को जानते हैं । जीभ से रस (स्वाद) को जानते हैं । आंख से रुप को जानते हैं , कान से शब्द को जानते हैं और चमड़ी से स्पर्श (ठंडा - गरम) को जानते हैं । जब इस संसार से शरीर को छोड़कर जीवात्मा चली जाती है उस स्थिति में पांचों _ शब्द , रुप ,रस , गंध और स्पर्श ये भी पृथ्वी , जल , अग्नि , आकाश , और वायु में अपने-अपने स्थान (तत्व) में समाहित हो जाते हैं । शब्द , रुप , रस , गंध और स्पर्श ये भी नहीं मरते । यह शरीर जो कि पंच तत्वों के संयोग से बना हुआ है यह भी एक-एक करके अर्थात शरीर राख

Edit with WPS Office

बनकर पृथ्वी में मिल जाता है । उसी प्रकार पानी - पानी में , अग्नि सूर्य में , वायु - वायु में , आकाश - आकाश में मिल जाते हैं ये पंच तत्व भी नहीं मरते । फिर मृत्यु किसकी ?

कठोपनिषद. 2.18 ______

यह जीवात्मा न मरता है , न जन्म लेता है यह तो अजन्मा है , नित्य है , हमेशा रहने वाला है और नहीं कोई मार सकता है ।

गीता. 2.23 ______

1. जीवात्मा को शस्त्र नहीं काट सकते , आग नहीं जला सकती , पानी नहीं गला सकता और वायु (हवा) नहीं सुखा सकता कहने का तात्पर्य जीवात्मा भी कभी नहीं मरती । हम जीवात्मा वैसे __ के वैसे ही रहते हैं । क्योंकि जीवात्मा अजर , अमर , शाश्वत , नित्य , सत्य - सनातन सूक्ष्म बीज तत्व है । शरीर क्या है , जिस प्रकार घर पुराना होने पर जीर्णोद्धार करते हैं अथवा दूसरा नया घर बनाकर रहने लगते हैं ठीक इसी प्रकार जीवात्मा भी उस पुराने घर को छोड़कर दूसरे ही नये घर में प्रवेश करती है । पुनः प्रश्न उठना है , फिर मृत्यु किसकी ? इस दुनिया से जो घर के वयोवृद्ध दादा - दादी नाना - नानी , 90 साल के ऊपर के हो जाते हैं उनके शरीर शांत होने पर कोई भी घर के सदस्य विशेष शोक नहीं करते ।
2. घर से कोई अल्प - वयस्क वाला सदस्य अर्थात एक साल से लेकर 5 साल तक के बालक - बालिका के आकस्मिक निधन पर भी अत्यधिक शोक नहीं किया जाता । चले जाने से दुख होना स्वाभाविक है , जल्दी ही भूल जाने का प्रयत्न करते हैं ।
3. लम्बी बीमारी के बाद कोई यदि गुजर जाता है तब भी शोक नहीं करते । कहते हैं बहुत दुख सहन किया इसने । भगवान ने अपने पास बुलाकर इसको तथा घर वालों को भी दुख से छुड़ाया । फिर प्रश्न वही " मृत्यु किसकी ? मृत्यु से मरणासन्न व्यक्ति को इतना दुख नहीं होता जितना उसके परिवार तथा संगे _संबंधियों को होता है । " जाने वाला " तो सब दुखों से छूटता है किंतु दूसरों के दुख का कारण अवश्य बन

Edit with WPS Office

जाता है ।
दुनिया में स्व - जनों के बिछोह होने पर जो दुख परिवार को हुआ करता है , इसका कारण यह नहीं है कि बिछोह स्वजन उन्हें बहुत प्रिय था बल्कि असली कारण यह है बिछोह स्व - जन के साथ परिवार के स्वार्थ जुड़े थे और बिछोह स्वार्थ सिद्धि में बाधक बनता है । बस असली दुख इतना ही है कि स्वार्थ की हानि हुई है । जिसे पुत्र का शोक है , वह केवल इसलिए की उसने पुत्र को बुढ़ापे की लाठी समझ रखा था । पुत्र क्या मरा , उस के बुढ़ापे की लाठी छिन गई ।

इसी प्रकार जवान पति मरने पर , जवान माता-पिता मरने पर , जवान भाई मरने पर अब चिंता केवल इस बात की है कि अब हमारा सहारा कौन देगा ? अतः यह स्पष्ट है कि जिसे मृत्यु का शोक कहते हैं वह शोक असल में बन्धु - बान्धवों वा अपनों के लिए नहीं , किंतु अपने ही स्वार्थ में बांधा पहुंचने के कारण होता है । महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रेयी से स्वार्थवृत्ति के संबंध में इस प्रकार कहते हैं ______

बृहदारण्यक उपनिषद. 4.5.6 ______

निश्चय ही पुत्रों की कामना के लिए (माता-पिता) को पुत्र प्रिय नहीं होते अपितु अपनी अपनी कामना के लिए ही पुत्र प्रिय होते हैं । अतः मृत्युंजय दुख का कारण एकमात्र स्वार्थ में हानि होना है । अर्थात स्वार्थ की हानि होना ही स्वार्थ की मृत्यु है । जहां स्वार्थ ना हो वहां दुख वा शोक नहीं होता है । भाइयों और बहनों ! स्वार्थ रहित , मोह रहित , और आसक्त रहित होकर भोगों को भोगना चाहिए । यह सब विशाल वस्तु भंडार - धन - धान्य , स्त्री-पुत्र , सगे - संबंधी , मित्र - बान्धव जीवन की इस यात्रा में हमारी सुख सुविधा के लिए हमें सौंपे गए हैं ।
यह शरीर भी जिससे हमें सबसे अधिक मोह है ___ यह भी तो एक साधन के रूप में हमें प्राप्त है । अब वह मालिक अपनी दी हुई इन वस्तुओं को जब वापस मांगे तो फिर कैसा दुख और कैसा विलाप ? छोटा सा उदाहरण __ एक कैदी जब जेल में रहता है तो उसे वेशभूषा , बिस्तर ,पात्र आदि दिए जाते हैं । जेल से मुक्त होने पर क्या वेशभूषा बिस्तर पात्रादि उसके ही होंगे ? नहीं ना , रोगी अस्पताल में चिकित्सा के लिए जब एडमिट होता है उसे भी

Edit with WPS Office

पहनने हेतु वस्त्र , सोने के लिए बिस्तर अन्य साधन आदि दिए जाते हैं परंतु अस्पताल से छूटने पर क्या उसका अधिकार , वस्त्र , बिस्तर , आदि से बना रहेगा ? सबको वही एक-एक गिनती करके वापस करना पड़ेगा न , सरकारी वस्तुएं सरकार की ही तो होगी ? यही अवस्था जीवन और मृत्यु की है ।

कहने का तात्पर्य जीवन में किसी भी प्रकार से स्वार्थ को आने ना दे । यदि स्वार्थ ने स्थान बना लिया तो उसकी मृत्यु निश्चित है । यही इस कथा का तात्पर्य है । श्रोतागण आप लोग स्वयं समझदार हैं जिस विषय पर हमने आप लोगों के समक्ष चर्चा की इस पर अवश्यक चिंतन मनन करेंगे ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 103.मृत्यु कभी पीछा नहीं छोड़ता

उपस्थित मेरे भाइयों और बहनों ! आज इस परिवार में जो घटना घटित हुई , जिसको हम सब मृत्यु के नाम से जानते हैं । यह सबके लिए अवश्य ही दुखदायी है । चलता - फिरता , खाता - पीता , बोलता - चलता मनुष्य - सहसा उसे क्या हो जाता है ? एक ही झटके में समाप्त हो जाता है । समस्त गतिविधियां कैसे शून्य हो जाती है ? और शून्यता भी कैसी , जो कभी भी हलचल के रूप में दिखाई नहीं देती । सारे रिश्ते - नाते , प्यार - सम्मान , और धन - दौलत धरें रह जाते हैं ।

Edit with WPS Office

मनुष्य के लिए यह " मृत्यु " सदा से एक चुनौती , एक प्रश्न बनकर खड़ी है जिसका उत्तर प्राप्त करने की जिज्ञासा चिरन्तन काल से रही है ।
सज्जनों ! राजकुमार सिद्धार्थ (महात्मा बुद्ध) और बालक मूलशंकर (स्वामी दयानंद) के अपरिपक्व मन को इन्हीं प्रश्नों ने विचलित किया था । कठोपनिषद में नचिकेता ने यम से तथा बृहदारण्यक उपनिषद में जनक की सभा में ऋषियों ने महर्षि याज्ञवल्क्य से इन्हीं प्रश्नों का समाधान प्राप्त करना चाहा था । परंतु समय बीतता गया जिज्ञासा वैसी _ की _ वैसी ही रह गयी आज तक भी शान्त नहीं हुई है । मृत्यु शब्द इतना भयानक है कि इस शब्द को सुनते ही शूरवीरों की वीरता और धीरों की धीरता समाप्त हो जाती है । हिंदी साहित्य के एक कवि मृत्यु के बारे में इस प्रकार कहते हैं ___

न मौत कुछ न ज़िन्दगी , बस इतनी सिर्फ बात है ।
किसी को नींद आ गई किसी की आंख खुल गई ।।

मृत्यु जीवन की अनिवार्यता है । वह प्रतिपल जीवन का पीछा कर रही है , फिर भी आश्चर्य यह है कि मनुष्य " मृत्यु " शब्द को सहन नहीं कर पाता । इस शब्द का सुनना भी अशुभ समझा जाता है । शब्द कितना ही असहाय क्यों न हो , परंतु प्रत्येक जीव धारी प्रतिक्षण इसी की और दौड़ रहा है । सामान्य जनों के अनुभव में " मृत्यु " एक दुखदायी व सन्तापक है , किंतु मृत्यु के आधुनिक सन्द्रष्टा महर्षि दयानंद की दृष्टि में यह सदा के लिए स्मरणीय अनुभूति है जिससे मनुष्य धैर्य मार्ग का उपासक व प्रचारक बना रहे ।

जो उग्या सो आथिवै फूल्या सो कुमिलाई ।
जो चिनिया सो ढहि पडै जो आया सो जाई ।।

संसार में स्थिरता कहा ? शरीर प्रतिक्षण बदल रहा है । जिस शरीर को लेकर हम यहां आए थे , शायद हम सोचते हो उसी को लेकर हम वापस जाएंगे । यह समझना सरासर भूल है ।
वाल्मीकि रामायण **(अयोध्या काण्ड सर्ग 105)** में राजा दशरथ की मृत्यु के पश्चात संपूर्ण राजपरिवार शोक में डूबा हुआ है । परिवार वन में श्री राम की सेवा में उपस्थित होकर उनसे अयोध्या लौटने की प्रार्थना करता है । ऐसे दु:खद अवसर पर राम समस्त परिजनों , विशेष रूप से भरत को समझाते

Edit with WPS Office

हुए जिन शब्दों में संसार की निस्सारता तथा मृत्यु की अनिवार्यता और वास्तविकता का वर्णन करते हैं वह विशेष विचारणीय एवं बोधप्रद है ।

वाल्मीकि रामायण. अयोध्या कांड , सर्ग 16 , श्लोक.21 ______
हे भरत ! सभी संग्रह का अंत विनाश है , उन्नतियों का अंत पतन है , संयोगों का अंत वियोग है और जीवन का अंत मरण है । जैसे पके फल का गिरना निश्चित है , वैसे ही उत्पन्न हुए मनुष्य का मरना भी निश्चित है । जैसे सुदृढ़ भवन भी पुराना होकर एक दिन धराशायी हो जाता है , वैसे ही बुढ़ापे और मृत्यु के वश में होकर मनुष्य भी एक दिन नष्ट हो जाता है । जो रात्रि एक बार व्यतीत हो जाती है वह दोबारा नही लौटती , यमुना भी जलपूर्ण समुद्र में जाकर सदा के लिए विलीन हो जाती है । सब प्राणियों के दिन - रात एक-एक कर बीतते जाते हैं और इस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में जल बिंदु की भांति शीघ्र उनकी आयु क्षीण होती जाती हैं । मृत्यु हमारे साथ-साथ चलती - फिरती , उठती -बैठती है और दीर्घ मार्ग तक चलकर हमारे साथ ही लौट आती हैं ।
वेद के शब्दों में ___ **अथर्ववेद. 19/53/3**
भावार्थ ______ वस्तुत: हमारा यह जीवन क्या है ? जल से भरा एक कुम्भ (घड़ा) जो क्षण में रीता होता जाता है और हम इसे जान भी नहीं पाते ।
किंतु यह नादान मानव काल की ओर निरंतर बढ़ता हुआ भी प्रसन्न होता है । कितनी कितनी खुशियां मनाता है एक-एक वर्षगांठ पर चाहे जन्म का हो अथवा विवाह का ।

शोक सन्तप्त अर्जुन को **(गीता. 2.27)** में भगवान कृष्ण ने इसी सत्य पर मोहर लगाते हुए कहा था ______
उत्पन्न व्यक्ति की मृत्यु निश्चित है । मृत व्यक्ति का जन्म भी उतना ही निश्चित है । इस अनिवार्य सत्य का अनुभव करते हुए हे अर्जुन ! तू क्यों शोक कर रहा है ? जो वस्तु नष्ट होनी थी , जिसका अंतिम परिणाम था ही विनाश उसके लिए कैसा शोक ! कैसा संताप !! महात्मा कबीर के शब्दों में ____**और मुये क्या रोइये , जो आपा थिर न रहाइ ।**
जो उपजै सो बिनसिहं , दु:ख करि

Edit with WPS Office

रोय बलाइ ।।

महाकवि कालिदास के प्रसिद्ध काव्य " रघुवंश " के अमर पात्र सम्राट अज अपनी पत्नी इंदुमती के निधन पर अपने व्यथित मन को स्वयं समझाते हुए कहते हैं ______

रघुवंश. 8/87 ___ : दहे धारियों के लिए मरना तो स्वाभाविक है और जीवन को ज्ञानी पुरुष विकास मानते हैं । यदि प्राणी क्षण भर भी जीवित रह सकते तो उसे संतोप करना चाहिए । उपस्थित भाइयों और बहनों ? मृत्यु के संबंध में ज्ञानी बनकर दूसरे को उपदेश देना जितना सरल है उतना ही कठिन है मृत्यु - क्षणों का अनुभव । मृत्यु क्या है , कितनी कष्ट - प्रद है यदि कोई जानना चाहता है तो पूछें उस नारी से जिसका सुहाग मिट चुका है , पूछे उस मां के दुखी हृदय से जिसका लाल (बेटा) उसकी गोदी को सूना कर सदा के लिए चला गया है । वह बहन बताएगी मृत्यु दुख जिसका भाई सदा सदा के लिए नाता तोड़ चुका है । वह बेटा कहेगा मृत्यु पीड़ा जिसके माता-पिता उसे अनाथ निराश्रित बनाकर हमेशा के लिए चले गये है । इस दुख - पारावार का कहीं अन्त नहीं , कौन सहारा देगा , किसको दु:ख सुनाएं ?

इसी मृत्यु के संदर्भ में महात्मा बुद्ध के जीवन में घटित एक कथा इस प्रकार है ___

उत्तर प्रदेश ___ श्रावस्ती की एक दिन की घटना है महात्मा बुद्ध वृद्ध जन - सभा में संसार की असारता , वस्तुओं की क्षणिकता एवं प्राणियों को पीड़ा के विषय में संबोधन कर रहे थे __: तभी सभा के एक कोने से एक आर्तनाद सुनाई पड़ा । देखा , एक क्षीणकाया , दु:खी ब्राहमणी एक बच्चे को गोद में उठाये पागल _ सी महात्मा बुद्ध की तरफ बढ़ रही है । सभा में आगे आकर अपने प्राण शून्य लाल (बेटा) को उसने महात्मा बुद्ध के चरणों में रखकर कहा __ महात्मा ! मुझ विधवा ब्राहमणी के हृदय से पूछों कि मृत्यु दुख क्या होता है , जिसको कितने यत्नों से पालित किया एक मात्र आशा की किरण यह शिशु आज काल _ कवलित हो गया है ।
महात्मा बुद्ध की आंखें अश्रुपूरित हो गई । धीरे से अपनें स्थान से उठें और

Edit with WPS Office

उस मृत बच्चे को अपनी गोद में उठाकर स्नेहासिक्त नयनों से निहारने लगे और फिर बोले ___

कितना सुन्दर यह बालक कितना प्यारा !! उससे भी सुन्दर हदया है वह मां जिसने इसे जन्म दिया है । मां ! यदि में तुम्हारे पुत्र को जीवित कर दूं तो ? पुत्र के जीवन के शब्द कानों में पड़े थे कि कृशा गौतमी ब्राहमणी ने महात्मा बुद्ध के चरण पकड़ लिये और कहां___ में अपना सर्वस्व न्योछावर कर सकती हूं महात्मन ! यदि मेरे लाल को जीवित कर मुझे लौटा सकें ।

बुद्ध ने उसी धीर - गम्भीर शान्त वाणी में उत्तर दिया ___ मां मत घबरा ! तुम्हें एक काम करना होगा । ब्राहमणी ने कहा - पूज्यवर ! शीघ्र आज्ञा दीजिए । महात्मा बुद्ध ने कहा - बात बहुत बड़ी नहीं है । केवल मुट्ठी भर पीली सरसों के दाने चाहिए जो तुम किसी के घर से मांग कर ला सकती हो । कौन तुम्हारी इस याचना को अस्वीकार करेगा ? ब्राहमणी सरसों के दाने लाने के लिए चलने लगी तो बुद्ध ने कहा - देखना मां ! सरसों के दाने ऐसे घर से लाना जिस घर में कभी किसी की मृत्यु न हुई हो । बात की गहराई को ठीक-ठीक न समझती हुई ब्राहमणी ने नगर के एक गृहस्थ के दरवाजे पर आवाज लगाई __ मुझ दुखिया विधवा ब्राहमणी को क्या भीख मिलेगी ? गृहपति ने विनम्रता से अंदर से बाहर आकर पूछा- क्या चाहिए मां?

केवल मुट्ठी भर पीली सरसों के दाने चाहिए । अभी उपस्थित करता हूं मां ! गृहपति के भीतर जाने के लिए उधत होते ही कुशा गौतमी ब्राहमणी को महात्मा बुद्ध की बातें याद आ गई जिसमें उन्होंने ऐसे घर से सरसों के दाने लाने के लिए कहा था जिस घर में कभी किसी की मृत्यु न हुई हो । अतः गृहस्वामी को रोककर का ब्राह्मणी ने पूछा __

मेरे भाई ! सरसों के दाने लाने से पहले आप यह बताएं कि आज या आज से वर्षों पूर्व कभी किसी की मृत्यु तो आपके घर में नहीं हुई ? गृहपति ने कहा - देवी ! यह क्या पूछती हो ? यह सत्य है कि मेरे माता-पिता , दादा दादी अभी जीवित हैं , किंतु उनके पिता तथा उनके भी पिता अब कहां है ? कौन सा ऐसा घर तुम्हें मिलेगा जिसमें मृत्यु का कभी प्रवेश न हुआ हो ? मृत्यु सबके घर में प्रवेश करती है और सबके साथ-साथ ही चलता है यह उसका नियम है । वह कभी अकेला नहीं चलता परछाई की तरह वह प्रत्येक प्राणी के पीछे छुपकर रहता है । उसके आगे सभी नत-मस्तक हैं । वह

Edit with WPS Office

सबको ग्रास बनाता है । बड़े-बड़े ऋषि , महात्मा , ज्ञानी ,ध्यानी सम्राट , राम , कृष्ण आदि महान् आत्माएं भी उससे बच नहीं सके । गृहस्वामी के कथन से उस कृशा गौतमी ब्राहमणी की आंखें खुल गईं ।

नौ द्वार का पींजरा , ता में पंछी पौन ।
रहिवे को अवरज महा ,जाइ तो अवरज कौन ।।
क्योंकि सत्य उसके सामने प्रकट था ।

महर्षि वाल्मीकि कहते हैं ___ **वाल्मीकि रामायण. उत्तरकाडं, 30/9**
पृथ्वी पर किसी भी प्राणी को कभी अमरता नहीं मिली ।
कहने का तात्पर्य यह है ___ मृत्यु का शासन किस पर नहीं है ? सन्त -योगी जन मृत्यु को जीवन की अनिवार्यता मानते हैं । मृत्यु ही परिवर्तन में बदलता है । आत्मा का शरीर से वियोग होना ही मृत्यु है और मृत्यु के बाद आत्मा का शरीर के साथ संयोग होना ही जन्म कहलाता है । जन्म और मृत्यु एक सिक्के के दो पहलू हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 104 ब्रह्मज्ञान से मृत्यु को जीतना संभव

Edit with WPS Office

उपस्थित सज्जनों ! कठोपनिषद में कथा आती है वाजश्रवा ऋषि के पुत्र कुमार नचिकेता अत्यंत तेजस्वी और मेधावी बालक थे । वाजश्रवा ऋषि ने सर्वमेध यज्ञ किया , उनके पास जो कुछ था सब देने लगे । उन में कुछ वस्तुएं ऐसी भी थी जो अनुपयुक्त थी जैसे दूध न देने वाली गौ , अत्यंत वृद्धा और जन्म देने में असक्त , जिसको ले जाने के बाद उपयोग वा उपकार मैं नहीं आ सकती । आस्तिक बुद्धि से प्रेरित होकर अपने पिता वाजश्रवा से पूछा __ आप अनुपयुक्त वस्तुओं को दान क्यों कर रहे हैं ? दान में लेकर ब्राह्मण इनका कैसे उपयोग करेंगे आदि । नचिकेता ने सब कुछ देते हुए देख कर अपने संबंध में पूछा कि आप मुझे किसको देंगे ?
पिता से तीन बार यही प्रश्न करने के बाद पिता वाजश्रवा ने कहा __ तुम्हें मृत्यु को दूंगा । नचिकेता पिता की अप्रसन्नता समझते हुए घर से चल दिए और मृत्यु के परम आचार्य विवश्वान के पुत्र यमराज के घर पहुंचे । यमराज उस समय घर पर नहीं थे , अतः बालक नचिकेता भूखा - प्यासा तीन दिन तक उनके द्वारा पर खड़ा रहा । तीन दिन पश्चात जब आचार्य यमराज घर लौटे तो उन्होंने अपने गृहद्वार पर एक तेजस्वी बालक देखकर मन में बड़ा पश्चाताप किया । आचार्य ने उस अतिथि बालक से क्षमा याचना करते हुए कहा ,

कठोपनिषद. 1.1.9 _____

हे ब्राह्मण ! तीन रात अतिथि होकर आप मेरे द्वारा पर बिना भोजन किये प्रतीक्षा करते रहे । मैं आपको नमस्कार करता हूं , आप मेरा कल्याण करें । एक-एक रात्रि के लिए एक-एक वर मांगकर आप मुझे कृतार्थ करें । इस कथा के अनुसार , बालक नचिकेता ने मृत्यु के आचार्य यम से प्रथम वर द्वारा पिता की प्रसन्नता , द्वितीय वर द्वारा स्वर्ग साधक अग्नि का रहस्य और तीसरे वर द्वारा मृत्यु के अनन्तर क्या होना है ? के विषय में जिज्ञासा की । यमराज नचिकेता को प्रलोभित करते हुए कहते हैं ___

कठोपनिषद. 1.1.25 ______

नचिकेता ! संसार में मनुष्यों के लिए दुर्लभ -भोग सामग्रियों को मुझसे मांग लो परंतु मृत्यु के गूढ़ रहस्य के विषय में मत पूछो ! इससे पहले भी बहुतों ने

Edit with WPS Office

प्रश्न पूछा था । नचिकेता हंस कर बोला ___ आचार्यवर ! धन द्वारा कभी किसी की तृप्ति नहीं हुई है , सांसारिक भोग आज है कल नहीं रहेंगे । ये क्षणिक वस्तु मुझे नहीं चाहिए । मनुष्य यदि पूर्ण आयु को भी प्राप्त करें तब भी वह वायु के समाप्त होने पर मृत्यु के मुख में तो जाएगा ही । इसलिए क्यों न वह ज्ञान प्राप्त किया जाय जिससे अमरता का जीवन प्राप्त हो सके और मृत्यु के फंदे से छूट सके । चौदह वर्षीय बालक मूलशंकर (महर्षि दयानंद सरस्वती) के सम्मुख भी मृत्यु का यह दृश्य आया _ प्यारी बहन अचानक काल (मृत्यु) की ग्रास बन गई । पिता से भी अधिक प्रिय चाचा भी उन्हें छोड़कर अचानक चल बसे । मृत्यु के इन बार-बार के धक्के को मूल शंकर चुपचाप सहन नहीं कर सके और मृत्यु की इस पहेली को समझने और सुलझाने के लिए सांसारिक सुखों को लात मारकर घर से सदा के लिए निकल पड़े । इसी तरह राज कुमार सिद्धार्थ (महात्मा बुद्ध) के जीवन में अनेक घटनाएं घटी वे भी मृत्यु के ताण्डव को सहन नहीं कर सके और " महाप्रयाण " कि उस रात्रि में राजकुमार सिद्धार्थ भी राजपाट , पुत्र , पत्नी , सब छोड़ कर घर से निकल गये ।

महाभारत के यक्ष - युधिष्ठिर संवाद में इसी आश्चर्य का सुंदर रूप में उल्लेख किया गया है ______

सरोवर का अधिष्ठाता यक्ष युधिष्ठिर से जल पीने से पूर्व अनेक प्रश्नों का उत्तर चाहता है इन्हीं में उसका एक प्रश्न है __ **किमाश्चर्यम् ?**

हे युधिष्ठिर ! संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है ? युधिष्ठिर ने यक्ष को जो उत्तर दिया वह आज भी उतना ही सार्थक और सत्य है । चक्रवर्ती महाराज युधिष्ठिर कहते हैं __

हम प्रतिदिन देख रहे हैं की एक-एक करके संसार के सभी प्राणी यम _ मंदिर (मृत्यु) को प्राप्त हो रहे हैं । शेष प्राणी यह सोचते हैं कि जाने वाले थे गये , हम नहीं जाएंगे । इससे बड़ा आश्चर्य क्या हो सकता है ? नचिकेता ने यमराज के सारे प्रस्ताव को ठुकरा दिया और आत्मा की अमरता तथा मृत्यु के गूढ़ रहस्य को जानने हेतु जिद करते रहे । नचिकेता एक ब्रह्मचारी थे । इस प्रकार का प्रश्न उठना स्वाभाविक था । प्राचीन पद्धति यह थी कि आत्म विद्या संबंधी प्रश्नों के उत्तर केवल उन्हीं व्यक्तियों को दिए जाते थे जिनको आचार्य इस विद्या के जानने का पात्र समझा करते थे । नचिकेता

Edit with WPS Office

इस विद्या के प्राप्त करने का अधिकारी है वा नहीं इसी के जानने के लिए उसकी परीक्षा लेने के उद्देश्य ही से नाना प्रकार के प्रलोभन उसे दिए गए थे । जब वह प्रलोभनों मैं न आकर परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ तो यम ने उसे अपेक्षित शिक्षा देना प्रारंभ किया । संपूर्ण ज्ञान वही प्राप्त कर सकता है जो प्रलोभन मैं न आकर अपने को गुरु के चरण में समर्पित कर देता है । नचिकेता बने बिना गुरु से ज्ञान प्राप्त करना सर्वथा असंभव है । उपनिषदों के ऋषि कहते हैं ___

कठोपनिषद. तृतीय वल्ली , श्लोक 14

उठो , जागो , जिन महात्माओं , तपस्वियों को परमात्मा का वरदान मिल चुका है उनकी शरण में पहुंचों और उनसे आत्मा - परमात्मा का ज्ञान प्राप्त करो । यह श्रेयमार्ग तेज किये हुए छुरे की धार के समान लाघंना कठिन है । आचार्य यम ने आत्मा - परमात्मा का ज्ञान देकर नचिकेता को मृत्यु के भय से मुक्त करके अमरत्व को प्राप्त कराया । जिस मनुष्य को आत्मा और परमात्मा के बारे में ज्ञान नहीं है उसे ही मृत्यु का भय बना रहता है । आत्मा के स्वरूप और परमात्मा के स्वरूप को जानना ही विधा है ।

श्वेता उपनिषद में कहां गया है ______ 3/10

जो उस परमात्मा (ब्रह्म) को जान लेते हैं वे अमृत हो जाते हैं । उस ब्रह्म को जानकर मृत्यु - भय से छुटकारा मिलता है । उस परमपिता परमात्मा की गोद ही ऐसी है जहां बैठकर मृत्यु क्या , अन्य सभी प्रकार के भय से मुक्त हो जाता हैं । एक आख्यान इस प्रकार है __

एक बार किसी सड़क पर बैठी एक स्त्री पत्थर कूट रही थी । पास में उसका छोटा बालक खेल में मस्त था । इतने में अजीव प्रकार की वेशभूषा धारण किये हुए एक साधु बम - बम बोलते हुए उधर से आ निकले । बालक उस विचित्र साधु को देख कर बहुत डर गया और भागकर मां की गोद में जा छिपा । गोद में बैठते ही बालक का सारा भय समाप्त हुआ । थोड़ी देर में उस साधु को अंगूठा दिखाने लगा । बस इसी प्रकार जो प्राणी उस परम पावनी मां (प्रभु) की गोद में स्थान बना लेते हैं वे निर्भय हो जाते हैं और मृत्यु को अंगूठा दिखा देते हैं । अतः परमात्मा की संगति करना मृत्यु के बंधन से अथवा भय से छुटकारा पाना है ।

Edit with WPS Office

त्रयंबक यजामहे सुगंधि पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।
(ऋग्वेद. 7/59/12 , यजुर्वेद. 3/60)

जैसे _ पका हुआ खरबूजा अपनी डाली से स्वत: छूट जाता है , उसे छुड़ाना नहीं पड़ता और उसके छूटते ही सुगंध तथा पुष्टि दोनों फैल जाती है । ठीक ऐसे ही जब मृत्युंजय पुरुष संसार की डाल से छुटते है तब उनकी स्थिति खरबूजे की तरह होती है । उनको इच्छा के विपरीत जवरन छुड़ाना नहीं पड़ता , अपितु भीष्म पितामह की तरह वे कहेंगे कि अभी सूर्य दक्षिणायन हैं , उत्तरायण होने दो ।

अथवा महर्षि दयानंद सरस्वती की तरह __ मेरे प्रभों ! तेरी इच्छा पूर्ण हो कहते कहते दीपावली के पावन सायंकाल पर उस आनंद में विलीन हो जाते हैं । इसी को कहते हैं मृत्यु से अमृत (अमरत्व) की प्राप्ति ।

योग वशिष्ठ में कहा है कि __ **योग वशिष्ठ स्मृति. 6/1/23/11**

जिसका मन निर्मल और एक ब्रह्म मैं स्थिर होकर शांत हो गया उसे मृत्यु कभी नहीं मार सकती ।

राजा जनक की सभा में ऋषि - महर्षियों ने याज्ञवल्क्य से प्रश्न पूछा कि संसार के सभी प्राणियों को यह मृत्यु ग्रास (खाध) बनाता है , वह कौन देवता होंगे जो मृत्यु को ग्रास बना सके ? याज्ञवल्क्य उत्तर देते हैं ___

बृहदारण्यक उपनिषद. 3/2/10 ______

हे मुनियों ! मृत्यु अग्निरूप है (सर्वभक्षक है) उसको यदि शांत करना है तो ब्रह्मानंद की जल में डुबकी लगानी पड़ेगी । वेद मंत्र भी यही कहता है ___

यजुर्वेद. 25/13 _____

जिस ब्रह्म का आश्रय ही मृत्यु है और न मानना ही मृत्यु का कारण है , ऐसे सकल ज्ञान के दाता उस ईश को अन्त: करण से आज्ञापालन में तत्पर रहें ।
एक भक्त मृत्यु (दुख) से छुटकारा पाने के लिए अश्रुपूर्ण नेत्रों से इस प्रकार प्रार्थना करता है कि ___

दुख दूर कर हमारा संसार के रचैया ,
जल्दी से दो सहारा मझदार में है नैया ।
तुम बिन कोई हमारा रक्षक नहीं यहां पर ,

Edit with WPS Office

बूढ़ा ज़हान सारा तुम - सा नहीं रखैया ।
सुख के सभी है साथी दुनिया के मित्र सारे ,
तेरा ही नाम प्यार दुख - दर्द से वचैया ।
दुनिया में फंस के हमको हासिल हुआ न कुछ फल ,
तेरे बिना हमारा कोई नहीं सुनैया ।

चिरन्तन सत्य मृत्यु को समझने के लिए पराविद्या तथा श्रेय मार्ग को ही अपनाना होगा । इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा मार्ग नहीं है । नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•105.मृत्यु सर्वत्र विद्यमान है

सज्जनों ! यह दुनिया कैसी विचित्र है ? एक दिन यहां से विदा होकर अवश्य जाना है , साथ में कुछ भी नहीं ले जाना है । इतना जानते हुए भी कोई धन इकट्ठा करने में व्यस्त है कोई अपने शरीर को सजाने में मस्त है , कोई मृत्यु से बचने के लिए दौड़ लगाने में व्यस्त दिखाई देते हैं । सब के सब अपनी मन की इच्छापूर्ति में लगे हुए हैं । परंतु जिस भावना को लेकर इस धरा में हम उतरे थे उस पवित्र भावना को भूला बैठे हैं । यह जीवात्मा इस धरती में दो दिन का मेहमान है । अपने गंतव्य स्थल को कभी नहीं भूलना चाहिए । जीवात्मा का गंतव्य स्थल अर्थात आखिरी पड़ाव तो मृत्यु ही है ।

Edit with WPS Office

महाभारत. शांति पर्व , श्लोक. 16 ____

किसी को कुछ नहीं मालूम कि कब किसका कहां मृत्यु का समय आ पहुंचेगा । किंतु यह मनुष्य इस चिरन्तन सत्य को समझता कहां है । मौत बार-बार समझाती हैं पर समझने की अपेक्षा भाग कर जीवन बचाने को ही प्रयत्न करता है । इसी संदर्भ में एक कहानी इस प्रकार है _____

एक राजा को रात में एक बार स्वप्न दिखाई दिया जैसे साक्षात् मृत्यु खड़ी होकर कुछ संदेश दे रही है _ " कल सायं काल ठीक पांच बजे निश्चित स्थान पर तुम मुझे मिलना , मैं तुम्हें लेने आऊंगी । " इतना कहकर ओझल हो गया । मौत से वह डरता था , अतः सपने में भी उसे वहीं मौत ही दिखाई दी । योगेश्वर कृष्ण कहते हैं ___

यो यथा मां प्रपधन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।। **(गीता. 4.11)**

जो मुझे जिस रूप में अर्थात मृत्यु , यम वा भूत के रूप में स्मरण करता है मैं भी उसके साथ उसी स्वरुप में अर्थात उपस्थित होता हूं । यहां राजा के सामने सपने में स्वयं कृष्ण मौत बनकर उपस्थित हुए । राजा बहुत डर गया था । अपने सभी संगे - सम्बंधियो , मित्रों और मन्त्रियों को उसने तुरंत बुलाया और सपने की सब बात कह डाली । मन्त्रियों ने पूछा , आपने यह सपना रात में देखा अथवा सवेरे ? आया तो सवेरे ही था । मंत्रियों ने अपने परंपरागत विश्वासो को पुष्ट करते हुए कहा _ राजन् सवेरे के सपने कभी असत्य नहीं होते । यदि सपना सवेरे आया हो तो सायं काल पांच बजे मृत्यु " आपको लेने निश्चित आएगी । यदि इससे बचना चाहते हो तो भागे यहां से तेज _ से _ तेज सवारी से । इतनी दूर निकल जाए जहां मौत न पहुंच सके । अभी तो बहुत समय है । बहुत दूर तक भाग सकते हैं ।

राजा ने तुरंत अपना सबसे तेज घोड़ा मंगवाया और बिना देर किए उस पर सवार होकर निकल गया । दिनभर वह घोड़ा भागता रहा । मीलों अपने महलों से वह दूर जा चुका था । सूर्य भी अस्ताचल की ओर बढ़ रहा था । मृत्यु से निश्चित होकर थक्कर राजा ने एक वृक्ष के नीचे विश्राम करना चाहा । घोड़े की लगाम ढीली कर दी । उसे वृक्ष से बांधकर स्वयं विश्राम करने के लिए जैसे ही राजा आगे बढ़ा पीछे से किसी ने कन्धा थमथमाया । राजा ने मुड़कर देखा तो वही आकृति है जो सवेरे के समय उसने सपने में देखी थी ।

Edit with WPS Office

राजा ने हिम्मत करके पूछा __ तुम कौन ? आकृति ने मुस्कुराकर कहा __ " वही तुम्हारी मौत " । राजा ने पूछा यहां कैसे ? मृत्यु ने कहां राजन ! सपने में मैंने तुम्हें निश्चित 5:00 बजे का समय तो बता दिया था किंतु निश्चित स्थान बताना भूल गई थी । यही वह निश्चित स्थान है जहां मुझे तुमसे मिलना था । मुझे प्रातः काल से चिंता थी कि इतनी दूर तुम कैसे पहुंच सकोगे? धन्यवाद है तुम्हें और तुम्हारे इस तेज घोड़े को जिसने ठीक समय पर तुम्हें निश्चित स्थान पर पहुंचा दिया । सायं काल के पांच बजने वाले हैं , मेरे साथ चलने के लिए तैयार हो जाओ !

वेद भगवान कहते हैं ______
तेनत्यक्तेन भुठ्जीयां त्याग पूर्वक उस परमात्मा का ही समझकर पुरुषार्थ से प्राप्य पदार्थों का उपभोग करना चाहिए । आवश्यकता से अधिक वटोरना दु:ख का कारण बन सकता है । इसलिए सतं जन कहते हैं___

साई इतना दीजिए जामें कुटुंब समाय ।
मैं भी भूखा ना रहूं साधु न भूखा जाय ।।

ईश्वरीय वाणी वेद कहता है कि **कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा: ।। (यजुर्वेद. 40/2) ___** इस संसार में मनुष्य कर्म करने के लिए आया है । कर्म करते हुए अनासक्त भाव में रहकर सौ साल तक जीने का प्रयत्न करना चाहिए । अनासक्त इसलिए की एक दिन अवश्य ही सब छोड़ - छाड़ कर जाना होता है । अत: मृत्यु को कभी भूलना नहीं चाहिए अन्त में गन्तव्य स्थल वही ही हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 106. ओउम् से परम गति की प्राप्ति

उपस्थित सज्जनों ! ओउम् की महिमा अपरंपार है ।
ब्रह्मांड का आश्रय स्थल ही ओउम् है अर्थात ओउम् में ही संपूर्ण जगत समाहित है । ओउम् शब्द में तीन अक्षर हैं । अकार , उकार , मकार । स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने इन तीन अक्षर के संयुक्त रुप को ही ओउम् एक पूर्ण शब्द माना है । मनुस्मृति में भी ऐसा ही वर्णन मिलता है ______

अकारं चाप्युकारं च मकारं च प्रजापति: ।
वेद त्रयन्निर दुहद् : स्वरितीति च ।।

परमात्मा ने अपनी वेद वाणी के द्वारा ही ओउम् का स्मरण करने का उपदेश किया है ।

कठोपनिषद. 2.15 ______
सभी वेदादि सत्य शास्त्रों में केवल ओउम् का ही वर्णन है और ब्रह्मादि से लेकर ऋषि -मुनि पर्यन्त सभी योगी - महात्मा जन ओउम् का ही जप - तप एवं गुण गान करते हैं ।

अर्थात ______ ओंकार कामनाओं तथा मोक्ष को प्राप्त कराने वाला अमोघ अस्त्र हैं । ओउम् के माहत्म्य को सुगमता पूर्वक इस प्रकार समझ सकते हैं ।

- (क)

ओउम् — अ _ अकार से विराट , अग्नि और विश्व आदि ।
उ _ उकार से हिरण्यगर्भ , वायु और तैजस आदि ।
म् _ मकार से ईश्वर , आदित्य और प्राज्ञ आदि नामों का वाचक और ग्राहक ।

Edit with WPS Office

• (ख)

अ _ ईश्वर _ भु: (भूति वै प्राण:) जो संपूर्ण जगत के जानने का हेतु है और प्राणियों का प्राण है , प्रिय भी है ।

उ _ जीवात्मा _ भुव: (भुवरित्यपान) जो मुक्ति के इच्छा करने वालों तथा संपूर्ण प्राणी मात्र को ।

म् _ प्रकृति _ स्व : (स्वरितिव्यान) जो सब जगत में , व्यापक होकर सबको नियमन कर पापों , तापों को दूरकर सुख प्रदान करने वाले हैं , वही भूर्भुवः स्व: ओउम् है ।

यह ओउम् अक्षर ' उद्गीथ है ' इस अक्षर को उच्च ध्वनि से गाया जाता है । यह रसों का रस परम रस है ।

छान्दोग्य उपनिषद. 1.1.3 ______

मुख द्वारा उच्च घोंप से ओंकार के नाद को गुंजाने से उद्गीथ होता है । अर्थात उत् _ उच्च स्वर से गीथ = गाना । ओउम् का महत्व उपनिषदकार इस प्रकार करते हैं ___

कठोपनिषद. 2.16 ______

यह ओउम् एक अक्षर है , परंतु यही ब्रह्म है , यही सबसे परे हैं , इसी अक्षर को जानकर जो कोई कुछ चाहता है उसे वह प्राप्त हो जाता है ।

कठोपनिषद. 2.7 ______

यह अविनाशी ओउम् का सहारा (आश्रय) सर्वोत्तम और सर्वोत्कृष्ट है । जो इस प्रकार जानता है वह मनुष्य ब्रह्म लोक में महान बन जाता है ।

मृत्यु के अधिष्ठाता देवता यम ने सत्यवती ठानकर ब्रह्मचारी नचिकेता को इसी ओउम् नाम की महिमा का वर्णन करके मृत्यु से जीतने का उपदेश दिया था । योग दर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि कहते हैं _____

तस्य वाचक : प्रणव : ।। योग दर्शन. सूत्र 1.27 ।।

उस ईश्वर का उच्चारित नाम प्रणव _ ओउम् है । क्योंकि ओउम् नाम ईश्वर के पूर्ण स्वरूप को अभिव्यक्त करता है । इसलिए दूसरा सूत्र कहता है , । **तज्जपस्तर्थभावनम्** ।। योगदर्शन. 1.28 में अर्थात ___ उसी ओउम् का

Edit with WPS Office

जप करना और उसी का चिंतन , मननं करना चाहिए । ओउम् के संबंध में योगिजन कहते हैं _ जिस प्रकार खेत में फैली हुई लौकी , कद्दू और तोरी वा कुष्माण्ड आदि की बेल (लता) को इकट्ठा करना हो तो अलग-अलग बैल को पकड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती उसकी जड़ को उखाड़ कर खींचने से सब इकट्ठा हो जाती है , उसी तरह ओउम् नाम को पकड़ने पर अन्य सारे नाम उसी में समा जाते हैं अर्थात जिस प्रकार सभी नदी _ नालों का पानी सागर में जाकर मिलता है उसी प्रकार ओउम् नाम रूप सागर में अन्य गुणवाचक सारे शिव , विष्णु , राम , कृष्ण , देवी , दुर्गा , लक्ष्मी , आदि नाम मिल जाते हैं और सागर हो जाते हैं । भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को कहते है ______

गीता. 8.6 ______ हे अर्जुन जिस - जिस भावना से प्रेरित होकर मनुष्य अंन्तकाल में शरीर को त्यागता है अर्थात मृत्यु को प्राप्त होता है , उस उस भावना में रंगने के कारण वैसे ही शरीर को प्राप्त करता है , अर्थात युद्धवीर , दानवीर , सत्यवीर ,विधानुरागी ,दीनवत्सल आदि भाव से महापुरुष के आचरण स्मरण करता है तथा उस भाव के स्मरण में प्राण त्यागता है , वह जीवन भर उसी भाव में भक्ति रहा है इसलिए मृत्यु के उपरांत वैसा ही शरीर वाला हो जाता है ।

भगवान अपने भक्तों को आश्वस्त करते हुए कहते हैं _____

गीता. 12.8 ______

तू अपना मन मुझमें ही आधारित कर अर्थात मुझ में समर्पित कर दें , बुद्धि को भी मुझ में निवेशित कर , लगा , इसके बाद तू मुझ में ही निवास करेगा इसमें कोई संशय नहीं है । उपरोक्त कथन अनुसार केवल समर्पित होने की आवश्यकता है । निम्न श्लोक भी इसी संदर्भ पठनीय है ______

गीता. 9.22 ______ हे अर्जुन ! चाहे किसी का नीच कुल में भी जन्म क्यों न हुआ हो , चाहे स्त्रियां हो , वैश्य अथवा शूद्र हो वे मेरी शरण में आ जाते हैं वे भी परम गति को (मोक्ष को) प्राप्त करते हैं अर्थात जब नीच कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी भगवान (ओउम्) की शरण में आ जाने पर परम गति को प्राप्त हो सकता है , तब पुण्यवान ब्राह्मणों राजपिर्ययों की तो बात ही क्या ? कहने का तात्पर्य यह है कि जो भगवान में तन मन इंद्रियों से शरणागत हो जाता है उसे परम गति को प्राप्त करने से कोई रोक नहीं सकता ।

Edit with WPS Office

प्रेतकल्प के 16 अध्याय में महर्षि वेदव्यास लिखते हैं ______
(गीता अध्याय. 8.13 , ग. पु. प्रे. 16.108)

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
य: प्रयाति त्यजन्देह स याति परमां गतिम् ।।

जब परमब्रह्म ईश्वर को स्मरण करता हुआ तथा ओउम् एकाक्षर मन्त्र का उच्चारण करता हुआ जो मनुष्य भौतिक देह (शरीर) को छोड़ता है अर्थात इस संसार से प्रायण करता है वह परम गति को , उच्चतम गति को प्राप्त करता है ।

वेद भगवान कहते हैं ___
यजुर्वेद . 40.17 _____ अर्थात , अनंत यात्रा का यह पथिक जीवात्मा अमर है , परंतु देह नाशवान है , भस्म होने वाला है तसर्थ हे मनुष्य ! तू ओउम् का चिंतन मनन और निदिध्यासन कर ।

योगेश्वर कृष्ण कहते हैं ______ गीता. 8.5
अन्तकाल में मुझे ही स्मरण करते-करते जो देह त्याग करता है वह मेरे स्वरूप को पाता है अर्थात , जीवन के हर क्षण को जीवन का अन्त समझ कर ओउम् का स्मरण करना चाहिए । ऐसा करने से मृत्यु के समय ब्रह्म (ओउम्) हमारे ध्यान में होगा और भक्त भगवान में लीन हो जाएगा । जिस प्रकार संमिधा अग्नि में समर्पित होते ही अग्निवत् होकर अग्नि का गुण धारण करता है उसी प्रकार भगवान (ओउम्) में समर्पित होने से ओउम् का दिव्य गुण _ कर्म _ स्वभाव , मनुष्य में अपने आप आने लगते हैं और अन्त में ब्रहममय हो जातें हैं ।
किसी कवि ने पूज्य स्वामी भवानी दयाल जी ने अंतिम वेला में प्रभु - भक्त की इच्छा की इच्छा को इस प्रकार गीत के द्वारा अभिव्यक्त किया है ______

जगदीश ! यह विनय हैं जब प्राण तन से निकले ।
प्रिय ओउम् - ओउम् जपते यह प्राण तनसे निकले ।।

Edit with WPS Office

वैदिक ऋचाएं रटते शुचि यज्ञ - होम करते ।
सर्वेश को सुमिरते यह प्राण तन से निकले ।।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•107. पितृ _ श्राद्ध _ तर्पण

परिवर्तिनि संसारें मृत: कोऽवा न जायते ।
ईश्वरीय सृष्टि में अपने-अपने कर्मफल भोगने के लिए जीवात्मा एक योनि से दूसरे योनि में भ्रमण करता रहता है । इसी को जन्म और मृत्यु कहते हैं । जन्म भी शरीर का है और मरण भी शरीर का है । जीवात्मा सर्वदा शुद्ध-बुद्ध पवित्र और शाश्वत है । जीवात्मा के लिए कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं है श्रद्धा के नाम पर पिंड तर्पणादि जो कार्य किए जाते हैं । वह तो केवल शरीर के लिए है अपने पितरों से लेकर संपूर्ण प्राणी मात्र की श्रद्धा पूर्वक सेवा करना श्राद्ध है । आज श्राद्ध कर्म में अनेक विकृतियां हैं । इसलिए जनमानस में श्राद्ध कर्म के वास्तविक स्वरूप को सप्रमाण दर्शाने का प्रयत्न किया है । आशा है पाठक गण " पितृ श्राद्ध " प्रकरण को अवश्य पड़ेंगे ।

प्रश्न : 1.श्राद्ध की परिभाषा क्या है , और किसका श्राद्ध ?
उत्तर : श्राद्ध की पवित्र भावना को इस प्रकार समझा जा सकता है __ जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाय उसमें श्रद्धा और श्रद्धा से जो कर्म किया जाए उसका नाम श्राद्ध हैं । श्राद्ध से ही श्राद्ध शब्द की निप्पति होती

Edit with WPS Office

है ।
अर्थात ______ अपने पितृगण माता-पिता तथा घर के अन्य वयोवृद्ध एवं महान आत्माओं की सेवा - सुश्रुषा में अपने अहनिश श्रद्धा पूर्वक समर्पित कर देने का नाम ही श्राद्ध है । वैदिक मनीषी इस पवित्र कर्म को पितृयज्ञ भी कहते हैं । दूसरे शब्दों में कहा जाए तो पिंडदान भी समझ सकते हैं । क्योंकि जिन माता-पिता की कृपा से मानव शरीर हमें मिला है यह उन्ही की अमानत है । इसलिए इस शरीर को उन्ही के चरणों में अर्पण करना पिंडदान भी कहलाता है । पितृयज्ञ के दो भेद हैं पहला श्राद्ध और दूसरा तर्पण । अर्थात , जिस - जिस कर्म से जीवित माता-पिता , दादा दादी , नाना नानी ,कुल _ गोत्र और वंश के बड़े बुजुर्ग समाज के वयोवृद्ध , साधु संत ज्ञानी ध्यानी तथा अतिथि आदि को यथावत श्रद्धा पूर्वक सेवा सत्कार करके तृप्त किया जा सके अथवा प्रसन्नता प्रदान की जाए उसको तर्पण कहते हैं । अतः कहां जा सकता है कि श्रद्धा पूर्वक जीवित माता-पिता , गुरुजन ,मान्यजन आदि का सेवा सत्कार कर उन्हें तन , मन , धन से संतुष्टि प्रदान करना या सम्मान प्रदान करना ही सही अर्थों में श्राद्ध है ।

प्रश्न : 2. पितर (पितृ) मरे हुए अथवा जीवित कौन है ?

उत्तर : पितर कौन है ? इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न विद्वानों ने अपने ग्रंथों में सूत्र , मंत्र तथा श्लोक के माध्यम से इस प्रकार व्यक्त किए हैं । द्रष्टव्य ______

शरीरकृत प्राणदाता... धर्म शासने ।।

महाभारत आदि पर्व अध्याय 72 , श्लोक 15 के अनुसार गर्भधारण द्वारा जो शरीर को निर्माण करते हैं , जो अभय (भयमुक्त) करते हैं , जो प्राणियों की रक्षा करते हैं , जिसका अन्न भोजन किया जाता है और जो धर्मशास्त्र के उपदेश से अज्ञान को दूर करते हैं वे ही पितृ कहलाते हैं ।

जनिता चोपनेताच... पितरस्मृता: ।।

चाणक्य नीति शास्त्र. 5.22 में के अनुसार भी जन्मदाता माता-पिता , आचार्य (प्राध्यापक) , अन्नदाता जीवन रक्षक आदि को पितर (पितृ) कहते हैं ।

Edit with WPS Office

वाल्मीकि रामायण. किष्किंधा कांड . 18.13 ______
विधा देने वाला ,अन्न देने वाला , जन्मदाता , कन्या देने वाला , रक्षा करने वाला तथा बड़ा भाई यह सभी पितृ कहलाते हैं ।
पान्ति पालयन्ति रक्षन्ति अन्न - विधा - सुशिक्षा आदि दानै: ते पितरा: ।
जो अन्न , विधा ,सुशिक्षा , आदि से पालन पोषण और रक्षण करते हैं वे पितर कहलाते हैं ।
अथर्ववेद. 6/123/3 ______ के अनुसार देवा: पितर: देवा : देवों अर्थात विद्वानों , साधु संन्यासियों , महात्माओं और ब्रह्म ज्ञानियों का नाम पितर हैं । पितर ही देव कहलाते हैं । ज्ञान ,बल , और अन्न आदि से रक्षा करने वालों का नाम देव है । " शतपथ ब्राह्मण ग्रंथ के अनुसार " विद्वांसो हि देवा : " जो विद्वान है वे ही देव अर्थात पितर (पितृ) है ।

प्रश्न : 3.श्राद्ध वा तर्पण के समय अग्निष्वाता , सोमपा , सोमसद: आदि पितरों का ध्यान कर तर्पण किया जाता है ये अग्निष्वाता , सोमपा , सोमसद , हविभुर्ज आदि कौन है ?

उत्तर : **अग्निष्वाता ______** जो अग्नि विधुदादि पदार्थों को जानने वाले हैं वे अग्निष्वाता पितर कहलाते हैं ।

- **सोमपा ______** जो ऐश्वर्या के रक्षक और महोपधि रस का पान करने से रोग रहित और अन्य के ऐश्वर्या के रक्षक औषधियों को देकर रोग नाशक हो वे सोमपा पितर कहलाते हैं ।
- **हविभुर्ज ______** जो मादक और हिंसाकारी द्रव्यों को छोड़ के भोजन कराने हारे हो वे हविभुर्ज पितर कहलाते हैं ।
- **आज्यपा ______** जो जानने के योग्य वस्तु के रक्षक और घृत दुग्धादि खाने और पीने वाले हो वे आज्यपा पितर कहलाते हैं ।
- **बर्हिषद ______** जो उत्तम विद्या बुद्धि युक्त व्यवहार में स्थित हो वे बर्हिषद नामक पितर कहलाते हैं ।
- **सोमसद ______** जो परमात्मा और पदार्थ दोनों ही विद्याओं में निपुण हो वे सोमसद पितर कहलाते हैं ।

Edit with WPS Office

उपरोक्त सभी परिवार समाज व राष्ट्र के अपने-अपने विषय के जो निष्णात विद्वान है जिनके अहनिस खोज के कारण राष्ट्र उन्नति की ओर आगे बढ़ता है इनको पितर कहते हैं ।

यजुर्वेद. 19/60 ______ के अनुसार पितरों की दीर्घायु की कामना किस प्रकार की जाती है उक्त मंत्र के भावार्थ से समझे ;
भावार्थ : मनुष्यों को परमेश्वर से ऐसी प्रार्थना करनी चाहिए की हे परमेश्वर ! जो अग्नि आदि की पदार्थ विधा को यथार्थ रूप से जान के उसमें प्रवृत्त होते हैं और जो ज्ञान में तत्पर विद्वान अपने ही पदार्थ के भोग से संतुष्ट रहते हैं , उन पितरों के शरीर को दीर्घायु कीजिए ।

ऋग्वेद. 10/15/14 , अथर्ववेद. 18/225 ______
भावार्थ : जो अग्नि की भांति तीव्र ताप से और स्वयं अपने तेज से तेजस्वी और जो अग्नि से भिन्न जल , वायु , और पृथ्वी आदि पदार्थों की भांति शीतल स्वभाव वाले ज्ञान के प्रकाश से आनंद लूट रहे हैं , हे परमेश्वर यदि आप इन सब को अपनाए तो वे आपके प्राप्त होकर आनंद का लाभ कर सकते हैं ।

उपरोक्त मंत्रों की यहा उल्लेख करने का उद्देश्य यह है कि अग्नि , वायु ,जल , आकाश , और पृथ्वी की विधा में चतुर और निष्णांत होने के कारण ही उनको अनगिन्दग्ध और अनग्निप्वात पितर कहा गया है । क्योंकि इन विधाओं से वे राष्ट्र की उन्नति के साथ-साथ हमारी भी रक्षा करते हैं ।

माता - पिता सन्तानों के सामने पौत्रादि को देखने के लिए परमात्मा से इस प्रकार अपनी दीर्घायु की कामना करते हुए प्रार्थना करते हैं ।
ऋग्वेद. 1/89/9 , यजुर्वेद. 25/22 ______
जहां हमारे बुढ़ापे में हमारे हमारे पुत्र पितर हो जावें अर्थात पुत्र वाले हो जावे । जब तक हमारे पौत्र न हो तब तक हे परमात्मन ? आप हमारी आयु का नाश न कीजिए , हम जीवित रहे ।

गरुड़ पुराण. प्रेतकल्प. 7.9.12 ______

Edit with WPS Office

भावार्थ : यहां लिखा है पुत्र पितरों की पुम् नामक नरक से रक्षा करता है इसलिए पुत्र कहलाता है ।

पुत्र भी अपने माता-पिता के लिए दीर्घायु के लिए प्रार्थना करता है ______

मां नो वधी: पितरं मोत मातरं । (यजुर्वेद. 16.15)

भावार्थ : हमारे माता-पिता को अल्पायु में हम से न छिनो अर्थात मत मारो ।

वेद में केवल जीवित माता-पिता , विद्वान आदि पितरों के प्रसन्नता के लिए आदेश है ।

यजुर्वेद. 19.58 मंत्र ______

भावार्थ : अर्थात चंद्रमा के तुल्य शान्त , शम - दमादि गुण युक्त , अग्न्यादि पदार्थविद्या में निपुण अन्न और विधा के दान से रक्षक हमारे जनक (पितर) वे आप्त लोगों के जाने - आने योग्य धर्मयुक्त मार्गो से आवे और अन्नादि से आनन्द को प्राप्त हुए हमको उपदेश करें , हमारी सदा रक्षा करें ।

अथर्ववेद. 18.2.34 मंत्र ______

अर्थात यजमान पुरोहित से कहता है कि _ हे विद्वान ! जो पदार्थ भूमि में गाड़े हुए होते हैं अर्थात (आलु ,शकरकन्द , मूली , गाजर) जो बोये जाते हैं गेहूं , चावल आदि और जो भूनकर खायें जाते हैं चने , मक्का , धान , (मुज्जी) आदि और जो बाहर निकाले जाते हैं सिंघाड़े , कमलगट्टे , मखाना आदि इन सब पदार्थों को खिलाने के लिए साधु , सन्यासी ,महात्मा वृद्धो आदि पितरों को लाकर दे । इस मंत्र में केवल जीवित पितरों को ही खिलाने के लिए कहा गया है , मृतक पितरों के लिए नहीं । इसी सन्दर्भ में अगला मंत्र ______

(यजुर्वेद. 19.57 मंत्र)

भावार्थ : हे पितृगण ! आप हमारे यज्ञों , घरों तथा प्रिय " ज्ञान निधि " अमृत चर्चा में बुलाने के समय आवे और हमारी प्रार्थना (वचन) को सुने हमको उपदेश से बोध युक्त करें और हमारी रक्षा करें । इन मंत्रों से इस बात को स्वीकार किया है कि पितर जीवित ही होते हैं , मृतक नहीं , क्योंकि

Edit with WPS Office

पितरों का यज्ञ में आना और पुत्रों की बातें सुनना , उनको उपदेश देना व उसकी रक्षा करना __ ये चार कार्य जीवित ही कर सकते हैं , मृतक नहीं । अतः ऐसे महान आत्माओं को अत्यंत श्रद्धा से उत्तम अन्न , वस्त्र ,सुंदर यान आदि देकर अच्छे प्रकार जो तृप्त किया जाता हो अर्थात जिन पवित्र भावना के साथ उनका आत्मा तृप्त और शरीर स्वस्थ रहे उन कर्मों से प्रीतिपूर्वक उनकी सेवा करना वह श्राद्ध कहलाता है ।

प्रश्न : 4. मृतक पितरों के नाम पर पिण्ड दान तथा तर्पण करने की प्रथा कब से प्रारंभ हुई ?

उत्तर : महाभारत ग्रंथ के युधिष्ठिर भीष्म पितामह संवाद में इस प्रकार वर्णन आता है ______

(महाभारत अनुशासन पर्व) : ऋषि दत्तात्रेय के पुत्र निमि बड़े ही तपस्वी ऋषि थे । निमि के भी एक पुत्र हुए उनका नाम था श्रीमान । काल के वश में होकर अल्पवयस्क में श्रीमान का अचानक देहात हो गया । पिता पुत्र शोक के कारण अतीव दुखी थे किंकर्तव्यविमूढ़ थे इसी शोकावस्था में ऋषि ने अमावस्या के दिन ब्राह्मण को बुलाकर बिना नमक का भोजन अर्पण किया । उसके बाद " पुत्र " श्रीमान , की याद में दक्षिण दिशा में नाम गोत्र उच्चारण करके कुछ भोज्य पदार्थ (पिण्ड) रख दिए ।
इतना करने के बाद निमि को ज्ञात हुआ कि मैंने बहुत ग़लत काम किया क्योंकि वे कहते हैं ___

अर्थात इससे पूर्व किसी ने भी ऐसा कर्म नहीं किया था , मैंने ही अनुचित कार्य किया है कहीं मुझे ऋषि मुनि श्राप देकर भस्म तो नहीं कर देंगे ?
स्वयं से गलत कार्य होने के कारण निमि धर्म संकट में पड़ गए । पश्चाताप हुआ क्योंकि यह धर्म विरुद्ध कार्य था । निमि स्वयं कहते हैं __ ऐसा कर्म न मैंने सुना था और न ही ऋषि - मुनियों ने पहले कभी किया था , यह क्या अनर्थ हुआ ? उन्होंने अपने वश अत्रि ऋषि को बुलाकर सारी बातें बताई । यह संवाद युधिष्ठिर और भीष्म पितामह के बीच हुआ । यही उपाख्यान वराह पुराण के श्राद्धोत्पत्ति प्रकरण में भी नारद और निमिऋषि के संवाद के रूप में है । अस्तु मृतक श्राद्ध परंपरागत कार्य नहीं है , अन्यथा निमिऋषि को पश्चाताप करने की जरूरत क्यों पड़ती , निमि ने दशाह , एकादशा ,

Edit with WPS Office

द्वादशाह आदि कर्म नहीं किए थे । उन्होंने तो केवल अमावस्या के दिन पितृ यज्ञ करके ब्राह्मण को भोजन कराया । तत्पश्चात् , विक्षिप्त चित्त से पुत्र की याद में भोज्य वस्तु (पिंड) रखी थी । खैर निमि ऋषि की गलती के कारण ही कालांतर में श्राद्ध - तर्पण परंपरा चल पड़ी ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•108.उपनिषदों का अमर संदेश

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत ।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति ।। (कठोपनिषद. 3.14)

अर्थात् अपने चरम लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए मनुष्यों ! उठो , जागो और अपने श्रेष्ठ (विद्वान व योगी) पुरुषों के पास जाकर ब्रह्म ज्ञान को सीखो । यह ब्रह्म ज्ञान का मार्ग तेज उस्तरे की धार के समान अत्यन्त दुर्गम है , ऐसा परमात्मा के साक्षात्कार करने वाले उपदेश करते हैं ।

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा: । (ईशोपनिषद)
हे मनुष्यों ! जीवन भर श्रेष्ठ कर्मों को करते हुए ही जीने की इच्छा करो ।

तेन त्यक्तेन भुठ्जीथा मां गृध: कस्यस्विद् धनम् ।। (ईशोपनिषद)
अनासक्ति भाव से संसार के भोगों को भोगों और किसी के धन या वस्तुओं

Edit with WPS Office

की इच्छा मत करो ।

न वित्तेन तर्पणीयो मनुष्य: ।। (कठोपनिषद. 1.27)
मनुष्य की धन से कभी तृप्ति नहीं हो सकती ।

नाविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो ना समाहित: ।
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ।। (कठोपनिषद. 2.24)

परमात्मा की प्राप्ति केवल बाहरी प्रदर्शन भजन कीर्तन से तब तक कदापि नहीं हो सकती , जब तक पाप कर्मों में लगा हुआ है , अशांत - इंद्रियों अशान्त मन = जिसका मन तृष्णा मैं फंसा हुआ है । चाहे कितना ही विद्वान हो जाए , उसे उपर्युक्त दुष्कर्म छोड़ने पर ही परमात्मा ज्ञान हो सकता है ।

भस्मान्त शरीरम् ।। (ईशोपनिषद.)
शरीर का अंतिम संस्कार भस्मान्त = दाह=क्रिया ही है । तत्पश्चात मृतक के लिए कोई मृतक श्राद्ध या संस्कार शेष नहीं रहता । संसार के सभी शारीरिक सम्बंधों का अंत भी भस्म ही है ।

ओउम् क्रतो स्मर ।। (ईशोपनिषद)
ओउम् परमात्मा का मुख्य नाम है । हे क्रतो = कर्मशील जीव ! तू ओउम् का ही स्मरण किया कर ।

स पर्यगाच्छुक्रम् अकायम् । (ईशोपनिषद)
वह परमात्मा सर्वत्र व्यापक है , सर्वशक्तिमान तथा स्थूल , सूक्ष्म व कारण शरीरों से रहित है ।

विधयाऽमृतमश्नुते ।। (ईशोपनिषद)
परमात्मा की प्राप्ति विद्या = आत्मा और शुद्धान्त: करण के संयोगरूप धर्म से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान से होती है ।

Edit with WPS Office

ओउम् खं ब्रह्म ।। (ईशोपनिषद)
वह परमात्मा किसी स्थान विशेष में नहीं रहता । वह तो आकाश के समान व्यापक , ओउम् = सबका रक्षक तथा ब्रह्म = गुण , कर्म , स्वभाव , से सबसे बड़ा है ।

सत्यमेव जयते नानृतम् ।। (मुण्डकोपनिषद)
सत्य ही की विजय होती है , झूठ की नहीं ।

न तस्य कार्य करण च विधते ।। (श्वेताश्वतर उपनिषद)
उस परमात्मा का कोई कारण नहीं है , और न हीं उसका कोई कार्य ही है __ अर्थात परमात्मा इस जगत का उपादान कारण नहीं है ।

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति ।। (श्वेताश्वर उपनिषद)
मनुष्य एकमात्र परब्रह्म को जानकर ही मृत्यु - दुख से मुक्त हो सकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 109. शंकराचार्य - भाष्य की कतिपय अवैदिक मान्यताएं

१. " एवं श्रुतिस्मृतिविरोधान्न कर्मसाधनममृतत्वं न्यायविरोधाच्च ।

Edit with WPS Office

कर्मसाधनत्वे मोक्षस्य चतुर्विधक्रियान्तर्भावादनित्यत्वं स्यात् । यत्कृतकं तदनित्यमिति कर्मसाध्यस्य नित्यत्वादर्शनात् । नित्यश्च मोक्षः सर्ववादिभि _ रभ्युपगम्यते । "

अर्थात , इस प्रकार श्रुति - स्मृतियों से विरोध होने के कारण तथा युक्ति से भी विरुद्ध होने से अमृतत्व कर्मसाध्य नहीं है । यदि इसे कर्मसाध्य माना जायेगा तो मोक्ष भी चार प्रकार की क्रियाओं (उत्पाध ,विकार्य ,सड्कार्य और प्राप्य) के अंतर्गत होने से अनित्य हो जाएगा । **क्योंकि जो क्रियासाध्य होता है वह अनित्य होता है , इस नियम के अनुसार क्रियासाध्य की नित्यता नहीं देखी जाती , किंतु मोक्ष को तो सभी सिद्धांत वालों ने नित्य माना है ।**

(श्वेता उपनिषद , अध्याय 1 , । शाकरभाष्य)

समीक्षा ______ श्री आदि शंकराचार्य जी ने " मोक्ष को कर्मसाध्य नहीं माना । क्योंकि यदि मोक्ष कर्म - साध्य हो तो वह अनित्य हो जाए । और मोक्ष को सभी नित्य मानते हैं । " ये शंकराचार्य जी की बातें सत्य नहीं है । मोक्ष दुखों से निवृत्ति तथा परमानंद की प्राप्ति का ही नाम है । जीवों को सुख व दुखों की प्राप्ति अपने-अपने कर्मों के अनुसार ही ईश्वर की व्यवस्था से होती है । मोक्ष भी हमारे कर्मों का ही फल है । मोक्ष में जीवों का लय नहीं होता , अर्थात वे मुक्त जीव परब्रह्म के सान्निध्य से मोक्ष के सुख को भोगते हैं । और सान्तकर्मों का फल अनन्त कभी नहीं हो सकता । अतः मोक्ष सुख को नित्य = सदा रहने वाला मानना एक अवैदिक धारणा है । अद्वैतवाद में जीव की ब्रह्म से पृथक कोई सत्ता ही नहीं है । इनके अनुसार जीव का ब्रह्म में लय होना ही मोक्ष है । किंतु यह मान्यता शास्त्र विरुद्ध होने से कदापि मान्य नहीं हो सकती । मोक्ष में जीव कैसे सुख भोगते हैं , इसका वर्णन करते हुए शतपथ ब्राह्मण में लिखा है ______

शृण्वन् श्रोत्रं भवति , स्पर्शयन् त्वग् भवति । (श. का. 14)

इस से स्पष्ट होता है कि जीव मोक्ष में ब्रह्म में लीन नहीं होता है अपितु पृथक् रहता हुआ मोक्ष सुख को भोगता है । महर्षि दयानंद सरस्वती लिखते हैं ______

" जो मुक्ति में जीव का लय होता तो मुक्ति का सुख कौन भोगेगा ? और जो जीव के नाश ही को मुक्ति समझते हैं , वे तो महामूढ है । क्योंकि

Edit with WPS Office

मुक्ति जीव की यह है कि दुखों से छूटकर आनंद स्वरूप , सर्वव्यापक , अंनन्त परमेश्वर में जीव का आनंद में रहना । देखो वेदान्त शारीरक सूत्रों में अभाव बादरिराह होवम् " । जो वादरि व्यास जी का पिता है वह मुक्ति में जीव का और उसके साथ मन का भाव मानता है । "

(सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास. 9)

इसी विषय को ऋग्वेद भू. के मुक्ति विषय में महर्षि दयानंद लिखते हैं ______

" जब जीव मुक्ति दशा को प्राप्त होता हैं तब वह शुद्ध मन से परमेश्वर के साथ मोक्ष में रहता है और इन दोनों से भिन्न इन्द्रियादि पदार्थों का अभाव हो जाता है । ' तथा _ (भाव जैमिनी) इसी विषय में व्यास जी के मुख्यशिष्य जो जैमिनी थे , उनका ऐसा मत है कि जैसे मोक्ष में मन रहता है वैसा ही शुद्ध संकल्पमय शरीर तथा प्राणादि और इन्द्रियों की शुद्ध शक्ति भी बराबर बनी रहती है । "

इससे स्पष्ट होता है कि वेदांत दर्शन कार मोक्ष में जीव का लय नहीं मानता । और मोक्ष से जीवों की मोक्षावधि के समाप्त होने पर पुनरावृत्ति भी होती हैं । इस विषय में वेद में लिखा है ______

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम । को नो महा अदितये पुनदात पितरं च दृशेय मातरं च ।।

अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम ।
स नो महा अदितये पुनदात पितरं च दृशेय मातरं च ।।

(ऋग्वेद. 1/24/1 - 2)

इन मंत्रों का अर्थ करते हुए महर्षि दयानंद लिखते हैं :

" **(प्रश्न)** : हम लोग किसका नाम पवित्रा जाने ? कौन नाशरहित पदार्थो के मध्य में वर्तमान देव सदा प्रकाशस्वरूप है । हम को मुक्ति का सुख भुगाकर पुनः इस संसार में जन्म देता है और माता तथा पिता के दर्शन कराता है ? "

(उत्तर) : हम इस स्वप्रकाशस्वरुप अनादि सदा मुक्त परमात्मा का नाम पवित्र जानें जो हम को मुक्ति मे आनन्द भुगाकर पृथिवी में पुनः माता -

Edit with WPS Office

पिता के सम्बन्ध में जन्म देकर माता - पिता का दर्शन कराता है । वहीं परमात्मा मुक्ति की व्यवस्था करता सबका स्वामी है । " **(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)**

मुक्ति की अवधि तथा मुक्ति से पुनरावृत्ति का वर्णन करते हुए मुण्डकोपनिषद में कहां गया है ___

ते ब्रह्मलोके ह परान्तकाले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे ।

इसकी व्याख्या महर्षि दयानंद ने इस प्रकार की है ___ " वे मुक्तिजीव मुक्ति में प्राप्त होके ब्रह्म में आनंद को तब तक भोग के पुनः महाकल्प के पश्चात मुक्ति सुख को छोड़ के संसार में आते हैं । "

" परान्तकाल की व्याख्या करते हुए महर्षि लिखते हैं ___ इसकी संख्या यह है कि 43 लाख 20 सहस्त्र वर्षों की 1 चतुर्युगी , 2 सहस्त्र चतुर्युगियो का एक अहोरात्र , ऐसे 30 अहोरात्रों का एक महीना , ऐसे बारह महीनों का एक वर्ष , ऐसे शतवर्षों का ' परान्तकाल ' होता है । " **(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)**

और जीवों का सामर्थ्य तथा कर्म सान्त होने से उनका फल अनंत कैसे हो सकता है । इससे ईश्वर की न्याय-व्यवस्था भी स्थिर व सच्ची नहीं कहला सकती हैं । इस विषय में महर्षि दयानंद ने बहुत ही स्पष्ट लिखा है ___

" प्रथम तो जीव का सामर्थ्य शरीरादि पदार्थ और साधन परिमित है , पुनः उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है ? अनन्त आनंद को भोगने का असीम सामर्थ्य कर्म और साधन जीवों में नहीं , इसलिए अनन्त सुख नहीं भोग सकते । जिनके साधन अनित्य है , उनका फल नित्य कभी नहीं हो सकता । और जो मुक्ति में से कोई भी लौटकर जीव इस संसार में न आवे तो संसार का उच्छेद अर्थात जीव निश्शेष हो जाने चाहिए । "

(सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास)

इसलिए मुक्ति में जीवो का लय मानना , मुक्ति को नित्य मानना , मुक्ति को कर्मों का फल न मानना , इत्यादि श्री शंकराचार्य जी की बातें वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध होने से सत्य नहीं है ।

2. **विधा चाविधा च यस्तद् वेदोभयं सह ।** **(ईशोपनिषद. 11)**

' तपों विधा च विप्रस्य नैः श्रेयस्कर परम् " इत्यादि नां कर्मणामप्यमृतत्व _ प्राप्तिहेतुत्वमवगम्यते । सत्यम् अवगम्यत एवं

Edit with WPS Office

तदपेक्षितशुद्धिदारेण न साक्षात ।

(**श्वेता उपनिषद. अध्याय 1 , शाकरभाष्य**)

प्रश्न ______ किंतु " जो विद्या (ज्ञान) और अविधा (कर्म) इन दोनों को साथ-साथ जानता है । " तप और ज्ञान ये ब्राह्मण के नि: श्रेयस् के उत्कृष्ट साधन है । " इत्यादि वाक्यों से तो कर्मों का भी अमृतत्व की प्राप्ति में हेतु होना जान पड़ता है ।

उत्तर ______ ठीक है , जान तो पड़ता ही है , परंतु ज्ञान के लिए अपेक्षित चित्त शुद्धि के द्वारा ही कर्म का अमृतत्व मे हेतुत्व है , साक्षात नहीं ।

समीक्षा ______ उपर्युक्त स्थल पर श्री शंकराचार्य जी ने कर्मों का फल चित्तशुद्धि तक ही माना है । अमृत = मोक्ष में साक्षात नहीं । यथार्थ में श्री शंकराचार्य जी के पूर्वमिथ्याग्रह का ही यह परिणाम है कि वे सत्य बात कही , उस बात की बलात् व्याख्या करना दुराग्रह ही कहलाता है । मंत्र में तो ' अभय सह ' ज्ञान और कर्म को साथ-साथ लिखा है , फिर उसकी विपरीत व्याख्या क्यों ? और क्या बिना ज्ञान के कर्मों का करना संभव है ? चित्त शुद्धि के लिए भी जो आवश्यक योगागों के अनुष्ठान आदि कर्म है , क्या वे बिना ज्ञान के हो जाएंगे ? ज्ञान और कर्म की ऐसी सीमा बांधना कि चित्तशुद्धि तक कर्म तथा बाद में ज्ञान से मोक्ष होता है , कोई युक्तियुक्त बात तथा प्रामाणिक नहीं है और इस बात को स्वयं श्री शंकराचार्य जी ने वेद विरुद्ध माना है मैं यथार्थ में सहसा ज्ञान नहीं होता और ज्ञान के बिना कर्म नहीं होता । इन दोनों के साथ-साथ उत्तरोत्तर परिष्कृत होते-होते ज्ञान की पराकाष्ठा पर मोक्ष होता है । मोक्ष प्राप्ति के अंतिम क्षण तक शुभ कर्मों का फल ही मोक्ष होता है ।

3. यावज्जीवं यथाकामं पुण्य - पापादिकं कुर्वत्यपि विदुषि न कर्मलेपो भवति विधासामर्थ्यादिति । तथा हि _ ईशावास्यमिदं सर्वम् (ईशावास्य उपनिषद 1) **इत्यारभ्यं तेन त्यक्तेन भुठ्जीथा:** (ईशा. उपनिषद 1) **इति विदुष: सर्वकर्मत्यागेनात्मपालनमुक्त्वानियोज्ये ब्रह्मविदि त्यागकत्त्तर्तव्यतोक्तिरप्ययुक्तैवोक्तेति चकित: सन् वेदो विदुषस्त्याग _ कर्तव्यतामपि नोक्तवान् । "** (**श्वेताश्वर उपनिषद** , **अध्याय 1 ,**

Edit with WPS Office

शाकरभाष्य)

अर्थात , विद्वान स्वेच्छा से जीवन पर्यंत पुण्य पाप आदि रूप - कर्म करता भी रहे तो भी ज्ञान के सामर्थ्य से उसे उन कर्मों का लेप नहीं होगा । तात्पर्य यह है कि ' **ईशावास्यमिदं सर्वम्** , यहां से लेकर ' **तेन त्यक्तेन भुठ्जीथा:** , इस प्रथम मंत्र से सर्वकर्म परित्यागपूर्वक आत्मरक्षा का प्रतिपादन करने पर वेद यह देखकर की जिसके लिए कोई भी विधि नहीं की जा सकती , उस ब्रह्मवेत्ता के लिए सर्वकर्म परित्याग का विधान करना भी अनुचित ही है , यह जानकर चकित हुआ , अत: वेद ने विद्वान के लिए कर्म त्याग की भी विधि नहीं कही है ।

समीक्षा ______ श्री शंकराचार्य जी का यह मन्तव्य कि ब्रह्मवेत्ता के लिए कर्म करने की आवश्यकता नहीं , यह स्वयं कल्पित तथा अवैदिक है और उपर्युक्त उद्धरण मैं शंकराचार्य स्वामी को इस सत्य बात को स्वीकार करना पड़ा है । उपनिषद में ब्रह्म ज्ञानियों (क्रियावान = कर्म करने वालों) को सबसे श्रेष्ठ मानते हुए लिखा है ___ **क्रियावान एष ब्रह्मविदां वरिष्ठ: ।।** (मुण्डक उपनिषद. 3.1.4)

वेद में तो जीवन भर शुभ कर्मों को करने का आदेश दिया है । और यह कितने आश्चर्य की बात है कि मुमुक्षु विद्वान जीवन पर्यंत कितने ही पाप - पुण्य कर्म करते रहे , वह कर्मों से लिप्त नहीं होता , ज्ञान के सामर्थ्य से । अनासक्ति भाव से शुभ कर्म करता हुआ जीव मोक्ष को प्राप्त करता है , यह तो सत्य है किन्तु पाप कर्म भी करता रहे और उनसे लिप्त न होवे , यह कैसे संभव है ? कर्मों का फल तो अवश्य ही मिलेगा , चाहे शुभ हो या अशुभ । मोक्ष शुभ कर्मों का ही फल है । विद्वान ज्ञान - सामर्थ्य से पाप कर्मों के फल से कभी मुक्त नहीं हो सकता । ऐसी अवैदिक व असत्य धारणाओं से अद्वैतवादी साधु स्वयं को पापी बनाते हैं और संसार को पाप मार्ग पर चलने का निर्देश करते हैं । यह कितना बड़ा दुष्कर्म है ।

4. " **ये मुमुक्षवो दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णा : सन्त उपनिषच्छब्दितविधा तन्निष्ठतया निश्चयेन शीलयन्ति तेषामविधादे: संसारबीजस्य विशरणाद् विनाशनात् परब्रहमगमयितृत्ववाद गर्भजन्म _ मरणाधुपद्रवावसादयितृत्वाद् उपनिषत् ।।** "

(श्वेताश्वर उपनिषद अध्याय 1 ,

Edit with WPS Office

शाकरभाष्य)

अर्थात , जो मोक्षकामी पुरुष दृष्ट और श्रुत विषयों से विरक्त हो उपनिषद शब्द से कहीं जाने वाली विद्या का निश्चय पूर्वक तत्परता से अनुशीलन करते हैं , उनकी संसार की बीजभूता अविधा का विशरण - विनाश हो जाने के कारण उन्हें परब्रह्म के पास ले जाने वाली होने से उनके जन्म - मरणादि उपद्रवों का अवसादन करने वाली होने के कारण यह उपनिषद् है ।

समीक्षा ______

मुमुक्षु ब्रह्म विद्या से अज्ञान का नाश करते हैं , यह सत्य है । किंतु अविधानाश से संसार का भी नाश हो जाता है यह कार्य कारण से विरुद्ध होने से असंभव बात है । क्योंकि इस संसार को मिथ्या या अविधा का कार्य कभी नहीं माना जा सकता । यह संसार मूल प्रकृति का कार्य है । उसका अविधा से क्या संबंध ? और ' उपनिषद , शब्द ' उप , तथा ' नि , पूर्वक ' सद् , धातु से बना है । इन उपसर्गों के संपर्क से ' सद् , धातु का विनाश अर्थ में वैदिक - साहित्य मैं कहीं प्रयोग भी नहीं मिलता । अतः यौगिकार्थ की दृष्टि से तथा कार्य - कारण भाव की दृष्टि से अविधा नाश से संसार का नाश कभी नहीं हो सकता । यह पूर्वागृहवश ही कल्पित व्याख्या की गई है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•110. अद्वैतमतखण्डन

इस संसार में जहां चार्वाक , बौद्ध व जैन मत आदि ईश्वर की सत्ता में विश्वास नहीं करते हैं , वहीं कुछ अध्यात्मवादी मानते हैं कि इस संपूर्ण सृष्टि

Edit with WPS Office

में मात्र ईश्वर तत्व की सत्ता है , जीव व प्रकृति आदि की कोई सत्ता नहीं है ? यह विचार मध्यकाल में अनेक आचार्यों का रहा है । इन आचार्यों में से आदि शंकराचार्य को प्रमुख स्थान दिया जाता है । अद्वैतवाद का आधार **महर्षि कृष्ण द्वैपायन बाद्रायण व्यास (महर्षि वेदव्यास)** का ब्रह्म सूत्र नामक महत्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है । यह मत संसार के अनेक वैदिक व अवैदिक किंवा भारतीय व विदेशी मत मतान्तरो को प्रभावित करता रहा व कर रहा है । हम इसकी चर्चा न करके मात्र इसी विषय पर विचार करेंगे कि यह मत क्यों वेद विरुद्ध स्वयं ब्रह्म सूत्रों के विरुद्ध तथा विज्ञान व युक्तियों के विरुद्ध है ? ब्रह्म सूत्रों में प्रथम दो सूत्रों से ही अद्वैतवाद खंडित हो जाता है । वे सूत्र इस प्रकार है ______

" अथातो ब्रह्म जिज्ञासा " (ब्रह्म सूत्र. 1.1.1)
" जन्माधस्य यत: " (ब्रह्म सूत्र. 1.1.2)

इन दो सूत्रों से ब्रह्म विषयक चर्चा प्रारंभ करते हुए कहा है ______ " अब हम ब्रह्म को जानने की इच्छा करते हैं । वह ब्रह्म कैसा व कौन है ? यह बताते हुए कहते हैं कि जिससे जगत का जन्म आदि (**जन्म , स्थिति , प्रलयादि**) होता है । "

जरा विचारे की जिस जगत का जन्म होता है , उसमें स्थिति होती है तथा समय आने पर ब्रह्म उसका प्रलय भी करता है , वह जगत कभी मिथ्या नहीं हो सकता । न जाने क्यों , इस ब्रह्म प्रतिपादक महान ग्रन्थ के आधार पर ब्रह्म के अतिरिक्त अन्य सभी पदार्थों की सत्ता को नकारा जाता है ? जबकि यह ग्रंथ अपने प्रारंभ में ही जगत के सभी पदार्थों की वास्तविकता को प्रतिपादित कर रहा है । यह बात पृथक है कि जगत ब्रह्म की भांति नित्य नहीं है परंतु जगत मिथ्या (अवास्तविक) भी नहीं है । यहां जीव व प्रकृति रूपी मूल उपादान कारण के अस्तित्व का भी निषेध नहीं है । ब्रह्म सूत्र ग्रंथ के विषय में यह बहुत बड़ी भ्रांति हो गई , और हो रही है ।

अद्वैतभाव ___ यदि ब्रह्म ही एक माना जाए , जीव की कोई सत्ता न मानी

Edit with WPS Office

जाए तो कौन किसकी उपासना करें ? ' उपासना करना , क्रिया कौन करें ? इस भ्रांति को दूर करने के लिए दो ब्रह्म मानने पड़ेंगे । एक ब्रह्म जन्म लेकर संसार में आने वाला और दूसरा अजन्मा । जो ब्रह्म जगत में उत्पन्न होकर शरीराणि धारण करता है , उसी में उपासना गुण रहता है । और यह अजन्मा ब्रह्म की उपासना करने वाला ब्रह्म ही जीव है । यदि इसे जीव न मानकर ब्रह्म की माना जाए तो ब्रह्म दो प्रकार वा दो गुण वाला माना जाएगा । और एक ही वस्तु में दो परंस्पर विरुद्ध गुण या धर्म कदापि नहीं रह सकते । जैसे घट उत्पन्न होने से उत्पत्तिधर्मक है और उसे कोई भी आकाश के समान अनुत्पति धर्म वाला नहीं मान सकता । जैसे रात - दिन , प्रकाश -अंधकार आदि परस्पर विरुद्ध एक समय या एक स्थान पर नहीं होते , वैसे ही ब्रह्म भी परस्पर दो विरोधी गुण वाला संभव नहीं । और उनके पक्ष की सिद्धि में कोई भी ऐसा दृष्टांत नहीं मिलेगा ।

अद्वैतवादी आकाश का उदाहरण दिया करते हैं । जैसे एक ही आकाश अनेक घटों में भिन्न - भिन्न प्रतीत होता है परंतु तो भी आकाश परिच्छिन्न नहीं कहाता , प्रत्युत व्याप्त बना रहता है । वैसे ही एक ही एक ब्रह्म सब भूतों में व्याप्त है , भिन्न भिन्न अन्त: करणो में भिन्न भिन्न प्रतीत होता हैं , किन्तु वह परिच्छिन्न नहीं होता ।

यह आकाश का दृष्टांत उनके अद्वैतपक्ष को सिद्ध नहीं करता । **यदि आकाश कोई वस्तु ही नहीं है तो दृष्टांत के मिथ्या होने से अद्वैतपक्ष खंडित हो जाता है ।** जैसे वन्धया पुत्र व गगनकुसुम का कोई दृष्टांत नहीं दे सकता , वैसे ही अद्वैतपक्ष वालों को अपनी मान्यता के विरुद्ध आकाश का भी दृष्टांत नहीं देना चाहिए । क्योंकि अविधमान वस्तु के दृष्टांत से किसी साध्य वस्तु की सिद्धि भी नहीं हो सकती । यदि घटस्थानीय जड़ अन्त: करण ही परब्रह्म को भिन्न-भिन्न करने वाले अद्वैतवादी मानते हैं तो घटादि में एक ही आकाश की भांति सब अन्त: करणों में एक ही ब्रह्म विद्यमान होने से सबके मन की बातों का ज्ञान होना चाहिए किंतु ऐसा नहीं होता । और जो आकाश व घड़े के दृष्टांत से जीव - ब्रह्म की एकता सिद्ध करना चाहते हैं , उन्हें घट आकाश तथा परमेश्वर को स्वीकार करने से अद्वैतवाद कहां सिद्ध हुआ ?

और यदि अद्वैत शब्द ब्रह्म का विशेषण है तो दूसरा ब्रह्म नहीं , ऐसा अर्थ करना चाहिए । क्योंकि जिसके साथ अन्य को पृथक करने वाला

Edit with WPS Office

विशेषण होता है , वह उसी के दूसरे भाव को हटाता है । जैसे किसी ने किसी से कहा __ देवदत्त अद्वितीय पंडित है । यहां यही अर्थ होता है की उसके तुल्य दूसरा नहीं है , अन्य चेतनादि का निषेध नहीं हो सकता । इसी प्रकार ' अद्वैतब्रह्म , कहने से द्वितीय ब्रह्म का ही निषेध होगा , जीवात्मा व वृक्षादि संसार का निषेध नहीं हो सकता ।

अन्य ब्रह्म का निषेध भी तीन प्रकार से होता है __ (एक ब्रह्म का सजातीय कोई दूसरा ब्रह्म नहीं है) । (द्वितीय) __ विजातीय पदार्थों में ब्रह्म के तुल्य सामर्थ्यवाला वा बड़ा कोई नहीं है । तथा (तृतीय) __ उस ब्रह्म में मनुष्यादि के शरीर के समान अवयवावयविभेद नहीं है , क्योंकि वह व्यापक निराकार है ।

सृष्टि के विषय में नवीन वेदंतियों का सिद्धांत है कि न सत् की उत्पत्ति और न असत् की अर्थात कभी कोई वस्तु किसी प्रकार उत्पन्न होते ही नहीं न कुछ है , केवल भ्रममात्र सब दीखता है । ' न निरोधों , इत्यादि गौड कारिकाओ में यह स्पष्ट लिखा है कि न किसी वस्तु वा संसार की उत्पत्ति होती , न प्रलय होता , न कोई बद्ध - दुख , न दुख से बचने का कोई उपाय तथा न कोई मुक्त , न कोई मुक्ति का चाहने वाला है , इत्यादि प्रकार से सब का अभाव समझ लेना ही परमार्थ की सिद्धि है ।

नवीन वेदंतियों की यह मान्यता शास्त्र विरुद्ध तथा प्रत्यक्ष प्रमाण के विरुद्ध है ही , किंतु इनके मान्य ग्रंथ गीता के भी विरुद्ध है । गीता में लिखा है __ **नासतो विधते भावों नाभावो विधते सत्: ।।** (गीता. 2.16) सत् (भाव) तथा असत् (अभाव) दोनों के संबंध में एक निश्चित सिद्धांत है __ जो नहीं है वह कभी होगा भी नहीं , और जो है , उसका कभी अभाव नहीं होगा । उसका रूपांतर तो संभव है परंतु नाश कभी नहीं हो सकता ।

अतः जो कुछ संसार में दिखाई दे रहा है , न तो यह मिथ्या ही है , और न ही इसका अभाव ही होगा ।

नवीन वेदंतियों का ऐन्द्रजालिक (बाजीगर) का दृष्टांत भी ठीक नहीं है । जैसे बाजीगर ऐसी-ऐसी वस्तुओं को दिखा देता है , जो उसके पास नहीं होती । तात्पर्य यह है कि अभाव से भाव दीख पड़ता है । इसी प्रकार परब्रह्म एक ऐन्द्रजालिक है , वह अपना खेल दिखा रहा है । वे अपने पक्ष में निम्न

Edit with WPS Office

प्रमाण भी देते हैं ______

" **इन्द्रों मायाभि: पुरुरुप ईयते ।। "** (**बृहदारण्यक उपनिषद. 2.5.19**) अर्थात इन्द्र = परब्रह्म माया = छल कपट से अनेक रूपों को प्राप्त हो रहा है । इसका उत्तर यह है कि सबकुछ मिथ्या कहने वालों की दृष्टि से ऐन्द्रजालिक भी मिथ्या है । यदि उसको सत्य मानोगे तो ' सब मिथ्या है , यह कथन असत्य हो जाएगा और यदि ऐन्द्रजालिक अभावात्मक वस्तुओं को दिखा देता है तो खरगोश के सींग या वन्धया का पुत्र क्यों नहीं दिखा देता ? यदि कहो कि वह उन ही वस्तुओं को दिखा सकता है , जो संसार में है तो स्पष्ट है कि वह बाजीगर भावात्मक वस्तुओं को ही दिखाता है , और वे उसके पास होती भी है । इस दृष्टांत से अद्वैतवाद की सिद्धि नहीं हो सकती ।

इसी मान्यता पर हम कुछ विवेचन प्रस्तुत कर रहे हैं ___

1. यदि ब्रह्म ही जीव बना है तो बताया जाये वह कब बना , क्यों बना और इसको सर्वप्रथम किसने जाना ? इसका कोई उत्तर नहीं । अतः जीव ब्रह्म के अद्वैत का विचार भ्रान्त है ।
2. यदि मान ले कि ब्रह्म ही जीव बना है तो सारे प्राणियों के जीव ब्रह्म के टुकड़े मानने होंगे , इससे ब्रह्म अखंड व अटूट नहीं रहेगा ।
3. इस प्रश्न का उत्तर भी नवीन वेदान्तियों को देना होगा कि ब्रह्म का कितना भाग अभी जीव नहीं बना और वह भाग कहां-कहां है ?
4. ब्रह्म का जो भाग अभी तक जीव नहीं बना , वह किस कारण से नहीं बना और जो जीव बना है वह क्यों बना ? क्या जीव बना हुआ भाग दूसरे भाग से कमजोर है या दोषयुक्त है ? यदि है तो ब्रह्म को एक रस नहीं कह सकते । जिसकी अवस्था बदलती है अर्थात जो कभी जीव बनता है कभी ब्रह्म वह भी एक रस नहीं हो सकता ।
5. यह भी बताना होगा की जीव के अन्दर ब्रह्म है या नहीं ? यदि कहें ब्रह्म सर्वव्यापक है अतः जीव के अंदर भी है , तो प्रश्न उठेगा कि जब जीव स्वयं ब्रह्म ही है तो जीव के अंदर व्यापक ब्रह्म कैसे माना जा सकता है ? यदि कहें कि जीव में ब्रह्म नहीं रहता ? तो ईश्वर सर्वव्यापक नहीं रहा ।

Edit with WPS Office

6. जिस वस्तु के अवयव (टुकड़े/अंश) हो सकतें हैं वह अनेक अवयवों से मिलकर बनी होती है । जिस ब्रह्म में से असंख्य जीव बन चुकें व बन रहे हैं , तथा पुनः (ब्रह्म में ही) विलीन भी हो रहें हैं वह स्वयं भी केवल जीवों का संग्रह ही मानना होगा , ब्रह्म के रूप में उसका पृथक अस्तित्व नहीं हो सकता । सावयव होने से ब्रह्म के अनित्य होने का दोष भी आयेगा ।
7. ब्रह्म का स्वाभाविक गुण ज्ञान है और स्वाभाविक गुण का कभी नाश नहीं होता । तब कैसे सम्भव है कि ज्ञान स्वरूप ब्रह्म कभी अज्ञानी हो जावें ?
8. अविधा वा माया क्या वस्तु है ? वह कहा रहतीं थीं ? और कब उसने ब्रह्म को पकड़ कर पहले ईश्वर और फिर जीव को बनाया ?
9. ब्रह्म और अविधा के (माया के) मेल से जीव बनता है तो क्या वह अविधा या माया से दुर्बल है ? क्या सर्वशक्तिमान को कोई अन्य शक्ति दबा सकती हैं ? क्या सर्वज्ञ में अविधा रह सकती हैं ?
10. जिस अविद्या और माया ने ब्रह्म को जीव बनाकर अपने अधीन किया , क्या वह ब्रह्म को रोक नहीं सकती कि जीवो को कर्म फल के रूप में दुख न देवें ?
11. ब्रह्म या ईश्वर जो जीवो को कर्म फल दे रहा है , वह किस अधिकार से देता है ? क्या कोई राजा या न्यायाधीश स्वयं ही दोषी या चोर बनकर अपने विरुद्ध साक्षियां लाता व अपने आपको दण्ड देता देखा जाता है ?
12. क्या संभव है कि मनुष्य अपने आप को काटकर वा किसी अन्य से काटा जाकर जीवित रहे और कटे हुए भाग से काम लें वा उस पर शासन करें ? कदापि नहीं । तब परमेश्वर किस प्रकार खंड-खंड रहकर जीवित रह सकता वा जीवो पर अधिकार पा सकता है ?
13. जब सब ब्रह्म ही ब्रह्म है तो प्रकृति या जड़ पदार्थ कहां से आ गयें ? ब्रह्म या ईश्वर को अविधा ने जीव बनाया है तो जड़ पदार्थ भी ब्रह्म से ही बने हैं या और किसी के मेल से ? यदि कहो की प्रकृति ब्रह्म से नहीं बनी तो मानना होगा की ब्रह्म से अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु भी अनादि है और जब प्रकृति को भी अनादि माना तो जीव को अनादि मानने में

Edit with WPS Office

क्या रुकावट है ?

14.यह कहना भी निरंथक है कि ___ क्योंकि जगत स्वप्न की तरह मिथ्या है अतः जीव भी मिथ्या है । " कारण की यह विचार केवल कल्पनाओं पर लागू हो सकता है कहने को यह भी कल्पना हो सकती है कि जैसे स्वप्न की बातें व जगत मिथ्या है वैसे ही ब्रह्म को मनाना भी असत्य हो , ऐसे ही नवीन वेदांती जो अपने आप को ब्रह्म मानते हैं यह भी अज्ञान हो । तब मात्र अज्ञान ही रहेगा अन्य कुछ नहीं , ब्रह्म भी नहीं ।

15.यदि सर्प वास्तव में न हो तो रज्जु में सर्प की कल्पना (भ्रम) भी नहीं हो सकती । रज्जू में सर्प नहीं , पर सर्प में सर्प अवश्य होता है । इसी प्रकार जगत व जीव भी भ्रांति मात्र नहीं । प्रत्येक वस्तु जिसके संबंध में कुछ भी कल्पना की जा रही है वह अपने यथार्थ स्थान पर सत्य अवश्य है ।

16.जन्म के अंधे को कभी रूप का स्वप्न नहीं आता और जो वस्तु कभी देखी या सुनी न हो वह भी कभी स्वप्न में नहीं आती । इससे सिद्ध है कि यदि जीव न होता तो ब्रह्म को जीव होने का ख्याल भी कदापि न आता । जीव की स्वतंत्र सत्ता माने बिना ब्रह्म को जीव मान लेना भी नहीं हो सकता ।

17.ब्रह्म जिस अज्ञान से जीव बना है , वह अज्ञान सारे ब्रह्म को अज्ञानी क्यों नहीं करता ? क्यों ब्रहम के कुछ (किन्हीं) अंशों को ही ग्रसित करता है ?

18.घटाकाश , मठाकाश का उदाहरण देकर बताया जाता है कि घट और मठ की उपाधि से आकाश पृथक पृथक दिखाई देता है अन्यथा सब आकाश एक ही है । ऐसे ही सब कुछ ब्रह्म है , जीव अविधा से प्रतीत हो रहा है । ऐसी युक्तियां निरंथक है । कारण की आकाश वास्तव में विभक्त नहीं होता और न घट और मठ का आकाश पृथक पृथक है , पर जीव तथा ब्रह्म तो स्पष्टतया पृथक माने जा रहे हैं । ब्रह्म व्यापक है जीव एकदेशी , ब्रह्म कर्मफल दाता है जीव कर्म कर्ता व फल भोगता इत्यादि । अतः इस दृष्टांत की जीव - ब्रह्म के साथ समानता नहीं है ।

Edit with WPS Office

19.घटाकाश और मठाकांश की उपाधि वाला दृष्टांत तो स्वयं नवीन वेदान्तियों के विरुद्ध जाता है क्योंकि घट और मठ आकाश से पृथक है । जैसे आकाश से विभिन्न घट - मठ को स्वीकार करने पर ही घटाकाश - मठाकाश बनते हैं वैसे ही ब्रह्म से भिन्न अन्य किसी (अविधा) की सत्ता मानने पर ही जीव माना जा सकेगा ऐसे में केवल ब्रह्म ही है यह सिद्धांत खंडित हो जाता है ।

20.यह कहना कि ' ब्रह्म की उपाधि से ईश्वर व जीव बनता है ' असत्य है । जब ब्रह्म के बिना कुछ है ही नहीं तो उपाधि कहां से आ गई । जब साधारण सा ज्ञानी मनुष्य व्याधि से बचकर सुख पूर्वक रह सकता है , तो ज्ञान स्वरूप , सर्वशक्तिमान ब्रह्म उपाधि का शिकार हो जावे , यह कभी स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

21.यह कहना की उपाधि = अविधा = माया का संबंध टूटने पर अपने स्वरूप का ज्ञान होता है और जीव फिर ब्रह्म हो जाता है , सत्य नहीं है । इससे तो जीव , ब्रह्म से अधिक ज्ञानी और शक्तिशाली सिद्ध होता है । ब्रह्म को तो उपाधि ने नीचा दिखाया , पर जीव ने उस उपाधि को बंधन को तोड़ दिखाया ।

22.जीव को ब्रह्म माने तो चोरी , व्याभिचार आदि सब पापों को करने वाला ब्रह्म ठहरता है ।

23.उपाधि के विषय में यह कहा जाता है कि ' यह अनिर्वचनीय हैं ' अर्थात यह ज्ञान वाली है या अज्ञान वाली कुछ कहा नहीं जा सकता । परंतु ज्ञान स्वरूप ब्रह्म को अज्ञानी बनाने वाली उपाधि के अज्ञान युक्त होने में क्या संदेह हो सकता है । उपाधि को अनिर्वचनीय बताना ही इस बात का प्रमाण है की नवीन वेदान्तियों को अपने मन्तव्यों की ' सत्यता पर स्वयं विश्वास नहीं ।

24.यह कहना कि ब्रह्म का प्रतिबिंब अन्त: करण पर पड़ता है , जिसे चिदाभास कहते हैं , यहीं जीव है , सर्वथा असत्य है । प्रतिबिंब पड़ता है दूसरी वस्तु पर और नवीन वेदान्तियों के मत में ब्रह्म के बिना दूसरी वस्तु है ही नहीं , तो प्रतिबिंब पड़ा किस पर ? प्रतिबिंब जहां पड़ता है वहां वह वस्तु नहीं होती , इससे ब्रह्म के सर्वव्यापक न होने का दोष भी आयेगा ।

Edit with WPS Office

25.प्रतिबिंब पड़ता है साकार वस्तु का । पर ब्रह्म तो निराकार है उसका कोई रूप या आकार नहीं है , तो उसका प्रतिबिंब कैसा ?

26.प्रतिबिंब पड़ता है फासले वाली चीज पर , परंतु ब्रह्म सब में व्यापक है , कोई भी वस्तु उससे दूर नहीं , तब उसका प्रतिबिंब कैसा ?

27.अन्त: करण के मेल से ब्रह्म का जीव बनता है ऐसी स्थिति में तो जहां-जहां अंतकरण जाएगा वहां-वहां का ब्रह्म जीव बनता जायेगा तथा पूर्व स्थान पर जहां जीव था वह ब्रह्म होता जाएगा । कभी जीव ब्रह्म बन जाएगा तो कभी ब्रह्म जीव बन जाएगा इस प्रकार सब क्षण - क्षण में परिवर्तन होता रहेगा । कर्म को करने वाला ब्रह्म /जीव भिन्न होगा व फल को भोगने वाला ब्रह्म /जीव भिन्न होगा । ऐसे में कर्म फल व्यवस्था व्यर्थ हो जाएगी ; अन्याय का दोष भी आएगा । करें तो कोई अन्य व भोगें कोई अन्य ।

28.यह कैसे हो जाता है कि जड़ अंन्त करण ब्रह्म को जीव बना ले तथा वह स्वयं अविधा से ग्रसित हो जावें ?

29.अद्वैतवाद में किसी जीव पर विश्वास नहीं हो सकता कि वह कब तक जीव है । संभव है उसे अभी अन्त करण छोड़ दे और वह ब्रह्म बन जाए । ऐसी अवस्था में तो किसी राजा को किसी भी नीच से नीच अपराधी को दंड भी नहीं देना चाहिए क्योंकि यदि अन्त: करण ने उसे छोड़ दिया तो वही विशुद्ध ब्रह्म बन जायेगा ।

30.अन्त: करण के संयोग तथा वियोग से प्रत्येक क्षण ब्रह्म ज्ञानी तथा अज्ञानी बनता रहेगा । ऐसी स्थिति में तो ब्रह्म अखण्ड , एक रस , सर्वज्ञ , सर्व व्यापक , सर्वशक्तिमान नहीं रहेगा ।

31.एक स्थान पर अन्त: करण के मेल से ब्रह्म ' जीव' बनता है और उसी अन्त: करण के दूसरे स्थान पर चले जाने से पूर्व जीव ' ब्रह्म ' बन जायेगा तो ऐसी अवस्था में पूर्व स्थान में की गई बातों का स्मरण नहीं रहना चाहिए , किंतु ऐसा तो देखने में नहीं आता । प्रत्येक मनुष्य को अपने बाल्यावस्था तक की अनेक बातें स्मरण रहती है । अन्त: करण तो जड़ है , जड़ कभी स्मरण नहीं रखता , स्मरण तो चेतन ही रखेगा । और चेतन बार-बार बदल रहा है तो एक के अनुभव का दूसरे को स्मरण कैसे होगा ?

Edit with WPS Office

32.यदि ब्रह्म ही जीव बना है तो जीव को भी सर्वत्र सर्वशक्तिमान होना चाहिए , क्योंकि स्वाभाविक गुणों का कभी नाश नहीं होता ।

33.कहां जाता है कि चेतन होने से जीव तथा ब्रह्म एक है , दो पृथक - पृथक नहीं है । परंतु केवल एक गुण समान होने से दो पदार्थ एक नहीं माने जा सकते । जैसे भार वाला होने से अमरूद व सब एक नहीं हो जाते । जीव तथा ब्रह्म के अनेक गुण परस्पर भिन्न भी है जैसे जीव एकदेशी , अल्पज्ञ अल्पशक्तिमान है किंतु ब्रह्म सर्वव्यापक , सर्वज्ञ तथा सर्वशक्तिमान है । मात्र एक या कुछ गुणों की समानता से दोनों को एक मान लेना अविधा (अज्ञान) है ।

34.यह अविधा जैसी बात लगती है कि स्त्री भी ब्रह्म और पुरुष भी ब्रह्म , रोटी भी ब्रह्म और मल भी ब्रह्म , चोर भी ब्रह्म और पुलिस भी ब्रह्म । ऐसी अवस्था में तो धर्माधर्म , सुख-दुख आदि की विवेचना भी नहीं हो सकती । पेड़ा भी ब्रह्म गोबर भी ब्रह्म , तो फिर पेड़ा मुख में पड़े तो निगलते क्यों और गोबर पड़े तो थूकते क्यों है ?

35.स्त्री को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं ? जनेऊ पहनने का अधिकार नहीं ? शूद्रो को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं , अगर शूद्र वेद पढें तो उसके कानों में लाख डालो या रुई ठोस दो जिससे एक शब्द की भी आवाज ना जा सके ?? यह कौन से ब्रह्म है नवीन वेदान्तियों जी जरा बताओ तो सही ..?

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 111.अद्वैतवाद - वेदांत दर्शन के भी विरुद्ध है

ब्रह्म का लक्षण करते हुए वेदांत दर्शन में लिखा है :

जन्माधस्य यत्: । (वेदांत दर्शन. 1.1.2)

अर्थात् , ___ इस जगत की उत्पत्ति , स्थिति , तथा प्रलय जिससे होती है , वह ब्रह्म है । अतः ब्रह्म जगत की उत्पत्ति में निमित्तकारण है । ब्रह्म को जगत का उपादान कारण नहीं माना जा सकता । क्योंकि उपादान कारण परतंत्र और परिणामी होता है और ब्रह्म एक रस तथा स्वतंत्र है । संसार में ऐसा कोई दृष्टांत नहीं मिलता , जो एक ही उपादान कारण तथा निमित्त कारण हो । और जगत को देखने से भी स्पष्ट होता है की ब्रह्म उपादान कारण नहीं हो सकता । क्योंकि उपादान कारण के गुण कार्य में अवश्य आते हैं । ब्रह्म के चेतनादि गुण जगत में नहीं पाए जाते , अतः ब्रह्म जगत का निमित्त कारण ही है ।

नवीन वेदान्तियों का मकड़ी का दृष्टांत भी उनकी मान्यता को सिद्ध नहीं करता । **क्योंकि मकड़ी की आत्मा चेतन और जाला जड़ है ।** जड़ और चेतन को एक मानना मूर्खों का काम है । यदि मकड़ी का शरीर और आत्मा एक होते तो मृतक मकड़ी कभी भी दृष्टिगोचर न होती । मृतक मकड़ी को देखकर स्पष्ट हो जाता है कि चेतन आत्मा इससे पृथक है । अतः **शरीर मकड़ी के जाले का उपादान कारण है और चेतनात्मा निमित्त कारण है ।** यह दृष्टांत ब्रह्म को जगत का निमित्त कारण ही सिद्ध करता है , उपादान कारण नहीं ।

नवीन वेदान्तियों का रज्जू - सर्प का दृष्टांत भी उनकी मान्यता का खंडन करता है । इस दृष्टांत से वेदान्ती ब्रह्म को विवृतोपादान मानते हैं । **विवृत समान आकृति अथवा समान धर्म वालों में ही होता है और प्रथम से उन दोनों वस्तुओं का ज्ञान भी हो , तब भ्रम होता है ।** किंतु भिन्न आकृति गुणों वालों में कदापि भ्रम नहीं होता । रस्सी में सर्प का तो भ्रम हो

Edit with WPS Office

सकता है , हाथी घोड़े का नहीं । सीपी में चांदी का भ्रम हो सकता है किंतु लोहे व सुवर्ण का नहीं । अतः जबकि ब्रह्म और जगत में न तो आकृति मिलती है , न धर्म तो ब्रह्म मैं जगत का भ्रम कैसे हो सकता है ? दूसरे विवृत किसी को किसी का किसी में होता है । जैसे मनुष्य को सर्प का भ्रम रस्सी में , थोड़ा प्रकाश व थोड़े अंधकार के कारण होता है । जिससे स्पष्ट है कि **बिना चार चीजों के भ्रम या विवृत नहीं हो सकता ,** किंतु अद्वैतवादियों के पास ब्रह्म के सिवाय कोई वस्तु ही नहीं , फिर भ्रम या विवृत कैसे हो सकता है ? और सर्वज्ञ ब्रह्म को भ्रम कहना कितनी बड़ी महाभ्रांति है ? **प्रकृति अचेतन है , उसमें भ्रम संभव ही नहीं । अल्पज्ञ जीव को ही भ्रम हो सकता है किंतु वेदांती उसकी सत्ता ही स्वीकार नहीं करते ।** अतः किसी भी प्रकार अद्वैतवाद की मान्यता सत्य सिद्ध नहीं होती और वेदान्तियों की यह प्रतिज्ञा कि ___

" ब्रह्म सत्यं जगत्मिथ्या जीवों ब्रह्मैव नापर : । "

सर्वथा निराधार एवं मिथ्या ही है । और उस परब्रह्म को जगत का उपादान मानने का खंडन स्वयम उपनिषद में स्पष्ट रूप से किया गया है ।

न तस्य कार्य करणं चं विधते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यन्ते ।
परास्य शक्तिविधैव श्रूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया ।। **(श्वेताश्वर उपनिषद. 6.8)**

अर्थात् उस परब्रह्म का कोई कार्य तथा कारण नहीं है । यदि परब्रह्म जगत का उपादान कारण होता तो जगत को परब्रह्म का कार्य अवश्य मानना पड़ता ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 112.नवीन वेदान्तियों का मायावाद

न्याय , वैशेषिक , सांख्य तथा मीमांसादि शास्त्र जगत का उपादान कारण 'प्रकृति , अथवा ' परमाणु , को मानते हैं । वेदों में इसका नाम ' स्वधा , है । उपनिषदों में इसका नाम ' माया , तथा ' अजा , आता है । जैसे कि कहा गया है __ **मायान्तु प्रकृतिं विधात् ।** (श्वेता उपनिषद. 4.11) । **अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम् ।** इत्यादि स्थलों पर ' माया ' तथा ' अजा ' शब्द प्रकृति के लिए प्रयुक्त है । इन शब्दों से यह भी स्पष्ट है कि **' मिमीते मानयुक्त करोतीति माया ।** अर्थात जो इस संसार को एक विशेष मानयुक्त = कार्याकार बनाए , उसका नाम माया है । और " **न जायते इत्यजा** " जो उत्पन्न न हो , इससे उसका नाम ' अजा , है । और यह सत्तोगुण , रजोगुण , तमोगुणयुक्त , अनादि व शाश्वत = नित्य है ।

नवीन वेदांती इस प्रकृति का खंडन करके माया को जगत का उपादान कारण मानते हैं । इनके मतानुसार माया का अर्थ मिथ्या है और यह प्रकृति के समान कोई भावात्मक पदार्थ नहीं है । यह माया न सत् है , न असत् , न निराकार है और न साकार । उसे यह सदसद् से विलक्षण एवं निर्वचनीय बताकर लोगों की जिज्ञासा को अपूर्ण ही छोड़ देते हैं और इसे सब प्रकार के प्रश्नों से बचने का उपाय मान बैठे हैं । शांकरभाष्य के टीकाकारों का कथन है ___

" मायावादे स्वप्नवत्सर्व समठ्जसम् ।। " (स्वामी गोविन्दानन्द)

" अनेन स्फुटतो मायावाद: स्वप्नदृगात्मा ।। " (श्री वाचस्पति मिश्र)

अर्थात मायावाद के अनुसार यह जगत स्वप्न के समान है । जैसे **स्वप्न का द्रष्टा अपने मन से ही बिना किसी परिणाम के स्वप्नों की सृष्टि को रच लेता है , इसी प्रकार ब्रह्म माया - शक्ति से सृष्टि को रच लेता है ।**

प्रथम तो ' माया , शब्द की परिभाषा ही वेदान्तियों की स्वयं कल्पित ही है । इनके लक्ष्मण की पुष्टि किसी भी प्रमाण से नहीं होती । उपनिषदों में प्रकृति का पर्यायवाची ' माया , शब्द को माना है । किंतु उसकी अन्य विशेषताएं इन वेदान्तियों की कल्पना मात्र ही है । और इनका यह मायावाद

Edit with WPS Office

(स्वप्न सदृश) वेदांत दर्शन के भी विरुद्ध है । वहां स्वप्नवाद का स्पष्ट रूप से खंडन करते हुए लिखा है ______

वैधर्म्याच्च न स्वप्नादिवत् ।। (ब्रह्म सूत्र. 2.2.28)

अर्थात यह संसार स्वप्न के तुल्य कदापि नहीं है । क्योंकि स्वप्न तथा संसार के पदार्थों में वैधर्म्य = अत्यंत भेद पाया जाता है । **स्वप्न के पदार्थ निद्रादोष मिट जाने पर मिट जाते हैं , किंतु संसार के पदार्थ इनकी मानी हुई माया के मिट जाने पर भी नष्ट नहीं होते ।**

जिन आध श्री शंकराचार्य आदि को का मिथ्याज्ञान नष्ट होना ये मानते हैं , तब भी यह संसार पूर्ववत् ही था और अब भी विधमान है । और जैसा ' माया , शब्द का अर्थ वेदान्तियों ने माना है , इसकी पुष्टि किसी शास्त्र से नहीं होती । ' माया - शब्द , कहीं भी मिथ्यार्थ में शास्त्रों में नहीं आता । शास्त्रों में 'माया , शब्द ' शक्ति , ' प्रज्ञा , आदि अर्थों में ही प्रयुक्त है । माया पद का शाब्दिक अर्थ भी ' मीयते ज्ञायतेऽनयेति माया , मिथ्यार्थ का खंडन करता है और जब ये ' माया , को मिथ्या ही मानते हैं तो __ मायान्तु प्रकृति विधात् मायिनन्तु महेश्वरम् । (श्वेता उपनिषद. 4.10)

माया वाले ब्रह्म को भी मिथ्या क्यों नहीं मानते ? अतः यह मायावाद वेद व उपनिषदादि से विरुद्ध होने से स्वयं कल्पित ही है । जिस मिथ्या कल्पना के आश्रम से नित्य , शुद्ध , बुद्ध , मुक्त , स्वभाव , वाले परब्रह्म को भी अविधाकूप में डालकर जीवभाव को प्राप्त करा दिया है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•113.उपनिषदों का त्रैतवाद

Edit with WPS Office

यद्यपि उपनिषदों वेदांत का ही भाग होने से आध्यात्मिक _ज्ञान अथवा ब्रह्म ज्ञान का ही विशेष रूप से प्रतिपादन करती है । पुनरपि प्रसंग से ब्रह्म से भिन्न जीवात्मा तथा प्रकृति का भी वर्णन ही नहीं , प्रत्युत उन्हें अज - अजन्मा तथा शाश्वत माना है । देखिए उपनिषदों के कुछ स्थल , इस विषय में ये उद्धृत किये हैं ______

1. **द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।**
तयोरन्य: पिप्पलं स्वाद्वत्यनश्नन्नयोऽभिचाकशीति ।।
(ऋग्वेद. 1.164/20 , अथर्ववेद. 9.9.20 , श्वेताश्वर उपनिषद. 4.6)

भावार्थ : इस मंत्र में प्रकृति को एक वृक्ष बताया है । उस पर दो पक्षी रहते हैं । ये जीवात्मा और परमात्मा ही है , जो व्याप्य - व्यापक भाव से साथ मिले हुए चेतन होने से मित्र की तरह है । वृक्ष को अचेतन होने से प्रकृति की ओर पक्षियों को चेतन होने से जीवात्मा - परमात्मा की उपमा दी है । इनमें से एक जीव रूपी पक्षी प्रकृति रूप वृक्ष के फलों को खाता है और दूसरा परमात्मा भोगादि से रहित होकर जीवो के कर्मों का साक्षी होकर कर्म फल देता है ।

2. **अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णा बही: प्रजा: सृजमानां। स्वरुपा ।**
अजो होंको जुषमाणोऽनुशेते जहात्येनां भुक्तभोगामजोऽन्य ।।
(श्वेताश्वर उपनिषद. 4.5)

भावार्थ : इसमें परमात्मा , जीवात्मा तथा प्रकृति तीनों को अज = अजन्मा अर्थात कभी न उत्पन्न होने वाला बताया है । इनमें से एक प्रकृति सत्तोगुण रजोगुण तथा तमोगुण वाली और अपनी विकृति रूप प्रजा को उत्पन्न करने वाली है । इस अनादि व अजन्मा प्रकृति की वस्तुओं का एक अनादि व अजन्मा जीवात्मा भोग करता है , परंतु दूसरा अनादि व अजन्मा परमात्मा इस जीव से भोगी जाने वाली प्रकृति को न भोगने के कारण पृथक है ।

Edit with WPS Office

3. **ज्ञानौ द्वावजावीशानीशावजा होका भोकतृभोग्यार्थयुक्ता ।**
अनन्तश्चात्मा विश्वरुपो हाकर्ता त्रयं यदा विन्दते ब्राहामेतत् ।।
(श्वेताश्वर उपनिषद. 1.9)

भावार्थ : इस मंत्र में भी परमात्मा , जीवात्मा , तथा प्रकृति के परस्पर संबंध और उनके स्वरूप का वर्णन करते हुए लिखा है __ परमात्मा सर्वज्ञ व सर्वशक्तिमान है , और जीवात्मा अल्पज्ञ व अल्पसामथ्र्य वाला है किंतु दोनों ही अज = अनादि तथा उत्पन्न न होने वाले है । तीसरी प्रकृति भोक्ता = जीवात्मा के भोगने योग्य पदार्थो वाली है । और वह भी अज = कभी उत्पन्न नहीं होती । इन तीनों में से परमात्मा अनन्त ,विश्वरुप ,(व्यापक) और सृष्टि को रचकर जीवात्माओं को कर्मानुसार फल भुगाने वाला है । ये तीनों ही ब्राहा = ब्रह्मा से संबंध रखने वाली सृष्टि रचना में उपयोगी है ।

4. **नित्यों नित्याना चेतनश्चेतनानामेको बहूनां यो विद्धति कामान् ।।**
(कठोपनिषद. 5.13)

भावार्थ : वह परब्रह्म प्रकृत्यादि नित्य पदार्थों में नित्य और जीव रुप चेतनों में चेतन स्वरूप है , वह एक है और इस विभिन्नरुप सृष्टि की रचना करता है ।

यहां परमात्मा से भिन्न प्रकृत्यादि नित्य पदार्थों तथा ब्रह्म से भिन्न चेतन जीवों को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया है ।

5. **ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमै परार्द्धे ।**
छायातपौ ब्रह्मविदो वदन्ति पठ्चाग्नयो ये च त्रिणाचिकेता: ।।
(कठोपनिषद. 3.1)

भावार्थ : इस मंत्र में जीवात्मा तथा परमात्मा को छाया - आतप के समान भिन्न - भिन्न माना है । और ये दोनों ही को हृदयाकाश में प्रविष्ट बताया है । " गुहा प्रविष्टावात्मानौ हि तद्दर्शनात् । " **(ब्र॰ सू॰ . 1.2.11)** इस सूत्र में भी जीव _ ब्रह्म की भिन्नता का स्पष्ट प्रतिपादन किया गया है ।

Edit with WPS Office

6. **ईशावास्यमिवं सर्व यत्किठ्च जगत्या जगत् ।**
तेन त्यक्तेन भुठ्जीथा मां गृध कस्यस्विद् धनम् ।।

इस मंत्र में सब को आच्छादित करने वाला ' तथा नियंत्रण में रखने वाला परमात्मा , ' जगत , शब्द से चराचर संसार और भुठ्जीथा: शब्द से भोग करने वाले जीव का वर्णन होने से त्रैतवाद का स्पष्ट वर्णन है । क्योंकि परमात्मा तो स्वयं भोग नहीं करता और परमात्मा से भिन्न यदि प्रकृत्यादि की कोई सत्ता ही न हो तो वह किसे आच्छादन करता है ? इसका कोई समाधान न होने से प्रकृति का तथा भोक्ता जीव का इसमें वर्णन है ।

7. **सन्मूला: सोम्येमा: प्रजा: सदायतना: सत्प्रतिष्ठा : ।।**
(छान्दोग्य उपनिषद. 6.8.4)

भावार्थ : अर्थात सत्यस्वरूप प्रकृति सब जगत का मूलाधार और स्थिति का कारण है । यहां प्रकृति को ' सत् , कहा है , जिसका कभी अभाव नहीं होता यह समस्त संसार प्रकृति का विकार होने से प्रकृति में ही लीन हो जाता है ।

8. **य आत्मनि तिष्ठन् आत्मनोऽन्तरो यमात्मा न वेद ।**
यस्य आत्मा शरीरम् ।। **(बृहदारण्यक उपनिषद)**

भावार्थ : इसमें जीवात्मा व परमात्मा का व्याप्य _ व्यापक सम्बन्ध बताते हुए लिखा है कि सूक्ष्म होने से परमात्मा जीवात्मा में भी व्यापक है , यह आत्मा उस परमात्मा को नहीं जानता । उस परमात्मा का यह जीवात्मा निवास होने से शरीर के समान है । इससे स्पष्ट है कि जीवात्मा व्याप्य है और परमात्मा व्यापक है , अत: ये दोनों भिन्न - भिन्न सत्ताएं है ।

9. **रसं होवायं लब्ध्वानन्दी भवति ।। (तैत्तिरीय उपनिषद्)**

भावार्थ : अर्थात जीवात्मा आंनद स्वरुप नहीं है , परमात्मा आनन्दस्वरुप है । यह जीव परमात्मा के सान्निध्य से ही आनन्द को प्राप्त

Edit with WPS Office

करता है ।

10. यतो वा इमानि भूतानि जायते येन जातानि जीवन्ति ।
यत्प्रयन्त्यभिसंविशन्ति तद् विजिज्ञासस्व तद् ब्रह्म ।।
(तैत्तिरीय उपनिषद्.)

भावार्थ : इसमें परब्रह्म का लक्षण बताया गया है । वेदांत दर्शन के " जन्माधस्य यत्: " सूत्र में जो ब्रह्म का लक्षण कहा है , वही यहां उपनिषद में कहा है । वह परब्रह्म इस सृष्टि की उत्पत्ति , स्थिति , तथा प्रलय का कारण है । उपादानकारण नहीं , प्रत्युत निमित्त कारण है । जैसे घट के निमार्ण में कुम्भकार निमित्त कारण है और मिटटी उपादान कारण , वैसे ही सृष्टि - रचना में ब्रह्म निमित्त कारण है और प्रकृति उपादान कारण । ब्रह्म सृष्टि का उपादानकारण इसलिए नहीं है , क्योंकि सृष्टि में ब्रह्म के गुण नहीं है । उपादान कारण के गुण कार्य में अवश्य ही आते हैं ।

इस मंत्र में यहां बताया गया है कि वह परब्रह्म ही सब भूतों की रचना करता है । इसको जीवित - बनाए रखता है और प्रलय काल में कारण में लीन भी करता है ।

ब्रह्मांड पुराण अध्याय 5 , श्लोक 93 से 99 तक , पृष्ठ संख्या. 43

Edit with WPS Office

४२ ब्रह्माण्डमहापुराण

हिंस्त्राहिंस्त्रे मृदुक्रूरे धर्माधर्मौ कृताकृते। तेषामेव पृथक् सूतमविभक्तं त्रयं बिदुः॥९३॥
एतदेवं च नैवं च न चोभे नानुभे तथा। कर्म स्वविषयं प्राहुः सत्त्वस्थाः समदर्शिनः॥९४॥
नामात्मपंचभूतानां कृतानां च प्रपंचताम् दिवशब्देन पंचैते निर्ममे स महेश्वरः॥९५॥
आर्षाणि चैव नामानि याश्च देवेषु सृष्टयः। शर्वर्यां न प्रसूयन्ते पुनस्तेभ्यो दधत्प्रभुः॥९६॥
इत्येवं कारणाद्भूतो लोकसर्गः स्वयंभुवः।
महदाद्या विशेषान्ता विकाराः प्राकृताः स्वयम्॥९७॥
चन्द्रसूर्यप्रभो लोको ग्रहनक्षत्रमण्डितः। नदीभिश्च समुद्रैश्च पर्वतैश्च सहस्त्रशः॥९८॥
पुरैश्च विविधै रम्यै स्फीतैर्जनपदैस्तथा। अस्मिन् ब्रह्मवनेऽव्यक्तो ब्रह्मा चरति सर्ववित्॥९९॥

कर दिये थे। उन्हीं कर्मों को पुनः पुनः प्रतिपादन किया जाता है।।९२।। हिंसक प्राणी में हिंसा करने का अहिंसक में हिंसा न करने का, कोमल स्वभाव वाले प्राणी में मृदु पूर्ण कार्य करने का, क्रूर प्राणी में क्रूरता पूर्ण कार्य करने का कार्य, पहले ही निश्चित कर दिया था तथा उन प्राणियों के धर्म (करणीय कार्य के नियम) अधर्म (अकरणीय कार्य) कृत और अकृत उन्हें क्या करना चाहिये? क्या नहीं? यह सब अलग अलग सबको पहले ही उत्पन्न कर दिये थे।।९३।। यह इस प्रकार है और यह इस प्रकार नहीं हैं, यह दोनों नहीं है तथा ये दोनों हैं, ऐसा सत्त्वस्थ समदर्शियों के कर्म अपने विषय को कहते हैं। अर्थात् जो प्राणी सत्त्व प्रधान हैं, वे सबको समान देखते हैं, उनके कर्म सर्वत्र अपने विषय के अधीन हैं, उनके लिये यह ऐसा है, ऐसा नहीं दोनों प्रकार नहीं, दोनों प्रकार हैं, ये सन्देहशील विषय सत्त्वस्थ समदर्शी व्यक्ति के विषय में नहीं है।।९४।।

आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी इन पाँच महाभूतों के नाम और उनके कर्म और उनका अपना विषय सत्त्वशील प्राणियों को कहते हैं अर्थात् सभी जीवन धारण करने वाले प्राणी इन पाँच महाभूतों से ही बने हैं तथा वे ही उनके जीने के साधन हैं। ये पाँचों महाभूत दिव शब्द से उस महेश्वर ब्रह्मा ने निर्माण किये थे। ये सभी महदादि विशेषान्त विकार हैं तथा ये सभी प्राकृत हैं। ये ऋषि सम्बन्धी वैदिक, मानव, ऋषि आदि जितने भी नाम हैं, जो देवों की सृष्टि में आते हैं, ये सभी रात्रि में नहीं उत्पन्न किये जाते हैं, फिर उनको प्रभु ब्रह्मा ने धारण किया।।९६।। इस प्रकार स्वयंभु ब्रह्मा ने प्रकृति कारण से समस्त पञ्चमहाभूत संसार की रचना की है। इनमें महत्तत्त्व आदि सब विशेष

- इस प्रकार स्वयंभू ब्रह्मा ने प्रकृति कारण से समस्त पंचमहाभूत संसार की रचना की है ।
- यहां प्रकृति को उपादान कारण बोला है ।

महाभारत के शांति पर्व के अध्याय 217 के अनुसार तो **नारायण** ने त्रैतवाद का उपदेश दिया था । इस अध्याय में महात्मा भीष्म नारायण का उपदेश युधिष्ठिर को सुना रहे थे । नारायण ने सच्चिदानंद परमात्मा , कारण प्रकृति और कार्य जगत तथा जीवात्मा का उपदेश दिया है ।

भीष्मजी कहते हैं—राजन्! जो मनुष्य सच्चिदानन्दघन परमात्मा, दृश्यवर्ग तथा प्रकृति और पुरुष—इन चारोंको नहीं जानता है, वह परब्रह्म परमात्माको नहीं जानता है। परम ऋषि नारायणने जिस व्यक्त और अव्यक्त तत्त्वका प्रतिपादन किया है, उसमें व्यक्त (दृश्यवर्ग) को मृत्युके मुखमें पड़नेवाला जाने और अव्यक्तको अमृतपद समझे तथा नारायण ऋषिने जिस प्रवृत्तिरूप धर्मका प्रतिपादन किया है, उसीपर चराचर प्राणियोंसहित समस्त त्रिलोकी प्रतिष्ठित है। निवृत्तिरूप जो धर्म है, वह अव्यक्त सनातन ब्रह्मस्वरूप है ।। १—३ ।।

Edit with WPS Office

तं विशेषमवेक्षेत विशेषेण विचक्षणः ।

इस प्रकार विचारशील पुरुषको चाहिये कि वह पहले अव्यक्त[१] (प्रकृति) और पुरुष (जीवात्मा)—इन दोनोंका ज्ञान प्राप्त करे; फिर इन दोनोंसे श्रेष्ठ जो परम महान् पुरुषोत्तम तत्त्व है, उसका विशेषरूपसे ज्ञान प्राप्त करे ।। ६½ ।।

संयोगलक्षणोत्पत्तिः कर्मणा गृह्यते यथा ।
करणैः कर्मनिर्वृत्तिः कर्ता यद् यद् विचेष्टते ।
कीर्त्यते शब्दसंज्ञाभिः कोऽहमेषोऽप्यसाविति ।। ११ ।।

प्रकृति और पुरुषके संयोगसे चराचर जगत्की उत्पत्ति होती है, जो कर्मसे ही जानी जाती है। जीव मन-इन्द्रियोंद्वारा कर्म करता है। वह जिस-जिस कर्मको करता है, उस-उसका कर्ता कहलाता है। 'कौन' 'मैं' 'यह' और 'वह'—इन शब्दों एवं संज्ञाओंद्वारा उसीका वर्णन किया जाता है ।। ११ ।।

विकारं प्रकृतिं चैव पुरुषं च सनातनम् ।
यो यथावद् विजानाति स वितृष्णो विमुच्यते ।। ३७ ।।

जो प्रकृतिको, उसके कार्यको, पुरुष (जीवात्मा) को और सनातन परमात्माको यथार्थ रूपसे जानता है, वह तृष्णासे रहित होकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है ।। ३७ ।।

प्रकाशं भगवानेतदृषिर्नारायणोऽमृतम् ।
भूतानामनुकम्पार्थं जगाद जगतो गतिः ।। ३८ ।।

संसारको शरण देनेवाले ऋषिश्रेष्ठ भगवान् नारायणने जीवोंपर दया करनेके लिये ही इस अमृतमय ज्ञानको प्रकाशित किया ।। ३८ ।।

यहां पर नारायण ऋषि कह रहे हैं कि प्रकृति और जीवात्मा __ दोनों अनादि और अनंत है । प्रकृति ब्रह्म के सकाश से सृष्टि करती है । यह प्रकृति का सहज स्वभाव है । प्रकृति और पुरुष से ही जगत की उत्पत्ति होती है । तथा जीवात्मा भी इन प्रकृति के गुणों से आवृत्त होता है ।

इस प्रकार ऋषि नारायण के अनुसार भी प्रकृति जगत का उपादान कारण है । जीव और ब्रह्म भी पृथक है ।

अपने उपदेश के अंत में ऋषि नारायण कहते हैं कि , प्रकृति , उसके कार्य _जगत , जीवात्मा और परमात्मा को जो यथार्थ रूप से जानता है __ वही मोक्ष प्राप्त करता है ।

इस प्रकार नारायण स्वयं त्रैतवाद का उपदेश कर रहे हैं और इसके ज्ञान

Edit with WPS Office

द्वारा ही मोक्ष को मान रहे हैं । तो आदि शंकराचार्य ने किस आधार पर अपना नवीन सिद्धांत चलाया ? किस आधार पर जीव और ब्रह्म का ऐक्य माना ? हमारे सारे आचार्य , नारायण , वशिष्ठ ,व्यास सभी पुरुष और प्रकृति के भेद को मानते थे । तब उसे न मानना आदि शंकराचार्य की व्यर्थ हठ ही मानी जा सकती है ।

महाभारत के शांति पर्व अध्याय 264 में स्वयं **महर्षि व्यास** त्रैतवाद का उपदेश कर रहे हैं ।

षट्चत्वारिंशदधिकद्विशततमोऽध्यायः

परमात्माकी श्रेष्ठता, उसके दर्शनका उपाय तथा इस ज्ञानमय उपदेशके पात्रका निर्णय

व्यास उवाच

प्रकृत्यास्तु विकारा ये क्षेत्रज्ञस्तैरधिष्ठितः ।
न चैनं ते प्रजानन्ति स तु जानाति तानपि ॥ १ ॥

व्यासजी कहते हैं—बेटा! देह, इन्द्रिय और मन आदि जो प्रकृतिके विकार हैं, वे क्षेत्रज्ञ (आत्मा) के ही आधारपर स्थित रहते हैं। वे जड होनेके कारण क्षेत्रज्ञको नहीं जानते; परंतु क्षेत्रज्ञ उन सबको जानता है ॥

तैश्चैवं कुरुते कार्यं मनःषष्ठैरिहेन्द्रियैः ।
सुदान्तैरिव संयन्ता दृढैः परमवाजिभिः ॥ २ ॥

जैसे चतुर सारथि अपने वशमें किये हुए बलवान् और उत्तम घोड़ोंसे अच्छी तरह काम लेता है, उसी प्रकार यहाँ क्षेत्रज्ञ भी अपने वशमें किये हुए मनसहित इन्द्रियोंके द्वारा सम्पूर्ण कार्य सिद्ध करता है ॥ २ ॥

इन्द्रियेभ्यः परे ह्यर्था अर्थेभ्यः परमं मनः ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः ॥ ३ ॥

इन्द्रियोंकी अपेक्षा उनके विषय बलवान् हैं, विषयोंसे मन बलवान् है, मनसे बुद्धि बलवान् है और बुद्धिसे जीवात्मा बलवान् है ॥ ३ ॥

महतः परमव्यक्तमव्यक्तात् परतोऽमृतम् ।
अमृतान्न परं किंचित् सा काष्ठा सा परा गतिः ॥ ४ ॥

जीवात्मासे बलवान् है अव्यक्त (मूल प्रकृति) और अव्यक्तसे बलवान् और श्रेष्ठ है अमृतस्वरूप परमात्मा। उस परमात्मासे बढ़कर श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। वही श्रेष्ठताकी चरम सीमा और परम गति है ॥ ४ ॥

Edit with WPS Office

श्लाघिने श्लाघनीयाय प्रशान्ताय तपस्विने ।। १८ ।।
इदं प्रियाय पुत्राय शिष्यायानुगताय च ।
रहस्यधर्मं वक्तव्यं नान्यस्मै तु कथंचन ।। १९ ।।

जो तत्त्वज्ञानकी अभिलाषा रखनेवाला, स्पृहणीय गुणोंसे युक्त, शान्तचित्त, तपस्वी एवं अनुगत शिष्य हो अथवा इन्हीं गुणोंसे युक्त प्रिय पुत्र हो, उसीको इस गूढ़ रहस्यमय धर्मका उपदेश देना चाहिये; दूसरे किसीको किसी प्रकार भी नहीं ।। १८-१९ ।।

यद्यप्यस्य महीं दद्याद् रत्नपूर्णामिमां नरः ।
इदमेव ततः श्रेय इति मन्येत तत्त्ववित् ।। २० ।।

यदि कोई मनुष्य रत्नोंसे भरी हुई यह सम्पूर्ण पृथ्वी देने लगे तो भी तत्त्ववेत्ता पुरुष यही समझे कि इस सारे धनकी अपेक्षा यह ज्ञान ही श्रेष्ठ है ।। २० ।।

अतो गुह्यतरार्थं तदध्यात्ममतिमानुषम् ।
यत् तन्महर्षिभिर्दृष्टं वेदान्तेषु च गीयते ।। २१ ।।
तत् तेरहं सम्प्रवक्ष्यामि यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।। २२ ।।

बेटा! तुम मुझसे जो प्रश्न कर रहे हो, उसके अनुसार मैं इससे भी गूढ़तर अर्थवाले अलौकिक अध्यात्मज्ञानका उपदेश करूँगा, जिसे महर्षियोंने प्रत्यक्ष अनुभव किया है और जिसका वेदान्तशास्त्र—उपनिषदोंमें गान किया गया है ।। २१-२२ ।।

यच्च ते मनसि वर्तते परं
यत्र चास्ति तव संशयः क्वचित् ।
श्रूयतामयमहं तवाग्रतः
पुत्र किं हि कथयामि ते पुनः ।। २३ ।।

पुत्र! तुम्हारे मनमें जो वस्तु सर्वश्रेष्ठ जान पड़ती हो तथा जिसके विषयमें तुम्हें कहीं संशय हो रहा हो, उसे पूछो और उसके उत्तरमें मैं जो कुछ तुम्हारे सामने कहूँ, उसे सुनो! बोलो, मैं फिर तुम्हें किस विषयका उपदेश करूँ ।। २३ ।।

महर्षि व्यास अनुसार जीवात्मा से अव्यक्त प्रकृति बलवान है । और प्रकृति से परमात्मा बलवान है । परमात्मा से बलवान कोई नहीं ।

तीनों तत्वों का तुलनात्मक अध्ययन करके महर्षि व्यास उनके मध्य में जो भेद है , वही बता रहे हैं । तथा श्लोक 21 में महर्षि व्यास उपसंहार करते हुए कह रहे हैं कि यह जो ज्ञान तुम्हें दिया है , वह ज्ञान वेदांत का है । इससे सिद्ध होता है की व्यास वेदांत में भी जीव , प्रकृति और परमात्मा के मध्य भेद स्वीकृत था ।

तो किस आधार पर शंकराचार्य ने इस भेद को कल्पित कहा ? क्या वह व्यास सिद्धांत को नहीं मानते थे ? यह प्रमाण से तो यही सिद्ध होता है कि शंकराचार्य का सिद्धांत महर्षि व्यास के वेदांत सिद्धांत के विरुद्ध ही था ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 114. आदि शंकराचार्य : वैदिक धर्म की पुनः स्थापना

शंकराचार्य का मूर्ति पूजा के विरुद्ध संघर्ष : महर्षि आदि शंकराचार्य ने शास्त्रार्थ के माध्यम से मूर्ति पूजा का खंडन करते हुए बौद्ध और जैन संप्रदायों को चुनौती दी । उनका उद्देश्य वैदिक धर्म की पुनः स्थापना करना था , जो बौद्ध और जैन मतों के प्रभाव से प्रभावित हो रहा था । आदि शंकराचार्य ने तर्क और वेदांत के सिद्धांतों के आधार पर मूर्ति पूजा की आलोचना की और इसे धर्म से मुक्त का प्रयास किया । महर्षि शंकराचार्य के काल तक , बौद्ध संप्रदाय कई शाखाओं में विभाजित हो चुका था और इसका वैभव क्षीण होने लगा था । जैन और बौद्ध अनुयायी शंकराचार्य के प्रभाव और उनके तर्कों के भय से अपनी मूर्तियों को जमीन में गाड़ने लगें , जिनके अवशेष आज भी हमें प्राप्त होते हैं । यह उस समय की धार्मिक और सामाजिक संघर्ष की स्थिति को दर्शाता है , जब मूर्तिपूजा को समाप्त करने का गंभीर प्रयास किया जा रहा था ।

वैदिक धर्म का पुनरुत्थान : प्रस्थानत्रयी की स्थापना : महर्षि शंकराचार्य ने वैदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए **उपनिषद , वेदांत दर्शन और भगवत गीता** को अपना आधार बनाया । उन्होंने इन तीन मुख्य ग्रंथों के आधार पर सनातन धर्म का व्यापक प्रचार किया , जो आज प्रस्थानत्रयी के

Edit with WPS Office

नाम से प्रसिद्ध है । इन ग्रंथो के माध्यम से उन्होंने सत्य , अद्वैत , और आत्मा के उच्चतम ज्ञान की व्याख्या की और धर्म को पुनः उस वैदिक स्वरूप में स्थापित करने का प्रयास किया , जिसमें बाहरी कर्मकांड और मूर्ति पूजा का स्थान नहीं था ।

शंकराचार्य की असमय मृत्यु और षड्यंत्र : ______

जब महर्षि स्वामी आदि शंकराचार्य जीवित थे , मूर्तिपूजा का पुनः स्थापित होना लगभग असंभव था । उन्होंने अपने ग्रंथ **" परापूजा "** में मूर्ति पूजा की कड़ी आलोचना की और इसे धर्म के मार्ग से भटकने वाला बताया । परन्तु उनके विरोधी और षड्यंत्रकारी इस संघर्ष को समाप्त करना चाहते हैं । अंततः षड्यंत्र के द्वारा उन्हें विष देकर मार दिया गया , तब उनकी उम्र केवल 32 वर्ष थी । महर्षि शंकराचार्य के देह त्याग के पश्चात , उन पर भी मिथकीय कहानियां बनाई गई और उन्हें शिव के अवतार के रूप में प्रचारित किया और साथ - साथ उनके बारे में कहा गया कि माता पार्वती ने उन्हें दर्शन दिए थे । यह एक विरोधाभासी स्थित है , क्योंकि उन्होंने स्वयं मूर्ति पूजा का खंडन किया था , और उनकी मृत्यु के पश्चात उन्हें शिव के अवतार के रूप में स्थापित करने का प्रयास हुआ ।

वेदांत दर्शन " **नैकस्मित्र सम्भवात** " । (2.2.33) का भाष्य करते हुए शंकराचार्य जी कहते हैं । " **नैकस्मिन धर्मिणि युगपत् सदसद्वादिवस्तुविपर्यसंसर्ग : संभवति शीतोष्णवत्** " **अर्थात** " एक वस्तु में एक ही समय में दो विरोधी गुण , जैसे सर्दी और गर्मी , एक साथ नहीं रह सकते । अर्थात **साकारता** और **निराकारता** , जो स्वभाव से परस्पर विरोधी है , एक साथ नहीं हो सकतें । इसका सीधा अर्थ यह है कि ईश्वर को साकार और निराकार एक साथ नहीं माना जा सकता । जैसे _ सर्दी और गर्मी एक साथ नहीं रह सकते , उसी तरह साकारता और निराकारता भी एक साथ ईश्वर में संभव नहीं है ।

महर्षि शंकराचार्य ने अल्प जीवन में ही वैदिक धर्म को पुनः स्थापित करने का महान कार्य किया । उन्होंने मूर्तिपूजा का विरोध करते हुए शुद्ध

Edit with WPS Office

वैदिक परंपराओं को पुनर्जीवित किया और अद्वैत वेदांत की शिक्षाओं का प्रचार किया । हालांकि , उनकी असमय मृत्यु के पश्चात , मूर्ति पूजा धीरे-धीरे फिर से समाज में प्रचलित हो गई , और उनके सिद्धांतों के विपरीत , उन्हें शिव के अवतार के रूप में स्थापित करने का प्रयास हुआ । यदि शंकराचार्य अधिक समय तक जीवित रहते , तो संभवतः भारतीय समाज में मूर्ति पूजा का प्रसार उस समय में नहीं हो पाता जैसा आज हम देखते हैं ।

आदि शंकराचार्य पर महर्षि दयानंद सरस्वती के विचार :

आदि शंकराचार्य सभी शास्त्रों के ज्ञाता चारों वेदों के विद्वान थे । उस समय की स्थिति को देखकर आदि शंकराचार्य ने बहुत अच्छा कार्य किया । जैन और बौद्ध संप्रदायों की लोगों में फैल रही नास्तिकता को उन्होंने जैन बौद्ध विद्वानों के साथ शास्त्रार्थ करके जैन बौद्ध के कुछ विद्वानों को अपने सनातन धर्म में पुनः वापसी की । अगर आदि शंकराचार्य जी वेद और सनातन के बारे में उद्घोष नहीं करते तो आज (आर्य) हिंदू पूर्ण रूप से नास्तिकता के घेरे में आ जाते , और अपने धर्म को छोड़ जैन और बौद्धों में मिल जाते । आगे महर्षि दयानंद आदि शंकराचार्य जी के बारे में लिखते हैं __ अगर उन्होंने नास्तिकता को रोकने के लिए जैन और बौद्ध की जीव और प्रकृति के सिद्धांत को खंडित करने के लिए केवल एक मात्र ब्रह्म की स्थापना की , अगर जैन और बौद्ध के विरोध में उन्होंने यह सिद्धांत अपनाया कि सब कुछ ब्रह्म ही है , जीव प्रकृति कुछ नहीं । तो इस नास्तिकता को रोकने के लिए कुछ हद तक सही है । अगर उनका स्वयं का अपना विचार सिद्धांत था , वेदों के अनुसार तो फिर सही नहीं है ? क्योंकि वेदों में तीनों की अलग - अलग सताएं है __ परमात्मा अलग सत्ता है , जीवात्मा अलग सत्ता है , प्रकृति अलग सत्ता है । तीनों अनादि तत्व है ।

मन में कुछ प्रश्न भी उभरते हैं , अद्वैतवादियों के पास भी इन प्रश्नों के उत्तर नहीं ? प्रश्न यह है आखिर आदि शंकराचार्य वेदों का विद्वान होने के बावजूद भी नारियों की भरपेट निंदा की है , शूद्रो से उनका विद्वान बनने का अधिकार छीन लिया , जो वेद विरुद्ध और मिथ्या बातें हैं । आदि शंकराचार्य को नारियों से इतनी नफरत क्यों ? आदि शंकराचार्य के प्रश्नोत्तर से हम कुछ

Edit with WPS Office

प्रश्न - उत्तर यहां लिखते हैं ______

प्रश्न _____ नरक का द्वारा क्या है ?

उत्तर _____ नारी ।

श्री शंकराचार्य ने अपनी इस छोटी सी प्रश्नोत्तरी में नारियों की भरपेट निंदा की है । यहां हम उनके नारी निंदा विषयक कुछ अन्य स्थल भी देते हैं ।

प्रश्न _____ मदिरा की भांति कौन सी वस्तु मोहित कर देती है ?

उत्तर _____ नारी ।

प्रश्न _____ प्राणियों के लिए सांकल क्या है ?

उत्तर _____ नारी ।

प्रश्न _____ विश्वास के योग्य कौन नहीं है ?

उत्तर _____ नारी ।

प्रश्न _____ वह कौन सा विष है जो अमृत - सा जान पड़ता है ?

उत्तर _____ नारी ।

इस प्रकार के और भी प्रसंग है । हमें आश्चर्य है कि श्री शंकराचार्य ने पानी पी _ पीकर स्त्रियों को क्यों कोसा है ? हे आचार्य महोदय ! स्त्रियों ने कभी आपके साथ कोई बुराई नहीं की , किसी ने आपको अपमानित नहीं किया फिर आपने मातृ शक्ति के प्रति इतना विषवमन क्यों किया ? जिस नारी ने आपका पालन और पोषण किया उसी नारी जाति का ऐसा अनादर एवं अपमान ! आश्चर्य ! महान आश्चर्य !!

योगेश्वर श्री कृष्ण से भी यह प्रश्न पूछा गया की नरक का द्वार क्या है तो उन्होंने कहा था ______ गीता. 16.21

हे अर्जुन ! काम , क्रोध , और लोभ __ ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा का नाश करने वाले हैं , अधोगति में ले __ जाने वाले हैं , इसलिए इन तीनों को त्याग देना चाहिए । कितना सुंदर उत्तर है ।

Edit with WPS Office

नारी नरक का द्वार नहीं है , नारी हेय और निन्दनीय नहीं है । हां , जो नारी की निंदा करते हैं वे अवश्य शोचनीय है । एक बात देवियों से भी कहनी है कि वे इस प्रकार की पुस्तकों को कभी न पढ़े जिनमें अनेक गौरव और मान मर्यादा पर प्रहार किया गया हो ।

वाह ! शंकराचार्य जी ! शूद्रो से उनका अधिकार कैसे छीन लिया ? आपने तो शूद्रों को जाति से मान लिया ? जबकि वेदों और सभी शास्त्रों ने कहा है , जो जो ऐसा करेगा जो जो स्वाध्याय करेगा वेद की रक्षा करेगा वह अपनी योग्यता अनुसार वर्ण मिलेगा आचार्य उसको वर्णन देता है । लेकिन आपने तो उनको अधिकार भी नहीं दिया पहले ही मना कर दिया । अगर शूद्र पढ़ाएं से भी ना पढ़े तब उनको शूद्र कहा गया है , लेकिन आपने बिना पढ़ाए ही उसको नीचा समझ लिया ? आपके ऐसे वाक्यों से आपको कौन विद्वान कहेगा ? वेद विरुद्ध बातें हैं , वेदों ने चारों वर्णों को अधिकार दिया है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 115.महत्वपूर्ण श्लोकों की व्याख्या

1. _____ चाणक्य नीति , 13.7

भावार्थ : राजा के धार्मिक होने पर प्रजा भी धार्मिक होती है , पापी होने से पापी , सम होने पर सम __ जैसा राजा वैसी प्रजा भी हो जाती है ।

2. _____ चाणक्य नीति , 13.14

भावार्थ : जैसे हजारों गौओं की विधमानता में बछड़ा अपनी माता के पास ही जाता है । वैसे ही जो कर्म किया जाता है वह कर्ता को ही प्राप्त होता है ।

3. _____ चाणक्य नीति , 16.5

भावार्थ : सोने का मृग न पहले किसी ने बनाया है , न किसी ने देखा और न ही किसी ने सुना है । फिर भी रामचंद्र जी उस पर ललचा गए । विनाश के समय बुद्धि उल्टी हो जाती है ।

4. _____ चाणक्य नीति , 16.20

भावार्थ : जो विद्या पुस्तकों में ही है और जो धन दूसरों के हाथ में है , काम पड़ने पर न वह विद्या और न ही वह धन काम आता है ।

5. _____ चाणक्य नीति , 17.2

Edit with WPS Office

भावार्थ : जो जैसा करें उसके साथ वैसा करना चाहिए , मारने पर मारना चाहिए , इसमें दोष नहीं होता । दुष्ट के साथ दुष्टता का आचरण करें ।

6. _____ चाणक्य नीति , 17.20

भावार्थ : हे बालें ! नीचे को क्या देखती हो , तुम्हारा पृथ्वी पर क्या गिर गया है । स्त्री बोली _ रे मूर्ख , तू नहीं जानता कि मेरा यौवन रूप मोती चला गया है ।

7. _____ गीता. 4.38

भावार्थ : इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र और कुछ भी नहीं है ।

8. _____ गीता. 18.61

भावार्थ : हे अर्जुन ! ईश्वर सब प्राणियों के हृदय में निवास करता है ।

9. _____ गीता. 2.27

भावार्थ : जो जन्म लेता है उसकी मृत्यु निश्चित है और जो मर चुका है उसका जन्म लेना निश्चित है ।

10. _____गीता. 2.22

भावार्थ : जैसे कोई व्यक्ति फटे पुराने कपड़ों को उतार देता है और दूसरे नए कपड़े पहन लेता है , उसी प्रकार यह आत्मा जीर्ण शीर्ण शरीर को त्याग कर अन्य नए शरीर को प्राप्त कर लेती हैं ।

11. _____ गीता. 2.23

भावार्थ : शस्त्र इस आत्मा को काट नहीं सकते , आग इसे जला नहीं सकती , पानी इसे गला नहीं सकता और वायु इसे सुखा नहीं सकतीं ।

12. _____ गीता. 3.21

भावार्थ : समाज में प्रतिष्ठित लोग जैसा आचरण करते हैं आम लोग भी वैसा ही आचरण करते हैं । वे जिसे सही कहते हैं लोग उसे स्वीकार करते हैं

Edit with WPS Office

।

13. _____ विदुर नीति. 3.40
भावार्थ : देव (भगवान) ग्वाले के समान हाथ में डंडा लेकर रक्षा नहीं करते । वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं उसको अच्छी बुद्धि दे देते हैं ।

14. _____ विदुर नीति. 3.58
भावार्थ : जहां सत्य नहीं वह धर्म नहीं , जिसमें छल हो वह सत्य नहीं ।

15. _____ विदुर नीति. 5.15
भावार्थ : हे राजन् ! संसार में प्यारी , चिकनी = चुपड़ी बातें करने वाले आदमी तो बड़ी सहजता से पाए जा सकते हैं । परंतु प्रिय न लगने वाले हितकारी वचनों को कहने वाले और ऐसे वचनों को सुनने वाले लोग मुश्किल से मिलते हैं ।

16. _____ भर्तृहरि , नीति शतक . 85
भावार्थ : नीतिवान् लोग चाहे निंदा करें या प्रशंसा करें , धन आए या जाए , मृत्यु अभी आ जाए या चिरकाल के बाद आए , धैर्यवान लोग न्याय के मार्ग से पीछे नहीं हटते ।

17. _____ मनुस्मृति. 12.106
भावार्थ : जो व्यक्ति तर्क के द्वारा खोज करता है वही धर्म के तत्व को समझ पाता है और कोई नहीं ।

18. _____ वैशेषिक दर्शन
भावार्थ : वेद का प्रत्येक वाक्य समझदारी से बना है ।

19. _____ शुक्र नीति. 1.88
भावार्थ : मनुष्यों को अपने किए कर्म का फल अवश्य ही भोगना पड़ता है । कोई कितना ही कर्मकांड करें कुछ भी होने वाला नहीं , बिना भोगे

Edit with WPS Office

छुटकारा नहीं ।

20. _____ महाभारत , शांति पर्व
भावार्थ : यह जीव दूसरों के पुण्य या पाप कर्मों के फल को नहीं भोगता । जैसा कर्म स्वयं करता है वैसा ही फल पाता है ।

21. _____ महाभारत
भावार्थ : धर्म का सार सुनो और सुनकर उसी के अनुसार आचरण करो । जो आचरण हमें अपने लिए पसंद नहीं वह आचरण दूसरों के साथ मत करो ।

22. _____ पंचतंत्र , काकोलूकीयम्. 24
भावार्थ : सत्य धर्म से रहित व्यक्ति से कभी संधि या समझौता नहीं करना चाहिए । भली भांति संधि कर लेने के बाद भी वह दुष्टता के कारण शीघ्र ही बिगड़ जाता है और समझौते से मुकर जाता है ।

23. _____ उपनिषद
भावार्थ : मन ही मनुष्यों के बंधन और मुक्ति का कारण है अर्थात सारा दुख _ सुख मन के कारण ही होता है ।

24. _____
सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं , झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं । सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं । इसलिए सत्य का आचरण करें ।

25. _____
धोखा देने वाले के साथ धोखा ही करें , मारने वाले को मारे ।

26. _____ विदुर नीति श्लोक 48
भावार्थ : छेदने और तपाने से सुवर्ण की पहचान होती है । सदाचार से भले मनुष्य की , बर्ताव से साधु = सज्जन की ,भय से शूरवीर की , अर्थ -

Edit with WPS Office

संकट में धीर की तथा घोर आपत्ति में मित्र और शत्रु की पहचान होती है ।

27. _____ विदुर नीति. श्लोक 49

भावार्थ : बुढ़ापा रूप सौंदर्य को नष्ट कर देता है , आशा धैर्य को समाप्त कर देती है , मृत्यु प्राणों को हर लेती है , असूया= डाह , निन्दा धर्माचरण पर पानी फेर देती है , क्रोध शोभा को नष्ट कर देता है , दुष्टों की संगति उत्तम स्वभाव को नष्ट कर देती है , विषय _ वासना की आंधी लज्जा के दीपक को बुझा देती है और अभिमान सारे गुणों पर चौका लगा देता है ।

28. _____ विदुर नीति. श्लोक 38

भावार्थ : जो व्यक्ति किसी प्रकार का संबंध न रखता हुआ भी मित्र भाव से व्यवहार करता है , वही वास्तव में बंधु होता है , वही मित्र होता है , वही आश्रय और वही सहारा होता है ।

29. _____ विदुर नीति श्लोक 39

भावार्थ : चंचल चित्तवाले , वृद्धो का सत्संग न करने वाले और अस्थिर मतिवाले मनुष्य के मित्रों का संग्रह सदा ही अस्थिर होता है , अर्थात जिन्हें आज वह मित्र समझता है , कल उन्हें ही शत्रु समझने लगता है ।

30. _____ विदुर नीति , अध्याय सप्तम ,श्लोक 65

भावार्थ : जो मनुष्य अधर्म से कमाये हुए धन से यज्ञ , दान आदि कर्मों को करता है कि इनसे परलोक में सुख मिलेगा , वह मरने के पश्चात उस यज्ञ , दान , आदि के शुभ फल को प्राप्त नहीं करता , क्योंकि वह धन अनुचित उपायों से कमाया गया था ।

31. _____ विदुर नीति , अष्टम अध्याय , श्लोक 22

भावार्थ : हे राजन् ! धैर्य रूपी नौका के द्वारा काम - क्रोध रूपी मगरमच्छोंवाली पांच इंद्रियोंरुपी जलवाली अथवा पांच इंद्रियों के पांच विषयोंरुपी जलवाली इस संसार रूपी नदी को , जीवन के संघर्षों अथवा जन्म मृत्यु रूपी भंवरों को तर जाओं ।

Edit with WPS Office

32. _____ **विदुर नीति , प्रथम अध्याय , श्लोक 47**

भावार्थ : मनुष्य को चाहिए कि औरों को खिलायें बिना अकेला स्वादिष्ट भोजन या पदार्थ न खायें । अकेला धन के विषय में विचार न करें अर्थात धनागम और व्यय आदि के संबंध में दूसरों से परामर्श अवश्य करें । अकेला यात्रा न करें , एक से दो भले ! और बहुत से लोग सोयें हुए हो तो उनमें अकेला जागता न रहे ।

33. _____ **विदुर नीति ,द्वितीय अध्याय , श्लोक 79**

भावार्थ : कर्णी , नालीक और नाराच नामक बाणों को शरीर से निकाला जा सकता है , परन्तु कटु वाणी रुपी कांटा नहीं निकाला जा सकता , क्योंकि वह ह्रदय के भीतर धंस जाता हैं ।

34. _____ **विदुर नीति. दूसरा अध्याय , श्लोक 80**

भावार्थ : कटु वचन रुपी बाण मुख से निकलकर दूसरों के मर्मस्थानों को छेद डालते हैं , जिनसे घायल हुआ मनुष्य रात - दिन दु:खी रहता है , अतः विद्वान दूसरों पर उन बाग्बाणों को न छोड़ें ।

विशेष : यहां विदुर जी यह संकेत कर रहे हैं कि तुम्हारे पुत्रों ने सभा में द्रौपदी को जो दुर्वचन कहे थे वे द्रोपती और पाण्डवों के हृदय में बैठ चुके हैं , अब जिसका परिणाम अब बहुत बुरा होगा ।

इसलिए हमें किसी के प्रति कटु वचन नहीं बोलने चाहिए ।

35. _____ **विदुर नीति. दूसरा अध्याय , श्लोक 70**

भावार्थ : पापाचारी दुष्टों का त्याग न करके उनके साथ मेल _ जोल रखने से निष्पाप धर्मात्माओं को भी उन पापियों के समान दण्ड प्राप्त होता हैं , जैसे __ सूखी लकड़ियां में मिल जाने से गीली लकड़ी भी जल जाती हैं , अतः दुष्टों के साथ कभी मेल - मिलाप नहीं करना चाहिए ।

36. _____ **विदुर नीति. दूसरा अध्याय , श्लोक 66**

भावार्थ : हे राजन् ! जैसे सूक्ष्म छेदवाले जाल में फंसी हुई दो बड़ी - बड़ी

Edit with WPS Office

मछलियां मिलकर उस जाल को काट डालती हैं , वैसे ही काम और क्रोध ___ ये दोनों मिलकर बुद्धि = विवेक को लुप्त कर देते हैं ।

37. _____ विदुर नीति. दुसरा अध्याय , श्लोक 67

भावार्थ : जो मनुष्य इस संसार में धर्म और अर्थ का भली भांति विचार करके विजय _ साधनों का संग्रह करता है , वह साधन _ संग्रह व्यक्ति निरन्तर सुख प्राप्त करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 116. वाल्मीकि रामायण से महत्वपूर्ण श्लोक

बालकाण्ड : ______ लाल हेडिंग में सर्ग और श्लोक संख्या है ।

1. जैसे नदियां समुद्र में पहुंचती हैं उसी प्रकार श्री राम के पास सदा सज्जनों का समागम रहता है । वे आर्य है , समदृष्टि है और सदा प्रियदर्शन है । ______ (1.16)
2. श्री राम गम्भीरता में समुद्र के समान , धैर्य में हिमालय के समान , प्रियदर्शन में चंद्रमा जैसे , क्षमा में पृथ्वी की भांति , सत्यभाषण में मानों दूसरे धर्म है । ______ (1.17-18)

Edit with WPS Office

3. श्रीराम के राज्यसिंहासन पर आरुढ होने पर महर्षि वाल्मीकि ने विचित्र पदों से युक्त इस सम्पूर्ण काव्य की रचना की। ______ (2.25)
4. श्री राम काम , क्रोध , और लोभ के वश में होकर भी कभी झूठ न बोलने वाले थे। ______ (5.6)
5. राजा दशरथ (विश्वामित्र से) __ आपके आगमन से मुझे वैसा ही हर्ष हुआ जैसा कि सूखी खेती को वर्षा से , अपुत्र को पुत्र होने से , खोई हुई वस्तु के मिलने से होता है। ______ (10.12 - 13)

अयोध्या काण्ड : ______ लाल हेडिंग में सर्ग और श्लोक संख्या है।

1. राजा दशरथ के राम को राजा बनाने के प्रस्ताव पर परिषद का अनुमोदन __ सब ने वैसी ही प्रसन्नता प्रकट की जैसे बरसते हुए बादल को देखकर मोर प्रसन्नता प्रकट करते हैं। ______ (2.9)
2. राजा दशरथ ने वशिष्ठ आदि महानुभावों से कहा __ इस श्रेष्ठ और पवित्र चैत्र मास में , जिसने वन पुष्पों से सुशोभित हो रहा है , राम के राज्याभिषेक के लिए तैयारी कीजिए। ______ (3.4)
3. श्रीराम प्रजा को सत्य से , दीनों को दान से , गुरुओं को सेवा से , और युद्ध में शत्रुओं को धनुष द्वारा जीतते थे। (11.16)
4. राजा दशरथ (कैकैयी से) __ कौशल्या जो सेवा करने में दासी के समान , रहस्य में सुखी के समान , धर्म कार्यों में स्त्री के समान , हितैषियों में बहिन के समान , आग्रहपूर्वक स्वादु भोजन कराने में माता के समान , सदा प्रिय कामना करने वाली , सदा प्रिय बोलने वाली , जब समय-समय पर उपस्थित होती रही तब तब हे देवि ! सत्कार करने योग्य होने पर भी मैंने तेरे कारण उसका सत्कार नहीं किया। ______ (11.39 - 40)
5. राजा दशरथ (कैकेयी से) __ तेरे प्रति मैंने जो सद्व्यवहार किया था , उसका आज मुझे उसी प्रकार पश्चाताप हो रहा है जिस प्रकार स्वादिष्ट किंतु कुपथ्य भोजन करके रोगी को पश्चाताप होता है। ______ (11.41)
6. राजा दशरथ (कैकेयी से) __ श्रेष्ठ लोग (आर्य) मुझे अनार्य और पुत्र

Edit with WPS Office

_विक्रेता कहकर उसी प्रकार धिक्कारेगें जिस प्रकार शराब पीने वाले ब्राह्मण को लोग गली - कूचों से धिक्कारते है । ______ (11.42)

7. कैकेयी द्वारा प्रेषित चाबुक से आहत घोड़े की भांति राम वन जाने के लिए शीघ्रता करने लगे । ______ (16.11)

8. सदा माता को प्रसन्न करने वाले पुत्र को चिरकाल पक्ष आया देखकर माता कौशल्या प्रसन्न होकर राम की और इस प्रकार दौड़ी जिस प्रकार गाय अपने बछड़े को देख कर उसकी और दौड़ती है । ______ (17.2)

9. राम के वचनों को सुनकर देवी कौशल्या कुल्हाड़े से कटी साल वृक्ष की डाली की भांति एक दम भूमि पर गिर पड़ी __ मानों आकाश से कोई तारा गिर गया हो ।

10. वन जाने के बात पर लक्ष्मण (राम से) __ जिस प्रकार सूर्य अपने प्रकाश से अंधकार को मिटा देता है उसी प्रकार में अपने पराक्रम से आपके सारे कष्टों को अभी नष्ट कर देता हूं । ______ (18.15)

11. वन जाने की बात पर राम (लक्ष्मण से) __ लोक में धर्म ही परम पुरुषार्थ है । धर्म से ही सत्य प्रतिष्ठित है । ______ (19.6)

12. राम लक्ष्मण से __ मेरे वनवास और पिता प्रदत राज्य के छिन जाने में भाग्य को ही कारण समझो । इसमें किसी का कुछ वश नहीं । यदि भाग्य मेरे विपरीत न होता तो मुझे पीड़ा देने हेतु कैकेयी की बुद्धि ऐसी न होती । ______ (20.4.5)

13. राम लक्ष्मण से __ दैव (भाग्य) से कौन युद्ध कर सकता है क्योंकि दैव का प्रत्यक्ष कर्म फल __ भोग के रूप में ही होता है और किसी रूप में नहीं । ______ (20.6)

14. राम लक्ष्मण से __ जिस कार्य को करने का कभी विचार भी न किया हो और वह अकस्मात् हो जाएं तथा प्रयत्न द्वारा आरंभ किया हुआ कार्य अनायास रुक जाए __ इसी को दैव कहते हैं । ______ (20.9)

15. राम कौशल्या से __ पति का परित्याग करना स्त्री के लिए सबसे बड़ी क्रूरता हैं । ______ (21.9)

16. राम सीता से __ देखना तुम भरत के सामने मेरी प्रशंसा कभी मत

Edit with WPS Office

करना क्योंकि ऐश्वर्य संपन्न पुरुष अन्य की प्रशंसा सहन नहीं कर सकता । ______ (22.8)

17. राम सीता से __ मैं तुम्हें उसी प्रकार नहीं छोड़ सकता जैसे चरित्रवान मनुष्य अपनी कीर्ति को नहीं छोड़ सकता । ______ (25.27)
18. दशरथ राम से __ हे राम ! कैकेयी ने वरदान के द्वारा मुझे धोखा दिया है । अतः तुम मुझे बंदी बनाकर बलपूर्वक अयोध्या का राजा बनों । ______ (28.22)
19. राम दशरथ से __ राजन् ! आप अनेक वर्ष तक पृथ्वी का पालन करें । मैं आपको झूठा नहीं बनाना चाहता । मैं अवश्य वन में वास करूंगा । ______ (28.24)
20. दशरथ राम से __ हे वत्स ! मैं सत्य की शपथ लेकर कहता हूं कि तुम्हारा वन जाना मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं है । परंतु क्या करूं मैं भस्म में छिपी हुई अग्नि की भांति भयंकर एवं कुटिल अभिप्राय वाली कैकेयी की चाल में फस गया हूं । ______ (28.31)
21. सुमंत्र कैकेयी से __ कैकेयी ! तू अपने पति का तिरस्कार मत कर । स्त्रियों के लिए पति की इच्छा के अनुसार चलना करोड़ों पुत्रों के स्नेह से भी बढ़कर है । ______ (29.3)
22. सुमन्त्र कैकेयी से __ नीम से कभी मधु नहीं चूता __ यह लोकोक्ति ठीक ही है । यही कारण है जैसी तेरी माता थी वैसे ही तू भी निकाली । ______ (29.8)
23. सुमन्त्र कैकेयी से __ यह लोक प्रवाद मुझे ठीक ही प्रतीत होता है कि पुत्र पिता के स्वभाव वाले और पुत्रियां माता के स्वभाव वाली होती है । ______ (29.9)
24. दशरथ का विलाप __ प्रतीत होता है कि मैं पूर्व जन्म में बहुत सी गायों को उनके बछड़ों से अलग कर दिया अथवा बहुत से प्राणियों का वध किया था , इसलिए मेरे ऊपर यह दुख आ पड़ा है । ______ (32.10)
25. कौशल्या सीता से __ जो स्त्रियां पति द्वारा सदैव संस्कृति और सम्मानित होने पर भी विपत्ति काल में पति का आदर सम्मान नहीं करती वे स्त्रियां कुलटा कहलाती हैं । ______ (32.21)

Edit with WPS Office

26. कौशल्या सीता से __ कुलटा स्त्रियां असत्य बोलने वाली तथा विकृत विचार वाली होती हैं । उनके मन की बात बड़ी कठिनाई से जानी जाती है । वे हृदय शून्य होती है । उनके संकल्प पापपूर्ण होते हैं । वे क्षणमात्र में अपने पतियों को त्याग देती हैं । ______ (32.23)

27. कौशल्या सीता से __ उत्तम कुल , किया हुआ उपकार , धर्म _ विधा , वस्त्राभूषणों का दान वैवाहिक बंधन _ कोई भी बात इन कुलटा स्त्रियों के मन को वश में नहीं कर सकती क्योंकि वे चंचलहृदय होती है । ______ (32.24)

28. कौशल्या सीता से __ मेरे पुत्र राम का कभी अपमान मत करना । वह चाहे धनी है या निर्धन , तेरे लिए तो देवता के समान पूज्य एवं मान्य है । _____ (32.26)

29. सीता कौशल्या से __ हे आर्यो ! आप असती स्त्रियों से मेरी तुलना न करें । जैसे चंद्रमा की ज्योतिसना चंद्रमा से पृथक नहीं हो सकती , उसी प्रकार में भी धर्म से कभी विचलित नहीं हो सकती । ______ (32.29)

30. सीता कौशल्या से __ जैसे बिना तार के वीणा नहीं बजती , बिना पहिए का रथ नहीं चलता , उसी प्रकार बिना पति के स्त्री भी सुख नहीं पाती चाहे वह सौ पुत्रों वाली ही क्यों न हो । ______ (32.20)

31. सीता कौशल्या से __ पिता , माता तथा पुत्र __ ये सब परिमित सुख के देने वाले हैं , परंतु पति अमित सुख का देने वाला है । अतः ऐसी कौन अभागी स्त्री होगी जो पति का आदर सम्मान न करेंगी । ______ (32.31)

32. जब राम वन को जाने लगे __ अयोध्या के सभी बालक और बूढ़े व्याकुल हो राम के रथ के पीछे वैसे ही दौड़ने लगे जैसे धूप से सन्तप्त व्यक्ति पानी की ओर दौड़ता है । ______ (33.14)

33. जब राम वन को जाने लगे , वे लोग राम को उत्कंठापूर्वक उसी प्रकार देखते हैं , जैसे प्यासा पानी की ओर देखता है । ______ (35.4)

34. राम के वन चले जाने पर चंद्रमा रहित आकाश अथवा जलविहीन समुद्र की भांति आनन्दहीन अयोध्या को देखकर वे लोग खिन्न हो गए । ______ (37.12)

Edit with WPS Office

35. महाराज दशरथ मृत्यु शैय्या पर पड़े हुए कौशल्या से बोलें __ हे कल्याणी ! मनुष्य अच्छा या बुरा जैसा भी कर्म करता है , उस कर्म का फल कर्ता को अवश्य मिलता है । ______ (48.3)
36. दशरथ कौशल्या से __ (श्रवण कुमार वध को याद करके) __ हे देवि ! स्वंय किया हुआ मेरा पाप दुःख के रूप में मुझे इस प्रकार प्राप्त हो रहा है जिस प्रकार अज्ञानवश विष खाकर बालक कष्ट उठाता है । ______ (48.7)
37. अनेक कठोर वाक्यों द्वारा कौशल्या ने जब निष्पाप भरत को फटकारा तब भरत को ऐसा दुःख हुआ जैसा घाव में सुई चुभोने से होता है । ______ (58.13)
38. वन में राम भरत से __ जिस प्रकार स्त्रियां परस्त्रीगामी पतित पुरुष का तिरस्कार करती है , उसी प्रकार कहीं अधिक कर लेने से प्रजा तुम्हारा अनादर तो नहीं करती । ______ (70.18)
39. वन में राम भरत से __ भोजन और वेतन ठीक समय पर न मिलने से नौकर लोग क्रुद्ध होते हैं , और स्वामी के निंदा करते हैं । ______ (70.23)
40. वन में राम का भरत को उपदेश __ हे भरत ! अपने सुख-दुख भोग में मनुष्य स्वतंत्र नहीं , परतंत्र है । कर्मों का यथायोग्य फल देने के लिए परमात्मा उसे इधर से उधर खींचता हुआ बहुत नाच नचाया करता है । ______ (74.8)
41. राम का उपदेश __ जैसे महासमुद्र मैं लहरों के द्वारा एक काठ दूसरे काठ के साथ मिल जाता हैं और फिर समय प्रकार अलग-अलग हो जाते हैं , वैसे ही स्त्री , पुत्र , भाई - बन्धु , धन - संपत्ति समय से प्राप्त होते हैं । फिर इनका वियोग भी हो जाता है क्योंकि इनका वियोग होना निश्चित है । ______ (74.19 -20)
42. राम का उपदेश __ ऋषि और विद्वान लोग सत्य को ही उत्कृष्ट मानते हैं क्योंकि सत्यवादी पुरुष ही संसार में अक्षय सुख को पाता है । ______ (77.19)
43. राम का उपदेश __ मिथ्यावादी पुरुष से लोग वैसे ही डरते हैं जैसे सांप से । ______ (77.20)

Edit with WPS Office

अरण्य काण्ड : लाल हेडिंग में सर्ग और श्लोक संख्या है ।

1. वन में राम का खर को उपदेश __ जैसे ऋतु के आने पर वृक्ष स्वयं फूल देने लगते हैं , ठीक उसी प्रकार समय आने पर जीवों को उनके लिए पाप कर्मों का घोर फल अवश्य प्राप्त होता हैं । ______ (19.8)
2. सीताहरण के पश्चात श्रीराम के वियोग में विलाप करते हुए कहते हैं __ हे लक्ष्मण ! मैं समझता हूं इस सारी भूमि पर मेरे समान बुरे काम करने वाला पापी पुरुष और कोई नहीं है , क्योंकि एक के पश्चात एक दु:खों की परम्परा मेरे हृदय और मन को चीर रही है । पूर्व जन्म में निश्चय ही मैंने एक के पश्चात एक बहुत से पाप किए हैं । उन्हीं पापों का फल आज मुझे मिल रहा है । राज्य हाथ से छिन गया , अपने लोगों से वियोग हो ऊ , पिता जी परलोक सिधार गए , माता जी से बिछोडा हो गया । इन घटनाओं को याद करके मेरा हृदय शोक से भर जाता हैं । हे लक्ष्मण , ये सारे दु:ख इस रमणीक वन में आने पर शान्त हो गए थे , परन्तु आज सीता के वियोग से वे सभी भूले हुए दुख उसी प्रकार फिर से ताजा हो गए हैं जैसे लकड़ी डालने से आग जल उठती हैं । ______ (35. 17 ,18 , 19 , 20)

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

117.वेदों के महत्वपूर्ण उपदेश

Edit with WPS Office

ऋग्वेद : ______

1. ऋग्वेद. 10/117/2

भावार्थ : जो व्यक्ति धनवान होते हुए भी दुर्बल को , गरीब को , अन्न मांगने वाले को और द्वार पर आएं हुए भिखारी को नहीं देता और उसके सामने स्वयं खानें बैठ जाता है , वह इस बात को निश्चय रुप से जान ले कि आवश्यकता पड़ने पर उसे भी सुख देने वाला कोई नहीं मिलता ।

2. ऋग्वेद. 10/115/5

भावार्थ : धनवान को चाहिए कि वह मांगने वाले को अवश्य ही दे । उसे दूरदृष्टि रखनी चाहिए । हो सकता है कि कभी उसे भी दूसरों के सामने हाथ पसारना पड़े , क्योंकि धन रथ के पहिए की तरह घूमता रहता है , एक से दूसरे के पास जाता रहता है ।

3. ऋग्वेद. 10/117/6

भावार्थ : हृदयहीन व्यक्ति केपास अन्न - धन का आना व्यर्थ ही है । सच कहता हूं ___ वह धन उसका नाश करने के लिए ही उसके पास आया है क्योंकि वह न तो सज्जनों का पोषण करता है और न ही अपने साथी की सहायता करता है । ऐसा अकेला खाने वाला व्यक्ति (आदमी) केवल पाप ही करता है ।

4. ऋग्वेद. 10/137/1

भावार्थ : विद्वानों ! जो नीचे गिर गया है उसे तुम ऊपर उठाओ । जो व्यक्ति अपराध करके उसका दुष्फल भोग रहा है , मरे हुए के समान हो गया है उसे फिर जीवन प्रदान करो ।

5. ऋग्वेद. 10/22/8

भावार्थ : जो निष्कमे , अविचारशील पापव्रती , मानवता के शत्रु दस्यु लोग हैं , उनके अत्याचार को , हे शत्रुहन्ता ! तू मत पनपने दें ।

संसार को बनाने वाला तथा पालने वाला ईश्वर सर्वज्ञ है , सर्व व्यापक

Edit with WPS Office

है , सर्वान्तयामी है , सर्वशक्तिमान है , और न्यायकारी है । वह हमारे सब कार्यों को देखता है और जानता है । संसार में रहते हुए जितना भला हम दूसरों का करते हैं , परमात्मा की व्यवस्था से उतना ही सुख हमें प्राप्त होता है और जितना बुरा हम दूसरों का करते हैं उतना ही दुख हमें मिलता है । इसलिए सुख की इच्छा रखने वाले प्रत्येक मनुष्य को दूसरों का भला जितना हो सके , करना चाहिए , बुरा किसी का भी नहीं करना चाहिए ।

6. ऋग्वेद में पासों से खेले जाने वाले जूए को आधार मानकर ही लिखा गया है । **ऋग्वेद. (10.34.1)** के अनुसार जूए के पासे बहेडे के वृक्ष की लकड़ी से बने होते हैं ।

7. ऋग्वेद. 10/34/3

भावार्थ : जूआ खेलने वाले पुरुष की सास उससे द्वेष करती है और उसकी पत्नी उसे छोड़ देती है । भिखारी बनकर वह किसी से कुछ मांगता है , पर कोई भी उसे धन नहीं देता । जैसे बूढ़े घोड़े का कोई मूल्य नहीं डालता ऐसे ही जुआरी मनुष्य भी सुख और आदर नहीं पाता ।

8. ऋग्वेद. 10/34/5

भावार्थ : जब भी मैं मन से निश्चय करता हूं कि अब मैं इन पासों से नहीं खेलूंगा , फेंकें जाने वाले ये लाल - पीले पासे मुझे बुलाते हैं और मैं जहां ये खेले जाते हैं वहां पहुंच जाता हूं जैसे पुरुष वेश्या के कोठे पर चला जाता है ।

9. ऋग्वेद. 10/34/7

भावार्थ : पराजित होने पर ये पासे अंकुश के समान चुभते हैं , बाण की तरह छेदते है , छुरे के समान काटते हैं और परिवार जनों को दुख देते हैं । जीतने पर जुआरी के लिए ये पासे पुत्र - जन्म के समान आनंददायक होते हैं । और हारने पर उसका नाश ही कर देते हैं ।

10. ऋग्वेद. 10/34/9

Edit with WPS Office

भावार्थ : इन पासों के बेशक हाथ नहीं है , पर ये हाथ वाले जुआरी को हरा देते हैं । ये पासे ठंडे होने पर भी जुआरियों के हृदय को हारने के डर के कारण जलाते हैं ।

11. ऋग्वेद. 10/34/10

भावार्थ : हारे हुए जुआरी की पत्नी निर्धनता से दुखी होती है और उसकी माता भी परेशान होती है । ऋणी होने पर जुआरी दूसरों के धन पर कुदृष्टि रखता है ।

12. ऋग्वेद. 10/34/13

भावार्थ : हे जुआरी ! तू जूआ मत खेल , खेती कर , खेती से कमाए हुए धन में संतोष करके आनंदपूर्वक रह , उससे गाय आदि पुश प्राप्त कर तथा अपनी पत्नी आदि परिवार का पालनपोषण कर । परमात्मा का यही आदेश है ।

13. ऋग्वेद. 1/164/27

भावार्थ : जैसे पृथ्वी महान ऐश्वर्य को बढ़ाती है अर्थात सब प्रकार की सुख सामग्री प्रदान करती है वैसे गौएं अत्यंत सुख देती है । इसलिए गौओं को कभी भी मारना नहीं चाहिए ।

14. ऋग्वेद. 8/101/15

भावार्थ : गाय दूध रूपी अमृत से माता की तरह हमारा पालन करती है , पुत्री और बहन की तरह स्नेह करती है । इसलिए गाय पूज्य हैं और वध के योग्य नहीं है । जो गाय को मारता है वह पाप और अपराध करता है । गाय की हर प्रकार से रक्षा की जाए ।

15. ऋग्वेद. 8/33/19

भावार्थ : हे स्त्री ! तू नीचे की ओर देख , ऊपर की ओर तांक - झांक मत कर । अच्छी तरह संभल कर अपने पैरों को चला । तेरे स्तन दिखाई न दे । स्त्री मनुष्य समाज को रचने वाली है ।

Edit with WPS Office

16. ऋग्वेद. 5/51/15

भावार्थ : हम सूर्य और चंद्र की तरह कल्याणकारी मार्ग पर चलते रहे और दानशील , वैर भाव रहित विद्वान मनुष्यों की संगति करते रहे ।

17. ऋग्वेद. 10/85/46

भावार्थ : हे वधू ! मेरे पिता जो तेरे ससुर है उनसे प्रेम पूर्वक व्यवहार करके तू रानी की तरह रह , मेरी माता जो तेरी सांस है उससे प्रेम पूर्वक वर्तकर तू रानी बनकर रह , अपनी ननदों और देवरों (मेरे छोटे बड़े भाई) के साथ भी प्रेम पूर्वक व्यवहार करके तू रानी की तरह रह ।

18. ऋग्वेद. 7/86/6

भावार्थ : मनुष्य केवल अपनी इच्छा से ही पाप कर्म नहीं करता , अपितु कुछ और कारण भी है जिनके कारण मनुष्य पाप कर्म कर बैठता है । शराब पीना , अत्यधिक क्रोध करना , जुआ खेलना , अज्ञान , असावधानी , बड़ो द्वारा छोटों को पाप कर्म करने का आदेश देना , स्वप्न , आलस्य __ इनके कारण भी मनुष्य पाप कर्म करता है ।

यजुर्वेद : ______

राष्ट्रीय प्रार्थना :

19. यजुर्वेद. 22/22

भावार्थ : हे सबसे महान प्रभु ! आपसे प्रार्थना है कि हमारे देश में सब सत्य विधाओं के ज्ञाता विद्वान हो जिनके पुरुषार्थ से अविधा का नाश और विद्या की वृद्धि होती रहे । राष्ट्र के शत्रुओं को मारने में समर्थ शूरवीर क्षत्रिय उत्पन्न हो । दूध , घी , अन्न , सब्जियों और फलों की देश में भरमार हो । बैल , घोड़ा , गाड़ी आदि की सुविधाएं सदा बनी रहे । राष्ट्र की महिलाएं संतान के धारण तथा पालन पोषण में समर्थ रहे । जब जब आवश्यकता हो , वर्षा हुआ करें । अतिवृष्टि (वर्षा का बहुत अधिक हो जाना) और अनावृष्टि

Edit with WPS Office

(वर्षा बिल्कुल न होना) कभी न हो । देशवासियों का सदा कल्याण हो । सभी आनंद से रहे । कोई भूखा , प्यासा , नंगा , और दरिद्र न रहे । देश से अज्ञान , अन्याय और अभाव का नाश हो ।

20. यजुर्वेद. 1/5

भावार्थ : हे ज्ञान स्वरूप , सब व्रतों के पालक प्रभु ! मैं यह व्रत करता हूं कि असत्य आचरण को छोड़कर सत्य का आचरण अपनाऊं । आपकी कृपा से मेरा यह व्रत पूर्ण हो , सफल हो ।

21. यजुर्वेद. 40/1

भावार्थ : इस गतिशील संसार में जो कुछ भी है वह सब परमेश्वर द्वारा आच्छादित है , अर्थात परमेश्वर ही उस सब का स्वामी है । इसलिए भोगों को यह जानकर भोग की ये तुम्हारे नहीं है । किसी दूसरे के धन के प्रति लालच मत कर ।

22. यजुर्वेद. 29/43

भावार्थ : रथ पर बैठा हुआ अच्छा चालक आगे दौड़ने वाले घोड़ो को जहां-जहां चाहता है , वहां वहां ले जाता है । पीछे लगी रस्सियां घोड़ों को चलाती है । ऐसे ही मन इंद्रियों को चलाता है । मन की वृत्तियों को जानो ।

23. यजुर्वेद. 3/33

भावार्थ : वे ही निश्चित रूप से ईश्वर के पुत्र हैं जो मनुष्य समाज के जीवन के लिए निरंतर ज्ञान का प्रकाश फैलाते हैं ।

24. यजुर्वेद. 40/3

भावार्थ : जो लोग अपनी आत्मा का हनन करते हैं , अर्थात मन में और वाणी में कुछ और तथा कर्म में और कुछ करते हैं । वे राक्षस है , अज्ञान अंधकार में फंसे हैं । मरने के पश्चात भी वे गहरे अंधकारमय जीवन को पाते हैं ।

Edit with WPS Office

25. यजुर्वेद. 3/1

भावार्थ : लकड़ी में अग्नि लगाकर जलाओ , फिर घी डालकर उसे तेज करो । उस अग्नि में अनेक औषधियां डालकर जलाओ ।

26. यजुर्वेद. 34/3

भावार्थ : जो मन ज्ञान प्राप्त करने का साधन है , स्मरण करने का और स्मरण रखने का साधन है , सब प्राणियों के अंदर विद्यमान है , नष्ट न होने वाला है , अंदर प्रकाश करने वाला है , जिसके बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता , वह मेरा मन शुभ विचारों वाला हो ।

27. यजुर्वेद. 40/8

भावार्थ : वह परमात्मा सर्वत्र व्यापक है । वह शीघ्रकारी है । उसका कोई शरीर नहीं है । वह छिंद्र रहित है तथा उसके टुकड़े नहीं हो सकते । वह नस नाडी आदि के बंधन से रहित है । अविधा आदि दोष न होने से वह सदा पवित्र है । वह कभी भी पाप कर्म नहीं करता । वह सर्वज्ञ हैं । सब जीवों की मनोवृत्तियां को वह जानता है । वह दुष्ट पापियों का तिरस्कार करने वाला है । वह परमात्मा अनादि स्वरूप वाला है , उसको कोई बनाने वाला नहीं है , उसके माता-पिता नहीं है । उसका गर्भवास , जन्म , मृत्यु आदि नहीं होते । वह परमात्मा सदा से प्रजा के लिए वेद के द्वारा सब पदार्थों का अच्छी तरह से उपदेश करता है ।

28. यजुर्वेद. 36/3

भावार्थ : ईश्वर सारे संसार का जीवनाधार है , दुखों को दूर करने वाला है , आनंद देने वाला है , समस्त जगत का उत्पादक है , ग्रहण करने योग्य है , शुद्ध स्वरूप है , उत्तम गुणों का प्रदाता है । वह ईश्वर हमारी बुद्धियों को उत्तम कार्यों की ओर प्रेरित करें ।

29. यजुर्वेद. 32/14

भावार्थ : जिस परमबुद्धि को विद्वान लोग और पहले हुए सज्जन प्राप्त करते व चाहते हैं , हे ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! उस परम प्रज्ञा से मुझको

Edit with WPS Office

मेधावान् करो ।

30. यजुर्वेद. 5/36

भावार्थ : हे सब शुभ कर्मों को जानने वाले ज्ञान स्वरूप परमेश्वर ! धन , ऐश्वर्य , प्राप्त करने के लिए हमें उत्तम मार्ग से ले चल , हमसे कुटिल पाप को दूर कर । आपके लिए हम बहुत ही आदरसूचक वचनों का प्रयोग करें ।

31. यजुर्वेद. 36/17

भावार्थ : प्रकाशक लोक , अप्रकाशक लोक , पृथ्वी , जल , औषधियां , वनस्पतियां , समस्त देव शांति देने वाले हो । ईश्वर हमें शांति दे , सभी पदार्थ शांतिप्रद हो । शांति भी शांति दायक हो , वह शांति मुझे प्राप्त हो ।

32. यजुर्वेद. 36/18

भावार्थ : हे सब दुखों और अज्ञानों के निवारक प्रभु ! मुझे दृढ़ कर । मुझे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से देखें और मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं । हम सब एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखें ।

33. यजुर्वेद. 20/25

भावार्थ : जहां पर आध्यात्मिक ज्ञानी और बल युक्त शूरवीर दोनों साथ-साथ मिलकर चलते हैं और जहां पर व्यवहार कुशल विद्वान लोग तेज के साथ कार्य करते हैं , उस राष्ट्र को पाप रहित सुखी समझता हूं ।

34. यजुर्वेद. 31/18

भावार्थ : इस ब्रह्मांड में व्यापक परमेश्वर को मैं जानता हूं , जो सबसे बड़ा है , महान ज्ञानी है और अज्ञान से रहित है । उस ईश्वर को जानकर ही मनुष्य मृत्यु से छूटता है । जन्म - मरण के चक्कर से बचने का कोई और मार्ग नहीं है ।

35. यजुर्वेद.3/60

भावार्थ : हे सारे संसार को सुगंधी व पुष्टि देने वाले प्रभु ! जैसे पककर

Edit with WPS Office

खरबूजा बैल से अलग हो जाता है , ऐसे ही मुझे मृत्यु के बंधन से छुड़ाकर अमृत (मोक्ष) का पान कराओ ।

36. यजुर्वेद. 30/3

भावार्थ : हे सर्व उत्पादक परमेश्वर ! समस्त बुराइयों को हमसे दूर कीजिए और जो कल्याणकारी उत्तम गुण - कर्म - स्वभाव है , उन्हें हमें प्राप्त कराईएं ।

अथर्ववेद : ______

37. अथर्ववेद. 3/30/2

भावार्थ : अथर्ववेद. पुत्र पिता के उत्तम कार्यों को आगे बढ़ाने वाला हो , वह माता की प्रति आदर और प्रेम रखने वाला हो । पत्नी पति के साथ मीठी और शांति देने वाली वाणी बोले ।

38. अथर्ववेद. 3/30/3

भावार्थ : भाई भाई से द्वेष न करें , बहिन बहिन से द्वेष न करें । सभी एक विचार वाले और एक लक्ष्य वाले होकर आपस में एक दूसरे के साथ कल्याणकारी वाणी बोले ।

39. अथर्ववेद. 14/1/31

भावार्थ : पति-पत्नी दोनों एक दूसरे के साथ सत्य का व्यवहार करते हुए खूब धन कमाए । पत्नी के मन में पति के प्रति रुचि हो और पति-पत्नी के साथ सुंदर और मधुर वाणी बोले ।

40. अथर्ववेद. 14/2/64

भावार्थ : तुम दोनों पति-पत्नी चकवा - चकवी की तरह प्रेमपूर्वक रहो । तुम्हें संतान प्राप्त हो । सुंदर घर में रहते हुए तुम गृहस्थाश्रम की सारी आयु का उपभोग करो ।

Edit with WPS Office

41. अथर्ववेद. 7/36/1

भावार्थ : पत्नी (पति से) __ हम दोनों आपस में ऐसे प्रेम से रहे कि हम दोनों की आंखों से मिठास टपकती हो , हम दोनों का मुख एक - दूसरे को देखकर खिल उठता हो । हे प्यारे पति ! तू मुझे अपने हृदय में स्थान दें , हम दोनों का मन सदा मिला रहे ।

42. अथर्ववेद. 6/9/2

भावार्थ : पति (पत्नी से) __ हे प्यारी पत्नी ! मैं तुझे अपनी भुजाओं में लेता हूं और अपने हृदय में स्थान देता हूं । तू मेरे कार्यों में सहयोग दें और मेरे मन में स्थान प्राप्त कर ।

43. अथर्ववेद. 14/1/22

भावार्थ : हे वर - वधू ! तुम दोनों इस गृहस्थ आश्रम में रहो , कभी अलग मत होवों पुत्रों और नातियों के साथ खेलते हुए , प्रसन्नता पूर्वक अपने घर में रहते हुए अपनी सारी आयु को अच्छे प्रकार से भोगों ।

44. अथर्ववेद. 10/8/32

भावार्थ : ईश्वर हम सब के अंदर विद्यमान है । कोई भी प्राणी उससे कभी भी अलग नहीं हो सकता और न ही उसे आंखों से देख सकता । ऐ मनुष्य ! उसे जानने के लिए तू वेदों में दिए उसके ज्ञान को प्राप्त कर जो न कभी मरता है और न ही कभी पुराना होता है ।

45. अथर्ववेद. 4/16/2

भावार्थ : चाहे कोई मनुष्य ठहरा हुआ है या चल रहा है , चाहे कोई किसी को ठग रहा है , चाहे कोई किसी के पीछे छिप कर षड्यंत्र रच रहा है , बेशक कोई दो मनुष्य कही एकांत में किसी विषय पर गुप्त चर्चा कर रहे हैं , सर्वव्यापक सर्वांतर्यामी परमेश्वर तीसरा वहां उपस्थित रहता हुआ सब कुछ जान लेता है ।

46. अथर्ववेद. 12/3/48

Edit with WPS Office

भावार्थ : अच्छे , बुरे कर्म के फल में किसी भी क्रिया कांड से कोई कमी नहीं आती , न किसी की सिफारिश चलती है और न ही कोई मित्र , साथी या संबंधी कर्म फल का हिस्सा ले सकता है । जिनका कर्म है उसका फल उसे ही मिलता है और जितना है उतना ही मिलता है , कम या अधिक नहीं ।

47. अथर्ववेद. 10/8/27

भावार्थ : हे जीव ! कभी तू स्त्री के शरीर में जाकर स्त्री कहलाता है , कभी पुरुष , कभी लड़के और कभी लड़की के शरीर में जाकर पुरुष , लड़का और लड़की कहलाता है । कभी तू बूढ़े शरीर में लाठी के सहारे चलता है । इस प्रकार तू अनेक शरीर धारण करता है ।

48. अथर्ववेद. 10/8/28

भावार्थ : जीवात्मा कभी तो बालकों का पिता बनता है और कभी वह इनका पुत्र बन जाता है । वह भाइयों में कभी बड़ा भाई बन जाता है और कभी छोटा भाई बन जाता है । एक एक जीव एक-एक मन में रहता है । यह जीव अलग अलग गर्भो में आता रहता है

49 अथर्ववेद. 12/1/10

भावार्थ : जिस प्रकार माता अपनी संतान को दूध पिलाती है उसी प्रकार यह पृथ्वी हम सबको खाने-पीने की वस्तुएं प्रदान करती है ।

50. अथर्ववेद. 12/1/12

भावार्थ : भूमि मेरी माता है , मैं इसका पुत्र हूं । बादल पिता है , वह हम सब का पालन करें ।

51. अथर्ववेद. 1/16/4

भावार्थ : यदि तू हमारी गाय को मारे या हमारे घोड़े को मारे या मनुष्य को मारे तो हम तुझे शीशे (सिक्का) की गोली से मारेंगे । फिर तू इनमें से किसी को भी मार न सकेगा ।

Edit with WPS Office

52. अथर्ववेद. 6/140/2

भावार्थ : हे मनुष्यों ! चावल खाओ , जौं खाओं , उड़द खाओ , तिल खाओं । ये अनाज तुम्हारे लिए ही बनाए गए हैं । उन्हें मत मारो जो माता-पिता बनते हैं अर्थात पशु पक्षियों को मत मारो ।

53. अथर्ववेद. 6/45/1

भावार्थ : ऐ मेरे मन के बुरे विचार ! तू दूर हट जा । बुरे कार्यों को तू अच्छा क्यों समझता है , मैं तुझे नहीं चाहता , तू दूर पेड़ों में जंगलों में चला जा । मेरा मन तो घर में और गायों में लगा हुआ है ।

54. अथर्ववेद. 5/7/7

भावार्थ : ओ दरिद्रता ! तू दूर चली जा । हम तेरे ऊपर वज्र से प्रहार करते हैं । हम जानते हैं कि तू सब प्रकार से निर्बल करने वाली है और अनेक प्रकार से पीड़ा देने वाली है ।

55. अथर्ववेद. 10/1/13

भावार्थ : जैसे वायु भूमि से धूल और आकाश से बादलों को उड़ा देती है वैसे ही ज्ञान द्वारा मेरे सब दुष्ट भाव दूर हो जाएं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 118.उपनिषदों के कुछ महत्वपूर्ण

Edit with WPS Office

उपदेश

अनुपश्य यथा पूर्वे प्रतिपश्य तथा अपरे ।
सस्यमिव मतर्य : पच्यते सस्यमिव आजायते पुनः ।। (कठोपनिषद)

भावार्थ : जो तुझसे पहले हो चुके हैं उन्हें देख , जो तेरे बाद में होंगे उनकी बाबत विचार कर । यह मरणशील मनुष्य अन्न की तरह पैदा होता है , पकता है , नष्ट हो जाता है और फिर उत्पन्न हो जाता है ।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद् वदन्ति ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्य चरन्ति तत्ते पदम् संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत् ।। (कठोपनिषद)

भावार्थ : जिस पद (शब्द) का सब वेद बार-बार वर्णन करते हैं , जिसे जानने के लिए सब तप किए जाते हैं , जिसकी चाहना में यति लोग ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं , वह पद संक्षेप में तुझे बताता हूं , वह पद ' ओम ' है ।

न जायते म्रियते वा विपश्चित नायं कुतश्चित् न बभूव कश्चित् ।
अजो नित्य : शाष्वतोऽयं पुराणों न हन्यते हन्यमाने शरीरें ।। (कठोपनिषद)

भावार्थ : जीवात्मा न उत्पन्न होता है , न मरता है , न यह कभी किसी कारण से उत्पन्न हुआ है । यह अजन्मा है , नित्य है , सदा रहने वाला है , पुरातन है । शरीर के मरने पर भी यह मरता नहीं ।

एष सर्वेषु भूतेषु गूढात्मा न प्रकाशते ।
दृश्यते तु अग्रयया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभि : ।। (कठोपनिषद)

भावार्थ : परमात्मा सारी जड़ चेतन सृष्टि में छिपा हुआ है , वह सामने नहीं है । सूक्ष्म दृष्टि वाले लोग अपनी तीव्र और सूक्ष्म बुद्धि से उसे देखते हैं ,

Edit with WPS Office

जानते हैं

असतो मा सद् गमय् , तमसो मा ज्योतिर्गमय , मृत्योर्माऽअमृतं गमय ।।
(बृहदारण्यक उपनिषद , प्रथम अध्याय _ तीसरा ब्राह्मण)

भावार्थ : हे ईश्वर ! आप मुझे गलत रास्ते से हटाकर ठीक मार्ग पर ले चलिए । अविधा अंधकार से छुड़ाकर विधा रुप प्रकाश को प्राप्त कराईए । मृत्यु रोग से बचाकर मोक्ष रुप अमृत को दीजिए ।

न सदृशे तिष्ठंति रुपमस्य न चक्षुषा पश्यति कश्चन एवं ।
ह्रदा ह्रदिस्थं मनसा य एनं एवं विंदु: अमृता : ते भवन्ति ।। (श्वेताश्वतर उपनिषद)

परमात्मा का कोई रूप (आकृति , वर्ण , स्वरुप) नहीं जिसे आंखों से देखा जा सकें । इसलिए उसे कोई भी आंखों से नहीं देखता । वह हृदय में स्थित है । जो उसे हृदय से तथा मन से जान लेते हैं वे आनन्द को प्राप्त करते हैं ।

नैव स्त्री न पुमान् एष न च एवं नपुंसक : ।
यद् यद् शरीरम् आदत्ते तेन तेन स रक्ष्यते ।। (श्वेताश्वतर उपनिषद)

भावार्थ : जीवात्मा न स्त्रीलिंगी है , न पुल्लिंगी है और न ही नपुंसक - लिंगी है । ये लिंग शरीर के है । जिस जिस शरीर को यह पाता है उस उस के लिंग का कहा जाता है । उदाहरण के लिए __ पानी का अपना कोई रंग नहीं है , पानी में जो रंग डाला जाता है , पानी उस रंग का कहा जाता है ।

न तत्र सूर्यो भांति न चन्द्रतारकं नेमा विधुतो भान्ति कुतोऽयमग्नि : ।
तमेव भान्तमनुभाति सर्व तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ।। (श्वेताश्वतर उपनिषद)

ईश्वर की आभा के सामने सूर्य का प्रकाश फीका पड़ जाता है , चन्द्र और

Edit with WPS Office

तारें प्रकाशहीन हो जातें हैं , आसमानी बिजलियां भी उसके सामने फीकी है , फिर इस आग की तो औकात ही क्या है । उसी के प्रकाश से ये सब प्रकाशित है

केनोपनिषद : ______

मनुष्य में देखने , बोलने और सुनने की शक्ति ईश्वर ने ही दी है । ईश्वर की दी हुई शक्ति से मन विचारने लगता है । जन्म के समय जब प्राण पहली बार चलने लगते हैं वह ईश्वर की प्रेरणा से ही होता है ।

ईश्वर का आदेश __ उसका बखान तो ऐसे है जैसे आसमानी बिजली चमकती है और छिप जाती हैं । इस चमकने के थोड़े समय में आप कुछ देख ले । ऐसे ही ईश्वर विशेष परिस्थितियों में कुछ क्षण के लिए मन में एक विचार देता है । कोई कोई उसे पकड़ लेता है । यह ऐसे ही है जैसे आंख खुले और झपकी मारें और इस बीच कुछ देख जाए ।

यह मन हर क्षण या तो बीते हुए को याद करता है या आगे के लिए नए विचार करता है ।

कठोपनिषद : ______

श्रेय (कल्याणकारी) तथा प्रेय (प्रिय लगने वाला) __ ये दोनों भावनाएं परमात्मा के सामने आती हैं । धीर पुरुष इन दोनों की भली प्रकार मन से सोचकर परीक्षा करता है , छान - बीन करता है । वह प्रेय की अपेक्षा श्रेय को ही चुनता है । धीर पुरुष वह है जो कोई काम जल्दी में नहीं करता , तत्काल फल नहीं देखता । मन्द - बुद्धि व्यक्ति सुख चैन के लिए , आराम से जीवन बिताने के लिए प्रेय को चुनता है ।

जो व्यक्ति दुराचारी है , अशान्त है , चंचल चित्त वाला है , जिसकी विचार शक्ति स्थिर नहीं है , वह परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकता । परमात्मा को शुद्ध ज्ञान के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है ।

शरीर एक रथ हैं , आत्मा रथी अर्थात रथ का मालिक है , बुद्धि सारथी

Edit with WPS Office

है , मन लगाम है । इंद्रियां घोड़े है , इंद्रियों के विषय वे मार्ग हैं जिन पर इंद्रियां रुपी घोड़े दौड़ते हैं ।

आंख ,कान , नाक , जिह्वा , त्वचा को पसंद है , केवल इस कारण से ही कार्य नहीं किया जाना चाहिए । अपितु बुद्धि से विचार कर ही कार्य किया जाना चाहिए ।

सारे ब्रह्मांड में एक ही शक्ति काम कर रही है __ वह है ब्रह्म की शक्ति । जो व्यक्ति यह समझता है कि यहां कोई और शक्ति है और वहां कोई और , वह अज्ञान - अंधकार में है ।

मनुष्य का जैसा ज्ञान और कर्म होता है उसके अनुसार ही उसे अगली योनि मिलती है ।

यह संसार स्वतंत्र नहीं है , किसी के वश में है । संसार को वश में करने वाला वही एक परमेश्वर है । सब प्राणियों के आत्मा में उसका वास है । आत्मा में बैठे उस ब्रह्म को जो धीर पुरुष देख लेते हैं वे पाप कर्म नहीं करते और सुखी रहते हैं ।

ईश्वर कुछ-कुछ तो सभी को भासता है । हां कभी-कभी उसका विशेष भास होने लगता है ।

आंख उसे देख नहीं सकती । हाथ उसे पकड़ नहीं सकते । मन को वश में रखने वाले ज्ञानी लोग आंख से और हाथ से नहीं हृदय से और मन से उसे पकड़ पाते हैं ।

जब पांच ज्ञान इंद्रियां मन के साथ स्थिर हो जाती हैं , भागती नहीं फिरती , और मन निश्चल बुद्धि के साथ आ मिलता है , उस अवस्था को परम गति (श्रेष्ठ स्थिति) कहते हैं ।

इंद्रियों के स्तिर धारणा को योग कहते हैं । जिसकी इंद्रियां स्थिर हो जाती हैं वह प्रमादरहित और सावधान हो जाता है । तब शुभ संस्कारों की उत्पत्ति होती है और अशुभ संस्कारों का नाश होता है ।

प्रश्नोपनिषद : ______

मन या तो संकल्प - विकल्प मैं उलझा रहता है या इनमें से निकल कर सत्य निश्चय पर पहुंच जाता है ।

Edit with WPS Office

जैसे शहद की मक्खियों की रानी मक्खी के उड़ जाने पर सब मक्खियां उड़ जाती हैं और उसके बैठने पर बैठ जाती हैं । इसी प्रकार प्राण के निकलने पर सब इंद्रियां निष्क्रिय हो जाती है । वे तब तक ही सक्रिय है जब तक शरीर में प्राण है ।

कौन सोता है ..? __ मन सोता है और मन इंद्रियों का मुखिया है । इसलिए जब मन सोता है सब इंद्रियां __ पांच ज्ञानेंद्रिय और पांच कर्म इंद्रियां अपने मुखिया में एक हो जाती है । इसी कारण से सोते समय मनुष्य न सुनता है , न देखता है , न सूंघता है , न चखता है , न छूता है , न बोलता है , न पकड़ता है , न चलता है , न ही मल - मूत्र त्यागता है , । ऐसी अवस्था में हम कहते हैं कि वह सो रहा है ।

कौन जागता है ..? __ मनुष्य के सोते समय भी पांचो प्राण नहीं सोते । ये प्राण है __ प्राण , अपान , व्यान , समान , उदान ।

क __ आंख , कान , नाक , मुख में प्राण काम करता है ।

ख __ शरीर के मध्य भाग में समान काम करता है ।

ग __ मल - मूत्र के स्थान पर अपान वायु काम करती है ।

घ __ हृदय से लेकर संपूर्ण रक्त - संचारिणी संस्थान (Circulatory system) में व्यान विचरता है ।

च __ हृदय से एक नाडी मस्तिष्क को जाती है उसमें उदान वायु रहती है ।

कौन स्वप्न देखता है ..? __ मन ही स्वप्न देखता है । जो जागते समय देखा है उसे सोते समय भी ऐसे देखता है जैसे प्रत्यक्ष देख रहा हो । जो जागते समय सुना है , उसे सोते समय भी ऐसे सुनता है जैसे जागते हुए ही सुन रहा हो । देश देशान्तर में जो अनुभव किया है उसे बार-बार स्वप्न में अनुभव करता है । देखे हुए को और कई बार पहले न देखें हुए को , सुने हुए को और कभी-कभी पहले न सुने हुए को , पहले अनुभव किये पदार्थ को और कभी-कभी पहले अनुभव मैं न आए पदार्थ को भी , सच्ची और झूठी , विद्यमान और अविद्यमान , होने वाली और न होने वाली संभव और असंभव (सत् असत्) __ मन वह सब देखता है ।

मनुष्य ही नहीं सभी प्राणी स्वप्न देखते हैं ।

निंद्रा की अवस्था में मन __ सत्व , रज ,तम , __इन तीनों में से किसी एक गुण से प्रभावित होता है , कोई एक अवस्था प्रबल होती है ।

Edit with WPS Office

जब सत्वगुण प्रधान होता है तब वह स्वप्न नहीं देखता , गूढ़ निंद्रा में होता है । उस समय आत्मा को सुख हो रहा होता है । जागने पर तरोताजा होता है और कहता है __ सुख से सोया ।

अगर निंद्रा में रजोगुण प्रधान हो तो सोकर उठने पर मनुष्य दुखी अनुभव करता है , हृदय धड़कता है , बेचैनी होती है ।

अगर निंद्रा में तमोगुण प्रधान हो तो उठने पर शरीर भारी होता है , चित्त में ग्लानि होती है । सोने पर भी ऐसा लगता है कि मानो एक पल भी नहीं सोया । ये अवस्थाएं आत्मा की नहीं , शरीर की होती है । सुख-दुख आत्मा को होता है ।

जैसे ___ सांप केच्चुली को छोड़ देता है , वैसे ही ईश्वर का उपासक पाप कर्म को छोड़ देता है ।

मुण्डकोपनिषद : ______

जैसे मकड़ी अपने शरीर के अंदर से जाले बनाती है और फिर उसे समेत लेती है , जैसे पृथ्वी में औषधियां उत्पन्न होती है , जैसे जीवित पुरुष के शरीर से बाल निकलते हैं , इसी प्रकार ब्रह्म के प्रकृति रूपी शरीर से संसार बन जाता है ।

प्रणव (ओम्) धनुष है , आत्मा बाण हैं , ब्रह्म (ईश्वर) लक्ष्य है । (ईश्वर तुम्हारे अंदर है , तुम्हारी आत्मा में है , तुम्हारे मन में है । वह सब देख रहा है जो तुम सोच रहे हो और जो तुम कर रहे हो । वह ईश्वर ही सभी कर्मों का यथोचित फल देने वाला है ।)

सत्यमेव जयते नानृतं , सत्येन पन्था विततो देवयान : ।

भावार्थ : सत्य की ही जीत होती है , झूठ की नहीं । सत्य के मार्ग पर चलकर ही मनुष्य देवता बनता है ।

माण्डूक्योपनिषद् : ______

Edit with WPS Office

(जाग्रत , स्वप्न , सुषुप्ति ___ ये तीन अवस्थाएं शरीर की है , जीवात्मा की नहीं । जीवात्मा की तो सदा एक ही अवस्था रहती है ।)

जाग्रत अवस्था में जीवात्मा स्थूल शरीर से और स्थूल इंद्रियों से भोग करता है । स्वप्न अवस्था में सूक्ष्म शरीर से और सूक्ष्म इंद्रियों से भोग करता है । यह भोग स्थूल जगत का नहीं अपितु विचारमय जगत का होता है ।

सुषुप्त अवस्था में शरीर और आत्मा का संबंध एक प्रकार से टूट जाता है । जीवात्मा अपनी शक्ति को बाहर बखेरने की बजाए अपने अंदर खींच लेता है , शरीर से मानों अपने आपको अलग सा कर लेता है । तब जीवात्मा तो ज्ञान की अवस्था में । ऐसी अवस्था में जीवात्मा आनंदमय हो जाता है , आनंद का उपभोग करता है । शरीर की सुषुप्त अवस्था में जीवात्मा को जो आनंद प्राप्त होता है , उसी को जागने पर मनुष्य याद करता है ।

तैत्तिरीय उपनिषद् : ______

मेरी कीर्ति इतनी फैलें , जितनी फैली हुई पहाड़ की पीठ होती है । पर्वत की चोटी पर जैसे पवित्र हिम होती है उसी प्रकार पवित्रता को लेकर मैं ऊंचा उठूं । मेरे उठने में अपवित्रता नहीं , हिम की सी पवित्रता सहायक हो ।

ब्रह्म को देखने के लिए कहीं दूर जाने की जरूरत नहीं । यह संसार जो दिखता है यह ब्रह्म का ही प्रत्यक्ष रूप है ।

गलती हो जाने पर जिस किसी की आंखें इन दो बातों की तरफ खुल जाती है ___ मैंने ठीक नहीं किया या मैंने पाप किया है ___ इन दो बातों पर जो विचार करने लगता है , उसका आत्मा बलवान हो जाता है । ये दोनों विचार आत्मा को बलवान बना देते हैं ।

दीक्षान्त भाषण ___ वेद विद्या पढ़ चुकने के बाद आचार्य अपने शिष्य को उपदेश देता है ___ सत्य बोलना , धर्माचरण करना , गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करके प्रजा के सूत्र को मत तोड़ना , सत्य बोलने में प्रमाद मत करना , धर्माचरण में प्रमाद न करना , जिस बात से तुम्हारा भला हो , उस बात में प्रमाद न करना , अपने ऐश्वर्य प्राप्ति में प्रमाद मत करना , स्वाध्याय और प्रवचन में प्रमाद मत करना ।

जो देव हैं ___ तुमसे गुणों में बड़े हैं और जो पितर हैं ___ तुमसे आयु

Edit with WPS Office

में बड़े हैं , उनके प्रति अपने कर्तव्य पालन में प्रमाद मत करना , माता को देवी समझना , पिता _ आचार्य _ अतिथि को देवता मानना । हमारे जो अनिन्दित (ठीक) कर्म है उन्हें ही अपनाना , दूसरों को नहीं ।

दान देते रहना ___ श्रद्धा हो तो देना , श्रद्धा न हो तो भी देना । अपने पास धन है , इस कारण से भी देना , लोक लाज के लिए भी देना । शुभ कर्म न होंगे तो सुख न मिलेगा ___ इस कारण से भी देना । किसी से प्रेम हो ___ इस कारण से भी देना ।

अगर किसी काम में स्नेह हो जाए , यह समझ न पड़े कि धर्माचार क्या है तो जो वहां ज्ञानी , विचारशील , धर्म बुद्धि वाले लोग हैं , ऐसी स्थिति में जैसे वे वर्त्तते है , वैसा तुम वर्तो ।

ऐतरेयोपनिषद् : ______

गर्भ कहने को तो स्त्री धारण करती है , परंतु वास्तव में शुरू से ही यह पुरुष धारण करता है । वीर्य से ही तो गर्भ होता है । यह वीर्य पुरुष के अंग अंग के तेज का ही तो सार ___ तत्व है । इस प्रकार पुरुष पहले वीर्य रक्षा द्वारा अपने में अपने को धारण करता है । उसे जब स्त्री में सिंचित करता है तब मानो वह अपने को ही सिंचित करता है । यह वीर्य स्त्री में जाकर उसका आत्मवत् हो जाता है , ठीक ऐसे जैसे कि वह उसका अपना ही अंग हो , विजातीय पदार्थ होते हुए भी वह स्त्री को कष्ट नहीं देता । स्त्री उसे अपने अंदर सुरक्षित रखकर उसकी पालना करती हैं । क्योंकि वह मानो हमारी ही पालना करती है , इसलिए स्त्री की पालना करना हमारा कर्तव्य है ।

छान्दोग्य उपनिषद् : ______

संसार को ऐसे भोगों कि लोग तुम्हारी प्रशंसा करें , निन्दा नहीं । भोग के साथ त्याग हो तो तेज भी आ जाता हैं । शक्ति भय की न हो , प्रेम की हो ।

घोर अंगिरस ऋषि ने देवकी पुत्र कृष्ण से कहा कि जीवन का

Edit with WPS Office

अन्तकाल आने पर उपासक इन तीन वाक्यों का उच्चारण करें ___

- अक्षितम् असि ___ हे भगवान ! आप अविनाशी है ।
- अच्युतम् असि ___ हे भगवान ! आप सदा एक रस है ।
- प्राणसंशितम् असि ___ हे भगवान ! आप प्राण से भी अधिक तीक्ष्ण (तीखा) है , सूक्ष्म है ।

ब्रह्म ज्ञान पाने के बाद मनुष्य पाप - कर्म में लिप्त नहीं होता जैसे कमल - पत्र पानी में रहते हुए भी उसमें लिप्त नहीं होता ।

ब्रह्म ज्ञान का अर्थ है ईश्वर सत्ता को समझना , उसके गुण - कर्म - स्वभाव को जान लेना । यह जानना कि ब्रह्म संसार में चप्पे-चप्पे मैं मौजूद है । वह हमारे सब कर्मों को देखता है तथा न्यायपूर्वक उनका फल देता है ।

मन में विचार कर ही वाणी से बोलना चाहिए । बिना विचारे बोलना ऐसे है जैसे एक पहिए की गाड़ी पर चलना ।

प्राण , वाणी , चक्षु , श्रोत्र , मन ___ **इन सबमें कौन श्रेष्ठ ..?** प्राण इन सबमें श्रेष्ठ है क्योंकि प्राण के निकलने पर ये सब निकल जाते हैं , शरीर में कोई भी ठहर नहीं सकता ।

प्राण शरीर से निकलने लगा तो इंद्रियां इस प्रकार उखड़ गई जैसे खूंटे से बंधा हुआ उत्तम घोड़ा , दौड़ने लगे और खूंटे को उखाड़ दे ।

मनुष्य जो भोजन करें , वह केवल अपने शरीर के लिए ही हितकारी न हो , बल्कि सारे संसार के लिए कल्याणकारी हो । हर ग्रास के साथ ऐसी भावना हो ।

मन अन्न से बनता है , प्राण जल से बनता है और वाणी तेज (घी) से बनती है । जैसे दही मथने पर उसका सूक्ष्म अंश मक्खन ऊपर उठ जाता है , ऐसे ही अन्न का सूक्ष्म अंश मन , जल का सूक्ष्म अंश प्राण तथा घी का सूक्ष्म अंश वाणी बन जाता है ।

जैसे डोर से बंधा पक्षी विभिन्न दिशाओं में उड़ उड़ कर जाता है , पर कहीं ठिकाना न पाकर जहां बंधा है वहीं आकर आश्रय पता है । इसी प्रकार मन दिशा - दिशा में जाता है , परंतु कहीं ठिकाना न पाकर प्राण का ही आकर सहारा लेता है । प्राण ही मन को बांधने वाला खूंटा है । (इसी कारण से प्राणायाम के द्वारा प्राण वश में करके मन वश में आ जाता है)

वट वृक्ष के फल के अंदर जो छोटे-छोटे दाने हैं , उनमें से प्रत्येक के

Edit with WPS Office

अंदर जो है वही सूक्ष्म पदार्थ इतने बड़े वृक्ष को खड़ा कर देता है । ऐसे ही इतना बड़ा मनुष्य शरीर एक सूक्ष्म पदार्थ से ही बना है ।

जैसे पानी में घुला हुआ नमक चखने पर स्वाद देता है , पर आंख से दिखाई नहीं देता और नमक पानी के हर भाग में है ___ ऊपर , मध्य , नीचे । इसी प्रकार ईश्वर इस सृष्टि में सब जगह है ।

जब मरणासन्न मनुष्य को उसके बंधु - बान्धव चारों तरफ से घेर लेते हैं और पूछते हैं ___ मुझे पहचानते हो ? जब तक उसकी वाणी मन में , मन प्राण में , प्राण तेज में और तेज आत्मा में लीन नहीं हो जाता वह पहचानता जाता है ।

मृत्यु के समय पहले वाणी बंद होती है , परंतु मन में वह विचार करता रहता है । मन भी जब काम करना बंद कर देता है तब भी प्राण चलता रहता है । जब प्राण भी चलता प्रतीत नहीं होता और शरीर में तेज (गर्मी) रहता है तब तक हम उसे मरा नहीं समझते । जब तेज भी चला जाता है तब हम कहते हैं कि वह मर गया है ।

वेद आदि ग्रंथ पढ़कर मनुष्य मन्त्रवित् तो बन जाता है , आत्मवित् नहीं , शब्द - ज्ञान तो आ जाता है , परंतु आत्म - ज्ञान नहीं आता । आत्मवित् बनने के लिए शब्द - ज्ञान तो सीढ़ी का पहला पाया है ।

सत्य वही बोलता है जिसे ज्ञान होता है । ज्ञान - विज्ञान उसे ही प्राप्त होता है जो मनन करता है । जो मनन नहीं करता वह समझता भी कुछ नहीं ।

जैसे अपनी मेहनत से कमाया हुआ धन - संपत्ति भोग लेने के बाद समाप्त हो जाता है , वैसे ही दानादि पुण्य कर्मों से कमाया हुआ पुण्य भोग लेने के बाद समाप्त हो जाता है ।

यह आत्मा हृदय में है । हृदय को हृदय कहते भी इसलिए है क्योंकि ' हृदि - अयम् ' यह हृदय में है । जो इस रहस्य को दिन प्रतिदिन जानता है वह उसे बाहर ढूंढने की बजाय हृदय के अंदर ढूंढता है और वही सुख को पाता है ।

शरीर में हृदय मानो सूर्य है । उससे पिंगला (हल्का पीला) , सफेद , नीला , पीला , लाल रंग की नाड़ियां सूक्ष्म रस से भरी हुई सूर्य की किरणों की तरह चारों तरफ फैल रही है । जब मनुष्य मरता है तब आत्मा इन्हीं

Edit with WPS Office

हृदय की किरणों रुपी नाड़ियों में से किसी एक में से होकर निकल जाती है । ये नाड़ियां आंख , कान , नाक आदि सभी इंद्रियों को गई है ।

यह शरीर मरणधर्मा है और अमृत _रुप आत्मा का निवास स्थान है । आत्मा स्वभाव से बिना शरीर के है । परंतु जब तक शरीर के साथ अपने को एक समझ कर रहता है , तब तक उसे सुख-दुख लगा रहता है । आत्मा के अपने अशरीर रूप में आने पर उसे सुख-दुख नहीं होता ।

वायु , बादल , विद्युत , गर्जना ___ ये भी बिना शरीर के हैं और आकाश में रहते हैं । पर जब इनका सूर्य से संपर्क होता है , तब प्रकट होते हैं । सूर्य की की गर्मी से ही वायु चलने लगती है , बादल प्रकट होते हैं , आकाश में बिजली चमकती है , गर्जना होती है ।
जैसे रथ से घोड़े जुड़े है , ऐसे ही शरीर से प्राण और आत्मा जुड़े हैं ।

आंख देखने का साधन है , जो देख रहा है वह आत्मा है । नाक सूंघने का साधन है , जो सूंघ रहा है वह आत्मा है । वाणी व्यवहार करने का साधन है , जो व्यवहार कर रहा है वह आत्मा है । कान सुनने के लिए है , परन्तु जो सुनता है वह आत्मा है । मन मनन करने का साधन है , उससे भूत - भविष्य , आगे - पीछे सब देखता है , कल्पना करता है , पर करने वाला आत्मा है ।

सुषुप्त अवस्था में आत्मा को जो आनंद होता है वह उसे अपने शुद्ध स्वरूप में जाने के कारण होता है । सुषुप्त अवस्था में आत्मा नहीं सोता , शरीर सोता है । आत्मा जडवत् नहीं होता , शरीर जडवत् होता है ।

जैसे घोड़ा बालों को झाड़कर गर्दन झाड़ देता है उसी प्रकार आत्मा के यथार्थ रूप को जानकर मैं पापों को झाड़ दूं ।

बृहदारण्यक उपनिषद् : ______

अगर ब्रह्म का कोई शरीर है तो यह सब ब्रह्मांड ही उसका शरीर है । प्राण अंगों का रस है । जिस - जिस अंग से प्राण निकल जाता है वह वह अंग सूख जाता है ।

पाप को दुर्विचार को संकल्प में आने से पहले ही समाप्त कर देना चाहिए ।

याज्ञवल्क्य ऋषि का कथन है कि हमारा शरीर चने के आधे दल के

Edit with WPS Office

समान है । जैसे चने का आधा दल दूसरे आधे दल के साथ मिलकर पूरा होता है , वैसे ही पुरुष के समान का खाली आकाश स्त्री के साथ मिलने से ही पूरा होता है ।

यह आत्म - तत्व पुत्र से अधिक प्यारा है , चित्त से अधिक प्यारा है । यह अन्य सब वस्तुओं से अधिक प्यारा है ।

धर्म क्या है..? सत्य ही धर्म है , धर्म ही सत्य है । तभी तो सत्य बोलने वाले के लिए कहा जाता है की धर्म कहता है और धर्म बोलने वाले के लिए कहा जाता है कि यह सत्य कहता है ।

धर्म के संबंध में केवल दो बातें जानने की है ___ एक ईश्वर , दूसरा सत्य । इन दो को समझ लिया तो सब समझ लिया ।

जिस अन्न को हम सब खाते हैं वह अन्न सब का सांझा हैं । उसे जो अपने ही लिए रख लेता है वह पाप से नहीं छूटता । अन्न को तो सबके साथ बाट कर खाना ही ठीक है ।

मन ठीक रहें तो शरीर की सब इंद्रियां ठीक रहती है । मन बिगड़ा तो सब बिगड़ा । पितर (माता-पिता आदि वृद्धजन) मनुष्य समाज के मन की तरह रक्षक है । प्राण शरीर का सब काम चलाता है । साधारण लोग भी समाज का सब काम कार्य करते हैं , वे प्राण की तरह है ।

जैसे चंद्र रात्रियों से पूर्ण होता है , रात्रियों से क्षीण होता है , वैसे पुरुष कभी वित्त (धन) में पूर्ण हो जाता हैं , कभी खाली हो जाता है । आत्मा इस शरीर रुपी पहिए की नाभि है , वह अविचल हैं । चित्त इस पहिए के अरे के समान है , ऊपर नीचे होता रहता है ।

साधारण लोग जो खानें , पीने और सन्तानोपत्ति में लगे हैं मनुष्य कहलाते हैं , अपना ही विचार छोड़ संसार की रक्षा में जो लोगे हैं वे पितर कहलाते हैं , संसार को ज्ञान देकर आगे बढ़ाने वाले लोग देव कहलाते हैं ।

जब तक पुत्र (सन्तान) नहीं होता तब तक मनुष्य स्वभाव का व्यक्ति इस संसार _ युद्ध में अपने आप को हारा हुआ समझता है ।

पितर लोग निरन्तर कर्म में लगे रहते हैं तब जाकर दुनिया का भला होता है । देव लोग विधा दान द्वारा , ज्ञान के प्रचार द्वारा संसार का भला करने में लगे रहते हैं । सबसे श्रेष्ठ देव लोक है ।

आंख , कान , वाणी आदि सभी इंद्रियां काम करते करते थक जाती हैं

Edit with WPS Office

। परंतु प्राण नहीं थकता , लगातार चलता रहता है । इसलिए भी प्राण सबसे श्रेष्ठ हैं ।

ऋषि याज्ञवल्क्य पत्नी मैत्रेयी को उपदेश देते हैं __ पति की कामना के लिए पति प्रिय नहीं होता , अपनी आत्मा की कामना के लिए पति प्रिय होता है । पत्नी की कामना के लिए पत्नी प्रिय नहीं होती है । पुत्र की कामना के लिए पुत्र प्रिय नहीं होता , अपनी आत्मा की कामना के लिए पुत्र प्रिय होता है ।

जैसे _ कपड़े में ताना - बाना होता है तभी कपड़ा रह सकता है । जैसे धागे में मनके पिरोएं रहते हैं तभी माला रह सकती हैं । वैसे ही यह लोक लोकान्तर ब्रह्मलोक में है ।

ब्रह्म ही है जो अंतर्यामी है , जो इस लोक - परलोक और सब चर - अचर भूतों का भीतर से नियमन कर रहा है ।

प्राण - वायु रुपी धागे से ही तो जीवित मनुष्य के अंग मनके की तरह गूंथे रहते हैं ।

न तदश्नाति किंचन न तदश्नाति कश्चन ।

भावार्थ : वह (ब्रह्म) कुछ नहीं खाता और कोई उसको नहीं खाता ।

जैसे शरीर में आत्मा है ऐसे ही ब्रह्मांड में परमात्मा है ।

जैसे लदीं हुई गाड़ी ठिकाने पहुंचकर अपना बोझ उतार देती है , इसी प्रकार जीवन रूपी यात्रा के अंत में आत्मा से लंदी हुई शरीर रूपी गाड़ी अपनी सवारी आत्मा को उतार देती है ।

जैसे आम , गूलर , या पीपल का फल पककर अपनी टहनी से टपक पड़ता है , वैसे ही जब यह शरीर बुढ़ापे से या बीमारी से निर्बल हो जाता है , तब यह आत्मा शरीर के भिन्न - भिन्न अंगों से छूट जाता हैं ।

जैसे इस जीवन में जाग्रत , स्वप्न , सुषुप्ति अवस्थाएं हैं , ऐसे ही जन्म और मृत्यु है । आत्मा इन सब स्थितियों में चक्कर काटता रहता है ।

जब शरीर दुर्बल हो जाता है , मन बेखबरी की हालत में आ जाता है , तब सब इंद्रियां इकट्ठी होकर आत्मा के पास पहुंचती है । वह इनमें से तेज की मात्रा को , जिसके कारण ये काम करती है , खींच लेता है , और उस तेज को जो वास्तव में इसी का था , अपने साथ लेकर हृदय प्रवेश में उतर आता है ।

Edit with WPS Office

उस समय वह हृदय के अग्र प्रदेश में , जहां से हिता नाम की नाड़ियां ऊपर को जाती है , आ जाती है , आ जाता है । हृदय का अग्र प्रदेश आत्मा की ज्योति से प्रकाशित हो उठता है । इस ज्योति के साथ आत्मा आंख से , सिर से या शरीर के किसी और भाग से निकल जाता है । आत्मा के निकलने के साथ-साथ प्राण पीछे - पीछे निकलते हैं । प्राण के निकलने के साथ-साथ इंद्रिया पीछे - पीछे निकलती है ।

जीव मरते समय सविज्ञान हो जाता है । जीवन का सारा खेल उसके सामने आ जाता है । यह विज्ञान उसके साथ - साथ जाता है । ज्ञान , कर्म , और पहले जन्मों की प्रज्ञा (बुद्धि , वासना - स्मृति - संस्कार) ये तीनों भी उसके साथ जाते हैं ।

जैसे सुंडी तिनके के अन्त पर पहुंचकर दूसरे तिनके को सहारे के तीर पर पकड़कर अपने आप को खींच लेती हैं , इसी प्रकार यह आत्मा इस शरीर रुपी तिनके को फेंक कर दूसरे शरीर रुपी तिनके का सहारा लेकर अपने आपको खींच लेता है ।

मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही हो जाता है । अच्छे कर्म करने से अच्छा , बुरे कर्म करने से बुरा , पुण्य कर्म करने से पुण्य आत्मा , पाप कर्म करने से पापात्मा हो जाता है ।

आत्मा काममय है । जैसी कामना होती है वैसा ही प्रयत्न होता है , जैसा प्रयत्न होता है वैसा ही कर्म होता है और जैसा कर्म होता है वैसा ही फल होता है ।

आत्मा में परमात्मा के दर्शन कर लेना ही ब्रह्म - लोक को पा लेना है । यह आत्म - लोक ही ब्रह्म - लोक है ।

ओम् पूर्णमद : पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

भावार्थ : वह ब्रह्म पूर्ण है । यह जगत पूर्ण है । पूर्ण ब्रह्म से ही यह पूर्ण जगत उत्पन्न होता है । पूर्ण से पूर्ण लेकर भी वह (ब्रह्म) पूर्ण बच जाता है ।

निरुक्त में हृदय ____ ह् - द - य

हरति , ददाति , याति ___ लेता है , देता है , चलता है ।

हृदय शरीर के अशुद्ध रक्त को लेकर उसे फेंफड़ों द्वारा शुद्ध करता है ,

Edit with WPS Office

फिर शरीर को वापिस देता है । इसी लिए सदा गति करता रहता है । शरीर के अंदर जो अग्नि हैं , जिससे खाया हुआ अन्न पचता है वह वैश्वानर अग्नि हैं । कानों को बन्द करने से जो अन्दर का घोष सुनाई देता है । वह इसी वैश्वानर अग्नि का घोष (नाद) है ।

जब मनुष्य मरने के आस पास होता है तब वह घोष सुनाई नहीं देता ।

श्वेताश्वतर उपनिषद् :

वह नित्य देव (परमात्मा) कहीं दूर नहीं , आत्मा में स्थित है । जैसे अग्नि जब अपने कारण में चली जाती है तब उसकी शक्ल तो दिखाई नहीं देती , पर उसका नाश नहीं होता । वह इन्धन मैं फिर ग्रहण की जाती है । इसी प्रकार शरीर में आत्मा और परमात्मा दोनों को ग्रहण किया जा सकता है ।

जैसे तिलों में तेल , दही में घी , जल के झरनों में जल और अरणी नाम की लकड़ी में आग रहती है । और तिलों को पीड़ने से , दही को बिलोने से , स्त्रोतों को खोदने से , अरणियों को रगड़ने से ये प्रकट होते हैं । वैसे ही जीवात्मा में परमात्मा निहित है और वही वह मिलता है । सत्य और तप (प्रयास) से उसे जाना जा सकता है ।

जैसे दूध के कण - कण में घी व्याप्त है , उसी प्रकार ब्रह्मांड के कण-कण में ब्रह्म व्याप्त है ।

जो भगवान के रचें सृष्टि क्रम के साथ अपने को नहीं जोड़ता वह ऐसे गिर जाता है जैसे प्रसव से पूर्व बच्चा , मानो उसका गर्भपात हो जाता है । जैसे रथ में लगे पुष्ट घोड़ों को वश में किया जाता है , वैसे विद्वान व्यक्ति सावधान होकर प्राणायाम के द्वारा मन को वश में करें ।

जैसे मिट्टी से लतपत सोने की डली धोने पर शुद्ध होकर चमकने लगती है , उसी प्रकार ब्रह्म के स्वरूप को देख कर देहधारी जीवात्मा सफल मनोरथ हो , दुख -चिंता से रहित हो जाता ।

जो भगवान अग्नि में है , जो जलों में है , जो सभी लोकों में रमा हुआ है , जो औषधियों में है , जो वनस्पतियों में है , उस देव को नमस्कार हो , नमस्कार हो ।

Edit with WPS Office

कर्मफल देने वाला ब्रह्म एक ही है , दूसरा कोई नहीं है । वह अपनी शक्तियों से इन सब लोकों का स्वामी है । प्रत्येक व्यक्ति के अंदर वह स्थित है । सृष्टि को बनाकर वहीं इसकी रक्षा करता है । अन्त में वही इसे समेट लेता है ।

सब जगह उस परमात्मा का मुख है , सिर है , गर्दन है । सब प्राणियों की हृदय रुपी गुफा में वह विद्यमान है । वह भगवान सर्वव्यापी है , सब जगह पहुंचा हुआ है ।

उसके पांव नहीं है , पर वह शीघ्रगामी है । उसके हाथ नहीं है , पर वह पकड़ लेता है । उसके आंख नहीं है , पर वह देख लेता है । उसके कान नहीं है , पर वह सुन लेता है । जो कुछ जानने योग्य है , उसको जान लेता है । वह सूक्ष्म से सूक्ष्म है , बड़े से बड़ा है ।

नैनमूधर्व न तिर्यठ्च न मध्ये परिजग्रभत् ।
न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महधश: ।। (यजुर्वेद. 32.2 -3)

भावार्थ : उस परमात्मा को कोई ऊपर से नहीं पकड़ सकता , कोई इधर-उधर से या बीच से भी नहीं पकड़ सकता । जिसका नाम बड़े यशवाला है , उसकी कोई प्रतिमा (मूर्ति) नहीं हो सकती । उसकी किसी दूसरी वस्तु से तुलना नहीं हो सकती ।

सूर्य अन्न आदि को पकाता है । प्रत्येक अन्न का जो स्वभाव है , उसी के अनुसार उसे पकाता है ___ आम को आम और अनार को अनार । इसी प्रकार भगवान भी मनुष्य , पशु , पक्षी आदि सब योनियों को उनके अपने-अपने स्वभाव के अनुसार परिपक्क करता है ।

आत्मा का आकार : अगर बाल के अगले हिस्से के सौ भाग किए जाएं , फिर उन सौ मैं से एक भाग के सौ भाग किए जाएं तो उसका उतना भाग जीव का समझना चाहिए । इतना सूक्ष्म रूप होते हुए भी जीवात्मा अत्यंत सामर्थ्य वाला माना गया है ।

उसे (परमात्मा को) अपने लिए कुछ भी नहीं करना । वह जो कुछ करता है उसके लिए उसे साधनों की आवश्यकता नहीं । उसकी परम शक्ति है , नानाविध शक्ति है । उसमें ज्ञान , बल , क्रिया ___ ये तीनों स्वाभाविक है

Edit with WPS Office

। किसी अन्य कारण पर वह आश्रित नहीं है ।

संसार में उसका कोई पति , स्वामी या रक्षक नहीं है । उसे कोई उत्पन्न करने वाला भी नहीं है । उसका कोई नियन्ता भी नहीं है ।

वह एक बीज रूप प्रकृति को अनेक बना देता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•119. दर्शनशास्त्र ज्ञान

•न्याय और वैशेषिक दर्शन

1. शास्त्र को जानने वाला __ शास्त्री ! दर्शनों को जानने वाला __ दार्शनिक ।
2. वेदों की प्रमाणिकता को सिद्ध करने के लिए किसी दूसरे प्रमाण की आवश्यकता नहीं है जैसे सूर्य स्वत: प्रमाण है ।
3. परमात्मा गुरुओं का भी गुरु है क्योंकि वह वेद ज्ञान देने वाला है ।
4. वेद के शब्दों के आधार पर ही पर ही संसार के पदार्थों की रचना हुई है अर्थात शब्दों के साथ अर्थ का संबंध है , अत: वेद स्वत: प्रमाण है ।
5. जैन ग्रन्थ प्राकृत भाषा और संस्कृत में लिखे हैं । बौद्ध ग्रन्थ पाली भाषा और संस्कृत भाषा में लिखे हैं ।
6. न्याय का आचरण करने वाले व्यक्ति की सहायता तो मनुष्य ही नहीं अपितु पशु - पक्षी भी करते हैं । अन्याय के रास्ते पर चलने वाले व्यक्ति का साथ तो सगा भाई भी छोड़ देता है ।

Edit with WPS Office

7. दुखों से पूर्ण रूप से छूट जाने को मोक्ष कहते हैं ।
8. प्रत्येक प्राणी मृत्यु से घबराता है । पिछले जन्म की मृत्यु के समय होने वाले कष्ट का अनुभव प्रत्येक प्राणी को मृत्यु से डराता है ।
9. जीवात्मा कर्मों के फलों के प्रति आसक्ति रखता है , भोग - विलास के प्रति राग के कारण फलों को भोगने के लिए बार-बार शरीर धारण करता है ।
10. आसक्ति के कारण राग , असहनशीलता के कारण द्वेष तथा मिथ्या ज्ञान के कारण मोह होता है ।
11. कर्म स्वयं जड़ है , वह अपना फल स्वयं नहीं दे सकता , इसलिए ईश्वर की सत्ता को मानना होता है ।
12. बिना कारण के कोई भी कार्य नहीं होता है ।
13. कर्म फल में शीघ्रता और विलम्ब ___ किसी वृक्ष का फल कुछ सालों के बाद लगता है ___ गेहूं आदि पौधे का फल कुछ महीनो में प्राप्त हो जाता है ।
14. यम नियम के आचरण से राग , द्वेष , मोह आदि दोषों को दूर करने में सहायता मिलती है ।
15. बाहरी विषयों की ओर जाने वाली मन की वृत्तियों को वैराग्य और निरंतर अभ्यास के द्वारा रोका जाता है जो आत्म साक्षात्कार के लिए आवश्यक एवं उपयोगी है ।
16. निरंतर ध्यान और आध्यात्मिक ग्रंथों के अध्ययन और चिंतन में लगे रहने से परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है ।
17. पानी का अपना गुण ठंडा है । आज के संसर्ग से गर्म हो जाता है आग से संसर्ग हटने से पानी फिर ठंडा हो जाता है । जमा हुआ घी आग के संसर्ग से तरल बन जाता है ।
18. आकाश का गुण शब्द है ।
19. शरीर में स्थित आत्मा की प्रेरणा से शरीर के हाथ आदि अंग काम करते हैं ।
20. शरीर के बाहर भी क्रियाएं होती है । हवा से घास के तिनके हिलते हैं , चुंबक के कारण लोहा खिंचा चला आता है । इसके लिए परमात्मा कारण है जो अदृश्य कारण है । पृथ्वी की गति , भूकंप आदि ईश्वरीय

Edit with WPS Office

व्यवस्था का परिणाम है ।

21. पानी ऊपर से नीचे को बहता है । परंतु सूर्य और हवा के साथ पानी ऊपर को जाकर बादल बनता है । वृक्षों में भी पानी नीचे से ऊपर को चढ़ता है ।
22. आग की ज्वाला ऊपर की ओर जाती है , पानी ऊपर से नीचे को बहता है और हवा तिरछी बहती है ।
23. अनुकूल पदार्थ की प्राप्ति होने पर मनुष्य सुख का अनुभव करता है तथा प्रतिकूल पदार्थ की प्राप्ति से दुख का अनुभव करता है ।
24. मन अत्यधिक चंचल है ।
25. जब मन बाहरी विषयों की ओर प्रवृत्त न होकर आत्मा में स्थित हो जाता है , तब एक मात्र आत्मचिंतन में लग जाता है , मन एकाग्र हो जाता है । ऐसी स्थिति में शरीर को सुख-दुख नहीं होता । ऐसी स्थिति को ही योग या समाधि कहते हैं ।
26. बाहरी विषयों से संपर्क टूटने पर मन की चंचलता प्राप्त होती है ।
27. शरीर से चेतन आत्मा पृथक है जब साधक यह अनुभव करने लगता है तब मिथ्या ज्ञान से होने वाले कर्मों से वह निवृत्त हो जाता है । कर्मों से निवृत्ति होने से मनुष्य मोक्ष पाने में सफल हो जाता है ।
28. धर्म का आचरण करने से मनुष्य की उन्नति होती है और अधर्म का आचरण करने से मनुष्य का पतन होता है ।
29. जिस परमात्मा ने सृष्टि की रचना की है , वही परमात्मा सृष्टि के विषयों में पूर्ण ज्ञान रखता है । इसलिए परमात्मा के ज्ञान वेद में कोई कमी नहीं है । वेदों में भ्रम या अज्ञान होने की कोई संभावना नहीं ।
30. वेदों में जिन कर्मों के करने का उपदेश है , उनके करने से आत्मा की उन्नति तथा जिन कर्मों को न करने का उपदेश है उनके करने से पतन होता है ।
31. जैसे मनुष्य अपनी उन्नति के लिए प्रयत्न करता है , वैसे ही दान देकर दूसरे की उन्नति में सहयोगी बनता है । दूसरे के कल्याण के लिए कर्म करने से आत्मा उन्नत होती है ।
32. लोक कल्याण के लिए दान देना और लोक कल्याण के लिए दूसरों से दान लेना भी चाहिए । दूसरे के धन को परोपकार के काम में लगाना

Edit with WPS Office

शुभ कर्म है ।

33. मानव समाज के उत्थान के लिए परस्पर एक दूसरे को सहयोग देना चाहिए ।
34. आत्म उन्नति को ध्यान में रखकर जो कर्म किए जाते हैं वे कर्म मोक्ष के साधन है ।
35. जिससे लौकिक और पारलौकिक सुख प्राप्त हो , उसे धर्म कहते हैं ।
36. पृथ्वी जल अग्नि वायु आदि स्थूल पदार्थों और उनके परमाणुओं का यथार्थ ज्ञान भौतिक और आध्यात्मिक सुख का साधन बन जाता है ।
37. जब प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से पदार्थों के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया जाता है उसे न्याय कहते हैं । पदार्थों के यथार्थ स्वरूप को जानने की अभिलाषा का कारण तर्क होता है ।

सांख्य , योग , मीमांसा , वेदान्त दर्शन : ______

सांख्य दर्शन : ______

1. यहां सांख्य का संबंध संख्या से नहीं , अपितु ' **सम्यक् ख्यानम्** ' अर्थात ' विशेष विचार ' है ।
2. मूल का मूल ढूंढना व्यर्थ है , क्योंकि जिसका कोई मूल न हो उसी को मूल कहां जाता है ।
3. जिसमें जैसी शक्ति है वह वैसे ही कार्य उत्पन्न कर सकता है । पीपल के पेड़ से पीपल का पेड़ ही उत्पन्न हो सकता है । कार्य पूरी तरह कारण के गुण नहीं त्यागता ।
4. कोई भी परिणाम निरंथक नहीं है । यह संपूर्ण ब्रह्मांड जीवात्मा के लिए ही उत्पन्न हुआ है ।
5. कर्म के अनुसार जीव की योनि और भोग प्राप्त होते हैं । पूरी सृष्टि की विचित्रता कर्मों की विचित्रता के कारण ही है ।
6. हमारे कर्तव्य कर्म वे है जो हमारे आश्रम के लिए विहित है ।

Edit with WPS Office

7. जो प्रमाण से दृष्ट है , उसका कल्पना से विरोध नहीं हो सकता ।
8. संसार में दो प्रकार के तत्व है __ जड़ और चेतन । दोनों के आपसी सहयोग से ही समस्त सृष्टि गतिशील और क्रियाशील होती है ।
9. सभी भोग्य पदार्थ सृष्टि के भोगने के लिए ही निरंतर बनते रहते हैं ।
10. अभाव से भाव नहीं होता । पानी से मक्खन नहीं निकाला जा सकता ।
11. प्रकृति जड़ है । वह स्वयं कोई क्रिया नहीं कर सकती । चेतन तत्व प्रभु की शक्ति के सहयोग से ही प्रकृति जगत की रचना करती है । मिट्टी जड़ पदार्थ है , जब तक कुम्हार इसका घड़ा आदि नहीं बनाता तब तक उसका कुछ नहीं बनता ।
12. प्रकृति के भोग्य पदार्थ चेतन जीवात्मा के भोग के लिए ही है । जड़ पदार्थों का प्रयोग तो चेतन जीवात्मा ही कर सकता है ।
13. जब साधक बाहरी विषयों से स्वयं को हटा लेता है तब वह अधिक सुख और पूर्ण शांति को प्राप्त करके प्रसन्न रहता है । इस स्थिति में आत्मा अपने स्वरूप में लीन हो जाता है ।
14. जन्म और मृत्यु के समय सूक्ष्म शरीर आत्मा के साथ ही रहता है । मोक्ष की प्राप्ति होने पर स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर से जीवात्मा स्वतंत्र हो जाता है । विवेक ज्ञान की प्राप्ति होने पर मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है ।
15. धारणा ___ मन को शरीर के किसी एक स्थान पर टिका कर एकाग्रता प्राप्त करना धारणा है । धारणा द्वारा ध्यान का अभ्यास करते रहने से समाधि की अवस्था तक पहुंचकर आत्म साक्षात्कार किया जा सकता है ।
16. जीवन में अधिक वस्तुएं इकट्ठा करना , उनके प्रति मोह होने से साधना में बांधा पड़ती है । जिन वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती उनको प्रसन्नता से त्याग देने अथवा बाट देने में सुख और उल्लास की प्राप्ति होती है ।
17. केवल चिंतन - मनन करने से आत्म - ज्ञान प्राप्त नहीं होता , इसके लिए भौतिक विषयों की इच्छाओं का त्याग भी करना पड़ता है । जब दृढ़ संकल्प से इनको त्याग दिया जाता है तब मन शुद्ध और निर्मल

Edit with WPS Office

होता जाता है और आत्मज्ञान की अनुभूति होने लगती है ।

18. जैसे मैल दर्पण से किसी का मुख मण्डल स्पष्ट दिखाई नहीं देता वैसे ही मैले अर्थात अपवित्र मन से आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता । जब मन में किसी के प्रति राग - द्वेष की भावना रहती है तब भी आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होता ।
19. चित्त व मन को सदा निर्मल और पवित्र रखने के लिए पुण्य कर्म अर्थात श्रेष्ठ कर्मों को निरंतर करते रहना चाहिए । यही सज्जनता व शिष्टाचार की पहचान है । केवल श्रेष्ठ व पुण्य कर्मों के करने से ही हमें परमात्मा के प्यार की अनुभूतियां होती है । इस से मन भी प्रसन्नता व उल्लास से सदा शांत व संतुष्ट रहता है ।
20. परमात्मा सत् - चित्त - आनंद स्वरूप है । जीवात्मा केवल सत् और चित् है , इसका स्वभाव आनंद नहीं है । इसलिए इसे आनंद प्राप्त करने के लिए बहुत दौड़ धूप करनी पड़ती है ।
21. सुषुप्ति अवस्था में जब तमोगुण बढ़ जाता है तब प्राणी सुख - दुख का अनुभव नहीं करता । उस समय उसका बाहर के विषयों से संबंध नहीं रहता । प्रातः काल जागने पर वह कहता है कि आज बहुत अच्छी नींद आई । सुषुप्ति में अमीर - गरीब , ज्ञानी - मूर्ख सबकी अवस्था एक समान होती है ।
22. यम - नियम का निरंतर अभ्यास करने से वैराग्य की अनुभूति होने लगती है ।
23. स्फटिक मणि का अपना कोई रंग नहीं होता । उसके सामने जिस रंग का फूल रख दिया जाए वह उसी रंग का दिखाई देने लगता है । आत्मा का स्वरूप शुद्ध , निर्मल और पवित्र है । परंतु बुद्धि उसके सामने जैसा विषय रखती है उसका स्वरूप वैसा ही दिखाई देने लगता है ।

योग दर्शन : ______

1. आत्मा और परमात्मा के मिलन को योग कहते हैं ।
2. सृष्टि के निर्माण के बाद ऋषियों ने वेद के रूप में ईश्वर से ही ज्ञान प्राप्त किया था । इसलिए ईश्वर गुरुओं का भी गुरु है ।

Edit with WPS Office

3. अपने कर्तव्यों को धर्म के अनुसार पूर्ण करने से दुखों की निवृत्ति हो जाती है । फिर सहज में मोक्ष की प्राप्ति का आनंद प्राप्त होने लगता है ।
4. सुखी व संपन्न व्यक्ति के साथ मित्रता के भाव रखें ।
दुखी व्यक्ति के प्रति दया के भाव रखें ।
सज्जन के प्रति मन में प्रसन्नता व उल्लास के भाव रखें ।
पापियों के प्रति उपेक्षा का भाव रखें ।

5.सुख-दुख , लाभ हानि , मान अपमान आदि द्वन्द्वों को धैर्य व संयम से सहन करते रहना ही तप कहा जाता है ।

6. आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना - पढ़ाना , उनके अनुसार अपनी जीवन शैली बनाना ही स्वाध्याय है ।

7. किसी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा ही राग कहलाता है ।

8. बुद्धि और आत्मा समान रूप से पवित्र होने पर जीवात्मा मुक्ति को प्राप्त करता है ।

9. कर्मों के तीन भाग ___

क___ क्रियमाण : जो कर्म मनुष्य द्वारा किए जा रहे हैं ।
ख ___ संचित : जिन कर्मों का फल अभी मिला नहीं ।
ग ___ प्रारब्ध : जिन कर्मों का फल भोगा जा रहा है ।

10. जीवात्मा जो शुभाशुभ कर्म करता है उनके संस्कार चित्त पर पड़ते हैं । फिर यही संस्कार पाप - पुण्य कर्म करने का कारण बनते हैं ।

11. लाभ - हानि , मान - अपमान आदि का प्रभाव जीवात्मा पर पड़ता है , चित्त पर नहीं पड़ता ।

मीमांसा दर्शन : ______

1. किसी पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को मन में जानने की अभिलाषा को मीमांसा कहा जाता है ।
2. किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करना हो तो पहले उसके विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए । फिर उस ज्ञान के अनुसार श्रद्धा , निष्ठा व विश्वास से काम करते रहने से ही सफलता मिल सकती है ।

Edit with WPS Office

3. परमात्मा जगत की उत्पत्ति , पालन , और प्रलय करता है । साथ ही जीवन को सुखी , संतुष्ट व ऐश्वर्याशाली बनाने के लिए वेदों का ज्ञान देता है ।

4. ऋग्वेद उसे कहते हैं जिसमें छन्द्रोबद्ध मन्त्र होते हैं ।

जिन मन्त्रों को गाया जाता है , उन्हें साम कहते हैं ।

जो मंत्र छंद शास्त्र के अनुसार नहीं है और जो गाए नहीं जाते वे यजु कहलाते हैं ।

जिन मंत्रों का अर्थ सरल और स्पष्ट होता है वे अथर्ववेद कहलाते हैं

5. यज्ञ के फल का अधिकारी तो केवल यजमान ही होता है ।

6. अपनी इच्छा अनुसार कर्म करने को पुरुषार्थ कहा जाता है ।

7. जैसे सूर्य के प्रकाश पर स्त्री - पुरुष दोनों का अधिकार है वैसे ही वेद ज्ञान पर भी स्त्री - पुरुष दोनों का अधिकार है ।

8. जैसे बीज के अनुसार ही फल होता है ऐसे ही कर्म के अनुसार ही फल मिलता है ।

वेदांत दर्शन : ______

1. वेदांत ___ जिस में वेद के अंतिम सिद्धांतों व लक्ष्य का उल्लेख किया गया है । वेदों के स्वाध्याय से ब्रह्म के जिस परम स्वरूप को जाना जाता है उस का उल्लेख जिस ग्रंथ में है उसे वेदांत दर्शन कहते हैं ।
2. सृष्टि में जड़ - चेतन में जो विधि - विधान है वैसा ही वेदों का ज्ञान है । ऐसा इसलिए है कि दोनों का कर्ता - धर्ता एक परमेश्वर ही है । आंखों से देखा जाता है , कानों से सुना जाता है । वेदों में भी ऐसा ही बताया गया है ।
3. ब्रह्म के समीप जाने से आनंद का अनुभव होता है क्योंकि ब्रह्म आनंद स्वरूप है ।
4. मिट्टी से घड़ा बनता है । जो गुण मिट्टी में है वही गुण घड़े में है ।
5. संसार में सुख-दुख आदि विषमता और भिन्नता का कारण परमात्मा नहीं , मनुष्य के अपने अच्छे बुरे कर्म हैं ।
6. शरीर की रचना पांच भूतों ___ अग्नि , जल , वायु , पृथ्वी , आकाश

Edit with WPS Office

से हुई है । इसलिए इसे पांच भौतिक शरीर कहते हैं । इसमें पृथ्वी का अंश अधिक है इसलिए इसे पार्थिव शरीर भी कहते हैं ।

7. जब जीवात्मा मृत्यु के समय एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर में जाता है तब वह अकेला नहीं जाता , उसके साथ सूक्ष्म शरीर भी जाता है । मनुष्य शरीर में किए पुण्य - पाप के संस्कार सूक्ष्म शरीर में संचित होते हैं । वे भी पुनर्जन्म में साथ रहते हैं ।

8. मोक्ष में आत्मा अपनी संकल्प शक्ति से आनंद को प्राप्त करता है , जैसे जीवात्मा स्वप्न में शरीर और इंद्रियों के बिना ही सुख-दुख की अनुभूति करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 120.मनुस्मृति के महत्वपूर्ण उपदेश

1. मनुस्मृति. 1.120

भावार्थ : जिसका सेवन राग द्वेष रहित विद्वान लोग नित्य करें , जिसको हृदय अर्थात आत्मा से सत्य कर्तव्य जाने वही धर्म माननीय और करणीय है ।

2. मनुस्मृति. 1.121

भावार्थ : क्योंकि इस संसार में अत्यंत कामात्मता और निष्कामता श्रेष्ठ नहीं है । वेदांर्थज्ञान और वेदोक्त कर्म ये सब कामना से ही सिद्ध होते हैं ।

Edit with WPS Office

3. **मनुस्मृति. 1.131**
भावार्थ : वेद , स्मृति , सत्पुरुषों का आचार और अपने आत्मा के ज्ञान से अविरुद्ध प्रियाचरण ___ ये चार धर्म के लक्षण है अर्थात इन्हीं से धर्म लक्षित होता है ।

4. **मनुस्मृति. 2.31**
भावार्थ : न किसी को अपना जूठा पदार्थ दे और उसी प्रकार न किसी के भोजन के बीच आप खावे , न अधिक भोजन करें और न भोजन किए पश्चात हाथ मुख धोये बिना कहीं इधर-उधर जाए ।

5. **मनुस्मृति. 2.63**
भावार्थ : जैसे विद्वान सारथी घोड़ों को नियम में रखता है वैसे मन और आत्मा को खोंटे कार्यों में खेंचने वाले विषयों में विचरती हुई इंद्रियों के निग्रह में प्रयत्न सब प्रकार से करें ।

6. **मनुस्मृति. 2.77**
भावार्थ : प्रातः कालीन संध्या में बैठकर जप करके रात्रि कालीन मानसिक मलीनता या दोषों को दूर करता है । सायंकालीन संध्या करके दिन में संचित मानसिक मलीनता या दोषों को नष्ट करता है ।

7. **मनुस्मृति. 2.136**
भावार्थ : मनुष्य स्वयं दुखी होता हुआ भी किसी दूसरे को कष्ट न पहुंचाने , न दूसरे के प्रति ईर्ष्या या बुरा करने की भावना मन में लायें । जिस वचन से कोई दुखी हो ऐसी वाणी न बोले ।

8. **मनुस्मृति. 2.188**
भावार्थ : इस संसार में यह स्वाभाविक ही है कि स्त्री पुरुषों का परस्पर के संसर्ग से दूषण हो जाता है ___ दोष लग जाता है । इस कारण से बुद्धिमान व्यक्ति स्त्रियों के साथ व्यवहारों में कभी असावधानी नहीं करते ।

Edit with WPS Office

9. मनुस्मृति. 2.190

भावार्थ : माता , बहिन अथवा स्त्री के साथ भी एकांत आसन पर न बैठे या न रहें । शक्तिशाली इंद्रियां विवेकी व्यक्ति को भी खींचकर अपने वश में कर लेती है ।

10. मनुस्मृति. 3.55

भावार्थ : पिता , भाई , पति और देवर को योग्य है कि अपनी कन्या , बहन , स्त्री और भौजाई आदि स्त्रियों की सदा पूजा करें । अर्थात यथा योग्य मधुर भाषण , भोजन , वस्त्र , आभूषण आदि से प्रसन्न रखें । जिनकी कल्याण की इच्छा हो वे स्त्रियों को क्लेश कभी न देवें ।

11. मनुस्मृति. 3.56

भावार्थ : जिस कुल में नारियों की पूजा अर्थात सत्कार होता है उस कुल में दिव्यगुण ___ दिव्य भोग और उत्तम संतान होती है । जिस कुल में स्त्रियों का सम्मान नहीं होता वहां जानों उनकी सब क्रिया निष्फल है ।

12. मनुस्मृति. 3.60

भावार्थ : जिस कुल में पत्नी से प्रसन्न पति और पति से पत्नी सदा प्रसन्न रहती है । उसी कुल में निश्चित कल्याण होता है ।

13. मनुस्मृति. 4.11

भावार्थ : जीविका के लिए भी कभी शास्त्र विरुद्ध लोकाचार का बर्ताव न करें । जिसमें किसी प्रकार की कुटिलता , मूर्खता , झूठ या अधर्म न हो उस वेदोक्त कार्य संबंधी जीविका को करें ।

14. मनुस्मृति. 4.19

भावार्थ : जो धर्म - धन और बुद्धि आदि को अत्यंत शीघ्र बढ़ाने वाले हितकारी शास्त्र है उनको और वेद के भागों की विधाओं को नित्य देखा करो ।

Edit with WPS Office

15. **मनुस्मृति. 4.30**
भावार्थ : पाखंडी , वेदों की आज्ञा के विरुद्ध चलने वाले , बिल्ले की मानसिकता वाले , धोखेबाज , बकवास करने वाले और बगुला भगत मनुष्यों का वाणी से भी सत्कार नहीं करना चाहिए ।

16. **मनुस्मृति. 4.35**
भावार्थ : केश , नाखून और दाढ़ी कटवाता रहे , सहनशील रहे , सफेद कपड़े पहने , सफाई रखें और प्रतिदिन वेदों के स्वाध्याय में और अपनी उन्नति में लगा रहे ।

17. **मनुस्मृति. 4.40**
भावार्थ : कामातुर होता हुआ भी मासिक धर्म के दोनों में स्त्री से उपभोग न करें और उसके साथ एक बिस्तर पर न सोएं ।

18. **मनुस्मृति. 4.137**
भावार्थ : पहले धनवान हो फिर गरीब हो जाएं , उससे अपनी आत्मा का अपमान न करें , किंतु मरने तक धन की प्राप्ति के लिए पुरुषार्थ किया करें । लक्ष्मी को दुर्लभ न समझे ।

19. **मनुस्मृति. 4.138**
भावार्थ : सदा प्रिय सत्य दूसरे का हितकारक बोलें , अप्रिय सत्य न बोले । दूसरे को प्रसन्न करने के लिए झूठ न बोलें । यह सनातन धर्म है ।

20. **मनुस्मृति. 4.139**
भावार्थ : सदा सबके हितकारी वचन बोला करें । जो - जो दूसरे का हितकारी हो और बुरा भी माने तथापि कहे बिना न रहे । बिना अपराध किसी के साथ विरोध या विवाद न करें ।

21. **मनुस्मृति. 4.161**
भावार्थ : जिस कर्म के करने से मनुष्य की आत्मा को सन्तुष्टि एवं प्रसन्नता

Edit with WPS Office

अनुभव हो उस - उस कर्म को प्रयत्न पूर्वक करें । जिसमें संतुष्टि एवं प्रसन्नता न हो उस कार्य को न करें ।

22. मनुस्मृति. 4.171

भावार्थ : धर्म आचरण से कष्ट उठाता हुआ भी अधर्म में मन को न लगावें । अधार्मिक पापियों का शीघ्र ही विनाश होता है ।

23. मनुस्मृति. 4.172

भावार्थ : इस संसार में जैसे गाय की सेवा का फल दूध आदि शीघ्र प्राप्त नहीं होता , वैसे ही किए हुए अधर्म का फल भी शीघ्र नहीं होता । किन्तु धीरे -धीरे अधर्मकर्ता के सुख के मूलों को काट देता है ।

24. मनुस्मृति. 4.177

भावार्थ : हाथ - पैरों से चंचलता के कार्य न करें , आंखों से चंचलता युक्त काम न करें , कुटिलता न करें , वाणी से चपलता न करें और दूसरों की हानि या द्वेष के कार्यों में मन लगाने वाला न बने ।

25. मनुस्मृति. 4.194

भावार्थ : जैसे पत्थर की नौका पर बैठकर जल में तरने वाला डूब जाता है वैसे अज्ञानी दाता और गृहीता दोनों दुख को प्राप्त होते ।

26. मनुस्मृति. 4.233

भावार्थ : संसार में जितने दान है अर्थात जल , अग्नि , गौ , पृथिवी , वस्त्र , तिल , सुवर्ण और घी आदि सब दानों से वेदविद्या का दान अति श्रेष्ठ है ।

27. मनुस्मृति. 5.51

भावार्थ : मारने की आज्ञा देने वाला , मांस को काटने वाला , पशु को मारने वाला , पशुओं को मारने के लिए मोल लेने वाला और बेचने वाला , मांस को पकाने वाला , परोसने वाला और खानें वाला ___ ये सब हत्यारे और पापी है ।

Edit with WPS Office

28. मनुस्मृति. 5.106

भावार्थ : जो धर्म ही से पदार्थों का संचय करना है वहीं सब पवित्रताओं में उत्तम पवित्रता है । जल , मिट्टी , आदि से जो पवित्रता होती हैं , वह धर्म के समान उत्तम नहीं होती है ।

29. मनुस्मृति. 5.109

भावार्थ : जल से शरीर के बाहर के अंग , सत्याचरण से मन , विधा और तप अर्थात सब प्रकार के कष्ट भी सहकर धर्म ही के मार्ग पर चलने से जीवात्मा , ज्ञान से बुद्धि दृढ़ निश्चय पवित्र होती हैं ।

30. मनुस्मृति. 5.165

भावार्थ : जो स्त्री मन , वाणी और शरीर को संयम में रखकर पति के विरुद्ध आचरण नहीं करती वह पति के हृदय में आदर का स्थान पाती है और श्रेष्ठ लोग अच्छी पत्नी कहकर उसकी प्रशंसा करते हैं ।

31. मनुस्मृति. 6.64

भावार्थ : यह निश्चित है कि प्राणियों को सभी प्रकार के दुख अधर्म से ही मिलते हैं और अक्षय सुखों की प्राप्ति केवल धर्म से ही होती है ।

32. मनुस्मृति. 6.71

भावार्थ : जैसे अग्नि में तपाने और गलाने से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं वैसे ही प्राणों के निग्रह से मन आदि इंद्रियों के दोष भस्मीभूत हो जाते हैं ।

33. मनुस्मृति. 6.92

भावार्थ :

- धृति ___ सदा धैर्य रखना ।
- क्षमा ___ निन्दा _ स्तुति _ मान _ अपमान , हानि - लाभ में सहनशील रहना ।
- दम: ___ मन को अधर्म से हटाकर धर्म में लगाना ।

Edit with WPS Office

- अस्तेय ___ चोरी त्याग अर्थात बिना आज्ञा के तथा छल - कपट से दूसरे का पदार्थ न लेना ।
- शौच ___ राग - द्वेष छोड़के मन की तथा पानी आदि से बाहर की पवित्रता ।
- इंद्रिय निग्रह ___ इंद्रियों को अधर्म से हटाके धर्म में लगाना ।
- धी: ___ बुद्धिनाशक मादक द्रव्य , दुष्टों का संग , आलस्य आदि छोड़के श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन , सज्जनों का संग आदि से बुद्धि बढ़ाना ।
- विधा ___ यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना और उनसे यथायोग्य उपकार लेना ।
- सत्य ___ जो पदार्थ जैसा हो उसको वैसा ही मानना , बोलना और वैसा ही करना ।
- अक्रोध ___ क्रोध को छोड़के शान्ति के गुणों को अपनाना ।

34. मनुस्मृति. 7.103

भावार्थ : जिस राजा के राज्य में सर्वदा दण्ड प्रयोग का निश्चय रहता है उसमे सारा जगत भयभीत रहता है । इसलिए राजा सब प्राणियों को दण्ड के भय से अनुशासन में रखें ।

35. मनुस्मृति. 7.110

भावार्थ : जैसे धान्य का निकालने वाला छिलकों को अलग कर धान्य की रक्षा करता है वैसे राजा चोरों , डाकुओं को मारे और राज्य की रक्षा करें ।

36. मनुस्मृति. 7.123

भावार्थ : प्राय: राजा के द्वारा प्रजा की रक्षा के लिए नियुक्त राजसेवक दूसरों के धन की लालची अर्थात रिश्वतखोर और ठग या धोखा करने वाले हो जाते हैं । राजा ऐसे राजपुरुषों से अपनी प्रजाओं की रक्षा करें अर्थात ऐसे प्रयत्न करें कि वे प्रजाओं के साथ ऐसा बर्ताव न कर पाएं ।

37. मनुस्मृति. 7.124

भावार्थ : पापी मन वाले , रिश्वतखोर और ठग राजपुरुष यदि काम कराने वालों और मुकदमे वालों से रिश्वत ले ही ले तो उनका सब कुछ अपहरण

Edit with WPS Office

करके राजा उन्हें देश निकाल दे ।

38. मनुस्मृति. 7.129

भावार्थ : जैसे जोंक , बछड़ा और भंवरा थोड़े-थोड़े भोग्य पदार्थों को ग्रहण करते हैं , वैसे राजा प्रजा से थोड़ा-थोड़ा वार्षिक कर लेवे ।

39. मनुस्मृति. 8.14

भावार्थ : जिस सभा में बैठे हुए सभासदों के सामने अधर्म से धर्म का और झूठ से सत्य का हनन होता है , उस सभा में सब सभासद मरें से ही है ।

40. मनुस्मृति. 8.15

भावार्थ : मरा हुआ धर्म मारने वाले का नाश करता है , रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करने वाले की रक्षा करता है । इसलिए धर्म का हनन नहीं करना चाहिए इस डर से कि मरा हुआ धर्म हमको न मार डाले ।

41. मनुस्मृति. 8.17

भावार्थ : इस संसार में धर्म ही मित्र है जो मृत्यु के पश्चात भी साथ चलता है । और सब पदार्थ वह संगी शरीर के नाश के साथ ही नाश हो जातें हैं , अर्थात साथ छोड़ देते हैं ।

42. मनुस्मृति. 8.91

भावार्थ : हे कल्याण की इच्छा करने हारे पुरुष ! जो तू ' मैं अकेला हूं ' ऐसा अपने आत्मा में मानता है , सो ठीक नहीं । तेरे हृदय में पुण्य - पाप का का देखने वाला परमात्मा सदा स्थित है ।

43. मनुस्मृति. 8.140

भावार्थ : ब्याज लेने वाला मनुष्य सवा रुपया सैकड़ा मासिक ब्याज ले , इससे अधिक नहीं ।

44. मनुस्मृति. 8.222

Edit with WPS Office

भावार्थ : किसी वस्तु को खरीदकर वा बेचकर जिस व्यक्ति को पश्चाताप हो वह 10 दिन के भीतर उस वस्तु को लौटा दे अथवा लौटा ले ।

45. मनुस्मृति. 8 _ 336.337.338

भावार्थ : जिस अपराध में साधारण मनुष्य पर एक रुपया दण्ड हो उसी अपराध में राजा पर एक हजार रुपया दण्ड हो अर्थात साधारण मनुष्य से राजा पर एक हजार गुणा दण्ड होना चाहिए ।

46. मनुस्मृति. 8.351

भावार्थ : दुष्ट पुरुषों के मारने में हन्ता को पाप नहीं लगता , चाहे प्रसिद्ध मारें चाहे अप्रसिद्ध (सबके सामने या एकान्त में) क्योंकि क्रोध को क्रोध से मारना जानो क्रोध से क्रोध की लड़ाई है ।

47. मनुस्मृति. 9.11

भावार्थ : अपनी स्त्री को धन की संभाल और उसके व्यय की जिम्मेदारी में , घर एवं घर के पदार्थों की शुद्धि में , अग्निहोत्र आदि धर्म सम्बन्धी कार्यों में , भोजन पकाने में , घर की सभी वस्तुओं की देखभाल में लगाएं ।

48. मनुस्मृति. 9.28

भावार्थ : सन्तानोंत्पति धर्म - कार्य , उत्तम सेवा और रति तथा अपना और पितरों का जितना सुख है वह सब स्त्री ही अधीन होता है ।

49. मनुस्मृति. 9.102

भावार्थ : विवाहित स्त्री - पुरुष सदा ऐसा यत्न करें कि किसी भी प्रकार से वे एक दूसरे से अलग न होवे , सम्बन्ध विच्छेद न हो पाए ।

50. मनुस्मृति. 9 - 221.222

भावार्थ : जड़ वस्तुओं से बाज़ी लगाकर खेलें जाने वाला और चेतन प्राणियों को दांव पर लगाकर खेलें जाने वाला जूआ __ ये प्रत्यक्ष में होने वाली चोरी है । राजा इनको समाप्त करने के लिए सदा प्रयत्नशील रहें ।

Edit with WPS Office

51. मनुस्मृति. 9.227
भावार्थ : यह जुआ अब से पहले समय में भी महान शत्रुता पैदा करने वाला देखा गया है । इसलिए बुद्धिमान मनुष्य हंसी मजाक में भी जूआ न खेले ।

52. मनुस्मृति. 9.249
भावार्थ : अदण्डनीय को दंड देने पर राजा को जितना अधर्म होना शास्त्र में माना गया है उतना ही दंडनीय को छोड़ने में अधर्म होता है । न्यायानुसार दण्ड देना ही धर्म है ।

53. मनुस्मृति. 9 _ 258.259.260
भावार्थ : रिश्वतखोर , भय दिखाकर धन लेने वाले ठग , जूआ से धन लेने वाले , ' तुम्हें पुत्र या धन की प्राप्ति होगी , इत्यादि मांगलिक बातों को कहकर धन लेने वाले , साधु -सन्यासी आदि भद्ररुप धारण करके धन लेने वाले , हाथ आदि देखकर भविष्य बता कर धन लेने वाले , धन - वस्तु आदि लेकर गलत तरीकों से काम करने वाले उच्च राज कर्मचारी , अनुचित मात्रा में धन लेने वाले या अयोग्य चिकित्सक , अनुचित मात्रा में धन लेने वाले शिल्पी , धन ठगने में चतुर वेश्याएं इत्यादियो को और दूसरे जो श्रेष्ठों का वेश या चिन्ह धारण करके गुप्त रूप से विचरण करने वाले दुष्ट या बुरे व्यक्ति है ___ राजा उनको प्रजाओं को पीड़ित करने वाले चोर समझें ।

54. मनुस्मृति. 9.307
भावार्थ : जिस प्रकार मृत्यु समय आने पर प्रिय और शत्रु सबको मारती है , राजा को उसी प्रकार अपराध करने पर प्रिय - शत्रु सभी प्रजाओं को न्याय पूर्वक दंड देना चाहिए ।
55. मनुस्मृति. 10.65
भावार्थ : शूद्र ब्राह्मण और ब्राह्मण शुद्र हो जाता है , अर्थात गुणकर्मों के अनुकूल ब्राह्मण हो तो ब्राह्मण रहता है तथा जो ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र के गुण वाला हो तो वह क्षत्रिय , वैश्य और शुद्र हो जाता हैं । वैसे शूद्र

Edit with WPS Office

भी मूर्ख हो तो वह शूद्र रहता है और जो उत्तम गुण युक्त हो तो यथायोग्य ब्राह्मण , क्षत्रिय और वैश्य हो जाता है । वैसे ही क्षत्रिय और वैश्य के विषय में भी जान लेना ।

56. मनुस्मृति. 11.229

भावार्थ : मनुष्य का मन - आत्मा जैसे-जैसे किए हुए पाप को धिक्कारता है , वैसे वैसे उसका शरीर उस अधर्म से मुक्त होता जाता है अर्थात बुरे कर्म को बुरा मान कर उसके प्रति ग्लानि होने से बुरे कार्य करने से निवृत्ति होती है ।

57. मनुस्मृति. 12.8

भावार्थ : यह जीव मन से जिस शुभ वा अशुभ कर्म को करता है , उसकी मन से , वाणी से किए को वाणी से और शरीर से किए को शरीर से सुख दुख को भोगता है ।

58. मनुस्मृति. 12.25

भावार्थ : सत्व , रज ,तम ___ जो गुण जीवों के शरीर में अधिकता से बर्ताता है वह गुण उस जीव को अपने जैसा कर लेता है ।

59. मनुस्मृति. 12.40

भावार्थ : **सत्वगुण ___** जब आत्मा में ज्ञान , प्रसन्नता , वेदों का अभ्यास , धर्मानुष्ठान , ज्ञान की वृद्धि ___ पवित्रता की इच्छा , इन्द्रियं निग्रह हो ,मन प्रसन्न , शान्त हो ।

रजोगुण ___ जब राग - द्वेष में आत्मा लगें , जब आत्मा और मन दुख संयुक्त , प्रसन्नतारहित , विषयों में इधर-उधर गमनागमन में लगे , धैर्य त्याग , असत् कर्मों का ग्रहण , निरंतर विषयों में प्रीति हो , अर्थ संग्रह की इच्छा हो ।

तमोगुण ___ जब आत्मा में अज्ञान रहे , सांसारिक पदार्थों में फंसा हुआ आत्मा और मन हो , जब आत्मा और मन में कुछ विवेक न हो , विषयों में आसक्त , तर्क- वितर्क रहित , जानने के योग्य न हो , अत्यंत आलस्य हो ।

Edit with WPS Office

(12 -26 से 32) तमोगुण से रजोगुण और रजोगुण से सतोगुण श्रेष्ठ है ।

60. मनुस्मृति. 12.40
भावार्थ : जो मनुष्य सात्विक है , वह देव अर्थात विद्वान , जो रजोगुणी होते हैं वे मध्यम मनुष्य और जो तमोगुणी होते हैं वे नीच गति को प्राप्त होते हैं ।

61. मनुस्मृति. 12.102
भावार्थ : जैसे धधकती हुई आग गीले वृक्षों को भी जला देती है , उसी प्रकार वेद ज्ञाता विद्वान अपने कर्मों से उत्पन्न होने वाले दुष्ट संस्कारों को मिटा देता है ।

62. मनुस्मृति. 12.106
भावार्थ : जो मनुष्य ऋषिप्रोक्त धर्मोंपदेश अर्थात धर्मशास्त्र का वेद शास्त्र के अनुकूल तर्क के द्वारा अनुसंधान करता है , वही धर्म के तत्व को समझ पाता है , और कोई नहीं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 121. वेदों में नदियों का प्रतीकात्मक अर्थ : गंगा , यमुना और सरस्वती का योगिक रहस्य

Edit with WPS Office

वेदों में गंगा , यमुना , सरस्वती का उल्लेख बार-बार आता है , लेकिन इसे एक भौगोलिक नदी तक सीमित कर देना वेदों की व्यापकता और उनके योगिक अर्थो को सीमित करने जैसा है । यदि हम गंगा जमुना सरस्वती शब्द के वैदिक संदर्भ और व्याख्याओं को सही दृष्टिकोण से समझे , तो यह स्पष्ट होता है कि इसका आध्यात्मिक और दार्शनिक अर्थ कहीं अधिक गहरा है । वेदों और वैदिक साहित्य में गंगा जमुना सरस्वती और अन्य नदियों का उल्लेख प्रतीकात्मक रूप से हुआ है । ये नाम केवल भौगोलिक नदियों के संकेतक नहीं है , बल्कि गहरे आध्यात्मिक और प्रतीकात्मक अर्थ लिए हुए हैं । वैदिक ऋषियों ने इन नदियों को मानव चेतना , शरीर और आत्मा के परिष्करण की धारा के रूप में प्रस्तुत किया है ______

वेद शाश्वत है

वेदों को शाश्वत माना गया है । वह किसी विशेष व्यक्ति , स्थान या वस्तु पर निर्भर नहीं है , क्योंकि ये सनातन ज्ञान के प्रतीक हैं । सांसारिक वस्तुएं , चाहे वे नदिया हो , पर्वत हो या व्यक्ति , अनित्य है अर्थात उनका अस्तित्व नश्वर है । इसलिए वेदों के शब्दों को किसी भौगोलिक या ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बांधना , वेदों की गहराई को समझे बिना उनकी व्याख्या करने जैसा है ।

सांसारिक नामों की उत्पत्ति वेदों से हुई है

वेदों के शब्द योगिक होते हैं , न कि रुढ । किसी वस्तु या स्थान का नाम उस वस्तु या स्थान के गुणों या विशेषताओं के आधार पर रखा जाता है । उदाहरण के लिए , " सरस्वती " शब्द का अर्थ "सरस " (प्रवाहमान , संजीव) और " वती " (युक्त) है । अतः सरस्वती का अर्थ केवल एक नदी नहीं , बल्कि वह ज्ञान है जो प्रवाहमान और जागृत है । यह व्याख्या स्पष्ट करती है कि संसार में कई वस्तुओं के नाम वेदों में निहित शब्दों से प्रेरित है , न कि वेदों की रचना उनके बाद हुई है ।

Edit with WPS Office

मनु का प्रमाण :

" सर्वेषा तु स नामानि कर्माणि च पृथक पृथक ।
वेद शब्देभ्य: एवादौ पृथक संस्थाश्व निर्ममे ।। "

- मनुस्मृति के इस श्लोक के अनुसार , संसार के समस्त नाम और कर्म वेदों के शब्दों पर आधारित है ।

- वेदों के शब्द योगिक हैं , रुढ नहीं ।

हम प्रचलित भाषा में ' **नदी** ' शब्द को एक जल प्रवाह से जोड़ते हैं , क्योंकि यह एक रुढ अर्थ है , लेकिन वेदों में शब्दों के अर्थ उनके घटकों में छुपे होते हैं ।

' नदी ' का योगिक अर्थ : ______

" नद " अर्थात **" नाद करने वाली "** । जो प्रवाहमान हो , गति करें और ध्वनि उत्पन्न करें , वह नदी है ।
इसी प्रकार ' सरस्वती ' का अर्थ केवल एक भौगोलिक नदी नहीं , बल्कि " प्रवाहमान वाणी " है । यह व्याख्या वैदिक विद्वानों जैसे महर्षि यास्क , महर्षि स्वामी दयानंद और अन्य ऋषियों द्वारा प्रमाणित की गई है ।

4. वेदों में सरस्वती के विभिन्न अर्थ : ______

वेदों में सरस्वती के कई आयाम है , जो उसके गहन अर्थों को दर्शाते हैं ।

1. **" वाणी रुप सरस्वती :**

   " वाक् सरस्वती ।। " **(शतपथ ब्राह्मण. 7.5.1.31)**

   अर्थात वाणी सरस्वती है । ज्ञान और वाणी का प्रवाह ही सरस्वती का प्रतीक है ।

2. **ज्ञानमयी सरस्वती :**

Edit with WPS Office

" ऋक्सामे वै सारस्वतौ उत्सौ । " **(तैत्तिरीय ब्राह्मण. 1.7.5.5)**
ऋक् और साम वेद सरस्वती के स्रोत हैं ।
यहां सरस्वती का अर्थ वेदवाणी और ज्ञान से है ।

3. आध्यात्मिक नाद:

अग्नि जब जलता हुआ ध्वनि करता है , उसे " सारस्वत रुप " कहां गया है ।

" स्फूर्जयन् वाचमिव वदन् दहति । " **(ऐतरेय ब्राह्मण. 3.4)**

4. नाड़ी तंत्र में सरस्वती :

" योग दर्शन में " सरस्वती " का गहरा अर्थ है । इड़ा पिंगला और सुषुम्ना नाड़ियों के संदर्भ में सरस्वती का उल्लेख आता है ।

5. सरस्वती का आध्यात्मिक प्रभाव : ______

ऋग्वेद. 7.95.2 के मंत्र में सरस्वती को इस प्रकार वर्णित किया गया है ;

" एका चेतत् सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य: आ समुद्रात ।
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेघृतं पयो दुदुहे नाहुषाय ।।

यहां " सरस्वती " का अर्थ " ज्ञानवती " प्रभु वाणी से है , जो गुरु रूपी गिरियों से निकलकर जनसमूह रूपी सागर तक जाती है । इसका तात्पर्य है कि सरस्वती के माध्यम से संसार में ज्ञान का प्रकाश फैलता है ।

- स्वामी दयानंद ने इस मंत्र का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखा है कि यह "**ज्ञान रूपी धारा** " है । न की भौगोलिक नदी ।

6. दस नदियों और यौगिक अर्थ : ______

Edit with WPS Office

" इमं में गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्णया ।। "

यहां दस नदियों का उल्लेख प्रतीकात्मक रूप से किया गया है । निरुक्त. 5.26 में स्पष्ट कहा गया है कि ;

- गंगा : गमनशील ऊर्जा
- सरस्वती : ज्ञान की प्रवाहमयी धार

स्वामी दयानंद ने इस मंत्र में नाड़ियों **(इड़ा पिंगला सुषुम्ना)** के संदर्भ में इन शब्दों में इन शब्दों का विश्लेषण किया ।

सरस्वती का गूढ़ आध्यात्मिक स्वरूप : अद्वितीय ज्ञान की धारा

सरस्वती , वेदों में केवल भौतिक नदी तक सीमित नहीं है , बल्कि इसका स्वरूप वाणी , ज्ञान और आध्यात्मिक ऊर्जा का प्रतीक है । परंपरागत वैदिक व्याख्याओं मैं भी इस वाणी या ज्ञान स्रोत के रूप में स्वीकार किया गया है । जब हम वेदों और उपवेदिक ग्रंथों में सरस्वती के विभिन्न संदर्भों को देखते हैं , तो इसके गहरे आध्यात्मिक और प्रतीकात्मक अर्थ स्पष्ट हो जाते हैं ।

7. सरस्वती : चेतना की प्रवाहमयी धारा : ______

सरस्वती का स्वरूप केवल भौगोलिक दृष्टि से नदी के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए । ऋग्वेद , ब्राह्मण ग्रंथ , और निरुक्त में इसके दिव्य वाणी , ज्ञान स्त्रोत और आध्यात्मिक शक्ति के प्रतीक रूप को विस्तार से बताया गया है ।

ऋग्वेद. 6.61.12

" विश्वा स्वसृ: सप्त धातवो सरस्वती । "

भावार्थ : यहां सप्त स्वसृ (सात बहने) और सप्त धातु (सात तत्व) का उल्लेख वेद वाणी के सात स्वरुपों कीऔर संकेत करता है , न कि भौगोलिक नदियों की ओर ।

Edit with WPS Office

- यहां ' सप्त स्वसृ ' का तात्पर्य गायत्री , त्रिष्टुप , जगती , अनुष्टुप , पंक्ति , बृहती और उष्णिक जैसे छंदों से है , जो वेदों की वाणी के सात आयाम है ।

8. ज्ञान स्त्रोत : इड़ा , पिंगला और सुषुम्ना का संदर्भ : ______

योग और वैदिक तंत्रों में सरस्वती का अर्थ आध्यात्मिक ऊर्जा के प्रवाह से भी जोड़ा जाता है । स्वामी दयानंद ने स्पष्ट किया है कि सरस्वती का यौगिक अर्थ " **ज्ञान की प्रवाहमयी धारा " है ,** जो मानव शरीर की प्रमुख नाड़ियों (इड़ा , पिंगला , और सुषुम्ना) के माध्यम से बहती है ।

" सितासिते यत्र संगमे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति । "
(वैदिक श्लोक का भावार्थ) : जहां दो नाड़ियों **(सित - इड़ा और असित - पिंगला)** का मिलन होता है , वहां योगी मोक्ष (दिवम्) को प्राप्त करते हैं ।

यहां गंगा और यमुना के प्रतीकात्मक अर्थ इड़ा और पिंगला नाड़ियों के लिए प्रयुक्त हुए हैं , जबकि सरस्वती का संबंध सुषुम्ना से है ।

9. सरस्वती और ईश्वर का तात्विक संबंध : ______

वेदों के अनुसार , सरस्वती का मूल स्वरूप ईश्वर की दिव्य वाणी है । यह वाणी वह है जो आत्मज्ञान कराती है और अज्ञान के अंधकार को मिटाती है ।

ऋग्वेद. 1.164.41 ______
" द्वे वाचौ परिमिता बभूवस्तां ह देवा व्यजन्मानुष्या : । "
भावार्थ : यहां दो प्रकार की वाणियों का उल्लेख है :

- एक प्रकट (लौकिक वाणी)

Edit with WPS Office

- दूसरी अप्रकट (दिव्य वाणी) जो केवल योग साधना से ही अनुभव की जा सकती है ।
  सरस्वती का यही अप्रकट स्वरुप ईश्वर की दिव्य वाणी का प्रतीक है ।

10. सरस्वती : चेतना की पराकाष्ठा : ______

योग साधना में , जब साधक का चित्त स्थिर होता है और वह अपने भीतर के ज्ञान को अनुभव करता है , तब सरस्वती का सुषुम्ना स्वरूप प्रकट होता है । इसी बिंदु पर उसे आत्मज्ञान की प्राप्ति होती हैं ।

शतपथ ब्राह्मण . 12.9.1.14
" जिह्वा सरस्वती "
भावार्थ : जब वाणी सत्य , ज्ञान और पवित्रता से युक्त होती है , तब वह सरस्वती के समान होती है ।

11. सरस्वती का ऐतिहासिक स्वरूप और भारतीय साहित्य : ______

हालांकि वेदों में सरस्वती का प्रमुख अर्थ ज्ञान और वाणी का प्रतीक है , लेकिन प्राचीन साहित्य में इसके ऐतिहासिक संदर्भ भी मिलते हैं ।

- **मनुस्मृति. 2.17**
  " सरस्वती दृषद्वत्योदैवनधोर्यदन्तरम् ।
  तं देवनिर्मित देश ब्रह्मावर्त प्रचक्षते । " यहां सरस्वती का उल्लेख ऐतिहासिक रूप से ब्रह्मवर्त क्षेत्र में नदी के रूप में किया गया है ।
  महाभारत (वन पर्व. 3.88.2)
  " सरस्वती पुण्यवहा ह्रदिनी वनमालिनी । " महाभारत में सरस्वती नदी का बार-बार उल्लेख किया गया है । यहां पर भी सरस्वती नदी के रूप में वर्णन है ।
  वाल्मीकि रामायण.

Edit with WPS Office

वाल्मीकि रामायण में भरत के ननिहाल से अयोध्या लौटते समय सरस्वती का उल्लेख है ;

" सरस्वती च गंगा च उग्मेन प्रतिपध च । "

- वेदों के सरस्वती शब्द से ही पृथ्वी पर बहने वाली सरस्वती नदी का नाम बाद में ऋषियों द्वारा रखा गया है । यह स्पष्ट है कि सरस्वती का भौगोलिक अस्तित्व एक ऐतिहासिक तथ्य है । लेकिन वेदों में इसका अर्थ भौतिक नदी नहीं है । सरस्वती का वैदिक अर्थ ज्ञान , वाणी और आत्मिक प्रवाह से जुड़ा है ।

12. आध्यात्मिक और ऐतिहासिक सरस्वती : ______

1. **वेदों मैं सरस्वती का अर्थ** ___ वाणी , ज्ञान , ऊर्जा और दिव्य ऊर्जा का प्रवाह है ।
2. यह आध्यात्मिक रूप से **इड़ा , पिंगला और सुषुम्ना** नाड़ियों से भी जुड़ी है ।
3. भारतीय इतिहास में सरस्वती नदी का अस्तित्व प्राचीन ग्रंथो जैसे **मनुस्मृति , रामायण , महाभारत** में प्रमाणित होता है ।

सरस्वती के गूढ़ रहस्य का सार :

सरस्वती केवल एक जल धारा नहीं है , यह **ज्ञान , वाणी , आत्मज्योति** की वह धारा है , जो मानव को अज्ञान से उठाकर आत्मज्ञान के उच्चतम शिखर पर ले जाती हैं ।

13. गंगा: पवित्रता और चेतना की उधर्वगामी धारा : ______

गंगा शब्द यौगिक अर्थ है **" गम् + गम्यते "** अर्थात जो गमनशील है , जो ऊपर की ओर प्रवाहित होती हैं ।

आध्यात्मिक अर्थ :

- **गंगा के गूढ़ तात्पर्य :**

Edit with WPS Office

1. चेतना की शुद्धि : गंगा पवित्र जल की तरह मन और आत्मा की अशुद्धियों को दूर करती है ।
2. प्रकाशमय विचार : गंगा का प्रवाह सत्तोगुण का प्रतीक है । यह साधक को पवित्र चिंतन और आत्मिक शांति की ओर ले जाती है ।

14. यमुना : ऊर्जा और प्रवाहमयी कर्म : ______

यमुना शब्द का यौगिक अर्थ है " **यम् + ऊना** " , अर्थात नियंत्रित प्रवाह । यह कर्म और ऊर्जा का प्रतीक है ।

आध्यात्मिक अर्थ :

- यमुना का संबंध **पिंगला नाड़ी** से है । यह सूर्य ऊर्जा का प्रतीक है , जो शरीर के दाहिने भाग में प्रवाहित होती हैं ।
- यह नाड़ी कर्म , उत्साह और ऊर्जस्वित विचारों का संचार करती है ।

यमुना के गूढ़ तात्पर्य :
कर्म प्रधान जीवन : यमुना जीवन में प्रवाह और गतिशीलता का प्रतीक है । यह कर्म के महत्व को दर्शाती है ।
ऊर्जा संतुलन : यमुना का प्रवाह रजोगुण का प्रतीक है , जो जीवन के कर्मशील पक्ष को जागृत करता है ।

15. गंगा - यमुना संगम: इड़ा और पिंगला का मिलन : ______

गंगा और यमुना का संगम प्रयाग में माना जाता है , परंतु वेदों में इसका प्रतीकात्मक अर्थ गहरे योग दर्शन से जुड़ा है ।

- **संगम** : गंगा (इड़ा) और यमुना (पिंगला) का मिलन **सुषुम्ना नाड़ी** में होता है ।

Edit with WPS Office

- **सुषुम्ना नाड़ी :** यह नाड़ी शरीर के मध्य में स्थित होती है और आध्यात्मिक जागरण के लिए महत्वपूर्ण है ।
- योग साधना में , जब इड़ा और पिंगला का संतुलन होता है , तब चेतना सुषुम्ना में प्रवाहित होती है , और साधक को **आत्मज्ञान** प्राप्त होता है ।

प्रतीकात्मक दृष्टि से संगम :

1. **शरीर , मन और आत्मा का संतुलन** : गंगा , यमुना और सरस्वती का मिलन मानव चेतना की उच्चतम स्थिति का प्रतीक है ।
2. **मोक्ष की प्राप्ति** : यही वह तीर्थ है , जहां स्नान अर्थात योग साधना करने से आत्मज्ञान और मोक्ष प्राप्त होता है ।

16. सरस्वती : दिव्य वाणी और ज्ञान की धारा : ______

सरस्वती का अर्थ हमने पहले ही विस्तार से किया है ।

- सरस्वती का संबंध सुषुम्ना नाड़ी से है ।
- यह ज्ञान और दिव्यता की उधर्वगामी ऊर्जा है , जो साधक को आत्मबोध की ओर ले जाती हैं ।

17. दस नदियां: प्रतीकात्मक व्याख्या : ______

ऋग्वेद. 10.75.5 ___ में गंगा , यमुना , सरस्वती, शुतुद्रि ,परुष्णी , असिक्नी , मरुद्वधे , वितस्ता , अजीकिया , और सुषोमा का उल्लेख मिलता है ।

अर्थ और प्रतीक :

1. **गंगा** : शुद्धता और शांत चेतना ।
2. **यमुना** : कर्म की सक्रिय धारा ।
3. **सरस्वती** : ज्ञान और वाणी ।

Edit with WPS Office

4. **शुतुद्रि** : स्थिर धारा , स्थिर मन ।
5. **परुष्णी** : कठोर साधना का प्रवाह ।
6. **असिक्नी** : निष्कलंकता और तप ।
7. **मरुदूधे** : वायु तत्व का प्रवाह , प्राणायाम ।
8. **वितस्ता** : तात्विक ऊर्जा का बहाव ।
9. **अजीकिया** : स्थूल से सूक्ष्म में परिवर्तन ।
10. **सुषोमा** : सुखद और शांत ऊर्जा प्रवाह ।

इन सभी नदियों का वेदों में प्रतीकात्मक अर्थ है , जो योग साधना और मानव चेतना की स्थिति के संदर्भ में समझा जाना चाहिए ।

18. वेदों का उद्देश्य : ______

वेदों का उद्देश्य भौगोलिक जानकारी देना नहीं है , बल्कि जीवन का गहन सत्य और ज्ञान प्रकट करना है । **सरस्वती , गंगा , यमुना** जैसे शब्द प्रतीकात्मक है , जो आत्मिक और आध्यात्मिक प्रवाह की और संकेत करते हैं ।

अंततः ______

सरस्वती को एक भौगोलिक नदी मानना वेदों के गूढ़ ज्ञान को सीमित करना है । वेदों में सरस्वती " वाणी " ज्ञान और चेतना का प्रवाह " है । जो व्यक्ति इस प्रवाह को आत्मसात करता है , वही मोक्ष और सत्य ज्ञान की अनुभूति कर सकता है ।

" सरस्वती " न केवल शब्द है , बल्कि यह जीवन के आध्यात्मिक उत्थान की प्रतीक है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

- 122. ब्रह्मा _ सरस्वती के विवाद का खंडन

Edit with WPS Office

ब्रह्मा सरस्वती भ्रांति निवारण।

The Debunk Of Brahma Saraswati Controversy

सरस्वती का अर्थ क्या है?

१६३०. सृ गतौ (६३५)
१६३१. सृ गतौ (१०६६)

सरस्वती शब्द: महर्षि पाणिनी के धातू पाठ के अनुसार "सृ गतौ" धातु से रस शब्द निष्पन्न होता है। फिर रस (भ्वा. पर. रसति शब्दों, चुरा. उभ. रसयति ते स्वादे) + अच् = रस-शब्द, स्वाद । सह + रस = सरस [ह्रस्य लोप:]- जिसका अर्थ है शब्दयुक्त, स्वाद युक्त। सरस + मतुप् + ङीप् = सरस्वती = सरस्वती सतत शब्दयुक्त, स्वादयुक्त। जिह्वा से स्वाद लिया जाता है तथा मुख में जिह्वा के संचालन से शब्द किया जाता है। अत: सरस्वती जिह्वा की अधिष्ठात्री शक्ति = वाक्, रस है । रस का अर्थ सारतत्व भी होता है।

छांदोग्य उपनिषद (1/1/2) के अनुसार मनुष्य के रस अर्थात सार तत्व उसके वाणी ही होती है।

इन [चराचर] प्राणियोंका पृथिवी रस (उत्पत्ति, स्थिति और लयका स्थान) है। पृथिवीका रस जल है, जलका रस ओषधियाँ हैं, ओषधियोंका रस पुरुष है, पुरुषका रस वाक् है, वाक्का रस ऋक् है, ऋक्का रस साम है और सामका रस उद्गीथ है ॥ २ ॥

Edit with WPS Office

शास्त्रों में सरस्वती का अर्थ वाणी है।

शतपथ ब्राह्मण (१२/९/१/१४)

प्राण एवेन्द्रः। जिह्वा सरस्वती। नासिके अश्विनौ। यद्वै प्राणेनान्नमात्मन् प्रणयते। तत् प्राणस्य प्राणत्वम्। जिह्वया वा

जैमिनीय ब्राह्मण (2/298)
मैत्रायणी संहिता (3/6/4)
कौषीतकि ब्राह्मण (5/2)
शतपथ ब्राह्मण (7/5/1/31)

आक्रुष्टम्। सरस्वत्या यन्ति। वाग् वै सरस्वती। वाग् उ देवयानः पन्थाः। देवयानेनैव तत् पथा यन्ति। प्रतीपं

शास्त्रों में ब्रह्मा शब्द का अर्थ मन है।

गोपथ ब्राह्मण (2/5/4)

अथ यद् ब्रह्मा स्तुतेत्य् उच्चैर् अनुजानाति मनो वै ब्रह्मा मन एव तत् प्राणैः संदधाति

गोपथ ब्राह्मण (1/2/11)

मनसैव ब्रह्मा ब्रह्मत्वं करोति मनसा हि तिर्यक् च दिश ऊर्ध्वं यच् च किं च मनसैव करोति तद् ब्रह्म ते ब्रूमो मन एव ब्रह्मा मनो ब्रह्म मनो देव इति ॥ ११ ॥

Edit with WPS Office

ब्रह्मा सरस्वती के सम्बन्ध।

कां० १२, अ० ८, ब्रा० २, कं० ४-१३ शतपथब्राह्मण / १९३

उसने उत्तर दिया कि व्रत तो यज्ञ का सिर है, दीक्षा शरीर है। सत्य ही व्रत का असली रूप है, और श्रद्धा दीक्षा का। मन यजमान का रूप है और वाक् यज्ञ का ॥४॥

यह जो वाक् से व्रत करता है मानो यज्ञ के शिर को उसके शरीर में स्थापित करता है। सत्य को श्रद्धा में रखता है, यजमान को यज्ञ में ॥५॥

इसलिए इस (सौत्रामणी) यज्ञ का व्रत ही दीक्षा है। व्रत नर है, दीक्षा स्त्री। सत्य नर है, श्रद्धा नारी। मन नर है, वाणी नारी। यजमान नर है, उसकी पत्नी नारी। इसलिए जहाँ पति होता है, वहाँ पत्नी। इस प्रकार यज्ञ के आरम्भ में ही वह जोड़ों को उपस्थित करता है सन्तान के लिए ॥६॥

शतपथ ब्राह्मण (12/8/2/6) के अनुसार मन अर्थात ब्रह्मा नर है और वाणी अर्थात् सरस्वती नारी के रूप में उनके पत्नी है। इस से साफ पता चल जाता है की ब्रह्मा सरस्वती के पति पत्नी के संबंध है पिता पुत्री की नहीं। वैदिक शास्त्रों में कहीं भी ब्रह्मा सरस्वती को पिता पुत्री रूप में वर्णित नहीं किया गया हैं।

ऋग्वेद (10/61/6-7) में पिता-पुत्री सम्बन्ध का भ्रान्ति निवारण।

जिस समय पिता ने अपनी युवती कन्या के साथ यथेच्छ कर्म किया, उस समय उनके संभोग कर्म के समीप ही थोड़ा वीर्य गिरा. परस्पर अभिगमन करते हुए उन दोनों ने वह वीर्य यज्ञ के ऊंचे स्थान योनि में छोड़ा था. (६)

पिता यत्स्वां दुहितरमधिष्कन्क्षमया रेतः सञ्जग्मानो नि षिञ्चत्.
स्वाध्योऽजनयन्ब्रह्म देवा वास्तोष्पतिं व्रतपां निरतक्षन्.. (७)

जिस समय पिता ने अपनी पुत्री के साथ संभोग किया उस समय धरती से मिलकर वीर्य त्याग किया. शोभन कर्म वाले देवों ने उसी वीर्य से व्रतरक्षक देव वास्तोष्पति का उत्पादन किया. (७)

सबसे पहली बात इन मंत्रों का व्याख्या शतपथ ब्राह्मण (1/7/4) और ऐतरेय ब्राह्मण (3/33) में आता है। और इनके अनुसार इन मंत्रों में प्रजापति और उषा के संबंध की बात है न की ब्रह्मा सरस्वती के।

प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरमभ्यध्यायत्, दिवमित्यन्य आहुः, उषसमित्यन्ये, तामृश्यो भूत्वा रोहितं भूतामभ्यैत्, तं देवा अपश्यन्। अकृतं वै प्रजापतिः करोतीति ते तमैच्छन्, य एनमारिष्यत्येतमन्योस्मिन्नाविन्दन्, तेषां या एव घोरतमास्तन्व आसंस्ता एकधा समभरन् ताः संभृता एष देवोऽभवत् तदस्यैतद् भूतवन्नाम ।।१।।

हिन्दी—(अब अग्निमारुतशस्त्र के विधान करने के लिए उपाख्यान को कह रहे हैं—) प्रजापति वै प्रजापति ने स्वां दुहितरं अपनी पुत्री को देखकर (पत्नी के रूप में) अभ्यध्यायत् ध्यान किया। इस (पुत्री) को अन्ये कुछ (ऋषि) दिवम् इत्याहुः द्युलोक का देवता कहते हैं और अन्ये कुछ उषसम् इति उषा (कहते हैं)। रोहितं भूतां ताम् रोहित (हिरणी अथवा ऋतुमती) हुई उस (पुत्री) के समीप ऋश्यः भूत्वा हिरण होकर (प्रजापति) अभ्यैत् अभिगत हुए (मिथुन धर्म को प्राप्त किये)। देवाः देवताओं ने तम् अपश्यन् उस (पुत्रीगामी प्रजापति) को देख लिया। 'प्रजापतिः अकृतं करोति प्रजापति निषिद्ध कर्म को

Edit with WPS Office

शास्त्रों में "प्रजापति" का अर्थ "सूर्य" है।

अथर्ववेद(17/1/27)

४२८०. प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च ।
जरदष्टिः कृतवीर्यो विहायाः सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम् ॥२७ ॥

प्रजापतिरूप सूर्य के ज्ञानरूप कवच से आच्छादित होते हुए हम कश्यप (सर्वदर्शक) के तेज और शक्ति से युक्त होकर वृद्धावस्था पर्यन्त नीरोग रहकर सुदृढ़ अंग- अवयवों से युक्त रहते हुए चिरकाल तक विभिन्न भोगों का उपभोग करें । हमारी गति कहीं अवरुद्ध न हो । हम दीर्घायु पाकर लौकिक और वैदिक सम्पूर्ण क्रियाकलापों को भली प्रकार सम्पन्न करके स्वयं को धन्य बनाएँ । हे सूर्यदेव ! हम आपके कृपापात्र रहें ॥२७ ॥

शतपथ ब्राह्मण (10/2/2/4)
प्रजापति ही सविता (सूर्य) है।

सुपर्णो अङ्ग सवितुर्गरुत्मान् पूर्वो जातः स उ अस्यानु धर्मेति प्रजापतिर्वै सुपर्णो गरुत्मानेष सवितैतस्य प्रजापतिरनु धर्ममित्येतत् - १०.२.२.४

उषा का अर्थ क्या है?

निरुक्त (2/18)

(उषानामनिर्वचनम्)

उषाः कस्मादुच्छतीति सत्या रात्रेरपरः कालः ।

कस्मात् किस कारण से **उषाः** उषा कहा जाता है? क्योंकि **उच्छतीति सत्या** (अन्धकार को) निवारित करती हुई रहती है–दूर करती हुई रहती है । **रात्रेः** रात्रि का **अपरः कालः** उत्तरवर्ती (पिछला) काल होता है ।

भगवान यास्क ने "उषा" का एक ही निर्वचन दिया है-'उच्छतीति सत्या' अर्थात् उषा अन्धकार को निवारित हुई रहती है अर्थात अन्धकार को दूर भगाती है। इस प्रकार यह शब्द विवासनार्थक 'उच्छी' धातु से 'असि' प्रत्यय और 'किद्भाव' (उणादि ४.२३५) होकर निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ प्रातःकाल अर्थात् सुबह होता है।

उणादि सूत्र (4/235)

उदा॰—(1) उषः (= प्रातःवेला, कर्णविल)—ओषति दहति । उष दाहे । उष् असि—अनुबन्धलोप—उष् अस्—'पुगन्तलघूपधस्य च' (पा॰ 7.3.86) से लघूपध गुण प्राप्त, निषेध, सु ।

Edit with WPS Office

प्राचीन आचार्य सायण तथा आचार्य हरिस्वामी ने उषा का बोहोत सारे अर्थ बताएं है जैसे की "लोकात्म रूप से द्युलोक, प्राणपिण्डात्म रूप से रोहिणी नाम नक्षत्र, कालात्म रूप से उषाकाल तथा यज्ञात्म रूप से वाणी" लेकिन कहीं भी आचार्यों ने उषा का अर्थ किसी साकार सरस्वती देवी नहीं किया है।

अत् " इति । तदाग्निमारुतमित्युक्थम् । तस्मिंस्तद्व्याख्यायते—यथा तद्देवा रेतः प्राजनयन् । तेषां

ध्यातवान्, ' दिवं वा उषसं वा ' लोकात्मना दिवम्; कालात्मना उषसम्; प्राणपिण्डात्मना ऋक्षेभ्यो मृगो रोहितम्, रोहिणीं नाम नक्षत्रम्, यज्ञात्मना वाचम् । कथमभिदध्यौ ? ' मिथुनी ' मिथुनवान् ' एनया ' ' स्यामिति ' ' तां ' सम्भूव ' सङ्गतः ॥ १ ॥

२९८ शतपथब्राह्मणम्

"कालात्मक संवत्सर प्रजापति जो देवों एवं असुरों के पिता हैं, उन्होंने एकबार निश्चितरूप से अपनी पुत्री का "लोकात्म रूप से द्युलोक को, प्राणपिण्डात्म रूप से रोहिणी नाम नक्षत्र को, कालात्म रूप से उषा को तथा यज्ञात्म रूप से वाणी को" एकत्र संगत होने अर्थात् इसके साथ ही रहूँ (सहवास करूँ) इस भाव से (अपनी पुत्री का) ध्यान किया। (यहाँ उक्त वर्णन से

वेद में सूर्य और उषा के पिता पुत्री के सम्बन्ध।

ऋग्वेद (4//52/1), सामवेद (19/2/1)

[सूक्त - ५२]

[ऋषि - वामदेव गौतम । देवता - उषा । छन्द - गायत्री ।]

३५८६. प्रति ष्या सूनरी जनी व्युच्छन्ती परि स्वसुः । दिवो अदर्शि दुहिता ॥१ ॥

सब प्राणियों की प्रेरक, फल प्रदायक, अपनी बहिन के तुल्य रात्रि के अन्त में प्रकाश फैलाने वाली सूर्य पुत्री उषा को सब देखते हैं ॥१ ॥

इन मंत्रों से यह सिद्ध होता है की प्रजापति सूर्य है तथा उसके पुत्री उषा अर्थात प्रातः काल है। जब सूर्य अपने रश्मि उषाकाल में पृथ्वी पर गिरा देता है वही पिता का पुत्री में गर्भ स्थापन जैसा है।

इसी प्रकार ऋग्वेद (1/115/2) में भी सूर्य और उषा को पति पत्नी का उपमा दिया गया है।

सूर्यो देवीमुषसं रोचमानां मर्यो न योषामभ्येति पश्चात्.
यत्रा नरो देवयन्तो युगानि वितन्वते प्रति भद्राय भद्रम्.. (२)

सूर्य दीप्यमान उषा का अनुगमन उसी प्रकार करता है, जिस प्रकार पुरुष नारी के पीछे-पीछे चलता है. इसी समय लोग सूर्य संबंधी यज्ञ करने की इच्छा से कार्य विस्तार करते हैं. कल्याण पाने के लिए हम सूर्य की स्तुति करते हैं. (२)

Edit with WPS Office

ब्राह्मण ग्रंथों में सूर्य और उषा के सम्बन्ध।

शतपथ ब्राह्मण (6/1/3/8): संवत्सर और उषा दोनो पति पत्नी है।

ये भूत ऋतु हैं, और संवत्सर भूतों का पति है, और उषा पत्नी है। इन भूतों और भूतों के मालिक संवत्सर ने उषा में वीर्य सींचा। वर्ष भर पीछे एक कुमार उत्पन्न हुआ, वह रोया ॥८॥

शतपथ ब्राह्मण (10/2/4/3) : संवत्सर ही सूर्य है।

यह संवत्सर ही आदित्य है। वह एक सौ एक विधि का है। उसकी सौ प्रकार की किरणें हैं, और एक वह स्वयं है, जो तपता है। वह इस संसार में प्रतिष्ठित है। इसी प्रकार यजमान भी अपने लिये एक सौ एक विधि का शरीर बना कर अपने को इस संसार में प्रतिष्ठित करता है ॥३॥

शतपथ ब्राह्मण (10/2/6/1) : संवत्सर ही प्रजापति है।

संवत्सर प्रजापति एक-सौ-एक विधि का है। उसमें दिन-रात होते हैं, अर्द्ध मास, मास और ऋतुयें होती हैं। एक मास में साठ दिन-रात हुये, चौबीस अर्द्ध मास हुये, तेरह मास हुये, तीन ऋतु हुये। ये सब हुये सौ। संवत्सर स्वयं हुआ एक सौ एक-

प्रजापति और उषा कथा का तात्पर्य क्या है?

निरुक्त (10/10) के अनुसार ऋषियों को मंत्रों के अर्थों को काल्पनिक आख्यानों के माध्यम से समझना ज्यादा पसंद है।

किया अथवा। जिस के बल से द्यावापृथिवी भी अबिभीताम्=भयभीत हुए, बल के महत्त्व से भी। वह, हे जनो इन्द्र [है।] ऋषेः=ऋषि के दृष्टार्थस्य=देखे हुए अर्थ की प्रीति होती है, आख्यान से संयुक्त हुई।

ऐतरेय ब्राह्मण(3/33) के अनुसार इस कथा के माध्यम से दो प्राकृतिक तत्वों सूर्य और उषा के व्यक्तिकरण कर के यह शिक्षा दिया गया है की वैदिक धर्म में पुत्री से व्यभिचार करना अत्यंत अपराध है और इसके लिए आगे प्रजापति को रुद्र अर्थात ईश्वर से कड़ी दंड मिलने का भी वर्णन है।

अभ्यैत् अभिगत हुए (मिथुन धर्म को प्राप्त किये)। देवाः देवताओं ने तम् अपश्यन् उस (पुत्रीगामी प्रजापति) को देख लिया। 'प्रजापतिः अकृतं करोति प्रजापति निषिद्ध कर्म को

(१) 'होतारमे भक्षयेदिति गौतमः'—इति आश्व०श्रौ० ५.६.२२।
(२) तु० आप०श्रौ० १३.१३.२२; १४.१-२।
ऐ.ब्रा.पू-३८

तमभ्यायत्याविध्यत् स विद्ध ऊर्ध्व उदप्रपतत्, तमेतं मृग इत्याचक्षते, य उ एव मृगव्याधः स उ एव सः, या रोहित् सा रोहिणी, यो एवेषुस्त्रिकाण्डा सो एवेषुस्त्रिकाण्डा ॥५॥

६०२ : ऐतरेयब्राह्मणम् [१३.९ तृतीयपञ्चिकायां

करता है'—इति ऐसा (विचार करके) ते उन (देवताओं) ने तम् उस (व्यक्ति) की ऐच्छन्

६०४ : ऐतरेयब्राह्मणम् [१३.९ तृतीयपञ्चिका

हिन्दी—(अब रुद्र और प्रजापति के वृतान्त को कह रहे हैं—) सः उस (रुद्र) ने तम् उस (प्रजापति) को अभ्यायत्य अविध्यत् (बाणयुक्त धनुष को) खींच कर मारा। विद्धः मारा गया (वह प्रजापति) ऊर्ध्व उदप्रपतत् ऊपर की ओर उछल गया। तम् एतम्

Edit with WPS Office

वैदिक धर्म में पुत्री संभोग दंडनीय अपराध

शतपथ ब्राह्मण (१/७/४/३) में आए इसी आख्यान में भी लिखा है की प्रजापति को इस पुत्री संभोग रूपी अपराध के लिए रुद्र अर्थात ईश्वर से दंड मिला जो आख्यान के माध्यम से शिक्षा दिया जा रहा की वैदिक धर्म में पुत्री संभोग एक दंडनीय अपराध है।

= स्वामी (शासक), है उससे, **यः** = जो, **अयं** = यह (प्रजापति),
अतिसन्धं = मर्यादा का अतिक्रमण, **वा** = ही, **चरति** = कर रहा है
(कि), **स्वां** = अपनी, **दुहितरम्** = पुत्री, **अस्माकं** = हमारी, **स्वसारम्** =
बहिन (के साथ), **इत्थं** = इस प्रकार का, **करोति** = व्यवहार करता है,
(इसलिए), **विध्येमम्** = अपने बाणों से बींध दो, **इति** = ऐसा, **ऊचुः** =
प्रयत्न पूर्वक (निशाना साधकर),

अतिक्रमण कर रहा है कि अपनी पुत्री तथा हमारी बहन (उषा) के साथ इस प्रकार का सहवास जन्य अपराध अर्थात् अत्याचारात्मक व्यवहार करता है उसको अपने तीव्र बाणों से बींध दो ऐसा कहा (निवेदन किया)। देवों का आर्त्तनाद सुनकर क्रुद्ध हुआ वह 'रुद्र' अपने रौद्र रूप से विशेष प्रयत्न पूर्वक अर्थात् निशाना साधकर उस प्रजापति को अपने तीक्ष्ण बाण से बींध दिया। उस समय प्रजापति का वीर्य स्खलित होने वाला ही था, कि रुद्र का बाण

श्री राम के अनुसार पुत्री संभोग करना दंडनीय अपराध

वाल्मिकी रामायण (४/१८/२२) में श्री राम बताते हैं की जो पुरुष अपनी पुत्री,बहन या भाई की पत्नी के पास व्यभिचार करने जाता है उसका एक मात्र दंड है वह है मृत्यु और इस पाप का कोई क्षमा नहीं है।

न च ते मर्षये पापं क्षत्रियोऽहं कुलोद्गतः।
औरसीं भगिनीं वापि भार्यां वाप्यनुजस्य यः॥ २२॥
प्रचरेत नरः कामात् तस्य दण्डो वधः स्मृतः।

'मैं उत्तम कुलमें उत्पन्न क्षत्रिय हूँ; अतः मैं तुम्हारे पापको क्षमा नहीं कर सकता। जो पुरुष अपनी कन्या, बहिन अथवा छोटे भाईकी स्त्रीके पास काम-बुद्धिसे जाता है, उसका वध करना ही उसके लिये उपयुक्त दण्ड माना गया है॥ २२½ ॥

Edit with WPS Office

कौषीतकि ब्राह्मण (6/1) में उषा को अप्सरा रूप भी कहा गया है जिसपर आज आक्षेप लगाया जाता है।

६.१ प्रजापतेस्तपः सृष्टिश्च

प्रजापतिः प्रजाति कामस् तपो अतप्यत । तस्मात् तप्तात् पञ्च अजायन्त । अग्निर् वायुर् आदित्यश् चन्द्रमा उषाः पञ्चमी । तान् अब्रवीद् यूयम् अपि तप्यध्वम् इति । ते अदीक्षन्त । तान् दीक्षितांस् तेपानान् उषाः प्राजापत्य अप्सरो रुपम् कृत्वा पुरस्तात् प्रत्युदैत् । तस्याम् एषाम् मनः समपतत् । ते रेतो असिञ्चन्त । ते प्रजापतिम् पितरम् इत्य् अब्रुवन् । रेतो वा असिचामहै तन् नो मामुया

(681) सर्त्तेरप्पूर्वपदादसिः [4.238]

पद०—सर्तेः 5.1, अप् पूर्वपदात् 5.1, असिः 1.1

सं०—अप्पूर्वपदात् सृधातोर् असिप्रत्ययः स्यात् ।

व्याख्या—'अप्' शब्द के पूर्वपद रहते सृ धातु से परे 'असि' प्रत्यय होता है। असि का 'अस्' शेष रहता है।

स्वा०द०वृ०—अपसरति विरुद्धं गच्छतीति अप्सराः [विद्युत्] । उपसर्गान्त्यलोपः । अथवाऽप्सु जलेषु प्राणेषु वा सरन्तीति अप्सरसः, किरणा वा; अथवा न प्सान्ति भक्षयन्ति रक्षां कुर्वन्तीति अप्सरसः, प्रत्ययस्य रुट् [धातोर्ह्रस्वत्वं च] । नित्यबहुवचनान्तः स्त्रीलिङ्गश्च ।

उदा०—(1) अप्सरसः (= किरण), अप्सराः (= विद्युत्)—अपसरति विरुद्धं गच्छति अप्सराः (= विद्युत्) । अप सृ गतौ असि—उपसर्ग के अन्त्य अल् का लोप बहुलता से । अप् सर् अस्—आर्धधातुक गुण, रपरत्व, सु—विभक्तिकार्य । अथवा अप्सु जलेषु (प्राणेषु वा) सरन्तीति—अप्सरसः (किरणाः) । अथवा न प्सान्ति भक्षयन्ति । नञ् प्सा रुट् अस्—धातु को ह्रस्व आदेश । अ प्सर् अस् सु ।

समाधान: यजुर्वेद(18/39) में सूर्य के रश्मियों को ही उसके अप्सरा रूप कहा गया है। महर्षी पाणिनी के व्याकरण ग्रंथ उणादि सूत्र(4/238) में भी अप्सरा शब्द का अर्थ किरण और विद्युत् ही किया गया है।

९८८. सꣳहितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोप्सरस ऽ आयुवो नाम । स न ऽइदं ब्रह्म क्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् ताभ्यः स्वाहा ॥३९ ॥

दिन और रात्रि को मिलाने वाले, सामवेद की उत्तम ऋचाओं द्वारा स्तुत्य, पृथ्वी के कर्त्ता-धर्त्ता सूर्यदेव हमारे सुवर्णों अर्थात् संस्कारवान् ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों की रक्षा करें । उनके निमित्त यह आहुति अर्पित है । परस्पर संयोग के गुणवाली व्यापक गन्धर्वरूप सूर्य रश्मियाँ इनकी अप्सराओं के रूप में हैं, वे हमारी रक्षा करें । उनके निमित्त प्रीतिपूर्वक आहुति अर्पित है ॥३९ ॥

700 CE के प्राचीन आचार्य कुमारिल भट्ट ने भी अपने मीमांसा दर्शन के भाष्य तंत्र वार्तिक (Pg- 189) में प्रजापति का अर्थ सूर्य और उषा का अर्थ प्रातःकाल सिद्ध किया है। यही मत ऋषि दयानंद जी ने भी अपने ऋग्वेदादी भाष्यभूमिका में प्रस्तुत करी है। अतः यह प्राचीन भाष्यों से भी सिद्ध है ।

E.g. (1) The word "*Prajāpati*" means 'one who protects all creatures;' as such it can be taken as a name of the Sun; and it is an ordinary fact that towards morning the sun reaches the early Dawn, ('*Ushā*'); and as the early Dawn is brought about by the approach of the Sun, it is called his "daughter;" and it is the fact of the Sun letting his rays fall in (or on) the Dawn that has been figuratively spoken of as the intercourse of a man with a woman.

भावार्थ—नवीन ग्रन्थकारों ने एक यह कथा भ्रान्ति से मिथ्या करके लिखी है, जो कि प्रथम रूपकालङ्कार की थी—(प्रजापतिर्वै स्वां दुहितरम०) अर्थात् यहां प्रजापति कहते हैं सूर्य को, जिस की दो कन्या एक प्रकाश और दूसरी उषा । क्योंकि जो जिस से उत्पन्न होता है, वह उस का ही सन्तान कहाता है । इसलिये उषा जो कि तीन चार घड़ी रात्रि शेष रहने पर पूर्व दिशा में रक्तता दीख पड़ती है, वह सूर्य की किरण से उत्पन्न होने के कारण उस की कन्या कहाती है । उन में से उषा के सम्मुख जो प्रथम सूर्य की किरण जाके पड़ती है, वही वीर्यस्थापन के समान है । उन दोनों के समागम से पुत्र अर्थात् दिवस उत्पन्न होता है ॥

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 123. वेदों में जिन राजाओं और ऋषियों के नामों का वर्णन है , पुराणों में इन्हीं नाम वाले व्यक्तियों का वेदों में कोई इतिहास नहीं ?

वेदों में राजाओं का कोई इतिहास नहीं ______

क्षत्रियों के सूर्य और चंद्र दो वंश प्रसिद्ध है । सूर्यवंश और चंद्रवंश दोनों की उत्पत्ति वैवस्वत मनु से है । सूर्यवंश का आदि पुरुष इक्ष्वाकु है और चन्द्र का पुरुरवा । पुरुरवा के पूर्व बुध , चन्द्र , और अग्नि तीनों आकाशीय पदार्थ है । इसी प्रकार सूर्यवंश का मूल स्वयं सूर्य भी आकाशीय पदार्थ है । क्या इन सृष्टि के महान चमत्कारिक पदार्थों से मनुष्य पैदा हो सकते हैं ? कभी नहीं ! तब समझना चाहिए कि इसका कुछ दूसरा ही भेद होगा ।
भेद वहीं है जो पहले बतलाया गया है कि वेदों का चमत्कारिक वर्णन लोक के राजाओं के वर्णन के साथ जोड़ दिया गया है ___ सूर्य , चन्द्र , बुद्ध आदि नाम के राजाओं को वेदों की आकाश ___ स्थित सूर्य , चन्द्रादि के वर्णनों के साथ मिला दिया गया है ।
वेद के तीन संसार है । एक संसार मनुष्य का शरीर है , दूसरा संसार इस

Edit with WPS Office

पृथिवी पर स्थित पदार्थों के सहित माना गया है । और तीसरा संसार अन्तरिक्ष हैं , जिसमें सूर्य , चन्द्र , नक्षत्र , विधुत और वायु , मेंघ तथा प्रकाशादि अनेक पदार्थ है ।

राजा पुरुरवा : ______

पुरुरवा चन्द्रवंश का मूल पुरुष हैं । वेदों में पुरुरवा और उर्वशी का वर्णन देकर एक आलंकारिक नाटक का नमूना बतलाया गया है । यह पुरुरवा सूर्य है , उर्वशी उसकी एक किरण है और दोनों अग्नि हैं ।
यह प्रसिद्ध है कि इन्द्र के अनेक अप्सराएं थी । इन्द्र नाम सूर्य का है और अप्सरा उसकी किरणें हैं । उसकी अनेक किरणों में उर्वशी भी एक किरण है । पहले देखिए कि वेद में पुरुरवा और उर्वशी तथा आयु , तीनों को अग्रियों के नाम से कहा है ___

अग्रेर्जनित्रमसि वृषणी स्थ उर्वश्यस्यायुरसि पुरुरवा असि । गायत्रेण त्वा छन्दसा मन्थामि , त्रैष्टुभेन त्वा छन्दसा मन्थामि जागतेन त्वा मन्थामि । (यजुर्वेद. 5.2)

भावार्थ : यहां अग्नि को संबोधित करके कहा गया है कि तू उर्वशी है , तू आयु है और तू पुरुरवा है । तुझे गायत्री , त्रैष्टुभ और जगती छन्दो से मथकर निकालता हूं ।

यहां आयुष शब्द बड़े मार्के का है । यह प्रसिद्ध है कि पुरुरवा और उर्वशी से आयु नामक पुत्र हुआ था । यहां उर्वशी और पुरुरवा अग्रि कहें गये है । अग्रि से अग्रि की ही उत्पत्ति होती है , इसलिए उन दोनों अग्नियों से पैदा होने वाली यह आयु नामक तीसरी अग्नि भी अग्नि ही है । अग्नि ही सूर्य है और अग्नि ही उसकी किरणें हैं । आगे का मंत्र कैसा स्पष्ट करता है कि ___

सूर्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरस: (यजुर्वेद. 18.39)
अर्थात सूर्य ही गंधर्व हैं और उसकी किरणें ही अप्सरा हैं ।
अग्नि ही सूर्य और गंधर्व है । गन्ध को यही फैलाती हैं , अर्थात आहुति

Edit with WPS Office

पदार्थ इसी में डाले जाते हैं , जो फैलते हैं । आगे अप्सराओं के नाम बतलाये जातें हैं ___

पुञ्जिकस्थला च क्रतुस्थला चाप्ससौ । मेनका च सहजन्या चाप्ससौ । प्रम्लोचन्ती चानुम्लोचन्ती चाप्सरसौ । विश्वाची च घृताची चाप्सरसौ । उर्वशी च पूर्वचित्तिश्चाप्सरसौ।(यजुर्वेद. 15/15 - 19)

भावार्थ : यहां अन्य अप्सराओं के साथ मेनका और उर्वशी भी अप्सरा कही गई है । ऊपर कहां गया है की अप्सरा सूर्य की किरणें ही है और बताया गया है कि सूर्य ही अग्नि है , अतः ऊपर का वर्णन अंतरिक्ष के चमत्कारिक तैजस् पदार्थों का ही है । इसे मनुष्य के वर्णन के साथ जोड़ने की क्या आवश्यकता है ?

बहुत दिन के अन्वेषण के पश्चात विद्वान भी अब इसी परिणाम पर पहुंचे हैं । नमूने के लिए उनके कुछ वाक्यों को पढ़िए । Selected Essays , Vol. P. 408 पर प्रोफेसर मैक्समूलर कहते हैं कि ___ यह पुरुरवा उर्वशी की कथा , उषा और सूर्य का आलंकारिक भाषा में वर्णन करती है । ' जिस सुक्त में उर्वशी और पुरुरवा का वर्णन है उसी के एक मंत्र में कहा गया है कि " **अन्तरिक्षप्रा रजसो विमानीमुप शिक्षाम्युर्वशीं वसिष्ठ** " । अर्थात मैं वशिष्ठ (सूर्य) अंतरिक्ष में घूमने वाली उर्वशी को अपने वंश मैं रक्खूं । अब बताइए कि क्या अंतरिक्ष में घूमने वाली वस्तु कभी मनुष्य हो सकती है ?

राजा आयु : ______

ऊपर के वर्णन में आयु का थोड़ा सा वर्णन आ गया । यजुर्वेद में लिखा है कि **अग्रे: ... आयुरसि** ' (यजुर्वेद. 5.2) ___ हे अग्नि ! तू आयु है । यह आयु पुराणों में उर्वशी और पुरुरवा का पुत्र कहा गया है । हमने भी देखा कि उर्वशी और पुरुरवा अग्नि से ही बने हुए सूर्य और रश्मि है , तब उनके पुत्र को अग्नि होना ही चाहिए । दूसरे स्थान पर **ऋग्वेद.** 1.31.11 मैं लिखा है ' **त्वामग्रे प्रथममायुमायवे देवा अकृण्वन्** , **अर्थात** हे अग्नि ! पहले तूने आयु को बनाया और आयु से देवताओं को बनाया । वही बात इससे भी सूचित होती है कि आयु नामक अग्नि से ही सूर्य किरण , ऊषा आदि देवता बनाये

Edit with WPS Office

गये है । इस प्रकार आयु भी मनुष्य सिद्ध नहीं होता ।

राजा नहुष : पुराणों में आयु का पुत्र नहुष लिखा है । इसकी कथा का संबंध भी पुराणों में आकाश के चमत्कारी पदार्थों से जुड़ा हुआ है । वहां लिखा है कि नहुष को इंद्र की पदवी मिली थी । यह इंद्र जिसकी अप्सराओं का ऊपर वर्णन हो चुका है सूर्य ही है । नहुष एक बार सूर्य हो चुका है । यहां हम नहुष से संबंध रखने वाले कुछ वेदमत्रों को उद्धत करते हैं और दिखलाते हैं कि उक्त मंत्रों में नहुष किस प्रकार का पदार्थ शुद्ध होता है ।

आ यातं नहुषस्यान्तरिक्षात् सुवृक्तिभि: पिबाथो अश्विना मधु । (ऋग्वेद. 8.8.3)

अध ग्मन्ता नहुषो हवं सूरे: ..... नभो जुवो यन्निरवस्य राध: । (ऋग्वेद. 1.122.11)

स निरुध्या नहुषो यहो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहत: सहोभि: । (ऋग्वेद. 7.6.5)

सूर्यामासा विचरन्ता दिविक्षिता धिया शमीनहुषी अस्य बोधतम् । (ऋग्वेद. 10.92.12)

यदिन्द्र नाहुषीष्वा । अग्रे विक्षु प्रदीदयत् । (ऋग्वेद. 8.6.24)

भावार्थ : ऊपर पांच मत्रों के वे भाग लिखे हैं , जिनसे 'नहुष' पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । हम यहां इन मंत्रों का अर्थ करके पाठकों को भ्रम में नहीं डालना चाहते । हम तो केवल यह दिखलाना चाहते हैं कि वेदों में आया हुआ यह नहुष किस भाव का सूचक है । यहां पहले मंत्र में कहा गया है कि ' नहुष ' के ऊपर अंतरिक्ष से कोई आते हैं । आगे अश्विन शब्द भी आया है जो आकाशीय पदार्थ है । दूसरे मंत्र में नहुष को सूर्य से नीचे बतलाया है । आगे नभ शब्द भी है जो आकाशवाची है । तीसरी मंत्र में नहुष को अग्नि के सहित रुका हुआ कहा गया है और बलि की चर्चा भी आई है । चौथे मंत्र में कहा है कि सूर्यो के मास दिवि में विचरते हैं , जिन्हें नाहुषी जानना चाहिए । पांचवें मंत्र में कहा गया है कि जो इंद्र नहुषो मैं प्रकाशित होता है ।

इन मंत्रों में नहुष का संबंध __ अंतरिक्ष , अश्विन , सूर्य ,नभ , अग्नि ,

Edit with WPS Office

बलि , इंद्र ,मास के साथ वर्णित हुआ है । उधर पुराणों में उसके इंद्र पद पाने का वर्णन है , ऐसी दशा में कैसे कहा जा सकता है कि वेद का यह नहुष मनुष्य है ___ राजा है ।

महाभारत में लिखा है ______ महाभारत अनुशासन पर्व. 100/23/25
अर्थात : राज ऋषि नहुष ने पुण्य कर्म के फल से इंद्रत्व प्राप्त किया । इंद्रत्व पाने पर उनको अत्यंत अहंकार हो गया । उन्होंने ऋषियों से अपनी पालकी उठवाना आरंभ कर दिया । एक बार अगस्त्य ऋषि पालकी उठा रहे थे , नहुष ने उनके सिर पर लात मारी । इस पर भृगु ऋषि ने नहुष को श्राप दिया कि ' तू सर्प हो जा ' नहुष सर्प होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा । महाभारत में नाग के भेदों का वर्णन करते हुए कहा गया है ____
महाभारत. 1/35/8 -9
इसमें यहां नहुष शब्द भी आया है , जो नागों के नामों में कहा गया है । नाग के कई अर्थ है , परंतु यहां यह नहुष बादलों के अर्थ में नाग कहा गया है । वेदों में अहि बादल को कहते हैं , इसलिए महाभारत में भी बादलों को नाग कहा गया है । महाभारत वन पर्व में लिखा है कि " **अगस्त्येन ततोऽस्मयुक्तो ध्वंस सपेति वै रुषा ।** " भावार्थ : ___ अगस्त नक्षत्र के उदय होते ही सर्प रूपी पानी का ___ बादलों का ध्वंस हो जाता है । **उदय अगस्त पथजल सोखा** तुलसीदास ने भी लिखा है । संभव है नहुष आकाशस्थ पदार्थों में से बादल ही हो , क्योंकि ऋग्वेद. 10/49/8 में वह सप्तहा ___ सात किरणों को मारने वाला कहा गया है जो बादल के सिवा और कुछ नहीं हो सकता । महाभारत की कथा के अनुसार नहुष ने इंद्र का पद पाया , अर्थात बादलों ने सूर्य को घेर लिया , परंतु अगस्ति ऋषि के तेज से वह भूमि पर गिर गया , अर्थात अगस्ति तारे के उदय होते ही वर्षा ऋतु चली गई । इससे स्पष्ट हो गया कि नहुष बादल है ।

राजा ययाति : ______

पुराणों में नहुष का लड़का ययाति लिखा हुआ है । इसका वर्णन भी आकाश से संबंध रखता है । इसकी एक रानी शुक्र की लड़की थी (देवयानी)

Edit with WPS Office

। यह वही शुक्र है जो आकाश में ग्रह है । दूसरी रानी वृषपर्वा की लड़की (शर्मिष्ठा) थी । यह वृषपर्वा बादलों के सिवा और कुछ नहीं है । ऋग्वेद में आया है कि ____

अग्रे अडिग्रस्वधडिरो ययातिवत् । (ऋग्वेद. 1.31.17)

यहां कहा है कि हे अग्रे ! तुम अंगिरस् की भांति हो और अंगिरस ययाति की भांति है । **ऐतरेय ब्राह्मण.** 3/34 में लिखा है कि ' ये अड्लारा आसंते अडिग्रसोऽभवन् अर्थात अग्डार ही अंगिरस है । **ऋग्वेद.** 10.62.5 में भी है कि अंगिरस: सूनवस्ते अग्रे: अर्थात अंगिरस ,अग्रि के लड़के अलंकार ही है ।

ऊपर ययाति को अलंकार की भांति बतलाया गया है और शुक्र ग्रह की लड़की के साथ उसका विवाह बतलाया गया है । इससे तो स्पष्ट हो गया है कि ययाति भी कोई तारा है अथवा आकाश का कोई चमकीला पदार्थ है , । हमारी समझ में नहीं आता कि इस आग्रेय आकाशस्थ पदार्थ को मनुष्य अथवा राजा कैसे बना दिया गया ?

यदु ,तुर्वश , पुरु , द्रुह्य और अंनु : ____

ये पांचों लड़के राजा ययाति के है । ऊपर ययाति की जो दो रानियां बतलाई गई है उनमें एक से दो लड़के और दूसरी से तीन लड़के हुए , यह पुराणों में लिखा है , परन्तु वेदों में इस बात का कही वर्णन नहीं है कि अमुक अमुक का पुत्र था या पिता । वहां तो केवल ये शब्द आते हैं और इन शब्दों के जो वाच्य है उनका वर्णन आता है । हम यहां भी कुछ ऐसे मन्त्र लिखना चाहते हैं जिनमें उपर्युक्त शब्द आते हैं और उन शब्द - वाच्यों का वर्णन आता है ।

1. **यन्नासत्या परावति यदु स्थो अधि तुर्वशे ।** (ऋग्वेद. 1.47.7)
2. **अतो रथेन सुवृता न आ गतं साकं सूर्यस्य रश्मिभि: ।।**
3. **अग्निना तु र्वशं यदुं परावत उग्रादेवं हवामहे ।** (ऋग्वेद. 1.36.18)
4. **समुद्रमति शूर पषि पारया तुर्वश यदुम् ।** (ऋग्वेद. 1.174.9)
5. **अन्तरिक्षै पतथ: पुरुभुजा ।** (ऋग्वेद. 8.10.6)
6. **यदुषो यासि भानुनां सं सूर्येण रोचसे ।** (अथर्ववेद . 20.142.6

Edit with WPS Office

)

7. हव्यवाहं पुरुप्रियम् । (अथर्ववेद. 20.101.2)
8. अनुप्रत्नस्यौकस: । (अथर्ववेद. 20.26.3)
9. पुरुरेतो दधिरे सूर्यश्रित: । (अथर्ववेद. 6.49.3)
10. इन्द्रो मायाभि: पुरुरुप ईयते । (ऋग्वेद. 6.47.18)
11. उत त्या तुर्वशायदू अस्नातारा शचीपति: । इन्द्रो विंदू अपारयत् । (ऋग्वेद. 4.30.17)
12. यदिन्द्राग्री यदुषु तुर्वशेषु यद् द्रुह्यष्वनुषु पूरुषु स्थ: । (ऋग्वेद. 1.108.8)
13. प्रातरग्नि: पुरुप्रिय: । (ऋग्वेद. 5.18.1)

इन बारह मन्त्रों में उक्त , यदु , तुर्वर्श आदि पांचों के नाम और काम आ गये है । यहां मन्त्रों का भाष्य नहीं करना , प्रत्युत उक्त शब्दों का भावमात्र खोलना है , अत: क्रमश: संक्षेप से उनका भाव लिखते हैं ।

1. जो विधुत तुर्वश में है , वह सूर्य की रश्मियों से आ गई ।
2. अग्नि से तुर्वश यदु को दूर करते हैं ।
3. प्रकाश से तुर्वश यदु को पार करो ।
4. अन्तरिक्ष का रास्ता पुरु है ।
5. यदु सूर्य के द्वारा जाते हैं ।
6. हुत पदार्थों को ले - जानेवाले पुरु ।
7. अनु का घर धुलोक है ।
8. पुरु सूर्य के आश्रित हैं ।
9. इन्द्र माया करके पुरु बन जाता है ।
10. तुर्वश यदु को शचीपति इन्द्र पार कर देगा ।
11. जो इन्द्र और अग्नि यदु , तु र्वश , द्रुह्य , अनु और पुरु में है ।
12. प्रात: काल का हवन पुरु को प्रिय है ।

क्या ऊपर के भावार्थ से यह समझ पड़ता है कि ये वर्णन मनुष्यों के है ? यदि ऐसा हो तो समझना चाहिए कि हमारी बुद्धि हमको ही धोखा दे रही है

Edit with WPS Office

। जिन पदार्थों का सम्बन्ध विधुत , सूर्य , रश्मि , अग्नि , आकाश , अन्तरिक्ष , धौ , इन्द्र , शची और अनेक आकाशस्थ पदार्थों से है , जो सूर्य की रश्मियों के द्वारा आते और हव्य ले - जातें हैं तथा जिनमें विधुत रहती हैं , क्या ऐसे पदार्थ मनुष्य हो सकते हैं ? हमारी समझ में तो ये मनुष्य नहीं है । ज्योतिष के ग्रंथों में लिखा है कि " **पौरो गुरु रविजा नित्यं शीता शुरा क्रन्दा : ।** अर्थात बुद्ध , गुरु , और शनि ये सदा पौर है । पुरु से ही पौर होता है । इससे ज्ञात होता है कि ये कई नक्षत्र मिलकर यदु , तुर्वश आदि कहलाते हैं । वेदों में इनका जो युद्ध वर्णित है वह युद्ध भी आकाशीय हैं । **सूर्य सिद्धांत अध्याय. 7** मैं यह ग्रह युद्ध वर्णित है । वहां लिखा है कि तारा और ग्रहों के परस्पर योग का नाम युद्ध है ।

पुराणों ने इस नक्षत्रवंश के वर्णन को घसीट कर राजाओं के वर्णन के साथ मिला दिया , परन्तु प्रो मैकडानल ने अपनी history of Sanskrit of literature में लिखा है , ऋग्वेद में बार बार कहे गए पुरु आदि पांचों वर्गों का ब्राह्मण ग्रन्थों में नाम तक नहीं है । यदि ये इतने सरल अर्थवाले ऐतिहासिक व्यक्ति होते तो ब्राह्मण ग्रन्थों में इनका वर्णन जरुर होता लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं लिखा । परन्तु वहां चर्चा तक नहीं है । ऐसी दशा में ये व्यक्ति ऐतिहासिक सिद्ध नहीं होते । वेदों में इतिहास का जो अनुमान किया जाता है वह मिथ्या है । वेदों में इतिहास का नाम भी नहीं है ।

राजा शन्तनु : ______

राजा शन्तनु दो भाई थे । दूसरे भाई का नाम था बाहीक , किन्तु पुराणों ने राजा शन्तनु के तीसरे भाई देवापी की कल्पना करके गड़बड़ मचा दी है । देवापी को शन्तनु का भाई क्यों बना दिया ? इसका कारण वेदों में आये हुए वही चमत्कारिक वर्णन है । ऋग्वेद के दशवे मण्डल में एक सूक्त हैं जिसमें वर्षा का वर्णन है । वर्षा का प्रयोजन अनेक प्रकार की वनस्पतियों की रक्षा है । उस सूक्त में शन्तनु , देवापी और आर्टिषेण शब्द आते हैं । इतने मात्र से ही यह कथा कल्पित कर ली गई है कि एक बार राजा शन्तनु के राज्य में अवर्षण हुआ । राजा शन्तनु ने अपने आष्टिषेण देवापी नामक भाई को (जो विरक्त हो गया था और ऋष्टिषेण नामी ऋषि का शिष्य होने से आष्टिषेण

Edit with WPS Office

कहलाने लगा था) बुलाकर यज्ञ कराया , जिससे पानी बरसा । दूसरी जगह लिखा है कि शन्तनु राजा की शादी गंगा से हुई । उपर्युक्त दोनों कथाओं का तात्पर्य इतने दिनों के बाद अब खुल रहा है । यदि गंगा नदी का स्त्री होना पहले से न लिखा होता तो हमारे इस निम्नलिखित निकाले हुए निष्कर्ष पर विश्वास ही न होता , किन्तु भाग्य से पुराना वैदिक रहस्य रद्दी अवस्था में पड़ा रहा तो इससे आज का बड़ा काम निकाला ।

पूर्व इसके कि हम उक्त कथा पर प्रकाश डालें , यह आवश्यक जान पड़ता है कि पहले हम ज्ञात करले कि देवापी , ऋष्ठिषेण , शन्तनु और गंगा आदि शब्दों का वेदों में क्या भावार्थ है । पहले देवापी शब्दों को देखिए । ऋग्वेद में ये दो शब्द है । बर्लिन के छपे हुए मैक्समूलर के पदपाठवाले ऋग्वेद में देव और आपी अलग - अलग छपा है । इसी प्रकार ऋष्टि और षेण भी अलग - अलग है । यहां देव , आपी , ऋष्टि और षेण का अर्थ विचार कीजिए । देव का अर्थ प्रसिद्ध है । यहां आपी के अधिष्ठाता को देव कहा गया है ।

ऋग्वेद में लिखा है कि ______

आपि: पिता प्रमति: सोम्यानाम् । (ऋग्वेद. 1.31.16)

अर्थात् सौम्य पदार्थों का ' आपि ' पिता है । आपी से ही सब सौम्य (जलीय) पदार्थ उत्पन्न होते हैं । दूसरी जगह ऋग्वेद. 4.41.2 में लिखा है कि " **इन्द्रा ह तो वरुणा चक्र आपी ,** अर्थात आपी नाम वरुण - चक्र का है । इस प्रकार देवापी का अर्थ होता है जल पैदा करने वाली प्रधान शक्ति । ऋग्वेद .10.98 सूक्त के सिवा देवापी शब्द अन्य किसी भी स्थान में इकट्ठा नहीं आता । इसका कारण स्पष्ट है कि यह एक शब्द नहीं हैं । इसलिए पदपाठ में दोनों शब्द अलग - अलग कहे गए हैं । परन्तु पौराणिकों ने दोनों को एक करके शन्तनु का भाई बना डाला है । इसी प्रकार ऋष्ठिषेण भी चारों वेदों में इस सुक्त के सिवा अन्यत्र कहीं नहीं आता , अतः हम यहां ' ऋष्टि ' और ' षेण ' शब्दों का भाव भी देखना चाहते हैं । ऋष्टि के लिए कहा है कि ___

आ विधुन्मद्भिर्मरुत: स्वकै रथेभियात ऋष्टिमद्भिरश्वपणै : । (ऋग्वेद. 1.88.1)

को वोऽन्तर्मरुत ऋष्टिविधुतो रेजति । (ऋग्वेद. 1.168.5)

य ऋष्वा ऋष्टिविधुत : कवय; सन्ति वेधस: । (ऋग्वेद. 5.52.13)

Edit with WPS Office

विधुद्रथा मरुत ऋष्टिमन्त: । (ऋग्वेद. 3.54.13)

इन चारों मन्त्रों में ऋष्टि का सम्बन्ध विधुत् से दिखलाई पड़ता है और षेण के लिए तो ऋग्वेद में स्पष्ट कहा है ___

षेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके । (ऋग्वेद. 6.66.6)

अर्थात ' षेण ' तो पृथिवी और आकाश दोनों को अकेला ही जोड़ता है । वहां वह षेण , ऋष्टि के साथ मिलकर उस विधुच्छक्ति का सूचक ज्ञात होता है कि इन शक्तियों का मतलब जल बरसाने से है ।

यह सबको विदित ही है कि गंगा की तीन शाखाएं हैं । एक वह पानी जो आकाश से भूमि पर बरसता है , दूसरा वह जो भूमि पर बहता है और तीसरा वह जो भूमि के खोदने से निकलता है । अश्विन के महीने में जो पानी ऊपर से बरसता है उसे गंगेय कहते हैं ।

यहां तक उक्त कथा का निष्कर्ष हुआ कि हवन से विधुत शक्ति की प्रेरणा द्वारा जलचक्र में क्रिया होती हैं और गंगा नामक देवनदी बरसात के रूप में नीचे आती हैं , परन्तु देखना चाहिए कि ये शन्तनु कौन है , जिसके साथ इस गंगा की शादी होती हैं ।

ऋग्वेद. 10.96 ___ सूक्त के अतिरिक्त , वेदों में शन्तनु शब्द अन्यत्र कहीं नहीं आया , इसलिए वेद से इस शब्द का स्पष्टीकरण नहीं हो सकता , परन्तु बड़े आनन्द की बात है कि पुराने ऋषियों ने इस शब्द का अर्थ वैधक के ग्रन्थों में लिख रक्खा है , अत: हम यहां सुश्रुत के वचन उध्दुत करके दिखलाते हैं कि ' शन्तनु ' शब्द का क्या तात्पर्य है ?

अथ कुधान्यवर्ग : ___
कोरदूषकश्यामाकनीवार ' शान्तनु ' ।
वरकोछालकप्रियंगुमधूलिका नान्दीमुखी कुरुविन्दगवेधुक
वरुक तोदपणी मुकुन्दक वेणु यवप्रभृतय: कुधान्यविशेष : । (सुश्रुत सूत्रस्थान. 46.21)

इसमें अनेक प्रकार के धान्य गिनाये गये है , जिनमें एक शन्तनु भी है । इस शान्तनुनामी धान्य का जीवन वर्षा है । आश्विन के महिने में इस धान्य को वर्षा की आवश्यकता होती हैं । आश्विन की वर्षा ही गंगा है । वह गंगा जब

Edit with WPS Office

इस शान्तनु से अपना परिणय करती हैं तभी इसका तप्त हृदय प्रफुल्लित होता है । उस गंगा को शान्तनु के लिए ऊपर कही हुई आष्टिषेणदेणदेवापि ने यज्ञ करके शन्तनु के राज्य में पानी बरसाया और गंगा से शन्तनु की शादी हुई ।
पुराणों की यह कथा वेदों में आये हुए शान्तनु , आष्टिषेण , देवापी आदि शब्द और उनमें सम्बन्ध रखने वाले वर्षा का विज्ञान हमें तुरंत वेदों में इतिहास की ओर बड़े प्रबलता से खींचने लगता है , परन्तु जब उन शब्दों को ___ उन मन्त्रों को ध्यानपूर्वक देखा जाता है तब ज्ञात होता है की वहां बात ही कुछ और है ।

अम्बा , अम्बिका और अम्बालिका : ______

वेद में दवा को अम्ब कहा गया है । **यजुर्वेद.** 12.76 में लिखा है कि ' **शतं वो अम्ब धामानि... इमं में अगदं कृत** ' अर्थात हे अम्ब ! मुझे आरोग्य कीजिए । यहां रोगी आरोग्य होने के लिए अम्ब (दवा) से कहता है । दूसरी जगह उक्त तीनों अम्बाओं (दवाओं) का होम करना भी कहा गया है , वहां लिखा है कि ' **सह स्वस्त्राऽम्बिकया तं जुषस्व ।** इसमें स्पष्ट कह दिया है कि अम्बिका की बहिनों के साथ हवन करो । **यजुर्वेद.** 3.60 में भी कहा गया है कि ' **त्र्यंबक यजामहे सुगंधि पुष्टिवर्धनम्** ' अर्थात तीनों अम्बाओं का मैं सुगन्धि और पुष्टि बढ़ाने के लिए हवन करता हूं । इन तीनों ओषधियों के लिए यजुर्वेद में कहा गया है कि ___

अम्बे अम्बिकेऽम्बालिके न मा नयति कश्चन ।
ससस्त्यश्वक: सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम् ।। (ऋग्वेद. 23.18)

यहां उक्त तीनों को एक ही स्थान पर कह दिया है । इसके सिवा यह भी बतला दिया कि वे काम्पील में होती है । काम्पील से महाभारत की उक्त कन्याओं का कुछ भी सम्बन्ध नहीं था । वे तो काशी नरेश की कन्याएं थीं , और हस्तिनापुर में ब्याह कर आई थी , अत: यह काम्पील या काम्पिल्य फरुखाबाद जिलेवाला कम्पिला नहीं है । काम्पील नाम एक औषधि का है , जिसके साथ ही अम्बिका आदि ओषधियां उगती हैं ।

अब देखना चाहिए कि वैधक में उक्त ओषधियों की चर्चा है या नहीं ।

Edit with WPS Office

भावप्रकाश में लिखा है कि ___

माचिका प्रस्थिकाम्बष्ठा तथाम्बाऽम्बालिकाऽम्बिका । ___ भा० हरीतक्यादिवर्ग. 170

अब सिद्ध हो गया कि यजुर्वेद में महाभारतकालीन कन्याओं और रानियों की चर्चा नहीं है , प्रत्युत वहां ये ओषधियों के नाम है ।

जिस प्रकार यह ओषधियों का वर्णन है उसी प्रकार ' सोमक: साहदेव: का भी वर्णन ओषधियों के लिए ही हुआ है , अन्यथा सूर्यवंशी अम्बरीष के साथ चन्द्रवंशी सहदेव का नाम क्यों आता ? परन्तु ऋग्वेद. 1.100.17 वाले मन्त्र में कहा गया है कि पानी के बिना अम्बरीष ___ आमडे का वृक्ष और सहदेव: ___ सहदेई का वृक्ष भयमान होते हैं ।

इसी प्रकार हमने यहां तक चन्द्रवंश के कतिपय राजाओं के नामों को जो वेदों में पाये जाते हैं , उन्ही मन्त्रों के अन्य शब्दों से जांचा और पुराणोक्त चमत्कारी वर्णनों से मिलाया तो वे राजा नहीं ___ मनुष्य नहीं प्रत्युत सृष्टि के कुछ अन्य ही पदार्थ सिद्ध हुए । हमें तो आश्चर्य है कि जो लोग इन शब्दों से राजाओं का अर्थ ग्रहण करते हैं , वे उन्हीं मन्त्रों में आये हुए अन्य शब्दों का क्या अर्थ करते होंगे ? सहदेव और सोमक को , पुरु , द्रुह्य , आदि पांचों भाइयों को तथा अम्बा , अम्बिका , अम्बालिका को एक ही जगह देखकर शायद कोई इतिहास प्रेमी हठ करें कि यह घटना अलौकिक नहीं है । उनसे निवेदन है कि वे तनिक संसार की शैली पर ध्यान दें । वेद में कृष्ण और अर्जुन एक ही स्थान पर आये हैं , परन्तु दूसरे स्थान पर ' **अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च** ' (ऋग्वेद. 6.9.1) कहकर वेद में ही बतला दिया है कि दोनों का अर्थ दिन है । यहां लोक में दोनों पुरुषों की अटूट मित्रता से ही कृष्ण अर्जुन नाम रख दिये गये है ।

ये घटनाएं बतलाती हैं कि आदर्श शब्दों से ही लोग नामों का अनुकरण करते हैं । रामायण से जिस प्रकार राम , लक्ष्मण नाम रक्खे गये और वेद से जिस भांति कृष्ण , अर्जुन नाम रक्खे गये उसी प्रकार वेदों को ही देखकर सहदेव , सोमक और अम्बा , अम्बिका , तथा पुरु , द्रुह्य , अनु आदि नाम भी रक्खे गये है । मनुस्मृति में लिखा है कि ' **वेदशब्देभ्य एवादौ पृथक संस्थाश्च निर्ममे** ' अर्थात वेदों के शब्द पहले के और मनुष्यों के नाम बाद के है ।

Edit with WPS Office

कृष्ण की व्रजलीला और विभूतियां : ______

एक दिन हमने भी वेदों से भागवत के दशम स्कंध की वे घटनाएं निकालना शुरू की थी , जो श्रीकृष्ण भगवान को कलंकित करती हैं । हमारे इस खेल का अच्छा परिणाम निकला और भागवत तथा गीता से सम्बन्ध रखने वाली दो बड़ी घटनाओं पर बहुत प्रकाश पड़ा । पहले हम वे मन्त्रांश एकत्र करते हैं , जिनमें कृष्ण की व्रजलीला दिखलाई पड़ती हैं ।

स्तोत्रं राधानां पते । (ऋग्वेद. 1.30.5)
गवामप व्रजं वृधि । (ऋग्वेद. 1.10.7)
दासपत्नीरहिगोपा अतिष्ठत् । (ऋग्वेद. 1.32.11)
त्वं नृचक्षा वृषभानु पूर्वी: कृष्णास्वाग्रे अरुषो वि भाहि । (ऋग्वेद. 3.15.3)
तमेतदाधारय: कृष्णासु रोहिणीषु च । (ऋग्वेद. 8.93.13)
कृष्णा रुपाण्यर्जुना वि वो मदे । (ऋग्वेद. 10.21.3)

इन मंत्रों में राधा , गौ , व्रज , गोप , वृषभानु , रोहिणी , कृष्ण , और अर्जुन सभी मण्डली एकत्र हो गई है । इसी मण्डली के आधार पर भागवत की रचना हुई है , परन्तु मन्त्रों में आये हुए अन्य शब्दों को देखने पर पता लगेगा कि ये सब आकाशीय पदार्थ है ।

ऋग्वेद. 6.9.1 में कहा है कि ' **अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च** ' अर्थात अर्जुन और कृष्ण दोनों दिन के नाम है । इसी प्रकार राधा , धन और अन्न को कहते हैं । गो , किरणें हैं और व्रजकिरणों का स्थान धौ है और भी सब प्रकार के आकाशीय पदार्थ है । वेदों के इस कृष्णार्जुन अलंकार से ही भागवत और गीता का वह स्थान बनाया गया है , जिसमें कृष्ण ने अपनी विभूतियां का वर्णन किया है कि वृक्षों में पीपल मैं हूं , इत्यादि । ऋग्वेद में सूर्य , इन्द्र और विधुत अर्थात आकाशस्थ आग्रेय शक्तियां कहती है कि ___

अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहं कक्षीवां ऋषिरम्सि विप्र: ।
अहं कुत्समार्जुनेयं न्यृञ्जेऽहं कविरुशना पश्यता मा ।। (ऋग्वेद.

Edit with WPS Office

4.26.1)

अर्थात हम मनु , सूर्य , कक्षीवान , उशना , आदि पदार्थ है । शुक्र की टेड़ी चाल भी हम ही हैं । यहां गीता का यह वाक्य भी कि ' कवियों में उशना कवि मैं हूं ; स्पष्ट हो जाता हैं । यह उशना कोई मनुष्य नहीं है । उशना नाम शुक्र का है । इसकी चाल बड़ी टेड़ी - बाकी होती हैं । वेद में नक्षत्रों की इस चाल को काव्य कहते हैं । '**पश्य देवस्य काव्यम्** ' यह वाक्य नक्षत्र काव्य के लिए कहा गया है । इसलिए जो प्रकाश कृष्ण और अर्जुन हैं , वही उशना काव्य भी है । **महाभारत आदि पर्व.** 4.77 में लिखा है कि ' **उशनस्य दुहिता देवयानी** ' अर्थात देवयानी उशना की लड़की है । इससे और भी स्पष्ट हो गया है कि उशना शुक्र ही है । इस प्रकार से भागवत की व्रजलीला और गीता की विभुतियों सूर्य , किरण , वर्षा , अन्न , प्रकाश , ग्रंह , ग्रहगति , और विधुत आदि ही है । इन वैदिक वर्णनों को शब्द - साम्य के कारण कथाओं के रूप में लिखकर पौराणिक कवियों ने व्यर्थ ही बात का बतंगड़ बना दिया है ।

हमने किया तो था एक खेल , सुलझ गई यह उलझन कि भागवत और गीता किस प्रकार के अलंकारों से कथाओं की सृष्टि करते हैं । हमारे कहने का तात्पर्य केवल यह है कि पुराणों में जो असंभव कथाएं लिखी है , वे वेद के आकाशीय वर्णन है , जिनको तत्तत्रामवाले राजाओं के साथ मिला दिया है । यहां तक हमने चन्द्रवंश से सम्बन्ध रखने वाले राजाओं का वर्णन किया , अब सूर्यवंश के राजाओं के भी एक - दो नमूने देख लेने चाहिए ।

राजा इक्ष्वाकु : ______

पुराणों में सूर्यवंश का मूल पुरुष मनु हैं और उसका आदि पुरुष राजा इक्ष्वाकु है । मनु शब्द भी वेदों में आया है , परन्तु वह '**अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहम्** ' (**ऋग्वेद.** 4.26.1) के अनुसार आकाशस्थ पदार्थ ही है । इक्ष्वाकु शब्द ऋग्वेद में एक ही जगह आया है । **ऋग्वेद.** 10.60.4 में उल्लेख है ___ ' **यस्य इक्ष्वाकुरुप व्रतें रेवान् मराय्येधते दिवीव पंच कृष्टय: ।** यहां रायी , दिवि और कृष्टय शब्द है । इनसे ज्ञात होता है कि इक्ष्वाकु कोई

Edit with WPS Office

कृषि - सम्बन्धी वस्तु है । अथर्ववेद में स्पष्ट कह दिया गया है कि वह औषधि है ।

यं त्वा वेद पूर्व इक्ष्वाको यं वा त्वा कुष्ठकाम्य: ।
यं वा वसो यमात्स्यस्तेनासि विश्वभेषज: ।। (**अथर्ववेद. 19.39.9**)

अर्थात जिसको (लोग) इक्ष्वाकु जानते हैं , कुष्ठकाम्य जानते हैं और खाध जानते हैं , ऐसी तू सर्वोषधि है ।

सुश्रुत सूत्रस्थान. 44.7 में लिखा है कि ' **इक्ष्वाकु कटुतुम्बिका** ' अर्थात इक्ष्वाकु कटु तुम्बी है । दूसरी जगह कहा है ____

इक्ष्वाकुकुसुम चूर्ण वा पूर्ववदेवं क्षीरेण ।
कासश्वासच्छदिकफरोगेषूपयोग : ।। (**सुश्रुत सूत्रस्थान. 44.7**)

अमरकोष में भी ' **इक्ष्वाकु: कटुतुम्बी स्यात्** ' लिखा हुआ है । इससे ज्ञात होता है कि ऋग्वेद में धन और कृषि से सम्बन्ध रखनेवाली यह अथर्ववेद की भेषज भी ओषधि ही है । इसको राजा या मनुष्य बनाने की तनिक भी आवश्यकता नहीं है ।

राजा अम्बरीष : ______

हम ऊपर लिख आये है कि अम्बरीष का वर्णन सहदेव के साथ आया है और वहां इसका अर्थ आमडा वृक्ष ही होता है । दूसरे स्थान पर अमरकोष में अम्बरीष भड़भूजे के भाड़ को भी कहते हैं । इससे अम्बरीष राजा सिद्ध नहीं होता ।

राजा त्रिशंकु : ______

यह राजा भी सूर्यवंश का है । इस त्रिशंकु राजा के लिए पुराणों में कथा आती है कि विश्वामित्र ने इनको स्शरीर के साथ इनको स्वर्ण पहुंचाया था । लेकिन वेदों में राजा त्रिशंकु नहीं है वहां इस शब्द का मतलब कुछ ओर है । इसके लिए प्रसिद्ध है कि यह भूमि और आसमान के बीच में लटका है । इससे समझ लेना चाहिए कि यह न तो मनुष्य है और न राजा । वाल्मीकि

Edit with WPS Office

रामायण में लिखा है कि ___

वाल्मीकि रामायण. युद्ध काण्ड. सर्ग 4

दक्षिण दिशा लंका में रामचंद्र जी ने इस तारे को देखकर कहा कि ये हमारे पूर्व पितामह त्रिशंकु है । लंका से देखने पर यह मध्यरेखा के नीचे लटका हुआ दीखता है , इसलिए इसे पृथिवी और आकाश के बीच में लटका हुआ कहा गया है ।

इस प्रकार आकाशीय और औषधियों पदार्थों के वर्णनों को , उसी - उसी नाम वाले राजाओं के वर्णनों के साथ मिलाकर पुराणकारों ने सच्चे इतिहास को असम्भव और इतिहास - शून्य वेदों को ऐतिहासिक बना दिया है ।

वेद अपौरुषेय ग्रंथ है । ये किसी मनुष्य द्वारा लिखित पुस्तक नहीं है , वेदों को श्रुति बोला है , श्रुति परंपरा जैसे कम होती गई तो ऋषियों ने समय से पहले वेदों को ग्रंथों के रूप में संकलित कर दिया ।

अब आगे हम वेदों में आए ऋषियों के बारे में थोड़ा सा ऋषियों के विषय में लिखने की इच्छा करते हैं ___

ऋषियों के नाम : ______

हम अभी यह दिखला आये हैं कि वेदों में जिन पदार्थों का वर्णन है वे संसार के राजा नहीं , प्रत्युत वे या तो आकाशीय पदार्थ है या वनौषधि है । यहां इस प्रकरण में हम उन शब्दों का अर्थ दिखलाना चाहते हैं , जिनका अर्थ लोग ऋषि , ब्राह्मण अथवा तपस्वी करते हैं ।

अगस्त्य ऋषि प्रसिद्ध है , परन्तु एक अगस्त्य नामक तारा भी प्रसिद्ध है जो वर्षा के अन्त में दिखलाई पड़ता है । उसके उदय होते ही वर्षा बन्द हो जाती हैं । इस पर से यह कथा गढ़ी गई है कि अगस्त्य ने समुद्र को पी लिया , किन्तु तुलसीदास अपनी रामायण में लिखते हैं कि ' उदय अगस्त्य पंथजल सोखा ' इससे स्पष्ट हो जाता हैं कि यह अगस्त्य तारा ही है , ऋषि नहीं ।

महाभारत में लिखा है कि ___

ब्रह्मराशिविशुद्धश्च शुद्धाश्च परमर्षय: । अचिष्मन्त: प्रकाशन्ते ध्रुव सवे प्रदक्षिणम् ।।

Edit with WPS Office

(महाभारत. आदि पर्व. अध्याय 71)

अर्थात सप्तर्षि ध्रुव की प्रदक्षिणा करते हैं । यहां लोक में भी उत्तर की ओर घूमने वाले सातों ताराओ को सप्तर्षि कहते हैं । उधर ध्रुव एक राजा का पुत्र प्रसिद्ध ही है । कहते हैं कि यह ध्रुव कभी पृथिवीलोक में मनुष्य था , परन्तु अब नक्षत्र है , जिसकी प्रदक्षिणा सात तारें करते हैं । ऋग्वेद में उत्तानपाद का वर्णन है जो ध्रुव से सम्बन्ध रखता है , परन्तु पुराणों ने उत्तानपाद , ध्रुव और सप्तर्षियों को मनुष्य बना डाला है , जिससे वेद में आये हुए इन शब्दों से इतिहास का भ्रम होने लगता है ।

याज्ञवल्क्य स्मृति में लिखा है कि ___

याज्ञवल्क्य स्मृति. प्रा ० २

हम पहले कह आयें है कि वैदिक साहित्य में आकाश भी एक संसार है । वहां गली , ग्राम , नगर , राजा , युद्ध , ऋषि आदि सभी कुछ है । उसी के अनुसार ऊपर के श्लोकों का अर्थ है कि उत्तर गोलार्ध में नागवीथी के अन्त में सप्तर्षि हैं और दक्षिण गोलार्ध में अगस्त्य तारें के पास जहां अजवीथी है , वहां 88,000 मुनि है । इस वर्णन से प्रकट हो गया कि तारागणों को ऋषि - मुनि कहा गया है ।

यह सब जानते हैं कि उत्तरस्थित सप्तऋषियों में एक नक्षत्र का नाम वशिष्ठ हैं । अभी हमने कहा है कि त्रिशंकु दक्षिण दिशा में है । इसको स्वर्ग (ऊपर) भेजने वाले विश्वामित्र ही थे । इसलिए इस त्रिशंकु के नीचे ही , दक्षिण में , विश्वामित्र नामी नक्षत्र होना चाहिए , क्योंकि उत्तरस्थित वशिष्ठ और दक्षिणास्थित विश्वामित्र के दिशा - विरोध से ही वशिष्ठ और विश्वामित्र का विरोधालंकार प्रसिद्ध हुआ है । इन कौशिक , अर्थात विश्वामित्र का वर्णन वाल्मीकि रामायण बालकाण्ड सर्ग 60 में है ।

यहां एक प्रमाण इन कौशिक के विषय का वेद से देते हैं , जिसमें प्रकट हो जाएगा कि वे पृथिवी की वस्तु नहीं है ।

ऋग्वेद. 3.53.9 ______

इस मंत्र में कुशिक विश्वामित्र का नाम है और उसे ऋषि भी कहा गया है , परन्तु यह भी कहा गया है कि वह आकाश को रोकता है । इसके आगे कहा गया है कि इन्द्र कुशिक के द्वारा सुदास को हानि पहुंचाता है । सब जानते हैं

Edit with WPS Office

कि इन्द्र मनुष्य नहीं है । यहां इन्द्र सूर्य अर्थ में ही है , इसलिए इस मन्त्र का यही भाव होता है कि सूर्य , कुशिक नामक नक्षत्र के द्वारा सुदास नामक किसी आकाशीय पदार्थ को हानि पहुंचाता है । सुदास को भी लोग राजा कहते हैं , परन्तु यहां वह भी आकाश से ही सम्बन्ध रखने वाला कुछ पदार्थ प्रतीत होता है । इस प्रकार विश्वामित्र , कौशिक और वशिष्ठ आदि सब नक्षत्र ही प्रतीत होते हैं , मनुष्य नहीं ___ देहधारी ऋषि नहीं ।

अथर्ववेद में दो मंत्र इस प्रकार है ___ **अथर्ववेद. 18.3.15 - 16**

इन दो मंत्रों में सभी ऋषियों के नाम गिना दिये गये है , परन्तु अन्त में कह दिया गया है कि ' **सुसंशास: पितर: अर्थात** ये प्रशंसा करने योग्य पितर हैं । ये पितर सूर्य - चन्द्र की किरणों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । इस विषय पर अथर्ववेद का यह मंत्र प्रकाश डालते हैं ___

अत्रिवद्ध: क्रिमयो हन्मि कण्ववज्जमदग्निवत् ।

अगस्त्यस्य ब्रह्मणा सं पिनष्म्यहं क्रिमीन् ।। (अथर्ववेद. 2.32.3)

अर्थात हम अत्रि , कण्व , जमदग्नि और अगस्त्य आदि की भांति कीड़ों को मारते हैं । अब देखना यह है कि अत्रि आदि कौन है और क्रिमियों को कौन मारता है । ऋग्वेद. 5.40.8 में लिखा है कि ' **अत्रि: सूर्यस्य दिवि चक्षुराधात्** ' **अर्थात** अत्रि सूर्य से संबंध रखता है । दूसरे स्थान पर , ऋग्वेद. 5.59.8 में कहा है कि " **आ याहाग्रे अत्रिवत् ;** अर्थात , हे अग्रि ! तुम अत्रि की भांति आओ । सूर्य से संबंध रखने वाली और अग्रि की भांति आनेवाली तथा कीड़ों को मारने वाले ये अत्रि आदि पितर - किरण नहीं है तो और क्या है ? अथर्ववेद. 2.32.1 में तो स्पष्ट ही लिखा हुआ है कि " **उधत्रादित्य: क्रिमीन् हन्तु निम्रोचन्हन्तु रश्मिभि: ;** अर्थात सूर्य उदय होकर अपनी रश्मियों से क्रिमियों को मारता है । कितना स्पष्ट वर्णन है । इस वर्णन से अब अच्छी प्रकार समझ में आ गया कि अत्रि , कण्व , और जमदग्नि आदि सब रश्मियां ही है , जो कीड़ों को मारती हैं । इसलिए ऊपर कहें हुए पितर नामी समस्त ऋषि , मनुष्य नहीं प्रत्युत किरणें ही है और रोग - जन्तुओं को नाश करने वाली है । वर्तमान कालीन डाक्टर भी मानते हैं कि सूर्य रश्मियों से हर प्रकार के रोगजन्तु नष्ट हो जाते हैं । वेदों में नक्षत्र और किरणवाले सैकड़ों प्रमाण है , जो ऋषियों के नाम से कहें गये है , परन्तु यहां हम विस्तारभय से बहुत नहीं लिखते ।

Edit with WPS Office

ये तमाम ऋषि जिस ब्राह्मण - राजा के राज्य में रहते हैं , उसका भी वर्णन भी वेद में सुन्दर रीति से इस प्रकार किया गया है ___

विप्रराज्य अर्थात चन्द्रराज्य : ______

अयं सहस्त्रं ऋषिभि: सहस्कृत: समुद्रइव पप्रथे ।
सत्य: सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ।। (ऋग्वेद. 8.3.4)

यहां हजारों ऋषियों को विप्र राज्य , अर्थात चन्द्रमा के राज्य में बसने वाले कहा है । चन्द्रमा को विप्र और द्विजराज आदि कहते ही हैं । चन्द्रोदय में ही ___ रात्रि में ही नक्षत्रों का प्रकाश होता है । चमकने वाले सभी ताराओं में चन्द्रमा अधिक विशाल और तेजस्वी है , अत: उसे सबका राजा कहा है और शीतल होने से विप्र कहा गया है ।

बस आकाशस्थ ऋषियों का इतना ही वर्णन करना है । इसके आगे अब यह दिखलाना है कि शरीरस्थ इन्द्रियों को भी ऋषि कहा गया है । यजुर्वेद में लिखा है कि ___

सप्त ऋषय: प्रतिहिता: शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् ।
सप्ताप : स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतो अस्वप्रजौ सत्रसदौ च देवी ।।
(यजुर्वेद. 34.55)

अर्थात शरीर में सात ऋषियों का वास है । उनके सोने पर भी दो जागा करते हैं ।

अथर्ववेद में लिखा है कि ___

तिर्यग्बिलश्चमस ऊर्ध्वबुध्नस्तस्मिन् यशो निहितं विश्वरुपम् ।
तदासत ऋषय: सप्त सार्क ये अस्य गोपा महतो बभूवु: ।।
(अथर्ववेद. 10.8.9)

अर्थात शिर में सात ऋषियों का वास है । इन ऋषियों से अभिप्राय आंख , कान , और नाक आदि से ही है ।

यजुर्वेद के " **अयम्पुरोभुव** " आदि मन्त्रों में (जिनके द्वारा पार्थिव पूजन के समय प्राण - प्रतिष्ठा की जाती हैं) कहा गया है कि वशिष्ठ ही प्राण है , प्रजापति मन है , जमदग्नि चक्षु हैं , विश्वामित्र श्रोत्र हैं , और विश्वकर्मा वाणी है , अर्थात वेद में आये हुए ऋषियों के वर्णन या तो आकाश - सम्बन्धी

Edit with WPS Office

अर्थ रखते हैं या शरीर सम्बन्धी ।

अब हम मनुष्य संबंधी वर्णनों को यही पर समाप्त करते हैं । जिन राजाओं और ऋषियों का वर्णन हमने ऊपर किया है उन्हीं से , अथवा उसी प्रकार के अन्य नामों के आ जाने से , लोग इतिहास का भ्रम करने लगते हैं , किन्तु जिस प्रकार हमने इतने नामों का निराकरण किया है और देखा है कि इनमें कुछ भी ऐतिहासिक तथ्य नहीं है , इसी प्रकार यदि विचारपूर्वक परिश्रम करके ढूंढा जाए तो सभी नामों का कुछ - न - कुछ दूसरा ही अर्थ निकलेगा और इतिहास की गन्ध तक न रहेगी । इन राजाओं और ऋषियों के अतिरिक्त भी बहुत - से शब्द वेदों में आते हैं , जिनका अर्थ सृष्टि की अनेक शक्तियां हैं , परन्तु ठीक-ठाक अर्थ न समझने के कारण पौराणिक समय में आलसी लोगों ने उन सबको मनुष्य कल्पित करके सबकी कथाएं बना ली है । इसी प्रकार त्रित और भुज्यु आदि की भी कथाएं बना ली है । परन्तु पाश्चात्य विद्वानों ने अब मान लिया है कि ये पदार्थ सृष्टि के चमत्कारी पदार्थ है ___ मनुष्य नहीं । लोकमान्य तिलक महोदय ने ' आर्यों का उत्तर ध्रुव निवास ' नामी अपने ग्रंथ में एक स्थान पर इस विषय को विस्तार से लिखा है । उसी का सारांश हम भी यहां लिखते हैं ___

" अश्विनों के पराक्रम का वर्णन इस प्रकार है ___ वृद्ध च्यवन ऋषि को उन्होंने फिर जवान कर दिया । पतित विष्णायू को स्वाधीन किया । समुद्र में पड़े हुए भुज्यु को सौ पतवार वाली नौका द्वारा बाहर निकाला । दश दिन और नव रात्रि तक पानी में पड़े हुए रेभ को अच्छा करके बाहर निकाला । खाई में पड़े हुए त्रित को अन्धकार से बहार निकाला । एक वर्तिका को वृक की दाढ से छुड़ाया । ऋर्जाश्व को नेत्र दिये । विश्पला की टूटी टांग के स्थान पर लोहे की टांग लगा दी । वधृमती को हिरण्यहस्त नामक पुत्र दिया । शंय्यू की वृद्ध गाय को फिर दूध देने वाली कर दिया और यदु को एक घोड़ा दिया , इत्यादि । '

लोकमान्य तिलक महोदय आगे कहते हैं कि ' इन घटनाओं को मैक्समूलर आदि पाश्चात्य पण्डितों ने शरद् में बलहीन हुए सूर्य को वसंत में पुनः बलवान् हो जाने के रुपक में लगाया है , परन्तु इनका वास्तविक तात्पर्य तो ध्रुव प्रदेश की घटनाओं से ही है ।

जो हो , परन्तु मनुष्य की घटना तो नहीं है ? मनुष्य की घटना जिन

Edit with WPS Office

लोगों ने कहीं हैं उन्होंने तो गजब किया है । उन्हें नहीं सूझा कि ' अश्विन ' से सम्बन्ध रखने वाले इन व्यक्तियों को हम मनुष्य कैसे बता रहे हैं । अश्विन निस्संदेह आकाशीय पदार्थ है तब वे इन मनुष्यों की सेवा __ परिचर्या करने के लिए कैसे आ सकतें हैं ? इन्हीं सब बातों को देखकर मैक्समूलर ने कहा है कि वेदों में जो संज्ञाएं (नाम) मिलती हैं , वे ठीक-ठाक नाम है , ऐसा नहीं समझना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 124.इतिहास,पशुहिंसा और अश्लीलता

हम पीछे लिख आए हैं कि अच्छी प्रकार सिद्ध कर आये हैं कि वेदों में इतिहास से सम्बन्ध रखने - वाली सामग्री नहीं है । जिन ऐतिहासिक नामों , ज्योतिष के चमत्कारों और भौगौलिक अथवा भौगार्भिक बातों को लेकर लोग वेदों से इतिहास निकालते हैं वे निस्सत्व है । उनमें इतिहास नहीं निकलता । वेदों में आये हुए ऐतिहासिक नाम तो इतिहास का साथ ही नहीं देते । इतिहास निकालनेवाले जानते ही नहीं कि पुराणकारो ने वेदों के अलंकारों को लेकर और उनको ऐतिहासिकरुप देकर पुराणों में केवल अर्थ ही खोला है , इतिहास नहीं लिखा । श्रीमद् भागवत पुराण. 1.4.28 में स्पष्ट लिखा हुआ है कि ___

भारतव्यपदेशेन धाप्रायार्थश्च दर्शित: । (भागवत पुराण. 1.4.29)

अर्थात भारतीय लेखक स्वयं स्वीकार करते हैं कि हमने पुराणों में इतिहास का रुप देकर केवल वेदों के अलंकारों का ही भाव खोला है तब दूसरों को

Edit with WPS Office

क्या अधिकार है कि वे मनगढ़ंत कल्पना कर लें कि वेदों का इतिहास पुराणों में विस्तृत किया गया है ? बात तो असल यह है कि आधुनिक विद्वानों ने न तो वेदों की शैली को समझा है , न पुराणों का तात्पर्य ही समझा है और न यही ढूंढ पाया है कि दोनों का सम्बन्ध क्या है ? महाभारत में स्पष्ट लिखा है कि ___

इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् । (महाभारत आदि पर्व. 1.267)

अर्थात इतिहास और पुराणों से वेदों का मर्म जाना जाता है । इसका तात्पर्य यही है कि पुराणों में पच्चतत्र की भांति ऐतिहासिक कथाओं को गढ़कर वेदों के अलंकारों को खोला गया है , परन्तु वह वर्णन वास्तविक इतिहास के साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखता । इसलिए यदि वास्तविक इतिहास और पुराण दोनों की तुलनात्मक दृष्टि से वेदों के साथ आलोचना की जाएं तो इतिहास साथ न देगा । इससे स्पष्ट हो जाता है कि पुराणों का वर्णन इतिहास नहीं , प्रत्युत अलंकारों का स्पष्टीकरण हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि वेदों में इतिहास नहीं है । जिस प्रकार वेदों में इतिहास नहीं है उसी प्रकार वेदों में पशु हिंसा भी नहीं है । हिन्दू साहित्य के देखने से पता लगता है कि आर्यों के याज्ञिक इतिहास में भिन्न भिन्न दो समय है , जिनमें से एक मे पशु हिंसा नहीं पाई जाती और दूसरे में पाई में पाई जाती हैं । पहला आदिकाल , अर्थात शुद्ध संहिताकाल है और दूसरा रावणकाल से लेकर आधुनिक ब्राह्मण और सूत्रकाल है । आदिमकाल , अर्थात संहिताकाल के यज्ञों में कहीं कहीं होता था । हम अपने इस आरोप की पुष्टि में कुछ प्रमाण उपस्थित करते हैं जो इस प्रकार है ___

1. वेदों में यज्ञ के लिए जितने शब्द आये हैं उनमें से किसी के भी अर्थ से पशुवध अथवा हिंसा सूचित नहीं होती , प्रत्युत अध्वर शब्द से अहिंसा ही सूचित होती हैं । ध्वर शब्द का अर्थ हिंसा है और अध्वर का अर्थ अहिंसा । अहिंसा के लिए ही यज्ञों में अध्वर्यु की नियुक्ति होती हैं । यह यज्ञ में कायिक , वाचिक और मानसिक किसी प्रकार की हिंसा नहीं होने देता । यहां तक कि छोटे - छोटे कीटों को भी अग्नि में जलनें से बचाता है , इसलिए वेदी में दो - तीन परिखाए बनाई जाती है और उनमें पानी भर दिया जाता है ।

Edit with WPS Office

2. यज्ञों में जिस गौं का वध बतलाया जाता हैं , वेदों में उसके कई नाम हैं । उन नामों में एक नाम अध्न्या भी है । अघ्न्या का अर्थ है ' **किसी अवस्था में भी न मारने योग्य** ' यदि गौ यज्ञ में वध्य होती तो उसका नाम इस प्रकार का न होता ? वह यज्ञ के लिए वध्य समझी जाती , परन्तु ऐसा अवकाश नहीं रक्खा गया ।
3. वेदों में स्पष्ट उल्लेख है कि मांस जलाने वाली अग्नि यज्ञों में प्रयुक्त न होने पावे । मांस जलाने वाली अग्नि बहुत करके चिताग्नि ही होती हैं । जब वेदों में चिता की अग्नि तक को यज्ञों में लाने का निषेध है तब मनुष्य मांस अथवा पशु मांस से यज्ञ करने की आज्ञा कैसे हो सकती हैं ?

वेद में स्पष्ट लिखा है कि ___

क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरं यमराज्ञो गच्छतु रिप्रवाहः ।
इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ।।
(ऋग्वेद. 10.16.9)
यो अग्निः क्रव्यात् प्रविवेश नो गृहमिमं पश्यन्नितरं जातवेदसम् ।
तं हरामि पितृयज्ञाय दूरं स धर्ममिन्धां परमे सधस्थे ।।
(अथर्ववेद. 12.2.7)

अर्थात् मैं मांस खाने वाली अग्नि को दूर करता हूं । वह पाप ढोने वाली है , इसलिए वह यमराज के घर जावे । यहां दूसरी ही अग्नि जो सबकी जानी हुई और देवों के लिए हवि ढोने वाली है उसे रखता हूं । जो मांसभक्षी अग्नि तुम लोगों के घरों में प्रवेश करती हैं , उसको पितृयज्ञ के लिए दूर करता हूं । तुम्हारे घरों में दूसरी ही अग्नि को देखना चाहता हूं , वही उत्तम स्थानों में धर्म को प्राप्त हो ।
इस प्रकार से इन दोनों मन्त्रों में बतलाया गया है कि मांस जलाने वाली अग्नि न तो देव यज्ञों में रह सकती हैं और न पितृ यज्ञों में , क्योंकि दोनों यज्ञ घर में ही होते हैं । यहां मांस जलानेवाली अग्नि को घर से दूर हटाने का उपदेश हैं , अतः ज्ञात हुआ कि मृत संस्कार के लिए ही उसे घर से दूर यमराज में भेज रहे हैं । मूल संहिताओं के इन मौलिक प्रमाणों से पाया

Edit with WPS Office

जाता हैं कि वेदों के अनुसार यज्ञों में हिंसा और गौवधादि नहीं हो सकता । यहां तक कि मांस जलाने वाली अग्नि भी यज्ञों में नहीं लाई जाती । जब वैदिक यज्ञ मांस और हिंसा से इतना परहेज करते हैं और इन बातों से इतना दूर भागते हैं तब यही सिद्ध होता है कि आदिमकाल में ___ संहिताकाल में मांसयज्ञ नहीं होते थे ।

4. संहिता काल में मांस यज्ञ न होने का सबसे बड़ा कारण आर्यों का हिंसा से डरना हैं । यजुर्वेद में इस प्रकार के वचननांश मिलते हैं , जिनसे सूचित होता है कि वे पशुओं को पालते थे , न कि उनकी हिंसा करते थे ।

अर्थात पशुओं की रक्षा करो , गाय को मत मारो , बकरी को मत मारो , भेड़ को मत मारो , इस मनुष्य और द्विपद पक्षियों को मत मारो , एक खुरवाले घोड़े , गंधें को मत मारो और किसी भी प्राणी को मत मारो ।

यहां पर किसी भी पशु - पक्षी के मारने की आज्ञा नहीं है । इतना ही नहीं प्रत्युत स्पष्ट लिखा है कि ___

एतद् वा उ स्वादीयो यदधिगवं क्षीरं वा मांस वा तदेव नाश्नीयात् ।।
(अथर्ववेद. 9.6(3).9)
अर्थात गाय का यह क्षीर , दधि और घृत ही खानें योग्य है , मांस नहीं ।
ऋग्वेद में लिखा है कि ___(ऋग्वेद .10.87.16)
अर्थात जो राक्षस मनुष्य का , घोड़े का और गाय का मांस खाता हो तथा दूध की चोरी करता हो , उसके शिर को कुचल देना चाहिए ।
अथर्ववेद में लिखा है कि ___

यथा मांस यथा सुरा यथाक्षा अधिदेवने यथा पुंसो वृषण्यत स्त्रियां निहन्यते मन: ।

(अथर्ववेद. 6.70.1)

अर्थात मांसाहारी , शराब पीनेवाला और व्याभिचार एक समान ही मार डालने योग्य है । इन प्रमाणों से सूचित होता है कि वेदों में पशुओं के मारने और उनका मांस खाने की सख्त मनाई है । वैदिक आर्यलोग न तो मांस ही खाते थे और न पशुओं को ही मारते थे । वैदिक काल में मनुष्य मांस नहीं खाता था और न वैदिक काल , अर्थात मनुष्योंत्पत्तिकाल में मनुष्य की प्रवृत्ति ही मांस की ओर थी , क्योंकि मांस में न तो कोई स्वाद ही

Edit with WPS Office

है और न उसको देखकर मनुष्य की रुचि ही हो सकती हैं , इसलिए मनुष्य आदिमकाल में ___ वैदिक काल में मांसाहारी न था । मांसाहारी प्राणियों के साथ मनुष्य की समता ही नहीं है । यह बात निम्नलिखित कारणों से स्पष्ट होती हैं ।

1. जितने मांसाहारी प्राणी है वे सब जीभ से पानी पीते हैं ।
2. जितने मांसाहारी प्राणी है , वे सब अंधेरे में देखते हैं ।
3. जितने मांसाहारी प्राणी है , उनके शरीर में पसीना नहीं आता ।
4. जितने मांसाहारी प्राणी है , सब मैथुन के समय जुड़ जाते हैं ।
5. जितने मांसाहारी प्राणी है , उनके बच्चे की आंखें पैदा होने के समय बन्द रहती हैं ।
6. जितने मांसाहारी प्राणी है सबके दांत नुकीले और चुभने वाले होते हैं ।
7. जितने मांसाहारी प्राणी है उनकी आंतें शरीर के परिमाण से बड़ी होती हैं ।
8. जितने मांसाहारी प्राणी है , उन सबका मेदा बड़ा होता है ।
9. जितने मांसाहारी प्राणी है , वे सब डरते हैं ।
10. जितने मांसाहारी प्राणी है , वे सब भयानक बनावट के होते हैं , किन्तु घांस और फल - फूल खानें वालों में ये एक भी लक्षण नहीं पाया जाता । मनुष्य में भी वे लक्षण नहीं पाये जाते । इससे ज्ञात होता है कि मनुष्य स्वभाव से मांस खाने वाला नहीं है । उसका मांस का खाना अस्वाभाविक है और बाद का है , किन्तु वेद आदिमकालीन है , इसलिए वेदों में पशुवध और मांसाहार की विधि नहीं हो सकती और न संहिताकाल में मांसयज्ञों का ही विधान हो सकता है । आदिमकाल में मांसयज्ञों के न होने के कई एक ऐतिहासिक प्रमाण भी उपस्थित है । यहां हम उनका भी वर्णन कर देना उचित समझते हैं ।

5. हम लिख आये हैं कि रावणादि ने मांसयज्ञ प्रचलित कर दिया था और उसका अनार्य म्लेच्छों में खूब प्रचार था । हेमाद्रिरामायण में लिखा है कि पूर्वसमय में अनार्य म्लेच्छों के संसर्ग से पतित हुआ पर्वतक नामी ब्राह्मण मरुत राजा के पुत्र वसु राजा का सहपाठी होकर अन्त में उसका

Edit with WPS Office

उपाध्याय हो गया । उसकी दीर्घकालीन संगति से वसु राजा भी आसुर प्रवृतिवाला हो गया और भीतर - ही - भीतर ऋषियों से द्वेष रखने लगा , परन्तु ऋषियों को यह बात ज्ञात न थी कि राजा वसु आसुर प्रवृतिवाला है और हम लोगों को पसन्द नहीं करता । मत्स्य पुराण. अध्याय 143 में , वायु पुराण में और महाभारत शान्तिपर्व. 336 में लिखा है कि इसी समय देवताओं और ऋषियों के बीच ' अज ' शब्द के अर्थ पर विवाद हुआ । देवता कहते थे कि अज शब्द का अर्थ बकरा है , इसलिए पशु मांस से यज्ञ करना चाहिए और ऋषि कहते थे कि ' अज ' शब्द का अर्थ बीज है , इसलिए केवल अन्न से ही यज्ञ करना चाहिए । दोनों ने निश्चय किया कि राजा वसु जो अर्थ निश्चित करें वहीं हम लोगों को मानना चाहिए । तदानुसार दोनों ने राजा वसु के पास आकर कहा कि हे महाराज ! बताइए कि यज्ञों को पशु मांस से करना चाहिए या अन्न से ..? राजा वसु ने प्रश्न तो सुन लिया पर केवल इतने ही प्रश्न से यह ज्ञात न कर सका कि दोनों दलों में से किसका क्या पक्ष हैं । अन्दर से राजा वसु ऋषियों को हराना चाहता था , इसलिए उसने पूछा कि ' **कश्य वै को मत: पक्षो बूत सत्यं द्विजोत्तमा:** (महाभारत शांति पर्व. 337.12) **अर्थात हे देवर्षियों ! आप सत्यं सत्यं बतलाईये कि किसका क्या पक्ष हैं** । इस प्रश्न को सुनकर ऋषियों ने कहा कि ___

महाभारत शांति पर्व. 337.13 ______ अर्थात हमारा यह पक्ष हैं कि धान्य ही से यज्ञ करना चाहिए और देवताओं का यह पक्ष हैं कि पशु हिंसा से ही यज्ञ करना चाहिए , इसलिए हे राजन् ! इस विषय में आप अपना मत प्रकट कीजिए । इसके आगे लिखा है कि ___

महाभारत शांति पर्व. 337.14 ______ अर्थात देवताओं का मत ज्ञात करके राजा वसु ने कहा कि अज ___ छाग ही से यज्ञ करना चाहिए ।

राजा वसु के इस निर्णय से ऋषियों का पक्ष गिर गया और उसी दिन से पशु यज्ञ होने लगें और यज्ञों में मांस का होम होने लगा , परन्तु इस निर्णय के पहले पशु मांस से यज्ञ नहीं होते थे । इसके पहले स्वयं राजा वसु ने ही यज्ञ किया था , किन्तु उस यज्ञ में पशु वंध नहीं हुआ था । इसी कथा में लिखा है कि ' **न तत्र पशुघातोऽभूत् स राजैरास्थितोऽभवत्** ' (**महाभारत शांति पर्व. 336.10**) अर्थात उस यज्ञ में पशुघात नहीं हुआ था ।

Edit with WPS Office

इस वर्णन से पाया जाता हैं कि एक समय था जब पशु मांस से यज्ञ नहीं होते थे , हमारी यह बात इसी कथा के अगले भाग से अच्छी प्रकार पुष्ट होती हैं । **महाभारत शांति पर्व अध्याय. 340 , श्लोक. 82 से 94** तक के लेख का सार यह है कि ___

अर्थात यह सत्ययुग है ___ श्रेष्ठकाल है , इसमें यज्ञ के लिए पशु हिंसा करने योग्य नहीं हैं , क्योंकि धर्म चारों कलाओं से परिपूर्ण हैं , परन्तु इसके आगे त्रेतायुग होगा , उसमें धर्म के तीन ही पाद होंगे , इसलिए उसमें यज्ञों में पशुवध होगा ।

इस वर्णन से ज्ञात होता है कि पूर्वयुग में ___ आदिमकाल में ___ संहिताकाल में पशुवधं नहीं होता था , प्रत्युत उसके बाद उत्तरयुग में जब धर्म में हास हुआ तब पशुवध होने लगा ।

6. पशु यज्ञों के संहिताकालिक न होने का बहुत बड़ा प्रमाण तैत्तिरीय साहित्य में लिखा हुआ है । वहां लिखा है कि ___

___ (तैत्तिरीय प्र० 2 , अध्याय 9 , मंत्र. 2)

अर्थात ऋग्वेद का पाठ देवताओं के लिए दूध की आहुतियां , यजुर्वेद का घृत की आहुतियां सामवेद का सोम की आहुतियां , अथर्ववेद का मधु की आहुतियां और ब्राह्मण , इतिहास , पुराण , कल्प , गाथा , नाराशंसी आदि का पाठ मेद की आहुतियां हैं ।

यहां चारों वेदों का सम्बन्ध दूध , घृत , सोमरस और मधु की आहुतियों के साथ बतलाया गया है , किन्तु वेदों के अतिरिक्त ब्राह्मण और पुराण आदि जितने उत्तरयुगीय शास्त्र हैं , सबका सम्बन्ध मेद , अर्थात चर्बी की आहुतियों के साथ बतलाया गया है । इस प्रमाण से बहुत ही अच्छी प्रकार प्रमाणित हो जाता है कि पशुयज्ञ संहिताकालिक नहीं प्रत्युत तैत्तिरीय , अर्थात रावणादिकालिप है और रावणादि से राजा वसु के पास पहुंचा है तथा (जैसा कि ऊपर कहा गया है) राजा वसु ने आर्यों में प्रचलित कर दिया है ।

7. पशु हिंसा के उत्तरकालीन होने में बुद्ध भगवान की सर्वोत्कृष्ट साक्षी हैं । सुत्तनिपात ग्रन्थ में लिखा है कि एक बार ब्राह्मणों ने बुद्ध से पूछा कि

Edit with WPS Office

क्या इस समय ब्राह्मण लोग सनातनधर्म का पालन करते हैं ? इस पर बुद्ध ने कहा कि ___

अन्नदा बलदा नेता वण्णदा सुखदा तथा
एतमत्थवसं ठत्वा नास्सु गावो हनिंसुते ।
गावो एक्ठक समाना सोरता कुंभ दूहना ।
ता विसाणो गहेत्वान राजा सत्येन घातयि ।

अर्थात पूर्वसमय में ब्राह्मण लोग गौ को अन्न , बल , कान्ति और सुख देनेवाली मानकर उसकी कभी हिंसा नहीं करते थे , परन्तु आज घड़ों दूध देने वाली , पैर और सींग से न मारने वाली बकरी के समान सीधी गाय को गोमेध में मारते हैं ।

इससे स्पष्ट पाया जाता हैं कि बुद्ध के समय में यह बात अच्छी प्रकार प्रकट थी कि पूर्वसमय में गौ का यज्ञ में वध नहीं होता था । चार्वाक स्पष्ट ही कहता है कि ' **मांसानां खादनं तद्रिशाचरसमीरितम्** ; अर्थात वेदों में मांसभक्षण निशाचरों का मिलाया हुआ है । इससे यह बात और भी दृढ़ हो जाती है कि पशु वंध वेदों में नहीं है , यह कृत्य पीछे से राक्षसों के संसर्ग से आया है ।

8. यज्ञों में मांसहुति और मांसाहार का प्रचार करने वालो की हिन्दुशास्त्रो में बहुत अधिक निन्दा की गई हैं । निन्दा करते हुए कहा गया है कि पशुयज्ञ नवीन हैं । महाभारत में लिखा है ___

श्रूयते हि पुराकल्पे नृणां व्रीहिमय: पशु : । येनायजन्त यन्ज्वान : पुण्यलोकपरायणा : ।। (महाभारत अनुशासन पर्व. 115.49)
सुरा मत्स्या मधु मांसमासवं कृसरौदनम् । धूतै: प्रवर्तितं होतत्रैतद् वेदेषु कल्पितम् ।। मानान्मोहाच्च लोभाच्य लौल्यमेतत्प्रकल्पितम् ।।
(महाभारत शांति मो० 265.9 - 10)

अर्थात पूर्व काल में अन्नपशु से ही याज्ञिक लोग यज्ञ करते थे । मध , मांस , आदि का प्रचार तो लोभी , लोलुप और धूर्तों ने कर दिया है , इसकी वेद में कुछ भी चर्चा नहीं है । इसी प्रकार महाभारत अनुशासन पर्व अध्याय.115 में लिखा है कि ' नाभाग , अम्बरीष , गय , आयुर्नाथ , अरण्य , दिलीप , रघु , नहुष , ययाति , नृग , शशबिन्दु , युवानाश्व , शिवि , औशीनर , मुचकुन्द ,

Edit with WPS Office

हरिश्चन्द्र , सेनचित्र , सोमक , वृक , रैवत , रन्तिदेव , वसु , संजय , कृपभरत , राम , अलक , विरुपाश्व , निमि , जनक , ऐल , पृथु , वीरसेन , इक्ष्वाकु , शुंभु , श्वेत , सगर , अज , धंधु , सुबाहु , क्षुप , मरुत , एतैश्चान्येश्च , राजेन्द्र , पुरा , मांस , न भक्षितम् अर्थात उपर्युक्त समस्त राजाओं तथा अन्य राजाओं ने कभी मांस नहीं खाया । इन समस्त प्रमाणों , पुरातन आचारो और ऐतिहासिक साक्षियों से स्पष्ट है कि मांसयज्ञ वेदकालिक नहीं प्रत्युत मध्यमकालिक है और रावणादि असुर धूर्तों के प्रचलित किये हुए हैं , किन्तु प्रश्न यह है कि असुरों ने इन्हें कैसे प्रचलित किया ?

यह तो मानी हुई बात है कि असुर और राक्षस मांसाहारी थे । उपर्युक्त राजा वसु के इतिहास से प्रकट हो रहा है कि असुरों की संगति से ही प्रेरित होकर राजा वसु ने मांस यज्ञ के पक्ष में अपना मत दिया था और अज शब्द के दो अर्थ हैं ___ पुराना धान्य और बकरा । जिस प्रकार अज के दो अर्थ हैं , उसी प्रकार गौ , अश्व , मांस , रुधिर , त्वचा , आदि शब्दों के भी दो - दो तीन तीन अर्थ है । इन्हीं दूयर्थक शब्दों के कुछ नमूने उद्धत करते हैं ___

वैदिक कोष निघण्टु के देखने से ज्ञात होता है कि वेद में मेघ को अद्रि , अश्मा , पर्वत , गिरि और उपल भी कहते हैं , परन्तु ये सब शब्द लोक में पहाड़ों के लिए ही व्यवहार में आते हैं । इसी प्रकार वेद में सागर और समुद्र शब्द अन्तरिक्ष के लिए भी आये हैं , परन्तु व्यवहार में ये शब्द समुद्र के लिए ही आते हैं । वेद में गांव: शब्द किरणों के लिए और सुपर्ण शब्द घोड़े तथा किरणों के लिए भी आता है । इस प्रकार गौ और अश्व दोनों शब्द सूर्य किरणों के भी वाची माने जाते हैं । जो दशा इन शब्दों की है वही दशा अन्य सैकड़ों शब्दों की भी है । इन अर्थों के अतिरिक्त वैज्ञानिक परिभाषा के कारण भी शब्दों के दो - दो अर्थ हो जातें हैं । वेद का '**यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा:** मन्त्र प्रसिद्ध है ।

यास्काचार्य ने इस टुकड़े का अर्थ करते हुए लिखा है कि ' **यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा ___ अग्निना अग्निमयजन्त देवा ___ अग्नि : पशुरासीत्तं देवाऽलभन्त ;** अर्थात देवों ने अग्नि से अग्नि का यजन किया , क्योंकि अग्नि ही पशु था उसी को देवता प्राप्त हुए । यहां अग्नि को पशु कहा गया है । यही नहीं , किन्तु वायु और सूर्य को भी पशु कहा गया है , तथा यजुर्वेद अध्याय. 32 के ' **सप्तास्यासन् परिधयस्त्रि; सप्त समिध: कृता । देवा यधज्ञं**

Edit with WPS Office

तन्वाना अबध्नन् पुरुष पशुम् , मन्त्र में पुरुष को भी पशु कहा गया है । इस मन्त्र के दो अर्थ हैं । पहला अर्थ यह है कि रस , रक्त , मांस ,अस्थि , मज्जा , मेद और वीर्य की सात परिधियां बनाकर पांच ज्ञानेंद्रियां , पांच कर्मेंद्रियां , दश प्राण और एक मन की इक्कीस समिधाएं को लेकर और आत्मारुपी पुरुष पशु को बांधकर देवताओं ने शरीरयज्ञ को फैलाया । दूसरा अर्थ यह है कि सातों स्वरों की सात परिधियां बनाकर इक्कीस मूर्छानाओ की इक्कीस समिधाओं को लेकर और नादरुपी पुरुष पशु को बांधकर देवताओं ने संगितयज्ञ को फैलाया । इन दोनों अर्थों से आत्मा और नाद भी पशु ही सिद्ध होते हैं , किन्तु प्रश्न यह है कि इन अग्नि , वायु , सूर्य , आत्मा , और नाद आदि को पशु कहने का क्या कारण हैं ? इस विषय का निर्णय शतपथ ब्राह्मण के एक प्रश्नोत्तर से अच्छी प्रकार हो जाता हैं । वहां पूछा गया कि **कतम: प्रजापतिरिति ,** अर्थात प्रजा का पालन करने वाला पशु ही है । ज्ञात हुआ कि जो पदार्थ या शक्तियां प्रजा का पालन करती हैं वे सब पशु शब्द से ही सूचित की गई हैं । अग्नि आंख और रुप को देकर , वायु प्राण और बल को देकर , सूर्य मेधा और चैतन्य को देकर , आत्मा जीवन देकर और नाद आनन्द देकर प्रजा का पालन करते हैं , इसलिए पशु नाम से सूचित किये गये है और इसी प्रकार अनेक शब्द वैज्ञानिक परिभाषाओं के कारण दो - दो अर्थ रखते हैं । जिस प्रकार ये शब्द अपना अपूर्व अर्थ रखते हैं उसी प्रकार उपयुक्त अज शब्द भी वैज्ञानिक अर्थ के ही कारण बीज अर्थ में आता है । अज का अर्थ न पैदा होने वाला है । बीज का मतलब भी यही है । बीज भी कभी पैदा नहीं होता । बीज __ कारण सदैव उत्पत्ति रहित अनादि काल से चला आ रहा है । इसलिए ' **अजसंज्ञानि बीजानि** ' के अनुसार अज का अर्थ बीज भी होता है । वेद में इस प्रकार के अर्थ कौशल का चमत्कार भरा पड़ा है । जिस प्रकार वेद शब्दों के दो - दो , तीन - तीन अर्थ होते हैं उसी प्रकार लौकिक शब्दों के भी अनेक अर्थ होते हैं । भावप्रकाश में इस प्रकार के कई शब्द दिए हुए हैं ___

- जैसे : अर्थात अक्ष शब्द के आठ अर्थ है __ संचर नमक , बहेड़ा , एक कर्ष (तौल) , पद्धाक्ष , रुद्राक्ष , छकडा , इन्द्रिय और पासे ।
- काकशब्द के सात अर्थ है __ मकोय , काकोली , लाल घूघची , काकजंघा , काकनामा , कठूमर और काकपक्षी ।

Edit with WPS Office

- नाग शब्द के आठ नाम है __ सांप , हाथी , मेढा , सीसा , नागकेसर , नागरबेल , पान और नागदन्ती ।
- रस शब्द के नौ अर्थ है __ मांस , द्रव , ईख का रस , पारद , मधुरादि , छह रस , बालक का एक रोग , विष , जल और काव्य के नौ रस ।

जिस प्रकार ये शब्द अनेक अर्थ रखते हैं उसी प्रकार गौ , वृषभ , अज और अश्व आदि शब्द भी अनेक अर्थ रखते हैं । यहां हम नमूने के रूप में गौ आदि कुछ शब्दों के अनेक अर्थों को दिखलाने का यत्न करते हैं । **निरुक्त में लिखा है कि ___ चर्म च श्लेष्मा च स्नायु च ज्यापि गौरुच्यते ;** अर्थात चमड़ा श्लेष्मा , नसें और धनुष की डोरी को भी गौ कहते हैं । ऐसी दशा में जहां चमड़े और प्रत्यंचा के काटने की बात हो वहां गौ के काटने का अर्थ ले __ दौड़ना बहुत ही संहज है । इन नामों के अतिरिक्त जिह्वा , वाणी , पृथिवी , किरण , और इन्द्रियों को भी गौ कहा गया है । इस प्रकार जब गौ शब्द के अनेक अर्थ है तब प्रत्येक स्थान पर चतुष्पाद गौ का ही ग्रहण करना नितांत अनुचित है ।

जिस प्रकार गौ शब्द के अनेक अर्थ है उसी प्रकार वृषभ शब्द भी अनेक अर्थों में आता है । यहां हम वैधक के ग्रंथों से दिखलाते हैं कि संस्कृत में जितने शब्द बैल के अर्थ में आते हैं , वे सब कांकड़ासिंगी ओषधि के लिए भी प्रयुक्त हुए हैं ।

ऋषभो गोपतिधीरो वृषाणी धूर्घरो वृष: ।
ककुधान पुंगवो वोढा श्रृग्डी धुर्यश्च भूपति : ।। (राजनिघण्टु. 1.156)

श्रृग्डी कर्कटश्रग्डी च स्यात् कुलीरविषाणिका ।
अजश्रृग्डी च रक्ता च कर्कटाख्या च कीर्तिता ।। (भाव प्रकाश० हरित ० 181)

इन श्लोकों में वृषभ के समस्त नाम कांकड़ासिंगी के लिए आये हैं । ऐसी अवस्था मे जहां कहीं कांकड़ासिंगी के काटने , पकाने और खानें का वर्णन हो वहां बैल के काटने , पकाने और खानें का अर्थ करना बहुत ही सहज है । इसी प्रकार वागभट्ट में अनेक प्राणियों के नाम से धानों (चावलों) की अनेक जातियों का वर्णन किया गया है । एक स्थान पर लिखा है कि ___

Edit with WPS Office

यहां जतूमुख , कुकुटाण्ड , कपाल , पारावत , सूकर और दर्दुर आदि अनेक प्राणियों के नाम से चावलों का वर्णन किया गया है । यदि कहीं पर सूकर और दर्दुर पकाकर हवन करने की विधि हो तो लोग यही कहेंगे सुवर और मेंढक के मारने , पकाने , हवन करने और खाने का विधान है , परंतु यहां बात ही कुछ और है । इसी प्रकार भाव प्रकाश में लिखा है कि ___

अजमोदा खराश्वा च मयूरी दीप्यकस्तथा ।

यहां अश्व , खर और मयूरी आदि नाम अजमोदा के बताए गए हैं । अश्वगंधा का भी अश्व के नाम से वर्णन किया गया है । इसी प्रकार सुश्रुत संहिता में लिखा है कि ___

अजा महौषधी ज्ञेया शंखकुन्देन्दुपाण्डुर: ।

यहां अजा भी ओषधि ही बताईं गईं हैं ।

कहने का तात्पर्य यह है कि गौ , वृषभ , सूकर , अश्व , और अजा आदि जितने प्राणियों की यज्ञ में हिंसा बतलाई जाती हैं वे सब ओषधियां है और हवनीय तथा प्राश्नीय पदार्थ है । केवल दूयर्थक होने से ही असुरों ने उनका हिंसापरक अर्थ करके अपना स्वार्थ सिद्ध किया है । इस पर कोई कह सकता है कि यह तो पशुओं और अन्नों के नामों की समता का समाधान हुआ , परन्तु जहां यज्ञ में स्पष्ट मांस , अस्थि , मज्जा , और नसों के वर्णन आते हैं , उसका क्या इलाज है । हम कहते हैं वहां भी दो भिन्न-भिन्न अर्थों के ही कारण ऐसा भासित होता है । सुश्रुत में आम के फल का वर्णन करते हुए लिखा है कि ___

अपक्वे चूतफले स्नाय्वस्थिमजान : ।
सूक्ष्मत्वात्रोपलभ्यन्ते पक्वे त्वाऽविभुरता उपलभ्यन्ते ।।

अर्थात आम के कच्चे फल में नसें , हड्डियां और मज्जा आदि प्रतीत नहीं होती , किन्तु पकने पर सब आविर्भूत हो जाती हैं ।

जहां गुठली के तन्तु रोम , गुठली हड्डियां , रेशे नसें और चिकना भाग मज्जा कहा गया है । इसी प्रकार का वर्णन भाव प्रकाश में भी आया है । वहां लिखा है कि ___

अर्थात जिस प्रकार कच्चे आम के फल में मांस , अस्थि और मज्जादि पृथक - पृथक नहीं दिखलाई पड़ते , किन्तु पकने पर ही ज्ञात होते हैं , उसी

Edit with WPS Office

प्रकार गर्भ के आरंभ में मनुष्य के अंग भी नहीं ज्ञात होते , किन्तु जब उनकी वृद्धि होती है तब स्पष्ट हो जातें हैं ।

इन दोनों प्रमाणों से प्रकट हो रहा है कि फलों में भी मांस , अस्थि , नाड़ी और मज्जा आदि उसी प्रकार कहे गये है जिस प्रकार प्राणियों के शरीर में । वैधक के एक ग्रंथ में लिखा है कि ___

प्रस्थं कुमारिकामांसम् ।

अर्थात एक सेर कुमारिका का मांस । यहां घीकुवार को कुमारिका और उसके गूंदें को मांस कहा गया है ।

कहने का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार ओषधियों और पशुओं के नाम एक ही शब्द से रक्खे गये है उसी प्रकार ओषधियों और पशुओं के शरीरवयव भी एक ही शब्द से कहें गये है । इस प्रकार का वर्णन आयुर्वेद के ग्रन्थों में भरा पड़ा है । श्रीवेंकटेश्वर प्रेस , मुम्बई के छपे हुए ' ओषधिकोष ' में नीचे लिखे समस्त पशुसंज्ञक नाम और अवयव वनस्पतियों के लिए भी आयें हुए दिखलायें गये है । हम नमूने के लिए कुछ शब्द उद्धृत करते हैं ___

वृषभ ___ ऋषभकन्द
मेष ___ जीवशाक
श्वान ___ कुत्ताघास , ग्रन्थिपर्ण
कुकुट (टी) शाल्मलीवृक्ष
मार्जार ___ बिल्लीघास , चित्ता
नर ___ सौगन्धिक तृण
मयूर ___ मयूरशिखा
मातुल ___ घमरा
बीछू ___ बीछूबूटी
मृग ___ सहदेवी , इन्द्रायण , जटामासी , कपूर
सर्प ___ सर्पिणीबूटी
पशु ___ अम्बाडा , मोथा
अश्व ___ अश्वगंधा
कुमारी ___ घीकुमार
अजमोदा
हस्ति ___ हस्तिकन्द
नकुल ___ नाकुलीबूटी
वपा ___ झिल्ली = बक्कल के भीतर का जाला
हंस ___ हंसपदी
अस्थि ___ गुठली
मत्स्य ___ मत्स्याक्षी
मांस ___ गूदा , जटामासी
मूषक ___ मूषाकणी
चर्म ___ बक्कल
गो ___ गौलोमी
स्नायु ___ रेशा

Edit with WPS Office

महाज ___ बड़ी अजवायन	नख ___ नखबूटी
सिंही ___ कटेली , वासा	मेद ___ मेदा
खर ___ खरपणिनी	लोम (शा) ___ जटामासी
काक ___ काकमाची	हद ___ दारचीनी
वराह ___ वाराहीकन्द	पेशी ___ जटामा
महिष ___ महिषाक्ष , गुग्गुल	रुधिर ___ केसर
श्येन ___ श्येनघंटी (दन्ती)	आलम्भन ___ स्पर्श

इस सूची में समस्त पशु - पक्षियों और उनके अवयवों के नाम तथा समस्त वनस्पतियों और उनके अवयवों के नाम एक ही शब्द से सूचित किये गये है । ऐसी दशा में किसी शब्द से पशु और उसका ही अवयव ग्रहण नहीं किया जा सकता । यधपि बिना कारण के कोई विशेष अर्थ ग्रहण नहीं किया जा सकता तथापि यह प्रश्न अवश्य हो सकता है कि ऐसी सन्देहात्मक भाषा क्यों बनाई गई , जिसका अर्थ ही स्पष्ट नहीं होता । इस प्रश्न का इतना ही उत्तर है कि संसार में ऐसी एक भी भाषा नहीं है जिसके शब्दों के दो - दो तीन - तीन अर्थ न होते हो । अब रही यह बात कि ऐसा क्यों होता है और क्यों एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं , इसका उत्तर बहुत ही सरल है । हम देखते हैं कि वेद में दो कारणों से ऐसा हुआ है । एक कारण तो यह है कि दो पदार्थों की समता के कारण भी दोनों का एक ही नाम दिया जाए । पहला कारण स्पष्ट है , उसमें लिखने की आवश्यकता नहीं है । सभी भाषाशास्त्री चाहते हैं कि यदि थोड़े - से शब्दों ही के द्वारा संसार का काम चल जाए तो अच्छा। , किन्तु पदार्थसाम्य से भिन्न-भिन्न पदार्थों का नाम एक ही शब्द के द्वारा रखने में बहुत ही ऊंचे ज्ञान की आवश्यकता है । अभी थोड़ी देर पहले हम लिख आये हैं कि अन्तरिक्ष और समुद्र के नाम एक ही शब्द के द्वारा रक्खे गये है । इसी प्रकार पहाड़ों और बादलों के नाम भी एक ही शब्द के द्वारा रक्खे गये है । ये दोनों उदाहरण पदार्थसाम्य के उत्कृष्ट नमूने हैं । जिन्होंने समुद्र देखा है वे जानते हैं कि वह किस प्रकार हूबहू आकाश की नीलिमा के साथ मिल जाता हैं । इसी प्रकार जिन्होंने पहाड़ देखें हैं वे जानते हैं कि बादलों की बनावट भी पहाड़ों के ही सदृश होती हैं । वेदों ने इस प्रकार का समतामूलक नामकरण करके भाषाविज्ञान को बहुत ही ऊंचा कर

Edit with WPS Office

दिया है । जो विशेषता इन समताओ में पाई जाती हैं वहीं समता मनुष्यों , प्राणियों और वनस्पतियों में भी पाई जाती हैं । ये तीनों थोक रुप बदले हुए एक ही थोक के परिणाम है । तीनों के शरीरों में जो अवयव है वे भी सब एक ही प्रकार का काम दे रहे हैं । इसलिए पशुओं और उनके अंगों के ही नामों से वनस्पतियों और उनके अंगों के भी नाम रक्खे गये है । इसमें भाषाशास्त्र की महान विशेषता प्रतीत होती हैं । यधपि इसमें भाषाशास्त्र की विशेषता है , विज्ञान हैं , सब - कुछ है , परन्तु सत्य बात के निर्णय करने में जो कठिनाई होती है उसका क्या इलाज है ? हम कहते हैं कि सत्य अर्थ के निर्णय करने में कुछ भी कठिनाई नहीं है । वेदों में जहां जहां कहीं इस प्रकार के दूयर्थक शब्दों के कारण गड़बड़ होने की संभावना हुई है , परमात्मा ने तुरंत ही उसका स्पष्टीकरण कर दिया है , क्योंकि सन्दिग्ध बात के स्पष्टीकरण करने की जब साधारण मनुष्य के हृदय में भी प्रेरणा होती हैं , तब वह जगन्नियन्ता जिसने मनुष्य के कल्याण के लिए वेद वाणी दी है , क्या सन्देहों का स्पष्टीकरण नहीं कर सकता ? अवश्य कर सकता है । हम यहां एक साधारण विद्वान की एक उक्ति का नमूना दिखलाकर बताएंगे कि किस प्रकार परमात्मा ने वेदों में यज्ञविषयक सन्दिग्ध शब्दों का स्पष्टीकरण किया है । हठयोगप्रदीपिका में लिखा है कि ___

गोमांस मक्षयैन्नित्यं पिवेदमरवारुणीम् ।
कुलीनं तमहं मन्यें इतरे कुलघातक: ।।

अर्थात जो नित्य गोमांस खाता है और मदिरा पीता है , वही कुलीन हैं , अन्य मनुष्य कुलघाती है ।

कैसा भयंकर प्रयोग है । सुनने में कितना पाप प्रतीत होता है , परन्तु वास्तव में पाप की कोई बात नहीं है । अगले ही श्लोक में लेखक ने इसका भाव स्पष्ट कर दिया है । वह लिखता है ___

अर्थात योगी पुरुष जिह्वा को लौटाकर तालू में प्रवेश करता है , उसी को गोमांस भक्षण कहा गया है ।

गो जिह्वा को कहते हैं और जिह्वा मांस की होती हैं । इसलिए जिह्वा को गोमांस के नाम से कहा गया है । यदि दूसरे श्लोक में यह बात स्पष्ट न कर दी जाती तो गोमांस भक्षण की विधि स्पष्ट रूप से पाई जाती , किन्तु

Edit with WPS Office

लेखक ने यह समझकर कि लोगों को भ्रम न हो जाए तुरंत ही बात को स्पष्ट कर दिया है , इसी प्रकार वेदों में भी ऐसे सन्दिग्ध दूयर्थक शब्दों का समाधान और स्पष्टीकरण परमात्मा ने भी कर दिया है । अथर्ववेद में स्पष्ट लिखा है कि ___

धाना धेनुरभवद् वत्सो अस्यास्तिलोऽभवत् । (अथर्ववेद. 18.4.32)

अर्थात धान ही धेनु हैं और तिल ही उनके बछड़े हैं । धान अनेक प्रकार के होते हैं , इसलिए अनेक धानों के नाम भी बता दिये गये है । अथर्ववेद में ही लिखा है कि ___

एनीर्धाना हरिणी: श्येनीररस्य कृष्णा धाना ।
रोहिणीधेनवस्ते तिलवत्सा ऊर्जमस्मै ।। (अथर्ववेद. 18.4.34)

अर्थात हरिणी , श्येनी , कृष्णा और रोहिणी आदि धान ही धेनु हैं । इनके तिलरुपी बछड़े हमें बल दे ।

यहां बतला दिया गया है हवन के प्रकरण में हरिणी , श्येनी और धेनु तथा वत्स आदि शब्द धान और तिल के वाचक है । इसी प्रकार मांस आदि शब्दों के विषय में भी अथर्ववेद में लिखा है कि ___

अश्वा: कणा गावस्तण्डुला मशकास्तुषा ।
श्याममयोऽस्य मांसानि लोहितमस्य लोहितम् ।। (अथर्ववेद. 11.3(1) . 47)

अर्थात चावल के कण ही अश्व हैं , चावल ही गौ है , भूसी ही मशक है , चावलों का जो श्यामभाग है वहीं मांस है और जो लाल अंश है वहीं रुधिर हैं ।

इन प्रमाणों से स्पष्ट हो गया है कि हवनप्रकरण में जहां - जहां अश्व , गौ , अजा , अस्थि , और मज्जा आदि शब्द आते हैं उनसे अन्न का ही ग्रहण है , पशुओं और पशुओं के अवयवों का नहीं । इस प्रकार से वेदों ने अपने आप अपने सन्दिग्ध दूयर्थक शब्दों का स्पष्टीकरण कर दिया है । इसी आज्ञा के अनुसार ब्राह्मणग्रन्थों ने भी उक्त शब्दों का निर्वाचन किया है । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ___

अर्थात जो आटा हैं उसी की लोमसंज्ञा है । जब उसमें पानी मिलाया जाता है तब वही धर्म संज्ञावाला होता है । जब गूंधा जाता है तब मांस संज्ञावाला

Edit with WPS Office

कहलाता है । जब तपाया जाता है तब उस तपे हुए का नाम अस्थि होता है और जब उसमें घी डाला जाता है तब मज्जा कहलाता है । इस तरह से इस पके हुए पदार्थ का नाम पशु है ।

इसी प्रकार के पारिभाषिक नाम ऐतरेयब्राहमण में भी गिनाये गये है । वहां लिखा है कि ___

अर्थात इस पुरोडाश में जो दाने हैं वहीं रोम कहलाते हैं , जो भूसी है वहीं त्वचा कहलाती हैं , जो टुकड़े है वहीं सींग कहलाते हैं और जो आटा हैं वहीं मांस कहलाता है । इस प्रकार के पके हुए अन्न का नाम पशु है ।

जिस प्रकार फल के अवयवों को मांस , अस्थि और मज्जा कहा गया है , जिस प्रकार प्राणी के शरीरवयवो को मांस , अस्थि और मज्जा आदि कहा जाता है और जिस प्रकार भूसी कण और भात को खाल , अस्थि और मांस कहा गया है , ठीक उसी प्रकार फल और अन्न के उन - उन अवयवों से बने हुए हवनीय द्रव्यों को भी उन्हीं - उन्ही नामों में कहा गया है , और जिस प्रकार अग्नि को पशु , वायु को पशु , सूर्य को पशु , और पुरुष को पशु कहा गया है , उसी प्रकार उन - उन अवयवों वाले समस्त हवनीय पदार्थों को भी समष्टिरुप से पशु ही कहा गया है , क्योंकि हवनीय द्रव्यों के खाने से ही पोषक शक्ति की प्राप्ति होती है , इसी से उनका समूह पशु कहलाता है । इस प्रकार पशु से चतुष्पाद पशु का कुछ भी वास्ता नहीं है जैसा की स्वयं वेद ने ही स्पष्ट कर दिया है । जिस प्रकार अस्थि - मांस वाले मनुष्य को पुरुष पशु कहा गया है और जिस प्रकार अस्थि मांस के होने से चतुष्पाद पशु भी पशु कहां गया है , उसी प्रकार अस्थि , मांस , मज्जावाले आम आदि फल और धान आदि अन्न भी पशु ही है , जैसा की **अश्वा: कणा गावस्तण्डुला** ' में वेद में कह दिया है । इस प्रकार से इस अन्न और फलमय पशु का ___ देखने , सुनने , स्मरण करने की पोषक शक्ति देने वाले हवनीय अन्नमय पशु का यज्ञ में विधान है , परंतु गौ आदि चतुष्पाद पशुओं के होम का विधान नहीं है ।

इस अन्नमय पशु के हवन का ही विधान वेद में सर्वत्र पाया जाता है । हम द्वितीय खंड के यज्ञ प्रकरण में लिख आये हैं कि तीन प्रकार के यज्ञ है । एक ब्रह्मांडयज्ञ है , दूसरा पिण्डयज्ञ है और तीसरा यह घृतादि का लौकिक यज्ञ है । जिस प्रकार इस घृतादि के सांसारिक यज्ञ को अन्न से ही करने का

Edit with WPS Office

विधान है उसी प्रकार पिण्ड और ब्रह्मांड के भी दोनों यज्ञ अन्न से ही करने के लिए कहा गया है और वहां भी अन्नपशु के सन्देह का स्पष्टीकरण कर दिया गया है । जिस प्रकार संसार की गौ - बछड़े आदि सन्दिग्ध शब्दों का स्पष्टीकरण कर दिया गया है कि धान ही गौ है , तिल ही बछड़े हैं , उनका श्यामभाग ही मांस है और लालिमा ही रक्त हैं , इसी प्रकार आकाशीय गौ के लिए भी स्पष्ट कर दिया गया है । अथर्ववेद में लिखा है कि ____

अग्निर्यव इन्द्रो यव: सोमो यव: यवयावानो देवा । (अथर्ववेद. 9.2.13)

अर्थात अग्नियव , इन्द्रयव , सोमो यव: यववाली अन्नादि वस्तुएं सब यव ही है और देवता इन यवो को प्राप्त होते हैं ।

यहां स्पष्ट कर दिया है कि ' **अग्नि: पशुरासीत्** ' में जो अग्नि को पशु कह आये हैं वह अग्निपशु चतुष्पाद पशु नहीं है प्रत्युत यवरुपी पशु ही है । इसी प्रकार शारीरिक यज्ञ के प्रकरण में भी कह दिया है कि ___

अथर्ववेद. 11.4.13 ____ अर्थात प्राण और अपान ही व्रीहि और यव है । प्राण ही बैल है । जौं में ही प्राण रखा हुआ है और अपान ही व्रीहि कहलाता है ।

इस वर्णन से भी ज्ञात हो गया कि यहां भी प्राण को बैल बतलाकर बैल को भी अन्न ही कह दिया है , चतुष्पाद बैल नहीं । कहने का तात्पर्य यह है कि यज्ञ के प्रकरण में जहां कहीं पशु शब्द से संबंध रखने वाले शब्द आए हैं , इन सबका तात्पर्य अन्न ही है , चतुष्पाद पशु नहीं , **क्योंकि गोपथ. 4.5 में** स्पष्ट लिखा है कि ' **पशवो वै धाना: ।** अर्थात धान्य ही पशु है ।

यहां तक वेद में आए हुए मास यज्ञ संबंधी द्वयर्थक शब्दों का विवेचन हुआ । इस विवेचन से ज्ञात हुआ कि वेद में दूयर्थक शब्दों से जो भ्रम हो सकता है , उसका निराकरण स्वयं वेदों ने ही कर दिया है और स्पष्ट कर दिया है कि वेदों में अन्न के ही हवन की विधि है , पशु के हवन की नहीं । यह बात और भी पुष्ट हो जाती है जब हम मध्यकालीन साहित्य को देखते हैं । यधपि मध्यकाल में असुरों के द्वारा दूयर्थक शब्दों के सहारे किया हुआ अर्थ प्रचलित हो गया था और यज्ञों में पशुवध होने भी लगा था , परंतु यह पशुवध सर्वसम्मति से स्वीकार नहीं कर लिया गया था । इसमें मतभेद था

Edit with WPS Office

और पशु यज्ञ से संबंध रखने वाले अनेक प्रयोगों का अर्थ दो प्रकार से किया जाता है । हमारी यह बात नीचे लिखे कतिपय वाक्यों से स्पष्ट होती है । मीमांसा दर्शन में लिखा है कि ___

मांसपाकप्रतिषेधश्च तद्वत् । (मीमांसा दर्शन. 12.2.2)

अर्थात जैसे यज्ञ में पशु हिंसा मना है , वैसे मांसपाक भी माना है ।

उसी के दूसरे स्थान 10.3.65 और 10.7.15 में लिखा है कि ___ अर्थात गौ की भांति घोड़ा भी यज्ञ में दक्षिणा के ही लिए है अथवा केवल दान के ही लिए है , क्योंकि घोड़े के लिए कहीं भक्ष शब्द नहीं आया । आश्वलायन गृह सूत्र कहता है कि ' **होमियं च मांसवर्जम् ,** अर्थात हवनयोग्य सामग्री में मांस नहीं है । इन प्रमाणों से ज्ञात होता है कि मांसयज्ञ प्रचलित होने पर भी वह सर्वस्वीकृत नहीं था ।

कुछ लोग बलि , आलम्भ ,मधुपर्क और गोध्नो शब्दों से भी पशु हिंसा निकालते हैं , परंतु हम देखते हैं कि मध्यकालीन साहित्य भी इन शब्दों का अर्थ हिंसापरक नहीं करता । बलि शब्द का अर्थ मारना नहीं होता । बलिवैश्वदेव में काकबलि , श्वाबलि होती है , परंतु कौवे और कुत्ते मारे नहीं जाते , प्रत्युत उनको उनका बलि ___ भाग दिया जाता है , जिससे बलि का अर्थ मारना नहीं , किंतु भाग सिद्ध होता है । इसी प्रकार आलम्भ शब्द से भी हिंसा अर्थ नहीं निकलता । निघण्टु मैं हिसार्थक जितने शब्द है , उनमें आलम्भ शब्द नहीं है । **मीमांसा दर्शन.** 2.3.17 की सुबोधिनी टीका में स्पष्ट लिखा है कि ' **आलम्भ: स्पर्शो भवति ;** अर्थात स्पर्श का नाम आलम्भ हैं । यही बात सत्य भी प्रतीत होती है , क्योंकि हम देखते हैं कि यज्ञोपवीत संस्कार के समय ' **अथास्य दक्षिणसमधिहदयमालभते '** और विवाह संस्कार के समय दक्षिणा **समिधहदयमालभते** ' आदि पारास्कर सूत्रों के अनुसार ब्रह्मचारी और कन्या के हृदय का स्पर्श होता है । इन दोनों संस्कारों में आलम्भ शब्द से स्पर्श ही किया जाता है , कोई वध नहीं किया जाता । इसी प्रकार पुराकाल में पशु आलम्भ , अर्थात पशु स्पर्श भी होता है । यह एक विशेष् यज्ञ था । कई वर्ष तक पानी न बरसाने में जब पशु भूखों मरने लगते थे तब किसान लोग स्पर्शयज्ञ करते थे । महाभारत अश्वमेधिक पर्व में लिखा है ___

यदि द्वादशवर्षाणि न वर्षति वासव: स्पर्शयज्ञं करिष्यामि विधिरेष

Edit with WPS Office

सनातन : ।।
अर्थात यदि 12 वर्ष तक पानी न बरसेगा तो मैं स्पर्शयज्ञ करूंगा ।
इस स्पर्श यज्ञ का तात्पर्य यही था कि लोग अपने-अपने पशुओं को छू-छूकर छोड़ देते थे और कह देते थे कि जाओ जहां चरने को मिले चरो । इस विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि आलम्भ का अर्थ मारना नहीं , प्रत्युत स्पर्श है । जिस प्रकार आलम्भ से पशु हिंसा सूचित नहीं होती उसी प्रकार मधुपर्क से भी हिंसा सिद्ध नहीं होती , क्योंकि लिखा है कि **मधुपर्क दधिमधुघृतमपि हितं कांस्ये कांस्येंन ;** अर्थात तीन भाग दधि , एक भाग शहद और एक भाग घृत कांसे के पात्र में रखने से मधुपर्क बनता है । इसमें भी कोई हिंसा की बात सूचित नहीं होती । अब रही **गोघ्नोऽतिथि :** की बात । लोग कहते हैं कि अतिथि के लिए गौ मारी जाती है , किंतु मध्यकालीन पंडितों ने इसका भी समाधान कर रखा है । पाणिनिमुनि ने इसके लिए एक सूत्र ही बना दिया है । वे कहते हैं कि **दाशगोघ्नौ सम्प्रदाने ;** अर्थात हन् धातु के तीन अर्थ होते हैं ___
ज्ञान , गमन और प्राप्ति , इसलिए गोघ्नपद प्राप्ति अर्थ में ___ दान अर्थ में ही है , अतः जिस अतिथि को गौ दी गई हो वही गोघ्न है । तात्पर्य यह है कि पशु हिंसा से सम्बन्ध रखने वाले प्राचीन साहित्य में जितने शब्द ___ जितने प्रयोग मिलते हैं , मध्यमकालीन वैदिक पण्डितों ने सबका तात्पर्य हिंसा रहित ही निकाला है । इससे ज्ञात होता है कि पशुयज्ञ कभी भी सर्वसम्मति से स्वीकृत नहीं हुआ । यहां तक कि आयुर्वेद में भी आर्यों ने मांस ओषधियों को अपने लिए नहीं कहा । चरक संहिता में स्पष्ट लिखा है कि ___

द्विजानामोषधीसिद्धं घृतं मांसविवृद्धये ।
सितायुक्तं ग्रदातव्यं गव्येन पयसा भृशम् ।।

अर्थात पुष्टि के लिए आर्यों की ओषधियां मिश्री से युक्त घी और दूध ही है । मांस तो **यज्ञ रक्षपिशाचान्नम् ,** अर्थात पिशाचों का अन्न है ।

हमारे यहां तक के विवेचन का सार इतना ही है कि असुर , राक्षस मांसाहारी थे ही । जब उन्होंने आर्यों में प्रवेश किया तब वेदों के द्व्यर्थक शब्दों से मांस हवन का विधान बनाकर पशु मांस से यज्ञों को करने लगे और मांस खाने लगे ' ।

यधपि वेदों में इसका स्पष्टीकरण विधमान है और उस स्पष्टीकरण को

Edit with WPS Office

लेकर वैदिक विद्वान आदि से लेकर अबतक कहते चले आ रहे हैं कि ___

श्रूयते हि पुराकल्पे नृणां व्रीहिमयों पशुः । (महाभारत अनुशासन पर्व)

धूतैः पवर्तितं यज्ञैनैतद्वेदेषु कल्पयते ।। (महाभारत शांति पर्व)

अर्थात हम प्राचीन काल से सुनते आ रहे हैं कि यज्ञ विधान में पशुसंज्ञा अन्न की ही है और मांसयज्ञ का प्रचार धूर्तों ने किया है , उनका विधान वेदों में नहीं है , यथापि पाप की और मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है , इसलिए मांसयज्ञ का प्रचार आर्यों में भी हो गया । प्रचार हो गया इसमें संदेह नहीं , परन्तु वह प्रचार सर्वसम्मति से स्वीकृत नहीं हुआ । सभी विद्वान कहते आ रहे हैं कि वेदों में पशुयज्ञ का विधान नहीं है । विष्णु शर्मा ने पच्चतत्र में ठीक ही कहा है कि ___

अर्थात जंगलों को काटनेवाले , पशुओं को मारनेवाले और मनुष्यों की बलि देनेवाले यदि स्वर्ग को जाएंगे तो भले नरक को कौन जाएगा ?

इसलिए सर्वतन्त्र सिद्धांत यही है कि वेदों में पशुयज्ञ नहीं है ।

जिस प्रकार वेदों में इतिहास और पशुयज्ञ नहीं है उसी प्रकार वेदों में अश्लीलता भी नहीं है । कुछ लोग कहा करते हैं कि वेदों में अश्लील बातों का वर्णन है , परन्तु जिन स्थलों को लेकर वे ऐसा कहते हैं वे स्थल काव्य के उत्कृष्ट रसोद्रेक के द्वारा बहुत ही उत्तम शिक्षा देते हैं , इसलिए शिक्षा संबंधी वे वर्णन अश्लील नहीं कहला सकते , क्योंकि हम संसार में देखते हैं कि एक ही वस्तु का स्थान में अश्लील है और वही दूसरे स्थान में अश्लील नहीं है । एक आदमी डॉक्टर के सामने नंगा खड़ा है , उस पर अश्लीलता का कलंक नहीं लग रहा , किंतु वही आदमी यदि किसी अन्य मनुष्य के सामने नग्न खड़ा है तो उस पर अश्लीलता का कलंक लग रहा है । इसी प्रकार डॉक्टरी की पुस्तकें जिनमें चित्र देकर गुप्तेन्द्रियों के वर्णन होते हैं , वे अश्लील नहीं समझी जाती , किंतु वही चित्र जब कोकशास्त्र के वर्णनों के साथ सर्वसाधारण में प्रचलित किए जाते हैं , तब वे अश्लील कहलाते हैं । जो स्थिति डॉक्टरी की पुस्तकों और कोक शास्त्र की है , ठीक वही अवस्था वेद और अन्य पुस्तकों की है । वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है । ज्ञान देने वाली समस्त पुस्तकों की वही पदवी है जो डॉक्टरी और स्कूलों से संबंध रखने वाली पुस्तकों की है , इसलिए गुप्तांगों का वर्णन करने से डॉक्टरी की

Edit with WPS Office

पुस्तकें यदि अश्लील नहीं कहलाती तो वेद भी अश्लील नहीं कहला सकते ? वेद में जो बाते लिखी गई है वे भी शिक्षा के लिए ही लिखी गई है । इसी प्रकार डॉक्टरी में भी जो बात लिखी गई है वे भी शिक्षा के ही लिए लिखी गई है , अर्थात जो पुस्तक मनुष्यों को शिक्षा देने के लिए लिखी जाती है , उनके वर्णन अश्लील नहीं समझे जाते ।

जब एक साधारण उपदेशक अपने व्याख्यान में बुराइयों का चित्र खींचकर उनसे बचने का आदेश करता है तब भला परमेश्वर क्यों न करता ? परमेश्वर ने लोगों को सभ्यता पूर्ण मार्ग में चलाने के अभिप्राय से उक्त समस्त बातों का वर्णन किया है और उन सबसे बचने के लिए कठोर आज्ञा कर दी है ।

इन अश्लिलताओं को परमात्मा ने इतना बुरा समझा है कि उनके उदाहरण तक मनुष्य में नहीं दिये । मनुष्यों में ही नहीं किंतु पशु - पक्षी , कीट -पतंग और तृण - पच्चव आदि किसी भी चेतन जगत से इनके उदाहरण नहीं दिये है । परमात्मा ने इन सब अश्लिलताओं के उदाहरण जड़ निर्जीव और अज्ञान प्रकृति में ही दिए हैं । इसका यही कारण है कि बीभत्स रस का वर्णन भी हो जाए और ऐसे अपवादों से बचने के लिए मनुष्यों को उपदेश भी दे दिया जाए , अतः हम यहां उक्त अश्लिलताओं का सारांश रूप से वर्णन करके दिखलाते हैं कि किस प्रकार परमात्मा ने वेदों में जड़ प्रकृति के उदाहरणों से उनका वर्णन किया है और किस प्रकार इन कृत्यों को पाप बतलाकर उनसे बचने का उपदेश दिया है ।

सबसे पहले यमयमी सूक्त में आये हुए बहिन भाई के संवाद पर ध्यान दीजिए । यह यम - यमी सूक्त **ऋग्वेद. 10.10** और **अथर्ववेद. 18.1** में आया है । यह यम यमी रात और दिन है । रात और दिन दोनों जड़ है । इन्हीं दोनों जड़ों को भाई-बहन मानकर वेद ने एक धर्म विशेष का उपदेश किया है । अलंकार के रूपक से दोनों में बातचीत कराई गई है । यम्मी यम से कहती है की आप हमारे साथ विवाह कीजिए , परंतु यम कहता है कि **पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् , न यत् पुरा चकृमा , अन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् ;** अर्थात बहिन के साथ कुत्सित व्यवहार करने से पाप होता है । कभी पुराकाल में भाई - बहन का विवाह नहीं हुआ । इसलिए तू दूसरे पुरुष को पति बना , मैं विवाह नहीं कर सकता । यहां स्पष्ट रूप से भाई ने कह दिया कि आज तक ऐसा नहीं हुआ , इसलिए यह पापकर्म मैं नहीं कर सकता ।

Edit with WPS Office

भाई के इस वचन से ज्ञात हो गया कि पूर्व समय में भाई - बहन की शादी नहीं होती थी । इस पर लोग प्रश्न करते हैं कि जब उस समय भाई - बहन की शादी नहीं होती थी तब ऐसा भधा रुपक ही क्यों बांधा गया ? हम कहते हैं कि इस प्रकार के रुपक की आवश्यकता थी । हम देखते हैं की बहुत से भाई और बहन प्राय: एक ही उम्र के होते हैं , दोनों एक ही घर में रहते हैं और पाप - पुण्य के भाव को अधिक नहीं समझते , इसलिए कभी-कभी उनसे इस प्रकार के पाप हो जाते हैं । यही कारण है कि परमात्मा ने जब प्रकृति का उदाहरण सामने रखकर लोगों को यह सूचित कर दिया है कि एक जड़ स्त्री के कहने पर भी पाप के डर से और परस्पर की शिक्षा से प्रेरित होकर एक जड़ पुरुष जब इस प्रकार के पाप कर्म को करने से इनकार करता है तब चेतन , ज्ञानवान् और सर्वश्रेष्ठ मनुष्य को चाहिए कि वह कभी इस प्रकार के गृहित कर्म को न करें । परमात्मा ने अचेतन ___ जड़ जगत में इस प्रकार का विवेक दिखलाकर स्पष्ट आज्ञा दे दी है कि यदि भाई - बहिन के साथ विवाह करें तो वह वध के योग्य समझा जाए । अथर्ववेद में लिखा है कि ___ अथर्ववेद. 20.96.15

इस मंत्र में लिखा है कि अर्थात जो तेरा भाई तेरा पति होकर जार कर्म करता है और तेरी संतान को मारता है , उसका हम नाश करते हैं ।

इसका तात्पर्य यह है कि जो भाई अपनी बहन के साथ में व्याभिचार करेगा वह लोकलज्जा के कारण बहन के गर्भ का अवश्य ही नाश करेगा । इसलिए वेद ने ऐसे भाई को प्राण दंड देने की आज्ञा दी है , जो प्रकट रूप से विवाह करता है अथवा गुप्त रुप से जार कर्म करता है और बहन की संतान को मारता है । इस प्रमाण से स्पष्ट हो गया कि वेदों में जड़ बहन - भाई का अश्लील संभाषण इसलिए कराया गया है कि भाई -बहन में न तो विवाह ही हो और न व्याभिचार ही हो ऋग्वेद में इसी प्रकार का दूसरा जड़ जगत से संबंध रखने वाला अलंकार पिता और पुत्री का है । ऋग्वेद में कहां है कि ___

___ ऋग्वेद. 1.164.33 , ऋग्वेद. 3.31.1

अर्थात इन मंत्रों में **पिता दुहितुर्गर्भमाधात्** और **पिता यत्र दुहितु: सेकमृंजन् ;** पद आए हैं जिनका यह अर्थ होता है कि पिता दुहिता में गर्भधारण करता है । इस घटना का स्पष्टीकरण शतपथ , ऐतरेय और निरुक्त आदि वैदिक ग्रंथों ,

Edit with WPS Office

में इस प्रकार लिखा हुआ है कि उषा सूर्य की कन्या है । सूर्य उसी उषा में अपने किरणरूपी वीर्य को स्थापित करके गर्भधारण करता है , जिससे दिन उत्पन्न होता है । अथवा जलरुपी पिता अपनी पृथ्वी रूपी कन्या में मेघ द्वारा गर्भ धारण करता है जिससे वनस्पति पैदा होती है । इस अलंकार के वर्णन से यह बात तो स्पष्ट हो गई की ये पिता और पुत्री कोई जीवधारी मनुष्य नहीं है , प्रत्युत प्रकृति जड़ पदार्थ है , परंतु शंका करने वाले कहते हैं __ कि पिता और पुत्री के लिए ऐसा रूपक ही अश्लील है । क्या वेदों को कोई और दूसरा रूपक नहीं मिलता था , जो ऐसे गंदे वर्णन से विषय का प्रतिपादन किया है ? किंतु हम कहते हैं कि ऐसे रूपक की ही आवश्यकता थी । जब संसार में इस प्रकार के पिता भी कभी-कभी सुनने में आ जाते हैं तो एक कानून की पुस्तक में __ ज्ञान की पुस्तक में केवल असभ्यता के डर के कारण उसका वर्णन न करना और उसको पाप न बतलाना कहां तक युक्तियुक्त है , यह शंका करने वाले ही समझ ले । जब संसार में इस प्रकार की घटना का अपवाद होता है तब भला वेद किन शब्दों से उसका वर्णन करते ? वेदों ने तो सभ्यता की पराकाष्ठा कर दी है जो ऐसा वर्णन किसी मनुष्य के नाम से न करके जड़ और अन्धी प्रकृति के नाम से किया है । हां , यह वर्णन अवश्य अश्लील होता यदि यह केवल मनोरंजन के लिए किया जाता और इसको पाप न बतलाया जाता , परंतु बात सर्वथा उल्टी है । वेदों ने इस वीभत्स वर्णन के साथ-साथ संसार के एक बहुत बड़े पाप का स्पष्टीकरण करते हुए उपदेश दिया है कि किसी मनुष्य को अपनी पुत्री के साथ इस प्रकार का घृणित व्यवहार कभी न करना चाहिए । अथर्ववेद में आज्ञा है कि ___
अथर्ववेद. 8.6.7 मैं कहां है कि अर्थात यदि सोते समय भूलकर भी तुझे तेरा भाई अथवा तेरा पिता प्राप्त हो तो वे दोनों गुप्त पापी औषधि प्रयोग से नपुंसक करके मार डाले जाए ।

कैसा कठोर दंड है ? जब स्वप्न में भी __ धोखे में भी इस प्रकार के कुत्सित विचार आने पर पिता को इतना बड़ा दंड देने का विधान है तब उपर्युक्त अलंकार का यही अभिप्राय निष्पन्न होता है कि वेदों ने ऐसे अपवाद को वीभत्सता की पराकाष्ठा दिखलाने और उसकी निंदा करने के लिए ही स्थान दिया है । वेदों में ही नहीं प्रत्युत वेद के पश्चात के साहित्य में भी इस अलंकार के धोखे से बचने के लिए निंदा कर दी गई है । यथा ___ प्रजापति:

Edit with WPS Office

स्वां दुहितरमाभिदध्यौ दिवं वोषसं वा मिथुन्यनेया स्यामिति तां संबभूव तद्वै देवानामाग आसं य इत्थं स्वा दुहितरमस्माकं स्वसारं करोति ।

प्रजापतिः स्वां दुहितरमाभिदध्यौ दिवं वोषसं वा मिथुन्यनेया स्यामिति तां संबभूव तद्वै देवानामाग आसं य इत्थं स्वां दुहितरमस्माकं स्वसारं करोति।

अर्थात प्रजापति ने अपनी दुहिता धौ अथवां उषा का बुरी दृष्टि से चिंतन किया और ' इसके साथ रहूंगा , इस प्रकार का विचार करके संग किया , पर देवों के मत से यह पाप हुआ । उन्होंने कहा कि जो इस प्रकार अपनी दुहिता , अर्थात हमारी बहन के साथ बर्ताव करता है , वह पाप करता है ।

इस प्रकार यहां इस जड़ उषा के अलंकार से स्पष्ट कह दिया गया है कि यदि कोई ऐसा करेगा तो वह पापी समझा जाएगा । भागवत में भी कहा गया है कि ___

नैतत्पूवै : कृतं त्वधे न करिष्यन्ति चापरे । यत्वं दुहितरं गच्छेरनिगृहाड्गजं प्रभुः ।।

वैसा न कभी किसी ने पूर्व में किया था और न कोई ___ **श्रीमद् भागवत पुराण. 3.12.30**

अर्थात हे प्रजापते ! तुमने अपनी कन्या को ग्रहण करके जैसा पाप किया है भविष्य में करेगा ।

इन प्रमाणों से सूचित होता है कि वेदों का यह अलंकार ऐसे कृत्यों में पाप दिखलाने के लिए प्राकृतिक जड़ उषा में प्रकट किया गया है और वेदों के अतिरिक्त अन्य साहित्य में भी जोर से कहा गया है कि इस प्रकार का संबंध पाप है , इसलिए मनुष्य में आरंभ न हो ।

इसके अतिरिक्त कुछ लोग कहते हैं कि वेदों में गुप्तेन्द्रियों का भी वर्णन है । अथर्ववेद में ' बृहच्छेप ' का और ऋग्वेद में ' सप्तबधि ' और शिपिविष्ट का वर्णन है , किंतु इन शब्दों में किसी मनुष्य की कामक्रीडा का वर्णन नहीं है। यह शब्द तो आकाशस्थ सातों किरणों के लिए आये हैं । सातों किरणें एक साथ स्तंभ रूप से जब पृथ्वी की ओर आती हैं तब मानो

Edit with WPS Office

एक दीर्घ शिश्न मैथुन करने के लिए बढ़ता है , परंतु वही जब बादलों में छिप जाता है तब मानो वह शेप बधि अर्थात बधिया हो जाता हैं । लोकमान्य तिलक और अविनाशचन्द्र दास आदि विद्वानों ने इसे अलंकार ही बतलाया है । वास्तव में यह अलंकार ही है , परंतु शंका करने वाले इसे भी अश्लील वर्णन बतलाते हैं । इसलिए यहां इसका भी समाधान किया जाता है ।

हम कई बार लिख चुके हैं कि वेदों के तीन संसार हैं । यह वर्णन आकाशीय संसार का ही है । आकाश में भी स्त्री- पुरुष है , उनके विवाह हैं , गर्भाधान है , रति हैं और वाजीकरण आदि भी है । यहां यह बृहच्छेप प्राकृतिक रति का ही वर्णन करता है । इससे गृहस्थधर्म की शिक्षा मिलती है । यह गृहस्थ धर्म की शिक्षा इस पृथ्वीस्थ संसार के विवाह प्रकरण में दी गई है , परंतु इससे यह न समझना चाहिए कि वेदों में गुप्तांगो का ऐसा वर्णन करके अश्लीलता फैला दी है , और वेदकलंकिक लोग नंगे फिरते हैं । वेद वेद भगवान ने जिस प्रकार हिंसा संबंधी दूयर्थक शब्दों का स्वयं समाधान कर दिया है और पिता पुत्री तथा भाई - बहन के वैवाहिक अलंकारों का स्वयं स्पष्टीकरण कर दिया है , उसी प्रकार इस गुप्तेन्द्रियं - विषयक आकाशीय वर्णन से उत्पन्न हुई भ्रांति का भी निवारण कर दिया है , क्योंकि परमात्मा जानता है कि मनुष्य कितनी जल्दी भ्रम में पड़ जाता है , इसीलिए उसको भ्रम से बचाने के लिए वेदों में स्थान - स्थान पर चेतावनी दे दी है । इस गुप्तेन्द्रियं प्रकरण में भी वेद कहते हैं कि ___

मा शिश्नदेवा अपि गुऋतं न : । (ऋग्वेद. 7.21.5)

अर्थात हे मनुष्यों ! शिश्न को देव मानकर और उसी में रत रहने वाले उसके पुजारी मुझको प्राप्त नहीं होते ।

कितनी सुंदर शिक्षा है । इस शिक्षा को पाकर मनुष्य कभी भी शिश्नदेवोपासक नहीं हो सकता । जब वेद इस प्रकार की शिक्षा देते हैं तब समझना चाहिए कि उनके वे वर्णन जिनमें गुप्तेन्द्रियों के नाम आते हैं , केवल उपदेश के लिए ही आते हैं । जिस प्रकार डॉक्टरी की पुस्तकों में विशेष प्रयोजन से आए हुए गुप्तेंद्रिय संबंधी वर्णन अश्लील नहीं है , उसी प्रकार विद्या की पुस्तक वेद में आये हुए ये वर्णन भी अश्लील नहीं हो सकते । विशेषकर ऐसी दशा में जब वेद ने ही अपने विषय का स्पष्टीकरण भी स्थान स्थान पर स्वयं कर दिया है ।

Edit with WPS Office

कुछ लोग कहते हैं कि वेदों में दो-दो स्त्रियों के साथ रात - दिन पड़े रहने का वर्णन है । यजुर्वेद के पुरुष सूक्त में आया है कि ' **श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्या अहोरात्र पार्श्वे ;** अर्थात श्री और लक्ष्मी दोनों स्त्रियां रात - दिन बगल में पड़ी रहती हैं । इस वर्णन में दो औरतों को लेकर रात दिन पड़े रहना कहां गया है जो अश्लीलता और असभ्यता का नग्न चित्र है , परंतु हम कहते हैं कि यह कोई असंभव या अनहोनी बात नहीं है । संसार में हजारों आदमी इस प्रकार के हैं जो दो-दो नहीं , किंतु चार-चार स्त्रियों के साथ विवाह करना धर्म समझते हैं । यदि वेद में इस प्राकृतिक जड़ घटना को लेकर उन लोगों को दो -दो विवाह के भयंकर परिणाम दिखलाये गये है तो क्या बुरा किया गया है ? वेद में स्पष्ट रूप से दो स्त्रियों से एक साथ विवाह करने के दुष्परिणाम का वर्णन किया गया है । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.101.11 के इस मंत्र में कहा गया है कि अर्थात जिस प्रकार दो धुराओ के बीच में दबा हुआ और चिल्लाता हुआ रथ का घोड़ा चलता है उसी प्रकार दो स्त्रियों का पति भी प्रत्येक ओर से दबा हुआ और वनस्पति लगाओ , तालाब खोदो और धन संग्रह करो का आर्तनाद करता हुआ भागा - भागा फिरता है ।

अनेक स्त्रियों वाले पुरुष की दुर्दशा का इस प्रकार वर्णन करके वेदों ने यह आज्ञा दे दी कि दो स्त्रियों से एक साथ विवाह करने में दुख है , इसलिए वह पाप ही है । ऊपर जिस प्राकृतिक सूर्य की दो स्त्रियों का वर्णन किया गया है की वह भी अपनी दो स्त्रियों के कारण न सोता है और न आराम करता है , प्रत्युत रात - दिन भागा - भागा फिरता है , इसलिए दो स्त्रियों के साथ विवाह करना उचित नहीं है । वेद ने इस जड़ अलंकार से भी बतला दिया कि दो पत्नी वाला और रात दिन काम क्रीड़ा करने वाला पुरुष उन स्त्रियों के बोझ से भागा - भागा फिरता है और रात - दिन चैन नहीं पाता ।

जिस प्रकार इन समस्त प्राकृतिक जड़ अलंकारों को वीभत्स रस के साथ वेदों ने वर्णन करके उनको पाप ठहरा दिया है और उनसे बचने के लिए जोरदार शब्दों के द्वारा शिक्षा कर दी है , उसी प्रकार अन्याय ही ऐसे ही स्थलों को किसी विशेष घटना को प्रकट करने के लिए लिखा है , और उसका निषेध भी कर दिया है । जो अलग अथर्ववेद के कतिपय मानसिक उपचारों को टोकटकाट्बर और जादू टोना समझते हैं वे भी गलती पर है ।

Edit with WPS Office

जिस प्रकार मांस और पशु यज्ञ के संबंध में दूयर्थक शब्दों के कारण लोगों ने अनर्थ किया है उसी प्रकार इस प्रकरण में भी कर रहे हैं । अथर्ववेद का उपचार प्रकरण मैस्मरेजम , हिपनाटिज्म और सजेशन से संबंध रखता है , इसलिए उसने भी अश्लीलता का अवकाश नहीं है । जो वेद स्वयं कहते हैं कि ' **सभ्य सभां में पाहि ,** अर्थात हे सभ्य ! इस सभा की रक्षा कर , उनमे असभ्यता की बात और अश्लीलता का वर्णन हो ही नहीं सकता । अतएवं वेदों में अश्लीलता और असभ्यता का लांछन लगाना बड़ी भारी भूल है ।

यज्ञ में पशु बलि क्यों नहीं देनी चाहिए ?

वृषभोंकी ओर देखो, वे कितना क्लेश सहा करते हैं। (४३-४६)

गऊ अवध्य है, इसहीसे उनका नाम अघ्न्या है; इसलिये कौन उन्हें मारनेमें समर्थ हुआ करता है। जो पुरुष वृषभ अथवा गऊकी हिंसा करता है वह बहुत ही अमङ्गल किया करता है। जितेन्द्रिय ऋषियोंने नहुषके समीप यह विषय कहा था। उन्होंने कहा था, गऊ मातृ-स्वरूप और वृषभ प्रजापति स्वरूप है; तुमने उनका वध किया है। हे नहुष! इससे तुमने बहुत ही अकार्य किया है, तुम्हारे निमित्त हम सब कोई व्यथित हुए हैं। हे जाजली! जैसे इन्द्रका ब्रह्म-हत्याका पाप स्त्रियोंमें रज रूपसे निक्षिप्त हुआ था, वैसेही उन महाभाग ऋषि-योंने नहुषके किये हुए गो-वृषभ हत्याके पापको सब प्राणियोंके बीच एक सौ एक रोग रूपसे निक्षेप किया। ब्रह्महत्या और गोहत्याका पाप समान है, इसीसे लोग नहुषको भ्रूणहत्या करनेवाला कहा करते हैं, इससे हम लोग उसका होम न करेंगे, उन समस्त तत्वार्थदर्शी महा-नुभाव जितेन्द्रिय शान्त महर्षियोंने नहुषके विषयमें ऐसा कहकर तथा ध्यानपूर्वक उसे गोहत्या करनेमें प्रवृत्त न देखकर उसके किये हुए पापोंको प्रजासमूहमें रोगरूपसे संक्रामित किया था। (४७-५१)

हे जाजली! इस लोकमें ऐसा घोर अकल्याणकर आचारके प्रचलित रहनेके कारणही तुम उस आचारको करते हो, मनुष्यको उचित है कि वह तत्त्वदृष्टीसे विचार करे। परन्तु वैसा करनेको तू

यज्ञ से शुद्ध वायु समस्त संसार पर उपकार करती है । यज्ञ में विभिन्न औषधियों का हवन करने से उनका लाभ समस्त संसार को मिलता है और इससे संसार के रोगों का नाश होता है ।

इसके विपरीत , यज्ञ में पशु बलि देने से वायु प्रदूषित होती है , जो रोगों का

Edit with WPS Office

कारण बनती है ।

महाभारत के शांति पर्व में उल्लेख है कि राजा नहुष ने यज्ञ में गाय और बैल की बलि दी थी । इसके परिणाम स्वरुप संसार में 101 रोग उत्पन्न हुए ।

अगर एक बलि से इतने रोग उत्पन्न होते हैं , तो बार-बार बलि देने से कितने रोग फैलेंगे ?

इसलिए , यज्ञ में हिंसा से बचना चाहिए , ताकि हम शुद्ध वायु और स्वास्थ्य को बनाए रख सके ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 125. मनुष्य की इच्छाएं

1. सबसे पहले मनुष्य की इच्छाओं को लीजिए । मनुष्य की इच्छाएं 7 भागों में विभाजित है ।
2. बहुत दिन जीने की इच्छा ।
3. स्त्री , पुरुष , रति , शोभा , श्रृंगार की इच्छा ।
4. खाने पीने , पहिरने , ओढ़ने , मकान , गृहस्थी , बाग - बगीचे और खेत तथा पशुओं की इच्छा ।

Edit with WPS Office

5. यश और मान आदि की इच्छा ।
6. विद्या ज्ञान विज्ञान और जानकारी की इच्छा ।
7. अपने साथ कोई अन्याय न करें , अर्थात न्याय की इच्छा और
8. बार-बार जन्म - मरण के दुख से छूटकर मोक्ष प्राप्ति की इच्छा मनुष्य मात्र को रहती है ।

वेदों ने गायत्री मंत्र के द्वारा इन्हीं इच्छाओं की पूर्ति के लिए नित्य परमेश्वर से प्रार्थना करने का उपदेश किया है । गायत्री का माहात्म्य वर्णन करते हुए अथर्ववेद. 19.71.1 में कहां गया है ___

स्तुता मया वरदा वेदमाता प्र चोदयन्ता पावमानी द्विजानाम् ।

आयु: प्राणं प्रजां पशु कीर्ति द्रविणं ब्रह्मवर्चसम् । महा दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ।।

अर्थात प्रचोदयात् पदान्तवाली और द्विजों को पवित्र करने वाली वेद माता गायत्री की में इसलिए स्तुति करता हूं कि वह मुझको आयु , बल , प्रजा , पशु , कीर्ति , धन और वैदिक ज्ञान देकर ब्रह्मलोक मोक्ष अर्थात मोक्षपद को पहुंचावें ।

इस आदेश से ज्ञात हुआ कि मनुष्य मात्र की ये इच्छाएं स्वाभाविक है । फ्रीनालाजीवाले भी बतलाते हैं कि मस्तिष्क में ज्ञान , मान , अर्थ , काम , आयु , विज्ञान और न्याय धर्म के ही प्रधान साथ स्थान है । अन्य स्थान तो इन्हीं के अंतर्गत , इन्हीं की शाखाएं हैं । इससे ज्ञात होता है कि ये इच्छाएं नैसर्गिक हैं । इन सब में दीर्घ जीवन की इच्छा सर्वप्रथम है , इसलिए सबसे पहले हम दीर्घ जीवन के ही मंत्रों का नमूना दिखलाते हैं । यजुर्वेद में लिखा है कि ___ यजुर्वेद. 25.22

अर्थात हे विद्वानों ! मनुष्य की आयु 100 वर्ष नियत है , अतः जब तक हमारे शरीरों के जरा अवस्था न हो जाए और हमारा पुत्र भी पिता न हो जाए तब तक हम जिएं , अर्थात सौ वर्ष के अंदर हमारी आयु क्षीण न हो ।

इतना ही नहीं की हम किसी प्रकार 100 वर्ष तक जिएं प्रत्युत आरोग्यता और बल के साथ जिएं , जैसा कि लिखा है ___

यजुर्वेद. 36.24 ______

अर्थात इस मंत्र में लिखा है ज्ञानियों का हित करने वाला शुद्ध ज्ञाननेत्र उदित

Edit with WPS Office

है । उसे उससे हम100 वर्ष देखें , 100 वर्ष जिएं , सौ वर्ष सुनें , सौ वर्ष बोले , सौ वर्ष तक दीन न हो और सौ वर्ष से भी अधिक दिन तक आनंद से रहे ।

वेद में दीर्घकाल दीर्घ जीवन कि इस इच्छा के आगे काम की इच्छा का वर्णन इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 19.52.1 ______

अर्थात् इस मंत्र में लिखा है जो काम मन में बीजरूप से है , वह पहले हुआ । हे काम ! तूने बहुत बड़े काम का विस्तार कर दिया है , इसलिए अब धन दे ।

अथर्ववेद. 17.1.2 -5 ______

अर्थात देवों के लिए , प्रजा के लिए , पशुओं के लिए और समानों के लिए मैं प्रिय होऊं । कामना से संबंध रखने वाले इन दोनों मंत्रों में कहा गया है कि मन और रेत ही काम का मूल है । इस काम से ही आगे पुत्रादि की बड़ी-बड़ी कामनाएं उत्पन्न होती है और इसी से बनाव , चुनाव , शोभा , श्रृंगार , और ठाट - बाट की आवश्यकता होती है । इन सबका मूल मन और रेत , अर्थात रति ही है । रति ही प्रजा , पशु और अन्नादि धन की और विशेष प्रवृत्ति उत्पन्न कराती है , क्योंकि दीर्घजीवन और कामजन्य स्त्री - पुत्रादिको के लिए ही धन की इच्छा होती है । मनुष्य को इस धन की इच्छा किस प्रकार रहती है उसका नमूना वेद ने निम्न मंत्रों में दिखलाया है ___

ऋग्वेद. 10.117.8 ______

अर्थात एक गुणा धन रखने वाला अपने से दुगना धन रखने वाले के मार्ग का आक्रमण करता है , दुगुने धन वाला तिगुने धन वाले के पीछे दौड़ता है और चौगुनें धन वाला अपने से दूने धन वाले की महत्ता को प्राप्त होता है , अर्थात मनुष्य धनवानों को देखकर स्पर्धा करते हुए , अधिकाधिक धन प्राप्त करने की इच्छा रखता है ।

इस धन की इच्छा के आगे मान की इच्छा होती है । वेद में मान की इच्छा का नमूना इस प्रकार दिखलाया गया है ___

अथर्ववेद. 10.3.17 - 25 _____

अर्थात जिस प्रकार सूर्य , चंद्रमा , पृथ्वी , ब्रह्मचारिणी कन्या , मधुपर्क और

Edit with WPS Office

सोमपान प्राप्त विद्वान , अग्निहोत्री , यज्ञ करने वाला , यजमान , परमेष्ठी और प्रजापति यश और कीर्ति को प्राप्त होते हैं उसी प्रकार की कीर्ति , तेज , और यश मुझे भी प्राप्त हो ।
इन मंत्रों में यश , कीर्ति , और मान के लिए प्रार्थना की गई है , क्योंकि लिखा है कि " सर्वे नन्दन्ति यशसा " अर्थात सबको यश से आनंद मिलता है । इस मान की इच्छा के आगे वेद में ज्ञान की इच्छा का वर्णन इस प्रकार है ___

यजुर्वेद. 32.14 -15 ______

अर्थात जिस मेधा (ज्ञान) की देवता और पितर उपासना करते हैं , उस मेधा से हे परमेश्वर ! मुझे शीघ्र ही मेधावी कीजिए । वरुण अग्नि प्रजापति इंद्र वायु और परमात्मा मुझे वह मेधा देवे , अर्थात इन सब पदार्थों का ज्ञान मुझे शीघ्र हो । इसलिए ___

अथर्ववेद. 6.41.1 ______

अर्थात मन , अन्त: करण , बुद्धि , विचारशक्ति , ज्ञानशक्ति , मति , श्रवणशक्ति और दृष्टि शक्ति की उन्नति के लिए हम सब यज्ञकर्म करें ।

इस ज्ञानेच्छा के आगे वेद में न्याय की इच्छा इस प्रकार बतलाई गई है ___

यजुर्वेद. 3.50 ______

अर्थात तू मुझे दे और मैं तुझे दूं । तू उत्तम गुण मुझ में धारण कर और मैं तुझ में धारण करूं । यह मैं लेता हूं और यह तू ले , अर्थात परस्पर न्याय युक्त व्यवहार हो ।

न्याय का कैसा सुंदर आदर्श है । इसके आगे परमपद की इच्छा का वर्णन इस प्रकार है ___

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्ण तमस: परस्तात ।
तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।। (यजुर्वेद. 31.18)

यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुद: प्रमुद आसते ।
कामस्य यात्राप्ता: मुद: प्रमुद आसते ।
कामस्य यात्राप्ता: कामास्तत्र माममृतं कृधि ।। (ऋग्वेद. 9.113.11)

Edit with WPS Office

अर्थात में अंधकार से परे उस महान प्रकाशमय सूर्यतुल्य परमात्मा को जानता हूं । उसी के जान लेने से अमृतत्व प्राप्त होता है , इसके सिवा और कोई दूसरा मार्ग नहीं है । इसलिए जहां आनंद - ही - आनंद है और जहां सब काम नहीं पूर्ण हो जाती है , उस मोक्ष धाम में मुझे अमर कीजिए ।

इन मंत्रों में दीर्घातिदीर्घ जीवन , अर्थात अमृतत्व की महान इच्छा वर्तमान है । इस संसार में बहुत दिन जीने की जो इच्छा जो पाई जाती है वहीं इसी अनन्त जीवन की अभिलाषा है । इस प्रकार से मनुष्य की ये सातों स्वाभाविक इच्छाओं को दर्शाने वाले मंत्र वेद में विद्यमान है , परंतु ये इच्छाएं बिना गृहस्थाश्रम के पूर्ण नहीं हो सकती ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 126. गृहस्थाश्रम

उपर्युक्त इच्छाएं बिना गृहस्थाश्रम के पूरी नहीं हो सकती , इसलिए वेदों में गृहस्थाश्रम का पर्याप्त वर्णन है । यहां हम नमूने के तौर पर गृहस्थाश्रम की विशेष - विशेष बातें लिखते हैं । सबसे पहले हम देखते हैं कि वेदमंत्रों के अनुसार गृहस्थ की अवस्था कैसी होनी चाहिए । ऋग्वेद में लिखा है ___

ऋग्वेद. 10.85.42 ______

अर्थात किसी से विरोध न करों , गृहस्थाश्रम में रहो , पूर्ण आयु प्राप्त करो , पुत्र और पौत्रों के साथ खेलते हुए और आनंद करते हुए अपने ही घर में रहो और घर को आदर्श रूप बनाओं ।

इसके आगे यह दिखलाते हैं कि गृहस्वामी दम्पति का परस्पर कैसा

Edit with WPS Office

आदर्श होना चाहिए । ऋग्वेद उपदेश करता है कि ___

अर्थात संसार की समस्त शक्तियां और विद्वान हम दोनों __ पति - पत्नी को अच्छी प्रकार जाने , हम दोनों के हृदय जल के समान शांत हो और हम दोनों की प्राण शक्ति , धारण शक्ति और उपदेश शक्ति परस्पर कल्याणकारी हो ।

यह वैदिक दम्पति का आदर्श है । अब देखना चाहिए कि इस वैदिक दम्पति का घर कैसा हो । वेद मत्रों के आदेशानुसार सर्वसाधारण के घर बहुत ही सादे होने चाहिए । अथर्ववेद में लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 9.3.16 -21 ___

अर्थात उपजाऊ और पानी वाली भूमि पर छोटी - सी निर्वाह-योग्य जिसमें समस्त आवश्यक अन्न भरे हैं , ऐसी हे शाले ! तू अपने ग्रहणकर्ता (निवासी) को मत मारना । तृण से छाई हुई और तोरण बन्दनवारो से सजी हुई हे शाले ! तू सबको रात्रि के समय शांति देने वाली है और लकड़ी के खम्भों पर हस्तिनी की भाति थोड़ी सी भूमि पर स्थित है । जो शाला दो छप्परवाली , चार छप्पर वाली , छह छप्पर वाली और जो आठ तथा दश छप्पर वाली बनाई जाती है , उस मान - मर्यादा बचाने वाली शाला में मै जठराग्नि और गर्भ के सामान निवास करता हूं ।

यह वैदिक घरों की सादगी । अब देखना चाहिए कि इन घरों में खाध और पेय पदार्थों के तैयार करने वाली गृहस्थी का कैसा वर्णन है । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 1.28.1 -5 ______

अर्थात जहां बड़ा स्थूल पत्थर (चक्की) नीचे ऊपर चलता है , जहां दो जंघाओं के बीच में सिलबट्टा चलता है , जहां स्त्रियां पदार्थों का धरना , उठाना और राधना - पकाना जानती है , जहां मथानी को रस्सी से बांधकर दही मथा जाता है और जहां घर-घर में उलूखल - मूसल चलता है वे घर ऐसे प्रकाशित होते हैं जैसे जय के समय दुन्दुभि प्रकाशित होती है ।

इन वैदिक घरों में चक्की , सिलबट्टा , ऊखली - मूसल और मथानी के शब्द दुन्दुभी के समान अन्न चाहने वालों को घोषित कर रहे हैं और गृह देवियों पदार्थों के धरने - उठाने और रांधने - पकाने में लगी हुई है । इन घरों में जिस प्रकार अन्नदान की धूम मची हुई है उसी तरह घी - दूध की भी धारा बह रही

Edit with WPS Office

है ।

अथर्ववेद में लिखा है कि ___ 4.34.7

अर्थात चार , चार घड़े दूध और चार - चार घड़े पानी चारों ओर देता हूं । ये सब आपको स्वर्ग में __ सुख स्थान में पोषण पहुंचाएं ।

अथर्ववेद. 3.12.8 ______

अर्थात हे स्त्री ! तू दूध और घी को घड़ों में भरकर उनकी धारा से इन पीने वालों को तृप्त कर और वापी , कृप , तड़ाग तथा दान आदि सब प्रकार से इनकी रक्षा कर ।

यजुर्वेद. 2.34 ______

अर्थात बलकारक जल , घृत , रसयुक्त अन्न और पके हुए तथा टपके हुए मीठे फलों की धारा बह रही है , अतः हे स्वधा मैं ठहरे हुए पितरों ! आप तृप्त हो ।

इन मंत्रों के अनुसार वैदिक घरों में देव , ऋषि और पितरों की तृप्ति के लिए घी , दूध और फलों का विशाल आयोजन दिखलाई पड़ता है । इतना ही नहीं प्रत्युत वैदिक गृहस्थ अपने इष्टमित्रों , अतिथियों और क्षुधापीडित मनुष्यों को किस प्रकार अन्न , जल , और सेवा से तृप्त करने के लिए बुला रहे हैं वह भी देखने योग्य है । अथर्ववेद में लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 7.60.1 - 7 ______

अर्थात हे वीर्य , धन , सम्पत्ति , मेधा , सुहभ्दाव और अच्छे मनवालों ! आप लोग इन घरों में प्रेम पूर्वक आइए , डरिए मत । घरों में आने वालों के लिए ये घर आरोग्यवर्धक , बलशाली , दुग्धवाले , लक्ष्मीवान् और श्रीमान है । ये घर अमित धनवाले , मित्रों के साथ आमोद - प्रमोद करने वाले और क्षुधा - तृषा के हरनेवाले हैं , इसलिए आइए , डरिए मत । गौवे , बकरी और नाना प्रकार के रसीले अन्न हमारे घरों में भरें पड़े हैं । ये घर सत्यवालों , भाग्यवानों , धनियों , हंसमुखो और भूख - प्यास से रहितों के है , इसलिए डरिए मत । थके हुए पथिक जो इन घरों का स्मरण करते हैं उन्हें ये घर अपनी और बुलाते हैं , इसलिए कहीं मत जाइए , यही रहिए । ये घर अनेक प्रकार से पोषण करतें हैं , इसलिए हम भी यहां आ गये है , ठहरे हैं और सब प्रकार से सुखी है ।

इस उपदेश में गृहस्थाश्रम का कैसा भव्य वर्णन है और कैसे उदार

Edit with WPS Office

गृहस्थों का चित्र खींचा गया है । इसका कारण यही है कि वेदों में अतिथि सत्कार न करने वाले और क्षुधातुरों को अन्न न देने वाले गृहस्थों की निंदा की गई है । ऋग्वेद में लिखा है ___

ऋग्वेद. 10.117.2 -3 ______

अर्थात जो अन्नवान होता हुआ , अन्न चाहने वालों को और गरीबी से पास आयें हुए दुखियों के लिए मन कठोर कर लेता है और आप मजे में खाता है , उसे सुख देने वाला मित्र नहीं मिल सकता । जो अन्न चाहने वाले दुर्बल याचक को अन्न देता है वही सच्चा भोजन करता है । ऐसे दाता के पास दान करने के लिए पर्याप्त अन्न आता है और कठिन समय में सहायक मित्र उत्पन्न होते हैं ।

इस प्रकार से इन वेद मंत्रों ने आदर्श , गृहस्थ , का चित्र खींचते हुए बतलाया की मकान तो सदैव साधारण ही हो , परंतु वह साधारण मकान अन्न आदि आवश्यक पदार्थों से भरा हो और मकान पर आने वालों का उत्तम सत्कार किया जाए , परंतु स्मरण रहे कि इस दानशीलता के कारण ऋण न होने पाए । ऋण मनुष्य को बहुत ही नीच बना देता है , इसलिए उतना ही व्यय करना चाहिए जितनी अपनी निज की आय हो । अथर्ववेद में लिखा है ___

अथर्ववेद. 6.117.3 , 19.31.5 ______

अर्थात इस लोक , परलोक और तीसरे लोक में हम सब अनुण होवे और देवयान तथा पितृयान के जो मार्ग और स्थान है उन सब में हम अनुण होकर निवास करें । मैं चतुष्पाद पशुओं से , द्विपाद मनुष्यों से और धान्यों से प्राप्त पदार्थ स्वीकार करता हूं और बृहस्पति तथा सविता देव परमात्मा ने मुझे जो पशुओं का दूध और औषधियों का रस दिया है , उसी से पोषण करता हूं ।

इन मंत्रों का यही तात्पर्य है कि जो कुछ अपने पुरुषार्थ से प्राप्त हो उसी के अनुसार व्यय किया जाए , ऋण लेकर नहीं । इस प्रकार से गृहस्थ की दशा का वर्णन करके अब गृहस्थ के नित्य करने योग्य पच्चमहायज्ञों का वर्णन करते हैं ___ यजुर्वेद में लिखा है कि ___

यद्ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये । यदेनश्चक्रिमा बयमिदन्तवयजामहे ।।

Edit with WPS Office

(यजुर्वेद. 3.45)

अर्थात ग्राम में , जंगल में हमने इंद्रियों से जो पाप किया है उसे इस यज्ञ में होम करके दूर फेंकते हैं ।

इस मंत्र का तात्पर्य यही है कि गृहस्थ से जो पांचों स्थानों में जो पाप होता है अथवा युद्धों में और हिंसापशुओं की हत्या से जो पाप होता है अथवा ग्राम में , जंगल में और सभाओं में जो मन , वाणी , और कर्म से बिना किसी इच्छा के पाप हो जाता है वह पच्चमहायज्ञों और इष्टापूर्तादि हो जाता है । इन पच्चमहायज्ञों में सबसे पहले वेदों का स्वाध्याय और प्राणायाम पूर्वक गायत्री का जप है । यही ब्रह्मयज्ञ है । वेद में इस ब्रह्मयज्ञ के करने की आज्ञा की गई है । वेद के स्वाध्याय के लिए यजुर्वेद में लिखा है कि ___

यथेमां वाचं कल्याणीमावदाग्नि जनेभ्य: । ब्रह्मराजन्याभ्याऽशूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं में काम: समृध्यतामुप मादो नमतु ।। (यजुर्वेद. 26.2)

अर्थात जैसे इस कल्याणकारिणी वाणी को मनुष्यों के लिए मैं बोलता हूं वैसे ही ब्राह्मणों , क्षत्रियों , वैश्यों , शूद्रो , स्त्रियों और अनार्यो के लिए आप भी बोलिए और समझिए कि इस प्रकार के विद्यादान से मैं देवताओं में प्रिय होऊं , मुझे परोक्ष सुख मिले और सब कामनाएं पूर्ण हो ।

यह वेद के स्वाध्याय की महिमा है , परंतु वेद - स्वाध्याय का अर्थ केवल वेदों का रटना ही नहीं है प्रत्युत उनके अर्थो का जानना है । इसलिए अथर्ववेद में लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 9.10.18 ______

अर्थात ऋचाएं परमव्यापक अक्षर में ठहरी हुई है जिसमें वेद के देवता ___ अर्थ ठहरे हुए हैं , अत: जो अक्षर और उनके अर्थों को नहीं जानता वह केवल ऋचाओं से क्या लाभ प्राप्त कर सकता है । ठीक है , जो अक्षर और अर्थों को जानता है वही अच्छी प्रकार वेद के तात्पर्य के तात्पर्य तक पहुंचता है ।

इसलिए वेदों को अर्थ सहित ही पढ़ना चाहिए । वेद विचार के बाद प्राणायाम पूर्वक गायत्री का जप करना चाहिए । अथर्ववेद में गायत्री की महिमा इस प्रकार लिखी है ___

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 19.71.1 ______

अर्थात द्विजों को प्रेरणा करने वाली पवित्र वेद माता गायत्री की में स्तुति करता हूं । यह मुझे आयु , बल , सन्तति , पशु , कीर्ति , धन , और ब्रह्मवर्चस्व , अर्थात वेद ज्ञान देकर ब्रह्मलोक को पहुंचावें । यही ब्रह्मयज्ञ है ।

इसके बाद देवयज्ञ का अनुष्ठान है । देवयज्ञ का तात्पर्य दोनों समय हवन करना है । अथर्ववेद में लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 19.55.3- 4

अर्थात शाम का नित्य हवन प्रातः काल के समय तक गृहस्थ के मन को प्रसन्न करने वाला होता है और प्रातः काल का नित्य हवन सायंकाल के समय तक मन को प्रसन्न करने वाला है , इसलिए गृहस्थ को नित्य दोनों संध्याओं में हवन करना चाहिए । यही देवयज्ञ है ।

इस देवयज्ञ के पश्चात पितृयज्ञ का विधान है । यजुर्वेद में देखा है कि ___

यजुर्वेद. 19.45 ______

अर्थात यम के राज्य में जो पितर एक - समान है और समान विचार वाले हैं उन पितरों को देवताओं के बीच में लोक , स्वधा , नमस्कार और यज्ञ प्राप्त हो ।

इस पितृयज्ञ के बाद बलिवैश्वदेव का विधान है । उसके लिए यजुर्वेद और अथर्ववेद में लिखा है ___

यजुर्वेद. 18.64 , अथर्ववेद. 19.55.6

अर्थात जो अभी दिया है और जो इसके पहले दिया है तथा जो आगे दिया है और जो पीछे दिया है वह सब बलिवैश्वदेवकर्म की अग्नि को प्राप्त हो । जिस प्रकार घोड़ा नित्य घास पाता है उसी प्रकार प्रतिदिन प्राणियों को उनका भाग , अर्थात बलि देनी चाहिए ।

इसके बाद अतिथि यज्ञ है । अतिथि यज्ञ के विषय में लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 15.10.1 -2 , 15.11.1 - 2

अर्थात जब विद्वान और व्रतधारी अतिथि राजा के घर आए तब राजा को उचित है कि वह अतिथि को अपने से भी अधिक श्रेष्ठ माने । इससे राजा न तो क्षत्रियकुल में ही दोषी होता है और न राष्ट्र की ओर से दोषी होता है । जिसके घर में व्रतशील और विद्वान अतिथि आ जाएं तो उसे चाहिए कि वह उठकर अतिथि से कहें कि हे व्रात्य ! आप कहां से आ रहे हैं ? आइए

Edit with WPS Office

लीजिए यह जल है , आप तृप्त हो और जो आपकी इच्छा हो वह भी उपस्थित किया जाए तथा जो आज्ञा हो वही किया जाए ।
यह वैदिक आतिथ्य का नमूना है । इस प्रकार से पच्चमहायज्ञों के द्वारा गृहस्थ सबको अन्न - जल पहुंचाता है और इसी प्रकार का गृहस्थ पहले कहीं हुई आयु , बल , कीर्ति , विधा , प्रजा , धन , और मोक्ष आदि इच्छाओं को प्राप्त कर सकता है ।

अहिंसा सत्यवचनं सर्वभूतानुकम्पनम् ।
शमो दानं यथाशक्ति गार्हस्थ्ये धर्म उच्चयते ।।
महाभारत , अनुशासन पर्व , दानधर्म पर्व , अध्याय 141. श्लोक 25

भावार्थ : गृहस्थ जीवन में अहिंसा , सत्य बोलना , सभी प्राणियों पर दया रखना , मन और इंद्रियों पर संयम रखना , तथा अपनी क्षमता के अनुसार दान देना सबसे उत्तम धर्म माना गया ।

- इन पांच गुणों को अपनाने से गृहस्थ जीवन भी धर्ममय और श्रेष्ठ बनता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 127.समाज और साम्राज्य की रक्षा

उपर्युक्त आदर्श वैदिक आर्य समाज का पवित्र चित्र देखकर उसकी रक्षा का

Edit with WPS Office

प्रश्न सामने आ जाता है और उस प्रश्न का उत्तर यही हो सकता है कि जहां-जहां भय की संभावना हो वही - वही रक्षा का प्रबंध करना चाहिए। वेदों में रक्षासंबंधी अनेक प्रकार के उपदेश हैं जो स्थूलरूप से चार भागों में बांटे जा सकते हैं। बीमारी से रक्षा, प्राकृतिक विप्लवों से रक्षा, समाज के भीतरी दुष्टों से रक्षा और बाहर के शत्रुओं से रक्षा। इन चारों प्रकार की रक्षाओं को आयुर्वेद, यज्ञ, प्रार्थना और राज्य प्रबंध के अंतर्गत रखा गया है। इनमें सबसे पहले आयुर्वेद _ ज्ञान है। आयुर्वेद दो प्रकार का है __ व्यक्ति का और समाज का। व्यक्ति का आयुर्वेद वैधशास्त्र है और समाज का यज्ञ है। व्यक्तिगत व्याधियां वैद्यकशास्त्र से और ऋतु - सम्बन्धी या महामारी आदि सामाजिक व्याधियां यज्ञों के द्वारा नष्ट होती है। वेदों में दोनों प्रकार का ज्ञान दिया गया है। यहां हम पहले वैधकज्ञान का नमूना दिखलाते हैं। वेद में सबसे पहले जीवन का उपदेश इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 10.18.4 ______

भावार्थ : अर्थात मैं मनुष्यों के आयु की मर्यादा 100 वर्ष स्थिर करता हूं। इससे पहले इस जीवनधन को न गंवाओ, सौ वर्ष जिओ और अपमृत्यु को पर्वत से दबा दो।

इस मंत्र में अपमृत्यु से बचने का उपदेश है। अपमृत्यु बीमारियों से ही होती है और बीमारियां दोषों के ही कोप से होती है, इसलिए वेद में दोषों का वर्णन इस प्रकार किया गया है ___

ऋग्वेद. 6.61.12 ______

भावार्थ : अर्थात तीन स्थानों (कफ, वात, और पित्त) में ठहरी हुई सात धातुएं पांच तत्वों से उत्पन्न होकर बढ़ती है और अन्न से पुष्ट होती है।

इसका तात्पर्य यही है कि पांचों तत्वों से बने हुए खाने पीने के पदार्थों से ही सातों धातुएं उत्पन्न होती है जो वात, पित्त, और कफ में स्थित है। इसके आगे हृदय और नाडी आदि के विषय में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.135.7 ______

अर्थात यह हृदय देवयान __ नियमित गति का बताने वाला यम का घर है और यही नाड़ी को धौंकता है।

इस मंत्र में हृदय की चाल का एक नियमित रूप बतलाकर नाडीज्ञान का

Edit with WPS Office

उपदेश किया गया है । इसके आगे पथ्याहार का वर्णन इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 18.1.17 ______

भावार्थ : अर्थात बुद्धिमानों ने अनेक प्रकार से निरूपण करने योग्य , अद्भुत गुणवाले , सबके जानने योग्य और आनंद देनेवाले तीन पदार्थों को बहुत प्रकार से समझ लिया है । वे तीनों पदार्थ जल , वायु और औषधियां हैं , जो संसार को दी गई है और प्रत्येक स्थान में विद्यमान है ।

यहां स्वास्थ्य रक्षा से संबंध रखने वाले और हर समय उपयुक्त होने वाले वायु , जल और अन्नों का वर्णन किया गया है , क्योंकि मनुष्य का स्वास्थ्य इन्हीं के अधीन है । इसके आगे आहार का नियम बतलाते हुए वेद उपदेश करते हैं कि ___

अथर्ववेद. 6.135. 1 -3 ______

भावार्थ : अर्थात जो कुछ मैं खाता हूं उसे बल बना देता हूं , तभी मैं शत्रु के कंधों को तोड़ने वाला वज्र उसी प्रकार ग्रहण कर सकता हूं जैसे वृत्र के लिए इंद्र अपने वज्र को ग्रहण करता है । इसी प्रकार मैं जो कुछ पीता हूं वह भी यथाविधि ही पीता हूं , जैसे समुद्र यथाविधि पीता है , इसलिए जो कुछ हम पीवे वह उस पदार्थ के सारभाग को चूसकर पीवें । इसी प्रकार जो कुछ चबाता हूं वह यथाविधि चबाता हूं जैसे समुद्र चबाकर पचा जाता है , इसलिए पदार्थों के प्राणस्वरूप सार को दांतों से पीसकर खूब चबाना चाहिए ।

इन मंत्रों में खूब चबाकर उतना ही खाने की आज्ञा है जितना पच जावे और बल उत्पन्न करने वाला हो । समुद्र के उदाहरण से बतला दिया गया है कि कभी अजीर्ण न होना चाहिए , क्योंकि समुद्र को जल से कभी अजीर्ण नहीं होता । इसके आगे संसार की दोनों शक्तियां सर्दी और गर्मी ___ इस प्रकार बतलाई गई है ।

ऋग्वेद. 10.9.6 ______

भावार्थ : अर्थात मुझसे सोम ने कहा कि पानी में सब औषधियां है और अग्नि सबको आरोग्य देता है ।

इन मंत्र में बतलाया गया है कि अग्नि और जल ही , अर्थात सर्दी और गर्मी ही दो दवाएं हैं , इसलिए **शतपथ ब्राह्मण. 1.6.3 .8** में लिखा है कि अर्थात संसार में अग्नि और सोम (जल) दो ही पदार्थ है , इन्हीं से सब वैधविधा ,

Edit with WPS Office

यश , अन्न , और शोभा प्राप्त होती है , इसलिए वेद में सर्दी की दवा गर्मी और गर्मी की दवा सर्दी बतलाई गई है । वेद में लिखा है कि ___

यजुर्वेद. 23.9 -10 ______

अर्थात कौन अकेला चलता है , कौन बार-बार पैदा होता है , सर्दी की दवा क्या है और बीज बोने का सबसे बड़ा स्थान क्या है ? सूर्य अकेला चलता है , चंद्रमा बार-बार पैदा होता है , अग्नि (गर्मी) सर्दी की दवा है और पृथ्वी ही बीज होने का सबसे बड़ा स्थान है ।

इस मंत्र में सर्दी की दवा गर्मी बतलाई गई है , परंतु अर्धापत्ति से यह बतला दिया गया है की गर्मी की दवा सर्दी है । इसके आगे समस्त शरीर के भीतरी - बाहरी अंगों का वर्णन इस प्रकार किया गया है ___

अथर्ववेद. 10.2.1 8 ______

अर्थात किसने पैर की दोनों एड़ियों मैं मांस भरकर पुष्ट किया , किसने मांस जोड़ा , किसने दोनों टखने जोड़े , किसने उंगलियों के जोड़ों को जोड़ा , किसने नख और किसने पांव के दोनों तलवों को जोड़ा है ? किसने पैर के नीचे के दोनों टखने , ऊपर के दोनों घुटने , दोनों टांगे और दोनों घुटनों के भीतर दोनों जोड़ों को जोड़ा है ? किसने दोनों कूल्हों और जांघों को चार प्रकार से सटी हुई नोको के ऊपर इस ढ़ीले धड़ को जोड़ा है ? किसने मनुष्य की छाती और गले को मिलाया , किसने दोनों स्तनों को बनाया , और किसने दोनों गालों , कंधों , और पसलियों को एकत्र किया ? किसने इन वीर कर्म करने वाली भुजाओं को पुष्ट किया है और कंधों के साथ में मिलाया है ? किसने सिर में दो आंखें , दो कान , दो नासाछिद्र और एक मुख को बनाकर सात गोलको में जोड़ा , जिसके सहारे द्विपद और चतुष्पाद प्राणी अपना - अपना कार्य - निर्वाह करते हैं ? किसने दोनों जबडों के बीच में बहुत - सा बोलने वाली जिह्वा को जोड़ा है ? किसने इसके मस्तिष्क , ललाट , शिर , के पिछले भाग और कपाल को दोनों जबड़ों के साथ मिलाया है ?

यहां तक इन मंत्रों में मनुष्य के पैर से लेकर शिरपर्यंत समस्त आवश्यक अंगों का वर्णन है । इसी प्रकार का शारीरिक वर्णन वेद के और भी कई स्थलों में आया है जिससे प्रतीत होता है कि वेद में शरीर के अवयवों का वर्णन है । इसलिए **सुश्रुत , शारीरस्थान. 5.18** में लिखा है कि ' **त्रीणि सषष्ठान्यस्थिशतानि वेदवादिनो भाषन्ते** ; अर्थात वैदिक लोग शरीर की

Edit with WPS Office

हड्डियों की संख्या तीन सौ साठ बतलाते हैं । इससे प्रकट होता है कि वेद में शरीर का पूरा वर्णन है , क्योंकि शरीर के अंन्तभाग में ही तो वैदिक लोग जीव और ब्रह्म को भी ढूंढ निकालते हैं । इसी शरीर - प्रकरण के आगे लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 10.2.26 - 32 ______

अर्थात परमेश्वर ने मस्तिष्क को हृदय के साथ सी दिया है जो अग्निविशेष के द्वारा शरीर को प्रेरित करता है । यह शिर देवकोश है । इसी में सब ज्ञान - विज्ञान निवास करता है । इसकी प्राण , मन और अन्न रक्षा करते हैं । परमात्मा ही इन उलटे , आड़े और सीधे शरीरों को अपनी व्यापकता से बनाता है । इसलिए जो इस पुररुपी शरीर को जानता है , वही पुरुष कहलाता है । जो उस अमृत ब्रह्म के इस शरीर - पुर को जानता है वही वेद को , परमात्मा को , स्वास्थ्य को , बल को और सन्ताति को प्राप्त होता है । उस मनुष्य के , बुढ़ापे के पूर्व , न नेत्र खराब होते हैं और न बल ही कम होता है जो इस ब्रह्मपुर __ शरीर __ को अच्छी प्रकार समझता है । इस आठ चक्र और नवद्वार वाले अयोध्यानगर में प्रकाशमान कोश है जो स्वर्गीय ज्योति से छाया हुआ है । उस तिहरे और तीन ओर से रक्षित कोश में जो आत्मा की भांति महान यक्ष बैठा है , उसी को ब्रह्म के ढूंढने वाले प्राप्त करते हैं ।

इन मंत्रों में शिर को विज्ञान का कोश बतलाकर और हृदय के साथ सिंया हुआ कहकर बतला दिया कि शरीर के हृदयाकाश में ही वह ज्योति: स्वरूप परमात्मा विराजमान हैं , जिसको ब्रह्मज्ञानी ही ढूंढ पाते हैं । इस प्रकार शरीर , मस्तिष्क और हृदय के स्थूल और सूक्ष्म अवयवों का वर्णन करके अब वैध का वर्णन करते हैं । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.97.6 ______

भावार्थ : अर्थात राजसभा में जिस प्रकार सभासद् एकत्र होते हैं , उसी प्रकार जिसके पास ओषधियां एकत्र रहती है , उसकी विद्वान लोग रोगों का दूर करनेवाला और अपमृत्यु का नाश करनेवाला __ वैध कहते हैं ।

वैध के पास इकठ्ठी रहने वाली सैकड़ो औषधियों का वर्णन वेदों में है । यहां नमूने के लिए दो-तीन का वर्णन करते हैं । वेद में अपामार्ग ___ लटजीरा के लिए लिखा है ___

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 4.17.6 ______

अर्थात क्षुधा मारनेवाले , तृषा मारनेवाले , निर्धनता और निर्वंशता दूर करने वाले के अपामार्ग (लटजीरा) तुझे हम तलाश करते हैं ।

इस मंत्र के द्वारा लटजीरे में उपर्युक्त गुण बतलाये गए हैं । इसके आगे पिप्पली के गुण इस प्रकार लिखे हैं ___

अथर्ववेद. 6.109.1 ______

अर्थात विद्वानों ने पिप्पली को उन्मत्त की औषधि , बड़े घाववाले की दवा और जीवन देने वाली माना है ।

पीपल के गुण इसी प्रकार वैधक में भी लिखे हैं । इसके आगे बालों को बढ़ाने , श्याम रखने और दृढ़ करने की औषधि का वर्णन इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 6.137.3 ______

अर्थात हे ओषधे ! तू बालों की जड़ों को दृढ़ कर , नोक को बढ़ा और मध्य भाग को लंबा कर जिससे केंस काले होकर लंबी घास के समान बढ़े ।

औषधियां के अतिरिक्त वायु सेवन के द्वारा रोग निवृत्ति करने का उपदेश इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 10.168.4 ______

अर्थात देवों का आत्मा और भुवन का गर्भ यह वायु देव अपनी इच्छा से चलता है । इसका केवल शब्द ही सुनाई पड़ता है , रूप नहीं दिखता । उस वायु के लिए हम हविष देते हैं ।

ऋग्वेद. 10.186.3 ___

अर्थात हे वायो ! आपके घर में जो अमृत का खजाना है , वह हमें जीने के लिए दीजिए ।

ऋग्वेद. 10.186.1 ______

अर्थात वायु आरोग्यता के लिए औषधि है । उससे हृदय की आरोग्यता बढ़ती है , बल प्राप्त होता है और आयु बढ़ती है ।

ऋग्वेद. 10.186.2 ______

अर्थात हे वात ! तू हमारा पिता है , हमारा भाई है और हमारा सखा है , अतः तू हमको जीवन के लिए तैयार कर ।

इसके आगे जल के द्वारा आरोग्य प्राप्त करने का उपदेश इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 1.4.4 ______

Edit with WPS Office

अर्थात जल में अमृत है और जल में औषधि है , इसलिए जल के इन श्रेष्ठ गुणों से गौ , बैल और घोड़े बलवान होते हैं । जिस प्रकार जल से आरोग्यता होती है , उसी प्रकार सूर्यताप से भी आरोग्यता होती है । एक मंत्र में वेद उपदेश करते हैं कि ___

ऋग्वेद. 1.50.11 ______

अर्थात आज और नित्य प्रात: काल आने वाले हे सूर्य ! मेरे हृदय के रोगों का और रात के समय चोरी करने वालों का नाश करो ।

इसका तात्पर्य यही है कि सूर्य देवता उदय होकर हृदय रोग और चोर दोनों का नाश करते हैं ।

इसके आगे शल्यकर्म (सर्जरी) का उपदेश इस प्रकार है ___

अथर्ववेद. 4.6.5 ______

अर्थात शल्यकर्म से , लेप से , पर से , सींग से (सींगी से चूसकर) , चाकू से और बाण से विष निकालता हूं ।

इस मंत्र में चीर - फाड़ , पुल्टिस , सींगी और बाण की नोक से मवाद निकालने का उपदेश है ।

इसके आगे रुके हुए पेशाब को खोलने के लिए इस प्रकार कहा गया है ______

अथर्ववेद. 1.3.1 ______

अर्थात हम जानते हैं कि वृष्टि की अधिकता से सरकाण्ड होता है । उस सरकण्डे से तेरे शरीर को आरोग्य करता हूं । अब तेरे मूत्र का प्रवाह पृथ्वी पर हो और बलबलाकर बाहर निकले ।

इसके आगे टूटी हुई हड्डियों के जोड़ने का उपदेश इस प्रकार है ______

अथर्ववेद. 14.2.47 ______

अर्थात जो वैध टकराने से टूटी हुई ग्रीवा आदि जोड़ों की हड्डियों को यथास्थान चिपका कर जोड़ता है , वही टेढ़े और अकड़े हुए अंग को भी सीधा कर देता है ।

इस मंत्र में बतलाया गया है कि टकराने आदि से टूटी हुई हड्डियों को ठीक-ठाक बांधकर जोड़ने वाला ही टेढ़े अंगों को भी ठीक कर सकता है । इसके आगे बिना दवा दारू के केवल रोगी के मन को उत्तेजना , उत्साह , और प्रेरणा देकर रोगों को निर्मल करने का उपदेश इस प्रकार दिया गया है ___

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 10.163.6 ______

अर्थात मै अपने आत्मबल से अंग अंग , रोम - रोम , जोड़ - जोड़ से यक्ष्मारोग को निकाल बाहर करता हूं । इस प्रेरणा को आकर्षणशक्ति के साथ किस प्रकार करना चाहिए उस क्रिया का उपदेश इस प्रकार किया गया है ___

अथर्ववेद. 4.13.6 - 7 ______

अर्थात मेरा यह हाथ प्रभावशाली है , मेरा यह हाथ अधिक गुणकारी है , मेरा यह हाथ सब रोगों की दवा है और मेरे हाथ इस हाथ के स्पर्श से आरोग्यता होती है । मैं प्रेरणात्मक वाणी और दशशाखा _ (अंगुली) _ वाले तथा आरोग्य देने वाले दोनों हाथों से तुझे स्पर्श करता हूं ।

इन मंत्रों में पास के द्वारा प्रेरणात्मक वाणी से रोगी को आरोग्य करने का उपदेश है । इसके आगे वाजीकरण औषधियों का वर्णन इस प्रकार है ____

अथर्ववेद. 6.139.5 ______

अर्थात जैसे नेवला सांप को चीरकर फिर घावों को भर देता है , वैसे ही मैं तेरी गुप्तेन्द्रियों की क्षीणता को ठीक करता हूं ।

अथर्ववेद. 6.101.2 , 6.72.2 - 3 ______

अर्थात जिससे कृश रहता है और जल्दी पात हो जाता है उस कारण को दूर करके तेरे उपस्थ को धनुष की तरह फैलाता हूं । जिस प्रकार से वह स्थूल हो जाए और जितना आवश्यक है उतना बढ़ जाए , वह उपाय करता हूं । जितना समर्थ पुरुषों का होना चाहिए उतना (गार्दभ) बड़ा , (हास्तिन) स्थूल और (वाजिन) तेज हो जाए , वह उपाय करता हूं ।

अथर्ववेद. 4.4.1 ______

अर्थात जिस औषधि को मृत वरुण के लिए गंधर्व ने खोदा था , उसी वाजीकरण औषधि को मैं तेरे लिए खोदता हूं ।

इस प्रकार से इन वाजीकरण उपचारों के द्वारा नपुंसकत्वादि दोषों को दूरकर पुरुषों को अच्छी संतान उत्पन्न करने के लिए योग्य बनाना वेद का तात्पर्य है , इसलिए यह चिकित्सा सब चिकित्साओं से अधिक मूल्यवान है , क्योंकि इसी के द्वारा भविष्य प्रजानिर्माण का कार्य संपादन होता है । इस प्रकार से हमने यहां तक वेदों से आयुर्वेदसंबंधी आवश्यक उपदेशों को इकट्ठा कर दिया है । इतने आयुर्वैदिक ज्ञान से मनुष्य आरोग्यता के नियम

Edit with WPS Office

समझ सकता है और रोगों से आरोग्यता प्राप्त कर सकता है । यह व्यक्तिचिकित्सा का उपदेश हुआ , अब सामाजिक चिकित्सा का वर्णन करते हैं ।

व्यक्तिव्याधियों की आयुर्वेदिक चिकित्सा के बाद वेद में सामाजिक व्याधियों की निवृत्ति का भी उपदेश किया गया है । प्राय: देखा जाता है कि बहुत सी चेपी व्याधियां उठ खड़ी होती है , जो आयुर्वेदिक चिकित्सा से दूर नहीं होती और सर्वत्र फेलकर असंख्य मनुष्यों का संहार कर देती है । उनके दूर करने का उपाय केवल यज्ञ ही है । हम यज्ञों का विस्तृत वर्णन पीछे लिख आए हैं , और बतला आयें है कि यज्ञों का सिद्धांत शिल्पों और विज्ञानों की आवश्यकता बतलाई गई है । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ऋतु - संम्बन्धिनी सार्वजनिन बीमारियां यज्ञों से दूर होती है । वेद स्वयं उपदेश करते हैं कि अज्ञात और सर्वत्र फैली हुई चेपी और मारक बीमारियां यज्ञों से दूर हो जाती है । अथर्ववेद में आया है कि ___

अथर्ववेद. 3.11.1 , 3.11.3 ______

अर्थात हे मनुष्य ! तुझे मैं हवन के द्वारा अज्ञात महामारी रोग से और क्षयरोग से सुखमय जीवन के लिए छुड़ाता हूं । इस रोगी को असाध्य रोग ने पकड़ रखा है , इसलिए हे इंद्र और अग्नि ! आप इसे अरोग्य करें । मैंने इस हवनीय हविष को सैकड़ो गुणदायक और आयु बढ़ानेवाली औषधियों को डालकर तैयार किया है , इसलिए हे यज्ञपति इंद्र ! आप इस संसार में फैलें हुए रोग को हटाकर इस बीमार को 100 वर्ष की आयु प्रदान करें ।

इन मंत्रों में अनेक औषधियों का हवन करके अज्ञात और सर्वत्र फैले हुए चेपी और मारक रोगों को हटाने का उपदेश है । ऐसे यज्ञों का महात्म्य वर्णन करते हुए वेद उपदेश करते हैं ___

अथर्ववेद. 19.63.1 ______

अर्थात हे ब्राह्मणस्पते ! उठो और यज्ञों से देवताओं को जगा दो , जिस आयु , प्राण , प्रजा , पशु , कीर्ति और राजा की उन्नति हो ।

इस प्रकार यज्ञ का महात्म्य बताकर यज्ञ में सबसे प्रधान वस्तु अग्नि का वर्णन करते हैं । यजुर्वेद में लिखा है कि ___

यजुर्वेद. 12.18 ______

अर्थात पहला अग्नि ___ सूर्य धौ से पैदा हुआ , दूसरा जातवेद हमसे (पृथ्वी

Edit with WPS Office

पर) पैदा हुआ , तीसरा (विद्युत) अंतरिक्ष के जलों से पैदा हुआ ।
इस मंत्र में अग्नि के तीन रूप तीन स्थानों में बतलाए गए हैं । इसके आगे अग्नि को देवताओं तक हुतद्रव्यों के पहुंचनेवाला दूत कहां गया है । यजुर्वेद में लिखा है ___

यजुर्वेद. 22.17 ______

अर्थात पूर्व ही अग्निदूत को धारण किया गया है और यह हव्यं पदार्थों का ढोनेवाला कहां गया है । यह देवताओं तक पदार्थों को पहुंचाता है , अतः यज्ञ के लिए इस अग्नि की स्थापना इस प्रकार बतलाई गई है ______

यजुर्वेद. 3.5 _____

अर्थात जिस प्रकार आकाश में स्थित महान सूर्य इस विस्तृत पृथ्वी के ऊपर देवयज्ञ कर रहा है , उसी प्रकार भोज्य पदार्थों के लिए में भी इस अग्नि की स्थापना करता हूं ।
इसके आगे अग्नि को प्रदीप्त करने के लिए लिखा है कि ___

यजुर्वेद. 15.54 ______

अर्थात हे अग्ने ! तू प्रदीप्त हो और हमको सतेज कर तथा तू और हम मिलकर इष्ट - सुख की युक्ति और प्राप्ति करें , जिससे यहां हम और अन्य यजमान तथा दूसरे विद्वान भी यज्ञ किया करें ।
इसके आगे समिधा मैं घी डालने की विधि बतलाते हैं ___
इसके आगे यह बतलाते हैं कि हवन किये गये पदार्थ किस प्रकार वायु की मलिनता को दूर करते हैं ।

यजुर्वेद. 3.3 ______

हे अंगारों ! बढ़ी हुई अग्निओं ! तुम सब पदार्थों को (विष्टय) छेदन - भेदन करके महान शुद्धि करनेवाले हो , इसलिए समिधाओं और घृत से हम तुम्हें बढ़ाते हैं ।
इन मंत्रों में अग्नि को जलाने , प्रदीप्त करने और उसके द्वारा पदार्थों के छेदन - भेदन की क्रिया को बतलाकर अब यह बतलाते हैं कि यह अग्नि वायु को हुत पदार्थ देता है । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.168.4 ______

अर्थात देवताओं का आत्मा और भुवन का गर्भ यह वायु अपनी इच्छा से चलता है । यधपि इसका शब्द ही सुनाई पड़ता है , रूप देखने को नहीं

Edit with WPS Office

मिलता , तथापि हम उसके लिए हविष देते हैं ।

यजुर्वेद. 8.21 ______

अर्थात हे हमारे मन के पति ! इस यज्ञ को सुहुत बनाकर हुत द्रव्यों को वायु पर स्थापित करो और मार्ग की खोज लगाने वाले हुत द्रव्यों से कहो कि वे अपने मार्ग से जाए ।

इस मंत्र में यज्ञ के हुत पदार्थों को वायु में जाने देने का उपदेश किया गया है । इसके आगे यज्ञ में किन-किन पदार्थों की आहुतियां देनी चाहिए , वह बतलाते हैं ।

ऋग्वेद. 3.52.1 ______

अर्थात हमारे धानवाले , दधि - दूधवाले , मालपुएवाले और स्रोत वाले ढेरों को हे इंद्र ! प्रातः काल के समय सेवन कीजिए ।

ऋग्वेद. 3.52.7 ______

अर्थात हे वृत्र के मारनेवाले विद्वान शूर ! तेरी पोषण करने वाली किरणों के लिए हमने जो दिया है उस दूध , दधि , धान , और मालपुवा आदि को खा तथा मरुतों के साथ सोम को पी ।

इसके आगे हवन किए हुए पदार्थों के विषय में वेद उपदेश करते हैं कि जो धन यज्ञ में लगाया जाता है , वही सुकृत होता है , क्योंकि ______

ऋग्वेद. 6.28.3 ______

अर्थात जो देवों को दिया जाता है और जिससे यज्ञ किया जाता है उसका न नाश होता है , न उसे चोर चुरा सकते हैं , न उसका कोई शत्रु होता है और न उसपर कोई आफ़त डाल सकता है । उसके द्वारा यजमान सदैव ही गोपति के साथ रहता है , अर्थात वह धनवान बना रहता है ।

सत्य है , ऐसे सार्वजनिक पुण्य कार्य में धन खर्च करने से ही धन का सदुपयोग कहा जा सकता है ।

यजुर्वेद. 13.27 - 29 ______

अर्थात हे परमात्मन् ! संसार में वायु मधुर होकर बहें , नदिया मधुर होकर बहें , औषधियां मधुर होकर उगें । रात मधुर हो , प्रभात मधुर हो , पृथ्वी मधुर हो और हमारा धौ पिता मधुर हो । वनस्पतियां मधुर हो , सूर्य मधुर हो , और गौवे मधुर हो ।

इसके आगे फिर प्रार्थना है ___

Edit with WPS Office

अर्थात जहां-जहां हमारे लिए जैसी परिस्थिति उत्पन्न हो वहां-वहां हमें हर प्रकार से अभय कीजिए तथा पशुओं की ओर से भी हमें सुखी और अभय कीजिए ।

अथर्ववेद. 19.15. 5 - 6 ______

अर्थात हमें अंतरिक्ष अभय करें , धावा तथा पृथ्वी हमें अभय करें और नीचे - ऊपर तथा आगे - पीछे से भी हमें अभय प्राप्त हो । मित्र से अभय हो , अमित्र से अभय हो । जाने हुए से अभय हो , और अज्ञात से अभय हो । रात में अभय हो और दिन में अभय हो , अर्थात हमारी समस्त आशाएं वा दिशाएं अभय हो ।

इसके आगे संसार की समस्त जड़ शक्तियों के कल्याणकारी और शांत होने की अभिलाषा की गई है ।

अथर्ववेद. 4.22.1 ______

अर्थात हे इंद्र ! तू हमारे इस क्षत्रिय को बलवान बना , इसी एक को सब प्रजाओ का नेता कर , इसके शत्रु को दूर कर और उनका सदैव नाश किया कर ।

इस मंत्र के द्वारा वेदों ने प्रजा की ओर से राजा को बलवान बनाने की आज्ञा दी है । अब अगले मंत्र में प्रजा को आश्वासन देने के लिए राजा को आज्ञा दी गई है । राजा कहता है कि ___

यजुर्वेद. 20.10 ______

अर्थात मै क्षत्र में , राष्ट्र में , घोड़ों में , गौवो में , अंगों में , चित्तों में , प्राणों में , पुष्टि में , धौ में , पृथ्वी में और यज्ञ में प्रतिष्ठावाला होऊं ।

इस मंत्र में राजा ने बतला दिया है कि मैं ऐसे काम करूंगा जिससे मेरी सर्वत्र प्रतिष्ठा हो ।

अथर्ववेद. 5.14.6 ______

अर्थात चाहे स्त्री हो या पुरुष हो जिसने पाप का कृत्य किया हो उसको पशु की भांति बांधकर वैसे ही ले - जाना चाहिए जैसे घोड़ा बागों से खींचा जाता है ।

अथर्ववेद. 20.96.14 - 16 , 8.6.23 ______

अर्थात दम्पति के बीच सोकर जो तेरी जंघाओं को फैलाता है या चौडाता है , और तेरी योनि को भीतर से सींचता है उसका हम नाश करते हैं । जो कोई

Edit with WPS Office

भाई व्याभिचारी बनकर अथवा पति बनकर तेरे पास आ जाए और तेरी संतान को मारना चाहे , उसका हम नाश करते हैं । जो कोई सोते हुए नशा खिलाकर अंधेरे में तेरे पास आ जाए और तेरी संतान को मारना चाहे उसका हम नाश करते हैं । जो कच्चे , अर्थात जिन्दा पशुओं के मांस को , जो मनुष्यों के मांस को और जो गर्भों (अण्डो) को खाते हैं उनका हम नाश करते हैं ।

इस प्रकार शासन के द्वारा पहले समाज का संशोधन करके भले आदमियों को दुष्टों के पीड़न से बचाना चाहिए , किंतु स्मरण रखना चाहिए कि दुष्टों का सुधार केवल कठोर शासन से नहीं हो सकता । इसलिए राज्य में ज्ञान , विद्या , सभ्यता , सदाचार और आस्तिकता का भी प्रचार करना आवश्यक है । यह काम ब्राह्मणों से ही हो सकता है , अतः राजा को चाहिए कि वह ब्राह्मणों , विद्वानों और सदाचारी पुरुषों का आदर बढ़ावे । इस विषय में वेद उपदेश करते हैं कि ___

अथर्ववेद. 5.17. 9 - 18 ______

अर्थात मनुष्य समाज का अधिपति ब्राह्मण ही है , क्षत्रिय और वैश्य नहीं । जिस प्रकार सूर्य पांचों ग्रहों को आज्ञा करता हुआ चलाता है ,उसी प्रकार विद्याबल से सबको ब्राह्मण ही चलाता है । इस विद्या को देवताओं ने पहले ब्राह्मणों को दिया , ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को और क्षत्रियों ने दूसरों को दिया । इस प्रकार से विद्या को सबमें बांटकर ही मनुष्य बल और कीर्ति को प्राप्त होते हैं । जिस राष्ट्र में विद्या का प्रचार रोका जाता है वहां वह सैकड़ो धाराओं से बहकर और कल्याणकारी होकर प्रतिष्ठित नहीं होती , जिस राष्ट्र में विद्या का प्रचार रोका जाता है वहां बहुश्रुत और बड़े दिमाग का कोई मनुष्य पैदा नहीं होता । जिसके राज्य में विद्या का प्रचार बंद है , ऐसे राजा का अलंकृत नौकर भी ऐश्वर्यवाले पुरुषों के सम्मुख नहीं जा सकता । जिस राष्ट्र में विद्या का प्रकाश रोका जाता है , वहां श्यामकर्ण घोड़ा भी रथ में जुड़कर बड़ाई नहीं प्राप्त कर सकता । जहां विद्या का प्रचार नहीं होता वहां न खेतों में पुष्करिणी होती है और न पृथ्वी में कुछ पैदा ही होता है । पृथ्वी की उपज खाने वाले वे किसान जिनमे विद्या का लेश नहीं है भूमि में अधिक अन्न पैदा नहीं कर सकते । जहां ब्राह्मण रात्रि को भूखा सोता है वहां न गौओ के दूध होता है और न बैलगाड़ी खींच सकते हैं , अर्थात जहां ब्राह्मण

Edit with WPS Office

और विद्या का निरादर होता है वहां प्रत्येक प्रकार से सर्वनाश हो जाता है ।
अथर्ववेद. 5.19.11 ______
अर्थात सौ में निन्यानवे देशों के राजाओं का पराभव हुआ है , जिन्होंने ज्ञानियों को सताया है । इस विषय में अथर्ववेद. 12.5.(2) । 7 - 11 ______

अर्थात ओज , तेज , सहनशक्ति , बल , वाणी , इंद्रियां , श्री , धर्म , ब्राह्मण , क्षत्रिय , राष्ट्र , प्रजा , कान्ति , यश , वर्चस , धन , आयु , रुप , कीर्ति , प्राण , अपान , चक्षु , श्रोत्र , दूध , रस , अन्न , यव , सत्य , ऋत , (नीति) यज्ञ , वापी , कूप , तड़ाग , वाटिकादि , प्रजा , और पशु आदि समस्त पदार्थ उस राजा के नष्ट हो जाते हैं , जो ब्राह्मणों को सताता है और विधा को छीन लेता है , अर्थात पढ़ना - पढ़ाना बन्द कर देता है । इस प्रकार विद्या की अवहेलना और ज्ञानियों के तिरस्कार का दुष्ट फल बतलाकर ब्राह्मणों की उपयोगिता का वर्णन करते हुए वेद उपदेश करते हैं ___
अथर्ववेद. 5.18.9 ______
अर्थात जिनके बाण तीखे हैं और जो हथियार धारण करते हैं , ऐसे ब्राह्मणों के फेक हुए ज्ञानशस्त्र व्यर्थ नहीं जाते । वे तेजस्वी बल के साथ तपकर शत्रु का पीछा करते हैं और निश्चय ही दूर से उसका भेदन कर देते हैं , इसलिए वेद उपदेश करते हैं कि ___
यजुर्वेद. 20.25 ______
अर्थात जहां ब्रह्मबल और क्षत्रबल साथ-साथ अच्छी तरह प्रीति युक्त होकर व्यवहार में लायें जाते हैं और जहां देवता अग्नि के साथ रहते हैं , वही देश पुण्यलोक होता है ।

कहने का तात्पर्य यह है कि जहां केवल शासन ही होता है वहां उत्तम मनुष्य नहीं होते , प्रत्युत जहां शासन और शिक्षा दोनों होते हैं , वही समाज पुण्यमय होता है । इसलिए वेद कहते हैं कि ___
यजुर्वेद. 32.16 ______
अर्थात ये मेरे ब्रह्मबल और क्षत्रबल दोनों श्रेय को प्राप्त हो । जिस प्रकार ये मुझे शोभा और लक्ष्मी से विभूषित करें उसी प्रकार तुझ ब्राह्मण को भी सुशोभित करें ।
यहां तक समाज की भीतरी दुर्बलताओं से जो कष्ट होते हैं , उन्हें दूर करने

Edit with WPS Office

के उपायों को बतलाकर अब वेद उपदेश करते हैं कि जो बाहर के शत्रु आर्य समाज को कष्ट करने और उस पर शासन करने के लिए आवें उनके साथ युद्ध किया जाए और उनको परास्त किया जाये ।
इस विषय में ऋग्वेद उपदेश करता है कि ___

ऋग्वेद. 10.157.4 ______

अर्थात जो तेजस्वी क्षत्रिय देवत्व के विरोधी शत्रुओं (असुरों) को जो युद्ध में मारकर विजयी होते हैं , वहीं रक्षा पाकर सुख से रहते हैं , क्योंकि ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.154.3 ______

अर्थात जो शूरवीर क्षत्रिय , धर्मरक्षा के लिए युद्ध में सम्मुख लड़कर शरीर का परित्याग करते हैं , वे अनुत्तम सुखवाले लोकों को प्राप्त होते हैं ।

यजुर्वेद. 29.39 ______

अर्थात हम धनुष से पृथ्वी और संग्राम को जीतें और हम धनुष से बड़ी वेगशाली सेना को जीतें । यह धनुष शत्रु की कामना को नष्ट कर देता है , अतः हम धनुष से सब दिशा - विदिशाओं को जीत ले ।
विजयी योद्धा के लिए लिखा है कि ___

अथर्ववेद. 18.2.60 ______

अर्थात हे वीर ! तू अपने क्षात्रधर्म , तेज और बल के द्वारा इस संग्राम में मरे हुए शत्रुओं के हाथ से धनुष को और अन्य पुष्ट करनेवाले बहुत से सामानों को लेकर इन पराजितों के सामने से आदर के साथ आ ।
इसके आगे सेना का वर्णन इस प्रकार है ___

यजुर्वेद. 11.77 - 80 ______

अर्थात जो सेना सुस्त , बीमार , अयोग्य और चोर है , उसको मैं जलाती हुई जवाला में डालता हूं । हे अग्ने ! आप उन चोरों और मैंले कर्म करने वाले लोगों को अपनी डाढो , झगड़ों और दांतों से खा डालें । हे अग्ने ! जो नकब लगाने वाले , डाका डालनेवाले , ठग और पाप - कर्म से जीने वाले हैं , उन अधमों को आप चबा डालें । आप शत्रुता करने वाले , द्वेष करने वाले , निंदा करने वाले और दम्भ दिखाने वाले दुष्टों को भस्म कर डालें ।
वेद ने इन मंत्रों में बतलाया है कि अयोग्य सेना को नष्ट कर देना चाहिए और समस्त समाज को चाहिए कि वह युद्ध के लिए राजा को उत्तेजित करें ।

Edit with WPS Office

यजुर्वेद. 11.34 ______

अर्थात दस्यु के मारनेवाले , धन जीतने वाले और अन्न देने वाले तुझ राजा को हम प्रदीप्त कर रण के समय उत्तेजित करें ।

इस राष्ट्रीय सेना के प्रत्येक योद्धा को किस प्रकार उत्साहित होना चाहिए , उसका उपदेश वेद में इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 10.48.7 ______

अर्थात मैं हूं तो अकेला ही पर एक , दो , तीन शत्रु भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते । मैं शत्रुओं को इस प्रकार कुचल डालूंगा जैसे खलिहान में अन्न कुचला जाता है , क्योंकि जिनका कोई मार्गदर्शन सेनापति ही नहीं है , वे शत्रु मेरी क्या निंदा कर सकते हैं ।

अथर्ववेद. 5.14.5 ______

अर्थात ये शत्रु नाशक सेनाएं हिंसाकारी और दुर्वाचन बोलने वाले शत्रु के लिए हो । ये शत्रु नाशक सेनाएं हिंसाकारियों में इस प्रकार चक्कर लगावे जैसे रथ का पहिया चक्कर लगाता है ।

इस मंत्र में बतलाया गया है कि सेनाएं हिंसकों , दुष्टों और बदमाशों के दमन के ही लिए है , अतः रथ की भांति वे उक्त बदमाशों के अंगों और देशों में चक्कर लगाती रहे । इस प्रकार से आवश्यकता पड़ने पर लड़ने वाला राजा अपने युद्धोपकरणों को मिट्टी के घरों में न रक्खें । इसके लिए वह अच्छे पक्के मकान बनावे । वेद उपदेश करते हैं कि ___

ऋग्वेद. 7.89.1 ______

अर्थात हे राजन् ! आप मिट्टी के घरों में निवास न करें , क्योंकि मिट्टी के घरों को वर्षा ऋतु मिट्टी कर देती है ___ गिरा देती है । मिट्टी के सादे घरों में तो हम प्रजा को ही रहना चाहिए ।

इस मंत्र के अतिरिक्त वेद में राजा के लिए लोहे के बड़े - बड़े वज्र (चरागाह) तैयार करवाइए , बहुत से मोंटे - मोंटे वर्म (कवच) सिलवाइए और अपने पुर को लोहे के बड़े बड़े किलो से घेर दीजिए , जिससे आपके यज्ञ का चमचा न टपक जाए । उसके दृढ़ करने के लिए यही प्रबन्ध कीजिए । ये वस्तुएं आपकी रक्षा करेंगी ।

इस मंत्र में राज्य की इस तैयारी का कारण चमचे की रक्षा बतलाया गया है । जिसका तात्पर्य यही है कि राज्य में छिद्र न होने पावे और वैदिक सभ्यता

Edit with WPS Office

की रक्षा होती रहें । इसके अतिरिक्त राजा को और क्या-क्या तैयारी करनी चाहिए उसका वर्णन इस प्रकार है ___

यजुर्वेद. 20.5 - 8 ______

अर्थात श्री मेरा शिर हैं , यश ही मुख है , केश और डाढी मूंछ ही प्रकाश है , राजा ही प्राण हैं , सम्राट ही चक्षु हैं , विराट ही कान है और यही सब अमरता है । भद्रता ही जिह्वा हैं , कीर्ति ही वाणी है , क्रोध ही मन है , स्वतंत्रता ही प्रकाश है , आमोद प्रमोद ही अंगुलियां और अंग है तथा सहनशीलता ही मित्र है । बल ही बाहु हैं , कर्म ही इन्द्रियां है , वीर्य ही हाथ है , क्षत्र ही हृदय और आत्मा है । राष्ट्र ही पीठ है , प्रजा ही उदर , ग्रीवा और पैर , जंघा , घुटना और अन्य समस्त अंग - प्रत्यंग हैं ।

इन मंत्रों में राष्ट्र की विशालता का वर्णन है , परन्तु यह सब विशाल राज्यकार्य बिना धन के नहीं हो सकता , इसलिए वेद कहते हैं कि राजा प्रजा से थोड़ा-थोड़ा कर लेकर इस महाकर्म का सम्पादन करें ।

अथर्ववेद. 10.8.15 ______

अर्थात पूर्णो के द्वारा दूंर तक और अधूरों के द्वारा निकट तक भुवन के मध्य में राज्य का प्रबंध करने वाला बैठा है । उसके लिए समस्त राष्ट्र बलि , अर्थात कर देता है ।

इस प्रकार राष्ट्रीय उपदेश करके अंत में वेद शिक्षा देते हैं कि खण्ड राज्यों में सदैव वैमनस्य जन्य उत्पातों का डर बना ही रहता है । इसलिए सबको सार्वभौम राज्य के अन्तर्गत हो जाना चाहिए , अर्थात सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य का प्रयत्न करना चाहिए । यजुर्वेद में लिखा है कि ___

यजुर्वेद. 5.24 ______

अर्थात स्वराज्य शत्रुओं को मारने वाला है , सत्रराज्य अभिमानियों का मद मारने वाला है , जनराज्य दुष्टों का मारने वाला है और सार्वभौम सर्वराज्य से शत्रु नहीं रहते ।

यहां स्पष्ट कह दिया है कि शत्रुओं का सर्वथा नाश तो सर्वराज्य , अर्थात सार्वभौमिक राज्य से ही होता है । इसके आगे फिर वेद उपदेश देते हैं कि ___

यजुर्वेद. 12.117 ______

अर्थात हे अग्ने ! तू भूत , भविष्य और प्रियों तथा प्रिय स्थानों में बिना किसी

Edit with WPS Office

परिवर्तन के एक समान अकेला एक ही राजराजेश्वर विराजमान हैं ।
इस मंत्र में अग्नि की उपमा देकर वेद ने बतला दिया कि समानता की स्थिरता तो तभी हो सकती है जब अग्नि के समान सारी पृथिवी का एक ही सम्राट हो । इसके आगे वेदों में राजा के लिए आपधर्म का उपदेश इस प्रकार दिया गया है कि ___

अथर्ववेद. 8.9.13 ______

अर्थात ऋत की तीन विधियां चलती आई है और तीनों मार्ग अनुधर्मा है । एक विविध प्रजा (समाज) की , एक राष्ट्र की ओर एक धर्म की रक्षा करती हैं ।
यहां ऋत अर्थात आपधर्म की तीनों शाखाओं का वर्णन किया गया है । आपधर्म की आवश्यकता धार्मिक , सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में आया ही करती है , इसलिए आवश्यकता पड़ने पर सत्य के जोड़े ऋत से भी काम लेना चाहिए । आगे वेद उपदेश करते हैं कि ___

ऋग्वेद. 6.47.7 ______

अर्थात हे राजन् ! हमको नेताओं की भांति देखिए और शत्रुओं के बल को उल्लंघन करने वाले हमारे धर्मबल की अच्छी प्रकार परीक्षा कीजिए कि जिससे हमारा सब कुछ अच्छी प्रकार पार लगे अथवा बिल्कुल ही पार लगने योग्य हो जाए , इसलिए हमारे पास सुनीति और वामनीति दोनों होनी चाहिए ।
इस मंत्र में स्पष्ट रूप से कह दिया गया है कि यदि सुपार हो , अर्थात सरल हो तो सुनीति से ___ धर्म से चले जाए , किंतु यदि अतिपार हो , अर्थात दुर्गम हो तो वामनीति से ___ पार हो जाएं । इस प्रकार से वेद ने इस राज्य प्रकरण के द्वारा समाज को भीतरी और बाहरी संकटों से रक्षा करने का उपदेश दिया है । इस उपदेश से मनुष्य अपनी ओर अपने समाज की रक्षा कर सकता है , परंतु स्मरण रखना चाहिए की मृत्यु से कोई रक्षा नहीं कर सकता । सबकोएक - न - एक दिन अवश्य मरना पड़ेगा , इसलिए मरने के बाद के रहस्य का जब तक ठीक-ठाक ज्ञान न हो जाए और जब तक परलोक की जटिल ग्रंथि सुलझ न जाए तब तक लोक के समस्त सुख और प्रबंध निकम्मे है । इसलिए अब हम दिखलाना चाहते हैं कि वेद में परलोक विषय की क्या शिक्षा है ? वैदिक उपनिषद में अगले पृष्ठ पर ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

128.वैदिक उपनिषद् , परलोक विषय

सब प्रकार से उन्नत समाज का लक्षण यही है कि वह सदाचारी हो , विद्वान हो , उधोगी हो और हर प्रकार से अपनी स्वयं रक्षा कर लेता हो । ऐसे समाज के लिए लोक की कोई अभिलाषा शेष नहीं रह जाती । ऐसी उन्नत दशा में पहुंचकर उस समाज के उन्नतमस्तिष्क मनुष्यों में परलोक - विचार की चर्चा उत्पन्न हो जाती है । वे सोचने लगते हैं कि मृत्यु से बचने का क्या उपाय है और मरने के बाद क्या होता है तथा इस संसार की उत्पत्ति का कारण क्या है ? उनके हृदयों में यह प्रश्न बड़े वेग से प्रभाव उत्पन्न करने लगता है कि जड़ और चेतन का भेद क्या है और इनके मूलकारणो के प्रत्यक्ष करने की युक्ति क्या है ? विद्वानों ने इसी साथ प्रकार की जिज्ञासाओं के ऊहापोह का नाम दर्शन रखा है और इस ऊहापोह के अंतिम उत्तरों को ही उपनिषद कहते हैं ।

इस उपनिषद् ज्ञान के दो विभाग हैं । सृष्टि की उत्पत्ति और नाश के कारणों का अनुसंधान करना पहला विभाग है और उन कारणों के प्रत्यक्ष करने वाले साधनों का उपयोग करना दूसरा विभाग है । यहां हम इन दोनों विभागों से संबंध रखने वाले वेद मंत्रों को एकत्र करके दिखलाते हैं कि वेदों ने इन विषयों का कितना विशाल ज्ञान दिया है । इस सृष्टि को देखकर किसी भी विचारवान मनुष्य के हृदय में जो सबसे पहले स्वाभाविक प्रश्न उत्पन्न

Edit with WPS Office

होता है , उसे वेदों ने इस प्रकार कहां है ___

किं स्विदूनं क उ स वृक्ष आस यतो धावापृथिवी निष्टतक्षु: ।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तधदध्यतिष्ठभ्दुवनानि धारयन् ।।
___ ऋग्वेद. 10.81.4

अर्थात कौन - सा वह वन है और कौन सा वह वृक्ष है जिसकी लकड़ी से यह धुलोक और पृथ्वी लोक बनाया गया है । हे बुद्धिमान लोगों ! अपने मन से पूछो कि इन भुवनों का धारण करने वाला और उनका अधिष्ठाता कौन है ? इसका उत्तर देते हुए वेद उपदेश करते हैं कि ___

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परो यत् ।
किमावरीव : कुह कस्य शर्मत्रम्भ: किमासीद्रहनं गभीरम् ।।
न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अहं आसीत्प्रकेत: ।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माध्दान्नत्र पर: किं चनास ।।
तम आसीत्तमसा गूठ्ठहमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदम् ।
तुच्छयेनाभ्वपिहितं यदासीत्तन्तन्महिना जायतैकम् ।।
___ ऋग्वेद. 10.129.1 -- 2

अर्थात यह सृष्टि पहले न तो सत् , अर्थात बनी हुई थी , न असत् , अर्थात अभाव अथवा शून्य दशा में थी , न रज अर्थात बनने की आरंभिक दशा में थी और न उस समय यह ऊपर नीला आकाश ही था । उस समय न मृत्यु थी , न जन्म था और न रात्रि थी , न दिन था । उस समय तम् , अर्थात आरंभ का पूर्वकाल केवल अंधकार था और एक हलचलरहित स्वधा (मैटर , माधा , माया , प्रकृति) कुहर की भातिं सर्वत्र फैली हुई थी ।

- इन मंत्रों में इस सृष्टि के पूर्वरूप का वर्णन करके अब वेद यह बतलाते हैं कि यह सृष्टि तीन अनादि स्वयंभू पदार्थों के मेल से बनती है । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते ।

Edit with WPS Office

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति ।।

___ ऋग्वेद. 1.164.20

अर्थात दो पक्षी एक में मिले हुए मित्रभाव से अपने ही समान एक वृक्ष पर बैठे हैं । इनमें से एक मित्र उस वृक्ष के फलों को खाता है और सुख - दुखों को भोगता है और दूसरा मित्र फलों को न खाता हुआ केवल देखता है ।

- इन मंत्रों में परमेश्वर , जीव और प्रकृति का वर्णन है । वही तीनों पदार्थ इस संसार का कारण है । इन्हीं के द्वारा इस संसार की उत्पत्ति - विनाश होता है । इन तीनों में से परमेश्वर के विषय में वेद उपदेश करते हैं ___

परीत्य भूतानि परीत्य लोकान् परीत्य सर्वा : प्रदिशो दिशश्च ।
उपस्थाय प्रथमजामृतस्यात्मनात्मानमभि सं विवेश ।।

___ यजुर्वेद. 32.11

अर्थात परमेश्वर सब भूतों , लोकों और सब दिशा -- विदिशाओं को सब ओर से व्याप्त करके सत्य और अनादि स्वयंभू आत्मा में भी अच्छी प्रकार प्रवेश किये हुए हैं ।

- इस मंत्र में परमेश्वर , का सर्वत्र व्यापकत्व बतलाया गया है । इस व्यापक परमेश्वर के अतिरिक्त दूसरे व्याप्य चेतन जीवों का वर्णन इस प्रकार है ___

सत्येनोर्ध्वस्तपति ब्रह्मणाऽर्वाङ् वि पश्यति ।
प्राणेन तिर्यङ् प्राणति यस्मिञ्ज्येष्ठमधि श्रितम् ।।
यो वै ते विद्यादरणी याभ्यां निर्मथ्यते वसु ।
स विद्वाञ्ज्येष्ठं मन्येत स विद्याद् ब्राह्मणं महत् ।।

___ अथर्ववेद. 10.8.19 -- 20

सनातनमेनमाहुरुताद्य स्यात् पुनर्णवः ।
अहोरात्रे प्र जायेते अन्यो अन्यस्य रुपयोः ।।
शतं सहस्त्रमयुतं न्यर्बुदमसंख्येयं स्वमस्मिन् निविष्टम् ।

Edit with WPS Office

तदस्य ध्नन्तयभिपश्यत एवं तस्माद् देवो रोचत एष एतत् ।।
बालादेकमणीयस्कमुतैकं नेव दृश्यते ।
ततः परिष्यजयिसी देवता सा मम प्रिया ।।
इय कल्याणयजरा मत्रर्यस्यामृता गृहे ।
यस्मै कृता शये से यश्चकार जजार सः ।।
त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी ।
त्वं जीर्णो दण्डेन वर्ज्जसि त्वं जाती भवसि विश्वतोमुखः ।।

___ अथर्ववेद. 10.8.23 -- 27

अर्थात यह जीव जिसके भीतर ज्येष्ठ ब्रह्म ठहरा हुआ है , वह सत्य से ऊंचा होकर प्रतापी होता है और असत्य से नीचा होकर प्राणों के साथ तिर्यक् योनियों में जीवन धारण करता है । जो इन दोनों (ज्येष्ठ ब्रह्म और प्राण धारण करने वाला जीव) को यज्ञ की दोनों अरणियो की भांति जान लेता है , वह ज्येष्ठ ब्रह्म को भी जान लेता है और दूसरे सनातन जीव को भी जान लेता है । ये सनातन जीव रात - दिन की भांति भिन्न भिन्न रूपों को धारण करते रहते हैं और नित नये ही होते रहते हैं । ये सनातन जीव सौ , हजार , दश हजार , दश करोड़ और असंख्यों की संख्या में उस व्यापक परमात्मा में भी भरे हुए हैं । जब ये उस सर्वज्ञ परमात्मा को प्राप्त होते हैं तभी सबको रचते हैं । इन दोनों व्याप्य - व्यापक ईश्वर और जीव मैं एक तो बाल की अनी से भी छोटा है और दूसरा तो बिल्कुल ही अदृश्य है । यह जीव उसी अदृश्य प्रिय देवता में चिपकनेवाला , अर्थात व्याप्य है । यह उस कल्याणकारिणी अजरा और अमृता प्रकृति माता के गर्भ रूपी घर में सोता है । हे जीव ! तू कभी स्त्री , कभी पुरुष , कभी कुमार , कभी कुमारी होता है और कभी वृद्ध होकर और लाठी लेकर चलता है , इसलिए तू जन्म लेनेवाला सर्वतोमुख है ।

- इन मंत्रों में वेदों ने जीव को सनातन असंख्य , व्याप्य , जन्म धारण करने वाला और परमेश्वर की प्राप्ति से मोक्ष प्राप्त करने वाला बतलाया है । इसके आगे इस सृष्टि के तीसरे कारण प्रकृति का वर्णन इस प्रकार है ___

Edit with WPS Office

अदितिर्धौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्र: ।
विश्वेदेवा अदिति: पठ्च जना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ।।

___ यजुर्वेद. 25.23

अर्थात अदिति ही धौ है , अदिति ही अंतरिक्ष हैं , अदिति ही माता है , अदिति ही पिता है , अदिति ही पुत्र है , अदिति ही पैदा करनेवाली तथा वही पैदा होनेवाली है , अर्थात यह सारा जगत अदिति का ही प्रपच्च है ।

- इस मंत्र में अदिति ___ माया का विशाल रूप दिखलाया गया है । यथार्थ में संसार के समस्त नामरुपात्मक पदार्थ प्राकृतिक ही है । यही बनते और बिगड़ते हैं और इन्हीं के द्वारा संसार का प्रादुर्भाव और तिरोभाव होता है । कहने का तात्पर्य यह है कि परमात्मा जीवन के कर्मानुसार उनको इस अदिति नामक प्रकृति के शरीररूपी घेरे में बंद करके और उसी प्रकृति के इस ब्रह्मांडरुपी बड़े घेरे में छोड़ देता है । इसी का नाम सृष्टि की उत्पत्ति है , परंतु परमात्मा इस सृष्टि को किस प्रकार उत्पन्न करता है , इस बात का वर्णन वेद में इस प्रकार है ___

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत् । ततो रात्र्यजायत तत: समुद्रो अर्णव: ।।
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरों अजायत । अहोरात्राणि विद्धद्विश्वस्य मिषतो वशी ।।

____ ऋग्वेद. 10.190. 1 -- 2

ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुष: । स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भमिमथो पुर: ।।

____ यजुर्वेद. 31.5

सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवी चान्तारिक्षमथो स्व: ।।

____ ऋग्वेद. 10.190.3

तस्माधाज्ञात्सर्वहुत: सम्भूतं पृषदाज्यम् । पशूंस्तांश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ।।

____ यजुर्वेद. 31.6

Edit with WPS Office

तं यज्ञं बहिषि प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रत: । तेन देवा अयजन्त ऋषयश्च ये ।।

____ यजुर्वेद. 31.9

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य: कृत: ।
ऊरु तदस्य यदैश्य: पद्भ्याऽ शूद्रो अजायत ।।

____ यजुर्वेद. 31.11

तस्माधज्ञात् सर्वहुत ऋच: सामानि जज्ञिरे ।
छन्दाळ सिं जज्ञिरे तस्माधजुस्तस्मादजायत ।।

____ यजुर्वेद. 31.7

अर्थात ऋत और सत्य (नीति और धर्म) को विचारकर परमात्मा ने तप (ईक्षण) किया । उस ईक्षण से हलचल उत्पन्न हुई और प्रकृतिरूपी अंधेरा हो गया तथा उससे आकाश पैदा हुआ । उस आकाश से वायु और मेघरुप ऊपर का समुद्र और संवत्सररुपी सूर्य हुआ और उसी सूर्य से पृथ्वी का समुद्र हुआ और रात - दिन हुए । इसके बाद विराट हुआ और विराट के बाद पृथ्वी उत्पन्न हुई । परमात्मा ने इन सूर्य , चंद्र , अंतरिक्ष , दिन और पृथ्वी आदि को उसी प्रकार बना दिया जिस प्रकार उसने इस सृष्टि के पूर्व अन्य भूत सृष्टियों को बनाया था । पृथ्वी उत्पन्न हो जाने के बाद उस पर वनस्पति उत्पन्न हुई । वनस्पति के बाद पशु - पक्षी उत्पन्न हुए और पशु - पक्षियों के बाद देव , ऋषि , साध्य , ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र उत्पन्न हुए तथा इन्हीं श्रेष्ठ मनुष्यों के हृदयों में ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद , अथर्ववेद का उपदेश हुआ ।

- उपयुक्त मंत्रों में सृष्टि उत्पत्ति के क्रम का बहुत ही अच्छा वर्णन है । इन मंत्रों में बतला दिया गया है कि परमात्मा ने अपनी ईक्षण शक्ति से प्रकृति में प्रेरणा की । प्रेरणा से गति उत्पन्न हुई और गति से आकर्षण उत्पन्न हुआ । आकर्षण से प्रकृति __ परमाणु आपस में मिले जिससे रात्रि के समान एक गंभीर स्थिति उत्पन्न हुई । वह स्थिति जब चक्राकार गति में घूमी तब और भी सघन हो गई और उसके चारों और आकाश उत्पन्न हो गया । उस रिक्त स्थान __ आकाश में वायु का समुद्र भर गया

Edit with WPS Office

और वायु समुद्र में ही सूर्य उत्पन्न हुआ , जिससे मेघ , वर्षा , नक्षत्र , पृथ्वी और रात - दिन उत्पन्न हुए , अर्थात यह समस्त सृष्टि उपर्युक्त क्रम के साथ परमात्मा की प्रेरणा से ही उत्पन्न हुई है और इसके उत्पन्न होने का प्रधान कारण जीवों का कर्म और परमेश्वर की न्यायव्यवस्था ही है । उस न्यायकारी , दयामय और कारणों के भी कारण परमपिता परमात्मा का वर्णन वेदों में इस प्रकार किया गया है कि ___

ऋग्वेद. 1.164.46 ______ : यजुर्वेद. 32.1 - 5 , 40.8

इन मंत्रों में परमात्मा की महिमा का वर्णन इस प्रकार है :
अर्थात इंद्र , मित्र , वरुण , अग्नि , दिव्य , सुपर्ण , गरुत्मान , अग्नि , यम , और मातरिश्वा आदि नाम उस एक ही परमात्मा के हैं । वही अग्नि , आदित्य , वायु , चंद्रमा , शुक्र , ब्रह्म , आप , और प्रजापति आदि नामों से कहा जाता है । सब निमेषादि कालविभाग उसी के उत्पन्न किये हुए हैं , । वह ऊपर - नीचे , आड़े - तिरछे और बीच से पकड़ा नहीं जा सकता । उसकी कोई नाप नहीं है , क्योंकि उसका नाम बड़े यशवाला है , इसलिए अनेक वेद मंत्र उसकी स्तुति करते हैं । वही देव सब दिशा - विदिशाओं मैं व्याप्त है और वही सबके अंदर पहले से ही बैठा है । वह सब ओर से प्राणियों में ठहरा हुआ है और वही संसार में प्रसिद्ध होता है और फिर सबको पैदा करता है । जिसके पहले कुछ भी उत्पन्न नहीं हुआ और जो सब भुवनों में अच्छी प्रकार स्थिर है वही सोलह कलावाला पूर्ण प्रजापति समस्त प्रजा में रमण करता हुआ तीन प्रकार की ज्योतियों को __ अग्नि , विद्युत , और सूर्य को उत्पन्न करता है । वह कायारहित , छिद्ररहित , नाड़ीरहित , पाप रहित है । वह शक्तिस्वरूप , शुद्ध , कवि , मनीषी , दुष्टों से दूर , स्वयंसिद्ध है और शाश्वत प्रजा के लिए सब और से व्याप्त होकर यथायोग्य अर्थों को उत्पन्न करता है । वही हमारा बंधु , पिता , विधाता और सब भुवनों का जाननेवाला है , इसलिए हम प्रार्थना करते हैं कि वह हमको तृतीय लोक में जहां देवता मोक्ष प्राप्त करते हैं , वहां पहुंचाएं ।

- इन मंत्रों में परमात्मा के स्वरूप और उसके कार्य का वर्णन करके मोक्षसुख की याचना की गई है । वेदों में इस प्रकार के मत्रों का बहुत बड़ा संग्रह है । सबमें उसके स्वरूप का वर्णन और अपने कल्याण की

Edit with WPS Office

याचना का वर्णन है । इन वर्णनों के द्वारा संसार के कारणों और कारणों के भी कारण परमात्मा की महत्ता का ज्ञान होता है और जिज्ञासु के हृदय में मोक्ष की अभिलाषा उत्पन्न होती है । यह वैदिक उपनिषद का पूर्वार्द्ध है । इसके आगे उस कारणस्वरूप परमात्मा को प्रत्यक्ष करके अनंत ब्रह्मानंद प्राप्त करने की विधि को भी वेदों ने बतलाया है । यजुर्वेद में लिखा है कि ___

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्ण तमस: परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।।

____ यजुर्वेद. 31.18

अर्थात उस आदित्यस्वरुप , प्रकाशमान परमात्मा को मैं जानता हूं । उसी के साक्षात्कार से मनुष्य को मुक्ति प्राप्त होती है , इसके सिवा और कोई दूसरा उपाय नहीं है ।

यो विधात् सूत्रं विततं यस्मिन्नोता: प्रजा इमा: ।
सूत्रं सूत्रस्य यो विधात् स विधाद् ब्राह्मणं महत् ।।

____ अथर्ववेद. 10.8.37

अर्थात जिस सूत्र में ये समस्त प्राणी पिरोये हुए हैं , जो मनुष्य उस फैले हुए सूत्र को जानता है और जो उस सूत्र के भी सूत्र को जानता है , वही उस महान ब्रह्म को जान पाता है ।

- इन मंत्रों में बतलाया गया है कि परमात्मा के साक्षात्कार से ही मोक्ष होता है । अब अगले मंत्र में वेद उपदेश करते हैं कि परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है ___

इदं जनासो विदथ महद् ब्रह्म वदिष्यति । न तत् पृथिव्या नो दिवि येन प्राणन्ति वीरुध: ।।

____ अथर्ववेद. 1.32.1

अर्थात हे मनुष्यों ! परमात्मा उपदेश करता है कि जिससे वनस्पति आदि

Edit with WPS Office

प्राणी प्राणधारण करते हैं , वह परमपिता परमात्मा न केवल पृथिवी में है और न केवल धुलोक ही में हैं , प्रत्युत वह सर्वत्र परिपूर्ण है ।

- इस मंत्र में उसकी सर्वत्र उपस्थित बतलाई गई है , परंतु प्रश्न यह है कि क्या उसको सर्वत्र ढूंढते फिरे ? इसका उत्तर देते हुए वेद उपदेश करते हैं कि ___

पुण्डरीकं नवद्वारं त्रिभिर्गुणेभिरावृतम् । तस्मिन् यद् यक्षमात्मन्वत् तद् वै ब्रह्मविदो विदु: ।।
अकामो धीरो अमृत: स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोन: ।
तमेव विद्वान न बिभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम् ।।
____ **अथर्ववेद. 10.8.43 - 44**

अर्थात इस नव दरवाजेवाले त्रिगुणात्मक शरीर में जो आत्मा की भांति यक्ष बैठा है , उसको ब्रह्मवेत्ता ही जानते हैं । वह निष्काम , धीर , अमर , स्वयंभू , रस से तृप्त और पूर्ण है , अत: उसी धीर , अजर , युवा आत्मा को विद्वान जानकर निर्भय हो जाते हैं । इसके आगे फिर कहते हैं कि ___

ये पुरुषे ब्रह्म विदुस्ते विदु: परमेष्ठिनम् । यो वेद परमेष्ठिनं यश्च वेद प्रजापतिम् । ज्येष्ठं ये ब्राह्मणं विदुस्ते स्कम्भमनुसंविदु: ।। ___ **अथर्ववेद. 10.7.17**

अर्थात जो इस पुरुष के अन्दर ब्रह्म को जानते हैं , वे परमेष्ठी को जानते हैं और जो परमेष्ठी , प्रजापति और ब्रह्म को जानते हैं वे इस समस्त स्कम्भ को जानते हैं ।

- इन मंत्रों में जीव ब्रह्म की व्याप्य और व्यापकता बतलाकर स्पष्ट कह दिया है कि जो व्यापक ब्रह्म को जान लेता है वह व्याप्य जीव को भी जान लेता है और एक - दूसरे के परिचय से सबका ज्ञान हो जाता है और मोक्ष हो जाता है , परंतु प्रश्न यह है कि इस शरीर के अंदर परमात्मा कैसे ढूंढा जाए । इसका उत्तर देते हुए वेद उपदेश करते हैं कि परमात्मा को इस शरीर में ढूंढने की तैयारी करने के साथ-साथ अर्थ और काम के फंदे से अलग रहना चाहिए ।

Edit with WPS Office

ईशा वास्यमिद; सर्व यकिठ्च जगत्यां जगत ।
तेन त्यक्तेन भुठ्जीथा मां गृध: कस्य स्विद्धनम् ।।
कुर्वत्रेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत; समा: ।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।

____ यजुर्वेद. 40.1 -- 2

ब्रह्मचर्येण तपसा देवामृत्युमपाध्नत । इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यं: स्वराभरत् ।।

____ अथर्ववेद. 11.5.19

अर्थात परमेश्वर को सर्वत्र परिपूर्ण समझकर उसी के दियें हुए पर संतोष करना चाहिए और दूसरों के धन की कभी इच्छा न करनी चाहिए । इस प्रकार का जीवन बनाकर शेष आयु तक कर्म करने से मोक्ष हो जाता है , इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है ? जिस प्रकार ब्रह्मचर्य से ही इंद्र देवों से धुलोक को पूरा करता है , उसी प्रकार ब्रह्मचर्य और तप से ही विद्वान मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं ।

- इन मंत्रों में मुमुक्षु के लिए अर्थ (धन) और काम (रति) का परित्याग बतलाया गया है । जब अर्थ और काम की इच्छा समूल निवृत्त हो जाएं तब किसी ब्रह्मविद्या के जाननेवाले के पास जाकर सत्संग करना चाहिए । अथर्ववेद में लिखा है कि ___

यत्र देवा ब्रह्मविदो ब्रह्म ज्येष्ठमुपासते ।
यो वै तान् विधात् प्रत्यक्षं स ब्रह्मा वेदिता स्यात् ।।

____ अथर्ववेद. 10.7.24

अर्थात जहां ब्रह्मविद् ब्रह्म की उपासना करते हैं , वहां जाकर जो वह मुमुक्षु उनको जानता है __ मिलता है , उसी सत्संगी को ब्रह्मा , अर्थात ब्रह्मनिष्ठ समझना चाहिए ।

- इन मंत्र में ब्रह्मविदो का सत्संग आवश्यक बतलाया गया है । जब

Edit with WPS Office

सत्संग में मुमुक्षु ब्रह्मविद्या में निभ्रान्त हो जाएं तब उसे चाहिए कि वह किसी एकांत स्थान में निवास करें । ऐसी स्थान का निर्देश करते हुए वेद उपदेश करते हैं कि ___

उपह्रे गिरीणां संगथे च नदीनाम् । धियो विप्रो अजायत ।।

____ ऋग्वेद. 8.6.28

अर्थात पहाड़ों की कंदराओं और नदियों के संगमों में ही मुमुक्षु की बुद्धि का विकास होता । ऐसे शान्त और उपद्रवरहित स्थान में निवास करके योग का अनुष्ठान करना चाहिए । वेद उपदेश करते हैं कि ___

तद्वा अथर्वण: शिरो देवकोश: समुब्जित: ।
तत् प्राणों अभि रक्षित शिरो अत्रमथो मन: ।।

____ अथर्ववेद. 10.2.27

अर्थात मनुष्य का जो शिर हैं , वह ज्ञान - विज्ञान का कोश है । उस शिर की प्राण , मन और अन्न रक्षा करते हैं ।

- इस मंत्र में विचार करने का अंग शिर बतलाया गया है और उसके साथ अन्न , मन और प्राणों का सम्बन्ध भी बतलाया गया है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि अन्न , प्राण , मन और विचारों की श्रृंखला का क्रम हैं , क्योंकि विचारों के रोकनेवाले को मन रोकना पड़ता है , मन रोकनेवाले को प्राण रोकना पड़ता है और प्राण रोकनेवाले को अन्न का नियन्त्रण करना पड़ता है । तात्पर्य यह कि मुमुक्षु को एकान्त में युक्ताहार होकर प्राणों के निग्रह में लग जाना चाहिए और मन तथा विचारों के प्रवाह को बन्द कर देना चाहिए । इस योगक्रिया के लिए वेद उपदेश करते हैं कि ___

युळ्ते मन उत युठ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चित: ।
वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितु: परिष्टुति: ।।

____ ऋग्वेद. 5.81.1

Edit with WPS Office

युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितु: सवे ।
स्वगर्याय शक्त्या ।। ____ यजुर्वेद. 11.2
युजे वां ब्रह्म पूव्र्य नमोभिर्वि श्लोक एतु पथ्येव सूरे: ।
श्रृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थु: ।।
____ यजुर्वेद. 11.5

अर्थात बड़े - बड़े यज्ञ - याग करने वाले और विद्वानों से भी अधिक विद्वान अपना मन और बुद्धि उस एक ही महान् देवाधिदेव महादेव (परमात्मा) में युक्त करते हैं । पूरी शक्ति से हम लोग स्वर्गीय सुखों के लिए अपने मन को सविता देव में जोड़ते हैं । सब लोग यह बात कान खोलकर सुन ले कि पूर्वजों ने योगबल से ही सूर्यमार्ग से यात्रा की है , इसलिए जो योग करेगा ___ ब्रह्म में मन लगाएगा ___ वही उस उत्तम गति को प्राप्त होगा ।

- इन मंत्रों में योग का बहुत बड़ा महत्व बतलाया गया है , क्योंकि योग का सम्बन्ध मन से है । मन को एकाग्र करके उसे परमात्मा में लगाना ही योग है , इसलिए वेद में मन को कल्याणकारी बनाने का बहुत बड़ा उपदेश हैं । यजुर्वेद में लिखा है कि ___

यजुर्वेद. 34.1 -- 6 ______
अर्थात जो सोते और जागते समय दूर-दूर जाता है , वह दूर-दूर तक जाने वाला ज्योति रूप मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो । जिसके द्वारा बुद्धिमान और धीर पुरुष नाना प्रकार के सुकर्मों का अनुष्ठान करते हैं , वह सबके अंदर बैठा हुआ अपूर्व शक्ति वाला मेरा मन उत्तम विचार करने वाला हो । जो प्रज्ञान , चेतना और धारणा शक्ति वाला है , जो अन्तज्योति है , जो सब प्राणियों में अविनाशी सत्तारुप से विराजमान है और जिसके बिना किंचित मात्र भी कोई काम नहीं हो सकता , वह मेरा मन शिव संकल्प वाला हो । जिसने अपनी अमरता से भूत भविष्य और वर्तमान को ग्रहण कर रखा है और जिसकी सहायता से आंख , कान , नाक , और जिह्वा आदि सातों कार्यकर्ता इस शरीर के व्यवहार को कर रहे हैं , वह मेरा मन कल्याणकारी विचार वाला हो । जिसमें ऋग्वेद , यजुर्वेद , सामवेद रथचक्र के आरों की भांति जुड़ रहे हैं और जिसमें सब प्राणियों के चित्त ओतप्रोत है , वह मेरा

Edit with WPS Office

मन शुभ विचार वाला हो । जिस प्रकार अच्छा सारथि रथ के घोड़ों को चलाता है , उसी प्रकार हृदय में बैठा हुआ और अपने क्रियाबल से मनुष्यों को नियम में चलानेवाला मेरा मन शुभ संकल्पवाला हो ।

- इन मंत्रों में मन की महत्ता बतलाते हुए उसको उत्तम विचार वाला बनाने का उपदेश किया गया है , जिससे योग सिद्धि में शीघ्र सहायता मिले । यह योग मनुष्य का अंतिम पुरुषार्थ है । मनुष्य योगानुष्ठान करके जप , तप , तितिक्षा और समाधि तक अपना पुरुषार्थ कर सकता है , परंतु यदि परमात्मा इतने पर भी मुमुक्षु के हृदय में स्वयं प्रकट होकर उसे दर्शन न दे और मोक्ष प्राप्त न हो तो वह अपने पुरुषार्थ से उसे प्रकट होने के लिए और मोक्ष देने के लिए विवश नहीं कर सकता । इसलिए उसके शरणागत होकर दर्शन और मोक्ष के लिए प्रार्थना करता है । वेद में परमात्मा की स्तुति और प्रार्थना करने का उपदेश इस प्रकार है ___

ऋग्वेद. 9.113.6 -- 11 , अथर्ववेद. 19.43.8 ______

अर्थात जहां वेदवेत्ता ब्रह्मा अथर्ववाणी को बोलता हुआ योग द्वारा परमात्मा को प्राप्त होता है और परमात्मा के द्वारा आनंद पाता है , वही हे परमात्मन् ! इस योगी को भी अमृतबिंदु देकर __ दर्शन देकर पहुंचाइए । जहां निरंतर ज्योति का प्रकाश होता है और जहां सुख- ही - सुख है उस अक्षय आनंद में मुझे पहुंचाइए । जहां वैवस्वत मनु राजा हैं , जहां का धुलोक दरवाजा है और जहां अमृत जल की वृष्टि होती है , वहां मुझे अमर कीजिए । जहां इच्छानुसार विचरण होता है और जहां ज्योतिरूप स्थान है , उसी तीसरे धुलोक के उस पार मुझे अमर कीजिए । जहां सब कामनाएं पूर्ण हो जाती है , जहां सबसे बड़ा सुख प्राप्त होता है और जहां स्वधा तथा हर प्रकार की तृप्ति होती है , वहां मुझे अमर कीजिए । जहां पूर्ण हर्ष , पूर्ण प्रसन्नता , पूर्ण सुख और पूर्ण आनन्द प्राप्त होता है और जहां सब इच्छाएं पूर्ण हो जाती है , वही हे परमात्मन् ! दर्शन देकर मुझे पहुंचाइए ।

- इन मंत्रों में परमात्मा से प्रार्थना की गई है कि मुझे पहले दर्शन दीजिए , जिससे मैं जीवन्मुक्त हो जाऊं और फिर मरने के बाद तृतीय लोकं के बाहर जहां प्राकृतिक जगत का लेश भी नहीं है , और जहां केवल ब्रह्म - ही - ब्रह्म है वहां सदा के लिए पहुंचा दीजिए । इस प्रकार की निरन्तर

Edit with WPS Office

प्रार्थना से समाधिस्थ निश्चल आत्मा में परमात्मा प्रकट हो जाता है । उस समय वह जीवन मुक्त कहता है कि ___

जो भूतानामधिपतिर्यस्मिंल्लोकां अधि श्रिता: । य ईशे महतो महांस्तेन गृहामि त्वामहं मग्रि गृहामि त्वामहम् ।। ____ यजुर्वेद. 20.32

अर्थात जो सबभूतों का अधिपति हैं , जिसमें सब लोकं ठहरें है , जो बड़ों से भी बड़ों का स्वामी है , उस तुझ परमात्मा को मैं ग्रहण करता हूं __ अपने अंदर तुझको ग्रहण करता हूं ।

- इस मंत्र में जीवन की अन्तिम सफलता का वर्णन है । इस प्रकार मनुष्य ईश्वरदर्शन से कृतार्थ होकर , सब प्रकार की शंकाओं से निवृत्त होकर और सब - कुछ जानकर शेष जीवन में लोगों को ब्रह्मज्ञान का उपदेश करता हुआ प्रसन्नता से मृत्यु को प्राप्त होता है और मुक्त हो जाता है । यह वैदिक उपनिषद का उतरार्द्ध है ।

वेदों में आरम्भ से लेकर अन्त तक इसी प्रकार की शिक्षा है , हमारा दृढ़ विश्वास है कि जितनी विस्तृत शिक्षा वेदों में है यदि उतनी शिक्षा विधिपूर्वक किसी भी मनुष्य समाज को दी जाए तो वह समाज हर विभाग में सरलता से अपनी उन्नति अच्छी प्रकार कर सकता है , परंतु आजकल की _ सी विस्तृत उन्नति वेदों की दृष्टि से समस्त मनुष्य जाति और समस्त प्राणी समूह के लिए कल्याणकारी नहीं है , इसलिए वैदिकों ने अकेले वेद को ही एक पूर्ण साहित्य का काम देने वाला माना है । वेद स्वयं समस्त मनुष्योपयोगी शिक्षा दे देते हैं , इसलिए वे किसी अन्य ग्रंथ या अन्य साहित्य के अधीन नहीं है । वेद अकेले ही अपनी शिक्षा से मनुष्य को इस योग्य बना देते हैं कि वह अपना प्रत्येक आवश्यक कार्य सरलता से कर सकता है और अपने ज्ञान को विस्तृत भी कर सकता है । यज्ञों का वर्णन करते हुए पीछे लिख आए हैं की आदिमकाल से मध्यकाल पर्यंत वैदिक आर्यों ने इसी मौलिक ज्ञान के कारण बहुत बड़ी उन्नति की थी और अपनी एक विशेष सभ्यता स्थापित की थी , जिसमें आदि से अंत तक संपूर्ण वेद ही चरितार्थ थे । आगे हम उसी आदिम वैदिक आर्यसभ्यता के आदर्श का वर्णन करते हैं और दिखलाते हैं कि किस प्रकार अकेला वैदिक ज्ञान मनुष्यसमाज को उन्नति के आदर्श शिखर तक

Edit with WPS Office

पहुंचाता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 129. यज्ञों के तीन संसार और तीन प्रकार

वेदों में तीन संसारों का वर्णन है । एक आकाशीय है जिसमें सूर्य , चन्द्र , तारा , वायु , जल , और विधुत आदि है । इस आकाशीय संसार में राजा , पुरोहित , सेना , ग्राम , वीथी , ब्राह्मण , वैश्य , शूद्र , नदी , समुद्र , जंगल , पशु , पक्षी , आदि सभी कुछ है । वहां शत्रु है , बड़े-बड़े युद्ध है और जो कुछ यहां संसार में दिखाई पड़ता है , वह सब आकाशीय संसार में विद्यमान है । जिस प्रकार यह आकाशीय संसार है उसी प्रकार का दूसरा संसार मनुष्य का शरीर है , जिसमें नगर , द्वार , राजा , ऋषि , शत्रु , ब्राह्मण , युद्ध और उसी प्रकार के समस्त पदार्थ है , जिस प्रकार के आकाशीय संसार में है । तीसरा यह पृथिवीस्थ संसार है जिसमें उक्त सभी पदार्थ विद्यमान है । वेदों के ये तीनों संसार आधिदैविक , आध्यात्मिक और आधिभौतिक कहलाते हैं । इनमें से आकाशीय संसार और मनुष्य - शरीरस्थ संसार दोनों परस्पर आधाराधेय संबंध रखते हैं । आकाशीय संसार का एक-एक पदार्थ शारीरिक संसार का आधार है । आकाशीय संसार में जिस प्रकार अन्य समस्त पदार्थ विराजमान है उसी प्रकार वहां यज्ञ भी हुआ करता है और जिस प्रकार आकाश में यज्ञ हुआ करता है उसी प्रकार शरीर में भी यज्ञ हुआ करता है ।

Edit with WPS Office

ये पिण्ड और ब्रह्मांड के यज्ञ निरंतर चालू रहते हैं , किंतु परिवर्तनों के कारण कभी-कभी दोनों में वैषम्य उत्पन्न हो जाता है । इसलिए भौतिक यज्ञों से दोनों का सामंजस्य करना ही वैदिक यज्ञों का मुख्य उद्देश्य है । हम चाहते हैं कि यहां थोड़ा - सा - पिण्ड - ब्रह्मांड के यज्ञ और उनका परस्पर संबंध वर्णन कर दे , जिससे विषय स्पष्ट हो जाए और ज्ञात हो जाए कि किस प्रकार यज्ञ वैज्ञानिक नीव पर स्थित है और पिण्ड - ब्रह्मांड से संबंध रखते हैं । पिण्ड और ब्रह्मांड का संबंध बताते हुए एक वेद मंत्र कहता है कि ___

अथर्ववेद. 5.9.7 ______ अर्थात सूर्य मेरा नेत्र है , वायु मेरा प्राण है , अंतरिक्ष मेरा आत्मा (हृदय) है और पृथ्वी मेरा शरीर है । मैं अपने आपको अपराजित समझकर धावा और पृथिवी के बीच में सुरक्षित रखता हूं ।
यह मंत्र पिण्ड और ब्रह्मांड का स्पष्ट संबंध बतलाता है । यजुर्वेद में कहां है ___

यजुर्वेद. 31.13 - 14 , अथर्ववेद. 10.7.34 ______ अर्थात धौ शिर , वायु प्राण , अंतरिक्ष नाभि , दिशा कान , और भूमि उसके पैर है ।
यहां भी वही संबंध वर्णित है । वेदों में इस प्रकार के बहुत वर्णन है । इन उद्धरणों से स्पष्ट हो जाता है कि पिण्ड के साथ ब्रह्मांड का घनिष्ठ सम्बन्ध है । यह बात प्रत्यक्ष भी है कि बिना सूर्य के हम देख नहीं सकते , बिना वायु के सांस नहीं ले सकते और बिना पृथ्वी के खड़े नहीं हो सकते । कहने का तात्पर्य यह है कि पिण्ड ब्रह्मांड के साथ नत्थी है । जैसे इन दोनों का आधार आधेय सम्बन्ध वर्णित है वैसे ही वेदों में दोनों स्थानों के यज्ञों का भी वर्णन है ब्रह्मांडयज्ञ के विषय में लिखा है कि ___
यजुर्वेद. 31.14,15 ______ अर्थात यज्ञवेदी की सात परिधियां है । उसमें इक्कीस समिधा हैं । ऐसे यज्ञ को देवताओं ने फैला रखा है , जिसमें पुरुष पशु बंधा हुआ है । पुरुष के द्वारा हवि से देवता जिस यज्ञ को फैलाते हैं उस यज्ञ में वसन्त ऋतु घी है , ग्रीष्म ऋतु ईंधन हैं और शरद ऋतु हवि है ।
गोपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ___
गोपथ. 1.1.13 ______ अर्थात अग्नि होता , वायु अध्वर्यु , सूर्य उद्गाता , चंद्रमा ब्रह्मा और वर्षा सदस्य है । यह ब्रह्मांड यज्ञ है ।
पिण्ड यज्ञ के लिए वेद में लिखा है कि ___

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 11.8.29 ______ अर्थात हड्डियों की संमिधा बनाकर , रेत का घी करके और आठ प्रकार के रसों को लेकर सब देवताओं ने पुरुष में प्रवेश किया ।

शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ___

शतपथ ब्राह्मण. 1.3.2.9 ______ अर्थात पुरुष ही यज्ञ है , क्योंकि वही यज्ञ करता है । वह उतना ही सत्कर्म करता है जितना वह स्वयं होता है , इसलिए पुरुष ही यज्ञ है ।

इसी प्रकार छान्दोग्य उपनिषद् में भी पुरुष को यज्ञ कहा गया है । वहां लिखा है कि ___

अर्थात पुरुष ही यज्ञ है । इसके जो चौबीस वर्ष है वह प्रातः सवन है , जो चवालीस वर्ष है वह माध्यन्दिनसवन है और जो अड़तालीस वर्ष है , वह तृतीय सवन है ।

इन प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि ऊपर जिन सूर्य आदि देवताओं का ब्रह्मांडयज्ञ के नाम से वर्णन हुआ है वहीं देवता मनुष्यशरीर में प्रवेश कर गये और मनुष्यशरीर के पदार्थों को यज्ञ की सामग्री बनाकर वहां भी यज्ञ करने लगे , मानो पिण्ड __ ब्रह्मांड के यज्ञ और उन दोनों का संबंध दृढ़ हो गया और इस प्रकार यह नित्य सम्बन्ध स्थापित हो गया। । इसी सम्बन्ध के अनुसार पिण्ड और ब्रह्मांड के दोनों यज्ञ , यज्ञ के तीनों धर्म __ देवपूजा , संगतिकरण और दान निरन्तर कर रहे हैं । गर्मी , सर्दी , जल , हवा , प्रकाश , और अन्धकार से ब्रह्माण्ड सदैव हमारी सबकी पूजा , संगति और दान किया जाता है । मनुष्य शरीर भी सर्दी , गर्मी , प्रकाश , आदि से संगति करता है । इन्द्रियां परस्पर पूजा करती हैं और दान देती हैं । इसी प्रकार मनुष्यशरीर भी अन्य प्राणियों के साथ पूजा संगति और दान का व्यवहार करता है । इस प्रकार पिण्ड और ब्रह्मांड दोनों यज्ञ का कार्य बराबर सम्पादन करते हैं । हम कह आये हैं कि ब्रह्मांड पिण्ड का आधार है । शरीर सर्वथा ब्रह्मांड के अधीन है । आंख सूर्य के , श्वास वायु के और पैर पृथिवी के अधीन है , परंतु जब सूर्य चला जाता है , वायु का चलना बंद हो जाता है और पृथ्वी ठंडी या गर्म हो जाती है , अर्थात जब दोनों संसारों में विषमता उत्पन्न हो जाती है तब हम तीसरे भौतिक यज्ञ से दोनों में सामंजस्य उत्पन्न करते हैं । हम दीपक जलाकर सूर्य का काम लेते हैं , पंखा चलाकर वायु का काम लेते हैं और

Edit with WPS Office

जूता पहनकर या ऊंचे मठ्च पर खड़े होकर पृथ्वी की सर्दी गर्मी का अनुकूलन कर लेते हैं । यह अनुकूलन ही यज्ञ का संगतिकरण , पूजा और दान है , अर्थात विषमता उपस्थित होने पर पृथिवीस्थ पदार्थों को लेकर वैज्ञानिक सिद्धांत से पिण्ड -- ब्रह्मांड में सामंजस्य उत्पन्न कर देना ही यज्ञ का प्रधान कार्य है , इसलिए वेद में कहा गया है कि **यज्ञों यज्ञेन कल्पताम् , यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा : ,** अर्थात यज्ञ से यज्ञ कल्पित हुए हैं । देवता भी यज्ञ से यज्ञ कर रहे हैं । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि **यज्ञाधज्ञं निर्मिमा इति ,** अर्थात मैं यज्ञ से यज्ञ का निर्माण करता हूं । इस सब वर्णन का यही तात्पर्य है कि पिण्ड - ब्रह्मांड के यज्ञों की विषमता का भौतिक यज्ञों से सामंजस्य करते रहना चाहिए ।

यधपि सत्कर्ममात्र यज्ञ के नाम से कहा गया है। , परन्तु भैषज्ययज्ञं , पुत्रेष्टियज्ञ , अवर्षणयज्ञ , गोमेधयज्ञ , अश्वमेधयज्ञ और पच्चमहायज्ञ आदि स्थूल और व्यावहारिक यज्ञ प्रधान है । ये सभी यज्ञ अपने - अपने ढंग के निराले हैं , अतएव इन सबके साधन भी निराले हैं । अपने अपने यज्ञ के अनुकूल साधन अलग - अलग होने पर भी अग्न्याधान , हवनीय पदार्थ , समयनिरुपण और यज्ञदेश का विचार आदि सबमें हैं । सबमें यज्ञकर्ता , यज्ञमण्डप आदि एक समान ही होते हैं , परन्तु कुण्डो की बनावट , पात्र , हवनीय पदार्थ और अन्य विधियां अलग अलग है । इसी प्रकार और भी बहुत सी बातों में अंतर है । जैसे अश्वमेध में अमुक प्रकार का घोड़ा , युद्ध सामग्री , सेना आदि विशेष रूप से आवश्यक होते हैं । किन्तु पुत्रेष्टि में इनकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं होती । तात्पर्य यह है कि यज्ञों में सामान्य __ विशेषभाव सदैव बना रहता है , इसलिए सबके उपकरण भी सामान्य विशेष रूप से पृथक पृथक और एक समान भी होते हैं । आगे हम यज्ञों का वर्णन करते हुए यह भी बतलाते जाएंगे कि किन किन यज्ञों में कौन कौन सी वस्तुएं विशेष रुप से आवश्यक होती हैं । यज्ञों को सफल बनाने के लिए बहुत से पदार्थों के साथ अनेक प्रकार की विधाओं की भी आवश्यकता होती है । मनुष्य से सम्बन्ध रखने वाली ऐसी एक भी आवश्यकता विधा नहीं है जिसकी यज्ञ में आवश्यकता न होती हो । आर्य लोग इसलिए यज्ञों को धर्म का मूल बतलाते हैं और थीबो साहब कहते हैं कि ' आर्यों , के पुरातन धर्म से सम्बंध रखनेवाली जितनी विधाएं हैं , सब उनकी निज की

Edit with WPS Office

उपज है , भैषज्ययज्ञं आर्यों का पुरातन धर्म है और उसका सम्बन्ध आयुर्वेद से है , अतः आयुर्वेद भी आर्यों की ही उपज है ।
हम पहले ही बता आये हैं कि यज्ञ के लाभों में सबसे बड़ा लाभ सार्वजनीन आरोग्यता है । सफाई , सड़क , रोशनी , अस्पताल , आदि जिस प्रकार सार्वजनीन आरोग्यता के साधन है , उसी प्रकार यज्ञ भी है । आरोग्यता का सम्बन्ध जीवन से है । संसार में जीवन सबसे अधिक मूल्यवान् है , अतः सार्वजनीन जीवन - रक्षा का श्रेय होने के कारण यज्ञ का आरोग्य - सम्बन्धी विषय प्रथम और प्रधान है , क्योंकि आरोग्यता नष्ट होने पर शरीर रोगी हो जाता हैं और रोग से मृत्यु का भय रहता है । मृत्यु कोई पसंद नहीं करता । एक व्यक्ति का जीवन चाहे सबके लिए मूल्यवान न हो , परन्तु सबका जीवन तो सबके लिए ही मूल्यवान है , इसलिए जिसमें सार्वजनीन आरोग्यता का विधान हो , वही यज्ञ सब यज्ञों में अधिक उपयोगी , आवश्यक और वर्णन करने योग्य है , अतः हम यहां अगले पृष्ठ पर आयुर्वेद से सम्बन्ध रखने वाले भैषज्ययज्ञं का वर्णन करते हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 130. यज्ञों में आयुर्वेद

भैषज्ययज्ञं आयुर्वेद से सम्बन्ध रखते हैं । इनमें देश काल और पदार्थों के गुणों का ज्ञान होना आवश्यक है । गोपथब्राहम्ण में लिखा है कि ___
' भैषज्ययज्ञा वा एते । ऋतुसन्धिषु व्याधिर्जायते तस्मांदृतुसन्धिषु प्रयुज्यन्ते " ।।
अर्थात ये भैषज्ययज्ञं कहलाते हैं । ऋतुओं की संधि में व्याधियां पैदा

Edit with WPS Office

होती है , इसलिए इनका प्रयोग ऋतुसन्धियों में होता है ।
छान्दोग्य उपनिषद. 4.17.8 ______ में लिखा है कि ___
भेषजकृतो ह वा एष यज्ञों यत्रैवंविद् ब्रह्मा भवति ।।
अर्थात जिनमें वैद्यकशास्त्र ब्रह्मा होता है , वे भैषज्ययज्ञं है ।
इन दोनों प्रमाणों में ऋतुसन्धि और भैषज्ययज्ञं का स्पष्ट वर्णन है , इसलिए वनस्पतियों के गुण और समय का ज्ञान होना आवश्यक है । ओषधियों के लिए स्पष्ट लिखा है कि **यस्य देशस्य यो जन्तुस्तज्जातस्यौषधं हितम् ।** अर्थात जो प्राणी जिस देश का होता है उसके लिए वहां की ही उत्पन्न ओषधियां हितकर होती है । इसके अतिरिक्त ओषधियों पर ऋतुओं का प्रभाव देशभेद से अलग-अलग होता है , इसलिए देश का भी ज्ञान बहुत आवश्यक होता है । देश , काल और पदार्थों के गुणों का ज्ञान आयुर्वेद से ही सम्बन्ध रखता है । इसमें शारीरिक ज्ञान और निदान मिला देने से ही पूरा आयुर्वेद बन जाता है । शारीरिक निदान , त्रिदोष , नाड़ीज्ञान और अन्य ऐसी ही अनेक बातें हैं जो व्यक्तिव्याधि से सम्बन्ध रखती है और वेदों में विस्तार से वर्णित है , किन्तु हम यहां सार्वजनीन व्याधियों के सार्वजनीन उपचार का ही वर्णन कर रहे हैं , इसलिए उन विषयों का वर्णन उचित नहीं समझते । सफाई , प्रकाश , सड़क और अस्पताल आदि म्युनिसिपेलिटी के काम जिस प्रकार सार्वजनिक है , उसी प्रकार ये यज्ञ भी है । होली ऐसा ही सार्वजनिक भैषज्ययज्ञं है , जो संवत्सर के अंत में किया जाता है । यह नवसस्येष्टि भी कहलाता है । ' नवसस्य , का नाम ही होला है । हरे चनो को भूनकर लोग होला खाते हैं , इसलिए होली में भुने हुए हरे चने ही होला कहलाते हैं । यह होली एक प्रकार का भैषज्ययज्ञं ही हैं ।

संसार में सर्दी और गर्मी दो ही हैं । सर्दी की दवा गर्मी और गर्मी की दवा सर्दी है । यजुर्वेद. 23.10 ______ में कहां है कि **अग्निर्हिमस्य भेषजम् ;** अर्थात अग्नि शीत की दवा है , अर्थापति से समझ लेना चाहिए कि सर्दी भी गर्मी की दवा है । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि ___ 1.6.3.23 -- 24
द्वयं वा इदं तृतीयमस्ति । आद्र चैव शुष्कं च । यच्छुकं तदाग्नेयं यदाद्र तत्सौम्यम् । अग्नीषोमयोहैवैतावती विभूत: प्रजाति: । सूर्य एवाग्नेय: चन्द्रमा सौम्य: ।।

Edit with WPS Office

अर्थात सूखा और गीला दो ही है , तीसरा नहीं । अग्नि ही सूखा है और सौम्य ही गीला है । इस प्रकार अग्नि और सौम्य की उत्पादकशक्ति विविध प्रकार की है । सूर्य ही अग्नि है और चंद्रमा ही सौम्य है । अग्नि और जल से ही पित्त और कफ की उत्पत्ति हुई है । तीसरी वस्तु वायु है , जो न शीत है न उष्ण । वायु धूप के संयोग से उष्ण और जल के संयोग से ठंडी हो जाती है और दोनों के प्रभाव को प्रबल कर देती है । यही सिद्धांत आयुर्वेद में भी वर्णित है । वेदों में **अग्निषोमौ** का विस्तारपूर्वक वर्णन है , जो अग्नि और जल के अतिरिक्त और कुछ नहीं है , अर्थात संसार में सर्दी और गर्मी दो ही प्रभाव है । यही दो प्रभाव संसार के समस्त पदार्थों में है । किसी पदार्थ में गर्मी अधिक है और किसी में सर्दी , इसलिए कोई पित्तकर है और कोई कफकर , परंतु बादी करने वाले पदार्थों का कोई लक्षण नहीं किया जा सकता । गर्म पदार्थ भी बादी होते हैं , परंतु जिन पदार्थों में गर्मी - सर्दी बराबर होती है व बादी नहीं होते । उन्ही का नाम समशीतोष्ण और त्रिदोषघ्न है । इस सबका कारण स्पष्ट है कि वायु निज में कुछ भी प्रभाव करने वाली नहीं है । वह प्रबल गुण के साथ मैत्री करके उसके बल को बेहद बलवान कर देता है । संसार के सर्द और गर्म पदार्थ वायु के सहचार से अधिक बलवान हो जाते हैं , इसलिए कहा है कि कफ और पित्त पंगु हैं । वायु जहां उनको ले जाता है वहां वे उसी प्रकार जाते हैं जैसे हवा पाकर मेघ भागते हैं , परंतु यह न समझना चाहिए कि वायु उनका कारण भी है । इस सर्दी - गर्मी का कारण तो ऋतुएं है । ऋतुओं के योग से पदार्थों में प्राय: ऋतुओं के गुण आया करते हैं । इन ऋतुओं का जन्म सूर्य और पृथ्वी की चाल पर है , इसलिए देशभेद से ऋतुओं में और ऋतुभेद से पदार्थों के गुणों में अंतर पड़ जाता है । इस सब वैज्ञानिक भेद को जानने वाले को भिसक् कहते हैं । छान्दोग्य उपनिषद के अनुसार भैषज्ययज्ञो में जो ब्रह्मा होता है , वह इस विद्या का जानने वाला होता है । उसके पास वे ओषधियां जो भैषज्ययज्ञं में काम आती है प्रचुरता से तैयार रहती है । ऋग्वेद में लिखा है कि ___

ऋग्वेद. 10.97.6 ______ अर्थात जिसके पास नाना प्रकार की अनेक औषधियां राजा की सभा की भांति खूब सजी हुई क्रम से इकट्ठी रखी हो वह रक्षोह , अर्थात रोग का नाशक और अमीवचातन , अर्थात् रोगबीजों का

Edit with WPS Office

दूर करनेवाला भिषक् है ।
अथर्ववेद. 5.29.1 ______ में लिखा है कि **त्वं भिषग् भेषजस्यासि कर्ता ;** अर्थात ओषधियों का बनानेवाला तू वैध है । बात स्पष्ट हो गई कि भैषज्ययज्ञो के लिए ऐसे वैध की आवश्यकता है जो देश , काल और पदार्थों के गुण जानता हो तथा हवनीय ओषधियां अपने पास रखता हो । भैषज्ययज्ञो में जैन औषधियों की आवश्यकता होती है वे बहुत है । उनकी एक सूची स्वामी दयानंद ने रोगनाशक , पुष्टिकारक , बलवर्धक , और मिष्ठ तथा सुगंधित पदार्थों के नाम से दी है । वेदों में बहुत सी औषधियों का वर्णन है , जो अमुक - अमुक यज्ञों में काम आती है , परंतु यहां हम कुछ ऐसी औषधियों का वर्णन करते हैं , जिनका अब पता नहीं लगता । यजुर्वेद में हवनीय ओषधियों को अम्ब कहा गया है । वहां लिखा है ___
यजुर्वेद. 12.76 ______ हे अम्ब ! तुम्हारे सैकड़ो स्थान है और तुम हजारों प्रकार से उगती हो । तुम मेरे यज्ञ में आओ और सबको आरोग्य करो ।
दूसरे स्थान में कहा गया है कि **एष ते रुद्र भाग: सह स्वस्त्रांबिकया तं जुषस्व ;** अर्थात यह तेरा रुद्रभाग है , उसका अंबिका की बहिनों के साथ होम कर । यहां अम्बा की भांति अम्बिका का वर्णन आया है और तीनों बहनों की चर्चा भी है। । अन्य मंत्र में कहां है कि ___ अर्थात हे अम्बे ! अम्बिके , अम्बालिके ! तुम्हारा प्राण , अपान , व्यान के लिए हवन करते हैं । इनके लिए निम्नलिखित प्रसिद्ध मंत्र में कहा गया है कि ___
यजुर्वेद. 3.60 ______ अर्थात सुगंधी और पुष्टि को बढ़ाने वाली तीनों अंबिकाओं का हवन करता हूं , जिससे मृत्यु के दुख से उसी प्रकार छूट जाऊं जिस प्रकार पका हुआ फल अनायास अपने बंधन से छूट जाता है , परंतु मोक्ष से न छूटूं ।
इस वर्णन से ज्ञात हो गया कि अंबा अंबिका और अंबालिका , अर्थात तीनों बहनों को रोगनाश करने और जीवन - रक्षा के लिए हवन करने को कहा गया है । ये औषधियां हैं , मनुष्य नहीं ? किंतु दुख से कहना पड़ता है कि इनकी पहचान किसी को नहीं है । बहुत कुछ अन्वेषण करने पर यह तो पता लग गया है कि ये ओषधियां है और इनके पर्याय नाम अमुक - अमुक है , परंतु इनका पहचाननेवाला आज कोई नहीं है । इनका आज यदि पता मिलता तो बड़ा काम निकलता , क्योंकि यजुर्वेद. 3.57 ______ में जहां

Edit with WPS Office

इन तीनों बहनों का हवन करना लिखा है , वहां चूहे का भी वर्णन है । संभव है ये प्लेग की दवाई हो और और सार्वजनिक रोगों को दूर करने के लिए भैषज्ययज्ञ मैं प्रयुक्त होती हो । परंतु आज तो लोग इन्हें भूल गए हैं । भूल जाए , इस बात की यहां चर्चा नहीं है । यहां तो केवल इतना ही कहना है की यज्ञों में वैधक के ज्ञान की आवश्यकता है । कोई यह नहीं कह सकता कि यज्ञों के लिए आयुर्वेद के ज्ञान की आवश्यकता नहीं है और वैदिक काल के आर्य बिना वैधक ज्ञान के यज्ञ किया करते थे अथवा केवल कार्बन फैलाते थे । हम देखते हैं कि आजकल चेपी बीमारियों के लिए बड़े-बड़े डॉक्टरों ने भी आग जलाना , शक्कर जालना और नीम की पत्ती जलाना आरंभ कर दिया है । यह उनमें भैषज्ययज्ञं का आरंभ है । इस आरम्भ से हम आशा करते हैं कि वर्तमान विज्ञान भी कभी यज्ञों की सार्थकता पर प्रकाश डालेगा । यहां तक के वर्णन से देखा गया कि ऋतु - सन्धियो में व्याधियां होती है तभी भैषज्य यज्ञों का प्रयोग होता है । अतः प्रश्न होता है कि क्या यज्ञों में ऋतुसन्धियों को जानने के लिए ज्योतिष का ज्ञान आवश्यक है ? अगले पृष्ठ पर हम , ' यज्ञों में ज्योतिष , के बारे में लिखेंगे ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 131. यज्ञों में ज्योतिष्

यज्ञों में ज्योतिष की आवश्यकता अनिवार्य है । आर्यों के दो विश्वास ऐसे हैं , जिनके कारण है ज्योतिष का सूक्ष्म ज्ञान आवश्यक है । एक तो भैषधयज्ञ के लिए ऋतुओं की सन्धियां जानना दूसरे दक्षिणायन और उत्तरायण में मरने से

Edit with WPS Office

दो प्रकार की गतियां मानना । वे मानते थे कि उत्तरायण में मरने से मोक्ष होता है और दक्षिणायन में मरने से पुनर्जन्म होता है । जिसका यह विश्वास हो कि उत्तरायण में मरने से मोक्ष होता है वह भला उसके सूक्ष्म ज्ञान के बिना कैसे रह सकता है ? देशी और विदेशी विद्वान एक स्वर से कहते हैं कि आर्यों में ज्योतिष का प्रादुर्भाव यज्ञों का समय देखने के लिए ही हुआ है । भास्कराचार्य सिद्धांतशिरोमणि में कहते हैं कि वेदों में यज्ञों का वर्णन है और काल के आश्रित है , इसलिए जिसमें काल का वर्णन हो वह ज्योतिषशास्त्र वेद का अंग कहलाता है । ज्योतिष वेद का नेत्र इसी कारण कहलाता है कि ज्योतिष से समय दिखलाई पड़ता है , इसलिए जर्मन का प्रसिद्ध विद्वान थीबों कहता है कि यज्ञों का ठीक समय जानने के लिए ही आर्यों में सबसे पहले ज्योतिषशास्त्र के सूक्ष्म अवलोकनों की आवश्यकता हुई । यह बात बिल्कुल सत्य है कि यज्ञ , चाहे छोटे हो या बड़े , सन्धियो में ही होते हैं । संधि के लिए दूसरा शब्द पर्व है । गांठ , जोड़ , अथवा संधि को पर्व भी कहते हैं । प्रातः __ सायं की संधि में हवन होता है । पक्ष की संधि , मास की संधि , ऋतु की संधि , चातुर्मास्य की संधि , दोनों अयनों की संधि और वर्ष की संधि पर ही यज्ञ (हवन) होते हैं । यही सब सन्धियां पर्व भी कहलाती हैं । इनका सूक्ष्म ज्ञान ज्योतिष से ही होता है । पक्ष और मास की संधि चाहे चंद्रमा के स्थूल अवलोकन से अमावस्या और पूर्णिमा के दिन ज्ञात हो जाए , परंतु ऋतु , अयन , संवत्सर का सन्धिज्ञान जब तक सायन गणनानुसार ज्योतिष का ठीक-ठाक ज्ञान ना हो तब तक नहीं हो सकता ।

वेदों में ऋतुओं के हिसाब से 12 महीनों के नाम दिये हुए इस , अतः प्रश्न है कि इन महीनों की सन्धियों को वे कैसे जानते थे ? वे कैसे जानते थे कि मधुमास आज बीत गया और माधव लगा तथा आज माधव बीतने पर वसंत ऋतु समाप्त हुई । वेदों में इसी प्रकार दोनों अयनों का भी वर्णन है , । यह भी कैसे जाना जाता था कि आज उत्तरायण समाप्त हुआ और दक्षिणायन लगा । इसके लिए तो उनको अयनों का बहुत ही सूक्ष्म ज्ञान होना चाहिए । अयनों का सूक्ष्म ज्ञान इसलिए भी होना चाहिए कि वे उत्तरायण को मोक्षदाता मानते थे । वे हमेशा कहते हैं कि **नान्य: पन्था विधतेऽयनाय „** अर्थात उत्तरायण के लिए परमेश्वर की भक्ति के सिवा और कोई दूसरा पन्थ नहीं है । दोनों पथ शास्त्रों में कहे गए हैं । दक्षिण अयनों वाले चंद्रलोक को

Edit with WPS Office

जाकर फिर जन्म मरण के फेर में पडते हैं , परंतु उत्तरायणवाले सूर्य लोक को जाते हैं और फिर नहीं आते । ऐसे बड़े काम के मुहूर्त (क्षण) को जिसमे दोनों अयन पृथक होते हैं , उन्होंने न जाना हो यह नहीं कहा जा सकता ।
ऐतरेय ब्राह्मण की भूमिका में मार्टिन हाग कहते हैं कि जो यज्ञ सालभर चलता है वह सौरजगत् की वार्षिक परिक्रमा का रुप ही है । यह यज्ञ दो बराबर भागों में बांट दिया जाता है । जिसका प्रत्येक भाग तीस अंशों में छह - छह मास का होता है । दोनों के बीच में जो दोनों अयनों को काटता है वह ' विषुवान् , नामी दिन है " । इससे ज्ञात होता है कि आर्यों को दोनों अयनों का और वर्ष समाप्त होने वाले दिन का सूक्ष्म ज्ञान था । इसी से उन्होंने उसका नाम विषुवान् रखा था , क्योंकि यज्ञ सौरजगत् की आकृति के ही होते हैं । कहां भी है कि " **यज्ञों वै संवत्सर : ;** अर्थात यज्ञ संवत्सर ही है । यज्ञों में स्थापित इंद्र , वरुण , कुबेर , गणेश , और गोरी क्रम से अग्नि , जल , वायु , आकाश और पृथ्वी के रूप ही है । इनके प्रतिनिधि दीपक , कलश , अन्न , नवग्रह और गोरी आदि है । यह गौरी पृथिवी की प्रतिमा ही है । इसकी बनावट में अब तक पृथ्वी के ध्रुव प्रदेश दबे हुए होते हैं । यज्ञों में अन्य ग्रह भी बनाए जाते हैं , जिनके स्थान में मन्थिन आदि पात्र रखे जाते हैं जो ग्रहों के ही रूपक है । इस प्रकार यज्ञ जगद्रूपी वर्ष का रुप ही है । वर्ष को अनुकूल बनाने के लिए ही यज्ञ होता है , अतः हम बलपूर्वक कह सकते हैं कि आर्यों को ज्योतिष का सूक्ष्म ज्ञान था और उसका उपयोग यज्ञों में होता है ।
ऋग्वेद. 1.33.8 ______ अर्थात पृथिवी गोलाकार है । इसका आधा भाग सूर्य से प्रकाशित होता है और आधा भाग अंधकारावृत रहता है । यह सूर्य के ही आकर्षण से ठहरी है । पृथ्वी सूर्य के ही आधार पर है ।
इसी बात का वर्णन ऋग्वेद में दूसरे स्थान पर इस प्रकार है ' **उक्षा स धावापृथिवी बिभर्ति ;** अर्थात पृथ्वी सूर्य के आधार पर ठहरी है ।
तीसरे स्थान पर ऋग्वेद. 10.149.1 ______ में है कि **सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णादस्कम्भने सविता धामदूंहत ;** अर्थात निराधार प्रदेश में सूर्य यंत्र द्वारा पृथ्वी घूम रही है और उसी ने ग्रहों को दृढ़ किया है । अथर्ववेद में पृथ्वी के घूमने के विषय में कहा है ____
अथर्ववेद. 12.1.52 ______ अर्थात जो पृथ्वी के दैनिक एवं वार्षिक

Edit with WPS Office

वृतांवृत्ता होते हैं और जिसके 30 दिन और 12 महीने __ धाम है , वे हमारी रक्षा करें ।
यहां स्पष्ट ही भूमि और पृथ्वी के साथ वृत्तावृता दो बार आया है , जिससे दैनिक और वार्षिक गतियां स्पष्ट होती है । यहां इस वृत्त शब्द का अर्थ चक्कर ही है । जिस मार्ग से होकर पृथ्वी वर्ष भर में घूम आता है , वही राशिपथ है । उसको वैश्वानर कहते हैं । वेद में लिखा है ____
अथर्ववेद. 8.9.6 ______ अर्थात वैश्वानर राशिपथ के ऊपर जो स्थान है , उससे सूर्य छह भाग एक ओर और छह भाग दूसरी और रहता है । इसी से ध्रुवों में छह मास की रात और छह मास का दिन होता है ।

इस वैश्वानर नामी राशि चक्र का वर्णन वाल्मीकि रामायण में भी आया है ______ बालकाण्ड सर्ग 60

अर्थात गमन में वैश्वानर __ पथ के बाहर बहुत से चमकीले नक्षत्र है ।
इस पर राम नामक टीकाकार कहता है कि ज्योतिश्चक्रमार्ग से बाहर सब नक्षत्र प्रकाशित है । यह ज्योतिश्चक्रमार्ग राशि चक्र ही है । इस राशिपथ के 12 भाग है ।
ऋग्वेद. 1.164.48 में कहां है कि ____
अर्थात 12 भागों में विभक्त 360 अंश का एक चक्र (संवत्सर का क्षेत्र) होता है , जिसमें सर्दी गर्मी वर्षा तीन नाभियां है ।
मंत्र कहता है कि इस चक्र के 360 अंश अचल है । इससे ये सावनदिन नहीं प्रत्युत सायनदिन प्रतीत होते हैं । यही मंत्र अथर्ववेद में पाठ भेद से इस प्रकार आता है ____
इसमें शक और खीला बताकर स्पष्ट कर दिया गया है कि यह ज्योतिष का चक्र बिल्कुल सायन है । इस चक्र का वर्णन महाभारत में भी इस प्रकार है ____
महाभारत वन पर्व अध्याय 133. श्लोक संख्या. 25 ______
अर्थात हे राजन् ! वह चक्र तुम्हारा कल्याण करें , जिसमें 24 पर्व , 6 नाभियां , 12 घेरे और 360 आरे है ।
ऋग्वेद. 5.40.5 -- 6 ______ अर्थात हे सूर्य ! तुम्हें चंद्रमा ने जो अंधकार से घेर लिया है , इससे ज्योतिष और रेखा गणित न जानने वाले मुग्ध हो रहे हैं । धुलोक में तुम्हारा प्रकाश है उसको चंद्रमा ने आच्छादित कर दिया है ,

Edit with WPS Office

इसलिए विद्वान लोग सूर्य को तुरीययंत्र से देखते हैं ।
यहां स्पष्ट कह दिया गया है कि जो रेखा गणित नहीं जानता वह अक्षेत्रविद् और ग्रहण से मुग्ध हो जाता है , परंतु जो विद्वान है वह गणित करके देख लेता है कि किस दिन चंद्र सूर्य के ऊपर आ जाएगा और यह घटना पृथ्वी के किस स्थान से दिखेगी । ग्रहण का समय किसी प्रकार नहीं ज्ञात हो सकता जब तक पृथ्वी और चंद्रमा की चालें ठीक ज्ञात न हो और जब तक अक्षांशज्ञान न हो । इस ऋग्वेद की घटना का वर्णन समस्त प्राचीन ग्रंथो में आया है । यहां हम उनमें से नमूने के लिए कुछ प्रमाण लिखते हैं ______

शतपथ ब्राह्मण. 5.3.2.2
गोपथ ब्राह्मण. 2.3.19
ताण्डय ब्राह्मण. 4.5.2
आश्वलायनशाखा अष्टक 4
वाल्मी ० यु० स० 102.3

ये पांचों उपर्युक्त ऋग्वेद के मंत्रों का ही आशय कह रहे हैं । इन सब का तात्पर्य यही होता है कि सूर्य को चंद्रमा अपने अंधकार से छिपा देता है ।
सारांश यह है कि वैदिकों को ग्रहण का पूर्ण ज्ञान था । ज्ञान ही नहीं था , किंतु जिस प्रकार उन्होंने सायन गणना के लिए बेधशाला के राशि चक्र का निर्माण किया था उसी प्रकार ग्रहण देखने के लिए तुरीययन्त्र का भी आविष्कार कर लिया था । इस तुरीययन्त्र का वर्णन भास्कराचार्य ने सिद्धांतशिरोमणि में किया है , और शिल्पसंहिता में तो दूरबीन बनाने का भी विस्तार से वर्णन है । वहां लिखा है ____

शिल्पसंहिता. ______ अर्थात दूर तक देखने के लिए इस प्रकार का यंत्र बनाना चाहिए कि पहले मिट्टी को जलाकर काच तैयार करें । फिर उसको साफ करके उस स्वच्छ काच को बांस या धातु की नली में (**आदि , मध्य , और अन्त में**) लगाकर देखें । यह तुरीययन्त्र की भांति ही ग्रहों के देखने में काम आता है ।
इस तमाम वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि वैदिको को ग्रहण जानने का ज्ञान था । यदि ग्रहण न जान सकते होते तो उन्हें कैसे ज्ञात होता कि सूर्य को चंद्रमा ढकता है , क्योंकि सूर्य ग्रहण सदा अमावस्या को ही होता है , जिस दिन चंद्रमा का कही पता ही नहीं रहता , वह भी दिन के समय और प्रत्येक

Edit with WPS Office

अमावस्या को नहीं , किंतु कभी-कभी । कभी किसी अमावस्या को दिन के समय सूर्य को चंद्र से ढकने वाले सूर्य ग्रहण की कल्पना , वह भी तुरीययन्त्र के द्वारा , क्या कभी आकस्मिक हो सकती है ? कभी नहीं ।
इसके सिवा वेदों में ध्रुव प्रदेश में होने वाले छह छह मास के दिन - रात का भी वर्णन है जिससे प्रकट हो जाता है कि याज्ञिक ज्योतिषियों को सायनगणना का पूरा ज्ञान था । अभी हमने दिखलाया था कि **अथर्ववेद. 8.7.6 ______** के **वैश्वानरस्य प्रतिमा** मंत्र में बतलाया गया है कि वैश्वानर राशिपथ पर घूमती हुई पृथ्वी में छह मास की रात और छह मास के दिन होते हैं । इसी विषय का स्पष्ट वर्णन तैत्तिरीय संहिता में आया है कि ' **एकं वा एतधेवानामह: । यत्संवत्सर: " अर्थात** मनुष्यों का संवत्सर देवताओं के एक दिन के बराबर है । यह देवताओं का दिन ध्रुवप्रदेशों में ही होता है । वैदिक काल में ही आर्यों को इसका ज्ञान था , किंतु 450 ईस्वी सन् पूर्व तक ग्रीकों को इस बात का ज्ञान नहीं था । आर्यों का उत्तरध्रुवनिवास मैं लोकमान्य तिलक कहते हैं कि ' हिराडोटस नामक ग्रीक इतिहासज्ञ के समय (450 ई० पूर्व) मैं लोगों को यह बात असत्य प्रतीत होती थी कि इस पृथ्वी पर लोग 6 मास की भी रात मानते हैं । इससे ज्ञात होता है कि ध्रुवों में 6 मास की रात और 6 मास का दिन ज्ञात करना ज्योतिष और भूगोल के महान सूक्ष्म ज्ञान पर ही अवलंबित है । जब तक क्रांतिवृत्त और विषुववृत्त के चलाचल का ज्ञान न हो तब तक ध्रुव का हाल ज्ञात ही नहीं होता । क्रांतिवृत्त राशि चक्र है , जो अचल हैं , परंतु विषुववृत्त पृथ्वी की गोलाई की रेखा है जो नति , अर्थात पृथ्वी के झुकाव के कारण चला करती हैं । इन्हीं दोनों से रात दिन का घटाव - बढाव , रात दिन की बराबरी और सायनवर्ष होता है । वैदिक आर्यों को ध्रुव का ज्ञान होने से इन सब बातों का ज्ञान होना पाया जाता है , अतः सिद्ध है कि वैदिक आर्य सायनगणना जानते थे ।
उनको नति का भी ज्ञान था । विषुववृत्त और क्रांतिवृत्त के बीच में लगभग साडे 22 अंश का जो कोण हैं उसे नति कहते हैं । लोकमान्य तिलक कहते हैं कि प्रोफेसर लडविग के कथनानुसार ऋग्वेद में क्रांतिवृत्त और विषुववृत्त की नति , अर्थात तिर्यक्त्व का उल्लेख है " । नति का सूक्ष्म ज्ञान होने पर ही ध्रुवों का वृत्तांत ज्ञात हो सकता है और तभी सायनगणना ठीक हो सकती है । ग्रीक लोगों को ध्रुव का ज्ञान नहीं था । इससे पाया जाता है कि वे

Edit with WPS Office

क्रान्तिवृत का रहस्य नहीं जानते थे , किंतु आर्य लोग जानते थे । ऐसी दशा में कैसे कहा जाता है कि आर्यों ने सायनगणना ग्रीकों से सीखी ?
वैदिक आर्यों का वर्ष हमेशा सायन था और वसन्त ऋतु से ही आरंभ होता था । तैत्तिरीय ब्राह्मण में लिखा है कि **मुखं वा एतदृतूनां यदूसन्त : ,** अर्थात वसन्तऋतु सब ऋतुओं का मुख है । इसके विषय में ओरायन में लोकमान्य तिलक कहते हैं कि यह मानने में लेशमात्र हानि नहीं है कि प्राचीन वैदिक काल में जब सूर्य वसन्तसम्पात में होता था तभी वर्ष का आरंभ होता था । इससे सिद्ध है कि वैदिक आर्यों का वर्ष सायन था , क्योंकि सायनगणना में ही वर्ष ऋतुओंवाला होता है और ऋतुएं अयनों वाली होती है । हम पहले ही कह आए हैं कि ऋतुओं की सन्धियों में यज्ञ करने के लिए और उत्तरायण को मोक्षसाधक मानकर उसकी प्रतीक्षा करने के लिए उनको अयन - चलन का सूक्ष्म ज्ञान प्राप्त हो गया था । सूक्ष्म ज्ञान से ही वे वर्ष के मध्य का दिन निकाल सकते थे और उसी दिन से वसन्त ऋतु का आरंभ मानकर वर्ष का आरंभ करते थे । यह सब कुछ बिना अयनगति और राशि चक्र के ठीक ठीक ज्ञान के हो ही नहीं सकता । ग्रीकों को इतना सूक्ष्म ज्ञान नहीं था । उनके विषय में लोकमान्य तिलक ओरायन में कहते हैं कि दूसरे सर्व राष्ट्रों से पूर्व और विशेष सूक्ष्मता से अयनगति को भारत वासियों ने ही जाना था । ग्रीक ज्योतिशास्त्र हिपार्कस ने इस अयनगति को प्रतिवर्ष कम से कम 36 विकला माना है , परंतु इस समय वह ठीक 40१/४ विकला है और भारतीय ज्योति वेदों के हिसाब से वह 45 विकला है । इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि भारतीयों ने अयनगति को भारतीय ज्योतिषियों ने स्वयं ढूंढ निकाला है , इसमें तनिक भी संदेह नहीं ।
इस वैदिक ज्ञान से ऋषियों ने अपनी कल्पना शक्ति के द्वारा ज्योतिष - संबंधी जो सूक्ष्म ज्ञान अविष्कृत किया था , वह समय की अस्थिरता हैं । समय जिसे काल कहते हैं वह पानी की धारा की भांति अटूट बहता है । उसमें भूत भविष्य और वर्तमान की रेखा नहीं खींची जा सकती । कोई नहीं कह सकता कि इतने बजकर इतने मिनट और इतने सेकंड पर वर्ष समाप्त हुआ और नया लगा , क्योंकि काल का प्रवाह अबंधित गति से बह रहा है । यज्ञों के लिए ऋषियों को वर्ष का कोई एक ऐसा दिन निश्चित करना पड़ता था जिससे वे 6 - 6 महीने के दोनों अयनों को बाट दे । उन्होंने उस दिन का

Edit with WPS Office

नाम विषुवान् रखा था और उसको निश्चित भी कर दिया था , परंतु काल प्रवाह अस्थिर है यह सोचकर उन्होंने गोपथ ब्राह्मण में लिखा है कि विषुवान् संवत्सर का आत्मा है और दो महीने अंग है । जहां आत्मा वहां अंग और जहां अंग वहां आत्मा है । आत्मा अंगों से अलग नहीं और अंग आत्मा से अलग नहीं । इसी प्रकार इधर वाले दिनों का वह पसीना है जो उधर वाला है और उधर वाले दिनों का यह पसीना है जो इधर वाला है । यही संवत्सर है । कितना सूक्ष्म विज्ञान है । वे यह मानते हैं कि 2 महीनों के बीच में कोई स्थान है जो दोनों का आत्मा है , परंतु उसका नियंत्रण नहीं हो सकता , इसलिए कभी तनिक सा इस ओर हो जाता है , क्योंकि दोनों खंड एक दूसरे का पसीना है ।

दूसरी सूक्ष्मता हैं सूर्य के उदय अस्त की । आधुनिक विद्वान मानते हैं कि सूर्य का उदयास्त वैदिक काल में आजकल की भांति ज्ञात नहीं था , परंतु यह बात सत्य नहीं है । ऐतरेय और गोपथ ब्राह्मण में लिखा है कि न सूर्य कभी अस्त होता है और न उदय होता है । वह सदैव बना रहता है , परंतु जब पृथ्वी से छिप जाता है तब रात्रि हो जाती है और जब पृथ्वी उसकी आड़ से हट जाती है तब दिन हो जाता है । यही बात डॉक्टर हाग ने ऐतरेय ब्राह्मण के अनुवाद में स्वीकार की है । ऐसी दशा में कौन कह सकता है कि खगोलिक भूगोल का सूक्ष्म ज्ञान उन्होंने आविष्कृत नहीं किया था । इसी प्रकार पृथ्वी का आकर्षण भी उन्होंने ज्ञात कर लिया था । भास्कराचार्य स्पष्ट शब्दों में कहते हैं कि कोई भी भारी पदार्थ ऊपर की ओर फेंकने से वह नीचे गिर जाता है , इससे सिद्ध है कि पृथ्वी में आकर्षण है । लोग इस आकर्षण के अविष्कार का श्रेय न्यूटन को देते हैं , परंतु न्यूटन से सैकड़ो वर्ष पूर्व यह ज्ञान यहां उत्पन्न हो चुका था । इसी प्रकार ग्रहों के आकर्षण की जो दूसरी बात समुद्र में ज्वार भाटे की है वह भी आर्यों को ज्ञात थी । विष्णु पुराण में लिखा है कि यथार्थ में ज्वार भाटे से समुद्र का जल कम और अधिक नहीं हो जाता , प्रत्युत अग्नि पर थाली में जल रखने से जिस प्रकार वह उमड़ पड़ता है , उसी प्रकार चंद्रमा के आकर्षण से ज्वार भाटा होता है । ज्योतिष का सूक्ष्म गणित बीजगणित के बिना सरलता से नहीं हो सकता , अतः आर्यों ने याज्ञिक ज्योतिष के लिए उसका भी आविष्कार किया था । मोनियर विलियम लिखते हैं कि बीजगणित और रेखा गणित का अविष्कार

Edit with WPS Office

तथा ज्योतिष के साथ उनका उपयोग सबसे प्रथम हिंदुओं के द्वारा ही हुआ है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 132. यज्ञों से ऋण -- मुक्ति

ब्राह्मण ग्रंथों में लिखा है कि **जायमानो ह वै पुरुषस्त्रिभिऋणैऋणवान् जायते ;** अर्थात प्रत्येक मनुष्य तीन प्रकार के ऋणों से ऋणी उत्पन्न होता है । ये तीनों ऋण देव ऋण , ऋषिऋण , और पितृ ऋण कहलाते हैं । कर्म यज्ञ करने से देव ऋण , ज्ञान यज्ञ करने से ऋषि - ऋण और पुत्रेष्टि यज्ञ करने से पितृ ऋण चुकते है । कर्म यज्ञ का हम विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए आ रहे हैं । इस यज्ञ में अग्निहोत्र की प्रधानता रहती है । जल , वायु आदि प्राकृतिक देवता हमारा नित्य कल्याण करते रहते हैं । यही इनका हम पर ऋण होता है । इस ऋण से हम तभी छूटते हैं जब हम जल , वायु आदि को हवन के द्वारा शुद्ध कर दें । यही ऋण से अनृण होना है । इसी प्रकार ऋषि लोग वेद विद्या पढ़ाकर हमें ऋणी करते हैं । इस ऋण से हम तब छूटते हैं जब ऋषि - संतान - मनुष्य को विधा का दान दे । जिस प्रकार के ये दो ऋण है उसी प्रकार का पितृऋण भी है । पिता , पितामह और प्रपितामह आदि हमें जन्म देकर लालन-पालन और शिक्षण से योग्य बनाते हैं । यही हम पर उनका ऋण होता है । इस ऋण से हम केवल भोजन - वस्त्र देकर और सेवा टहल करके ही अनृण नहीं हो सकते । इस ऋण से हम तभी अनृण हो सकते हैं जब हम भी उन्हें अपनी स्त्री से उत्पन्न करें और लालन-पालन शिक्षण से

Edit with WPS Office

योग्य बनावें , परंतु यह तभी हो सकता है जब हम उनको अपने वीर्य में आकर्षित करके अपनी स्त्री के गर्भ से उत्पन्न कर सके । जिस क्रिया से यह सब कुछ किया जा सकता है उस कर्म का नाम पुत्रेष्टि यज्ञ है । पुत्रेष्टि यज्ञ का बहुत सा भाग पुंसवन आदि संस्कारों में और पितृ श्राद्ध आदि कर्मों में सम्मिलित है , अतः हम यहां थोड़ा सा भाग केवल पितृ श्राद्ध का लेकर पुत्रेष्टि यज्ञ का दिग्दर्शन कराते हैं ।

यह सभी जानते हैं कि जितने मनुष्य मरते हैं वे या तो सूर्य लोक को जाते हैं या चंद्रलोक को । जो मोक्ष को जाते हैं और आवागमन के चक्कर से छूट जाते हैं वे सूर्य लोक को जाते हैं , परंतु जो कर्मवश फिर लौटने के लिए जाते हैं , वे चंद्रलोक को जाते हैं । चंद्रमा वीर्य का देवता है । चंद्रलोक से जीव मनुष्यलोक को आते हैं और किरणों के द्वारा मनुष्य के वीर्य में प्रवेश कर जाते हैं । मनुष्य वीर्य से स्त्री के गर्भ में जाते हैं और गर्भ से बाहर निकलकर संसार में विचरते हैं । इस प्रकार से पुनर्जन्म का कर्म चालू रहता है , परंतु कारणवंश जब मनुष्य के वीर्य में अथवा स्त्री के गर्भाशय में किसी प्रकार का दोष उत्पन्न हो जाता है और संतान नहीं होती अथवा लड़की ही लड़की होती है तो पुत्रेष्टि यज्ञ अथवा पुंसवन के द्वारा वह दोष दूर कर दिया जाता है और पुत्र उत्पन्न होता है । जिसके लड़की ही लड़की उत्पन्न होती हो वह पुंसवन संस्कार के दिन से 2 महीने तक अथर्ववेद के अनुसार शमीवृक्ष पर उगे हुए वटवृक्ष की जड़ को लाकर और पानी में पीसकर गर्भवती स्त्री को पिलावे तो पुत्र उत्पन्न होगा ; परंतु दंपत्ती के योग्य होते हुए जिनके संतान ही ना होती हो वे पुत्रेष्टि यज्ञ के द्वारा ही पुत्रोत्पन्न करें ।

हम लिख आये हैं कि मनुष्य पुत्रोत्पन्न करके ही पितृऋण से अनृण होता है , इसलिए पुत्रकामा मनुष्य पितृपिण्डयज्ञ , अर्थात पुत्रेष्टियज्ञ के द्वारा अपने पितरों को हविष्यान्न में आकर्षित करके वह हवि स्त्री को खाने के लिए देवें , किंतु प्रश्न यह है कि चान्द्रलोक से जीवो को किस प्रकार खींचा जाए ? जीवो के खींचने की वही विधि है , जो सूर्यकांत मणि के द्वारा सूर्य ताप के खींचने में और चंद्रकांतमणि के द्वारा चान्द्रजल के खींचने में प्रयुक्त की जाती है । जिस प्रकार चंद्रकांत के प्रयोग से चाद्रजल की प्राप्ति होती है । उसी प्रकार चान्द्रपदार्थों को एकत्रित करने से चान्द्रवीर्य भी आकर्षित होता है । चान्द्रवीर्य ही में जीव रहते हैं , इसलिए वे उन पदार्थ में खींच आते हैं जो

Edit with WPS Office

चन्द्राकर्षण के लिए विधि से एकत्र किये जाते हैं । वे पदार्थ दूध , घृत , चावल , मधु , तिल , रजतपात्र , कुश , और जल है । ये सभी पदार्थ वीर्यवर्धक है , इसलिए आकर्षणानुकर्षण के सिद्धांत अनुसार चान्द्रवीर्य का इनके साथ संबंध हो जाता है और चान्द्रवीर्य खिंच आता है । यह प्रक्रिया लोग शरद पूर्णिमा के दिन करते हैं , परंतु विधिपूर्वक क्रिया तो पितृ श्राद्ध के ही समय होती है । पितृ श्राद्ध अपराह्न के समय होता है । उसमें घृत , दूध , मधु , कुश , आदि सभी पदार्थ रखे जाते हैं । पितरों का प्रतिनिधि पुत्र अथवा पौत्र भी उन पदार्थों को छूता हुआ वहीं पर बैठता है , इसलिए यह सब हवि आदि सामग्री उसी प्रकार का यंत्र बन जाती है जिस प्रकार चन्द्रकान्त मणि । इसी में पितर खींचकर आते हैं और हविपिण्ड सूंघने अथवा खाने से वीर्य और गर्भ में जाते हैं । शतपथ ब्राह्मण. 14.4.2.29 ______ में लिखा है कि **अथ यत् प्रजाममिच्छते , यत् पितृभ्यों निपृणाति तेन पितृणाम् ;** अर्थात जो प्रजा की इच्छा रखता हो वह पितृयज्ञ करें । यजुर्वेद . 2.23 में लिखा है कि ____

अर्थात इस पुरुष की भांति के आकाशस्थ कुमार पितर गर्भ को धारण करें ।

ज्ञात हुआ कि आकाशस्थ पितर पितृयज्ञ या पुत्र यज्ञ के द्वारा गर्भधारण करते हैं । गृह सूत्र में इसी मंत्र के लिए लिखा है कि अर्थात इस आधत मंत्र को कहकर बीच के पिंड को पत्नी खा जाए । यही बात मनुस्मृति में भी लिखी है कि ____

अर्थात पितृपूजन में रत पुत्र की इच्छा रखने वाली पतिव्रता स्त्री बीच का पिंड खावे ।

इस प्रकार से यह पुत्रेष्टि यज्ञ की क्रिया पितृपिण्ड श्राद्ध में घुसीं हुई पाई जाती है । कहने का भाव यह है कि जहां देव और ऋषिगण कर्मयज्ञ और ज्ञानयज्ञ से चुकते है वहां पितृऋण पुत्रेष्टि यज्ञ से चुकता है , अर्थात सब प्रकार के ऋण यज्ञों से ही चुकते।

भरद्वाज मुनिकृत यन्त्राणव के वैज्ञानिक प्रकरण में लिखा है कि जल और वायु के स्तम्भन से जो शक्ति उत्पन्न होती है , उसे मंत्र कहते हैं और दंड , चक्र , दांतों की योजना , सरणि और भ्रामक आदि के द्वारा जिस व्यक्ति का वर्धन और सठ्चालन किया जाता है , उसे यंत्र कहते हैं तथा मनुष्यों और

Edit with WPS Office

पशुओं की शक्ति से जो कार्य किया जाता है उसे तंत्र कहते हैं । यहां इन मंत्र , यंत्र और तंत्रों के अनेक प्रमाण मिलते हैं । जो विज्ञान की उत्कृष्टता को प्रकट करते हैं । हम ज्योतिष के प्रकरण में लिख आये हैं कि याज्ञिकों ने ग्रहबेध के लिए तुरीययन्त्र बनाया था और भूगोल तथा खगोल का नक्शा भी कास्ट के गोलों पर बना लिया था । इसी प्रकार ऋतु जानने के लिए उन्होंने थर्मामीटर , बारोमीटर और घड़ी भी बना रही थी । उन्होंने वह यंत्र भी बना दिया था जो आंप ही आंप चलता था । हमने यह भी लिख दिया है कि वे पृथ्वी की आकर्षण शक्ति और ज्वार भाटे के कारणों को जानते थे तथा विधुदाकर्षण , अर्थात चुंबक शक्ति से पूर्ण परिचित थे ।

अब हम उन यंत्रों का वर्णन करते हैं जो सवारी , मनोरंजन और युद्ध आदि के काम आते थे । **भोजनप्रबंध में लिखा है कि राजा भोज के पास एक काठ का घोड़ा था जो एक घड़ी में 11 कोस जाता था और एक पंखा था जो बिना किसी मनुष्य की सहायता से आप ही आप खूब तेज चलता था और खूब हवा देता था । इसी प्रकार धम्मपद की कथा वासुलदता वत्थु पृष्ठ 98 पर लिखा है कि कौशांबी के राजा उदयन से उजयिनी के राजा चण्डप्रधोत की शत्रुता थी । प्रधोत ने राजा उदयन को धोखा देकर पकड़ने के लिए एक हस्तीयन्त्र तैयार करवाया । यह हाथी लकड़ी का था । इसका रंग सफेद था । वह आप ही आप यन्त्र के सहारे चलता था । इसके अंदर 60 योद्धा बैठ सकते थे ।** प्रधोत ने इस हाथी को उदयन के जंगल में छुड़वा दिया । वह इधर-उधर फिरने लगा । सफेद हाथी की खबर पाकर उदयन उसे पकड़ने के लिए आया , परंतु स्वयं पकड़ा गया । उसी ग्रंथ की कथा विसाखवत्थु पृष्ठ 195 में लिखा है कि विशाखा के लिए एक महालता नाम का आभूषण बनाया गया था । यह शिर से पैर तक था । 4 महीने में 500 सुंनार इसे बना पाये थे । इसका मूल्य उस समय के किसी सिक्के के भाव से 9 करोड़ था । इस आभूषण में एक मोर लगा था जो हर समय विशाखा के मस्तष्क पर नाचा करता था । इसी प्रकार महाभारत आदि पर्व में उत्तक के घोड़े का वर्णन है । वह भी यन्त्र के ही सहारे चलता था । शहबाजगढी (पेशावर) मैं एक पत्थर पर रेल का इशारा भी है । विमान नामक यंत्र तो वैदिक काल से ही इस देश में प्रचलित था । वेद में विमान के बनाने की विधि बतलाते हुए कहा गया है कि जो आकाश में पक्षियों के उड़ने की स्थिति को जानता है

Edit with WPS Office

वह समुद्र __ आकाश की नाव __ विमान को जानता है । संस्कृत में ' वी ,पक्षी को कहते हैं और ' मान , का अर्थ अनुरूप अथवा सदृश है । ऊपर हमने जो वेद में विमान बनाने की विधि की चर्चा की है , उससे भी यही ज्ञात होता है कि विमान की रचना पक्षियों के ही सिद्धांत पर हुई थी । आज हम प्रत्यक्ष भी ऐरोप्लेन को चिड़िया की ही शक्ल का उड़ता हुआ देखते हैं । इससे ऊपर की बात में कुछ शंका नहीं रह जाती ।

पंचतंत्र की एक कथा में लिखा है कि एक धूर्त मनुष्य विष्णु का रूप धारण करके आया करता था और गरुड़ की आकृति का ही वाहन लाता था । इसी प्रकार गयाचिन्तामणि नामी ग्रंथ में मयूर की आकृति के विमान का वर्णन है । वाल्मीकि रामायण सुंदरकांड सर्ग 9 , में पुष्पक विमान का वर्णन है । और भागवत में शाल्व राजा के विमान का भी वर्णन आया है । शाल्व का यह विमान भूमि , आकाश , जल , और पहाड़ पर भी आरानी से चलता था । सबसे विशाल और भव्य विमान कर्दम ऋषि का था । भागवत में इसका भी अपूर्व वर्णन देखने योग्य है । विमान के बनाने वाले कारीगर का हाल इस प्रकार लिखा है कि बोधिराजकुमार ने एक महल बनवाया । बनाने वाले कारीगर ने उसे बड़ा ही विचित्र बनाया । बोधिराज ने सोचा कि यह कारीगर कही दूसरे का मकान भी ऐसा ही न बना दे , इसलिए इसके हाथ काट लेने चाहिए । राजा ने यह बात अपने एक सलाहकार से कह भी दी । सलाहकार ने यह खबर कारीगर के पास पहुंचा दी । कारीगर ने अपनी स्त्री से कहला भेजा कि वह घर द्वार , माल - मता बेचकर एक दिन इस महल के देखने की प्रार्थना करें । स्त्री ने वही किया और राजा से आज्ञा लेकर वह महल देखने गई । कारीगर उसे एक कोठरी में ले गया और स्त्री तथा लड़कों समेत एक गरुड़ यंत्र पर चढ़कर भाग गया और नेपाल के काठमांडू में रहने लगा । इन सब उपलब्ध परमाणो से जाना जाता है कि इस देश में विमान बनाने की कला ज्ञात थी । विमान पक्षी (गरुड़) की आकृति के बनते थे । इसलिए विष्णु का वाहन गरुड़ कहा गया है । इन विमानों से संबंध रखने वाली एक प्राचीन पुस्तक है । इसका नाम है **अंशुबोधनी ,** यह भारद्वाज ऋषि के बनाई हुई है । इस पुस्तक में अनेक विधाओं का वर्णन है । प्रत्येक विद्या के लिए एक-एक अधिकरण रखा गया है । इन अधिकरणों में एक विमान अधिकरण भी है । इस अधिकरण में आये हुए भारद्वाज ऋषि के

Edit with WPS Office

शक्त्युमोद्यष्टौ , सूत्र पर बौधायन ऋषि की वृत्ति इस प्रकार है ____
विमान की रचना और उनकी आकाश संचारी गति के आठ विभाग इस प्रकार हैं ___ बिजली से चलने वाला , अग्नि जल और वायु आदि से चलने वाला , वाष्प से चलने वाला , पंचशिखी के तेल से चलने वाला , सूर्य किरणों से चलने वाला , तारा मुख उल्कारस (चुंबक) से चलने वाला , सूर्यकांत - चंद्रकांत आदि मणियों से चलने वाला और केवल वायु से चलने वाला , इस प्रकार से विमान बनाने और चलाने के अनेक प्रमाण मिलते हैं । इन उपलब्ध प्रमाणों से यह नहीं कहा जा सकता है कि भारतीय आर्य विमान बनाना नहीं जानते थे ।
उनके अस्त्र-शस्त्रों में अनेक प्रकार के यंत्र सम्मिलित थे । तोप और बंदूक यंत्र बनाने की विस्तार पूर्वक विधि **शुक्र नीति अध्याय 4** में लिखी है । वहां बंदूक और तोप दोनों का वर्णन है । बारुद बनाने और बारूद के द्वारा उनके चलाने का भी वर्णन है । पुराने जमाने में ऐसा यंत्र भी बनाया जाता था जो मनुष्य की भांति बोलता था ।
विक्रमादित्य के सिंहासन की पुतलियां बराबर बोलती थी , यही नहीं , प्रत्युत वाल्मीकि **रामायण लंका कांड सर्ग 80 में** लिखा है कि रावण ने एक कृत्रिम सीता बनाई थी जो राम का नाम ले लेकर रोती थी । इसी प्रकार वैदिक काल में दूर समाचार भेजने का भी साधन था । यह साधन कबूतर थे । ये कबूतर पत्र पहुंचाया करते थे । ऋग्वेद में इनका वर्णन है । कबूतरों के सिवा थोड़ी-थोड़ी दूर पर नगाड़े रखवाकर भी एक दूसरे की आवाज के द्वारा शीघ्र और दूर खबर पहुंचाई जाती थी । अभी हाल में अमृत बाजार पत्रिका ने इस विषय से संबंध रखने वाला एक बड़ा ही उत्तम निबंध छापा है । वह कहता है कि दक्षिण हैदराबाद में पत्थर घाटी नाम का एक ग्राम है । उस ग्राम में डॉक्टर सैयद मुहम्मदक्रासिम साहब रहते हैं । आपके पूर्वज बीजापुर राज्य के पुरोहित थे । आपके यहां संस्कृत का बहुत बड़ा पुस्तकालय है । आप इस पुस्तकालय की अच्छी देखभाल रखते हैं । इस पुस्तकालय में एक संस्कृत की पुस्तक है जिसमें अनेक विधाओं के वर्णनों के साथ दूर देश में समाचार भेजने वाले यंत्र का भी वर्णन दिया हुआ है । इसमें लिखी हुई विधि के अनुसार दो पत्थरों को बनाकर और चाहे जितनी दूरी पर रखकर उनके द्वारा बातचीत कर सकते हैं । हमारा विश्वास है कि पुराने जमाने में इस यंत्र

Edit with WPS Office

के द्वारा काम भी लिया जाता होगा , **क्योंकि शुक्र नीति अध्याय 1 , श्लोक 367 में लिखा है कि अर्थात राजा एक दिन में 10000 कोस की बात जाने ।** इससे ज्ञात होता है कि शीघ्र जल्दी खबर पहुंचाने वाले यंत्रों का आविष्कार हो चुका था ।
हमने वहां तक सूक्ष्म यंत्रों का पर्याप्त वर्णन कर दिया है । अब थोड़ा सा भौतिक विज्ञान का भी वर्णन करते हैं । पुराने जमाने वालों ने सूर्यकांतमणि का तो आविष्कार किया ही था , किंतु उससे भी सूक्ष्म चंद्रकांत मणि का भी आविष्कार कर लिया था , अब तक यूरोप की बढी हुई साइन सभी ऐसा वैज्ञानिक यंत्र नहीं बना सकती । **चंद्रकांत मणि के द्वारा चंद्रमा से पानी बनाया जाता था और बीमारों को पिलाया जाता था । सुश्रुत सूत्रस्थान. 45.30 में लिखा है कि ____**
अर्थात चंद्रकांत से बना हुआ जल शीतल , विमल , आनंद देने वाला , पित्त , ज्वरदाह और विष का नाश करने वाला है ।
यह चंद्रकांत मणि अकबर बादशाह के जमाने तक थी । इसकी चर्चा ' आईनअकबरी ,, में आई है । सूर्य की सात किरणों का प्रभाव भी यहां वालों को ज्ञात था । वेद के सप्ताश्व प्रकरण अनुसार सूर्य की सात किरणों का ज्ञान संसार में सबसे पहले आर्यों ने ही प्राप्त किया था । वे आकाश की अन्य शक्तियों का विज्ञान भी जानते थे । ज्योतिष के ग्रंथों में भूमि से ऊपर की दूरी लिखी हुई है जहां पृथ्वी के कण , वायु , मेष , और विद्युत आदि रहते हैं । वहां लिखा है कि अर्थात मेघ , विद्युत और वायु आदि भूमि से बारह योजन की ऊंचाई पर है । यही नहीं , प्रत्युत सूर्य के अंदर के उन काले धब्बों को भी देख लिया था , जिनको बड़े-बड़े पाश्चात्य विद्वान ज्योतिषियों ने बड़े-बड़े दूरबीनो के सहारे जाना है । वाल्मीकि रामायण में रामचंद्र लक्ष्मण से कहते हैं कि ____
अर्थात देखो विमल आदित्य में छोटा सा काला धब्बा दिखलाई पड़ता है ।
इन वर्णनों से स्पष्ट है कि उस युग में विज्ञान बहुत ऊंचे दर्जे तक पहुंच चुका था और यहां बहुत ही ऊंचे वैज्ञानिक साधन प्रस्तुत थे । भारत के जिन दिनों का यह वर्णन है वे दिन यहां वैज्ञानिक दृष्टि से उसी प्रकार के थे , जैसे आजकल यूरोप के हैं । हम कह आए हैं कि सूक्ष्मतर विज्ञान से विलासिता बढ़ती है । वह विलासिता यहां भी बढ़ी थी और उसने पृथ्वी के दूर-दूर देशों

Edit with WPS Office

तक अपना विष फैलाया था। यदि सच कहें तो हम कह सकते हैं कि भारत देश आजकल उसी पाप का प्रायश्चित कर रहा है। यहां के सूक्ष्मतर विज्ञान के द्वारा यहां विलासिता के अनेक पदार्थ बनने लगे थे और दूसरे देशों का धन अपहरण होने लगा था। यहां की मज़लीन और मलमल , यहां की छींट और यहां के जवाहरातों ने संसार को चकाचौध में डाल दिया था। एंटानियो सैन्सन ने छींट छापने के विषय में एक बहुत बड़ा महत्वपूर्ण ग्रंथ लिखा है। उसमें लिखा है कि ईस्वी सन् के 2000 वर्ष पूर्व इस विद्या को भारतीय जानते थे। समस्त लेखक इस विषय में सहमत है कि भारतवर्ष कपड़ा पर छींट छापने की जन्म भूमि है। यूरोप वाले इस कला की नकल करने के बहुत दिन पूर्व भारत के छपें कपड़े को जानते थे। इतने वर्ष बीतने पर हमने रंगों में अंतर किया है , परंतु उनका मूल रूप वैसा ही है जैसा भारत वासियों ने बताया था।

आर्यों ने ऊंचे से ऊंचे दर्जे के व्यापार किए थे। सबसे बहुमूल्य जवाहरत होते हैं , परंतु आर्यों ने जवाहरत के धंधे की भी पराकाष्ठा कर दी थी। **प्रेशियस स्टोन्स एण्ड जेम्स ' नामी , ग्रंथ में एडविन डब्ल्यू स्ट्रीटर एफ० आर० एस० लिखते हैं कि बहुत पुराने समय से हिंदुओं को रत्नों का शौक है।** वे आदिकाल से ही हीरे निकालते रहे हैं।

राजा सुरेंद्र मोहन टैगोर के ' मणिमाला , नामक ग्रंथ के प्रमाण से वे लिखते हैं कि कोहनूर आदि हीरे भारतवर्ष की ही खानो से निकले हैं। आर्य उन्हें काटना और कमल बनाना जानते थे। वे उन्हें रंगना , उनके रंग बनाना और उन पर से रंग निकलना भी जानते थे। ऐसा एक भी रतन नहीं है , जिसें वे पहले ही से न जानते हो। ये सब बड़े-बड़े धंधे दूसरे देशों के साथ जहाजों के द्वारा होते थे। यहां का नौकाशास्त्र बहुत ही उन्नत दशा में था। नौ शब्द से ही अंग्रेजी का नेवी शब्द बना है।

सबसे प्रथम सिकंदर की चढ़ाई होती है। हम उससे हारते हैं , परंतु क्या हम सिकंदर के बल या रण कौशल से हारते हैं ? नहीं ! हम अपने ही बल और रणकौशल से हारते हैं। हमारे ही आदमी सिकंदर की सेना में शामिल होते हैं और हमारा पराजय होता है। इतिहास में लिखा है कि तक्षशिला के मोफी ने 5000 योद्धाओं को साथ लेकर सिकंदर को सहायता दी और और पोरस को हराया।

Edit with WPS Office

यदि यह देशशत्रु सिकंदर को मदद न देता तो सिकंदर को आगे बढ़ने का साहस न होता , क्योंकि मगध के राजा महानंद की सेना की चढ़ाई से सिकंदर घबरा गया था । यहां हम स्वयं ही इस सिकंदर की विजय के कारण सिद्ध होते हैं ।

हम पर दूसरा विजय मुसलमानों का है । मुसलमानो को बुलाने वाले , उनको सहायता देने वाले , उनकी नौकरी करने वाले और उनसे रिश्तेदारी करने वाले भी तो हम ही हैं । उनको हमने ही बुलाया और हमने ही उनकी अधीनता स्वीकार की । इससे प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं है ।

यूरोप निवासियों की विजय का तीसरा इतिहास हमारे सामने है । कालीकट के राजा ने उन्हें टिकाया । मुसलमान बादशाहों ने उन्हें व्यापार करने , जमीन खरीदने , फौज रखने और सिक्का चलाने का परवाना दिया । हमारे देशी सिपाहियों ने अंग्रेजों की फौज में नौकरी की और बेशर्मी से अपने आप को पराजित करते रहे ।

हममें कभी कम ताकत नहीं रही , हममें ज्ञान की कभी कमी नहीं रही और इसमें धन की भी कभी कमी नहीं रही । अगर कोई कमी सभी हुई है तो परस्पर के मेल मिलाप की । हममें मतभेद बहुत ही शीघ्र हो जाता है । यह हमारे मिश्रित दर्शन ज्ञान का ही दोष है । जहां दर्शन मिश्रित हो जाता है वहां के दार्शनिकों में सदैव मतभेद बना रहता है । दर्शन भी सूक्ष्मतर ज्ञान की एक शाखा है । वह सदैव अस्थिर रहता है । इसलिए हम दार्शनिक मतभेद को छोड़कर जब तक पूर्ण शुद्ध वैदिक न हो जाए तब तक हमारा मतभेद मिट्ट नहीं सकता और जब तक मतभेद न मिटें तब तक हमारा कल्याण नहीं हो सकता । इस प्रकार हमने इस सूक्ष्मतर ज्ञान के नमूने दिखलाते हुए यह बतलाया कि आर्यों ने सूक्ष्मतर ज्ञान वेद से ही उपलब्ध किया था ,उसी से बढ़ाया है और संसार के किसी भी अन्य देश से कोई ज्ञान नहीं सीखा , प्रत्युत दूसरों को सिखलाया है । ऐसी दशा में आदिज्ञान के स्वरूप के साथ वेद के ' कर्मयज्ञ , पूर्ण रीति से मिलते हैं , ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 133. ज्ञानयज्ञ

ज्ञानयज्ञ का सम्बन्ध विद्याध्ययन से है । वैदिकों में इसका बड़ा माहात्म्य था । नित्य के पच्च महायज्ञों में ब्रह्मयज्ञ सर्वप्रथम है । इस सर्वप्रथम ब्रह्मयज्ञ के विषय में मनु महाराज मनुस्मृति में कहते हैं कि **अध्यापनं ब्रह्मयज्ञ: ;** अर्थात पढ़ाना ही ब्रह्मयज्ञ है । द्विजों को चाहिए कि वे नित्य पढ़ावें , क्योंकि उन पर ऋषिऋण है , परंतु प्रश्न तो यह है कि बिना पढ़े पढ़ावें क्या ? इसलिए अभिप्राय यह निकला कि वे स्वयं नित्य पढ़े । मनुस्मृति में स्वाध्याय के लिए लिखा है कि ____

मनुस्मृति. 2.107 ______ अर्थात जो नियत समय में विधि से 1 वर्ष भी स्वाध्याय करता है , उसको स्वाभाविक ही दूध , दधि , घृत , और मधु नित्य मिलते हैं ।

इसी प्रकार ब्राह्मण ग्रंथों में लिखा है कि ____

शतपथ ब्राह्मण. 11.5.7.2 , ऐतरेय ब्राह्मण. 5.1.1 ______ अर्थात जितना जितना वह स्वाध्याय करता है उतना ही उस यज्ञ का फल होता है , इसलिए स्वाध्याय अवश्य करें । यही लोक - परलोक का मार्ग है , यही सब कर्तव्यों का कर्तव्य कर्म है , यही सत्य है , और यही ब्रह्मप्राप्ति का उपाय है , इसलिए स्वाध्याय अवश्य करें ।

गीता में इस ज्ञानयज्ञ के विषय में कहा है ____

भगवतगीता. 4.33 ______ अर्थात द्रव्ययज्ञ __ कर्मयज्ञ बहुत उत्तम है , परंतु ज्ञानयज्ञ तो बहुत ही श्रेष्ठ है । ज्ञान के सामने सब कर्म समाप्त हो जाते हैं ।

शास्त्रों में इस प्रकार ज्ञानयज्ञ का महात्म्य बतलाया गया है । इस ज्ञानयज्ञ में यधपि तृण से लेकर ईश्वरपर्यंत का ज्ञान सम्मिलित है , परंतु मुख्यत: इस

Edit with WPS Office

ज्ञान के तीन विभाग हैं । प्रथम विभाग में धर्म है । सदाचार , सभ्यता , वर्णाश्रम मर्यादा और संस्कार आदि इस धर्म विभाग के अंग है । दूसरा विभाग विधाओं से संबंध रखता है । वैधक , ज्योतिष , गणित , भूगोल , रसायन विज्ञान , कला , संगीत आदि इसके अंग है । तीसरा विभाग पर परलोक से संबंध रखता है । ईश्वर ,जीव , पुनर्जन्म , कर्म , कर्म फल , स्वर्ग , नरक , और बन्ध - मोक्ष आदि इसके अंग है । इन तीनों विभागों को जानना ही ज्ञान यज्ञ कहलाता है । इस ज्ञानयज्ञ से दो प्रकार के यज्ञ उत्पन्न होते हैं ____ **कर्मयज्ञ और उपासना यज्ञ** । कर्मयज्ञ का वर्णन इसके पहले हो चुका है । और उपासना का वर्णन अगले पृष्ठ पर लिखेंगे । बीच का यह ज्ञान यज्ञ ही उक्त दोनों यज्ञों को सफल बनाता है । यह न हो तो भी यज्ञ संपन्न नहीं हो सकता । इस यज्ञ को प्राचीन आर्यों ने बहुत ही अच्छी प्रकार पहचाना था । इसका नाम ब्रह्मयज्ञ है और नित्य के कर्तव्य कर्मों में सम्मिलित है । इस यज्ञ का सर्वप्रधान अंग धर्म है । यदि मनुष्य में धर्म नहीं है __ यदि वह कर्तव्याकर्तव्य को नहीं जानता तो उसका जीवन व्यर्थ है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 13.उपासनायज्ञ

अब तक हम जिस प्रकार के सार्वजनिक सुख - साधक यज्ञों का वर्णन कर आए हैं उनको निस्वार्थ भाव से करने वाला__ सब कुछ देकर भी ' इदं न मम , अर्थात यह मेरा नहीं है , कहने वाला वैदिकों के मत से मोक्षभागी हो जाता है । मनुस्मृति में लिखा है कि **महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनु: ;**

Edit with WPS Office

अर्थात पच्चमहायज्ञों और अन्य यज्ञों से यह शरीर ब्राह्मी बनाया जाता है । ब्राह्मी शरीर का तात्पर्य ब्रह्मयोग्य बनना ही है । फल की आशा का त्याग करके परोपकार - दृष्टि से सार्वजनिक लोकसेवा करने से मोक्ष होता है । इस बात को गीता ने भी माना है । वहां लिखा है ____

भगवत गीता. 5.2 ________

अर्थात सन्यासरूपी ज्ञानमार्ग और लोकसेवा रुपी कर्ममार्ग दोनों मोक्ष के देनेवाले हैं , परंतु ज्ञानमार्ग से कर्ममार्ग विशेष रूप से उपयोगी है ।

मनु ने तो इसे ही वैदिक कहा है । वे कहते हैं कि ____

मनुस्मृति. 2.2 _______ न कामात्या होना अच्छा है और न निष्काम ही होना चाहिए , प्रत्युत काम्यभाव से वेद प्राप्त होता है इसलिए कर्म योग ही वैदिक है ।

यजुर्वेद. 15.50 _______ अर्थात हे देवों ! हम पत्नी , पुत्र , भाई और संपूर्ण धन के साथ उस यज्ञ का संपादन करेंगे , जिससे दिव्य तेजस्वी तृतीय पुण्यलोक में सुखी होकर रहें ।

पुरुष सूक्त में स्पष्ट ही लिखा है कि ____

यजुर्वेद. 31.16 _______ अर्थात देवताओं ने यज्ञ किया जो प्रथम धर्म था । वे उसी से उस महान स्वर्ग को गयें जहां पूर्व काल के वेदर्षि गये है ।

इसका भाव यही है कि शरीरयज्ञ से जो तप , योग आदि क्रियाएं की जाती हैं , उसी का नाम उपासनायज्ञ है । उसी से स्वर्ग प्राप्ति होती है । स्वर्ग और मोक्ष में कोई अंतर नहीं है । वैदिक कालीन स्वर्ग और मोक्ष एक ही वस्तु है , क्योंकि लिखा है कि मोक्ष में जाने वाले सूर्यलोक से जाते हैं और सूर्य लोक ही स्वर्ग है । यदि ऐसा ना होता तो वेद में यह ना लिखा होता कि

____

यजुर्वेद. 40.2 _______ अर्थात कर्म करते हुए ही **100 वर्ष** तक जीने की इच्छा कर । इस प्रकार की जीवन - यात्रा से ही कर्म लिप्यमान न होंगे । इसके सिवा और कोई उपाय नहीं है ।

भाव यह है कि यज्ञयोगरुपी सत्कर्म से कर्मफल लिप्यमान नहीं होते । ऐसे यज्ञों से मनुष्य मोक्ष का अधिकारी हो जाता है , इससे संदेह नहीं , परंतु यह ना समझ लेना चाहिए कि मोक्ष वाले यज्ञ भी यही कर्मयज्ञ ही है , जो सायं प्रातः के अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेधपर्यंत कहे गये है । इन यज्ञों से तो वह

Edit with WPS Office

केवल " ब्राह्मीतनु „ अर्थात ब्रह्म योग्य ही होता है । मोक्ष के लिए तो एक आध्यात्मिक यज्ञ ही निराला है । यह यज्ञ भी सब यज्ञों की भांति दोनों संध्याओं में ही होता है । इसी से इस यज्ञ का नाम संध्या है । संध्या में हृदय की वेदी पर प्राणों की संमिधा से ज्ञान की अग्नि के द्वारा मन की चंचलता का होम किया जाता है । वेद में कहां है कि **तायते सप्तहोता । तन्मे मन : शिवसंकल्पमस्तु ;** अर्थात सातों इंद्रियां होता होकर जब प्राणों का होम करती है तब मन एकाग्र होकर समाधिस्थ होता है और दीनभाव की प्रार्थना से परमात्मा के शरणागत होकर उसको अपने अंदर प्रकट करता है __ साक्षात्कार करता है ।

वेद में लिखा है कि **तमेव विदित्वातिमृत्युमेति** अर्थात उसी का दर्शन प्राप्त होने पर मोक्ष होता है । इस उपासनायज्ञ का वर्णन वेदों , उपनिषदों , गीता , और अन्य तत्संबंधी पुस्तकों में विस्तृत रूप से है । इसको योगयज्ञ भी कहते हैं । संध्या योगयज्ञ ही है । आधुनिक काल में उसका नाम ब्रह्मयज्ञ हो गया है , परंतु ब्रह्मयज्ञ का अर्थ पढ़ाना है , इसलिए वह ज्ञानयज्ञ हैं , उपासनायज्ञ नहीं है । उपासनायज्ञ का संबंध जप , तप , योग , वैराग्य , ज्ञान , भक्ति और ईश्वरपरायणता आदि से ही है । इसलिए उपासनायज्ञ के विषय में गीता उपदेश करती है कि ____

श्रीमद् भगवत गीता. 4.24 , 29 ______ अर्थात ब्रह्म ही हवि है , वही अग्नि है , वही हुत पदार्थ है और यह सब उसी में जाता है । समाधिवालों का यही ब्रह्मकर्म है ।अपान को प्राण में और प्राण को अपान में अर्थात प्राणापान दोनों की गतियां को रोककर ध्यान करें और स्तुति - प्रार्थना करता रहे , क्योंकि **मनुस्मृति. 2.85 ______** में लिखा है कि **विधियज्ञाज्जपयज्ञों विशिष्टों दशभिर्गुणै ;** अर्थात कर्मयज्ञ से यह उपासनायज्ञ __ जपयज्ञ दशगुना उत्तम है । इस उपासनायज्ञ से संबंध रखने वाली समाधि की दशा का वर्णन करते हुए उपनिषद् कहते हैं कि ____

अर्थात धुले हुए मलों के बाद समाधि में निवेश करने से आत्मा को जो सुख प्राप्त होता है , वह वाणी से वर्णन नहीं किया जा सकता । वह सुख तो अपने हृदय से ही अनुभव होने योग्य है ।

इस प्रकार से उपासना यज्ञ का वर्णन किया गया है । यह उपासना यज्ञ सब यज्ञों में श्रेष्ठ है , क्योंकि इस यज्ञ से ही ज्ञान की सब उलझने सूलझ जाती है

Edit with WPS Office

। उपनिषदों में लिखा है कि ____
अर्थात परमात्मा का साक्षात्कार होते ही हृदय की गांठ खुल जाती है , सब संशय नष्ट हो जाते हैं और कर्मों का क्षय हो जाता हैं ।
संसार में देखा जाता है कि उच्च ज्ञान और उच्च शिक्षा प्राप्त लोग भी निभ्रांत नहीं होते , परंतु इस स्थिति में पहुंचकर समस्त विश्व ब्रह्मांड का निभ्रांत ज्ञान हो जाता है , इसलिए वेदों में वह युक्ति बतलाई गई है , जिसका प्रयोग करने से मनुष्य निभ्रांत ज्ञान प्राप्त कर सकता है ।
हमने ज्ञान के विभाग करते हुए बतलाया था कि प्रावेशिका ज्ञान के आगे काल्पनिक ज्ञान होता है , परंतु वह मनुष्यों का सोचा हुआ होने के कारण निभ्रांत नहीं होता , इसलिए आदिज्ञान प्रावेशिका ही था । इस प्रावेशिका ज्ञान में ही लौकिक और पारलौकिक दो प्रकार के ज्ञान है । दोनों प्रकार के ज्ञान यज्ञ में ही ओतप्रोत है । यज्ञ के तीनों विभाग __ **कर्मयज्ञ , ज्ञानयज्ञ , और उपासना यज्ञ** ___ लोक - परलोक की पूर्ण शिक्षा देते हैं । लोक में संबंध रखने वाले कर्मयज्ञ जिस प्रकार चक्रवर्ती राज्य तक पहुंचाते हैं और ज्ञानयज्ञ जिस प्रकार सामाजिक उन्नति की चरम सीमा तक पहुंचाते हैं , उसी प्रकार परलोक शिक्षा से संबंध रखने वाले उपासनायज्ञ जिनका वर्णन हमने अभी किया है , परमेश्वर तक पहुंचा देते हैं । इस प्रकार यज्ञ के तीनों विभाग लोक - परलोक सुखों को देकर जीव को निभ्रांत , निर्दोष बनाकर अक्षयपद और अनुपमेय आनंद देते हैं । इनसे मनुष्य कृतकृत्य हो जाता हैं , उसे फिर कोई इच्छा नहीं रहती ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 135.उत्तरायण क्या है ? अर्थात

Edit with WPS Office

उत्तरायण किसको कहते हैं ?

सूर्य के द्वारा ही संवत्सर तथा काल का विभाग होता है । काल में ही सब जीते और मरते हैं । संवत्सर के दो भाग हैं __ उत्तरायण और दक्षिणायन । शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म ये तीन ऋतुएं अर्थात मकर संक्रांति (माघं) से लेकर आषाढ़ तक के समय को उत्तरायण कहते हैं । इन 6 महीनों में सूर्य उत्तर दिशा की ओर बढ़ता है अर्थात उत्तर दिशा की तरफ जाता है । सूर्य जब उत्तर दिशा की तरफ जाता है , दिन क्रमश: लंबे होने लगते हैं और रात शनै: शनै: छोटी होने लगती है , साथ ही गर्मी भी प्रचंड रूप धारण करने लगती है । उस समय आकाश स्वच्छ हो जाता है , सूर्य का प्रकाश चारों तरफ चमकने लगता है । तब मनुष्य में स्वभावत: त्याग की , निवृत्ति की भावना प्रबल हो जाती है । यह दिव्य भाव उत्पन्न कर देवता बनने का अध्यात्म मार्ग है । इसी मार्ग को श्रेय मार्ग तथा देवयान भी कहते हैं । देवयान का संबंध उत्तरायण , शुक्ल पक्ष , दिन , ज्योति और प्रकाश आदि से है ।

छान्दोग्य उपनिषद्. 5.10.2 ______

यजुर्वेद. 30.6 ______

अर्थात उत्तरोत्तर प्रकाश से प्रकाश में विकसित होते हुए पुरुष का मानव से दिव्यमानव अर्थात अमानव रूप प्रकट होता है , फिर वही अमानव रूप ब्रह्म मार्ग का अनुसरण करता है । यही देवयान मार्ग कहलाता है । जो निवृत्ति अर्थात श्रेय मार्ग का आश्रय लेते हैं वे योग - साधना , ब्रह्मचर्य तथा कठिन तपस्या , श्रद्धा एवं विद्या के सहारे आत्मा को ढूंढ लेते हैं । आत्मा को ढूंढने वाले आदित्यादि लोक जीत लेते हैं । आदित्य लोक प्राण प्रधान है । यही उत्तरायण अर्थात देवयान कहलाता है । इस सीधे रास्ते पर जो चलता है वह पुनः लौटकर जन्म - मरण के बंधन में नहीं आता ।

अत: जो मनुष्य निष्काम उपासक है वे उत्तरायण में देवयान से ब्रह्मलोक को जाते हैं और आदित्य की ज्योति के समान ज्योतिर्मय हो जाते हैं । गीता में भी इस प्रकार कहा गया है कि ___

गीता. अध्याय 8 , श्लोक 24 _______ उपरोक्त मार्ग में मृत्यु को प्राप्त हुए

Edit with WPS Office

ब्रह्मवेत्ता योगीजन ब्रह्म को ही प्राप्त होते हैं ।
इसलिए भीष्म पितामह ने शर शैय्या पर पड़े पड़े प्राण त्यागने के लिए उत्तरायण (देवयान) की प्रतीक्षा की थी । यही जन्म मरण से मुक्त होकर ब्रह्मलीन होने का मोक्ष मार्ग है ।

उपरोक्त प्रमाणों से यह भी समझना होगा कि निष्काम कार्य करने वाले सुकृत जन उत्तरायण अथवा दक्षिणायन में जब भी मृत्यु को प्राप्त होते हो वे देवयान के द्वारा ब्रह्मलोक को ही जाते हैं । इसी प्रकार सकाम पूर्वक कार्य करने वाले राजसी जन पितृयाण से जाते हैं और आवागमन को प्राप्त होते हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 136. दक्षिणायन क्या है.. ? दक्षिणायन किसको कहते हैं ?

संवत्सर के दो भागों में द्वितीय भाग दक्षिणायन है वर्षा , शरद और हेमन्त ऋतु तक अर्थात श्रावण संक्रांति से लेकर पौप मासान्त तक 6 महीनों तक दक्षिणायन कहा जाता है । इन 6 महीनों में सूर्य दक्षिण दिशा की तरफ जाता है , रात धीरे-धीरे लंबी होने लगती है और दिन क्रमश: छोटे होने लगते हैं । इसी विधि में ठंड का प्रकोप भी कम नहीं होता । आकाश में बादल उमड़ने लगते हैं , कोहरे के कारण दिन में अंधेरा छा जाता है , बारिश का मौसम (ऋतु) होने से सर्वत्र पानी और कीचड़ से जन - जीवन

Edit with WPS Office

अस्त-व्यस्त रहता है । इन महीनों में सर्वत्र हरियाली अवश्य दिखाई देती है । खेत - खलिहानों में भोग्य अन्नादि वस्तुएं देखने को मिलती है । जो सकाम कर्मी जन है इष्ट आपूर्त अर्थात यज्ञ - आदि कुआं , वावडी और धर्मशाला आदि परोपकार वाले मानव-कल्याण कार्य को ही अपना कृत्य या लक्ष्य रखकर फल - लाभ तथा यश की इच्छा रखते हैं , वे चन्द्र लोक को जीत लेते हैं । चंद्र भोग्य पदार्थों का प्रतिनिधि है । जिनके जीवन में दक्षिणायन की अवस्था छा जाती है वे रयि (ऐश्वर्य) मार्ग पर प्रवृत्त हों जाते हैं । उनके हृदय में घर गृहस्थी बसाकर पुत्र - पौत्र उत्पन्न कर वंश - कुल बढ़ाने की इच्छा प्रबल होती है । उनका मार्ग पितृयाण अर्थात पिता - पितामह बनने का मार्ग है । संसार के भोगों में चित्त रखने वाले बार-बार जन्म मरण के चक्र में चक्कर लगाते हैं , जिसको प्रेय मार्ग भी कहते हैं ।

- प्रश्नोपनिषद. 1.9 ______
- छान्दोग्य उपनिषद्. 5.10.5 ,6 , 7 ______

अर्थात जो सकाम के उपासक चन्द्र लोक से लौटते हैं दक्षिणायन से पितृयाण मार्ग से जाते हैं । अगर मृत्यु लोक से जाते समय उनका आचरण अच्छा रहा तो अच्छी योनि में पहुंचते हैं अन्यथा कुत्ता , सूअर , चाण्डाल की योनि में जन्म होता है ।

जन्म लेने से पूर्व वे वर्षा द्वारा बरसते है और भिन्न - भिन्न अन्नों में जा पड़ते हैं । इस प्रकार अन्न रूप वीर्य द्वारा अपने - अपने अच्छे बुरे कर्मों के अनुसार भिन्न - भिन्न योनि में जन्म पाते हैं । गीता में भी इसका वर्णन इस प्रकार है ____

गीता. 3.6 ______ अर्थात प्राणान्त के समय जिस भाव को स्मरण करता है उस - उसको ही प्राप्त करता है । कहने का तात्पर्य सकाम कर्मी चंद्रलोक जाकर फिर आकाश , धूम , अभ्र , मेघ , अन्न आदि मार्गो से लौट आते हैं और अपने पूर्व संचित कर्मों के अनुसार नाना योनियों में जन्म ग्रहण करते हैं । गीता में भी कहा है ____

गीता. अध्याय 8 , श्लोक 25 , अध्याय 9 , श्लोक 21 ______ अर्थात वेदों में कहे हुए सकाम कर्म का आश्रय लेने वाले और भोगों की कामना वाले पुरुष पितृयाण से बार-बार आवागमन को प्राप्त होते हैं । यही संवत्सर का दूसरा स्वर्ग पथ दक्षिणायन का मार्ग है ।

Edit with WPS Office

प्रश्न ______

मरने के बाद जिन प्राणियों की आत्मा देवयान तथा पितृयान के मार्ग से नहीं जाती हैं उन आत्माओं की क्या गति होगी अर्थात उन आत्माओं का किस प्रकार आवागमन होगा ..?

आत्मा पितृयान और देवयान इन दोनों मार्ग में से किसी एक मार्ग से भी नहीं जाती है उनका **जायस्व - मृयस्व** जन्म - मरण यह तीसरा मार्ग है । उपनिषद के ऋषि कहते हैं ____ **अथैतयो: पथोर्न... तदेषश्लोक: ।।** **छान्दोग्य उपनिषद्. 5.10.8** ।।

विवेकशील और उच्च चेतना में जीने वाले मनुष्य को छोड़कर अन्य मनुष्य सहित सभी कीट - पतंग , छोटे-छोटे जन्तु और सूक्ष्म प्राणी तथा वनस्पतियों का गर्भ में जाना और आना यही जन्म - मरण वाला तीसरा मार्ग है । इस तीसरी अवस्था की तुलना **बृहदारण्यक उपनिषद्. 4.4.3 ______** में तृणजलायचक सुंडी (जौंक) से की है ।

तधथा तृणजलायूका... हरति ।। **बृहदारण्यक उपनिषद्. 4.4.3** ।।

जिस प्रकार तिनके पर बैठीं जौंक तिनके के सिरे पर जाकर दूसरे तिनके पर पहुंचकर अपने आपको समेट लेती है इसी प्रकार आत्मा भी तुरंत अपने आपको दूसरी योनि में समेट लेती है । इससे स्पष्ट है कि मृत्यु के पश्चात आत्मा का कर्म अनुसार का जायस्व और मृयस्व को भी शास्त्रों में आवागमन का तीसरा मार्ग कहां है । दूसरी बात जो व्यक्ति दुर्घटना के कारण से हो अथवा अन्य कोई भी कारण से हो लंबे समय तक बेहोशी की स्थिति में रहते हैं अर्थात कोमा में रहते हैं , वह एक प्रकार गाढ़ निंद्रा की स्थिति ही है । उस समय बाहरी शरीर शून्य होने पर भी अंदर शरीर में क्रिया - प्रतिक्रिया चलती रहती है । चेष्टा रहित शरीर होने पर भी उस समय जीवन में किये गये शुभ - अशुभ कर्मों को जीवात्मा प्रत्यक्ष देखता रहता है । बेहोशी की स्थिति में शरीर से जीवात्मा निकल जाने पर पूर्ण किए गये कर्मों के अनुसार ही पुनः देह (शरीर) प्राप्त करता है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 137. मनुष्य की परिभाषा

' मनुष्य उसी को कहना है कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख -दुख और हानि - लाभ को समझे । अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे । इतना ही नहीं किंतु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ , निर्बल और गुणरहित क्यों न हो , उन की रक्षा , उन्नति , प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ , महाबलवान् और गुणवान् भी हो तथापि उसका नाश , अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें अर्थात जहां तक हो सके वहां तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करें । इस काम में चाहे उस को कितना ही दारूण दुख प्राप्त हो , चाहे प्राण भी भले ही जावे परंतु इस मनुष्यापन रूप धर्म से पृथक कभी न होवे ।

__________ **महर्षि दयानंद सरस्वती**

(स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश)

मनुष्य का उद्देश्य :

ऋग्वेद. 1/6/3______ हे मनुष्यों ! अज्ञानी के लिये ज्ञान देता हुआ , और अरुप के लिये रुप देता हुआ , तू विधादि से प्रकाशमान लोगों के साथ प्रसिद्ध हो ।

Edit with WPS Office

- मनुष्य का जन्म इसलिए हुआ है , कि वह अज्ञानी को ज्ञान देवे और विरुप को सुंदर हष्ट-पुष्ट करें । जिस प्रकार सूर्य उप काल के पश्चात आकर सबको प्रकाश और सुंदर रूप देता है , उसी प्रकार करने के लिये मनुष्य जन्मा है ।

ऋग्वेद. 10/7/7 ______ हे हम सबका कार्य साधक हो , और संरक्षक हो । और दीर्घ आयु करने वाला तथा हम सबको अन्न का दान दें । और हम सब का शरीर न क्षीण न करता हुआ सुरक्षित करों ।

- स्वस्थ - रक्षण , इंद्रिय - संयम , दीर्घ आयु , तारुगयका उत्साह , अन्न का दान , शरीरपोषण और शरीरसंरक्षण सबको करना चाहिए ।

ऋग्वेद. 10/101/9 ______ हे विद्वानों दिव्य पूज्य और पवित्र आपकी बुद्धि को संरक्षण के लिये आकषिर्त करना है । वह आपकी बुद्धि हम सबको वैसी सहायता देवें , जैसी बड़ी चपल गाय घास खाकर दूध की हजारों धाराएं दोहन करके देती हैं ।

- विद्वान लोग अन्य साधारण जनों को योग्य सहायता देकर उनको ऊपर उठने का मार्ग बनावें ।

ऋग्वेद. 10/101/12 ______ हे लोगो ! आप में आनंद की पूर्णता करने वाले का सम्मान कीजिए । सबको बल की प्राप्ति करने के लिये प्रेरणा कीजिए । और आप स्वयं मरदानी खेल खेलिए । निष्ठा अर्थात श्रद्धा से पवित्र बनें हुए परम ऐश्वर्य वान को यहां उत्सुकता से सबके संरक्षण के लिये और विशेषत: विद्वान के रक्षण के लिये ले आइए ।

- सदा आनंदित रहना चाहिए । बल की उन्नति करनी चाहिए । खुली जगह में खेल खेलने चाहिये । और हर एक कर्म पूर्ण निष्ठा से करना चाहिये ।

आगे बढ़े :

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 8/1/4 ______ हे पुरुष इस वर्तमान अवस्था से आगे बढ़ नीचे मत गिर । मृत्यु के पाश को तोड़ता हुआ आगे बढ़ । इस लोक से अग्नि रूप सूर्य के तेज से मत अलग हो ।

- वर्तमान अवस्था से अधिक उस अवस्था को प्राप्त करना हर एक का कर्तव्य है । मृत्यु के पाश को तोड़कर अमरपन प्राप्त करना चाहिये और कभी गिरने के कार्य नहीं करने चाहिये । इस लोक में सूर्य प्रकाश आरोग्य का मुख्य साधन है , इसलिए उन्नति करने वाले मनुष्य सूर्य प्रकाश में रहकर आरोग्य प्राप्त करें और आगे बढ़े ।

अथर्ववेद. 8/1/6 ______ हे पुरुष ! तेरी उन्नति होवे , नीचे गिरावट न होवे । जीवन के लिये दक्षता का बल करता हूं । इस अमृतमय सुरा देने वाले रथ पर चढ़ और स्तुत्य बनकर सभा में भाषण कर ।

- अपनी उन्नति करनी चाहिये । गिरावट के कार्य कभी नहीं करनी चाहिये । इसलिए जीवन और बल प्राप्त हुआ है । इस शरीर रूपी उत्तम स्थान पर सवार होकर सभाओं में कार्य करते हुए आगे बढ़ना चाहिये ।

अथर्ववेद. 8/1/13______ ज्ञान और विज्ञान तेरी रक्षा करें । स्फूर्ति और स्थिरता तेरी संरक्षण करें । रक्षक और जागने वाले तेरा संरक्षण करें ।

- ज्ञान और विज्ञान , स्फूर्ति और स्थिरता , रक्षा करना और जागृत रहना ये सब भाव मनुष्य के सहायक बने , अर्थात , इनका यथा योग्य उपयोग करने से मनुष्य का अभ्युदय हो सकता है ।

अथर्ववेद. 4/31/7 ______ क्षेष्ठ आत्मा और उत्साह ये दोनों मिले हुए और सुसंस्कृत होकर दोनों प्रकार का धन हमारे लिए धारण करते हैं शत्रु अपने हृदयों में धारण करते हुए पराजित होकर भाग जाये ।

- आत्मिक बल और उत्साह से सब प्रकार का धन हमारे पास इकट्ठा हो जाय । तथा हमारे सब शत्रु पराजित होकर दूर भाग जायें । इस प्रकार अपने शत्रुओं को दूर भगाकर अपनी प्रगति का साधन करना चाहिये

Edit with WPS Office

।

प्रायश्चित शुद्धि :

ऋग्वेद. 10/164/3 ______ आशा के कारण , कुसंस्कार के कारण जागृति के समय अथवा स्वप्न के समय , जो - जो दोष हम सबसे हुए हैं , वे असभ्य , अप्रिय सब दुराचार तेजस्वी आत्मा हम सबमें परे करें ।

- लोभ , दोष , और कुसंस्कार के कारण मनुष्यों से दुराचार होते हैं । इसलिए असभ्य भाव और दुराचार के भाव को दूर करने चाहिये ।

ऋग्वेद. 10/164/4 ______ रोगी को निराश नहीं होना चाहिए , किंतु रोग दूर करने के अनेक औषधोपचार करते हुए मानसिक संकल्प से रोग बढ़ने या मृत्यु तक को भगाने के लिये साहस धारण करना चाहिए ।

- द्वेष मूलक कुसंस्कार के कारण घातपात करने की ओर मनुष्य की प्रवृत्ति होती हैं । इस लिये आंतरिक जीवन की चेतन - शक्ति के बल से उक्त द्वेषमूलक कुसंस्कार से बचना चाहिये ।

अथर्ववेद. 4/13/1 ______ महात्मा लोग स्वभाव से ही अधोगत पुरुषों को ऊंचा करते और मृतक समान अपराधियों को पाप से छुड़ाकर उनका जीवन सुफल कराते हैं । मनुष्य सत्पुरुषों के सत्संग से अपने आत्मिक और शारीरिक दोषों को त्याग कर जीवन सुधारें ।

- ज्ञानी विद्वान महात्माओं को उचित है , कि वे नीच हीन अधोगत और अपराधी पापी मनुष्य को भी योग्य उपदेश द्वारा उन्नत और पवित्र जीवन वाला बनावें ।

अथर्ववेद. 6/19/1 ______ दिव्य सज्जन मुझे पवित्र करें । मनन - शील विद्वान बुद्धि से मेरी पवित्रता करें । सब भूतमात्र मेरी पवित्रता करें । और पवमान प्रभु मुझे पवित्र करें ।

Edit with WPS Office

- श्रेष्ठ सत्पुरुष , महात्मा , मुनि और विद्वान सद्बुद्धि के द्वारा सबको शुद्ध करते हैं । इसलिए हर एक मनुष्य को उचित है , कि वह उनके पास जाकर , उन का उपदेश सुनकर तदनुसार आचरण करके पवित्र बनें ।

अथर्ववेद. 6/19/2 ______ शुद्ध कर्ता भगवान पुरुषार्थ करने के लिये बल को बढ़ाने के लिये और दीर्घ आयुष्य प्राप्त करने के लिये तथा कल्याण प्राप्त करने के लिए पवित्र करें । अपनी शुद्धता करके पुरुषार्थ करने की कर्तव्य शक्ति , बल , दीर्घ आयु और संकट को नाश करने की शक्ति , इतने गुण अपने अंदर बढ़ाने चाहिए ।

यजुर्वेद. 1/13 ______ वेदोक्त कर्म करने के लिए शुद्ध हो जाओ । अशुद्ध कर्म आदि ने पराहत किया है । अतः मैं तुम्हारी इस अशुद्धि को दूर करके देव यज्ञ आदि के लिए तुम्हारी शुद्धिकरता हूं ।

अथर्ववेद. 6/115/1______ हे सब देवता लोगों ! जानते हुए जो और न जानते हुए जो पाप कर्म हमने किये है , समान प्रीति से युक्त तुम उस पाप से हमें छुड़ाओ ।

- किये हुए अपराध के दोष से मुक्त होना आवश्यक है । पाप जानते हुए किया गया हो या अज्ञान से किया गया हो, उसका निराकरण करना आवश्यकता है । विद्वान यानी सज्जन अन्यों को पाप - निष्कृति का बता सकते हैं । यानी विद्वानों से उक्त मार्ग जानकर उसका आक्रमण करके हर एक को अपने पाप की निष्कृति करनी चाहिए ।

अथर्ववेद. 6/115/2 ______ यदि जागते हुए और यदि स्वप्न में मैंने पाप द्वारा पाप किया हो , वह भूतकालीन हो , या भविष्य कालीन हो , काष्ठ के बंधन से छूटने के समान मुझे उससे छुड़ा लेवे ।

- जागृति में अथवा स्वप्न में जो पाप किये जाते हैं , उनके दोष से मुक्त होने का पुरुषार्थ अवश्य करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

अथर्ववेद. 6/115/3 ______ काष्ठ बंधन से , खडावो से छुटने के समान , पानी में गोता लगाकर जान करके मल से जिस प्रकार शुद्ध होते हैं , छाननी से शुद्ध होने वाले घी के समान सब धर्मात्मा लोग पाप से मुझे शुद्ध करें ।

शुद्धि तीन प्रकार की है ___

- बाह्य दोष से शुद्धता जैसी खडावें या जूते आदि अपवित्र पदार्थ पांवों से निकालने से पांव की शुद्धता होती हैं ।
- गात्रों की शुद्धि , जो स्नान द्वारा मल के दूर होने से होती है । और
- अंत शुद्धि , मनुष्य को इन तीनों प्रकारों की शुद्धि करना चाहिये । शरीर शुद्धि , इंद्रियों की शुद्धि , और आत्मा की पवित्रता ये तीन पवित्रताएं प्राप्त करके मनुष्य को अंतरयाण शुद्धता संपादन करना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 138. रामायण की उभरती शंकाएं , गरजते उत्तर

शंबूक वध का सत्य : श्री राम पर उठे प्रश्नों का वैदिक और तार्किक उत्तर :

Edit with WPS Office

श्री रामचंद्र जी महाराज को मर्यादा पुरुषोत्तम और धर्म के आदर्श प्रतीक के रूप में सदियों से पूजा जाता रहा है । लेकिन कुछ विधर्मी और नास्तिक विचारधारा के लोग उन पर शंबूक नामक एक शूद्र तपस्वी की हत्या का आरोप लगाते हैं । इस कथा का उल्लेख गीता प्रेस की वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड में मिलता है , लेकिन इसकी सत्यता पर गंभीर तर्क - वितर्क और शास्त्रीय परीक्षा आवश्यक है ।

इस लेख में हम तर्क , वैदिक प्रमाण , और श्री रामचंद्र जी के चरित्र के आधार पर यह सिद्ध करेंगे कि शंबूक वंध की कथा का क्या सत्य है और यह श्री राम के आदर्श व्यक्तित्व से मेल खाती है या नहीं ।

शंबूक वंध की कथा का संक्षिप्त वर्णन : ______

गीता प्रेस की वाल्मीकि रामायण के उत्तर कांड के 73 - 76 सर्ग में शंबूक वध की कथा वर्णित है । कथा के अनुसार , एक ब्राह्मण का पुत्र अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है । ब्राह्मण राजा राम के पास न्याय की गुहार लगाता है । नारद मुनि के कथनानुसार , राज्य में शूद्र द्वारा तपस्या करने के कारण यह अनर्थ हुआ । श्री राम शंबूक नामक तपस्वी को खोजते हैं और उसे शूद्र होने के कारण वध कर देते हैं ।

यह कथा सुनने पर प्रश्न उठते हैं ..?

- क्या शूद्रों को तपस्या करने का अधिकार नहीं है ?
- क्या किसी के तप करने से दूसरे की मृत्यु हो सकती है ?
- क्या श्री रामचंद्र जी जैसे आदर्श पुरुष शूद्रों के प्रति भेदभाव कर सकते हैं ?

तर्क और शास्त्रीय प्रमाणों से सत्य की खोज :

Edit with WPS Office

1. वेदों में शूद्र के तप का उल्लेख :

वेद शूद्र सहित सभी वर्गों के लिए तपस्या , विद्या और यज्ञ का समान अधिकार प्रदान करते हैं ।

यजुर्वेद . 30.5 ______

" तपसे शूद्रमा " ।

परिश्रमी और तपस्वी व्यक्ति को शूद्र कहां गया है ।

यजुर्वेद . 18.48 ______

" रुचं शूद्रेषु " ।

जैसे ईश्वर सबसे प्रेम करता है , वैसे ही विद्वान भी शूद्रों सहित सभी से समान प्रेम करें ।

ऋग्वेद . 5.60.5 ______

" पच्च जना मम " ।

पांच वर्ण __ ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र और निषाद सभी को समान रूप से यज्ञ का अधिकार है ।

2. वाल्मीकि रामायण में शूद्रो के अधिकार :

रामायण के अनुसार , स्वाध्याय से शूद्र महान बन सकते हैं ।

- अयोध्या कांड . (63.50 - 51) : ______ शूद्रों और वैश्यों को रामायण का श्रवण और ज्ञान प्राप्त करने का समान अधिकार है ।
- राम और लक्ष्मण ने शबरी के चरण स्पर्श कर उन्हें माता कहकर संबोधित किया था , जो शूद्र वर्ग से थी ।

3. महाभारत में शूद्रों के उपासना के अधिकार :

महाभारत स्पष्ट रूप से शूद्रों के मोक्ष और विद्या प्राप्ति का समर्थन करता है ।

Edit with WPS Office

- श्री कृष्ण , गीता. (9.32) : ______

" **स्त्रियों वैश्यास्तथा शूद्रा: तेऽपि यान्ति परां गतिम " ।**
स्त्रियां , वैश्य और शूद्र मेरी उपासना करके परम गति प्राप्त कर सकते हैं ।

4. उपनिषदों में शूद्रों का महत्व :

- **बृहदारण्यक उपनिषद्. (1.4.13) :** ______ शूद्र को पूषण (पोषण करने वाला) और पृथ्वी के समान सहनशील बताया गया है ।
- **सत्यकाम जाबाल का उदाहरण :** ______ सत्यकाम जाबाल , एक शूद्र मां के पुत्र , ने अपनी सत्यता के कारण ब्राह्मणत्व प्राप्त किया ।
  - संदर्भ छांदोग्य उपनिषद. (3.4)
- महर्षि ऐतरेय का जन्म भी शूद्र कुल में हुआ था परंतु उन्होंने अपने कर्मों से ब्राह्मणत्व को प्राप्त किया ।

शंबूक वध की कथा के असत्य पहलू : ______

1. नारद मुनि का कथन :

कथा में कहा गया है कि नारद मुनि ने शूद्रों के तप को अधर्म बताया । यह वैदिक सिद्धांतों और नारद मुनि के चरित्र के विपरीत है ।

- **तर्क:**
  - वैदिक काल में सभी वर्णों को तपस्या और यज्ञ का अधिकार था ।
  - नारद मुनि स्वयं समानता और धर्म के समर्थक थे ।

2. पुष्पक विमान का उल्लेख :

कथा में कहा गया है कि श्री राम पुष्पक विमान पर सवार होकर शंबूक की खोज में गए ।

- **तथ्य:**

Edit with WPS Office

श्रीराम ने पुष्पक विमान अयोध्या लौटते ही कुबेर को लौटा दिया था।

- **संदर्भ: युद्ध कांड. (127.62)**

3. शूद्र तपस्या से ब्राह्मण पुत्र की मृत्यु हो गई , तर्कहीन है।

- तर्क

किसी भी व्यक्ति का तप , उसके स्वयं के कर्म फल का निर्धारण करता है , न कि किसी अन्य के जीवन - मरण का।

4. मध्यकालीन हस्तक्षेप :

- उत्तर कांड को मूल वाल्मीकि रामायण का हिस्सा नहीं माना जाता। विद्वानों के मतानुसार , यह पूर्णत : प्रक्षिप्त (मिलावटी) है , जिसे श्री राम के चरित्र को विकृत करने के उद्देश्य से बाद में जोड़ा गया। इसके बावजूद , गीता प्रेस आज भी इसे वाल्मीकि रामायण का अंग मानकर प्रकाशित कर रही है। गीता प्रेस जैसी प्रतिष्ठित संस्था को ऐसा नहीं करना चाहिए। उन्हें इसे तुरंत हटा देना चाहिए।
- यह संभव है कि मध्यकाल में जातिवाद को बढ़ावा देने के लिए इस प्रकार के असत्य प्रसंग जोड़े गए हो।

श्री रामचंद्र जी का आदर्श चरित्र : ______

1. शबरी से भेंट :

- श्री राम ने शबरी , एक शूद्र तपस्विनी , के भक्ति भाव से अर्पित किए गए बेर खाए।
    - यह समानता और करुणा का प्रतीक है।

2. निषाद राज का सत्कार :

- निषाद राज गुह के साथ मित्रता , राम के समानता के सिद्धांत का उदाहरण है।

Edit with WPS Office

o संदर्भ : अयोध्या कांड. (37 -- 40)

3. सभी वर्णों के प्रति समानता :

- वाल्मीकि रामायण में कहा गया है कि श्री राम सभी से समान व्यवहार करते थे ।

  o संदर्भ : बालकाण्ड.(1.16)

" सर्वेषु स हि धर्मात्मा वर्णानां कुरुते दयाम् । "

अयोध्या काण्ड. 17.15

अर्थात धर्मात्मा श्रीराम सभी वर्णों अर्थात ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , व शूद्रो पर दया करने वाले थे । जरा विचारें कि महर्षि वाल्मीकि श्रीराम को निर्दोष शम्बूक का हन्ता कैसे हो सकते हैं ?

निष्कर्ष :

शंबूक वध की कथा तर्क , वैदिक प्रमाण , और श्री राम के आदर्श चरित्र के विरुद्ध है । यह कथा बाद के काल में जातिवाद और ब्राह्मणवादी वर्चस्व को स्थापित करने के लिए जोड़ी गई प्रतीत होती है ।

- **वैदिक शास्त्र :** शूद्रों को तप , विद्या और यज्ञ का समान अधिकार प्रदान करते हैं ।
- **श्री राम का चरित्र :** समानता , करुणा और धर्म के आदर्श पर आधारित है ।

" श्री रामचंद्र जी के प्रति अज्ञानता से फैलाएं गए मिथकों का खंडन करना और उनके आदर्श चरित्र को समझना ही सच्चे रामराज्य की स्थापना है ।

क्या रावण देवी सीता का अपहरण करने के लिए पुष्पक विमान में आया था ..?

Edit with WPS Office

ऐसा वाल्मीकि रामायण में कुछ भी नहीं है , वहां उस प्रसंग में लिखा है __रावण देवी सीता को लेने के लिए पुष्पक विमान में नहीं बल्कि मायावी रथ के साथ आया था , जिस रथ को **गधे और खच्चर** खींचते थे । जब रावण सीता को ले जा रहा था , तो रास्ते में उसे जटायु ने रोका ? जटायु ने अपने सामर्थ्य अनुसार उसके सारथी रावण से युद्ध लड़ा था , युद्ध लड़ते लड़ते जटायु ने उसके रथ के दो टुकड़े कर दिए थे । और सारथी को मार डाला था । यह सब देखकर रावण क्रोधित हो उठा और उसने जटायु के दोनों पंख काट डाले ।

कुछ लोग रावण को अच्छा दिखाने के लिए उसकी प्रशंसा करते हैं और कहते हैं रावण ने सीता को छुआ तक नहीं ? अपहरण के समय ! बल्कि ऐसा कुछ नहीं है वाल्मीकि रामायण में लिखा है___ **अरण्य काण्ड , सर्ग** 49 में लिखा है रावण देवी सीता के बालों को पकड़कर घसीटकर आकाश मार्ग की ओर ले गया था ।

क्या भगवान श्री राम 11000 वर्ष तक जीवित रहे थे ? क्या उन्होंने 11000 वर्षों तक शासन किया था ? क्या उनकी उम्र इतनी है ? आइए जानते हैं सच्चाई क्या है ..?

वाल्मीकि रामायण. (1.1.97.) ______ श्री राम ने 11000 वर्षों तक शासन किया था और इस बात पर यकीन करना कठिन है और जब 25 वर्ष के थे , तब उन्हें वनवास मिला था । जब वो वनवास से वापस अयोध्या आए तब वह 39 वर्ष के थे । इस समय राज्याभिषेक हुआ था और 30 वर्ष 6 महीने तक शासन करने के बाद जब वह 70 वर्ष के थे । तब उन्होंने राज्य को छोड़ दिया था । तो फिर श्री राम की शासन अवधि 11000 वर्ष क्यों बताई ? इस शंका का समाधान हमें महाभारत से मिलता है , महाभारत में लिखा है ____ **महाभारत के अरण्य पर्व.** (3.49.21) जहां पर कहा गया है कि धर्म के अनुसार जीने वाले राजा के लिए एक दिन एक वर्ष के बराबर होता है । और 1 वर्ष के 360 दिनों को 360 वर्ष मानने पर काव्यात्मक

Edit with WPS Office

रूप से वर्णित 11000 वर्षों का वास्तविक रूप से 30 वर्ष 6 महीने होता है ।

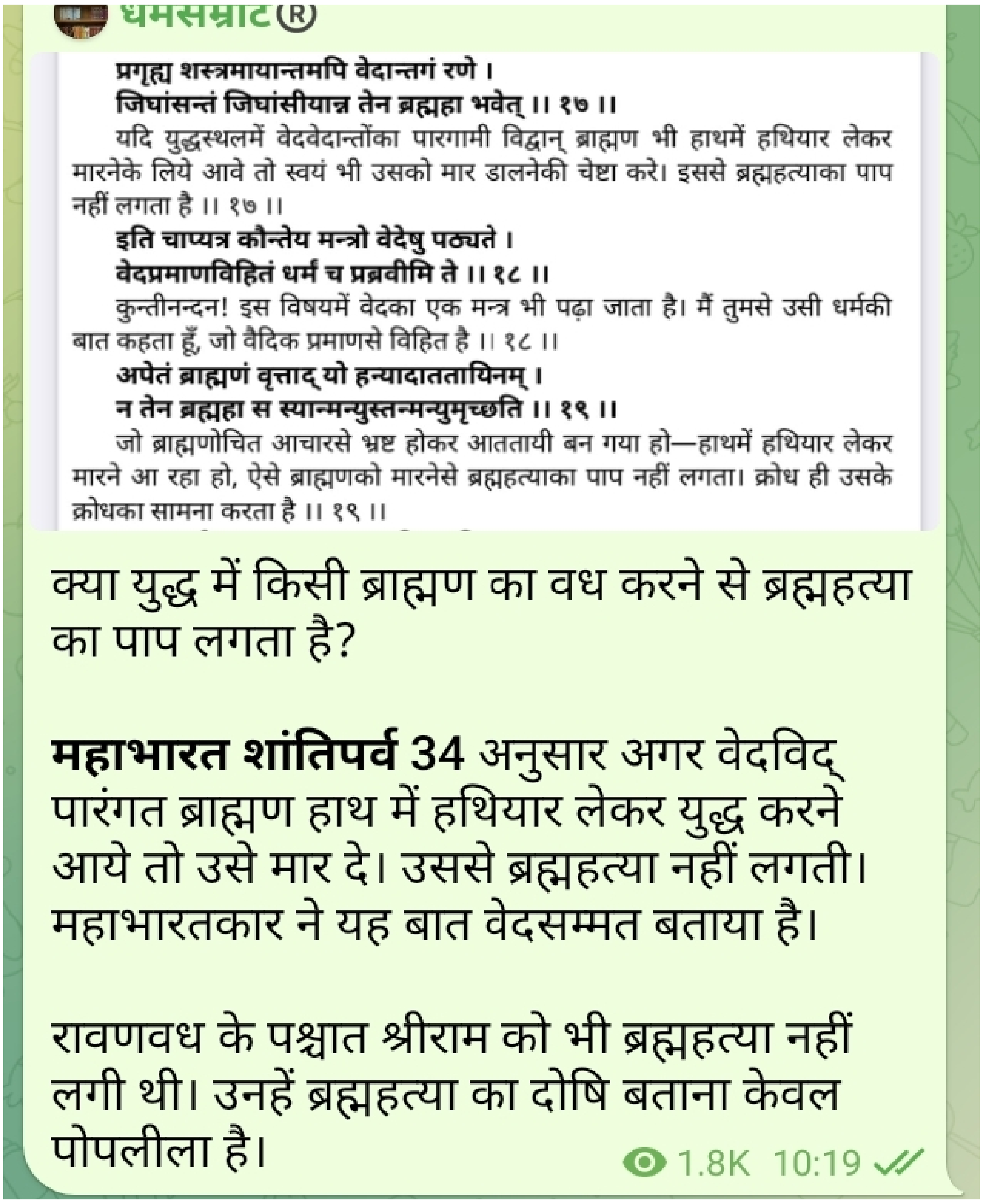

धर्मसम्राट®

प्रगृह्य शस्त्रमायान्तमपि वेदान्तगं रणे ।
जिघांसन्तं जिघांसीयान्न तेन ब्रह्महा भवेत् ।। १७ ।।

यदि युद्धस्थलमें वेदवेदान्तोंका पारगामी विद्वान् ब्राह्मण भी हाथमें हथियार लेकर मारनेके लिये आवे तो स्वयं भी उसको मार डालनेकी चेष्टा करे। इससे ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगता है ।। १७ ।।

इति चाप्यत्र कौन्तेय मन्त्रो वेदेषु पठ्यते ।
वेदप्रमाणविहितं धर्मं च प्रब्रवीमि ते ।। १८ ।।

कुन्तीनन्दन! इस विषयमें वेदका एक मन्त्र भी पढ़ा जाता है। मैं तुमसे उसी धर्मकी बात कहता हूँ, जो वैदिक प्रमाणसे विहित है ।। १८ ।।

अपेतं ब्राह्मणं वृत्ताद् यो हन्यादाततायिनम् ।
न तेन ब्रह्महा स स्यान्मन्युस्तन्मन्युमृच्छति ।। १९ ।।

जो ब्राह्मणोचित आचारसे भ्रष्ट होकर आततायी बन गया हो—हाथमें हथियार लेकर मारने आ रहा हो, ऐसे ब्राह्मणको मारनेसे ब्रह्महत्याका पाप नहीं लगता। क्रोध ही उसके क्रोधका सामना करता है ।। १९ ।।

क्या युद्ध में किसी ब्राह्मण का वध करने से ब्रह्महत्या का पाप लगता है?

महाभारत शांतिपर्व 34 अनुसार अगर वेदविद् पारंगत ब्राह्मण हाथ में हथियार लेकर युद्ध करने आये तो उसे मार दे। उससे ब्रह्महत्या नहीं लगती। महाभारतकार ने यह बात वेदसम्मत बताया है।

रावणवध के पश्चात श्रीराम को भी ब्रह्महत्या नहीं लगी थी। उनहें ब्रह्महत्या का दोषि बताना केवल पोपलीला है।

रामायण में मिलावट ______ रामायण में भी बहुत ज्यादा मिलावट हुई है ? पूरा उत्तर कांड मिलावट है अथवा बाद में जोड़ा गया ? यह बात तुलसीदास ने भी लिखी है । उत्तरकाड के अन्य भी अन्य कांड में श्लोक में भी अन्य जगह मिलावट देखने को मिलती है ? जैसे सीरियलों में दिखाया गया ऐसा वाल्मीकि रामायण पढ़ने पर कुछ नहीं है , लक्ष्मण रेखा के बारे में रामायण

Edit with WPS Office

में ऐसा कुछ नहीं की लक्ष्मण ने रेखा खींची थी ,? हम एक श्लोक के माध्यम से बता सकते हैं की अन्य जगह भी ऐसे ही श्लोक जोड़े गए हैं ______ जगह-जगह तो प्रेक्षेप्त श्लोक मिलते हैं , सभी श्लोक यहां हम नहीं दिखा सकते ? पीडीएफ ज्यादा बड़ी होने की शंका है , इसलिए हम एक ही वाक्य में सारी बातें कहेंगे ? जैसे ___

वाल्मीकि रामायण में हनुमान जी कोई बंदर नहीं थे बल्कि मनुष्य थे ।

वाल्मीकि रामायण में कोई लक्ष्मण रेखा का वर्णन नहीं ।

वाल्मीकि रामायण में सीता हरण के समय रावण कोई पुष्पक विमान से नहीं आया था । बल्कि मायावी रथ के साथ आया था ।

जब रावण सीता को लंका ले गया , तब रावण सीता से मिलने जाता है और अपनी भरपूर बड़ाई करता है बल्कि दो दो तीन तीन बार ? वहां रावण कहता है , मेरी सेवा में करोड़ो दासियां मेरी सेवा करती है । और करोड़ों दासियां लंका में रहती है ? और करोड़ों इस लंका में पहरेदार है , और करोड़ अरबों सैनिक है । क्या यह श्लोक पढ़ने से मिलावट नहीं लगता ?? लगता है ! बहुत सारे ऐसे ही श्लोक वाल्मीकि रामायण में जोड़े गए हैं । उत्तरकाड तो मिलावट है ही है ? (मनोरंजन और ज्ञानवर्धन के लिए उत्तराकाड पढ़ने में अच्छा लगता है लेकिन वह पूर्ण रूप से मिलावट है यह आर्य विद्वान ही नहीं बल्कि सनातन विद्वान के लोग भी मानते हैं , कि उत्तराकांड मिलावट है बाद में जोड़ा गया) साथ ही साथ अन्य कांड में भी जगह-जगह श्लोकों कीमिलावटी है । इसलिए सभी स्वयं से ही रामायण पढ़े और उसका स्वाध्याय करें और तर्क बुद्धि के साथ निर्णय ले और स्वयं सोचे कि यह सब सच है या मिलावटी ??

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 139. अर्जुन और सुभद्रा के विवाह पर उठी शंकाओं का तर्कसंगत समाधान

भारतीय संस्कृति और विवाह परंपरा की गहराई : ______

भारत (आर्यावर्त) की संस्कृति और परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन सभ्यताओं में से एक मानी जाती है । यह आर्य संस्कृति और वेदों के सिद्धांतों पर आधारित रही है । समय के प्रभाव और वेद विद्या के प्रसार में आई रूकावटों के कारण समाज में अनेक भ्रांतियां उत्पन्न हो गई । इनमें से एक प्रमुख भ्रांति यह है कि अर्जुन ने अपनी ममेरी बहन सुभद्रा से विवाह किया था । इस लेख में हम इस विषय पर विस्तार से चर्चा करेंगे ।

शंका समाधान के चार प्रमुख पहलू : ______

1. सपिण्ड और गोत्र प्रणाली
2. सुभद्रा के माता-पिता को लेकर भ्रम
3. कुंती और प्रथा के बीच का अंतर
4. हिंदू विवाह अधिनियम , 1955 के अनुसार विवाह की वैधता

1. सपिण्ड और गोत्र प्रणाली का विश्लेषण :

मनुस्मृति में विवाह संबंधित स्पष्ट दिशा - निर्देश दिए गए हैं ;

- कन्या माता की ओर से छठी पीढ़ी तक और पिता की ओर से गोत्र संबंधी निषेध के अंतर्गत नहीं होनी चाहिए ।

मनुस्मृति का उल्लेख : **असपिण्डा च या मातुरसगोत्र च या पितुः । सा**

Edit with WPS Office

प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने ।
भावार्थ : यदि कन्या माता की छह पीढ़ियों तक और पिता के गोत्र में नहीं आती है , तो उसका विवाह उचित है ।

गोत्र का विश्लेषण :

- अर्जुन का गोत्र अत्रि था ।
- सुभद्रा का गोत्र यदु था ।
- चूंकि दोनों अलग-अलग गोत्र से थें , अतः यह विवाह शास्त्रसम्मत था ।

2. सुभद्रा के माता-पिता को लेकर भ्रांतियां :

सुभद्रा के कुल को लेकर शास्त्रों में जितने भी प्रमाण हमें मिलते हैं उनमें अनेक भिन्नताएं हैं ।

(क) सुभद्रा , वसुदेव और रोहिणी की पुत्री थी

- यदि सुभद्रा वसुदेव और रोहिणी की पुत्री थी , तब भी उनका गोत्र अर्जुन से भिन्न था ।
- पीढ़ी के अंतर के कारण यह विवाह पूर्णत: मान्य था ।

(ख) सुभद्रा , नंद बाबा और यशोदा की पुत्री थी

- उड़ीसा की महाभारत के अनुसार , सुभद्रा ने स्वयं को नंद बाबा और यशोदा की पुत्री बताया ।
- यदि यह सत्य मान लिया जाए , तो अर्जुन और सुभद्रा के बीच कोई रक्त संबंध नहीं था ।

3. कुंती और प्रथा: एक विश्लेषण :

- कुंती का वास्तविक नाम पृथा था और वे शूरसेन की पुत्री थी ।
- कुंती को कुंतिभोज ने गोद लिया , जिससे उनका गोत्र बदल गया ।

Edit with WPS Office

- दत्तक ग्रहण करने पर नए पिता का गोत्र ही संतान का गोत्र माना जाता है ।
- इस कारण अर्जुन और सुभद्रा के विवाह में कोई बांधा नहीं थी ।

4. अधिनियम , 1955 के अनुसार वैधता :

- पिता की ओर से पांचवीं पीढ़ी तक और माता की ओर से तीसरी पीढ़ी तक का रक्त संबंध निषिद्ध होता है ।
- अर्जुन और सुभद्रा के बीच छह पीढ़ियों का अंतर था , इसलिए विवाह कानूनी रूप से वैध था ।

पीढ़ी अंतर का विश्लेषण :

- **सुभद्रा की पीढ़ी गणना :**
  1. सुभद्रा
  2. रोहिणी
  3. वासुदेव
  4. शूरसेन
- **अर्जुन की पीढ़ी गणना :**
  1. अर्जुन
  2. कुंती
  3. शूरसेन
  4. वासुदेव
  5. रोहिणी
  6. सुभद्रा

- **इसलिए यह विवाह किसी भी प्रकार से अनैतिक नहीं था और पूर्णतः शास्त्रीय एवं कानूनी दृष्टिकोण से उचित था ।**

Edit with WPS Office

अर्जुन का गोत्र: नियोग परंपरा का प्रभाव : ______

अर्जुन नियोग से उत्पन्न संतान थे , जिनके जैविक पिता तो इंद्र थे , लेकिन सामाजिक और गोत्रीय दृष्टि से वे पांडु के पुत्र माने गए ।

मत्स्य पुराण के अनुसार : नियोग से उत्पन्न संतान अपने जैविक पिता का नहीं , बल्कि उस कुल के पिता का गोत्र अपनाती है , जहां वह जन्म लेती है ।

- पांडु का गोत्र अत्रि था ।
- अर्जुन ने इसी गोत्र को ग्रहण किया ।
- इस कारण अर्जुन और सुभद्रा के बीच विवाह में कोई गोत्रीय बाधा नहीं थी ।

निष्कर्ष :

1. गोत्र और सपिण्ड प्रणाली के अनुसार अर्जुन और सुभद्रा का विवाह वेद सम्मत था ।
2. सुभद्रा के माता-पिता को लेकर अलग-अलग मत है , लेकिन किसी भी स्थिति में वे अर्जुन की सगी बहन नहीं थी ।
3. कुंती और पृथा के बीच अंतर के कारण अर्जुन का गोत्र भिन्न हो गया था , जिससे कोई निकट संबंध नहीं बनता ।
4. भारतीय विवाह अधिनियम के अनुसार भी यह विवाह पूरी तरह वैध था ।

इसलिए , यह सोचना की अर्जुन और सुभद्रा भाई बहन थे और उनका विवाह अनुचित था , पूर्णतः गलत धारणा है । वेदों और शास्त्रों के अनुसार यह विवाह न केवल उचित था , बल्कि समाज में स्वीकृत भी था ।

ऐतिहासिक तथ्यों की प्रमाणिकता और शोध की आवश्यकता :

Edit with WPS Office

इतिहास में मामा और बुआ के पुत्र - पुत्री के विवाह के अनेकों उदाहरण मिलते हैं , परंतु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वे केवल शरीर के संबंध से रिश्तेदार थे , जबकि गोत्रीय दृष्टिकोण से भिन्न हो सकते थे । इस पर गहन शोध की आवश्यकता है । जब हम जैसे साधारण लोग इस प्रकार के विवाह को सहज स्वीकार नहीं करते , तो योगेश्वर श्री कृष्ण और वेदों और शास्त्रों के ज्ञाता ऋषि - मुनि इसे कैसे मान्यता देते होंगे ? यह विचारणीय प्रश्न है ।

आपद्धर्म : ______ की रक्षा के लिए विपरीत परिस्थिति में कुछ विवाह हुए भी होंगे , इसकी संभावना से इनकार भी नहीं किया जा सकता । इसलिए , विभिन्न कालखंडों के बीच इतना बड़ा अंतर होने के कारण उन परिस्थितियों की सटीक कल्पना और आकलन करना आज के समय में अत्यंत कठिन है । उचित और अनुचित का निर्णय भी वर्तमान संदर्भ में संभव नहीं है , क्योंकि ऐतिहासिक और सामाजिक परिस्थितियां समय-समय पर बदलती रही है । महाभारत में आपधर्म की बहुत आवश्यकता पड़ी थी , जब पांडव और भगवान श्री कृष्ण को ऐसा लगा कि अब तो युद्ध निश्चित है ? तो दोनों पक्ष के लोग (कौरव पांडव) अपनी सेनाओं और राजाओं की संख्या बढ़ाने के लिए उचित प्रयास करते रहे । इस धर्म संकट की घड़ी में आपधर्म की बहुत ही आवश्यकता थी । इसलिए भगवान श्री कृष्ण ने सोच समझकर यह निर्णय लिया कि अर्जुन का विवाह सुभद्रा के साथ होना चाहिए । अगर ऐसा नहीं होता तो बलराम अपनी बहन का विवाह दुर्योधन के साथ कर देते , जिससे आर्थिक जन और युद्ध सेना (अस्त्र-शास्त्र) दोनों की हानि होती , क्योंकि ऐसा करने से यदुवंशी कौरवों की तरफ चले जाते , इसलिए भगवान श्री कृष्ण ने सोच समझकर उचित ही निर्णय लिया कि सुभद्रा का विवाह अर्जुन के साथ होना चाहिए ? ऐसा ही हुआ । यदुवंशियों की सेनाएं कौरवों के तरफ चली गई ? और शक्तिशाली योद्धा भगवान श्री कृष्ण के परिवार के लोग यदुवंशी राजा महाराजा , और यदुवंशी प्रजा पांडवों की तरफ से युद्ध में उतरे और सत्य की जीत हुई ।

इतिहास में समय-समय पर तथ्यों में मिलावट और शब्दों की फेरबदल भी

Edit with WPS Office

हुई है , जिसके कारण शास्त्रीय प्रमाणों में भी भिन्नताएं मिलती हैं । वेदों की शिक्षाएं समय के साथ दुर्लभ हो गई , जिससे सत्य और मिथ्या के बीच अंतर कर पाना कठिन हो गया । इसलिए किसी भी तथ्य पर आंख मूंदकर विश्वास करने के बजाय उसे तर्क और बुद्धि की कसौटी पर कसना आवश्यक है । सत्य की खोज में तर्क शास्त्र और प्रमाणों का सम्यक अध्ययन करना चाहिए ।

आइए , सत्य की खोज में वेदों की ओर लौटे.....

प्रश्न : क्या द्रोपती के पांच पति थे ?

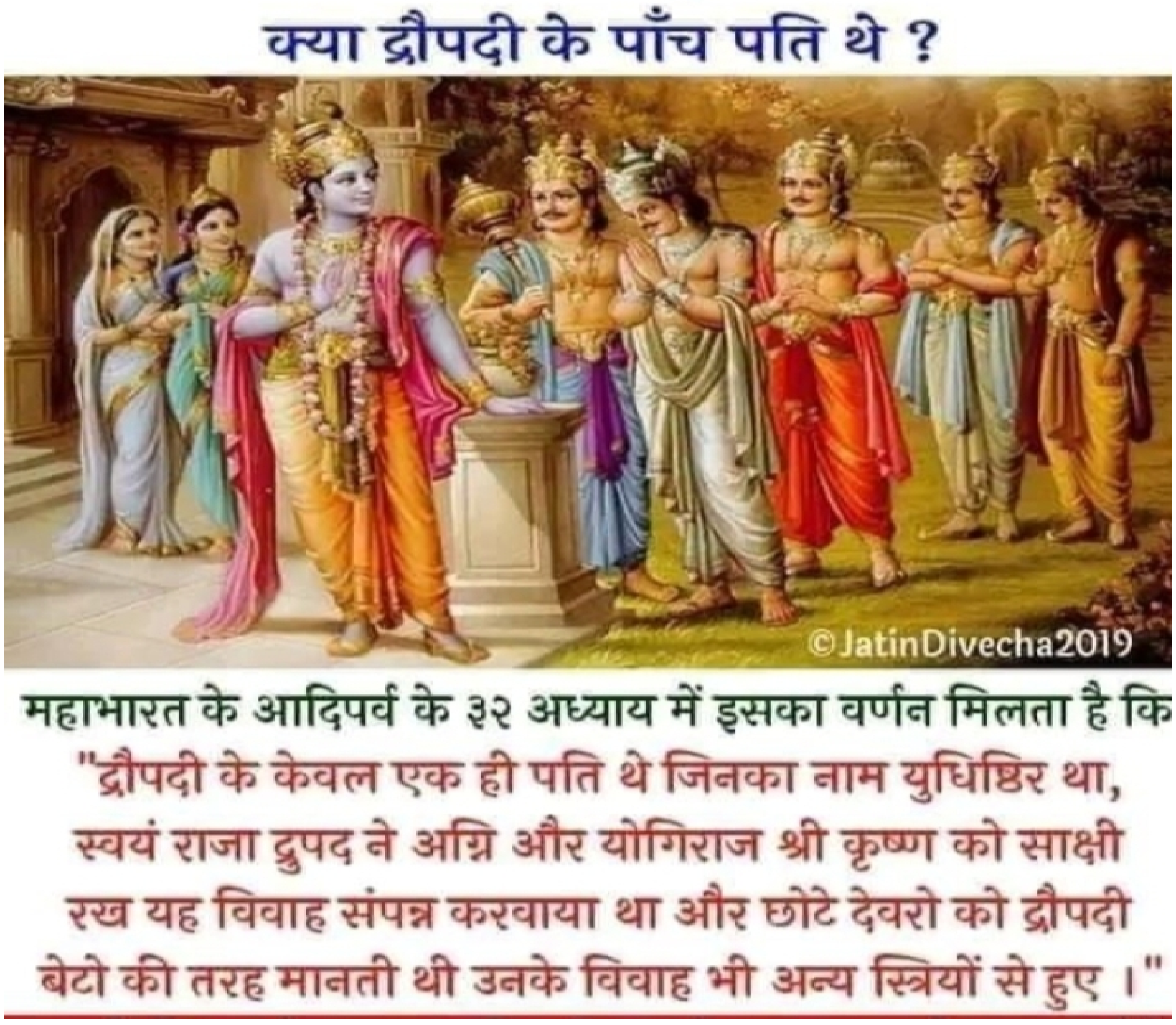

यह धारणा कि द्रोपती के पांच पति थे , अंग्रेजों द्वारा फैलाई गई एक भ्रामक कहानी है । जर्मन विद्वान मैक्स मूलर को अंग्रेजों ने भारतीय धर्म ग्रंथो में विकृति फैलाने का दायित्व सौंपा था । और इस कार्य में वह सफल भी हुआ । इसके अंतर्गत महाभारत के प्रेरणादायक चरित्रों को नकारात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया । हालांकि , महाभारत के मूल श्लोकों का गहन अध्ययन

Edit with WPS Office

करने पर स्पष्ट होता है कि द्रोपती का केवल एक ही पति था। ____ राजा युधिष्ठिर।

- **यहां महाभारत के विभिन्न श्लोकों के साथ द्रोपती के एकमात्र पति युधिष्ठिर होने का प्रमाण प्रस्तुत किया गया है ;**

प्रमाण 1. कीचक के प्रकरण में

महाभारत विराट पर्व . 18/1 ______

भावार्थ : जब कीचक द्वारा परेशान किए जाने के बाद द्रोपती भीम के पास आई और कहा , जिस स्त्री का पति राजा युधिष्ठिर हो , वह कैसे बिना शौक के रह सकती है ? यहां द्रोपती स्वयं को केवल युधिष्ठिर की पत्नी बता रही है।

प्रमाण 2 . द्रौपदी का दुख

महाभारत विराट पर्व. 20/13 ______

भावार्थ : द्रौपदी कहती है कि जिनके कई भाई , श्वसुर और पुत्र हो , वह भी दुख में जी रही है। यदि उसके कई पति होते , तो सबसे पहले यही कहती कि जिसके पांच पांच पति हैं , वह मैं दुखी हूं।

प्रमाण 3 . कीचक का वध

महाभारत विराट पर्व. 22/79 ______

भावार्थ : भीम ने कीचक को मारते समय कहा , जो सैरन्ध्री के लिए कांटा बना हुआ था और जिसने मेरे भाई की पत्नी का अपहरण करने का प्रयास किया था , उसे मारकर आज मैं अनृण हो गया हूं। यहां भीम द्रोपती को अपने भाई युधिष्ठिर की पत्नी बता रहे हैं।

प्रमाण 4 . सभा में दांव पर लगाना

Edit with WPS Office

महाभारत सभा पर्व. 207/43 ______

भावार्थ : जब द्रोपती को दाव पर लगाया गया , तो उसने सभा में प्रश्न किया कि जब युधिष्ठिर स्वयं को हार चुके थे , तो मुझे कैसे दाव पर लगा सकते हैं ? अगर वह पांच पत्तियों की पत्नी होती , तो यह प्रश्न उठाती की एक पति के पास मुझे दांव पर लगाने का अधिकार कैसे हो सकता है ।

प्रमाण 5 . युधिष्ठिर की पत्नी के रूप में परिचय

महाभारत सभा पर्व. 69/11/907 ______

भावार्थ : द्रोपती सभा में कहती है , मैं धर्मराज युधिष्ठिर की पत्नी हूं । यहां वह स्पष्ट रूप से युधिष्ठिर को ही अपना पति बता रही है ।

प्रमाण 6 . जयद्रथ के समक्ष परिचय

महाभारत वन पर्व. 12/267/1694 ______

भावार्थ : जयद्रथ से बातचीत में द्रोपती कहती है , मेरे पति कुरुकुल - रत्न कुंती पुत्र राजा युधिष्ठिर सकुशल है । मैं और उनके चारों भाई भी कुशल से हैं । यहां द्रोपती युधिष्ठिर को अपना पति बताती है , और भीम , अर्जुन , नकुल और सहदेव को भाई के रूप में संबोधित करती है ।

प्रमाण 7 . कृष्ण का कथन

महाभारत उद्योग पर्व. 28/8/2382 ______

भावार्थ : जब कृष्ण संधि के लिए दुर्योधन के पास जाते हैं , तो वह उसे धिक्कारते हुए कहते हैं , कौन ऐसा व्यक्ति है जो अपने बड़े भाई की पत्नी को सभा में लाकर उसके साथ अनुचित व्यवहार करें जैसा तूने किया । यहां कृष्ण भी द्रोपती को युधिष्ठिर की पत्नी बताते हैं ।

निष्कर्ष :

Edit with WPS Office

इन श्लोकों के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि द्रोपती का एकमात्र पति युधिष्ठिर ही था । द्रोपती को ' पांचाली , इसलिए कहा गया क्योंकि वह पांचाल नरेश की पुत्री थी , न कि पांच भाइयों की पत्नी ।

क्या अश्वत्थामा आज भी जीवित हैं..??

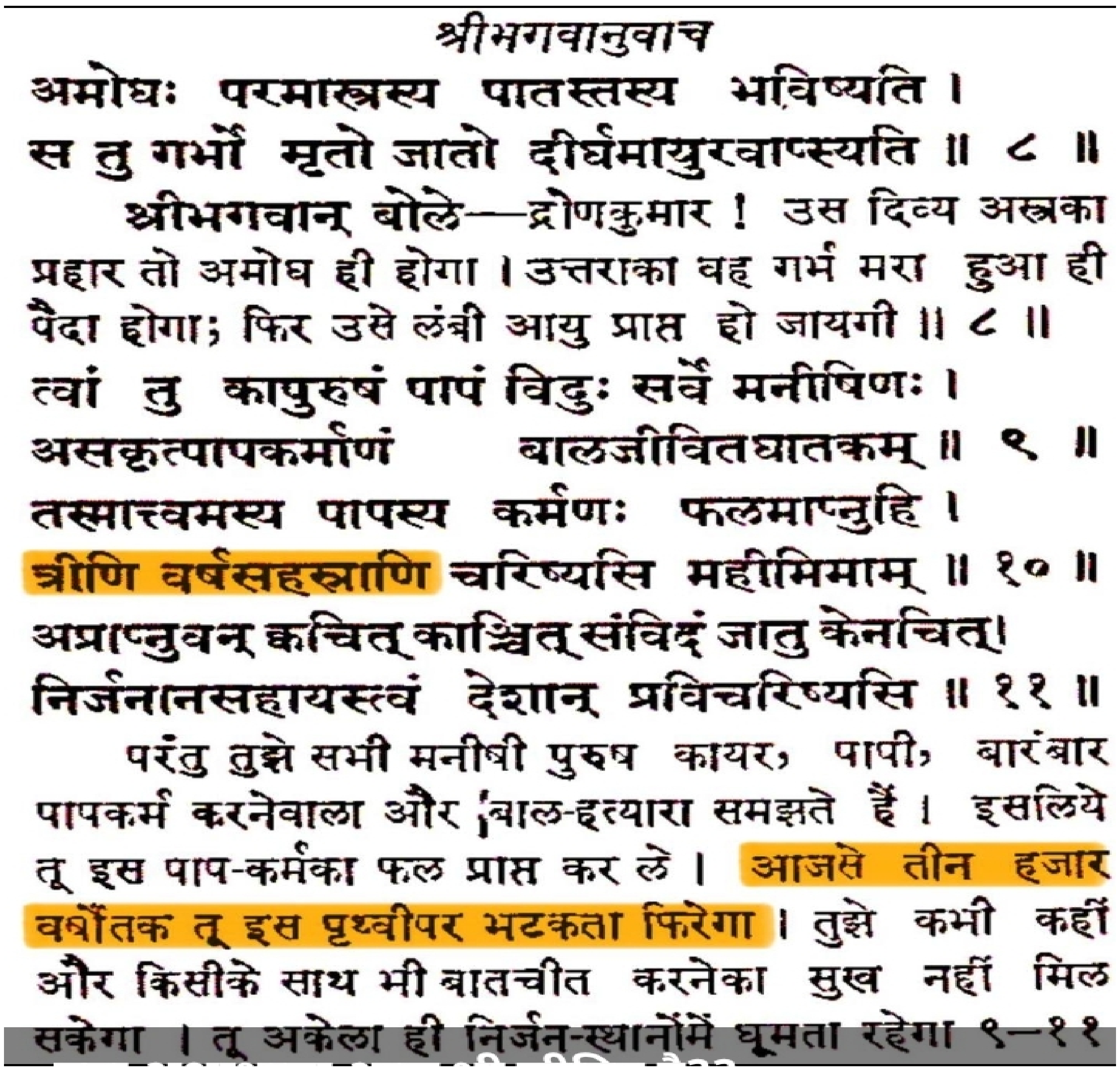

श्रीभगवानुवाच

अमोघः परमास्त्रस्य पातस्तस्य भविष्यति ।
स तु गर्भो मृतो जातो दीर्घमायुरवाप्स्यति ॥ ८ ॥

श्रीभगवान् बोले—द्रोणकुमार ! उस दिव्य अस्त्रका प्रहार तो अमोघ ही होगा । उत्तराका वह गर्भ मरा हुआ ही पैदा होगा; फिर उसे लंबी आयु प्राप्त हो जायगी ॥ ८ ॥

त्वां तु कापुरुषं पापं विदुः सर्वे मनीषिणः ।
असकृत्पापकर्माणं बालजीवितघातकम् ॥ ९ ॥
तस्मात्त्वमस्य पापस्य कर्मणः फलमाप्नुहि ।
त्रीणि वर्षसहस्राणि चरिष्यसि महीमिमाम् ॥ १० ॥
अप्राप्नुवन् क्वचित् काश्चित् संविदं जातु केनचित्।
निर्जनानसहायस्त्वं देशान् प्रविचरिष्यसि ॥ ११ ॥

परंतु तुझे सभी मनीषी पुरुष कायर, पापी, बारंबार पापकर्म करनेवाला और बाल-हत्यारा समझते हैं। इसलिये तू इस पाप-कर्मका फल प्राप्त कर ले। आजसे तीन हजार वर्षोंतक तू इस पृथ्वीपर भटकता फिरेगा। तुझे कभी कहीं और किसीके साथ भी बातचीत करनेका सुख नहीं मिल सकेगा । तू अकेला ही निर्जन-स्थानोंमें घूमता रहेगा ९—११

महाभारत शल्य पर्व के अनुसार अश्वत्थामा तो युद्ध के कुछ समय बाद ही मर गया था । इस श्लोक में श्री कृष्ण ने स्पष्ट कहा है " **त्रीणि वर्षसहस्राणी** " जिसका अर्थ है की अश्वत्थामा 3 वर्ष या उससे कुछ दिन अधिक जियेगा ।

गीता प्रेस की महाभारत के अनुसार सहस्त्र शब्द का अर्थ हजार है , परंतु अनेक विद्वान काव्यात्मक दृष्टि से तथा मीमांसा दर्शन का प्रमाण मानकर सहस्त्र का अर्थ " कुछ अधिक " अथवा " and above " करते हैं । इससे

Edit with WPS Office

अनुमान लगाया जा सकता है कि अश्वत्थामा युद्ध के 3000 वर्ष नहीं , लगभग 3 वर्ष में ही मर गया होगा ।

यदि इधर श्री कृष्ण के वचन के अनुसार अश्वत्थामा की पूर्ण आयु 3000 वर्ष भी मानें तो भी अश्वत्थामा आज के समय तक जीवित तो नहीं ही है । क्योंकि महाभारत के युद्ध को लगभग 5150 वर्ष हो गए हैं ।

क्या भीष्म पितामह इसी गंगा के पुत्र थे जो आज बह रही है ..?

आदिकाल से गंगा नाम की अनेक स्त्रियों हुई । उस समय के लोगों ने वेद शास्त्र में आए शब्दों के आधार पर ही अपना नाम रखते थे । यह बात महाराज मनु ने भी कहीं हैं उस समय लोग वेदों में से ही अपना नाम चयन करते थे अर्थात वेद में से ही अपना नाम चुनकर रखते थे। जैसे ___ अयोध्या , अयोध्या भारत का एक क्षेत्र है राज्य है , राम की जन्मभूमि है । इस क्षेत्र के भगवान राम राजा थे । लेकिन हम इसी अयोध्या को कुछ अज्ञानी लोग इतिहास की दृष्टि से वेदों में आए अयोध्या शब्द को इतिहास पुराण की दृष्टि से देखते हैं , जबकि यह सत्य नहीं है । अयोध्या का कोई इतिहास वेदों में नहीं ? बल्कि वेदों में जो अयोध्या शब्द है वह शरीर के लिए आया है । आठ चक्र नो द्वार यह हमारे शरीर में स्थित है अर्थात वेदों में जो अयोध्या शब्द है वह शरीर के लिए प्रयोग है । लेकिन महाभारत युद्ध के पश्चात शास्त्रों का लोप होने के कारण लोग शास्त्रों से विमुख हो गये । विद्वान लोग सभी महाभारत युद्ध में मारे गए । जो कुछ ऋषियों के उनके शिष्य बचें थे वो शुद्ध ज्ञान से वंचित रह गए ? इसलि परिस्थिति बदली इस आर्यावर्त जन्मभूमि में उतार - चढ़ाव आक्रमण होते रहे , सभ्यताएं आती रही , जाती रही और शास्त्रों का लोप होता गया , ऐसे समय में कुछ विद्वानों ने वेद में आए अयोध्या शब्द को इतिहास मानने लगे , और यह समझने लगे कि वेदों में तो हमारे राज्य का नाम है **। इसी प्रकार माता गंगा नदी के साथ हुआ ।** पितामह भीष्म गंगा नाम की स्त्री के पुत्र थे । शांतनु से उसका विवाह हुआ था जो हस्तिनापुर के नरेश थे । लेकिन दुर्भाग्य से लोगों ने गंगा नदी को ही पितामह भीष्म की माता बताने लगे । पितामह भीष्म की माता

Edit with WPS Office

गंगा उन्होंने गंगा नदी के नाम पर अपना नाम रख लिया ? इसी दुर्भाग्य और अज्ञान के कारण यह रहस्य आज भी सुलझा नहीं है ? लोग यही समझते हैं जो गंगा नदी बह रही है यही पितामह भीष्म की माता थी । लेकिन यह सत्य नहीं है ।

महर्षि दयानंद सरस्वती जी ने सही कहा था __ हमें अपने महापुरुषों का नाम नहीं रखना चाहिए ? हमें किसी नदी या अपने देवी देवताओं के नाम पर अपना नाम नहीं रखना चाहिए । गंगा जमुना सरस्वती पार्वती ऐसे नाम हमें नहीं रखने चाहिए । नदियों का नाम नहीं रखना चाहिए ।

दूसरी बात ____ हमारे सभी शास्त्रों में खासकर महाभारत में समय-समय पर मिलावट होती गई । महर्षि वेदव्यास ने 10000 श्लोक लिखे थे और जिसका नाम वेदव्यास ने जय संहिता रखा था और बाद में उनके शिष्यों ने 10000 और जोड़कर 20000 का ग्रंथ बना दिया । जो महाभारत नाम से परिचित हुआ । यहां तक सही था । ग्रंथ में सब कुछ सही था , लेकिन इतिहास में उतार-चढ़ाव सभ्यताएं आने-जाने में लोगों ने अपने-अपने ढंग से इस ग्रंथ को विस्तृत करते गये । और आज वर्तमान की महाभारत में 110000 श्लोक हैं । आज कोई भी यह पता नहीं लगा सकता कि कौन से श्लोक मिलावटी है और कौन से सत्य है । सिर्फ वेदों के आधार पर और शास्त्रों के आधार पर तर्क बुद्धि और विज्ञान के आधार पर मिलावटी श्लोकों को अलग किया जा सकता है । आर्य समाज के विद्वान जिनका नाम जगदीश्वर सरस्वती हैं । इन्होंने शुद्ध महाभारत लिखा और मिलावटी श्लोकों को अलग करके सही महाभारत लिखा है ।

• 140. गुरु कौन है और किसे गुरु

Edit with WPS Office

बनाना चाहिए ?

सनातन धर्म में गुरु का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और पूजनीय है । गुरु का स्थान माता-पिता से भी ऊंचा है , क्योंकि माता-पिता हमें इस संसार में लाकर जीवन की प्रारंभिक शिक्षाएं देते हैं , जो केवल हमारे भौतिक जीवन तक सीमित होती है । परंतु गुरु की शिक्षाएं न केवल इस जीवन में बल्कि जन्म - जन्मांतर तक हमारे साथ रहती हैं और हमारे संस्कारों का निर्माण करती हैं ।

गुरु न केवल इस संसार के लिए , बल्कि आत्मा के उन्नति और मोक्ष के लिए भी मार्गदर्शन करते हैं । गुरु का ज्ञान और उपदेश जीवात्मा को सही दिशा दिखाते हैं और परलोक में भी उसे सही मार्ग पर अग्रसर करते हैं ।

गुरु का कार्य केवल भौतिक ज्ञान देना नहीं है , बल्कि हमें आध्यात्मिक जागरूकता की और ले जाना है , जिससे हम इस संसार के बंधनों से मुक्त होकर मोक्ष की ओर बढ़ सकें । यही कारण है कि गुरु को जीवन में उच्चतम स्थान दिया गया है और उनकी शिक्षाओं को जीवन का आधार माना जाता है ।

गुरु शब्द का अर्थ : ______

" गु " का अर्थ है **अंधकार** , और **" रु "** का अर्थ है उसे **दूर करने वाला** । इस प्रकार "गुरु" का अर्थ होता है , वह जो अज्ञानता रूपी अंधकार को मिटाकर ज्ञान रूपी प्रकाश की ओर ले जाए । गुरु हमें असत्य से सत्य की ओर , और अज्ञानता से ज्ञान की ओर ले जाता है । वह जीवन का सच्चा मार्गदर्शट होता है , जो शिष्य के भीतर की सभी बुराइयों को नष्ट करके उसे सुसंस्कृत बनाता है । गुरु केवल शास्त्रों का ज्ञान नहीं देता , बल्कि जीवन के गहरे रहस्यों का बोध भी कराता है । वह जीवन के सभी भ्रमों और गलतियों से शिष्य को मुक्त करता है । **गुरु सृजन , पालन , और विनाश ___ तीनों कार्यों**

Edit with WPS Office

में शिष्य के जीवन का मार्गदर्शन करता है ।

किसे गुरु बनाना चाहिए :

शास्त्रों में यह बताया गया है कि किसी को गुरु बनाने से पहले उसकी परीक्षा अवश्य लेनी चाहिए । बिना जांच परख के किसी को गुरु मान लेना अंधविश्वास को जन्म दे सकता है । गुरु केवल वयोवृद्ध (आयु में बड़ा) नहीं होता , बल्कि ज्ञानवृद्ध (ज्ञान में समृद्ध) होना चाहिए । आयु से अधिक महत्वपूर्ण उसका ज्ञान और अनुभव होता है ।

गुरु को परखने के लिए यह देखना चाहिए कि वह शास्त्रों के ज्ञान में निपुण हो , उसका आचरण सच्चा और नैतिक हो , और वह अपने शिष्यों को सही दिशा में ले जाने की क्षमता रखता हो । गुरु बनने के लिए केवल बाहरी प्रतिष्ठा नहीं , बल्कि आंतरिक गुणों और आदर्शों की आवश्यकता होती है ।

गुरु की योग्यता :

1. **ज्ञानवृद्धि** : गुरु को शास्त्रों , धर्म , और जीवन के गहरे सिद्धांतों का ज्ञान होना चाहिए । उसे न केवल आध्यात्मिक ज्ञान हो , बल्कि व्यावहारिक ज्ञान भी हो जिससे वह शिष्य को हर क्षेत्र में मार्गदर्शन दे सके ।
2. **नैतिकता और अनुशासन** : गुरु का जीवन उच्च नैतिक आदर्शों पर आधारित होना चाहिए । वह सत्य , अहिंसा , और निष्ठा के मार्ग पर चलने वाला हो ।
3. **शिष्य के प्रति सहानुभूति** : गुरु को शिष्य की आवश्यकताओं और उसकी क्षमताओं को समझने की शक्ति होनी चाहिए । वह सहानुभूति और धैर्य से शिष्य का मार्गदर्शन करें ।
4. **निर्मल और नि:स्वार्थ मन** : गुरु का मन निर्मल और निस्वार्थ होना चाहिए । उसे केवल शिष्य के कल्याण और उन्नति की इच्छा होनी चाहिए , न कि अपने व्यक्तिगत लाभ की ।

Edit with WPS Office

5. **आध्यात्मिक उन्नति** : गुरु को अपने शिष्यों की आध्यात्मिक उन्नति में रुचि होनी चाहिए , और उसे सही मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करना चाहिए ।

गुरु वह है जो शिष्य को जीवन के अंधकार से ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाता है । किसी को गुरु बनाने से पहले उसकी योग्यता , ज्ञान , और चरित्र का मूल्यांकन आवश्यक है । सही गुरु का चयन जीवन में सच्ची उन्नति और मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करता है ।

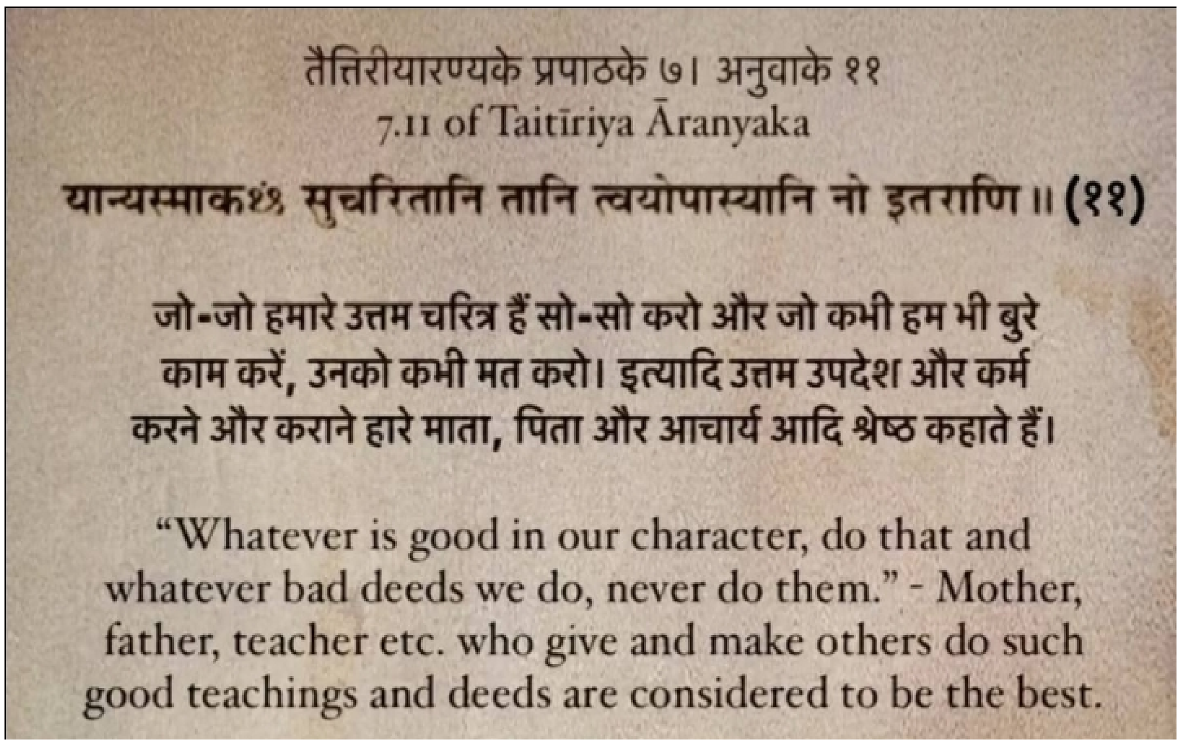

तैत्तिरीय आरण्यक. 7.11 में ऋषि कहते हैं कि विद्यार्थी को अपने गुरु और माता-पिता की अच्छी आदतों और व्यवहारों को ही ग्रहण करना चाहिए ।

यदि गुरु भी कुछ भूल से अनुचित कार्य करें तो उस कार्य अथवा गलती को ग्रहण न करें । आज कई लोग अपने गुरुओं की कहीं कुछ अनुचित बातों को गुरु परंपरा के नाम पर ज्यों का त्यों , बिना सोचे समझे और बिना तर्क व विवेक के ग्रहण करने का प्रयास करते हैं , यह सनातन धर्म नहीं है , यह ऋषियों की परंपरा नहीं है ।

- इसलिए , गुरु उसी को बनाना चाहिए जो आपकी हर शंका का

Edit with WPS Office

समाधान कर सके ? जो गुरु तर्क बुद्धि और विज्ञान के आधार पर सनातन धर्म और वेदों की रक्षा करें अथवा वेद के अनुसार आचरण करें , उसी को गुरु बनाओ ।

गौतम धर्मसूत्र के अनुसार ब्रह्मचारी विद्यार्थी को मांस और मदिरा खाना वर्जित है । चंदन आदि गंध लेपन करना (परफ्युम लगाना) , आंखों में अंजन लगाना , गीत गाना , नृत्य देखना सब वर्जित है ।

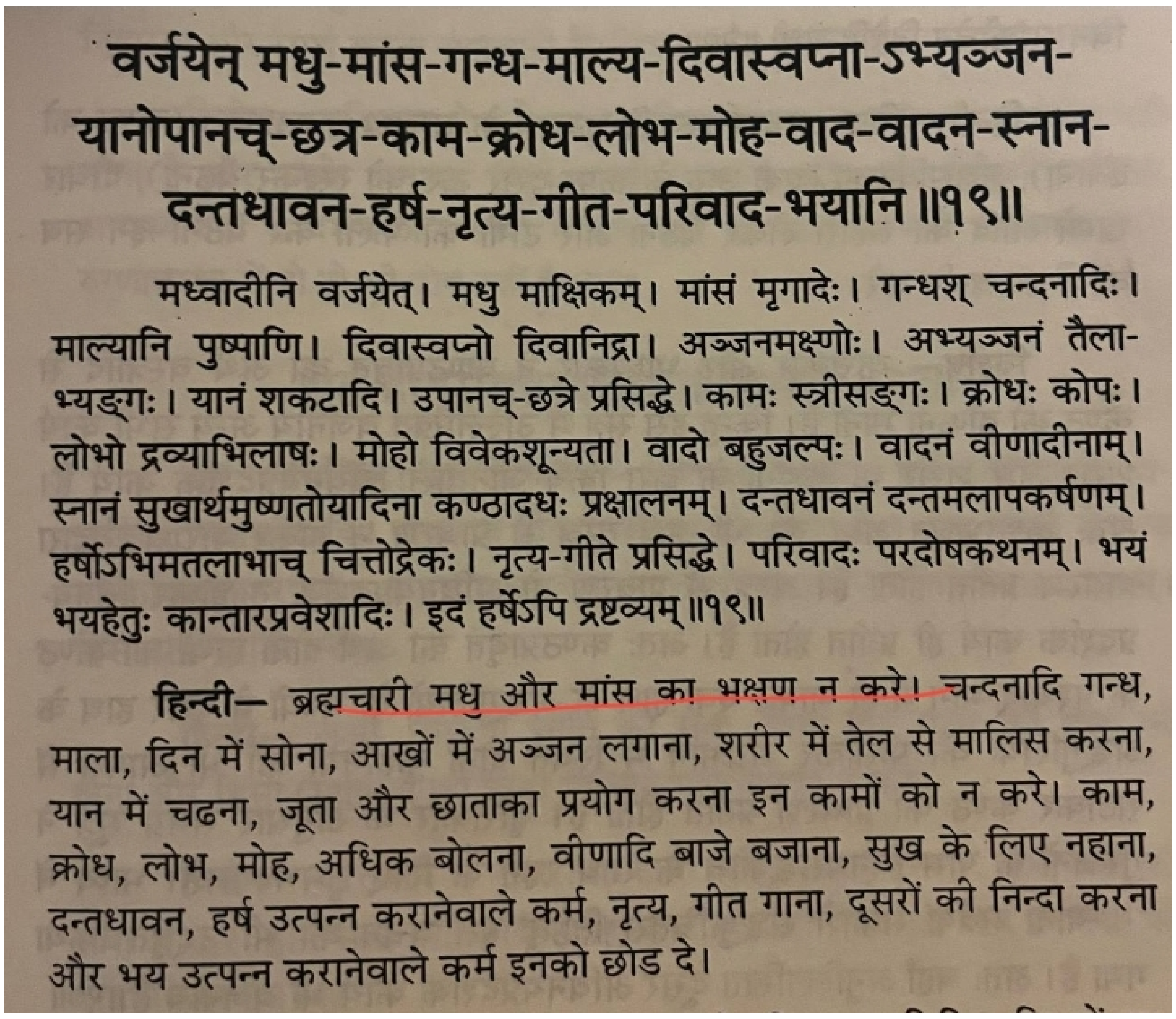

वर्जयेन् मधु-मांस-गन्ध-माल्य-दिवास्वप्ना-ऽभ्यञ्जन-यानोपानच्-छत्र-काम-क्रोध-लोभ-मोह-वाद-वादन-स्नान-दन्तधावन-हर्ष-नृत्य-गीत-परिवाद-भयानि ॥१९॥

मध्वादीनि वर्जयेत्। मधु माक्षिकम्। मांसं मृगादेः। गन्धश् चन्दनादिः। माल्यानि पुष्पाणि। दिवास्वप्नो दिवानिद्रा। अञ्जनमक्ष्णोः। अभ्यञ्जनं तैलाभ्यङ्गः। यानं शकटादि। उपानच्-छत्रे प्रसिद्धे। कामः स्त्रीसङ्गः। क्रोधः कोपः। लोभो द्रव्याभिलाषः। मोहो विवेकशून्यता। वादो बहुजल्पः। वादनं वीणादीनाम्। स्नानं सुखार्थमुष्णतोयादिना कण्ठादधः प्रक्षालनम्। दन्तधावनं दन्तमलापकर्षणम्। हर्षोऽभिमतलाभाच् चित्तोद्रेकः। नृत्य-गीते प्रसिद्धे। परिवादः परदोषकथनम्। भयं भयहेतुः कान्तारप्रवेशादिः। इदं हर्षेऽपि द्रष्टव्यम् ॥१९॥

हिन्दी— ब्रह्मचारी मधु और मांस का भक्षण न करे। चन्दनादि गन्ध, माला, दिन में सोना, आखों में अञ्जन लगाना, शरीर में तेल से मालिस करना, यान में चढना, जूता और छाताका प्रयोग करना इन कामों को न करे। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अधिक बोलना, वीणादि बाजे बजाना, सुख के लिए नहाना, दन्तधावन, हर्ष उत्पन्न करानेवाले कर्म, नृत्य, गीत गाना, दूसरों की निन्दा करना और भय उत्पन्न करानेवाले कर्म इनको छोड दे।

- **सारे दिन शास्त्रों की दुहाई देने वाले कितने पौराणिक बच्चे यह सब पालन करते हैं..?**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 141.दुख क्या है यह कितने प्रकार के होते हैं ..?

दुःख जीवन की एक अपरिहार्य वास्तविकता है , जो व्यक्ति के मानसिक , शारीरिक , या भावात्मक संतुलन को प्रभावित करता है । यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें व्यक्ति को पीड़ा , कष्ट , या असंतोष का अनुभव होता है । सनातन धर्म और दर्शन में दुख का विश्लेषण बहुत गहराई से किया गया है , दुख का कारण मानव जीवन के अस्थायी अंगों से जुड़ा होता है , जैसे की इच्छाएं , भौतिक वस्त्रो का आकर्षण , या मोह ।

दुख के प्रकार :

भारतीय दर्शन और शास्त्रों के अनुसार , दुख को मुख्यतः तीन प्रकारों में विभाजित किया गया है , जिन्हें त्रिविध दुःख कहा जाता है । ये दुख हमारे जीवन में अलग-अलग रूपों में प्रकट होते हैं और हमारे मानसिक , शारीरिक , और सामाजिक जीवन को प्रभावित करते हैं ।

1. आधिभौतिक दुख

- यह दुख बाहरी भौतिक कारणों से उत्पन्न होता है , जैसे जीव - जंतु दुर्घटनाएं , महामारी , या समाज से संबंधित संघर्ष या अन्य भौतिक कारकों से । इसे भौतिक दुख भी कहा जाता है । यह व्यक्ति की भौतिक स्थिति को प्रभावित करते हैं । यह दुख व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर होता

Edit with WPS Office

है , क्योंकि यह बाहरी कारकों से उत्पन्न होता है । इस दुख से बचने के लिए अधिकतर प्रयास सावधानी और सुरक्षा से जुड़े होते हैं , परंतु पूर्ण रूप से इससे मुक्त होना कठिन है ।

2. आधिदैविक दुख

- यह दुख बाढ़ , भूकंप , तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं से होने वाला हानि से संबंधित है जो व्यक्ति के नियंत्रण से बाहर होते हैं और जिन्हें भाग्य या ईश्वर की इच्छा से जोड़ा जाता है । इसमें अदृश्य शक्तियों , दैवी आपदाओं का योगदान होता है ।

3. आध्यात्मिक दुख

यह दुख व्यक्ति के आंतरिक मानसिक और भावात्मक संघर्षों से उत्पन्न होता है । इसे आत्मा से जुड़ा दुख कहा जाता है , जो इच्छाओं , लालसाओं , अज्ञानता , और आंतरिक अशांति के कारण उत्पन्न होता है । मानसिक तनाव , आत्म - संदेह , गलत धारणाएं , ईर्ष्या , द्वेष , लालच , और मोह - माया से उत्पन्न दुख । मन की अशांति और असंतोष भी इस श्रेणी में आते हैं । यह दुख सबसे गहरा और जटिल होता है , क्योंकि इसका स्रोत व्यक्ति के भीतर होता है । इससे छुटकारा पाने के लिए व्यक्ति को आत्म चिंतन , ध्यान , और आत्म - ज्ञान की आवश्यकता होती है । इसे आध्यात्मिक साधना और मानसिक संतुलन से नियंत्रित किया जा सकता है ।

दुख के प्रमुख कारण

1. **अज्ञान (अविधा)** : शास्त्रों के अनुसार , अज्ञानता को सभी दुखों का मूल कारण माना गया है । आत्मा और परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को न जानने से व्यक्ति मोह , माया , और सांसारिक इच्छाओं में उलझ जाता है , जिससे दुख का अनुभव होता है ।
2. **मोह और माया** : जब व्यक्ति है अस्थायी भोगों के प्रति आकर्षित

Edit with WPS Office

होता है , जैसे की धन , संपत्ति , परिवार , और सांसारिक वस्तुएं , तब वह मोह और माया में फंसकर दुख का अनुभव करता है ।

3. **कर्म :** हमारे कर्मों का सीधा संबंध हमारे दुख और सुख से होता है । यदि हम गलत कर्म करते हैं , तो उनके परिणाम स्वरूप हमें दुख का सामना करना पड़ता है । कर्म का सिद्धांत यह कहता है कि जो जैसा करेगा , उसे वैसा ही फल मिलेगा ।
4. **इच्छाएं और लालसाएं :** व्यक्ति की अनियंत्रित इच्छाएं और तृष्णाएं उसे असंतोष और दुख की ओर ले जाती है । जितनी अधिक इच्छाएं होगी , उतना ही अधिक दुख होगा , क्योंकि हर इच्छा का पूर्ण होना संभव नहीं है ।

5. असंतुलित जीवन : यदि व्यक्ति का जीवन संतुलित नहीं है , यानी उसे मानसिक , शारीरिक , और भावात्मक संतुलन प्राप्त नहीं है , तो वह अधिक दुख का अनुभव करता है ।

दुख से मुक्त होने के उपाय :

1. **ध्यान और साधना :** मानसिक और भावात्मक शांति के लिए ध्यान , योग , और साधना करना अत्यधिक प्रभावी होता है । इससे आंतरिक संतुलन प्राप्त होता है ।
2. **आत्मज्ञान :** आत्मा और परमात्मा के सत्य स्वरूप को जानकार व्यक्ति अज्ञानता से मुक्त हो जाता है । यह ज्ञान हमें मोह माया और दुखों से बाहर निकालता है ।
3. **संतोष :** इच्छाओं और लालसाओं को नियंत्रित करके संतोष को अपनाने से व्यक्ति मानसिक शांति और सुख का अनुभव कर सकता है । अतः आपके पास जो भी है उसमें संतुष्ट हो जाना ही सुख का मूल कारण है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

142.भगवान शिव कौन थे ..?

वेदों में शिव ईश्वर का एक गुणवाचक नाम है जिसका अर्थ कल्याणकारी है वेदों में एक ईश्वर के अनेक नाम गुणों के आधार पर बताये गए हैं । जैसे ____

नम: शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शंक्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ।। यजुर्वेद. 16/41

अर्थात ___ हे कल्याणस्वरूप , " शम्भवाय " आप " शंभव " हो (मोक्षसुखस्वरूप और मोक्षसुख के कराने वाले हो) आपको " नमः " नमस्कार है , आप (मयोभवाय) मयोभव हो , सांसारिक सुख के करनेवाले आपको मैं नमस्कार करता हूं , आप (शंक्कराय) शंकर हो , आपसे ही जीवों का कल्याण होता है , अन्य से नहीं ।

इस मंत्र में शंभव , मयोभव , शंकर , मयस्कर , शिव , शिवतर शब्द आये हैं जो एक ही परमात्मा के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुए हैं । ऐसे में ईश्वर के शिव नामक नाम के आधार पर एकमात्र की कल्पना करना जो भांग/गांजा जैसे नशे को ग्रहण करता है । यह अज्ञानता का प्रतीक मात्र है ।

वेदों में शिव कल्याणकारी उसी निराकार ईश्वर का एक नाम है जिन्हें रुद्र आदि नामों से भी संबोधित किया गया है । परंतु हम यहां जिस शिवजी की चर्चा कर रहे हैं वहां एक ऐतिहासिक महापुरुष थे महात्मा , धर्मज्ञ , महान वैज्ञानिक शिवजी के चरित्र को समझने के लिए हमें महाभारत के प्रसंगों का

Edit with WPS Office

अध्ययन करना आवश्यक है , क्योंकि वहां उनके वास्तविक स्वरूप का अधिक यथार्थवादी चित्रण किया गया है ।

भगवान शिव को प्राय: " **कैलाशपति** " कहा जाता है , जो उनके निवास स्थान कैलाश का संकेत है । उन्हें " **देव वर्ग** " में उत्पन्न बताया जाता है , लेकिन उनके चरित्र की महत्ता देवता होने से कहीं अधिक उनके आदर्श और आचरण से होती है । शिव को लेकर एक भ्रम यह है कि उनका नशा (भांग और गांजा) करते हुए चित्रण किया जाता है , जो उनके दिव्य और पवित्र व्यक्तित्व के विरुद्ध है । उनका जीवन और उनके उपदेश शुद्धता , योग , और ज्ञान पर आधारित थे । उनका नशा करते हुए चित्रण करना उनके पवित्र आचरण पर कलंक लगाने के समान है ।

महर्षि वेदव्यास द्वारा रचित महाभारत में भगवान शिव का विवरण कई स्थानों पर मिलता है । महाभारत के शांति पर्व में महर्षि वैशम्पायनजी ने शिव को अग्निष्वात का पुत्र बताया है । अग्निष्वात ब्रह्मा के वंशज माने जाते हैं , जिससे यह सिद्ध होता है कि भगवान शिव ब्रह्मा के वंश में आते थे ।

महर्षि वैशम्पायनजी का उद्धरण :

" उमापतिभूतपति: श्री कण्ठो ब्रह्मण: सुत: । उक्तवानिदमव्यग्रो ज्ञानं पाशुपतं शिव: ।।

महाभारत शांति पर्व , मोक्षधर्मपर्व , अध्याय 349 , श्लोक 67 ______

यह श्लोक स्पष्ट करता है कि शिव , उमा के पति और भूतपति (सभी प्राणियों के स्वामी) है , शिव का पाशुपत अस्त्र उनकी एक विशेष पहचान थी , जो इस सृष्टि में कोई और अस्त्र नष्ट नहीं कर सकता था ।

शिव का आदर्श चरित्र :

1. भगवान शिव एक अद्वितीय और दिव्य चरित्र के धनी थे ।

Edit with WPS Office

महाभारत के प्रसंगों से उनके कुछ प्रमुख गुण इस प्रकार है ;

2. **विरक्ति** : शिव अत्यंत विरक्त और सदैव योग साधना में लीन रहते थे । सांसारिक मोह - माया में उनकी कोई रुचि नहीं थी ।
3. **संयम** : वे विवाहित होते हुए भी पूर्ण रूप से जितेंद्रिय (इंद्रियों पर विजय प्राप्त) थे ।
4. **महान वैज्ञानिक** : वे वेदों और वेदांगों के महान ज्ञाता थे , जो उनके वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रतीक है ।
5. **शारीरिक बल और वीरता** : शिव का शरीर सुगठित , तेजस्वी और अत्यंत बलिष्ठ था , जिससे उनकी वीरता का भी प्रमाण मिलता है ।
6. **सिद्धियां** : वे आकाशगमन जैसे अद्भुत शक्तियों के स्वामी थे , जो उनकी योग साधना का परिणाम थी ।
7. **जीवन्मुक्त अवस्था** : वे जीवित रहते हुए ही मुक्ति की अवस्था को प्राप्त कर चुके थे , जो उनके चरम आत्मज्ञान और साधना को दर्शाता है ।

शिवरात्रि का अर्थ :

" **शिवरात्रि** " शब्द का अर्थ है **"कल्याणकारी रात्रि "** । यह केवल एक तिथि नहीं , बल्कि एक अवसर है जो आत्मिक उन्नति और संपूर्ण विश्व को सुख , शांति और आनंद की और प्रेरित करती है । इसी रात्रि में शिव जी ने असुरों का संहार भी किया था । यह मानव जीवन में एक महत्वपूर्ण क्षण के रूप में आती है , जब व्यक्ति आत्म - साक्षात्कार की ओर बढ़ता है । शिवरात्रि हमें उस रात्रि की याद दिलाती है , जो मनुष्य के भीतर के अंधकार को दूर कर उसे प्रकाश की ओर ले जाती है ।

शिवलिंग की उत्पत्ति :

शिवलिंग की पूजा और उसकी उत्पत्ति के संबंध में प्राचीन वैदिक शास्त्रों में कोई उल्लेख नहीं मिलता । यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि वाल्मीकि रामायण और महाभारत जैसे प्रमुख ग्रंथों में भी शिवलिंग से संबंधित कोई

Edit with WPS Office

कथा या प्रसंग उपलब्ध नहीं है । वाल्मीकि रामायण में भगवान श्री राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना का कोई वर्णन हमें नहीं मिलता है । इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि शिवलिंग और इससे जुड़ी कई कथाएं , विशेष रूप से शिव पुराण के माध्यम से , पौराणिक काल में गढ़ी गई है , जो ऐतिहासिक रूप से सत्य न होकर कल्पना पर आधारित प्रतीत होती है । शिवलिंग की उत्पत्ति से संबंधित कथाओं में से एक प्रमुख कथा शिव पुराण में दारुवन की कथा के रूप में आती है । इस कथा में शिवजी के चरित्र का वर्णन बहुत ही मार्मिक एवं अश्लील तरीके से किया गया है । इससे शिवजी की छवि को अत्यधिक व्यभिचार , कामी , तथा दोष पूर्ण रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है , जो न केवल उनके उच्च आध्यात्मिक व्यक्तित्व के विपरीत है , बल्कि उनके भक्तों के लिए असहजता का कारण भी बनता है । शिव पुराण , भविष्य पुराण , और देवी भागवत पुराण में शिवलिंग की उत्पत्ति से संबंधित कथाएं भी एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न है और कई भ्रम एवं प्रश्न भी उत्पन्न करते हैं । इन कथाओं का गहन अध्ययन करने पर यह समझ में आता है कि शिवलिंग की पूजा की परंपरा का पौराणिक आधार अत्यधिक काल्पनिक है और इसे ऐतिहासिक संदर्भों में सटीकता के साथ नहीं देखा जा सकता ।

पाठकों से विनम्र निवेदन है कि शिवलिंग की उत्पत्ति से संबंधित भ्रम को दूर करने के लिए यह अत्यधिक आवश्यक है कि हम पुराणों (शिव पुराण , भविष्य पुराण , और देवी भागवत पुराण) का सम्यक अध्ययन करें । इन ग्रंथो में शिवलिंग से जुड़ी कथाओं का विवेचन करने से हमें यह बोध होता है कि इनमें से कई कथाएं पौराणिक कल्पनाओं से प्रेरित है , जो समय के साथ धार्मिक मान्यताओं का हिस्सा बन गई है ।

शिवजी का चरित्र केवल पौराणिक कथाओं तक सीमित नहीं है ; वे एक ऐतिहासिक महापुरुष थे , जो योग , ज्ञान , विज्ञान , और आत्मसंयम के प्रतीक माने जाते हैं । उनकी उपासना सिर्फ मूर्ति या लिंग रूप में नहीं होनी चाहिए , बल्कि उनके जीवन के आदर्श और उपदेशों को आत्मसात करना चाहिए । शिव का वास्तविक संदेश हमें दिव्यता , आत्मज्ञान और सच्ची

Edit with WPS Office

मुक्ति की और प्रेरित करता है ।

इसलिए , भगवान शिव की पूजा उनके चरित्र और उपदेशों को समझने और अपने जीवन में अपनाने की दिशा में होनी चाहिए , न कि केवल पारंपरिक या पौराणिक मान्यताओं तक सीमित । यही शिव की वास्तविक महिमा है , जो मानवता को आध्यात्मिक ऊंचाइयों की ओर ले जाती है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 143. धर्मिष्ठ श्री राम द्वारा शिवलिंग की स्थापना या कल्याणकारी शिव की उपासना

किसी भी व्यक्ति के धार्मिक , पारिवारिक , सामाजिक एवं राष्ट्रीय व्यक्तित्व के परिलक्षक उस व्यक्ति के चारित्रिक विशेषण हुआ करते हैं , तथा वे विशेषण ही सामान्य - असामान्य का भेद कराते हुए उस व्यक्ति को एक गौरवपूर्ण स्थान दिलाने में सक्षम होते हैं , अर्थात ये विशेषण उस व्यक्ति के संपूर्ण जीवन की बहुमूल्य उपलब्धि होते हैं , इस विशेषता से युक्त आज जैसे हम राष्ट्रोन्नायक महर्षि दयानंद , आदि शंकराचार्य जी , अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद , लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल , आदि महापुरुषों को देखते , सुनते हैं , ठीक वैसे ही 9 लाख वर्ष पूर्व उत्पन्न " श्री राम " के वैदिक

Edit with WPS Office

संस्कृति से ओत - प्रोत उज्जवल , धवल जीवन के परिचायक , सत्यवादी , मर्यादा पुरुषोत्तम , महात्मा , कृतज्ञ , धर्मज्ञ , धार्मिक , धर्मात्मा , धर्मिष्ठ इत्यादि विशेषणों को पाते है , जिन्होंने "राम " को विशिष्ट स्थान पर प्रतिष्ठित कर दिया है ।

हर्ष - विषाद , सुख दुख प्रत्येक अवसर पर राम को वाल्मीकि रामायण में सत्यवादी , धर्मज्ञ , धार्मिक इत्यादि पूर्वोक्त विशेषणों से ही अभिहित किया गया है , तथाहि ____

ज्येष्ठे धर्मप्रधाने च न रामं नेतुमर्हसि ।

वाल्मीकि रामायण बाल कांड. 20/12

अर्थात् हे विश्वामित्र ! ज्येष्ठ और धर्म प्रधान राम को नहीं ले जा सकते ।

ज्येष्ठं पुत्रं प्रियं रामं द्रष्टुमिच्छांमि धार्मिकम् ।

वाल्मीकि रामायण अयोध्या कांड. 14/24

अर्थात् हे कैकेयी ! ज्येष्ठ पुत्र प्रिय धार्मिक राम को देखना चाहता हूं ।

विद्धि माम् ऋषिभिस्तुल्यं विमलं धर्ममास्थितम् ।।

वाल्मीकि रामायण अयोध्या कांड. 16/20

अर्थात हे माता कैकेयी ! ऋषियों के तुल्य विमल और धर्म में लगा हुआ मुझे जानो ।

धर्मपालो जनस्यास्य शरणयश्च महायशा: ।

वाल्मीकि रामायण अरण्य कांड. 1/18

अर्थात् हे महायशस्वी ! धर्मरक्षक ! आप इस वन के मुनि जनों के शरण्य है , पूजनीय है ।

धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च कथं पापं करिष्यति ।

वाल्मीकि रामायण किष्किंधा कांड. 16/5

अर्थात् हे तारा ! (मुझ बाली के प्रति) धर्मज्ञाता , कृतज्ञ राम पाप क्यों

Edit with WPS Office

करेंगे ? अर्थात् राम उचित कार्य ही करेंगे ।

भवान् क्रियापरों लोके भवान् देवपरायण: ।
आस्तिकों धर्मशीलश्च व्यवसायी च राघव ।।

वाल्मीकि रामायण किष्किंधा कांड. 27/35

अर्थात् हे राघव ! आप नित्य कर्म के अनुष्ठाता , देवोपासक , आस्तिक , धर्मशील और उधमी है ।

तस्य धर्मात्मन: पत्नी स्नुषा दशरथस्य च ।
कथं व्याहरतो मां ते न जिह्वा पापं शीर्यति ।।

वाल्मीकि रामायण सुंदरकांड. 22/16

अर्थात् हे पापी रावण ! मुझ सीता जो उस धर्मात्मा की पत्नी और दशरथ की पुत्रवधू है , उसका नाम लेते हुए तुम्हारी जिव्हा नहीं कट जाती ?

तच्छुत्वा परामप्रीतो रामो धर्मभूतां वर: ।

वाल्मीकि रामायण. युद्ध कांड. 111/66

अर्थात् विभीषण के वाक्य को सुनकर धर्मधारकों में श्रेष्ठ परमप्रसन्न राम (बोले) ।

इस प्रकार संपूर्ण रामायण में हम देखते हैं कि राम की धार्मिकता ज्वार भाटे के समान हिलोरे ले रही है , उनका प्रत्येक कदम , प्रत्येक कार्य धर्म की मर्यादा से बंधा हुआ है , वे रठ्च मात्र भी धर्म की डोरी से च्युत नहीं है । राम की इस धर्मज्ञता , धर्मनिष्ठा को जानने से पूर्व को जानना आवश्यक है । छान्दोग्योपनिषद् में धर्म का स्वरूप बताते हुए कहा ____

त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनदानमिति प्रथम: ।
तप एवं द्वितीयों , ब्रह्मचर्याचार्यकुलवासी तृतीय: ।।

छान्दोग्य उपनिषद्. 2/23/1

अर्थात् धर्म के तीन स्कन्ध भाग हैं ।

प्रथम है ___ यज्ञ ___ देवयज्ञ , शुभ कर्म आदि करना ।

Edit with WPS Office

अध्ययन ___ ज्ञान की पराकाष्ठा को पहुंचाना ।

दान ___ त्याग की प्रवृत्ति , लोभ से कोसों दूर रहना ।

द्वितीय है ___ तप ___ स्वात्म पर नियंत्रण रखते हुए निराकार ब्रह्म की उपासना करना ।

तृतीय है ___ ब्रह्मचारी ___ ब्रह्मचर्य व्रत धारण करते हुए अनेक कष्टों को सहकर आचार्य कुल में रहना ।

उपनिषद के इस वचन की गरिमा बड़ी गहन है , अन्य मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्रोंक्त धर्म के लक्षण इसी में समाहित हो जाते हैं । राम के जीवन में धर्म के ये तीनों स्कन्ध इतने रच - पच गये है , कि जिन्हें देख अन्ततोगत्वा संस्कृत कवि कह ही उठा ____

" रामो विग्रहवान धर्मः " अर्थात् राम धर्म की साक्षात् प्रतिमूर्ति है ।

धर्म राम का अविभाज्य अंग है , धर्म की प्रशंसा राम स्वयं करते हैं ____

धर्मो हि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम् ।
धर्मसंश्रितमप्येतत् पितुर्वचनमुत्तमम् ।।

अयोध्या कांड. 21/41

अर्थात हे कौशल्या माता ! इस संसार में धर्म उत्तम है , धर्म में ही सत्य प्रतिष्ठित है , तथापि धर्म का आश्रय होते हुए भी पिता का यह वचन श्रेष्ठ है ।

यहां पर मुझे धर्म के प्रथम और तृतीय स्कन्धो पर कुछ न लिखकर , द्वितीय स्कन्ध पर ध्यान दिलाना है , क्योंकि इन दो स्कन्धों को सामान्यतया आबालवृद्ध सभी जानते हैं कि राम ब्रह्मचर्य व्रत में दीक्षित होकर विश्वामित्र के साथ शिवाश्रम , सिद्धाश्रम इत्यादि आश्रमों में यज्ञ के रक्षार्थ 10 वर्ष तक रहे , तथा राज्य रक्षार्थ 14 वर्ष वन में रहे । राज्य छोड़कर 14 वर्ष पर्यंत वनवास में रहना और सुग्रीव एवं विभीषण को उनके भाइयों की मृत्यु के पश्चात , उनके राज्य को लोष्ठवत् मान उन्हें सौंप देना , इससे बढ़कर और कौन सा दांन तथा त्याग हो सकता है ?

Edit with WPS Office

राम ने धर्म के द्वितीय स्कन्ध तप को अपनी काया के आच्छादन की भांति अंगीकार किया हुआ है , चाहे अयोध्यावास हो , चाहे आश्रमवास हो , चाहे वनवास , दुख हो या सुख , प्रत्येक परिस्थिति में उस देवाधिदेव महादेव की उपासना तथा अग्निहोत्र को नहीं भूलते , राम की इस ईश्वर भक्ति को रामायण के निम्न श्लोकों में देखा जा सकता है ____

प्रभातकाले चोत्थाय पूर्वां सन्ध्यामुपास्य च ।
प्रशुची परमं जाप्यं समाप्य नियमेन च ।।

बालकांड. 26/31 - 32

अर्थात् प्रातः काल उठकर , प्रातः काल की संध्या को करके और नियम पूर्वक परम पवित्र जप को समाप्त करके (विश्वामित्र को अभिवादन किया) ।

एकयामावशिष्टायां रात्र्यां प्रतिविबुध्य स: ।
पूर्वां सन्ध्यामुपासीन: जजाप यतमानस: ।।

अयोध्या कांड. 6/5 , 6

अर्थात् रात्रि के एक प्रहर के शेष रहने पर राम ने उठकर प्रातः कालीन उपासना करते हुए मन लगाकर जप किया ।

उपास्य तु शिवां सन्ध्यां दृष्ट्वा रात्रिमुपागताम् ।।

अयोध्या कांड. 46/13

अर्थात् रात्रि होती हुई देख राम आदि ने कल्याणकारी संध्या की उपासना विधि पूर्ण की है ।

नामनुष्ये भवत्यग्निर्व्यक्तमत्रैव राघवौ ।।

अयोध्या काण्ड. 63/22

अर्थात सैनिकों ने भरत से कहा , मनुष्य रहित स्थान में अग्नि नहीं होती है , (अतः धूम दीखने से प्रतीत होता है) कि निश्चित रूप से यहां ही राम , लक्ष्मण है ।

Edit with WPS Office

तात्पर्य हुआ आश्रम में यज्ञाग्रि का धूम प्रसूत हो रहा था ।

एतस्मिन्नाश्रमे वासं चिरं तु न समर्थये ।
तमेवमुक्त्वोपरमं राम: सन्ध्यामुपागमत् ।।

अरण्य कांड. 7/22

अर्थात् हे मुनि ! इस सुतीक्ष्ण आश्रम में बहुत काल तक रहना नहीं चाहता , ऐसा मुनि से कहकर राम सन्ध्या में बैठ गये ।

अथ तेऽग्रि सुरांश्चैव वैदेही रामलक्ष्मणौ ।
काल्यं विधिवदभ्यच्र्य तपस्विशरणे वने ।।

अरण्य कांड. 8/3

अर्थात् तत्पश्चात राम , लक्ष्मण और सीता प्रातः काल विधिवत् अग्रिहोत्र देवयज्ञ को करके आश्रम में सुतीक्ष्ण के पास पहुंचे ।

भवान् क्रियापरो लोके भवान् देवपरायण: ।
आस्तिको धर्मशीलश्च व्यवसायी च राघव ।।

किष्किंधा कांड. 27/35

वाल्मीकि रामायण के ये स्थल पुकार - पुकार कर कह रहे हैं कि मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम उस निराकार सर्वान्तयामी प्रभु की ही उपासना करते थे एवं अग्निहोत्र की क्रिया संपादित करते थे । वे शिवादि मूर्ति के समुपासक नहीं थे । निराकार , व्यापक , कल्याणकारी उस परमात्मा के ही विष्णु , शिव इत्यादि नाम है । वेवेष्टि व्याप्रोति चराचरं जगत् से विष्णु: जो चर और अचर रुप जगत में व्याप्त है वह विष्णु हैं । शेवयति कल्याणं करोति इति शिव: जो कल्याण स्वरूप व कल्याण करने हारा है वह शिव है । तात्पर्य हुआ इन नामों वाले निराकार परमेश्वर के ही राम समुपासक थे ।

इस प्रकार इन स्फटिकवत् सुस्पष्ट स्थलों को देखते हुए कैसे कहा जा सकता है कि एकेश्वरवादी आस्तिक , धर्मिष्ठ राम ने दक्षिण में समुद्र को तरते हुए रामेश्वरम् टापू में रावण विजयार्थ सेतु बन्धन के पश्चात शिवलिंग की स्थापना कर उसकी पूजा की थी ।

Edit with WPS Office

- **राम ने शिवलिंग की स्थापना की या नहीं ? इस निर्णय से पूर्व किंचित निम्नलिखित बातों पर दृष्टिपात करें ____**

मूल वाल्मीकि रामायण युद्ध कांड के 22 वे सर्ग में जहां पुल बांधने की चर्चा है , वहां कहीं भी आगे पीछे शिवलिंग की स्थापना का लेश मात्र भी व्याख्यान नहीं है ।

जिन कूर्म , शिव , पदम आदि पुराणों में रामचंद्र द्वारा ___

सेतुमध्ये महादेवमीशानं कृत्तिवाससम् ।
स्थापयामास लिगठ्च पूजयामास राघव: ।।
कूर्म पुराण. 21/46 -47

सुपुष्पकामारुहा जलधिमुत्तीर्य पारावारतटे सेनां समावस्था शिवप्रतिष्ठ तत्र कृत्वा मुनिभिदेवैरभ्य _ चितोऽयोध्यामगमत् ।।
पद्म पुराण पुराकल्पीय रामा० 321

इत्यादि वचनों द्वारा शिवलिंग की स्थापना , पूजा करना बताया गया है , ये सभी कथन कितने यथार्थ है इसकी पड़ताल उन्ही पुराणों में कही गई है , कि त्रेता अर्थात राम के युग में मूर्ति पूजा नहीं थी , इस बात से भलीभांति हो जाती है , तधथा ____

सत्येषु मानसी पूजा देवानां तृप्तिकारिणी ।
त्रेतायां वहिपूजा च यज्ञदानादिका क्रिया ।।
द्वापरे मूर्तिपूजा च देवानां वै प्रियकरी ।
कलौ तु दारुण्ये प्राप्ते ब्रह्मपूजनमुत्तमम् ।।
भविष्य पुराण प्रति सर्ग . 3 , अध्याय 22/11 -12

अर्थात सतयुग में मानसिक चिंतन , त्रेता में अग्निहोत्र , यज्ञदान इत्यादि धार्मिक कार्य , द्वापर में मूर्ति पूजा तथा कलयुग में ब्रह्मोपासना देवों

Edit with WPS Office

के लिए उत्तम और तृप्ति कारक होती है ।

पद्म पुराण , शिव पुराण , भविष्य पुराण इत्यादि पुराणों में तो यहां तक कहां है कि शिव के भक्त एवं पूजक पाखंडी , अछूत , शूद्र एवं विष्ठा के कीड़े होते हैं , तथा शिवलिंग का प्रसाद विष्ठा के समान है , इत्यादि एतादृश विरोधाभास युक्त बातें इन कपोलकल्पित पुराण ग्रंथों में भरी पड़ी है । शिव की पूजा और अपमान दोनों एक पलड़े पर है , ऐसे शिव का पूजक राम को बताना राम को अपमानित करने के अतिरिक्त क्या हो सकता है ?

पुराण , अध्यात्म रामायण तथा अपने को बाल एवं अज्ञानी कहने वाले तुलसीदास जी द्वारा रचित रामचरितमानस में बहुश: लिखा है , कि शिवजी पार्वती सहित राम का स्मरण , मनन , चिंतन किया करते थे ।

यथा ____

राघव: सर्वदेवानां पावन: पुरुषोत्तम: ।
स्पृष्ट्वा दृष्ट्या तेनैव विमला: शंकरादय: ।।

पद्म पुराण , उ० ख० अध्याय ,255 , श्लोक 121 - 122

इदमेव सदा में स्यात् मानसे रघुनन्दन: ।
सर्वज्ञ: शंकर: साक्षात् पावृत्या सहित: सदा ।।

अध्यात्म रामायण. 6/50

अर्थात पार्वती सहित , सदा सर्वज्ञ , साक्षात शंकररुप रघुनंदन मेरे मानस में होवे ।

एहि महं रघुपति नाम उदारा । अति पावन पुराण श्रुतिसारा ।
मंगल भवन अमंगलकारी । उमा सहित जेहिं जपत पुरारी ।।

रामचरितमानस बालकाण्ड. दो ० 6/1

Edit with WPS Office

अर्थात इसमें श्री रघुपति का नाम उदार है , जो अत्यंत पवित्र है , वेद पुराण का सार है , कल्याण का भवन है , और अमंगल को हरने वाला है , उस राम नाम को पार्वती सहित शिव जी सदा जपा करते हैं ।

इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि 'राम ' पुराण आदि में वर्णित शिव के पूजक नहीं थे , अपितु शिव ही उनके उपासक थे और राम शिव से कहीं अधिक पवित्र तथा उच्चादर्श वाले थे , अतः शिव अपने उद्धार के लिए , कल्याण के लिए श्री राम का जाप करते हैं । राम के लिए रामायण में अनेकशः ' स्वस्य धर्मस्य स्वजनस्य च रक्षिता ' कहां गया है , अर्थात राम अपने चरित्र तथा अपने आत्मीय जनों के रक्षक हैं , तात्पर्य हुआ राम ने अपने चरित्र की रक्षा के लिए कोर कसर नहीं उठा रखी । ऐसी स्थिति में कैसे संभव है कि अपने से छोटे तथा भ्रष्ट , चरित्रहीन तथा कथित शिवनामक पुरुष के लिंग की स्थापना वेद - वेदांगवित् पवित्र , धर्मात्मा , चरित्रवान " राम ने की हो ।

श्री राम को मूर्तिपूजक बताना अपनी मूढ़ता को ही उजागर करना है । न जाने कैसे तुलसीदास इत्यादि लोगों ने राम के विषय में विरोधाभास युक्त बातें लिख दी , फिर कोषों के बनाने वाले तथा इतिहास लेखन ऐसी तर्कहीन बातें लिखने में क्यों हिचकिचाते ?

युद्ध कांड के 123 वे सर्ग के 20 वे श्लोक में " महादेव " शब्द देखकर तिलक , भूषण इत्यादि टीकाकारों ने भी रामचंद्र द्वारा शिवलिंग की स्थापना का जमकर प्रतिपादन किया है । जबकि इन्होंने सेतुबन्ध के वर्णन में भी किंचित मात्र भी इस विषयक चर्चा नहीं की है ।

- **इस संदर्भ में राष्ट्रोद्धारक जगद्गुरु महर्षि दयानंद सरस्वती जी रामचंद्र के ऊपर थोपे गये इस असत्य कलंक को दूर करते हुए एकादश समुल्लास मैं लिखते हैं कि ____**

" रामचन्द्र के समय में उस लिंग वा मंदिर का नाम चिह्न भी न था । किन्तु ये ठीक है कि दक्षिण देशस्थ राम नामक राजा ' ने मंदिर बनवा लिंग का नाम रामेश्वर रख दिया है । जब रामचन्द्र सीता जी को लेकर , हनुमान आदि के साथ लंका से चले , आकाश मार्ग में विमान पर बैठ अयोध्या को

Edit with WPS Office

आते हैं , तब सीता जी से कहा कि ___

अत्र पूर्व महादेव: प्रसादमकरोत् विभु: ।
एतत्तु दृश्यते तीर्थ । सेतुबन्ध इति ख्यातम् ।।
युद्धकांड. 123/20 , 21

हे सीते ! तेरे वियोग से हम व्याकुल होकर घूमते थे और इसी स्थान में चातुर्मास किया था , और परमेश्वर की उपासना ध्यान भी करते थे । वही जो सर्वत्र विभु (व्यापक) देवों का देव 'महादेव ' परमात्मा है उसकी कृपा से हमको सब सामग्री यहां प्राप्त हुई । और देख ! यह सेतु हमने बांधकर लंका में आके , उस रावण को मार , तुझको ले आये हैं। इसके सिवाय वहां वाल्मीकि ने अन्य कुछ भी नहीं लिखा । "

- ' रामेश्वरम् ' मंदिर के खम्भों पर जिस राजा ने इसे बनवाया , उसकी मूर्तियां अंकित है । उससे भी स्पष्ट है कि दशरथ पुत्र रामचंद्र जी ने वहां शिवलिंग की स्थापना नहीं की थी क्योंकि वह मूर्तियां रामचंद्र के रूप वाली नहीं है ।

महर्षि के ये अमृततुल्य वचन तथा इस श्लोक का ' विभु ' शब्द ही बताता है कि वह देवों का देव परमात्मा साकार व एकदेशी नहीं है , अपितु वह निराकार एवं सर्वदेशी है , रामचन्द्र उसी सर्वदेशी के उपासक थे ।

और तो और रामायण के सभी पात्र अयोध्या वासी , वनवासी , लंकावासी सभी जन उस सर्वव्यापी निराकार ईश के ही चिन्तक हैं तथा संपूर्ण कार्य यज्ञ से ही संपन्न उनके द्वारा किये गये है , यदि उन सबका बखान किया जाये , तो दूसरी रामायण प्रस्तुत हो सकती है । फिर राम के विषय में कहना ही क्या ? जो राम अपने को ऋषि तुल्य तथा धर्म में आस्थित बताता है और सत्य की शपथ खाता हुआ ___ " **रामों द्विर्नाभिभाषते** " अयोध्या ० 18/30 ।। की प्रतिज्ञा करता है यदि वही आस्तिक कहां जाने वाला राम संपूर्ण जीवन में निराकार की उपासना तथा यज्ञ यागादि करने के पश्चात , किसी निम्न क्षण में पत्थर के आगे मत्था टेक

Edit with WPS Office

देगा एवं अपनी प्रतिज्ञा को भूल जायेगा , तो क्या उसके मत्थे असत्यवादिता का सिरमौर नहीं बंधेगा ?

अतः हमें निस्संदेह मानना होगा तथा यह कलंक दूर करना होगा कि उस समय चरित्र नायक पुरुषोत्तम श्री राम ने वेदादि शास्त्र विरुद्ध ऐसा घृणित कार्य नहीं किया । केवल अपने स्वार्थ के वशीभूत स्वार्थी तत्वों ने इस शिवलिंग स्थापना के कार्य को राम के साथ जोड़ा है बेचारे राम को भी इस घृणित कुकृत्य से अछूता नहीं छोड़ा , क्योंकि इस प्रक्रिया से पीढ़ी , दर पीढ़ी माल चाबने को मिलेंगे और देश की पूंजी का उपभोग करते हुए मठाधीश की गद्दी बरकरार रखेंगे , यही कारण है कि आज गद्दी के आगे शिवलिंग स्थापकों को न देश की चिंता है , न देशवासियों की ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 144.क्या हनुमान जी बंदर थे ?

रामायण और अन्य धार्मिक ग्रंथो में हनुमान जी को अक्सर ' वानर ' या ' कपि ' कहकर संबोधित किया गया है , जिससे लोगों के मन में भ्रम उत्पन्न हुआ कि वे बंदर थे । परंतु गहराई से अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि हनुमान जी और उनके साथी बंदर नहीं , बल्कि एक विशेष मानव जाति के सदस्य थे , जिसे वानर कहा जाता था । आइए इस विषय को कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं के माध्यम से समझे: ।
वानर शब्द दो शब्द से मिलकर बना है : "वन " और " नर " अर्थात " वन "

Edit with WPS Office

में रहने वाला पुरुष । " इसका तात्पर्य यह है कि जो लोग वन में रहते थे , उन्हें वानर कहा जाता था । इसलिए हनुमान जी ने स्वयं को वानर कहा था । यह स्पष्ट करता है कि वानर और बंदर में रात और दिन का अंतर है । वानर कोई बंदर नहीं थे , बल्कि एक वनवासी मानव जाति के सदस्य थे ।

संस्कृत में " कपि " शब्द का अर्थ बंदर या मर्कट होता है , परंतु वाल्मीकि रामायण काल में इसका उपयोग विशेष रूप से वानर जाति के श्रेष्ठ पुरुषों के लिए किया जाता था । " कपिलश्रेष्ठ " कपिराज " का उल्लेख वानरों के कुल , वंश , और गोत्र की पहचान के रूप में किया गया है । इस प्रकार , कपि शब्द उस समय की सामाजिक संरचना में वानर जाति के उच्च पदस्थ मानवों के लिए प्रयुक्त होता था , न कि साधारण बंदरों के लिए ।

जो लोग हनुमान जी को बंदर मानते हैं , वे उनके चरित्र और गुणों को सही तरीके से नहीं समझते । **हनुमान जी एक महाबली , पराक्रमी , वेदों के ज्ञाता , और संस्कृत के प्रकांड पंडित थे । बंदरों में न तो वेदों का ज्ञान होता है , न ही संस्कृत बोलने की क्षमता । हनुमान जी अपने कंधे पर जनेऊ धारण किए रहते थे , जो केवल मनुष्यों में ही पाया जाता है ।**

हनुमान जी के दादा का नाम प्रहलाद विद्याधर था , जो एक शूरवीर और विद्या प्रेमी व्यक्ति थे । उनके पिता का नाम पवन और माता का नाम अंजनी था । उनका परिवार एक उच्च मानव समाज का हिस्सा था । बंदरों में नामकरण की कोई परंपरा नहीं होती , लेकिन हनुमान जी का नामकरण संस्कार उनके माता-पिता द्वारा किया गया था ।

वानर एक मानव जाति थी , न कि कोई पशु जाति । जैसे भील , गिरि ,नाग , सिंह जातियां होती है , वैसे ही वानर भी एक जाती थी । पंजाब , हरियाणा , हिमाचल , राजस्थान , उत्तर प्रदेश , बंगाल तथा कुछ अन्य प्रदेशों में बहुत से लोग (अधिकतर जन्मना क्षत्रिय) अपने नाम के साथ सिंह का प्रयोग करते हैं , जिसका अर्थ शेर है । हरियाणा में बहुत से लोग मोर जाती से सम्बद्ध है और उनके नाम के पीछे मोर लिखा होता है । इसी प्रकार वानर जाति के

Edit with WPS Office

लोग विशेष रूप से वीर , बुद्धिमान , और विद्वान थे । वाल्मीकि रामायण में वानर जाति के पुरुषों को आर्यों के वंश से संबंधित बताया गया है । बाली , सुग्रीव , अंगद , और तारा सभी वानर जाति के थे , और वे मनुष्य थे । बाली की पत्नी तारा को एक विद्वान स्त्री के रूप में वर्णित किया गया है , जो मत्रों की ज्ञाता थी । यह प्रश्न उठता है कि क्या कोई बंदर मंत्रों का ज्ञान रख सकता है ? बाली की मृत्यु के पश्चात , अंगद और सुग्रीव ने बाली के शव का शास्त्रीय विधि से अंत्येष्टि संस्कार किया था यह एक ऐसा अनुष्ठान है जो केवल मनुष्यों में ही संभव है , न कि किसी पशु जाति में ।
आश्चर्य की बात यह है कि टीवी सीरियलों में रामायण के पात्रों में हम देखते हैं कि वानर जाति के पुरुषों को बंदर के रूप में दर्शाया गया है , परंतु उनकी स्त्रियां ___ जैसे तारा और रुमा ___ साधारण मानव स्त्रियों की तरह दिखाई गई है , जिनकी न तो पूछ पूंछ होती है , न ही उनका मुख बंदर जैसी प्रतीत होती है । अब यहां बड़ा प्रश्न उठता है कि यह किस प्रकार की " बंदर जाति " थी । जहां पुरुषों के पास तो पूंछ होती थी , लेकिन स्त्रियों के पास नहीं ? यह विरोधाभास दिखाता है कि वानर जाति का बंदरों से कोई संबंध नहीं था , बल्कि वे एक विशेष मानव जाति के थे , जिन्हें वानर कहा जाता था ।

हनुमान जी न केवल राम के परम भक्त थे , बल्कि वह एक आदर्श पुरुष , बलशाली , योद्धा , और विद्वान थे । वे वैदिक धर्म के अनुयायी थे और ब्रह्मचर्य का पालन करते थे । बंदर कभी भी ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकते , क्योंकि वे स्वाभाविक रूप से कामुक होते हैं । इसके विपरीत , हनुमान जी सच्चे शाकाहारी और सात्विक जीवन का पालन करते थे । वाल्मीकि रामायण के विभिन्न प्रसंगों में यह स्पष्ट होता है कि हनुमान जी को वेदों और संस्कृत का गहन ज्ञान था । वे राम और लक्ष्मण से संवाद करने में सक्षम थे , जो यह सिद्धांत करता है कि वे मनुष्य थे , न कि कोई पशु ।

हनुमान जी की शक्ति अद्वितीय थी । वे संजीवनी बूटी लाने में सक्षम थे , जो जड़ी बूटियां का गहन ज्ञान दर्शाता है । यह ज्ञान किसी साधारण प्राणी के

Edit with WPS Office

पास नहीं हो सकता । वाल्मीकि रामायण के अनुसार , हनुमान जी को चारों वेदों का ज्ञान था और वे व्याकरण के भी महान ज्ञाता थे । राम ने लक्ष्मण से कहा था कि हनुमान जी का भाषण ऐसा कोई नहीं कर सकता , जिसने वेद और व्याकरण का अध्ययन न किया हो । वाल्मीकि रामायण के अनुसार हनुमान जी आठ सिद्धि और नौ निधियों के ज्ञाता थे ।

हनुमान जी का चरित्र और उनके कार्य बताते हैं कि वे बंदर नहीं थे । उन्हें वानर जाति से संबंधित एक विशेष पुरुष के रूप में समझा जाना चाहिए , जो रामायण के प्रमुख पात्रों में से एक थे । उनके माता-पिता मनुष्य थे , और उनके जीवन का इतिहास पूरी तरह से मानव समाज से जुड़ा हुआ है ।

हनुमान जी का बंदर के रूप में चित्रण हमारे समाज की एक ऐतिहासिक भूल है । वे एक महान विद्वान , वीर पुरुष , और आदर्श भक्त थे , जिनका जीवन हमें उच्च आदर्शों की प्रेरणा देता है । हनुमान जी को बंदर के रूप में प्रस्तुत करना उनके प्रति अन्याय है । हमें उनके चरित्र को समझकर उनके गुणों को अपने जीवन में अपनाना चाहिए ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

---

145. मूर्तिपूजा एवं अवतारवाद

मूर्ति पूजा शब्द दो शब्द से मिलकर बना है पहले " **मूर्ति** " और दूसरा " **पूजा** " " मूर्ति " शब्द का शाब्दिक अर्थ है "आकृति " या " रूप " । जहां किसी

Edit with WPS Office

देवता या ईश्वर के प्रतीक स्वरूप एक मूर्ति बनाई जाती है । यह किसी अमूर्त (अदृश्य या वैचारिक) तत्व को मूर्त रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है ।

पूजा का वास्तविक अर्थ है " **सत्कार** " यानी सत्य का पालन और उसके अनुसार जीवन जीना ही सच्ची पूजा है । बाहरी कर्मकांड से इसका कोई भी संबंध नहीं है । जब हम अपने विचारों , कार्यों और व्यवहार में सत्य और नैतिकता को स्थान देते हैं , तब हम ईश्वर की सच्ची आराधना कर रहे होते हैं । इसलिए , पूजा का सार केवल विधि - विधान से नहीं , बल्कि सत्य के प्रति हमारी निष्ठा और उसके अनुरूप जीवन जीने में निहित है । यही वास्तविक भक्ति और ईश्वर के प्रति आदर का प्रतीक है ।

आज के भारतीय समाज में मूर्ति पूजा का एक विशिष्ट स्थान और महत्व है । सदियों से यह परंपरा इस देश की संस्कृति और इतिहास में गहराई से जुड़ी रही है , और इसके परिणामस्वरूप कई महत्वपूर्ण ऐतिहासिक परिवर्तन भी देखे गए हैं । मूर्ति पूजा का प्रारंभ कब और कैसे हुई , इसका हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ा , और क्या इसका धार्मिक , सामाजिक या राष्ट्रीय उत्थान - पतन से कोई संबंध है ___ ये प्रश्न आज के समय में विशेष रूप से प्रासंगिक हो गए हैं । स्वतंत्र भारत में अब यह आवश्यक है कि हम इन बिंदुओं पर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से विचार करें । इस खंड के माध्यम से हम सृष्टि के प्रारंभ से लेकर वर्तमान तक इस परंपरा के उद्भव , विकास और प्रभाव को समझने का प्रयास करेंगे । साथ ही साथ यहां भी समझने का प्रयास करेंगे की वेद , ब्राह्मण ग्रंथ , उपनिषद , दर्शन , मनुस्मृति , वाल्मीकि रामायण और महाभारत जैसे प्राचीन शास्त्रों में जहां स्पष्ट रूप से परमात्मा , अकायम तथा निराकार है फिर मूर्ति पूजा का रहस्य क्या है ? आखिर क्यों , जब शास्त्र परमात्मा को निराकार बताते हैं , तब भी मूर्ति पूजा का प्रचलन इतना व्यापक क्यों है ? आइए , तथ्य प्रमाण के आधार पर इस रहस्य को समझने का प्रयास करते हैं ;

आदिकाल से महाभारत काल पर्यंत : ______

Edit with WPS Office

1. वैदिक काल : प्रारंभिक समाज :

ईश्वर की निराकार उपासना : वैदिक काल में , ईश्वर को सर्वव्यापी , निराकार और अजन्मा माना जाता था । उस समय उसकी उपासना के लिए कोई मूर्त रूप नहीं था , बल्कि ध्यान , योग , समाधि और यज्ञ के माध्यम से आत्मोन्नति की साधना की जाती थी । ये साधन न केवल व्यक्तिगत विकास के लिए थे , बल्कि समाज और सृष्टि की उन्नति के लिए भी महत्वपूर्ण माने जाते थे । इसके साथ ही , यज्ञ और कर्मकांडों को जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में संतुलन और सद्भावना बनाएं रखने का माध्यम माना जाता था । पंच महायज्ञों के माध्यम से समाज के हर वर्ग को योगदान करने और ब्रह्मांड के साथ सामंजस्य बनाए रखने के लिए प्रेरित किया जाता था ।

• वर्ण व्यवस्था: समाज का प्रारंभिक विकास :

वैदिक काल में समाज में वर्ण व्यवस्था का स्पष्ट विकास नहीं हुआ था । लोगों के कार्य और कर्तव्यों का विभाजन उस समय उतना सख्त या जटिल नहीं था जितना कि बाद के युगों में हुआ । समाज अधिक लचीला और कार्य आधारित था , जहां व्यक्ति के गुण और कर्म ही उसकी पहचान और कर्तव्य का निर्धारण करते थे ।

• मनुस्मृति , सृष्टि का प्रथम संविधान :

महर्षि मनु के समय से वर्ण व्यवस्था का औपचारिक विकास प्रारंभ हुआ । उनके द्वारा उपदेशित मनुस्मृति इस सामाजिक व्यवस्था का आधार बनी । मनुस्मृति को सृष्टि का पहला मानव निर्मित संविधान माना जाता है , जिसने समाज के संचालन और नियमों को स्थापित किया । यह वह समय था जब समाज ने एक औपचारिक रूप धारण किया और लोगों के कर्तव्यों , अधिकारों और उत्तरदायित्व को वर्णों के अनुसार परिभाषित किया गया । महर्षि मनु को सृष्टि का प्रथम स्वघोषित राजा भी कहा जाता है । उनके

Edit with WPS Office

समय में ही समाज ने एक संगठित रूप लेना प्रारंभ किया और महर्षि मनु के उपदेशों के अनुसार समाज का संचालन प्रारंभ हुआ । मनुस्मृति ने न केवल सामाजिक नियमों का निर्धारण किया , बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आदर्श आचरण का मार्ग भी दिखाया ।

अतः यहां तक हमें मूर्ति पूजा का कोई भी प्रमाण एवं उल्लेख नहीं मिलता है ।

2. रामायण काल : वैदिक मर्यादा और आर्य संस्कृति

रामायण काल वह समय था जब वैदिक मर्यादा और आर्य संस्कृति का प्रभाव समाज पर गहराई से स्थापित था । वैदिक परंपराओं का पालन अभी भी प्रचलित था , और लोग धार्मिक कर्तव्यों , यज्ञों और उपासना में संलग्न रहते थे । हालांकि , इस काल में कुछ असुर प्रवृत्तियां जैसे मांसाहार और मदिरापान का प्रारंभिक प्रसार भी होने लगा था , जो एक नए परिवर्तन की ओर संकेत करता है ।

रामायण काल की जितनी भी सामग्री आज उपलब्ध है , वे भी किसी न किसी रूप में महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित मूल रामायण पर आधारित है । वाल्मीकि कृत रामायण ही इस युग का प्रमाणिक ग्रंथ है । हालांकि , आज के समय में उपलब्ध विभिन्न संस्करणों में कांड , सर्ग और श्लोक की संख्या मैं भिन्नता पाई जाती है , फिर भी सभी वाल्मीकि रामायणों में वैदिक यज्ञों और धार्मिक परंपराओं का ही वर्णन मिलता है ।

• मूर्ति पूजा का अभाव : वैदिक परंपराओं की निरंतरता :

यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि वाल्मीकि रामायण के विभिन्न संस्करणों में कहीं भी मूर्तिपूजा का उल्लेख नहीं मिलता है । यह दर्शाता है कि उस समय तक , समाज में मूर्ति पूजा का प्रचलन प्रारंभ नहीं हुआ था । वाल्मीकि रामायण में केवल वैदिक यज्ञों , तपस्या , योग , और अग्निहोत्र का

Edit with WPS Office

वर्णन किया गया है , श्री राम भी संध्या उपासना गायत्री आदि मंत्र का जाप और यज्ञ किया करते थे । जो उस काल की आध्यात्मिक और धार्मिक परंपराओं को दर्शाते हैं । लोग ईश्वर की आराधना के लिए मूर्ति पूजा पर निर्भर नहीं थे , बल्कि वैदिक अनुष्ठानों और साधना के माध्यम से आत्मा की शुद्धि और परमात्मा से जुड़ने का प्रयास करते थे ।

श्री राम द्वारा सेतु बंधन के अवसर पर रामेश्वरम में शिवलिंग की स्थापना और पूजन का संदर्भ प्रचलित है , परंतु वाल्मीकि रामायण में इसका कोई उल्लेख नहीं मिलता है जब श्री राम लंका विजय के पश्चात विमान से अयोध्या लौट रहे थे , तो उन्होंने सीता जी को समुद्र का संकेत करके कहा कि " हे सीते ! यह महादेव की कृपा से हमने समुद्र पर पुल बाधा था । ";
______ (युद्ध कांड. 125.20 , 21)

अतः शिवलिंग की स्थापना और पूजन का कोई प्रत्यक्ष वर्णन वाल्मीकि रामायण में नहीं मिलता । ' महादेव , शब्द का भी अर्थ व्यापक रूप से समझा जाना चाहिए । इस संदर्भ में ' महादेव , का अर्थ है सर्वव्यापक परमात्मा , जो सभी देवताओं का अधिपति है । यह परमात्मा की उसी शक्ति का उल्लेख है जो संपूर्ण सृष्टि का संचालन करती है । अतः यहां श्रीराम का भाव यह है कि समुद्र पर पुल बनाने में जो भी सफलता मिली , वह उस परमात्मा की कृपा से ही संभव हो पाई है ।

अतः हमें रामायण काल में भी मूर्ति पूजा का कोई ठोस एवं प्रत्यक्ष प्रमाण प्राप्त नहीं होता है ।

3. महाभारत काल : वैदिक मर्यादा का क्षरण :

वैदिक परंपराओं की अवहेलना रामायण काल तक लोग वैदिक मर्यादा का पालन करते थे , लेकिन महाभारत के समय में यह स्थिति बदलने लगी थी । वैदिक तप , त्याग और आत्म - संयम की परंपराएं धीरे-धीरे पीछे छूट रही थी , और समाज में भोग - विलास का प्रभाव बढ़ता जा रहा था । यहां तक

Edit with WPS Office

की जुआ (दयूत) जैसे कार्य , जो पाप माने जाते थे , अब सामाजिक रूप से स्वीकृत हो गए थे । यह परिवर्तन महाभारत काल की सामाजिक और नैतिक गिरावट को दर्शाता है , जिसमें आंतरिक संतुलन और साधना की जगह बाहरी आनंद और विलासिता ने ले ली थी ।

• जय संहिता से महाभारत तक :

महाभारत का मूल नाम जयं संहिता था , जो समय के बढ़ते हुए " भारत " और फिर " महाभारत " के नाम से प्रसिद्ध हुआ । यह विशाल ग्रंथ महर्षि वेदव्यास द्वारा रचा गया था , जिसे उन्होंने अपने शिष्यों , जैसे वैशम्पायनजी और जैमिनी को सुनाया । महाभारत में समय समय पर अनेक प्रक्षिप्त एवं मिलावटी श्लोक मिलाएं जाने लगें । क्योंकि उस समय तक श्रुति स्वरूप में महाभारत की कथाएं सुनाई जाती थी अथवा हस्तलिखित ग्रंथ के द्वारा सुरक्षित रखी जाती थी इसलिए मिलावट कर पाना बहुत ही सरल होता था । मूल जयं संहिता में लगभग 24 हजार श्लोक थे , लेकिन समय के साथ यह ग्रंथ विस्तार पाता गया और आज इसमें एक लाख से अधिक श्लोक हो गए हैं । महाभारत की कथा ने पीढ़ियों तक भारत के धार्मिक , नैतिक और सांस्कृतिक विचारों को आकार दिया , और यह ग्रंथ आज भी गहन रूप से प्रासंगिक बना हुआ है । महाभारत का एक अत्यधिक महत्वपूर्ण भाग है गीता , जिसे महाभारत के युद्ध के समय श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश स्वरूप दिया था । जैसे महाभारत में कई प्रक्षिप्त एवं मिलावटी श्लोक जुड़े गए हैं , उसी प्रकार भगवत गीता में भी प्रक्षिप्त श्लोकों की कमी नहीं है । इसके पश्चात भी , पूरे महाभारत और भगवत गीता में कहीं भी मूर्ति पूजा का प्रत्यक्ष उल्लेख नहीं मिलता । महाभारत काल तक मूर्ति पूजा का कोई प्रचलन नहीं था । इस विशाल ग्रंथ में प्रातः और सायं संध्या उपासना और यज्ञ का उल्लेख मिलता है । श्री कृष्ण स्वयं भी प्रतिदिन संध्या और यज्ञ किया करते थे , जो वैदिक परंपराओं का सम्मान और निरंतरता दर्शाता है ।

इससे यह स्पष्ट होता है कि महाभारत काल तक वैदिक साधना पद्धतियों , जैसे संध्या उपासना और यज्ञ , को सर्वोच्च माना जाता था । मूर्ति पूजा , जो

Edit with WPS Office

बाद के युगों में अधिक प्रचलित हुई , इस समय तक भारतीय समाज का हिस्सा नहीं थी ।

4. महाभारत युद्ध के पश्चात : पतन का प्रारंभ :

- **महाभारत युद्ध के परिणामस्वरुप जनहानि :**

महाभारत युद्ध के पश्चात भारत में एक गहरा सामाजिक और नैतिक पतन प्रारंभ हो गया । यह युद्ध न केवल विशाल जनहानि का कारण बना , बल्कि समाज के मार्गदर्शन करने वाले ज्ञानी , गुणी और विद्वानों की भी भारी कमी हो गई । समाज में संतुलन और धार्मिक मार्गदर्शन के अभाव ने समाज को अनाचार की ओर धकेल दिया । अर्जुन ने भी इस भयावह परिणाम की चेतावनी भगवत गीता में श्री कृष्ण को दी थी ।

अर्जुन की चिंता कुलधर्म का नाश : अर्जुन ने भगवत गीता में श्री कृष्ण से कहां अगर यहां युद्ध होता है तो उसके परिणाम स्वरूप कुल का नाश हो जाएगा:

- **कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्मा: सनातना:** (1.40) ______ कुल के नष्ट होने से सनातन धर्म नष्ट हो जाते हैं ।
- **धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्माऽभिभवत्युत:** (1.40) ______ धर्म के नाश होने पर अधर्म हावी हो जाता है ।
- **अधर्मीभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रिय:** (1.41) ______ अधर्म के बढ़ने से कुल की स्त्रियां दूषित हो जाती है , जिससे वर्णसंकर उत्पन्न होता है ।
- **उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन :** (1.44) ______ जिनका कुल धर्म नष्ट हो जाता है , वे नरक में अनियत काल तक वास करते हैं ।

अर्जुन की यह चिंता न केवल तत्कालीन समाज की स्थिति को दर्शाती है ,

Edit with WPS Office

बल्कि यह भी इंगित करती है कि महाभारत युद्ध के पश्चात समाज का नैतिक और धार्मिक ढांचा बिखरने लगा था।

• राज्यों में विभाजन और धर्म का पतन :

महाभारत युद्ध में विश्व के अलग-अलग देशों के राजाओं ने उस समय भाग लिया था। युद्ध के पश्चात भारत कई मंडलों और छोटे-छोटे राज्यों में बट गया। इन राज्यों में धर्म के नाम पर पापाचार और अधर्म का प्रचलन होने लगा। एक समय जो वैदिक मर्यादा और धार्मिक अनुशासन समाज का मार्गदर्शन करते थे , वे अब बिखेर चुके थे। इस काल में तंत्र शास्त्रों की रचना होने लगी और वाममार्ग (वामाचारी) का प्रचलन सर्वत्र फैल गया। यज्ञ , जो वैदिक काल में पवित्र और शुद्धिकरण के साधन थे , उनमें पशु बलि का प्रचलन प्रारंभ हो गया। जहां रामायण काल में मांस डालने से यज्ञ विध्वंस माने जाते थे , वहीं अब यज्ञों में घोड़े , गाय और मनुष्य की बलि दी जाने लगी।

• वैदिक यज्ञों का पतन : अश्वमेध , गोमेध और नरमेध :

इस काल में पवित्र वैदिक यज्ञ जैसे __ अश्वमेध , गोमेध और नरमेध में घोड़ों , गायों और मनुष्यों की बलि दी जाने लगी । वैदिक हिंसा , हिंसा न भवति " जैसे वाक्य गढ़ लिए गए , जिससे हिंसा को वैदिक धर्म के अंतर्गत उचित प्रमाणित किया जा सके। यह धार्मिक पतन का एक स्पष्ट संकेत था , जहां शांति और अहिंसा के मूल वैदिक सिद्धांतों को तोड़ - मरोड़कर हिंसक आचरण को स्वीकार्य बनाया गया।

राक्षसी प्रवृत्तियों का पुनरुत्थान :

जिस प्रकार श्रीराम में रामायण काल में राक्षसों से देश को मुक्त करने के लिए घोर युद्ध किया था , उसी तरह महाभारत युद्ध के बाद राक्षसी प्रवृत्तियों

Edit with WPS Office

का पुनरुत्थान हुआ । अधर्म और हिंसा समाज के हर हिस्से में फैल गई , और धर्म के स्थान पर अधर्म का साम्राज्य स्थापित होने लगा । यह वह समय था जब धर्म की नींव कमजोर हो गई थी और समाज में पापाचार का बोलबाला हो गया था । यहां भारतीय समाज के लिए एक महान धार्मिक पतन का समय था । समाज में विद्वानों और धर्मगुरुओं की कमी के चलते धर्म के नाम पर पाप और अधर्म का बोलबाला हो गया । वैदिक परंपराओं का ह्रास हुआ , और यज्ञों जैसी पवित्र विधियों को हिंसा और बलि का साधन बना दिया गया । यह युग धर्म के विकृति और अधर्म की प्रबलता का काल था , जिसने समाज को नैतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से कमजोर कर दिया । परंतु इस धार्मिक हास्य काल में भी इस देश में मूर्ति पूजा प्रचलित नहीं थी अपितु यज्ञों का ही अत्यंत विकृत रूप में प्रचार प्रसार था ।

5. जैन और बौद्ध संप्रदाय का उदय :

महाभारत के विनाशकारी युद्ध के पश्चात भारतीय समाज में नैतिक और धार्मिक अव्यवस्था का वातावरण था । यज्ञों में हिंसा , कर्मकांडों का बोलवाला , और धर्म के नाम पर सामाजिक असमानता ने समाज को विभाजित कर दिया था । इस अशांत स्थिति में जैन और बौद्ध संप्रदायों का जन्म हुआ । इन सम्प्रदायों ने महाभारत युद्ध के पक्ष की सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध एक सशक्त प्रतिक्रिया दी ।

• धार्मिक अनियमितताओं के विरुद्ध बुद्ध का संदेश :

गौतम बुद्ध का जन्म लगभग 680 ई० पूर्व माना जाता है , जो आज से लगभग 3000 वर्ष पूर्व की बात है । उस समय समाज में छुआछूत , जादू - टोना , और कर्मकांडों का अत्यधिक प्रभाव व्याप्त था । लोग यज्ञों को मुक्ति का एकमात्र साधन मानते थे , और इन यज्ञों में निरीह पशुओं की बलि दी जाती थी । बुद्ध ने इन हिंसक यज्ञों और अंधविश्वासों का कड़ा विरोध किया और अहिंसा , सदाचार , और नैतिक जीवन पर विशेष बल दिया । हालांकि , एक महत्वपूर्ण बात यह है कि गौतम बुद्ध वेदों और मूल वैदिक संस्कृति से

Edit with WPS Office

अनभिज्ञ थे। उन्होंने उस समय समाज में फैली कुरीतियों को ही वेद सम्मत मान्यताएं समझ लिया , जबकि वे वस्तुत: वेदों के विपरीत थी। बुद्ध ने यह सत्य जानने का प्रयास नहीं किया कि जिन परंपराओं का वे विरोध कर रहे थे , वे वास्तव में वेदों का हिस्सा नहीं थी। इसलिए , उन्होंने वेदों और तथा कथित ब्राह्मणों का उच्च स्वर में विरोध किया , यह मानते हुए कि वेदों के नाम पर समाज में पापाचार फैलाया जा रहा है। समाज पहले से ही इन कुरीतियों से त्रस्त था , और जब बुद्ध ने अहिंसा , करुणा , और शांति का संदेश दिया , तो लोगों ने इसे खुले दिल से स्वीकार किया। धीरे-धीरे , समाज के बड़े हिस्से ने बौद्ध संप्रदाय को अपनाना प्रारंभ कर दिया , क्योंकि वह समय समाज में परिवर्तन की तीव्र आवश्यकता का था।

• मूर्ति पूजा का आरंभ , विदेशी प्रभाव और वाममार्ग :

बुद्ध के समय में ही , देश में विदेशियों का आगमन शुरू हो चुका था , और उनके संपर्क से मूर्तिपूजा की परंपरा का सूत्रपात हुआ। इस समय , वामपंथी वाममार्ग यज्ञों की हिंसा का स्थान धीरे-धीरे मूर्ति पूजा ने लेना प्रारंभ किया। ऐतिहासिक रूप से , भारत में मूर्ति पूजा सबसे पहले जैनियों और फिर बौद्धों मैं प्रारंभ हुई। महावीर की मूर्तियों की पूजा का उल्लेख भारत के इतिहास में सर्वप्रथम हमें प्राप्त होता है , और बौद्धों ने भी बुद्ध की मृत्यु के पश्चात इसी परंपरा का अनुसरण करते हुए बुद्ध की मूर्तियां स्थापित की। जैन संप्रदाय में मूर्तिपूजा का यह आरंभ बाद में बौद्ध संप्रदाय में भी प्रवेश कर गया , विशेष रूप से बुद्ध की मूर्तियों के रूप में।

• ऐतिहासिक प्रमाण : फाहियान और हेनसांग की यात्राएं :

फाहियान की यात्रा (400 ई०) चीन के प्रसिद्ध यात्री फाहियान ने लगभग 400 ई० पूर्व में भारत की यात्रा की थी। उन्होंने अपनी पुस्तक " Foguoji " (A record of Buddhistic kingdoms) में तत्कालीन भारत का वर्णन किया। उस समय भारत में बौद्ध संप्रदाय का व्यापक प्रसार हो चुका था , और फाहियान ने बड़े-बड़े बौद्ध मठ और संघाराम देखें। बुद्ध की

Edit with WPS Office

विशाल मूर्तियां स्थापित हो चुकी थी , परंतु उन्होंने किसी भी हिंदू मंदिर का उल्लेख नहीं किया ।

हेनसांग की यात्रा (600 ई०) : फाहियान के लगभग 200 वर्षों बाद हेनसांग ने भारत की यात्रा की । अपनी पुस्तक " **si - u - ki** " मैं उन्होंने तत्कालीन भारत का विस्तृत वर्णन किया । जहां फांहियान ने बौद्ध संप्रदाय के उत्कर्ष को देखा था , वही हेनसागं ने कई बौद्ध मठों को उजड़ा हुआ पाया और इसके साथ ही कई हिंदू मंदिर का भी वर्णन किया । हेनसांग ने तक्षशिला और कश्मीर में जैनियों को महावीर की मूर्तियों की पूजा करते हुए देखा ।

बौद्ध और पौराणिक मत का संघर्ष : फाहियान के समय में बौद्ध संप्रदाय अपने चरम उत्कर्ष पर था , परंतु हेनसांग के समय में यह ढलान की ओर था । इसी समय हिंदू संप्रदाय के पौराणिक मतों की जड़े जमने लगी , और बौद्ध व जैन संप्रदाय के प्रभाव से हिंदू मंदिरों और मूर्ति पूजा का प्रचलन प्रारंभ हुआ । बौद्ध और जैन मठों की देखा देखी तत्कालीन पौराणिक समाज ने भी देवताओं के मंदिर बनाना और मूर्ति पूजा को अपनाना प्रारंभ किया ।

भारत में मूर्ति पूजा की परंपरा बौद्ध और जैन काल से प्रारंभ हुई । इससे पहले , वैदिक सनातन धर्म में मूर्ति पूजा का कोई स्थान नहीं था । बौद्ध और जैन संप्रदाय की देखादेखी , हिंदू समाज ने भी मूर्तिपूजा को अपनाया , और धीरे-धीरे यह प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित हो गई । इसलिए , यह स्पष्ट है कि वर्तमान हिंदू मूर्तिपूजा का प्राचीन वैदिक धर्म से कोई सीधा संबंध नहीं है , बल्कि यह जैन और बौद्ध संप्रदाय के प्रभाव से उत्पन्न परंपरा है ।

6. आदि शंकराचार्य : वैदिक धर्म की पुनः स्थापना :

- **शंकराचार्य का मूर्ति पूजा के विरुद्ध संघर्ष :**

Edit with WPS Office

महर्षि आदि शंकराचार्य ने शास्त्रार्थ के माध्यम से मूर्ति पूजा का खंडन करते हुए बौद्ध और जैन संप्रदायों को चुनौती दी । उनका उद्देश्य वैदिक धर्म की पुनः स्थापना करना था , जो बौद्ध और जैन मतों के प्रभाव से प्रभावित हो रहा था । शंकराचार्य ने तर्क और वेदांत के सिद्धांतों के आधार पर मूर्तिपूजा की आलोचना की और इसे धर्म से मुक्त का प्रयास किया । महर्षि शंकराचार्य के काल तक , बौद्ध संप्रदाय कई शाखाओं में विभाजित हो चुका था और इसका वैभव क्षीण होने लगा था । जैन और बौद्ध अनुयायी शंकराचार्य के प्रभाव और उनके तर्कों के भय से अपनी मूर्तियों को जमीन में गाड़ने लगे , जिनके अवशेष आज भी हमें प्राप्त होते हैं । यह उस समय की धार्मिक और सामाजिक संघर्ष की स्थिति को दर्शाता है , जब मूर्ति पूजा को समाप्त करने का गंभीर प्रयास किया जा रहा था ।

- **वैदिक धर्म का पुनरुत्थान : प्रस्थानत्रयी की स्थापना :**

महर्षि शंकराचार्य ने वैदिक धर्म की पुनः स्थापना के लिए उपनिषद , वेदांत दर्शन और भगवत गीता को अपना आधार बनाया । उन्होंने इन तीन मुख्य ग्रंथों के आधार पर सनातन धर्म का व्यापक प्रचार किया , जो आज प्रस्थानत्रयी के नाम से प्रसिद्ध है । इन ग्रंथों के माध्यम से उन्होंने सत्य , अद्वैत और आत्मा के उच्चतम ज्ञान की व्याख्या की और धर्म को पुनः उस वैदिक स्वरूप में स्थापित करने का प्रयास किया , जिसमें बाहरी कर्मकांड और मूर्तिपूजा का स्थान नहीं था ।

- **शंकराचार्य की असत्य मृत्यु और षड्यंत्र :**

जब तक शंकराचार्य जीवित है , मूर्तिपूजा का पुनः स्थापित होना लगभग असंभव था । उन्होंने अपने ग्रंथ " परापूजा " में मूर्तिपूजा की कड़ी आलोचना की और इसे धर्म के मार्ग से भटकाने वाला बताया । परंतु उनके विरोधी और षड्यंत्रकारी इस संघर्ष को समाप्त करना चाहते थे । अंततः , षड्यंत्र के द्वारा उन्हें विष देकर मार दिया गया , तब उनकी उम्र केवल 32 वर्ष थी । महर्षि शंकराचार्य के देह त्याग के पश्चात , उन पर भी मिथकीय

Edit with WPS Office

कहानियां बनाई गई और उन्हें शिव के अवतार के रूप में प्रचारित किया गया । यह एक विरोधाभासी स्थित है , क्योंकि उन्होंने स्वयं मूर्ति पूजा का खंडन किया था , और उनकी मृत्यु के पश्चात उन्हें शिव के अवतार के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया ।

वेदांत दर्शन " **नैकस्मित्र सम्भवात** " 12.2.33 का भाष्य करते हुए शंकराचार्य जी कहते हैं । " **नैकस्मित्र धर्मिणि युगपत् सदसद्वादिवस्तुविपर्यसंसर्ग : संभवति शीतोष्णवत्** अर्थात " एक वस्तु में एक ही समय में दो विरोधी गुण , जैसे सर्दी और गर्मी , एक साथ नहीं रह सकते । अर्थात साकारता और निराकारता , जो स्वभाव से परस्पर विरोधी हैं , एक साथ नहीं हो सकते । इसका सीधा अर्थ यह है कि ईश्वर को साकार और निराकार एक साथ नहीं माना जा सकता । जैसे सर्दी और गर्मी एक साथ नहीं रह सकते , उसी प्रकार साकारता और निराकारता भी एक साथ ईश्वर में संभव नहीं है ।

महर्षि शंकराचार्य ने अल्प जीवन में ही वैदिक धर्म को पुनः स्थापित करने का महान कार्य किया । उन्होंने मूर्ति पूजा का विरोध करते हुए शुद्ध वैदिक परंपराओं को पुनर्जीवित किया और अद्वैत वेदांत की शिक्षाओं का प्रचार किया । हालांकि , उनकी असमय मृत्यु के पश्चात , मूर्ति पूजा धीरे-धीरे फिर से समाज में प्रचलित हो गई , और उनके सिद्धांतों के विपरीत , उन्हें शिव के अवतार के रूप में स्थापित करने का प्रयास हुआ । यदि शंकराचार्य अधिक समय तक जीवित रहते , तो संभवत: भारतीय समाज में मूर्ति पूजा का प्रसार उस रूप में नहीं हो पाता जैसा आज हम देखते हैं ।

7. पौराणिक काल का उदय :

बौद्ध और जैन संप्रदाय के पतन , और आदि शंकराचार्य की मृत्यु के पश्चात पौराणिक संप्रदाय को बढ़ावा मिला । इस समय विरोध करने वाला कोई नहीं था , जिससे पुराणों की रचना का मार्ग खुला । वेदों में वर्णित ईश्वर के गुण वाचक शब्दों से एवं विभिन्न वैदिक देवताओं और ईश्वर की शक्तियों के

Edit with WPS Office

नाम पर मंदिर बनाने लगे , और समाज में मूर्ति पूजा का प्रचलन बढ़ने लगा।

- **अवतारवाद का उदय :**

पुराणों की एक प्रमुख मान्यता यह थी कि ईश्वर अवतार लेकर शरीर धारण करते हैं और दुष्टों का नाश करते हैं । इस विचार ने समाज में यह धारणा स्थापित कर दी थी मनुष्यों को कुछ करने की आवश्यकता नहीं है , क्योंकि सब कुछ ईश्वर ही करेंगे । इस प्रकार की विचारधारा ने समाज में निष्क्रियता और भाग्यवादी दृष्टिकोण को बढ़ावा दिया । इस मान्यता की प्रमाणिकता सिद्ध करने के लिए शास्त्रों में भी मिलावट की जाने लगी , और यह पुराणों के उदय का समय था ।

- **वर्तमान मूर्ति पूजा की रूपरेखा :**

वर्तमान भारतीय समाज की मूर्तिपूजा , आचार - विचार , पर्व , तीर्थ और जाति व्यवस्था की रूपरेखा इसी काल में स्थापित की गई ।**शाक्त , वैष्णव , और शैव** संप्रदायों का उदय भी इसी काल में हुआ । इन तीन मुख्य संप्रदायों पर आधारित 18 पुराण रचे गए , जो इन संप्रदायों की आधिकारिक धार्मिक ग्रंथ माने जाते हैं । इस समय ने भारतीय समाज की धार्मिक और सामाजिक संरचना को पूरी तरह से बदल कर रख दिया ।

मूर्ति पूजा के उदय के पीछे 4 प्रमुख कारण :

1. **महापुरुषों की स्मृति को स्थाई रूप में रखना** ____ बौद्ध और जैन संप्रदाय में महापुरुषों की स्मृति को स्थायी रखने की परंपरा थी , जो मूर्तियों के रूप में प्रकट हुई । धीरे-धीरे यह परंपरा पौराणिक हिंदू संप्रदाय में भी प्रवेश कर गई ।

Edit with WPS Office

2. **अदृश्य को मूर्तिमान देखने की इच्छा** ____ मनुष्य की प्रवृत्ति अदृश्य शक्तियों को मूर्त रूप में देखने की होती है। यह इच्छा उन्हें उन चीजों को मूर्तिमान करने के लिए प्रेरित करती है जिन्हें वे सीधे अनुभव नहीं कर सकते। इसी भाव से परमात्मा के अदृश्य गुणों को मूर्त रूप में स्थापित करने की परंपरा प्रारंभ हुई।

3. **साधारण जनमानस की दार्शनिक क्षमता का अभाव** ____ दार्शनिक और अमूर्त विचारों को समझने की क्षमता साधारण जनमानस में कम होती है। इसलिए , वे अदृश्य या निराकार परमात्मा को मूर्त रूप में कल्पना करके संतुष्ट होते हैं। यही कारण है कि वेदों में वर्णित परमात्मा के गुणवाचक नामों जैसे ब्रह्मा , विष्णु , महेश , दुर्गा , सरस्वती आदि के आधार पर मूर्तियां रची गई और उनके आस - पास कई काल्पनिक कहानियां गढ़ी जाने लगी।

4. **आलस्य और भोग - विलास** ____ मूर्ति पूजा एक सरल और सहज मार्ग होता है , जहां मनुष्य को केवल ईश्वर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा - अर्चना करनी होती है। इसके विपरीत , वेद मार्ग में हमें धर्म का पालन , तपस्या , कर्तव्य , योग - प्राणायाम , स्वाध्याय और पांच महायज्ञ जैसे दैनिक कृत्यों का निर्वहन करना पड़ता है। समय के साथ मनुष्य में आलस्य और भोग - विलास की प्रवृत्ति बढ़ती गई , और इसके परिणामस्वरूप मूर्ति पूजा जैसी सरल और बाहरी पूजा पद्धतियों का प्रचलन प्रारंभ होने लगा। मनुष्य ने धर्म के कठोर अनुशासन और तप से बचने के लिए सरल मार्ग अपनाने लगे , जो उसे वेदों की गहन शिक्षाओं और आत्मिक उन्नति से दूर ले गया।

इस प्रकार पौराणिक काल ने भारतीय समाज की धार्मिक और सामाजिक संरचना को पूर्ण रूप से परिवर्तित करके रख दिया। मूर्ति पूजा की स्थापना और नए-नए संप्रदायों का उदय इसी काल की देन हैं। लोगों की अदृश्य ईश्वर को मूर्त रूप में देखने की इच्छा और महापुरुषों की स्मृति को स्थायी रखने की लालसा , आलस्य और भोग - विलास की प्रवृत्ति ने मूर्ति पूजा को

Edit with WPS Office

समाज में स्थिर कर दिया । यह काल उस परिवर्तन का प्रतीक है , जिसने वैदिक सनातन धर्म को पौराणिक रूप में ढाल दिया । इस प्रकार भारतीय समाज में बड़े-बड़े मंदिरों की रचना कर उसमें मूर्तियां स्थापित की जाने लगी । इसी समय को मूर्ति पूजा का प्रारंभिक काल कहां जा सकता है । अतः मूर्ति पूजा पौराणिक काल की ही देन है ।

• पुराणों में अवतारवाद : एक वैदिक दृष्टिकोण :

अवतार शब्द का मूल अर्थ ___ अवतार शब्द संस्कृत के " अवतरण " से बना है , जिसका अर्थ है " उतरना " या " नीचे " आना । यह अवधारणा पुराणों में यह दर्शाती है कि जब - जब संसार में धर्म की हानि और अधर्म का बोलबाला होता है , तब तब ईश्वर किसी न किसी रूप में अवतरित होते हैं । परंतु इस अवधारणा के साथ एक बड़ा दर्शनिक प्रश्न उत्पन्न होता है ; क्या वास्तव में सर्वव्यापक ईश्वर को अवतरित होने की आवश्यकता पड़ती है ?

ईश्वर की सर्वव्यापकता और अवतारवाद का विरोधाभास :

वेदों के अनुसार , ईश्वर सर्वव्यापक और निराकार है । वह कण - कण में विद्यमान है , यानि वह पहले से ही हर स्थान पर उपस्थित है । ऐसे में यह प्रश्न उठता है कि ईश्वर को कहां से उतरना है और कहां पर उतरना है , जब वह पहले से ही हर जगह उपस्थित है । इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो अवतारवाद का सिद्धांत , जिसमें कहा जाता है कि ईश्वर शरीर धारण करके आते हैं , वेदों के सर्वव्यापक और निराकार ईश्वर की अवधारणा के विपरीत प्रतीत होता है । वेद , उपनिषद , महाभारत , और रामायण सभी इस बात पर जोर देते हैं कि ईश्वर अजन्मा और निराकार है । वह शरीर धारण नहीं करते क्योंकि उनका स्वरूप अनंत और अमूर्त है । इस प्रकार , यदि हम अवतारवाद को सत्य मानते हैं , तो यह वेदों की शिक्षाओं के विपरीत होगा । अवतारवाद की कल्पना पुराणों में की गई है , परंतु वेदों में इसका कोई समर्थन नहीं मिलता । अगर अवतारवाद सत्य है , तो वेद मिथ्या है । अगर

Edit with WPS Office

अवतारवाद असत्य है , तो वेद सत्य है ।

• क्या ईश्वर धर्म की रक्षा के लिए अवतरित होते हैं

पुराणों के अनुसार भगवान विष्णु के 24 अवतार माने गए हैं , जिनमें से 10 प्रमुख अवतार विशेष रूप से प्रसिद्ध है । लेकिन यह मात्र पुराणों की कल्पना है , क्योंकि ईश्वर को अवतार लेने की कोई आवश्यकता नहीं होती । ईश्वर सर्वशक्तिमान है और वह बिना शरीर धारण किए ही सृष्टि की उत्पत्ति , पालन , और प्रलय कर सकते हैं ।

जिस ईश्वर ने बिना शरीर धारण किए रावण , कंस और दुर्योधन जैसे दुष्टों को उत्पन्न किया , वह बिना अवतार लिए ही उनका विनाश भी कर सकते हैं । परमात्मा को शरीर धारण करने की कोई आवश्यकता नहीं होती , क्योंकि उनकी शक्ति अनंत है । वे निराकार रहते हुए भी अपनी शक्ति से संसार के हर कण को संचालित करते हैं । यह पुराणों का भ्रम है कि दुष्टों का नाश करने के लिए ईश्वर को अवतार लेना पड़ता है । वास्तविकता यह है कि ईश्वर अपनी अदृश्य शक्ति से ही दुष्टों का नाश कर सकते हैं ।

• ईश्वर धर्म की रक्षा कैसे करते हैं ?

ईश्वर धर्म की रक्षा अपनी प्रेरणा शक्ति से करते हैं । जब भी संसार में अधर्म का प्रभाव बढ़ता है , ईश्वर किसी न किसी श्रेष्ठ और योग्य मनुष्य को प्रेरित करते हैं ताकि वह धर्म की रक्षा के लिए आगे बढ़े । इतिहास इसका साक्षी है कि जब-जब अधर्म ने सिर उठाया , तब तब किसी न किसी महापुरुष ने समाज में धर्म की पुनर्स्थापना की ।

ऋग्वेद में यह स्पष्ट कहा गया है ; " **इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम , अपघन्तो अराव्ण** " (ऋग्वेद. 9/63/5) ___ इसका अर्थ है , " **श्रेष्ठ गुणों को धारण करो , दुष्टों का नाश करो , और समूचे विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाओं "** । ईश्वर ने हमें ज्ञान , बल , बुद्धि , और शक्ति से संपन्न बनाया है

Edit with WPS Office

ताकि हम धर्म की रक्षा कर सके। धर्म की रक्षा करना ईश्वर का कार्य नहीं, बल्कि हमारा कर्तव्य है। जब हम श्रेष्ठ गुणों को अपनाएंगे और तुच्छ विचारों का त्याग करेंगे, तभी धर्म का मार्ग प्रशस्त होगा और अधर्म स्वत: ही नष्ट हो जाएंगा।
वेदों का स्पष्ट उपदेश है कि एक हाथ में शास्त्र (ज्ञान और धर्म) और एक हाथ में शस्त्र (सुरक्षा और न्याय) होना चाहिए। श्री राम और श्री कृष्ण ने भी यही मार्ग दिखाया, जब धर्म की रक्षा के लिए शस्त्र उठाने की आवश्यकता पड़ी, वे पीछे नहीं हटे। हमें उनसे यही सीख लेनी चाहिए ___ जब भी समय की मांग हो, ज्ञान का उपयोग करें और जब आवश्यकता हो, तब न्याय और धर्म की रक्षा के लिए शस्त्र उठाने से भी न डरे। क्योंकि, ईश्वर स्वयं धर्म की रक्षा के लिए अवतरित नहीं होते, यह दायित्व हमारा है। अवतारवाद का सिद्धांत पूर्णतः पुराणों की कल्पना पर आधारित है और वेदों की शिक्षाओं के विपरीत है। ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वे सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है। धर्म की रक्षा का कार्य स्वयं हमें करना है, और ईश्वर हमें अपनी प्रेरणा शक्ति से मार्गदर्शन देते हैं। जैसे कि वेदों का स्पष्ट उपदेश है, धर्म की रक्षा के लिए हमें अपने भीतर के ज्ञान, बल, सामर्थ और नैतिकता का उपयोग करना चाहिए।

• मूर्ति पूजा की हानियां : आत्मिक उन्नति में बाधक :

मूर्ति पूजा, पूजा नहीं बल्कि पूजा का निषेध : मूर्ति पूजा वास्तविक पूजा नहीं है, बल्कि पूजा का दुरुपयोग और उसका निषेध है। पूजा शब्द का वास्तविक अर्थ है " सत्कार " अर्थात सत्य का पालन और जीवन में सच्चाई का आचरण। परंतु मूर्ति पूजा इसके ठीक विपरीत है। मूर्ति पूजा में व्यक्ति ईश्वर को वैसा मानता है जैसा वह वास्तव में है ही नहीं। यह सत्य के विपरीत एक कल्पना पर आधारित आचरण है, जो आध्यात्मिक उन्नति में बांधा उत्पन्न करता है। मूर्ति पूजा करने वाला व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्युपर्यंत तक मूर्ति पूजक ही बना रहता है। उसकी आध्यात्मिक उन्नति नहीं हो पाती क्योंकि वह यह मान लेता है की मूर्ति पूजा ही ईश्वर है। इस कारण से उसके मन में ईश्वर को और गहराई से जानने की जिज्ञासा समाप्त

Edit with WPS Office

हो जाती है । जबकि ईश्वर चिंतन और अनुभूति का विषय है , किसी बाहरी मान्यता या मूर्ति पर आधारित नहीं । जीवन , आत्मा और शरीर के संयोग का नाम है , और ईश्वर की उपासना आत्मोन्नति का सबसे महत्वपूर्ण साधन माना गया है । इसलिए , मूर्ति पूजा आत्मिक विकास के मार्ग में एक बड़ी बांधा बन जाती है ।

- **ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य : गुलामी का कारण :**

भारत की 700 वर्षों की गुलामी का एक महत्वपूर्ण कारण मूर्ति पूजा और वैदिक ज्ञान से समाज का दूर होना था । जब मुस्लिम आक्रमण हुआ , उस समय भारत में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली चल रही थी , परंतु वैदिक ज्ञान का अभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा था । पौराणिक मान्यताएं , अवतारवाद और मूर्ति पूजा का समाज में इतना बोलबाला हो गया था कि सत्य , धर्म और आत्मबल जैसे मूलभूत सिद्धांतों से समाज दूर हो चुका था ।

गुरुकुलो में भी वैदिक शिक्षाओं के स्थान पर पौराणिक कथाओं और अवतारवाद की शिक्षा दी जा रही थी , जिसने समाज को निष्क्रिय बना दिया । लोग वेदों की शिक्षाओं को भूल चुके थे , और यहां तक की श्री राम और श्री कृष्ण की शिक्षाएं भी धूमिल हो चुकी थी । समाज में यह भ्रांति घर कर गई थी कि ईश्वर अवतार लेकर आएंगे और हमारी रक्षा करेंगे , जबकि हमें कोई प्रयास करने की आवश्यकता नहीं है । यह निष्क्रियता समाज को कमजोर और अधर्म के सामने झुकने पर विवश कर दिया ।

यदि उस समय वेदों की शाखाओं का व्यापक प्रचार - प्रसार हुआ होता , तो समाज श्री राम और श्री कृष्ण की तरह अधर्म के विरुद्ध खड़ा होता । लोग सत्य के मार्ग पर चलकर संघर्ष करते , लड़ते , और आवश्यकता पड़ने पर अपने शरीर का त्याग कर देते , परंतु गुलाम बनाना कभी स्वीकार नहीं करते । मूर्ति पूजा के कारण समाज की ऊर्जा ठहर गई , और इसी निष्क्रियता ने गुलामी का मार्ग खोल दिया ।

Edit with WPS Office

अब जब हम समझते हैं कि परमात्मा स्वयं अवतार लेकर नहीं आते , बल्कि योग्य और श्रेष्ठ जनों को धर्म की रक्षा के लिए प्रेरित करते हैं , उसी ईश्वरीय प्रेरणा के फलस्वरुप समय-समय पर छत्रपति शिवाजी , महाराणा प्रताप , सुभाष चंद्र बोस , भगत सिंह जैसे वीर महापुरुष उत्पन्न हुए । इन महापुरुषों ने अधर्म का डटकर विरोध किया , दुष्टों का नाश किया और धर्म की रक्षा एवं उसकी पुनर्स्थापना करने का प्रयास किया ।

आगे भविष्य में भी , जब जब धर्म की हानि होगी या संकट आएगा , परमात्मा अपनी प्रेरणा से ऐसे ही महापुरुषों को उत्पन्न करते रहेंगे जो धर्म की पुनर्स्थापना करेंगे । यही सृष्टि का नियम है , और यही धर्म का शाश्वत सत्य है ।

• वेदों के अनुसार मूर्ति पूजा की हानियां :

अन्धन्तम्: प्र विंशन्ति येऽसंम्भूतिमुपासंते ।
ततो भूयंऽइव ते तमोयऽउ सम्भूंत्या रता: ।। (यजुर्वेद. 40/9)

भावार्थ : जो लोग सर्वव्यापक ईश्वर की उपासना करने के बजाय जड़ प्रकृति या उससे बनी मूर्तियों की पूजा करता है , वे गहन अंधकार यानी दुख और अज्ञानता की ओर जाते हैं । इस श्लोक का मुख्य संदेश यह है कि ईश्वर निराकार , सर्वव्यापक और असीम है , और उसकी पूजा जड़ वस्तुओं या मूर्तियों के माध्यम से नहीं की जा सकती । ऐसे लोग सत्य के मार्ग से भटक जाते हैं और अंधकार में प्रवेश करते हैं ।

मूर्ति पूजा : अज्ञानियों के लिए :

" प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र समदर्शिन : (शतपथ ब्राह्मण. 14/2/2/22)

भावार्थ : मूर्ति पूजा केवल उन लोगों के लिए है जो अल्प बुद्धि या अज्ञानी

Edit with WPS Office

होते हैं । बुद्धिमान व्यक्ति जानते हैं कि ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है , उन्हें किसी विशेष रूप में बांधना संभव नहीं है । यह श्लोक स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि जो व्यक्ति मूर्तियों में ईश्वर को खोजते हैं , वे सीमित सोच रखते हैं , जबकि ज्ञानी व्यक्ति ईश्वर को हर जगह , हर कण में देख पाते हैं ।

• वेदों की निंदा करने वाले नास्तिक है

" नास्तिकों वेदनिन्दक: " (मनुस्मृति. 1/130)

भावार्थ : जो वेदों की निंदा करता है , उनका अपमान करता है , या उनके विपरीत आचरण करता है , वह नास्तिक कहलाता है । इस श्लोक का संदेश यह है कि वेदों के सिद्धांतों का अनुसरण न करने वाला व्यक्ति धर्म से विमुख हो जाता है । मूर्ति पूजा , जो वेदों के सिद्धांतों के विपरीत है , का अनुसरण करने वाला व्यक्ति वेदविरोधी और नास्तिक की श्रेणी में आता है ।

वेद स्पष्ट रूप से मूर्ति पूजा को नकारते हैं और इसे अज्ञानता का प्रतीक मानते हैं । वे यह सिखातें हैं कि ईश्वर सर्वव्यापक और निराकार है , और उसे किसी मूर्ति में सीमित नहीं किया जा सकता । मूर्ति पूजा करने वाले लोग अंधकार और अज्ञान की ओर बढ़ते हैं जबकि जो वेदों का पालन करते हैं , वे सच्चे मार्ग पर चलते हैं । वेदों का उद्देश्य मनुष्य को सत्य , ज्ञान और आत्म - उन्नति के पथ पर ले जाना है , न कि उसे जड़ वस्तुओं में उलझाए रखना ।

• पौराणिक काल में वेदों का गलत भाष्य : एक ऐतिहासिक दृष्टिकोण :

• वेदों के गलत अर्थ और उनका प्रभाव :

पौराणिक काल (1200 - 1400 ई०) में वेदों की गलत व्याख्या और

Edit with WPS Office

भाष्य के दौर का आरंभ हुआ । इस काल में प्रमुख वेद भाष्यकार जैसे सायणानार्च , महीधर और उवट ने वेदों का भाष्य अपने समय और धारणाओं के अनुसार किया । इन भाष्यों में वेदों का गलत अर्थ निकालते हुए कई विकृत विचार प्रस्तुत किए गए । उदाहरण स्वरूप , इन व्याख्याओं मैं पशु बलि , मांसाहार , अश्लीलता , शूद्रो के साथ दुर्व्यवहार , और नारी को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं जैसी मान्यताएं प्रकट की गई , जो वेदों के वास्तविक सिद्धांतों के विपरीत थी ।

• अंग्रेजों द्वारा वेदों की विकृति :

18वीं शताब्दी में , अंग्रेज भाष्यकार जैसे मैक्समूलर और कीथ ने इन ही गलत व्याख्याओं को आधार बनाकर वेदों का अनुवाद और अध्ययन किया । उन्होंने भी इन्हीं गलत अर्थों के आधार पर वेदों को पश्चिमी दृष्टिकोण से समझने का प्रयास किया , जिससे वैदिक धर्म और संस्कृति का वास्तविक स्वरूप धुंधला हो गया । इस काल में मूर्तिपूजा और अन्य कुरीतियों का प्रभाव भी बढ़ गया था ।

• आधुनिक काल में मूर्तिपूजा के खंडन का प्रारंभ :

1800 ई के समय , जब भारत में मूर्ति पूजा और अन्य धार्मिक कुरीतियां अपने चरम पर थी , कई समाज सुधारकों ने इन अंधविश्वासों के विरुद्ध आवाज उठाई । ब्रह्म समाज , आर्य समाज , और प्रार्थना समाज जैसे संगठनों ने मूर्ति पूजा और अन्य विकृतियों का खंडन करने का प्रयास किया । इसी सामाजिक और धार्मिक पतन की अवस्था में , एक महान विभूति ने वैदिक धर्म की वास्तविकता को पुनः स्थापित करने का संकल्प लिया । यह महापुरुष थे महर्षि दयानंद सरस्वती , जिनके हृदय में मूर्ति पूजा और समाज में व्याप्त अन्य कुरीतियों को देखकर गहन पीड़ा उत्पन्न हुई ।

महर्षि दयानंद सरस्वती ने आदि शंकराचार्य की तरह शास्त्रार्थ की विद्या अपनाकर मूर्ति पूजा और अंधविश्वासों का जोरदार खंडन किया । उन्होंने

Edit with WPS Office

इन धार्मिक कुरीतियों को चुनौती देते हुए वैदिक सनातन धर्म का प्रचार करने का दृढ़ संकल्प लिया । महर्षि दयानंद ने अपने विचारों को तर्क , प्रमाण , और सत्य पर आधारित सिद्धांतों के आधार पर प्रस्तुत किया । उनकी इस बौद्धिक यात्रा का परिणाम सत्यार्थ प्रकाश के रूप में प्रकट हुआ , जो उनका सबसे प्रमुख ग्रंथ है ।

सत्यार्थ प्रकाश में , उन्होंने न केवल मूर्ति पूजा , अंधविश्वास और सामाजिक कुरीतियों का वेदों के आधार पर खंडन किया , बल्कि विभिन्न मत , पंथ , संप्रदाय , मजहब और धर्म की तुलनात्मक विवेचना भी प्रस्तुत की । महर्षि दयानंद का यह अद्वितीय योगदान उस समय का सबसे साहसिक और मार्गदर्शक प्रयास था , जिसने समाज को इन विकृतियों से उबारने का मार्ग दिखाया । उनके विचारों ने भारत के धार्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई , और वैदिक का ज्ञान की पुनः स्थापना की आधारशिला रखी ।

- **वैदिक ज्ञान का पुनर्जागरण :**

महर्षि दयानंद सरस्वती संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे । अपने गुरु की प्रेरणा से उन्होंने वेदों की अत्यंत दयनीय स्थिति देखकर सत्य और वैज्ञानिक आधार पर वेदों का प्रामाणिक भाष्य प्रारंभ किया । उन्होंने वेदों की सच्ची शिक्षाओं को पुनः प्रकट किया और यह बताया कि वेद किसी भी प्रकार के अंधविश्वास , मूर्ति पूजा या कुरीतियों का समर्थन नहीं करते । उनके द्वारा किए गए वेद भाष्य को आज भी सबसे प्रामाणिक और वैज्ञानिक माना जाता है । महर्षि दयानंद सरस्वती के कार्य ने भारत में वैदिक धर्म के पुनर्जागरण की नींव रखी । पौराणिक काल में वेदों की दूषित भाष्य से समाज भटक गया था , परंतु महर्षि दयानंद ने सत्य के मार्ग पर चलते हुए वेदों की वास्तविकता को उजागर किया । उनके द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश और उनके वेदभाष्य आज भी समाज में वैदिक ज्ञान का प्रकाश फैला रहे हैं । उनका योगदान न केवल अंधविश्वासों के खंडन में , बल्कि समाज को वैदिक धर्म की शुद्धता और वैज्ञानिकता से जोड़ने में महत्वपूर्ण है ।

Edit with WPS Office

• आचार्य चाणक्य की शिक्षा : राष्ट्र सर्वोपरि :

• राष्ट्र सर्वोपरि का सिद्धांत :

आचार्य चाणक्य का कहना है कि यदि कोई शिक्षा यह नहीं सिखाती कि राष्ट्र और उसकी सुरक्षा सर्वोपरि है , तो ऐसी शिक्षा व्यर्थ है और उसे त्याग देना चाहिए । चाणक्य का यह संदेश समय की कसौटी पर खरा उतरा है , क्योंकि राष्ट्र की सुरक्षा और उसकी समृद्धि ही प्रत्येक नागरिक का पहला कर्तव्य होना चाहिए । अगर शिक्षा से राष्ट्रभक्ति और कर्तव्यनिष्ठा का भाव उत्पन्न नहीं होता , तो वह शिक्षा समाज और देश के विकास में कोई भूमिका नहीं निभा सकती ।

• हमारे वर्तमान कर्तव्य :

• गलत मान्यताओं की पहचान और सुधार :

किसी भी समाज में , समय के साथ गलत मान्यताएं और कुरीतियां स्थापित हो जाती है । जब ऐसा होता है , तो यह श्रेष्ठ पुरुषों (ज्ञानी , गुणी और विद्वान) का परम कर्तव्य बन जाता है कि वे इन गलत धारणाओं को पहचानें और समाज में पुनः सत्य , धर्म और उचित मान्यताओं की पुनर्स्थापना करें । यही उनका सच्चा धर्म और कर्तव्य है । आज हमारे समाज में भी कई कुरीतियां और अंधविश्वास व्याप्त है , जिन में मूर्ति पूजा प्रमुख है । समाज को इन गलत मान्यताओं एवं अंधविश्वास से मुक्त करने के लिए यह आवश्यक है कि हम सत्य और वेदों के मार्ग को पुनः अपनाएं ।

• मूर्ति पूजा और कुरीतियों से मुक्ति :

• वेदों के मार्ग पर चलें :

Edit with WPS Office

मूर्ति पूजा , अंधविश्वास और कुरीतियां समाज को जड़ता की ओर धकेलती है । यह हमारा कर्तव्य है कि हम इनसे बाहर निकले और वेदों के मार्ग पर चले । वेदों की शिक्षाएं हमें सत्य , धर्म , और आत्मिक उन्नति की ओर ले जाती है । जब हम वेदों के सिद्धांतों के अनुसार जीवन यापन करते हैं , तो हमारा व्यक्तिगत और सामाजिक विकास होता है ।

इसलिए , आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि हम अपने जीवन को वेदों के अनुसार ढालें और दूसरों को भी इस दिशा में प्रेरित करें । यह हमारे समाज और राष्ट्र को सही दिशा में ले जाने का एकमात्र तरीका है । श्रेष्ठ पुरुषों का यही धर्म है कि वे समाज को सही मार्ग दिखाएं और उसे अंधविश्वास और कुरीतियों से मुक्त करें ।

इस प्रकार सृष्टि उत्पत्ति से लेकर वर्तमान समय तक हमने मूर्ति पूजा एवं अवतारवाद को तर्क बुद्धि तथ्य एवं शास्त्र प्रमाण के आधार पर विवेचना करने का प्रयास किया । अब तो आप जान ही गए होंगे कि परमात्मा की कोई भी मूर्ति संभव नहीं है अतः जैसे वेद कहते हैं कि :

न प्रतिमा ऽअस्ति यस्य नाम महधश : । (यजुर्वेद. 32/3)

भावार्थ : जिसका महान यश और सामर्थ है उस परमात्मा की कोई प्रतिमा नहीं है । उस परमात्मा की प्रतिमा , प्रतिमान , उपमान कोई वस्तु नहीं । अतः परमात्मा की मूर्ति बनाना संभव नहीं है ।

मूर्ति उसी की बनाई जा सकती है जिसे हम इंद्रियों से जान सकते हैं जो इंद्रियों से परे है उनकी मूर्ति संभव नहीं । हम केवल ईश्वर के गुणों और कर्मों को अपने शरीर , इंद्रियों , बुद्धि और मन के माध्यम से ही समझ सकते हैं , और उन्हीं के आधार पर ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव कर सकते हैं । परंतु यदि वास्तव में ईश्वर को जानना है , तो आत्मा में स्थित होना अनिवार्य है , क्योंकि केवल आत्मा के द्वारा ही परमात्मा का साक्षात्कार संभव है ।

Edit with WPS Office

परमात्मा को शुद्ध अन्त: करण मैं ध्यान , योग के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है । और इसके लिए अष्टांग योग ही वह एकमात्र विधि है , जो इस अनुभूति तक पहुंचा सकती है । जब ईश्वर की प्रतिमा , प्रतिमान , उपमान ही नहीं है तब उसकी मूर्ति बन कैसे सकती है ? अगर हम फिर भी परमात्मा की मूर्ति बनाते हैं तो वहां परमात्मा की तो नहीं , परंतु किसी और की अवश्य हो सकती है । अत: हमें मूर्ति पूजा का त्याग कर वैदिक ईश्वर स्तुति एवं उपासना की पद्धति का अनुसरण करना चाहिए वही मनुष्य मात्र के कल्याण का एकमात्र मार्ग है ।

•अवतारवाद पर महत्वपूर्ण शास्त्रार्थ :

- **आर्य समाज की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता :** शास्त्रार्थ महारथी श्री पंडित ठाकुर अमर सिंह जी ' आर्य पथिक ' (वर्तमान महात्मा अमर स्वामी जी महाराज)

एवं

- **सनातन धर्म की ओर से शास्त्रार्थ कर्ता :** श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री । जो बाद में आर्य समाजी बन गए थे ।

नोट : दिन के 2:00 बजे श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री आर्य समाज मंदिर कोहाट में प्रविष्ट हुए , गले में फूलों की माला पहिने हुए थे , बहुत से सनातन धर्मी आर्य समाज मंदिर के द्वार तक उन के साथ शंख और घड़ियाल बड़े जोर-जोर से बजाते हुए आयें ।

श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री ______

सज्जन वृन्द ! आज के शास्त्रार्थ का विषय अवतारवाद निश्चय किया गया है । आर्य समाज ईश्वर को सर्वशक्तिमान कहता हुआ भी अल्प शक्ति

Edit with WPS Office

युक्त ही मानता है । आर्य समाज कहता है , कि वह परमेश्वर अवतार नहीं ले सकता , तो बताओ ! वह एक शक्ति से तो हीन हुआ ।

1. मैं पूछता हूं जो अवतार नहीं ले सकता , जन्म नहीं ले सकता , शरीर धारण नहीं कर सकता तो वह सर्वशक्तिमान किस प्रकार हुआ ? सर्वशक्तिमान का अर्थ तो है ही यही ,कि जिसमें सब कुछ करने की शक्ति हो , अतः अवतार न लेने से वह एक शक्तिहीन हुआ , तो सर्वशक्तिमान कहां रहा ?
2. सृष्टि में जब-जब अधर्म बढ़ जाता है , तथा धर्म घट जाता है , तब तब धर्म की स्थापना के लिए भगवान अवतार लेते हैं , और भांति भांति के शरीर धारण करके अधर्म और अधर्मियों का संहार तथा धर्म का विस्तार करते हैं ।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है ___

जब जब होय धर्म की हानी । बाढ़हि असुर - अधम , अभिमानी ।।
करहि अनीति जाय नहीं वरणी । सीदहिं विप्र धेनु सुर धरणी ।।
तब - तब प्रभु धरि विविध शरीरा । हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा ।।

दोहा ______ अतुर मारि थापहिं सुरन राखहिं निज श्रुति सेतु । जग विस्तारहिं विषद यश राम जन्म कर हेतु ।।

इसी प्रकार **गीता अध्याय 4 , श्लोक 7** में भगवान स्वयं कहते है कि ___

यदा - यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । अभ्युत्यानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।। 7।।

परित्राणाय साधूनां , विनाशाय च दुष्कृताम् । धर्म संस्थापनार्याय , सभ्मवामि युगे - युगे ।। 8।।

अर्थात " जब-जब धर्म की ग्लानि होती हैं , और अधर्म बढ़ जाता है , तब तब मैं अपने आप को उत्पन्न करता हूं । अर्थात जन्म लेता है । " किसी राजा का प्यारा बच्चा यदि अचानक पानी आदि में गिर जायें , तो राजा भी यह नहीं सोचता कि कोई नौकर ही उसको पानी में से निकालें , या राजा अपने नौकर से कहें , कि तुम बच्चे को निकालो , वह स्वयं ही बच्चे को निकालने के लिए जल में कूद पड़ता है , इसी प्रकार परमेश्वर भी जब भूमि पर अत्याचार देखते हैं , तो उसको नष्ट करने के लिए स्वयं जन्म ले लेते हैं ,

Edit with WPS Office

अतः भगवान का अवतार वेदानुकूल है , और सर्व प्रकार से ठीक है , भगवान के अवतार को न मानना वेद का तथा परमेश्वर का अपमान करना है ।

शास्त्रार्थ केसरी पंडित ठाकुर अमर सिंह जी ______

सज्जनों ! आज अत्यावश्यक विषय पर शास्त्रार्थ प्रारंभ हुआ । यदि यह ढंग से चला तो सुनने वालों को अपार लाभ होगा , ईश्वर जन्म लेता है , या नहीं ? इसका आज भलीभांति निर्णय आप लोगों के सामने आ जायेगा । श्री पंडित जी ने ईश्वर के अवतार को वेदानुकूल तो बताया पर वेद का प्रमाण ईश्वर अवतार के पक्ष में एक भी न दिया । लीजिए मैं ईश्वर के शरीरधारी होने के विरुद्ध प्रमाण देता हूं , और आवश्यकता होने पर बहुत से और प्रमाण भी दूंगा । सुनिये ! **यजुर्वेद अध्याय 40 का आठवां मंत्र ___** " **सपर्यगाच्छकमकायमवज मस्ताविरं शुद्धमपाप विद्धम् ।।** " यह मंत्र का पूर्वार्ध है , इसमें कहा गया है कि , परमेश्वर सर्व व्यापक है , सर्वथा शुद्ध पवित्र है , और अकाय अर्थात शरीर रहित है । वेद पहले भी थे , अब भी है , और आगे भी सदा रहेंगे । न वेद के शब्द बदलेंगे और न अर्थ बदलेगा इस मंत्र में परमेश्वर को " अकाय " शरीर रहित बताया है , इसका प्रयोजन यह कि वह भूत भविष्यत् और वर्तमान तीनों कालों में शरीर रहित ही रहता है । कभी भी शरीरधारी नहीं होता है । पंडित जी ने कोई प्रमाण न देकर परमेश्वर के सर्व " शक्तिमान विशेषण पर व्यर्थ बहस की " यह नहीं सोचा की शक्ति के रहते हुए भी शक्तिमान को वही कार्य करना चाहिए , जिसका करना उचित और आवश्यक हो , अनुचित और अनावश्यक कार्य को करने वाला मनुष्य बुद्धिमान नहीं कहलाता है , परमेश्वर अनुचित और अनावश्यक कार्य को करेगा ही क्यों ? शरीर धारण करना उसकी शक्ति में है , केवल इसलिए शरीर धारण कर लेगा या उसकी आवश्यकता कोई होगी , तब करेगा ? यदि आवश्यकता होने पर शरीर धारण करेगा तो बताइये ऐसा कौन सा कार्य है , जिसको शरीर धारण किये बिना वह नहीं कर सकता ? सर्वशक्तिमान का अनावश्यक झगड़ा डालकर आप फंस गये है ।

यदि कोई कार्य ऐसा बताएंगे जिसको बिना शरीर धारण किए नहीं कर सकता तो परमेश्वर आपके शब्दों में " सर्वशक्तिमान " नहीं रहेगा , क्योंकि

Edit with WPS Office

आप स्वयं ही कहेंगे कि अमुक कार्य को वह नहीं कर सकता , यदि परमेश्वर में किसी कार्य विशेष के करने की शक्ति शरीर के बिना नहीं है , और शरीर धारण करने पर आएगी तो वह शक्ति परमेश्वर की स्वाभाविक न हुई , शरीर के निर्मित से आने के कारण नैमिकता ही हुई । बस आपके अर्थो वाला वह सर्वशक्तिमान न रहा । रही चौपाइयों की बात , गोस्वामी तुलसीदास जी का वचन हमारे लिए प्रमाण नहीं है । गीता के दो श्लोक आपने बोले , वह श्री कृष्ण जी के वचन है , परमेश्वर के नहीं , श्री कृष्ण परमेश्वर है , यह तो आपको अभी सिद्ध करना शेष है जब तक आप यह सिद्ध न करलें कि श्री कृष्ण जी परब्रह्म परमेश्वर थे , तब तक आपके बोले हुए दोनों श्लोक प्रमाण नहीं बन सकते । यह भी साध्य है कि श्री राम जी और श्री कृष्ण जी ईश्वर थे । और यह भी " साध्य " है कि ईश्वर अवतार लेता है । आप साध्य से साध्य की सिद्धि करना चाहते हैं ! तो यह " साध्यसम हेत्वाभास " ।
अतः यह प्रमाण व्यर्थ हुए , आपको यह भी बताना पड़ेगा कि सृष्टि के आरंभ से अब तक कितने और कौन-कौन अवतार हुए ? यह मेरा प्रश्न नोट करिये और अवतारों की संख्या तथा अवतारों के नाम भी बताने की कृपया करिये जिससे शास्त्रार्थ ठीक मार्ग पर चल सके और किसी निर्णय पर पहुंचने में सहायता मिल सके । राजा का उदाहरण आपने जो दिया वह विषम है , राजा एक देशी और अल्प शक्ति वाला होता है , और परमेश्वर सर्वदेशी तथा अपार शक्तियों से युक्त सदा रहता है , एक देशी राजा की तरह उसको जल आदि में कूदने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है , वह जल आदि में सदा विद्यमान रहता है । वेद में कहां है ___ **" उतास्मिन् अल्प उदके निलीन: । " अथर्ववेद. काण्ड. 4 , सुक्त 16 , मंत्र 3 ,** अर्थात वह पानी की प्रत्येक बूंद में भी विद्यमान है ।

श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री ________
मैं पूछता हूं क्या आप कोई काम ऐसे बता सकते हैं , जिन्हें परमेश्वर न कर सके ? और क्या कोई कार्य ऐसे भी हैं , जिनका करना ईश्वर के लिए अनुचित हो ? गोस्वामी तुलसीदास जी का वचन आपके लिए प्रमाण नहीं है , तो वेद का प्रमाण तो आप मानोगे ही लीजिए वेद का प्रमाण भी देता हूं ।

Edit with WPS Office

प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तरजायमानो बहुधा विजायते ।
तस्य योनि परिपश्चयम्ति श्रीरास्तस्मिन् ह तस्थुभु वनानि विश्वा: ।।

अर्थात ______ **(यह यजुर्वेद अध्याय 31 का 16 मंत्र है)** इसमें स्पष्ट लिखा है की प्रजापति परमात्मा गर्भ में आता है । और जन्म लेकर बहुत प्रकार से प्रकट होता है । आर्य समाज पंडित जी ने इस प्रश्न पर बहुत बल दिया है कि , भगवान के अवतार कितने और कौन-कौन से हुए हैं , यह बताया जाये । इसके उत्तर में मैं आपको बताता हूं सुनिये __ भगवान के अवतार अनादि काल से होते आये हैं । उनकी गणना कोई नहीं कर सकता है । तो भी मुख्य अवतार हमारे यहां 24 माने जाते हैं । उनमें से भी मुख्य 10 कहे गए हैं । चार सत्ययुग में । तीन त्रेता युग में । दो द्वापर में हुए । इस प्रकार नौं अवतार हो चुके एक कलयुग में होता है सौ होना शेष है । जो हो चुके उनके नाम लिखिये , मैं बताता हूं ।

1. वराह (सूकर)
2. मत्स्य
3. कच्छप
4. नृसिंह ये चार अवतार तो सतयुग में हुए । तथा ,

1. वामन
2. श्री राम जी
3. परशुराम जी ये तीन अवतार त्रेता युग के इस प्रकार से साथ अवतार हुए । और ,

श्रीकृष्ण जी
श्री बलराम जी । ये दो अवतार द्वापर में हुए इस प्रकार कुल " 9 अवतार " हुए हैं , दसवां कलियुग में कल्कि अवतार होता है । सतयुग में चारों चरण धर्म रहता है । त्रेतायुग में तीन तीन चरण होता है । द्वापर में दो चरण होता है , तथा कलयुग में एक चरण धर्म शेष रह जाता है । धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए भगवान का अवतार होता है । भगवान परम दयालु है । अपने भक्तों पर दया करके समय-समय पर शरीर धारण करते रहते हैं ।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पंडित ठाकुर अमर सिंह जी ______

Edit with WPS Office

पंडित जी महाराज ! आपने बड़ी कृपा की जो एक वेद मंत्र अपने पक्ष में समझ कर बोल दिया । मैं सर्व प्रथम उस मंत्र पर ही विचार करता हूं । क्योंकि ___

अर्थकामेष्वसवतानां धर्मज्ञानं विधीयते ।

धर्म जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ।। मनुस्मृति. अध्याय 2 श्लोक 13

अर्थात : जिनको सत्यासत्य के जानने की इच्छा है , उनके लिए वेद परम प्रमाण है । ऐसा यह मनुस्मृति का वचन कहता है " प्रजापतिश्चरति गर्भे " का अर्थ आपने यह किया कि (परमात्मा गर्भ में आता है) श्री मान जी परमेश्वर तो सर्वदेशी है । तथा सर्वव्यापक है । उसका आना जाना कैसा ? आना तो वही उसको होता है , जो जहां आने से पहले वहां न हो । जो सब जगह मौजूद हैं , उसका आना क्या और जाना क्या ? क्या गर्भ में परमात्मा पहले नहीं था ? जो कभी आता है । महाराज जी वेद में ही कहा है ___ " **तदन्तरस्य सर्वस्य तदुसर्वस्यास्य बाह्यत ।** " (यजुर्वेद अध्याय 40 , श्लोक 5) अर्थात वह परमेश्वर इस सर्वे जगत के भीतर है और बाहर भी है । वह गर्भ में भी बच्चे को भोजन देता है । उसको जीवित रखता और बढ़ाता है इसलिए कहा है कि ___

" प्रजापतिश्चरति गर्भे " प्रजापति परमात्मा गर्भ में भी कार्य करता है । आपने कहा ' जन्म लेना ' उसका अर्थ कैसे करते हैं ? इस मंत्र में आगे कहां है । " तस्य योनि परिपश्चयम्ति धीराः । " अर्थात उसके स्वरूप को बुद्धिमान लोग ही देखते हैं । शास्त्री जी ! यदि परमात्मा शरीर धारण कर लेगा तो उसके उस रूप को मनुष्य - पशु - गधे - घोड़े सभी देख सकेंगे , केवल बुद्धिमान ही नहीं वह केवल बुद्धि का विषय न रह कर आंखों का विषय बन जाएगा , आंखों से तो पशु भी देख लेगा , पशु को केवल आंखों से देखने वाला कहा गया है । " पश्यतीति पशु " अर्थात जो आंखों से देखता है , बुद्धि से नहीं वही पशु है । " तस्य योनि परिपश्चयम्ति धीराः । " ये शरीरधारी और साकार सिद्ध नहीं होता । इस मंत्र से अवतारवाद का मंडन नहीं होता । बल्कि खंण्डन ही होता है , इसका अर्थ है कि बुद्धिमान लोग ही उस परमेश्वर के स्वरूप को देख सकते हैं , क्योंकि ___ वह बुद्धि से ही दिखता है , आंखों से नहीं , आंखों से उसकी कारीगरी दीखती है । उपनिषद में भी

Edit with WPS Office

कहा गया है ___ " दृश्यन्ते त्वप्रया बुद्धया , सूक्ष्मया सूक्ष्म वर्शिभि : " सूक्ष्म से सूक्ष्म देखने वालों के द्वारा बुद्धि से ही दीखता है , आंखों से नहीं , आपने अवतारों की संख्या और अवतारों के नाम बताकर शास्त्रार्थ का मार्ग प्रशस्त कर दिया । भगवान आपका भला करें । शास्त्री जी ! जब सतयुग में चारों चरण धर्म रहता है । तब तो एक भी अवतार की आवश्यकता नहीं , फिर चार अवतारों का होना बुद्धि संगत नहीं , आपकी युक्ति से तो , कलयुग में तीन , द्वापर में दो , त्रेता में एक , अवतार होता । सतयुग में एक भी नहीं होना चाहिये था , जब चारों चरण धर्म विद्यमान है , तब धर्म से ग्लानि हो ही नहीं सकती । परमेश्वर के अवतार उस समय व्यर्थ ही कूदते रहते हैं । और कलयुग में धर्म के तीन चरण टूट जाते हैं , तब एक अकेला अवतार आकर क्या करेगा ? वास्तविकता यह है कि , ईश्वरावतार की कल्पना ही निराधार है , आपने अवतार होने के कारण इस प्रकार बताये ।

- धर्म की ग्लानि का होना
- अधर्म की बुद्धि का होना
- धर्म की स्थापना
- धर्मात्माओं की रक्षा
- पापियों का विनाश

आपके पुराणों में इसके विरुद्ध स्पष्ट लिखा है । आपके बताए सारे अवतार श्राप से हुए । भृगु ऋषि की पत्नी का सिर विष्णु जी ने इंद्र के कहने पर काट दिया । इस पर भृगु ऋषि ने विष्णु को शाप दिया । देखिए ___ **देवी भागवत स्कंद 40 , अध्याय 12 श्लोक 8 ___**

अवतारा: मृत्यु लोके , संतुमच्छाप संभव: ।
प्रायोगर्भमभवं दुख , भ क्ष्वं पापाज्जनावृनं ।।

अर्थात ______ भृगु ने कहां ___ हे विष्णु मेरे श्राप से मृत्यु लोक में तुम्हारे अवतार हो , हे विष्णु तुम (अपने इस) पाप से गर्भ में होने वाले दुखों को भोगो । **देवी भागवत स्कंध 5 , अध्याय 19 , श्लोक 18** में देखिये ___
कुपित भृगु के द्वारा दिए गए शाप से विष्णु मछली बना , अवतार धारण करके कच्छप बना , शूकर बना , पश्चात नरसिंह बना , और भूमि पर छल करने वाला (बलि राजा को ठगने वाला) वामन अवतार हुआ ।

कहते हैं कि हे जननी ! उनका सेवन - पूजन करने वालों को मृत्यु का

Edit with WPS Office

भय क्यों न होगा ? अर्थात अवश्य होगा , इन प्रमाणों से स्पष्ट सिद्ध हैं कि , आपके भगवान का अवतार , धर्म का उद्धार करने के लिए नहीं प्रत्युत शाप का फलस्वरुप दुख भोगने के लिए , कच्छप , मछली और सूकर , जैसी नीच योनियों में उसको जाना पड़ा । और सुनिये ___ **देवी भागवत स्कंद 6 , अध्याय 7 श्लोक 34 से 37 तक ___**

भृगु ऋषि की पत्नी का सिर काट देने के कारण भगवान विष्णु भृगु ब्राह्मण के शाप से पशु योनियों में जन्मे , और वामन बनकर राजा बलि के घर में भिक्षा मांगने के लिए गये । पाप कर्म करने वाला मनुष्य इससे अधिक दुख और क्या भोग सकता है ? राजा जी भी वनवास में सीता के वियोग से उत्पन्न हुए घोर दुख को भृगु श्राप से प्राप्त हुए , विष्णु ने जालंधर का रूप बनाकर वृद्धा से व्याभिचार किया , वृन्दा को जब व्याभिचार के पीछे पता चला कि , यह मेरा पति जालंधर नहीं है बल्कि यह तो विष्णु है , इस पर उसने श्राप दिया ___ हे विष्णु ! पराई स्त्री के साथ व्याभिचार करने वाले तेरे इस स्वभाव को धिक्कार है , मैंने जान लिया तू छल - कपट युक्त तपस्वी है , मुझको जैसे छल - युक्त तपस्वी द्वारा धोखा दिया गया है उसी प्रकार तुम्हारी स्त्री को भी कोई छली - कपटी , तपस्वी ले जाएगा । " **(पद्म पुराण उत्तरखंड अध्याय 150 , श्लोक 1 से 30 तक) तथा (पद्म पुराण उत्तरखंड अध्याय 16 , श्लोक 54 से 72 तक)** एवं इसी प्रकार **(शिव पुराण रुद्र संहिता अध्याय 3 व 4)** में नारद के श्राप से विष्णु का रामावतार होना बताया गया है । श्री शास्त्री जी ! आपका कहना है कि भगवान का अवतार धर्म की रक्षा तथा अधर्म का विनाश करने के लिए होता है । यह आपके माने हुए पुराणों से सिद्ध नहीं होता है । पुराणों से तो यह भी सिद्ध होता है कि पाप कर्मों का फल भोगने के लिए विष्णु के मछली आदि की योनियों में जन्म हुए । देखिए शास्त्री जी महाराज ! नोट कीजिए । **गरुड़ पुराण पूर्व खंड आचार कांड अध्याय 113 , के श्लोक 15 में ___**

पंडित जी ! मेरे पास सैकड़ो प्रमाण पुराण आदि ग्रंथों के ऐसे हैं , जिनसे सिद्ध होता है कि जिन - जिनको आप भगवान - परमेश्वर का अवतार मानते हैं , वह सब कर्म फल भोगने वाले जीव ही थे । परमेश्वर के अवतार नहीं । वाल्मीकि रामायण में श्री राम जी का वचन भी कहां हुआ यही सिद्ध करता है । सुनिए ___ **वाल्मीकि रामायण अरण्य काण्ड सर्ग 63 श्लोक 3 व 4 में**

Edit with WPS Office

श्री राम जी कहते हैं कि ___ मैं मानता हूं की मेरे समान पाप कर्म करने वाला दूसरा मनुष्य इस भूमि पर नहीं है , शोक से शोक परंपरा से हृदय तथा मन को भेदन करता हुआ मुझ को प्राप्त होता हैं , निश्चय ही मैंने पूर्व जन्म में , बहुत पाप बार-बार किये है । उन्हीं का फल मुझको यह है कि दुख पर दुख प्राप्त हो रहा है ।

योग दर्शन में परमेश्वर का लक्षण इस प्रकार बताया है ___ " **क्लेश कर्म विपाकाशर्यरपरामृष्ट पुरुष विशेष ईश्वर: ।** **(योग दर्शन. पाद 1 , सूत्र 26)** अविधा (विपरीत ज्ञान) अस्मिता (अहंकार) राग द्वेष और अभिनिवेश , (मृत्यु का भय) ये पांच क्लेश , जिनसे सुख और दुख प्राप्त हो वह शुभाशुभ कर्म विपाक कर्म फल आशय (कर्मों की वासना) इनसे सर्वथा रहित पुरुष विशेष परमेश्वर है ! राम आदि सबको क्लेश हुए इनमें राग और द्वेष भी दिखाई देता है । ये कर्म फल भी भोंगते थे , इसलिए ये सब ईश्वर नहीं थे । पंडित जी महाराज ! सनातन धर्म के अनुसार तो यह भी सिद्ध होना कठिन है ,कि ब्रह्मा , विष्णु , महेश , और दुर्गा , इन चारों में से परमेश्वर कौन है ? पुराणों में कहीं ब्रह्मा जी को सबसे बड़ा बताया है , कहीं शिवजी को सबसे बड़ा बताया है , कहीं विष्णु जी ही सबसे बड़े कहे गये हैं । कहीं शक्ति को ही इन सब पर शासन करने वाली बतायी गई है । इतना ही नहीं ! कहीं ब्रह्मा की निन्दा लिखी है । कहीं शिव की और कहीं विष्णु की निंदा की गई है । अतः बताने की कृपा करें कि आपका ईश्वर कौन है ? तथा आप किसका अवतार सिद्ध करना चाहते हैं ?

श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री ______

लीजिये में एक दो वेद मंत्र और बोलता हूं ___ (1) **इदं विष्णुविचक्रमे त्रेधा निदषेपदं समूढस्य सुरे ।।** **(यजुर्वेद अध्याय 5 , मंत्र 15) ।** इस मंत्र में विष्णु के वामनावतार के तीन पदों का वर्णन है , राजा बलि के राज्य आदि और शरीर को भी वामनावतार में तीन पगों से नाप लिया था । (2) **प्रतद्विष्णु स्तवते वीर्येण मृगों न भीम: कुचरो गिरिष्ठा: ।। यस्योक्षु त्रिषु विक्रमणेण्वधिषिक्षि पन्ति भुवनानि विश्वा ।। यह यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 20 हैं ।** इस मंत्र में विष्णु के नृसिंह अवतार का वर्णन है । (3) **भद्रों भद्रया**

Edit with WPS Office

सचमान आगात् स्वसारं जारो अम्येति पश्चात ।। यह ऋग्वेद मंडल 10 , सुक्त 3 , का मंत्र 3 हैं । इस मंत्र में राम अवतार और सीता के जार (रावण) का भी वर्णन है , और वराह व कृष्ण नाम भी वेद में आते हैं , पुराणों के आपने बहुत प्रमाण दिए हैं , दुर्भाग्य से हमने श्रीमद् भागवत पुराण ही पढ़ा है , और गरुड़ पुराण तो बार-बार ही पढ़ना पड़ता है , जब किसी की मृत्यु हो जाती है , तब उस घर में हम गरुड़ पुराण ही पढ़ते हैं । ब्रह्मायेन कुलाल वन्नियमितो ..." आदि यह श्लोक तो उसमें कभी आया ही नहीं । अन्य पुराणों को हमने पढ़ा नहीं है । इसलिए उनके विषय में अभी कुछ कह नहीं सकते । नारद ने विष्णु को श्राप क्यों दिया ? इसको स्पष्ट करिए । ब्रह्मा आदि की प्रशंसा जहां-जहां है , " वह तो जिसका विवाह उसके गीत " पर पुराणों में निन्दा भी इनकी है , ऐसा हमारा विश्वास नहीं है , बता सकते हो तो बताइये ?

आर्य समाजी पंडित जी की बहुत बातों का उत्तर हमारे पास नहीं है । उनका पाण्डित्य भी बहुत है , तथा उनकी सभ्यता और शिष्टाचार कि हम सराहना करते हैं , इस शास्त्रार्थ से बहुत सी बातें नई सामने आई है , पंडित जी के अंतिम भाषण में और भी आयेंगी उन सब पर विचार करेंगे , और हम आशा करते हैं , श्री पंडित अमर सिंह जी महाराज से हमारा फिर भी संपर्क और संवाद होगा ।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पंडित ठाकुर अमर सिंह जी ______

भाइयों श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री विद्वान तथा हठ दुराग्रह से रहित है । मैं आशा और विश्वास करता हूं कि , श्री पंडित जी शीघ्र ही आर्य समाजी हो जाएंगे , और यह मानने लगेंगे की ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता । और बाद में गोकुल चंद्र जी शास्त्री आर्य समाजी बने । पंडित जी ने जो वेद मंत्र बोले हैं , उनके विषय में , मैं स्पष्टीकरण करता हूं ध्यान से सुनिए ।

1. **" इदं विष्णुविचक्रमे...."** इस मंत्र में न तो वामन अवतार का नाम है , और न राजा बलि का । केवल तीन पंगों (पदों) का वर्णन होने से न वामन अवतार न बलि राजा को ठगना , अर्थात उससे ठगी करना सिद्ध होता है । धोखा देना परमेश्वर का काम नहीं है , इस मंत्र में विष्णु नाम से सूर्य का वर्णन किया जाता है , सूर्य के तीन पंग , पृथ्वी , अंतरिक्ष , और धौ मैं होते हैं ,

Edit with WPS Office

दूसरा अर्थ विष्णु का यज्ञ है । शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया है कि " यज्ञों वै विष्णु: " वह भी पृथ्वी अंतरिक्ष, और धौ तक जाता है । मनु जी ने भी मनुस्मृति में कहा है कि ___ अग्नौ प्रास्ताहुति सम्यक् आवित्यमुप तिष्ठते " । अर्थात अग्नि में अच्छे प्रकार दी हुई आहुति सूर्य तक पहुंचती हैं । विष्णु परमेश्वर का भी नाम है । उसके तीन पग कई प्रकार से कहे जाते हैं , सूर्य , अग्नि , और वायु , पृथ्वी , अंतरिक्ष और धौं तथा भूत , भविष्यत् , और वर्तमान आदि । ईश्वर जन्म लेता है , ऐसा बताने वाला वेद में कोई मंत्र है तो बताइये ?

2. **" प्रतदूविष्णु स्तवते वीर्येण...."** आदि मन्त्र में न नरसिंह अवतार का नाम है , और न भक्त प्रहलाद का तथा न उसको सताने वाले उसके पिता हिरण्यकश्यप का कहीं नाम निशान हैं , मंत्र का अर्थ इस प्रकार है । इस मंत्र में उपमालंकार है , जैसे सिंह अपने पराक्रम से अन्य पशुओं का वध करता फिरता है , वैसे ही जगदीश्वर अपने पराक्रम से सब लोगों का नियमन करता है ।

3. **" भद्रों भद्रया सह "** इस मंत्र में न राम है , न सीता , न रावण है , भद्र का अर्थ राम ही क्यों ? कोई भी भला पुरुष भद्र कहला सकता है । मैं कहता हूं इस मंत्र में भद्र श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री को कहा गया है । तो आप कैसे मेरी बात का खंडन करेंगे ? वैसे इस पूरे मंत्र का अर्थ में आपको कह देता हूं । पहले पूरा मंत्र सुनिए ___

भद्रों भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अम्येति पश्चात ।
सुप्रकेतैध भिरग्निवितिष्ठन्न शद्भिवर्णौरभि राममस्यात् ।।

(ऋग्वेद मंडल.10.सुक्त 3 , मंत्र 3)

अर्थात ______ जैसे (जार:) रात्रि का विनाश करता हुआ सूर्य (स्वसारं पश्चात अभि एति) अपनी भगिनी के तुल्य अंधकार हटाने वाली उषा के पीछे-पीछे दौड़ता है , और स्वयं (भद्रं) सुखकारी होकर (भद्रया सचमान आगात्) सुखदायिनी उषा के साथ मिलकर आता है , और वह (उशदिभ वर्णो) उज्जवल रश्मियों से (रामम् अभिअस्थात्) रात्रि के अंधकार को पराजित करता है , वैसे ही (भद्रं:) प्रजा को सुख देने वाला विद्वान (भद्रया सचमान:) प्रजा को सुख देने वाली बुद्धि या नीति से युक्त होकर (आगात्) प्राप्त हो । वह (जार:) शत्रु या दुष्टों का नाश करने वाला होकर (स्वसारं)

Edit with WPS Office

सुख से शत्रु को उखाड़ने वाली सेना वा (स्वसारं) स्वयं आने वाली प्रजा के (पश्चात अभिएति) पीछे तदनुकूल रहकर वश करें । वह (अग्निः) अग्नि के समान पुरुष (सू - प्र - कंतेः) ज्ञानवान (धभिः) रश्मि तुल्य विद्वानों के साथ (वितिष्ठन्) विविध कार्यों को करता हुआ (उशदिभ) उज्जवल कामना वाले (वर्णेः) विद्वानों के साथ (रामम अभिअस्थात्) अंधकार तुल्य शत्रु पर चढ़ाई करें ।

इस मंत्र में जार यदि रावण को कहा गया है , तो " स्वसारं जारो अम्येति " का क्या अर्थ होगा ? " स्वसा " का अर्थ तो बहिन है , बहिन को जार सब ओर से प्राप्त होता हैं । पर यह कौन सा अवतार सिद्ध हुआ ?
" वराह " का अर्थ निरुक्त में यास्काचार्य ने " मेघ " किया है । यथा **" वराहो मेघों भवति "** **(निरुक्त. 5 - 4)** राम का अर्थ किसी भी भाष्याकार ने भी दशरथी राम नहीं किया और न कोई और रामावतार हुआ । और न बताया । सायण महीधर तथा उबट तीनों आचार्य , राम का अर्थ रात्रि का अंधेरा और कृष्ण का अर्थ वासुदेव का पुत्र कृष्ण न कृष्ण काला रंग बताते हैं । नारद के श्राप की बात आपने पूछी है । सो ध्यान देकर सुनिए और नोट करिये **। शिव पुराण रूद्र संहिता 2 अध्याय 3 -4** में लिखा है कि एक राज कन्या का स्वयंवर होना था , नारद जी ने विष्णु जी से कहा कि मेरा मुख सुंदर बना दीजियें । जिससे राज कन्या मुझी को अपना पति वरण करें , श्री विष्णु जी ने नारद जी का मुंह बंदर का सा बना दिया , और स्वयं स्वयंवर में जा विराजें , राज कन्या ने विष्णु जी को ही वरण कर लिया , नारद जी ने अपना मुंह जल में देखा तो वह बंदर का - सा मुख था , तो श्री नारद जी ने , विष्णु जी को श्राप दिया , और रुष्ट होकर नारद जी बोले ___ " हे विष्णु तुम महा दुष्ट हो , कपटी हो , विश्व को मोहने वाले हो , प्राई उन्नति को सहन नहीं करते हो , तुम मायावी हो , और मलिन आशय वाले हो , मैं तुम्हें शाप देता हूं , कि तुम भी अपनी स्त्री के वियोग दुख को प्राप्त करो । नारद के इस शाप से विष्णु जी ने राम का जन्म लिया , और अपनी स्त्री को जो रावण हरकर ले गया था , तब उसके वियोग का दुख नारद के शाप से उन्होंने भोगा । ब्रह्मा , विष्णु और शिव की निंदा पुराणों में कहां है ? यह आपने पूछा है । सो अति संक्षेप में बताता हूं । विस्तार से बोलने के लिए बहुत समय ही नहीं बल्कि बहुत दिन होने चाहिये । आपने शास्त्री जी श्रीमद् भागवत को

Edit with WPS Office

पढ़ा है , उसमें ही पुत्री गमन का दोष ब्रह्मा जी पर लगाया गया है । यही नहीं अन्य भी जो जो दोष लगायें गये उनको कहता हूं ___

ब्रह्मा जी पुत्रीगामी थे । **(श्रीमद् भागवत स्कंद 3 , अध्याय 12 , श्लोक 28 से 29) ।**

ब्रह्मा जी का वीर्यपात ।

ब्रह्मा के पांच सिर थे । **(शिव पुराण विधेश्वरी संहिता अध्याय 8 श्लोक 4 से 7)**

1. श्री ब्रह्मा जी पर पुत्री गमन का घृणित दोषारोपण ______

श्रीमद् भागवत पुराण. स्कंद 3 , अध्याय 12 , श्लोक 28 , 29 , 30 ,

अर्थात : यहां लिखा है हे विदुर ! वाणी से श्रेष्ठ देह वाली सरस्वती हुई ,कि जिसे देख कर ब्रह्मा जी ने काम के वशीभूत होकर उसके साथ काम की इच्छा की ऐसा ही मैंने सुना है । संपूर्ण पुत्र मरीचि आदि ऋषियों ने अपने पिता की खोटी बुद्धि देखकर समझाया । कि ऐसा पहले किसी ने नहीं किया और न कोई करेगा की जो तुम अपने अंग से उत्पन्न हुई पुत्री को ग्रहण करते हो यह ग्रहण करने योग्य नहीं है ।

2. ब्रह्मा जी के पांच सिर ______

शिवजी की आज्ञा से भैरव ने उन पांच सिरों मैं से एक को काट दिया , देखिये ___ महादेव द्वारा ब्रह्मा जी का अभियान दूर करना :

अर्थात ______ तब महादेव जी ने ब्रह्मा जी का मद दूर करने के लिए भृकुटी के मध्य से एक अद्भुत पुरुष भैरव की रचना की । उत्पन्न होते ही समरांगण में उस पुरुष ने शिव जी को प्रणाम किया । और कहा भगवन ! मैं क्या करूं ? शीघ्र आज्ञा दीजिए । शिवजी ने कहा ___ हे वत्स ! यह जो जगत के आदि देवता ब्रह्मा है , तीक्ष्ण धार वाले वेगवान खड्ग से इनकी पूजा करो अर्थात इन पर प्रहार करो । यह सुनते ही भैरव ने एक हाथ से कैश पकड़ कर वह ब्रह्मा जी का पांचवा असत्य भाषी सिर काट , हाथ से स्फुरायमान होते हुए खड्ग से उनके और भी सिर काटने की इच्छा की । तब तुम्हारे पिता ब्रह्मा जी गहने - माला और उत्तरीय वस्त्र त्याग कैश खोले हुए हवा चलने से केले और बेल के समान कम्पित होकर भैरव जी के चरण

Edit with WPS Office

कमल में गिर पड़े । ब्रह्मा जी की यह दशा देखते ही , विष्णु जी ने हमारे स्वामी के चरण कमलों में अश्रु मोचन करते-करते हाथ जोड़कर कहा । जैसे बालक , पिता से कहते हैं । उन्होंने कहा ___

विष्णु बोले ___ हे भगवान ! प्रथम अपने कृपा करके इनको पांच सर दिए थे । अब एक जाता रहा , इस कारण क्षमा करके ब्रह्मा जी पर प्रसन्नता करो । विष्णु जी की निंदा तो आपने अभी सुनी है । विष्णु जी ने विन्दा से व्याभिचार किया , उसके पति जालंधर का रूप बनाकर धोखे से उसका पतिव्रता धर्म नष्ट किया । विष्णु ने नरसिंह बनकर शिव के भक्त हिरण कश्यप का वध किया , तो उसके दंड स्वरूप शिव जी ने नृसिंह को पटक - पटक कर मारा , और उसकी खाल उतार ली , शिव जी के चित्रों में शेर का चमड़ा पहने हुए उनको अब भी दिखाया जाता है । और शिव जी के गले में कभी-कभी एक नर मुंडो कि माला दिखाई जाती है । उसके बीच में नृसिंह का भी मुख दिखाया जाता है । शास्त्री जी आप निम्न पते पर पूरे विस्तार से देख सकते हैं ।

" शिव पुराण रुद्र संहिता 3 , अध्याय 12 श्लोक 1 से 36 तक । शिव पुराण में शिव जी का नंगे होकर ऋषि पत्नियों के सामने जाना लिखा है । ऋषियों के शाप से शिवजी की मूत्रेन्द्रिय टुकड़े - टुकड़े होकर भूमि पर गिर गयी । देखिए ___ " **शिव पुराण कोटि रुद्र , संहिता अध्याय 11 , श्लोक 6 से 19** तक । शिवजी ने विष्णु जी के मोहिनी रूप को देखा तो उनका वीर्यपात हो गया । देखिए ___ **" श्रीमद् भागवत पुराण. स्कंद 8 , अध्याय 12 , श्लोक 18 - 33** " तक । शिवजी ने महानंदा नाम वाली वैश्या से समागम किया । देखिए ___ **" शिव पुराण. शतरुद्र संहिता अध्याय 25 , श्लोक 13 से 30 "** तक । ब्रह्मा , विष्णु और शिव जी तीनों ने अत्रि ऋषि की पत्नी अनुसूया के साथ अत्यंत घृणित कुचेष्टाएं की । देखिए ___ **" भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पूर्व खंड 4 , अध्याय 17 , श्लोक 67 - 75 "** तक मैं आपको आज एक या दो नहीं अनेकों प्रमाण दूंगा और तब तक देता रहूंगा जब तक शास्त्री जी अच्छी तरह छक न जायें और मना न करने लगे ।

नोट ______ बीच में ही उठकर श्री पंडित गोकुलचंद्र जी शास्त्री कहने लगे बस ! बस !! महाराज इतने ही प्रमाण बहुत है । श्री ठाकुर अमर सिंह जी ने अन्त में कहा , कि __ मानवीय शास्त्री जी !

Edit with WPS Office

आपने यह कहा कि ब्रह्मा विष्णु और शिव जी की भिन्न भिन्न पुराणों के भिन्न-भिन्न स्थलों में जो एक दूसरे से बढ़ाकर प्रशंसा लिखी है । वह तो " जिसका विवाह उसके गीत " है । यदि आपकी यह बात भी मान ली जायें , तो भी तो वह तीन प्रथम पृथक - पृथक सिद्ध हुए । मेरा तो प्रश्न यह है कि इन तीनों में से किसी को परमेश्वर माना जाए ? जब परमेश्वर का निश्चय ही नहीं तो अवतार किस का सिद्ध करोगे ? मैंने तो सिद्ध कर दिया कि ईश्वर का अवतार किसी प्रकार भी सिद्ध नहीं हो सकता , शास्त्रार्थ का समय तो समाप्त हो गया । और नियम अनुसार मुझे ही अन्त में बोलना था , शास्त्री जी आपका तो अंतिम भाषण हो चुका , तो भी यदि आप कुछ कहना चाहें तो मैं कोई आपत्ति नहीं उठाऊंगा आप कुछ कहना चाहे तो कहें ।

श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री ______

मैं शास्त्रार्थ के अन्त में आर्य पंडित जी को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने मेरा बोलने का अधिकार न रहने पर भी मुझको अपनी उदारता से बोलने का अधिकार दिया है । मैं उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूं । और आगे कुछ और न चाहता हुआ यह ही कहता हूं कि पुराणों के सारे प्रमाण तथा मेरे दिए हुए वेद मंत्रों के अर्थ भी मेरे लिए सर्वथा नये है । मैं इन सब पर फिर विचार करूंगा ।

शास्त्रार्थ केसरी श्री पंडित ठाकुर अमर सिंह जी ______

इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि पंडित जी हठ , दुराग्रह रहित यथा निष्कपट है । एवं विद्वान तथा सज्जन साधु स्वभाव वाले हैं । सनातन धर्मी भाई इनको बहुत श्रद्धा के साथ लायें हैं । मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि , श्री शास्त्री जी को उसी प्रकार श्रद्धा और प्रेम के साथ ले जायें , पंडित जी में कोई कमी नहीं है । वास्तविकता यह है कि अवतार वाद का मानना सर्वथा अनुचित है । इसको कोई भी सत्य सिद्ध कर ही नहीं सकता , मैं श्री पंडित जी के लिए यह शुभ कामना करता हूं कि वह परमेश्वर की कृपा से अवतारवाद के मिथ्या मत को छोड़कर सत्य सनातन वैदिक धर्म के मानने वाले बन जायें । शास्त्रार्थ के कुछ समय बाद ऐसा ही हुआ श्री पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री आर्य समाजी बने ।

Edit with WPS Office

नोट : ______ पंडित गोकुल चंद्र जी शास्त्री स्टेज से उठकर चलने लगे । तो सनातन धर्मी लोग बिना शंख , घड़ियाल बजाये शास्त्री जी को बिना पुष्प हार पहनायें चुपचाप लेकर चले गये । आर्य समाज का बहुत अच्छा प्रभाव रहा , अपनों और परायों सभी ने आर्य पंडित श्री ठाकुर अमर सिंह जी शास्त्रार्थ केसरी की भूरि भूरि प्रशंसा की । एवं पुष्प मालाओं से ठाकुर अमर सिंह जी को लाद दिया । चारों ओर के जयकारों से आकाश गूंज उठा ___

वैदिक धर्म की जय , महर्षि दयानंद की जय , आर्य समाज अमर रहे । वेद की ज्योति जलती रहे , परमेश्वर का अवतार नहीं होता ।

तथा ठाकुर साहब को हाथों पर उठा लिया , एवं पिण्डाल से जहां ठाकुर साहब ठहरे हुए थे , वहां तक हाथों ही हाथों पर लिए हुए जुलूस की हालत में नारे लगाते हुए पहुंचे । इस प्रकार यह शास्त्रार्थ समाप्त हुआ ।

इसलिए , कहने का तात्पर्य यह है कि राम , कृष्ण , हनुमान हमारे महापुरुष हैं भगवान है । इनका जीवन मर्यादा में रहा , सदा मर्यादा का पालन किया । हम लोगों की तरह ही हमारे महापुरुष राम कृष्ण हनुमान उत्तम चरित्र के साथ अच्छे स्वभाव के उत्तम मनुष्य थे । इनका चरित्र इतना महान था उनकी महानता और उनके जीवन से हमें सीखना चाहिए । कहने को तो हम इनको ईश्वर कह सकते हैं । लेकिन हमारे कहने से क्या होगा ? शास्त्रों के अनुसार वेद के अनुसार रामायण के अनुसार और भगवान राम के मुख से बोलने के अनुसार , मनुष्य थे भगवान थे सभी गुणों में उत्तम थे इसलिए हम इनको भगवान कहते है । लेकिन भगवान राम कृष्ण और हनुमान परमात्मा नहीं है बल्कि परमात्मा के भक्त हैं । सुबह और शाम संध्या के समय राम और कृष्ण ईश्वर की उपासना ध्यान यज्ञ , हवन आदि करते थे । खुद भगवान श्री राम स्वयं को मनुष्य स्वीकार कर रहे हैं । देखिए ____

रामायण के प्रारंभ में वे नारद जी से एक सर्व गुण संपन्न श्रेष्ठ व्यक्ति के विषय में पूछते हैं , भगवान के अवतार के विषय में नहीं । देखिए

महर्षे त्वं समर्थोसि विध नरम् ।

अर्थात हे महर्षि आप इस संसार के मनुष्य के विषय में जानने में समर्थ है ।

Edit with WPS Office

रामायण में श्री राम स्वयं अपने को मनुष्य ही कहते हैं , भगवान नहीं । जैसे ___

देवं संपादितो दोषो मानुषेण मवा जित: । युद्ध काण्ड 118.5

अर्थात हे सीता तुझ पर जो दैवी विपत्ति आयी उस पर मुझ मनुष्य ने विजय प्राप्त कर ली है ।

आत्मानं मानुषं मन्वे , रामं दशरथात्मजम् ।। युद्ध कांड. 110.11

अर्थात मैं तो अपने को महाराज दशरथ का पुत्र एक मनुष्य ही मानता हूं ।

पूर्व मया नूनमभीप्सितानि , पापानि कर्माण्यसकृत् कृतानि ।
तत्रायमध पतितो बिपाको , दुखेन दुःख यदहविशामि ।।

रामायण अरण्य कांड. 63.4

अर्थात हे लक्ष्मण निश्चय ही पूर्व जन्म में मैंनें अनेक पाप किये थे । उसी का परिणाम है कि मुझे दुख के पश्चात दुख प्राप्त हो रहे हैं ।

वाल्मीकि न केवल राम को मनुष्य मानते थे अपितु मनुष्य को परमात्मा मानने के भी विरुद्ध थे । इसलिए वे श्री राम के मुख से कहलाते हैं कि ___

नात्मन: कामकारोस्ति पुरुषोयमनीश्वर: । अयोध्या काण्ड. 101.15

अर्थात हे भरत , मनुष्य अपनी इच्छा से कुछ नहीं कर सकता , क्योंकि वह ईश्वर नहीं है ।

प्रभातकाले चोत्थाय पूर्वा सन्ध्यामुपास्य च ।
प्रशुची परमं जाप्यं समाप्य नियमेन च ।।

बालकाण्ड. 26/31 - 32

अर्थात प्रातः काल उठकर , प्रातः काल की संध्या को करके और नियम पूर्वक परम पवित्र जप को समाप्त करके (विश्वामित्र को अभिवादन किया) ।

एकयामावशिष्टायां रात्र्यां प्रतिविबुध्य स: ।
पूर्वा सन्ध्यामुपासीन: जजाप यतमानस: ।।

अयोध्या काण्ड. 6/5 ,6

अर्थात रात्रि के एक प्रहर के शेष रहने पर राम ने उठकर प्रातः कालीन

Edit with WPS Office

उपासना करते हुए मन लगाकर जप किया ।

उपास्य तु शिवां सन्ध्यां दृष्टया रात्रिमुपागताम् ।।

अयोध्या काण्ड. 46/13

अर्थात रात्रि होती हुई देख राम आदि ने कल्याणकारी संध्या की उपासना विधि पूर्ण की है ।

नामनुष्ये भवत्यग्रिव्यक्तमत्रैव राघवौ ।।

अयोध्या कांड. 63/22

अर्थात सैनिकों ने भरत से कहा , मनुष्य रहित स्थान में अग्नि नहीं होती , (अतः धूम दीखने से प्रतीत होता है) की निश्चित रूप से यहां ही राम , लक्ष्मण है ।

तात्पर्य हुआ आश्रम में यज्ञाग्रि का धूम प्रसूत हो रहा था ।

एतस्मिन्नाश्रमे वासं चिरं तु न समर्थये ।
तमेवमुक्त्वोपरमं रामं: सन्ध्यामुपागमत् ।।

अरण्य कांड. 7/22

अर्थात हे मुनि ! इस सुतीक्ष्ण आश्रम में बहुत काल तक रहना नहीं चाहता , ऐसा मुनि से कहकर राम संध्या में बैठ गये ।

- **और अब हम भगवान श्री कृष्ण के बारे में दिखाएंगे की वह ईश्वर के कितने बड़े भक्त थे । देखिए , प्रमाणों के साथ ______**

।। महाभारत शांति पर्व. 530 पृष्ठ ।।

अर्थात यहां लिखा है कि श्री कृष्ण ने ब्रह्ममुहुर्त में परब्रह्म ईश्वर का ध्यान किया । तत्पश्चात शौचादि दैनिक हवन संध्या उपासना के कार्यों से निवृत होकर गायत्री मंत्र का जाप और अग्निहोत्र किया ।

।। महाभारत उद्योगपर्व. 85/21 ।।

Edit with WPS Office

अर्थात; श्री कृष्ण जी जिस समय वृकस्थल पर पहुंचे , तब सूर्यास्त होने वाला था , उस समय श्री कृष्ण ने रथ से उतरकर स्नान आदि करके ईश्वर का ध्यान करने के लिए बैठ गए ।

।। महाभारत सभा पर्व. 38/18 ।।

श्री कृष्ण वेद वेदांग विज्ञानवेत्ता और बल में तथा शास्त्रारथ विद्या में इतने निपुण है , कि उनसे अधिक इस समय संपूर्ण पृथ्वी पर दूसरा कोई मनुष्य नहीं है ।

समाधान ___ इस श्लोक में भगवान श्री कृष्ण को मनुष्य ही बताया है । मनुष्य से तुलना की हैं , जो लोग यह बोलते हैं कि भगवान श्री कृष्ण परमेश्वर थे ? वे निर्बुद्धि अज्ञानी है । लोग श्री कृष्ण को विष्णु जी का अवतार बताते हैं । यह बात शास्त्रों के विरुद्ध है और वेदों के विरुद्ध हैं महाभारत के विरुद्ध है ।

।। भागवत पुराण स्कंद 10 , अध्याय 45 , श्लोक 34 ।।

यहां लिखा है कि श्री कृष्ण और बलराम ने यदुकुल के पुरोहित गर्गाचार्य से जनेऊ धारण कराकर दिउजत्व प्राप्त किया । और गायत्री मंत्र की दीक्षा ली । तत्पश्चात गुरुकुल में जाकर 6 अंगों सहित चारों वेद उपनिषद धनुर्वेद चारों उपवेद धर्मशास्त्र न्याय शास्त्र मीमांसा सहित राजनीतिक शास्त्र का विधिवत अध्ययन किया ।

समाधान ___ अगर भगवान श्री कृष्ण परब्रह्म होते तो इन जनेऊ के तीन ऋणों में क्यों बंधते ..?

- **महाभारत में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि ___**

अहं हि तत् करिष्यसि परमपुरूषकारत: ।
दैवं तु न मया शक्यं कर्म कर्तु कथठ्चन ।।

अर्थात , मैं एक श्रेष्ठ पुरुष की भांति अपने पुरुषार्थ से तो कुछ कर

Edit with WPS Office

सकता हूं , किंतु दैवी (ईश्वरीय) विधान में हस्तक्षेप करना मेरे सामर्थ्य से बाहर है ।

प्रश्न : ____ जब श्री कृष्ण मनुष्य थे तो गीता के उपदेश के समय अपने आप को ब्रह्म क्यों बता रहे हैं..?

उत्तर : ____ वेदांत दर्शन , प्रथम अध्याय. सूत्र 30 में यहां वेदव्यास जी कहते हैं कि जो मनुष्य योगी अवस्था में होता है , उसे ब्रह्म का बोध हो जाता हैं । और वह अपने आप को ब्रह्म कहकर ब्रह्म का वर्णन करता है कि " मैं ही ब्रह्म हूं " ।

मुझ से अभिप्राय ब्रह्म परमात्मा से है , श्री कृष्ण जी ने परमात्मा के स्थान में अपने को क्यों कर कहा ? इसका उत्तर यह है कि श्री कृष्ण जी परम योगी थे । उनके पास कई जन्मों की तपस्या का फल था , अपने पूर्व जन्मों की स्मृतियां उन्हें याद थी । इस कारण वे परब्रह्म परमात्मा मैं इतने लवलीन थे , कि अपने को उससे भिन्न नहीं देखते थे ? जो योगी होता है उसे इसी प्रकार " मैं ही ब्रह्म हूं " इस प्रकार बोध होता है ।
ऐसे पूर्ण योगी महात्मागण इसी प्रकार दीक्षा करते हैं , इसका प्राचीन प्रमाण भी और दिखाते हैं । देखो एक और प्रमाण ____

।। बृहदारण्यक उपनिषद. 1.4.10 ।।

अर्थात एक दिन उपदेश के समय वामदेव ऋषि ने कहा ? कि जो सूर्य में पुरुष प्रकाश दे रहा है ? वह मैं ही हूं ।

।। यजुर्वेद. 31.17 ।।

ओंकार ही सर्वव्यापक परब्रह्म है ।

प्रश्न : ____ क्या पूर्वजन्म की स्मृति आप को रह सकती है ?

उत्तर : ____ पूर्व जन्म की स्मृतियां काफी विवादास्पद विषय रहा है । गर्भो उपनिषद अनुसार जीवात्मा जब माता के गर्भ में होती है तब वह अपने

Edit with WPS Office

पूर्व जन्म की स्मृति रखती है । लेकिन प्रसव के समय वह अपने पूर्व जन्म को भूल जाता है ।

लेकिन साथ में लोक में ऐसे भी उदाहरण पायें जातें हैं जहां पर योगी और मनिषी लोगों को अपने पूर्व जन्म की स्मृतियां रहती हैं ।

कृष्ण गीता के श्लोक. 4.5 में स्वयं श्री कृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि ____

बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ।।
।। गीता. 4.5 ।।

हे अर्जुन ! मेरे और तुम्हारे बहुत से जन्म हो चुके हैं , (परंतु) हे परन्तप ! उन सबको मैं जानता हूं और तुम नहीं जानते ।

यहां पर स्पष्ट तरीके से श्री कृष्ण यह स्वीकार कर रहे हैं कि उन्हें अपने पूर्व जन्म की स्मृति हैं , लेकिन अर्जुन को अपने पूर्व जन्म याद नहीं है ।

तो क्या ऐसा होना संभव है ..?

इस पर **सामवेद से संबंधित आर्षेय ब्राह्मण. 1.1.7** अनुसार जो व्यक्ति वेद का सम्यक अध्ययन करता है वह ऋषियों की गति को प्राप्त करता है । (अर्थात मोक्ष प्राप्त करता है) अथवा स्वर्ग लोक अर्थात उत्तम योनि को प्राप्त करता है । अगर उसका पुनर्जन्म हो तो वह पिछले जन्मों की बातें याद रखने वाला होगा ।

ब्राह्मणकार अन्य किसी **प्राचीन ब्राह्मण** का उदाहरण देते हुए कह रहे हैं कि ___ **स्मरन्नाजायते पुनः ।**

इस पर भाष्य करते हुए नारायण लिखता है कि ____

यदि च पुनर्जन्म भवति तर्हि जातिस्मरः

Edit with WPS Office

(विगतजन्मवृतस्मरणशाली) भूत्वा जन्म लभते ।।

नारायण ने **जातिस्मर** होकर जन्म लेना लिखा है । उसका अर्थ समझाते हुए वह लिखता है कि जिसे पुनर्जन्म की स्मृति रहती है वह जातिस्मर है ।

तो इससे यह सिद्ध होता है कि जो व्यक्ति ने अपने पूर्व जन्म में वेदादिग्रन्थो का सम्यक अध्ययन किया हो वह अपने पूर्व जन्म की स्मृतियां याद रख सकता है ।

इसी कारण से श्री कृष्ण को अपने पूर्व जन्म की स्मृतियां याद थी । और लोक में भी कुछ उदाहरण देखे गये हैं जहां पर लोग जातिस्मर है ।

इसलिए समाज में फैल रही अवतारवाद पर भ्रांतियां आडंबर ढोंग , पाखंड से जागरूक करना समाज को एक नई रहा दिखाना । शास्त्रों का सत्य दिखाना । मेरा अपना कर्तव्य है ताकि लोग सत्य को जान सके । लोग अपनी तर्क , बुद्धि अनुसार सत्य - असत्य का निर्णय लेने में सक्षम हो सके । समाज में फैल रही गलत धारणाओं से बच सके । और मुझे आशा है पाठकगण ! हमारी इस पुस्तक से अपने जीवन में उत्तम चरित्र के साथ-साथ , पुरुषार्थ के साथ-साथ , लोक से परलोक तक की यात्रा को सफल बनाने में प्रयास करेंगे ।
इसलिए कोई अवतार नहीं होता हमें अपनी लड़ाई खुद ही लड़नी है । अवतारों के भरोसे मत बैठो । इस अवतारवाद के कारण हम 1200 साल की गुलामी झेल चुके हैं और दोबारा से उस गन्दी नाली में नहीं गिरना चाहते ? जहां हमारे अपने पूर्वज छुआछूत आडंबर , गलत धारणाएं किसी शत्रु को देखकर शस्त्र डाल देना जैसे __ राजा दाहिर के समय हुआ कि पाखंडी ने मंदिर का ध्वज झुका दिया , तभी राजा ने शस्त्र त्याग दिए पाखंडी की जाल में आ फंसें और फिर अपना राज्य हाथ से निकल गया , अपनी जान चली गई , मार काट हुई । आदि पतन हुआ । और इसी प्रकार सोमनाथ मंदिर के समय हुआ । सोमनाथ के पुजारी ब्रह्म मुहूर्त देखने में व्यस्त रहे और विदेशी आक्रमणकारी लूटपाट मार - काट करके , और

Edit with WPS Office

हमारी बहन बेटियों मां के साथ बलात्कार करके चले जाएं ऐसा दृश्य दोबारा नहीं देखना चाहते । इस देश के राजा बहुत ही शक्तिशाली थे । किसी विदेशी आक्रमण कारी की इतनी ताकत नहीं जो हमसे जीत सके ? लेकिन हमारी आपस की फूट , के कारण तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है । ढोंग आडंबर छुआछूत समाज से यह सब खत्म होना चाहिए । तभी भारत फिर से विश्व गुरु बन सकता है । सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारत आज किस तरफ जा रहा है आज भी हम उसी गुलामी की तरफ खिसकते जा रहें हैं । इसलिए समय रहते हमें जागना होगा , लोगों को अपने शास्त्र और शस्त्र की सही जानकारी नहीं है ? किसी पाखंडी के जाल में आ फंसते हैं । इसी पाखंड से बचने के लिए हमने यह पुस्तक लिखी है । इस पुस्तक की पीडीएफ पीडीएफ सबके लिए फ्री है । सभी अपने सनातन धर्म को जान सकते हैं । आप लोग सत्य को जान सके इसलिए हमने यह पीडीएफ बनाई है । कुछ पाखंडी अवतारवाद पर फैला रहे भ्रांतियों से बचें । देखिए __भोले भाले लोगों को किस प्रकार पाखंडी लोग अपने ही सनातन भाई गलत जाल में फसाते हैं जबरदस्ती वेदों के नाम पर गलत प्रमाण देकर समाज में अवतारवाद सिद्ध करते हैं । देखिए ____

देखिए ___ शिवांशु नारायण नाम का एक व्यक्ति किस प्रकार यह युवा शंकराचार्य के नाम पर शास्त्रों के नाम पर प्रोपेगेंडा फैला रहा है , हमारे शंकराचार्य को भी समाज में गलत मैसेज पहुंचाने का कार्य कर रहा हैं । आदि शंकराचार्य द्वारा चार मठों की स्थापना करने का उद्देश्य यह था कि हमारे अपने सनातन धर्म की रक्षा हो सके । समाज में शस्त्र और शास्त्र दोनों आवश्यकताओं को पूरा कर सके । शंकराचार्य सनातन समाज के चार स्तंभ हैं । अगर शंकराचार्य नहीं रहे तो सनातन नष्ट हो जाएगा । अगर शंकराचार्य के शिष्य ही समाज में गलत मैसेज भेजेंगे तो सनातन संस्कृति नष्ट होने की कगार पर आ जाएगी । पुरी मठ के शंकराचार्य निश्चलानंद सरस्वती जी बहुत बड़े विद्वान होकर भी वेदों में मूर्ति पूजा सिद्ध करते हैं । और अवतारवाद सिद्ध करते हैं । जो बिल्कुल शास्त्रों के विरुद्ध हैं । शंकराचार्य निश्चलानंद सरस्वती जी बहुत बड़े विद्वान होकर और मनमानी ढंग से शास्त्रों में हिंदू शब्द ना होते हुए भी जबरदस्ती दिखाना शब्दों के

Edit with WPS Office

गलत अर्थ करना । इससे लोगों में गलत मैसेज जाएगा ? निश्चलानंद सरस्वती सनातन के बहुत बड़े विद्वान और संन्यासी भी हैं । आर्य समाज और शंकराचार्य के बीच विचारधारा का मतभेद है यहां तक जैसा भी चल रहा था ठीक है । लेकिन हद तो तब हो गई जब इन्ही का एक शिष्य अपने आप को निश्चलानंद का शिष्य बताता है जिसका नाम शिवांशु नारायण है । इनका यूट्यूब चैनल आव्हान धर्म रक्षा समिति नाम से यूट्यूब चैनल है , इस चैनल पर रामपाल जैसें पाखंडियों का भंडाफोड़ करता हैं । लोगों को सनातन के झंडे के नीचे लाने का प्रयास करता हैं । इनके इन्हीं सब कार्यों के लिए हम इनका पूरा समर्थन करते हैं । रामपाल जैसे पाखंडियों का भंडाफोड़ तो होना ही चाहिए ? जो समाज में गलत मैसेज देते हैं सनातन को तोड़ने का काम करते हैं । लेकिन शिवांशु नारायण जबरदस्ती मनमाने अपने तरीके से शास्त्रों के विरुद्ध अनेकों वीडियो डालकर वेदों में मूर्ति पूजा सिद्ध करता है और प्रमाण गलत बता कर भोली भाली जनता को भ्रमित करता हैं । शिवांशु नारायण अगर समाज में गलत धारणाएं दोगे जबरदस्ती मनमानी ढंग से प्रमाण झूठे प्रमाण दोगे तो आपका भंडाफोड़ करना जरूरी है । और आपका भंडाफोड़ हो रहा है । आपने झूठे प्रमाण देकर वेदों में मूर्ति पूजा अवतारवाद सिद्ध किया है जो वेदों के विरुद्ध है । शिवांशु नारायण जी जो आपने प्रमाण अवतारवाद का दिया है वेदों से ? मैं आपको याद दिला दूं इस सूक्त में मंत्र पांच तक है । आठ तक नहीं ? आठवां मंत्र कौन से भाग के नशे में लिख डाला ..? मैं इस समाज से कहना चाहता हूं ऐसे प्रोपेगेंडा से बचें । ऐसे पाखंडी लोगों से बचें । जो समाज में और शास्त्रों में जबरदस्ती मनमानें ढंग से बिना प्रमाण के साथ मूर्ति पूजा अवतारवाद सिद्ध करते हैं जो कि वेदों के विरुद्ध ? देखिए ____

Edit with WPS Office

ऋग्वेद ३.४६.८ अनुसार परमात्मा बार बार मत्स्य कूर्म आदि नानारूप बनाता है।

बस खाली समस्या यह है की ऋग्वेद में ३.४६.८ वा मंत्र ही नहीं इस सूक्त में केवल ५ मंत्र है।

1.8K 17:52

- शिवांशु नारायण जी जरा हमको बताओ तो सही आठवां मंत्र कहां से लिख मारा कौन सा भांग का नशा किया हुआ था ? इस सूक्त में केवल पांच मंत्र हैं आठ नहीं ? कौन से परंपरा प्राप्त वेदों की बात आप करते हो ? कौन से परंपरा प्राप्त आचार्यों ने आठवां वेद मंत्र मान लिया ? इस ऋग्वेद के तीसरे मंडल के 46 वे सुक्त में ??

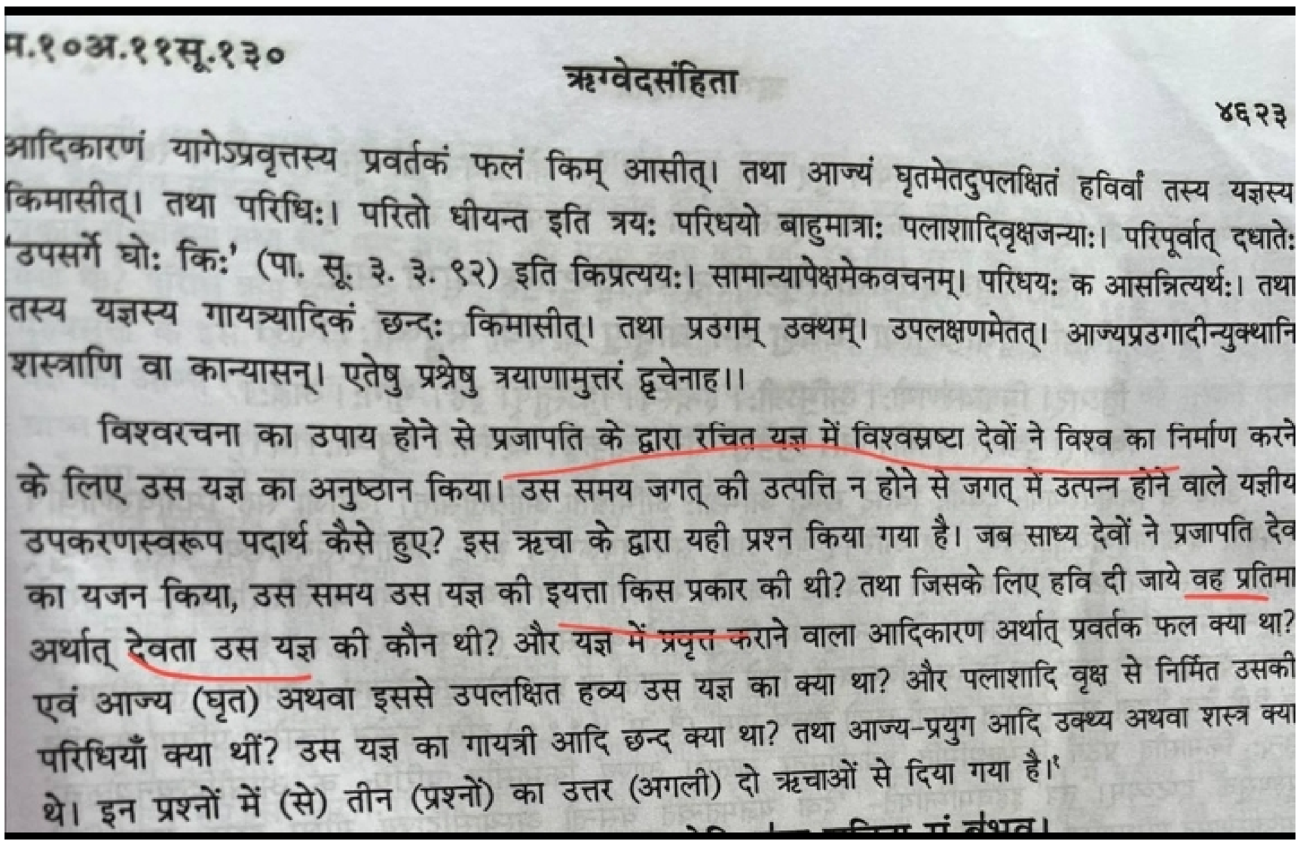

म.१०अ.११सू.१३०

ऋग्वेदसंहिता

४६२३

आदिकारणं यागेऽप्रवृत्तस्य प्रवर्तकं फलं किम् आसीत्। तथा आज्यं घृतमेतदुपलक्षितं हविर्वा तस्य यज्ञस्य किमासीत्। तथा परिधिः। परितो धीयन्त इति त्रयः परिधयो बाहुमात्राः पलाशादिवृक्षजन्याः। परिपूर्वात् दधातेः 'उपसर्गे घोः किः' (पा. सू. ३. ३. ९२) इति किप्रत्ययः। सामान्यापेक्षमेकवचनम्। परिधयः क आसन्नित्यर्थः। तथा तस्य यज्ञस्य गायत्र्यादिकं छन्दः किमासीत्। तथा प्रउगम् उक्थम्। उपलक्षणमेतत्। आज्यप्रउगादीन्युक्थानि शस्त्राणि वा कान्यासन्। एतेषु प्रश्नेषु त्रयाणामुत्तरं द्वृचेनाह।।

विश्वरचना का उपाय होने से प्रजापति के द्वारा रचित यज्ञ में विश्वस्रष्टा देवों ने विश्व का निर्माण करने के लिए उस यज्ञ का अनुष्ठान किया। उस समय जगत् की उत्पत्ति न होने से जगत् में उत्पन्न होने वाले यज्ञीय उपकरणस्वरूप पदार्थ कैसे हुए? इस ऋचा के द्वारा यही प्रश्न किया गया है। जब साध्य देवों ने प्रजापति देव का यजन किया, उस समय उस यज्ञ की इयत्ता किस प्रकार की थी? तथा जिसके लिए हवि दी जाये वह प्रतिमा अर्थात् देवता उस यज्ञ की कौन थी? और यज्ञ में प्रवृत्त कराने वाला आदिकारण अर्थात् प्रवर्तक फल क्या था? एवं आज्य (घृत) अथवा इससे उपलक्षित हव्य उस यज्ञ का क्या था? और पलाशादि वृक्ष से निर्मित उसकी परिधियाँ क्या थीं? उस यज्ञ का गायत्री आदि छन्द क्या था? तथा आज्य-प्रयुग आदि उक्थ्य अथवा शस्त्र क्या थे। इन प्रश्नों में (से) तीन (प्रश्नों) का उत्तर (अगली) दो ऋचाओं से दिया गया है।[१]

Edit with WPS Office

वह बारह-बारह रखता है। जगती छन्द भी बारह अक्षरों का है। पशु जगती हैं, पशु अन्न हैं, बीच की चिति बीचोंबीच में है। इस प्रकार अन्न को मध्यभाग में रखता है। उनको प्राण-भृत् से लिपटाकर रखता है, अर्थात् प्राणों में चिपटाकर अन्न को रखता है, पीछे से। इस प्रकार अन्न को प्राण से पीछे रखता है ॥४॥

इस मन्त्र से—"मा च्छन्दः" (यजु० १४।१८)—"छन्द माप है।" यह लोक 'मा' है, क्योंकि मापा-सा गया है। "प्रमा च्छन्दः" (यजु० १४।१८)—अन्तरिक्ष प्रमा है, क्योंकि अन्तरिक्ष इस लोक से मापा जाता है। "प्रतिमा छन्दः" (यजु० १४।१८)—"वह (द्यौ) लोक प्रतिमा है,

क्योंकि वह अन्तरिक्षलोक द्वारा प्रतिमित-सा होता है। "अस्रीवयश्छन्दः" (यजु०१४।१८)—आस्रीवय अन्न है। इन लोकों में जो अन्न है वह अस्रीवय है, या जो अन्न इन लोकों से बहता है वह अस्रीवय है। अब वह केवल निरुक्त (निर्वाचित) छन्दों को रखता है ॥५॥

Edit with WPS Office

(निर्वाचित) छन्दा

स्वामी करपात्री के कुछ शिष्य - प्रच्छन्न इतिहास आदि - ऋग्वेद के मन्त्र १०.१३०.३ में से प्रमा, प्रतिमा आदि शब्द दिखाकार मूर्तिपूजा सिद्ध कर रहे है।

यह मन्त्र है -

> **कासीत्प्रमा प्रंतिमा किं निदानमाज्यं किमांसीत्परिधिः क आंसीत् । छन्दः किमांसीत्प्रउंगं किमुक्थं यद्देवा देवमयंजन्त विश्वें ॥**

स्वामी करपात्री जी कभी यथार्थ वेद नहीं जान पाये, तो उनके शिष्य की तो क्षमता से ही बहार है वेद को जानना!

कम से कम **आचार्य सायण** का भाष्य ही पढ लिया होता। आचार्य सायण ने यहां **यज्ञ** का प्रकरण माना है, मूर्तिपूजा का नहीं। सायण इस मन्त्र का अर्थ करते हुए लिखता है की जब परमात्माने जगतरचना के लिए यज्ञ शुरु किया तो उसके यज्ञ पदार्थ कौन से थे? उस यज्ञ की प्रमा क्या थी, प्रतिमा क्या थी, परिधि क्या थी? उस यज्ञ का छन्द इत्यादि क्या था?

सायण ने यहां कहीं पर भी मूर्तिपूजा सिद्ध हो ऐसा अर्थ नहीं किया है। सायणने भी **प्रतिमा शब्द का अर्थ - यज्ञ में जिसे हवी दी जा[illegible] वह देवता** किया है।

Edit with WPS Office

वह देवता किया है।

मन्त्र में प्रमा, प्रतिमा, परिधि इत्यादि शब्दो का व्यवहार यह सिद्ध करता है की यहां नांपने की बात है, ना की मूर्ति की।

शतपथ ब्राह्मण ८.३.३ में मा, प्रमा, प्रतिमा इत्यादि शब्द का अर्थ करते हुए ऋषि लिखते है की **भूलोक** को **मा** कहते है क्योकि वह नांपा गया है। **अन्तरिक्ष** को **प्रमा** कहते है क्योंकि भूलोक के द्वारा अन्तरिक्ष को नांप सकते है। और **द्युलोक** को **प्रतिमा** कहते है क्योंकि वह अन्तरिक्ष के द्वारा प्रतिमित होता है।

इस प्रकार शास्त्र में इन शब्द के सही अर्थ किये हुए है। लेकिन करपात्रीभक्त शास्त्र पढे तब ना?

1.8K 10:30

October 1

विष्णु और प्रहलाद का इतिहास :

Edit with WPS Office

Forwarded from
धर्मसम्राट®

विष्णु और प्रह्लाद का इतिहास

विष्णु और **प्रह्लाद** चाचा और भतीजे थे। प्रजापति **कश्यप** की ज्येष्ठ पत्नी थी **दिति** – जिसका पुत्र हुआ हिरण्यकश्यप, और उसका पुत्र हुआ प्रह्लाद। कश्यप की दूसरी पत्नी थी **अदिति** – जिसके पुत्र हुए १२ **आदित्य।** उन **आदित्यो** में सब से छोटा पुत्र था **विष्णु।** इस प्रकार विष्णु और प्रह्लाद **चाचाभतीजे** थे।

हिरण्यकश्यप ही पाश्चात्य इतिहास् का **Zeus** नामक देव है।

हिरण्यकश्यप प्रजापति कश्यप का **ज्येष्ठपुत्र** था। इस लिए समग्र पृथ्वी का अधिपति बना। हिरण्यकश्यप और उसके भाईओने पृथ्वी बाँट ली। ज्येष्ठ होने के कारण वही साम्राज्य के अधिकारी थे। अदिति के पुत्रोने सोचा की अगर हिरण्यकश्यप और उसके भाई सारी पृथ्वी बाँट लेगे तो उनका महत्व नहीं रहेगा। (सन्दर्भ – शतपथ ब्राह्मण 1.2.5)

अदिति के बेटो का नेतृत्व **विष्णु** ने किया। विष्णु सब से छोटा भाई था, इस लिए **वामन** नाम से प्रसिद्ध था।लेकिन गुण में आदित्यो में सर्वोत्तम थ
महाभारत के आदिपर्व में लिखा है की,

Edit with WPS Office

महाभारत के आदिपर्व में लिखा है की,

> **एकादशस्तया त्वष्टा द्वादशो विष्णुरुच्यते**
> **जघन्यस्तु सर्वेषाम् आदित्यनां गुणाधिकः।**

यह विष्णु देवताओ का नेता बना, इस लिए इसे **सुरकुलेश** कहा गया। यही सुरकुलेश, ग्रीक और मिस्र का **हरक्युलिस** बना। इसने क्षीरसागर अर्थात् आजके कास्पीयन समुद्र के आसपास अपना राज्य स्थापित किया।

कूर्मपुराण अनुसार यह विष्णुने हिरण्यकश्यप के राज्य पर आक्रमण कर दिया। यह विष्णु महान् योद्धा था, इस लिए **नरशार्दूल** या **नरसिंह** नाम से प्रख्यात था। प्रह्लाद और उसके भाई **ह्लाद**, **अनुह्लाद**, **संह्लाद**ने विष्णु से युद्ध किया। लेकिन विष्णुने प्रह्लाद और उसके भाई की टांग पकडकर फेंक दिया। वह हार गये।

Edit with WPS Office

हार गया।

उनकी हार के बाद **हिरण्यकश्यप** स्वयं युद्ध करने आया। विष्णु और खूंखार युद्ध करने लगा। हिरण्यकश्यप ने प्रह्लाद को आज्ञा दी की वह अपने **चाचा विष्णु** को मार दे। प्रह्लादने प्रयत्न किया, लेकिन हार गया। उसने अपने चाचा विष्णु की शरणागति स्वीकार कर ली और चाचाने भतीजे को छोड दिया। विष्णुने अपने भाई हिरण्यकश्यप और उसके बाकी के तीन बेटे को मार दिया। उसके बाद हिरण्याक्ष राजा बना, विष्णुने उसे भि मार दिया। अन्त में विष्णुचाचाने अपने भतीजे प्रह्लाद को राजा बनाया।

प्रह्लादने थोडे समय तक विष्णु के अधीन रहकर शासन किया। लेकिन उसको भी अपने पिता के हत्यारे से बदला लेना ही था। उसने फिर से विष्णु से युद्ध किआ और फिर से हार गया। फिर से उसने शरणागति स्वीकार कर ली और फिर से चाचा विष्णुने अपने यह भतीजे को जीवीत छोड दिया। प्रह्लाद के बाद उसके वंशज **विरोचन**, **बलि** आदि विष्णु के अधीन रहकर राज्य करने लगे।

यह इनका इतिहास था। यह सब **आदि त्रेतायुग** की घटना है, लगभग आज से १७,००० वर्ष पहले की।

इस में ना प्रह्लाद को लेकर होलिका जली थी, ना खम्भे से नारायण नीकले थे। कलियुग आया और भक्तिमार्ग चला। अदिति और कश्यप का सब से छोटा बेटा वैष्णवो के लिए साक्षात् परमात्मा हो गया। अपने पिता के लिए युद्ध करनेवाला प्रह्लाद परम वैष्णव हो गया और होलीका एक राक्षसी।

सनातनधर्म का सही इतिहास विकृत करने में पौराणिक और वामपन्थी दोनो दोषी है।

Edit with WPS Office

वेदों में ब्रह्मा विष्णु महेश ऐतिहासिक पुरुष भी थे । और वेदों में रचना करने से ब्रह्मा नाम है । पालन करने से विष्णु नाम है । कल्याण करने से शिव नाम है । जो परमपिता परमात्मा के गौण नाम है । परमात्मा का असली निज नाम ओउम् है । हमारे प्राचीन इतिहास में वेदों में से नाम चुनकर अपनी अपनी योग्यता अनुसार अनेकों हमारे महापुरूषों ने वेद मंत्रों में से नाम रखे थे । किसी ने ब्रह्मा किसी ने विष्णु किसी ने महेश किसी ने इंद्र किसी ने यम रखा था । इन्हीं नाम के हमारे महापुरुष हुए हैं । लेकिन शास्त्रों को ना पढ़ने के कारण और मिथ्या ज्ञान के कारण लोगों ने अपने महापुरुषों को ही ईश्वर परमात्मा मान लिया ? हमारे इन्हीं महापुरुषों का प्राचीन इतिहास महाभारत ब्राह्मण ग्रंथ पुराणों आदि में मिलता है । इतिहास को नकारा नहीं जा सकता ? हमारे शास्त्रों में प्राचीन इतिहास है चाहे वह पुराण हो चाहे महाभारत हो । हमारा इतिहास हमारे पास हमारे शास्त्रों में सुरक्षित है लेकिन समय-समय पर मिलावट होने के कारण लोगों के पास सही जानकारी न होने के कारण आज लोग ज्ञान से वंचित रह गए और सत्य को ना जान सके ना जान पा रहे हैं ? कोई अवतार नहीं होता है ? सभी पुराणों में जो जिस जिस महापुरुष भगवान ईश्वर का भक्त था ? उसने उसको परब्रह्म से भी ऊपर रखा । विष्णु पुराण में विष्णु को सर्वश्रेष्ठ कहा गया परब्रह्म कहा गया । शिव पुराण में शिव जी को सर्वश्रेष्ठ कहा गया । विष्णु और ब्रह्मा को नीचा दिखाया गया । ऐसे ही ब्रह्म पुराण में ब्रह्मा को सर्वश्रेष्ठ दिखाया गया विष्णु और शिव को नीचा दिखाया गया । ऐसे ही देवी भागवत में देवी को सर्वश्रेष्ठ परब्रह्म कहां गया और तीनों देवताओं को ब्रह्मा विष्णु महेश को उनके पुत्र कहा गया , जो देवी के हाथ मसलने से उत्पन्न हुए । आप बताओ अलग-अलग पुराणों में अलग-अलग भगवान है परब्रह्म है ? अब मुझे बताइए इन सभी पुराणों में सर्वश्रेष्ठ और ईश्वर कौन है परमपिता परमात्मा कौन है ? कोई नहीं बता सकता ? क्योंकि यह सत्य नहीं है । ईश्वर एक है अनेक नहीं हो सकते ? सृष्टि को रचने वाला एक है परमपिता परमात्मा जिसका निज नाम ओउम् है । यही परमात्मा रचना करने से ब्रह्मा पालन करने से विष्णु और कल्याण करने से शिव कहलाता है ? जो अज्ञानी लोग विष्णु को अवतार लिया हुआ मानते हैं ? मुझे बताइए महाभारत में

Edit with WPS Office

एक श्लोक आया है । देखिए ____

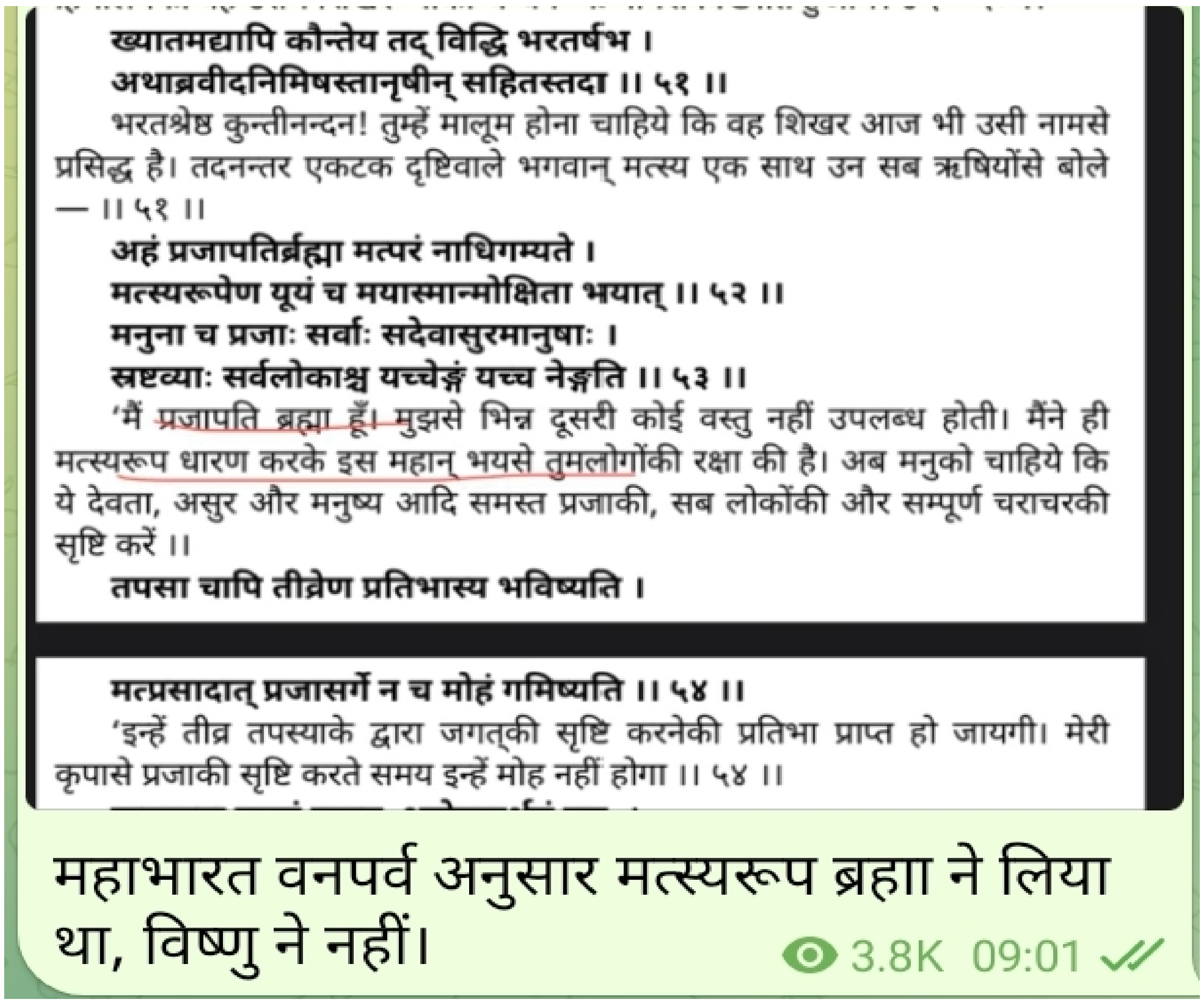

ख्यातमद्यापि कौन्तेय तद् विद्धि भरतर्षभ ।
अथाब्रवीदनिमिषस्तानृषीन् सहितस्तदा ॥ ५१ ॥

भरतश्रेष्ठ कुन्तीनन्दन! तुम्हें मालूम होना चाहिये कि वह शिखर आज भी उसी नामसे प्रसिद्ध है। तदनन्तर एकटक दृष्टिवाले भगवान् मत्स्य एक साथ उन सब ऋषियोंसे बोले — ॥ ५१ ॥

अहं प्रजापतिर्ब्रह्मा मत्परं नाधिगम्यते ।
मत्स्यरूपेण यूयं च मयास्मान्मोक्षिता भयात् ॥ ५२ ॥
मनुना च प्रजाः सर्वाः सदेवासुरमानुषाः ।
स्रष्टव्याः सर्वलोकाश्च यच्चेङ्गं यच्च नेङ्गति ॥ ५३ ॥

'मैं प्रजापति ब्रह्मा हूँ। मुझसे भिन्न दूसरी कोई वस्तु नहीं उपलब्ध होती। मैंने ही मत्स्यरूप धारण करके इस महान् भयसे तुमलोगोंकी रक्षा की है। अब मनुको चाहिये कि ये देवता, असुर और मनुष्य आदि समस्त प्रजाकी, सब लोकोंकी और सम्पूर्ण चराचरकी सृष्टि करें ॥

तपसा चापि तीव्रेण प्रतिभास्य भविष्यति ।

मत्प्रसादात् प्रजासर्गे न च मोहं गमिष्यति ॥ ५४ ॥

'इन्हें तीव्र तपस्याके द्वारा जगत्की सृष्टि करनेकी प्रतिभा प्राप्त हो जायगी। मेरी कृपासे प्रजाकी सृष्टि करते समय इन्हें मोह नहीं होगा ॥ ५४ ॥

महाभारत वनपर्व अनुसार मत्स्यरूप ब्रहाा ने लिया था, विष्णु ने नहीं।

- **अवतारवाद पर प्रोपेगेंडा फैलाने वाले इस श्लोक पर क्या कहोगे..? यहां तो ब्रह्मा जी मत्स्य अवतार अपना बता रहे हैं ? ना की विष्णु का ?**

इसलिए हमारा प्राचीन इतिहास यही कहता है चाहे हम कुछ भी कहे ? इतिहास में अगर कोई बात वेद के विरुद्ध है यह माननीय नहीं ? । वेदों में कोई अवतारवाद मूर्ति पूजा का समर्थन नहीं है ? राम लक्ष्मण हनुमान कृष्ण आदि परमपिता परमात्मा के पुत्र हैं , ऋषि हैं , महापुरुष है , भगवान है , । ईश्वर नहीं ? ऐश्वर्यावान होने से परमपिता परमात्मा का नाम इंद्र भी है । और इंद्र नाम के एक महापुरुष प्राचीन समय में हुए थे । देखिए ___

Edit with WPS Office

देवराज इंद्र कौन है ?

देवराज इंद्र एक ऐतिहासिक पुरुष थे ।
ऋषि कश्यप और अदिति के 12 पुत्र थे । धाता , अर्यमा , मित्र , वरुण , अंश , भाग , विवस्थान , पूषा , पर्जन्य , त्वष्टा , विष्णु , इंद्र ।
यही 12 आदित्य देंव कहलाएं । इनके नाम वेद मंत्रों से लेकर रखे गए हैं ।
देव और असुर दोनों ही प्रजापति कश्यप के पुत्र थे । देवों की उत्पत्ति अदिति से और असुरों की उत्पत्ति दिति से हुआ था । असुर ज्येष्ठ , और देव कनिष्ठ थे । -- **(ताण्डय ब्राह्मण . 18/1/2) और शतपथ ब्राह्मण.**

14/4/1/1
जब देव बड़े हुए तो उन्होंने असुरों और दानवों से कुछ भूमि मांगा परंतु दैत्यों और असुरों ने वह बात स्वीकार नहीं की , दोनों में घोर युद्ध प्रारंभ हुआ यही ऐतिहासिक देवासुरसंग्राम नाम से प्रसिद्ध हुआ । **(काठक संहिता. 31/8)**
इन पर इन्ही दिनों ग्रंथ रचे गए उन्हीं ग्रंथो के आधार पर रामायण और महाभारत में राम रावण युद्ध और महाभारत के युद्ध के वर्णनों में देव असुर संग्राम की उपमाएं पदे पदे दी जाने लगी ।
अमृत मंथन __ अमृत मंथन का कोई भी ऐतिहासिक उल्लेख किसी भी वैदिक साहित्य ग्रंथो में नहीं मिलता । लेकिन सृष्टि के आरंभ में अमृत मंथन अंतरिक्ष में ईश्वर द्वारा किया गया सत् रज तम प्रकृति के तीन गुणों से अंतरिक्ष में मंथन हुआ । तब यह सृष्टि बनी ।
इसका उल्लेख हमें कुछ पुराणों में ही प्राप्त होता है । उसमें भी किसी अमृत नाम के स्थान पर अमृत मंथन का वर्णन है । **(हरिवंश पुराण. 67/6)**
समुद्र मंथन में निकले कुछ रत्नों के नाम जैसे -- कामधेनु गाय , कौस्तुभ , मणि , लक्ष्मी , रंभा , पांचजन्य , शंख , पारिजात , पुष्प , धनवंतरी , हलाहल विष , अमृत ।
समुद्र मंथन की बात भी बाद में जोड़ी गई है , यह कहानी सच्ची नहीं है । किसी भी वैदिक शास्त्र में इस मंथन का कोई उल्लेख नहीं ? ना ही वेदों में , ना ही ब्राह्मण ग्रन्थों में , ना रामायण महाभारत में , पुराणों में इसका उल्लेख आता है । वह भी किसी स्थान का नाम आता है हरिवंश पुराण में । अगर इस कहानी को सच्ची मान भी लें तो इसे मानने से बहुत ज्यादा विरोधाभास है व दोष आएगा क्योंकि अवतारवाद मानना पड़ेगा , जैसे कि समुद्र मंथन के समय कछुआ का अवतार विष्णु जी ने लिया ऐसी ऐसी जो कहानी है इस कहानी को मानने से , वेद गलत साबित होंगे , अगर पुराणों में यह बात गलत है , तो वेद का सिद्धांत सही है । क्योंकि वेदों में कहीं भी अवतारवाद नहीं ? कहीं भी नरक लोक स्वर्ग लोक के स्थान की बात नहीं , वेदों में नरक लोक स्वर्ग लोक व्यक्ति के जीवन में है यह वेद का कहना है , जबकि पुराण स्वर्ग लोक नरक लोक का स्थान मानता है अंतरिक्ष में । दोनों में विरोधाभास हो जाएगा । इसलिए वेद ही परम प्रमाण है क्योंकि वेद अपौरुषेय हैं , वेद

ईश्वर द्वारा इस सृष्टि का सिद्धांत संविधान है , वेदों में जो कहा गया है , वही सत्य है ।

अयि! मेरे कथित सनातनी परन्तु वास्तव में पौराणिक मतावलम्बियो! आप मानव शरीरधारी न मानकर ब्रह्मा, विष्णु व महादेव जैसे पूज्य पुरुषों को परमात्मा मानकर उनके चित्रों को पूजने में व्यस्त रहे। साथ ही उन्हें दुराचारी, छली, कपटी व क्रूर भी बताते रहे। परन्तु आपने भली प्रकार ये कथित पुराण भी नहीं पढ़े, जिनमें अनेक बातें वेदों के अनुकूल भी हैं। देखिये! वहाँ इन देवों को मानव शरीरधारी व कर्म फल भोक्ता कहा है-

किं विष्णुः किं शिवो ब्रह्मा मघवा किं बृहस्पतिः।
देहवान् प्रभवत्येव विकारैः संयुतस्तदा।
(देवीभागवत स्कं. ४ अ. १३ श्लोक १५)

अर्थात् विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इन्द्र वा बृहस्पति, जो भी देहधारी होते हैं, वे विकारग्रस्त होते ही हैं।

देवैर्मनुष्यैरसुरैर्यक्षगन्धर्वकिन्नरैः।
कर्मैव हि महाराज देहारम्भस्य कारणम्।।
(देवीभागवत स्कं.६ अ. १० श्लोक १६)

अर्थात् देवता हो या मनुष्य, असुर हो या यक्ष, गन्धर्व हो या किन्नर पूर्व में किये धर्माधर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

आप महर्षि पतंजलि प्रोक्त अष्टांग योग को त्याग कर मूर्तिपूजा जैसी सबसे बड़ी आध्यात्मिक बुराई को ही ईश्वर उपासना कह कर सम्पूर्ण आर्य (हिन्दू) जाति को बंधक बनाये बैठे हैं, उधर आपका जैसा वैसा श्रीमद् भागवत पुराण भी वेदोक्त सत्य बात को भी कह ही बैठा है, परन्तु उसे आप नहीं मानते। वह सत्य बात है-

Edit with WPS Office

आप महर्षि पतंजलि प्रोक्त अष्टांग योग को त्याग कर मूर्तिपूजा जैसी सबसे बड़ी आध्यात्मिक बुराई को ही ईश्वर उपासना कह कर सम्पूर्ण आर्य (हिन्दू) जाति को बंधक बनाये बैठे हैं, उधर आपका जैसा वैसा श्रीमद् भागवत पुराण भी वेदोक्त सत्य बात को भी कह ही बैठा है, परन्तु उसे आप नहीं मानते। वह सत्य बात है-

यस्यात्मबुद्धिः कुणपे त्रिधातुके
स्वधीः कलत्रादिषु भौम इज्यधीः।
यत्तीर्थबुद्धिः सलिले न कर्हिचि
ज्जनेष्वभिज्ञेषु स एव गोखरः।।

(श्रीमद्भागवत पुराण स्कंध १० अ. ८४ श्लोक १३)

अर्थात् जो मनुष्य वात-पित्त-कफ इन तीन धातुओं से बने हुये शवतुल्य शरीरादि को ही आत्मा-अपना 'मैं', स्त्री-पुत्रादि को ही अपना और मिट्टी, पत्थर, काष्ठ आदि पार्थिव विकारों को ही इष्टदेव मानता है। और जो केवल जल को ही तीर्थ समझता है, ज्ञानी महापुरुषों को नहीं, वह मनुष्य होने पर भी पशुओं में भी नीच गधा है।

क्या अपने इन पुराणों की ये बातें आपको नहीं रुचतीं। आप विशेषकर कर्मकाण्डोपजीवी महानुभाव विचारते होंगे कि मूर्तिपूजा व अवतारवाद से ही तो आपकी दुकानें चल रही हैं। हिन्दुओं में जिसकी इच्छा हो, वह स्वयं को अवतार घोषित करके अपनी पूजा करवा सकता है, जिससे मान प्रतिष्ठा, धन सब मिल सकता है। इसी के आधार पर ही तो आज अनेक मूर्ख गुरु व जातीय भगवान् बन रहे हैं, जिससे आर्य हिन्दू जाति खण्ड-२ हो रही है और आपको इस जाति को नष्ट करके भी धन व यश कमाना है, तब आप इन स्वार्थविरोधी वेदानुकूल बातों को क्यों मानेंगे?

अन्त में, मैं समस्त आर्य (हिन्दू) जाति, जो स्वयं को सनातन धर्मी मानती है, का ध्यान उन सम्प्रदायों जैसे ब्रह्माकुमारी मत आदि व कुछ कथित विद्वानों, धर्माचार्यों की ओर आकृष्ट करना चाहूँगा, जो भारतीय ऐतिहासिक घटनाओं एवं महापुरुषों को काल्पनिक बताकर इन प्रसंगों की मनोहारी आध्यात्मिक व वैज्ञानिक मिथ्या व्याख्या करते हैं।

Edit with WPS Office

ऐसे लोग, जैसे ब्रह्माकुमारी मत वाले शिव, ब्रह्मा, कृष्ण जैसे महापुरुषों का नाम लेकर भी इनके इतिहास को नहीं मानते। रामायण वा महाभारत को ऐतिहासिक नहीं मानते। शोक है कि जो आर्य जाति इन ऐतिहासिक महाकाव्यों से सदैव प्रेरणा लेकर जीवित रही, जो हमारी सबसे बड़ी ऐतिहासिक धरोहर है, उस धरोहर को नष्ट करने का प्रबल पुरुषार्थ जहाँ पाश्चात्य कथित विद्वान् करते रहे हैं और ऐसा करने के पीछे भारत को मिटाना ही लक्ष्य है। वे जानते व मानते हैं कि यदि किसी देश को नष्ट करना है, तो उसके इतिहास व संस्कृति को नष्ट करना चाहिए। जरा विचारें कि वे तो भारत के खुले शत्रु हैं परन्तु इन मत-पन्थों, जो भारतीय इतिहास को मिटाकर धर्म की आड़ में घर-२ में घुसपैठ कर रहे हैं, को भारत का शत्रु कैसे नहीं माना जाय? यह दुःखद आश्चर्य है कि स्वयं को भारतीयता का प्रबल पोषक मानने वाले अनेक सुपठित नादान महानुभाव पाश्चात्य इतिहासकारों को तो शत्रु मानते हैं परन्तु भारतीय इतिहास व धर्म के इन गुप्त शत्रुओं के प्रति नत मस्तक होते हैं। पता नहीं मेरी यह अभागी मातृभूमि और यह प्यारी आर्य (हिन्दू) जाति कब तक ऐसे षड्यन्त्रों का शिकार होती रहेगी? कब इस मूर्खा जाति को सद्बुद्धि आयेगी?

अवतारवाद पर मेरे विचार : वेद शास्त्रों में अवतारवाद का निषेध तो है ही लेकिन तर्क बुद्धि शास्त्र प्रमाण विज्ञान के आधार पर भी अवतारवाद सिद्ध नहीं होता । विचार करो तर्क बुद्धि शास्त्र प्रमाण के आधार पर ऐसा कहते हैं कि सतयुग में चारों स्तंभ सत्य के थे लोग धर्म का पालन करते थे अधर्म नहीं था लेकिन यह बात सच नहीं उतरती क्योंकि जब चारों तरफ धर्म ही था लोग सत्य का पालन करते थे , कोई पाप नहीं था । तो फिर अवतार किसका और क्यों ? और पुराणों में सबसे ज्यादा अवतार सतयुग में हुआ ? और **दूसरी बात __** जब कोई पाप नहीं था , अधर्म नहीं था ? तो फिर पशु पक्षी भोग योनि कैसे ? भोग योनि तो तभी मिलती है जब पाप होगा ? इसलिए अवतारवाद को मानने वाले से मेरा प्रश्न है ; क्या उस समय दूध की नदियां थी ? या पशु पक्षी नहीं थे । अतः क्योंकि ऐसा कुछ भी नहीं है कि सतयुग में पशु-पक्षी नहीं थे , क्योंकि सृष्टि के आरंभ में वनस्पतियों के बाद पशु पक्षियों की उत्पत्ति हुई फिर उसके बाद मनुष्य उत्पत्ति हुई। इसलिए उस समय कोई दूध की नदियां नहीं थी ऐसे ही सब था जैसे वर्तमान में । उस समय आज जैसे वर्तमान कलयुग की तरह जैसे हम स्थिति देख रहे हैं , ऐसे ही चारों युगों में धर्म का पालन भी होता है अधर्म भी होता

Edit with WPS Office

है पाप और पुण्य भी होते हैं । **और तीसरी बात __** जितना धर्म घटता गया आतें आतें कलयुग तक उतने ही अवतार कम होते चले गये ? क्योंकि जब सतयुग में धर्म के चारों स्तंभ है तब अधिक अवतार हैं और जब आतें आतें त्रेतायुग में धर्म के तीन स्तंभ , द्वापर में धर्म के दो स्तंभ और कलयुग में एक स्तंभ धर्म का , जबकि इन युगों में अवतार सबसे अधिक होने चाहिए थे? जो सबसे कम है ? । इसलिए ऐसी कपोल-कल्पित मिथ्या अवतारवाद की धारणा ही गलत और मिथ्या है ।

पतन का कारण ______ जगन्नाथ पुरी मंदिर में 7000 श्रद्धालुओं के लिए₹300000 की लागत से भोजन बनाया गया । फिर उसे फेंक दिया गया क्योंकि वहां के पंडितों ने 18 घंटे की बहस के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि ' भोग ' एक अमेरिका वासी के , जो कि हिंदू नहीं था , किसी पंडित की कृपा से अंदर आने के कारण भ्रष्ट हो गया ।

थाईलैंड की राजकुमारी सिरींधोरन को इसलिए मंदिर के अंदर नहीं आने दिया गया था क्योंकि वह बौद्ध तो थी , पर भारत में जन्मी बौद्ध न थी । 1972 में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को इसलिए मंदिर में नहीं जाने दिया गया था क्योंकि वह बेशक हिंदू थी पर उसके पति पारसी थे ।

और इतना भेद कौन से अवतारवाद बताकर गयें ? जरा यह तो बताओ पौराणिक पंडितों इतना छुआछूत अछूत कैसे ? इसलिए , प्रिय बंधुओं ! ऐसे मिथ्याप्रोपेगेंडा से बचें । कोई अवतारवाद नहीं होता है । अवतार सभी वैदिक शास्त्रों के विरुद्ध हैं । इसलिए सत्य हो जाने और तर्क बुद्धि विज्ञान के आधार पर सत्य का निर्णय ले और कर्तव्य पालन के साथ जीवन को सफल बनाएं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 146. मोक्ष

मोक्ष प्राप्ति के मार्ग में चलने वाले मनुष्य को दो बातों की आवश्यकता होती है पहला तो सृष्टि उत्पत्ति के कारणों का जानना और कारणों के कारण जो ईश्वर है उनको प्राप्त करना , दूसरा सृष्टि के उपभोग करने की विधि को समझना । सृष्टि के कारणों और ईश्वर प्राप्ति के उपायों के ज्ञान से सृष्टि , प्रलय , ईश्वर , जीव , कर्म , कर्मफल और ईश्वर - जीवों के संयोग तथा उनकी प्राप्ति आदि का रहस्य खुल जाता है और सृष्टि के उपयोग करने की विधि के ज्ञान से अर्थ और काम के उपयोग का तात्पर्य समझ में आ जाता है , तथा दोनों के मौलिक ज्ञान और उचित उपयोग से मोक्ष हो जाता है ।

अर्थ और काम के चक्र से मुक्त होना ही मोक्ष है , लेकिन इनसे पूरी तरह बचाना संभव भी नहीं है । इसी कारण धर्म का सहारा लेना आवश्यक है ताकि अर्थ और काम के बीच संतुलन बनाए रखा जा सके । मनुष्य के जीवन निर्वाह के लिए भोजन , वस्त्र , गृहस्थ जीवन की आवश्यकता होती है , जो संसार से ही प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार , मनुष्य की इच्छाओं और कामनाओं की भी पूर्ति आवश्यक होती है , जैसे परिवार , समाज में प्रतिष्ठा , और भोग - विलास । ये सभी तत्व संसार से ही प्राप्त होते हैं , और जब तक संसार के मूल कारणों का ज्ञान ना हो , तब तक इनका उचित उपयोग समझ में नहीं आता । इसलिए , प्राचीन ऋषि मुनियों ने सबसे पहले संसार के कारणों को जाना और उसी के अनुसार जीवन का संचालन करते हुए मोक्ष

Edit with WPS Office

की प्राप्ति की संभावना समझी ।

मोक्ष का वास्तविक स्वरूप दुखों से मुक्ति और शाश्वत आनंद की प्राप्ति है । दुखों से मुक्ति का अर्थ है प्राकृतिक बंधनों , मोह , माया , भोग - विलास और प्रमाद से मुक्त होना । न्याय दर्शन में कहा गया है कि सभी प्रकार के दुखों का कारण शरीर ही है । चाहे वह आध्यात्मिक दुख हो , दैविक दुख या भौतिक दुख ___ ये सभी शरीर से उत्पन्न होते हैं । परंतु केवल दुखों के अंत से आनंद की प्राप्ति नहीं होती ।

आनंद क्या है ..?

आनंद दो प्रकार का होता है :

1. **सांसारिक आनंद :** जिसमें व्यक्ति यह चाहता है कि उसे किसी प्रकार का दुख न हो और वह अपने जीवन , परिवार और समाज का भला करते हुए सुखी रहे ।
2. **आध्यात्मिक आनंद :** जिसमें व्यक्ति यह चाहता है कि उसे किसी प्रकार का दुख न हो और वह परमात्मा की प्राप्ति करके उस दिव्य ज्ञान का अनुभव करता रहे ।

सांसारिक सुख शरीर के बिना संभव नहीं है , और शरीर ही दुख का मुख्य कारण है । इस प्रकार , शरीर के साथ जो भी थोड़े बहुत सुख मिलते हैं , वे दुख के साथ मिश्रित होने के कारण वास्तविक आनंद नहीं होते । अपने आप से तृप्ति प्राप्त करने की इच्छा भी सीमित होती है क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने ही अस्तित्व से लंबे समय तक संतुष्ट नहीं रह सकता ।
दूसरी और , आध्यात्मिक आनंद परमात्मा के सानिध्य और उसकी अनुभूति में निहित होता है । स्थायी और शुद्ध आनंद की प्राप्ति के लिए हमें शाश्वत और शुद्ध वस्तु की आवश्यकता होती है , जो केवल परमात्मा ही हो सकता है । उपनिषदों में कहा गया है : " **तद्विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीरा आनंदरुपमृत यद्विभाति** " **(मुण्डकोपनिषद. 2.2.8)** (केवल विद्वान लोग ही उस अमृत समान आनंद की अनुभूति करते हैं जो पूर्ण ज्ञान से प्राप्त

Edit with WPS Office

होता है) यह आनंद शुद्ध , स्थायी , और दुखों से रहित होता है । जब अविधा (अज्ञान) का नाश हो जाता है , तो जीव के सभी दोष नष्ट हो जाते हैं ___ अधर्म , अन्याय , और विषयासक्ति जैसी वासनाएं समाप्त हो जाती है । तब जीव को फिर से जन्म लेने की आवश्यकता नहीं रहती और वह शाश्वत आनंद का अनुभव करता है । यही मोक्ष की स्थिति है ।

मोक्ष की अवस्था में व्यक्ति किसी अन्य वस्तु की प्राप्ति या ज्ञान की लालसा नहीं रखता , क्योंकि उसने सब कुछ जान लिया होता है । यह ज्ञान उसे संसार के बंधनों से मुक्त कर देता है और आत्मा को परमात्मा के साथ एकाकार कर देता है । इस प्रकार , मोक्ष वह अवस्था है जब आत्मा और परमात्मा के बीच का भेद समाप्त हो जाता है और आत्मा परान्तकाल तक परमात्मा के साथ लीन हो जाती है । यही मोक्ष का वैदिक और शुद्ध स्वरूप है ।

अष्टांग योग और अन्य तप , ध्यान , और उपासना की प्रक्रियाएं शरीर में रहते हुए मोक्ष प्राप्ति के साधन है । अतः प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन में शरीर रहते अष्टांग योग के अभ्यास द्वारा मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयास करना चाहिए , क्योंकि बिना शरीर के मोक्ष सिद्धि असंभव है ।

•ब्रह्मज्ञान से मुक्ति :

अथर्ववेद. 4/35/1 ______ सत्य के प्रथम प्रवर्तक प्रजापति ने अपने तेज से जिस ज्ञान रूपी ओदन को जीव के लिये , मुक्ति के लिये पकाया । और जो लोकों का विशेष धारण कर्ता और जो सबका मध्य है । उसके पकायें हुए ज्ञान रूपी चावलों से मृत्यु के पार होता हूं ।
ब्रह्म=मुक्ति (न्यायभाष्य. 1/1/21)

यजुर्वेद. 31/18 ______ जो अंधकार से परे , सूर्य के समान तेजस्वी और महान पुरुष है , उसको मैं जानता हूं । उसको जानने से ही मृत्यु के पार हो

Edit with WPS Office

सकता है । मृत्यु दूर करने का दूसरा कोई मार्ग नहीं है ।

मुक्ति से पुनरावृत्ति

ऋग्वेद. 10/59/6 ______ हे प्राण संचालक प्रभु हममें दर्शन शक्ति फिर से धारण कीजिये , हमें इस संसार में फिर से जीवन शक्ति तथा अभ्युदय साधन भोग दीजिए । सूर्य ज्योति उदय होते सूर्य को चिरकाल तक देखें ।

- मुक्ति जीव परमात्मा से प्रार्थना कर रहा है , कि प्रभु मुझे फिर से शरीर आदि प्रदान कर । ताकि मैं फिर पुरुषार्थ करके पुनः इस अवस्था को प्राप्त करुं ।

ऋग्वेद. 1/24/1 ______

पदार्थ :
हम लोग **(कस्य)** कैसे गुण कर्म स्वभाव युक्त **(कतमस्य)** किस बहुतों **(अमृतानाम्)** उत्पत्ति विनाशरहित अनादि मोक्ष प्राप्त जीवों और जो जगत के कारण नित्य के मध्य में व्यापक अमृत स्वरूप अनादि तथा एक पदार्थ **(देवस्य)** प्रकाशमान सर्वोत्तम सुखों को देने वाले देव का निश्चय के साथ **(चारु)** सुंदर **(नाम्)** प्रसिद्ध नाम को **(मनामहे)** जानें कि जो **(नूनम्)** निश्चय करके **(क:)** कौन सुख स्वरूप देव **(न:)** मोक्ष को प्राप्त हुए भी हम लोगों को **(महौ)** बड़ी कारणरुप नाश रहित **(अदितये)** पृथ्वी के बीच में **(पुन:)** पुनर्जन्म **(दात)** देता है । जिससे कि हम लोग **(पितरम्)** पिता **(च)** और **(मातरम्)** माता **(च)** और स्त्री पुत्र बन्धु आदि को **(दृशेयम्)** देखने की इच्छा करें ।

भावार्थ :
इस मंत्र में प्रश्न का विषय है कौन ऐसा पदार्थ है जो सनातन अर्थात अविनाशी पदार्थों में भी सनातन अविनाशी है कि जिसका अत्यंत उत्कृष्टयुक्त नाम का स्मरण करें वा जाने ? और कौन देव हम लोगों के लिये

Edit with WPS Office

किस - किस हेतु से एक जन्म से दूसरे जन्म का संपादन करता ? और अमृत वा आनंद के कराने वाली मुक्ति को प्राप्त होकर भी फिर हम लोगों को माता-पिता से दूसरे जन्म में शरीर को धारण कराता है ।

ऋग्वेद. 1/24/2 ______

विषय :

इन प्रश्नों के उत्तर अगले मंत्र में प्रकाशित किए हैं ।

पदार्थ :

हम लोग जिस **(अग्ने)** ज्ञान स्वरूप **(अमृतानानाम्)** विनाश धर्म रहित पदार्थ वा मोक्ष । प्राप्त जीवों में **(प्रथमस्य)** अनादि विस्तृत अद्वितीय स्वरूप **(देवस्य)** सब जगत के प्रकाश करने वा संसार में सब पदार्थों को देने वाले परमेश्वर का **(चारु)** पवित्र **(नाम्)** गुणों का गान करना **(मनामहे)** जानते हैं , **(स:)** वही **(न:)** हमको **(महौ)** बड़े-बड़े गुण वाली **(अदितये)** पृथ्वी के बीच में **(पुनः)** फिर जन्म **(दात्)** देता है , जिससे हम लोग **(पुनः)** फिर **(पितरम्)** पिता **(च)** और **(मातरम्)** माता **(च)** और स्त्री - पुत्र - बन्धु आदि को **(दृशेयम्)** देखते हैं ।

भावार्थ :

हे मनुष्यों ! हम लोग जिस अनादिस्वरुप सदा अमर रहने वा जो हम सब लोगों के किये हुए पाप और पुण्यों के अनुसार यथायोग्य सुख - दुख फल देने वाले जगदीश्वर देव को निश्चय करते और जिसकी न्याय युक्त व्यवस्था से पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं , तुम लोग भी उसी देव को जानों , किंतु इससे और कोई उक्त कर्म करने वाला नहीं है , ऐसा निश्चय हम लोगों को है कि वही मोक्षपदवी को पहुंचे हुए जीवों का भी महाकल्प के अन्त में फिर पाप - पुण्य की तुल्यता से माता-पिता और स्त्री आदि के बीच में मनुष्य जन्म धारण कराता है ।

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 147. मोक्ष प्राप्ति के साधन : अष्टांग योग

योग शास्त्र के अनुसार , महर्षि पतंजलि योग की परिभाषा में कहते हैं , " योगश्चितवृत्तिनिरोध : " जिसका अर्थ है कि योग चित्त की वृत्तियों का निरोध है । इसका तात्पर्य है कि योग का उद्देश्य मन को बुराइयों से दूर कर , शुभ गुणों को स्थिर करना और परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग पर अग्रसर होना है । इसके विपरीत , बुराइयों में फंसकर ईश्वर से दूर हो जाना वियोग कहलाता है ।

योग का वास्तविक उद्देश्य मन को स्थिर करना और आत्मा को परमात्मा के निकट लाना है । योग साधक को निर्देश देता है कि वह अपने जीवन में सत्य , धर्म और शांति को अपनाकर मोक्ष प्राप्ति की दिशा में बढ़े । ऋषि पतंजलि ने अष्टांग योग के आठ अंगों के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति के लिए एक स्पष्ट मार्ग बताया है ।

इस संसार में जितने भी मनुष्य आदि प्राणी सुखी है , उन सभी के साथ मित्रता करना । दुखियों पर कृपा दृष्टि रखना । पुण्य आत्माओं के साथ प्रसन्नता , तथा पापियों के साथ उपेक्षा अर्थात न प्रेम रखना न वैर करना ,

Edit with WPS Office

इस प्रकार के व्यवहार एवं कर्म से उपासक की आत्मा में सत्य धर्म का प्रकाश और मन स्थिरता को प्राप्त होता है । मन कि स्थिरता के साथ ही आत्मा के द्वारा मनुष्य उस परमात्मा को जान लेता है , **केवल उस परमात्मा को जान लेने पर किसी और वस्तु को पाने और जानने की इच्छा नहीं होती , सब कुछ जान लेना होता है इसी को ही** समाधि एवं मोक्ष की स्थिति **कहते हैं । "**

उपासना योग के आठ अंग होते हैं , जिनके अनुष्ठान से अविधा आदि दोषों का क्षय और ज्ञान के प्रकाश की वृद्धि होने से जीव मोक्ष को प्राप्त हो जाता है । आइए जानने का प्रयास करते हैं ऋषि पतंजलि के द्वारा बताए गए अष्टांग योग का अनुसरण कर किस प्रकार हम ईश्वर प्राप्ति के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं ।

योग के आठ अंग :

1. **यम ___** यह बहुत ही महत्वपूर्ण अंग है । यम पांच प्रकार के होते हैं जो अष्टांग योग के बीज स्वरूप है ।

पहला (अहिंसा) , सब प्रकार से सब काल में सब प्राणियों के साथ प्रेम पूर्वक रहना किसी के साथ द्वेष एवं हिंसा न करना ।

दूसरा (सत्य) , जो वस्तु जैसी है उसे वैसी ही लिखना , कहना और जानना सत्य है , अर्थात जैसा अपने ज्ञान में हो वैसा ही सत्य बोले , करें और माने ।

तीसरा (अस्तेय) , चोरी तथा अधर्म के कृत्यों से दूर रहना ।

चौथा (ब्रह्मचर्य) , बाल्यावस्था से लेकर 25 वर्ष पर्यंत वेदों का पठन - पाठन करना , 25 वर्ष से लेकर 48 वर्ष पर्यंत विवाह करना , परस्त्री गमन से दूर रहना , विद्या को ठीक - ठीक पढ़कर सदा बढ़ाते रहना और जितेंद्रिय होना ।

पांचवा (अपरिग्रह) , विषयों और अभिमान आदि दोषों से रहित होना । अर्थात आवश्यकता से अधिक संचय नहीं करना और दूसरों की वस्तुओं की इच्छा नहीं करना ।

Edit with WPS Office

इस प्रकार यम के पांचों प्रकारों को अच्छी तरह से व्यवहार और कर्मों में उतार लेने के बाद ही मनुष्य को अगले अंग की सिद्धि के लिए में जाना चाहिए ।

2. नियम ___ जो कि पांच प्रकार के होते हैं , और यह आंतरिक अनुशासन से संबंध रखते हैं ;

पहला (शौच) , इसका संबंध शरीर और आत्मा की शुद्धि से है एक भीतर की और दूसरी बाहर की शुद्धि , भीतर की शुद्धि धर्माचरण , सत्यभाषण , सत्संग आदि शुभ गुणों के आचरण से होती है और बाहर की पवित्रता जल आदि से ।

दूसरा (संतोष) , सदा धर्म अनुष्ठान एवं परोपकार में लिप्त रहना और दुखों में शोकातुर न होना ।

तीसरा (तप) , जिस प्रकार अग्नि सोने को तपाकर के निर्मल कर देती है वैसे ही आत्मा और मन धर्म आचरण और शुभ कर्मों के तप से निर्मल हो जाता है ।

चौथा (स्वाध्याय) , मोक्ष विद्या रूपी वेद शास्त्रों को पढ़ना - पढ़ाना और सदा ओंकार का जाप करते रहना ।

पांचवा (ईश्वरप्राणिधान) , अपने सभी कर्म , गुण , आयु , आत्मा , मन , वचन सभी द्रव्यों को ईश्वर की आज्ञा पालन के लिए समर्पित करना , उस परमात्मा के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर देना । ईश्वर के प्रति समर्पण भाव रखना ।

पांच यम और पांच नियमों को यथावत अनुष्ठान कर ग्रहण करने से उस पुरुष के मन से वैर भाव छूट जाता है । जब वह धर्म का वास्तविक स्वरूप जान जाता है तब मनुष्य निश्चय करके केवल सत्य ही मानता है बोलता है और करता है । तथा उसकी संगति से अन्य पुरुष भी सत्याचरण , सत्य भाषण आदि करने लगते हैं ।

3. आसन ___ जिसमें सुख पूर्वक शरीर और आत्मा स्थिर हो अपनी रुचि

Edit with WPS Office

के अनुसार उपासना के लिए ठीक वैसे ही आसन को ग्रहण करना चाहिए । पतंजलि के अनुसार , शरीर को एक स्थिति में स्थिर और सहज बनाएं रखना ही आसन है । पतंजलि योग शास्त्र में आसन से संबंधित अधिक वर्णन हमें प्राप्त नहीं होते कोई भी सुख पूर्वक स्थिति जो योग के लिए उचित हो उसे ही महर्षि पतंजलि ने आसन कहां है । जैसे ; सुखासन ।

4. प्राणायाम ___ नासिका को हाथ से पकड़े बिना ज्ञान के द्वारा श्वास को रोकने की विधि का नाम प्राणायाम है , जो वायु बाहर से भीतर की ओर आता है उसको श्वास और जो भीतर से बाहर जाता है उसको प्रश्वास कहते हैं , प्राणायाम चार प्रकार के होते हैं ।

- **पहला ___ रेचक** : श्वास को बाहर निकालना । जब भीतर से बाहर को श्वास निकले तब उसको बाहर ही रोक दें , इसको पहला प्रणाम कहते हैं ।
- **दूसरा ___ पूरक** : श्वास को भीतर लेना । जब बाहर से श्वास भीतर को आए तब उसको जितना रोक सके उतना भीतर ही रोक दे , यह दूसरा प्राणायाम है ।
- **तीसरा ___ कुंभक** : श्वास को रोकना । इसमें न श्वास भीतर लेना है न बाहर छोड़ना है जितनी देर हो सके श्वास को जहां-तहां , ज्यों के त्यों एकदम रोक दे ।
- **चौथा ___ शून्यक** : श्वास के बिना स्थिति । जब श्वास भीतर से बाहर आए तब बाहर ही कुछ रोकते रहे , और जब बाहर से भीतर आवे तब उसको भीतर ही थोड़ा-थोड़ा रोकते रहे , अर्थात रोकते हुए श्वास को बाहर छोड़ें तथा अंदर लेवे ।

प्राणायाम श्वास और प्राण (जीवन शक्ति) को नियंत्रित करने की विधि है । इसके माध्यम से मन को शांत और स्थिर किया जाता है । इन चारों प्राणायाम का अनुष्ठान करने पर चित्त निर्मल होकर उपासना में स्थित हो जाता है । इस प्रकार प्राणायाम पूर्वक उपासना करने से आत्मा पर अज्ञान रूपी जो आवरण है वह नित्य प्रतिदिन नष्ट होता जाता है और ज्ञान का

Edit with WPS Office

प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता जाता है ।

5. प्रत्याहार ___ प्रत्याहार का अर्थ है इंद्रियों को बाहरी विषयों से हटकर आंतरिक विषयों की ओर मोड़ना । इससे साधक ध्यान में लीन हो सकता है और बाहरी विकर्षणों से मुक्त हो जाता है । मन पर विजय प्राप्त करना ही प्रत्याहार का मुख्य उद्देश्य है ।

6. धारणा ___ मन की चंचलता को वश में करके अपने ध्यान को नाभि , हृदय ,मस्तक , नासिका के अग्रभाग आदि स्थानों में स्थित करके मन में ही ओंकार का जप और उसका अर्थ , जो परमेश्वर है उस पर विचार करना " धारणा " की स्थिति है ।

7. ध्यान , " **ध्यान निर्विषय** मन : " मन को निर्विषय करना ही ध्यान कहलाता है ध्यान की मुद्रा में बैठकर , उस निराकार परमपिता परमेश्वर को छोड़कर किसी अन्य पदार्थ का स्मरण नहीं करना तथा उसी अंतर्यामी के स्वरूप और ज्ञान में मग्र हो जाना यही ज्ञान की स्थिति है ।

8. समाधि ___ जैसे अग्नि में तपकर लोहा भी अग्नि रूप हो जाता है उसी प्रकार परमेश्वर के ज्ञान रूपी अग्नि में तप कर , अपने स्वरूप को भूलकर , आत्मा को परमेश्वर के प्रकाश स्वरूप आनंद और ज्ञान में परिपूर्ण करने की स्थिति समाधि है , ध्यान और समाधि में इतना ही भेद है की ध्यान में ध्यान करने वाला , जिस मन से , जिस वस्तु का ध्यान करता है वे तीनों विद्यमान रहते हैं , परंतु समाधि में आत्मा सब कुछ भूल कर केवल परमेश्वर ही के आनंद स्वरूप में मग्र हो जाता । इस स्थिति में साधक , साध्य और साधन का भेद समाप्त हो जाता है यही शरीर रहते मोक्ष की अनुभूति है ।

अष्टांग योग का समर्पित और विधिपूर्वक अभ्यास करने पर मनुष्य अपने समस्त दोषों से मुक्त होकर परमानंद और मोक्ष को प्राप्त करता है । हालांकि , दुष्ट प्रवृत्ति वाले व्यक्ति इस सिद्धि को प्राप्त नहीं कर पाते , क्योंकि जब तक मनुष्य दुष्ट कर्मों से दूर होकर अपने मन को शांत नहीं

Edit with WPS Office

करता और आत्मा को पुरुषार्थी नहीं बनाता , तब तक वह कितनी भी शिक्षा ग्रहण कर ले , परमेश्वर की प्राप्ति संभव नहीं है । इसलिए , मोक्ष की प्राप्ति के लिए निरंतर प्रयास करना ही मनुष्य जीवन का सर्वोच्च उद्देश्य है । इस उद्देश्य की प्राप्ति केवल अष्टांग योग के माध्यम से संभव है , और इससे भिन्न कोई अन्य मार्ग नहीं है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

- # 148. ईश्वर कहां रहता है , कैसा दिखता है और क्या करता है ? उसको कैसे जाने ।

राजा और मंत्री का संवाद :

एक बार एक राजा ने अपने मंत्री से कहा , (बुद्धिमान मंत्री) से कि आप ईश्वर को ईश्वर कहते हैं ? वह ईश्वर कहां रहता है ? क्या करता है ? उसको देखा कैसे जायें ? उस परमात्मा के दर्शन कैसे हो ? **मंत्री कहता है** ___ मैं एक सप्ताह , के बाद इस बात का उत्तर दूंगा । कुछ दिनों बाद एक सप्ताह हो गया , मंत्री को भी थोड़ी सी चिंता हुई कि राजा को मैं कैसे समझाऊं ? एक दिन चिंता में उसके छोटे बालक ने पूछा , पिताजी आप चिंतित से दिखाई दे रहे हैं ? क्या बात है , पिताजी कहते हैं बेटा तुमको क्या बताऊं बालक ने कहा और आग्रह किया । पिता ने कहा कि मुझे राजा को जवाब

Edit with WPS Office

देना है , प्रश्न यह है कि परमेश्वर कहां रहता है , क्या करता है , कैसे उसके दर्शन होते हैं । बालक कहता है , पिताजी इस छोटी सी बात से आप जैसे विद्वान बुद्धिमान व्यक्ति चिंतित हो गए ।
यह तो कुछ भी बात नहीं है । मैं इसका उत्तर दे दूंगा । एक सप्ताह के बाद मंत्री जी दरबार में उपस्थित हुए । राजा से कहते हैं कि ये मेरा बेटा है । ये आपके तीनों प्रश्नों का उत्तर देगा । राजा ने बच्चे से पूछा । परमेश्वर कहां रहता है ? बालक कहता है हे राजन् ! आपको इतने शिष्टाचार का भी मालूम नहीं है । आप इतने बड़े राजा हैं , किसी जब आप किसी को बुलाते हैं तो उसे बैठाते हैं , कुछ खिलाते हैं । और आप मुझ से ऐसा कुछ नहीं पूछ रहे हो ? तभी राजा कहता है कि बताओ बेटे ! क्या खाओगे । बालक कहता है कि मैं छोटा बच्चा हूं , दूध पियूंगा , मेरे लिए दूध मंगवा लो । दूध मंगवाया गया , कटोरे में दूध डाला , और बालक कटोरे में उंगली देकर देख रहा है । राजा कहते हैं ___ छोटे बच्चे क्या देख रहे हो ? बालक कहता है मैं देख रहा हूं मैंने सुना है , दूध में मक्खन होता है , और आप कहते हैं कि ये दूध मीठा है । मुझे तो इसमें मक्खन भी नहीं दिख रहा और चीनी भी नहीं दिख रही ? मैं मक्खन को ढूंढ रहा हूं । राजा कहता है , कि भाई मक्खन इस पूरे दूध में समाया हुआ है , पहले इसको जमाना पड़ेगा , रात भर जमेगा , फिर उसके बाद फिर इसको दही में परिवर्तित करके मथना पड़ेगा , तब माखन हमको प्राप्त होगा । तभी बालक कहता है कि हे राजन् ! आपके दो प्रश्नों के उत्तर यही है । जैसे इस पूरे दूध में मक्खन व्यापक है , इसी प्रकार ब्रह्मांड के कण -कण में परमेश्वर प्राप्त है । और जैसे इस दूध को जमाया जाएगा उसके बाद इसको मंथा जाएगा तब हमें मक्खन प्राप्त होगा । ऐसे ही योग की आठ सीढ़ियों पार करके उनका जब मंथन करेंगे , तब सात सीढ़ियां का जब आठवीं सीढ़ी आएंगी उसमें आपको परमात्मा के दर्शन होंगे । मक्खन जैसा छोटा सा पदार्थ मक्खन निकालने के लिए आपको 12 घंटे की मेहनत करनी पड़ी ऐसे ही जो ईश्वर ब्रह्मांड का नायक है , उसको आप देखना चाहते हैं या प्राप्त करना चाहते हैं तो आप 1 मिनट में परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकते 1 मिनट में परमात्मा के दर्शन नहीं हो सकते ? इसके लिए , उसे प्राप्त करने के आठ नियम है ।
यम , नियम , आसन , प्राणायाम , प्रत्याहार , धारणा , ध्यान , इन सात

Edit with WPS Office

सीढियों को प्राप्त करने के बाद अपने मन का मंथन करने के बाद जब जाकर के समाधि तक पहुंचोगें । इन आंखों से परमात्मा के दर्शन नहीं हो सकते ? तभी राजा कहता है कि मैंने मान लिया परमेश्वर है । तब राजा ने पूछा , वह परमेश्वर करता क्या है ? तब बालक ने कहा , आप ये प्रश्न गुरु बनकर पूछ रहे हो या शिष्य बनकर ? राजा कहता है कि गुरु बनकर कोई नहीं पूछता , शिष्य बनकर सब पूछते हैं । बालक कहता है ___ गुरु तो तुम्हारे चरणों में खड़ा है और तुम ऊपर बैठे हुए हो ? राजा सिंहासन से उतरा और बालक को उठा करके सिंहासन पर बैठा दिया । तभी बालक कहता है ईश्वर यही करता है । ऊपर वाले को नीचे , और नीचे वाले को ऊपर कर देता है ।

ईश्वर को प्राप्त करने के रास्ते अनेकों नहीं हैं बल्कि एक है :

वेदाहमेतं पुरुष महान्तमादित्यवर्णं तमस: परस्तात् ।
तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्य: पन्था विधतेऽयनाय ।।

यजुर्वेद. 31.18

भावार्थ : मनुष्य इस लोक - परलोक के सुखों की इच्छा करें तो सबसे अति बड़े स्वयंप्रकाश और आनंद स्वरूप अज्ञान के लेश से पृथक वर्तमान परमात्मा को जान के ही मरणादि अथाह दु:खसागर से पृथक हो सकते हैं , यही सुखदायी मार्ग है , इससे भिन्न कोई भी मनुष्य की मुक्ति का मार्ग नहीं है ।
समाधान : इस मंत्र में परमात्मा ने स्पष्ट कह दिया है कि मुझे जाने बिना इस सृष्टि को जाने बिना मुक्ति नहीं हो सकती अर्थात मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता । ईश्वर को प्राप्त करने का मार्ग एक है अनेक नहीं ?

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 149.इंद्रियां , मन , और अंत:करण

इंद्रियां , मन और अंत: करण मनुष्य के मानसिक और शारीरिक संरचना को समझने के लिए उपयोग किए गए प्रमुख तत्व हैं । ये तत्व एक दूसरे के साथ गहराई से संबंध रखते हैं और मानव के अनुभवों , क्रियाओं और विचारों को संचालित करते हैं । शास्त्रों में इन तीनों का महत्व और कार्य विस्तार से वर्णित है । आइए हम इन्हें शास्त्रीय प्रमाणों के साथ समझते हैं :

1. इंद्रियां (इंद्रिय)

इंद्रियां वे साधन है जिनके माध्यम से मनुष्य बाहरी संसार का अनुभव करता है और विभिन्न विषयों से जुड़ता है । इन्हें दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है ;

- **ज्ञानेंद्रियां (ज्ञान प्राप्त करने वाली इंद्रियां) :** ये पांच इंद्रियों हमें बाहरी संसार से ज्ञान प्राप्त करने में सहायता करती है :
  1. **चक्षु (नेत्र) ___ दृष्टि के लिए**
  2. **श्रोत्र (कान) ___ श्रवण के लिए**
  3. **प्राण (नाक) ___ गंध को ग्रहण करने के लिए**
  4. **रसना (जीभ) ___ स्वाद के लिए**
  5. **त्वचा (स्पर्श) ___ स्पर्श के अनुभव के लिए**

- **कर्मेंद्रियां (कर्म करने वाली इंद्रियां) :** ये पांच इंद्रियां हमें कार्य करने की क्षमता प्रदान करती है :

Edit with WPS Office

1. **पाणि (हाथ) ___ ग्रास करने के लिए**
2. **पाद (पैर) ___ चलने के लिए**
3. **वाक (वाणी) ___ बोलने के लिए**
4. **उपस्थ (जननेंद्रिय) ___ संतति उत्पत्ति के लिए**
5. **पायु (मलेंद्रिय) ___ मल त्याग के लिए**

शास्त्र प्रमाण :

कठोपनिषद. (2.1.15) में इंद्रियों का महत्व इस प्रकार बताया गया है ;
अर्थ ___ परमात्मा ने इंद्रियों को बाहर की ओर उन्मुख किया है , इसलिए जीव बाहरी वस्तुओं को देखता है और अंतर्मुख नहीं हो पाता ।

यह श्लोक दर्शाता है कि इंद्रियां स्वाभाविक रूप से बाहरी विषयों की और केंद्रित रहती है , और जब तक उनका नियंत्रण नहीं किया जाता , आत्मा का सही ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता ।

2. मन

मन वह तत्व है जो इंद्रियों के माध्यम से प्राप्त जानकारी को एकत्रित और विश्लेषित करता है । मन इंद्रियों के द्वारा प्राप्त अनुभवों को क्रमबद्ध करता है और निर्णय लेने में सहायता करता है । मन का कार्य संकल्प - विकल्प होता है । इंद्रियां , शब्द , स्पर्श , रूप , रस , गंध को अनुभव करती है , लेकिन मन उस अनुभव को सही या गलत , अच्छा या बुरा , सुखद या दुखद के रूप में मूल्यांकन करता है ।

शास्त्र प्रमाण :

भगवत गीता. (6.6) में भगवान श्री कृष्ण मन के बारे में कहते हैं ;
अर्थ ___ जिसने मन को जीत लिया , उसका मन उसके लिए मित्र है , लेकिन जिसने मन को वश में नहीं किया , उसके लिए मन शत्रु के समान है

Edit with WPS Office

।

यह श्लोक मन की महत्ता और उसके नियंत्रण की आवश्यकता को बताता है । यदि मन नियंत्रित नहीं है , तो वह इंद्रियों के माध्यम से विषयों की ओर खींचकर व्यक्ति को दुख और भ्रम में डाल देता है । मन 11 वी इंद्री है उसका कार्य विषय चिंतन , विचार , संकल्प - विकल्प आदि करना है वह अपने विशेष गुणों के कारण दोनों प्रकार की इंद्रियों में संबंध स्थापित करता है केवल मन को जीत लेने से ज्ञानेंद्रियां तथा कर्मेंद्रियां आदि दसों इंद्रियां स्वत: ही जीत ली जाती है । इसलिए मन को इंद्रियों का राजा कहा जाता है ।

मन को वश में कैसे करें ?

मन को वश में करने के लिए शास्त्रों में कई विधियों और सिद्धांतों का वर्णन किया गया है । मन अत्यंत चंचल और अस्थिर होता है , लेकिन इसे नियंत्रित और वश में किया जा सकता है । भगवद गीता , योग सूत्र , उपनिषद और अन्य वैदिक ग्रंथों में मन के नियंत्रण के महत्व और उपायों को विस्तार से समझाया गया है । आइए शास्त्र प्रमाणों के साथ इसे विस्तार से समझे :

मन का स्वभाव और चंचलता :

मन का स्वभाव स्वाभाविक रूप से चंचल है । यह इंद्रियों के द्वारा प्राप्त विषयों की और बार-बार आकर्षित होता रहता है । मन की अस्थिरता को नियंत्रित करना ही मनुष्य के आत्म साक्षात्कार और आत्मविश्वास के लिए आवश्यक है । शास्त्रों में कहा गया है कि मन को वश में करना कठिन तो है , लेकिन अभ्यास और वैराग्य के द्वारा यह संभव है ।

शास्त्र प्रमाण :

भगवद गीता. (6.34) में अर्जुन ने भगवान श्री कृष्ण से मन की चंचलता के

Edit with WPS Office

बारे में कहा:
अर्थ ___ हे कृष्ण , मन अत्यंत चंचल , प्रयत्नशील , और शक्तिशाली है । इसे नियंत्रित करना वायु को रोकने के समान कठिन है ।

यह श्लोक दर्शाता है कि मन को नियंत्रित करना कठिन है , लेकिन असंभव नहीं ।

मन को वश में करने के उपाय :

1. अभ्यास (practice)

मन को नियंत्रित करने का सबसे पहला और महत्वपूर्ण उपाय है अभ्यास । अभ्यास का अर्थ है बार-बार मन को एकाग्र करने का प्रयास करना । जब हम बार-बार मन को एक दिशा में लगाते हैं , तो धीरे-धीरे यह स्थिर होने लगता है । मन को एक स्थायी , शुभ , और उच्चतर विषयों की ओर लगाने से नियंत्रित होता है ।

भगवद्गीता. (6.35) में अर्जुन श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं ;

**" असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।। "**

अर्थ ___ हे महाबाहु अर्जुन , मन निस्संदेह चंचल और वंश में करने में कठिन है , परंतु इसे अभ्यास और वैराग्य के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है ।

अभ्यास का अर्थ योग , ध्यान , और प्राणायाम के माध्यम से मन को स्थिर करना है । नियमित ध्यान और साधना से मन की चंचलता कम होती है और मन वश में आता है ।

Edit with WPS Office

2. वैराग्य (Detachment)

वैराग्य का अर्थ है इच्छाओं और भौतिक वस्तुओं के प्रति निराशक्ति विकसित करना । मन अनावश्यक इच्छाओं और भौतिक वस्तुओं में उलझा रहता है , जिससे उसका नियंत्रण कठिन हो जाता है । वैराग्य के माध्यम से व्यक्ति उन वस्तुओं से दूरी बना लेता है , जो मन को अस्थिर करती है । वैराग्य से व्यक्ति भोग , सुख सुविधाओं और विषय - वासना से मुक्त होकर मन को आत्मिक उन्नति की और प्रेरित करता है ।

पतंजलि योग सूत्र . (1.12) मैं कहां गया है ;

" अभ्यास - वैराग्याभ्यां तन्निरोध: । "
अर्थ ___ अभ्यास और वैराग्य के द्वारा चित्त की वृत्तियों का निरोध संभव है ।

यह सूत्र स्पष्ट करता है कि चित्त (मन) को शांत और स्थिर करने के लिए अभ्यास और वैराग्य दो प्रमुख साधन है ।

3. सत्संग (Good Company)

सत्संग , अर्थात सज्जनों और संतों की संगति , मन को स्थिर और शुद्ध बनाने का एक और उपाय है । जब व्यक्ति आध्यात्मिक ज्ञान और सद्गुणों से युक्त संगति में रहता है , तो मन अपने आप उच्च विचारों की ओर प्रवृत्त होता है और सांसारिक इच्छाओं से मुक्त होने लगता है । इससे मन का ध्यान आत्मिक और आध्यात्मिक विषयों की ओर केंद्रित होता है ।

4. ध्यान (Meditation)

ध्यान मन को वश में करने का सबसे प्रभावी उपाय है । ध्यान के माध्यम से व्यक्ति अपने मन को एकाग्र करता है और उसे भटकने से रोकता है । ध्यान

Edit with WPS Office

से मन की चंचलता कम होती है और वह एकाग्र होकर शांति और स्थिरता प्राप्त करता है ।

" **ध्यान निर्विषय मन :** " ध्यान वह स्थित है जिसमें मन को किसी भी बाहरी या आंतरिक विषयों से मुक्त कर दिया जाता है । इसका सीधा तात्पर्य है कि ध्यान में मन को विषयों के चक्र से बाहर निकालकर एक ऐसे स्थिर बिंदु पर केंद्रित किया जाता है , जहां विचार , इच्छाएं और बाहरी विक्षेप समाप्त हो जातें हैं ।

ध्यान का सर्वोच्च उद्देश्य यह है कि मन को " **निर्विषय** " (अर्थात विषयों से रहित) बना दिया जाए । जब मन किसी विषय या भौतिक वस्तु से बंधा होता है , तो वह चंचल रहता है और व्यक्ति की मानसिक शांति भंग हो जाती है । लेकिन जब मन को किसी भी प्रकार के विचार या विषय से मुक्त किया जाता है , तब ध्यान की अवस्था में मन एकाग्र शांत और स्थिर हो जाता है ।

पतंजलि योग सूत्र. (1.2) में ध्यान के बारे में कहा गया है :

" **योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:** "
अर्थ ___ योग चित्त (मन) की वृत्तियों (तरंगों) का निरोध है ।

यह सूत्र ध्यान की प्रक्रिया को स्पष्ट करता है । ध्यान वह अवस्था है , जहां मन की सभी वृत्तियों को रोक कर उसे निर्विष्य और स्थिर बनाया जाता है । यह स्थिति आत्मज्ञान और आत्मिक शांति की ओर ले जाती है ।

भगवद्गीता. (6.19) ___ में ध्यान की अवस्था को दीपक की लौ से तुलना करते हुए कहा गया है :

" **यथा दीपो निवातस्थो नेगडते सोपमा स्मृता ।** "

Edit with WPS Office

अर्थ ___ जिस प्रकार वायु रहित स्थान में रखा दीपक स्थिर रहता है , उसी प्रकार ध्यान की अवस्था में मन भी स्थिर और निर्विषय होता है ।

इस प्रकार , ध्यान का मुख्य उद्देश्य मन को बाहरी विषयों से मुक्त कर , उसे शुद्ध , और स्थिर बनाना है ।

5. शास्त्रों का अध्ययन और चिंतन :

शास्त्रों के नियमित अध्ययन और चिंतन से मन को उच्च विचारों में लगाने में सहायता मिलती है । वेद , उपनिषद , रामायण , महाभारत , भगवद्गीता , और अन्य वैदिक ग्रंथों का अध्ययन करने से व्यक्ति का मन आत्मिक ज्ञान की ओर अग्रसर होता है , जिससे उसकी सांसारिक इच्छाएं कम हो जाती है और मन वश में आता है ।

मुण्डक उपनिषद. (1.2.12) में कहां गया है :

" त द्विज्ञानार्थ स गुरुमेवाभिगच्छेत् समित्पाणि : श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् । "
अर्थ ___ आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए गुरु के पास जाकर शास्त्रों का अध्ययन और चिंतन करना चाहिए । शास्त्रों के अध्ययन से मन को गहराई से आत्म निरीक्षण करने का अवसर मिलता है , जिससे मन शांत और स्थिर होता है ।

निष्कर्ष : मन को वश में करना कठिन , लेकिन अभ्यास , वैराग्य , ध्यान , सत्संग , और शास्त्र अध्ययन के माध्यम से संभव है । शास्त्रों में बताया गया है कि मन की चंचलता को नियंत्रित करके व्यक्ति आत्मिक उन्नति और शांति प्राप्त कर सकता है । भगवद्गीता , योग सूत्र , और उपनिषदों में मन को वश में करने के अनेक उपाय दिए गए हैं , जिन्हें अपना कर व्यक्ति अपने जीवन को श्रेष्ठ और समृद्ध बना सकता है ।

3. अंत: करण (आंतरिक उपकरण)

Edit with WPS Office

अंत: करण मानव के आंतरिक उपकरण का कुल रूप है , जिसमें चार प्रमुख भाग होते हैं :

1. **मन :** जो संकल्प विकल्प करता है ।
2. **बुद्धि** : निर्णय लेने की शक्ति , जो सही और गलत का भेद करती है ।
3. **चित्त (चेतना)** : स्मरण (मेमोरी) और अनुभवों को संचित करने का स्थान ।
4. **अहंकार** : स्वयं के अस्तित्व का अनुभव ही अहंकार है । जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को परिभाषित करती है ।

अंत: करण मन , बुद्धि , चित्त और अहंकार का सम्मिलित रूप है । यह वह स्थान है जहां बाहरी अनुभवों को आंतरिक ज्ञान में परिवर्तित किया जाता है । **मुण्डक उपनिषद.** **(3.1.9)** में अंतकरण के चार भागों का संकेत इस प्रकार दिया गया है:

" मनसा वेदितव्यम् । " अर्थ ___ अंत: करण के माध्यम से ही आत्मा और परमात्मा का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है ।

अंत :करण वह माध्यम है जिसके द्वारा हम आत्मा और ब्रह्मांड के गहन रहस्यों को समझते हैं । इसे साधना और आत्मनिरीक्षण के द्वारा शुद्ध किया जा सकता है ।

मन , इंद्रियां और अंत: करण के आपसी संबंध :

इंद्रियां बाहरी दुनिया से जानकारी प्राप्त करती है , और वह जानकारी मन तक पहुंचातीं है । मन उन सूचनाओं का विश्लेषण करता है और उसे बुद्धि तक भेजता है , जहां निर्णय लिया जाता है । अहंकार और चित्त इस पूरे प्रक्रिया में व्यक्ति की पहचान और स्मृतियों के अनुसार विचारों को दिशा देते हैं । यदि इंद्रियां , मन , और अंत:करण नियंत्रित और शुद्ध होते हैं , जो

Edit with WPS Office

व्यक्ति को सही दिशा में बढ़ने का मार्ग मिलता है ।

कठोपनिषद. (1.3.3 - 4) इस संबंध को सुंदर रूप से प्रस्तुत करता है ;

" आत्मानं रथिनं विद्धि शरीर रथमेव तु । बुद्धि तु सारथिं विद्धि मन: पग्रहमेव च ।। इन्द्रियाणि हयानाहु: विषयान् तेषु गोचरान् । "

अर्थ ___ शरीर को रथ मानो , आत्मा को रथी , बुद्धि को सारथी , मन को लगाम और इंद्रियों को घोड़े । ये घोड़े विषयों की ओर भागते हैं , परन्तु जब बुद्धि और मन संयमित होते हैं , तब आत्मोन्नति होती है ।

निष्कर्ष : मन , इंद्रियां , और अंत:करण जीवन के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । इंद्रियां बाहरी संसार से जानकारी लाती है , मन उसे संशोधित करता है , और अंत:करण का हर भाग (मन , बुद्धि , चित्त , अहंकार) इस जानकारी को सही रूप में ग्रहण करने और निर्णय लेने में सहायता करता है । शास्त्रों में इन तत्वों का अध्ययन और उन्हें संयमित करने की विधियों का वर्णन किया गया है , ताकि व्यक्ति आत्मज्ञान और मुक्ति की ओर बढ़ सकें ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 150.वर्ण व्यवस्था

Edit with WPS Office

वर्ण व्यवस्था भारतीय समाज में चार मुख्य वर्गों (ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र) की विभाजन की प्राचीन सामाजिक संरचना है। यह व्यवस्था प्राचीन वैदिक काल से जुड़ी मानी जाती है और सनातन धर्म के शास्त्रों में इसका उल्लेख मिलता है । इसका उद्देश्य समाज में विभिन्न कार्यों और जिम्मेदारियों को विभाजित करना था ताकि समाज संगठित और सुव्यवस्थित रहे।

संसार की सुरक्षा व्यवस्था एवं समृद्धि के लिए उस परमात्मा ने मुख्य , बाहु , जांग और पैरों के गुणों की तुलना से निर्मित वर्णों का अर्थात ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , एवं शूद्र का पृथक पृथक कर्म , वेदों से निर्धारित किया । अतः वर्ण व्यवस्था का विधान वेदों में किया गया है जो कि ईश्वर प्रदत्त है और यह कर्म के अनुसार निर्धारित किया जाता है ना की जन्म के अनुसार ।

प्रत्येक मनुष्य का अपना अलग-अलग स्वभाव और रुचि होता है और उसी के अनुसार वह कर्म को करता है एवं धारण करता है , वैदिक वर्ण व्यवस्था इसी आधार पर बनाया गया था कि प्रत्येक मनुष्य को अपनी रुचि , स्वभाव , योग्यता और गुणों के अनुसार वर्ण को निर्धारित करने का अवसर प्राप्त हो तथा आश्रम व्यवस्था एवं गुरु शिष्य परंपरा द्वारा इस उत्तम व्यवस्था को समाज में भली - भांति स्थापित भी किया गया था । आइए जानने का प्रयास करते हैं वैदिक वर्ण व्यवस्था में प्रत्येक वर्ण के कर्तव्य कौन-कौन से हैं।

चारों वर्णों के प्राकृतिक गुण :

ब्रह्म जानाती ब्राह्मण ।

जो परम सत्य को समझता है वो ब्राह्मण है । अर्थात ब्रह्म को जानने वाला ही ब्राह्मण है।

तथा महाभारत शांति पर्व के अनुसार ,

Edit with WPS Office

येन सर्वमिदं बुद्धम प्रकृतिविकृतिश्च या ।
गतिज्ञ: सर्वभूतानां नं देवा ब्राह्मणा विदु: ।।

भावार्थ : जिसको इस संपूर्ण जगत की नश्वरता का ज्ञान है , जो प्रकृति और विकृति से परिचित है तथा जिसे संपूर्ण प्राणियों की गति का ज्ञान है उसे देवता लोग ब्राह्मण जानते हैं ।

तदुपरांत ,
स्कंद पुराण के अनुसार ,

जन्मना जायते शुद्र: संस्कारात् द्विज् उच्यते ।

हर कोई जन्म से शूद्र ही होता है , केवल उचित प्रशिक्षण और संस्कारों से ही व्यक्ति द्विज (ब्राह्मण) बनता है ।

और ब्राह्मण का चरित्र कितना महत्वपूर्ण है
इस पर जोर देते हुए **पद्म पुराण की सृष्टि खंड** में कहा गया है कि ,

समाचारस्थमपि चाण्डालम तं देवा ब्राह्मणं विदु: ।।
भावार्थ : यहां तक कि एक चरित्रवान चांडाल को भी देवता ब्राह्मण मानते हैं । "

1. ब्राह्मण वर्णस्थ के कर्म :

ब्राह्मण वर्ण को धारण करने वाले मनुष्य के लिए पढ़ना - पढ़ाना तथा यज्ञ करना तथा यज्ञ करने में सहायता देना , श्रेष्ठों को और श्रेष्ठ कार्यों में दान देना और लेना , संसार के कल्याण के लिए नियमों का निर्माण कर उनकी

Edit with WPS Office

देखभाल करना , यह 6 कर्म निर्धारित किए गए हैं **(विशुद्ध मनुस्मृति. 1.88)**

" ब्राह्मणा वेदेन परमेश्वरस्य उपासनेन च सह वर्तमानो विधादि उत्तमगुणयुक्त: पुरुष: "
भावार्थ ___ अर्थात वेद और परमात्मा के अध्ययन और उपासना में तत्लीन रहते हुए विद्या आदि उत्तम गुणों को धारण करने से व्यक्ति ब्राह्मण कहलाता है ।

शमो दमस्तप: शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च । ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ।। (18.42)

अर्थात स्थिरता , आत्म संयम , तपस्या , पवित्रता , क्षमा , जागरूकता , बुद्धिमत्ता , ज्ञान , परमात्मा में विश्वास , इंद्रिय निग्रह यह विशेषताएं तथा गुण पुरुष व स्त्री मानव के ब्राह्मण कहलाने से पूर्व होने आवश्यक है ।

ब्राह्मणों के गुण :

शमो दमस्तप शौचं सन्तोष क्षान्तिरार्जवम् ।
मद्भक्तिश्च दया सत्यं ब्रह्मप्रकृतयस्त्विवमा: ।।
श्रीमद् भागवत महापुराण. 11.17.16

शमो दमस्तप: शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम् ।।
श्रीमद् भगवत गीता. 18.42

- शांति और तपस्या
- मन और इंद्रियों पर नियंत्रण
- सत्य और स्वच्छता
- ज्ञान और बुद्धि

Edit with WPS Office

- संतुष्टि और सहनशीलता
- सादगी और सीधापन
- श्री भगवान की भक्ति
- दूसरों के दुख के लिए करुणा
- कंचन (सोना , धन) कामिनी (मोहक महिला) और कीर्ति (प्रसिद्धि) से दूरी

ब्राह्मणों के कर्तव्य :

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजन तथा ।
दान प्रतिग्रहश्चैव षट् कर्माण्यग्रजन्मन: ।।
मनुस्मृति. 10.75

- पठन और पाठन : शास्त्र पढ़े और पढ़ाएं
- यज्ञ : यज्ञ करें
- याजन : दूसरों के लिए यज्ञ करें
- दान : दूसरों से दान स्वीकार करें
- प्रतिग्रह : उस धन का उपयोग मंदिर पूजा , देवता पूजा और प्रसाद

2. क्षत्रिय वर्णस्थो के कर्म :

प्रजा की सभी प्रकार से रक्षा करना , दान देना , यज्ञ करना - करवाना , वेद आदि शास्त्रों को पढ़ना तथा विषय में आसक्त न रहकर जितेंद्रिय रहना यह संक्षेप से क्षत्रिय वर्ण धारण करने वाले मनुष्य के कर्तव्य हैं अतः दुष्टों का नाश और श्रेष्ठों की रक्षा करना ही क्षत्रिय वर्णस्थो का मूल धर्म है । **(विशुद्ध मनुस्मृति. 11.89)**

साहस , वैभव , दृढ़ता , चतुरता , लड़ाई छोड़कर ना भागाना , उदारता ,

Edit with WPS Office

शासक की प्रकृति क्षत्रियों के गुण तथा विशेषताएं हैं । (गीता. 18.43)

क्षतात त्राय ते इति क्षत्रिय: ।
' क्षत्रिय वो है जो क्षतियो से समाज की रक्षा करता है । '
वे पांच मुख्य क्षतियां है पाप , अधर्म , पीड़ा , दुष्ट और शत्रु ।

क्षत्रियों के गुण :

तेजो बलं धृति शौर्य तितिक्षौदार्यमुधम: । स्थैर्यं ब्रह्मण्यमैश्वर्य क्षत्रप्रकृतयस्त्विवमा: ।।
शौर्य तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् । दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभाववजम् ।।

श्रीमद् भागवत पुराण. 11.17.17 और श्रीमद् भगवत गीता. 18.43

- पराक्रम और वीरता
- वीरता और सहिष्णुता
- उदारता (दान में बड़ा हृदय)
- लड़ाई से कभी पीछे न हटना
- ब्राह्मणों की भक्ति
- शारीरिक शक्ति और दृढ़ता
- नेतृत्व की क्षमता
- महान दृढ़ता और हथियार कौशल
- संप्रभुता और स्थिरता

क्षत्रियों के कर्तव्य :

- **समाज** का **पोषण** करना (प्रजा पालन)
- **पांचों कमजोर (अबला) की** अपने **प्राणों से रक्षा करें ,**
  - **संत** : ब्राह्मण , भिक्षु , शिक्षक , और पुजारी की रक्षा होनी चाहिए ।

Edit with WPS Office

o **औरतें** : स्त्रियों पे अत्याचार करने वाले कभी दंड रहित ना छूटे ।
o **बच्चे** : गुरुकुलों में उन्हें संपूर्ण रूप से रक्षा , शिक्षा और भरण - पोषण सही रूप से मिलता रहे ।
o **वृद्ध** : उनका आदर हो और वे कभी आश्रय और सेवा विहीन न हो ।
o **गाय** : गौधन हमेशा सम्मानित और पोषित रहे ।

- **नागरिकों को न्याय दे** और **दुष्टों** और **अपराधियों को सजा दे ।**
- **सुनिश्चित करें कि हर कोई** अपना **कर्तव्य पालन सही से कर रहा है ।**
- हर नागरिकों को जिम्मेदारी और रोजगार बाटंकर सबको उचित रूप से व्यस्त रखें ताकि किसी को अपराध करने की फुर्सत भी ना मिले ।

3. वैश्य वर्णस्थो के कर्म :

पशुओं की सब प्रकार से रक्षा करना , श्रेष्ठों को और श्रेष्ठ कार्यों के लिए दान देना , यज्ञ करना - करवाना , वेद आदि शास्त्रों को पढ़ना , सब प्रकार का उत्तम व्यापार करना और नियम अनुसार ब्याज लेना , खेती करना - करवाना वैश्य वर्ण को धारण करने वाले मनुष्य के कर्तव्य है । **(विशुद्ध मनुस्मृति. 1.90)**

कृषि , गौ रक्षा , व्यापार करना यह सब के सब वैश्य के स्वभाविक कर्म है । **(गीता. 18.44)**

विश : प्रजा
वैश्य : प्रजा पोषक

वैश्यों के गुण :

आस्तिक्यं दाननिष्ठा च अदम्भो ब्रह्मसेवनम् ।
अतुष्टिरर्थोपचयैवैश्यप्रकृतयस्त्विमा: ।।

श्रीमद्भागवत पुराण. 11.17.18

Edit with WPS Office

- वेदों और ईश्वर में आस्था
- परोपकारी हृदय
- जरूरतमंदों के लिए करुणा
- अभिमान से मुक्ति
- ब्राह्मणों की सेवा
- धन संचय करने की अतृप्त इच्छा ।

वैश्यों के कर्तव्य :

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम् ।

श्रीमद् भगवत गीता. 18.44

- कृषि
- गायों का पालन - पोषण
- दूध उद्योग
- व्यापार और वाणिज्य
- जितना हो सके उतना धन अर्जित करना
- धर्म के लिए नियमित दान करना
- जरूरतमंदों के लिए नियमित दान करना

4. शूद्र वर्णस्थो के कर्म :

शूद्र वह व्यक्ति होता है जो किसी भी कुल में उत्पन्न होने के पश्चात अपनी अशिक्षा के कारण किसी उन्नत वर्ण की स्थिति को नहीं प्राप्त कर पाता । अशिक्षा से जिनकी निम्र जीवन स्थिति रह जाती है , ज्ञान शिक्षा के प्रति जिन की कोई रुचि नहीं होती और नित्य नीच कर्मों में लगा रहता है । ऐसे अशिक्षित मनुष्य शूद्र होते हैं अतः जो मनुष्य ऊपर बताए गए तीनों वर्णों के गुणों को धारण नहीं कर सकता उनको शूद्र कहां गया है , वह जीवन में पुनः

Edit with WPS Office

कभी भी किसी उच्च वर्ण की शिक्षा - दीक्षा ग्रहण कर उस उच्च वर्ण में दीक्षित हो सकता है अतः कोई जन्म से नहीं कर्म से ही शूद्र होता है ।

परमात्मा ने शूद्र वर्ण को धारण करने वाले मनुष्यों का एक ही कर्तव्य निर्दिष्ट किया है इन चार वर्णों (ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र) का ईर्ष्या निंदा रहित रहकर सेवा कार्य करना । क्योंकि इस सृष्टि में आप बिना कर्म किए नहीं रह सकते कुछ ना कुछ तो कर्म आपको करना ही होगा । **(विशुद्ध मनुस्मृति. 1.90) ।**

" परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् " । (गीता. 18.44)

अर्थात चारों वर्णों की सेवा करना , सेवा की सामग्री तैयार करना और चारों वर्ण के कार्य में कोई बांधा , अड़चन ना आए , सबको सुख आराम हो इस भाव से अपनी बुद्धि , योग्यता , बल के द्वारा सब की सेवा करना शूद्रो का स्वाभाविक कर्म है ।

" ऋग्वेद में कहां गया है कि जो व्यक्ति जिन जिन कर्मों का पालन करेगा वह उस उस वर्ण का अधिकारी होगा । " निरुक्त. मैं भी प्रमाण है " वर्णो वृणोते: " अर्थात कर्म के अनुसार जिसका वरण किया जाएं वह वर्ण है , किसी भी कुल में उत्पन्न व्यक्ति किसी भी वर्ण की शिक्षा दीक्षा ले सकता है , और उस वर्ण के गुण कर्म ग्रहण करके उस वर्ण का कहला सकता है , अतः वर्ण जन्म मूलक नहीं , कर्म मूलक है । यह उत्तम वर्ण व्यवस्था का आयोजन ईश्वर के द्वारा समाज को व्यवस्थित , समृद्ध और संगठित करने के लिए किया गया था परंतु अज्ञानता वश हम मनुष्यों ने इसे जाति अर्थात जन्म मूलक बना दिया है , और जिसका अति गंभीर परिणाम आज हम भोग रहे हैं ।

शूद्रों के कर्तव्य :

शुश्रूषणं द्विजगवां देवानां चाप्यमायया ।

Edit with WPS Office

तत्र लब्धेन सन्तोष शूद्रप्रकृतयस्त्विमा: ।।
श्रीमद् भागवत पुराण. 11.17.19

- देवताओं की निष्ठा से सेवा
- ब्राह्मणों की सेवा
- गायों की सेवा
- इन सेवा से प्राप्त धन से संतुष्टि ।

परिचयात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम् ।।
भगवत गीता. 18.44

शूद्र सुयोग्य लोगों की सेवा करते हैं और अपने विभिन्न कौशल और व्यवसायों के साथ आजीविका अर्जित करते हैं जैसे की ,

- कारीगर
- तकनीशियन
- नौकरी करने वाले
- दर्जी
- शिल्पकार
- नाई , आदि ।

शूद्रो के अंदर इस प्रकार का नैतिक अहंकार भी होता है कि वे सिर्फ धर्मी व्यक्ति की ही सेवा करेगा । यदि कोई **अपने गुरु , धर्म या वेदों के विरुद्ध कुछ** कर रहा है तो वो उनकी सेवा कितने भी धन के लिए **नहीं करेगा ।**

इनके उपरांत ऐसे लोग भी हैं जिनके पास वर्णाश्रम के चार वर्गों में से किसी वर्ण की कोई योग्यता नहीं है । और वो लोग भी जिन लोगों ने अपने वर्ण के नियमों को तोड़ा है , तो वो बनता है ...

Edit with WPS Office

- **अंत्यज (बहिष्कृत) :**

अशौचमनृतं स्तेयं नास्तिक्यं शुष्कविग्रह: ।
काम: क्रोधश्च तर्षश्च स भावोऽन्तयावसायिनाम् ।।
श्रीमद् भागवत पुराण. 11.17.20

जो निम्नतम वर्ग में है , और जो वर्णाश्रम व्यवस्था से विमुख हैं , उनकी प्राकृतिक विशेषताएं हैं : अशुद्धता , कपट , चोरी , वैदिक धर्म में विश्वास की कमी , व्यर्थ झगड़ा , काम , क्रोध और भौतिक वस्तुओं के लिए लालच ।

तथा इन सभी चार वर्णों के लिए सामान्य कर्तव्य है :

- अहिंसा
- सत्य
- चोरी में भाग न लेना
- काम , क्रोध और लोभ से मुक्ति
- सभी जीवों का कल्याण के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहना

ऐसे हर व्यक्ति अपने वर्ण के विशिष्ट **कर्तव्य मात्र को पूरा** करके अपने जीवन में , समाज में और आध्यात्मिक **चेतना में उच्च स्तर पर जाता है ।**

यद्यपि ,
हमें समझना चाहिए की ,
केवल जन्म ही नहीं ,
परंतु **संस्कार भी निश्चितता नहीं देते की ,**
व्यक्ति उस वर्ण में हमेशा स्थित रहेगा ।

यदि संस्कार करने और उचित प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद भी , जीवन के किसी मोड़ पर किसी परिस्थितिजन्य कारण से किसी के कर्म और आचरण में परिवर्तन होता है , तो भी वो अपने वर्ण समाज में अपने पद से गिर जाता

Edit with WPS Office

है ।

शूद्रों ब्राह्मणतां एति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातं एवं तु विध्या द्वैश्यात्तथैव च ।।
मनुस्मृति. 18.65

" जैसे शूद्र ब्राह्मणत्व को और ब्राह्मण शूद्रता को प्राप्त होते हैं , उसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य से उत्पन्न शूद्र भी क्षत्रियत्व और वैश्यत्व प्राप्त होते हैं । "

इसलिए किसी को यह नहीं सोचना चाहिए की एक बार वो एक निश्चित वर्ण की स्थिति प्राप्त कर लेता है , तो वो हमेशा के लिए वहां रहेगा । वो तब तक ही वहां रहेगा जब तक उसका आचरण वर्ण नियमों पर आधारित रहेगा ।

वर्ण व्यवस्था का आधार कर्म :

मनुस्मृति में शूद्र को कर्मों के आधार पर वर्णित किया गया है , न कि मात्र जन्म के आधार पर । **(अध्याय 10 , श्लोक. 65)** में ऋषि मनु कहते हैं कि ___

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम् ।
क्षत्रियाज्जातमेवंतु विधाद्वैश्यात्तथैव च ।।

अर्थ ___ एक शूद्र अपने कर्मों और गुणों के माध्यम से ब्राह्मण बन सकता है , और ब्राह्मण भी अपने अवगुणों और कुकर्मों के कारण शूद्र बन सकता है । इसी तरह , क्षत्रिय या वैश्य के कुल मैं जन्मा हुआ व्यक्ति भी अपने ज्ञान और कर्तव्यों के आधार पर अपना वर्ण परिवर्तित कर सकता है ।

व्याख्या :

Edit with WPS Office

- शूद्रो ब्राह्मणतामेति : यदि कोई शूद्र (निम्न कुल या कर्मों से संबंधित है) उत्तम ज्ञान , शिक्षा और सद्गुणों को अपनाता है , तो वह ब्राह्मणत्व प्राप्त कर सकता है । इसका अर्थ यह है कि जन्म से शूद्र होने के बाद भी , व्यक्ति अपने कर्मों से ब्राह्मण बन सकता है ।

- ब्राह्मणश्चेति शूद्रताम् : इसी प्रकार , यदि कोई ब्राह्मण अपने कर्तव्यों और सद्गुणों से विमुख होकर अशिक्षित , अज्ञानी और नीच कर्म करने लगता है , तो वह शूद्र के समान बन जाता है ।

- क्षत्रियाज्जातमेंवंतु विधाद्वैश्यात्तथैव च : क्षत्रिय या वैश्य कुल में जन्मे व्यक्ति भी अपने कर्मों और ज्ञान के अनुसार वर्ण परिवर्तन कर सकते हैं । यदि वे ज्ञान और शिक्षा से वंचित होते हैं , तो उनका भी शूद्रत्व हो सकता है । इसके विपरीत , यदि वे उत्तम गुणों और कर्तव्यों का पालन करते हैं , तो वे ब्राह्मणत्व प्राप्त कर सकते हैं ।

शूद्रता से मुक्ति का मार्ग :

शूद्र वह व्यक्ति होता है जो अशिक्षा और ज्ञान के अभाव के कारण जीवन में उन्नति नहीं कर पाता । ऐसे व्यक्ति न केवल शिक्षा और ज्ञान से वंचित रहते हैं , बल्कि वे नित्य नीच कर्मों में लगे रहते हैं । उनकी रुचि न तो शिक्षा में होती है , न ही आत्मविकास में । इस स्थिति में वे शूद्र की श्रेणी में आते हैं । जो व्यक्ति ब्राह्मण , क्षत्रिय , और वैश्य के गुणों को धारण करने में असमर्थ रहता है , उसे शूद्र कहां गया है । हालांकि , यह स्थायी नहीं है । यदि व्यक्ति अपने कर्मों को सुधारता है , शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करता है , तो वह किसी भी समय उच्च वर्ण में दीक्षित हो सकता है । शूद्रता जन्म से नहीं , बल्कि कर्म और जीवनशैली से निर्धारित होती है । किसी भी व्यक्ति के लिए शिक्षा और सद्गुणों का मार्ग अपनाकर उच्च वर्ण में स्थान प्राप्त करना संभव है ।

शूद्र को वेद पढ़ने का अधिकार : सत्य और मिथक का निराकरण

Edit with WPS Office

परमात्मा की दृष्टि में भेदभाव का कोई स्थान नहीं । जिस प्रकार एक पिता अपनी संतानों के बीच भेदभाव नहीं करता , उसी प्रकार परमात्मा ने जब मनुष्यों को बनाया , तब कोई जाति पाति या भेदभाव का विधान नहीं किया । हम सभी उस परमपिता परमात्मा की संतान है , और हमें समान रूप से अधिकार प्राप्त है । लेकिन समय के साथ , कुछ स्वार्थी और अज्ञानता से भरे लोगों ने समाज में भेदभावपूर्ण व्यवस्थाएं स्थापित कर दी । यही कारण है कि शूद्रों को वेद पढ़ने से वंचित किया गया , जो एक गंभीर सामाजिक अन्याय है ।

क्या शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार है ?

यह प्रश्न बहुत लंबे समय से हिंदू समाज में विवाद का विषय बना हुआ है । इस धारणा ने समाज को इस प्रकार दूषित कर दिया है कि आज भी हम इससे पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाए हैं । लेकिन वेद और शास्त्रों के साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह बताते हैं कि वेदों का ज्ञान सभी के लिए है ___ शूद्र सहित । अब , वेदों के प्रमाण से इस बात को समझने का प्रयास करते हैं ।

यजुर्वेद का संदर्भ: सबके लिए वेद का अधिकार :

यजुर्वेद में एक महत्वपूर्ण मंत्र है , जिसका तात्पर्य यह है कि वेद पढ़ने और पढ़ाने का अधिकार हर मनुष्य को है । इस मंत्र में , विद्वान व्यक्ति को यह आज्ञा दी जाती है कि वे वेदों का सही अर्थ समझकर सभी को उसका ज्ञान दे , क्योंकि वेदों का ज्ञान अमृत समान है ।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदाग्नि जनेभ्य: । ब्रह्माराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च । प्रियं देवाना दक्षिणाय दातुरिह भूयासं में काम: । समृद्धयतामुप मादो नमतु ।।

ऋषि दयानंद सरस्वती ने इस मंत्र की व्याख्या इस प्रकार की है :

Edit with WPS Office

(यथेमां वाचं कल्याणी) : हे मनुष्यों ! जिस प्रकार में (ईश्वर) तुम सबको चारों वेदों का उपदेश करता हूं , वैसे ही तुम भी उन्हें पढ़कर और सब मनुष्यों को पढ़ाओ और सुनाओ । ये वेद वाणी कल्याणकारी है , और इसका लाभ सभी को मिलना चाहिए ।

(ब्रह्माराजन्याभ्यांशूद्रांय चार्याय च स्वाय चारणाय) : इस मंत्र का अर्थ यह है कि वेदों का अधिकार न केवल ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , के लिए है , बल्कि शूद्र और अति शूद्र के लिए भी है । वेद ईश्वर द्वारा प्रकाशित ज्ञान है , जो हर व्यक्ति के लिए समान रूप से हितकारी है । जिस प्रकार पिता की संपत्ति पर सभी पुत्र - पुत्रियों का समान अधिकार होता है , उसी प्रकार परमपिता परमेश्वर के ज्ञान रूपी संपत्ति पर हर मनुष्य का समान अधिकार है ।

ईश्वर : वेदों का प्रचारक :

(प्रियों देवानां) : ईश्वर स्वयं को वेदों के प्रचारक के रूप में प्रस्तुत करते हैं । वे कहते हैं कि जैसे मैं इस सत्य विद्या का उपदेश करके विद्वानों के आत्मा में प्रिय हो रहा हूं , वैसे ही तुम भी पक्षपात रहित होकर इस वेद विद्या को सबके लिए प्रिय बनाओ ।

वेद प्रचार की आवश्यकता :

(अयं में काम: समृध्यताम्) : ईश्वर की यह इच्छा है कि जैसे वेदों का प्रचार उनके द्वारा किया जा रहा है , वैसे ही मनुष्य भी इस ज्ञान को संसार में प्रसारित करें । यही कारण है कि वेद विद्या को ग्रहण करने और प्रचार करने से व्यक्ति मोक्ष और संसार के सुखों को प्राप्त कर सकता है ।

निष्कर्ष : शूद्रो का वेद अध्ययन पर अधिकार :

इस संदर्भ से यह स्पष्ट होता है कि वेदों का ज्ञान सभी के लिए समान रूप से

Edit with WPS Office

उपलब्ध है । वेद ईश्वर का अमूल्य उपहार है , और ईश्वर ने किसी को भी इस ज्ञान से वंचित करने का आदेश नहीं दिया । यह समझ में व्याप्त अज्ञानता और स्वार्थी प्रवृत्तियों का ही परिणाम है कि शूद्रों को इस अमूल्य ज्ञान से दूर रखा गया । वेदों का प्रचार - प्रसार हर जाति और हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है , और सभी को इस ज्ञान का अधिकार है , जैसा की यजुर्वेद और अन्य शास्त्रों में स्पष्ट रूप से कहा गया है ।

गलत मान्यताओं एवं कुरीतियों का मूल कारण :

वेदों में स्वयं ईश्वर ने सभी मनुष्यों को समान अधिकार प्रदान किया है , जिसमें वेद पढ़ने और ज्ञान अर्जित करने का अधिकार भी सम्मिलित है । फिर भी , हमारे समाज में भेदभाव और गलत धारणाओं का उदय कैसे हुआ ? इसका उत्तर यह है कि हमने सत्य शास्त्रों का अध्ययन करना छोड़ दिया , और बिना किसी तर्क या बुद्धि का प्रयोग किए सुनी सुनाई बातों पर विश्वास करना शुरू कर दिया ।

शास्त्रों का अध्ययन और मिलावट की समस्या :

हमारे प्राचीन धर्म ग्रंथों में समय के साथ मिलावट की समस्या सामने आई । पौराणिक काल में सभी शास्त्र हस्तलिखित होते थे , जिससे उनमें मिलावटी श्लोको को जोड़ना आसान हो गया । स्वार्थी तत्वों ने अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति और समाज में अपनी मान्यताओं को थोपने के लिए ग्रंथों में प्रक्षिप्त श्लोकों का समावेश किया । रामायण , महाभारत , और मनुस्मृति इस संदर्भ में प्रमुख उदाहरण है , जिनमें विरोधाभासी विचार और मान्यताएं देखने को मिलती है ।

तर्क और बुद्धि से गलत श्लोकों की पहचान :

यदि हम थोड़ा तर्क और बुद्धि का प्रयोग करें , तो इन मिलावटी श्लोकों को पहचानना कठिन नहीं है । अक्सर एक ही ग्रंथ में दो परस्पर विरोधी

Edit with WPS Office

मान्यताएं देखने को मिलती है । जैसे , एक श्लोक किसी कर्म को उचित ठहराता है , तो दूसरा उसी का खंडन करता है । यह स्पष्ट करता है कि एक ही लेखक द्वारा ऐसे विरोधी विचार नहीं हो सकते । इसलिए , तर्क और विवेक का प्रयोग करके इन मिलावटों को समझा जा सकता है ।

श्रुति और स्मृति में अंतर का महत्व :

ब्रह्म सूत्र में ऋषि व्यास कहते हैं कि जहां श्रुति (वेद) और स्मृति (अन्य धर्म ग्रंथ) में टकराव हो , वहां श्रुति को ही सर्वोच्च माना जाएगा । वेद एकमात्र ईश्वरीय ग्रंथ है , और उनका संदेश अपरिवर्तनीय है । इसलिए , जब भी श्रुति और स्मृति में कोई विरोध हो , हमें वेदों का अनुसरण करना चाहिए , क्योंकि वे ही सत्य का मूल स्रोत है ।

समाज में गलत धारणाओं का खंडन :

सत्य शास्त्रों का अध्ययन करने से ही हम समझ में व्याप्त गलत धारणाओं और कुरीतियों का सटीक प्रमाणों के साथ खंडन कर सकते हैं । वेदों और वेद - सम्मत शास्त्रों का ज्ञान हमें सही मार्ग दिखाता है और हमें समाज में फैली अज्ञानता और अन्याय से मुक्त करता है ।

संसार की व्यवस्था में त्रुटियों का सुधार :

हमारे ऋषि मुनि कहते थे कि संसार की सभी व्यवस्थाएं सत प्रतिशत परिपूर्ण और सर्वमान्य नहीं हो सकती । अगर किसी व्यवस्था में त्रुटि आ जाती है , तो उसका शुद्धिकरण किया जा सकता है और करना उचित भी है । किसी भी काल में उत्पन्न विसंगतियों और त्रुटियों को सुधारने का रास्ता हमेशा खुला रहता है ।

तैत्तिरीयोपनिषद का मार्गदर्शन. (तैत्तिरीयोपनिषद. 1.11.2)

Edit with WPS Office

" अस्माकं सुचरितानि , तानि त्वया उपास्यानि , नो इतराणि " ।
अर्थात ____ हमारे जो उत्तम आचरण है , उन्ही का अनुसरण करना चाहिए , अन्य का नहीं । "

यह उपनिषद का मंत्र हमें यह सिखाता है कि हमें अपने पूर्वजों के उन गुणों का ही अनुकरण करना चाहिए जो श्रेष्ठ है , और तुच्छ या अप्रासंगिक गुणों का त्याग करना चाहिए । इस सिद्धांत को अपनाकर हम किसी भी काल में अपने जीवन को श्रेष्ठ और आदर्श बना सकते हैं ।

वैदिक शिक्षा : श्रेष्ठ गुणों को धारण :

वैदिक शास्त्रों का मुख्य संदेश : " **मनुर्भव:** " अर्थात श्रेष्ठ गुणों को धारण कर मनुष्य , बनों । यह केवल शारीरिक रूप से मनुष्य होने का संदर्भ नहीं है , बल्कि मानसिक और आत्मिक रूप से भी मनुष्य होने की योग्यता प्राप्त करना है । हमारे ऋषि - मुनियों ने जो श्रेष्ठ और उत्तम गुण स्थापित किए थे , उनका अनुसरण करना ही सच्चे मानवता का प्रमाण है ।

निष्कर्ष : हमारे पूर्वजों ने जो उत्तम और आदर्श आचरण स्थापित किए , वे समय और समाज की आवश्यकता के अनुसार थे । हमें उन आचरणों और गुणों को आत्मसात करना चाहिए जो आज भी प्रासंगिक और श्रेष्ठ है । इस दृष्टिकोण से हम त्रुटियों का शुद्धिकरण कर सकते हैं और मानव जीवन को और भी अधिक आदर्श बना सकते हैं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 151. जाति और जातिवाद

योग दर्शन के अनुसार , जाति , आयु और भोग प्राणियों को उनके पूर्व कर्मों के आधार पर प्राप्त होते हैं । न्याय दर्शन में महर्षि गौतम ने जाति की परिभाषा दी है : " **समानप्रसवात्मिका जातिः ।** (2.2.68) जिसका अर्थ है कि जिनका समान प्रसव (जन्म) होता है , वे सब एक जाति के होते हैं । जैसे गाय और बैल वंश वृद्धि के लिए एक दूसरे के सहयोगी होते हैं , इसलिए दोनों एक ही जाति के माने जाते हैं । दूसरी और घोड़ी और कुत्ता अलग जाति के माने जाते हैं क्योंकि वे वंश वृद्धि में सहयोगी नहीं होते ।

आयु और भोग : जाति की अन्य प्रमुख पहचान :

जाति की पहचान का दूसरा तत्व आयु है । जिन प्राणियों का समान प्रसव होता है , उनकी आयु भी लगभग समान होती है । उदाहरण स्वरूप __ गाय और बैल की आयु समान होती है , जबकि घोड़ी और कुत्ते की आयु में अंतर होता है । तीसरी पहचान भोग (आहार और जीवन शैली) है । समान प्रसव और आयु वाले प्राणियों का भोग भी समान होता है । जैसे , गाय और बैल दोनों घास खाते हैं , जबकि घोड़ी और कुत्ते का भोग भिन्न है ___ कुत्ता मांस खाता है , घोड़ी नहीं ।

मनुष्यों की जाति : समानता का सिद्धांत :

शास्त्रों के अनुसार , समस्त मानव जाति समान प्रसव , आयु और समान भोग की धारणा पर आधारित है , जिससे स्पष्ट होता है कि सभी मनुष्य मूल रूप से एक ही जातीयता के हैं । वैदिक काल में ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र की वर्ण व्यवस्था व्यक्ति के गुण , कर्म और योग्यता के आधार पर निर्धारित होती थी । परंतु आज यह पवित्र वर्ण व्यवस्था विकृत होकर जाति व्यवस्था में बदल गई है , जिसमें जन्म के आधार पर समाज को विभाजित

Edit with WPS Office

किया जाता है । वैदिक वर्ण व्यवस्था का यह विकृत रूप अब समाज में भेदभाव और बंटवारे का माध्यम बन गया है , जबकि इसका मूल उद्देश्य समाज में सामंजस्य और समरसता बनाए रखना था ।

समाज में जातिवाद को बढ़ावा देने के पीछे स्वार्थी तत्वों का गहरा षड्यंत्र काम कर रहा है । दुर्भाग्य वंश , हम शास्त्रों के अध्ययन से विमुख हो गए हैं और तर्क एवं विज्ञान की उपेक्षा कर , केवल सुनी - सुनाई बातों पर विश्वास करने लगे हैं । इसी अज्ञानता का लाभ उठाकर कुछ लोगों ने वर्ण व्यवस्था का दुरुपयोग किया और सनातन समाज को जातियों में विभाजित कर दिया । समाज की एकता और शांति को पुनः स्थापित करने के लिए यह आवश्यक है कि हम शास्त्रों का गहन अध्ययन करें , जिससे सत्य का वास्तविक ज्ञान प्राप्त हो सके और हम इस विभाजनकारी प्रवृत्ति को समाप्त कर सके । आज समाज में जात-पात का भेदभाव अज्ञानता के कारण व्याप्त है । जातीयता से उत्पन्न विभाजन ने समाज को अशांत और विखंडित कर दिया है । विभिन्न वर्गों की मध्य भेदभाव , राग द्वेष और संघर्ष के कारण समाज टूट रहा है । यही कारण है कि सनातन समाज में एकता का अभाव है ।

आर्य संस्कृति : वसुधैव कुटुंबकम का संदेश :

प्राचीन आर्य संस्कृति " वसुधैव कुटुंबकम " की भावना पर आधारित थी , जिसमें समस्त मानवता को एक परिवार माना जाता था । प्राचीन वैदिक समाज में जातीयता का भेद नहीं था । वे केवल " **आर्य** " (अच्छे) और **अनार्य** (दस्यु या बुरे) के रूप में विभाजन करते थे । बुरे लोग भी शिक्षा और संस्कार से आर्य बन सकते थे , और आर्य भी यदि असंस्कारी रहे तो दस्यु बन सकते थे ।

वैदिक संस्कृति जातिवाद की नकारात्मकता को भली भांति समझती थी और यह मानती थी कि जातीयता अन्याय और अहंकार का जन्म देती है । जातिवाद के इस अन्यायपूर्ण तंत्र को समाप्त करने का सबसे उत्तम तरीका

Edit with WPS Office

यह था कि सभी मनुष्य एक समान शासन के अधीन हो और समान जीवन शैली अपनाएं । समान विवाह संबंध एक भाषा , और एक धर्म भी जातिवाद को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं ।

वेदों में चक्रवर्ती राज्य की प्रार्थनाएं इसलिए की गई है , क्योंकि एक सार्वभौमिक राज्य की स्थापना से ही समाज में शांति और एकता का मार्ग प्रशस्त हो सकता है । जब तक सभी लोग एक ही राजा के अधीन नहीं होंगे , तब तक समाज में अशांति बनी रहेगी । यही मार्ग राष्ट्र और समाज की प्रगति और कल्याण का स्रोत है ।

निष्कर्ष : जातिवाद का अंत और सामाजिक एकता का निर्माण वैदिक शास्त्रों के माध्यम से ही संभव है । यह शास्त्र हमें " वसुधैव कुटुंबकम " की भावना सिखाते हैं , जो मानवता की एकता और शांति की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है । जब तक किसी राष्ट्र की एक भाषा , एक धर्म , और एक उद्देश्य नहीं होगा , तब तक वह राष्ट्र का भविष्य उज्जवल नहीं हो सकता । एकता के इन स्तंभों के बिना किसी देश की प्रगति और स्थिरता अधूरी रहती है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 152.मनुस्मृति एवं उसका वैश्विक प्रभाव

Edit with WPS Office

मनुस्मृति प्राचीन भारतीय धर्म शास्त्रों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रतिष्ठित ग्रंथ है , जिसे " धर्म शास्त्रों का आधार " माना जाता है । हालांकि इसे महर्षि मनु के नाम से जाना जाता है , परंतु इसे महर्षि मनु द्वारा स्वयं नहीं लिखा गया था । यह उनके उपदेशों और शिक्षाओं का संग्रह है , जिसे उनके शिष्यों ने समय के साथ संकलित किया और एक व्यवस्थित ग्रंथ का रूप दिया ।

मनुस्मृति समाज के लिए धर्म , नैतिकता , सामाजिक व्यवस्था और कर्तव्यों का विधान करती है । इसमें वर्णित नियम और सिद्धांत समाज के नैतिक और सामाजिक ढांचे को स्थापित करने में सहायक रहे हैं , और इसी कारण यह एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक और धार्मिक दस्तावेज के रूप में स्वीकार किया जाता है । मनुस्मृति में विभिन्न सामाजिक , धार्मिक और नैतिक विषयों पर विस्तृत नियम और दिशा निर्देश दिए गए हैं । इसमें पांच मुख्य विषय शामिल है ।

मुख्य विषयवस्तु :

1. धर्म और आचार - संहिता :

मनुस्मृति में समाज के विभिन्न वर्गों के कर्तव्यों , धर्मो , और आचारों का वर्णन किया गया है । इसमें वर्णाश्रम धर्म का विस्तृत उल्लेख है , जिसमें समाज को चार वर्णों (ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र) में विभाजित किया गया है , और उनके कर्तव्यों और अधिकारों का निर्धारण किया गया है । महर्षि मनु के अनुसार जन्म से कोई भी ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र नहीं होता है वह तो अपने कर्मों और गुणों से होता है । ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , को द्विज कहां गया है जबकि शूद्रों का विद्या रूपी दूसरा जन्म न होने के कारण एकजातीय कहा गया है ।

दलितों और पिछड़ों को " शूद्र " नहीं कहा गया : आजकल जिन जातियों

Edit with WPS Office

को दलित , पिछड़ी और जनजाति के रूप में जाना जाता है , उन्हें मनुस्मृति में कहीं भी "शूद्र " नहीं कहा गया है । मनु की वर्ण व्यवस्था गुण , कर्म और योग्यता पर आधारित थी ,न कि जन्म या जाति पर । इस कारण से , शूद्र वर्ण में किसी विशेष जाति का उल्लेख नहीं किया गया है । मनु के समय में वर्ण का निर्धारण कर्म और योग्यता के अनुसार होता था , जाति के आधार पर नहीं ।

वास्तव में , समय के साथ परवर्ती समाज और व्यवस्थाकारो ने कुछ जातियों को " शूद्र " की संध्या दी और उन्हें शूद्र वर्ण में शामिल कर दिया । इस प्रक्रिया का दोष महर्षि मनु पर मढ़ा जा रहा है , जबकि इसकी जिम्मेदारी विकृत सामाजिक व्यवस्थाओं पर है । दुर्भाग्य से , दलित प्रतिनिधियों द्वारा न्याय की मांग के नाम पर , महर्षि मनु को दोषी ठहराया जा रहा है । यह एक प्रकार का अन्याय ही है , क्योंकि विकृतियों के लिए जिम्मेदार परवर्ती समाज है , न कि मनु ।

मनुस्मृति में शूद्रों की स्थिति और उनके अधिकारों के बारे में कई श्लोक मिलते हैं , जिनमे यह स्पष्ट होता है कि मनु का दृष्टिकोण शूद्रो के प्रति मानवीय और न्यायपूर्ण था । यहां कुछ प्रमुख श्लोक और उनके प्रमाण दिए गए हैं :

शूद्रों की परिभाषा :

मनु ने शूद्र को उस व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया है , जो विद्याजन्म (ब्रह्मजन्म) प्राप्त नहीं करता । उनके अनुसार ब्राह्मण , क्षत्रिय , और वैश्य को द्विजाति कहा जाता है , जबकि शूद्र केवल एक जन्म से जाना जाता है ।

" ब्राह्मण: क्षत्रियों वैश्य: , त्रयो वर्णा: द्विजातय: ।
चतुर्थ: एकजातिस्तु शूद्र: नास्ति तु पंचम: ।। मनुस्मृति. 10.4

भावार्थ : ब्राह्मण , क्षत्रिय और वैश्य , इन तीनों को द्विजाति कहां जाता है

Edit with WPS Office

क्योंकि वे उपनयन संस्कार से दूसरा जन्म प्राप्त करते हैं । चौथा वर्ण शूद्र होता है , जो केवल एक जन्म प्राप्त करता है और पवित्र संस्कारों से वंचित होता है ।

2. शूद्रों का ब्रह्मजन्म न होने तक शूद्र रहना :

मनु स्पष्ट रूप से कहते हैं कि जब तक व्यक्ति ब्रह्मजन्म (वेदाध्ययन और संस्कार) प्राप्त नहीं करता , तब तक वह शूद्र के समान है ।

" शूद्रेण हि समस्तावद् यावद् वेदे न जायते । " मनुस्मृति. 2.172

भावार्थ : जब तक व्यक्ति वेदों का ज्ञान प्राप्त नहीं करता , वह शूद्र के समान रहता है । यानि , शिक्षा प्राप्त करने से पहले हर कोई शूद्र है ।

3. शूद्रों को वेदाध्ययन का निषेध नहीं :

मनु ने कहीं भी शूद्रो को वेदाध्ययन और धार्मिक कार्यों से वंचित नहीं किया है । उन्होंने शूद्रों को धर्म पालन का अधिकार दिया है ।

" न धर्मापालन प्रतिषेधनम् " मनुस्मृति. 10.126

भावार्थ : शूद्रों को धर्म पालन से वंचित नहीं किया जा सकता । वे धर्म के अनुसार जीवन जीने के लिए स्वतंत्र है ।

4. शूद्र को मानवीय दृष्टिकोण से देखना :

मनु ने शूद्रों को अस्पृश्य नहीं माना , बल्कि उन्हें सेवा कार्य में संलग्न किया और उनके प्रति मानवीय दृष्टिकोण अपनाया ।

" मानाह्वः शूद्रों ऽपि दशमी गतः " मनुस्मृति. 2.137

Edit with WPS Office

भावार्थ : यदि कोई शूद्र वृद्ध हो गया है , तो उसे भी सम्मान का पात्र माना जाना चाहिए । मनु ने शूद्रों के प्रति संवेदनशील और सम्मानजनक व्यवहार की वकालत की है ।

5. शूद्रों के प्रति द्विजों का कर्तव्य :

मनु ने स्पष्ट किया कि यदि कोई शूद्र अतिथि के रूप में द्विज के घर आता है , तो उसे भी उचित आदर के साथ भोजन कराना चाहिए ।

" शूद्रः अतिथिरुपेण आगच्छति , तदा भोजनं कारयेत मनुस्मृति. 3.112

भावार्थ : यदि कोई शूद्र अतिथि के रूप में आता है , तो उसे भोजन कराया जाना चाहिए । इससे यह स्पष्ट होता है कि शूद्रों को भी मानवीय और आदरपूर्ण व्यवहार का अधिकारी माना गया था ।

6. शूद्र को सबसे कम दंड :

मनु ने शूद्रों के अपराधों के लिए सबसे कम दंड का प्रावधान किया है , जबकि उच्च वर्णों के लिए कठोर दंड का प्रावधान है । यह मनु की न्याय पूर्ण और मनोवैज्ञानिक दंड नीति को दर्शाता है ।

" अष्टापाधं तु शूद्रस्य स्तेये भवति किल्विषम्
षोडशैव तु वैश्यस्य द्वात्रिंशत् क्षत्रियस्य च ।
ब्राह्मणस्य चतुः षष्टिः पूर्णा वा ऽपि शतं भवेत् । " मनुस्मृति. 8.337 - 338

भावार्थ : यदि शूद्र कोई अपराध करता है , तो उसे आठ गुणा दंड दिया जाएगा । वैश्य को सोलह गुणा , क्षत्रिय को बत्तीस गुणा , और ब्राह्मण को चौसठ गुणा दंड मिलना चाहिए । इससे स्पष्ट है कि शूद्रों के लिए सबसे कम

Edit with WPS Office

दंड का प्रावधान किया गया था ।

7. शूद्र को सम्मान देने का निर्देश :

मनु ने यह भी निर्देश दिया कि वृद्ध शूद्र को सम्मान दिया जाना चाहिए , चाहे वह शिक्षित हो या नहीं ।

" वृद्ध शूद्रं मानाह कृत्वा द्विजातयो यथाशक्ति मनुस्मृति. 2.137

भावार्थ : वृद्ध शूद्र भी मान सम्मान के योग्य होता है , और उसे द्विजों से सम्मान मिलना चाहिए ।

8. सभी वर्ण परमात्मा के अंग है :

मनु के अनुसार , सभी वर्ण परमात्मा के अंग है , और कोई भी अंग तुच्छ या अस्पृश्य नहीं हो सकता ।

" ब्राह्मणोंऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य: कृत;
ऊरु तदस्य यदैश्य: पभ्दयां शूद्रों अजायत । " मनुस्मृति. 1.31

भावार्थ : ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण , बाहु से क्षत्रिय , जंघा से वैश्य और पैरों से शूद्र उत्पन्न हुए । यह प्रतीकात्मक है कि सभी वर्ण एक ही शरीर का अलग-अलग अंग है , और कोई भी अंग अस्पृश्य या तुच्छ नहीं हो सकता ।

समय के साथ , सामाजिक और राजनीतिक कारणों से मनुस्मृति में कई ऐसे श्लोक जोड़ दिए गए जो शूद्रों के प्रति कठोर और भेदभावपूर्ण थे । यह मिलावट इसलिए की गई ताकि मनुस्मृति का वास्तविक उद्देश्य बदल जाए और समाज में वर्ग विभाजन , भेदभाव और जातिगत भेद को मजबूत किया जा सके । महर्षि मनु का उद्देश्य समाज के हर वर्ग के लिए न्यायपूर्ण और संतुलित व्यवस्थाएं बनाना था । उन्होंने शूद्रों को भी समाज में समान

Edit with WPS Office

अधिकार और सम्मान के साथ रहने का अधिकार दिया ।

2. दंड और न्याय :

मनुस्मृति में कानून और न्याय की स्पष्ट रूप से व्याख्या की गई है , जिसमें दंड नीति , अपराध , और उनके दंड के प्रकारों का विस्तृत उल्लेख मिलता है । यह शास्त्र न केवल सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ हा बनाने के उद्देश्य से लिखा गया था , बल्कि व्यक्तिगत नैतिकता और आचरण के नियमों को भी स्थापित करता है । महर्षि मनु का मानना था कि दंड विधान ही शासन का वास्तविक आधार है , और राजा केवल उसका निमित्त मात्र है । मनु कहते हैं कि कठोर और न्याय पूर्ण दंड व्यवस्था एक स्वस्थ और सशक्त समाज के निर्माण के लिए अनिवार्य होता है ।
मनु के अनुसार , दंड का भय ही वह शक्ति है जो समाज में अनुशासन और शांति बनाए रखता है । अगर दंड व्यवस्था कमजोर होगी , तो समाज में अराजकता फैल जाएगी । राजा का काम केवल इस दंड व्यवस्था को लागू करना है , लेकिन असली शक्ति और नियंत्रण दंड विधान में निहित होता है । यह दृष्टिकोण आज भी अत्यधिक प्रासंगिक है , क्योंकि एक न्यायपूर्ण दंड नीति के बिना समाज में शांति और व्यवस्था बनाए रखना कठिन होता है । मनु ने अपराध की गंभीरता , अपराधी के सामाजिक पद और उसके बौद्धिक स्तर के अनुसार दंड का निर्धारण किया , जिससे हर व्यक्ति को उसके कर्म के अनुसार न्याय मिल सके ।

इस प्रकार , मनुस्मृति में दंड विधान को न केवल सामाजिक सुरक्षा के रूप में देखा गया है , बल्कि इसे नैतिकता और अनुशासन का संरक्षक भी माना गया है । यही कारण है कि मनु ने कठोर लेकिन न्याय पूर्ण दंड को समाज के स्वास्थ्य और स्थिरता के लिए अनिवार्य माना ।

3. स्त्रियों का स्थान :

मनुस्मृति के अन्तनिहित साक्ष्य स्पष्ट रूप से यह दर्शाते हैं कि महर्षि मनु की

Edit with WPS Office

स्त्री -विरोधी छवि भ्रांतियों पर आधारित है और पूरी तरह से तथ्यों के विपरीत है । मनु ने स्त्रियों से संबंधित जो व्यवस्थाएं दी है , वे न केवल उनके सम्मान , सुरक्षा , समानता और सद्भाव को बढ़ावा देती है , बल्कि न्याय की भावना से भी प्रेरित है । यहां कुछ प्रमुख प्रमाण प्रस्तुत है:

नारियों को सर्वोच्च महत्व :

महर्षि मनु उन पहले महापुरुषों में से एक हैं , जिन्होंने नारी के महत्व को सर्वोच्च स्थान दिया । उन्होंने स्त्री के सम्मान को लेकर एक उच्च आदर्श स्थापित किया , जो आज भी मान्य है :

" यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमन्ते तत्र देवता: ।
यत्रैता: तु न पूज्यंन्ते सर्वा : तत्राफला: क्रिया : ।। मनुस्मृति. 3.59

भावार्थ : जिस घर में नारियों का सम्मान होता है , वहां देवता निवास करते हैं , अर्थात वहां दिव्यता , सुख और समृद्धि होती है । जहां स्त्रियों का सम्मान नहीं होता , वहां सभी कार्य निष्फल हो जाते हैं । इस श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि मनु ने स्त्री को गृह लक्ष्मी और परिवार की धुरी माना , जो घर की शोभा , आधार और सौभाग्य का कारण होती है ।

पुत्र और पुत्री की समानता :

मनु ने नारी सम्मान के साथ-साथ पुत्र और पुत्री के बीच समानता का सिद्धांत भी प्रस्तुत किया , जो उनके समय में क्रांतिकारी विचार था । उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा :

" पुत्रेण दुहिता समा " मनुस्मृति. 9.130

भावार्थ : पुत्र और पुत्री समान है । यह विचार न केवल नारी सम्मान का प्रतीक है , बल्कि यह स्त्री की गरिमा को एक उच्च स्थान पर रखता है , जहां पुत्री भी पैतृक संपत्ति की अधिकारिणी मानी जाती है ।

Edit with WPS Office

पैतृक सम्पत्ति मैं समान अधिकार :

मनु ने पैतृक सम्पत्ति मैं भी पुत्र और पुत्री को समान अधिकार देने की व्यवस्था की । इसका प्रमाण निम्न श्लोक में मिलता है ।

" अविशेषेण पुत्राणां दायो भवति धर्मत: ।
मिथुनानां विसर्गादौ मनु: स्वायम्भुवोऽब्रवीत ।। " निरुक्त. 3.1.4

भावार्थ : सृष्टि के प्रारंभ में मनु ने यह विधान किया कि पैतृक संपत्ति में पुत्र - पुत्री का समान अधिकार होता है । यह विचार आधुनिक संवैधानिक न्याय व्यवस्था के अनुरूप है , जो स्त्रियों के प्रति न्याय और समानता को बढ़ावा देता है ।

स्त्रियों के धन की सुरक्षा :

मनु ने स्त्रियों के धन की सुरक्षा के लिए भी विशेष निर्देश दिए । उन्होंने कहा कि कोई भी , चाहे वह परिवार का सदस्य ही क्यों न हो , स्त्रियों के धन पर कब्जा नहीं कर सकता । ऐसा करने वालों को चोर की तरह दंडित किया जाना चाहिए ।

" स्त्रींधनं हस्तग्रहणं चोरेण सदृश भवेत् " । मनुस्मृति. 9.212

भावार्थ : स्त्रियों के धन का हरण चोरी के समान अपराध माना जाएगा , और इसे गंभीरता से दंडित किया जाएगा ।

अपराधों के लिए कठोर दंड :

मनु ने स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों के लिए कठोर दंड का प्रावधान किया । स्त्रियों की हत्या या अपहरण करने वालों को मृत्युदंड और बलात्कारियों के

Edit with WPS Office

लिए यातनापूर्ण दंड का विधान किया ।

" स्त्रियों के प्रति अपराध करने वालों के लिए मृत्युदंड और देश निकाला का प्रावधान हो । " **मनुस्मृति. 8.323 ; 9.232**

अर्थात : स्त्रियों की सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए मनु ने उनके प्रति अपराध करने वालों के लिए कठोर दंड निर्धारित किए , जिससे समाज में उनका सम्मान और सुरक्षा सुनिश्चित हो सके ।

वैवाहिक स्वतंत्रता और अधिकार :

मनु ने स्त्रियों को वैवाहिक स्वतंत्रता भी दी । उन्होंने कन्याओं को योग्य पति चुनने का अधिकार दिया और स्वयंम्वर विवाह का समर्थन किया :

" कन्या स्वयं वरमहति। " मनुस्मृति. 9.90 - 91

अर्थ : कन्या को अपने पति के चयन की स्वतंत्रता है । इसके साथ ही , मनु ने विधवाओं के पुनर्विवाह का अधिकार भी दिया , जो उस समय की समाज व्यवस्था में एक बड़ी प्रगतिशील सोच थी ।

मनुस्मृति में स्त्रियों के सम्मान और सुरक्षा के लिए स्पष्ट और सशक्त व्यवस्थाएं दी गई है । मनु ने नारी को केवल परिवार का आधार ही नहीं माना , बल्कि उसे सामाजिक और धार्मिक दृष्टिकोण से सर्वोच्च स्थान दिया । उनकी व्यवस्थाओं में स्त्रियों को समाज में समानता , सुरक्षा और अधिकारों की पूरी गारंटी दी गई है । आज के समय में स्त्री अधिकारों को लेकर जो विचारधारा है , उसका आधार भी मनु की इन व्यवस्थाओं में ही पाया जा सकता है ।

4. आर्थिक और सामाजिक नियम :

Edit with WPS Office

मनुस्मृति न केवल धार्मिक और नैतिक व्यवस्थाओं पर ध्यान देती है , बल्कि इसमें आर्थिक व्यवहार , व्यापार और संपत्ति के अधिकारों का भी विस्तार से वर्णन मिलता है । यह प्राचीन ग्रंथ समाज के सभी वर्गों के लिए एक सुसंगठित आर्थिक ढांचा प्रदान करता है , ताकि समाज में नैतिक और धार्मिक आचरण को बनाए रखते हुए समृद्धि और संतुलन बना रहे ।

आर्थिक नियमों का विवरण : मनु ने संपत्ति के अधिकार , आर्थिक व्यवहार और व्यापार के सिद्धांतों को स्पष्ट किया है । उन्होंने यह व्यवस्था दी कि संपत्ति के अधिकार जाति या वर्ग पर आधारित न हो , बल्कि उन्हें योग्यता और सामाजिक कर्तव्यों के अनुसार विभाजित किया जाए । मनु के अनुसार , संपत्ति का संरक्षण और उसका सही उपयोग समाज की स्थिरता और विकास के लिए आवश्यक है व्यापार और अन्य आर्थिक गतिविधियों में नैतिकता को प्राथमिकता दी गई है , ताकि समाज के विभिन्न वर्गों के बीच समानता और न्याय का संतुलन बना रहे । मनु ने यह भी स्पष्ट किया कि आर्थिक कार्यों में धोखाधड़ी , भ्रष्टाचार , और अनुचित लाभ लेना समाज के पतन का कारण बन सकते हैं ।

सामाजिक नियमों का विवरण : सामाजिक नियमों के संदर्भ में मनु ने नैतिकता और धार्मिक आचरण को समाज की आधारशिला माना । उन्होंने समाज के हर व्यक्ति को उसके कर्तव्यों के प्रति जागरूक किया , चाहे वह किसी भी वर्ण या वर्ग से हो । मनु का विचार था कि सामाजिक व्यवस्था का प्रमुख उद्देश्य समाज में सद्भाव , शांति , और अनुशासन बनाए रखना है । मनुस्मृति में कहां गया है कि हर व्यक्ति अपने व्यक्तिगत कर्तव्यों और समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझकर आचरण करें । धर्म , नैतिकता , और आर्थिक संतुलन को एक साथ रखते हुए , समाज को प्रगति की ओर ले जाने के लिए नियम बनाए गए हैं ।

मनुस्मृति में आर्थिक और सामाजिक नियम एक संगठित और संतुलित समाज की स्थापना के लिए बनाए गए थे । आर्थिक व्यवहार में नैतिकता को सर्वोच्च स्थान देकर मनु ने एक ऐसा समाज निर्माण करने का प्रयास

Edit with WPS Office

किया , जहां आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय एक साथ चले । उनके सामाजिक नियम आज भी यह संदेश देते हैं कि एक समाज तभी स्थिर और समृद्ध हो सकता है , जब उसके नागरिक अपने नैतिक और धार्मिक कर्तव्यों का पालन करें ।

परिवार और समाज की जिम्मेदारियां : मनुस्मृति में परिवार और समाज के प्रति कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन है । इसमें यह बताया गया है कि पति - पत्नी , माता-पिता , और बच्चों के कर्तव्य क्या होने चाहिए । आज के समय में , जब पारिवारिक मूल्य कमजोर हो रहे हैं , और लोगों में एक दूसरे के प्रति सहानुभूति की कमी है , मनुस्मृति हमें परिवार के प्रति जिम्मेदारी और कर्तव्य की भावना को समझने में सहायता करती है , यह ग्रंथ हमें यह सिखाता है कि एक सुदृढ़ हा परिवार कैसे समाज का आधार बन सकता है , और किस प्रकार पारिवारिक अनुशासन समाज की उन्नति के लिए आवश्यक है ।

5. कर्मकांड और धार्मिक अनुष्ठान :

मनुस्मृति में वैदिक कर्मकांडों और धार्मिक अनुष्ठानों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है । मनु के अनुसार , इन धार्मिक कर्तव्यों का पालन केवल व्यक्तिगत मुक्ति या आध्यात्मिक उत्थान के लिए ही नहीं , बल्कि पूरे समाज की समग्रता और संतुलन के लिए आवश्यक है । धर्म और कर्मकांड का पालन समाज के प्रत्येक व्यक्ति को उसकी भूमिका और कर्तव्यों से जोड़ता है , जिससे समाज में अनुशासन , सामंजस्य और स्थिरता बनी रहती है ।

धार्मिक कर्तव्यों का महत्व : मनु ने यह बताया है कि धार्मिक अनुष्ठानों का महत्व केवल बाहरी कर्मकांडों में नहीं , बल्कि इन अनुष्ठानों के माध्यम से प्राप्त होने वाले मानसिक और आध्यात्मिक शुद्धिकरण में है । धार्मिक कर्तव्यों का पालन करते हुए व्यक्ति न केवल अपने व्यक्तिगत जीवन को संतुलित करता है , बल्कि समाज में भी एक सकारात्मक और धार्मिक वातावरण की स्थापना करता है । यज्ञ , व्रत , और समाज में सामूहिक

Edit with WPS Office

चेतना का विकास करते हैं ।

समाज और व्यक्तिगत जिम्मेदारी : मनु के अनुसार , हर व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपने धर्म और कर्मकांडों का पालन करें , जिससे व्यक्तिगत मुक्ति के साथ-साथ समाज में शांति और समृद्धि का भी मार्ग प्रशस्त हो । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि धार्मिक कर्तव्यों का त्याग केवल व्यक्ति के लिए हानिकारक नहीं है , बल्कि यह पूरे समाज की संतुलन व्यवस्था को भी प्रभावित करता है ।

मनु का दृष्टिकोण यह था कि वैदिक अनुष्ठान और कर्मकांड केवल धार्मिक प्रथाओं तक सीमित न होकर समाज में नैतिकता , अनुशासन , और सहयोग की भावना को बढ़ाने का एक साधन है। । उन्होंने धार्मिक कर्तव्यों को समाज के प्रत्येक वर्ग और व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण माना , ताकि समाज का विकास और संतुलन बना रहे ।

मनुस्मृति में प्रायश्चित और आत्म - सुधार का उल्लेख है । यह माना जाता है कि यदि व्यक्ति से कोई गलती हो जाती है , तो उसे सुधारने के लिए प्रायश्चित करना चाहिए और भविष्य में उन गलतियों को न दोहराने का संकल्प लेना चाहिए । परंतु यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि प्रायश्चित से किए हुए कर्मों के फल नहीं कटते हैं ।

6. महर्षि मनु का भारतीय समाज में योगदान :

महर्षि मनु का योगदान भारतीय संस्कृति और विश्व सभ्यता के इतिहास में अतुल्यनीय है । वे पहले ऐसे व्यक्तित्व हैं जिन्होंने मानव समाज को एक व्यवस्थित , नैतिक और आदर्श जीवन जीने की दिशा दिखाई । महर्षि मनु को ' आदि पुरुष ' कहा जाता है , क्योंकि वे मानवता के प्रथम धर्मशास्त्रकार , विधिप्रवर्तक और समाज व्यवस्थित करने वाले व्यक्ति माने जाते हैं । उनके द्वारा उपदेशित " मनुस्मृति " मानव जीवन के नियमों , सामाजिक ढांचे और धार्मिक आचरण की महत्वपूर्ण नींव मानी जाती है ।

Edit with WPS Office

महर्षि मनु को भारतीय संस्कृति में धर्म , समाज और राजनीति का पहला व्यवस्थापक माना गया है । उन्होंने यज्ञ परंपरा का प्रारंभ किया और " धर्म " की आधारशिला रखी । मनुस्मृति को सबसे प्राचीन और प्रामाणिक स्मृति ग्रंथ माना गया है , जिसमें नैतिकता , न्याय व्यवस्था , सामाजिक व्यवस्था और धार्मिक अनुष्ठानों के विस्तृत नियम दिए गए हैं । महर्षि वाल्मीकि ने रामायण में मनु का उल्लेख एक प्रामाणिक धर्मशास्त्रज्ञ के रूप में किया है , और श्री राम ने भी अपने जीवन के आदर्शों को न्याय संगत सिद्ध करने के लिए मनु के श्लोकों का उदाहरण दिया । महाभारत में भी मनु को सर्वोच्च धर्मशास्त्री और न्याय शास्त्री के रूप में दर्शाया गया है । वैदिक साहित्य से लेकर विभिन्न शास्त्रों में महर्षि मनु की प्रशंसा की गई है , और उन्हें औषध के समान हितकारी बताया गया है ।

आधुनिक भारत के विभिन्न महापुरुषों ने भी महर्षि मनु की अत्यधिक प्रशंसा की है जैसे महर्षि दयानंद सरस्वती , अरविंदो घोष , रविंद्र नाथ टैगोर , डॉ राधाकृष्णन ने मनु की विधानों को अनुकरणीय माना है । न्यायविदों ने भी मनुस्मृति को " अथारिटी " के रूप में स्वीकार किया है , और संविधान प्रस्तुत करते समय डॉक्टर अंबेडकर को ' आधुनिक मनु , की संज्ञा दी गई थी , जिससे मनु की परंपरा को आधुनिक संदर्भ में भी मान्यता मिली ।

7. महर्षि मनु की वैश्विक प्रतिष्ठा :

महर्षि मनु की प्रतिष्ठा सिर्फ भारत तक सीमित नहीं है , बल्कि वैश्विक स्तर पर भी उनकी विधानों को सराहा गया है । ब्रिटेन , अमेरिका और जर्मनी की प्रकाशित इनसाइक्लोपीडियां में मनु को मानव जाति का आदि पुरुष , धर्मशास्त्रकार और विधि प्रवर्तक माना गया है । पश्चिमी विद्वानों जैसे मैक्समूलर ,ए.ए मैकडांनल , और लुइसरेनो ने मनुस्मृति को एक धार्मिक ग्रंथ के साथ-साथ विधियों की पुस्तक के रूप में भी माना जाता है ।

जर्मन दार्शनिक फ्रेडरिक नीत्शे ने मनुस्मृति को बाइबल से बेहतर ग्रंथ कहा

Edit with WPS Office

और इसे एक उत्कृष्ट मार्गदर्शनक के रूप में वर्णित किया। भारत के सुप्रीम कोर्ट के तत्कालीन जज सर विलियम जॉन्स ने भारतीय विवादों के निर्णय में मनुस्मृति की अपरिहार्यता को देखकर संस्कृत सीखी और इसका संपादन भी किया।

एशियाई देशों में मनु का प्रभाव :

एशियाई देशों जैसे बाली द्वीप , बर्मा , फिलिपींस , थाईलैंड , दक्षिणी वियतनाम , कंबोडिया , श्रीलंका और नेपाल में मनु का प्रभाव गहरा रहा है। इन देशों के प्राचीन शिलालेखों में मनु के धर्मशास्त्र और उनके द्वारा स्थापित वर्ण व्यवस्था का उल्लेख मिलता है। राजा और शासक स्वयं को मनु का अनुयायी कहने में गर्व अनुभव करते थे। दक्षिण वियतनाम में राजा जयइंद्रवर्मदेव और कंबोडिया में राजा यशोवर्मा के शिलालेखों में मनु के नियमों का पालन करने की स्पष्ट झलक मिलती है। फिलीपींस मैं वहां के आचार - संहिता के निर्माण में मनु और लाओत्सो की स्मृति का योगदान मान्य है। यहां तक की वहां की विधानसभा के द्वार पर इन दोनों की मूर्तियां स्थापित की गई है।

मनु का योगदान : एक गौरवशाली धरोहर :

महर्षि मनु का योगदान सिर्फ धार्मिक और सांस्कृतिक सीमाओं तक सीमित नहीं है। उनकी विधियां और नैतिक सिद्धांत आज भी भारतीय समाज में गहराई से रचे - बसे हैं। मनुस्मृति का वैश्विक प्रभाव इस बात का प्रमाण है कि उनके सिद्धांतों ने न केवल भारतीय समाज बल्कि विश्वभर के कानूनविदों और दार्शनिकों को प्रभावित किया।

विशेष ध्यान : आज के समय में , मनुस्मृति के नाम पर कई अलग-अलग ग्रंथ उपलब्ध है , लेकिन उनकी प्रमाणिकता को लेकर कई सवाल उठते हैं। वर्तमान में मिलने वाली मनुस्मृति में लगभग 2685 श्लोक पाए जाते हैं , जिनमें से 1471 श्लोक मिलावटी या प्रक्षिप्त माने जाते हैं। इतिहास के

Edit with WPS Office

कुछ विकृत घटनाक्रम , आक्रमणों , और षड्यंत्रों के कारण मनुस्मृति के कुछ हिस्सों में परिवर्तन और मिलावट की गई , जिसके परिणाम स्वरुप समाज में भेदभाव , जातिवाद और अन्य कुरीतियों ने जन्म लिया । मनुस्मृति का यह विकृत रूप , जो समाज में विभाजन और असमानता का कारण बना , महर्षि मनु की मौलिक शिक्षाओं से बहुत दूर है । ऐसे मिलावटी संस्करणों का अध्ययन करना न केवल भ्रामक है , बल्कि यह महर्षि मनु की वास्तविक शिक्षाओं के साथ अन्याय भी है । इसलिए , हमें 1214 श्लोकों वाली विशुद्ध मनुस्मृति , डॉक्टर सुरेंद्र कुमार द्वारा भाष्य , का ही अध्ययन करना चाहिए । यह शुद्ध संस्करण ही महर्षि मनु के मूल विचारों और उपदेशों का सही प्रतिनिधित्व करता है ___ जो नैतिकता , सामाजिक संगठन , और धर्म के अनुशासन को अनमोल रूप में प्रस्तुत करता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 153. ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य एक महत्वपूर्ण जीवन शैली और आध्यात्मिक साधना है , जिसे सनातन धर्म और योग के मार्ग में बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है । इसका शाब्दिक अर्थ है " ब्रह्म " (सत्य , परमात्मा) और " चर्य " (आचरण) , अर्थात ब्रह्म में रमण करना , या ईश्वर की ओर उन्मुख जीवन जीना । यह केवल यौन संयम तक सीमित नहीं है , बल्कि जीवन के सभी क्षेत्रों में संयम और आत्म - नियंत्रण की साधना है ।

Edit with WPS Office

ब्रह्मचर्य के मूल सिद्धांत :

1. **शारीरिक संयम :** यौन गतिविधियों से दूर रहना और शरीर की ऊर्जा को बचाना । यह शक्ति को उच्च आध्यात्मिक और मानसिक उद्देश्यों की ओर निर्देशित करने में सहायक होता है ।

2. **मानसिक संयम :** मन और विचारों पर नियंत्रण रखना , ताकि किसी भी प्रकार की अनैतिक इच्छाओं से मुक्ति पाई जा सके ।

3. **भौतिक संयम :** भोग - विलास , अनावश्यक सुख सुविधाओं , और लालसाओं से बचना । इसका उद्देश्य मितव्ययी और सरल जीवन जीना है ।

4. **आध्यात्मिक साधना :** ब्रह्मचर्य का अंतिम उद्देश्य ईश्वर , सत्य या आत्म - साक्षात्कार की और उन्मुख होना है । यह व्यक्ति को ध्यान , प्रार्थना और आध्यात्मिक ज्ञान के माध्यम से आत्मा की उन्नति की दिशा में मार्गदर्शन करता है ।

ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले दो प्रकार के साधक :

ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले पुरुष और स्त्रियों को दो मुख्य श्रेणियां में विभाजित किया जाता है । दोनों ही श्रेणियों के साधक अपने जीवन को संयम , अनुशासन और उच्च आदर्शों के अनुसार जीते हैं , लेकिन उनके जीवन के उद्देश्य और पालन के तरीके भिन्न होते हैं । आइए इन दोनों प्रकारों को विस्तार से समझे :

1. नैष्ठिक ब्रह्मचारी :

नैष्ठिक ब्रह्मचारी वे होते हैं जो जन्म से मृत्यु तक ब्रह्मचर्य का कठोरता से पालन करते हैं । इनका जीवन पूर्णतः संयम और आत्म नियंत्रण पर

Edit with WPS Office

आधारित होता है । ऐसे ब्रह्मचारी विवाह नहीं करते और यौन जीवन से पूरी तरह विरक्त रहते हैं । उनका जीवन पूरी तरह से आध्यात्मिक साधना , सेवा , और समाज के उत्थान के प्रति समर्पित होता है । उदाहरण : महावीर हनुमान , भीष्म पितामह , आदि शंकराचार्य और महर्षि दयानंद सरस्वती नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के आदर्श उदाहरण माने जाते हैं । इन महापुरुषों ने ब्रह्मचर्य का पालन कर समाज और धर्म की सेवा की और जीवन को उच्च आध्यात्मिक उद्देश्य की ओर समर्पित किया ।

2. उपकुर्वाणक ब्रह्मचारी :

उपकुर्वाणक ब्रह्मचारी वे होते हैं जो विवाह करते हैं , परंतु उनका यौन जीवन कामवासना से प्रेरित नहीं होता । इनके विवाह और संतानोंत्पत्ति का उद्देश्य संस्कारित , शक्तिशाली और चरित्रवान संतानों का निर्माण करना होता है । ये ऋतुकाल का पालन करते हुए संयमित जीवन जीते हैं और अपने विवाहित जीवन के प्रति संतुष्ट रहते हैं ।

विशेषता : उपकुर्वाणक ब्रह्मचारी पर - स्त्री और पर - पुरुष के प्रति कभी भी राग या आकर्षण नहीं रखते । उनका जीवन अत्यंत मर्यादित और संयमित होता है ।

उदाहरण : हमारे प्राचीन ग्रंथो में कई उपकुर्वाणक ब्रह्मचारियों का उल्लेख मिलता है , जिन्होंने संतानों के निर्माण में ध्यान देते हुए एक नैतिक और संतुलित जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया । उदाहरण : श्री राम , श्री कृष्ण ।

ब्रह्मचर्य का उद्देश्य :

1. **शारीरिक और मानसिक शक्ति की वृद्धि :** यौन संयम और भौतिक संयम के माध्यम से व्यक्ति अपनी शारीरिक और मानसिक शक्ति को संरक्षित कर सकता है और उसका उपयोग उच्च उद्देश्यों के लिए कर

Edit with WPS Office

सकता है ।

2. **आत्म - संयम और आत्म - नियंत्रण :** ब्रह्मचर्य का पालन करने से व्यक्ति अपने विचारों , इच्छाओं और भावनाओं पर नियंत्रण पा सकता है । यह आत्म - अनुशासन को विकसित करता है ।

3. **आध्यात्मिक उन्नति :** ब्रह्मचर्य का अंतिम उद्देश्य आत्मा की उन्नति और ईश्वर से मिलन है । यह व्यक्ति को मोह - माया और काम - वासना से ऊपर उठाकर सत्य , ज्ञान और आनंद की ओर ले जाता है ।

4. **ध्यान और साधना में सहायता :** ब्रह्मचर्य का पालन करने से ध्यान की शक्ति बढ़ती है , जिससे साधक अपने मानसिक विकारों को शांत कर सकता है और ध्यान में गहराई से उतर सकता है ।

5. **समाज और जीवन के प्रति जिम्मेदारी :** ब्रह्मचर्य व्यक्ति को समाज और परिवार के प्रति अधिक जिम्मेदार और कर्तव्यनिष्ठ बनाता है । यह उसे एक अनुशासित और नैतिक जीवन जीने के लिए प्रेरित करता है ।

ब्रह्मचर्य केवल यौन संयम तक सीमित नहीं है ; यह जीवन के सभी क्षेत्रों में संयम , आत्म - नियंत्रण और उच्च आध्यात्मिक उद्देश्यों की प्राप्ति का मार्ग है । इसके माध्यम से व्यक्ति न केवल शारीरिक और मानसिक शक्ति प्राप्त कर सकता है , बल्कि आत्म - साक्षात्कार और मोक्ष की दिशा में भी अग्रसर हो सकता है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 154. आर्य कौन है

आर्य कौन है यह जानने से पहले हमें आर्य शब्द का अर्थ जानना पड़ेगा " आर्य " शब्द की जड़ें वेदों में निहित है , और इसका अर्थ उन व्यक्तियों से है जो सभ्यता , शिष्टता , परोपकार , वैज्ञानिक दृष्टिकोण और मानवीय गुणों से ओत - प्रोत होते हैं । " आर्य " की पहचान जन्म से नहीं , बल्कि कर्म से होती है । वैदिक ग्रंथों में यह कई स्थानों पर स्पष्ट किया गया है कि सभी मनुष्य जन्म से समान होते हैं , लेकिन जो लोग श्रेष्ठ कर्म और आदर्श गुणों को अपनाते हैं , वे आर्य कहलाते हैं । इसके विपरीत , जो व्यक्ति दुष्ट कर्मों में लिप्त होते हैं , उन्हें दस्यु कहां जाता है ।

आर्यों के लक्षण :

" आर्य " किसी एक देश या जाति तक सीमित नहीं है । इस शब्द का प्रयोग वेदों में श्रेष्ठ , आदर्श और उच्च गुणों से संपन्न पुरुषों के लिए किया गया है । चाहे कोई किसी भी देश या जाति से क्यों न हो , अगर वह आदर्श आचरण और सद्गुणों का पालन करता है , तो उसे " आर्य " कहां जाता है ।

वेदों में आर्य का महत्व :

वेदों में आर्य शब्द का उल्लेख एक विशेष आदर और सम्मान के साथ हुआ है । **ऋग्वेद (मंडल 4 , सुक्त 26 , मंत्र 2)** में ईश्वर स्वयं कहते हैं : **" अहम् भूमिमघम आर्यायं "** अर्थात " में यह भूमि आर्यों को देता हूं । " यह आर्यत्व की सार्वभौमिकता और सार्वकालिकता को दर्शाता है । आर्य कभी भी कायरता का परिचय देकर दस्युओं से छिपते नहीं , बल्कि वे सदा साहस और नैतिकता के प्रतीक रहे हैं ।

Edit with WPS Office

महाकाव्यों में आर्य का प्रयोग :

आर्य शब्द केवल वेदों तक ही सीमित नहीं हैं , बल्कि महाकाव्य जैसे महाभारत और रामायण में भी इसका कई स्थानों पर उल्लेख मिलता है । माता सीता भगवान राम को आर्य पुत्र कहकर संबोधित करती है , जो उनके उच्च आदर्शों और गुणों की प्रतीक है । इसी प्रकार , महाभारत में द्रोपती और भगवान कृष्ण भी अर्जुन को " आर्यपुत्र " के रूप में संबोधित करते हैं ।

आर्य: एक गुण , एक आदर्श :

हमारे इतिहास और शास्त्रों में " आर्य " शब्द का विस्तृत वर्णन मिलता है । आर्य होने का अर्थ है श्रेष्ठ विचारों , उत्तम आचरण और उत्कृष्ट कर्मों को अपनाना । इसके विपरीत , जो लोग इन गुणों का त्याग करते हैं , उन्हें दस्यु या अनार्य कहा जाता है । आर्यत्व का मापदंड सदैव गुणों और कर्मों पर आधारित होता है , न कि किसी जाति , धर्म या जन्म पर ।

ईश्वर का उपदेश : आर्यत्व का मार्ग :

ऋग्वेद. 9.63.5 में ईश्वर हमें स्पष्ट रूप से उपदेश देते हैं :

" इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुर: कृण्वन्तो विश्वमार्यम अपघन्तो अराव्ण: ।। हे मनुष्य ! अपना ऐश्वर्य , धन , संपदा और बल को बढ़ाओ , और फिर समस्त संसार को आर्य (श्रेष्ठ) बनाओं । दुष्ट और राक्षसी प्रवृत्तियां इस मार्ग में बांधा बने , उनका सर्वनाश करो । "

इस मंत्र से स्पष्ट होता है कि हम सभी आर्यवंश की संताने हैं । हमारे पूर्वजों ने श्रेष्ठ आचरण , उदारता और नैतिकता का पालन किया , जिससे वे आर्य कहलाए । लेकिन कालांतर में , हमने उन महान कर्मों और आदर्शों को त्याग दिया और दुष्ट प्रवृत्तियों को अपना लिया । यही कारण है कि आज "आर्य " कहलाने के योग्य कोई व्यक्ति ढूंढना दुर्लभ हो गया है । आर्यत्व से दूर होने

Edit with WPS Office

का मूल कारण हमारे वैदिक शास्त्रों और शिक्षाओं से विमुख होना है । वैदिक ज्ञान , जो कभी हमारे जीवन का आधार था , उसका अध्ययन और पालन धीरे-धीरे लुप्त होता जा रहा है । इसी कारण से हम अपने मूल आदर्शों और संस्कारों से भटक गए हैं । यदि हमें फिर से आर्य बनना है , तो तो हमें पुनः वेदों और वैदिक ग्रंथों का गहन अध्ययन और पालन करना होगा , ताकि हम अपने श्रेष्ठ कर्मों और गुणों को पुनः प्राप्त कर सकें ।

आर्यों की प्रारंभिक उत्पत्ति :

आदि सृष्टि के आरंभ में , जब ईश्वर ने मनुष्य को ज्ञान प्रदान किया , वह संस्कृत भाषा में वेदों का ज्ञान था । यही कारण है कि सभी वैदिक शास्त्रों की भाषा संस्कृत है , और यह माना जाता है कि संसार की सभी भाषाओं की जननी संस्कृत ही है । इसी के अनुसार , आर्यों की प्रारंभिक भाषा भी संस्कृति थी । संसार की उत्पत्ति के समय सर्वप्रथम मानव ने त्रिविष्टप , अर्थात वर्तमान तिब्बत , में जन्म लिया । ईश्वर ने सबसे पहले आर्यों को वेदों का ज्ञान दिया , और तभी से हमारे ऋषि - मुनियों ने पुरुषार्थ से वैदिक ग्रंथों की रचना आरंभ की ।

वेदों से विज्ञान और ज्ञान का प्रसार :

आज संसार में जितनी भी विद्याएं और ज्ञान की धाराएं हैं , उनका मूल वेदों में ही निहित है । समय के साथ जब मानव समाज में आपसी वैमनस्य और संघर्ष बढ़ा , तब आर्य और अनार्य के बीच द्वंद्व प्रारंभ हुआ । इस संघर्ष के परिणाम स्वरूप अनार्यो को समाज से बहिष्कृत कर दिया गया , और वे विभिन्न स्थानों पर बसने लगे । इसके बाद आर्य भी अन्य क्षेत्रों की ओर बढ़ने लगे , और भारत की भूमि का नाम आर्यों के बसने के कारण " आर्यत्व " पड़ा ।

आर्यों का विस्तार और भौगोलिक परिवर्तन :

Edit with WPS Office

आर्यों के परिप्रेक्ष्य में , जो लोग दुष्ट प्रवृत्तियों वाले थे , वे संसार के अन्य हिस्सों जैसे __ चीन , अमेरिका , अफ्रीका , आदि में बस गए । समय के साथ , भौगोलिक स्थितियों के प्रभाव के कारण उनके रंग , रूप और शारीरिक संरचना में परिवर्तन आने लगा । जब मानव समाज में भोग - विलास और प्रमाद का उदय हुआ , तब वेंदिक शिक्षा का हास होना शुरू हुआ । जैसे-जैसे भोगवाद बढ़ता गया , आर्यों ने आर्यवर्त से विमान आदि साधनों द्वारा अन्य देशों , विशेषकर यूरोप और अन्य पश्चिमी क्षेत्रों की यात्रा की । कई आर्य अन्य देशों में जाकर बस गए और वहां की सभ्यताओं का हिस्सा बन गए । इस प्रवृत्ति से आधुनिक समाज का निर्माण हुआ ।

आर्य बाहर से नहीं , यही के थे :

इस प्रक्रिया से यह स्पष्ट होता है कि आर्य कहीं बाहर से आकर भारत में नहीं बसे थे , बल्कि आर्यावर्त (भारत) से ही लोग धीरे-धीरे अन्य देशों में जाकर बसे । इस तथ्य के आधार पर , यह सिद्ध होता है कि आर्यों की उत्पत्ति और प्रसार भारत से ही हुआ , और विभिन्न देशों में जाकर वे वहां की सभ्यता और समाज का हिस्सा बने ।

आर्यावर्त से भारत तक की यात्रा :

महाभारत के आदि पर्व मैं वर्णित कथा के अनुसार , यह मान्यता है कि ऋषि विश्वामित्र और अप्सरा मेनका की पुत्री शकुंतला का विवाह पुरुवंशी राजा दुष्यंत से हुआ था । उनके पुत्र भरत , जो एक पराक्रमी और यशस्वी राजा थे , के नाम पर इस भूमि का नाम " भारत " पड़ा । राजा भरत के साहस और नेतृत्व के कारण यह भूमि धीरे-धीरे " भारतवर्ष " के नाम से प्रसिद्ध हो गई । कवि कालिदास के महाकाव्य अभिज्ञानशाकुंतलम् में भी इसका उल्लेख मिलता है , जो इस नाम की उत्पत्ति का समर्थन करता है ।

इत्सिंग का यात्रा वृतांत: भारत को आर्य देश कहा गया :

Edit with WPS Office

सातवीं शताब्दी के प्रसिद्ध चीनी यात्री इत्सिंग ने अपने यात्रा वृतांत " इत्सिंग " का भारत "(पृष्ठ 75) में उल्लेख किया है कि उस समय मध्य एशिया के लोग इस देश को " हिंदू " कहते थे । हालांकि , भारत में इस नाम का कोई प्रचलन नहीं था । इत्सिंग के अनुसार , इस भूमि का वास्तविक नाम आर्यदेश , ब्रह्मदेश , और जम्मूद्वीप था । उन्होंने कहा कि भारत के निवासियों को " हिन्दू " शब्द का कोई ज्ञान नहीं था , और उस समय यह भूमि " आर्यदेश " के नाम से जानी जाती थी ।

" हिंदू " और " इंडिया " की उत्पत्ति :

भारत का नाम " हिंदू " और "इंडिया " तब प्रसिद्ध हुआ जब मुस्लिम आक्रमणकारियों और अन्य बहारी शक्तियों ने इस पर आक्रमण किया । फारसी आक्रमणकारियों ने इस भूमि को हिंदू कहा , जबकि यूनानी इसे इंडो के नाम से जानते थे । ये दोनों नाम " सिंधु " नदी के अपभ्रंश माने जाते हैं , जो कालांतर में " हिंदू " और " इंडिया " में बदल गए ।

गुलामी का युग और नामकरण में परिवर्तन :

मुगल और ब्रिटिश शासन के दौरान , भारत का नाम धीरे-धीरे परिवर्तित हुआ । पहले जिसे "आर्य देश " कहां जाता था , वही भूमि मुस्लिम आक्रमण के बाद "हिंदुस्तान " के नाम से जानी जाने लगी । अंग्रेजों के आगमन के बाद , इस भूमि का नाम " इंडिया " और इसके निवासियों को इंडियन कहां जाने लगा ।

आर्य से हिंदू तक का सफर :

भारत की इस यात्रा में " आर्य " शब्द , जो श्रेष्ठ गुणों और सभ्यता का प्रतीक था , धीरे-धीरे " हिंदू " में बदल गया । जहां कभी यह भूमि आर्य संस्कृति और वैदिक ज्ञान की ध्वजवाहक थी , वही आक्रमणों और विदेशी प्रभाव के कारण इसे " हिंदू " और फिर "इंडिया " के नाम से पहचाना जाने लगा । यह

Edit with WPS Office

नामकरण का बदलाव हमारी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर का एक महत्वपूर्ण पहलू है ।

आर्यन आक्रमण सिद्धांत : एक कपोल कल्पित कहानी :

Aryan invasion Theory **(आर्यन आक्रमण सिद्धांत)** पूरी तरह से काल्पनिक और मिथ्या पर आधारित है । इस सिद्धांत के पीछे एक गहरा षड्यंत्र काम कर रहा है , जिसका प्रमुख उद्देश्य भारत को नीचा दिखाना और जाति - पाति में बांटकर हिंदू समाज को विभाजित करना है । इस सिद्धांत का आधार केवल भ्रम फैलाना है , ताकि भारतीय समाज अपनी प्राचीन सभ्यता और एकता से दूर हो जाए । आर्यन आक्रमण सिद्धांत ने यह भ्रम फैलाने की कोशिश की है कि आर्य बाहरी आक्रांता थे , जिससे भारतीय समाज को भीतर से तोड़ने का प्रयास किया गया । जब हिंदू समाज यह सच्चाई समझेगा कि वे आर्यों की संतान है और उनकी संस्कृति का आधार वेदों में निहित है , तो उन्हें एक होने से कोई भी शक्ति रोक नहीं सकेगी ।

आने वाली पीढ़ी को सच बताने की आवश्यकता :

हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि हमारी आने वाली पीढ़ी इस झूठे सिद्धांत से भ्रमित न हो । उन्हें यह बताना अनिवार्य है कि हमारे पूर्वज कितने वैज्ञानिक , उन्नतिशील और महान थे । संसार में जितने भी महत्वपूर्ण आविष्कार हुए हैं , उनका मूल वेदों में है । वेदों ने केवल धार्मिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शन ही नहीं दिया , बल्कि वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी गहरा योगदान दिया है ।

हमारे आने वाली पीढ़ी को यह जानने का पूर्ण अधिकार है कि वे एक महान संस्कृति के ध्वजवाहक हैं । उन्हें अपनी जड़ों और सभ्यता पर गर्व होना चाहिए , और यह समझना चाहिए कि उनके पूर्वजों ने संसार के ज्ञान और विज्ञान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । हमें इस बात का ध्यान रखना है

Edit with WPS Office

कि यह सच्चाई नई पीढ़ी तक पहुंचे और वे गर्व के साथ अपनी सांस्कृतिक धरोहर को आगे बढ़ाएं ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 155. विवाह : उचित या अनुचित

आज के समय में विवाह का मूल उद्देश्य केवल जीवनसाथी का चयन नहीं , बल्कि भोग - विलास , मोह और सांसारिक सुखों से जुड़ चुका है । सही अर्थ में हम विवाह नहीं , बल्कि संगति का चयन करते हैं , क्योंकि दिन रात , सुबह शाम हमें अपने चुने हुए जीवनसाथी की संगति में ही रहना होता है । शास्त्रों में कहां गया है कि " जैसी संगति करोगे , वैसे बन जाओगे । " इसलिए विवाह से पहले सही जीवनसाथी का चुनाव करना बेहद महत्वपूर्ण है , ताकि दोनों के गुण और व्यवहार में सामंजस्य हो । विपरीत गुणों वाले व्यक्तियों के बीच संगति का परिणाम विनाशकारी हो सकता है ।

विवाह मानव जीवन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्राचीन सामाजिक संस्थान है । इसे संसार की लगभग सभी सभ्यताओं में विशेष स्थान प्राप्त है । विवाह की व्यवस्था समाज , परिवार और व्यक्ति के जीवन में कई महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती है । परंतु , जैसे-जैसे समय बदला है , विवाह को लेकर भी कई प्रश्न उठने लगे हैं ___ क्या विवाह उचित है या अनुचित ? इस पर विचार करना आवश्यक है कि विवाह के सामाजिक , धार्मिक , और व्यक्तिगत महत्व क्या है , और इसके पक्ष एवं विपक्ष में कौन से तर्क दिए जा

Edit with WPS Office

सकते हैं ।

विवाह : सामाजिक दृष्टिकोण से :

सामाजिक दृष्टिकोण से विवाह को एक ऐसा संस्थान माना जाता है जो परिवार की नींव रखता है । परिवार समाज का सबसे छोटा और महत्वपूर्ण इकाई होती है , और विवाह से ही परिवार की संरचना होती है । यह समाज में अनुशासन , नैतिकता और परंपराओं को बनाए रखने में सहायक होता है ।

विवाह सामाजिक ढांचे को स्थिरता और संतुलन प्रदान करता है । यह परिवार को एकजुट रखता है और समाज में नैतिक मूल्यों की रक्षा करता है । विवाह के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पारिवारिक मूल्य , संस्कार और परंपराएं स्थानांतरित होती है । विवाह के द्वारा दो परिवारों का मिलन होता है , जिससे आपसी सहयोग और संबंध बढ़ते हैं । यह समाज में एकजुटता को प्रोत्साहित करता है परंतु कई बार विवाह व्यक्ति की इच्छा के विरुद्ध केवल समाज की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए किया जाता है । इसके परिणाम स्वरूप लोग जीवन भर असंतोष का सामना करते हैं । कुछ व्यक्तियों के लिए विवाह एक ऐसी संस्था बन जाती है जिसमें वह स्वयं को बंधा हुआ अनुभव करते हैं । यह उनकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और विकास में बांधा डाल सकता है ।

विवाह : धार्मिक दृष्टिकोण से :

सनातन धर्म और अन्य धार्मिक परंपराओं में विवाह को एक पवित्र बंधन माना गया है । इसे केवल शारीरिक या सामाजिक संबंध नहीं , बल्कि एक आध्यात्मिक यात्रा के रूप में देखा जाता है । सनातन धर्म में विवाह को ' संसार धर्म ' कहां गया है , जिसमें व्यक्ति अपने गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करता है और धर्म अर्थ काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयास करता है । विवाह को धर्म , अर्थ और संतान की प्राप्ति का माध्यम माना गया है ।

Edit with WPS Office

इसके द्वारा व्यक्ति अपने कुल की वृद्धि और धर्म का पालन कर सकता है परंतु कुछ व्यक्तियों के लिए धार्मिक रीति रिवाज और विवाह से जुड़े कर्तव्यों का पालन बोझिल हो सकता है । इससे विवाह एक अनिवार्य सामाजिक और धार्मिक बंधन के रूप में अनुभव हो सकता है । कभी-कभी विवाह को अनिवार्य धार्मिक कर्तव्य मानकर व्यक्ति इसे केवल एक रस्म के रूप में देखता है , जबकि उनका मन इस संस्था को स्वीकार नहीं करता ।

विवाह : व्यक्तिगत दृष्टिकोण से :

व्यक्तिगत जीवन में विवाह का स्थान बेहद महत्वपूर्ण है । यह एक ऐसा बंधन होता है जो दो व्यक्तियों के बीच शारीरिक , मानसिक , और भावनात्मक जुड़ाव का प्रतीक है । विवाह से व्यक्ति को जीवन के कठिन समय में एक साथी का एक साथ मिलता है जो उनके सुख-दुख में साथ खड़ा रहता है । इसमें मानसिक और भावनात्मक संतुलन बना रहता है । विवाह से दोनों व्यक्ति जीवन की जिम्मेदारियों को साझा करते हैं , जिससे व्यक्तिगत तनाव कम हो सकता है और जीवन में संतुलन बना रह सकता है परंतु विवाह कई बार व्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित कर देता है । हर व्यक्ति के जीवन के निर्णयों में एक अन्य व्यक्ति का हस्तक्षेप आ जाता है , जिससे व्यक्तिगत इच्छाओं का हनन हो सकता है । सभी विवाह सफल नहीं होते । अगर दोनों व्यक्तियों के बीच तालमेल नहीं हो पाता , तो यह तनावपूर्ण स्थिति में बदल सकता है , जिससे मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है ।

मनुष्य जन्म और समय की सीमितता :

मनुष्य जन्म दुर्लभ है और यह हमें तपस्या के फल स्वरुप प्राप्त हुआ है । इसके साथ ही हमारे पास समय भी सीमित है , क्योंकि जन्म के साथ मृत्यु भी निश्चित हो जाता हैं । हमारे शास्त्रों में चार आश्रमों का उल्लेख किया गया है , जो मनुष्य जीवन की यात्रा को दर्शाते हैं : ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , और संन्यास । यदि आपकी रुचि ज्ञान और सत्य की खोज में है ,

Edit with WPS Office

तो शास्त्रों के अनुसार आपको ब्रह्मचर्य से सीधे संन्यास की ओर बढ़ना चाहिए परंतु यदि आप गृहस्थ जीवन में रुचि रखते हैं , तो आपको इन चारों आश्रमों से होकर गुजरना होगा । गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम में अधिकांश समय भौतिक इच्छाओं की पूर्ति और दायित्व को निभाने में व्यतीत हो जाता है , जिससे मोक्ष का मार्ग कठिन हो जाता है ।

उचित विवाह : वर - वधू का सही चुनाव :

शास्त्रों में विवाह की निषेधाज्ञा नहीं है , बल्कि यह कहां गया है कि उचित पात्र मिलने पर विवाह अवश्य करना चाहिए । अगर योग्य वर न मिले , तो कन्या को जीवन भर पिता द्वारा भरण पोषण करने की भी आज्ञा दी गई है । यहां 'उचित ' का अर्थ है कि वर - वधू के गुण , स्वभाव , चरित्र और जीवन के उद्देश्य एक समान हो । ऐसे मेल से ही गृहस्थ जीवन सुखी और सफल हो सकता है । आज के संदर्भ में देखा जाए तो वर के संदर्भ में धन , संपत्ति और कन्या के रूप सौंदर्य को प्रमुखता दी जाती है , जिनका गृहस्थ जीवन में सुख शांति से कोई संबंध नहीं है । यह सब अस्थायी है , आज है कल नहीं । इसके लिए विवाह करें , परंतु गलत विवाह करने से बचें ।

विवाह करना या न करना पूरी तरह से व्यक्तिगत निर्णय है । यह निर्णय आपके जीवन के उद्देश्य और प्राथमिकताओं पर आधारित होना चाहिए । विवाह को उचित या अनुचित ठहराना व्यक्तिगत अनुभवों , समाज और संस्कृति के दृष्टिकोण पर निर्भर करता है । विवाह जीवन की एक ऐसी प्रक्रिया है जो सही परिस्थितियों में अत्यंत लाभकारी हो सकता है , लेकिन अगर यह केवल समाज के दबाव या धार्मिक मान्यताओं के आधार पर किया जाता है , तो यह अनुचित भी हो सकता है । विवाह तभी सफल होता है जब यह दो व्यक्तियों की स्वेच्छा , प्रेम , और आपसी समझदारी पर आधारित हो । अतः यह कहना उचित होगा कि विवाह जीवन का एक अति महत्वपूर्ण अंग है , परंतु इसे चुनना या न चुनना प्रत्येक व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और स्थिति पर निर्भर करता है ।

Edit with WPS Office

मनुस्मृति में विवाह के आठ प्रकारों का विस्तृत वर्णन किया गया है ।

1. ब्राह्म विवाह **(मनुस्मृति. 3.27)**

" प्रेक्ष्य दत्त शीलाय वराय वधूं सुताम् ।
आहुब्राहा तु तं धम्र्य दारकल्याणमुत्तमम् ।।

भावार्थ : योग्य वर को , जो शीलवान हो और धर्म का पालन करता हो , कन्या का पिता अपनी पुत्री को शॉप देता है । इसे ब्राह्म विवाह कहा जाता है और इसे सबसे उत्तम तथा पवित्र विवाह माना गया है । इस विवाह में कोई धन या उपहार नहीं लिया जाता है , केवल कन्या का सौंपना ही विवाह होता है । इसे स्वयंवर विवाह भी कहा जाता है जिसमें कन्या अपने लिए योग्य वर चुनने के लिए स्वतंत्र होती है ।

2. दैव विवाह **(मनुस्मृति. 3.27)**

" यज्ञस्य ऋत्विजे दत्तवा स हविदैव समर्पयेत् ।
दैव धर्मर्य विदुब्राहयाद्ध्वं धर्मेणं प्राश्रयम् ।।

भावार्थ : जब यज्ञ में पुरोहित को कन्या प्रदान की जाती है , तो उसे दैव विवाह कहा जाता है । इस ब्राह्म विवाह के बाद दूसरा श्रेष्ठ विवाह माना गया है । इस प्रकार का विवाह धार्मिक क्रिया में भाग लेने वाले व्यक्ति के साथ किया जाता है ।

3. आर्ष विवाह **(मनुस्मृति. 3.29)**

" एकं गोमिथुनं चैव यत् कश्चित् सम्प्रदायते ।
आर्ष धमर्य प्रचक्षते धर्मेण दारकल्याणम् ।। "

Edit with WPS Office

भावार्थ : इस विवाह में वर पक्ष द्वारा कन्या के पिता को एक जोड़ा गाय और बैल प्रदान किया जाता है । इसे आर्ष विवाह कहां जाता है । इस प्रकार के विवाह में कन्या के पिता को आर्थिक लाभ नहीं दिया जाता है , बल्कि एक प्रतीकात्मक भेट दी जाती है ।

4. प्राजापत्य विवाह **(मनुस्मृति. 3.30)**

" कन्यामथै प्रतिगृहीयात् पतिरित्यब्रवीत् सुताम् ।
प्राजापत्यं तु धम्र्य विद्धि धर्मस्य स्थापनम् ।।

भावार्थ : इस विवाह में कन्या के पिता वर को यह कहते हुए कन्या प्रदान करते हैं कि वह धर्म का पालन करते हुए कन्या के साथ जीवन यापन करें । इसे प्राजापत्य विवाह कहां जाता है और यह विवाह पति-पत्नी के समान कर्तव्य और दायित्व पर आधारित होता है ।

5. आसुर विवाह **(मनुस्मृति. 3.31)**

" अर्थे गृहीत्वां यदित्त यत्कन्या संप्रयच्छति ।
आसुरं धम्र्य संज्ञातं तदिवाहं स्मृत बुधैः ।। "

भावार्थ : इस विवाह में वर द्वारा कन्या के पिता को धन देकर कन्या का वरण करना आसुर विवाह कहलाता है । इस अधम विवाह माना गया है क्योंकि यह आर्थिक लेनदेन पर आधारित होता है , जो वैदिक दृष्टि से उचित नहीं माना गया है ।

6. गंधर्व विवाह **(मनुस्मृति. 3.32)**

" कामात् संस्पृष्टयोर्दयोः समन्वेता प्रजायते ।
गंधर्व तु विवाह तं धम्र्य विदुरशुद्धये ।।

Edit with WPS Office

भावार्थ : परस्पर प्रेम और सहमति से वर और कन्या का विवाह गंधर्व विवाह कहलाता है । इसमे माता-पिता या समाज की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती । यह विवाह पूरी तरह से प्रेम पर आधारित होता है । लव मैरिज इसी विवाह का उदाहरण है ।

7. राक्षस विवाह **(मनुस्मृति. 3.33)**

" सिंह व्रत बलाधत्र कन्या हत्वा वधुबुरधा: ।
राक्षसं विवाहं तु तं वेदवक्ता प्रचक्षते ।।

भावार्थ : बलपूर्वक कन्या का हरण करके विवाह करना राक्षस विवाह कहलाता है । इसे वैदिक समाज में अस्वीकार्य और अधम विवाह माना गया है , क्योंकि इसमें कन्या की इच्छा का कोई स्थान नहीं होता है ।

8. पैशाच विवाह **(मनुस्मृति. 3.34)**

" सुप्तां मत्तां वा बालां वा स्त्रियां न ज्ञायते यथा ।
पैशाच तु विवाह तं धर्म नोपदिश्यते ।। "

भावार्थ : इस विवाह में नशे की अवस्था में या अज्ञानता में कन्या का वरण किया जाता है । इसे पैशाच विवाह कहा जाता है और यह सबसे अधम और निंदनीय विवाह माना गया है । वैदिक समाज में इसे पूर्णतः निषिद्ध और अनुचित माना गया है ।

इन आठ विवाह प्रकारों में **पहले चार (ब्राह्म , दैव , आर्ष और प्राजापत्य)** को धर्मसम्मत और श्रेष्ठ माना गया है , जबकि **अंतिम चार (आसुर , गंधर्व , राक्षस , पैशाच)** को निम्न और अस्वीकार्य माना गया है ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

• 156. वैदिक 16 संस्कार

वैदिक संस्कारों का सनातन धर्म और संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान है । संस्कारों का तात्पर्य " सुसंस्कृत करना " या "शुद्ध करना " होता है , जो व्यक्ति के जीवन को विभिन्न स्तरों पर शुद्ध और परिष्कृत करने के लिए किए जाते हैं । संस्कारों का संबंध जन्म-जन्मांतर का होता है इसलिए सनातन संस्कृति में मनुष्य के जन्म से मृत्यु पर्यंत तक 16 प्रमुख संस्कारों को करने की रीति हैं , जो व्यक्ति के जीवन के महत्वपूर्ण चरणों से जुड़े होते हैं । इनका उद्देश्य मनुष्य के शारीरिक , मानसिक , और आध्यात्मिक विकास को सुनिश्चित करना है । यहां हम 16 वैदिक संस्कारों का वर्णन और उनके जीवन में प्रैक्टिकल एप्लीकेशन (व्यवहारिक उपयोग) के साथ महत्व को समझने का प्रयास करेंगे ।

1. गर्भाधान संस्कार :

गर्भाधान संस्कार वैदिक 16 संस्कारों में पहला और महत्वपूर्ण संस्कार है , जो संतान उत्पत्ति के उद्देश्य से किया जाता है । इसका उद्देश्य शारीरिक और मानसिक रूप से स्वास्थ्य और संस्कारी संतान की प्राप्ति के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करना होता है । संतान का प्रारंभिक विकास गर्भधारण से ही प्रारंभ होता है , इसलिए गर्भधारण की प्रक्रिया को शुद्ध और पवित्र बनाने पर बल दिया जाता है ।

गर्भाधान संस्कार का महत्व :

Edit with WPS Office

1. **संतान उत्पत्ति का धार्मिक आधार :** यह संस्कार धार्मिक दृष्टिकोण से शुद्ध और पवित्र संतान उत्पत्ति का मार्गदर्शन करता है , जिससे संतान समाज के लिए उपयोगी और संस्कारी बने ।

2. **स्वस्थ संतान :** गर्भाधान संस्कार का उद्देश्य शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ संतान का जन्म सुनिश्चित करना है ।

3. **परिवार की नींव :** यह संस्कार परिवार के आरंभ के लिए महत्वपूर्ण होता है , जहां पति-पत्नी अपने परिवार को बढ़ाने की दिशा में पहला कदम उठाते हैं ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन :

1. **परिवार नियोजन :** आधुनिक संदर्भ में गर्भाधान संस्कार को परिवार नियोजन के दृष्टिकोण से देखा जा सकता है , जहां दंपति सही समय और परिस्थितियों में संतान प्राप्ति की योजना बनाते हैं ।

2. **मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक तैयारी :** ऐसे संस्कार से दंपति को संतान के आगमन के लिए मानसिक और भावनात्मक रूप से तैयारी होने में सहायता मिलती है ।

3. **स्वास्थ्य पर ध्यान :** आधुनिक युग में इसे गर्भधारण से पहले माता-पिता की शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की जांच और देखभाल से जोड़ा जा सकता है , ताकि गर्भ स्वस्थ और अनुकूल परिस्थितियों में ठहरे ।

गर्भाधान संस्कार आज के समय में परिवार नियोजन , स्वस्थ संतान प्राप्ति और मानसिक तैयारी के रूप में प्रासंगिक है , जो संतान के भविष्य को बेहतर बनाने में सहायक हो सकता है ।

Edit with WPS Office

2. पुसंवन संस्कार :

गर्भ ठहर जाने के पश्चात दूसरे या तीसरे महीने में यह संस्कार किया जाता है । यह बच्चे के स्वास्थ्य के लिए निर्धारण से संबंधित माना जाता है । इस संस्कार में ईश्वर से संतान के लिए मंगल कामनाएं एवं प्रार्थना की जाती है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : आधुनिक युग में , यह संस्कार गर्भावस्था के दौरान मां और शिशु के स्वास्थ्य की देखभाल और खान-पान का विशेष ध्यान रखने के रूप में देखा जा सकता है । इस समय गर्भस्थ स्त्री का भोजन स्वास्थ वर्धक एवं पुष्टि कारक होना चाहिए मांसाहार आदि का त्याग करना चाहिए , अधिक खट्टा , तीखा , कड़वा आदि न खावे । काम क्रोध लोभ एवं मानसिक तनाव से दूर रहे ।

3. सीमंतोन्नयन संस्कार :

यह संस्कार गर्भवती महिला के गर्भकाल के छठे अथवा सातवें महीने में किया जाता है । इसका उद्देश्य गर्भवती महिला को प्रसन्न रखना और उसकी मानसिक स्थिति को सुदृढ़ बनाना है । जिससे कि गर्भिणी स्त्री का मन संतुष्ट रहे , आरोग्य गर्भ स्थिर व उत्कृष्ट होवे ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन :

इस संस्कार का आधुनिक संदर्भ में महत्व यह है कि गर्भवती महिलाओं को मानसिक और भावनात्मक समर्थन प्रदान करना , जो गर्भधारण के दौरान अत्यंत आवश्यक है ।

4. जातकर्म संस्कार :

शिशु के जन्म के तुरंत बाद यह संस्कार किया जाता है , जिसमें शिशु के

Edit with WPS Office

कान में ' ओम " का उच्चारण किया जाता है और असमान मात्रा में मधु एवं घी का मिश्रण चटाया जाता है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : यह संस्कार नवजात शिशु के जीवन में धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्यों के प्रारंभिक बीजारोपण के रूप में कार्य करता है । आज के समय में , इस नवजात की सुरक्षा और स्वास्थ्य के प्रोटोकॉल के साथ जोड़कर देखा जा सकता है ।

5. नामकरण संस्कार :

जन्म के कुछ दिनों बाद छठे , दसवें अथवा जिस दिन उपयुक्त समझे शिशु का नामकरण किया जाता है । यह संस्कार शिशु की पहचान स्थापित करने के लिए होता है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : नामकरण संस्कार आज भी बड़े उत्साह के साथ मनाया जाता है , जो परिवार और समुदाय के साथ नवजात के परिचय का एक अवसर होता है । शिशु का नाम चिंतन मनन पूर्वक अर्थपूर्ण नाम रखना चाहिए ।

6. निष्क्रमण संस्कार :

इस संस्कार में शिशु को पहली बार घर से बाहर ले जाया जाता है और सूर्य या चंद्र दर्शन कराया जाता है । यह संस्कार जन्म से चौथे माह में करना उचित है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : यह संस्कार शिशु को बाहरी वातावरण और प्रकृति से परिचित कराने के लिए है । आज यह बच्चों को धूप , ताजी हवा और बाहरी गतिविधियों से परिचित कराने के रूप में महत्वपूर्ण है ।

7. अन्नप्राशन संस्कार :

Edit with WPS Office

जब शिशु की शक्ति अन्न पचाने योग्य हो जावे तब शिशु को पहली बार अन्न (चावल ,खीर) का आहार कराने का संस्कार है । यह शिशु की वृद्धि और विकास के लिए महत्वपूर्ण है । जन्म से छठे व सातवें महीने में यह संस्कार करवानी चाहिए ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : आज के समय में , यह संस्कार शिशु के पोषण और आहार परिवर्तन के महत्व को दर्शाता है । शिशु के लिए संतुलित आहार का प्रारंभ इसी समय से होता है ।

8. चूड़ा कर्म संस्कार :

इस संस्कार में शिशु के सिर के बालों का मुंडन किया जाता है , जो उसकी पहली निशानी (बाल) को हटाने के रूप में होता है । यह संस्कार 1 वर्ष या अथवा 3 वर्ष की आयु में करनी चाहिए ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : आधुनिक दृष्टिकोण से , यह संस्कार बालों और खोपड़ी की स्वच्छता और स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने के रूप में भी देखा जा सकता है ।

9. कर्णवेध संस्कार :

तीसरी अथवा पांचवें वर्ष में शिशु के कान छिदवाने का संस्कार है , जो पारंपरिक और स्वास्थ्य संबंधी कारणों से किया जाता है । महाभारत काल एवं उनके अनेक काल पश्चात तक भी पुरुष एवं स्त्री सभी के कान छिदवाए जाते थे पुरुष कान में कुंडल पहनते थे स्त्रियों की तरह , जो की शारीरिक स्वास्थ्य से संबंधित था ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : यह संस्कार आज भी लोकप्रिय है और इसे स्वास्थ्य लाभ और श्रंगार दोनों के रूप में देखा जाता है ।

Edit with WPS Office

10. उपनयन संस्कार :

यह संस्कार व्यक्ति के शिक्षा के आरंभ का प्रतीक है। इसे द्विज (विद्या रूपी दूसरे जन्म) के रूप में भी जाना जाता है , जो व्यक्ति के शैक्षिक और आध्यात्मिक जीवन के प्रारंभ का संकेत है । 5 से 8 वर्ष की आयु में यह संस्कार शिक्षा का प्रतीक गुरु द्वारा जनेऊ धारण करवा कर प्रारंभ किया जाता है। सामान्यत: यह संस्कार गुरुकुल में प्रवेश के समय करवाया जाता है। आजकल यहां संस्कार जन्मजात ब्राह्मण एवं क्षत्रियों तक ही सीमित है परंतु महाभारत काल तक यह संस्कार सभी के लिए करना अनिवार्य था।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : आज के समय में , यह संस्कार बच्चों को शैक्षणिक जीवन के लिए तैयार करने , अनुशासन और नैतिकता की शिक्षा देने के रूप में महत्वपूर्ण है।

11. वेदारंभ संस्कार :

यह संस्कार वेदों के अध्ययन की आरंभ का संकेत है और इसे गुरुकुल में प्रवेश के समय किया जाता है। तथा 25 वर्ष की आयु तक वेदों की शिक्षा दीक्षा ग्रहण करके पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना इस संस्कार का उद्देश्य है।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन : आधुनिक संदर्भ में , यह संस्कार शिक्षा और ज्ञानार्जन की यात्रा को प्रारंभ करने का प्रतीक है। माता-पिता द्वारा बच्चों को सनातन धर्म के मूल सिद्धांतों से अवगत करवाने का प्रतीक माना जा सकता है।

12. समावर्तन संस्कार :

इस संस्कार को स्नातक संस्कार भी कहा जाता है और यह औपचारिक शिक्षा की समाप्ति पर किया जाता है । शिक्षा ग्रहण करने की अवधि

Edit with WPS Office

समाप्त होने पर यह संस्कार किया जाता है ।

प्रैक्टिस एप्लीकेशन : यह संस्कार शिक्षा के महत्व को दर्शाता है और छात्र को समाज में अपनी भूमिका निभाने के लिए तैयार करता है । ग्रेजुएशन के पश्चात शिक्षा के आधार पर धन , मान अर्जन तथा सामाजिक दायित्व का निर्वहन करना इस संस्कार का मूल उद्देश्य है ।

13. **विवाह (पाणिग्रहण) संस्कार** :

यह जीवन का सबसे महत्वपूर्ण संस्कार है , जो व्यक्ति को गृहस्थ जीवन में प्रवेश कराता है और परिवार की स्थापना का आधार होता है । शिक्षा दीक्षा समाप्त कर स्त्री पुरुष का परस्पर एक दूसरे को विवाह द्वारा स्वीकार करके गृहस्थ आश्रम में प्रवेश कराना इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य है। विवाह संस्कार के लिए स्त्री की न्यूनतम आयु 16 वर्ष और पुरुष की 25 वर्ष होनी चाहिए ।

इसे गृहस्थाश्रम संस्कार भी कहा जाता है जिसका उद्देश्य व्यक्ति को परिवार , समाज और धर्म के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए प्रेरित करना है । यह जीवन का वह महत्वपूर्ण चरण है , जहां व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं को पूरा करते हुए समाज और परिवार की भलाई के लिए कार्य करता है । यह व्यक्ति को जिम्मेदार , नैतिक और समाज का सहायक सदस्य बनने की प्रेरणा देता है ।

गृहस्थाश्रम संस्कार : महत्व और प्रैक्टिकल एप्लीकेशन :

गृहस्थाश्रम संस्कार वैदिक जीवन के चार आश्रमों (ब्रह्मचर्य , गृहस्थ , वानप्रस्थ , सन्यास) में दूसरा और अत्यंत महत्वपूर्ण आश्रम है । इस संस्कार के तहत व्यक्ति विवाह करके गृहस्थ जीवन में प्रवेश करता है और पारिवारिक , सामाजिक और धार्मिक जिम्मेदारियों का निर्वाह करता है । गृहस्थाश्रम संस्कार का महत्व जीवन के उस चरण से जुड़ा है जहां व्यक्ति

Edit with WPS Office

एक गृहस्थ (परिवार के मुखिया) के रूप में अपनी भूमिका निभाता है और समाज के विकास में योगदान देता है ।

गृहस्थाश्रम संस्कार का महत्व :

1. **व्यक्तिगत जिम्मेदारी :** गृहस्थाश्रम का प्रमुख उद्देश्य व्यक्ति को पारिवारिक जीवन में प्रवेश कराकर विभिन्न दायित्वों का निर्वहन करना सीखना है । इसमें जीवनसाथी के साथ रिश्ते को निभाना , बच्चों का पालन पोषण करना और उनके नैतिक व सामाजिक विकास की विभिन्न दायित्व प्रमुख है ।

2. **समाज की नींव :** गृहस्थ व्यक्ति समाज की नींव होते हैं । एक संतुलित परिवार समाज के समग्र विकास में सहायक होता है । गृहस्थाश्रम के माध्यम से समाज में एकता , सहयोग और नैतिकता की भावना का विकास होता है ।

3. **धार्मिक कर्तव्यों का पालन :** गृहस्थाश्रम में व्यक्ति अपने धार्मिक कर्तव्यों का पालन करता है , जैसे यज्ञ ,तप , दान , व्रत और सामाजिक अनुष्ठान । यह आश्रम वैदिक रीतियों और परंपराओं को बनाए रखने का भी माध्यम है ।

4. **आर्थिक उत्तरदायित्व :** गृहस्थाश्रम का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष आर्थिक जिम्मेदारी है । व्यक्ति इस चरण में परिश्रम करके धन अर्जित करता है , जो न केवल अपने परिवार बल्कि समाज और राष्ट्र की आर्थिक समृद्धि में योगदान देता है ।

5. **चार पुरुषार्थों की पूर्ति :** गृहस्थाश्रम की अवधि में व्यक्ति को धर्म , अर्थ , काम और मोक्ष की प्राप्ति की दिशा में संतुलन साधने की शिक्षा दी जाती है । यह जीवन के चार मुख्य उद्देश्यों को पूरा करने का समय होता है ।

Edit with WPS Office

गृहस्थाश्रम का प्रैक्टिकल एप्लीकेशन (व्यावहारिक उपयोग) :

आज के आधुनिक समय में भी गृहस्थाश्रम के कई सिद्धांत प्रासंगिक और व्यवहारिक है । आधुनिक जीवन में गृहस्थाश्रम के कई प्रैक्टिकल एप्लीकेशन निम्नलिखित है :

1. **पारिवारिक जीवन की स्थापना :** गृहस्थाश्रम संस्कार आज के समय में विवाह की रीति के रूप में देखा जा सकता है , जिसमें दो व्यक्तियों के बीच एक सामाजिक और कानूनी समझौता होता है । विवाह केवल दो व्यक्तियों का मेल नहीं है , बल्कि यह परिवार और समाज की स्थिरता का एक आधार भी है ।
2. **नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण :** गृहस्थाश्रम व्यक्ति को जीवन में नैतिक मूल्यों और संस्कारों का पालन करने की शिक्षा देता है । यह आज के समाज में पारिवारिक और सामाजिक मूल्य बनाए रखने का माध्यम है , जहां बच्चों को सही शिक्षा और संस्कार देकर समाज का अच्छा नागरिक बनाया जाता है ।
3. **आर्थिक स्थिरता :** आधुनिक समाज में गृहस्थ व्यक्ति का आर्थिक योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है । गृहस्थाश्रम व्यक्ति को न केवल अपने परिवार के लिए , बल्कि समाज और राष्ट्र के लिए भी आर्थिक रूप से सक्षम और आत्मनिर्भर बनने की प्रेरणा देता है । आज के समय में इसका प्रैक्टिकल उपयोग व्यक्ति की करियर योजना और वित्तीय स्थिरता से जुड़ा हुआ है ।
4. **समाज में योगदान :** गृहस्थ व्यक्ति समाज की सेवा करने के विभिन्न माध्यम अपनाते हैं । यह सामाजिक कार्य , धार्मिक आयोजन , या आर्थिक योगदान के रूप में हो सकता है । आज के युग में , गृहस्थाश्रम संस्कार को सामाजिक कार्यों , दान , और सामुदायिक सेवा के रूप में देखा जा सकता है ।
5. **सामाजिक और मानसिक संतुलन :** गृहस्थाश्रम संतुलित और स्वस्थ जीवन जीने की शिक्षा देता है । आज के व्यस्त और तनावपूर्ण

Edit with WPS Office

जीवन में , गृहस्थ जीवन का महत्व मानसिक और भावनात्मक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । यह व्यक्ति को अपने जीवनसाथी और परिवार के साथ संतुलित जीवन जीने की प्रेरणा देता है ।

6. **धार्मिक और आध्यात्मिक विकास :** गृहस्थाश्रम संस्कार आज भी धार्मिक और आध्यात्मिक अनुष्ठानों का पालन करने के लिए प्रेरित करता है । आधुनिक जीवन की भाग - दौड़ में , यह व्यक्ति को नियमित धार्मिक क्रियाकलापों , योग , प्राणायाम और ध्यान के माध्यम से आंतरिक शांति और संतुलन प्राप्त करने की शिक्षा देता है । गृहस्थाश्रम संस्कार का उद्देश्य व्यक्ति का परिवार , समाज और धर्म के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करने के लिए प्रेरित करना है । यह जीवन का वह महत्वपूर्ण चरण है , जहां व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं को पूरा करते हुए समाज और परिवार की भलाई के लिए कार्य करता है । यह व्यक्ति को जिम्मेदार , नैतिक और समाज का सहायक सदस्य बनने की प्रेरणा देता है ।

14. वानप्रस्थ संस्कार :

वानप्रस्थ आश्रम वैदिक जीवन के चार आश्रमों में तीसरा आश्रम है , जिसका अर्थ है " वन की ओर प्रस्थान करना " यह गृहस्थाश्रम के बाद आता है , जब व्यक्ति अपने पारिवारिक और सामाजिक दायित्वों को पूरा करने के पश्चात एकांत , साधना , और आत्मचिंतन की ओर अग्रसर होता है । इस अवस्था में व्यक्ति धीरे-धीरे सांसारिक मोह - माया से दूर होकर आध्यात्मिक और मानसिक शांति की ओर ध्यान केंद्रित करता है ।

महत्व :

1. **धर्म और आध्यात्मिकता :** वानप्रस्थ का मुख्य उद्देश्य धर्म और आध्यात्मिक विकास के प्रति समर्पित होना है , जहां व्यक्ति संसार से विमुख होकर ईश्वर और आत्मज्ञान की ओर बढ़ता है ।

Edit with WPS Office

2. **सामाजिक योगदान :** वह चरण अनुभव और ज्ञान के आधार पर समाज और परिवार का मार्गदर्शन करने का अवसर प्रदान करता है ।
3. आत्म - नियंत्रण और संयम का अभ्यास करता है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन :

1. **रिटायरमेंट और सामाजिक सेवा :** आधुनिक युग में वानप्रस्थ का अर्थ रिटायरमेंट के बाद सामाजिक और परोपकारी कार्यों में संलग्न होना है ।
2. **आध्यात्मिक साधना :** व्यक्ति ध्यान , योग और धार्मिक गतिविधियों में समय देकर मानसिक शांति और संतुलन प्राप्त कर सकता है ।
3. **परिवार से परामर्श :** व्यक्ति अपने अनुभव का उपयोग कर परिवार और समाज को नैतिक और आध्यात्मिक मार्गदर्शन दे सकता है ।

वानप्रस्थ आश्रम का प्रैक्टिकल उपयोग आज के जीवन में रिटायरमेंट के बाद सामाजिक सेवा और आध्यात्मिकता की ओर झुकाव के रूप में देखा जा सकता है ।

15. सन्यास संस्कार :

सन्यास आश्रम वैदिक जीवन के चार आश्रमों (ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ सन्यास) में अंतिम और सबसे उच्चतम आश्रम है । यह जीवन के उस चरण को दर्शाता है जब व्यक्ति अपने सांसारिक कर्तव्यों और जिम्मेदारियों से मुक्त होकर पूर्ण रूप से ईश्वर और आत्मज्ञान की खोज में लग जाता है । सन्यास का अर्थ है " सब कुछ त्याग देना " और इसमें व्यक्ति भौतिक वस्तुओं , इच्छाओं , और सामाजिक बंधनों से मुक्त होकर केवल आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जीवन व्यतीत करता है ।

सन्यास संस्कार का महत्व :

Edit with WPS Office

1. **मुक्ति/मोक्ष की प्राप्ति** : सन्यास आश्रम का मुख्य उद्देश्य मोक्ष (मुक्ति) की प्राप्ति है । व्यक्ति को यह सिखाया जाता है कि वह सभी सांसारिक बंधनों से ऊपर उठकर आत्मा और परमात्मा का मिलन कर सके ।
2. **आध्यात्मिकता का चरण** : यह जीवन के अंतिम चरण में आने वाला आश्रम है , जिसमें व्यक्ति ध्यान , साधना , और आत्म अनुसंधान के माध्यम से आध्यात्मिक उत्थान की ओर बढ़ता है ।
3. **संपूर्ण त्याग** : सन्यासी भौतिक सुख सुविधाओं , संपत्ति , और परिवार से पूरी तरह से दूर होकर ईश्वर को समर्पित हो जाता है । यह त्याग का प्रतीक है , जहां व्यक्ति किसी भी प्रकार के व्यक्तिगत स्वार्थ से मुक्त हो जाता है ।

प्रैक्टिकल एप्लीकेशन :

1. **आध्यात्मिक जीवन का मार्ग** : आधुनिक जीवन में सन्यास का महत्व उन लोगों के लिए अधिक होता है जो जीवन के अंतिम चरण में आकर आध्यात्मिक शांति की खोज करते हैं । ध्यान , योग , और साधना के माध्यम से व्यक्ति आत्म चिंतन कर सकता है और अपने जीवन का उद्देश्य समझ सकता है ।
2. **परोपकारी कार्य** : सन्यास का प्रैक्टिकल उपयोग सामाजिक सेवा में भी देखा जा सकता है । कई सन्यासी अपने अनुभव और ज्ञान का उपयोग समाज और लोगों के भलें के लिए करते हैं । आज के समय में , व्यक्ति समाज सेवा , धार्मिक मार्गदर्शन , और आध्यात्मिक शिक्षक के रूप में अपनी भूमिका निभा सकता है ।
3. **आत्मिक संतुलन** : सन्यास का एक महत्वपूर्ण प्रैक्टिकल पक्ष यह है कि व्यक्ति भौतिक जीवन से हटकर मानसिक और आत्मिक संतुलन प्राप्त कर सकता है । यह मन की शांति , आत्म - अनुशासन और व्यक्तिगत स्वार्थ से मुक्ति की दिशा में एक आवश्यक कदम है ।

सन्यास संस्कार जीवन के अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण चरण को इंगित

Edit with WPS Office

करता है , जहां व्यक्ति अपनी आत्मा की मुक्ति और आध्यात्मिक विकास के लिए समर्पित हो जाता है । आज के समय में , इसका प्रैक्टिकल एप्लीकेशन रिटायरमेंट के पश्चात ध्यान , साधना , समाज सेवा , और मानसिक शांति की खोज के रूप में देखा जा सकता है ।

16. अंत्येष्टि संस्कार :

अंत्येष्टि संस्कार (जिसे अंतिम संस्कार भी कहा जाता है) वैदिक संस्कारों का अंतिम चरण है , जो व्यक्ति के देहावसान/मृत्यु के पश्चात किया जाता है । इस संस्कार का मुख्य उद्देश्य मृतक शरीर को प्रकृति के नियम के अनुसार विनिष्ट करना है इस संस्कार के माध्यम से दिवंगत आत्मा को भौतिक संसार से विदाई दी जाती है । सनातन संस्कृति में यह संस्कार मृतक के प्रति अंतिम कर्तव्य और समाज के लिए एक महत्वपूर्ण धार्मिक कर्तव्य है । इसका उद्देश्य मृतक को सम्मानपूर्वक विदाई देना और आत्मा को ईश्वर से मिलाने की प्रार्थना करना है ।

अंत्येष्टि संस्कार का महत्व :

1. **आत्मा की शांति :** सनातन धर्म के अनुसार , शरीर नश्वर है लेकिन आत्मा अमर है । अंत्येष्टि संस्कार का उद्देश्य आत्मा को मोक्ष या पुनर्जन्म के लिए विदा करना होता है ।
2. **धार्मिक परंपरा :** अंत्येष्टि संस्कार सनातन धर्म की प्राचीन परंपराओं का हिस्सा है , जो व्यक्ति के जीवन चक्र (जन्म , मृत्यु , पुनर्जन) को पूरा करने में सहायता करता है । यह मृतक के प्रति कृतज्ञता और सम्मान प्रदर्शित करने का भी तरीका है ।
3. **पारिवारिक और सामाजिक अनुष्ठान :** अंत्येष्टि संस्कार केवल धार्मिक ही नहीं , बल्कि पारिवारिक और सामाजिक दृष्टिकोण से भी महत्वपूर्ण है । यह परिवार के सदस्यों को एक साथ लाने और उन्हें मृतक के प्रति अपना अंतिम कर्तव्य निभाने का अवसर देता है ।
4. **मृत्यु के पश्चात जीवन के प्रति जागरूकता :** इस संस्कार का एक

Edit with WPS Office

उद्देश्य लोगों को मृत्यु के अनिवार्यता और उसके पश्चात जीवन के महत्व के बारे में जागरूक करना भी है । यह जीवन के अस्थायी स्वभाव का स्मरण कराती है और व्यक्ति को आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करता है ।

दशगात्र , श्राद्ध और तेरहवीं :

कर्मों के आधार पर आत्मा को स्वर्ग , नरक , यमालय , गया श्राद्ध , पिंडदान , दशगात्र , मासिक - वार्षिक क्रिया जैसे कर्मकांडों से गुजरना पड़ता है । यह सभी कर्मकांड गरुड़ पुराण में वर्णित है और केवल कल्पना मात्र है इसका वैदिक मान्यता एवं संस्कृति से कोई भी संबंध नहीं है । गरुड़ पुराण के अनुसार मृत्युपरांत आत्मा को अपने कर्मों के अनुसार विभिन्न लोकों और योनियों में जाना पड़ता है ।
स्वर्ग : अच्छे कर्मों के परिणाम स्वरूप आत्मा स्वर्ग में जाती है , जहां उसे सुख संपन्नता प्राप्त होती है ।
नरक : बुरे कर्म करने वाली आत्माओं को नरक में ले जाया जाता है , जहां उन्हें कष्ट और दुख का सामना करना पड़ता है ।
गया श्राद्ध और पिंडदान : ये अनुष्ठान मृतक आत्माओं की शांति और उन्हें मोक्ष प्राप्त कराने के लिए किए जाते हैं ।

अंत्येष्टि संस्कार मनुष्य के जीवन का सबसे अंतिम संस्कार होता है इसके पश्चात और कोई भी कर्मकांड या क्रिया कर्म करने की आवश्यकता नहीं है आजकल समाज में स्थापित दशगात्र , श्राद्ध और तेरहवीं , आदि कर्मकांड वैदिक मान्यताओं के विरुद्ध है एवं 16 संस्कारों में भी नहीं आते हैं । यहां सब पौराणिक मान्यताएं हैं इसका कोई भी वैज्ञानिक आधार नहीं है समय-समय पर पुराणों के द्वारा समाज में स्थापित की गई है जिसमें गरुड़ पुराण मुख्य है वेद कहते हैं भस्मान्त शरीरम् । यजुर्वेद . 40.1.51 अर्थात इस शरीर का संस्कार भस्म करने पर्यंत है । अतः इन कुरीतियों से बचने का हमें हर संभव प्रयास करना चाहिए ।

Edit with WPS Office

यमराज कौन है ..?

यमराज मृत्यु के देवता के रूप में जाने जाते हैं , जिनका शाब्दिक अर्थ है नियंत्रण , संयम , और दमन । उन्हें वह शक्ति माना जाता है जो जीवन के नियमों को लागू करती है । यमराज का मुख्य कार्य आत्माओं को उनके कर्मों के आधार पर न्याय प्रदान करना है । वे संसार में मृत्यु और कर्म फल का प्रतिनिधित्व करते हैं , जो आत्मा को शरीर से अलग करने और उसे कर्मों का फल देने की प्रक्रिया को नियंत्रित करते हैं । यम वास्तव में ईश्वर की मृत्यु और कर्म फलदायक शक्ति है , जो शरीर से आत्मा को अलग करने का कार्य करते हैं । इस दृष्टिकोण से , यमराज ईश्वर की शक्ति का वह रूप है जो मृत्यु के समय आत्मा को उसके कर्मों के अनुसार अगले गंतव्य तक पहुंचाते हैं । हालांकि , गरुड़ पुराण में जो यमराज का चित्रण किया गया है , वह पूर्ण रूप से काल्पनिक और मिथ्या है । वैदिक दृष्टिकोण से देखें , तो यमराज किसी भयावह शक्ति का नहीं , बल्कि ईश्वर के न्याय और संतुलन का प्रतीक है ।

स्वर्ग और नरक की वास्तविकता :

गरुड़ पुराण में स्वर्ग और नरक को एक स्थान विशेष के रूप में चित्रित किया गया है , परंतु वैदिक शास्त्रों के अनुसार , स्वर्ग और नरक वास्तव में कोई भौतिक स्थान नहीं है , बल्कि ये केवल मन की स्थितियां हैं ।

- **स्वर्ग** : जब मनुष्य का मन शांति , आनंद , और सकारात्मकता से परिपूर्ण होता है , तब वह अपने जीवन में स्वर्ग का अनुभव करता है । यह स्थिति तब उत्पन्न होती है , जब व्यक्ति अपने जीवन में सद्कर्म करता है और पुण्य अर्जित करता है ।
- **नरक** : जब मन चिंता , दुख , भय और नकारात्मक विचारों से भर जाता है , तो व्यक्ति नरक जैसी स्थिति का , अनुभव करता है । यह स्थिति पाप कर्मो और अधर्म का परिणाम होती है , जो मन को कष्टकारी बनाती हैं ।

Edit with WPS Office

इसलिए गरुड़ पुराण में जो स्वर्ग और नरक की कल्पना की गई है , वह पूरी तरह काल्पनिक और मिथ्या है । वैदिक दृष्टिकोण से देखें , तो ऐसा स्वर्ग या नरक संभव नहीं है , क्योंकि यह केवल मनुष्य के कर्म और मानसिक अवस्था पर आधारित अनुभव है ।

- स्वर्ग का अनुभव पुण्य कर्मों के सुखद परिणाम के रूप में होता है ।
- नरक का अनुभव पाप कर्मों के कष्टदायक परिणाम के रूप में होता है ।

इस प्रकार , स्वर्ग और नरक कहीं दूर स्थित कोई स्थान नहीं है , बल्कि मनुष्य के कर्मों और मानसिकता से उत्पन्न आंतरिक अनुभव है , जिन्हें व्यक्ति इसी जीवन में अनुभव करता है ।

मृत शरीर को जलाना अथवा दफनाना : कोई भी वस्तु कभी भी नष्ट नहीं होती केवल उसके स्वरूप में परिवर्तन होता है वह हमारे इंद्रियों के पहुंच से बाहर चला जाता है अति सूक्ष्म हो जाता है तब हमें वहां नहीं दिखता है इसका अर्थ यहां नहीं होता है कि वह नष्ट हो गया है वह केवल हमारी इंद्रियों की पहुंच से बाहर हो गया है । ठीक वैसे ही हमारा शरीर भी अणु - परमाणु एवं पांच तत्वों (अग्नि , वायु , आकाश ,जल एवं पृथ्वी) से बना हुआ है इन पांच तत्व में केवल अग्नि में ही यह शक्ति है कि वह शरीर के मूल कणों को तोड़कर उसे पुनः जिन तत्वों से वह बना हुआ है उसे वापस कर दें ताकि यहां शरीर पुनः अदृश्य हो जाए अप्रकट अवस्था में आ जाए इसलिए इसे नष्ट होना नहीं कहते स्वरूप में परिवर्तन होना कहते हैं अतः इस सृष्टि में कुछ भी नष्ट नहीं होता है केवल उसके स्वरूप में परिवर्तन होता है ।

इसलिए शरीर को जलाने से ही शरीर के सभी मूल तत्वों का सही प्रकार से विघटन हो पाना संभव हो पाता है और यह वैज्ञानिक भी है । अब बहुत से लोग कहेंगे कि शरीर को जलाने से तो पर्यावरण प्रदूषण के साथ-साथ जंगल के भी कटाई होती है । इसका उपाय भी हमारे शास्त्रों में दिया गया है अंतिम संस्कार के समय शरीर के भार के बराबर गाय का घी एवं चंदन की

Edit with WPS Office

लकड़ी , अंत्येष्टि सामग्री आदि अनेक जड़ी बूटियां का उल्लेख किया गया है । जिसका उपयोग अंतिम संस्कार में करने पर पर्यावरण प्रदूषण को बहुत अधिक कम किया जा सकता है । यह अंत्येष्टि संस्कार मनुष्य के जीवन का अंतिम यज्ञ होता है जिस प्रकार से यज्ञ करने पर पर्यावरण प्रदूषण नहीं होता है । उसी प्रकार ऊपर बताई गई सामग्रियों का उपयोग अंत्येष्टि संस्कार में करने पर पर्यावरण का प्रदूषण बिल्कुल भी नहीं होता । अंत्येष्टि संस्कार में चंदन की लकड़ी सबसे उपयुक्त होती है न मिलने पर उसके जगह पर आम ,बंट , पीपल पलाश आदि की लकड़ी का उपयोग भी किया जा सकता है । अब जितने पेड़ काटे जाएंगे उतने ही पेड़ भी हमें लगाने होंगे जिससे कि पर्यावरण का संतुलन भी बना रहे इस प्रकार इन दोनों समस्याओं (पर्यावरण प्रदूषण एवं जंगल की कटाई) का समाधान यहां हो सकता है ।

अब मृत शरीर को भूमि में गाड़ने से शरीर के मूल तत्वों का विघटन नहीं हो पाता है वह सड़ने गलने लगता है इससे भूमि भी प्रदूषित होती है और उसभूमि का उपयोग वृक्षारोपण , रहन-सहन एवं फसल आदि के भी नहीं किया जा सकता । जिससे भूमि का अतिक्रमण के साथ-साथ दुरुपयोग भी होता है । इसलिए मृत शरीर को भूमि में दफनाने से अधिक तर्कसंगत एवं सृष्टि नियमों के अनुसार उसे जलाना ही उचित है ।

Recommended book : 16 संस्कारों को पूर्ण रूप से विधिपूर्वक जानने के लिए पठनीय ग्रंथ ___ संस्कार विधि : **(महर्षि दयानंद सरस्वती) ।**

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

•157. शंका समाधान प्रश्नोत्तरी

प्रश्न 1. ______ क्या ईश्वर है ? तो दिखाई क्यों नहीं देता है ?

उत्तर ______ यदि सृष्टि है , तो ईश्वर भी अवश्य है , क्योंकि सृष्टि का अस्तित्व बिना किसी निर्माता के संभव नहीं हो सकता । जिस प्रकार एक सुई भी अपने आप से नहीं बन सकता , उसी प्रकार इतनी विशाल और अद्भुत सृष्टि स्वत: उत्पन्न नहीं हो सकता । इसका कोई सृजनकर्ता अवश्य है , जिसने इसे बुद्धि पूर्वक और योजना के साथ रचा है , और वही सृजनकर्ता ईश्वर है ।

ईश्वर हमें अपनी आंखों से इसलिए नहीं दिखाई देते क्योंकि वे भौतिक नहीं , बल्कि अभौतिक , अदृश्य और निराकार है । इंद्रियों से उन्हें जान पाना संभव नहीं है , क्योंकि उनकी प्रकृति भौतिक इंद्रियों की सीमाओं से परे हैं । ईश्वर को केवल आत्मा के माध्यम से ही अनुभव किया जा सकता है , और आत्मा की इस अनुभूति से ही परमात्मा का साक्षात्कार होता है । आंखों से तो आंखों में पड़ा तिनका भी दिखाई नहीं देता , परंतु उसका अस्तित्व हमें अनुभव होता है । इसी प्रकार , ईश्वर का अस्तित्व भी इंद्रियों से परे है , और इसलिए उन्हें इनसे जान पाना संभव नहीं है । सृष्टि का होना , ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण है , क्योंकि इतनी जटिल और आश्चर्यजनक सृष्टि का बिना किसी बुद्धिमान सृजनकर्ता के बन पाना संभव नहीं ।

प्रश्न 2.______ क्या ईश्वर अवतार लेते हैं ?

उत्तर ______ नहीं , ईश्वर अवतार नहीं लेते , और इसकी कोई आवश्यकता भी नहीं है । इसे हम एक उदाहरण से समझ सकते हैं । किसी वस्तु का निर्माण करना अधिक कठिन होता है या उसे नष्ट करना ? निश्चित रूप से निर्माण करना अधिक जटिल और कठिन कार्य है , जबकि उसे नष्ट कुछ ही क्षणों में किया जा सकता है । अब , यदि वही निराकार परमात्मा , जिसकी

Edit with WPS Office

शक्ति से दुर्योधन , रावण ,कंस जैसे दुष्टों का जन्म हुआ , तो क्या उनका वंध करने के लिए परमात्मा को शरीर धारण करने की आवश्यकता होगी ? यह तो परमात्मा के लिए अत्यंत साधारण कार्य है ।

निराकार परमात्मा ने जिस प्रकार इन दुष्टों को शरीर प्रदान किया , उसी प्रकार बिना शरीर धारण किए , वह उन्हें क्षण भर में नष्ट कर सकते हैं । इसलिए धर्म की रक्षा करने या अधर्म का विनाश करने के लिए परमात्मा को अवतार लेने की कोई आवश्यकता नहीं है । यह विचार कि ईश्वर अवतार लेते हैं , पुराणों की एक कल्पना और भ्रांति मात्र है , जो वास्तविकता से परें है । परमात्मा की शक्ति इतनी व्यापक और असीमित है कि वे बिना किसी अवतार के , अपनी निराकार स्थिति में ही सृष्टि का संचालन और संरक्षण कर सकते हैं ।

प्रश्न 3. ______ यदि ईश्वर अवतार नहीं लेते तो श्री राम , श्री कृष्ण कौन है ?

उत्तर ______ जैसे कि हम जानते हैं ईश्वर शरीर धारण नहीं करते अतः श्री राम और श्री कृष्ण भी स्वयं ईश्वर नहीं है , और इसका प्रमाण वे स्वयं अपने आचरण और वचनों में वाल्मीकि रामायण और महाभारत , भगवत गीता के माध्यम से देते हैं । वाल्मीकि रामायण में अनेकों प्रमाण है जहां श्री राम अपने आप को मनुष्य कहते हैं और उनके 14 वर्ष का वनवास , तथा सीता वियोग के दुख को वहां अपने कर्मों का फल के रूप में दर्शातें है एवं उसके लिए वे अपने भाग्य को दोषारोप भी करते हैं । महाभारत में भी श्री कृष्ण का चरित्र भी एक श्रेष्ठ मनुष्य का है भगवत गीता में भी अनेकों श्लोक है जिनमें श्री कृष्ण किसी तीसरी शक्ति अर्थात उस निराकार परमात्मा के स्वरूप की चर्चा कर रहे हैं । जैसे ______

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थ चान्तिके च तत् ।। **भगवत गीता. 13.16**

भावार्थ ______ परमात्मा संपूर्ण प्राणियों के बाहर भीतर परिपूर्ण है और

Edit with WPS Office

चर - अचर प्राणियों के रूप में भी वे ही हैं दूर से दूर तथा निकट से निकट भी वे ही हैं । वे अत्यंत सूक्ष्म होने से इंद्रियों से जानने का विषय नहीं है । यहां परमात्मा के निराकार तथा सर्वव्यापक स्वरूप की चर्चा की गई है ।

श्री कृष्ण पुनः कहते हैं :

बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप ।।

भावार्थ ______ हे परन्तप अर्जुन ! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके है । उन सबको मैं जानता हूं , पर तू नहीं जानता । यहां पर श्री कृष्ण अपने आप को अनेक जन्म धारण करने वाले कह रहे हैं अनेक जन्म शरीर का होता है परमात्मा का नहीं । जीवात्मा अपने कर्मफल के अनुसार अनेकों शरीर धारण करता है । श्री कृष्ण योगेश्वर थे ? इसलिए एक परम योगी के द्वारा अपने सभी पूर्व जन्मों को जानना कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है । इतिहास में भी ऐसे अनेकों ऋषि भी हुए हैं जो ऐसा कर सकते थे ।

अब अगर भगवत गीता में ही आपको ऐसा कोई भी श्लोक मिले जिसमें श्री कृष्ण कह रहे हैं मैं ही ईश्वर हूं , मैं ही परमात्मा हूं । तो या तो वहां श्लोक प्रक्षिप्त/मिलावटी है या तो उनका अर्थ का अनर्थ हुआ है क्योंकि वह वेद विरुद्ध है और वेद विरुद्ध होने से यह सभी श्लोक अमान्य है इन श्लोकों को बाद में जोड़ा गया है श्री कृष्ण को परमात्मा सिद्ध करने के लिए । क्योंकि श्री कृष्ण वेदों के परम अनुयाई एवं रक्षक थे वेद विरुद्ध कुछ भी उपदेश उनके मुख से हो पाना असंभव है ।

श्री राम , श्री कृष्ण वे दोनों ही महापुरुष और महान मानव थे , जिनके जीवन का आधार वेदों की गहन शिक्षाओं पर आधारित था । उन्होंने भी हमारी ही तरह जन्म लिया , शरीर धारण किया , और वेदों की शिक्षाओं को आत्मसात कर धर्म के मार्ग पर चलकर अपने तप , पुरुषार्थ , और योगबल से महानता प्राप्त की ।

Edit with WPS Office

श्री राम का जन्म अयोध्या के राजा दशरथ और रानी कौशल्या के पुत्र के रूप में हुआ था । रामायण के अनुसार , उन्होंने राक्षसों के राजा रावण का वध कर अधर्म का नाश किया और सीता माता को रावण के बंधन से मुक्त कराया । श्री राम को मर्यादा पुरुषोत्तम कहा जाता है , क्योंकि वे धर्म , सत्य , और कर्तव्य के आदर्श उदाहरण माने जाते हैं । उनका जीवन भारतीय संस्कृति में आदर्श राजा , आदर्श पुत्र , और आदर्श पति के रूप में देखा जाता है ।

श्री कृष्ण का जन्म मथुरा के कारागार में हुआ था , जहां उनके माता-पिता , देवकी और वासुदेव , राजा कंस द्वारा बंदी बनाए गए थे । कंस को यह भविष्यवाणी हुई थी कि देवकी का पुत्र उसके अंत का कारण बनेगा , और इसी भय से उसने देवकी और वासुदेव को बंदी बना रखा था । जब श्री कृष्ण का जन्म हुआ , तो वसुदेव ने उन्हें अत्यंत साहस के साथ यमुना नदी पार कर गोकुल पहुंचाया , जहां नंद बाबा और यशोदा माता ने उनका पालन पोषण किया । श्री कृष्ण ने अपने जीवन में कई महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाई , किंतु महाभारत में वे एक निर्णायक चरित्र के रूप में उभरे । कुरुक्षेत्र के युद्ध भूमि में उन्होंने अर्जुन को धर्म और कर्म के गूढ़ सिद्धांतों को समझाते हुए गीता का महान उपदेश दिया , तो आज भी मानवता के मार्गदर्शन के रूप में पूजनीय है ।

इन दोनों महापुरुषों के जीवन संघर्षों से भरे हुए थे परंतु उन्होंने कभी भी धर्म का पथ नहीं त्यागा । यदि हम भी उनके दिखाए मार्ग पर चले , वेदों के ज्ञान को अपने जीवन में उतारे और धर्म का पालन करें , तो हम भी अपनी जीवन यात्रा में उत्कृष्टता को प्राप्त कर सकते हैं । यदि श्री राम मर्यादा पुरुषोत्तम के प्रतीक हैं , तो श्री कृष्ण योगेश्वर के रूप में जाने जाते हैं । इन दोनों महान विभूतियों का जीवन हमारे लिए आदर्श है , और उनका अनुसरण करना ही हमारे जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य होना चाहिए ।

श्री कृष्ण और श्री राम भी उसी निराकार परमपिता परमेश्वर की उपासना

Edit with WPS Office

करते थे , और उनके जीवन का आधार वेदों की आज्ञाओं का पालन था । उनके धर्म और कर्म का मार्गदर्शन भी वेदों द्वारा ही निर्धारित था । परंतु , अज्ञानता और भ्रम में हमने उन्हें ही ईश्वर मान लिया । इसी भ्रांति पूर्ण विश्वास ने हमारे मन में यह धारणा उत्पन्न कर दी कि जो कार्य उन्होंने किएं , वे केवल ईश्वर ही कर सकते हैं , मनुष्य नहीं । इस मिथ्या विश्वास के कारण समाज में अनेक कुरीतियों का जन्म हुआ , क्योंकि हम यह समझने लगे कि हमारे लिए वही आदर्श और कर्म अकल्पनीय है , जबकि वे स्वयं वेदों के अनुयायी थे और उन शिक्षाओं पर आधारित जीवन जी रहे थे , जिसे हर व्यक्ति अपना सकता है लोगों ने उनके अनुकरणीय जीवन से प्रेरणा लेने के स्थान पर उन्हें अलौकिक मानकर अपने कर्तव्यों से विमुख होना प्रारंभ कर दिया ।

अतः श्री राम और श्री कृष्ण सनातन धर्म के आधार स्तंभ है , श्रेष्ठ पुरुष है , जिनकी वास्तविक पूजा उनके द्वारा दिखाए गए पवित्र मार्ग पर चलने में है । उनके सिद्धांत और जीवन दर्शन हमें धर्म , कर्तव्य , और आदर्शों की ओर प्रेरित करते हैं । महापुरुषों का सम्मान उनके पगचिन्हों का अनुसरण करने में है , और यही हमारे जीवन को सही दिशा और अर्थ प्रदान करता है ।

प्रश्न 4. ______ ब्रह्मा , विष्णु और शिव कौन है ?

उत्तर ______ ब्रह्मा , विष्णु और महेश ये तीनों ही शब्द संस्कृत के हैं , जिनका मुल वेदों में मिलता है । ये शब्द ईश्वर के गुणों और कर्मों को व्यक्त करने के लिए विशेषण के रूप में उपयोग होते हैं । " ब्रह्मा " का अर्थ सर्वव्यापक और निरंतर सृजनकर्ता , "विष्णु " का अर्थ है पालनकर्ता , और " शिव " का अर्थ है कल्याणकारी या शुभकारी ।

ये तीनों शब्द एक ही परमात्मा के विभिन्न गुणों और कर्तव्यों को परिभाषित करते हैं । ब्रह्मा (सृजनकर्ता) , विष्णु (संरक्षक) , और शिव (परिवर्तक या कल्याणकारी) के रूप में निराकार परमात्मा के भिन्न भिन्न गुणों को दर्शाते हैं । यह समझना महत्वपूर्ण है कि ये गुणात्मक शब्द उस एक परम सत्ता के

Edit with WPS Office

कार्यों और कर्तव्यों का प्रतीक है , जो सृष्टि पालन और परिवर्तन के माध्यम से इस संसार का संचालन करते हैं ।

पौराणिक काल में , इन गुणवाचक शब्दों को लेकर काल्पनिक कहानियों और ग्रंथों की रचना की गई , जिसके परिणाम स्वरूप आज हम ब्रह्मा , विष्णु और महेश (शिव) को अलग-अलग देवताओं के रूप में पहचानते हैं । परंतु मूल रूप से , ये तीनों ही एक ही परमात्मा के गुण और कर्म है , जो सृष्टि के अलग-अलग कार्यों को पूरा करते हैं ।

आदिकाल से ही ऋषिगण अपने और अपने वंशजों , स्थानों , पर्वतों , और नदियों के नाम वेदों के शब्दों पर रखते थे । इसके पुष्टि मनुस्मृति के इस श्लोक से की जाती है ।

चातुर्वर्ण्य त्रयो लोकाश्वारश्वाश्रमा: पृथक ।
भूतं भव्यं भविष्यं च सर्व वेदांत् प्रसिध्यति ।। मनुस्मृति. 12.97

भावार्थ ______ चार वर्ण , चार आश्रम , भूत , भविष्यत और वर्तमान आदि सभी विद्याएं वेदों से ही प्रसिद्ध होती है । इसी कारण इतिहास में ब्रह्मा , विष्णु , और शिव जैसे नामों के महापुरुष भी जन्में , जैसे महर्षि ब्रह्मा , विष्णु जी , शिवजी , देवराज इन्द्र । इन महापुरुषों के नाम वेदों में उल्लिखित इन गुणात्मक शब्दों पर आधारित थे , लेकिन यह समझना आवश्यक है कि वेदों में जिन ब्रह्मा , विष्णु और शिव का उल्लेख किया गया है , वे इन ऐतिहासिक महापुरुषों से भिन्न है । वेदों में यह शब्द निराकार परमात्मा के गुणों का प्रतीक है , जबकि इतिहास के ये महापुरुष मानव रूप में धर्म और ज्ञान का प्रचार करने वाले थे ।

प्रश्न 5.______ मंदिर शब्द का अर्थ , मंदिर जाना उचित या अनुचित है ?

उत्तर ______ " मंदिर " शब्द दो शब्दों के मेल से बना है । ___ " मन " और " धीर " । इसका वास्तविक अर्थ है , मन को स्थिर और नियंत्रित करके

Edit with WPS Office

उसमे समय परमात्मा को धारण करना । वास्तव में , मनुष्य के शरीर से अधिक सुंदर , भव्य , दिव्य , विशाल और सुंदर मंदिर कहीं और नहीं है । इसलिए , हमें अपने शरीर को ही परमात्मा का निवास स्थान बनाना चाहिए , क्योंकि सच्चा मंदिर हमारे भीतर ही स्थित है ।

जब ईश्वर की कोई प्रतिमा नहीं बनाई जा सकती , तो बाहरी मंदिर कैसे संभव हो सकता है ? ईश्वर कण - कण में उपस्थित है , परंतु कण - कण ईश्वर नहीं है । इसलिए , मंदिर में स्थापित प्रतिमा परमात्मा की नहीं हो सकती , परंतु किसी महान आत्मा या महापुरुष की स्मृति अवश्य हो सकती है ।

यदि आप मंदिर में महापुरुषों की स्मृति और उनके गुणों को स्मरण करने जाते हैं , तो मंदिर जाना उचित है , क्योंकि यह आपको उनके आदर्शों और शिक्षाओं का स्मरण कराती है । परंतु यदि आप मूर्ति को ही परमात्मा समझते हैं , तो मंदिर जाना अनुचित है । क्योंकि ईश्वर बाहरी मूर्तियों में नहीं , बल्कि हमारे भीतर विद्यमान है ।
सारत: मंदिर केवल एक बाहरी ढांचा नहीं , बल्कि आंतरिक चेतना का प्रतीक है , और वास्तविक मंदिर का निर्माण हमारे भीतर होना चाहिए , बाहर नहीं ।

प्रश्न 6. ______ क्या रामायण और महाभारत काल्पनिक है ?

उत्तर ______ रामायण और महाभारत भारत की सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर है । इन्हें काल्पनिक या वास्तविक घटनाओं पर आधारित माना जाए , इसका विश्लेषण निम्नलिखित तीन आधारों पर किया जा सकता है :

1. **यात्री साक्ष्य (Traveller Evidence) :** इतिहास में मौर्य काल के दौरान मेगास्थनीज जैसे विदेशी यात्री भारत आए , और बाद में हेनसांग , फाहियान जैसे अन्य यात्रियों ने भी यात्रा की , जिनके वितरणों से हम

Edit with WPS Office

इतिहास को प्रमाणित कर पाते हैं । लेकिन रामायण का काल 10 लाख वर्ष पूर्व का माना जाता है । इतनी प्राचीन घटना के लिए यात्री साक्ष्य मिलना स्वाभाविक रूप से असंभव है । इतने लंबे समय तक अगर कोई साक्ष्य होते भी , तो वे कालचक्र में नष्ट हो चुके होते । इसलिए इस आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि रामायण या महाभारत की घटनाएं काल्पनिक है या सत्य।

2. पुरातात्विक साक्ष्य (Archaeological Evidence) : इस आधार पर भी रामायण और महाभारत की घटनाओं को प्रमाणित करना चुनौती पूर्ण है । रामसेतु के पुरातात्विक प्रमाण आज भी उपलब्ध होते हैं परंतु इतने प्राचीन समय की घटनाएं होने के कारण ,उस समय की तकनीक , स्थापत्य और विज्ञान के साक्ष समय के साथ नष्ट हो जाने के कारण उपलब्ध नहीं होते हैं । इसलिए पुरातात्विक दृष्टिकोण से भी इन महाकाव्यों की सत्यता या असत्यता को निर्णायक रूप से प्रमाणित करना कठिन है ।

3. साहित्यिक प्रमाण (Literary Evidence) : रामायण और महाभारत का सबसे ठोस प्रमाण उनके साहित्यिक रूप में मिलता है । वाल्मीकि रामायण और महर्षि व्यास कृत महाभारत इसका प्रमुख उदाहरण है , जिसमें हर घटना को ग्रह नक्षत्रों की स्थिति और वेदांग ज्योतिष के आधार पर वर्णित किया गया है । इसके माध्यम से हम रामायण के काल की सटीक कालगणना कर सकते हैं । इस साहित्यक प्रमाण से स्पष्ट होता है कि रामायण और महाभारत का आधार वास्तविक घटनाओं पर टिका हुआ है ।

इस प्रकार , इन महाकाव्यों की घटनाओं की सत्यता को पूरी तरह से अस्वीकार करना कठिन है । भले ही यात्री साक्ष्य और पुरातात्विक प्रमाण सीमित हो , साहित्यिक साक्ष्य स्पष्ट रूप से संकेत देते हैं की रामायण और महाभारत सत्य घटनाओं पर आधारित है ।

प्रश्न 7.______ क्या भूत प्रेत होते हैं ?

Edit with WPS Office

उत्तर ______ नहीं ! भूत प्रेत जैसी कोई वस्तु नहीं होती । मृत्यु के पश्चात , जीवात्मा शरीर त्याग देती है और परमात्मा के सानिध्य में चली जाती है , जहां वह नए शरीर को धारण करने की प्रतीक्षा करती है । बिना शरीर के जीवात्मा किसी भी प्रकार का कर्म नहीं कर सकती , क्योंकि कर्म करने के लिए शरीर का होना अनिवार्य है ।

सनातन धर्म में भूत प्रेत की कोई मानता नहीं थी । यह अवधारणा बाद में हमारे समाज में आई , जब इस्लाम और क्रिश्चियनिटी का प्रभाव हमारी संस्कृति पर पड़ा । इन बाहरी प्रभावों के कारण ही भूत - प्रेत जैसी मान्यताएं हमारे समाज में प्रवेश कर गई । सनातन धर्म के अनुसार , भूत - प्रेत का अस्तित्व असंभव है ।

प्रश्न 8. ______ क्या मूर्ति में परमात्मा है ?

उत्तर ______ परमात्मा की उपस्थिति के बिना कोई भी वस्तु आकार नहीं ले सकता । यह सृष्टि का नियम भी परमात्मा के द्वारा ही बनाया गया है । परमात्मा केवल मूर्ति में ही नहीं वह मूर्ति के आगे पीछे , ऊपर नीचे , कण - कण में उपस्थित है अतः वह मूर्ति में भी उपस्थित है परंतु मूर्ति ही परमात्मा है यह मानना बिल्कुल गलत है । मूर्तियां दो प्रकार की होती हैं एक मनुष्य की बनाई जड़ मूर्तियां और दूसरी ईश्वर की बनाई हुई मनुष्य रूपी चलती फिरती मूर्तियां जैसे माता-पिता आचार्य गुरु विद्वान अतिथि तथा पति के लिए उसकी धर्मपत्नी एवं पत्नी के लिए उसका पति , मूर्तिमान देवता कहलाता है । हमें इन्हीं का ही आदर सत्कार और सम्मान अपने जीवन में करना चाहिए ।

प्रश्न 9.______ क्या 84 लाख योनियां होती हैं ?

उत्तर ______ योनियां 84 लाख ही नहीं उससे भी कई अधिक होती है किसी भी वैदिक शास्त्रों में 84 लाख योनियों का वर्णन नहीं है योनियां

Edit with WPS Office

अनेक होती है । परंतु वास्तव में कितनी होती है यह तो केवल परमात्मा ही जानते हैं । मनुष्य के लिए इसका ठीक-ठाक निर्णय कर पाना असंभव है ।

प्रश्न 10.______ स्वर्ग और नरक क्या है ?

उत्तर ______ स्वर्ग किसी विशेष स्थान का नाम नहीं है , बल्कि इसका तात्पर्य मन की स्थिति से है । उन पुरुषों से है जो सांसारिक दुखों से सर्वथा मुक्त रहते हैं । जो व्यक्ति सभी सांसारिक दुखों से मुक्त होते हैं , वे ही "स्वर्ग प्राप्त " माने जाते हैं । परिवार के सभी सदस्यों में मेल होना ही इस धरा पर स्वर्ग है । यह विचार की स्वर्ग कोई विशेष स्थान है जहां व्यक्ति मृत्यु के पश्चात अपने पुण्य कर्मों के फल स्वरुप जाता है , पूर्णतः भ्रांति है ।

शतपथ ब्राह्मण में यह स्पष्ट रूप से लिखा गया है : " **स : सर्वतनुरेव यजमानोंऽस्मिल्लोके संभवति** " (शतपथ ब्राह्मण. 4.6.1.1) अर्थात यजमान (जिसने यज्ञ किया है) स्वर्ग में सभी शरीरों के साथ उत्पन्न होता है ।

यहां " स्वर्ग " को किसी विशेष भौतिक स्थान के रूप में नहीं बल्कि एक आध्यात्मिक और मानसिक अवस्था के रूप में देखा गया है , जिसमें व्यक्ति सांसारिक दुखों से पूरी तरह मुक्त होता है । शतपथ ब्राह्मण के इस श्लोक के अनुसार , स्वर्ग प्राप्त करने का तात्पर्य केवल मृत्यु के पश्चात शरीर का त्याग नहीं , बल्कि वह अवस्था है जहां व्यक्ति जीवन की संपूर्णता को आत्मसात करता है । यजमान (जिसने यज्ञ या आध्यात्मिक साधना की है) उस अवस्था को प्राप्त करता है जहां उसे सभी सांसारिक बंधनों से मुक्ति मिलती है ।
स्वर्ग और नरक मनुष्य के मन की स्थितियां हैं जब मनुष्य सुख आनंद तथा शांति की अनुभूति करता है वह स्वर्ग का सुखी होता है परंतु जब मनुष्य दुख , कष्ट , पीड़ा , और तनाव भोक्ता है वहां नर्क रूपी दुख का अनुभव करता है । सुख दुख मनुष्य के कर्मों से उत्पन्न होते हैं और इसके लिए वह स्वयं ही उत्तरदाई होता है ।

Edit with WPS Office

प्रश्न 11.______ भाग्य बड़ा है या कर्म ?

उत्तर ______ भाग्य और कर्म एक दूसरे के अभिन्न अंग है । आज का कर्म ही कल का भाग्य बनता है । भाग्य हमेशा कर्म के पीछे ही चलता है , और जैसे-जैसे हम कर्म करते हैं , वैसे-वैसे भाग्य की संरचना होती जाती है । श्रेष्ठ कर्म करने से हमारा भाग्य भी उतना ही श्रेष्ठ होता है । इसलिए , यह कहना अधिक उचित होगा कि कर्म का महत्व भाग्य से बढ़कर है , क्योंकि जैसा हम कर्म करेंगे , वैसा ही भाग्य हमारे जीवन में सुख-दुख के रूप में परिरक्षित होगा ।कर्म ही जीवन का वास्तविक निर्माता हैं , और भाग्य उसका परिणाम ।

प्रश्न 12. ______ धर्म बड़ा है या कर्म ?

उत्तर ______ धर्म और कर्म एक दूसरे से जुड़े हुए हैं , धर्म ही वह नींव है जिस पर कर्म का निर्माण होता है । धर्म के बिना कर्म अधूरा और दिशाहीन हो सकता है । हमारे कर्म तभी सार्थक और प्रभावी होते हैं जब वे धर्म के सिद्धांतों का पालन करते हुए किए जाएं । बिना धर्म को समझे किए गए कर्म का परिणाम विपरीत हो सकता है । इसलिए , सही मार्गदर्शन के लिए धर्म का अनुसरण करना आवश्यक है , ताकि कर्म हमें सही दिशा में ले जाए और जीवन में सच्ची सफलता और शांति की प्राप्ति हो सके । धर्म से प्रेरित कर्म ही सर्वश्रेष्ठ है ।

प्रश्न 13. ______ परमात्मा के मुख्य कार्य कौन-कौन से हैं ?

उत्तर ______ परमात्मा द्वारा रचित इस प्रकृति के नियम अटल और अपरिवर्तनशील होते हैं । इन नियमों में कोई भी परिवर्तन संभव नहीं है , और इन्हीं अटल नियमों को " ऋत " कहां जाता है । परमात्मा की सत्ता को " सत " कहां जाता है , जिसका अर्थ है कि जिस वस्तु का जैसा स्वभाव है , उसे उसी रूप में स्वीकारना और मानना ही सत कहलाता है । परमात्मा कभी भी अपने ही बनाए हुए नियमों के विरुद्ध कुछ नहीं करता ।

Edit with WPS Office

परमात्मा के तीन मुख्य कार्य है :

1. **सृष्टि की उत्पत्ति , स्थिति , और प्रलय ______** परमात्मा सृष्टि का निर्माण करते हैं , उसे स्थिर रखते हैं , और फिर समय आने पर उसे प्रलय के रूप में समाप्त करते हैं ।

2. **वेदों का ज्ञान प्रदान करना ______** परमात्मा संसार को वेदों के माध्यम से ज्ञान का प्रकाश देते हैं , जिससे सभी जीव सही मार्ग पर चल सके ।

3. **कर्मफल की व्यवस्था करना ______** परमात्मा प्रत्येक जीव के कर्मों के आधार पर उसे उचित फल प्रदान करते हैं , जो न्याय और धर्म के सिद्धांतों पर आधारित होता है ।

परमात्मा का यह त्रिविध कार्य सृष्टि की व्यवस्था को स्थिर , न्याय संगत और धर्ममय बनाए रखता है ।

प्रश्न 14. ______ क्या हम परमात्मा को पूर्ण रूप से जान सकते हैं ?

उत्तर ______ परमात्मा सर्वज्ञ हैं , जबकि हम जीवात्माएं अल्पज्ञ है । सीमित ज्ञान के आधार पर असीमित ज्ञान को पूरी तरह से समझना संभव नहीं है । ठीक उसी प्रकार , अल्पज्ञता के माध्यम से सर्वज्ञता का पूर्णतः ज्ञान प्राप्त करना असंभव है । अतः हम परमात्मा को पूर्ण रूप से नहीं जान सकते । हम केवल उनके गुण , कर्म और स्वभाव से यह अनुमान लगा सकते हैं कि परमात्मा कैसे हो सकते हैं । उनका असीमित स्वरूप हमारी सीमित बुद्धि से परे हैं , परंतु उनकी दिव्यता को उनके कार्यों और गुणों के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है ।

प्रश्न 15.______ परमात्मा की उपासना के क्या लाभ है ?

Edit with WPS Office

उत्तर ______ जो व्यक्ति परमात्मा की उपासना करता है , वह हमेशा प्रसन्नचित्त और संतुलित रहता है । उसके जीवन में चाहे कितने भी कठिन पल क्यों न आएं , वह उनसे विचलित नहीं होता । यदि पूर्व कर्मों के परिणाम स्वरूप दुख भी आते हैं , तो वह उन्हें सहजता और धैर्य के साथ स्वीकार करता है । ईश्वर की उपासना से व्यक्ति को वास्तविक सुख , समृद्धि , शांति , संतोष और आनंद की अनुभूति होती है । संसार में धन से भौतिक सुख सुविधाएं और भोग की वस्तुएं तो खरीदी जा सकती है , परंतु सच्ची शांति और आनंद केवल परमात्मा के सानिध्य में ही प्राप्त होता है । बिना ईश्वर की कृपा के ,ये अनमोल अनुभव प्राप्त करना असंभव है ।

प्रश्न 16. ______ परमात्मा की उपासना कैसे की जाती है ?

उत्तर ______ ईश्वर की उपासना के अनेकों अंग है , जो व्यक्ति की श्रद्धा , भक्ति , और आध्यात्मिक परिपकुता पर निर्भर करते हैं । सनातन धर्म में उपासना के कई मार्ग हैं , जिनके माध्यम से व्यक्ति परमात्मा के सानिध्य को अनुभव कर सकता है । यहां परमात्मा की उपासना के कुछ प्रमुख मार्ग दिए गए हैं :

1. साधना और ध्यान :

- **ध्यान :** परमात्मा की उपासना का सबसे प्रभावी तरीका ध्यान है । शांत और एकाग्र मन से परमात्मा पर ध्यान केंद्रित करना । मन को स्थिर रखना , और विचारों को नियंत्रित करना उपासना का एक उच्च मार्ग है । यह व्यक्ति को आंतरिक शांति और आत्मिक संतुलन प्रदान करता है ।

- **प्राणायाम और योग :** योग और प्राणायाम के माध्यम से शारीरिक और मानसिक स्थिरता प्राप्त होती है , जिससे उपासना के दौरान मन एकाग्र होता है और ईश्वर से जुड़ना सरल हो जाता है ।

Edit with WPS Office

2. जप और मंत्र :

- **मंत्रजप :** ईश्वर के नाम या मत्रों का जप करने से मन को हृदय में शुद्धता आती है । " ऊं " "गायत्री मंत्र " या अन्य वैदिक मंत्रों का अर्थ सहित उच्चारण व्यक्ति को परमात्मा की उपासना में गहरा उतारने में सहायता करता है । नियमित रूप से परमात्मा के नाम का जाप करना एक सशक्त उपासना पद्धति है , जिससे मनुष्य के भीतर भक्ति जागृत होती है और वह ईश्वर के निकट पहुंचता है । प्रतिदिन सुबह और शाम परमात्मा से जुड़ने के लिए प्रार्थना की जाती है । यह मन को शांति और संतुलन प्रदान करता है और परमात्मा की कृपा को आकर्षित करता है ।

3. यज्ञ/अग्निहोत्र :

- **हवन और यज्ञ :** यज्ञ और हवन , वैदिक पद्धति का हिस्सा है , जिसमें अग्नि में आहुति देकर परमात्मा की उपासना की जाती है । इसे वैदिक संस्कारों का महत्वपूर्ण अंग माना गया है । दैनिक अग्निहोत्र ईश्वर उपासना का महत्वपूर्ण अंग है जिसके द्वारा हम अपने देव ऋण से भी मुक्त हो सकते हैं इसलिए नित्य प्रतिदिन सुबह शाम संध्या बेला में अपने घर पर दैनिक अग्निहोत्र करना अनिवार्य है । अग्निहोत्र दिन में ही करना उचित है रात्रि में यह वर्जित है ।

4. सेवा :

- **निस्वार्थ भाव :** सेवा का भाव भी परमात्मा की उपासना का एक महत्वपूर्ण अंग है । निस्वार्थ भाव से दूसरों की सहायता करना , जरूरतमंदों की सेवा करना , और समाज के लिए कुछ अच्छा करना भी ईश्वर की उपासना का एक रूप है । दूसरों की कल्याण के लिए कार्य करना ईश्वर की सच्ची उपासना मानी जाती है ।

Edit with WPS Office

6. स्वाध्याय :

- **वेद , उपनिषद , भगवत गीता का अध्ययन :** शास्त्रों का अध्ययन और उनके सिद्धांतों को जीवन में लागू करना भी परमात्मा की उपासना का एक माध्यम है । यह आत्मज्ञान ज्ञान प्राप्त करने और परमात्मा के प्रति ज्ञान युक्त भक्ति का विकास करता है। । धर्म ग्रंथो का अध्ययन और आत्मचिंतन के माध्यम से व्यक्ति को अपनी आत्मा और परमात्मा के संबंध को समझने में सहायता मिलती हैं ।

7. सत्संग :

- संतो और विद्वानों की संगति भी उपासना का एक महत्वपूर्ण अंग है । सत्संग से व्यक्ति के भीतर भक्ति , शांति और आंतरिक शुद्धता का विकास होता है ।

8. विवेकपूर्ण जीवन और संयम :

धर्मानुसार जीवन : धर्म के नियमों का पालन करते हुए सदा , सरल और संयमित जीवन जीना भी ईश्वर की उपासना का अंग है । यह व्यक्ति को ईश्वर के मार्ग पर चलने और उसके निकट पहुंचने में सहायता करता है ।

अतः __ ध्यान ,जप , सेवा ,यज्ञ , और स्वाध्याय के माध्यम से हम ईश्वर से जुड़ सकते हैं । उपासना का मुख्य उद्देश्य परमात्मा की कृपा प्राप्त करना और जीवन में शांति , संतोष और आनंद को अनुभव करना है । इससे भिन्न ईश्वर की उपासना का कोई और मार्ग नहीं है ।

प्रश्न 17.______ क्या गंगा में डुबकी लगाने , पूजा - पाठ , कथा , यज्ञ , हवन , अथवा प्रायश्चित करने से पाप धुल जाते हैं ?

Edit with WPS Office

उत्तर ______ मनुष्य को अपने द्वारा किए गए कर्मों के फल अवश्य भोगने पड़ते हैं , चाहे वे सुखद हो या दुखद । कोई भी कर्मकांड , पूजा पाठ , या धार्मिक अनुष्ठान हमें हमारे कर्मों के परिणामों से मुक्त नहीं कर सकते । न हीं किसी प्रकार का प्रायश्चित हमें पाप और कर्मों से बचा सकता है । कर्मों का फल निश्चित है और उसे भोगे बिना उससे छुटकारा पाना असंभव है । इसलिए यह समझना आवश्यक है कि पूजा पाठ , कथा आदि क्रियाएं केवल सांत्वना मात्र है , वे हमारे कर्मों के परिणामों को टाल नहीं सकते । कर्म का सिद्धांत अटल है , और इसे भोगना ही पड़ता है ।

प्रायश्चित का अर्थ है उन गलतियों या पापों के लिए पश्चाताप करना जो व्यक्ति ने अज्ञानता , लापरवाही , या जानबूझकर किए हैं । प्रायश्चित का उद्देश्य आत्मशुद्धि और उन गलतियों का परिमार्जन है जो जीवन में अनजाने या जानबूझकर हो जाती है । यह व्यक्ति को अपनी आत्मा के प्रति दायित्व का अनुभव करता है और उसे पुनः सही मार्ग पर लौटनें के लिए प्रेरित करता है ।

प्रायश्चित के उद्देश्य :

1. **पश्चाताप :** व्यक्ति अपने किए गए गलत कार्यों के लिए भीतर से पछताता है और उसे ठीक करने की इच्छा रखता है ।

2. **आत्म शुद्धि :** प्रायश्चित के माध्यम से व्यक्ति अपने भीतर की दोष पूर्ण प्रवृत्तियों को दूर करने का प्रयास करता है ।

3. **सुधार :** प्रायश्चित केवल क्षमा मांगना नहीं , बल्कि उस गलती को दोबारा न करने का दृढ़ संकल्प लेना है ।
4. **कर्म का परिमार्जन :** यह एक आंतरिक प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति अपने कर्मों का विश्लेषण करता है और उन्हें सुधारने का प्रयास करता है ।

Edit with WPS Office

प्रायश्चित के प्रकार :

1. **मानसिक प्रायश्चित :** यह आंतरिक भावना से जुड़ा हुआ है , जिसमें व्यक्ति अपने पापों के लिए गहरे स्तर पर पछताता है और मानसिक रूप से शुद्धि की प्रक्रिया से गुजरता है ।
2. **शारीरिक प्रायश्चित :** इसमें कुछ तप , व्रत , या कठिनाई का सामना करके आत्म शुद्धि की जाती है । उदाहरण के लिए , उपवास करना या कठिन योग करना ।
3. **सामाजिक प्रायश्चित :** यह उस क्षति की भरपाई करना है जो व्यक्ति ने समाज या दूसरों को पहुंचाई हो । इसमें क्षमा मांगना , दूसरों की सेवा करना या समाज के लिए कुछ अच्छा करना शामिल है ।

प्रायश्चित की आवश्यकता :

पहली बार हम जीवन में अनजाने या जानबूझकर ऐसे कार्य कर जाते हैं जो नैतिकता या धर्म के विपरीत होते हैं । ऐसे कार्यों को पाप बोधं व्यक्ति के मन को अशांत कर देता है । प्रायश्चित करने से वह व्यक्ति अपने मन की शांति को पुनः प्राप्त कर सकता है और अपने जीवन में सुधार कर सकता है । अपितु , प्रायश्चित से व्यक्ति अपने पिछले कर्मों के परिणामों से पूरी तरह बच नहीं सकता , परंतु यह उसे आंतरिक शांति और जीवन में सुधार के अवसर प्रदान करता है । प्रायश्चित के माध्यम से आत्मा की शुद्धि होती है और मन में नई सकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है , जिससे भविष्य के कर्मों में सुधार की संभावना बढ़ जाती है ।

प्रश्न 18. ______ क्या गाय हमारी माता है ?

उत्तर ______ गाय को माता कहने की प्रथा भारतीय समाज में आदर और सम्मान की भावना से जुड़ी हुई है । हालांकि , गाय हमें जन्म देने वाली माता नहीं होती , फिर भी उसे माता के समान माना जाता है , क्योंकि वह हमें अपने माता के जैसे अपने दूध , दही , घृत आदि से पोषण देती हैं । यह

Edit with WPS Office

भावना वैसे ही है जैसे हम धरती को " माता " कहकर सम्मानित करते हैं , क्योंकि वह भी हमें भोजन और जीवन के लिए आवश्यक वस्तुएं प्रदान करती है । धरती हमारी वास्तविक माता तो नहीं होती , परंतु उसे माता के रूप में सम्मान देना हमारी संस्कृति की एक विशेषता है ।

जब कोई यह तर्क करता है कि अगर गाय हमारी माता है , तो बैल हमारा पिता होगा , यह एक संकुचित दृष्टिकोण को दर्शाता है । जैसे हम किसी को सम्मान पूर्वक "दादा " "भाई " "बहन " कहते हैं । इसका वास्तविक संबंध रक्त संबंधों से नहीं होता । बैल भी किसान का सहायक है , अन्नदाता है , पर उसे पिता के रूप में देखा जाना सिर्फ एक मानवीय और सकितिक सम्मान का हिस्सा है , वास्तविकता से इसका कोई लेना देना नहीं है । बेल जब खेत में हल खींचता है तो वह भी पिता के समान किसान है , पिता के समान अन्नदाता है मगर पिता सिद्ध नहीं होता , जिस प्रकार गाय माता सिद्ध नहीं होती । इसी प्रकार बैल भी पिता सिद्ध नहीं होता ।

गाय और बैल को माता-पिता के रूप में संबोधित करना केवल सम्मान और आदर का प्रतीक है , न कि वास्तविक संबंध । जो लोग ऐसे कुतर्कों से मजाक बनाते हैं , वे स्वयं अपने जीवन से भटके होते हैं ।

प्रश्न 19.______ सप्त ऋषि कौन है ?

उत्तर ______ सप्त ऋषि प्राचीन भारतीय संस्कृति में अत्यंत पूजनीय और ज्ञान के स्तंभ माने गए हैं । ये सात ऋषि वे महान ज्ञानी और तपस्वी थे जिन्होंने वेदों की रचना में योगदान दिया और मानव सभ्यता को धार्मिक , आध्यात्मिक और नैतिक मार्गदर्शन प्रदान किया । इनका नाम संस्कृत ग्रंथों और वेदों में प्रमुखता से उल्लेखित है , और इनकी प्रतिष्ठा को आज भी भारतीय संस्कृति में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है । वेदों का अध्ययन करने पर जिन सात ऋषियों या ऋषि कुल के नामों का पता चलता है वे नाम क्रमशः इस प्रकार है : ___

1. वशिष्ठ

Edit with WPS Office

2. विश्वामित्र
3. कण्व
4. भारद्वाज
5. अत्रि
6. वामदेव
7. शौनक

इनके अलावा ऋषि अगस्त्य , कश्यप , अष्टावक्र , याज्ञवल्क्य , कात्यायन , ऐतरेय , कपिल , जैमिनी , गौतम आदि सभी ऋषि उक्त सात ऋषियों के कुल के होने के कारण इन्हें भी वही स्थान प्राप्त है । महाभारत में सप्त ऋषियों की दो नामवालियां मिलती है इस प्रकार वैदिक शास्त्रों में हमें सप्त ऋषियों के नामावली में कुछ भिन्नताएं पाई जाती है हम यहां नामावली वेदों के आधार पर प्रस्तुत कर रहे हैं : ____

सप्तर्षियों के नाम इस प्रकार है :

ऋषि वशिष्ठ : वशिष्ठ महर्षि राजा दशरथ के राजगुरु थे और रामायण में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है । वे अपने ज्ञान , तपस्या , और योगबल के लिए प्रसिद्ध थे ।

ऋषि विश्वामित्र : विश्वामित्र एक राज ऋषि थे जो अपने तप के बल पर ब्रह्म ऋषि बने । इन्हें गायत्री मंत्र के द्रष्टा के रूप में भी जाना जाता है । इन्होंने अपने जीवन में कठिन तपस्या करके अद्वितीय सिद्धियां प्राप्त की ।

ऋषि कण्व : कण्व वैदिक काल के ऋषि थे । देश के सबसे सोमयज्ञ को ऋषि कण्व ने व्यवस्थित किया था । इन्हीं के आश्रम में हस्तिनापुर के राजा दुष्यंत की पत्नी शकुंतला एवं उनके पुत्र भरत का पालन पोषण हुआ था । ऋग्वेद के आठवें मंडल के अधिकांश मंत्र महर्षि कण्व तथा उनके वंशजों तथा गोत्र जो द्वारा दृष्ट है । इनमें लौकिक ज्ञान विज्ञान तथा अनिष्ट निवारण संबंधी उपयोगी मंत्र है ।

ऋषि अत्रि : अत्रि ऋषि अपनी पत्नी अनुसूया के साथ अपने तप और ब्रह्म ज्ञान के लिए प्रसिद्ध थे । उनकी संताने चंद्रमा , दत्तात्रेय , और दुर्वासा माने जाते हैं , जो महान दिव्य शक्तियों के प्रतीक हैं । कृषि विज्ञान में उनका अद्वितीय योगदान भी माना जाता है ।

Edit with WPS Office

ऋषि भारद्वाज : भारद्वाज ऋषि वैदिक काल के महान ऋषि माने जाते हैं और उनकी शिक्षा और लेखन की परंपरा प्राचीन गुरुकुल परंपरा में जारी रही । उन्हें चिकित्सा और युद्ध विद्या का ज्ञाता माना जाता है । ऋषि भारद्वाज ने " यन्त्र - सर्वस्व " नामक बृहद ग्रंथ की रचना की थी । इस ग्रन्थ में उच्च और निम्र स्तर पर विचरने वाले विमानों के निमार्ण का वर्णन मिलता है ।

ऋषि वामदेव : वामदेव ने इस देश को सामगान (अर्थात संगीत) दिया । वामदेव ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के सूत्तद्रष्टा , गौतम ऋषि के पुत्र तथा जन्मत्रयी के तत्ववेत्ता माने जाते हैं । भरत मुनि द्वारा रचित भरतनाट्य शास्त्र वामदेव से ही प्रेरित है ।

ऋषि शौनक : ऋषि शौनक भारतीय वेंदिक साहित्य के एक महान ऋषि माने जाते हैं , जिनका योगदान विशेष रूप से वैदिक शिक्षा और सांस्कृतिक परंपराओं के संरक्षण में महत्वपूर्ण है । ऋषि शौनक ने 10000 विद्यार्थियों के गुरुकुलों को चलकर कुलपति का विलक्षण सम्मान प्राप्त किया था ।

सप्तर्षियों का महत्व :

सप्त ऋषि न केवल धर्म और अध्यात्म के प्रतीक हैं , बल्कि भारतीय संस्कृति के बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के आधार हैं । उनकी शिक्षाओं और तप के आधार पर मानवता को दिशा मिली । वेदों के निर्माण और संरक्षण में उनकी भूमिका अत्यधिक

प्रश्न 20.______ क्या नाम जप , पूजा पाठ से ईश्वर की प्राप्ति संभव है ?

उत्तर ______ हम ईश्वर को मानते तो हैं , लेकिन उसे वास्तव में जानते नहीं है । बिना सच्चे ज्ञान के , केवल मान लेने से अंधविश्वास को बढ़ावा मिलता है । ईश्वर मानने का नहीं , बल्कि जानने का विषय है । जब हम उसके गुण , कर्म , और स्वभाव को समझ लेते हैं , तो ही उसकी सही उपासना कर सकते हैं । धूप अगरबत्ती और बाहरी पूजा से ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती । योग , प्राणायाम , निष्काम कर्म , और यज्ञ जैसे आध्यात्मिक अभ्यास ईश्वर

Edit with WPS Office

की वास्तविक उपासना के माध्यम है । ये क्रियाएं हमें ईश्वर के समीप ले जाती है क्योंकि वे हमारे भीतर की शुद्धता और मानसिक एकाग्रता को जाग्रत करती है । इसलिए , हमें इन क्रियाओं का ही अनुसरण करना चाहिए , और बाहरी , भौतिक पूजा पर निर्भर नहीं होना चाहिए । ईश्वर का सर्वोत्तम और पवित्र नाम " ओम " है , जो उसके सत्य स्वरूप का प्रतीक है । यह नाम हमें ईश्वर के सच्चे स्वरूप के समीप लाता है । अन्य नामों या विधियों का अनुसरण करने से ईश्वर की केवल एक ही गुण का स्मरण होता है । ईश्वर के सभी गुण एवं कम ओम नाम में समाहित है अतः हमें ओम का ही जाप करना चाहिए ।

यह विचार स्पष्ट करता है कि ईश्वर की प्राप्ति केवल बाहरी पूजा या कर्मकांड से नहीं , बल्कि आत्मज्ञान , योग और आंतरिक शुद्धता के माध्यम से संभव है । ईश्वर को जानने और समझने के लिए हमें उसके गुणों और कर्मों का अध्ययन करना चाहिए और उन आध्यात्मिक अभ्यासों का पालन करना चाहिए जो हमें मानसिक और आत्मिक रूप से जागरूक बनाते हैं । " ओम " ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ नाम है , जो उसकी व्यापकता और सार्वभौमिकता को दर्शाता है ।

प्रश्न 21.______ क्या वेदों में मिलावट संभव है ?

उत्तर ______ ऋषियों ने वेदों को सुरक्षित रखने के लिए असाधारण सावधानियों और विधियों का उपयोग किया । जिससे वेदों की शुद्धता और उनके मौलिक रूप को अरबों वर्षों तक बिना किसी परिवर्तन के संरक्षित किया जा सका । वेदों की सुरक्षा और संरक्षण के लिए अपनाई गई विधियां न केवल प्राचीन थी , बल्कि आज भी अद्वितीय और अनुकरणीय है । आइए इसे विस्तार से समझते हैं :

अनुपूर्वी और वेदों का मौखिक संरक्षण :

वेदों को प्रारंभिक काल में लिपिबद्ध नहीं किया गया था , बल्कि इन्हें

Edit with WPS Office

मौखिक रूप से संरक्षित किया जाता था । ऋषियों ने " अनु पूर्वी " का नियम लागू किया , जिसका अर्थ था कि मंत्रों का सही कम्र , उच्चारण , और प्रत्येक अक्षर को बिना किसी परिवर्तन के याद रखा जाए । यह मौखिक परंपरा इतनी सुदृढ़ थी कि वेदों का हर मंत्र , हर अक्षर , और हर स्वर सही रूप से अगली पीढ़ी तक पहुंचता रहा । वेदों के पाठ को पूरी तरह से याद रखने के लिए 11 प्रमुख प्रकार की विधियों के माध्यम से पढ़ा जाता था , जिसे " विकृति - वल्ली " नामक ग्रंथ में विस्तार से बताया गया है ।

वेद मंत्रों के संरक्षण के लिए विशेष पाठ विधियां :

वेद मंत्रों को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखने के लिए विभिन्न पाठ विधियां विकसित की गई । इन विधियों का उद्देश्य वेद मंत्रों के हर शब्द और अक्षर को शुद्ध रूप से संरक्षित करना था , ताकि उनमें कोई गलती या मिलावट न हो सके। इन विधियों में शामिल है:

संहिता पाठ : मंत्रों को बिना किसी विभाजन के सीधे पढ़ना ।
पद पाठ : मंत्रों के हर शब्द को अलग-अलग पढ़ना ।
क्रम पाठ : दो दो शब्दों का क्रमिक पाठ ।
जटा पाठ : शब्दों को उलट - पलट कर पढ़ना ।
माला पाठ : प्रत्येक शब्द को माला की तरह जोड़कर पढ़ना ।
रेखा पाठ : शिखा पाठ , ध्वज पाठ , दंड पाठ , रथ पाठ , घन पाठ : इन जटिल विधियों के माध्यम से मंत्रों का क्रम , ध्वनि , और संरचना सुरक्षित रखी जाती है ।

इन पाठ विधियों की जटिलता के कारण , वेदों में किसी प्रकार की मिलावट या बदलाव करना असंभव था । यदि वेदों की सभी मुद्रित प्रतियां नष्ट भी हो जाए , तो भी इन विधियों के माध्यम से वेदों को पुनः शुद्ध रूप में प्राप्त किया जा सकता है । उदाहरण के लिए :

1. संहिता पाठ :

Edit with WPS Office

यह सबसे सामान्य पद्धति है , जिसमें मत्रों को उनके मूल रूप में संहिता (मंत्रों का मिलाजुला पाठ) के रूप में पढ़ा जाता है । शब्दों को उनके स्वाभाविक रूप में पढ़ा जाता है , बिना किसी विभाजन या अलगाव के । यह पद्धति मंत्रों के सामान्य उच्चारण के लिए है ।

उदाहरण :

" अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । " (संहिता पाठ मैं सभी शब्द एक साथ पढ़े जाते हैं)

2. पद पाठ :

पद पाठ में वैदिक मंत्रों को उनके प्रत्येक पद या शब्दों में विभाजित कर पढ़ा जाता है । इसका उद्देश्य शब्दों को अलग-अलग करके उनके स्वाभाविक स्वरूप को समझना और सही रूप से उपचारित करना है । इसमें संहिता पाठ की तुलना में हर शब्द या पद को अलग किया जाता है , और हर शब्द को स्वतंत्र रूप से उच्चारित किया जाता है ।

उदाहरण :

संहिता पाठ : " अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।"
पद पाठ : अग्निम् । इळे पुरः । हितम् । यज्ञस्य । देवम् । ऋत्विजम् । "

इसमें मंत्र के हर शब्द को स्पष्ट रूप से अलग किया जाता है , ताकि उसका सही रूप में उच्चारण किया जा सके । पद पाठ मंत्र के हर शब्द और उनके विभक्तियों को स्पष्ट करने के लिए है ।

3. क्रम पाठ :

Edit with WPS Office

क्रम पाठ में एक मंत्र के दो दो पद (शब्द) साथ-साथ पढ़े जाते हैं । पहले पहला और दूसरा पद , फिर दूसरा और तीसरा पद , और इसी क्रम से आगे बढ़ा जाता है । यह पद्धति मंत्रों के सही अनुक्रम और क्रम को सुरक्षित रखने के लिए है ।

उदाहरण : संहिता पाठ : " अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । "
क्रम पाठ :

1. " अग्निम् इळे "
2. " इळे पुरः "
3. " पुरः हितम् "
4. " हितम् यज्ञस्य "
5. " यज्ञस्य देवम् "
6. " देवम् ऋत्विजम् "

4. जटा पाठ :

जटा पाठ में मंत्रों के पदों को उलट- पलट कर पढ़ा जाता है । हर दो शब्दों को पहले सामान्य रूप से , फिर उल्टे क्रम में और फिर फिर से सामान्य रूप में पढ़ा जाता है । यह विधि मंत्रों के सही क्रम और उच्चारण को सुरक्षित रखने के लिए एक गहरी और जटिल पद्धति है ।

उदाहरण : संहिता पाठ : " अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । "
जटा पाठ :

1. " अग्निम् इळे । इळे अग्निम् । अग्निम् इळे । "
2. " इळे पुरः । पुरः इळे । इळे पुरः । "
3. इसी प्रकार पूरा मंत्र ।

वेदों की अनुक्रमाणिकाएं :

वेदों को सुरक्षित रखने के लिए ऋषियों ने एक और महत्वपूर्ण उपाय और

Edit with WPS Office

अपनाया __ वेदों की अनुक्रमाणिकाएं । हर वेद मंत्र के ऋषि , देवता , छन्द , और मंत्रों की संख्या को बताने वाली अनुक्रमाणिकाएं तैयार की गई । इससे वेद मंत्रों के क्रम , संख्या , और विशेषताओं को स्मरण रखना और संरक्षित करना सरल हो गया । प्रमुख अनुक्रमाणिकाओं में शामिल है :

शौनकानुक्रमणी , अनुवाकानुक्रमणी , सुक्तानुक्रमणी , आर्षानुक्रमणी , छंदोनुक्रमणी , देवतानुक्रमणी , कात्यायनीयानुक्रमणी , सर्वानुक्रमणी

इन अनुक्रमणिकाओं के माध्यम से यह सुनिश्चित किया गया कि मंत्रों का सही क्रम और उनका विवरण सदियों तक सुरक्षित रहे । ऋषियों ने वेद मंत्रों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने के लिए गुरु - शिष्य परंपरा का पालन किया । इस परंपरा में मंत्रों का उच्चारण , स्वर , और क्रम सटीक रूप से सिखाया जाता था । एक गुरु अपने शिष्य को वेदों का पाठ सिखाने के लिए अत्यधिक सावधानी बरतता था , ताकि मंत्रों में कोई गलती न हो । यह मौखिक परंपरा इतनी सटीक थी कि वेदों का एक अक्षर भी बदलने की संभावना नहीं रहती थी ।

वेदों की शुद्धता का प्रमाण :

वेदों की शुद्धता की पुष्टि इस बात से होती है जबकि अन्य सभी ग्रंथों में किसी न किसी प्रकार की मिलावट हुई है , वेदों में ऐसा नहीं हुआ । उदाहरण के लिए , मनुस्मृति , रामायण , महाभारत , और अन्य धर्म ग्रंथों में समय के साथ मिलावट और प्रक्षिप्तता की घटनाएं हुई , लेकिन वेदों को उनके शुद्ध रूप में संरक्षित रखा गया । ऋषियों द्वारा अपनाई गई कठोर विधियां और अनुक्रमाणिकाएं इस बात का प्रमाण है कि वेदों में किसी भी प्रकार की मिलावट संभव नहीं थी । वेदों के हर मंत्र की छंद संख्या , पद संख्या , और देवता को व्यवस्थित रूप से संरक्षित किया गया । यह सुनिश्चित किया गया कि मंत्रों का उच्चारण , उनकी लंबाई , और उनका क्रम पूरी तरह से सही रहे । छंदों के अनुक्रम और मंत्रों के पदों की संख्या की गणना से यह पता चलता था कि कोई मंत्र सही है या नहीं ।

Edit with WPS Office

ऋषियों द्वारा अपनाई गई सावधानियों और विधियों के कारण , वेदों को शुद्धता के साथ संरक्षित किया गया है । यह साहित्यिक इतिहास में एक अद्वितीय उदाहरण है कि किसी ग्रंथ को इतनी सटीकता और शुद्धता के साथ अरबों वर्षों तक सुरक्षित रखा गया हो । वेदों की यह शुद्धता उन्हें अन्य सभी ग्रंथों से अलग और विशिष्ट बनाती है ।

प्रश्न 22.______ क्या तीर्थ यात्रा से पाप धुलते हैं ?

उत्तर ______ तीर्थ यात्रा का वास्तविक अर्थ और उद्देश्य पापों से मुक्ति पाना नहीं है , बल्कि आंतरिक शुद्धिकरण और जीवन के महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करना है । " तीर्थ " शब्द का अर्थ है तराने वाला या पार कराने वाला । प्राचीन काल में काशी , मथुरा , हरिद्वार , बद्रीनाथ , केदारनाथ , जैसे तीर्थ स्थल ऋषियों और संतों के आश्रम हुआ करते थे । जहां जाकर मनुष्य उनके उपदेशों से मार्गदर्शन प्राप्त करता था । इन स्थानों पर ऋषियों की संगति से व्यक्ति अपने जीवन के विभिन्न समस्याओं का हल प्रकार दुखों से मुक्त हो जाता था , इसलिए इन स्थानों को तीर्थ कहा जाता था ।

ऋषियों के उपदेशों को जीवन में अपनाने से व्यक्ति पाप कर्मों से बच जाता था और इसी कारण इन स्थानों को " तीर्थ " कहा जाता था । हालांकि , आजकल तीर्थ का स्वरूप बदल गया है । आज इसे सिर्फ धार्मिक स्थलों की यात्रा , गंगा में स्नान , और पापों का प्रायश्चित करने तक सीमित कर दिया गया है ।

वास्तविक तीर्थ यात्रा तब होती है जब व्यक्ति माता-पिता , गुरु , धर्म ग्रंथों और आप्त पुरुषों की शिक्षाओं को समझकर उन्हें अपने जीवन में उतारता है । वेदों का अध्ययन भी एक तीर्थ यात्रा के समान है , क्योंकि इससे व्यक्ति संसार रूपी भवसागर से तर जाता है और मोक्ष प्राप्त कर लेता है । यही सच्ची तीर्थ यात्रा है ।

Edit with WPS Office

प्रश्न 23. ______ क्या गंगा नदी को राजा भगीरथ लाए थे ?

उत्तर .______ पुराणों में कथा आती हैं कि गंगा नदी जो बह रही है । इस नदी को राजा भगीरथ लाएं थें , ऐसी पुराणों में कथा आती है । लेकिन पुराणों में जो कथा है वो एक दूसरे पुराण के विरुध है । एक पुराण में गंगा नदी को आदिकाल से बताया है तो दूसरे में भागीरथ द्वारा लाया गया है । भागवत पुराण , मार्कंडेय पुराण , हरिवंश पुराण . इन पुराणों में एक जगह राजा भगीरथ द्वारा गंगा नदी को लाया हुआ बताते हैं । लेकिन दूसरी तरफ इन्हीं पुराणों में , एक जगह राजा भगीरथ की वंशावली दी गई है । उस वंशावली में राजा भगीरथ से 14 पीढ़ी पहले राजा हरिश्चंद्र हुए , उस समय राजा हरिश्चंद्र के साथ , गंगा नदी का वर्णन आता है । तो वह कौन सी गंगा थी ?? जरा इन पुराण वालों से पूछो तो सही ? कि पहले क्या लिख मारा और बाद में क्या लिख दिया । पुराण कार ने कौन सा भांग का नशा कर रखा था ?? इन्हीं पुराणों में एक जगह , जब राजा हरिश्चंद्र सत्य के कारण अपना राज महल त्याग देते हैं । ऋषि विश्वामित्र को दान कर देते हैं । राजा के पास अपनी पत्नी अपना पुत्र और आप तीनों महल छोड़कर निकल पड़तें है । आगे चलकर ऐसी परिस्थिति आती है , कि राजा अपनी पत्नी और बच्चे राहुल से अलग हो जाते हैं । स्थिति ऐसी आती है राजा को अपने आप को खुद को बेचना पड़ता है । राजा हरिश्चंद्र को एक भंगी ने खरीद लिया , भंगी राजा हरिश्चंद्र को अपने घर ले जाकर , उसे अपना नौकर बना लिया । और राजा हरिश्चंद्र को ड्यूटी दे दी कि शमशान घाट पर । तो श्मशान घाट पर पहरा देने की ड्यूटी राजा हरिश्चंद्र की थी , तो उस समय राजा हरिश्चंद्र के साथ गंगा नदी का वर्णन है । पुराणों को मानने वालों को उनसे मैं पूछना चाहता हूं ? राजा हरिश्चंद्र के समय कौन सी गंगा थी ? जो राजा हरिश्चंद्र भागीरथ की 14 पीढ़ी पहले वंशावली में पैदा हुए उनके साथ गंगा नदी का वर्णन है ।

और दूसरी जगह राजा सगर के 60000 पुत्रों को मुक्ति दिलाने के लिए राजा भगीरथ स्वर्ग लोक से गंगा को लाएं ? अब इन दोनों में सत्य कौन सी बात है ? और मिथ्या कौन सी ? हां , इतना अवश्य कह सकते हैं कि राजा भगीरथ ने गंगा नदी का अपने राज्य की तरफ रास्ता जरूर बनाया होगा ।

Edit with WPS Office

जिससे गंगा नदी का मुंह मोड़ा होगा । गंगा नदी आदिकाल से बहती आ रही है । गंगा नदी प्रकृति की देन है , कुदरती हैं , इसलिए नदियों को कोई नहीं लाता नदिया स्वयं अपना रास्ता चुनती हैं । मनुष्य नहरे निकाल सकता है , नदिया नहीं ?

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

•158. _____ संस्कृत भाषा _____

संस्कृत भाषा की सबसे प्राचीन और समृद्ध भाषाओं में से एक है , जिसे " देववाणी " या " ईश्वर " की भाषा ' भी कहां जाता है । यह वैदिक ग्रंथों , उपनिषदों , पुराणों , महाभारत और रामायण जैसे महाकाव्यों की भाषा है । संस्कृत का साहित्य , व्याकरण , और ध्वनि विज्ञान अत्यधिक समृद्ध और वैज्ञानिक है । पाणिनि द्वारा रचित " अष्टाध्यायी " संस्कृत व्याकरण का सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है , जिसे विश्व का सबसे सटीक और पूर्ण व्याकरण माना जाता है ।

संस्कृत भाषा की उत्पत्ति :

संस्कृत भाषा की उत्पत्ति वेदों से हुई है , जो सृष्टि के आरंभ में केवल ध्वनियों के रूप में विद्यमान थे । प्रारंभ में , वेद मंत्रों का स्वरूप ध्वन्यात्मक था , जिन्हें " श्रुति " कहां जाता था । इन मंत्रों को मौखिक रूप से गुरु - शिष्य परंपरा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी सिखाया जाता था । उस समय

Edit with WPS Office

कोई लिखित शब्द या लिपि नहीं थी , वेद केवल ध्वनि के रूप में ही अस्तित्व में थे ।

ध्वनियों से वर्णमाला और भाषा की रचना : वेदों की इन मूल ध्वनियों से समय के साथ ध्वन्यात्मक संरचना का विकास हुआ , और धीरे-धीरे वर्णमाला की रचना की गई । वैदिक ध्वनियां विभिन्न स्वर , व्यंजन , और उच्चारण की ध्वनियों में विभाजित की गई , जिससे संस्कृत की वर्णमाला बनी । इस वर्णमाला से शब्दों का निर्माण हुआ , और फिर शब्दों से वाक्य बनने लगे , जिससे भाषा का रूप सामने आया ।

संस्कृत भाषा का नामकरण : जब समाज को शिक्षित और सुसंस्कृत करने के लिए इन ध्वनियों का उपयोग किया गया , तो इन ध्वनियों को "संस्कृत " नाम दिया गया । "संस्कृत "शब्द का अर्थ है "सुसंस्कृत " या " संपूर्ण " । इस प्रकार , जो ध्वनियां वेद ज्ञान को व्यक्त करने और समाज को सुसंस्कृत बनाने के लिए प्रयुक्त की गई , उन्ही ध्वनियों का नाम संस्कृत रखा गया । इस दृष्टिकोण से , संस्कृत भाषा स्वयं वैदिक ध्वनियों से उत्पन्न हुई ।

वेदों और संस्कृत का संबंध ______ यह महत्वपूर्ण है कि वेद संस्कृत में नहीं लिखे गये थें , बल्कि वे मौखिक रूप से श्रुति रूप में विद्यमान थे । वेदों का लिखित रूप बहुत बाद में आया , जब लिपियों का विकास हुआ । वास्तव में , संस्कृत भाषा का विकास और उसका साहित्यिक रूप वेदों की ध्वनियों से निकला हुआ है , इसलिए संस्कृत की उत्पत्ति वेदों से मानी जाती है ।

संस्कृत भाषा की उत्पत्ति सृष्टि के आरंभ में उत्पन्न वैदिक ध्वनियों से हुई है । इन ध्वनियों ने धीरे-धीरे भाषा का रूप धारण किया , जिससे वर्णमाला , शब्द और वाक्य रचें गए । संस्कृत का नाम इसलिए पड़ा क्योंकि यह ध्वनियां और उनके द्वारा व्यक्त ज्ञान समाज को शिक्षित और सुसंस्कृत करने का माध्यम बनी । इस प्रकार , संस्कृत भाषा को वैदिक ध्वनियों का विकसित रूप माना जाता है ।

Edit with WPS Office

संस्कृत की विशेषताएं

1. ध्वन्यात्मक परिपूर्णता (phonetic perfection) :

संस्कृत में प्रत्येक अक्षर का उच्चारण स्पष्ट रूप से निर्धारित होता है , और यह जैसा लिखा जाता है , वैसा ही बोला भी जाता है । इस विशेषता के कारण भाषा की ध्वनि संरचना बहुत सटीक होती है । संस्कृत में हर शब्द , ध्वनि , और उच्चारण एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जुड़ा होता है । ध्वन्यात्मक और व्याकरणिक संरचना इतनी सटीक है कि शब्दों का सही उच्चारण मानसिक और शारीरिक संतुलन को प्रभावित कर सकता है ।

उदाहरण :

" ओम " शब्द की ध्वनि से उत्पन्न कंपन व्यक्ति के मानसिक और आत्मिक संतुलन को सुधारती है । इस प्रकार , संस्कृत के शब्द न केवल संचार का साधन है , बल्कि वे ऊर्जा और संतुलन को भी प्रभावित करते हैं ।
" धर्म " (धर्म) __ इस शब्द को स्पष्ट उच्चारण के साथ " ध " की ध्वनि , " र " की स्वाभाविक ध्वनि और " " (विसर्ग) की ध्वनि के साथ उच्चारित किया जाता है । संस्कृत की इस विशेषताओं से मंत्रों और श्लोकों का उच्चारण प्रभावी और शक्ति से भरा होता है , क्योंकि ध्वनि का विज्ञान इसमें निहित होता है ।

2. व्याकरण की लचीलापन और शुद्धता (flexibility and purity of grammar) :

संस्कृत के व्याकरण के कठोर नियम होते हुए भी इसमें लचीलापन है । शब्दों के स्थान बदलने पर भी वाक्य का अर्थ नहीं बदलता , जबकि अन्य भाषाओं में वाक्य की संरचना का परिवर्तन अर्थ को प्रभावित कर सकता है ।

Edit with WPS Office

उदाहरण :

" राम: सीतां वनं नयति " (राम सीता को वन ले जाता है) इस वाक्य को कई तरीकों से लिखा जा सकता है , जैसे :

- " सीतां राम: वनं नयति "
- " वनं राम: सीतां नयति " अर्थ वही रहेगा , जबकि वाक्य की संरचना बदल जाएगी । इसका कारण है कि संस्कृत में शब्दों की विभक्ति (case endings) के आधार पर अर्थ स्पष्ट रहता है , चाहे शब्दों का क्रम कोई भी हो ।

3. धातु और नाम प्रणाली (verb - roots system) :

संस्कृत में अधिकांश शब्द धातु (verb roots) से उत्पन्न होते हैं । धातु से विभिन्न रूपों में शब्द बनाए जाते हैं , जो भाषा को वैज्ञानिक और तार्किक बनाते हैं ।

उदाहरण :

- धातु " भू " (होना) से अनेक शब्द बनते हैं :
- " भवति " (होता है) ,
- " भविष्यति " (होगा) ,
- " भविष्य " (भविष्य) ,
- " भूत " (अतीत) । यह धातु प्रणाली संस्कृत को अन्य भाषाओं से अलग और व्यवस्थित बनाती है , क्योंकि एक ही धातु से विभिन्न अर्थ और भावनाएं उत्पन्न किया जा सकती है ।

4. दार्शनिक और आध्यात्मिक अभिव्यक्ति (philosophical and spiritual expression) :

Edit with WPS Office

संस्कृत को दार्शनिक और आध्यात्मिक विचारों को व्यक्त करने के लिए अनूठी माना जाता है । इसमें गहरे विचारों और भावनाओं को अत्यंत सटीकता और गहराई से व्यक्त किया जा सकता है ।

उदाहरण :

" अहम् ब्रह्मास्मि " (मैं ब्रह्म हूं) यह महाकाव्य आत्मा और परमात्मा के एकत्व का दार्शनिक सिद्धांत प्रस्तुत करता है । इसका आध्यात्मिक अर्थ यह है कि आत्मा और ब्रह्म समान है और उनके बीच कोई भेद नहीं है । संस्कृत की यह क्षमता इसे दार्शनिक ग्रंथों और आध्यात्मिक शिक्षाओं के लिए आदर्श भाषा बनाती है ।

5. शब्दों की असीमित शक्ति (vast lexicon) :

संस्कृत की शब्दावली बहुत विस्तृत और समृद्ध है । एक ही वस्तु या विचार के लिए कई शब्द होते हैं , जो सूक्ष्म अंतर और भावनाओं को व्यक्त करते हैं ।

उदाहरण :

" सूर्य " (सूरज) के लिए संस्कृत में कई शब्द है : आदित्य , दिवाकर , रवि , भास्कर । ये सभी शब्द सूर्य के विभिन्न गुणों और भूमिकाओं को व्यक्त करते हैं , जैसे " दिवाकर " का अर्थ है " दिन का निर्माता " और " भास्कर " का अर्थ है "प्रकाश देने वाला " ।

6. संक्षिप्तता और स्पष्टता (conciseness and Clarity) :

संस्कृत में एक विचार या भावना को संक्षिप्त और सटीक रूप में व्यक्त किया जा सकता है , जिससे वाक्य प्रभावशाली और अर्थपूर्ण बनते हैं ।

Edit with WPS Office

उदाहरण :

" सत्यं वद धर्मं चर " (सत्य बोलों , धर्म का पालन करो) यह वाक्य छोटा है , लेकिन इसमें जीवन का एक महत्वपूर्ण नैतिक सिद्धांत छिपा हुआ है । यह संक्षिप्तता और सटीकता संस्कृत की विशेषता है , जिससे भाषा में गहराई और अर्थ दोनों रहते हैं ।

7. कविता और संगीत की उपयुक्तता (Suitability for poetry and music) :

उदाहरण :

" शुभं करोति कल्याणं , आरोग्यं धनसम्पदा । शत्रुबुद्धिविनाशाय दीपज्योतिर्नमोऽस्तुते ।।

यह श्लोक एक दीप प्रज्वलित करते समय बोला जाता है । इसमें शब्दों का संगीतात्मक मेल और लय भाषा को अत्यंत मधुर बनाते हैं । संस्कृत में इस तरह के कई श्लोक और मंत्र है , जो संगीत और भावना का संगम है ।

8. सार्वभौमिकता (Universality) :

संस्कृत को विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध भाषा है , और इसे सभी भाषाओं की जननी कहे जाने का कारण इसकी व्यापकता और प्रभाव है । संस्कृत का प्रभाव न केवल भारत में , बल्कि दुनिया भर में देखा गया है । व्याकरणिक ढांचा , ध्वन्यात्मक संरचना , और शब्दावली इतनी सशक्त और वैज्ञानिक है कि यह क्या आधुनिक भाषाओं की नींव बनी । विशेष रूप से , संस्कृत का प्रभाव भारतीय उपमहाद्वीप की भाषाओं जैसे हिंदी , मराठी , बंगाली , गुजराती और दक्षिण भारतीय भाषाओं पर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है ।

Edit with WPS Office

संस्कृत का प्रभाव और वैश्विक विस्तार :

1. भारतीय भाषाओं पर प्रभाव : संस्कृत ने भारत की लगभग सभी प्रमुख भाषाओं को जन्म दिया है। हिंदी, बंगाली, मराठी, गुजराती, तेलुगू, तमिल, कन्नड़, मलयालम और अन्य भारतीय भाषाओं के शब्दकोश का बड़ा हिस्सा संस्कृत पर आधारित है। इन भाषाओं की शब्दावली, व्याकरण और साहित्य में संस्कृत का गहरा प्रभाव है।

2. यूरोपीय भाषाओं पर प्रभाव : संस्कृत का प्रभाव केवल भारतीय भाषाओं तक सीमित नहीं है, बल्कि इंडो - यूरोपीय भाषा परिवार की कई भाषाओं, जैसे __ ग्रीक, लैटिन, जर्मन, और अंग्रेजी में भी संस्कृत के कई समान शब्द और धातुएं पाई जाती है। उदाहरण के लिए :

- o संस्कृत में " मातृ " (मां) और अंग्रेजी में " mother "
- o संस्कृत में " पितृ " (पिता) और अंग्रेजी में " father "
- o संस्कृत में " अग्नि " (आग) और लैटिन में " ignis "

3. यह समानताएं दर्शाती हैं कि संस्कृत और इन भाषाओं के बीच ऐतिहासिक संबंध है और संस्कृत ने यूरोप की भाषाओं पर भी प्रभाव डाला है।

4. वैश्विक शब्दावली : संस्कृत के कई शब्द जैसे " योग ", " गुरु ", "मंत्र ", " कर्म ", " आत्मा " और " धर्म " आज पूरी दुनिया में सामान्यतः उपयोग किए जाते हैं। यह संस्कृत के वैश्विक प्रभाव और उसके शब्दों की सार्वभौमिकता को दर्शाता है।

9. शब्दों की लय और माधुर्य (rhythm and melody in words) :

संस्कृत के शब्दों में एक स्वाभाविक लय और माधुर्य होता है, जो इसे

Edit with WPS Office

कविता और श्लोकों के लिए आदर्श बनाता है ।

उदाहरण :

" कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन " (कर्म करने का अधिकार तुम्हें है , परंतु फल की चिंता मत करो) इस वाक्य की ध्वनि और लय इसे न केवल सुनने में मधुर बनाती है , बल्कि इसका संदेश भी गहरा और प्रेरणादायक है ।

10. मशीन भाषाओं के लिए उपयुक्तता (Suitability for machine language) :

संस्कृत की संरचना इतनी सटीक और नियमबद्ध है कि इसे कंप्यूटर और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के लिए आदर्श माना जाता है ।

उदाहरण : पाणिनि का " अष्टाध्यायी " व्याकरण अल्गोरिदमिक संरचना पर आधारित है । इसका तर्क संगत और सुव्यवस्थित ढांचा कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के लिए व्यवस्थित किया गया है ।

11. विशिष्ट और सूक्ष्म शब्द :

संस्कृत में ऐसे कई शब्द होते हैं जो किसी विशिष्ट वस्तु , भाव या परिस्थिति को अत्यंत सूक्ष्मता से व्यक्त करते हैं । इन शब्दों में सामान्य से विशेष तक की हर भावना और स्थिति का वर्णन किया जा सकता है ।

उदाहरण :

- **" स्नेह "** का अर्थ केवल प्रेम नहीं है , बल्कि यह उस प्रेम को व्यक्त करता है जिसमें गहरा संबंध और आत्मीयता हो ।
- **" शांत "** का अर्थ केवल शांति नहीं , बल्कि वह शांति है जो मानसिक

Edit with WPS Office

और आत्मिक स्तर पर अनुभव की जाती है ।

- **" विधा "** का अर्थ केवल शिक्षा नहीं , बल्कि यह ज्ञान , समझ , और विवेक का प्रतीक है ।

12. विशाल साहित्यिक धरोहर :

संस्कृत भाषा का साहित्यिक खजाना अत्यंत विशाल है । वेद , ब्राह्मण ग्रंथ , उपनिषद , गीता , महाभारत , रामायण , काव्य , नाटक और शास्त्रों में प्रयुक्त शब्दों की संख्या और उनका प्रयोग संस्कृत शब्दकोश को अत्यधिक विस्तृत बनता है । इन ग्रंथों में न केवल धार्मिक और दार्शनिक विचारों का संग्रह है , बल्कि इनमें विज्ञान , खगोलशास्त्र , चिकित्सा , गणित और व्याकरण से संबंधित शब्दों की भी भरमार है ।

उदाहरण :

- **वेदों** में प्रयुक्त कई शब्द जैसे " ऋच " , " साम " , " यजुस " , " अथर्व " धार्मिक अनुष्ठानों और वैदिक विज्ञान से जुड़े हैं ।
- **आयुर्वेद** मैं शरीर और चिकित्सा से संबंधित शब्द जैसे " धातु " , " दोष " , " वात " , " पित्त " "कफ " ।
- **गणित** में शब्द जैसे " शून्य " (zero) , " परिमाण " (quality) , और " समास " (Equation) ।

13. शब्दों की सृजन क्षमता :

संस्कृत की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें नए शब्दों की सृजन क्षमता बहुत अधिक है । संस्कृत व्याकरण और धातु प्रणाली के आधार पर नए-नए शब्द बनाए जा सकते हैं , जो भाषा की विकासशीलता को दर्शाते हैं ।

Edit with WPS Office

उदाहरण :

- " विद्युत " का अर्थ बिजली या बिजली से संबंधित चीजों के लिए किया जाता है । इससे बने नए शब्द जैसे " विद्युत वाहन " (Electric vehicle) ।
- आधुनिक तकनीकी शब्दावली जैसे " दूरदर्शन " (Television) ," आकाशवाणी " (radio) भी संस्कृत की इसी सृजन क्षमता का उदाहरण है ।

14. विशाल शब्दकोश (Dictionary) :

संस्कृत भाषा का शब्दकोश अत्यंत विशाल है और इसमें अरबों शब्द उपलब्ध है । हालांकि , भाषा लगातार विकसित होती रही है और नए शब्दों की रचना की जाती रही है । विभिन्न स्रोतों और शब्दकोशों में अलग-अलग शब्दों की संख्या पाई जा सकती है , लेकिन यहां कुछ महत्वपूर्ण बिंदु दिए गए हैं जो संस्कृत के शब्दकोश की विशालता को समझने में सहायक सिद्ध होंगे :

संस्कृत शब्दकोशों में लगभग एक अरब तक शब्द होने का अनुमान लगाया जाता है । पाणिनि के " अष्टाध्यायी " व्याकरण ने संस्कृत की धातु प्रणाली को इतना व्यवस्थित किया कि इससे आवश्यकता अनुसार निरंतर नए-नए शब्दों का निर्माण संभव है । पाणिनि के बाद कई अन्य विद्वानों ने संस्कृत के शब्दकोषों का विस्तार किया ।

संस्कृत में लगभग 2000 धातुएं (verb roots) मानी जाती है , और इन धातुओं से लाखों नए शब्द बन सकते हैं । एक धातु से कई शब्द बनते हैं , जैसे __ संज्ञा , विशेषण , क्रिया , और अन्य प्रकार के शब्द । यह शब्द निर्माण प्रक्रिया संस्कृत शब्दकोश को अनंत विस्तार देने में सहायता करती है । संस्कृत में एक ही वस्तु या विचार के लिए कई पर्यायवाची शब्द होते हैं , जो भाषा को समृद्ध बनाते हैं । उदाहरण के लिए , " सूर्य " के लिए 100 से

Edit with WPS Office

अधिक पर्यायवाची शब्द हैं , और इसी प्रकार अन्य विचारों और वस्तुओं के लिए भी कई शब्द उपलब्ध है ।

उदाहरण :

" पृथ्वी " के लिए पर्यायवाची शब्द : भूमि , धरा , अवनि , धरित्री , क्षिति , वसुधा ।

संस्कृत शब्दकोश आज भी जीवित है और इसमें आधुनिक युग के लिए नए शब्द बनाए जाते रहे हैं । विज्ञान , गणित , तकनीकी , और अन्य आधुनिक क्षेत्रों के लिए संस्कृत में नए शब्दों का निर्माण किया गया है ।

उदाहरण :

- " दूरदर्शन " (Television)
- " विद्युत " (Electricity)
- " आकाशवाणी " (radio)
- "अंतरिक्ष " (space)

संस्कृत भाषा की डिक्शनरी में शब्दों की संख्या का सटीक अनुमान लगा पाना अत्यंत कठिन है क्योंकि संस्कृत का शब्दकोश अत्यंत विस्तृत और समृद्ध है , और यह साहित्य , दर्शन , विज्ञान , चिकित्सा , खगोल शास्त्र , गणित और अन्य विषयों में फैला हुआ है । इसके अलावा , संस्कृत में नए शब्दों के निर्माण की क्षमता बहुत अधिक है , इसलिए शब्दों की संख्या निरंतर बढ़ सकती हैं । संस्कृत का शब्दकोश एक अद्वितीय और अत्यंत विशाल धरोहर है , जिसमें अरबों शब्दों का समावेश है । इसकी सृजनशीलता , धातु - प्रणाली , और व्याकरणिक लचीलापन इसे अन्य भाषाओं से अलग और समृद्ध बनाते हैं ।

वैदिक v/s लौकिक संस्कृत

Edit with WPS Office

वैदिक और लौकिक संस्कृत संस्कृत भाषा के दो प्रमुख रूप हैं , जो समय और उपयोग के अनुसार विभाजित किए गए हैं । ये दोनों रूप संस्कृत की समृद्धि को दर्शाते हैं , परंतु उनके बीच कई महत्वपूर्ण अंतर भी है । आइए इन्हें विस्तार से समझते हैं :

1. समय काल :

- **वैदिक संस्कृत** : यह संस्कृत भाषा का सबसे पुराना स्वरूप है , जो वैदिक काल से महाभारत काल तक मुख्यतः प्रचलित था । इसका प्रयोग मुख्य रूप से वेदों , ब्राह्मणों , आरण्यकों और उपनिषदों में हुआ है ।

- **लौकिक संस्कृत** : यह महाभारत काल के पश्चात का रूप है और इसे शास्त्रीय संस्कृत भी कहा जाता है महाकाव्यों (जैसे महाभारत और रामायण) , पुराणों , काव्य , नाटकों , और शास्त्रीय साहित्य में इसका उपयोग हुआ ।

2. ध्वन्यात्मक अंतर (phonetic differences)

- **वैदिक संस्कृत** : इसमें कुछ ध्वनियां और उच्चारण है जो लौकिक संस्कृत में नहीं पाए जाते हैं । वैदिक संस्कृत में " ऋच " "स्वर " और " अनुनासिक " ध्वनियां अधिक प्रचलित थी । उदाहरण के लिए , वैदिक संस्कृत में " प्लुत " स्वर होते हैं , जिसमें ध्वनि को तीन मात्राओं तक खींचा जाता था , जैसे " स्वाह " ।

- **लौकिक संस्कृत** : इसमें वैदिक संस्कृत के तुलना में उच्चारण के नियम अधिक सरल और नियमित होते हैं । " प्लुत " स्वर का उपयोग नहीं होता , और ध्वनियों का उपयोग एक नियमित और सरल ढंग से होता है ।

Edit with WPS Office

3. व्याकरण (Grammar)

- **वैदिक संस्कृत :** इसका व्याकरण अधिक जटिल है । इसमें कुछ विशेष विभक्तियां और क्रिया रूप होते हैं जो लौकिक संस्कृत में लुप्त हो गए । जैसे की वैदिक संस्कृत में "लिट् " काल अधिक विस्तृत थे ।

- **लौकिक संस्कृत :** इसका व्याकरण पाणिनि के " अष्टाध्यायी " के अनुसार व्यवस्थित और सरल हो गया । इसमें कई पुराने व्याकरणिक रूप , जैसे द्वितीया और तृतीया विभक्तियों में विशेष ध्वनियां , लुप्त हो गई ।

4. शब्दावली (vocabulary)

- **वैदिक संस्कृति :** इसमें कई शब्द और धातुएं हैं जो लौकिक संस्कृत में नहीं पाए जाते । वैदिक संस्कृत में शब्दों का अर्थ विशेष और धार्मिक संदर्भ में होता है । उदाहरण के लिए " अग्रि " का अर्थ केवल अग्नि नहीं था , बल्कि एक देवता के रूप में भी प्रयोग किया जाता था ।

- **लौकिक संस्कृति :** इसमें नए शब्दों और प्रयोगों का विकास हुआ , और वैदिक शब्दों का अर्थ धीरे-धीरे बदल गया । उदाहरण के लिए " जाति " का प्रयोग लौकिक संस्कृत में जन्म से संबंधित है , जबकि वैदिक संस्कृत में इसका अर्थ समान प्रसव , आयु एवं भोग के लिए किया गया था ।

5. धार्मिक और सामाजिक उपयोग (religious vs.secular use)

- **वैदिक संस्कृत :** इसका प्रयोग मुख्यतः धार्मिक ग्रंथो , यज्ञों , और अनुष्ठानों के संदर्भ में होता था । यह वेदों के मंत्रों , स्तुतियों , और

Edit with WPS Office

धार्मिक अनुष्ठानों में से संबंधित था ।

- **लौकिक संस्कृत** : इसका प्रयोग साहित्य , काव्य , नाटकों , राजनीति , दर्शन , और विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में हुआ । महाभारत , रामायण , कालिदास की रचनाएं , और पाणिनि का व्याकरण इसी लौकिक संस्कृत में लिखा गया ।

6. साहित्यिक भिन्नता (Literary Differences)

- **वैदिक संस्कृत** : वैदिक ग्रंथों में गेयता और छंदबद्धता होती है , विशेष रूप से ऋग्वेद में पाए जाने वाले मंत्रों में । इन ग्रंथों में शब्दों का प्रयोग अधिक सांकेतिक और प्रतीकात्मक होता है ।

- **लौकिक संस्कृत** : यह शास्त्रीय साहित्य , नाटक , और काव्य के लिए अधिक उपयुक्त थी । इसमें भाषा की लयबद्धता और रसात्मकता को महत्व दिया गया , जैसे कालिदास के नाटक " शकुंतला " और " मेघदूत " में मिलता है ।

7. प्रचलन और संरचना (usage and Structure)

- **वैदिक संस्कृत** : यह सीमित वर्गों तक सीमित थी , मुख्यतः ब्राह्मणों और वैदिक अनुष्ठानों में प्रचलित थी । वैदिक संस्कृत का अध्ययन और प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित था ।

- **लौकिक संस्कृत** : यह भाषा व्यापक वर्गों में फैल गई और साहित्य , शिक्षा और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने लगी । यह शास्त्रों , नाटकों , काव्य , राजनीति , और विज्ञान की भाषा बन गई ।

सारांश :

Edit with WPS Office

- **वैदिक संस्कृत :** धार्मिक , अनुष्ठानिक , और ध्वन्यात्मक दृष्टि से समृद्ध थी , जिसका प्रयोग मुख्यत: वैदिक ग्रंथों और अनुष्ठानों में होता था ।

- **लौकिक संस्कृत :** अधिक व्यवस्थित , सरल और व्यापक रूप से प्रयोग की जाने वाली भाषा थी , जिसका उपयोग साहित्य , कला , दर्शन , और सामाजिक विषयों में किया जाता था ।

वैदिक संस्कृत का स्वरूप आध्यात्मिक और धार्मिक था , जबकि लौकिक संस्कृत ने साहित्य और जीवन के व्यावहारिक पक्षों पर ध्यान केंद्रित किया ।

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

159.पृथ्वी ,जल ,अग्नि ,वायु , आकाश पंचतत्वों के गुण :

द्रव्य	**गुण**
1. पृथ्वी	गंध , रस , रुप , स्पर्श , शब्द

Edit with WPS Office

- **पृथ्वी में चार गुण होते हैं**
  1. गंध
  2. रस
  3. रुप
  4. स्पर्श

2. जल

- **जल में तीन गुण**
  1. रस
  2. रुप
  3. स्पर्श

3. अग्नि

- **अग्नि में दो गुण**
  1. रुप
  2. स्पर्श

4. वायु

- वायु में एक गुण
  1. स्पर्श

5. आकाश

- आकाश का गुण
  1. शब्द (जिसके माध्यम से सुनते हैं)

अतः इसलिए जैसे पृथ्वी में चार गुण होते हैं पृथ्वी में गंध है रस है मिट्टी में एक स्वाद है और मिट्टी का रूप भी है जिसे हम अपनी आंखों से देखते हैं , और मिट्टी को स्पर्श भी करते हैं । इसी प्रकार चार तत्वों में भी इसी प्रकार के उनके अपने गुण हैं । जैसे जल में तीन गुण है , रस , रुप , और स्पर्श ।

Edit with WPS Office

जल में गंध और शब्द नहीं होता । अग्नि में दो गुण है रूप अग्नि का एक रूप है जिसे हम अपनी आंखों से देखते हैं । और अग्नि को अपने हाथों से स्पर्श भी करते हैं । यही उसके दो गुण हैं । अग्नि में रस नहीं है अग्नि को कोई नहीं चख सकता । अग्नि में कोई गंध नहीं है और ना हीं कोई शब्द है । इसी प्रकार वायु में एक गुण है । वायु को स्पर्श कर सकते हैं । वायु में कोई गंध नहीं होती , न कोई रूप है , ना शब्द , ना स्पर्श नहीं है । आकाश में अपना एक ही गुण हैं । जिसके माध्यम से हम सुनते हैं । अगर आकाश नहीं होता , तो हम बोल नहीं पाते ना हीं सुन पाते ।

पंचमहाभूत : प्रकृति और मानव शरीर का संबंध

सनातन धर्म और आयुर्वेद में " पंचमहाभूत " का विशेष महत्व है । पंचमहाभूत ___ **आकाश , वायु , अग्नि , जल , और पृथ्वी** ___ सृष्टि के निर्माण के मूल तत्व हैं । इन तत्वों से न केवल यह ब्रह्मांड बना है , बल्कि मानव शरीर भी इन्हीं तत्वों का संगम है । वैदिक ग्रंथों के अनुसार , पंचमहाभूत और मानव शरीर के बीच गहरा संबंध है । यह लेख इन तत्वों की प्रकृति , उनके महत्व , और मानव शरीर पर उनके प्रभाव को विस्तार से समझाएगा ।

पंचमहाभूत का परिचय ______

पंचमहाभूत कौन-कौन से हैं ?

1. आकाश (Ether) :
   - स्थान और ध्वनि का स्रोत ।
   - यह शून्यता और विस्तार का प्रतीक है ।

2. वायु (Air) :
   - गति और प्राण का स्रोत ।
   - यह जीवन के प्रत्येक क्रियाशील तत्व को गतिशील बनाता है ।

Edit with WPS Office

3. अग्नि (Fire) :

- ऊर्जा और प्रकाश का स्रोत ।
- यह शरीर में ताप , पाचन और ऊर्जा का निर्माण करता है ।

4. जल (Water) :

- तरलता और जीवन का आधार ।
- यह शरीर में रक्त , लार , और अन्य द्रव पदार्थों का निर्माण करता है ।

5. पृथ्वी (Earth) :

- स्थायित्व और शक्ति का आधार ।
- यह शरीर को संरचना और स्थिरता प्रदान करता है ।

पंचमहाभूत का ब्रह्मांड से संबंध :

- वैदिक ग्रंथों में कहां गया है कि सृष्टि पंचमहाभूतों के संतुलन से बनी है ।
- **तैत्तिरीय उपनिषद. (2.1) :**
  " आकाश से वायु , वायु से अग्नि , अग्नि से जल , और जल से पृथ्वी उत्पन्न होती है । "
- ये तत्व एक दूसरे से जुड़े हुए हैं और मिलकर ब्रह्मांड की संरचना करते हैं ।

पंचमहाभूत और मानव शरीर

मानव शरीर इन पांच तत्वों से बना है । आयुर्वेद में इसे " मूलभूत " कहां गया है ।

1. आकाश (Ether) और मानव शरीर

Edit with WPS Office

- शरीर में स्थान :
  - यह शरीर के आंतरिक खाली स्थान , जैसे कान , कोशिकाएं , और नसों में पाया जाता है ।

- कार्य :
  - ध्वनि का संचरण ।
  - शरीर को विस्तार और लचीलेपन का अनुभव कराना ।

- उपयोग
  - ध्यान और आत्मनिरीक्षण के लिए आवश्यक है ।

2. वायु (Air) और मानव शरीर

- शरीर में स्थान
  - यह श्वसन तंत्र , मांसपेशियों की गति , और नसों में प्रवाहित होता है ।

- कार्य :
  - प्राण (सांस) का प्रवाह ।
  - रक्त और ऑक्सीजन का संचार ।

- उपयोग :
  - प्राणायाम और योग वायु तत्व को संतुलित करते हैं ।

3. अग्नि (Fire) और मानव शरीर

- शरीर में स्थान :
  - यह पाचन तंत्र , दृष्टि , और शरीर के तापमान को नियंत्रित करता है ।

- कार्य :

Edit with WPS Office

- भोजन को ऊर्जा में परिवर्तित करना ।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता का निर्माण ।

- उपयोग :
  - संतुलित आहार और नियमित दिनचर्या अग्नि तत्व को संतुलित रखते हैं ।

4. जल (Water) और मानव शरीर

- शरीर में स्थान
  - रक्त , लसीका , पसीना , और अन्य तरल पदार्थ ।

- कार्य :
  - शरीर को हाइड्रेट रखना ।
  - कोशिकाओं को पोषण और नमी प्रदान करना ।

- उपयोग :
  - पर्याप्त जल पीना और संतुलित आहार लेना जल तत्व को मजबूत करता है ।

5. पृथ्वी (Earth) और मानव शरीर

- शरीर में स्थान
  - हड्डियां , मांसपेशियां , और त्वचा ।

- कार्य :
  - शरीर को स्थायित्व और संरचना प्रदान करना ।
  - वजन और सहनशक्ति को संतुलित रखना ।

Edit with WPS Office

- उपयोग
  - पौष्टिक आहार और व्यायाम पृथ्वी तत्व को संतुलित करते हैं ।

पंचमहाभूत का आयुर्वेद में महत्व

आयुर्वेद के अनुसार, पंचमहाभूत शरीर के तीन दोषों—वात, पित्त, और कफ—का निर्माण करते हैं।

1. वात दोष (वायु + आकाश):

- शरीर की गति और संचरण का प्रबंधन।
- संतुलन बिगड़ने पर गठिया, सूखापन, और चिंता होती है।

2. पित्त दोष (अग्नि + जल):

- पाचन और ऊर्जा का निर्माण।
- असंतुलन से त्वचा की समस्याएँ और गुस्सा उत्पन्न होता है।

3. कफ दोष (जल + पृथ्वी):

- स्थायित्व और पोषण का कार्य।
- असंतुलन से मोटापा, सुस्ती, और जमाव की समस्याएँ होती हैं।

Edit with WPS Office

पंचमहाभूत और पर्यावरण

1. प्रकृति के साथ सामंजस्य

- पंचमहाभूत केवल मानव शरीर में ही नहीं, बल्कि पूरी प्रकृति में व्याप्त हैं।
- इन तत्त्वों का संतुलन पर्यावरण के संतुलन से जुड़ा हुआ है।

2. असंतुलन के परिणाम

- आकाश: ध्वनि प्रदूषण।
- वायु: वायु प्रदूषण।
- अग्नि: ग्लोबल वार्मिंग।
- जल: जल प्रदूषण।
- पृथ्वी: भूमि का क्षरण।

3. संरक्षण का महत्व

- प्रकृति के पंचमहाभूतों को संतुलित रखने के लिए हमें पर्यावरण का संरक्षण करना चाहिए।
- जैसे शरीर में इन तत्त्वों का संतुलन आवश्यक है, वैसे ही ब्रह्मांड में भी इनका संतुलन अनिवार्य है।

Edit with WPS Office

पंचमहाभूत को संतुलित करने के उपाय

1. आकाश (Ether):

- ध्यान और मौन का अभ्यास करें।
- तनाव से दूर रहें।

2. वायु (Air):

- प्राणायाम और गहरी सांस लेने के अभ्यास करें।
- नियमित व्यायाम करें।

3. अग्नि (Fire):

- संतुलित और पौष्टिक आहार लें।
- मसालेदार भोजन से बचें।

Edit with WPS Office

4. जल (Water):

- दिन में कम से कम 8-10 गिलास पानी पिएं।
- हाइड्रेटेड रहें और शरीर को स्वच्छ रखें।

5. पृथ्वी (Earth):

- प्राकृतिक आहार लें।
- नियमित रूप से योग और व्यायाम करें।

पंचमहाभूत और अध्यात्म

1. आत्मा और पंचमहाभूत

- उपनिषदों में पंचमहाभूत को आत्मा का भौतिक रूप कहा गया है।
- आत्मा इन तत्त्वों का संतुलन बनाए रखकर ब्रह्मांड से जुड़ती है।

Edit with WPS Office

2. मोक्ष का मार्ग

- पंचमहाभूत का सही संतुलन आत्मा को मोक्ष की ओर ले जाता है।
- भगवद गीता में पंचमहाभूत को भौतिक संसार के नियम का हिस्सा बताया गया है।

निष्कर्ष

पंचमहाभूत सृष्टि और मानव शरीर का मूल आधार हैं। यह हमें सिखाते हैं कि हमारा शरीर और प्रकृति एक ही तत्त्वों से बने हैं। इनके संतुलन से न केवल शारीरिक स्वास्थ्य बेहतर होता है, बल्कि मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति भी होती है।

"पंचमहाभूत का ज्ञान न केवल हमें अपने शरीर और प्रकृति को समझने में सहायता करता है, बल्कि हमें यह भी सिखाता है कि सच्चा सुख और शांति तब मिलती है, जब हम इन तत्त्वों को संतुलित रखते हैं।"

Edit with WPS Office

।। पृष्ठ समाप्त् ।।

• 160. प्रार्थना

संदर्भ वैदिक साहित्य/references Vedic literature

वेद , उपनिषद , ब्राह्मण ग्रंथ , भगवत गीता , षडदर्शन , ऋग्वेद भाष्य भूमिका , विशुद्ध मनुस्मृति , सत्यार्थ प्रकाश ।

===========================

।। प्रार्थना ।।

ओम असतो मा सद्गमय ।
तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्मामृतं गमय ।।
ओम शान्ति शान्ति शान्ति:

।। बृहदारण्यक उपनिषद्. 3.28 ।।

अर्थात ______ हे प्रभु मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलो ।।
मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो ।।
और मुझे मृत्यु से अमरता (मोक्ष) की ओर ले चलो ।।

Edit with WPS Office

।। ओम् तत् सत् ।।

।। संपूर्ण पृष्ठ समाप्त् ।।

Edit with WPS Office

Edit with WPS Office

Edit with WPS Office